Volume III, Issue XXII
April 2018 E-Journal
U.G.C. Journal No. 64728

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Impact Factor - 5.110 (2017)

Naveen Shodh Sansar

(An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
(U.G.C. Approved Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

Index/अनुक्रमणिका

01. Index/ अनुक्रमणिका 02

02. Regional Editor Board 13

03. Editorial Advisory Board 14

04. Referee Board 15

05. झाबुआ राज्य की तुलनात्मक स्थिति विभिन्न राजाओं के काल में (16-19 वीं सदी तक) 17
(निर्मला बिलवाल, डॉ. रविद्र सिंह)

06. माध्यमिक स्तर पर विद्यालयों में समावेशी शिक्षा विषयक शैक्षिक चुनौतियाँ (डॉ. बी.के. गुप्ता) 19

07. मद्यपान का आदिवासी जनजीवन पर प्रभाव (जिला अलीराजपुर के विशेष संदर्भ में) (लखनलाल गांगले) 21

08. एच.आई.वी. एड्स की रोकथाम में परिवार तथा समाज की भूमिका (मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में) (मुकेश अजनार) 23

09. स्व सहायता समूहों का बैंक लिंकेज तथा रिवॉल्विंग फंड वितरण (धार जिले के संदर्भ में एक अध्ययन) 25
(संजीव कुमार व्यास, डॉ. विजय ग्रेवाल)

10. भारत में सामाजिक न्याय की संकल्पना : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (महेश कुमार रचियता, डॉ. सुनील महावर) 28

11. भारतीय महिला संत (डॉ. ज्योति मिश्रा) 31

12. Factors affecting Promotion of Culinary Tourism in district Nainital (Nainital district) 34
(Sundeep Singh Takuli, Dr. Yashwant Singh Rawal)

13. नीमच जिले के चयनित गांवों में शैक्षणिक सेवा संस्थाओं की सुविधाओं का वितरण 37
(टीना चौहान, डॉ. आर.के. श्रीवास्तव)

14. An Analytical Study of Saffron Production in District Pulwama (J&K) 39
(Shahid Hussain Rather, Dr. Ajay Kumar Tripathi)

15. संविधान और सामाजिक न्याय (दयाराम मुझाल्दा) 45

16. Analysis of Congestion Control Techniques and Traffic Managementin Cellular Networks 47
(Laxmi Rav, Kalpana Midha)

17. A Comparative View of Paradise Lost and Divine Comedy 49
(Nitesh Kumar Sharma, Dr. O.P. Tiwari)

18. PIL - A Judicial Response to Represent the Unrepresented (Dr. Suneeta Bhadoo) 51

19. Human Rights Friendly School on World (Dr. Gurpreet Singh, Dr. B. K. Yadav) 53

20. Arsenicum Album - Natural History (Dr. Rajinder Girdhar, Dr. Parveen Kumar) 56

21. राग दरबारी में श्रीलाल शुक्ल (डॉ. विनिता वर्मा) 58

22. सरदार पटेल की खेडा सत्याग्रह आन्दोलन में भूमिका (डॉ. मनोज दाधीच, जयश्रीबेन डी. मेवाड़ा) 61

23. Investigating the effect of herbal drugs used for the treatment of cognitive dysfunction 64
(Chakresh Patley, Rakesh Sagar, M.L.Kori, Nitu Singh)

24. आइपोमोइया कार्निया द्वारा व्युत्पन्न सक्रियित कार्बन से Co (II) के अधिशोषण का अध्ययन 68
(डॉ. गीता परियानी, शिखा श्रीवास)

25. Role of Education on Poverty Eradication in India : A Sociological Study (Yatindra Kumar Jha) 72

26. ग्रामीण क्षेत्रों में भ्रष्टाचार नियंत्रण हेतु मध्यप्रदेश सरकार की भूमिका : एक विवेचन (महेश भारती) 77

27. शिक्षा के अधिकार अधिनियम का क्रियान्वयन (दुर्गेश कुमार त्रिपाठी) 79

28. Risk Management as a Business Concern (Manish Jain) 81

29. श्रवण हास के कारण बालिकाओं की बुद्धि-लब्धि स्तर पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन (रीवा जिले के संदर्भ में) ... 83
(जयलक्ष्मी मौंपाची, डॉ. आभा गोयल)

30. स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान देश के निर्माण व उत्थान में डॉ. केशवराव बलिराम हेडगेवार का योगदान 86
(विजिया जायसवाल, डॉ. रविन्द्र सिंह)

31. भारत में स्थानीय शासन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं वर्तमान स्वरूप (डॉ.कान्ता अलावा, नगारची जामरे) 88

32. The Attitude of Parents Towards Their Blind Children in Southern Tribal Area of Rajasthan 91
(Dr. Shilpa Rathore, Priyanka Deopura)

33. राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी उपशमन में इंदिरा आवास योजना की सार्थकता (योगेश चितारा) 94

34. Bacteriological Examination of Tapti River Water in Burhanpur (Madhya Pradesh, India) 98
(Sheetal Patel)

35. Web Technology for Learning and Training (Education) (Syed Asif Ali) 101

36. विशिष्टाद्वैत वेदान्त में आत्म तत्व निरूपण (डॉ. दिनेश कुमार कौशल) 105

37. बी.पी.एल. परिवार के विकास पर मनरेगा योजना के प्रभावों का मूल्यांकन (कविता यादव) 109

38. देवास जिले में ग्रामीण बाजार का बदलता स्वरुप (डॉ. सुनील मोरे, जाहिद खान) 113

39. भक्त कबीर विचारधारा (मनजीत कौर) 116

40. शिवप्रसाद सिंह की कहानियों में ग्रामीण समाज (कमलेश चौधरी) 119

41. A Study of Essential Skills by Experts and Students of Teacher Education : Suggested 122
Strategies (Dr. Nirupama Sharma, Pratima Samar)

42. ग्रामीण बाजार के उपभोक्ताओं की समस्या (देवास जिले के विशेष सन्दर्भ में) (डॉ. सुनील मोरे, जाहिद खान) 125

43. खरगोन जिले में नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की स्थापना एवं विकास - एक मूल्यांकनात्मक अध्ययन 127
(डॉ. सुनील कुमार शर्मा, प्रतिभा शर्मा)

44. नगरीय भूमि उपयोग का बदलता प्रतिरूप : इन्दौर महानगर के संदर्भ में (स्थानिक-कालिक विश्लेषण 129
1981-2011) (हेमंत मण्डलोई)

45. रामायण काल में नारी का सौन्दर्य (डॉ. पंकज कुमार सिंह) 131

46. आदिवासी एवं गैर आदिवासी जिले के शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय/महाविद्यालय के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि ... 133
का तुलनात्मक अध्ययन (मीना भुटेजा (कालरा))

47. सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र एवं छात्रा शिक्षकों में तनाव के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन..... 137
(हेमन्त त्रिवेदी)

48. वाल्मिकि रामायण में कन्या का स्वरुप (डॉ पंकज कुमार सिंह) 139

49. कृषि के क्षेत्र में महिलाओं का विकास (प्रीती रवि, डॉ. ए. के. पाण्डे) 141

50. Yoga as an Effective Alternative Management Intervention for Perceived 142
Occupational Stress: An Overview (Altaf Hussain)

51. हिन्दी भाषा और भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी का बाजार (डॉ. अभयवीर) 146

52. महिलाओं के विरूद्ध अपराध एवं कानून (मेहर डोडवे).. 149

53. बिलासपुर संभाग में परिवहन तंत्र का सामाजिक-आर्थिक प्रभाव (डॉ. काजल मोइत्रा, सृष्टि शर्मा) 152

54. English For Specific Purposes : Paragraph Writing For Engineering Students in 154
National Capital Region (Dr. Omprakash Upadhyay)

55. Concept And Application Of Promissiory Estoppel : A Critical Study With Indian Evidence 157
Act And Legislation (Narender Dhaka)

56. Relevance of Cashless Economy in India (Dr.Yadu Rao) 160

57. लघु उद्योगो के विकास में जिला उद्योग केन्द्र का योगदान (नन्दना शिल्पकार, डॉ. ए.के. पाण्डेय) 164

58. भारत में ऊर्जा के गैर परम्परागत स्त्रोत (डॉ. शुभ्रा तिवारी) 166

59. पंचायती राज व्यवस्था में सरपंच की भूमिका (धनेन्द्र कुमार, डॉ. वाय.बी. कसवे).................................. 168

60. अलका सरावगी के कथा साहित्य में चेतना के विविध आयाम (सुनिता चौहान, डॉ. मंजुला जोषी) 170
61. Historical Analysis of Spread of Buddhism from India To Tibet (Dr. Shilpa Mehta) 172
62. भवन निर्माण में कार्यरत महिला श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का मूल्यांकन (उषा राजे, डॉ. महेश गुप्ता) 175
63. कृषक की आर्थिक एवं सामाजिक प्रतिष्ठा की सूचक अफीम (डॉ. प्रीति मुरड़िया)................................... 177
64. अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं भारत (डॉ. आराधना शुक्ला, निधी श्री) 179
65. Role of Management in Faculty Development (Dr. Prabhat Chopra) 180
66. असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिला श्रमिकों के मानवाधिकार (रवि प्रकाश चौधरी, डॉ. ए.बी. सोनी) 186
67. हिन्दी साहित्य में किन्नरों का यथार्थवादी चरित्र-चित्रण (डॉ. पिंकी मिश्रा) 188
68. Analytical Study Of Women Oriented Life Insurance Plans 190
(Dr. Savita Agrawal, Dr. Monika Bapat, Dr. Venus Shah)
69. श्रीलाल शुक्ल के साहित्य में चिन्तन पक्ष की प्रासंगिकता (पद्मा आर्य).. 193
70. A Study On Business Process Outsourcing Call Centres 195
(Dr. Rajendra Singh Waghela, Viranchi Vyas)
71. Women Empowerment : Meaning, Salient Features & Characteristics 197
(Dr. Meenaskshi Panchal, Heena Shekhawat)
72. Make in India – Exploring the Prospects for Growth Sectors (Dr. Sanjay Patni) 201
73. A Need of a change in Teaching Style (Pedagogy) (Dr. Manoj Jain) 205
74. इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य शिक्षा-आज की आवश्यकता (डॉ.कविता चंदानी) 208
75. Higher Education in Rural Areas of India (Dr. Sonia Chandani).. 210
76. नागार्जुन के उपन्यासों में विधवा-चिंतन (डॉ. सत्येन्द्र कुमार मिश्रा).. 212
77. 'Rudali' by Mahasweta Devi - Exploitation is the issue for the survival of women 214
(Papiha Amin, Dr. Meenakshi Choubey)
78. बौद्ध-दर्शन का स्वरुप (डॉ. विनय शर्मा) 216
79. स्वतंत्रता संग्राम और गांधीवादी रचनात्मक प्रवृत्तियाँ में आदिवासियों का योगदान 219
(डॉ. अजातशत्रु सिंह राणावत, नरेन्द्रकुमार केशवभाई राठौड़)
80. Human Resource Development In The New Generation In Private Sector Banks –....................... 221
A Case Study Of HDFC Bank Ltd. (Ritu Arora, Dr. S.N. Vyas)
81. Impact Of Skill Development On Expenditure And Migration In Southern Rajasthan 225
(Swati Sanadhya, Dr. Mahendra Ranawat)
82. पुलिसकर्मियों की कार्यप्रणाली तथा सेवा सन्तुष्टि का अध्ययन (कानपुर जिले के विशेष सन्दर्भ में) (विकास दीक्षित) 228
83. गोविन्द मिश्र के कथेतर साहित्य में बदलते नैतिक मूल्य- एक विश्लेषण (मोनिका पटेल, डॉ. चंदा तलेरा जैन) . 231
84. डॉ. अम्बेडकर के शिक्षा संबंधी विचारों का अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के शैक्षणिक.................. 234
विकास में आने वाली कठिनाईयों व चुनौतियों का अध्ययन (धार जिले के विशेष संदर्भ में) (ज्योति सोलंकी)
85. मध्यप्रदेश में आदिवासी विकास परियोजनाओं का क्रियान्वयन एवं उपलब्धियों का मूल्यांकन (संदर्भ: 237
लाडली लक्ष्मी योजना झाबुआ जिले में विगत पांच वर्षों की उपलब्धियां)(डॉ. सुनील कुमार शर्मा, शशि सिसौदिया)
86. कृषि विकास में लघु सिंचाई परियोजनाओं का योगदान (खण्डवा जिले के संदर्भ में) (हिरासिह जामोद)......... 240
87. Application of Fuzzy Clustering into Real World problem (Shilpi Singh)....................................... 244
88. अकबर के राजत्व का आदर्श और समन्वयवादी नीति की पृष्ठभूमि (प्रताप कुमार पाण्डेय, डॉ. रामरतन साहू) .. 248
89. जनजातीय पलायन पर आधुनिक कृषि तकनीकी का प्रभाव (झाबुआ जिले के विशेष सन्दर्भ में एक अध्ययन) ... 251
(पूजा बघेल)
90. उद्यमशील महिलाओं के सशक्तिकरण में सोशल मीडिया की भूमिका:एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (मोनिका आमरे)... 255
91. लोकतंत्र में जनप्रतिनिधियों के प्रति जनता के दृष्टिकोण का अध्ययन (साधना खराड़ी) 258

92. मानव स्वास्थ्य पर जल प्रदूषण के प्रभावों का समीक्षात्मक अध्ययन (डॉ. जयदेव प्रसाद शर्मा) 260
93. Findout The Impact Of Corporative Strengths In Project Management (Tophique Qureshi)......... 263
94. Role of digital technologies in promoting financial literacy 267
(Ajay Kumar Jain, Dr. (Prof.) Kamlesh Bhandari)
95. डॉ. देवराज के उपन्यासों में सिने-टैकनीक (डॉ. रोली श्रीवास्तव) 271
96. Growth of Agricultural Subsidies in India (Dr. D.N.Khadse, Prof. C.B. Tembhurnekar) 272
97. भारत में घटता स्त्री लिंगानुपात व विधिक उपबंधों का विवेचनात्मक अध्ययन (डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल) 276
98. Indo-US Nuclear Deal: A New Beginning in Indo-US Relations 278
(Javeed Ahmed Tali, Dr. Ratan Senha)
99. भारतीय संदर्भ में साइबर अपराध निवारण हेतु सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 के प्रावधानों का विधिक .. 283
अध्ययन (डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल)
100. झालावाड़ जिले में पर्यटन एवं विकास का मूल्यांकन एवं भौगोलिक विश्लेषण (नीलोफर अगवान, डॉ. सौरभ त्यागी) 286
101. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों के व्यापार का एक अध्ययन (राकेश कुमार गुप्ता) 288
102. औद्योगीकरण के कारण पर्यावरण प्रदूषण (देवास नगर के संदर्भ में एक अध्ययन) (डॉ. विक्रम वर्मा, किरण भार्गव)293
103. गांवों से नगरों की ओर पलायन और इसके विविध आयाम कन्नौज जनपद का एक भौगोलिक अध्ययन 295
(प्रो. डी. एस. नेगी, नागेन्द्र सिंह)
104. चन्द्रकान्त देवताले के काव्य में जनजातीय संस्कृति तथा विविध आयाम (प्रो. मुकेश भार्गव) 298
105. समाज के विभिन्न वर्गों पर भ्रष्टाचार के प्रभावों का अध्ययन (मध्य प्रदेश के विशेष संदर्भ में) 300
(रामचन्द्र जमरा, प्रो. सरोज बिल्लौरे)
106. Need Of Research On Media Cross-Ownership Patterns In India (Ms. Sayma Imtiaz).................. 303
107. Main Irritants between India and China (Sartaj Afzal Bhat, Dr. Chetna shrivastava) 308
108. Socio-economic condition of weavers in Jammu and Kashmir and Madhya Pradesh 311
(Sajad Hussain Sheikh, Dr. Rajveer Singh Kirar)
109. छत्तीसगढ़ राज्य की मुख्य अराष्ट्रीयकृत गैर-औषधीय लघुवनोपज इमली के उत्पादन एवं व्यापार का........... 316
एक अध्ययन(राकेश कुमार गुप्ता, डॉ. के.के.शर्मा)
110. नागौर जिले के माध्यमिक स्तर पर विज्ञान विषय के विधार्थियो की शैक्षिक उपलब्धियो और उनके आत्म सम्प्रत्यय पर..... 319
स्व अनुदेशन शिक्षण-अधिगम सामग्री पैकेज के प्रभावों का अध्ययन (डॉ. ऋतु बाला, डॉ. राजकुमारी परिहार, भगवान सिंह)
111. साहित्य और जीवन मूल्य (डॉ. अन्ना राम शर्मा, रीतिका मोंगा).. 322
112. Diabetic food and Health Benefits of Fenugreek Seeds (Kapil Bala Panchal) 324
113. A Study On Customer Satisfaction Towards SBI Life Insurance At Bilaspur (Dr. Niket Shukla) ... 326
114. मध्यप्रदेश में वनों की घटती हुई स्थिति - कारण और निदान (अनीता चौधरी, डॉ. दिनेश श्रीवास्तव) 329
115. पर्यटन के विविध आयाम (ऐतिहासिक, धार्मिक, सामाजिक) (वन्दना पाठक, डॉ. पंकज माहेश्वरी) 331
116. अशासकीय विद्यालय के कक्षा नवम् स्तर के विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि पर अधिगम आव्यूह 334
की प्रभावशीलता का अध्ययन (नलिनी शर्मा)
117. भारत का समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम (राजेश कुमार कुशवाहा, डॉ.प्रभु प्रकाश पांण्डये)........................ 337
118. Disinvestment and Its Effect on Indian Economy (Dr. Suresh Shravan Patil)................................ 339
119. उत्तराखण्ड राज्य निर्माण में उत्तराखण्ड के गांधी इन्द्रमणी बड़ोनी की भूमिका (डॉ. अर्चना जोशी) 342
120. शिक्षा में सुधार की पहली शर्त अपनी राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली : एक दृष्टिकोण (डॉ. धनंजय सिंह).................. 346
121. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति विद्यार्थियों के सामाजिक स्तर, समायोजन एवं 349
शैक्षिक उपलब्धि में सम्बन्ध का अध्ययन (डॉ. भंवर लाल नागदा, रेखा खराड़ी)
122. शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 : पालको की समस्याओं का अध्ययन (वनमाला गडोईया) 352

123. Some Accidental Discoveries in Change a Human Life (Dr. Anjeli Garg) 354
124. बहुजन शासक शाहू छत्रपति का भारतीय समाज के उत्थान में योगदान (अमिता वानखेडे) 357
125. Models Of Information Seeking Behaviour: An Overview 358
(Pradyumna Kumar Panigrahi, Dr. Mega Arora)
126. Problem and Prospects of Digital Libraries in Technical Universities of UP& MP: 362
A Comparative Study (Anand Kumar, Dr. Ashwani Yadav)
127. Information Needs And Seeking Behaviour Of Faculty Members Of Geetanjali University, ... 365
Udaipur (Rajasthan): A Study (Pradyumna Kumar Panigrahi, Dr. Mega Arora)
128. An Analysis of the Relationship between Financial Knowledge and Risk Tolerance..................... 373
(Nikita Jain, Prof. J. K. Jain)
129. Customer Satisfaction: A Positive Impact on Banking Services (Arti Padiyar, Dr. C.M. Mehta) 375
130. खरगोन जिले की जनजातियों में साक्षरता की स्थिति: एक अध्ययन (मनीषा सावले) 378
131. Woman : Drivers of Globalisation (Dr. Shikha Yadav) 380
132. A Study of Consumer Buying Behavior of White Goods in Bhopal 382
(Minhal Haider, Dr. BMS Bhadoriya)
133. महाराजा यशवंतराव होलकर (प्रथम) का राजस्थान के राज्यों से खण्ड़नी वसूली अभियान (संध्या गर्ग)......... 387
134. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के अंतर्गत महिलाओं की स्थिति का अध्ययन................ 391
(इंदौर जिले के संदर्भ में) (डॉ. खुशबू जैन)
135. बजट एवं बजट द्वारा नियंत्रण तंत्र की प्रभावशीलता का विश्लेषण (राष्ट्रीय ताप विद्युत् निगम का एक 396
प्रकरण अध्ययन) (सुनील कुमार विश्वकर्मा, डॉ. विकास सराफ)
136. घाटे की वित्त व्यवस्था का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव (डॉ. स्वाति शर्मा) 401
137. Financial Appraisal And Position Of Ranbaxy Laboratories Limited (Dr. Vinay Kumar) 402
138. Significance of Airborne fungi: Diversity and Molecular Identification 405
(Shadma Siddiqui, CBS Dangi)
139. मध्यप्रदेश के चयनित सार्वजनिक उपक्रम मध्यप्रदेश स्टेट हस्तशिल्प एवं हाथकरघा निगम लिमिटेड 413
में कार्मिकों की कार्य कुशलता में प्रशिक्षण तथा विकास की भूमिका (राखी कुशवाहा)
140. महिला सशक्तिकरण: एक कदम समानता की ओर (प्रो. रेणु जटाना, कन्हैया लाल) 416
141. महाभारत में प्रतिपादित स्वास्थ्यरक्षण विधियाँ (डॉ. विनोद कुमार शर्मा) 422
142. Systematic Paleontological Contributions of Cretaceous Inoceramid Bivalves excavated 425
from from Bagh Beds (Mamta Pathrade, Dr. Sandhya Batwe)
143. The Socio – Economic status of Fishermens in Dejla Dewada Reservoir...................................... 428
Tehasil Bhagwanpura, District Khargone (M.P.) (Dr. Sandhya Batwe, Mamta Pathrade)
144. An Analytical Study on Funds Utilized under Janbhagidari Scheme & Self Finance 431
in Selected Government Colleges of Dhar District (Dr. Mahesh Gupta, Aarti Bansal)
145. Deforestation : Alarming Situation For Mankind (Rachna Mathur) 435
146. भारत में लोक सेवको की भर्ती की प्रक्रिया एवं पारदर्शिता तथा निष्पक्षता (प्रो. रामशंकर, बिनय कुमार गुप्ता).... 438
147. म.प्र. में विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) का रोजगार सृजन के क्षेत्र में योगदान का एक अध्ययन.......................... 443
(योगेन्द्र सिंह ठाकुर, डॉ. ऋषि शर्मा)
148. आदिकवि वाल्मीकि रामायण मे कन्या के प्रति माता पिता और समाज की धारणा (डॉ. पंकज कुमार सिंह)....... 446
149. वर्तमान भारतीय लोकतंत्र में मतदान व्यवहार की चुनौतियाँ एवं संभावनायें (अभिजीत सिंह)....................... 448
150. Greening Of The Supply Chain: The Need Of The Hour (Sheetal Sharma) 454
151. लोकगीतों में संस्कारों की अभिव्यंजना (जयमाला वागद्रे) 457
152. बाल श्रम उन्मूलन का विकल्प : शिक्षा (डॉ. रेखा माली)(PDF).. 459

153. छिन्दवाड़ा जिले में शस्य गहनता प्रतिरूप में परिवर्तन का अध्ययन (दिलीप ढोबाले, डॉ.बी. टेंभरे) 462
154. समाज उत्थान हेतु गौतम बुद्ध का नैतिक चिन्तन (डॉ. के.पी. आजाद) 464
155. म.प्र. के आर्थिक विकास में कृषि का महत्व एवं योजनाएं (निशा विश्वकर्मा, डॉ. एस.सी. हर्णे) 466
156. Social Norms & Antisocial Conduct - Dalit Lives Through The Eyes Of Bama & Valmiki 468
(Tripti Sadana, Dr. Parneet Jaggi)
157. उदयपुर जिले में भूमि उपयोग एवं संभावनाएँ - कृषि हेतु भूमि उपयोग एवं संभावनाएॅ (डॉ. सौरभ त्यागी) 470
158. आदिवासी महिला नेतृत्व की भूमिका (प्रियंका झाला) 474
159. Ethnobotanical Significance of *Malvastrum coromandelianum* (L.)Gracke 475
(Harsha Hinge, D.K. Billore, Sanjay Vyas)
160. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण शिक्षा एवं संपोषित विकास (डॉ. रेनू जैन) 477
161. Synthesis, Structural Characterization and Biological Aspects of O, N- Donar Schiff base 480
ligand and its Fe(III), Co(II), Ni(II) and Zn(II) complexes (Rajiv Kumar Singh, Dr. Anand Sharma)
162. Effects of Tannery Effluents on Sediments of Ganga River Specially Heavy Metals at 484
Jajmau, Kanpur (India) (Yajuvendra Singh, Dr. Anand Sharma)
163. जैन दर्शन में प्रमा ज्ञान एक दार्शनिक विवेचन (श्रीमति प्रीति जयसवाल (सोनी)) 487
164. मालती जोशी की कहानियों में व्याप्त भाषिक सौन्दर्य(अनीता भदौरिया, प्रो. विजयलक्ष्मी राय) 489
165. प्रोजेक्ट उत्कर्ष की वस्तुस्थिति का तुलनात्मक अध्ययन (प्रो. शशि चित्तौड़ा, गायत्री भारद्वाज) 491
166. धार्मिक केन्द्रों का स्थानीय निवासियों की आय पर प्रभाव का आर्थिक अध्ययन (डॉ. पारस जैन, लवेश पोरवाल) 493
167. विकलांग व्यक्ति अधिकार अधिनियम 2016: एक अवलोकन (अमिता जोशी, डॉ. प्रार्थना निगम) 497
168. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना के योगदान का एक अध्ययन (बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड में ... 502
अनुसूचित जाति एवं जनजाति की आर्थिक उत्थान में के विशेष संदर्भ में) (डॉ. के.के.शर्मा)
169. भारतीय संस्कृति एवं परिवर्तन (डॉ. अंजू श्रीवास्तव) 505
170. छत्तीसगढ़ राज्य की खाद्य सुरक्षा योजना के अन्तर्गत लाभार्थी अन्त्योदय परिवार का एक अध्ययन 510
(राकेश कुमार गिरि)
171. उत्तर प्रदेश में मतदान व्यवहार के प्रमुख घटकों का 17वीं विधानसभा चुनाव के परिप्रेक्ष्य............................ 514
में विश्लेषणात्मक अध्ययन (विकाश कुमार दीक्षित)
172. Evaluation of Primary Metabolites from Selected Medicinal Plants 517
(Ankush Johar, Ankita Anand, Neha Puri, Ajit Kumar Swami, Manas Mathur)
173. छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज बहेड़ा के उत्पादन एवं विपणन का आर्थिक अध्ययन (राकेश कुमार गिरि) 521
174. उज्जैन जिले में उद्यमिता विकास की विभिन्न योजनाओं के माध्यम से उद्यमियों के मध्य रोजगार की उभरती 523
संभावनाएँ एक अध्ययन (जुनेद नागौरी)
175. Women Participation in Mass Movement in India at the time of Pre and Post-Independence 526
(J. Ben Anton Rose, Prof. Ram Shankar)
176. चर्म निर्मित सामग्री के विपणन की चुनौतियां- स्थिति एवं संभावना (छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में) 531
(डॉ.के.एल.टाण्डेकर, डॉ. आर.आर. कोचे)
177. Role of Micro, Small, and Medium Enterprises (MSMEs) in Reducing Unemployment 533
in India (Dr. K.L.Tandekar, Dr. E.V. Revaty)
178. रविदास और संतकाव्य (डॉ. त्रिभुवन कुमार साही) 536
179. राजपूताना के एकीकरण में जनमानस की भूमिका (डॉ. सुनीता मीना)... 537
180. पंचायती राज में महिलाएं : चुनौतियां और समाधान (डॉ. हनुमान प्रसाद मीना) 541
181. आँगनवाड़ी कर्मियों पर मानदेय व्यय का लेखकीय अध्ययन (राजसमन्द जिले के संदर्भ में) 549
(प्रो. अनिता शुक्ला, मनीष श्रीमाली)

182. जनजातीय विकास का आर्थिक योगदान : एक अध्ययन (संदीप कुमार सिंह) 552
183. विपिन बिहारी के साहित्य में दलित महिला के अस्मिता की तलाश (कल्पना नि.शेवाळे)............................ 555
184. भारतीय ग्रामीण महिलाओं की प्रस्थिति एवं सामाजिक न्याय (डॉ. ज्योति उपाध्याय, कु0 सुमन मौर्य) 559
185. काला पहाड़ : लोक जीवन की अभिव्यक्ति (संदीप कुमार यादव) 563
186. हिंदी वेब पोर्टल : चुनौतियां और संभावनाएं (प्रो. रफी मोहम्मद शेख) 566
187. Government Schemes And Poverty Alleviation In Urban U.P. 569
(Yatindra Kumar Jha, Dr. Amit Kumar)
188. संस्कृत साहित्य में नाटक : एक अध्ययन (राम प्रसाद वर्मा) 575
189. Effect of Cadmium on morphometric and biochemical plant parameters of 577
Trigonella foenum – graecum L. (Manish Singh, Soumana Datta)
190. निर्धनता उन्मूलन और रोजगार – जवाहर रोजगार योजना (डॉ. सुरेन्द्र कुमार, डॉ. अजय कुमार) 585
191. जनजातीय वर्ग में परम्परिक ज्ञान का भौगोलिक अध्ययन (संदीप कुमार सिंह) 588
192. Impact of Demonetization on Indian Banking Sector (Pravinkumar M. Lonare)............................ 590
193. Impact of Performance Appraisal System on Employees Motivation of an Organization 593
(Aditya Kothari, Dr. Pallavi Pattan)
194. A Study on Corporate Governance Practices in India (Dr. Sanjeev Kumar Bansal) 598
195. A Study on Customer Relationship Management (Dr. Sunanda K. Deshpande)............................. 600
196. Information Technology and Cloud Security (Bharat Batham) 603
197. सहकारी समितियों द्वारा कृषि उत्पादों का विपणन : एक अध्ययन (मंगलेश भालेराव) 607
198. Critical Evaluation of Protection of Human Right Act, 1993 (Firoz Ansari) 610
199. A Study of Career Expectations at Senior Secondary Students of Uttar Pradesh 614
Madarsa Board (Mohammed Iqbal Yusuf Ansari, Dr. Naseem Ahmad)
200. माध्यमिक स्तर के सरकारी एवं निजी विद्यालयों मेें अध्ययनरत विद्यार्थियों के समायोजन स्तर का 617
तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. मोहम्मद नूर आलम अंसारी)
201. भारत-म्यांमार सीमा पर चल रही देश विरोधी गतिविधियों को नियंत्रित करने मे भारत के प्रयास (संजय तिलकवार)... 620
202. Innovations and Sustainable Development in Entrepreneurship (Dr. Suresh Shrawan Patil)....... 623
203. Contribution of Garlic in the Treatment of Hypertension 627
(Nisha Udhwani, Dr. Charanjeet Kaur)
204. Human Resource Management in Military Operations (Saurabh Dubey) 629
205. IFRS as Indian Accounting Standards for Similarity in Financial Reporting in India : 632
Challenges & Benefits (Dr. Sanjeev Kumar Bansal, Raj Kumar Singhal)
206. Urban Banks and Women Empowerment : An Empirical Study with Special Reference 638
to Bhopal (Juhi Sharma, Dr. Saroj Chhajed)
207. भागवतकालीन पारिवारिक जीवन (डॉ. बिहारीलाल मीना) 644
208. Non Government Education Institution Approach Towards Promotion of Sports With 648
Education (Nidhi Verma)
209. Medical Negligence Against Professional Doctors (Ramesh Kumar Shukla) 651
210. Cyber Crimes Against Women (Rajeev Kumar) 654
211. Judicial Activism and its Parameters (RajPal Singh) 657
212. Recent Advances and Challenges in Compton Scattering from Heavier Metals & 660
Directional Compton Profiles of Mo (M.D. Sharma)
213. कोयला श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा का अध्ययन (कोरबा जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. कृष्णकुमार शर्मा) .. 662
214. सामाजिक न्याय की अवधारणा और डॉ0 भीमराव अम्बेडकर : एक अवलोकन (सत्येन्द्र सिंह) 666

215. मध्य गंगा बैराज के (जनपद बिजनौर में) पारिस्थितिकी व पर्यावरणीय प्रभाव (कु. दीपा, डॉ. भूदेव सिंह)........ 670
216. A Study on Current Scenario of Entrepreneurship in India (Dr. Rekha Lakhotia)........................... 672
217. 21वीं सदी की हिन्दी पत्रकारिता में भारतेंदु की प्रासंगिकता : एक मूल्यांकन (संकर्षण परिपूर्णन).................. 675
218. Indian Economy After Implementation Of GST-A Study (Dr. Rekha Lakhotia) 678
219. Relation Between Patient and Doctor (Ramesh Kumar Shukla) 681
220. Right to constitutional Remedies and Judicial Activism (RajPal Singh) 684
221. प्रदूषण समस्या-ग्वालियर जिले के संद्रर्भ में (डॉ. कौशलेन्द्र सिंह) 687
222. रासायनिक शस्त्रास्त्रों के प्रभाव (डॉ. गिरीश शर्मा, डॉ. वीरेन्द्र कुमार शर्मा) 689
223. A Hazard To Civilization: Cyber Terrorism (Surendra Singh, Prof. D.C. Upadhyay) 692
224. Cyber Terrorism: A Critical Review (Surendra Singh, Prof. D.C. Upadhyay)................................... 695
225. भारत में महिला सशक्तिकरण-राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक सहभागिता का एक अध्ययन 699
(डॉ. अशोक कुमार त्यागी)
226. Medical Negligence in Indian Penal Code 704
(Ramesh Kumar Shukla, Prof. (Dr.) Narendra Kumar Thapak)
227. Horizons of Judicial Activism (Rajpal Singh, Dr. Anushka Nayak)... 707
228. Higher Education and Administration (Dr. Ashok Kumar Tyagi) 710
229. Personality Traits of B.Ed. Students : A Case Study (Ashish Kumar) 714
230. Women Empowerment – Human Rights (Nidhi Bala) 716
231. Cow Milk: Miraculous Complete Meal (Dr. Sumitra Meena) 719
232. नेहरू एवं भारी उद्योग (डॉ. जोगेन्द्र सिंह)... 721
233. मलिन बस्तियों में स्वच्छता उन्नयन के सामाजिक-आर्थिक पक्ष (भगवान दास पाल)................................ 724
234. सैलानी टापू : मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम के आर्थिक आय में सम्भावनाओं का एक नया आयाम............. 727
(टीना यादव, डॉ. कृष्णकांत शर्मा)
235. उज्जैन तहसील में ग्रामीण बस्तियों की प्रमुख समस्याओं का भौगोलिक अध्ययन (रविराज सिंह गोरास्या)...... 729
236. माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि में परंपरागत शिक्षण के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन........ 731
(डॉ. विजय पाराशर)
237. New Liberalism Policy of India - A Historical Study (Sachin Mujumdar) 733
238. ऋतुकालीन लोकगीत कजरी की 'अखाड़ा परम्परा' (पूर्वी उत्तर प्रदेश की कजरी के सन्दर्भ में) 736
(लीना प्रकाश शाक्या, डॉ. नीतू गुप्ता)
239. Indian Scenario and Industrial Relation (Sachin Mujumdar) 739
240. दिव्यांग अधिकार अधिनियम 2016 का विश्लेषणात्मक अध्ययन (गायत्री यादव, डॉ. कुसुम दीक्षित)............. 743
241. भारत में दिव्यांगों हेतू संवैधनिक प्रावधान (गायत्री यादव, डॉ. कुसुम दीक्षित) 745
242. मेवाड़ राज्य के सरदारगढ ठिकाने (डोडिया राजवंश) का ऐतिहासिक परिचयात्मक अध्ययन...................... 747
(डॉ. हेमेन्द्र सिंह सारंगदेवोत)
243. भारतीय समाज में अंर्तजातीय विवाह अवधारणा - औचित्य एवं सामाजिक परिदृश्य................................. 750
(डॉ.के.एल. टाण्डेकर, डॉ. राजेन्द्र कुमार शर्मा, श्रीमती तूलिका चक्रवर्ती)
244. उज्जैन जिले के आर्थिक विकास में महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा संचालित योजनाओं का अध्ययन 753
(वर्ष 2010-11 से 2014-15) (डॉ. हेमलता ललावत)
245. भारतीय जीवन बीमा निगम एवं रिलायन्स इन्श्योरेन्स कम्पनी द्वारा संचालित पेंशन योजना का वर्ष 755
2010-11 से वर्ष 2014-15 तक का तुलनात्मक अध्ययन : उज्जैन जिले के विशेष संदर्भ में (डॉ. राजेन्द्र ललावत)

246. सीहोर जिले की चयनित पंचायतों का बजट नियंत्रण एवं प्रबन्ध की प्रक्रियाओं का अध्ययन 758
(देवेन्द्र सिंह परमार, डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा)
247. Swachh Bharat Abhiyan (2016-2017): Indore Model and Teachings for Other Cities 762
(Priyanka Chourasiya, Dr. Manjari Gupta)
248. A Study of Customer Decision Making Process for Interior Design (Pawan Tiwari) 765
249. Social Entrepreneurship: A Growing Trend in Indian Business (Dr. Sanjay Patni) 768
250. Auditors Report –A Tool of Management (Dr. Nilesh Gangwal) 771
251. बी.एड विद्यार्थियों द्वारा शिक्षण अभ्यास प्रक्रिया में सूक्ष्म शिक्षण कौशलो के प्रभाव का अध्ययन 773
(डॉ. घनश्याम शर्मा, जगदीश चन्द्र शर्मा)
252. हृदयेश की कहानीयों में स्त्री विमर्श (उर्मिला शर्मा).. 776
253. Financial Specialists Perception Towards Investment with Reference to Other Traditional 778
and Modern Tools (Kuldeep Agnihotri)
254. Role of E-Commerce in Insurance Industry (Dr. Rupesh Mittal, Dr. Ajay Soni) 781
255. Impact of Organizational Stress on Quality of Life in Indian Corporate World (Dr. Sanjay Bhavsar) ...784
256. Education: Its Height and Depth (Dr. Pratiksha Vyas) 787
257. ग्रामीण महिलाओं के परिवारों के जीवन स्तर को प्रभावित करने वाले कारको का अध्ययन 789
(बलिया जिले के सोबईबान ग्राम के विशेष संदर्भ में) (डॉ. तृप्ति तिवारी)
258. असगर वजाहत के उपन्यासों में स्त्री जीवन (राम रक्षा सिंह) 792
259. पूर्व मध्ययुगीन काल तथा मालवा की वर्ण एवं जातिगत व्यवस्थायें (गुलाबराव डोंगरे, डॉ. श्रीमती विजेता चौबे)..... 794
260. Diversity Of Molluscan Fauna From Ransai Dam, Uran, Navi Mumbai, Dist. Raigad, ... 796
Maharashtra (Aamod N. Thakkar)
261. Effectiveness of Interactive Digital Classes of Science Teaching for the Students of 798
Upper Primary School (Prof. Praveen Doshi, Ms. Jyotsna Jain)
262. Emotional Intelligence among Secondary School Teachers (Dr. Anil Kumar, Pooja)..................... 801
263. निर्मितवाद पर आधारित प्रशिक्षण का छात्राध्यापकों की शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रभाव 804
(प्रो. पी.सी. दोसी, देवी लाल जाट)
264. Evaluation of Therapeutic Potency of *Cassia tora* Linn. In Hot Semi Arid Region of Jaipur 810
(Sangeeta jangir, Ajit kumar Swami)
265. A Study Of Mutual Funds As Long Term Investment Schemes With Special Reference 815
To Retail Investors (Saloni Chauhan, Dr. Suresh Kataria, Dr. Rakesh Dhand)
266. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त अध्यापकों के कार्यमूल्य (डॉ. अमी राठौड़, किरण आमेटा) 820
267. Role of Brand Image in influencing Customers' buying behavior for Patanjali Products 824
in Personal Care Category (Dr. Sonal Gupta)
268. बजट तैयार करने में चित्तौड़गढ़ क्षेत्र के जन प्रतिनिधियों की भूमिका (बीना राणावत)............................... 827
269. भारत में जनजाति आवासीय विद्यालयों एवं उनकी स्थिति, कार्यप्रणाली और प्रदर्शन 830
(भरत चौबीसा, डॉ. देवेन्द्रा आमेटा)
270. Phenological Observations in *Sterculia urens* and *Helicteres isora* in Aravali Hills of.................. 832
Jaipur District. (R.P. Ahrodia, M. Kumar)
271. Floristic composition ofSacred groves in Jhunjhunu and Sikar, Rajasthan 836
(Sunita Kumari, Dr. Parul Gupta)
272. मध्यान्ह भोजन योजना की भूमिका का माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं की तुलना के आधार पर 841
मूल्यांकन करना (डॉ. गंगाराम वास्केल)
273. Impact of Displacement Peoples of the Indira Sagar Dam Harsud (Vikram Singh Darbar) 846

274. अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989: सामाजिक न्याय या प्रतिशोध का हथियार (कपिल देव अहिरवार) 849
275. An Overview on Cleanth Brooks' "The Language of Paradox" (Dr. Surendra Kumar Sao) 852
276. Women Empowerment: Working Woman's Issue and Challenges (Anjana Jatav, Rajbala Vashishtha) 855
277. Antidiabetic activity of Zinc doped Nanodiamonds in Streptozotocin induced diabetic rats *in vivo* and *in vitro* (Ankita Anand, Ajit Kumar Swami, Neha Kumari, Manas Mathur) 858
278. Applications of Fuzzy Set Theory and Fuzzy Logic: An Overview (N. T. Katre) 863
279. उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों की आकांक्षा का अध्ययन (संगीता उपाध्याय, डॉ. हनुमान सहाय शर्मा) 868
280. Fashion Markets and Consumer Impulse Purchase Behavior: An Empirical Study (Dr. Abhishek Raizada) 872
281. Solid Waste Management: Sources, Composition and Recycling (Dr. Pushpanjali Arya) 875
282. A Study of Payment Banks' Contributions to Financial Inclusion (Dr. Mukesh Chauhan) 878
283. महिला कर्मियों के संवैधानिक तथा कानूनी अधिकार (डॉ. किरण चौहान) 881
284. ममलूक कालीन स्थापत्य कला का अध्ययन (डॉ. आनन्द गोस्वामी) 884
285. शिक्षकों के आकांक्षा स्तर प्रभावशीलता, सुविधास्तर, स्वधारणा एवं कार्यात्मक मूल्यों का समीक्षात्मक अध्ययन (पूजा वर्मा, डॉ. आदित्य चतुर्वेदी) 886
286. A Study of Working Capital Management in Small Scale Industries in J & K (Dr. L. N. Sharma, Mohd Rafi Malla, Imtiyaz Rashid Lone) 891
287. मध्यप्रदेश के औद्योगिक विकास का विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. सी. एम. मेहता, मुकेश बाथम) 897
288. How Satisfied are employees in Public sector banks: A case study of Canara Bank located in Kashmir (Youns Ahmad Shah, Mohd Sultan Bhat, Prof. (Dr.) L.N.Sharma) 900
289. वाङ्चू: सृजन सर्वस्व की कथा (डॉ. संजय सक्सेना) 905
290. जीवन और संगीत (डॉ. इच्छा नायर) 907
291. Overweight and Obesity Among Adolescent Girls of Allahabad City Under Changing Lifestyle (Parvati Singh) 910
292. Relevance of Unorganized Sector Employment in India: The Current Needs (Dr. Arvind Prakash) 913
293. खंडवा जिले के प्रमुख पर्यटन स्थल (डॉ. अजय वाघे) 916
294. Drainage System of Ramganga River System (In Respect of Moradabad District) (Ankit Kumar) 918
295. Assessment of Physico-Chemical Properties of Soil from Panje- Funde Wetland, Uran, Navi Mumbai, West Coast of India (Aamod N. Thakkar) 921
296. A Study of People's Perception Regarding Investment in Gold (Dr. Girish Shah) 924
297. Exploring Components of Service Quality Dimensions of Commercial Banks Operating in Ujjain Region (Jitendra Parmar, Dr. Kamran Sultan) 928
298. मध्यकाल में सघन वनों एवं वनोपज की प्रचुरता का अध्ययन (डॉ. भावना तिवारी) 932
299. छत्तीसगढ़ राज्य के स्थानीय निकायों की वित्तीय स्थिति का विश्लेषण (दुर्ग नगर निगम के विशेष सन्दर्भ में) (कु. अभिलाषा रजक, डॉ. डी. पी. जायसवाल) 935
300. गीता में भक्ति का स्वरूप (डॉ. जयराम त्रिपाठी) 937
301. कला के संदर्भ में विभिन्न दार्शनिकों की अभिव्यक्ति (मीना बरतिया) 940
302. Comparative Study of Values in Indian Ideology, Science and Human Psychology (Dr. Mani Bansal, Dr. Manuj Kumar Agarwal) 943
303. Quantification of Primary Metabolites from Selected Medicinal Plants (Mukesh Agarwal, R.D. Agarwal) 948

304. श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिपादित यज्ञविज्ञान निरूपण (डॉ. उषा नागर) 955
305. आधुनिकता और सामाजिक विचलन (डॉ. जयराम बैरवा) 959
306. भारतीय समाज में अंधविश्वास और चमत्कारों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (डॉ. हरिचरण मीना)........ 962
307. अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो के ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की शिक्षण प्रभावशीलता का तुलनात्मक ग्रामीण अध्ययन (डॉ. सतीश पाल सिंह) 966

Regional Editor Board - International & National

1. Dr. Manisha Thakur - Fulton College, Arizona State University, America.
2. Mr. Ashok Kumar - Employbility Operations Manager, Action Training Centre Ltd. London, U.K.
3. Ass. Prof. Beciu Silviu - Vice Dean (Management) Agriculture & Rural Development, UASVM, Bucharest, Romania.
4. Mr. Khgendra Prasad Subedi - Senior Psychologist, Public Service Commission, Central Office, Anamnagar, Kathmandu, Nepal.
5. Prof. Dr. G.C. Khimesara - Former Principal, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) India
6. Prof. Dr. Pramod Kr. Raghav - Research Guide, Jyoti Vidhyapeeth Women University, Jaipur (Raj.) India
7. Prof. Dr. N.S. Rao - Director, Janardhanrai Nagar Raj. Vidhyapeeth University, Udiapur (Raj.) India
8. Prof. Dr. Anoop Vyas - Former Dean, Commerce, Devi Ahilya University, Indore (India) India
9. Prof. Dr. P.P. Pandey - HOD, Commerce(Dean), Avadesh Pratapsingh University, Rewa (M.P.) India
10. Prof. Dr. Sanjay Bhayani - HOD, Business Management Deptt., Saurashtra University, Rajkot (Guj.) India
11. Prof. Dr. Pratap Rao Kadam - HOD, Commerce, Govt. Girls PG College, Khandwa (M.P.) India
12. Prof. Dr. B.S. Jhare - Professor, Commerce Deptt., Shri Shivaji College, Akola (Mh.) India
13. Prof. Dr. Sanjay Khare - Prof., Sociology, Govt. Auto. Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
14. Prof. Dr. R.P. Upadhayay - Exam Controller, Govt. Kamlaraje Girls Auto. PG College, Gwalior (M.P.) India
15. Prof. Dr. Pradeep Kr. Sharma - Professor, Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) India
16. Prof. Akhilesh Jadhav - Prof., Physics, Govt. J. Yoganandan Chattisgarh College, Raipur (C.G.) India
17. Prof. Dr. Kamal Jain - Prof., Commerce, Govt. PG College, Khargone (M.P.) India
18. Prof. Dr. D.L. Khadse - Prof., Commerce, Dhanvate National College, Nagpur (Maharastra) India
19. Prof. Dr.Vandna Jain - Prof., Hindi, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) India
20. Prof. Dr. Hardayal Ahirwar - Prof.,Economics, Govt. PG College, Shahdol (M.P.) India
21. Prof. Dr. Sharda Trivedi - Retd. Professor, Home Science, Indore (M.P.) India
22. Prof. Dr. Usha Shrivastav - HOD, Hindi Deptt., Acharya Institute of Graduate Study, Soldevanali, Bengaluru (Karnataka) India
23. Prof. Dr. G. P. Dawre - Professor, Commerce, Govt. College, Badwah (M.P.) India
24. Prof. Dr. H.K. Chouarsiya - Prof., Botany, T.N.V. College, Bhagalpur (Bihar) India
25. Prof. Dr. Vivek Patel - Prof., Commerce, Govt. College, Kotma, Distt., Anooppur (M.P.) India
26. Prof. Dr. Dinesh Kr. Chaudhary - Prof., Commerce, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) India
27. Prof. Dr. P.K. Mishra - Prof., Zoological, Govt. PG College, Betul (M.P.) India
28. Prof. Dr. Jitendra K. Sharma - Prof., Commerce, Maharishi Dayanand Uni. Centre, Palwal (Haryana) India
29. Prof. Dr. R. K. Gautam - Prof., Govt. Manjkuwar Bai Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.) India
30. Prof. Dr. Gayatri Vajpai - Professor, Hindi, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.) India
31. Prof. Dr. Avinash Shendare - HOD, Pragati Arts & Commerce College, Dombivali, Mumbai (Mh.) India
32. Prof. Dr. J.C. Mehta - Fr. HOD, Research Centre, Commerce, Devi Ahilya Uni., Indore (M.P.) India
33. Prof. Dr. B.S. Makkad - HOD, Research Centre Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) India
34. Prof. Dr. P.P. Mishra - HOD, Maths, Chattrasal Govt. PG College, Panna (M.P.) India
35. Prof. Dr. Sunil Kumar Sikarwar - Professor, Chemistry, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
36. Prof. Dr. K.L. Sahu - Professor, History, Govt. PG College, Narsinghpur (M.P.) India
37. Prof. Dr. Malini Johnson - Professor, Botany, Govt. PG College, Mahu (M.P.) India
38. Prof. Dr. Vishal Purohit - M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Miadan, Indore (M.P.) India

Editorial Advisory Board, INDIA

1.	Prof. Dr. Narendra Shrivastav	-	Scientist , ISRO, Bengaluru (Karnataka) India
2.	Prof. Dr. Aditya Lunawat	-	Director, Swami Vivekanand Career Guidance deptt. M.P. Higher Education, M.P. Govt., Bhopal (M.P.) India
3.	Prof. Dr. Sanjay Jain	-	Former Controller, Madhya Pradesh Professional Examination Board Bhopal (M.P.) India
4.	Prof. Dr S.K. Joshi	-	Former Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) India
5.	Prof. Dr. J.P.N. Pandey	-	Fr. Principal, Govt. Auto.Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
6.	Prof. Dr. Sumitra Waskel	-	Principal, Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.) India
7.	Prof. Dr. P.R. Chandelkar	-	Principal, Govt. Girls PG College, Chhindwara (M.P.) India
8.	Prof. Dr. Mangal Mishra	-	Principal, Shri Cloth Market, Girls Commerce College, Indore (M.P.) India
9.	Prof. Dr. R.K. Bhatt	-	Former Principal, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) India
10.	Prof. Dr. Ashok Verma	-	Former HOD, Commerce (Dean) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
11.	Prof. Dr. Rakesh Dhand	-	HOD, Student Welfare Deptt., Vikram University, Ujjain (M.P.) India
12.	Prof. Dr. Anil Shivani	-	HOD, Commerce /Management Deptt. Shri Atal Bihari Vajpai Hindi University, Bhopal (M.P.) India
13.	Prof. Dr. PadamSingh Patel	-	HOD, Commerce Deptt., Govt. College, Mahidpur (M.P.) India
14.	Prof. Dr. Manju Dubey	-	HOD (Dean), Home Science Deptt. Jiwaji University, Gwalior (M.P.) India
15.	Prof. Dr. A.K. Choudhary	-	Professor, Psychology, Govt. Meera Girls College, Udiapur (Raj.) India
16.	Prof. Dr. T. M. Khan	-	Principal, Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) India
17.	Prof. Dr. Pradeep Singh Rao	-	Principal, Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.) India
18.	Prof. Dr. K.K. Shrivastava	-	Professor, Eco., Vijaya Raje Govt. Girls PG College, Gwalior (M.P.) India
19.	Prof. Dr. Kanta Alawa	-	Professor, Pol. Sci., S.B.N.Govt. PG College, Badwani (M.P.) India
20.	Prof. Dr. S.K. Jain	-	Professor, Commerce, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
21.	Prof. Dr. Kishan Yadav	-	Asso. Professor, Research Centre Bundelkhand College, Jhasi (U.P.) India
22.	Prof. Dr. B.R. Nalwaya	-	Chairman,Commerce Deptt.,Vikram University, Ujjain (M.P.) India
23.	Prof. Dr. Purshottam Gautam	-	Dean, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
24.	Prof. Dr. Natwarlal Gupta	-	HOD, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
25.	Prof. Dr. S.C. Mehta	-	Professor/HOD, Govt. Bhagat Singh PG College, Jaora (M.P.) India
26.	Prof. Dr. Tapan Chore	-	HOD,Economics, Vikram University, Ujjain (M.P.) India

****

Referee Board

Maths - (1) Prof. Dr. V.K. Gupta, Director Vedic Maths - Research Centre, Ujjain (M.P.)
Physics - (1) Prof. Dr. R.C. Dixit, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
(2) Prof. Dr. Neeraj Dubey, Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
Computer Science - (1) Prof. Dr. Umesh Kumar Singh, HOD, Computer Study Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
Chemistry - (1) Prof. Dr. Manmeet Kaur Makkad, Govt. Kalidas Girls College,Ujjain (M.P.)
Botany - (1) Prof. Dr. Suchita Jain, Govt. Girls PG College, Kota (Raj.)
(2) Prof. Dr. Akhilesh Aayachi, Govt. Adarsh Science College, Jabalpur (M.P.)
Life Science - (1) Prof. Dr. Manjulata Sharma, M.S.J. Govt. College, Bharatpur (Raj.)
- (2) Prof. Dr. Amrita Khatri, Mata Jijabai Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
Statitics - (1) Prof. Dr. Ramesh Pandya, Govt. Arts - Commerce College, Ratlam (M.P.)
Military Science - (1) Prof. Dr. Kailash Tyagi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
Biology - (1) Dr. Kanchan Dhingara, Govt. M.H. Home Science College, Jabalpur (M.P.)
Geology - (1) Prof. Dr. R.S. Raghuvanshi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Suyesh Kumar, Govt. Adarsh College, Gwalior (M.P.)
Medical Science - (1) Dr.H.G. Varudhkar, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.)
Microbiology Sci. - (1) Anurag D. Zaveri, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat)

***** Commerce *****

Commerece - (1) Prof. Dr. P.K. Jain, Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Shailendra Bharal, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
(3) Prof. Dr. Laxman Parwal, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)

***** Management *****

Management - (1) Prof. Dr. Rameshwar Soni, HOD, Research Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Anand Tiwari, Govt. Autonomus PG Girls Excellence College, Sagar (M.P.)
Human Resources - (1) Prof. Dr. Harwinder Soni, Pacific Business School, Udaipur (Raj.)
Business Administration - (1) Prof. Dr. Kapildev Sharma, Govt. Girls PG College, Kota (Raj.)

***** Law *****

Law - (1) Prof. Dr. S.N. Sharma, Principal, Govt. Madhav Law College, Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Narendra Kumar Jain, Principal, Shri Jawaharlal Nehru PG Law College, Mandsaur (M.P.)

***** Arts *****

Economics - (1) Prof. Dr. P.C. Ranka, Sri Sitaram Jaju Govt. Girls PG College, Neemuch (M.P.)
(2) Prof. Dr. J.P. Mishra, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.)
(3) Prof. Dr. Anjana Jain, M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Maidan, Indore (M.P.)
(4) Prof. Rakesh Kumar Gupta, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)
Political Science - (1) Prof. Dr. Ravindra Sohoni, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.)
(2) Prof. Dr. Anil Jain, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
(3) Prof. Dr. Sulekha Mishra, Mankuwar Bai Govt. Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.)
Philosophy - (1) Prof. Dr. Hemant Namdev, Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
Sociology - (1) Prof. Dr. Uma Lavania, Govt. Girls College, Bina (M.P.)
(2) Prof. Dr. H.L. Phulvare, Govt. PG College, Dhar (M.P.)
(3) Prof. Dr. Indira Burman, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)

Hindi - (1) Prof. Dr. Vandana Agnihotri, Chairperson, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
(2) Prof. Dr. Kala Joshi , ABV Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
(3) Prof. Dr. Chanda Talera Jain, M.J.B. Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.)
(4) Prof. Dr. Jaya Priyadarshini Shukla, Vansthali Vidyapeeth (Raj.)
(5) Prof. Dr. Amit Shukla, Govt. Thakur Ranmatsingh College, Rewa (M.P.)

English - (1) Prof. Dr. Ajay Bhargava, Govt. College, Badnagar (M.P.)
(2) Prof. Dr. Manjari Agnihotri, Govt. Girls College, Sehore (M.P.)

Sanskrit - (1) Prof. Dr. Bhawana Srivastava, Govt. Autonomus Maharani Laxmibai Girls PG College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Balkrishan Prajapati, Govt. PG College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)

History - (1) Prof. Dr. Naveen Gidiyan, Govt. Autonomus Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.)

Geography - (1) Prof. Dr. Rajendra Srivastava, Govt. College, Pipliya Mandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
(2) Prof. Kajol Moitra, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.)

Psychology - (1) Prof. Dr. Kamna Verma, Principal, Govt. Rajmata Sindhiya Girls PG College, Chhindwara (M.P.)
(2) Prof. Dr. Saroj Kothari, Govt. Maharani Laxmibai Girls PG College, Indore (M.P.)

Drawing - (1) Prof. Dr. Alpana Upadhyay, Govt. Madhav Arts-Commerce-Law College. Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Rekha Srivastava, Maharani Laxmibai Govt. Girls PG College, Bhopal (M.P.)
(3) Prof. Dr. Yatindera Mahobe, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.)

Music/Dance - (1) Prof. Dr. Bhawana Grover (Kathak),Swami Vivekanand Subharti University, Meerut (U.P.)
(2) Prof. Dr. Sripad Aronkar, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.)

***** Home Science *****

Diet/Nutrition Science - (1) Prof.Dr. Pragati Desai, Govt. Maharani Laxmibai Girls PG College, Indore (M.P.)
(2) Prof. Madhu Goyal, Swami Keshavanand Home Science College, Bikaner (Raj.)
(3) Prof. Dr. Sandhya Verma, Govt. Arts & Commerce College, Raipur (Chhattisgarh)

Human Development - (1) Prof. Dr. Meenakshi Mathur, HOD, Jainarayan Vyas University, Jodhpur (Raj.)
(2) Prof. Dr. Abha Tiwari, HOD, Research Centre, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.)

Family Resource Management - (1) Prof. Dr. Manju Sharma, Mata Jijabai Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
(2) Prof. Dr. Namrata Arora, Vansthali Vidhyapeeth (Raj.)

***** Education *****

Education - (1) Prof. Dr. Manorama Mathur, Mahindra College of Education, Bangluru (Karnataka)
(2) Prof. Dr. N.M.G. Mathur, Principal/Dean, Pacific EducationCollege, Udaipur (Raj.)
(3) Prof. Dr. Neena Aneja, Principal, A.S. College Of Education, Khanna (Punjab)
(4) Prof. Dr. Satish Gill, Shiv College of Education,Tigaon, Faridabad (Haryana)
(5) Prof. Dr. Mahesh Kumar Muchhal, Digambar Jain (P.G.) College, Baraut (U.P.)

***** Architecture *****

Architecture - (1) Prof. Kiran P. Shindey, Principal,School of Architecture,IPS Academy, Indore (M.P.)

***** Physical Education *****

Physical Education - (1) Prof. Dr. Joginder Singh, Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj.)

***** Library Science *****

Library Science - (1) Dr. Anil Sirothia, Govt. Maharaja College, Chhattarpur (M.P.)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

झाबुआ राज्य की तुलनात्मक स्थिति विभिन्न राजाओं के काल में (16-19 वीं सदी तक)

निर्मला बिलवाल* डॉ. रविद्र सिंह **

प्रस्तावना - झाबुआ राज्य की स्थापना से लेकर स्वतंत्रता तक झाबुआ राजगद्दी में विभिन्न उतार-चढ़ाव देखे गये हैं। विभिन्न बड़े राज्यों के साथ संबंधों एवं शक्ति संतुलन में राज्य की शक्ति विभिन्न राजाओं के समय अलग-अलग रही है। करणसिंह (1607-10) द्धारा अपने पिता के हत्यारा होने के कारण मुगल सम्राट जहाँगीर के क्रोध का भाजक बनना पड़ा। अत: करण सिंह बदनावर से भागकर रम्भापुर के करणगढ़ किले में शरण ली। किन्तु सम्राट के डर से वह करणगढ़ के किले से भी भाग गया। जिससे उसके क्षेत्र में अराजकता और अविश्वास का माहौल उत्पन्न हो गया। जिसमें उसके राज्य को भूमि अन्य के हाथों चली गई।[1] माहसिंह (1610-77) अपने पिता की मृत्यु के बाद करण सिंह का ज्येष्ठ पुत्र 8 वर्ष की आयु में जो कि अभी तक अवयस्क था। उत्तराधिकारी बनाया गया। इस समय उसी प्रकार की अराजकता और अविश्वास का माहौल चल रहा था। जो उसके पिता करणसिंह के समय था।

इस अराजकता के कारण सम्राट ने केशवदास द्धारा जीते गए व उसे दिए गए सूबे तथा पड़ोसी प्रमुखों और उपद्रवियों से छीने गए सम्पूर्ण क्षेत्र अपने अधीन जब्त कर लिए। दिल्ली में रहकर माहसिंह की सेवाओं, उसकी बहादुरी और साहस से प्रभावित होकर सम्राट ने उसे केशवदास की सम्पत्ति और उसका उत्तराधिकारी स्वीकार कर लिया। उसे उसकी सम्पूर्ण जागीर, जायदाद व राज्य 1634 में सम्राट ने उसे लौटा दिया।[1] खुशाल सिंह (1677-1723) - माहसिंह के दो पुत्र थे। खुशालसिंह और रघुनाथ सिंह। खुशालसिंह गद्दी का उत्तराधिकारी हुआ। उसने 46 वर्ष तक राज किया। उसके दो पुत्र अनूपसिंह और इन्दरसिंह हुए। खुशालसिंह ने अपने परिवार के युवा पीढ़ी को शासन में भागीदारी हेतु विभिन्न जिले व शासन इकाईयाँ प्रदान की।

भगोर उसके सबसे छोटे पुत्र इन्दरसिंह को सारगी बिड़वाल के ठाकुर इन्दरसिंह को 1685 में प्रदान की। जामली को किशोरसिंह को 1695 में तथा करड़ावद 1722 में 12 गाँवों के साथ सुजातसिंह को सौंपी गई एवं अगराल ठाकुर उदयसिंह को 1698 में प्रदान कर दी। खुशालसिंह एक कमजोर शासक सिद्ध हुआ, सम्पूर्ण राज्य पर अपनी मजबूत पकड़ बनाए रखने में असमर्थ रहा। वह दुर्व्यसनी और लम्पट राजकुमार था। इस प्रकार की जानकारी हमें प्राप्त होती है। भूमि का बटवारा कर देने से केन्द्रीय सत्ता कमजोर और निर्बल हो गई। विघटन कारी शक्तियों में और प्रवृतियों में अधिक तिव्रता आ गई।[1] अनूपसिंह (1723-27) - खुशालसिंह को उसके पुत्र अनूपसिंह (जो कि 1698 में पैदा हुआ था) के द्धारा पराजित कर दिया गया। 1725 में बिठोजी राव बोलिया (जो कि होल्कर के सूबेदार थे) ने थांदला जिले में प्रवेश किया और थांदला से 10 मील दूर बोरड़ी में पड़ाव डाला। सैलाना के राजा ने विठोजी राव बौलिया का साथ दिया। उसने अनूपसिंह को पिछले चार वर्षों की बकाया राशि जो कि 35000 रू. प्रतिवर्ष के हिसाब से 140000 की राशि के भुगतान करने के आदेश दिए। इस पर अनूपसिंह ने आदेश का पालन करने से इंकार कर दिया। परंतु अधिक दबाव के कारण अनूपसिंह एक लाख रूपये अदायगी करने को मजबूर हो गया। यह कार्य शियोगढ़ के महन्त मुकुन्दगीर की गध्यस्थता से पूर्ण संतुष्टि से स्वीकार कर लिया गया। शिवसिंह (1727-58) - अनूपसिंह की रानी बानाबाई की जो कि अनूप सिंह की मृत्यु के पश्चात् भी शिवगढ़ में रहती थी उसे (पिता की मृत्यु उपरान्त) एक पुत्र 1727 में उत्पन्न हुआ। उसकी नाबालिग अवस्था के दौरान राज्य का प्रबंध उसकी माता द्धारा किया गया था।

उसने अपने आप को मराठों का मुकाबला करने में असमर्थता पाते हुए पूना के पेशवा के सामने उसका मामला रखने के लिए शिवगढ़ छोड़ दिया और अपने पुत्र को बोरी के ठाकुर रतनसिंह और महंत मुकुन्दगीर की देखरेख में उसके पुत्र को सौंपते हुए अंतिम रूप से यह व्यवस्था की गई कि अवयस्क उत्तराधिकारी शिवसिंह की उम्र को देखते हुए राज्य के प्रबंधन व्यवस्था होल्कर को सौंप दी गई। बहादुर सिंह (1758-70) शिवसिंह की मृत्यु बिना संतान के ही सन् 1758 में हो गई। उसके बाद भगोर के ठाकुर इन्दरसिंह के पुत्र बहादुरसिंह राज गद्दी पर बैठा। 1762 में बहादुर सिंह ने होल्कर के वीसाजी पन्त कामावसदार और देओजी तिलोकचंद्र कोठारी के माध्यम से पेटलावद और थांदला जिलों के संबंध में एक इकरारनामा किया था। भीमसिंह (1770-1829)। बहादुर सिंह का शत्रु भीम सिंह 1770 में अपने पिता के बाद उत्तराधिकारी हुआ। होल्कर के अधिकारियों द्धारा क्रूर कार्यवाहियों, मांगो और परेशान करने के कारण भीमसिंह हैरान रह गया।

अंतिम रूप से पेटलावद लूट लिया गया और थांदला में होल्कर के निवास स्थान को जला दिया गया।[2] इन्दौर राज्य के पुराने अभिलेखों में भीमसिंह का आचरण संदर्भित करते हुए होल्कर के काम सरदार द्धारा अहिल्याबाई होल्कर को 1200 एडी 1792 में लिखे गए पत्रों में इस बात का उल्लेख आता है। भीमसिंह द्धारा उकसाये गये झाबुआ के भीलों और सरदारपुर के उसके अक्षायित भील सरदारसिंह और अन्य डाकुओं द्धारा की गई लूटपाट और विध्वंसों की शिकायत की गई है। इससे प्रतीत होता है कि भीमसिंह के काल में झाबुआ राज्य का अधिकांश भाग भीलों के अधिकार क्षेत्र में आ गया था।

प्रतापसिंह (1829-32)/रतनसिंह (1832-40) 1829 में राजा भीमसिंह की मृत्यु होने पर राजा प्रतापसिंह ने 1829-32 तक तीन वर्ष

*शोधार्थी (इतिहास) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

शासन किया। उसने अपने छोटे भाई सलीम सिंह के पुत्र रतनसिंह को गोद लिया। जिससे की एक नाबालिग के रूप में उत्तराधिकार प्राप्त हुआ। उसकी बालिग अवस्था होने तक राज्य का प्रबंध केप्टन बोरथविक के नियंत्रण में एक धनी वृद्ध महिला रानी रानावतजी द्वारा किया गया। केप्टन बेथिविक ने 6 वर्षो तक (1836–1842) की अवधि तक के लिए 35000 रूपए के वार्षिक भुगतान के लिए इकरार नामा में थांदला, पेटलावद जिलों के पट्टों पर समझौता कर लिया। इसी दौरान सन् 1840 में दशहरा समारोह के दूसरे दिन जब राजा रतनसिंह बहादुर सागर तालाब के किनारे के साथ नीलकंठ जुलुस में हाथी पर सवारी कर रहा था। तभी बिजली का जोरदार झटका लगने से राजा रतनसिंह की मृत्यु हो गई।[3] गोपाल सिंह (जिसकी आयु मात्र 17 वर्ष थी) ने भोपावर के शरणार्थियों की सहायता कर अच्छी सेवा प्रदान की। जुलाई में अमझेरा चीफ ने इन्दौर का विद्रोह सुनने पर बगावत कर दी। भोपावर में लेफ्टिनेंट हुयिन्सन, भील एजेन्ट अपने पास मालवा भील पलटन के 200 भीलों का एक दल रखते थे। उसने और डॉ. चिशोल्म ऐजेन्सी सर्जन ने स्टेशन पर रहना निश्चित किया, लेकिन यह समाचार सुनने पर कि धार के विलायती पहुँच रहे हैं।

तब 30 भीलों को छोड़कर सारे भील भाग गए और यूरोपियनों ने भी यहाँ से पलायन कर गए। ले. हुयिन्सन, डॉ. चिलशोम, दो महिला और बच्चों के साथ पारसियों के रूप में वेश बदलकर छिपकर झाबुआ के लिए प्रस्थान किया। पारा गाँव में पहुँचने पर उन्होंने चीफ को संदेश भेजा। जिससे तुरंत एक अंगरक्षक सेना भेजी। ये भगोड़े 5 जुलाई को झाबुआ पहुँचे। नौजवान राजा और उसकी माता ने अपने सामर्थ्य के अनुसार उनकी सेवा सत्कार व सहायता की।[1]

स्थानीय अरब दल द्वारा उनके सरेन्डर करने के लिए मांगों के बावजूद भी अंतिम रूप से होल्कर ने इन्दौर से एक अंगरक्षक को भेजा और शत्रु को यूरोपियन्स महु पहुँचे। वाइसराय वार्ड कैनिंग ने चीफ द्वारा ली गई उन अच्छी सेवाओं को अभिस्वीकृत किया। जिसको कि भारत सरकार द्वारा सदैव ही कृतज्ञतापूर्वक स्मरण किया जाएगा।

इन सेवाओं के बदले मालवा भील पलटन को दरबार के अंशदान के रूपये 3000 से घटा कर 1500 किया गया और 9 फरवरी 1878 को गर्वनर जनरल के एजेन्ट सर हेनरी डाली हार 12500 रू. की एक खिलत के साथ (प्रतिष्ठित) नवाजा गया। 1859 में गोपालसिंह को प्रशासन की पूर्ण शक्तियाँ प्रदान कर दी गई। वर्ष 1863 में उसने उसके राज्य में कपास पर सभी शुल्कों और करों की समाप्ति कर दी थी।[4] 1864 में चीफ ने पूरी सामान्य में ऐसी भूमियों का परित्याग करने पर सहमत कर लिया। जो कि उसके राय में रेल्वे के लिए आपेक्षित/आवश्यक थी। 1891 में बाम्बे बड़ौदा और सेन्ट्रल इण्डिया रेल्वे की गोधरा रतलाम नागदा उज्जैन में शाखा के लिए विशेष रूप से भूमि को छोड़ा। महामान्य राजा उदयसिंह जी – राजा उदयसिंह जी का जन्म 4 मई 1875 को हुआ था। वह 22 जनवरी 1895 को उत्तराधिकारी बना। वह राज्य के संस्थापक केशोदास के वंश से पीढ़ी में बाहरवा है। 1898 में उसे प्रशासन की पूर्ण शक्तियों के साथ प्रतिष्ठित किया गया।

उसके जीवन के प्रारंभ में शासक ने उमरावों की वंशानुगत कठिनाईयों के अतिरिक्त जैसे कि अगले अध्याय में दर्शाया गया है। राज्य द्वारा लगातार तीव्रतम कठोर अकालों का सामना किया गया। उसकी प्रजा के लिए उठाए गए उपायों ने उसे ग्वालियर से और ब्रिटिश सरकार से कर्ज लेने के लिए मजबूर किया। कुछ शर्तो के अधीन, जिसमें से एक शर्त थी राजनैतिक ऐजेन्ट के अनुमोदन के साथ दीवान की नियुक्ति करना। दीवान के दोहरे नियंत्रण ने प्राय: प्रशासक तथा उसके बीच मतभेद को बढ़ाने का कार्य किया। जिससे बहुत से दीवानों को बदलना पड़ा।

प्रशासक हमेशा मितव्ययी पथ पर प्रशासन को करने के लिए चिंतित रहना पड़ता था। जिससे की वह कर्जे को चुकाने में समर्थ हो सके और उसकी शक्तियों पर लगाए गए प्रतिबंधों से अपने आप को मुक्त करा सके।[6] 1918 में वह कर्ज को चुकाने में सफल हुआ लेकिन दीवान पर दोहरा नियंत्रण आगे भी कुछ वर्षो तक निरंतर जारी रहा। उपरोक्त कठिनाईयों के रहते हुए भी महामहिम ने प्रशासन को समर्थता से और कुशलतापूर्वक व्यवहार किया। 1901 में रही जनसंख्या 81000 से बढ़कर 1931 में 146000 हो गई। राज्य की आय 1.1 लाख से 4.6 लाख रूपये हो गई थी। पूरे राज्य का सर्वेक्षण और भूमि की पैमाइश की गई। भूमि को वर्गीकृत किया गया और सेन्टलमेन्ट के अनुसार किराया निर्धारित किया गया। अत: झाबुआ राजगद्दी में राजा गोपालसिंह तथा राजा उदयसिंह के काल में राज्य की सत्ता एवं शक्ति प्रखर होकर जनता तथा अन्य राज्यों तक राठौड़ों का कीर्तिमान फैला।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. इनायत उल्ला, फोलियों बी पृष्ठ 34
2. एम. टी. आर. एस. पृष्ठ 78
3. मालवा के राठौड़ पृष्ठ 131
4. झाबुआ स्टेट गजेटियर सी. ई. लुआर्ड पृष्ठ 6 (12)
5. झाबुआ स्टेट गजेटियर 1098 पृष्ठ 7
6. झाबुआ स्टेट गजेटियर, सी. ई. लुआर्ड, बाम्बे ब्रिटिश प्रेस, बेयकुला पृष्ठ 7
7. डॉ. शोभनाथ पाठक भीलों के बीच बीस वर्ष, प्रभात प्रकाशन दिल्ली।
8. डॉ. राजेन्द्र जैन झाबुआ के भीलों की संस्कृति, मानसी पब्लिकेशन्स दिल्ली।
9. श्रीचंद जैन वनवासी भील एवं उनकी संस्कूति, रोशनलाल एण्ड़ संन्स जयपुर।

****

माध्यमिक स्तर पर विद्यालयों में समावेशी शिक्षा विषयक शैक्षिक चुनौतियाँ

डॉ. बी. के. गुप्ता*

प्रस्तावना – समाज में आत्म-सम्प्रत्यय, समायोजन, सम्बलन, आत्म-विश्वास जाग्रत करना शिक्षा का उद्देश्य होता है। विशिष्ट विद्यार्थियों को पर्याप्त शैक्षिक सुविधाएँ उपलब्ध न होने पर वे शिक्षा से दूर हो जाते हैं, जिसके परिणामस्वरुप उनमें आत्म-विश्वास की कमी हो जाती है जो सामाजिक स्तर पर एक महत्वपूर्ण समस्या उत्पन्न करता है।

बालक विशिष्ट प्रकृति का हो या सामान्य प्रकृति का उसकी शैक्षिक एवं सामाजिक भावनाएँ समान होती है वह शिक्षा प्राप्त करके उन्नति करना चाहता है, अत: बालकों को उनकी विशिष्टता के आधार पर उन्हें शैक्षिक सुविधाएँ उपलब्ध करवाई जानी चाहिए लेकिन विद्यालय में संसाधनों का अभाव एवं शिक्षकों की रुचि के अभाव में उनका शैक्षिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक विकास अपेक्षित स्तर पर नहीं हो पाता है। प्रत्येक राष्ट्र का भविष्य बालक होता है, अत: बालकों को शिक्षा, चिकित्सा इत्यादि मूलभूत सुविधाएँ उपलब्ध करवाना प्रत्येक राष्ट्र का कर्त्तव्य होता है। शिक्षा अधिकार अधिनियम-2009 के कानून बनने के बाद शत-प्रतिशत साक्षरता दर प्राप्त करने एवं राष्ट्रीय स्तर पर विद्यार्थियों को शैक्षिक सुविधाएँ प्राप्त करने हेतु सरकार कटिबद्ध है। अत: विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों को विभिन्न राज्यों की सरकारें विभिन्न शैक्षिक सुविधाएँ प्रदान कर रही हैं परन्तु यह अनुभव किया जा रहा है कि विद्यार्थियों को उनका लाभ अपेक्षित मात्रा में नहीं मिल पा रहा है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा-2005 की अनुशंसाओं के अनुसार हमारे देश में समावेशित शिक्षा का सम्प्रत्यय विकसित किया जाना है, इस हेतु प्रत्येक स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं परन्तु वांछित परिणाम दृष्टिगोचर नहीं हो रहे हैं। जब तक पूर्ण शैक्षणिक सुविधाएँ प्रत्येक विशिष्ट विद्यार्थी को प्राप्त नहीं होगी तब तक राष्ट्र के श्रेष्ठ विकास एवं निर्माण की परिकल्पना अधूरी रहेगी। अत: शैक्षणिक सुविधाओं की उपलब्धता से विशिष्ट आवश्यकता वाले विद्यार्थियों का मानसिक, शारीरिक, नैतिक, सामाजिक विकास होगा तथा राष्ट्र के निर्माण में विशिष्ट विद्यार्थी भी अपेक्षित सहयोग प्रदान करेगा जिससे उसमें भी उत्साह एवं आत्मविश्वास बढ़ेगा।

प्रस्तुत शोध आलेख में राजकीय शहरी एवं ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा लागू करने में आने वाली शैक्षिक समस्याओं का विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है।

समस्या कथन – माध्यमिक स्तर पर विद्यालयों में समावेशी शिक्षा विषयक शैक्षिक चुनौतियाँ।

शोध उद्देश्य – प्रस्तुत शोध कार्य हेतु निम्नलिखित शोध उद्देश्य निर्धारित किए गए-

1. राजकीय ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा लागू करने में आने वाली शैक्षिक चुनौतियों का अध्ययन करना।
2. राजकीय शहरी माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा लागू करने में आने वाली शैक्षिक चुनौतियों का अध्ययन करना।
3. राजकीय ग्रामीण एवं शहरी माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा लागू करने में आने वाली शैक्षिक चुनौतियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शून्य परिकल्पना – राजकीय ग्रामीण एवं शहरी माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा लागू करने में आने वाली शैक्षिक चुनौतियों में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।

परिसीमन :-

1. क्षेत्र – प्रस्तुत शोध कार्य सीतापुर जिले के माध्यमिक शिक्षा परिषद् उत्तर प्रदेश (UPMSP) से संबंधित माध्यमिक विद्यालयों तक सीमित रखा गया है।
2. जनसंख्या – प्रस्तुत शोध कार्य दिव्यांग/विशिष्ट (मूक, बधिर, दृष्टि बाधित, अस्थि विकलांगता इत्यादि) के संदर्भ में सीमित रखा गया है।

न्यादर्श – सीतापुर जिले में संचालित शहरी राजकीय एवं ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों में से यादृच्छिक प्रतिचयन विधि के माध्यम से 4 शहरी एवं 4 ग्रामीण राजकीय माध्यमिक विद्यालयों का चयन किया गया। चयनित विद्यालयों के 8 प्रधानाध्यापकों (4 शहरी एवं 4 ग्रामीण) का सोद्देश्य प्रतिचयन विधि से एवं 30 अध्यापकों (15 शहरी एवं 15 ग्रामीण) का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि के माध्यम से किया गया।

पारिभाषिक शब्दावली :

समावेशी शिक्षा – समावेशी शिक्षा से तात्पर्य उस औपचारिक शिक्षा पद्धति की विद्यालय शिक्षा से है जहाँ विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी अन्य सामान्य विद्यार्थियों के साथ शिक्षा प्राप्त करते हैं और वहाँ विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी सामान्य विद्यार्थियों के साथ अध्ययन करते हुए सामाजिकता का विकास कर समाज की मूल धारा से जुड़ने का प्रयास करते हैं।

चुनौतियाँ – राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा (NCF)-2005 की अनुशंसानुसार सामान्य विद्यालयों में समावेशित शिक्षा का सम्प्रत्यय विकसित किया जाना है परन्तु भारतीय सामाजिक परिदृश्य में समावेशित शिक्षा को विद्यालयों में लागू करने में विभिन्न स्तरों (समाज/विद्यालय/परिवार/अभिभावक/विद्यार्थी इत्यादि) पर आने वाली अनेक समस्याओं का समाधान करते हुए विद्यालयों में समावेशित शिक्षा का सम्प्रत्यय विकसित करने हेतु प्रयासरत रहता है; सफलता प्राप्ति हेतु समस्याओं के साथ संघर्ष करने की इस प्रक्रिया को चुनौतियों के संदर्भ में देखा गया है।

शोध उपकरण – प्रस्तुत शोध कार्य में निम्नलिखित स्वनिर्मित शोध

* एसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षा) जे. एन. एम. पी. जी. कॉलेज, बाराबंकी (उ.प्र.) भारत

उपकरणों का उपयोग किया गया–

1. समावेशी शिक्षा की चुनौतियों विषयक प्रश्नावली – अध्यापकों हेतु।
2. साक्षात्कार अनुसूची प्रपत्र – प्रधानाध्यापकों हेतु।

सांख्यिकीय प्रविधि – प्रस्तुत शोध कार्य में दत्तों का विश्लेषण करने हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं 'टी' मूल्य का उपयोग किया गया।

दत्त विश्लेषण एवं व्याख्या – प्राप्त दत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या निम्नानुसार की गई–

तालिका संख्या–1 : समावेशी शिक्षा आधारित शैक्षिक चुनौतियों के संदर्भ में मध्यमान, मानक विचलन एवं 'टी' मान

विद्यालय	अध्यापकों की संख्या	मध्यमान	मानक विच–लन	मध्यमान का अंतर	मानक त्रुटि	'टी' मान	परिणाम
शहरी राजकीय विद्यालय	15	3.00	1.06	0.12	0.33	0.37	कोई सार्थक अंतर नहीं
ग्रामीण राजकीय विद्यालय	15	3.12	1.24				

स्वतंत्रता के अंश (df) = 48

0.05 स्तर पर सारणीमान = 2.01

व्याख्या – उपर्युक्त तालिका यह दर्शाती है कि समावेशी शिक्षा लागू करने में राजकीय शहरी विद्यालयों एवं राजकीय ग्रामीण विद्यालयों में शैक्षिक चुनौतियाँ (प्रशिक्षित शिक्षकों की उपलब्धत, शिक्षकों पर शैक्षणेत्तर कार्यभार, आनुपातिक शिक्षकों की उपलब्धता, विशिष्ट पाठ्यक्रम, शैक्षिक वातावरण में कृत्रिमता अनुभव होना) विषयक दत्तों के मध्य संगणित 'टी' मान 0.37 प्राप्त हुआ जो कि सारणी मान (.05 स्तर पर 2.01) से कम है। उपर्युक्त दत्त विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि राजकीय शहरी विद्यालयों एवं राजकीय ग्रामीण विद्यालयों में शैक्षिक चुनौतियों के मध्य कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है, अर्थात् दोनों प्रकार के विद्यालयों में शैक्षिक चुनौतियाँ समान स्तर पर पायी जाती है।

शून्य परिकल्पना की जाँच – इस शोध हेतु पूर्व निर्धारित शून्य परिकल्पना कि 'राजकीय ग्रामीण एवं शहरी माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा लागू करने में आने वाली शैक्षिक चुनौतियों में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।' स्वीकार की गयी।

समावेशी शिक्षा लागू करने में आने वाली चुनौतियाँ – प्रधानाध्यापकों के मतानुसार समावेशी शिक्षा के अंतर्गत दिव्यांग/विशिष्ट विद्यार्थियों को सामान्य अध्यापकों द्वारा शिक्षण करवाने में अध्यापकों एवं विद्यार्थियों दोनों को कठिनाई महसूस होती है क्योंकि सामान्य अध्यापक इस प्रकार के विद्यार्थियों को शिक्षण करवाने हेतु प्रशिक्षित नहीं होते हैं। विद्यालयों में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों हेतु विशेष प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव रहता है। शिक्षण हेतु उपयुक्त शिक्षण सामग्री जैसे ब्रेल लिपि, ब्लेक बोर्ड, बड़े अक्षरों वाली पुस्तकें आदि सामग्री का अभाव रहता है। पाठ्यक्रम भी विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए अनुकूल नहीं होता है जिससे इन विद्यार्थियों को पढ़ाने में समस्या महसूस होती है। शिक्षकों पर कार्यभार अधिक होने की वजह से विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों को अतिरिक्त समय भी नहीं दिया जा सकता है। विद्यालयों की वर्तमान स्थिति के अनुसार सामान्य विद्यार्थियों के आनुपातिक स्तर पर भी पर्याप्त शिक्षक उपलब्ध नहीं है। उपलब्ध शिक्षकों में से भी समय–समय पर कुछ शिक्षकों को विभिन्न गैर–शैक्षणिक कार्यों (जनगणना, मतदान, पोलियो इत्यादि) में सरकार द्वारा प्रतिनियुक्त कर दिया जाता है तो ऐसी स्थिति में समावेशित शिक्षा का सम्प्रत्यय विकसित करना असंभव अनुभूत होता है।

निष्कर्ष एवं विवेचना – दत्त विश्लेषण एवं व्याख्या के आधार पर निम्न निष्कर्ष निकलकर सामने आते हैं कि–

1. राजकीय ग्रामीण एवं शहरी माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा लागू करने में आने वाली शैक्षिक चुनौतियों में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है, अर्थात् दोनों प्रकार के विद्यालयों में चुनौतियाँ समान स्तर पर पायी जाती है।
2. दिव्यांग/विशिष्ट विद्यार्थियों को शिक्षण करने हेतु राजकीय शहरी एवं ग्रामीण विद्यालयों में प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षक उपलब्ध नहीं है।
3. राजकीय ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों पर शिक्षण से इतर अधिक कार्यभार होने के कारण अध्यापक दिव्यांग/विशिष्ट विद्यार्थियों पर पर्याप्त समय नहीं दे पाते हैं।
4. राजकीय ग्रामीण विद्यालयों में उपलब्ध विद्यार्थियों के अनुपात में पर्याप्त शिक्षक उपलब्ध नहीं है।
5. राजकीय शहरी एवं ग्रामीण विद्यालयों में दिव्यांग/विशिष्ट विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुसार पाठ्यक्रम (ब्रेल लिपि वाली पाठ्य–पुस्तके, बड़े अक्षरों वाली पुस्तकें) उपलब्ध नहीं हैं।
6. सामान्य विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों को सामान्य विद्यार्थियों एवं दिव्यांग/विशिष्ट विद्यार्थियों को एक साथ बिठाकर पढ़ाने में समस्याएँ अनुभूत होती है।
7. सामान्य प्रशिक्षित शिक्षकों को दिव्यांग/विशिष्ट विद्यार्थियों को पढ़ाने में शैक्षिक वातावरण कृत्रिम, औपचारिक एवं नाटकीय महसूस होता है।

उपसंहार – राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा–2005 के अनुसार विद्यालयों में समावेशी शिक्षण का सम्प्रत्यय विकसित किया जाना अपेक्षित है। इस अनुशंसा की क्रियान्विति में विभिन्न स्तरों पर आने वाली समस्याओं एवं चुनौतियों का अध्ययन किया गया। इसके लिए राजकीय शहरी एवं ग्रामीण विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं प्रधानाध्यापकों से दत्तों का संकलन किया गया। दत्त विश्लेषणोपरान्त यह निष्कर्ष निकलकर सामने आया कि राजकीय शहरी एवं ग्रामीण विद्यालयों में समावेशी शिक्षण विषयक चुनौतियाँ पायी जाती है। अतः इन विद्यालयों में समावेशी शिक्षा लागू करने से पूर्व आवश्यक शैक्षिक एवं भौतिक व्यवस्थाएँ प्रशासनिक स्तर पर उपलब्ध करवाई जानी अपेक्षित है तभी समावेशी शिक्षा का सम्प्रत्यय विकसित किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Garret, H.E. (1992) Statistics in Psychology and Education, Bombay : Allied Pacific Pvt. Ltd.
2. Karlinger, F.N. (1994) Foundation of Behavioural Research, New York: Halt Reinetart and Winston.
3. कपिल, एच. के. (2006) सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
4. नारंग, के. सी. (2000) समोवशी शिक्षा, नई दिल्ली : सूर्या प्रकाशन।
5. गैरेट, ई. हेनरी (2007) शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी, नई दिल्ली : कल्याणी पब्लिशर्स।
6. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा (2005) एन.सी.ई.आर.टी., प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली।

मद्यपान का आदिवासी जनजीवन पर प्रभाव (जिला अलीराजपुर के विशेष संदर्भ में)

लखनलाल गांगले *

प्रस्तावना - जनजाति समुदाय में मद्यपान का अत्यधिक चलन है एवं ये समुदाय अपने घरों में ही मदिरा बनाता है। पश्चिमी मध्यप्रदेश के जनजाति समुदाय में महुआ द्धारा बनाई गई मदिरा बहुत लोकप्रिय है। विभिन्न अवसरों पर मद्य का सेवन करना जनजाति समुदाय के जीवन की एक परंपरा बन गई है। प्रमुख त्योहारों, विवाह और अन्य छोटे-बड़े उत्सवों में जनजाति पुरुषों के साथ - साथ महिलाओं द्धारा भी मद्य का सेवन किया जाता है। सामान्यत: घर में बनाई गई मद्य उतना हानिकारक नहीं था जितना की बाजार में मिलने वाला, परंतु समय के साथ जनजाति समुदाय में घर की बनी मदिरा की अपेक्षा बाजार की मदिरा का चलन बढ़ता जा रहा है जो कि उनके स्वास्थ्य, सामाजिक स्थिति एवं आर्थिक स्थिति सभी के लिए घातक हो रही है। यदि अध्ययन क्षेत्र में मद्यपान की यही स्थिति रही तो संभवत: आने वाले समय में समुदाय और अधिक भी पिछड़ सकता है।

यह सत्य है कि मद्य जनजाति समुदाय की संस्कृति एवं परंपरा का हिस्सा है परंतु वर्तमान में हो रहे परिवर्तन के कारण यह एक समस्या बन गई है, परिणामस्वरूप जनजाति समुदाय का सामाजिक-आर्थिक विकास अवरूद्ध हो रहा है। अत: आवश्यक हो जाता है कि जनजाति समुदाय में बढ़ रहे मद्यपान पर नियंत्रण के प्रयास किये जाए। शासन द्धारा किए जा रहे प्रयास के साथ-साथ क्षेत्र में गैर सरकारी संगठनों के द्धारा भी व्यापक स्तर पर मद्यपान निषेध हेतु विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। फिर भी जनजाति समुदाय पर मद्यपान के प्रभाव को देखा जा सकता है।

प्रस्तुत अध्ययन में मद्यपान का आदिवासी समुदाय पर प्रभाव का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

शोध प्रविधि -

शोध प्रारूप - प्रस्तावित शोध अध्ययन हेतु वर्णनात्मक शोध प्रारूप को अपनाया गया है।

अध्ययन क्षेत्र - प्रस्तुत शोध कार्य हेतु अलीराजपुर जिले का चयन किया गया है। जो मध्यप्रदेश के दक्षिण-पश्चिमी भाग में स्थिति मध्यप्रदश के अलीराजपुर जिले की कुल जनसंख्या 7,28,999 है। जिनमें जनजातीय वर्ग की जनसंख्या 6,48,648 है। जिनमें से पुरुष 3,21,842 एवं महिलाओं की संख्या 3,26,796 है। इस जिले की साक्षरता दर प्रदेश में सबसे कम है।

अध्ययन का समग्र - अध्ययन क्षेत्र अलीराजपुर जिले में निवासरत् समस्त आदिवासी परिवार अध्ययन का समग्र हैं।

अध्ययन की इकाई - अध्ययन क्षेत्र का एक अदिवासी परिवार अध्ययन की इकाई है।

निदर्शन विधि - शोध अध्ययन हेतु निम्नानुसार बहुस्तरीय दैव निदर्शन विधि के द्धारा उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। इस प्रकार 6 विकासखंडों में से उच्च जनसंख्या, मध्यम जनसंख्या एवं निम्न जनसंख्या वाले विकासखंडों का चयन किया गया है।

चयनित तीन विकासखंडों में से प्रतयेक विकासखंड में दो कार्यरत् गैर सरकारी संगठन का चयन किया गया है। गैर सरकारी संगठनों के कार्यक्षेत्र में से 5 ग्रामों का चयन किया गया, इस तरह तीन विकासखंड में से कुल 30 ग्रामों का चयन बहुस्तरीय दैव निदर्शन विधि द्धारा किया गया है। चयनित 30 ग्रामों में से 300 उत्तरदाता का चयन दैव निदर्शन विधि द्धारा किया गया है।

तथ्य संकलन के स्त्रोत

प्राथमिक स्त्रोत - शोध के उद्देश्यों के अनुरूप साक्षात्कार सूची बनाकर एवं अवलोकन से क्षेत्र के समुदाय विशेष के बारे में मौखिक रूप से प्राप्त जानकारियाँ एकत्र की गई।

द्धितीयक स्त्रोत - अध्ययन के विषय में विद्धानों द्धारा लिखी गई पुस्तकें, प्रलेखों तथा विकासखण्ड और विकास प्राधिकरण द्धारा विभिन्न बिन्दुओं पर संकलित जानकारियों का उपयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं विवेचन

स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव - मदिरा एक ऐसा पेय पदार्थ है जिसका उपयोग लोगों द्धारा केवल नशे के लिए किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति के पास नशा करने का अलग-अलग कारण होता है लेकिन एक निश्चित सीमा से अधिक सेवन करने पर उसका नकारात्मक प्रभाव ही पड़ता है। अध्ययन क्षेत्र में मद्यपान अधिक मात्रा में देखने को मिलता है अत: मदिरा का स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव संबंधी अभिमतों को निम्न तालिका में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका 01 - मदिरा के कारण स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव संबंधी अभिमत

अभिमत	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	178	59.3
नहीं	122	40.7
कुल	300	100.0

उपरोक्त तालिका के अनुसार 59.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा कि मद्य के कारण उनके परिवारिक सदस्यों को मद्यपान से होने वाली बिमारियॉ हुई है शेष 40.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस संदर्भ में ना में जवाब दिया। तालिका अध्ययन से पता चलता है कि मद्यपान से अनेक प्रकार के रोग होने की संभावना होती है अत: किसी भी प्रकार एवं मात्रा में इसका प्रयोग उचित नहीं है। इसके लगातार प्रयोग से अनेक प्रकार की शारीरिक एवं मानसिक

* शोधार्थी (समाजकार्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

रोग तो होते ही है साथ में इसके अधिक प्रयोग से व्यक्ति का स्वभाव चिढ़चिढा और आक्रमक भी हो जाता है। वर्तमान समय में हम देखते है कि मद्य पीकर अनेक दुष्कर्म की घटनाओं को अंजाम दिया जाता है। क्योंकि इसके प्रयोग के बाद मन–मस्तिष्क पर नकारात्मक उर्जा हावी हो जाती है।

मद्यपान के कारण मृत्यु संबंधी अभिमत – मद्यपान का ज्यादा सेवन मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है और समय रहते इस पर नियंत्रण अथवा रोक नहीं लगाने की वजह से व्यक्ति की मृत्यु भी हो जाती है। अध्ययन क्षेत्र में जागरूकता का अभाव एवं अधिक मद्यपान दोनों ही समस्या विद्यमान होने के कारण आवष्यक हो जाता है कि क्षेत्र में मद्यपान के कारण परिवार में हुई मृत्यु का अध्ययन किया जाए।

तालिका 02 – मद्यपान से परिवार में हुई मृत्यु संबंधी अभिमत

अभिमत	आवृत्ति	प्रतिशत
कोई नहीं	221	73.7
एक	56	18.7
दो	23	7.7
कुल	300	100.0

उपरोक्त तालिका में प्रदर्शित आंकडो के संदर्भ में 73.7 प्रतिशत परिवार है जिनमें मद्यपान के कारण किसी पारिवारीक सदस्य की अकाल मृत्यु नहीं हुई है। 18.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार है जिनमें मद्य पीने से परिवार के 1 सदस्य की अकाल मृत्यु हुई है और 7.7 प्रतिशत परिवार में 2 लोगों की मृत्यु हुई है। यहॉ यह उल्लेखित करना आवश्यक है कि 26.4 प्रतिशत परिवारों के घर में शराब सेवन से किसी सदस्य की मौत हुई है अत: यह कथन सर्वदा सत्य है कि शराब एक जानलेवा पेय पदार्थ है यह ना सिर्फ गंभीर शारीरिक एवं मानसिक बिमारीयों का कारण बनता है अपितु इससे जान भी जा सकती है। यदि किसी परिवार के मुखिया की मृत्यु शराब के कारण हो जाती है तो उसके परिवार के सदस्यों को अत्यधिक कठिनाई का सामना करना पडता है।

मद्यपान का परिवार पर नकारात्मक प्रभाव – मद्यपान नशे हेतु किया जाता है और जब व्यक्ति मद्य के नशे का आदि हो जाता है तो वह अपनी और अपने परिवार की अधिकांश आय मद्यपान पर ही खर्च करना प्रारंभ कर देता है। जिसके परिणाम स्वरूप परिवार पर मद्यपान का नकारात्मक प्रभाव नजर आने लगता है। अध्ययन क्षेत्र में परिवार पर मद्यपान के नकारात्मक प्रभाव का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

तालिका 03 – परिवार पर मद्यपान का नकारात्मक प्रभाव संबंधी अभिमत

अभिमत	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	200	66.7
नहीं	100	33.3
कुल	300	100.0

उपरोक्त तालिका अनुसार 66.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यह माना है कि मद्य पीने से उनके परिवार पर नकारात्मक प्रभाव पडे है वही शेष 33.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने किसी भी प्रकार के नकारात्मक प्रभावों से इनकार किया है।

तालिका अध्ययन से पता चलता है कि मद्यपान से ना सिर्फ व्यक्ति विशेष अपितु उसके परिवार पर भी अनेक प्रकार के नकारात्मक प्रभाव पढते है जिससे की परिवार को अनेक कठीनाईयों का सामना करना पडता है। मद्यपान के कारण व्यक्ति के मन–मस्तिष्क में नकारात्मक विचार आने लग जाते है जिसके कारण वह कई बार जाने – अनजाने में आक्रामक होकर स्वयं अथवा परिवार की हानि कर देता है। आंकडे बताते हैं कि चोरी, हत्या तथा दुष्कर्म जैसै निंदनीय कार्य करने वाले व्यक्ति किसी ना किसी प्रकार के नषे के आदि होते है। वे नशा कर इन घटनाओं को अंजाम देते है। अत: इसका प्रयोग कदापि नहीं करना चाहीये।

विभिन्न तालिकाओं के विश्लेषण से निष्कर्ष ज्ञात होता है कि आदिवासी जनजीवन पर मद्यपान के सिर्फ और सिर्फ नकारात्मक प्रभाव ही हुए हैं। आदिवासी समुदाय अतीत से ही मद्यपान करता आ रहा है परंतु वर्तमान में मद्यपान एक समस्या बन गया है। जिसका मुख्य कारण पूर्व में समुदाय द्वारा नाचने–गाने व मनोरंजन के लिए मद्यपान किया जाता था जो कि बहुत कम मात्रा में होता था परंतु वर्तमान में मद्यपान शोक के लिए एवं बहुत अधिक मात्रा में उपयोग किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आहुआ राम (1994), 'सामाजिक समस्याएं', रावत पब्लिकेशन, जवाहर नगर, जयपुर।
2. ओझा एन. एम (2005),'भारत की सामाजिक समस्याऐं', रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
3. गुप्ता एम. एल., शर्मा डी. डी. (2010), 'भारतीय सामाजिक समस्याएं', साहित्य भवन, पब्लिकेशन आगरा।
4. जाउलकर माधव (1991),'नशा मुक्ति', पंचायत एवं समाज कल्याण संचनालय, मध्यप्रदेश, भोपाल।
5. यादव रामलाल (2012),'मद्यपान का समाजशास्त्र', युनिवर्सल बुक डिपो, ग्वालियर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

एच.आई.वी. एड्स की रोकथाम में परिवार तथा समाज की भूमिका (मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में)

मुकेश अजनार *

प्रस्तावना – भारत में बडे पैमाने पर वैश्यावृत्ति होती है जो कि एचआईवी/एड्स होने का भारत में सबसे महत्वपूर्ण कारण है। हालांकि भारत मे वैश्यावृत्ति पर कानूनी रूप से पूरी तरह से पाबंदी है किंतु फिर भी भ्रष्ट राजनीति, कमजोर पुलिस प्रशासन तथा जनसाधारण में जागरूकता की कमी होने के कारण एड्स बड़ी आसानी से भारतीयों को अपना शिकार बना रहा है। मुख्य रूप से आपराधिक कार्यो में लिप्त पुरूष, मलीन बस्तियों में रहने वाले पुरूष, कम उम्र के बच्चे जिन्हें उचित देखभाल, समझाईश ना मिली हो वैश्याओं के संम्पर्क में आकर स्वंय को जानलेवा स्थिति में डाल लेते है। ग्रामों में निवासरत महिला–पुरूष जिनमें एचआईवी/एड्स से संम्बधित अधिक जानकारी ना हो, वह अपनी कामवासना में पागल होकर असुरक्षित यौन संम्बंधों का निर्माण कर बडी सुलभता से इस बीमारी का शिकार हो जाते है।

भारत में प्रथम एच.आई.वी पीड़ित व्यक्ति का मामला (केस) 1986 को तमिलनाडु के चेन्नई में पाया गया जो देह व्यापार में लिप्त था। और पता लगाने पर पता चला कि ये एक विदेशी पर्यटक के सम्पर्क में आने से पाया गया था। वर्ष 1987 में राष्ट्रीय एच.आई.वी. नियंत्रण कार्यक्रम की शुरूआत की गई, जिसने प्राथमिक रूप से खुन की जाँच और स्वास्थ्य शिक्षा पर विशेष ध्यान रखा। 2017 में NACO और UNAIDS के सामान्य अध्ययन के अनुसार भारत में लगभग 21 लाख 40 हजार लोग एच.आई.वी./एड्स से पीड़ित व्यक्ति पाये गये। मध्यप्रदेश में **मार्च 2019** तक 61372 एचआईवी एड्स पीड़ित व्यक्ति है। **(मध्यप्रदेश राज्य एड्स नियंत्रण समिति के अनुसार)**

मध्यप्रदेश के आदिवासी बाहुल्य जिलों में से झाबुआ एक विशेष पिछड़ा जिला है, इस जिले की अधिकांश जनसंख्या सामाजिक, आर्थिक, स्वास्थ्य समस्याओं से निरंतर ग्रसित जीवन–यापन कर रहे है। जिनमें से स्वास्थ्य समस्या एक प्रमुख समस्या है। इस क्षेत्र में लोग अज्ञानता, अस्वच्छता, परम्परागत मान्यतायें, सुखा, पलायन, शासकीय योजनाओं का ज्ञान नहीं होना इत्यादि महत्वपूर्ण कारणों से ही स्वास्थ्य समस्या से ग्रसित हो रहे हैं। झाबुआ जिला मध्यप्रदेश राज्य के पश्चिमी छोर पर स्थित है। जनगणना 2011 के अनुसार झाबुआ जिले की जनसंख्या 1024091 है। वर्तमान में **मार्च 2019** तक झाबुआ जिले में 533 लोग एड्स पीड़ित है। **(मध्यप्रदेश राज्य एड्स नियंत्रण समिति के अनुसार)**

वर्तमान झाबुआ जिले में अनेक स्वास्थ्य समस्या है। जिलें में अनेक बीमारी में से एक एच.आई.वी./एड्स भी व्याप्त है। पीड़ित लोगों में व्याप्त एच.आई.वी./एड्स का मुख्य कारण अशिक्षा, अजागरूकता एवं पलायन है। इस क्षेत्र में कृषि उत्पादन कम एवं बेरोजगारी के कारण यह लोग जीविका हेतु समीपस्थ गुजरात राज्य में कार्य हेतु पलायन करते है। जहाँ पर जनजातीय किशोरी, महिलाओं को कुछ उच्च वर्गो के द्वारा शोषण किया, जाता है, एवं जनजातीय यूवक–यूवतियों में असुरक्षित यौन क्रिया द्वारा भी यह रोग फैल रहा है।

शोध प्रविधि –

अध्ययन क्षेत्र – मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले में अशिक्षा, गरीबी तथा बेरोजगारी की समस्या से ग्रसित अधिकांश जनसंख्या रोजगार के लिए अन्य राज्यों में पलायन करती है। अत: नियमित पलायन के कारण झाबूआ जिला एड्स जैसी बीमारियों के फैलने के लिए अति संवेदनशील है। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2014 में कुल 353 व्यक्ति एड्स से ग्रसित है। ऐसे व्यक्तियों की संख्या में प्रतिवर्ष इजाफा ही हो रहा है। अत: यह तथ्य को ध्यान में रखते हुये शोध हेतु झाबुआ जिले को अध्ययन क्षेत्र स्वरूप चयनित किया गया है।

निष्कर्ष – दुष्प्रभाव रोकथाम में परिवार तथा समाज की भूमिका :

1. 78.7 प्रतिशत एड्स के रोगी अपने परिवार के साथ ही रहते है।
2. 72 प्रतिशत एड्स के रोगीयों ने स्वीकार किया की उनकी चिकित्सा हेतु परिवार सहयोग प्रदान कर रहा है।
3. एड्स के मरीजों को मुख्य रूप से परिवार से ही आर्थिक एवं प्रेराणास्पद मदद मिल रही है इसके बाद गैर शासकीय संगठनों को स्थान है।
4. 81.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यह माना कि उनके परिवार के सदस्यों द्वारा उनकी उपेक्षा नहीं की जाती है।
5. 84.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार एड्स से ग्रसित व्यक्ति के परिवार वालों को मरीज के प्रति सहायता की भावना रखना चाहिये तो शेष 15.3 प्रतिशत ने दया भावना रखने की बात कही।
6. 88 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि एड्स से ग्रसित व्यक्ति के प्रति ग्रामजन का व्यवहार उसकी हमेशा सहायता का होना चाहीये।
7. कुल पुरूषों में से 95.4 प्रतिशत पुरूष उत्तरदाताओं ने यह कहा कि वे नियमित रूप से उपचार ले रहे है जबकि 4.6 प्रतिशत ने नियमित उपचार लेने से इनकार किया है।
8. कुल महिला उत्तरदाताओं में से शत प्रतिशत ने स्वीकार किया कि वे नियमित रूप से उपचार लिया है।
9. कुल पुरूष उत्तरदाताओं में से 56.3 प्रतिशत ने इस बात को स्वीकार किया है कि उनके उपचार में उनके परिवार ने सहायता की है।
10. 36.8 प्रतिशत पुरूषों ने उपचार हेतु गैर–शासकीय संस्थाओं के सहयोग की बात कही है।
11. कुल महिला उत्तरदाताओं में से 93.7 प्रतिशत ने परिवार से सहायता की बात की तो शेष 6.3 प्रतिशत ने शासकीय ट्रस्ट की मदद को

* शोधार्थी (समाजकार्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

स्वीकारा है।

12. किसी भी महिला उत्तरदाता ने गैर शासकीय संस्थाओं से उपचार संबंधी कोई सहायता नही ली है।
13. कुल पुरूष उत्तरदाताओं में से 63.2 प्रतिशत ने स्वीकार किया है कि वे परिवार के साथ ही रहते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची : -

1. आहुआ राम (1994), 'सामाजिक समस्याएं', रावत पब्लिकेशन, जवाहर नगर, जयपुर।
2. ओझा एन. एम (2005),'भारत की सामाजिक समस्यायें', रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
3. गुप्ता एम. एल., शर्मा डी. डी. (2010) ,'भारतीय सामाजिक समस्याएं', साहित्य भवन, पब्लिकेशन आगरा।
4. आहुजा राम, (2008), 'सामाजिक समस्या, विवेक प्रकाशन', नई दिल्ली।
5. दुबे श्यामचरण (2005),'भारत में सामाजिक समस्याएँ', नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया नई दिल्ली।
6. जैन राजेन्द्र (2008),'झाबुआ के भिलों की संस्कृति', मानसी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
7. जैन राजेन्द्र (2008), 'झाबुआ के भिलों की संस्कृति', मानसी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
8. कुमार शेलेन्द्र मोहन (2011) 'एड्स से संघर्ष', योजना पत्रिका, नई दिल्ली।
9. लामस ग्रेसियन (1995),'एड्स एण्ड फेमिली एज्युकेशन', रावत पब्लिकेंशन, जयपुर।
10. मुकर्जी रविन्द्र नाथ (2012),'सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी', विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली।
11. नाकों (1994),'एड्स /एच. आई.वी./ एस वी.डी.,परामर्श प्रशिक्षण मेनुअल', नई दिल्ली।
12. नाको (2012-13), 'वार्षिक प्रतिवेदन', नई दिल्ली।
13. पाटिल अशोक डी (2008),'ग्रामीण एवं नगरीय समाजशास्त्र', म.प्र.हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
14. सिंह गुर्रिदरवीर (1997) 'एड्स एण्ड फेमिली एज्युकेशन, इग्नु नई दिल्ली।
15. शर्मा, कमलेश सुमन पाटनकर, (2002)'प्रवासी आदिवासी महिलाओं की समस्याएँ एवं समाधान', डॉ. आम्बेड़कर सामाजिक विज्ञान, शोध पत्रिका, महू।
16. शर्मा, श्रीनाथ (2003),'जनजातीय समाजशास्त्र', म.प्र.हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
17. सिंह, उर्मिलेश, (2009),'ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधायें योजना' पत्रिका, नई दिल्ली।
18. सांख्यिकी पुस्तिका (2011), सांख्यिकी कार्यालय, झाबुआ।

****

स्व सहायता समूहों का बैंक लिंकेज तथा रिवॉल्विंग फंड वितरण (धार जिले के संदर्भ में एक अध्ययन)

संजीव कुमार व्यास* डॉ. विजय ग्रेवाल**

प्रस्तावना – स्वयं सहायता समूह का बैंक में खाता खुलवाना एक चरणबद्ध प्रक्रिया है। पूर्व के शोध बताते है कि समूह के सदस्य प्रारम्भ में ऋण का उपभोग कार्य (बीमारी, शादी, शिक्षा इत्यादि) में अधिक खर्च करते हैं। कुछ समय उपरांत खर्च उत्पादन कार्य की ओर बढ़ता है और जैसे-जैसे समूह पुराना होता होता है उसके ऋण धारण की क्षमता भी बढती है। अपेक्षा यह रहती है कि अब समूह अनुभवी हो चूका है और सभी प्रकार का ऋण प्रवंधन क्षमता प्राप्त कर चूका है। इस वक्त समूह को पर्याप्त कोष की आवश्यकता होती है और इस हेतु किसी स्थानीय वित्तीय संस्था अथवा बैंक से सहबद्ध किया जाता है। प्रस्तुत शोध लेख मध्य प्रदेश के धार जिले के राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के द्वारा गठित स्व सहायता समूहों की बैंक लिंकेज की स्थिति पर तथ्यों को प्रकट करने का एक प्रयास है।

बैंकिग सरंचना एवं ग्रामीण – देश में औपचारिक ऋण प्रक्रिया का तेजी से विस्तार होने के बावजूद, बहुत से क्षेत्रों में, विशेष रूप से आकस्मिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए गरीब ग्रामीणों की निर्भरता अधिकांशत: साहूकारों पर ही थी। ऐसी निर्भरता सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग और जनजातियों के सीमान्त किसानों, भूमिहीन मजदूरों, छोटे व्यवसायियों और ग्रामीण कारीगरों में देखने को मिलती थी जिनकी बचत की क्षमता व राशि इतनी सीमित होती है कि बैंकों द्वारा उसे इक्ठ्ठा नहीं किया जा सकता। कई कारणों से इस वर्ग को दिए जाने वाले ऋण को संस्थागत नहीं किया जा सका है। गैर सरकारी संगठनों द्वारा बनाए गए अनौपचारिक समूहों पर नाबार्ड, एशियाई और प्रशांत क्षेत्रीय ऋण संघ (एप्राका) और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) द्वारा किए गए अध्ययनों से यह बात सामने आई है कि स्वयं सहायता बचत और ऋण समूहों में औपचारिक बैंकिंग ढांचे और ग्रामीण गरीबों को आपसी लाभ के लिए एकसाथ लाने की संभाव्यता है एवं उनका कार्य उत्साहजनक रहा है।

भारतीय रिजर्व बैंक के प्रयास – एसएचजी और गैर संगठनों की कार्यप्रणाली के अध्ययन के विचार से ग्रामीण क्षेत्र में उनकी गतिविधियों और भूमिका के विस्तार के लिए भारतीय रिजर्व बैंक ने श्री एस. के. कालिया नाबार्ड के तत्कालीन प्रबंध निदेशक की अध्यक्षता में नवंबर 1994 में एक कार्यदल का गठन किया जिसमें प्रमुख गैर सरकारी संगठनों के कार्यकर्ता, शिक्षाविद्, परामर्शदाता और बैंकर थे। कार्यदल का विचार था कि औपचारिक बैंकिंग प्रणाली से अब तक अछूते ग्रामीण गरीब लोगों को ऋण उपलब्ध कराने की स्थिति में सुधार के लिए एसएचजी को बैंकों से जोड़ना एक लागत प्रभावी, पारदर्शी और लचीला उपाय है और इससे ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण वसूली तथा बारंबार अंतराल पर छोटे उधारकर्ताओं के साथ लेन-देन में उच्च लेन-देन लागत की बैंकों की दोहरी समस्या का अति आवश्यक समाधान प्रदान की जाने की आशा है। अत: कार्यदल को ऐसा महसूस हुआ कि नीति का मुख्य उद्देश्य स्व-सहायता समूहों के गठन तथा बैंकों से उनकी सहलग्नता को प्रोत्साहित करना है और इस संबंध में बैंकों को मुख्य भूमिका निभानी होगी। कार्यदल ने सिफारिश की थी कि बैंकों को सहलग्नता कार्यक्रम को एक कारोबारी अवसर के रूप में लेना चाहिए तथा वे अन्य बातों के साथ-साथ संभाव्यता, स्थानीय आवश्यकताओं, उपलब्ध प्रतिभा/कौशल आदि को ध्यान में रखकर क्षेत्र-विशिष्ट और समूह - विशिष्ट ऋण पैकेज बनाएं।

स्व सहायता समूह का खाता खोलना – रिजर्व बैंक के अनुसार पंजीकृत और अपंजीकृत एसएचजी जो अपने सदस्यों की बचत आदतों को बढ़ाने के कार्य में संलग्न हैं, बैंकों के साथ बचत खाते खोलने के पात्र हैं। यह आवश्यक नहीं है कि इन एसएचजी ने बचत बैंक खाते खोलने से पहले बैंकों की ऋण सुविधा का उपयोग किया हो। चूंकि सभी पदधारियों का केवाईसी सत्यापन पर्याप्त है, अत: एसएचजी के बचत बैंक खाते खोलते समय एसएचजी के सभी सदस्यों का केवाईसी सत्यापन करने की आवश्यकता नहीं है। साथ ही, यह स्पष्ट किया जाता है कि चूंकि बचत बैंक खाता खोलते समय केवाईसी का पहले ही सत्यापन किया जा चुका होगा और उक्त खाता परिचालन में होने और उसे ऋण सहलग्नता के लिए प्रयोग में लाए जाने पर, एसएचजी को ऋण सहलग्नता प्रदान करते समय सदस्यों अथवा पदधारियों का अलग से केवाईसी सत्यापन करने की आवश्यकता नहीं है।

दस्तावेजीकरण – रिजर्व बैंक के अनुसार एक ऐसी आसान प्रणाली, जिसमें न्यूनतम क्रियाविधि और दस्तावेजीकरण की अपेक्षा हो, एसएचजी को ऋण के प्रवाह में वृद्धि करने की पूर्व शर्त है। उधारों के स्वरूप और उधारकर्ता के स्तर को ध्यान में रखते हुए बैंकों को अपने शाखा प्रबंधकों को पर्याप्त मंजूरी अधिकार प्रदान करके ऋण शीघ्र स्वीकृत और संवितरित करने की व्यवस्था करनी चाहिए तथा परिचालनगत सभी व्यवधानों को दूर करना चाहिए। ऋण आवेदन फार्मो, प्रक्रिया और दस्तावेजों को आसान बनाना चाहिए। इससे शीघ्र और सुविधाजनक रूप से ऋण उपलब्ध कराने में सहायता मिलेगी।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. स्व सहायता समूहों के बैंक लिंकेज के तथ्यों को राज्य एवं जिले के परिदृश्य में देखना।
2. रिवॉल्विंग फंड प्राप्त समूहों की स्थिति को जानना।

प्राक्कल्पनाएँ :

1. स्व सहायता समूहों का बैंक लिंकेज होने से वित्तीय लेन-देन में

* शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) श्री वैष्णव वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

पारदर्शिता स्पष्ट हुई हैं।

2. रिवॉल्विंग फंड प्राप्त स्व सहायता समूह अन्य समूहों से बेहतर प्रदर्शन करते हैं।

न्यादर्श – न्यादर्श हेतु उद्धेश्यपूर्ण निदर्शन की विधि को प्रयोग में लाया गया हैं जिसमें मध्यप्रदेश के धार जिले में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन द्वारा गठित 2014 से 2017 तक बैंक से जुड़े समस्त स्व सहायता समूहों का चयन किया गया हैं।

तथ्य संकलन – प्राथमिक तथ्य संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची तथा फोकस ग्रुप डिस्कशन प्रविधि का प्रयोग किया गया हैं। यह तथ्य संकलन समूह के पदाधिकारियों के उपलब्धता के अनुसार किया गया हैं। द्वितयिक तथ्यों हेतु इंटरनेट का सहयोग अपेक्षाकृत लिया गया हैं।

बैंक लिंकेज की स्थिति – प्रत्येक स्व सहायता समूह का जहां भी संभव हो खाता खोला जाता है। खाते का परिचालन दो प्राधिकृत अधिकारियों के हस्ताक्षर से किया जाता है। बचत-उधार, लेन-देन का रिकार्ड इसी में रहता है। समूह पंजीकृत या गैरपंजीकृत किसी भी बैंक में अपना खाता खोल सकतें है। समूह की महिलाओं में से ही अध्यक्ष और सचिव चुनी जाती हैं। समूह का बैंक में बचत खता खुलवाया जाता है। सभी महिलाएं उसमें दस से लेकर 50 रुपए तक हर माह जमा करतीं हैं। जरूरत के मुताबिक महिलाएं पैसा निकालती हैं और अगले माह उतनी ही रकम एकाउंट में जमा करती हैं।

सारणी :01 – स्व सहायता समूहों का बैंक से जुड़ाव

वर्षिक प्रगति	मध्य प्रदेश	बैंक से जुड़े स्व सहायता समूह	बैंक से नहीं जुड़े स्व सहायता समूह
2014 से 2015	64502	59072	5430
2015 से 2016	91615	84183	7432
2016 से 2017	103768	94439	9329
वर्षिक प्रगति	**धार जिला**	**बैंक से जुड़े स्व सहायता समूह**	**बैंक से नहीं जुड़े स्व सहायता समूह**
2014 से 2015	3550	3284	266
2015 से 2016	8738	8078	660
2016 से 2017	10966	10244	722

स्रोत :– अधिकारिक वेबसाईट राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन

सारणी 01 में स्व सहायता समूहों के बैंक लिंकेज की मध्य प्रदेश और धार जिले की तुलनात्मक स्थिति को दर्शाया गया है। 2014 से 2015 तक कुल मध्य प्रदेश में पात्र 64502 स्व सहायता समूहों में से 59072 स्व सहायता समूहों का बैंक में खाता खोला गया जबकि धार जिले में 3350 स्व सहायता समूहों में से 3284 स्व सहायता समूहों का बैंक में खाता खोला गया। 2015 से 2016 तक कुल मध्य प्रदेश में गठित 91615 स्व सहायता समूहों में से 84183 स्व सहायता समूहों का बैंक में खाता खोला गया जबकि धार जिले में 8738 स्व सहायता समूहों में से 8078 स्व सहायता समूहों का बैंक में खाता खोला गया। 2016 से 2017 तक कुल मध्य प्रदेश में गठित 103768 स्व सहायता समूहों में से 94439 स्व सहायता समूहों का बैंक में खाता खोला गया जबकि धार जिले में 10966 स्व सहायता समूहों में से 10244 स्व सहायता समूहों का बैंक में खाता खोला गया। अत: उक्त सारणी से यह ज्ञात होता है कि स्व सहायता समूहों के बैंक लिंकेज का स्तर मध्य प्रदेश और धार जिले में समान्तर हैं।

रिवॉल्विंग फन्ड – आर्थिक रूप से पिछड़े ग्रामीण गरीब परिवार की महिलाओं को समूह के माध्यम से स्वरोजगार स्थापित करने के लिए समूह में पूंजी की उपलब्धता के लिए रिवॉल्विंग फंड, सामुदायिक निवेश निधि व बैंक लिंकेज के माध्यम से ऋण उपलब्ध कराया जाता है। तीन माह तक सही तरीके से समूह के खाते का संचालन होने पर सरकार उसमें 15000 रुपए जमा कराती है। इस रकम को बैंक की भाषा में रिवॉल्विंग फंड कहते हैं। रिवॉल्विंग फंड मिलने के बाद छह माह तक समूह का सही तरीके से संचालन होने पर बैंक संबंधित समूह की लिमिट बनाती है। इस लिमिट (बैंक क्रेडिट) को लिंकेज बोलते हैं। यानी वह समूह सही तरीके से बैंक से लिंक हो गया। इस प्रक्रिया में 50 हजार से एक लाख रुपए के लिमिट का प्राविधान है। अमूमन बैंक पचास हजार की ही लिमिट बनाते हैं। सारणी 02 में स्व सहायता समूहों के रिवॉल्विंग फंड की पात्रता का मध्य प्रदेश और धार जिले की तुलनात्मक स्थिति को दर्शाया गया है। 2014 से 2015 तक कुल मध्य प्रदेश में कुल 64502 स्व सहायता समूहों में से 57049 स्व सहायता समूह रिवॉल्विंग फंड की पात्रता रखते थे जबकि धार जिले में 3550 स्व सहायता समूहों में से 3277 स्व सहायता समूह रिवॉल्विंग फंड की पात्रता रखते थे।

सारणी :02 – रिवॉल्विंग फन्ड हेतु पात्र स्व सहायता समूह

वर्षिक प्रगति	मध्य प्रदेश	रिवॉल्विंग फन्ड हेतु पात्र स्व सहायता समूह
2014 से 2015	64502	57049
2015 से 2016	91615	81892
2016 से 2017	103768	91959
वर्षिक प्रगति	**धार जिला**	**रिवॉल्विंग फन्ड हेतु पात्र स्व सहायता समूह**
2014 से 2015	3550	3277
2015 से 2016	8738	7989
2016 से 2017	10966	10168

स्रोत :– अधिकारिक वेबसाईट राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन

2015 से 2016 तक कुल मध्य प्रदेश में कुल 91615 स्व सहायता समूहों में से 81892 स्व सहायता समूह रिवॉल्विंग फंड की पात्रता रखते थे जबकि धार जिले में 8738 स्व सहायता समूहों में से 7989 स्व सहायता समूह रिवॉल्विंग फंड की पात्रता रखते थे। 2016 से 2017 तक कुल मध्य प्रदेश में कुल 137768 स्व सहायता समूहों में से 91959 स्व सहायता समूह रिवॉल्विंग फंड की पात्रता रखते थे जबकि धार जिले में 10966 स्व सहायता समूहों में से 10168 स्व सहायता समूह रिवॉल्विंग फंड की पात्रता रखते थे। अत: उक्त सारणी से यह ज्ञात होता है कि स्व सहायता समूहों ने मध्य प्रदेश और धार जिले में बेहतर संचालन करके रिवॉल्विंग फंड की पात्रता सुनिश्चित की हैं।

सारणी :03 – स्व सहायता समूहों को रिवॉल्विंग फन्ड वितरण

वर्षिक प्रगति	मध्य प्रदेश	रिवॉल्विंग फन्ड वितरण	राशि(लाख में)
2014 से 2015	57049	8604	1205.68
2015 से 2016	81892	7232	920.24
2016 से 2017	91959	11532	1435.19
वर्षिक प्रगति	**धार जिला**	**रिवॉल्विंग फन्ड वितरण**	**राशि(लाख में)**
2014 से 2015	3277	1412	196.71
2015 से 2016	7989	1165	170.17
2016 से 2017	10168	1225	183.3

स्त्रोत :- अधिकारिक वेबसाईट राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन

सारणी 03 में स्व सहायता समूहों के रिवॉल्विंग फंड की उपलब्धता का मध्य प्रदेश और धार जिले के विवरण को दर्शाया गया है। 2014 से 2015 तक मध्य प्रदेश में पात्र 81892 स्व सहायता समूहों में से 8604 स्व सहायता समूहों को 1205.68 लाख का रिवॉल्विंग फंड वितरित किया गया जबकि धार जिले में पात्र 3277 स्व सहायता समूहों में से 1412 स्व सहायता समूहों को 196.71 लाख का रिवॉल्विंग फंड वितरित किया गया। 2015 से 2016 तक मध्य प्रदेश में पात्र 81892 स्व सहायता समूहों में से 7232 स्व सहायता समूहों को 920.24 लाख का रिवॉल्विंग फंड वितरित किया गया जबकि धार जिले में पात्र 7989 स्व सहायता समूहों में से 1165 स्व सहायता समूहों को 170.17 लाख का रिवॉल्विंग फंड वितरित किया गया। 2016 से 2017 तक मध्य प्रदेश में पात्र 91959 स्व सहायता समूहों में से 11532 स्व सहायता समूहों को 1435.19 लाख का रिवॉल्विंग फंड वितरित किया गया जबकि धार जिले में पात्र 10168 स्व सहायता समूहों में से 1225 स्व सहायता समूहों को 183.3 लाख का रिवॉल्विंग फंड वितरित किया गया।

निष्कर्ष :

1. 2014 से 2015 धार जिले में 3350 स्व सहायता समूहों में से 3284 स्व सहायता समूहों बैंक से जोड़ा गया और पात्र 3277 स्व सहायता समूहों में से 1412 स्व सहायता समूहों को 196.71 लाख का रिवॉल्विंग फंड वितरित किया गया।
2. 2015 से 2016 तक धार जिले में 8738 स्व सहायता समूहों में से 8078 स्व सहायता समूहों बैंक से जोड़ा गया और पात्र 7989 स्व सहायता समूहों में से 1165 स्व सहायता समूहों को 170.17 लाख का रिवॉल्विंग फंड वितरित किया गया।
3. 2016 से 2017 तक धार जिले में 10966 स्व सहायता समूहों में से 10244 स्व सहायता समूहों बैंक से जोड़ा गया तथा पात्र 10168 स्व सहायता समूहों में से 1225 स्व सहायता समूहों को 183.3 लाख का रिवॉल्विंग फंड वितरित किया गया।

सुझाव :

1. स्वयं सहायता समूह का गठन लक्ष्य आधारित ना होकर माँग आधारित हो सकता हैं।
2. स्वयं सहायता समूहों का एक्सपोजर विजिट होना आवश्यक है।
3. स्वयं सहायता समूहों का बैंक के द्वारा समय-समय पर प्रशिक्षण करवा कर इनकी कार्यक्षमता कों बढ़ाया जा सकता हैं।
4. रिवॉल्विंग फन्ड में स्वयं सहायता समूहों की कार्यक्षमता के अनुसार बढ़ोत्तरी सुनिश्चित की जा सकती हैं।
5. शासकीय निविदाओं हेतु स्वयं सहायता समूहों की बचत राशि के अनुसार पात्रता एवं कायदिश में प्राथमिकता दे सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. MicroCredit Summit (2000) “Empowering Women With Microcredit”: Presented by Microcredit Summit Campaign the Beijing +5 Conference in New York. pp. 1-23.
2. Bhuiya, Abbas (2001) “Micro Credit and Emotional Well- Being: Experience of Poor Rural Women from Matlab, Bangladesh.” World Development. Vol.29, No.11, pp. 1957-1966.
3. Kabeer, Naila (2001) “Conflicts over Credit Re-evaluating the Empowerment Potential of Loans to a Women in Rural Bangladesh”, World Development, Vol. 29, No.1, PP. 63-84.
4. Harper, Malcom (2002). “Promotion of Self Help Groups Under the SHG Bank

****

भारत में सामाजिक न्याय की संकल्पना : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

महेश कुमार रचियता * डॉ. सुनील महावर **

प्रस्तावना – सामाजिक न्याय से आशय यह है कि व्यक्ति-व्यक्ति के मध्य सामाजिक स्थिति, रंग, जाति, धर्म, भाषा या लिंग आदि के आधार पर किसी प्रकार का भेद न किया जाये और राज्य में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के विकास का पूर्ण अवसर मिले। सामाजिक न्याय की धारणा में यह बात निहित है कि अच्छे जीवन के लिये आवश्यक परिस्थितियाँ प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव के प्राप्त होनी चाहिए और इस संदर्भ में राजनीतिक सत्ता से भी यह आशा की जाती है कि वह अपने विधायी तथा प्रशासनिक निर्णयों एवं कार्यक्रमों द्वारा एक ऐसे समाज की स्थापना करेगा, जो समानता पर आधारित हो।[1] समाजिक न्याय का अभिप्राय ऐसी सामाजिक व्यवस्था जिसमें प्रतिष्ठा सम्मान, उत्पादन के साधनों, शक्ति, सत्ता एवं लाभ कुछ लोगों के हाथ में न रह जाए वरन् बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक व्यक्ति को समाज में समान अवसर एवं सुख-सुविधाएं प्राप्त हों। विशेषकर निर्बल, निर्धन, शोषित, उत्पीड़ित एवं हाशिये पर रहे दीनहीन, वंचित एवं दलित वर्ग तथा महिलाओं को उनमें समुचित अवसर मिले ताकि वे सामान्यत: सुखी, सम्मानित और गरिमामय जीवन जी सकें। इस अर्थ में सामाजिक न्याय को वंचित वर्गों को समाज में बिना वर्ग विभेद के मानवीय सम्मान एवं अधिकारों की प्राप्ति के रूप में देखा जा सकती है।[2]

सामाजिक स्तर पर दुर्बल वर्गों के निम्न स्तर को ऊपर लाए बिना, अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों पर हो रहे अत्याचार को रोके बिना और इन जातियों को विकास क्रम में आगे लाये बिना सामाजिक न्याय संकल्पना भारत के संदर्भ साकार करना असम्भव है। इस प्रकार सामाजिक न्याय का अभिप्राय है कि सभी मनुष्यों को मानव की श्रेणी में स्वीकार करते हुए किसी भी तरह के सामाजिक भेद को मान्यता न प्रदान की जाये। प्रत्येक व्यक्ति समाज में समान रूप से न केवल पहचान मिले वरन् सार्वजनिक सुविधाओं को भोगने के समान अवसर प्राप्त हों तथा अतीत में जो भेदभाव के दंश उन्हें सहन करने पड़े थे जिनके कारण कि वे विकास क्रम में पिछड़ गये थे की क्षतिपूर्ति के लिए उन्हें कुछ विशेष प्रकार की सुविधाएं प्रदान की जाए।

राजनीतिक चिन्तन में सामाजिक न्याय की धारणा को बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। पाश्चात्य चिन्तन में सामाजिक नयाय की झलक प्लेटो के चिन्तन में दृष्टिगत होती है। तत्पश्चात् यह अवधारणा अनेक विचारकों के चिन्तन का मूल आधार रही। 'सामाजिक न्याय' शब्द का स्पष्ट रूप से उपयोग 1780 के दशक में किया गया। इस शब्द को गढने का श्रेय लूईगी तापारेली नाम के एक जेसुइट पुजारी को दिया जाता है[3] और 1848 के विद्रोह के दौरान एंटोनियो रोजमिनि, जो एक इतालवी कैथेलिक पादरी और दार्शनिक थे, ने रोसमिनियन इंस्टीट्यूट ऑफ चैरिटी या सोसाइटस के माध्यम से सामाजिक न्याय को आगे बढ़ाया। आगे चलकर जॉन डेवी, रोस्को पाउंड और लुई ब्रेंडिस ने अपने चिंतन में सामाजिक न्याय पर बल दिया। आधुनिक काल में जॉन रॉल्स ने 'ए थ्योरी ऑफ जस्टिस' में सामाजिक न्याय का विशद विश्लेषण प्रस्तुत किया।

भारतीय चिन्तन में यह अवधारणा अपेक्षाकृत आधुनिक है, क्योंकि प्राचीन समय में निर्धारित न्याय व्यवस्था सामाजिक न्याय के विपरीत सामाजिक शोषण एवं असमानता की स्थिति पर आधारित था। समाज में इस विभेद को न केवल शास्त्र सम्मत ठहाराया गया बल्कि उसे धार्मिक मान्यता एवं संरक्षण भी प्रदान किया गया। भारतीय समाज में विद्यमान इस असमानता एवं उत्पीड़न को दूर करने के लिए कुछ बुद्धिजीवियों एवं समाज सुधारकों ने प्रयास किया। इस दिशा में राजा राममोहन राय, ज्योतिराव फुले, सावित्री बाई फुले, ई.वी. रामास्वामी नायकर, महात्मा गांधी और डॉ. भीमराव अम्बेडकर का नाम उल्लेखनीय है।[4]

प्राचीन भारत में सामाजिक न्याय – भारतीय चिन्तन में विशेष रूप से प्राचीन वैदिक कालीन चिन्तन में सामाजिक न्याय की अवधारणा को चातुर्वर्ण्य सिद्धान्त पर आधारित बताया गया है। प्राचीन भारत में अधिकांश सामाजिक संगठन चातुर्वर्ण्य सिद्धान्त पर आधारित थे। प्रत्येक व्यक्ति अपनी जीविका का उपार्जन कर सके और निर्बाध अपना जीवन व्यतीत कर सके, इसलिए समाज को चार वर्णों ब्राह्मण, वैश्य और शूद्र में बांट दिया गया। प्रत्येक व्यक्ति अपने वर्ण के अनुसार कार्य का निष्पादन करता था और कोई किसी दूसरे वर्ण का कार्य में हस्तक्षेप नहीं कर सकता था। यहाँ चार्तुवर्ण्य सिद्धान्त में सामाजिक न्याय दृष्टिगत होता है।[5] यद्यपि यह व्यवस्था सामाजिक न्याय से अधिक अन्याय की ओर इशारा करती है।

मध्यकालीन भारत में सामाजिक न्याय – मध्यकालीन भारत में सामाजिक न्याय की तस्वीर धूमिल पड़ गयी थी। तत्कालीन समाज जातिवाद, सामंतवाद, असमानता एवं शोषणपूर्ण सामाजिक जीवन का पर्याय बन चुके थे। वर्णाश्रम व्यवस्था में जाति एवं अस्पृश्यता का बोलबाला था। मध्यकाल में सामाजिक न्याय की बुझती लौ को पुन: जलाने का प्रयास सूफी-सन्तों ने किया। उन्होंने अपने उपदेशों में सभी व्यक्तियों, चाहे वे किसी भी धर्म-सम्प्रदाय के हो, को ईश्वर/अल्लाह के सम्मुख समान बताया।

मध्यकाल में सामाजिक उत्पीड़न को अभिव्यक्ति प्रदान कर सामाजिक न्याय का स्वर देने वालों में एक प्रमुख नाम था चोखामेला का। चोखामेला अस्पृश्य समाज के अत्यंत निम्न स्तर से आये थे। मध्ययुग में सामाजिक समानता एवं न्याय की संकल्पना को जीवन्त रखने में संत कबीर और गुरू नानक का महत्वपूर्ण योगदान रहा। कबीर ने न केवल सैद्धान्तिक चिन्तन

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन विभाग) वनस्थली विद्यापीठ, निवाई, टौंक (राज.) भारत
** शोध निदेशक, एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन विभाग) वनस्थली विद्यापीठ, निवाई, टौंक (राज.) भारत

के स्तर पर बल्कि व्यवहारिक सामाजिक जीवन में भी शूद्रों एवं अछूतों के लिए पूर्ण समानता का समर्थन किया। उन्होंने सामाजिक समरसता का उपदेश देकर सामाजिक न्याय की भावना को प्रचारित किया।[6] मध्ययुग में संतों-सूफीयों के प्रयासों से सामाजिक न्याय के विचार को पुन: जीवन प्राप्त हुआ।

आधुनिक भारत में सामाजिक न्याय -आधुनिक युग को पुनर्जागरण का युग माना गया। सामाजिक न्याय की संकल्पना ने व्यावहारिक रूप प्राप्त कर लिया। इस युग में अधिनायकवाद, दैवीय आधार, सम्प्रदायवाद, वर्ण एवं जाति के आतंकवाद के स्थान पर स्वतंत्रता, प्रजातंत्र तथा मानववाद की भावना को बल प्राप्त हुआ। ब्रिटिश शासन में राज्य सामाजिक न्याय की शक्तिशाली संस्था के रूप में विकसित हुआ। समान न्याय पद्धति, शिक्षा एवं संचार के साधनों में वृद्धि, धर्मनिरपेक्षता, राजनीतिक जागृति इत्यादि ने मानवीय संबंधों और सामाजिक मूल्यों में बदलाव किया, जिसमें सामाजिक न्याय को बल प्राप्त हुआ। आधुनिक भारत में सामाजिक न्याय के विचार के विकास में केशवचन्द्र सेन, स्वामी दयानन्द सरस्वती, जस्टिस एम.जी. रानाडे, महात्मा ज्योतिबा फुले, सावित्र बाई फुले, स्वामी विवेकानन्द एवं महात्मा गांधी आदि का योगदान रहा किन्तु इन सबसे अधिक सामाजिक न्याय के संदर्भ में भीमराव अम्बेडकर का योगदान अविस्मरणिय है।

नवजागरण के अग्रदूत राजा राममोजन राय ने जाति व्यवस्था में उत्पन्न कमियों पर ध्यान दिलाते हुए स्पष्ट किया कि हिन्दू जाति में व्याप्त अछूत समस्या का कलंक है। हिन्दू समाज को अनेक जातियों एवं उपजातियों में विभाजित होने के कारण ही यहाँ के सामाजिक जीवन मे अनेक संकीर्णताओं ने स्थान बना लिया है। वे मानते थे कि अतीत में भारत की पराधीनता का कारण एकता का वह अभाव था, जिसे जाति व्यवस्था के फलस्वरूप उत्पन्न असंख्य विभाजनों एवं उप-विभाजनों ने जन्म दिया था। राजा राममोहनराय की मान्यता थी कि किसी भी व्यक्ति की जाति जन्म के आधार पर नहीं वरन् कर्म के आधार पर आंकी जानी चाहिए। किसी भी व्यक्ति को जाति के आधार पर उच्च अथवा निम्न बताकर भेदभाव ने नहीं किया जाना चाहिए अपितु उसकी योग्यता, गुणों और उपलब्धियों के आधार पर ही महत्व प्रदान किया जाना चाहिए।[7]

स्वामी विवेकानन्द ने जात-पांत के नियमों को उदार बनाने का प्रयास किया और साथ ही अस्पृश्यता का घोर विरोध किया। उनका मानना था कि सभी वर्णो की समानता स्थापित करने के लिए आवश्यक है कि शोषित वर्ग को शिक्षा के विस्तृत एवं समान अवसर प्रदान करने चाहिए।[8] महात्मा ज्योतिबा फुले की भूमिका समाज में समस्त जड़ता, अज्ञान, कुरीति और अन्धविश्वास दूर करने में अमूल्य रही है। उनका मत है कि जन्म के आधार पर न कोई शूद्र होता है न ही ब्राह्मण। उन्होंने स्पष्ट किया कि स्वयंहित के साधन हेतु कुछ लोगों ने पिछड़े हुए लोगों को आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं शिक्षा संबंधी अधिकार से वंचित करके उन्हें दलित एवं गुलाम बना दिया। ज्योतिबा के मत में सामाजिक समता और न्याय एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। उनके मत में सामाजिक न्याय के लिए शाब्दिक सहानुभूति, किताबी एकता, कोरे मेल-मिलाप के स्थान पर सामाजिक और जातीय समानता की आवश्यकता है।[9]

महात्मा गांधी का लक्ष्य सर्वोदय समाज की स्थापना करना था। सर्वोदय समाज से गांधी का तात्पर्य एक ऐसे समाज से था जिसमें सभी उन्नत हों, सभी सुखी हों, सभी के साथ न्याय हो। सामाजिक प्रगति में सब समान रूप से भागीदार बनें और सभी को सामाजिक प्रगति में समान रूप से हिस्सा मिले। गांधीजी यह जानते थे कि सर्वोदय समाज की उनकी परिकल्पना तब तक सार्थक नहीं हो सकती जब तक कि समाज के निर्बल व कमजोर वर्ग विशेष रूप से महिलायें और अछूत समुन्नत नहीं होते। इसलिये उन्होंने स्वतंत्रता के लिये संघर्ष के साथ महिलोत्थान तथा हरिजनोद्धार के कार्यक्रमों को अपने हाथ में लिया।

सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए किये गये संघर्ष का इतिहास अम्बेडकर के योगदान का उल्लेख किये बिना कभी पूर्ण नहीं हो सकता है। आधुनिक भारत में सामाजिक न्याय की स्थापना व दलित वर्गों के प्रति प्रतिबद्धता के प्रतीक के रूप में अम्बेडकर का नाम लिया जाात है। उन्होंने सामाजिक समानता स्थापित करने तथा दलित एवं अस्पृश्य समझे जाने वाले वर्गो के उत्थान के लिये अनेक प्रयास किये।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का चिंतन एवं सामाजिक न्याय - डॉ. अम्बेडकर की दृढ़ मान्यता थी कि सामाजिक-आर्थिक समानता के बिना राजनीतिक स्वतंत्रता निरर्थक है। अब जब देश के अधिकांश नेता राजनीतिक स्वतंत्रता की मांग कर रहे थे, लेकिन अम्बेडकर समाज के उपेक्षित-वंचित वर्ग के लिए सामाजिक अधिकारों की मांग कर रहे थे। अम्बेडकर के समस्त प्रयास भारतीय समाज में अस्पृश्यों जो अधिकार तथा सम्मान दिलाने की दिशा में थे। अस्पृश्यता की परपंरा इस देश में हजारों वर्षो से चली आ रही थीं वह समाज में पूर्ण रूप से व्याप्त हो गई थी। उसमें समाज के कई तत्व सक्रिय थे, इस समस्या के धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा अन्य पक्ष भी थे। स्वाभाविक है कि इस जटिल समस्या को हल करने के लिए इन सभी पक्षों को ध्यान में रखा जाए। अम्बेडकर ने इस समस्या के सभी पक्षों पर विचार कर मार्ग तय किया।[10] अम्बेडकर के प्रयासो से ही स्वतंत्रता उपरांत भारतीय संविधान में दलित वर्ग को समान अधिकार प्रदान किये गये तथा साथ ही उन अधिकारों के विशेष संरक्षण की व्यवस्था की गई, लेकिन संवैधानिक व्यवस्था के बावजूद भी व्यवहार में दलित वर्ग के लोग आज भी उस अमानवीय व्यवहार को सहने को विवश है।

भारतीय समाज में अधिकारों के विधान एवं व्यवहार में इस गहन भेद ने सामाजिक न्याय की प्रबल आवश्यकता को प्रतिपादित किया। भारतीय समाज में सामाजिक न्याय के विरूद्ध उपस्थित विभिन्न नकारात्मक पक्षों में सबसे अधिक हानिकर पक्ष 'अस्पृश्यता' है। जन्माधारित श्रेष्ठता-कनिष्ठता पर आधारित चातुर्वर्ण्य-व्यवस्था इस अस्पृश्यता की जननी है। इस व्यवस्था के अनुसार ब्राह्मण को सर्वश्रेष्ठ तथा शूद्र को कनिष्ठ वर्ण माना जाता रहा। उनका स्पर्श तक निंदनीय माना गया। इस वर्ण में कई जातियां थी, जो लगभग ढाई हजार वर्षो तक अस्पृश्य बनकर असह्य जीवन जी रही थी।[11] असमानता एवं अन्याय की यह भावना भारतीय समाज व्यवस्था का ही अभिन्न अंग है। अंबेडकर के अनुसार सामाजिक न्याय की कसौटियों पर यदि हिन्दू समाज, उसके विधान और वैचारिकी को परखें तो पायेंगे कि वे अन्यायपूर्ण है। हिन्दू समाज का बुनियादी सिद्धान्त समानता नहीं असमानता है। समानता से हमारा आशय भेदभाव की अनुपस्थिति है, जो हिन्दू समाज में नहीं है। हिन्दू समाज में वर्ण एवं जाति की रचना अपरिवर्तनीय असमानता के सिद्धांत पर हुई है। वर्णो एवं जातियों के अधिकारों, सुविधाओं एवं सामाजिक स्थितियों में अंतर है। विवाह, दासता, सम्पत्ति, स्वामित्व एवं दण्ड संबंधी मनु के विधान भेदभावपूर्ण हैं। इसमें ब्राह्मणों को विशेष सुविधाएं दी गयी हैं। सामाजिक सोपान में जैसे-जैसे हम ब्राह्मणों से नीचे की ओर बढ़ते हैं, ये सुविधाएं घटती जाती हैं और शूद्रों तक पहुँचते - पहुँचते मनु के नियम बहुत कठोर हो जाते हैं। चर्तुवर्ण से बाहर होने कारण इस विधान में अन्त्यजों की स्थिति दासों से भी बद्तर है।

अम्बेडकर ने सामाजिक न्याय की कसौटियों के आधार पर संविधान के माध्यम से न्यायपूर्ण समाज का ताना-बाना रचा था। अम्बेडकर के अनुसार स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व सामाजिक न्याय का दूसरा नाम है। अम्बेडकर के अनुसार स्वतंत्रता से आशय है व्यक्ति पर राज्य, समाज, वर्ग या अन्य व्यक्तियों के प्रतिबंध का नहीं होना है। स्वतंत्रता की एक आवश्यक पूर्व दशा समानता है। यदि नागरिकों के अधिकारों सुविधाओं में समानता होती है तो वे जीवन में स्वतंत्रता का प्रभावी ढंग से उपयोग कर पाते है। हिन्दू समाज में सुविधाओं एवं अधिकारों के वितरण में समानता का स्पष्ट अभाव है, इसलिए उनमें स्वतंत्रता का भी अभाव है। स्वतंत्रता की दूसरी आवश्यक दशा आर्थिक सुरक्षा है। मनु ने भिन्न वर्णो के लिए भिन्न व्यवसाय निर्धारित किए और जो व्यक्ति अपने वर्ण के लिए निर्धारित व्यवसाय को नहीं अपनाता उसे दण्ड देना राजा का कर्तव्य निरूपित किया। मनु ने शूद्रों को सम्पत्ति संग्रह करने के अधिकार से वंचित किया। शूद्र यदि किसी प्रकार कोई सम्पत्ति अर्जित भी करता तो उस पर उसके स्वामी का अधिकार होगा। अम्बेडकर के अनुसार स्वतंत्रता के उपयोग की तीसरी आवश्यक दशा यह है कि समाज में सभी को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार हो। प्राय: प्रचलित समाजों में शिक्षा धार्मिक विषयों तक ही सीमित रहती थी। प्राचीन काल में आम जनता को शिक्षित करने का दायित्व समाज पर नहीं था।[12]

सामाजिक न्याय की तीसरी कसौटी है, समाज में भाईचारे का पाया जाना। अम्बेडकर के अनुसार जातियों में बंटे होने के कारण हिन्दू समाज में भ्रातृत्व भाव का नितान्त अभाव है। हिन्दू समाज में सामाजिक समरसता नहीं है। इससे खान-पान, हुक्का-पानी और शादी-विवाह अपनी जाति में ही होता है। इसके अलावा जातियों में ऊँच-नीच की भावना भी पायी जाती है। जिसकी वजह से परस्पर प्रतिद्वंद्विता और घृणा की भावना बनी रहती है। इन बातों के अतिरिक्त विभिन्न जातियों, विशेष रूप से शीर्षस्थ में सत्ता पर वर्चस्व को लेकर संघर्ष होता रहता है। इन सब कारणों से एक जाति दूसरी जाति के सुख-दु:ख को अपना सुख-दु:ख नहीं समझती और न ही दूसरे के कल्याण को अपना कल्याण मानती है। जातियों के बीच आपसी विलगाव के कारण से हिन्दू समाज में भाईचारा और एकता की भावना का विकास नहीं हो पाया और उसे पराजय और पतन को प्राप्त होना पड़ा।[13]

समानता सहज एवं आवश्यक है तथा असमानता की तुलना में अधिक आवश्यक और अधिक महत्वपूर्ण है। मनुष्य पशु की तुलना में अपने समाज पर अधिक निर्भर करता है और समाज में बने रहने के लिए लोगों में सहयोग भी जरूरी है। समानता सहयोग को विकसित करती है। विषमता भी सहयोग को विकसित करती है किन्तु अधिक विषमता संघर्ष को जन्म देती है। संघर्ष समाज को विघटित करता है। समाज के घटकों में अविश्वास और संघर्ष अधिक होने की दशा में समाज विकास की जगह विनाश की और अग्रसर होता है।

सामाजिक जीवन में एकता की भावना आवश्यक है। जो समानता से विकसित होती है। अधिक विषमता में भाई-चारे की भावना का विकास नहीं होता, इससे समाज में बिखराव का खतरा अधिक हो जाता है। शिक्षा, आय, राजनैतिक शक्ति और सामाजिक प्रस्थिति से सम्बन्धित भेद जब समाज में बढ़ जाते हैं तो इससे न केवल सामाजिक संगठन अपितु राष्ट्रीय एकता को भी खतरा उत्पन्न हो जाता है। जब कभी समाज, संस्कृति और राष्ट्र पर कोई बाह्य संकट उत्पन्न होता है तो उपेक्षित, वंचित तथा सुविधा एवं अधिकार विहीन वर्ग जो समाज के हाशिये पर होते हैं, मूलधारा से आसानी से कट जाते हैं। वस्तुत: बाह्य या आरोपित व्यवस्था से तादात्मय स्थापित करने में उन्हें संकोच नहीं होता। ऐसी स्थिति में समाज, संस्कृति एवं राष्ट्र के विनाश को रोकना कठिन हो जाता है। समाज के अस्तित्व को बनाये रखने और उसे सतत् विकास की ओर गतिमान रखने की दृष्टि से समाज के विभिन्न वर्गो में परस्पर सामंजस्य अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार अधिक विषमता को नियंत्रित करना और समानता की प्राप्ति करना सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए आवश्यक है। भेदभाव रहित अथवा विषमता विहीन समता पर आधारित समाज की स्थापना ही सामाजिक न्याय का लक्ष्य है। सामाजिक न्याय का उद्गम ही मनुष्य के सामंजस्यपूर्ण सामाजिक जीवन व्यतीत करने के प्रक्रम में हुआ। सभी आदर्श तथा नैतिक मूल्य किसी न किसी रूप में मनुष्य के सामाजिक व्यवहार को अनुशासित तथा प्रभावित करने के लिए ही बनाये गये हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पूरण मल, मानवाधिकार, सामाजिक न्याय और भारत का संविधान, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2010, पृ. 115
2. सुनील महावर, भारत में दलित मानवाधिकार एवं सामाजिक न्याय, राज्य शास्त्र समीक्षा, अंक 33, नं. 1-2, जनवरी-दिसम्बर 2003, (जुलाई 2012 में प्रकाशित), पृ. 172
3. https://pdfs.semanticscholar.org/5875/8e983e1bc09 4d3a04d375d02b5b8b 6de5e23.pdf
4. शिप्रा सिंह, डॉ. भीमराव अम्बेडकर के चिंतन में सामाजिक न्याय की अवधारणा: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, रिसर्च रिइन्फोर्समेन्ट, खण्ड-6, अंक-1, मई 2018-अक्टूबर 2018, पृ. 115-116
5. राकेश कुमार झा, भारतीय चिंतन परम्परा में सामाजिक न्याय: एक विश्लेषण, राज्य शास्त्र समीक्षा, अंक 33, नं. 1-2, जनवरी-दिसम्बर 2003, (जुलाई 2012 में प्रकाशित), पृ. 110
6. राकेश कुमार झा, वही, पृ. 113
7. राजा राम मोहन राय, हिज लाइफ, राइटिंग्लस एण्ड स्पीचेज, जी.ए. नटेसन एण्ड कम्पनी, मद्रास, 1925, पृ. 30-36
8. ओम प्रकाश गाबा, भारतीय राजनीतिक विचारक, मयूर पेपरबैक्स, नोएड, 1999, पृ. 130
9. राकेश कुमार झा, वही, पृ. 119
10. गजानन च्वहाण, डॉ. बाबासाहब अंबेडकर: दलितों के मसीहा, लोकतंत्र समीक्षा, खण्ड 43, अंक 1-2, जनवरी-जून, पृ.111
11. गजानन च्वहाण, वही, पृ.105
12. आर.जी. सिंह, सामाजिक न्याय, लोकतंत्र और जाति व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ. 177
13. आर.जी. सिंह, वही, पृ. 178

****

भारतीय महिला संत

डॉ. ज्योति मिश्रा *

शोध सारांश – संत किसी धर्म, सम्प्रदाय ग्रन्थ या गुरु से प्रतिबद्ध नहीं होते जैसा की भक्त होते हैं। इसी कारण वे तथा उनका सृजन भी अर्थो में स्वायत्ता होकर अपनी प्रकृति एवं सृष्टि के निकट होता है। नारी सन्तों का सृजन भी सर्वल: मुक्त है। सभी सन्तों ने अपने अपने जनभाषाओं में अपनी वाणी का प्रचार किया और जनसाधारण से सीधा नाता जोड़ा। नारी सन्तों ने भी एक कदम और आगे बढ़कर अपने-अपने समाज के पुरुष वर्ग के विरुद्ध अपने प्रति होने वाले अन्याय और प्रताड़ना की आवाज को बुलन्द करने के लिए जनसाधारण की भाषा को अपनाया, उन्हें अपनी वाणी और उपदेशों में अभिव्यंजित किया। वास्तव में यह लोक साहित्य ही संत साहित्य का इतिहास अपने भीतर छुपाये हुए है। महिला संतों ने अज्ञान एवं अन्याय से ग्रस्त नारी जाति को उन्नति का मार्ग दिखाया। महिला शक्ति से समन्वित होकर भक्ति मार्ग अधिक प्रशस्त हुआ। अपनी भक्ति भाव पूर्ण रचनाओं के द्वारा इन महिला संतों ने यह सिद्ध कर दिया कि नारी शक्ति स्वरूपा है।

प्रस्तावना – बीज काव्य – महिला संत – 'हरि अनन्ता हरि कथा अनन्ता' के समान ही भारतीय समाज और साहित्य में सन्तों की सत्ता और शक्ति अनन्त, अकथ और अनुपम है। इस अनन्तता का प्रमुख कारण उनका सीमातीत और वाकतीत विस्तार है और इस विस्तार के पीछे आत्मोन्नयन तथा मानवीय उत्कर्ष की उदात्त धारणा विद्यमान है। 'सन्त' शब्द सत् शब्द से निर्मित हुआ है और 'सन' सत् का पुल्लिंग है जो 'ल' प्रत्यय के योग से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है- होने वाला या रहने वाला। इससे स्पष्ट है कि इस नश्वर संसार में वही व्यक्ति यश:काय रूप में स्थिर रह सकता है जिसके चित्त में मानवीय उत्कर्ष या मानवता का मंगल भाव निहित हो। वास्तव में हमारे सन्त हमारी संस्कृति के सच्चे संपोषक और सम्प्रसारक है, मानवात्मा के अभ्यूदय के मूर्त रूप हैं। संत शब्द बड़ा व्यापक है और इसकी परिसीमा सगुणोपासक और निर्गुणोपासक सभी आ जाते ळै लेकिन अब यह शब्द रूढ़ हो गया है और हम संत शब्द से तिर्गुणोपासक सन्त कवियों का ही अर्थ लगाते हैं। भक्तिकालीन हिन्दी संतों में कबीर, नानक, दादू, रैदास, रज्जब, धनीधरमदास, मलूकदास, सुन्दरदास, गरीबदास, चरणदास आदि अनगिनत साधु संतों की गणना की जाती है तथा नारी संतों में आंडाल, लक्ष्मीकरा, अक्क-महादेवी, माधवी, लल्लेश्वरी, मीराबाई, बावरी साहिबा, दयाबाई, सहजोबाई, मुक्ताबाई आदि अनगिनत नारी संतों की गणना की जाती है।

भारत के गौरवशाली सांस्कृतिक इतिहास में महिला संतों की एक सुदीर्घ परम्परा है जो वर्तमान युग तक निरन्तर प्रवाहित है और इक्सवीं सदी के द्वितीय दशक में नारी सशक्तीकरण की दिशा में बढ़ता हुआ नारी मुक्ति आन्दोलन को वैश्विक स्तर पर एक नई दिशा दे रहा है। ऐसी स्थिति में भारत अपने वैदिक युगीन विदुषी नारियों को विश्व समाज के सामने एक आदर्श के रूप में रख सकता है। भारत की प्राचीन विदुषी नारियों – गार्गी, घोसा, अपाला, ऊषा, अदिति, गोद्या, इला, सरस्वती, सरमा, इन्द्राणी, उर्वशी, लोपमुद्रा, श्रद्धा, सूर्या, सावित्री, शची, शक्ती, उमा, हेमवती, सुलभ, ममता, रोमशा आदि वेदकालीन एवं उत्तरवेदकालीन ऋषि माताओं ने अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया। इसी प्रकार मध्ययुग में महिला संतों ने अपने संत गुरुओं के साथ तथा स्वतंत्र रहकर अपने आराध्य के प्रति अनन्य भक्तिभाव और अद्भूत मनोबल के कारण अंतत: अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुई। भारतीय संस्कृति में नारी को शक्ति स्वरूपा माना गया है उसे इन्हीं अर्थो में पूज्य माना जाता है। शिव शक्ति के समन्वित होकर ही पूजे जाते है। शक्ति से समन्वित इन महिला सन्तों ने सांसारिक प्रलोभनों से दूर रहकर स्वयं को प्रभु चरणों में समर्पित कर दिया साथ ही पुरुष सन्तों की भाँति बल्कि उससे भी अधिक विद्रोहिणी भूमिकाओं में कर्मकांड तथा परम्परागत प्रथाओं का विरोध करते हुए अज्ञान एवं अन्याय से ग्रस्त नारी जाति को उन्नति का मार्ग दिखाया। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया की महिलाएँ भी शक्ति स्वरूपा हैं।

इन नारी सन्तों को विद्रोहिणी भूमिका में देखकर समाज उनका शत्रु बन गया और उनके अस्तित्व तक को मिटा डालने पर उतारू हो गया। कई नारी सन्तों के जीवन से ऐसे प्रमाण मिलते हैं। मीराबाई सबसे ज्वलंत प्रमाण है। पुरुष समाज के अहंकार को इन नारी सन्तों ने बड़े गहरे घाव दिए। इतना ही नहीं 'जड़ संस्कारी, अन्ध साम्प्रदायिक, धर्मो के नाम पर अधार्मिक अधम मानवीय कृत्यों, सजाओं, अन्यायों को अन्याय ढोहरे-तिहरे घेरों को नारी सन्तों ने तोड़ा है। इस टूटने की आवाजें ईसापूर्व काल से लेकर आज तक आयी इन नारी सन्तों की वाणियों में सुनी जा सकती है।'[1]

'भारतीय अमर नारी सन्तों ने समाज की जड़ता को तोड़ने की खातिर, जाति-पाति, ऊँच-नीच, साम्प्रदायिकता पूर्ण भेदभाव को मिटाने के लिए की गहरी चोटें दी। पुरुष संतों से भी गहरी गम्भीर। क्योंकि उन्होंने दलित वर्ग के पुरुषों से भी अधिक घिनौने, अपमान, लांछन, भूख और अन्याय के दंश सहे। वेद-कालीन समता, स्वतंत्रता, सम्मान व शिक्षा के अधिकारों के क्रमश: खोते जाने और अज्ञानता, अविद्या के गहन अन्धकार में धकेल दिए जाने के बाद, नारी को मात्र भोग्य पदार्थ एवं क्रय-विक्रय की वस्तु बल्कि इससे भी नीचे – 'पाँव की जूती' बना दिए जाने की घोर जलालत भरी, नारकीय स्थितियों को भोगना पड़ा। इस कारण विवशता में ही सही चुपचाप खामोश रह कर समाज को उक्त स्थितियाँ रचने के कारण नंगा किया। उन्होंने घर छोड दिए, अकेली हो गयी पर झुकी नहीं। पुरुष सन्त जो प्राय: समाज

* ऐसोसिएट प्रोफेसर (हिन्दी) गंगाधर मेहेर विश्वविद्यालय, सम्बलपुर (ओडिशा) भारत

के निम्न, दलित, उपेक्षित वर्ग में आते है, उसी के संग साथ में रहकर भी नारी सन्तों ने भगवान को अपनी, अपने वर्ग की आपबीती सुनाई, मुक्ति की गुहार भी लगाई। भगवान को उलाहने भी दिए कि कैसे मनुष्यों की दुनिया में उसने उन्हें धकेल दिया। नारी सन्त तो दलितों की भी दलित है। उनकी यातनाएँ तो दोहरी-चौहरी है किन्तु अपनी और समूचे मानव समाज की मुक्ति का मार्ग उन्होंने दिखाया - आत्म छन्द को उपलब्ध करके, स्वच्छन्द हो जाना है, मुक्त हो जाना है।'[2]

दक्षिण भारतीय नारी सन्तों के ईष्ट शिव है। छठी शताब्दी के तामिलनाडु की पहली नारी सन्त कारैक्काल अम्मैयार (पुनितवर्ता) निर्गुण निराकार शिव की आराधिक हैं। अपनी वाणी में शिव को उसने 'ज्ञान रूप' माना है। भले ही शिव का बाध्याकार 'नीलकंठ', 'जटाधारी', 'जटा में गंगा' तथा 'चन्द्रकला' सुशोभित वाला है, किन्तु उनकी शक्ति सार्वभौम व्यापिनी है, सब पर कृपा कर उद्धार करने वाली है।'[3] पुनितवती कहती है कि वही शिव धरती, आकाश, जल तथा प्रकाश रूप है। निराकार है।

संत कवियत्री आंगल मध्यकालीन अनन्य कृष्ण भक्त मीराबाई की तरह एकनिष्ठ, गहन आस्थाशील आलवार भक्त आठवीं शताब्दी में दक्षिण भारत में हुई। आडांल का अर्थ है देव की प्रियतमा अथवा विष्णु पत्नी अपने ईष्ट भगवान कृष्ण पर भी शासन करने के कारण लोग उसे आंगल (शासिका) कहने लगे। संत कवियत्री आण्डाल का मूल नाम गोदा देवी था। गो याने धरती दा याने दी हुई। आलवार संत विष्णुचित्त कोदई को धरती माना की भेंट समझता था। दक्षिण भारत में आंडाल के द्वारा पहनी गई पुष्पमाला ही रोज रंगनाथ को अर्पित करने की प्रथा रूढ है जो आज भी प्रचलन में है। इस परम्परा गत प्रथा के कारण तमिलनाडू की जनता आंगल को 'शुडिकोडुत नाच्चियार' अर्थात् (अपना निर्माल्य देव को अर्पण करने वाली) नाम से संबोधित करती है। आंडाल को रंगनाथ की पत्नी अर्थात् 'रंगनायकी' कहा जाता है और प्रतिवर्ष रंगनाथ के मंदिर में उसके विवाह को महोत्सव के रूप में मनाया जाता है। आंगल ने तमिल भाषा में 'तिरूप्पावै' और 'नाच्चियार तिरूमौली' नामक दो सुन्दर काव्य ग्रन्थों की रचना की। 'तिरूप्पावै' में कात्यायानी व्रत कथा है। जिसके सभी पदों में राधावल्लभ श्रीकृष्ण के अनुपम सौन्दर्य, प्रेम, कम्णा, भक्तवत्सलता आदि गुणों का वर्णन है। 'नाच्चियार तिरूमौली' के 143 पदों में - 'देवता उक्त पवित्र वचन' है। इसमें श्रीरंगनाथ की प्राप्ति के लिए आंडाल की उत्कट भक्तिभावना का हृदयस्पर्शी वर्णन है। भक्ति परम्परा में आंगल का स्थान उत्तरभारत को 'मीरा' के समान है।

अल्कामहादेवी कर्नाटक की महाशिवयोगिनी सन्त हुई। उनके ईष्ट का नाम श्री मल्लिकार्जुन है। बचपन से ही शरण सती लिंग पति का भाव उनके मन में रम गया था। वह उनकी अनन्य भक्त थी तथा अपने ईष्ट के साथ एक रूप हो गई थी। इनके ईष्ट देव कृष्ण है और कृष्ण ही आनंद और मुक्ति का माध्यम है। इस सम्प्रदाय के संस्थापक चक्रधर स्वामी के मत के प्रचार-प्रसार का एक बड़ा श्रेय महदायिसा को जाता है। संत वेणास्वामी अपने गुरु संत रामदास के सम्प्रदाय ईष्ट रामभक्त हनुमान को ही अपना ईष्ट मानती है। इनका मानना था कि मानव-सेवा ही सच्ची ईश सेवा है इसलिए अपने गुरु के साथ सामाजिक एवं राष्ट्रीय उत्थान के कार्य में हाथ बँटाती रहीं। संत सोयराबाई भगवान के पांडुरंगा स्वरूप को अपना ईष्ट मानती है। वारकरी सन्तों ने निर्गुण ज्ञानमार्गी स्वरूप को सर्वोपरि माना है तथा गीता ज्ञान को युक्तिपथ के रूप में स्वीकार किया। संत मुक्ताबाई भी, जो वृत्तिनाथ, ज्ञानदेव, सोपानदेव की बहन है इसी ईष्ट परम्प्रा को स्वीकार करती है। भक्ति की साक्षात् प्रतिमा लल्लेश्वरी कश्मीर की प्रथम अमर महिला संत थी। तत्कालीन कशीमर शैव-दर्शन के आचार्य सिद्ध श्रीकंठ के अनुशासनबद्ध मार्गदर्शन में लल्लेश्वरी ने शैवदर्शन का गहन ज्ञान प्राप्त किया। लल्लेश्वरी द्वारा प्रतिपादित 'रिशी संप्रदाय' का विलक्षण प्रभाव आज भी कश्मीर के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन पर स्पष्ट परिलक्षित होता है। उनकी प्रवचनों और गीतों में अभिव्यक्त अध्यात्मिक विचार रिशी सम्प्रदाय के मूल तत्व बन गए। उनकी रचनाएँ 'लल्लावाक्यानि' नाम से आज भी प्रसिद्ध है। उनकी प्रशंसा में शेख नुरुद्दीन कहते है- 'ईश्वर प्राप्ति की तड़फ में उसने अपने सर्वस्व का होम कर दिया।'[4] वेश्या की पुत्री कान्होपात्रा जिसने अपना सारा जीवन अपने प्रिय कृष्ण को अर्पित कर दिया। अपनी आत्मा को मारकर अपना शरीर बेचने की अपेक्षा अपना सर्वस्व कृष्ण भक्ति में लगा दिया।

भक्तिकालीन महान् संत मीरा के आराध्य ईष्ट देव भगवान कृष्ण थे। भक्ति के सगुण मार्ग से आरंभ करके वह अपने अन्तिम सोपान तक आते आते निर्गुण निराकार भक्ति के शिखर तक पहुँच गयी। संत रैदास इनके गुरु थे। इस संबंध में डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं- 'मीराबाई अत्यंत उदार और मनोभाव संपन्न नारी थी। उसके मन में किसी भी पंथ के प्रति विशेष आग्रह नहीं था जहाँ जहाँ उसे भक्ति और पवित्रता देखने को मिली वहाँ-वहाँ उसने विनम्र भाव से वंदन किया।'[5] उनके काव्य ग्रन्थों में 'गीत गोविन्द की टीका, नरसी जी मेरो माहेरो, राग मल्हार, राम विहाग, सोरठ के पद, मीरानी गरबो, फुटकर पद, रूक्मिणी, मंगल, सत्यभानु रूसण, नरसी मेहता की हुंडी' आदि प्रमुख है। ब्रजभाषा में रचित 'मीराबाई' का पदावली प्रमुख काव्य ग्रन्थ है। इनकी काव्य भाषा ब्रज पर राजस्थानी, गुजराती और पंजाबी भाषा का प्रभाव है। नवधा-भक्ति से युक्त मीरा के पदों में सर्वत्र विशुद्ध भक्ति और संपूर्ण समर्पण के भाव चित्रित है। कृष्ण के विरह में व्यथित मीरा की एकमात्र शिकायत यही थी कि -

'हेरि म्हां दरदे दिवाणी
म्हारां दरद न जाण्यो कोय।'[6]

सन्त आतुकूरि मोल्ला आन्ध्रप्रदेश की ऐसी महिला संत है जिसने तेलगु भाषा में अपने ईष्ट श्रीराम की भक्ति में रामायण की रचना की। बादशाह अकबर और संत दादुदयाल की समकालीन महिला संत बावरी-सहिबा के नाम से 'बावरी पंथ' प्रसिद्ध हुआ। बावरी पंथ निर्गुणोपासक था। बावरी साहिबा ने भक्तिरस से युक्त अनेक रचनाओं का निर्माण किया। किन्तु वर्तमान में केवल दो ही रचनाएँ उपलब्ध है। संत दयाबाई तथा संत सहजोबाई महात्मा चरणदास की शिष्याएँ थी। इनके ईष्ट भगवान श्रीकृष्ण है। इन्होंने कृष्ण के निर्गुण रूप की उपासना की। दयाबाइ द्वारा रचित 'दयाबोध' और 'विनयमालिका' काव्य कृतियाँ साहित्य सुषमा में मंडित है। सहजोबाई द्वारा रचित 'सहज-प्रकाश' तथा 'सोलह तत्व' उनकी अद्भूत कवित्व शक्ति के प्रमाण है।

आंध्रप्रदेश के चित्तूर जिले में जन्मी संत बंगमाम्बा वेंकटेश्वर को अपना आराध्य मानती थी। अनश्वर, अविनाशी वेंकटेश्वर ही उसके पति थे। 'तरिगोंडा नरसिंह शलकमु, नरसिंह विलास, शिवविलासमु, बालकृष्ण नाटकमु इनके प्रसिद्ध काव्य ग्रन्थ हैं। नवधा-भक्ति, प्रेमा भक्ति तथा माधुर्योपासना के सौष्ठव से युक्त इनकी सभी रचनाएँ तेलगु साहित्य की अक्षय संपदा है। सौराष्ट की भूमि में जन्मी भूधर दास की शिष्या गंगासती के जीवन का केन्द्र बिन्दु 'चैतन्य' है। और यही चैतन्य आत्मा, भगवान, ईश्वर तथा ब्रह्म आदि नामों से प्रतीत होता है। गंगासती द्वारा 'रचित पूर अभंग' उनकी दृढ गुरु निष्ठा आध्यात्मिक ज्ञान तथा निर्मल भक्ति भाव से

संपन्न है।'[7]

'सतीलोयण' के नाम से प्रसिद्ध संत लोयण का जन्म सौराष्ट के अमरेली जिले के कीडी गाँव में लौहार परिवार में हुआ। संत लोयण के भजनों में गुरु महिलमा, भक्तिमार्ग की प्रशंसा तथा योगसाधना की गुढातिगुढ़ प्रक्रियाओं को अत्यन्त सहज सरल भाषा में अभिव्यंजित किया गया है। लोयण हरि और गुरु को एकरूप मानती है। गुरु ही शिष्य को साधना की उच्चतम भावभूमि पर पहुँचाता है। लोयण के भजनों में परमतत्व के सगुण और निर्गुण दोनों रूपों का वर्णन है। अमराम भगत के भजन संग्रह 'भक्तिसागर' में सतीलोयण के 84 भजन संग्रहित हैं।

प्राचीन मराठी संत कवियित्री जनाबाई का जीवन नामवदेव के मार्गदर्शन से सार्थक हो गया। विशुद्ध अंत:करण से विठ्ठल भक्ति ही उनके जीवन का परमोच्च ध्येय था। संत ज्ञानेश्वर के कारण उसे पांडुरंग के दर्शन हुए और वह आध्यात्मिक उन्नति के चरम शिखर तक पहुँच गई। उसके द्वारा रचित – हरिश्चंद्राख्यान, थालीपाक, प्रल्हाद, चरित्र, कृष्णजन्म, बालक्रीड़ा आदि ग्रंथ काव्य सौन्दर्य एवं दार्शनिक विचारों से भूषित हैं। महाराष्ट्र की संत परम्परा में 'नाम–चतुष्ट्य' के रूप में विख्यात निवृतिनाथ ज्ञानदेव, सोपानदेव और मुक्ताबाई का विशिष्टस्थान है। मुक्ताबाई को तत्कालीन यादवकालीन इतिहास में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। कल्याण पत्रिका, ताटी के अभंग, नमन, हरिपाठ उनकी प्रसिद्ध काव्य रचनाएँ हैं जिनमें आध्यात्मिक भाव बोध, भक्ति, नामस्मरण एवं कीर्त्तन की उपलब्धियों से प्राप्त आनंद के भाव व्यक्त हुए है।

संत चोखेबा की बड़ी बहन संत निर्मलाबाई अपने भाई को ही अपना गुरु मानती है। निर्मलाबाई कहती है कि प्रभु की कृपा से ही व्यक्ति उनके नाम का जप और स्मरण कर सकता है, किन्तु यह नाम स्मरण शुद्ध मन और गहरे निष्ठाभाव से लिया जाना चाहिए।

नारी सन्तों में कान्होपात्रा का प्रमुख स्थान है। कान्होपात्रा ने अपना सम्पूर्ण जीवन कृष्ण भक्ति में लगा दिया। कान्होपात्रा के स्वरचित अभंग संख्या में कम है किन्तु वे अत्यंत भावपूर्ण और उसके अन्त:करण की पवित्रता तथा निर्मल भक्तिभाव के निर्देशक हैं।

आन्ध्रप्रदेश के संत कवियों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखने वाली मोल्लांबा ने तेलगु भाषा में रामायण की रचना की। सरल, सुबोध भाषा तथा चम्पू शैली में लिखी यह अद्भुत रामायण है। महाराष्ट्र की प्रमुख संत वेणाबाई के मन में श्रीराम के प्रति बचपन से ही प्रगाढ़ भक्ति थी। वेणाबाई ने मंगल रामायण, छंदो रामायण, संकेत रामायण, लवकुश रामायण, सुंदर रामायण, शब्द रामायण, भाषा रामायण आदि ग्रन्थों की रचना की। इसके साथ ही वेणाबाई ने अनेक भजन, गीत तथा मधुर पद रचनाओं के द्वारा मराठी साहित्य को समृद्ध किया। सन्त वहिणाबाई सन्त तुकाराम की शिष्या है। उन्होंने मराठी और हिन्दी दोनों भाषाओं में काव्य की रचना की। वहिणाबाई ने अभंग के माध्यम से अपना 'आत्मचरित' भी लिखा। इनकी हिन्दी की रचनाओं में तत्कालीन हिन्दी भाषा का स्वरूप परिलक्षित होता है। सन्त उमा निर्गुण निराकार ब्रह्म को मानती थी। उमा के पदों में तीव्र आध्यात्मिक अनुभूतियों और भावों के वेग को स्पष्ट रूप से अनुभव किया जा सकता है। वह अपनी आत्मा को सद्गुरु की आत्मा में मिला देना चाहती है। श्री शारदा देवी माँ काली की साक्षात् जीवित प्रतिमा थी। आज भी श्री शारदा देवी की विश्व जननी के रूप में सर्वत्र आराधना की जाती है।

मुस्लिम परिवार में जन्मी सन्त ताज बीबी ने मीराबाई की तरह कृष्ण भक्ति में मतवाली हुई। कृष्ण की रूप माधुरी पर वह अपने जन्मजात धर्म को न्यौछावर कर दिया। मीराबाई से एक कदम आगे बढ़कर मुगलानी धर्म की आन–बान को कृष्ण पर कुर्बान करके हिन्दुआनी बनना स्वीकार किया। उसने मुक्त कण्ठ से गाया –

'नन्द के कुमार, कुरबान तेरी सूरत पे।
हूँ तो मुगलानी, हिन्दुआनी ह्वै रहूँगी मैं।।'[8]

संत कवियित्री इन्द्रायती ने हिन्दू–मुस्लिम–ईसाई एकता का प्रचार किया। इनके रचित ग्रन्थों में 'ऋतु–ऋतु', षट् ऋतु नो, कलस प्रमुख है जिनमें प्रेम–विरह के व्यापक भावों का वर्णन है। सन्त कोकिलाबाई की साधना मुख्यत: सखीभाव की थी। उच्चकोटी की साधिका होने के कारण इनकी कई शिष्याएँ थी। इनकी भाषा में कहीं पूर्वी–हिन्दी की झलक मिलती है तो कही पंजाबी शब्दों की छटा।

इनके अलावा संत नूपीबाई, सन्त है हसीना, हमीदा, संत पार्वती, सन्त फूलीबाई, संतजन बेगम, सन्त करमाबाई, संत सखूबाई, बयाबाई, सागरबाई, सन्त माँ पीरो आदि अनेक ऐसी संत महिलाएँ हुई जिन्होंने अपनी दु:खों से परमात्मा की राह प्राप्त की। इनकी रचनाओं में अपने आराध्य के प्रति गहरी निष्ठा और श्रद्धाभाव व्यंजित हुए हैं। इनके जीवन का एकमात्र और अंतिम लक्ष्य 'श्रीकृष्ण शरणम्' था इन नारी संतों का जीवन समूचे नारी–समाज के लिए प्रेरणा का आधार बन सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय नारी संत परम्परा, बलदेव वंशी, वाणी प्रकाशन, पृ. 12
2. भारतीय नारी संत परम्परा, बलदेव वंशी, वाणी प्रकाशन, कवर पेज
3. भारतीय नारी संत परम्परा, बलदेव वंशी, वाणी प्रकाशन, पृ. 29
4. भारत की महिला संत, डॉ. वासंती मधुकर सालवेकर, अतुल प्रकाशन, पृ. 31
5. भारत की महिला संत, अतुल प्रकाशन, पृ. 35
6. मीराबाई की पदावली, पृ. 123
7. भारत की महिला संत, अतुल प्रकाशन, पृ. 51
8. भारतीय नारी संत परम्परा, बलदेव वंशी, पृ. 90

****

Factors affecting Promotion of Culinary Tourism in district Nainital (Nainital district)

Sundeep Singh Takuli* Dr. Yashwant Singh Rawal**

Abstract - Local cuisine play an important role to attract tourist from various places to a particular destination Cuisine has a great impact on traveler's choice when choosing their final destination. A variety of businesses including farms, restaurants, or specialty food stores, cooking school, tour operators, breweries, wineries, historical attractions , religious monuments and many other businesses across the country have capitalized on their regions culturally unique cuisines to attract various tourist. Culinary of a destination can also be categorized as a part of cultural tourism. It is not only a basic need for tourist but also a cultural element that can positively present a destination. Food consumption can be used in the development of a destination image. In addition , culinary tourism is not only attracting the tourist, but also contributes to the social, economic and environmental development of that particular destination. This paper focus at the importance of the connection between food and tourism which cannot be ignored from any point of view. Each tourist destination of nainital district has different level of beauty that can attract tourist from different countries and various places thus the delicious food of nainital district which is also rich in medicinal values as it grow on high altitude and harsh climate can be used as the main attraction and promotional tool for the development of tourism in Nainital district and what are the various factors that can be helpfulin promoting culinary tourism in Nainital district of uttrakhand.
Keywords: - culinary, Cuisines, destination, promotional.

Introduction - Nainital is referred to in the 'Manas Khand' of the 'Skanda Purana' as the Tri-Rishi-Sarovar,the lake of the three sages ,Atri,Pulastya and Pulaha who were reputed to have arrived here on a penitential piligrimage, and, finding no water to quench their thirst dug a hole and siphoned water into it from Mansarovar the sacred lake in Tibet.

The Second important mythological reference to Nainital is as one of 64 'Shakti Peeths'.These centres were created wherever parts of charred body of Sati fell ,when Lord Shiva was carrying around her corpse in grief .It is said that the left eye (Nain) of Sati fell here and this gave rise to patron deity of town Nainital . It is said that the lake is formed in the emerald eye shape . Naina Devi temple is located at the northern end of the lake . Thus name of Nainital derivated from Naina and the tal (Lake).

Objectives of the Study - The main objective of this is to present trends in the emergence of culinery tourism in nainital district states of India. The paper aims to focus on the impact of culinery tourism in regional and local development and conservation of culinary traditions that is mixed with the culture of uttrakhand. A special emphasis has also been made on food as an attraction in destination marketing apart from other tourist attractions.

An attempt has been made to show the scope of culinary tourism in nainital district India which indirectly helps the tourist to get along well with culture, rich heritage traditions and inclination of a particular region. In uttrakhand, the concept of culinary tourism is still new underdeveloped and unexplored by many tourism professionals about the fact that the cuisine of a place is in fact an reflection of its history. The sole aim of this paper is to develop culinary tourism concept like other forms of tourism and pave the way for its sustainability and exploring and bringing to limelight the antique foods which are hidden as the Treasure Island and putting it as one of the masterpiece of India's rich culinary repository. The purpose of the study is to find out the initial growth and scope of culinary tourism in nainital district India. So, as a strong marketing strategy can be chalked out for successful destination promotions and products improvisation to make it prime focus in the tourism system. Yet another purpose of this study is to learn the future trends of gastronomic tourism in nainital district.

Methodology - It is a cross sectional study which explanatory in nature. It mainly involved secondary data collection. Secondary data has been collected from text book, research papers and websites. Some primary data source has been used from the information's gathered from direct enquiry.

Marketing Strategies :

1. Aggressive marketing of indigenous food products is very necessary to start with in nainital district ,
2. The model of two states of India can be taken in this

*Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Assistant Professor, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

regard—Goa and Kerala. Goa aggressively markets Feni (a locally prepared alcoholic brew prepared either from cashew or coconut) and cashew while Kerela markets its spices.

3. Nainital district states must come up with its list of culinary products that can attract the tourists.
4. The website www.igougo.com tries to draw tourists towards Goa by saying it to be the land of beach, hot sun and heady feni but look at the supreme appreciation of the lesser known alcoholic brew of the Adis of Arunachal Pradesh .
5. The strategies adopted in marketing of spices in Kerala can be used for marketing local products that are exclusively produced in the region of nainital district only,
6. The forceful marketing of herbal tea in nainital district needs to be reciprocated For this it must be made available to the tourists by setting up adequate outlets selling quality tea. The places in and around the Kaziranga National Park stands put to be the most profitable beneficiaries in such an exercise
7. Growth and development of tourism marketing involves attention on four salient features: Attraction (sites of historical interest or natural beauty, manmade structures and monuments, museums, parks, spaces of socio-cultural attraction etc), Accommodation (Hotels, Resorts, Guest Houses, Motels, Home Stays etc.), Accessibility and Amenities (eateries, souvenir shops, tourist information bureaus, security, guides and other facilities covered under the head of niche tourism). Amenities are of utmost necessity for a tourist and are factors that can pull a tourist towards a particular destination again in future.
8. The Word-of-Mouth promotion is far more effective in generating interest regarding a tourist destination among the acquaintances of a tourist than cost-intensive advertisements in the media and tourist literature. This is primarily because of the notion that advertisements usually cover-up the unsavory sides of a destination.
9. In the context of culinary tourism which can be included in the fourth category of necessary features of the growth and development of tourism a proper result-oriented marketing strategy is very vital. Mr, .Jha opines that marketing strategies in the tourism sector involves going for strategies intended to offset challenges or to utilise the prospect available in what he calls the ¯(four Ps of marketing), e.g., alter the product, the price, the promotional campaign and the place.
10. For those involved in the promotion of culinary tourism tremendous focus is to be laid on the second and the third parameters as exorbitant pricing is a potential customer dispelling factor. Tourism planners and managers emphasize on sustainable tourism which concentrates on the maintaining socio-cultural identity on the face of the cultural aggression of the tourists (specifically in terms of attires, life-style, material possessions, exhibited habits), mitigating any unsavory economic because of the cash inflow from tourists and physical impact which is the change in the physical features of a destination because of tourist inflow. This makes determining the Tourism Carrying Capacity of a particular region that witness tourist footfalls a major exercise for all the policy making agencies in the field. This is the capacity of a tourist spot of bearing tourist inflow without any undesirable impact on the social, cultural, psychological, environmental, legal, economic and other factors that are linked with the sustenance of the people and distinctiveness of the place. Growth of ethnic culinary tourism is inextricably related to maintaining standard levels of Tourism Carrying Capacity as an unmaintainable spurt in the number of tourists would lead to gradual dilution of the quality of the menu which is nothing less than a faulty representation of a region's socio-cultural life. One recent trend in the hospitality industry of nainital district is the growth of interest in ethnic food. While talking of ethnic food and traditional cuisines.Authentic presentation of ethnic food needs to be made at the various festivals and fairs that are organized in various places of the nainital district and they should be scheduled during the tourist season. When visited two such festivals showcasing the culture of the area concerned in particular and the state of nainital district in general – the nandadevi mela in Nainital and the utrani ka mela in bageshwar and many others big festival ,Gastronomy was not the primary thrust of the organizers but the food stalls catering local delicacies seemed to attract considerable crowd though the menu was limited. Instead of offering a complete palate the focus remained on a few products. A more professional approach in the culinary dimension can translate such festivals into cultural spaces that can be utilized for benefit of the local culinary entrepreneurs in nainital district.

Conclusion - Culinery Tourism will keep growing ,create huge job opportunities in all the related sectors including small and medium scale businesses. in Nainital district of uttrakhand In future Culinary Tourism will be the largest sector of Tourism industry in terms of tourism receipts, while developing countries will emerge as top most destinations due to their natural resources and cheap labor force. thus if we keep the above mentioned points in mind we will see the enormous growth in culinary tourism of uttrakhand as one hand it will provide employment to local people on the other hand it will help to generate the revenue for the state this will lead to an overall development of the state ,

References :-

1. Culture and cuisine in a changing global marketplace in a strategic questions.In R.Woods, market place in strategic questions.In R.Woods(Eds), food and Beverage Management (pp187-194) London: Butterworth Heinemann.
2. http://planningcommission.nic.in/plans/stateplan/sdr/

sdr_uttarakhand1909.pdf
3. Hall,C.M and Mitchell, R.(2001).Wine and food tourism.In Douglas,N.andDerret,R.(eds.) Special Interest Tourism: Context and Cases.John Wiley and Sons,Australia,Brisbane,pp.307-329
4. Hobsbawn,E.& Ranger,T(1983).The invention of tradition.Cambridge University Press.Cambridge.
5. Riley,M.(2000).What are the implications of tourism destination identity for food and beverage policy?
6. https://en.wikipedia.org/wiki/Tourism_in_Uttarakhand
7. https://en.wikipedia.org/wiki/Uttarakhand
8. http://uttarakhandtourism.gov.in/utdb/?q=contact-us
9. http://uttarakhandtourism.gov.in/
10. Jha, S.M. 2011. Tourism Marketing. Himalaya Publishing House: Mumbai, 238.
11. Achaya, K.T. 1998. A Historical1

****

नीमच जिले के चयनित गांवों में शैक्षणिक सेवा संस्थाओं की सुविधाओं का वितरण

टीना चौहान* डॉ. आर.के. श्रीवास्तव**

(अ) शैक्षणिक सेवाएं/संस्थाएं – किसी भी क्षेत्र का सामाजिक विकास, आर्थिक प्रगति तथा राजनैतिक प्रौढ़ता वहां के निवासियों की शिक्षा पर निर्भर करती है। शिक्षा मनुष्य के सामाजिक व मानसिक पृथकत्व को समाप्त करती है। शिक्षा प्राप्त व्यक्ति अपने ही काम में उन्नति नहीं करता बल्कि समाज की उन्नति में भी सहायक होता है। इससे समाज के विकास की प्रक्रिया सरल और अधिक उपयोगी बन जाती है। विकास का अर्थ केवल आर्थिक और भौतिक विकास ही नहीं होता, अपितु इसमें लोगों के व्यक्तित्व, उनका चिंतन और समता के भावों का विकास करना भी निहित है। यह लक्ष्य केवल उचित शिक्षा से ही सम्भव है। वास्तव में शिक्षा प्रत्येक समाज की मानसिक भूख है, जिसका दायित्व समाज तथा प्रशासन का है। इसके अभाव में कोई भी क्षेत्र अपनी उन्नति नहीं कर सकता।[1] नीमच जिले के गांवों में शिक्षा के चार स्तर उपलब्ध हैं, जिसका विवरण तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है।

मध्यप्रदेश में सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत स्कूल शिक्षा विभाग ने प्रदेश की सभी बसाहटों में प्राथमिक विद्यालय की उपलब्धता सुनिश्चित कराने के उद्देश्य तय किए हैं तथा प्राथमिक विद्यालय गांव की बसाहट के आधार पर बनाए जाते हैं। एक गांव में एक या दो शासकीय प्राथमिक विद्यालय खोले जा सकते हैं। शासकीय माध्यमिक विद्यालय के लिए सरकार ने 3 कि.मी. दूरी तय की है। 3 कि.मी. अंतराल पर ही शासकीय माध्यमिक विद्यालय खोले जा सकते हैं शासकीय हाईस्कूल के लिए 5 कि.मी. की दूरी व शासकीय हायर सेकेण्डरी विद्यालय 8 कि.मी. की दूरी पर खोले जा रहे हैं।

तालिका क्रमांक 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

1. प्राथमिक विद्यालय – नीमच जिले की तीनों तहसील के चयनित कुल गांव 70 हैं, जिसमें मनासा तहसील के 24 ग्राम चयनित गांवों में शासकीय प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 26 तथा 66.00 प्रतिशत तथा अशासकीय प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 13 तथा 33.33 प्रतिशत है। नीमच तहसील के 23 चयनित गांवों में शासकीय प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 31 तथा 60.78 प्रतिशत, अशासकीय विद्यालयों की संख्या 20 तथा 39.27 प्रतिशत है। इसी प्रकार जावद तहसील के 23 चयनित गांवों में शासकीय विद्यालय की संख्या 25 तथा 62.5 प्रतिशत, अशासकीय प्राथमिक विद्यालय की संख्या 15 तथा 37.5 प्रतिशत है।

2. माध्यमिक विद्यालय – अध्ययन क्षेत्र में सम्मिलित शासकीय माध्यमिक विद्यालयों का मनासा तहसील के चयनित गांवों में संख्या 23 तथा 67.64 प्रतिशत है। अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों की संख्या 11 तथा 32.35 प्रतिशत है। नीमच तहसील के चयनित गांवों में शासकीय माध्यमिक विद्यालयों की संख्या 39 तथा 72.22 प्रतिशत है। अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों की संख्या 15 तथा 27.77 प्रतिशत है। इसी प्रकार जावद तहसील के चयनित गांवों में अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों की संख्या 20 तथा 68.96 प्रतिशत है। अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों की संख्या 9 तथा 31.00 प्रतिशत है।

3. हाईस्कूल – अध्ययन क्षेत्र में सम्मिलित शासकीय हाईस्कूल मनासा तहसील में संख्या 10 तथा 100 प्रतिशत है, अशासकीय हाईस्कूल मनासा तहसील के चयनित 24 गांवों में नहीं है। नीमच तहसील में शासकीय हाईस्कूल की संख्या 4 तथा 57.14 प्रतिशत, अशासकीय हाईस्कूल 3 तथा 42.85 प्रतिशत है। जावद तहसील में शासकीय हाईस्कूल 5 तथा 62.5 प्रतिशत, अशासकीय हाईस्कूल 3 तथा 37.5 प्रतिशत है।

4. उच्चतर माध्यमिक विद्यालय – अध्ययन क्षेत्र में चयनित गांवों में सम्मिलित शासकीय हायर सेकेण्डरी विद्यालय मनासा तहसील में संस्था 4 तथा 100 प्रतिशत है, अशासकीय हायर सेकेण्डरी विद्यालय मनासा तहसील के चयनित 24 गांवों में नहीं है। नीमच तहसील के चयनित गांवों में शासकीय हायर सेकेण्डरी विद्यालय संख्या 9 तथा 90.00 प्रतिशत है, अशासकीय हायर सेकेण्डरी विद्यालय 1 तथा 10.00 प्रतिशत है। जावद तहसील के चयनित गांवों में शासकीय हायर सेकेण्डरी विद्यालय संख्या 4 तथा 66.6 प्रतिशत है, अशासकीय हायर सेकेण्डरी 2 तथा 33.3 प्रतिशत है।

निष्कर्ष – अध्ययन क्षेत्र में चयनित गांवों में सम्मिलित शासकीय हायर सेकेण्डरी विद्यालय मनासा तहसील में संस्था 4 तथा 100 प्रतिशत है, अशासकीय हायर सेकेण्डरी विद्यालय मनासा तहसील के चयनित 24 गांवों में नहीं है। नीमच तहसील के चयनित गांवों में शासकीय हायर सेकेण्डरी विद्यालय संख्या 9 तथा 90.00 प्रतिशत है, अशासकीय हायर सेकेण्डरी विद्यालय 1 तथा 10.00 प्रतिशत है। जावद तहसील के चयनित गांवों में शासकीय हायर सेकेण्डरी विद्यालय संख्या 4 तथा 66.6 प्रतिशत है, अशासकीय हायर सेकेण्डरी 2 तथा 33.3 प्रतिशत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2015 के अनुसार।
2. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

* शोधार्थी (भूगोल) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंण्डी, मंदसौर (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक 1 – नीमच जिले के 70 चयनित गांवों में प्राथमिक विद्यालय, माध्यमिक विद्यालय, हाईस्कूल, उच्चतर माध्यमिक विद्यालय (संख्या व प्रतिशत में)

	प्राथमिक विद्यालय				माध्यमिक विद्यालय				हाईस्कूल				उ.मा. विद्यालय			
	शासकीय		अशासकीय		शासकीय		अशासकीय		शासकीय		अशासकीय		शासकीय		अशासकीय	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
मनासा	26	66.66	13	33.33	23	67.64	11	32.35	10	100	–	–	4	100	–	–
नीमच	31	60.78	20	39.21	39	72.22	15	27.72	4	57.14	3	42.85	9	90.00	1	10.00
जावद	25	62.5	15	37.5	20	68.96	9	31.0	5	62.5	3	37.5	4	66.6	2	33.3

स्त्रोत – क्षेत्रीय सर्वेक्षण वर्ष 2015-16 के आधार पर।

****

An Analytical Study of Saffron Production in District Pulwama (J&K)

Shahid Hussain Rather* Dr. Ajay Kumar Tripathi**

Abstract - Economic development of the country mainly is dependent on the agricultural activities together with the industrialization. Cash crops contribute most to the economy of the country and their export adds to the GDP. In India the state Jammu and Kashmir is the largest grower of the Saffron: second largest cash crop of the state after fruits. The average land area under saffron cultivation is 3711.5 hectares with a standard deviation of 775.7. The coefficient of variation during 1995-96 to 2015-16 is 20.9 % indicating that there has been the alteration in the land area under cultivation. The average production of saffron is 9.3 metric tons with standard deviation of 4.2. The coefficient of variation of saffron production during the period is 45 %. Based on per hectare, the average saffron productivity is 2.4 kg with standard deviation of 0.8. The present study is an attempt to find the influence of input costs on saffron production in the study area. The study was conducted in 2 villages (Ladoo, Lathipora) of district Pulwama; major saffron producers of the state. We selected 25 respondents from each village in order to collect the primary data employing Regression analysis. We investigated the collective impact of investments on ploughing and hoeing, corms, fertilizers and pesticides and other processes of harvesting on the saffron production. We observed that investments on ploughing, hoeing and corms had positive influences on saffron production while the investments on fertilizers and pesticides had negative impact.

Keywords - Saffron, Cash crop, Kashmir, Socio-economic status, Production, Productivity, Grower, Input costs.

Introduction - Saffron (Crocus sativus L.) popularly known as kesar in India has been regarded as one of the world's finest flavoring agents. Saffron plant is a natural herb mostly cultivated in Azerbaijan, Greece, France, Iran, Spain, Italy, China, Israel, Morocco, Turkey, Egypt, Mexico and Kashmir in Indian (Zargari, 2007) and has purple or white flowers with orange stigmas. Saffron is the most attractive and intriguing plant spices often called "The Golden Spice," and is among the most expensive and priced spices. Method generally employed for saffron cultivation contributes to its high price. The quality of saffron is determined by the existence of three main secondary metabolites: Crocin, picrocrocin, and Safranal (Negbi, 1999). Saffron is a non perishable high value low volume commercial crop of Jammu & Kashmir (India). Saffron is comprised of dried stigmas of saffron flower Saffron is very famous due to its fine flavor, colour and medicinal value. It is indigenous to Greece and Asia. In Greek Roman era, saffron was scattered on the floors of theatres and public halls as a perfume. With the advent of time Medicinal and aromatic plants have been increasing in importance to society continuously for the past one hundred years.

Saffron is cultivated in climatically diverse regions, varying in altitude, temperature and humidity conditions. It is an important commodity and is of great significance in the agricultural economy of Jammu and Kashmir. Saffron has many other uses in industries such as food, pharmaceutical, cosmetic and perfumery as well as in the textile dyes (Kafi et al. 2006).

Saffron industry in Kashmir has been showing a steady decline, particularly during the last decade. Constraint analysis of factors responsible for resulting in considerable losses primarily includes reduction in production and productivity of this important commercial crop due to climate changes, droughts, unavailability of water facilities, corm rot and lack of adequate nutritional support that has significantly contributed in the dismal performance of the saffron crop under actual farm situations. The heart of this activity is district Pulwama which occupies about 86% of the total area under saffron in the entire state of Jammu & Kashmir and out of which 80% of the saffron area belongs to Pampore Tehsil alone (Imtiyaz et al. 2007)

Objectives :

1. Study the area, production and productivity of saffron in Jammu and Kashmir
2. Study the socio-economic profiles of the respondents in the study area.

Hypothesis - There is significant impact of input costs on saffron production of the sample respondents in the study area.

Research Methodology - The present study has been conducted on both primary as well as secondary data. The

*Department of Economics, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
**Department of Economics, Govt. S.L.P College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA

primary data has been collected through a well designed questioner on the selected groups of respondents to elicit required information. The primary data has been collected by applying stratified random sampling method and total sample of 50 respondents have been selected from 2 villages (Ladoo, Lathipora) of tehsil pamore district Pulwama. The researcher has selected 25 respondents from each village of pampore tehsil. The secondary data which is taken from the Digest of statistics Govt. of Jammu and Kashmir, Agriculture and production department and Sher-e-Kashmir university of Agriculture science & Technology. Various published and unpublished articles and reports were also used for the study.

Area production and productivity of saffron in Jammu and Kashmir - Saffron is one of the important commercial activities of Indian agriculture and appears to be second largest industry after the fruit production in Jammu & Kashmir. Its cultivation dates back to 550 A.D. It is a renowned crop, an imperative constituent of ethnically rich inheritance of Kashmir and was worn as a component in Ayurvedic Medicines by the prominent Kashmiri vaids (Vegbhatta and Sushtra).

Kashmir enjoys the distinction of occupying the largest area (5707 ha) under saffron in the world and has great potential for increasing its production and export to other countries. Once producing 173.82 q of saffron out of 5316 ha which by conservative estimates of Rs.250 per gram led to earn foreign exchange worth Rs.40 crores, the present production of 64.64 q and productivity level of 2.28 kg/ha (2002) is far less when compared to other saffron grown countries of the world like Iran, Spain, Italy producing 5-6 kg per hectare has been a matter of great concern. The area under saffron cultivation has also declined drastically 1998-2002 primarily due to failure of precipitation experienced during the active growing season of saffron and non-application of nutrients to soil which has resulted in enormous increase in the cost of seed corms thereby affecting the replantation rate in the conventional areas. In 2002 the area under saffron cultivation was hardly 2825 yielding 64.64 q.

Jammu & Kashmir enjoys the domination in the gardening of saffron in the sub-continent. The foremost regions of saffron crop growing are Zeewan, Balhama, Khunamu, Yachnambal (Srinagar) Khrew, Ludoo, Dussu, Konibal, Chandaha, Namblabal, Barsu, Lethipora, Sambora, Waantipora, Nagam, Sarwin, Hapthnar, Kakewring, Charar-e-Sharief and Kishtwar (Doda). 78.91 per cent of the total area under saffron cultivation is in the district Pulwama, followed by district Budgam (12.27%), Srinagar (7.32%) and Doda (1.5%).

More than 10000 farm families of 226 villages are associated with the cultivation of this crop, directly and indirectly and nearly 85 per cent families associated with its cultivation are categorized into small and marginal farmers, living below the poverty line. Most of the cultural and post-harvest operations are primarily done by farm women who contribute 65 to 70 per cent of total labour component. Saffron (Crocus sativus L.), traditionally known as golden spice is the legendary crop of Kashmir valley of India and covers nearly 4% of the total cultivated region of the valley and delivers approximately 16% of aggregate agricultural income (Anonymous 2008). The past several years, Kashmir has the virtual monopoly of saffron cultivation in the country as a valuable industrial/medicinal product and contributes a lot to its agricultural economy. It is the best quality saffron in the world owing to its rich colour and flavour and has been conventionally associated with the well-known Kashmiri Cuisine and has for times been in good demand (Chand 2005)

Table 1 : Trends in Production Area and Productivity of Saffron in J & K (2015)

Year	Area in (Ha)	Production in (MTs)	Average Productivity (kg/ha)
1995-96	4496	14.18	3.15
1996-97	5707	15.92	2.79
1997-98	5316	17.38	3.27
1998-99	4416	12.88	2.92
1999-00	3997	7.65	1.91
2000-01	3831	3.59	0.94
2001-02	2713	0.30	0.11
2002-03	2825	6.50	2.30
2003-04	2742	5.15	1.88
2004-05	3143	6.86	2.18
2005-06	3130	7.04	2.25
2006-07	3010	6.50	2.16
2007-08	3280	8.20	2.50
2008-09	3280	7.70	2.35
2009-10	3785	9.46	2.50
2010-11	3785	9.55	2.52
2011-12	3790	9.85	2.60
2012-13	3674	10.00	2.72
2013-14	3674	11.5	3.13
2014-15	3674	15.0	4.08
2015-16	3674	9.64	2.62
Average	3711.5	9.3	2.4
S.D	775.7	4.2	0.8
C.V	20.9	45.0	33.7
CAGR	-1.00	-1.91	-0.92

Source: Horticulture Department of J&K and Directorate of Agriculture J&K.

Fig. 1 : Area under saffron cultivation in J&K in different years (see in last page)

Fig. 2 : Production and average yield of Saffron in J & K in different years (see in last page)

The area under saffron cultivation has increased from 4496 hectares in the year 1995-96 to 5707 hectares in 1996-97 while decreased to 5316 hectares in 1997-98. During the year 1998-99 and 1999-00 the area under saffron has further declined to 4416 hectares and 3997 hectares. In the year 2000-01 the area under saffron was 3831 hectares which further decreased to 2713 hectares in the year 2001-02 while as increased to 2825 hectares in the year 2002-

03. The area under saffron shows fluctuations of area over the years as in the year 2003-04 the area under saffron was 2742 hectares which increased to 3143 hectares in 2004-05 but again decreased to 3130 hectares in 2005-06 and further declined to 3010 hectares in the year 2006-07 but again increased to 3280 hectares in 2007-08 from where it remained same in the year 2008-09. The area under saffron has increased from 3785 hectares in the years 2009-10 and 2010-11 to 3790 hectares in 2011-12. The area under saffron in the year 2012-13, 2013-14, 2014-15 and 2015-16 remained the same which were 3674 hectares.

The area under saffron has been highest in the year 1996-97(5707 hectares) and lowest area has been in the year 2001-02 (2713 hectares) with annual compound growth rate of -1.00 percent which shows the CAGR has been negative in these years. The average area under saffron has been 3711.5 hectares with standard deviation of 775.7. The coefficient of variation is 20.9 percent which means there has been the variation of area in these years.

The production of saffron has been highest in the year 1997-98 (17.38 metric tons) and the annual compound growth rate is -1.91 percent which shows the CAGR is negative. The average production of saffron is 9.3 metric tons with standard deviation of 4.2. The coefficient of variation of saffron production in these years has been 45 percent which indicates there has been large variation of production during these years.

The productivity of saffron in the year 1995-96 was 3.15 kg per hectare which decreased to 2.79 kg per hectare in 1996-97 and again increased to 3.27 kg per hectare in 1997-98. In the year 1998-99 the productivity of saffron was 2.92 kg per hectare which decreased again to 1.91 kg per hectare in the year 1999-00. The saffron productivity has decreased from 0.94 kg per hectare in 2000-01 to 0.11 kg per hectare in 2001-02 while increased to 2.30 kg per hectare in 2002-03. The productivity of saffron from 2003-04 to 2008-09 were 1.88 kg per hectare, 2.18 kg per hectare, 2.25 kg per hectare, 2.16 kg per hectare, 2.50 kg per hectare and 2.35 kg per hectare. During the year 2009-10 the productivity of saffron was 2.50 kg per hectare which increased to 2.52 kg per hectare in 2010-11. The productivity of saffron during 2011-12 to 2014-15 were 2.60 kg per hectare, 2.72 kg per hectare, 3.13 kg per hectare and 4.08 kg per hectare, while as during the year 2015-16 the productivity of saffron sharply decreased to 2.62 kg per hectare.

The productivity of saffron has been highest in the year 2014-15 (4.08 kg per hectare) and the lowest productivity is in the year 2001-02 (0.11 kg per hectare) with annual compound growth rate of -0.92 percent which shows CAGR is negative. The average saffron productivity is 2.4 kg per hectare with standard deviation of 0.8. The coefficient of variation of saffron productivity is 33.7 percent in these years which shows there has been variation of productivity of saffron in these years.

Socio-economic profile of the respondents - Socio-economic profile of the respondents has a very important role to play in expressing and giving responses to the problems in social science research. Taking this into account, a set of personal characteristics namely age, experience, education, income and land holding have been examined and presented.

Age of farmers - Age is one of the important factors that play a vital role in the farmer's response to the adoption of new ideas and innovations and plays an important role in agricultural activities.

Table 2 : Age structure of the respondents

Age in Years	Frequency	Percentage
Young (up to 35 yrs)	12	24
Middle (36-60)	35	70
Above 60	3	6
Total	50	100

Source: *Field survey*

Table 2 shows the age wise classification of the respondents out of total 50 respondents, only 24 percent of the farmers were found below the age of 35 years, while 70 percent were found in the age group of 36-60 years and just 6 percent under the age of 60 and above. During our interaction with the households it was observed that the role of younger generations, who are more educated and can easily adopt new ideas, is less. The role of Middle generation in the decision making process is more. Because of their age, they are not only the heads of the families but also the final decision makers.

Experiences In Saffron Cultivation - Experience in saffron cultivation is very crucial for a successful crop. It requires a special knowledge regarding the choice of corm, timely and judicious application of fertilizers, preparation of beds, intercultural operations, post-harvest management practices etc.

TABLE 3 : Experiences of farmers in saffron cultivation

Experience in Years	Frequency	Percentage
< 5 Years	7	14
5-10 Years	5	10
10-15 Years	8	16
15-20 Years	11	22
20-25 Years	13	26
> 25 Years	6	12
Total	50	100

Source: *Field survey*

The data from the field study divulges that a majority group of the growers (more than 48%) had practice ranging between 15-25 years in saffron cultivation.

Family Size of Respondents - The associates of a household which lives and eats together on the basis of the members comprises the family, the categorizing and size of the family effects the nature of any work. The age structure of the associates of families gives an Idea about the nature and amount of reliance and the strength of the working force. In certain cases, it entertains as crucial force in approval of various agricultural innovations.

TABLE 4 : Family size of respondents

No. of family members	Frequency	Percentage
Less than 5	10	20
5-8	17	34
9-12	15	30
Above 12	8	16
Total	50	100

Source: field survey

According to the above table, 34 percent of total families have the family members in between 5-8. While as only 20 percent families are such who are having less than 5 family members in their whole family structure, 30 percent have family size ranging from 9-12 and 16 percent respondents representing above 12 members. Such family size adversely affects the agricultural productivity and very often problem of disguised unemployment is taking place in large size of family system. While the families with small number of members make desperate efforts for the purpose of enhancement of productivity in agriculture sector.

Level Of Education - Education plays an important role in the development of agriculture. It enhances the overall personality of an individual and helps him to think in the most efficient manner. Education is the aggregate of all the processes by means of which a person develops abilities, attitudes and other form of behavior. Education influences the course of behavior of both the individual and family. There is a close relationship between education and adoption of agricultural innovations, which in turn affects agricultural productivity. The following table shows the educational status of farmers of District Pulwama.

TABLE 5 : Educational status of farmers

Education status	Frequency	Percentage
Illiterate	18	36
Primary education	10	20
Middle school	9	18
High school	8	16
Graduate or above	5	10
Total	50	100

Source: *Field survey*

The table 5 reveals that 64 percent farmers are literate while as 36 percent of the saffron growers are illiterate in the saffron producing state of Jammu and Kashmir. Education and adoption of scientific techniques and improved technology for the cultivation of saffron in the whole area has a watertight relationship which ultimately affects the productivity in particular and production in general per hectare of saffron land.

Main Occupation - Economic status is very often described and observed by the occupation of the masses of the district and members of the family. Rather economic status of a family directly depends upon the level of occupation. People having the main occupation in services or business sector are economically and socially advanced than the people who are having agriculture as main occupation. In the district Pulwama the following table can help us to understand the main source of occupation of agriculture especially in the saffron producing district of Pulwama in Jammu and Kashmir.

TABLE 6 : Main occupations

Main occupation	Frequency	Percentage
Agriculture	22	45
Govt. Service	10	20
Business	5	10
Labour	12	25
Total	50	100

Source: *Field survey*

The table 6 shows that 45 percent families are directly engaged in agriculture and agriculture is their main source of income and livelihood. While only 10 percent households are experiencing business as their main occupation.

Size Of Land Holding (Saffron) - There are two schools of thought regarding the size of holdings and agricultural productivity. Scholars of one school of thought believe there is a positive and high correlation between size of holding and the adoption of agricultural innovations because they require heavy investment. The other group who believes that smaller farmers adopt improved agricultural practices much earlier than large farmers, because they are keen to increase yield in order to raise their standards of living.

TABLE 7 : Size of land holding (saffron)

Size of holding in Kanals	Frequency	Percentage
Up to 10 kanal	14	28
10-20 kanal	26	52
Above 20 kanal	10	20
Total	50	100

Source: *Field survey*

The above table 7 reveals that 28 percent respondents out of 100 percent are having land up to 10 kanals of land for the cultivation of this golden condiment. Majority of farmers in the saffron producing areas are small and medium farmers. Because this crop is being cultivated on Karewa lands, out of 50 respondents only 20 percent are having their size of holding above 20 kanals. The above table also gives a clear picture that 52 percent are having the land ranging between 10-20 kanals for the cultivation of this crop.

Impact of input costs on saffron production - The table below shows the production function between saffron production and input costs for its production. The dependent variable is production of saffron and input costs as independent variable which is cost of ploughing and hoeing, cost of corms, cost of fertilizers, cost of drying, grading, stamen separation and other costs.

H_0: There is no significant impact of input costs on saffron production in Jammu and Kashmir.

H_1: There is significant impact of input costs on saffron production in Jammu and Kashmir.

Table No. 8 : Relationship between input costs and production of saffron

Variable	Unstandardized coefficient β	t value	p value
Constant	0.253	1.134	.263
Cost of ploughing	0.511	3.336	.002

and hoeing			
Cost of corms	0.412	2.451	.018
Cost of fertilizers	0.240	1.875	.067
Cost of drying, grading, stamen separation etc.	0.207	1.410	.166
Other costs	-0.218	-2.199	.033

R = 0.904
R^2 = 0.817
F-ratio 39.352, d.f = 44+4= 49 (sig= 0.000)
Source computed.

The explanatory variables included in the model collectively have significant influence on saffron production as the F-statistics and R^2 value is quite significant. The Pearson correlation is defined by R in the table which is 0.904 means there is strong correlation between dependent and independent variables. The R Square (R^2) indicates the proportion of variance that can be explained in the dependent variable by the linear combination of the independent variable. R square shows the amount of variation in one variable (production) that is accounted by another variable (input factors). The value of R square is 0.817 which means 81.7 percent variation in respondent's production is explained by the input factors and the rest of the variation ($1-R^2$) is an unexplained variation in production of saffron of the respondents due to variables that has not been considered in this model. ANOVA shows the significance of model. The overall model is significant because the significant value is 0.000 which is less than 0.05 and indicates that the model fits the data well. The value of unstandardized beta coefficient of input cost of ploughing and hoeing 0.511which means that one unit change in cost of ploughing and hoeing brings 0.511 units change in production of saffron of the respondents. Besides, this impact is strong and statistically significant as p value is 0.002 which is less than 0.05.

The Unstandardized beta coefficient for cost of corms (seeds) is positive (0.412) and statistically significant at 5% level of significance with P value 0.00. It suggests that corms affect saffron production positively. One per cent increase in the corm (seed) would induce an increase of about 0.412 per cent in saffron production.

The coefficient of cost of fertilizers is also positive (0.240) and is insignificant at 5% level of significance with P value 0.067, It suggests that One per cent increase in the fertilizer would induce an increase of about 0.067 per cent in saffron production which induces that the impact of fertilizers on saffron production is very less.

The coefficient for cost of drying, grading, stamen separation etc. used in production of saffron is also positive (0.207) and statistically insignificant as the P value is 0.166 more than 0.05. It suggests that the total cost of drying, grading, stamen separation etc. in production affects saffron production positively. One per cent increase in the drying, grading, stamen separation would induce an increase of about 0.207 per cent in saffron production.

The other cost from the table above shows negative relationship with saffron production as the value of Unstandardized beta coefficient is -0.218 which means one percent increase in the other costs will bring -0.218 percent in saffron production but is statistically significant as the p value of other costs is 0.033 which is significant.

Y (Dependent Variable) = α (Intercept) + β (Slope) x (Independent Variable) + e

Saffron production=0.253+ 0.511 -cost of ploughing and hoeing + 0.412 cost of corms (seeds)+ 0.240 cost of fertilizers + 0.207 cost of drying, grading, stamen separation+ (-0.218) other costs .

The regression equation shows the intercept value shows the change in Production when input factors are zero. There is linear relationship between saffron production and input factors. The e (residual) shows the error that will occur in the prediction of Y (saffron production) for the value of X (input costs) as X does not explain all the variation in Y.

The above table results that the hypothesis is partially accepted as all the input costs are significant except cost of fertilizers and cost of drying, grading, stamen separation is insignificant which means that input costs played a vital role in saffron production.

Conclusion - Saffron the identity of Jammu and Kashmir and the pride of valley is rapidly vanishing although its cultivation has spread beyond the terraces of Pampore in south Kashmir, where it has been grown since ancient times. After analyzing it was found that the young educated people have no concern about the agricultural activity neglecting that the economy is totally dependent on it at in particular on cash crops like saffron. Because of this the major part of the action are still in the hands of aged and illiterate farmers, they are having no knowledge of new technologies and their impact on the surplus of the products. Adulteration by some growers and pathetic approach of Govt. are the factors that have hit its production and hence are mainly responsible for decline in its production. Saffron activities require sufficient water at different stages of growth, rains are not coming frequently and at the necessity conditions which had badly hit the production of this golden crop in district Pulwama. Another region of serious concern is inexperience in regards to the utilization of fertilizers in an unscientific route without taking after the standard solutions. All those factors that have become the hindrances in the actual production needs to be examined and should be bought before the ministry of agriculture so that immediate steps would be taken to resolve it. For increasing production and productivity there is the need of the development of irrigation schemes, High yield variety of corms, manures and fertilizers and human exertion are required to improve the production and productivity.

References :-

1. Zargari, A, Medicinal Plants. Tehran University Press, Tehran; 4, 1993, 574-578.
2. Negbi M. Saffron cultivation; past, present and future prospects. Saffron Crocus sativus L. Amesterdam:

Harwood Academic Publishers: 1999, 1-19.

3. Kafi M, Showket T. (2006) A comparative study of Saffron Agronomy and production systems of Khorasan (Iran) and Kashmir (India). Acta Horticulturae: 739: 123-132.
4. Imtiyaz-ul-Haq & Sahina S., (2014). Economic Analysis of Saffron Cultivation in Kashmir Valley of India. European Academic Research. Vol. 2(1).
5. Anonymous, (2008). Directorate of Agriculture, Planning and Development Department, Government of Jammu and Kashmir, India, pp 54
6. Chand, R. (2005). Exploring Possibilities of Achieving Four Present Growth Rates in Indian Agricultural Production.
7. Dwivedi S. and Singh T. (2010): “An analytical study on economics of saffron cultivation in Jammu and Kashmir,” Journal of Hill Agriculture, Hill Campus, Ranichauri, Tehri Garhwal, Uttrakhand, 1(2):168-171
8. Anon (2009): Statistical Digest Directorate of economics and Statistics Government of Jammu and Kashmir, India, pp584
9. Horticulture Department of Jammu and Kashmir and Directorate of Agriculture Jammu and Kashmir.
10. Indiamart (2010). http://trade .indiamart.com/details mp

Fig. 1 : Area under saffron cultivation in J&K in different years

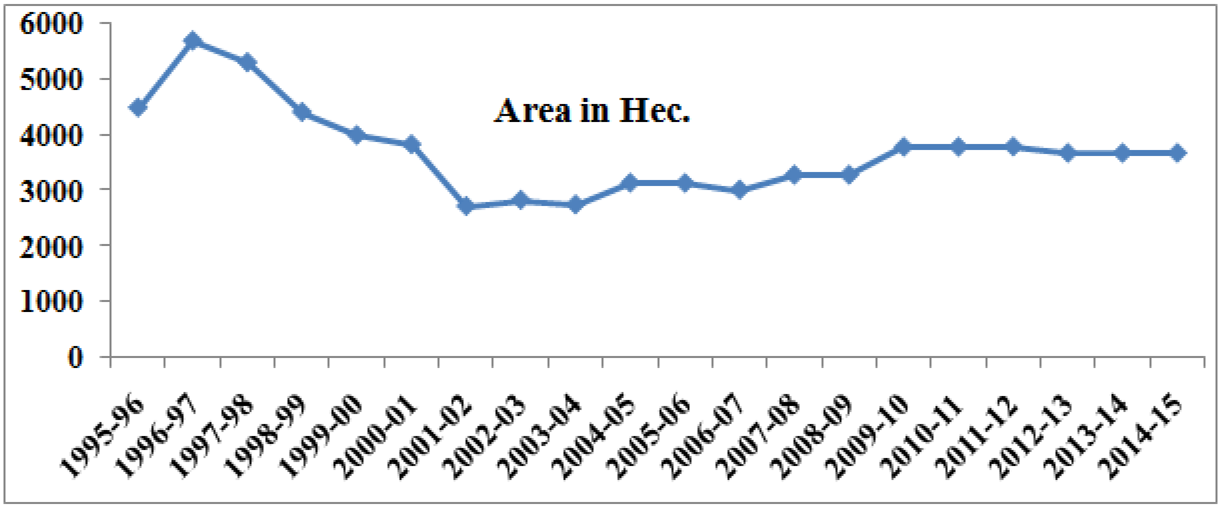

Fig. 2 : Production and average yield of Saffron in J & K in different years

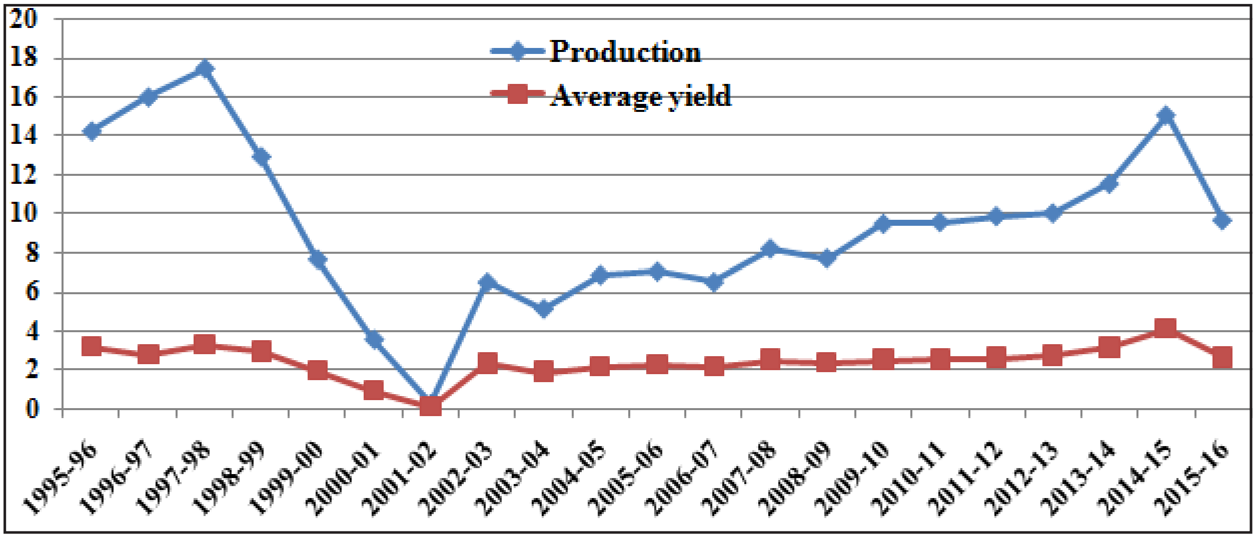

****

संविधान और सामाजिक न्याय

दयाराम मुझाल्दा *

शोध सारांश – भारत के संविधान का निर्माण न्याय, स्वतंत्रता, समता, भातृत्व और आज़ादी की गरिमा के मूल्यों के आधार पर किया गया है। कमजोर वर्गो के हितों की सुरक्षा जैसा कि बहुत पहले सुकरात ने समझाया और डॉ. अम्बेडकर ने सोचा भारतीय संविधान का मुख्य लक्ष्य है। सामाजिक न्याय का सारभूत तत्व यहीं है। उसने न्याय के मार्ग में आने वाली जाति, छुआछूत, रंगभेद, धर्म, तथा जन्म-भेद सभी का निषेध किया है। सामाजिक असमानता को मिटाने का संकल्प उसमें निहित है। सामाजिक न्याय हमारे संविधान का सर्वोतम आदर्श है जिसका स्वरूप 'सामाजिक न्याय, लोगों के जीवन में सामाजिक शैक्षणिक, आर्थिक और राजनीतिक असंतुलनों को समाप्त करके एक न्यायसंगत समाज की स्थापना में सहायता करता है। सामाजिक न्याय को कमजोर, वृद्ध तिरस्कृत के रूप में परिभाषित किया जा सकता है? जहाँ राज्य सामाजिक दृष्टि से उच्च, आर्थिक रूप से धनी, राजनीतिक अर्थ से सता में और शैक्षणिक स्थिति से विकसित लोगों के साथ निष्ठुर स्पर्धा में संरक्षा करें।'

प्रस्तावना – भारतीय संविधान की प्रस्तावना में अंकित सामाजिक आर्थिक, राजनैतिक, न्याय, विचार, अभिव्यक्ति विश्वास धर्म एवं उपासना की स्वतंत्रता प्रतिष्ठा तथा अवसर की समानता शब्द स्पष्ट रूप से भारत में एक नयी समाज अवस्था पर बल देते हैं। संविधान में राज्य और उसके तीन अंगों विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका को भली-भाँति अधिकृत किया है कि वे एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था स्थापित करें और प्रभावी बनाएं जिसमें किसी जातिगत पंथगत एवं सामूहिक भेदभाव के बिना सभी नागरिकों का हर प्रकार का न्याय मिले।

संविधान का अनुच्छेद 38 कहता है 1) राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था करें जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को समाहित करें और लोक कल्याण की अभिवृद्धि का प्रयास करें। 2) राज्य विशिष्ट रूप से आप की असमानताओं को कम करने का प्रयास करेगा और विभिन्न व्यवस्थाओं में लगे लोगों के समूहों के बीच की प्रतिष्ठा सुविधाओं और अवसरों की असमानता समाप्त करने का प्रयास करेगा। इसके अतिरिक्त संविधान सामाजिक न्याय के प्रति बड़ा ही सजग है। उसने जनहित तथा कमजोर वर्गों की स्थिति को भी पूर्णत: ध्यान में रखा है। यह तथ्य हमें उसके अनुच्छेद 39 (क) व 46 से ज्ञात होता है।

अनुच्छेद 39 के अनुसार 'राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि विधिक व्यवस्था इस प्रकार काम करें कि न्याय समान अवसर के आधार पर सुलभ हो और वह विशिष्टतया, यह सुनिश्चित करने के लिये कि आर्थिक या किसी अन्य निर्योग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाएं उपर्युक्त विधान या स्कीम द्वारा या किसी अन्य रीति से निशुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करेगा।' इतना ही नहीं संविधान सामाजिक न्याय को कमजोर, निर्धन तथा निर्बल वर्गो तक पहुंच की मंशा रखता है। यह बात अनुच्छेद 46 से पूर्णत: स्पष्ट है जो यह कहता है कि 'राज्य जनता के दुर्बल वर्गो के विशिष्ट तथा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उनकी रक्षा करेगा।' इन अनुच्छेदों 38 (1) व (2) 39 क तथा 46 में अर्न्तनिहित उपबन्ध किसी न्यायालय द्वारा लागू नहीं होंगे किन्तु फिर भी इनमें अधिक तथाकथित तत्व देश के शासन में मूलभूत है और विधि बनाने में इन तथ्वों को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा।

भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों को इस प्रकार से उल्लिखित किया गया है यदि किसी नागरिक के अधिकारों का कोई व्यक्ति संस्था या राज्य उल्लंघन करता है तो उसे न्यायालय में चुनौती दी जा सकती है। सभी भारतीय नागरिकों के लिये मैं मौलिक अधिकार समान हैं। इन अधिकारों में मानववादी मूल्यों की प्रधानता है जो सामाजिक न्याय के सार तत्व को प्रदर्शित करते हैं। अत: यहा मौलिक अधिकारों के कुछ विशेष उद्धरण उनके अनुच्छेदों के क्रम में प्रस्तुत है :

1. समता का अधिकार :

अनुच्छेद 14 विधि के समक्ष समता – राज्य, भारत के राज्यक्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से या विधियों के समान संरक्षण में वंचित नहीं करेगा।

अनुच्छेद 15 धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म-स्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध – अर्थात् भारत के किसी नागरिक के साथ सार्वजनिक स्थानों, होटलों भोजनालयों, तालाबों, कुंओं, स्नानाघरों, सड़कों आदि के उपयोग को लेकर उक्त आधारों पर कोई भेदभाव नहीं होगा।

अनुच्छेद 16 लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता :

1. राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से सम्बन्धित विषयों में सभी नागरिकों के लिये अवसर की समता होगी और
2. कोई नागरिक केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग उद्‌भव, जन्मस्थान, निवास या इसमें से किसी के आधार पर राज्य के अधीन किन्ही नियोजन या पद के सम्बन्ध में अपात्र नहीं होगा या उससे विभेद नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता का अन्त – अस्पृश्यता का अन्त किया जाता है और उसकी किसी भी रूप में आवरण निषिद्ध किया जाता है। 'अस्पृश्यता' से उपजी किसी निर्योग्यता को लागू करना अपराध होगा जो विधि के अनुसार दण्डनीय होगा।

2. स्वतंत्रता का अधिकार :

अनुच्छेद 19 वाक स्वतंत्रता आदि विषयक कुछ अधिकरों का संरक्षण

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) माता जीजाबाई शास्कीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

– सभी नागरिकों को वाक् स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति स्वतंत्रतया शान्तिपूर्वक और निरायुद्ध, सम्मेलन या संग बनाने सर्वत्र अभाव संरचरण निवास करने और बस जाने और कोई वृत्ति उपजीविका, व्यापार या कारोबार करने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 20 अपराधों के लिये दोषसिद्धि के संबंध में संरक्षण – किसी नागरिक को किसी अपराध के लिये न्यायिक प्रक्रिया से ही दोषी ठहराया जा सकता है और वह भी किसी प्रवृत्त विधि के अतिक्रमण पर अन्यथा नहीं।

अनुच्छेद 21 प्राण एवं देहिक स्वतंत्रता का संरक्षण –किसी व्यक्ति को उसके प्राण या देहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जायेगा अन्यथा नहीं।

21 (अ) के अर्न्तगत संविधान के 86वें संविधान – संशोधन 2002 को निशुल्क शिक्षा का अधिकार के रूप में अधिनियम पारित किया गया है। इसमें 6 से 14 वर्ष तक के बालकों को राज्य निशुल्क शिक्षा उपलब्ध करायेगा।

अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत निजता के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता – न्यायालय ने 1960 में खड़क सिंह और 1950 में एमपी. शर्मा प्रकरण में फैसला 24 अगस्त 2017 को सुनाते हुये निजता के अधिकार को मौलिक घोषित किया गया है।

अनुच्छेद 22 कुछ दशकों में गिरफ्तारी और निरोध से संरक्षण सभी नागरिकों को प्राप्त होगा।

शोषण के विरूद्ध अधिकार :

अनुच्छेद 23 मानव के दुर्व्याहार और बलातश्रम का प्रतिषेध – मानव का दुर्व्याहार और बेगार तथा उसी प्रकार का अन्य जबरदस्ती लिया जाने वाला श्रम प्रतिषेध किया जाता है और इस उपबन्ध का कोई भी उल्लंघन अपराध होगा जो विधि के अनुसार दण्डनीय होगा।

अनुच्छेद 24 कारखाने आदि में बालकों के नियोजन प्रतिषेध – चौदह वर्ष से कम आयु के के किसी बालक को किसी कारखाने या खान में काम करने के लिये नियोजित नहीं किया जायेगा या किसी अन्य संकट में नियोजन नहीं लगाया जायेगा।

धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार – अनुच्छेद 25 अन्तकरण की और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार करने स्वतंत्रता।

1. अनुच्छेद 27 किसी विशिष्ट धर्म की अभिवृद्धि के लिये करों का संदाय के बारे में स्वतंत्रता।
2. अनुच्छेद 28 कुछ शिक्षा संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक उपासना में उपस्थिति होने का अधिकार हो। किन्तु पूर्णत: राज्य निधि से पोषित किसी शिक्षा संस्था में कोई धार्मिक शिक्षा नहीं दी जायेगा।

संस्कृति और शिक्षा सम्बन्धी अधिकार :

अनुच्छेद 29 अल्पसंख्यक वर्गों के हितों का संरक्षण :

1. भारत के राज्य क्षेत्र या उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी विभाग को जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपि या संस्कृति है, उसे बनाये रखने का अधिकार होगा और
2. राज्य द्वारा पोषित या राज्य निधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक को केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा या इनमें से किसी के आधार पर वंचित नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद 30 शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन करने का अल्पसंख्यक वर्गों का अधिकार :–

संवैधानिक उपचारों का अधिकार – अनुच्छेद 32 इस अधिकार का सार तत्व यह है कि यदि किसी नागरिक के इन अधिकारों में से किसी प्रकार हनन होता है तो संविधान में प्रदत्त उपचारों का वह सहारा ले सकता है, ताकि उसके साथ होने वाले अनाचार या अन्याय को रोका जा सके।

संविधान के मूल अधिकार वाले भाग 3 में जो भी प्रावधान किये गये हैं, यदि कोई प्रथा, रीति या अन्य व्यवहार उन उपबन्धों में असंगत है तो वे शुन्य होंगे अर्थात् सांविधानिक विधि की दृष्टि से वे मान्य होंगे और उन्हें गैर–कानूनी करार किया जायेगा इसका तात्पर्य यह है कि इन उपबन्धों का उल्लंघन करने वाला कोई अध्यादेश, आदेश, उपविधि, नियम, विनियन, अधिसूचना, रूढ़ि या प्रथा विधि संगत नहीं होगी और उसे किस न्यायालय में चुनौती दी जा सकेगी ताकि मूल अधिकारों का अतिक्रमण न हो और सामाजिक न्याय की अर्न्तनिहित भावना को चोट न पहुंचे और न ही प्रतिक्रियावादी तत्व और कट्टरपंथी ताकतें हावीं होने पायें।

निष्कर्ष – यहाँ स्पष्ट: कहा जा सकता है कि संविधान में वर्णित सामाजिक न्याय का सिद्धांत न केवल कमजोर वर्गो के हितों की रक्षा करता है बल्कि धनी वर्गों पर भी यही दायित्व डालता है कि वे वर्तमान भारत में कमजोर वर्गों का आर्थिक शोषण न करे, उन्हें बेकारी तथा भूखमरी की स्थिति में न धकेले और उन्हें भी आजीविका में उचित अवसर प्रदान करे। धनी वर्गों का सामाजिक उत्तरदायित्व है कि वे निर्धन, दरिद्र, बेकार–विकलांग, अपंग–अपाहिज, अशिक्षित, पिछड़े लोगों का आर्थिक विकास तथा उत्थान में भरपूर योगदान करे। उन्हें धन कमाने व सम्पत्ति अर्जित करने का अधिकार है, पर वे उसका दुरूपयोग न करे उसका अपने ही हाथों में इस प्रकार एकत्रीकरण न करें समाज के कमजोर वर्ग निर्धनता–दरिद्रता की स्थिति में फंसते चले जायें। उधर सामाजिक न्याय का लाभ उठाने के लिये कमजोर वर्गो का दायित्व है कि वे अपने को सुशिक्षित बनाये, सामाजिक, बुराईयों को त्याग करे, फिजूल खर्चो से बचे, निष्ठापूर्वक काम रोजगार का निष्पादन करे और विभिन्न अवसरों का अपने उत्थान की दिशा में उपयोग करे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डी.एन. सदाशिव : लॉ एण्ड सोशल जस्टिस, (संपादित), 1978, पृष्ठ –69–70।
2. डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर : राईटिंग्स एण्ड स्पीचेज, खण्ड–3, 1987, पृष्ठ– 54।
3. बी.आर. अम्बेडकर : एनिहिलेशन ऑफ कास्ट, 1944, पृष्ठ–43–44।
4. डॉ. डी.आर. जाटव, सामाजिक न्याय का सिद्धांत, 1993, समता साहित्य सदन, जयपुर, पृष्ठ – 51–52।
5. https://www.bbc.com/hindi/india-41033512
6. https://hi.m.wikipedia.org>wiki>

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Analysis of Congestion Control Techniques and Traffic Managementin Cellular Networks

Laxmi Rav* Kalpana Midha**

Introduction - The correspondence stage in registering field is developing with the quick pace. Innovation is always developing with the approach of new mechanical gadgets, particularly in correspondence industry. The Internet is extending exponentially. Web empowered gadgets are ending up an integral part of our day by day. It has end up being relatively difficult to consider the world without Internet. The Internet structures may be fortified to meet coming essentials in portable correspondence. Congestion assumes an essential job in controlling the stream of information to quicken the sharing of information in the middle of the wired and remote gadgets.

Motivation - Web has seen huge development with 562 clients in 1983 to 3.4 billion out of 2016 as appeared in fig.1.1. The number sites took off from 193 of every 1993 to 8 billion sites in 2015 as appeared fig.1.2.With the development in size, the Internet has additionally seen development in decent variety of uses like sound video gushing, Emails, P2P document sharing, VOIP, FTP, gaming and E-business. Truth be told researchers are attempting to give interplanetary Internet. The decent variety in applications likewise brought about enhancement in inertness, Bit mistake rate, and direct limit as appeared Table 1.1.

Fig. 1.1 - Growth of internet users [1]. (see in next page)

Review Of Literature - The variable in congestion. A node priority based congestion control protocol (PCCP) is suggested. Priority index is maintained to reflect the importance of a node. The combination of arrival and service rates are used for perceiving the severe-ness of congestion. Node priority index and degree of congestion are used to impose hop to hop control.TCP is unreliable for telephony and streaming media, although the UDP being the natural alternative but lacks congestion control. Datagram congestion control protocol (DCCP) was designed to add congestion control support for UDP. Two type of Control laws were proposed in this paper. The first one identified as dual control law that scales gracefully with capacity of network but provides constrained resource allocation policy.Thesecond one known as primal dual used to overcome limits possessed by dual control law. ECN and queuing delay are further used at two levels to communicate the congestion message from sink to source.

Table 2.1: Representing the protocols with their Median speedup and Mediandelay reduction.

Protocol	Median speedup	Median delay reduction
Compound	2.1	2.7
New Reno	2.6	2.2
Cubic	1.7	3.4
Vegas	3.1	1.2
Cubic/sfqCoDel	1.3	7.8
XCP	1.7	4.3

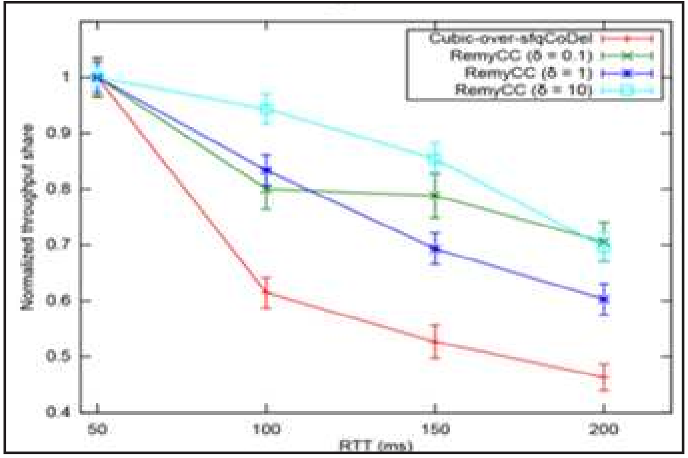

Methods And Techniqes - Artificial neural network is the building motivational methodology of natural neurons found in people. ANN is an electronic model that endeavors to mirror the preparing capacities of sensory system. The human mind learns by involvement similarly ANN learn via preparing models. Indeed, even the basic functionalities of a cerebrum in little creature is difficult to actualize by PCs. The PCs are great at preparing yet are wasteful in perceiving the examples.

The human mind stores the data as examples. Frequently these examples are perplexing in nature. The human mind can perceive and recognize different complex examples, as individual is capable perceive the different items like creatures, plants, structures even shapes and size of different articles with various points.

Simulation And Results - The reenactment of work was

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
**Research Supervisor, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

done on ns-2 .Regardless of topology the adhoc coordinate with 50 hubs was picked as appeared in fig.5.4. The arrangement parameters of the system are as appeared table 5.1 and fig.5.5. For transmission and transporter sense, default estimation of 250m and 500m are utilized separately. We utilized Omni directional two beam ground engendering radio wire, with every hub utilizing tail drop need line of 201 parcels.

Conclusions - We are living in the period of developing innovation. The world has changed into advanced world. From time to time new gadgets with refined innovation that can convey are created. With the expansion of new gadgets there is additionally increment in information. Around 3.4 billion clients associated with web creating about 2.5 × 1018 bytes of information in multi day. To course this colossal measure of information there is need of proficient and solid component. In 21 century the needs changed now the attention is on management and execution. Hence control congestion plays an essential in directing the information in capable way.

Congestion can be characterized as the condition of the system where all out interest for assets is more than accessibility of the asset. Normally congestion happens when accessibility of assets is lacking to take care of the demand of the system. Congestion in the system can be caused due inadequate memory to store arriving parcels, bundle landing rate surpasses the active connection limit, moderate processor, bursty traffic. Regularly expanding the quantity of assets for example bigger cushion, diminishing preparing time, utilizing rapid connection does not alienate the issue of congestion but rather may exacerbate things. The congestion adversy affects organize throughput and postponement.

Reference :-

1. Personal Research.

Fig. 1.1 - Growth of internet users

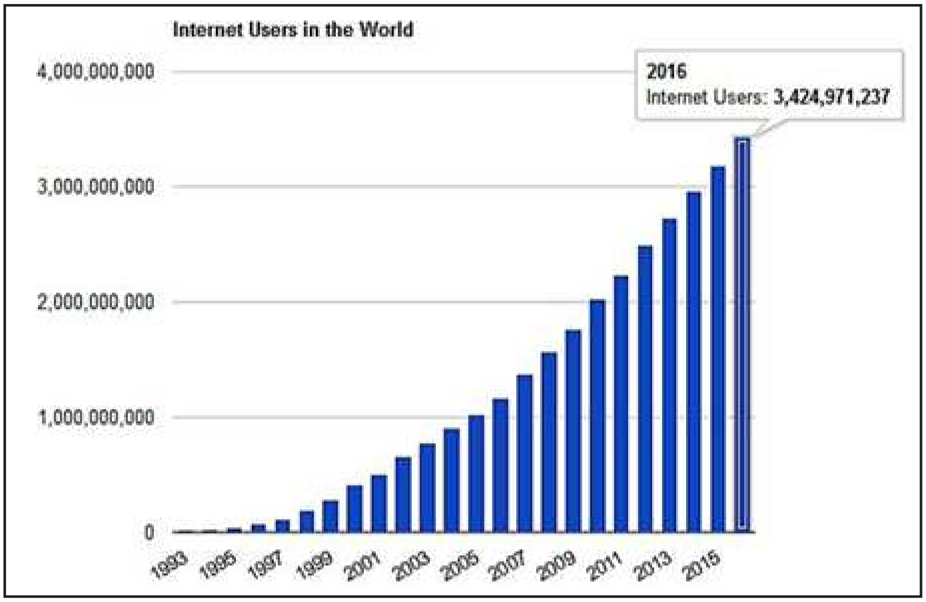

****

A Comparative View of Paradise Lost and Divine Comedy

Nitesh Kumar Sharma* Dr. O.P. Tiwari**

Introduction - In The Divine Comedy and Paradise Lost Dante and Milton embodied European thought down the centuries. However, different philosophical and theological issues expressed by Dante and Milton in The Divine Comedy and Paradise Lost are not confined or applicable to one particular religion or set of people either. The appeal of both poems is universal. There is much that is metaphysical in both poems and both poets made a supreme attempt to synthesis and harmonize poetry and philosophy. In both poems we find the fullest play of reason on the one hand and lofty and profound imagination and intuition on the other. Both poets express their philosophy and theology in verse. Both poems deal with the spiritual background of human existence and restoration to blessedness. The message conveyed by Dante and Milton is not sectarian or addressed to the Christian world alone. Both poems are "secular" in the larger sense because they transcend the interest of any one nation, religion, and community and belong to the whole world. Both poems are relevant even today. The Divine Comedy and Paradise Lost have freshness and vitality enough to console the afflicted mind of the modern man too. Both these poems provide a remedy to the spiritual crisis not only of the medieval but the modern civilization. The story of Adam and Eve and the symbolic journey of Dante through Hell, Purgatory and Paradise are not pigments of a fantasy. There lies the great religious truth behind these vibrant stories. This type of universal appeal is a pre-eminent quality of both poems. This type of highest universal appeal is created by Dante and Milton through the perfect balance between poetry and philosophy on the one hand and reason and imagination on the other.

Most of the great poems of the world are sublime and philosophic in nature. The acme of Dante's and Milton's art lies in expressing esoteric and philosophic thinking in the form of poetry. Not only this, by this type of fusion they made philosophy easy to comprehend and understand it in a better manner. The story of Paradise Lost or that of The Divine Comedy is the story of every individual who is tortured by doubt and is torn by acute conflicts of good and evil. Both poems deal with the story of the individual's soul which is continuously tempted and frightened by evils and sins, and the soul's ultimate union with God. Milton calls his poem 'more heroic' because he deals with a philosophy of universal significance. Here lies the greatness of Milton as a poet through his spiritual vision he transcended the world of contradictions and attained that state where all distinctions vanish. His philosophy of life is applicable to every individual.

Milton was interested in nothing less than man's union with God. Only this type of union can make man happy for ever. Happiness resulting from worldly achievements is ephemeral. It cannot last forever. Man can establish the kingdom of Heaven within himself by uniting and submitting himself completely to God. Blessedness and happiness resulting from this union can never be ephemeral. Milton wrote his epic with this intention in mind. In his epic Milton tried to probe into the mystery of individual's soul's relation to God. Milton was deeply concerned with the salvation and redemption of man.

Paradise Lost is a poem meant for all mankind. The philosophy of Paradise Lost is efficacious to every individual who is in search of God. The philosophy expressed by Milton is just like a beautiful tree loaded with great foliage in bloom. Milton used all his philosophical and scientific knowledge in Paradise Lost, He used philosophy and science in his poem in such a way that the fusion of poetry and philosophy does not seem artificial or in any way contrived. Milton successfully fused poetry, philosophy, science and theology and, the fusion of these apparently contradictory disciplines does not create in his poem any conflict or clash, since it is achieved through the operation of, and appeal to, imagination and intuition the greatness of Milton as a poet lies in creating an unprecedented harmony between poetry and philosophy.

The Divine Comedy and Paradise Lost, contain the whole essence of European philosophy in the form of sublime poetry. In every great poem we find some sort of philosophy. Like Milton, Dante also used science, philosophy and theology in his poem. Like Paradise Lost, The Divine Comedy deals with the spiritual struggle of a human soul and final progress to blessedness the philosophy of Dante is based on his spiritual vision. According to Dante man's ultimate aim should be to resolve

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
**Research Supervisor, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

human will to the Divine. His main Endeavour is to show how a man can realize the Eternal, Infinite and Divine within himself.

Like Paradise Lost, the appeal of The Divine Comedy is universal. According to Dante's philosophy truth is one. There cannot be many truths. The manifestations of Truth may be different, but beyond them there exists only one reality, and through whatever manifestation we try to reach the truth, we attain to the same goal in the end. According to Dante there is only one aim for the seeker of truth and that is he must march towards God, the Eternal Truth beyond which no truth exists.

According to Dante after the realization of truth, there remains nothing for the seeker of God except the Absolute Truth: God. He lives forever in the state of God - consciousness. This is what we find in all philosophies and religions of the whole world. Almost every school of philosophy and religion says that truth is absolute and one. Here lies Dante's universality. His message is not sectarian but universal.

The Divine Comedy deals with the mystery and the final destiny of the soul. This interest of Dante was not limited to one nation, culture or one single individual. He was rather interested in the soul's union with God which alone can bring everlasting peace and happiness.The moral and ethical philosophy and ideas expressed by Dante in The Divine Comedy are relevant in every individual's life. The philosophy of good and evil, the vision of love, the vision of God, the philosophy of the freedom of will, the soul's suspension between the world of senses and the kingdom of heaven are inevitably related to human life. Dante and Milton made the supreme effort to present the widest possible spectrum of philosophical and metaphysical thoughts related to human existence in The Divine Comedy and Paradise Lost respectively. Both poems deal with the spiritual struggle of a human soul.

The superiority of Dante and Milton lies in the fact that while they fully imbibe philosophy and reason, they at the same time supplement and shape the results attained by philosophy and reason by a suprarational intuition and imagination which does not conflict with either reason or philosophy. In both poems we find an enfoldment of the ultimate truth which we do not find in many philosophical works which rely completely on reason. For the realization of the Ultimate Truth reason is incomplete and inadequate. It is not possible to envisage truth face to face with the help of reason only. Reason can help us to a certain extent but then it should be transcended by intuition.

The supreme proof of Dante's and Milton's greatness as philosophical poets lies in creating an indubitable harmony between poetry and philosophy, reason and imagination and intellect and intuition. This fusion does not create any clash or discord. On the contrary they are fused in such an integral way that it is very difficult and detrimental to separate them. Hence, we can say that in a truly sublime work of literature we do not find two isolated continents: one of philosophy and another of poetry. They coalesce inevitably in great works of literature. In The Divine Comedy and Paradise Lost both poetry and philosophy are inseparably blended. Both these poetic philosophic works are full of magnificent imagery, symbolism, allegory and religious and metaphysical truths that provide joy, strength and wisdom to the individuals afflicted with doubt, fear and conflict. The message of both works is non-sectarian. They are universal in outlook and appealing to every seeker of truth.

Reference :-

1. Personal Research.

****

PIL - A Judicial Response to Represent the Unrepresented

Dr. Suneeta Bhadoo*

Introduction - The Indian constitution which was made with a lot of hope, even after sixty nine years, couldn't deliver what was thought of it. Ours is a noble constitution worked in an ignoble spirit. That is the legislature, executive and the judiciary, which were meant to complement and supplement each other,

Till 1960s and 70s, the concept of litigation in India was still in its rudimentary form and was seen as a private pursuit for the vindication of private vested interests. Litigation in those days consisted mainly of some action initiated and continued by certain individuals, usually, addressing their own grievances/problems. Thus, the initiation and continuance of litigation was the prerogative of the injured person or the aggrieved party. Even this was greatly limited by the resources available with classes of persons or the general public at large.

However all this scenario changed during eighties with the Supreme Court of India laid down the concept of Public Interest Litigation.[1] The Supreme Court gave all the individuals in the country and the newly formed consumer groups or social action groups, an easier access to the law and introduced in their work a broad public interest perspective.

Public Interest Litigations are proceedings which may be regarded as having a public element and which evolve remedies traditionally associated with matters of public concern. Public interest litigation is not defined in any statute or in any act. It has been interpreted by judges to consider the interest of public at large. Although, the main and only focus of such litigation is only "public interest" there are various areas where public interest litigation can be filed e.g.: violation of basic human rights of the poor, content or conduct of government policy, compel municipal authorities to perform a public duty, violation of religious rights or other basic fundamental rights. In the words of Supreme Court in Peoples Union for Democratic Rights v. Union of India[2], "we wish to point out with all the emphasis at our command that public interest litigation is a totally different kind of litigation from the ordinary traditional litigation which is essentially of an adversary character".

Prior to 1980s, only the aggrieved party could personally knock the doors of justice and seek remedy for his grievance and any other person who was not personally affected could not knock the doors of justice as a proxy for the victim or the aggrieved party. And as a result, there was hardly any link between the rights guaranteed by the constitution of Indian union and the laws made by the legislature on the one hand and the vast majority of illiterate citizens on the other. In 1981 justice P N Bhagwati in S.F Gupta V. Union of India[3], articulated the concept of PIE as follows, "where a legal wrong or a legal injury is caused to a person or to a determinate class of persons by reason of violation of any constitutional or legal right or any burden is imposed in contravention of any constitutional or legal provision or without authority of law or any such legal wrong or legal injury or illegal burden is threatened and such person or determinate class of persons by reasons of poverty, helplessness or disability or socially or economically disadvantaged position unable to approach the court for relief any member of public can maintain an application for an appropriate direction, order or writ in the high court under article 226 and in case any breach of fundamental rights of such persons or determinate class of persons, in this court under article 32 seeking judicial redress for the legal wrong or legal injury caused to such person or determinate class of persons"

A person is not able to get justice because of -

- Cost of litigation
- Time
- Recognising rights

The judicial activism gets its highest bonus when its orders wipe some tears from some eyes. This epistolary jurisdiction is somehow different from collective action.

The first reported case of PIL in 1979 focussed on the inhuman conditions of prisons and under trial prisoners[4]. Then in Anil Yadav case[5] the court took notice of the dastardly acts of the Bihar Police who used to blind the suspected criminals by putting acid into their eyes. In Bandit Mukti Morcha Case[6] the Supreme Court ordered for the release of bonded labourers. In another case the Supreme Court ordered that handcuffs and other fetters shall not be forced upon the under trials and convicts[7]. In a ftirther case, the Supreme Court ordered the banning of smoking in pubic places[8]. And there were many judgements which were pronounced to uplift the women's condition in the society[9]. There were numerous cases filed by M C Mehta for the

* LL.M., Ph.D, Bikaner (Raj.) INDIA

cause of environment protection which may not be possible if the concept of PIL were not there.

Remedial nature of PIL indirectly incorporated the principles enshrined in the part TV of the constitution of India into part III of the Constitution. By riding the aspirations of part TV into part III of the constitution had changed the procedural nature of the Indian law into dynamic welfare one. An array of case decisions are the obvious example of this change in nature of judiciary. The doctrine of citizen standing makes a significant expansion of the courts rule, from protector of individual rights to guardian of the rule of law wherever threatened by official lawlessness. The change as we have seen, are both substantial and structural. It has radically altered the traditional judicial role so as to enable the court to bring justice within the reach of the common man. Public interest litigation is here to stay but the initial momentum seems to be missing. With the passage of time, things have changed a lot, and the worst part is that it was for worst.

It is inherent in the very process of democracy that men of high character and exceptional calibre do not get nominated or chosen. justice is provided to the deprived irrespective of, whether he asks for it or not. Not every one is in a situation where one can even demand for justice. It seems that for a person to have access to justice he should have several qualifications other than the fact that his right is denied which has been guaranteed by the constitution or any law made there under. A person is supposed to buy justice by paying fees which itself cannot be justified as it itself is violative of his right to equality and access to justice. It means that a person with no money cannot avail justice. And a rich man and a poor person stand in different footing when they approach the court for justice.

Majority of the citizens even doesn't know that he has a right to life and liberty and equality and so on. Then, how one can expect to know that he can approach the courts for enforcement of his rights.

To any foreigner observer, one of the most striking aspects of the Indian legal system is the extent to which formal legal arrangements exist in almost metaphysical isolation from social reality. It is hardly surprising, therefore, that while public interest litigation may have secured a better life for some individuals, it has not ended bonded labour nor found homes for the Bombay pavement dwellers. It is a fact that litigation strategies can never substantially redistribute wealth or power, nor penetrate and affect the economic, cultural conditions which define the reality of Indian life. But that doesn't mean not to strive for making things better. Nevertheless, the problem of backlogs and delays remains a serious concern and appears to underlie a recent retrenchment in PIL matters. So the recent trends have been to restrict the PIL cases to where the conscience of the court was shocked.

To curb the perils he made the following suggestions -

1. Reject dubious PIL "at the threshold, and in appropriate case with exemplary costs,"
2. In cases where important projects or socio-economic regulations are challenged after gross delay, such petitions "should be thrown out at the very threshold on the ground of latches. Just because a petition is termed as PIL does not mean that ordinary principles applicable to litigation will not apply. Latches is one of them".
3. PIL petitioners should be put on strict terms such as providing an indemnity or giving an adequate undertaking to the court to make good the damage, if PIL is ultimately dismissed. To avoid PIL that has rendered invaluable service from becoming an unruly horse, "a firm sober judicial jockey in the saddle is essential".

Public interests litigation represents a daring, and in some respects unique, response to a problem of unparalleled proportions. The character and degree of the challenge are related to societal conditions in the subcontinent which pose the danger of significant alienation of a large section of the community from the values infusing the legal system. The commitment of Indian judges to social action litigation should reflect their conviction that the courts are bound to make a relevant and meaningful contribution to the alleviation of tensions and to preservation of the social fabric. The court should seek to reach out to segments of the community bereft of influence, privilege or even basic opportunity, and to assure them, at least in a fundamental sense, of the benefits of the legal order. At the heart of the problem is the political accountability of the courts, and the legitimacy, if not the practicality, of their leadership role in the formulation and implementation of broad social policy, often impinging on matters of acute.

References :-

1. Public Interest Litigation is herein after referred to as PIL.
2. Peoples Union for Democratic Rights v. Union of India AIR 1982 S.C. 1473.
3. SP Gupta v. Union of India 1981 (supp) SCC 87.
4. 4Hussainara Khatoon v. State of Bihar, AIR 1979 SC 1360.
5. Anil Yadav v. State of Bihar AIR 1982 SC 1001.
6. Bandu Mukti Morcha v. Union of India (1984)3 S.C.C. 161.
7. Citizens for Democratic Rights v. State ofAssam (1995) 3 SCC 743.
8. Murli Deora v. Union of India AIR 2002 SC 40.
9. Delhi Domestic Working Womens Forum v. Union of India (1995) 1 SCC 14. Vishaka v. State of Rajasthan AIR 1997 SC 3014.

****

Human Rights Friendly School on World

Dr. Gurpreet Singh* Dr. B. K. Yadav**

Introduction - A Human Rights Friendly School is founded on principles of equality, dignity, respect, non-discrimination and participation. It is a school community where human rights are learned, taught, practised, respected, protected and promoted.

A Human Rights Friendly School is founded on principles of equality, dignity, respect, non-discrimination and participation.It is a school community where human rights are learned, taught, practised, respected, protected and promoted.

Human rights education aims to do the following: Enhance the knowledge and understanding of human rights. Foster attitudes of tolerance, respect, solidarity, and responsibility. Develop awareness of how human rights can be translated into social and political reality.

An important outcome of human rights education is empowerment, a process through which people and communities increase their control of their own lives and the decisions that affect them. The ultimate goal of human rights education is people working together to bring about human rights, justice, and dignity for all.

Article 26 states: "Everyone has the right to education. Education shall be free, at least in the elementary and fundamental stages. ... Education shall be directed to the full development of the human personality and to the strengthening of respect for human rights and fundamental freedoms.

The court declared that students and teachers do not "shed their constitutional rights to freedom of speech or expression at the schoolhouse gate." The First Amendment ensures that students cannot be punished for exercising free speech rights, even if school administrators don't approve of what they are saying.

Amnesty International supports schools and their wider communities in all regions of the world to build a global culture of human rights. Human Rights Friendly Schools aim to empower young people and promote the active participation of all members of the school community to integrate human rights values and principles into all areas of school life.

A Human Rights Friendly School places human rights at the heart of the learning experience and makes human rights an integral part of everyday school life. From the way decisions are made in schools, to the way people treat each other, to the curriculum and extra-curricular activities on offer, right down to the very surroundings in which students are taught, the school becomes an exemplary model for human rights education.

A Human Rights Friendly School is founded on principles of equality, dignity, respect, non-discrimination and participation. It is a school community where **human rights are learned, taught, practiced, respected, protected and promoted**.

Human Rights Friendly Schools are inclusive environments where all are encouraged to take active part in school life, regardless of status or role, and where cultural diversity is celebrated.

Amnesty International's Human Rights Friendly Schools project started in 2009 in 14 countries: Benin, Cote d'Ivoire, Denmark, Ghana, Ireland, Israel, Italy, Moldova, Mongolia, Morocco, Paraguay, Poland, Senegal and the United Kingdom. Today, the network of schools aspiring to become human rights friendly continues to expand, and currently covers 22 countries around the world.

The Human Rights Friendly Schools approach encourages and supports the development of a global culture of human rights by empowering young people, teachers and the wider school community to create human rights friendly school communities across the world. Participating schools work towards developing a whole-school approach to human rights education, integrating human rights values and principles into key areas of school life. Human Rights Friendly Schools reach beyond the classroom and out into the community to change the way people think about, and actively participate to address, human rights issues. It is founded on the belief that by increasing knowledge and changing behaviors and attitudes in entire communities, a global culture of human rights becomes possible.

The Human Rights Friendly Schools aims to -

- Empower young people and promote the active participation of all members of the school community in integrating human rights values and principles into all areas of school life.

*Research Supervisor (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
**Research Scholar (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

- Enable young people to know their human rights and responsibilities and to become inspired to protect and defend their rights and the rights of others, based on values such as equality, dignity, respect, non-discrimination and participation.

The Human Rights Friendly Schools project is founded on the 10 Global Principles for Human Rights Friendly Schools. These principles are based on international human rights standards, norms and instruments such as the Universal Declaration on Human Rights. In order to become a Human Rights Friendly School, schools are encouraged to integrate the Global Principles into four key areas of school life: Governance; Relationships; Curriculum; and School environment.

Schools implement the Human Rights Friendly Schools approach, with the involvement of the whole community and often with support from Amnesty International.

The school has creative control over how to integrate human rights, taking into account the framework of the national educational system and the social and cultural context in which it is situated, however, global standards in all key areas of school life outline what all Human Rights Friendly Schools are working towards. **Creativity and innovation are encouraged!** Support, guidance and examples of inspirational activities are available in the Human Rights Friendly Schools Toolkit, Pamphlets and Poster.

The toolkit provides information to schools on how to implement the Human Rights Friendly Schools approach. It offers practical suggestions for schools around the world to make human rights a viable part of their curricula, teaching methodology and broader learning environment that has a lasting impact not just on students, but also on their wider communities.

Pamphlets for different stakeholders in the school's community allow Human Rights Friendly Schools to be introduced easily and a poster outlining what Human Rights Friendly Schools are, can be used to display in engaged schools.

Assessing the impact of the project over time is an important aspect of the project. Results of monitoring and evaluation activities are used both to improve the project and to make interim amendments to a school's action plan if needed, and to assess how the project is meeting its overall goals and objectives.

Human rights can give schools around the world a shared language of equality, non-discrimination, inclusion, respect, dignity and participation that is crucial to the goal of achieving a more peaceful and just global society.

Human rights education is a critical means of instilling the knowledge, skills, attitudes and values that can foster a culture of human rights. Amnesty International defines a culture of human rights as an atmosphere in which all members of a given community understand, value and protect human rights, where the values of equality, dignity, respect, non-discrimination and participation anchor policies and are the basis for decision making processes within the community.

Human Rights for the children are following IN Schools

1. **The right to a free education -** Every child is granted a free education . However, there's free and then there are the long list of expenses that go along with an education. Parents need to investigate their state, district, and school policies to find out what's free - and what you're required to pay for.
2. **An immigrant child's right to a free education -** In 1982, the U.S. Supreme Court decided that immigrant children have the same right to a free K-12 public education as legalized U.S. children. This means that your and your child's immigration status is irrelevant and not the school's business.

   In no uncertain terms, discrimination is illegal as stated in the U.S. Constitution, which guarantees equal treatment to all, including public school students. You have the right to demand the education you believe your child needs.
3. **Right to learn English and other language rights-** In 1974, the Supreme Court decided in *Lau vs. Nichols* that the public education system must provide English language instruction because failure to do this prohibits children from full participation, which violates the Civil Rights Act of 1964

   Many states offer English as a Second Language and bilingual programs to assist immigrant children.
4. **Right to be safe in school -** Many state laws require schools to provide a safe and supportive learning environment, with a School Safety Plan your school's principal has designed. Civil rights laws are in place to protect students from bullying at all federally funded schools. Teachers and fellow students cannot harass your children about their race, national origin, color, sex, disability, ethnicity, or religion.

   However, safety from physically abusive teachers isn't guaranteed. Remarkably, corporal punishment is allowed in 19 states despite the American Psychological Association's condemnation Corporal punishment generally refers to "paddling." Teachers are not permitted to choke, punch, slam children against a wall, or cause injury that requires medical attention beyond first aid. If they do, they may be suspended or arrested. (GreatSchools.org also offers advice if your child is berated and humiliated by a bullying teacher.)
5. **Right to freedom of speech and religion -** The U.S. public school system is secular (non-religious) and state laws forbid public education funds to be spent on religion. However, freedom of speech and religion are protected by the First Amendment of the U.S. Constitution.

   Conversely, it is illegal for a public school to proselytize or impose religious beliefs on your child or promote one religion as superior to another, or religion in general as superior to secular beliefs.

Discussion of world religions must be "neutral". School prayer led by teachers or coaches is illegal.

6. **Right to information and participation -** Parents have the legal right, via the Family Educational Rights and Privacy Act (FERPA, 1974), to inspect their child's educational records at the school, to have them explained if necessary, to request updates and corrections, and to have their child's education records sent to another school in a timely manner if they wish to have their child transfer schools.
   All parents have the right to participate in parent councils and committees, and the right to join the school's parent-teacher association or organization (PTO/ PTA). Parents can also appeal to their school district's school board, which has regular meetings where the public can present their questions and complaints. Get tips on how to influence your school board and learn what the school board does, and learn what makes a great school board candidate.
7. **Right to learn about evolution, not creationism or intelligent design -** Evolution has been presented as a scientific fact in public schools ever since a Supreme Court decision in 1968, and it's included in the Common Core curriculum adopted by 41 states. Several religious groups that frown on evolution have strived, and failed, to insert their own beliefs into public schools. In 1987, the Supreme Court banned the teaching of "Creation Science" because it promoted a religious belief. Likewise, in 2005 a District Court in Pennsylvania banned the insertion of "Intelligent Design" in science classrooms.
8. **Right to opt your children out from sexual health education and HIV/AIDS prevention education -** Some parents don't want school officials teaching sex information to their children. Students can opt out of these presentations if their parents request an exemption in writing or petition the principal. (Note: Parents do not have the right to opt their children out of diversity and tolerance programs.)
9. **Right to opt your children out of standardized testing -** One study claims students take 112 government-mandated standardized tests between PreK and 12th grade, even though polls indicate the practice is disliked by 67 percent of public school parents. The Every Student Succeeds Act (ESSA) allows parents to refuse testing.
10. **Right to opt your children out of the classroom entirely -** Homeschooling is legal in all 50 states. Regulations about homeschooling vary with strict rules in many and lax control in others. The easiest place to home school is Alaska, where no contact with the government is required. Texas is also rather lenient in its policy.

Reference :-

1. Personal Research.

****

Arsenicum Album - Natural History

Dr. Rajinder Girdhar* Dr. Parveen Kumar**

Abstract - Aresenic triovide is the inorganic compound with the formula AS203. this commercially important oxide of arsenic is the main precursor to other arsenic compounds, including organo arsenic compounds. Approximately 50,000 townes are produced annually. Many applications are controversial given the high toxicidy of arsenic compounds.
Key Words -Lemna gibba, duckweed, Saccharmoyies cerevisiae, yeast arsenic, Arsenicum album, nosode, gibberrellic acid.

Introduction - Large scale applications include its use as a precursor to forestry products, in colorless glass production, and in electronics. Being the main compound of arsenic, the trioxide is the precursor to elemental arsenic, arsenic alloys, and arsenide semiconductors. Organoarsenic compounds, e.g. feed additives (Roxarsone) and pharmaceuticals (Neosalvarsan), are derived from arsenic trioxide. Bulk arsenic-based compounds sodium arsenite and sodium cacodylate are derived from the trioxide.

A variety of applications exploit arsenic's toxicity, including the use of the oxide as a wood preservative. Copper arsenates, which are derived from arsenic trioxide, are used on a large scale as a wood preservative in the US and Malaysia, but such materials are banned in many parts of the world. This practice remains controversial. In combination with copper(II) acetate arsenic trioxide gives the vibrant pigment known as paris green used in paints and as a rodenticide. This application has been discontinued.

Despite the well known toxicity of arsenic, arsenic trioxide has long been of biomedical interest, dating to traditional Chinese medicine, where it is known as *Pi Shuang* and is still used to treat cancer and other conditions, and to homeopathy, where it is called arsenicum album. Some discredited patent medicines, e.g., Fowler's solution, contained derivatives of arsenic oxide. Arsenic trioxide under the trade name Trisenox (manufacturer: Cephalon) is a chemotheraputic agent of idiopathic function used to treat leukemia that is unresponsive to "first line" agents. It is suspected that arsenic trioxide induces cancer cells to undergoapoptosis. Due to the toxic nature of arsenic, this drug carries significant risks. Use as acytostatic in the treatment of refractory promyelocytic (M3) subtype of acute myeloidleukemia. The combination therapy of arsenic trioxide and all-trans retinoic acid (ATRA) has been approved by the U.S. Food and Drug Administration (FDA) for treatment of certain leukemias. University of Hong Kong developed a liquid form of arsenic trioxide that can be administered orally.

Arsenic trioxide also appears to be a promising therapeutic agent for autoimmune diseases.

The enzyme thioredoxin reductase has recently been identified as a target for arsenic trioxide.

Arsenic trioxide in combination with ascorbic acid and buthionine sulfoxide decrease intracellular glutathione to a greater extent, and render malignant cells more sensitive to apoptosis. Arsenic trioxide induced apoptosis was not enhanced by ascorbic acid in normal cells, suggesting that this combination may be selectively toxic to some malignant cells.

The first symptoms of acute arsenic poisoning by ingestion are digestive problems: vomiting, abdominal pains, diarrhea often accompanied by bleeding. Sub-lethal doses can lead to convulsions, cardiovascular problems, inflammation of the liver andkidneys and abnormalities in the coagulation of the blood. These are followed by the appearance of characteristic white lines (Mees stripes) on the nails and by hair loss. Lower doses lead to liver and kidney problems and to changes in the pigmentation of the skin. Even dilute solutions of arsenic trioxide are dangerous on contact with the eyes.

The poisonous properties are legendary and the subject of an extensive literature.

Chronic arsenic poisoning is known as arsenicosis. This disorder affects workers in smelters, in populations whose drinking watercontains high levels of arsenic (0.3 - 0.4 ppm), and in patients treated for long periods with arsenic-based pharmaceuticals. Similarly, studies on workers exposed in copper foundries in the U.S., Japan and

*Principal, HMC, Abohar (Punjab) INDIA
**Director (Academic & Research) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Sweden indicate a risk of lung cancer 6 -10 times higher for the most exposed workers compared with the general population. Long-term ingestion of arsenic trioxide either in drinking water or as a medical treatment can lead to skin cancer. Reproductive problems (high incidence of miscarriage, low birth weight, congenital deformations) have also been indicated in one study of women exposed to arsenic trioxide dust as employees or neighbours of a copper foundry.

Conclusion - Ars Aib 30C ameliorated arsenic toxicity and DNA damage, validafing efficacy of ultra-highly dilnded remdies used in homeopadhy.

References :-

1. Remedy Mini workbooks : Arsenicum album Kindle Edition by Neil Slade (Author).
2. Lockie, Andrew & Geddes, Nicola (1995). Homeopathy: The Principal and Practice of treatment. Dorling Kindersley Publishing PP 52-53.
3. Bhattacharya, Shaohi “Homeopathy reduces arsenic poising in mice (New Scientist News Service).

****

राग दरबारी में श्रीलाल शुक्ल

डॉ. विनिता वर्मा *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधपत्र प्रसिद्ध व्यंग्यकार श्रीलाल शुक्ल जी की व्यंग्य रचना 'राग दरबारी' से सम्बंधित हैं। शोधपत्र का विषय 'राग दरबारी में श्रीलाल शुक्ल' हैं।

प्रस्तावना – उपन्यास की दृष्टि से हिन्दी का स्वातंत्रयोत्तर युग अपने आप में एक उपलब्धि रहा है। जिसमे 'राग दरबारी' का भी अपना महत्वपूर्ण स्थान है। गोदान के बाद इसे भी उपन्यास जगत् में 'मील का पत्थर' माना जाता है। श्रीलाल शुक्ल जी ने जिस अभिव्यक्ति कौशल का परिचय दिया वह अनुपम है। श्री शुक्ल जी का उपन्यास मनुष्य की निजी तकलीफों, कष्टों, हताशाओं, कुण्ढ़ओं आदि को अभिव्यक्ति देकर समाज के बाह्ययाचारों पर आक्रमण करता हुआ विडम्बनाओं, विसंगतियों की कसकर व्याख्या करता है। सामाजिक यथार्थ के दस्तावेज़ के रूप में तथा एक सृजनात्मक कृति के रूप मे भी उपन्यास शब्द शक्तियों के माध्यम से जागृत करने का काम करता है। विश्व में होने वाले सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, शिक्षा आदि परिवर्तनों को प्रस्तुत करने वाला उपन्यास कलात्मक रूप में होने वाले परिवर्तनों के प्रति भी उदार दृष्टिकोण रखता है। आज मानव की सोचने–समझने की शक्ति का ह्रास हो रहा है और जीवन की मूल आवस्यकताओं को ही मनुष्य में अपना सब कुछ समझ लिया है चाहे वह कैसे भी प्राप्त हो।

श्री शुक्ल जी ने अपने उपन्यास में व्यंग्य के माध्यम से अभिव्यक्ति कौशल का परिचय दिया है। स्वतंत्रता से पूर्व भी काफी व्यंग्य रचनाएँ की गई। किन्तु भारतेन्दु युग से ही व्यंग्य साहित्य का विधिवत् शुभारम्भ हुआ। श्रीलाल शुक्ल का 'राग दरबारी' शिवपालगंज गाँव की नहीं अपितु सम्पूर्ण भारत की समाज व्यावस्था पर करारा व्यंग्य किया। इस उपन्यास में अंग्रेज़ी राज्य, अंग्रेज़ो की नीति के प्रति गुलामियत, रिश्वतख़ोरी, नेता, भ्रष्टाचार, प्रशासनिक अक्षमता आदि सभी पर व्यंग्य बाणों की वर्षो होती हुई दृष्टिगोचर होती है। श्री शुक्ल जी ने इन्हीं माध्यम वर्ग की कुण्ठाओं आदि को अपनी व्यंग्याभिव्यक्ति का एक आधार बनाया। आज का लेखक महाकाव्यात्मक वस्तु की अपेक्षा अपनी छोटी और सच्ची अनुभूति को विस्तृत रूपों में चित्रित करना ज़्यादा उचित समक्षता है। इसलिए आज के उपन्यसों का आकार भी सिमटता जा रहा है। 'राग दरबारी' उपन्यास भी उपर्युक्त परम्परा का निर्वाह करता है। 'राग दरबारी' उपन्यास 35 अंशों में लिखा गया है परन्तु परम्परावादी उपन्यासों की भाँति इसमें कथा एक के बाद एक घटनाओं का वर्णान प्रस्तुत नहीं करती है अर्थात् इसमें मूल कथा सूत्र की वह अन्तर्धार नहीं मिलती है जैसी अन्य उपन्यासों में विद्यमान है। इसकी कथावस्तु कुछ उखड़ी–उखड़ी सी जान पड़ती है परन्तु हम यह कहना चाहेगे कि इस उपन्यास में लेखक का उद्देश्य पाठकों को कोई मनोरंजक कहानी सुनाने का नहीं रहा है अपितु उसका लक्ष्य शिवपालगंज के सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक दृष्टि शिक्षा और अन्य विषयों को नए आयामों में प्रस्तुत करना रहा है। श्रीलाल शुक्ल जी ने अपने हास्य–व्यंग्य प्रसंगों के द्धारा वर्णन शैली में ही 'राग दरबारी' की विषयवस्तु को अभिव्यक्त किया है। यह अपने नवीन कथा विन्यास में एक ऐतिहासिक प्रयोग है। पात्र और चरित्रांकन की दृष्टि से उपन्सास की यह न्यूनता कुछ अखरती तो है, कि इसमें कोई भी पात्र ऐसा नहीं है। जिसे कथानक की छुरी कहा जा सके या उसको मूलाधार बनाकर कथानक का विकास किया जा सके। किन्तु 'राग दरबारी' पर इस परम्परागत कसौटी की दृष्टि से विचार करना श्रीलाल के साथ अन्याय होगा।

'राग दरबारी' का मुख्य स्वर ही व्यंग्यात्मक है। इन सहमतियों के बाद भी आलोचकों, साहित्यकारों का कथन है कि इनकी व्यंग्यात्मकता बहुत आरोपित व अनावश्यक लगती है और जैसे ग्राम जीवन की विसंगतियों का दर्द उभारने के स्थान पर उसका मख़ौल उड़ती नज़र आती है। वैसे मेरी दृष्टि में यह सरासर गलत व भ्रामक तथ्यों पर आधारित आरोप है क्योंकि युगाभिव्यक्ति में यथास्थिति का चित्रण करने के लिए मूल्यहीनता की स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिए व मानवीय अवशता–विवशता से साक्षात्कार करने के लिए इन परिस्थितियों का नग्न चित्रण आवश्यक ही नहीं वरन् अनिवार्य हो जाता है। हाँ इतना अवश्य कहा जा सकता है कि कही–कही उपन्यास में व्यंग्य का स्वरूप अपनी सीमा से अतिक्रमण कर गया है। सम्पूर्ण उपन्यास में सम्पूर्ण गतिविधियाँ शिवपालगंज में घटित होती है और इतने बड़े स्वरूप को एक छोटे से गाँव में एकत्रित करना मामूली बात नहीं है। सहकारी संस्थानों, विद्यालायों, अदालतों आदि में निरन्तर परिव्याप्त भ्रष्टाचार का वर्णन कर व्यक्ति को उसकी मनुष्यता की संज्ञा को ही बदलने को यह उपन्यास मजबूर करता है। लंगड़ द्धारा वैद्य रूप से नकल प्राप्त करने के प्रयास का वर्णन आम आदमी एवं सरकारी विभाग के संबंधों पर रोशनी डालता है। वर्तमान युग के गद्य एवं पद्यकारों ने प्रमुख रूप से राजनीतिक अव्यवस्था, दल–बदल, भाई–भतीजावाद, जातिवाद, चरित्र हीनता, अर्थव्यवस्था में गरीब–अमीर की बढ़ता हुई खाई, बेरोज़गारी, रिश्वतख़ोरी, नौकरशाही, महँगाई, मानव–मूल्यों का अवमूल्यन और इन सबके बावज़ूद बुद्धिजीवियों की अकर्मण्यता, अकेलापन, अजनबीपन, घुटन, संघर्ष से पलायन, मानवीय विवशता का ध्यान में रखकर साहित्य साधना की है। जीवन के समूचे पक्षों को उलट–पुलट कर देखने, उनकी विसंगतियों को जाँचने, परखने उनकी आतरिक पीड़ा को समझने संसार के रेशे–रेशे में मनुष्य की खण्डित प्रतिमा को समग्रता प्रदान करने में लीन व्यंग्यकार की अनुभूतियाँ निश्चय ही इस युग की उपलब्धियाँ भी है। श्री शुक्ल जी ने राग दरबारी उपन्यास में व्यंग्य के माध्यम से अभिव्यक्ति कौशल के सभी रूपों को प्रस्तुत किया है। सामाजिक,

* अतिथि विद्वान, रावटी शासकीय महाविद्याय, रतलाम (म.प्र.) भारत

राजनीतिक, धार्मिक, देश की स्थिति आदि में मानव मूल्य के विघटन को व्यंग्यात्मक रूप में रखकर मानव चिन्तन को विचारधारा को युगीन परिस्थितियों के प्रति सोचने पर विवश करता है। यही कारण है कि श्री शुक्लजी व्यंग्यात्मक उपन्यास के लिए चर्चित रहे।

श्रीलाल शुक्ल जी ने व्यंग्यकार की रचनाहृष्टि को परिभाषित करते हुए लिखा है :- **'व्यंग्यकार के मन में भी आदर्श समाज और जीवन की क्वालिटी की एक कल्पना होती है। जिससे मेल न खाने वाली हर स्थिति को वह विसंगति मानता है उसे विकृति समझकर, उस पर हमला करता है। व्यंग्यकार उसे आदर्श के प्रति बराबर आबद्ध रहता है। अप्रतिबद्ध व्यंग्यकार की कल्पना ही नहीं हो सकती क्योंकि तब वह किसी जगह पर मजबूती से खड़े होकर चीज़ों को अपनी निग़ाह से नहीं देख सकेगा, जोरकर की तरह चुटकी बजाता हुआ स्टेज के एक कोने से दूसरे कोने तक फुदकता भर रहेगा।'**[1] श्रीलाल शुक्ल ने उत्तरप्रदेश के अवध क्षेत्र में लखनऊ जैसे किसी शहर के निकटवर्ती एक गाँव (जिसे शिवपालगंज कहा गया है।) को अपनी कथा का माध्यम चुना गया है। यह कस्बा शहर से कुछ मील दूरी पर सड़क से लगा हुआ है। वैसे शिवपालगंज का भौगोलिक अस्तित्तव है या नहीं यह बात उतनी महत्व की नहीं जितना यह कि रागदरबारी का शिवपालगंज आज़ादी के बाद विकसित हुए हिन्दुस्तान में कहीं भी मिल सकता हैं। शिवपालगंज आम गाँवों से कुछ ज़्यादा उन्नतिशील है। वहाँ इन्टर मीडियट कालिज है, सरकारी समिति है। वह तहसील और थाने का सादर मुकाम भी है और तो और वहाँ दुकानें और शराब की भट्टी भी है। इन सब विशेषताओं के कारण यह गाँव अधिक उन्नात है। लेखक ने बहुत सूक्ष्मता और गहराई से सरकारी, नीतियों, नौकरशाही और विकास कार्य के नाम चल रहे पाखण्ड और आडम्बर को गाँव की गतिविधियों तथा उसके अन्तर्गत हिस्सा ले रहे विभिन्न चरित्रों के द्वारा प्रकट किया है। राग दरबारी की यही कथावस्तु है, जो लेखक ने विशिष्ट दृष्टिकोण से अनूठी व्यंग्य शैली में प्रस्तुत की है। इस कथावस्तु के बारे में लेखक का खास दृष्टिकोण है। रागदरबारी का विषय और उसे देखने का दृष्टिकोण उपन्यास में शुरूआत से ही प्रकट की है और अन्त तक कायम है। लेखक एक दो स्थानों पर व्यंग्य की वार से पिघला है और चूका है, किन्तु यह स्वाभाविक ही है। बहुत तटस्थता से लेखक विवरण देता चलता है :- **'शहर का किनारा उसे छोड़ते ही भारतीय देहात का महासागर शुरू हो जाता था।'**[2]

इस उपन्यास में लेखक की रचना दृष्टि सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, जो अपने समय, ग्रामीण समाज और उसमें फैली विसंगतियों को हमे दिखाती है। शहर से गाँव जाने वाले व्यक्ति रंगनाथ से सर्वप्रथम एक ट्रक के प्रसंग से हमारा परिचय होता है। उपन्यास का प्रारम्भ व्यंग्य की विलक्षण शुरूआत करता है, जो इस प्रकार है :- **'वही एक ट्रक खड़ा था उसे देखते ही यकीन हो जाता है कि जिसका जन्म केवल सड़कों के साथ बलात्कार करने के लिए हुआ है।'**[3] **'जैसा कि सत्य के होते है इस ट्रक के भी कई पहलू थे, पुलिस वाले उसे एक ओर से देखकर कह सकते थे, कि वह सड़क के बीच में खड़ा है, दूसरी ओर से देखकर ड्रायवर कह सकता था कि चालू फ़ैशन के हिसाब से ट्रक का दाहिना दरवाजा खोलकर डैने की तरह फैला दिया था। इससे ट्रक की ख़ूबसूरती बढ़ गई थी, साथ ही ख़तरा मिट गया था कि उसके वहाँ होते हुए कोई दूसरी सवारी भी सड़क के पर से निकल सकती थी।'**[4]

इस पूरे अंश के द्वारा लेखक ने सत्ता सम्पत्ति और नौकरशाही के चरित्र को अद्भुत ढंग से उजागर किया है। पुलिस वाला अपने कोण से ट्रक को गलत खड़ा सिद्ध कर ड्रायवर से रिश्वत वसूल सकता है। ड्रायवर अपने कोण से बहस कर सकता है कि ट्रक किनारे खड़ा है। ड्रायवर उस समय तो पुलिस से बहस में स्वयं को ट्रक मालिक से कम नहीं समझता और बात बिगड़ती है, तो रिश्वत का शाश्वत् मार्ग तो खुला ही है। यह ट्रक वस्तव में सम्पत्ति और सत्ता की निरंकुशता का प्रतीक है, जो हमारी भ्रष्ट व्यवस्था में पूरी ताकत से निरन्तर फल फूल रहा है। हमारे लोक-तांत्रिक समाज में अमीर लोग समस्त नियम कानूनों और अंकुशों से परे है। अंकुश मात्र गरीबों और दलितों के लिए है। रंगनाथ सेहत लाभ के लिए अपने वैद्य मामा के गाँव शिवपालगंज जा रहा है। ट्रेन चूकने के कारण ड्रायवर द्वारा भ्रम वश उसे सी.आई.डी. का आदमी समझ कर सद्भावना के साथ ट्रक में बिठाया जाता है, किन्तु बहुत जल्दी ही भ्रम दूर होने पर ड्रायवर एकाएक रंगनाथ के प्रति बेरूखी दिखाता है। इतिहास में एम.ए.रंगनाथ रिसर्च (यानी घास खोदने) का कार्य कर रहा है। रंगनाथ को आर.टी.ओ. के चपरासी को दो रुपये की रिश्वत देने के हादसे से भी गुजरना पड़ता है। इससे अगला दृश्य रास्ते में पड़ी कुतिया का है, जिसे शिक्षा के सन्दर्भ में लिया गया है। औरतों का कतार बाँधकर वायु सेवन करना और साथ ही मलमूत्र करने के दृश्य पर कवि आलोचक की निगाह ख़ास तौर पर टिकती है। जिसे राम मनोहर लोहिया भारत के लगभग आधी आबादी यानी औरत की सबसे बड़ी समस्या मानते थे जिसका अपरिचित अनुभव फिर से ताज़ा किया है। यह पहचान परख कहाँ तक सही है, इसकी गवाही उपन्यास है। यह उपन्यास 35 अंशों में लिखा गया है। आलोचक इन्द्रनाथ मदान ने रागदरबारी को व्यंग्य लेखों का संकलन कहा है। उनके अनुसार भाँग पीने की विधियों, जुतियाने के तरीकों, भाषण-बाजी, ठहाकों की किस्मों, कचहरी लोकतन्त्र, चुनाव, शास्त्रीय संगीत, लोकतन्त्र, बस के अठे, पुलिस प्रशासन सभी पर श्रीलाल शुक्ल की लेखनी ने व्यंग्य से वार किए है। कभी व्यंग्य कथ्य से ही जन्मा है तो कहीं लेखक व्यंग्य करने के लिए व्यंग्य कर रहा है, यानी वहाँ व्यंग्य आरोपित है।

इसी तरह कही यानी शिवपालगंज के परिवेश पर व्यंग्य का निशाना है तो कही साम्यवाद पर। थाने में बैठकर यह मालूम होता है कि आदमी इतिहास के किसी कोने में खड़ा है। **दारोगा का यह कहना कि :- 'रिश्वत, चोरी, डकैती अब सब एक हो गया है, पूरा साम्यवाद है।'**[5] रूप्पन बाबू, दारोगा और बख्तावरसिंह का अंकन व्यंग्य की प्रभाव पूर्ण रेखाओं से किया गया है। मास्टर मोतीराम के चित्रांकन में व्यंग्य का पुट गहरा हुआ है। जहाँ तक स्कूल के लड़कों का सवाल है, 'वे कनखजूरे की तरह स्कूल से चिपके हुए है और किसी कीमत पर उससे चिपके रहना चाहते है फैल होकर कुदाल की दुनिया में वापस नहीं जाना चाहते थे।' यह है शिवपालगंज की दुनिया जिसकी बाहरी और भीतरी सच्चाई को पैने व्यंग्य द्वारा प्रकट किया गया है। वैद्यजी महाराज का दरबार ही शिवपालगंज का परिचय है। जहाँ के जीवन को बहुत गहराई से पहचान कर चित्रण किया गया है। रंगनाथ उस गाँव में शहरी सभ्यता और बौद्धिकता का प्रतिनिधि है वह असलियत से उतना ही दूर है, जितना वैद्यजी और शिवपालगंज आदर्श से। मुकदमा और कचहरी उपन्यास में प्रमुखता प्राप्त किए हुए है। लंगड़ की कथा अपने ढंग से आदर्श की मौत की कथा बन जाती है। उसने अदालत में मुकदमें की अरजी दे रखी है और जिसका फैसला उपन्यास के अन्त तक नहीं हो पाता। लंगड़ नहीं रहता मगर रिश्वत की व्यवस्था बनी रहती है।

रूप्पन बाबू और बेला के प्रेम का मज़ाक, लेखक ने आधुनिक रोमेंटिक बोध के सतहीपन पर भी चोंट की है। उपन्यास के केन्द्र में शिवपालगंज है और शिवपालगंज के एक-एक दृश्य और एक व्यक्ति का चित्रण बहुत ख़रा

और प्रमाणिक है। रंगनाथ अपने को उस वातावरण में पाटाया सा अनुभव करता है और शिवपालगंज के निवासी भी उसे 'अपना' नहीं समझ पाते इसलिए वह इस विराने क्षेत्र से शहर लौट आता है। रंगनाथ की यह विरानेपन की अनुभूति शायद रंगनाथ की तरह के हर भारतीय की अनुभूति है और शिवपालगंज जैसी परिस्थितियाँ सब कहीं है जिसमें रंगनाथ के लिए कोई जगह नहीं है।

इस प्रकार 'राग दरबारी' उपन्यास समीक्षा के अर्थ में ग्रामीण जीवन पर केन्द्रित अन्य आँचलिक उपन्यासों से भिन्न है कि इसमें लेखक की दृष्टि कहीं भी रूमानी, पारम्परिक फार्मूलाबद्ध नहीं है। हिन्दी के अधिकांश ग्रामाणी जीवन के उपन्यासों में गाँव को प्राय: एक सुविधाजनक दूरी से देखा गया है और उनमें 'अहा! ग्राम जीवन भी क्या है' जैसी भाव विहवलता का दृष्टिकोण है। जबकि 'रागदरबारी' में ग्रामीण परिवेश की गन्दगी अपने पूरे घिनौनेपन के साथ उपस्थित हुई है। शिवपालगंज अपने में एक पूरा संसार हैं, जिसमें कॉलेज, प्रिंसीपल, शिक्षक, विद्यार्थी, पुलिस थाना, अफ़सर और सहकारी संस्थाओं में चलने वाली राजनीति और राजनीतिओं के हथकण्डे दु:श्चक्र सभी कुछ है। अपने सच्चे और वास्तविक रूप में।

रागदरबारी में कोई सिल-सिलेवार क्रमबद्ध कथा नहीं है और उपन्यासों की भाँति यह कथानक का परम्परागत ढाँचा नहीं हैं, इसीलिए आरोह अवरोह तथा चरमोत्कर्ष वाला प्रचलित कथा गठन इस उपन्यास में ढूँढ़ना व्यर्थ है। क्योंकि लेखक का मूल लक्ष्य स्थितियों और परिवेश के सत्य को प्रस्तुत करना है और उपन्यास के पात्र भी इसी लक्ष्य को प्रतिपादित करने में सहायक बनकर आए है। रंगनाथ के माध्यम से कथानक में एक सूत्रता लाने का प्रयत्न किया गया है। कथानक में आदि से अन्त तक प्रत्येक स्तर पर व्यंग्य मौजूद है। शब्द, भाषा के स्तर पर पात्रों के व्यवहार में और स्वयं लेखक द्वारा की गई टिप्पणियों और कथनो में। रागदरबारी इस दृष्टि से हिन्दी का प्रथम शुद्ध मौलिक व्यंग्य उपन्यास है। **डॉ. गंगाप्रसाद गुप्त बरसैया ने कहा है कि 'वस्तुत: रागदरबारी की कोई एक बंधी कथा नहीं है। विभिन्न झलकियाँ है, घटनाएँ है, जो लेखक द्वारा इस प्रकार संयोजित है कि उन्हें एक कथा का रूप मिल गया है सभी झलकियाँ घटनाएँ वर्तमान स्थितियों, विचारधाराओं को पात्रों के माध्यम से वर्तमान समाज व्यवस्था की विसंगतियों और विद्रूपताओं को स्पष्ट करती है। साथ ही उनके दोष और बाह्याडम्बरों का उद्घाटन भी करवाया गया है। सम्पूर्ण उपन्यास में कहीं पात्र घटनाओं का कारण है तो कहीं घटनाएँ अपने में पात्रों को लिए रहती है।'**[6]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीलाल शुक्ल : मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृ. 20
2. श्रीलाल शुक्ल : 'राग दरबारी', पृ. 6
3. श्रीलाल शुक्ल : 'राग दरबारी', पृ. 7
4. श्रीलाल शुक्ल : 'राग दरबारी', पृ. 8
5. श्रीलाल शुक्ल : 'राग दरबारी', पृ. 16
6. श्री गंगा प्रसाद गुप्त, बरसैयाँ : 'समीक्षा लोक' द्वैमासिक स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास अंक : मार्च-अप्रैल, मई, जून : 1972

****

सरदार पटेल की खेडा सत्याग्रह आन्दोलन में भूमिका

डॉ. मनोज दाधीच* जयश्रीबेन डी. मेवाड़ा **

प्रस्तावना – सरदार वल्लभ भाई पटेल प्रसिद्ध भारतीय स्वतंत्रता सेनानी एवं स्वतंत्र भारत के प्रथम गृहमंत्री थे। इनका जन्म 31 अक्टूबर, 1875 को गुजरात के एक छोटे से गांव नाड़ियाद में हुआ था। उनके पिता झावेर भाई एक किसान और माँ लाड़ बाई एक साधरण महिला थी। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा करमसद में सम्पन्न हुई। 1896 में आपने हाई स्कुल की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपके द्वारा वकालत की शिक्षा भी प्राप्त की गई। सन् 1917 में सरदार पटेल मोहनदास करमचन्द गाँधी से अत्यधिक प्रभावित हुए, जिससे उनके जीवन की दिशा परिवर्तित हो गई और उन्होंने सार्वजनिक जीवन में प्रवेश करते हुए कई महत्वपूर्ण जन एवं किसान आन्दोलनों को नेतृत्व प्रदान किया। खेडा सत्याग्रह सरदार पटेल के जीवन का प्रथम सत्याग्रह था। सन् 1917 में अतिवृष्टि के कारण खेडा जिले में औसतन 30 इच वर्षा के स्थान पर 70 इच वर्षा हुई जिससे सारी फसल नष्ट हो गई। यहाँ तक कि मवेशियो के लिए घास-चारा आदि भी उत्पन्न नहीं हुई। सामान्यतया जब कभी वर्षा ऋतु में बरसात अधिक हो जाती है तो यह उम्मीद की जाती है कि शरद ऋतु की रबी की फसल अच्छी होगी। किन्तु इस समय चूहो ने भारी उत्पात मचाया जिससे फसलो में तमाम प्रकार के रोग लग गये और फसले बेकार हो गयी। इस प्रकार किसानो को पूरे वर्ष दोहरीमार झेलनी पडी। उनके सामने लगान चुकाने का सकट आ गया। लगान के संबंध में कानून यह था कि 'हर वर्ष फसल का अनुमान लगाया जाय, यदि फसल छ आने से कम मालूम पडती है तो आध लगान स्थगित कर दिया जाय और यदि चार आने से कम दिखती है तो सारा लगान स्थगित कर दिया जाय साथ ही अगर उसमें अगले वर्ष भी फसल न हो तो पिछले साल का स्थगित लगान माफ कर दिया जाया।'[1]

17 नवम्बर, 1917 ई. को श्री पाण्डया जी ने कठलाल गाँव के किसानो की तरफ से एक प्रार्थना पत्र के माध्यम से सरकार से मांग की, कि पूरे साल में अतिवृष्टि के कारण चार आने से भी कम फसल पैदा हुई है इसलिए लगान स्थगित कर दिया जाय। इसी प्रकार नाडियाद की होमरूल लीग शाखा ने अलग-अलग गॉवो से 18 हजार किसानो, बठलाल की शाखा ने चार-हजार किसानो के हस्ताक्षर वाला प्रार्थना पत्र बम्बई सरकार के पास भेजा और उसकी प्रतियाँ जिला कलेक्टर, उत्तरी विभाग के कमिश्नर, बम्बई प्रान्त के राजस्व सदस्यो, महात्मा गाँधी जी, गोकुल दास पारीख, माननीय विट्ठल भाई पटेल तथा गुजरात सभा के सचिवो के नाम भेजी। सरदार साहब उस समय गुजरात सभा के सचिव थे। बम्बई सरकार ने यह जवाब दिया कि 'लगान के मामले में सारा अधिकार जिला कलेक्टर को है और प्रार्थना पत्र में जो मुद्दे बताये गये है उस पर वे ध्यान भी दे रहे है।'[2]

सरकार की ओर से कोई सन्तोषजनक उत्तर न मिलने से मध्य दिसम्बर में विट्ठल भाई पटेल तथा गोकुल दास पारीख ने किसानो के एक प्रतिनिधि मडल के साथ कलेक्टर से मुलाकात करके अपना लिखित बयान प्रस्तुत किया जिसके परिणामस्वरूप 22 दिसम्बर 1917 ई. को जिला कलेक्टर ने 'अहमदाबाद, नाडियाद और कपडबग ताल्लुके के 104 गॉवो में कुल मिलाकर एक लाख पिचछत्तर हजार आठ सौ अडसठ (1,75,868 रु.) को रकम की लगान स्थगित किया जबकि जिले में कुल (23) तेईस लाख रु. लगान था यानी कुल 74 प्रतिशत लगान वसूल करना ही स्थागित किया।'[3] आदेश प्रकाशित होते ही पटवारी लोग जबरदस्ती वसूली करने पर उतर आये और तरह-तरह के जुल्म ढाने लगे। उनके अत्याचार से लोगो ने घर त्यागना शुरू कर दिया। 'पटवारी लोग अत्याचारो के साथ-साथ बेइज्जती करने पर भी उतारू हो गये थे। महिलाओ के सामने गन्दी-गन्दी गालियाँ देते थे वे कहते थे कि घर बेचो, भूमि बेचो, पशुओ को बेचो और फिर स्त्रियो और बच्चो को बेचो लेकिन सरकारी लगान का भुगतान करो।'[4] सरकार ने कठोरता की और शह भी दी, जिससे एक प्रकार का किसानो के जीवन मरण का प्रश्न पैदा हो गया।

इसी समय महात्मा गाँधी अहमदाबाद पहुंचे और गुजरात सभा के सदस्यो की बैठक सरदार वल्लभ भाई पटेल के घर पर हुई। जिसमें यह तय किया गया कि जब तक बम्बई सरकार की ओर से लगान सबधी प्रार्थना पत्र का उत्तार नही आ जाता तब तक कमिश्नर से मिलकर लगान स्थगित करने को कहा जाय। गुजरात सभा की ओर से सर्वसम्मति के आधार पर गाँधी जी किसानो को नयी दिशा देने के लिए तैयार हुए। साथ ही अपने सहायक के रूप में सरदार वल्लभ भाई पटेल को नियुक्त किया। सरदार पटेल द्वारा गाँधी के सहायक के रूप में काम करने के लिए तैयार होने पर गाँधी जी बहुत खुश हुए। इसके उपरान्त सभा ने तीन प्रस्ताव पास किये।

1. पहली तारीख (1 /1/ 1918) को गुजरात सभा द्वारा दिये गये प्रार्थना पत्र का निर्णय होने तक सरकार से लगान स्थगित करने की प्रार्थना की जाये।
2. निर्णय सधना किसानो को दिये जाने की व्यवस्था की जाय।
3. कमिश्नर से मुलाकात के लिए एक प्रतिनिधि मण्डल का चयन किया जाय।[5]

सभा की बैठक के उपरान्त गाँधी जी पुन चम्पारण चले गये। अत सत्याग्रह का पूरा भार सरदार वल्लभ भाई पटेल के कधे पर आ गया। प्रस्ताव के अनुरूप सभा की ओर से गुजरात के उत्तरी डिवीजन के कमिश्नर एफ.जी. प्रैट से मिलने एक शिष्टमडल 10 जनवरी, 1918 ई. को गया तो कमिश्नर ने केवल दो सदस्यो (कृष्ण लाल देसाई व जी.वी. मावलकर) से मिलना

* सहायक आचार्य (इतिहास) पेसिफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी (इतिहास) पेसिफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

स्वीकार किया तथा गुजरात सभा को अवैधानिक घोषित करने की धमकी दी। 'इसी बीच गाँधी जी ने तार द्वारा सरदार पटेल को सूचित किया कि लगान स्थगित करने और वसूली का कार्य बन्द करने के लिए जबरदस्त आन्दोलन छेडा जाय। यह सत्याग्रह है और इसी से स्वराज्य मिलेगा। सम्भव है कि वह अभी न मिले। मौका पडते ही अपनी शक्ति के अनुसार सत्याग्रह की महिमा दिखाना परम धर्म है।'[6] गाँधी जी की सधना के प्रतिक्रियास्वरूप खेडा जिले के कलेक्टर ने 14 जनवरी, 1918 ई. को आदेश निकाल कर यह चेतावनी दी कि 'लगान वसूल करने या उसको स्थगित का अधिकार पूरी तरह से जिला के कलेक्टर को है। कलेक्टर के इस आदेश की पुष्टि 16 जनवरी, 1918 ई. को बम्बई सरकार ने भी कर दी।[7]

खेडा जिले के किसानो को उनके कष्टकारी जीवन से मुक्ति दिलाने के लिए सत्याग्रह का मार्ग चुना तो उनके सहयोगी के रूप से सरदार साहब ने अंग्रेजी वेशभूषा को त्याग कर धेती कुर्ता ग्रहण किया और ग्रामो के भ्रमण पर चल दिये। गाँधी जी ने समस्या के समाधन हेतु गवर्नर का भी दरवाजा खटखटाया लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला। इस प्रकार सारे प्रयत्न के असफल हो जाने के बाद 22 मार्च, 1918 ई. को शाम के छ बजे गाँधी जी ने नाडियाद में खेडा जिले के किसानो की विशाल सभा में सत्याग्रह का मगलाचरण करते हुए कहा कि 'असल में जो पैदावार हो उसमें लगान किया जाता है, पैदावार न होने पर भी सरकार दवाब डालकर लगान ले, यह सहन नही किया जा सकता, परन्तु इस देश में यह नियम ही बन गया है कि, सरकार की बात ही रहनी चाहिये। लोग कितने ही सच्चे हो, तो भी उनकी बात न मानकर सरकार को अपने ही मन की करनी है परन्तु बात तो न्याय की ही टिक सकती है। अत उसके सामने अन्याय का फैसला बदलना ही पडेगा।'[8] इसी दिन लगभग 200 किसानो ने सत्याग्रह की प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर किये दिन प्रतिदिन यह सख्या बढती ही गयी।

महात्मा गाँधी के प्रथम सहायक में रूप में सरदार पटेल ने सत्याग्रह का खूब जोर शोर से प्रचार-प्रसार किया। गाँधी जी की अनुपस्थिति में सरदार पटेल ही सत्याग्रह का नेतृत्व करते थे। यद्यपि गाँधी जी इस आन्दोलन के सचालक थे पर सरदार पटेल ने इरा आन्दोलन का क्षेत्र घटाने के लिए अपने ढग के गॉव-गॉव जाकर किसानो को हिम्मत बधई। सरदार पटेल में तो सत्याग्रह के गुण जन्मजात थे पर गाँधी जी के सैनिक के रूप में उन्होने जो कमान सम्भाली उससे किसानो को विशेष हिम्मत आयी। वे लगातार कुर्कियॉ, जारी रहने पर भी अहिसक बने रहे। सरदार पटेल की प्रेरणा से स्त्रियो ने पुरुषो के साथ बराबर की भागीदारी करके सभी को आश्चर्यचकित कर दिया। एक अखबार ने तो लिखा कि, 'जिस ढग से रैयत लड रही है वह अपने में आश्चर्यवान है।'[9] दूसरे प्रान्तो में भी सत्याग्रह के समर्थन में सभाये होने लगी और सरदार पटेल के पास बधई सन्देश आने लगे। गाँधी जी की छत्रछाया में सरदार पटेल ने इतना सगठित आन्दोलन चलाया कि उसकी गूंज 'हाउस ऑफ कामन्स' तक सुनायी दी। सरदार पटेल ने निम्न मत्र खेडा के किसानो को सत्याग्रह की सफलता के लिए बताये।

सरदार पटेल ने किसानो से कहा कि 'यदि कानून गलत हो या उसका अमल सही ढग से सरकार न कर रही हो तो कानून का उचित ढग से पालन कराने के लिए प्रजा को कानून के विरुद्ध जाकर भी सत्याग्रह करना पड़ता है। यह प्रजा का अधिकार है।[10] उन्होने स्पष्ट किया कि अगर अन्याय कि विरुद्ध भी सत्याग्रह नही किया गया तो उसका परिणाम अच्छा नही होगा। सरदार पटेल ने कहा कि 'आप जानते है कि एक कुम्हार भी गधे पर पहले एक मन बोझा रखता है, यदि उसे वह ले जाय तो आध मन और बढा देता है और इस तरह करते-करते उससे दो मन बोझा खिचवाता है। इसी प्रकार आप सरकार के आस-पास बोझा जैसे-जैसे सहन करते जायेगे वैसे-वैसे सरकार आप पर ज्यादा बोझा डालती जायेगी। आपने जो बोझा अभी तक सहन किया है उसे उतार फेकिए और निर्भीक होकर बैठिये।'[11]

1. किसानो का नेतृत्व वही कर सकता है जो उनके बीच रहकर उन जैसा हो जाय। इसके लिए वह अपना निवास अहमदाबाद से उठाकर नाडियाद किसानो के बीच ले गये।
2. सरदार पटेल ने किसानो को अहिंसक रहकर कष्ट सहने की प्रेरणा दी। उन्होने कहा कि, 'सरकार ने सत्ता की जोर से जमीन का लगान वसूल करने का निश्चय किया है। लोगो ने प्रतिज्ञा की है कि सरकार के अनुचित आदेशो का आदरपूर्वक वहिष्कार किया जाये और सरकार उसमें अगर सत्ता का प्रयोग करे तो आने वाले सभी दुख सहन कर लिये जाय मगर लगान न अदा किया जाये।' किसानो ने सरदार पटेल की बातो को मानकर सरकारी क्रूरता तथा दुखो को सहन किया, किन्तु लगान अदा नही किया।
3. सरदार पटेल ने किसानो को एकता का मत देते हुए कहा कि, 'आपस में जो जोश है उसे न्याय के लिए लड़ने के काम में लीजिये। मारने के लिए हॅसिया उठाना छोड दीजिये। विनय और विवेक से चलिये।[12] सरदार पटेल का कथन था कि यदि जन-बल पारीख, नरहरि, सरदार पटेल के भाषण एकत्रित हो जाय तो कोई भी सरकार उसकी शक्ति नहीं तोड सकती। उन्होने दृढतापूर्वक कहा कि, 'किसान एक है, उसका काम एक है, आदर्श एक है तथा मार्ग एक है।'[13]

इस प्रकार आदोलन अहिंसक मार्ग से किसानो को कष्ट सहन करने कि प्रेरणा देते हुए गाँधी जी की छत्रछाया में सरदार पटेल के व्यावहारिक नेतृत्व में सफलता की ओर बढ़ चला था कि उसी बीच (3) तीन जून, 1918 ई. को गाँधी जी जैसे ही नाडियाद पहुंचे तहसीलदार उनके निवास पर पहुंच गया और उसने कहा कि, यदि अच्छी स्थिति वाले लोग लगान चुका दे तो गरीब लोगो का लगान स्थगित कर दिया जायेगा।[14] इस पर गाँधी जी ने लिखित रूप से ऐसा देने के लिये कहा। तहसीलदार ने ऐसा ही किया। इसके उपरान्त गाँधी जी कलेक्टर से मिले और कहा कि यदि ऐसा आदेश सारे जिले में लागू कर दिया जाय और अन्य प्रकार के दण्ड जो किसानो को कुर्की के दौरान दिये गये है उन्हे रद्द कर दिया जाय तो आन्दोलन का कोई अर्थ नही रह जायेगा।' कलेक्टर ने गाँधी जी की बात मानकर आदेश जारी कर दिया। इस प्रकार सत्याग्रह समाप्त कर दिया गया।

इस सत्याग्रह से जो भी सफलता मिली उसका सेहरा गाँधी जी ने सरदार पटेल के सिर पर रखते हुए कहा कि 'सेनापति की चतुराई अपनी कार्य समिति चुनने में होती है। बहुत से लोग मेरी सलाह मानने के लिए तैयार थे लेकिन उप सेनापति के रूप में मैंने वल्लभभाई को चुना। वल्लभभाई ने अपनी चलती हुई वकालत को छोडकर मेरे विचारो की लडाई में शामिल हो गये। यदि वल्लभभाई न मिले होते तो जो काम आज हुआ वह कभी नहीं होता।[15] खेडा आन्दोलन में अपनी प्रशासनिक क्षमता के कारण सरदार पटेल गुजरात प्रान्त की सक्रिय राजनीति में प्रवेश का अवसर दिया। सरदार पटेल 1920 से 1942 ई. तक गुजरात प्रान्त की कांग्रेस के अध्यक्ष रहे। इस प्रकार गाँधी जी गुजरात प्रान्त की जिम्मेंदारी सरदार पटेल को सौप कर बड़े कार्यो के लिए मुक्त हो गये।

संदर्भ ग्रंथ सधी :-

1. पारीख, नरहरि, सरदार वल्लभ भाई, भाग-एक, अहमदाबाद, 1972,

पृ. 49

2. पटेल, राजीव भाई, मणि भाई, हिन्द के सरदार, अहमदाबाद, 1972, पृ. 49
3. पारीख, नरहरि, पूर्वो, पृ. 85
4. पूर्वोक्त, पृ. 85
5. कुमार, रवीन्द्र, सरदार पटेल का सत्याग्रही जीवन, मुजफ्फरपुर, 1987, पृ. 17
6. पूर्वोक्त, पृ. 18
7. पूर्वोक्त, पृ. 18
8. होम पोलिटिकल डिपार्टमेंट 1918 डी.एन./एफ.एन.26.12.18, नेशनल आर्थिब्स ऑफ इण्डिया, न्यू देल्ही
9. पटेल, ईश्वर भाई, सरदार पटेल, आणद, 1974, पृ. 40
10. पारीख, नरहरि, सरदार पटेल के भाषण (1918 से 1947 तक), अहमदाबाद, 1950, पृ. 19
11. पूर्वोक्त, पृ. 23
12. पूर्वोक्त, पृ. 27
13. पूर्वोक्त, पृ. 28
14. पटेल, ईश्वर भाई, पूर्वोक्त, पृ. 42
15. प्रभाकर विष्णु, सरदार वल्लभ भाई पटेल, नयी दिल्ली, 1982, पृ. 9
16. नवजीवन, 13 जनवरी, 1924

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Investigating the effect of herbal drugs used for the treatment of cognitive dysfunction

Chakresh Patley* Rakesh Sagar M.L.Kori*** Nitu Singh******

Abstract - Memory is the ability of an individual to record sensory stimuli, events, information, etc., retain them over short or long periods of time and recall the same at a later date when needed. Memory loss is unusual forgetfulness that can be caused by brain damage due to disease or injury, or it can be caused by severe emotional trauma. Dementia refers to a large class of disorders characterized by the progressive deterioration of thinking ability and memory as the brain becomes damaged. In our present study we, conclude that *Gmelina arborea* stem bark (Roxb) Extract has Nootropic property and shows that it have significant result which concluded that it can be beneficial for treatment of certain disease.
Keyword - Nootropic, Cognitive dysfunction, Memory.

Introduction - Nature always stands as a golden mark to exemplify the outstanding phenomena of symbiosis. Natural products from plant, animal and minerals have been the basis of the treatment of human disease. 'traditional' use of herbal medicines implies substantial historical use, and this is certainly true for many products that are available as 'traditional herbal medicines' A large proportion of the population relies on traditional practitioners and their armamentarium of medicinal plants in order to meet health care needs. Although modern medicine may exist side-by-side with such traditional practice, herbal medicines have often maintained their popularity for historical and cultural reasons. Such products have become more widely available commercially, especially in developed countries.

Memory - Memory is the ability of an individual to record sensory stimuli, events, information, etc., retain them over short or long periods of time and recall the same at a later date when needed. Poor Memory, lower retention and slow recall and are common problems in today's stressful and competitive world. Age, stress, emotions are conditions that may led to memory loss, amnesia, anxiety, high blood pressure, dementia, to more ominous threat like schizophrenia and Alzheimer's diseases. Neuro-transmitters are packaged into synaptic vesicles clustered beneath the membrane on the presynaptic side of a synapse, and are released into the synaptic cleft, where they bind to receptors in the membrane on the postsynaptic side of the synapse. Release of neurotransmitters usually follows arrival of an action potential at the synapse, but may also follow graded electrical potentials. Low level "baseline" release also occurs without electrical stimulation. Neurotransmitters are synthesized from plentiful and simple precursors, such as amino acids, which are readily available from the diet and which require only a small number of biosynthetic

Method and Material: In vivo Study: Various laboratory models for testing learning and memory:

1. Scopolamine induced amnesia (Interoceptive Behavior Model).
2. Diazepam induced amnesia (Interoceptive Behavior Model).
3. Elevated plus maze (Exteroceptive Behavior Model).

Scopolamine induced (Model) - The administration of the antimuscarinic agent scopolamine to young human volunteers produces transient memory deficits. Analogously, scopolamine has been shown to impair memory retention when given to mice shortly before training in a dark avoidance task. The scopolamine test is performed in groups of 10 male NMRI mice weighing 24 34g in a one trial, passive avoidance paradigm. After five minutes i.p. Administration of 3 mg/kg scopolamine hydro bromide, each mouse is individually placed in the bright part of a two chambered (bright and dark) apparatus for training. After a brief orientation period, the mouse enters the second darker chamber. Once inside the second chamber door is closed which prevents the mouse from escaping, and a 1 mA, 1sec foot shock is applied through the grid floor. The mouse is then returned to the home cage. Twenty four hours later, testing is performed by placing the animal again in the bright chamber. Latency in entering the second darker chamber.

*Research Scholar, RKDF University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Principal and Guide, RKDF University, Bhopal (M.P.) INDIA
*** Research Director, RKDF University, Bhopal (M.P.) INDIA
**** Research Scholar, RKDF University, Bhopal (M.P.) INDIA

The latency in entering the second darker chamber within a 5 min. test session is measured electronically. Whereas untreated control animals enter the darker chamber in the second trial with latency about of 250 sec, treatment with scopolamine reduces the latency to 50 sec. The test compounds are administered 90 min before training. A prolonged latency indicates that the animal remembers that it has been punished and, therefore, does avoid the darker chamber. Using various doses latencies after treatment with test compounds are expressed as percentage of latencies in mice treated with scopolamine only. In some cases straight doses response curves can be established whereas with other drugs inverse U shaped dose responses are observed.

Experimental animals - The experiment was carried out on Swiss Albino mice of the either sex weighing between 23±2g and six-eight week. The animals were acclimatized to the standard laboratory conditions in cross ventilated animal house at temperature 25±2°C relative humidity 42–54% and light and dark cycles of 12:12 hours, mice were housed in groups of 6 per cage. They were fed with standard pellet diet and water *ad libitum*. Paddy husk was provided as bedding material, which was changed every day. The cages were maintained clean.All the animal experiments was approved by the institutional ethics committee and conducted in accordance with the guidelines of the CPCSEA.

Nootropic activity - Gmelina arborea stem bark extract was evaluated for Memory and learning activity using animal model viz. elevated plus maze served as the Exteroceptive behavioral model (wherein the stimulus existed outside the body) in mice.

Elevated plus maze model in mice:

Materials - Cylindrical container (bucket) had been taken for Swiss albino mice with either sex, approximately 23 ± 2 g of weight .Divided into four group each having 6 animal. Gp 1 treated as Control, Gp II treated as Standard(Piracetam 100mg/kg i.p., Gp III Drug treated (100mg/kg p.o.) and Gp IV treated second (200mg/kg p.o.)

Method - Albino mice weighing 23 ± 2 g selected by random sampling technique were used in the study. Memory and Learning activity was performed as per OECD-423 guidelines.

Elevated plus maze model:

The procedure described by (Kulkarni S K, 2007) was used to study Elevated plus maze test. Animal were divided in four groups of six mice each. Group I animals served as control (saline 20ml/kg .p.o.), Group II animals were treated with Piracetam as a standard (200mg/kg i.p.), Group III animals were treated with test substances (100 mg/kg p.o.), Group IV animals were treated with test substances (200 mg/kg p.o.) orally, using oral gauge, for 7 days. EPM acquisition (learning) can be considered as Transfer latency (TL) of IST day trial (on seventh day of drug treatment) reflected acquisition of learning behavior of animals. Whereas transfer latency of next day (after 24hr) reflected retention/consolidation of information (memory).

The elevated plus maze served as the exteroceptive behavioural model (wherein the stimulus existed outside the body) to evaluate learning and memory in mice. The apparatus consisted of two open arms (16 cm × 5 cm) and two covered arms (16 cm × 5 cm ×12cm). The arms extended from a central platform (5cm×5cm) and the maze was elevated to a height of 25 cm from the floor. On the first day, each mouse was placed at the end of open arm, facing away from central platform. Transfer latency (TL) was taken as the time taken by the mouse to move into any one of the covered arms with all its four legs. TL was recorded on the first day (on seventh day of drug treatment) for the each animal. If the animal did not enter in to one of the covered arm within 90 s it is gently pushed in tonne of the two covered arms and the (TL) was assigned as 90 s The mouse was allowed to explore the maze for another 10 sec. and returned to its home cage. Memory retention was examined on the second day, 24 hr after the first day trial.

Result: Nootropic Activity:

Elevated plus maze model:

Elevated plus maze model in mice (GA) aqueous extract at a Dose I (100 mg/kg/ b.w) and Dose II (200 mg/kg/ b.w.) of has shown significantly (P<0. 0001) decreasing Transfer latency on $8^{th\ day}$ and after 24 hr,i.e. on 9^{th} day as compared to control(normal saline) treated group ,indicating improvement in both learning and memory.

Group	Dose (mg/kg)	TransferLatency Time (sec.)Mean± SEM	
		8^{th} day	9^{th} day
I-Control	20 ml/kg normal saline p.o.)	33.05±0.12	31.22±0.16
II-Standard	Piracetam (100 mg/kg) (i.p.)	20.5±0.22***	18.4±0.52***
III-Dose	100 mg (GA) aqs. p.o.)	26.35±0.50***	2.35±0.21***
IV-Dose	200 mg(GA) aqs. p.o.)	24.70±0.34***	20.80±0.18***

Effect of Gmelina arborea stem bark Aqueous extracts on Elevated plus maze model in mice All values expressed, mean ± SEM, Transfer Latency vs. group P<0.001,onewayANOVA.

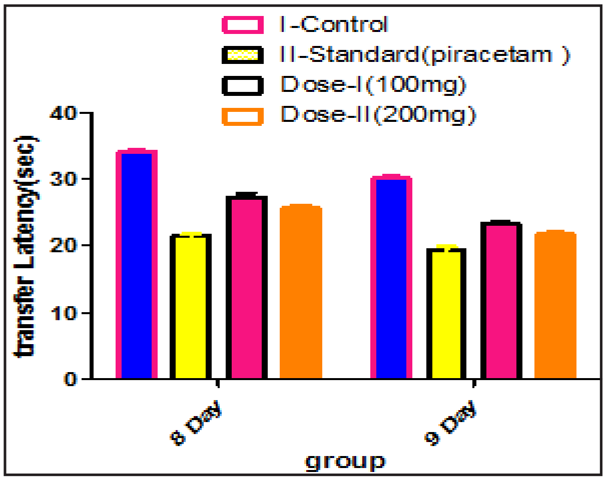

Effect of aqueous extract of Gmelina arborea on transfer latencies of young mice in elevated plus maze
Percentage express in MEAN±SEM (n=6) ANOVA followed by Dunnett's test. ***P<0.001 when compaired with normal control.

Group	Dose (mg/kg)	TransferLatency Time (sec.)Mean± SEM	
		8th day	9th day
I-Control	20 ml/kg normal saline p.o.)	33.15±0.12	30.22±0.16
II-Standard	Piracetam (200 mg/kg) (i.p.)	20.5±0.22***	18.4±0.52***
III-Dose	100 mg (GA) hyd.alc. p.o.)	31.20±0.45***	28.32±0.15***

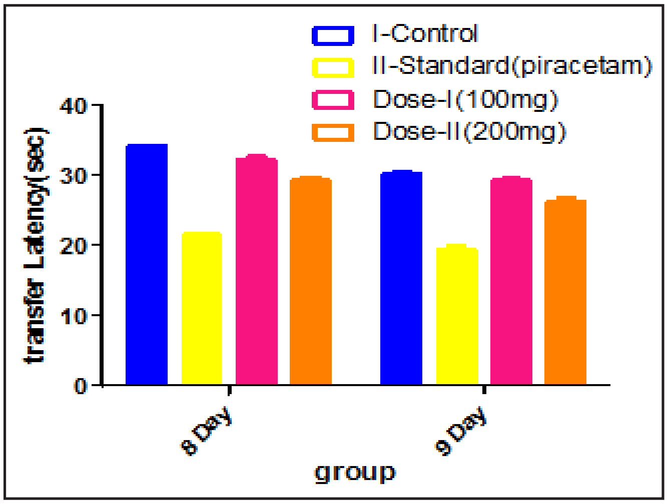

Effect of Gmelina arborea stem bark Hydro alcoholic extract on Elevated plus maze model in mice. All values expressed, mean ± SEM, Transfer Latency vs. group P<0.001, onewayANOVA

Effect of Hydroalcoholic extract of Gmelina arborea stem bark on transfer latencies of young mice in elevated plus maze

Discussion and Conclusion- In our present study we, conclude that *Gmelina arborea* stem bark (Roxb) Extract has Nootropic property. Phytochemical screening revealed that the major constituents of *Gmelina arborea* stem bark (Roxb) ext. are glycosides, tannins, resins, flavanoid, and steroid. gmelianoside is the main active nootropic principal present in the ext. of GA plant. Apart from memory enhancer activity. These gmelianoside have the potential to modulate the activity of protein expression cytochrome P450 and superoxide dismutase in the mice brain.The research data clearly shows that *Gmelina arborea* stem bark(Roxb) extract ,Enhances the learning**,**Enhances the memory**.**The result also indicate that *Gmelina arborea* stem bark(Roxb) extract all 3 individual ext. effect is in quite close proximity to standard *i.e.* Piracetam in case of *Gmelina arborea* aqueous extract best activity and 50% ethanolic extract and ethanolic ext. activity also present.

References :-

1. Abdala S, Martín-Herrera D, Benjumea D, Pérez-Paz P. Diuretic activity of Smilax canariensis, an endemic Canary Island species. Journal of Ethnopharmacology. 2008;119:12- 16.
2. Ahmed et.al medicinal plant a potent diuretic;a review.international journal of advance in pharmacy medicine and bioallied science.2017:1:8
3. Banu M, Gururaja GM, Deepak M, Roopashree T, Shashidhara S. An overview on Phytochemistry and Pharmacological properties of Gmelina arborea. J Nat Prod Plant Resour., 2013; 3; 62.
4. Lauridsen EB, Kjaer ED. Provenance research in Gmelina arborea Linn. Roxb. A summary of results from three decades of research and a discussion of how to use them, International For Rev. 2002; 4: 1.
5. Evans J. Plantation forestry in the tropics Clarendon press, Oxford, UK. 1982; 472.
6. Jensen M. Trees commonly cultivated in Southeast Asia, Illustrated field guide. 38, FAO, Bangkok, Thailand. 1995; 93.
7. Davidson J. Assistance to the forestry sector of Bangladesh. Species and sites-What to plant and where to plant. Field Doc. No. 5, UNDP/FAO/BGD/79/ 017. 1985; 50.
8. Padua JM. Juvenile selection of Gmelina arborea clones in the Philippines, New Forest 2004; 28:195.
9. Dvorak WS, World view of Gmelina arborea: opportunities and challenges New Forests New Forest. 2004; 28: 111.
10. Roquel RM, TomazelloFo M. Wood density and fiber dimensions of Gmelina arborea in fast growth trees in Costa Rica: relation to the growth rate. Investigación Agraria: Sistemas y Recursos Forestales. 2007; 16: 267.
11. El-Mahmood AM, Doughari JH, Kiman HS, In vitro antimicrobial activity of crude leaf and stem bark extracts of Gmelina arborea (Roxb) against some pathogenic species of Enterobacteriaceae. Afr J Pharm Pharmacol.,2010; 4: 355.
12. Valsaraja R, Pushpangadana P, Smitt UW, Adsersenb A, Nymanb U. Antimicrobial screening of selected medicinal plants from India. J Ethnopharmacol. 1997; 58: 75.
13. Idu M, Ovuakporie-Uvo PO, Ndana RW. Preliminary Phytochemistry and In Vitro Antimicrobial Properties of The Chloroform and Ethanol Extracts of The Roots of Cedrela Odorata, Chlorophora Excelsa and Gmelina Arborea. International journal of Analytical, Pharmaceutical and Biomedical Science (IJAPBS). 2015; 4: 117.
14. Kawamura F, Ohara S, Nishida A. Antifungal activity of constituents from the heartwood Gmelina arborea: part 1. Sensitive antifungal assay against Basidiomycetes, Holzforschung. 2004; 58: 189.

15. Kawamura F, Ohara S. Antifungal activity of iridoid glycosides from the heartwood of Gmelina arborea, Holzforschung. 2005; 59, 153.
16. Forestry/Fuelwood Research and Development Project (F/FR ED), Growing multipurpose trees on small farms, module 9: Species fact sheets (2nd ed.). Bangkok, Thailand: Winrock International. 1994; 127.
17. Foelkel CE, Silvan, Zvinakevicius C, Siqueira LR. Pequenamonografiaprodução de celulose de Gmelina arborea. O. papel.1978; 39: 81.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

आइपोमोइया कार्निया द्वारा व्युत्पन्न सक्रियित कार्बन से Co (II) के अधिशोषण का अध्ययन

डॉ. गीता परियानी* शिखा श्रीवास**

शोध सारांश – वर्तमान शोध कार्य में, सक्रियित कार्बन के उत्पादन के लिए कच्चे माल के रूप में आइपोमोइया कार्निया के तने का उपयोग किया जाता है। सक्रियित कार्बन बनाने के लिए आइपोमोइया कार्निया के तने को अम्ल द्वारा उपचारित किया जाता है। प्राप्त सक्रियित कार्बन सतह की संरचना की जांच इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी (SEM) द्वारा की जाती है। सक्रियित कार्बन का प्रयोग बड़े पैमाने पर एक अच्छे अधिशोषक के रूप में किया गया है। इस कार्य में बैच प्रणाली का प्रयोग करके सक्रियित कार्बन पर Co (II) के अधिशोषित होने की क्षमता की जांच की जाती है। बैच प्रणाली के अंतर्गत संपर्क समय, अधिशोषक की मात्रा,pH (पीएच) और प्रारंभिक सांद्रता जैसे कारकों के प्रभावों की जांच की गई। लैंगमूर और फ्रायंडलिच मॉडल के अधिशोषण को आइसोथर्म साम्यावस्था के लिए प्रयोग किया गया तथा इसके स्थिरांक का निर्धारण करने के लिए लागू किया गया था।
शब्द कुंजी – सक्रियित कार्बन, आइपोमोइया कार्निया, भारी धातु, अधिशोषण।

प्रस्तावना – तेजी से हो रहे औद्योगिक विकास के कारण, भारी धातुओं द्वारा जल निकायों का प्रदूषण मुख्य चिंता का विषय है। यह अनुमान लगाया जाता है कि वैश्विक उत्पादन की भारी धातुओं की भारी मात्रा में कई उद्योगों द्वारा प्रवाहित कर दी जाती है [1]। इन उद्योगों द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट जल में भारी धतुओं की अधिक सांद्रता पर भी अत्यधिक ध्यान देने योग्य है। जल निकायों में ऐसी सामग्रियों के निस्कासन से न केवल प्रकृति नष्ट होती है, बल्कि यह सूर्य के प्रकाश के प्रसार में भी बाधा डालती है, जिससे जल पारिस्थितिक तंत्र में मौजूद खाद्य श्रृंखला [2] नष्ट होती है। उद्योगों द्वारा जल निकायों में प्रदूषित पानी की बड़ी मात्रा मिलाने पर यह जानवरों और मनुष्यों दोनों के लिए विशाक्त है। सभी भारी धातुएं विशैली होती हैं और वे सभी जीवित चीजों पर बहुत बुरा प्रभाव दिखाती हैं। वे आम तौर पर औद्योगिक, नगरपालिका और शहरी अतिप्रवाह में मौजूद होते हैं, जो मानव और जैविक जीवन के लिए हानिकारक हो सकते हैं। इन धातुओं में आर्सेनिक, क्रोमियम, तांबा, जस्ता, एल्यूमीनियम, कैडमियम, सीसा, लोहा, निकल, पारा और चांदी शामिल हैं। अपशिष्ट जल से भारी धातुओं को हटाने के लिए उपयोग की जाने वाली कई प्रक्रियाओं में फ्लोक्यूलेशन, आयन एक्सचेंज, शुष्क बायोमास के अवशोषण और अधिशोषण शामिल है। लेकिन उनकी बहुत सी सीमाएँ हैं और वे महँगी भी हैं और बड़े पैमाने पर लागू नहीं की जा सकतीं। बड़े पैमाने पर कम लागत और गुणवत्ता के कारण एक सर्वोत्तम प्रक्रिया अधिशोषण है। अधिशोषण आमतौर पर सक्रिय कार्बन का उपयोग करके किया जाता है, जो प्रदूषित जल में से कार्बनिक पदार्थों, रंगों और भारी धातुओं को निष्कासित कर देता है।

आजकल लोग पीने के पानी में दूषित पदार्थों की उपस्थिती से चिंतित हैं इन दूषित पदार्थों को सॉफ़्टनर या भौतिक निस्पंदन द्वारा हटाया नहीं जा सकता है।[3] इसलिए, पानी को मानव और सभी जीवित चीजों के लिए सुरक्षित बनाने हेतु उपचार की आवश्यकता है। कई प्रकार के उपचार हैं जो पानी की गुणवत्ता में सुधार कर सकते हैं। इनमें से एक उपचार है सक्रियित कार्बन। सक्रियित कार्बन का उपयोग अपशिष्ट जल प्रदूशक हटाने के रूप में किया जा रहा है। सक्रियित कार्बन, कार्बन प्रजातियों का एक रूप है जो उच्च रंध्रता और अधिशोषण हेतु बहुत बड़े सतही क्षेत्र के लिए संधरित और तैयार किया जाता है।[4] भारी धातुओं को अपशिष्ट जल से हटाने में सक्रियित कार्बन काफी सफल रहा है। कार्बन की अत्यधिक सरंध्र प्रकृति दूषित पदार्थों को जमा करने के लिए एक बड़ा सतह क्षेत्र प्रदान करती है। अणुओं के बीच आकर्षक बल के कारण अधिशोषण होता है। सक्रियित कार्बन की एक विस्तृत विविधता है जो कच्चे माल के आधार पर विभिन्न विशेषताओं का प्रदर्शन करती है। इस शोद्य कार्य में आइपोमोइया कार्निया के तने का प्रयोग करके सक्रियित कार्बन बनाया गया है।

शोध प्रविधि

सक्रिय कार्बन का बनना – आइपोमोइया कार्निया तने का प्रयोग Co (II) के लिए अधिशोषक के रूप में किया जाता है। सबसे पहले आइपोमोइया के तने का एकत्र कर धूप में रखकर सुखाया जाता है। इसके बाद ओवन में $110^{O}C$ पर रखा जाता है। 24 घंटे की अवधि के लिए HCl के साथ सूखे तने को उपचारित किया गया। अगले दिन फिर सामग्री को 60 मिनट की अवधि के लिए 400-800 डिग्री सेल्सियस पर मफल भट्टी में रखा गया।[5] रासायनिक सक्रियण इसकी उच्च आंतरिक सतह क्षेत्र और कार्बोनाइजेशन के दौरान बने छिद्रों की प्रक्रिया उच्च अधिशोषण की क्षमता को बढ़ावा देता है।[6]

अधिशोष्य – कोबाल्ट अन्य जहरीले रसायनों के समान है, प्राकृतिक या औद्योगिक स्रोतों से, मानव जीवन[7] के लिए गंभीर खतरा पैदा कर सकता है। कोबाल्ट नरम, मुलायम, सिल्वर-व्हाइट रंग के साथ चमकदार, चमकदार और इलेक्ट्रोपोसिटिव विशेषताओं से युक्त होता है। इसमें कोई गंध या स्वाद नहीं है और यह बहुत जहरीला भी है। कोबाल्ट एन्थ्रोपोजेनिक गतिविधियों के परिणाम के कारण पर्यावरण में पाया जाता है, जैसे कि जीवाश्म ईंधन, धातु अयस्क दहन और अपशिष्ट जल का उपयोग। इसके अलावा, कोबाल्ट

*सहायक प्राध्यापक, रसायन शास्त्र विभाग, शासकीय मोतिलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** रसायन शास्त्र विभाग, शासकीय मोतिलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

का संपर्क सिगरेट के धुएं के कारण भी होता है, साथ ही कृषि भूमि पर सीवेज कीचड़ के स्थानांतरण के कारण खाद्य श्रृंखला में कोबाल्ट यौगिकों का स्थानांतरण हो सकता है, और यह अलग-अलग मानव अंगों में जमा हो सकता है। [8]

कोबाल्ट मुख्य रूप से गुर्दे और यकृत में जमा होता है, इसके अलावा यह अन्य ऊतकों जैसे हड्डी और नाल में पाया जा सकता है। कोबाल्ट संपर्क गुर्दे की क्षति, प्रोटीनमेह, कैल्शियम की हानि और ट्यूबलर घाव के लक्षण दिखा सकता है। मूत्र परीक्षण, गुर्दे की चोट के शुरुआती संकेतों को साबित करने में मदद कर सकती है। दीर्घकालिक सम्पर्क [9] में आने पर कोबाल्ट से प्रभावित होने वाले प्रमुख अंग किडनी हैं।

बैच अधिशोषण अध्ययन – बैच अधिशोषण प्रयोग Co (II) आयनों के विलयन और कमरे के तापमान पर अधिशोषक की मात्रा को आपस में मिलाया गया। सक्रियित कार्बन और Co (II) आयनों के बीच प्रकिया की प्रकृति की जांच करने के लिए अधिशोषण पर pH (पीएच) का प्रभाव देखा गया, फिर सम्पर्क समय, अधिशोष्य की प्रारंभिक सांद्रता एवं अधिशोषक की सांद्रता के प्रभाव को देखा गया। केवल एक मापक को एक समय में बदल दिया गया जबकि अन्य को स्थिर बनाए रखा गया था। अधिशोषक को मिलाने से पहले प्रत्येक घोल के pH को 1 N HCl या 1 N NaOH की आवश्यक मात्रा का उपयोग करके समायोजित किया गया।

संतुलन और अधिशोषण प्रतिशत की एक इकाई द्रव्यमान द्वारा अधिशोषित होने वाली मात्रा की गणना साम्यावस्था पर निम्नलिखित संबंधों [10] का उपयोग करके की गई थी।

$$Q_e = \frac{(C_0 - C_e)}{m} \times V \quad \%R = \frac{C_0 - C_e}{C_0} \times 100$$

जहां साम्यावस्था पर C अधिशोष्य की सांद्रता (mg.L-1) है। तथा Co अधिशोष्य की प्रारंभिक सांद्रता(mg.L-1) है।

परिणाम और चर्चा

अधिशोषण अध्ययन

(1) pH(पीएच) का प्रभाव – अधिशोषण तंत्र पर pH(पीएच) का प्रभाव चित्र-1.1 में व्यक्त किया गया है। इन प्रयोगों को Co (II) की प्रारंभिक सांद्रता और अधिशोषक मात्रा और 60 मिनट के संपर्क समय पर रखा गया फिर विलयन के pH(पीएच) को अलग-अलग (2 से 7) pH(पीएच) में विश्लेषण किया गया, जिसके परिणामस्वरूप Co (II) आयनों का अधिकतम अधिशोषण 6.5 से 7 पर होता है सबसे कम अधिशोषण pH (पीएच) 2 पर हुआ।

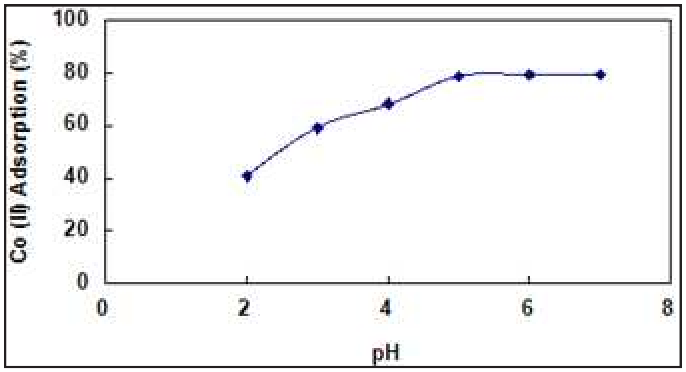

चित्र -1.1 Co (II) आयनों के अधिशोषण पर pH(पीएच) का प्रभाव

(2) अधिशोषक की मात्रा का प्रभाव – सक्रियित कार्बन पर Co (II) आयनों के अधिशोषण की जाँच की गई। प्रारंभिक विलयन Co (II) (100 mg/l) के साथ परीक्षण में अधिशोषक की 0.1 से 0.5 gm/50 ml) की मात्रा में मिलाते है और pH (पीएच) (6.0) को 60 मिनट के संपर्क समय के लिए स्थिर रखा गया। चित्र-1.2 यह दर्शाता है कि Co (II) आयनों का अधिशोषण 71.2 से 95.7 तक बढ जाता है तब जबकी अधिशोषक की मात्रा 0.1 से 0.5 तक बढाते है।

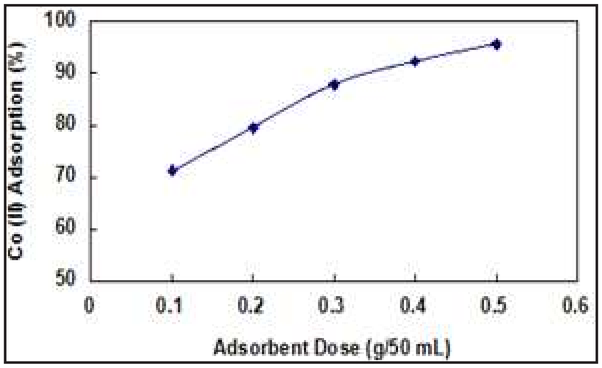

चित्र-1.2 Co (II) आयनों के अधिशोषण पर अधिशोषक की मात्रा का प्रभाव

(3) संपर्क समय का प्रभाव – सक्रियित कार्बन पर Co (II) आयनों के अधिशोषण से प्राप्त आकड़ो से पता चला है कि अधिक से अधिक अधिशोषण प्राप्त करने के लिए 60 मिनट का संपर्क समय पर्याप्त है। 60 मिनट पर 79.4 अधिशोषण मिला, इसलिए 60 मिनट को Co (II) आयनों के अधिकतम निस्कासन के लिए आवश्यक सम्पर्क अवधि के रूप में उपयुक्त मान लिया गया।

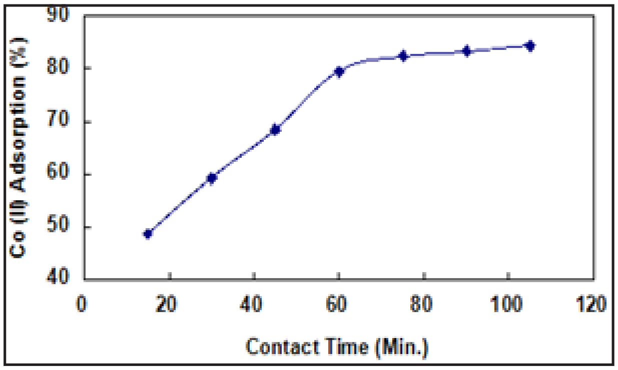

चित्र-1.3 Co (II) आयनों के अधिशोषण पर संपर्क समय का प्रभाव

(4) Co (II) सांद्रता का प्रभाव – सक्रियित कार्बन पर अधिशोषण की क्षमता Co (II) आयनों की प्रारंभिक सांद्रता के प्रभाव की जांच की गई और परिणाम चित्र-1.4 में दिखाए गए हैं। प्रयोगों को कमरे के तापमान, pH (पीएच) 6.0 और Co (II) आयनों विशिष्ट सांद्रता को अधिशोषक की मात्रा के साथ मिलाया गया। चित्र के अनुसार Co (II) की सांद्रता बढाने पर अधिशोषण का प्रतिशत कम होता जाता है Co (II) आयनो का अधिशोषण इसकी प्रारंभिक सांद्रता में अधिक (84.6 प्रतिशत) तथा उच्च सांद्रता में (34.1 प्रतिशत) बहुत कम प्राप्त होता है।

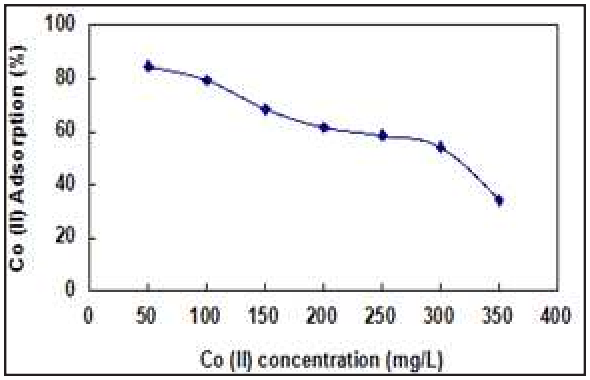

चित्र-1.4 सहकारिता पर Co (II) आयनों सांद्रता का प्रभाव

आइसोथर्म द्वारा आकडों का विश्लेषण - निश्चित तापमान पर अधिशोषित होने वाले पदार्थ की मात्रा और उसकी सांद्रता के बीच स्थापित साम्यवस्था को अधिशोषण आइसोथर्म कहा जाता है ।Co (II) आयनों के निष्कासन से प्राप्त परिणमों को फ्रायंडलिच और लैंगमुइर आइसोथर्म मॉडल के द्वारा विश्लेषण किया गया जो कि तालिका-1 में दिया गए हैं। तालिका -1 से प्राप्त हुआ सहसंबंध गुणांक Co (II) के सक्रियित कार्बन द्वारा अधिशोषण की पुष्टि करता है ।

तालिका -1 - Co (II) आयनों के लिए गुणांक आईसोथर्म मापक की तुलना

Isotherm Model	Coefficients Isotherm Parameters		
Langmuir	Qm (mg/g)	b (L/mg)	R2
	31.40	0.0107	0.9763
Freundlich	1/n	Kf (mg/g)	R2
	0.354	6.15	0.8281

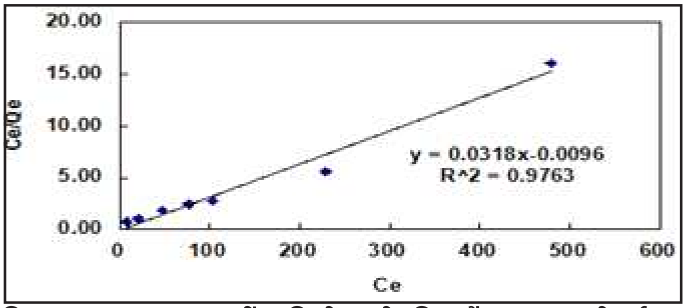

चित्र-1.5 Co (II) आयनों अधिशोषण के लिए लैंगमुइर आइसोथर्म का रैखिक ग्राफ

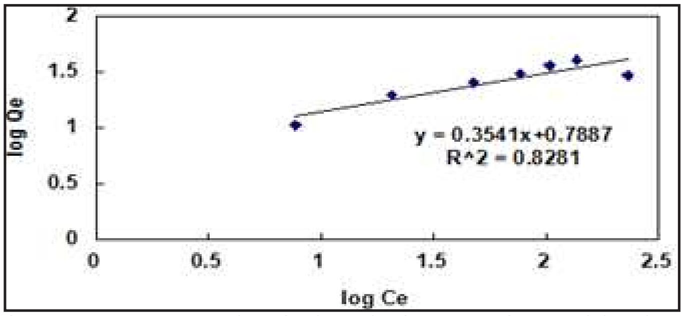

चित्र-1.6 Co (II) आयनों अधिशोषण के लिए फ्रायंडलिच आईसोथर्म का रैखिक ग्राफ

गतिकी अध्ययन (Kinetic Study) - अधिशोषण गतिकी, अधिशोषण की एक प्रमुख विशेषता है । अधिशोषण गतिकी का अध्ययन करने के लिए प्रथम कोटी व द्वितीय कोटी के प्रारूप को प्रयोग्रात्मक आकड़ों के लिए एक निश्चित सांद्रता (100 mg/l) पर लागू किया गया है । प्रथम कोटी व द्वितीय कोटी के लिए सह संबंध गुणांक 0.9163 और 0.9950 प्राप्त हुए । जिससे यह पता चला कि प्रथम कोटी व द्वितीय कोटी दोनों के मध्य अंतर क्रिया Co (II) आयनों के सक्रियित कार्बन पर अधिशोषण के लिए उपयुक्त है ।

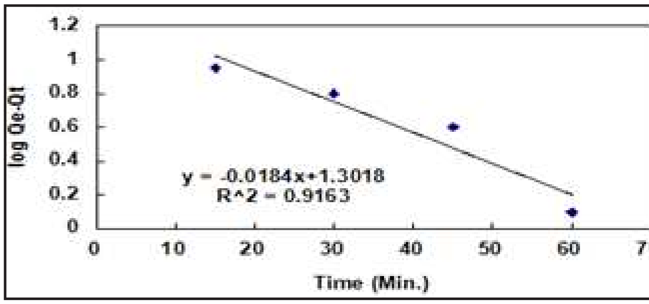

चित्र-1.7 Co (II) आयनों के अधिशोषण के लिए प्रथम कोटी के गतिकी ग्राफ

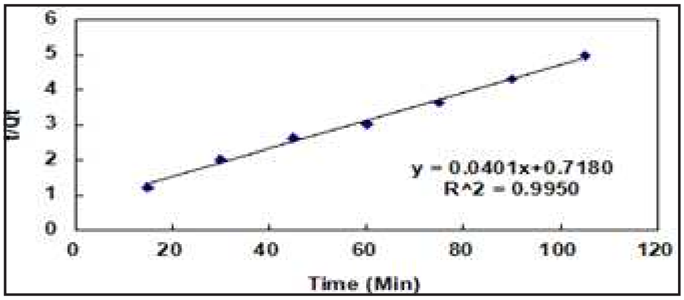

चित्र-1.8 Co (II) आयनों के अधिशोषण के लिए द्वितीय कोटी के गतिकी ग्राफ

तालिका -2 - Co (II) आयनों के अधिशोषण के लिए प्रथम कोटी व द्वितीय कोटी के गतिकी स्थिरांक

	First-order Kinetic Model			Second-order Kinetic Model			
Qe Experimental	k1	Qe Calculated	R2	k2	Qe Calculated	h	R2
21.10	0.042	20.03	0.9163	0.003	24.90	1.39	0.9950

निष्कर्ष - वर्तमान शोद्य कार्य इपोमिया कार्निया तने से प्राप्त सक्रियित कार्बन से Co (II) को निष्कासित केने के लिए बैच प्रक्रिया प्रस्तुत की गई, उच्च सतह क्षेत्र, सरंधता और कृषि अपशिष्ट से तैयार किया सक्रियित कार्बन विभिन्न प्रकारों से प्रयोग किया जाता है । पर्यावरण अनुप्रयोग, भारी धातुओं को हटाने, अपशिष्ट जल उपचार और अधिशोषण प्रक्रिया में भी प्रयोग होता है Co (II) का अधिशोषण प्रारंभिक pH (पीएच), अधिशोषक की मात्रा, संपर्क समय और प्रारंभिक Co (II) की सांद्रता पर निर्भर करता है । यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कुछ कम लागत वाली सामग्री का उपयोग जलीय घोल से Co (II) जैसे भारी धातुओं को निष्कासन करने के लिए प्रभावी और वैकल्पिक अधिशोषक के रूप में किया जा सकता है, क्योंकि वे आसानी से उपलब्ध हैं, इसलिए प्रदूषण को कम करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. S. Pirillo, M.L. Ferreira, E.H. Rueda, "Adsorption of alizarin, eriochrome blue black R, and fluorescein using different iron oxides as adsorbents" Ind. Eng. Chem.

Res. 46 ,8255–8263,2007.

2. G. Mishra, M. Tripathy, "A critical review of the treatment for decolourization of textile effluent" Colourage 40, 35–38, 1993.
3. Thompson T, Sobsey M, Bartram J. "Providing clean water, keeping water clean: an integrated approach" Int J. Env Health Res, 13:S89-S94, 2003
4. Ahmedna, M. Marshall, W. E. And Rao, R.M."Production of granular activated carbons from select agricultural by-products and evaluation of their physical, chemical and adsorption properties" Biosource Technology, 71: 113-123, 2000.
5. Arockiaraj I and Renuga V "Sorption kinetics and dynamic studies of basic dye by lowcost nanoporous activated carbon derived from Ipomoea carnea stem waste by sulphate process" Frontiers in Nanoscience and Nanotechnology 2016.
6. S.Karthikeyan , P.Sivakumar and P.N.Palanisamy Department of Chemistry, "Activated Carbons from Agricultural Wastes and their Characterization '' net Vol. 5, No., pp. 409-426, April 2008.
7. Rafati Rahimzadeh M, Rafati Rahimzadeh M, Moghadamnia AA. Arsenic compounds 11. toxicity. J Babol Univ Med Sci. 15:51–68; 2013.
8. Munisamy R, Ismail SNS, Praveena SM. Cadmium exposure via food crops: a case study of intensive farming area. Am J Appl Sci;10:1252–62 ,2013.
9. Boonprasert K, Kongjam P, Limpatanachote P, Ruengweerayut R, Na-Bangchang K Southeast Asian J Trop Med Public Health. 42(6):1521-30; 2011 Nov.
10. Lekene Ngouateu R. B., Kouoh Sone P M. A., Ndi Nsami J., Kouotou D., Belibi Belibi P. D., Ketcha Mbadcam J. "Kinetics and equilibrium studies of the adsorption of phenol and methylene blue onto cola nut shell based activated carbon" Int J Cur Res Rev | Vol 7 Issue 9, May 2015.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Role of Education on Poverty Eradication in India : A Sociological Study

Yatindra Kumar Jha*

Abstract - The Poverty is broadly defined in terms of material deprivation, human deprivation and a range of other deprivations such as lack of voice, vulnerability, violence, destitution, social and political exclusions, and lack of dignity and basic rights. In India, and indeed throughout the world, the conventional approach equates poverty with material deprivation and defines the poor in terms of incomes or levels of consumption .Poverty is a major threat to the existence of humanity in modern times especially in the developing world. Poverty eradication is a term that describes that how to permanently lift as many people as possible over a poverty line. We affirm that there are different approaches, visions, models and tools available to each country to eradication poverty. Education in the largest sense is any act or experience that has a formative effect on the mind, character, or physical ability of an individual. In its technical sense, education is the process by which society deliberately transmits accumulated knowledge, skills and values from one generation to another. This paper is aimed at focusing on eradicating poverty through education. This paper aim to create the awareness of education which is one of most important factor in Poverty Eradication In this paper we study the impact of education on poverty eradication in India. Findings of the study shows that educational qualification play significant role in poverty eradication and it concludes that if poverty is to be effected, it can be carried out only through the medium of education.
Key words - Poverty Eradication, Deprivation, Education, Sustainable Development.

Objective of study - The study will have the following main objectives:

1. To impact of education on poverty eradication and know about whether education as a measure was successful in reducing poverty.
2. To study the level of poverty in India and analyse the reasons related to poverty.

Hypothesis :

1. In this present study our main focus to find correlation between education literacy rate and poverty eradication.
2. Is Increasing literacy rate by education has succeeded in reducing the poverty levels in India?

Data Base and Methodology - The propose study will be of immense importance for the policy implications and operational view point. It will provide a data base which will help in analyzing and understanding the real situation of poverty as well as efforts made by the Government for poverty eradication in the context of education providing by governance and new policy regime. The study will also examine the constraints, difficulties and challenges in implementation of poverty eradication programmes as well as infrastructure development programmes oriented towards development and empowerment of poor. The present study is based on secondary data and pertinent literature have been compiled from published, documented and internet sources. The secondary sources of information mainly include publications of Ministry of Urban Development, Ministry of housing and Urban Poverty Alleviation, Planning Commission / NITI Aayog, World Bank, Asian development Bank etc. Previous studies, surveys and reports have been critically reviewed to get the insights on the topic of research. The research study has focused on the eradication of poverty through measures of education. It covers the approximate overview of the level of poverty in India, and measures taken to eradicate it. Methodology applied in the study are totally depends statistical analysis by tables, charts, interpretation, projection. Some basic information are taken from internet and few literature have been studied for prepare the papers.

Study Area - This paper study area is India.India demographics occupy 2nd rank among the world's most populated countries. With its current population of more than 1.21 billion people As per Census of India 2011, Total Population: 1210193422, Females: 586469174, Males: 623724248,Total Literacy: 778454120, Females: 334250358, Males: 444203,762, Literacy rate: Total: 74.04 %, Females: 65.46 %, Males: 82.14 %. In this study we want to know the role of education in poverty eradication.

Introduction - Poverty is the most challenging task before the planners In India. Urban poverty is different from the rural poverty and thus demands for innovative and

*Assistant Professor (Sociology) Dr. Rajendra Prasad Memorial Degree College, Lucknow (U.P.) INDIA

multipronged approaches and strategies for its eradication. Cities are engines of growth and therefore serve as pull factor for the poor. Due to better economic opportunities, socio-economic infrastructure and facilities, the poor from rural areas and semi-urban areas migrate to urban centres. Thus, the poverty is shifting from urban to rural areas. There has been increase in the number of urban poor though the proportion of urban poor against the total urban population has declined over the period. On the other hand, the number of poor and ratio of poverty in rural areas has significantly declined over the period. In view of empowering the urban and rural poor and improving their living conditions , Government of India has introduced numerous centrally sponsored schemes from time to time.for upliftment of poors as Rajiv Awas Yojana, Rajiv Rin Yojana and National Urban Livelihood Mission, MGREGS etc are the new addition.

Literature Review - Weber (1958) in his book 'the protestant ethic and the spirit of capitalism' emphasizes that the social 'class situation' of individuals accounts for their poverty. The 'class situation' of an individual depends upon their 'market situation'.

Devis and Moore (1967) state that poverty exists in society as it is functional and benefits the rich in many ways. Poverty of any society provides a cheap labour force in a fast growing society and ensures that dirty jobs are done by the poor at a low cost. In addition, poverty provides the base of social stratification and motivates people to work hard to achieve a higher position in the society.

According to Lewis, the culture of poverty is learned, shared by the process of socialization, and transforms from one to the next generation of the family. Once the culture of poverty establishes, then it tends to perpetuate itself from one generation to the next (Lewis 1959).

Talcott Parsons was a key functionalist who saw the school and its classrooms as reflections of the social system; he also described the university's role in the maintenance of social order. He and his colleague felt that universities carried out four functions, namely (1) undergraduate training, (2) research and graduate training, (3) professional schools, and (4) relations between universities and the broader society (Parsons and Platt, 1973).

Although Marx said little about education, neo-Marxists such as Louis Althusser and Antonio Gramsci established the importance of education in their interpretation of the dynamics of modern capitalism and the class struggle. Althusser (1971) argued that the schools in capitalist societies help preserve the position of the dominant class by teaching the dominant ideology whereby children learn to know and accept their place in society so that there is no challenge to the class structure. Neo-Marxist ideas about education have played an important part in the development of the sociology of education since the 1960s.

Durkheimian sociology of education tends to be functionalist. Therefore, studies that tend to take a positivistic approach to the study of educational processes, in particular those based on empirical data and explicit or implicit causal assumptions are linked with forms of Durkheimian functionalism.

Dale (2001) agrees that theoretical perspectives in the sociology of education are not linear. He argues, however, that the emergence of new theoretical perspectives is due to what he calls "the selection principle," namely through the political and social contexts within which sociologists of education operate. The evolution of theories in the sub-discipline is not due to any kind of inner dynamic.

The review of literature simply demonstrates that there is paucity of literature, empirical research findings, and data on p education and sociology of education in Indian perspective. Thus, the present study attempts to review the Indian poverty and education system.

Conceptualization of Poverty - The word 'poverty' and its adjectival 'poor' denote an ancient concept, expressing social difference between man and man. Poverty is a very vague concept with varied connotations and facets. As a socio-economic issue, it is defined by various international and national agencies, social scientists and sociologists. The World Bank (1990) defines poverty as "the inability to attain a minimal standard of living". In an article, 'Poverty Reduction and Equity,' the World Bank defines poverty in a comprehensive manner, saying, "Poverty is hunger, Poverty is lack of shelter, Poverty is being sick and not being able to see a doctor. Poverty is not having access to school and not knowing how to read. Poverty is not having a job, is a kind of insecurity for the future. Poverty is losing a child to illness brought about by unclean water. It is a state of powerlessness, lack of representation and freedom."

The traditional definition of poverty is constructed with a one-dimensional approach of income and food intake capabilities, which derived the poverty line. After independence, a working group was formed to set a poverty line in India. (1970) and Dandekar and Rath (1971) used calories required for survival and income needed to buy those calories in different parts of India, to derive an average poverty line, and defined poverty on the basis of poverty line. In 1990s, another expert group, chaired by Lakdawala, set the poverty line for India on the basis of consumption expenditure based on calorie consumption as earlier. The standard lists of poverty line were drawn up on the basis of price of commodities in each state of the nation (Planning Commission 2012).

In July 2013, the Rangrajan committee report has also defined poverty on the basis of MPCE and the revised poverty line has been fixed at Rs. 816 Per Capita per Month for rural areas and Rs. 1000 for urban areas (Planning Commission 2013). The official definition of poverty defines it on the basis of the poverty line. Those who fall below the fixed poverty line are considered as poor. For Sen (1992), poverty is a kind of inequality, where the poor suffer a lack of opportunities to choose their life style, and covers a wide range of dimensions like low-level income and education, insufficient capacity and opportunity in society, inability to

acquire the basic goods and services necessary to survive in society with dignity. He argues that apart from income, standard of living is a suitable indicator to identify the situation of poverty. Standard of living is considered as quality of life by sociologists. R. Chambers (1995) explains the state of poverty on the basis of several domains of life. According to him, poverty is not only the deficiency of income but also the deficiency of several basic and social human needs.

As per report of Planning Commission (2012), it is reported that nearly, one-fourth of the country's population resides below poverty line. If one counts those who are deprived of safe drinking water, adequate clothing or shelter, the number is considerably higher. Further, the vulnerable groups such as, Scheduled Castes, Scheduled Tribes, minorities, pavement dwellers etc are living in acute poverty. It is also analyzed by India's Planning Commission report that even though country's poverty rate continuously declined from 44.5 percent in 1980s to 21.9 in 2012 but the number of poor is still high, as shown in table 1.1.

Table 1.1 - Population Living Below Poverty Line in India

Year	India		Urban India		Rural India	
	Millions	Percentage	Million	Percentage	Million	Percentage
1983-84	333.9	44.5	70.9	21.96	252.0	45.7
1987-88	307.1	38.9	75.2	24.49	231.9	39.1
1993-94	403.7	45.3	74.5	31.8	328.6	50.1
1999-2000	170.3	27.1	68.2	23.6	238.5	26.1
2004-05	326.3	41.8	80.8	25.8	407.1	37.2
2009-10	354.7	29.8	76.4	20.9	278.2	33.8
2011-12	269.7	21.9	53.1	13.7	216.6	25.7

Source: Planning Commission report 1993, 2007, 2009, 2012

Poverty Eradication through Education - Education is one of the key sectors, which provide direction to the national development. No country has succeeded if it has not educated its people. Not only is education important in reducing poverty, it is also a key to wealth creation. The role of education in this process is particularly one of achieving universal primary education and adult literacy. The Decade for the Eradication of Poverty confirms that universal primary education is central to the fight against poverty. Understandably so, because this is the level of education through which most poor children pass and within which their achievements should assist them to break the cycle of poverty. In fact, education is the social institution that reaches the largest segment of the population with the goal of guiding it through a systematic learning process.

Current Scenario of Literacy Rate in India - Over the years, India has changed socially, economically, and globally. The effective literacy rate for India in Census 2011, works out to 74.04 percent. The corresponding figures for males and females are 82.14 and 65.46 per cent respectively. Thus three-fourth of the population of aged 7 years and above is literate in the country. Four out of every five males and two out of every three females in the country are literate. The country has continued its march in improving literacy rate by recording a jump of 9.21 percentage points during 2001-2011. The increase in literacy rates in males and females are in the order of 6.88 and 11.79 percentage points respectively. However, efforts are still required to achieve the target of 85 per cent set by the Planning Commission to be achieved by the year 2011-12.

Graph 1 (see in last page)

Table 1.2

Years	Literacy Rate (%)
1981	43.57
1991	52.21
2001	64.83
2011	74.04

In this present study we used Pearson Correlation Coefficient. Pearson correlation coefficient is a very helpful statistical formula that measures the strength between variables and relationships. In the field of statistics, this formula is often referred to as the Pearson R test. When conducting a statistical test between two variables, it is a good idea to conduct a Pearson correlation coefficient value to determine just how strong that relationship is between those two variables.

The Pearson product-moment correlation coefficient depicts the extent that a change in one variable affects another variable. This relationship is measured by calculating the slope of the variables' linear regression.The value of Person r can only take values ranging from +1 to -1 (both values inclusive). If the value of r is zero, there is no correlation between the variables.If the value of r is greater than zero, there is a positive or direct correlation between the variables. Thus, a decrease in first variable will result in a decrease in the second variable. If the value of r is less than zero, there is a negative or inverse correlation. Thus, a decrease in the first variable will result in an increase in the second variable .as we say that A positive correlation between two variables, say X and Y, means that if one increases, the other will too. No correlation means that they are not related. A negative correlation means that as one increases, the other decreases.

Pearson Correlation Coefficient Formula

$$r = \frac{N\Sigma xy - (\Sigma x)(\Sigma y)}{\sqrt{[N\Sigma x^2 - (\Sigma x)^2][N\Sigma y^2 - (\Sigma y)^2]}}$$

Where:

N = number of pairs of scores
Σxy = sum of the products of paired scores
Σx = sum of x scores
Σy = sum of y scores
Σx^2 = sum of squared x scores
Σy^2 = sum of squared y scores

In this study we use two variables.1-Poverty Rate 2- Literacy Rate (Education)

Table 1.3

Years	Literacy Rate (%) (x)	Poverty Rate (%) (y)	(xy)	(x^2)	(y^2)
1981	43.57	44.5	1938.86	1898.34	1980.25
1991	52.21	45.3	2365.113	2725.88	2052.09
2001	64.83	27.1	1756.89	4202.92	734.41
2011	74.04	21.9	1621.47	5481.92	479.61
Total	234.65	138.8	7682.33	14309.06	5246.36

After put the correct values in Pearson correlation formula, the result of my coefficient value has to come :— **- 0.07 (Moderate Negative Correlation)**

A negative correlation means that **when a variable increase the other decrease**. It is showing that if one variable is increasing than second variable is decreasing.

Result - In this present study our main focus to find correlation between education literacy rate and poverty alleviation. So we make a hypothesis for finding relation-

Hypothesis- Is Increasing literacy rate by education has succeeded in reducing the poverty levels in India?

For this hypothesis testing relation between education and poverty we have taken two variables-

1- Literarcy Rate Percentage

2- Poverty Rate percentage

After using values **in Pearson correlation formula we got coefficient value -0.07 .**

It is showing relation between education and poverty.

Moderate Negative Correlation is showing that if Literarcy Rate Percentage is increasing than Poverty Rate percentage is decreasing. This Value is highly supported to my hypothesis that this hypothesis is reliable and true . Over these years the increased literacy rate & increase in the level of education. Thus, Education as a measure is found to be successful in eradicating poverty.

Suggestions :

1. Providing quality education to poor will have greater and long term impact to escape poverty. However, it consists of many challenges including creation of educational infrastructure, providing poor people access to institutions, convincing parents to keep their children in school and providing quality education.
2. Poverty eradication was identified by the World Social Summit as an ethical, social, political and economic imperative of mankind. To address the root causes of poverty, it is essential that basic needs are provided for all and it needs to be ensured that the poor have access to productive resources, including credit, education and training.
3. In addition to this, there should be an increase capacity in the distribution of education to the rural areas.

Conclusion - Eradication of poverty in India is a priority for the Indian government. Providing quality education to poor will have greater and long term impact to escape poverty. However, it consists of many challenges including creation of educational infrastructure, providing poor people access to institutions, convincing parents to keep their children in school and providing quality education. This study is done to estimate the effect of education upon poverty in India With the research conducted and data collected by sources, Our hypothesis was satisfied on the basis of data collected and thus, we conclude that : Increasing literacy rate by education has succeeded in reducing the poverty levels in India. In testing this hypothsis it is clearly prove that education effected on poverty eradication . No economic development is possible without education. A balanced education system promotes not only economic development, but productivity, and helps in sustainable growth. The results have shown that education attainment has a negative impact upon poverty. The other notable thing is the consistent increase in the chances of escaping poverty of a person as we increase the educational level it means that as educational achievement increases, the likelihood of a person to be poor declines. Therefore, education is the most important factor regarding poverty reduction.

References :-

1. World Bank, (1990), *World Development Report of Poverty*, Washington
2. World Bank, (2012). *India: New Global Poverty Estimates,* [webliInk: poverty.data.worldbank.org, Accessed 11-10-2012]
3. World Bank. (2005). *New Global Poverty Estimates,* United Nations Development Programme in Mandal Jay Poverty Reduction. [weblink: www.undp.org.in]
4. Weber, M., (1958). *The City,* New York: The Free Press
5. United Nation Development Report (2011). *Oxford Poverty and Human Development Initiative (OPHI), Country Briefing: Multidimensional Poverty Index (MPI) At a Glance,* Oxford Department of Development: Univ. of Oxford
6. Sundaram, K. and Tendulkar, S., (2000). *Poverty in India: An Assessment and Analysis,* Manila: Asian Development Bank
7. Sharma, R. and Sharma, R. K., (1996). *Problems of Education in India,* New Delhi: Atlantic Publishers
8. Marx, K. and Engeles, F., (1964). *The Communist Manifesto*, New York: Simon and Sahustea Inc
9. Lewis, O., (1959). Five Families: Maxican Case Studies in the Culture of Poverty, New York: Basic Books
10. Haralambos, M., (2004). *Sociology Themes and Perspective*, New Delhi: Oxford University Press
11. World Bank (1993) “The East Asian Miracle: Economic Growth and Public Policy”, Policy Research Report, Oxford University Press.
12. Bramley,G. and Karley, K.N. (2005). Home-Ownership, Poverty and Educational Achievement: Individual, School and Neighbourhood Effects. CRSIS Research Report, www.crsis.hw.ac.uk.
13. UNESCO (2007) “Education For All Global Monitoring Report 2007”, *www.unesco.org.*
14. Tilak, J.B.G. (2005). Post Elementary Education, Poverty and Development in India. International Journal

of Educational Development, 27,435-445.
15. Bonal, X. (2007). On Global Absences: Reflections on the Failings in the Education and Poverty Relationship in Latin American Countries. International Journal of Educational Development, 27, 86-100.

Graph 1

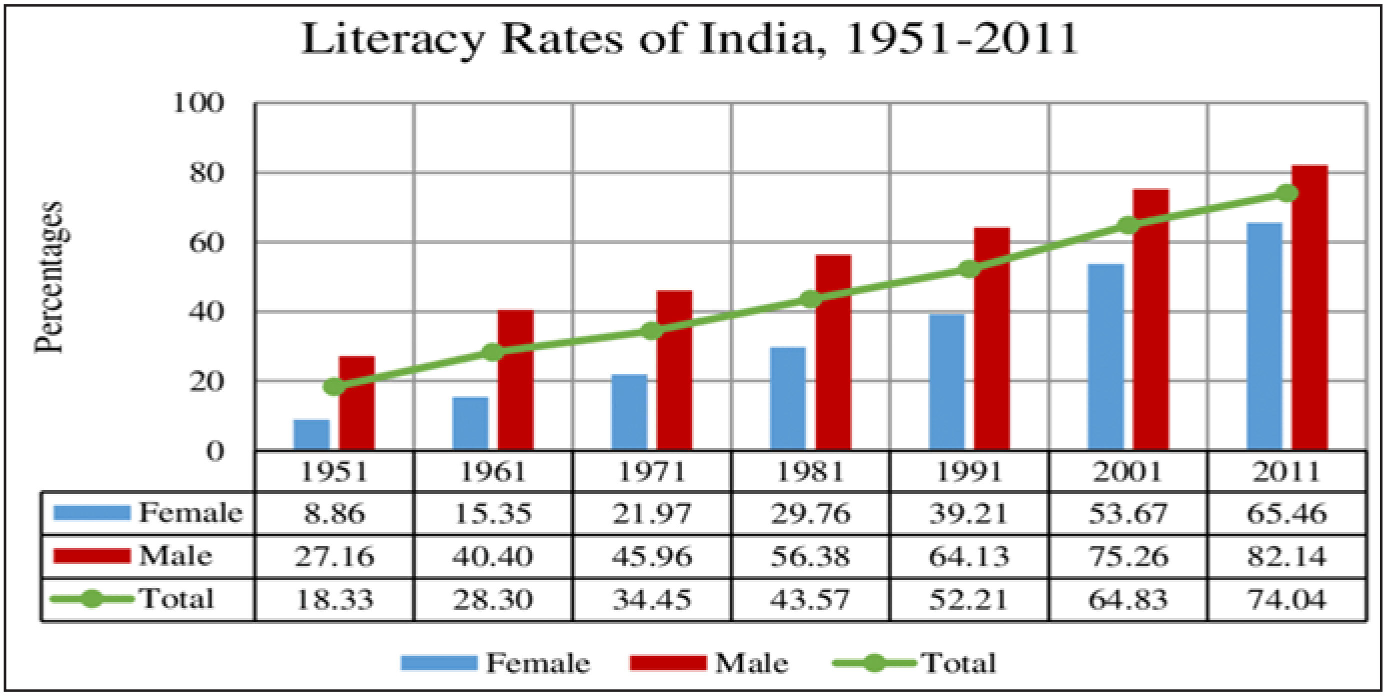

	1951	1961	1971	1981	1991	2001	2011
Female	8.86	15.35	21.97	29.76	39.21	53.67	65.46
Male	27.16	40.40	45.96	56.38	64.13	75.26	82.14
Total	18.33	28.30	34.45	43.57	52.21	64.83	74.04

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

ग्रामीण क्षेत्रों में भ्रष्टाचार नियंत्रण हेतु मध्यप्रदेश सरकार की भूमिका : एक विवेचन

महेश भारती *

प्रस्तावना - मध्यप्रदेश भारत का दूसरा सबसे बड़ा राज्य है तथा इसका ग्रामीण क्षेत्र भी फैला हुआ है। आज प्रदेश में जहाँ प्रशासन ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु प्रयासरत है। वहीं दूसरी ओर भ्रष्टाचार जैसी बुराई भी विकास के कार्यों में रोड़ा बन कर सामने बनी हुई। जहाँ केन्द्र सरकार से लेकर राज्य सरकार तक ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले नागरिकों को अपने जनकल्याणकारी योजनाओं से लाभ पहुँचाने का प्रयास कर रही है।

लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में भ्रष्टाचार की समस्या होने के कारण सुविधाएँ लाभार्थी को आसानी से प्राप्त नहीं होती है तथा भ्रष्ट अधिकारी व कर्मचारी योजनाओं का सीधा लाभ नागरिकों को नहीं पहुँचने देते। इसमें सबसे बड़ा कारण जागरूकता की कमी पाई गई है। ग्रामीण क्षेत्र के लोग कम पढ़े लिखे होते हैं। तथा जानकारियों को समझने में भी उन्हें दिक्कत का सामना करना पड़ता है। इसी का लाभ लेकर अफसरशाही उसका फायदा उठाती है। इन सबको ध्यान में रखकर मध्यप्रदेश सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में जो सुविधाओं को पहुँचाने के अधिक से अधिक प्रयास किये जाते रहे हैं।

ग्रामीण सुविधा पूर्ण वातावरण में अपने कार्यों को पूरा करा सके इसके लिए सरकार ने कई भ्रष्टाचार विरोधी कानून एवं निकाय की स्थापना की है।

सरकार द्वारा जनता की समस्या हेतु लोक सेवा गारंटी 2010 की स्थापना की जिससे समय सीमा में ग्रामीण अपने छोटे-छोटे कार्यों को पूरा करवा सके तथा भ्रष्ट कर्मचारियों एवं अधिकारियों को अपनी जिम्मेदारियों को पूर्ण न कर सके उन्हें जुर्माने से दंडित भी किया जा सके।

लोक सेवा गारंटी 2010 एक महत्वपूर्ण अधिनियम है। इसके माध्यम से अपने कार्यों को समय सीमा में पूरा आसने से करवाया जा सकता है। प्रदेश सरकार जहाँ नागरिकों को अपने अधिकारों के लिए भ्रष्टाचार मुक्त वातावरण देने का संकल्प ले चुकी है। वहीं जनसुनवाई जैसी सुविधा देकर अपनी समस्या का समाधान सीधे उच्च अधिकारी के माध्यम से किया जाता है।

इसी कड़ी में सीएम हेल्पलाइन का उपयोग भी आज ग्रामीण आसानी से करते तथा अपने कार्य नहीं होने पर शिकायत दर्ज करवा सकते है। जागरूकता लाने हेतु भी सरकार ग्रामीण क्षेत्र में कैम्पों के माध्यम से लोगों को जगरूक कर रही तथा प्रचार-प्रसार का समय लेकर भी आज लोगों को अपने कार्यों के प्रति जागरूक किया जा रहा है।

प्रदेश सरकार द्वारा ई-गवर्नेंस के माध्यम से सुविधाओं को सीधा ग्रामीण क्षेत्रों में फैलाया गया है, जिसके माध्यम से आज पंचायत सचिव से लेकर सरपंच तक ई गवर्नेंस का लाभ जनता तक पहुँचा रहे हैं ई गवर्नेंस के माध्यम से भ्रष्टाचार में कमी आई है। इससे सबसे ज्यादा लाभ सरकारी कार्यों में होने वाला भ्रष्टाचार पर लगाम लगाने में हुई है।

शोध प्रविधि - इस शोध पत्र विषय **ग्रामीण स्तरों में बढ़ते भ्रष्टाचार के नियंत्रण में मध्यप्रदेश शासन की भूमिका** में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध पद्धति के द्वारा विश्लेषणात्मक एवं संश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। इसके साथ पत्र-पत्रिकाओं, शोध पत्रिका, साक्षात्कार, विद्वानों का मार्गदर्शन प्राप्त किया गया है। इस शोध पत्र में ग्रामीण परिवेश में हो रहे भ्रष्टाचार की जानकारी एकत्रित करने के लिए आज जनता से विचार-विमर्श भी किया गया है।

समस्या - ग्रामीण परिवेश में भ्रष्टाचार एक बहुत बड़ी समस्या है, जिससे गरीब व्यक्ति परेशान हो रहा है। यहाँ तक आये दिन अखबारों, न्यूज चैनलों आदि में परिवारिक कलह, पुलिस प्रशासन द्वारा परेशान करना। सरपंच/पार्षद द्वारा व्यक्ति के विकास को अवरूद्ध करना आदि समस्याऐं आज भी विद्यमान है।[2] भ्रष्टाचार दूर-दूर तक अपनी पैठ जमा रहा है। बहुत कुछ समस्याऐं ग्रामीण स्तर पर है।

1. खाद्य बीज समय पर न मिलने और कलाबाजारी की समस्या।
2. सरकारी उचित मूल्य की दुकानों में कलाबाजारी होने के कारण ग्रामीण जनता को समय पर अनाज का वितरण नहीं होने की समस्या।
3. ओला-पाला के पैसे वितरण में घूस की समस्या।
4. बधान निर्माण, मिट्टी बहाव को रोकने हेतु मेड़ बधान की आर्थिक सहायता समय पर न मिलने की समस्या।
5. कीटनाशक दवाईयों को न देने वाले ब्लाक स्तर के कर्मचारियों में भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति।
6. पानी की समस्या।
7. कास्तकारों द्वारा श्रमिकों से मजदूर करवाने के उपरान्त उन्हें परिश्रमिक देने की समस्या।
8. ग्रामीण अशिक्षित व्यक्ति को बधुआ मजदूरी एवं कम पैसे देकर अधिक कार्य करवाने की प्रवृत्ति से की समस्या।

उद्देश्य - ग्रामीण जनता को भ्रष्टाचार से मुक्त करने के लिए मध्यप्रदेश शासन को ठोस कदम उठाने की जरूरत है, जिससे ग्रामीण जन-जीवन अस्त-व्यस्त न हो। इन्हें उद्देश्य से प्रशासन को जनता के हित साधन को ध्यन में रखकर कार्य करना ही मूल उद्देश्य है। सामाजिक बुराईयों का होता जा रहा गढ़ ग्रामीण परिवेश जिसके लिए मध्यप्रदेश को ठोस कदम उठाना चाहिए। इससे समाज में शान्ति वातावरण को माहौल विद्यमान होगा। प्रशासन और मजबूती से कार्य को कर सकेगा। इससे मध्यप्रदेश शासन पर जनता का विश्वास बना रहेगा।[3] मध्यप्रदेश शासन को ग्रामीण जनता के हित को ध्यान रखना ही इस शोध पत्र का मूल उद्देश्य है।

1. ग्रामीण परिवेश में जीवन यापन करने वाली जनता को समुचित

* शोधार्थी, लोक प्रशासन मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.) भारत

सुविधाऐं प्रदान करना मध्यप्रदेश शासन का उद्देश्यों का अध्ययन करना।

2. खाद्य/बीज की पूर्ति करना मध्यप्रदेश प्रदेश शासन के उद्देश्यों का अध्ययन करना, जिससे अच्छी फसल हो सके।
3. प्राकृतिक आपदा से नष्ट होने वाले अनाज और माकान की क्षति पूर्ति समय पर होने से मजदूर और किसान कर्ज के बोझ से बच जायेगा। इस उद्देश्य से उसकी पूर्ति होती है। वह किसान और मजदूर सरकार की कार्य प्रणाली पर किसी भी प्रकार का हस्ताक्षेप नहीं करेगा।
4. ग्रामीण इलाकों में होने वाले श्रमिकों पर अत्याचार का अध्ययन करना।
5. ग्रामीण स्तर पर मध्यप्रदेश शासन के अधिकारियों और कर्मचारियों के द्वारा करने वाले भ्रष्टाचार का अध्ययन करना।

समाधान – निर्धन और मजदूर व्यक्ति बहुत लम्बे समय से ग्रामीण इलाकों में तास और जुआ जैसे अपराध पूर्ण खेल खेलते रहे हैं। यदि उनसे पूछा जाये की आप लोग ऐसा क्यों कर रहे हैं। उनका उत्तर है कि हम अपना समय काट रहे हैं। इसका अभिप्राय यह है कि यदि उनकी बेरोजगारी दूर कर दी जाये। सम्भवत: मध्यप्रदेश शासन बुराईयों से बच सकती है। मध्यप्रदेश शासन उनसे काम ले काम के बदले में उन्हें समय पर मजदूरी दे। निर्धन व्यक्ति की सूची प्रत्येक ग्रामीण ईलाके से तैयार की जाय। उन्हें उनकी योग्यता के अनुसार कार्य प्रदान किया जाये। इससे ग्रामीण इलाके के विकास में अत्यधिक बदलाव आयेगा। समाज सुधार का कार्य समुचित रूप से होगा। इससे कई लाभ होगें। चोरी से बचाव होगा। सामाजिक वातावरण मानवीयता के आधार पर निर्मित होगा। बेरोजगारी समाप्त होने से भ्रष्टाचार भी समाप्त होगा। ऐसी स्थिति में लोगों में जुँऐं, तास जैसी सामाजिक बुराईयों से छुटकारा मिलेगा। पत्नियाँ घरेलू कार्यो को लेकर कार्य को करती रहती हैं। वे मजदूरी करके लाती है। उनका पति तास, जुऐं, शराब आदि में लिप्त रह कर घरेलू हिंसा को जन्म देता है। इस प्रकार की घरेलू हिंसा से महिला उत्पीड़न जैसी स्थिति ने महिलाओं के जीवन को जीना मुस्किल कर दिया है। ऐसी दशा में भ्रष्ट कर्मचारी उनके सम्मान का मजाक उड़ाता है।[4]

भ्रष्टाचार के नाम पर होने वाली ग्रामीण ईलाकों में घटनाऐं जिस प्रकार से महिला उत्पीड़न, चोरी, बलात्कार, हिंसा आदि कारणों को अन्जाम दिया जा रहा है। इसके लिए मध्यप्रदेश शासन ने नियम तो बनाये है किन्तु उनका संचालन करने वाला अधिकारी/कर्मचारी भ्रष्ट होने के कारण सहीं सूचना शासन स्तर पर नहीं भेजता है। गाँव का पूँजीपति व्यक्ति यदि प्रशानिक कर्मचारी और अधिकारी को किसी पीड़ित व्यक्ति के बारे में कह दे इसकी रिर्पोट न लिखी जाये।[5] पुलिस उसकी रिपोर्ट नहीं लिखती है। उल्टा उसे ही हवालात में धकेल देती है। झूठे प्रकरण में आज ग्रामीण जनता जेलों की सलाखों में पिस रहे हैं। अपराधी बाहर घूम रहें हैं।[6] इससे लोकतंत्र की छवि को धूमिल किया जा रहा है। यह लोकतंत्र का आईना नहीं है। लोकतंत्र का आईना गुनहगार को सजा और निर्दोश व्यक्ति को छुटकारा मिलना ही असली लोकतंत्र का कार्य है।

1. ग्रामीण ईलाकों में बारिस के समय में नाली निकासी को व्यवस्थित करना चाहिए।
2. ग्रामीण ईलाकों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र होने से जनता को स्वास्थ्य सुविधाऐं प्रदान होगी। जो मध्यप्रदेश शासन का मुख्य दायित्व है। आज प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तो खुले हुए है किन्तु उसमें समय पर उपस्थित दवाईयाँ और डाक्टर का होना भी आवश्यक है, जिससे बिमारी की हालत में व्यक्ति को चिकित्सा सहायता प्राप्त हो सके।
3. कास्तकार द्वारा समय पर श्रमिक को मजदूरी देने के लिए मध्यप्रदेश शासन को सख्ती से कानून का पालन करना चाहिए।
4. बधुआ मजदूरी की प्रथा का अन्त कर स्वतंत्र कार्य प्रणाली को जन्म देना मध्यप्रदेश शासन का मूल कर्त्तव्य है।
5. ग्रामीण जनता को भ्रष्टाचार मुक्त करने में मध्यप्रदेश शासन की अह्म भूमिका है।

निष्कर्ष – ग्रामीण स्तरों में भ्रष्टाचार को रोकने के लिए मध्यप्रदेश शासन के द्वारा मुहिम चलाई जा रही है, जिससे ग्रामीण जनता को किसी भी प्रकार की असुविधाओं का सामना न करना पड़े। एक मानव होने का दायित्व भ्रष्टाचार मुक्त जीवन जीना है। मध्यप्रदेश शासन इन छोटी–छोटी बातों पर अमल करता है। तभी भ्रष्टाचार से मुक्ति सम्भव है। अन्यथा ये गरीब पीसते जायेगें। उन्हें न्याय नहीं मिलेगा। मानव कल्याण और समस्यों के त्वरित निदान हेतु मध्यप्रदेश शासन प्रतिबद्ध है। इन्हीं उद्देश्यों को लेकर यह शोध पत्र तैयार किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. एस. के. कपूर, मानव अधिकार, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद, पंचम संस्करण 2015, पृष्ठ 30
2. राकेश कुमार आर्य, भारतीय राष्ट्र की समस्याएं और उनके समाधान, संजीव प्रकाशन, दरियागंज दिल्ली, 2011, पृष्ठ 25
3. डॉ. हरीश कुमार वैश्य, लोक प्रशासन संकल्पना तथा सिद्धांत, आर्या पब्लिकेशन्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2010, पृष्ठ 70
4. पवन कुमार, लोक प्रशासन सिद्धान्त एवं व्यवहार, वंदना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृष्ठ 150–165
5. जगजीवन राम, भारत में जातिवाद और हरिजन समस्या, राजपाल एण्ड सन्ज़ कश्मीरी गेट, दिल्ली, संस्करण 2006, पृष्ठ 86
6. गिरीश पंकज, मीडिया और भ्रष्टाचार, समन्वय प्रकाशन, गाजियाबाद दिल्ली, प्रथम संस्करण 2015, पृष्ठ 35 एवं 89

****

शिक्षा के अधिकार अधिनियम का क्रियान्वयन

दुर्गेश कुमार त्रिपाठी *

प्रस्तावना – बच्चे किसी भी देश के सर्वोच्च बौद्धिक सम्पदा है। ये वे मानव संसाधन हैं जिनके समग्र विकास के बिना किसी भी समाज का विकास सम्भव नही है। शिक्षा ही वह माध्यम है जिसके द्वारा बच्चों को न केवल अच्छा नागरिक बनाया जा सकता है, बल्कि उनके अन्दर छुपी प्रतिभा को निखारा जा सकता है। वही शिक्षा समाज के मूल समस्याओं के निराकरण का सशक्त माध्यम भी है। एक शिक्षित समाज ही लोकतांत्रिक व्यवस्था को सुदृढ़ आधार प्रदान कर सकता है। इन उद्देश्यों के मद्देनजर शिक्षा के स्तर को उन्नयन करना न केवल राज्य का दायित्व बनता है बल्कि राज्य के लिए अपरिहार्य हो सकता है।

भारतीय संविधान के 86 वें संशोधन द्वारा वर्ष 2002 में अनुच्छेद 21-अ द्वारा शिक्षा के अधिकार को मूल अधिकार माना गया। संविधान क उक्त धारा में निम्नलिखित प्राविधान किया गया है- **'राज्य, 06 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु वाले सभी बालकों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का ऐसी रीति में, जो राज्य विधि द्वारा अवधारित करें, उपलब्ध करेगा।'** संविधान के द्वारा प्रदत्त उक्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए व्यापक स्तर पर विचार-विमर्श के उपरान्त 08 वर्ष बाद बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2010 (Right to Educaiton Act.) लागू हुआ।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम (आर0टी0ई0 एक्ट) एक व्यवस्था परिवर्तन के रूप में आया। इससे यह मान लिया गया है कि सभी बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा राज्य द्वारा प्रदान की जा सकती है। परन्तु इस अधिनियम के क्रियान्वयन में कई बाधाएँ है:-

क्रियान्वयन की समस्या :

1. ड्राप आउट की समस्या – बच्चों को स्कूलों में बनाये रखने का अधिकार, अधिनियम में यद्यपि राज्य सरकार और पंचायतों को दिया गया है। परन्तु अनिवार्य रूप से दुर्भाग्यवश बच्चों को 08 वर्ष तक स्कूल में रोकना राज्य सरकारों के लिए एक कठिन कार्य सिद्ध हुआ है। 07 वर्ष, 08 वर्ष की उम्र में बच्चे स्कूल छोड़कर खेलों में, सड़कों पर या होटल जैसे अन्य स्थानों पर परिसंकटमय नियोजन में संलिप्त हो जाते हैं। स्कूल छोड़ना एक कठिन समस्या है जो कि अधिनियम के क्रियान्वयन में एक प्रमुख बाधा है।

2. शिक्षक-छात्र अनुपात में कमी – शिक्षा के अधिकार अधिनियम के सही तरीके से लागू करने में शिक्षक-छात्र अनुपात में कमी दूसरी महत्वपूर्ण समस्या है जिससे इस अधिनियम का पालन नही हो पा रहा है। जिस अनुपात में प्रतिवर्ष बच्चों की संख्या में वृद्धि होती है, उस अनुपात में शिक्षकों का चयन विद्यालयों में नही होता है। वास्तविकता यह है कि यह शिक्षक -छात्र अनुपात बहुसंख्यक, राज्यों में सदैव कम रहता है क्योंकि भारत के अधिकांश राज्यों में शिक्षकों की भारी कमी है। शिक्षकों पर होने वाला राजकीय व्यय कमजोर अर्थव्यवस्था वाले राज्यों के लिए गले की हड्डी बना हुआ है।

उदाहरण स्वरूप यदि हम देखते है तो हाल में ही उत्तर प्रदेश में शिक्षा मित्रों का भर्ती प्रकरण जिसमें बड़ी संख्या में शिक्षा मित्रों क नियुक्ति सुप्रीम कोर्ट के द्वारा निरस्त कर दिये जाने के कारण एक असहज स्थिति उत्पन्न हो गयी। ऐसे में छात्रों की संख्या के अनुपात में राज्य सरकारों द्वारा पर्याप्त मात्रा में शिक्षकों की समयबद्ध उपलब्धता सुनिश्चित करना एक टेढ़ी खीर साबित हो रही है क्योंकि वित्तिय अनुशासन जैसे तमाम आर्थिक सामाजिक अड़चन भी स्पष्ट परिलक्षित हो रही है।

3. शिक्षकों का प्रशिक्षण – शिक्षकों का प्रशिक्षण की एक कठिन चुनौती है योग्य एवं प्रशिक्षित शिक्ष्ज्ञकों की कमी को समय से पूरा न किये जाने के कारण आर0टी0आई0 अधिनियम के क्रियान्वयन में बाधा आ रही है। इस सम्बन्ध में समस्त पक्षधारकों को नीतियों के बेहतर क्रियान्वयन के सम्बन्ध में प्रयास करना चाहिए।

4. मूलभूत सुविधाओं का विद्यालय में न होना – आर0टी0आई0 अधिनियम में बच्चों के लिए स्कूलों में न्यूनतम मानक अनुसार शौचालय, पेयजल एवं क्लास रूम के प्राविधान किये गये है। अधिकांश विद्यालयों में मानक पूरा न होने के कारण बच्चों स्कूल छोड़ देते है जिससे विद्यालय का अनाकर्षण कहा जाता है। राज्य सरकारों को इस दिशा में मानकों को सही ढंग से पालन करना चाहिए।

5. शैक्षिक सत्र का निर्धारण – अधिनियम के अन्तर्गत शैक्षिक सत्र का निर्धारण राज्य स्तर पर किया जाता है जबकि शैक्षिक सत्र का निर्धारण स्थानीय स्तर पर होना चाहिए जिसमें सांस्कृतिक एवं क्षेत्रीय विविधताओं का जैसे त्योहार, फसली सीजन, प्राकृतिक आपदा आदि का ध्यान रखा जाना चाहिए।

वास्तविक स्थिति – वस्तु स्थिति यह है कि भारत में 6 मिलियन से अधिक बच्चो अभी स्कूल से बाहर है। देश के 92 प्रतिशत सरकारी प्राथमिक विद्यालय आर0टी0आई0 अधिकनयम के मानदण्डों का पालन नही करते हैं। भारत दुनिया के 19 प्रतिशत बच्चों का घर है। इसका अर्थ यह है कि भारत में दुनिया की सबसे बड़ी संख्या में युवा है, जो काफी हद तक फायदेमन्द है। विशेषकर चीन जैसे देशो क तुलना में जो आबादी के बड़े हिस्से से उम्रदराज होने से चिंतित है जिसका अंतिम परिणाम वहां के आर्थिक विकास पर पड़ेगा। भारत में लगभग 1618 भाषाओं और 1942 मातृभाषा बोली जाती है। स्कूल 148 विभिन्न माध्यमों में शिक्षा प्रदान करते हैं।

शिक्षित एवं सशक्त युवा नागरिकों का निर्माण करना भारत के लिए एक कठिन चुनौती है। भारत में दुनिया की अशिक्षित आबादी का एक तिहाई

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) राजकीय महाविद्यालय, ढाढ़ा बुजुर्ग, हाटा, कुशीनगर (उ.प्र.) भारत

हिस्सा निवास करता है, जो चिन्ता की बात है। ऐसा नही है कि साक्षरता में वृद्धि नही हुई है। 2011 की जनगणना में धनात्मक संकेत है।

डकार फ्रेमवर्क (अप्रैल 2000) में यह स्वीकार किया गया है कि दुनिया में सामाजिक आर्थिक रूप से वंचित लोगों में मौलिक शिक्षा तक पहुॅच नही हैं। अर्थात इन पिछड़े लोगों में मूल औपचारिक शिक्षा का आभाव है। अत: डकार फ्रेमर ने यह निर्णय लिया गया था कि 'शिक्षा को मूल अधिकारों का दर्जा मिलना चाहिए। भारत भी डकार फ्रेमर को स्वीकार करता है। इसलिए भारत प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्यो के प्रति दृढ़संकल्पित है।' यूनेस्कों के रिपोर्ट के अनुसार दुनिया भर में स्कूलों से बाहर होने वाले बच्चों में तीन चौथाई बच्चें भारत, बांग्लादेश, पाकिस्तान, इण्डोनेसिया, चीन, ब्राजील और अफ्रीकी देशों सहित 15 देशों में निवास करते हैं। इस गम्भीर परिस्थिति से लड़ना एक चुनौती है। इन्ही उद्देश्यों के सन्दर्भ में नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिनियम लाया गया।

नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा अधिनियम 06 से 14 वर्ष आयु वर्ष के बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का वादा करता है। यह अधिनियम कहता है कि स्कूलों 01 से 03 किमी0 की त्रिज्या के भीतर होना चाहिए। जहां बच्चा रहता हो। दूसरे सभी सहकारी सहायता प्राप्त स्कूलों को आर्थिक रूप से कमजोड़ वर्गो के छात्रों के लिए अपने सीटों का 25प्रतिशत आरक्षित करना होगा। तीसरे सभी सरकारी स्कूलों में स्कूल प्रबन्धन समितियां होंगी। इनमें 50 प्रतिशत महिलाओं का होना अनिवार्य है। राज्य बाल अधिकार आयोग अपने सम्बन्धित राज्यों में आर0टी0आई0 अधिनियम के क्रियान्वयन की निगरानी करेंगे। सभी राज्यों को राज्य शिक्षा सलाहकार निकाय स्थापित करना है।

अधिनियम को सफल बनाने के उपाय – अब प्रश्न है इस अधिनियम को सफल कैसे बनाया जाए – इस सन्दर्भ में विशेष रूप से ग्रामीण इलाकों में माता पिता को शिक्षा के लाभों से अवगत कराने की जरूरत होगी। ताकि वे अपने बच्चों को स्कूल में भेजने के लिए प्रोत्साहित हों। दूसरे देश में सामाजिक परिवर्तन की तरह इसे भी समुदाय के स्तर पर लागू करने की जरूरत है। उम्र की पुरानी मानसिकता में व्यापक परिवर्तन की आवश्यकता है और साथ में ही बालश्रम कानून तथा शिक्षा के अधिकार अधिनियम के बीच जो संघर्ष है उसे दूर करना होगा।

आर0टी0आई0 अधिनियम को प्रभावी ढंग से क्रियान्वित करने के लिए मानव संसाधन विकास मंत्रालय, श्रम मंत्रालय , महिला एवं बाल विकास मंत्रालय, पंचायत राज्य मंत्रालय एवं ग्रामीण विकास मंत्रालय को एक साथ काम करना होगा। इसके साथ ही सरकार को इसके लिए स्पष्ट वित्तिय व्यवस्था करके आत्मनिर्भर बनाने का हरसम्भव प्रयास करना होगा। इन उपरोक्त बिन्दूओं के साथ–साथ सरकार को समय समय पर इसकी सफलता दर की समीक्षा भी करनी होगी।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि किसी भी अधिनियम की सफलता उसके क्रियान्वयन पर निर्भर करती है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम एक अच्छे उद्देश्य की पूर्ति के लिए बनाया गया है परन्तु यह सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक ढ़ांचे के मध्यम लागू किया गया है। जहां पर इन ढ़ांचों क कमियां भी अधिनियम को प्रभावित करती है। वे विगत 08 वर्षों में शिक्षा के अधिकार अधिनियम में कइ सुधार हुये हैं। संघीय व्यवस्था में केन्द्र के पास संसाधनों की प्रचुरता होती है, जबकि अधिकांश राज्य सरकारें कमजोड़ अर्थव्यवस्था से युक्त हैं। अत: केन्द्र सरकार को इस दिशा में सार्थक पहल करनी चाहिए।

भारत में यह अन्तर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। दक्षिण भारत एवं उत्तर पूर्व के राज्यों में साक्षरता दर अधिकतम है जबकि उत्तर भारत के राज्यों में यह दर न्यूनतम है। मानव विकास सूचकांक के अनुसार वर्ष 2017 में भारत विश्व में 131 वीं स्थान पर है। भारत की साक्षरता दर 74 प्रतिशत है जो वैश्विक स्तर पर खराब साक्षरता दर को दर्शाता है। उक्त परिस्थितियों में शिक्षा के स्तर को बढ़ाये जाने हेतु बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2010 को ठोस कार्यान्वयन हेतु बच्चों के भविष्य को ध्यान में रखते हुए राज्य के सभी पक्षकारों एवं निजी क्षेत्र को भी प्रयास करना होगा।तभी संविधान के अनुच्छेद 21–अ की भावना का सम्मान होगा। यह अधिनियम उचित तरीके से लागू हो जाता है तो विकास की धारा में पिछड़े हुये छात्रों को अत्यन्त लाभ होगा परन्तु यह एक अजीब विडम्बना है कि राज्य इस महत्वाकांक्षी अधिनियम के वित्तीय बोझ पर चिन्ता व्यक्त करते हैं। फिर भी सरकार हर साल प्रमुख सब्सिडी की पेशकस करके कार्पोरेट क्षेत्र को प्रोत्साहित कर रही है। कहने के लिए देश में शिक्षा का अधिकार बनाने के लिए पर्याप्त धनराशि नहीं है परन्तु यह एक उपहास है। यह स्पष्ट रूप से उन फण्डों की कमी नही है जो अधिनियम की क्रियान्वयन में बाधा है बल्कि राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारत का संविधान : सुभाष कश्यप
2. आर0टी0ई0 एक्ट : 2010
3. द हिन्दू में प्रकाशित श्रीमती मनिन्दर कौर का लेख दिनांक 12.01.2018
4. भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्यायें : रमन बिहारी लाल

****

Risk Management as a Business Concern

Manish Jain*

Abstract - Universal risk guideline began in the 1980's and cash organizations made inward hazard the board models and value estimation to shield themselves from unexpected risks and gather administrative capital. What's more, chance administration has turned out to be urgent, incorporated hazard the executives has been actualized, and the main hazard official positions have been created. Notwithstanding, the financial emergency started in 2007 couldn't be averted by these laws, administration standards and hazard the board procedures. Presentation Snider (1956) noticed that no hazard the executives books were accessible right now and that no universities were offering classes in that field. More and Hedges (1963) and Williams and Heins (1964) discharged the initial two academic books. Their examination secured extreme hazard the board without joining the numerous kinds of corporate monetary hazard. Correspondingly, science hazard the executives substance were delivered by experts. Innovative inclusion is overseen by banks and insurance agencies under operational hazard covers.

Keywords - monetary, risk, organization, swaps, business.

Introduction - The utilization of market protection to shield people and organizations from innumerable chance misfortunes has been connected to risk authority for quite a while (Harrington and Niehaus 2003). In the mid-1950s, the answers for fitting protection showed up as new sorts of hazard the executives, while various types of money were very expensive and inadequate. Various organization perils were costly or uninsurable. Unexpected booking work was built up during the 1960s and numerous hazard anticipation or self-assurance activities and self-protection instruments were set up against specific losses. Moreover, during this time organizations had assurance and inclusion of business-related sicknesses and mishaps [1].

The utilization of subordinates as apparatuses for overseeing safeguarded and non-safe dangers began during the 1970s and was quick through the 1980s. Organizations began to think about cash the executives or portfolio the board during the 1980s as well. Budgetary hazard the executives for a few organizations has supplemented sheer hazard the board. During the 1980s, money related establishments, including banks and protection firms, expanded their market hazard and the tasks of advance hazard the executives. During the 1990s there was operational hazard the executives and liquidity chance administration. Also, global hazard guideline began during the 1980s. So as to forestall unusual perils and scale down administrative capital, money related establishments made internal hazard the board models and capital estimation formulae. At a similar minute, hazard the executives administration has turned out to be critical, chance administration fused and the situation of Chief Risk Manager (CRO) has been set up. In 2002 Sarbanes-Oxley Regulation set down administration rules for organizations in the United States was executed in the repercussions of various outrages and insolvencies emerging from awful risk authority[2].

In any case, the money related emergency that began in 2007 was not averted by these laws, guidelines and hazard the board methods.[3] It isn't really incapable hazard guideline and administration laws yet their execution and usage. Chiefs habitually skirt guideline and guidelines over various markets. It's outstanding. Be that as it may, in the years paving the way to the monetary emergency, it appears that the deviation exercises had turned out to be significantly more pervasive, saw or clearly reprimand by the administrative specialists. Self-security activities have additionally turned out to be extremely huge in protection and hazard the board. The likelihood of misfortunes or costs before they happen impacts this kind of action[4]. The contingent progression of misfortunes can likewise be influenced. The most common kind of self-protection is the mishap bar. Safety measure is a sort of self-security for assumed however vague occasions that have obscure probabilities and financial ramifications. One such event is a pandemic (Courbage, and so forth.). Every single square activity in the security and bar measure a hazard the board segment. The antiquated position of safety net providers was truly tested in us during the 1980s, quite over the span of the obligation emergency, with excessive premiums and fractional hazard inclusion.

During this century, elective types of security from various dangers were created, for instance hostage one's

*Research Scholar (Management) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA

hazard maintenance gatherings organizations in the social insurance industry or zone that are engaged with regular risk assurance associations and limited protection chance conveyance after some time for a solitary introduction unit. Crockford wrote in 1982: "Expressibility remains the precondition that unadulterated and theoretical dangers ought to be taken care of by an organization's completely unmistakable highlights, in spite of the fact that hypothesis may contend that these capacities are overseen as a certain something. Thusly, for sensible purposes hazard the board is as yet centered around unadulterated hazard."

The essential ascent in the worth variances recorded above caused this insurgency. Fixed-cash equalities in explicit evaporated and item cost instability expanded fundamentally. There was additionally significantly more risk of a catastrophic event. Truly, organizations utilized monetary records or genuine tasks to secure themselves against these money perils[5]. Subordinates have been utilized increasingly more to upgrade adaptability or to diminish the cost of customary supporting tasks. Territory unit subordinates understandings to ensure the holder against specific perils. The estimation of the agreement depends on the qualities and instability of the fundamental understandings or on its property or worth records. Future understandings, decisions, future and swaps are best known items.

During the mid 1990s, hazard the board turned into a business undertaking. The principle center choices in the square proportion of organization initiative arrangements (and supervision) that the governing body by and by builds up. The review board of trustees regularly controls those choices, regardless of whether some major money related foundations have set up hazard the executives advisory groups. It emerged that he was the Chief Risk Officer or CRO. In the start of the 2000s the real defaults inside the late 1990s and the Enron liquidation in 2001 turned into a significant issue.

Basel II has actualized stricter financial guidelines. The Agreement propelled crisp rules for operational hazard, in connection to changing the credit chance administration laws. By the by, the administrators have next to no referenced about the hazard the board of different administration and mutual funds, particularly benefits reserves. Québec was similarly careless: in the last budgetary emergency, the Caisse de dépôt et arrangement du Québec lost more than $30 billion, including a lessening of $10 billion, because of fatal cash hazard dealing with that equivalent to the maltreatment of this organized thing, with an aortic aneurysm advance score. Alan Greenspan, President of the Federal Reserve, was particularly careless: he frequently talked conflictingly on the advantages and dangers identified with the utilization of subordinates and on the capacity to go for broke in a viable manner on the monetary market moving along without any more guideline. Until real or controlled checks of the counterparty risk, over - the-counter products multiplied expressly. So as to disguise various dangers, monetary supporting item was made. Credit chance (80% of banks hazard including default chance), showcase chance (5%), operational hazard (15%) and liquidity chance (not very much estimated and typically incorporated into yield among private and open liabilities), are the essential four threats for banks.

Just in 1988 was there a credit hazard lined; years after the fact, 1996 was a market hazard considered. It before long ended up apparent that administrative treatment of market peril (self-assertive capital) was adjusted to the administration of this hazard by banks ' portfolios. As a result, the administrative specialists approved banks to utilize internal market hazard models. In 2004 alone under city II the portfolio treatment of credit hazard began. The goal of Corporate Risk Management is to deliver a reference structure to oversee hazard and equivocalness for organizations. Current Definition of corporate hazard the executives In practically all organizations ' cash and business tasks, chance square estimates endowments. Hazard recognizable proof, assessment and the executive's procedure are part of the vital development process for organizations, and the Board of Directors should be planned and booked at the best level.

An incorporated methodology to chance administration must survey, manage and track all risks and their reliance on the business. A blend of the likelihood or recurrence of a case and its normally antagonistic impacts is commonly a sheer danger. The instability of the results can be evaluated, yet more noteworthy portion times are regularly required. Vulnerability is less precise as it is regularly obscure how likely a dubious occasion is to result. We would allude in this circumstance to prudent instead of preventive measures to shield us from vulnerability. Last hazard incorporates completing crafty activities connected to future risks which could prompt gainful or negative results.

References :-

1. Blanchard, D., and G. Dionne, 2004, The Case for Independent Risk Management Committees, Risk, 17: S19-S21
2. Courbage, C., B. Rey-Fournier, and N. Treich, Forthcoming, Prevention and Precaution, in: G. Dionne, ed., Handbook of Insurance, 2nd edition (New York: Springer).
3. Crockford, G. N., 1982, The Bibliography and History of Risk Management: Some Preliminary Observations, The Geneva Papers on Risk and Insurance, 7:169-179.
4. Crouhy, M., R. Mark, and D. Galai, 2000, Risk Management (New York: McGraw-Hill).
5. Cummins, J. D., and L. R. Freifelder, 1978, A Comparat -ive Analysis of Alternative Maximum Probable Yearly Aggregate Loss Estimators, Journal of Risk and Insurance, 45: 27-52.

****

श्रवण हास के कारण बालिकाओं की बुद्धि-लब्धि स्तर पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन (रीवा जिले के संदर्भ में)

जयलक्ष्मी मौंपाची* डॉ. आभा गोयल**

शोध सारांश – श्रवण हास के ग्रामीण तथा शहरी बालिकाओं की बुद्धि लब्धि के बीच सार्थकता का अध्ययन किया। जिसमें हमने 100 ग्रामीण तथा 100 शहरी बालिकाओं का चयन याद्धिच्छिक रूप से किया ग्रामीण तथा शहरी बालिकाओं की उम्र हमने 6 से 12 वर्ष की ली गई। सेगुइन फार्म बोर्ड स्केल का उपयोग बुद्धि लब्धि ज्ञात करने के लिए किया। हमने इसमें श्रवण हास की 100 शहरी बालिका तथा श्रवण हास की 100 ग्रामीण बालिकाओं के बीच सार्थकता का अध्ययन किया, जिसका परिणाम हमें इस प्रकार प्राप्त हुआ, ग्रामीण बालिका M=69.23 तथा SD=8.34तथा शहरी बालिका का M=74.07 तथा SD=8.63 तथा SE_D =1.20 t=4.03 P = <0.001पाया गया। आगे इसमें हमने श्रवण हास की ग्रामीण तथा शहरी बालिकाओं की बुद्धि लब्धि तथा श्रवण हास के विभिन्न स्तरों (रेन्ज ऑफ डेसिबल)के बीच सहसंबंध का अध्ययन किया, जिसका परिणाम (बेसलाईन) ग्रामीण बालिका 0.85 बेसलाईन शहरी बालिका 0.81 'छ' माह के बाद ग्रामीण बालिका का IQ - db रेंज का स्तर 0.66 तथा शहरी बालिका का 0.61 तथा 12 महीने बाद IQ - dbके रेन्ज स्तर ग्रामीण बालिका 0.44 तथा शहरी बालिका का 0.39 का सहसंबंध पाया गया।

प्रस्तावना – विकास एक सतत् प्रक्रिया है जो कि मानव जीवन के गर्भाधारण से जीवन के अन्त अर्थात मृत्यु तक चलती रहती है। आयु बढ़ने के साथ-साथ बालक एवं बालिकाओं का शारीरिक मानसिक संवेगात्मक तथा सामाजिक विकास होता है। इस शोध कार्य में श्रवण हास से बाल्यावस्था के 6 वर्ष 12 वर्ष के मध्य से बालिकाओं के मानसिक विकास (बुद्धि लब्धि स्तर) पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया गया है। श्रवण हास में पूर्ण रूप से बहरापन को शामिल नहीं किया गया है। 30% के ऊपर को श्रवण हास माना जाता है। श्रवण हास तीन प्रकार प्रवाहकीय श्रवण हास, संवेंदी स्नायविक श्रवण हास एवं मिश्रित श्रवण हास है। प्योरटोन आडियोमेट्री मशीन के द्वारा श्रवण हास के स्तर का पता लगाया जाता हैं।

विलियम स्टेम (1914) के अनुसार – नई परिस्थितियों में समायोजन की योग्यता ही बुद्धि हैं।

टरमन (1921) के अनुसार 'अमूर्त चिन्तन की योग्यता ही बुद्धि है।'

शोध साहित्य का सर्वेक्षण :

1. **डेल एल जॉनसन, पॉल आर भोखी, मैरी जे ओवेन, कनस्टेस की बाल्दीन (1986)** ने अपने अध्ययन में पाया कि लंबे समय के मिडल ईयर इफ्युजन (Middle ear effusion) विशेषकर 6 से 12 महीने के 3 वर्ष के बच्चो में संज्ञानात्मक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है तथा 5 या 7 साल के उम्र के बच्चों में कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. **बेलिंजर स्टरल्स एण्ड नीडलमैन (1992)** का तर्क है कि बच्चों के खून में बहुत कम सीसा स्तर बौद्धिक एवं शैक्षिक कार्यो पर गंभीर परिणाम देते हैं।
3. **कार्ल सी0 क्रान्डेल, जोसेफ जे स्माल्डिनो (2000)** ने अपने अध्ययन में परीक्षण किया कि कई ध्वनिकी चर (Acoustics Variables) जैसे, शोर, गूंज, वक्ता-श्रोता दूरी कक्षा में भाषण बोध पर हानिकारक प्रभाव डाल सकता है। यह अध्ययन सामान्य श्रवण एवं श्रवण हास वाले बच्चे दोनों के भाषण बोध योग्यताओं पर इन ध्वनिकी चर के प्रभावों का परीक्षण करता है। अंत में, अध्ययन शैक्षणिक संस्थाओं में बच्चों के लिए उपर्युक्त ध्वनिकी मापदण्ड का सुझाव दिया हैं।

उद्देश्य :

1. श्रवण हास के ग्रामीण तथा शहरी बालिकाओं की बुद्धि लब्धि के बीच सार्थकता का अध्ययन करना।
2. श्रवण हास के ग्रामीण तथा शहरी बालिकाओं की बुद्धि लब्धि तथा श्रवण हास (डेसिबल) के विभिन्न स्तरों के बीच सहसंबंध का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

1. श्रवण हास की ग्रामीण तथा शहरी बालिकाओं की बुद्धि लब्धि के के बीच सार्थक अन्तर होगा।
2. श्रवण हास के ग्रामीण तथा शहरी बालिकाओं की बुद्धि लब्धि तथा श्रवण हास (डेसिबल) के विभिन्न स्तरों के बीच सकारात्मक सहसंबंध होगा।

प्रयोज्य – श्रवण हास की 100 ग्रामीण बालिकाओं तथा 100 शहरी बालिकाओं का चयन प्रत्यक्ष रूप से किया गया, ग्रामीण व शहरी बालिकाओं की उम्र 6-12 वर्ष की ली गयी है।

उपकरण – सेंगुइन फार्म बोर्ड स्केल का उपयोग ग्रामीण तथा शहरी बालिकाओं की बुद्धि लब्धि ज्ञात करने के लिए किया गया है।

कार्यविधि – श्रवण हास के ग्रामीण व शहरी बालिकाओं का चयन कर उनकी बुद्धि लब्धि ज्ञात किया गया बुद्धि लब्धि ज्ञात करने के लिए सेंगुइन फार्म बोर्ड स्केल का उपयोग किया गया। ग्रामीण श्रवण हास की 100 बालिका तथा शहरी श्रवण हास की 100 बालिकाओं की बुद्धि लब्धि के बीच सार्थकता को देखा, आगे हमने इसमें बालिकाओं की बुद्धि लब्धि तथा श्रवण हास के विभिन्न स्तरों का श्रवण यंत्र लगाकर उपचार करने के उपरान्त किया। इसमें हमने इन्हें 3 महीने 6 महीने तथा 12 महीने की उपचारिक

* शोधार्थी (गृहविज्ञान) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

प्रशिक्षण दिया।

परिणाम :

सारणी – 1 : ग्रामीण बालिका तथा शहरी बालिका की बुद्धि लब्धि का माध्यमान

	N	M	S.D.	SE_D	T	p
ग्रामीण बालिका	100	69.23	8.34	1.20	4.03	<0.001
शहरी बालिका	100	74.07	8.63			

सारणी – 2 : श्रवण हास की ग्रामीण बालिका व शहरी बालिका के श्रवण हास(डेसिबल) के स्तरों के बीच सहसंबंध

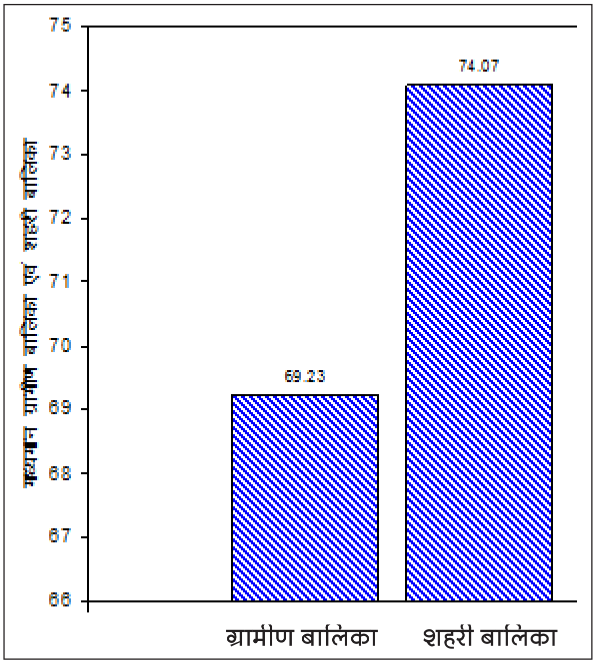

	ग्रामीण बालिका के IQ-db Rang का स्तर	शहरी बालिका के खट–वल ठरसि का स्तर
बेसलाइन	0.85	0.81
छ: महीने बाद	0.66	0.61
12 महीने बाद	0.44	0.39

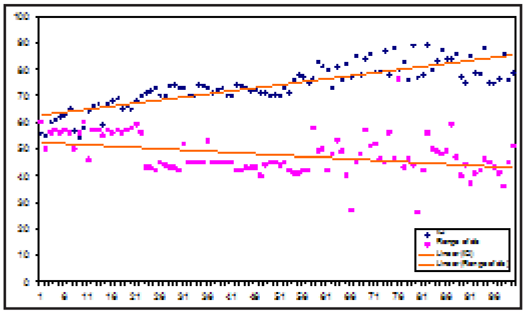

बेसलाइन श्रवण हास के शहरी बालिका की बुद्धि लब्धि (IQ) तथा श्रवण हास के स्तर (Range of db) **के मध्य सहसंबंध**

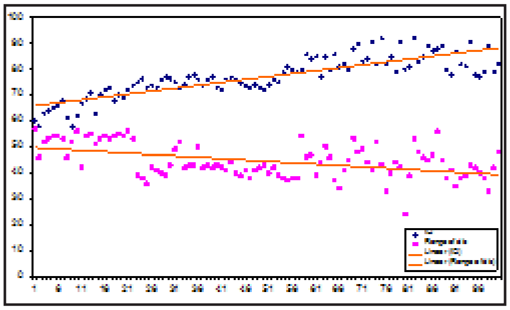

छ: महीने बाद श्रवण हास की शहरी बालिका बुद्धि लब्धि (IQ) तथा श्रवण हास के स्तर (Range of db) **के मध्य सहसंबंध**

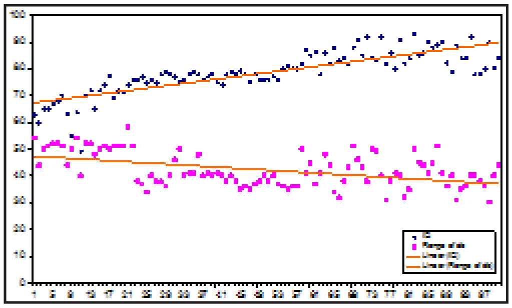

बारह महीने बाद श्रवण हास की शहरी बालिका बुद्धि लब्धि (IQ) तथा श्रवण हास के स्तर (Range of db) **के मध्य सहसंबंध**

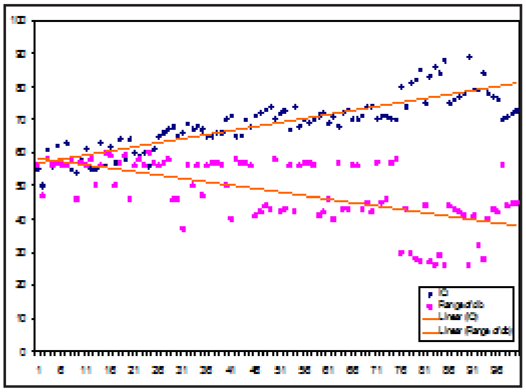

बेसलाइन श्रवण हास के ग्रामीण बालिका की बुद्धि लब्धि (IQ) तथा श्रवण हास के स्तर (Range of db) **के मध्य सहसंबंध**

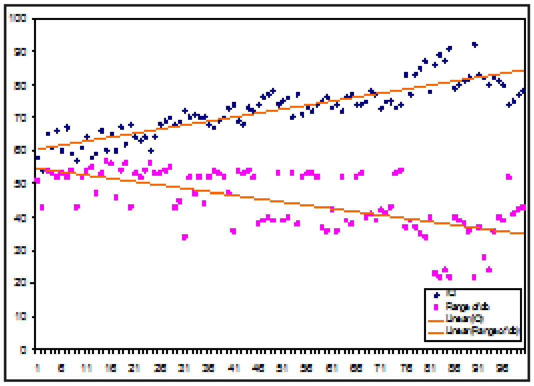

छ: महीने बाद श्रवण हास की ग्रामीण बालिका बुद्धि लब्धि (IQ) तथा श्रवण हास के स्तर (Range of db) **के मध्य सहसंबंध**

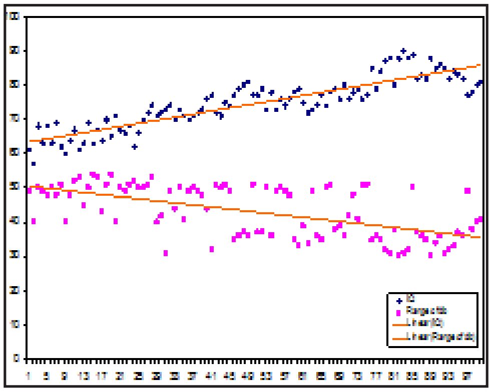

बारह महीने बाद श्रवण हास की ग्रामीण बालिका बुद्धि लब्धि (IQ) तथा श्रवण हास के स्तर (Range of db) के मध्य सहसंबंध

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शारगोडस्की जे, क्यूरन एसजी, करहन जीसी, एवी आरए अमेरिकी किशोरों में सुनवाई हानि की व्यापकता में परिवर्तन, जामा, 2010, 304 (7) 772.778
2. ली डीजे, गोमेज-मारिन ओ, ली एचएम, बच्चों में एकतरफा सुनवाई हानि की व्यापकता- राष्ट्रीय स्वास्थ्य और पोषण परीक्षा सर्वेक्षण II और डिस्पैनिक स्वास्थ्य और पोषण परीक्षा सर्वेक्षण। कान और श्रवण 1998, 19(4):3297332
3. बेस एफएच, थारपे एएम, बच्चों में एकतरफा सुनवाई हानि, बाल रोग, 1984, 74 (2):206.216

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान देश के निर्माण व उत्थान में डॉ. केशवराव बलिराम हेडगेवार का योगदान

विजिया जायसवाल* डॉ. रविंद्र सिंह **

शोध सारांश – राष्ट्र की सर्वसामान्य जनता को श्रेष्ठ पुरूषों के जीवन से ही मार्गदर्शन प्राप्त होता है। अपने जीवन को उचित दिशा में मोडकर, अपनी समग्र शक्ति को राष्ट्रसेवा में लगाने की उनकी प्रवृत्ति, उनके ह्रदयों के सुप्तभाव जाग्रत होकर समाज के प्रति अपने कर्तव्यों को वे पहचान सके, इसके लिए उन्हें निरन्तर अपने लक्ष्य का स्मरण दिलाने वाला आदर्श आवश्यक होता है। यह आदर्श समाज के श्रेष्ठ पुरूषों के जीवन से ही प्राप्त होता है। विशुद्ध राष्ट्रभाव से अपने सत्व का स्मरण रखते हुये अपनी परम्परा का उज्जवल स्वरूप अपने जीवन में उतारने वाले विरले ही होते है। डॉ. कैशवराव बलिराम हेडगेवार का जीवन अत्यन्त सीधा सादा पर उतना ही भव्य था अव्यवस्थित हिन्दु समाज को सुसगंठित अंग्रेजी राज्य की बेडियों को तोडकर स्वतन्त्र जीवन शिक्षा देने वाला कार्य होना चाहिए यह उनकी धारण रही। डॉ. हेडगेवार के स्वतन्त्रता पाने के विषय में विचार कहीं अधिक तेजस्वर थे। उनका मानना था कि पराधीनता के जहरीले वायुमण्डल में राष्ट्रीय संस्कृति की रक्षा या सवंर्धन असम्भव ही रहता है।

प्रस्तावना – 'अत्याचार और अनीति तथा फुट डालो और राज्य करो के द्वारा अग्रेजों, पुर्तगाली, फ्रांसीसी इत्यादि के आगमन से लूट – खसोट की भावना और प्रबल होती चली गई। अग्रेंजो ने अपना स्वार्थ साधन करते हुए भारत को मात्र एक चरागाह समझा, सोने की चिडिया समझा और मन्तव्य पूरे किये ।'[1] जिस प्रकार अन्धकार सदैव नही रह सकता, पश्चात् प्रभात का आना निश्चित होता है। ठीक उसी प्रकार अत्याचार अत्यन्त दुर्दमनीय नीतियॉ भी सदैव नही टिक पाती। जागरण का उद्घोष होने पर जन– जन के मन में नवीन आशाओं का सुखद प्रभात उदित होने लगता है।

डॉ. हेडगेवार का पर्दापण इसी दौरान हुआ। उनके मन में यही प्रश्न बना रहता कि आखिर आज हम गुलाम बने तो क्यों ?

डॉ. हेडगेवार जीवन परिचय – महाराष्ट्र प्रान्त के नागपुर महानगर में रहने वाले कर्मनिष्ठ बलिराम हेडगेवार के यहॉ रेवती माता के गर्भ से चैत्र शुक्ल वर्ष प्रतिप्रदा प्रात: कालीन 01 अप्रेल 1889 ई. में पुत्र उत्पन हुआ जिसका नाम केशव रखा गया। ये बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि के कारण साहसी मनोवृत्ति के थे। उन्होंने सन् 1925 के विश्व विख्यात काकोरी काण्ड में केशव चक्रवर्ती के नाम से भाग लिया। 27 सितम्बर 1925 को पढने वाले कुछ छात्रों को साथ लेकर सरदार मोहित के मकान में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की। सन् 1930 में गॉधीजी द्वारा गुजरात में नमक सत्याग्रह प्रारम्भ किया जिसमें उन्हें नौ मास की सजा सुनायी गई।

स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान देश के निर्माण व उत्थान में डॉ. हेडगेवार का योगदान – स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान डॉ. हेडगेवार ने निर्भयता से शुद्ध स्वतन्त्रता की कल्पना लोगों के सम्मुख रखना प्रारम्भ की। ये कांग्रेस के अधिवेशन के कुछ दिनों पहले उन्होने व उनके मित्रों ने नागपुर के 'व्यंकटेश' नाट्यग्रह में एक सभा करके विशुद्ध स्वातन्त्रय ही हमारा उद्देश्य है, इस बात की घोषणा करने वाला प्रस्ताव स्वीकृत किया।[2] सन् 1921 में महात्मा गॉधी ने अग्रेंजी शासन के विरूद्ध एक देशव्यापी गॉव – गॉव में घूमकर अपने ओजस्वी भाषणों से सहस्त्रों लोगो के ह्रदयों में देश की स्वाधीनता के लिए प्रेरणा जगा दी और लोगो को स्वतन्त्रता संग्राम की ओर उन्मुख किया। स्वतन्त्र रूप से इन्होंने बोरी, वर्धा, भडार देवली इत्यादि स्थानों पर भाषण दिये। मुम्बई और उस के महानगर के उपनगरों में तो इनके व्याख्यान भी हुए। युवा छात्रों एवं नागरिकों से व्यक्तिगत मेल– मुलाकात करने की अपनी एक खास शैली के अनुसार अपने स्वतन्त्रता के विचारों का प्रभावक्षेत्र बढाने में भी दिन –रात लगे ही रहते थे।[3]

नागपुर में नशाबंदी को असहयोग कार्यक्रमों में प्रमुखता दी गई थी। सन् 1921 के जनवरी– फरवरी महीनों में आयोजित सभाओं में डॉ. हेडगेवार का मुख्य विषय यही होता था। उनकी योजना मध्यप्रान्त की सरकार के राजस्व पर आघात की थी। न्यायालय द्वारा उनको नोटिस भेजा गया। जिला अधीक्षक सरोली जेम्स इरविन के हस्ताक्षर से दिए गए नोटिस में कहा गया – 'मैं आप पर सभा करने पर प्रतिबंद लगाता हूँ'। लेकिन डॉ. हेडगेवार ने सरकारी आदेश का खुल्लमखुल्ला उल्लघन किया। डॉ. हेडगेवार पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया न्यायाधीश ने उन्हें एक वर्ष के सश्रम करावास की सजा दी। 11 जुलाई 1922 को डॉ. हेडगेवार अपनी सजा पूरी करके बाहर आए।[4] एक वर्ष जेल में रहने के बाद डॉ. हेडगेवार पुन: स्वतन्त्रता संघर्ष में सक्रिय हुए। वर्ष 1924 में उन्होने समाचार पत्र स्वातन्त्रय का प्रकाशन शुरू किया।[5]

साईमन विरोध – मध्यप्रान्त की काग्रेंस में डॉ. हेडगेवार को साईमन विरोधी आन्दोलन के लिए प्रचार करने एवं लोगो को जाग्रत करने का कार्य सौपा गया था जिसे उन्होने बडी ही जिम्मेदारी से निभाया।

जंगल सत्याग्रह – 9 अप्रेल 1930 को प्रारम्भ हुआ। जंगल सत्याग्रह द्वारा प्रान्तीय सरकार के राजस्व को निशाना बनाया गया। इस आन्दोलन में डॉ. हेडगेवार की महत्वपूर्ण भूमिका रही उनके भाषण से स्पष्ट हो जाता है – 'इस भ्रम में नहीं रहना चाहिए कि वर्तमान आन्दोलन स्वतन्त्रता प्राप्ति की अन्तिम लडाई है। इस आन्दोलन के बाद निर्णायक लडाई होगी और हमें सर्वस्व त्यागकर इसमें कुदने के लिए तैयार रहना चाहिए।'[6]

*शोधार्थी (इतिहास) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

मुल्यांकन – स्वतन्त्रता की लडाई भारतीय राष्ट्र के अस्तित्व एवं अस्मिता का प्रश्न है। स्वाधीनता आन्दोलनों में शामिल होकर वहाँ के लोग एवं उनकी कार्यपद्धति करीब से परखने और प्रचलित प्रभा के अनुसार आम सभाएँ लेकर जनजागरण करने का प्रयास डॉ. हेडगेवार ने पूरी हार्दिकता से किया। उन्होने दासता से स्वातन्त्र्य की ओर, निद्रा से जागृति की ओर , दुबर्लता से दिग्विजयी सामर्थ की और सम्पूर्ण हिन्दू समाज को ले जाने का कार्य किया। उन्होने भारतीय स्वतन्त्रता के प्रयासों के साथ – साथ भारत की परतंत्रता के कारणों का भी सुक्ष्म विश्लेषण किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. खेर रामस्वरूप , संघ संस्थापक डॉ हेडगेवार पृ. 2
2. पालकर ना.ह. डॉ. हेडगेवार चरित्र लोकहित प्रकाशन लखनउ पृ. 94
3. हमारे डाक्टर जी, पृ. 21
4. डॉ. करन्दीकर,तीन सरसंघ चालक पृ. 81
5. महाराष्ट्र, 2 फरवरी 1921 पृ. 6
6. महाराष्ट्र, 20 अप्रेल 1921 पृ. 7

****

भारत में स्थानीय शासन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं वर्तमान स्वरूप

डॉ.कान्ता अलावा* नगारची जामरे**

प्रस्तावना – भारत में स्थानीय शासन या पंचायत प्रणाली, भारतीयों के लिए कोई नई संकल्पना नही है। यह तो अनंत काल से चली आ रही एक जीवंत व्यवस्था है। जिसे भारतीयों ने काल दर काल संजोया, संवर्द्धन किया और आज भी उसके परिवर्तित स्वरूप के साथ इस अद्धितीय, बहुमूल्य व्यवस्था को अपनाया हुआ है। चूँकि प्राचीन काल में भारत में पंचायते तो थी किन्तु उनका स्वरूप लोकतांत्रिक नही थी। बहुधा गाँव की देखरेख, आपसी विवादो का निपटारा तथा ऐसे अनेक कार्य प्राचीन, पंचायतों के द्वारा किये जाते थे, जिसका ताल्लुक मुख्यत: ग्राम विकास एवं लोक कल्याण होता था। प्राय: प्राचीन काल में गाँव के मुखिया को ग्रामिणी कहते थे,[1] जो कि गाँव के सबसे वयोवृद्ध व्यक्ति हुआ करते थे। यद्यपि चौथी शताब्दि ई.पू. आचार्य कौटिल्य ने भी छोटे-छोटे नगर राज्यों की चर्चा अपने प्रसिद्ध ग्रंथ अर्थशास्त्र में की थी। प्राचीन काल में पंचायतों को न तो कोई संवैधानिक दर्जा प्राप्त था और न ही किसी राजा का संरक्षण। पंचायते भारत में सतत् विकास का ही परिणाम है, जो कि आज भी अपने परिवर्तित एवं संवर्द्धित स्वरूप में विद्यमान है।

यद्यपि स्थानीय शासन का मूल अर्थ स्थानीय जनता का जनता के लिए स्थानीय जनता द्वारा शासन अर्थात शासन करने की ऐसी व्यवस्था जो स्वयं के द्वारा संचालित एवं स्थापित होती है। स्थानीय स्वशासन, स्थानीय जनता तथा राज्य शासन के बीच कार्यो विचारों और भावनाओं के सम्प्रेषण का महत्वपूर्ण माध्यम है। जो स्थानीय जनो की इच्छाओं एवं आकांक्षाओं को मुखरित करता है। तथापि राजनीति कोश के अनुसार 'स्थानीय स्वशासन का अभिप्राय वह प्रथा है जिसके द्वारा नगर कस्बो और गाँवों में निवास करने वाली जनता को अपनी निर्वाचित संस्थाओं द्वारा अपना शासन आप करने का अधिकार दिया जाता है। जहाँ तक स्थानीय मामलों का संबंध होता है, जनता उनका अपनी निर्वाचित संस्थाओं द्वारा स्वत: प्रबंध कर लेती है।'[2] अत: यह स्पष्ट होता है कि पंचायते भारत में प्राचीन काल से लेकर अब तक स्थानीय जनता की भावनाओं का केन्द्र रहा है, जो आस्थाएँ प्राचीन काल में लोगो की अपनी स्थानीय संस्था के प्रति होती थी वही आस्था आज भी ग्रामीणजनों में पंचायतों के प्रति विद्यमान है। जिसे हम भारत का अति प्राचीन धरोहर कह सकते हैं।

स्थानीय शासन का ऐतिहासिक विकास – भारत में ग्राम पंचायतों की परम्परा बहुत पुरानी है। प्राचीन भारत में ग्राम पंचायते समस्त स्थानीय मामलो का चाहे वे सामाजिक हो गया आर्थिक, नैतिक हो या न्यायिक जैसे लोकहित से जुड़े कार्यो का प्रबंध करती थी। यद्यपि प्राचीन समय में पंचायतों का स्वरूप पृथक-पृथक प्रकार का रहा है। 'पंचायते जिन्हें प्राय: ग्रामीण सरकारे कहा जाता था, बड़ी पुरातन संस्थाएँ थी और लघु गणराज्य थी। उनका ग्रामीण जीवन के विभिन्न क्षेत्रो पर अधिकार और नियंत्रण हुआ करता था।'3 पंचायते भारत की जीवन पद्धति का एक उदाहरण है। जो सहजरूप में भारत के ग्रामीण जीवन में शताब्दियों से व्यवहारित है। जिसे न तो किसी राजा ने संरक्षण दिया और न ही इसे प्राचीन काल में कोई संवैधानिक शक्तियाँ प्राप्त हुई। भारत में पंचायती राज व्यवस्था का इतिहास उतना ही प्राचीन है, जितना की मानव जीवन का अस्तित्व। आज भी भारतीय संस्कृति का मूल तत्व सह-जीवन एवं सहअस्तित्व पर आधारित है। यद्यपि पंचायत राज व्यवस्था भी सहजीवन की मान्यताओं पर आधारित है। प्राचीन भारतीय साहित्यों मे भी स्थानीय स्वशासन की संगठित व्यवस्था के कुछ संदर्भ यंत्र-तत्र मिलते है। उसे समय में 'ग्राम' प्रशासन की सबसे छोटी इकाई थी। उसका मुखिया 'ग्रामिणी' कहलाता था।[4] ग्रामिणी ग्राम के श्रेष्ठ एवं वयोवृद्ध लोगो से सलाह कर अपना कार्य करता था उनके निर्णय अन्तत: प्रजाजन को मान्य होते थे। आचार्य कौटिल्य ने भी अपनी रचनाओं एवं नगर राज्य की संरचना प्रस्तुत करते हुए उन्होंने स्पष्ट किया कि 'प्रत्येक जनपद मे कम से कम 100 ग्राम और अधिकतम 500 घर होने चाहिए तथा वहाँ निवासरत लोगों के आवास, कार्य एवं भोजन की उचित व्यवस्था होनी चाहिए तथा वहाँ निवासरत लोगों के आवास, कार्य एवं भोजन की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।'[5] इस प्रकार प्राचीन भारतीय ग्रंथो एवं चिंतको की अमूल्य कृतियों में स्थानीय स्वशासन/ पंचायती व्यवस्था का उल्लेख मिलता है। विभिन्न पुरातन ग्रंथो के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में ग्रामों का नगरों की अपेक्षा अधिक महत्व था और यातायात की कठिनाइयों के कारण प्रत्येक ग्राम स्वावलम्बी व आत्मनिर्भर हुआ करते थे। भूमि का बटवारा, सिंचाई के साधनों का प्रबंध, चारागाहो की देखभाल, मेले तथा उत्वसों का आयोजन तथा ग्राम की मुलभूत समस्याओं एवं लोगों के आपसी झगड़ो का फैसला जैसे अनेक कार्य ग्राम के लोग स्वयं ही कर लेते थे। ग्राम की रक्षा एवं मालगुजारी वसूल करना भी ग्रामीण एवं पंचायत के प्रमुख कार्य हुआ करते थे। इसी प्रकार भारतीय ग्रामों ने वैदिक काल में भी स्वायत्तता का उपयोग किया। तथा बाद के कालखण्डों जिनमें बड़े शासको ने साम्राज्यशाही सत्ता स्थापित करने के अनेकों प्रयास किये किन्तु उनसे भी गाँवों की स्थिति अव्यवस्थित नहीं हुई। मौर्य शासको ने भी, जिन्होंने शासन की छोटी-छोटी बातो एवं कार्यों में हस्तक्षेप किया, किन्तु उनका स्वरूप ज्यों का त्यों बना रहा और वे प्रशासनिक एवं सामाजिक व्यवस्था के अंग रहे है। यद्यपि स्थानीय सरकार को मानव की मनोवैज्ञानिक और व्यवहारिक आवश्यकता के रूप में रेखांकित किया गया है। मानव की सदैव यह इच्छा रही है कि जो भी सरकार हो वह उसके स्वयं के द्वारा शासित

* विभागाध्यक्ष (राजनीति विज्ञान) श.भी.ना. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

एवं अच्छी सरकार होनी चाहिए। मानव प्रकृति से स्वकेन्द्रित होता है। वह कभी यह पसंद नही करता है कि उसके सार्वजनिक मामलों का निर्णय कोई और करे। मानव मन की यही इच्छा अति प्राचीन काल से स्थानीय संस्थाओं के विकास का अन्तर्निहित दर्शन रही है।

स्वतंत्रता के पश्चात् पंचायती राज का स्वरूप एवं विकास – 15 अगस्त, सन् 1947 को भारत को आजादी मिली और 26 जनवरी सन् 1950 को नया संविधान लागू हुआ। स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय शासन एवं प्रशासनिक व्यवस्था में मूलभूत परिवर्तन किये गये। शासन व प्रशासन की नयी प्रवृतियों का जन्म हुआ। मंत्रीमण्डल के सामूहिक उत्तारदायित्व सिद्धांत पर आधारित एक उत्तारदायी सरकार की स्थापना की गई। देश में नई अखिल भारतीय और राज्य सेवाओं का विकास हुआ तथा प्रशासन के कर्त्ताव्य एवं उत्तारदायित्व भी बढ़े। देश में लोकतंत्र विकास, लोककल्याण और समाजवाद के लिए लोकप्रशासन युग की शुरूआत भी हुई। इसके परिणामस्वरूप भारतीय शासन एवं प्रशासन को नवीन एवं विशिष्ट महत्व के कार्यो के सम्पादन की चुनौती भी स्वीकार करनी पड़ी। यद्यपि आजादी के दिसम्बर 1946 में संविधान सभा का गठन किया जा चुका था। चूँकि संविधान सभा के प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. भीमराव अम्बेडकर जी थे, जिनके उपर संविधान निर्माण की महत्वपूर्ण बागडोर थी। तथा बाबा साहेब अम्बेडकर ग्रामीण स्थानीय शासन या पंचायतो के हिमायती नही थे, और संविधान सभा में उन्होंने इस बात का पुरजोर विरोध भी किया और तर्क दिया कि 'गाँवो का भारत के इतिहास में कोई योगदान नही है, यह जानकर हम उस पर कैसे गर्व कर सकते है। यह ठीक है कि वे परेशानी में जीवित रहे, लेकिन किसलिए? निचले स्तर पर केवल स्वयं के लिए। गाँव क्या है? वे स्थानीयता का कूप है, अज्ञान और संकीर्णता और साम्प्रदायिकता की गुफा है। मुझे खुशी है कि संविधान के मसौदे में गाँव को नही बल्कि, व्यक्ति को इकाई माना गया है।'[6] यद्यपि संविधान सभा में गांधीवादी विचारधारा के समर्थको की बहुलता होने तथा गांधी जी की पंचायती व्यवस्था में अटुट विश्वास होने के कारण भारतीय संविधान के नीति-निर्देशक तत्वो के अन्तर्गत अनुच्छेद 40 में पंचायती व्यवस्था को अंगीकृत किया गया तथा अनुच्छेद 40 के अन्तर्गत राज्यों को निर्देशित किया गया कि 'राज्य ग्राम पंचायतों का गठन करने के लिए कदम उठाएगा और उनको ऐसी शक्ति और प्राधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्ता शासन की इकाईयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक है।'[7] यद्यपि पंचायत राज अधिनियम 1947 के अन्तर्गत ग्राम पंचायतो के प्रथम चुनाव 1949 में सम्पनन हुए तथा पहली पंचायतों ने 15 अगस्त 1949 से अपना कार्य करना प्रारम्भ कर दिया किन्तु अनुच्छेद 40 में पंचायती राज को जो स्थान दिया गया था, उसका स्वरूप अत्यंत ऐच्छिक ही था। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सरकार की पहली-प्राथमिकता यह थी कि देश की जनता को गरीबी भूखमरी, बेरोजगारी, अशिक्षा, सामाजिक आर्थिक कमजोरियों एवं बुराइयों से मुक्ति दिलाना था, इस हेतु सरकार ने सामुदायिक विकास योजनाओं को लागू किया, किन्तु विकास कार्यक्रम अपने उद्देश्य प्राप्ति में सफल नही हो पाये। परिणामस्वरूप पंचायते पूरी तरह से निष्क्रीय हो गयी।

पंचायतो के विकास हेतु गठित विभिन्न समितियाँ – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में पहला प्रयास सामुदायिक विकास कार्यक्रम का शुभांरभ था। यह कार्यक्रम 02 अक्टूबर, 1952 से प्रारम्भ किया गया था।[8] किन्तु जिन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सामुदायिक विकास कार्यक्रम चलाया गया था, वह पांच वर्ष बाद भी अपने लक्ष्यों को हासिल करने में असफल रहा। इस कार्यक्रम की कार्यप्रणाली तथा उनमें सुधार लाने के उद्देश्य से जनवरी 1957 में बलवंत राय मेहता समिति का गठन किया गया था। जिसके अध्यक्ष बलवंत राय मेहता थे।[9] समिति ने मुख्य रूप से त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था के अपनाये जाने की सिफारिशे की थी। इसी प्रकार 1977 में अशोक मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया था, जिसे अशोक मेहता समिति के नाम से जाना जाता है। समिति ने मुख्य रूप से द्विस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को अपनाये जाने की सिफारिश की थी। तथा 1985 में जी.वी.के.राव समिति, 1986 में एल.एम.सिंघवी समिति, 1988 में पी.के.थुंगन समिति तथा 1988 में वी.एन. गाडगिल समिति का गठन किया गया था। जिनके सुझावों एवं सिफारिशों के आधार पर 73वां संविधान संशोधन अधिनियम 1992 पारित कर पंचायतों को संवैधानिक दर्जा के साथ-साथ महिलाओं के लिए एक-तिहाई आरक्षण की व्यवस्था की गई थी।

73वां संविधान संशोधन अधिनियम 1992 एवं संवैधानिक उपबंध – भारत में पंचायतों का अस्तित्व प्राचीन काल में भी रहा है किन्तु उनका स्वरूप लोकतांत्रिक नही था। और आज भी वर्तमान पंचायते, ग्राम शासन या पंचायतों के ऐतिहासिक सतत् विकास का परिणाम है। प्रत्येक काल एवं राजवंशो में पंचायतों के सशक्तिकरण हेतु अनेको प्रयास किये गये। कुछ काल में पंचायतों का ह्रास हुआ तो कुछ कालों में इनका संवर्द्धन भी हुआ। आजादी के बाद अनेकानेक विकास कार्यक्रम संचालित किये गये। ग्रामीण जन-जीवन के सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक विकास हेतु तमाम प्रकार के प्रयास किये गये। महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए भी विभिन्न संवैधानिक प्रावधान किये गये ताकि महिलाओं का भी पुरूषों के अनुरूप विकास हो सके। चूँकि भारतीय समाज का स्वरूप पुरूष प्रधान होने के कारण महिलाओं को हमेशा दोयम दर्जा दिया जाता रहा। परिणामस्वरूप महिलाएँ अपने मूलभूत या विकास कारक अधिकारों से वंचित होने के कारण पुरूषों की तुलना में पिछड़ गई। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जब सत्ता भारतीयों के हाथ में आयी तब हमारे नीति-निर्माताओं ने महिलाओं की स्थिति पर गहन चिंता व्यक्त की और उनके सशक्तिकरण हेतु अनेक कार्यक्रम योजनाएँ एवं कानूनी प्रावधान भी निर्दिष्ट किये गये जिससे की महिलाओं का सशक्तिकरण हो सके। आजादी के स्थानीय निकायों के संवर्द्धन हेतु अनेक समितियाँ भी बनाई गई। पंचायतों के विकास हेतु अनेक सुझाव भी प्रस्तुत किये गये। तत्पश्चात् 2 अक्टूबर, 1959 में तात्कालीन प्रधानमंत्री पं.जवाहरलाल नेहरू द्वारा, राजस्थान के नागौर जिले से पंचायती राज संस्थाओं को शुभारम्भ किया गया। किन्तु तब पंचायतो को संवैधानिक दर्जा प्राप्त नही हुआ था। यद्यपि विभिन्न समितियों के अनुशंसाओं के बाद 1992 में 73वां संविधान संशोधन पारित किया गया, जिसमें प्रमुखत: पंचायतों को संवैधानिक दर्जा एवं महिलाओं का सबसे बड़ा आमूलचूल परिवर्तन था।

73वां संविधान संशोधन अधिनियम 24 अप्रैल, 1993 को लागू किया गया। इस संविधान संशोधन द्वारा संविधान में एक नया भाग '9' जोड़ा गया। तथा इसे 'पंचायतेय नाम से भाग '9' में उल्लेखित किया गया है।[10] तथा भारतीय संविधान के अनुच्छेद 243 से 243 'ण' तक पंचायती राज व्यवस्था से संबंधित प्रावधान विनिर्दिष्ट किये गये है। इस अधिनियम के अन्तर्गत संविधान में 11वीं अनुसूची भी जोड़ी गई। जिसमें पंचायतों के 29 कार्यकारी विषय-वस्तु को समाहित किया गया है। यह अनुच्छेद 243-छ से संबंधित है। इस अधिनियम में संविधान के 40वें अनुच्छेद को एक व्यवहारिक रूप दिया गया, जो कि राज्य के नीति-निर्देशक तत्वों के

अन्तर्गत आता है। जिसमें मुख्यत: यह कहा गया है कि 'राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए कदम उठायेगा और उनको ऐसी शक्तियाँ और प्राधिकार, प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्ता शासन की इकाईयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हो।'[11] इस अधिनियम के उपबंध के अनुसार नई पंचायती राज व्यवस्था को अपनाने के लिए राज्य सरकारें संवैधानिक रूप से बाध्य है। यद्यपि इस अधिनियम के प्रमुख उपबंधों को दो भागो में विभक्त किया जा सकता है- अनिवार्य और स्वैच्छिक। अधिनियम के अनिवार्य हिस्से को पंचायती राज व्यवस्था के गठन के लिए राज्य के कानून में सम्मिलित किया जाना आवश्यक है। किन्तु स्वैच्छिक उपबंधों को राज्यों के स्वविवेक में सम्मिलित किया जा सकता है। तथापि स्वैच्छिक प्रावधान राज्य को नई पंचायती राज पद्धति को अपनाते समय भौगोलिक, राजनीतिक एवं प्रशासनिक स्थिति को ध्यान में रखकर अपनाने का अधिकार सुनिश्चित करता है। वस्तुत: यह अधिनियम देश की जमीनी स्तर पर लोकतांत्रिक संस्थाओं के विकास में एक महत्वपूर्ण कदम हैं।

पंचायतों का वर्तमान स्वरूप – 73वां संविधान संशोधन अधिनिमय पारित होने के पश्चात पंचायतों के स्वरूप एवं कार्यप्रणाली में काफी परिवर्तन आया। आज देश के अधिकांश राज्यों ने त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को अपनाया है। तथा कुछ ऐसे भी राज्य है जहाँ भौगोलिक भिन्नता के कारण द्विस्तरीय पंचायती व्यवस्था को अपनाया गया है। संवैधानिक प्रावधानों के अन्तर्गत सभी राज्यों में महिलाओं को एक-तिहाई आरक्षण दिया गया है। किन्तु मध्यप्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, राजस्थान जैसे राज्यों में अब महिलाओं को स्थानीय निकायों में 50 फीसदी आरक्षण दिया जा रहा है, जिसके कारण महिलाएँ आज पुरूषों की तुलना में अधिक सीटो पर निर्वाचित हो रही है। यद्यपि त्रिस्तरीय पंचातयों के अन्तर्गत ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, खण्ड स्तर पर जनपद पंचायत या पंचायत समिति तथा जिला स्तर पर जिला पंचायत जैसी व्यवस्था को अपनाया गया है। पंचायतों का कार्यकाल पाँच वर्ष निर्दिष्ट किया गया है। ग्ग्राम स्तर के ग्राम पंचायत चुनाव में पंचायत सदस्य एवं सरपंच का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा ही होता है। तथा जनपद पंचायत एवं जिला पंचायत के सदस्यों का चुनाव जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से होता है, किन्तु इन दोनों स्तर के अध्यक्षों का चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से जनता के द्वारा चुने हुए सदस्यों द्वारा किया जाता हैं।

निष्कर्ष – अत: पंचायती राज की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं विकास के प्रमुख सोपानों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि भारत में स्थानीय स्वशासन के आरम्भ का अपना कोई निर्दिष्ट काल नही है। यह एक सतत् विकास की प्रक्रिया का ही परिणाम है। न तो इन संस्थाओं को किसी राजा का संरक्षण प्राप्त हुआ और न ही इन्हें संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ। समय परिवर्तन के साथ-साथ इनका स्वरूप भी बदलता गया, लेकिन इनका अस्तित्व कभी मिटा नही। विभिन्न शासन काल में इनके संवर्द्धन एवं सुरक्षा में उतार-चढ़ाव जरूर आये, किन्तु इनकी जीवंतता हमेशा बनी रही। आजादी के बाद हमारे देश के संविधान निर्माताओं ने भारत की सबसे प्राचीनतम् व्यवस्था पंचायत को समझा और संविधान के अनुच्छेद 40, नीति निर्देशक तत्वों के अन्तर्गत इस व्यवस्था को सम्मिलित कर लिया गया। तथा इसे लोकतांत्रिक स्वरूप एवं संवैधानिक दर्जा 73वां संविधान संशोधन अधिनियम 1992 को प्रदान किया गया, जो कि एक ऐतिहासिक कदम था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, संगीता (2016), कौटिल्य का राज्य सिद्धांत, त्यागी, रूचि (संपा.) भारतीय राजनीतिक चिंतन प्रमुख अवधारणाएँ एवं चिंतक, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, पृष्ठ संख्या-168
2. काश्यप, सुभाष एवं गुप्त, विश्वप्रकाश (2009), राजनीति कोश, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, पृष्ठ संख्या 259
3. माहेश्वरी, एस.आर. (1999), भारत में स्थानीय शासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, पृष्ठ संख्या-10
4. सक्सेना, आलोक (2015), मध्यप्रदेश पंचायती राज एवं ग्राम स्वराज अधिनिमय, 2014 तक अधतन संशोधित, इण्डिया पब्लिशिंग कम्पनी, इन्दौर, पृष्ठ संख्या 03
5. शर्मा, संगीता (2015), वहीं, पृष्ठ संख्या 168
6. महिपाल (2015), पंचायती राज चुनौतियाँ एवं सम्भावनाएँ, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 12
7. भारत का संविधान (9 नवम्बर, 2015) को यथा विद्यमान), भारत सरकार विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), राजभाषा खण्ड, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 26
8. Aslam, M. (2015), Panchayat Raj in India, National book trust, India, New Delhi, Pp.17
9. सक्सेना, आलोक (2015), वहीं, पृष्ठ संख्या 5
10. भारत का संविधान (9 नवम्बर 2015 से यथा विद्यमान), वही, पृष्ठ संख्या 145
11. वही, पृष्ठ संख्या 26

****

The Attitude of Parents Towards Their Blind Children in Southern Tribal Area of Rajasthan

Dr. Shilpa Rathore* Priyanka Deopura**

Introduction - Rajasthan tribes constitute around twelve percent of the total population of the state. The tribes of Rajasthan, India constitutes of mainly Bhil and the Mina. In fact, they were the original inhabitants of the area where Rajasthan stands now. Apart from these main tribes, there are also a number of smaller tribes in Rajasthan. However, all Rajasthan tribes share certain common traits, the variations being in their costumes, jewelry, fair and festival etc.

Around 39% of Rajasthan tribes comprise of the Bhil. Dominating in Banswara area of Rajasthan, the Bhil are believed to be fine archers. In fact, Bhil bowmen even found a reference in the great epics Mahabharata and Ramayana. The Bhil were originally food gatherers. However, with the passage of time, they have taken up small-scale agriculture, city residence and employment. The major festivals of Bhils are the Beneshwar fair (held near Dungarpur) and Holi.

The second largest tribal group of Rajasthan is that of the Minas. The original inhabitants of the Indus Valley civilization, Minas have a tall, athletic build with sharp features, large eyes, thick lips and a light brown complexion. They are found dominating the regions of Shekhawati and eastern Rajasthan. Minas solemnize marriage in the younger years of the children.

One of the Tribe is Gadiya Lohar, they are wandering blacksmiths that are named after their attractive bullock carts called *Gadis*. Initially a martial Rajput tribe, they left their homeland when Emperor Akbar ousted Maharana Pratap from Chittorgarh. Garasias are another tribe and they are small Rajput tribe inhabiting Abu Road area of southern Rajasthan. Another tribe is Sahariya, the jungle dwellers, they considered as the most backward tribe in Rajasthan. Believed to be of Bhil origin, they inhabit the areas of Kota, Dungarpur and Sawai Madhopur in the southeast of Rajasthan. Their main occupations include working as shifting cultivators, hunters and fishermen.Damor are one of the tribebelongs to the Dungarpur and Udaipur districts, Damors are mainly cultivators and manual laborers.

Rajasthan tribes include the following also:

1. Meo and Banjara (the traveling tribes)
2. Kathodi (found in Mewar region only)
3. Rabaris (cattle breeders, found in Marwar region)
4. Sansi
5. Kanjar

Indian society is marked by inequality, discrimination, exploitation, domination and deprivation. What is even more striking is the fact that such thwarting societal features are mostly based on the lines of caste, tribe, religion, language, region, etc. There is hardly any segment or dimension of life that are not characterized by one or more of such features. Even children have been unable to escape the all-pervasive effects of such features. Tribes are one of the most exploited and deprived sections of the Indian society. All development indicators show them to be the most excluded from mainstream Indian society despite the fact that various kinds of policies and programs have been pursued and executed for their social and economic uplift in post-Independence India. Needless to say that exclusion from the fruits of development has adversely affected the quality of life of the tribal people. Tribal children are no exception.

On the eve of Independence, a large section of the tribal communities which came under colonial rule in different phases lived in relative isolation from the rest of the Indian society. If at all this isolation was broken, it was more in terms of land, labor and the credit market, which were predominantly exploitative. As for infrastructure such as education, health, agricultural development, irrigation and road networks, tribal communities, however, remained completely neglected. The state in which they found themselves during Independence was primarily attributed to their social and geographical isolation. In fact, the use of the category 'tribe' has greatly shaped the discourse on tribes in India. From this angle, the critical issue is their isolation, both geographical and social. The onus of the problems of tribes is squarely put on their isolation and economic, social and cultural features of their societies.

Childhood is the time for children to be in school and at play, to grow strong and confident with the love and encouragement of their family and an extended community of caring adults. It is a precious time in which children should live free from fear, safe from violence and protected from

*Head & Associate Professor (Home Science) Bn. University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar (Home Science) M.L.S. University, Udaipur (Raj.) INDIA

abuse and exploitation. As such, childhood means much more than just the space between birth and the attainment of adulthood. It refers to the state and condition of a child's life, to the quality of those years. Childhood is a blissful state of innocence and joy, but this is often not for the children, who are disabled or special children. When they play, laugh; they feel isolated, as no one is beside them to hear or bear, as every day in their life is a big struggle. Disability is proven to be a big hindrance in the normal day to day life of a place of negligence, despair and isolation.

Throughout the period of growth and development, children need the stimulation of all senses. Eye obviously tops the list of sense organs. Eyesight is the window to the world for individuals to see, to perceive, to comprehend, to express, and to communicate the worldly things. Any kind of substitutive method for the blind cannot match a person with the normal vision. Hence care and preservation of eye should be foremost concern of every human being. "**vision animates, inspires, transforms purpose into action".**

Blindness is a devastating physical condition with deep emotional and economic implications. Various problems that the blind people face are problems in orientation and mobility, problems in social contact, problems in conversation, personality problems, psychological problems, etc. There are certain coping strategies that a visually impaired person adopts, which include acceptance, trust, positive avoidance, minimization, independence, control etc.

A blind child needs medical, psychosocial, educational, and vocational. Most important is social support, which includes accepting them as a useful part of the society, providing proper guidance and advice, helping them regain their self-esteem. *Blind* and visually impaired children faced several challenges which make them prone to powerlessness, inability to participate in decision making and development programs that affect them and their fundamental rights. The lack of an act on disability right is a major reason for the continuation of many challenges faced by blind children's in our society today. Attitude is a vital ingredient for the success or failure of children with visual impairment in their optimum development.

The attitude of parents can have a profound effect on the social and educational integration of visually impaired children. It makes a great difference to these children whether the attitude and actions of parents reflect considerations for their real needs or are merely prompted by pity or monetary limitations. The adjustment of visually impaired children to society begins with the ability to adjust to their own family members. The child brought up with affection and care in the least restrictive environment would be able to cope up better with the sighted world. Therefore, the family shapes the social integration of the child more than a formal school. Parent's duty is to take care of children and train them as good as possible. However, the child is a member of family, even if he/she is blind. Disabled child and parents have reciprocal effect on each other.

Socioeconomic status seems to be a factor in parental reactions to having a visually impaired child. As the socioeconomic situation improves, the ability to deal with the stress also seems to improve. Conversely if **there are few resources to address the basic needs of food, shelter, clothing and medical care, the ability** of parents to manage their emotional reactions to a visually impaired child may be stretched to the breaking point. Financial assistance can go a long way towards balancing the emotional levels of the family. Family income is far from adequate as employment is non-existent for other adult member of the family. This has resulted in malnutrition and various kinds of disabilities among the children. Children also suffered disabilities due to poor hygienic and living conditions in colonies or settlements they inhabited.

Review of work already done on the subject

- Schell (1981) and Marion (1981) in Ferrell (1988) state that the higher the socio- economic status of the family, the more adverse the reaction to the birth of a disabled child.
- Sommer (1944) cited by Warren (1984) distinguished four types of parental attitudes towards blindness-

1. Viewing the child's blindness as a form of punishment
2. Fearing that others would think that the child's blindness was a result of Parent's having a social disease,
3. Feeling guilty because negligence or because having violated some moral Or social Code, and
4. Feeling personally disgraced.

- Ware (1981) cited by Ferrell (1988) showed that the birth of blind infant can challenge the parents' basic system of values, beliefs, and trust, as well as the sense of control over their own lives. How parents respond to the situation will depend on their strengths and weakness, the help given by other family members, professionals and other factors like severity of the problem (disability), socio-economic status, the availability of time and so on.
- Trachtenberg (1992) the perception of parents towards disability in general and blindness in particular affects the type of treatment and way of handling their child with disability.
- Macha (2001) stated that in Africa some parents of disabled people were afraid of being laughed at and isolated by the society. Hence, they often kept them in doors and made no efforts to develop them for their future lives. Many parents show a wide range of feelings and practices when they realize that their child has any disability. They nearly always react strongly (whether positively or negatively) to the birth of a child with disabilities.

Government welfare policies for disable children - The 2001 Census revealed that in Rajasthan 2.5% of the population consisted of disabled persons.1 During the same year, the Rajasthan Government conducted a door to door survey in order to categorize the disabilities according to the seven categories listed in the Persons with Disabilities (Equal Opportunities, Protection of Rights and Full Participation) Act, 1995.2 Among the disabled, the highest

number of 53.4 % was persons with visual impairment. Rajasthan also has 6.45% of the total disabled population in India, the sixth largest in the country.

The Government of Rajasthan has formulated four main Rules for the benefit of persons with disability. They are-

1. The Rajasthan Persons with Disabilities (Equal Opportunities, Protection of Rights and Full Participation) Rules 2011.
2. The Rajasthan Government Scholarship to the Physically Handicapped Rules 1981
3. The Rajasthan Handicapped, Crippled and Blind Persons Pension Rules 1965
4. The Rajasthan Government Financial Assistance to Disabled Individuals Rules 1986
5. The Rajasthan Persons with Disabilities (Equal Opportunities, Protection of Rights and Full Participation) Rules 2011 were enacted under S.73 of the PWD Act. The Rules provide for the following:
6. Application for issue of Disability Certificate
7. Rules regarding State Co-ordination Committee and the Sate Executive Committee.
8. Employment of persons with disability- reservation, relaxation in age and other such concessions.
9. Rules regarding recognition of institutions for Persons with Disabilities through registration.
10. Rules regarding presentation of complaints before the Commissioner for Persons with Disabilities.

Directions were issued to make suitable amendments to the State Rules due to the amendments made to the central **Persons with Disabilities Rules, 1996,** 5 mainly with regard to issuance of Disability Certificates.

Case studies

Case-1: It is a joint family headed by father. All family members live together. He is coming from modra village of Dungarpur district.His parents are illiterate but theywant to educate his blind son. The occupation of father is farming.

Case-2: The second child belongs to a nuclear family. Father and mother both are educated. They live in one of the surrounding rural area of the Dungarpur district. Father is cloth merchant.

Case-3: It is a joint family. The occupation of parents is farming. Both mother and father are illiterate. They have two children. They belong to Bildora situated in interior area of Dungarpur district.

The reaction of parents to their child's blindness at the beginning of the problem.

On the basis of the following basic interview guides and other leading questions, parents reported their reaction about their child's blindness when the problem occurred.

1. What did you feel when you first realized that your child not see?
2. What were the types of treatment sought by parents for their children?
3. What were the reasons of your child's blindness?

Case-1 (the mother) responded that the problem created was a traumatic experience for her. In addition, the child was the first born for her. She reported how the family experienced the situation. At first when the baby was born, none knew he was blind for about a week. After week we realized that he is unable to see. We were very shocked. Parents took the child to traditional healer for treatment. Although the traditional healer gave medicine for the child, but the medicine did not cure the problem.

Case-2 (the father) at the beginning something, which look like white, covered the edge of his eye. During this time, he took the child to the holy water. But through time his eye was totally covered by it. He said I was shocked and confused. Some advised me to take the child to medical treatment. But the Doctor told me the problem was beyond their level.

Case-3 (the mother) reported that at the beginning, the eyes of the child changed its colour into something like cloud. Soon after parents took the child to a nearby clinic. But they heard the problem was so intense and the Doctor ordered further medical treatment. When they heard this they were shocked and worried. They did not take the child to hospital for further treatment due to financial problem.

Conclusion - In these three case studies the children were blind by birth, the parents were very shocked. Lack of awareness, illiteracy and financial problems were the measures reasons due to which children were not able to receive proper medical help.

References :-

1. Macha, E. (2001). Disabled people and discrimination a global overview. Justice,Peace and Creation Echoes. Geneva: world council of churches.
2. Warren, D.H. (1984). Blindness and Early Childhood. New York: AmericanFoundation for the blind.
3. Trachtenberg, S. W. (1992). Caring and Coping the family of a child with disabilities.Children with Disabilities: A Medical Primer. London: Paul H. Brookes Pub. Co. Inc.
4. Zelalem, F. (2002): Attitudes of Parents towards their Blind Children: *Published Dissertation.*
5. http://www.hindu.com
6. http://www.shodhganga.org
7. http://bharatonline.com

****

राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी उपशमन में इंदिरा आवास योजना की सार्थकता

योगेश चितारा *

शोध सारांश – राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्र में गरीबों को आवास एवं अन्य मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सरकार द्वारा इस कल्याणकारी योजना के साथ ही अन्य योजनाओं से लाभान्वित करके गरीबी उन्मूलन करने का सार्थक प्रयास करके राज्य के विकास में ग्रामीण क्षेत्र की भूमिका को सशक्त बनाकर राज्य को विकास की राह पर लाने का सतत प्रयास सराहनीय एवं प्रशंसनीय है।
शब्द कुंजी – आवास, ग्रामीण आवास, गरीबी उपशमन, इंदिरा आवास योजना, प्रधानमंत्री आवास योजना-ग्रामीण, ग्रामीण विकास मंत्रालय।

प्रस्तावना – मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं में रोटी, कपड़ा और मकान को माना जाता है। स्वयं का आवास होने पर मनुष्य अपने आपको मानसिक और शारीरिक रूप से सुरक्षित महसूस करता है और उसे समाज में इज्जत से जीने का अहसास होता है। संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रतिबद्धताओं को अंगीकार करने के कारण प्रत्येक सदस्य देश को अपने नागरिकों को आवास जैसी मूलभूत सुविधा उपलब्ध कराया जाना नैतिकता की श्रेणी में आता है तथा यह अपने नागरिकों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने में मददगार होता है।[1]

भारत में शहरी और ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों में आवासीय कमी की समस्या विद्यमान है इस हेतु आजादी के पश्चात् पंचवर्षीय योजनाओं में विभिन्न योजनाओं के माध्यम से शहरी और ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों में आवासीय समस्याओं के निदान के लिए भरसक प्रयास किये जा रहे है परन्तु आज 70 वर्षों के पश्चात् भी देशमें बढ़ती हुए जनसंख्या के कारण स्थिति जस की तस बनी हुई है बल्कि दिनोदिन समस्या विकराल होती जा रही है शहरों में इसके कारण मलीन बस्तियां तथा सरकारी भूमि पर अतिक्रमण करके आवासहीनों द्वारा अपने रहने योग्य आवास तैयार कर के शहरों के स्थितियां खराब की जा रही है। वहीं यदि ग्रामीण क्षेत्रों में आवासहीन गरीब व्यक्तियों द्वारा असुरक्षित कच्चे मकानों और झोपड़ियों में अपना गुजर बसर करके अपना जीवनयापन किया जा रहा है। हालांकि राजस्थान में पिछले तीन दशकों में गरीबी उन्मूलन के लिए किये गये प्रयास काफी सराहनीय रहे हैं और काफी हद तक गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों को सरकारी प्रयासों के कारण आवास प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हुआ है और ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक समस्या के समाधान के लिए महात्मा गांधी नरेगा जैसी बहुआयामी योजना से 100 दिन का रोजगार प्राप्त करने का सुअवसर मिलता है जिससे गरीब लोगों कोजीवनयापन करने में पहले के मुकाबले काफी सुविधा मिली है। परन्तु अभी तक स्थिति अच्छी नहीं कही जा सकती है इसलिए ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी उन्मूलन के लिए अभी और सार्थक प्रयासों की आवश्यकता है।[2]

भारतीय अर्थव्यवस्था मूलत: ग्रामीण है। यह भारत की विशिष्टता है और प्राकृतिक उपहारों का परिणाम है। यहां के कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 60 प्रतिशत भाग कृषि योग्य है जबकि विश्व स्तर पर यह मात्र 10 प्रतिशत है। भारत की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है इसलिए ग्रामीण विकास अर्थव्यवस्था के समग्र विकास की पूर्वपेक्षा है। ग्रामीण विकास के लिये सक्षम अवस्थापना सुविधाओं की पर्याप्त आवश्यकता है। नियोजन काल में समय-समय पर अवस्थापना विकास के लिए विशेष कार्यक्रम चलाये गये हैं। विकास कार्यक्रम में ग्रामीण अवस्थापना विकास को ऊंची प्राथमिकता दी थी। इन प्रयासों के बाद भी ग्रामीण अवस्थापना की निरपेक्ष कमी है और उन तक जन-सामान्य की पहुंच अत्यंत कम है। अवस्थापना सुविधा की कमी विकास प्रक्रिया का प्रमुख बाधक घटक है।[3]

ग्रामीण अवस्थापना का प्रमुख घटक आवास है जिसके लिए सरकार द्वारा विभिन्न योजनाएँ चलाकर गरीबों व आवासहीनों को आवास उपलब्ध कराया जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्र में आवासों की बहुत अधिक कमी है। ग्रामीण क्षेत्र प्राय: उपेक्षा का शिकार रहा है जिसके कारण ग्रामीण क्षेत्र में रह रहे गरीबों विशेषकर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के लोगों को उनकी आवश्यकता के अनुरूप आवासों एवं अन्य मूलभूत आवश्यकताओं के नहीं होने के कारण सामान्य से भी नीचे जीवन जीने को मजबूर होना पड़ रहा है। दूसरी ओर देश की स्थिति को देखने पर यह तथ्य उभर कर सामने आये है कि भारत में नगरीकरण तेजी से बढ़ता जा रहा है। यद्यपि भारत की आधी से अधिक आबादी अभी भी गांवों में निवास करती है किन्तु गांवों से शहरों की ओर जनसंख्या का पलायन निरंतर बढ़ता ही जा रहा है।[4]

भारत की जनगणना 2011 के अनुसार राज्य की कुल जनसंख्या भारत की जनसंख्या के मुकाबले निम्नानुसार थी-

तालिका 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

वर्णित तालिका 1 में राजस्थान में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लोगों की जनसंख्या निम्नानुसार है-

तालिका 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

भारत की जनगणना 2011 के अनुसार राजस्थान में 59.7 प्रतिशत लोग शहरों में तथा 40.3 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे लोगों के पास अपना कोई आवास नहीं है। इन आवासहीन अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, वृद्धजन पुरूष एवं महिला, दिव्यांगजन तथा पिछड़ी जाति के गरीब लोगों को आवास सुविधा उपलब्ध कराने के लिए भारत सरकार द्वारा ग्रामीण विकास मंत्रालय के माध्यम से इन्दिरा आवास योजना संचालित है जो कि 01 अप्रैल 2016 से प्रधानमंत्री आवास योजना-ग्रामीण के नाम से संचालित

* शोधार्थी (लोक प्रशासन विभाग) राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

की जा रही है। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी **हैण्डबुक ऑफ स्टेटीस्टिक्स ऑन इण्डियन इकोनॉमी, 2017-18** के अनुसार राजस्थान में गरीबी गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों का 14.71 प्रतिशत है।[5]राजस्थान में इंदिरा आवास योजना के अतिरिक्त वर्ष 2011-12 के बजट में इन्दिरा आवास योजना में बहुप्रतीक्षारत बी.पी.एल. व्यक्तियों के लिए मुख्यमंत्री बी.पी.एल. आवास योजना इन्दिरा आवास योजना की तर्ज पर वर्ष 2011-12 से 2013-14 तक संचालित करके इन तीन वर्षो में आवासहीन बी.पी.एल. व्यक्तियों को आवास उपलब्ध कराने हेतु बहुमुखी योजना संचालित की गयी जिससे कि गरीब व्यक्ति समाज की मुख्यधारा से जुड़ सके।[6]

इंदिरा आवास योजना – ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार के गरीबी उन्मूलन प्रयासों के व्यापक हिस्से के रूप में इन्दिरा आवास योजना एक अग्रणी कार्यक्रम है जो कि प्रारम्भ होने के समय से ही गरीबी रेखा से नीचे के ऐसे परिवारों को सहायता दे रहा है जो या तो घर विहीन है या जिनके पास पर्याप्त आवासीय सुविधाएं नहींहै। सरकार काप्रमुख कार्य देशमें आवास की कमी की बड़ी समस्याओं का समाधान करने वे तरीके तलाशना है। ग्रामीण क्षेत्रों में आवास की कमी को पूरा करने के लिए भारत सरकार ने एक व्यापक योजना के रूप में इंदिरा आवास योजना, जो कि गरीबी-रेखा से नीचे बसर करने वाले परिवारों के मकान बनाने अथवा उन्नयन करने में सहायता करने के लिए है, वर्ष 1985-86 से आरंभ की गई थी, ग्रामीण आवास का मुख्य कार्यक्रम है।[7]

इंदिरा आवास योजना द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन के लिए 11वीं पंचवर्षीय के योजना के प्रारम्भ में नये आवास इकाई की लागत 25,000 रू से बढ़ाकर वर्ष 2008-09 में 35,000 रू की गयी उसके बाद 01.04.2010 से 45,000 रू की गयी जिसका केन्द्र एवं राज्य के बीच 75:25 के अनुपात में वित्त पोषण की व्यवस्था की गयी। वर्ष 2005 से 2009 के बीच 60 लाख मकानों को बनाने का लक्ष्य रखा गया। राजस्थान में 1,52,070 आवासों को बनाने का लक्ष्य था जिसके विरूद्ध इस अवधि में 1,72,072 आवास इकाईयों का 512.37 करोड़ रूपये व्यय करके बनाये गये। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-08 से 2011-12) एवं बारहवीं पंचवर्षीय योजनावधि (2012-13 से 2016-17) की भौतिक एवं वित्तीय प्रगति निम्नानुसार रही-

तालिका 3: 11वीं पंचवर्षीय के योजना के दौरान प्रगति

वर्ष	व्यय (करोड़ रूपये)	निर्मित आवासों की संख्या
2007-08	126.90	44028
2008-09	206.31	47642
2009-10	298.67	84601
2010-11	376.42	63126
2011-12	391.00	44018

अप्रैल, 2008 से इन्दिरा आवास योजना के अंतर्गत प्रति इकाई निर्माण सहायता की सीमा मैदानी क्षेत्रों में 25000 रुपये से सूची, 2002 के आधार पर उनकी निर्धानता स्थिति की प्राथमिकता क्रम में आईएवाई मकानों की आवश्यकता है, के नाम शामिल रहते हैं। ग्राम सभा पात्र बीपीएल परिवारों की सूची स्थायी आईएवाई प्रतीक्षा सूची, जहाँ कहीं भी यह बनाई गई है, में से लाभार्थियों का चयन करती है। भारत निर्माण कार्यक्रम जिसका उद्देश्य ग्रामीण अवसंरचना निर्माण का संवर्धन करना है, के चरण-खमें इसके छः घटकों में से एक केरूप में ग्रामीण आवास भी शामिल है और जिसमें वर्ष 2005-06 से 4 वर्षों में 60 लाख मकानों के निर्माण की संकल्पना की गई है। इस लक्ष्य की तुलना में 21720 करोड़ रु. व्यय से 71.76 लाख मकानों का निर्माण किया गया था।[8]

भारत निर्माण कार्यक्रम के चरण-खखके तहत, इस लक्ष्य को 2009-10 से आरंभ 5 वर्ष की अवधिा में दुगुना कर 120 लाख मकान कर दिया गया है। इसे लागू किए जाने से लेकर अब तक 52365.76 करोड़ रु. के व्यय से 218.69 लाख मकानों का निर्माण/उन्नयन किया जा चुका है। वर्ष 2009-10 के दौरान 40.52 लाख मकानों के वास्तविक लक्ष्य की तुलना में जनवरी, 2010 तक 21.18 लाखमकानों का निर्माण किया गया है और 27.53 लाख मकान निर्माणाधीन हैं। 2022 तक सभी के लिए मकान उपलब्ध कराने की सरकार की प्राथमिकता के संदर्भ में इंदिरा आवास योजना को नया रूप देने और इसे मिशन मोड में लागू करने का निर्णय लिया गया है इसी के अनुरूप इंदिरा आवास योजना के साथ विभिन्न केन्द्रीय प्रायोजित योजनाओं, सीएसएस, में तालमेल स्थापित किए जाने के संबंधा में सभी जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों को आवश्यक निर्देश जारी कर दिए गए हैं। इंदिरा आवास योजना के लाभार्थी राजीव गाँधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना, आरजीजीवीवाई, संपूर्ण स्वच्छता अभियान, टीएससी, जनश्री तथा आम आदमी बीमा योजना, स्वास्थ्य बीमा तथा ब्याज संबंधी विभेदक दरें योजना आदि का लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत हुई वर्षवार प्रगति निम्नानुसार है –

तालिका4: इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत हुई वर्षवार प्रगति

वर्ष	लक्ष्य (संख्या)	निर्मित/उन्नयित मकान (संख्या)	व्यय राशि(रूपये लाखों में)
2011-12	157596	125647	60401.537
2012-13	88825	83466	43392.782
2013-14	85460	77817	67681.994
2014-15	97145	109982	75175.90
2015-16	101015	103247	77999.06

स्त्रोत: वार्षिक प्रतिवेदन, ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज विभाग, राजस्थान, पृ.सं. 21

इन्दिरा आवास योजना का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति/जनजाति, विमुक्त बंधुआ मजदूर एवं ग्रामीण क्षेत्र के गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले गैर अनुसूचित जाति/जनजाति के परिवारों के आवास की आवश्यकता की पूर्ति हेतु सहायता अनुदान प्रदान करना है। वित्तीय वर्ष 1999-2000 से अनुपयुक्त कच्चे मकानों को क्रमोन्नत करने तथा ऋण एवं अनुदान योजना को भी इस योजना में समाहित कर दिया गया है।[9]

इस योजनाकी निम्नलिखित विशेषताएं हैं-

1. कोष का 3 प्रतिशतग्रामीण क्षेत्र में गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले दिव्यांगों के लिए तथा 15 प्रतिशत अल्पसंख्यकों के लिए आरक्षित रखा गया है।
2. परिवार की महिला सदस्य अथवा पति-पत्नी के संयुक्त नाम से सहायता राशि स्वीकृत की जाती है। अनुसूचित जाति/जनजाति के लोगों के आवास निर्माण हेतु कोष की कम से कम 60 प्रतिशतराशि उपयोग में लिया जाना आवश्यक है।
3. स्वच्छ शौचालय एवं धुँआ रहित चूल्हा इन्दिरा आवास योजना के समाहित भाग हैं।
4. लाभार्थियों का चयन ग्राम सभा द्वारा किया जाएगा।

5. योजनामें निर्माण कार्य की तकनीक, निर्माण सामग्री का चयन एवं डिजाइन का कार्य पूर्ण रूप से लाभार्थी पर छोड़ा गया है।
6. इस सम्बन्ध में बिचौलिए अथवा ठेकेदार एवं विभागीय एजेन्सी की आवास निर्माण में कोई भूमिका नहीं है।

राजस्थान में ग्रामीण विकास के क्षेत्र में संचालित योजनाओं में इन्दिरा आवास योजना के अन्तर्गत वर्ष 2017-18 के दौरान माह दिसम्बर, 2017 तक 37,043 नए मकान निर्मित किए गए हैं। सीमा क्षेत्र विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत वर्ष 2017-18 के दौरान माह दिसम्बर, 2017 तक 80.55 करोड़ व्यय कर 726 कार्य पूर्ण किए गए हैं। इसी प्रकार विधायक स्थानीय क्षेत्र विकास योजना (एम.एल.ए.एल.ए.डी.) के अन्तर्गत माह दिसम्बर, 2017 तक 317.19 करोड़ व्यय कर 7,694 कार्य पूर्ण किए गए हैं। सांसद स्थानीय क्षेत्र विकास योजना (एम.पी.एल.ए.डी.) के अन्तर्गत भी वर्ष 2017-18 के दौरान माह दिसम्बर, 2017 तक 91.74 करोड़ व्यय कर 1,808 कार्य पूर्ण किए गए हैं। विभिन्न विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत विभिन्न पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिए राशि का उपयोग किया गया है, यथा-मेवात क्षेत्र विकास कार्यक्रम में 29.04 करोड़, मगरा क्षेत्र विकास कार्यक्रम में 23.18 करोड़, डांग क्षेत्र विकास कार्यक्रम में 26.02 करोड़, स्व-विवेक जिला विकास योजना में 2.36 करोड़ की राशि माह दिसम्बर, 2017 तक व्यय की गई है।

प्रधानमंत्री आवास योजना- ग्रामीण - सभी को आश्रय-2022 के मदद्देनजर 01 अप्रैल, 2016 से इन्दिरा आवास योजना को सुदृढ़ीकृत कर इसके स्थान पर प्रधानमंत्री आवास योजना-ग्रामीण प्रारम्भ की गई है। योजनान्तर्गत अनुदान राशि रू. 70,000 से बढाकर राशि रू. 1,20,000/- की गई है। प्रावधित राशि केन्द्र व राज्य के मध्य 60:40 में भारित किये जाने का प्रावधान है।

प्रधानमंत्री आवास योजना-ग्रामीण का विधिवत् शुभारम्भ माननीय प्रधानमंत्री द्वारा दिनांक 20 नवम्बर, 2016 को आगरा में किया गया है। योजनान्तर्गत लाभार्थी के चयन का आधार सामाजिक, आर्थिक एवं जाति आधारित जनगणना-2011 के आधार पर होगा। इस योजना के अन्तर्गत लाभार्थी को देय सहायता राशि 1,20,000 है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक लाभार्थी को स्वच्छ भारत मिशन के तहत शौचालय निर्माण हेतु देय राशि 12,000 है। मनरेगा योजना के अन्तर्गत लाभार्थी को मज़दूरी (90 मानव दिवस तक) राशि 16,290 देय है। व्यय राशि केन्द्र व राज्य के मध्य 60:40 अनुपात में वहन की जाती है। वर्ष 2017-18 के दौरान माह दिसम्बर, 2017 तक 1,31,076 नए मकान निर्मित किए गए हैं।[10]

इस योजना में निम्न प्रावधानों को शामिल किया गया है-

1. आवास के साथ रसोईघर निर्माण का भी प्रावधान कर निर्मित क्षेत्रफल 25 वर्गमीटर (267 वर्गफीट) निर्धारित किया गया है।
2. योजनान्तर्गत लाभार्थी के चयन का आधारडएउउ 2011 के आंकड़ों को रखा गया है।
3. आवास का निर्माण स्वयं लाभार्थी के द्वारा एक वर्ष की अवधि में पूर्ण कराना होगा।
4. पंजीकरण हेतु लाभार्थी का अथवा परिचित का मोबाईल नम्बर अनिवार्य किया है।
5. अनुदान राशि का हस्तान्तरण झ्रच्चडप्रणाली के माध्यम से सीधा लाभार्थी के बैंक खाते में।
6. स्वीकृति के लिए वर्तमान निवास एवं प्रस्तावित निर्माण स्थल की Geo Tagged फोटो अनिवार्य है।
7. ग्रामसभा द्वारा तैयार वरीयता सूची क्रम में आवाससॉफ्ट के माध्यम से स्वीकृति जारी करने का प्रावधान किया गया है, जिसमें लाभार्थी को स्वीकृति की प्रति दिया जाना अनिवार्य है।
8. योजना की प्रगति एवं किश्त की जानकारियों के लिए गूगल/एपल प्ले स्टोर पर "AwaasApp" नि:शुल्क उपलब्ध है, जिसका उपयोग लाभार्थी अपने स्वयं के मोबाईल नम्बर को आवाससॉफ्ट पर पंजीकृत करवाकर कर सकता है।
9. लाभार्थी इच्छा अनुसार स्वयं की डिजाइन का आवास निर्माण कर सकता है।
10. लाभार्थी की सुविधा हेतु ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा भारतीय प्रौद्योगिक संस्थान, नई दिल्लीके सहयोग से राजस्थान को 4 जोनमानकर 7 प्रकार की स्थानीय परिस्थितियों के अनुकुल आवास डिजाईनें तैयार की है, जिन्हें मार्ग-दर्शिका में उपलब्ध कराया जा रहा है।

प्रधानमंत्री आवास योजना-ग्रामीण के अन्तर्गत SECC 2011 के आंकडों के आधार पर ग्राम सभा में अनुमोदित वरीयता वर्गवार सूची, जिसमें आवासहीन, कच्चा आवास (एक कमरा व दो कमरा) वाले परिवार जिन्होंने पूर्व में अन्य आवास योजना से लाभ प्राप्त नहीं किया है, पात्र होगें। योजनान्तर्गत परिवार की पात्रता निर्धारित मापदण्ड की सुविधा न होने पर ही मान्य होगी।

योजनान्तर्गत लाभार्थी को देय अनुदान राशि रू. 1,20,000 आवास निर्माण के विभिन्न स्तरों पर निम्नानुसार 3 किश्तों में देय है -

किश्त	आवास निर्माण स्तर	वर्ष 2016-17 में देय राशि रू	वर्ष 2017-18 में देय राशि रू
प्रथम	स्वीकृति के साथ	30,000	30,000
द्वितीय	कुर्सी स्तर निर्माण पूर्ण करने पर तक	60,000	48,000
तृतीय	शौचालय निर्माण एवं छत स्तर तक का आवास निर्माण कार्य पूर्ण करने पर	30,000	42,000

इस योजना के अन्तर्गत लाभार्थियों को अन्य योजनाओं से निम्नलिखित लाभ देय हैं -

- स्वच्छ भारत मिशन-ग्रामीण के तहत शौचालय निर्माण हेतु देय राशि रू. 12,000/-
- महात्मा गाँधी नरेगा योजना के साथ कन्वर्जेन्स के तहत निम्नानुसार 90 अकुशल मानव दिवस का पारिश्रमिक (राशि रू.-17,280/-) देय है।

आवास निर्माण स्तर	**देय मानव दिवस**	**राशि रू.**
नीवं से कुर्सी स्तर तक का कार्य पूर्ण होने पर	28	5,376
कुर्सी स्तर से लिन्टल लेवल तक कार्य होने पर	24	4608
लिन्टल लेवल से छत डालने तक कार्य होने पर	10	1920
फिनिशिंग कार्य हेतु	28	5376

- महात्मा गाँधी नरेगा योजना के प्रावधान अनुसार अनुमत कार्य भूमि सुधार, कृषि/ उद्यानिकी, लघु सिंचाई के कार्य कराये जा सकते हैं।
- महात्मा गाँधी नरेगा योजना के प्रावधान अनुसार पात्र लाभार्थियों के

आवास के साथ-साथ पशु छायागृह का निर्माण भी कराया जा सकता है।

- दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति/सौभाग्य योजना के प्रावधानों के अनुसार विद्युत कनेक्शन।
- जन स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग द्वारा क्रियान्वित छठउथ्र्झके प्रावधानों के अनुसार स्वच्छ पेयजल सुविधा उपलब्ध।
- उज्ज्वला योजनान्तर्गत गैस कनेक्शन।

तालिका 5 (निचे देखे)

- विभिन्न आवासीय योजनान्तर्गत वर्ष 2015-16 तक स्वीकृत/प्रगतिरत आवासों में से वर्ष 2016-17 में 226049 आवास पूर्ण कराकर 106050.70 लाख रुपये व्यय किये गये।
- प्रधानमंत्री आवास योजना- ग्रामीण का राज्य में विधिवत् शुभारम्भ माननीय मुख्यमंत्री, एवं केन्द्रीय मंत्री, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा 18 मार्च, 2017 को किया गया है।
- वर्ष 2016-17 में 2,50,258 लक्ष्यों के विरूद्ध 2,50,008 आवास स्वीकृत।
- वर्ष 2017-18 में प्रधानमंत्री आवास योजना-ग्रामीण के अंतर्गत 223629 के लक्ष्यों के विरूद्ध 214843 आवासों की स्वीकृति जारी की गई। माह दिसम्बर, 2017 तक प्रधानमंत्री आवास योजना-ग्रामीण अन्तर्गत 1,31,076 आवास पूर्ण कराये गये।
- योजनान्तर्गत 2017-18 में माह दिसम्बर, 2017 तक केन्द्र एवं राज्य सरकार से कुल 371818.68 लाख रूपये की प्राप्तियों के विपरीत कुल 262365.180 लाख रूपये व्यय किये गये हैं।
- ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा योजनान्तर्गत प्रगति के दृष्टिगत राज्य को 1.43 लाख के अतिरिक्त लक्ष्य (वर्ष 2018-19 के लक्ष्यों के विरूद्ध) माह दिसम्बर, 2017 में आवंटित किये गये है। 2017-18 में माह दिसम्बर, 2017 तक कुल व्यय राशि रूपये 262365.18 लाख में से 163554.12 लाख रूपये अनुसूचित जाति/जनजाति के लाभार्थियों पर व्यय किये गये हैं। माह दिसम्बर, 2017 की स्थिति के अनुसार कुल व्यय में से अनुसूचित जाति/जन जाति हेतु व्यय का प्रतिशत 62.33 प्रतिशत है।[11]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. संयुक्त राष्ट्र (1949), यूनाइटिड नेशंस यूनिवर्सल डिक्लेरेशन ऑफ ह्यूमन राईट्स, 1948.http://watchlist.org/wordpresas/wp-content/uploads/Universal-declaration-of-human-rights.pdf
2. बावेल, बसन्ती लाल पंचायतीराज एवं ग्रामीण विकास योजनाएँ
3. वार्षिक प्रतिवेदन 2017-18, ग्रामीण विकास मंत्रालय,भारत सरकार, नई दिल्ली
4. उपर्युक्त, वार्षिक प्रतिवेदन 2017-18
5. हैण्डबुक ऑफ स्टेटीस्टिक्स ऑन इण्डियन इकोनॉमी, 2017-18, भारतीय रिजर्व बैंक
6. भारत 2016, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, 2016
7. उपर्युक्त, भारत 2016
8. आर्थिक समीक्षा, 2017-18, आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय, राजस्थान, जयपुर
9. उपर्युक्त, आर्थिक समीक्षा, 2017-18
10. वार्षिक प्रतिवेदन, 2017-18ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज विभाग, राजस्थान, पृ.सं. 21
11. उपर्युक्त, वार्षिक प्रतिवेदन, 2017-18

तालिका 1: ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या 2011-भारत एवं राजस्थान

	कुल	ग्रामीण			शहरी		
		कुल	पुरूष	महिला	कुल	पुरूष	महिला
भारत	1210854977	833748852	427781058	405967794	377106125	195489200	181616925
राजस्थान	68548437	51500352	26641747	24858605	17048085	8909250	8138835

स्त्रोत: भारत की जनगणना 2011

तालिका 2: अनुसूचित जाति/जनजाति की जनसंख्या 2011

अनुसूचित जाति			अनुसूचित जनजाति		
कुल	ग्रामीण	शहरी	कुल	ग्रामीण	शहरी
3	4	5	3	4	5
12,221,593	9,536,963	2,684,630	9,238,534	8,693,123	545,411

स्त्रोत: भारत की जनगणना 2011, पृ.सं. 30 एवं 36

तालिका 5: भौतिक एवं वित्तीय स्थिति

वर्ष	भौतिक लक्ष्य	स्वीकृत	निर्मुक्त राशि(राशि लाख रू. में)		
			केन्द्र मद	राज्य मद	कुल
2016-17	250258	250008	70048.07	10000.00	80048.07
2017-18	223629	214843	201071.98	170746.70	371818.68
कुल	473887	464851	271120.05	180746.70	451866.75

स्त्रोत: वार्षिक प्रतिवेदन, ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज विभाग, राजस्थान, पृ.सं. 21

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Bacteriological Examination of Tapti River Water in Burhanpur (Madhya Pradesh, India)

Sheetal Patel*

Abstract - The Tapti river quality at Burhanpur was studied by using Bacteriological examination water borne pathogens like bacteria viruses contaminate both surface & ground water. Sample was collected from 10 different location total 100 samples were collected (Apr-June-2013) the present research work bacteriological study recorded high bacterial count by SPC and MPN method. Isolation & deification studies more pathogenic bacteria were isolated salmonella & shigella species were isolated on S.S. Agar Media. The enumeration of total viable count aerobic heterotrophs total coli form & Fecal coli form are aerobic & facultative anaerobic rod shaped gram negative non spore forming bacteria were observed. Highly resistance flora were observed by Antibiotic Sensitivity Test of isolated pathogenic bacteria.

Introduction - Water being a good solvent is prone to physico-chemical & microbial contamination, Municipal sewage both treated & untreated is often released in to the receiving water bodies, which influence water quality(R.J.Burn andR.D.Vaughan1966) and Idol immersion is also contaminate the river.(Ujjania and Multani 2011)

Water borne disease continue to present challenge to public health official & water suppliers water borne pathogens like bacteria & viruses contaminate both surface & ground water where as parasite protozoa predominately in surface water.(WHO,1993) In devolving countries 80% Infection diaseases are water borne.(Manja and Kaul,1992)

Pollution of water is one of the serious problem in all over the world. It is mainly because of increasing & rapid growth of population & Industrialization.(Ho and Hui,2001) The waste discharge from sewage industry agriculture & anthropogenic activities are seriously polluting the water which promote the growth of pathogenic micro-organism. water the most vital source for all kinds of life on this planet.(Krishna MJayashankar 2012)

The discharge of waste generated due to developmental activities in to the river at various points has resulted in the degradation of the water quality of the river(R.K.Tiwary2005)

The most common water borne pathogens are typhoid, cholera, shigellosis viral associated diarrhoea & infectious hepatitis.(Pelczar etal,1988)

According to WHO 1998 report there were estimated 4 billions cases of diarrhea and 2.2 million deaths annually (Chan etal 2007). The quality of water must be checked before use because consumption of unsafe water leads to the major cause of disease. The various studies on river were carried out based on bacteriological parameter the present work was carried out on Tapti river at Burhanpur (M.P.).

Material & Method - Water sample were collected from 10 different location of Tapti river (Apr-June-2013) 100 samples were collected 10 sample from one location.

Sample location of Tapti river

S.	Source	Sample location	Location Code
1	Tapti river	Before Samshan ghat	R1
2	Tapti river	Shamshan ghat	R2
3	Tapti river	Nagzhiri ghat	R3
4	Tapti river	*Rajghat*	R4
5	Tapti river	Jainabad bridge	R5
6	Tapti river	Satiyara ghat 1	R6
7	Tapti river	Satiyara ghat 2	R7
8	Tapti river	Big Pool	R8
9	Tapti river	Small pool	R9
10	Tapti river	After small bridge	R10

Bacteriological Analysis - Bacteriological Studies were conducted to know the microbial quality of Tapti river water using laboratory manual Aneja 2003 Total plate count method was used for isolation of bacteria.The bacteria were isolated. The water sample of 0.1 ml & 1.00ml were inoculated by pour plate method by using standard nutrient agar media.

The plates were incubated in bacteriological incubator for 24 hours. After incubation the total number of colonies were counted & recorded.

Table-I Heterotrophs on different Sites

Sites	I	II	III	IV	V	VI	VII	VIII	IX	X
R1	10^1	10^2	10^3	10^3	10^2	10^2	10^2	10^1	10^1	10^1
R2	105	104	10^3	10^3	10^2	10^3	10^2	10^3	10^2	10^3
R3	104	105	10^3	105	104	10^3	10^3	104	104	104
R4	107	106	105	107	108	107	105	106	107	107
R5	107	105	107	106	105	107	108	106	107	106
R6	107	106	108	105	106	105	107	107	107	107
R7	108	107	106	107	106	107	106	106	106	107
R8	10^3	10^2	10^1	10^3	10^1	10^2	10^1	10^2	10^3	10^1
R9	10^3	10^1	10^2	10^3	10^2	10^1	10^3	10^2	10^1	10^1
R10	10^1	10^2	10^1	10^2	10^3	10^1	10^2	10^3	10^1	10^2

*HOD (Microbiology) Prof. Brijmohan Mishra Institute of Medical & Technical Sciences, Burhanpur (M.P.) INDIA

Most probable number tests were performed by using multiple tube fermentation technique. Which includes presumptive coli forms test performed for water samples which was collected and then double strength (2) and single strength lactose broth was prepared broth was sterilized along with glass wares, 5 test tubes were labeled as 10, other 5 as 1 and another 5 as 0.1 to 10 (2x) 10ml sample was added to 1 (1x) test tubs 1ml of sample and to 0.1 (1x) tubes 0.1 ml sample was added. Then the tubes were incubated at 37^0C for 48 hrs color change and gets formation was observed.

Confirmed Test - The positive result of presumptive coli form test were taken and then sterile brilliant green lactose broth was inoculated with all positive presumptive tubes. Then incubated at 37^0C for 48 hrs and observed for gas production.

Completed Coli form test - The positive results of Confirmed test were taken for complete test & EMB agar media was prepared and sterilized along with glass wares at 121^0C for 20 min media was poured to Petri plate and allowed to solidity plates was inoculated with positive tubes of confirmed test by streak plate method. Then Incubated at 37^0C for 24 hours in inverted position and observed for coli form colonies brilliant green lactose broth and nutrient agar slants were inoculated with colonies on EMB agar plate and incubated at 37^0C for 24 hours Brilliant green lactose broth tube was observed for gas production. Colonies on nutrient agar slant was gram stained and observed for its gram reaction and cell morphology.

Isolation & Identification was done on special medias(selective media) maccokey media salmonella shigella media, Eosin ethylene blue agar (EMB) & MSA media.

Salmonella sp and shigella sp colonies were isolated on salmonella shigella (SS) Agar media and it was prepared, sterilized along with glass water at 121^0C for 20 min using autoclave and water sample was mixed thoroughly by shaking and then 1ml of sample was transferred to each Petri plates. Cooled media was poured to different Petri plates and sample was mixed by gentle swirling. Then plates were allowed to solidify and incubated at 37^0C for 24-48 hr and observed for growth of colonies (Aneja 2003).

Table-II Isolation of Bacteria on Selective media (Average of locations)

Name of M.O.	I	II	III	IV	V	VI	VII	VIII	IX	X
Coliform	107	107	106	107	107	106	107	106	107	107
E.coli	105	106	105	104	105	105	106	105	105	106
Salmonella	104	105	104	105	105	104	104	105	104	104
Shigella	105	10^3	10^3	10^2	10^3	10^2	10^3	10^2	10^3	10^3
S. aureus	26	27	25	27	25	26	27	26	27	27

Table-III (see in last page)

Isolated & Identified micro-organism that is coli form, Ecoli, salmonella, Shigella & staphylococcus aureus antibiotic sensitivity test was done.

Antibiotic Sensitivity Test - Susceptibility test were performed by Bauer-Kirby (Bauer etal-1966) disc diffusion by using Muller Hinton agar The results were expressed as susceptible/resistant according to criteria developed by national committee for clinical laboratory standard (NCCLS 2002).

The inoculums for antibiotic sensitivity testing was prepared in a broth. Each of the isolates was uniformly & aseptically inoculated in to a different Muller-Hinton agar plats by spread plate method using sterile cotton wool. A sterile cotton wool was allowed to soak in the broth culture squeezed by the slide of the bottle before streaking over the sensitivity plates. The appropriate antibiotic multi discs were aseptically placed on the agar using sterile forceps. The plates were then incubated at 37'C for 24 hr After incubation the zone of clearance of organism around the disc were also measured & recorded.

Table-IV (see in last page)

Result & Discussion - The results of this research work have been shown Standard plate count- In Table I Heterotrophs are found more at location R4,R5,R6 and R7and these location are present mid of the city. More activity was here like washing cloths, bathing,immersion of idols many temples are located here the river.

Result comparison the Ganga river of Bihar (R.K.Tiwary 2005) that reasons these location Are more pollution

Table II- shows that coliforms bacteria are found more at each location means the river is more contaminated.

Table III- shows that Total coli form in water sample of Tapti river were estimated through Multiple tube dilution method TC was observed in the range of 1400-18000 MPN/100ml The high value of TC observed at location R5 and R6(Janabad bridge and Satiyaraghat)this result comparise Ganga water Patna(Ram 2007) and that reason this water may not be useful for domestic purpose without conventional treatment.

Table IV- shows that all Gram negative and Gram positive bacteria were resistance to Chloramphenicol, Oflaxacin, Piperacillin,Gentamicin with 100%.Comparise that Assessment of antibiotic(A.U Nkang 2009)that means more pathogenic bacteria were observed.

Conclusion - Bacteriological studies of the Tapti river water sample indicates higher population of microbial fauna indicates that the water is contaminated The Coliform (MPN/ 100ml) in the river water is high. One remarkable point is that the pollution load is significantly high at the mid location in comparison to the water at side location. That contaminated water can not be used for organized bathing and as a source of drinking water without conventional treatment.

References:-

1. Alonso J.L. Soriano A. Amoros I and ferre MA:1998

quantitative determination of Escherichia coli and fecal coli form in water using a chromomeric medium J Environ Sci Health A33(6) 1229-1248.
2. A.O.Nkang,I.O.Okanko(Nov2009)Assessment of antibiotics susceptibility profiles of Some selected clinical isolates from laboratories in Nigeria Journal of Microbiology Vol1(2)pp019-026.
3. American public Health association (APHA): 1998 standard methods for the examination of water and waste water 19thed Washington USA pp 336-556.
4. Chan C.L. Zalifar. M.K.& Norrakian A.S. (2007): Microbiological and physicochemical quality of drinking water. The Malaysian Journal of Analytical science, 11(2) pp 414-420
5. ICMR (1975) Manual of standards of quality for drinking water supplies special report, 44, p 27.
6. J.E.Mckee and H.W.Wolf,"Water quality criteria", State Water Quality Control Bord, Sacramento, Calif. Publication No.3-A,1963.
7. Krishna M. Jaya-Shankar International Journal of Environmental sciences volume 2 No 4, 2012
8. N.C. Ujjain and Azhar A. Multani/ Research journal of Biology(2011), Vol 01, Issue 01, PP 11-15.
9. Pelczar,M.J.Chan,E.C.S.,Krieg,N.R.(1988):Heavy metals and their compound,Microbiology,5th edition, Mc.Graw-Hill Book Company,NewYork,PP.497-498.
10 . Rajkumar N.S. Nongbri B and Patwardhan A.H. (2003) Physiochemical and microbial analysis of umiam (Barapanl) lake water. Indian Journal of Environ Prot, 23(6) pp 633-639.
11. Ram,Parasharam(Jan2007) Ganga water Quality at Patna with reference to physicoss-chemical and Bacteriological parameter.J.Environ Sci and Engg vol.49,No1,p.28-32

Table-III Total coloform/100ml in Tapti River different location

Location	I	II	III	IV	V	VI	VII	VIII	IX	X
R1	1700	2600	1300	1400	2100	2100	1700	2100	2100	1400
R2	1400	1700	1300	2100	2600	1300	2600	1700	2100	1400
R3	2600	2200	3400	4600	3400	3300	4600	4900	3300	4600
R4	22000	24000	22000	24000	25000	25000	28000	22000	24000	22000
R5	180000	140000	120000	140000	180000	120000	120000	140000	180000	120000
R6	120000	180000	140000	150000	180000	140000	140000	120000	180000	140000
R7	22000	24000	22000	17000	18000	17000	18000	22000	18000	18000
R8	3100	3400	2600	3400	3300	1400	3400	3300	3100	3300
R9	2200	2600	2100	2600	3300	2100	2600	2600	3100	3300
R10	1400	1300	1700	2100	1400	1700	2100	1700	2200	1400

Table-IV-Antibiotics susceptibility test of micro-organism which isolated from Tapti River water

S.	Antibiotics (Mcg)	Coli form	E-Coli	Salmonella	Shigella	Staphylococcus aurous
1	Ampicillin(20)	R	S	R	R	R
2	Cefotaxime (30)	R	R	R	S	R
3	Piperacillin(100)	R	R	R	R	R
4	Chloramphenicol(30)	R	R	R	R	R
5	Ciprofloxacin	R	R	R	R	R
6	Meropenem(30)	S	S	S	S	S
7	Tetracycline(30)	S	R	R	R	S
8	Ofloxacin (5)	R	R	R	R	R
9	Gentamicin(10)	R	R	R	R	R
10	Imipenem	S	S	S	S	S

****

Web Technology for Learning and Training (Education)

Syed Asif Ali*

Abstract - The Internet has enabled a great amount of information to be readily available and easily accessible. It has promoted several changes in the world, including in the education area. Nowadays, there is a great amount of educational and training systems, which provide different functionality according to specific administrative, pedagogical and technologicalapproaches. Authoring tools, content repositories, evaluation and assessment, curriculumdesign and collaborative tools are some pieces of this educational "puzzle". This paperdescribes a generic architecture for educational and training systems from the softwaredevelopment point of view.Then this architecture is discussed according to web technology,enabling a betterunderstanding of the involved technological aspects of learning(educational) and training systems.

Introduction - There are three main aspects that support education: administration, pedagogy andtechnology, which through a variety of combinations imply on different educational andtraining systems, with different approaches. Whenever there is a new strategy, method ortechnique in one of these aspects, it is expected its propagation to learning and trainingsystems.

In addition, the development of the web and its application on learning and trainingenvironments has led to the development of new learning theories and philosophies. This"world of differences" makes difficult the cooperation of learning and training partners inorder to allow reuse of e-learning content and services.

To enable learning content reuse organizations such as IEEE, IMS Global LearningConsortium and ADL have worked to develop technical standards, recommended practicesand guides for learning technology. In general, the main focus is on describing learningcontent.

To deal with services interoperability, a draft standard proposal, IEEE LearningTechnology Systems Architecture (LTSA) specifies a "high level architecture forinformation technology-supported learning, education, and training systems". However,its focus is to identify the objectives of human activities and computer processes and theirinvolved categories of knowledge. It does not provide a generic view of softwarecomponents and services of learning and training systems.

In this paper we present a generic architecture for learning and training systems. Thenthis architecture is discussed according to web technology. With this discussion, weexpect to help understanding and clarifying approaches of existing learning process andtraining systems; assist researchers to develop more innovative web systems; and assistsoftware and hardware developers to improve commercial learning process and training products based on the web technology.

This paper is organized as follows: Section 2 presents a generic architecture for educationand training systems. Section 3 focuses on the use of web technology in the architecture.Then, Section 4 presents some final remarks.

A generic architecture - In this section we present a generic architecture for learning process and training systems (Figure 1).

As stated earlier, learning and training activities consider administrative, pedagogical andtechnological aspects. Therefore, there should be general guidelines for these threeaspects in order to support learning. The three reference models represent meta modelsand business rules that could assist the automation of several processes and could alsoguide the execution of most of the learning and training tasks.

Figure 1 (see in last page)

Before starting the development of any learning or training program, the need forinstruction should be clearly identified. In general it implies on conducting needsassessment. The users can perform needs assessment through the (read only) access tothe database, finding information on which topics students need more material, whatprofessional or academic goals need further/deeper support etc. Then, after choosing anew learning/training goal, it is necessary to acquire knowledge about the audience. Itcan be supported by a learner model and usually consists of inserting data into thelearner's database. This learner model can be as simple as personal identification data oras complex as the PAPI Learner model including maintenance during learning process.

* Vice Principal & HOD (Computers) Prof. Brijmohan Mishra Institute of Medical and Technical Sciences, Burhanpur (M.P.) INDIA

For the execution of the other activities there is a role manager that is responsible foridentifying the user according to a learning/training role and managing his/her interactions with the system.

After defining the overall goal of an educational/training program, the objectives should be defined. According to the course model and based on the pedagogy reference model,the system should support the definition of the sequence of learning content. This taskcould also imply on the definition of alternative learning/training paths based on differentcharacteristics (skills, previous knowledge etc.) of the learners.

Notice that it is not mandatory that a professor/teacher be the only responsible for defining the learning/training sequence paths. In some cases this could be up to thestudent to define his/her own objectives and sequences of learning content.

Then, before developing content material, it is necessary to select media. In some cases the same content is developed in diverse media to accomplish different learning abilities(visual, auditory, sensitive etc.).

On content development it is possible to perform media selection, authoring and/or composition and respective metadata edition, inserting data and metadata on the contentmaterial repositories as well as possibly on the course repository (when it is related to aspecific course).

Developing learning content is in most cases an authoring task that can involve several different tools such as html authoring tools, word processing, presentation tools, videorecording and edition, simulation development etc. Other authoring method is related togrouping together pieces of information objects. It is even more common when thinking onreusable learning objects. There is also the description of essential metadata related tolearning content in order to allow faster search and easier access. Notice that authoringand composing tasks could be automated according to some special rules, allowing ondemand learning. In addition it could be possible to generate automatically metadata from the learning material.

In the traditional model to teaching, information processing or symbol-processingapproach the key concept is that a teacher transmits a fixed group of information to thelearners through an external representation or medium. The learners develop their ownimage and use it to construct new knowledge based on their own previous knowledge andabilities.

Learning process and training systems based on this approach (traditional model), usuallyfocuses on the access to content material in a previously specified sequence. Therefore it involves the access to the content and visualization procedures. It is possible to visualize learning content through the (read only) access to the course database. However theanswer must follow visualization steps before presenting the content. At the visualization steps it is important to consider aspects such as user interface usability and informationpresentation, content hypermedia navigation and education personalization andadaptation.

Nowadays, there is a great movement towards personalization and adaptive aspects. Brusilovsky cites the following adaptation technologies in web-based educational systems:hypertext components, adaptive sequencing, and adaptive navigation support, problemsolving support, intelligent solution analysis and adaptive presentation. The goal ofadaptation and personalization is to provide content according to the users' background and abilities.

The other main approach to teaching is based on constructivist principles, in which learners actively construct an internal representation of knowledge by interacting with thematerial to be learned. There is a high degree of interactivity among all the participants.

Learning and training systems based on this second approach usually focuses oninteractivity and, therefore on groupware concepts. "A group support system needs toprovide support for Communication (i.e., information exchange), Coordination (i.e.,process definition and scheduling) and Cooperation (i.e., working on shared tasks andaccessing/manipulating shared data)." Groupware activities result on insertions in thecourse and interaction databases.

In addition, there are the assessment tools that can be incorporated in the learning/training system in order to evaluate the students. Although assessment activitiescould be supported by groupware infrastructure, it is interesting to consider assessment tools that could help teachers and students in the learning process. These systems couldprovide automatic feedback or triggering message or even adaptive assessment. In thegeneric architecture, assessment results on storing data on the course database.

Finally, security tasks and overall evaluation are present on all the activities of the architecture. Course evaluation should lead to a revision on new iterations of the coursewhile the evaluation of the educational and training system should lead to its development and improvement.

This generic architecture (Figure 1) should provide the necessary functionality to deal with learning and training requirements.However, each environment is different in the sensethat it can adopt different administrative, pedagogical and/or technological strategies,methods and techniques. Therefore, each instance of the generic architecture can use adifferent set of components that can by themselves incorporate different learningapproaches.

Furthermore, as new administrative, pedagogical and technological strategies, methods and techniques become available, other components can be added to or removed from thegeneric architecture.

Web technology applied to the architecture - Since we are interested on web technology in learning and training, in this section wediscuss the components and services of the generic architecture according to webtechnology.

In a real-world deployment of architecture for learning and training systems based on the web technology it is

important to provide loosely coupled, component-oriented and cross technology implementations. Web services-based applications provide suchcharacteristics.

Manes some says that a Web service represents a unit of business, application, or systemfunctionality that can be accessed over the Web. Web services fulfill a specific task or a set of tasks. They can be used alone or with other Web services to carry out a complexaggregation or a business transaction.

However, bringing semantics to web services is an essential step. Therefore, in the development of web based learning process and training systems it would be interesting toconsider architectures such as those proposed.

A web service conceptual architecture is composed of data and applications (containing customer database, legacy database, application database, and ontology server with arepository and workflow engine), web services components (centralized coordinator andmanager, B2B protocol engine, discovery, negotiation, deployment, transport, security,audit/tracking, trading partner manager, semantic transformation, adaptors and webservice, goal, ontology and workflow manager), and front-end tools (modeling anddeployment environment, simulation, and administration, management and configuration).

The learner database of the generic architecture would be equivalent to the customer database. However, it should be based on a learner model such as that can be based onXML and would structure the learner database. Notice that learner data can be founddistributed over the web (and institution/enterprise systems) and therefore an integrated view of structured information is not so straight forward.

The content material ismultimedia so its database should allow the storage of multimedia objects. In addition, content material can be highly distributed and hetero-geneous although it is desirable a common metadata definition/structure based on some standard proposal.

The course and interaction databases should also follow a well-defined standardized conceptual framework, but since they are part of course implementation processes theyare usually embedded in education and training systems according to proprietarysolutions. The three reference models as well as the other database models could beimplemented / managed through the use of the ontology technology.

Since we are considering the web-based education and training, besides authoring content it is also necessary to publish it according to predefined access' rights. If thecontent development is based on composition, it will be necessary to discover alreadypublished content, compose new content and then publish it. Notice that course definitionsare also part of the services' functionality, such as defining a new courseaccording to the available content, structuring and managing enrolling procedures etc.

The course implementation focuses on content access and visualization, groupware activities and assessment. Content access is already considered in the web-services architecture. For enabling content visualization, several services such as those related topersonalization and contextual navigation throughout the content should be provided.

Content hypermedia navigation could be based on guidelines or patterns. Therefore, it is important to define node units and navigational contexts, to provide background information to the participant without distracting his/her attention, to provide activereference in order to keep the reader informed in which concept he/she is, what conceptshave been explored and those that are still missing.

Other services for enabling the real presentation of the content, such as video and sound plugging as well as video synchronization and simulation procedures must also beconsidered. Content visualization is tightly related to the content development proceduresand content characteristics, especially content media. At the groupware functionality, forthe communication tasks one can observe asynchronous and synchronous events, suchas email, mail list, newsgroup, chat, instant message (peer contact), phone talk (voice overip), teleconferencing, etc.

Coordination events include lesson plan, calendar, agenda, scheduling, workflow, contribution-track, follow up reports etc. Cooperation events include co-authorship, groupdefinition and related management accessibility, web reference, bibliography, documentation, download, etc.

Assessment includes task assessment, multiple choice, true/false, fill in questions etc. Teachers who are content-oriented (i.e., they think it is important to cover the syllabusand to ensure that students acquire the correct information and ideas) are likely to seeassessment as designed to demonstrate detailed factual knowledge of the syllabus.Theyalso tend to consider the outcomes of learning as being almost entirely the responsibilityof the students themselves, depending on their ability and motivation.

By the other hand, teachers who are student-oriented (i.e., they are more concerned with helping students to develop personal understanding and more sophisticated conceptions,and design their teaching and assessment accordingly) tend to use more varied methodsof asses-sment and to be aware of their own responsibility for enco-uraging students todevelop deep levels of understanding.

"Assessment which encourages students to think for themselves – such as essay question, applications to new contexts, and problem-based questions – shifts students in a class towards a deep approach. In contrast, procedures perceived by students as requiring nomore than the accurate reproduction of information lead to a predomina-nce of surfaceapproaches".

Security is already considered in the web-services architecture, although some issues such as authorship can be more complex. Needs assessment and audience identificationcan be seen as common marketing activities. Evaluation and role management are alsogeneral functions / services.

Conclusion - This paper presented a generic architecture

for learning process and training systems and discussed it according to web technology. The web-based learning and training architecture enables a better understanding of the involved technological aspects oflearning process and training systems, allowing the identification of possible componentsthat may be object of a standardization process and thus facilitates e-learning software development and use.

Through the work presented in this paper we expect to assist researchers to develop more innovative web-based educational systems; and assist software and hardware developers to improve commercial learning and training products based on the web technology.

From the generic architecture we are specializing an e-learning environment. However, much work remains to be done such as in the context of the web services architecture, inthe definition of learning related ontologies and services, and in the automaticcoordination of the services throughout learning stages.

We are trying to start with a simple example, but there are several issues still under research. We are working on different issues such as web services architecture andimplementation, defining a groupware metadata proposal for e-learning, definingontologies for the reference models and other database models, working on course definitions, defining hypermedia characteristics in e-learning, working on a methodology for developing learning objects and making groupware considering users' perception.

References :-

1. Streibel, M.J.: Instructional plans and situated learning. G.J. Anglin (Ed.), *Instructional technology, past, present, and future* (Englewood, CO: Libraries Unlimited, 1991) 117-132
2. Savery, J.R., Duffy, T.M.: Problem based learning: An instructional model and its constructivist framework. *Educational Technology*, 35(5), (1995) 31-38.
3. Perraton, H.: A theory for distance education. D. Sewart, D. Keegan and B. Holmberg (Ed.), *Distance education: International perspectives* (New York: Routledge, 1988) 34- 45.
4. IMS Global Learning Consortium, Inc.: IMS Learning Resource Meta-Data Information Model – Version 1.2.1 Final Specification. (28 September 2001)
5. Advanced Distributed Learning Initiative: Sharable Content Object Reference Model (SCORMtm) – Version 1.2 – The SCORM Overview. (1 October, 2001)[6] Learning Technology Standards Committee of the IEEE: Draft Standard for Learning Object Metadata.Institute of Electrical and Electronics Engineers, Inc. (15 July 2002)
7. Learning Technology Standards Committee of the IEEE: Draft Standard for Learning Technology – Learning Technology Systems Architecture (LTSA) – Draft 9. (30 November 2001)
8. Learning Technology Standards Committee of the IEEE: Draft Standard for Learning Technology – Public and Private Information (PAPI) for Learners (PAPI Learner) – Draft 7. (28 November 2000)
9. Plekhanova, V.: Engineering the Infrastructure for Online Distance Education. Proceedings of the International Conference on Information Society in The 21st Century: Emerging Technologies and New Challenges,Fukushima, Japan (2000) 610-614.
10. Barritt, C., Lewis, D.: Reusable Learning Object Strategy – Definition, Creation Process and Guidelines for Building – Version 3.1. Cisco Systems, Inc. (22 April 2000)
11. Seamans, M.C.: New perspectives on user-centered design. Presentation at the Interchange Technical Writing Conference, Lowell, USA. (1990)

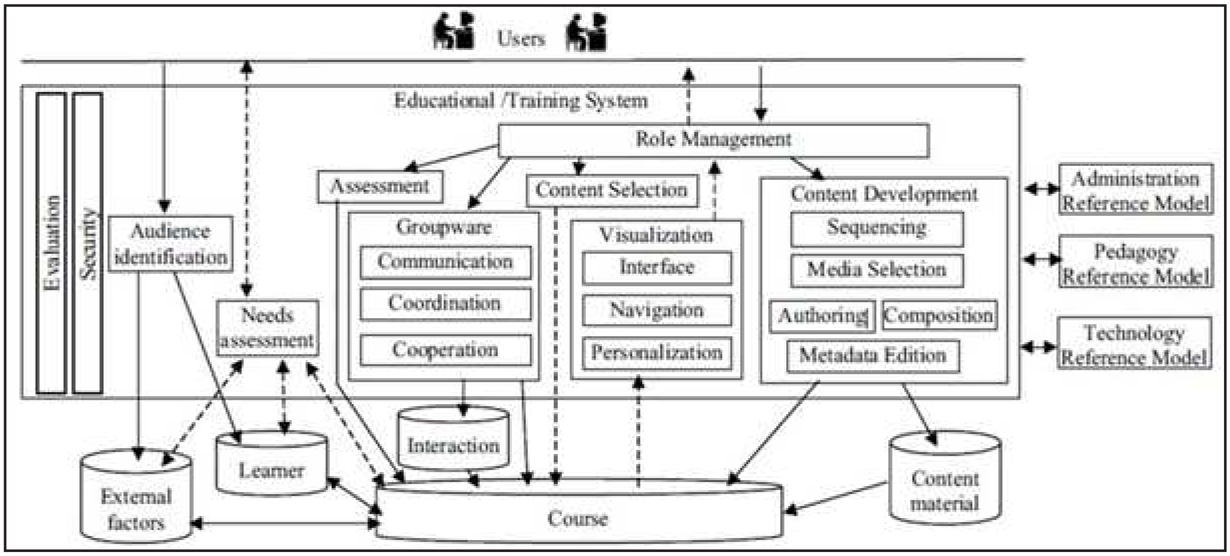

Figure 1: A generic architecture for learning process and training systems

****

विशिष्टाद्वैत वेदान्त में आत्मतत्व निरूपण

डॉ. दिनेश कुमार कौशल *

प्रस्तावना – विशिष्टाद्वैत वेदान्त में रामानुज चित्, अचित् और ईश्वर इन तीन तत्वों को मानते हैं। चित् चेतन भोक्ता जीव है। अचित जड़ भोग्य जगत है। ईश्वर दोनों का अन्तर्यामी है। चित् और अचित् दोनों नित्य और परस्पर स्वतंत्र द्रव्य हैं, किन्तु दोनों ईश्वर पर आश्रित हैं और सर्वथा उनके अधीन हैं। दोनों स्वयं में द्रव्य हैं, किन्तु ईश्वर के गुण या धर्म हैं। दोनों ईश्वर के शरीर हैं और ईश्वर उनका अन्तर्यामी आत्मा है। जीव अपने शरीर का आत्मा है, किन्तु ईश्वर का शरीर है, जो जीव का भी आत्मा है। शरीर और आत्मा का संबंध अपृथकसिद्ध है जो आन्तरिक अपार्थक्य संबंध है। यही संबंध द्रव्य और गुण में, अंगी और अंग में होता है और एक स्वतंत्र द्रव्य तथा तदाश्रित अन्य द्रव्य में भी होता है। रामानुज समवाय संबंध को नहीं मानते, क्योंकि वह बाह्य संबंध है और उनमें अनवस्था दोष आता है। रामानुज के अनुसार शरीर वह है जो आत्मा द्वारा धारण किया जाए(धार्य), नियमन किया जाये(नियाम्य) और अपनी अर्थ सिद्धि के लिए साधन के रूप में प्रवृत्त किया जाये(शेष) तथा 'आत्मा' वह है जो शरीर को धारण करे(धर्ता), नियमन करे(नियत्त) और जो साधन रूप में प्रवृत्त होने वाले शरीर का साध्य हो। यह सब चेतन और अचेतन विश्व परमपुरूष ईश्वर द्वारा नियाम्य, धार्य तथा शेष होने के कारण उनका शरीर है। ईश्वर चिद्चिद्विशिष्ट है। चिद्चिद् ईश्वर के विशेषण, धर्म, गुण, प्रकार, अंश, अंग, शरीर, नियाम्य, धार्य और शेष हैं तथा ईश्वर उनके विशेष्य, धर्मी, द्रव्य, प्रकारी, अंगी, शरीरी या आत्मा, नियत्त, धर्ता और शेषी हैं। चित् और अचित् दोनों ईश्वर के समान या भिन्न कोई अन्य स्वतंत्र तत्व नहीं है, किन्तु ईश्वर में स्वगत भेद विद्यमान है, क्योंकि उनका शरीर नित्य एवं परस्पर भिन्न चित् और अचित् तत्वों से निर्मित है। ईश्वर का अपने चिद्चिद् शरीर से संबंध स्वाभाविक और सनातन है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में तत्वमीमांसीय आधार पर निरूपित सामांजस्य के रूप में मूल ग्रन्थों के के अतिरिक्त पत्र-पत्रिकाओं के अध्ययन को समाहित किया गया है।

समस्या – मानव में अनेक प्रकार की उत्पन्न होने वाली भ्रान्तियो के परिणाम मानव की विकृति स्थिति है। इस हेतु मानव का सामाजिक स्तर बहुत ही निगण्य दिखाई देता है। यह योग से न जुडने के कारण उत्पन्न हो रही है।

उद्देश्य – चिद्चिद्विशिष्ट ईश्वर या ब्रम्ह का उपनिषद में प्रतिपादन उपलब्ध है। 'श्वेताश्वतर उपनिषद' के अनुसार 'अज, सर्वज्ञ ईश्वर, अज, अल्पज्ञ भोक्ताजीव और अजा भोग्या प्रकृति, ये तीनों ब्रम्हा है। उसी उपनिषद का वचन है- यही जानने योग्य है कि भोक्ताजीव, भोग्या प्रकृति और प्रेरिता ईश्वर, ये तीनों ब्रम्हा हैं।' बृहदारण्यक उपनिषद में 'ब्रम्हा को सूत्र' बताया है जो सब जीवों और पदार्थों को आबद्ध किये है। यह अन्तर्यामी अमृत आत्मा है जो जड़, प्रकृति और चेतन जीवों में अन्तर्यामी रूप से विराजमान रहकर उनका नियमन करता है, जड़ प्रकृति और चेतन जीव इस आत्मा के शरीर हैं।' जिस प्रकार रथचक्र में डंडे बँधे रहते हैं, उसी प्रकार जीव और जगत परमात्मा में आबद्ध है। परमात्मा अग्निवत है, जीव जगत स्फुलिंगवत है। जीव और जगत सत्य है। परमात्मा उनका भी सत्य है, वह सत्यों का सत्य है।

समाधान – रामानुचार्य के विशिष्टाद्वैत दर्शन में आत्मतत्व को तीन तत्वों (चित्, अचित् तथा ईश्वर) में से चित् तत्व माना गया है। चित् या चेतन जीव यद्यपि ईश्वर का विशेशण, प्रकार या गुण है तथापि वह स्वयं चेतन द्रव्य है। जीव एक नहीं अनेक हैं। जीव नित्य, जन्म-मरण रहित और अणुरूप है। वह शरीर, प्राण, इन्द्रिय, मन, अहंकार और बुद्धि से विलक्षण है। वह स्वप्रकाश चेतन द्रव्य है और ज्ञानाश्रय है। वह अपने धर्मभूत ज्ञान का आश्रय है। साथ ही वह नित्य, स्वचेतन, ज्ञाता या दृष्टा है। अतः ज्ञान स्वरूप भी है। ज्ञान उसका आवश्यक, अनिवार्य और अपृथकसिद्ध स्वरूप है। ज्ञान उसका आवश्यक धर्म भी है और उसका अपृथक स्वरूप भी है। अतः उसे एक साथ ज्ञान-स्वरूप और ज्ञानाश्रय कहा जाता है। वह स्वभाव से आनन्दस्वरूप है। वह परिवर्तनरहित, अविकारी और पूर्ण है, किन्तु अविद्या और कर्म के कारण वह बंधन में पड़कर जन्म-मरण चक्र में घूमता है। कर्म से आत्मा (जीव) का संबंध अनादि है। शरीर, प्राण, इन्द्रिय, अन्तःकरण आदि से वह संसारी दशा में तादात्म्य स्थापित करके जन्म-मरण चक्र में घूमता है।

रामानुजाचार्य के आत्मतत्व की विश्लेषणात्मक एवं संशलेषणात्मक समीक्षा – शंकर का मत है कि ज्ञाता और प्रमेय(ज्ञेय) के मध्य जो भेद है वह सापेक्ष है, क्योंकि यथार्थ तो भेद शून्य ब्रम्ह ही है। रामानुज इस विचार को नहीं मानते और उनका मत है कि चैतन्य का स्वरूप यह निर्देश करता है कि कोई विचारशील ज्ञाता भी है एवं आत्मा से भिन्न प्रमेय पदार्थ भी है। ज्ञान के अन्तर्गत भेद का प्रत्यक्ष भी आ जाता है। हमें भेद शून्य सत्ता को जानने योग्य बता सके, ऐसा ज्ञान का कोई साधन नहीं है और यदि होता भी तो वह ब्रम्हा को एक ज्ञेय पदार्थ की स्थिति में रखता और इस प्रकार ईश्वर नश्वर पदार्थों के क्षेत्र में आ जाता। विशुद्ध चैतन्य नाम की कोई वस्तु नहीं हो सकती। यह बात या तो सिद्ध हो या असिद्ध हो। यदि विशुद्ध चैतन्य की यथार्थता सिद्ध हो जाए तो परिणाम यह निकलता है कि उसमें गुण हैं और यदि सिद्ध नहीं होती तब यह असत् जैसे कि आकाश, कुसुम। शंकर ने चेतनता के अंदर नित्यता एवं स्वतः प्रकाशकता आदि गुण बताये हैं। ज्ञान तो निश्चित रूप में स्वतःप्रकाश है, किन्तु चेतनता ज्ञान के लिए एक ज्ञेय (वेद्य) पदार्थ है। यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक वस्तु जो जानी गई है, उसे जड़ पदार्थ ही होना चाहिए।

यदि ज्ञान अपरिमित होता तो उसके विषय भी इसी प्रकार अपरिमित

* शिवाजी नगर,बी. डी. ए. कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) भारत

होते, किन्तु यह बात नहीं है। यह सोचना भूल है कि सुषुप्ति अवस्था में तथा तत्सदृश अन्य अवस्थाओं में भी ज्ञान विशुद्ध ज्ञान के रूप में विद्यमान रहता है अर्थात् सब विषयों से रहित, क्योंकि कोई व्यक्ति प्रगाढ़ निद्रा से उठकर कभी स्वप्नावस्था में अपनी चेतनता की अवस्था को इस प्रकार से प्रस्तुत नहीं करता कि मैं विशुद्ध चैतन्य था, जिसमें किसी प्रकार का अहंभाव नहीं था एवं जो स्वरूप में प्रत्येक अन्य वस्तु से विरूद्ध था और अज्ञान को देख रहा था। यह जो कुछ सोचता है केवल यह है कि– 'मैं बहुत अच्छी तरह सोया।' इस प्रकार के चिन्तन से यह प्रतीत होता है कि स्वप्नावस्था में भी आत्मा अर्थात् 'मैं एक जानने वाला प्रमाता (कर्ता) था और सुख का अनुभव करता था। यहाँ तक कि जब आत्मा कहती है कि 'मुझे कुछ चेतना नहीं थी तो उसका तात्पर्य हुआ कि जानने वाला 'मैं' विद्यमान था और जिसका निषेध किया गया, वे ज्ञान के विषय थे। बिना प्रमेय पदार्थ के संबंध के ज्ञान नहीं जाना जाता और प्रगाढ़ निद्रा में यह कार्य नहीं करता, क्योंकि उस समय कोई प्रमेय पदार्थ नहीं होता। प्रगाढ़ निद्रा में आत्मा अपनी आन्तरिक स्वतःचेतना के अन्दर ज्ञान के साथ रहती है जोकि उस समय काम नहीं कर रही होती। आत्मा सदा ही एक अहंभाव है और कभी भी विशुद्ध ज्ञान नहीं। शंकर इतना तो स्वीकार करते हैं, जब वे कहते हैं कि प्रगाढ़ निद्रा में सामान्य अज्ञान के साक्षी रूप में विद्यमान रहती हैं, यदि अहंकार का भाव विलीन हो जाता है, किन्तु वह जो ज्ञान ग्रहण नहीं करता, साक्षी भी नहीं हो सकता। विशुद्ध ज्ञान साक्षी नहीं है। साक्षी एक जानने वाला होता है अर्थात् वह प्रमाता (ज्ञान का कर्ता) होता है। यह प्रमाता प्रगाढ़ निद्रा में भी विद्यमान रहता है यद्यपि हमें उसकी चेतना नहीं होती, क्योंकि चैतन्य तमोगुण से परिभूत होता है। यदि प्रगाढ़ निद्रा में यह विद्यमान न होता तो नींद से जागने पर हम यह स्मरण न कर सकते कि हम अच्छी तरह साये। यदि यह आत्मा नित्य न होती तो स्मृति भी असम्भव होती और जिस वस्तु को कल हमने देखा था, उसे आज पहचान न सकते। यदि चेतनता को चेतन प्रमाता के साथ एक रूप में मिला दिया जाये तो भी पहचान की घटना की व्याख्या सरलता से नहीं की जा सकती, क्योंकि उक्त अनुभव इस विषय का उपलक्षण है कि कोई चेतनावान ज्ञाता प्रारम्भ के क्षण से लेकर अंतिम क्षण तक विद्यमान रहता है, केवल चेतनता ही नहीं। आत्मा स्वतःप्रकाशित ज्ञान नहीं है, किन्तु केवल उसका कर्ता है। हम ऐसा नहीं कहते कि मैं चैतन्य हूँ, किन्तु केवल यही कहते है कि 'मैं चेतनावान हूँ। ज्ञान का स्वतःप्रकाशित स्वरूप आत्मा अथवा ज्ञाता से ही प्रादुर्भाव होता है। ज्ञान का अस्तित्व तथा उसका स्वतःप्रकाशित स्वयप उसके एक आत्मा के साथ संबंध के ऊपर ही निर्भर करते हैं। इस प्रकार का तर्क करना कि ज्ञाता, जिसकी सिद्धि इस प्रकार हो गयी, विषय पक्ष से ही संबद्ध है, इससे अधिक कुछ नहीं है जैसे कि किसी का यह मत प्रकट करना कि उसकी माँ एक बाँझ स्त्री है।' हम अहंकार को, जो प्रकृति की एक जड़ उपज है, ज्ञान के समान ज्ञातृत्वभाव नहीं दे सकते। 'आत्मा ज्ञान का सार तत्व है और ज्ञान उसका गुण है। यह एक ज्ञाता है, केवल मात्र प्रकाश नहीं।' हमें यह न सोचना चाहिए कि ज्ञाता होने से ही अवश्य परिवर्तनशील भी होना चाहिए, क्योंकि ज्ञाता बनने का तात्पर्य ज्ञान रूपी गुण का आधार होना है और चूँकि जानने वाली आत्मा नित्य है, इसलिए ज्ञान भी जो इसका गुण है, नित्य है। यही नित्य ज्ञान है जो अपने को सदा अभिव्यक्त नहीं करता। ज्ञान जो अपने में अपरिमित है, संकोच एवं विस्तार दोनों को अपना सकता है। कर्म के प्रभाव से यह संकुचित हो जाता है, जबकि यह अपने को भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्यो के अनुकूल बना लेता है और भिन्न-भिन्न इन्द्रियों द्वारा विविध प्रकार से निर्णीत होता है। इन्द्रियों के कारण इन्हीं अनुकूलताओं के संबंध में कहा जाता है कि यह उत्पन्न हुआ और नष्ट हुआ। इसका विलोप कभी नहीं होता, यद्यपि जीवन भर यह कार्य करता है। कभी कम और कभी अधिक सीमाओं के अन्दर। किन्तु चूँकि अनुकूलन का गुण अनिवार्य नहीं है और कर्म से ही उत्पन्न होता है इसलिए आत्मा को वस्तुतः अपरिवर्तनशील ही माना जाता है।

रामानुज इस मत का खण्डन करते हैं कि चैतन्य कभी भी प्रमेय पदार्थ नहीं है। यद्यपि यह प्रमेय विषय नहीं है, जबकि यह दूसरी वस्तुओं को प्रकाशित करता है तो भी यह प्रायः प्रमेय पदार्थ बन सकता है और बन जाता है, क्योंकि साधारण अनुभव दर्शाता है कि एक व्यक्ति का चैतन्य दूसरे के बोध का विषय बन जाता है। जैसे कि जब हम अन्य पुरुष के मैत्रीपूर्ण अथवा अमैत्रीपरक रूप से किसी वस्तु का अनुमान कर लेते हैं अथवा जबकि किसी मनुष्य के भूतकाल के चैतन्य की अवस्थायें उसकी वर्तमान काल की पहचान का विषय बन जाती है। चैतन्य केवल इसीलिए कि यह चेतनता का प्रमेय विषय बनता है, अपना स्वरूप नहीं खो देता। हम यह नहीं कह सकते कि चैतन्य स्वतः सिद्ध है। रामानुज की इस दृष्टि में चैतन्य का वास्तविक स्वरूप वर्तमान क्षण में अपने आपके द्वारा अपने अधिष्ठान के प्रति व्यक्त करने में अथवा इसके अपने विषय को अपनी सत्ता के द्वारा सिद्ध करने के लिए साधन बनने में है। जब जड़ वस्तुएँ प्रकाश में आती हैं तो वे अपने प्रति व्यक्त नहीं होतीं। 'आत्मा के अन्य गुण जैसे आणविक विस्तार, नित्यता आदि और चैतन्य की भूतकाल की अवस्थाएं अपने निज के द्वारा व्यक्त नहीं होतीं वरन् ज्ञान की एक क्रिया के द्वारा व्यक्त होती है जो उनसे भिन्न है।'

रामानुज के दर्शन में ईश्वर की परिपूर्णता सोपाधिक है जिसके कारण उसकी सर्वव्यापी गतिविधि के क्षेत्र में स्वतंत्र आत्माओं की सत्ता को भी स्थान है जिन्हें सब कुछ ईश्वर से ही मिला है, तो भी उनमें एक स्वेच्छा तथा चुनाव करने की योग्यता विद्यमान है जिसके कारण पुरुष कहलाने योग्य हैं। रामानुज ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध एक प्रबल तथा प्रभावशली तर्क उठाते हैं, जो मनुष्यों को उसी एकमात्र निरपेक्ष सत्ता के निरर्थक परिवर्तित रूप मानते हैं। 'जीवात्मा सर्वोपरि ब्रम्हा के ही एक रूप के द्वारा यथार्थ, अद्भुत, नित्य, बुद्धिसम्पन्न और आत्मचेतना से युक्त, अखंड, अपरिवर्तनशील, अदृश्य और आणविक है।' यह शरीर, इन्द्रियों, शक्तिशाली प्राण और बुद्धि से भी भिन्न है। यह ज्ञाता है, कर्ता है और भोक्ता भी है। यह मानवीय स्तर पर स्थूल शरीर तथा शक्तिशाली प्राण से संयुक्त है जोकि एक साधन रूप है, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि ज्ञानेन्द्रियों। पाँच कर्मेन्द्रियाँ और मन इसके साधन हैं। मन आत्मा के लिए आन्तरिक अवस्थाओं का प्रकाश करता है और इन्द्रियों की सहायता से बाह्य अवस्थाओं का ज्ञान भी पहुँचाता है। मन के व्यापार तीन प्रकार के हैं: निर्णय (अध्यवसाय), आत्मप्रेम (अभिमान) और चिन्तन। आणविक जीव का स्थान हृदय कमल में है। सुषुप्ति की अवस्था में यह इसी हृदय कमल के अंदर तथा सर्वोपरि आत्मा में भी रहता है। निद्रा के द्वारा आत्मा के नैरंतर्य में भंग नहीं होता और इसकी यथार्थता कार्य के नैरंतर्य स्मृति रूप तथ्य, धर्मशास्त्र के कथन और नीतिशास्त्र संबंधी आदेशों के सही प्रमाणित होने से स्पष्ट है। जीव का आकार अणु होने पर भी अपने ज्ञान रूपी गुण के द्वारा जो संकोच तथा विस्तार को प्राप्त होता है, यह सारे शरीर में व्याप्त, सुख तथा दुःख का अनुभव कर सकता है, जैसे दीपक की शिखा यद्यपि अपने में बहुत छोटी है तो भी अपने प्रकाश से अनेक पदार्थों को प्रकाशित करती है, क्योंकि उसका प्रकाश संकोच तथा विस्तार को प्राप्त हो सकता है। यह देश तथा काल की दूरी का भी विचार न करके अत्यंत सुदूरस्थ पदार्थों का ज्ञान ग्रहण कर सकता है। 'आत्माओं का बोध, जैसा कि ईश्वर

के विषय में है, स्वरूप में नित्य है, आत्मनिर्भर है, सब वस्तुओं तक विस्तृत है और निर्दोष है, यद्यपि इसका क्षेत्र भूतकाल के कर्म आदि दोषों के कारण संकुचित हो गया है।' जीवात्माओं की अनेकता सुखों तथा दु:खों के विभाग के कारण स्पष्ट हैं। जब तक मोक्ष नहीं होता, वे प्रकृति के साथ-साथ जकड़ी हुई है, क्योंकि प्रकृति जीवात्मा के लिए वाहन का काम देती है, जैसे कि घोड़ा घुड़सवार के लिए वाहन का काम देता है। यह शरीर का बंधन 'यह मलिन तथा क्षय होने वाला परिधान (शरीर) उस नित्य के दर्शन में बाधा देता है और आत्मा को ईश्वर के साथ जो उसका मैत्री संबंध है। उसे पहचानने से रोकता है।'

आत्मा अपने तात्विक स्वरूप के कारण समसत जीवन एवं मृत्यु की क्रियाओं के अन्दर अपरिवर्तित रहती है। यह इस चेतन जगत में अनेक बार जन्मी और फिर इसमें विदा हुई, परन्तु फिर भी यह बराबर अपने उसी व्यक्तित्व को बनाये रखती है। हर एक प्रलय में जीव की विशेष आकृतियाँ नष्ट हो जाती हैं, यद्यपि स्वयं आत्माएँ अपने-आप में अविनश्वर हैं। वे अपने भूतपूर्व जीवनों में किए गए कर्मों के परिणामों से छुटकारा नहीं पा सकती और नई सृष्टि में उन्हें फिर इस संसार में उपयुक्त शक्तियाँ प्रदान करके ढकेल दिया जाता है। जन्म तथा मृत्यु से तात्पर्य शरीरों से साहचर्य या विच्छेद जिसके परिणामस्वरूप बुद्धि का संकोच अथवा विस्तार होता है और मोक्ष पर्यन्त आवश्यकतावश आत्माएँ शरीरों से संलग्न है। यद्यपि प्रलय में वे एक सूक्ष्म सामग्री के साथ संबद्ध रहती हैं, जिसमें नाम व रूप के भेद का कोई स्थान नहीं है। आत्मा अपने भूतपूर्व जीवन की साक्षी नहीं हो सकती, क्योंकि स्मृति वर्तमान शरीर से परे नहीं जा सकती।

जीवात्मा का विशिष्ट सार तत्व अहंबुद्धि हैं। यह आत्मा का केवल गुण मात्र नहीं है जो नष्ट हो जाए और जीवात्मा का अनिवार्य और मुख्य स्वरूप फिर भी अप्रभावित रह जाए। आत्म-निरूपण ही स्वयं आत्मा का वास्तविक अस्तित्व है। यदि ऐसा न होता तो मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रयत्न करने का कुछ अर्थ न होता। बंधन तथा मोक्ष दोनों अवस्थाओं में आत्मा अपने वैशिष्ट्य को, अर्थात् ज्ञानत्व के भाव को स्थिर रखती है। आत्मा एक सक्रिय कर्ता भी है। यह इसलिए चूँकि कर्मो का संबंध आत्मा से है और आत्मा ही कर्मो के परिणामों को भोगती है। केवल इसलिए कि इसमें कर्म करने की शक्ति है। इससे यह परिणाम नहीं निकलता कि यह सदा ही कर्म करती है। उस समय तक जबकि कर्म के कारण आत्माओं का संबंध शरीरों के साथ हैं, उनके कर्म अधिकतर निश्चित हैं, किन्तु जब वे शरीर संबंध से मुक्त हो जाती हैं तो वे अपनी इच्छाओं की पूर्ति केवल संकल्प के द्वारा ही कर लेती हैं।

जीव और ईश्वर एक नहीं है, क्योंकि जीव मुख्य लक्षणों में ईश्वर से भिन्न है। इसे ब्रम्हा का अंश कहा जाता है। यद्यपि यह सम्पूर्ण इकाई में से कहा गया भाग नहीं हो सकता, क्योंकि ब्रम्हा अखण्ड है अर्थात् उसके हिस्से नहीं हो सकते, तो भी यह विश्वात्मा के अन्दर ही समाविष्ट है। रामानुज का कहना है कि आत्माएँ विशेषण के रूप में ब्रम्हा के अंश हैं अथवा यों कहें कि सोपाधिक आकृतियाँ है। आत्माओं को ज्ञान का कार्य माना गया है, क्योंकि वे ब्रम्हा से भिन्न नहीं हो सकतीं, किन्तु तो भी वे उत्पन्न होने वाली कार्यरूप सत्ताएँ नहीं हैं, जैसे कि आकाश (ईश्वर) आदि है। आत्मा के तात्विक स्वरूप में परिवर्तन नहीं होता। यह जिन अवस्थाओं में परिवर्तित होता है, वे हैं बुद्धि का संकुचन तथा विस्तार, जबकि ऐसे परिवर्तन जिन पर दृष्टान्त के लिए ईश्वर की उत्पत्ति निर्भर करती है तात्विक स्वरूप के परिवर्तन है। आत्मा के विशिष्ट लक्षण, जैसे दु:ख की संभावना आदि ईशवर में नहीं घटते। केवल मात्र ईश्वर ही तात्विक स्वरूप संबंधी परिवर्तनों से स्वतंत्र है एवं जड़ पदार्थो के विशिष्ट लक्षणों और संकोच तथा विस्तार से भी रहित है, जो आत्माओं के विशिष्ट लक्षण हैं।

सर्वोपरि आत्मा (ब्रम्हा) का आभ्यन्तर निवास जीव को अपनी संकल्प संबंधी स्वतंत्रता से वंचित नहीं करता, यद्यपि जीवात्मा का केवल मात्र प्रयत्न ही कर्म करने के लिए पर्याप्त नहीं है। सर्वोपरि आत्मा का सहयोग भी आवश्यक है। जीवात्मा को अपने भविष्य के निर्णय करने में जो एकाधिकार प्राप्त है उस पर बल देते हुए भी और यह भी स्वीकार करते हुए कि एक सज्जन पुरुष विश्व के केवल मात्र प्राकृतिक कानून के ऊपर उठ सकता है। रामानुज बलपूर्वक कहते हैं कि एकमात्र सर्वोपरि नैतिक व्यक्तित्व ईश्वर का ही है, जो प्रकृति और कर्म के सब प्रकार के बंधनों से स्वतंत्र है। ईश्वर को शेषी अथवा सर्वाधिपति प्रभु कहा गया है, जिसके तथा जीवात्माओं के मध्य में स्वामी तथा उसकी प्रजा का सा संबंध है, जिसे शेष-शेषी भाव से प्रकट किया जाता है। शेषित्व ईश्वर की सर्वतंत्र स्वतंत्र शक्ति है जिसके आधार पर वह आत्मा के साथ व्यवहार करता है।

रामानुज के दर्शन में जीवात्मा का स्वातन्त्र्य (कर्म करने में) तथा दैवीय आधिपत्य विशेष महत्व रखते हैं, क्योंकि वह दोनों ही के ऊपर बल देता है। जीवात्मा अपनी क्रियाशीलता के लिए पूर्ण रूप से ईश्वर के ऊपर निर्भर करते हैं। ईश्वर निर्णय करता है कि क्या अच्छा है और क्या बुरा है, आत्माओं को शरीर प्रदान करता है तथा अपना कार्य करने की शक्ति देता है और अन्तिम रूप में आत्माओं की स्वतंत्रता तथा बंधन का कारण है, तो भी यदि संसार में इतना अधिक दु:ख और संकट है तो उसके लिए ईश्वर उत्तरदायी नहीं है, वरन् मनुष्य उत्तरदायी है, जिसे पाप व पुण्य कर्म करने की शक्ति प्राप्त है। मनुष्य का संकल्प ईश्वर की निरपेक्षता को सीमाबद्ध करता प्रतीत होता है। आत्माएँ जिन्हें चुनाव के विषय में स्वातन्त्र्य प्राप्त है, ऐसा कार्य भी कर सकती है जो ईश्वर की इच्छा में हस्तक्षेप हो। यदि निरपेक्ष ईश्वर भी कर्म का ही विचार करके तद्नुसार कर्म करने को बाध्य हो तो वह निरपेक्ष नहीं ठहरता। रामानुज इस कठिनाई का समाधान इस प्रकार करते हैं कि सब मनुष्यों के कर्मो का कारण अन्ततोगत्वा ईश्वर है, किन्तु यह पाप मोक्षवाद नहीं है, क्योंकि ईश्वर कुद निश्चित विधान के अनुसार कार्य करता है और उक्त विधान उसके स्वभाव की अभिव्यक्ति है। ईश्वर अपनी स्वेच्छा से किसी मनुष्य से पुण्य अथवा पाप कर्म नहीं करवाता, वरन् निरन्तर कर्म विधान के अनुसार ही कार्य करने की पद्धति का प्रदर्शन करता है। यदि कर्म विधान ईश्वर से स्वतंत्र है तो ईश्वर की निरपेक्षता में अन्तर आता है। जो समालोचक यह कहता है कि हम ईश्वर के स्वातन्त्र्य की रक्षा बिना कर्म सिद्धांत के निषध के नहीं कर सकते, उसे ईश्वर विषयक हिन्दू विचार का सही-सही ज्ञान ही नहीं है। कर्म विधान ही ईश्वर की इच्छा को व्यक्त करता है। कर्म की व्यवस्था ईश्वर ने ही बनाई है, जो कर्माध्यक्ष है,चूँकि कर्म विधान ईश्वर के स्वभाव के ऊपर निर्भर करता है इसलिए ईश्वर ही को पुण्यात्माओं को पुरस्कार तथा पापात्माओं को दण्ड देने वाला माना जा सकता है। यह दिखाने के लिए कर्मविधान ईश्वर से स्वतंत्र नहीं है, कभी-कभी यह कहा जाता है कि यद्यपि ईश्वर कर्मविधान को स्थगित कर सकता है तो भी वह ऐसा करने की इच्छा नहीं करता। नैतिक विधान को क्रियात्मक रूप देने के लिए कृत-संकल्प, जो कि उसकी न्यायसंगत इच्छा का अविर्भाव है, वह पाप को भी होने देता है जिस वह अन्यथा रोक सकता है। अन्तर्यामी ईश्वर प्रत्येक अवस्था में संकल्पपूर्वक प्रयत्न का ध्यान रखता है, क्योंकि वही मनुष्य को कर्म करने की प्रेरणा देता है। वह अपने ही विधान को पलटने का विचार भी नहीं करता जिससे कि सांसारिक योजना में हस्तक्षेप हो। संसार के अन्दर

बैठकर भी ईश्वर अनुचित हस्तक्षेप करने वाला नहीं बनना चाहता।

निष्कर्ष – जीवों के तीन वर्ग हैं, नित्य अर्थात् वे जो बैकुण्ठ में निवास करते हैं और कर्म तथा प्रकृति से स्वतंत्र रहकर आनन्द का उपभोग करते हैं, मुक्त, अर्थात वे जो अपने ज्ञान, पुण्य और भक्ति के द्वारा मोक्ष प्राप्त करते हैं तथा बद्ध अर्थात् वे जो अपने अज्ञान तथा स्वार्थपरता के कारण संसार चक्र में घुमते रहते हैं। जहाँ एक ओर जीवात्मा ऊँचे से ऊँचे शिखर तक उठ सकता है, वहाँ यह शरीर के अन्दर ही अधिकाधिक लिप्त होकर नीचे दर्जे तक गिर भी सकता है, यहाँ तक कि अपने ज्ञानमय जीवन को भी खो दे सकता है और उस निरूद्देश्य पाशविक जीवन तक पहुँच सकता है, जो मनोवेगों तथा भूख की तृप्ति ही जीवन है। संसार चक्र में भ्रमण करते हुए जीवात्माओं के अंदर वर्णभद भी उनके भिन्न–भिन्न शरीरों के कारण हैं। स्वरूप में जीवात्मा न तो मानवीय हैं, न आकाशीय हैं, न ब्राम्हण हैं और न ही शूद्र हैं। संसार के अन्दर जीवात्माओं के विभाग दो प्रकार के हैं– एक वे जो सुखोपभोग की इच्छा रखते हैं और दूसरे वे जो मोक्ष के लिए उत्सुक हैं। जब तक जीवात्मा मोक्ष को प्राप्त नहीं कर लेता, इसका पुनर्जन्म होना आवश्यक है जिससे कि वह अपने कर्मो के फल का उपयोग कर सके। जीवात्मा दूसरा शरीर धारण करने के लिए गति करते समय मूल तत्वों से आवृत्त रहता है और ये मूलतत्व ही जीवन के अधिष्ठान का कार्य करते हैं। जब तक बंधन रहता है तब तक सूक्ष्म शरीर का भी अस्तित्व रहता है। मुक्तात्मा पुरूष देवयान मार्ग से तथा पुण्यात्मा पितृयान से जाते हैं। किन्तु पापात्मा चंद्रलोक पहुँचने से पहले ही तुरन्त पृथ्वी पर लौट आते हैं। ईश्वर के दूत जीवात्मा को ऊपर की ओर का पथ प्रदर्शन करते हैं। यदि जीवात्माओं को दैवीय स्वरूप में किसी प्रकार का भी हिस्सा बँटाना है तो उन्हें एक बार अपनी स्वतंत्रता तथा पवित्रता प्राप्त करनी चाहिए। वे इनको खोलकर कर्म के विधान में कैसे आयेंगे? रामानुज का मत है कि न तो तर्क और न धर्मशास्त्र ही हमें यह बतलाने में समर्थ हैं कि किस प्रकार कर्म के आत्मा को अपने वश में किया, क्योंकि विश्व की प्रक्रिया अनादि है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रामानुजाचार्य: श्रीभाष्य–2–1–9
2. श्वेताश्वतरोपनिषद
3. वृहदारण्यकोपनिषद
4. श्रुतप्रकाशिका
5. यतीन्द्रमतदीपिका
6. तैत्तरीयोपनिषद।

****

बी.पी.एल. परिवार के विकास पर मनरेगा योजना के प्रभावों का मूल्यांकन

कविता यादव *

प्रस्तावना - पिछले 70 वर्षो में यहाँ जनसंख्या निरन्तर बढती जा रही है। बढती जनसंख्या का सर्वाधिक नकारात्मक पहलु बढती हुई निर्धनता है। सरकार की वृहद योजना मनरेगा जो पुरे भारत में क्रियाशील है, इसे सुखा, जंगलों का विनाश और भूमि कटाव जैसी समस्याओं को रेखांकित किया गया है, जिनके कारण बडे पैमाने पर निर्धनता फैल रही है। चुकि यह योजना सम्पूर्ण भारत में कार्यरत है, परिणाम स्वरूप समस्याओं का आना स्वाभाविक है परन्तु भारत सरकार ने इसकी कमीयों को ध्यान में रखकर बढती हुई कार्यों की मांग, रूचियों तथा गाँवों में कार्यो की कमी के कारण भारत सरकार ने मनरेगा के कार्यों में अधिक से अधिक नवीन कार्यों का समावेश किया है तथा राजस्थान राज्य सरकार ने अपने राज्य में इस योजना के कार्य दिवस को बढाकर 150 दिन कर दिया है। मनरेगा के अन्तर्गत उपलब्ध होने वाले रोजगार, निर्धनता में कमी लाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे है। यह योजना सैद्धांतिक स्वरूप से अच्छे एवं प्रभावी उद्देश्यों को अपने में समाहित किए हुए है। यह कानून रोजगार अधिकार को साकार करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। प्रस्तुत शोध पत्र में शोधार्थी ने बी.पी.एल. परिवारों पर मनरेगा योजना के प्रभावों का अध्ययन करने का प्रयास किया है।

साहित्य का अवलोकन :

वाजपेयी, अनुराग (2011) इन्होंने अपने अध्ययन में अमीर और गरीब देशों में अन्तर बताने के लिए इन्होनें विभिन्न देशों के लोगों का रहन सहन के स्तरों की तुलना की हैं। इन्होंने भारत में गरीबी के महत्वपूर्ण कारण जनसंख्या वृद्धि, अषिक्षा, आर्थिक तंगी आदि बताये है और भारत में गरीबी निवारण के लिए चलायी जा रही योजनाओं का भी उपलब्धियों का वर्णन किया है।

Satyanarayana, G. Madhusadana H.S. (2012) इन्होंने अपने अध्ययन में यह बताया है कि अधिकतम भारत की जनसंख्या ग्रामीण इलाकों में रहती है। 2001 की सेन्सेक्स के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या में 68.8 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या है।

योजना आयोग, वार्षिक रिपोर्ट, (2013-14) योजना आयोग, राष्ट्रीय स्तर पर और राज्य स्तरों पर ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के संबंध में अलग-अलग गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों की संख्या और प्रतिशतता का अनुमान लगाने के लिए नोडल एजेन्सी है। गरीबी का अनुमान लगाने के लिए क्रिया विधि की समय-समय पर समीक्षा की जाती है।

उद्देश्य :

1. बी.पी.एल परिवारों पर मनरेगा योजना के प्रभावों का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना :

1.महानरेगा योजना से बी.पी. एल. परिवारों के रोजगार स्तर कोई महत्वपूर्ण वृद्धि नहीं हुई है।

शोध प्रविधि :

1. **अध्ययन क्षेत्र का चुनाव -** प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु राजस्थान राज्य का चयन उद्देश्यात्मक रूप से किया है।राजस्थान राज्य प्रशासनिक रूप से 7 संभागों में विभाजित है यहां की जनसख्यां अपनी आजीविका हेतु कृषि पर निर्भर है। तथा बड़ी मात्रा में बी.पी.एल. की श्रेणी में आते है। मनरेगा योजना से इस क्षेत्र में सामाजिक-आर्थिक विकास को प्रोत्साहन मिला है अत: इस बात का आंकलन करना अति-आवश्यक है कि इन योजना के क्या प्रभाव हुए है।

2. **प्रतिदर्श प्रचना -** प्रस्तुत शोध में याद्दच्छिक विधि से उदयपुर जिले की दो पंचायत समितियों- गिर्वा एवं कुराबड़ का चयन किया गया है। इन पंचायत समितियों में मनरेगा योजना के सामाजिक-आर्थिक प्रभावों का आंकलन करने हेतु प्रत्येक पंचायत समिति से सरल याद्दच्छिक रीति से 5 गाँवों का चयन किया है। सूक्ष्म अध्ययन हेतु प्रत्येक गाँव से 20 लाभार्थियों का चयन सरल याद्दच्छिक पद्धति से किया गया है। इस प्रकार हमारे प्रतिदर्श का कुल आकार 200 लाभार्थी है।

3. **ऑकडों का संकलन -** प्रस्तुत शोध अध्ययन द्वितीयक एवं प्राथमिक दोनों प्रकार के ऑकडों पर आधारित है। अध्ययन से सम्बद्ध प्राथमिक ऑंकडों की प्राप्ति विशिष्ट रूप से निर्मित अनुसूची से की गयी है। तत्पश्चात् संकलित ऑकड़ों का विश्लेषण विभिन्न सांख्यिकीय तकनीकों का औसत, प्रतिशत, प्रमाप विचलन, द्धारा किया गया है। अध्ययन से सम्बन्धित शोध परिकल्पना का परीक्षण ीं परीक्षण द्धारा किया गया है।

1. उत्तरदाताओं की आय में परिवर्तन - किसी व्यक्ति के जीवन स्तर के निर्धारण में आय अति महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। मनरेगा योजना से लाभान्वित होने से पूर्व उत्तरदाताओं की आय क्या थी एवं मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् उनकी आय में कितना परिवर्तन आया है। यहां हमने मनरेगा योजना से बी.पी.एल.उत्तरदाताओं की आय के बारे में सूचना प्राप्त करने हेतु सर्वेक्षण क्षेत्र के प्रतिदर्श में चयनित गांव के उत्तरदाताओं की मासिक आय का औसत ज्ञात किया है एवं मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् की औसत आय के साथ तुलनात्मक अध्ययन कर आय में हुए परिवर्तन की सांख्यिकीय सार्थकता की जांच की है। इस हेतु स्टूडेण्ट के युग्मीत यींपरीक्षण का प्रयोग किया गया है। यहाँ निम्न शुन्य परिकल्पना की गयी हैं -

H_0 : मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् उत्तरदाताओं की आय

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) मोहन लाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

में कोई महत्वपूर्ण वृद्धि नहीं हुई है।

H_A : मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् उत्तरदाताओं की आय में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है।

तालिका :1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

$$\bar{D} = \frac{\sum D}{n} = \frac{34}{10} = 3.4$$

$$S = \sqrt{\frac{\sum(D-D)^2}{n-1}}$$

$$= \sqrt{\frac{14.4}{10-1}} = \sqrt{1.6} = 1.264$$

$$t = \frac{\bar{D}}{S}\sqrt{n} = \frac{3.4}{1.264}\sqrt{10} = 8.50$$

स्वातंन्त्र्य अंश = n – 1 = 10 – 1 = 9

निष्कर्ष : यहाँ t के अन्तर परीक्षण का आंकलित मान 8.50 है जबकि 9 स्वातन्त्र्य स्तर एवं 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर t परीक्षण का सारणी मान 1.83 है। स्पष्ट है कि t परीक्षण का आंकलित मान इसके सारणी मान से अधिक है। अत: हमारी शून्य परिकल्पना गलत सिद्ध होती है एवं यह निष्कर्ष प्रापत होता है कि मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् उत्तरदाताओं की आय में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। यह जानकारी प्रायिकता मूल्य से भी होती है जो 0.05 (सार्थकता स्तर) से कम है।

2. उत्तरदाताओं के व्यय में परिवर्तन – ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों का व्यय सतर कम होता है तथा व्यय के कम होने से जीवन स्तर भी निम्न होता है। मनरेगा योजना के कारण ग्रामीण लोगों की आय में वृद्धि से लोगों का जीवन स्तर समुन्नत हुआ है। यहां हमने उत्तरदाताओं से यह जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया है कि मनरेगा योजना के कारण उत्तरदाताओं के घरेलु व्यय में कितना परिवर्तन हुआ है। इस हेतु हमने मनरेगा योजना से लाभान्वित होने से पूर्व उत्तरदाताओं के व्यय तथा मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् उनके व्यय के आँकड़े एकत्र कर औसत व्यय ज्ञात किया है। व्यय में परिवर्तन की सांख्यिकीय सार्थकता भी जाँच हेतु स्टूडेण्ट t शिक्षण के युग्मित परीक्षण का प्रयोग किया है। यहाँ शून्य परिकल्पना निम्नवत् है :

H_O : मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् उत्तरदाताओं के व्यय में कोई सार्थक परिवर्तन नहीं हुआ है।

H_A : मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् उत्तरदाताओं के व्यय में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है।

तालिका : 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

$$\bar{D} = \frac{|\sum D|}{n} = \frac{25}{10} = 2.5$$

$$S = \sqrt{\frac{\sum(D-\bar{D})^2}{n-1}} \Rightarrow \sqrt{\frac{4.5}{9}} = 0.70$$

$$t = \frac{\bar{D}}{S}\sqrt{n} = \frac{2.5}{0.70}\sqrt{10} \Rightarrow 11.30$$

स्वातंन्त्र्य अंश = n – 1 = 10 – 1 = 9

निष्कर्ष : यहाँ स्टूडेण्ट t परीक्षण के अन्तर परीक्षण का आंकलित मान 11.30 है जबकि 9 स्वातन्त्र्य स्तर एवं 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर सारणी मान 1.83 है। क्योंकि अन्तर परीक्षण का आंकलित मान इसके सारणी मान से अधिक है अत: हमारी शून्य परिकल्पना गलत सिद्ध होती है। एवं यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि मनरेगा योजना से आय में वृद्धि के कारण उत्तरदाताओं के व्यय में सार्थक परिवर्तन हुआ है। यही निष्कर्ष प्रायिकता मूल्य से भी प्राप्त होते है।

3. उत्तरदाताओं की बचत क्षमता में परिवर्तन – यहां हमने उत्तरदाताओं से यह हमने उत्तरदाताओं से यह जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया है कि मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पूर्व उनकी बचत क्या थी एवं मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् उनकी बचत क्षमता में क्या परिवर्तन हुआ है। बचत में हुए परिवर्तन की सार्थकता जांच हेतु हमने स्टुडेण्ट t परीक्षण के अन्तर परीक्षण का प्रयोग किया है। यहां निम्न शुन्य परिकल्पना की गयी है :

H_O : मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् उत्तरदाताओं की बचत क्षमता में कोई महत्वपूर्ण वृद्धि नहीं हुई है।

H_A : मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् उत्तरदाताओं की बचत क्षमता में कोई महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है।

तालिका : 3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

$$\bar{D} = \frac{|\sum D|}{n} = \frac{|22|}{10} = 2.2$$

$$S = \sqrt{\frac{\sum(D-\bar{D})^2}{n-1}} \Rightarrow \sqrt{\frac{4.48}{9}} = \sqrt{.49} = 0.70$$

$$t = \frac{\bar{D}}{S}\sqrt{n} = \frac{2.2}{0.70}\sqrt{10} = 9.93$$

स्वातंन्त्र्य अंश = n – 1 = 10 – 1 = 9

निष्कर्ष : यहाँ स्टूडेण्ट t के अन्तर परीक्षण का आंकलित मान 9.93 है जबकि 9 स्वातन्त्र्य स्तर एवं 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर अन्तर परीक्षण का सारणी मान 1.83 है। स्पष्ट है कि t परीक्षण का सारणी मान, आंकलित मान से कम है अत: शून्य परिकल्पना गलत सिद्ध होती है एवं यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि मनरेगा योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् उत्तरदाताओं की बचत क्षमता सार्थक रूप से बढ़ी है। यहाँ निष्कर्ष प्रायिकता मूल्य से भी प्राप्त होते है।

सुझाव :

1. मनरेगा के अतिरिक्त किसी अन्य रोजगार योजना के प्रचार–प्रसार का ग्राम पंचायतों द्वारा दायित्वों का निर्वहन नहीं किया जा रहा है। अत: ग्राम पंचायत द्वारा चलाई जाने वाली या क्रियान्वित किये जाने वाली योजनाओं का सूचना, शिक्षा, सम्प्रेषण द्वारा प्रचार प्रसार किया जाना आवश्यक है।
2. मनरेगा के तहत छोटे किसानों को हरित धारा प्रोजेक्ट के अन्तर्गत सब्जियों के बीज उपलब्ध करा कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाना चाहिए।
3. सरकार द्वारा चलायी जा रही विभिन्न विकासात्मक व कल्याणकारी योजनाओं से बी.पी.एल.परिवार के उत्तरदाता अनभिज्ञ है। इन योजनाओं से उनका अवगत कराया जाए।

4. पलायन करने वाले परिवारों का पंजीयन हेतु मना नहीं करना चाहिये।
5. परिवार के प्रत्येक व्यक्ति को अलग–अलग जॉब कार्ड जारी नहीं करना चाहिए, पंजीकरण हेतु एकल परिवार पात्र हो। और ऐसे एकल परिवार को अलग–अलग जॉब कार्ड जारी किये जाने चाहिए।
6. ग्रामीण रोजगार सृजन योजना हेतु एक प्रबंध बैठक का आयोजन ग्राम पंचायत में किया जाना चाहिए। जिससे लाभार्थियों का चयन आयु एवं शैक्षणिक स्तर तथा योजना के आधार पर किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रसाद नीता, 'नरेगा अब गाँवों में ही रोजगार' कुरूक्षेत्र, मासिक पत्रिका, दिसम्बर 2009, पृ.48
2. डॉ. जगबीर कौशिक 'नरेगा गरीबों का सुरक्षा कवच' कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका फरवरी 2009, पृ.48
3. ठाकुर, रामेश्वर : 'गरीबी उन्मूलन की सशक्त योजना', कुरूक्षेत्र, सितम्बर, 1994
4. वार्ष्णेय, डॉ. एस.के. 'यग्रामीण निर्धनता और समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम' : कुरूक्षेत्र, फरवरी 1999
5. डॉ. सुरेन्द्र कटारिया 'आर्थिक मंदी से जुझने में नरेगा का योगदान' कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका फरवरी 2009, पृ.50
6. डॉ. अतुल कुमार तिवारी 'नरेगा ग्रामीण भारत में बदलाव लाने का अभियान'
7. CAG Report on Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (2013). *Performance Audit of MNREGS, page vii.*

तालिका :1 – मनरेगा से उत्तरदाताओं की आय में हुए परिवर्तन की सार्थकता जांच

गाँव का नाम	मनरेगा से लाभान्वित होने से पूर्व आय (रू. हजार)	मनरेगा से लाभान्वित होने के पश्चात् आय (रू. हजार)	अन्तर |D|	$\|(D-\bar{D})^2\|$	S	t मुल्य	P मुल्य
I	4	8	4	0.36	1.264	8.50	0.0002
II	5	9	4	0.36			
III	4	8	4	.036			
IV	3	9	6	6.76			
V	4	7	3	0.16			
VI	3	5	2	1.96			
VII	4	8	4	0.36			
VIII	5	7	2	1.96			
IX	4	6	2	1.96			
X	5	8	3	0.16			

स्त्रोत : आगणित

तालिका : 2 – मनरेगा से उत्तरदाताओं के व्यय में हुए परिवर्तन की सार्थकता जांच

गाँव का नाम	मनरेगा से लाभान्वित होने से पूर्व व्यय (रू. हजार)	मनरेगा से लाभान्वित होने के पश्चात् व्यय (रू. हजार)	अन्तर |D|	$\|(D-\bar{D})^2\|$	S	t मुल्य	P मुल्य
I	2	5	3	0.25	0.70	11.30	0.0001
II	2	4	2	0.25			
III	3	5	2	0.25			
IV	3	6	3	0.25			
V	2	5	3	0.25			
VI	2	4	2	0.25			
VII	3	5	2	0.25			
VIII	2	4	2	0.25			
IX	2	6	4	2.25			
X	3	5	2	0.25			

स्त्रोत : आगणित

तालिका : 3 – मनरेगा से उत्तरदाताओं के बचत में हुए परिवर्तन की सार्थकता जांच

गाँव का नाम	मनरेगा से लाभान्वित होने से पूर्व बचत (रू. हजार)	मनरेगा से लाभान्वित होने के पश्चात् बचत (रू. हजार)	अन्तर |D|	$\|(D-\bar{D})^2\|$	S	t मुल्य	P मुल्य
I	1	3	2	.04	0.70	9.93	0.0004
II	2	4	2	.04			
III	2	5	3	.64			
IV	2	4	2	.04			
V	1	3	2	.04			
VI	2	5	3	.64			
VII	1	3	2	.04			
VIII	2	4	2	.04			
IX	3	5	2	.04			
X	3	5	2	.04			

स्त्रोत : आगणित

****

देवास जिले में ग्रामीण बाजार का बदलता स्वरुप

डॉ. सुनील मोरे* जाहिद खान **

प्रस्तावना - देवास जिले की अर्थव्यस्था में 76.46 प्रतिशत जनसंख्या का मुख्य व्यवसाय कृषि एवं मजदूरी है जबकि प्रतिशत जनसंख्या कृषि एवं मजदूरी पर आश्रित है। कुल भौगोलिक क्षेत्र का 61.59 प्रतिशत भाग कृषि के लिए उपलब्ध है, कृषि भूमि का मात्र 49.76 प्रतिशत सिंचित है। कुल जनसंख्या में 47.49 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या में 35.04 प्रतिशत कृषक, 41.82 प्रतिशत मजदूर, एवं 1.59 प्रतिशत घरेलू उद्योग एवं 21.55 प्रतिशत अन्य कार्यो में संलग्न है। बाजारों के विकास में सड़कों की सबसे अहम भूमिका है। किन्तु सड़कों के अन्तर्गत 49.57 प्रतिशत गाँव पक्की सड़कों से जुडे है शेष गांव अभी भी सड़कों के अभाव में कच्चे रास्तों द्वारा बैलगाडी अथवा पैदल यात्रा करते है। जो गांव शहरी क्षेत्रों के नजदीक है उन ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि कार्यो के अतिरिक्त उससे सम्बद्ध अन्य गतिविधियों जैसे पशुपालन व डेयरी, रेशम कीटपालन, खाद्य परिरक्षण, हथकरघा वस्त्रकारी, फलों व नयी सब्जियों की खेती को बढ़ावा दिये जाने की अपार सम्भावनाएं जुड़ी हुई हैं।

ग्रामीण बाजार ऐसे स्थान को सन्दर्भित करते हैं जहाँ स्थाई अथवा अस्थाई रूप से जिसमें सड़क किनारे, चौपाल, मंदिर अथवा अन्य किसी स्थान पर वस्तुओं अथवा सेवाओं के क्रय-विक्रय के लिए सप्ताह के किसी दिन अथवा विशेष अवसर पर एकत्रित होते है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में ऐसे बाजार प्राचीन काल से चली आ रही परम्परा का महत्वपूर्ण व्यापारिक गतिविधि का भाग है। ग्रामीण बाजार न केवल वस्तुओं एवं सेवाओं के विनिमय बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और राजनीतिक विचारों और ज्ञान के आदान-प्रदान का केन्द्र होता है। संगठित विपणन केन्द्रों की स्थापना के पूर्व ग्रामीण हाठ या बाजार कृषि उपजों के क्रय-विक्रय का एक मात्र स्थान था। कृषि विपणन में स्थानिय साहूकारों, व्यापारियों एवं दलालों का प्रभुत्व था। किन्तु सार्वजनिक वितरण प्रणालि की स्थापना एवं कानूनी कठोरता के परिणामस्वरूप कृषि उपजों का स्थानीय हाठ बाजारों के स्थान पर संगठित मण्डियों में विपणन में वृद्धि हुई। अत: वर्तमान हाठ बाजार में खुदरा एवं फुटकर व्यापारियों की श्रृंखला में वृद्धि देखने को मिलती है।

ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादित विभिन्न उत्पादों जैसे कृषि उत्पाद, फल-फूल, सब्जी उत्पाद, दुग्ध उत्पाद आदि प्रकार के उत्पाद हैं, जिन्हें अधिक समय तक संग्रह कर नहीं रखा जा सकता। इस हेतु कृषि विविधिकरण परियोजना द्वारा इस दिशा में पहल की गयी तथा ग्रामीण मार्गो को मुख्य मार्ग से जोड़ने का प्रयास भी किया गया। शोध अध्ययन के आधार पर यह तथ्य सामने आया है कि उत्पादों के विपणन हेतु लोगों को स्वयं अपनी व्यवस्था करके शहरों में स्थित बाजारों में सार्वजनिक वाहन, निजी अथवा पैदल जाना पडता है। इससे समय, श्रम व धन की बर्बादी होती है। उत्पादों का उचित मूल्य ना मिलने के कारण उत्पादकर्ताओं को निराशा ही हाथ लगती है। अत: इस दिशा में सुविकसित ग्रामीण बाजार व ग्रामीण सम्पर्क मार्गो का निर्माण जरूरी है। साथ ही विभिन्न एजेन्सियों द्वारा यह प्रयास किया जाना चाहिए कि उनका उत्पाद समय से बाहर की बड़ी मंडियों तक पहुँच जाए और उन्हें उत्पाद का उचित मूल्य मिल सके।

बाजारों के निर्माण एवं दूकानों की संख्या में वृद्धि का जनसंख्या के आकार एवं आय के स्तर का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। देवास जिले में स्थाई बाजारों एवं साप्ताहिक हाठ बाजार लगने वाले शहर या कस्बे एवं गाँवों को चित्र क्रमांक एवं जनसंख्या के आकार के अनुसार गाँवों का वर्गीकरण तालिका क्रमांक में दर्शाया गया है-

तालिका 1 - (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1 के अनुसार देवास जिले के 29.80 प्रतिशत गाँवों की जनसंख्या 500 से कम है। जिले में 500 से कम जनसंख्या वाले गाँवों की कुल संख्या 315 है। अत: इन गांवों में दुकानों की उपस्थिति नहीं होती है। यदि होती है तो सामान्य रूप से किराना सामग्री, बिड़ी, तम्बाकू, गुटखा पाउच प्रमुख वस्तु होते है। जिले में 32.17 प्रतिशत गाँवों की जनसंख्या 500 से अधिक किन्तु 1000 से कम है। इस प्रकार के गाँवों में किराना दुकानों के अतिरिक्त आटा चक्की, पंचर की दुकान, चाय, ठण्डा पेय आदि सामग्री की उपलब्धता की संभावना रहती है। जबकि 2000 से कम आबादी वाले गाँवों में किराना, रेडीमेट कपडे, कंगन चूडी की दूकान, मोटरसाईकिल मरम्मत आदि की दूकानों की उपस्थिति होती है। 2000 से 5000 की जनसंख्या वाले गाँवों अथवा कस्बे आसपास के छोटे गाँवों का प्रमुख बाजार क्षेत्र होने के कारण सभी प्रकार की उपभोग एवं उपयोगी वस्तुओं की उपस्थिति होती है। क्षेत्रिय विशमता एवं जनसंख्या के सामाजिक-आर्थिक विकास के साथ आधुनिक वस्तुओं की मांग में वृद्धि होती है।

इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या के वितरण में विविधता के अनुसार ग्रामीण बाजार को जनसंख्या के आकार एवं उनके स्थान के आधार पर विभक्त किया जा सकता है। जनसंख्या के आधार पर बाजार का वर्गीकरण व्यवसाय एवं व्यापार की दृष्टि से उचित निर्णय लेने में सहायक हो सकता है। ऐसे गाँव जो शहरी अथवा किसी कारखाना अथवा परियोजना क्षेत्र के आस-पास रहने वाली जनसंख्या का उपभोग पेटर्न शहरी क्षेत्रों के समान होगा। शहरी सीमा अथवा आसपास के गाँवों में उपभोग प्रवृत्ति भी परिवर्तित होती रहती है। अनेक स्थानों पर आर्थिक परियोजनाओं की स्थापना के साथ नई आर्थिक गतिविधियों के विकास के कारण आर्थिक वृद्धि की

* प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, अंजड़, जिला-बड़वानी (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

संभावनाएँ बनी रहती है। जबकि अन्दरूनी एवं पिछड़े गाँवों में अभी भी अवसर आधारित पारम्परिक जीवन और सरल उपभोग पैटर्न के साथ सदियों पुरानी परम्पराओं का पालन करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Richika, R., (2005). "Rural Marketing in India: Strategies and Challenges", New Century Publication.
2. जिला सांख्यिाकी पुस्तिका, 2017-18, जिला सांख्यिकी कार्यालय, देवास
3. Sudhanshu, S., and Sarat, S. K., (2010). "Non-Conventional MARCOM Strategy for RuralIndia", Indian Journal of Marketing, Volume: 40: (2),
4. स्वविवेक पर आधारित।

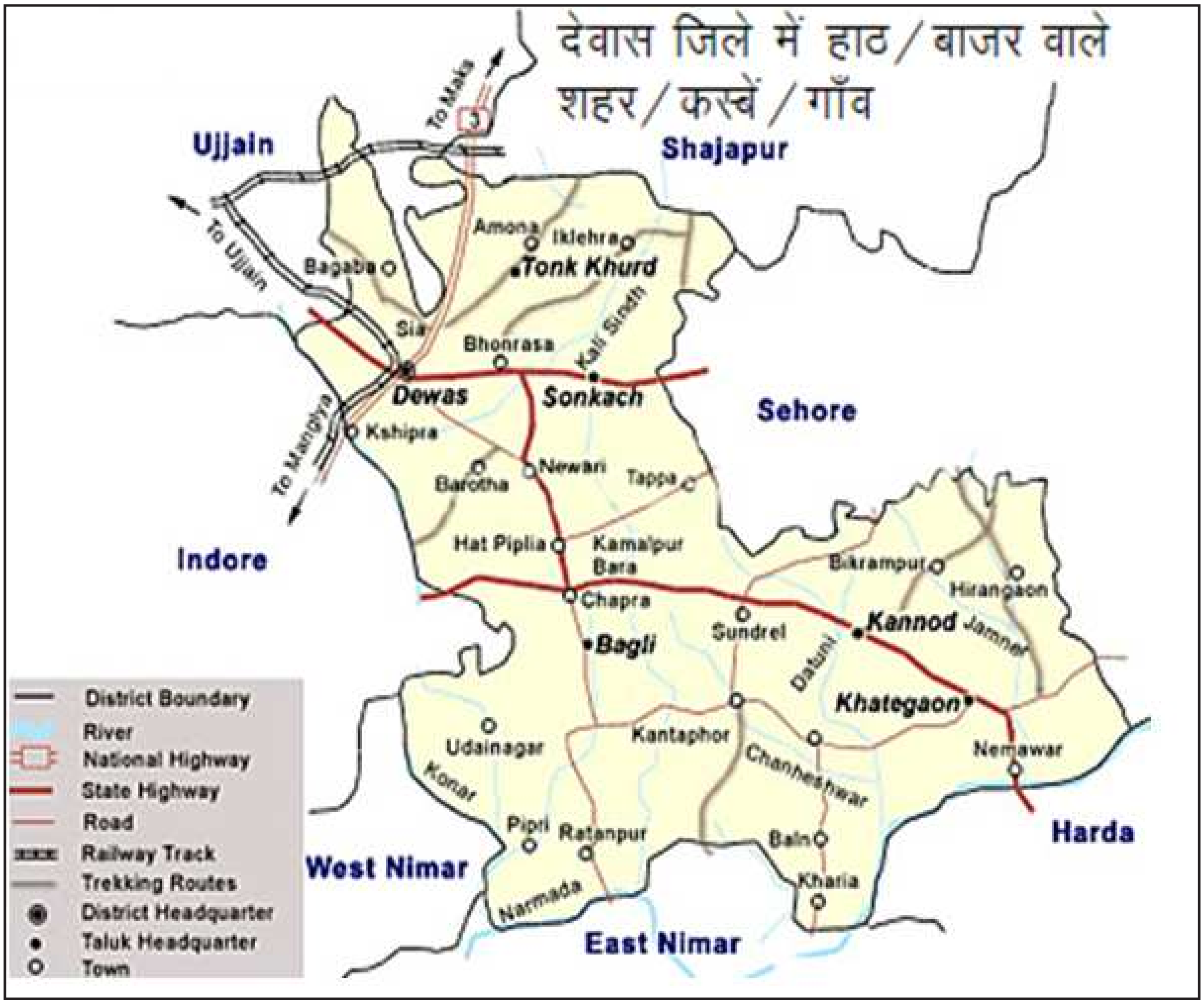

जिला / विकासखण्ड	गांव की संख्या	जिले की कुल जनसंख्या	कुल ग्रामीण जनसंख्या संख्या	500 से कम जनसंख्या वाले गांव			500 से 999 जनसंख्या वाले गांव			1000 से 1999 जनसंख्या वाले गांव			2000 से 4999 जनसंख्या वाले गांव			5000 से 9999 जनसंख्या वाले गांव		
				संख्या	प्रतिशत	जनसंख्या	संख्या	प्रतिशत	जनसंख्या	संख्या	प्रतिशत	जनसंख्या	संख्या	प्रतिशत	जनसंख्या	संख्या	प्रतिशत	जनसंख्या
टोंकखुर्द	108	133783	125804	27	25.00	8126	34	31.48	23773	31	28.70	46721	15	13.89	41817	1	0.93	5367
सोनकच्छ	128	172308	133945	28	21.88	9028	49	38.28	34104	39	30.47	54913	11	8.59	30371	1	0.78	5529
देवास	221	505948	216398	85	38.46	28667	65	29.41	47295	46	20.81	60177	20	9.05	51184	5	2.26	29075
कन्नौद	161	112387	207017	22	13.66	6142	52	32.30	37494	61	37.89	86247	24	14.91	64676	2	1.24	12458
बागली	271	195153	262770	107	39.48	24744	73	26.94	52656	57	21.03	75072	30	11.07	85792	4	1.48	24506
खातेंगांव	168	191435	166022	46	27.38	13830	67	39.88	49052	41	24.40	60641	12	7.14	31283	2	1.19	10766
देवास	**1057**	**1563715**	**1111956**	**315**	**29.80**	**90537**	**340**	**32.17**	**244374**	**275**	**26.02**	**383771**	**112**	**10.60**	**305123**	**15**	**1.42**	**88151**

Source:-http://censusindia.gov.in/2011census/dchb/DCHB_A/23/2320_PART_A_DCHB_DEWAS.pdf

भक्त कबीर विचारधारा

मनजीत कौर *

प्रस्तावना – भक्त कबीर जी को मध्यकालीन भक्तों में अति महत्वपूर्ण और सम्मानीय स्थान प्राप्त हुआ है। धर्म चिन्तन के क्षेत्र में भक्त कबीर जी का योगदान बहुत सराहनीय है। इन्होंने उस समय लोगों को सत्य का मार्ग दिखाया जब समाज धार्मिक कट्टरता और भ्रम के भयानक दौर से गुजर रहा था। भक्त कबीर जी के समाज हित और एक परमात्मा की बंदगी के कारण ही वे मध्यकालीन युग में उत्तर भारत के महान सन्तों में एक हुए। यही कारण था कि गुरू अर्जुन देव जी की नजरों में भक्त कबीर जी की वाणी परवान चढ़ी और श्री गुरू ग्रन्थ साहिब में दर्ज की गई।

भक्त कबीर जी का जन्म ज्येष्ठ 1455 संवत् अर्थात 1398 ई. में हुआ। 'कबीर चरित्रबोध' अनुसार 1455 संवत् और डॉ. श्यामसुन्दर दास जी के अनुसार 1456 संवत् होना बताया गया है। 'मूल बीजक ग्रन्थ' अनुसार भी 1456 संवत् होना स्वीकारा गया है।

चौदह सहि छप्पन जेठ पूनम चन्द सौ बारां।
कबीर साहिब का जन्म हित काशी में अवतारा।।[1]

'कबीर कसौटी' में इनका जन्म 1455 संवत् स्वीकारा गया है।

चौदह सौ पचपन साल गये। चन्दर वार एक ठाट गए
जेठ सुदी बरसाई को। पूरण मासी प्रगट भये।[2]

कुछ विद्वान इनको जुलाहा मानते है और कुछ मुसलमान। पर गुरूवाणीनुसार भक्त कबीर जी जुलाहा बिरादरी में पैदा हुए।

जाति जुलाहा मति का धीर।
सहजि सहजि गुण रमै कबीर।।[3]

सामाजिक तौर पर भक्त कबीर जी सच्चे प्रभु भक्त थे।

उनकी सोच लोकहितकारी और क्रांतिकारी थी। इनकी रचनाओं का मुख्य सार समाज में फैली कुरीतियों के खिलाफ आवाज उठाना था। वे निडर और निरवैर वृति के धनी थे। बेशक भक्त कबीर जुलाहा जाति से संबंध रखते थे। पर असल में सन्त महापुरूषों का संबंध किसी जाति महजब से न होकर समस्त लौकाई के लिए दरिया के बहनें के समान एकसार होता है जो निरन्तर बहते रहने का संदेश देता है। इनके समय में ऐतिहासिक और सामाजिक परिस्थितियाँ बड़ी विकट थी। किसी भी समय राज परिवर्तन सम्भव था। ऐसे हालात में कबीर जी ने रामानन्द जी से राम–नाम का उपदेश लेकर हिन्दुओं और मुसलमानों की रूढ़िवादी धार्मिक और सामाजिक परम्पराओं का त्याग करके सर्वएकता और सर्वव्यापक निर्गुण परमात्मा का प्रचार किया। भक्त कबीर जी के धर्म प्रचार कारण उस समय के धार्मिक अवलम्बी बहुत प्रभावित हुए। जिस कारण अनेकों परिवर्तन वृति वाले लोग आप जी के शिष्य बन गये।

गृहस्थ जीवन के बारे गुरवाणी के कई हवालों को आधार बना कर कुछ विद्वानों ने ये अनुमान लगाया है कि भक्त कबीर जी ने ग्राहस्थ्य में रहते हुए प्रभु भक्ति की।

गुरू दीक्षा – कबीर जी के गुरू रामानन्द जी हुए। माना जाता है कि भक्त कबीर जी रामानन्द जी के रास्ते में लेट गए थे और जब रामानन्द जी नदी से स्नान करके वापस आ रहे थे तो उन्होंने कबीर जी को अपने पैर के अंगूठे से हिला कर कहा कि प्यारे राम–नाम बोल। इस उपदेश के बाद भक्त कबीर जी रामानन्द जी के शिष्य बन गए। इस साखी का प्रमाण सिक्खों के महान विद्वान भाई गुरदास जी ऐसे देते हैं –

होई बिरकत बानारसी रहिंदा रामानन्द गुसाईं।
अम्रित वेले उठ के जांदा गंगा नावन ताईं।
अग्गो ही दे जाइकै लंमा पिया कबीर तिथाईं।
पैरी टुंब उठालिया 'बोलहु राम' सिख समझाई।
जिउ लोहा पारसु छुहे चन्दन वास निंम महकाई।
पशु प्रतेहु देव करि पूरै सतगुरि की वडआई।
अचरज नूं अचरज मिलै बिसमादै बिसमांद मिलाइ।
झरना झरदा निझरहुं गुरमुखि बाणी अघड़ घड़ाई।
राम कबीरै भेद न भाई।।15।।[4]

रचनाएँ – भक्त कबीर जी गुरू ग्रन्थ साहिब में संकलित भक्तों में शिरोमणि भक्त हुए हैं। गुरू ग्रन्थ साहिब में कबीर जी के पद सारे भक्तों से ज्यादा हैं आप जी की बाणी 229 शब्द और 243 श्लोक है सहित 6 श्लोक गुरु साहिब के दर्ज हैं। इन 6 श्लोकों में एक गुरू अमरदास जी और 5 गुरू अर्जुन देव जी के हैं।

विचारधारा – भक्त कबीर जी ने अपने प्रचार काल दौरान जो उपदेश दिए वे उपदेश ही शिक्षाओं के रूप में यहाँ अंकित करने की कोशिश की गई है। भक्त कबीर जी के जीवन में अनेकों ऐसे पहलु देखे जा सकते हैं जहाँ से इस बात का अनुमान लगाया जा सकता है कि कबीर क्रांतिकारी वृत्ति के थे। आपने पाखण्ड, कर्मकाण्ड, ब्राह्मणों की वर्ण भेद और जाति–पाति के भेदभाव का बड़े जोरदार, व्यंग्यमयी और कटाक्ष भरे ढंग से विरोध किया। कबीर की विचारधारा को समझने के लिए निम्न पहलुओं पर दृष्टि डाली जा सकती है। 1. सामाजिक चेतना, 2. भ्रम का खण्डन, 3. ब्रह्म स्वरूप का निर्णय, 4. माया, 5. जीवात्मा, 6. शरीर की नश्वरता, 7. मुक्ति

1. सामाजिक चेतना – भक्त कबीर जी के समय दो विभाजन राजसी और धार्मिक थे। एक हिन्दु और दूसरा मुसलमान। हिन्दुओं में ब्राह्मण श्रेणी जो अपने आप को सबसे श्रेष्ठ समझती थी और दूसरे किसी को मन्दिर के पास भी नहीं फटकने दिया जाता था। राजसी श्रेणी मुसलमानों की थी जो गैर मुस्लिम वर्ग पर विभिन्न प्रकार के कर लगाते थे। उन पर अत्याचार किए

*शोधार्थी (हिन्दी) राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

जाते थे। अत्याचारों की घटना कबीर जी के साथ भी घटी वो बताते हैं –

मन न डिगै तन काहै को डराई।
चरन कमल चित्त रहिउ समाई।।[6]

पर बावजूद इसके भक्त कबीर जी ने न ही परम्परावादी ब्राह्मण सोच को अपनाया न ही मुसलमानों के दबाव अधीन उनकी अधीनगी स्वीकार की। कबीर निडर और निरवैर की वृति वाले सन्त थे। वो सब में परमात्मा का स्वरूप देखते थे –

अव्वल अल्लाह नूर उपाइया कुदरति के सब बंदे।
एम नूर ते सब जग उपजिया कवनु भले को मंदे।।[7]
लोगा भरभि न भूलहि भाई।
खालिक खलक खलक महि खालिक पूरि रहिउ सब ठाई।।[8]

2. वहम भ्रम का खंडन – भक्त कबीर जी के समय देश में अनेक तरह के भ्रम फैले हुए थे। समस्त लुकाई इन भ्रमों के जाल में फंसी हुई थी। एक प्रचलित घटना और गुरवाणी के हवाले के अनुसार जिसका खण्डन भक्त कबीर जी ने किया कि जो लोग मगहर की धरती पर मरते हैं। वो गधे की योनि में पड़ते हैं और जो बनारस यानि काशी में मरता है वह मुक्त होता है। पर भक्त कबीर जी ने इस धारणा को खत्म करने के लिए अपने जीवन का आखिरी समय मगहर में बिताया।

सकल जन्म शिवपुरी गवाइया।
मरती बार मगहरि उठ आया।
हुत बरस तप किया काशी।।
मरन महइया मगहर की बासी।।3।।
काशी मगहर सम बिचारी।।
ओछि भक्ति कैसे उतरसि पारी।।[9]
तेरे भरोसे मगहरि बसिउ मेरे तन की तपति बुझाई।।
पहले दरसनि मगहर पाइउ फुनि काशी बरने आई।।[10]
जैसा मगहरि तैसी काशी हम एकै करि जानि।।
हम निरधन जिउ इह धन पाइया मरते फुटि गुमानि।।[11]

3. ब्रह्म स्वरूप का निर्णय – ब्रह्म से भाव जो परमात्मा सर्वशक्तिमान हैं के बारे में कबीर जी बताते हैं कि वो ब्रह्म जात–पांत के बंधनों से मुक्त है, वह मनुष्य के हृदय रूपी घर में रहता है मजहबों में नहीं।

अलहु गैब सकल घट भीतरि हृदय लेहु बिचारी।
हिन्दु तुरक दुहूँ महि एकै कहै कबीर पुकारी।।[12]

उस ब्रह्मा के बारे में कबीर जी कहते हैं कि यदि सारे समुद्रों को इकट्ठा करके स्याही बनाई जाए और सारे जंगलों को काट कर कलम बनाई जाए और सारी धरती को कागज मान करके उस पर ब्रह्म का यश लिखा जाए तो भी उसका यश लिखने में धरती रूपी कागज कम पड़ जाएगा। वो ब्रह्म सर्वव्यापक हैं पर उसको पाने के लिए अपना आप मिटावा पड़ता है।

कबीर तूं तूं करता तूं हुआ मुझ में रहा न हूं।
जब आपा पर का मिटि गया जत देखउ तित तूं।।[13]

4. जीवात्मा – जीवात्मा का संबंध ही परमात्मा के साथ है, मनुष्य का शरीर तो पंच तत्व से प्राप्त हुआ है एक दिन इसने विनष्ट हो जाना है पर जीव आत्मा हमेशा अमर है।

गुरु प्रसादि मैं डगरो पाईया।
जीवन मरण दोउ मिटवाइया।।
कहु कबीर इहि राम की अंसु।
जस कागद पर मिटै न भंसु।।
जब लगि तेल दीवै मुखि बाटी तब सूझै सब कोई।
तेल जलै बाती ठहरानी सूना मंदर होई।।
रे बहुरै तुहि घरी न राखै कोई।
तू राम नाम जपि सोई।।[15]

जिस तरह दीपक में तेल और बाती होती हैं और जब तेल खत्म हो जाता है तो बाती भी जल जाती हैं और दीपक खाली हो जाता है इस प्रकार जब सांसो रूपी तेल और आत्मा रूपी बत्ती इस शरीर को छोड़कर चली गई तो पीछे इस शरीर का भी नष्ट हो जाना तय है।

5. माया – भक्त कबीर माया को परमात्मा ही की शक्ति स्वीकारते हैं उनके अनुसार परमात्मा ने ही सृष्टि रचना करते समय माया की रचना की है। माया के तीन रूप स्वीकार किए जाते हैं। रज, सत, तम।

रज गुण, तम गुण, सत गुण कहियै इहि तेरी सब माया।
चउथे पद को जो नर चीन्है तिनहि परम पद पाया।।[16]

माता–पिता, भाई–बहन सब माया के आवरण में ही है यहाँ तक कि ब्रह्मा, विष्णु आदि भी इस माया से नहीं बच सके।

अंधकार सुखि कबहि न सोई है।
राजा रंग दोउ मिलि रोई है।।
जपउ रसना राम न कहिबो।
उपजत बिनसत रोवत रहिबो।।[17]

भक्त कबीर माया को, बहुत ही खतरनाक मानते हैं क्यूंकि ये मनुष्य को अपनी गिरफ्त में ले लेती है और फिर छोड़ती नहीं और अन्त समय में माया मनुष्य का साथ नहीं देती।

कबीर माया डोलनि पवनु झकोलनहार।।
संतहु माखन खाया छाछि पीये संसारा।।[18]

सारी दुनिया तो क्या कबीर जी बताते है तीनों लोकों (ब्रह्ममपुरी, शिवपुरी, इन्द्रपुरी) भी इस माया के पीछे लगे हुए हैं पर एक सन्त महात्मा ही है जिनका इस माया से बैर है।

नाकहु काटी कानहु काटी काटि कूट कै डारी।
कहु कबीर संतनु की बैरनि तीनि लोकि की प्यारी।।

इसलिए कबीर जी मनुष्य को इस माया से बचने के लिए प्रेरित करते हैं और कहते हैं कि सबसे उत्तम परमात्मा का नाम है उसी के सहारे जीव माया के प्रभाव से बच सकता है।

6. शरीर की नश्वरता – कबीर जी इस शरीर को पांच तत्वों का पुतला मानते हैं, पंच तत्वों की समाप्ति के साथ ही शरीर भी नश्वर हो जाता है।

खट नेम करि कोठडी बांधी बसतु अनूप बीच पाई।
कुंजी कुलफु प्राण करि राखै करते बार न लाई।।
पंच परऊआ दर महि रहते तिनका नहीं पतिआरा।
चेति सुचेत चित होई रहु तउ लै परगासु उजारा।।[19]

जन्म ले के आए मनुष्य के लिए ये लोक लड़कियों के मायके से जोड़ते हुए कबीर जी बताते हैं कि जिस प्रकार माता–पिता के लाड़ प्यार से पली बढ़ी बेटी एक दिन मायके को छोड़कर ससुराल चली जाती है। उसी प्रकार शरीर ने भी नष्ट हो जाना है और फिर इस शरीर रूपी घर से निकल जाना है–

पेवकडै दिन चारि है साहुरडै जाना।
अंधा लोक न जानही मुर्ख इयाना।।[20]

7. मुक्ती – भारतीय धार्मिक परम्परा में मुक्ती को बहुत ही महत्व दिया जाता है। परम्परावादी सोच के अनुसार जीव की मृत्यु के बाद उस परमात्मा

के साथ हुए मेल को मुक्ती कहा जाता है। पर भक्त कबीर जी और गुरूवाणी के अनुसार सांसारिक बंधनों से छुटकारा और प्रभु के चरणों के प्यार का आनन्द लेने वाला जीव जब सांसारिक विकारों से अपने मन को तोड़ लेता है, तब फिर से आत्मा और परमात्मा का आपसी मेल हो जाता है इनको ही मुक्ति कहा जाता है।

कबीर मन निर्मल भया जैसा गंगा नीर।
पाहै लागै हरि फिरै कहत कबीर कबीर।।[21]
(शब्दार्थ, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब पृष्ठ 1367)

निर्ष्कषत: कहा जा सकता है कि भक्त कबीर जी ने उस समय जन्म लिया जब भारत के हालात धार्मिक और राजसी तौर से उथल-पुथल हो रहे थे। फिर भी उन्होंने अपना प्रचार प्रसार निरन्तर जारी रखते हुए लोगों को वहम, भ्रमों से निकालते हुए सामाजिक और धार्मिक पद को नया रूप प्रदान किया। जिससे समाज में फैली कुरीतियों का खात्मा हुआ और कट्टरता भी ढीली हुई। कबीर ने जन भाषा, लोकभाषा को महत्व दिया उनका मानना था कि लोगों तक अपनी बात पहुँचानी है तो उन्हीं की भाषा में पहुँचे तो ही उसकी सार्थकता है। कबीर की जनभाषा का महत्व गुरू ग्रन्थ साहिब के संकलनकर्ता में भी माना है। यदि ऐसा नहीं होता तो वे अवधी, ब्रज, राजस्थानी के पदों का संकलन नहीं करते। ऐसा करने में उनका पंजाबी होना आडे नहीं आता।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उद्धरित डॉ. जसबीर सिंह साबर, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब और भक्त कबीर जी, शि. गु. प्र. कमेटी श्री अमृतसर , पृष्ठ 9
2. वही, पृष्ठ 9
3. शब्दार्थ, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब, पृष्ठ 328
4. वारां भाई गुरदास, 10/15
5. स. कृपाल सिंह चन्दन, भक्त कबीर जीवन और विचारधारा, पृष्ठ 5
6. शब्दार्थ, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब, पृष्ठ 1162
7. वही, पृष्ठ 1349
8. वही, पृष्ठ 1350
9. वही, पृष्ठ 326
10. वही, पृष्ठ 969
11. वही, पृष्ठ 969
12. वही, पृष्ठ 483
13. वही, पृष्ठ 1375
14. वही, पृष्ठ 871
15. वही, पृष्ठ 478
16. वही, पृष्ठ 1123
17. वही, पृष्ठ 325
18. वही, पृष्ठ 1365
19. वही, पृष्ठ 339
20. वही, पृष्ठ 323
21. वही, पृष्ठ 1367

****

शिवप्रसाद सिंह की कहानियों में ग्रामीण समाज

कमलेश चौधरी *

प्रस्तावना – शिवप्रसाद सिंह आजादी के बाद के कथाकारों में प्रमुख रचनाकार है। भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के बाद बदलते परिवेश का यथार्थ चित्रण उन्होंने कहानियों में किया है। उन्होंने व्यक्ति ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण समाज के विघटनकारी मूल्यों को बारीकि से समझा और कहानियों का विषय बनाया है। उन्होंने जब कथा लेखन प्रारम्भ किया उस समय देश औद्योगिकरण, पंचवर्षीय योजना आदि विभिन्न विकासमान मूल्यों की ओर गतिशील था। अम्बेडकर और गांधी के प्रायस से दलित वर्ग में चेतना जाग्रत हो रही थी। ग्रामीण समाज बिखर रहा था। इस स्थिति में ग्रामीण परिवेश का बदलता स्वरूप अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया। कहानियों में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, जातिगत आदि विभिन्न समस्याओं को उजागर किया। इस विषय में विवेकीराय कहते हैं बदले हुए गांव और बिन बदली हुई गांव के गरीबों की नियति से संबंधित सवालों को कथाकार शिवप्रसाद सिंह विविध कोणों से उठाते हैं आर्थिक सवालों से तीखे सामाजिक सवाल हैं।

इनकी कहानियों का विषय ग्रामीण जीवन पर आधारित होने के कारण, इन्हें प्रेमचन्द को परम्परा का अनुगामी कहा जाता है दोनों लेखक ग्रामीण जीवन के कथाकार है लेकिन अलग-अलग देशकाल, वातावरण के कारण दोनों की रचना प्रक्रिया, कथाशिल्प में भिन्नता दिखाई देती है। प्रेमचन्द के समय साम्राज्यवाद फैला हुआ था जनता सामन्तवाद से संघर्ष कर रही थी वहीं सब प्रेमचन्द की कहानियों का विषय रहा। लेकिन शिवप्रसाद सिंह के समय देश स्वतंत्र हो गया था, जमींदारी प्रथा लगभग समाप्त हो गयी थी। जमींदारी समाप्त होने पर भी जमीदारों का शोषण बरकरार रहा। शिवप्रसाद सिंह प्रेमचन्द की परम्परा में होते हुए भी आधुनिक कथाकार हैं।

इनकी कहानियों में परम्परागत रूढियां न होकर आधुनिकता का समावेश है प्रेमचन्द की परम्परा में होने के कारण शिवप्रसाद सिंह की कहानियों में ग्रामीण जनजीवन की पीड़ा, उच्चतर नैतिकता तथा नैतिक संघर्श दिखाई देता है। उनके चेतन, अवचेतन में ग्रामीण जीवन की यथार्थ स्मृतियां झलकती है। शिवप्रसाद ने व्यक्ति बाह्य और आंतरिक सभी समस्याओं को उजागर करने के प्रयास किया है स्वयं शिवप्रसाद सिंह के शब्दों में ग्रामीण जीवन की कहानियों का प्रतिपाद्य स्पष्ट होता है। उन्होंने कहा मैंने ग्राम जीवन से ही अधिकांश चरित्र चुने। यह मेरी विवशता इसलिए है क्योंकि मैं इन चरित्रों के बाह्य आभ्यंतरिक रूपों को ज्यादा आसानी से समझता हूँ।'[1]

इन पात्रों में नन्हों, माटी की औलाद का टीमल कुम्हार, पापजीवी का बदलु आदि के अंत:मन की जीवन्तता कहानियों में द्रष्टव्य हैं। सभी पात्र इनके आस-पास के लोग ही है उनके जीवन के प्रत्येक स्थिति एवं समस्याओं को उन्होंने नजदीक से देखा परखा है शिवप्रसाद को ग्रामीण जीवन का गहरा अनुभव है। उन्होंने ऐसे पात्रों का चयन किया है, जो बिना किसी अपराध की यातना झेलते है उनकी बिंदा महाराज ऐसे ही पात्र पर केन्द्रित है जो बिना किसी अपराध के अनेक सामाजिक समस्याओं का सामना कर रहा है।

नयी कहानी की प्रवृत्तियों जैसे विश्वसनीयता अनुभूति की प्रमाणिकता और अभिव्यक्ति की ईमानदारी का समावेश इनकी कहानियों में दिखाई देता है। शिवप्रसाद सिंह का कथन है, मेरी कहानियों में उपन्यासों में जो पात्र आए है, वे पूरे के पूरे कल्पना द्वारा नहीं निर्मित किए गए है यह अलग बात है कि परिवार, रिश्ते, परिवेश और वातावरण भिन्न है लेकिन वो सब मेरे जाने हुए और देखे हुए हैं। कहीं न कहीं मेरा उनसे मानवीयता के धरातल पर संवेदना के स्तर पर सर्म्पक रहा है, चाहे वे खुबबक्श या बिंदा महाराज देखे हुए पात्र है काल्पनिक नहीं। इन्होंने अपने परिवेश के प्रत्यक्ष अनुभव को कहानी का विषय बनाया। जो भी पात्र कहानियों में दिखाई देते है उनका आचरण चित्रण शिवप्रसाद सिंह जी ने जिस प्रकार किया है उससे महज ही पता चलता है कि कहानीकार ने इन्हें प्रत्यक्ष रूप से देखा जाना अच्छा अनुभव किया है उन्होंने कहा भी है 'ये अनुभव मेरे लेखक के लिए वरदान भी थे और चुनौती भी, वरदान इस अर्थ में कि मुझे अपनी कहानियों के प्लाट खोजने के लिए कहीं भटकना नहीं पड़ता था और चुनौती इस अर्थ में कि अपने व्यक्तिगत अनुभवों को मैं किस प्रकार एक अपेक्षाकृत विस्तृत मानवीय संवेदना से युक्त करू कि स्त्रोतों को वह आंचलिक न लगे।'[2]

शिव प्रसाद सिंह की कहानी 'मंजिल और मौत' में एक व्यक्ति के जीवन की लालसा को अत्यन्त मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया गया है। कहानी का पात्र 'बौड़म' स्वतंत्र भारत में जिंदगी की सारी विपरीत स्थितियों जुझता दिखाई देता है उसकी पत्नी ने भी उसे पागल कहकर ठुकरा दिया और स्वयं ठाकुर के कहने पर उसके नौकर की रखैल बन गयी। तब से बौड़म के मन की लालसा है कि पायलों वाली एक बहू लाए उसके घर की खुशियां पुन: लौट आए। कहानी में लेखक प्रतीक रूप में कुएं के पास की पुरानी सीढ़ियों का जिक्र करता है जो बौड़म की तरह बिल्कुल जर्जर हो गयी। 'जिसके सहारे पीठ को अड़ाकर अपने दोनों घुटनों के बीच सिर के गड़ाकर बौड़म निश्चेष्ट बैठा रहेगा, जैसे जिन्दगी के असहय भार को क्षण भर के लिए उतारकर कोई थका-हारा बटोही विश्राम करता हैं।[3]

बस विपरीत परिस्थिति में भी बौड़म में जिजीविषा है बौडम की विषम असहय स्थिति में भी पूरा गांव उसे मनोरंजन का साधन मानता है। बच्चे, बूढे, अंधेड, औरतें सब मिलकर बौड़म को मुफ्त का खेल समझते है उसके कंधे की चादर खींचकर उसे उकसाया जाता है। उसकी आंखों में क्रोध, दीनता, कच्ची नींद के टूटने की खुमारी, यह सब जान पाना बहुत मुश्किल है। वह अपनी चादर लेने के लिए वहां खड़े प्रत्येक व्यक्ति को करूणा की नजर से देखेगा। उसकी आंखों में बेबसी और आग्रह की मूर्ति दिखाई देती है। अरे दे

*शोधार्थी (हिन्दी) राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

दो ना। वे हंसते है, मर्द है, मजबूत है। तुम तो औरत हो, गरीब हो, मेरी तरह कमजोर हो, तुम मुझे परेशान क्यों करती हों। इस करूणाबद्ध आग्रह में कितनी विन्रमता है, जिसे यह समाज समझना नहीं चाहता है।[4]

उसके दु:ख को समझने वाला समाज में कोई दिखाई नहीं देता। उसके जीने का एक मात्र सहारा मिटु कुत्ता है, जो एक महिने से दिखाई दे रहा है अत: यह कुत्ता सोते-जागते हमेशा बौड़म के साथ रहता है उस कुत्ते के आ जाने से बौड़म व्यस्त हो गया है और कोई यदि बौड़म के करीब आने की कोशिश करता है तो कुत्ता गुर्रा उठता है। और यहीं कुत्ता बौड़म का सहारा था और बौड़म की व्यस्तता का कारण बना हुआ था। लेकिन बौड़म की वयस्तता गांव वाले के मनोरंजन में बाधा बन रही थी। किसी गांव वाले ने उसके मिट्ठू को अंत में जहर दे दिया। इस स्वार्थी समाज से बौड़म की खुशी का एक मात्र सहारा भी लोगों ने छीन लिया। लेकिन इन विपरीत परिस्थितियों में भी उसके अंदर एक ऐसी जिजीविषा है तो विश्व की बड़ी से बड़ी समस्या का सामना कर सकता है 'बौड़म का पूरा जीवन सत्रांस से भरा हुआ है, वह जिंदगी से लड़ भी रहा हे लेकिन अपनी मंजिल पाने की उम्मीदों के कारण जिंदगी से हार भी नहीं मान रहा। उम्मीद की किरणें उसे हारने नहीं देती। अंत में उसकी मनोकामना पूरी होती है उसका घर दुल्हन की रून-झुन पायलों की आवाज से गूंज उठता है। बौडम के घर में चारों तरफ उल्लास था, आनंद था, और इस अपार खुशी की रात के सवेरे लोगों ने देखा कि आनंद के महासागर में तैरते हुए बौड़म का शरीर ठंडा हो गया। मरा सा तो था ही, पर इच्छा का जोर उसे खींचता गया, मंजिल पर आकर राही मौन हो गया। कहानीकार के कथा कौशल का चरम उनकी कहानी में द्रष्टव्य है उनके कथा पात्रों की दारूण यातना, असमान सामाजिक मूल्यों से पैदा होने वाली दु:सह यंत्रणा,सामाजिक कुरीतियों के घोर अभिशप्त पाठक को झकझोर देते है। कहानी का पात्र घोर जिजीविषा की शक्ति के कारण अंत तक पाठक को जोड़े रखता है। अत: अंत तक आशा दीप जलाये संघर्षरत रहता है।[5]

'कर्मनाशा की हार' कहानी में शिवप्रसाद सिंह ने अंधविश्वासों और सामाजिक रूढ़ियों पर करारा प्रहार किया है। इस कहानी में मनुष्य के कर्म को नष्ट करके उसे ऊपर सामाजिक रूढ़ियों और निर्यात का अभिशाप लादने वाली प्रकृति को उजागर किया है। कहानी का पात्र भैरो पाण्डे का छोटा भाई कुलदीप और जाति की विधवा फलमतिया से प्रेम करता हैं और लोकलाज के डर से उसे गर्भवती कर भाग खड़ा होता है। उसी समय कर्मनाशा नदी में बाढ़ आती है, जिसे इसी पाप का परिणाम मानकर गांव का ठाकुर फुलमत और उसके बच्चे सहित बलि देने को तैयार हो जाता है।[6]

वही लेखक इन अंधविश्वासों की दीवारों को तोड़ते,स्वस्थ, आधुनिक विचारों वाले पात्र भैंरो पाण्डे को खड़ा करता है भैरो कहता है[7] 'कर्मनाशा की बाढ़ एक दुधमुहे बच्चे की बलि देने से नहीं रूकेगी उसके लिए तुम्हें पसीना बहाकर बांधो को ठीक करना होगा।'[8] भैंरो का चरित्र अत्यंत आधुनिक विचारधारा का परिचायक है। भैरों का कथन- 'कुलदीप कायर हो सकता है, किन्तु मैं कायर नहीं हूँ। मेरे जीते जी बच्चे और उसकी माँ का कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता।[9] जिस समाज में भैरो पाण्डे जैसे लोग रहेगें वहाँ की कर्मनाशा को पराजित होना ही है। गोपालराय ने लिखा है य'इससे कहानीकार की नयी सोच और संवेदना का पता चलता है। कर्मनाशा नहीं यदि उस रूढ़िवादी परम्परा का तो भैरो पांडे उस नयी चेतना का प्रतीक है जिसके सामने कर्मनाशा को झुकना ही पड़ता है।[10] इस कहानी में बदलते ग्रामीण जीवन के पारम्परिक भूतों-मान्यताओं की ओर संकेत किया है।[11]

'नन्हों' कहानी में शिवप्रसाद ने नन्हों के जीवन की विडम्बनाओं, परम्पराओं दाम्पत्य जीवन और प्रेम संबंधों को रेखांकित किया है। इस कहानी में नन्हों का वैवाहिक जीवन अत्यन्त दुखदायी बनकर प्रस्तुत हुआ है। शादी से पूर्व शादी के लिए रामसुभग नामक लड़का दिखाया जाता है।[12] जो सुन्दर और सुडौल है लेकिन शादी किसी मिसरी लाल जो पैर से विकलांग है से कर दी जाती है। यह बात नन्हों के पिता को मालूम है परन्तु नन्हों के लिए अच्छे घर और अच्छे वर के लिए दहेज देने की औकात नहीं है। अत: वह इस बात के पता होने पर भी चुप ही रहता है। लम्बे घूंघट के नीचे आँसूओं को सुखाती हुई नन्हों सुहागिन बनी। शादी के धोखे की पीड़ा उसे जीवन भर सताती रहती है इस पीड़ा कैसे उबरने के पहले ही पति की मृत्यु हो जाती है। 'ये कांच की चूडियाँ भी किस्मत का अजीब खेल खेला करती है।'[13] नन्हों जब इन्हें पहनना नहीं चाहती थी तब तो ये जबरदस्ती उसके हाथों में पहना दी गयी और अब जब इन्हें उतारना नहीं चाहती तो लोगों ने जबरदस्ती हाथों से उतरवा दिया। नन्हों का पूरा जीवन सामाजिक मर्यादा और नैतिक दबावों में ही बीत जाता है। मन में दु:ख को छिपाए वह अकेले ही जीवन संघर्ष करती रही। आधुनिकता के इस दौर में भी ग्रामीण समाज का ढांचा आज भी रीति रिवाजों, कुप्रथाओं से जकड़ा हुआ है। शिव प्रसाद सिंह जी कहते है 'नन्हों मध्यवर्गीय नारी का प्रतिनिधित्व करती है, उसे शायद इतनी छूट मिल जाए कि वह भविष्य में अपनी मजबुरियों से बचने के लिए कोई रास्ता ढूंढ ले, क्योंकि समाज का नैतिक ढांचा काफी तेजी से बदल रहा है।'[14]

कहानी 'गंगा तुलसी' एक विधवा स्त्री के जीवन पर केन्द्रित है। गंगा के असुरक्षित जीवन और स्त्री की नियति को चित्रित किया गया है। गंगा अपने इकलौते पुत्र को पढ़ाना चाहती है।

लेकिन उसकी आर्थिक स्थिति कमजोर है, बेटे को पढ़ाने के लिए वह जमींदार के घर में चूल्हा-चौका का काम करने लगती है। जहां उसे मजबूरन जमींदार से संबंध बनाते पड़ते है। गंगा की मजबूरी का जमींदार फायदा उठाता है। गंगा बेटे की पढ़ाई के लिए जमींदार के कुकर्मो का विरोध नहीं कर पाती और परिस्थिति से समझौता कर लेती है। गंगा और जमींदार के संबंधों की चर्चा पूरे गांव में फैल जाती है, यह बात जब उसके बेटे को पता चलती है तो दलदल से निकल नहीं पाती। समाज उसकी कोशिशों को कामयाब नहीं होने देता। श्यामा को वेश्या बनने पर मजबूर करने वाला कौन है? क्या वह स्वयं वेश्या बनना चाहती थी?

शिवप्रसाद सिंह की कहानियां समाज में फैली इन समस्याओं के प्रति संकेत ही नहीं करती अपितु इन पर प्रश्न चिन्ह भी लगाती है। इनकी कहानियें में समाज का सच्चा आईना दिखाई देता है समाज में व्याप्त आर्थिक शोषण के शिकार चरित्रों का चित्रण शिवप्रसाद सिंह की कहानियों में होता है, इन्होंने पात्रों की सजीवता उनकी चारित्रिक स्थितियों, संघर्षो का स्पष्ट एवं यथार्थ चित्रण किया है शिवप्रसाद जी ईमानदारी, आत्मीयता और संवेदना के साथ ग्रामीण समाज की समस्याओं को उजागर करने का प्रयास किया है। इन ग्रामीण समाज संदर्भित कहानियों के माध्यम से शिवप्रसाद सिंह ने समाज की सड़ी-गली परम्पराओं, प्रथाओं, रीतिरिवाजों, अंधविश्वासों को समाज से निकल फेंकने का कार्य भी किया है। इन्होंने अपनी कहानियों में व्यक्ति के जीवन के सभी पहलुओं को बड़ी मार्मिकता से साथ उभारा है।[15]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राय विवेकी, हिन्दी कहानी, समीक्षा और सन्दर्भ, राजीव प्रकाशन, इलाहाबाद सं.1985 पृ.सं. 27
2. सिंह शिवप्रसाद, स्मृतिनिधि कहानियां, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1994, पृ.सं. 80

3. सिंह शिवप्रसाद, मेरे साक्षात्कार, किताबघर, नई दिल्ली, सं. 1995 पृ. सं. 72
4. वहीं –,– पृ. सं. 67
5. सिंह शिवप्रसाद, अंधकूप, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली सं. 2005 पृ.सं. 68
6. वहीं –,– पृ. सं. 69
7. शिवप्रसाद, मेरे साक्षात्कार, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1995, पृ.सं. 41
8. सिंह शिव प्रसाद, अंधकूप, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2005 पृ. सं. 75
9. वहीं –,– पृ.सं. 52
10. वहीं –,– पृ. सं. 61
11. राय गोपाल, हिन्दी कहानी का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2014 पृ.सं. 112
12. सिंह शिवप्रसाद, एक यात्रा सतह के नीचे, अंधकूप, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली सं. 2005 पृ.सं. 27
13. सिंह शिव, मेरे साक्षात्कार, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली सं. 1995 पृ. सं. 13
14. सिंह, शिव प्रसाद, अंधकूप, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2005, पृ.सं. 231
15. सिंह शिवप्रसाद, एक यात्रा सतह के नीचे, अंधकूप, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2005, पृ.सं. 49

****

A Study of Essential Skills by Experts and Students of Teacher Education : Suggested Strategies

Dr. Nirupama Sharma * Pratima Samar **

Abstract - The present research article is based on the study of essential skills by experts and students of teacher education. The main objective was to study the rating given to the each Skill by experts and students of Teacher Education and the second objective was to suggest some strategies to develop the selected skills among the students of Teacher Education. For this research a sample of 50 students studying in the B.Ed. Course and 15 experts teaching them were taken from 5 old B.Ed. colleges of Udaipur City. Data was collected by self made rating scale for students and Experts (enlisting 10 skills). For analysis, the rating given by experts and students to each skill was recorded and mean was calculated. The analysis shows that the communication skill is of great importance for teacher education group and so the researcher suggested some strategies to develop communication skill among the students of teacher education group.

Introduction - An educational organization performs a considerably important role in providing learning experiences to lead its students from shadows of ignorance to the bright light of knowledge. The key persons to bring about this huge transformation are teachers. As stated by NCTE (1998) in Quality concerns in Secondary teacher education "The *teacher is the most important element in any educational program. It is the teacher who is mainly responsible for implementation of the educational process at any stage*". Thus it is very important to empower the preparation of teachers, so that the future of the nation is safe and secure. The teacher education providing organizations have a great responsibility and must show the ability to change and modify according to the need of the time.

Now as time is changing, the skills that students need to be successful in life and society also should change. The students need to be flexible and skill ready for the present scenario. They should be ready to constantly learn new skills. Skills are described variously. **www.yourdictionary.com** defines "Skill is a talent or ability that comes from training or practice." **DK Illustrated Oxford Dictionary (2008)** explains 'skill' as "expertness, practiced ability, facility in an action, dexterity or tact." The teacher education institutes must be enriched with all new and modified skills.

Thus it is important to study the inclination of experts and students towards various essential skills and select an important skill required for the students of teacher education group in terms of its value in making the student of their stream employable. There is also a need to understand the ways to develop this important skill.

Problem Statement - "**A Study of Essential Skills by Experts and Students of Teacher Education: Suggested Strategies**"

Research Objectives

I. To study rating given to each essential skill by experts and students of Teacher Education.
II. To suggest some strategies to develop the most important skill among the students of Teacher Education.

Delimitations of the study - The study was confined to the Teacher Education colleges of Udaipur city of Rajasthan State only.

Research Method - For any research, appropriate method selection is very important. As per the need of the study, Survey Method is adopted for this study.

Tools for the study

1) A common rating scale listing 10 skills which are mostly required by students of teacher education during job.

Sample used for study :

I. From 5 old B.Ed. colleges, 3 experts were taken into consideration thus in all (5*3) **15 experts** were selected
II. From each selected B.Ed. colleges, 10 Students were selected randomly, thus in all (5*10) **50 students** were selected.

Data analysis and interpretation - The researcher studied a lot of researches and enlisted 10 skills with their meanings and the students and the experts were asked to rate each skill in terms of its value in making the student of their stream employable where **5** indicated ***most important*** and **1** indicated ***least important.*** The calculation of the rating scale is done and the average values of the responses

*Associate Professor, Rajasthan Mahila Teachers' Training College, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Mohan Lal Sukhadia University, Udaipur (Raj.) INDIA

given by experts and students is recorded in the following table1.1-

Table 1.1 (see in next page)

The rating in Table 1.1 shows that communication skill is most essential skill in terms of its value in making the student of teacher education stream employable. Both students and students have given the highest rating to communication skill.

Chart 1.1 shows the average rating values given by experts and students of Teacher Education to various essential skills.

Chart 1.1 (see in next page)

Chart 1.1 depicts the comparison of responses of experts and students. Both agree that communication skill is important and consider it to be the most important skill. Seeing its importance, the researcher suggested some strategies for developing communication skill.

Strategies for developing communication skill - The strategies were developed for the communication skill by the researcher after studying the available books and Websites for definitions, main components. Some experts were also consulted for developing strategies. It was found that Communicative skill is basically a combination of four basic skills (listening skill, speaking skill, reading skill and writing skill) working together. The suggested strategies for developing communication skills are as follows-

1. **Attend workshops -** students can attend specially oriented workshops for developing various communication skills. They can get a chance to finely modify their abilities by fine tuning their styles.
2. **Do brainstorming –** the students ask some "wh" questions like what, when, where, why, who, and how to themselves and try to find specific answers. This enables the students to create authentic ideas.
3. **Be receptive** – students must be coached to be receptive to what they listen and read, to comprehend and to appreciate.
4. **Be productive**– students must be trained to be productive and express creatively with fluency, with right pronunciation, without grammatical errors, correct usage of vocabulary and with clarity of thoughts.
5. **Stop hesitation** – students must be trained to build up confidence, mental confidence to remove stage fear, to develop tranquility and self esteem in students and motivate to fight with hesitation.
6. **Sequence ideas -** structure and unity are two very important features of any work, thus now the students are exposed to arrange their ideas in proper sequence
7. **Supplement thoughts –** thoughts and ideas should be created and supplemented through extensive reading.
8. **Avoid distractions**- while the listening, speaking, reading or writing the students should not be exposed to any distraction like TV, mobile, audio, etc thus understanding the hindrances they create
9. **Practice regularly** all the learnt abilities can be enhanced by regular and continued practice. All the above mentioned strategies should be followed and activities such listening some music, regional dialects etc reading of poetry, story, great speeches etc, and after that students are suggested to answer the questions based of comprehension, puzzles games, story telling, interactive group discussions, wall magazine preparation, slogan writing, developing models, organizing exhibitions, peer group learning, panel discussion, organizing street plays, and creative writings to improve communications.

Educational Implications - The present research is of great use to teachers as well as students. This research gives the average values of responses given by experts and students thus indicating the rating given to each essential skill by them and also show how important is each skill for teacher education. This rating shows that students and experts feel that communication skill is the most important skill. The suggested strategies along with activities are ready to use for developing communication skill among students.

Conclusion - This research gives the inclination of experts and students of teacher education towards various essential skills and thus an important skill required for the students of teacher education group in terms of its value in making the student of their stream employable is selected. Some useful strategies for developing it among the students are also suggested.

References :-

1. **Steven Farr (2010)** in a blog answered How Do You Define 21st-Century Learning?
2. **Nair Prakash(2008)** in the guidebook "*30 Strategies For Education Innovation*" stated that Cultural diversity is an important strength in today's increasingly global society and so he represented a new, alternative, education model
3. **Palit, Amitendu (2009)** presented a working paper titled "**Skills Development in India: Challenges and Strategies"**
4. City guides, Manipal Global and FICCI, Skills for All, New Approaches to Skill Development
5. www.Jstor.org
6. www.shodhganga.org
7. www.wikieducator.org
8. www.journals.elsevier.com
9. www.skillsyouneed.com/
10. www.eduvisors.com

Table 1.1

N	Skills	Collaborative Skill	Communicative Skill	Conflict Managing Skills	Creative Skill	ICT Skill	Innovative Skill	Leadership Skill	Problem Solving Skill	Stress Managing Skills	Time Management Skills
50	Average values (Students)	4.66	4.84	4.18	3.72	4.38	3.36	3.94	4.44	3.34	3.7
15	Average values (Experts)	4.87	4.87	4.20	3.73	4.20	3.53	4.07	4.33	3.33	3.40

Chart 1.1

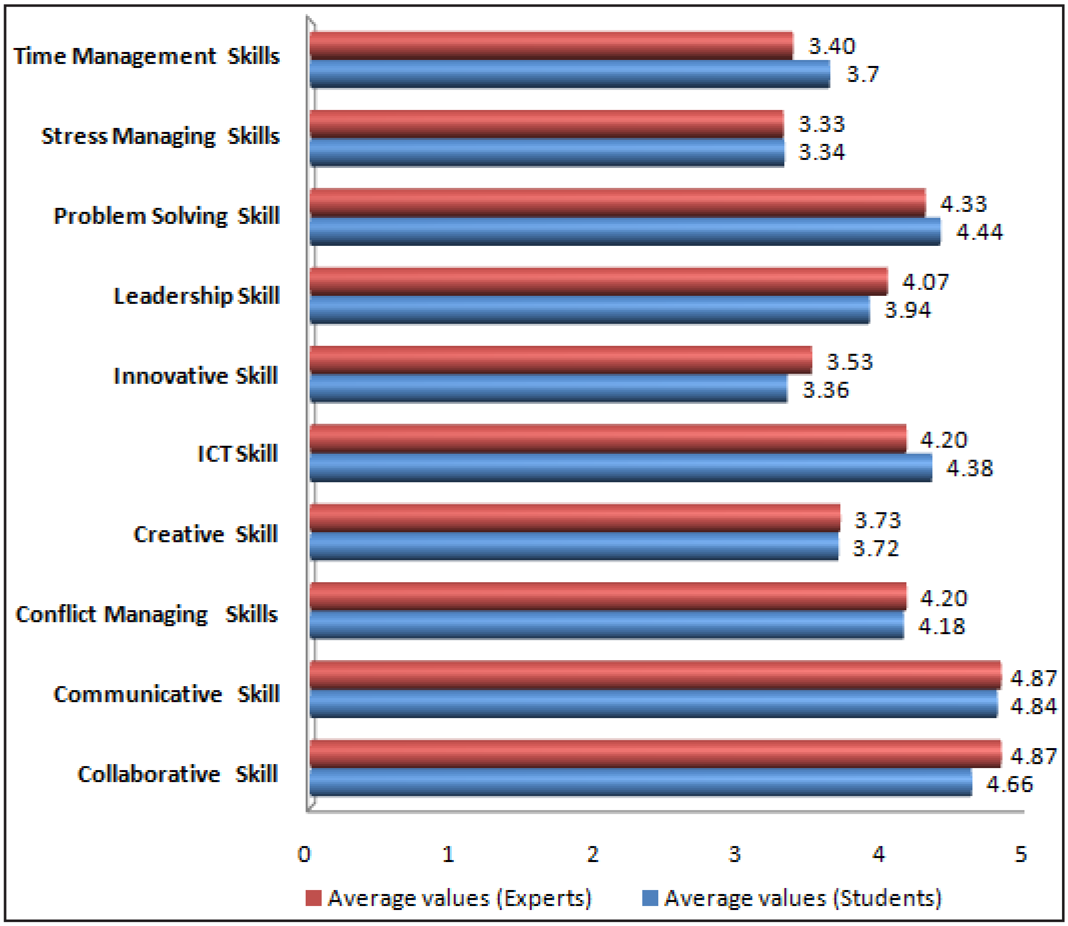

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

ग्रामीण बाजार के उपभोक्ताओं की समस्या (देवास जिले के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. सुनील मोरे* जाहिद खान **

प्रस्तावना – देवास जिले का गठन मध्यप्रदेश के अन्य जिलों की तरह 1 नवम्बर 1956 में हुआ। यह जिला प्रशासनिक दृष्टि से इन्दौर संभाग के अन्तर्गत आता है। वर्तमान में देवास जिले में 8 तहसीलें और 6 विकास खण्ड हैं। जिसका प्रशासनिक मुख्यालय देवास में स्थित है। जिले में 1114 आबाद गाँव 1 जिला पंचायत, 6 जनपद पंचायत 497 ग्राम पंचायत कार्यरत है। जिले में 236 पटवारी हल्का है। देवास जिले का भौगोलिक क्षेत्रफल 7020 वर्ग किलो मीटर है, जो मध्यप्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 2.3 प्रतिशत है।देवास जिला मालवा का पठार क्षेत्र के अंतर्गत आता है।

ग्रामीण बाजार के विकास से सर्वाधिक सांस्कृतिक परिवर्तन हुए है। बाजार में उपभोक्ता व्यवहार पर सबसे प्रभावित करने वाला कारक सांस्कृतिक पक्ष होता है। किन्तु बाजार परिस्थितियों में परिवर्तन, वस्तुओं एवं सेवाओं का अन्य विकसित, सभ्य एवं परिस्कृत रूप ने ग्रामीण परम्परागत रूप से चली आ रही सांस्कृतिक मान्यताओं एवं धारणाओं को अपनाने को विवष किया है। हांलाकि ग्रामीण उपभोक्ता सास्कृतिक वातावरण से विभिन्न मूल्यों, धारणाओं और प्राथमिकताओं के आधार पर वस्तु एवं सेवा चयन करने को बाध्य है। फिर भी सांस्कृतिक रूप से नवीन विचारधारा का प्रवेष हुआ है। जबकि किसी भी उत्पादक द्धारा किसी क्षेत्र विषेष के लिए उपभोक्ताओं के लिए उत्पादन करने से पूर्व सांस्कृतिक पहलूओं पर विचार किया जाता है। फिर भी ग्रामीण एवं पिछड़े बाजार क्षेत्रों में आधुनिक एवं शहरी क्षेत्रों के समान वस्तुओं एवं सेवाओं की मांग में वृद्धि हुई है।

ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में तेजी वृद्धि एवं प्रगति के बावजूद ग्रामीण विपणन में कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ग्रामीण बाजार में दुकानदार एवं ग्राहक दोनों की अलग-अलग समस्याएँ है। यद्यपि ग्रामीण क्षेत्रों में षिक्षा, आय, सम्पर्क, एवं संचार साधनों के विकास के परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में बाजार विकास की अनेक संभावनाएँ विद्यमान है किन्तु अनेक कारणां से बाजार विकास, नवीन ग्राहकों की प्राप्ति एवं उपभोक्ता सन्तुष्टि के स्तर में पर्यापत विकास नहीं होने के लिए अनेक कारण जिम्मेदार है।

- **उत्पाद की जानकारी का अभाव –** ग्रामीण बाजार में ग्राहकों का सबसे बड़ा वर्ग अशिक्षित है। वस्तु का आकार, गुणवत्ता, पेकेजिंग, किस्म, संरचना, कीमत आदि में अन्तर विद्यमान होने के बावजूद ग्राहकों को जानकारी के अभाव में निम्न स्तरिय वस्तुओं को उच्च कीमतों पर बेचा जाता है।
- **अत्यधिक मूल्य वृद्धि –** वस्तुओं अथवा सेवाओं के अत्यधिक आकर्षण, विज्ञापन, प्रस्तुत करने के ढंग, स्थान आदि के कारण व्यय की जाने वाली कीमत को वस्तु के मूल्यों में जोडने के कारण वस्तुओं की कीमत सामान्य बाजार की तुलना में अत्यधिक उच्च होती है। जिससे एक सामान्य ग्राहक को खरीदना कठिन हो जाता है।
- **नाप-तौल में कमी की समस्या –** ग्रामीण बाजार में विक्रय हेतु प्रस्तुत वस्तुएँ पेकिंग वाली होती है। जिनका वास्तविक वजन पेकिंग किए गए पदार्थ के साथ होने के कारण उपभोग वस्तु का वजन कम होता है। मूल्य में वस्तु का पूर्ण वजन एवं पेकेजिंग की लागत, कर व अन्य भत्तो जोडकर वस्तु का मूल्य लिया जाता है।
- **अत्यधिक विज्ञापन से असमंजस्य की स्थिति –** शहरी बाजार में विभिन्न वस्तुओं अथवा सेवाओं के अत्यधिक प्रचार के कारण ग्राहक अथवा उपभोक्ता के मन में असमंजस्य की स्थिति उत्पन्न होती है। वह किसी निश्चित वस्तु या सेवा को क्रय करने के लिए निर्णय लेने में संकोच करता है। किसी निर्धारित वस्तु या सेवा को क्रय करने के बाद उसके मन में क्रय की गई वस्तु या सेवा के प्रति भय व गलत अथवा सही वस्तु या सेवा के प्रति पूर्ण सन्तुष्टि का भाव नहीं बना पाता है।
- **ऑफर्स, इनाम अथवा लॉटरी की आड़ में ठगी –** ग्रामीण बाजारों ग्राहकों को वस्तुओं या सेवाओं के लिए अनेक प्रलोभन दिए जाते है जिसमें नगद वापसी, इनाम, लॉटरी आदि सम्मिलित है। ऑफर्स में दी वाली वस्तु की आवश्यकता, गुणवत्ता का स्तर निम्न, ऑफर्स का लाभ भी निष्चित राषि तक क्रय करने पर मिलना, इनाम, लॉटरी की प्राप्ती नहीं होने पर ग्राहकों का ग्रामीण बाजार के प्रति विश्वास में कमी आई है।
- **दुकानदार द्धारा गलत जानकारी –** ग्रामीण दुकानदार द्धारा ग्राहकों को विभिन्न वस्तुओं की कीमत, गुणवत्ता आदि की जानकारी दी जाती है। जिससे ग्रामीण ग्राहक वस्तु की गुणवत्ता में कमी, अधिक मूल्यों की वसुली के कारण ग्राहक ठगा सा महसूस करता है।
- **आवश्यक व्यय में वृद्धि –** ग्रामीण दुकानदारों द्धारा अनेक ऐसी वस्तुओं का विक्रय किया जाता है जिनकी उपयोगिता कम है ग्रामीण उपभोक्ता के स्तर की नहीं है। किन्तु ईनाम व ऑफर के लालच में आवश्यक वस्तुओं पर व्यय किया जाता है।
- **ग्राहकों की शिकायतों की सुनवाई का अभाव –** ग्रामीण बाजार में क्रय की गई वस्तु से सम्बन्धित किसी समस्या के लिए शिकायत की सुनवाई करने के लिए कोई जिम्मेदार व्यक्ति नहीं मिलता है। अत: ऐसी परिस्थिति में ग्राहकों का अत्यधिक धन, समय की बर्बादी होती है एवं ग्रामीण बाजार में ग्राहकों के विष्वास में कमी का प्रमुख कारण है।
- **ग्राहकों की सीमित संख्या –** ग्रामीण बाजार में ग्राहकों की सीमित

* प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, अंजड़, जिला-बड़वानी (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

संख्या एवं अनिश्चित विक्रय संभावनाओं के कारण ग्रामीण दुकानदार द्वारा अत्यधिक विनियोग नहीं किया जाता।

- **प्रशिक्षण की कमी –** ग्रामीण क्षेत्र में बाजार दशाओं के विकास के लिए आवश्यक कुशश्ल उद्यमी का अभाव है। प्रशिक्षित उद्यमियों के विकास के लिए संस्थाओं व एजेसिंयों की कमी के कारण कुशल प्रशिक्षित रोजगार के अवसरों के विकास का अभाव है।
- **बाजार मांग एवं दशाओं के ज्ञान का अभाव –** बढ़ती प्रतियोगिता एवं क्षेत्रियता, जनसंख्या की आवश्कता, परम्परा व संस्कृति के प्रभाव के अध्ययन के बिना अनेक ग्रामीण बाजार में विनियोक्ताओं द्वारा भारी विनियोग किया जाता है।
- **अविकसित समाज और जनसंख्या –** ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक सामाजिक समूहों का अधिवास है। उक्त समाज की मान्यताएँ एवं धारणाओं पर पुराने रीति–रिवाजों, परम्पराओं और मान्यताओं का सर्वाधिक प्रभाव है। आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने ग्रामीण परम्पराओं एवं मान्यताओं को परिवर्तीत करने में पूर्ण सफलता प्रापत नहीं हुई है। इसका प्रमुख कारण ग्रामीण क्षेत्रों में लोग अपनी सामाजिक परम्पराओं के प्रति समर्पित होने के कारण अपनी सामाजिक परम्पराओं को श्रेष्ठ मानने के कारण किसी भी रूप में परिवर्तन को अपनाने को तैयार नहीं है। जिसके कारण बाजार के विकास में नवीन परिवर्तन एवं सामग्रियों के उपयोग को अपनाने के प्रति मान्यताओं में परिवर्तन नहीं हुआ है।
- **अपर्याप्त अधोसंरचनात्मक सुविधाओं का विकास –** ग्रामीण क्षेत्रों में वेयर हाउसिंग, परिवहन, सड़क, बाजार यार्ड आदि क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाओं का विकास नहीं हो पाया है। जिसके कारण ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादित उत्पादों को उनकी सही कीमत और मान्यता नहीं मिल पा रही है। खराब अधोंसंरचनात्मक सुविधाओं ने मांग और आपूर्ति कारकों को पुरा करने में एक बड़ा असंतुलन उत्पन्न होता है।
- **अविकसित बैंकिंग सुविधाएँ –** ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिग सुविधाओं एवं ग्रामीणों की बैंकों के उपयोग ऋण, बचत, जमा के रूप में किए जाने की दिशा में बहुत कम लोगों द्वारा उपयोग किया जा रहा है। जनधन योजना के तहत खोले गए खातों की स्थिति अमुर्त हो चुकी है। बैंकों के उपयोग के स्थान पर असंस्थागत साधनों का चलन पुर्ववत स्थित है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी बैंकिग सुविधाओं का विस्तार जनसंख्या के आकार की तुलना में कस्बे अथवा शहरी सीमा तक सीमित है। अधिकांश ग्रामीणों द्वारा आधुनिक विपणन सुविधाओं के अन्तर्गत केश–लेश भुगतान, इलेक्ट्रानिक बैंकिग और ई–भुगतान जैसी सुविधाओं का नाम भी नहीं सुना है।
- **उत्पादन एवं मांग के मध्य असन्तुलन –** ग्रामीण क्षेत्रों में विपणन के लिए प्रमुख चुनौतियों में प्रमुख रूप से उत्पादन एवं मांग के मध्य असन्तुलन की स्थितियों की उपस्थिति है। ग्रामीण उत्पादक ग्राहकों को अनुकूलित सेवाएँ प्रदान करने में सक्षम नहीं है। कम उत्पादन के कारण ग्रामीण उत्पादों की कीमत उनके व्यवसायिक उपयोग की तुलना में कम होती है। मांग अधिक व उत्पादन कम होने के कारण उपयोगकर्ताओं के मध्य किसी प्रकार की प्रतियोगिता नहीं होती है।
- **विपणन योजना का अभाव –** ग्रामीण क्षेत्रों के विक्रेता द्वारा किसी वस्तु के विक्रय के लिए किसी प्रकार की योजना का निर्माझा नहीं किया जाता है। ग्राहक की मांग एवं वस्तु उपयोग के चलन के अनुरूप विक्रेता द्वारा किसी वस्तु विशेष के लिए विनियोग किया जाता है। जबकि बाजार परिस्थितियों के निर्माण के लिए विक्रेता द्वारा कोई प्रयास नहीं किया जाता बल्कि ग्राहक द्वारा मांग किए जाने के अनुरूप वस्तुओं अथवा सेवाओं के प्रबंध पर सिमित विनियोग किया जाता है।
- **ग्राहक सन्तुष्टि एवं ग्राहक सम्बन्धों का अभाव –** ग्राहक सम्बन्ध प्रबंध की अवधारणा ग्रामीण बाजार में पूर्णत: अभाव है। अधिकांश विक्रेताओं द्वारा ग्राहक सन्तुष्टि पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है। वस्तु सामग्री अथवा सेवाओं के के ग्राहक सीमित होने के कारण किसी प्रकार के भौतिक प्रमाण की उपस्थिति के अभाव के कारण उत्पादों की मांग एवं उपयोग, मूल्यों की भिन्नताएँ संभव नहीं है। ग्रामीण बाजार में किसी वस्तु विशेष के संभावित ग्राहकों के अनुमान लगाना संभव नहीं है। ग्रामीण बाजार के उपभोक्ता द्वारा किसी वस्तु के खराब अथवा अनुपयोगी होने की स्थिति में दुकानदार द्वारा पुरा दोष उत्पादक अथवा निर्माता कम्पनी अथवा ग्राहक के उपयोग ज्ञान के अभाव को दिया जाता है। दुकानदार ग्रामीण बाजार में राजा की भुमिका में है। जबकि ग्राहक अभी भी दुकानदार द्वारा उपलब्ध सामग्री पर निर्भर है।
- **अशिक्षित व ग्रामीण ग्राहकों की अनदेखी –** शहरी अथवा कस्बाई क्षेत्रों में स्थापित आधुनिक साज–सज्जायुक्त, उच्च गुणवत्ता, किस्म, आकार एवं मूल्य की वस्तुओं के लिए अशिक्षित व पिछड़े क्षेत्रों के ग्राहकों की पंहुच से दूर है। जबकि उक्त प्रकार की अन्य पूरक वस्तुओं के लिए ग्रामीण उपभोक्ता की व्यय की क्षमता एवं आवश्यकता अन्य उपभोक्ता के समान है।
- **वस्तु के उपयोग के ज्ञान का अभाव –** ग्रामीणउपभोक्ताओं को अनेक प्रकार की वस्तुओं, उपभोग वस्तुओं के वासतविक उपयोगशैली एवं उपभोग के ज्ञान का अभाव है। किसी वस्तु अथवा उपभोग वस्तु के ज्ञान के अभाव के कारण अशिक्षित अथवा वास्तविक जानकारी के अभाव के कारण उपभोक्ता का उपभोग सन्तुष्टी का वास्तविक स्तर प्राप्त नहीं हो पाता है।

इन समस्याओं के अतिरिक्त भी कुछ समस्यायें जैसे– प्रति व्यक्ति आय का निम्न स्तर, सौदेबाजी के अवसरों की अनुपस्थिति, बाजार मांग एवं दशाओं के ज्ञान का अभाव,अशिक्षित व ग्रामीण ग्राहकों की अनदेखी, तकनीकी सम्बन्धी चुनौतियाँ आदि समस्या का सामना करना पड़ता है।

निष्कर्ष – ग्रामीण अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से प्राथमिक क्षेत्र पर आधारित है। जिसका अर्थ है ग्रामीण उपभोक्ता की व्यय क्षमता पर कृषि आय का पूर्ण नियन्त्रण है। ग्रामीण उपभोक्ता की आवश्यकता के अनुसार विपणन नीतियों का निर्धारण किया जाना चाहिए। ग्रामीण उपभोक्ताओं को मूलभूत सुविधाएँ प्रदान करने के लिए अधिक कठोर प्रयास करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जिला सांख्यिकी पुस्तीका, जिला देवास 2016
2. गर्ग, आर. बी. एल. : ग्रामीण विपणन समस्याएँ एवं संभावनाएँ, पत्रिका कुरुक्षेत्र, 2004
3. जैन एवं जैन : उपभोक्ता संरक्षण कानून, तुलसी साहित्य पब्लिकेषन्स, मेरठ
4. मिश्र एण्ड पुरी : भारत में कृषि विपणन व्यवस्था, हिमालया पब्लिकेन्स, मुंबई।
5. स्वविवेक पर आधारित।

****

खरगोन जिले में नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की स्थापना एवं विकास - एक मूल्यांकनात्मक अध्ययन

डॉ. सुनील कुमार शर्मा * प्रतिभा शर्मा **

शोध सारांश - 'ग्रामीण क्षेत्रो में वित्त की आपूर्ति में नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक का विशेष महत्व है। खरगोन जिले में बैंक द्वारा दी गई बैंकिग सेवाओं से ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास हुआ है। बैंक द्वारा किसान एवं मजदूर वर्ग को विशेष लाभ मिला है। जिले में बैंकिंग व्यवस्था के विस्तार में नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक का महत्वपूर्ण योगदान है।अनेक समस्याओ के उपरान्त भी बैंक अपने उद्देश्यो की पूर्ति में सफल रही है।'

प्रस्तावना - क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको की स्थापना के पूर्व हमारे देश में ग्रामीण व्यक्ति के द्वारा यदि अपने विकास हेतु या कोई कार्य करने हेतु धन की आवश्यकता होती थी, तो वह साहूकारो या महाजनो पर निर्भर रहता था और इन साहूकारो के कर्ज की ब्याज दरें बहुत ऊँची होती थी। जिसे चुका पाने में साधारण मजदूर, किसान का जीवन ही पूरा समाप्त हो जाता था और यदि वह इन साहूकारो या महाजनो से कर्ज न ले तो उसका आर्थिक विकास हेतु कार्य पूरा नही हो पाता था।

सहकारी संस्थाओ के द्वारा भी ग्रामीण वित व्यवस्था में अनेको कमियाँ थी। यह संस्थाएँ भी ग्रामीण क्षेत्र में अपेक्षाकृत कार्य नही कर पायी और ना ही व्यवसायिक बैंक। परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रो में एक ऐसी बैंक की स्थापना का विचार किया गया जो कि विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रो के उन लोगो को बैंकिंग सुविधाएँ उपलब्ध करवा सके, जहाँ पर ये सुविधाएँ उपलब्ध नही है।

नर्मदा झाबुआ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की स्थापना - मध्यप्रदेश में नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की स्थापना 1 नवम्बर 2012 को दो पूर्ववर्ती ग्रामीण बैंक नर्मदा मालवा ग्रामीण बैंक जिसकी प्रायोजित बैंक, बैंक ऑफ इंडिया तथा झाबुआ धार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक जिसकी प्रायोजित बैंक, बैंक ऑफ बड़ोदा के समामेलन के बाद की गई। वर्तमान में मध्यप्रदेश में 353 शाखाओ के साथ नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक का विकास हुआ है।

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक का प्रधान कार्यालय इन्दौर में स्थापित है और 6 क्षेत्रीय कार्यालय निम्नानुसार है-

1) देवास 2) खरगोन 3) उज्जैन 4) झाबुआ 5) सिहोर 6) धार

शोध का उद्देश्य :

1. प्रस्तुत शोध का उद्देश्य नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की स्थापना एवं आवश्यकता का अध्ययन करना है।
2. नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक के विकास का अध्ययन करना है।

मध्यप्रदेश में एवं खरगोन जिले में नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की शाखाओ की स्थापना:-

नर्मदा झाबुआ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की शाखाएँ तीन भागो में विभाजित है। शहरी, अर्द्धशहरी एवं ग्रामीण।

24 शाखाएँ शहरी है, 85 अर्द्धशहरी है और 244 ग्रामीण शाखाएँ है। इस प्रकार कुल 353 शाखाएँ क्रियान्वित है।

तालिका 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक के क्षेत्रीय कार्यालय एवं जिलो में शाखाओ की स्थिति-

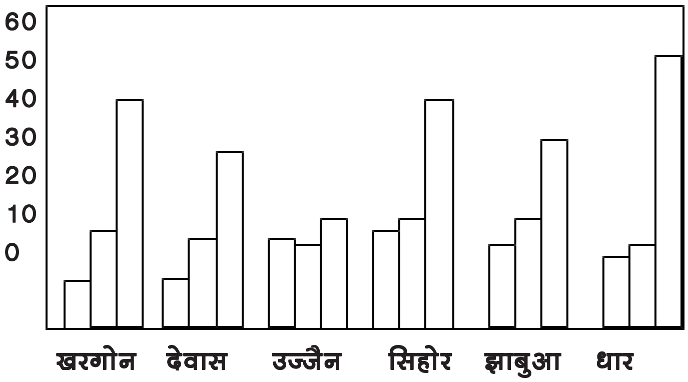

खरगोन जिले में शहरी 9 अर्द्धशहरी, 23 ग्रामीण और 2 अनुशंगी शाखाओ के साथ कुल 32 शाखाएँ है। खरगोन जिले में खरगोन, बड़वाह, सनावद, काटकूट, भीकनगाँव, झीरन्या, कसरावद, निमरानी, महेश्वर, मण्डलेश्वर, करही, सोमाखेड़ी, मेहतवाड़ा, नेनगाँव, कानापुर, भगवानपुरा, बेड़िया, लालखेड़ा, भाग्यापुर, गोगावा, चेनपुर, लोनारा, सेंगाव, धुलकोट, ओझर, पीपलगोन, सहित कुल 32 (31/03/2015 की स्थिति में) शाखाएँ है। जिनका मुख्यालय खरगोन में हैं। वर्तमान में जिले में 36 शाखाएँ कार्यरत है।

विश्लेषण - मध्यप्रदेश में कुल 353 शाखाओ द्वारा बैंक का विस्तार छ: क्षेत्रो में हुआ है। जिनमें सर्वाधिक शाखाएँ 66 धार जिले में है। जबकि सबसे कम शाखाएँ 08 आगर मालवा जिले में है।

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की अंशपूँजी - नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की अंशपूँजी 500 लाख रू. है, जो कि भारत सरकार, बैंक ऑफ इण्डिया और मध्यप्रदेश शासन में 50:35:15 के अनुपात में विभाजित है। इसी प्रकार इस बैंक की अधिकृत पूँजी 500 लाख रू. 100 रू वाले 5 लाख अंशो में विभाजित है।

नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक की कुल अंशपूँजी में भारत सरकार,

* प्राध्यापक एवं निर्देशक, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

प्रायोजक बैंक, बैंक ऑफ इण्डिया तथा मध्यप्रदेश शासन 50:35:15 अनुपात के हिस्सेदार है।

रू. लाख में–

अंशधारक	अंशपूँजी	जमा अंशपूँजी
भारत सरकार	250.00	5562.55
बैंक ऑफ इण्डिया	175.00	3893.79
म.प्र. शासन	75.00	1668.77
	500.00	11125.11

निष्कर्ष – नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक अपने कार्य क्षेत्र और शाखाओ के माध्यम से किसानो को साहूकारो एवं महाजनो से मुक्ति प्रदान करने में सफल रहा है। बैंक के द्वारा विभिन्न योजनाओ के माध्यम से लघु बचत के माध्यम से पूँजी का निर्माण हो रहा है और साधारण व्यक्ति का आर्थिक विकास संभव हो रहा है। मध्यप्रदेश में नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक सफल और श्रेष्ठ बैंक है। नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक के द्वारा जनता का विकास पूँजी निर्माण, ग्रामीण विकास सामाजिक विकास, राष्ट्र विकास सार्थक हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. बैंकिंग विधि एवं व्यवहार लेखक डॉ. रमेश मंगल युनिवर्सल पब्लीकेशन आगरा
2. क्षेत्रिय ग्रामीण बैंक की कार्य–प्रणाली एवं उपलब्धियाँ डॉ. जी.पी. यादव आदित्य पब्लिशर्स बीना
3. भारतीय ग्रामीण बैंक अर्थव्यवस्था के.जी. भटनागर किशोर पब्लिकेशन हाउस कानपुर
4. www.njgb.com
5. www.nabard.org.in
6. दैनिक भास्कर , पत्रिका।

तालिका 1 – नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक के क्षेत्रीय कार्यालय एवं जिलो में शाखाओं की स्थिति (31/03/2015 की स्थिति में)

क्षेत्र का नाम	जिले का नाम	शहरी	अर्द्धशहरी	ग्रामीण	योग	अनुशंगी शाखाएँ
देवास	देवास	05	06	26	37	–
	शाजापुर	–	08	10	18	–
	आगर मालवा	–	05	03	08	–
	योग	05	19	39	63	–
खरगोन	खरगोन	–	09	23	32	02
	खण्डवा	03	02	19	24	03
	बुरहानपुर	02	01	07	10	–
	योग	05	12	49	66	05
सिहोर	राजगढ़	–	08	28	36	01
	सिहोर	–	07	14	21	–
	योग	–	15	42	57	01
उज्जैन	इन्दौर	08	07	08	23	–
	उज्जैन	06	06	16	28	02
	योग	14	13	24	51	02
झाबुआ	झाबुआ	–	06	15	21	–
	अलिराजपुर	–	01	12	13	–
	बड़वानी	–	07	12	19	02
	योग	–	14	39	53	02
धार	धार	–	12	51	63	01
महायोग		24	85	244	353	11

(स्त्रोत– नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक से प्राप्त जानकारी के अनुसार)

****

नगरीय भूमि उपयोग का बदलता प्रतिरूप : इन्दौर महानगर के संदर्भ में (स्थानिक-कालिक विश्लेषण 1981-2011)

हेमंत मण्डलोई *

प्रस्तावना – भूमि मानव जीवन की आर्थिक क्रिया-कलापों एवं उत्पादन की प्रारम्भिक इकाई मानी गई है, तथा मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उसके स्वरूप में परिवर्तन करता रहता है। भूमि उपयोग से तात्पर्य है कि, भूमि किस उपयोग में लाई गई अर्थात पृथ्वी या भूमि के एक निश्चित भाग का किन-किन कार्यो के रूप में प्रयोग हुआ है या भूमि जिस वर्ग के अन्तर्गत उपयोग की गई है तथा उससे अधिक से अधिक लाभ प्राप्त हो रहा है या नहीं।

जब भूमि का उपयोग मानव अपनी आवश्यकतानुसार करता है तो उस भू-भाग के लिए भूमि उपयोग शब्द का प्रयोग उचित होगा अर्थात भूमि उपयोग में भू-भाग का प्राकृतिक स्वरूप क्षीण हो जाता है तथा मानवीय क्रियाओं का योगदान महत्वपूर्ण हो जाता है तथा इसे भूमि उपयोग की संज्ञा देते है। भूमि उपयोग का अर्थ सभी प्रकार की भूमि से लिया जाता है।

डॉ. बी.बी. सिंह के अनुसार 'जब मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु भूमि के उचित तथा अनुचित उपयोग के पश्चात लाभप्रद उपयोग अपनाता है तो उसे भूमि उपयोग कहना उपयुक्त होगा।'

एच.ए.वुड के अनुसार 'भूमि उपयोग केवल प्राकृतिक भूदृश्यों के संदर्भ में ही नहीं अपितु मानवीय क्रियाओं पर आधारित उपयोग सुधारों के रूप में प्रयुक्त होनी चाहिए।'

फॉक्स के अनुसार 'एक निश्चित प्रयोजन व उद्देश्य से भूमि का किसी भी रूप में उपयोग ही भूमि उपयोग कहा जा सकता है।'

नगरीय भूमि उपयोग नगर की भूमि का कार्यो के अनुसार वर्गीकरण प्रस्तुत करता है। इसमें नगर की भूमि का क्षेतिजीय विस्तार के साथ-साथ लम्बवत् विस्तार का भी अध्ययन किया जाता है। भूमि का कितना भाग आवासीय,वाणिज्यिक,औद्योगिक परिवहन एवं मनोरंजन आदि गतिविधियों में लगा हुआ है, यह पता लगाया जाता है।

उद्देश्य इस प्रकार है :-

1. नगर में सन् 1981 से 2011 में हुए भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन का अध्ययन करना।
2. वर्तमान इन्दौर नगर के भूमि उपयोग की स्थिति और उसका अध्ययन।

अध्ययन क्षेत्र एवं स्थिति – इन्दौर नगर मध्यप्रदेश की आर्थिक राजधानी के रूप में विख्यात है। यह प्रदेश का एक प्राचीन नगर है और संभागीय मुख्यालय है। मालवा क्षेत्र का केन्द्र बिन्दु है जो $22^{0}43'$ उत्तरी अक्षांश तथा $76^{0}42'$ पूर्वी देशांतर रेखाओं पर स्थित है। समुद्र सतह से 1805 फीट की उँचाई पर है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार इसकी जनसंख्या 19.9 लाख है। क्षेत्रफल 530 वर्ग कि.मी. है। प्रदेश में जनसंख्या की दृष्टि से सबसे वृहद नगर है।

इन्दौर नगर सड़क, रेल तथा हवाई मार्ग से जुड़ा है। राष्ट्रीय राजमार्गो के रूप में मुम्बई-आगरा (एन.एच.3) तथा अहमदाबाद-इन्दौर रोड़ नगर से गुजरते है। इन्दौर से ब्राडगेज एवं मीटर गेज रेल्वे लाईन गुजरती है। इन्दौर खान नदी एवं सरस्वती नदी के किनारों पर बसा है।

इन्दौर नगर का भूमि उपयोग का बदलता प्रतिरूप : स्थानिक-कालिक विश्लेषण (1981 से 2011) – इन्दौर नगर के भूमि उपयोग को निम्नलिखित भागो में बांटा जाता है-आवासीय, वाणिज्यिक, औद्योगिक, सार्वजनिक एवं अर्द्ध-सार्वजनिक सुविधाएँ, यातायात एवं परिवहन तथा आमोद-प्रमोद (मनोरंजन)।

तालिका 1 – (अगले पृष्ठ पर देखे)

आवासीय क्षेत्रों में सन् 1981 में भूमि उपयोग का 42.73 प्रतिशत था जो सन् 1991 में 42.53 हो गया जो सन् 2001 में 41.10 प्रतिशत और वर्ष 2011 में 42.09 प्रतिशत हो गया। मध्यप्रदेश राजपत्र दिनांक 04 नवम्बर 2005 के अनुसार इन्दौर नगर निवेश की सीमा में निम्नलिखित ग्रामों को आवासीय भूमि के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है :-

अनुसूची :

1.	पूर्व में	सनावदिया, उमरिया खुर्द, मालीखेड़ी, कनाड़िया, निपान्या, मायाखेड़ी, अरण्डिया
2.	पश्चिम में	बुढान्या, जम्बुडी हप्सी, रिजलाय, बिसनावदा, कलारिया, सिंदोडी, सिंदोड़ा, रंगवासा
3.	उत्तर में	लिम्बोदागारी, रेवती, अल्वासा, बारोली, जाख्या, भांग्या, केहलोदहला, तलावलीचांदा, मांगल्या सड़क, राहुखेड़ी, लसूड़िया परमार
4.	दक्षिण में	रंगवासा पिगड़म्बर, उमरिया, नावदा, पानदा, माचला, मोरोद, उमरी, असरावद खुर्द, गिरजापुर, रालामण्डल, सनावदिया

वाणिज्यीक क्षेत्रों में भूमि उपयोग 1981 में भूमि उपयोग का 5.22 प्रतिशत था जो सन् 1991 में 4.20 हो गया जो सन् 2001 में 4.95 प्रतिशत और वर्ष 2011 में 3.20 प्रतिशत हो गया।

औद्योगिक क्षेत्रों में भूमि उपयोग 1981 में भूमि उपयोग का 11.60 प्रतिशत था जो सन् 1991 में 6.00 हो गया जो सन् 2001 में 6.13 प्रतिशत और वर्ष 2011 में 5.58 प्रतिशत हो गया।

सार्वजनिक और अर्द्ध-सार्वजनिक क्षेत्रों में 1981 में भूमि उपयोग का 14.72 प्रतिशत था जो सन् 1991 में घट कर 11.84 हो गया जो सन् 2001 में 12.14 प्रतिशत और वर्ष 2011 में 9.57 प्रतिशत हो गया।

मनोरंजन के अन्तर्गत वर्ष 1981 में भूमि उपयोग का 4.06 प्रतिशत

* शोधार्थी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

था जो वर्ष 1991 में बढ़कर 11.57 प्रतिशत हो गया जो सन् 2001 में बढ़कर 10.44 प्रतिशत और वर्ष 2011 में 5.54 प्रतिशत हो गया।

यातायात के अन्तर्गत वर्ष 1981 में कुल भूमि उपयोग का 14.11 प्रतिशत था जो वर्ष 1991 में बढ़कर 19.38 प्रतिशत हो गया जो सन् 2001 में बढ़कर 19.83 प्रतिशत तथा वर्ष 2011 में घटकर 9.43 प्रतिशत हो गया, इसका कारण यह है कि, भूमि उपयोग के कुल हेक्टेयर में वृद्धि हुई, अत: यह निम्न प्रतिशत को दर्शाता है।

अनुपयोगी भूमि के अन्तर्गत वर्ष 1981 में कुल भूमि उपयोग का 7.86 प्रतिशत था जो वर्ष 1991 में घटकर 4.36 प्रतिशत हो गया, इसका कारण यह है कि, वर्ष 1991 में कुल भूमि प्रतिशत बढ़ गया है। वर्ष 2001 में 5.41 प्रतिशत था जो वर्ष 2011 में बढ़कर 24.59 प्रतिशत हो गया। 2011 में यह बढ़ोत्तरी कुल हेक्टेयर में वृद्धि के कारण दिखाई देती है तथा 27 नए ग्रामों को जोड़ने के बाद अनुपयोगी भूमि का प्रतिशत बढ़ गया है।

इन्दौर 2021 – इन्दौर विकास योजना 2021 के अनुसार वर्ष 2021 में विभिन्न विधियों से आंकलित 35.6 लाख जनसंख्या हेतु लगभग 35600 हेक्टेयर भूमि की आवश्यकता होगी। वर्तमान में उपलब्ध विकसित भूमि लगभग 13171 हेक्टेयर है। नगरीय विकास हेतु अनुकुल भूमि सम्बन्धी ऑकड़ो से स्पष्ट होता है कि, वर्ष 2021 में नगरीय विकास के लिए पूर्णरूप से अनुकुलतम भूमि निवेश क्षेत्र में उपलब्ध नहीं है। नगरीय विकास में ऐसी भूमि को सम्मिलित करना होगा जो कि, औसत रूप से अनुकुल है।

स्मार्ट सिटी : हम सबका सपना स्मार्ट इन्दौर हो अपना – भारत में स्मार्ट नगर की कल्पना प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने की है, जिन्होंने देश के 100 नगरो को स्मार्ट नगरों के रूप में विकसित करने का संकल्प किया है, जिनमें इन्दौर भी एक स्मार्ट सिटी के रूप में विकसित किया जाएगा।

स्मार्ट सिटी की बुनियादी सिद्धांतो में **Quality of life** पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। जीवन की गुणवत्ता से तात्पर्य कम मुल्य पर उच्च गुणवत्ता युक्त किफायती घर देना, बेहतर इन्फ्रास्ट्रक्चर, पानी और 24 घण्टे बिजली, बेहतर शिक्षा, सुरक्षा, मनोरंजन के साधन, इंटरनेट की तेज कनेक्टीविटी, अच्छे स्कूल और अस्पताल आते है।

स्मार्ट सिटी का मानक है कि, शहर के अन्दर एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने का यात्रा समय 45 मिनट से अधिक ना हो साथ ही घर से 10 मिनट पैदल चलने पर बस या मेट्रो की सुविधा हो इसलिए इन्दौर में मेट्रो प्रोजेक्ट, बी.आर.टी.एस., आई.बस आदि सुविधाओं का विस्तार किया जा रहा है। स्मार्ट सिटी के तहत 100 फीसदी घरों तक वाई-फाई कनेक्टिविटी के विशेष प्रयास किए जा रहे है।

इन्दौर को वाणिज्यिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय महानगर के रूप में पहचान दिलाने के लिए कुछ महत्वपूर्ण मार्गो को सुपर कॉरिडोर के रूप में विकसित किया जा रहा है। सुपर कॉरिडोर निम्नलिखित मार्गो के दोनों और 300 से 300 मीटर तक रहेगा :-

1. एम.आर.10 (सुखलिया से उज्जैन रोड़ तक)
2. आर.डब्ल्यू.2 (उज्जैन रोड़ से एयरपोर्ट तक)

सुपर कॉरिडोर में नॉलेज बेस इण्डस्ट्रीज, एक्सपोर्ट प्रोसेसिंग झोन (ई.पी.झेड.), फिल्म इण्डस्ट्रीज गतिविधियॉ, स्पोर्टस कॉम्पलेक्स, स्टार होटल, वर्ल्ड ट्रेड सेन्टर, मनोरंजन पार्क आदि ऐसी गतिविधियॉ होंगी जो गैर प्रदूषणकारी हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची : –

1. मास्टर प्लान 1974, 1991, 2001, 2011 का प्रयोग किया गया।
2. जनंसख्या के ऑकाड़े जनगणना पुस्तिका 1981, 1991, 2001, 2011 से लिए गए।
3. टाऊन एण्ड कंट्री प्लानिंग, इन्दौर विकास प्राधिकरण से भी विभिन्न सूचनाएँ ली गयी।
4. इन्दौर विकास योजना 2011, 2021 का प्रयोग किया गया।
5. इन्दौर नगर निगम, कलेक्टर कार्यालय, जिला सांख्यिकीय कार्यालय आदि से विभिन्न ऑकड़े एकत्रित किए गए।
6. विभिन्न समाचार पत्रों, इन्टरनेट, रिसर्च पेपर, जनरल आदि का यथा स्थान किया गया।
7. रिमोट सेंसिंग, जी.आई.एस., जी.पी.एस., विकिमेपिया आदि से प्राप्त मानचित्रों का संग्रहण किया गया।

तालिका 1 – इन्दौर महानगर – भूमि उपयोग का स्थानिक-कालिक विश्लेषण(1981 से 2011)

भूमि उपयोग श्रेणियॉ	वर्ष 1981		वर्ष 1991		वर्ष 2001		वर्ष 2011	
	हेक्टेयर	प्रतिशत	हेक्टेयर	प्रतिशत	हेक्टेयर	प्रतिशत	हेक्टेयर	प्रतिशत
आवासीय	3950	42.73	5980	42.53	6415	41.10	7352	42.09
वाणिज्यीक	360	5.22	590	4.20	773	4.95	555	3.20
औद्योगिक	780	11.60	860	6.00	956	6.13	976	5.58
सार्वजनिक अर्द्धसार्वजनिक	1016	14.72	1665	11.84	1895	12.14	1672	9.57
मनोरंजन	280	4.06	1627	11.57	1630	10.44	968	5.54
यातायात	970	14.11	2726	19.38	3095	19.83	1648	9.43
अनुपयोगी भूमि	543	7.86	614	4.36	844	5.41	4295	24.59
कूल	6903	100.00	14062	100.00	15608	100.00	17466	100.00

****

रामायण काल में नारी का सौन्दर्य

डॉ. पंकज कुमार सिंह *

प्रस्तावना – वर्षा ऋतु में आकाश में छायी हुई काली घटा को देखकर मोर नाच उठता है, पूर्ण चन्द्रमा को देखकर चकोर की तृशित आँखें उसमें जा गड़ती हैं, गुलाब की अधखिली कली दर्शक के चित्त को बरवस आकृष्ट कर लेती है। आखिर इसका कारण क्या है ? उत्तर मिलता है – सौन्दर्य। यह सौन्दर्य कौन सी वस्तु है जो जादू की तरह सबको अपनी ओर खींच लेती है। सौन्दर्य शब्द का प्रयोग जितना ही सामान्य एवं व्यापक है, इसका अर्थ उतना ही रहस्यपूर्ण और विवादास्पद। सौन्दय को न तो परिभाषित ही किया जा सकता है, और न परिमाण अथवा गुण के आधार पर विश्लेषित ही। अत: इसे विज्ञान का आधार भी नही बनाया जा सकता।

सौन्दर्यशास्त्रियों और दार्शनिकों ने इसकी व्याख्या अपने ढंग से कर है। क्रोच ने सौन्दर्य के स्थान पर 'अभिव्यंजना' अथवा 'अन्म:प्रज्ञा' की 'अभिव्यंजना' जैसे शब्दो का प्रयोग किया है। सुखवादियों ने इसे इच्छापूर्ति अथवा उदात्तीकरण कहा है। हाडर ने इसे अर्थ देने के लिये 'परानुभूति' का सहारा लिया है। लेकिन ये सारी व्याख्यायें सौन्दर्य तत्व के मूल तक पहुंचने के प्रयास मात्र हैं, उसके यथार्थ स्वरुप की नियामक नहीं।

सौन्दर्य की परिभाषा के रुप में डॉ. शुक्ल के मत का उल्लेख किया जा सकता है – 'सौन्दर्य तथ्यों का वह पहलू है जो इन्द्रियों द्वारा लक्ष्य किये जाने पर और वहाँ से लक्ष्यक की चिन्तात्मक शक्ति को संदर्भित कर दिये के पश्चात् ऐसी शक्ति रखता है कि वह लक्ष्यक के संचित अनुभव से प्रतिक्रियाओं को जागृत कर सकें।'

आदिकाल से ही नारी पुरुषों के लिये आकर्षण का केंद्र रही है। इसका कारण उसकी सुकुमारता, आंगिक मनोज्ञता, वाणी की मधुरिमा आदि हैं। ये ही नारी सौन्दर्य के साधन है। संस्कृत साहित्य में सौन्दर्य का विशेषत: नारी–सौन्दर्य का वर्णन सर्वत्र पाया जाता है। रामायण आर्शकाव्य है। महाकवि कालिदास से काव्यों की तरह श्रृंगार प्रधान नहीं होने के कारण रामायण में नारी सौन्दर्य का साड् 'गोपाड्' ग वर्णन तो नहीं किया गया है, लेकिन गौण रुप में यत्र तत्र इसका उल्लेख अवश्य मिलता है। उन प्राप्त उल्लेखों के आधार पर नारी सौन्दर्य पर विचार किया जा रहा है।

वाल्मीकि के अनुसार रुपवती भार्या पुरुष के हृदय को सद्य: वषीभूत कर लेती है। अपने सौन्दर्य के कारण वह पति का अद्धितीय प्रेम पात्र बन जाती है। सीता के पातिव्रत्य आदि गुणों तथा उनके सौन्दर्य से ही श्री राम के हृदय में उसके प्रति प्रेम नित्य द्विगुणित होता जाता है। सचमुच सीता अनिन्द्य सुन्दरी है। उसके अंग अंग में यौवन अंगडाई ले रहा है। शरीर के सभी अवयव सुन्दर और सुडौल है। इलंकारों से विभूषित वह संसार की सर्वोत्तम सुन्दरी है। अपने सौन्दर्य के कारण नारी पति के लिये तो आकर्षण का केंद्रस्थली होती ही थी, परपुरुष भी कुछ देर के लिये मोहित हो जाते थे। नारी के सौन्दर्य को देखते ही सामान्य पुरुष कामासक्त हो जाते है। सीता के शारीरिक सौन्दर्य को देखते ही रावण का काम पीड़ित हो जाना इसका उदाहरण है। जितेन्द्रिय महर्षि–जनों का हृदय भी ललनाओं के लावण्य पर आकृष्ट हुए बिना नहीं रहता। स्त्रियों से सर्वथा अनभिज्ञ संयमित इन्द्रियों वाले ऋष्यश्रृंग भी सुसज्जित एवं मनोहर रुप वाली वेश्याओं को देखकर अनियन्त्रित हो जाते है। इसी तरह मेनका को देखकर विश्वामित्र की भी तपस्या भग्न हो जाती है।

संस्कृत साहित्य में नारी सौन्दर्य के नखशिख वर्णन को परिपाटी की परम्परा दिखाई पड़ती है। कालिदास और श्रीहर्ष की तरह आदिकवि ने एक स्थल विशेष में नारी के आंगिक लावण्य का वर्णन ही नहीं किया परंतु यत्र–तत्र पात्रों के मुख से भी नारी–सौन्दर्य का वर्णन करवाया है। इस संदर्भ में विविध अंगों का सौन्दर्य वर्णन क्रमिक रुप से द्रष्टव्य है।

सौन्दर्य की दृष्टि से गौर वर्ण अधिक प्रशंसनीय है। लेकिन कुछ लोगों ने रमणियों के श्यामत्व की ही प्रशंसा की है। महाकवि कालीदास की दृष्टि में श्यामा नायिका ही सौन्दर्य की दृष्टि से अधिक श्लाघनीय है। महाकवि वाल्मीकि ने भी नारी सौन्दर्य में श्यामत्व को स्थान दिया है। परंतु इन्होनें गोरवर्ण को ही अधिक प्रधानता दी है। तत्कालीन लोग नारी के अरुणाईयुक्त गोरवर्ण को सुन्दरता की दृष्टि से सर्वोत्तम मानते थे। इसीलिये वाल्मीकि ने नारी के शारीरिक वर्ण की तुलना तप्त स्वर्ण की आभा तथा चन्द्रमा की चाँदनी से की है। एक अन्य स्थान पर कवि ने सीता का आंगिक कांति की तुलना कमल के केशर, स्वर्ण और सौदामिनी से की है। अपहरण करके ले जायी जाती हुई सीता रावण की पीठ पर काले बादलों के बीच चमकली हुई बिजली के समान सुषोभित हो रही थी। यहीं पर एक दूसरे श्लोक में सीता को वृक्षों के नूतन पल्लवों के समान सुनहले वर्ण का बतलाया गया है। श्रीराम ने सीता की कान्ति की तुलना जाम्बुनद की प्रभा से की है। अन्यत्र आदिकवि ने नारी की कान्ति के वर्णनार्थ रौप्यकांचनवर्णा, कांचनवर्णमया, चम्पकवर्णाभा इत्यादि विशेषणों का प्रयोग किया है।

इन उद्धरणों से स्पष्ट होता है कि तत्कालीन जनमानस में नारी शरीर के गौरवर्ण की अधिक प्रतिष्ठा थी। गौरवर्ण वाली स्त्री को अधिक सुंदर माना जाता था। सौन्दर्य की दृष्टि से श्यामा नारी भी प्रशंसा की पात्र थी, परंतु गौरवर्ण नारी अपेक्षाकृत अधिक प्रतिष्ठित मानी जाती थी

तन्वी – तनुता नारी की एक महती विशेषता है। प्राय: सभी कवियों ने रमणी को तन्वड्.गी रुप में ही चित्रित किया है। उत्तरमेघ में नारी सौन्दर्य को सैद्धान्तिक रुप में निरुपित करते हुए कवि ने तन्वड्.गता को विशेष रुप से अपेक्षित माना है – 'तन्वीश्यामा शिखरिदशना पक्वबिम्बाधरोष्ठी'। उर्वशी के लिये भी कालिदास ने 'तनुशरीरा' विशेषण का प्रयोग किया है। महाकवि वाल्मीकि ने भी अपनी नारी सौन्दर्य में तन्वड्.गता को समुचित महत्व

* पीएच.डी. (संस्कृत विभाग) जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार) भारत

दिया है। इन्होनें सीता के तनु शरीर की तुलना प्रफुल्ल लता से की है। अनेक स्थलों पर नारी के लिये 'कृषाड्.गी' विशेषण का भी प्रयोग किया गया है। इससे अनुमान किया जाता है कि तत्कालीन युग में शारीरिक तनुता नारी सौन्दर्य का आधायक मानी जाती थी।

केश – नारी के केशों का लंबा, घना और काला होना सौन्दर्याधायक माना जाता रहा है। महाकवि वाल्मीकि ने भी इन्ही रुपों में नारी के केशपाशों का चित्रण किया है। इन्होनें काले काले घुघँराले बालों की प्रशंसा की है। सामान्यत: सुन्दर अलकों को देखकर ही महाकवि ने सुंदरी स्त्री के लिये 'सुकेशी' सम्बोधन का प्रयोग किया है। सीता के रुप–सौन्दर्य का वर्णन करते हुए रावण ने उसके केशों को चिकना और मनोहर कहा है। एक दूसरे श्लोक में उसने सीता के बालों को काला बतलाया है। श्रीराम ने भी सीता को सुंदर बालों वाली बतलाया है। सीता के शुभ लक्षणों का वर्णन करते हुए कवि ने 'सुकेशी' शब्द का प्रयोग किया है। रमणीयों के असित अलकों के वर्णन में महाकवि कालिदास की कल्पना वाल्मीकि को अतिशयित कर गयी है। इनकी पार्वती के केश इतने सुंदर है कि यदि पशुओं में भी मनुष्यों के समान लज्जा होती तो चमरी अपने बालों पर इतराना छोड़ देती। मयूर की पूँछ को देखकर विरही यक्ष को अपनी यक्षिणी के सुंदर केशकलाप की याद हो जाती है।

स्पष्ट है कि सुंदर, काले, चिकने, घने बाल रमणियों की सुंदरता के प्रतीक थे।

भ्रू – नारी की लंबी, काली, पतली तथा कुछ टेढ़ी भौहें अनुपम सौंदर्य की कसौटी मानी जाती थी। महाकवि वाल्मीकि ने सुंदरी के लिये सुदंर भौहों का होना आवश्यक माना है। स्त्री के लिये उन्होनें 'सुभ्रु' विशेषण का अनेकश: प्रयोग किया है। कवि ने स्त्री की टेढी भौहों की तुलना धनुश से की है। इससे भौहों की वक्रता की महत्ता परलिक्षित होती है। महाकवि कालिदास ने भी धनुश के समान वक्र भौहों को सौन्दर्य की पराकाष्ठा माना है। पार्वती की सुंदर एवं वक्र भौहों के समक्ष कामदेव का धनुश भी तुच्छ हो जाता है। श्रीहर्ष की दमयंती की भौहें विश्वविजय करने के लिये रति और कामदेव के धनुश ही है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि रामायणकला में लंबी, पतली, काली तथा कुछ वक्र भ्रू अनुपम सौंदर्य का आगार कही जाती थी। परवर्ती काव्यों में प्राप्त उल्लेखों से भी इस मत की पुष्टि होती है।

अक्षि–पक्षम – सुंदरता की दृष्टि से नारी की काली, लंबी, सूक्ष्म तथा तिरछी पलकें अच्छी मामनी जाती थी। श्रीराम ने सता को सूक्ष्म बरौनियोंवाली कहा है। कवि ने सीता के लिये 'सुपक्ष्म' विशेषण का प्रयोग किया है। सीता के शुभ लक्षणों के वर्णन–क्रम में उसे बाँकी बरौनियावाली कहा गया है। कालिदास ने उर्वशी और शकुंतला के बरौनियों के लिये 'उत्पक्ष्मणा' विषेषण का प्रयोग किया है, जो उनकी विशालता का द्योतक है।

इन उद्धरणों से पता चलता है कि बरौनियों का सौंदर्य घनापन, कालिमा एवं बाँकपन में निहित माना जाता था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सौंदर्य का तात्पर्य – डॉ. रामकीर्ति शुक्ल, पृ. 93
गुणाद्रूपगुणाश्चापि प्रीतिर्भूयांऽभिवधते।
तस्याश्स भर्ता हि गुणं हृदये परिवर्तति।। वा. रा. 1/77/27
2. भार्या तस्योत्तमा लोके सीता नाम सुमध्यमा।
श्यामा समविभक्ताड्.गी स्त्रीरत्नं रत्नभूशिता।। वही, 2/31/29
3. दृष्ट्वा कामशराविद्धो ब्रह्मघोशमुदीरयन्।
अब्रवीत् प्रश्रितं वाक्यं रहितं राक्षसाधिप:।। वही, 3/46/14
4. अदृष्टरुपास्तास्तेन काम्यरुपा वने स्त्रिय:।
हार्दात्तस्य मतिर्जाता आख्यातुं पितरं स्वकम्।। वही, 1/10/13
5. श्यामास्वंगं चकितहरिणी प्रेक्षणे दृष्टिपाते। उ. मे./46
तन्वीश्यामाशिखरिदशना .... वही, 22
6. श्यामा समविभक्ताड्.गी स्त्रीरत्नं रत्नविभूशिता। वा.रा. 3/34/29
7. तप्तकांचनवर्णाभा रक्तातुड्.गनरकी शुभा। वही, 3/34/17
चन्द्रप्रकाशाश्च हि वक्रमाला .... वही, 5/5/22
8. सा पदम्पीता हेमाभा रावणं जनकात्मजा।
विद्युद्घनाभाविश्य शुशुभे तप्तभूषणा।। वही, 3/52/24
9. तरुप्रवालरक्ता सा नीलाड्.गराक्षसेश्वरम्।। वही, 3/52/30
10. यदि दृश्या त्वया जम्बो जाम्बोनदसमप्रभा। वही, 3/60/19
11. वही, 3/46/16
12. वही, 3/47/27
13. वही, 3/60/32
14. उत्तारमेघ
15. स्थिरयौवना तनुशरीरा हँसगति:। विक्रम. 4/59
16. लतां प्रफुल्लामिव साधु जातां
ददर्श तन्वीं मनसाभिजाताम्।। वा.रा. 5/5/23
17. रक्ताम्बरधरां बालां नीलकुच्चितमूर्धजाम्।। वही, 6/118/3
18. सा सुवेशी सुनासोरुः सुरुपा च यशस्विनी। वही, 3/34/76
19. कराश्तमितमध्यासि सुकेशे संहतस्तनि।। वही, 3/46/28
20. स तामसितकेशातां भास्करस्य प्रभामिव।। वही, 3/49/10
21. न हिं तां सूक्ष्मपक्षमाक्षीं सुकेशीं मृदुभाषिणीम् ।। वही, 4/1/30
22. प्रास्पन्दतैकं नसनं सुकेश्या मीनाहतं पयमिवाभिताभ्रम्।। वही, 4/29/2
23. लज्जातिरश्चां यदिद चेतसि स्यादसंशयं पर्वतराजपज्या:
तं केशपाशं प्रसभीक्ष्य कुर्यर्वालप्रिय त्वं शिथिलं चमर्य:।। कुमार: 1/48
24. श्यामा स्वंगे चकितहरिणीप्रेक्षणे दृष्टिपामतं। वक्त्रच्छायां शशिनि शिखिनां बहुभारेशु केशान्।। उ.मे. 46
25. पूर्णचन्द्राननां सुभ्रूंचारुवृत्तापयोधराम्।। वा.रा. 5/15/28
स्वक्षिभ्रूकेशान्तमरालपक्ष्म् । वही, 5/29/7
26. यस्या वक्त्रं शशिनिभं भ्रुवो चापनिभेशुभे ।। वही, 7/26/18
27. तस्या: शलाकाजननिर्मितेव कान्तिभ्रूवोरायलेख्योर्यो
तां वीक्ष्य लीला चतुरामनंग: स्वचापसौन्दर्यमदं मुमोंच।। कुमार. 1/47
28. धनुषी रतिपंचबाणयोरुदिते विभृजयायतभ्रूवा । नै.च. 2/28
29. न हिं तां सूक्ष्मपक्ष्माक्षीं .... वा.रा. 4/1/30
30. .... सुपक्ष्मताभ्रायतषुक्ललोचनाम् । वही, 5/29/2
31. तस्या: शुभं वाममरालपक्ष्म .... वही, 5/29/2
स्वक्षिभ्रुकेशान्तमरालपक्ष्म । वही, 5/29/7
32. उत्पक्ष्मणा ममसखे मदिरेक्षणाया:
तस्या: समागतमिवाननमाननेन। विक्रम. 2/13

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

आदिवासी एवं गैर आदिवासी जिले के शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय /महाविद्यालय के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन

मीना भुटेजा (कालरा)*

शोध सारांश – उत्पादन, निवेश, विपण्णन और आयोजन की आधुनिक पद्धतियों में जटिलता को आत्मसात् करने के लिए उच्च स्तरीय ज्ञान और कौशल आवश्यक है। इसलिए इन्होनें शिक्षा के महत्व को बढ़ा दिया है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालय/महाविद्यालय के आदिवासी एवं गैर आदिवासी जिले के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना है । प्रस्तुत शोध अध्ययन दक्षिणी राजस्थान के आदिवासी एवं गैर आदिवासी जिले के सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालयों/महाविद्यालयों से 300 शिक्षको का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा किया गया। सांवेगिक बुद्धि के चरों के मापन हेतु स्वनिर्मित मापनी का उपयोग किया गया। शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालय/महाविद्यालय के आदिवासी एवं गैर आदिवासी जिले के शिक्षकों के की सांवेगिक बुद्धि की तुलना हेतु टी-परीक्षण एवं का प्रयोग किया गया। आँकड़ों के विश्लेषण से परिकल्पना 'शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालय एवं महाविद्यालय के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता हैं' असत्य सिद्द हुई।

प्रस्तावना – संवेगात्मक बुद्धि स्वयं की एवं दूसरों की भावनाओं अथवा संवेगों को समझने, व्यक्त करने और नियंत्रित करने की योग्यता है। दूसरे शब्दों में, अपनी और दूसरों की भावनाओ को पहेचानने की की क्षमता, अलग भावनाओं के बीच भेदभाव और उन्हें उचित रूप से लेबल करना, सोच और व्यवहार मार्गदर्शन करने के लिए भावनात्मक जानकारी का उपयोग को **संवेगात्मक बुद्धि** कहते हैं।

अपनी भावनाओं, संवेगों को समझना उनका उचित तरह से प्रबंधन करना ही भावनात्मक समझ है। व्यक्ति अपनी 'भावनात्मक समझ' का उपयोग कर सामने वाले व्यक्ति से ज्यादा अच्छी तरह से संवाद कर सकता है और ज्यादा बेहतर परिणाम पा सकता है।

डेनियल गोलमैन (Daniel Goleman) की पुस्तक 'भावनात्मक बुद्धि' (Emotional Intelligence) ने इस शब्द को को सारे विश्व में प्रचलित कर दिया। इससे पहले बुद्धि लब्धि को ही सब कुछ माना जाता था। अब यह माना जाने लगा है कि एक अच्छी बुद्धि लब्धि वाला व्यक्ति अच्छी सफलता पा सकता है पर सबसे ऊपर पहुचने के लिए भावनात्मक समझ का होना भी जरूरी है। अच्छी भावनात्मक समझ रखने वाला व्यक्ति कभी भी क्रोध और खुशी के अतिरेक में आ कर अनुचित कदम नही उठाता है।

भावनात्मक बुद्धि के तीन प्रकार बताये गये है। क्षमता प्रकार पीटर सालवोय और जॉन मेयर द्वारा सांचलित है जो भावनात्मक प्रक्रिया की जानकारी और सामाजिक वातावरण नेविगेट करने के लिए इसका इस्तेमाल करने के लिए व्यक्ति की क्षमता पर केंद्रित है। कोन्स्टेंटीन वॅसिली पेत्रिदेस द्वारा विकसित दूसरे प्रकार मे व्यवहार स्वभाव और स्वयं कथित क्षमता शामिल है और आत्म वर्णन के माध्यम से मापा जाता है। आखरी प्रकार एक क्षमता और विशेषता का मिश्रण है। यह डॅनियल गोलेमान द्वारा विकसित नमूना, भावनात्मक बुद्धि को कौशल और विशेषताओं की सरणी के तौर पर परिभाषित किया है जो नेतृत्व के प्रदर्शन के लिए मार्ग का काम करता है। अध्ययन से पता चलता है कि उच्च भावनात्मक बुद्धि के साथ लोगों को अधिक से अधिक मानसिक स्वास्थ्य, अनुकरणीय काम के प्रदर्शन, और अधिक शक्तिशाली नेतृत्व कौशल है।

उत्पादन, निवेश, विपण्णन और आयोजन की आधुनिक पद्धतियों में जटिलता को आत्मसात् करने के लिए उच्च स्तरीय ज्ञान और कौशल आवश्यक है। इसलिए इन्होनें शिक्षा के महत्व को बढ़ा दिया है। स्वतन्त्रता के बाद अनुसूचित जनजातियों के लिए शैक्षिक विस्तार विशेष रूप से प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर हुआ है। लेकिन उच्च शिक्षा में इस वर्ग की भागीदारी बहुत ही कम रही है। अनुसूचित जनजाति के जो परिवार शहर में बसे हुये हैं, उनमें शिक्षा का प्रतिशत काफी अच्छा है; लेकिन ग्रामीण क्षेत्र के परिवारों में शिक्षा का प्रतिशत अभी भी बहुत कम है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक शिक्षा की तो काफी प्रगति हुई है लेकिन माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा का प्रसार बहुत कम है।

इसके फलस्वरूप ही अनुसुचित जनजाति के लिये जो योजनायें तथा अवसर सरकार द्वारा उपलब्ध कराये जाते हैं उनका अधिकांश लाभ शहर में बसे अनुसूचित जनजाति के लोग ही उठा लेते हैं। जबकि ग्रामीण क्षेत्रों के लोग उच्च शिक्षा तथा माध्यमिक शिक्षा का प्रतिशत कम होने के कारण योजनाओं तथा अवसरों का लाभ नहीं उठा पाते। ग्रामीण क्षेत्रों के अनुसूचित जनजाति के लोगों में शहरी क्षेत्रों के मुकाबले शैक्षिक विकास कम हुआ है इसी कारण से उनकी आर्थिक स्थिति शहरी क्षेत्रों के परिवारों के मुकाबले अच्छी नहीं है।

इस प्रकार शैक्षिक विकास के इस प्रतिमान ने उनके आर्थिक अवसरों को अनिवार्य रूप से प्रभावित किया है। जहाँ शिक्षित अनुसूचित जनजाति के लोगों के लिये रोजगार के अवसर बढ़े हैं वहाँ निरक्षर और अर्धसाक्षर अनुसूचित जनजाति के लोगों के लिये रोजगार के अवसर कम होने लगे हैं और इस प्रकार कार्य सहभागिता में उनका अनुपात उल्टी गति से बढ़ने लगा है। लेकिन शिक्षा उन्हें कतिपय आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक कार्यो को सम्पन्न कराने योग्य बनाती है और उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति को सम्पन्न करती है। शिक्षा को ऐसे उपकरण के रूप में मान्यता दी गई है जिसका उपयोग समाज में

* शोधार्थी, पेसिफिक विश्वविद्यालय,उदयपुर (राज.) भारत

परिवर्तन, विकास एवं आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने की दिशा में किया जा सके। अदिवासी हो अथवा गैर आदिवासी, व्यक्ति पर उनके चारों ओर के वातावरण का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता, आज के इस भौतिक एवं वैज्ञानिक युग में समायोजन एवं सृजनात्मकता के अवसरों को विकसित करने की आवश्यकता है जिससे सांवेगिक बुद्धि में तीव्रता उत्पन्न हो सके।

बानो रेशमा (2011) ने माध्यमकि स्तर के विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि में सम्बन्ध और पाया कि संवेगात्मक बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि में धनात्मक संबंध होता हैं।

दिनेश ठाकुर और श्रीमती योगेश (2013) ने विज्ञान संकाय एवं वाणिज्य संकाय के विद्यर्थियों की बुद्धि स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया और निष्कर्ष के रूप में पाया कि विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों में बुद्धि स्तर तुलनात्मक रूप से अधिक होता हैं।

राठौर योगिता एवं संस्मति मिश्रा (2015) ने ग्रामीण विद्यार्थियों के मध्य सामाजिक बुद्धि एवं समायोजन के आधार का तुलनात्मक अध्ययन एवं पाया कि ग्रामीण विद्यार्थियों में सामाजिक बुद्धि एवं समायोजन के मध्य सकारात्मक संबंन्ध होता हैं।

लाखेरा संगीता (2015) ने शासकीय एवं अशासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन किया है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालय/महाविद्यालय के आदिवासी जिले के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि का अध्ययन करना।
2. शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालय/महाविद्यालय के गैर–आदिवासी जिले के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि का अध्ययन करना।
3. शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालय/महाविद्यालय के आदिवासी एवं गैर आदिवासी जिले के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध अध्ययन परिकल्पनाएँ :

1. शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालय/महाविद्यालय के आदिवासी एवं गैर आदिवासी जिले के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता हैं।
2. शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालय एवं महाविद्यालय के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता हैं।

न्यादर्श का चयन – जिले के सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालयों/ महाविद्यालयों से शिक्षको का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा किया गया। प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु चयनित न्यादर्श को निम्नांकित रूप से दर्शाया गया है।

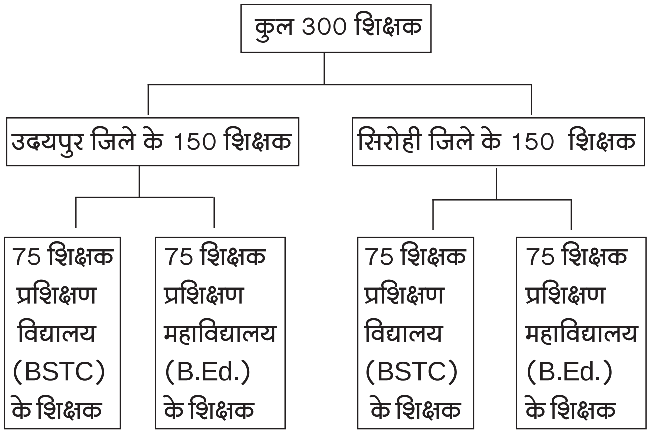

अध्ययन के चर

- **स्वतंत्र चर**

1. शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय (BSTC) के शिक्षक
2. शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय (B.Ed.) के शिक्षक

- **आश्रित चर**
- सांवेगिक बुद्धि

3.6 उपकरण – अनुसंधान प्रक्रिया की एक और महत्तवपूर्ण कड़ी हैं – अनुसंधान सामग्री अथवा प्रदत्तों का संग्रहण। अनुसंधान के उद्देश्यों की पूर्ति एवं परिकल्पनाओं का परीक्षण उपयुक्त एवं संबंधित सूचनाओं एवं सामग्री के विश्लेषण पर निर्भर करता हैं। प्रत्येक अनुसंधान में दत्तों का संकलन करने के लिये कुछ साधनों की आवश्यकता होती है इन्ही साधनों को उपकरण कहा जाता हैं। अनुसंधान की सफलता के लिये उपयुक्त उपकरणों के चयन का बहुत अधिक महत्तव है। विभिन्न उद्देश्यों के लिये भिन्न–भिन्न प्रकार से सूचनायें एकत्रित करने के लिये भिन्न–भिन्न प्रकार के उपकरण प्रयोग में लाये जाते हैं।

प्रस्तुत शोध अध्ययन को सफल बनाने तथा उद्देश्यों की सफलता पूर्वक प्राप्ति के लिये अनुसंधानकर्त्ता ने निम्नलिखित स्वनिर्मित उपकरण का चयन किया हैं।

प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु तीन प्रकार के उपकरणों को प्रयुक्त किया गया जो निम्न होंगे –

- **सांवेगिक बुद्धि** के चरों के मापन हेतु **स्वनिर्मित मापनी** Self Made Test का उपयोग किया गया।

सांवेगिक बुद्धि के मापन हेतु – स्वनिर्मित उपकरण

सांवेगिक बुद्धि प्रमापनी

1. प्रथम सोपान – सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन

2. द्वितीय सोपान – सम्बन्धित क्षेत्रों का चयन – शोधकर्त्ता द्वारा समस्या से सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन के बाद समस्या से सम्बन्धित क्षेत्रों का चयन किया गया। विशेषज्ञों की राय से निम्नांकित क्षेत्रों का चयन किया गया –

- स्व–जागरुकता
- सहानुभूति
- स्व–प्रेरणा
- सांवेगिक स्थिरता
- संबंध प्रबंधन
- अखंडता
- स्व–विकास
- मूल्य विन्यास
- प्रतिबद्धता
- परोपकारी व्यवहार

3. तृतीय सोपान – क्षेत्रवार कथनों का निर्माण – सांवेगिक बुद्धि प्रमापनी के निर्माण हेतु चयनित क्षेत्रों के आधार पर कथनों का निर्माण किया गया है। कथनों का निर्माण करने में शोधकर्त्ता ने संबंधित साहित्य एवं उपलब्ध उपकरणों के आधार पर कुल 60 कथनों का निर्माण किया।

4. चतुर्थ सोपान – कथनों पर विशेषज्ञों की राय – संकलित कथनों की प्रतियां बनाकर विषय विशेषज्ञों, शिक्षाविदों, प्रोफेसरों, प्रधानाध्यापकों एवं अनुसंधान विषय के अनुभवी प्राध्यापकों को दी गई। उनसे अनुरोध किया गया कि संबंधित कथनों पर सही–गलत का निशान लगाएं एवं

असंबंधित कथनों में विशेषज्ञों की राय के आधार पर कथनों में सुधार किया गया। जिन कथनों पर 70 प्रतिशत विशेषज्ञों ने राय दी उन कथनों को प्रमापनी में रखा गया। इस प्रकार अस्पष्ट कथनों को पृथक कर 50 कथनों की एक प्रमापनी तैयार की गई।

5. पंचम सोपान – पूर्व परीक्षण – प्रमापनी के कथनों का अन्तिम चयन हो जाने के पश्चात् प्रमापनी का पूर्व परीक्षण आवश्यक हो जाता है ताकि ये पता लग सके कि शिक्षक उत्तारदाता कथनों को भली–भांति समझे या नहीं। यह ध्यान में रखते हुए शोधकर्त्ता द्वारा प्रमापनी की प्रतियां चयनित विद्यालय तथा महाविद्यालय के छात्रों पर प्रशासित की गई। प्राप्त उत्तारों से इस परिणाम पर पहुंचा गया कि प्रमापनी का भाषा स्तर उपयुक्त है। तथा कथनों से वांछित सूचनाऐं प्राप्त हो रही है।

6. षष्टम् सोपान – प्रमापनी का अन्तिम प्रारूप – पूर्व परीक्षण के बाद प्रमापनी का अंतिम प्रारूप तैयार किया गया।

1. क्षेत्रों के अनुसार कथन बनाये।
2. प्रत्येक कथन पंच बिन्दु मापनी के रूप में प्रस्तुत किया गया–अत्यधिक असहमत, असहमत, उदासीन, सहमत, अत्यधिक सहमत।
3. सांवेगिक बुद्धि प्रमापनी के ऊपर निर्देश लिखे गये।

7. सप्तम सोपान – उपकरण का प्रशासन – अनुत्तीर्ण विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि प्रमापनी को 120 शिक्षक पर प्रशासित किया गया। फिर उत्तर पुस्तिकाओं का अंकन करने के पश्चात् उनके अंकों को बड़े से छोटे क्रम में जमाया गया। इस प्रकार क्रम से जमा उत्तर पत्रकों में से 27 प्रतिशत को उच्च समूह तथा 27 प्रतिशत को निम्न समूह में रखा। बीच के शेष पत्रकों को छोड़ दिया गया। अधिक अंक प्राप्त करने वाले 32 शिक्षकों के समूह को उच्च समूह एवं कम अंक प्राप्त करने वाले 32 शिक्षकों के समूह को उच्च समूह एवं कम अंक प्राप्त करने वाले 32 शिक्षकों के समूह को निम्न समूह कहा गया। इस प्रकार प्राप्त उच्च समूह एवं निम्न समूह के शिक्षक उत्तारदाताओं के आधार पर प्रत्येक कथन का विश्लेषण करने के लिए कथनवार टी.मान निकाला गया। शोधकर्त्ता द्वारा सांवेगिक बुद्धि के 50 कथनों पर निकाला गया टी मान सार्थक प्राप्त होने पर चयनित किए गए तथा असार्थक मान प्राप्त होने पर इन कथनों का चयन नहीं किया गया है। इस प्रकार 34 कथनों का चयन किया गया है।

सांवेगिक बुद्धि प्रमापनी की विश्वसनीयता – उपकरण के सम तथा विषम कथनों में **r = 0.74** (आधे उपकरण का) सह संबंध गुणांक प्राप्त हुआ। इस प्रकार अर्द्ध विच्छेदन विधि से सम्पूर्ण उपकरण की विश्वसनीयता **0.851** प्राप्त हुई। जो यह प्रदर्शित करता है कि शोधकर्त्ता द्वारा निर्मित उपकरण विश्वसनीय है।

वैधता – शोधकर्त्ता ने सांवेगिक बुद्धि प्रमापनी के कथनों का चयन विशेषज्ञों की 90 प्रतिशत (10 में से 9) सहमति के आधार पर किया है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि शोधकर्त्ता द्वारा बनाई गई सांवेगिक बुद्धि वैध है।

प्रदत्ता संकलन – किसी भी शोधकार्य के लिये प्रदत्तों का संकलन तथा इनके व्यवस्थित विश्लेषण के लिये जिस प्रक्रिया का सहारा लिया जाता है उसे प्रविधि कहते हैं। न्यादर्शों के चयन एवं उपकरण के निर्माण के पश्चात् सभी चयनित विद्यालयों में संस्था प्रधानों से पूर्वानुमति लेकर व्यक्तिगत रूप से सभी विद्यालयों में जाकर उनसे प्रदत्ता संकलन किया गया। प्रदत्ता संकलन हेतु सभी चयनित न्यादर्शों से सौहार्दपूर्ण वातावरण में 'स्वनिर्मित प्रश्नावली' को भरवाया गया। प्राप्त तथ्यों को सारणीबद्ध किया गया तत्पश्चात् प्राप्त तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया। सांख्यिकीय विश्लेषण में निम्न सांख्यिकीय तकनीकों का प्रयोग किया गया।

शोध में प्रयुक्त सांख्यिकी तकनीकी

मध्यमान

मानक विचलन

टी–परीक्षण – सांख्यिकीय विश्लेषण कम्प्यूटर का प्रयोग कर SPSS (Statistical Package for Social Sciences) किया गया।

आँकड़ों का विश्लेषण – शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों तथा शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों के सांवेगिक बुद्धि के क्षेत्र कूल सांवेगिक बुद्धि की तुलना को सारणी संख्या 1 में दर्शाया गया है।

सारणी संख्या 1 – शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों तथा शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों के कूल सांवेगिक बुद्धि की तुलना

	कूल सांवेगिक बुद्धि	
	शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों के शिक्षक	शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षक
N	150	150
मध्यमान	59.26	64.47
मानक विचलन	8.43	13.56
मध्यमान अन्तर	5.213	
'टी मान'	3.998	
सार्थकता	0.000	

उपर्युक्त सारणी को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों के शिक्षकों की कूल सांवेगिक बुद्धि का मध्यमान 59.26 तथा शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों की कूल सांवेगिक बुद्धि का मध्यमान 64.47 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 5.213 तथा 'टी मान' 3.998 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों तथा शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों की कूल सांवेगिक बुद्धि में सार्थक अन्तर है। मध्यमान अंको को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों के शिक्षकों की कूल सांवेगिक बुद्धि शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों की तुलना में कम होती है।

आदिवासी जिले तथा गैर आदिवासी जिले के शिक्षकों के कूल सांवेगिक बुद्धि की तुलना को सारणी संख्या 2 में दर्शाया गया है।

सारणी संख्या 2 – आदिवासी जिले तथा गैर आदिवासी जिले के शिक्षकों के कूल सांवेगिक बुद्धि की तुलना

	कूल सांवेगिक बुद्धि	
	आदिवासी जिले के शिक्षक	गैर आदिवासी जिले के शिक्षक
N	150	150
मध्यमान	58.07	65.66
मानक विचलन	8.19	13.14
मध्यमान अन्तर	7.59	
'टी मान'	6.00	
सार्थकता	0.000	

उपर्युक्त सारणी को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों एवं शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों की कूल सांवेगिक बुद्धि का मध्यमान 58.07 तथा गैर आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों एवं शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के

शिक्षकों की कूल सांवेंगिक बुद्धि का मध्यमान 65.66 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 7.59 तथा 'टी मान' 6.00 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों/महाविद्यालयों तथा गैर आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों/महाविद्यालयों के शिक्षकों की कूल सांवेंगिक बुद्धि में सार्थक अन्तर है। मध्यमान अंको को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों/महाविद्यालयों के शिक्षकों की की कूल सांवेंगिक बुद्धि गैर आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों/महाविद्यालयों के शिक्षकों की तुलना में कम होती है।

आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों तथा शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों के कूल सांवेंगिक बुद्धि की तुलना को सारणी संख्या 3 में दर्शाया गया है।

सारणी संख्या 3 – आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों तथा शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों के कूल सांवेंगिक बुद्धि की तुलना

	कूल सांवेंगिक बुद्धि	
आदिवासी जिले के शिक्षक	शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों के शिक्षक	शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षक
N	75	75
मध्यमान	56.91	61.61
मानक विचलन	7.68	8.54
मध्यमान अन्तर	4.71	
'टी मान'	3.55	
सार्थकता	0.001	

उपर्युक्त सारणी को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों के शिक्षकों की कूल सांवेंगिक बुद्धि का मध्यमान 56.91 तथा आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों की कूल सांवेंगिक बुद्धि का मध्यमान 61.61 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 4.71 तथा 'टी मान' 3.55 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों तथा आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों की कूल सांवेंगिक बुद्धि में सार्थक अन्तर है। मध्यमान अंको को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों के शिक्षकों की की कूल सांवेंगिक बुद्धि आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों की तुलना में कम होती है।

गैर आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों तथा शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों के कूल सांवेंगिक बुद्धि की तुलना को सारणी संख्या 4 में दर्शाया गया है।

सारणी संख्या 4 – गैर आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों तथा शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों के कूल सांवेंगिक बुद्धि की तुलना

	कूल सांवेंगिक बुद्धि	
गैर आदिवासी जिले के शिक्षक	शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों के शिक्षक	शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षक
N	75	75
मध्यमान	59.24	69.71
मानक विचलन	8.56	15.54
मध्यमान अन्तर	10.47	
'टी मान'	5.11	
सार्थकता	0.000	

उपर्युक्त सारणी को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि गैर आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों के शिक्षकों की कूल सांवेंगिक बुद्धि का मध्यमान 59.24 तथा गैर आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों की कूल सांवेंगिक बुद्धि का मध्यमान 69.71 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 10.47 तथा 'टी मान' 5.11 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि गैर आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों तथा गैर आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों की कूल सांवेंगिक बुद्धि में सार्थक अन्तर है। मध्यमान अंको को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि गैर आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों के शिक्षकों की की कूल सांवेंगिक बुद्धि गैर आदिवासी जिले के शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों के शिक्षकों की तुलना में कम होती है।

निष्कर्षः

1. आँकड़ों के विश्लेषण से परिकल्पना '*शक्षण प्रशिक्षण विद्यालय/महाविद्यालय के आदिवासी एवं गैर आदिवासी जिले के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता हैं*' **असत्य** सिद्द होती हैं।
2. आँकड़ों के विश्लेषण से परिकल्पना 'शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालय एवं महाविद्यालय के शिक्षकों की सांवेगिक बुद्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता हैं' **असत्य** सिद्द होती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. बानो रेशमा, 'माध्यमकि स्तर के विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि में सम्बन्ध', परिप्रेक्ष्य – शैक्षिक योजना और प्रशासन का सामाजिक–आर्थिक संदर्भ, 2011; 18(2):109.121.
2. दिनेश ठाकुर और श्रीमती योगेश, 'विज्ञान संकाय एवं वाणिज्य संकाय के विद्यर्थियों की बुद्धि स्तर का तुलनात्मक अध्ययन', सन्दर्भ (वैश्विक शैक्षिक परिप्रेक्ष्य), 3(1), 2013ण
3. राठौर योगिता एवं संस्मति मिश्रा, 'ग्रामीण विद्यार्थियों के मध्य सामाजिक बुद्धि एवं समायोजन के आधार का तुलनात्मक अध्ययन', International Journal of Multidisciplinary Research and Development, Vol. (2)2:434-436, 2015.
4. लाखेरा संगीता, 'शासकीय एवं अशासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के संवेगात्मक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन', International Journal of Multidisciplinary Research and Development, 4(2):1-4, 2015.

****

सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र एवं छात्रा शिक्षकों में तनाव के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन

हेमन्त त्रिवेदी *

शोध सारांश – अध्यापक शिक्षा सामाजिक, शैक्षणिक मार्गदर्शन संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक सक्षम अभिकरण है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र एवं छात्रा शिक्षकों में तनाव के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना है । प्रस्तुत शोध अध्ययन दक्षिणी राजस्थान के उदयपुर जिले के सरकारी एवं गैर सरकारी सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के 200 छात्र शिक्षक एवं 200 छात्रा शिक्षकों को चयनित याद्दच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा किया गया। तनाव के चरों के मापन हेतु अरूण कुमार सिंह, आशीष कुमार सिंह एवं अर्पणा सिंह द्वारा निर्मित मानकीकृत उपकरण सिंह परसोनल स्ट्रेस सोर्स इनवेंटरी का उपयोग किया गया। सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र शिक्षकों तथा छात्रा शिक्षकों के तनाव की तुलना हेतु टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया। आँकड़ों के विश्लेषण से परिकल्पन *'सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र एवं छात्रा शिक्षकों में तनाव के स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता हैं'* असत्य सिद्द हुई।

प्रस्तावना – शिक्षा को सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक माध्यम के साथ ही सामाजिक परिवर्तन का कारक भी माना जाता है, अत: अध्यापक शिक्षा सामाजिक, शैक्षणिक मार्गदर्शन संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक सक्षम अभिकरण है। संज्ञानात्मक एवं सामाजीकरण संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज ही अध्यापक को दायित्व प्रदान करता है। इस दायित्व की पूर्ति अध्यापक वर्ग पर तथा उनकी गुणवत्ता, अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। आजकल बच्चों की शिक्षा मनोविज्ञान तथा उनकी योग्यता एवं क्षमता के आधार पर करना आवश्यक होता है। इसके लिए अध्यापकों को विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। अत: इस द्दष्टि से अध्यापक शिक्षा अति महत्वपूर्ण मानी जाती है।

तनाव उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों के प्रति एक अन्य संवेगात्मक अनुक्रिया भी होती है जिससे बाद में व्यक्ति आक्रामक व्यवहार करने लगता है और यदि ऐसे उद्दीपक प्राणी के सामने अधिक समय तक बनी रहे तो वह उनके प्रति आक्रमकता पूर्ण व्यवहार भी करने लगता है। तनाव उत्पन्न करने वाली परिस्थिति के प्रति कुछ लोगों में क्रोध एवं आक्रमकता का व्यवहार न होकर ठीक उसके विपरीत भावशून्यता तथा विषाद का भाव विकसित हो जाता है, सामान्यत: यह देखा गया है कि अगर तनावपूर्ण परिस्थिति व्यक्ति के सामने बनी होती है और व्यक्ति उसके साथ निबटने में सफल नहीं होता है, तो वह उनके प्रति भावशून्यता या उदासीनता विकसित कर लेता है जो बाद में व्यक्ति में विषादी प्रवृत्ति उत्पन्न कर देता है।

रोबिन्सन (2010) ने अपने शोध प्रपत्र में विद्यार्थियों की दुश्चिन्ता, निराशा, तनाव एवं न्नतिबल से बचने हेतु ADTS विधि के प्रयोग को बल दिया। इस विधि में A - Anxiety Control, D - Defeating Depression, T - Tenssion Reduction and S = Stress Management की प्रविधियों को महत्व दिया। शोध प्रपत्र से यह निष्कर्ष प्रतिपादित किया कि विद्यार्थी ADTS विधि द्वारा अकादमिक सफलता को प्राप्त कर सकता हैं।

पाण्डे (2006) ने उच्च एवं निम्न तनाव ग्रस्त छात्रों में तनाव और व्यक्तित्व कारकों का अध्ययन किया। उनके अध्ययन का उद्देश्य उच्च एवं निम्न तनाव ग्रस्त छात्रों में तनाव और व्यक्तित्व कारकों के मध्य संबंध का अध्ययन करना था। इन्होने शोध हेतु व्यक्तित्व कारक प्रश्नावली जिससे 22 व्यक्तित्व कारकों का मापन किया जा सकता है एवं जिसमें 176 पद थे, का प्रयोग किया। प्रयोज्यों हेतु उन्होने याद्दच्छिक प्रतिचयन विधि से 37 इलाहबाद स्कूल के कक्षा 11 के छात्रों को चयनित किया तथा विश्लेषण में सार्थकता को जाँचने हेतु 'टी' टेस्ट का प्रयोग किया गया। अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष में पाया कि जो छात्र ज्यादा तनावग्रस्त थे वे अपेक्षाकृत अधिक अन्त: वैयक्तिक एवं अन्त: वैयक्तिक समायोजन की आवश्यकता महसुस करते है।

गुप्ता (2006) ने यह अध्ययन किया कि क्या छात्राध्यापक, अध्यापन प्रयास के दौरान उच्च अकादमिक स्तर पर तनाव को महसुस करते है ? इस हेतु उन्होने 62 छात्राध्यापक एवं 60 छात्राध्यापिकाओं को चयनित किया और एक स्वनिर्मित मापन द्वारा उनमें तनाव को ज्ञात किया। दत्ता विश्लेषण हेतु प्रोडेक्ट मोमेन्ट सहसंबंध गुणांक एवं टी मान की गणना की गई। निष्कर्ष के रूप में छात्राध्यापिकाओं में अध्यापन प्रयास के दौरान तनाव एवं उनके अकादमिक स्तर में सार्थक सहसंबंध पाया गया तथा विभिन्न समूहों के मध्य उच्च एवं औसत अकादमिक स्तर पर सार्थकता परीक्षण में कला एवं विज्ञान के छात्राध्याक एवं छात्राध्यापिकाएँ तथा कला की छात्राध्यापिकाएँ अपेक्षाकृत अधिक तनाव ग्रस्त पाई गई।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र शिक्षकों में तनाव के स्तर का अध्ययन करना।
2. सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्रा शिक्षकों में तनाव के स्तर का अध्ययन करना।
3. सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र एवं छात्रा शिक्षकों में तनाव के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना – सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र एवं छात्रा शिक्षकों में तनाव के स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता हैं।

शोध में प्रयुक्त विधि – प्रस्तुत शोध में मापनी पूर्ति हेतु न्यादर्श चयन के लिये अनुसंधानकर्त्ता ने प्रस्तुत अध्ययन हेतु याद्दच्छिक प्रतिचयन विधि से न्यादर्शों का चयन किया हैं। इस विधि का प्रयोग एक तो सीमित विधि के

* शोधार्थी, पेसिफिक विश्वविद्यालय,उदयपुर (राज.) भारत

संदर्भ में करते हैं इस प्रतिदर्श के सदस्यों को इस प्रकार चुनते है कि प्रतिदर्श एवं समष्टि के ज्ञात गुणों के केन्द्रिय माप एवं विचलन समान हो।

न्यादर्श का चयन – प्रस्तुत शोध अध्ययन दक्षिणी राजस्थान के उदयपुर जिले के सरकारी एवं गैर सरकारी सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के कुल 400 विद्यार्थियों पर किया गया। जिनमें से 200 छात्र शिक्षक एवं 200 छात्रा शिक्षकों को चयनित किया गया। जिले के सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों से शिक्षक विद्यार्थियों का चयन **यादृच्छिक प्रतिचयन विधि** द्धारा किया गया।

अध्ययन के चर

- **स्वतंत्र चर**

1. छात्र एवं छात्रा विद्यार्थी शिक्षक

- **आश्रित चर**

1. तनाव

उपकरण – तनाव के चरों के मापन हेतु अरूण कुमार सिंह, आशीष कुमार सिंह एवं अर्पणा सिंह द्धारा निर्मित मानकीकृत उपकरण **सिंह परसोनल स्ट्रेस सोर्स इनवेंटरी** का उपयोग किया गया। तनाव के चरों के मापन हेतु अरूण कुमार सिंह, आशीष कुमार सिंह एवं अर्पणा सिंह द्धारा इस इंनवेटरी को निर्मित किया गया। कुल तीन क्षेत्रों में प्रत्येक में 10-10 प्रश्न है। परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक 0.83 तथा वैद्यता गुणांक 0.79 है।

प्रदत्त संकलन – न्यादर्शों के चयन एवं उपकरण के निर्णयन के पश्चात् सभी चयनित विद्यालयों में संस्था प्रधानों से पूर्वानुमति लेकर व्यक्तिगत रूप से सभी विद्यालयों में जाकर उनसे प्रदत्त संकलन किया गया। प्रदत्त संकलन हेतु सभी चयनित न्यादर्शों से सौहार्दपूर्ण वातावरण में मानकीकृत परीक्षण को भरवाया गया। प्राप्त तथ्यों को सारणीबद्ध किया गया तत्पश्चात् प्राप्त तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया। सांख्यिकीय विश्लेषण में निम्न सांख्यिकीय तकनीकों का प्रयोग किया गया।

प्रयुक्त सांख्यिकी तकनीकी

1. **मध्यमान**
2. **मानक विचलन**
3. **टी-परीक्षण**

सांख्यिकीय विश्लेषण कम्प्यूटर का प्रयोग कर SPSS (Statistical Package for Social Sciences) किया गया। साथ ही संमकों को वैज्ञानिक कसौटी पर कसने के लिये 0.05 एवं 0.01 स्तर पर उनकी सार्थकता की जाँच की गई।

आँकड़ों का विश्लेषण – सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र शिक्षकों तथा छात्रा शिक्षकों के तनाव की तुलना को सारणी संख्या 1 में दर्शाया गया है।

सारणी संख्या 1 – सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र शिक्षकों तथा छात्रा शिक्षकों के तनाव की तुलना

	सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के	
	छात्र शिक्षक	छात्रा शिक्षक
N	200	200
मध्यमान	74.88	69.40
मानक विचलन	6.478	5.118
मध्यमान अन्तर	5.480	
'टी मान'	9.388	
सार्थकता स्तर	0.01	

उपर्युक्त सारणी को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र शिक्षकों के तनाव का मध्यमान 74.88 तथा सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों की छात्रा शिक्षकों के तनाव का मध्यमान 74.88 प्राप्त हुआ । मध्यमान अन्तर 5.480 तथा 'टी मान' 9.388 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्रों तथा सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों की छात्राओं के तनाव में सार्थक अन्तर है। मध्यमान अंको को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों की छात्रा शिक्षकों का तनाव सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र शिक्षकों के तनाव से अधिक होता है।

सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र शिक्षकों तथा छात्रा शिक्षकों के तनाव की श्रेणी अनुसार तुलना को सारणी संख्या 2 में दर्शाया गया है।

सारणी संख्या 2 – सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र शिक्षकों तथा छात्रा शिक्षकों के तनाव श्रेणी अनुसार तुलना

		तनाव श्रेणी		योग	काई वर्ग(p मान)
		सामान्य	उच्च		
छात्र शिक्षक	f	147	53	200	29.033(0.000)
	%	73.5%	26.5%	100.0%	
छात्रा शिक्षक	f	187	13	200	
	%	93.5%	6.5%	100.0%	
योग	f	334	66	400	
	%	83.5%	16.5%	100.0%	

उपर्युक्त सारणी को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के कुल छात्र व छात्रा शिक्षकों में से 83.5 प्रतिशत का तनाव स्तर सामान्य तथा 16.5 प्रतिशत का तनाव स्तर उच्च है। सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के कुल छात्र शिक्षकों में से 73.5 प्रतिशत का तनाव स्तर सामान्य तथा 26.5 प्रतिशत का तनाव स्तर उच्च है। जबकि सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के कुल छात्रा शिक्षकों में से 93.5 प्रतिशत का तनाव स्तर सामान्य तथा 26.5 प्रतिशत का तनाव स्तर उच्च है। काई -वर्ग का मान 29.033 प्राप्त प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्रों तथा सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों की छात्राओं के तनाव श्रेणी में सार्थक अन्तर है। प्रतिशत अंको को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों की कुल छात्र व छात्रा शिक्षकों में से उच्च तनाव स्तर के छात्र शिक्षक छात्रा शिक्षकों की तुलना में अधिक है।

निष्कर्ष – आँकड़ों के विश्लेषण से परिकल्पना *'सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्र एवं छात्रा शिक्षकों में तनाव के स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता हैं'* **असत्य** सिद्द होती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Robinson, D. (2010) : "The self help process of adolescents", Journal of Adolescent Development", Lipzic, W. Gernaj, Vol. 2, p. 17-28.
2. Bisht, A. R. (2000) : ` A Study of stress in relation to school climate and academic achievement', Third Survey of Education in Research Survey.
3. Pandey, S.P. (2006) : `Personality in relation to stress among students", Trends and Thoughts of Education.

वाल्मिकि रामायण में कन्या का स्वरुप

डॉ. पंकज कुमार सिंह *

प्रस्तावना - व्यावाहारिक जीवन में नारी की प्रमुख तीन अवस्थायें दृष्टिगोचर होती है। प्रथम अवस्था जन्म से लेकर विवाह के पूर्व तक कौमार्य की है, जिसे नारी का 'कन्यारुप' कहा जा सकता है। द्वितीय अवस्था विवाह के बाद आरंभ होती है, जो नारी का 'पत्नीरुप' है तथा तीसरी अवस्था संतान जनन के बाद आरंभ होती है, जो इसका 'मातृरुप' है। मनु महाराज ने नारी जीवन की इन तीनों अवस्थाओं का निर्देश किया है। इन्होने कहा है कि कौमार्य में नारी का रक्षक उसका पिता होता है। वह पिता के सरंक्षण में रहकर अपने कन्या जीवन को व्यतीत करती है। यौवन में जब नारी वैवाहिक सूत्र में बँध जाती है, उसका रक्षक पति हो जाता है। तीसरी वृद्धावस्था में नारी पुत्र के संरक्षण में चली जाती है। इन तीन अवस्थाओं के अतिरिक्त नारी जीवन के कुछ और रुप हैं, जैसे- विधवा, वियोगिनी, वेश्या, कुलटा इत्यादि। प्रस्तुत अध्याय में रामायण के परिप्रेक्ष्य में नारी का कन्या जीवन ही विचारणीय है।

रामायण कालीन कन्या जीवन पर विचार करने के पूर्व वैदिककालीन कन्या जीवन पर सामान्य रुप से दृष्टिपात कर लेना आवश्यक है, जिससे स्पष्ट हो सके कि रामायण से पूर्वकाल में कन्याओं की जो स्थिति थी, उसकी अपेक्षा रामायण काल में उनकी अवस्था विकासोन्मुखी है या ह्रासोन्मुखी। भारतीय सभ्यता और संस्कृति का शुभारंभ विद्वानों ने वैदिक काल से ही माना है। अत: यहाँ वैदिक और उत्तर वैदिक कालीन कन्या की स्थिति की एक झाँकी प्रस्तुत करना अपेक्षित है। किसी भी समाज में नारी जीवन की जानकारी के लिये यह देखना आवश्यक है कि कन्या जन्म को समाज किस रुप में ग्रहण करता है, उसके जन्म से उसके परिवारवालों को या अन्य सामाजिक जनों को हर्ष होता है या विशाद। उसका जन्म मंगल-स्वरुप माना जाता है या अमंगल स्वरुप। ऋग्वेद में पुत्र-प्राप्ति के लिये प्रार्थनायें तो अवष्य की गयी हैं। लेकिन कन्या के जन्म से घृणा या विशाद कही भी प्रकट नहीं होता है। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि पुत्री की स्थिति भले ही पुत्र के समान स्तर पर नहीं रही हो, किंतु उन्हें निम्न कोटि का भी रही माना जाता था। ऋग्वेद की एक ऋचा मे विवाह कालिक आशीर्वाद में नव-दम्पत्ति को जीवन भर पुत्र-पोत्रों के साथ खेलने का कहा गया है। उस समय पत्नी से वीर पुत्रों के जन्म की कामना की गई है। इन उद्धरणों से भी यही अनुमान होता है कि य़द्यपि ऋग्वेदिककाल में पुत्र को अधिक महत्व अवश्य प्राप्त था, परंजु परिवार या समाज में कन्या की निंदा की जाती थी। माता-पिता या परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा कन्या को भी स्नेह की दृष्टि से देखा जाता था तथा उनके साथ किसी प्रकार का कठोर व्यवहार नहीं किया जाता था।

अथर्ववेद में पुत्र की अपेक्षा कन्या का स्थान कुछ न्यून दिखार्द देता है। यत्र-तत्र कन्या की निंदा भी की गई है। लोग प्रार्थना करते थे कि कन्या का जन्म न हो और उत्पन्न होने वाला गर्भस्थ शिशु यदि पुत्री हो तो वह पुत्र हो जाये। एक मंत्र से पिंग से प्रार्थना की गयी है कि आप बालक की रक्षा जन्म के क्रम में करें। ऐसा न हो कि शत्रुगण बालक को बालिका के रुप में बदल दे। अथर्ववेद के तृतीय काण्ड के 23वें सूक्त में वन्धारुप का नाश करने वाले तथा बालक (पुत्र) का जन्म देने वाले मंत्र प्रयोग का वर्णन है। इस प्रकार षष्ट काण्ड के एकादश सूक्त में पुत्र जन्म के लिये प्रार्थना और पुत्री की निंदा की गई है। अष्टम काण्ड के षष्ठ सूक्त में गर्भवती स्त्री की दृष्ट ग्रहों की रक्षा के लिये प्रार्थना की गयी है जिससे से किसी गर्भस्थ बालक को बालिका के रुप में परिणत न कर दें। इन तथ्यों से प्रतीत होता है कि अथर्ववेदकाल में समाज में कन्या का स्थान हीन हो गया था। इसका कारण यह हो सकता है कि पुत्र पिता के परिवार का स्थायी सदस्य होता था, जबकि पुत्री विवाहोपरांत पति के घर चली जाती थी। पुत्री से पिता के परिवार को कोई विशेष सहयोग प्राप्त नहीं होता था, विपरीतत: विवाह के संदर्भ में अनेक प्रकार की कठिनाईयों का सामना करना पड़ता था।

उत्तर वैदिक काल में भी कन्या को पुत्र की अपेक्षा कम महत्व प्राप्त था ब्राहमण काल में पुत्र को धार्मिक महत्व दिया गया। पितरो के उद्धार के लिये पुत्र के द्वारा पितृतर्पणादि आवश्यक माने जाने लगा। शतपथ ब्राहमण में कहा गया है कि मनुष्य जन्मकाल से ही देवताओं, ऋषियों, पितरो और मनुष्यों को ऋणी होता है। पुत्र पिता को नकर जाने से बचाता है तथा पितरों की आत्मायें पुत्र के पिण्डदान से संतुष्ट होती है। इन मान्यताओं से पुत्र का महत्व बढ़ जाता है। पुत्र को इतना अधिक धार्मिक महत्व प्राप्त हो जाने के कारण पुत्री उपेक्षित हो गयी। एतेरेय ब्राहमण में तो यहाँ तक कह दिया गया है कि वह जन्म के समय स्वजनों को दु:ख देती है, विवाह के समय समुचित धन (दहेज) ले जाती है, तरुणाई में अनेक दोषों से युक्त होकर वंश को कलंकित कर सकती है। अत: कन्या माता-पिता के हृदय को आघात पहुँचाने वाली होती है।

उपनिषद्काल में स्त्री की स्थिति में कुछ सुधार दृष्टिगोचर होता है। वृहदारण्क उपनिषद् में गृहस्थों को परामर्श दिया गया है कि वे विदुषी पुत्री प्राप्त करने के लिये अनुष्ठान करें। यद्यपि पुत्र जन्म के लिये किया गया पुंसवन संस्कार जितना लोकप्रिय हो सका था, उतना पुत्री-प्राप्ति के लिये किये गये अनुष्ठान नहीं। फिर भी इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि पुत्री को लोग अशिक्षित रखना नही चाहते थे। उनके लिये लोग वैदुश्य की कामना करते थे।

उपर्युक्त विचारों को ध्यान में रखकर अब हमें विचार करता है कि रामायण में चित्रित कन्या जीवन कैसा है - विकासोन्मुख या ह्रासोन्मुख, कन्या के जन्म के संबंध में लोगों की धारणा कैसी थी, उनकी शिक्षा-दीक्षा और पारिवारिक जीवन अर्थात् परिवार के सदस्यों के साथ उनका संबंध कैसा था।

* पीएच.डी. (संस्कृत विभाग) जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार) भारत

रामायण में नारी के कन्या रुप का विस्तारश: उल्लेख नहीं मिलता। मूल कथा में केवल सीता, उर्मिला: श्रुतिकीर्ति और मांडवी की चर्चा आयी है। मात्र श्रीराम के विवाह के समय सीता आदि चारो वाहनों का अतिसंक्षिप्त वर्णन उपलब्ध होता है। रामायण के आनुशांगिक वृत्तों में कुछ कन्याओं की चर्चा की गयी है, यथा कुशनाभ की सौ पुत्रियाँ, राजा शुक्र की कन्या आदि। इन्ही उल्लेखित तथ्यों के आधार पर यहाँ तत्कालीन कन्या जीवन पर विचार किया जा रहा है।

कन्या के प्रति माता-पिता और समाज की धारणा एवं उसकी पारिवारिक स्थिति - रामायण में माता पिता के साथ कन्या के संबंध को प्रेममय बतलाया गया हैं। कन्या परिवार में पूज्या थी। महाभारत में बताया गया है कि माता पिता कन्या को ब्रहमा द्धारा दिया गया धरोहर समझते थे। अपने घर में कन्या का रहना अत्यल्प काल (विवाह पर्यन्त) के लिये जानकर उसका काफी सम्मान करते थे। सामान्य परिवारों की अपेक्षा राजघरानों में कन्या का विशेष सम्मान था। राजा जनक अपनी पुत्री सीता को प्राणों से भी बढ़कर प्रिय मानते थे। इसीलिये वे अपनी कन्या का विवाह सुयोग्य वर से करना चाहते हैं। महाभारत में भी लिखा है कि सीता अपने पिता के प्राणों के समान थी। द्रोपदी भी अपने पिता से अगाध प्रेम करती थी। अत्यन्त प्रिय होने के कारण ही राजा जनक ने अपनी कन्या को 'वीर्यशुल्का' घोषित कर दिया है। सीता अयोनिजा है। फिर भी जनक उसे स्ववीर्योत्पन्न पुत्री से भी बढ़कर मानते है और अत्यन्त प्रेमपूर्वक उसका लालन-पालन करत है। माण्डवी एवं श्रुतिकीर्ति के प्रति भी उनके पिता कुशध्वज द्धारा दिये गये किसी प्रकार की अवमानना का उल्लेख नहीं है। आदिकवि ने महर्षि विश्वामित्र के मुख से एक बार इनकी सुंदरता की प्रशंसा करवायी है। यह केवल विश्वामित्र की उक्ति नही, अपितु राजा जनक ने भी आगे इसका समर्थन किया है। यह वृत्तांत कन्या के प्रति माता पिता के सुंदर विचार का परिचायक है। महाभारत में भी कन्या की सुंदर तथा स्नेहित पारिवारिक स्थिति का परिचय प्राप्त होता है। कन्या के जन्म से आंनदित होकर उसके संस्कार और शिक्षा का प्रबंध करके माता पिता उसका विशेष लाड़-प्यार से लालन-पालन करते थे। पिता की रक्षा एवं माता के संरक्षण में उसके लिये सुख और मनोरंजन के पर्याप्त साधनों का प्रबंध किया जाता था। माता पिता उसके भविष्य की चिंता में उसके लिये सुयोग्य वर की प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील रहते थे। पिता की गोद में बैठकर नीतिशास्त्र का पाठ सुनाने वाली द्रोपदी पितृ स्नेह में पली हुई बालिका का एक चित्र प्रस्तुत करती है। पिता स्नेह से पुत्री कास आलिंगन करता थां और सिर सूँघता था। गरीब परिवार में भी पिता पुत्री का परस्पर व्यवहार प्रेमपूर्ण रहता था, जैसा कि एक ब्राहमण और उसकी कन्या का था। आश्रम में रहने वाले कण्व का भी शकुंतला के प्रति नितान्त स्नेह था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने।
   रक्षन्ति रुथविरे पुत्रा न स्त्री स्वातंत्रयमर्हति ।। मनु. 9/3
2. वीमेन इन द वैदिक एज, एस.राव. शास्त्री, पृष्ठ 2
3. क्रीडन्तो पुत्रौर्नप्तृभिर्मौदमानो स्वेगृहे - ऋग्वेद 10/85/42
4. सुपुत्रा सुभगासति - वही, 10/85/25
5. अथर्ववेद 2/28/2
6. वीमेन इन द वैदिक एज, एस.राव. शास्त्री, पृ. 43
7. ऋणं हवे जायते योऽस्ति। स जायमान एव देवेभ्यं ऋषिभ्य: पितृभ्यो मनुष्येभ्य:।। शत.ब्रा. 1/7/2/1
8. संभवे स्वजन दु:खकारिका, सम्प्रदानसमयेऽर्थहारिका।
   यौवनेऽपि बहुदोशकारिका, दारिका हृदयदारिका पितु:। ऐ.ब्रा. 33/1 पर सायणभाप्य
9. अथ च इच्छेदुदुहिता में संति जायेत, सिलोदनी पाचयितवा अश्नीताम्। वृ.उ. 4/4/18
10. महा. आदि. 145/35
11. सीता प्राणैबर्हुमता देया रामाय में सुता।। वा.रा. 1/67/23
12. महा. आदि. 80/9/10
13. वही, सभा. 22/65
14. वीर्ये शुल्केति में कन्या स्थापितेयमयोतिजा।
    भूतलादुत्थितं तां तु वर्धमानां ममात्मजाम्।
    वीर्यशुल्कैति भगवन् ददामि सुतामहम्। वा.रात्र 1/66/17
15. अस्य धर्मात्मानो राजन् रुपेणाप्रतिमं भुवि।
    सुताद्धयं नरश्रेष्ठ पत्न्यर्थ वरयामहे।। वही, 1/72/5
16. महा. आरण्यक. 23/57-58
17. वही, अनुशासन. 78/14
18. वही, उद्योग. 95/20-21
19. वही, आदि. 145/34-37 एवं 147/1-12
20. वही, 67/30-33

****

कृषि के क्षेत्र में महिलाओं का विकास

प्रीती रवि* डॉ. ए. के. पाण्डे **

प्रस्तावना – वर्तमान मे खेती एक खतरनाक मोड़ पर आकर खड़ी है। रासायनों के प्रयोग से प्रदुषण बढ़ रहा है तथा मिट्टी की उर्वरक शक्ति का भी हास्य हो रहा है। ऐसे मे संपूर्ण विश्व का ध्यान जंगल संरक्षा, मृदा संरक्षा, स्वास्थ्य संरक्षा एवं वातावरण संरक्षा पर केन्द्रित हो गया है। संपूर्ण विश्व यह मान रहा है कि रासायनिक अवशेष स्वास्थ्य को गंभीर हानि पहुंचाते है। अब समय आ गया है कि इस दिषा मे शीघ्र कदम उठाये जाये। ऐसे मे कृषि श्रमिक महिलाओं की भूमिका अग्रणी हो जाती है। कृषि श्रमिक महिलाएं कार्वनिक खेती के विभिन्न पहलुओं को जानकर रासायनों के प्रयोग से उत्पन्न हुई चुनौतियों का निवारण करके स्वस्थ्य भारत के निर्माण मे महत्वपूर्ण योगदान दे सकते है।

कृषि श्रमिक महिलाएं वनस्पति पीड़कनाशी के विभिन्न पहलुओं को जानकर रासायनिक पीड़कनाशियों के प्रयोग से उत्पन्न हुई चुनौतियों का निवारण करके स्वास्थ्य भारत के निमार्ण, महत्वपूर्ण योगदान फसल उत्पादन मे कृषि श्रमिक महिलाओं की अग्रणी भूमिका रही है। कृषि श्रमिक महिलाओं को वानस्पतिक पीड़कनाशियों का प्रयोग करना सर्वोत्तम होता है क्योंकि इसका प्रयोग करने के बाद इनसे लाभदायक कीटों को कोई हानि नही पहुंचाती है। कुछ पीड़कनाशियों को आसानी से और कम खर्च मे बनाकर प्रयोग किया जा सकता है तथा कीट अवरोधी होने का भय नही रहता। इसे कृषि श्रमिक महिलाएं स्वयं बना सकती है। इससे उर्वरकों पर जो पैसा खर्च होता है वह बचेगा और बचत की गई राशि को अन्य विकास कार्यो मे लगाया जा सकता है।

फसल उत्पादन मे कृषि श्रमिक महिलाओं की अग्रणी भूमिका रही है। रासायनों के अंधाधुंध प्रयोग से महिलाओं मे अनेक प्रकार की समस्यायें परिलक्षित हो रही है। जैविक कीटनाशी का प्रयोग से स्वास्थ्य फसल उत्पादन भी होगा और महिलाओं के स्वास्थ्य पर भी इसका कोई प्रतिकूल असर नही पडेग़ा। कृषि महिलाओं को जैविक पीड़कनाशियों का प्रयोग करना सर्वोत्तम होगा, क्योंकि इनका प्रयोग स्थायी होता है। एक बार प्रयोग करने के बाद इनकी क्रिया अपने आप चलती रहती है। इनसे लाभदायक कीटों को कोई क्षति नही पहुंचती है।

भारत मे छोटी जोतों होने के कारण सब्जियों की रोपाई यंत्र का उपयोग लगभग नगण्य है और रोपाई मुख्यतया महिला सब्जी उत्पादकों या महिला श्रमिक द्वारा हांथों से की जाती है। विभिन्न सब्जियों की रोपाई मे महिलाओं की भागीदारी 90 प्रतिशत से भी अधिक है। फल वृक्षों को सामान्यतया अधिक दूरी पर पहले से तैयार गड्ढों मे लगाया जाता है। महिलाओं का फल-वृक्षों की रोपाई का योगदान पुरूषों की तुलना से कम है, लेकिन नये लगाये गये फल वृक्षों मे पानी देने तथा उनकी आरम्भिक देखभाल मे उनकी भूमिका बहुत अधिक है। विभिन्न अन्तसस्यन क्रियाओं जैसे-सिंचाई, विरलन, फसल की निगरानी, खरपतवार निकालना, पीड़कनाशकों के प्रयोग मे महिलाओं की प्रभावी भूमिका है। विभिन्न अन्तशस्यन के प्रयोग मे महिलाओं की प्रभावी भूमिका है। विभिन्न अन्तशस्यन क्रियाओं मे खरपतवार निकालना एक महत्वपूर्ण और उबाऊ प्रक्रिया है और फसल उत्पादन की किसी भी अन्य क्रिया से अधिक श्रम की आवश्यकता होती है। खरपतवार निकालने का कार्य मुख्यतया महिलाओं द्वारा किया जाता है। विभिन्न बागवानी फसलों मे खरपतवार निकालने मे महिलाओं का योगदान 80 से 90 प्रतिशत तक है।

भारतीय शहरी महिलाएं अपने ग्रामीण बहनों को, जो न सिर्फ घरेलू काम-काज की जिम्मेदारी का निर्वाह करती है बल्कि पुरूषों के साथ खेतों मे भी हांथ बटाती है, उसकी भांती ही घर की चार दिवारी से बाहर निकलकर आय सृजित करने लगी है। महिलाओं को मां के कर्तव्य के साथ-साथ उसे सुसंस्कृति गृहिणी की भूमिका का भी निर्वाह सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए करना पड़ता है। महिलाएं अपना जीवन यापन के लिए और आर्थिक सहायता के लिए तथा समाज का सदस्य होने के नाते अपने संतोष के लिए काम करती रहती है।

मार्क्स ने कहा था कि 'स्त्रियों की सामाजिक स्थिति से सामाजिक प्रगति को ठीक-ठाक मापा जा सकता है' राष्ट्र के निर्माण मे स्त्रियों का योगदान काफी महत्व रखता है लेकिन राष्ट्र की आर्थिक प्रगति और विकास मे भी स्त्रियों की भूमिका कुछ कम महत्व नही रखती। (महिला सशक्तिकरण और कामकाजी महिलाएं)

सतना शहर मे महिला श्रमिकों की स्थिति और संख्या मे लगातार वृद्धि हो रही है लेकिन छोटे कस्बों और गांवों मे स्थिति अभी भी बहुत अच्छी नही है। अभी कुछ समय पूर्व कामकाजी महिलाओं के संदर्भ मे एक अध्ययन किया गया है जिनके नतीजों का उल्लेख यहां प्रसंगिक होगा। इस अध्ययन के अनुसार अधिकतर महिला श्रमिक 20 से 45 वर्ष की आयु वर्ग की है, इनमे से 20 से 25 वर्ष की महिला श्रमिकों की संख्या अधिक है। इनमे से कुछ महिलाएं शिक्षित तो कुछ अशिक्षित है। इसने लिए श्रम कल्याण विभाग द्वारा योजनाओं के माध्यम से सहायता कि जा रही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Yoga as an Effective Alternative Management Intervention for Perceived Occupational Stress : An Overview

Altaf Hussain*

Abstract

Background: The spiritual observance that connects body, mind and breath as well as Atman and Brahman to bring in harmony between them by Yogic Sadhanas (practices) is known as Yoga. India is credited as Land of Yoga. Yoga now accepted as a healthy form of scientific exercise all over the world is an 'enduring cultural outcome' of 'Indus Saraswati Valley Civilization'. Corporal and psychological well being are natural consequences of Yoga. The ultimate aim of Yoga is 'self realization'. Yoga has proved itself catering to both bodily health and spiritual purification cum perfection. This is the reason why today Yoga is practiced as just alternative healthcare intervention across globe. With internationalization hence increasing realization about the payback of Yoga in terms of physical and mental health, Yoga is becoming a global phenomenon and tribute for it goes to Narenda Modi, the Prime Minister of India.

Objective: The present study endeavors to study the impact of yogic practices on 'perceived occupational stress' as an effective alternative management intervention.

Methodology: This study is based on content analysis of the relevant literature. Google Scholar, Research Gate and Wikipedia are used as data bases.

Interpretation: Yogic intervention improves performance, hence efficiency at workplace by efficient management of stress related to the job.

Conclusion: Yoga is an effective alternative management intervention to treat the 'perceived occupational stress'. Therefore introduction of Yoga increasingly in workplace settings in Indian condition to improve health of social system of an organization as well as turnover of the workers, hence overall efficiency of an organization is strong need of an hour. Yoga does not hold on to any fastidious religion, faith or community. A person who practices Yoga with dedication can garner its psycho-physical benefits, irrespective of faith s/he holds, his/her ethnicity or culture and nation s/he belongs.

Key Words - Yoga, Intervention, Well being, Workplace.

Introduction

Yoga - Yoga which is not mere practice of asanas and aerobatics but healthy way of life, has the Sanskrit root 'Yuj' which means 'to yoke' or 'to join' or 'to unite'. Yoga as the spiritual process leads to the union of body, mind and breath as well as Man and Nature by yogic sadhanas. The commonly practiced yogic sadhanas include Yama (restraint), Niyama (observance/sanction), Asana (Posture), Pranayama (controlling breath while inhaling), Pratyahara (control of mind and senses), Dharna (applying mind by concentrating on single object), Dhyana (Meditation) and Samyama/ Samadhi (merging with the Nature/ultimate). These are known as eight limbs of Yoga or Ashtanga. Among them Yama's (restraints) and Niyama's (observances/sanctions) are considered to be pre-requisites for the other Yogic Sadhanas (J. S. Walia, 2010)

Immediate objectives of practicing Yoga are to live with health and freedom in all walks of life as well as in harmony with Nature. The ultimate objective of performance of Yoga is 'self realization' (A. M. Tripathi, 2010).

One is said to be in Yoga when s/he experiences the oneness of the existence. A person who is in Yoga is termed as a Yogi. Yogi attains the state of freedom wherein he neither experiences pain nor pleasure known as Moksha or Mukti or Nirvana or Kaivalya.

Lord Shiva is considered as the first Yogi or Adiyogi, and the first Yoga Guru or Adi Yoga Guru. In the yogic tradition Lord Shiva poured profound knowledge of Yoga into Saptarishis or 'seven sages' on the banks of the lake Kantisarovar. Saptarishis carried it to various continents of the world. But it bloomed fully in Indian Subcontinent only and became part and parcel of its culture by the sincere efforts of Agastya, one among the saptarishis (Ishwar V. Basavaraddi, 2015).

Patanjali systematized and codified the then existing practices of Yoga into his Yoga Sastra to preserve this

*M. Ed. Student, Directorate of Distance Education, University of Kashmir, Srinagar (Jammu & Kashmir) INDIA

unique Indian tradition and propounded Yoga System of Philosophy (J. S Walia, 2010).

There are different Traditional Schools of Yoga each having its own principles and practices leading to ultimate aim and objective of Yoga, i.e., 'self realization'. These include Patanjala-Yoga, Kundalini-Yoga, Jain-Yoga, Buddha-Yoga, et cetra (Ishwar V. Basavaraddi, 2015).

Yoga works on the level of body, mind, emotion and energy. Accordingly Yoga is classified into four broad categories which include Karma Yoga (involves body), Gyana Yoga (uses mind and intellect), Bhakti Yoga (utilize emotions) and Kriya Yoga (utilize energy). Each system of Yoga one practice would fall within the scope of one or more of these categories.

There are many styles of Yoga. The popular ones include Hatha Yoga, Power Yoga, Integral Yoga, Iyengar Yoga, Kundalin Yoga and Viniyoga. Hatha Yoga often used as synonym for Yoga is a considered as preparatory process for yog and is characterized by both asanas/postures and aerobatics/ breathing exercises. Power Yoga is characterized by quick shift from one asana /posture to another asana/posture therefore demands excessive workout. It warms and stretches muscles, ligaments and tendons as well as detoxifies the body through sweating. Integral Yoga which is mild style of Yoga is characterized by breathing exercises, meditation and chanting. Iyengar Yoga style emphasizes precise body alignment and is characterized by holding postures for long periods of time. Kundalin style is characterized by laying emphasis on effects of breath on postures. It aims at freeing energy in the lower body to facilitate its upward movement. Viniyoga style is characterized by adaptation of postures to ones needs and abilities as well as coordination of breath and postures.

Perceived Occupational Stress - Stress is the biological response (fight or flight) to life- threatening/challenging conditions or demand/s perceived along with feeling of being inability to cope up due to dearth of resources (personal and environmental) (Anand Prakash et al, 2007). Felt stress is known as perceived stress. Stress which is felt at the workplace or at occupation is called 'perceived occupational stress'. 'Perceived occupational stress' is one of the two major causes of 'sickness absence'. The other cause is back pain. Most of the 'perceived stress' at work place is not the result of 'much to do' but due to perception of myriad of extant stressors at workplace reveal studies. Stress is something that cannot be avoided but managed (Saroj Yadav et al, 2015).

Alternative Stress Management Intervention - Management of stress refers to tackling, controlling and reducing stress to improve daily functioning by exploring the particular stressors and undertaking constructive actions to curtail their effects (R. S. Feldman, 1990). Handling stress by employing unconventional stress management approaches or techniques is known as alternative stress management intervention. Now a day's Yoga is increasingly used as alternative stress management intervention. Yogic asanas to manage stress include Hastottanasana, Padahastasana, Trikonasan, Shashankasana, Ushtrasana, Ardhamatsyendrasana, Bhujangasana, Makarasana, Sarvangasana, Matsyasana and Shavasana. Yogic pranayamas to deal with stress include Anuloma-Viloma Pranayama, Bhastrika Pranayama, Bhramari Pranayama andSheetali Pranayama. Yogic kriyas to handle stress include Kapalabhati (Saroj Yadav et al, 2015).

Discussion

Objectives of the Study :

1. To assess the impact of the 'perceived occupational stress' on the health of employees hence on efficiency and proficiency of an organization.
2. To assess the impact of 'yogic sadhanas' on productivity of the employees of an organization.

Methodology - The present study is based on content analysis of available literature in the form of books, research papers and internet blogs.

Yogic Intervention as an Effective Alternative to Manage Perceived Occupational Stress - Stress has role in fifty to seventy percent of all physical discomfiture (Anand Prakash et al, 2007). Absence of employee from the workplace due to sickness is termed as 'sickness absence'. 'Sickness absence' has bearing on organizational productivity and proficiency (Gura Shira Taylor, 2002). One among the major causes of 'sickness absence' is 'burnout' at the workplace. 'Burnout' at the work place is characterized by exhaustion, depersonalization, maladjustment, disorganization, disorientation, display of negative attitudes towards job and colleagues and reduced satisfaction in self performance (Anand Prakash et al, 2007). The root cause of 'burnout' is unsuccessful resolution of the 'perpetual perceived stress' or 'perceived chronic stress' by employees at workplace/at occupation called 'occupational stress'. 'Perceived occupational stress' is caused by 'occupational stressors'. 'Perceived occupational stressors' include 'unhealthy relations' with superior or subordinates or both, 'difference between' the expectations of the employee and actual demands of the job, 'inability' to accomplish the task delegated, 'lack' of skills or 'poor' required skills resulting in fear of failure or failure to achieve target or goal, assignment of 'different role' or 'multiple roles', dominance tendency, suppression, authoritative decision making, 'change' in social (frequent transfers, et cetra) and work environment (technology, hours, shifts, et cetra) and overall poor morale of an organization due to bias and favoritism.

Occupational Medicine researchers reveal that one among six working people suffer from stress. Occupation related stress manifests in many forms and has harmful physiological effects on workers (Hari Singh and Lara Sharma, 2014).

Yoga is the convenient, effective and practical means to prevent the possibility of injury on the job by releasing stress as well as means to improve the performance by increasing job satisfaction (Gura Shira Taylor, 2002). Yoga is the solution to the ailment of stress. It promises calm

and ensures strength and peace of mind (Narendr Modi, 2018). Yogic practices of Asana, Pranayama, Dhayana Kriyas (cleansing procedure) and Yoganidra ('sleep' with awareness) relax (vihar) body and mind by mitigating physical and mental stress due to revitalization/ energizing of nervous system and other physical systems by increasing oxygen and blood supply to them, by removal of toxic substances from them, by causing cooling through dissipation of negative energies, hence soothing of body and mind and by regulating the production of stress causing hormones and balancing other hormones in the phenomenon called homeostasis, by strengthening physical and immune system and bring one joy and happiness (Hari Singh and Lara Sharma, 2014). Yogic method of meditation (alters consciousness) manages stress (Anand Prakash et al, 2007). Increasing strength of employers is using Yoga as intervention of choice to reduce stress levels of their employees on organizational floor in addition to striving consistently towards creation of conductive workplace atmosphere by cutting short workplace stressors, to increase job satisfaction and to improve organizational productivity due to its safe, effective and low investment features (Gura and Shira Taylor, 2002). The practice has picked the momentum after internationalization of Yoga on 21st June 2015 (declared as International Yoga Day by United Nations) by the sincere efforts of the Narendra Modi, the P. M of India and can be put forth as precedent support in addition to above studies to the just claim that Yoga is potent alternative to manage 'perceived occupational stress'.

Conclusion - From the present study it is just concluded that that 'occupational stress' is associated with higher number of accidents on the organizational floor, absenteeism, lower morale, greater interpersonal conflict with colleagues and superiors and decreased productivity of an individual hence of an organization. Yogic practices of Asana, Pranayama, Dhayana, Kriyas and Yoganidra relax body and mind by managing physical and mental stress in addition to bringing harmony between body and mind as well as between individual and universal conscious. Therefore suitable yogic practices should be embraced and introduced as effective alternative 'occupational stress' management intervention at workplace at earliest to prevent both individual injury and organizational dent is the strong need of hour.

Suggestion - Persistent perception of 'occupational stress' has cumulative negative implication upon health of employees, hence upon their official behavior and performance. In spite of several available stress management techniques and approaches, there is enormous scope to take advantage of yogic sadhanas as convenient and effective alternative intervention to combat 'perceived occupational stress' and improve health of employees, hence productivity of an organization particularly in education sector especially in Indian situation due to her credit of epicenter of Yoga and Yogis. Vacant period and physical education classes can be exploited to achieve the end. Dru Yoga can be chosen an effective intervention because it is characterized particularly by its safe nature and graceful movements, directed breathing and relaxation techniques, hence can be conveniently practiced by all irrespective of age and sex.

India is popular as the Land of Yoga and Land of Yogis. India is also credited for internationalization of Yoga which has in turn internationalized the Indian system of education in general and increased the demand of Indian Yogis in the global market manifold in particular. While providing logistic and other support to other interested countries in developing required infrastructure as well as fulfilling their demands of yogic man power India should take due cognizance of the associated predicament of brain drain and other associated impasse which can otherwise have dreadful repercussions for her.

Acknowledgement - The author expresses his heartfelt gratitude to his parents (Shri M. Yousuf and Smt. Shameema) and sisters (Nayema, Mubena and Mymona) who provided him every sort of support untill completion of this study.

References :-

1. Basavaraddi, Ishwar V. (2015). *Yoga: Its Origin, History and Development.* Retrieved from https://www.mea.gov.in
2. Bhogal, R.S., Gore, M. M., Oak, J.P., Kulkarni, D.D. and Bera, T. K. (2004). *Psycho – Physiological Responses to Omkar and Gayatri Mantra Recitation in Police Trainees, Undergoing Professional Training.* Yoga-Mimansa 36,1 & 2,11-27.
3. Carthy H. James (1998). *Yoga a Path Way of Life.* London Rider Company, p.28.
4. Devi Indra (2001). *Yoga the Technique of Health and Happiness.* Jaico Publishing House, Bombay, p.4.
5. Feldman, R. S. (1990). *Understanding Psychology.* USA; McGraw Hill, Inc. edn. 2, pp. 522-523.
6. Gura, Taylor Shira (2002). *Yoga for Stress Reduction and Injury Prevention at Work*. In- Alignment, Inc, Catherine Berkely, 19(2002) 3-7.
7. https://www.indianfolk.com
8. https://www.narendramodi.in
9. https://www.wikipedia.com
10. Pandey, N. K, Dr. Saxena, A (2015). *A Teachers Occupational Stress- A Review Study in National and International Scenario.* International Journal of Organisational Behaviour and Management, 2279-0950(P).
11. Pandey, N. K, Dr. Saxena, A (2013). *Prediction of Occupational Stress of the Professional Teacher Using Artificial Neural Network*. Dev Sanskrit: Interdisciplinary International Journal, vol. 2, No.3.
12. Prakash, A. et al (2007). *Psychology, Textbook for Class XII*. National Council of Educational Research and Training, Sri Aurobindo Marg, New Delhi, pp. 51,52,58, 62 and 75.[13]. Tripathi, A. M. (2010). Truemans UGC- NET/ SLET Philosophy. Danika

Publishing Company, New Delhi, p. 95.

14. Yadav, S. et al (2015). *Yoga a Healthy Way of Living. Secondary Stage*. National Council of Educational Research and Training, Sri Aurobindo Marg, New Delhi, pp. 48, 50, 52-77.
15. Singh, H. & Sharma, L. (2014). *Impact of Yogic Practices on Occupational Stress among Male Employee*. IJLTEMAS, Vol .III, Issue VII, pp.151-152.
16. Walia, J. S. (2010). *Education in Emerging Indian Society*. Ahim Paul Publishers, Jalandhar, pp. 242- 243.

****

हिन्दी भाषा और भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी का बाजार

डॉ. अभयवीर *

शोध सारांश – भाषा के बिना मानव जाति का अस्तित्व संभव नहीं है। प्रकृति में व्याप्त विविध जीव-जन्तुओं से हटकर के मानव की पहचान का वास्तविक रूप 'भाषा' ही है, ठीक 'भाषा' की दृष्टि से भारत की पहचान 'हिन्दी' भाषा से ही मानी जा सकती है आज सम्पूर्ण विश्व में हिन्दी 'भाषा' अपना वर्चस्व वनाकर उच्च पायदान पर आसीन होती जा रही है। अंग्रेजी,फेंच,चीनी आदि भाषाओं ने जो अपना अस्तित्व कायम किया है। ठीक वैसे ही आज हिन्दी भाषा ने भी अपना रूप खूब निखारा है, जिसका आज परिणाम सामने दृष्टिगत होता है। इस शोधपत्र को लिखने का मूल कारण हिन्दी भाषा और भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी भाषा के बाजार को स्पष्ट करना है।

शब्द कुंजी – भूमण्डलीकरण और हिन्दी, बाजारवाद और हिन्दी भाषा, आधुनिक हिन्दी का आर्थिक,सामाजिक,राजनैतिक क्षेत्र,हिन्दी भाषा प्रचार एवं प्रसार।

प्रस्तावना – आधुनिक दौर में भारतीय लोगों के भाव-विचारों में अन्तर देखने को मिलता है, कि भारतीय लोग अपनी मातृभाषा को भूलकर पाश्चात्य संस्कृति में जीने लगे हैं, जिससे ऐसा लगता है, आने वाले समय में फिर से हम परतन्त्रता का 'जामा' पहनने की तैयारी कर रहे हैं। किसी देश की पहचान 'भाषा' एवं 'संस्कृति' के दो पहलु अपना अह्म स्थान रखते हैं, फिर क्यों नहीं भारतीय लोग अपने वजूद को पहचानकर हिन्दी से प्रेम करने से क्यों कतराते जा रहे हैं। विशेष रूप से देखने में आता है। विदेशी संस्कृति को अपनाते हुए विदेशी भाषओं से प्यार करना अपनी अहमियत को गर्त में गिराना ही है। आज हिन्दी विश्व भाषा के कगार पर पहुँच चुकी है। ऐसी स्थिति में हिन्दी के गौरव को वढ़ाने के लिए 'बाजारवाद' पर भी विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। यदि 'बाजारवा' की वैश्विक नीति में आज भारत नवधनाढ्य खरीददार की तरह खड़ा है, आर्थिक, सामाजिक, और राजनीतिक कूटनीति की दृष्टि से भारत की उपेक्षा संभव नहीं है। भूमण्डलीकरण के इस दौर में हिन्दी को इसका लाभ मिलना चाहिए आज वाणिज्य और व्यापार में विदेशी भाषाओं को हावी होने से रोकने की नितान्त आवश्यकता है। आज हमें ऐसा प्रयास करना होगा 'एक' हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र में आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता मिले। और उस उद्धेश्य की प्राप्ति के लिए समयबद्ध कार्यक्रम वनाया जाये, तथा यदोय हिन्दी को साहित्य के साथ-साथ आधुनिक ज्ञान-निज्ञान और वाणिज्य की भाषा बनाया जाए, लेकिन देखने में आता है लाचारी से युक्त प्रशासनिक व्यवस्था और कमजोर राजनीतिक इच्छा शक्ति के कारण हिन्दी अपने 'गौरव' को खोने लगी है।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी भाषा की महत्वता स्पष्ट करना।
2. हिन्दी भाषा और बाजार की हिन्दी को स्पष्ट करना।
3. हिन्दी भाषा के वर्चस्व एवं क्षेत्र विस्तार पर चर्चा करना।
4. हिन्दी भाषा के वर्तमान मूल्य स्थापना को स्पष्ट करना।
5. अन्य भाषाओं से हिन्दी भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करना।
6. संवैधानिक दर्जे में हिन्दी भाषा को श्रेष्ठ स्थान दिलाना।

विषय विस्तार – आज दुनिया का धरातल परिवर्तित हो चुका है। विश्वग्राम और खुली अर्थव्यवस्था अब अवधारणा नहीं वरन हकीकत है। वैश्विक बाजार में भारत नवधनाढ्य की तरह खड़ा तो है लेकिन कितनी मजबूती प्रदान करने वाली नींव है कुछ कहा नहीं जा सकता। इससे मुँह मोड़कर अपनी दुकान सजाना किसी के लिए भी नुकसान दायक साबित हो सकता है, आर्थिक,सामाजिक, और राजनीतिक कूटनीति की दृष्टि से भी भारत की उपेक्षा कर वर्तमान सम्भव नहीं है। 'भाषा' को लेकर पारस्परिक कट्टरता को अनेक महत्वपूर्ण और शक्तिशाली देशों ने लगभग छोड़ दिया है। रुस, चीन, जापान जैसे स्वाभाविक देशों ने भी बदले समय की जरुरतो के मुदद्े पर नजर रखकर अंग्रेजी को अपनाना शुरु ही नहीं किया बल्कि विशेष मुहिम की तरह उसे आगे बड़ाकर सीखने को तत्पर हैं 'एक भाषा, दो भाषा बल्कि त्रिभाषा सूत्र अनेक देश अपनाने के लिए आज मजबूर है। गौरतलब है कि यह सूत्र हमने दशकों पूर्व खोज लिया था और कुछ स्तरों पर अपनाया भी है। वर्तमान विश्वग्राम के अधिकांश समाज आज बहुभाषी है और बनने को तैयार है, चीन जैसा भाषिक समाज कुछ ही वर्षो में अपने सभी नागिरिकों को अंग्रेजी और हिन्दी सिखाने की योजना पर अमल करना शुरू कर चुका है। हिन्दी विस्तार के रणनीतिकारों के लिए यह एक सुनहरा अवसर है जब हिन्दी सिर्फ 'भाषा' ही नहीं बल्कि बाजार का पर्याय बन चुकी है, इसकी साहित्य,संस्कृति और देशज विरासत दुनिया के लिए अतिरिक्त आकर्षण हो सकता है। हिन्दी भारत की संपर्क भाषा है। बोलने और समझने बालों की संख्या की दृष्टि से यह विश्व की दूसरी सबसे बड़ी भाषा है।

वास्तविक रूप से यह कहा जा सकता है, 'जो बोली में बसता है वह घर है घर से दूर कौनसा ठौर है।' 'मातृभाषा' से मोह छोड़कर विदेशी 'भाषा' को गले लगाना उचित है यह तो वही स्थिति कही जा सकती है कि कोई व्यक्ति अपनी माँ से माँ न कहकर दूसरी से माँ कहे क्या यह उचित है। चाहे हिन्दी को 'राष्ट्रभाषा'का दर्जा न मिला हो लेकिन हम कह सकते हैं, आज भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी का सम्पर्क अपने विस्तारित रूप में चरमोत्कर्ष तक पहुँच चुका है। ऐसी स्थिति में 'हिन्दी राष्ट्रभाषा' के गौरव को स्वाभाविक रूप से प्राप्त करने लगी है। लेकिन बड़ा दुख होता है हिन्दी आज साहित्कारों की डोली से निकलकर साहूकारों के कंधों पर सवार हो गई है। हुक्मरानों के

*असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी) कमला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धौलपुर (राज.) भारत

दरवार में विराजमान हो गई है। लेकिन बिसंगतियों के वावजूद वह 'विश्व भाषा' बनने को तैयार है।

भूमण्डलीकरण सर्वे से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि भारत की पहचान का मूलाधार 'हिन्दी भाषा' ही है क्योंकि 'बाजारवाद' का रूप भाषा पर ही निर्भर करता है आज भारतीय अर्थव्यस्था के सभी पहलुओं पर विचार किया जाये तो पता चलता है, 'वैश्विक नीति' में हम 'विदेशी भाषा' का अनुकरण छोड़कर अपने वजूद को पहचानें और समस्त 'बाजारवाद' में हिन्दी भाषा का प्रचार एवं प्रसार करें तो सम्पूर्ण विश्व में हिन्दी को सर्वोच्च भाषा का पायदान मिलने में किसी प्रकार का संदेह नहीं किया जा सकता।

'बाजारवाद' की रूपरेखा को तभी बदलना संभव हो सकेगा जब प्रशासनिक क्षेत्रों एवं राजनीतिक क्षेत्रों सभी उच्चासीन लोग हिन्दी भाषा के मूल को समझकर तन-मन से चाहने की इच्छा रखे एवं हिन्दी भाषा के प्रचार एवं प्रसार के लिए 'नवीन तकनीकी' का सहयोग लेकर भरसक प्रयास किये जायें, आज देखने में आता है सम्पूर्ण 'शेयर बाजार' का रूप 'विदेशी भाषओं' पर टिका हुआ है। देश के सभी कारोबारी कार्यालयों में भी 'विदेशी भाषा' को शरण दी जा रही है यह सबसे बड़ा दुख का विवाद है।

मध्यप्रदेश 'भोपाल' में आयोजित 10 वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन और राष्ट्रभाषा की दशा-दिशा विषय पर विविध हिन्दी विद्धानों द्धारा अपने तर्क देकर 'राष्ट्रभाषा' का गौरव दिलाने के लिए लम्बे-चौड़े भाषण दिए गए लेकिन कहीं अन्य सम्मेलनों की तरह यह सम्मेलन भी थोथा सिद्ध न हो जाए बड़ा विचारणीय विषय है विश्व में बिकपीडिया ने विश्व में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषाओं की सूची में इसे चौथे स्थान पर रखा है। हिन्दी में अनेक बोलियाँ जैसे अवधी,भोजपुरी,हरियाणवी,छत्तीसगढ़ी,मैथिली,मगही इत्यादि को स्वतंत्र भाषा मानकर सूचीबद्ध किया है ऐसी स्थिति में हिन्दी की बात करते समय इन बोलियों और इनके समाज को भी सम्मिलित किया जाता है। सदियों में भारत हिन्दी को आसानी से बोलता,समझता और कार्य करता आ रहा है। ऐसी स्थिति में अहिन्दी भाषी भी हिन्दी को समझने लगे हैं। और अहिन्दी भाषी हिन्दी क्षेत्र में आकर आसानी से 'हिन्दी भाषा' को समझ लेता है। वर्तमान में विकसित 'तकनीकी संसाधनों' ने इस कार्य को और भी आसान कर दिया है।

'बाजारवाद' पर दृष्टि डालने पर पता चलता है कि आज अपने 'माल' को भारत के गाँव तक पहुंचाने के लिए 'अंग्रेजी' से ज्यादा प्रभावी और संप्रेषणीय भाषा 'हिन्दी' है क्योंकि भारतीय हिन्दी भाषी क्षेत्रों में 'हिन्दी भाषा' का बीज तो हमे अपनी माँ के गर्भ में ही मिल जाता है। उर्वरकता का कार्य हमारा समाज कर देता है इस प्रकार हमारे रग-रग में हिन्दी भाषा पुष्ट होकर आगे बड़ती रहती है। लेकिन हम चन्द लोगों के बहकाबे में आकर अपने-आप को उच्च कहलाने या बनने की चाहत में गुलामी रूपी विदेशी भाषाओं के जाल में फँस रहे हैं।

आधुनिकता के इस दौर में ऐसा विश्व का कोई देश नहीं कोई दुनिया का 'भूखण्ड' शेष नहीं जहाँ पर 'हिन्दी भाषा-भाषी' न हो विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों में आज हिन्दी भाषा सिखाने के लिए विभाग बना दिए गए हैं। विदेशी भूमियों से भी बहुत अधिक भारत के विश्वविद्यालयों में प्रवेश हिन्दी सीखने के लिए ही ले रहे हैं, जिससे की यहाँ की संस्कृति 'बाजारवाद' साहित्यिक ज्ञान की उपलब्धि हासिल कर सकें।

'भूमण्डलीकरण बाजारवाद' को सुदृढ़ रूप देने के लिए यदि सभी भारतीय हिन्दी में हस्ताक्षर नीति को ही अपना लें तो एक नया चमत्कारिक कार्य विश्व में देखने को आयेगा, और अपनी भाषा की अहमियत स्वाभाविक सिद्ध हो सकेगी इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं किया जा सकता हिन्दी को विज्ञान और वाणिज्य की भाषा बनाने की आवश्यकता है। यदि यह संभव हुआ तो हिन्दी सीखने के इच्छुक देशों के लिए हिन्दी 'संसाधन' का श्रोत बन सकती है।

ऐसा नहीं कि हम 'बाजारवाद' की नीति के लिए हिन्दी भाषा से पर्याप्त शब्द ना जुटा सके क्योंकि हिन्दी की ताकत 'संस्कृत' है संस्कृत में 2200 धातुएँ हैं। जिससे बनने वाले शब्दों की संख्या डेढ़ 1 1/2 करोड़ तक जाती है, जबकि 'अँग्रेजी' की शब्द सम्पदा डेढ़ 1 1/2 लाख है। हिन्दी में संस्कृत की सहायता से अनगिनत नये शब्द गढ़ कर 'बाजारवाद' के रूप को बदला जा सकता है। हिन्दी भाषा के पास संसार की सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक लिपि 'देवनागरी' भी है जिसमें जो लिखा जाता है वही पढ़ा या बोला जाता है और जो बोला या पढ़ा जाता है वही लिखा जाता है। जबकि अँग्रेजी जैसी भाषा में यह संभव नहीं है। 'हिन्दी भाषा' का सुनश्चित और स्पष्ट व्याकरण भी है। 'हिन्दी' का लगभग एक हजार साल का इतिहास है।

निष्कर्ष - 'आधुनिक हिन्दी' को भी लगभग 150 वर्ष से अधिक हो गये हैं। आधुनिकता के दौर में 'हिन्दी भाषा-भाषियों' ने 'हिन्दी भाषा' में विविध भाषाओं के शब्दों को भी जगह देना प्रारम्भ कर दिया है। इसके कारण सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों प्रभाव 'हिन्दी भाषा' में देखने को मिल रहे हैं। समस्त भारतवासियों को अपनी शक्ति को पहचानना होगा क्योंकि जीवन के उद्देश्य न होने पर लोगों को सुख की कमी लगती है। आज से ही हमें हिन्दी को अपने जीवन का उद्देश्य बनाना होगा। गृहणियों को अपनी मातृभाषा के वजूद को पहचानना होगा,स्वयं को उपेक्षित समझने वाले वृद्धजनों को अपनी भाषा,बोली,संस्कृति को पहचानना होगा। भावी देश का नवनिर्माण करने वाले छात्रों को 'हिन्दी भाषा' के महत्व को ध्यान में रखकर के व्यापार एवं वाणिज्यिक हिन्दी का प्रसार एवं प्रचार करके समाज को नई दिशा देनी होगी दुकानदार,शेयर बाजार, मालिकों को अपनी 'मातृभाषा' हिन्दी का सम्मान करते हुए अपने-2 प्रतिष्ठानों का नाम एवं वयवहार हिन्दी भाषा में ही करना होगा। साहित्यकारों का तो यह मूल कार्य है कि ऐसी रचनाओं का 'हिन्दी भाषा' में निर्माण करें जिससे समाज,देश-विदेश के लोगों में हिन्दी भाषा के प्रति स्वभाविक प्रेम झलके। पत्रकार तो देश-विदेश की तस्वीर दिखाने वाले हैं यदि वे चाहें तो चन्द दिनों में ही 'हिन्दी भाषा' को आत्मगौरव का दर्जा दिला सकते हैं। इस प्रकार हर वर्ग अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन करें तो समाज एवं देश की काया पलट सकती है। और 'हिन्दी-हिन्दुस्तान' की पहचान का परचम पूरे विश्व में फहर सकता हैं और 'बाजारवाद' की नीतियों में 'हिन्दी भाषा' अपना स्थान बना सकती है क्योंकि 'बाजारवाद' की नीतियों से ही लोगों का संचार होता है। आत्मविश्वास रूपी चिनगारी जब सुलगने लगती है, तव भयंकर लपटें उठने में भी समय नहीं लगता। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी के बाजार को और मजबूत करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शैला एल कोचर वैश्वीकरण और संबंध एक बदलती हुई दुनिया की पहचान की राजनीति रोमैन लिटिलफील्ड (2004) पृष्ठ-10।
2. (6) पोडोनिक ब्रूस वैश्वीकरण के लिए प्रतिरोध-वैश्वीकरण विरोध आंदोलन में चक्र और विकास पी-2।
3. हर्स्ट ई. चार्ल्स सामाजिक असमानता : प्रकार, कारण और परिणाम, छटा संस्करण- पी-41।
4. वैश्विक सामाजिक गोष्ठी।

5. संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम 1992 मानव विकास रिपोर्ट, 1992 (न्यूयार्क ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस)
6. डेविस ब्रुक्स,'गरीबी के बारे में अच्छी खबर'।
7. स्टाइपो फ्रांसेस्को : विश्व संघवादी घोषणा पत्र राजनीतिक,वैश्वीकरण के लिए मार्गदर्शिका,
8. दैनिक भास्कर www.danikbhaskar.com
9. राजस्थान पत्रिका www.rajasthanpatrika.com
10. हिन्दुस्तान एक्सप्रेस www.hindustanexpress.com
11. अमर उजाला www.amarujala.com
12. दैनिक जागरण www.danikjagran.com
13. दैनिक नव जागरण www.daniknavjagran.com
14. दैनिक नवज्योति www.daniknavjyoti.com

****

महिलाओं के विरूद्ध अपराध एवं कानून

मेहर डोडवे *

प्रस्तावना – भारत के वर्तमान में अपराध एवं अपाधियों का प्रभाव हमें दिनों दिन दिखाई दे रही है। भारतीय राजनीति के प्रत्येक समाज गाँव, शहर या कस्बा और राज्यों एवं देश में अपराधो का शरण स्थल बना हुआ है। देशों में विशिष्ट प्रकार के अपराध हो रहे है। देश की भौगोलिक स्थिति आचार-विचार, आर्थिक सामाजिक परिस्थितियों, संस्कृति, राष्ट्रीय जन चेतना एवं शिक्षा आदि का गहरा प्रभाव पड़ रहा हैं। प्रत्येक राष्ट्र स्वयं इस अपराध से मुक्त होने के लिए कोशिश करते हैं किन्तु आज वर्तमान में किसी भी देश को सफल नहीं होने दे रहे है। विभिन्न देशों में अपराध निवारण के लिए भरसक प्रयास किये जाने पर भी अपराधो की संख्या दिनों-दिन बढती ही जा रही है। बहुत सारे व्यक्ति अपने स्वार्थ के लिए अपराध करते है और कुछ व्यक्ति मजबूरी में करते हैं। आज अपराधों की संख्या इतनी हो गई है कि महिलाओं और लडकियों को बाहर निकलना मुश्किल हो गया है, उन्हें डर रहता है कि हम कब और किस समय अपराधो के मुह में आ जाए।

आज अपराधीकरण की यही प्रवृति महिलाओं की जडों को खोखला कर रही है। आज देश में राजनीति या अपराध कोई भी हो एक-दूसरे से ऐसे धुल मिल गए कि इनके बीच कोई भी हो एक-दूसरे से ऐसे घुल किल गए कि इनके बीच स्पष्ट विभाजन रेखा खीचना मुश्किल हो गया है। क्योंकि अपराधी जो अब राजनैतिक नेता बन गए। आज तक जनता जिनके खिलाफ शिकायत करती रही, वे ही शासक बन रहें हैं आज के युग में राजनीति का अपराधीकरण इतनी तेजी से क्यों हो रहा? विश्व स्तर पर यदि देखा जाए या ध्यान दिया जाए हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि देश के विकास में अपराध एवं अपराधियों की संख्या में वेहिसाब वृद्धि हो रही है। भारत में अपराध की दर सामाजिक आर्थिक में सबसे अधिक है वस्तुओं या सेवाओं पर वितरण को ज्यादा से ज्यादा दिया जा रहा है। मसलन मादक दवाईयों को देना भारत और दूसरे देशों में वेश्यावृत्ति के लिए लडकियों को भेजना नौकरी का लालच देकर दूसरे देशों में भेजना या किसी और जगह पर झूठ बोलकर बुलाना और अवैध धंधा करना और उनकी हत्या, बलात्कार चोरी करवाना ऐसी बहुत सारी आर्थिक अपराध हो रही है। क्या महिलाओं की यही स्थिति रहेगी। आज अनेक कारण से अपराध हो रहे, राजनीति अपराधियों का जाल पूरें विष्व में फैला हुआ है।

शोध का उद्देश्य – महिलाओं का जीवन शोषित, पीडित, क्रुर प्रथाओं एवं परम्पराओं से जकडा हुआ है। दहेज प्रथा, यौन पीड़ित, बाल विवाह, घरेलू हिंसा सभी प्रकार की परेशानिया दूर करना जो निम्नलिखित है।

1. कानून की नीतियों एवं सरकारी योजनाओं से लाभान्वित करने के लिए संगठन सदस्यों की मदद करना।
2. महिलाओं में शक्ति का संचार हो सके इसलिए नारी संगठन से जोडना।
3. महिलाओं को सम्पत्ति और जमीन का अधिकार दिलाना और उन्हें अत्याचार से मुक्ति दिलाना।
4. महिलाओं को समाज हो या समाज के बाहर सम्मान से जीने का अधिकार दिलाना।
5. संगठन से जुडे सदस्यों के साथ मिलकर पारंपरिक कुरीतियों एवं रूढियो को बदलना।
6. महिलाओं का संगठन में ऐसा समन्वय स्थापित करना जिससे वे एक दूसरे की आवश्यकतानुसार मदद कर सकें।
7. नारी हिंतैषी योजना कानून लागू करवाना एवं बेहतर क्रियान्वयन करवाना।
8. सामूहिक प्रयास से आय संवर्धन योजनाओं को लागू करवाना।
9. महिलाओं के प्रति जो अत्याचार हो रहे उन्हें कानून की मदद से कठोर से कठोर दण्ड दिया जाये।
10. महिलाओं के विरूद्ध अपराध हो रहे ऐसी जालधार योजना बनाकर उन अपराधियों को कड़ी से कडी सजा दि जाये ।

शोध का महत्व – महिलाओं को इस देश में या समाज परिवार का अहम हिस्सा माना जा रहा है। इस समाज में महिलाओं का विशेष स्थान है। प्राचीन समय में महिलाओं को पूजा जाता था। उसे पूरूषों के सामान ही माना गया है हर काम में पूरूष के पीछे महिलाओं का हाथ होता है। महिलाओं के अंदर शिक्षा के आत्मविश्वास पैदा होता है जिससे वे अपनी क्षमता की खोज कर सकती है। और वे क्षमता की खोज कर सकती है। और वे नए विचारों और नवीनता के मार्ग की और अग्रसर होती है। शिक्षा से लिंग भेदभाव दूर होता है। महिलाएं अपने फैसलों को लेने में सक्षम बनती है। शिक्षित महिलाअये आज की दुनिया में स्वतंत्र है। यदि महिलाओं को शिक्षित किया जाता है, तो इसका लाभ पूरे परिवार को मिलता है।

हर काम में महिलाएं पूरूषों के समान ही भागीदारी रही है फिर भी आज के दौर में महिला की दशा दयनीय बनी हुई है। यह पुरूष प्रधान देश, देश की बेटी को दबाता है। एक महिला अपने जीवन में तीन अहम भूमिका निभाती है। एक अच्छी बेटी, एक अच्छी पत्नी और एक अच्छी माँ इन सब बातों के लिए जरूरी है एक नारी का शिक्षित होना। सही मायनों में उसी दिन ही महिला दिवस होगा जिस दिन देश की हर महिलाएं शिक्षित होगी। घर के चूल्हे चौके से निकल कर अपनी एक अलग पहचान बनाएगी।

महिलाओं के प्रति अपराधों के कारण :

हत्या – महिलाओं की हत्या के मामले तेजी से बढ़ रहें है। चरित्र पर संदेह, दहेज की मांग तथा पारिवारिक कलह के कारण महिला की हत्या करने के मामले अधिक प्रकाश में आ रहे है। कुछ मामलों में जमीन-जायजाद को लेकर भी महिलाओं को मार दिया जाता है।

अपहरण – नाबालिग लडकियों को अपहरण के मामले ज्यादा हो रहे है।

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) स्कूल ऑफ सोशल साईंस, दे.अ.वि.वि., इन्दौर (म.प्र.) भारत

साथ ही शादी शुदा महिलाओं का भी बहला-फुसलाकर अपहरण कर लिया जाता है। महिलाओं के अपहरण के मामले अधिक हो रहे है।

दहेज हत्या – भौतिक सुख-सुविधाएं बढ़ने के साथ-साथ दहेज लोभियों की मागें भी बढती जा रही हैं। निम्न मध्यमवर्गीय तथा अशिक्षित वर्ग ही नहीं बल्कि उच्चवर्गीय परिवारों में भी दहेज हत्या के मामले अधिक हो रहे है।

प्रताड़ना – पुलिस थानों में मानसिक तथा शारीरिक प्रताड़ना देने के मामले तेजी से बढ़ रहे हैं। गरिब तथा अषिक्षित वर्गो में प्रताड़ना के मामले अधिक होते है। शराब की लत, जुआ तथा आवारागर्दी इसके प्रमुख कारण है।

आत्महत्या – अधिकतर मामले फंसी लगाने के होते है। इसका मुख्य कारण पति द्वारा शराब पकर पत्नी के साथ मारपीट करना अथवा ससुराल वालों द्वारा प्रताड़ना है। दहेज की मांग भी इसका प्रमुख कारण है।

बलात्कार – परिवार के सदस्यों तथा रिश्तेदारों द्वारा ही बलात्कार करने के मामले अधिक हो रहे है। नाबालिग लड़कियों से लेकर अधेडावस्था की महिलाओं को बलात्कार का शिकार बनाया जा रहा है बच्चियों के साथ बलात्कार के मामले तेजी से बढ़ रहे है।

छेडछाड़ – स्कूल-कालेज के बाहर लड़कियों के साथ छेडछाड़ के प्रकरण अधिक सामने आते हे। वहा पुलिस का तैनात न होना इसाका मुख्य कारण है। असामाजिक तत्वों को बढ़ावा मिलता है। कम उम्र की युवतिया छेड़छाड की शिकार अधिक होती है।

मारपीट – घर-परिवार में ही महिलाए सुरक्षित नही है अक्सर छोटी-छोटी बातों पर उन्हें मारपीट का शिकार होना पड़ता है।

महिलाओं की खरीदी -बिक्री – महिलाओं तथा युवतियों का अपहरण कर उन्हें बेचने का कृत्य खूब फल-फूल रहा है गरीबी के कारण भी यह घिनौना कृत्य बढ़ रहा है। महिलाओं तथा युवतियों को बेचने का घृणित धंधा तेजी से बढ़ रहा है।

महिलाओं के प्रति अपराधों को रोकने के लिए आवश्यक उपाय – भारत सरकार महिलाओं की रक्षा करने और विशेष रूप से उनके प्रति अपराध की घटनओं को रोकने के लिए और अधिक उपाय किए जाने के लिए जरूरी कदमों के संबंध में समय-समय पर राज्यक सरकार को सलाह जारी करती रही हैं। पुलिस कर्मिकों के प्रति महिलाओं के प्रति हिरासती हिसा में द्योषी पाए गए सरकारी कर्मचारी को तत्काल और सेल्यूटरी दण्ड देने के लिए उचित उपाय अपनाना, महिलाओं की हत्य, बलात्कार, उत्पीड़न,दहेज हत्या, घरेलू हिंसा, छेडछाड, अपहरण की जाचं-पड़ताल में कम से कम समय लगाना और उसकी गुणवत्ता में सुधार करना, जिन जिलों में महिलाओं के प्रति अपराध प्रकोष्ठ नहीं है वहां इनकी स्थापना करना, पीडित महिलओं को पर्याप्त संख्या में परामर्श केन्द्र और आश्रय गृह प्रदान करना, विशेष महिला अदालते स्थापित करना और पीडित महिलओं के कल्याण और पुनर्वास के लिए विकसित योजनाओं की प्रभावकारिता में सुधार कना जिसमें आय अर्जित करने पर विशेष जोर दिया जाए ताकि महिलाओं को और अधिक स्वतंत्र और आत्म -निर्भर बनाया जा सके।

अनुरोध है कि राज्य सरकारों और संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा इस संबंध में की गई कार्यवाई की समीक्षा की जाए और वर्तमान स्थिति दर्षाने वाली रिपोर्ट इस मंत्रालय को भेजी जाए।

महिलओं के प्रति अत्याचार से संबंधित मामलों पर कार्यवाही करने वाले पुलिस कर्मिको को विशेष कानूनों में पर्याप्त रूप प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। प्रवर्तन पहलू पर पर्याप्त रूप से जोर दिया जाना चाहिए ताकि इसे सुचारू बनाया जा सके।

जो महिलाएं पीडित है उनके कल्याण और पुनर्वास के लिए विकसित योजनाओं की कारगरता में सुधार किए जाने की जरूरत है

महिलाओं के हित संबंधी कार्य करने वाली पुलिस और एनजीओ के बीच निकट समन्वय सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

जिन पुलिस पदाधिकारीयों को महिलाओं की रक्षा करने की जिम्मेंदारी सौपी गई है उन्हें पर्याप्त रूप से सुगृही बनाया जाना चाहिए।

महिलाओं के प्रति अपराध प्रकोष्ठों के हेल्प लाइन नम्बरों को बड़े-बड़े अंको में अस्पतालों/स्कूलों/कालेजों के परिसरों और अन्य उपयुक्त स्थानों पर प्रदर्शित किया जाना चाहिए।

पुलिस स्टेशनों में महिला पुलिस प्रकोष्ठ और पृथक रूप से महिला पुलिस स्टेशन, आवश्यकतानुसार स्थापित किए जाने चाहिए।

महिलओं के प्रति अपराध के सभी मामलों में प्राथमिकी दर्ज करने में किसी भी तरह का देर नहीं होना चाहिए।

महिलाओं और विद्यार्थियों की रक्षा और सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए स्कूलो/कालेजों में व्यतिक्रम पर नर रखने के लिए अपराध संभावित क्षेत्रों का पता लगाया जाना चाहिए और एक तंत्र बनाया जाना चाहिए । पुलिस अवसंरचना से पुरी तरह सज्जित पर्याप्त मात्रा में महिला पुलिस अधिकारियों की तैनाती ऐसे क्षेत्रों में की जानी चाहिए।

महिलाओं पर अत्याचार के खिलाफ ये है कडे कानून :

भारतीय दण्ड सहिता – 1960 भारतीय दण्ड संहिता 1960 के तहत विभिन्न अपराधों को परिभाषित किया गया है तथा इन अपराधों के लिए दण्ड का प्रावधान रखा गया है। इस संहिता का मुख्य उद्देश्य है – प्रत्येक व्यक्ति को अपराधिक नियमों एवं सिद्धान्तों की पूर्ण जानकारी देना। महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों अर्थात हत्या, आत्महत्या, दहेज मृत्यु, बलात्कार, अपहरण एवं व्यवहरण आदि महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों के लिए साक्ष्य संबंधी नियमों ढिलाई बरती जानी चाहिए अन्यथा महिलाओं पर लगाया जाने वाला लोकप्रिय आरोप 'महिला चरित्रहीन है' के बल पर आरोपीगण अपना बचाव करते रहेगे और महिलाए दीन-हीन अवस्था में स्वयं न्यायालीन निर्णयों में महिलाओं की प्रस्थिति एवं सीमाओं का ध्यान रखा जाए तो सम्भवत: महिलाएं न्याय प्राप्त कर सशक्त की और अग्रसर हो सकेगी।

दण्ड प्रक्रिया सहिता, 1973 और महिलाए – इस संहिता में महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने की व्यवस्था है। अत: महिलाओं को गवाही के लिए थाना बुलाना, अपराध घटित होने पर उनहें गिरफ्तार करना, महिला की तलाशी लेना और उसके घर की तलाशी लेना, आदि पुलिस प्रक्रियाओं को इस सहिता में वर्णित किया गया है। इन्हीं वर्णित प्रावधानों के तहत न्यायालय भी महिलाओं से संबंधित अपराधों का विचारण करती है।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 – यह अधिनियम उत्पीडन महिलाओं के हितार्थ है। दहेज हत्या, आत्म हत्या या अन्य प्रकार के अपराधों में यह प्रावधान महिला को उत्पीड़न करने वाले को दण्डित करने हेतु अत्यधिक उपयोगी है। वैसे दहेज प्रकरण एवं महिलाओं के खिलाफ होने वाले अन्य प्रकरणों जेसे बलात्कार, अश्लील हरकतों एवं आत्महत्या के लिए उत्प्रेरित करने पर सामापन्यत: साक्ष्य एकत्रीकरण में कठिनाई होती है। घरेलू हिंसा से प्रताडित महिला के हितार्थ कोई साक्ष्य ही नहीं मिल सकता । जबकि न्यायालय साक्ष्य के बिना दण्ड देने से कतराता है। यही तथ्य अपराधियों के मनोबल को बढ़ाता है।

निष्कर्ष – महिलाओं के विरूद्ध जो हमें अपराध करते हुए यह निष्कर्ष यह है

कि महिलाओं के बेहरीकरण के लिए हम सबको अपनी कुरिति एवं रूढ़िवादी मानसिकता से बाहर निकलना होगा। उन्हें सम्मान के साथ-साथ शिक्षा व्यवसाय, नौकरी व अन्य सभी स्थानों पर बराबरी देना होगा। गौरतलब है कि भारतीय महिलाओं ने राष्ट्र की प्रगति में अपना अधिकाधिक योगदान देकर राष्ट्र को शिखर पर पहुचाने हेतू सदैव तत्पर रही है। सच पूछो तो नारी शक्ति ही सामाजिक धुरी और सबकी वास्तविक आधार है। महिलाओं के उत्थान के लिए सरकार द्वारा चलाई जा रही नीतियों में पूर्ण सहयोग देकर उसको परिणाम तक पहुँचाना होगा। युगनायक एवं राष्ट्र निर्माता **स्वामी विवेकानंद जी** ने कहा था 'जो जाति नारियों का सम्मान करना नहीं जानती, वह न तो अतीत में उन्नति कर सकी, न आगे उन्नति कर सकेगी', हमें भारतीय सनातन संस्कृति के 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देयता' धारणा को साकार करते हुए महिलाओं को आगे बढ़ने में सदेव सहयोग करना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रथं सूची :-

1. आहुजा, राज-भारतीय सामाजिक व्यवसथा, 1999 रावत प्रकाशन जयपुर, नई दिल्ली
2. हसनैन, नदीम – समकालीन भारतीय समाज, 2004 भारत वफ सेन्टर लखनऊ
3. राजकुमार डॉ. नारी के बदले आयाम् 2005, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस
4. सिंह करण बहादूर, महिला अधिकार व सशक्तिकरण मार्च 2006
5. भारतीय संविधान, अनुच्छेद 14,15,16,19,21,23,39
6. सिह डॉ. श्यामाधर – अपराधशस्त्र के सिद्धांत प्रकाशन, इन्दौर सक्सेना डॉ.सुधीर-वर्तमान में महिला सशक्तिकरण अर्थात एवं चुनौतिया, म.प्र. सामाजिक शोध समग्र- अप्रैल 2011

(अ) समाचार पत्र – पत्रिकाएं :

1. जनसत्ता
2. नवभारत टाईम्स
3. नई दूनिया

(ब) पत्रिकाएं :

1. प्रतियोगिता निर्देशिका
2. प्रतियोगिता दर्पण
3. इण्डिया टुडे
4. प्रतियोगिता निवेश

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

बिलासपुर संभाग में परिवहन तंत्र का सामाजिक-आर्थिक प्रभाव

डॉ. काजल मोइत्रा* सृष्टि शर्मा **

शोध सारांश – संभाग का अधिकांश भाग दक्षिण पूर्वी मध्य रेलवे के बिलासपुर मंडल के अंतर्गत आता है। संभाग में वायु सेवा का विकास नगण्य ही माना जा सकता है। परिवहन के साधन आर्थिक संरचना के स्नायुतंत्र होते हैं, किसी भी क्षेत्र में उद्योग और व्यापार के विकास में परिवहन साधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसलिए इसे वर्तमान युग में आर्थिक विकास का मापदंड माना जाता है।

प्रस्तावना – संभाग की धरातलीय विशमताएँ रेल एवं सड़क मार्गो पर प्रभाव डालते हैं। इस क्षेत्र में परिवहन के साधन मध्यम स्थिति में है। मानव की तमाम आवश्यकताओं के लिए एक मात्र परिवहन तंत्र उत्तरदायी है। परिवहन तंत्र द्वारा बाजार का विस्तार तथा वस्तु विनिमय की आवश्यकता स्थिति सुनिश्चित की जाती है।

वर्तमान प्रादेशिक विकास का मूलभूत श्रेय किसी प्रदेश के परिवहन तंत्र को जाता है, जिस क्षेत्र का परिवहन तंत्र जितना विकसित और आधुनिक होता है वह उतना ही समृद्ध और उर्ध्वगामी क्षेत्र बन जाता है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य अध्ययन क्षेत्र में परिवहन तंत्र का सामाजिक-आर्थिक विकास पर प्रभाव का विश्लेषण करना है।

विधि तंत्र – प्रस्तुत शोध पत्र प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है।

व्याख्या – वर्तमान परिपेक्ष्य में ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक और सामाजिक दोनों स्वरूपों में विभाजित करने की आवश्यकता निर्विवाद है विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण विकास को उन्नत करने और राष्ट्रीय विकास के साथ संयुक्त करने के लिए सतत् प्रयास केन्द्र तथा राज्य शासन द्वारा निरंतर किये जा रहे हैं। किन्तु तीव्र रूप से बढ़ती हुई जनसंख्या की मौलिक आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति करने के लिए अधिकांश धन राशि, समय और संस्थान निवेश ग्रामीण परिवहन जैसे मूल-भूत सुविधाओं को मुहैया कराने में अभी भी असक्षम सिद्ध हुआ है। यद्यपि केन्द्रीय सरकार ने प्रत्येक ग्राम को सड़कों द्वारा संयुक्त करने के लिए बहुत बड़ी राशि प्रत्येक योजना काल में उपलब्ध करायी गई है किन्तु सरकारी तंत्र में व्यप्त भ्रश्टाचार, अनियंत्रित वितरण प्रणाली, आवश्यकताओं के विपरीत राशि का आवंटन और निम्न स्तर तक राशि के न पहुंच पाने के कारण यातायात के साधनों अभाव आज भी संभाग के भू-भाग पर स्पष्ट दिखाई देता है। जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से संतुलित विकास को निर्मित करने में प्रभावशाली भूमिका निभानें में असमर्थ हो रहा है। यह विडम्बना ही है कि प्राथमिक अनिवार्यता के रूप में किये जाने वाले कार्य अथवा आवागमन के लिए प्रदत्त अनुदानों का समुचित उपयोग अन्य क्रिया-कलापों पर व्यय कर दिया जाता है और ग्रामीण विकास के चिन्ह प्रत्येक ग्राम में एक जैसे दिखाई नहीं दे रहे हैं।

ग्रामीण क्षेत्र एवं विकास संकल्पना – ग्रामोदय के माध्यम से स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व महात्मा गांधी ने ग्रामीण विकास का स्वरूप इस आधार पर संजोया था कि ग्रामों में प्राप्त संसाधनों द्वारा ग्रामों का विकास किया जाये किन्तु ग्रामीण संसाधनों का विदोहन छोटे नगरों ओर कस्बों के संसाधनों का विदोहन बड़े नगरों में और वृहद्ध नगरों के संसाधनों का शोषण महानगरों ने किया है। इस प्रकार महानगर लगातार विकसित होते गये। इसके विकास में ग्रामीण क्षेत्रों में भारी संख्या में जनसंख्या को आकृष्ट किया और ये वर्तमान जनसंख्या बम के रूप में प्रतिस्थापित हो गये। ग्रामीण क्षेत्रों से प्रवासित इस जनसंख्या ने महानगरों में झुग्गी-झोपड़ियों और गन्दी बस्तियों को जन्म दिया। इसी कारण यह कहा जाता है कि-

"Metroes are developing in slums are developing in metroes"

उपरोक्त कथन का तात्पर्य यह कि ग्रामीण क्षेत्रों में विकास या तो नहीं हुआहै अथवा होने की स्थिति में नगण्य है। इससे स्थानीय जनसंख्या का पलायन रोजगार, की तलाश में निरंतर बढ़ता जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में निर्मित रोजगार के साधन जैसे जवाहर रोजगार योजना, ट्रायसेम, डवाकरा आदि ग्रामीण जनसंख्या को उनके गांव में ही रोजगार मुहैया कराने अक्षम सिद्ध हुये हैं।

अत: वर्तमान समय में प्रत्येक हाथ को काम प्रत्यक मुंह को भोजन देने के समान है। इसमें ग्रामीण क्षेत्रों से महानगरों की ओर न केवल जनसंख्या पलायन रोका जा सकता है बल्कि ग्रामीण क्षेत्र अपने ही संसाधनों द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम हो सकेंगें। इसहेतु यह आवश्यक है कि प्रत्येक गांव को सड़कों से जोडत्रा जाये। चूंकि भारत में श्रमिकों की कमी नहीं है और सड़कों का चहुं ओर अभाव है।

अत: इन श्रमिकों को सड़क निर्माण के साथ रोजगारोन्मुख करना इस समय की प्राथमिक आवश्यकता है। इसमें आवागमन के साधनों के विकास के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों की सुरक्षा, अनेक लोगों को काम तथा बाजार जैसे आवश्यकताओं का विकास स्वत: ही होने लगेगा।

प्रतिदर्श ग्रामों का अध्ययन – जैसा कि पूर्व में उल्लेखित है कि संभाग के प्रतयक जिले से एक विकसित, एक विकासशील तथा एक अविकसित ग्राम तथा प्रतिचयन सुगम प्रवेशगम्य, प्रवेशगम्य तथा अप्रवेशगम्य ग्राम के रूप में किया गया है। इस प्रकार 7 ग्राम विकसित (जो सड़क अथवा रेल मार्ग पर स्थित है), 7 ग्राम विकासशील (जो सड़क अथवा रेल मार्ग से 5 किमी पर

* सह प्राध्यापक (भूगोल) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** शोधार्थी, डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

स्थित है), 7 ग्राम अविकसित (जो सड़क से 5 किमी से अधिक दूरी पर स्थित है) का अध्ययन किया गया है।

चयन का आधार – संभाग में ग्रामीण जनसंख्या का लगभग 80 प्रतिशत सामाजिक परिवेश ग्रामीण पर्यावरण द्धारा आवासित हुआ है। जहां विकास के चिन्ह विगत् 50 वर्षो की सतत् ग्रामीण परियोजनाओं का परिणाम है। यद्यपि ग्रामीण विकास को सम्यक विकासत करने में तीव्र बढ़ती जनसंख्या, भ्रष्टाचार तथा क्रियान्वयन की दूषित प्रक्रिया ने बुरी तरह से प्रभावित किया है। फिर भी ग्रामों में कृषि संसाधनों की प्रचुरता तथा विकसित मानव संसाधनों ने स्वत: रोजगार प्रदान किये है,जो प्रत्येक ग्रामीण क्षेत्रों में कम या अधिक अथ्वा असमान वितरण के रूप में परिलक्षित होते हैं। परिवहन प्रणाली ने ग्रामीण विकास को विकसित करने में अति महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन ग्रामों में यहां प्रारंभिक काल में सड़क एवं रेल मार्ग मिल चुके हैं वहां विकास के चिन्ह सड़क मार्ग कई स्वरूप धारण कर चुके हैं। किन्तुवे ग्राम जहां आज भी सड़क नहीं पहुचं सकी है ऐसे ग्रामों में आधारभूत संरचनाओं का विकास नगण्य दिखाई देता है। यह भी उल्लेखनीय है कि सड़क ही ग्रामों में राजनीतिक चिन्तन की विकासोन्मुखी प्रस्तुति के अभाव के कारण भी समुचित परिवहन तंत्र का विकास नहीं हो सका है। इसी संकल्पनात्मक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए संभाग के ग्रामों का चयन किया गया है।

निश्कर्ष एवं सुझाव – संभाग में कृषि योग्य भूमि वहां अधिक पायी जाती है जहां कृषि मार्गो के अभाव के कारण कृषि संभव नहीं है। विषम धरातलीय स्वरूप तथा झाड़–झंखाड़ से युक्त भूमि का विकास केवल इसलिए नहीं हो सका क्योंकि वहां सड़क परिवहन का अभाव है। भारतीय सड़क एवं परिवहन विकास संस्था के अन्वेशण से यह सिद्ध हो चुका है कि सड़कें बनाने मात्र से ग्रामीण क्षेत्रों में हम कृषि भूमि के क्षेत्र में 25 प्रतिशत की वृद्धि की सकती है। सड़के मात्र कृषि क्षेत्र में ही वृद्धि नहीं करती वरन इनके द्धारा कृषि के माध्यम से उत्पादन में वृद्धि भी सहज सुलभ है। सड़कों के विकास के साथ–साथ कृषि का प्रतिरूप भी बदलता है। सुगम अभिगम्यता वाले क्षेत्रों में खाद्यान्न के स्थान पर बिक्री वाली फसलों को अधिक उगाया जाता है।

अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण के अनुसार किसान अपनी उपज का 65 प्रतिशत गांवों में ही बेचता है। इसका मूल कारण गांवों से मण्डियों का बिक्री केन्द्रों तक सड़क का अभाव है। अध्ययन क्षेत्र के कस्बों में साप्ताहिक बाजार तथा पशु मेलों का आयोजन सड़कों के किनारे ही होता है। एक अध्ययन के अनुसार सड़कों के निर्माण पर यदि 100रू. व्यय होता है तो इनसे 275रू. से अधिक उत्पादन वृद्धि होती है। सड़क परिवहन की सुविधा के कारण विशाल नगरों का विकास होता है तथा नगरों की आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक क्रियाओं सड़क परिवहन से सीधे प्रभावित होती है। अध्ययन क्षेत्र के प्राय: सभी बड़े औद्योगिक नगर जैसे बिलासपुर, कोरबा, जांजगीर आदि के विकास में सड़कों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सड़क परिवहन के विकास से उत्पादन एवं उपभाग दोनों में आशातीत वृद्धि हुई है तथा उत्पादन क्षमता, कुशलता और वस्तुओं के वितरण में निरंतर वृद्धि हो रही है। यह परिवहन ही है जो किसी क्षेत्र में विशिष्ट उद्योग के स्थापित होने, उसमें विशेषीकरण की प्रक्रिया निर्मित करने औद्योगिक उत्पादन के लिए कच्चे माल को उत्पादन कराने उत्पादित माल को विभिन्न व्यापारिक केन्द्रों तक पहुंचाने और व्यापारिक केन्द्रों से आवश्यक स्थल तक वितरित करने का कार्य करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Pankaj T (1968) : “A study of the traffic flows pattersn of the port of cochin” Indian Economic Journal 10(4).
2. वनमाली एस. एवं घोष अभिजीत (1975) : ‘ग्रामीण भारत में उपभोक्ता वस्तुओं का वितरण प्रारूप’ प्रबंधन एवं श्रम अध्ययन 7, पृ. 10
3. जैन पी.एस. (1992) : ‘परिवहन अर्थशास्त्र’ रिसर्च पब्लिकेशन नई दिल्ली
4. Rangnathan R. (1995) : “National urban transport policy-A Frame work” Indian journal of Transport management vol.19, no.2 PP 85-98.
5. Khan Z.T. Dutta, S. (2004) : “Traffic system of Raipur City” Dissertation, Pt. Ravishankar Shukla University Raipur 2004.
6. पदम एस. एवं सिंग एस. (2006) : ‘भारत में नगरीय करण एवं नगरीय परिवहन’ उत्तर भारत भूगोल पत्रिका
7. मोइत्रा, काजल (2012) : ‘छत्तीसगढ़ राज्य में यातायात तंत्र की विषमताएं एक भौगोलिक विश्लेषण’ शोध प्रबंध गुरूघासीदास विश्वविद्यालय बिलासपुर

****

English For Specific Purposes : Paragraph Writing For Engineering Students in National Capital Region

Dr. Omprakash Upadhyay *

Abstract - Paragraph writing is a difficult task for students studying engineering in north India. The aim of the paper is to develop writing skills through paragraph writing task.It is an essential skill or foundation of language development.This paper explores basics of writing emphasizing core writing essentials such as content, style, coherence, underling idea,structure and grammaretc.in modern age MNC are recruiting those who are well versed in every part of language.this way, the whole study is goal oriented for engineering and other technical students.

Introduction - As with most developments in human activity, ESP was not a planned and coherent movement, but rather a phenomenon that grew out of a number of converging trends. These trends have operated in a variety of ways around the world. After development of the concept, this language moved beyond the sentence structure and started to target the situation created before the users. Under this process, the teachers started to identify the need of the learners and set the already existing knowledge and pattern on a more specific basis to design a syllabus for ESP. The ESP teachers and researchers started to think beyond language and structure. This brought the era of the role of thinking process in language learning and use. Francoise Grellet (1981), Christine Nuttall (1982), Charles Anderson and Sandy Urcuhart (1984) are some of the prominent figures who started to work with this idea and added new dimensions to the world of ESP development. Finally towards the end of the 20th century, a learner Centered approach came into existence because it was felt that mere exemplifying and describing what people do with language will not make someone learn language. Besides reading grammar books and referring to dictionaries, It was experienced that ESP should be based on process of understanding the process of language learning.

Definition of ESP - After 1960s, ESP emerged out as a very important discipline of English language teaching. Many universities across the world started courses in ESP and provided big platform for its development. In 1985, Coffey was probably the first to give a proper definition to ESP. He says:

ESP is “A quick and economical use of the English language to pursue a course of academic study (EAP) or effectiveness in paid employment (EOP)” (Coffey,1985 p.79)

Hutchinson and Waters (1987) tried to define ESP but they could not give a solid definition in their work English for Specific Purposes. The very next year Stevens came out with his Teacher Education for Language for Specific Purposes and defined ESP by making a distinction between absolute and variable characteristics. Both the types of characters are defined as below:

The absolute characteristics are that ESP courses are:

1. Designed to meet the specific needs of the learner;
2. Related in content to particular disciplines or occupations;
3. Centered on language specific to those disciplines or occupations;
4. In contrast to General English.

The variable characteristics are that:

1. Courses may be restricted in the skills to be learned;
2. Not be taught according to a particular methodology.

Stevens knew that defining ESP was not an easy task. He divided it into absolute and variable characters.

The study and analyses of the work of different scholars make it clear that all the definitions given so far are having one common idea that ESP is the study of specific vocabulary, grammar, select phraseology and select sentence patterns of English language for achieving the goal of communicative proficiency in a specific field. Although it has always been the matter of discussion whether grammar should be taught to the learners of ESP or not. Lorenzo (2005) says that ESP concentrates more on language in context than on teaching grammar and language structures. (pp-1)7 Some scholar think in a different way and find that ESP and its teaching should be based on the problems and need of the people which varies from person to person, time to time and place to place. Belcher (2006:134-5) finds that ESP has a varied field of study which may be having many problems. He states: ESP now encompasses an ‘ever-diversifying and expanding range of purposes. ESP assumes that the problems are unique to specific learners in specific contexts and thus

*Lecturer, Kamla College, Dholpur (Raj.) INDIA

must be carefully delineated and addressed to fit instruction (p. 134-5). Like the other fields of studies, ESP as a branch of English Language Teaching has been a matter of contention because the scholars have not yet reached the conclusion yet as what are the fields of study of ESP. There are several sources which provide different information regarding the fields of study. One of the authentic sources is Longman Dictionary of Business English which tell as many as twenty-five fields of ESP. They are:

Accounts, Advertising, Agriculture , Banking, Commerce, Commodity exchange, Computers , Economics, Economic history, Economic theory, Finance , Industry, Industrial relations, Industrial safety, Insurance, Law, Management , Marine insurance, Public finance, Quality control , Shipping, Stock exchange, Taxation, Tourism, and Transport. (LDBE, 1982)

Another authentic source is Macmillan Career English Series which includes twelve books nine for teaching ESP. They are: Agriculture, Aviation, Business—Banking, General Business, International Trade, Computers, Engineering , Hotel Personnel, Medicine, Restaurant Employees , Secretaries, and Tourism.

ESP today is not something that can be confined to certain fields of studies. In this era of rapid development and rocket science, it has become more vibrant than ever before. Every day we find a new field of occupation which needs a specific language and a distinct content. Therefore, defining ESP is a very difficult task though analysis of need gives a solid clue to decide the kind of ESP one needs.

Purpose of study - The purpose of this course is to equip students with English language skills that will help them both in their academic success and in their career. The classroom is as interactive as possible as a means of allowing students to share ideas, experiences, and information in order to play a major role in their own learning and for their success in the field of engineering. The whole stydy is prepared to help students to fully understand their career and develop a more positive attitude to it in addition to getting authentic and meaningful learning experience. To sum up this study is supposed to help students making career in the fields of Engineering.

Writing skills-paragraph teaching in technical colleges - Paragraph can be described as a collection of sentences.These sentence combine to express a specific idea ,main point ,topic and so on. A number of paragraphs then combined to writing a report an essay or even a book The purpose of paragraph is to express one point,opinion and idea etc.A writer may provide multiple examples to support their point.The main idea is expressed through three sections of paragraph-Topic sentence,supporting sentences and conclusion.Topic sentences idea ,topic point and or opinion.Supporting sentences provide explanations,support for the topic sentence of your paragraph. Supporting sentences include facts, statics and reasoning.The concluding sentences restate the main idea rein force the main idea and point.

Essentials of writing paragraph - Paragraph writing is important aspect of essay, story, article or other prose work. The focus of study is discuss paragraph especially in technical colleges. we must study some points essential for paragraph writing.

1. A paragraph must begin with a capital letter and ends with a full stop,a question mark and exclamation mark.
2. there must a suitable title of a paragraph
3. It must aclear idea or aim to the readers
4. connectors,adverbialphrases, signal words and commas and other aspects of parts of speech and grammar must be followed
5. there must be coherence in the sentences and each paragraph

Requirement of writing skills for engineering students - Writing skill is one of the major skill of the four skills. Writing skill is the authentic way to express any idea as compared to speaking or reading skills.It follows civilized or standard form not challengeable anyway.the second learners have to learn phonology,syntax form of grammar and vocabularyand idioms of language besides learning the mechanics of writing. A writer must be cautious enough while writing any work. It is an intelligent and permanent record of knowledge for learnersIn engineering colleges emphasis must be given on writing skills as well as speaking.In the global world An Engineer must have a thorough knowledge of writing a paragraph.

Approach to writing - Two major approaches have been identified as writing approaches such as product approach and process approach.Product approach is the traditional approach which deals with the production parallels of the text based on the models provided by teachers. Process approach focuses on linguistic skills such as drafting and with less emphasis on the grammatical knowledge and text structure. It pays attention to creativity and good writing than imitating models. The product approach is is essential for improving writing skills presenting models. Paragraph is a unit of writingwhich expresses a central ideaand consists of two kinds of sentences, atopic sentence and other supporting statements.the topic sentence introduce the paragraph and it gives the clear ideaabout the content of paragraph.Supporting ideas must be expressed in a paragraph.

Course outline for Engineering students - Having determined the engineering needs through the tools I have used namely a questionnaire and authentic data analysis, the discussion will take place around, . the technical students need a language course that encompasses teaching of all the four language skills, emphasizing speaking and writing. the teachers seems quite aware of the students ‘real and practical needs, but at the same time the wants and necessities of the learners cannot be ignored as wants necessities of the learners can be helpful in retaining their interest in the language .therefore, it can be suggested that the syllabus may be designed in such a way that it meets the academic as well as sociolinguistics

needs of the students, emphasizing writing and speaking as well. As writing should have the following aims and objectives:

Aims and Objectives - As a result of the needs analysis The aims of the course will be To promote engineers ability to write different types of reports

1. Inspection reports
2. specification reports
3. Instruction reports
4. The objectives of the course will be
5. Recognize the organization of different report genre
6. Use appropriate grammatical structures, and functions
7. Write a full report with accuracy
8. Assess each other's writing
9. Use technical and semi technical vocabulary
10. Use appropriate lay out and punctuation
11. Employ the process of editing and drafting
12. Expressing a variety of functions in writing.
13. Promoting writing fluency

Given the wants, necessities, and lack of language skills of the students, the following items are suggested for course:

1. Remedial grammar
2. fundamentals of English grammar
3. Parts of speech
4. Modifiers and articles
5. Prepositions
6. Descriptive paragraph writing
7. Précis
8. Dialogue writing

All the vocabulary development of the students, different exercises and activities may be carried out in the class room. the course will cover technical and semi technical words there will be specific vocabulary input such as areas that may be problematic or unknown to the engineers e.g. spelling, multiword verbs and compound nouns. the another activity is to display several objects or pictures with their spellings and synonyms once or twice ,and then the students may be asked to write the names of the objects and their usage to the students, and ask them to construct sentences from the words.

Designed course - Upon successful completion of the course. The students should be able to

1. Become familiar with the basic principles of paragraph writing
2. Learn and practice the key concept of four skills
3. Learn key concept of essay writing
4. Learn the key concepts of essay writing such as subject, purpose, audience, thesis, statement, introduction, body, and conclusion
5. Have a clear cut idea of essay writing and learn the stages of Essay writing
6. Learn technical report writing
7. Gain understanding of presentation about a technical subject
8. Gain at least workplace mastery over the language
9. Language proficiency by practicing text.
10. Sharpen their cognitive and analytical skills through reading and discussing
11. Noting new words and memorizing

Conclusion - This research explored the self perceived English proficiency of students in engineering fields. They can perform better in all the four skills in their working fields such as conversation with employees, dealing with foreign delegates, in writing report,. Mailing, .particular tasks dealing with customers, using daily technical words, relationships and industry-specific tasks,project reports,memos,job instruction manuals,operating procedures,training modules,meeting minutes and other tasks. Thus Engineering employees have the advantage of the real professional practices to improve their language skills. I have introduced theoretical background concerning ESP and mentioned some characteristic features closely connected with process of ESP learning. I drew the special to organizing ESP course and selecting material to fulfill demands of ESP learners in engineering fields. I have also pointed out some role between ESP *teachers and General English teachers. I have also mentioned learning centered approach based on learners 'needs, expectations and learners'* way of learning language. Learning strategies and teachers 'attitude to ESP course and motivation is also emphasized as a necessary part of learning process. In my practical part I have focused on particular learning aspects and various activities that have been done in the course of engineering.

References :-

1. Brumfit, Christopher. Problems and Principles in English Language Teaching. Oxford, Pergamon Press1980...
2. Dudley-Evans, T. & St. John, M. (Developments in ESP: A multi-disciplinary approach, Cambridge: Cambridge University Press. 1998.
3. Hutchinson, Tom and Alan Waters. English for Specific Purposes, Cambridge: Cambridge University Press.1987.
4. Munby, John. Communicative Syllabus Design, Cambridge: Cambridge University Press.1978.
5. Nunan, David. The Learner-centeredCurriculum, Cambridge: Cambridge University Press.1988.
6. Singh, R. K. Teaching English for Specific Purposes: An evolving Experience, Jaipur: Book Enclave. 2005.

****

Concept And Application Of Promissiory Estoppel : A Critical Study With Indian Evidence Act And Legislation

Narender Dhaka*

Introduction - The principle of promissory estoppel is a principle of equity initially applicable in the private law domain. it is also known as 'equitable estoppel', 'quasi estoppel' or new-estoppel'. It has been accepted in various legal systems. How far the official representation, assurance, promise or advice can be relied upon? Is the administration bound as an ordinary citizen would be, when someone acts upon a promise made or an assurance given by it? The question relates to the application of the doctrine of estoppel against administration or government. Is the administration stopped later on from going back on the advice given by it or from retreating the promise it may have made?'

Definition of Promissory Estoppel - Where by his words or conduct one party to a transaction makes to the other a promise or assurance which is intended to affect the legal relations between them and the other party acts upon it, altering his position to his detriment, the party making the promise or assurance will not be permitted to act inconsistently with it[1].

1. Should promissory esteppel be allowed to be used as a cause of action?
2. Could the doctrine be used against the government and if so when?
3. Should the promisee suffer detriment before he can invoke the doctrine?

Why Problem?

Procedure and Promise including policy promise of the administration and the expectation of the citizen.

- Civilized States, their instrumentalities and agencies should act like a civilized man.

General Rule Regulation and its Basis

The general rule is that estoppel will not apply against statute. Its basis is two fold:

1. To maintain the authority of law in a society governed by the rule of law; and
2. To restrain administration from acting arbitrarily, capriciously and fancifully.

The above principle was reiterated in Home Secretary, U.T. of Chandigarh v Darshjit Singh Grewal[2] It was held that promissory estoppel cannot be invoked against a statutory provision or to support an ultra vires act or to compel the government or a public authority to carry out a promise which is contrary to law. In Assirtant Commr. (Excise) v Isaac Peter[3]. It was held that promise/assurance held out by Minister or authorities contrary to statutory provisions would not confer any enforceable right. Similarly, in Jalandhar Improvement Trust v Sampuran Singh[4], the dictum no estoppel against statute was restated. It was held that preferential allotment of plots in favour of certain persons contrary to rules does not give any other person a right to claim equality with such allottes. If allotment was wrongly made, it may be liable to cancellation, if permissible in law. Illegal or ultra vires action does not give right to others for similar treatment.

Liberalization of the Rule of Estoppel: Case law - In Union of India v Anglo-Afghan Agencies[5] export promotion scheme for providing incentives to the exporters of woolen goods was involved, The respondent exported goods of a certain value and claimed import entitlement equal to the full value of exports as notified in the scheme, but the Textile Commissioner reduced the import entitlement. The Supreme Court held in favour of the respondent on the ground that the Textile Commissioner may assess the value of the goods exported and issue an entitlement certificate on the basis of such assessed value. Import entitlement was reduced without giving adequate opportunity. The court applied the equitable principle and decided in favour of the respondent.

In Century Spy & Maf. Co. v Ulhasnagar Municipality[6], the appellant set up its factories in an industrial area in the year 1956. At that time no octroi duty was payable with respect to the goods imported into the industrial area. In 1962, 7 years exemption was granted. District Municipality became the Ulhasnagar Municipality which decided to levy octroi duty in 1968, and the appellant objected The Supreme Court decided in the favour of the appellant.

"As a general rule estoppel will not be applied against the State in its governmental, public or sovereign capacity. An exception however, arises where it is necessary to prevent fraud or manifest injustice".[7]

In Jit Ram Vs, State of Haryana[8]," for establishing Mandi, purchasers of plots were exempted from octroi duty. This was in 191 8-1965. In 1965 Municipality started

*LL.M., Ph.D., Bikaner (Raj.) INDIA

levying octroi duty. This was challenged on the principle of promissory estoppel. The Supreme Court held as follows:

1. The plea of promissory estoppel is not available against the exercise of the legislative functions of State,
2. The doctnne cannot be invoked for preventing the government from discharging its functions under the law.
3. 'When the officer of the government acts outside the scope of his authority, the plea of promissory estoppel is not available.
4. The courts can enforce compliance by a public authority or the obligation laid on him if he arbitrarily or on his mere whim ignores the promise made by him on behalf of government.
5. The officer would be justified in changing the terms of the agreement to the prejudice of the other party on special consideration such as difficult foreign exchange or other matters which have a bearing on the general interest of the State.

In Union of India v Godfrey Philips India Ltd.[9] Justice Bhagwati, C.J. has reiterated his earlier decision in Motilal[10] and discarded Kailasam J. Views in Jig Ram[11]. In the instant case, the question was whether the cost of final- packing in corrugated fiber board containers could be included in the value of cigarettes for the puipose of assessment of excise duty under section 4(4)(d)(i) read with the explanation to the Central Excises and Salt Act, 1944.

In D,R,Kohli v Atul Products Ltd. AIR[12]", Vankataramiah J. held that promissory estoppel applied only when representation/promise had been relied upon and a person had suffered a detriment by acting upon the same. If the person merely took benefit of the promise/representation without any detriment, the government could not be estopped from withdrawing the benefit. In the instant case, benefit was related to the exemption from payment of excise duty.

The doctrine of promissory estoppel had not been applied consistently by the High Courts. In Kanlilal v Chairman, Town Improvement Trust, Ratlam[13], disposal of open land by Improvement Trust was prohibited. The Court held that the residential scheme was prepared with the object of providing health, air, light and other amenities to the people in the community and for that purpose it is necessary to provide open land. The open land could not be leased to run dharamshala. The doctrine of promissory estoppel would apply against such an action.

In Delhi Cloth and General Mills Ltd. v Union of India[14], it was observed that in order to apply the doctrine of promissory estoppel, the promises need not have suffered a detriment. It was enough that he had relied on the promise, acted upon it and changed his position. Letter of the Railway Board Promising special concessional freight rate for carriage of naphtha from Koyali refinery of the Indian Oil Corporation to its fertilizer plant at Kota in Rajasthan. The appellant's complaint to the Railway Rate Tribunal was rejected. Application of the doctrine in the instant case was refused on the basis of the second portion of the letter of the Board.

In Aeronautics Employees 'Co-operative Housing Society Ltd. v State of A.P.,[15] where the State Government had promised land for house sites for employees of Central Government undertaking but tried to resile from it after the lapse of a long period on the ground that the State Government employees should be given preference in the allotment of land, it was held that State Government should not go back from its promise to give land to the empl9yees of undertaking on the basis of promissory estoppel.

In Vasant Kumar Radhakrisna Vora v Board of Trustees of the Port of Bombay[16], the Supreme Court held that if an official acted without any authority and gave a promise, the authority on whose behalf such a premise was given could not be held to be bound by it. The Estate Manager of the Bombay Port Trust had proposed to the tenants occupying promises of-the Trust that if each of them deposited Rs. 1 ,000/- with the Trust, flats would be allotted to them on lease on reconstruction of the building. The Trust, however, passed a resolution to allot the flats to its staff and not to the tenants. The promise given by the Estate Manager was ultra vires and therefore, it did not bind the Trust. The doctrine of promissory estoppel could not be invoked.

In Dr. Ashok Kumar Maheshwari v State of U.P.[17], it was held by the Supreme Court that the principle promissory estoppel could not be invoked to enforce a promise contrary to law. Where the prescribed mode of appointment to the post of Lecturer in Pharmacy Department of Government Medical Colleges was only by direct recruitment and not by promotion, promise (if any at all) made to demonstrators by the State Government or Director, Medical Education to promote them to the posts of Lecturer, was held not enforceable against the State.

In Central Airman Selection Board v Surender Kumar Das[18] appointment was denied which was obtained by way of misrepresentation of facts by the candidate. In such a situation the application of promissory estoppel was refused by the court.

In State of Bihar v Kalyanpur Cement Ltd,[19] principle of promissory estoppels applicability was reiterated. In order to invoke the doctrine it must be established: a party must make an unequivocal promise or representation to the other party; the representation was intended to create legal relationship to arise in the future; a clear foundation has to be laid in the petition with supporting documents; it has to be shown that the party invoking the doctrine has altered its position relying on promise; it is possible for the government to resile from its promise when public interest would be prejudicially affected. If the government were required to carry out the promise, and the court would not apply the doctrine in abstract in order to invoke the doctrine, clear sound and positive foundation must be made in the petition itself by the party invoking the doctrine and bald expression without any supporting material would not be sufficient.

The Law Commission of India (LCI) in its 108th Report on "Promissory Estoppel," (1984) analyzed the devel-

opments in this area and expressed its views, for example, the view of the LCI on the decision of the Supreme Court in Anglo Afghan Agencies,[20] that the reference of promissory estoppel was uncalled for. The application of promissory estoppel in Century Spg. & Maf Co.'s Case[21] was also viewed as wrong in the case of taxation whether by legislative power or its delegate. Local Self Government or delegate and all judges in this case agreed that there can be no estoppel against the legislative power. The imposition of octroi is nothing but tax. It was further emphasized by the LCI that the reference to nascent democracy in the instant case in justification of the application of the principle of promissory estoppel is again unfortunate. A democracy in a developing country cannot be effective unless the government or municipality is free to formulate its policies and augment resources. Similarly, the LCI expressed its opinion on the judgment of the Supreme Court in MY. Sugar Mills Case[22], against the application of the principle of promissory estoppel. The LCI seems to be in favour of, generally speaking, the views expressed by the Supreme Court in Jit Ram 's Case[23].

Law Commission of India Recommendations

1. The doctrine of promissory estoppel may be allowed to be used as a cause of action.
2. It can be used against the government in its business md proprietary activities.
3. There should be detriment, i.e., the person to whom the representation or promise is made, is likely to suffer some damage or løss if the person making the representation or promise is allowed to go back on his representation or promise.

On the basis of above recommendations, the Law Commission suggested amendment to the law of contract by way of incorporating a new section 25k This recommendation of Law Commission is still a dead letter because no positive action has been taken either by the government or by the legislature.

To sum up, it may be said that the principle of promissory estoppel is well recognized as a beneficial doctrine based on equity, exclusion of its operation may be allowed only where absolutely necessary. The doctrine of promissory estoppel does not prevent an executive authority to make or amend rules in exercise of delegated power[24]

References :-

1. (1993) 4 SCC 2.
2. (1994) 4 SCC 104.
3. (1999) 3 SCC 494.
4. A1R1968SC718.
5. A1R1971SC1021
6. AIR 1973 Sc 2641.
7. AIR198OS 1285.
8. (1985) 4 SCC 369.
9. Supra. 9.
10. Supra. 10.
11. AIR 1985 Sc 37.
12. AIR 1986 M.P. 134.
13. AIR 1987 SC 2141.
14. AIR 1990 A.P. 331.
15. Air 1991 SC 14.
16. (1998) 2 SCC 502. See also Kanishka Trading (1995) 1 5CC 274; Darshan Pits (P.) Ltd. v Union ofIndia, (1995) 1 SCC 345; Shreejee Sates Corporation v Union of India, (1997) 3 SCC 398.
17. (2003) 1 5CC 152. See also Executive Engineer Uttaranchat Power Corporation V Kashi Vishanath steel Ltd., (2010) 6 5CC 738 and Commissioner ofCentral Excise v Bat Pharma Ltd. , (201 1) 2 SCC 620.
18. (2010) SCC 274.
19. Supra 6.
20. Supra 7.
21. Supra 9.
22. Supra 10.
23. R.C. Singhvi V State ofM.P., AIR 1992 M.P. 384.

****

Relevance of Cashless Economy in India

Dr. Yadu Rao*

Abstract - Every economy nowadays is being influenced by the technology and automation and banking system cannot be an exception to it. The Indian economy is cash based and it is the fourth largest user of paper currency in the world. With the rapid changing world the way of doing payment also has changed. The digital transaction is the way of making payment electronically. It is far better than the conventional way of physical payment in many ways. However it requires some logistics and awareness and knowledge of online payment system and thus, it is important to take into consideration the choice, comfort and perception of the people. The cashless tools compatibility in the hands of user is important and to cover this aspect it is important to take a note from users to confirm the relevance of cashless economy in Indian context. The study is based on the common issue of Cashless economy and today we are on the state of transition from conventional payment system to totally new system of e-payment. Based on the responses people seem to support the cashless economy and thus cashless economy is relevant in Indian context rather this system will lead to more transparency and effective mobilization of funds. On the flipside of a coin it is important of incorporate the programs and campaigns to spread the awareness regarding using the electronic instruments of financial payments safely.
Keywords - cashless economy, cashless transaction, electronic payment.

Introduction - Every economy nowadays is being influenced by the technology and automation and banking system cannot be an exception to it. With the advent of mobile banking smart phones have been becoming a kind of payment system. In case of countries like India transformation to Electronic modes of payments from conventional physical or paper mode of currency is a bit difficult task. Although Government of India in the year 2015 launched a ambitious campaign of Digital India Mission to promote electronic payment system for governmental products and services.

In order to make electronic payment system handy for users various modes of online payment were introduced in past few years viz. Cards like debit/ credit/ cash/ travel / others, Unstructured Supplementary Service Data (USSD) and SMS banking, AADHAAR Enabled Payment System (AEPS), Immediate Payment Service (IMPS), Unified Payments Interface (UPI), Mobile or E-Wallets, Banks Cash or Pre-Paid Cards, Point of Sale (POS Machines), Internet Banking, Mobile Banking with Android Applications and Micro ATMs. As an initiative taken by Reserve Bank of India (RBI) and Indian Banks Association (IBA), National Payments Corporation of India (NPCI) is the national body responsible for the entire retail payments and settlement systems in India.

The Indian economy is cash based and it is the fourth largest user of paper currency in the world. With the rapid changing world the way of doing payment also has changed. The digital transaction is the way of making payment electronically. It is far better than the conventional way of physical payment in many ways. However it requires some logistics and awareness and knowledge of online payment system.

Cashless economy is a situation where the financial transactions are made through electronic channels such as debit card, credit card and e-wallets and the use of cash will be the minimum. Here electronic money will replace the traditional currency. It includes e-banking or banking through computers, digital wallets etc. There are countries where payments are conducted without cash. Sweden is one of them where the transactions are done digitally. Countries like Denmark and Norway also support digital transfer of money. It is here important to note that cashless economy is not one with no cash rather it is where all the transactions can be done with our without cash.

The cashless economy have some benefits like save money and time by reducing the cost of printing of currency and is a fast way of doing transactions and this system also keep ready record of the transactions. Reduction of criminal activities like corruption and terror funding activity are the key motivators of cashless transactions. Government at the same time can track the financial transactions.

It also has some limitations like privacy issue but government has made some secure network/server for it. Cost of setting up the technology network is quite a bit high but it is one time cost.

The Indian government is working intensively on a

*Assistant Professor, Government Meera (Girls) College, Udaipur (Raj.) INDIA

program to reduce the use of paper currency and to promote cashless economy. Intensive work is being done to educate the population of India about safe internet payment as well as to reduce cyber-crime. Cashless economy is certainly an ideal situation for an economy. However, it must be introduced gradually and step by step procedure is to be followed.

It is here important to understand the limitation with cashless economy in India as more than 60 percent of Indian population belongs to rural region. There are a significant number of people who do not have smart mobile phones and a large percentage of them are computer illiterate. They are not comfortable using computers or mobile phones for financial transactions and rely on other people for help. This sometimes leads to the misuse of the accounts and siphoning of funds. Majority of Indian labour market is unorganized and rely on daily wages. Under such circumstances the informal labour market is heavily cash dependant.

Review of Literature - Researches already have been done relating cashless economy of India:-

(Rachna & Singh, 2013) In this Study an effort has been made to identify the issues and challenges of electronic payment systems and the study also suggests solutions to the problems in the e-payment system. The authors talks about the limitations of each mode of payment.

(NC, 2016) the author emphasized that the India is a cash based economy. An effort of demonetization has been made by the government to curb the corruption but at the same time online transactions and credit card transactions are seemed to be expensive for small merchants. The author also talks about the mobile wallets and e-wallets.

(Suri, 2016) the author here established an association between black money, counterfeit currencies, crime and terrorism. The author considered demonetization as a significant and the first step towards cashless economy.

(Singh, Ajit;, 2017) the author in this article talks about various mode of payments available and emphasized that mobile may play a significant role in case of transition towards cashless economy. However, the author pin points the challenges for mobile cashless transaction regarding security and other related issues.

(Bhattacharyya & Noria, 2017) In this article an effort has been made by the authors to discuss how Indian economy is becoming digital and cashless. In the article e-wallets are also discussed and are deemed to be the alternatives to ATMs.

(CH. B. V. L. Sudheer & Ashrefunnisa, 2017) talks about how electronic payment system affects cashless economy of India. Electronic payment system is the key in the regime of Cashless India.

(Kumar, H., B.M,N. & Rajesh, M. 2017) The authors in this article talked about the important step taken by the Government of India towards digital India however people of India should accept this system in order to make it effective and thus several efforts should be made by the RBI in terms of security and safety

(Shendge & Shelar, 2017) In this article an effort has been made to gauge the importance of cashless policy in India accordingly the cashless policy will increase the employment, reduce paper currency related crime by reducing risk of carrying cash, corruption will also be curbed and more foreign investors will show their interest. Apart from that Cashless policy will bring modernization of payment system, reduce the cost of banking service. However steps towards financial safety are to be taken to promote the idea of cashless economy.

Apart from the efforts taken by the researches it is important to take into consideration the choice, comfort and perception of the people. The cashless tools compatibility in the hands of user is important and to cover this aspect it is important to take a note from users to confirm the relevance of cashless economy in Indian context. In the present article an effort has been made to cover these aspects.

Objective :

1. To study the relevance of Cashless transaction
2. To study effect of gender on the relevance of Cashless transaction

Hypothesis :

1. There is no significant difference in the opinion of male and female on the preference and awareness of users towards the Cashless transaction.
2. There is no significant difference in the opinion of various age groups on the preference and awareness of users towards the Cashless transaction.

Research methodology - The study is Empirical and the data used in this study are from primary source which have been collected using questionnaire method. A questionnaire was designed and information has been collected from 150 respondents. The respondents include people of Udaipur City.

Significance of Study - The study is based on the common issue of Cashless economy and today we are on the state of transition from conventional payment system to totally new system of e-payment. Envisaging reforms in financial system is one thing and but if these reforms are intended to change the payment system on day to day transaction by the general public it becomes an issue to be discussed. What people think about electronic payment system and what they think about the relevance of cashless economy in Indian context? Both these questions are to be answered. What people think about the awareness of electronic mode of payments, wiping off black money via demonetization, safety measures, decline in crime rate, curbing corruption, availability of logistics, basic infrastructure required, level of literacy, streamlining unorganized sectors and so on are the relevant questions to be asked. The present study is intended to incorporate all these points of discussion.

Limitation of study - The study is limited to Udaipur City and Responses were received from 150 people only however from various age groups.

Analysis and Interpretation - One of the objectives of demonetization is to motivate people to do more cashless transactions. Perception of people towards the new regime is the most important factor to be considered to achieve the goal successfully. Although the use of digital currency and payment will ensure transparency but at the same time acquaintance with new modes of payments viz. IMPS, UPI, USSD, MOBILE APPS etc. will play significant role. In order to analyze whether the cash less economy is relevant in Indian context or not various questions were asked from 150 respondents. SPSS software is used to fit the collected data and analyzed the results as explained below.

Between-Subjects Factors

		VALUE LABEL	N
GENDER	1	Female	75
	2	Male	75
Age	1	Below 25 years	81
	2	26 to 50 years	52
	3	Above 50 years	17

The above table shows that there were 150 respondents with the male and female ratio of 1:1. 81 respondents were below 25 years of age; 52 were above 25 to 50 years and 17 respondents were above 50 years of age.

Table 1 - Showing Relevance of Cashless Economy based on Gender and Age

Source	Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
Gender	0.014	1	0.014	0.001	0.986
Age	341.379	2	170.690	3.844	0.024
Gender X Age	8.344	2	4.172	0.094	0.910
Error	6393.797	144	44.401		
Total	7093.440	149			

The above table indicates that the F-ratio for effect of gender on relevance of cashless economy is found to be 0.000 which is insignificant at 0.05 level. It infers that there are no significant differences between males and females regarding relevance of cashless economy. In other words same opinion is reflected by males and females over cashless economy.

The above table indicates that the F-ratio for measuring effect of age on relevance of cashless economy is found to be 3.844, which is significant at 0.05 level. It infers that there are significant differences between age groups (below 25 years, 25 to 50 years, 50 years & above) regarding relevance of cashless economy. In other words difference in opinion is reflected by different age respondents over cashless economy.

H_0: *"There is no significant difference in the opinion of male and female* on the relevance of Cashless transaction" - accepted.

As the results indicate that there is significant difference in relevance of cashless transaction. Furthermore the mean scores indicate that most of the males believe that cashless economy is relevant in Indian context as compared to female respondents.

H_0: *There is no significant difference in the opinion of various age groups on the preference and awareness of users towards the Cashless transaction*- rejected

Here it is interesting to see that people below age 25 are not well verse with cashless transactions and on the other side respondents above 50 years found to be comfortable.

When respondents were asked to reply on "People in India are aware of and can use electronic mode of payments and instruments viz. debit card, online banking 92 out of 150 agreed upon it while 52 disagreed. The opinions of male do not significantly differ from that of female.

When respondents were asked to reply on "when you are cashless you feel safe", 106 were agreed while 34 disagreed.

When respondent were asked to reply on, if all the transactions are to be done through electronic banking, rate of crime will decline significantly, 129 agreed while only 19 disagreed and 2 did not respond.

On asking whether the cashless economy can curb the problem of corruption,117 respondent support cashless transactions while only 10 were disagreed.

102 respondents felt that cashless transactions will reduce the cost of banking services and improvise the mobilization of resources by providing more efficient transaction options while 39 remained neutral and only 9 were disagree.

When respondent were asked to reply on that the basic infrastructure required for cashless economy is available in country, 65 out of total agreed while 44 disagreed and 41 remained silent.

61 respondents felt that the people of India are not well aware and informed of the adoption of the cashless policy and 68 respondents felt that they are.

When asked a question whether cashless economy will ensure the inclusion and streamline the unorganized sector, 120 agreed and only 16 disagreed.

Conclusion - Based on the responses people seem to support the cashless economy and thus cashless economy is relevant in Indian context rather this system will lead to more transparency and effective mobilization of funds. On the flipside of a coin it is important of incorporate the programs and campaigns to spread the awareness regarding using the electronic instruments of financial payments safely. Definitely the system will have the potential to curb black money, corruption and lead to decline in crime rate but at the same time it is important to activate agencies to control cyber crime. A lot of enhancement is yet to be done to widen and strengthen the infrastructure to ensure the smooth and risk free platform for financial transactions. Most of people understand and actively doing the financial transactions electronically but people especially from rural sector a separate campaign is to be setup to motivate and ensure them the sense of security. Demonetization was done with multifold objectives but one of the derived objectives was to become cashless followed by GST. These

initiatives will definitely improve the transparency but a lot of steps are yet to be taken.

References :-

1. Bhattacharyya, A., & Noria, Y. (2017, July 14). India paves its way to a cashless economy. *PwC India*, pp. 1-4.
2. Garg, P., & Panchal, M.(2017) Study on introduction of cashless economy in India 2016: benefits & challenges. IOSR Journal of Business and Management, 19(4), 116-120.
3. Kumar. S.H., B M,N., & M, R. (2017). A study on secured cashless economy in India with reference to initiatives taken by Reserve Bank of India (RBI) towards digital payment. EPRA International Journal of Economic and Business Review, 5(9),21-27. Retrieved from https://eprawisdom.com/jpanel/upload/articles/1150am4.Dr.%20Hemanth%20Kumar%20.S,%20%20Asst%20Prof. %20Nagendra%20.B%20M%20&%20Asst%20Prof.%20Rajesh%20.M.pdf
4. NC. (2016, November 16). *'Cashless Indian Economy' – Money demonetization to mobile digitization*. Retrieved from www.rctom.hbs.org:https://rctom.hbs.org/submission/cashless-indian-economy-money-demonetization-to-mobile-digitization/
5. Rachna, & Singh, P. (2013, December). Issues and Challenges of Electronic Payment Systems. International Journal for Research in Management and Pharmacy, 2(9), 25-30.
6. Shendge, M. A., & Shelar, M. B. (2017, April). Impact and Importance of Cashless Transaction in India. International Journal of Current Trends in Engineering & Research (IJCTER), 3(4), 22-28.
7. Singhraul, B. P., & Garwal, Y. S. (2018). Cashless economy-challenges and opportunities in India. Pacific Business Review International, 10 (9), 54-63.
8. Singh, A. (2017). *Cashless India: Leveraging Possibilities and Facing Security Challenges in the Mobile Space.* Retrieved from www.globallogic.com: https://www.globallogic.com/gl_news/cashless-india-leveraging-possibilities-and-facing-security-challenges-in-the-mobile-space/
9. Sudheer, C. B., & Ashrefunnisa, M. (2017, February). Electronic Payment in Cashless Economy of India: Problems and Prospect. International Journal of Scientific Engineering and Technology Research, 6(7), 1398-1402.
10. Suri, Y. (2016). *Demonetization – An Opportunity to Curtail Black Money.* Retrieved July 18, 2017, from niti.gov.in: http://niti.gov.in/content/demonetization-%E2%80%93-opportunity-curtail-black-money-and-promote-digital-payments.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

लघु उद्योगो के विकास में जिला उद्योग केन्द्र का योगदान

नन्दना शिल्पकार * डॉ. ए.के. पाण्डेय **

प्रस्तावना – प्राचीन काल से ही लघु उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था के आधार रहे हैं। यदि लघु क्षेत्र को विशेष प्रयास से प्रोत्साहन दिया जाय तो वह भारत जैसी पूंजी न्यून अर्थव्यवस्था में उत्पादन पूंजी अनुपात में ऊंची दर द्धारा अर्थव्यवस्था को स्थायित्व दे सकता है। किन्तु लघु उद्योगों कि विकास और केन्द्रण की दृष्टि से देश में भारी असमान्ता देखी गई है। मंत्रालय की तीसरी गणना ने यह कटु सत्य उजागर किया है कि लघु स्तर की इकाइयां सात राज्यों सकेन्द्रित है। जिसमें महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और पश्चिम बंगाल है इन राज्यों में कुल इकाइयों की 53 प्रतिशत इकाइयां स्थित है। जो कुल लघु स्तर क्षेत्र का 55 प्रतिशत रोजगार कुल अचल निवेश 66 प्रतिशत और कुल उत्पादन 60 प्रतिशत उपलब्ध कराती है। प्रदेश में लघु उद्योग के विकास पर विशेष जोर दिया गया है। क्योंकि ये उद्योग कम पूंजी निवेश पर अपेक्षाकृत रोजगार के अवसर पैदा करते हैं।

जिला उद्योग केंद्र की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य जिला स्तर पर लघु उद्योगों को सभी सुविधाएं एक स्थान पर उपलब्ध करा देना है। जिससे उन उद्योगों का विकास तेजी से हो सके। जिला उद्योग केंद्र किसी भी जिले में उद्योग स्थापना की धुरी है। जिले में होने वाली समस्त औद्योगिक गतिविधियां संबंधित जिला उद्योग केंद्र के समन्वय में ही संचालित होती है। उद्योग अथवा स्वरोजगार स्थापना के इच्छुक व्यक्तियों के लाभार्थ शासन द्धारा जिला उद्योग केंद्र स्थापित किये गये है जिला उद्योग केंद्रों के माध्यम से वर्तमान में राष्ट्र मे ग्रामीण उद्योगीकरण के क्रांति चल रही है इस औद्योगिक क्रांति का लक्ष्य न्यूनतम पूंजी से औद्योगिक इकाइयों की स्थापना है तथा क्षेत्रीय संसाधनों एवं उपलब्ध करने माल का परिपूर्ण दोहन कर औद्योगिक उत्पादन में अन्वेषण, ऋण, विपरण, कच्चा माल मशीनरी उपकरण अनुसंधान एवं विस्तार व औद्योगिक तकनीकी प्रशिक्षण आदि भी उद्यमियो को उपलब्ध कराता है। जिससे औद्योगिक विकास को पर्याप्त गति प्रदान की जा सके।

उत्पादन बढ़ाने के लिए समूह विकास कार्यक्रम (सीडीपी) – सूक्ष्म, लघु और मध्य उद्यम मंत्रालय (एमएसएमई) ने उत्पादकता और प्रतिस्पर्धा बढ़ाने के साथ देश के सूक्ष्म और लघु उद्यगो के क्षमता विकास के लिए बतौर मुख्य रणनीति समूह विकास कार्यक्रम (क्लस्टर डेवलपमेंट प्रोग्राम) स्वीकर किया है। सीडीपी के कदमों को सूक्ष्म और लघु उद्यम समूह विकास कार्यक्रम के तहत कार्यन्वित किया जा रहा है। एमएसई – सीडीपी के तहत वित्तीय मदद दी जाती है। निदान अध्ययन रिपोर्ट तैयार करने के लिए अधिकतम अनुदान 2.5 लाख रुपये, प्रति समूह अधिकतम परियोजना लागत 25 लाख रुपये के लिए मंजूर राशि 75 प्रतिशत सॉफ्ट इंटरवेंशन के लिए विस्तृत परियोजना रपट तैयार करने के लिए 5 लाख रुपये प्रति समूह अधिकतम परियोजना लागत 15 करोड़ रुपये के लिए मंजूर राशि का 70 प्रतिशत सामान्य सुविधा केंद्र के लिए प्रति समूह अधिकतम परियोजना लागत 10 करोड़ रुपये के लिए मंजूर राशि का 60 प्रतिशत बुनियादी ढांचा विकास के लिए दिया जाता है। इसे लॉन्च करने के बाद अब तक 470 से ज्यादा समूह एमएसई–सीडीपी योजना के तहत आ चुके है। 124 से ज्यादा प्रस्ताव बुनियादी ढांचा विकास के लिए जा चुके हैं। इन परियोजनाओं में छोटे और सूक्ष्म इकाइयों को अब तक 10,972 भूखण्ड आवंटित हो चुके हैं। इससे कुल 37,555 लोगों को रोजगार मिला है। क्लस्टर विकास का तरीका बहुत कारगर रहा है। एमएसई–सीडीपी के दिशा–निर्देशों में कुछ सुधारों और विभिन्न अंशधारको के बीच बढ़ी जागरूकता के बाद यह योजना निकट भविष्य में बड़ी छलांग के लिए तैयार है।

लघु उद्योगों की समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव :

1. लघु उद्योगों की उत्पादन तकनीक में सुधार किया जाना चाहिए।
2. जिला उद्योग केंद्र द्धारा चलाई जाने वाली योजनाओं का लाभ उठाना चाहिए।
3. जिला उद्योग केंद्र द्धारा लघु उद्योगों के लिए चलाई जाने वाली योजनाओं का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।
4. पर्याप्त सलाहकार फर्मो की व्यवस्था होनी चाहिए।
5. बड़ी संख्या में लोगों को पूर्णकालिक रोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए औद्योगिक इकाइयों की स्थापना की जानी चाहिए।
6. लघु उद्योगों सहकारी समितियों का अधिकाधिक विकास किया जाना चाहिए।
7. लघु उद्योग को बैंकों द्धारा दिए जाने वाले ऋणों के लिए गारंटी या जमानत की आवश्यकता नहीं पड़नी चाहिए।

शोध का अर्थ – किसी विषय का गहन व सूक्ष्म अध्ययन करके विषय के संबंध में कुछ नवीन तथ्यों की खोज करना शोध कहलाता है। अंग्रेजी में शोध को रिसर्ज कहा जाता है। यह दो शब्दों से मिलकर बना है। रिसर्च जिसमे का अर्थ है खोज करना अत: शोध का अर्थ है गहन तथा पुन: अध्ययन करने के उपरांत नवीन तथ्यों की खोज करना।

अध्ययन का उद्देश्य – लघु उद्योगों के विषय में जिला उद्योग केंद्र की कार्यप्रणाली एवं भूमिका (सतना जिले की विशेष संदर्भ में) का अध्ययन किया है जिसका प्रमुख उद्देश्य यह है कि लघु उद्योगों के लिए जिला उद्योगों केंद्र द्धारा कौन–कौन सी योजनाएं चलाई जाती हैं जिनका लाभ प्राप्त करके लघु उद्योगों की स्थिति को सुधारा जा सकता है।

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

परिकल्पना का निर्माण – किसी कार्य को करना पूर्णत: इस बात पर निर्भर करता है कि कार्य के उत्पादन से पूर्व उसके प्रारंभ करने और उसके संपादन के उपायों के संबंध में कई प्रकार की कल्पना कर ली जाये और उसके उत्पादन की रूपरेखा तैयार कर ली जाये। इस शोध का मुख्य बिंदु लघु उद्योगों के विकास में जिला उद्योग केंद्र की कार्यप्रणाली एवं भूमिका पर प्रकाश डालना है जो सतना जिले के विशेष संदर्भ में है।

न्यादर्श का चुनाव – इस पद्धति के अंतर्गत अनुसंधान सभी क्षेत्र के समस्त इकाइयों का अध्ययन नहीं कर पाता है वह उनमें से कुछ प्रतिनिधि इकाईयों को चुन लेता है और उनका धन कर लेता है।

तथ्य सामग्री का अध्ययन – मैंने सर्व प्रथम यह पता लगाया की सतना जिले में कौन–कौन से लघु उद्योग चलाये जाते हैं और वे उद्योग जिला उद्योग केंद्र द्वारा चलाई जाने वाली योजनाओं का लाभ प्राप्त कर रहे हैं या नहीं उन योजनाओं का लाभ प्राप्त करके लघु उद्योगों में उन्नति करके आगे बढ़ाया जा सकता है।

ऑकड़ों का संकलन – शोध जानकारी हेतु साक्षात्कार द्वारा लघु उद्योगों के विकास में जिला उद्योग केंद्र द्वारा चलाई जाने वाली योजनाओं की जानकारी स्वयं जाकर एकत्रित की यह जानकारी उनके कार्य स्थल पर जाकर एकत्रित की गई साक्षात्कार पूर्व उन्हे प्रस्तुत शोध अध्ययन के उद्देश्य की जानकारी दी गई तथा उन्हें विश्वास भी दिलाया गया कि उनके द्वारा दी गई जानकारी केवल शोध कार्यों में ही प्रयुक्त की जाएगी। प्रत्येक साक्षात्कार में लगभग 15–20 मिनट का समय लगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. प्रज्ञा त्रिवेदी 2004–2005, लघु एवं कुटीर उद्योगों का अध्ययन (सतना जिले के विशेष संदर्भ में)
2. विक्रम सिंह 2007–2008, लघु एवं कुटीर उद्योग का अध्ययन।
3. बी.सी. सिन्हा 2008, भारतीय आर्थिक नीति पुष्पा सिन्हा।
4. त्रिभुवननाथ शुक्ला 2010, अद्यमिता विकास पुस्तक
5. राखी सोलंकी 2010, विकास केन्द्र सेडमैप की प्रदेश के लघु उद्योगों के विकास में भूमिका एक का अध्ययन।
6. रीता तिवारी 2011, मध्यप्रदेश के औद्योगिक जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र की भूमिका।
7. सारा अप्तारी 2012, विकास एवं पर्यावरण का अर्थशास्त्र।
8. युधिष्ठिर हालदार 2014, उद्यमी।
9. मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना, विंध्याचल भवन, भोपाल।
10. सत्येन्द्र शुक्ला 1995, जबलपुर क्षेत्र के औद्योगिक विकास में लघु एवं कुटीर उद्योगों की भूमिका।

****

भारत में ऊर्जा के गैर परम्परागत स्त्रोत

डॉ. शुभ्रा तिवारी *

शोध सारांश – वर्तमान समय में पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोत खत्म होते जा रहे है, इस कारण से गैर पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोतों को उपयोग में लाया जा रहा है जिससे पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोतों का उपयोग कम होगा और गैर पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोतों के उपयोग को बढावा मिलेगा। गैर पारम्परिक ऊर्जा को वैकल्पिक ऊर्जा भी कहा जाता है उदाहरण– सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, सामुद्रिक ऊर्जा आदि।

शब्द कुंजी – पारम्परिक ऊर्जा, संसाधन, अनन्त भण्डार।

प्रस्तावना – आज का युग विज्ञान और प्रौद्योगिकी का युग है। आज मानव अपने ज्ञान–विज्ञान का अधिकाधिक प्रयोग कर विभिन्न कार्यो के संचालन के लिए ऊर्जा प्राप्त करता है। वर्तमान समय में ऊर्जा के उत्पादन एवं प्रयोग के आधार पर ही किसी भी राष्ट्र की गतिशीलता और विकास का आकलन किया जाता है।

कार्य करने की क्षमता ही ऊर्जा कहलाती है और जिन संसाधनों से ऊर्जा की प्राप्ति होती है, वे ऊर्जा के स्त्रोत कहलाते है। लकड़ी, कोयला, तेल, पेट्रोल, डीजल, गैस आदि ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोत है, जबकि सूर्य ताप, पवन चक्की, जल विद्युत, बायोगैस, कचरा, भू–ताप, समुद्रीताप, बायोडीजल आदि इसके गैर परम्परागत स्त्रोत है। इसमें से ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोत सीमित मात्रा से उपलब्ध है।

इन्हें प्राकृतिक रूप से निर्मित होने से काफी समय लग जाता है। आज मानव द्वारा अपने जीवन को सुखमय बनाने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अधिकाधिक दोहन किया जा रहा है। यदि इसी तरह इनका दोहन होता रहा तो वर्ष 2050 के पश्चात इन संसाधनों का अभाव हो जायेगा और पृथ्वी पर ऊर्जा संकट की स्थिति उत्पन्न हो जायेगी।

भविष्य में आने वाले संकट से बचने और अपने विभिन्न कार्यों का सुचारू रूप से संचालन करने के लिए आज मानव ऊर्जा के नित नए–नए गैर–पारम्परिक स्त्रोतों को खोजने का प्रयास कर रहा है। आज अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस, जापान आदि विकसित राष्ट्रों के साथ–साथ भारत जैसे विकासशील देश भी गैर परम्परागत स्त्रोतों से प्राप्त ऊर्जा उत्पादन को बढावा दे रहा है।

ऊर्जा खपत के क्षेत्र में भारत विश्व में चौथे स्थान पर है, जहॉ कुल ऊर्जा उत्पादन का 10% भाग गैर–परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों से प्राप्त किया जाता है, सूर्य, वायु, समुद्र और भूमि ऊर्जा के अक्षम भंडार है। इनसे असीमित मात्रा में बार–बार ऊर्जा का उत्पादन किया जा सकता है, यानि जीवाश्म ईंधन–जैसे कोयला, पेट्रोलियम की तरह इनके खत्म हो जाने का भय नहीं है।

गैर परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों के मामले में प्रकृति ने हमारे देश में बहुत समृद्ध बनाया है। इस कारण से हमारे देश में इन स्त्रोतों से ऊर्जा उत्पादन की सम्भावनाएँ भी बहुत बढ़ जाती है।

सौर ऊर्जा– सूर्य ऊर्जा का अक्षय एवं अनन्त भंडार है सूर्य की समस्त ऊर्जा का 10 प्रतिशत भाग ही धरती पर आ पाता है तथापि इससे अन्य सभी साधनों से प्राप्त ऊर्जा से 36 गुना अधिक ऊर्जा प्राप्ति की जा सकती है।

सूर्य ऊर्जा का सर्वाधिक व्यापक एवं अपरिमित स्त्रोत है, जो वातावरण में फोटॉन के रूप में विकिरण में ऊर्जा का संचार करता है। पृथ्वी पर सर्वाधिक महत्वपूर्ण रासायनिक अभिक्रिया प्रकाश सश्लेषण की होती हो जो सूर्य के प्रकाश के साथ पौधों की होती है इसलिये सौर ऊर्जा को पृथ्वी पर जीवन का प्रमुख संवाहक माना जाता है।

सूर्य से सीधे प्राप्त होने वाली ऊर्जा में कई खास विशेषताएँ है इनमें इसका अत्यधिक विस्तारित होना, अप्रदूषणकारी होना व अक्षुण होना प्रमुख है।

सौर–ऊर्जा वह ऊर्जा है जो सीधे सूर्य से प्राप्त की जाती है। सौर ऊर्जा हीमौसम एवं जलवायुका परिवर्तन करती है।

सौर ऊर्जा को विविध प्रकार से प्रयोग किया जाता है, किन्तु सूर्य की ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदलने को ही मुख्य रूप से सौर ऊर्जा के रूप में जाना जाता है। सूर्य की ऊर्जा को दो प्रकार से विद्युत ऊर्जा में बदला जा सकता है। पहला प्रकाश विद्युत तेल की सहायता से तथा दूसरा किसी तरल पदार्थ को सूर्य की उष्मा से गर्म करके इससे विद्युत जनित्र चलाकर।

सौर प्रौद्योगिकी में लगातार सुधार हो रहा है, इस कारण सूर्य की ऊर्जा की प्रचुरता का उपयोग करने की हमारी क्षमता बढ़ रही है।

पवन ऊर्जा – वायु की गति के कारण अर्जित गतिज ऊर्जा पवन ऊर्जा होती है। यह एक नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत है। कई शताब्दियों से पवन का ऊर्जा स्त्रोत के रूप में प्रयोग होता रहा है, जैसे पवन चालित नौकाओं में। आधुनिक पवन चक्कियों का निर्माण इस प्रकार किया जाता है कि वे पवन ऊर्जा को यांत्रिक या विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित कर सकें। पवन ऊर्जा का आशय वायु से गतिज ऊर्जा को लेकर उसे उपयोगी यांत्रिकी अथवा विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करना है।

वायु का ऊर्जा उत्पादन करने हेतु उपयोग करने में न तो किसी प्रकार की प्रदूषण की समस्या या अम्लीय वर्षा की समस्या या विशाक्त प्रदूशक पदार्थो जैसी कोई समस्या है। वास्तव में मानव की पर्यावरणीय आवश्यकताओं की पूर्ण आपूर्ति पवन ऊर्जा रूपान्तरण तंत्रों द्वारा हो जाती है। कार्बनडाई ऑक्साइड के उत्सर्जन को कम करने के लिए उपलब्ध कुछेक तकनीकि विकल्पों में पवन ऊर्जा भी एक है, इसमे गैसीय प्रदूशकों के

* सहायक आचार्य (भौतिक शास्त्र) सेठ मथुरादास बिनानी राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा (राज.) भारत

उत्सर्जन जैसी कोई समस्या नहीं है जो कि ग्रीन हाउस प्रभाव को उत्पन्न करके पर्यावरणीय समस्याओं को बढ़ाए, अत: विद्युत उत्पादन हेतु पवन ऊर्जा ही सबसे अच्छा स्त्रोत है। यह नवीकरण योग्य ऊर्जा ही विश्वव्यापी उष्णता तथा अम्लीय वर्षा से संघर्ष कर सकती है। सूर्य की विकिरित ऊर्जा से पवन ऊर्जा सतत् रूप से नवीकृत होती रहती है और इसका दोहन सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

जलविद्युत ऊर्जा – विद्युत, जल से उत्पन्न ऊर्जा को जल विद्युत ऊर्जा कहते है तथा जल से प्राप्त की गई विद्युत शक्ति को जल विद्युत कहते है। विश्व की सम्पूर्ण विद्युत शक्ति का एक तिहाई भाग जल विद्युत के रूप में प्राप्त होता है।

यों तो किसी भी रूप में उपलब्ध ऊर्जा को विद्युत शक्ति के जनन के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। जलप्रपात में गिरते हुए पानी में निहित ऊर्जा का उपयोग प्राचीनकाल से ही पवनचक्की को चलाने में किया जाता रहा है, परन्तु इस ऊर्जा का विद्युत शक्ति के लिए उपयोग बीसवीं शताब्दीं की ही देन है।

न केवल गिरते हुए जल में निहित ऊर्जा का उपयोग शक्ति जनन के लिए किया जा सकता है, वरन् बहते हुए पानी में निहित गतिज ऊर्जा का उपयोग भी शक्ति जनन के लिए किया जा सकता है।

बायोमास ऊर्जा – यह जैव ऊर्जा का एक रूप है। जैविक पदार्थो का उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए किया जाता है। पादप एंजाइम, जीवाणु आदि ऊर्जा के महत्वपूर्ण स्त्रोत है। जैव पदार्थो से ऊर्जा प्राप्त करने की अनेक विधियाँ है। एक तो पादप को सीधे जलाकर ऊर्जा प्रापत की जाती है, जिससे प्राप्त ऊर्जा की मात्रा भी कम होती है और उससे प्रदूषण भी फैलता है। परन्तु यदि वैज्ञानिक तकनीक से जैवाणिवक संवर्धन द्वारा मीथने का निर्माणकर अथवा यीस्ट फर्मेण्टेशन से इथेनॉल का निर्माण कर ऊर्जा प्राप्त की जाती है तो अधिक ऊर्जा भी प्राप्त होती है और प्रदूषण भी कम फैलता है। बायोमास या जैव ऊर्जा मुख्यत: पौधों और कूड़ों कचरों से प्राप्त की जा रही है। पौधों से बायोमास प्राप्त करने के लिए तीव्र विकास वाले पौधों को बेकार पडी जमीन पर उत्पादित किया जा रहा है। इनसे प्राप्त लकडियों के गैसीकरण से ऊर्जा प्राप्त की जाती है।

जैव ईधन – जैव ईधन मुख्यत: सम्मिलित बायोमास में उत्पन्न होता है अथवा कृषि या खाद्य उत्पाद या खाना बनाने और वनस्पति तेलों के उत्पादन की प्रक्रिया से अवशेष और औद्योगिक संसाधन के उप-उत्पाद से उत्पन्न होता है। जैव ईधन में किसी भी प्रकार का पेट्रोलियम पदार्थ नहीं होता है।

जैव ईंधन ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्त्रोत है जिसका देश के कुल ईंधन उपयोग में एक तिहाई योगदान है और इसकी खपत लगभग 90 प्रतिशत है। जैव ईंधन का उपयोग खाना बनाने और उष्णता प्राप्त करने में किया जाता है। मुख्य रूप से कृषि अवशेष, लकड़ी, कोयला और सूखे गोबर का उपयोग जैव ईंधन के रूप में किया जाता है। जीवाश्म ईधन की तुलना में यह स्वच्छ ईधन है। इस प्रकार में जैव ईंधन कार्बनडाई ऑक्साइड़ का अवशोषण कर हमारे परिवेश को स्वच्छ रखता है।

नाभिकीय ऊर्जा – नाभिकीय ऊर्जा ऐसी ऊर्जा है जो प्रत्येक परमाणु में अंतर्निहित होती है। नाभिकीय ऊर्जा संयोजन (परमाणुओं के संयोजन से) अथवा विखंडन (परमाणु विखंडन) प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न की जा सकती है। इनमें विखंडन की प्रक्रिया व्यापकरूप में प्रयोग में लाई जाती है।

नाभिकीय विखंडन प्रक्रिया में यूरेनियम एक प्रमुख कच्चा पदार्थ है। इसे संसाधित कर छोटी गोलियों में बदला जाता है। इन गोलिया को लंबी छड़ों में भरकर ऊर्जा इकाइयों के रिएक्टर में डाला जाता है।

श्रृंखला अभिक्रिया द्वारा ऊष्मा ऊर्जा मुक्त होती है। इस ऊष्मा का प्रयोग रिएक्टर के कोर में स्थित भारी जल को गर्म करने में किया जाता है। इसलिए नाभिकीय ऊर्जा प्लांट परमाणिक ऊर्जा को उष्मा ऊर्जा में बदलने के लिए किसी ईधन को जलाने की बजाय, श्रृंखला अभिक्रिया द्वारा उत्पन्न ऊर्जा का प्रयोग करता है। नाभिकीय कोर के चारों तरफ फैले भारी जल को ऊर्जा प्लांट के अन्य खंड में भेजा जाता है और बिजली पैदा की जाती है।

निष्कर्ष – पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोत सीमित मात्रा में है और जल्द ही खत्म हो जाएंगे। उनके कारण प्रदूषण भी बढ रहा है। गैर पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोत प्रदूषण नहीं करते है और ये कभी खत्म भी नहीं होगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वैकल्पिक ऊर्जा, पर्यावरण और विकास – रवि शंकर, योजना, दिसम्बर, 2015।
2. राठौड़ पंवार रिन्युक्ल एनर्जी सोर्सेस, फॉर सरटेनेबल डवलपमेंट, इंडिया न्यू इंडिया पब्लिशिंग एजेन्सी 2007
3. बालात रिव्यू ऑफ मॉडर्न विंड टरबाइन टेक्नोलॉजी, एनर्जी सोर्सेस, रिकवली, यूटिलाइजेशन एंड एनवायरमेन्टल इफेक्ट्स, 2009, 31 (17), 1561-72
4. सिंह, भट्टी, कोठारी, इंडियन सिनेरिओ ऑफ विंड एनर्जी, प्राब्लमस् एंड सोल्यूशनस्, एनर्जी सोर्सेस, पॉर्ट, रिकवरी, यूटिलाइजेशन एंड एनवायरमेन्टल इफैक्ट् 2004, 20 (9), 811-19.

****

पंचायती राज व्यवस्था में सरपंच की भूमिका

धनेन्द्र कुमार * डॉ. वाय.बी. करवे **

प्रस्तावना – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था भारत की प्रमुख विशेषता रही है। लोकतंत्र मूलत: विकेन्द्रीकरण पर आधारित शासन व्यवस्था है और विकेन्द्रीकरण, की संकल्पना पूर्ण रूप से तभी सफल होगी जब सत्ता विकेन्द्रीत हो सत्ता निचले स्तर से लेकर ऊपरी स्तर तक प्राप्त हो तथा शक्तिशाली एवं प्रभावपूर्ण हो। लोकतांत्र का मुख्य आधार शासन में जनता की प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से पूर्ण भागीदारी होना जिसमें जनता के द्वारा एक ऐसी शासन व्यवस्था का निर्माण किया जाता है। जो कि जनता के हित में निष्पक्ष रूप से कार्य करे साथ ही जनता का नियंत्रण भी शासन व्यवस्था पर बना रहता है।

भारत गाँवों का देश है। यहा लगभग 80 प्रतिशत आबादी गाँवों में निवास करती है। गाँधीजी का सपना था कि देश का विकास करना है तो गाँव का विकास करना होगा। पंचायती राज संस्थाओं से संबंधित विधेक पी.व्ही. नरसिंहाराव सरकार ने राजीव गाँधी सरकार द्वारा तैयार पंचायती राज संस्थाओं से संबंधित विधेयक को संशोधित कर दिसम्बर 1993 में 73 वॉ संविधान संशोधन के रूप में संसद से पारित करवाया। यह 73 वॉ संविधान संशोधन 24 अप्रैल सन् 1993 से लागू किया गया। इस संशोधन द्वारा भाग 9 जोड़ा गया और ग्यारहवी अनुसूची जोड़ी गयी जिसका शीर्षक 'पंचायत' है। इस संशोधन के माध्यम से पंचायती राज व्यवस्था में प्रत्येक स्तर पर पहिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण एवं 73 वॉ संविधान संशोधन के 243 (डी) की धारा में संशोधन कर भारत के कुछ राज्यों में महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया जा चुका है कुछ में किया जा सकता है। (मध्यप्रदेश सरकार में 50 प्रतिशत आरक्षण है।) जिसके परिणामस्वरूप सम्पूर्ण भारत में पंचायती राज संस्थाओं के विविध पदों पर सरपंच, उपसरपंच, पंच जनपद पंचायत अध्यक्ष, सदस्य एवं जिला पंचायत अध्यक्ष, सदस्य और अन्य पदों पर महिलाएं पदासीन हुई है। विभिन्न धर्म, जाति सम्प्रदाय के लोग निवास करते है। ऐसे क्षेत्रीय विभिन्नता वाले विशाल देश में लोकतंत्र को सार्थक एवं सफल बनाना एक लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है। गाँवों की सघन आबादी वाले भारत देश में लोकतंत्र का मुख्य आधार सत्ता विकेन्द्रीकरण का स्वरूप स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ही सफल हो पाया है। गाँवों की उन्नति और प्रगति पर भी भारत की उन्नति और प्रगति निर्भर करती है। इसी लक्ष्य की ओर संकेत करते हुए भारत के संविधान निर्माता ने संविधान के अनुच्छेद 40 में यह निर्देश दिया गया कि राज्य ग्राम पंचायतों के निर्माण के लिए कदम उठायेगा और उन्हें इतनी शक्ति और अधिकार प्रदान करेगा, जिससे कि वे स्वशासन की इकाई के रूप कार्य कर सकें। भारत में लोकतंत्र को सफल बनाने में यह संवैधानिक आधार जिसमें स्वशासन की इकाई के रूप में पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़ता प्रदान की गयी।

भारत में जनतंत्र का भविष्य इस तथ्य पर निर्भर करता है कि ग्रामीण जनों का शासन से कितना अप्रत्यक्ष, प्रत्यक्ष और सजीव सम्पर्क स्थापित हो पाता है, लोकतंत्र राजनीतिक व्यवस्था में पंचायती राज संस्थाएँ ही वह माध्यम है जो शासन को सामान्यजन के दरवाजे तक लाता है। केन्द्र सरकार की योजनाएँ पंचायती राज संस्था के माध्यम से ही एक सामान्य ग्रामीण नागरिकों तक पहुँचायी जा रही है। यही संस्थाएँ ग्रामीणों को विकास के अवसर प्रदान करती है। गाँव में रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति इन छोटी संस्थाओं के माध्यम से ही शासन की नीतियों से भली-भांति परिचित हो रहा है तथा एक छोटे से गाँव की समस्या राज्य एवं केन्द्र सरकार तक जनता द्वारा चुने गये प्रतिनिधियों के माध्यम से ही ऊपरी स्तर तक पहुँच पाती है। पंचायती राज संस्थाएँ ही लोकतंत्र की रीढ़ है तथा भारत के ग्रामीण विकास का आधार भी है।

स्थानीय स्वशासन से तात्पर्य- स्थानीय स्वशासन की संकल्पना एक प्राचीन अवधारणा है। जिसका आशय है एक छोटे क्षेत्र विशेष में स्थानीय लोगों का शासन होना तथा उन्हीं के द्वारा उस क्षेत्र विशेष की समस्याओं का निराकरण करना। प्राचीनकाल में गाँवों में किसी भी तरह की समस्याओं का निराकरण करने हेतु ग्रामीणों द्वारा गाँव के पाँच प्रतिष्ठित व सम्मानित लोगों के द्वारा उस गाँव की समस्या का सुलझाने का कार्य पूर्ण किया जाता था। यह पाँच लोगों का समूह उस समय किसी भी रूप से संवैधानिक आधार लिये हुए नहीं था गाँव के लोग उन्हीं पाँच लोगों द्वारा लिये गये निर्णय को अंतिम निर्णय मान लेते है जिन्हें उस समय पंचपरमेश्वर कहा गया। गाँव की समस्या द्वारा गाँव के बीच में एक पेड़ के नीचे बैठकर समस्या को सुलझाया जाता था। समय के साथ-साथ यही पाँच लोगों का समूह एक राजनैतिक संवैधानिक आधार को प्राप्त करने लगा।

स्थानीय स्वशासन की संकल्पना धीरे-धीरे अस्तित्व में आने लगी भारत में समय-समय पर जिन शासकों ने नकारा नहीं कभी यह संस्थाएँ केन्द्र सरकार के अधीन होने लगी तो कभी राज्य सरकार के अधीन किन्तु यह व्यवस्था पूरी तरह से विलुप्त नहीं हो पायी थी संवैधानिक आधार प्रदान नहीं था। किन्तु ग्रमीण समाज का विकास उन्हीं संस्थाओं के आधार पर टिका हुआ था। अंग्रेजों के शासन काल में पंचायतों को समाप्त करने का प्रयास किया गया सारे कार्य प्रान्तीय सरकारे करने लगी। किन्तु स्वाधीनता के पश्चात् राज्य सरकारों ने पंचायतों की स्थापना की और विशेष ध्यान दिया।

*शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, किरनापुर, बालाघाट (म.प्र.) भारत

सन् 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जो कि पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना हेतु एवं पहल थी। 1950 में भारत का संविधान लागू हो गया केन्द्र सरकार के अनेक महत्वपूर्ण कार्यो में पंचायती राज एवं सामूदायिक विकास मंत्रालय की स्थापना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। 1952 में पं. जवाहरलाल नेहरू की पहल पर सामुदायिक विकास कार्यक्रम इस उद्देश्य से प्रारम्भ किया गया कि आर्थिक नियोजन एवं सामाजिक पुनरूप की राष्ट्रीय योजनाओं के प्रति देश की ग्रामीण जनता में सक्रिय रूचि उत्पन्न की जा सके। सरकार के साथ मिलकर ग्रामीण जनता स्वयं सहभागी होकर ग्रामीण एवं सामुदायिक विकास को सफल बनाए।

स्थानीय स्वशासन के अन्तर्गत पंचायती राज संस्था के सामुदायिक विकास कार्यक्रम के आधार पर ही पंचायत को संवैधानिक आधार प्रदान करने हेतु समय-समय पर (1952 के बाद) पंचायती राज संस्थाओं से संबंधित सभी के माध्यम से सुझाव दिये गये। पं. नेहरू के द्वारा 02 अक्टूबर 1959 को राजस्थान के नागौर जिले में पंचायती राज की आधारशीला रखी गयी थी। तथा 73 वॉ संविधान संशोधन के द्वारा 30 दिसम्बर सन् 1993 को विधानसभा में प्रस्ताव पारित कर दिया गया इसके अन्तर्गत 25 जनवरी सन् 1994 को मध्यप्रदेश पंचायती राज को व्यापक अधिकारों के साथ लागू कर दिया गया। पंचायती राज व्यवस्था में 29 विषय पर कार्य कर रही है। त्रि-स्तरीय पंचायतों, जनपद पंचायत, जिला पंचायत व नगर पालिकाओं का चुनाव करवाने वाला मध्यप्रदेश पहला राज्य बना।

आज अनेक कार्य पंचायती राज व्यवस्था सरपंच के द्वारा गाँव में हो रहे है, पहले की तुलना में आज गाँव विकसीत हो रहे है। लगभग प्रत्येक गाँव आज सिमेंट रोड़, पिने के पानी की टंकी, स्वास्थय केन्द्र, शोक गढडें, स्कूल, तालाब, आगनबाड़ी भवन, सामुदायिक भवन का निर्माण, मेड़बदंन, पेंशन योजनाएं और भी ऐसे अनेक कार्य है, जो सरपंच के माध्यम से हो रहे है।

अत: ग्राम पंचायत में सरपंच की भूमिका के लेकर कई महत्वपूर्ण सवाल होते है, मेरा मानना है कि सरपंच प्रतिनिधि व्यक्ति कम से कम 10 वीं या 12 वीं पास होना चाहिए। उसे विधायक या सांसद की तरह भत्ता राज्य सरकार की ओर से दिया जाना चाहिए। सरपंच की मासिक वेतन में वृद्धि किया जाना चाहिए। और समय-समय पर प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। और भी अन्य सुविधाएं सरकार की ओर से दिया जाना चाहिए। ग्रामीण विकास को सफल बनाने में सरपंच प्रतिनिधियों को उनके कार्यो के प्रति एवं कर्तव्यों के सफल निर्वहन करने में ग्रामीणों में जागरूकता आवश्यक है साथ ही शासन के द्वारा भी ठोस कदम उठाये जाने की आवश्यकता है। तभी पंचायती राज संस्थाओं में सरपंच की भूमिका पूर्णरूप से सफल होगी। वर्तमान परिदृश्य में देखे तो पहले की तुलना में आज पंचायती राज संस्था में सरपंच के द्वारा विकास के विभिन्न कार्य हो रहे है। केन्द्र व राज्य की अनेक योजनाएं संचालित हो रही है, और गाँव विकास की ओर अग्रेसित हो रहे है। गाँव में हर वर्ग को इसका फायदा मिल रहा है। सरकारों के द्वारा अनेक योजनाओं का संचालन पंचायती राज संस्था के माध्यम से हो रहा है।

निष्कर्ष एवं सुझाव – पंचायती राज संस्थाओं में सरपंच की भूमिका पूर्णरूप से सफल होगी। वर्तमान परिदृश्य में देखे तो पहले की तुलना में आज पंचायती राज संस्था में सरपंच के द्वारा विकास के विभिन्न कार्य हो रहे है। केन्द्र व राज्य की अनेक योजनाएं संचालित हो रही है और गाँव विकास की ओर अग्रेसित हो रहे है। गाँव में हर वर्ग को इसका फायदा मिल रहा है। सरकारों के द्वारा अनेक योजनाओं का संचालन पंचायती राज संस्था के माध्यम से हो रहा है। तभी पंचायती राज संस्थाओं में सरपंच की भूमिका पूर्णरूप से सफल होगी। वर्तमान परिदृश्य में देखे तो पहले की तुलना में आज पंचायती राज संस्था में सरपंच के द्वारा विकास के विभिन्न कार्य हो रहे है। केन्द्र व राज्य की अनेक योजनाएं संचालित हो रही है, और गाँव विकास की ओर अग्रेसित हो रहे है। गाँव में हर वर्ग को इसका फायदा मिल रहा है। सरकारों के द्वारा अनेक योजनाओं का संचालन पंचायती राज संस्था के माध्यम से हो रहा है।

अत: ग्राम पंचायत में सरपंच की भूमिका के लेकर कई महत्वपूर्ण सवाल होते है, मेरा मानना है कि सरपंच प्रतिनिधि व्यक्ति कम से कम 10 वीं या 12 वीं पास होना चाहिए। उसे विधायक या सांसद की तरह भत्ता राज्य सरकार की ओर से दिया जाना चाहिए। सरपंच की मासिक वेतन में वृद्धि किया जाना चाहिए और समय-समय पर प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए और भी अन्य सुविधाएं सरकार की ओर से दिया जाना चाहिए। ग्रामीण विकास को सफल बनाने में सरपंच प्रतिनिधियों को उनके कार्यो के प्रति एवं कर्तव्यों के सफल निर्वहन करने में ग्रामीणों में जागरूकता आवश्यक है साथ ही शासन के द्वारा भी ठोस कदम उठाये जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. पुखराज जैन, राजनीति विज्ञान, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा, पृष्ठ 21।
2. डॉ. यतीन्द्र सिंह सिसोदिया, डॉ. आशीष भट्ट, मध्यप्रदेश पंचायत राज व्यवस्था विविध आयाम, म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 2011 पृष्ठ 3
3. जहवाहरलाल नेहरू, सामुदायिक विकास पंचायत राज सत्ता साहित्य मण्डल, 1965 पृष्ठ 104
4. महिपाल, पंचायती राज, चुनौतियां एवं सम्भावनाएं, पहला संस्करण 2004 पृष्ठ संख्या 24 व 25।
5. मध्यप्रदेश पंचायत अधिनियम, 1981 पृष्ठ संख्या 103 लेखक दीपक कुमार भार्गव।
6. कोठारी रजनी, पॉलिटिक्स इन इंडिया, अरिमेट लांगमैन नई दिल्ली, 1970 पृष्ठ संख्या 95।

****

अलका सरावगी के कथा साहित्य में चेतना के विविध आयाम

सुनिता चौहान * डॉ. मंजुला जोषी **

प्रस्तावना – अंतिम दशक के कथा साहित्यकारो ने जीवन के विविध अतरंग और तनावपूर्ण छवियों के यथार्थ रूप अंकित किये। समसामायिक सात्यिकारों की रचनाओं में जीवन के नये संदर्भ और संबंधों के अदलाव को चित्रित किया है। नयी कहानी में व्यक्तिवादी रूझान परिलक्षित होता है। राजनैतिक वातावरण ने सहित्याकारों को भी भारी प्रभावित किया है कहानियों में जवीन के अतंर्विरोधी तनावो के विरोधाभासों को व्यक्त करती है नयी कहानी आंदोलन के दौरान अनके महिला कहानीकार उभर कर आयी। जिनमें अपनी मुक्ति के लिए छटपटाती नारी का चित्रण मिलता है। स्त्री –विमर्श के विभिन्न पहलुओं पर महिला लेखिकाओं ने उपन्यासों और कहानियों में माध्यम से अपने वैचारिक और भावनात्मक असंतोष और विद्रौह को व्यक्त किया है पिछले दो–तीन दशको में अनेक महिला रचनाकारों ने अपनी कृतियों से हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया है। जिन्होने अपनी रचनाओं के माध्यम से वर्तमान समय की अनेक समस्याओं को उठाया है आधुनिकता के प्रभाव से माननीय सवेदनाओं की समान अवस्था समाज के आदर्श मूल्यों का अवमूल्यन स्त्री–विमर्श, स्त्रियों की स्वाधीन अस्मिता का हनन करने वाली परम्परागत, धर्म आधारित वर्जनाए मानवीय संबंधो में वर्तमान स्थितियों के प्रभाव से उत्पन्न विघटनकारी तत्वों जैसी अनेक बदली हुई दशाओं को खुलकर अपनी रचनाओं में व्यक्त किया है। इस प्रकार अपनी रचनाओं के द्वारा उन्होंने वर्तमान यथार्थ को चित्रित कर स्वस्थ समाज की स्थापना के प्रति विचारों को व्यक्त कर साथ ही समाज की सोच में भी एक स्वस्थ्य परिवर्तन का अधिक किया है। तात्पर्य यह है कि इन महिला रचनाकारों ने नई वैचारिक पृष्ठभूमि तैयार करने की जद्दहोजहद की है। इतना ही नही अभिव्यक्ति के नये–नये आयाम भी साहित्य का दिये है।

इन्ही में अलका सरावगी जैसी मारवाड़ी संस्कारों में पली–भड़ी महिला ने अपनी रचनाओं के द्वारा पीढीयों के अन्तराल से उपजे मुल्य – सक्रमण तथा इतिहास और वर्तमान के द्वन्द्व के तनाव को अभिव्यक्ति दी है। स्त्री की पुरूष नकारवादी विचारधारा से असहमत होते हुए सरावगी जी स्वस्थ समाजवादी स्त्री –पुरूष संबंधो को स्थापित करने की पक्षधर है। एक स्वस्थ विकासित संवेदना वाले समाज में ही स्त्री पूरे आत्मविश्वास, स्वतंत्रता और सम्मान के साथ जीवन जी सकती है। रोजमर्रा की ढर्रे की जिन्दगी का चित्रण करना उनकी कहानी का उद्देश्य नही बल्की आधुनिकतावादी जीवन की संवेदनहीनता और विसंगतियों को उजागर करने पर ही अलका जी बल देती है। अलका सरावगी का समुचा लेखन कर्म यथार्थ परख है, उनके कथा साहित्य में जीवन की नित नूतन सम्भावनाओं की तलाश से परिपूर्ण है। दर्शाये गये शीर्षक के अतंर्गत वर्तमान दशक तक के कथा साहित्य में आये सामाजिक परिवर्तन तथा वैचारिक परिवर्तन का अध्ययन करना वर्तमान कथा साहित्य की शिल्पगत विशेषताओं तथा सामाजिक समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में अलकाजी के चिन्तन का अनुशीलन करना तथा उनके संपूर्ण कथा साहित्य के समग्र प्रभाव का विश्लेषण करना है। साहित्य की विधा में आये परिवर्तनों को रेखांकित करना, समकालीन यथार्थ,व्यष्टि और समष्टिगत सम्बन्धों और चिन्तनों का अनुशीलन करना। सरावगीजी का लेखक यात्रा से गुजरते हुए सामाजिक परिवेश की पडताल की जावेगी। अलका सरावगी के साहित्य में अभिव्यक्त सामाजिक, राजनैतिक चेतना का अनुशीलन किया जाएगा तथा अलका सरावगीजी के साहित्य में सांस्कृतिक और धार्मिक प्रवृत्तियों पर भी प्रकाश डाला जायेगा।

पिछले तीन दशकों में अनेक महिला रचनाकारों ने अपनी कृतियों के माध्यम से हिन्दी साहित्य को समुद्ध किया है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से नारी की अनेक समस्याओं के साथ वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण किया है। मानवीय संवेदनाओं की वर्तमान हास्मान स्थितियों के प्रति उन्होंने आक्रोश भी व्यक्त किया है। साथ ही उन्होंने समाज के आदर्श प्रतिमान मूल्यों का भी उल्लेख किया है जिनमें आदर्श मूल्यों की दयनीयता स्त्री विमर्श की अनेक प्रासंगिक स्थितियों का और स्त्रियों की स्वाधीनता के प्रति भी चिन्ता व्यक्त की है।

परम्परा धर्म पर आधारित वर्जनाओं और पुरुष वर्चस्ववादी सोच के अपरिवर्तनीय स्थितियों के प्रति भी नारी लेखिकाओं ने अपनी रचनाओं के माध्यम से असंतोष व्यक्त किया है। उन्होंने समाज की परम्परावादी दीवारो को ढहा कर स्त्री – पुरुष के समत्ववादी रिश्ते को कायम करने पर बल दिया है। प्रभा खेतान जैसी परम्परागत मारवाडी रीति–रिवाजों में पली बढी महिला ने विवाह जैसी संकीर्ण प्रथा को ही ध्वस्त कर समाज की प्रलित मान्यताओं को खुले आम ठुकराने का साहस किया है। रमणिका गुप्ता ने राजनैतिक क्षेत्र में अपनी प्रभावी भूमिका का निर्वाह करते हुए बिहार ओर झारखण्ड मैत्री पुष्पा ने अपने विचारोंतेजक निबंधों के माध्यम से पुरातन महिला ने दमन की प्रवृतियों के विरुद्ध वर्चस्ववादी विचारों पर कडे प्रहार किये है।

कृष्णा अग्निहोत्री ने असहनीय घरेलू हिंसा और उत्पीड़न को सहते हुए अपने अस्तित्व की खातिर विवाह के जुएँ को ही उतार कर फेंक दिया। 'गलियारे' शीर्षक कहानी संग्रह की कहानियों में नारी जीवन की विविध पीड़ाओं, विषमताओं, सामाजिक, प्रताड़नाओं तथा मानसिक द्वंद्व को उजागर किया है।

नासिरा शर्मा की 'पत्थर की गली' में संकलित कहानियों में मुस्लिम नारियों के जीवन का प्रमाणित अनुभव चित्रित किया है। नासिरा शर्मा लिरवती

*शोधार्थी (हिन्दी) शहीद भीमा नायक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बडवानी (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक व विभागाध्यक्ष (हिन्दी) शहीद भीमा नायक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बडवानी (म.प्र.) भारत

है' मेरी ये कहानियॉ महाजरत के दुख और मुजरो के सुख का मोहभंग करती हुई एक ऐसी गली की सैर कराती है जो 'पत्थर की गली' जिसमें रहने वाले अपने निकाय के लिए छटपटाते नजर आते है । अपनी पहचान के लिए जद्दोजहज के समुन्दर में गोते लगाते है। रूढ़िवादिता की बेड़ियों को तोड़कर खुले आसमान में उड़ाना चाहते है। पंखों को पसार कर उसमें सूरज की गर्मी ओर रोशनी भरने के लिए तड़पते है ओर कशमकश में पत्थर से टकराकर लहुलुहान को उठाते है।

साहित्य मानव के विचार तथा अनुभूतियों को व्यक्त करने का एक सशक्त माध्यम है । साहित्य का सिंहावलोकन करने से ज्ञात होता है कि भाषा व साहित्य के विविध आयामों के माध्यम से ही मानव की अभिव्यक्ति अधिक हुई है। एकांकी, कहानी उपन्यास, नाटक, कविता संस्मरण आदि के सहारे लेखक अपने अनुभवों को व्यक्त करता है। आधुनिक युग में ऐसे कई महान साहित्यकार है जिन्होने अपनी लेखनी को हर क्षेत्र में चलाकर अपनी मेधाशक्ति तथा प्रतिभा को परिचय दिया है। अलका सरावगी ऐसी ही महान प्रतिभाशाली लेखिका है।

अलका सरावगी अंतिम दशक के महिला साहित्यकारों में प्रभावशाली हस्ताक्षर है। उनकी रूचि बाल मनोविज्ञान से लेकर कॉर्पोरेट समाज तक जुड़ी हुई है। कथ्य और कथानक की मौलिकता अलका सरावगी के प्रखर रचनाकार घोषित करती है। अलकाजी स्वतंत्र रूप से लेखन कार्य कर रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समकालीन कहानी की पहचान पृष्ठ 39
2. नासिरा शर्मा- हिन्दी कहानी का इतिहास गोपाल राय के ग्रन्थ से उद्धृत, पृ. 201

****

Historical Analysis of Spread of Buddhism from India To Tibet

Dr. Shilpa Mehta *

Introduction - A most important epoch in the religious history of India is marked by the rise of Jainism and Buddhism, the dates of which have been ascertained approximately from the combined evidence of literary and inscriptional sources. These two religions, represent the most successful of a number of movements directed against the formality of Brahmanism and the supremacy of the priestly cast in the sixth century B.C. These two reformed religions, although springing directly from Brahmanism and inheriting many of its fundamental ideas, yet introduced new elements into the intellectual life of India. Both these religions arose and flourished originally in the same region of India,viz. the district to the east including the ancient kingdoms of Kosala, Videha and Magadha with the old province of Tirhut and south Bihar in Western Bengal.

Founder of Buddhism - The Buddha or Enlightened as he was called by his disciples was – Siddhartha whose date was probably from about 563 to 483 B.C. He belonged to the Kshatriya tribe of Sakyas and is often called Sakyamuni. Buddha shared the pessimism of his period and he sought a refuge from the world and a means of escape from existence, first in the doctrine of Atman and subsequently in the system of the several penance and self mortification. But neither of this satisfy him and he propounded his own system after a period of meditation. He gave the world the teachings of Four Truths, Eight Fold Path and Middle Path. Buddhism started to spread slowly in India until the time of Mauryan Emperor Ashoka, who was a public supporter of the religion. The support of Ashoka and his descendants made efforts to spread Buddhism throughout the enlarged Mauryan Empire and its neighbouring lands such as Central Asia and to the island of Sri Lanka. According to the edicts of Ashoka missionaries were sent to various places to spread Buddhism. In a curt record ,we get the name of missionaries sent out by Tissa, the son of Moggali (the author of Katha –Vatthu and the president of third council held in Ashokas reign and under his patronage).They were sent to Kashmir, to Gandhara ,to the Himalayas , to the coast of Burma and Ceylon. Each Party consisted of a leader and four assistants. Of the five Missionaries sent to the Himalayan region three were named as Majjhima, Kassapa- Gotta, and Dundubhissara.

Spread of Buddhism - The silk route transmission of Buddhism to China is most commonly thought to have started in the late 2nd or the 1st century B.C., probably as the consequence of the expansion of the Kushan empire in to the Chinese territory. In the 2nd century B.C., Mahayan sutras spread to China then to Korea and Japan. During the Indian period of esoteric Buddhism ie. From 8th century onwards, Buddhism spread from India to Tibet and Mongolia. When Buddhism was split in two vehicles ie. Lower vehicle (Hinayana) and greater vehicle (Mahayana) , the greater vehicle had fully accepted Tantra. The period which witnessed the spread of Buddhism in Tibet (600-1100) was roughly the period when Tantra was dominant cult in India. There were regular flow of the fresh developments from India into Tibet. Ghang – Chen or the land abounding in snow , is a native name for the Tibet by outsiders . Ghang – Chen in Tibetan lexicons, corresponds to Himavat. The first kings of Tibet reputedly came from the Magadha, the home province of Ashoka at a time when the Maurya Empire was breaking up. These kings down to 27th generation followed the old Tibetan religion Bon. During the reign of Lha-tho-tho-ri the 28th king, a volume of Buddhist canon reached the court , the Kushan were then ruling over north India and Inner Asia . Firm evidence about Buddhism in Tibet, dates from the time of Song – tsen Gampo (605-650) whose two queens, one from Nepal and one from China , were devout Buddhism canon. He had a scholary minister, Thomi Sambhota who devised an alphabet from Brahmi script and founded the systematic translations of the Buddhist canon. Temples were built and images of Buddha and Mahayana deities were installed. The principal temple was located in the newly founded capital of Lhasa. Monks and scholars from Nepal and India were invited to expound the Buddhas doctrine. The king drew up a code of customs and morals which were believed to be integral part of dharma. In his reign the Buddhist scriptures were translated in Tibetan language.

The progress of Buddhism was by no means smooth for the first two hundred years as it had to reckon with the hostility of native religion. The Bon religion was deeply rooted not only in the mind of common man , it was strongly entrenched in the court itself. The Bon priests disputed the

*Assistant Professor (History) Seth Mathuradas Binani Govt. P.G. College, Nathdwara (Raj.) INDIA

authority of the Indian monks and challenged them to polemics and mysteries. Victory in doctrinal debates was easy for the scholar monks who emphasized the doctrine of salvation for all. In the second half of the eight century during the reign of king Trisong-De-tsen , the Buddhist monk failed to meet Bon priests in an encounter of miracle. The Bon priest proclaimed the monks defeat and reconverted the bulk of population in their native faith. But the king not only invited the famous tantric mystic Padmasambhava to visit Tibet but also established Buddhism as the official religion of state. Guru Padmasambhava established the superiority of Buddhist magic and many people soon sought refuge in Buddhism. In addition to writing a number of important scriptures, he also established the Nyingma school. He was considerd as the saviour of Dharma and adored as Guru Rimpoche ie. Guru Ratna. Guru handled the problem of foreign religion with high statesmanship. With the help of Santarakshita ,he ordained the first seven natives into the Gedun (Sangha).,thereby founding the Lamaist order. A monastery on the river Tsang-Po was built by the king with the help of Guru Rimpoche and Santarakshita. Buddhism as the universal religion acclimatized itself to the native genius of the country and Guru's cult of Vajra (Dorje) became the national cult of Tibet. The order thrived well without dependence on monks from India but with the assassination of the great Chogyal Ralpa –Chen during whose time Tibetan language was reformed and its philosophical and religious terminology standardized.

Buddhism in Tibet went into serious decline during the next 150 years. After long time loyal and devout Buddhist living mostly in obscure and distant places invited saints and scholars from Nalanda and Vikramasila to visit Tibet and preach the saddharma. It was only during the 11th century, Srijnana Dipankara well known as Atisa came to Tibet and lived in central Tibet till he passed away in 1054 A.D.. He preached pure doctrine in west and central Tibet specially Kalachakra Tantra. He worked for the reconstruction and regeneration of the sangh in Tibet. Atisa readily approved the prefix of " I take refuge in the Guru (Lama)." and also sanctioned the occurance of Nirmanakaya in Tibet. He recognized the Tibetan tradition that Srong – tsen Gampo was incarnation of Avalokitesvara and prophesied that the same Bodhisattva would appear successively in the lineage of Dromton , the great disciple of Atisa. He also predicted that when the Dharma would be in danger again and no royal protection will be available, the Sanga would come forward and the Sangharatna Avalokitesvara would incarnate successively in the hierarch of the sect ,succeeding Dromton's disciples. The Dalai Lama are the successive incarnations in the fulfillment of Atisa's prophecy according to Yellow sect and all red sect have also accepted their authority despite all doctrine differences. Fourteen incarnations of Avalokitesvara ,the fourteen Dalai Lama are known to have ruled Tibet in fulfillment of ancient prophecies. It is said that Tibetan Buddhism played a very important role among the Mongols also. In 1578, Sonam Gyatso was invited to Mongolia who converted Altan Khan to Buddhism along with his tribe, the king conferred the title "Dalai" on him which means sea or ocean. This is from where the title Dalai Lama came. Tibetan Buddhism comprises the teachings of three vehicles of Buddhism : the Lesser Vehicle (Hinayana), Mahayana and Vajrayana. Tibetan Buddhism teaches methods for achieving Buddhahood more quickly by including the Vajrayana path in Mahayana.

There are four main schools of Tibetan Buddhism : Nyingma, Sakya ,Kagyu and Geluk. All four school belong to the Mahayana tradition. Difference among four schools belong to Mahayana tradition . Difference among the four schools are primarily use of contradictory terminology , tantras they favour and which lineage they follow.These four major schools are said to constitute the Nyingma "Old Translation" and Sarma "New Translation" traditions, the later following from the historical Kadam lineage of Tantric lineages. It include the three schools ie Kagyu , Sakya, Gelug and Jonang as minor school, which is branched from Sakya tradition. Another Western division of Tibetan Buddhism is into the Yellow and Red hat. By Red is meant the three earlier sects ie. Nyingma, Kargyu and Sakya and yellow hat denotes later Gelugpa and this distinction is due to the involvement in Rime movement verses the school which did not take part in it ie the Gelug.

There is a sharp difference in opinion regarding esoteric practices and monastic discipline between the so called Red and Yellow sects. But all temples and monasteries of all sects are equally holy and good both for congregation and pilgrimage. All incarnations of all sects, render obedience to the incarnation of Avalokitesvara - the Dalai Lama as the sole god of the land of snow. Tibet owed her identity and independence to the Dharma. Buddhism disappeared from India at the end of the Twelth century A.D. ,but it still flourished in the eastern Asia and its ancient books are preserved in four great collections – Pali (in Ceylon, Burma and Siam) ,Sanskrit (in Nepal), Tibetan and Chinese. Long before the development of Tibetan script, the folk poems and epics were orally handed down and enlarged from generation to generation. With the advent of alphabet and script, historical accounts called Yig Tshang (records), Deb-Ther (annals) and Gyal-rap (Genealogy of kings)came to be composed. Emphasis in historical compositions was on origin of Dharma in India and its spread in Trans Himalayas. Events recorded were about the royal patronage of Dharma, construction of monasteries and lives of monks, scholars and saints.

With the advent of Buddhism in Tibet, Sanskrit also put impact on Tibetan language. Lhasa in welcoming Sanskrit gave shelter to the language of the land of enlightment and Tibetan as the medium Dharma became as sacred as Sanskrit. The Tibetan script received its first impetus in the 8th century with the establishment of monastic university "Samaye" for the purpose of translation of the voluminous Buddhist text from Sanskrit into the vernacular.

The monastic universities of Tibet not only preserved the treasures of Sanskrit literature but also developed the Sanskrit traditions in their seats. Thus the expansion of Buddhism got its road through Sanskrit literature which became the bridge between India and Tibet. The literary works of Tibet are strongly influenced by Buddhist thought which are mostly religious , historical and biographical texts. The Tibetan Buddhist canon is loosely defined list of sacred texts recognized by various sects of Tibetan Buddhism. The Tibetans divided Buddhist text in two broad categories ie. 'Kangyur' – which consist words supposed to have been said by Buddha himself and 'Tengyur' – translated treatises is the section to which commentaries and abhidharma works are associated. Buddhism has exerted a particularly strong influence on Tibetan culture since its introduction in the 7th century. Buddhist missionaries who came mainly from India and Nepal introduced arts and customs of their respective places. Art, literature and music all contain elements of the prevailing Buddhist beliefs and Buddhism itself has adopted a unique form in Tibet, influenced by the local religion and beliefs. Mahayana Buddhist influence is also seen in Tibetan art which is deeply religious in nature. Bodhisattva were the main subject and were depicted ion Tibetan art. The most common bodhisattva is the Chenrezig deity who is often potrayed as a thousand arm saint with the eye in the middle of each hand representing the all seeing compassionate and hears the request. Most of the Tibetan art can be seen as a part of the practice of tantra. Thangka paintings done on cotton and linen and Tibetan Buddhist wall paintings can be found on temple walls as frescos in monasteries. Tibetan architecture is also influenced by Buddhism. The Buddhist prayer wheel along with dragons can be seen on nearly every Gompa in Tibet. Buddhist monasteries are the unusual example of Tibetan architecture.

Result- From ancient times till about the end of 11th century India and Tibet have very active cultural and commercial contacts. With the Turkish conquest of north India the active contact between both India and Tibet ceased which revived nearly 200 yrs ago when the East India Company started to trade with Tibet from Kalikata. Today, Tibetan Buddhism is adhered to widely in Tibetan Plateau, Mongolia, Northern Nepal, Bhutan etc. Buddhism has long been the main source of Tibetan's pride in their culture and country. Today the Buddhist are restructuring their religion through a complex process of social, political and economic adaptation. Tibetans, whose traditional, religious and cultural institutions had been decimated during the preceding two decades are trying to begin a Buddhist renewal so that their religion can attain new heights as before and light the world with its cultural and religious teachings.

References:-

1. Rapson,E.J .- Ancient India,Delhi,1985,pg.44
2. Mahavamsa Tika, Chapter12, Colombo Edition,1895
3. Devids, Rhys,T.W.-Buddhist India, Sushil Gupta Publication,1959,pg135 4.Zurcher, Eric [Ed.]- Buddhist conquest of China,3ed.,Brill Publication ,2007 pg-22-27
5. ibid – pg. 23
6. Bhattarcharya, Benoytosh- Sadhanamala, Gaekword oriental series,Vol.2
7. Sinha, N.C.-A Tibetologist in Sikkim, Namgyal Institute of Tibetology,2008,pg40
8. Kirkland,Russell- The History of Tibet , Vol.1, London,2003, pg.190n.12
9. Richardson,Hugh E. – A Corpus of Early Tibetan Inscriptions, Royal Asiatic Society, London, 1981, pg.75
10. Studholme, Alexander –The Origin of Om Manipadme Hum, Albany,NY 2002,pg.13-14
11. Beckwith, C.I. – The Revolt of 755 in Tibet, in : The History of Tibet ed. , Alex Mckay Vol.1 ,London 2003, pg.27

****

भवन निर्माण में कार्यरत महिला श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का मूल्यांकन

उषा राजे * डॉ. महेश गुप्ता **

प्रस्तावना – निर्माण कार्य क्षेत्र में अधिकतर अशिक्षित एवं कम पढ़ी–लिखी महिलाएँ निर्माण श्रमिक के रूप में कार्य करती हैं। कम शिक्षित होने के कारण इन्हें अपने अधिकारों व महिला श्रमिकों हेतु बनाये गये कानूनों की जानकारी नहीं होती है या बहुत ही कम होती है। निर्माण क्षेत्र असंगठित क्षेत्र में आता है। इस कारण इन महिला श्रमिकों में संगठन का आभाव होता है एवं कार्य की निश्चितता नहीं होती है। कार्य नियमित रूप से नहीं मिलने के कारण महिला श्रमिक परिवार को नियमित रूप से आर्थिक सहायता नहीं उपलब्ध करा पाती है एवं इनके परिवार की आर्थिक व सामाजिक स्थिति प्राय: कमजोर होती है।

परिवार में महिला प्रसुती के समय, स्वयं महिला श्रमिक अथवा श्रमिक की पुत्री के विवाह एवं श्रमिक की अकास्मिक मृत्यु के कारण उसकी पत्नि व बच्चों के सामने आर्थिक व कई तरह की सामाजिक समस्याएँ भी उत्पन्न हो जाती हैं। श्रमिकों की उपरोक्त स्थिति को देखते हुए प्रदेश शासन द्वारा मध्यप्रदेश भवन तथा अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मंडल का गठन दिनांक 10 अप्रेल, 2003 को किया गया एवं निर्माण मंडल के माध्यम से महिला श्रमिकों को सामाजिक सुरक्षा एवं सहायता प्रदान करने के लिए कई सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ जैसे प्रसुती सहायता योजना, स्वयं महिला श्रमिक एवं श्रमिक की पुत्री के विवाह लिए सहायता योजना, दुर्घटना बीमा, चिकित्सा सहायता, श्रमिक की मृत्यु पर सहायता के लिए श्रमिक परिवार को विभिन्न योजनाएँ प्रारंभ की गई है। इन योजनाओं के माध्यम से प्रदेश सरकार द्वारा महिला श्रमिकों की स्थिति सुधारने हेतु बहुत महत्वपूर्ण प्रयास किये जा रहे हैं।

श्रमिक महिलाओं के लिये संचालित महत्वपूर्ण योजनाएँ इस प्रकार हैं :–

1. प्रसूति सहायता योजना – प्रसूति के समय महिला श्रमिक को आराम मिल सके व माँ तथा होने वाला बच्चा सुरक्षित रहे, श्रमिक के परिवार को प्रसूति के समय आर्थिक सहायता व सुरक्षा मिल सके इस उद्देश्य हेतु यह योजना प्रारंभ की गई है। प्रसूति सहायता योजना वर्ष 2004 से प्रभावशील है। इस योजना के अंतर्गत हिताधिकारी महिला श्रमिक को गर्भावस्था की अंतिम तिमाही में 45 दिन की अवधि का अकुशल श्रमिक हेतु निर्धारित न्यूनतम वेतन प्रसूति हितलाभ के रूप में प्रदान किया जाता है। प्रसूति के उपरांत हिताधिकारी महिला श्रमिक को शहरी क्षेत्र हेतु 1 हजार तथा ग्रामीण क्षेत्र हेतु 1400 रू. पौष्टिक आहार हेतु सहायता प्रदान की जाती है। हिताधिकारी पुरूष श्रमिक को उसकी पत्नि की प्रसूति के पश्चात 15 दिन की अवधि का अकुशल श्रमिक हेतु निर्धारित न्यूनतम वेतन पितृत्व अवकाश के रूप में दिया जाता है।

निर्माण श्रमिक चाहे पुरूष हो या स्त्री, पति हो या पत्नी में से कोई भी यदि निर्माण श्रमिक के रूप मे पंजीयत है तो उसे योजना का लाभ प्राप्त होता है। हितग्राहियों को हितलाभ की राशि एकाउंट पेयी चैक के माध्यम से सीधे हितग्राही के खाते में प्रदान की जाती है। योजना से लाभान्वित संख्या एवं वितरित राशि का वर्षवार विवरण तालिका क्र. 1 में दिया गया है।

तालिका क्र. 1 – योजना से लाभांवितों की वर्षवार संख्या व वितरित राशि

क्र.	वर्ष	हितग्राही संख्या	वितरित राशि
1.	प्रारंभ से 2011 तक	631	3179290
2.	2011–2012	756	3731000
3.	2012–13	1873	7953609
4.	2013–14	623	2930120
5.	2014–15	281	1111828
	कुल	**4164**	**18905847**

स्त्रोत :– श्रमायुक्त कार्यालय, जिला इन्दौर से प्राप्त आंकड़े।

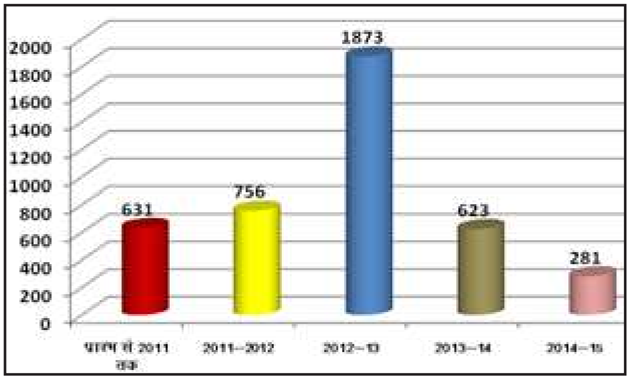

तालिका से स्पष्ट होता है कि प्रसूति सहायता योजना अंतर्गत वर्ष 2012–13 में सर्वाधिक हितग्राहियों को योजना का लाभ प्राप्त हुआ है। वर्ष 2012–13 में 1873 श्रमिक हितग्राहियों को कुल राशि रू. 7953609/– सहायत राशि वितरित की गई है। वर्ष 2013–14 में 623 श्रमिक हितग्राहियों को कुल राशि रू. 2930120/– एवं 2014–15 में 281 श्रमिक हितग्राहियों को कुल राशि रू. 1111828/– वितरित की गई है। तालिका का अध्न करने पर ज्ञात होता है कि श्रमिक हितग्राहियों की संख्या में लगातार कम होती जा रही है। यह योजना के प्रति उनकी अरूचि एवं असंतुष्ति को प्रदर्शित करता है। योजना के उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु हितग्राहियों में योजना के

* शोधार्थी (वाणिज्य) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्याल, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (वाणिज्य) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्याल, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रचार-प्रसार करने एवं योजना प्रक्रिया को सरल बनाने की आवश्यकता है। सहायता राशि में भी यथोचित वृद्धि किये जाने की आवश्यकता है।

2. हिताधिकारी की पुत्री/महिला हिताधिकारी के स्वयं के विवाह हेतु सहायता योजना – श्रमिक के परिवार में विवाह का कार्यक्रम जहाँ एक ओर खुशियाँ लाता है वहीं दूसरी तरफ कर्ज व कई तरह की समस्याएँ भी लाता है। कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण श्रमिक अपनी पुत्री के विवाह में कर्ज लेता है परन्तु उसे चुकाने में तो असमर्थ होता है या बड़ी कठिनाई से चुका पाता है। श्रमिक के परिवार को उपरोक्त स्थिति में सहायता करने के उद्देश्य से उक्त योजना वर्ष 30.09.2004 से प्रारंभ की गई है। योजनांतर्गत पंजीबद्ध महिला श्रमिक के विवाह/एक बार पुर्नविवाह एवं पंजीबद्ध श्रमिक की दो पुत्रियों की सीमा तक एकल विवाह के लिये रूपये 25000 प्रति विवाह सहायता प्रदान की जाती है। न्यूनतम पांच महिला श्रमिकों के सामूहिक विवाह के आयोजन की दशा में रूपये 23,000 सहायता एवं इसके अतिरिक्त रूपये 2000 प्रति विवाह, सामूहिक विवाह के आयोजक को अलग से प्रदान की जाती है।

हितग्राहियों को हितलाभ की राशि म.प्र.भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल के पोर्टल के माध्यम से सीधे हितग्राही के खाते में प्रदान की जाती है। योजना से लाभान्वित संख्या एवं वितरित राशि का वर्षवार विवरण तालिका क्र. 2 में दिया गया है।

तालिका क्र. 2 – योजना से लाभांवितों की वर्षवार संख्या व वितरित राशि

क्र.	वर्ष	हितग्राही संख्या	वितरित राशि
1.	प्रारंभ से 2011 तक	223	1385000
2.	2011-2012	115	941000
3.	2012-13	201	2440000
4.	2013-14	357	5375000
5.	2014-15	189	2785000
	कुल	**1085**	**12926000**

स्त्रोत :- श्रमायुक्त कार्यालय, जिला इन्दौर से प्राप्त आंकड़े।

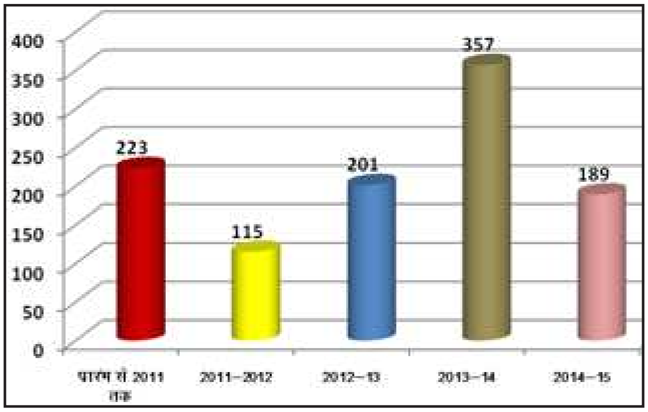

तालिका से ज्ञात होता है कि विवाह सहायता हेतु सर्वाधिक सहायत राशि वर्ष 2012-13 में 201 हितग्राहियों को कुल राशि रू. 2440000/- वितरित की गई है। वर्ष 2013-14 में 357 हितग्राहियों को कुल राशि रू. 5375000/- एवं सबसे कम 189 हितग्राहियों कुल राशि रू. 2785000/- विवाह हेतु सहायता राशि वर्ष 2014-15 में वितरित की गई है।

श्रमिक महिला के स्वयं एवं श्रमिक की पुत्री के विवाह हेतु यह योजना श्रमिकों की आर्थिक व सामाजिक स्थिति को असंतुलित होने से बचाने के लिये बहुत महत्वपूर्ण एवं प्रभावी योजना है। यह योजना जहाँ एक ओर श्रमिक को विवाह में सहायता प्रदान करती हैं वहीं उसे कर्जदार होने बचाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

प्रदेश सरकार द्वारा म.प्र.भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल के माध्यम से महिला श्रमिकों हेतु संचालित उपरोक्त योजनाओं से निर्माण श्रमिक के परिवार की निम्न आर्थिक व सामाजिक स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन एवं सुधार आयेगा। प्रदेश सरकार द्वारा महिला निर्माण श्रमिकों के लिये उपरोक्त योजनाओं के माध्यम से किये जा रहे कार्य अत्यंत सराहनीय एवं उनकी निम्न स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिये प्रशंसनीय हैं।

सुझाव :

1. असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों को शिक्षा प्रति जागरूक करने की आवश्यकता है। इस हेतु सरकार एवं स्वयं सेवी संगठनों द्वारा विशेष शिक्षा कार्यक्रम संचालित किये जाने की आवश्यकता है।
2. सामाजिक सुरक्षा योजना की विभागीय प्रक्रिया को सरल बनाये जाने की आवश्यकता है।
3. योजना हेतु पंजीयन एवं अन्य प्रक्रिया में कार्य कर रहे कर्मचारियों को इस हेतु विशेष प्रशिक्षण दिये जाने आवश्यकता है जिससे वे योजना के महत्व को समझे एवं श्रमिकों की यथासंभव सहायता कर सकें।
4. श्रमिक ठेकेदारों एवं उद्योग मालिकों को योजनाओं की सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करने एवं अपने श्रमिकों का योजना हेतु पंजीयन करवाने एवं योजनाओं की जानकारी प्रदान करने हेतु नियम बनाये जाने की आवश्यकता है।
5. श्रमिक ठेकेदारों एवं उद्योग मालिकों द्वारा श्रमिकों को शिक्षा के लिये प्रोत्साहित किये जाने की आवश्यता है।

निष्कर्ष – सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का लाभ प्राप्त करने में अशिक्षा सबसे बड़ी बाधा है। योजना की प्रक्रिया को सरल किये जाने की आवश्यकता है जिसे अशिक्षित एवं कम शिक्षित श्रमिक आसानी से समझ सकें एवं योजनाओं से लाभ प्राप्त कर अपना सामाजिक एवं आर्थिक विकास कर सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'योजना दर्पण निर्माण श्रमिकों के कल्याण की छह योजनाएँ', मध्यप्रदेश भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल द्वारा वर्ष 2005 में प्रकाशित।
2. 'निर्माण श्रमिकों के लिये पंजीयन एवं योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु मार्गदर्शिका', मध्यप्रदेश भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल द्वारा वर्ष 2008 में प्रकाशित एवं निर्माण श्रमिकों के राज्य स्तरीय सम्मेलन में 19 अगस्त 2008 को विमोचित।
3. 'प्रदेश के लाखों निर्माण मजदूरों के लिये सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ प्रचार पुस्तिका', मध्यप्रदेश भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार कल्याण मण्डल द्वारा प्रकाशित।
4. Website : www.google.com, mp.labour.mp.gov.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

कृषक की आर्थिक एवं सामाजिक प्रतिष्ठा की सूचक अफीम

डॉ. प्रीति मुरड़िया *

प्रस्तावना – भारतवर्ष में कृषि अधिकांश जनसंख्या के जीवन का आधार ही नहीं अपितु राष्ट्र का मेरूदण्ड भी है। किसी भी देश की आर्थिक व्यवस्था में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का बहुत महत्व होता है। यदि कृषि को लाभकारी व्यवसाय बनाना है तब हमें कृषि उत्पाद के साथ कृषि विपणन का पूर्ण ध्यान देना होगा।

उपज को निश्चितता का आधार प्रदान कर शासकीय व्यवस्था के अंतर्गत स्थापित कर एक नवीन स्वरूप प्रतिपादित किया गया और उपज विपणियों को स्थापित किया गया।

विपणिया भारत में दो प्रकार की है –

1. स्कन्ध विपणि
2. उपज विपणि

1. स्कन्ध विपणि में सूचित प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय किया जाता है, जो मुख्य रूप से औद्योगिक वातावरण में दृढ़ता प्रदान करता है।
2. उपज विपणि में कृषि उपज का विपणन किया जाता है, इसलिए कहा गया है कि यदि किसी देश की आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक स्थिति का अध्ययन करना है तो हमें राष्ट्र का भ्रमण करने की बजाय उस देश की स्कन्ध विपणि में जाकर उस राष्ट्र की आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक स्थिति का अध्ययन कर सकते है। शहरी क्षेत्रों में जहाँ औद्योगिकरण की प्रवृत्ति का विकास हुआ है, वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि के व्यापारीकरण की मनोवृत्ति का भी उदय हुआ है। अत: खाद्यान्न फसलों की तुलना में व्यापारिक फसलों को भी अधिकाधिक क्षैत्रों में बोने को किसान प्रवृत्त हो रहा है,जिसमें प्रमुख व्यापारिक (नगद) फसल है 'अफीम'।

अफीम की पैदावार भारत में प्राचीनकाल से ही चली आ रही है आयुर्वेद तथा संस्कृत ग्रंथों में इसका उल्लेख अहिंफेन के नाम से आता है।

आइने अकबरी में उल्लेख मिलता है कि सम्राट अकबर के कृषि एवं वाणिज्य मंत्री टोडरमल किसानों से लगान के रूप में उत्पादित अफीम का 1/4 से 1/10 भाग प्राप्त करते थे तब से अब तक अफीम की कृषि पर केन्द्रीय सरकार का पूर्ण नियंत्रण चला आ रहा है।

अफीम रबी की प्रमुख सिंचित फसल है यह अत्यधिक खिर्चीली, जोखिम पूर्ण एवं श्रम प्रधान फसल है। इसके लिए बलुई, ढोमट, मवाई, भूरी मिट्टी उपयुक्त होती है और औसत तापमान 150 से 200 सेंटीग्रेट होना आवश्यक है।

अफीम के रंग एवं कीमतीपन तथा तस्करी के कारण इसे 'काला सोना' कहा जाता है। अफीम का पौधा 1 मी. ऊँचा होता है तथा तना हरा पुष्प बैंगनी, लाल व हरे होते है पोस्त से अफीम निकालना विशेषता का काम है, किसान शाम के वक्त पोस्त के फुलों को काटते हैं और सुबह उसमें से अफीम इकठ्‌टी करते हैं अफीम क्षेत्रों में नीलगायों का कहर होता है, लिहाजा किसानों को रातभर गश्त देनी पड़ती है, नीलगायों को भी इसकी लत लग जाती है। इसीलिए वे बार-बार खेतों में आती है। बिच्छु और साँप भी अफीम की मादक गंध से आकर्षित होते है।

सरकार हर साल सीजन से पहले न्यूनतम उत्पादन मापदण्ड तय करती है तय मानक से ज्यादा अफीम का तस्करी में जाने का खतरा रहता है मालवा-मेवाड़ पट्टी से तस्करी का माल पंजाब-दिल्ली आता है और अंतर्राष्ट्रीय बाजार में भेजा जाता है। सरकार के मुकाबले तस्कर कहीं अच्छा दाम देते हैं, लिहाजा अफीम की काला बाजारी का आकर्षण बहुत ज्यादा है। तस्कर 1 किलो का 7000/- रू. तक देते है और यदि इससे हेरोईन बनाई जाती है तो दाम कई गुना बढ़ जाता है। लिहाजा किसान अपने उत्पादन को कम करके दिखाते है और काला बाजार से पैसा कमा लेते है।

अफीम की फसल हेतु खसखस के दाने बोये जाते है खसखस की बुआई अक्टूंबर के उत्तारार्द्ध एवं नवंबर के पूर्वार्द्ध में की जाती है मिट्टी को महिन कर फिर हल से लाइने बनाकर कतारों में या क्यारियों में खसखस के दाने बिखेर कर सिंचाई की जाती है।

अफीम की बुआई के समय यह कहा जाता है कि यदि अफीम 'कार्तिक' माह में बोई जाती है तो भरपूर फसल प्राप्त होती है, और यदि 'पोष' माह में बोई जाती है तो न्यूनतम औसत से भी कम पैदावार प्राप्त होती है।

अफीम की कृषि से उपज के रूप में मुख्य उत्पाद अफीम के अतिरिक्त सह उत्पाद के रूप में खसखस एवं उपोत्पाद के रूप में डोडा-चूरी प्राप्त होती है अफीम एक काला एवं भूरा गुड जैसा पदार्थ होता है। इसमें अल्कोलाइड की मात्रा निम्नानुसार है –

मारफीन 8-14%, कोडीन 11.8-4%, 3.5-7.6%, थीवेन 0.5 - 1%, पापावरीन 0.1% अफीम का उपयोग विभिन्न औषधियों में होता है।

अफीम के कई आयुर्वेदिक फायदें है जो निम्नानुसार है –

1. मोतियाबिंद में आँखों की दवाई के लिए अमृत है।
2. दाँत के दर्द को कम करता है (जायफल और अफीम को समान मात्रा में मिलाकर लगाने से दाँत दर्द ठीक होता है)
3. खाँसी दूर करने में (मुनक्का और 1/4 भाग अफीम लेने से खाँसी रोग दूर होता है)।
4. अनिद्रा दूर करने में (गुड़ और पिपलामुर और 1/2 ग्राम अफीम को बराबर मात्रा में मिलाकर लेने से अनिद्रा दुर होती है)
5. कमर दर्द में राहत (पोस्ता दाना और मिश्री समान मात्रा में मिलाकर 1

***अतिथि विद्वान, राजीव गाँधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत**

कप दूध के साथ दिन में उबाल कर लेने से कमर दर्द में राहत मिलती है)।

नुकसान – अफीम से हेरोईन प्राप्त होती है जिसे नशे के रूप में बड़ी मात्रा में प्रयोग किया जाता है। यह सफेद व भूरे पावडर के रूप में होता है इसे नशा करने वाले सूंघ कर या कागज पर जला कर धुएँ को खीचकर नशा करते है। दर्द से मुक्ति तो मिलती है और आनंद की प्राप्ति भी होती है लेकिन लगातार सेवन व अधिक मात्रा में लेने पर इंसान की मौत का कारण बनती है।

फायदे व नुकसान के कारणों पर सरकार का इसमें पूर्ण नियंत्रण है। 1994 में इसकी तस्करी लगभग बंद हो गयी थी। लेकिन नीतियों के परिवर्तन से पुन: तस्करी चरमोत्कर्ष अवस्था पर है। इसे सरकार समय-समय पर कानुन बनाकर रोक लगा रही है। सन् 2004-05 से 2014-15 तक कई किसान न्यूनतम उपज भी उपलब्ध नहीं करवा पाये थे। लेकिन भारत सरकार के वित्त मंत्रालय द्धारा पुन: पाँच साल की उत्पादकता के आधार पर पुन: लाइसेंस प्रक्रिया प्रारंभ की गई।

इस प्रकार अफीम की खेती एक शहंशाही कृषि है कृषक के आर्थिक स्तर एवं सामाजिक प्रतिष्ठा की सूचक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. योजना, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार 2016
2. आर्थिक समीक्षा - 2017-18
3. https://m.patika.com>tags7afeem-kes
4. https://www.healthumbox.com
5. https://m.wikipedia.orglwiki>
6. वित्त मंत्रालय, भारत सरकार 2017-18

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं भारत

डॉ. आराधना शुक्ला* निधी श्री **

शोध सारांश – अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष अपने सदस्य देशों के वैश्विक आर्थिक स्थिति पर नजर रखने का काम करती है, जो अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय दरों को स्थिर रखने के साथ साथ आर्थिक वृद्धि को सहज बनाने मे सहायक है। इस संगठन का मुख्य उद्देश्य व अल्प विकसित एवं विकासशील देशों के आर्थिक स्थिरता, गरीबी को कम करना, रोजगार को बढ़ावा देना तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को सुविधाजनक बनाना है।

शब्द कुंजी – अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष

प्रस्तावना – अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एक अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक संस्था है। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा –कोष की स्थापना प्रथम व द्वितीय महायुद्ध के मध्य की अवधि मे विद्यमान वित्तीय विषम परिस्थितियों का परिणाम था। जुलाई, 1944 में ब्रेटनवुड्स नामक स्थान पर 44 राष्ट्रों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन आयोजित किया गया एवं अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा – कोष की स्थापना की गयी।

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के उद्देश्य – कोष के उद्देश्य , को चार्टर के अनुसार निम्न प्रकार बताये गये है :

अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक सहयोग की उन्नति करना – इस कोष का प्रथम उद्देश्य सदस्य देशों में मुद्रा नीति सम्बन्धी सहयोग स्थापित करना और मुद्रा सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को बातचीत एवं सहयोग से हल करना है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा – कोष का दुसरा उद्देश्य ऐसी सुविधाएँ जिससे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बढावा मिले, अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक सहयोग की उन्नति करना, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ाना, विनिमय दर में स्थिरता, अन्तर्राष्ट्रीय भुगतानों की विशमता को दूर करना, विनिमय नियंत्रण को हटाना, अन्तर्राष्ट्रीय भुगतान असन्तुलन को कम करना, उत्पादक पूँजी विनियोग, असन्तुलित आर्थिक विकास में सहायक। भारत का मुद्रा–कोष से घनिष्ठ सम्बन्ध है , तथा मुद्रा – कोष नीति–निर्माण एवं कार्य–संचालन मे भारत निरन्तर योगदान रहा है।

तालिका 1 – (निचे देखे)

31 मार्च, 2002 के बाद भारत में ने मुद्रा – कोष से कोई ऋण नहीं लिया है। 23 अक्टुबर , 2010 जी–20 के वित मंत्री के बैठक में कई सहमती बनी, बैठक के बाद भारत के वित मंत्री प्रणब मुखर्जी ने कहा कि आईएमएफ में भारत की रैंक तीन अंक ऊपर हो जाएगी, भारत आठवें स्थान पर आ जाएगा, मुखर्जी ने कहा,'हमने महत्वपूर्ण कामयाबी हासिल की है, आईएमएफ में अब भारत का कोटा 2.75 फीसदी बढ़ गया है, इससे पहले भारतीय हिस्सेदारी 2.44 फीसदी थी।

आईएमएफ में एशिया प्रशांत विभाग के उप निर्देशक केनेथ कांग ने कहा कि एशिया का परिदृष्य अच्छा है और यह मुश्किल सुधारों के समिप भारत को आगे ले जाने का महत्वपूर्ण अवसर है। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) ने भारत के लिए त्रिवक्षीय ढांचागत सुधार दृष्टिकोण अपनाने का सुझाव दिया, 7–09 अक्टूबर , 2016 में हुए बैठक मे यह निष्कर्ष सामने आता है कि भारत की चरम गरीबी एवं भ्रष्टाचार को 2030 तक विश्व बैंक के मिशन तहत समाप्त करना है, युवाओं का उद्यमिता हेतु प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है, आर्थिक असामनताओं को दूर करने हेतु अनेक सरकारी प्रयास किये जाने चाहिए, वैश्वीकरण एवं प्रौद्योगिकीकरण हेतु भारत में कार्य किये जाना आवश्यक हो गया है, तथा महिला सशक्तिकरण हेतु अनेक योजनाओ को संचालित करते हुए अनेक योजनाओ को क्रियान्वित किया जाना चाहिए, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के वर्तमान अध्यक्ष जिम योंग कॉग का कहना है कि भारत में आर्थिक विकास एवं विनियोग के प्रत्याय दर तीव्र गति से प्राप्त की जा सकती है, क्योंकि यह एक बहुल संसाधन देश हैं , 27 जनवरी , 2016 के कोटा समीक्षा में भारत का कोटा बढ़कर 2.78 प्रतिशत हो गया है, तथा मताधिकार बढ़कर 2.66 प्रतिशत हो गई है, इस प्रकार यह संकेत प्राप्त हो रहा है कि, भारत चहुमुखी आर्थिक विकास कर रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ओझा शिवकुमार, भारतीय अर्थव्यवस्था बौद्धिक प्रकाशन , इलाहाबाद।
2. सिन्हा वी.सी., व्यावासायिक पर्यावरण, एस.बी.पी.डी.,पब्लिकेशन हाउस।
3. प्रतियोगिता दर्पण।

तालिका 1

वर्ष	1991	1992	1993	1994	1995	1996	1997	1998	1999	2000
कुल ऋण	2623	3451	4799	5040	4300	2374	1313	664	287	26

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) आर. आई. टी. महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) प्रगति महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

Role of Management in Faculty Development

Dr. Prabhat Chopra *

Abstract - Even though people cannot be compartmentalized and treated uniformly, academic administrators can learn a variety of techniques to manage people. For these techniques to be successfully employed, academic leaders must first develop a clear understanding of the management role and then apply the appropriate technique such as motivating, mentoring, and performance counseling. The purpose of this paper is to present an overview of human resource management and faculty development fundamentals including motivating, mentoring, and performance counseling. In marked contrast with the K-12 sector of American schooling, we in higher education have traditionally come to our careers as teachers and managers of learning with little, if any, formal professional training or experience other than in the content of our various disciplines and perhaps employment as graduate teaching assistants. Our lack of professional training as educators was perhaps understandable as long as relatively little was known about how learning occurs, how college students develop, and what the effects of the college experience are on that development. Our lack of training was perhaps irrelevant as long as most of our students were similar to us culturally and as learners and relatively advantaged both socially and financially. Much has been written about the characteristics and needs of both Net Generation students and Millennial students: their learning expectations and styles, the ideal learning spaces for these students, and the best ways to support their learning. However, just as the student population has changed and continues to change, so too are faculty members changing. Today's 21st-century faculty members share some characteristics with their students. For instance, computers were present throughout the educational experience of these faculty members, they likely had access to the Internet throughout their graduate studies, they may have taken online courses, they probably use mobile technologies, and they are generally comfortable with a wide array of electronic communication tools. 21st-century faculty members may have interacted with technology extensively by the time Web 2.0 tools began to emerge, and many use these tools in their teaching today.

Introduction - Managing people is a continuing leadership challenge. The foundation discipline for managing people relates to human resource management and faculty development in academic settings. In human resource management, administrators are challenged to balance the needs of individuals and the expectations of the organization for the mutual benefit of both. A primary goal of management is to lead and develop people and manage the organization in alignment with the mission and vision of the organization. Which includes managing resources, mentoring, motivation, and development? Academic administrators and industrial leaders frequently consider managing people a most complex aspect of their position. As a result, managing people has earned a place in management theory as a separate discipline of business. This discipline, human relations (or resource) management, is defined as the process by which leaders bring together the needs of the organization with factors that motivate employees to create an environment that is mutually beneficial.

In the academic setting, this process parallels the issue of faculty development. The ultimate goal is to supplement leaders' and administrators' intuition with facts and theories that will enhance their ability to lead, nurture, and motivate individuals and manage the organization more effectively. Basic business theories for managing people incorporate general progressions from mentoring to motivation to performance counseling. The ultimate goals are to develop personnel and to advance the organization. Faculty with varying goals, objectives, and needs, however, may not be manageable by the general theories of personnel management. The consequences of using such traditional theories could be poor performance, conflict, lack of trust, lack of motivation, and eventual unhappiness for both the administrator/chair and the faculty member. Primary reasons for this difficulty lie within the complex nature of human interrelationships, the need to understand and respect cultural diversity, and the varying perceptions that people may have of the same object or issue. These relationships must be managed with meticulous communication and leadership skills by the administrative staff. Thus, the resulting challenge for a chair/dean is to manage and lead a diverse group of people while respecting individual career development plans that must complement the mission and vision of the department, the school, and the university.

Now, however, the wide diversity of our students, with

*Associate Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

a forecast of greater diversity still to come, together with the nation's pressing need for truly well-educated graduates and a growing dissatisfaction with the quality of our graduates' knowledge, skills, and values, suggest it is time we systematically use the fruits of research to inform our professional practice. Instruction in courses, the central educational activity we traditionally use to produce learning in colleges and universities, is largely comprised of a lecture system in which 70% to 90% or more of American college professors use the lecture as their preferred instructional method. Academic advising, where it occurs at all, is largely focused on helping students make short-term decisions as they choose from menus of course titles.

Many higher education researchers and influential national reports issued over the last two decades have asserted that such educational practices cannot produce the complex kinds of student outcomes required today by employers and for effective citizenship. The shift from a tradition-based, primarily a theoretical educational process to a research- and theory-based process will require not only constant innovation to incorporate new findings about learning but also the high-quality faculty and staff professional development necessary to support this innovation throughout each teacher's and manager's career. Listed here are a number of projected future trends that will likely influence both the way we conduct our work in American colleges and universities in the years ahead and the role that faculty development will have to play in enhancing institutional quality.

With significant numbers of faculty members retiring in the next decade, 21st-century faculty will continue to need support in some of the same areas as their predecessors: orienting to the institution, teaching and conducting research, navigating the tenure track, and developing professional networks. But they will need support in new areas as well: keeping up with an increasingly technological workplace, developing ways to further integrate technology into the instructional experience, and assessing student learning in a variety of instructional delivery modes. Indeed, "encouraging faculty adoption and innovation in teaching and learning with IT." Reaching out to, supporting, and also leveraging the talents of 21st-century faculty members will thus require colleges and universities to consider a varied menu of support options.

Trends in College and University Teaching - College teaching increasingly will be viewed as a true profession in its own right, underpinned by a solid base of knowledge derived from empirical studies on learning and student development, college effects on students, and the management of learning in complex organizations. Professors will be understood to need solid grounding in both theory and practice in both higher education and one or more disciplinary content areas.

Intended student outcomes will become far richer than they in many cases are now. They will beyond what is often primarily factual and low-level conceptual learning in a particular discipline to mastery of diverse higher-order cognitive skills such as critical thinking, complex problem solving, and principled ethical reasoning and beyond the cognitive and psychomotor domains of learning to outcomes that will include significant affective components such as self-esteem and interpersonal and team skills. Together these outcomes can lead to the development of the "whole person," a result we profess to value but often fail to achieve, and can fit a student for a fulfilling life, a successful professional career in a rapidly changing world, and significant contribution as a citizen in a democratic society. To achieve these diverse, complex, and often difficult-to-develop outcomes, teachers will use student development theory based on empirical psychological research to adapt their instruction and advising to the needs of individual students. Teachers will routinely conduct classroom research using input, process, and outcome assessment methods to understand their students and their students' educational processes and thus to improve learning.

There will be a marked diminution of faculty isolation from colleagues and the "privacy" of individual courses: courses will be viewed as interrelating parts of curricular systems, and faculty will be members of educational teams. Teachers will view these corporate endeavors as important means of improving their effectiveness, not as infringements on their autonomy or as in any way diminishing their academic freedom. The educational efforts of the faculty will be increasingly linked with those of our colleagues at the secondary and elementary levels as we move toward becoming all one system.

Evaluation of faculty as educators increasingly will be based on the results of modern input, process, and outcome assessments, using multiple criteria and multiple indicators to reveal effectiveness in facilitating learning. Faculty evaluation will focus on the quality with which teachers implement what is currently considered good professional practice in curriculum design, instruction, academic advising, and other educational activities as appropriate to defined and written intended outcome goals and objectives and the characteristics of their students.

Evaluation of faculty performance as educators also will focus on their informed contributions to improving the quality of their institutions' educational processes: curricula, courses, and advising and assessment programs. The system of incentives provided for college and particularly university teachers will change substantially. In those institutions where available rewards currently are perceived as undermining educational quality by focusing on activities only weakly related to learning and student development, a wider array of professional work will be recognized as essential to improving institutional quality and effectiveness.

- **Faculty Development Needs**

Faculty Knowledge of Existing Opportunities - While the bulk of this report describes unmet needs for faculty development, there was some awareness of existing faculty development opportunities on campus. A small number of

faculty observations addressed faculty use or impressions of these opportunities. A few additional observations mentioned off-campus faculty development programs, such as leadership training offered by disciplinary associations. FTEP was the specific program named most often. While FTEP's activities were viewed positively by those who did participate, low attendance was also reported. Also mentioned were new faculty orientation and a year-long, FTEP-sponsored program for early-career STEM faculty.

Even if they were aware of faculty development programs, many respondents were unclear about the origins of particular programs, as the following rambling description exemplifies Lack of clarity about the sponsorship of various faculty development activities may not prevent participants from finding value in them, but does suggest that faculty are unlikely to know where to look on campus for faculty development opportunities. Two comments also noted concerns with the common model assumed by speakers as the primary model of group-based skill development in workshops: one person preferred a one-on-one approach, and one wanted a chance to practice new skills in her own setting, then come back for a follow-up session.

Overall, comments on existing faculty development activities indicate that, while individual activities are valued, awareness is not high and campus-wide offerings are not extensive, The Area Scholars Program was also offered in other disciplines. It has been reconfigured and now focuses solely on teaching, assessment, and integration of research with teaching rather than the full span of junior faculty concerns complete, or coherent. Indeed, it can be argued that the LEAP workshops were received very positively in part because relatively little else was on offer.

Overview of Faculty Development Needs - A larger body of data observations in all addressed specific, unmet needs for faculty development. Most of these observations fell into six broad categories—three categories that reflect the varying needs of faculty at differing career stages, comprising of the total:

1. Needs of pre-tenure faculty for making the transition to new roles and achieving tenure.
2. Needs of earlier-career faculty (assistant and associate ranks) for specific skills.
3. Needs of tenured faculty for post-tenure career exploration and growth plus three that were raised by faculty across career stages.
4. Needs for strong leadership and effective processes within departments.
5. Needs for intellectual community and interaction among faculty across campus.
6. Needs for new views to support faculty career development over time.

Development to Improve Department Life - Needs centered on the functioning of departments were among the most often mentioned, at of all observations. These include two main topics: development of the leadership skills and knowledge of department chairs, and development of department members' collective skills in communication, mentoring, and other areas. Bilimoria et al. (2006) note the importance of the department as a mediating link between institutional characteristics—faculty members' experiences of leadership and mentoring—with the job satisfaction of individual faculty. They find that a "collegial, inclusive, and respectful immediate work environment" is a more important factor in job satisfaction for women faculty than for men. Thus strategies to improve departmental life may also address the broader goal of retaining a diverse faculty.

1. Chairs Training - Better training for department chairs was the single most-mentioned faculty development need. Nearly a quarter of these observations explained why the chair is an obvious target for faculty development, due to their central role in the department and influence on individuals and the department as a whole. Because of this central role, this speaker suggested that chairs were also a key target for ADVANCE projects seeking change in women's representation within institutional leadership. Department chairs are important targets because they allocate resources and play influential roles in hiring, advancement and promotion. While this quotation cites women's careers in particular, the same factors apply to the success of any new faculty member. In addition to controlling resources, chairs set a tone, both in overt messages and through their behavior. As the following examples show, chairs communicate—consciously or not— departmental expectations and norms for a wide range of issues: work style and departmental presence, balance between work and personal life, and decision-making processes. Chairs are also an efficient target for university resources, because they are in a position to lead change across the department as a whole.

2. Improving Departmental Relations - While chairs were identified as central to improving departmental life, improved relations among all department members were noted in 8% of observations. As one speaker noted, "A lot of the things that make people's lives difficult in academia go on at the departmental level." Problem areas mentioned by respondents included "turf" battles involving groups of faculty, "hazing" of newer faculty by senior colleagues, faculty who monopolize meetings, and posturing that take place to obtain resources, such as at annual review time. Mentoring of pre-tenure faculty was highly variable, effective in some departments and nearly absent in others. Most suggestions for improving these interactions centered on communication. Skills that were seen to be important in departments and other small-group settings include:

1. Listening and responding to expressed concerns.
2. Working with colleagues long-term, including learning from experience how to work with individuals while not holding grudges: "You are working with the same people on a series of different committees. If... you can't get along with them, then you're not going to get anywhere on the committee."
3. Knowing how and when to work through "back chan-

nels" vs. in public meetings.

4. Leading meetings effectively, including setting agendas, managing time and group dynamics, separating work best done by committee vs. by individuals outside of meeting time, and not calling a meeting when there is no group task.
5. Participating effectively in meetings, including being actively involved, concise, and getting one's point across effectively.

3. Support at All Levels - Broadly speaking, faculty development tends to be either a distributed service, offered at the department or college level, or a centralized service, provided by a unit such as a teaching or faculty development center. Two critical institutional or organizational characteristics affecting whether faculty development is a distributed or a central function are the size and the geographic distribution of the institution (i.e., whether the institution is a single- or multi-campus site). As the size of the institution gets larger and/or as the institution becomes more geographically distributed, services usually become more distributed. Smaller, less geographically distributed institutions tend to deliver services centrally.

Many institutions, regardless of size, have developed a menu of faculty development options, as illustrated in the following two examples. In most cases, faculty members can choose from a variety of resources, depending on their needs: for instance, structured courses, multi-semester or multi-year programs, mentoring, or online tutorials.

The Five-Year Plan for Support and Development - High-quality teaching and learning support programs will include faculty development over several years.

The Faculty Development Five-Year Plan

Year	Target Audience	Services and/or Areas of Support Offered
0	Graduate Students, Teaching Assistants	1. Basic instructional strategies and methodologies 2. Introduction to learning technologies 3. Teaching course or certificate to complement graduate degree
1	New Faculty Members	1. Mentoring with senior faculty 2. Exposure to institutional policies, culture, and expectations
2–5	Established Faculty Members	1. Institutional orientation 2. Ongoing support for new instructional delivery models, technologies, and pedagogies 3. Advanced course management system support

Year 0: Graduate Student Pipeline Programs - Year 0 is the time before graduation when the soon-to-be faculty members are still in graduate school completing their doctorates. During this time, institutions can support colleges and departments by offering pedagogical programs or training institutes. Support may come in the form of an interdisciplinary teaching certificate that introduces graduate students to a variety of technology topics.

Year 1: New Faculty Member Orientations - Most, if not all, institutions provide entering faculty members with some form of orientation designed to acquaint them with institutional mission, policies, procedures, and culture. The typical orientation program is structured to present a number of topics with a relatively modest investment of time on the part of the new faculty member. Often these programs utilize a one- or two-day format delivered before the start of, or very early into, the first semester. Orientation programs frequently rely on non-faculty professionals from areas such as the center for teaching and learning, the registrar's office, academic affairs, or the library. Although the value and importance of new faculty orientation is generally acknowledged, the limitations of time and the content of the traditional models often create an experience that can aptly be described as a "crash course" for delivering the "survival skills" needed to navigate the initial semester or year. On the other hand, delivering a longer, comprehensive, in-depth faculty orientation program would represent a substantial commitment of resources by the institution and a significant commitment of time by the faculty and the department.

Years 2–5: Faculty Mentorship, Orientation Programs, Classes - Once faculty members have become oriented, institutions have an opportunity to leverage the 21st-century faculty members' instructional and technological skills and also to engage and begin integrating them in the academic community. One approach may be a "reverse mentoring," in which newer, more technologically savvy faculty members assist and work collaboratively with the senior faculty. In fact, during the first two to five years of a new faculty member's career, the junior member and the senior faculty have experiences from which all can benefit. The senior faculty can orient the junior faculty member to the institution's traditions, cultural norms, practices, and unique history, whereas the junior faculty member can introduce the senior faculty to new pedagogical approaches, emerging technologies, instructional tools, and delivery models.

Being Specific: Some Helpful Questions to Ask - Suggested here are several questions to help a curriculum or faculty development committee, dean, or department chairperson assess an institution's or subunit's faculty professional development needs. The questions are general. They can be used in a college wide program, such as when developing a new general education curriculum, or within an academic department. The questions are equally applicable to the training of staff serving in any educational role, for example, graduate teaching assistants, new faculty hires, or more senior faculty members. An individual teacher can use the questions to identify areas

where reading or consulting at the campus teaching effectiveness center might be helpful.

1. What are the specific intended competency outcomes we have defined for our students in each curriculum? Have these outcomes been articulated as effective written goals and objectives that provide a useful foundation for program design, implementation, and assessment? Are we actively using these statements of intended results to manage learning in every program?
2. What educational processes does current higher education research suggest can best develop these outcomes with our students?
3. What specific professional knowledge and skill competencies do the faculty and staff require to implement these educational processes effectively and efficiently?
4. Does each educator now have these competencies as appropriate to his or her role? Specifically, how do we know?
5. What types of activities are best suited for developing these professional competencies with our particular people?
6. Does our faculty development program now have the capacity—the professional staff with appropriate knowledge and skills—to cultivate these competencies? If not, specifically how should it be changed so it can meet our needs at a high level of quality?
7. How do we know if this professional development program is effective: that staff competencies are being developed and that our people are thoroughly prepared for working with our students?
8. Are participants in the faculty development program using their new knowledge and skills effectively in their teaching and advising?
9. To what extent are actual student (or other) outcomes affected by the program? Specifically, how do we know? Are these effects of high quality?
10. How should the program be modified such that its actual outcomes—its results—more closely approach its intended outcomes?

Colleges and universities today confront growing dissatisfaction off-campus with the actual outcomes we are producing coupled with a remarkable growth in competition for our students' business from non-traditional educational organizations. Some of these competitors employ trained educators to develop and implement their instruction. Some will be able to offer higher-quality learning opportunities than institutions with untrained faculty and traditional methods. Expert observers of higher education view these organizations as putting many traditional colleges and universities at risk for survival in the years ahead.

High-quality faculty professional development for every teacher is an urgent need and will become essential to institutions' capacity to compete for students in the years ahead and to survive and thrive. We have a wide array of new knowledge about student learning and development, and we have research-based methods of fostering this learning and development. If used, this knowledge and these methods can permit us to produce learning on a scale never before achieved in our colleges and universities and not likely to be duplicated outside them.

Conclusion - In the 21st century, colleges and universities need to consider faculty development programs in the same way that they view academic programs for their Net Gen and Millennial students. In other words, successful faculty development programs should include mentoring, delivery in a variety of on-campus and off-campus formats (face-to-face, blended, online, self-initiated/self-paced), and anyplace/anytime programming to accommodate just-in-time needs. Faculty members are learners with needs and constraints similar to those of students. Support programs must be valuable, relevant, current, and engaging. They should also demonstrate best practices in providing a participatory, facilitated learning environment. In addition, faculty development programs should address the multiple roles and needs of the faculty member as facilitator, teacher, advisor, mentor, and researcher. Institutions should also consider that offering a dynamic faculty development program will serve not only full-time, but also part-time faculty—relied on heavily by some institutions. Finally, faculty development can occur outside official programs: internal opportunities can include serving on and/or leading committees, writing and administering grants, and designing and facilitating official faculty development programs; external development opportunities can include attending conferences, furthering academic studies, conducting research projects, and collaborating with colleagues from other institutions.

Implementing and sustaining successful faculty development initiatives continues to be both an opportunity and a challenge, especially with the anticipated severe budget cuts that many institutions are facing. As noted earlier, the EDUCAUSE community recently identified "encouraging faculty adoption and innovation in teaching and learning with IT" as one of the top-five teaching and learning challenges of 2009. Thus it is critical that institutions continue to seek systemic ways to support teaching and learning innovation and to connect to successful programs such as the ones mentioned in this article. A critical component of an innovative teaching and learning environment continues to be sustainability: the process of faculty development must begin before students enter the academic profession and must continue at all subsequent levels of the 21st-century faculty member's career.

References :-

Books :

1. Weimer, Maryellen. 1990. Improving College Teaching: Strategies for Developing Instructional Effectiveness. San Francisco: Jossey-Bass. [232 pp]
2. Wright, Alan, and Associates. 1995. Teaching

Improvement Practices: Successful Strategies for Higher Education. Bolton, Mass.: Anker. [420 pp]

Journals :

1. The Journal of Staff, Program, & Organization Development. [New Forums Press, Stillwater, Oklahoma. http://www.newforums.com/prod03.htm]
2. To Improve the Academy. [Professional and Organizational Development Network in Higher Education. http://www.podnetwork.org/publ/academy.html]

Websites :

1. International Associations | Faculty of Management Studies
2. Rashmi Sinha, brother Amit Ranjan sell world's largest slide-sharing site SlideShare to LinkedIn.com for Rs 640 cr - Economic Times
3. Improving with age- Hindustan Times

****

NSS Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिला श्रमिकों के मानवाधिकार

रवि प्रकाश चौधरी * डॉ. ए.बी. सोनी **

शोध सारांश – भारत में असंगठित क्षेत्र रोजगार के लिए एक बड़ा अवसर उपलब्ध कराता है। किन्तु असंगठित क्षेत्र के नाम से पहचाने जाने वाले इस असंगठित रोजगार के क्षेत्र के विभिन्न आयाम जैसे कि कार्य के घण्टे, मजदूरी, कार्य की प्रकृति आदि निर्धारित नहीं होती है। असंगठित क्षेत्र के रोजगारों में आधे से अधिक हिस्सा महिला श्रमिकों का है। असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिला श्रमिक अपने नियोक्ता की शोषण, भेदभाव एवं लैंगिक उत्पीड़न से परेशान होती है; ये लैंगिक रूप से कमजोर एवं भीरू प्रकृति की होती है। इन करणों से अपना रोजगार छोड़ देती है। असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिला श्रमिकों को अत्यन्त कम मजदूरी, मजदूरी में भेदभाव, लैंगिक भेदभाव, शोषण, अत्याधिक समय तक कार्य करने एवं उत्पीड़न जैसी अनेकों समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार यह अवलोकन किया गया है कि असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिला श्रमिकों के मानवाधिकारों का उल्लंघन होना आम बात हो गयी है। अनेकों अन्तर्राष्ट्रीय संगठन जैसे कि संयुक्त राष्ट्र संघ, अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संघ उपबंधित करते हैं कि सभी मनुष्य समान है, तथा महिला और बच्चों के मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए प्रावधान करते हैं। भारतीय संविधान भी सभी को समता का अधिकार उपबंधित करता है। इस शोध पत्र में असंगठित क्षेत्र की महिला श्रमिकों के मानवाधिकारों एवं उनसे सम्बन्धित मुद्दों का वर्णन किया गया है।
शब्द कुंजी – मानवाधिकार, असंगठित क्षेत्र, कार्यरत् महिला, नियोजन समानता।

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध पत्र असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिला श्रमिकों के मानवाधिकार के अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य भारत में महिला श्रमिकों को प्राप्त विधिक संरक्षण एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्राप्त संरक्षण का अध्ययन कर निष्कर्ष पहुँचना है। मानव अधिकार वे अधिकार होते हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को मानव होने के नाते प्राप्त है। मानव अधिकार वे अन्तर्निहित अधिकार होते हैं जिसे मनुष्य अपने से अलग नहीं कर सकता।

मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति को आजीविका के अधिकार पर जोर देता है जिससे भोजन, वस्त्र, आश्रय, काम आदि शामिल हैं। भारत में एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले श्रमिकों और विशेष रूप से असंगठित क्षेत्र में महिला श्रमिकों की सुरक्षा के लिए कई विधियाँ बनाई गयी हैं जिससे इन श्रमिकों के मानव अधिकारों की रक्षा हो सके और वे समाज में सम्मानपूर्ण जीवन यापन कर सकें।

मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सर्वसम्मति से 1948 में मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा एवं सिविल एवं राजनैतिक अधिकारों की प्रसंविदा, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की प्रसंविदा के द्वारा महिलाओं को भी पुरूषों के समान ही मानवाधिकार प्राप्त हैं।

सन् 1979 के अभिसमय में संयुक्त राष्ट्र ने महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के भेदभाव की समाप्ति की उद्घोषणा किया (CEDAW) जो कि विकास में महिलाओं के अधिकारों और विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं के अधिकारों को संरक्षित करने का प्रयास किया गया है तथा ग्रामीण महिलाओं के अपने परिवारों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने में उनकी भूमिका के लिए महत्वपूर्ण नियमों को स्वीकार किया गया।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 1999-2000 के अनुसार असंगठित क्षेत्र में लगभग 370 मिलियन श्रमिक कार्यरत थे जो कि देश के कुल श्रमबल का 92 प्रतिशत था। यह देश में कार्य बल के बड़े हिस्से को रोजगार का अवसर प्रदान करने के सम्बन्ध में और राष्ट्रीय उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शुद्ध घरेलू उत्पादन में असंगठित क्षेत्र का योगदान और मौजूदा मूल्य पर कुल एन.डी.पी. में हिस्सेदारी 60 प्रतिशत से अधिक है। घरेलू बचत के मामले में मुख्य रूप से असंगठित क्षेत्र की हिस्सेदारी कुल सकल घरेलू बचत का लगभग तीन चौथाई है (दास 2012)।

महिलायें वयस्क आबादी का 50 प्रतिशत और श्रम शक्ति के लिए तिहाई हिस्से का प्रतिनिधित्व करती हैं। ये कुल कार्य घण्टों को लगभग दो तिहाई हिस्सा नियोजित रहती हैं और विश्व आय का केवल दसवां हिस्सा प्राप्त करती हैं। पुरूष एवं महिलाओं के द्वारा बाजारू एवं गैर बाजारू गतिविधियों में समय व्यतित करने के सम्बन्ध में मानव विकास रिपोर्ट वर्ष 2000 के अनुसार 31 देशों ने विचार किया और पाया कि लगभग सभी देशों में महिलायें पुरूषों की तुलना में घण्टों ज्यादा काम करती हैं। विकासशील देशों में कुल का औसत 53 प्रतिशत महिलाओं द्वारा सम्पादित होता है और औद्योगिक देशों में कुल का औसत 51 प्रतिशत महिलाओं द्वारा सम्पादित होता है। मोटे तौर पर महिलाओं के कुल कार्य के घण्टों को लगभग दो तिहाई समय राष्ट्रीय गतिविधियों से अन्यथा कार्यों में व्यतित होता है (विमल 2005)।

सभी महिला श्रमिक कर्मचारियों के बीच असंगठित क्षेत्र का काम बहुत लोकप्रिय है। आम तौर पर असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाएं निरक्षर और कम पढ़ी लिखी होती है, उन्हे दिया जाने वाला वेतन विभेदकारी होता है, बड़े पैमाने पर उनके नियोक्ताओं द्वारा उनका शोषण किया जाता है, उनकी सामाजिक स्थिति भी निम्न स्तर की होती है, वे दकियानुसी और

* शोधार्थी (विधि) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** प्राचार्य, डी.पी. विप्र विधि स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

अनपढ़ परिवारों से होती है। इस क्षेत्र में महिला श्रमिकों का काम सामान्यत: मौसमी होती है। असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाएं कमजोर सामाजिक एवं आर्थिक स्तर की गरीब महिलाएं होती हैं। असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलायें निर्माण कार्यों में, कृषि मजदूरी में, घरेलू कार्यों में, घरेलू नौकरी में नियोजित होती हैं तथा लड़कियाँ दुकानों, वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों आदि मे नियोजित होती हैं। असंगठित क्षेत्र के महिला श्रमिकों के मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु भारत में भी अनेकों विधिक प्रावधान किये गये हैं जो अग्रलिखित हैं-

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 14 समता के अधिकार की गांरटी देता है तथा अनुच्छेद 15 एवं 16 लिंग आधारित भेदभाव का निषेध करता है। लेकिन अनुच्छेद 15(3) एवं 16(4) में महिलाओं के पक्ष में विशिष्ट विधियों की अनुमति प्रदान की गयी है। अनुच्छेद 38 में परिवार को राष्ट्रीय इकाई एवं समाज का आधार बताया गया है और यह भी कहा गया है कि राज्य को समुदाय द्वारा मान्यता प्राप्त नैतिकता और पारंपरिक मूल्यों की रक्षा करनी चाहिए। अनुच्छेद 39(क) में महिलाओं को भी पुरूषों के समान जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने, अनुच्छेद 39(घ) में पुरूष एवं महिलाओं दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन प्राप्त करने, अनुच्छेद 39(ङ) में पुरूष एवं महिला कर्मकारों को प्रतिकूल परिस्थितियों के रोजगार से संरक्षण करने हेतु उपबंध किये गये हैं। अनुच्छेद 42 में महिलाओं के काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं की सुनिश्चितता तथा प्रसूति सहायता हेतु प्रावधान उपबंधित हैं। इसके अतिरिक्त महिला श्रमिकों के मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु भारतीय श्रम विधियों में भी प्रावधान किये गये हैं जो अग्रलिखित हैं-

जिनमें न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, मातृत्व लाभ अधिनियम, समान पारिश्रमिक अधिनियम, अवकाश सुविधाएं आदि सम्मिलित है। लेकिन वास्तविकता यह है कि असंगठित क्षेत्र की महिला श्रमिकों के लिए नियोक्ता द्वारा सक्रिय रूप से निष्पादित नहीं किया जाता है। लिंग भेद के बिना समान कार्य के लिए समान वेतन संयुक्त राष्ट्र के सदस्य देशों का कानून है। भारत में संविधान के भाग 4 नीतिनिर्देशक तत्वों के प्रावधानों में इसे अनुप्रमाणित किया गया है। भारत में समान कार्य या समान प्रकृति के कार्य के लिए समान पारिश्रमिक की अवधारणा प्रयुक्त होती है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 39(डी) में समान कार्य के लिए समान वेतन के सिद्धान्त का उल्लेख है और अनुच्छेद 14 सभी को विधि के समक्ष समता की गारंटी प्रदान करता है। भारत ने सामन पारिश्रमिक अभिसमय 1958 को अनुमोदित किया है।

समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 के अन्तर्गत समान कार्य या समान प्रकृति के कार्यों के लिए नियोक्ता पर बिना लिंग भेद के समान वेतन भुगतान का उत्तारदायित्व अधिरोपित किया गया है। यह अधिनियम सम्पूर्ण भारत पर विस्तारित है। समान पारिश्रमिक संशोधित अधिनिमय, 1978 के द्वारा विस्तारित करके इसके क्षेत्राधिकार को कार्मिक प्रशासन के अन्य पहलुओं जैसे कि भर्ती, पदोन्नती, प्रशिक्षण या स्थानान्तरण के लिए बढ़ाया गया। लेकिन वास्तव में असंगठित क्षेत्र की महिला श्रमिकों को पुरूष श्रमिकों के समान मजदूरी प्रदान नहीं की जाती हैं। इसके अलावा कार्य स्थल में यौन उत्पीड़न, अत्यधिक लम्बे समय तक काम लेकर नियोक्ताओं द्वारा असंगठित क्षेत्र में महिला श्रमिकों का शोषण हो रहा है। असंगठित क्षेत्र में महिला श्रमिकों को कार्यस्थल मे ंइन सभी समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, वहां उन्हे अपने कार्य और नौकरी खो देने का भय होता है। मूल समस्या यह है कि वे संगठित नहीं हैं और अलग-थलग तथा बिखरे हुए हैं। इसके अलावा वे काम की प्रकृति के आधार पर वर्गीकृत होती है जैसे - निर्माण श्रमिकों के रूप में, शहर के बाहर रहने वाले महिला, घरेलू नौकर, शहर के एक विशेष मुहल्लों या विस्तार क्षेत्र में कुछ घरों में काम करने वाली। आवश्यक कौशल की कमी और नौकरी के नुकसान के डर से वे नियोक्ताओं का शोषण सहन करने के लिए विवश होती है। असंगठित क्षेत्र में कार्य करने वाली महिलाओं की इन समस्याओं से सम्बन्धित कई पूर्व अध्ययनों में इन समस्याओं का उल्लेख किया गया है। मानवाधिकारों का प्रवर्तन ही असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं की समस्याओं और चुनौतियों का समाधान है।

उपसंहार - उपरोक्त अध्ययन शीर्षक असंगठित क्षेत्र में कार्यरत् महिला श्रमिकों के मानवाधिकारों के अध्ययन के उपरान्त यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि इनके मानवाधिकरों के संरक्षण के लिए भारतीय विधि व्यवस्था एवं अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों में पर्याप्त प्रावधान मौजूद हैं। इन प्रावधानों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि महिला श्रमिक खास कर असंगठित क्षेत्र में कार्यरत् श्रमिकों को इन प्रावधानों का समुचित ज्ञान का अभाव होना और भारतीय अर्थव्यवस्था की इस हेतु जिम्मेदारी महसूस होती है। जैसा कि श्रमिक वर्ग सदियों से शोषण एवं अत्याचार से पीड़ित रहा है, इस पीड़ा को कम करने में भारतीय विधि व्यवस्था सक्षम है। महिला श्रमिकों को विशेष रूप से भारतीय संविधान एवं विभिन्न श्रम विधियों में सशक्त बनाये जाने हेतु उपबंध हैं। समस्या यह है कि इन उपबंधों का प्रचार एवं प्रसार यदि वैज्ञानिक तरीके से किया जाये तो असंगठित क्षेत्र में कार्यरत् अनपढ़ श्रमिकों को लाभ प्राप्त होगा और उनके शोषण एवं अत्याचारों में कमी होगी और उनके मानवाधिकारों को बेहतर संरक्षण प्राप्त हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दास, गिरधारी प्रसाद (2012): भारत के असंगठित क्षेत्र में मजदूरों की सुरक्षा अर्थशास्त्र और सामाजिक विज्ञान में अनुसंधान का अन्तर्राष्ट्रीय जर्नल वॉल. 2 संख्या 2, फरवरी 2012 पृ. 188-197
2. गोथोस्कर, सुजाता (2003): वैश्वीकरण में कार्य की विवशता: अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में वैश्वीकरण और महिला श्रमिक एक परिप्रेक्ष्य, A Perspective Combat Law Vol. 1. No. 5 जनवरी 2003
3. रागी, शरण बसप्पा और सिंधे, जगन्नाथ आर (2011): आनौपचारिक क्षेत्र और मानवाधिकारों में महिला कार्यकर्ता, Development at International Perspective in: Developments in Social Sciences Edited by Atik. Ur – Rahman S.M. and Dr. Parveen Kumar, Kumbargoudar, Jaipur, Aadi Publications 2011 page 182 – 203
4. विमला, एम. (2005): घरेलू महिला सेवकों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति: त्रिसूर निगम का एक केस स्टडी तिरूवनंतपुरम: Keral Research programme on Local level Development, CDS 2005
5. शर्मा, डॉ. गंगा सहाय : श्रमिक विधियाँ, सेण्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद 6वां संस्करण 2014
6. बाबेल, बसन्ती लाल : भारत का संविधान, सेण्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद 10वां संस्करण 2011
7. अग्रवाल, एच. ओ. : अन्तर्राष्ट्रीय विधि एवं मानवाधिकार, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन इलाहाबाद 12वां संस्करण 2010
8. कटारिया, राजपाल : श्रमिक विधियाँ, ओरिएण्टल पब्लिकेशन इलाहाबाद द्वितीय संस्करण 2010

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

हिन्दी साहित्य में किन्नरों का यथार्थवादी चरित्र-चित्रण

डॉ. पिंकी मिश्रा *

प्रस्तावना – प्रसिद्ध विचारक कॉडवेल का कथन हैंकि, 'साहित्य का मोती समाज की सीपी में ही जन्म लेता हैं'। साहित्य को समाज का दर्पण इसलिए भी कहा जाता हैं, क्योंकि समाज में घटित होने वाली प्रत्येक घटनाओं की सिलसिलेवार अभिव्यक्ति का माध्यम साहित्य ही हैं। कोई साहित्यकार अपनी लेखनी से समाज की जिस चिंता और संवेदना का स्पर्श करता हैं, उन सभी का आधार भी साहित्य ही होता हैं। समाज से संवाद स्थापित करना हो या फिर समाज को दिशा निर्देशित करने का कार्य हो, सभी में साहित्य अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता हैं। विशेष रूप से हिंदी साहित्य की बात की जाए तो यह स्पष्ट हो जाता हैं, कि हिंदी साहित्य अपने जन्म से लेकर तो वर्तमान तक अनेक विषयों को समसामयिकता के साथ प्रस्तुत करता रहा हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, एवं मुस्लिम विमर्श सहित अनेक विचारधाराओं पर पूर्ण मनोयोग से चर्चा की हैं तथा विभिन्न समस्याओं के समाधान प्रस्तुत किए हैं। साहित्य के अन्तर्गत समाज के शोषित, वंचित और उपेक्षित वर्गो पर भी गहन चिन्तन किया जा रहा है। इन्हीं में से एक उपेक्षित वर्ग हैं, किन्नर, या यूं कहा जाएं तृतीयपंथी अर्थात तीसरा समाज।

किन्नर समुदाय का परिचय – किन्नर शब्द हिंदी के दो शब्द 'कि' और 'नर' से मिलकर बना हैं, जिसका अभिप्राय हिमाचल की किन्नर जनजाति से ना होकर उस वर्ग से हैं, जो पूर्ण रूप से ना तो स्त्री हैं और न ही पुरूष। वास्तव में जनसामान्य की भाषा में जिसे हिजड़ा कहा जाता हैं। हिजड़ा शब्द सुनते ही हमारे मन मस्तिष्क में एक ऐसे वर्ग की कल्पना होती है, जो अलग तरह की भाव भंगिमाऐं, आचार-विचार, रहन-सहन आदि के लिए जाने जाते हैं। यदि किन्नरों की श्रेणी पर विचार-विमर्श किया जाए, तो यह कहा जा सकता है कि देवी-देवताओं के बाद गंधर्वो व यक्षों के समान ही गौरव और अधिकार की प्राप्ति किन्नरों को हुआ करती थी। प्राचीन भारतीय पौराणिक ग्रंथों, वेद-पुराणों और साहित्य में किन्नर हिमालय अथवा हिमकुट पर बसने वाली अति प्रतिष्ठित आदिमजाति मानी जाती थी। हमारे पुराणों किन्नरों को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया हैं-

1. वायु पुराण के अनुसार किन्नर अश्वमुखों के पुत्र हैं अर्थात एक ऐसे समुदाय से संबंधित हैं जो, गायन व नृत्य कला में निपुण हुआ करते थे।
2. मत्स्य पुराण के अनुसार किन्नर समुदाय को हिमालय पर्वत पर रहने वाली एक जनजाति के रूप में जाना जाता था।
3. हरिवंश पुराण के अनुसार किन्नर ऐसे वर्ग से संबंधित हुआ करते थे, जो प्राय: फूल और लता से सुसज्जित श्रृंगार कर नृत्य किया करते थे।
4. अजंता के भित्ति चित्रों में भी किन्नरों के चित्र देखें जा सकते हैं।
5. बौद्ध साहित्य में किन्नरों को मानव मुखी पक्षी के रूप में देखा गया हैं।
6. कालिदास ने कुमारसंभव के प्रथम सर्ग में किन्नरों का बहुत ही मनोरम चित्र प्रस्तुत किया हैं।

वर्तमान परिवेश में किन्नरों कीसमाजिक स्थिति – आज भी समाज में जो महत्व स्त्री और पुरूषों को मिलता है, वह इन तृतीयपंथी समुदाय के लोगों को नहीं मिल पा रहा है। समाज और सरकार दोनों के दृष्टिकोण एवं विचारधारा में यह समाज, यह वर्ग उपेक्षित है, अस्तित्वहीन है। हाल ही में भारत सरकार द्वारा यह निर्णय लिया गया, कि अब यह तृतीयपंथी समाज आधार कार्ड के माध्यम से अपने अस्तित्व की उपस्थिति को दर्ज करा सकेगा। इसी बात से यह साबित हो जाता है, कि समाज का यह वर्ग कितना दयनीय और उपेक्षित हैं। वास्तव में हमारे समाज का ताना-बाना मर्द और औरत से मिलकर बना है लेकिन इसी समाज का हिस्सा थर्ड जेंडर यानी तृतीयपंथी समुदाय को आज भी हेय दृष्टि से देखा जाता है। पूरे समाज के लिए इन्हें एक बदनुमां दाग के सिवा कुछ और नहीं समझा जाता। इस संदर्भ में डॉ. एम. फिरोज खान द्वारा संपादित पुस्तक 'थर्ड जेंडर' की यह पंक्तियां बहुत सटीक प्रतीत होती हैं कि 'हिजडों' की ना आवाज हैं, ना नाम, ना परिवार, ना इतिहास, ना सोच, ना खुशी, ना गम, ना हक, ना व्यक्तित्व।

पौराणिक कथाओं में किन्नरों का उल्लेख – किन्नरों के जीवन पर हमारे प्राचीन धर्म ग्रंथों में भी बहुत कुछ लिखा गया है। महाकवि तुलसीदास द्वारा रचित रामचरितमानस के बालकांड में तुलसीदास जी ने देवी-देवताओं की आराधना करते समय किन्नरों की भी वंदना करते हुए कहा है कि –

'देव, दनुज, नर, नाग, खग, प्रेत, पीतर, गंधर्व।
बंदेऊ, किन्नर, रजनीचर, कृपा करहु अब सर्व।'

महाभारत महाकव्य में शिखंडी एक ऐसा पात्र था, जो किन्नर था। प्रसिद्ध गांडीवधारी अर्जुन ने भी अपने अज्ञातवास के एक वर्ष का समय किन्नर का रूप धारण करके व्यतीत किया था। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री कौटिल्य ने भी अपने अर्थशास्त्र में किन्नरों का उल्लेख किया था। ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार हिंदू और मुस्लिम शासकों द्वारा विशेष रूप से किन्नरों को रानियों के महलों की पहरेदारी हेतु नियुक्त किया जाता था। राजा -महाराजाओं के दरबार में किन्नर नाच-गाकर सभी का दिल बहला कर मनोरंजन किया करते थे। लेकिन इज्जत उन्हें किसी भी दौर में नसीब नहीं हुई।

हिंदी साहित्य में किन्नरों का यथार्थवादी चरित्र-चित्रण – हिंदी साहित्य में भी गद्य की अनेक विधाओं के माध्यम से किन्नर वर्ग पर प्रकाश डाला गया हैं। मानोबी बंधोपाध्याय की आत्मकथा **'पुरूष तन में फंसा मेरा नारी मन'** में लेखिका ने सोमनाथ नाम के एक ऐसे पुरूष का वर्णन किया है, जिसका जन्म तो एक पुरूष के रूप में हुआ हैं परन्तु उसकी भावनाएं, इच्छाएं,

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) एम. के. एच. एस. गुजराती कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

विचारधाराएं एक स्त्री की तरह कोमल व सुंदर हैं। इसी के चलते उसे अपने जीवन में हिजड़ा, छक्का, पावईया, जैसे उपहास व अपमान सूचक शब्दों का सामना करना पड़ता हैं। विद्यालय में सहपाठियों द्वारा कटाक्ष किया जाना, उसके बाद महाविद्यालय और कार्यक्षेत्र में भी इस प्रकार का कुटिल व भेदभावपूर्ण व्यवहार इनकी सामाजिक स्थिति को बखूबी चित्रित करता है। ए रेवती की **'हमारी कहानियां हमारी बातें'** किन्नर समाज पर लिखा गया एक ऐसा ग्रंथ है, जो किन्नरों की कहानी को किन्नरों की जुबानी अभिव्यक्ति करता है। एक किन्नर के रूप में रेवती का दर्द, उसकी वेदना समाज को झकझोर कर रख देती हैं। इसके अतिरिक्त हिंदी साहित्य के विभिन्न उपन्यासों के माध्यम से भी किन्नरों के सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्ति किया गया है। समाज की मुख्यधारा से किन्नरों को जोड़ने और उनकी वेदना को समाज के सम्मुख रखने का श्रेय अनेक साहित्यिक उपन्यासों को जाता है। महेन्द्र भीष्म की रचना **'किन्नर कथा'**, चित्र मुदग्ल द्वारा रचित **'नाला सोपारा'**, निर्मला भुराडिया द्वारा रचित **'गुलाम मंडी'**, प्रदीप सौरभ द्वारा रचित **'तीसरी ताली'** तथा भगवंत अनमोल द्वारा रचित **'जिंदगी फिफ्टी-फिफ्टी'** ऐसे कई उपन्यास हैं, जिसमें लेखकों ने अपनी लेखनी के माध्यम से तृतीयपंथी इस समाज के लिए न्याय और अधिकार की मांग की हैं। जिसके प्रतिफलस्वरूप समाज का यह शोषित वर्ग भी आज सम्मान, प्रेम, और स्नेह पाने का अधिकारी बनने की दिशा में प्रयासरत हो रहा हैं।

निष्कर्ष – कहने का अभिप्राय यह है, कि वर्तमान में यदि किन्नर समाज की वास्तविक स्थिति का आकलन किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाता है, कि इनका अस्तित्व आज भी खतरे में हैं। हालांकि इस विषय में कुछ संवैधानिक अधिकार 21वीं सदी में इस समाज को मिले हैं, जैसे थर्ड जेंडर के रूप में मान्यता, विवाह की मान्यता, समलैंगिक विवाह को मंजूरी आदि। लेकिन विडंबना यह है कि आज भी उनका शोषण, तिरस्कार, जीवन जीने के लिए संघर्ष खत्म होने का नाम ही नहीं ले रहा हैं।

वैंसे आज अधिकांश मोहल्लें, दफ्तर, सरकारी नीतियों में, समाज के नजरिए में धीरे-धीरे इन किन्नरों के प्रति बदलाव आ रहा है। उदाहरण के तौर पर तमिलनाडू की सरकार ने अब हर सरकारी पहचान पत्र चाहे वह राशन कार्ड हो या फिर मतदान पत्र हो, दोनों पर मर्द और औरत के साथ ही 'अन्य' लिखने का मौका भी दिया है। ऐसा ही अन्य राज्य की सरकारों को किए जाने की आवश्यकता हैं। कुल मिलाकर इस वर्ग के प्रति हमारी जो धारणा बनी हुई हैं उसे बदलने की जरूरत हैं। आवश्यकता इस बात की हैं कि इन्हें भी व्यक्ति समझा जाए, इन्हें अपमान सूचक शब्दों से ना पुकारा जाए, इनको समाज की मुख्यधारा में जगह मिले। समाज इनके जीवन संघर्ष, इनकी वेदना, इनकेदर्द को कम करने में अपना योगदान दें तो निश्चित तौर पर समाज का यह वर्ग भी बेहतर जीवन यापन कर सकता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यमदीप: नीरजा माधव, सुनील सहित्य सदन, नई दिल्ली, संस्करण, 2009
2. तीसरी ताली: प्रदीप सौरभ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2011
3. किन्नर कथा: महेन्द्र भीष्म, सामायिक प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण, 2016

सहायक ग्रंथ :

1. थर्ड जेंडर: कथा आलोचन, डॉ एम. फिरोज खान, अनुसंनधान पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रब्यूटर्स, प्रथम संस्करण, 2017
2. हिन्दी उपन्यास का विकास, मधुरेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण, 2011

****

Analytical Study Of Women Oriented Life Insurance Plans

Dr. Savita Agrawal* Dr. Monika Bapat Dr. Venus Shah*****

Abstract - Women are the pillars of our society. No matter if it is corporate sectors, household management, politics, journalism or any art field like painting or dance and tough fields which were earlier thought to be male dominated like wrestling or sports are all ruled the and participated by women. When women are managing every aspect of the society, then they also deserve a strong protective cover for themselves. If you are the one who has Responsibility for Financial planning, then you need to secure yourself first. If you own a life insurance plan, then it will ensure your security in a systematic way against an unforeseen financial uncertainty. Financial planning is very important for a woman as a woman can foresee the danger beforehand. It has many policies specifically designed for the benefit and requirement for women. Money stability is a very important factor for woman empowerment. And what can be better than a perfect insurance plan for money management and life security. So let's have a look at the life insurance plans that are offered by various companies, which are well known and trusted name in the insurance sector with features and benefit that suits women.

Introduction - Women are an integral part of today's society. They have an active social life. They participate in various social and cultural functions. A woman today no longer lags behind the man in the most occupations. She plays the games of football, cricket, and hockey. She draws the attention of the world as an athlete. The women can no more be kept behind the curtains doing only domestic duties. Our society is accepting the wider participation of women. They are working as pilots; and they are even holding the helm of a country's administration. The women now work in offices both as clerks and as officers. They participate at Assemblies and Parliaments as the people's representatives.

Women, with her intelligence and personality, protect the family from disruptions and disintegration. As a woman, play an important role for those near and dear to you. Have you focused on giving yourself the much-needed protection and financial security?Financial planning is important for everyone who shoulders responsibilities for his/her family. If you are a self-empowered woman, financial planning is very crucial for you. Having a life insurance plan can help you secure your ways against financial uncertainties and systematically plan for the important goals of your life. The insurance market is changing drastically and to meet the need of their customers, the insurance companies are also coming up with a wide range of products. Keeping the requirements of women in mind insurance plans are introduced by the companies.

Review Of Literature - Vijay Srinivas (2000), found that lack of understanding among the public, lack of availability of new schemes, low income yielding are the main reasons for low priority for insurance in India and he suggested return linked insurance, for the more successful penetration.

Puneet Bhushan &YajuluMedury (2013) concluded that women are more conservative and takes less risk and significant gender differences occur in investment preferences for health insurance, fixed deposits and market investments among employees.

Laxman Prasad Gupta (1987) "life insurance business in M.P"in this study he showed expansion of life insurance business.

Need For The Study - Indian insurance industry has achieved only a little because of the lack of insurance awareness. Women are not aware of different life insurance plans which are especially for them and specially meet to their requirements. Hence the basic need of this study is to give information about the best life insurance plans for women.

Here, let's briefly discuss the various features and benefits of the plans.

Research Methodology - Data sources and Data Collection This study uses primary data collected from the women policyholders of unorganized sector. The secondary data has been collected from various insurance journals and websites, print and e-publications of IRDA and LIC.

Scope Of The Study - Investment in life insurance policies

*Asst. Prof. (Commerce) M.K.H.S. Gujrati Girls College, Indore (M.P.) INDIA
** Asst. Prof. (Commerce) M.K.H.S. Gujrati Girls College, Indore (M.P.) INDIA
*** Asst. Prof. (Commerce) M.K.H.S. Gujrati Girls College, Indore (M.P.) INDIA

will give security, increase in return and other additional benefits. But a major segment which remains still untapped is the women investors, especially in the unorganized sector. Hence this study limits its scope to Women policy

Here, let's briefly discuss the various features and benefits of the plans.

LIC Jeevan Bharathi – I Plan

1. This life insurance policy is also designed only for women.
2. LIC Jeevan Bharathi –It is a money back plan, hence there is security and surety to the customer that she will get a percentage of the sum that is assured at a regular interval of time rather than in a form of a lump sum payment at the end of the year. This is a very important feature as a continuous flow of money is very important in order to continue livelihood.
3. If you have a good knowledge about the money invested, then you can use the maturity amount of this money back plan to purchase an annuity. One even enjoys the flexibility of paying the premium amount in advance only.
4. Customer needs to pay a premium amount for the complete tenure of the desired plan of 15-20 YEARS.
5. The customer enjoys the benefit of the survival benefit of 20% of the sum that is assured to be paid by LIC for every 5 policy years.
6. When the tenure of the policy ends, a maturity benefit is paid in the form of remaining sum that is assured along with the accrued bonus of the plan to the customer and one can even secure 3 additional riders as an add-on benefit as follows-
7. Critical Illness rider
8. Accident Benefit rider
9. Congenital Disabilities benefit rider

All of the above 3 riders are very important for women as it covers disease like cancer, common female disease, childbirth and etc

LIC e-term plan - This is a regular premium non-participating 'online' term insurance policy. It is good for providing financial protection to your family in case of your unfortunate, untimely demise. You can also consider this as the LIC insurance plan for 3 years.

This is suitable for the working woman with dependents to take care of. Ease of premium payments and the fact you can buy this policy online makes it among the best LIC plans for women in 2017.

Also, it has better benefits for non-smokers with almost double sum assured. However, one important factor to note that there is no maturity benefit with this policy. This is one among the best LIC policy for 10 years.

The premium for this policy needs to be paid annually with a grace period of 30 days. The minimum annual premium is as low as Rs. 2,875/-. An important drawback of this policy is that loan facility is not available. Also, no surrender value is awarded under this plan. The premium can also be calculated with the help of the LIC term plan premium calculator.

Some of the best features of this policy are:

1. Available to purchase on the official website of LIC
2. Better premium rates for non-smokers
3. Policy revival period in case of missed premium payments
4. 30 days of grace period premium payment
5. Both parents and children can be added as dependents

New term assurance rider can be clubbed with this policy.

The two important features of this rider are: –

1. Policyholders have the option to enhance policy cover from Rs. 1 Lakh to Rs. 25 Lakhs
2. Premium for the rider is paid along with premium for the parent policy

LIC e-term benefits are mainly focused on providing family assistance in the untimely death of the policyholder. This policy is to take care of the loved ones in the absence of the policyholder.

SBI LIFE – SMART WOMEN ADVANTAGE

SBI Life – Smart Women Advantage avail triple benefits of life cover, savings and Critical Illness (CI) benefit under a single, women-centric plan. With this three-fold advantage, spread your wings and soar high.

This plan has numerous benefits, such as –

Security – to protect your family in case of an eventuality

Reliability – through comprehensive coverage

Flexibility – to choose between two plans and coverage against pregnancy-related complications and childbirth-related abnormalities.

Enter your personal and policy-related details in our benefit illustrator below, and secure the future for both you and your family.

Watch yourself take on the world independently.

Features :

1. Life insurance coverage
2. Inbuilt Premium Waiver benefit in the event of Major Stage CI for in-force policies
3. Regular bonuses (if any), along with sum assured at maturity
4. Two plan options# – Gold and Platinum
5. Choose the level of death cover & CI cover
6. Option of Additional Pregnancy Complication and Congenital Anomalies (APC&CA)

#Specific Critical Illnesses (CI) are covered based on the plan chosen. Plan once selected at inception cannot be changed during the policy term

Maturity Benefit (For In-force policies) - On survival of the Life Assured up to maturity, Basic Sum Assured# + Vested Simple Reversionary Bonuses + Terminal bonus, if any, will be paid. Here, Basic Sum Assured is equal to Guaranteed Sum Assured at Maturity.

Death Benefit (For In-force policies) - In the unfortunate event of death of the Life Assured, 'Sum Assured on death' along with Vested Simple Reversionary Bonuses Plus Terminal bonus (if any) or 105% of the premiums paid, whichever is higher, will be payable to the beneficiary.

Where, Sum Assured on death is higher of following:

1. 10 times of annualized premium,
2. Guaranteed Sum Assured on Maturity,
3. The absolute amount assured to be paid on death, which is SAMF x Basic Sum Assured at Maturity.

The Policy would terminate on payment of death benefit.

Conclusion - Life insurance products are complex and not easy to understand. A customer relies greatly on the advice of the service provider and any breach in that bond of trust has serious consequences for the business as a whole. women policy holders are of the view that they may take another policy in the future if their economic conditions improve and their existing expectations are satisfied. So to tap the women insurance market adequately, the insurance companies have to rise to the expectations of the insured. Women investors should be made financial literates which aids their financial planning so that they can make a proper selection of the policies to invest.

Suggestion :

1. If the women policy holders in unorganized category are made aware of the benefits of the policies introduced, then, they may invest in more than one policy, resulting in an increase in the insurance density and penetration.
2. Women investors should be made financial literates which aids their financial planning so that they can make a proper selection of the policies to invest
3. The insurance officials should take effective steps to popularize women policies among women, so that special needs of women could be addressed in a better way
4. The present style, font size and language used in the policy document make even the well-educated find difficult to understand. Plain, simple and easily understandable language is to be used in all communications, including the insurance policy document. It is preferable if the same is in regional language.
5. Though the women policy holders want their money back during their lifetime itself provided there is no risk, the majority of them still expect a portion of the sum assured to be paid on their death also. To meet their needs, policies with a combination of money back and whole life with extended non premium paying term policies may be introduced in the market.

References :-

1. Insurance chronicle – ICEFAI
2. LIC 'S ZENITH'S READY RECKONER
3. PrashantaAthama and Prof. Ravikumar (2007) "An Explorative Study of Life Insurance Purchase Decision Making: Influence of Product and Non-product factors" The Icfai Journal of Risk and Insurance, vol IV, no.4, October
4. Dr. Rudra Saibaba, 2002," Perception and attitude of Women towards Life Insurance Policies" –Indian Journal of Marketing,vol.No.12 ,xxxii, p
5. http://www.licindia.in
6. http://www.sbilife.co.in
7. http://www.bimadeals.com
8. http://www.irdaindia.com

****

श्रीलाल शुक्ल के साहित्य में चिन्तन पक्ष की प्रासंगिकता

पद्मा आर्य *

शोध सारांश – श्रीलाल शुक्ल के साहित्य चिन्तन में उनकी दृष्टि आधुनिक है। उनकी दृष्टि एक सर्जन साहित्यकार की है। संक्रमणशील परिवेश में उनकी चेतना कर्म के दौरान उभरती हुई समस्याओं का विवेचन करती है। उनकी दृष्टि में न परम्परा है न एकोन्मुखता बल्कि एक सर्जन साहित्यकार की उन्मुखता है। इसलिए उनका साहित्य अन्याय पक्षों के साथ अपना सहज सम्बन्ध स्थापित करता हुआ एक गतिशील साहित्यिक प्रक्रिया प्रस्तुत करता है। उनकी यथार्थ दृष्टि जागरूक और संवेदनशील है। श्रीलाल शुक्ल ने अपने साहित्य में आधुनिक युग की विषमताओं पर गहन चिन्तन किया है। उनके साहित्य में समाज के हर पहलु पर विचार किया गया है। साहित्यकार समाज का अन्वेषक होता है और अन्वेषक हर चीज को बड़ी बारीकी से देखता है। संवेदनशील साहित्यकार अपनी बाह्य परिस्थिति एवं आन्तरिक शक्ति के बीच होने वाले टकराव से निरन्तर भावानुभव को अपने साहित्य में उतारता है। श्रीलाल शुक्ल का साहित्य चिन्तन बहुआयामी है। उनको जीवन के विविध रूपों में गहन दिलचस्पी थी। उसमें उत्पीड़ितों के प्रति सहानुभूति, सद्भाव के बजाय स्वाद और चटखारे की आवाज अधिक साफ है। श्रीलाल शुक्ल का साहित्य अपनी प्रकृति में बिखराव और संगठनहीनता से बच नहीं सकता, यहाँ अपने समय की सीमाहीन विद्रूपताओं को समेटना ही श्रीलाल शुक्ल का बुनियादी लक्ष्य रहा है। सामाजिक यथार्थ को चित्रित करते समय समाज के हर वर्ग को चाहे वह मजदूर, किसान, पूँजीपति, नौकर ही क्यों न हो, सभी का समान दृष्टि से उल्लेख किया है। समाज की अन्य विषमताओं का विश्लेषण जहाँ यथार्थ रूप लिए हुआ हैं, वहाँ चिन्तन की झलक स्पष्ट दृष्टिगोचर हुई है।
शब्द कुंजी – संक्रमणशील परिवेश, एकोन्मुखता, दिलचस्पी, चटखारे की आवाज, उत्पीड़ितों के प्रति।

प्रस्तावना – भारत ग्राम प्रधान देश है। स्वाभाविक है कि भारतीय साहित्य की मूलधारा ग्रामीण जीवन ही है। गाँव का शुद्ध वातावरण, शुद्ध पेयजल और प्राकृतिक सौम्यता से भरा ग्रामीण जीवन भी असुविधाओं से घिरा हुआ है। ग्रामीण जीवन की सबसे बड़ी समस्या अशिक्षा है। आज भी अधिकतर गाँवों में विद्यालयों की सुविधा नहीं है और कुछ गाँव में विद्यालय बनाये गए है किन्तु उचित शिक्षक की सुविधा नहीं होने से ग्रामीण शिक्षा स्तर गिरा हुआ है। छंगामल विद्यालय इंटरमीडिएट कॉलेज, शिवपालगंज के यथार्थ को हम समक्ष रखते हैं, 'यहाँ से इंटरमिडिएट पास करने वाले लड़के सिर्फ इमारत के आधार पर कह सकते थे कि हम शांति निकेतन से भी आगे हैं, हम असली भारतीय विद्यार्थी हैं, सैनिटरी फिटिंग किस चिड़िया का नाम है। हमने विलायती तालीम तक देसी परम्परा में पायी है और इसीलिए हमें देखों, हम आज भी उतने ही प्राकृत हैं। हमारे इतना पढ़ लेने पर भी हमारा पेशाब पेड़ के तने पर ही उतरता है, बन्द कमरे के ऊपर चढ़ जाता है।'[1] इससे स्पष्ट होता है कि कई ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी यही स्थिति होती है।

आज का ग्रामीण समाज अभावों, अंधविश्वास, रूढ़ियों से ग्रस्त और साथ ही नैतिक मूल्यों, मान-मर्यादा एवं पारिवारिक सम्बन्ध का भी विघटन हो रहा है। मारपीट आम बात हो गई है। शिवपालगंज में बद्री पहलवान, छोटे पहलवान, कुसहर प्रसाद आदि इन्हीं खोखले जीवनादर्शों के प्रतिरूप है। श्रीलाल शुक्ल ने ग्रामीण जीवन के सभी आयामों की तलस्पर्शी आलोचक दृष्टि से अध्ययन कर व्यंग्यात्मक प्रहार भी किये हैं।

समाज में अनेक प्रकार के रीति-रिवाजों प्रचलित हैं, जिससे हमारी संस्कृति एवं सभ्यता का पतन हो रहा है। तंत्र-मंत्र, झाड़-फूंक, साधू-फकीरों का आतंक चारों और फैल रहा है। धार्मिक पाखण्ड का एक ओर बोलबाला हुआ तो दूसरी और बाल विवाह, दहेज विवाह, अनमेल विवाह, जातिगत भेदभाव आदि कुरीतियों को बढ़ावा दे रही हैं। ये कुरीतियाँ समाज विकास में बाँधा बन रही है। कहानी संग्रह- 'इस उम्र में के अन्तर्गत 'सुखान्त' कहानी में आधुनिक विचारों वाली उषा, यादव समाज के लड़के से शादी करना चाहती है। यादव छोटी जाति का होने से उषा के पिता ब्राम्हण दहाड़कर बोला,'जी में आता है, इस लड़की को गोली मार दूँ और खुद भी मर जाऊँ।'[2] हमें इस जातिगत भेदभाव को दूर करना चाहिए, जिससे हमारे समाज का विकास हो सकें।

युवा वर्ग देश का भविष्य होने के साथ-साथ विकास का भी एक महत्वपूर्ण अंग है। युवाओं के व्यक्तिगत में सुधार लाने, जिम्मेदार नागरिक के गुण, नेतृत्व गुण विकसित करने और स्वयं सेवा की भावना उत्पन्न करने में समाज और देश की अहम भूमिका होती है। आज के युवावर्ग स्वार्थी और निकम्में होते जा रहे हैं। 'रागदरबारी' उपन्यास में छोटे पहलवान, बद्री पहलवान, रूप्पन बाबू, सनीचर, जोगनाथ आदि निकम्मेपन, दादागिरी और गुण्डागर्दी में अपना जीवन यापन कर रहे है। यह बड़ा चिन्तन का विषय है, इसे हमें दूर करना चाहिए। राष्ट्र निर्माण में युवाओं को कैसे भागीदार बनाया जाए, इसके सम्बन्ध में अपने विचार सांझा करना चाहिए। यह देश और समाज को शिखर पर पहुँचाता है। युवा वर्ग देश का वर्तमान है, तो भविष्य का सेतु भी है। समाज में तेजी से आ रहे परिवर्तन के प्रति युवाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। श्रीलाल शुक्ल अपनी रचनाओं में युवावर्ग की गिरी स्थिति का वर्णन करने के साथ-साथ उसे प्रोत्साहित करने का कार्य भी किया है। एम.कॉम. पास लड़का कहता है, 'चाचाजी मैं गरीब बुढ़िया नहीं हूँ, नौजवान हूँ। आप मुझे पचास रुपये का दान नहीं, सिर्फ आठ हजार का

** शोधार्थी (हिन्दी) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

कर्ज दे दें। अपने बाप की औलाद हूँ, तो छः महीने में ही वापस कर दूँगा।'[3] यहाँ लेखक युवावर्ग को प्रोत्साहित कर रहे है, जिससे यह अपने कर्तव्यों के प्रति जिम्मेदार हो सकें।

समाज में गुटबंदी के चलते विकास कार्यों के प्रभावित होने की आशंका रहती हैं। गुट में रहकर हम देश का विकास नहीं कर सकते हैं। छोटे-छोटे, गुटबाजी में शक्ति खंडित हो जाती है। हम सब मिलकर कार्य करने से समाज और देश का कल्याण कर सकते हैं। वर्तमान व्यवस्था में राजनीतिक दलों की उपस्थिति के कारण चुनावों में इसके उपरान्त राजनीतिक गुटबाजी से विकास कार्य प्रभावित होता है। जनप्रतिनिधि शिक्षित होने के बावजूद भी दलगत राजनीति के कारण खुलकर अपने विचार व्यक्त नहीं कर पाते हैं। विकास के कार्य में भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए राजनीतिक गुटबाजी नहीं होना चाहिए। लेकिन आज यह गुटबंदी दिनो-दिन बढ़ती जा रही है और इसे दूर करना असंभव है।

चुनाव लोकतंत्र की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। यही प्रक्रिया हमारे देश में भ्रष्टाचार को बढ़ावा देती है। चुनाव आते ही राजनीतिक पार्टियों द्वारा मतदाताओं को लुभाने की कोशिशें तेज हो जाती है। कोई रुपये देकर, कोई शराब बांटकर, कोई उपहार देकर लुभाता है। जो उम्मीद्वार चुनाव में करोड़ो रुपये खर्च करता है, वही निर्वाचन के बाद वसूली चालू कर देता है। इस सच्चाई से देश में हर कोई वाकिफ है, लेकिन इसे रोकने का तरीका अब तक नहीं ढूंढा जा सका है। इसी कारण भ्रष्टाचार दिनो-दिन बढ़ता जा रहा है। 'रागदरबारी' उपन्यास में छंगामल विद्यालय में मैनेजर के चुनाव के संबंध में गयादीन कहता है,'चुनाव के चोचले में कुछ नहीं रखा है। नया आदमी चुनो, तो वह भी घटिया निकलता है। सब एक जैसे हैं। इसी से मैंने कहा, जो जहाँ है, उसे वहाँ चुन लो। पड़ा रहे अपनी जगह। क्या फायदा है उखाड़-पछाड़ करने से।'[4] इससे स्पष्ट है कि जो भी नेता आता है वह अपनी पुरानी परम्परा में ढल जाता है और भ्रष्टाचार को बढ़ावा देता है। राजनीति और भ्रष्टाचार का चोली दामन का साथ हो गया है, इसे अलग करना असंभव है।

भाई-भतीजावाद एक राजनीतिक शब्दावली है, जिसमें योग्यता को महत्व न देकर अयोग्य परिजनों को उच्च पदों पर आसीन कर दिया जाता है। हमारे चारों और पेशेवर क्षेत्रों में, चाहे वह शिक्षा का क्षेत्र हो या चिकित्सा का, राजनीति हो या उद्योग का, बहुराष्ट्रीय संगठन हो या खेल का, सभी जगह भाई-भतीजावाद का बोलबाला है। यह प्राचीन काल से चला आ रहा है। आज इसे दूर करना अत्यन्त कठिन है। जिसके पास यह शक्ति है वही अधिक शक्तिशाली बनते जा रहे हैं। इसी बात को गयादीन खन्ना मास्टर को कहता है, 'वहीं हाल अपने मुल्क का है, मास्टर साहब। जो जहाँ है, अपनी जगह पर गोंद की तरफ चिपका बैठा है। टस से मस नहीं होता। उसे चाहे जितना कोंचो, चाहे जितना दूर भगाओं, वह अपनी जगह चिपका रहेगा और जितने नाते-रिश्तेदार हैं, सब उसकी दुम के सहारे सड़ासड़ चढ़ते हुए ऊपर तक चले जाएगें। कॉलिज को क्यों बदनाम करते हो, सभी जगह यहीं हाल है।'[5] भाई-भतीजावाद अधिक शक्तिशाली होता जा रहा है। यह पानी मिले दूध की तरह व्यापक हो चुका है। इसे अलग करना अत्यन्त कठिन है।

श्रीलाल शुक्ल आधुनिक युग के अत्यन्त सजग एवं संवेदनशील साहित्यकार थे। उन्होंने मानव जीवन के जितने अधिक पक्षों पर चिंतन किया, वह सराहनीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीलाल शुक्ल - रागदरबारी, पृ. 18.
2. श्रीलाल शुक्ल - इस उम्र में, पृ. 68.
3. श्रीलाल शुक्ल - कुछ जमीन पर, कुछ हवा में, पृ. 45.
4. श्रीलाल शुक्ल - रागदरबारी, पृ. 139.
5. श्रीलाल शुक्ल - रागदरबारी, पृ. 102.

****

A Study On Business Process Outsourcing Call Centres

Dr. Rajendra Singh Waghela* Viranchi Vyas**

Abstract - The purpose of this paper is to study on BPO call centres and examine the significance of BPO call centres. The approach implemented in this study was a quantitative research and based on critical analysis of the literature available on call centres. The findings suggest that BPO call centres have a positive impact on India's economy. There have been many works presented on call centres over the years and the sector has matured, the business still seems towards growth. In the wake of social media and other communication channels, call centres might have to go through changes. In order to progress managers must understand the value of their employee and their impact on the customer. The findings of this paper may contribute to understand the process and formation of BPO call centres. This research may also contribute to enlighten the purpose and growth of BPO call centres.

Introduction - In this paper an attempt is made to study the growth and devolvement of Business Process outsourcing (BPO), the evolution of Business Process Outsourcing, the role of the Government, the global growth of BPO, service of Call Centre, Call Centre Challenges ahead.

Business Process Outsourcing (BPO) - Business Process outsourcing (BPO) has emerged as India's new sunshine sector and the country is now one of the most prominent electronic house keepers to the world and making waves in the Indian industrial landscape. Outsourcing to India means substantial cost and time saving compared to the rest of the world. India has people with excellent project management skills, in depth, experience in state of the art software and information Technology enabled services. These main elements contribute to the success of outsourcing in India. Today, outsourcing has become a long-term growth and survival strategy for corporations by which an organization contracts routine functions to service providers who specialize in such functions. The BPO takes the over non-core processes of the company and bring in our best practice from outside. Companies are use profitably using BPO to reach a wide range of goals.

Call Centre - The definition of call centre is changing in our e-business world, but the core fundamentals of a customer making a call (via a telephone, e-Mail, Website or Fax) to a centre will remain constant because the customer views the call as an important or pivotal activity to themselves. Call Centre, Contact Centre, and BPO - by whatever names your call it - operate on a common need of providing services to customers for their needs at their convenient time and location. Like a Bank customer can operate his bank account at 12 midnight using his telephone at his bedside. His/her call is attended by a call centre executive located at a distance having no knowledge of banking. The call centre executive helps the customer by feeding his instructions on the computer and giving the customer the required information.

The Call Centre Industry In India - India's call centre industry accounts for a quarter of all software and services exports from the country, according to industry association NASSCOM, Indian call centres employ over 550,000 professionals. Daimler-Chrysler, British Telecom, Barclays Bank, HSBC, Honeywell, Aventis, and several others have come to India while the old timers of GE, British Airways, Citigroup, Amex, and others have been around for a decade.

Call Centers In India. Why?

Indian call centres work round the clock and provide 24*7 supports for the customers of these US based clients. From the concept of being just a voice based medium of customer support, today call centres are referred to as 'Contact Centres' which are capable of handling customer queries over phone or the online medium. Qualified professional talent with fluency in English and a neutral accent with the ability to shift to different accents have made India, a preferred destination for offshore clients.

Reducing cost for business proceeding is the prime focus of the corporate houses. They realized that shifting their call-centre operations to India would heavily cut down their costs. Business settlement laws were reviewed and it was easier for alien firms to settle in the Indian soils. The country produces technically sound work force with high standards of English.

Call Centres are required for large companies to sell their products to the customers, proposing a product or service as well as for the after-sale enquiries made by the customers. Call centres in India are at its peak today. Customized solution through customer interactive programs in the success mantra of numerous corporate firms

*Prof. (Commerce) SABV Govt. Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA
** Research Scholar, School of Commerce, DAVV, Indore (M.P.) INDIA

nowadays. For the strategic business development - that requires acquired skills for customer queries, solutions etc., Indian call-centres are at par with the current marketing demands.

Call centre industry in India is projected at $143 billion by the year 2010 as per NASSCOM. With its built-in potency, India is advertised as the hot destination for **offshore outsourcing hub**. The booming Indian call centre industry is the benchmark of the changing global trend.

Call centres in India are prospering upon the upscale rise amongst the entrepreneurs who are trying to allure their customers through inbound and outbound calling facility. This concept raving in US have enabled many offshore call centres establishments, major are in India. The quality of English is at par with the international standards. Indians are technically literate and comfortable with new technologies arising in the industry.

In order to meet the growing international demand for lucrative, customer interaction centres, many organizations worldwide are outsourcing these services from locations like India. India has inherent strengths, which have made it a major success as an outsourcing destination:

Scope Of Call Centers In India :

1. A booming IT industry, with IT strengths recognized all over the world.
2. The largest English-speaking population after the USA.
3. A vast workforce of educated, English speaking, tech-savvy personnel: A boon in a high-growth industry faced with a shortage of skilled workers.
4. Cost-effective manpower: In a call interaction centre operation, manpower typically accounts for 55 to 60 percent of the total cost. In India, the manpower cost is approximately one-tenth of what it is overseas. Per agent cost in USA is approximately $40,000 while in India it is only $5,000.
5. Technical support: India graduates about 100,000 engineers each year. These can be used in call centres for troubleshooting/technical support, as the salaries are dramatically lower than in Europe or the US.
6. The Government of India has recognized the potential of IT enabled services and has taken positive steps by providing numerous incentives.
7. IT is one of the Government of India's top five priorities.
8. The National IT Task Force submitted its Action Plan to promote IT in the country. The Government of India has approved the plan and is in the process of implementing it.
9. A separate Ministry of Information Technology was set up to expedite swift approval and implementation of IT projects and to streamline the regulatory process.
10. Information Technology Act 2000: The Information Technology Bill that was passed in the Indian Parliament in May 2000 has now been notified as the IT Act 2000. The IT Bill brings E-commerce within the purview of law and accords stringent punishments to "cyber criminals". With this, India joins a select band of 12 nations that have cyber laws.
11. 100% foreign ownership permitted in IT Enabled Services industry unlike other sectors Where is foreign ownership restricted?
12. Software Technology Parks (STPs) established.
13. To provide ready to plug IT infrastructure and telecom facilities.
14. Single window clearance for all regulatory compliance issues.
15. Basic, Cellular, Paging and Internet Services privatized.
16. Domestic leased circuit tariff reduced by 80% in last 1 year.
17. International Internet Gateway privatized-likely reduction in tariff.

Research Design And Methodology - Research Design The purpose of the current study is to find out the significance of BPO call centres in India. Research design is actually the blue print of the research project & when implemented must bring about the information for solving the identified problems. It indicates the methods of research, the instrument of research etc.

Objectives :

1. To study the growth level of the BPO call centres.
2. To study causes of growth of BPO call centres in India.
3. To find out main problems facing by BPO call centre.

Limitations - The limitations to this study were time constraints and also where the research was conducted, that is only call centre located in specific City. As the preferred research method was quantitative study, the results allow researcher to generalise however if a qualitative study was implemented more in depth outcomes would have been achieved.

Conclusion - The study revealed that call centres in India has developed. The BPO call centres not only handle the task of interacting with customers but also provide a wider base for official task of inventories, bill handling, web solution and various other business requirements proceedings. To be more precise we can say that it is an organisation of solution of all these issues. Thus India has taken a leap step in several call centres industry which is recent past have been the home for more developed nation like US and UK.

Reference :-

1. Personal research.

****

Women Empowerment : Meaning, Salient Features & Characteristics

Dr. Meenaskshi Panchal* Heena Shekhawat**

Introduction - "Having a daughter is like watering a flower in the neighbour's Garden". (Tamil Proverb).

Women Empowerment is a significant tool for the development and sustainability of the economic and it also has an impact on the progress of the society and community in order to bring women to the main stream for the development of the economic by the government. The policy makers are recognizing some of the factors such as marginalization of women through reduction in poverty increase in productivity, enhance competition and growth etc. Empowering women also leads to the eco-growth, providing employment opportunities, rise in per Capita income, socio-economic development and status of women in political participation etc. Hence, the concept of women empowerment has gaining imp. Therefore several studies are conducted with an aim to know the status of women empowerment. Thus, the present study conducted with a purpose to examine the mainstream of economic development through empowerment of women to achieve sustainable development in India.

"empowerment is an aid to help women to achieve equality with men or at least to reduce gender gap considerably."(P.K.B Nayar)

Economic Participation - Women's quantitative interest in the workforce is noteworthy not just in conveying the various degrees of neediness among female, yet additionally as a fundamental advance towards developing family unit winning and enabling financial improvement.

Political Empowerment influences - Gainful Political Contribution includes the unbias exhibition of Women in basic leadership essentials, both formal and casual, and there responsibility in outcry of approaches affecting the financial social orders in which they live.

Educational Achievement - Expanding course of action of training is the most rudimentary essential for qualifying Women in all areas of society.

Health and Prosperity - Properly accommodating the regular and sexual orientation explicit wellbeing necessities of lady most incorporate access to adequate nourishment, medicinal services and conceptive toilets.

Social and Cultural Rights - Allowing Women to practice completely there financial and political rights incorporates recollecting and in regards to the privileges of female to live with sense of pride, free from mercilessness and imbalance.

Salient Features of Women Empowerment - Women empowerment implies liberation of Women from the horrible grasps of social, prudent, political, standing and sex based segregation. It implies allowing Women the opportunity to settle on life decisions. Women empowerment doesn't signify 'revering Women's rather it implies supplanting man centric society with equality. Get Resilient Women Statements here. In such manner, there are different aspects of Women empowerment, for example, given hereunder:—

Human Rights or Individual Rights - A lady is a being with faculties, creative mind and musings; she ought to have the option to express them openly. Singular empowerment intends to have the self-assurance to express and declare the ability to arrange and choose.

Social Women Empowerment - A basic part of social empowerment of Women is the advancement of sexual orientation correspondence. Sexual orientation uniformity infers a general public where Women and men appreciate similar chances, results, rights and commitments in all circles of life.

Educational Women Empowerment - It implies engaging Women with the information, abilities, and fearlessness important to take part completely in the advancement procedure. It implies making Women mindful of their privileges and building up a certainty to guarantee them.

Economic and occupational empowerment - It infers a superior nature of material life through feasible jobs possessed and oversaw by Women. It implies diminishing their money related reliance on their male partners by making them a critical piece of the human asset.

Legal Women Empowerment - It recommends the arrangement of a viable legitimate structure which is strong of Women empowerment. It implies tending to the holes between what the law recommends and what really happens.

Political Women Empowerment - It implies the presence

*Asst. Professor (Economics) PCSSH Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar (Economics) PCSSH Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

of a political framework supporting the interest in and control by the Women of the political basic leadership process and in administration.

The Situation of Women in India - The position delighted in by Women in the Rig- Vedic period disintegrated in the later Vedic civilization. Women were denied the privilege to instruction and widow remarriage. They were denied the privilege to legacy and responsibility for. Numerous social shades of malice like youngster marriage and settlement framework surfaced and began to inundate Women. During Gupta period, the status of Women massively decayed. Settlement turned into an establishment and Sati pratha got noticeable.

During the British raj numerous social reformers, for example, Raja Rammohun Roy, Ishwar Chandra Vidyasagar, and Jyotirao Phule began tumults for the empowerment of Women. Their endeavors prompted the abrogation of Sati and detailing of the Widow Remarriage Act. Afterward, stalwarts like Mahatma Gandhi and Pt. Nehru supported Women rights. Because of their concentrated endeavors, the status of Women in social, monetary and political life started to hoist in the Indian culture.

Characteristics of Women Empowerment :

1. Coming up next are the attributes of Women empowerment -
2. Women empowerment is offering capacity to Women. It is improving Women off. It empowers a more prominent level of fearlessness and feeling of freedom among Women.
3. Women empowerment is a procedure of gaining power for Women so as to comprehend their privileges and to play out her duties toward oneself as well as other people in a best manner. It gives the limit or capacity to oppose separation forced by the male commanded society.
4. Women empowerment empowers Women to compose themselves increment their independence and it gives more noteworthy self-rule.
5. Women empowerment implies Women's authority over material resources scholarly assets and philosophy it challenges conventional power conditions and relations.
6. Women empowerment nullifies all sexual orientation base separation in all organizations and structures of society . It guarantees support of Women in arrangement and basic leadership the procedure at household and open levels.
7. Women empowerment implies uncovering the abusive forces of existing sexual orientation social relations.
8. Women empowerment makes Women all the more dominant to confront the difficulties of life, to defeat to the incapacities , impairments, and imbalances . it empowers Women to understand their full character and powers in all circles of life.
9. Empowerment likewise implies equivalent status to Women . it gives more noteworthy access to information and assets more prominent self-governance in basic leadership more noteworthy capacity to design their and opportunity from the shackles forced on them by custom conviction and practice.
10. Women empowerment happens inside human science, mental, political social, natural and monetary circles and at different levels, for example, individual, gathering and network.
11. Women empowerment is a progressing dynamic procedure which improves Women's capacities to change the structure and belief systems that keep them subordinate. Women empowerment is a procedure of making mindfulness and limit building.

Women in Unorganized Sector - Women laborers in unorganized part endure under exceptionally shaky and powerless working conditions. There are no standardized savings measures to give chance inclusion and guarantee support of essential expectations for everyday comforts in the midst of emergency, for example, joblessness or medical problems. There are no laws to guarantee they work under appropriate working conditions and are not dependent upon any wellbeing perils. There is no fixity of functions hours, no consistence to least wages and much of the time these are represented by neighborhood factors.

Women prevails the most helpless occupation and structure enormous (and sparkling) piece of home specialists. They work extended periods of time without wellbeing and security rejulation, and are not qualified for extra time rates, week by week occasions and so on similarly as with other disorderly specialists, they don't have any social insurance.

Women in Cooperatives - Sorting out Women educate regarding cooperatives can be seen as procedure of empowerment. The component of empowerment that recognizes it structure different ideas is office as it were, Women themselves must be critical on-screen characters during the time spent change that is being portrayed or quantifies.

Foundation of Women's self improvement gathering as vehicles for female empowerment's important. It will give Women a stage to meet up to go about as a weight gathering, simultaneously giving the individuals financial (ex. Credit) and social help (a lawful help and guiding). (Praveen S. and Leon Hausar.1.2004.p.10).

The development of grassroot Association, especially in seventies was the consequence of dislluionment with government projects and detachment of ideological groups towards, Women's issue. A large portion of them target making certainty and abilities with the goal that the Women themselves later assume control over the duties of dealing with the cooperatives.

The full proportion of the quality and development of a country's social and financial development and by and large prosperity isn't estimated basically by its pace of monetary development yet by the general financial and political status

of Women. A nation isn't 'created' in any significant sense if either fundamentally or socially through disregard or implied endorsement it denies 50 percent of its populace of its essential needs, occupation alternatives, access to information and compelling political portrayal, particularly dependent on garder. Of all the different financial and political gatherings in Indian Culture, Women have a case to one side to be engaged with all parts of improvement forms.

Women in the 21st Century - I don't view myself as a Women's activist, yet I feel enabled as a lady, and I've utilized every one of my assets extensively. I have faith in consistency, however that is simply normally occurring. Despite everything I need an entryway opened for me, to be dealt with like a woman, yet I additionally need equivalent rights for Women, obviously." – Pamela Anderson.

Women Empowerment alone decorated that Social Rights , Political Rights , Financial dependability, legal quality and every single other right ought to be additionally similiar to women. There ought to be no segregation among men and lady. Women should now there head and open rights which they get once they conceived. Women are a fundamental piece of human culture. In any case, for a lady, there couldn't have been any man. Women is the mother of mankind. Regardless of holding such a significant and unexceptionable position, job of Women has been cleared by men over centuries. Our Vedas disclose to us that Women involved a significant spot in old culture. No ceremonial was ever finished without the nearness of a lady by her man's side. Every one of our divine beings are adored nearby their grand friend. There is no inconsistency there. Nobody addresses this. The steadiest of male superpatriotism profoundly retires from to Goddess Lakshmi, or Durga. It isn't viewed as an indication of shortcoming to bow to female divinities.

Women at home and society in generally, are an alternate cup of tea. They are consulted as peons. How did this 'clash of genders' start? How did the men win the triumphant hand? I feel that financial aspects had a task to carry out in the plan of things. At the point when man assumed the job of a provider, and lady played the regular job of a guardian, these jobs fit their proposed job by the Developers. Man was physically solid, while the lady was naturally solid. Over some stretch of time the man began accepting that his job was higher to that of the lady as without him there would be no nourishment at the table. Lady's job was taken concerning granted. The physically powerless lady was directed to acknowledge this lie for quite a long time.

Somebody as regarded as Socrates said that the main explanation he endure his better half, Xanthippe, was that she bore him children. He said it resembled enduring the noise of geese because they produce eggs and chicks. What an counterpart from the most honored philosopher of all ages! Closer home Manu said in 200 B.C.: ***"by a young girl, by a young woman, or even by an aged one, nothing must be done independently, even in her own house". "In childhood a female must be subject to her father, in youth to her husband, when her lord is dead to her sons; a woman must never be independent."***

It is just when things went way surpass the degree of guilty pleasure that the Women gathered their voices. The main such voice was heard boisterous and clear in the mid nineteenth century, when the term 'Women suffragists' turned into a family word in the west. We were an British province around then, yet Women crosswise over Europe and US rose as an individual requesting voice, or the privilege to cast a ballot. It is to the credit of these challenging Women that today Women's entitlement to cast a ballot is 'guaranteed' in the majority of the free world, however there are still a few nations, for the most part in the Center East that still repudiate Women their all inclusive right to cast a ballot.

'Women'ss activists' were those people who composed, talked and followed up for Women and their privileges to social, prudent, and political correspondence. **Famous writer Rebecca comments, *"I myself have never been able to find out precisely what feminism is: I only know that people call me a feminist whenever I express sentiments that differentiate me from a doormat, or a prostitute."***

Today at the dawn of the 21st century the female over the world are set at a place of matchless quality. They are totally on the advancement. They are focusing on their interior voice. They are never again inspired by discouraged gibberish and hawkishness. They are finding their own and total voice. They are subsidiary with their ethical sense, pushing forward with tenacious walkes.

21st century is the century for change. The Planet Earth is prepared for 'The Move of the Ages'. In this New Age, love and compassion will wear the pants, and the lady with her characteristic traits of sympathy will plant the seeds of worldwide change. These progressions have just started, and soon they will increase a phenomenal energy. Now is the ideal opportunity for Women all things considered, standings, class, and nationalities to meet up to be the harbinger of this change. Mother Earth is sobbing for consideration, before long like the fanciful **'Shakti'** it will show its actual may and destroy all the shrewd powers en route. No one but Women can be compassionate to the 'Mother's predicament in her hour of need. At the point when I state 'Women's, I mean the 'ladylike' in people virtual. Indian manuals have constantly spoken about ***'Ardhnareeshwar'***, the Manly Ladylike divinity. The opportunity has arrived to beg that Manly ladylike parity within each one of us.

In the cutting edge century Women don't have to take a gander at the typical unfairnesses done to her. It's a great opportunity to put all that behind her and look forward to her allowed job in this 'Aquarian age'. Women today need not search anyplace for an ideal perfect excellence. They have to search inside and tune in to their motivation, to

make the correct move at the opportune time. All they need right presently is to set the correct ramifications, and every one of their suggestions will bear natural products sooner than later.

Some of you should have questions. 'I don't have so a lot of mental fortitude'. You don't should be Rani Laxmi Bai to realize this change. You should simply discover your capacity of discourse. You should simply spread real love and mankind. Simply venture out however you can. Utilize the intensity of distresses, utilize the intensity of wrath, and utilize the intensity of words. Be that as it may, USE it.21st century is the time of the 'ladylike'. In the event that you don't trust me now, you soon will......

Woman is the nigger of the world yes she is

If you don't believe me, take a look at the one you're with If she won't be a slave, we say that she don't love us While putting her down, we pretend that she's above us While telling her not to be so smart we put her down for being so dumb you know, she is slaves of the slaves, do something about it, Ahh you better scream"

In 21st Century all through ages Women in India have confronted horrible brutalities. One side of history shows the confidence among the Indians about "Shakti" or the "Women Power" to be the amazing vitality. The opposite side of history is hued in dark, dim shades of settlement, kid marriage, sati and other related mal rehearses. Hinduism depicts lady to take care of business half-batsman. It is plainly represented and emerged through "Shiv-Shakti" that a man is flawed without a lady. Sacred Books have indistinguishable worth correspondence of both genders.

References :-

1. Prasad, Rajendra – 1990. Population Geography of India (A Case Study of Rajasthan). New Delhi.
2. Raghuvanshi, A. 1996. Women and Literacy. New Delhi; National Literacy .
3. UN Women Executive Director, Tichelle Bachelet gives Key Note Speech at the 39th Annual Commencement 2011.
4. Altebar, A.S. (2014). The Position of Women in Hindu Civilization. Motilal Banarsidas Publishers, ISBN-10.
5. Salawade, S.N. (2012). Status of Women in ancient India : The Vedic Period Indian Streams Research Journal.
6. Radhey Shyam Chaurasia (2002). History of Ancient India : Earliest Times to 1000 A.D. Atlantic Publishers & Distributors.
7. Gupta & Bakshi (2008).
8. Ahluwalia B. 1983. Vivekananda and the Indian Renaissance. New Delhi : Associated Publishing Co. Books on Women Empowerment and Socio- economic Development.

****

Make in India - Exploring the Prospects for Growth Sectors

Dr. Sanjay Patni *

Abstract - Make in India is an international marketing strategy, conceptualized by the Prime Minister of India, Narendra Modi on 25 September 2014 to attract investments from businesses around the world and make India the manufacturing Hub. The aim is to take a share of manufacturing in country's gross domestic product from stagnant 16% currently to 25% by 2022, as stated in national manufacturing policy, and to create 100 million jobs by 2022. The stock market boom at the clear mandate given to BJP in the 2014 Lok Sabha elections and the current stock market scenario was a clear indicator of investor confidence in the Narendra Modi Government. Key thrust of the programme would be on cutting down in delays in manufacturing projects clearance, develop adequate infrastructure and make it easier for companies to do business in India. The 25 key sectors identified under the programme include automobiles, auto components, bio-technology, chemicals, defence manufacturing, electronic systems, food processing, leather, mining, oil & gas, ports, railways, ports and textile. The major objective behind the initiative is to focus on 25 sectors of the economy for job creation and skill enhancement. Make in India is the key to revitalization of Indian economy.
Keywords: Growth of Sectors, Skills Enhancement, Job Creation.

Introduction - The Indian economy has been witnessing positive sentiments during the past few months. The macroeconomic indicators have also displayed an encouraging trend in the recent times. However, the situation of the manufacturing sector in India is a cause of concern. At 16% value added to GDP, the sector does not seem representative of its potential which should have been 25%. However, the industrial growth scenario is improving and is estimated at 1.9% in the period April-October 2014-15. The recent measures undertaken by the new government in terms of facilitation to industrial sector, creation of conducive environment for the manufacturing activities, focus on improving industrial policies and procedures and reforming labor laws have facilitated recovery in industrial sector.

The Government recently launched the Make in India initiative which is expected to make India a manufacturing hub while eliminating the unnecessary laws and regulations, making bureaucratic processes easier, make government more transparent, responsive and accountable and to take manufacturing growth to 10% on a sustainable basis.

Apart from initiatives such as development of smart cities, skill development, National Investment and Manufacturing zones, FDI enhancement, the government is building a pentagon of corridors across the country to boost manufacturing and to project India as a Global Manufacturing destination of the world. The most important of these corridors is the DMIC which is one of the largest infrastructure projects planned in India and spans the six states of Uttar Pradesh, Haryana, Madhya Pradesh, Rajasthan, Gujarat and Maharashtra. The present study is an attempt to understand the global and domestic outlook of manufacturing sector, growth dynamics, opportunities and challenges for manufacturing firms particularly in the states under the influence of DMIC.

Major objective of this scheme focuses on 25 sectors. The sectors are Automobiles, textiles and Garments, Biotechnology, Wellness, Defence , Manufacturing, Ports, Food Processing , Mining, Media and Entertainment, IT and BPM, Pharmaceuticals, Renewable Energy, Roads and Highways, Railways, Thermal Power, Oil and Gas, Space, Leather , Construction, Aviation, automobile components, chemicals and Electronic System .

Objectives :

1. To convert India into Global Manufacturing Hub
2. To Provide Employment
3. Boost Economic Growth
4. To urge both local and foreign companies to invest in India.

But at the ground level, there are a lot of challenges that the government has to overcome in order to turn the vision of achieving a sustainable 10% growth in the manufacturing sector into reality. This research paper aims to analyse the key issues facing the "Make in India" vision and recommend possible strategies to deal with the same. Below are highlighted some of the issues which the new Government has to take care of for turning the "Make in India" vision

*Assistant Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

into a reality:

- **Improving the ease of doing business in India -** According to World Bank report, India ranks 142 out of 189 countries in the category for ease of doing business based on surveys conducted in the two major cities of India, Mumbai and Delhi prior to the new Government came to power. To increase investor sentiment, it is necessary that the Government works to improve the various components of Doing Business indicators like starting a business, dealing with construction permits, getting electricity, registering property, getting credit, protecting minority investors, paying taxes, trading across borders, enforcing contracts and resolving insolvency because it is these indicators that a firm looks at before going forward with an investment decision in a country.
- **Land Acquisition challenges -** One of the very important initial steps for establishment of manufacturing facilities by a firm is acquiring land. Under the new Land acquisition act, developers would require the consent of up to 80 per cent of people whose land is acquired for private projects and of 70 per cent of land owners in the case of public-private partnership projects. But the greatest concern in acquiring such land is the proper rehabilitation and resettlement of affected inhabitants of those lands. The government has to identify and devise strategies for the rehabilitation and resettlement of the displaced people failing which the result can be serious conflicts. Moreover, the rehabilitation and resettlement also becomes a costly venture.
- **Improving the employability of general and engineering graduates -** The greatest asset of any firm is its human resource. Companies will set up manufacturing facilities in India only if it is able to find requisite amount of good quality skilled labour in the country. Around 51% of the workforce is employed in the agricultural sector which contributes to only about 17% of the GDP and around 22% of the workforce is employed in the manufacturing sector which contributes to around 26% of GDP.

However, various surveys conducted on employability reveals a vast skills gap between graduate skills and market needs. According to **Higher Education in India: Vision 2030** , a report produced by international consultants Ernst and Young for the Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry (FICCI), 75% of IT graduates, 55% of manufacturing, 55% of healthcare and 50% of Banking and Insurance graduates are deemed unemployable. Moreover, the National Association of Software and Services Companies (NASSCOM) maintains that of around 3 million graduates each year, less than a third of graduates of engineering colleges and only 10% to 15% of regular graduates are employable. It is therefore important to dwell upon the possible reasons which cause low employability of Indian graduates in general and engineering graduates in particular.

- **Infrastructure development of major roads and highways in the country -** It is needless to say that well developed and well maintained infrastructure, particularly, roads and highways is vital for an efficient inbound and outbound logistics of a manufacturing firm to ensure efficient movement of raw materials and finished goods across the country as roads carry 65% of its freight in the country. India has a total of 48.65 lakh kilometre of road network comprising National Highways (92,851 Km), State Highways (1,38,489 Km), Major District Roads, Rural roads and Urban roads (All together 46.34 Lakh kilometre) as per figures from website of Ministry of Road Transport and Highways as on 31st March, 2014. National Highways comprise 1.7% of India's total road network but carry 40% of road traffic. Most of these highways are two lane highways. Only 10,000 Km of highways have been widened to four lanes with two lanes in each direction as of August, 2011. Moreover, as of 2010, 19064 Km of NH were still single-laned roads. With increase in vehicular traffic and congestion in the major cities of India and for smooth movement of large container trucks, it is imperative that the Government in association with private parties through public-private partnerships convert the single-lane or double-lane national and state highways to four or six lane roads to cater to the growing congestion problem in India. However, most of these conversion projects are stuck at various stages of bureaucratic delays. With the new government at the centre, we can hope for faster execution of projects by removal of unnecessary approval stages and thereby leading faster clearances.
- **Capacity addition in the power sector to meet industrial energy demand -** Without the power industry, no other industry would survive. India has an installed capacity of 253.389 GW as of August 2014, the break-up of which is given below:

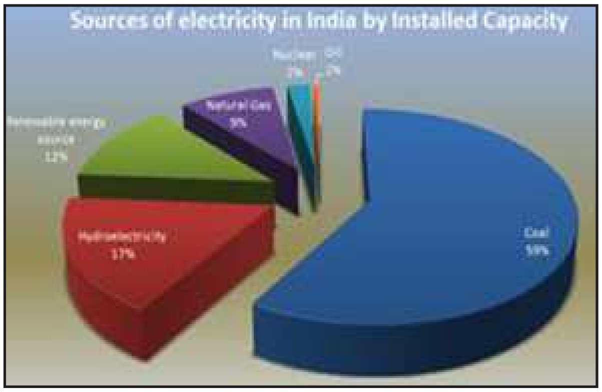

In a May 2014 report by India's Central Electricity Authority, India had an energy requirement of **1048672** Million Units (MU) of energy out of which only **995157** MU of energy were available and out of a peak demand of **147815 MW**, **144788 MW** was the supply. Also, the 17th electric power survey of India report claims that over 2010-11, India's industrial demand accounted for **35%** of electrical power requirement which will further grow significantly as more and more manufacturing facilities come up.

Advantages of Investing in Industry Sector :

1. Make in India scheme will create large scale employment opportunities to low skill workforce since majority of workforce in India are low skilled.
2. India is hugely dependent on FDI to keep the economy positive. Make in India scheme will attract more FDI to revitalize Indian economy.
3. Any manufacturing hub needs supply of parts which is boon for SME's. Make in India will help to generate indirect employment through SME's.
4. Manufacturing sector helps to reduce India's trade deficit through exports.
5. India is the largest consumer market. Any company investing in India under Make in India initiative will directly get access to huge market of 125 Cr people.
6. Job Creation, Enforcement to Secondary and Tertiary sector, boosting national economy.
7. Converting the India to a self-reliant country and to give the Indian economy global recognition.

Moments of Change - "Make in India" boosts manufacturing trade and economy. Over 10,000 training centers open within 2 years. It Creates job market for over 10 million people. Make in India raises the share of the manufacturing sector in gross domestic product (GDP) from its current level of around 16 per cent to 25 per cent by 2022, and creating 100 million new manufacturing jobs over the same period.

Indians should need a wakeup call for consuming Indian made products. More than 30000 crore rupees of foreign exchange is being siphoned out of our country on products such as cosmetics, snacks, tea, beverages, etc. which are grown, produced and consumed here. In 1970 1$ = Rs. 4 Today 1$ = Rs. 68 .Estimated 1$ by end of the year = Rs. 72. Dollar is not getting stronger, rupee is getting weaker and nobody else is responsible for the fall, except us. A Cold Drink produced for 70-80 paisa sold at Rs. 9-10. Stop drinking them, Drink Lemon juice, Lassi, Fruit juice, butter milk etc instead of foreign drinks. Likewise start to use Indian made products in all needs. If we check most of the products we use, half of the things are foreign made. People use these foreign made products & Government has to pay in dollars for the same, thus value of rupee Decreases. Same features comes at Indian mobile Rs 17k means we waste Rs 24k and these 24k go to south Korea in dollars .None of the Indian products are inferior in quality, they might look a bit less fancy. Youngsters should start using more Indian websites for online purchases.

Challenges - India's small and medium-sized industries can play a big role in making the country take the next big leap in manufacturing. India should be more focused towards novelty and innovation for these sectors. The government has to chart out plans to give special privileges to these sectors. According to World Bank, India ranks 142 out of 189 countries in terms of ease of doing business. India has complex taxation system and poor infrastructure facilities. Rapid skill up gradation is needed because skill intensive sectors are dynamic sectors in India, otherwise these sectors would become uncompetitive. India should motivate research and development which is currently less in India and should give more room for innovation.

Make In India - Make in India is aimed at making India a manufacturing hub and economic transformation while eliminating the unnecessary laws and regulations, making bureaucratic processes easier, make government more transparent, responsive and accountable and to take manufacturing growth to 10% on a sustainable basis.

Objectives :

1. To make investing in manufacturing more attractive to domestic and foreign investors
2. To give the Indian economy global recognition
3. To create competitive industrial environment
4. To development infrastructure
5. To invite latest technologies
6. To generate employment and skill formation

The Make in India focuses on new ideas and initiatives such as-

1. First Develop India and then Foreign Direct Investment,
2. Look-East on one side and Link-West on the other,
3. Highways and 'I-ways.
4. Facilitate investment
5. Foster innovation
6. Protect intellectual property
7. Build best-in-class manufacturing infrastructure.

Conclusion - Indian has the capacity to push the GDP to 25% in next few years. The government of India has taken number of steps to further encourage investment and further improve business climate. "Make in India" mission is one such long term initiative which will realize the dream of transforming India into manufacturing Hub. Start-ups in the core manufacturing sectors are poised to play a crucial role in the success of 'Make in India' ambitions, said experts at a panel discussion at the 11th India Innovation Summit 2015 . "Start-ups in the fields of telecom, defense manufacturing, automobile, Internet of Things, financial technology modules and mobile internet have immense potential to succeed in the scheme of 'Make in India'," said Siddhartha Das, general partner, Venture East addressing aspiring entrepreneurs at the discussion on "Entrepreneurship - Role of Startups towards Make in India". Make in India scheme also focuses on producing products with zero defects and zero effects on environment.

Although the ease of doing business score went down to 142 from 134 last year, the World Bank has taken care to distance this downslide from the NDA government which took charge barely a week earlier and World Bank has used data till May 2014 whereas most measures to improve doing business were undertaken subsequent to that. The various measures undertaken by the NDA Government to address issues related to economic growth, delay in Government decisions and reforms in the Labour law, Land law and taxation have kick started the manufacturing sector and shot the GDP growth by 5.7 % in the last quarter. The Modi Government has also signed a staggering USD 35 Billion

investment deal with Japan for infrastructure development. If governance continues in the current manner, we can definitely hope to see significant and sustainable growth in the manufacturing sector and progress tow ards India becoming a global manufacturing hub.

References :-

1. Article: PM Narendra Modi's US visit: Eight highlights. http://articles.economictimes.indiatimes.com/2014-10-01/news/54516929_1_prime-minister-narendra-modi-modi-and-obama-saath
2. Economy Profile of India.pdf, Doing Business 2015, World Bank Group
3. Goods and services tax: http://gstindia.com/
4. National Remote Sensing Centre website http://www.nrsc.gov.in/Publications_Atlas.html
5. Wasteland atlas of India: http://www.dolr.nic.in/wasteland_atlas.html
6. Green clean guide website : http://greenclean guide.com/2011/01/18/wastelands-types-and-status-in-india/
7. Article: Reasons for low employability of engineering graduates.
8. http://www.nitinbhatia.in/views/make-in-india/
9. http://articles.economictimes.indiatimes.com/2015-07-23/news/64772859_1_m-sipsmotherson- sumi-systems-investment-proposals.
10. http://www.livemint.com.
11. http://tech.firstpost.com/news-analysis/after-xiaomi-andothers-asus-planning-to-make-in-india-277014.html

****

A Need of a change in Teaching Style (Pedagogy)

Dr. Manoj Jain *

Abstract - This Research paper is all about assessing the need to change the teaching styles pedagogy. All teachers have their own philosophy governing how they teach. These philosophies serve as a foundation for their individual teaching style. Some teachers use more traditional styles of teaching, while others have adopted a more progressive style. Not much research has been conducted to determine the impact of teaching styles on Academic achievement, but the little research that is available suggests progressive Teaching styles may be more effective than traditional ones. This researcher used quantitative data in an attempt to support the idea that teachers need to develop more progressive styles of teaching in order to become more effective in the classroom and produce students with higher levels of academic achievement.

Introduction - Teachers have their own philosophy guiding how they teach. Aspiring teachers in Undergraduate classes are encouraged to develop a teaching philosophy, and most colleges and universities even require a personal teaching philosophy statement to be included in all educational portfolios. This teaching philosophy serves as a foundation for one's individual teaching style. Teaching styles represent a pattern of needs, beliefs, and behaviors displayed by teachers in their classrooms. They are multidimensional and can influence one's methods of instruction, types of assessments, classroom management, and teacher-student interaction. An individual teaching style also contributes to the overall atmosphere of a classroom by creating a particular mood or emotional climate. Since schools are comprised of many teachers, each with their own philosophies and individual teaching styles, there exists a plethora of personalities blended together. Schools are a wonderful and vast mixture of individuals with unique educational styles and perspectives on how to teach. Some teachers adopt a more traditional style of teaching relying heavily on lecture, note-taking, and formal assessments. These teachers tend to be highly-structured and serious when it comes to educating their students on the subject matter. They are quite often perceived as figures of authority. On the opposite end of the teaching style spectrum are the progressive teachers. They tend to focus on class discussion, hands-on activities, and collaborative learning. As teachers, they asses student performance based on group projects, Teaching styles presentations, and participation. Progressive teachers are perceived as being entertainers, friendly, and nurturing. Of course, quite a distance separates a traditional teacher from a progressive one, and many teachers would probably categorize themselves somewhere in between as they may exhibit various aspects of both teaching styles. Very little research exists, however, examining the actual impact of teaching styles on student academic achievement. The question therefore remains: is one style more advantageous than the other? Does a student who is taught by a traditional teacher have a higher academic success rate than one taught by a progressive teacher?

Answering this question poses many difficulties and may be the subject of debate.

In this study, the researcher focused on how much of an impact individual teaching styles have on student academic achievement. Questionnaires were given to teachers of different colleges of Indore District where they reported their years of teaching experience. The subjects also read descriptions of three different teaching styles and select which one best describes them. They also answered yes or no to two additional questions, further assessing their teaching style.

Need to Evaluate the teaching Style - It takes a certain amount of time and effort to effectively evaluate our own teaching. Is this a wise use of time? I would argue that it is, for three reasons.

1. First, consider the following diagram:

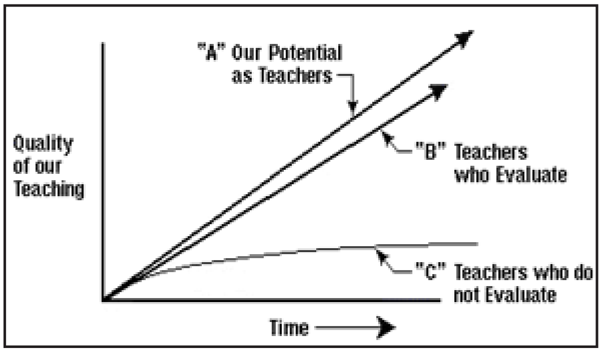

Regardless of how good or how poor we are as teachers,

*Assistant Professor (Commerce) PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

we all have the potential to get better over time (see the arrow in Figure 1). Yet some teachers continually improve and approach their potential (see arrow) while others experience a modest improvement early in their career and then seem to level off in quality or sometimes even decline (see arrow). Why? I would argue that the primary difference between those who do and those who do not improve, is that only the former gather information about their teaching and make an effort to improve some aspect of it — every time they teach.

2. A second reason to evaluate is to document the quality of one's teaching for others. All career professionals have other people who need to know about the quality of their teaching. It may be the person's current department or institution head, or it may be a potential employer. But once people teach, they have a track record, and others need and want to know how well they taught. The only way a teacher can provide them with that information is to gather it, and that means evaluation. Teaching portfolios are becoming a common way of communicating this information to others. As it turns out, putting a portfolio together also helps the teacher understand his or her own teaching better.

3. Third, there is a very personal and human need to evaluate. This is for our own mental and psychological satisfaction. It is one thing to do a good job and think that it went well; it is quite another, and a far more enjoyable experience, to have solid information and thereby know we did a good job. That knowledge, that certainty, is possible only if we do a thorough job of evaluation.

Definition of Terms

Teaching Style - The pattern of needs, beliefs, and behaviors displayed by teachers in their classrooms. One's teaching style influences the method of instruction, type of assessment, classroom management, teacher-student interactions, and emotional climate of the classroom.

Traditional Teaching Style - The traditional teacher is serious and primarily concerned with educating students on the subject matter. The majority of the classroom instruction consists of lecture, note-taking and reading. The majority of grades are based on tests, quizzes, and papers. In regards to discipline, the class is highly structured, and there are established rules and clear consequences.

Progressive Teaching Style - Progressive teachers aim to educate and entertain students to keep their attention and interest. The majority of classroom instruction consists of active learning procedures such as class discussion, collaborative learning, and group projects. The majority of grades are based on projects, presentations, and participation. In regards to discipline, the class is less structured and may be a bit louder as student interaction is encouraged. Progressive teachers are perceived as supportive and nurturing.

Limitations of the Study - This study was limited by a variety of factors.

1. It was conducted with some colleges running undergraduate courses in Indore. So the research in confined to Indore only.
2. Random Sampling (Only 5 colleges and 20 teachers were taken as sample size)
3. The reactions may not be as sincere as expected.

Methodology

Study Design - This study used quantitative research to explain a need of a change in teaching styles. This was accomplished by administering a survey to the participants.

Participants - Teachers of colleges of Indore city.

Instruments

1. The study was conducted by administering a survey.
2. A Questionnaire was designed in accordance with the purpose.

Data Analyses Procedures - The data was organized, reviewed, and coded. Manual tabulation was conducted by the researcher.

Preliminary Results :

1. The researcher expected to prove that the alternative hypothesis is correct.
2. The alternative hypothesis states: There is a need of a change in teaching styles.

Data Analysis - The purpose of this study was to examine if a relationship existed between teaching styles and a student's academic performance. The sample was comprised of 5 colleges of Indore city. A survey was distributed to the 20 English teachers that assessed their teaching styles.

- **70% of the teachers had taught for 5-10 years and 30% have taught for 2-5 years.**

Teacher's Experience	2-5 Years	5-10 Years
Percentage	30	70

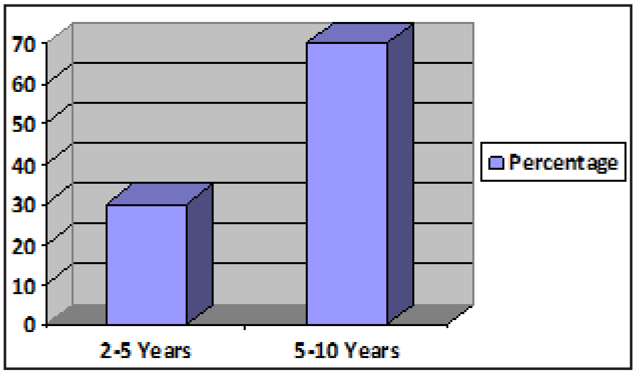

- **30% of the teachers rated themselves as having a traditional teaching style.**
- **10% of the teachers reported having a progressive teaching style.**
- **60% of the teachers reported having a combination of a traditional and progressive teaching style.**

Teaching Style	Traditional Style	Progressive Style	Combination of Traditional & Progressive
Percentage	30	10	60

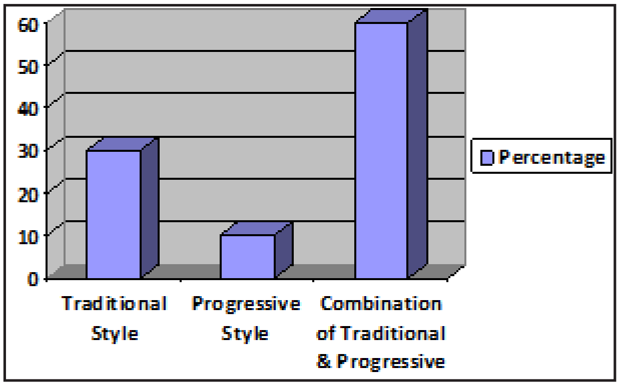

- **Teachers who followed traditional style of teaching have average of 55% result in semester Jan' 2011.**
- **Teachers who followed progressive style of teaching have average of 75% result semester Jan' 2011.**
- **Teachers who followed combination of both styles of teaching have average of 67% result semester Jan' 2011.**

Teaching Style	Traditional Style	Progressive Style	Combination of Traditional & Progressive
Result %	55	75	67

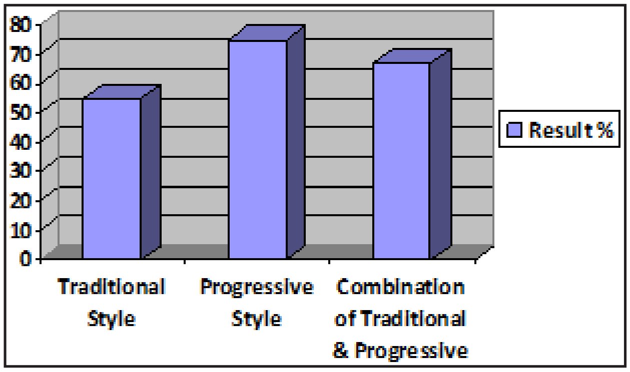

Findings :

1. Teachers who follow traditional style are on the lower side of progress.
2. Teachers who follow combination of both are more successful than those who follow traditional style.
3. Teachers who follow progressive style are the most successful.

Conclusion - Most of the existing literature on adopting a progressive teaching style focuses on how teaching style enhances student interest in the subject matter and generates a more stimulating classroom atmosphere.

Based upon the findings of this research, the alternative hypothesis can be accepted. Therefore**, there is a need of a change in teaching style**. The null hypothesis stating that there is no need of a change in teaching style can be rejected. There are several implications that can be based upon some of the findings.

This research suggests that the teachers who follow the progressive style of teaching are more successful than those using traditional and combination of both.

References :-

1. www.researchlink.com
2. www.researchtools.com
3. Abbott-Chapman, J., Hughes, P. & Williamson, J. (2001). Teacher.s perceptions of classroom competencies over a decade of change. Asia-Pacific Journal of Teacher Education 29 (2): 171-185.
4. College records.
5. Research Methodology by Ranjit Kumar.
6. Research Methodology by C.R. Kothari

****

इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य शिक्षा-आज की आवश्यकता

डॉ. कविता चंदानी *

प्रस्तावना – सूचना प्रौद्योगिक के इस युग में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अनेक परिवर्तन हुए है और वाणिज्य शिक्षा भी इस परिवर्तन से अछूती नहीं रही है। इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य ने आज पुरातन व्यवसायिक शैली को तिलांजलि देकर अपना विश्वव्यापी नया रूप प्रस्तुत किया है। वर्तमान में इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य शिक्षा व्यवसायिक जगत की अनिवार्यता बन गई है।

व्यवसाय में इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य का प्रारंभ 1970 से हुआ। जब बडे-बडे निगमों ने व्यवसायिक साझेदारो व पूर्तिकताओ से सूचना के आदान-प्रदान हेतु किसी नेटवर्क की स्थापना की। यह प्रक्रिया Electronic data Enter Change (E.D.J) कहलाती है, जिसके अन्तर्गत मानकीकत समंक व्यवसायिक प्रक्रिया के दौरान एक-दूसरे के पास पहुंचने से कागजी कार्य व मध्यस्थता समाप्त हई।

इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य सूचनाओं का बिना कागजी कार्य के समुचित तकनीक के प्रयोग द्वारा आदान-प्रदान है। इन सूचनाओं को प्राप्त करने के उपकरण है - Telephone,Television, Fascimile (FAX), Data base service, Electronic Fund Transfer Debit/Credit Card-

- **श्रेणियो –** इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य का विश्व व्यापीबाजार चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है :

1. B to B बिजनेस टू बिजनेस
2. B to C बिजनेस टू कन्ज्यूमर
3. C to B बिजनेस टू बिजनेस
4. C to C कन्ज्यूमर टू कन्ज्यूमर

1. बी टू बी द्वारा उत्पादक व वितरक के मध्य थोक व्यापार हेतु इंटरनेट के माध्यम से सीधा संबंध स्थापित किया जाता है।
2. बी टू सी द्वारा उत्पादक एवं उपभोक्त्ता के बीच फुटकर दुकानदार की भांति कार्य होता है
3. सी टू बी द्वारा उपभोक्त्ता व उत्पादक के बीच व्यवसाय हेतु सीधा संबंध होता है।
4. सी टू सी द्वारा उपभोक्ता का सीधा संबंध होता है।

- **भारत में इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य –** भारत में इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य में पिछले कुछ वर्षो से ऑनलाईन खरीदी तेजी से बढी है।इंटरनेशनल डाटा कार्पोरेश्न एण्ड मेकिन्सी-नेसकॉम के एक अनुमान के अनुसार 2001 में भारत इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य के प्रयोग से 48 मिलियन डॉलर का व्यापार हुआ।

- **भारत में इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य का क्षेत्र**

बैकिंग – में इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य के प्रयोग से मोबाईल बैकिंग, एटीएम, फोन बैकिंग, नेट बैकिंग की सुविधा 24 घंटे उपलब्ध हुई।

परिवहन – में यह ट्रक मालिक आढतियों तथा निर्माताओ को मार्ग में अपने ट्रक की स्थिति जानने में सहायता करता है।

संचार – इन्टरनेट टेलिफोनो की मदद से कॉल की दरे कम हुई, साथ ही वॉइस काल तथा कम्प्यूटर के समायोजन की सुविधा उपलब्ध हुई।

खरीददारी – इन्टरनेट खरीददारी आज सभी वर्गो में लोकप्रिय है। यह केवल एक फर्म के द्वारा घर बैठे हमारी पसंद की वस्तु क्रय करने की सुविधा देती है।

शिक्षा – ई-कॉमर्स की शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों की विभिन्न क्षेत्रो में बढती मांग शिक्षा के क्षेत्र में इसकी भूमिका स्पष्ट करती है।

रोजगार – ई-कॉमर्स की लोकप्रियता ने रोजगार के अवसरों में तेजी से वृद्धि की है। इस तकनीक के परिचालन हेतु सिस्टम प्रोग्रामर, टेक्नीकल, राइटर, ट्रेनर, तकनीक सहायक सेल्स व विपणनकर्मी तथा फील्ड इंजीनियरिंग में दक्ष लोगो की काफी मांग है।

इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य के लाभ – परम्परागत व्यवसायिक प्रक्रिया में ग्राहक कम्पनी से सीधा संबंध स्थापित करने में समक्ष नहीं था। अतः कम्पनी को यह जानकारी नहीं हो पाती थी, कि ग्राहक चाहता क्या है उसकी क्रय क्षमता क्या है फलतः व्यवसाय को अधिकतम ग्राहक संतुष्टि का लाभ नही मिल पाता था। आज इंटरनेट के माध्यम से व्यवसाय का सीधा संबंध ग्राहक से स्थापित हुआ है। ग्राहक घर बैठे किसी उत्पाद को खरीदने का आदेश वेबसाईट देखकर ऑनलाईन दे सकता है। क्रेडिट कार्य व अन्य इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से ऑनलाईन भुगतान कर सकता है।

इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य के निम्नलिखित लाभ है –

1. भौगोलिक सीमाओं की समाप्ति,
2. उत्पादन क्रय सीमाओं की समाप्ति,
3. विज्ञापन, वितरण व परिचालन लागतो में कमी,
4. बेहतर प्रस्तुतिकरण,
5. उत्पाद की किस्म व क्षमता से निरंतर वृद्धि,
6. उपभोक्त्ताओ की अधिकतम संतुष्टि,
7. बाहय वातावरण से बेहतर तालमेल,
8. 24 घंटे विश्वव्यापी व्यापार,
9. प्रबंधन व नियंत्रण में सुविधा,
10. स्वस्थ प्रतिस्पर्धा का विकास,
11. उचित व सही सूचनाओं की प्राप्ति द्वारा नए,
12. अवसरो की उपलब्धता।

* एम.के.एच.एस. गुजराती कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

चुनौतियॉं – किसी भी नवीन तकनीक के विकास हेतु आधारभूत संसाधनों की उपलब्धता कुशल मानव शक्ति तथा सरकारी नीति अति आवश्यक है। भारत में जनसंख्या का एक बडा भाग गांवो में निवास करता है। कई गांवो में बिजली, परिवहन तथा दूरसंचार सेवाओ का अभाव है, जिससे अधिकांश लोगों को इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य का लाभ नही मिल रहा है। रोटी, कपडा, मकान तथा शिक्षा का अभाव भी इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य के मार्ग में बाधक है।

सुझाव – इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य पारम्परिक संचार माध्यम है जो ग्राहक संबंधो को मजबूत करता है। तथा व्यवसायी को अधिकतम ग्राहक संतुष्टि प्रदान करने के योग्य बनता है। जो व्यवसायी इसकी संभाव्यता को जितनी जल्दी पहचान कर प्रभावी ढंग से उस पर अमल करेगा, वह वर्तमान बाजार में प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति में होगा। अतः वर्तमान में आने वाले समय में व्यवसायिक जगत में अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिये इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य शिक्षा अपरिहार्य है।

निष्कर्ष – इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य एक नवीन एवं गतिशील तकनीक है, जिसका भविष्य संभावनाओ से भरा हुआ है। जहां तक उपर्युक्तचुनौतियों का सवाल है अधिकांशतः आधारभूत ढॉचे के विकास के साथ ही समाप्त हो जायेगी। आवश्यकता है तो केवल परिवर्तनों के प्रति सचेत रहकर विकास करने की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Higher Education in Rural Areas of India

Dr. Sonia Chandani *

Introduction - Higher education is the backbone of the modern society. It has the power to transform human beings into human resources. Along with primary and secondary education higher education is also an instrument to build future generation. In India majority of the higher educational institutions are urban centric. Even most of the higher educational institutions in rural India lack quality. As a result of that rural population are deprived. Under certain circumstances it is seen that gross enrolment ratio is very poor in these rural areas. The situation is even worse for female population in regard to gross enrolment ratio.

Education is one of the most powerful instrument for reducing poverty and inequality of society. Education is the key to enhance India's competitiveness in the global economy. Therefore ensuring access to quality education for all, in particular for the poor and rural population, is central to the economic and social development. The rapid expansion of higher education system has brought several pertinent issues related to the standards of its quality and equal availability of higher education facilities to all the categories of people of the society. India is a country with severe economic and social inequalities. There are some families with children rolling in wealth on one hand, while on the other, people strive of hunger.

In India a large number of populations fall under middle class family and lower middle class families. At the same time lower economy class families also exist in large numbers. Now, when a large number of families and their youth are struggling hard to fulfill their basic needs, they naturally have to compromise with the higher education specially the youth of rural and remote areas. Normally it is observed in India, higher education institutions are mostly located in cities, main towns etc.; where it is not possible for all the youth to stay away from their families as they may be the only bread earner of their families. Apart from this poor communication & transportation system of the rural areas also hinders equal access of higher education. The most important problem in the higher education system in India is the lack of quality of the institutions in rural areas. The quantitative expansion is not adequate. The inequalities among the institution located in rural area and urban area are quite remarkable.

The institutions of higher education located in rural and socio-economic backward areas are lacking in the implementation of best practices in higher education and quality. There are number of colleges located in remote, rural, backward and hilly areas, striving to achieve excellence. In these colleges the student's enrolment is from the socio-economic backward families. Most of the students are the first generation learners of higher education. More than 70% of the students are scholarship holders as they are belonging to socio-economic backward families. There are no criteria for admission in the college, any students seeking higher education; who has passed the last qualifying examination, can enroll his name. The colleges are bound to enroll them, because they were established for these students. They were established with the objectives to provide education to these economically, socially and educationally weaker section of the society. In the assessment and accreditation by NAAC, such colleges get poor grades only because of the high dropout rates. The high dropout rate of the students in such colleges is a most important problem, which is to be solved.

Equity is at the heart of a good educational system. We don't have equity." Kapil Sibal. The Indian Higher Education system is characterized by a large rural- urban and gender divide. Gross Enrollment Ratio (GER) in rural India is estimated to be about 7%, while urban areas have a GER of about 23%. India's GER shows significant variability across regions. Though the current rural—urban disparity in access to higher education opportunities is trending towards continuous shrinking, however this disparity is still very clear.

The National Knowledge Commission chaired by Sam Pitroda has recommended setting up of 1500 universities in the country. This was done with the objective of extending the benefits of education to all the people of our country eligible for the same. The UGC in a report released in early part of 2010 has identified 374 districts of the country as educationally backward districts. This number as compared to the total nos. of 650 district of the country amounts to approximately 60% of the districts.

Educationally Backward Districts In India - The rural urban divide continues as urban GER is about three times higher (23.79) than the rural (7.51). For women it is four times higher (22.56 for urban as compared to 5.67 for rural)

*Asst. Professor (Commerce) M.K.H.S. Gujrati Girls College, Indore (M.P.) INDIA

whereas for urban men it is about twice and half higher than the rural men, the corresponding figures being 24.77 for urban and 9.28 for rural. Analysis of about 111 Universities and 3,492 colleges assessed. by the NAAC indicates that the deficiencies in availability of human resources in terms of quantity and quality teachers and physical and other infrastructural facilities caused qualitative gaps between 'A' and 'C' grade Universities and colleges. The higher educational institute of rural areas are lacking behind in different aspects as compared to the institutes of urban areas which leads to lower grading by NAAC. The percentage of colleges with libraries, computer centers, health centers, sport facilities, hostels, guest houses, teachers housing, canteens, common rooms, welfare schemes, gymnasiums, auditoriums, and seminar rooms are much higher in case of high quality colleges as compared with the low quality ones.

Similarly, high quality colleges are better placed with regard to academic indicators, which include higher student-teacher ratios, number of permanent teachers or teachers with PhD degrees, books per student, books and journals per college, and students per computers etc. Thus, if low quality colleges are to be brought at parity with high quality ones; a substantial improvement in the physical and academic infrastructure is necessary in the higher educational institutions located in remote areas. The colleges located in rural areas have their own specific patterns of student's attendance in the classroom. Especially in rural areas more than 50% of the students use to remain absent in the classroom during the sowing season in the fields as they are from the farmers families and the land-less labors families; and again in the season of harvesting the classrooms use to be vacant. The annual teaching plans prepared by the teachers are not much helpful to carry out the process of teaching and evaluation in practice.

Problems :

1. **Lesser Number of Institutes :** In comparison to the number of higher education institution present in urban areas i.e., cities or towns, there are very few institutions in rural areas of India. Technical higher educational institutions are very rarely established in the rural areas.

2. **Access :** The Gross Enrolment Rate (GER), measures, the access level by taking the ratio of persons in all age groups enrolled in various programs to total population in age group of 18 to 23. The access to higher education for all eligible in the country is a major issue before the policy makers.

3. **Equity :** On one hand GER stands low for the overall population, while on the other there are large variations among the various categories of population based on urban or rural habitation and rich and poor. Due to regional disparity in economic development and uneven distribution of institutions of higher education, the higher education is not equally available to the different sections of the society.

4. **Limitation of Quality :** The higher educational institutions suffer from large quality variation in so much so that a NASSCOM- Report-2005 has said that not more than 15per cent of graduates of general education and 25-30per cent of Technical Education are fit for employment. First, the quality norms oL which are not comparable with international standards can't be maintained by the higher educational institute of rural areas. Secondly, the enforcement process is not stringent. Further political interference and corruption dilute the role and impact of these intuitions in ensuring the desired quality standards.

5. **Cost of Education :** One of the main factors of lower enrolment in rural area is the cost of education. Technical education sometimes only a dream for most of the students of rural areas where the people are mostly dependent on agriculture. Even sometimes it is seen that normal higher education expenses cannot be afforded by some of the families coming under lower middle class tag.

6. **Higher Teacher-student Ratio :** Student teacher ratio is one of the indicators used to describe the quality of education received in any education unit, be it in a city or in any rural areas of the country. UGC has recommended an ideal ratio of 1:30 for the general undergraduate courses. Unfortunately, because of lesser no of educational institutes in rural areas, more and more students are bound to enroll and the teacher-students ratio does vary to the standard so far as quality education is concerned.

7. **Privatization :** In India both public and private institutions operate simultaneously. In the year 2000-01, out of 13,072 higher education institutions, 42 per cent were privately owned and run catering to 37 per cent of students enrolled into higher education. Since providing grant-in-aid to private colleges is becoming difficult, they sometimes not able to maintain the minimum standard of quality education. The quality of education in these private colleges is very uneven. Many of the colleges because of shortage of funds are not able to hire well deserving and quality teachers which at times create a problem for the students to face. Apart from it some institutions do not have proper infrastructure like quality laboratory. But on the other side of the coin we actually could see there are some private colleges which have strived to enhance their standards and some of them rank better than many Government run colleges today which is not accessible for all.

8. **Misuse of Grants :** UGC provides financial assistance to the universities and colleges for various developmental activities. But the same fund is hardly seen to be properly utilized. Specially, in rural areas where the local bodies are not so strong, the guardian of the students are not so conscious about the proper use of financial assistance, administrative bodies takes the advantage of it.

Reference :-

1. Personal Research

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

नागार्जुन के उपन्यासों में विधवा-चिंतन

डॉ. सत्येन्द्र कुमार मिश्रा *

प्रस्तावना – भारतीय समाज में विधवा-समस्या एक बड़ी सामाजिक समस्या है, लेकिन क्योंकि विधवा परिवार में रहती है इसलिए पारिवारिक समस्या पहले है। 'उसके लिए आर्थिक स्वतंत्रता की आवश्यकता होती है। वह बैठे-बैठे खाती है इसलिए सबको वह भार मालूम होती है और लोग उसे तंग करते हैं।'[1]

नागार्जुन के उपन्यासों में अनेक विधवा स्त्री पात्र हैं जो परोपजीवी बनकर दैनिक जीवन जीने को बाध्य हैं। नागार्जुन ने अपने उपन्यासों- 'रतिनाथ की चाची', 'बलचनमा', 'नई पौध','बाबा बटेसर नाथ','दुख मोचन','उग्रतारा' आदि में भारतीय समाज में अपमानित, तिरस्कारपूर्ण और यातनापूर्ण जीवन जीने वाली नारी के विधवा जीवन का यथार्थ चित्रण किया है। उनके प्रथम उपन्यास 'रतिनाथ की चाची' की मुख्यकथा एक उपेक्षित, अपमानित और यातनापूर्ण विधवा जीवन जीने कोविवश गौरी से संबंधित है।

गौरी का जन्म मध्यवर्गीय ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बचपन अच्छी तरह गुजरा उसके पिता चुम्मन झा ने कुलीनता को महत्व देते हुए बड़े परिवार में, किंतु आर्थिक रूप से विपन्न मैथिल ब्राह्मण परिवार में एक रोगी और आलसी आदमी से गौरी की शादी करवा दी। उसने शीघ्र ही इस संसार से विदा ले ली स्वाभिमानी गौरी ने अपने मायके के बजाय अपने पति के घर में रहना ही उचित समझा। गौरी के वैधव्य जीवन की असल कथा यहीं से शुरू होती है।

गौरी का देवर जयनाथ रुग्ण मानसिकता एवं कामुक चित्र वाला व्यक्ति था। वह गौरी को अपने प्रेमजाल में फंसा कर अपनी हवस का शिकार बना लेता है। गौरी गर्भवती हो जाती है और यहीं से उसके विधवा जीवन की अपमानपूर्ण, तिरस्कारपूर्ण और यातनापूर्ण शुरुआत होती है। इस स्थिति का वास्तविक कारण खोजती हुई गौरी इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि 'दरिद्र कुल में लड़की ब्याहने का ही परिणाम था।'[2] गौरी उस अमावस की भयानक रात को याद करती है-'एक घनी और अंधेरी छाया मेरे बिस्तर की तरफ बढ़ आई। उसके बाद क्या हुआ उसका होश अपने को नहीं रहा।'[3] जब होश आया तो पाया कि वह समाज की दृष्टि से पतित हो गई है। स्वयं बाल वैधव्य की रंगरेलियां मनाने दमयंती सहानुभूति दिखाने के बहाने आई, लेकिन गांव में घूम-घूम कर सबो को कहती फिरी-'सामाजिक बहिष्कार तो उमानाथ की मां (गौरी) का हर हालत में करना ही पड़ेगा।'[4]

वह जहां विधवा गौरी को बदनाम करती फिरती थी, वही एक अजीब तर्क देकर जयनाथ का इन शब्दों में बचाव करती थी-'मर्दों का तो कोई ठिकाना है नहीं। अगर हम ना रहे तो संसार से आचार विचार हट जाए।'[5] अर्थात समाज की बुराइयों का ठेका नारी समाज ने ही ले रखा है। दमयंती हर जगह प्रचार करती चलती कि 'उमा नाथ की मां व्यभिचारिणी है, पतिता है, भ्रष्टा है, कुलटा है, छिनार है, उससे हमें किसी प्रकार का संबंध नहीं रखना चाहिए। बोलचाल बंद , बात-विचार बंद। प्रत्येक व्यवहार बंद। हां, जयनाथ और रतिनाथ दोनों बाप-पूत यदि प्रायश्चित कर ले, तो इस समाज में उनके लिए स्थान हो सकता है, परंतु उमानाथ की मां को समाज किसी हाल में क्षमा नहीं कर सकता ।'[6]

समाज के ऐसे ही अन्यायपूर्ण विचारों के कारण विधवा स्त्रियों का पारिवारिक-सामाजिक जीवन यातनापूर्ण बन जाता है।

गौरी की तरह और भी कई विधवाएँ हैं, जो गौरी की तरह ही यातनापूर्ण जीवन व्यतीत करती हैं। अनेक विधवाएँ घुट-घुट कर जीवन व्यतीत करती हैं, लेकिन कुछ के मुंह में बोली है, जो विधवाओं की समस्याओं एवं समाज की विधवाओं के प्रति उदासीनता पर खुलकर बोलती हैं। गौरी की मां भी विधवा है। वह गौरी के दुख को जानती है और समाज में दमयंती जैसी कूटनी स्त्रियों को भी। वह गौरी के बचाव के लिए अपने समाज से लड़ती है। काशी में जयनाथ का सुशीला नामक एक विधवा से परिचय होता है। वह जयनाथ से कहती है-'तुम जिस जाति में जिस समाज में पैदा हुए हो वह जिंदा नहीं, मुर्दाघर है, वह छाइन है।'[7]

सच पूछा जाए तो नागार्जुन का 'रतिनाथ की चाची' उपन्यास उच्च कुलीन ब्राह्मण परिवार में चिता की ज्वाला में जीती विधवा स्त्रियों का जीवंत दस्तावेज है।

'दुख मोचन' उपन्यास की माया का विवाह कुलीन मगर दरिद्र परिवार में हुआ था। उसका पति बूढ़ी गंडक पार करते समय नाव उलट जाने के कारण डूब कर मर गया था। वह गौरी की तरह स्वाभिमानी नहीं थी। वह ससुराल में नहीं रही, क्योंकि वहां वहां बूढ़ी सास थी, आवारा देवर था। मायके में निर्वाह बड़ी मुश्किल से होता था। वह अपनी बड़ी भाभी से आग्रह कर मायके में ही रह गई ।

ऐसा नहीं है कि विधवा के प्रति परिवार में एवं समाज में पुरुषों की सोच दकियानूसी है या सभी औरतें दमयंती की तरह होती हैं। नागार्जुन ने 'दुख मोचन' उपन्यास में विधवा समस्या के लिए प्रगतिशील दृष्टिकोण का समर्थन किया है। विधवा माया विधुर कपिल के संपर्क में आती है। दोनों में प्रेम होता है एवं बढ़ता चलता है। दोनों विवाह करने की सोचते हैं, तब नागार्जुन वर्तमान समाज व्यवस्था की वास्तविकताओं की ओर संकेत करते हुए कहते हैं- 'एक तो विधवा-विवाह ही इस गांव के लिए अनहोनी घटना थी। दूसरे कपिल राजपूत था।'[8]

पुरानी पीढ़ी के दकियानूसी- रूढ़िवादी उच्च जाति के कुलीन ब्राह्मण इस विवाह के बारे में कहते हैं-'राम-राम! घोर कलयुग आ गया है। जो कहीं

* सहायक प्राध्यापक, सी -15 कैलाशपुरी आलमबाग, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

नहीं हुआ था वह टमका–कोइली गांव में हो रहा है।'[9] परंतु दूसरी जातियों के प्रगतिशील लोग सोचते हैं–'वह ठीक ही हुआ था। विधवा लड़की ने रंडुआ लड़के से संबंध कर लिया तो क्या बुरा किया ? इधर–उधर भटकती और भरस्ट होती तो गांव कुल का नाम डुबाती . . . वह अच्छा होता कि यह अच्छा हुआ ?'[10] अंत में लेखक एक सार्थक टिप्पणी करते हैं–'दस–पांच दकियानूसों को छोड़कर बाकी लोगों का ऐसा ही विचार था।'[11]

इस तरह नागार्जुन ने 'दुख मोचन' उपन्यास में माया की मां को जो प्राचीन संस्कारों में पली बढ़ी थी वह भी अपनी बेटी के जीवन को सुखमय देखने की लालसा में असवर्ण विवाह तथा पुनर्विवाह का प्रस्ताव कबूल करने वाली मां के रूप में उपस्थित किया है। दरअसल, विधवा– समस्या समाधान के संदर्भ में नागार्जुन की सोच भी पुनर्विवाह की ही थी।

इसी प्रकार 'उग्रतारा' उपन्यास की उगुनी का पति एक स्ट्रीमर– दुर्घटना में मर गया था। विधवा उगनी बाद में विधुर कामेश्वर से प्रेम करने लगती है। वह अपने परिवार में विधवा– जीवन व्यतीत करने वाली अकेली नारी नहीं है। उसकी पिछली कई पीढ़ियां विधवा– जीवन के अभिशाप से ग्रस्त थी। लेखक के शब्दों में–'उगनी नई विधवा थी। उसकी मां पुरानी विधवा थी। कहते हैं दादी भी विधवा थी।'[12] अंत में उगनी कामेश्वर से पुनर्विवाह करके अपने परिवार के विधवा जीवन के अभिशाप को खत्म करती है।

'नई पौध' की रामेसरी अपने दुर्भाग्य पर उतना कभी नहीं रोई जितना कि बहनों की बदनसीबी पर रोती थी। क्योंकि उसकी चार –चार बहनें दुर्भाग्य से विधवा हो गई थीं। वह स्वयं विधवा जीवन का दंश झेल रही थी और देवरानी– जेठानी के दुर्व्यवहार से तंग आकर मां –बाप की शरण में आ गई थी। लेकिन वह बिसेसरी को साठ साल के बूढ़े से ब्याह कराके विधवा– जीवन की ओर नहीं धकेलना चाहती थी।

इस प्रकार नागार्जुन समाजवादी– यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाते हुए तथा भारतीय ग्रामीण समाज की सड़ी– गली , जर्जर और रूढ़ मान्यताओं का विरोध करते हुए विधवा–समस्या का समाधान प्रगतिशील कदमों से करने की वकालत करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ रामविलास शर्मा, प्रेमचंद आलोचनात्मक परिचय,पृ.119
2. रतिनाथ की चाची, पृ.145
3. वही, पृ.132
4. वही, पृ.175, 76
5. वही, पृ.175
6. वही, पृ.175
7. वही, पृ.189
8. दुखमोचन, पृ.62
9. वही ,पृ.75
10. वही, पृ.75
11. वही,पृ.75
12. उग्रतारा (नागार्जुन संपूर्ण उपन्यास) पृ.373

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

'Rudali' by Mahasweta Devi - Exploitation is the issue for the survival of women

Papiha Amin* Dr. Meenakshi Choubey**

Abstract - Rudali, a Hindi film directed by the feminist Indian director Kalpana Lajmi, is based, On the short story written by famous Bengali Novelist Mahashweta Devi. The title is a reference to a custom in certain areas of Rajasthan where women of lower caste are hired as professional mourner's upon the death of upper caste males. These women are referred to as a "Rudaali" (roo-dah-lee), literally translated as "Female weeper" or" Weeping woman". Their job is to publically express grief of family members who are not permitted to display emotion due to social status.
Key Words - Exploitation, Female weeper, Mahasweta Devi, Rudali, Women.

Introduction - Both the terms Race and Gender go conjointly and this is the reason for marginalisation or oppression of women according to different groups. Shruti Sangam & Shilpi Bhattarcharya highlighted that when race and gender twitch together in the obscure pyramid of society women automatically are targeted to marginalisation. Globally the dilemma of women in terms of race and gender remains the same. This issue is very much clearly narrated in Mahasweta Devi's Rudali.[1]

The script of Rudali lionizes the decease of the mediaeval lords to launch their caste supremacy and other social issues like poverty, sexual abuse, prostitution, old age, marginalisation and patriarchy as the alarming problems in the emancipation of women.

The professional assumption status transformed the Rudali's into a low gendered caste known as " whores". MahashwetaDevi narrated this communal practice as a matter of fundamental tension. AJAY SEKHER also stated that it is the women who were derelict by the Malik Mahajans by converting them into whores. The work of MahashwetaDevi on Rudali was sensational narration to highlight the third world of marginalisation. In Rudali, Devi portrays the low caste woman both as victim and as a potentially subver- sive agent in the order of brahmanical patriarchy.[2]

The lower caste women in north India were ruled by Brahmanic patriarchy till the end half of the 20th century. The societal dictatorship of the village groups was based on the thumb rule of caste. Tahad village situated in west Bengal is a classic example for such an observation.[3]
The Tahad Village comprised of Ganjus and Dushads were in the majority. Sanichari along with the other villagers dwelled in the village with poverty, who belonged to the community called Ganju. She lived in in a desperate condition due to poverty.[4]

Her dreams were very simple, straightforward and ordinary; however, they were at no time contented. Sanichari had a unpretentious reverie of living peacefully in the bosom of her family surrounded by the grand-children, she also desired to buy a wooden comb for her hair, to wear bangles for a full year.

Continuous problems were prevalent throughout Sanicharis life.Sanichari was exposed to a lot of physical, emotional and financial sufferings which made her vulnerable to exploitation. Her name was kept as Sanichari as she was born on Saturday which was considered as in auspicious the same dictum was also given by her mother in law. Hence, she was cursed as Manhoos, doomed to suffer. But Sanichari did not believe the dictum and she also observed that individuals who were born on lucky days also had Tough and unlucky life.

'Muh' because I was born on and named after a Saturday, that made me an unlucky daughter-in-law! You were born on a Monday - was your life any happier? Somri, Budhni, Moongri, Bishri - do any of them have happier lives? (Rudali54)

Hence her belief was supported by her own observation, as she observed the in the village everyone was not happy.

Sanichari's mother in law died in a prodigious pain slumbering in her own excreta and oedema (Dropsy); crying for food on a rainy day. Sanichari and her sister in law cleaned the body and prepared it for the cremation. The blind belief of performing the rites on the same day of her death forced Sanichari to go out of the house from one neighbour house to another in rains. She had to drag neighbours along with her to make the necessary arrangements to be made for her cremation; leaving no

*Research Scholar, J.H. Govt. P.G College, Betul (M.P.) INDIA
**Prof. & Head, J.H. Govt. P.G College, Betul (M.P.) INDIA

time for her to express her own emotion of grief and cry. She was also unable to bring out tears for her due to her bitter memories with her mother in law. (Rudali, p 55)

She had to fight for the release of her husband and his brother who were in jail because of Malik Mahajan the master money lender; because they both were the victim of Malik's anger who had locked them in due to loss wheat by them.

Years later, her husband, Ganju gets died due to cholera after consuming holy water from a temple in a religious fair. Sanichari was unable to weep. Her brother-in-law and his wife died consequently.

Sanichari dreamt that her son and daughter-in-law would earn enough, they would support her, she imagined sitting in the winter sun sharing a bowl of gur and sattu with her grandson - Had this last dream been overambitious? Had she sinned by wanting too much? Is that why Budhua was wasting away before her eyes? (Rudali 59). Mahashweta Devi narrated the mental agony of Sanichari life of visualising the ordeal of the death of her son in front of her eyes. Roasting heat blowing about her day and night. She could comprehend that he was going to die, and realized that her dreams of constructing a life around Budhua would never be contented. Her son dies due to Tuberculosis. Her daughter-in-law leaves the home and becomes a prostitute. She looks after her grandson with the help of the other people of her community.[5]

Though Sanichari was totally against it at the beginning, she also became a 'rudali' because of material constraints. It was the caste lords who create whores and wailers out of the low caste women. She believed that her family was one among the target of Malik, who had as strong Oppressive behaviour towards Dushads and Ganjus.

Rajput's Malik's and Singhs s enforced the tag of "whores" on the lower caste women and constructed a succession of prostitute wailers into a caste called Rudali's. It was observed that the laborers were treated as whores and were made tramp in sludge by Mailk's and Singh's. Among them the worst was Gambir Singh; he kept a whore and had a daughter by her. Till the whore was alive he kept the child in comfort. The moment when the whore died, he insisted the girl to become a whore; stating a whore's daughter would be whore and suggested the girl to practice the profession to support herself. The same girl was observed in Tohri, in a randi bazaar; where her value fell from a five-rupee whore to a five-paisa whore (Rudali, pp 70-71).

Her motivation to be alive after all these mental traumas was her grandson. She used to console herself for the wellbeing of her grandson. As time passed on her grandson grew up, Sanichari discovers a job for him in the market for two rupees a month. For the first few months, he works hard but gradually he gets bored and one day he also runs away deserting his grandmother and goes away with some magic-show fellows leaving her in a deep sorrow.

Hence in this lonely time Sanichari happened to meet her childhood friend Bhikni. After having heard the sad story of Sanichari she thought that there no caring left in the world and blamed self and Sanicharis fate for their present situation (Rudali 65). Visualising the present circumstances both decided to support eachother. With the backing of cunning Dulan, they started working as 'rudalis,' ladies who cry deafeningly when some rich person was dead. They did well in their job and progressively their demand grew rapidly.

This was not the end of difficulties of Sanichari in her life, she also lost her childhood friend Bhikni when she did not return after her visit to her relatives wedding in Ranchi where she died because of Asthama. For Sanichari at this time her survival was of major concern because an accompanying person as a Rudali. To get Rudali she had to visit Tohri. It was Dulan who came to the rescue of Sanichari; he removed the reluctancy of her visit to Tohri, where her daughter in law used to work as prostitute. Dulan made her understand not to weigh right and wrong so much, leave that kind of thing to the rich. This removed the hesitation of Sanichari and she called every female in Tohri as her Daughter in law.

Conclusion - Thus, Mahashweta Devi work on Rudali is all about the enabling downtrodden woman survives many calamities. It also highlights how downtrodden women support each other's. Devi's effort is an epic of class and caste oppression by the system where women find themselves twofold oppressed. This epic provided a realistic presentation of the inevitable struggles of countless women among the poor and low caste people. Like 'mother-earth' women have enormous capacity of enduring sufferings.

References :-

1. Sangam, Shruti, and Shilpi Bhattarcharya. "Feracialnalisation in Toni Morrison's the bluest eye and Mahashweta Devi's Rudali." International Journal of English and Literature (IJEL) 5.5 (2015): 97-102.
2. Tony Beck and Tirthankar Bose, 'Dis- possession, Degradation and Empowerment of Peasantry and the Poor in Benglai Fiction', Economic and Political Weekly, 30,1995:441- 48.
3. Sharma, Kanhaiya Lal, and Yogendra Singh. Social inequality in India: Profiles of caste, class, power, and social mobility. South Asia Books, 1995.
4. Devi, Mahasweta. "Marginality in Mahasweta Devi's Rudali S. Pragadhipriya, M. Phil. Research Scholar."
5. Hema, v. "Women's triple oppression in Mahasweta Devi's Rudali." A Peer Reviewed, Refereed & Quarterly Journal: 16.

****

बौद्ध-दर्शन का स्वरुप

डॉ. विनय शर्मा *

प्रस्तावना – यों तो 'दर्शन' शब्द का अर्थ होता है देखना, लेकिन युक्तिपूनर्वक तत्व ज्ञान प्राप्त करने के प्रयत्न को ही दर्शन कहा जाता है क्योंकि दर्शन में धारणाओं को निश्‍चित करने की शक्ति होती है। वह जीव, जगत, ब्रह्म, जीवन और मृत्यु पर अपना विचार व्यक्त करता है। सत्य को खोजता है और खेज कर गुत्थियाँ सुलझाता है। इस प्रकार सभी प्रकार की अनुभूतियों की तर्कपूर्ण व्याख्या कर उनके आधार पर वास्तविकता का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना ही दर्शन कहलाता है। वास्तव में दर्शन एक गतमान तथा चिंतनशील प्रक्रिया है। इस संदर्भ में यहाँ मनु कर कथन सत्य ज्ञान पड़ता है कि 'सम्यक् दर्शन प्राप्त होने पर कर्म मनुष्य को बंधन में नहीं डाल सकते है।'

दर्शन के सूत्र साहित्य तथा विज्ञान से भी जुड़े हुये दिखाई देते है। दर्शन जगत को बुद्धि द्वारा समझने का प्रयत्न करता है जबक साहित्य भावना द्वारा दर्शन बुद्धि के आधार पर जो बात निश्‍चित करते हुये घबराता है, साहित्य आगे बढ़कर अपनी भावना से उसमें निश्‍चितता ला देता है। यही स्थिति विज्ञान की है। विज्ञान एक निश्‍चयात्मक ज्ञान है जबकि दर्शन अनुभूति पर आधारित है। प्रसिद्ध दार्शनिक स्पेंसर ने दर्शन को 'समस्त विज्ञान की समष्टि' कहा है।

1. भारतीय दर्शन की शाखाएँ – भारत में समस्त बौद्धिक दार्शनिक एवं धार्मिक सिद्धांतों का मौलिक संबंध वेदो से है। वेदों को हम समूची भारतीय सभ्यता और संस्कृति के साथ साथ धर्म और दर्शन के उद्गम स्थान के रुप में पाते है। वेद का अर्थ है ज्ञान। वेद चार है। ऋग, यजुस, साम तथा अथर्व और प्रत्येक वेद के चार भाग है जिन्हें संहिता, ब्राहमण, आरण्यक और उपनिषद् कहते है। संहिता वैदिक मंत्रों का संकलन है तो ब्राहमणों में याज्ञिक आचरणों और उनके मूल्यों का विवेचन है। इसी प्रकार आरण्यक ध्यान आदि गूढ़ विषयों से संबद्ध है तथा उपनिषदो में वेदों के आध्यात्मिक सिद्धांतों का विवेचन है। इस संबंध में डॉ. राधाकृष्णन कहते है कि उपनिषदों से अध्यात्मवाद का प्रकाश अधिक नकलता है बनिस्बत सुव्यस्थित चिंतन से।

मूल रुप से भारतीय दर्शन को दो शाखाओ में बाँट सकते है। आस्तिक दर्शन और नास्तिक दर्शन। साधारणत: आस्तिक का अर्थ आजकल ईश्‍वरवादी के रुप में लगाया जाता है और नास्तिक का अर्थ अनिश्‍वरवादी के रुप मे। आधुनिक साहित्य के दृष्टिकोण से भी उसी व्यक्ति को आस्तिक कहा जाता है जो ईश्‍वर में विश्‍वास रखता है इसके विपरीत दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्ति को नास्तिक कहा जाता है जबकि प्राचीन दृष्टिकोण से आस्तिक और नास्तिक के कुछ दुसरे ही अर्थ लगाए जाते है। आस्तिक का अर्थ वेद के अनुकुल और नास्तिक का अर्थ वेद विरोधी है। प्राचीन दर्शन के साहित्य में आस्तिक का अर्थ परलोक में विश्‍वास रखने वाला और नास्तिक का अर्थ परलोक में विश्‍वास नही करने वाला से लगाया जाता था।

इस प्रकार आस्तिक दर्शन के अंतर्गत (1) न्याय दर्शन (2) सांख्य दर्शन (3) वैशैषिक दर्शन (4) योग दर्शन (5) मीमांसा दर्शन (6) वेदांत दर्शन सम्मिलित है। इन्हें षड्दर्शन भी कहा जाता है क्योंकि ये सभी वेद के अस्तित्व पर विश्‍वास सखते है। हालांकि सांख्य और मीमांसा दर्शन ईष्वर को नही मानते है फिर भी ये आस्तिक दर्शन है। नास्तिक दर्शन के अंतर्गत तीन दर्शन आते है – (1) चार्वाक दर्शन (2) बौद्ध दर्शन (3) जैन दर्शन।

2. बौद्ध दर्शन का स्वरुप – भारतीय विचार परम्परा के विकास में गौतम बुद्ध का आविर्भाव एक महत्वपूर्ण घटना है। बौद्ध दर्शन के प्रवर्तक गौतम बुद्ध माने जाते है। बुद्ध का पूर्व का नाम गौतम था तथा बचपन में इन्हें सिद्धार्थ भी कहते थे। बोधि प्राप्ति के बाद वे बुद्ध कहलाए। इनका जन्म ईसा पूर्व 6 टीं शताब्दी में हिमालय की तराई के निकट एक राजपरिवार में हुआ था। जरा-मरण के दृष्यों को देखकर इन्होंने युवावस्था में ही सन्यास ग्रहण कर लिया था। इनके मन में यह विचार गहाई से बैठ गया कि यह संसार दु:खों से भरा है। अत: दु:ख से मुक्ति पाने के लिये इन्होने सन्यास ग्रहण क लिष्सा जीवन के दुखों के कारण तथा उनसे मुक्ति पाने के लिये वे दर दर भटकने लगे। दृढ़ संकल्पों के साथ ये घोर साधना में लीन हुए और दु:ख के रहस्यों का समझने की चेष्टा की। अंत में ये बोधि प्राप्त कर महात्मा बुद्ध कहलाए। इसके बाद बुद्ध घूम घूम के अपने ज्ञान का प्रकश लोगों के बीच बिखेरने लगे। इसी के फलस्वरुप बौद्ध धर्म का जन्म हुआ वैसे तो बौद्ध धर्म का आविर्भाव ब्राहमणों के कर्मकांडय धर्म के विरुद्ध हुआ था, लेकिन बाद में बुद्ध का संदेश समस्त भारत के साथ लंका, चीन, जापान, तिब्बत तथा कोरिया तक फैल गया।

बुद्ध के उपदेशों का ज्ञान हमें 'त्रिपिटकों' से मिलता है। 'पिटक' शब्द का शाब्दिक अर्थ बक्सा या पेटी है। ज्ञान की तीन पेटियाँ होने के कारण ये त्रिपिटक कहलाया। इनमें विनय पिटक, सुत्त पिटक तथा अभिधम्मक पिटक शामिल है। प्रत्येक पिटक में अलग अलग ग्रंथ है। विनय पिटक में आचरण तथा संघ के नियमों संबंधी बातें है। सुत्त पिटक में बुद्ध के उपदेश तथा धर्म संबंधी बातों की व्याख्या है। अभिधम्म पिटक में दर्शनिक विचारों की व्याख्या की गई है। इन सभी ग्रंथो की भाषा पालि है।

3. चार आर्य – सत्य – गौतम बुद्ध का मानना था कि कोई भी कार्य बिना कारण नही होता। अत: कारणों की खोज करना ज्ञानी का काम है। इसी कारण चार आर्य-सत्यों की खोज की गई।

(अ) प्रथम आर्य-सत्य (दु:ख) – रोग, जरा तथा मरण के दृष्यों को देखकर सिद्धार्थ का मन विकल हो उठा, किंतु जब वे बोधि को प्राप्त हुए तो वे

* प्राध्यापक, प.म.ब. गुजराती वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जीवन दु:ख से परिपूर्ण है। उन्होंने कहा है – जन्म भी दु:ख है , बुढ़ापा भी दु:ख है, मरण..... शोक रुदण मन की खिन्नता हैरानगी दु:ख है। अप्रिय से संयोग, प्रिय से वियोग भी दु:ख है। उनका मानना है कि क्षणिक विषयों के लिये आसक्ति ही पुनर्जन्म का कारण होती है। सुख भी दु:ख के साथ मिला रहता है। सासांकि सुख क्षणभंगुर है। इन सुखों को देखकर जो लोग खुष होते है वे अज्ञानी है।

(ब) द्वितीय आर्य– सत्य (दु:ख का काण है) – दु:ख के अस्तित्व को तो सभी दर्शन स्वीकार करते है, लेकिन दु:ख के कारण संबंध में एकमत नहीं है। बुद्ध अपने तरीके से दु:ख का कारण खोजते है। इसके लिये उन्होंने प्रतीत्य समुत्पाद का सहारा लिया है। प्रतीत्य समुत्पाद के कारण संसार का कोई भी विषय बिना कारण नही है। अत: जब तक कुड कारण नही रहे दुख की उत्पत्ति नही हो सकती। बुद्ध ने बताया कि अभिलाषा ही तमाम दु:खों का कारण है। इस जगत में कारण के बिना किसी वस्तु का अस्तित्व नही है। पुरानी वस्तु के विनाश से ही नई वस्तु की उत्तपति ही प्रतीत्य समुत्पाद है। इस प्रकार एक बात की जिक्र कना अप्रासंगिक न होगा जो भारतीय दर्शन की विशेषत: महात्मा बुद्ध की अपूर्व देन है – वह यह कि शरीर की उत्पत्ति तथा वृद्धि एक अंतर्निहित वासना के कारण होती है। इस तरह बुद्ध तथा हेनरी बर्गसाँ और हेरेक्लिटस तीनो हही संसार को परिवर्तनशील मानते है।

(स) तृतीय आर्य– सत्य (दु:ख निरोध या निर्वाण) – यदि दु:ख के कारण का अंत हो जाए तो दु:ख का अंत भी अवश्यभावी है। दु:ख नाश या दु:ख निरोध की अवस्था का ठीक ठाक ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। निर्वाण की प्राप्ति जीवनकाल में भी हो सकती है। बुद्ध का कहना है कि निर्वाण एक अवस्था का नाम है जहाँ पहुँचकर मनुष्य के संपूर्ण दु:खों का नाश हो जाता है। राग–द्वेषों पर विजय पाकर तथा शुद्ध आचरण या शील के साथ आर्य–सत्यों का निंरतर ध्यान करते हुए ध्यान मग्न हो समाधि में लीन हो जाना निर्वाण की अवस्था की प्रमुख विशेषता है। इसी निर्वाण की अवस्था में ज्ञान का अलौलिक प्रकाश देखने को मिलता है जिसे प्रज्ञा कहते है। इसे ही बोधि के नाम से पुकारते है। निर्वाण की इसी अवस्था में आने के बाद मनुष्य को अरहत या तथागत कहा जाता है। बुद्ध का कहना है कि निर्वाण निष्क्रिय अवस्था नही है। निर्वाण प्राप्ति के बाद भी मनुष्य कर्मो को करता रह सकता है। निर्वाण दु:खों का अंत करता है जीवन का नही। निर्वाण के बाद जीवन नियमित औ नियंत्रित हो जाता है। जो निर्वाण को प्राप्त हो जाता है उसका जीवनमृत्युपर्यंत पूर्ण ज्ञान और शांति के साथ बितता है।

(द) चतुर्थ आर्य – सत्य (दु:ख निरोध का मार्ग) – बुद्ध के अनुसार दु:ख दूर करने के रास्ते हैं। इन रास्तों पर चलकर मनुष्य निर्वाण प्राप्त कर सकता है। बुद्ध ने आठ मार्ग सुझाएं है जिन्हें अष्टांग मार्ग कहते है। इन मार्गो पर चलकर दु:ख दूर किये जा सकते है। आठ मार्ग इस प्रकार है –

1) **सम्यक् दृष्टि** – इसे पालि में समादिट्ठ कहते है। कायिक, वाचिक, मानसिक और भले बु कर्मो के ठीक–ठीक ज्ञान को सम्यक् दृष्टि कहते है। हिंसा, चोरी, यौन व्यभिचार, चुगली, कटुभाषण, बकवास, लोभ, प्रतिहिंसा तथा झूठी धाणा बुरे कर्म माने गये है। बुद्ध कहते है कि ये सारे बुरे कर्म तब होते है जब अविद्या हो। अत: सम्यक् दृष्टि का होना जरुरी है।

2) **सम्यक संकल्प** – इसे पालि में सम्मासंसकल्प कहते है। बुद्ध कहते है कि संकल्प में आत्मबल मिलता है जो जीवन को नियंत्रित करने में सहायक होता है। सम्यक् संकल्प के द्वारा ही व्यक्ति बुराईयों को अपने से दूर कर सकता है। झूठ, चुगली, कटुभाषण, बकवास से बचना चाहिए।

3) **सम्यक् वाक** – इसे पालि में सम्मावाच कहते है। सम्यक् संकल्प केवल मानसिक नही होना चाहिए बल्कि उसे कार्यरुप में भी परिणत होना चाहिए।

4) **सम्यक् कर्म** – इसे पालि में सम्माकम्मन्त भी कहते है। आचरण को शुद्ध रखने के लिये बुरी बातों का त्याग कर अच्छी बातों को जीवन में उतारना सम्यक् कर्म कहलाता है।

5) **सम्यक् जीवन** –इसे पालि में सम्मयजागीव कहते है। बुद्ध ने बताया कि ढुखों को दूर करना इतना आसान नही है इसके लिये पूरे जीवन को नियत्रिक करनाहोगा। जीवन का निर्वाह सच्चाई से करना चाहिए।

6) **सम्यक् व्यायाम** – इसे पालि में सम्मावायाम भी कहते है। इन्द्रियों पर संयम, बुरी भावनाओं को रोकने तथा अच्छी भावनाओं के उत्पादन के प्रयत्न का नाम है सम्यक् व्यायाम्। इसमें कुसंस्कों का नाश हो जाना चाहिए।

7) **सम्यक् स्मृति** – इसे पालि में सामासति कहते है। इस मार्ग पर चलने के लिये सतर्क रहने की आवश्यकता है जिन विषयों का ज्ञान हमें प्राप्त हो गया है उनका स्मरण करते रहना चाहिए। सम्यक् स्मृति के कारण व्यक्ति सभी विषयों से विरक्त हो जाता है और सांसारिक बंधनों में नही पड़ पाता है।

8) **सम्यक् समाधि** – इसे पालि में सम्मासमाधि भी कहते है। चित्त की एकाग्रता को समाधि कहा गया है। सम्यक् समाधि उसे कहा गया है जिससे मन के विक्षेपों को हटाया जा सके। इस प्रकार हम कह सकते है कि सारी बुराईयों को न करना और अच्छाईयों का सम्पादन करना तथा अपने चित्त का संयम करना ही बुद्ध की शिक्षा है।

4. **बौद्ध दर्शन का विवेचन** – मालूम हो कि बुद्ध ने स्वयं अपने दार्षनिक विचारो की व्याख्या नहीं की है, लेकिन 'अनित्य, दु:ख तथा अनात्म' इस एक सूत्र में बुद्ध का सारा दर्शन आ जाता है। फिर भी उनके उपदेशों से कुछ दार्शनिक विचार हम निकाल सकते है।

1) **प्रतीत्य – समुत्पाद** – इस शब्द का अर्थ है किसी वस्तु पर निर्भर उत्पत्ति। एक के विनाश के बाद दूसरे की उत्पत्ति। इसी नियम को बुद्ध ने प्रतीत्य समुत्पाद कहा है। इसमें ऐसा बताया गया है कि बाहृय तथा मानस की जितनी भी अवस्थाएं या घटनाए है सभी के लिये कुछ न कुछ कारण अवश्य रहता है। कारण के बिना किसी भी घटना का आविर्भाव नही होता है। यही निलयम किसी चेतना शक्ति के द्वारा संचालित नहीं होता बल्कि स्वयं ही परिचालित होता है। पालि भाषा में इस नियम को प्रतिच्च समुप्पपाद कहते है। यह बुद्ध के सारे दर्शन का आधार है। बुद्ध ने स्वयं कहा कि जो प्रतीत्य समुत्पाद को देखता है वह धर्म को देखता है और जो धर्म को देखता है वह प्रतीत्य समुत्पाद को देखता है।

2) **क्षणिकवाद** – बुद्ध ने कहा है कि इस संसार में कुछ भी अनंत अथवा शाश्वत नही है। सब की उत्पत्ति किसी कारण से होती है और कारण समाप्त हो जाने पर पदार्थ का भी नाश हो जाता है। केवल चेतना क्षणिक है, पदार्थ नहीं।

3) **कर्मवाद** – मनुष्य का वर्तमान जीवन उसके पिछले जन्म का एक परिणाम माना जाता है। कर्मवाद का यही कहना है कि वर्तमान जीवन पिछले जीवन के कर्मो का ही एक फल है। इसी प्रकार वर्तमान जीवन से भविष्य जीवन का निर्माण होता है। उनका कहना है कि कर्म संचित होते रहते है।

4) **अनात्मवाद** – भारतीय दर्शनों में आत्मा की व्याख्या– किसी न किसी रुप में की गई है। कोई इसे ब्रह्म मानता है तो किसी ने द्रव्य और किसी ने पुरुष माना है, किंतु बुद्ध आत्मा का अस्तित्व नही मानते है। उपनिषद् में इतने परिश्रम से स्थापित किये गये आत्मा के महान सिद्धांमत को बुद्ध ने सिरे से खारित कर दिया है। यह अनात्मवाद का सिद्धांत ही बौद्ध दर्शन तथा

वैदिक दर्शन के बीच की विभाजन रेखा है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि बौद्ध दर्शन मुख्यत: दु:खवादी दर्शन है। आर्य सत्यो तथा अष्टांगिक मार्ग के द्वारा बुद्ध ने दु:खों की व्याख्या तथा उन दु:खों को दूर करने के उपाय बताये है। महादेवी का करुणावाद इसका प्रमाण है। बाद में बौद्ध दर्शन धार्मिक विषयों की व्याख्या को लेकर दो सम्प्रदायों में बँट गया– हीनयान तथा महायान। इसके साथ ही बौद्ध धर्म हिंदू धर्म में घुलमिल गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय दर्शन, सिंह एवं सिंह
2. दर्शन – दिग्दर्शन, राहुल सांकृत्यायान
3. हिंदी साहित्य की दार्शनिक पृष्ठभूमि, डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय
4. हिंदी सगुण भक्ति –काव्य के दार्शनिक स्त्रोत– नवीन चिंतन, डॉ. ए. रामचंद्र देव
5. हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेन्द्र
6. भारतीय दर्शन, डॉ. राधाकृष्णन
7. भारतीय दर्शन की भूमिका , डॉ. रामानंद तिवारी शास्त्री
8. समकालीन दर्शन, डॉ. सतीषचंद्र, धीरेंद्रमोहन दत्त
9. भारतीय चिंतन परम्परा, के. दामोदरन
10. भारतीय दर्शनशास्त्र, धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री

****

स्वतंत्रता संग्राम और गांधीवादी रचनात्मक प्रवृत्तियाँ में आदिवासियों का योगदान

डॉ. अजातशत्रु सिंह राणावत * नरेन्द्रकुमार केशवभाई राठौड़ **

प्रस्तावना - 1915 में भारतीय राजनीति में महात्मा गाँधी के प्रवेश के बाद उनका स्वप्न भारत में स्वराज्य के साथ सुराज्य लाना भी था। इस स्वप्न को सिद्ध करने हेतु असहयोग आंदोलन के दौरान रचनात्मक प्रवृत्ति का कार्यक्रम पेश किया था। जिसके मुताबिक शहरों से लेकर गाँव, भद्र वर्ग से लेकर निम्न वर्ग के लोग स्वतन्त्रता आन्दोलन में जुड़े ऐसी उनकी मनोकामना थी। वैविध्यपूर्ण नवीन प्रयोगों से वह प्रक्रिया दलित, महिलाऐं, मजदूर जैसे वंचित वर्गो में सफलतापूर्वक चली, किन्तु आदिवासियों को स्वतन्त्रता संग्राम में साथ में लेना उतना आसान काम नहीं था। एक उदाहरण से उस बात को स्पष्ट करते हैं - सन् 1921 में चौरीचौरा हत्याकांड की वजह से बारडोली का स्वराज्य यज्ञ बंद रहा। तत्पश्चात् बारडोली, वालोद की आधी आबादी आदिवासी है और उनकी आबादी में कमी नहीं होती है। ऐसी बात जानकर उनको बड़ा आघात लगा। 'कालीपरज' (यह शब्द उस समय के दक्षिण गुजरात में आदिवासियों के लिए प्रचलित था) शब्द भी उनको पसंद नहीं आया और आन्दोलन स्थगति हुआ इसमें ईश्वर का कोई शुभ संकेत होगा। ऐसा कह के प्रार्थना सभा में अपनी व्यथा दर्शायी। उन्होंने कहा कि दक्षिण अफ्रीका में गोरे लोग हमको काला कहते हैं और यहाँ हम अपने भाइयों को 'कालीप्रजा' से पहचानते हैं। यह कैसे ? इस रोग को निकालना ही चाहिए। यह लोग समान नहीं होंगे तो सरकार उनका उपयोग हमारे सामने ही करेगी और हमारी लड़ाई सफल नहीं होगी। जिस शरीर का आधा अंग झूठा पड़ गया हो ऐसे शरीर के साथ हम लड़ाई शुरू करेंगे तो कैसे जीत सकते हैं ? इसलिए लोकजीवन में जमा हुए इस खून को फिर से उबलता हुआ करना चाहिए।

गांधीजी के उपरोक्त बयान में सरकार अज्ञानी और निरक्षर आदिवासियों का गैर लाभ न उठाए और स्वतन्त्रता आन्दोलन वास्तविक अर्थ में लोक आन्दोलन बने ऐसा शूर व्यक्त हुआ है।

गांधीयुग के प्रारम्भ तक सयाज़राव गायकवाड़ और ईसाई मिशन की प्रवत्तियों के अलावा आदिवासी इलाकों में खास आशानुरूप प्रवृत्तियाँ नहीं हुई थी। इस समय तक गुजरात में 'रानी विभाग' और 'रास्ती विभाग' जैसे विभाग भी प्रचलित थे। भद्र लोग और आदिवासियों के बीच सामाजिक विनिमय का व्यापक अभाव था। इसी वजह से आदिवासी समाज गांधीयुग के प्रारम्भ तक समाज की मुख्य धारा से कटा हुआ था। अब हम ऐसे मुख्य धारा से कटे हुए और आत्यांतिक मानसिकता वाले समाज गांधी प्रेरित स्वतन्त्रता आन्दोलन में कैसे दाखिल हो ? उनके पीछे गांधीवादियों ने कौन सी तरकीब अजमाई थी ? और सब से महत्वपूर्ण बात गांधी पूर्व के स्वयंभू आदिवासी आन्दोलनों ने आदिवासी इलाकों में गांधीवादी राष्ट्रीय आन्दोलनों में कितनी सहायता की ? इस बारे में विस्तार से देखते हैं।

गाँधी के पहले आदिवासी सुधार के क्षेत्र में शून्यावकाश नहीं था। करजण (बड़ौदा), जणोर और डभाला (भरूच), झघडीया (राजपीपला), राजकोट आदि स्थानों पर 1907 से लेकर 1911 तक भीलों के सम्मेलन हुए थे। इसमें शराब निषेध और समाज सुधार की चर्चा होने के उपरान्त उसके अमलीकरण के बारे में गंभीरता से सोचा गया था। हालांकि ऐसे प्रयत्न शुरूआत मात्र थी। स्वयंभू सुधारों के क्षेत्र में घाटा (व्यारा दक्षिण गुजरात) की भगत परम्परा के माध्यम से स्तुत्य प्रयत्न हुआ था। गायकवाड़ी इलाके के व्यारा तहसील के घाटा गांव से शुरू हुई भगत प्रवृत्तियाँ 1905 में 'एकड़ा' (Nity) के नाम से संस्थीकृत हुई थी। उसके माध्यम से स्थानीय आदिवासियों में शिक्षित और संस्कारी वर्ग तैयार हुआ था। जिन्होंने शिक्षण प्राप्ति से लेकर समाज सुधार तक की प्रवृत्तियों में आदिवासी समाज को नेतृत्व प्रदान किया था। ये लोग रियासती इलाके के होते हुए भी ब्रिटिश प्रान्त में चल रहे राष्ट्रीय आन्दोलन को सहयोग किया था। उदाहरण के तौर पर किशनसिंह गामीत नामक आदिवासी नेता रचनात्मक कार्यकर्ता एवं स्वतन्त्रता सैनिक के रूप में उभर आये थे। घाटा की भगत प्रवृत्तियों में महत्वपूर्ण बात यह थी कि उसके अंतर्गत तैयार हुए आदिवासी शिक्षितों ने सयाज़राव गायकवाड़ और देवी आन्दोलन (1922-25) की प्रवृत्तियों में नींव के पत्थर समान भूमिका अदा की थी। इसी तरह गायकवाड़ी शासन ने आदिवासी विकास हेतु किये कार्यो का इतिहास प्रसिद्ध है।

बीसवीं सदी के तीसरे दशक में दक्षिण गुजरात में देवी आन्दोलन नामक आन्दोलन ने आकार लिया था। इस आन्दोलन का प्रधान हेतु शराब, ताड़ी का विरोध मांसाहार निषेध, शोषक वर्ग का बहिष्कार, व्यक्तिगत स्वच्छता जैसे सामाजिक, धार्मिक सुधार लाना था। इस आन्दोलन में देवी स्वरूप महिला अपने मुँह से आदिवासियों को सार्वजनिक रूप से समाज-धर्म सुधार का उपदेश देती थी। देवी की प्रवृत्तियों से हुए मूलभूत परिवर्तनों से आदिवासी समाज, जीवन के महत्वपूर्ण मोड़ पर आकर खड़ा हुआ था। संस्कृतिकरण की इस प्रवृत्तियों से गांधवादी विचारों के लिए आशा की किरण जगी थी, क्योंकि 1921-22 से दक्षिण गुजरात के आदिवासी इलाकों में खादी काटना, बुनना जैसी रचनात्मक प्रवृत्तियाँ के लिए घूमते रहे गांधीवादियों के लिए उम्मीद की किरणें कम थी। गांधीवादी कार्यकर्ता सर्वे क्षेत्रकार्य की पद्धति में आस्था रखते थे। वे अच्छे मनोचिकित्सक भी थे। इसी वजह से समांतर चला आ रहा देवी आन्दोलन का आदिवासी समाज जीवन

*पर्यवेक्षक, पेसिफिक यूनीवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, पेसिफिक यूनीवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

पर गहरा प्रभाव उनकी नज़र से बाहर नहीं था और देवी की प्रवृत्तियों के आश्रय में राष्ट्रीय प्रवृत्तियाँ कैसे विकसित की जाये ? स्वतन्त्रता आन्दोलन में आदिवासियों की भागीदारी कैसे पाई जाए ? उस समस्या का उनको मानो उत्तार मिल गया। एक उदाहरण द्वारा प्रस्तुत बात को स्पष्ट करते हैं, गाँवों में जागृत्ति लाने के लिए कुंवरजीभाई (सूरत जिले के अग्रगण्य स्वतन्त्रता सैनिक कुंवरजी देसाई) का फलद्रुप दिमाग (Fertile Brain) काफी प्रयोग कर रहा था। उनके साथ सूरत में आयी सूरज बेन नामक, ब्राह्मण बहन, जो शिक्षिका थी उनको कुंवरजीभाई 'कालीदेवी' बनाकर बैलगाड़ी में घुमाते थे। कालीदेवी बनी सूरज बहेन भी अपना रोल बराबर अदा करती थी। काले कपड़े, लाल रंग से रंगा मुँह, गले में मालाएँ, सुत्रोच्चार के साथ इस कालीदेवी को गाँव-गाँव घुमाया जाता था। कुंवरजीभाई गांववालों को समझाते थे कि यह धर्म युद्ध है, उसमें जुड़ने का यह देवी का आदेश है। जो लोग इसमें नहीं जुड़ेंगे उनको इस देवी का कोप सहना पड़ेगा।

उपरोक्त बातों से पता चलता है कि आदिवासियों की परम्परागत, धर्मभीरू मानसिकता और ईश्वर के बारे में भयमुलक मान्यता को देवी आन्दोलन के माध्यम से राष्ट्रीय आन्दोलन में आदिवासियों की भागीदारी के रूप में पाने के लिए गांधीवादियों ने कोई कसर छोड़ी नहीं थी। स्वराज्य यात्रा में आदिवासियों की भागीदारी पाने की प्रक्रिया का ब्यौरा देखने के बाद उसका परिणाम क्या हुआ ? उसका चित्र गांधीवादी लेखक श्री जुगतराम दवे के शब्द में देखते हैं - सारे देश में गर्मी चढ़ी हुई थी, वह धीरे-धीरे नीचे उतर रही थी (वो असहयोग आन्दोलन के उत्तरार्ध की बात कर रहे हैं) किन्तु सूरत जिले में आदिवासी प्रदेश में गर्मी कम होने के कोई आसार दिखता नहीं था। गांधीजी की महान लड़ाई उस प्रदेश में अलग स्वरूप में फैली थी। कहिये की रानी परज लोगों ने उसको अपनी रानी (आदिवासी) आवृत्ति बना दी थी। वहाँ उसने देवी प्रवृत्तियाँ (देवी ना धुणा) (Fire Pits) का स्वरूप लिया था। असहयोग आन्दोलन के कार्यकर्ता आदिवासी गांवों में घुमते रहते थे, सभाऐं आयोजित करते थे, उनकी भजन मण्डलियाँ और 'देवी का धुणा' का लाभ उठाकर उन्होंने गांधीजी के मद्यपान निषेध और चरखे का संदेश आम लोगों तक पहुँचाया था। ऐसा करने में कुंवरजी-कल्याणजी बन्धुओं का बड़ा योगदान था। गांधजी की गैर मौजूदगी में उन्होंने कस्तुर बा को आदिवासी गाँवों में घुमाया। इस तरह देवी के भक्तों को एक जिन्दा देवी मिल गई और एक उदाहरण 'स्वराज्य ना संभारणा' (1972) ग्रंथ में देखते हैं - शराब बंदी के कार्यक्रमों को एक विचित्र संजोग का सहयोग मिल रहा था। आदिवासी लोग पिछड़े और देव-देवी, भूत-प्रेत में आस्था रखने वाले थे। कुछ धार्मिक लोगों के शरीर में देवी आती थी। ऐसे लोगों ने अपने शरीर में आती देवी को अपनी बात मनवाकर अपना प्रभाव दर्शाया और पिछड़े लोगों को शराब ताड़ी छोड़ने की आज्ञा थी। उसका चमत्कारीक तरीके से अमल हुआ। इस तरह विचित्र दिशा से शराब बंदी के कार्यक्रमों को सहयोग मिला ऐसा मान सकते हैं। इस क्रम में कुएं के पानी में गांधी और उनका चरखा दिखता है, ऐसी बात भी स्थानीय कार्यकर्ताओं ने फैलाई थी।

यह उदाहरण बताते हैं कि आदिवासियों की धर्म भीरू और ईश्वर के बारे में भयमुक्त मान्यता ने गांधीवादी को नये-नये प्रयोग करने के लिये ललचाया था। इसके प्रयोग के तौर पर गांधी को आदिवासियों के परम्परागत शीमलीया देव के विकल्प के रूप में पेश कर उनकी आज्ञा का अनुसरण करने की बात भी कही गई थी। संक्षेप में गांधीवादी कार्यकर्त्ताओं ने स्वतन्त्रता आन्दोलन में आदिवासियों की भागीदारी पाने के मुद्दे पर कोई कसर नहीं छोड़ी थी। हालांकि महात्मा गांधी ने स्थानिक कार्यकर्त्ताओं को ऐसा करने से मना किया था। आदिवासी में व्याप्त भजन प्रवृत्तियाँ, उनके धार्मिक गीतों में खादी कातना, बुनना, शराब बंदी आदि बातों को विनियोग वगैरह गांधीवादियों की मानसिक कवायत में से उभर आये उपाय थे। उसके प्रभाव के बारे में श्री जुगतराम दवे ने लिखा है कि भजन और गीत के माध्यम से पवित्र जीवन का, शराब-ताड़ी के प्रभाव से छूटने का, चरखा और गांधी विचारों के उपदेश से लोगों का हृदय तरबोल होते थे। उपरोक्त उपाय पद्धतियाँ दक्षिण गुजरात के स्थानीय संयोग और समय के अनुरूप अजमाई हुई पद्धतियाँ थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. टीना दोशी, 'भारतना आदिवासी आन्दोलनो' पार्थ पब्लिकेशन, अहमदाबाद।
2. डॉ. सी.सी. चौधरी, 'दक्षिण गुजरातना आदिवासी आन्दोलनो' पोप्युलर प्रकाशन, सूरत।

****

Human Resource Development In The New Generation In Private Sector Banks - A Case Study Of HDFC Bank Ltd.

Ritu Arora* Dr. S.N. Vyas**

Abstract - Banking is a service industry. The Banking Industry in India has undergone an incredible change due to the Economic, Financial and Banking Sector Reforms. The role of the human resources has become the crucial most. The success of the Banks depends not only on the satisfaction of their customers but also the satisfaction level of the employees working in banks. The stay of the employees in banks largely depends upon the prevailing human resource practices. Banks must try to distinguish themselves by creating their own images, especially in transparent situations with a high level of competitiveness. The healthy Competition posed by the private sector banks has improved the quality of service and innovative diversified products by the Public sector banks. Banking sector is also highly dependent on the quality of HRD practices for the motivation of its employees. Through this paper the researcher has attempted to identify the development between Human Resource Practices and Organizational Climate for the people to be productive and competitive in the new generation private sector banks specially in HDFC Bank LTD.
Keywords- Human Resource Development, Human Capital, Private sector banks, HRD Practices.

Introduction - Human resource is a multi –dimensional concept. It has been defined by various economists, social scientists, industrialists, managers and other academicians in different ways and from different angles. In the broad sense Human Resource Development is the framework for helping employees to develop their personal and organizational skills, knowledge and abilities. An organization is nothing without human resources. Human resources represent the "people at work". Of all the prime resources of organization men, materials, money and machine the human resource is recognized as the most vital and the most valuable resource. HRD (Human Resource Development) is a subset of HRM (Human Resource Management). Both are very important concepts of management specifically related with human resources of organization. Human resource management mainly aims to improve the efficiency of the employees whereas HRD aims at the development of the employees as well as organization as a whole. The performances of private sector banks are good. Due to their innovative schemes and services, all these efforts are making the private sector banks to be in top position. Today, our banking system is divided into commercial banks, regional rural banks and cooperative banks. Commercial banks play an important role in the financial system and the economy. Banking becomes greater driver of growth and employment. A need is to enable labor reforms and enriching human capital, help banks become competitive in this new era. 'People' is the most important and valuable resource every organization or institution. HRD ensures dynamism; competency, motivation and effectiveness of the employees remain at high levels in a systematic and planned way. A few banks have established an outstanding track record of innovation, growth and value creations in which HDFC bank has made its place in top position. HDFC bank believes that the most important factor which provides sustainable competitive advantage in its business is its people. As strive to create an environment to attract and nurture them. Supportive environment and good for learning because there is no other private bank which possess this much products and supportive infrastructure.

Literature Review - The review of literature is a first step towards proceeding to a further study on any problem or subject. It provides not only direction but also gives a vision to further strengthen the subject. Every organization has four important resource viz. money, material, machinery and men. Men i.e. human resources are only resources which must be coordinated in such a manner that monetary and material resources are utilized for organizational objectives.

Yoder, Dale (1972) in his book Personnel Management and Industrial Relations has described Manpower management is a crucial job. In his considered opinion managing people is the heart and essence of being manager. Yoder observed that a large number of management development methods are used but it is because of their application for different groups and jobs. He suggests that no one technique is most effective.

*Research Scholar, Tantia University,Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Supervisor, Tantia University,Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Comparative studies have indicated some superiority for certain procedures in specific instances.

Dr. R. K. Bajaj (1976) In his work personnel problem of large scale industries has emphasized that the human resources of an organization is essentially capable, competent and contended. An organization may well in physical resources but these are of little value unless access to the supply of well trained intelligent and loyal work force.

Barthwal R.R. (2002) has made a study on Environmental Impact Assessment. In his observation he revealed that major human actions programmes and policies is to be carried in order to protect human health and well being in the affected areas from the adverse impacts of the projects and actions. In the present technocratic environment it is necessary to keep these factors in mind while planning Human Resource Development.

Cascio, W.F. & Agvims (2005) is their book "Applied Psychology in Human Resource Management" has observed that in the fields of human resource management job analysis is often used to gather information for use in personal selection, training, classification and / or compensation.

Avik Ghosh (2006) in his book Communication Technology and Human Development he has given impact of technology on Human Development. The application of communication technologies in social development programmes is a complex task which requires professional approach.

R. Papaiah & A.V Ramana (2007) in their work 'Human Resources Development Through DWCRA Programme' has observed that Human Resource Development now a days has become a special subject of economic enquiry achieving sustainable and equitable development in all third world countries including India.

Problem Statement

1. There is a gap between prescribed and achieved HR policies by private sector banks.
2. There is a gap between the performance and compensation structure in private sector banks.
3. There is difference between Hr practices of middle level employees and Top level employees.

Objective

1. To identify the innovative HRD practices adopted in private sector banks
2. To study the role of human resources in banking industry particularly in private sector.
3. To study realistic and generous understanding of the requirements of employees.
4. To explore the challenging areas of the innovative HR practices where the banks are lacking and to give suitable suggestions.

Hypothesis

The present study tested the following null and alternative hypothesis:

(a)H0 (Null Hypothesis) -There is no significant difference in the implementation of innovative HRD practices as per the interpreted responses of different levels of employees.

H1 (Alternate Hypothesis)- There is a significant difference in the implementation of innovative HRD practices as per the interpreted responses of different levels of employees.

(b) H0 (Null Hypothesis)- There is no relationship between growth of employees and HR policies followed by private banks.

H1 (Alternate Hypothesis)- There is a relationship between growth of employees and HR policies followed by private banks.

Research Methodology

Sample frame - A total of 325 questionnaires were distributed by randomly selecting respondents from; bank organizations, web-sites and telephone directory 2014. The questionnaires sent were followed in response and finally 210 questionnaires were received from respondents operating in the banking sector yielding a response rate of 64.6%. The questionnaire responses were digitized using SPSS software and scale reliability was done.

Data collection method - Both primary and secondary data is used for the study. The data partially based upon the published information from the offices of HDFC Bank Ltd. RBI, other private sector banks etc and Questionnaire survey. A survey questionnaire has been used as a primary instrument to collect information.

Tools & techniques - The responses of 210 respondents of bank organization have been properly classified and tabulated in properly devised statistical tables. The data collected by way of Questionnaire were compiled in tabular form along with the graph so that analysis can be made easily. Analysis is also done with the pie , bar charts and graphs. The descriptive statistics used for interpretation for data analysis are viz: Frequencies, Percentages and Mean.

Data analysis and interpretation - HRD Practices using variables such as Recruitment and Selection, Training and Development, Appraisal and Reward, Performance Management, Managing people, Promotion and Transfer, Compensation management and welfare measure, Employee health and safety, Industrial relations its relationship. The focus of all aspects of HRD is on developing the most superior workforce so that the organization and its individual employees can accomplish their work goals. HRD practices are divided in four main factors. These are categorized in given table no. 1.

Table 1 - Factors of Human Resource Practices

Sr.	Name of the Factor	Human Resource Practices Covered
1	Procurement & Development	HR planning, Recruitment & Selection, Training & Development and Induction
2	Performance Appraisal	Performance appraisal
3	Benefits of Employees	Career Planning, Reward & Recognitions And Compensation
4	Promotion & Transfer	Promotion & Transfer and Separation

The recruitment & selection system of the employees can be considered on the basis of respondent's perception

whether it is well defined, scientific or vigorous.

Table 2 - Respondents perception about Recruitment & Selection Practices (HDFC Bank)

Factors	Strongly agree		Agree		Neutral		Disagree	
	N	%	N	%	N	%	N	%
Well defined	70	51.66	25	62.5	15	42.85	2	40
Scientific	45	33.33	10	25	8	22.85	2	40
Vigorous	20	14.81	05	12.5	12	34.28	1	20
Total	135	64.28	40	19.04	35	16.67	5	.024

Source: Compiled Primary Data

Graph 1 - Respondents perception about Recruitment & Selection Practices

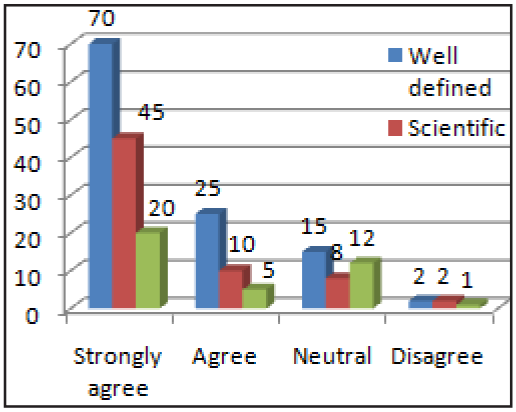

Table 2 exhibits information on the respondents opinion whether the recruitment and selection system of selected banks is well defined, scientific and vigorous. From the tabulated data it is depicted that majority of 70 respondents strongly agreed , 25 agreed, 15 neutral and 2 were disagreed that system was well defined. Further it is interpreted that 45 respondents were strongly agreed , 10 agreed, 8 neutral and only 2 were disagreed on the scientific concept. Opinion for vigorous was also described as strongly agreed by 20 respondents, 5 agreed, 12 neutral and 1 was disagreed.

Training constitutes a basic concept in human resource development. Training is the process of teaching the new and/or present employees the basic skills they need to effectively perform their jobs for higher level jobs.

Table 3 (see in last page)

Graph 2 - Respondent perception on purpose of Training & Development programme of bank

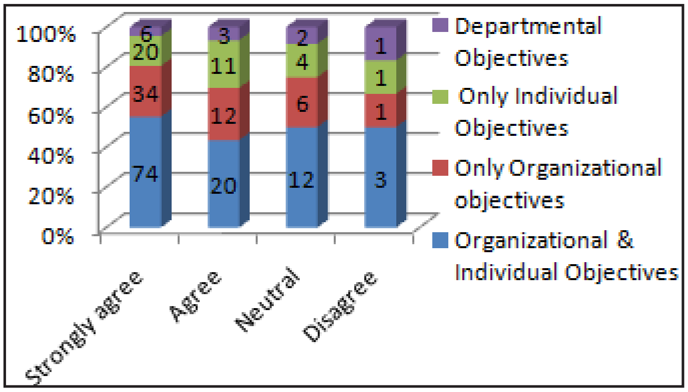

From the tabulated data , out of 210 respondents, 105 expressed their views that training and development programmes of the bank serves organizational and individual objectives out of which 74 strongly agree, 20 agree, 12 neutral and 3 disagree. 53 respondents reported that these programmes only serves organizational objectives out of which the ratio was 34:12:6:1 . Next 36 respondents were of opinion that training and development programmes serves only individual objectives in ratio of 20:11:4:1. Only 12 respondents described that these T & D programmes serves only departmental objectives. The study resulted that majority was in favor of both objectives i.e., organizational and individual.

Findings - HDFC Bank uses internal and external sources of recruitment: Employee referral, advertisement in newspapers and journals, recruitment agencies, campus requirement etc. it is categorized in three methods i.e. direct , indirect and third party method .Performance Management System is designed to explore the training needs. The sole purpose of a performance management system is to assess and ensure that the employee is carrying out their duties which they are employed to do in an effective and satisfactory manner, which is contributing to the overall business objectives. Promotions are basically depends upon the performance level of each individual and bank assistance in the prevention of discrimination and the promotion of equal opportunities when interacting with other employees. In HDFC Bank Role-based scorecards at the employee level coupled with managerial feedback provide clarity and support to help employees excel. In an attempt to better understand and attach values to their human assets" companies have modified their performance appraisal systems. Private Banks are focusing on more and more on employee engagement programs and are taking initiatives to make their employees engaged. The governing theme in HDFC Bank is rewards with recognition. Its Fair pay or Salary is not only the requirement of employees but other benefits also important. The bank not only attract the employees but also retain the best talent.

Recognition is the timely informal or formal acknowledgement of a person's or team's behavior, effort or business result. Rewards for each position are based on performance, potential and market value.

Limitations of the study - This study is primarily focused on Questionnaire.The size of sample is small and hence the results can have a degree of variation. We strongly feel that a larger sample size would have been better.The information collected by the observation method is limited.Collection of responses from the executives has been a very difficult task. Organization's resistance to share the internal information.The data have been obtained in the form of perceptual measures: though objective measures are more desirable. It was felt that hesitation of some respondents to give the real situation due to the fear of management action.The findings and conclusions are based on knowledge and experience of the respondents

may subject to bias. The limited time period of the study at the disposal of the researcher is also limitation.

Recommendations - The Bank organization should review its polices from time to time for the improvement of employee's participation at middle level and senior level management. The other practices like Training, Performance Appraisal, Team Work and Compensation etc. are need to be maintained in order to achieve high level of job satisfaction. The Management should create awareness at all levels that HRM is everybody business and systems for creating such awareness for the development of the organization The support staff should be employed at regular basis as a cadre of the bank. . Human Resource Audits has to be compared with the existing practices. A gap analysis could help bank forward looking to initiate reforms. HR audits help in finding out actual state of affairs.

References :-

1. Alan H. Anderson: Effective Personnel Management : A Skills And Activity- Based Approach [Effective Management] Blackwell, 1994
2. Arora, S.; and Kaur, S. (2006), "Financial Performance of Indian Banking Sector in Post-Reforms Era", The Indian Journal of Commerce, Vol.59, No.1, Jan.-March.
3. Bansal, M.P. (1991): "HRD in Public Enterprises", RBSA Publishers, Jaipur.
4. Bilgrami S R. (2005). Growth of Private Sector Banks- A Regional Growth Analysis. Deep and Deep publishers, New Delhi
5. Dimensions of NPAs in Indian Scheduled Commercial Banks by Santosh Kumar Das Pradyuman Singh Rawat (2018)
6. D'Souza, E. (2002). Employment and Human Resource Practices in Public Sector Banks in the 1990s.
7. Lloyed L. Byers and Leslie W. Rue (1997), Human Resource Management (5th edition), The McGraw-Hill Companies, USA.
8. M. B. Chande kautilyan Arthasastra (2004)
9. Prasad Lallan., & Bannerjee A. M. (1981). Management of human resources. Sterling Publishers Private Limited.
10. Rao, T.V., Readings in Human Resource Development, Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi, 1991.
11. Reddy A. Jagan Mohan (2006): "HRD: Origin, Concept and Future", PJMR, Vol.10, No.1 & 2, April-Oct. 2006.
12. Sadri Jayashri (2006): "HRD in the Era of LPG", Personnel Today, Oct-Dec. 2006.
13. Tapomoy Deb : Concept Tools And Application Strategic Approach To Human Resource Management (2006)
14. The Indian Banking Sector: Recent Developments, Growth and Prospects, (2013)
15. Talluru Srinivas (2006): Banking sector and Human Resources : Changing Scenario
16. Business Administration, Soldier Field, Boston.
17. Compensation & Benefits Review, the Journal of Total Compensation Strategies, New Jersey.
18. Human Resource of International Digest –Emerald Journals, UK
19. Human Resources Management, University of Michigan, Michigan
20. IOSR Journal of Business and Management Volume 16, Issue 2.
21. Journal of Strategic Human Resource Management, New Delhi
22. Annual Reports of HDFC Bank Ltd. 2014-19
23. State Bank of India, Annual Report 2017-18
24. www.rbi.org.in
25. www.pmjdy.gov.in
26. www.ibef.org
27. https://www.hdfcbank.com/

Table 3 - Respondent perception on purpose of Training & Development programme of bank

Purpose of Training & Development	Strongly agree		Agree		Neutral		Disagree	
	N	%	N	%	N	%	N	%
Organizational & Individual Objectives	74	55.22	20	43.47	12	50	3	50
Only Organizational objectives	34	25.37	12	26.08	6	25	1	16.67
Only Individual Objectives	20	14.92	11	23.91	4	16.67	1	16.67
Departmental Objectives	6	4.47	3	6.52	2	8.33	1	16.67
Total	134	63.80	46	21.90	24	11.42	6	02.85

****

Impact Of Skill Development On Expenditure And Migration In Southern Rajasthan

Swati Sanadhya* Dr. Mahendra Ranawat**

Abstract - Present study is based on the experiences of the impact of skill development on the expenditure of the tribal people and on their migration. Study has been conducted in the south part of Rajasthan in Udaipur district which is a tribal dominant district. Agriculture is the main source of livelihood so the expenditure of the people is low due to low income and people migrate in neighborhood states for employment. Due to the skill development programmes of state and central government people got self employment in various fields and their income has been increased which caused in increase in their expenditure and reduction in migration level. With the help of primary data these impacts has been traced out. Student T test has been used in the study.
Keywords - Skill development, Migration, Expenditure, Income, Tribal people.

Introduction - At present Indian economy is enjoying the fruits of young aged people which contribute about 60 percent of the total population. After 10 or 20 years these youth people will become old and then the Indian economy will suffer with a huge problem of old aged people. Who can't work but they will consume, so there emerges a huge problem of un-productivity. This problem can be removed with the help of skills development. If these youth people are trained in different types of skill by the government and other institutions , then these youth will become productive in future and when they will turn into old aged they will remain productive. One additional benefit associated with the skill development of youth of current time is that when they become old, they can share their experience to the youth of the future which will makes the youth productive. Thus the future generation can take the profit and benefits of the experiences of the old aged people.

If the people of the country get the training of different skills then they indulge in productive activities which results in enhanced development without environmental degradation and population growth. In this way present research has more interdisciplinary relevance. It evokes the spirit of the government to set such priority which boosts the skills of the people.

There is a need to identify those sectors which has growth potentials. If we recognize them and give the skills to the people about those activities then these people can contribute significantly in production process. Thus present study is useful for identifying those areas in rural and tribal region which has high growth potentials and can provide employment to the people.

Present study tries to find out the impact of skill development on the expenditure of the people and on migration.

Review of available literature:

Anthony P.S. Souza[1], Asfa, M. Yasin , Abdul Naser[3], Andrae, Karen and Smith, Karen[4] and many more studies the role of an entrepreneur and challenges in self employment in unorganized sectors of Indian economy. They reported that unorganized sector has been coined by Keith hart. Today it is emerged as a urban and dynamic sector of the economy. They concluded that skill development can be proved very beneficial for Rajasthan. Since Rajasthan is a state where climate is very critical and monsoon always fails therefore skill development is very helpful to give employment to the people of the state.

Objectives of the research - Main objective of the study are to find out the impact of skill development on the expenditure of the people and on migration.

Major hypothesis - Followings are the hypothesis of the study:

1. There is no significant decrease in the migration of people due to skill development.

RESEARCH METHODOLOGY:

Following methodology has been adopted in the study:

(i) Selection of the study area - Present research study will be conducted in South Rajasthan. South Rajasthan is basically a rural and agro based area where a huge part of the state falls under hilly and desert area. Monsoon is very uncertain. So the social people migrate in neighboring areas in search of employment.Therefore, to skill the people to generate employment opportunities in this region is very necessary.

ii)Sample Design - Udaipur,Dungerpur and Rajsamand

*Research Scholar (Economic) B.N.U., Udaipur (Raj.) INDIA
** Associate Professor, B. N. University, Udaipur (Raj.) INDIA

district has been selected for the study. 20 respondents from each district have been selected on random basis making a total of 60.

(iii) Analysis of the data - Study is based on primary data which has been analysedthrough various statistical tools like average, percentage, correlation regression analysis etc. The hypothesis relating to the study will be tested through t test.

Results and discussion:

(I) Effect of skill development on emigrants - It is clear that people who come under survey area moved to another place in search of employment. Limit power of earning increases the no. of emigrants to the rich place of vacancies.

Here we come to analyze the effect of skill development on surveyee. Skill development significantly decreases the no. of emigrants. We analyze the difference due to skill development in the number of skill development. It is clear from given data.

Table: 1 - Significance of decrease in number of emigrants

Blocks	No. of emigrants		D	S	t value	P value
	Before skill develo pment	After skill develo pment				
Dungerpur	3200	960	2240	79.4 779	50.9 403	0.0001
Rajsamand	3335	875	2460			
Udaipur	2945	635	2310			

Source: Computed

$$\bar{D} = \frac{\Sigma IDI}{n} = \frac{7010}{3} = 2336.666$$

$$S = \frac{\sqrt{\Sigma(D-\bar{D})^2}}{n-1} = \frac{158.9549}{2} = 79.4774$$

$$t = \frac{\bar{D}}{n}\sqrt{n} = \frac{2836.66}{79.4774}\sqrt{3} = 50.94034$$

Degree of freedom = n - 1 = 3-1 = 2

H_O: There is no significant decrease in number of emigrants due to skill development.

H_A: There is significant decrease in number of emigrants due to skill development

Conclusion - Here calculated value of t test is 50.94034 at 2 degree of freedom and tabulated value at 2 degree of freedom is 2.92

Since tabulated value is less than calculate value at 2 degree of freedom. So we can reject our null hypothesis and accept the alternative hypothesis. From the above hypothesis testing we can conclude that there is significant decrease in number of emigrants as the effect of skill development.

(II) Effect of skill development on the expenses of surveyee - From the above test we can establish that earnings of respondentsare increased due to skill development. Increased earnings play a vital role in expense of surveyee.

Now we can test the effect of skill development on the expenses of surveyee. It is given by following data.

Table: 2 (see in last page)

From Table 2 classification we came to know that eighty two percent, seventy three percent and ninety one percent respondents from Dungerpur, Rajsamand and Udaipur respectively expend up to Rs 5 thousand monthly before skill development and remaining eighteen percent, twenty seven percent and nine percent respondents from Dungerpur, Rajsamand and Udaipur respectively expend Rs.5 to Rs. 10 thousand monthly.

From the above tabulation we can calculate that overall eighty two percent people who come under the survey area expend up to Rs.5 thousand per month and remaining eighteen percent people who come under the survey area expend Rs. 5 to Rs. 10 thousand per month.

From the above calculation we can conclude that most of people expend only up to Rs.5 thousand monthly before skill development.

It can be seen from the data after skill development thirty eight percent, twenty seven percent and thirty three percent respondents from Dungerpur, Rajsamand and Udaipur respectively spend Rs. 5 to Rs. 10 thousand per month and sixty two percent, seventy three percent and sixty seven percent respondents from Dungerpur, Rajsamand and Udaipur respectively spend Rs. 10 to Rs. 15 thousand per month after skill development.

From the above tabulation we can calculate that overall 32.66 percent respondents started expend Rs.5 to Rs.10 thousand per month and remaining 67.33 percent respondents started Rs. 10 to Rs. 15 thousand expend per month.

From the above calculation we conclude that most of the people who fall under the survey area increase their expenses.Now we have use average expenses of respondents and analyze statistical the significance of increase in expense of respondents.For the given data suitable test is t test.

Hypothesis Testing:

H_o: There is no significant difference in the expenses of respondents after skill development.

H_A: There is significant difference in the expenses of respondents after skill development.

Table 3 - Result of t test

Blocks	Expenditure		D	S	t value	P value
	Before skill develo pment	After skill develo pment				
Dungerpur	7	11	5	1.0	10.68	0.0002
Rajsamand	6	13	7	801		
Udaipur	4	12	8			

Source: calculated

$$\bar{D} = \frac{\Sigma |D|}{n} = \frac{20}{3} = 6.666$$

$$s = \sqrt{\frac{\Sigma D (D-\bar{D})^2}{n-1}} 1.0801$$

$$t = \frac{\bar{D}}{s}\sqrt{n} \Rightarrow \frac{6.666}{1.0801}\sqrt{3} = 10.6892$$

Degree of freedom = n - 1 = 2

Conclusion - Calculated value of t test at 2 degree of freedom is 10.6892 and tabulated value of t test at 2 degree of freedom is 2.92

Since calculated value of t test is greater than tabulated value of t test at 2 degree of freedom. So we can reject null hypothesis and accept the alternative hypothesis and conclude that there is significant difference in expense of respondents due to skill development.

i.e. surveyee's monthly expenses increases due to skill development.

Policy measures - Following policy measures has been suggested by the researcher to enhance the level of skill development in Rajasthan;

1. Various types of skill development courses should be open in the state and the courses of international reputation should be running in state. It will help the students to compete at the international level.
2. There is a huge shortage of skill development institutions in the state especially in rural and tribal areas therefore it is suggested to open the institutes which promote skill development in remote tribal areas.
3. Highly qualified staffs should be appointed in these skill developmental institutions so the students can learn high skills which make them better and able enough to compete in the modern world.
4. Government should provide the facility of easy access to the credit facilities to open the skill development institutions in tribal areas.
5. There is a gap in the demand of the required skills by the industrial organizations and the supply of skills by skill development institutions. There is a need to identify the areas where skill development is needed.

References :-

1. Anthony P. D'souza, "the role of an entrepreneur and challenges in self employment in unorganized sectors of Indian economy," Research steps, vol.1, 2016
2. Anthony P. D'souza , "Unorganized Sectors: Role of an Entrepreneur and Challenges in Self-Employment", International Journal of Scientific and Research Publications, Volume 3, Issue 6, June 2013 1 ISSN 2250-3153
3 *Asfa M. Yasin, "*Skilled human resource development for fisheries sector", *Biological Forum — An International Journal,* 2(1): 84-87(2010)
4. *Abdul Naser.V, 2013, "Micro small and medium enterprises and employment in India",Social change, 2014*
5. Andrae, Karen and Smith, Karen, "A Synthesis Review of Sightsavers' work on economic empowerment and financial inclusion",Research zone,vol:2,2014
6. Anne booth, "employment, education and skills development in papuanew guinea," institute of national affairs,october 2009
7. Bryman, A. and Bell, E., "Challenge of Employment in India", (2007). *Business Research Methods,* 2nd ed., Oxford: Oxford University Press.
8. Chetan Vaidya, "Skill development and youth employment generation initiatives in urban India," for Development and Enterprise, commissioned for Cities of Hope project, June 2013.
9. Crouch, C., Finegold, D., and Sako, M. (2004). Are Skills the Answer? The Political Economy of Skill Creation in Advanced Industrial Countries. Oxford: Oxford University Press
10. DeVault, M.L., and McCoy, L. (2006). Institutional ethnography: Using interviews to investigate ruling relations. In Dorothy E. Smith (Ed.) 67

Table: 2 - Fluctuation of expenses of respondentsdue to skill development

Blocks	Annual expenditure (In Rs.)							
	Before skill development				After skill development			
	Upto Rs. 5000	Rs.5 to 10 thous.	Rs.10 to 15 thous.	Total	Upto Rs.5000	Rs.5 to 10 thous.	Rs.10 to 15 thous.	Total
Dungerpur	82	18	**-**	**100**	38	62	-	**100**
Rajsamand	73	27	**-**	**100**	27	73	-	**100**
Udaipur	91	9	**-**	**100**	33	67	-	**100**
Total	**246(82%)**	**54(18%)**	**-**	**300**	**98 (32.66%)**	**202 (67.33%)**	**-**	**300**

Source: Field Survey

****

पुलिसकर्मियों की कार्यप्रणाली तथा सेवा सन्तुष्टि का अध्ययन (कानपुर जिले के विशेष सन्दर्भ में)

विकास दीक्षित *

शोध सारांश – आम नगरिकों की सुरक्षा करना सरकार का प्रथम कर्तव्य होता है। संविधान द्धारा बाहरी तथा आन्तरिक सुरक्षा के लिए विभिन्न प्रकार के विभागों का गठन किया गया है। पुलिस विभाग भी आन्तरिक सुरक्षा हेतु एक महत्वपूर्ण संगठन है। आम नागरिकों की सुरक्षा के लिए यह विभाग सदैव तत्पर रहता है। परन्तु शासन द्धारा इस विभाग की उपेक्षा की जा रही है। पुलिसकर्मी आज भी अपनी मूलभूत जरूरतों के लिए परेशान होते हैं। इस 21वीं सदी में अधिकाशत: प्रशासनिक विभाग आधुनिक सुख-सुविधाओं से सन्तुष्ट हैं, तो वहीं पुलिस विभाग भिन्न-भिन्न महत्वपूर्ण तथ्यों को लेकर वर्तमान समय में भी पिछड़ेपन की मार झेल रहा है। समय-समय पर शासन द्धारा पुलिस विभाग के लिए आवश्यक कार्य किये गये। परन्तु वह आज भी आधुनिक अपराध शैली को देखते हुए पूर्ण नहीं हैं। जिससे उनमें कार्य के प्रति असन्तुष्टि की भावना जन्म लेती है। प्रस्तुत शोध पत्र में पुलिसकर्मियों की कार्यप्रणाली तथा सेवा सन्तुष्टि का व्यवहारिक विवेचन किया गया है।

शब्द कुंजी – कार्य सन्तुष्टि, पुलिस-प्रशासन, कार्यप्रणाली, पुलिसकर्मी।

प्रस्तावना – समाज में शान्ति, कानून और व्यवस्था बनाए रखना प्रशासन का मुख्य कर्तव्य है। समाज में सुरक्षा का दायित्व प्रशासन पर ही है। प्रशासन अपने इस दायित्व का निर्वहन जिन साधनों, संगठनों एवं संसाधनों के माध्यम से करता है, उनमें पुलिस प्रशासन सबसे महत्वपूर्ण है। यदि यह कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी कि यही वह प्रशासनिक अंग है जो समाज में न केवल शान्ति और व्यवस्था बनाए रखता है, अपितु समाज की सुरक्षा के लिए ढाल एवं सुरक्षा-चक्र का काम भी करता है। इस तथ्य से हम अच्छी तरह अवगत हैं कि जहाँ कहीं भी लडाई-झगड़ा, दंगा-फसाद अथवा अशान्ति पैदा होने की आशंका होती है अथवा कारित होता तो सर्वप्रथम पुलिस को ही याद किया जाता है। ऐसे क्षणों में प्रत्येक व्यक्ति के कदम पुलिस थाने की ओर ही बढ़ते हैं। समाज पुलिस नाम से भली-भाँति परिचित हैं। पुलिस की वर्दी एवं पैरो की खड़खड़ाहट से ही समाज में सन्नाटा छा जाता है। अशान्त वातावरण शान्त हो जाता है। समाज में असमाजिक तत्वों के मध्य आज यदि थोड़ा भी भय है तो वह पुलिस का है। यह सभी तथ्य पुलिस के महत्व को प्रकट करते हैं।[1]

कार्य सन्तुष्टि: प्रस्थिति – कार्य सन्तुष्टि कर्मचारी के लिए अभिप्रेरणा है। सन्तुष्टि असीम आनन्द की अनुभूति है तथा सन्तुष्टि वैयक्तिक स्तर पर अनुभव की जाने वाली एक अनुभूति है। जब कोई कर्मचारी अपने कार्य संचालन में असीम आनन्द की अनुभूति करता है, तो वह अपने कार्य से पूर्णत: सन्तुष्ट होता है, ये अनुभूति सदैव वैयक्तिक स्तर पर अनुभूत की जाती है, इसकी व्याख्या कभी सामूहिक सन्दर्भ में नहीं हो सकती है। सन्तुष्टि कार्य विषयक कारक व्यक्ति की विशेषताए तथा कार्य के बाहर होने वाले समूह सम्बन्ध से सम्बद्ध मनोवृत्तियों के बाहर होने वाले समूह सम्बन्ध से अनेक मनोवृत्तियों से जुड़ी रहती है।[2] अत: स्पष्ट है कि सन्तुष्टि एक ऐसी मनोवृत्ति है, जो बहुत सारी विशिष्ट मनोवृत्तियों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है। तथा आकांक्षाओं एवं स्वबोधों द्धारा संचालित होती है। समस्त औद्योगिक सामाजिक व्यवस्था में ऐसा प्रयास किया जाना चाहिए ताकि प्रत्येक औसत कार्यकर्ता को एक ऐसा व्यवसाय मिले जो मात्र जीविकोपार्जन का साधन न हो बल्कि, जिसके अन्तर्गत स्वत: जीवन के सभी तत्व एक साथ समविष्ट हो। अर्थात् अभिकर्मी को एक ऐसा व्यवसाय कार्य मिले जिससे उसकी भौतिक आवश्कताओं की पूर्ति ही न हो, अपितु इस व्यवयाय कार्य से उसे शारीरिक एवं मानसिक उलझन भी न हो। अत: औद्योगिक क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि के लिए श्रमिक कार्य और श्रमिक सन्तुष्टि दोनों का ही अपना महत्व है, जिसे किसी स्थिति में नकारा नहीं जा सकता है।[3]

अध्ययन के उद्देश्य:

1. पुलिसकर्मियों की कार्यप्रणाली में अकारण स्थानान्तरण, उच्चाधिकारी, पारिवारिक सन्तुलन आदि अन्य तत्वों के प्रभावों एवं कार्य प्रक्रिया के आधार पर सन्तुष्टि का व्यवहाारिक विश्लेषण करना।
2. पुलिसकर्मियों की कार्य स्थिति सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं जैसे- वेतन, अवकाश, कार्य का दवाब आदि का अध्ययन करना।

शोध-प्रविधि – यह अध्ययन उत्तर प्रदेश राज्य के कानपुर जिले पर केन्द्रित है, जिसमें प्रमुख रूप से कानपुर जिले के पुलिस थानों में तैनात पुलिसकर्मियों का अध्ययन किया गया है। कानपुर जिले में कुल 44 पुलिस थाने हैं। जिसमें से अध्ययन के लिए 16 पुलिस थानों का चयन सामान्य यादच्छिक प्रतिदर्श प्रणाली के आधार पर लॉटरी विधि द्धारा किया गया है। प्रत्येक थाने से समान रूप से 16 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है, जिसमें थाने स्तर पर एक निरीक्षक तीन उप-निरीक्षक दो मुख्य सिपाही तथा 10 सिपाहियों से साक्षात्कार अनुसूची एवं साक्षात्कार के माध्यम से तथ्यों का संकलन किया गया है। अत: प्रतिचयन का आकार 256 था।

तालिका-1 – पुलिसकर्मियों के पद की स्थिति

क्र.	पद	आवृत्ति	प्रतिशत
1	निरीक्षक (इंस्पेक्टर)	22	09.5
2	उप-निरीक्षक (सब-इंस्पेक्टर)	38	16.4
3	मुख्य सिपाही (हेड कांस्टेबल)	28	12.1

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.) भारत

4	सिपाही (कांस्टेबल)	144	62.1
	योग	**232**	**100.0**

अतः स्पष्ट है कि सर्वाधिक 62.1 प्रतिशत पुलिसकर्मी सिपाही वर्ग के हैं, जबकि निरीक्षक वर्ग से 9.5 एवं उपनिरीक्षक वर्ग से 16.4 प्रतिशत पुलिसकर्मी अध्ययन में शामिल हैं। वहीं 12.1 प्रतिशत मुख्य सिपाही वर्ग भी अध्ययन में शामिल हैं। अतः स्पष्ट है कि निदर्शन प्रक्रिया के आधार पर सिपाही वर्ग की संख्या अधिक है, जबकि अन्य वर्गों की संख्या अध्ययन की आवश्यकता के अनुरूप सम्मिलित की गयी है।

तालिका-2 – वर्तमान जिले के अधिकारी (कप्तान) से कार्य सन्तुष्टि की स्थिति

क्र.	वर्तमान जिले के अधिकारी (कप्तान) से कार्य सन्तुष्टि	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पूरी तरह	173	74.6
2	थोड़ा-बहुत	52	22.4
3	कह नहीं सकते	07	03.0
	योग	**232**	**100.0**

तालिका 2 मे थाने स्तर के पुलिसकर्मियों से उनके वर्तमान उच्च अधिकारी कप्तान (एस. एस. पी.) से कार्य सन्तुष्टि के विषय में जानने का प्रयास किया गया है। अतः तालिका के आंकड़ों से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 74.4 प्रतिशत पुलिसकर्मी पूरी तरह एवं 22.4 प्रतिशत पुलिसकर्मी थोड़ा-बहुत के रूप में सन्तुष्ट हैं। जबकि 3 प्रतिशत पुलिसकर्मियों ने इस प्रश्न पर कोई भी विचार व्यक्त नहीं किये हैं। अतः स्पष्ट है कि निदर्शन के लगभग अधिकांश पुलिसकर्मी अपने वर्तमान कप्तान से सन्तुष्ट हैं।

तालिका-3 – पारिवारिक जीवन के सन्तुलन के सापेक्ष में सन्तुष्टि की स्थिति

क्र.	पारिवारिक जीवन के सन्तुलन के सापेक्ष में सन्तुष्टि	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पूरी तरह	35	15.1
2	थोड़ा-बहुत	121	52.2
3	बिल्कुल नहीं	76	32.8
	योग	**232**	**100.0**

तालिका से स्पष्ट है कि 52.2 प्रतिशत पुलिसकर्मी अपने पारिवारिक सन्तुलन को लेकर थोड़ा-बहुत सन्तुष्ट हैं, जबकि 15.1 प्रतिशत पुलिसकर्मी पूरी तरह तथा 32.8 प्रतिशत पुलिसकर्मी बिल्कुल भी सन्तुष्ट नहीं हैं। अतः स्पष्ट होता है कि 52.2 प्रतिशत पुलिसकर्मी पारिवारिक सन्तुलन से आंशिक रूप में सन्तुष्ट हैं। वहीं निदर्शन का एक-चौथाई भाग बिल्कुल भी सन्तुष्ट नहीं हैं। जिसका मुख्य कारण परिवार तथा रिश्तेदारों को समय न दे पाना है।

तालिका-4 – विभाग द्वारा निर्धारित अवकाश मिल पाने के सापेक्ष में सन्तुष्टि की स्थिति

क्र.	निर्धारित अवकाश की प्रस्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	39	16.8
2	नहीं	192	82.8
3	कह नहीं सकते	01	00.4
	योग	**232**	**100.0**

प्रस्तुत तालिका 4 में पुलिसकर्मियों को विभाग द्वारा प्रदान किये जा रहे, निर्धारित अवकाश की स्थिति का विश्लेषण किया गया है जिसमें सर्वाधिक 82.8 प्रतिशत पुलिसकर्मी विभाग द्वारा अवकाश नहीं मिल पाने की स्थिति को स्वीकार करते हैं। वहीं 16.8 प्रतिशत पुलिसकर्मियों ने अवकाश समय से मिल पाने के तथ्य को स्वीकार करते हैं। मात्र 0.4 प्रतिशत पुलिसकर्मियों ने इस प्रश्न कोई भी राय व्यक्त नहीं की है। अतः तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि निदर्शन का तीन-चौथाई भाग विभाग द्वारा निर्धारित अवकाश न मिल पाने के तथ्यों को स्वीकार किया है। जिसका कारण पूछे जाने पर पुलिसकर्मियों ने बताया कि विभाग में पुलिस बल की कमी तथा कार्यभार होने के कारण से अवकाश प्राप्त मिलने में समस्या उत्पन्न होती है।

तालिका-5 – पुलिसकर्मियों के कार्य के घण्टों के सापेक्ष में कार्य सन्तुष्टि

क्र.	कार्य के घण्टों के सापेक्ष में कार्य सन्तुष्टि	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पूरी तरह	16	06.9
2	थोड़ा-बहुत	39	16.8
3	बिल्कुल नहीं	177	76.3
	योग	**232**	**100.0**

उर्पयुक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 76.3 प्रतिशत पुलिसकर्मियों ने कार्य के घण्टों को लेकर बिल्कुल भी सन्तुष्टि व्यक्त नहीं की है। मात्र 6.9 प्रतिशत पुलिसकर्मी ही कार्य घण्टे को लेकर पूर्णतः से सन्तुष्ट हैं तथा 16.8 प्रतिशत पुलिसकर्मी थोड़ा-बहुत के रूप में सन्तुष्ट है। अतः तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के तीन-चौथाई से अधिक पुलिसकर्मी कार्य के घण्टों को लेकर पूर्ण रूप से असन्तुष्ट हैं जिसका कारण पुछे जाने पर पुलिसकर्मियों द्वारा बताया गया कि विभाग में कार्य के सम्बन्ध में घण्टों का कोई भी निर्धारण है। अतः किसी भी समस्या के लिए चौबीस घण्टे तैयार रहना पड़ता है। अन्त में पुलिसकर्मियों ने कार्य के घण्टों के निर्धारण को लेकर विचार प्रकट किये हैं कि अन्य विभागों की अपेक्षा पुलिस विभाग में भी आठ-दस घण्टे कार्य करने की नियमावली को लागू करने के तथ्य को स्वीकारा है।

तालिका-6 – वेतन के सापेक्ष में कार्य सन्तुष्टि की स्थिति

क्र.	वेतन के सापेक्ष में कार्य सन्तुष्टि	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पूरी तरह	17	07.3
2	थोड़ा-बहुत	109	47.0
3	बिल्कुल नहीं	105	45.3
4	कह नहीं सकते	01	00.4
	योग	**232**	**100.0**

उर्पयुक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 47 प्रतिशत पुलिसकर्मी अपने वर्तमान से वेतन से आंशिक रूप में एवं 7.3 प्रतिशत पुलिसकर्मी पूर्ण रूप में अपने वेतन से सन्तुष्ट हैं, जबकि 45.3 प्रतिशत पुलिसकर्मी अपने वेतन को लेकर बिल्कुल भी सन्तुष्ट नहीं है। केवल 0.4 प्रतिशत पुलिसकर्मियों ने इस प्रश्न पर कोई भी राय नहीं दी है। अतः तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि वेतन के सम्बन्ध में आंशिक सन्तुष्टि तथा बिल्कुल नहीं का प्रतिशत लगभग समान है। असन्तुष्टि का मुख्य कारण पूछे जाने पर ज्ञात हुआ कि अधिकांश पुलिसकर्मी सिपाही वर्ग के हैं तथा जिनकी अभी नवीन नियुक्ति हुई है। इसी कारण अपने वर्तमान वेतन से अपने तथा अपने परिवार के खर्चों को वहन नहीं कर पा रहें हैं। साथ ही अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं करनी पड़ती हैं, जिसकी वजह से वेतन बचा पाना अति मुश्किल हो जाता है।

तालिका-7 - पुलिसकर्मियों की कार्यप्रणाली (नौकरी) के सापेक्ष में कार्य सन्तुष्टि की प्रस्थिति

क्र.	कार्यप्रणाली	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पूरी तरह	71	30.6
2	थोड़ा-बहुत	94	40.5
3	बिल्कुल नहीं	62	26.7
4	कह नहीं सकते	05	02.2
	योग	**232**	**100.0**

तालिका 7 के आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि अधिकांशत: 40.5 प्रतिशत पुलिसकर्मी नौकरी की सुरक्षा को लेकर आंशिक रूप में सन्तुष्ट हैं। वहीं 30.6 प्रतिशत पुलिसकर्मी नौकरी की सुरक्षा के प्रति पूरी तरह से सन्तुष्ट हैं, जबकि 26.7 प्रतिशत पुलिसकर्मी नौकरी की सुरक्षा के सम्बन्ध में बिल्कुल भी सुरक्षित महसूस नहीं करते हैं। मात्र 2.2 प्रतिशत पुलिसकर्मियों ने इस प्रश्न पर कोई भी विचार प्रकट नहीं किये हैं। अत: स्पष्ट है कि सन्तुष्टि के दोनों बिन्दुओं को मिलाकर थोड़ा-बहुत एवं पूरी तरह से 70 प्रतिशत पुलिसकर्मी अपनी नौकरी की सुरक्षा को लेकर सन्तुष्ट हैं जबकि 40.5 प्रतिशत पुलिसकर्मियों ने पूर्ण रूप से असन्तुष्टि को व्यक्त किया है। जिसकी मुख्य वजह पुलिस विभाग की अनुशासित कार्यप्रणाली है, जिसके चलते यदि कोई पुलिसकर्मी किसी भी अनियमितता के तहत कार्य करता है तो तत्काल प्रभाव से निलम्बन के साथ ही उस पर मुकदमा दर्ज हो जाता है।

निष्कर्ष - अत: हम कह सकते है कि पुलिसकर्मियों की कार्यप्रणाली के सापेक्ष में कार्य सन्तुष्टि को जानना अति आवश्यक है। जिसके फलस्वरूप पुलिसकर्मियों के पद की स्थिाति में सिपाही वर्ग की संख्या अधिक है, जिसका मुख्य कारण निदर्शन प्रक्रिया के आधार पर चयन किया गया है। वहीं अध्ययन क्षेत्र के अधिकांश पुलिसकर्मी अपने वर्तमान अधिकारी (कप्तान) से सन्तुष्ट हैं। पारिवारिक जीवन के सन्तुलन को लेकर 52 प्रतिशत पुलिसकर्मी के तथ्य को स्वीकारते हैं। वहीं तीन-चौथाई से अधिक पुलिसकर्मी निर्धारित अवकाश तथा कार्य के घण्टों से बिल्कुल भी सन्तुष्ट नहीं हैं। अध्ययन में शामिल 47 प्रतिशत पुलिसकर्मी वर्तमान वेतन से सन्तुष्ट हैं, 45 प्रतिशत पुलिसकर्मी पूर्णत: असन्तुष्ट हैं। वहीं अन्त में कार्यप्रणाली (नौकरी) के सापेक्ष में 71 प्रतिशत पुलिसकर्मियों ने थोड़ा-बहुत एवं पूरी तरह के तथ्य में सन्तुष्टि व्यक्त की है, जबकि 26 प्रतिशत पुलिसकमी बिल्कुल भी सन्तुष्ट नहीं हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बावेल, बसन्तीलाल (1998): *पुलिस प्रशासन, अन्वेषण एवं मानवाधिकार*, जयपुर: हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पृ. 1।
2. पाण्डे, रमा (1997): *भारतीय रेल कर्मियों की कार्य सन्तुष्टि*, दिल्ली मानक पब्लिकेशन
(प्र. लि.), पृ. 2।
3. मल्लिक, बी. एन. (1970): *पुलिस-एक दार्शनिक विवेचन*, यूनाइटेड इण्डिया प्रेस, नई दिल्ली, पृ. 51।
4. https://uppolice.gov.in

****

गोविन्द मिश्र के कथेतर साहित्य में बदलते नैतिक मूल्य- एक विश्लेषण

मोनिका पटेल * डॉ. चंदा तलेरा जैन **

शोध सारांश - औद्योगिक क्रांति, भूमण्डलीकरण तथा विभिन्न व्यापारिक सुविधाओं के कारण नगरों और महानगरों का विकास हुआ है। इस विकास के कारण समाज के आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक ढांचे में बड़ा परिवर्तन आया। इस परिवेश में नैतिक मूल्यों और परंपराओं का लगातार ह्रास हो रहा है। व्यक्ति अवसरवादी हो गया है और वह हर जगह अपना भौतिक स्वार्थ ढूँढता नजर आता है जिसके कारण समाज में नैतिक मूल्यों का परिदृष्य बदलता जा रहा है। नैतिक मूल्यों के बदलते आयामों ने उसे पतन की ओर अग्रसर कर दिया है।

'कथेतर साहित्य' से तात्पर्य है, कथा से इतर साहित्य। जैसे संस्मरण, निबंध, आलोचनात्मक लेख, यात्रा साहित्य, आदि का विषयगत अध्ययन करना है। साहित्यकार गोविन्द मिश्र के कथेतर साहित्य में नैतिक मूल्यों के बदलते परिदृष्य का आकलन करना ही इस शोध का उद्देश्य है।

भारतीय संस्कृति के नैतिक मूल्यों का सार सामाजिक समर्पण और माता-पिता की सेवा करना है। किंतु वर्तमान में नैतिक मूल्यों के अवमूल्यन के चलते लोग अपने माता-पिता के लिए ही समय नहीं निकाल पाते तो माता-पिता की सेवा करना तो दूर की बात है। इसी संदर्भ में उल्लेख गोविन्द मिश्र 'गीली-गीली धुंध और उजले जुआघर' यात्रा वृतांत में लिखते है कि- 'बेटा-बहू दोनों बड़े सुबह काम पर निकल जाते हैं, वह अकेला टी.वी. के सामने पड़ा रहता है। मैंने उसको कल अटलांटा सिटी चलने का प्रस्ताव दिया- वह अमेरिका तीसरी बार आया है, हर बार वहीं ठहरा है और अभी तक अटलांटा सिटी जो पास ही है- वहाँ नहीं जा सका। मैंने उसे न्यूजर्सी में एक बस स्टॉप पर कल आ जाने को कहा, साथ चलेंगे। वह कैसे आए- बेटे-बहू को ड्रॉप करने की फर्सत नहीं, और वह हिंदूस्तानी अफसर अपने आप बस या ट्रेन से आ-जा नहीं सकता बोर होता घर में ही पड़ा रहता है।'

प्रस्तावना - नैतिक मूल्य आचरण की संहिता है। नैतिक मूल्य मनुष्यता की पहचान है। नैतिकता का संबंध मानवीय अभिवृत्ति से है, इसलिए शिक्षा से इसका महत्वपूर्ण अभिन्न व अटूट संबंध है। कौशलों व दक्षताओं की अपेक्षा अभिवृत्ति-मूलक प्रवृत्तियों के विकास में पर्यावरणीय घटकों का विशेष योगदान होता है। यदि बच्चों के परिवेश में नैतिकता के तत्व पर्याप्त रूप से उपलब्ध नहीं है तो परिवेश में जिन तत्वों की प्रधानता होगी वे जीवन का अंश बन जायेंगे। इसलिए कहा भी जाता है कि मूल्य पढ़ाये नहीं जाते आत्मसात किए जाते हैं। आधुनिक जीवन में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता महत्व अनिवार्यत: व परिहार्यता को इस बात से सरलता व संक्षिप्त में समझा जा सकता है कि संसार के दार्शनिकों, समाजशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों, शिक्षा शास्त्रियों, नीति शास्त्रों ने नैतिकता को मानव के लिए एक आवश्यक गुण माना है।

नैतिक मूल्यों की जननी नैतिकता सद्गुणों का समन्वय मात्र नहीं है, अपितु यह एक व्यापक गुण है जिसका प्रभाव मनुष्य के समस्त क्रियाकलापों पर होता है और सम्पूर्ण व्यक्तित्व इससे प्रभावित होता है। नैतिक मूल्य से व्यक्ति का सर्वांगीण विकास होता है जो व्यक्ति के स्वयं के सर्वांगीण विकास और कल्याण में योगदान देने के साथ-साथ किस अन्य के विकास और कल्याण में बाधा न पहुँचाए ऐसे होने चाहिए। नैतिक मूल्य की जननी नैतिकता सद्गुणों का समन्वय मात्र नहीं है यह एक आंतरिक भावना है।

नैतिक मूल्य एक सामाजिक अवधारणा है जिसका मूल्यांकन किया जा सकता है। यह कर्तव्य की आंतरिक भावना है और उन आचरणों के प्रतिमानों का समन्वित रूप है जिसके आधार पर सत्य-असत्य, अच्छा-बुरा, उचित-अनुचित का निर्णय किया जा सकता है और यह विवके के बल से संचालित होता है। कुछ विद्वानों के अनुसार नैतिक मूल्य की कई परिभाषाएँ दी गई है।

नैतिक मूल्य -अर्थ एवं परिभषा - प्रो. अर्बन के अनुसार- 'मूल्य वह आचरण है, जो मनुष्य की इच्छा को तृप्त करें तथा उसकी जाति के संरक्षण में सहायक हो। केवल वही साध्य और मूल्यवान है जो आत्मा का विकास और आत्म साक्षात्कार करावे।' मूल्य वह सत्य है जिसके लिए आदमी बड़ा से बड़ा त्याग करते हुए जीता है। ईसा मसीह, सुकरात और गांधी को इसलिए याद किया जाता है कि उन्होंने मूल्यों की रक्षा के लिए प्राण गंवाये।

जेम्स पी. शेखर विलियम स्ट्रांग के अनुसार- मूल्य महत्व के बारे में निर्णय के मानदण्ड तथा नियम हैं। ये वे मानदण्ड है जिनसे हम लोगों, वस्तुओं, विचारों, क्रियाओं तथा परिस्थितियों के अच्छा, महत्वपूर्ण और वांछनीय होने अथवा खराब होने, महत्वहीन और तिरष्करणीय होने के बारे में निर्णय करते हैं।

मनुष्य के जीवन की अन्तरात्मा की आवाज नैतिक मूल्य है किंतु वर्तमान में इसके मानदण्ड बदल गए है। नैतिक मूल्यों का परिदृष्य समाज में बदल रहा है जो कि मानव जाति के लिए काफी घातक है। इन बदलतें नैतिक मूल्यों के दर्शन हर जगह दृष्टिगोचर हो रहे है फिर साहित्य कैस इस बात से अछूता रह सकता है।

गोविन्द मिश्र के कथेतर साहित्य में नैतिक मूल्य - गोविन्द मिश्र के कथेतर साहित्य में भी बदलते नैतिक मूल्यों की छाया दिखाई देती है। कथेतर साहित्य से तात्पर्य है- कथा से इतर साहित्य। जैसे संस्मरण, निबंध,

* शोधार्थी (तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष (हिन्दी) शास. महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, किला भवन, इन्दौर (म.प्र.) भारत

आलोचनात्मक लेख, यात्रा साहित्य, कविताएँ आदि का विषयगत अध्ययन करना है। साहित्यकार गोविन्द मिश्र के कथेतर साहित्य में नैतिक मूल्यों के बदलते परिदृष्य का आकलन करना ही इस शोध का उद्देश्य है।

महानगरीय परिवेश में नैतिक मूल्यों का पतन होता जा रहा है। नैतिक मूल्य उनके लिए ढकोसला हो गए है। जहाँ भारतीय संस्कृति में एक स्त्री और एक पुरूष समाज को साक्षी मानकर विवाह के बंधन में बंधकर साथ रहते थे किंतु अब इसका एक दूसरा रूप भी सामने आया है। लड़का-लड़की बड़ी ही उन्मुक्तता से एक साथ रहते हैं, इस बात के लिए उन्हें कोई शर्म नहीं है। इस बात का उल्लेख गोविन्द मिश्र अपने कथेतर साहित्य में करते हैं। गोविन्द मिश्र समाज में संस्कारों के निर्माण और उन्हें अत्मसात करने की चर्चा करते हैं।

(धुंधभरी सुर्खी : रंगों की गंध- 1, यात्रा वृतांत संग्रह से प्रथम संस्करण : गोविन्द मिश्र, पृ.सं.191)

नैतिक मूल्य राष्ट्र और समाज की शक्ति है। दूसरे शब्दों में कहें तो वह समाज की आधारशिला है। व्यक्ति, परिवार, समुदाय, समाज राष्ट्र से मानवता तक नैतिक मूल्यों की आवष्यकता होती है। मानव का प्रेम वर्तमान समय में कम होता जा रहा है। लोग तेरा मेरा करने लगते है। अपनी चीजों को अपने परिवार के लोगों के साथ ही बाँटना नहीं चाहते। मानव जाति की सोच यतेरा है मेरा है के कारण संकुचित हो गई है। यह मानव जाति का दुर्भाग्य है कि हम अपनी ही जाति के प्रति संकुचित हो गए है। इसी बात को गोविन्द मिश्र अपने यात्रा वर्णन यभारत का पष्चिमी कोना गुजरात में करते हैं।

(भारत का पष्चिमी कोना गुजरात : रंगों की गंध-2, संस्करण 2016 : गोविन्द मिश्र, पृ.सं.153)

समाज में नैतिक मूल्यों के पतन के चलते व्यक्ति अंहकारी ज्यादा हो गया है। वो प्रेम के साथ सहनशील न होकर अंहकारी हो गया है। नैतिक मूल्यों के अभाव में 'मैं' का अस्तित्व अधिक होता है। अंहकार के चलते मनुष्य अपने जीवन को नष्ट भी कर देता है। अहम् के चलते लोग हमसे दूर हो जाते है। इस संदर्भ में गोविन्द मिश्र अपने संस्मरण 'वह ऋजुता' में लिखते है कि- यह अजीब समय है कि स्वभाव में स्थित होना, जो संस्कार हममें है उनका आदर करते हुए अपनी परंपरा से जुड़ना ये आडंबर का त्याग लगते हैं। इन्हें प्रतिक्रियावादी कहा जाता है। लघुता का वरण, अंहकार का त्याग....... यह हमारे 'एथौस' का एक महत्वपूर्ण अंग है जबकि व्यक्ति का महत्व उसे इर्द-गिर्द बुना अंहकार है।

(वह ऋजुता; साहित्यकार होना : गोविन्द मिश्र, पृ.सं.80)

प्रकृति भी हमें नैतिक मूल्यों की शिक्षा देती है। समस्त मानव जाति एक है। प्रकृति ने सभी को समान बनाया है। एक जैसा जीवन दिया है। व्यक्ति को मनुष्य रूप मिला है तो वो सिर्फ मनुष्य बनकर क्यों नहीं रह सकता क्यों वो जातिवाद, रंगभेद का जहर समाज में फैला रहा है। जाति, छुआछूत, रंगभेद और भेदभाव के चक्रव्यूह में फंसे व्यक्तियों के विचारों को कैसे बदला जाय? आजादी के बाद भी काले-गौरे का भेद है। इसका उल्लेख गोविन्द मिश्र अपने निबंध 'भोगे हुए यथार्थ की सीमाएँ: दूसरी तरफ' में लिखते हुए कहते हैं कि- 'हर व्यक्ति का अपने आप स्वयं में एक बड़ा यथार्थ है और इस लिहाज से निहायत व्यक्तिपरक दस्तावेजों को भी यथार्थपरक माना जा सकता है..... लेकिन ये दस्तावेज फिर व्यक्ति के उस यथार्थ से बाहर जाने की कोशिश....... भी नहीं करते।' दूसरी तरफ में आग्रह इस सीमित यथार्थ के बहुत आगे एक सामाजिक यथार्थ उठाने का है- रंगभेद का यथार्थ एक समाज का भी नहीं हैं। वहाँ का है जहाँ दो क्या कई समाज एक दूसरे से टकराते हैं। दूसरे शब्दों में यह अंतर्समाजीय यथार्थ है और इसमें ऐतिहासिक और राजनैतिक पहलू भी अपने ढंग से उलझे हुए हैं।

(भोगे हुए यथार्थ की सीमाएँ : दूसरी तरफ; संदर्भ और सवाल : गोविन्द मिश्र, पृ.स.87)

भारतीय संस्कृति का मुख्य नैतिक मूल्य है माता-पिता की सेवा करना किंतु वर्तमान में नैतिक मूल्यों के अवमूल्यन के चलते लोग अपने माता-पिता के लिए ही समय नहीं निकाल पाते तो माता-पिता की सेवा करना तो दूर की बात है। इसी संदर्भ में उल्लेख गोविन्द मिश्र 'गीली-गीली धुंध और उजले जुआघर' यात्रा वृतांत में लिखते है कि- 'बेटा-बहू दोनों बड़े सुबह काम पर निकल जाते हैं, वह अकेला टी.वी. के सामने पड़ा रहता है। मैंने उसको कल अटलांटा सिटी चलने का प्रस्ताव दिया- वह अमेरिका तीसरी बार आया है, हर बार वहीं ठहरा है और अभी तक अटलांटा सिटी जो पास ही है- वहाँ नहीं जा सका। मैंने उसे न्यूजर्सी में एक बस स्टॉप पर कल आ जाने को कहा, साथ चलेंगे। वह कैसे आए- बेटे-बहू को ड्रॉप करने की फुर्सत नहीं, और वह हिंदूस्तानी अफसर अपने आप बस या ट्रेन से आ-जा नहीं सकता बोर होता घर में ही पड़ा रहता है।

(गीली-गीली धुंध और उजले जुआघर; इतिहास और प्रकृति दोनों : गोविन्द मिश्र, पृ.स.62)

नैतिक मूल्य के बदलते आयामों में व्यक्ति प्रेम, सौहार्द्र, अपनापन से दूर हो गया है। लोग कृत्रिमता के दायरे में सौहार्द्रता, एक-दूसरे प्रेम का भाव भूल गए है। यदि गलती से कोई उनके दिल में झांकना चाहता है तो वह घबरा जाता है। वह दूसरों के पास आने में भी घबराता है। इसी स्वभाव को गोविन्द मिश्र अपनी कविता में इस तरह व्यक्त करते है-

'तुम चौंक-चौंक उठते हो
डर जाते हो
कि कहीं मैंने वह कोना तो नहीं छू लिया
जो ओट हैं...... अदृष्य
पता नहीं, है भी
और मैं प्रति पल
अपनी प्रतीति को छील-छील करता रहता हूँ खुद को
और घायल'

(यह क्या हैं; ओ प्रकृति माँ कविता संग्रह से 1995 गोविन्द मिश्र, पृ.सं. 47)

लोग नैतिक मूल्य को भूलकर स्वार्थी हो गए हैं। वे अपनी सुख-सुविधा के लिए पढ़-लिखकर गाँव से शहर की तरफ पलायन कर रहे है जिससे वो संयुक्त परिवार से दूर होकर अपने बच्चों को भी नैतिक मूल्य के संस्कार नहीं दे पा रहे है। इसी संदर्भ में गोविन्द मिश्र अपने संस्मरणों में लिखते हैं। **(केन किटकिटाहट और कमल : बांदा; साहित्यकार होना : गोविन्द मिश्र, पृ.सं.24)**

उपसंहार - वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों के अवमूल्यन की वजह से ईमानदारी बेमानी कर रिश्वत लेकर समाज में भ्रष्टाचार को फैला रहे हैं, इसका उल्लेख गोविन्द मिश्र अपने संस्मरणों में करते हैं। आधुनिकता के इस दौर में भारतीय संस्कृति के नैतिक मूल्यों का हनन हो रहा है। इसका प्रभाव साहित्य पर भी पड़ रहा है। गोविन्द मिश्र ने अपने कथेतर साहित्य में नैतिक मूल्यों के बदलने का परिदृष्य सहज वह सरल रूप में प्रस्तुत किया है। उनकी सूक्ष्मावलोकन दृष्टि से यह निष्कर्ष निकलता है कि नैतिकता समाज सामाजिक जीवन को सुगम बनाती है और समाज में अप्रत्यक्ष रूप से नियंत्रण

रखती है। समाज राष्ट्र में एकीकरण और अस्मिता की रक्षा नैतिकता के अभाव में नहीं हो सकती है। विश्वबंधुत्व की भावना, मानवतावाद, समता भाव, प्रेम और त्याग जैसे नैतिक गुणों के अभाव में विश्व शांति अंतर्राष्ट्रीय सहयोग मैत्री आदि की कल्पना भी नहीं की जा सकती। समय रहते यह चिंतन का विषय है कि परिवार और समाज को श्रेष्ठ नैतिक मूल्यों के बीच अपने बच्चों में बोना ही होगा तभी एक संस्कारित समाज या राष्ट्र की कल्पना कर सकते है।

बदलते नैतिक मूल्यों के कारण व्यक्ति चरित्रिक पतन की ओर जा रहा है। वास्तव में नैतिक मूल्य आचरण की संहिता है। व्यक्ति-परिवार, समुदाय, समाज, राष्ट्र से मानवता तक नैतिक मूल्यों की यात्रा होती है और बदलते नैतिक मूल्यों ने संपूर्ण मानव जाति तथा भारतीय संस्कृति को प्रभावित किया है। समाज में नैतिक मूल्यों के पतन के चलते व्यक्ति सहनशील न होकर अंहकारी ज्यादा हो गया है। प्रकृति भी हमें नैतिक मूल्यों की शिक्षा देती है। समस्त मानव जाति एक है। प्रकृति ने सभी को समान बनाया है। एक जैसा जीवन दिया है। व्यक्ति को मनुष्य रूप मिला है तो वो सिर्फ मनुष्य बनकर क्यों नहीं रह सकता क्यों वो जातिवाद, रंगभेद का जहर समाज में फैला रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चन्द्रकान्त बांदिवडेकर(संपा.) : गोविन्द मिश्र: सृजन के आयाम, वाणी प्रकाशन दिल्ली।
2. तिवारी रामजी : आंकलन गोविन्द मिश्र, अमन प्रकाशन कानपुर,
3. मिश्र गोविन्द : मेरे साक्षात्कार, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. मिश्र गोविन्द : लेखन की जमीन, वाणी प्रकाषन दिल्ली।
5. मिश्र गोविन्द :रंगों की गंध-1 यात्रा वृतांत, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010।
6. मिश्र गोविन्द : ओ प्रकृति माँ कविता संग्रह, प्रथमसंस्करण, 1995.
7. मिश्र गोविन्द : रंगों की गंध-2 यात्रा वृतांत, किताबघर प्रकाषन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2016.
8. मिश्र गोविन्द :'इतिहास और प्रकृति.....दोनों' अमन प्रकाशन, कानपुर प्रथमसंस्करण, 2017.
9. मिश्र गोविन्द :'संदर्भ और सवाल' अमन प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, 2018, प्रथम संस्करण.
10. दुबे यशरतेन्दु एस. एन. : मूल्य शिक्षण: शारदा पुस्तक भवन, यूनिवर्सिटी रोड,इलाहाबाद
11. भार्गव एम. एवं चतुर्वेदी एस. : मूल्य शिक्षार एवं शिक्षण: माधव प्रकाशन, आगरा.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

डॉ. अम्बेडकर के शिक्षा संबंधी विचारों का अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के शैक्षणिक विकास में आने वाली कठिनाईयों व चुनौतियों का अध्ययन (धार जिले के विशेष संदर्भ में)

ज्योति सोलंकी *

प्रस्तावना – अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के शैक्षणिक विकास को बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक पचास वर्षो के समय को अम्बेडकर का समय मानकर उस समय की शिक्षाव्यवस्था पर विचार करें तो हम पाते हैं कि इस समय भारतीय साम्राज्य अंग्रेजों के अधीन था। डॉ0 अम्बेडकर के समय में दलितों की सामाजिक स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। समाज में उनका स्थान अस्पृश्य अथवा अछूत का था। उच्च वर्ग के लोग उनका स्पर्श करने से परहेज करते थे। विद्यालयों में भी साधिकार रूप से वे प्रवेश लेने में लज्जित होते थे। यदि प्रवेश हो भी जाता तो उन्हें आत्मिक रूप से अपार आत्मग्लानि और असहनीय पीड़ा का सामना करना पड़ता था। अध्ययन से पता चलता है कि डॉ0 भीमराव अम्बेडकर को सवर्णो के साथ विद्याध्ययन करने में कितने अपमान और आत्मिक पीड़ा का अनुभव करना पड़ा था। सवर्णो की दृष्टि में वे दलित होने के नाते उपेक्षित माने जाते थे। विद्यार्थी जीवन में उन्हें सवर्णो की उपेक्षा की पीड़ा का जो घूँट उन्हें पीना पड़ा, उस वेदना का सामना उन्होंने एक प्रखर विद्यार्थी बनकर बहादुरी से सामना किया। यद्यपि वे विद्याध्ययन में अत्यन्त प्रखर एवं तेज तर्राक थे, फिर भी शैक्षिक प्रगति में उन्हें ढेर सारी समस्याओं का सामना करना पड़ा।

'एक समय था, जब हमारे देश में वर्ण–आश्रम–व्यवस्था सशक्तढंग से प्रचलित थी। इस व्यवस्था के अन्तर्गत भारतीय समाज चार वर्णो में विभक्त था। प्रथम वर्ण ब्राह्मण, द्वितीय क्षत्रिय, तृतीय वैश्य और चतुर्थ शूद्र थे। इस देश में जो वर्ण–विभाजन हुआ, उसमें ब्रह्मा को भी प्रसूता नारी की तरह अनेक अंगों से विभिन्न वर्णो को उत्पन्न करना पड़ा। सर्वशक्तिमान से सब डरते हैं, ब्रह्मा सर्वशक्तिमान थे। इस विभाजन के पचड़े में उन्हें भी घसीटा गया। वर्ण–विभाजन पर उनके हस्ताक्षर हुए और उनकी मुहर भी लग गयी। फिर इस आदेश को कौन न मानता, जिसको जो काम मिला, भीगी बिल्ली बने करने लगे, बेचारे शूद्र बेमौत मरने लगे।'[1] इस आधार पर प्रत्येक वर्ण के पृथक–पृथक कर्तव्य निर्धारित हुए, शूद्रों की स्थिति पहले तो अच्छी रही, लेकिन धीरे–धीरे इनकी स्थिति गिरती गयी। शूद्रों एवं स्मृतियों की रचना से छूत–छात की भावना को बल मिला। इनकी स्थिति का उल्लेख गौतम ऋषि ने इस प्रकार किया है, 'शूद्रों को ऊँचे वर्णो का जूठा भोजन, कपड़े, छाते, चटाई, जूते आदि प्रयोग में लाना चाहिए। वे यदि वेद सुन लें तो कान में लाख भर दें, उच्चारण करें तो जिह्वा काट लें, याद रक्खें तो शरीर के दो टुकड़े कर दें।'[2] उसी तरह से अनुसूचित जाति के अन्य लोगों को शिक्षा ग्रहण करने में अनेक समस्याओं को सामना करना पडा है। धार जिले के अनुसूचित जाति के लोगों को भी शिक्षा प्राप्त करने में अनेक कठिनाईयां आई हैं।

जाति की वजह से दुर्व्यवहार का सामना – जब उत्तरदाताओं से यह पूछा गया कि क्या आपको कभी शिक्षण संस्थाओं में अपनी जाति की वजह से दुर्व्यवहार का सामना करना पड़ा है? तो उनमें से 67 प्रतिशत लोगों का कहना था कि हां। उन्होंने दुर्व्यवहार का सामना किया है। लेकिन तैंतीस प्रतिशत लोगों का कहना था कि उन्होंने दुर्व्यवहार का सामना नहीं किया। लेकिन एक बात इसमें प्रमुख रुप से यह थी कि इन उत्तरदाताओं में जो 40 से 50 की उम्र से अधिाक वर्ष के थे, उनको शिक्षा ग्रहण करते समय शिक्षण संस्थाओं में दुर्व्यवहार का सामना अधिक करना पड़ा है। इसका कारण उन्होंने यह बताया कि पूर्व में अर्थात 50 वर्ष पूर्व अनुसूचित जाति के छात्र–छात्रओं को शिक्षण संस्थाओं में अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पडता था। उस समय वर्ण व्यवस्था के नाम पर विभाजित समाज में अनुसूचित जाति के लोगों को शूद्र में देखा जाता था। शूद्र का मतलब था वर्ण व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर इस जाति के लोगों का आना। इसलिए शेष जातियां इन शूद्रों के साथ में शिक्षण संस्थाओं में गैर बराबरी का व्यवहार करती थीं।

शिक्षालयों में केवल उच्च वर्ग के लोग ही शिक्षक होते थे, किन्तु अम्बेडकर शिक्षक होने के लिए जातिगत भेदभाव का विरोध किया। उच्च शिक्षा पर चर्चा करते हुए डॉ0 अम्बेडकर ने यह अनुभव किया था कि, वर्तमान विश्वविद्यालयीय शिक्षा अच्छे आचार्यो का निर्माण करने में असफल रही है। इसके लिए विषयों को वर्गो में गठित किया जाना चाहिए। अध्यापन और शोध कार्य प्रोफेसरों के मुख्य कार्य होने चाहिए और दोनों के लिए उन्हें समान वेतन मिलना चाहिए। बाबा साहब डॉ0 अम्बेडकर ने प्रोफेसरों के गुणों के विषय में कहा है कि, 'एक प्रोफेसर का विशेष गुण विद्धत्ता ही नहीं है, बल्कि उसकी वाणी में स्पष्टता भी होनी चाहिए। उसे अपने विषय में पारंगत होना चाहिए।'[3] शिक्षक अपने नैतिक गुणों के द्वारा छात्रों को प्रभावित कर सकता है। डॉ0 अम्बेडकर विश्वविद्यालय और डिग्री कॉलेजों में समन्वय के पक्षधर थे। ऐसा करने से स्नातक तथा स्नातकोत्तर शिक्षा के विकास में योगदान दिया जा सकता है। डॉ0 अम्बेडकर प्राथमिक शिक्षा के शिक्षकों के जातिगत भेदभावों से विरत करने की बात करते हैं और विश्वविद्यालयी स्तर पर शिक्षा देने के लिए प्रोफेसरों को निष्ठा से कार्य करने चाहिए, शोधकार्य में रत रहना चाहिए। शिक्षक के गुणों में वे वाणी की स्पष्टता को विशेष महत्व देते हैं। उन्हें अपने विषय का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए तथा उनमें

* शोधार्थी, डॉ. अम्बेडकर विचार एवं दर्शन शास्त्र, बानिस,महु, इन्दौर(म.प्र.) भारत

नैतिकता कूट-कूट कर भरी होनी चाहिए। शिक्षक सभी वर्गो से नियुक्त होने चाहिए। डॉ0 अम्बेडकर का कहना है कि शिक्षकों में जातीय भेदभाव की भावना नहीं होनी चाहिए। देश के विश्वविद्यालयों और डिग्री कालेजों में ही नहीं पूरी शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त जात-पाँत और ऊँच-नीच के भेदभाव बाबा साहेब परिचित ही नहीं, वरन् भुक्तभोगी भी थे। इसे वे भारतीय शिक्षा का केंसर कहते थे। उन्होंने कहा था कि-'जो अध्यापक यह प्रचार करते हैं कि अछूत तो केवल सेवा करने के लिए ही उत्पन्न हुए हैं और शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार एक वर्ग विशेष का है, ऐसी धारणों वाले का शिक्षा विभाग में भर्ती नहीं किया जाना चाहिए। क्योंकि अध्यापक ही राष्ट्र के रथवान हैं।'[4]इस तरह डॉ0 अम्बेडकर योग्य शिक्षकों की नियुक्ति और सभी के लिए समान शिक्षा के पक्षधर थे।

साहित्य समीक्षा - 'मोहनदास नैमिशराय-डॉ अंबेडकर और मार्टिन लूथर किंग का जीवन संघर्ष-2000' इस पुस्तक में लेखक ने डॉ. आंबेडकर और मार्टिन लूथर के जीवन को बताया है और विशेष रुप से ढोनों के जीवन के संघर्ष को बताया है। निश्चित रुप से डॉ. अंबेडकर के जीवन में अनेक तरह की कठनाईयां दिखाई देती हैं। लेकिन इन कठिनाईयों के बाद भी डॉ. आंबेडकर रुकते नहीं हैं, झुकते नहीं है बल्कि लगातार चलते रहते हैं और शिक्षा प्राप्त करके दलितों के बीच एक नई चेतना लेकर आते हैं। इन सभी बातों को प्रमुख रुप से इस पुस्तक में उठाया गया है।

'जगजीवन राम-भारत में जातिवाद एवं हरिजन समस्या-2008' इस पुस्तक के अंदर लेखक ने भारत के जातिवाद एवं अनुसूचित जाति की अनेक समस्याओं को रेखांकित किया है। साथ ही यह भी बताया है कि वर्ग, वर्ण एवं जातिगत भेदभाव के आधार पर अनुसूचित जाति वर्ग दूसरे वर्णो की तुलना में बहुत पिछड़ा हुआ रहा है। इस वर्ग को प्रमुख रुप से पहचान दिलाने में डॉ.अंबेडकर का बहुत बड़ा योगदान है। डॉ. अंबेडकर ने शिक्षा के द्वारा इस वर्ग को सचेत करने की बड़ी भूमिका निभाई है। इस तरह कीबातों को इस पुस्तक में उठाया गया है।

'डॉ चंद्रभूषण पाठक-बोधा शिक्षा दर्शन एवं भीमराव अंबेडकर-2000' इस पुस्तक में भारतीय शिक्षा व्यवस्था एवं डॉ. अंबेडकर के शिक्षा संबंधी विचारों को रेखांकित करते हुए बौद्ध शिक्षा को लेखक ने भारत के लिए उत्ताम शिक्षा बताया है। लेखक ने कहा है कि इसी शिक्षा प्रणाली के आधार पर डॉ. अंबेडकर ने भी अपने शिक्षा प्रणाली के विचार रखे हैं। इसलिए भारत में यह शिक्षा प्रणाली लागू तो निश्चित रुप से बडा परिवर्तन हो सकता है।

'भारतीय समाज में दलित वर्ग एवं कमजोर वर्ग की स्थिति-संपादक डॉ0 झिनकू यादव, लेखक-शैलेन्द्र पानधरी-2006' इस पुस्तक में दलित वर्ग की स्थिति को स्पष्ट करने की कोशिश की गई है। विशेष रुप से दलित वर्ग की सामाजिक स्थिति में जिस तरह से भेद भाव होता था, उसका वर्णन किया गया है तथा आधुनिक युग में वह भेदभाव किस तरह से हो रहा है या किस रुप में हो रहा है यह भी दिखाया गया है। दलित वर्ग में पूर्व की तुलना में काफी चेतना आई है एवं अनेक बदलाव हुए हैं। लेखक ने इन सब कार्यो के पीछे डॉ.अंबेडकर एवं उनके कार्य को प्रमुखत दी है। लेकिन बड़ा सवाल लेखक ने यह भी उठाया है कि शिक्षा सभी लोगों को प्राप्त नहीं हो रही है या सभी लोग प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के शिक्षण संस्थानों से मिलने वाले लाभ को प्राप्त करने में आने वाली कठिनाईयों का अध्ययन करना।
2. उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी प्राप्त करने में आने वाली समस्याओं का अध्ययन।

अध्ययन क्षेत्र का चयन - अध्ययन के लिए म. प्र. के धार जिले को चयनित किया गया है एवं गंधवानी तहसील के पॉच गांवों में से 20-20 परिवारों का चयन किया गया है। क्योकि मध्य प्रदेश में कुल जनसंख्या का लगभग 21 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति वर्ग निवासरत हैं। साथ ही मध्य प्रदेश मे सर्वाधिक अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति समुदाय धार जिले में निवासरत हैं, तथापि गंधवानी तहसील धार जिले की सर्वाधिक पिछडी हुई तहसील (साक्षरता स्तर) होने के साथ ही यहा पर अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति सर्वाधिक पाई जाती हैं एवं अधिकांश इन जनजातिय परिवार के बच्चे सरकारी स्कुलों मे अध्ययनरत् हैं। चुकि इनकी आर्थिक व सामाजिक स्थिति खराब होने के कारण अधिकांश बच्चें पढने में अक्षम हैं।

निदर्शन - प्रस्तुत शोध अध्ययन में धार जिले अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के 100 उत्तरदाताओं का चयन किया जो सरकार द्वारा शिक्षा के लिए चलाई जा रही योजनाओं के लाभार्थी परिवार हैं जिनको शैक्षणिक स्तर में कठिनाईयों का सामना करना पडता हैं उनका सोउद्देश्यपूर्ण विधि द्वारा चयन किया गया हैं।

तथ्य संकलन - प्रथमिक- साक्षातकार अनुसूची, प्रश्नावली, समूह चर्चा के माध्यम से उत्तरदाताओं से जानकारी प्राप्त कि गई हैं।

द्वितीयक - आकडें विभिन्न वेबसाइड समाचार-पत्र पत्रिकाऍ शॉसकीय विभागों द्वारा प्रकाशित प्रकाशन आदि से संकलित किए गए। आकडों के संकलन के पश्चात उनके निर्वचन के लिए निम्न सांख्यिकीय उपकरणों का प्रयोग किया गया हैं।

उत्तरदाताओं का लिंग के आधार पर वर्गाकरण

लिंग	आवृति	प्रतिशत
पुरूष	53	53
महिला	47	47
कुल	100	100

उपर्युक्त तालिका में डॉ. अम्बेडकर के शिक्षा संबंधी विचारों का अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के शैक्षणिक विकास में आने वाली कठिनाईयों व चुनौतियों का अध्ययन हेतु संकलित प्राथमिक समंकों को विश्लेषित किया गया है। समंकोंके विश्लेषण से स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्र में सर्वेक्षित लिंग के आधार पर वर्गीकरण किया गया है इन में से सर्वाधिक 53प्रतिशत पुरूष कि जनसंख्या है जो कि सबसे ज्यादा है तथा महिलाओं कि जनसंख्या का 47 प्रतिशत है।

उत्तरदाताओं का आयु के आधार पर वर्गीकरण

आय	आवृति	प्रतिशत
20 से 30	22	22
30 से 40	32	32
40 से 50	31	31
50 से अधिक	15	15
कुल	100	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि डॉ. अम्बेडकर के शिक्षा संबंधी विचारों का अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के शैक्षणिक विकास में आने वाली कठिनाईयों व चुनौतियों का अध्ययन हेतु संकलित प्राथमिक संमकों का आयु के आधार पर विश्लेषण किया गया है जो कि सर्वाधिक 32 प्रतिशत 30 से 40 वर्ष आयु वाले उत्तरदाता है जो कि सबसे अधिक है, 40

से 50 वर्ष आयु वाले उत्तरदाताओं की संख्या का 31 प्रतिशत है। 20 से 30 वर्ष आयु वाले उत्तरदाताओं कि संख्या 22 प्रतिशत है, 50 से अधिक वर्ष आयु वाले उत्तरदाताओं की संख्या 15 प्रतिशत है।

उत्तरदाताओं की वैवाहिक एवं पारिवारिक स्थिति के आधार पर वर्गीकरण

क्र.	वैवाहिक स्थिति		पारिवारिक स्थिति	
	विवाहित	अविवाहित	एकांकी	संयुक्त
आवृति	62	38	52	48
प्रतिशत	62	38	52	48

उपर्युक्त तालिका में डॉ. अम्बेडकर के शिक्षा संबंधी विचारों का अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के शैक्षणिक विकास में आने वाली कठिनाईयों व चुनौतियों का अध्ययन हेतु संकलित प्राथमिक समंकों को विश्लेषित किया गया है। समंकोंके विश्लेषण से स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्र में सर्वेक्षित उत्तरदाताओं की वैवाहिक एवं पारिवारिक स्थिति के आधार पर वर्गीकरण किया गया और यह पाया कि 62 प्रतिशत विवाहित हैं एवं अविवाहित 38 प्रतिशत हैं एवं वही पर पारिवारिक स्थिति का भी अध्ययन किया तो पाया कि 52 प्रतिशत लोग एकांकी एवं 48 प्रतिशत लोग संयुक्त परिवार में रहते हैं इससे यह स्पष्ट होता हैं कि अधिकांश लोग एकांकी परिवार हैं।

1- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के शिक्षण संस्थानों से मिलने वाले लाभ को प्राप्त करने में आने वाली कठिनाईयों का अध्ययन

अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के शिक्षण संस्थानों से मिलने वाले लाभ को प्राप्त करने में आने वाली कठिनाईयों का अध्ययन	उत्तरदाता	प्रतिशत
हां	32	32
नहीं	68	68
कुल	100	100

उपर्युक्त तालिका में डॉ.अम्बेडकर के शिक्षा संबंधी विचारों का अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के शैक्षणिक विकास में आने वाली कठिनाईयों व चुनौतियों का अध्ययन हेतु संकलित प्राथमिक समंकों को विश्लेषित किया गया है। समंकों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्र में अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के शिक्षण संस्थानों से मिलने वाले लाभ को प्राप्त करने में आने वाली कठिनाईयों का अध्ययन किया गया जिसमें पाया कि 68 प्रतिशत वाले उत्तरदाताओं ने कहा कि उनको लाभ प्राप्त करने में कोई कठिनाईयों का सामना नही करना पडा वही पर 32 प्रतिशत वाले लोगो ने कहा कि उनको बहुत सारी कठिनाईयां आती हैं

2-उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी प्राप्त करने में आने वाली समस्याओं का अध्ययन

उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी प्राप्त करने में आने वाली समस्याओं का अध्ययन	उत्तरदाता	प्रतिशत
हां	21	21
नहीं	79	79
कुल	100	100

इससे यह बात स्पष्ट होती है कि अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के छात्र-छात्राओं को पूर्ण जानकारी है। उपर्युक्त तालिका में संकलित प्राथमिक संमकों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्र के जिन उत्तरदाताओं को जानकारी है उनका प्रतिशत है। यह सर्वाधिक प्रतिशत है। 'किताबों के माध्यम से योजनाओं की जानकारी है' ऐसा कहने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 22.5 प्रतिशत है। 'सर्वशिक्षा अभियान के माध्यम से योजनाओं की जानकारी है' ऐसा कहने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 20.0 प्रतिशत है। 'छात्रवृति योजना की जानकारी है' ऐसा कहने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 18.8 प्रतिशत है एवं लैपटॉप के माध्यम से योजनाओं की जानकारी प्राप्त करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 14.5 प्रतिशत है, जो कि सबसे कम है।

निष्कर्ष- उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि दलितों की शिक्षा व्यवस्था अत्यन्त शोचनीय स्थिति में थी लेकिन धीरे-धीरे भारत को स्वतंत्रता प्राप्त होने के बाद जब भारतीय संविधान का निर्माण हुआ और उसे लागू किया गया तो दलितों की शिक्षा व्यवस्था की ओर लोगों की रुचि और बाध्यता बढ़ी यह सब डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के ही प्रयास से सम्भव हुआ ये भारतीय संविधान के निर्माता थे और उन्होंने दलितों की शिक्षा व्यवस्था के लिए उन्होंने अनेक प्राविधान दिये थे। यद्यपि अम्बेडकर नहीं रहे तो भी दलितों की शिक्षा के लिए उनके भागीरथ प्रयास से पूर्ण सफलता पायी फलत: अन्य सभी वर्गो और वर्णो की तरह ही दलितों की भी शिक्षा व्यवस्था की जाने लगी उन्हें प्रारम्भिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक इतना ही नहीं प्राविधिक शिक्षा के क्षेत्र में भी उन्हें सामान्य वर्ग से कही अधिक सुविधाएं दी गई और उन्हे शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ने का पथ प्रसस्त हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'मोहनदास नैमिशराय- डॉ अंबेडकर और मार्टिन लूथरकिंग का जीवन संघर्ष', आमेगा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2000
2. 'जगजीवन राम-भारत में जातिवाद एवं हरिजन समस्या', गौतम बुक पब्लिकेशन, दिल्ली, तृतीय संस्करण-2008
3. 'डॉ चंद्रभूषण पाठक-बोधा शिक्षा दर्शन एवं भीमराव अंबेडकर', सबलाईन पब्लिकेशन्स-जयपुर प्रथम संस्करण-2000
4. 'भारतीय समाज में दलित वर्ग एवं कमजोर वर्ग की स्थिति-संपादक डॉ0 झिनकू यादव, लेखक-शैलेन्द्र पानधरी', रमेश बुक डिपो, जयपुर, प्रथम संस्करण-2006
5. 'आर के मुखर्जी-एजुकेशन इन एशियन इंडिया', इंटरनैशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, प्रथम संस्करण-2008
6. 'कंवल भारती-डॉ. अंबेडकर एक मूल्यांकन', किताब घर प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2003
7. 'दलित कारवां'-भारतीय दलित साहित्य अकादमी, दिल्ली, अंक-8, 2008
8. 'गांधी और अछूतों का उद्धार-डॉ भीमराव अंबेडकर', गौतम बुक पब्लिकेशन, दिल्ली, द्वितीय संस्करण-1945'

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

मध्यप्रदेश में आदिवासी विकास परियोजनाओं का क्रियान्वयन एवं उपलब्धियों का मूल्यांकन (संदर्भ: लाडली लक्ष्मी योजना झाबुआ जिले में विगत पांच वर्षों की उपलब्धियां)

डॉ. सुनील कुमार शर्मा * शशि सिसौदिया **

प्रस्तावना – भारतीय संविधान में सदियों से पीड़ित, शोषित व पिछड़े हुए लोगों, विशेष रूप से आदिवासी जनजातियों के विकास व उत्थान की समुचित व्यवस्था की गई है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात इस वर्ग को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने व वर्गहीन, शोषणरहित– व भयमुक्त समाज की स्थापना के उददेश्य से देश में अनेकानेक योजनाएँ चलाई गई हैं। मध्य प्रदेश सरकार,को समाज के सर्वांगीण विकास हेतु प्रदेश में शैक्षणिक, आर्थिक व सामाजिक कार्यक्रमों को उच्च प्राथमिकता के आधार पर संचलित किया जाना चाहिए। वर्तमान में मध्य प्रदेश सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के व्यक्तियों के आर्थिक तथा सामाजिक उत्थान एवं चहुंमुखी विकास के लिये अनुसूचित जाति एवं जनजाति के गरीब सदस्यों का आर्थिक विकास एवं जीवनस्तर– सुधारने के लिये विभिन्न प्रकार की योजनाएँ तैयार करना तथा उनके क्रियान्वयन हेतु वित्तीय, प्रबन्धकीय एवं विपणन सहायता प्रदान करना है।

सामान्य परिचय : राज्य शासन दवारा बालिकाओं के शैक्षणिक स्तर तथा आर्थिक स्तर में सुधार तथा उनके अच्छे भविष्य की आधारशिला रखने के उद्देश्य से लाडली लक्ष्मी योजना संचालित की जा रही है। निकट की आंगनवाडी या जिला महिला बाल विकास कार्यालय से योजना का संचालन किया जाता है।

योजना का स्वरुप एवं कार्यक्षेत्र – यह योजना 1 जनवरी , 2006 के पश्चात् जन्म लेने वाली बलिकाओं के लिए है । जिसके माता – पिता ने दो जीवित बच्चों के रहते हुए परिवार नियोजन अपना लिया हो या बालिका परिवार की प्रथम संतान है तो सशर्त कि परिवार दवितीय संतान उपरांत परिवार नियोजन अपना लेगा इस योजना में उन हितग्राहियों का नाम दिया जा सकता है तथा जो आंगनवाडी केन्द्रों में पंजीकृत हो और आयकरदाता न हों । प्रदेश में बालिकाओं के शैक्षिणिक तथा स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार लाने एवं अच्छे भविष्य की आधारशिला रखने हेतु बालिका भ्रूण हत्या रोकने और बालिकाओं के जन्म के प्रति जनता में सकारात्मक सोच लाने एवं बाल विवाह रोकने के उद्देश्य से लाड़ली लक्ष्मी योजना आरंभ की गई है। योजना 1 जनवरी 2006 के उपरान्त जन्मी बालिकाओं के लिए योजना का लाभ कौन ले सकता है ऐसी बालिकाएं

1. जिनके माता पिता मध्य प्रदेश के मूल निवासी हों एवं आयकर दाता न हों ।
2. द्वितीय बालिका के प्रकरण में आवेदन करने से पूर्व माता या पिता ने परिवार नियोजन अपना लिया हो।
3. प्रथम प्रसव की प्रथम बालिका जिनका जन्म 1 जनवरी 2006 के उपरान्त हुआ हो परन्तु द्वितीय प्रसव के उपरान्त परिवार नियोजन अपनाना अनिवार्य होगा।
4. हितग्राही की आंगनवाडी केन्द्र में उपस्थिति नियमित हो ।
5. जिस परिवार में अधिकतम दो सन्तान हों माता पिता की मृत्यू हो गई है एवं उस परिवार के लिये परिवार नियोजन की शर्त अनिवार्य नहीं होगी परन्तु माता अथवा पिता का मृत्यू प्रमाण पत्र आवश्यक होगा।
6. जिस परिवार में प्रथम बालक अथवा बालिका है तथा दूसरे प्रसव पर दो जुड़वां बच्चियां जन्म लेती हैं तो दोनों जुड़वा बच्चियों को इस योजना का लाभ दिया जावेगा।
7. यदि परिवार ने अनाथ बालिका को गोद लिया हो तो उसे प्रथम बालिका मानते हुए योजना का लाभ दिया जावेगा।
8. माता पिता की मृत्यू की दशा में बच्ची की उम्र पांच साल होने तक भी आवेदन पत्र प्रस्तुत किया जा सकता है ।
9. प्रथम प्रसूति के समय एक साथ तीन लड़कियां होने पर भी तीनों बच्चियों को लाड़ली लक्ष्मी योजना का लाभ मिलेगा ।
10. ऐसे अभिभावक जो बालिका के जन्म के 1 वर्ष के अन्दर आवेदन पत्र प्रस्तुत नहीं कर पाये हैं उन्हें यह सुविधा होगी कि आगामी 1 वर्ष की अवधि अर्थात बालिका के जन्म के 2 वर्ष के अन्दर अपील, संबंधित जिले के कलेक्टर को कर सकेगें । प्रकरण मान्य अमान्य करने के पूर्ण अधिकार कलेक्टर को होंगे ।

आवेदन कैसे और कहां करना होगा ;

1. योजना का लाभ लेने के लिये अपने गांव मोहल्ले के आंगनवाडी केन्द्र में संपर्क कर आवेदन करना होगा।
2. आवेदन पत्र के साथ निर्धारित समस्त दस्तावेज संलग्न कर देना होगा।
3. अनाथ बालिका की दशा में संबंधित अनाथालय अथवा संरक्षण गृह के अधीक्षक दवारा बालिका के अनाथालय में प्रवेश के 1 वर्ष के अंदर बालिका की आय 6 वर्ष होने के पूर्व संबंधित परियोजना अधिकारी को आवेदन करना होगा।

पंजीकरण कब तक :

*प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह, खरगोन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

1. प्रदेश की किसी भी आंगनवाडी केन्द्र में जन्म के 1 वर्ष के अन्दर अनिवार्यत: पंजीकरण करा लिया गया हो।
2. योजना में पंजीकरण के लिये माता पिता यां अभिभावक दवारा बालिका के जन्म 1 वर्ष के अंदर संबधित आंगनवाड़ी कार्यकर्ता को आवेदन प्रस्तुत करना होगा।
3. ऐसी बालिकाएं जो अपने माता पिता की पहली संतान हैं एवं जिनका जन्म 31 मार्च 2008 के पूर्व हुआ है तो द्धितीय संतान के जन्म के 1 वर्ष के अंदर पंजीयन एवं आवेदन कराना आवश्यक होगा। राशि का प्रदाय प्रकरण स्वीकृति उपरांत हितग्राही के नाम पर लगातार 5 वर्षो तक रूपये 6000 रू. के राष्टीय बचत पत्र क्रय किये जायेगें तदोपरांत बालिका के कक्षा 6 वीं में प्रवेश लेने पर रूपये 2000 कक्षा 9 वीं में प्रवेश लेने पर रूपये 4000 कक्षा 11 वीं में प्रवेश लेने पर रूपये 7500 का एक मुश्त भुगतान किया जावेगा। बालिका की आयु 21 वर्ष होने पर तथा कक्षा 12 वीं परीक्षा में सम्मिलित होने पर शेष एक मुश्त राशि का भुगतान किया जावेगा किन्तु शर्त यह होगी कि बालिका का विवाह 18 वर्ष की आयु के पश्चात हुआ हो।

योजना का लाभ- इस योजना के तहत बालिका के पक्ष में प्रतिवर्ष 6000 रुपये लगातार पांच वर्षो तक कुल 30000 रुपये के एन एस सी क्रय किये जायेंगे। कक्षा छठवी में प्रवेश पर दो हजार रुपये, कक्षा ग्यारहवी में प्रवेश पर सात हजार पांच सौ रुपये तथा ग्यारहवी एवं बारहवी में पढ़ाई के समय दो वर्ष तक दो सौ रुपये प्रतिमाह दिए जायेंगे। बालिका के इक्कीस वर्ष की आय पूर्ण होने पर एवं अटठारह वर्ष के पूर्व विवाह न करने पर तथा बरहंवी कक्षा की परीक्षा में सम्मिलित होने पर एकमुश्त राशि का भुगतान किया जावेगा। इस प्रकार भुगतान की गई राशि एक लाख रुपये से अधिक की होगी।

संपर्क -निकट की आंगनवाडी या जिला महिला बाल विकास कार्यालय से संपर्क किया जा सकता है।

उपलब्धियाँ: वित्तीय वर्ष 2014-15 में जहाँ झाबुआ जिले में 4060 हितग्राही ने लाडली लक्ष्मी योजना में लाभान्वित होने हेतु पंजीयन करवाया वहीं वित्तीय वर्ष सत्र 2015-16 में सर्वाधिक 4973 2016-17 में 4632, 2017-18 में 4735 व 2018-19 में 3272 पंजीयन लाडली लक्ष्मी योजना के हितग्राहीयों की रही है जो इस बात कि सूचक है की बेटियों के जन्मदर में वृद्धि हुई है उपरोक्तानुसार वित्तीय मदद शासन द्वारा की गई है। स्वास्थ्य भौतिक, सामाजिक एवं मानसिक रूप से पूर्ण कुशलता की अवस्था है सबके लिए स्वास्थ्य का अर्थ यह सुनिश्चित करना है की सस्ती एवं उत्तम सेवाओं, सुरक्षित पेयजल तथा स्वच्छता प्रबंध, पर्याप्त पोषण हो जिसमें झाबुआ जिला काफी हद तक लाडली लक्ष्मी योजना की सुविधाएँ झाबुआ जिले के रहवाहियों को प्रदान करता आ रहा है।

तालिका क्र.1: लाडली लक्ष्मी योजना की झाबुआ जिले की वित्तीय वर्ष 2014-19 तक वर्षवार जानकारी

क्र.	वित्तीय वर्ष	स्वीकृत प्रकरण	स्वीकृत राशी	हितग्राही
1	2014.15	4060	2,43,60,000	4060
2	2015.16	4973	2,98,38,000	4973
3	2016.17	4632	2,77,92,000	4632
4	2017.18	4735	2,84,10,000	4735
5	2018.19	3272	1,96,32,000	3272

ग्राफ क्र1: लाडली लक्ष्मी योजना की झाबुआ जिले की वित्तीय वर्ष 2014-19 तक वर्षवार जानकारी **(अगले पृष्ठ पर देखे)**

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पंचायतीराज,महात्मा गांधी, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद
2. म.प्र.का आर्थिक विकास, बी.एस.राव, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमिक 1972
3. भारतीय ग्रामीण एवं नगरीय अर्थव्यवस्था, प्रो.नंदलाल भटनागर, रस्तोगी एण्ड कं.मेरठ1966
4. म.प्र. का भौगोलिक अध्ययन, अग्निहोत्री एंड अग्निहोत्री, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अमादमी
5. म.प्र. पंचायत अधि. 93, राधेष्याम द्विवेदी, सुविधाला बुक हाउस
6. भारतीय अर्थव्यवस्था, डा.अलकाघोष, दी वर्ल्ड प्रेस प्रगति, बम्बई
7. म.प्र. पंचायत अधिनियम 1982, शंकरलालदुबे
8. पंचायत राज, उपाध्याय विद्यासागर शर्मा
9. कृषि एवं ग्रामीण अर्थशास्त्र, वी.सी. सिन्हां एवं पुष्पासिंह, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद
10. भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था, के.जी.भटनागर, किशोर पब्लिकेशन हाउस, कानपुर
11. ग्रामीण भारत का आर्थिक विकास, जी.एल.खुल्ला, नैशनल प्रकाशन(1969)
12. शोध प्रविधि एवं क्षेत्रिय तकनिकी, बी.एम.जैन, रिसर्च पब्लिकेशन, नईदिल्ली
13. मध्यप्रदेश का भौगोलिक अध्ययन, प्रमील कुमार, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
14. अनुसंधान प्रक्रिया, डॉ. सावित्री सिन्हा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस,नईदिल्ली
15. जनजातियों का सामाजिक आर्थिक उत्थान, डॉ. मंजूगुप्ता, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नईदिल्ली
16. रिसर्च मेथोडोलॉजी इन कामर्स, डॉ. त्रिवेदी आर.एन. एवं शुक्ल डी.पी.एस. मोहन, कॉलेज बुक डीपो, जयपुर, दीप एवं दीप पब्लिकेशन, नईदिल्ली

ग्राफ क्र 1: लाडली लक्ष्मी योजना की झाबुआ जिले की वित्तीय वर्ष 2014-19 तक वर्षवार जानकारी

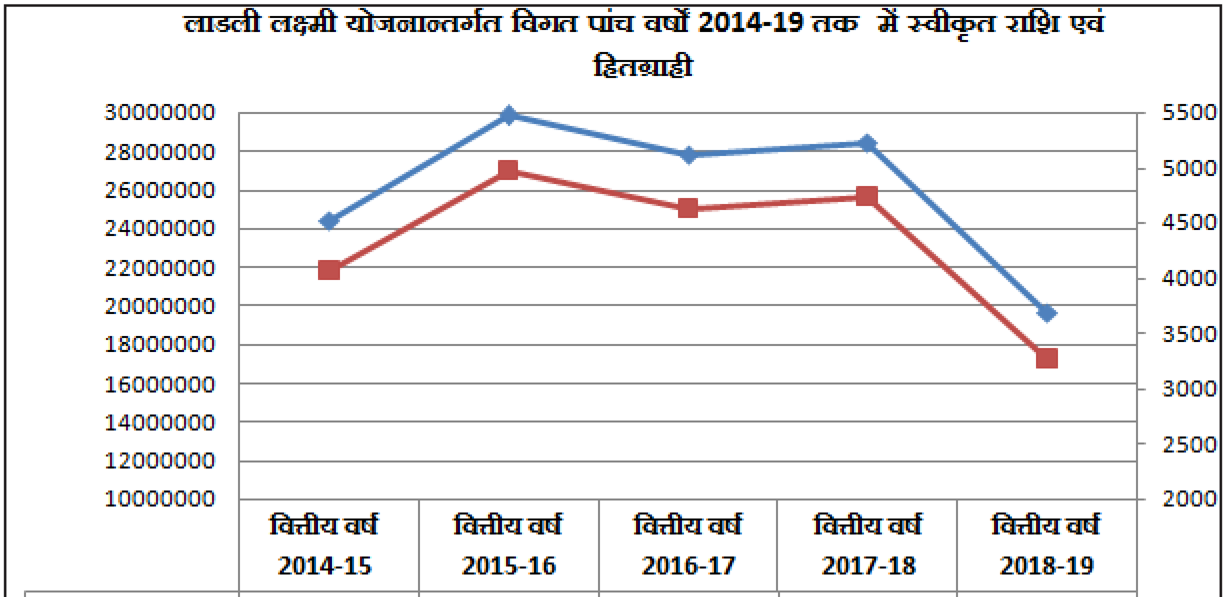

	वित्तीय वर्ष 2014-15	वित्तीय वर्ष 2015-16	वित्तीय वर्ष 2016-17	वित्तीय वर्ष 2017-18	वित्तीय वर्ष 2018-19
स्वीकृत राशि	24360000	29838000	27792000	28410000	19632000
हितग्राही	4060	4973	4632	4735	3272

****

कृषि विकास में लघु सिंचाई परियोजनाओं का योगदान (खण्डवा जिले के संदर्भ में)

हिरासिह जामोद *

शोध सारांश – लघु सिंचाई परियोजना के अंतर्गत 2000 हेक्टेयर से कम का कमांड एरिया होता है। अनुसूची साक्षात्कार का प्रयोग कर जिले के 50 गावों के 300 कृषक परिवारों का अध्ययन किया गया। खण्डवा जिले की 50 लघु सिंचाई परियोजनाओं से जुड़े किसानों का अध्ययन किया गया। जिले में वर्ष 2017-18 में रबी सीजन में कुल 50 लघु सिंचाई परियोजनाओं से 6427 हेक्टेयर में सिंचाई की गई। लघु सिंचाई परियोजनाओं से सबसे अधिक 40.66 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति वर्ग के कृषकों को लाभ प्राप्त हो रहा है।

जिले में लघु परियोजनाओं से सिंचाई क्षेत्र में वृद्धि हुई जिससे उत्पादकता के साथ-साथ किसानों की आय में भी वृद्धि हुई। लघु सिंचाई परियोजनाओं में लगभग 68.0 प्रतिशत लघु एवं सीमांत किसानों को प्रत्यक्ष रूप से लाभ हो रहा है। लघु सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण से मुख्य रूप से रबी की फसलों के लिए सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने से उत्पादन बढ़ा है। किसानों की आमदनी बढ़ने से उनकी व्यय प्रवृत्ति में वृद्धि हुई, जो शिक्षा, परिवहन, स्वास्थ्य, एवं आवास जैसे क्षेत्र में होने से कृषको के जीवन स्तर में सुधार हुआ है।

लघु सिंचाई परियोजनाओं का निर्माण सीमित वित्तीय संसाधनों तथा कम समय में पूर्ण हो जाता है और जिससे शीघ्र सिंचाई सुविधा प्राप्त होने लगती है। वहीं पर्यावरणीय क्षति भी वृहत परियोजनाओं के मुकाबले कम होती है। जिले में इन परियोजनाओं की 70 प्रतिशत नहरें कच्ची है, जिससे अधिकांश जल का अपव्यय होता है। किसानों सिंचाई हेतु समय पर जल उपलब्ध नही हो पाना, नहरो के रखरखाव पर ध्यान देने की आवश्यकता है। इन परियोजनाओं का जल स्तर वर्षा पर निर्भर करता है। लघु सिंचाई परियोजनाएँ भूमिगत जल स्तर बढ़ाने में सहायता करती है, जिससे यह पर्यावरण संरक्षण में सहायता करती है।

प्रस्तावना – कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। कृषि का सकल घरेलु उत्पाद में लगभग 14.5 प्रतिशत का योगदान है, और लगभग 70 प्रतिशत लोगों को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त होता। भारतीय उद्योगों के लिए कच्चे माल का मुख्य स्त्रोत कृषि है। लेकिन भारतीय कृषि का अधिकांश भाग प्रकृति पर निर्भर होने के कारण इसे मानसून का जुआ भी कहा जाता है, क्योंकि हमारे देश की कृषि का बड़ा (वर्ष 2009-10 में 55 प्रतिशत) हिस्सा वर्षा जल पर आज भी निर्भर है। देश के आर्थिक विकास की कुंजी कृषि विकास में निहित है। कृषि का विकास सिंचाई पर निर्भर होता है। कृषि उत्पादकता को प्रभावित करने वाले तत्वों में सिंचाई के साधनों का विशेष महत्व है। आजादी के समय हमारे देश में सिंचाई क्षमता 2.00 करोड़ हेक्टर थी। जो अब बढ़कर 2010-11 में 11.32 करोड़ हेक्टयर हो गयी है। भारत सरकार ने 'भारत निर्माण' कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण आधारभूत संरचना के निर्माण के लिए एक समयबद्ध योजना तैयार की है। जिसे जल संसाधन मंत्रालय एवं राज्य शासन के सहयोग से क्रियान्वित की जा रही है। जिसमें बड़ी मध्यम एवं लघु सिंचाई परियोजनाओं के द्वारा 1.00 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र की अतिरिक्त सिंचाई क्षमता के सृजन का लक्ष्य रखा गया है। भारत में कृषि सिंचाई के लिए विभिन्न साधनों का उपयोग किया जाता है जिसमें कुओं जलाशय अथवा नहरों ट्युबवेल आदि। वर्ष 1978-79 में सिंचाई परियोजनाओं का क्षेत्र के आधार पर वर्गीकरण किया गया जिसमे -बड़ी सिंचाई परियोजना 10000 हैक्टर से अधिक का कमांड एरिया। मध्यम सिंचाई परियोजना 10000 से 2000 हैक्टर तथा लघु सिंचाई परियोजना 2000 हैक्टर से कम का कमांड एरिया होता है।

खण्डवा जिले का कुल क्षेत्रफल 8307 वर्ग कि.मी. है। जिले की लगभग 75 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है, और कृषि कार्य में संलग्न है। वर्ष 2009-10 में जिले की कुल कृषि रकबा में से बोया गया क्षेत्र 3,00,619 हेक्टेयर था। जिसका 45 प्रतिशत हिस्सा सिंचित क्षेत्र था। जिले में वर्ष 2016-17 के अनुसार कुल 50 लघु सिंचाई परियोजनाऐं क्रियान्वित है। जिनके द्वारा 6424 हेक्टेयर क्षेत्र को सिंचित किया गया था।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन में निम्नलिखित उद्धेश्य है :

1. जिले में जल ग्रहण क्षेत्र स्थिति एवं उपयोग का अध्ययन करना।
2. पूर्वी निमाड़ में क्रियांवित एवं प्रस्तावित सिंचाई परियोजनाओं का मूल्यांकन करना।
3. पूर्वी निमाड के कृषि विकास में सिंचाई साधनों की भूमिका का अध्ययन।
4. सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण से कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र के आर्थिक एवं सामाजिक विकास पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।

परिकल्पना – प्रस्तुत शोध में निम्नलिखित परिकल्पनाऐं उभरकर सामने आती है :

1. लघु सिंचाई परियोजनाऐं, ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि उत्पादन, आय एवं रोजगार के अवसर बढ़ाती है। जिससे छोटे कृषकों के जीवन स्तर में सुधार आता है।
2. सीमांत किसान सिंचाई के साधन नहीं जुटा पा रहें है। वही दुसरी ओर अत्यधिक सिंचाई एवं जल वितरण की अपर्याप्त व्यवस्था खेती की खराब विधियों के कारण लवणता तथा बहुमूल्य जैव संसाधन के नष्ट होने की समस्याएँ पैदा हो रही है।

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, हरसूद, जिला खण्डवा (म.प्र.) भारत

3. जनसंख्या में तेजी से विस्तार के कारण निरंतर कम हो रही पानी की उपलब्धता पर अधिकाधिक दबाव पड़ रहा है। प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता कम हो रही है। इसलिए हाल ही के वर्षो में सिंचाई जल का प्रबंध मुख्य चुनौति बन गया

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन में विश्लेषणात्मक विधि को अपनाकर, निष्कर्षो को प्रतिशत में प्रस्तुत किया है।

1. **प्राथमिक स्त्रोत–** साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग कर, जिले के 6 विकासखण्डों में प्रत्येक विकास खण्ड से 10 गांव अर्थात कुल 60 गावों का चयन किया गया। जिसमें प्रत्येक गांव से 5 कृषकों का चयन किया गया इस प्रकार कुल 300 कृषकों का सर्वेक्षण कर संमकों का संकलन किया गया।

2. **द्वितीयक स्त्रोत–** इस स्त्रोत के अंतर्गत रिकार्ड प्रकाशित आंकडें, पत्र पत्रिकाओं की रिपोर्ट वार्षिक प्रतिवेदन एवं सांख्यिकी आंकडें शोध अध्ययन में शामिल किये गयें है। मध्यप्रदेश एवं खण्डवा जिलें में स्थित सिंचाई परियोजनाओं के मुख्यालयों एवं कृषि विभाग के विभागीय पोर्टल से प्राप्त किये गयें।

निदर्शन – प्रस्तुत अध्ययन में मध्यप्रदेश के खण्डवा जिले में स्थित लघु सिंचाई परियोजनाओं से जुड़े कुल कृषक 300 कृषक परिवारों का चयन किया गया।

जिले में लघु सिंचाई परियोजनाओं द्वारा वर्षवार सिंचित क्षेत्रफल, तालिका–1

वर्ष	लघु परियोजनाओं के द्वारा सिंचित क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	वृद्धि सिंचित क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	वृद्धि (प्रतिशत में)
2009-10	1759	-	-
2010-11	2465	706	40.14
2011-12	3727	1262	51.20
2012-13	4729	1002	26.88
2013-14	5651	922	19.50
2014-15	6149	498	8.81
2015-16	6253	104	1.70
2016-17	6424	170	2.40
2017-18	6427	3	0.05

स्त्रौत – जल संसाधन विभाग खण्डवा।

खण्डवा जिले में लघु सिंचाई परियोजनाओं द्वारा कुल की गई सिंचाई वर्ष वार उपरोक्त तालिका में दी गई है। वर्ष 2009-10 में 1759 हेक्टेयर, वर्ष 2010-11 में 40.14 प्रतिशत, बढ़कर 2465 हेक्टेयर हो गया। वर्ष 2017-18 में 6427 हेक्टेयर हो गया, जो पिछले वर्ष की तुलना में तीन गुना से अधिक कमाण्ड एरिया सिंचाई के लिए विकसित किया गया। इस प्रकार जिले में लघु सिंचाई परियोजनाओं से निरंतर सिंचाई क्षेत्र में वृद्धि की गई है।

चित्र–1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

(अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी के अनुसार खण्डवा जिले में सबसे अधिक 40.66 प्रतिशत जनजातीय वर्ग के कृषको लघु परियोजनाओं से सिंचाई का लाभ प्राप्त हो रहा है। उसके बाद अन्य पिछड़ा वर्ग 31.34 प्रतिशत, 15.14 प्रतिशत, और सबसे कम अनुसूचित जाति के किसानों का इसका लाभ मिल रहा है।

खण्डवा जिले में गेंहु का क्षेत्रफल कुल उत्पादन एवं उत्पादकता की स्थिति,

तालिका–1

वर्ष	क्षेत्रफल (हजार हेक्ट. में)	कुल उत्पादन (हजार मि.टन)	उत्पादकता (कि.ग्रा./ प्रति हेक्टेयर मे)
2011-12	10.600	28.100	2572
2012-13	11.100	31.800	2872
2013-14	117.500	276.100	2349
2014-15	44.000	132.000	3000
2015-16	118.800	273.002	2298

Source: - Commissioner Land Records, M.P. Gwalior

जिलें में वर्ष 2011-12 से लगातार गेहुॅं के क्षेत्रफल वृद्धि हुई वही उत्पादकता में लगातार वृद्धि हुई किन्तु वर्ष 2015-16 में 702 किलोग्राम की कमी आयी है। खण्डवा जिलें में वर्ष 2011-12 में गेहुॅं का कुल उत्पादन 28.1 हजार मि.टन था। जो बढ़कर वर्ष 2012-13 में 31.8 हजार मि.टन, वर्ष 2013-14 में 276.1 हजार मि.टन, वर्ष 2014-15 में घटकर 132.0 मि.टन तथा वर्ष 2015-16 में यह 273.0 हजार मि.टन हो गया।

खण्डवा जिले क प्रति प्रतिव्यक्ति आय (2004-05 की स्थिर कीमतों पर)

चित्र–2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

खण्डवा जिले की प्रति व्यक्ति आय, वर्ष 2008-09 में 15800 थी, जो 2009-10 में बढ़कर 16602 हो गई। वर्ष 2010-11 में 17635 हो गई थी, वर्ष 2011-12 में 19884 हो गई। वर्ष 2012-13 में प्रतिव्यक्ति आय 22129 रूपयें (2004-05 की स्थिर कीमतों पर) हो गई थी। जिले की प्रतिव्यक्ति आय में लगातार वृद्धि हो रही है। इससे यह बात सिद्ध होती है कि जिलें में किसानों के जीवन स्तर में भी सुधार हुआ है।

लघु सिंचाई परियोजनाओं से संबंधित प्रमुख समस्याऍं :

1. लघु सिंचाई परियोजनाओं का जिलें में नियोजित तरीके से क्रियान्वयन नही हो पाया है।
2. सिंचाई लक्ष्यों की पूर्ति नही हो पाती है। तथा वास्तविक सिंचाई समय पर उपलब्ध नही हो पाती है।
3. लघु सिंचाई परियोजनाऍं मानसून पर निर्भर है क्योंकि इनमें जल तभी भरता है जब अच्छी वर्षा होती है।
4. लघु सिंचाई परियोजनाओं के निर्माण में घाटा के पश्चात सिंचाई हेतु पर्याप्त उपयोगी नही साबित हो पा रहें।
5. जल वितरण की मात्रा पर्याप्त व्यवस्था नही है।
6. समय का अपव्यय होता है क्योंकि किसान घंटों जल का इंतजार करता रहता है।
7. फसल का नष्ट होना जाती है नियमित जलापूर्ति न होने से सीमांत एवं लघु कृषकों को भारी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।
8. भोगोलिक समस्या भी जिसमें खेतों से नहरों की अधिक दुरी मुख्य कारण मौजूद है।
9. तालाबों की जल संग्रहण क्षमता सीमित है।
10. कृषकों में जागरूकता का अभाव एक प्रमुख समस्या है।
11. परियोजनाओं के निर्माण में अत्यधिक विलंब भी होता है।

12. परियोजनाओ के निर्माण के लिए वित्तीय संसाधनों का अभाव पाया जाता है।
13. नहरों से सिंचाई करने पर जल का अत्यधिक विदोहन होता है।
14. कुल जलाशयों का व नहरों का निर्माण कार्य स्तरहीन है।

लघु सिंचाई परियोजनाओं से जुड़ी समस्याओं के निराकरण हेतु सुझाव– उपरोक्त समस्याओं के निराकरण हेतु क्रियात्मक मौलिक सुझाव निम्नलिखित है :

1. सिंचाई परियोजनाओं का निर्माण करतें समय रूपांकित सिंचाई क्षमता में वास्तविक समंकों के आधार पर परियोजना का डिजाईन किया जावे, क्योंकि रबी मौसम में ही सिंचाई हेतु जल की आवश्यकता होती है।
2. जिले में लघु सिंचाई परियोजनाओं का निर्माण प्राथमिकता के आधार उन क्षेत्रों में किया जाय जहां पर सिंचाई साधनों की प्रमुख रूप से आवश्यकता है तथा परियोजनाओ का निर्माण ऐसा हो जो स्थानीय सिंचाई आवश्यकताओं के अनुरूप हो।
3. रबी के मौसम में किसानों को पर्याप्त मात्रा में सिंचाई हेतु जल उपलब्ध हो सकें इसके लिए आवश्यक है कि प्रशासनिक पारदर्शिता लाकर कृषकों से सलाह लेकर जल वितरण व्यवस्था में सुधार लाया जाय ताकि किसानों की फसलों को सिंचाई आवश्यकता के समय जल उपलब्ध हो सकें।
4. लघु सिंचाई परियोजनाओं के अंतर्गत बने जलाश्य एवं छोटे बांधों में वर्षा ऋतु के दौरान तेज प्रवाह से उनमें गाद (रेत, मिट्टी) जमा हो जाती है जिसके कारण उसकी गहराई कम हो जातीं।
5. जिले में बारह माह बहने वाली नदी नर्मदा के अलावा नही है। भूमि के पठारी एवं बंजरी होने से जल बह निकलता है। उनका भूमि में जलभरण नही होता है जबकि मानसून में पर्याप्त वर्षा होती है। विभिन्न नदी नालों पर छोटे–छोटे बांध एवं तालाबों का निर्माण वर्षा के जल को बहने से रोका जा सकता है। वर्षा जल को एकत्रित कर रबी के मौसम में सिंचाई की जाकें इसके लिए जरूरी है कृषकों के सहयोग से बेहतर जल प्रबंधन किया जाय।
6. बांध द्वारा नहरों से छोड़े जाने वाले जल की मात्रा एवं समय का पूर्व निर्धारण कर किसानों को सूचित किया जावे जिससे पानी के इंतजार में होने वाले समय का सदुपयोग कर सकें तथा किसानों का विश्वास प्राप्त कर सके ।
7. जल वितरण व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार को दुर करने के लिए विभागीय कर्मचारियों के साथ ही किसानों के प्रतिनिधियों को शामिल किया जाना चाहिए। विभागीय कर्मचारियों एवं किसानों के साथ बेहतर तालमेल एवं सामजस्य बनाने हेतु प्रेरित किया जाना चाहिए।
8. जल वितरण व्यवस्था में संपन्न किसानों के दखल को दुर करने के लिए सीमान्त एवं लघु किसानों को जल वितरण समिति में शामिल किया जावे।
9. लघु सिंचाई परियोजनाओं से नहरों के माध्यम से पानी लेने वाले कृषकों को नहरों की साफ–सफाई एवं निर्माण में भागीदारी देने के प्रयास किये जाने चाहिए।
10. नहरों को पक्का किया जाना चाहिए यह सरकार एवं किसानों के सहयोग के संभव नही इसलिए इसमें किसानों का सहयोग लिया जाना चाहिए। साथ ही नहरों से होने वाले पानी के रिसाव को रोका जा सकें।
11. उपलब्ध जल संसाधनों के अधिकतम उपयोग को सुनिश्चित किया सकें। जिसके लिए शासन को जल संसाधन विभाग के माध्यम से विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम एवं जल के महत्व एवं उसके कुशल उपयोग के संबंध में जन साधारण में जागरूकता लाने के प्रयास किये जाने चाहिए।
12. जहां कही भी जल एवं विद्युत पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है वहा भिन्न भिन्न व्यक्तियों तथा समुदाय के सावामित्व वाली लघु सिंचाई परियोजनाओं को बढ़वा दिया जाना चाहिए।
13. लघु सिंचाइ परियोजनाएँ सरकार के लिए घाटे का सौदा बनती जा रही है सिंचाई परियोजनाओं के घाटे को कम करने के लिए सिंचाई दरो में वृद्धि कर बकाया राशि वसूल कर पूरा किया जावें।
14. पानी कमी वाले तथा सुखा प्रवृत क्षेत्रों में पानी की बचत करने के लिए छिड़काव टपक सिंचाई प्रणाली लगाने के काम को प्राथमिकता दी जावे।

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि जिलें लघु सिंचाई परियोजनाओं से क्षेत्र में सिंचाई रकबा बढ़ा है जिससे कृषकों को खेती से प्राप्त होने वाली आय के साथ साथ रोजगार भी स्थानीय स्तर पर प्राप्त हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पंत,के.सी., कृषि नियोजन: इक्कीसवी सदी की चुनौतियॉ एवं अवसर, कपिला राज एवं उमा, 2005, भारतीय अर्थनीति, साहित्य प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ–135।
2. दत्त,आर.एवं सुंदरम 2004, भारतीय अर्थव्यवस्था, एस.चन्द प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ.439।
3. योजना आयोग, भारत सरकार, 12वीं पंचवर्षीय योजना(2012–2017) नई दिल्ली, संस्करण1 एनेक्सयु 5.1 पृष्ठ.181.
4. पाटनी, आर.एल. 2001, कृषि अर्थशास्त्र, संजीव प्रकाशन मेरठ, उ.प्र. पृष्ठ.107।
5. पूरी वी.के. एण्ड मिश्र एस.के. 2014, भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालया पब्लिशिंग, नई दिल्ली, पृष्ठ 311.
6. वैद्यनाथन ए., इरिगेशन, इन कौशिक बसु (एडी.) दि न्यू अक्सफोर्ड कम्पानियन टू इकोनॉमिक्स इन इण्डिया, नई दिल्ली, 2012 संस्करण–2 पृष्ठ 421
7. ओझा, अपूर्वा इरिगेशन,उपलब्धियां एवं चुनौतियॉ, भारतीय अद्योसंरचना रिपोर्ट 2007, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ 188.
8. विभागीय प्रशासकीय प्रतिवेदन जल संसाधन विभाग मध्यप्रदेश 2015.16
9. इकॉनामिक एण्ड पॉलिटीकल विकली वालुम 1, 46 और 53।
10. भारत सरकार की रिपोर्ट (state of indian agriculture report 2011-12)
11. भारत 2008 प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मत्रालय नई दिल्ली पृ.408.
12. जल संसाधन विभाग मध्यप्रदेश विभागीय प्रशासकीय प्रतिवेदन 2015.16
13. भारत सरकार, राष्ट्रीय कृषि नीति 2000, नई दिल्ली, पृष्ठ 2.।
14. मध्यप्रदेश सरकार का पोर्टल, विजन डाक्यूमेंट1018,
15. एन.आय.सी, डिस्ट्रीक पोर्टल खण्डवा।

चित्र–1

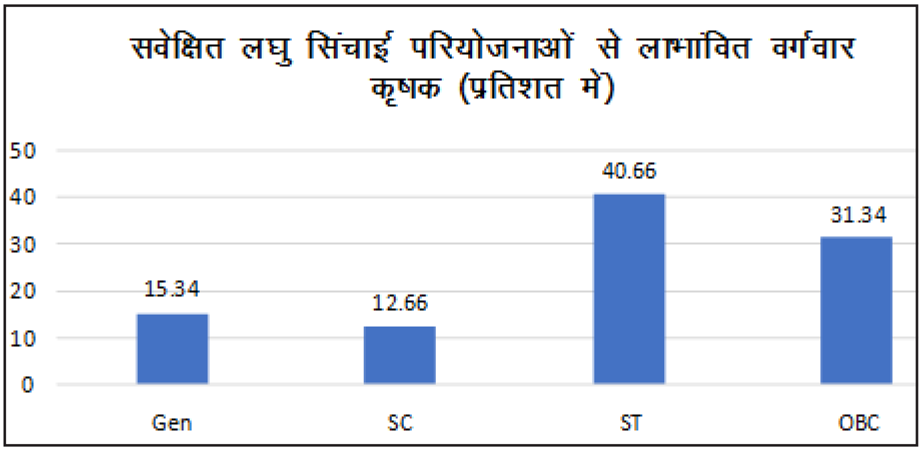

स्त्रौत– सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी अनुसार।

चित्र–2

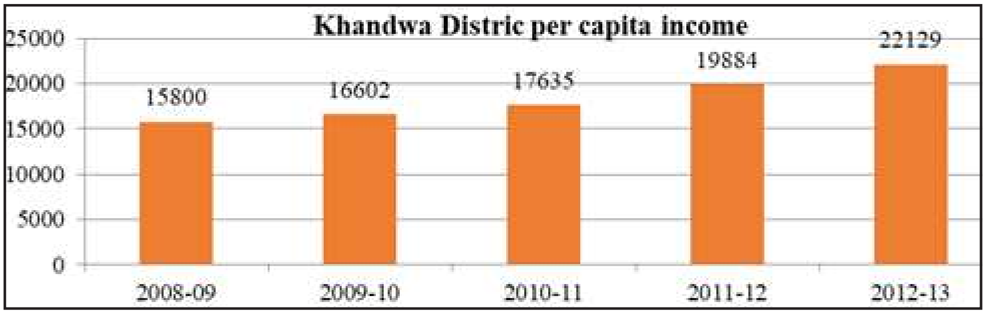

Source: - Commissioner Land Records, M.P. Gwalior

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Application of Fuzzy Clustering into Real World problem

Shilpi Singh*

Abstract - Generally, In hospital it has seen that many patients came effected by same disease but different characteristic. So we admit all patients into different wards using fuzzy clustering. It is common way to allocate patients from certain diseases into different ward based on their completely inspection. A new approach for this allocation activity is proposed in my work. This proposed approach, which applies the fuzzy clustering algorithm, is based on each patient's symptoms of his/her disease.

Utilizing this method, patients with similar symptoms are admitted into the same ward. On the other hand, patients with slightly different symptoms of diseases will be in different ward. This approach proposed in this work for patient allocation is expected to improve the effectiveness of daily inspection process.

Introduction - There is unique and interesting phenomenon to be observed that usually happens in hospital daily: allocation of patients into wards.

Consider approximately 20 patients of fever come in a day in S.N. Medical college Agra and cold and headache is relative symptoms among all patients. These patients are allocated in 5 wards says ward 1, ward 2, ward 3, ward 4 and ward 5.

Now in our mind there are many questions related to above phenomenon. There are four major potential research questions that need to be answered.

Q.1 Does this common method of allocating patients to wards need to be changed?
Q.2 What are the reason(s) if such a change is needed?
Q.3 How can it be changed, if such a change is needed?
Q.4 What are the factors to be considered if the doctors decide to make such a change?

Inspection Activity - The issues of inspection are discussed in almost every agenda. Improving in inspection activity is a compulsory task of all hospital, company, educational institute etc. However inspection is still considered an enigmatic concept [1]. The word enigmatic is defined as follows: Something that is enigmatic is mysterious, puzzling, not obvious and difficult to understand [2].

The concept of inspection activity is also enigmatic. It seems that Doctors agree that inspection activity is a worthy undertaking. However there is no such agreement on the definition of inspection and how to measure it [3].

My inspection component involves two components:
1. Doctor 2. Patients

Patients are unique individuals: they differ from each other .As such each patient's level of disease for body pain will be unique as well.

Ideally the inspection activity demands the availability of one Doctor for one student per disease. Of course, such a demand is financially unfeasible especially for S.N.Medical College, Agra or any other hospital in India. Thus a compromise solution, which is still based on inspection activity, must be offered.

Effort to establish inspection activity - An inspection activity can be established if serious attention is given to the allocation of patients into wards. Mathematically, the process of allocating patients into wards is called clustering and the ward obtained is called a cluster. Clustering of 20 patients for fever, by definition is based on patient's level of condition and other relative diseases are headache and cold .

How are the patient's levels of condition for disease measured? It can be obtained by giving some grade to each patient. I divided the patient group into eleven categories i.e.

Table 1: Grade and score

Grade	Score
A	4.00
A^-	3.70
B^+	3.30
B	3.00
B^-	2.70
C^+	2.30
C	2.00
C^-	1.70
D^+	1.30
D	1.00
E	0.00

Scores are the sole input for clustering. Successful clustering results in cluster of patients with similar condition level.

Thus clustering patients based on their condition level of disease is the answer to the third potential research

*Assistant Professor (Mathematics) Govt. Degree College, Shivrajpur, Kanpur (U.P.) INDIA

question , the mechanism of which will be discussed in further below.

The mechanism of fuzzy clustering - As an illustration , a result from a small study of 20 patients related to body pain in Orthopedic Dept. in S.N. medical college, Agra is presented. As stated before body pain, cough, fever, bone-pain, headache etc. are symptoms of diseases. Total 20 patients grade of their disease, as presented in Table 1 are their attributes.It is known from Table 1 that the attribute for the 6th patients is presented as vector X_6 , where

$$X_6 = \begin{bmatrix} 2.3 \\ 1 \end{bmatrix} \quad \ldots(1)$$

This means that the respective patient received C^+ for headache; and D for cold.

X_i denotes the attribute of i^{th} patient, I column denotes level of headache ,

II column denotes level of cold,

X_i	Level for headache	Level for cold
X_1	2	1.3
X_2	1	1.7
X_3	1	1.7
X_4	2	1.7
X_5	2.3	1.7
X_6	2.3	1
X_7	1	2
X_8	2.3	1
X_9	2.7	1
X_{10}	2	2.3
X_{11}	2	1.7
X_{12}	2.7	2.7
X_{13}	3	2.7
X_{14}	2.3	3.3
X_{15}	3.3	2.3
X_{16}	2.3	3.7
X_{17}	2.7	1
X_{18}	2	1
X_{19}	3.7	1
X_{20}	1.7	3.3

Table2: Attributes of 20 patients based on their grade achieved for different symptoms

The *fuzzy clustering* technique, first introduced by James C.Bezdek [4] in 1973, is used here to allocate these 20 attribute vectors X_1, X_2, …, X_{20} into three wards or clusters.

The fuzzy clustering approach is generally able to find the lowest known Jm value or a Jm associated with a partition very similar to that associated with the lowest Jm value. On data sets with several local extreme, the fuzzy clustering approach always avoids the less desirable solutions.

SUBTRACTIVE CLUSTERING - The subtractive clustering method assumes each data point is a potential cluster center and calculates a measure of the likelihood that each data point would define the cluster center, based on the density of surrounding data points.

The subtractive clustering method [8] is an extension of the mountain clustering method proposed by R. Yager [9].

However, the iterative search is used to optimize the least square error from the model being generated and the test model. After that, the number of clusters is taken to the Fuzzy C-Means Algorithm.

Fuzzy C-Means (FCM) is a method of clustering which allows one piece of data to belong to two or more clusters. This method is frequently used in pattern recognition. It is based on minimization of the following objective function:

$$J_m = \sum_{K=1}^{N} \sum_{i=1}^{c} u_{ki}^{m} \left\| x_k - v_i \right\|^2$$

Where *m* is any real number greater than 1, it was set to 2.00 by Bezdek.

Therefore, the component value of vectors **Ui** and **vi** are obtained by solving the fuzzy clustering problem, which is basically a constrained optimization problem in the form as follows:

$$J_2 = \sum_{K=1}^{N} \sum_{i=1}^{c} u_{ki}^{2} \left\| x_k - v_i \right\|^2 \quad \ldots\ldots (4)$$

Subject to :

$$\sum_{i=1}^{c} u_{ki} = 1 \quad \forall\, k = 1, 2, \ldots, n \quad \ldots(5)$$

$$\sum_{k=1}^{n} u_{ki} \geq 0 \quad \forall\, i = 1, 2, \ldots, c \quad \ldots(6)$$

u_{ki} is the degree of membership of x_k in the cluster *i*; x_k is the k^{th} of d-dimensional measured data ; v_i is the d-dimension center of the cluster and ||*|| is any norm expressing the similarity between any measured data and the center.

Fuzzy partitioning is carried out through an iterative optimization of the objective function shown above, with the update of membership and the cluster centers by:

$$u_{ki} = \frac{1}{\sum_{m=1}^{c} \left(\frac{\left\| x_k - v_i \right\|}{\left\| x_k - v_m \right\|} \right)^2}$$

$$v_i = \frac{\sum_{k=1}^{n} u_{ki}^{2} . x_k}{\sum_{k=1}^{n} u_{ki}^{2}}$$

This iteration will stop when

$$\max_{ki} \{|u_{ki}(l+1) - u_{ki}(l)|\} \prec \in$$

Where $\in$ is a termination criterion between 0 and 1 and l are the iteration steps.

Results - Bezdek has developed an algorithm, called the *Fuzzy C-means Algorithm* (FCM), to solve the fuzzy clustering problem ([4] in [5]). The application of the FCM [10] algorithm is illustrated by a case described as data in Table 1. Table 2 gives the value of the elements of vector $\mathbf{U}_i$ (i = 1,2,3,4,5). As an illustration, the values in the 6th row of Table 2 can be interpreted as:

$$u_{61} = 0.8675 \quad u_{62} = 0.0345 \quad u_{63} = 0.0220 \quad u_{64} = 0.0081$$

$$u_{65} = 0.0680$$

From those three values, the 6th patient is the most suitable to be in ward or *cluster* 1 (or ward 1), since he/she has the highest degree of membership to this ward or *cluster* compared to the other four. By the same interpretation, the following ward allocation was obtained for patients of fever as follows:

- The first class or ward 1 consists of patient numbers 1, 6, 8, 9, 17 and 18.
- The second class or ward 2 consists of patient numbers 13, 15 and 19.
- The third class or ward 3 consists of patient number 2, 3 and 7.
- The forth class or ward 4 consists of patient numbers 12, 14, 16 and 20.
- The fifth class or ward 5 consists of patient number 4, 5, 10 and 11.

Table 2: The patient's degree of membership to five clusters (or five wards)

Patient	Cluster 1	Cluster 2	Cluster 3	Cluster 4	Cluster 5
1	0.6712	0.0400	0.0513	0.0117	0.2258
2	0.0464	0.0181	0.8549	0.0130	0.0675
3	0.0464	0.0181	0.8549	0.0130	0.0675
4	0.0253	0.0111	0.0157	0.0035	0.9443
5	0.1059	0.0982	0.0410	0.0180	0.7369
6	0.8675	0.0345	0.0220	0.0081	0.0680
7	0.0128	0.0067	0.9509	0.0057	0.0239
8	0.8675	0.0345	0.0220	0.0081	0.0680
9	0.5060	0.2063	0.0626	0.0348	0.1903
10	0.0827	0.1192	0.1654	0.0811	0.5516
11	0.0253	0.0111	0.0157	0.0035	0.9443
12	0.0633	0.3082	0.0700	0.3917	0.1668
13	0.0609	0.3973	0.0573	0.3526	0.1319
14	0.0224	0.0505	0.0378	0.8379	0.0513
15	0.0486	0.7414	0.0329	0.0922	0.0849
16	0.0235	0.0477	0.0391	0.8430	0.0467
17	0.5060	0.2063	0.0626	0.0348	0.1903
18	0.9878	0.0022	0.0027	0.0007	0.0066
19	0.2224	0.4353	0.0810	0.0855	0.1758
20	0.0764	0.1151	0.1932	0.4416	0.1736

What have not thus far been discussed are the differences of patient' levels of condition in the relative symptoms for fever among those five wards or clusters. The answer to this question is given implicitly by interpreting the values of vector V_t(i =1, 2, 3, 4 and 5), as presented in Table 3.

Table 3: The cluster center vectors for the five clusters

V_1	V_2	V_3	V_4	V_5
2.0644	3.0123	1.1603	2.6551	2.0452
1.0140	1.9454	1.9478	3.4230	1.8034

As an example, the interpretations of the values in the 1st column of Table 5 are as follows:

- V_{11}=2.0644, the (weighted) average of the condition level for headache ;
- V_{21}=1.0140, the (weighted) average of the condition level for cold.

$$v_{11} = 2.0644 \quad v_{12} = 3.0123 \quad v_{13} = 1.1603 \quad v_{14} = 2.6551$$

$$v_{15} = 2.0452$$

From those five values, it can be concluded that the highest condition level for the first symptom headache for disease fever, is achieved by patients of ward 2, followed by wards 4, 1, 5 and 3. The same order applies for the other symptom cold. This information is important for the Medical Department on inspection suitable treatment for patients.

Discussion - The fuzzy clustering algorithm can be successfully utilized to allocate the 20 patients into clusters. The Fukuyama and Sugeno's *fuzzy cluster validity index* has succeeded in determining the optimal number of clusters.

The correlation coefficient between the values in the first and the second row of Table 3 is 0.3349. This low value indicates that there is no significant relationship between fever patients condition for headache and cold.

Conclusion - If there is a need for the clusters generated by the fuzzy clustering algorithm to contain approximately the same number of patients, then this algorithm needs to be modified. Such a modification can be accomplished by performing a minor modification to the stopping rule of Step 4 of Bezdek's algorithm.

References :-

1. **Sallis, E. (1993);** "Total Quality Management in Education. London".Kogan Page.
2. **Collins COBUILD English Language Dictionary(1994);** London: HarperCollins.
3. **Ibrahim, A.(1999);** "Current issues in engineering education quality". Global J. of Engng. Educ.,Vol. 3, Issue 3, pp. 301-305.
4. **Bezdek, J.C.(1973);** "Fuzzy Mathematics in Pattern Recognition", Ph.D. Thesis, Cornell University.
5. **Bezdek, J.C.(1981);** "Pattern Recognition with Fuzzy Objective Function Algorithms". New York: Plenum Press.
6. **Chiu S.(1994) ;** "Fuzzy model identification based on cluster estimation", J of I & Fs,Vol. 2, pp. 267–78.

7. **Susanto, S.,Suharto, P. and Sukapto, P.(2002);** "Using the fuzzy clustering algorithm for the allocation of students",Vol.1,Issue 2,pp. 245-248.

8. **Yager, R. and D. Filev(1994);** "Generation of Fuzzy Rules by Mountain Clustering". Journal of Intelligent & Fuzzy Systems,Vol.2 ,Issue 3,pp. 209-219

9. **Sani Susanto, Ernawati and Pandian Vasant(2006);** "Students' allocation using fuzzy clustering algorithms and Fukuyama and Sugeno's fuzzy cluster validity index". World Trans. on Eng. and Tech. Educ., Vol.5, Issue 1.

10. **Richard J. Hathaway,James C. Bezdek(1986);** "Local convergence of the fuzzy c-Means algorithms", Vol.19, Issue 6, pp. 477-480.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

अकबर के राजत्व का आदर्श और समन्वयवादी नीति की पृष्ठभूमि

प्रताप कुमार पाण्डेय* डॉ. रामरतन साहू **

शोध सारांश – अपने सिंहासनारोहण के कुछ ही वर्षों में अकबर ने यह समझ लिया कि पूर्ववर्ती मजहबी राज्य भारत में ज़बरदस्ती थोपा नहीं जा सकता। राजत्व के उच्च मानदण्डों पर साम्राज्य की स्थापना के लिये यह आवश्यक है कि भारत के हिन्दू और मुस्लिम दोनों प्रमुख धर्मों में समन्वय की भावना को विकसित कर राजनीतिक रूप से सशक्त बना जाए। राजपूतों की स्वामी भक्ति और अदम्य शौर्य को अपना सहयोगी बनाते हुए अपने राजत्व को प्रजा मात्र के हित व कल्याण में नियोजित किया जाए। इससे जहां असंतुष्ट हिन्दू समर्थन में आकर सहायक बनेंगे वहीं मुस्लिम विद्रोहों को दबाने में भी उनका सहयोग लिया जा सकेगा। बादशाह की छवि को सशक्त कर प्रजा हित को वरियता दी जा सकेगी। अकबर निरंकुश होते हुए भी जनकल्याणकारी प्रवृत्ति का था। उसने राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक, साहित्यिक आदि सभी क्षेत्रों में समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया। वह एक उत्कृष्ट शासक था। उसका राज्य एक ऐसा राज्य था जो एक संस्कृति, एक परम्परा और एक राष्ट्रीय राज्य के सिद्धांत पर क्रियाशील होने को उन्मुख था।
शब्द कुंजी – राजत्व, समन्वयवाद, सुलह-ए-कुल, दीन-ए-इलाही, वैश्विक पुनर्जागरण, दैवीय उत्पत्ति का सिद्धांत, लोककल्याणकारी राज्य, धर्म निरपेक्षता, मनसबदारी, भावनात्मक संरक्षण।

प्रस्तावना – मुगलकाल के प्रारंभिक शासक बाबर और हुमायूँ निरंतर युद्धों में उलझे रहे। अत: उन्हें राजत्व को उच्च मानदण्डों पर स्थापित करने पर्याप्त अवसर नहीं मिल पाया। अकबर का शासनकाल इस्लामिक सिद्धांतों का स्थापनाकाल न होकर राष्ट्रीयता की विचारधारा से प्रभावित था। अकबर ने यह भली प्रकार अनुभव कर लिया था कि हिन्दुओं के सक्रिय सहयोग के बिना भारत में स्थायी मुस्लिम शासन की स्थापना संभव नहीं है। उसने राजनीतिक एवं धार्मिक नीतियों में अपने उदारता का प्रदर्शन किया। उसके उदार शासनकाल में मुल्ला-मौलवी और उलेमा लोगों का प्रभाव नगण्य रह गया था। 1575 ई. में इबादतखाने की स्थापना से उसका दृष्टिकोण अधिक व्यापक और अधिक समन्वयवादी हो गया था तथा 1582 में दीन-ए-इलाही के प्रवर्तन के बाद अकबर स्वयं ही धर्म एवं राजनीति दोनों में प्रधान बन गया था। उसने उलेमाओं के अधिकारों पर भी अतिक्रमण कर लिया था।

राजत्व का उच्च आदर्श – 'राजपद ईश्वर का एक उपहार है और यह तब तक प्रदान नहीं किया जाता जब तक कि एक व्यक्ति में हजारों महान गुणों और विशेषताओं का समन्वय न हो जाये। इस महान पद के लिये जाति, धन-सम्पत्ति तथा लोगों की भीड़-भाड़ ही काफी नहीं है। ...... जब तक कि वह सर्वजनीन शान्ति और सहिष्णुता स्थापित न करें।'

– अबुल फजल (1)

अबुल फजल ने इस सिद्धान्त में यह बात सिद्ध करने की चेष्टा की है कि राजा एक सामान्य मानव से कहीं अधिक बढ़कर है, वह पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि है, ईश्वर का रूप है (जिल्ले-इलाही), और उसे एक सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा बुद्धि-विवेक का ईश्वरीय वरदान अधिक मात्रा में प्राप्त है। अकबर इस सिद्धान्त पर विश्वास करता था। उसका विचार था कि – 'राजाओं का दर्शन मात्र ही ईश्वर भक्ति का अंग माना गया है। इन्हें समुचित ईश्वर के रूप में जिल्ले इलाही कहकर पुकारा गया है और इसका दर्शन-लाभ दिल में ईश्वर की याद जगाने का साधन है।'(2)

राजत्व के इस दैवी-उद्गम सिद्धान्त को जनता के एक विशाल वर्ग ने स्वीकार किया था। अकबर का यह सिद्धान्त फारस के शाह अब्बास को उसके द्वारा लिखे गये पत्र की इन पंक्तियों से और भी अधिक स्पष्ट हो जाता है – 'प्रत्येक धर्म में विश्वास के साथ ईश्वरीय दया सन्नद्ध है और व्यक्ति को सबके साथ शान्ति (सुलह-ए-कुल) की सदाबहार पुष्प वाटिका में लाने की महती चेष्टा करनी चाहिये। सम्पूर्ण इतिहास में बहुत कम शासकों का ऐसा उच्चतम आदर्श रहा है महान अशोक की ही भांति अकबर ने लोक कल्याणकारी राज्य का आदर्श अपनाया और लोगों के हित के अनेकानेक कार्य किये। उसने अपनी प्रजा के भौतिक सुख और समृद्धि की वृद्धि के लिये ही नहीं अपितु उसकी नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति के लिये भी, उसके इहलौकिक ही नहीं अपितु पारलौकिक सुख और शांति के लिये भी अनूठे कार्य किये। उसने प्रजा पर आतंक और सैन्य बल से सल्तनत कालीन शासन नहीं किया अपितु स्नेह, प्रेम और वात्सल्य से भावनात्मक पोषण व संरक्षण भी देने का प्रयत्न किया।'

लोककल्याणकारी राज्य – अकबर अपने आपको प्रजा का पिता अनुभव करता था और उसके चहुंमुखी हित के लिये सदैव प्रस्तुत रहता था। इससे पूर्व भारतीय इतिहास के सर्वाधिक महिमामय सम्राट अशोक महान ने भी इन्हीं सिद्धांतों का अनुसरण किया था। इस दृष्टि से अकबर, अशोक महान का पश्चगामी प्रतीत होता है। अशोक महान का मानना था– 'सर्व लोकहित से बढ़कर किसी का कोई भी दूसरा कर्तव्य नहीं है। सभी मनुष्य मेरी संताने हैं, जिस प्रकार मैं चाहता हूं कि मेरी संतति इस लोक और परलोक में सब प्रकार की समृद्धि और सुख भोगे, ठीक उसी प्रकार मैं अपनी प्रजा की सुख-समृद्धि की कामना करता हूं।'(3) अकबर ने एक सुसंगठित साम्राज्य की स्थापना की थी किन्तु उसके प्रशासन का सबसे महत्वपूर्ण बिन्दु लोककल्याण की भावना थी। अकबर की महानता का आधार उसका लोककल्याण, समस्त प्रजा के पालन की आकांक्षा, नैतिक गुणों की प्रधानता उसके विजयों से

* शोधार्थी (इतिहास) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

कहीं अधिक है। जिस प्रकार अशोक महान को उसके प्रजा के कल्याण की अदम्य भावना और प्राणिमात्र के प्रति सेवा की भावना के कारण उसे महान कहा गया है। अकबर में भी ये गुण बहुत अर्थो में विद्यमान थे। उसने हिन्दुओं को अपनी प्रजा समझा और अपनी मुसलमान प्रजा समान उसकी सुख-समृद्धि के लिये कार्य किया। उसने साहित्य, कला और संस्कृति के क्षेत्र में भी समन्वय का कार्य किया।

के.टी. शाह का कथन सत्य ही है कि 'मुगलों में अकबर सबसे बड़ा था और महान मौर्य शासकों को छोड़कर सम्भवत: पिछले 1000 वर्षो में होने वाले भारतीय शासकों में भी वह सबसे महान था।'(4)

राजत्व की प्रतिष्ठा व धार्मिक समन्वय हेतु अकबर के विविध प्रयत्न - युग के आवश्यकतानुसार इन परिस्थितियों में अकबर ने राजसत्ता की जो नवीन व्याख्या की थी, उससे सम्राट का पद इतना ऊँचा हो गया था कि कोई उसे चुनौती नहीं दे सकता था। अबुल फजल लिखता है - 'राजत्व, ईश्वर से उद्‌भासित एक प्रकाश, सूर्य की एक किरण, विश्व को प्रकाशित करने वाला, पूर्णता के ग्रंथ का तर्क और गुणों को केन्द्र है। आधुनिक भाषा में इस प्रकाश को 'करे रजीदी' (देवी प्रकाश) कहते हैं और प्राचीन भाषा में इसे 'किया ख़ुरा' (पवित्र मण्डल) कहते हैं। यह राजाओं को बिना किसी मध्यस्थ की सहायता के ईश्वर से प्राप्त होता है। इसकी उपस्थिति में लोग प्रशंसा से मस्तक को अधीनता की भूमि की ओर नत कर देते हैं।'

राजत्व के इन आदर्शो को अपनाते हुए अकबर ने धार्मिक क्षेत्र में समन्वय हेतु विविध प्रयत्न किये। उसने 1562 ई. में अपने सिंहासनारोहण के तीसरे वर्ष में युद्धबंदियों को दास बनाने एवं उन्हें जबरिया इस्लाम अपनाने पर प्रतिबंध लगा दिया साथ ही हिन्दुओं से तीर्थयात्रा कर लेना बंद कर दिया। 1564 ई. में घृणित 'जजिया' कर दिया जाना निषेध घोषित कर दिया। हिन्दुओं को नवीन मंदिरों के निर्माण एवं पुराने मंदिरों के जीर्णोद्धार करने की आज्ञा प्रसारित कर दी। इसी समय से उसने हिन्दू राजकुमारियों से विवाह भी करने प्रारंभ किये। आमेर, बीकानेर, जैसलमेर आदि की हिन्दू की राजकुमारियों से उसने विवाह किया। इन रानियों के लिये उसने अपने महल में मंदिर भी बनवाया। हिन्दुओं की गाय के प्रति कोमल भावनाओं को देखकर उसने गौवध पर प्रतिबंध लगा दिया तथा स्वयं भी गौमांस खाना बंद कर दिया। अकबर ने 1575 ई. में फतेहपुर सीकरी में इबादतखाने की स्थापना भी करायी और वहां होने वाले हिन्दू, जैन, पारसी व ईसाई आदि धर्माचार्यो के धर्म-सिद्धांतों की व्याख्या सुन-सुनकर वह इस निष्कर्ष पर पहुंच गया कि सभी धर्मो में न्यूनाधिक अच्छी व बुरी बातें शामिल हैं। सभी धर्मो के मानने वाले विभिन्न मार्गो से एक ही मंजिल पर पहुंचने के लिये प्रयत्नशील हैं। अत: उसने विभिन्न धर्मो की उपासना पद्धतियों से प्रभावित होकर एक नए पथ 'दीन-ए-इलाही' का 1582 में प्रवर्तन किया। दीन-ए-इलाही एक धर्म नहीं था अपितु यह सब धर्मो का सार था। अकबर ने दीन-ए-इलाही का प्रचार नहीं किया और न ही इसके लिये किसी प्रकार का प्रलोभन दिया था। अकबर का उद्देश्य धर्म की स्थापना करना नहीं था, बल्कि विभिन्न वर्गो में वैमनस्य को समाप्त कर साम्राज्य को सुदृढ़ बनाना था, जिससे सभी धर्म के अनुयायी अपने धर्मो का स्वतंत्रता से पालन करते हुए सौहार्द्र और सद्‌भावना बनाये रखें वे साम्प्रदायिक विवादों में न फंसे।

इन उदारनीतियों के परिणाम अंततोगत्व हुआ अकबर के लिये अत्यंत लाभप्रद सिद्ध हुए। हिन्दू जनता की सहानुभूति को प्राप्त करके जहां एक ओर उसे मुस्लिम विरोधियों को दबाने के लिये प्रबल राजपूत सेनानायकों का साथ प्राप्त वहीं दूसरी ओर वह मुगल साम्राज्य की जड़ों को मजबूत करने में सफल हुआ। यद्यपि महाराणा प्रताप के साथ चले संघर्षो ने उसे व्यक्तिगत व राजनीतिक रूप से सदा सर्वदा के लिये अपूर्णीय क्षति पहुंचायी तथापि उसके ये प्रयत्न धार्मिक समन्वय के लिये इतिहास में मील का पत्थर सिद्ध हुए।

दैवीय व्यवस्था की इस व्याख्या ने राज्य की इस्लामी व्याख्या तथा उसकी दुहरी नागरिकता के सिद्धान्त को रद्द कर दिया और सम्राट को अपनी सम्पूर्ण प्रजा का बिना जाति, धर्म के भेदभाव के पितृत्वपूर्ण शासक बना दिया। अब प्रजा की भलाई ही सम्राट का प्रमुख कर्तव्य बन गया था। अकबर सम्पूर्ण रूप से भारतीय हो गया था। उसकी प्रतिभा ने हिन्दू और मुसलमान दो जातियों को एक महान शानदार साम्राज्य की समान सेवा और समान नागरिकता के बंधनों द्वारा एक राष्ट्र में ढलने के कार्य की सम्भावना का अनुभव किया और उसके साहस ने यह कार्य पूर्ण किया। इस पवित्र कार्य को करने के लिये अकबर ने ऐसे धर्म को बनाने का प्रयास किया था जो सभी को मान्य हो।

समन्वयवादी श्रेष्ठ प्रशासन - प्रशासन में स्वयं अकबर की व्यक्तिगत रूप से गहन अभिरूचि थी। वह प्रशासन के कर्तव्यों के प्रति पूर्ण सजग रहता था। प्रशासन प्रबंध में उसकी कर्मठता देखते ही बनती थी। अकबर ने अपने प्रशासन में धर्म निरपेक्षता और जनहित के सिद्धान्तों को अपनाया। मध्युग में वह ऐसा प्रथम सम्राट था जो इस्लाम धर्म के आधार पर शासन करने का इच्छुक नहीं था। उसने पारस्परिक संदेह और अविश्वास के वातावरण में ऐसी उदार दूरदर्शी समन्वयकारी प्रशासनिक नीति निर्धारित की जिससे उसे न केवल मुसलमानों का सहयोग मिला बल्कि राजपूतों का भी समर्थन मिला, जो अब तक मुगलों को विदेशी और अपना घोर शत्रु मानते थे। अपने युग की संकीर्ण राजनीतिक मनोवृत्तियों के पक्षपात पूर्ण बातों और धर्मान्धता से ऊपर उठकर उसने राजपूतों को मैत्री, सहयोग और समर्थन प्राप्त किया। अकबर ने प्रशासकीय विभाग के द्वार हिन्दू-मुसलमान दोनों के लिये समान रूप से खोल दिये। केवल गुणों की श्रेष्ठता ही इनकी योग्यता की कसौटी थी। योग्यता के आधार पर ही टोडरमल को वित्तमंत्री बनाया गया।(5)

अकबर ने साम्राज्य को प्रान्तों, सूबों और परगनों में विभक्त करके एक सी प्रशासन व्यवस्था स्थापित की। पूरे साम्राज्य में सर्वत्र-भू-राजस्य की एक सी व्यवस्था, एक समान न्याय प्रणाजी, एक मुद्रा प्रणाली, एक सी सैनिक व्यवस्था, एक ही राज्य भाषा, एक सी शाही सेना और समान रूप से कानून प्रचलित किये। सभी प्रांतों और सूबों में अधिकारियों और कर्मचारियों के एक से पद थे और ये अधिकारी और कर्मचारी एक प्रांत से दूसरे प्रांत में, एक सूबे से दूसरे सूबे में स्थानांतरित होते रहते थे। अपने अधिकारियों को पुरस्कृत करने के लिये उसने मनसबदारी प्रथा को प्रोत्साहित किया। शासन प्रबंध की ऐसी व्यवस्था से राज्य में प्रशासनिक एकता जो जब तक नहीं थी स्थापित हो गई। इस प्रशासकीय एकता की विशिष्टता यह है कि उसने मुसलमानों के साथ-साथ बहुसंख्यक हिन्दू जाति को भी अपनाया और हिन्दुओं को ऊंचे-ऊंचे पदों पर आसीन किया। उसने हिन्दुओं और मुसलमानों के लिये एक ही प्रकार की शासन व्यवस्था पिता की। हिन्दुओं और मुसलमानों में राजनीति और प्रशासन के लिये कोई भेदभाव नहीं माना। प्रशासन के क्षेत्र में अकबर की मौलिक एकता और प्रशासकीय दक्षता इस तथ्य से प्रकट होती है कि उसने इस सिद्धान्त को समझा कि हिन्दुओं और मुसलमानों के साथ समानता का व्यवहार किया जाये।

अकबर इतना महान इसलिये था कि उसने राजनीतिक आवश्यकता

समझकर स्वयं को भारतीय बनाने का प्रयत्न किया। उसके इस साहस और दूरदर्शितापूर्ण निर्णय ने हिन्दू और मुसलमान दो जातियों को एक शानदार साम्राज्य की समान सेवा और समान नागरिकता के बंधनों द्वारा एक राष्ट्र में ढलने के कार्य की संभावना का अनुभव किया और उसकी दृढ़ता ने यह कार्य पूर्ण किया।[6]

लारेंस विनयन लिखते हैं –

His great achievement as a ruler was to weld the collection of different states, different races, different religious into a whole. It was accomplished by elaborate organisation. Akbar had an extra ordinary genius for details. All though a foreigner, he identified himself with the India, he has conquered.

हिन्दुस्तान की दुनिया को ख़ास दिन यह रही है कि उसने विचारों और क़ौमो के जुदा–जुदा तत्वों के समन्वय की ओर विभिन्नता से एकता पैदा करने की योग्यता और तत्परता दिखाई है।[7] मुगल साम्राज्य के विस्तार तथा सुदृढ़ीकरण में अकबर की समन्वयवादी नीतियों का महत्वपूर्ण योगदान था। अकबर एक दूरदर्शी तथा विवेकवान राजनीतिज्ञ था उसने यह भली प्रकार समझ लिया था कि शक्तिशाली, शूरवीर राजपूतों के सहयोग के बिना हिन्दुस्तान में स्थायी राज्य असंभव है। अत: अकबर ने ऐसी समन्वयवादी राजपूत नीति का विकास किया था जिससे वह हिन्दुओं का भरपूर सहयोग प्राप्त कर सके और उनके इस सहयोग से ऐसा साम्राज्य स्थापित करे जो शांति व सुव्यवस्था पर आधारित हो, क्योंकि ऐसा साम्राज्य ही स्थायी हो सकता था।

अकबर राष्ट्रीय शासक की भूमिका में – अकबर विश्व के प्रमुख सम्राटों में से एक है। उसकी दूरदर्शिता तथा विवेकपूर्ण नीतियों की सभी इतिहासकारों ने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। उसके राज्यारोहण से भारत में नवीन युग का उदय हुआ। यह युग शांति और समृद्धि का युग था। उसने राजनीति, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, कला तथा सांस्कृतिक क्षेत्र में भी सामंजस्य और समन्वय की नीति द्वारा एक राष्ट्रीय संस्कृति का विकास किया, जिसमें सभी वर्गों का योगदान था। इससे राष्ट्रीय भावना उत्पन्न हुई और सभी क्षेत्रों में एकता स्थापित हुई। उसके साम्राज्य में उसकी प्रजा को समानता और धार्मिक स्वतंत्रता प्राप्त थी। किसी भी आधार पर – धर्म, प्रजाति, सामाजिक स्तर – किसी भी नागरिक के साथ भेदभाव नहीं होता था। प्रशासन तथा न्याय के क्षेत्रों में सभी समान थे। साम्राज्य किसी एक वर्ग या धर्म के अनुयायियों का नहीं था, बल्कि सम्पूर्ण प्रजा का था और सम्राट किसी एक वर्ग का शासक न होकर सभी वर्गों का शासक था। इस प्रकार अकबर ने साम्राज्य को एक राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया। उसने मौर्य सम्राटों के पश्चात् तथा मध्य युग में सर्वप्रथम राष्ट्र की अवधारणा पर बल दिया। भले ही उसके राष्ट्र की अवधारणा अस्पष्ट रही हो किन्तु उसने मानवीय सौहार्द्र के लिये प्रशंसनीय कार्य किया। वह मुगल प्रशासन का केवल संस्थापक ही नहीं था, अपितु वह अपनी राजधानी को भी प्रगतिशील विकसित सभ्यता व संस्कृति का केन्द्र बना गया। फतेहपुर सीकरी में निर्मित बुलंद दरवाजे के समान अकबर न केवल स्वयं अपने समकालीन शासकों में बहुत ऊंचा उठा है साथ ही इतिहास के महानतम् शासकों में भी एक है। इसी को पुष्ट करते हुए स्मिथ ने लिखा है –

He was a born king of men, with a rightful claim to be one of the mightest soveretgns known to history. That claim rests surely on the basis of his extra ordinary natural gifts. His original ideas and magnificient achievments.[8]

निष्कर्ष – अकबर ने सामयिक आवश्यकता को समझते हुए समन्वयवादी नीतियों को अपनाकर अपने राजत्व के आदर्शों को उच्चतम मानदण्ड दिये। उसके राज्य में सभी वर्गों को समानता व धार्मिक स्वतंत्रता प्राप्त थी। अकबर का यह लोककल्याणकारी राज्य प्रजा में किसी भी आधार पर भेदभाव नहीं करता था। अकबर सभी वर्गो का बादशाह था और उसने अपनी प्रजा के सभी वर्गों को सुखी बनाना अपने राजत्व का उद्देश्य रखा था। विभिन्न वर्गों को निकट लाकर एक राष्ट्र के निर्माण का महान कार्य उसने प्रशंसनीय रूप में प्रारंभ किया था। अकबर की प्रशंसा का एक कारण यह भी था कि उसने स्वयं को पूर्ण रूप से भारतीय बना लिया था। अकबर अपने राजत्व की उच्चता के आधार पर विश्व के महान साम्राज्य निर्माताओं तथा प्रशासकों में स्थान रखता है। वह एक आदर्श मानव, लोककल्याणकारी प्रशासक, विजेता तथा साम्राज्य निर्माता था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अबुल फजल : **अकबरनामा**, भाग–2, अनुवाद–एच. ब्लोचमेन, कलकत्ता, 1956, पृष्ठ 3
2. श्रीवास्तव आशीर्वादीलाल : **मुगलकालीन भारत**, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कंपनी, 1997, पृष्ठ 186.
3. लुणिया, बी.एन. : **मध्युगीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास.** 1995, पृष्ठ 161.
4. शाह, के.टी. : **स्प्लेण्डरब दैट वाज़ इण्डिया**, केसिंगर पब्लिकेशन, मोण्टाना, यूएसए, 1960, पृष्ठ 30
5. चौबे, झारखण्डे एवं श्रीवास्तव कन्हैया लाल : **मध्युगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति**, उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1979, पृष्ठ 315
6. पाण्डेय श्रीनेत्र : **भारत का वृहद इतिहास**, भाग–3, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1940, पृष्ठ 150.
7. नेहरू, जवाहरलाल : **हिन्दुस्तान की कहानी**, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997, पृष्ठ 100
8. Smith, V.A. : **Akbar the Great Mughal**, Creatpace IndependentPublication, 1960, Page - 353

****

जनजातीय पलायन पर आधुनिक कृषि तकनीकी का प्रभाव (झाबुआ जिले के विशेष सन्दर्भ में एक अध्ययन)

पूजा बघेल *

शोध सारांश – आधुनिक कृषि तकनीक भारत जैसे विकासशील देशों में कृषि उत्पादकता में वृद्धि करने के लिए एक प्राथमिक कारक रहा है। कृषि के द्वारा ही ग्रामीण एवं जनजातीय क्षेत्रों की उन्नति के साथ औद्योगिक अर्थव्यवस्था का निर्माण सम्भव है। पश्चिमी मध्यप्रदेश में जनजातियों का सर्वाधिक जनाभार है। भौतिक संस्कृति की अंधी दौड़ से दूर ये जनजातियाँ आज भी अपने परम्परागत रहन–सहन, खान–पान एवं रूढ़िवादी कृषि प्रणाली में जकड़ी हुई है। जिसके कारण जनजातीय कृषकों के जीवन–स्तर एवं घरेलू उद्योगों में गिरावट आई है। आदिवासी क्षेत्रों में कृषि की नवीन तकनीकी के प्रयोग की शुरूआत हुई परन्तु आज भी इतने सरकारी प्रयासों के बावजूद पूर्ण रूप से जनजातीय व्यक्तियों में शिक्षा एवं जागरूकता का विकास नहीं हो पाया। जिसका मुख्य कारण उनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति का निम्न स्तर होना है।
शब्द कुंजी – आधुनिक कृषि तकनीकी, जनजातीय, आय, रोजगार, ऋण, पलायन।

प्रस्तावना – भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ कि दो तिहाई जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार 58.2 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या कृषि क्षेत्र में कार्यरत है। आदिवासी क्षेत्रों में कृषि की नवीन तकनीकी के प्रयोग की शुरूआत हुई, परन्तु आज भी इतने सरकारी प्रयासों के बावजूद पूर्ण रूप से कृषकों में शिक्षा एवं जागरूकता का विकास नहीं हो पाया। जिसका मुख्य कारण उनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति का निम्न स्तर होना है। करीब 90 प्रतिशत जनजातीय परिवार कृषि पर निर्भर रहते हैं लेकिन उनके पास खेती की जमीन बहुत कम होती है और जो होती है वह अधिकांशत: गैर सिंचित, अनुत्पादक और उबड़–खाबड़ होती है ऐसे में साल के 6 महीने से 9 महीने तक उनके पास काम नहीं होता है और अगर होता भी है तो वह अपर्याप्त होता है। ओर जनजातीय लोग मौसमी प्रवास करते है। ज्यादातर जनजातीय लोग भूमिहीन मजदूर, सीमांत कृषक, सड़क एंव भवन निर्माण, खनन व स्थानीय उद्योगों में अकुशल श्रमिक है।

शोध समस्या का चयन – अत: प्रस्तुत शोध अध्ययन से यह जानने का प्रयास किया गया है कि जनजातीय क्षेत्र में कृषि के विकास में आधुनिक कृषि तकनीकी की क्या भूमिका है? आधुनिक कृषि तकनीकी को अपनाने में जनजातीय पलायन पर क्या प्रभाव पड़ा है? जनजातीय पलायन को किस तरह से रोका जा सकता है? शासन द्वारा चलाए जा रहे कृषि विकास के कार्यक्रमों और योजनाओं का कितना प्रभाव जनजातीय लोगों के जीवन पर पड़ा है, आदि प्रश्नों के उत्तर जानने का प्रयास किया गया।

अध्ययन के उद्देश्य – 'आवश्यकता अविष्कार की जननी है।' इस युक्ति के तर्ज पर यहाँ यह कहा जाना ज्यादा बेहतर होगा **'समस्या शोध की जननी है।'** सभी सामाजिक आर्थिक शोध किसी न किसी समस्या को लेकर किये जाते हैं। जिससे समस्या के समाधान खोजने के प्रयास किये जाते हैं। इस प्रक्रिया के तहत उद्देश्य निर्धारित किए जाते हैं। जो इस प्रकार है–

1. जनजातीय पलायन पर आधुनिक कृषि तकनीकी के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. अध्ययन क्षेत्र में शासन द्वारा चलाये जा रहे नवीन कृषि तकनीकी के विस्तार कार्यक्रमों के प्रभावों का अध्ययन करना।

अध्ययन का क्षेत्र – झाबुआ जिला मध्यप्रदेश के पश्चिमी भाग में स्थित है। झाबुआ जिला गुजरात के पंचमहल, बड़ौदा, जिले राजस्थान का बासवाड़ा जिलो म.प्र. के आलिराजपुर, धार, रतलाम, जिलों से घिरा हुआ है। झाबुआ जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 6793 वर्ग किलोमीटर है। भारत की जनगणना 2011 के अनुसार जिले की कुल जनसंख्या 1025048 है। जिसमें अनुसूचित जनजातियों की संख्या 891818 है, जो कुल जनसंख्या का 87.00 प्रतिशत है।

निदर्शन विधि – झाबुआ जिले के झाबुआ एवं राणापुर तहसील जिसकी जनजातीय जनसंख्या 500 से अधिक जनसख्या वाले 06 गाँवो का चयन दैव निदर्शन विधि द्वारा किया गया। प्रत्येक गाँव से 10–10 साक्षात्कार अनुसूची भरी गई। इस प्रकार से कुल 60 जनजातीय परिवारों का चयन किया गया है।

समंकों का संकलन – प्राथमिक समंकों का संकलन साक्षात्कार अनुसूची, समुह चर्चा एवं अवलोकन द्वारा किया गया। द्वितीयक समंकों का संकलन जनगणना पुस्तिकाओं, मानक पुस्तक, पत्र–पत्रिकाओं, विभिन्न रिपोर्ट, जिला सांख्यिकी विभाग झाबुआ, आदिम जाति संस्थान भोपाल, इन्टरनेट, अखबार आदि से एकत्र किये गये।

आकड़ो का विश्लेषण

कृषि तकनीकी का उपयोग – जनजातीय समाज कर्त्तव्य भावना की परम्परा और दूसरी ओर नवोदित व्यक्तिवादी प्रवृत्ति इन दोनों के बीच कसमकस की स्थिति में है। अध्ययन क्षेत्र में कृषि तकनीकी के उपयोग के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उन्हें तालिका क्रमांक– 1 में दर्शाया गया है–

तालिका क्रमांक– 1

कृषि तकनीकी के उपयोग के संबंध में जानकारी

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

क्र.	कृषि तकनीकी का उपयोग	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	आधुनिक	19	31.67
2.	परम्परागत	06	10.00
3.	आधुनिक व परम्परागत दोनों	35	58.33
	कुल योग	**60**	**100.00**

तालिका क्रमांक– 1 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल सर्वेक्षित परिवारों में 31.67 प्रतिशत परिवार आधुनिक कृषि तकनीकी का उपयोग कर रहे, 10.00 प्रतिशत परिवार परम्परागत कृषि तकनीकी का उपयोग कर रहे, 58.33 प्रतिशत परिवार आधुनिक एवं परम्परागत दोनों का उपयोग करते हैं। अत: निष्कर्ष स्वरूप कहा सकता है कि अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक उत्तरदाता आधुनिक एवं परम्परागत दोनों कृषि तकनीकों से कृषि करते हैं।

मकान का स्वरूप – उत्तरदाताओं का रहन–सहन उसके सामाजिक–आर्थिक स्तर को दर्शाने का द्वितीयक घटक होता है। अध्ययन क्षेत्र के कृषकों के मकान का स्वरूप सम्बन्धी जानकारी के संबंध में जो आँकड़े प्राप्त हुए है, उन्हें तालिका क्रमांक –2 में दर्शाया गया है –

तालिका क्रंमाक –2 – मकान का स्वरूप

क्र.	परिवार का स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	कच्चा	40	66.6
2.	पक्का	04	6.7
3.	मिश्रित	16	26.7
	योग	**60**	**100.0**

तालिका क्रमांक –2 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि चयनित सर्वेक्षित परिवारों में मकान का स्वरूप सम्बन्धी जानकारी में कुल कच्चे मकान 66.0 प्रतिशत है, पक्के मकान 6.7 प्रतिशत है और मिश्रित मकान 26.7 प्रतिशत है। अत: निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि आदिवासी कृषक परिवारों में आज भी कच्चे मकानों की संख्या अधिक है लेकिन सर्वेक्षण के दौरान देखने में आया है कि इन परिवारों में भी पक्के मकानों की संख्या बढ़ती जा रही है। जिसका मुख्य कारण है आर्थिक स्थिति में सुधार आना, बाजारों की ओर प्रवास होना एवं शिक्षित होना।

आय – किसी भी व्यक्ति या परिवार के जीवन–स्तर का सबसे महत्वपूर्ण आधार उसकी आय का स्तर होता है और इसी के आधार पर उनके जीवन–स्तर का भी अनुमान लगाया जा सकता है। जनजाजियों के द्वारा विभिन्न प्रकार के आर्थिक कार्य किए जाते हैं। इस विभिन्नता के कारण इनकी आय में भिन्नता होना स्वभाविक है। इस प्रकार आय का स्तर किसी भी व्यक्ति या परिवार की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति का महत्वपूर्ण पहलू एवं सूचक है। अध्ययन क्षेत्र में परिवार की कुल वार्षिक आय के सम्बन्ध में जो तथ्य प्राप्त हुए है उन्हें तालिका क्रमांक– 3 में दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक –3 – परिवार की कुल वार्षिक आय सम्बन्धी जानकारी

क्र.	कुल वार्षिक आय	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	10000 से कम	01	1.6
2.	10000 से 20000 तक	07	11.7
3.	20000 से 30000 तक	10	16.7
4.	30000 से 40000 तक	28	46.7
5.	40000 से 50000 तक	11	18.3
6.	50000 से अधिक	03	5.0
7.	**योग**	**60**	**100.0**

तालिका क्रमांक– 3 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सर्वेक्षित परिवारों में वार्षिक आय सम्बन्धी जानकारी में 10000 से कम 1.6 प्रतिशत है, 10000 से 20000 तक में 11.7 प्रतिशत है, 20000 से 30000 तक में 16.7 प्रतिशत है, 30000 से 40000 तक में 46.7 प्रतिशत है, 40000 से 50000 तक में 18.3 प्रतिशत है, 50000 से अधिक में 5.0 प्रतिशत है। अत: निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि 46.7 प्रतिशत परिवारों की कुल वार्षिक आय 30000 से 40000 के बीच में है जो सबसे अधिक है इसका मुख्य कारण है कि इस क्षेत्र के लोग कृषि कार्य करते हैं तथा आधुनिक संसाधनों का उपयोग बहुत कम करते हैं जिससे इनकी आय कम होती है।

ऋण की ब्याज दर – जनजातीय कृषकों द्वारा लिए गये ऋण की ब्याज दर के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए है, उन्हें तालिका क्रमांक– 4 में दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक– 4 – ऋण की ब्याज दर सम्बन्धी जानकारी

(मासिक ब्याज दर)

क्र.	ब्याज दर	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	2 प्रतिशत से कम	04	6.7
2.	2 से 4 प्रतिशत	45	75.0
3.	4 से 6 प्रतिशत	08	13.3
4.	6 प्रतिशत से अधिक	3	5.0
	योग	**60**	**100.0**

तालिका क्रमांक– 4 कि विश्लेषण से स्पष्ट है कि सर्वेक्षित परिवारों में लिए गये ऋण की ब्याज दर सम्बन्धी जानकारी में 6.7 प्रतिशत परिवारों ने 2 प्रतिशत से कम ब्याज दर पर ऋण लिया, 75.0 प्रतिशत परिवारों ने 2 से 4 प्रतिशत ब्याज दर पर ऋण लिया है, 13.3 प्रतिशत परिवारों ने 4 से 6 प्रतिशत ब्याज दर पर ऋण लिया है, 5.0 प्रतिशत परिवारों ने 6 प्रतिशत से अधिक ब्याज दर पर ऋण लिया है। अत: कहा जा सकता है कि सर्वाधिक 75.0 प्रतिशत परिवारों द्वारा लिये गए ऋण की ब्याज दर 2 से 4 प्रतिशत थी। जो सबसे अधिक है।

बेरोजगारी की स्थिति – जनजातियों को बेरोजगारी की समस्या का सामना करना पड़ता है। आस–पड़ोस के जंगलों की कटाई के कारण खाद्य संकलन नहीं हो पा रहा है। जंगली जानवरों के शिकार पर भी प्रतिबंध लगा हुआ है। कृषि कार्य में कुछ ही दिनों के लिए रोजगार उपलब्ध होता है। इस प्रकार साल में अधिकांश समय बेरोजगारी से निपटने के लिए लोग कृषि कार्य के बाद विभिन्न स्थानों पर मजदूरी की खोज में भटकते हैं। पुरूष रिक्शा, ठेला आदि चलाने के लिए शहर की ओर जाते हैं तो महिलाएँ भवन, सड़क, बाँध अथवा पुल निर्माण कार्य के लिए अपना गाँव–घर छोड़कर बाहर जाती हैं। कुछ लोग ईंट भट्टा पर काम करने जाते हैं। वहाँ उन्हें अप्रवासी मजदूर के रूप में तरह–तरह से शोषित एवं उत्पीड़ित होना पड़ता है। महिला मजदूर को यौन शोषण का शिकार भी होना पड़ता है।

रोजगार – व्यवसाय व्यक्ति की सामाजिक, आर्थिक स्थिति के निर्धारण का प्रमुख आधार है किन्तु जनजातीय क्षेत्रों में व्यवसाय की स्थितियाँ विचित्र है। अभावग्रस्त परिस्थितियाँ, अशिक्षा, शोषण एवं अज्ञानता के रहते जनजातीय समाज पर व्यवसायिक गतिशीलता में उतार–चढ़ाव आदि परिवर्तनों का प्रभाव नहीं के बराबर है। जिले में परिस्थितियाँ कृषि के अनुकूल नहीं होने एवं कृषि से अधिक लाभ नहीं होने के बावजूद आज भी जनजातीय समाज परम्परागत रूप से अपने मुख्य व्यवसाय कृषि कार्य में संलग्न है। इसके अतिरिक्त यह समुदाय पलायन एवं मजदूरी पर भी आश्रित है। अध्ययन

क्षेत्र में आदिवासियों की व्यवसाय के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए है, उन्हें तालिका क्रमांक – 5 में दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक– 5 – उत्तरदाताओं का व्यवसाय

क्र.	व्यवसाय	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	खेती	17	28.4
2.	खेती+ मजदूरी	35	58.3
3.	मजदूरी	6	10.0
4.	अन्य (नौकरी, दुकान)	2	3.3
	योग	60	100.0

तालिका क्रमांक– 5 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सर्वेक्षित परिवारों के व्यवसाय सम्बन्धी जानकारी में 28.4 प्रतिशत परिवार खेती करते हैं, 58.3 प्रतिशत परिवार खेती और मजदूरी करते हैं, 10.0 प्रतिशत परिवार मजदूरी करते हैं, 3.3 प्रतिशत परिवार अन्य व्यवसाय (नौकरी, दुकान) करते हैं। अत: निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि सर्वेक्षित क्षेत्रों में खेती और मजदूरी करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या सबसे अधिक है जो 58.3 प्रतिशत है। जिसका मुख्य कारण है कि इन क्षेत्रों मे सिंचाई के संसाधनों का अभाव होने के कारण लोग मौसमी खेती करते हैं अर्थात वर्षा ऋतु में कृषि करते हैं और गर्मी में मजदूरी के लिए प्रवास कर जाते हैं।

आदिवासियों को वर्षभर कार्य प्राप्त होने के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उन्हें तालिका क्रमांक – 6 में दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक –6 – वर्षभर कार्य प्राप्त होने सम्बन्धी जानकारी

क्र.	वर्षभर कार्य प्राप्त होना	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हाँ	15	25.0
2.	नहीं	45	75.0
3.	**योग**	**60**	**100.0**

तालिका क्रमांक– 6 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षित परिवारों में वर्षभर कार्य प्राप्त होने सम्बन्धी जानकारी में 25.0 प्रतिशत परिवारों को वर्ष भर कार्य प्राप्त होता है, 75.0 प्रतिशत परिवारों को वर्षभर कार्य प्राप्त नहीं होता है। अत: निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि 75.0 प्रतिशत परिवारों को वर्षभर कार्य नहीं मिलता है, जिससे ये बेरोजगार रहते हैं। इसका मुख्य कारण है कि इस क्षेत्र के लोग कृषि पर निर्भर रहते हैं जो कि मानसूनी है और कार्य के लिए प्रवास करते हैं।

पलायन सम्बन्धी जानकारी – आदिवासी समुदाय प्रारम्भ से ही अपने जीवन–यापन हेतु प्रकृति पर निर्भर रहा है। पिछले कुछ दशकों से आदिवासियों की वनों पर से निर्भरता में निरंतर कमी आयी है, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कृषि पर पूर्ण रूप से निर्भर होना पडा़ है। परन्तु क्षेत्र में अनुपजाऊ कृषि भूमि, असमतल धरातल, सिंचाई के साधनों का अभाव एवं छोटी जोत जैसी समस्याओं के कारण कृषि से केवल एक ही फसल अल्प मात्रा में प्राप्त कर पाते हैं, जो कि संपूर्ण वर्ष के निर्वाह हेतु पर्याप्त नहीं होती है। अत: अपनी आवश्यकतों की पूर्ति हेतु आदिवासी समुदाय प्रवास करता है।

तालिका क्रमांक–7 – शैक्षणिक स्थिति एवं मौसमी पलायन करने सम्बन्धी जानकारी

क्रं.	शैक्षणिक स्थिति	मौसमी पलायन		योग
		हां	नहीं	
1.	अशिक्षित	27 (45.0)	09 (15.0)	36 (60.0)
2.	शिक्षित	08 (13.3)	01 (1.7)	09 (15.0)
3.	प्राथमिक	03 (5.0)	01 (1.7)	04 (6.7)
4.	माध्यमिक	02 (3.3)	01 (1.6)	03 (5.0)
5.	हाई स्कूल	6 (10.0)	01 (1.6)	07 (11.6)
6.	हायर सेकेण्डरी और उससे से अधिक	01 (1.7)	00 (0.0)	01 (1.6)
	योग	**47 (78.3)**	**13 (21.7)**	**60 (100.0)**

तालिका क्रमांक–7 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सर्वेक्षित कृषक परिवारों की शैक्षणिक स्थिति एवं मौसमी पलायन करने सम्बन्धी जानकारी में 45.0 प्रतिशत अशिक्षित कृषक परिवार मौसमी पलायन करते हैं, 15.0 प्रतिशत कृषक परिवार मौसमी पलायन नहीं करते हैं, 13.3 प्रतिशत शिक्षित कृषक परिवार मौसमी पलायन करते हैं, 1.7 प्रतिशत कृषक परिवार मौसमी पलायन नहीं करते हैं, 5.0 प्रतिशत प्राथमिक स्तर तक के कृषक परिवार मौसमी पलायन करते हैं, 1.7 प्रतिशत कृषक परिवार मौसमी पलायन नहीं करते हैं, 3.3 प्रतिशत माध्यमिक स्तर तक के कृषक परिवार मौसमी पलायन करते हैं, 1.7 प्रतिशत कृषक परिवार मौसमी पलायन नही करते हैं, 10.0 प्रतिशत हाईस्कूल स्तर तक के कृषक परिवार मौसमी पलायन करते हैं, 1.6 प्रतिशत कृषक परिवार मौसमी पलायन नही करते हैं, 1.6 प्रतिशत हायर सेकेण्डरी स्तर एवं उससे अधिक तक के कृषक परिवार मौसमी पलायन करते हैं कुल सर्वेक्षित कृषक परिवारों में 78.3 प्रतिशत कृषक परिवार मौसमी पलायन करते हैं, 21.7 प्रतिशत कृषक परिवार मौसमी पलायन नहीं करते है। अत: कहा जा सकता है कि शैक्षणिक स्तर एवं मौसमी पलायन करने सम्बन्धी जानकारी में 78.3 प्रतिशत कृषक परिवार मौसमी पलायन करते हैं, जो सबसे अधिक है क्योंकि कृषि उपज पर्याप्त मात्रा में नहीं होने से इन्हें रोजगार के लिए मौसमी पलायन करना ही पड़ता है।

आधुनिक कृषि तकनीकी का पलायन पर प्रभाव – अध्ययन क्षेत्र में आधुनिक कृषि तकनीकी का प्रभाव इस प्रकार है:

1. आधुनिक कृषि तकनीकी से कठिन कार्य जैसे उबड़–खाबड़, कंकरीली–पथरीली भूमि, टीले आदि को समतल करके कृषि योग्य एवं उपजाऊ भूमि बनाना संभव होता है।
2. कृषि कार्य में मशीनों एवं यत्रों के उपयोग से समय बचत होती है एवं उत्पादन भी बढ़ जाता है।
3. कृषि यंत्रीकरण के कारण उत्पादन लागत कम हो जाती है। आय में वृद्धि होती है जिससे जिवन स्तर में भी सुधार हुआ है
4. कृषि यंत्रीकरण से व्यापारिक फसलों का विस्तार हुआ है।

अध्ययन के प्रमुख निष्कर्ष एक दृष्टि में :

1. आदिवासी कृषक परिवारों में आज भी कच्चे मकानों की संख्या अधिक है लेकिन सर्वेक्षण के दौरान देखने में आया है कि इन परिवारों में भी पक्के मकानों की संख्या बढ़ती जा रही है।
2. अध्ययन क्षेत्र में उत्तरदाताओं की कुल औसत वार्षिक आय 32280 रूपये है।
3. जनजातीय क्षेत्रों मे सिंचाई के संसाधनों का अभाव होने के कारण लोग मौसमी खेती करते हैं अर्थात वर्षा ऋतु में कृषि करते हैं और गर्मी में मजदूरी के लिए मौसमी पलायन कर जाते हैं।
4. जनजातीय कृषक परिवारों द्वारा 2 या 2 से अधिक प्रतिशत ब्याज दर से साहूकारों से सर्वाधिक 75.0 प्रतिशत ऋण लिया जाता है।
5. कृषि कार्य एवं सामाजिक कार्यक्रमों के लिये जनजातियों द्वारा

अल्पकालीन ऋण लिये जाते हैं।

6. कृषकों के रोजगार एवं आय पर नवीन कृषि तकनीकी का प्रभाव का पड़ा है।
7. नवीन कृषि तकनीकी से जनजातीय कृषकों के मौसमी पलायन में कमी आई है।
8. जनजातीय कृषि विकास योजनाओं से कृषकों के जीवन स्तर में सुधार हुआ है।

सुझाव :

1. जनजातीय कृषकों में शिक्षा के प्रति जागरूकता पैदा की जाए और इस हेतु सरकार द्वारा पालकों के लिए कुछ प्रोत्साहन राशि का प्रावधान किया जाए ताकि वे अपने बच्चों को शिक्षित करने हेतु प्रेरित हो सके। इस प्रकार जनजातियों की शिक्षा के स्तर को बढ़ाया जा सकता है।
2. आदिवासी क्षेत्रों में सरकार गाँवों में सस्ती एवं निरन्तर बिजली प्रदाय करे। ताकि सिंचाई के साधन की सुविधा उपलब्ध हो सके।
3. जनजातीय कृषकों को उनकी सहुलियत के अनुसार निम्न ब्याज दर पर सरकारी संस्थाओं द्वारा ऋण उपलब्ध कराया जाना चाहिए। इससे उनको शोषण से बचाया जा सकता है।
4. अध्ययन क्षेत्र में सरकार के कृषि से संबंधित समस्त कार्यक्रमों एवं योजनाओं के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए जनजातीय कृषकों के गाँवों के शिक्षित युवको को नियुक्त कर दिया जाना चाहिए ताकि जनजातियों को अच्छी तरह से समझा सके।
5. जनजातीय क्षेत्रों पर्याप्त वित्त सुविधा हेतु सरल बैंकिंग प्रणाली की नीति अपनाना चाहिए। कृषि कार्य के लिए ऋण आसानी से उपलब्ध हो इसके लिए शासन द्वारा विशेष प्रयास किया जाना चाहिए।
6. जनजातीय क्षेत्रों में आधुनिक कृषि तकनीकी के उपयोग द्वारा गाँवों से शहरों की ओर मौसमी पलायन को रोका जा सकता है। इसके लिये जनजातीय कृषकों को आधुनिक कृषि तकनीकों के बारे में जानकारी देने के लिए सुनियोजित प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वैद्य, नरेश कुमार (2003) 'जनजातीय विकास मिथक एवं यर्थाथ', रावत पब्लिकेशन जयपुर।
2. वर्मा, एम.एल (1992) 'भीलों की सामाजिक व्यवस्था', क्लासिकल पब्लिशिगं कम्पनी, नई दिल्ली।
3. मध्यप्रदेश जिला गजेटियर जिला झाबुआ (1994) गजेटियर संचालनालय संस्कृति विभाग, मध्यप्रदेश भोपाल।
4. जिला सांख्यिकी झाबुआ (2010) जिला योजना एवं सांख्यिकी कार्यालय, जिला झाबुआ।
5. जैन, श्रीमंधर (1995) कृषि संसाधन-मण्डला जिले के आदिवासी कृषकों के सन्दर्भ मे, बुलेटिन ऑफ द ट्रायबल रिसर्च एण्ड डेवलपमेंट इंस्टीट्यूट, भोपाल, वाल्यूम-23,नं. 1।
6. वर्मा, एम.एल निंकुम (1995) 'भीलों की सामाजिक व्यवस्था', निंकुम प्रकाशन, बड़वानी, म.प्र. पृ. 142।
7. मिश्र, जयप्रकाश (2005) कृषि अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा पृ. 136।
8. वर्मा, एम.एल निंकुम (1995) 'भीलों की सामाजिक व्यवस्था', निंकुम प्रकाशन, बड़वानी, प्र.पृ. 174।
9. मध्यप्रदेश कृषि आर्थिक सर्वेक्षण (2016) योजना, आर्थिक एवं सांख्यिकी विभाग, मध्यप्रदेश शासन पृ. 3।
10. प्रसाद, गोविन्द, गीतांजली एवं नन्द कुमार सिह (2007) 'जनसंख्या अध्ययन के आयाम', डिस्कवरी पब्लिशिंग हाऊस 4831/28, अन्सारी रोड़ दरियागंज, नई दिल्ली पृ. 192।
11. सिसौदिया, यतीन्द्र (1999) 'पॉलिटिकल कांशसनेस अमंग ट्रायबल्स', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर पृ. 86-90।
12. डॉ. गोविन्द प्रसाद, गीतांजली एवं डॉ. नन्द कुमार सिह (2007) 'जनसंख्या अध्ययन के आयाम', डिस्कवरी पब्लिशिंग हाऊस 4831/28, अन्सारी रोड़ दरियागंज, नई दिल्ली पृ. 192।
13. भट्ट, राकेश (1995) 'जनजातीय उद्यमिता का विकास', हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर पृ. 121-122।
14. दत्त रुद्र, सुन्दरम के.पी.एम. (2010) 'भारतीय अर्थव्यवस्था', एस. चन्द एण्ड कम्पनी लि. रामनगर, नई दिल्ली पृ. 347।

****

उद्यमशील महिलाओं के सशक्तिकरण में सोशल मीडिया की भूमिका:एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

मोनिका आमरे *

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध पत्र, महिला उद्यमिता एवं महिलाओं के सशक्तिकरण में सोशल मीडिया की भूमिका का व्यवहारिकवादी अध्ययन किया गया है। उक्त शोध पत्र में महिला सशक्तिकरण के विभिन्न आयामों के साथ ही उद्यमशील महिलाओं के लिए सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा निरन्तर प्रयास किये जा रहे हैं। भारत की आजादी के बाद संविधान निर्माताओं और राष्ट्रीय नेताओं ने महिलाओं को पुरूषों के समान स्थान देने के साथ ही एक के बाद एक सरकारों ने महिलाओं को आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक क्षेत्र में समान दर्जा देने के लिए कई उपाय किए गये साथ ही महिलाओं को अपनी प्रतिभा दर्शाने तथा राष्ट्रीय गतिविधियों में सहभागिता को बढ़ाने के उद्देश्य से पिछले कुछ दशकों में केंन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा शुरू की गई विभिन्न योजनाओं ने महिलाओं को कानूनी, राजनीतिक और सामाजिक शक्ति प्रदान करने की दिशा में सराहनीय कार्य किये हैं।

किसी भी राष्ट्र का विकास तभी सम्भव है जब उस राष्ट्र में रहने वाले लोगों की भागीदारी राष्ट्र के निर्माण में हो और उसकी उपलब्ध मानव–शक्ति की कार्यक्षमता, सामर्थ्य, गुणवत्ता व शिक्षा आदि का समुचित उपयोग हो सके। प्राचीन काल से ही महिलाओं का राष्ट्र निर्माण एवं राष्ट्रीय विकास की गतिविधियों में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान रहा है परन्तु अभी तक महिलाओं की भूमिका परदे के पीछे ज्यादा छिपी रही है इसलिए इसे समुचित रूप से ज्यादा मान्यता नहीं मिल पाई है। महिला सशक्तिकरण का मुद्दा ना केवल भारत में अपितु विश्व के सभी देशों में चिंतनीय विषय रहा है। चिंतन को साकार रूप प्रदान करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 08 मार्च, 1975 को अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस की शुरूआत की गई थी और संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा अनेक विश्व महिला सम्मेलनों का सफलतापूर्वक आयोजन भी किया गया। इन्हीं प्रयासों के साथ ही सोशल मीडिया ने भी सामाजिक रूप से महिलाओं को सशक्त बनाने एवं महिला उद्यमिता के क्षेत्र में अहं भूमिका निभाई हैं।

महिला उद्यमिता की अवधारणा – सृष्टि के प्रारंभ से ही महिलाएं मानवीय पूंजी निर्माण में प्रमुख योगदान करती रही हैं। परन्तु भारत में महिलाओं का उद्यमिता के क्षेत्र में विस्तार करना एक नवीन घटना है। लंबे समय तक महिलाओं को ज्यादातर घरेलू क्रियाओं से ही संबंध रहा है, किंतु विगत तीन दशकों से हुए सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिवर्तनों के फलस्वरूप उद्यमिता के क्षेत्र में महिलाओं का तेजी से आगमन हुआ है।

देश में महिलाओं के चहुंमुखी कल्याण, विकास और सशक्तिकरण के लिए निरंतर प्रयास किये जा रहे हैं। विकास की प्रक्रिया में महिलाओं की केन्द्रीय भूमिका को पहचानते हुए योजनाओं की प्रक्रिया सभी क्षेत्रों में पिछले वर्षों में शुद्ध 'कल्याण' उन्मुख मार्ग से भी आगे विकसित हुई है। हमारे कानून, विकास नीतियां, योजनाएं और कार्यक्रम अलग–अलग क्षेत्रों में महिलाओं की उन्नति पर लक्षित हैं। भारतीय संविधान, इसके आमुख, मूलभूत अधिकारों, मूलभूत कर्तव्यों और नीति निर्देशक तत्वों में लिंग की समानता के सिद्धांत बताए गए हैं। लैंगिक समानता ग्रामीण एवं शहरी विकास के माध्यम से गरीबी को कम करना, आय एवं रोजगार के अवसरों का सृजन करना, आर्थिक विकास की रणनीति का मख्य उद्देश्य है।

महिला सशक्तिकरण से आशय – महिला सशक्तिकरण के विषय पर जब हम बात करते हैं तो एक बात स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है कि भारतीय समाज में सदैव ऐसी ताकतें सक्रिय और सशक्त रही हैं जो महिला सशक्तिकरण का पुरजोर विरोध करती रही हैं। जो एक तथ्यात्मक रूप से सत्य है। ऐसे में आज वर्तमान में जहां हम हैं इस पर विचार करना जरूरी हो गया है। आज की महिलाएं योग्यता के मापदण्ड पर तो विकास कर रहीं हैं परन्तु पुरूष प्रधान समाज में अभी भी सामाजिक दृष्टिकोण में बदलाव पर जोर देना होगा।

महिला सशक्तिकरण के प्रयासों ने समाज के कमजोर वर्गों को सशक्त करने का काम किया है। आज राजनीतिक प्रक्रिया और राजनीतिक संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी से शासन की गुणवत्ता में भी सुधार हुआ है। 73वें एवं 74वें संविधान संशोधन एवं महिलाओं के लिए सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं की वजह से महिलाएं अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने के साथ ही उनमें शोषण और अन्याय के विरूद्ध आवाज उठाने की हिम्मत बढ़ी है। उनके व्यक्तित्व और आत्मविश्वास में परिवर्तन के साथ ही रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रति भागीदारी भी बढ़ी है।

भारतीय संविधान में महिलाओं को समानता का अधिकार और पंचायतीराज में आरक्षण का अधिकार मिला तो लिंगविभेद आधारित विभिन्न समस्याएं सशक्तिकरण में बाधा बन गई। भारतीय समाज में महिला सशक्तिकरण के लिए सामाजिक पद्धति और नियमों की वृहद् परम्परा में यदि हम पुरूष प्रधान मानसिकता के मध्य अमृत मंथन की कल्पना करेंगें तो शायद ये सम्भव नहीं होगा। इसी सन्दर्भ में पाश्चत्य विचारक अरस्तू का भी कथन है कि 'किसी राष्ट्र की स्त्रियों की उन्नति या अवनति पर ही उस राष्ट्र की उन्नति या अवनति निर्भर है।' भारतीय संविधान महिलाओं को न सिर्फ समानता का दर्जा देता है बल्कि महिलाओं के पक्ष में सकारत्मक रूख अपनाने के उपायों के लिए सरकार को सशक्त भी बनाता है। समाज में महिलाओं के प्रति अत्याचार व भेदभाव की मानसिकता को विराम लगाने के उद्देश्य से भारतीय सरकार ने विधिक अधिकार और संविधान प्रदत्त सुरक्षा

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) स्कूल ऑफ शोसल साईंस देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

और महिलाओं की प्राथमिकताओं को मद्देनजर रखते हुए विभिन्न प्रावधान भी किये हैं।

1. सभी व्यक्तियों के लिए कानून के समक्ष समानता (अनुच्छेद-14)
2. धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या स्थान के आधार पर भेदभाव पर निषेध (अनुच्छेद-15) (1), महिलाओं और बच्चों के लिए अनुच्छेद 15 (3) में विशेष प्रावधान।
3. राज्य के अधीन किसी भी पद, रोजगार या नियुक्ति से सम्बन्धित समान अवसर (अनुच्छेद-16)
4. पुरूषों और महिलाओं के लिए सुरक्षित जीविका के पर्याप्त साधन उपलब्ध कराने का अधिकार (अनुच्छेद-39 -ए)।
5. समान कार्य के लिए समान भुगतान का अधिकार (अनुच्छेद 39 द)
6. स्थानीय निकायों में 50 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान अनुच्छेद 343 (द) और 343 (त) इसके अतिरिक्त घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005, बाल विवाह, हिन्दू वसीयत अधिनियम, विदेश विवाह अधिनियमों के माध्यम से विधिक सुरक्षा संरक्षा प्रदत्ता कर महिलाओं के सशक्तिकरण के क्षेत्र में गम्भीर प्रयास हुए हैं।

सशक्तिकरण की अवधारणा – महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य यह है कि महिलाएं पारम्परिक रूप से पारिवारिक बंधनों से मुक्त होकर अपने और अपने देश के विषय में सोचने की क्षमता का विकास कर सके और महिलाएं अपने निर्णयों के लिए किसी अन्य पर निर्भर ना हों और अपने जीवन के विषय में खुद निर्णय ले सकें। और निश्चित रूप से किसी राष्ट्र का विकास तभी सम्भव है जब उस राष्ट्र के लोगों की भागीदारी राष्ट्र के निर्माण में हो और उसकी उपलब्ध मानव-शक्ति की कार्यक्षमता, सामर्थ्य, गुणवत्ता व शिक्षा आदि का समुचित उपयोग हो सके। महिलाओं का राष्ट्र निर्माण एवं राष्ट्रीय विकास की गतिविधियों में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है परन्तु अभी तक महिलाओं की भूमिका परदे के पीछे ज्यादा छिपी रही है इसलिए इसे समुचित रूप से ज्यादा मान्यता नहीं मिल पाई है। महिला सशक्तिकरण का मुद्दा ना केवल भारत में अपितु विश्व के सभी देशों में चिंतनीय विषय है। संयुक्तराष्ट्र संघ द्वारा 08 मार्च, 1975 को अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस की शुरूआत की गई थी। इसके बाद संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा अनेक विश्व महिला सम्मेलनों का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया है।

अध्ययन का क्षेत्र – प्रस्तुत आलेख मध्यप्रदेश के इन्दौर शहर की उद्यमशील महिलाओं के अध्ययन पर आधारित है।

अध्ययन का समग्र– अध्ययन का समग्र मध्यप्रदेश का इन्दौर शहर है। अध्ययन हेतु इन्दौर शहर में अलग-अलग लघु व्यवसाय से जुड़ी महिलाओं का चयन उद्देश्यपूर्ण एवं स्नोवाल पद्धति से किया गया है।

अध्ययन की इकाई एवं प्रतिचयन का आकार– सूक्ष्म एवं लघु व्यवसाय से जुड़ी उद्यमशील महिलाओं को अध्ययन में सामिल किया गया है जो सोशल मीडिया के माध्यम से अपने व्यवसाय का विस्तार एवं संचालन करती हैं विभिन्न व्यवसाय से जुड़ी महिलाओं का साक्षात्कार किया गया तथा प्रतिचयन का कुल आकार 150 था।

समंक संकलन की विधि:

प्राथमिक संकलन – साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन एवं समूह चर्चा के माध्यम से उत्तारदाताओं का साक्षात्कार किया गया।

द्वितीयक संकलन – पत्र पत्रिकाएं, सरकारी अभिलेख, सोशलमीडिया, इन्टरनेट आदि से लेखन कार्य किया गया है।

तथ्यों का प्रक्रियाकरण एवं विश्लेषण – सर्वेक्षण के पश्चात् समस्त साक्षात्कार अनुसूचियों से प्राप्त उत्तरों के आधार पर एक संकेत पुस्तिका बनाई गयी। उक्त संकेत पुस्तिका के आधार पर साक्षात्कार अनुसूचियों का संकेतीकरण किया गया। संकेतीकरण के पश्चात् प्राप्त तथ्यों को कम्प्यूटर (एस.पी.एस.एस. सॉफ्टवेयर) में प्रविष्ट किये गये। इसके पश्चात् उत्तरों को सरल आवृत्ति विभाजन के रूप में बाँटकर पृथक-पृथक सारणियाँ तैयार कर विश्लेषण किया गया।

आंकड़ो का मूल्यांकन – अध्ययन के आधार पर उद्यमशील महिलाओं की वैयक्तिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि के सन्दर्भ में देखा जाये तो आयु की दृष्टि से सबसे बड़ा प्रतिशत आयु वर्ग (36-45 वर्ष) का है। लगभग दो तिहाई व्यवसाय करने वाली महिला मध्यम वर्ग से हैं। 18.07 प्रतिशत उद्यमशील महिलाएं 18 से 35 वर्ष के हैं। जातीय विभाजन वर्ग के आधार पर स्पष्ट है कि 37.05 प्रतिशत सामान्य वर्ग एवं 33.03 प्रतिशत पिछड़ी जाति तथा 22.09 प्रतिशत अनुसूचित जाति एवं 6.2 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति की महिलाएं उद्यमिता से जुड़ी हुई हैं। लगभग सभी व्यवसायिक महिलाएं विवाहित हैं एवं आधे से अधिक महिलाएं संयुक्त परिवार में रहती हैं। शैक्षणिक दृष्टि से देखा जाये तो 37.05 प्रतिशत व्यवसायिक महिलाएं उच्च शिक्षित एवं 27.01 प्रतिशत महिलाएं उच्चत्तार माध्यमिक हैं। जबकि साक्षर एवं निरक्षर का प्रतिशत क्रमश: 22.9 एवं 8.3 है।

सामाजिक मीडिया एवं उद्यमिता विस्तार के सम्बन्ध में देखा जाये तो 48.8 प्रतिशत व्यवसायिक महिलाए स्वयं ही अपना व्यवसाय एवं प्रबन्धन का कार्य करती हैं। उद्यमिता से जुड़ी 74.02 प्रतिशत महिलाएं ज्यादातर व्हाटसप, फेसबुक सामाजिक मीडिया का प्रयोग करती हैं। 50 प्रतिशत महिलाएं सामाजिक मीडिया का प्रयोग अपने प्रोडक्ट का प्रचार एवं प्रोडक्ट ज्यादातर उद्यमशील महिलाओं को सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं के बारे में जानकारी ही नहीं है। 39.6 प्रतिशत उद्यमशील महिलाएं सरकार द्वारा जो योजनाएं संचालित की जाती हैं उनसे वे सन्तुष्ट नहीं हैं क्यों कि उद्यमशील महिलाओं को कहना है कि सरकार द्वारा जो योजनाएं संचालित की जाती हैं वे उन तक नहीं पहुँच पाती हैं, साथ ही जो पैसा आता है वह भी उन तक नहीं पहुँच पाता है।

विपणन एवं विस्तार के सम्बन्ध में यदि देखा जाए तो उद्यमिता संगठनों का भी उद्यमिता विस्तार में बहुत बड़ा योगदान है। 41.7 प्रतिशत महिला उद्यमियों का कहना है कि सामाजिक मीडिया की वजह से व्यवसाय को बढ़ाने में मदद मिली है अर्थात् व्यवसाय के संचालन को बेहद सुगम कर दिया है। बाजार मूल्यांकन का निर्धारण भी अपनी लागत के हिसाब से होता है। जब महिलाओं से यह जानना चाहा कि क्या आपने अपने व्यवसाय को चलाने से पहले किसी पेशेवर व्यक्तियों से सलाह आदि लिया था तो 69.3 प्रतिशत महिलाओं का कहना था कि यह व्यवसाय जो वर्तमान में चला रहीं हैं पहले से ही चलता था बस उन्होंने उसी व्यवसाय को आधुनिक बाजार के हिसाब से बढ़ाने का प्रयास किया है। 70.8 प्रतिशत महिलाएं अपने व्यवसाय को अपने घर के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर चलाती हैं। 29.2 प्रतिशत महिलाएं अपना व्यवसाय चलाने में किसी और की मदद नहीं लेती हैं अर्थात् वे अपने व्यवसाय को स्वयं ही चलाती हैं।

उद्यमशील महिलाओं के उद्यम विस्तार में मीडिया की भूमिका का अध्ययन किया जाये तो 52.1 प्रतिशत महिला उद्यमी का मानना है कि आज सामाजिक मीडिया की वजय से समाज में महिलाएं जागरूक हुई हैं, इस जागरूकता की वजय से महिलाएं व्यवसाय करने के लिए समाज में आंगे आई हैं। ज्यादातर उद्यमशील महिलाएं न्यूजपेपर रोज पढ़ती हैं तथा

सोशल अकाऊंट्स का नियमित इस्तेमाल करती हैं। सोशल अकाउंट्स को प्रयोग 64.4 प्रतिशत महिलाएं अपने व्यवसाय को बढ़ाने और व्यवसाय नेटवर्क को बनाएं रखने के लिए करती हैं। 84.4 प्रतिशत महिलाएं व्यवसायिक ग्रुप, जातीय ग्रुप या शेक्षणिक जैसे संगठनों की सदस्य हैं। 66.7 प्रतिशत महिलाओं का मानना है कि उद्यम विस्तार में सामाजिक मीडिया को योगदान तो बढ़ा है पर कुछ महिलाओं का मानना है कि सामाजिक मीडिया की वजह से कई बार धोखधड़ी का शिकार भी होना पड़ता है।

निष्कर्ष – राष्ट्र का निर्माण महिलाओं की सहभागिता के बिना नहीं किया जा सकता है और न ही सामाजिक सशक्तिकरण महिलाओं के आर्थिक विकास के बिना संभव है। इन्हीं विचारों को सत्यता प्रदान करने एवं लोकतांत्रिक वातावरण में विचारों के स्वतंत्र प्रवाह को गति देने में संचार माध्यमों ने सराहनीय योगदान दिया है। देश की कुल आबादी का लगभग आधा हिस्सा महिलाओं का है और आज भारत सरकार और राज्य सरकारें महिलाओं के आर्थिक विकास के लिए कई तरह की महत्वपूर्ण योजनाएं चला रहीं हैं। जिसकी वजह से सूक्ष्म एवं लघु व्यवसाय से जुड़ी महिलाओं के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका के साथ ही महिलाओं में जागरूकता सम्बन्धी कार्यो को भी इन योजनाओं के माध्यम से किया जा रहा है।

आज सामाजिक मीडिया और संचार के माध्यमों ने सामाजिक रूप से महिलाओं को सशक्त करने में अहं भूमिका निभाई है। महिलाओं का स्वविकास के साथ ही दूसरों से मेल-जोल बढ़ाने, स्वामित्व की भावना, आत्म-अभिव्यक्ति, स्वयं एवं दूसरों की समस्याओं को सही परिपेक्ष्य में देखने और उनका विश्लेषण करने एवं निर्णय लेने आदि का अवसर उपलब्ध कराने के साथ ही मुख्य रूप से उद्यमशील महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त करने का कार्य भी सामाजिक मीडिया ने किया है। सामाजिक मीडिया ने लोगों से अनौपचारिक संपर्क कर परिचर्चा को बढ़ावा दिया है साथ ही व्यवसाय, ऋणग्रस्तता, सामाजिक कुरीतियों, सरकारी योजनाओं, सार्वजनिक सुविधाओं, स्वास्थ्य व शिक्षा आदि विषयों पर कामकाजी महिलाओं को जागरूक करने के साथ ही उन्हें इन महत्वपूर्ण विषयों से अवगत भी कराया है जिससे उनके आत्मविश्वास व्यक्तित्व में भी परिवर्तन आया है।

वर्तमान समय में देखा जाये तो महिलाएं घर गृहस्थी का कार्य निपटाने के साथ ही महिलाएं लघुव्यवसाय को बखूबी कर रहीं हैं जिन्हें सरकार और स्वैच्छिक संगठनों ने भी सहयोग प्रदान किया है। सरकार का लगातार प्रयास भी यही रहा है कि सामाजिक मीडिया या विभिन्न उपक्रमों के माध्यम से महिलाएं लघु या मध्यम व्यवसाय को सुचारू रूप से संचालित करे सकें, जिसकी सकारात्मक तस्वीर भी सामने आ रही है। निश्चित रूप से आज महिलाओं के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में सूचना एवं संचार माध्यमों के साथ ही सामाजिक मीडिया ने समाज में व्यवसायिक रूप से नई अलख जगाने का कार्य किया है।

सुझाव ;

1. महिलाओं में उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए सुरक्षात्मक वातावरण तैयार किया जाये।
2. महिला उद्यमियों को शिक्षा एवं कौशल प्रदान किया जाये जिससे महिलाएं बिना कम से कम जोखिम में अपना व्यवसाय कर सकें।
3. वंचित समूहों की महिलाओं को व्यवसाय करने के समान अवसर प्राप्त हों ऐसे उपाय किये जाऐ।
4. सामाजिक मीडिया को महिलाओं के लिए संवैधानिक रूप से और सुरक्षात्मक प्लेटफार्म बनाया जाये।
5. महिलाएं कम पूंजी में भी लघु और मध्यम व्यवसाय कर सकें ऐसे उपाय किये जाएं।
6. महिलाएं सामाजिक मीडिया का व्यवसाय के लिए सुरक्षात्मक तरीके से प्रयोग कर सकें, इसके लिए सामाजिक मीडिया और पारदर्शी तरीके से कार्य करे ऐसे उपाय किये जायें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. तिवारी, कणिका (2013): महिला सशक्तिकरण का आत्मावलोकन, कुरूक्षेत्र, अगस्त नई दिल्ली।
2. गोयल, डॉ. सुनील (2003) भारतीय समाज में नारी, आर बी एस ए पब्लिशर्स, जयपुर।
3. गंगराडे, के.डी. (1975): सोशल मोबीलिटी इन इंडिया: ए स्टडी ऑफ डिपरेस्ड क्लास मेन इन इंडिया।
4. गुलाटी, रवि एवं कवल गुलाटी (1998): भारत में स्वयंसेवी संस्थाओं के कार्यो की उन्नति, बत्रा बुक सर्विस, नई दिल्ली।
5. झा, सुशील कुमार (2013): पत्रकारिता में सोशल मीडिया का योगदान, योजना मई, नई दिल्ली।
6. जोशी, रामशरण (2008): मीडिया: मिशन से बाजारीकरण तक, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर।
7. खांडेकर, वनिता कोहली (2013): भारतीय मीडिया व्यवसाय, सेज पब्लिकेशन्स इंडिया प्रा.लि., नई दिल्ली।
8. मन्ना डॉ. अनिता एवं डॉ. वीरेन्द्र कुमार मिश्रा (2014): वैकल्पिक पत्रकारिता और सामाजिक सरोकार, हिन्द-युग्म प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. प्रतिभा (2018): मीडिया में महिला, जनवरी, जनकृति अंतराष्ट्रीय पत्रिका, नई दिल्ली।
10. पंत, अतुल (2013): शिक्षा में सोशल मीडिया, मदद अथवा बाधा, योजना, मई, नई दिल्ली।
11. श्रीवास्तव (डॉ.) मीनाक्षी (2012): कामकाजी महिलाएं वास्तविक स्थिति, हरि प्रकाशन दिल्ली।
12. श्रीवास्तव मयंक (2013): महिला सशक्तिकरण सामाजिक बदलाव के लिए आवश्यक, कुरूक्षेत्र, अगस्त, नई दिल्ली।
13. शर्मा, एस. सी. (1977): मीडिया कम्यूनिकेशन एण्ड डेवलपमेंट, रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
14. सिंह, ओम प्रकाश (1993): संचार माध्यमों का प्रभाव, क्लासिक पब्लिशिंग कम्पनी नई दिल्ली।
15. वर्मा, अरूण कुमार (2011): मीडिया एवं सामाजिक परिवर्तन, योजना, अगस्त, नई दिल्ली।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

लोकतंत्र में जनप्रतिनिधियों के प्रति जनता के दृष्टिकोण का अध्ययन

साधना खराड़ी *

शोध सारांश – लोकतंत्र का स्वरूप बदल रहा है। आज जो लोकतंत्र परिदृष्य होता है। वह निरन्तर परिवर्तन होते हुए इस अवस्था में पहुचाँ है। लोकतंत्र की कोई एक अवधारणा नही हो सकती है। प्रजातंत्र को केवल राजनीति से जोडना सही नही होगाा। लोकतंत्र का सामाजिक और आर्थिक द्वोनो से भी उतना ही सम्बन्ध है। जितना राजनीति से हैं। यदि हम सामान्य भाषा मे लोकतत्रं को देखते ह, तो जनता इसमें स्वंय प्रतिनीधियों का चूनाव करती है। और उनके द्वारा अपने मुदद्दों को शासन के समक्ष रखती हैं।

शब्द कुंजी – लोकतंत्र, जनप्रतिनिधि, निर्वाचन, मताधिकार, कानून, शासन, अधिकार,जनता।

प्रस्तावना – लोकतंत्र में जनता अपने प्रतिनिधि का चूनाव अपने मताधिकार के द्वारा करती है। देश के सभी व्यक्तियों को निर्वाचन में समानता का अधिकार होता है। वर्तमान लोकतंत्र मे यह आवष्यक है,कि प्रतिनिधि का चुनाव स्वतंत्र रूप से हो। भयमुक्त वातावरण में हो, प्रतिनिधि का चुनाव निरतंर होता रहे। परन्तु केवल 5 वर्ष में प्रतिनिधियों का चुनाव करना काफी नही होता है। जनता को यह भी देखना चाहिए कि हमारे द्वारा जो प्रतिनिधि भेजा गया है वह अपनी शक्तियों का सही प्रयोग करे। उसे प्रशासन द्वारा जो दायित्व सौपे गये है। जो कार्य दिये गये है। उनका पालन वह कानूनों कों ध्यान में रखकर करे। मतदाता को यह भी देखना होगा कि प्रतिनिधि अपने मनमूताबिक कार्यो को ना करे। वह जनता के हितों का ध्यान रख कर करें।

लोकतंत्र को जनता का शासन माना है अब्राहम लिंकन के शब्दो में लोकतंत्र जनता का, जनता द्वारा, और जनता के लिए शासन है वह लोकतत्रं बेंहतर माना जाता है जिसमे सभी की सहभागिता हो इसमे शासन व सत्ता जनसाधारण के हाथो मे होती है। सार्वजनिक नीतिया जनता के अनुसार बनाई जाती है। शासन चलाने का कार्य जनप्रतिनिधियो द्वारा किया जाता है उन जनप्रतिनिधियो का चूनाव जनता अपने मतो के द्वारा करती है। निर्वाचित प्रतिनिधि जनता के लिए नीतिया बनाने का करते है।लोकतत्रं मे स्वतत्रता समानता और आम जनता की सहमति होती है।

उद्देश्य :

1. जनप्रतिनिधि के प्रति जनता के दृष्टिकोण का अध्ययन।
2. लोकतंत्र में जनप्रतिनिधियों की स्थिति का अध्ययन।

शोध प्रविधि – अध्ययन के लिए आकडों का संकलन द्वितीय पद्धति के द्वारा किया गया है, इसमें पुस्तक,शोध-पत्र,पत्रिकाए इन्टरनेट, और सरकारी दस्तावेज आदि सम्मिलित है।

जनप्रतिनिधियों के प्रति जनता का दृष्टिकोण – आम जनता अपने प्रतिनिधियों को कानून बनाने मे सुझाव दे सकती है। प्रतिनिधि उस व्यवस्था से सम्बन्धित कानून बनाये इसके लिये जनता दबाव बना सकती है। प्रतिनिधि को हमेशा यह जानने का प्रयास करना चाहिये, कि जनता का पक्ष क्या है। उनकी आवश्यकताए क्या है इन मुदद्दो पर। यदि जनता सहमत नही है तो जनता को विरोध करनें का अधिकार भी प्राप्त है। यहि लोकतंत्र का आधार है परन्तु वह विरोध शान्तिपुर्ण तरिके से किया जाना चाहिए जिससे की किसी प्रकार की समस्याये उत्पन्न ना हो।

आम तौर पर यह परिदृष्य होता है,कि जनता अपने प्रतिनिधि से संतुष्ट नही होती है। जिस कारण जनता का प्रतिनिधि के प्रति विश्वास कम होने लगता है जनता को कोशिश करना चाहिए कि वह शांतिपूर्ण तरिके से प्रतिनिधि पर कार्य करने का दबाव बनाये ना कि अनुचित तरिको से। कई बार प्रतिनिधि द्वारा कार्यो को करवाया जाता है। परन्तु कुछ अव्यवस्थाओं के चलते वे भी पुरे कार्य नही करवा पाते हैं। जनता कई बार इन कारणों से नकारात्मक सोच की ओर बढंती हैं जो कि प्रतिनिधि के लिये कई सवाल खडें कर देती है।

जनप्रतिनिधियों को जनता की सहमति से शासन करना चाहिए।लोकतंत्र में विचार- विमर्श प्रक्रिया द्वारा कार्यो कों करवाया जाता हैं। लोकतंत्र में वह सरकार जनता की प्रिय होती है जो स्वतंत्र भाषण और स्वतंत्र सभा के द्वारा कार्यो को करती है। लोकतंत्र एक ऐसी व्यवस्था होती है जिसमें सभी का विकास होता है।

लोकतंत्र में जनता समय-समय पर प्रतिनिधि को सचेत भी करते है। आज जनता जागरुक है हर मुदद्दे पर अपनी राय रखती है।लोकतंत्र एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें प्रतिनिधि के कार्यो में जनता अपना हस्तक्षेप करती है प्रतिनिधि कों जनता के पक्ष विपक्षा में निर्णय लेना होता है। और जनता सदेव यह चाहती है। कि उनका प्रतिनिधि उनकी इच्छानुसार कार्यो को करे।

जनप्रतिनिधियों की स्थिति का अध्ययन – लोकतंत्र में परिवर्तन का आधार जनता के मताधिकार का प्रयोग है। लोकतंत्र में जनता सें बहुतमत प्राप्त पार्टी सत्ता में आती हैं जो पार्टी कम मत प्राप्त करती है वह विपक्ष में होती है। जिसका कार्य लोकतंत्र की रक्षा करना होता है विपक्ष का यह कर्तव्य होता है। कि वे गलत का विरोध करे। भारत के संविधान में एक व्यक्ति,एक मत का सिद्धांत रहा है।मतदाता से किसी भी जाति,लिंग, और धर्म के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव नही किया जा सकता है।आम जनता अपने मतों से प्रतिनिधि को चूनती है।जो उम्मीदवार मतदाताओं का विश्वास को जीत लेता है।वह आगे जनता का प्रतिनिधित्व करता है।

समय के साथ लोकतंत्र में भी बहुत कुछ परिवर्तन देखने को मिल रहा है। लोकतांत्रिक व्यवस्था की नीव कमजोर पडने लगी है। वर्तमान में कानून व्यवस्था अनियंत्रित सी प्रतित होती हैं। जिस कारण हिसां,उपद्रव जैसी

* शोधार्थी, राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन अध्ययनशाल, विक्रम विश्वविघालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

घटनाए देखने को मिल रही है।

जनता अपने कार्यों को प्रतिनिधियों के द्धारा करवाती है। जनता अपने क्षेत्र के प्रतिनिधि अनेक प्रकार की अपेक्षा रखती हैं। उन पर खरा उतरना प्रतिनिधि का दायित्व हैं।वह जनता को संतुष्ट कैसे रखते है।यह उन पर निर्भर करता है। जनता की आधारभूत समस्याएँ हो या शिक्षा खेल आदि से सम्बन्धित हो प्रतिनिधि को उनका समाधान करना चाहिए । जनता यहि अपेक्ष करती है। कि उनकी आवश्कताओं के अनुरुप कानून बनाये जाये । कानून ऐसे बनाये जाये जो जनता के हित मे हो, प्रतिनिधि के सामने बजट असामन्जस्य भ्रष्टाचार जैसी समस्याए कई बार उत्पन्न होती हैं। पंरन्तु इनका समाधान कर उन्हे जनता के विषय में विचार करना होता है। आज का लोकतंत्र यहि मांग करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एडी आर्शीवादम कृष्णकातं मिश्र,राजनीति विज्ञान 2014 एस,चन्द एण्ड कम्पनी प्रा. लि. रामनगर नई दिल्ली पृ0 403-409
2. दुबे प्रीती,राजनैतिक समाजशास्त्र,कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, पृ0 105-106
3. नन्दलाल, 2011, राजनीति विज्ञान, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी खजूरी बाजार, इन्दौर
4. फडिया बी.एल.एवं फडिया कुलदीप,2018,भारतीय शासन एवं राजनीति,साहित्य भवन आगरा,पृ0 884-886
5. भांभरी चद्रं प्रकाश, मनोरम अशोक,2019,भारत में लोकतंत्र,राष्ट्रीय पुस्तक न्यास,नई दिल्ली, पृ08

****

मानव स्वास्थ्य पर जल प्रदूषण के प्रभावों का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. जयदेव प्रसाद शर्मा *

शोध सारांश – जल प्रदूषण एवं मानव स्वास्थ्य के बीच गहरा संबंध है। जल प्रदूषण एवं मानव के बारे में विभिन्न प्रकाशित शोधों की गहन समीक्षा करके मानव स्वास्थ्य पर प्रभावों को ज्ञात किया गया है। ये तथ्य राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय पत्रिकाओं और प्रासंगिक पुस्तकों के माध्यम से प्राप्त किए गए हैं। हमारी पृथ्वी की सतह पर लगभग 70 प्रतिशत भाग पर जल का साम्राज्य है। सुरक्षित पेयजल मानव जाति के साथ-साथ सभी जीवधारियों के लिए एक बुनियादी जरूरत है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार 80 प्रतिशत रोग जल जनित होते हैं। औद्योगिकीकरण, घरेलू कचरे के निर्वहन, कीटनाशकों एवं उर्वरकों आदि के अत्यधिक प्रयोग के साथ साथ जल स्रोतों से रिसाव भी जल-प्रदूषण के प्रमुख स्रोत हैं। जल में घुले हुए ये अपशिष्ट मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। जल में घुलनशील रसायनिक अपशिष्टों का उनके स्थान व प्रकार के आधार पर अलग-अलग प्रभाव दृष्टिगोचर होते हैं। बैक्ट्रीरियल, वायरल एवं परजीवी रोग जैसे:- टाइफाइड, हैजा, हैपेटाइटिस, एन्सेफलाइटिस, पोलियो माइलाइटिस, गैस्ट्रोइन्टेस्टाइनल के साथ-साथ त्वचा संक्रमण आदि रोग प्रदूषित जल प्रयोग से फैल रहे हैं। मानव स्वास्थ्य को इन विनाशकारी रोगों से बचाने के लिए जल गुणवत्ता की जाँच नियमित रूप से करवाने की सिफारिश की जाती है। घरेलू एवं कृषि अपशिष्टों का निस्तारण उपचारित करके करना चाहिए।

प्रस्तावना – जल प्रदूषित तब होता है जब अवांछित तत्व जल में विलय होकर उसकी गुणवता में परिवर्तन कर देते हैं। प्रदूषित जल मानव स्वास्थ्य व हमारे पर्यावरण के लिए नुकसानदायक है। जल एक प्रकृति प्रदत्त संसाधन है जो पेयजल एवं अन्य विकास कार्यो के लिए उपयोग किया जाता है। मानव स्वास्थ्य के लिए पूरी में सुरक्षित पेयजल आवश्यक है। जल एक सार्वभौमिक विलायक होने के कारण जल संक्रमण का प्रमुख स्रोत है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार 80 प्रतिशत रोग जल जनित होते हैं। विभिन्न देशों को जल विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानकों पर खरा नहीं उतरता है। 13.2 प्रतिशत मौतें गुणवत्तहीन जल के उपयोग करने से होती है। घरेलू व औद्योगिक अपशिष्ट, जलाशयों से रिसाव समुद्री डंपिंग, रेडियोधर्मी कचरे से जल ही प्रदूषित नहीं होता हैं, वहां का वायुमंडल भी प्रभावित होता है। भारी धात्विक औद्योगिक अपशिष्टों का निस्तारण झीलों एवं नदियों में किया जाता है। ये अपशिष्ट पदार्थ यहां जमा होते रहते हैं तथा प्रदूषण के स्तर में बढ़ोतरी करते रहते हैं। इनसे जीवों में रोग प्रतिरोधक क्षमता का दमन, प्रजनन विफलता एवं तीव्र विशाक्तता देखने को मिलती है। प्रदूषित जल के प्रभाव से हैजा, जठरांत्रशोथ, दस्त, उल्टी, टाइफाइड बुखार, त्वचा संक्रमण और गुर्दे के विकारों का सामना करना पड़ता है। प्रदूषित जल से पशु पोषण, पौधों एवं मानव स्वास्थ्य पर प्रत्यक्ष प्रभाव होता है। जल प्रदूषकों की मार समुद्रीय जीव-जन्तुओं पर भी पड़ती है। मोलस्क, मछलियां आदि जलीय जीव जो प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से मानवोपयोगी हैं, प्रदूषित जल के शिकार होते रहते हैं। कीटनाशकों के बढ़ते प्रयोग ने जल प्रदूषण की समस्या को बढ़ा दिया है। आजकल कृमि जनित कार्यो में कीटनाशकों के प्रयोग का प्रचलन बढ़ गया है। जल प्रदूषण के मुख्य स्रोतों में घरेलू सीवरेज, औद्योगिकीकरण, जनसंख्या वृद्धि, कीटनाशकों व रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग प्लास्टिक व पॉलिथीन बैग, शहरीकरण तथा उनके कमजोर प्रबंधन प्रणाली को बतलाया गया है। 75 से 80 प्रतिशत जल घरेलू सीवरेज से प्रदूषित होता है। चीनी, कपड़ा, शराब, कीटनाशक, कागज आदि उद्योगों के अपशिष्टों से नदियों के जल में असहनीय गंध उत्पन्न होती है। इनसे वनस्पतियों व जीवों की 80 प्रतिशत आबादी को खतरों का सामना करना पड़ता है। बड़ी मात्रा में घरेलू सीवरेज नदी तंत्रों में बहाया जाता है जो अधिकांशत: अनुपचारित अवस्था में होता है। घरेलू सीवरेज में मल-मूत्र में विशाक्त पदार्थ विद्यमान होते हैं। जल में ठोस अपशिष्टों के रूप में प्लास्टिक, धात्विक व जीवाणु संदूषक होते हैं, ये जल की विशाक्तता को बढ़ाते हैं।

औद्योगिक संस्थानों व शहरी सीवरेज का बिना उपचार के जल स्रोतों में निर्वहन किया गया अपशिष्ट पदार्थ सतही जल के साथ भूमिगत जल की गुणवत्ता को प्रभावित करता है। उद्योगों से निकली जहरीली धातुएं जल में प्रवेश कर उसकी गुणवत्ता को क्षीण कर देती है।

बढ़ती आबादी भी जल-प्रदूषण के लिए उत्तरदायी है। क्योंकि बढ़ी हुई जनसंख्या के विकास के लिए उद्योगों, कीटनाशकों व शहरीकरण को बढ़ावा दिया जाता है तथा प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से अपशिष्टों के योग को बढ़ाने का काम करता है। बढ़ी हुई जनसंख्या की आवश्यकता पूर्ति हेतु रासायनिक उर्वरकों कीटनाशकों का प्रयोग अधिक होता है। बढ़ी हुई जनसंख्या का मानव प्रर्सजन भी अधिक होता है बढ़ती जनसंख्या सुविधाओं के लिए गावों से शहरों की और पलायन करती है। स्लम बस्तियों का विस्तार होता है। प्लास्टिक कि थैलिया पोलिथिन बेग वर्तमान में शहरों का सबसे बड़ा कचरा साबित हो रहा है बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकता पूर्ति में सरकारे असमर्थ नजर आती है लोग खुले में शौच करते है प्लास्टिक थैलियों में कचरा डालते है जिससे संक्रामक रोगों को बढ़ावा मिलता है। शहरी आबादी की लगभग एक चौथाई जनसंख्या रोगों के प्रति अति संवेदनशील पायी जाती है। बढ़ती जनसंख्या जल-प्रदूषण का कारण बन रहा है। बैक्टिरिया, किट, एंव विभिन्न कीटाणुओं को मारने के लिए किटनाशकों का प्रयोग किया जाता है रसायन युक्त कीटनाशक सीधे जल में विलय होकर उसकी गुणवत्ता को प्रभावित करते है। कीटनाशकों के अधिक प्रयोग से जल के साथ- साथ मृदा की गुणवत्ता पर भी प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है। कीटनाशक अधिक मात्रा

* सहायक आचार्य, श्री जगदीशप्रसाद झाबरमल टीबड़ेवाला विश्वविद्यालय, विद्यानगरी, झुंझुनू (राज.) भारत

में है तो कृषि परिस्थिति की तंत्र के लिए खतरनाक होता है कृषि जनित कार्यो के लिए उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग किया जाता है। ये रसायन वनस्पतीयों के साथ भू-सतह (मृदा) पर आ जाते है। तथा जल में घुलकर जलाशयों में पहॅुच जाते है। बहुत रसायन मृदा में रहकर वनस्पतियों शाक-सब्जियों के माध्यम से खाद्य श्रखंला में सम्मिलित होकर मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकुल प्रभाव डालते है।

मानव स्वास्थय पर जल प्रदुषण का प्रभाव और स्वास्थ्य संकर के बिच गहरा संबध है। जल-प्रदुषण से सूक्ष्म जीवों का जन्म होता है और ये सूक्ष्म जीवों का जन्म होता है और ये सुक्ष्म जीव मनूष्यों के बीच प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में बीमारी का कारण बनतें है। रोग जनक सूक्ष्म जीव कई प्रकार के होते है तथा इनको प्रसार का माध्यम भी भिन्न-भिन्न होता है। कुछ रोग जनक दुनिया भर में फैलें हुए है तो किसी परिभाषित क्षेत्र में पायें जाते है। नदियों का प्रदुषित जल रोगाणुओं को एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में तथा नदी जल तंत्र से समुद्र जल मंत्र के साथ-साथ नहरी सिचांई तंत्र के माध्यम से कृषि तंत्र तक पहॅुच कर सब्जियों व फलों को इषित करते है।

भारी वर्षा व बाढ़ का मौसम जल जनित रोगों के प्रसार का चरम समय होता है। सिंचाई के काम आने वाला जल अगर प्रदूषित होता है तो आबादी को प्राप्त हाने वाले भोजन सब्जियों में जल जनित संक्रामक तत्व मनूष्यों के शरीर में पहूॅंच जाते है। पेयजल का नियमित जॉच होकर उपचारित होना शहरी क्षैत्रों में तो सम्भव है जबकी ग्रामिण क्षैत्रों में अनुपचारित पेयजल का ही प्रयोग किया जाता है प्रदूषित जल से मृदा स्वास्थय जोखिम स्नायविक विकार श्वांसन रोग हृदय रोग आदि कैसंर जैसी असाध्य बिमारीयों का कारण बनता है। नाइट्रोजन रसायन कैंसर सहित 'ब्लू बेबी सिंड्रोमश' के लिए उतरदायी होता है। शहरों एंव ग्रामिण परिवेश कि तरह ही अमीर एंव गरीब का प्रभाव भी साफ दृष्टिगोचर होता है। अमीर लोंगो कि आबादी में स्वच्छता पर बल दिया जाता है। वे उपचारीत पेयजल व खाद्य सामग्रीयों उपयोग करतें है परन्तु गरीब लोगों कि आबादियों में स्वच्छता का अभाव पाया जाता है तथा अनुपचारित जल का उपयोग करते है। इषित जल का गर्भवती महिलाओं पर नकारात्मक पड़ता है। यह एक कम वजन के बच्चों के रूप में सामने आता है जलीय जीवों पर घात्विक विलायकों का नकारात्मक प्रभाव दिखाई देता है। लोहा मछलियों के गलफडों में एकत्रीत होकर उनकी श्वसन प्रणाली को प्रभावित करता है। जब यह मछलियां मनुष्यों के द्वारा भोजन के रूप में उपयोग ली जाती है संक्रामक तत्व मानव शरीर में प्रविष्ट हो जाते है जिसमें सिर बालों का झड़ना लीवर व यूरीनल डिजीज के रूप में सामने आता है। ये तंत्रीका तंत्र में वीकार पैदा करते है।

उद्देश्य:-

1. जलीय संगठन पर हुए अनूसंधानों का अध्ययन करना।
2. जलीय प्रदूषण के अध्ययनों की समीक्षा करना।
3. जल प्रदूषण एंव मानव स्वास्थ्य पर प्रभावों का अध्ययन करना।
4. जलजनित रोगों का अध्ययन कर जन जागृती लाना।

शोध विधि :- प्रस्तुत अध्ययन समिक्षात्मक शोध-विधि पर आधारित है। इस अध्ययन में विभिन्न शोध-पत्रो, शोध-ग्रन्थों व विषय विज्ञ पुस्तको का गहन अध्ययन कर तैयार किया गया है। विभिन्न लेखकों के पत्रो का विश्लेषण कर सरल एंव सुगम भाषा का प्रयोग किया गया है।

प्रदुषित जल से होने वाले रोग:-

1. बैक्टीरियल रोग :- अनुपचारित पेयजल व जल के नकली संदूषण अतिसार का प्रमुख कारण है। अतिसार में बुखार, पेट दर्द, मतली (उल्टी) दस्त आदि रोगों का प्रकोप हो जाता हैं। हैजा रोग दूषित पानी के प्रयोग से होता है। विब्रियो कोलराइस जीवाणु पाचन तंत्र में विश उत्पन्न करता है। उल्टी-दस्त से शरीर में निर्जलीकरण व गुर्दे की विफलता का सामना करना पड़ता है। इसके उपचार के लिए एंटी माइकोबियल का प्रयोग किया जाता हैं। शिशेलोसिस भी एक जीवाणु रोग हैं जो शिगेला बैक्टीरिया के कारण फैलता है। शिगेला भी मनुष्य के पाचन तंत्र को प्रभावित कर नूकसान पंहूचाता है। यह मानव कि आतों की परत, पानी व खूनी दस्त, पेट में एटन, उल्टी और मत्ली आदि का कारण बनता है इससे छुटकारा पाने के लिए ऐंटीबायोसिस और अच्छे हाइजीनिक अभ्यास की आवश्यकता होती है। साल्मोनेला बैक्टीरिया से सलमोनेलोसिज जीवों की आंत्र पथ को संक्रमित करता है। प्रदूषित जल के प्रयोग से आतों मे सुजन आने से अक्सर मोत हो जाती है।

2. वायरल रोग :- हेपेटाइटिस एक वायरल रोग है इसका मुख्य स्रोत दूषित जल होता है। हेपेटाइटिस जिगर को संक्रमित करता है। हेपेटाइटिस लम्बे समय तक बने रहने से मोत हो जाती है। पिलिया, थकान, भूकन लगना, बैचेनी व उच्च रक्तताप आदि हेपेटाइटिस के प्रमुख लक्षण है। स्वच्छता उचित उपचार एंव हेपेटाइटिस के टिके लगवाकर इस रोग से बचा जा सकता है।

एनसेफलाइटिस :- क्यूलेक्स मच्छर दूषित पानी में अण्डे देता है। संक्रमित मच्छरों के काटने पर एनसेफलाइटिस नामक भड़काउ बिमारी फैलती है। इसके लक्षण प्रारम्भिक स्तर पर दिखाई नहीं देते है। सिरदर्द, तेज बुखार, एंव मॉस्पेशियों में अकड़न आदि प्रमुख लक्षण है। गंभीर मामलों में रोगी को पक्षाद्यात को सकता है व कोमा में भी जा सकता है। इस रोग के उपचार के लिए बाजार में कोई टिका उपलब्ध नहीं है।

पेलियोमाइलाइटिस :- पेलियोमाइलाइटिस एक वायरल रोग है। गले में पीड़ा, बुखार, मतली, कब्ज और दस्त व कभी-कभी पक्षाद्यात पेलियोमाइलाइटिस के लक्षण द्धष्टिगोचर होते है। इसके उपचार के लिए बाजार में टिका उपलब्ध है।

गैस्ट्रोएंटेराइटिस :- इस रोग के लिए वायरस कारण बनते है रोटाविर्दूज, ऐडेनोवायरस, कैल्सीविरस और नोरवोक वायरस के कारण यह फैलता है। संक्रमित रोगी आंत्रशोद्य से पीड़ित होता है। संक्रमित होने के एक- दो दिन में सिरदर्द, उल्टी, बुखार आदि लक्षण दिखाई पड़ते है। यह रोग छोटे बच्चों और विकंलाग लोगों के लिए खतरनाक हो सकता है।

परजीवी रोग :-

क्रिप्टोस्पोरिओसिस :- यह एक परजीवी बीमारी है जो क्रिप्टोस्पोरिडियम परवुम की वजह से होता है। यह रोग दुनिया भर के देशों में होता है। पेट की परेशानी, दस्त ढीलेया पानी के कटोरे, पेट में एंटन आदि लक्षण देखे जा सकते है। क्रिप्टोस्पोरिडियम मनुष्य की रोग प्रतिक्षा प्रणाली को प्रभावित करता है।

सरपट अमीबा :- यह रोग एंटामोइबाहिस्टोलिट के कारण होता है। यह प्रदूषित जल के साथ पुटी के रूप में शरीर में प्रवेश करता है इसकी परत काजमाव पेट में होता रहता है। संक्रमण तब होता है जब दूषित पुटी कि मात्रा अधिक हो जाती है। बुखार, दस्त, व ठन्ड लगना इसके मुख्य द्धष्टिगोचर होने वाले लक्षण है।

निष्कर्ष :- पेयजल के बिना मानव अस्तित्व कि कल्पना ही बेमानी है। शुद्ध उपचारित जल के अभाव में मानव-प्रजाती का स्वास्थ्य का स्तर उपरोतर गिरता जा रहा है। घरेलु व ओद्योगिक अपशिष्टो का बिना उपचारित किए जल स्रोतों में छोडना जल प्रदूषण का मुख्य कारण है। प्रदूषित जल से हैजा, डायरिया, पीलिया, उल्टी, दस्त जैसी बीमारीयां तो फैलती ही है कैसंर व

हेपटाइरिस जैसी असाध्य बीमारीयों का वायरस भी बनता है। वर्तमान पीढ़ी के साथ–साथ आने वाली पीढीयां भी इसका शिकार हो रही है। नाइट्रोजन रसायनों के कारण 'ब्लू बेबी सिंड्रोमश' पंख फैला रहा है। दूषित जल के संक्रमंण से कम वजन के बच्चों का जन्म हो रहा है तथा शिशु मृत्यु दर कम नहीं हो पा रही है। दूषित जल सम्पूर्ण मानव जाती के लिए प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से हानिकारक है।

सुझाव :– विभिन्न शोद्य ग्रन्थों व शोद्य पत्रो के विश्लेषनात्मक अध्ययन के पश्चात संदर्भित सुझाव निम्न है :–

1. पेयजल स्रोतों के जल की नियमित रूप से जांच कि जाए।
2. पेयजल स्रोतों के जल को उपचारित किया जाए।
3. घरेलु व ओद्योगिक अपशिष्टों का उचित उपचार किया जाना तय हो।
4. प्लास्टिक व पौलिथिन का प्रयोग प्रतिबंधित हो पौलिथिन बेग का निर्माण प्रतिबंधित किया जाए।
5. रसायनिक उर्वरको का प्रयोग कम करके जैविक खाद् के प्रयोग को बढ़ावा दिया जाऐ।
6. किटनाशकों का सावधानी पूर्वक उचित मात्रा में प्रयोग किया जाए। रसायनिक किटनाशकों कि जगह जैविक तत्वों से निर्मित किटनाशकों का प्रयोग किया जाए।
7. मानव स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता का प्रचार–प्रसार किया जाये। लोगों में स्वास्थ्य पर प्रतिकुल प्रभाव डालने वाले अवयवो के प्रति जागरूकता का निर्माण करना।
8. बिना भेदभाव के कानून बनाकर उसका कड़ाई से पालन करवाया जाये। प्रदूषण का वायस बनने पर पोलिथिन–बैग का उपयोग प्रतिबंधित होने के साथ इसका निर्माण भी प्रतिबधिंत किया जाये। बहुत सा खाद्य सामान बजार में प्लास्टिक पेंकिग में मिलता है। इनकी पैकिंग प्लास्टिक पर प्रतिबंध लगाया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. एंडरसन फेंजर बीएच। पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य। यूरोपीय पर्यावरण एजेंसी। 2003: 250–71।
2. अहमद टी, शुल्ज एफ, अल–फराज डब्ल्यू, एट अल। जल–संबंधी जलवायु परिवर्तन का कृषि पर और उसके बाद प्रभाव सार्वजनिक स्वास्थ्य पर: विशेष रूप से सामान्य लोगों के लिए एक समीक्षा पाकिस्तान का संदर्भ। पर्यावरण की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका अनुसंधान और सार्वजनिक स्वास्थ्य। 2013 13: 1–16।
3. अहमद एसएम, यूसफजई एफ, बारी टी, एट अल। भारी का आकलन पंजकोरा डिअर लोअर, केपीके के सतही जल में धातु पाकिस्तान। जे बायो और एनवी विज्ञान। 2014 5: 144–52।
4. अलरमैन एसए, एल–कोट एएफ, केहस्क एमए। जल प्रदूषण:स्रोत और उपचार पर्यावरण की अमेरिकी पत्रिका अभियांत्रिकी। 2016, 6 (3): 88–98।
5. ब्रिग्स डी। पर्यावरण प्रदूषण और के वैश्विक बोझ रोग। ब्रिटिश मेडिकल बुलेटिन। 2003, 68: 1–24।
6. बीबी एस, खान आरएल, नजीर आर, एट अल। पीने में भारी धातु लक्की मरवत जिला, केपीके, पाकिस्तान का पानी। विश्व लागू पत्रिका। 2016, 34 (1): 15–19।
7. बैलेस्टर एफ, सनियर जे। सार्वजनिक स्वास्थ्य में चुनौतियां हैं नई सहस्राब्दी। जर्नल एपिडेमिओल सामुदायिक स्वास्थ्य। 2000; 54: 2–5।
8. चौधरी एस, एनाबेले के, क्लॉस एफजेड। आर्सेनिक संदूषण पीने के पानी और मानसिक स्वास्थ्य के लिए। 2015: 1–28।
9. देसाई एन, श्रीमती वनीताबेन। जल प्रदूषण पर एक अध्ययन पर्यावरणीय समस्या पर आधारित है। इंडियन जर्नल ऑफ दअनुसंधान। 2014;3 (12): 95–96।
10. डॉ–धर्मेन्द्र सिंह (2012) 'जल संरक्षण– आवश्यकता एवं उपाय', प्रकाशक–श्री सिर्राज प्रकाशन, राम भवन चौड़ा रास्ता, जयपुर
11. गुरचरण सिंह एवं जगदीयश सिंह (2013) 'जल संभरण, सफाई एवं पर्यावरण इंजीनियरी', प्रकाशक: स्टैण्डर्ड पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स 1705–B, नई सड़क, दिल्ली –110006
12. हालदार जेएन, इस्लाम एमएन। जल प्रदूषण और उसके प्रभाव पर मानव स्वास्थ्य। पर्यावरण और मानव की पत्रिका। 2015
13. हो वाईसी, शो केवाई, गुओ एक्सएक्स, एट अल। औद्योगिक निर्वहन और पर्यावरण को प्रभावित करता है। औद्योगिक अपशिष्ट, खढिशलह 2012: 1–32।
14. जुनेजा टी, चौधरी ए। पानी की गुणवत्ता का आकलन और झुंझुनू जिले के निवासियों के स्वास्थ्य पर इसका प्रभाव, राजस्थान एकपार के अनुभागीय अध्ययन। सार्वजनिक स्वास्थ्य के जर्नल और महामारी विज्ञान। 2013; 5 (4): 186–91।
15. जबीन एसक्यू, महमूद एस, तारिक बी, स्वास्थ्य पर असर जिला एबटाबाद में खराब पानी और स्वच्छता के कारण। जे अयूब मेड कोल एबटाबाद। 2011; 23 (1): 47–50।
16. करी जे, जोशुआ जीजेड, कैथरीन एम,: दूषित पेयजल और शिशु स्वास्थ्य। अर्थशास्त्र की कनाडाई पत्रिका। 2013; 46 (3): 791–810।
17. खुराना सेन आर। ग्रामीण भारत में पीने के पानी की गुणवत्ता मुद्दे और दृष्टिकोण–जल सहायता। भारत जल पोर्टल। 2008।
18. कृष्णन एस, इंदु आर। भूजल संदूषण भारत में: शारीरिक प्रक्रियाओं, स्वास्थ्य और समाजशास्त्रीय चर्चा करना आयाम। IWMI– टाटा, जल नीति अनुसंधान कार्यक्रम, आनंद, भारत। 2006।
19. सलेम एचएम, ईवेदा ईए, फैराग ए। पीने में भारी धातुएं पानी और मानव स्वास्थ्य पर उनके पर्यावरणीय प्रभाव। ICEHMA 2000: 542–56।
20. योंगलोंग लू,सोंग एस,वांग आर, एट अल। मिट्टी के प्रभाव और चीन में खाद्य सुरक्षा और स्वास्थ्य जोखिमों पर जल प्रदूषण। पर्यावरण अंतर्राष्ट्रीय। 2015 77: 5–15।

****

Findout The Impact Of Corporative Strengths In Project Management

Tophique Qureshi*

Abstract - Cooperatives are organizations with great potential and possibilities to stir social change. In face of economic difficulties, cooperative is an option to take advantage of the existing productive power and, once authorized to operate as financial institution, they can face the economical instability and work to improve people welfare. This paper is a study on possible emergent strategy in a credit cooperative in the south of Minas Gerais, aiming at proposing an introduction of a competitive strategy to the organizational development. It was observed as a theoretical referential the origin and the development of cooperativism, some ways of management which aim at strategic planning.

Project Based Learning (PBL) as a learning model with scientific approach will accustom students to do the inquiry process which is believed to be able to improve the quality of education. By implementing PBL which belongs to constructive approach, it will enable the students-centered learning, so it will facilitate students to innovatively and creatively transfer their knowledges to the real world situation. However, there are only a few teachers who entirely understand on how the PBL with scientific method should be implemented. Therefore, teachers still get difficulties on its implementation. In the literature review, the writer would like to emphasize on the importance of improving PBL to increase the quality of education in order to prepare the human resources which have competitive and comparative superiority based on demanded quality standard of the 21st century era. Many researchers have conveyed their findings about the strengths of PBL to increase knowledges, skills and attitudes, yet the writer also considers the problems faced by teachers in improving and implementing PBL. It is highly expected that the problem discussed in this literature review is relevant to trigger the pre-service training in preparing the teacher candidates and teachers at school in order that they are willing and able to implement this learning model.
Keywords - learning model; PBL approach; Project Based Learning; scientific method.

Introduction - Project Based Learning (PBL) is one of the constructivism approaches in which the cooperation among the students in finding and building their knowledge through active learning. This is a learning process based on the research, design, and anything engaging students minds-on activity and students hands-on activity. PBL when compared to traditional curricula was inversely associated with perceived stress and that in turn had a strong impact on learning, assignment project appears in the more traditional learning concept but the project or problem is centered around the notion of learning which gives the learner the opportunity to be involved in learning process. Doing/creating projects is a long-standing tradition in education. PBL is learning with the use of projects as systematic teaching method which involves students in learning knowledge and skills through research assignment, authentic question, and well-designed product. Projects within PBL as based on challenging questions and making students having central role in design, problem-solving, decision making processes so giving students the opportunity to work relatively autonomously. Meanwhile explained that PBL is a model which organizes learning comprehensively based on challenging questions or problems, which involves students in designing, problem solving, decision making, or investigation activity of project assignments; giving opportunities for autonomous working over a particular period; and end up on a realistic product or presentation. PBL is sometimes compared to research based learning or experiental learning. In Indonesia, PBL was firstly assigned only for vocational high schools, but there are finally a lot of studies which result in the fact that PBL does not only focuses on getting solutions for social issues related to economy and entrepreneurship, but also improving students academic achievement, motivation, creativity/skills and attitudes. It is considered important for students to be given a wide chance to get experience and understanding on the information obtained from their findings or experiments. This kind of learning has a huge potential to give students interesting and meaningful learning experiment. Various researches showed that PBL has been used by western lecturers and it has been quite useful in designing an effective learning.

Methodology - A questionnaire consisting of questions about the latent variables and their constituent variables explained in the preceding sections was designed to analyze the influence of ‘‘corporate strengths/weaknesses” on

*Shri JJT University, Jhunjhunu (Raj.) INDIA

“project management competencies”. The questions were designed to seek the perceptions of the respondents relative to company resources and capabilities, strategic decisions, the strength of the company’s relationships with other parties, and project management competencies in the company. An example question would read “How successful do you think your company is in schedule management?” The respondent would rate the answer on a scale of 1–5, where 1 represents ‘‘not successful” and 5 ‘‘very successful”. The questionnaire was administered via e-mail and faceto-face interviews to 185 construction companies established in Turkey. The target construction companies were all members of the Turkish Contractors Association (TCA) and the Turkish Construction Employers Association (TCEA). The 185 companies received an e-mail describing the objective of the study, inquiring about their willingness to participate in the study and requesting a face-to-face interview with an executive of the company. Forty seven questionnaires were completed, the majority of which were administered by face-to-face interviews. The rate of response was 25%.

Figure 1 (see in last page)

However, considering the fact that there were other construction companies in the industry which were not members of TCA or TCEA butshowing similar characteristics with the member companies of these two associations in terms of size and type of work undertaken, a decision was made to expand the survey by including 26 additional similar companies selected individually through personal contacts. At the end of the extended survey, there were 26 more completed questionnaires, bringing the total number of respondents to 73. The variables associated with the survey questions were described in the preceding sections and are presented in Fig.

Discussion - The data collected from 73 respondents were analyzed using a software package called EQS 6.1, a structural equation modeling (SEM) tool. SEM is a statistical technique that combines a measurement model (confirmatory factor analysis) and a structural model (regression or path analysis) in a single statistical test. The first step in SEM is the validation of the measurement model through confirmatory factor analysis (CFA). While conducting CFA, construct validity should be satisfied by using content validity and empirical validity tests. Once the measurement model is validated, the structural relationships between latent variables are estimated. Content validity tests rate the extent to which a constituent variable belongs to its corresponding construct. Since content validity cannot be tested by using statistical tools, an in-depth literature survey is necessary to keep the researcher’s judgment on the right track. An extensive literature survey was conducted to specify the variables that define latent variables. The model was tested in a pilot study administered to industry professionals and academics. Based on the input of these subjects, the model was restructured, eliminating some of the variables and adding recommended ones. Content validity was thus achieved. In the proposed model, “corporate strengths/weaknesses” is considered to be a three-dimensional and 2nd order construct composed of “company resources and capabilities”, ‘‘strategic decisions”, and ‘‘strength of relationships with other parties”; its effect on ‘‘project management competencies” is tested. In other words, the structure of the model involves a second order construct whereby a latent variable (corporate strengths/ weaknesses) is represented by three latent variables (company resources and capabilities, strategic decisions, strength of relationships with other parties) (Fig. 1). The second order approach is recommended by Hair et al. as it maximizes the interpretability of both the measurement and the structural models. The heavyarrow in Fig. defines the direction of the influence between two constructs, while light arrows define the dimensions of latent variables. Empirical validity tests follow content validity. Scale reliability is the internal consistency of a latent variable and is measured most commonly with a coefficient called Cronbach’s alpha. The purpose of testing the reliability of a construct is to understand how each observed indicator represents its correspondent latent variable. A higher Cronbach’s alpha coefficient indicates higher reliability of the scale used to measure the latent variable. According to the EQS analysis results, Cronbach’s alpha values were, 0.84 for ‘‘company resources and capabilities”, 0.88 for ‘‘strategic decisions”, 0.71 for ‘‘strength of relationships with other parties”, 0.93 for ‘‘project management competencies”, and 0.95 for the ‘‘overall model”, all well beyond the threshold of 0.70 recommended by Nunallyindicating that scale reliability has been achieved. The reliability of the ‘‘corporate strengths/ weaknesses” construct was also observed to be 0.93, which justifies the use of a three-dimensional construct with a twostep approach. Unidimensionality refers to the degree to which constituent variables represent one underlying latent variable. CFA was used to test for unidimensionality. Initially, CFA was conducted independently for each construct.

Figure 2 (see in last page)

Once each construct in the model was deemed unidimensional by itself, then unidimensionality was tested for all possible pairs as recommended by Garver and Mentzer and Dunn et al..Convergent validity is the extent to which the latent variable correlates to corresponding items designed to measure the same latent variable. If the factor loadings are statistically significant, then convergent validity exists. Fig. shows the factor loadings marked next to light arrows corresponding to the five constructs of the model; note that all of the factor loadings are significant at a = 0.05. Another way of assessing construct validity is the goodness-of-fit of the model. A number of fit indices are available, but Marsh et al. propose that ideal fit indices should have:

1. relative independence of sample size;
2. accuracy and consistency to assess different models; and
3. ease of interpretation aided by a well-defined continuum or pre-set range.

Many fit indices do not meet these criteria, because they are adversely affected by sample size [68]. The non-normed fit index (NNFI) considers a correlation for model complexity. The comparative fit index (CFI) is interpreted in the same way as the NNFI and represents the relative improvement in fit of the hypothesized model over the null model. The root mean squared error of approximation (RMSEA) is an estimate of the discrepancy between the observed and estimated covariance matrices in the population. The v 2 compares the observed covariance matrix to the one estimated on the assumption that the model being tested is true. But, when the sample size is small, it is difficult to obtain a v2 that is not statistically significant; in such situations, the ratio of v2 to degree of freedom (dof) is to be examined.

Based on the stated criteria and the suggestions made by Garver and Mentzer, Bentler and Yuan [68], and Jackson,

1. the no normality fit index (NNFI);
2. the comparative fit index (CFI);
3. the root mean squared error of approximation (RMSEA) and
4. the ratio of v2 to dof were selected in this study since they are less affected by sample size compared to other goodness-of-fit indices.

Bentleralso recommends using robust methodology in EQS to handle no normality and to avoid the limitations of small sample size. Robust analysis leads to corrected v2 statistics and fit indices. In this study, robust analysis is performed and robust statistics are presented.

According to the values presented, the v2 to dof ratio was satisfactory as it was smaller than 3, the threshold suggested by Kline. The CFI and NNFI values of 0.87 and 0.86 also demonstrate a good fit of the model to the data. Moreover, the RMSEA value was found to be satisfactory as it was below the recommended value of 0.10. All in all, the measurement model shows a good fit to the data. In the second step of the analysis, SEM tests the hypothesized relationships between the validated constructs.

The relationship between the latent variables was hypothesized with a heavy arrow in Fig. which represents the direction of the influence. The path coefficient marked on this heavy arrow is calculated for a 95% confidence level and can be interpreted similar to a regression coefficient that describe the linear relationship between two latent variables. According to the model, "corporate strength/ weaknesses" has a significant impact on ''project management competencies" with a path coefficient of 0.93.

Conclusion - Through the literature reviews that have been done, PBL which is applied has the following characteristics: cooperative learning, have a facilitator with the characteristics and psychological motives, and have other elements of lifelong learning, and student-centered. However, seeing the of self-directed learning elements in this program, to increase creativity among students, then in implementing the PBL, the teacher should give more freedom to the students to explore their own learning and construct their own meaning. This program will pay more attention up to the end of the process in producing innovative products rather than just concentrating on knowing the facts. In order to implement the PBL, it is highly required lecturers/teachers who are also creative. The ability to solve problems and to improve the content knowledge and skills is a challenge, especially to deal with students with low ability, lack of motivation and lack of focus, the lecturers/teachers should be more patient and should try to improve the lecturer-student relationship. PBL is an approach that has these three characteristics, they should be evident in the verbal interactions of students in the process of PBL. With PBL, then the ability of students has increased in those things as follows: (1) Making a combination of several parts to form a new thing; (2) Using the random characteristics of an object resulting in a change of the existing design into a new design; (3) Eliminating a part of something so that something new is obtained; (4) Thinking about alternative uses of something in order to obtain new uses; (5) Developing ideas which are contrary to the ideas that are commonly used by people in order to obtain new ideas; (6) Determining the usefulness of an extreme form of an object that is found a new use for the object. From these PBL activities, four components, namely: fluency, flexibility, originality, and elaboration will be increased.

References :-

1. Barrs, K. (2012). Fostering computer-mediated L2 interactions beyond the classroom. Language Learning And Technology, 16(1), 10-25.
2. Bas, G. (2011). Investigating the effects of PBL on students academic achievement and attitudes towards english lesson. The Online Journal Of New Horizons In Education, 1(4). Retrieved from http://www.tojned.net/pdf/tojnedv01i04-01.pdf.
3. Bas, G. And Beyhan, Ö. (2010). Effects of multiple intelligences supported PBL on students achievement levels and attitudes towards english lesson. International Electronic Journal Of Elementary Education, 2(3). Retrieved from http://www.iejee.com/2_3_2010/365-385.pdf.
4. Blumenfeld, P. C., Soloway, E., Marx, R. W., Krajcik, J. S., Guzdial, M., &Palincsar, A. (1991). Motivating PBL: Sustaining the doing, supporting the learning. Educational Psychologist, 26 (3&4), 369-398.
5. Chandrasekaran, S, A Stojcevski, G Littlefair, And M Joordens. (2012). Learning through projects in engineering education. Paper presented at SEFI 40th Annual Conference, 23-26 September 2012, Thessaloniki, Greece. Retrieved from http://www.sefi.be/conference2012/Papers/Papers/007.pdf.
6. Chang, C.S., Wong, W.T., & Chang, C.Y. (2011). Integration of PBL strategy with mobile learning: case study of mangrove wetland ecology exploration project. Tamkang Journal Of Science And Engineering, 14(3), 265-273
7. Chanlin, L. J. (2008). Technology integration applied to PBL in science. Innovations In Education And

Teaching International, 45(1), 55-65.

8. Curtis, D. (2002). The power of projects. Educational Leadership, 60, 50-53.
9. Doppelt, Y. (2003). Implementation and assessment of PBL in a flexible environment. International Journal Of Technology And Design Education, 13 , 255-272.
10. Downing, K., Kwong, T., Chan, S., Lam, T., & Downing, W. (2009). Problem-based learning and the development of metacognition. Higher Education, 57(5), 609-621.

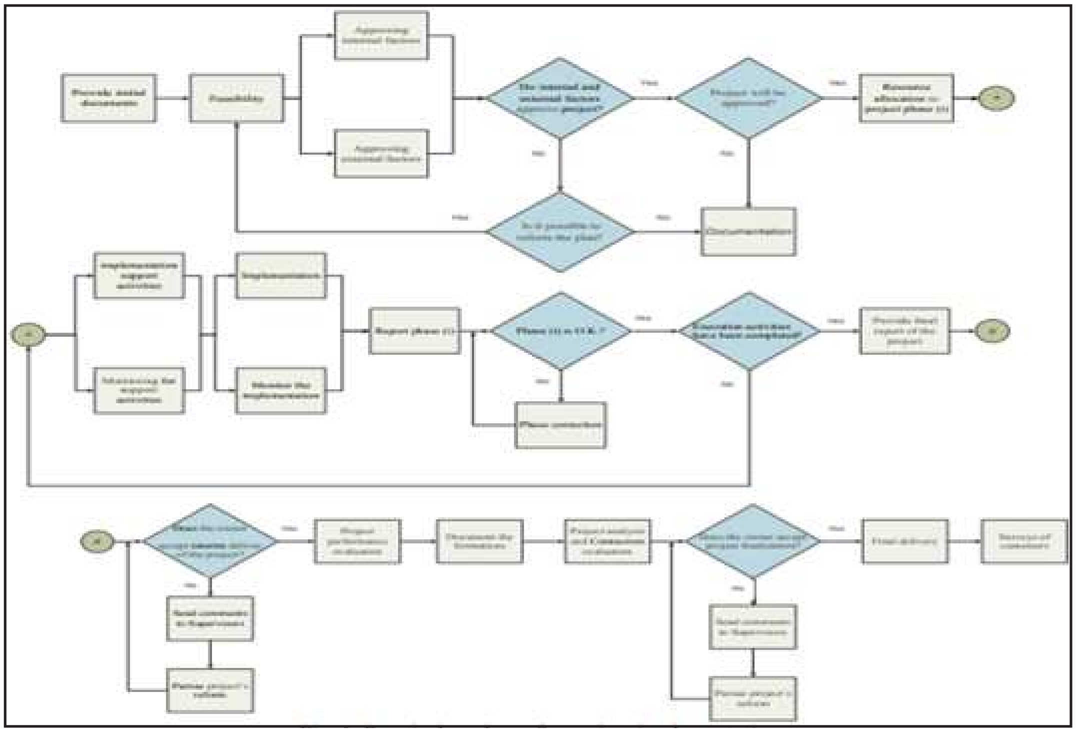

Figure 1 Practical roadmap for project implementation

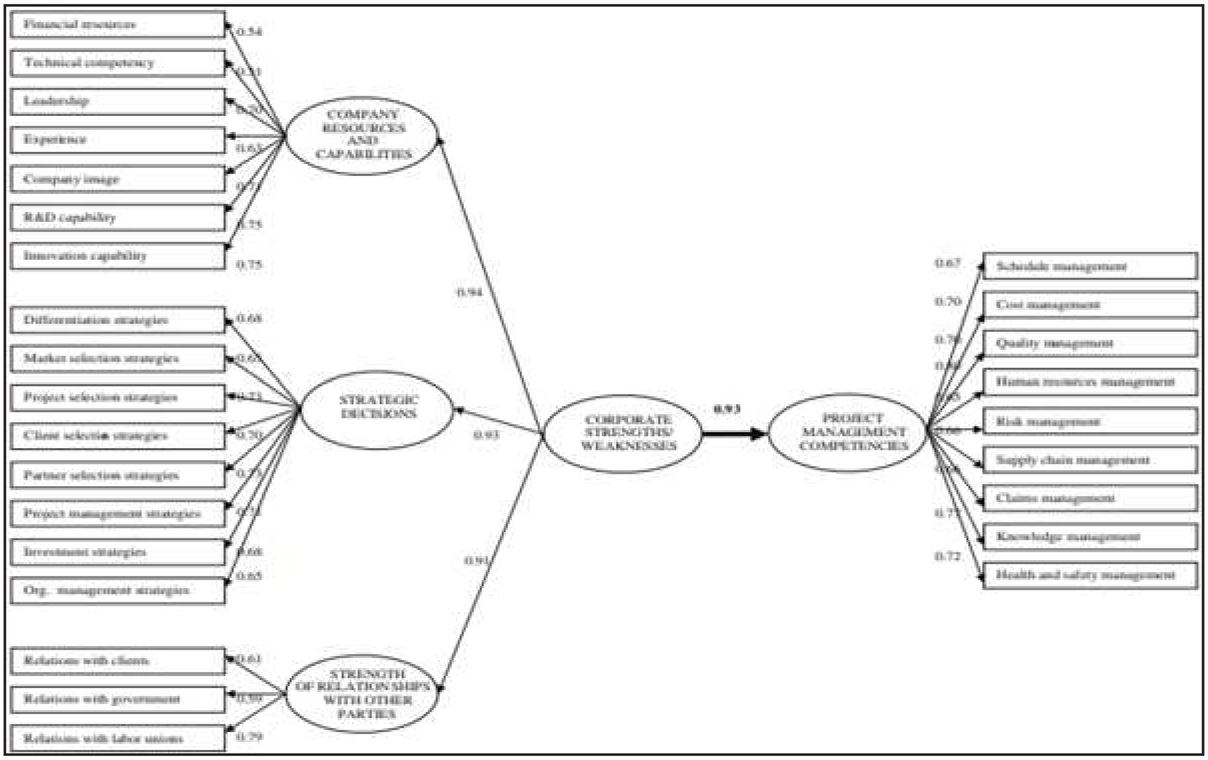

Figure 2 Structural equation model

Role of digital technologies in promoting financial literacy

Ajay Kumar Jain* Dr. (Prof.) Kamlesh Bhandari**

Abstract - For the economic growth of any country, the presence of an efficient financial system is a crucial requirement. Financial literacy assists in the creation of a link between 'Savers' and 'Investors' funds that promote mutual wealth. In today's era, the traditional model of financial literacy is losing its importance and digital modes are serving in a better way in promoting financial literacy. Digital financial literacy emerged as a new concept that has a wider reach in under-served & un-served sectors in the country. This research aimed at the identification of digital technology & modes that will promote digital financial literacy. Analysis reveals that there are various modes like mobile phones, tablets, websites, learning applications, etc. that are promoting digital financial learning. Digital technology should be enhanced to improve the financial literacy level due to its low cost and wide reach amongst the people.

Key Words - Financial Inclusion, Financial Literacy, Digital Financial Literacy.

Objective - The aim of this research is to investigate the level of Digital Financial Literacy" amongst the peoples and exploring its role in promoting financial literacy through digital modes in terms of future prospectus.

Introduction: Digital Financial Literacy - Digital Financial Literacy is becoming the most crucial aspect in today's digital era. "Digital Financial Literacy" can be defined as the digital platform that enables sound financial decision-making to achieve the goal of financial well-being (Dube&Asthana, 2017). Traditional modes also played a crucial role in educating peoples about finance but growing & frequently changing technologies are now becoming the necessity of individuals for every kind of financial decision-making that is ranging from big investments to daily household financial affairs. In simple words 'Digital financial literacy' means the use of digital devices for acquiring knowledge, better understanding of financial terminologies and emphatic use for financial transactions.

The position of digital financial literacy in developing nations is very strong but the developing nations are far behind as compared to them. The major identified reason is lack of infrastructure, lack of awareness, resistance to change and outdated education system. However, governments are taking various initiatives to improve the position of digital literacy but various challenges are restricting the benefits of digital financial literacy for the public. These challenges need to be addressed properly to recognize digital technologies in promoting financial literacy.(Prajakta, 2013).

This research paper will involve a literature review on existing researches and conduct of survey to identify the reason for not preferring digital platforms by peoples, challenges that are often faced while using digital modes and associated benefits to the peoples if properly utilized. The results of this research will enable us to understand the actual position of digital financial literacy at the local level & difficulties that are faced by peoples while using digital mode for financial literacy that will further help in effective planning and implementation to increase the role of digital technologies in promoting financial literacy for the purpose of financial inclusions.

Financial Literacy - It is the evaluations of information related to finance so that right decisions can be taken for finances. In this Complex financial environment the financial literacy taking place speedily in under developed, developing and developed countries. It is serving awareness amongst the people for their rights towards banking. Financial inclusion and financial literacy both are treated as Joint pillar and the former is fulfilled by the later. It is a win-win situation for a country as a whole for its citizens and banking industry. (Thomas, 2015).

Financial Inclusion - It is a process by which citizens are getting access towards financials services. Also, enough and easy credit facilities available to lower and average income groups at a reasonably good cost. Financial services here includes, banking, insurance, stock & commodity market, Investments and savings, risks and credit etc. (Duha, 2017).

Importance of digital financial literacy - In this digital Era, when children are plying and learning with mobile phones immediately after their birth, we can understand the importance of it very well. Governments are also

*Research Scholar, Devi Ahilya Vishwavidhyalaya, Indore (M.P.) INDIA
** Principal, P.M.B. Gujrati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

focusing on paperless offices and cash less economy. In India the importance of digital literacy came in to picture immediately after demonetization. Drastic communication channel revaluation through mobile, mobile valet payment system creating an opportunity for financial inclusion at a reasonable cost which is reliable as well through these kinds of digitalized interfaces.

Literature Review - Porches (2016) examined the perception with regards to digital financial services in rural India to identify the factors that are promoting or discouraging it. In rural area, digitalize services are being provided jointly by mobile network operators and Banks. His study reveals that Cost which these mediators are imposingon customers resulting lack of liquidity. Also, Mobiles are giving opportunity to spend money whatever the consumer gets through their digital wallet but fewer opportunities available to save it which tends to decrease the saving rate.

Wey & Wang (2016)revealed that in the recent time the usage of techno-tools rapidly increased because digital media improveda lot their practices in serving the financial literacy among the people. His study presented the ecological technocrat model for promoting financial literacy in practice and for further research purposes.

Atif (2014) states that the development and use of technology-based tools for financial literacy education has grown rapidly in recent years, often based on the presumption that digital media will enhance past practice. The studies present an ecological model for technology-based financial literacy education intervention and propose an action agenda for practice and further research.

As reported by Bash (2014) in today's era digital financial literacy is essential part for financial inclusion because individuals have to know the digital concept of finance for better decision of their finances. But at the other side 3/4th of the Indian youth lacking with basic understanding of concepts of finance.

Lusardis (2012) reveled in his study that digital mode to serve financial literacy can make a great change in the initial learning of financial concepts. Even graphical and Comical Conversational view appeals a lot to the readers for better understanding the concepts of their own personal finances. Children can pick up very fast those basic understanding of financial concepts in this era of digital world.

Pergue (2013) found in his study that many people are avoiding the learning of financial concepts through digital mode as they are not very much familiar with the technologies, specially the old age people. They still wants to use the traditional learning method which sometimes cumbersome also. The easy way of digital mode needs to be explore to connect them with the technology learning model.

According to Shetty(2015) there are 3 parameters to major access to finance viz. financial transactions, financial inclusions and financial literacy. Financial transactions are taking the level of the stock of usage. Financial literacy means how much the people are aware about the available financial services. Financial inclusions mean how proximate the financial counters are available. Interactive applications can be designed through which the users can raise their queries and can get solve it. User based application can solve the purpose for different types of users.

Singh (2016) suggested innovative digital approach for serving financial literacy at large in his research study. He suggested Audio and Video modes, different types of presentations through flowcharts, presentations through power points, Java based tools to calculate for financials starting from the school itself and also can be used to address the people even without their physical presence. They can be at a place of their own choice and even at home also and can learn by using these digital tools.

As stated by Parks (2015) digitalization taking active part in the growing economy and putting positive effect in the growth of finance industry as they are coming up with new digitalize products & services and also the service providers. Process of digitalization affects businesses & individuals across the border. In 64 % developing countries, Banking via valet money in Mobile services available now a day which is almost going to touch 100 % by 2020 globally as the increasing rate of mobile connections. These important changes required the digital financial education, protection and inclusion policies that need to adapt in this drastic changing environment.

Methodology - This research aiming to evaluate the digitals financial literacy amongst the house holds of India. In this study descriptive survey has been used as research design. A questionnaire which is consisting 8 questions based on awareness, usage, popularity, challenges and how to overcome on challenges has been asked. After conducting a pilot survey and suggestions taking in to consideration of experts penal for the purpose of validating the contents, the survey has been done on 133 Households of India. Out of which 27 responses were not considered as they did not fill all the information which may lead to wrong conclusion. The rest 106 responses were taken into consideration to analysis with the help of statistical tools.

Data Analysis & Findings:

Graph 1.1: Are you aware of the concept of "Digital Financial Literacy"?

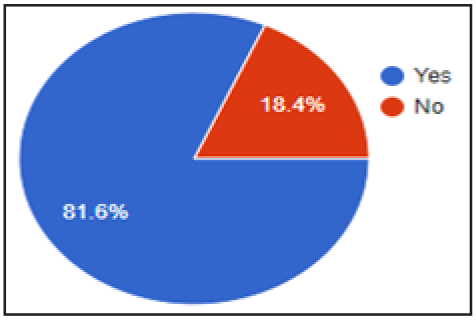

Graph 1.2: Do you agree that "Digital Mode" is more

effective platform for promoting financial literacy as compared to traditional modes?

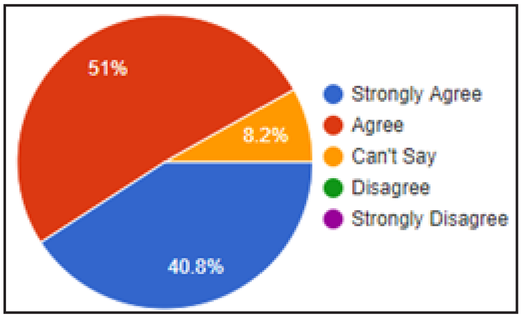

Graph 1.3: How frequently you use Digital modes for availing Financial Information?

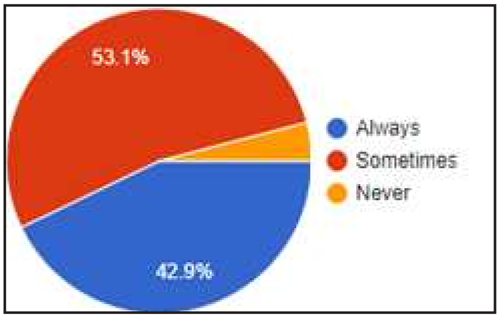

Graph 1.4: What are the digital platforms that you are presently using for Financial Learning?

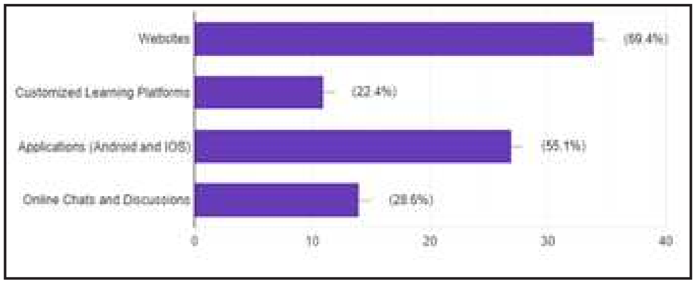

Graph 1.5: Which of the following is the most popular resource of digital financial learning?

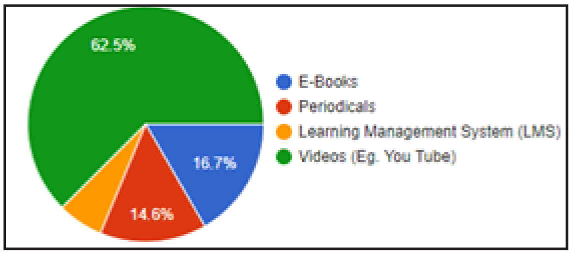

Graph 1.6: What kind of financial decisions in which digital financial literacy plays an important role?

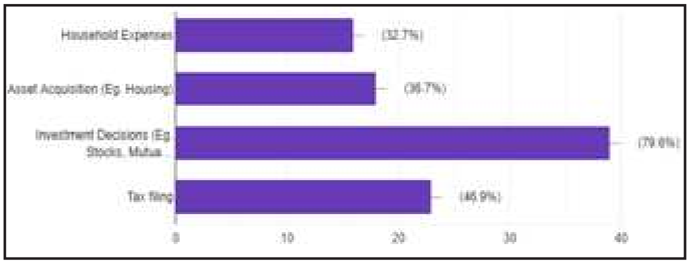

Graph 1.7: What are the challenges you come across while using 'Digital Mode" for Financial Literacy?

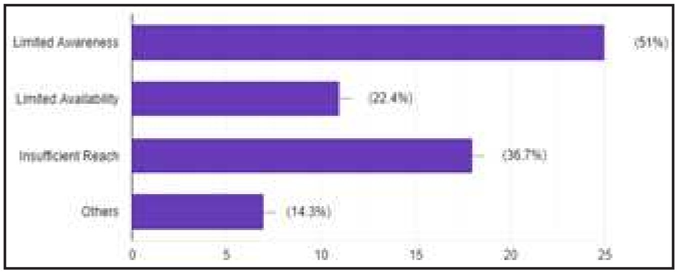

Graph 1.8: Which of the following will be helpful to overcome the above problems/Challenges?

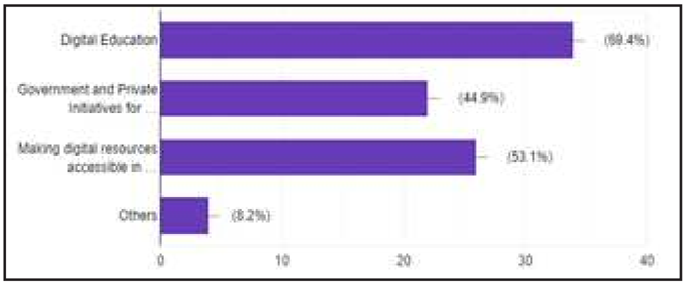

Source: Compiled by researcher using primary data

Findings -:

1. Around 81.6% of the respondents were aware of the concept of "Digital Financial Literacy. Remaining 18.4% of the respondents we net aware about the concept of digital financial literacy.
2. 91.80% of the respondents agreed that 'Digital Mode' of promoting financial literacy is a more effective platform as compared to the traditional modes.
3. For seeking financial information around 43% of the respondents always used digital modes. While 53% used occasionally. 4% of the respondents replied of not using digital media for seeking financial information
4. Websites with the highest frequency of 69% were the most preferred digital platform for financial learning, followed by mobile applications which comprised 55%. Less popular platforms stated by respondents were online discussion forums followed by customized learning platforms (around 22%).
5. You Tube videos were the most popular source of on-line learning preferred by 62.5% of the respondents. E-Books (16.7%) and online periodicals (14.6%) were also preferred by the respondents. LMS were the least popular choice of digital sources for financial learning.

6. Majority of the respondents (79.6%) used digital financial literacy for investments in stocks and mutual funds. Around 47% of the respondents used digital financial literacy for tax filing followed by 36.7% for asset acquisition like housing.
7. It was observed that limited awareness of digital mode for financial remained the biggest challenge. 51% of the respondents agreed to it. Insufficient reach also posed as a significant challenge for lack of digital financial literacy, 36.7% of the respondents agreed to it.
8. Majority of the respondents (around 69.45%) agreed that Digital Education through modes like mobile phones will be helpful to overcome the above challenges which limit the spread of digital mode of financial literacy. Making digital resources accessible is also one of the responses from respondents.

Conclusions - In this Digital Era when rapid expansion of technologies are taking place, the role of digital technologies are putting its positive impact on serving financial literacy which ultimately helps to society for their well-being and at the same time government can also achieve its objectives of financial inclusion by offering more new financial products digitally. In view of the above our recent Prime Minister ShirNarendraModi has also given the concept of 'Digital India'. Digital Technologies for serving financial literacy at one side can save a lot of cost and nature and at other side it is more effective way to learn if the reach and accessibility can be improved.

Recommendations - Based on above finding and analysis, the research scholar giving the following recommendations:
1. Government and Private Institutions should take more initiatives to serve financial literacy digitally.
2. It is required to make technologies to cheaper to make it more viable and available to the mass population.
3. Institutions should not promote only their financial products digitally but should guide the people digitally about it. With their digital guidance and promotions awareness can be increased.
4. Through Public and Private Partnership Government should make available the digital resources within the reach of the people.
5. Digital Financial Education should be initiated from School Level itself.
6. As the video mode is more popular a separate, dedicated and authenticate video channels should be started to serve authenticate digital financial education.
7. More promotions should be taken to promote digital mode for gaining financial information.
8. Dedicated Mobile applications and websites should be promoted to learn financial literacy specially for taking decisions with regards to household expenses, assets acquisitions and tax return fillings.

References :-

1. Asthana & Dubey (2017). "FINANCIAL LITERACY: AN OVERVIEW OF CURRENT LITERATURE AND FUTURE OPPORTUNITIES", Research Paper Volume - 6, Issue- 1, 2018, e-ISSN: 2347 - 9671| p- ISSN: 2349 – 0187.
2. Fina, G., Rika, N., Samurai, J., &Mc-goon, J. (2016). Perception of Digital Finance Services in Rural area of Fiji. Information Technologyand International Developments, 12(4), 12-20
3. Wey, U. T., & Wang, M. (2016). Harnessing the Power of Technologies to Enhance Financials Literacy Level& Personal Financial Well-Beings: A Literature Review, Proposed Models, and Actions Agenda. Centers for Financials Security WP, 5-95.
4. Duha, G. (2017). The Roles of Pradhan-Mantri Jan-Dhan-Yojana in Financials Inclusions: An Evaluation. GLOBAL JOURNAL FOR RESEARCH ANALYSIS, (GJRA) 3(8), 462-463.
5. Ambedkar, T., Venkataraman, C., & Singh, B. T. (2016). Financials Literacy Index For College Students. Annual Research Journal of Symbiosis Centre for Management Studies, 4, 5-30.
6. Atif, G. (2014). Financials Literacy and Other Factors Influencing Investment Decision of Individuals: An evidencefroma Developing Country. Journal of Poverties, Investments And Developments, 13, 75-85.
7. Amani Mona (2015), "Financials literacy and decisions making: An Overview from Tunisia", Internationals Journals of Information's, Business Management, Vol. 5, No.4, 2013;
8. Zuwaina Nemcora, Hanaa Thomaskova, Hanaz Modelska, (2014), "Issues on financials literacy educations", Political, Behavioral and Social Sciences 29 (2014) 367 – 370;
9. Lusardis, B., & Mitchells, Z. T. (2012). Economic Importance of Financial Literacy: Evidences Theories. Journals of Economic Literatures, 53(2), 6-45.
10. Michaels,G. F., Hills, T.T., &Pergue, F. (2013). Schools of Studies and Financials Literacy. Journals of Economic and Education Research, 13(4), 30-39.
11. Bash, E. T. (2014). Financials Literacy: An Indian Scenario. Asians Journals of Researches In Banking's and Finances , 4(2), 67-89
12. Parks, Z. T. (2015). Digitals Literacy & Privacy Behaviors Online. Communications Research, 39(3), 214-234
13. Porches, V. T., Sieira, N. O., &Kirsch, B. (2016). Determinant of Financial Literacy: Analysis of the Influences of Socio-economic and Demo-graphic Variables. RevistasContabilidaded&Finançs, 27(59), 372-387
14. Thomas, D. S., &, Shetty B. J. (2015). A Study of Financials Literacy among the College going Students In Mumbai. Tactful Management Research Journal, 7, 7-12.
15. Shobha, P. T., &Prajakta ,T. S. (2013). A Study on the Factors affecting Financials Literacy of Household. International Journal of Advanced Information Science and Technology, 24(24), 18-22.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

डॉ. देवराज के उपन्यासों में सिने-टैकनीक

डॉ. रोली श्रीवास्तव *

प्रस्तावना- स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी उपन्यास साहित्य के क्षेत्र मे जिन मनीषियो का विशेष योगदान है, इनमें डॉ0 देवराज का स्थान प्रथम श्रेणी के साहित्यकारों में है। वह आजीवन मौन भाव से साहित्य सृजन के क्षेत्र में एक तपोनिष्ठ साहित्य सेवी के रूप में संलग्न रहे। वाड्.मय की विभिन्न विधाओं में विशेष रूप से दर्शन, मनोविज्ञान, संस्कृति समीक्षा, पत्रकारिता, निबन्ध, काव्य तथा उपन्यास के क्षेत्र में उनके अप्रतिम योगदान को नकारा नहीं जा सकता। उन्होंने जिन विधाओं में अपनी प्रतिभा व पाण्डित्य का परिचय दिया है, उसमें उनके व्यक्तित्व, कृतित्व एवं कवि रूपो का आँकलन अनेक शोध प्रबन्धों के माध्यम से हो चुका है। उनके उपन्यास साहित्य पर भी अनेक शोध ग्रन्थ प्रकाश में आ चुके हैं, परन्तु मेरा यह विनम्र प्रयास है। कि अभी तक सर्वथा अछूते क्षेत्र अर्थात मनोविज्ञान के परिप्रेक्ष्य में डॉ0 देवराज के उपन्यासों का यक गणवेषात्मक अध्ययन न केवल अपने विषय क्षेत्र में सर्वप्रथम मौलिक रचना के रूप में स्वीकार्य होना चाहिये। वरन इसी के समानान्तर इसे ज्ञान की अभिवृद्धि के क्षेत्र में भी एक मौलिक योगदान के रूप में मान्य किया जाना चाहिये।

जिस प्रकार चलचित्र में एक दृश्य के बाद दृश्य बदल जाता है उसी प्रकार देवराज जी के उपन्यासों में अनेक ऐसे उदाहरण हैं 'तपती रेखाएँ' देवराज जी का एक मर्मस्पर्शी औपन्यासिक कृति है। जिसमें 'इरा' नामक युवती के जीवन में आने- वाले अनेक बड़े परिवर्तनों को दिखाया गया है। आत्म-स्वीकृति है इरा नामक एक ऐसी युवती की, जिसके जीवन में आये हर पुरूष ने कुछ-कुछ तिक्त, कुछ मधुर अनुभवदिये। मनोज उसका पहला प्यार, सुरेन्द्र - पति। जिससे उसे तलाक लेना पड़ा, सुबोध जिसके प्रति वह विवाहिता होते हुए भी समर्पित हो गयी, देव एक गांधीवाधी राजनेता, इरा का दूसरा पति सहइय जिसके व्यवहार से कृत-कृत्य इरा अपने विश्वासघात के अपराध बोध से त्रस्त भी रही। जिस प्रकार सिनेमा में एक के बाद एक चित्र आते हैं, उसी प्रकार डॉ0 देवराज जी उपन्यासों में एक के बाद एक स्थिति सामने आती जाती है। सिनेमा में पात्रों के हाव-भाव से दर्शक उसके मन की स्थिति का अनुमान लगाते हैं। डॉ0 नन्द किशोर देवराज ने अपने उपन्यासो में पात्रों के हाव-भाव का विशेष रूप से वर्णन किया है। 'भीतर का घाव' की नायिका तथा नायक राजन के बीच सुन्दर घटनाक्रम की सचित्र अंकन डॉ0 देवराज जी ने किया है। 'वह दृश्य भूलने लायक नहीं है। मैं कहानी सुना रहा था और भाभी हँस रही थी, हँसते हुए लोटपोट हो रही थी। इतने मुक्त भाव से हँसते मैनें कभी नहीं देखा था। उनके स्वच्छ, सुन्दर दांतों की वह शुभ्र हँसी कितनी मोहक थी।'

'देखा भाभी दीवार से सिर सटाए खड़ी है और आँखो से टप-टप गिरते आँसुओं को आंचल से पोछ रही है।'

चित्रात्मक शैली में उपन्यासकार किसी भी दृश्य का ऐसा चित्र प्रस्तुत करता है। जिससे पाठक के मस्तिष्क में उसकी रूपरेखा खिंच जाती है और पाठक चित्रित दृश्य का रचत: अनुभव कर सकता है। भीतर का घाव उपन्यास में अनेक ऐसे जीवन्त चित्र प्रस्तुत किये हैं।

'मैं चलने को तैयार हुआ, मेरा हृदय विचित्र ढंग से धड़क रहा था। बाहर छत पर पहुँचकर जब भाभी मेरे साथ-साथ चल रही थी, मैं उनसे कहना चाहता था कि 'मुझे ऐसी दृष्टि से न देखा करो, भाभी! उससे अजीब-सी व्याकुलता और पीड़ा होती है। पर मैं कुछ भी कह न सका।' 'भीतर का घाव' में डॉ0 देवराज ने युनिवर्सिटी के जीवन्त चित्र प्रस्तुत किये हैं। 'जुलाई के तीसरे सप्ताह में जब विश्वविद्यालय खुला तो मुझे फिर एक बार नवीनता का आघात लगा, मानो विश्वविद्यालय लखनऊ की नूतनता में स्वयं भी एक नवीनता हो। इतने छात्र छात्राएं और शिक्षक, इतनी विशाल इमारत, इतनी बड़ीलाइब्रेरी, बिजनौर के तीसरी श्रेणी के इण्टर कॉलेज से यह सब भिन्न था। मैंने फिर एक बार महसूस किया कि लखनऊ मेरे लिए कितना बड़ा सौभाग्य हुआ है।' यूनिवर्सिटी के वातावरण का उपर्युक्त विवरण पढ़कर एक चित्र आँखों के सामने साकार हो जाता है।

'रोड़े और पत्थर' उपन्यास का नायक हरीश अपना मकान बनवा रहा है मकान बनवाते समय हरीश चिन्ता का सजीव चित्र सामने आता है। 'लॉन' का भाग बिल्कुल खेत जैसा दिखाई दे रहा है। सर्वत्र गीली, फूली हुई मिट्टी है और कई जग पानी भरा है। नींव और बीच के खड्ड में तो पानी ही पानी है 'गंदला, मटमैला पानी। हरीश बार-बार उस पानी के दृश्य को देख रहा है। यदि पानी को यों ही भरा रहने दिया जाये, तो वह शायद तीन-चार दिन से कम में नहीं सूखेगा और तब तक इधर का काम बन्द रहेगा। यदि उसे किसी तरह उलीचवा दिया जाये तो भी नींव के सूखकर इस लायक बनने में कि उसमें बजड़ी पकड़कर चुनाई हो सके।'

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ0 नन्द किशोर देवराज भीतर का घाव, पृष्ठ सं0 6,10, 32,44,45,93
2. डॉ0 नन्द किशोर देवराज पथ की खोज, भाग 2 पृ0सं0 169
3. डॉ0 नन्द किशोर देवराज रोड़े और पत्थर, पृ0सं0 61-62
4. डॉ0 नन्द किशोर देवराज अजय की डायरी पृ0सं0 214
5. डॉ0 नन्द किशोर देवराज मैं, वे और आप प्र0 सं0 28
6. डॉ0 नन्द किशोर देवराज तपती रेखायें, पृ0सं0 79-85
7. डॉ0 नन्द किशोर देवराज दूसरा सूत्र
8. डॉ0 नन्द किशोर देवराज न भेजे गये पत्र

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद मेमोरियल डिग्री कॉलेज, राजाजीपुरम, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Growth of Agricultural Subsidies in India

Dr. D.N. Khadse* Prof. C.B. Tembhurnekar **

Introduction - Agriculture plays a significant role in the economic growthof our country. Almost all the activities rotate around agriculture. Itprovides employment to around 60 per cent of the total workforce in thecountry (Swaminathan, 2009). Extremity in climate and variety of soilcondition has made possible the cultivation of every item. Introduction ofnew high yielding varieties after the spread of Green Revolution in the late1960s resulted in record of food grains production. For inspiringagriculture production and attaining self-sufficiency the governmentprovides different incentives collectively with price supporting schemes.Between the agriculture production incentives, subsidies are considered tobe the most significant instruments for accelerating the growth ofagricultural production. Most of the subsidies provided are designed tocompensate the high cost of production and to stimulate the use of moderninputs.

The agriculture subsidies are essential part of the farmer's life in India. The agriculture subsidies plays very significant role in agriculture sector in every country. Each and every year's government of India spends big amounts in various agriculture subsidies for growth of agriculture sector.Major items of agricultural subsidies are food, fertilizer,irrigation, power and credit. While food and fertilizer subsidies are borneby the Centre, power and irrigation subsidies are borne by the respectivestate government. Credit subsidies are given through the banking system.Food subsidy is the difference between the price at which the FoodCorporation of India (FCI) procures from farmers and sells through thePublic Distribution System (PDS). The food subsidy in India was Rs.12060crores in 2000-01 and it increased to Rs.56002 crores in 2009-10.

For fertilizer inputs, subsidy is the difference between theprice paid to fertilizer manufacturers and price received from the farmers.For other inputs, it is the difference between economic cost of input andissue price to the farmers, which is paid by the government. Credit subsidyis applicable for short term loans provided for production purpose for aperiod of one year. It is the difference between cost of credit and the actualinterest paid by the farmers. Credit subsidy includes interest subventionand interest subsidy. In the case of Nationalised Banks interest subventionis only applicable and it is provided by the Government of India through the RBI. For the Co-operative Banks both the interest subvention and theinterest subsidy is applicable and it is given through the NABARD.India's agricultural input subsidies which include fertiliser and electricity subsidies has increased from $10.3 billion in 2004-05 to $29.1 billion in 20010-11.

The objective

1) To understand the nature of agriculture subsidies in India.
2) To understand the Methodology for estimation of subsidies in India

Research methodology - The study is based on secondary data which is related FY 2000-01 to 2009-10 and collected from the published reports, Census Surveys, newspapers, journals, websites etc

Review of literature - The subsidy is very important for growth of farmers in India. Many persons have presented their views on agriculture subsidies in national & internal national level through research papers & articles. Mr.Gajendra Pratap presented his view in article Domestic subsidies, The agriculture subsidies can be broadly discussed under two categories one is export subsidy & another is domestic subsidy, he also focused on following issues -Subsidies pro-poor in the developed country and subsidy impact on the Indian economy. The growing volume of subsidies particularly the ¯Green Box subsidies are the new excuse instruments of the developed countries for projecting a pro-poor image.

While studies (Dorwarde*t al.,* 2004; Smith & Urey, 2002) suggest that during the early phases of the green revolution payment of subsidies on inputs contributed to rapid expansion of production of cereals and thereby to poverty reduction, subsequently it is less clear that the subsidies have continued to do so.

Input subsidies also became a major feature of policy and were valuable to farmers faced with declining output prices in the 1980s. They were not, however, key determinants of technology adoption and became damaging when they crowded out capital investment in research, infrastructure and human capital as fiscal constraints began to bite under structural adjustment reforms. They may also con-

*Associate Professor (Commerce) Dhanwate National College, Nagpur (Maharashtra) INDIA
** Associate Professor, M.B.Patel College, Sakoli (Maharashtra) INDIA

tribute to environmental degradation, and to the extent that wealthier farmers and regions largely captured them they had little direct influence on poverty (Smith & Urey, 2002)

Agricultural subsidies - The total agricultural subsidies for thepast ten years from 2000-01 to 2009-10 and the agricultural subsidies perhectare of GCA in India is presented in Table 1.

Table.1 - Agricultural subsidies in per hectare of grosscropped area in India

Year	Total Agricultural Subsidies (in crores)	GCA in India (million ha)	Subsidy perhectare (in Rs.)
2000-01	50440	185.34	2658
2001-02	56747	188.29	3062
2002-03	59679	175.58	3399
2003-04	66625	190.08*	3506
2004-05	75635	191.55*	3948
2005-06	82967	193.05*	4297
2006-07	91737	193.23*	4748
2007-08	119036	195.83*	6078
2008-09	204668	195.83*	10451
2009-10	108982	195.83*	5565

Source: Central Statistical Organisation, New Delhi; Agricultural Statistics at a glance – 2010; As per calculation
Note: 2009-10 includes only fertilizer and food subsidy * Provisional 2008-09 and 2009-10 GCA pertains to 2007-08

It is noted from Table.1 that the total agricultural subsidiesinclude fertilizer, irrigation, other subsidies and electricity. During 2000-01the total subsidies in Indian agriculture accounted for Rs.50440 crores andRs.108982 crores in 2009-10. The amount of subsidy is increasing at asignificantly higher rate year after year. The increase in total subsidy maybe due to the increase in the consumption of fertilizers, increase in the useof electricity for irrigation purpose and easy availability of credit at asubsidized rate. The subsidy amount per hectare of GCA was Rs.2658during 2000-01 and it was Rs.10,451 per hectare during 2008-09.

Fertilizer Subsidy in India - Fertilizer plays a major role in increasing agriculturalproduction and productivity. The Government of India introduced theRetention Price-cum-Subsidy Scheme (RPS), a cost-plus approach, fornitrogenous fertilizers in November 1977 and extends to complex fertilizers in February 1979. The RPS scheme also aimed at assuring areasonable return on investment and to attract further investment in thefertilizer sector. From 1st April,2010 the Government of India fixed subsidyon the fertilizer nutrients 'N'-Nitrogen, 'P'-Phosphorous, 'K'-Potash and'S'Sulphur contents present in the fertilizer which is known as NutrientBased Fertilizer Subsidy (NBS). **Table 2** presents thedetails of expenditure met by the government in order to subsidizefertilizers during the period 2000-01 to 2009-10.

Table 2 (see in last page)

It is noted from **Table 2** that the amount of subsidydisbursed during the year 2000-01 was Rs.9481 crores and it wasRs.24580.23 crores for the year 2009-10.The amount of subsidy providedfor domestic (indigenous) production is more than that of importedfertilizer except the year 2009-10.

Credit Subsidy - Credit is the most important input that controls the growth ofagricultural production. Till the end of 1966, credit for agriculture wasconsidered to be synonymous with co-operative credit. Only after thenationalization of Commercial Banks in 1969 and establishment of RRB'sin 1975 these banks entered in the field of agricultural financing. The mostimportant development in the field of agricultural credit is the setting up ofthe National Bank for Agricultural and Rural Development (NABARD) inJuly 1982. It is guiding all the major agencies operating in the rural creditmarket namely the Commercial Banks, the Regional Rural Bank and theCo-operative Credit Institution.

Credit system in rural India can be classified as institutioncredit sources and non-institution sources. Institution credit sources includeCo-operatives, Commercial Bank and RRB's. The Non-institution sourcescomprises of professional money lender, commission agents, friends andrelatives. The flow of institutional credit to agriculture sector from2000-2001 to 2009-10 is given in Table 3.

Table 3 - Flow of institutional credit to agriculturesector in India

(in crores)

Year	Co-operative Banks	RRBs	Comm-ercial Banks	Other Agencies
2000-01	20718	4219	27807	83
2001-02	23524	4854	33587	80
2002-03	23636	6070	39774	80
2003-04	26875	7581	52441	84
2004-05	31231	12404	81481	193
2005-06	39403	15223	125477	382
2006-07	42480	20435	166485	0
2007-08	48258	25312	181088	0
2008-09	46192	26765	228951	0
2009-10	34363	22132	139733	0

Source: Department of Agriculture and Co-operative, Credit Division.

It is noted from Table 3 that the credit flow to agriculturesector through the Co-operative Banks is showing an increasing trend from2000-01 to 2007-08. Only in the last two years it shows a decreasing trend.

Methodology for estimation of subsidies in India - Alternative approaches and conventions have evolved regarding measurement of the magnitude of subsidies. Two major conventions relate to measurement through (i) budgets, and (ii) National Accounts. The latter estimates comprise explicit subsidies, and certain direct payments to producers in the private or public sectors (including compensa-

tion for operating losses for public undertakings) that are treated as subsidies. This, however, does not encompass all the implicit subsidies.

The estimates of budgetary subsidies are computed as the excess of the costs of providing a service over the recoveries from that service. The costs have been taken as the sum of:

1. revenue expenditure on the concerned service
2. annual depreciation on cumulative capital expenditure for the creation of physical assets in the service;
3. Interest-cost (computed at the average rate of interest actually paid by the respective governments) of cumulative capital expenditure, equity investments in public enterprises, and loans given for the service concerned including those to the public enterprises. The recoveries are the current receipts from a service, which are usually in the form of user charges, fees, interest receipts and dividends.

Mathematically, the subsidy (S) in a service is obtained by:

$$S = RX + (d + i) K + i(Z + L) - (RR + I + D)$$

Where:

RX = revenue expenditure on the service

L = sum of loans advanced for the service at the beginning of the period

K = sum of capital expenditure on the service excluding equity investment at the beginning of the period.

Z = sum of equity and loans advanced to public enterprises classified within the service category at the beginning of the period.

RR = revenue receipts from the service

I + D = interest, dividend and other revenue receipts from public enterprises falling within the service category.

d = depreciation rate

i = interest rate

Services provided by the Govt. are grouped under the broad categories of general, social and economic services.

General services consist of i) organs of state ii) fiscal services iii) administrative services iv) defence services, and v) miscellaneous services. These services can be taken as public goods because they satisfy, in general, the criteria of non-rival consumption and non-excludability. The entitlement to these services is common to all citizens. Since they are to be treated as public goods, they are assumed to be financed through taxes.

Important service categories in social services are i) education consisting of general education, technical education, sports and youth services, and art and culture, ii) health and family welfare, iii) water supply, sanitation, housing and urban development, iv)information and broadcasting, v) labour and employment and vi) social welfare and nutrition.

Under the heading of economics services, the following are included i) agriculture and allied activities, ii) rural development, iii) special area programmes, iv)irrigation and flood control, v)energy, vi)industry and minerals, vii) transport, viii) communications, ix) science technology and environment and x)general economic services.

In the estimation of subsidies these governmental services are divided into three groups:

Group1: all general services, secretariat expenses in social and economics services, and expenditure on natural calamities are included in this subgroup. Being public goods, these are financed out of taxation and are therefore not included in the estimation of subsidies.

Group 2: it consists of services with strong externalities associated with them. In the case of these services, it is arguable that even though the exclusion may be possible, these ought to be treated as merit goods or near-public goods. The provision of subsidies is most justified in this case. Near zero recovery rates in these cases only indicate the societal judgement that these may be financed out of tax-revenues.

Merit social services: elementary education, public health, sewerage and sanitation, information and publicity, welfare of SC, ST's and OBC's, labour, social welfare and nutrition etc.

Merit economic services: soil and water conservation, environmental forestry and wildlife, agricultural research and education, flood control and drainage, roads and bridges, space research, oceanographic research, other scientific research, ecology and environment and meteorology.

Group 3: all the remaining services are clubbed under this head. In these cases consumption is rival and exclusion is possible, therefore cost-recovery is possible through user charges. These services are regarded as non-merit services in the estimation of subsidies.

The distinction between merit and non merit services is based on the perceived strong externalities associated with the merit services. However, it does not imply that the subsidisation in their case needs to be hundred percent. In addition, even if small recoveries are advocated for merit services, the issues relating to the costs of their provision, leakages to non-target beneficiaries, and their effectiveness in attaining the objectives for which they are provided, need to be examined. It also does not mean that there are no externalities associated with non-merit services, or that the subsidies associated with them should be completely eliminated.

Conclusion - The beginning of input subsidies in Indian agriculture can be traced to the philosophy and objectives of agricultural development strategy launched during the mid-1960s. Input subsidies helped in balancing the conflicting interests of farmers and consumers and in achieving macro and micro food-security. Subsidies on fertilizers, electricity and canal water, which account for bulk of subsidies, have been analyzed

India has very huge arable area and lot of investment in agriculture in last few years. But there is large number of decrement is shows in provision of fund towards agriculture sector in five years plan and annual budgets in term of

agriculture subsidies. This thing is responsible for slow growth of agriculture in India and less contribution in GDP of country. The agriculture subsidies are distributed by every country but it percent if very low and numbers of dependent is very large in India. The government of India takes serious measure for development of agriculture sector and agriculture subsidies are one of tool to help for growth of agriculture sector in India.

References :-

1. Banarjee, P.K., (1985), Indian Agricultural Economy: Financing Small Farmers, ChetanaPublication, New Delhi, pp.83-84.
2. Central Statistical Organisation, National Account Statistics,Government of India (2010).
3. Dorward, Andrew, Shenggen Fan, Jonathan Kydd, Hans Lofgren, Jamie Morrison, Colin Poulton, Neetha Rao, Laurence Smith, Hardwick Tchale, SukhadeoThorat, Ian Urey & Peter Wobst (2004), Institutions and Policies for Pro-poor Agricultural Growth', *Development Policy Review*, 22 (6):
4. Government of India, (2010), Union Budget 2009-2010, Expenditure Budget, Vol.1, p.15.
5. Government of India, Economic Survey 2000-2001, p.162.
6. Swaminathan, M.S., (2009), "Drought Management for Rural Livelihood Security", The Hindu, August 17, p.7.
7. Smith, L.E.D. & I. Urey (2002), Agricultural Growth and Poverty Reduction: A Review of Lessons From the Post-Independence and Green Revolution Experience in India', *Report* written as part of a research project on Institutions and Economic Policies for Pro-poor Agricultural Growth, funded by the Department for International Development of the United Kingdom (ESCOR Project R7989).

Table 2 - Details of expenditure on subsidy/concessionduring the year 2000-01 to 2009-10

Period	Amount of Concession Disbursed on Decontrolled Fertilizers (Indigenous + Imported)			Amount of Subsidy Disbursed onUrea			Total for All Fertilizers
	Indigenous P & K	Imported	Total P & K	Indigenous Urea	Imported Urea	Total Urea	
2000-01	3595.00	724.00	4319.00	9480.00	1.00	9481.00	13800.00
2001-02	3759.52	744.00	4503.52	8044.00	147.50	8191.50	12695.02
2002-03	2487.94	736.8	3324.52	7790.00	1.16	7791.16	11015.68
2003-04	2606.00	720.00	3326.00	8521.00	0.82	8521.82	11847.82
2004-05	3977.00	1165.18	5142.18	10243.15	742.37	10985.52	16127.70
2005-06	4499.20	2096.99	6596.19	10625.57	2140.37	12793.45	19389.64
2006-07	6648.17	3649.95	10298.12	12650.37	5071.06	17721.43	28019.55
2007-08	10333.80	6600.00	16933.80	16450.37	9934.99	26385.36	43319.16
2008-09	32957.10	32597.69	65554.79	20968.74	12971.18	33939.92	99494.71
2009-10	16000.00	23452.06	39452.06	17580.25	6999.98	24580.23	64032.29

Source: Central Statistical Organisation, National Account Statistics,Government of India (2010).

****

भारत में घटता स्त्री लिंगानुपात व विधिक उपबंधों का विवेचनात्मक अध्ययन

डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल *

शोध सारांश – प्रति एक हजार बालकों के जन्म पर बालिकाओं के जन्मों की संख्या के अंतर को लिंगानुपात कहा जाता है। भारत में जनगणना 2011 के अनुसार प्रति 1000 पुरूषों पर 943 महिलाएँ हैं जो यह दर्शाता है कि लिंगानुपात में गिरावट हो रही है। इसका प्रमुख कारण पितृ सत्तात्मक व्यवस्था, बेटे की प्रबल चाहत, दहेज प्रथा जैसे कुप्रथा का होना, भारत में महिलाओं का निम्न स्तर, कन्या शिशु के प्रति भेदभाव है। भारत में कन्या भ्रूण हत्या वर्तमान की समस्या नहीं है बल्कि मुगलकाल में हिन्दु क्षत्रियों द्धारा भी कन्या हत्या के प्रमाण प्राप्त होते हैं। वर्तमान समय में भारत के कुछ राज्यों का लिंगानुपात अत्यंत ही कम है जिसमें हरियाणा का लिंगानुपात 879, उत्तार प्रदेश, 912, मध्य प्रदेश 931, बिहार 918, पंजाब 895, छत्तीसगढ़ 991 यह दर्शाता है कि भारत के राज्यों में लिंगानुपात भिन्न है। स्पष्ट होता है कि जहाँ एक ओर समानता की बाात करते हैं। वहीं दुसरी जरफ लिंगनुपात में कमी यह दर्शाता है कि भारत में लोगों को बेटी से अधिक बेटे प्यारे हैं, जिस देश में लिंगानुपात असमान होता है उस देश में महिला अत्याचार जैसी समस्याएं आना स्वभाविक है। भारत में लिंगानुपात को रोकने के लिए विभिन्न विधायी उपबंध के अलावा विभिन्न केन्द्रीय एवं राज्यों में नीतियाँ बनायी गयी है परन्तु आकड़े यह बताते हैं कि अभी भी इस दिशा में प्रयास शेष है। इस अध्ययन में घटती हुई लिंगानुपात को रोकने के लिए बनाये गये विधियों का अध्ययन है।

शब्द कुंजी – लिंगानुपात, घटता, विधि, विधायी, अंतर।

शोध का उद्देश्य – इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भारत में घटती हुई लिंगानुपात को रोकने के लिए बनाये गये प्रमुख कानूनी उपबंधों का अध्ययन करना है।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र सैद्धांतिक विधि पर आधारित है जिसमें सर्वमान्य पुस्तकों तथा आलेखों में व्यक्त विचारों का समावेश करते हुए विवेचनात्मक अध्ययन किया गया है।

विवेचना – भारत में लिंगानुपात को बनाए रखने के लिए ब्रिटीश काल से ही प्रयास किये जा रहे हैं। ब्रिटीश काल में संहिताबद्ध भारतीय दण्ड संहिता 1860 में गर्भपात को एक दण्डात्मक कार्य बताया गया है। इस संहिता धारा 312 के अनुसार जो कोई गर्भवती स्त्री का स्वेच्छेया गर्भपात कारित करेगा यदि ऐसा गर्भपात उस स्त्री के जीवन बचाने के प्रायोजन से सद्भावपूर्वक कारित न किया जाए तो वह दोनों में से किसी भांती के कारावास से जिसकी अवधि तीन वर्ष तक हो सकेगी या जुर्मने से या दोनों से दण्डित किया जएगा और यदि वह स्त्री स्पंदनगर्भा हो तो वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि सात वर्ष तक हो सकेगी दण्डित किया जाएगा और जुर्मने से भी दण्डित होगा।

इसी संहिता के धारा 313 स्त्री की सहमति के बिना चाहे वह स्त्री स्पंदनगर्भा हो या नहीं पूर्ववर्ती अंतिम धारा में परिभाषित अपराध करेगा। वह आजीवन कारावास से या दोनों में से किसी भांति के कारावास में से जिसकी अवधि 10 तक की हो सकेगी दण्डित किया जाएगा और जुर्मने से भी दण्डित होगा।

धारा 314 गर्भपात कारित करने के आशय से किये गये कार्यो के द्धारा कारित मृत्यु का संबंध में 10 वर्ष की कारावास एंव जुर्मने का प्रावधान किया गया है।

संहिता की धारा 315 शिशु का जीवित पैदा होना रोकने या जन्म के पश्चात् उसकी मृत्यु कारित करने के आशय से किये गये कार्य को 10 वर्ष तक की अवधि का कारावास एवं जुर्माना दोनों से दण्डित करने का प्रावधान है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि लिंगानुपात को बनाये रखने के लिए भारतीय दण्ड संहिता में ब्रिटीश काल से ही प्रावधान किये गये हैं।

भारत में घटते हुए लिंगानुपात को रोकने के लिए गर्भधारण से पूर्व या उसके पश्चात् लिंग चयन के प्रतिशेध और आनुवांशिक असमानताओं, मेटाबॉलिक विकारों, कुछ जन्मजात विकृतियों या लिंग सहलग्न विकारों का पता लगाने के प्रायोजन के लिए प्रसव पूर्व निदान तकनीकों को विनियमन तथा इन तकनीकों का लिंग चयन एवं लिंग आधारित गर्भपात के लिए दुरूपयोग रोकने तथा उनसे संबंधित विषयों का उपबंध करने के लिए भारत सरकार द्धारा सन् 1994 में प्रसवपूर्व निदान तकनीकी (विनियमन एवं दुरूपयोग निवारण) अधिनियम, 1994 लागु किया गया।

इस विषय पर फरवरी 2000 में माननीय सर्वोच्च न्यायालन में एक जनहित याचिका दाखिल की गयी और इस कानून को एक ठोस रूप देने तथा इसे कठोरता से लागू किये जाने की अपील की गई। माननीय न्यायालय ने इस विषय को गंभीरता से लेते हुए भारत सरकार को अधिनियम में सुधार लाने के निर्देश दिये। संसद द्धारा इस विधि को माननीय न्यायालय के निर्देशानुसार संशोधित करते हुए 20 जनवरी 2003 को इसे पुरे भारत में संशोधित रूप से लागु किया तब से यह विधि गर्भधारण पूर्व एवं प्रसव पूर्व निदान तकनिकी (लिंग चयन प्रतिषेध) अधिनियम, 1994 (पी. सी. एण्ड पी. एन. डी. टी. एक्ट 1994) के नाम से भारत में लागू है। इस अधिनियम में निम्नलिखित प्रावधान रखे गये हैं–

* सहा. प्राध्यापक, डॉ. सी. वी रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

यह अधिनियम गर्भ धारण के पूर्व तथा पश्चात् लिंग निर्धारण पर रोक लगाता है। इस अधिनिमय में सभी अल्ट्रासाउड मशीन के प्रयोग के क्लिनिकों का पंजीयन आवश्यक किया गया है।

प्रसव पूर्व निदान तकनीकी का प्रयोग केवल अनुवांशिक विसंगतियों जन्मजात विकृतियों एवं विकारों के चांज के लिए किया जायेगा। इस अधिनियम में प्रसव पूर्व परीक्षण करने वाले व्यक्ति अथवा अन्य कोई भी व्यक्ति गर्भवति महिला अथवा उसके रिश्तेदारों को शब्दों इशारों या अन्य किसी भी तरीकों से शिशु की भ्रूण लिंग के बारे में नहीं बता सकेगा। इसके अतिरिक्त प्रसव पूर्व लिंग निर्धारण सुविधा की उपलब्धता के बारे में प्रचार प्रसार करना एक दण्डनीय अपराध बनाया गया है।

इस अधिनियम में प्रसव पूर्व लिंग निर्धारण करने वाले ऐसे चिकित्सक एवं रेडियोलॉजिस्ट जो लिंग निर्धारण के दोषी पाए जायेगें उन्हे तीन वर्ष का कारावास व 10,000 रूपये तक के जुर्मने की सजा व उसी अपराध की पुनरावृत्तिा करने पर 5 वर्ष तक का कारावास व 50,000 रूपये तक जुर्मने के सजा के साथ चिकित्सक के पंजीयन के निलंबन का भी प्रावधान किया गया है।

लिंग परिक्षण हेतु विज्ञापन करने पर तीन वर्ष तक का कारावास एवं 10000 रूपये तक जुर्मने का प्रावधान है। इसके साथ ही भ्रूण का लिंग परिक्षा करवाने वाले व्यक्ति प्रथम अपराध की दशा में 3 वर्ष तक का कारावास एवं 50,000 तक जुर्माना उसी अपराध की पुनरावृत्ति करने पर 5 वर्ष तक का कारावास व 1,00,000 रूपये तक जुर्मने के सजा का प्रावधान है।

इस अधिनियम में उस महिला को अपराधी नहीं माना गया है जिसे ऐसा परिक्षण के लिए मजबूर किया गया हो इस अपराध के संबंध में संज्ञान लेने व विचारण करने की शक्ति सिर्फ महानगर मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी न्यायिक मजिस्ट्रेट को दी गई है।

इस अधिनियम द्वारा केन्द्र, राज्य व जिला स्तर पर अधिनियम के प्रावधान के अनुसार पंजीयन व दस्तावेजीकरण संबंधीत कार्य करने के लिए सक्षम प्राधिकारियों की नियुक्त के संबंध में भी प्रावधान किये गये हैं।

उपसंहार – भारत में घटते लिंगानुपात को रोकने के जो विधिक प्रावधान किये गये हैं वह बहुत ही कारगर सिद्ध हो रहे हैं जैसा कि सन 2001 की जनगणना के अनुसार औसत लिंगानुपात 933 था जो कि 2011 की जनगणना में 943 थी। यह जो वृद्धी दृष्टीगोचर हो रही है वह विधियों के क्रियान्वयन का ही परिणाम है। दस वर्षो में मात्र 1 प्रतिशत वृद्धि दर संतोषजनक तो नहीं है किन्तु एक आशा के रूप में देखा जा सकता है। घटती हुई लिंगानुपात को रोकने के लिए समुदाय को आगे आने की आवश्यकता है क्योंकि विधियों के क्रियान्वयन मात्र से ही समस्याओं का निदान नहीं हो सकता। जब तक समाज इस तरह की सामाजिक बुराईयों का स्वयं अंत न कर दे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय दण्ड संहिता, 1860
2. प्रसव पूर्व निदान तकनिकी (लिंग चयन प्रतिषेध) अधिनियम, 1994
3. जनगणना 2001
4. जनगणना 2011

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Indo-US Nuclear Deal: A New Beginning in Indo-US Relations

Javeed Ahmed Tali* Dr. Ratan Senha**

Abstract - The civilian nuclear cooperation is the name assigned to a joint accord on strategic cooperation between the two countries. The energy segment is the key in enhancing India's economic intensification to double digit. The joint statement of 2005 between the two nations is considered as a historic step. Hyde Act, 123 agreement, IAEA Safeguards and NSG waiver were main postulates for the nuclear deal to take place despite domestic and international reactions. The passage of the agreement in both the countries legislatures finally paved way for the enforcement of the deal. Both the nations were able to have lot of benefits through this historic nuclear deal. It balanced the strategic and economic relation between the two nations.
Keywords - USA, India, 123 Agreement, nuclear energy, Nuclear Suppliers Group (NSG).

Introduction - There is a long history of Indo-US nuclear relations. Prior to India's independence, the Tata Institute of Fundamental Research was founded under the brilliant leadership of Homi Bhabha. He did a lot of work for the national interest. Due to his painstaking efforts, India had succeeded to produce atomic energy through a fission process. At that stage India considered nuclear energy only as a mean of improving the living conditions of impoverished people in the country. However, India's quest for using nuclear energy for connecting its constructive potential continued, as was clearly outlined by Nehru in 1957.[1]

On the nuclear issue, friction between India and America erupted when nuclear powered countries tried to establish their monopoly over nuclear weapons and formulated a discriminatory treaty popularly known as Non-proliferation Treaty (NPT) 1968 came into existence in 1970. India opposed the Treaty strongly. The friction on nuclear issue between the two countries reached to culmination, when India conducted its first nuclear test at Pokhran in May 1974. In the reaction to this nuclear explosion, US ceased all nuclear cooperation with India and suspended the supply of nuclear fuel to Tarapur reactors. This was a clear violation of 1963 agreement under which it was an obligation upon US to supply fuel for Tarapur reactors, whereas the agreement did not prohibit Peaceful Nuclear Explosion.[2]

T. N. Kaul then Indian Ambassador wrote a letter to the US Secretary of State, Henry Kissinger on July 6, 1974 in which he made it clear that the peaceful nuclear explosion had used only Indian materials, personnel and technology and did not violate any bilateral or international agreements to which India was signatory. India gave assurance that no materials from Tarapur reactors had been or would be used for explosives. But, in America, 1974 nuclear test was regarded as having used the nuclear material produced by a Canada-supplied nuclear reactor (CIRUS: Canada-India Reactor United States) which used as moderator heavy water supplied by the US under a 1956 contract. The US then took an initiative in 1974 to establish a Nuclear Suppliers Group (NSG), an informal body of the countries having or supplying nuclear fuel that agreed not to transfer nuclear material and sensitive nuclear technology to non-NPT signatory states.[3]

After this, the matter of supply of nuclear fuel to India was controversial between US Congress and the US Executive. In September 1977, Congress passed the Nuclear Non Proliferation Act (NNPA), which became law after President Carter affixed his signature on May 10th, 1978. Tarapur plant was brought under the NNPA. On April 20, 1978 the Nuclear Regulatory Commission declined to export fuel to Tarapur reactors under license issued by the State Department. American President Carter overruled this decision on April 27. On May 1, a joint Senate house resolution was introduced in Congress to veto the President's decision. Both the Senate and the House Foreign Relations Committees rejected the veto resolution with a directive to US executive and the Indian government unless full scope safeguards were acceptable to Congress. A similar message was also transmitted to European Atomic Energy Community (EURATOM), which imported 50 per cent of its nuclear requirements from the US. It consequently decided to re-negotiate the terms of its agreement. As the result, the US nuclear cooperation with India, including nuclear fuel supplies to Tarapur reactors, ceased in 1980,

* Research Scholar (Political Science) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Professor (Political Science) V. R. G. Girls PG College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA

and the 1963 Agreement terminated in 1993.[4]

In 1995, the nuclear issue again became the cause of disagreement between two countries when the NPT extended for indefinite period. On similar ground, US took another initiative to cap the nuclear proliferation and formulated Comprehensive Test Ban Treaty (CTBT) in 1996. Major Powers led by America pressurized India to join these treaties but India strongly condemned these on the ground of their discriminatory nature. Indo-US relations again came at nadir on nuclear issue when India again went on nuclear explosions in 1998. The Clinton administration imposed mandatory sanctions on India.

Both the countries paved the way for nuclear cooperation by signing Next Steps in Strategic Partnership (NSSP) on January 12, 2004. In October 2004, at the G-8 meeting in St Petersburg, President Bush had given a signal and said that India and the US needed to discuss nuclear issues. Indian officialdom caught the words and immediately took the matter up with its US counterparts.[5] The hopes for nuclear cooperation between two counties were raised during the visit of US Secretary of State, Condoleezza Rice to India in March 2005. During her visit, Rice told Manmohan Singh that 'the United States would break with longstanding non-proliferation orthodoxy and work to establish full civil nuclear cooperation with India'.[6] On June 28, 2005, India and the US agreed to resume cooperation in the highly sensitive area of civilian nuclear energy.[7]

India's quest for Energy and Indo-US Joint Accord - The energy segment is the key in enhancing India's economic intensification to double digit. The progress of the energy segment in the country is been inhibited by capital, technology and environmental issues. Investments in energy sector have become imperative and to attract investments, Indian government has provided striking packages and policy incentives. Energy security for a country as large as India can only be provided by a diversified portfolio. An assessment of data shows India as the fifth largest producer of electricity in the world. However, while by hydro, coal, oil and gas India is amongst the top 10 countries of the world for production of electricity, but it is nowhere near the top 10 with respect to nuclear power generation. For a country like India, this is an inconsistency in need of modification. India needs to speed up the improvement of the sector to meet its growth aspirations. To stimulate economic growth, every source of energy needs to be exploited. While meeting today's needs, we have to continue to look into the future and work out strategic plans to meet future energy requirements. India and US have been witnessing unprecedented growth in their bilateral ties. The collaboration in energy field between the two nations has been crystallizing from the years in government, academia and industry. Currently some alliance exists in the fields of coal, gas and electricity and a number of US enterprises are working in India. Energy cooperation between the two is progressing in the areas like energy efficiency, nuclear energy, the application of biotechnology in biomass gasification, geophysical exploration, renewable, and other clean energy technologies. With advancement in technology and progress on the commercial deployment front, nuclear energy can have an imperative role in the electricity field. A nuclear energy policy must first of all be grounded in the confidence that India has a balanced and justifiable need for nuclear power.[8]

In 2003, the Bush administration not only rejuvenated the suspended nuclear safety cooperation with India, but also prolonged it to the greater possible extent within the sphere of U.S. domestic laws and international commitments toward nonproliferation. As part of this discourse, the U.S. National Regulatory Commission (NRC) was engaged with its Indian counterpart the Atomic Energy Regulation Board (AERB) to make sure the regulation and safety of nuclear reactors in India. India became eligible for Excess Defense Articles (EDA) on grant basis under the US Foreign Assistance Act in 2003. Its aim was to support the war on terrorism, promote interoperability of systems and to modernize previously solid equipment. Under the Presidency of Bush, US start giving much importance to India and actively sought to make India a trategic partner. For the first time the Indo-US Defense Policy Group met and outlined a strategic partnership and commenced implementation of the same, which included joint training and procurement of some more defense related equipment. This subsequently led to an agreement between India and US on 'Next Steps in the Strategic partnership' (NSSP) in 2004. NSSP was the first document that clearly identified along with others Civilian nuclear activities as a strong spot for cooperation between the two countries.[9] It sought to expand collaboration on nuclear and civilian space technology, missile defense and dual use high-technology trade.[10] It aimed at providing India civilian nuclear technology to address her dreadful energy needs and bound the dangers of nuclear accidents at obsolete plants. Technology transfer and close cooperation in business and, science and technology including in the nuclear and missile technology areas also form an essential part of the bedrock of the partnership. In January 2004 NSSP was announced by Vajpayee and Bush, then reaffirmed by Manmohan Singh and Bush in September 2004, and at the movement moving into its second phase. Along with various positive developments which took place in order to transform the bilateral relation, the most vital was the March 2005 visit of Condaleezza Rice to India, during her visit she revealed the eagerness of US to cooperate with India in the field of civilian nuclear energy. Indians were exceedingly surprised by this offer and lost no time in seizing the opportunity and immediately after her visit, the two nations started negotiations to chalk out contours for this broad cooperation. This restoration of the nuclear safety cooperation with India served as a significant confidence-building measure and assured both the countries that they had a common interest in providing safe

and reliable nuclear energy. Anil Kakodkar as chairman of the Indian Atomic Energy Commission while underlining India's commitment to nonproliferation, made an appeal for the deletion of technological embargoes. He stated, "We have a commitment and an interest in contributing as a partner against proliferation. we must discard the baggage inherited from the past which restricts the flow of equipment and technologies related to the peaceful uses of nuclear energy." Significantly, in July 2005, a mere couple of weeks before the scheduled visit of the Prime Minister of India to the U.S., the chairman of the AERB, A. Gopalakrishnan, for the first time drew public attention to the shortage of fuel for the Indian nuclear reactors. Calling for international cooperation in the supply of nuclear fuel, A. Gopalakrishnan criticized the silence maintained by the Indian government and the Department of Atomic Energy (DAE), he noted, "it turns out as the chief setback for the officials of NPCIL (Nuclear Power Corporation of India Limited) and the Nuclear Fuel Complex (NFC) to some extent.[11] Contrary to the common discernment, he emphasized that the imperative need for India, was not nuclear reactors, but fuel for the nuclear reactors already functioning or to be built. Cognizant of U.S. domestic laws and international commitments that barred nuclear trade with India, Gopalakrishnan anticipated that assistance on the part of Washington could at least support the removal of NSG objections so as to facilitate India to import the gravely needed uranium, i.e., nuclear fuel, from other countries. Interestingly, India's growing nuclear energy needs were being recognized at the international level too.[12]

The US has been repetitively assured by two successive Indian governments of this desire, assurances that have been delivered in terms of concrete instances of support to the US. India while preserving as much recognition as possible as a nuclear weapon state, both NDA and UPA governments have been more than eager to surrender or narrow down their strategic and foreign policy options across the board, aligning with the US on everything from missile defense to climate change. On 28 June 2005, the new agenda for the Defense Relationship was signed between the US Defense Secretary and the Indian Defense Minister, to facilitate cooperative exercises, information sharing and greater opportunities to jointly build up technologies and deal with security and humanitarian issues, this came as a herald to the coming July 18 statement between the two nations. After more than a few years of joint deliberations between the two countries, an agreement on 18 July, 2005 was signed on the strategic relationship between the two.[13] Both the leaders issued a joint declaration on civil nuclear cooperation and significantly, Arvind Virmani quoted that it is in India's favour to utilize the opportunity provided by Bush administration, to enhance India's strategic capability and global power. However, the major advancement from international relations point of view and energy augmentation for India is the consensus reached between the two nations in July 2005. The joint statement between the two nations is considered as a historic step. The three major dialogue areas among a wide spectrum of areas for cooperation entrenched in the statement were: strategic (including global issues and defense), economic (including trade, finance, commerce, and environment) and energy. The civil nuclear technology has been acknowledged as a key area of collaboration, attempted at ending three decade long segregation of India by throwing open the most recent civil nuclear technology and in the course, facilitating accelerated fabrication of nuclear energy, thus tumbling the future utilization of hydrocarbon by India. The Foreign Relations Committee of the US Senate approved the Indo-US Energy Security Cooperation Act intended at increasing bilateral trade and investment in the Indian energy zone by working with the public and private sectors to promote identification of areas for cooperation and build on the wide array of existing collaboration between the two countries to organize safe, clean, consistent and inexpensive sources of energy. Following agreement, Manmohan Singh made certain statements in Parliament, which now bind the government to definite commitments. These were a claim regarding deal that it will provide "full" admittance to nuclear technology in the civilian area, including what is termed as "dual use" technologies, like those related to reprocessing of fuel, enrichment process and the fabrication of heavy water. In return, besides separating civilian and military nuclear facilities, and placing the former under safeguards stipulated by the International Atomic Energy Agency, India would stick to its voluntary cessation on nuclear testing and cooperate with US on a fissile material cut-off treaty. The mutual views to nuclear energy, which are more political than legal, centered on the amplification of the non-proliferation of weapons of mass destruction and on energy cooperation to prevail over India's rising energy scarcity. India like other countries will have the identical responsibilities and practices with sophisticated nuclear technologies, and has agreed on: i. Identification and separation of civilian-military nuclear facilities, and placing all the civilian nuclear facilities voluntarily under the International Atomic Energy Agency (IAEA) safeguards system. ii. Implementation of IAEA's additional protocol with respect of civilian nuclear facilities. iii. Enduring one-sided cessation on nuclear testing. iv. Working with US for the wrapping up of a Fissile Material Cut-Off Treaty (FMCT). v. Put in practice broad export controls on susceptible goods and technologies. vi. Harmonization and devotion of Missile Technology Control Regime (MTCR) and Nuclear Supplier Group (NSG) Guidelines.[14]

The US has reciprocally promised that it will: i. Adjust domestic laws and policies after seeking agreement from Congress. ii. Work with friends and allies to adjust international regimes to facilitate full civil nuclear energy cooperation and trade with India, and iii. Consult with partners on India's participation in the fusion energy consortium ITER and support India's part in work to develop

advanced nuclear reactors.

Significance of the Accord - The 2005 joint statement was examined at different levels by experts, think tanks, politicians and commentators of media. It manifested the commencement of the next phase of strategic partnership entailing intensified cooperation on essential areas, including nuclear energy and 'international efforts to prevent WMD proliferation'. From the political point of view, the agreement had the most vital and extensive impacts. It established Indian relationship to US with new interests. India got recognized as a de facto nuclear power and there was prospect of American favour for becoming a global power and permanent membership in the United Nations Security Council. The joint statement detached almost three decades old technological sanctions and provided multifaceted assistance of influential economy of the world. It also provided energy options in nuclear area and made it a feasible resource for Indian growing economy. More importantly, the deal turned to be a huge global leverage for India being partner of the US, especially in ensuring India's safety measures in an unstable neighbourhood.

The main feature of the Joint Statement being the assurance by the U.S. President according to which US adjust domestic laws and policies after seeking agreement from Congress, as well as international regimes to enable full civil nuclear energy cooperation with India. After amendment in its domestic laws US tried to accommodate India by persuading the members of the NSG to restart nuclear cooperation and trade with India.[15] It broadened the energy options for India and predicted nuclear energy as a feasible basis of power for its growing economy. India, on its part, is to unilaterally lay its civilian nuclear reactors and nuclear materials to be acquired from US within the purview of IAEA's new India specific guidelines; for this, India is to draw a wall of separation between its nuclear defensive deterrence programme and nuclear energy producing reactor system. A. Gopalakrishnan (2005) quoted that the joint statement faced varied opinions in both the countries, with both opposition and favour coming from important individuals and political parties. Oddly, while the US non-proliferation lobby considers that the intentional collaboration with India would spoil the current nuclear control regime, the Indian opponents assert that the agenda will gravely edge the country's nuclear weapon capabilities, harm national security benefits and harm aboriginal nuclear development. The prime minister laid about joint agreement in a clear cut manner to Union Parliament on July 29, saying" Our nuclear programme is exceptional. It composes the entire assortment of activities that describe a highly developed nuclear power, the scientists already accomplished marvelous work and we are moving ahead fine on this programme as per the unique visualization outlined by Pandit Jawaharlal Nehru and Dr Homi Bhabha." He went on to argue that" nuclear power has to maintain an escalating role in our power generation plans" and the deal offers a means where "our aboriginal nuclear power programme based on domestic assets and national hi-tech capabilities would prolong to develop.

At the end of the joint accord of 2005, the Indian PM invited US President to tour India, which the latter accepted and as per his visit to India in March 2006, the two sides finalized a plan for the separation of civilian-military facilities of India. The key essentials were[16]: i. Eight indigenous Indian power reactors will be placed under an India specific safeguards agreement, the total number of power reactors is 22 and 14 will be brought under safeguards. ii. Future power reactors would be placed under safeguards, if India declares them as civilian. Some facilities in the Nuclear Fuel Complex e.g; fuel fabrication will be specified as civilian in 2008. iii. Nine research facilities and three heavy water plants would be declared as civilian.

The following facilities and activities are outside the separation list:i. Eight indigenous Indian power reactors. ii. Fast Breeder Test Reactor (FBTR) and Prototype Fast Breeder Reactor (PFBR) under construction. iii. Enrichment facilities. iv. Spent fuel reprocessing facilities (except for the existing safeguards on the Power Reactor Fuel Reprocessing (PREFRE) plant. v. Research Reactors: CIRUS (which will be shut down in 2010), Dhruva, Advanced Heavy Water Reactor. vi. Three heavy water plants. vii. Various military-related plants (e.g; prototype naval reactor). As part of its plans for separating its facilities, India will eventually begin negotiations with the IAEA about the nature of safeguards it will put into practice. The leadership of both the nations hailed the March 2006 agreement as the anchor of a new "strategic partnership." Both the leaders received a report from chief executives of five US corporations and ten Indian companies to improve investment and commercial links. The corporation executives stressed that the greater US investment could help India to further develop its infrastructure, and American technical skill will be helpful for India to upgrade its low-cost manufacturing. India's target to construct nuclear power plants is to generate 40,000 megawatts of electricity by 2020 an aim proclaimed by Prime Minister Singh. If the contract with the US is successful, 'India will have admittance to the global nuclear technology market', said by S. K. Jain chairman of Nuclear Power Corporation of India. He added, once the deal with the US is successful, supplies of enriched uranium would be 'included in contracts to install reactors.'

Some points revealed out as the logic of the US-India cooperation included that nuclear power is grave in meeting 'India's energy requirements', while also creating 'innovative business opportunities' for U.S. firms, which translates into 'new jobs for American workers'. Another main issue, the US vice president said: 'India will go into the global nonproliferation mainstream by sorting out its civil-military nuclear programmes'. The separation plan envisages requirements for remedial procedures that India may take to make certain continuous process of its civilian nuclear reactors in the incident of interruption of far-off fuel supplies. In November 2006, India received the largest trade

delegation from the US which naturally included nuclear equipment companies. The Business Council of the Chamber of Commerce of India and US predicted that the new US law on nuclear relation with India would 'yield a gift of opportunities' for the two countries. K. Subrahmanyam, a foreign policy political analyst and chairman of Indian Government's Task Force on Global Strategic Developments, was quoted as saying that American interests and India's interests are 'at present, different', he further pointed out that it would take time for the differences to be 'harmonized', but added that 'the door has opened'. The US House of Representatives on 8 December, 2006, approved the conference report and passed the "Henry J. Hyde United States-India Peaceful Atomic Energy Cooperation Act of 2006" gaining 330 votes out of 359. The US Senate also offered a "unanimous consent" to the conference report on 9 December 2006 and subsequently, on 18 December, 2006, President Bush, in a crucial development, signed the Hyde Act into law (PL 109-401) by President Bush on 18 December 2006, which is considered as a big step in the direction of reintegrating India with global nuclear market.

Conclusion - The bilateral civil nuclear cooperation is a milestone as the leadership of both the nations has managed to challenge grave odds to make it happen. Without being the member of nonproliferation regime, the nuclear accord makes India to attain a recognized (de facto) nuclear status. It is all about civilian nuclear energy cooperation so that to meet the growing India's energy requirements, but it can be a predicament for the nonproliferation regime that India has a remedial determinence to sustain its nuclear accumulation under the nuclear agreement. Through this deal, US is exclusively attempting to strengthen India into its coalition alliance to encourage its strategic benefits in the region. In essence, non-proliferation objective is to meet the national interests of two states and also United States sought the nuclear agreement with India principally for two reasons: to control China and to tap the enormous Indian nuclear market. The nuclear deal also serves the broad economic objectives of both the nations.

References :-

1. Chadha, Vivek, Indo-US Relations: Divergence to Convergence, op.cit., p.133.
2. Ganaie, Muzaffar Ahemad, 'Indo-US Civil Nuclear Deal: Heralding a New Era in Indo-US Relations' op. cit., p.46.
3. Gaan, Narottam, India and the United States: From Estrangement to Engagement, op. cit., pp.222-223.
4. McGoldrick, Fred, Bengelsdorf, Harold and Scheinman, Lawrence, 'The US-India Nuclear Deal: Taking Stock', Arms Control Today, Vol. 35, No. 8, October 2005, pp. 67. Available online at www.armscontrol.org/act/2005_10/Oct-Cover. (Accessed on 2507-2011)
5. Sridharan, Kripa, Indo-US engagement: An Emerging Partnership and its Implications, op. cit., p.20.
6. Bhattacharya, Amar, Strategic Breakthroughs in Indo-US relations, World Focus, Vol. XXIX, No-7, July 2008, p.244.
7. Yadav, Surya Narain, Indo-America Strategic Partnership: Experiences and Expectations, op. cit., p.118.
8. Sethi Manpreet, Inputs for a Nuclear Energy Policy for India, in 'Nuclear Power and Non-Proliferation' Jasjit Singh (ed.), Knowledge World, New Delhi, ISBN 8187966-31-9, 82, (2004)
9. Tasleem Sadia, Indo-US Nuclear Cooperation: Altering Strategic Positioning and Shifting Balance of Power in South Asia", Regional Centre for Strategic Studies, Colombo, ISBN 978-955-8051-40-5, 26, (2008)
10. Purushothaman U., Indo-US Defence Relations: Challenges and Prospects, in 'Indo-US Relations: Dimensions and Emerging Trends', Mohammed Badrul Alam (ed.), Shipra Publications, New Delhi, ISBN 978-817541-671-0, 30, (2013)
11. Gopalkrishnan A., Indo-U.S. Nuclear Cooperation: A NonStarter, Economic and Political Weekly, XL(27), 29352940, (2005)
12. Bhatia V., 'Change in the US Nuclear Nonproliferation Policy Toward India (1988-2005): Accommodating the Anomaly', Ph. D. Thesis, Edmonton, University of Alberta, (2012).
13. Iyenger P.K., There are Weighty Reasons not to Accept the 123 Agreement, in Strategic Sellout: India-US Nuclear Deal by Bharat Karnad and et al (eds.), Pentagon Press, New Delhi, ISBN 978-81-8274-432-5, 286-292, (2009)
14. Senger S.K.S. and Rathore R. S., The Impact of Indo-US Deal on India's Nuclear Policy, in 'India's Nuclear Policy, Disarmament and International Security', Dr. S. K. Mishra (ed.), Radha Publications, New Delhi, ISBN 81-7487-4305, 119, (2006)
15. Jabeen Mussarat and Ahmad Ishtiaq, Indo-US Nuclear Cooperation, South Asian Studies, 26(2), 421, (2011)
16. Squassoni Sharon, India's Nuclear Separation Plan: Issues and Views, Congressional Research Service, 17, (2006)

****

भारतीय संदर्भ में साइबर अपराध निवारण हेतु सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 के प्रावधानों का विधिक अध्ययन

डॉ. जैनेन्द्र कुमार पटेल *

शोध सारांश – विधि का प्रमुख प्रयोजन समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करना तथा शांति व्यवस्था बनाए रखना है। सामाजिक परिवर्तनों के साथ विधि में भी परिवर्तन करना आवश्यक होता है। इसी श्रृंखला में सूचना प्रौद्योगिकी एवं कम्प्यूटर विज्ञान की प्रगति के फलस्वरूप इनसे जुड़े अपराधों की रोकथाम के लिए कानून निर्मित किये जाना तथा विद्यमान कानूनों में संशोधन किया जाना आवश्यक हुआ। वर्तमान 21 सदी के कम्प्यूटर युग में अनेक ऐसे अपराध अस्तित्व में आये हैं जिनके संबंध में पहले कभी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। अब साइबर अपराध एक ही स्थान से दूरस्थ देशों में विभिन्न जगहों पर कारित होना सम्भव हो गया है जबकि अपराधी का अपराध के स्थान पर उपस्थित रहना आवश्यक नहीं है। नई प्रौद्योगिकी के परिणामस्वरूप दूर संचार क्षेत्र कें प्रगति के कारण अब कम्प्यूटर की छोटी सी डिस्क या फाइल में सन्देशों या जानकारी का अपार भंडार संग्रहीत करना, परिचालित करना या डाटा इधर-उधर वितरित करना अत्यन्त सरल हो गया है परन्तु साइबर अपराधियों द्वारा इनका दुरूपयोग किये जाने के अवसरों में भी उतनी ही वृद्धि हुई है।

भारत में साइबर अपराधों के निवारण एवं नियन्त्रण के लिए दंडविधि तथा साक्ष्य विधि में कतिपय संशोधनों के अतिरिक्त एक पृथक विधि अस्तित्व में लाया गया है, जो सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 के रूप में प्रभावी है। इस अध्ययन में सूचना प्राद्योगिकी अधिनियम 2000 के प्रावधानों का अध्ययन किया गया है।

शब्द कुंजी – कम्प्यूटर, प्रौद्योगिकी, साईबर, विधि, दण्ड।

शोध का उद्देश्य – इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य साईबर अपराधों के निवारण में सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम 2000 के विधिक प्रावधानों का अध्ययन करना है।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र सैद्धांतिक विधि पर आधारित है जिसमें सूचना प्राद्योगिकी अधिनियम 2000 के अन्तर्गत दिये गये विधिक प्रावधानों तथा विभिन्न आलेखों में व्यक्त विचारों का समावेश करते हुए विधिक अध्ययन किया गया है।

विवेचना – कुछ परम्परागत अपराध जैसे, कपट, षड़यन्त्र, जासूसी, अश्लीलता, मानहानि आदि अपराध भी आजकल इन्टरनेट के माध्यम से घटित हो रहे हैं। ऐसे साईबर अपराधों के निवारण हेतु भारतीय दण्ड संहिता, 1860 के प्रावधान अपर्याप्त प्रतीत हुए तथा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सन् 1996 में पारित प्रस्ताव तथा उसके द्वारा अधिनियम 'मॉडल लॉ' के आधार पर की गई है। ताकि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाले ई-वाणिज्यिक को विनियमित किया जा सके तथा सभी जगह एक समान साइबर कानून लागू हो। जिसके निवारण हेतु इन अपराधों से संबंधित पृथक कानून सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 पारित किया गया जो 17 अक्टूबर, 2000 से प्रभावी हुआ। इस अधिनियम में कुल 94 धाराएँ तथा चार अनुसूचियाँ हैं। इसे सन् 2008 में संशोधित करके अधिक व्यापक रूप दिया गया। संशोधित अधिनियम दिनांक 5 फरवरी 2009 से लागू किये गए जिनमें अप्रैल 2011 में पुन: संशोधित किया गया है।

इस अधिनियम का मूल उद्देश्य इलेक्ट्रानिक डाटा के विनियमन तथा इलक्ट्रानिक माध्यम से संचारित अन्य संव्यवहारो का विधिक मान्यता प्राप्त हो तथा कागजी पत्र व्यवहार तथा दस्तावेजों के स्थान पर इलेक्ट्रानिक डाटा फाइलिंग से दस्तावेजों को संरक्षित किया जा सके। इस अधिनियम द्वारा ई-वाणिज्यि को मान्यता प्रदान की गई जिससे इलेक्ट्रानिक पत्राचार के माध्यम से वाणिज्यिक एवं व्यापारिक संव्यवहार सुविधाजनक हो गए। उक्त अधिनियम के प्रमुख लक्षण निम्नानुसार हैं-

1. इलेक्ट्रानिक रूप में तैयार किये गये रिकार्ड को वैसी ही वैधानिक मान्यता प्रदान की गई जैसी कागजी दस्तावेजों को प्राप्त है।
2. अधिनियम द्वारा डिजीटल हस्ताक्षरों को भी मान्यता प्रदान की गई जिनका प्रमाणन प्राधिकारी द्वरा अधिप्रमाणन आवश्यक होता है।
3. अधि-निर्णय प्राधिकारियों द्वारा दिये गये निर्णयों के विरूद्ध अपील की सुनवाई हेतु अपीलीय न्यायाधिकरण की स्थापना की गई।
4. इस अधिनियम के उपबनध परक्राम्य लिखत पावर ऑफ अटार्नी न्यास, इच्छा पत्र तथा अचल से भी सम्बन्धित विक्रय या अभिहस्तांतरण की संविदा के प्रति लागू नहीं होंगे।
5. यह अधिनियम ऐसे व्यक्तियों के प्रति भी लागू होगा जिन्होने कोई साइबर अपराध या इस अधिनियम के प्रावधानों का भारत के बाहर कारित किया हो, भले ही उस व्यक्ति की राष्ट्रीयता कोई भी क्यों न हो।
6. अधिनियम की धारा 90 के अन्तर्गत राज्य सरकार अपने कार्यालयीन गजट में अधिसूचना जारी करके 'नियम' बना सकती है, ताकि अधिनियम के उपबंधों को प्रवृत्त किया जा सके।

सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम की परिधि में आने वाले अपराध – सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 के अन्तर्गत निम्नलिखित अपराधों के लिए दांडिक प्रावधान हैं :

1. **अनधिकृत अभिगमन–** अधिनियम की धारा 43 के अनुसार काई

* सहा. प्राध्यापक, डॉ. सी. वी रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

व्यक्ति जो कम्प्यूटर, कम्प्यूटर सिस्टम या कम्प्यूटर नेटवर्क में अनुमति के बिना अनधिकृत अभिगमन करता है या अभिगमन को अभिप्राप्त करता है तो वह इससे प्रभावित व्यक्ति को प्रतिकर देगा जो एक करोड़ रूपये से अधिक राशि हो सकेगी। मूल अधिनियम में सन् 2008 में संशोधन द्वारा एक नई धारा 43-A जोड़ दी गई जिसके अनतर्गत किसी व्यक्ति के कम्पयूटर संसाधन में वैयक्तिक डाटा या जानकारी संरक्षित रखने में विफलता की स्थिति में प्रतिकर प्राप्त होगा।

2. रिटर्न या जानकारी प्रस्तुत करने में विफल रहने का अपराध- धारा 44 के अनुसार यदि कोई व्यक्ति इस अधिनियम या इसके अधीन निर्मित नियमों के अधीन कोई दस्तावेज, रिटर्न या रिपोर्ट कंट्रोलर या प्रमाणिकी-प्रौद्योगिकी को प्रेषित करने में व्यतिक्रम करता है या विफल रहता है तो उसे प्रत्येक विफलता के लिए जुर्माना जो डेढ़ लाख रूपये तथा व्यतिक्रम के लिए 5000 रु. का अर्थदण्ड देना होगा।

3. अधिनियम के अन्तर्गत बनाए गए नियमों का उल्लंघन - सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम की धारा 45 के अधीन अधिनियम के अन्तर्गत बनाए गए नियमों के उल्लंघन को अपराध माना गया है।

4. कम्प्यूटर जनित दस्तावेजों में हेर-फेर करना- अधिनियम की धार 65 के अनुसार कम्प्यूटर जनित दस्तावेजों की हेरा-फेरी, कूट संकेतों को नष्ट करना, बदलना, छिपाना, विनष्ट कराना एवं दूसरे के द्वारा कूट संकेत-साधन को बदलवा देना, इस अपराध के विभिन्न रूप हैं। जिसके के लिए तीन वर्ष तक कारावास तथा दो लाख रूपये जुर्माने का दण्ड देय है।

5. हेकिंग- धारा 66 कम्प्यूटर सिस्टम के साथ हेकिंग को साइबर अपराध मानती है। जिसके लिए तीन वर्ष तक का कारावास या दो लाख रूपये तक अर्थदण्ड या दोनों से दण्डित किया जा सकेगा।

6. इलेक्ट्रानिक फार्म में अश्लील जानकारी का प्रकाशन- इन्टरनेट पर अश्लीलता धारा 67 के अन्तर्गत दंडनीय अपराध है। इस धारा के अधीन तीन वर्ष तक के कारावास या दो लाख रूपये अर्थदण्ड दोनों से दण्डनीय है।

7. कंट्रोलर के निर्देशों का पालन नहीं किया जाना- धारा 68 कंट्रोलर को अधिकृत करती है कि वह प्रमाणीकरण प्राधिकारी या उसे प्राधिकारी के किसी कर्मचारी को यह शक्ति है कि वह कम्प्यूटर या इन्टरनेट पर संग्रहीत या प्रसारित किसी भी जानकारी के संचारण में हस्तक्षेप कर उसके सम्बन्ध में उचित आदेश या निर्देश जारी कर सकता है। कंट्रोलर के निर्देशों के अपालना की दशा में दोषी व्यक्ति को तीन वर्ष तक के कारावास या दो लाख रूपये अर्थदण्ड या दोनों से दडिण्त किया जा सकेगा।

8. धारा 69 के अन्तर्गत प्रमाणीकरण प्राधिकारी या उसके किसी कर्मचारी को यह अधिकार होता है कि वह आश्यक होने पर इन्टरनेट पर पोषित होने वाली किसी जानकारी को बीच मे ही हस्तक्षेप करके रोक सकेग, मिटा सकेगा उसका परिवीक्षण कर सकेगा ताकि देश की सूरक्षा, अखंडता या राज्य की सुरक्षा आदि को खतरा न रहे। यदि कोई व्यक्ति इस एजेंसी को मदद करने में विफल रहता है तो उसे सात वर्ष तक के कारावास से दण्डित किया जा सकेगा।

9. धारा 69-A अन्त:स्थापित की गई है जो केन्द्र सरकार को अधिकृत करती है कि वह देश की संप्रभुता तथा अखंडता के हित में इन्टरनेट पर पारेषित किसी जानकारी/सूचना को जनता की पहुँच से बाहर रखने के उद्देश्य से उसे बीच में ही रोक सकेगी या विनष्ट कर सकेगी। इस प्रावधान के उल्लंघन के लिए तीन वर्ष तक के कारावास का दण्ड तथा यदि आवश्यक हो तो अर्थदण्ड भी देय होगा।

10. संरक्षित सिस्टम में अभिगमन या प्रवेश- अधिनियम की धारा-70 में संरक्षित सिस्टम के सम्बन्ध में विशिष्ट प्रावधान है। इस धारा के अनुसार समुचित सरकार अपने राजपत्र में अधिसूचना के प्रकाशन द्वारा किसी भी कम्प्यूटर, कम्प्यूटर सिस्टम या कम्प्यूटर नेटवर्क को 'संरक्षित सिस्टम' घोषित कर सकेगी। दो नई धाराएँ 70-A तथा 70-B के अनतर्गत देश के लिए एक 'राष्ट्रीय नोडल एजेंसी' की नियुक्ति का प्रावधान है। इस राष्ट्रीय एजेन्सी को **'भारतीय कम्प्यूटर आपदा प्रतिक्रिया दल'** के नामसे सम्बोधित किया जाएगा।

11. दुर्व्यपदेशन - अधिनियम की धारा 71 के अनुसार किसी व्यक्ति द्वारा डिजिटल हस्ताक्षर के प्रमाणीकरण हेतु कंट्रोलर या प्रमाणन अधिकारी को दिये गए आवेदन में दुर्व्यपदेशन किया जाने को अपराध माना गया है। इस अपराध के लिए दो वर्ष तक के कारावास या एक लाख रूपये तक जुर्माने का दंड, या दोनो से दण्डित किया जा सकेगा।

12. गोपनीयता या नीजता भंग के लिए शास्ति - सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम की धारा 72 के अनुसार किसी इलेक्ट्रानिक रिकार्ड, पुस्तक, रजिस्टर, पत्राचार, सूचना दस्तावेज, जानकारी या किसी अन्य सामग्री को सदोष प्राप्त या अभिगमन करता है तो उसे दो वर्ष तक के कारावास या एक लाख रूपये तक जुर्माने या दोनों से दण्डित किया जाएगा।

धारा 72-A जिसमें इन्टरनेट पर किये गये संविदा-भंग या सदोष वैयक्तिक जानकारी हासिल करके किसी व्यक्ति को सदोष हानि या स्वत: को सदोष लाभ पहुँचाने को गम्भीर साइबर अपराध मानते हुए तीन वर्ष तक के कारावास या पाँच लाख रूपये तक अर्थदण्ड या दोनों दिये जाने का प्रावधान है।

13. गलत ब्यौरे सहित डिजिटल हस्ताक्षर प्रमाण पत्र का प्रकाशन- यदि कोई व्यक्ति डिजिटल हस्ताक्षर प्रमाण पत्र के कतिपय झूठी या गलत जानकारी प्रकाशित करता है, तो इसे अधिनियम की धारा 73 के अन्तर्गत दंडनीय अपराध माना गया है जिसके लिए उसे दो वर्ष तक के कारावास या एक लाख रूपये तक अर्थदंड, या दोनों के दण्डित किया जा सकेगा।

14. कपटपूर्ण उद्देश्य के लिए डिजीटल हस्ताक्षर प्रमाण पत्र प्रकाशित करना- अधिनियम की धारा 74 के अनुसार कोई भी व्यक्ति जो कपटपूर्ण आशय से जानबूझकर डिजीटल हस्ताक्षर तैयार करता है, प्रकाशित करता है या उपलब्ध कराता है इस धारा के अन्तर्गत दो वर्ष तक के कारावास या एक लाख रूपये के अर्थदण्ड या, दोनो से दण्डित किया जा सकेगा।

अपराधों का प्रशमन - सूचना प्रौद्योगिकी (संशोधन) अधिनियम, 2008 (2009 का अधि. संख्या 10) द्वारा मूल अधिनियम में एक नई धारा 77-। जोड़ी गई है जिसमें साइबर अपराधों के प्रशमन सम्बन्धी प्रावधान हैं। इस धारा के अनुसार ऐसे अपराध जो आजीवन कारावास या तीन वर्ष से अधिक कारवास से दण्डनीय हैं, प्रशमनीय नहीं होंगे परतु न्यायालय को ऐसे अपराधों प्रशमन करने की अधिकारिता नहीं होगी जिनमें अपराधी को पुन: अपराध की पुनरावृत्ति करने के लिए वर्धित दण्ड देय है या अपराध की प्रकृति सामाजिक-आर्थिक स्वरूप की हो या अपराध किसी महिला या 18 वर्ष से कम आयु के बालक के प्रति किया गया हो। धारा 77-B जो मूल अधिनियम में सन् 2008 के संशोधन द्वारा जोड़ी गई है, उपबंधित करती है कि दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 मे अन्यथा होतु हुए भी ऐसे साइबर अपराध जो तीन वर्ष के कारावास तक दंडनीय हैं, संज्ञेय तथा जमानतीय होंगे। सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम की धारा 46(1) के अनुसार साइबर अपराधों में न्याय-निर्णयन की प्रथम अधिकारिता न्याय-निर्णयन अधिकारी की होगी

जैसा कि अधिनियम के अध्याय IX में वर्णित है।

अधिनियम की धारा 46(3) के अनुसार अधिनियम के अन्तर्गत न्याय-निर्णयन अधिकारी के पद पर नियुक्ति कें लिए विधिक और न्यायिक अनुभव तथा योग्यता वही होगी जैसी कि केन्द्र सरकार इस हेतु विहित करे।

सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 58(2) के अन्तर्गत साइबर अपीलीय अधिकरण को प्राप्त हैं। उसके द्धारा की गई कार्यवाही न्यायिक स्वरूप होगी। भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 196 के प्रयोजनों के लिए साइबर अपीलीय अधिकरण को सिविल न्यायालय माना जाएगा। जाँच के दौरान न्याय-निर्णयन अधिकारी को निम्नलिखित बातों के लिए शक्ति प्राप्त है-

1. व्यक्तियों को समन (बुलाने) करने तथा उनकी उपस्थिति प्रवर्तित कराने की शक्ति ,
2. व्यक्तियों को दस्तावेज तथा इलेक्ट्रानिक रिकार्डस पेश करने हेतु बाध्य करने की शक्ति,
3. साक्ष्य रिकार्ड करने की शक्ति,
4. एकतरफा निर्णय देने की शक्ति, तथा
5. आवेदन या याचिका को निरस्त करने की शक्ति।

उपसंहार – वर्तमान समय में साईबर अपराध एक बढ़ती हुई अपराध है क्योंकि वर्तमान समय सूचना एवं प्रौद्योगिकी का है और प्रतिदिन साइबर अपराधों का दायरा बढ़ता जा रहा है। इस हेतु भारम में अधिनियमित सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 जिसमें कि समय एवं परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न संशोधन भी किये गये हैं। अपने उद्देश्यों में तो सफल है परन्तु साईबर अपराधों की बदलती हुई प्रकृति एवं अपराधों की नई तकनिकियाँ इस क्षेत्र में नई चुनौतियाँ लेकर खड़ी हैं। इस हेतु इस अधिनियम में समयानुसार बदलाव की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय दण्ड संहिता, 1860
2. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973
3. सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000
4. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872

****

झालावाड़ जिले में पर्यटन एवं विकास का मूल्यांकन एवं भौगोलिक विश्लेषण

नीलोफर अगवान* डॉ. सौरभ त्यागी**

प्रस्तावना – आधुनिक समय में पर्यटन विश्व बाजार में सबसे अधिक मुद्रा अर्जित करने वाले उद्योगों में से एक है। पर्यटन के काल में आने वाले पर्यटकों की संख्या क्षेत्र की कुल जनसंख्या से कई गुना अधिक हो जाती है और यह कई लोगों को प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष लाभ पहुँचाता है।

पर्यटन एक व्यापारिक क्रिया है। पर्यटन उद्योगों का विकास द्वितीय विश्व युद्ध के बाद मुख्यत: हुआ। प्राचीन काल की यात्राओं से पर्यटन का स्वरूप भिन्न है। प्राचीन समय में यात्राएं सिमित व्यक्तियों द्वारा की जाती थी, जबकि आधुनिक काल में पर्यटन अपने जनसमूह के स्वरूप के आधार पर भिन्न है। सन् 1945 के बाद घरेलु तथा अन्तर्राष्ट्रीय दोनों प्रकार के पर्यटन का तीव्र गति से विकास हुआ। तीन दशक के पूर्व पर्यटकों की संख्या सैकड़ों में थी, वह अब कई हजारों या लाखों में है। पर्यटन हेतु गन्तव्य स्थान की स्थिति व पहुंच महत्वपूर्ण होते है। गन्तव्य स्थान तक सफलता पूर्व पहुँचना अधिक महत्व रखता है। पर्यटन स्थल दूर्गम -स्थानों में होने पर वे एक चुनौती बन जाते है। पर्यटकों के आकर्षण का तात्पर्य भवन: दृश्य या मनोरंजन गतिविधियों से है। यहाँ पर पहुँचने के लिए पर्यटक की सुविधा परिवहन कहलाती है और अन्त में गन्त० पर पहूँचने पर ऐसे आवास की सुविध होनी चाहिए जहाँ पर वह विश्राम व भोजन प्राप्त कर सकें। किसी भी पर्यटन स्थल पर आने वाले पर्यटकों की संख्या से स्थानीय स्त्रोंतो के महत्व का अनुभव लगाया जा सकता है। प्राकृतिक दृश्य,प्राचीन गाथाऐं, ऐतिहासिक स्मारक, स्तम्भ व शिलालेख और अनूठी कलात्मक चित्रकारी, विभिन्न रीति रिवाज, तीज-त्यौहार, मेले तथा अन्य सांस्कृतिक क्रियाकलापों का अपना महत्व है। भारत में पर्यटन हेतु पैदल चलना भी एक आवश्यक अंग है। इससे कटि पेडू और जंधाए सुदृढ़ होती है। जीवन की बहुमुख उन्नति के लिए मनुष्य जाति के स्वभाव आचार विचार व्यवहार रहन -सहन आदि का अध्ययन भी पर्यटन द्वारा हो जाता है। शिक्षा के विकास से लोगों की समझ में यह बात आ गई है कि पर्यटन जीवन में महत्वपूर्ण है।

वर्तमान समय में पर्यटन पर अनेक पूस्तकें मिलती जिनका विवरण किसी भी विश्वविद्यालय पर्यटन-अध्ययन केन्द्र द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। प्रकृति और वन्य जीव संरक्षण द्वारा पर्यटन को बढ़ाने की अनन्त सम्भावनांए यहाँ विद्यमान है।

शोध अभिकल्प

उद्देश्य:

1. वर्तमान पर्यटन संसाधनों की पहचान तथा उन्हें विकसित करने के सुझाव प्रस्तुतकरना।
2. महत्वपूर्ण स्मारक व भव आदि को खोजना और उनके विशेष संरक्षण की योजना बनाना।
3. पर्यटन द्वारा क्षेत्र के विकास की सम्भावनाओं का पता लगाना व अवरोधों को दूर करने हेतु सुझावों को प्रस्तुत करना।
4. विशेष रूप से प्राकृतिक स्थलों के लिए प्रसिद्ध झालावाड़ के सुरम्य स्थलों को बचाने हेतु महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत करना।

समस्या का कथन – झालावाड़ जिले में पर्यटन एवं विकास एक भोगोंलिक विश्लेषण।

परिकल्पनांए :

1. पर्यटन स्थलों में यातायात के प्रमुख घटक रेल्वे-सड़क मार्ग सभी की सुविधांए है लेकिन वृहद ग्रामीण क्षेत्रों में फैले हुए पर्यटन केन्द्रों तक पहुंचाने वाली सड़कों की दशा अत्यन्त दयनीय है। पर्यटन से यह समस्या दूर हो सकती है।
2. पर्यटक-केन्द्रों में बिक्रि योग्यता, उनके जरिये पर्यटन क्षेत्र से होने वाली अनुमानित आय और भारी माँगों का प्रक्षेपण किया जा सकता है।

शोध प्रणाली – प्रस्तुत शोध अध्ययन को निम्न चरणों में पूर्ण किया जाएगा। ऐतिहासिक तथा सामाजिक सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य की जानकारी, मूल ग्रंथ, सहायक ग्रंथ, लेखों, आदि साहित्य, वेबसाइट, जर्नल, प्रोजेक्ट रिर्पोट सरकारी तथा गैर सरकारी वार्षिक रिर्पोट अन्य स्त्रोंतों से शोध साहित्य सामग्री का संचालन करना।

प्रतिचनयन विधि – इस शोध कार्य के लिए झालावाड़ जिले में पर्यटन विकास का मुल्यांकनन किया जाएगां झालावाड़ जिले के पर्यटन विकास के मुल्यांकन के अन्तर्गत सभी वर्तमान विकसित व संभावित पर्यटन क्षेत्रों के गहन क्षेत्रीय अध्ययन किया जाऐगा।

उपकरण– शोध में उपकरण के रूप में प्रश्नावली का प्रयोग किया जाएगा।

शोध की सीमाएँ :

1. भारत में पर्यटन हेतु पर्यटन मंत्रालय द्वारा पर्यटन के विकास के लिए अपनाया गया है।
2. यह पर्यटन का एक नया आयाम है तथा इससे संबंधित शोध कार्य अधिक उपलब्ध नहीं है इस कारण शोधकार्य की जानकारी लेने हेतु सांख्यिकीय विभाग से आंकड़े संग्रहित करने पड़ेगें।

सुझाव :

1. पर्यटन के प्रति सामाजिक जागरूकता व प्रचार किया जाए।

*शोधकर्त्री, पेसिफिक एकेडमी ऑफ हायर एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च यूनिवरसिर्टी, उदयपुर (राज.) भारत
** सहायक आचार्य, पेसिफिक एकेडमी ऑफ हायर एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च यूनिवरसिर्टी, उदयपुर (राज.) भारत

2. स्थानीय सांस्कृतिक कला का विकास
3. स्वदेशी पर्यटन का बढ़ाने के लिए सुझाव
4. नवीन पर्यटन क्षेत्रों की खोज व विकास किया जाए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. Zaray, Vijay :Research Methodology ABD Publication, Jaipur,1995)
2. डॉ. मामोरिया एवं जैन :राजस्थान का भूगोल, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
3. सक्सेना, एच.एम : पर्यावरण एवं प्रदूषण राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
4. शर्मा डॉ. गोपीनाथ : राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
5. शर्मा एच.एस. व शर्मा एच.एस : राजस्थान का भूगोल, पंचशील प्रकाशन जयपुर
6. शर्मा के. आर : निदेशालय, का इतिहास व्यास प्रकाशन
7. खान, एस.आर. : हाड़ौती के बोलते शिलालेख
8. ऐतिहासिक मानचित्रवली : स्पक्ट्रम इण्डिया दिल्ली
9. इग्नू पर्यटन स्थल : उत्पादन संचालन
10. दीक्षित मनोज एवं राम निशीध (2002) : भारत के प्रमुख पर्यटन उत्पाद
11. दीक्षित डॉ. के.के. गुप्ता डॉ. जे.पी. (2003) : पर्यटन के विविध आयाम तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 10
12. शर्मा डॉ. संजय : पर्यटन एवं पर्यटन उत्पाद, तक्षशिला प्रकाशन राजस्थान ग्रन्थगार, जयपुर
13. ओझा जे. के. : राजस्थान ग्रन्थगार, जयपुर

पत्र पत्रिकाएं :-

1. अखण्ड ज्योति
2. क्रोनीकल
3. दैनिक जागरण
4. सुजस
5. राजस्थान पत्रिका

****

छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों के व्यापार का एक अध्ययन

राकेश कुमार गुप्ता *

शोध सारांश – छत्तीसगढ़ के आर्थिक,सामाजिक तथा पर्यावरणमूलक खुशहाली में वनों का सार्थक योगदान रहा है। छत्तीसगढ़-जैसे नवोदित राज्य वनों की महती भूमिका है। यहाँ के पर्याप्त वनों और वृक्षों से स्थायी पर्यावरण की स्थिति है, जो कि धारणयोग्य कृषि-उत्पादन के लिए सहायक है। जंगलों के कारण मिट्टी का क्षरण कम हुआ है तथा इनसे 'रिसाइक्लिंग' से पोषक तत्वों का विकास हुआ है। इनसे छत्तीसगढ़ के जलप्रवाह की रक्षा हुई है तथा नदियों के प्रवाह सूखे नहीं। छत्तीसगढ़ के जंगल पौधों तथा पशुओं के जैविक संसाधनों के 'स्टोरहाउस' हैं। प्रदेश की जैविक विविधता के लिए इसका योगदान महत्वपूर्ण है। 'बायोलाजिकल' विविधता अन्न के उत्पादन की किसी भी संभावित 'क्रायसिस' के लिए बीमा का काम करती है।
शब्द कुँजी –धारणयोग्य कृषि-उत्पादन, अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज, एग्रोक्लाइमेटिक जोन, अकाष्ठीय वनोपज।

प्रस्तावना – ऋग्वेद द्वारा 'वनस्पति शत्वत्सो विरोह' का उद्घोष करने वाले इस अंचल में वनों के महत्व की चेतना प्रागैतिहासिक युग से ही मिलती है। पद्मपुराण के अनुसार 'अपुत्र के लिए वृक्ष सहस्त्र सुपुत्रों का कार्य करता है' यह संदेश युगों से जहाँ गूँजता आ रहा है। अपनी बहुमुखी उपादेयता के कारण छत्तीसगढ़ की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था उनसे प्रभावित है। ये एक ओर तो 'कृषि की पोषक माता' का रूप धारण करते है, तो दूसरी ओर उद्योगधंधों की समृद्धि करते है। प्रकृति को इस अमूल्य सम्पत्ति से सम्पन्न बनाया है। छत्तीसगढ़ के आर्थिक,सामाजिक तथा पर्यावरणमूलक खुशहाली में वनों का सार्थक योगदान रहा है। छत्तीसगढ़ राज्य का 43.85 प्रतिशत भू-भाग प्राकृतिक वनों से आच्छादित है जिसमें विभिन्न प्रकार की लघु वनोपज पाई जाती है। राज्य शासन द्वारा औषधीय तथा अन्य लघुवनोपज के स्थानीय ग्रामीणों, विशेषकर आदिवासियों के खाद्य औषधि तथा जीविकोपार्जन में महत्व को ध्यान में रखते हुए राज्य को हर्बल राज्य घोषित किया गया है। राज्य की नवीन वन नीति में भी अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज के विनाशविहीन विदोहन की प्रक्रिया को अपनाकर इनकी सतत् उपलब्धता बनाए रखते हुये स्वास्थ्य सुरक्षा तथा ग्रामीण अंचल में नियमित आय सुनिश्चित करने के लिए वनौषधियों तथा अन्य लघुवनोपजों के उत्पादन, संग्रहण, प्रसंस्करण एवं विपणन को बढ़ावा देने पर बल दिया गया है। छत्तीसगढ़ प्राकृतिक वनसम्पदा के लिए अनादि काल से प्रसिद्ध रहा है तथा इसके विविध अंचलों का रामायण, महाभारत, पुराण, काव्य या अभिलेखों में दण्डकारण्य, नागवन, झाडेशवन, महाटवी या महाकान्तार आदि नामों से पुकारा जाता रहा है। छत्तीसगढ़ राज्य का 56,772 वर्ग कि.मी. (अर्थात् 59285.27 हेक्टेयर) भूभाग वनों से आच्छादित है, जो प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 43.85 प्रतिशत है। छत्तीसगढ़ की प्रचुर वनसम्पदा की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं –

(क) देश के सम्पूर्ण वनों में से 12 प्रतिशत छत्तीसगढ़ में हैं।
(ख) राज्य के वनों का कुल क्षेत्रफल 69,772 वर्ग किलो मीटर अर्थात् कुल क्षेत्रफल के 44 प्रतिशत भाग पर वन हैं।
(ग) जैव विविधता से समृद्ध, दो सौ से अधिक प्रकार की लघु वनोपज, विलक्षण एवं बहुमूल्य वन-संसाधनों के साथ ही यह क्षेत्र वन्य प्राणियों से परिपूर्ण हैं।
(घ) यहाँ 03 राष्ट्रीय उद्यान तथा 11 अभ्यारण्य हैं।
(ड़) छत्तीसगढ़ के कुल वन क्षेत्र में 36 प्रतिशत हिस्से में साल वृक्ष तथा दूसरे स्थान पर सागौन इनके अतिरिक्त बाँस, साजा, सरई, बीजा, हल्दू भी बहुतायत में उपलब्ध हैं।
(च) देश के कुल तेंदूपत्ता उत्पादन का 17 प्रतिशत छत्तीसगढ़ में उत्पन्न होता हैं। यहाँ लघु वनोपज लाख, महुआ, गोंद, चिरौंजी, इमली इत्यादि की विपुलता पायी जाती हैं।
(छ) वनौषधियों की प्रचुरता, संरक्षण तथा वृहद् उत्पादन की संभावना को देखते हुए छत्तीसगढ़ को वनौषधि राज्य घोषित किया गया हैं।
(ज) जनोन्मुखी वननीति लागू करने में देश में अव्वल, विनाश-विहीन विदोहन तथा संयुक्त वन-प्रबन्धन के जरिए जन-वन-विकास पर जोर दिया गया हैं।

उद्देश्य – राज्यों के पुनर्गठन के परिणामस्वरूप 1 नवम्बर 2000 देश के 26वें राज्य के रूप में छत्तीसगढ़ की स्थापना की गई। मूलत: यह राज्य विपुल वन संसाधनों एवं खनिज संपदा से परिपूर्ण होने के बावजूद मध्यप्रदेश राज्य के अंतर्गत सदैव उपेक्षित रहा। दूसरों को भोजन तथा जीवन की सुविधाऐं प्रदान करने वाला 'धान का कटोरा' क्षेत्र स्वयं अर्धसंतृप्त एवं जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तरसता रहा है। नए राज्य के गठन से क्षेत्रीय जनमानस की आशायें बढ़ी है। नवगठित राज्य में प्रशासनिक सुविधाओं की उत्कृष्टता के लिए जिलों का पुनर्गठन करते हुए 27 जिलों में विभाजित किया है। प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. छत्तीसगढ़ राज्य में वन स्थिति एवं लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन का अध्ययन करना।
2. छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों के व्यापार एवं विपणन का अध्ययन करना।
3. छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज के व्यापार एवं विपणन का अध्ययन करना।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

4. अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज के व्यापार का छत्तीसगढ़ राज्य की आर्थिक स्थिति में सशक्त संभावनाओं का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पनाएँ :

1. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज के व्यापार एवं विपणन की पद्धति असंतोषजनक है।
2. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज के व्यापार एवं विपणन की महत्वपूर्ण संभावनाएँ हैं।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र :

1. अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।
2. यह अध्ययन छत्तीसगढ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित शंकर नगर रायपुर से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित हैं। इनसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है और निष्कर्ष प्राप्त किये गए है।
3. अध्ययन का क्षेत्र छत्तीसगढ राज्य की अराष्ट्रीयकृत औषधीय वनोपज के व्यापार एवं विपणन पर आधारित हैं।
4. अध्ययन की समय सीमा पिछले पाँच वर्षो के उत्पादन एवं विपणन पर आधारित हैं।

शोध उपकरण – अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।

सांख्यिकी उपकरण – यह अध्ययन छत्तीसगढ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित शंकर नगर रायपुर से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित हैं। इनसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है और निष्कर्ष प्राप्त किये गए है।

शोध व्याख्या – छत्तीसगढ़ वास्तव में लघु वनोपज का गढ़ है। छत्तीसगढ़ सरकार ने वनोपजों के व्यापार में वनवासियों और ग्रामीणों को भागीदार बनाते हुए उन्हें ज्यादा से ज्यादा लाभ पहुंचाने की रणनीति अपनाई हैं। लघु वनोपज संग्राहकों की आर्थिक, सामाजिक समस्याओं के निदान के लिए जितना अधिक कार्य छत्तीसगढ़ सरकार कर रही है उतना कोई और राज्य सरकार नहीं कर रही है। अराष्ट्रीयकृत वनोपज के कारोबार को जितना अधिक बाजार से जोड़ा जाएगा, उतना अधिक लाभ संग्राहकों को होगा। छत्तीसगढ़ राज्य के विकास का प्रयास बैगर वनवासी के विकास के सोचना कोरी कल्पना होगी। यदि हम सोचे कि आखिर किस प्रकार से वनों के समीप रहने वालों की आयु वृद्धि की जावें, तो एक सशक्त विकल्प लघु वनोपज से जुड़े कार्य है। इस हेतु लघु वनोपज का विनाशविहीन विदोहन, संग्रहण के उपरांत सही प्राथमिक उपचार तथा प्रसंस्करण किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। जब तक लघु वनोपज का प्रसंस्करण नहीं किया जाता, तब तक संग्राहकों को उनकी वनोपज के सही मूल्य दिलाने का सोच क्रियान्वित नहीं किया जा सकता। प्रत्येक जिला यूनियन में लघु वनोपज आधारित एक बड़ी प्रसंस्करण इकाई तथा अनेक छोटी इकाइयों की स्थापना की जानी चाहिये। अकाष्ठीय वनोपज संग्राहकों को उचित मूल्य दिलाने हेतु शासन द्वारा छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ की स्थापना की गई है। राज्य लघु वनोपज संघ द्वारा राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज जैसे की तेंदू पत्ता, साल बीज, हर्रा, गोंद वर्ग 1 एवं 2 को प्राथमिक वनोपज समितियों के माध्यम से संग्रहण कर, निविदा/नीलाम के द्वारा विक्रय किया जाता है। इसके अतिरिक्त शेष लघु वनोपज अराष्ट्रीयकृत होने के कारण,ग्रामीण बिना किसी रायल्टी के संग्रहण कर स्थानीय बाजार में विक्रय करने हेतु स्वतंत्र है। अराष्ट्रीयकृत वनोपज को वनौषधीय एवं गैर–वनौषधीय लघु वनोपजों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ द्वारा अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों के व्यापार के संबंध में प्राथमिक बाजार अध्ययन एवं लघु वनोपज परिवहन अनुज्ञा पत्र की जानकारी के आधार पर लघु वनोपज विपणन से संबंधित प्राथमिक जानकारी निम्नानुसार है :–

तालिका 1 – छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज संपदा

क्र.	अकाष्ठीय प्रजाति के प्रकार	महत्वपूर्ण प्रजाति उत्पाद	व्यावसायिक लघु वनोपज संख्या	अनुमानित वार्षिक व्यापार (रू. करोड़ में)
1	राष्ट्रीयकृत वनोपज	तेंदू पत्ता, साल बीज, हर्रा तथा कुल्लू, धावड़ा बबलू एवं खैर गोंद आदि	7	225
2	अराष्ट्रीयकृत औषधीय	बायबिडिंग, कालीजीरी, कालमेघ, आंवला, शहद आदि	42	50
3	अराष्ट्रीयकृत गैर–औषधीय	महुआ लाख, माहुल पत्ता, इमली, चिरौजी आदि	30	250
	योग		79	525

राज्य के अधिकांश राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज औषधीय व गैर–औषधीय रूप में उपयोग में आते हैं। इन लघु वनोपजों के गुणवत्ता मापदंड किसी भी संस्था द्वारा निर्धारित किए गए हैं।

अराष्ट्रीयकृत औषधीय लघु वनोपज उत्पादन एवं विपणन : मुख्य वनौषधियों की मात्रा एवं मूल्य – राज्य के वन क्षेत्रों से संग्रहित की जाने वाली मुख्य वनौषधियाँ, उपयोग किये जाने वाले भाग, उनकी मात्रा एवं अनुमानित मूल्य दिए गए हैं। दर्शायी गई वनौषधियों की उपलब्ध वार्षिक मात्रा अनुज्ञा पत्र के आधार पर है परन्तु वास्तविक उत्पादन दर्शायी गई मात्रा से कहीं अधिक है। इससे यह स्पष्ट होता है कि राज्य में विक्रय की जाने वाली वनौषधियों में कुछ की मात्रा अधिक एवं शेष की मात्रा कम है। प्रत्येक प्रजाति के उपयोगी भाग को उनके औषधीय गुणों के आधार पर विभिन्न प्रकार की दवाओं एवं अन्य उपयोग में लिया जाता हैं। उपयोग के आधार पर राज्य की व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण वनौषधियों का विवरण निम्नलिखित है :–

तालिका 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

वनौषधि उत्पादन क्षेत्र – छत्तीसगढ़ राज्य को भौगोलिक स्थिति एवं जलवायु के आधार पर तीन एग्रोक्लाइमेटिक जोन में वर्गीकृत किया गया है। ये तीन एग्रोक्लाइमेटिक जोन बस्तर पठार (बस्तर क्षेत्र) छत्तीसगढ़ मैदान (छत्तीसगढ़ राज्य का मध्य भाग) एवं छत्तीसगढ़ पहाड़ (सरगुजा, जशपुर, कोरिया आदि क्षेत्र) हैं। इन तीनों क्षेत्रों से विभिन्न प्रकार की वनौषधियाँ उपलब्ध होती है। अत: तालिका 2 में दर्शाये अनुसार मुख्य वनौषधियों का संग्रहण करने हेतु संबंधित एग्रोक्लाइमेटिक जोन उपयुक्त है, तद्धुसार संग्रहण कार्य प्रणाली में सुधार या निजी क्षेत्र में खेती द्वारा इन वनौषधियों के उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है।

वनौषधि विपणन :

(क) राज्य के वनौषधि बाजार – छत्तीसगढ़ राज्य में उत्पादित वनौषधियों के लिए राज्य में ज्यादा बड़े बाजार उपलब्ध नही है। राज्य के मुख्यत: धमतरी

एवं रायपुर मुख्य वनौषधि बाजार के रूप में विकसित हुए है। इन बाजारों के व्यापारियों द्वारा परम्परागत रूप से वनौषधि का क्रय–विक्रय कार्य किया जाता है। इसके अलावा छत्तीसगढ़ राज्य में अन्य बाजार भी उपलब्ध हैं। विक्रय की जाने वाले मात्रा कम होने पर या बाजारों में संपर्क करना कठिन होने पर क्षेत्र के स्थानीय बाजारों में भी विक्रय होता है। राज्य में वनौषधि विक्रय हेतु कोई भी मंडी नही है। सामान्यत: संग्रहणकर्ता द्वारा वनौषधियों को संबंधित बाजार के स्थानीय व्यापारी (कोचिया) से संपर्क कर वनौषधि की मात्रा एवं गुणवत्ता के आधार पर व्यापारी द्वारा निर्धारित दर/प्रचलित स्थानीय दर पर विक्रय किया जाता है। वनौषधि विक्रय दर विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि वनौषधि की वार्षिक दर में बहुत उतार–चढ़ाव रहते है। कभी–कभी इनकी दरे सामान्य से दुगुनी तथा आधी टन हो जाती है। दरों मे ये उतार चढ़ाव वनौषधियों की मांग तथा उपलब्धता के आधार पर होते हैं। सामान्यत: झाड़ी, शाकीय एवं बेला प्रजातियों द्वारा प्राप्त होने वाली वनौषधि दीपावली के पश्चात् संग्रहित होकर बाजार में उपलब्ध हो जाती है जैसे सफेद मुसली, कालीजीरी, वनतुलसी, सतावर, सर्पगंधा, बायबिडिंग, कालमेघ, मालकांगनी, निर्मली, मरोड़फल्ली, कौंच, अश्वगंधा, बैचांदी, तिखुर, माहुल पत्ता आदि। नवंबर से फरवरी माह में इनकी आवक ज्यादा रहती है अत: उक्त समय में इनकी दरों में कमी रहती है। वृक्ष प्रजाति जैसे आंवला, भिलवा, कुसुम, बबुल, बेल, पलाश, महुआ, इमली आदि से प्राप्त होने वाली वनोपज सामान्यत: जनवरी से जून माह तक उपलब्ध होती है। अत: वनौषधि उत्पादन सीजन को छोड़कर अन्य सीजन में वनौषधि दर में तेजी रहती है परंतु यह निश्चित नही माना जा सकता है क्योकि कभी कभी किसी वनोपज की मांग के आधार पर भी उसके मूल्य कभी भी तेजी व मंदी रहती है। इस प्रकार वर्ष के विभिन्न सीजनों में इनकी दरों में अंतर आता रहता है। इसके अतिरिक्त वनौषधियों के उत्पादन में स्थानीय सीजन तथा अन्य कारणों से भी बहुत उतार–चढ़ाव होता है। किसी वर्ष में वनोपज का सामान्य दुगना या तिगुना उत्पादन रहता है और किसी वर्ष उत्पादन बहुत कम होता है, इस कारण भी वनोपज की मांग एवं दर प्रभावित होते है। वनौषधियों की दर मुख्यत: उसकी गुणवत्ता पर आधारित होती है। सही रूप से प्रसंस्करण कर ग्रेडिंग की गई, उत्तम गुणवत्ता वाली वनौषधियों के मूल्य अधिक रहते हैं। अत: उत्पादक या संग्राहक वनौषधि के संग्रहण, प्रसंस्करण एवं भंडारण में पर्याप्त ध्यान देते हुए, बाजार की मांग के अनुरूप उनकी उपलब्धता सुनिश्चित कराते हुए उचित मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

(ख) राज्य के मुख्य वनौषधि व्यापारी – राज्य के मुख्य बाजारों के वनौषधि व्यापारियों द्वारा क्रय–विक्रय की जाने वाली मात्रा देश के अन्य बाजारों में इनकी मांग पर निर्भर रहती है। इन व्यापारियों द्वारा की क्रय की जाने वाली वनोपज की दरों में भी अंतर रहता है, ये दरें वनौषधि की उपलब्धता, गुणवत्ता एवं मुख्य व्यापारियों की मोल भाव क्षमता पर आधारित होती है। कुछ व्यापारियों द्वारा क्रय की गई वनोपज का भुगतान तत्काल किया जाता है तथा कुछ व्यापारियों द्वारा कुछ समय बाद किया जाता है। तत्काल भुगतान की स्थिति में मोलभाव द्वारा अच्छी गुणवत्ता की वनोपज कम दरों पर उपलब्ध हो जाती है। देश–विदेश के थोक व्यापारी छत्तीसगढ़ के व्यापारियों से संपर्क कर राज्य में उपलब्ध वनौषधियों का क्रय कर सकतें हैं।

(ग) देश के मुख्य वनौषधि बाजार – छत्तीसगढ़ राज्य की वनौषधियाँ देश के विभिन्न राज्यों की वनौषधि बाजारों में विक्रय की जाती है इसका विवरण तालिका क्रमांक 3 में दर्शाया गया है। उक्त तालिका से यह स्पष्ट ज्ञात होता है मध्यप्रदेश, दिल्ली, उत्तरप्रदेश, कनार्टक, तमिलनाडू राज्यों के मुख्य बाजारों में वनौषधि विक्रय हेतु उचित बाजार उपलब्ध है। इन राज्यों में औषधि निर्माण इकाईयों के स्थापित होने की वजह से यहाँ वनौषधि की मांग अधिक है। राज्य के वनौषधि व्यापारी/प्राथमिक वनोपज सहकारी समितियाँ उचित मूल्य हेतु इन राज्यों के व्यापारियों से सीधे संपर्क कर वनौषधियों का उचित विक्रय मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

तालिका 3. देश के मुख्य वनौषधि बाजार

क्र.	राज्य	बाजार	वनौषधि
1	छत्तीसगढ़	धमतरी, रायपुर, बिलासपुर, जगदलपुर	आंवला, बेल, सतावर, मालकांगनी, शहद, भिलवा, धवई, नागरमोथा, बहेड़ा
2	मध्यप्रदेश	इंदौर, जबलपुर	आंवला, कालीजीरी, भिलवा, शहद, नागरमोथा, बहेड़ा, कालमेघ, बायबिडिंग
3	उत्तर प्रदेश	आगरा, लखनऊ, कानपुर, सहारनपुर	आंवला, बेल, सतावर, बहेड़ा, मालकांगनी, भिलवा, धवई, नागरमोथा
4	आंध्रप्रदेश	विजयवाड़ा	आंवला, धवई, कालमेघ, शहद, नागरमोथा, बहेड़ा
5	कर्नाटक	बैंगलोर	आंवला, बेल, मालकांगनी, धवई, बहेड़ा
6	तमिलनाडू	चेन्नई	बेल, आंवला, बहेड़ा, मालकांगनी, धवई, बायबडिंग, कालमेघ
7	दिल्ली	दिल्ली	आंवला, सतावर, कालीजीरी, मालकांगनी, भिलवा, नागरमोथा, कालमेघ, बहेड़ा, धवई, बायबडिंग
8	महाराष्ट्र	मुंबई, नागपुर	आंवला, भिलवा, कालीजीरी, धवई नागरमोथा, मालकांगनी, कालमेघ, बहेड़ा
9	पश्चिम बंगाल	कोलकाता	आंवला, सतावर, बेल, भिलवा, धवई, मालकांगनी, कालमेघ, बहेड़ा

छत्तीसगढ़ की लघु वनोपज के उत्पादन एवं विपणन की संभावनाएँ

लघु वनोपज प्रसंस्करण इकाईयों की स्थापना – प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत मुख्य लघु वनोपज प्रजातियों के उत्पादन क्षेत्रों का चिन्हांकन कर मुख्य उत्पादन क्षेत्र जिला एवं वृत्त वार इनका वार्षिक उत्पादन ज्ञात किया गया हैं उक्त विवरण से ज्ञात होता हैं कि जगदलपुर, कांकेर एवं सरगुजा वृत्त में लघुवनोपज प्रजातियों का वार्षिक उत्पादन आधिक हैं इस लिए इन वन वृत्तों में लघुवनोपज प्रजातियों का वार्षिक उत्पादन अधिक हैं इस लिए इन वन वृत्तों में लाख, इमली, माहुल पत्ता, तैलीय बीज, चिरौंजी एवं शहद आदि लघुवनोपजों मे संबंधित बड़ी प्रसंस्कण इकाईयाँ स्थापित किए जाने की अपार संभावनाएं हैं तथा इसके अतिरिक्त विभिन्न छोटी इकाईयों की स्थापना भी की जानी चाहिए। मुख्य लघु वनोपज आधारित उत्पादों के निर्माण हेतु उन्नत तकनीकों तथा नए उत्पादों के विकास हेतु अनुसंधान किया जाना प्रस्तावित हैं जिससे मूल्यवर्धन से संग्राहकों की आय मे वृद्धि हो जाए।

अकाष्ठीय वनोपज (NWFP)/उत्पाद की दर निर्धारण – प्रत्येक अकाष्ठीय वनोपज (NWFP) मार्ट में विभिन्न जिला यूनियनों से प्राप्त होने वाली कच्ची लघु वनोपज को छ.ग. प्रमाणीकण समिति के माध्यम से गुणवत्ता जांच कर ग्रेडवार लाट तैयार किये जाये। इस लाट की दर देश एवं राज्य के

मुख्य लघु वनोपज बाजार दर के आधार पर निर्धारित की जायेगी। इस हेतु संघ मुख्यालय में एक दर निर्धारण समिति गठित की जाये। यह समिति समय-समय पर लघु वनोपज या अकाष्ठीय वनोपज (NWFP)/उत्पाद विक्रय हेतु निश्चित थोक एवं चिल्हर दर उपलब्ध होने के कारण क्रेता या उद्यमी इन्हें क्रय करने हेतु तत्काल निर्णय ले सकते हैं। इस प्रकिया से निगेसियेशन आदि हेतु समय व्यर्थ नही होगा आवश्यकता पड़ने पर कुछ सामग्रियों की अधिक मात्रा में विक्रय हेतु निविदा भी मंगायी जा सकती है।

प्रचार-प्रसार - अकाष्ठीय वनोपज(NWFP) मार्ट की गतिविधियों एवं विक्रय हेतु उपलब्ध सामग्रियों के बारे में प्रचार-प्रसार समाचार पत्रों के माध्यम से संघ मुख्यालय द्वारा किया जावेगा। साथ ही इसका प्रचार-प्रसार देश एवं राज्य की प्रमुख मंडियों में कराया जाना प्रस्तावित है। इसके अतिरिक्त संघ की वेबसाइट एवं इंटरनेट के माध्यम से भी प्रचार-प्रसार किया जायेगा।

1. प्राथमिक वनोपज समिति/वन समिति लघु वनोपज द्वारा प्राप्त मूल्य की 70 प्रतिशत राशि तत्काल उन्हें मार्ट द्वारा प्रदाय की जावेगी। शेष राशि उक्त सामग्री बिक्री होने के उपरांत उपलब्ध कराया जाना प्रस्तावित है।
2. मार्ट में कार्यरत समस्त कर्मचारियों एवं स्व-सहायता समूह को देय राशि का भुगतान विक्रय से प्राप्त होने वाले लाभ से किया जावेगा।
3. प्रत्येक मार्ट में कम्प्यूटर, इंटरनेट एवं टेलीफोन की व्यवस्था संघ से अनुमति प्राप्त कर करनी होगी। मार्टस की नेटवर्किंग संघ मुख्यालय के साथ कर प्रत्येक दिन की प्रगति इंटरनेट के माध्यम से संघ मुख्यालय एवं अन्य समस्त अकाष्ठीय वनोपज(NWFP) मार्टस को उपलब्ध कराया जाना प्रस्तावित है।
4. संजीवनी विक्रय केन्द्र एवं प्रसंस्करण एवं पैकेजिंग सेन्टर संचालन हेतु दो महिला स्वसहायता समूहों को संबंधित जिला यूनियन द्वारा चयन किया जाना है। यह समूह न्यूनतम एक वर्ष के पूर्व गठित होना चाहिए तथा प्रथम या द्वितीय ग्रेड उत्तीर्ण होना आवश्यक है। जहां तक संभव हो समूह में 80 प्रतिशत बी.पी.एल.सदस्य हों। इस हेतु महिला बाल विकास विभाग, जिला पंचायत, नगर निगम से संपर्क कर समूहों की सूची प्राप्त की जावेगी। इस समूह को सामग्री बिक्री किये जाने पर उचित कमीशन दिया जावेगा।
5. प्रत्येक मार्ट में लघु वनोपज के साथ अन्य समस्त सामग्री, उदाहरण के लिए बांस व काष्ठ कलाकृतियां, जो वन समितियों के द्वारा तैयार की जाती है, भी विक्रय किया जाना प्रस्तावित है। उपरोक्तानुसार अकाष्ठीय वनोपज (NWFP) मार्ट की स्थापना किये जाने से राज्य में अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपज विक्रय हेतु सुव्यवस्थित बाजार व्यवस्था उपलब्ध होगी एवं थोक एवं फुटकर विक्रेताओं को अकाष्ठीय वनोपज/उत्पाद प्रदाय करने हेतु यह मार्ट सुपर स्टाकिस्ट के रूप में कार्य कर सकेंगे। इस प्रकार व्यवस्था किये जाने से समय-समय पर जारी निर्देशों के अनुसार अकाष्ठीय वनोपज उत्पाद के संग्रहण, प्रसंस्करण व विक्रय का कार्य सम्पन्न हो सकेगा।

सेल्स एक्सीक्यूटिव - छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ द्वारा विभिन्न प्रकार के अकाष्ठीय वनोपज (NWFP) आधारित उत्पादों का उत्पादन एवं विपणन प्राथमिक वनोपज समिति तथा वन समितियां के सहयोग से किया जा रहा है। इन उत्पादों के प्रभावी विपणन कार्य हेतु कुछ जिला यूनियनों में संजीवनी विक्रय केन्द्र संचालित किए जा रहे है। अकाष्ठीय वनोपज (NWFP) के उत्पादों की बिक्री में आवश्यक गति लाने हेतु प्राथमिक वनोपज समिति के प्रबंधकों को सेल्स एक्सीक्यूटिव के रूप में उपयोग किया जाना प्रस्तावित है। चूंकि समिति के प्रबंधकों को अपने क्षेत्र की बाजार व्यवस्था तथा विपणन संबंधी अधिक जानकारी होती है, अत: उनके द्वारा हर्बल उत्पादों का प्रचार-प्रसार एवं बिक्री में गति लायी जा सकती है। इस हेतु समिति प्रबंधकों को सेल्स एक्सीक्यूटिव के रूप में उपयोग किया जाना प्रस्तावित है। इस हेतु प्रत्येक जिला यूनियन से कम से कम 5-10 सेल्स एक्सीक्यूटिव का चयन करना है।

सेल्स एक्सीक्यूटिव बनने हेतु समिति प्रबंधक की योग्यता निम्नानुसार होनी चाहिए :

1. शैक्षणिक योग्यता कम से कम 12वीं पास होनी चाहिए।
2. विगत तीन वित्तीय वर्ष का संघ का लेखा तैयार कर, अंकेक्षण पूर्ण कराया गया हो एवं उससे कोई भी वसूली लंबित न हो।
3. आवेदक व्यवहारकुशल, वाक पटु, अपने कार्य के प्रति समर्पित एवं ईमानदार होना चाहिए।

कार्य दायित्व - प्रत्येक सेल्स एक्सीक्यूटिव को अपने कार्य क्षेत्र में उत्पादों की बिक्री हेतु प्रचार-प्रसार करते हुए क्रेताओं से क्रय आदेश लेकर निकटतम संजीवनी विक्रय केन्द्र/एन.डब्ल्यू.एफ.पी. मार्ट से उत्पाद प्राप्त कर क्रेताओं को उपलब्ध कराना होगा। संजीवनी विक्रय केन्द्र/एन.डब्ल्यू.एफ.पी. मार्ट से सामग्री/उत्पाद प्राप्त करने हेतु राशि अग्रिम रूप में जमा करनी होगी। अग्रिम राशि रिटेल दुकानदार का देय कमीशन+सेल्स एक्सीक्यूटिव को देय कमीशन (खुदरा मूल्य पर देय कमीशन+ परिवहन व्यय) काटकर शेष राशि जमा करनी होगी।

प्रशिक्षण - सेल्स एक्सीक्यूटिव को आवश्यकतानुसार प्रशिक्षण की व्यवस्था संघ मुख्यालय, रायपुर द्वारा किये जाने की प्रावधान है।

कार्य क्षेत्र - चयनित सेल्स एक्सीक्यूटिव को संबंधित प्राथमिक वनोपज समिति के कार्य क्षेत्र एवं उससे संलग्न शहरी क्षेत्र में कार्य करना होगा।

सेल्स एक्सीक्यूटिव को देय कमीशन (एक वित्तीय वर्ष हेतु) :

1. हर्बल उत्पाद की बिक्री पर खुदरा मूल्य पर 2 प्रतिशत कमीशन रू. 50000/- तक की खरीदी पर।
2. परिवहन हेतु 2 प्रतिशत राशि पृथक से दिया जाा प्रस्तावित है।
3. रू. 50000/- के ऊपर प्रत्येक रू. 25000/- तक की खरीदी पर रू. 200/- अतिरिक्त कमीशन दिया जाएगा।

निष्कर्ष - वनों का महत्व पर्यावरण की दृष्टि से सर्वविदित है लेकिन यदि हम छत्तीसगढ़ के संदर्भ में देखे तो यह वन वनवासियों जिसमें कि अधिकांश गरीब आदिवासी हैं, के लिये जीवन का आधार हैं, क्योंकि वनों से प्राप्त होने वाली लघु वनोपज को संग्रहित कर खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों में बीमारियों का उपचार जंगल से प्राप्त होने वाली जड़ी बूटियों से किया जाता है। लघु वनोपज को संग्रहण उपरान्त विक्रय कर ग्रामीण दैनिक उपयोग की वस्तुएं क्रय करते हैं। भूमिहीनों तथा कृषकों के लिये तो लघु वनोपज का महत्व और भी अधिक है क्योंकि उनकी आय का बहुत अधिक हिस्सा लघु वनोपज के विक्रय से प्राप्त होता हैं। वर्ष के अंत में सबसे अधिक उत्पाद क्रय-विक्रय करने वाले सेल्स एक्सीक्यूटिव को संघ द्वारा पुरस्कार से सम्मानित किया जाएगा। सेल्स एक्सीक्यूटिव बनने हेतु निर्धारित योग्यताधारी प्रबंधक जिला यूनियन के माध्यम से अपना आवेदन संघ मुख्यालय, रायपुर को भेज सकते है। चयनित सेल्स एक्सीक्यूटिव जिला यूनियन स्तर पर स्थापित संजीवनी हर्बल उत्पाद केन्द्र की सहायता से हर्बल उत्पाद बिक्री हेतु प्रयास करेंगे।

सुझाव – प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध के अंतर्गत यह पाया गया कि अंराष्ट्रीयकृत वनोपज पर कोई रायल्टी नही होने के कारण वनवासी आदिवासी इसका संग्रहण करके स्थानीय हाट बजारो में छोटे व्यापारियों को विक्रय कर देते है। अनुसंधान के द्वारा यह पाया गया कि ये छोटे व्यापारी राज्य की इन लघु वनोपज को मांग के अनुरूप अपना कमीशन या अधिक मूल्य पर बाजारो पर विक्रय करते है। बड़े व्यापारियों द्वारा संग्रहित वनोपज को ग्रेडिंग करते हुए देश की विभिन्न मंडियों में या लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों को विक्रय कर देते है। प्रत्येक वर्ष छत्तीसगढ़ राज्य में संग्रहित किये जाने वाले लघु वनोपज की अधिकांश मात्रा अन्य राज्यों की मंडियों या उद्योगो को भेज दी जाती है। अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि छत्तीसगढ़ राज्य में लघु वनोपज पर आधारित उद्योगो का विकास अपर्याप्त है साथ ही औषधीय व गैर औषधीय लघु वनोपज की वार्षिक उत्पादन क्षमता को देखते हुए यह बात स्पष्ट होती है कि छत्तीसगढ़ राज्य में इनका संपोष्य विकास करते हुए संबंधित उद्योगो के विकास की महत्वपूर्ण संभावनाएँ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दुबे, डॉ. श्यामाचरण – आदिवासी लोक कला परिषद, 1987
2. तिवारी डॉ वी.के.– छत्तीसगढ़ की जनजातियाँ, 2001
3. Tiwari D.N. Primitiv eTribes of M.P.
4. Mahapatro, P.C. – Economic Development of Tribal India 1987 , New Delhi
5. Social History of Chhattisgarh, Agam kala Prakasham Delhi 1985
6. Chhattisgardh Redis Coverd, Aryan Book International Delhi 1995
7. मामोरिया डॉ. चतुर्भुज, भूगोल, साहित्यभवन पब्लिकेशन्स 2013.
8. भारत वन स्थिति रिपोर्ट 2011
9. Census of India 2001 &2011
10. आर्थिक सर्वेक्षण – 2010–11, 2011–12, 2012–13.
11. Impact of Forestry Project on Tribal Economy Tribal & Harijan WelfarePlanning – Commission
12. 11वीं पंचवर्षीय योजना 2007–2012, छ.ग. रायपुर
13. 12वीं पंचवर्षीय योजना 2012–2017, छ.ग. रायपुर

तालिका 2. छत्तीसगढ़ राज्य की महत्वपूर्ण वनौषधियाँ

क्र.	प्रजाति	उपयोगी भाग	वानस्पतिक नाम	मात्रा(क्विं में)	दर(प्रति क्विं.)	राशि(लाख में)
1	आंवला	फल	Emblica cfficinalis	31,000.00	3,000.00	930.00
2	शहद	शहद	Honey	3,750.00	5,000.00	187.50
3	बायबिडिंग	फल	Embelia pjericottam	11,300.00	3,000.00	339.00
4	बेल	गुदा	Aegle marmelos	15,600.00	700.00	109.20
5	कालीजीरी	बीज	Vernonia anthelmintica	6,800.00	2,400.00	163.20
6	धवई	फूल	Woodfordia fruticosa	26,250.00	400.00	105.00
7	सतावर	जड़	Asparagus racemosus	2,600.00	3,000.00	78.00
8	कालमेघ	पंचांग	Andrographis paniculata	13,950.00	500.00	69.75
9	नागरमोथा	जड़	Cyperus esculetus	14,800.00	550.00	81.40
10	बेहड़ा	फल	Terminalia bellerica	29,700.00	250.00	74.25
11	मालकांगनी	बीज	Celastrus paniculatus	3,200.00	2,300.00	73.60
12	भेलवा	बीज	Semecarpus anacardium	12,250.00	250.00	30.63
13	मरोड़फली	फल	Helicteres isora	3,900.00	400.00	15.60
		योग		**175100.00**		**2,257.13**

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

औद्योगीकरण के कारण पर्यावरण प्रदूषण (देवास नगर के संदर्भ में एक अध्ययन)

डॉ. विक्रम वर्मा * किरण भार्गव **

प्रस्तावना – भूगोल में पृथ्वी तल का अध्ययन मानव निकास के रूप में किया जाता है। जिसके अन्तर्गत कलापों पर पाए जाने वाले विभिन्न भौतिक एवं मानवीय क्रियाकलापों का अध्ययन किया जाता है। भूगोल के परम्परागत स्वरूप में समय-समय पर परिवर्तन औद्योगिक भूगोल की एक प्रमुख शाखा के रूप में विकसित हुआ है। औद्योगिक भूगोल, मानव भूगोल की प्रमुख शाखा है। जिसका संबंध मानव के आर्थिक क्रियाकलापों से है।

मानव की आवश्यकतापूर्ति के लिये उद्योगों का विकास आवश्यक है। इस शाखा में भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक और वाणिज्यिक तथ्यों का समावेश है जिसके परिणामस्वरूप औद्योगिक क्षेत्र का विकास होता है। विनिर्माण शब्द की व्युत्पत्ति को बदलने की प्रक्रिया को औद्योगिक विनिर्माण कहते हैं। चाहे वह हाथ द्धारा हो या मशीन के माध्यम से बना हुआ है। 'वह भूगोल जिसके अन्तर्गत उद्योगों का भौगोलिक औद्योगिक भूगोल में उद्योगों की गहनता एवं केन्द्रीकरण के कारकों औद्योगिक जटिलताओं इस पर आश्रित जनसंख्या, कच्चा माल, सरकारी नीतियाँ, बाजार, यातायात, श्रमशक्ति और सामाजिक व्यवस्था का अध्ययन किया जाता है।'

शोध पत्र का अध्ययन क्षेत्र देवास नगर मध्यप्रदेश के पश्चिमी भाग में मालवा के पठार पर स्थित है जो उज्जैन संभाग का महत्वपूर्ण जिला है। देवास नगर की भौगोलिक स्थिति $23^0 58'$ अक्षांश एवं $75^0 5'$ पूर्वी देशांतर है। जिसकी समुद्र सतह से औसत ऊँचाई 540 मी. है। देवास नगर का कुछ क्षेत्रफल 10022.00 हैक्टैयर है। जो कि 45 वार्डो में विभक्त है।

देवास के मध्य में राष्ट्रीय राजमार्ग क्र. 3 गुजरता है जिसे रक्तवाहिनी कहा जाता है। देवास नगर के पूर्व में सोनकच्छ दक्षिण में म.प्र. की व्यापारिक राजधानी इन्दौर, पश्चिम में सांस्कृतिक राजधानी उज्जैन तथा उत्तर दिशा में मक्सी स्थित है जो विकसित होता हुआ औद्योगिक नगर है। देवास स्वयं में एक औद्योगिक पृष्ठभूमि वाला नगर है। जो मध्यप्रदेश ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारत एवं विश्व में अपने उत्पादों के लिये विश्व प्रसिद्ध है। इन्हीं विशेषताओं को अपने अन्दर समाहित करता हुआ यह नगर भविष्य का महत्वपूर्ण औद्योगिक नगर बनने की सारी योग्यता रखता है जिसे सोयाबीन नगर के नाम से जाना जाता है।

देवास एक प्रगतिशील नगर है। लेकिन विगत वर्षो में औद्योगिकीकरण के कारण यहां विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय समस्याओं ने जन्म लिया है। प्राकृतिक वातावरण की भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक विशेषताओं में अवांछनीय परिवर्तन लाने वाले पदार्थ को प्रदूषण कहते है। देवास नगर में औद्योगिक ईकाईयों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थो से वायु, जल तथा भूमि प्रदूषण के स्तर में वृद्धि हुई है।

वायु प्रदूषण – पृथ्वी के वायुमण्डल में मानव निर्मित प्रदूषणों का मौजूद होना वायु प्रदूषण कहलाता है। जिससे सम्पत्ति, पौधों, पशुओं एवं मनुष्य के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। देवास नगर में वृहद एवं मध्यम आकार के उद्योगों की संख्या लगभग 268 है। जिसमें चमड़ा, रसायन, सूत्री वस्त्र, सेनेटरी, टाईल्स, लोहा, सोयाबीन आदि उद्योग है। जिसमें बड़ी मात्रा में कार्बन डाई ऑक्साईड, कार्बन-मोनोआक्साइड, सीसा, नाईट्रोजन ऑक्साईड तथा भारी मात्रा में धातुओं के निलंबित कण वायु में उत्सर्जित होते है। जिनमें देवास नगर की वायु में इनकी मात्रा में विगत वर्षो से वृद्धि हुई है।

जल प्रदूषण – जल मानव के जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है। स्वच्छ जल स्वास्थ्य तथा मानव विकास के लिये अनिवार्य है। औद्योगिक अपशिष्ट में ठोस, अपशिष्ट तथा कूड़ा के अलावा रसायन, डिटर्जेंट, धातु तथा कृत्रिम योगिक होते है। ये प्रदूषण सामान्यत: नदियों में बहा दिये जाते है। देवास नगर में नागदाह नदी तथा क्षिप्रा नदी प्रवाहित होती है। नगर में स्थित औद्योगिक ईकाईयों द्धारा दूषित जल खुले नालों के माध्यम से प्रवाहित कर दिया जाता है, और यह दूषित पानी इन नदियों के स्वच्छ जल को दूषित कर देता है। क्षिप्रा और नागदाह नदियों में पानी में जांच से पता चला है कि इसके पानी में रसायनों की उपस्थिति अधिक है। जिसके कारण इसका पानी पीने लायक नहीं है। अभी हाल ही में इन नदियों के पानी का सेवन करने से मोरों और अन्य जीवों की मृत्यु हुई है। साथ ही इस दूषित पानी से भूमिगत पानी भी प्रदूषित हो रहा है। जिसके उपयोग करने से समीपवर्ती रहवासियों को अनेक जल जनित बीमारियां हो रही है। जैसे हैजा, पेचिस, अतिसार, पीलिया तथा क्षयरोग आदि।

भूमि प्रदूषण – उद्योगों से निकलने वाले ठोस अपशिष्ट पदार्थो एवं रॉ मटेरियल के कारण उद्योगों के निकट की भूमि पर फेंक दिया जाता है। जिससे उपजाऊ और अच्छी मिट्टी प्रदूषित हो रही है। देवास नगर में लैदर, सेनेटरी टाईल्स तथा कपड़ा उद्योगों से निकलने वाला अपशिष्ट निकट ही फेंक दिया जाता है। जिससे भूमि प्रदूषण हो रहा है। देवास नगर में प्रतिदिन 1200 टन ठोस अपशिष्ट पदार्थ निकलता है। जिसको निष्पादन करना एक समस्या है। जिसमें सीमेन्ट, क्रांक्रीट, राख, टाईल्स, पत्थर आदि बड़ी मात्रा में निकलते है। जो मिट्टी को प्रदूषित करते हैं।

आज देवास एक तीव्रगति से विकास करता हुआ औद्योगिक नगर है। यहां पर्यावरण में औद्योगिक इकाइयों के कुप्रबंधन के कारण प्रदूषण के स्तर में वृद्धि हुई है। आज हमें पर्यावरण के बारे में गंभीरता से विचार करना होगा। नगर निगम और मध्यप्रदेश प्रदूषण विभाग अपने स्तर पर इनमें औद्योगिक ईकाइयों पर प्रतिबंधात्मक कार्यवाही करें जिससे समय रहते

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (भूगोल) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रदूषण से बचा जा सके। साथ हमें भी पर्यावरण को प्रदूषण से बचाने के लिये सकारात्मक प्रयास करना होगा जिससे पर्यावरण जैसी समस्या को जड़ से मिटाया जा सके और आगे वाली पीढी को एक स्वच्छ वातावरण दें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. रविन्द्र कुमार : पर्यावरण प्रदूषण एक अध्ययन, हिन्दू युग्म नई दिल्ली 2016
2. अख्तर, रईस : जलवायु परिवर्तन एवं वायु प्रदूषण, शिकागो 2017 मध्यप्रदेश प्रदूषण बोर्ड, देवास

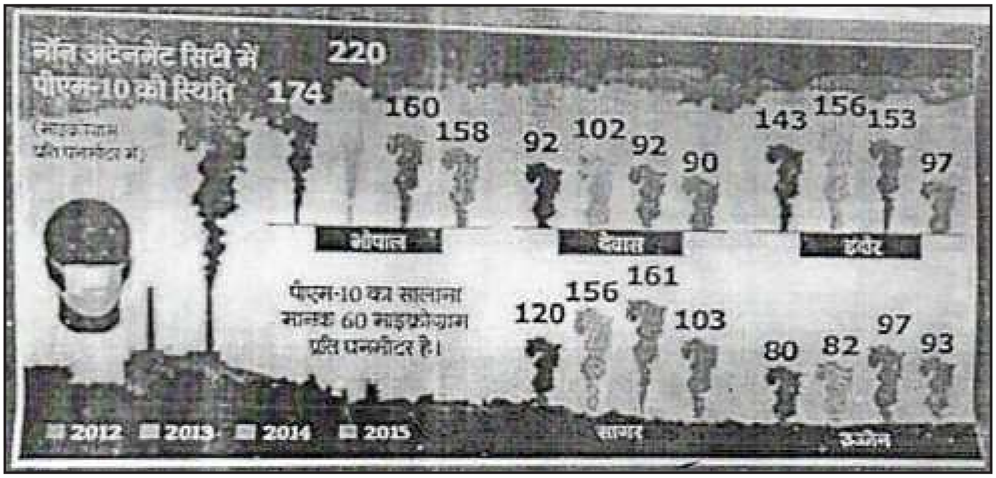

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

गांवों से नगरों की ओर पलायन और इसके विविध आयाम कन्नौज जनपद का एक भौगोलिक अध्ययन

प्रो. डी. एस. नेगी* नागेन्द्र सिंह**

शोध सारांश – अध्ययन क्षेत्र कन्नौज जनपद में गांवों से नगरों की ओर पलायन एक जटिल समस्या बन गया है। कन्नौज जनपद में प्राय: सभी न्याय पंचायतों में 20 से 30 प्रतिशत व्यक्ति पलायन को विवश हैं। यहाँ सबसे अधिक पलायन स्थानीय स्तर पर ही होता है। अधिकांश न्याय पंचायतों में 55 से 65 प्रतिशत पलायन स्थानीय स्तर पर ही हो रहा हैं। रोजगार और शिक्षा यहाँ पलायन के लिए उत्तारदायी कारणों में सबसे प्रमुख हैं। यहाँ लगभग 80 प्रतिशत व्यक्ति रोजगार और शिक्षा के कारण ही पलायन करते हैं। यहाँ पलायन की प्रकृति क्रमशरू अल्पकालिक, दीर्घकालिक और मौसमी होती हैं, मनरेगा के कारण यहाँ मौसमी प्रवास की प्रवृत्ति में कमी देखी जा सकती हैं।

पलायन के कारण जहां ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यशील जनसंख्या का अभाव हो गया है, वहीं ग्रामीण क्षेत्रों की जनांकिकीय संरचना भी इस से नकारात्मक रूप से प्रभावित हो रही हैं, उधर ग्रामीण क्षेत्रों से होने वाले पलायन से नगरीय क्षेत्रों में नगर नियोजन भी नकारात्मक रूप से प्रभावित हो रहा हैं।

मुख्य शब्द – पलायन, प्रवास, ग्रामीण जनसंख्या, नगर नियोजन और ग्रामीण विकास।

प्रस्तावना – महात्मा गाँधी कहते थे कि असली भारत गांवों में बसता है। तत्कालीन समय में यह बात पूर्णतया सत्य भी थी, उस समय भारत की लगभग 90 से अधिक आबादी ग्रामीण भागों में ही निवास करती थी। परंतु स्वतंत्रता पश्चात ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों में कमी और नगरों की चकाचौंध से प्रभावित होकर भारत में ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय क्षेत्रों की ओर पलायन में अप्रत्याशित रूप से वृद्धि हुई, जिसके कारण नगरीय क्षेत्र ग्रामीण आबादी से भर गए। अध्ययन क्षेत्र भी इस प्रवृत्ति से अछूता नहीं रह सका, यहां भी ग्रामीण क्षेत्रों से एक बहुत बड़ी आबादी नगरीय क्षेत्रों में जाकर बस गई। ग्रामीण जनसंख्या की इस पलायनवादी प्रकृति के कारण नगरों में विभिन्न प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो गई, इस पलायन के कारण ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों की जनसंख्या संरचना पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

प्रस्तुत शोधपत्र में अध्ययन क्षेत्र कन्नौज जनपद में ग्रामीण क्षेत्रों से नगरों की ओर होने वाले पलायन की प्रकृति, गत्यात्मकता, कारण और प्रभावों का विश्लेषण किया गया है।

शोध विधि – यह शोधपत्र प्राथमिक आंकड़ों पर आधारित है, इस शोधकार्य में कन्नौज जनपद की न्याय पंचायतों को इकाई माना गया है। कन्नौज जनपद में 8 उपखंड और 81 न्याय पंचायतें हैं। यहाँ प्रस्तुत शोधकार्य हेतु प्रत्येक उपखंड से एक-एक न्याय पंचायत क्रमशरू लोहामढ़, मिंधौली, अनौगी, ठठिया, सौरिख देहात, नादेमऊ, सलेमपुर और नौरंगपुर को याद्दच्छिक प्रतिचयन विधि से चयनित किया गया है। इसी प्रकार सभी आठों न्याय पंचायतों से प्रत्येक से 4-4 गांवों का चयन याद्दच्छिक प्रतिचयन विधि से किया गया है। पुनरू प्रत्येक चयनित गांव से 10-10 उत्तरदाताओं का चयन याद्दच्छिक प्रतिचयन विधि से किया गया है। इस प्रकार शोध के लिए आवश्यक आंकड़े कन्नौज जनपद में 320 उत्तरदाताओं के व्यक्तिगत साक्षात्कार और प्रश्नावलियों के माध्यम से वर्ष 2019 के सितंबर-अक्टूबर माह में एकत्र किए गए हैं। इन सभी आंकड़ों का विश्लेषण कर इन्हें तालिकाओं के माध्यम से प्रदर्शित किया गया हैं।

ग्रामीण पलायन – वर्तमान समय में ग्रामीण क्षेत्रों में पलायन की प्रवृत्ति निरंतर बढ़ रही हैं। प्रायरू यहाँ सभी न्याय पंचायतों से लोग नगरों की ओर पलायन कर रहे हैं। अधिकांश पालन उन क्षेत्रों से हो रहा हैं जहां रोजगार, शिक्षा और बुनियादी सुविधाओं का अभाव हैं। अध्ययन क्षेत्र में प्रायरू सभी न्याय पंचायतों से 20 से 30 प्रतिशत लोग पलायन हेतु विवश हैं। तालिका 1 से कन्नौज जनपद के ग्रामीण क्षेत्रों में नगरों की ओर होने वाले पलायन को सरलता से समझा जा सकता है।

तालिका 1: कन्नौज जनपद में पलायन की प्रवृत्ति

क्र.	न्याय पंचायत	कुल उत्तरदाता	प्रवासित व्यक्ति	प्रतिशत
1	लोहामढ़	240	72	30.00
2	मिंधौली	223	63	28.25
3	अनौगी	232	74	31.90
4	ठठिया	253	82	32.41
5	सौरिख देहात	271	89	32.84
6	नादेमऊ	276	76	27.54
7	सलेमपुर	246	53	21.54
8	नौरंगपुर	226	47	20.80

स्रोत: क्षेत्रीय सर्वेक्षण

पलायन का स्तर –पलायन को दूरी के आधार पर चार प्रमुख भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है- स्थानीय स्तर पर, जिला स्तर पर, राष्ट्रीय स्तर पर और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर। अध्ययन क्षेत्र में प्रायरू स्थानीय और जिला स्तर पर ही अधिक पलायन देखने को मिलता हैं। यहाँ व्यक्ति रोजगार

* प्राचार्य, राजकीय महाविद्यालय, चौबट्टाखाल पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखंड) भारत
** शोधकर्ता (भूगोल) डॉ. पीतांबर दत्त बड़थ्वाल हिमालयन राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटद्वार (गढ़वाल) (उत्तराखंड) भारत

हेतु आस-पास के गांवों और नगरों में पलायन करते हैं। कानपुर ऐसा ही एक महत्वपूर्ण नगर है, अध्ययन क्षेत्र से अनेक व्यक्ति रोजागर और उच्च शिक्षा हेतु कानपुर नगर में प्रवास कर रहे हैं। राष्ट्रीय स्तर पर होने वाले पलायन में लोग रोजागर हेतु अधिकांशत: दिल्ली, राजस्थान, पंजाब और हरियाणा जाते हैं, वहीं उच्च शिक्षित कुछ युवा बेंगलुरु, हैदराबाद और चेन्नई जैसे दक्षिण भारतीय नगरों में भी पलायन कर रहे हैं।

तालिका 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पलायन केवल आर्थिक रूप से सक्षम परिवार ही कर पाते हैं। अध्ययन क्षेत्र में अनेक व्यक्ति रोजगार की तलाश में मध्य पूर्व एशिया के सऊदी अरब, संयुक्त राज्य अमीरात और कतर तथा दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों में रोजगार की तलाश में प्रवास कर रहे हैं। यद्यपि ऐसे व्यक्तियों की संख्या यहाँ अत्यंत सीमित है। तालिका 2 में अध्ययन क्षेत्र में होने वाले पलायन के स्तर को प्रदर्शित किया हैं।

पलायन का कारण – गांवों में कृषि भूमि के लगातार कम होने, कृषि आय में लगातार गिरावट होने, प्राकृतिक आपदाओं और रोजगार की तलाश में ग्रामीण आबादी का बड़ा हिस्सा लगातार नगरों की ओर पलायन कर रहा है। गांवों में बुनियादी सुविधाओं की कमी भी पलायन का एक महत्वपूर्ण कारण मानी जा सकती है। गांवों में रोजगार और शिक्षा के साथ-साथ बिजली, पानी, आवास, सड़क, संचार व्यवस्था जैसी अनेक सुविधाओं का आज भी अभाव बना हुआ है। इन बुनियादी कमियों के साथ-साथ गांव में भेदभाव पूर्ण सामाजिक व्यवस्था के कारण भी शोषण और उत्पीड़न से परेशान होकर बहुत से लोग नगरों की ओर पलायन कर रहे हैं।

तालिका 3 से प्रदर्शित होता है कि अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक पलायन रोजगार और शिक्षा के कारण ही हो रहा है। यद्यपि यहाँ सुरक्षा और सामाजिक कारणों की भी अनदेखी नहीं की जा सकती।

तालिका 3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

अवधि के अनुसार पलायन के प्रकार – अवधि के आधार पर पलायन को मुख्य रूप से तीन प्रमुख भागों- अल्पकालिक, दीर्घकालिक और मौसमी वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता हैं।

तालिका 4 : कन्नौज जनपद में अवधि के अनुसार पलायन की प्रवृत्ति

न्याय पंचायत	अल्पकालिक		मौसमी		दीर्घकालिक	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
लोहामढ़	26	36.11	19	26.39	27	37.50
मिधौली	31	49.21	09	14.29	23	36.51
अनौगी	37	50.00	13	17.57	24	32.43
ठठिया	44	53.66	07	8.54	31	37.80
सौरिख देहात	35	39.33	11	12.36	43	48.31
नादेमऊ	27	35.53	13	17.11	36	47.37
सलेमपुर	23	43.40	03	5.66	27	50.94
नौरंगपुर	21	44.68	07	14.89	19	40.43

स्रोत: क्षेत्रीय सर्वेक्षण

अल्पकालीन पलायन में प्रवासी कुछ दिन या महीनों के भीतर ही अपने गृह स्थान पर लौट आते हैं। विशेष समयावधि या ऋतु में प्रतिवर्ष होने वाले मानव संचरण को मौसमी पलायन कहा जाता है। इस पलायन का समय और अवधि लगभग निश्चित होती है। इसी प्रकार दीर्घकालिक पलायन अपेक्षाकृत लंबे समय तक जारी रहता है और समाप्त होने के पश्चात दीर्घकाल तक स्थगित रहता है। तालिका 4 में अध्ययन क्षेत्र में अवधि के आधार पर पलायन को प्रदर्शित किया गया हैं।

पलायन का प्रभाव – पलायन दो प्रकार से किसी समाज पर प्रभाव डालता हैं। पहला सकारात्मक और दूसरा नकारात्मक। पलायन के सकारात्मक प्रभावों में नगरों में संस्कृति का विविधीकरण सर्वप्रमुख हैं। नगरीय क्षेत्रों में विभिन्न संस्कृतियों के संगम से एक नई संस्कृति का विकास होता है जो अधिक समावेशी, प्रगतिशील और विकसोन्मुखी होती हैं।

अध्ययन क्षेत्र में गांवों से नगरों की ओर होने वाले पलायन से गांवों से कार्यशील जनसंख्या का एक बड़ा वर्ग नगरों में चला गया है, जिससे गांवों में लिंग संरचना के साथ- साथ उम्र संरचना भी प्रभावित हो रही है। पलायन से जहां प्रवासियों को रोजगार के अवसर, आय में वृद्धि और उन्नत जीवन शैली तो मिलती है, वहीं इस से नगरीय क्षेत्रों में नगर नियोजन, यातायात तंत्र, स्वास्थ्य सुविधा और मांग एवं पूर्ति के मध्य अंतराल इत्यादि नकारात्मक रूप से प्रभावित होते हैं। पलायन का यह सबसे अधिक नकारात्मक प्रभाव हैं।

ग्रामीण पलायन रोकने के उपाय – अध्ययन क्षेत्र में गांवों से नगरों की ओर पलायन ग्रामीण और नगरीय दोनों ही क्षेत्रों को प्रभावित करता हैं। इस पलायन के जहां कुछ सकारात्मक पक्ष है वहीं इसके नकारात्मक पक्ष भी हैं हालांकि इसके नकारात्मक पक्ष अधिक स्थायी और गंभीर हैं। अतरू वर्तमान में ऐसी ग्रामीण विकास नीति की आवश्यकता है, जो ग्रामीण पलायन को सीमित करने हेतु प्रतिबद्ध हो। इसके अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन, ग्रामीण स्वास्थ्य, मानव संसाधन विकास, शिक्षा सुधार, कौशल विकास, कुटीर उद्योग, 24 घंटे बिजली आपूर्ति, यातायात साधनों का विकास, पशुधन विकास, पेयजल एवं स्वच्छता और पोषण पर विशेष बल दिया जाए। एक बार भारत के पूर्व राष्ट्रपति और भारत रत्न डॉ0 ए0 पी0 जे0 अब्दुल कलाम ने कहा था कि 'भारत के नगरों को गांवों मे लाकर ही ग्रामीण क्षेत्रों से होने वाले पलायन को रोका जा सकता हैं।'

निष्कर्ष – अध्ययन क्षेत्र के ग्रामीण भागों से नगरीय क्षेत्रों की ओर होने वाले पलायन में विगत कुछ दशकों से अधिक वृद्धि देखी जा सकती है, यहाँ स्थानीय स्तर पर लोग रोजगार की तलाश में आस-पास के नगरों में तेजी से पलायन कर रहे हैं। हालांकि मनरेगा के कारण यहाँ मौसमी प्रवास की प्रवृत्ति में कमी आयी है। हाल के वर्षों में जिस प्रकार से सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों के बजट में वृद्धि की है, वो ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन रोकने की दिशा में एक सकारात्मक कदम हैं, परंतु अभी भी इस दिशा में अधिक प्रयासों की आवश्यकता है। अध्ययन क्षेत्र में मनरेगा जैसी ग्रामीण विकास को समर्पित योजनाओं के बजट में वृद्धि और उनकी उचित मॉनिटरिंग जैसे प्रयास ग्रामीण पलायन को रोकने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Aajeevika Bureau. 2004. Status of Rajasthani Migrant Labour in Key Destination Areas of Gujarat. Report. Udaipur.
2. Aajeevika Bureau. 2010a. Har Haath ko Kaam? Impact of NREGS on Migrant Households. Report Udaipur.
3. Alam, Anwar (ed). 2008. India and West Asia in the Era of Globalisation. New Delhi: New Century Publications.
4. Banerjee, Biswajit. 1984a. Information Flow, Expectations and Job Search: Rural to Urban Migration Process in India. Journal of Development Economics, 15(1-3), 239–257.

5. Chattopadhyaya, Haraprasad. 1987. Internal Migration in India: A Case Study of Bengal (From Second Half of 19th century to 1931). New Delhi: K P Bagchi and Co.
6. Deshpande, Lalit. 2004. Migration and Development : A Review Article. Social Change, 34(3), 98.
7. GoI. 1999-2000. Migration in India. Report No. 470. National Sample Survey Office, Government of India, New Delhi.
8. Premi, Mahendra K. 1986. Migration to Cities in India. In:Rao (1986c). Pages 39–84

तालिका 2: कन्नौज जनपद में पलायन का स्तर

न्याय पंचायत	स्थानीय स्तर पर		जिला स्तर पर		राष्ट्रीय स्तर पर		अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
लोहामढ़	41	56.94	22	30.56	07	9.72	02	2.78
मिधौली	36	57.14	12	19.05	10	15.87	05	7.94
अनौगी	48	64.86	13	17.57	12	16.22	01	1.35
ठठिया	42	51.22	25	30.49	09	10.98	06	7.32
सौरिख देहात	53	59.55	17	19.10	15	16.85	04	4.49
नादेमऊ	46	60.53	19	25.00	11	14.47	00	0.00
सलेमपुर	31	58.49	17	32.08	05	9.43	00	0.00
नौरंगपुर	23	48.94	12	25.53	10	21.28	02	4.26

स्रोत: क्षेत्रीय सर्वेक्षण

तालिका 3: अध्ययन क्षेत्र कन्नौज जनपद में पलायन का कारण

न्याय पंचायत	रोजगार		शिक्षा		सुरक्षा		सामाजिक कारण	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
लोहामढ़	53	73.61	17	23.61	00	0.00	02	2.78
मिधौली	39	61.90	19	30.16	01	1.59	04	6.35
अनौगी	60	81.08	13	17.57	00	0.00	01	1.35
ठठिया	59	71.95	19	23.17	00	0.00	04	4.88
सौरिख देहात	51	57.30	31	34.83	00	0.00	07	7.87
नादेमऊ	46	60.53	30	39.47	00	0.00	00	0.00
सलेमपुर	29	54.72	17	32.08	01	1.89	06	11.32
नौरंगपुर	31	65.96	10	21.28	03	6.38	04	8.51

स्रोत: क्षेत्रीय सर्वेक्षण

****

चन्द्रकान्त देवताले के काव्य में जनजातीय संस्कृति तथा विविध आयाम

प्रो. मुकेश भार्गव *

प्रस्तावना – कवि चन्द्रकान्त देवताले की कई रचनाओं में स्वातंत्रेत्तर भारत की समाज विरोधी तत्वों, गरीबी, बेरोजगारी, महंगाई, व्यक्तिगत स्वार्थ परकता, ईश्वरी तत्वों के प्रति नकारवादी दृष्टिकोण, धार्मिक मतभेद, साम्प्रदाकि भेदभाव, आदि की ह्रासमान स्थितियों का प्रभावी चित्रण दिखाई देता है।

सन् 1960 के दशक के बाद समकालीन काव्यधारा में अर्थ बढता कर्ज, पेट्रोलियम पदार्थों में बढ़ती कीमतें, आदि के कारण जनमानस में जटिल समस्याएं पैदा हुई जिनका जिक्र बड़ी उग्रता के साथ व्यक्त किया गया।

दुष्यंत कुमार ने अपनी एक गजल में इस स्थितियों का बड़ा मार्मिक उल्लेख किया है। वे कहते हैं–

'हां तक आते–आते सूख जाती है कई नदियां।
हमें मालूम है कि पानी कहां ठहरा हुआ है।'

स्वतंत्र निर्णय कभी नहीं कर पाता। ताकतवर लोग सरकार बनाते हैं। गरीबों के केन्द्र पर वे वोट हासिल कर जनता पर ही शासन करते हैं। कवि चन्द्रकान्त देवताले कहते है–

'सरकार भी सरकार बनने के लिए
झाँकती है दोनों की दुनियां में
फिर मुट्ठी भर दाने छितरा कर
लड़वा देती है आपस में
और एक नाजूक यमौका देख मांगती हैं ताकत
उन करोड़ों कमजोर लोगों से
जिनकी आँखों में जलता हुआ जंगल।'
सारी दुनिया को देकर अपनी ताकत
वे नहीं जानते ताकत कहां हैं
खड़ी करके सरकार पूछते हैं सरकार कहाँ है।

कवि ने स्वातंत्र्तयोत्तर, सामाजिक स्थिति पर काफी कुछ लिखा है। झूठे फरेबी नेता, काला बाजारी करने वाले और मुनाफाखोरों के षडयंत्र, खून चूसने वाले पूंजीपति खटमल और इस बीच भूख, बेबसी, बीमारी के शिकार होकर चूहों की तरह दम तोड़ते लोग, और उन्हीं पर रिश्वतखोर, नौकरशाहों द्वारा सत्ताये जाने वाले आम जन।

'वह एक आदमी
नंगी सड़क पर, खेत के किनारे या जंगल में
भूख से दम' तोड़ देता है
कत्लेआम की तरह नहीं होता कुछ भी
हजारों मरे हुए चूहों की दुर्गन्ध के विस्फोट में
तड़फड़ाती तितलियों की तरह दम घुटता रहता है
रिश्वतखोर नौकर शाहों द्वारा सताये जाने वाले
अबोधों की गिनती करते–करते
बचपन से उमर बीत जाने तक थक जायेगें।'

आदिवासी और दलितों को लिए भी कवि ने अपनी सहानुभूति व्यक्त की है। आधुनिक जीवन से कटे, एकान्त जंगलों में अपने अभावगग्रस्त कष्ट भरे जीवन बीताने वाले बस्तर के आदिवासी, जिन्हें विकास के नाम पर नौकरशाहों और राजनेताओं ने भी उन्हें जी भर कर लूटा है, आज भी वे लोग खुशहाली का जीवन जीने के लिए तरस रहे है।

कवि चन्द्रकान्त देवताले ने उनकी घुटनभरी जिंदगी का मर्म भेदी किन्तु यथार्थ चित्रण किया है।–

'पर मैं देख रहा हूँ
बस्तर के जंगल में जन्मान्ध अंधेरे का दमा
पेट भर टंगे घोसलों में कैद
चिन्ताओं के छिन्न–भिन्न केंचुल
कहां हैं हमारा गाढा खून
हमार पैतृक मस्तक
स्वाभिमान से दमकता हुआ
पसीनों को पीता
आदमी का लोहा
अब के फिर मुर्गे पकेंगे
मंद और सल्फी की हांडी फूटेगी
माद्री का थाप थिरकेगी बस्तर की लड़किंया
ब्लाउज नहीं पहनेगी कोई भी लड़की
चाहे जो भी हों उनके पास
मांस के जंगल में धँसते
तोड़ी की हुकुमत के साथ
नाचेगी लड़किँ सारी रात
जुल्म की आरी के नीचे छिरता हुआ
उसका पूरा दिन
दुबक कर रह होगा 'धुए की छाह के पीछे।'

धूरे के दिन भी कभी पलट जाते हैं। बुरे दिन टल जाते हैं। खुशहाली फिर लौट आती है, लेकिन बस्तर के इन जनजाती लोगों की दशा में कोई बदलाव आज भी नजर नहीं आता। कवि ने इसी प्रसंग पर कहा है–

'दस बरस में चमक जाती है

* संविदा सहायक प्राध्यापक, तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

धूरे की किस्मत भी
पर तीस बरस से यहाँ तो
वैसा का वैसा ही अन्धेरा है
बस्तर तो घूरा नहीं
पिंजरा है मोहने वाली मैना का
बस्तर तो मादल हैं
हवा की पीठ पर बजता हुआ।'

कुल मिलाकर सीदे साधे, भोले भाले आदिवासी लोग सभ्य कहे जाने वाले बनियों, अफसरों तथा अन्य लुटेरों के द्वारा कि जाने वाले अन्याय और अत्चारों से त्रस्त हैं, पीड़ित है। किन्तु जुल्म का यह सिलसिला अनवरत बढता ही रहा है। एक अत्याचार के बाद दूसरा अत्याचार तत्पर है। जुल्म की चक्की मे बेचारे अबोध आदिवासी आज भी पिस रहे है।

चन्द्रकान्त देवताले ने अपनी रचना 'आग हर चीज में बताई गई थी' में बाहर के जनजीवन की व्यथा का चित्रण इस प्रकार किया है-

'कब तक देखते रह सकेंगे वे
उनकी ही हड्डियों पर खड़े किए हैं
आलीशान 'हल डंडी मार बनियों ने
करोंड़ों का हिसाब चुकता करना हैं, उन्हें
शताब्दियों का, पेड़ों का असंख्य'
पीठ पर पड़े चाबुक के निशानों का
गोश्त का हिसाब, खून का
साँवली वन कन्याओं की चीख और सिसकियों का,
भंग-धड़ंग बच्चों के फूले हुए पेट
और बूढी नंगी देहों की
आत्मा की झुरियों का हिसाब।'

बस्तर में जनजीवन में आज भी विकास का मुँह नहीं देखा है। बचपन से ही आदिवासी बच्चों को पेट भरने के लिए दिन रात कष्ट उठाना पड़ता है।

आदिवासी लड़कियाँ चकाचौंध वाले शहर में भयभीत चिड़ियां की तरह लगती है-

'फकत भयभीत चिड़ियो-सी
देखती रहती है लड़कियां सात
बड़ी फजर से आकर बैठी गई है
पत्थर के घोड़े के पास।'
'होंगी अंधेरे के कई-कई मोड़ पर
इस वक्त मेरे देश की कितनी ही आदिवासी बेटियाँ।'

आदिवासियों का जीवन अभावग्रस्त रहा है। जंगलों में और पहाड़ों में रहकर पेट भरना बहुत मुश्किल हो रहा है। आदिवासी लोग हर बार मौसम पर अन्यत्र मजदूरी के लिए अन्यत्र पलान करते हैं।

यूं तो पुरुष प्रधान समाज में नारी की स्थिति में कोई खास परिवर्तन नहीं आया है। नारी अपना सब कुछ अपने परिवार के लिए समर्पित कर देती है। इसके बावजूद भी अपनी कोई निजी पहचान नारी के पास अब भी शेष नहीं है। इसी बात को कवि चन्द्रकान्त देवताले ने निम्नांकित शब्दों में व्यक्त किया है-

'एक औरत का धड़
भीड़ में भटक रहा है
उसके हाथ अपना चेहरा ढूंढ रहे है
उसके पाँव
जाने कब से
सबसे
अपना पता पूछ रहे हैं।'

प्रस्तुत पंक्तियों में प्रतीक के रूप में कवि कहता है कि एक औरत का धड़ भीड़ में भटक रहा है याने स्त्री का आज भी अपना कोई अस्तित्व नहीं है। वह अपने चेहरे को ढूंढ रही हैं। अपनी पहचान आज भी नारी अस्तित्वहीन नहीं बनी रहती है।

'ब्लाउज बदलती, साड़ी पछीटती
कंघी करती हुई औरतें
सड़क को एक साथ 'हर औरत हमाम' की
तरह वापरती औरतें।'

जनता की योजनाओं को हड़प कर धनिक बनते सत्ताधारी अपने गुंडे पालते हैं। प्रजातंत्र की यह निकृष्टत स्थिति कवि ने बेलाग तरीके से व्यक्त की है।

'प्रजातंत्र की रथ-यात्रा निकल रही है
औरतों और बच्चें रोंदा जा रहा है
गुंडे और नोटों की ताकत से हतप्रभ लोग
खामोश खड़े है।'

सत्ता पर बैठे लोग संवेदनशील नहीं रहते। सत्ता पाने के लिए गुंडों का सहारा लेते है। औरतों और बच्चे पर जुल्म करते हैं। हमेशा सत्ताधारी लोग आम जनता पर अनुचित दबाव डालते रहते हैं।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि समकालीन कविता में दलितों, आदिवासियों और आम जनता के प्रति सहानुभूति का स्वर कवि ने मुखर किया है। समकालीन कविता पूंजीवादी अर्थव्यवस्था से संघर्ष करती है और कवि ने शोषितों के हक में अपनी बात स्पष्ट रूप से व्यक्त की गई है।

सत्ता पाने तक सत्ताधारियों ने आम लोगों को भारी प्रलोभन दिये है। लेकिन सत्ता पाने पर सत्ताधारी लोगों ने जनता से मुँह मोड़ लिया। वे भ्रष्टाचार में ही लिप्त रहे हैं। कवि ने उनकी भरपूर भर्त्सना की है। कवि का समूचा काव्य लेखन आम जनता के प्रति सहृदता और समाज विरोधियों के प्रति उग्र आक्रोश व्यक्त किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दुष्यंत कुमार-साए में धूप, पृ.15
2. चन्द्रकांत देवताले, भूखण्ड तप रहा है, पृ. 34
3. चन्द्रकांत देवताले, पत्थर की बेंच, पृ.90
4. चन्द्रकांत देवताले, आग हर चीज में बताई गई थी, पृ.106
5. चन्द्रकांत देवताले, आग हर चीज में बताई गई थी, पृ.109
6. चन्द्रकांत देवताले, आग हर चीज में बताई गई थी, पृ.111
7. चन्द्रकांत देवताले, उसके सपने, रोशनी मैदान की तरफ, पृ. 104
8. चन्द्रकांत देवताले, उजाड़ में संग्रहालय, पृ.82
9. चन्द्रकांत देवतालें, आग हर चीज में बताई गई थी, पृ.35

****

समाज के विभिन्न वर्गों पर भ्रष्टाचार के प्रभावों का अध्ययन (मध्य प्रदेश के विशेष संदर्भ में)

रामचन्द्र जमरा* प्रो. सरोज बिल्लौरे**

शोध सारांश – भ्रष्टाचार वर्तमान समय की सबसे समस्या बन गया है, जिससे समाज का प्रत्येक वर्ग प्रभावित हो रहा है। भ्रष्टाचार के कारण लोगों को जहाँ एक ओर आर्थिक हानि हो रही है, वहीं दूसरी ओर सामाजिक एवं नैतिक पतन भी हो रहा है। भ्रष्टाचार को नियंत्रित /समाप्त किया जाना नितांत आवश्यक है।

कुंजी शब्द – भ्रष्टाचार, भ्रष्ट, नौकरीपेशा

प्रस्तावना – वर्तमान समय में अन्य देशों के साथ ही भारत जैसे विकासशील देश में भी भ्रष्टाचार अपनी जड़े फैला चुका है। जब कोई व्यक्ति या संस्था न्यायिक व्यवस्था के लिए निर्धारित कानूनो/नियमों के विरूद्ध अपने व्यक्तिगत स्वार्थ की पूर्ति के लिए अनैतिक व्यवहार करता है तो वह व्यक्ति या संस्था भ्रष्ट या भ्रष्टाचारी कहलाते है अर्थात् सार्वजनिक जीवन में स्वीकृत मूल्यों के विरुद्ध आचरण को भ्रष्ट आचरण समझा जाता है (भ्रष्टाचार = भ्रष्ट आचार)। वर्तमान में आम जीवन में इसे आर्थिक अपराधों से जोड़ा जाता है। 21 दिसम्बर 1963 को भारत में भ्रष्टाचार के खात्मे पर संसद में हुई बहस में डॉ राममनोहर लोहिया ने जो भाषण दिया था, वह आज भी प्रासंगिक है। उस वक्त डॉ लोहिया ने कहा था सिंहासन और व्यापार के बीच संबंध भारत में जितना दूषित, भ्रष्ट और बेईमान हो गया है, उतना दुनिया के इतिहास में कहीं नहीं हुआ है। **बुसैल(2015)** ने स्पष्ट किया है कि वर्तमान में चीनी और विदेशी शैक्षणिक मंडलों ने 'भ्रष्टाचार' की एक एकीकृत परिभाषा नहीं बनाई है। आमतौर पर इसे राज्य के अंगों में सार्वजनिक अधिकारियों के भ्रष्टाचार के रूप में परिभाषित किया जाता है, जो रिश्वत, भ्रष्टाचार, लापरवाही, धोखाधड़ी और अन्य कृत्यों के लिए हाथों में शक्ति का उपयोग करते हैं। लेकिन इस शब्द में अर्थव्यवस्था, राजनीति, संस्कृति, नैतिकता, कानून आदि के कई पहलुओं को शामिल किया गया है।[1]

शोध विषय का चयन – भ्रष्टाचार के संक्रमण से देश एवं समाज का प्रत्येक वर्ग प्रभावित हुआ है। समाज के विभिन्न वर्गों पर भ्रष्टाचार के प्रभावों का अध्ययन करने के लिए ही **'समाज के विभिन्न वर्गों पर भ्रष्टाचार के प्रभावों का अध्ययन' (मध्य प्रदेश के विशेष संदर्भ में)** नामक शोध पत्र तैयार किया गया है।

शोध के उद्देश्य

1. समाज के विभिन्न वर्गों पर भ्रष्टाचार के प्रभावों का अध्ययन करना।

अध्ययन का महत्व – समाज के विभिन्न वर्गों पर भ्रष्टाचार के प्रभावों से संबंधित विभिन्न तथ्यों को सामने लाने का एक महत्वपूर्ण प्रयास यह शोध अध्ययन है। इस शोध कार्य का महत्व एवं प्रासंगिकता यह है कि इसके माध्यम से यह स्पष्ट हो सकेगा कि समाज के विभिन्न वर्गों पर भ्रष्टाचार का किस प्रकार का प्रभाव हो रहा है? यह शोध कार्य नये शोधार्थियों के लिए महत्वपूर्ण एवं बहुत प्रासंगिक होगा और उनको मार्गदर्षन देगा।

शोध प्रविधि

अध्ययन का समग्र – इस शोध कार्य के लिए **अध्ययन के समग्र** के रूप में मध्य प्रदेश के धार जिले का चयन किया गया है।

अध्ययन की इकाई – अध्ययन की इकाई के रूप में धार जिले की 8 तहसीलों की कुल जनसंख्या में से चयनित 400 उत्तरदाताओं को सम्मिलित किया गया है।

उत्तरदाताओं का चयन – इस शोध की पूर्ति के लिए उत्तरदाताओं का चयन शोध कार्य के निर्धारित उद्देश्यों को दृष्टि में रखकर **सोद्देश्य प्रतिचयन** विधि से किया गया है।[2] धार जिले की 8 तहसीलों कुल 400 उत्तरदाताओं का चयन दैव निदर्शन पद्धति से किया गया है। उद्देश्यों के आधार पर जिले की प्रत्येक तहसील से 2 गाँवों का चयन किया गया है। इस प्रकार से जिले के कुल 16 (2 x 8) गाँवों का चयन किया गया है। **गाँवों के चयन के बाद प्रत्येक गाँव से 25 (25 x 16 = 400) उत्तरदाताओं का चयन शोध कार्य के लिए किया गया है।** इस प्रकार धार जिले के 16 गाँवों से 400 उत्तरदाताओं (25 x 16=400) का चयन अध्ययन की इकाई के रूप में किया गया है।

तथ्यों का संकलन – इस शोध कार्य के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों का संकलन किया गया है। प्राथमिक समंकों का संकलन अध्ययन के लिए चयनित क्षेत्र के चयनित गाँवों के उत्तरदाताओं से साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से किया गया है और शोध कार्य हेतु आवश्यक द्वितीयक समंकों का संकलन संबंधित विभागों के दस्तावेजों एवं वेबसाइट्स और शायकीय एवं अशासकीय कार्यालयों के प्रतिवेदनों, भारतीय जनगणना 2011 के विभिन्न लिखित दस्तावेजों से किया गया है।

संबंधित साहित्य का अध्ययन – इस अध्ययन के लिए समीक्षित साहित्य का विवरण निम्न प्रकार से है–

खान (2012) ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया है कि भ्रष्टाचार एक सार्वभौमिक अभिशाप है जो दुनिया और सभी देशों में एक आम घटना के रूप में मौजूद है। विकसित एवं गरीबों देशों में केवल स्तर का अन्तर है।[3]

भोयर (2012) ने अपने अध्ययन में यह स्पष्ट किया है कि काला

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

धन और भ्रष्टाचार एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इसलिए काला धन भ्रष्टाचार का एक स्त्रोत है। काला धान अवैधा तरीके से बनाया जाता है। ऐसे लोगों द्वारा सरकार का व्यवहार और नियंत्रण वांछित नहीं है। इसलिए काले धान का अनुपात हमारी आर्थिक प्रणाली में कानूनी धान से दोगुना है।[4]

श्रीवास्तव (2013) ने अपने लेख में बताया है कि भ्रष्टाचार मानव अधिाकारों के लिए खतरनाक है। जब भ्रष्टाचार व्यापक है, तो न्याय तक लोगों की पहुंच नहीं होती है और वे अपनी आजीविका की रक्षा नहीं कर पाते हैं।[5]

जैन (2012) ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया है कि देश में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम- 1988 जैसा एक व्यापक कानून है, जो भ्रष्टाचार से संबंधिात सभी संभावित कृत्यों को शामिल करता है और लोक सेवकों द्वारा भ्रष्ट आचरण को नियंत्रित करता है। इन सबके बावजूद देश भ्रष्टाचार का कहर से अभी भी मुक्त नहीं है।[6]

वांग (2011) का शोधा पत्र में खेल में अपनाई गई भ्रष्ट प्रथाओं पर अपने अनुभवजन्य अध्ययन पर धयान केंद्रित करता हैं। उनके अनुसार भ्रष्टाचार जमीनी स्तर पर है और भ्रष्टाचार के कई मामले सामने आए हैं। खेल सट्टेबाजी भी एक पैसे का प्रतिनिधिात्व करती है। ऐसे में बार-बार होने वाले घोटालों का सामना करने में आपराधिाक संगठनों के लिए अवसर उत्पन्न होते है।[7]

यादव एवं चौपड़ा (2007) ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया है कि भ्रष्टाचार गरीबों के लिए एक दोहरा खतरा है, जो आर्थिक रूप से सबसे कठिन हैं। यह शोध पत्र वर्तमान स्थिति का अध्ययन करता है और स्पष्ट करता है कि देश में भ्रष्टाचार एवं रिश्वत के विभिन्न रूपों का सामना करना पड़ा। यह भ्रष्टाचार के प्रभाव को भी दर्शाता है कि भ्रष्टाचार के कारण अर्थव्यवस्था का क्षेत्रवार कितना खराब प्रदर्षन है।[8]

अध्ययन का विश्लेषण - इस शोध कार्य के लिए अध्ययन क्षेत्र से प्राप्त संबधित महत्वपूर्ण तथ्यों का विश्लेषण इस प्रकार से किया गया है-

1. भ्रष्टाचार के प्रभाव के संबंध में उत्तरदाताओं का अभिमत - अध्ययन क्षेत्र के उत्तरदाताओं पर भ्रष्टाचार का प्रभाव हुआ है या नहीं ? इस संबंध में प्राप्त तथ्यों को तालिका क्रं. 1 में दर्शाया गया है-

तालिका क्रं. 1 - भ्रष्टाचार के संबंध में उत्तरदाताओं का अभिमत

क्रं.	उत्तरदाता वर्ग	अभिमत		कुल योग
		हाँ	नहीं	
1.	कृषक	87(87.00)	13(13.00)	100 (100.00)
2.	व्यापारी	92(92.00)	08(8.00)	100 (100.00)
3.	नौकरीपेशा	91(91.00)	09(9.00)	100 (100.00)
4.	अन्य वर्ग	84(84.00)	16(16.00)	100 (100.00)
	कुल योग	354(88.50)	46(11.50)	400 (100.00)

स्त्रोत- सर्वेक्षण से प्राप्त समंक

नोट- कोष्ठक में प्रतिशत दर्शाया गया है

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के चयनित कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 88.50 प्रतिशत उत्तरदाताओं पर भ्रष्टाचार का प्रभाव हुआ है, जबकि 11.50 प्रतिशत उत्तरदाताओं पर कोई प्रभाव नहीं हुआ है। इस संबंध में विभिन्न वर्गों के उत्तरदाताओं की स्थिति स्थिति देखें तो स्पष्ट है कि व्यापारी वर्ग के सर्वाधिक 92 प्रतिशत उत्तरदाताओं पर भ्रष्टाचार का प्रभाव हुआ है, जबकि नौकरी करने वाले 91 प्रतिशत उत्तरदाताओं पर भ्रष्टाचार का प्रभाव हुआ है। वहीं अन्य वर्ग के 84 प्रतिशत उत्तरदाताओं पर भ्रष्टाचार का प्रभाव हुआ है।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि भ्रष्टाचार का सर्वाधिक प्रभाव कृषक, व्यापारी एवं नौकरी करने वाले लोगों पर हुआ है और सबसे कम प्रभावित होने वाले अन्य वर्ग के उत्तरदाता है। इसका आषय यह है कि भ्रष्टाचार का समाज के सभी वर्गों पर प्रभाव हुआ है।

2. भ्रष्टाचार के प्रभाव के प्रकार के संबंध में उत्तरदाताओं का अभिमत - अध्ययन क्षेत्र के जिन उत्तरदाताओं पर भ्रष्टाचार का प्रभाव हुआ है। इन उत्तरदाताओं पर भ्रष्टाचार के किस प्रकार के प्रभाव हुए है ? इस संबंध में प्राप्त तथ्यों को तालिका क्रं. 2 में दर्शाया गया है-

तालिका क्रं. 2 - भ्रष्टाचार के प्रभाव के प्रकार के संबंध में उत्तरदाताओं का अभिमत

क्रं.	उत्तरदाता वर्ग	प्रभाव		कुल योग
		आर्थिक हानि	सामाजिक एवं नैतिक पतन	
1.	कृषक	59(67.82)	28(32.18)	87(100)
2.	व्यापारी	72(78.26)	20(21.74)	92(100)
3.	नौकरीपेशा	76(83.52)	15(16.48)	91(100)
4.	अन्य वर्ग	62(73.81)	22(26.19)	84(100)
	कुल योग	269(75.98)	85(24.02)	354 (100.00)

स्त्रोत- सर्वेक्षण से प्राप्त समंक

नोट- कोष्ठक में प्रतिशत दर्शाया गया है

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के जिन उत्तरदाताओं पर भ्रष्टाचार का प्रभाव हुआ है, उनमें से सर्वाधिक 75.98 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार भ्रष्टाचार के कारण आर्थिक हानि हुई है, वहीं 24.02 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार भ्रष्टाचार के कारण सामाजिक एवं नैतिक पतन हुआ है। दूसरी ओर विभिन्न वर्गों के उत्तरदाताओं की स्थिति स्थिति देखें तो स्पष्ट है कि नौकरीपेशा वर्ग के सर्वाधिक 83.52 प्रतिशत उत्तरदाताओं का अभिमत है कि भ्रष्टाचार से आर्थिक हानि हुई है, जबकि कृषक वर्ग के 67.82 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार भ्रष्टाचार के कारण आर्थिक हानि हुई है।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि भ्रष्टाचार के कारण का सर्वाधिक उत्तरदाताओं यथा कृषक, व्यापारी एवं नौकरी करने वाले को आर्थिक हानि हुई है और साथ ही सामाजिक एवं नैतिक पतन हुआ है।

अध्ययन के निष्कर्ष - उक्त विश्लेषण के आधार पर इस अध्ययन के महत्वपूर्ण निष्कर्ष निम्न प्रकार है-

1. भ्रष्टाचार का सर्वाधिक प्रभाव कृषक, व्यापारी एवं नौकरी करने वाले लोगों पर हुआ है और सबसे कम प्रभावित होने वाले अन्य वर्ग के उत्तरदाता है। इसका आशय यह है कि भ्रष्टाचार का समाज के सभी वर्गों पर प्रभाव हुआ है।
2. भ्रष्टाचार के कारण का सर्वाधिक उत्तरदाताओं यथा कृषक, व्यापारी एवं नौकरी करने वाले को आर्थिक हानि हुई है और साथ ही सामाजिक एवं नैतिक पतन हुआ है।

समस्याएँ एवं सुझाव – भ्रष्टाचार के कारण देश के आर्थिक–सामाजिक विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, जो देश एवं समाज के हित में नहीं है। इस हेतु आवश्यक है कि लोगों को नैतिक रूप से जागरूक किया जाए ताकि भ्रष्टाचार को नियंत्रित /समाप्त किया जा सके।

उपसंहार – उक्त विश्लेषण एवं निष्कर्षों के आधार पर यह स्पष्ट हुआ है कि देश में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण समाज के प्रत्येक वर्ग पर किसी न किसी प्रकार का प्रभाव हुआ है और इसके परिणामस्वरूप लोगों को आर्थिक हानि का सामना करना पड़ता है और साथ ही लोगों का सामाजिक क एवं नैतिक पतन होने लगता है। जिस देश में भ्रष्टाचार अधिक पनपने लगता है, उस देश का विकास भी अवरूद्ध होने लगता है और इसके परिणामस्वरूप लोगों का जीवन स्तर प्रभावित होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Bussell, J. (2015) Greed, Corruption, and the Modern State Essays in Political Economy, Edward Elgar, London, 22-32
2. श्यामधर सिंह, वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूल तत्व, कमल प्रकाशन, इन्दौर 1982, पृ. 39
3. Khan, Muhammad Tariq (2012) Corruption: Causes and Effects in Pakistan's Case (A Review Research) , University of Haripur, PAKISTAN, pp. 45-47
4. Bhoyar, Jaywant S. (2012), Black Money and Corruption; Causes and Remedies, Politics and International Studies, Pondicherry University, p. 29
5. Shrivastava, Ashish and Dixit, Kusum (2013), Corruption is Dangerous For Human Rights: A Study, M B Khalsa Law College, Indore (M. P.), p. 64
6. Jain, Dharam Chand (2012), Effective Legal And Practical Measures For Combating corruption: A Criminal Justice Response - An Indian Perspective, p. 37
7. Wang, Xuehong (2011), Sports betting and corruption, Executive Director - China Center for Lottery Studies , Beijing University, pp. 40-41
8. Yadav, K.S and Chopra, Sunita (2015), Anti-Corruption Movements & Measures in India, International Journal of Trade and Commerce, Volume 4, No. 2 pp. 411-422

****

Need Of Research On Media Cross-Ownership Patterns In India

Ms. Sayma Imtiaz*

Introduction - Information on effects that mass media ownership has on serving the public interest, if generalized, would be useful in building policy in sphere of mass media. Information is now called "power" like money and authority. Cross media companies that exercise control over information transmitted to the masses are now seen as strong force in building public opinion. As the "fourth power" in society, mass media organizations attract attention of many scientists. Cross media ownership and its effects on different aspects of mass media performance is the subject of many studies. Cross media ownership and its effects on different aspects of mass media performance is the subject of many studies. This topic attracts many scholars due to importance of mass media in social life of society and its ability to affect publics. Ownership is playing a crucial role in media business. Sometime its implication effects on the content. These implies are belongs the ownership which are not giving proper media values. Now, the main concern should be on control of ownership with existing policy. Understanding of issues and approaches of cross media would seem to be critically important today, most distribution measures are based on single media identification that is television viewing is measured separately from radio listening, which is measured separately from magazine readership which is measured separately for outdoor exposure and so on. Today even the newer form of media such as mobile, DTH and even social media are also measured separately and individually with no regard for the simultaneous media consumption of the participating audiences.

Gillian Doyle defined in his book (Media Ownership, 2002) that diversity of ownership of the media generally seen as one of the essential conditions for sustaining political and cultural pluralism. Pluralism is a key social objective but it is not the only reason why ownership of the media matters. It also matters because it affects the way in which media industry is able to manage the resources available for media provision.

This research paper focused on expansion of cross ownership as a performance in media scenario then it will also catch the section of implications of cross ownership in Indian media. The attractive part of this research will be role of cross media and formation of the policy. The methodology of this Study will be Case study and Documentations on Media Groups; with the help of Documents and we will find the role of Cross Media Ownership. To get the information we applying the case study on media groups. The Case study method is a very common technique for qualitative data but it s also gives very strong and empirical inquiry. For this study we will apply it because it is way to uses multiple sources of evidence to investigate a contemporary phenomenon. Using of Comparison Constant Technique we will get the qualitative data through related Books, Research Paper, Research Articles, Research Reports, Internet links & websites e.g. It applied on media groups and existing policy to check the exposure and business motives.

Media Ownership Laws in India - Another area of media ownership where research is in absentia and is severely needed is the laws related to it. To be precise, media ownership laws in India can be characterized by the utter lack of it. And this is something even the government and the media regulators admit to. Many international markets have identified the parameters that define the level of concentration in media ownership and cross media holdings. These parameters are reviewed periodically and the restrictions/safeguards are modulated accordingly. However, in India, there has been lack of willingness on their part as well in getting in place in the ideas of media ownership. And again that government attempt to bring changes in the news media has largely been restricted to controlling media content. The government, however, has done a lot of on paper drill to streamline media ownership through TRAI consultation papers and also through sponsored studies. One such study e TRAI's recommendation was commissioned to the Administrative Staff Collage of India (ASCI) in 2009. Some key elements of the recommendations by ASCI regarding Media Ownership in the country after studying the ownership patterns were:

1. Cross Media ownership rules for broadcasting, print 20d the new media must be put in place since there is ample evidence of market dominance in certain relevant markets.

*Research Scholar, Makhanlal Chaturvedi National University of Journalism & Communication, Bhopal (M.P.) INDIA

2. As regards vertical integration, a cap on vertical holdings must be carefully determined based on existing market conditions.
3. Disclosure regarding cross media affiliations and ownership should be in public domain.
4. There should be a regulatory oversight on carriers so as do ensure nondiscriminatory access.

However, there are still no cross media ownership restrictions across Print, Television and Radio industries in the country. As far as vertical integration of media entities in broadcasting sector is concerned, certain restrictions have been put in place in the guidelines for obtaining license for Direct-to-Home (DTH) platform and in the Head-end in the sky (HITS) policy wherein a DTH service provider cannot have more than 20% stake in a HITS service provider. While content creation has no restriction either on cross media ownership or on vertical integration. So, most of the companies are expanding their content portfolios across languages (acquiring or launching new ventures in a host of regional languages) and across technical platforms (print companies are entering into broadcast or digital ventures and broadcast companies are getting in publications etc). This trend is leading to monopoly in news media which is a serious threat to plurality of news in any democracy. While we get to know about them as individual deals or launches there is no documented evidence of the overall deals over a period of time. There is a need for such documented studies which put the threads together and weave a larger fabric of media ownership. That is where research in media ownership, its patterns, its trends and a futuristic overview is required.

Major Business Trends in Media Ownership - The number of media products and the brands making and selling them has increased rapidly. These reach out to through several technical platforms by various brand names. So, we have print publications, television, radio, internet, smart phones and so on. For each kind of content we have choices in the way we decide to consume them. For news updates we can watch our preferred news channel, check for the text updates on our mobile phones or log in to the website of the channel either to watch live video streaming or read the transcript of the same content. Similarly, a movie can either be watched in a theatre, at home using the pay per view service of cable and satellite service provider or through several movie website which provide the same facility online.

The number of companies which own these content creating entities is shrinking. This trend is also termed as Cross Media ownership which ultimately means that much of the information and entertainment flow is being controlled by a handful of media conglomerates. These conglomerates are increasingly marking their presence in almost all forms of content creation as well as their distribution platforms. To illustrate this lets randomly pickup some of the biggest media groups of this country and look at their current portfolios. Bennett, Coleman and Company Limited (BCCL) widely known as the Times of India Group was traditionally known to be a Newspaper entity. However, today the group is known for having diverse media interests. Apart from owning various newspaper brands in several Indian languages, BCCL boasts of a General English news channel Times Now, a business news channel ET Now and a Bollywood based channel Zoom. It owns FM radio stations by the name Radio Mirchi, an event management firm 360 degrees, Outdoor advertising firm Times Outdoor apart from several portals which provide services from Jobs to Property and even Matrimonial. Zee Entertainment Enterprise(ZEE) entered the media industry as a general entertainment channel in early 90s today owns more than 30 television channels from news to movies to sports across major Indian languages and several foreign as well. The group also owns a cable distribution company Siticable, a record label Zee Records and a movie production venture Zee Motion Pictures. Another major media group in terms of its wide reach is Living media company popularly known as the India Today Group waich first started publishing a weekly news and current affairs magazine India Today in the year 1975. After expanding the magazine in various Indian languages and turning it into a weekly one, the group today owns a bouquet of four news and current affairs channels spearheaded by its flagship channel AajTak, an FM Radio company Oye, an afternoon newspaper Mail Today which is a joint venture with London's daily mail. The group also has several license agreements with niche foreign brands for their Indian edition like Cosmopolitan, Good housekeeping, Harvard Business Review etc.

Media conglomerates are increasingly forming joint ventures with other media or non media companies to launch a new media brand or service. This particular trend is making the nations of ownership even more complicated to understand. Most significant example of such alliance in India is that of the Network 18 group. While the group's Business News channel CNBC TV18 is a joint venture between TV 18 and NBC Universal, it owns 57% stake in the Hindi news channel IBN7 which is co-owned by Global Broadcast Network (GBN). Its Marathi news channel IBN Lokmat is again a joint venture with newspaper entity Lokmat. The group is a major player in television entertainment segment. It has formed another joint venture with American media conglomerate Viacom and operates channels like Colors TV, MTV India, Nick India etc. Further, to distribute its channels through various distribution platforms, the group entered into yet another joint venture with Sun Network in 2010 to form Sun 18. In collaboration with Forbes Media, the group also publishes Forbes India, which is the local edition of this world famed magazine. On distribution front, SKY network of UK which is controlled by news corporation joined hands with TATA in India for a DTH company which is being managed by STAR India limited (another News Corporation entity)

Objectives :

1. To study on the media regulations in India.

2. To understand the need of study on media ownership.
3. To find out the behavior of cross media houses.

Research methodology - This study is designed by Descriptive Research Design. It is used to obtain information concerning the current status of the phenomenon and to describe "what exists" with respect to variables or conditions in a situation. The first step of this study is to specify the objectives with sufficient precision to ensure that the data collected are relevant. If this way will not do carefully, this study will be not provided the desired information.

According to my problems this design is suited perfectly. With the help of this design, I solved the all desirable dimensions of the problem such as expansion, business policy, editorial policy and content production of cross media. By apply the different methods to get the many results for this research design.

Through the using of constant comparison technique I had been searching data and information into the text materials. The analysis of Documentation based on the text materials and Internet materials. These materials will be gathered from Books, Magazines, Articles, Research paper, Govt. Reports and Documents e.g

The Case study (method) is a very common technique for qualitative data but it is also gives very strong and empirical inquiry. For this study I applied because it is way to uses multiple sources of evidence to investigate a contemporary phenomenon. I did study on four targeted cross-media organisations and case study method apply on them for knowing and investigating about expansions related matters.

Analysis - Here, I proposed some cross-media groups and its different segments for study. There are as follows: -

GROUP	PLATFORMS
The times group	Times of India newspaper, Times Now news channel and Radio mirchi FM channel.
India Today	India today magazine, AajTak news channel, headlines today news channel &Oye 104.8 FM channel
HT media	Hindustan time newspaper & fever 104 fm channel
Bhaskar group	Media, publishing, textile, real estate, internet services e.g.

Case studies on Cross-media ownership groups

Business Expansion Direction

THE TIMES GROUP	Vertical integration, private, mass media business
INDIA TODAY	Vertical integration, private, mass media business, diagonal expan -sion
HT MEDIA	single entity to cross media own ership, private body
BHASKAR GROUP	cross media ownership to diago -nal expansion, private body

Above table shows the business expansion of cross media groups. The direction of the business of media groups from single entity to multi entity. We get Times group, HT media and India today group are moved from single entity to multi business in media market. And Bhaskar group expanded their business towards non media segments. So, here is difficult to say all cross-media groups are having a pure mass media business.

We also assumed most of the media houses initially had a single media outlet and they turns toward multi business for technology development, society demand andbusiness growth. There is one important thing we get they also try to invest in non-media business e.g. real estate.

Now during analysis, we get media houses focusing on diagonal expansion for business revenues.

MEDIA CONTENT

THE TIMES GROUP	Audience choice, entertainment, political issuesSocial issues,
INDIA TODAY	Social development and political issues
HT MEDIA	Social welfare and development, environmental issues
BHASKAR GROUP	Entertainment, cultural, local issues

If we discuss on media content during study on media houses, we assumed most of the media houses focusing on the edutainment and infotainment kind of content. Every media outlet has an own pattern of content e.g. news, debate programme, news story editorial special news coverage etc.

So, here we assumed times group is carrying a content like audience demands, edutainment and infotainment programme. And other side India today group mostly prefer the social development and political issues and coverage.

We also assumed HT media group is fully based on social welfare and environmental development issues. And Bhaskar group mostly preferred the entertainment cultural and local issues.

So now we believed mostly cross media house's content are like mostly based on edutainment, social issues & concerns and infotainment.

BUSINESS STRATEGY

THE TIMES GROUP	Mouth-watering profit, focusing on internet business (times internet ltd. And times business solutions ltd.)Mobile applications
INDIA TODAY	Magazines publishing and internet web portals and joint venture for eign investment.
HT MEDIA	Hindustantimes.com,Livemint. com,Desimartini.com, shine.com , web portal
BHASKAR GROUP	Mobile app and real estate business

Above table shows the business strategy of media

houses. we get the times group have a many media segment and entertainment TV channels. It is keeping mouth-watering profits and bringing paralleling internet business. Its standard of business is very high, and quality of news based on mostly political issues.

If we talk about India today group its business strategy is differ from the times group. It is mostly focusing on magazines publishing and joint venture in foreign investment. It is also taking business towards non media segments.

If we compare from HT media group, it is diverting towards the internet business and running many website and web portals.

And other last Bhaskar group have a main strategy of business is both media segment and non-media segments.

CONTRIBUTION ON SOCIAL WELFARE & DEVELOPMENT

THE TIMES GROUP	Min
INDIA TODAY	Max
HT MEDIA	Max
BHASKAR GROUP	AVERAGE

If we analysis on social development contribution, we get India today and HT media groups are maximum coverage and content on it. And Bhaskar group coverage on this is average, other side we get minimum coverage on social issues from times group.

MEDIA MARKET STAKE

THE TIMES GROUP	NEWS CHANNEL NEWSPAPER SUPPLEMENTS FM CHANNEL ENTERTAINMENT CHANNEL BUSINESS CHANNEL INTERNET WOMEN ORIENTED MAGAZINE
INDIA TODAY	MAGAZINES NEWS CHANNEL AND FM CHANNEL
HT MEDIA	NEWSPAPER AND FM CHAN -NEL, internet web portals
BHASKAR GROUP	NEWSPAPER supplements AND FM CHANNEL

Above table shows the data of market stake in media. We get times group consuming maximum number of TV channel and newspaper supplements. HT media have a maximum number of websites. Other side India today group consuming maximum number of magazines published. And last Bhaskar group have a sufficient number of newspaper supplements.

NUMBER OF MEDIA SEGMENT

THE TIMES GROUP	5 NEWSPAPER 8 MAGAZINES 9 TV CHANNEL 1 RADIO STATION MOBILE APP 2 INTERNET PROVIDER
INDIA TODAY	16 MAGAZINES 2 NEWS CHAN -NEL AND 1 RADIO STATION
HT MEDIA	1 NEWSPAPER 2 WEB PORTAL 2 MAGAZINES 1 RADIO STATION
BHASKAR GROUP	4 NEWSPAPER 2 MAGAZINES 1 RADIO STATION

Above table showing the number of media segments we get the times group consuming maximum number of segments.

NON MEDIA OUTLETS

THE TIMES GROUP	NO
INDIA TODAY	YES
HT MEDIA	NO
BHASKAR GROUP	YES

Above table showing that times group and HT media group have not non media segments. And India today and HT media have business which is outside media.

MEDIA POLICY

THE TIMES GROUP	BRAND EQUITY AND BRAND CONSIOUS
INDIA TODAY	STILL FOCUS ON WRITTEN MEDIA SOCIAL WELFARE TO EACH SEGMENT
HT MEDIA	SOCIAL DEVELOPMENT AND AUDIENCE NEEDS
BHASKAR GROUP	INTERESTED IN INVESTMENT ON NON-MEDIA SEGMENT

Above table shows the media policy of houses. We get times group are maintaining own brand with high standards. And we also get the India today focusing on more written medium like magazines publishing.Similarly HT media targeting more on social and urban development content and not so much believing in expand their business in others segments.We also conclude Bhaskar group diverting towards the non-media business.

Findings and Conclusion - In India consolidation of media firms is a trend very fast picking up. There is an enormous increase in the volume of smaller media entities being acquired by larger ones. The transactions are so many in numbers and so big in volumes that it needs very close follow up and in-depth analysis. According to FICCI-KPMG annual report on media and entertainment industry 2013, the year 2012 saw overall Mergers and Acquisitions (M&A) and private equity funding in India totaling approximately 1,000 deals with a value exceeding USD 49 billion.

The analysis of the findings clearly established the fact that media has played an important role in disseminating information with regard to the election campaign as it was found that majority of respondent’s main source of information was media. There are some definite findings as we get:-

1. The direction of business expansion in cross media group from vertical integration to multiple segments.
2. Diagonal expansion is common in cross media groups.
3. Political issues and Entertainment are main elements for new outlets.
4. The quantity of print media outlets is more than audio-visual media.
5. The business towards non media segments is very common in cross media ownership pattern.
6. The diversion of maximum cross media ownership towards the mobile app and social media.

After the analysis we concluded the scenario of cross media houses are complex and scattered. To maintain the media plurality and market power, firstly we have to understand deeply of them. Policy maker have to understand the media market dominance, society demands and media diversity.

The major motivation behind the restrictions on cross media ownership is to preserve the diversity of media so that citizens have access to diverse viewpoints that enable them to have access to a wide variety of views and thereby participate fully in democratic process. The framework would also be required to address ownership of media issues governing print broadcasting and the new media. And restrictions on cross media and vertical integration needs to be based on detailed market studies and should be periodically revised.

References:-

1. Doyle Gillain, Media Ownership, Sage Publications New Delhi, First edition 2002.
2. Sarkar Rita, Media Ownership- Research and Regulation, Arise Publishers and Distributers New Delhi, First edition 2011.
3. Khandekar Vanita Kohli, The Indian Business Media, Response Books, 2010.
4. TRAI Consultation paper on issues relating to Media Ownership (Published on 15th February2013) *(http://www.trai.gov.in/WriteReadDatsa/ConsultationPaper/Document/CP_on_Cross_media_%2015-02-2013.pdf)*
5. Mass communicator Research Journal Article Dated July-September 2013; Author: Shilpi Jha; Titled: Need of Research related to Indian Ownership Patterns in India.
6. Mass communicator Research Journal Article Dated April-June 2013; Author: I.W. Udomisor and A.A. Sonuga; Titled: Effects of ownership patterns on the functions of the Nigerian media.
7. FICCI KPMG frames report
8. FICCI KPMG frames report
9. C.R. Kothari, Research Methodology- Methods and Techniques, New International Publishers, New Delhi, Second Revised Edition 2004(Reprint 2010).
10. Ranjit Kumar, Research Methodology- A step-by-step guide for beginners, Pearson Education, Australia, Second edition.
11. Wimmer D. Roger, Dominick R. Joseph, Mass Media Research, Wadsworth Cengage Learning, 2006.

****

Main Irritants between India and China

Sartaj Afzal Bhat* Dr. Chetna shrivastava**

Abstract - The paper reflects on bilateral problems that hamper ties between the two states and explores mutual understanding in the key issues for the two Asian giants ' peaceful development. There is a difference in concerns, for example, between the two such as border disputes, water disputes etc. Here they made an attempt to illuminate whether the paths of China and India lead them to interact as rivals or partners.
Keywords - China**;** Dalai Lama; India; Tibet, Bhutanese; Doklam.

Introduction - There is considerable confusion and complexity in the current relationship between China and India as both countries have embraced various tactical approaches and methods of working out the gaps to emerge as regional powers mainly due to reciprocal mistrust and resentment, more due to the inheritance of problems.

China and India, the world's two main budding countries, share a range of interests, especially in conjugal growth, and economic reform. They're going through a stage of rapid economic development. Nevertheless, despite their new deep crash on the global economy, both states are also trying to set up their role in the world. China's planned interests in India stem from its desire to maintain a peaceful international environment, creating friendly relations with all states and in particular with neighbours, preventing any endeavour to form anti-China blocs and finally developing new markets, investment opportunities and resources to boost economic growth. It also wants to find a coherent resolution to its domestic inconvenience. To accomplish all of these targets, China needs to have friendly relations with India, given the bilateral problems that have been present at birth. By similarity, India's own insistence on internal development helps it to establish positive relationships with China. Nevertheless, due to the historical history of China-India ties, India's stance toward establishing cordial relations with China remains to some degree mixed. Although left-wing parties such as India's Communist Party (Marxist) have always pursued better relations with China, right-wing parties and some in the security establishment perceive China as a major security threat [1]. From this point of view, it would be important here to mention certain fields in which both sides contend with each other and which are a major source of mistrust, scepticism and confusion between them.

Main Irritants between China and India - There are various aspects within and outside China and India that still influence their ties, for example, boundary and Tibet problems are more common, and lately the water issue has also arisen in bilateral China-India relations. Such bilateral problems will not only influence their current relationships but will also have a negative impact on their future relationships; they will also affect their ascension cycle and peace and stability within and outside the country.

Border issue - The Border problem, which is a significant one, is the main issue between the two nations. The Border issue is embedded in the contested nature of the McMahon Line, which determines the India-Tibet border. India accepts this arrangement as the foundation of its territorial claim, though China objected to the legitimacy of the 1914 Simla Convention's McMahon Line, because China claims it was not a party to the Simla Convention and is not indebted to acknowledge the Simla Convention's boundary [2]. India claims 43,180 squares Kilometres of Jammu and Kashmir in use by China including 5180 square kilometres yield to China by Pakistan under a 1963 China-Pakistan boundary accord. On the other hand China claims 90,000 square kilometres of territory held by India in Arunachal Pradesh [3]. There has not been a extraordinary progress in resolving the border dispute between the two sides due to the importance of Aksai Chin to China because it is the main link between Tibet and Xinjiang province of China and Arunachal Pradesh to India is crucial to stability in India's north-eastern insurgent affected areas [4].After the war of 1962, China-India relations stayed aggressive for several decades. India's statehood award to Arunachal Pradesh in the late 1980s (February 1987), asserted by China as part of South Tibet, exacerbated the bilateral relations tension to such a degree that another border war seems to be about to take place. China claimed significant territorial concessions in populated areas of Arunachal Pradesh, particularly Twang, because the Chinese believed that it was fundamental to Tibetan Buddhism since the sixth Dalai Lama was born there. Similarly, as China wants Arunachal Pradesh return on religious grounds, India is seeking the restoration of Holy Mount Kailash Manasrovar in Tibet, as

***Research Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA**
**** Professor, S.L.P. College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA**

it is a sacred place connected with the Hindu religion [5]. Nevertheless, after the boundary deals between the two states in 1993 and 1996, ease on the borders and overall border ties began to improve. Since then, all parties have agreed to continue to collaborate on the border issue and have accepted that any dispute on border issues should not affect the overall bilateral relationships. The two sides have adopted border-side Confidence Building Measures (CBMs), which involves joint troop cuts, regular meetings of local military leaders and other confidence-building measures. However, a further measure was taken in 2003 to settle border disputes, when both sides named special delegates to discuss border issue [6]. Since then, there have been several talks between the Special Representatives to address the border issue, but no progress has been reached so far. The main reason for this was that the unsettled frontier provided China with the strategic flexibility to hold India confused about its motives and insecure about its resources, and to ensure good conduct by India on issues of critical concern to China. In fact, an unsettled border is also in line with contemporary Chinese priorities, as the Indian-Pakistan conflict over Kashmir complicates China's arguments in the western region, and China wants to engage India under military pressure on two fronts from China and Pakistan [7]. Furthermore, it should also be taken into account here that while India has recognised Tibet as a part of China, there is still considerable support within India for the Tibetan cause at the popular level. No party is willing to give up their rights or resolve over the uncertain territory because of the security threats and national interests. Nevertheless, it may be emphasized here once again that from the point of view of India, "Tibet is not a vital issue in ties between China and India, because the Indian government is neither an accomplice nor a troublemaker of the Tibetans political cause"[8]. To India, boundary settlement ranks higher than Tibet's position. That is why India formally recognized Tibet as an intrinsic part of China during the visit to China made by Prime Minister Shri Atal Bihari Vajpayee in 2003. Nevertheless, China has shown increasingly hostile border policy with India in recent years. In May 2007, a visa was refused by the Chinese government to an Indian official to enter China on the basis that he was from Arunachal Pradesh who considered his own land. Furthermore, media reports of encroachments by the People's Liberation Army (PLA) across the Line of Actual Control (LAC) have been increasing. The recent that insistent policy over the contested boundaries has culminated in a rapid breakdown in border talks between Sino-India and a' mini-cold war' on the border issue became highly noticeable. Once again, China attempted to block a $2.9 billion loan from the Asian Development Bank (ADB) to India in March 2009 on the grounds that it was meant for Arunachal Pradeshs development [9]. Continuing the assertion on Arunachal Pradesh, Chinese Foreign Minister again stated in June 2007 that the Indian interference would not deter China from demanding Arunachal Pradesh. On the other side, India considers Arunachal Pradesh as an integral part of the Indian Union that merged legally with the Indian Union in 1987 and according to the agreement of the Arunachal Pradesh citizens. India is therefore strong on its stand on Arunachal Pradesh and it is doubtful that India will follow the line of China on this issue. So the border issue between China and India is one of the sensitive issues and needs urgent resolution in order to bring any long-lasting peace to this part of the world.

Dalai Lama - China argues that India views the Dalai Lama in India as an independent government in Dharmsala, barely 200 kilometres from the frontier with China. In fact, the presence of more than 1,00,000 Tibetan refugees in India and the continuing reluctance of India to provide asylum to the Dalai Lama is a persistent source of irritation in ties between China and India. China, too, alleged that the Dalai Lama and his associates are provoking suicides by posting a "self-immolation guide" on the internet and "openly encouraging Chinese-border Tibetans to perform self-immolations" against China. China accused the Dalai Lama of endorsing a self-immolation campaign by Tibetan exiles in India during the Chinese president's visit in March 2012 and Chinese Primer's visit in May 21, 2013[10]. So Dalai Lama's involvement in India and his anti-China actions have negative implications for India-China relations

Doklam issue - Many sources have spoken in recent days about the Chinese side beefing up its military footprint in the contested Doklam region, where in the summer of 2017 Indian and Chinese troops were engaged in a two-month stand-off. Recent satellite images and intelligence reports show that the Chinese have built several permanent military posts, a few helipads and new trenches not far from where the two armies were facing off. According to other reports about 1,800 Chinese troops are deployed in the Doklam region, even in deep winter. India has also increased its presence in the region.

How did it come about? - Doklam, or Donglang in Chinese, is a region spread over less than one hundred square kilometres that occupies a plateau and valley at the trijunction between India, Bhutan and China. It is surrounded by Tibet's Chumbi Valley, Ha Valley and Sikkim's of Bhutan. The conflict between the two over Doklam has not been settled, following many rounds of negotiation between China and Bhutan. It flared up in 2017 when the Chinese attempted to build a road in the region, and Indian troops objected to it in assistance of their Bhutanese counterparts, leading to stand-off. Doklam is strategically located along the Siliguri Corridor, which links India's mainland to its northeast area. A weak area for India is the road, also known as Chicken's Neck. [11]

Why does it matter? - Although commerce between India and Tibet flourished along the Siliguri corridor and Chumbi River, Doklam had very little importance. Doklam did not even demand much publicity under British rule. However, China has been strengthening its military presence in the

Chumbi Valley in recent years, where the Chinese are militarily at a major disadvantage. All Indian and Bhutanese forces are round the Valley on a higher ground.

This is also the reason the Indian security establishment suspects why the Chinese are deeply interested in Doklam, which would give them a commanding view of both the Chumbi Valley and the Siliguri Corridor and easy access. After the stand-off, the desolate Doklam region catched global attention. This started on June 16, 2017, according to Indian reports, when Chinese troops came to the region with equipment to expand a road south in Doklam, towards the Bhutanese Army camp along the Jampheri Ridge, which according to both Bhutan and India is an integral part of Bhutanese territory. China says the boundary sits on the mountain. A few hundred Indian troops reached Doklam two days later, at the request of Bhutan, and stopped the construction [12]

The Chinese government published a chart to warn India of trespassing on its territories, and it said in a comprehensive statement in the first week of August, "India has no right to interfere or hinder the China-Bhutan border talks."

What next? - India and China have one of the longest disputed borders and areas in the world— including 37,000 square km of uninhabited Aksai Chin and Arunachal Pradesh with 1,4 million inhabitants and over 84,000 square kilometres. After many rounds of talks by Special Representatives, there is nowhere near a solution to the conflict.[13]

Furthermore, they were modernizing their armies at a frenetic pace. Additionally, the two sides carry out one of the biggest conventional military build-ups around their boundaries in Europe. Doklam is creating yet another flashpoint along the two Asian giants ' contested frontiers.

Conclusion - It can be assumed that India's long-standing border dispute with China, particularly China's claims to Arunachal Pradesh through which the Brahmaputra river flows, come in the way of substantive water cooperation. There it can be said that the border issues and water issues are tightly interlinked between the two nations. China is likely to use water as a weapon for bullying India and for exacting compromises on border issues in the future. Therefore, apart from the border issues, water will be the prime concern which will determine the future ties between India and China, the world's two largest nations. In addition, life-sustaining rivers from China's Tibet region to India will be the main incentive for cooperation or conflict between the two. Both sides should in the will of mutual respect and mutual accepting, make meaningful and mutually acceptable adjustment to their respective positions on the boundary question, so as to arrive at a package settlement to the boundary question. The boundary conclusion must be final covering all sector of the India- China boundary.

References :-

1. The Indian Express (1998) China is India's "potential threat number one". Press Trust of India
2. Bhawan Pokharna (2009) India-China Relations (Dimensions and Perspectives), New Century Publications, New Delhi, India 122.
3. Derek j, Mitchell and Chietigi Bajpaee India and China.
4. Mohan Malik (2007) India-China Competition Revealed on Ongoing Border Disputes, Power and Interest New Report (PINR).
5. Mohan Malik (2004) "India-China Relations: Giants Stir, Cooperate and compete", Special Assessment: Asia's Bilateral Relations, Asia-Pacific Centre for Security studies.
6. Fonathan Holslag (2010) China and India Prospects for Peace, Columbia University Press, New York.
7. Dinesh L (2008) Indo-Tibet-China Conflict, Kalpaz Publication, New Delhi, India.
8. Ramachandran KN (2004) India-China interactions In K. Santhanam and Srikanth Kondapall (Ed.), Asian Security and China 2000-2010,Shirpa Publications, New Delhi, India.
9. Shashank Joshi, China and India: Awkward Ascents. Orbis 55: 4.
10. IDSA Task Force Report (2010) water security for India: the external dynamics, Institute of Defence Studies and Analysis, New Delhi, 47.
11. China maps Brahmaputra, Indus for dams (2011) the times of India, and New Delhi, India.
12. Dalai Lama behind Tibet protest self-immolation, says China (2012) The Telegraph
13. The Hindu

****

Socio-economic condition of weavers in Jammu and Kashmir and Madhya Pradesh

Sajad Hussain Sheikh* Dr Rajveer Singh Kirar**

Abstract - The minimum basic needs of human society are food, clothes and shelter. Weaving of clothes fulfills the common needs of human beings, the amount and different type of clothing worn depends on social, physical and geographical considerations. Weaving is an art of making clothes and a textile in a woven fabric. Textiles represent the tastes and requirements of the people, social, economic and cultural status of a particular society. Textiles and clothing industry in India is one of the mainstays in the Indian economy. This industry is based on labour intensive and is one of the largest employment generators and has also realized export earnings worth of $ 41.57 billion in the year 2013-14. Thus the handloom industry along with agriculture is the foundation stone of rural economy. The purpose of the study is to analyze the socio-economic condition of weavers in Jammu and Kashmir and Madhya Pradesh.
Keywords - Textiles, weaving and labour intensive.

Introduction - The art of weaving is an old age tradition practiced over centuries in India. Handloom weaving is one of Indian cultural heritage's richest and most vibrant aspects. Handloom weaving is known for its flexibility, versatility and creativity. Under the leadership of the Prime Minister, Mr. Narendra Modi, the new Government has taken many important initiatives for the growth and development of the textiles sector, the Prime Minister has stressed on broad economic vision, based on increasing production and productivity, foreign exchange, export and generating employment, giving special to generation employment opportunities for educated as well as uneducated youth, skill, scale and speed, inclusive and participative growth, make in India and zero deficit- zero effect on environment.[3]

Handloom weaving industry is one of the main and largest economic activities next to agriculture sector. It provides direct as well as indirect employment nearby 44 lakh weavers and its allied workers in the country. The handloom weaving sector occupies a special place of the national economy and also the largest non-farm rural employment generator. The handloom weaving industry is household based as well as labour intensive contributed by the entire family. This sector spreads across thousands of villages and towns throughout the country.[4]The handloom weaving sector contributes 95 per cent of the worlds hand woven fabric comes from India and also contributes 15.5 per cent of the cloth production and export earning of the national economy.

Weaving industry occupies a significant in the social, economic and cultural structure of Jammu and Kashmir. Handloom weaving plays a unique role in employment generation in rural areas of the society, the Handloom Development Department (HDD), plays a crucial role in modernization of handloom weaving sector through Upgradation of weavers by providing special training, designing, modernized and weaving. The J&K State is famous for the weaving of specialized fabrics like Pashmina shawls, Silk sarees, Raffal shawls, Kani shawls, chain stitch, namdas, Kishtwari blankets, Lois, Chashme Bul Bul blankets in hilly areas of the State besides Cotton Check bed sheets and long cloth in Jammu and Kathua Districts. The handloom sector, besides being environment friendly, has enormous employment potential as it is highly labour intensive with low capital investment.

Weaving of textile is the part of rich heritage of Madhya Pradesh. In the old age, the old age the state was as an eminent center of weaving between 7th century and 2nd century BC. Weaving of meheshwari and chanderi saris are some of the most finest and quality textures of the state. The weaving of Madhya Pradesh, though it has its own distinctive style and individuality and also its influences from the neighboring states of the country. The weaving industry in Madhya Pradesh is basically a fare situated industry, composed on house industry lines with generation being continued for the most part in the homes of weavers and contractual workers to the request of the sellers/temporary worker.

Objectives:

1. To study the role of weavers in Jammu and Kashmir and Madhya Pradesh.
2. To study the socio- economic profile of weavers in Anantnag and Gwalior districts.

*School of Studies in Economics, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Govt. P. G. College, Morena (M.P.) INDIA

Methodology

Data Collection - For achieving the objective of the current study and to conduct the investigation, data has been collected from both primary and secondary sources:-

a. Primary Data - Primary data are statistical information collected on an economic phenomenon or an industry through the methods of observation and personal interviews conducted with the help of carefully designed questionnaire surveyed on a selected group of respondents. Questionnaires are usually used methods when respondents can be reached and are willing to co-operate.

b. Secondary Data - Secondary data are the statistical details concerning the co-operative societies of the handloom weaving industry available in prestigious journals, standard books, Government bulletins and other periodicals associated with the handloom weaving industry.

Frame Work Of Analysis - The data collected from the weavers of Jammu & Kashmir and Madhya Pradesh through a structured questionnaire is tabulated by using MS-Excel spread sheets and uploaded in to SPSS master data sheet and labelled the variables in a clear manner. Later the descriptive statistical tool frequency analysis is made to calculate and group the weavers of Jammu & Kashmir and Madhya Pradesh on the basis of demographical variables.

Tabular method - The primary data collected through schedules was tabulated to workout averages, ratios, percentages and indices. Tabular technique was employed to examine socio-economic status of the weavers and cost and production process of weaving products.

Review of Literature

Sahai, (1956)[1] The study felt the need for introducing modern tools and techniques of production in handloom industry and weavers should learn modern techniques and skills relating to handloom industry to get continuous employment and to earn livelihood through handloom weaving. It is identified that Government must open training centers in the State and appoint special teachers to teach all aspects of the modern designs and techniques. Important courses should be conducted in the villages where highly weavers are concentrated.

Planning commission, (1967)[2] conducted a study on the impact of handloom development programmes and policies on employment generation and earnings amongst weavers. It is observed that the co-operative household members gained relatively more and recommended the adequate working capital towards production and marketing activities.

Venkata Subbaiah K. (1991)[21] found that the handloom weavers India were living below poverty line and the incidence of the dependence is very high among the weavers. To improve the socio-economic condition of the weavers, the weavers should take the help of weaver service centers and learn innovative skills. He has suggested that more number of weaving service centers should be opened and provides proper training to the weavers to adopt the modern skills

Gopinath P (2010)[59] Weaving at home is a household activity and is labour intensive, with an individual weavers working on the loom helping by other family members in the processing and production stages. The process of yarn for weaving involving wrapping, sizing and starching depends upon weaver. The common sight of weavers houses are hand operated wheel, which looks like a charkha. Weavers spending time about 6 to 12 hours per day of the job and is mostly traditional weavers belonging to the marginalized communities like scheduled tribes (STs) and scheduled castes (SCs). The daily earnings of weavers are higher than those who spend more hours in weaving.

Tawheed Yousuf and et.al (2013)[63] observed that situation of skill weavers of Srinagar city is ineffective due to illiteracy, health problems, financial constraints, low remuneration and poor Government support. Thus the government should take special initiative relating to the weavers and chalk out an action plan for the upliftment of poor weavers.

Role of Handloom Weaving Industry in the Indian Economy - India's textile industry occupies a significant place of the national economy. It accounts 5 per cent of the country, s GDP and also contributes15per cent of the total Industrial production, contributes to nearly 16 percent of the total exports and is the largest employment provider after agriculture sector. The Handloom weaving industry plays a very significant role in the Indian economy. Handloom weaving industry is mostly based on labour intensive and is one of the largest economic activities providing direct employments to over 65 lakhs persons engaged in weaving and allied activities. In India handloom weaving sector contributes nearly 19 per cent of the total cloth production; it exports in different countries and adds substantially to export earnings and also generates countries revenue.

Analysis And Interpretation Of Data - The data are collected from 295 sample respondents of both districts by supplying the questionnaires, the data are analyzed by using simple bar diagrams, pie diagram on the basis of age wise, sex wise, educational qualifications, cost and production, annual income, consumer durables, awareness of the various incentives and schemes and production and Sales.

Table 1 (see in last page)

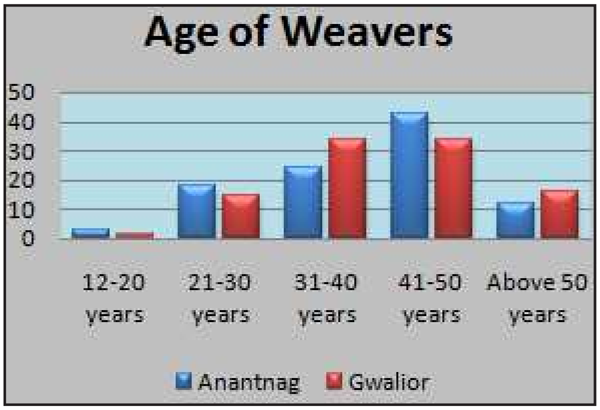

Fig:1

Table 1 Shows age of the participants which were categorized under five sub heads. In Anantnag 3.3% participants fall under the age group of 12-20, while as Gwalior 1.53% fall under age group of 12-20. Under the age group of 21-30 18.18% were from Anantnag, while as 14.61% are from Gwalior, under age group of 31-40, 24.24% were from Anantnag while as 33.84% were from Gwalior, under 41-50 were 42.42% from Anantnag while as 33.84% are from Gwalior and above 50 years 12.12% are from Anantnag and 16.15% were from Gwalior.

Table 2: Sex ration of weavers in Anantnag and Gwalior

Sex	Anantnag			Gwalior		
	Male	Female	Total (%)	Male	Female	Total (%)
N	140	25	165(100)	100	30	130 (100)
Total	**140**	**25**	**165**	**100**	**30**	**130**

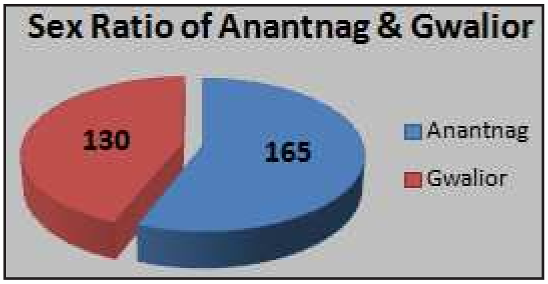

Fig:2 Sex ratio of Anantnag and Gwalior

Table 2: Shows the descriptive statistics of gender of two states in weaving. In Anantnag total number of participants are 165 among which 140 were male and 25 were female while as in Gwalior total number were 130 among which 100 were male and remaining 30 were female. The overall weavers were 295 among which 240 were males and 55 were females.

Table 3 (see in last page)

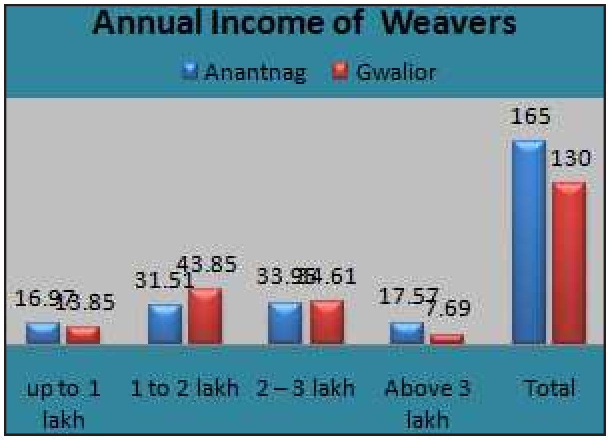

Fig 3: Annual income of weavers in Anantnag and Gwalior

Table 3 shows the income of the respondents. Income up to 1 lakh from Anantnag was 15.15% and from Gwalior were 14.61%. Income 1-2 lakh from Anantnag were 35.75% and from Gwalior it was 43.84%. Income 2-3 lakh from Anantnag were 32.72% and from Gwalior it was reported as 33.84%. Income above 3 lakhs from Anantnag was 16.36% and from Gwalior were 7.69%.

Table 4 (see in last page)

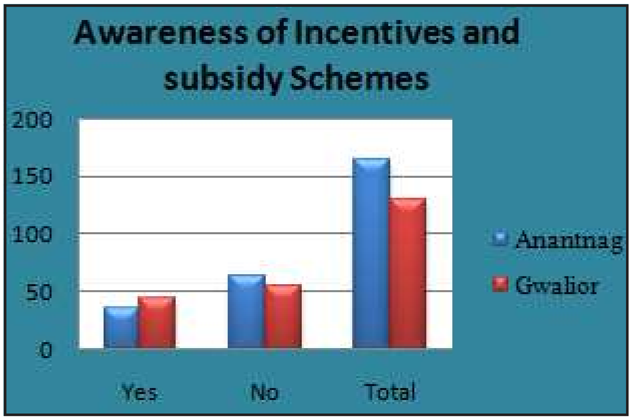

Fig 4: Awareness of incentives and subsidy schemes provided by the government

Table 4 shows the awareness about the incentives and subsidy schemes provided by the government Table shows 35.76% from Anantnag were aware while as 44.61% were from Gwalior and those who were not aware from Anantnag were 64.24% and 55.39 were from Gwalior.

Table 5 (see in last page)

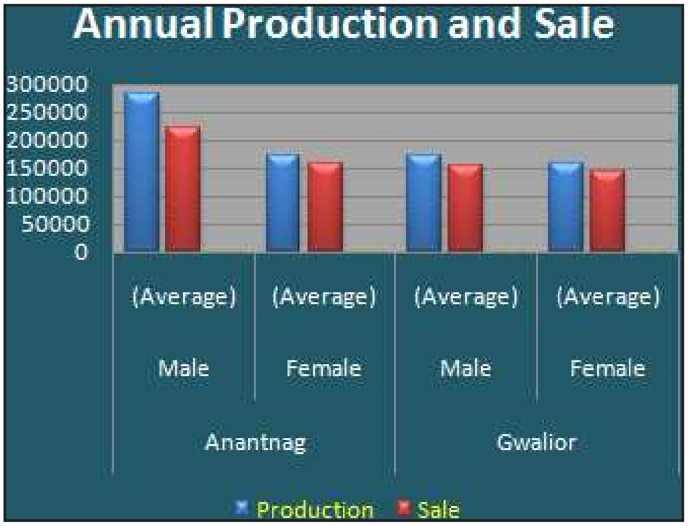

Table 5: Shows the production and sale of products. The average annual production among male were 282678.57 and female were 171000 of Jammu and Kashmir while as in Gwalior males average were 171750and females 158666.67.

The average annual sale among male were 223181.82 and female were 157000 of Jammu and Kashmir while as in Gwalior males average were 154800 and females 143833.34.

Table 6 (see in last page)

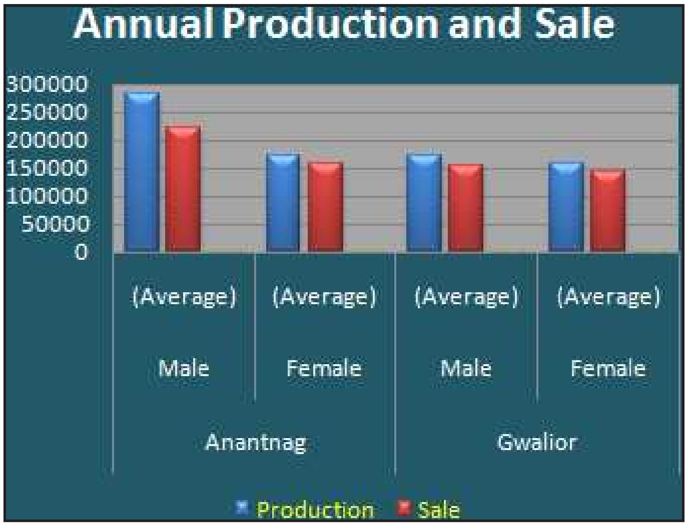

Table6: Shows the cost of annual production among two states of India. The cost of average annual production of raw material in Anantnag among males were 24957.14 and among females it was 11800 while as in Gwalior males average were 25400 and females were 9130. The average cost of annual production of labour in Anantnag among males was 10021.43 and among females it was 7600. However, in Gwalior male's averages were 13866 and for females it is about 7490. The average cost annual production of transport in Annatnag among males was 10375 and among females it is 3400. Similarly, in Gwalior average for male population was 7200 and female population it was reported about 3100. The average cost of annual production of finance in Anantnag among males was 5388.57 and among females it is 4800 while as in Gwalior average for males was 7120 and among females it is 3000. This indicates that there is a quite variation in the cost of annual production among the weavers from both regions and in different genders.

Conclusion - Handloom weaving plays an important role in both the State and the nation's development cycle. Due to the traditional craft skills of the weavers, this sector has declared remarkable that continue to meet local needs and demands. The modern economy has different strengths in the handloom market. It is simple and connected to suitable technology. The legacy of skills and abilities goes beyond the spectrum and reach of any modern education and training. This research paper deals with the handloom weavers in Districts of Anantnag and Gwalior. Research has looked at the socio-economic background of weavers of sample districts of Jammu and Kashmir and Madhya Pradesh, their demography, their annual income, cost of annual production, annual production and sale, their consumer durables and awareness of incentives and subsidy schemes.

References :-

1. Kumar P. S (2015). Handloom Industry in India; International Journal of Multidisciplinary Research and Development, vol.2 (1), No 24-29
2. Venkateshvaran. A (2014) A Socio- economic Conditions of Handloom Weaving in Tiruneveli District, International Journal of Social Science and Humanities Research vol.2, No. 38-49.
3. Biswambhar, S. (1956) "Handloom weaving Industry in North India" *(Ph.D Thesis*), Agra University.
4. Planning Commission, (1967) Study of Handloom Development Programmes', *Planning Commission*, New Delhi, p.63.
5. Venkata S. K., (1991) Socio-economic conditions of Handloom weavers in Cuddapah District of Andhra Pradesh *(Ph.D Thesis) submitted to the S.K. University,* Anantapur.
6. Gopinath P (2010) Wages, Working Conditions and Socio-economic Mobolity of Spinners and Weavers in the Unorganised Khadi Industry, The Indian Journal of Labour Economics, vol 53, No.2
7. Yousuf Tawheed and et.al, (2013) Socio-economic profile of silk weavers. A micro level study of Srinagar city, European Academic Research, vol.(1)3, No.319-331.

Table 1: Age of weavers in Anantnag and Gwalior

Age	Anantnag			Gwalior		
	Male	Female	Total(%)	Male	Female	Total(%)
12-20 years	5	0	5 (3.03)	0	2	2 (1.53)
21-30 years	25	5	30 (18.18)	15	4	19 (14.61)
31-40 years	30	10	40(24.24)	30	14	44 (33.84)
41-50 years	62	8	70 (42.42)	38	6	44 (33.84)
Above 50 years	18	2	20 (12.12)	17	4	21 (16.15)
Total	**140**	**25**	**165**	**100**	**30**	**130**

Table 3: Annual income of weavers in Anantnag and Gwalior

Annual Income	Anantnag			Gwalior		
	Male	Female	Total(%)	Male	Female	Total(%)
up to 1 lakh	14	11	25 (15.15)	12	7	19 (14.61)
1 to 2 lakh	52	7	59 (35.75)	43	14	57 (43.84)
2 – 3 lakh	50	4	54 (32.72)	35	9	44 (33.84
Above 3 lakh	24	3	27(16.36)	10	0	10 (7.69)
Total	**140**	**25**	**165**	**100**	**30**	**130**

Table 4: Awareness of incentives and subsidy schemes provided by the government

Subsidy Schemes	Anantnag			Gwalior		
Provided	Male	Female	Total(%)	Male	Female	Total(%)
Yes	49	10	59(35.76)	48	10	58 (44.61)
No	91	15	106(64.24)	52	20	72 (55.39)
Total	**140**	**25**	**165**	**100**	**30**	**130**

Table 5. Annual production and sale of your product of weavers in Anantnag and Gwalior

Activity	Anantnag		Gwalior	
	Male(Average)	Female(Average)	Male(Average)	Female(Average)
Production	282678.57	171000	171750	158666.66
Sale	223181.81	157000	154800	143833.33
Total	**140**	**25**	**100**	**30**

Table 6. Cost of annual production of weavers in Anantnag and Gwalior

Activity	Anantnag		Gwalior	
	Male(Average)	Female(Average)	Male(Average)	Female(Average)
Raw materials	24957.14	11800	25400	9130
Labour	10021.42	7600	13866	7490
Transport	10375	3400	7200	3100
Finance	5388.57	4800	5420	3000
Other	8657	5400	7120	4566.33
Total	**140**	**25**	**100**	**30**

****

छत्तीसगढ़ राज्य की मुख्य अराष्ट्रीयकृत गैर-औषधीय लघुवनोपज इमली के उत्पादन एवं व्यापार का एक अध्ययन

राकेश कुमार गुप्ता* डॉ. के.के.शर्मा **

शोध सारांश - भारत वर्ष प्राकृतिक संपदा की प्रचुरता हेतु विश्व में प्रसिद्ध रहा है। भारत के प्राकृतिक संसाधन, प्रकृति-प्रदत्त अमूल्य उपहार है, जिनका उपयोग मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करता है, अत: यह मनुष्य की शांति और समृद्धि का आधार हैं प्राकृतिक संसाधन का रूप एवं विस्तार मनुष्य की प्रतिभा बुद्धि तथा परिश्रम पर आधारित है अत: आज पृथ्वी का संपूर्ण धरातल प्राकृतिक संसाधन कहा जा सकता है। पृथ्वी के संपूर्ण भू-दृश्यों जैसे- पर्वत, पठार, मैदान, नदियां, जलाशय, मिट्टी आदि हमारे प्राकृतिक संसाधन के आधार है और कृषीय उत्पाद, वन, जीव-जन्तु, खनिज आदि हमारे प्राकृतिक संसाधन है।

शब्द कुँजी -धारणयोग्य कृषि-उत्पादन, अराष्ट्रीयकृत लघुवनोपज, एग्रोक्लाइमेटिक जोन, अकाष्ठीय वनोपज।

प्रस्तावना - हमारी सभ्यता और संस्कृति का वन वृक्षों से अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध है। वन हमारी सभ्यता और संस्कृति के जन्मदाता और हमारी आध्यात्मिक और भौतिक समृद्धि के उन्नायक है; कहा जाता है कि वृक्ष ही जल है, जल ही अन्न है और अन्न ही जीवन है। देश की आर्थिक समृद्धि के लिए भी वनों के संरक्षण की तीव्र आवश्यकता है। अतिवृष्टि, अकाल, बाढ़, रेगिस्तान आदि विषम समस्याओं पर काबू पाने के लिए वनों के संरक्षण के हर सम्भव प्रयास करने होंगें। पर्यटन की दृष्टि से भी वनों का विकास एवं संरक्षण होने चाहिए क्योंकि इससे विदेशी मुद्राएँ प्राप्त होती है। लघु वनोपज का उपयोग अनेक उद्योगों में कच्चे माल के रूप में किया जाता है इनसे अनेक लघु तथा कुटीर उद्योग चलाये जाते हैं वनों से पशुओं के लिए चारा भी मिलता है जिससे वन्य पशु-पक्षियों का पालन-पोषण होता है। यहाँ कुछ ऐसी वनस्पतियाँ तथा जड़ी-बूटियाँ वृक्षारोपण के साथ-साथ वृक्षों की रक्षा तथा उनकी उचित देखभाल के लिए चेतना उत्पन्न करने पर ही देश की खुशहाली एवं सुंदरता निर्भर है।

प्रस्तुत शोध पत्र के अन्तर्गत मुख्य लघु वनोपज प्रजातियों के उत्पादन क्षेत्रों का चिन्हांकन कर मुख्य उत्पादन क्षेत्र जिला एवं वृत्तवार इनका वार्षिक उत्पादन ज्ञात किया गया हैं उक्त विवरण से ज्ञात होता हैं कि जगदलपुर, कांकेर एवं सरगुजा वृत्त में लघुवनोपज प्रजातियों का वार्षिक उत्पादन आधिक हैं इस लिए इन वनवृत्तों में लघुवनोपज प्रजातियों का वार्षिक उत्पादन अधिक हैं इसलिए इन वनवृत्तों में लाख, इमली, माहुल पत्ता, तैलीय बीज, चिरौंजी एवं शहद आदि लघुवनोपजों मे संबंधित बड़ी प्रसंस्करण इकाईयाँ स्थापित किए जाने की अपार संभावनाएँ हैं तथा इसके अतिरिक्त विभिन्न छोटी इकाईयों की स्थापना भी की जानी चाहिए।

उद्देश्य - राज्यों के पुनर्गठन के परिणामस्वरूप 1 नवम्बर 2000 देश के 26वें राज्य के रूप में छत्तीसगढ़ की स्थापना की गई। मूलत: छत्तीसगढ़ राज्य विपुल वन संसाधनों एवं खनिज संपदा से परिपूर्ण होने के बावजूद मध्यप्रदेश राज्य के अंतर्गत सदैव उपेक्षित रहा, दूसरों को भोजन तथा जीवन की सुविधाऐं प्रदान करने वाला 'धान का कटोरा' क्षेत्र स्वयं अर्धसंतृप्त एवं जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तरसता रहा है। नए राज्य के गठन से क्षेत्रीय जनमानस की आशायें बढ़ी हैं। नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य में प्रशासनिक सुविधाओं की उत्कृष्टता के लिए जिलों का पुनर्गठन करते हुए 27 जिलों में विभाजित किया है। प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. छत्तीसगढ़ राज्य में अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों में इमली के व्यापार एवं विपणन का अध्ययन करना।
2. अराष्ट्रीयकृत वनोपज में इमली के व्यापार का छत्तीसगढ़ राज्य की आर्थिक स्थिति में सशक्त संभावनाओं का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पनाएँ :

1. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत वनोपज के में इमली के व्यापार एवं विपणन की स्थिति असंतोषजनक है।
2. छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत वनोपज में इमली के व्यापार एवं विपणन की महत्वपूर्ण संभावनाएँ हैं।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र :

1. अध्ययन हेतु द्वितीयक आंकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।
2. यह अध्ययन छत्तीसगढ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित शंकर नगर रायपुर से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित हैं। इनसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है और निष्कर्ष प्राप्त किये गए है।
3. अध्ययन का क्षेत्र छत्तीसगढ राज्य की अराष्ट्रीयकृत वनोपज में इमली के व्यापार एवं विपणन पर आधारित हैं।
4. अध्ययन की समय सीमा पिछले पाँच वर्षो के उत्पादन एवं विपणन पर आधारित हैं।

शोध उपकरण - अध्ययन हेतु द्वितीयक आँकड़ों का सहारा लिया जा रहा हैं।

सांख्यिकीय उपकरण - यह अध्ययन छत्तीसगढ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित शंकर नगर रायपुर से प्राप्त

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डी. पी. विप्र महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

आँकड़ों पर आधारित हैं, इनसे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर इमली के व्यापार एवं विपणन के विश्लेषणात्मक अध्ययन करने के उपरान्त निष्कर्ष प्राप्त किये गए है।

शोध व्याख्या- मुख्य अराष्ट्रीयकृत गैर-औषधीय लघुवनोपज उत्पादन एवं बाजार : इमली के मुख्य उत्पादन क्षेत्र - राज्य में इमली का लगभग 5.10 लाख क्विंटल वार्षिक उत्पादन होता है। इमली का वार्षिक व्यापार रू. 15/- प्रति किलो की दर से रू. 76.50 करोड़ का होता है। परन्तु इमली के उत्पादन में हर वर्ष 30-40 प्रतिशत का उतार चढ़ाव आने के कारण इसके व्यापार एवं दरों में अंतर आता रहता है। इसमें से केवल कुछ ही मात्रा का प्रसंस्करण राज्य में किया जाता है तथा शेष को बिना प्रसंस्करण के ही अन्य राज्यों में विक्रय कर दिया जाता है इसप्रकार इसके व्यापार पर आश्रित संग्राहकों को उनके परिश्रम का सही मूल्य नहीं मिल पाता है। इमली के मुख्य उत्पादन क्षेत्रों का विवरण तालिका क्र. 1 में दर्शाया गया है, जिससे यह ज्ञात होता है कि बस्तर एवं सरगुजा क्षेत्र में इमली का उत्पादन अत्यधिक मात्रा में होता है। अत: इन क्षेत्रों से इमली संग्रहण तथा प्रसंस्करण हेतु परियोजना क्षेत्र का चयन किया जा सकता है।

तालिका 1. इमली के मुख्य उत्पादन क्षेत्र

क्र.	उत्पादन हेतु उपयुक्त जिला यूनियन	स्थानीय बाजार	वार्षिक उत्पादन मात्रा (क्विं. में)
1	जगदलपुर	जगदलपुर, नानगुर, तोकापाल	50000
2	दंतेवाड़ा	गीदम, बोढली, बारसूर, दंतेवाड़ा	50000
3	सुकमा	सुकमा, ढोरनापाल	50000
4	बीजापुर	बीजापुर	50000
5	कांकेर	कांकेर	10000
6	उत्तर कोण्डागांव	केशकाल, बडेराजपुर, बडेडोंगर, विश्रामपुरी, फरसगांव, लंजोड़ा	50000
7	दक्षिण कोण्डागांव	हीरापुर, दहीकोंगा, मर्दापाल	50000
8	नारायणपुर	धवड़ई, बैनर, छोटेडोंगर	75000
9	धमतरी	धमतरी, नगरी	20000
10	उदंती	मैनपुर, तौरेंगा	5000
11	राजनांदगांव	राजनांदगांव, डोंगरगढ़	10000
12	बिलासपुर	बिलासपुर, पेंड्रा	10000
13	मरवाही	गौरेला, खोड़री, मरवाही	10000
14	कटघोरा	पाली, पसान, कटघोरा,	10000
15	धरमजयगढ़	धरमजयगढ़	15000
16	रायगढ़	तमनार, घरघोड़ा, मीलुपारा	10000
17	जाँजगीर-चांपा	बलौदा, सक्ति	9000
18	दक्षिण सरगुजा	रामानुजनगर, सीतापुर	11000
19	पूर्व सरगुजा	चाँदो, राजपुर	5000
20	जशपुर	पत्थलगाँव, लादोन	10000
	योग		**5,10,000**

इमली के राज्य एवं देश में मुख्य बाजार - इमली का मुख्यत: आटी, फूल एवं बीज के रूप में राज्य एवं देश के मुख्य बाज़ारों में विक्रय किया जाता है। इमली के मुख्य बाज़ारों का विवरण तालिका क्रमांक 2 में दिया गया है जिससे स्पष्ट है कि आटी इमली हेतु तमिलनाडु के थैनी, फूल इमली हेतु आंध्रप्रदेश के ताड़ेपल्लीगुडम एवं इमली बीज हेतु महाराष्ट्र के गोंदिया शहर को लक्ष्य मानकर भविष्य की विपणन रणनीति निर्धारित की जा सकती है, जिससे विपणन का कार्य आसान हो सकेगा।

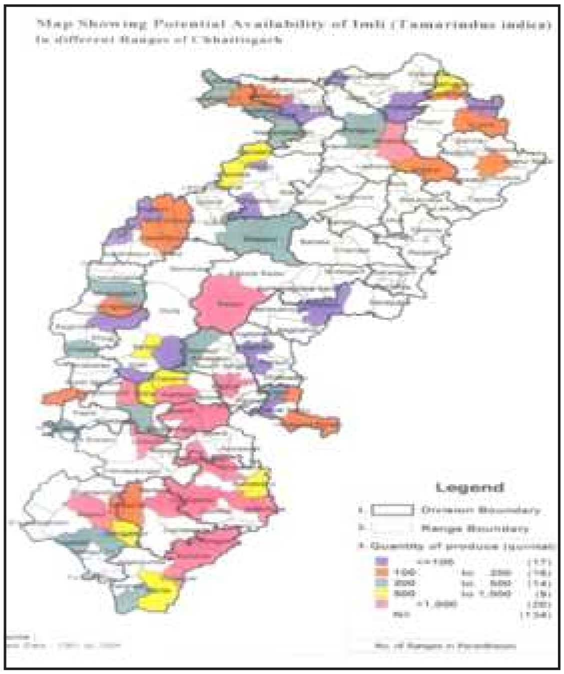

तालिका 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

राज्य में स्थापित इमली की प्रसंस्करण इकाइयाँ - राज्य में इमली के बीज से स्टार्च पाउडर का निर्माण किया जाता है। धमतरी, बिलासपुर, रायपुर, जगदलपुर में इनकी प्रसंस्करण इकाईयाँ स्थापित है। इन प्रसंस्करण इकाइयों की कुल वार्षिक उत्पादन क्षमता 13,000 क्विं प्रति वर्ष है। इमली से फूल इमली तैयार करने के लिए प्रसंस्करण इकाइयाँ उदंती, उत्तर कोण्डागांव, दक्षिण कोण्डागांव एवं रायपुर में स्थापित है। जिनकी कुल वार्षिक उत्पादन क्षमता लगभग 1,300 क्विं. है, इसका विवरण निम्न तालिका क्रमांक 3 में दिया गया है, इनके अतिरिक्त इमली 7 प्रसंस्करण इकाइयाँ छत्तीसगढ़ राज्य लघुवनोपज के माध्यम से उत्तर कोण्डागांव, जगदलपुर, दक्षिण कोण्डागांव, नारायणपुर, दंतेवाड़ा, बीजापुर एवं सुकमा जिला यूनियनों से इमली संग्रहण एवं प्रसंस्करण तथा विपणन का कार्य कर रही हैं।

तालिका 3. इमली बीज से स्टार्च पाउडर तैयार करने वाली प्रसंस्करण इकाइयों का विवरण

क्र.	वनमंडल	प्रसंस्करण इकाई संख्या	कुल वार्षिक उत्पादन(क्विं.)
1	धमतरी	3	4500
2	बिलासपुर	1	1000
3	रायपुर	2	4000
4	जगदलपुर	1	3500
	योग	7	13,000

फूल इमली तैयार करने वाली प्रसंस्करण इकाईयों का विवरण

क्र.	वनमंडल	प्रसंस्करण इकाई संख्या	कुल वार्षिक उत्पादन (क्विं.)
1	उदंती	2	400
2	उत्तर कोण्डागांव	1	400

3	रायपुर	1	500
	योग	4	1,300

निष्कर्ष – छत्तीसगढ़ राज्य में संग्रहित किये जाने वाले लघु वनोपज की अधिकांश मात्रा अन्य राज्यों की मण्डियों या उद्योगों को भेज दी जाती है। अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि छत्तीसगढ़ राज्य में लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों विशेषकर अराष्ट्रीयकृत वनोपज में इमली के व्यापार एवं विपणन का विकास अपर्याप्त है साथ ही अराष्ट्रीयकृत वनोपज में इमली की वार्षिक उत्पादन क्षमता को देखते हुए यह बात स्पष्ट होती है कि छत्तीसगढ़ राज्य में इनका सम्पोष्य विकास करते हुए सम्बन्धित उद्योगों के विकास की महत्वपूर्ण सम्भावनाएँ है।

सुझाव – प्रस्तुत लघु शोध पत्र के अन्तर्गत यह पाया गया कि अराष्ट्रीयकृत वनोपज पर कोई रायल्टी नहीं होने के कारण वनवासी आदिवासी इसका संग्रहण करके स्थानीय हाट–बाज़ारों में छोटे व्यापारियों को विक्रय कर देते हैं। अनुसंधान के द्वारा यह पाया गया कि ये छोटे व्यापारी छत्तीसगढ़ राज्य की अराष्ट्रीयकृत वनोपज में इमली के व्यापार एवं विपणन की मांग के अनुरूप अपना कमीशन या अधिक मूल्य पर बाज़ारों पर विक्रय करते है। बड़े व्यापारियों द्वारा संग्रहित वनोपज को ग्रेडिंग करते हुए देश की विभिन्न मण्डियों में या लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों को विक्रय कर देते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Tiwari D.N. Primitive Tribes of M.P.
2. Mahapatro, P.C. – Economic Development of Tribal India 1987 , New Delhi
3. Social History of Chhattisgarh, Agam kala Prakasham Delhi 1985
4. Chhattisgarh Redis Coverd, Aryan Book International Delhi 1995
5. Census of India 2001 &2011
6. Impact of Forestry Project on Tribal Economy Tribal & Harijan Welfare Planning – Commission
7. दुबे, डॉ. श्यामाचरण – आदिवासी लोक कला परिषद्, 1987
8. तिवारी डॉ वी.के.– छत्तीसगढ़ की जनजातियाँ, 2001
9. मामोरिया डॉ. चतुर्भुज, भूगोल, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स 2013.
10. भारत वन स्थिति रिपोर्ट 2011
11. आर्थिक सर्वेक्षण – 2010–11, 2011–12, 2012–13.
12. 11वीं पंचवर्षीय योजना 2007–2012, छ.ग. रायपुर
13. 12वीं पंचवर्षीय योजना 2012–2017, छ.ग. रायपुर

तालिका 2 इमली के राज्य एवं देश में मुख्य बाज़ार तथा विक्रित मात्रा

छत्तीसगढ़ राज्य के मुख्य बाजार	अन्य राज्य	अन्य राज्यों के मुख्य बाज़ार	वार्षिक विक्रित मात्रा (क्विं.में)		
			आटी इमली	फूल इमली	इमली बीज
धमतरी, रायपुर, कांकेर, बैकुंठपुर	आंध्रप्रदेश	सलूर विजयनगरम्, पुंगनुर, हैदराबाद, विशाखापट्टनम्, ताड़ेपल्लीगुडम	8200	17447	0
	महाराष्ट्र	मुम्बई, नागपुर, गोन्दिया	2520	3567	23761
	तमिलनाडु	डिडिगल, थैनी, नागरकोइल	17155	3815	0
	मध्यप्रदेश	कटनी, बालाघाट	2900	126	0
	उत्तर प्रदेश	वाराणसी, गाजियाबाद, लखनऊ, कानपुर	9776	2390	0
	दिल्ली	दिल्ली	6000	900	0
		योग	**46551**	**28245**	**23761**

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

नागौर जिले के माध्यमिक स्तर पर विज्ञान विषय के विधार्थियो की शैक्षिक उपलब्धियो और उनके आत्म सम्प्रत्यय पर स्व अनुदेशन शिक्षण-अधिगम सामग्री पैकेज के प्रभावों का अध्ययन

डॉ. ऋतु बाला* डॉ. राजकुमारी परिहार भगवान सिंह *****

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधकार्य में नागौर जिले के माध्यमिक स्तर पर विज्ञान विषय के विधार्थियो की शैक्षिक उपलब्धियो और उनके आत्म सम्प्रत्यय पर स्व अनुदेशन शिक्षण-अधिगम सामग्री पैकेज के प्रभावों का अध्ययन किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। इस हेतु स्वअनुदेशन शिक्षण अधिगम सामग्री पैकेज स्वनिर्मित।आत्म सम्प्रत्यय प्रश्नावली डॉ0 राजकुमार सारस्वत। शैक्षिक उपलब्धि पूर्व परख व पश्चपरख पत्र स्वनिर्मित का उपयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में पाया गया कि सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि व आत्म सम्प्रत्यय में सार्थक अन्तर है।

प्रस्तावना – मानव की कमी न शांत होने वाली पिपासा सदैव उसे कुछ न कुछ करने को प्रेरित करती रहती है। वह अपने चारों तरफ की भौतिक, जैविक व सामाजिक दुनिया की घटनाओं को समझने के लिये अनेको मान्य एवं अन्तर्सम्बन्धित विचारों के विकास के प्रति जागरूक रहता हैपरिवर्तन सृष्टि का शाश्वत नियम है, प्रकृति में हर क्षण परिवर्तन से ही सृष्टि में नवीनता आती है। पुराने फूलों और पत्तों के स्थान पर नवीन पत्तो व फूल आ रहे हैं। प्रकृति की इस नित नई नवीनता से हम सदा ही आकर्षित रहते हैं। प्रकृति की इस नवीनता के पीछे परिवर्तन का ही हाथ रहता है।

समाज में भी प्रति क्षण परिवर्तन हो रहा है। पुराने विचारों एवं पुरातन मान्यताओं के स्थान पर नवीन विचार एवं मान्यताएँ स्थान ले रही हैं। वैश्वीकरण के इस दौर में पिछले दशक में तो यह परिवर्तन द्रुत गति से हुआ है। जो समाज नवीन विचारों और नवाचारों को स्थान नहीं देता है उसका जीवित रहना कठिन है। समाज में परिवर्तन, नवीन-नवीन विचारों का आना, उसे नया जीवन प्रदान करता हैं, उसे नई स्फूर्ति देता है तथा ऐसा समाज शिक्षा के द्वारा ही सदा आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। आज शिक्षा के क्षेत्र का विस्तार हो रहा है लेकिन अध्यापन (शिक्षण) में गुणात्मकता का उस अनुपात में विस्तार नहीं हो रहा है। इसके कई कारण है – विद्यालयों को आज समाज ने व्यापक जिम्मेदारियां दे दी हैं जिनसे शिक्षक पर कार्यभार अधिक होने, पारम्परिक शिक्षण पद्धति चॉक एवं टॉक का प्रयोग होने, ज्ञान के उद्योतन का अभाव होने के कारण कक्षा – शिक्षण में नवाचारों के प्रयोग के लिये शिक्षक अपने आपको महसूस करता है।

शोधकर्ता ने महसूस किया है कि कक्षा- शिक्षण में नवाचारों के प्रयोग से विद्यार्थियों के व्यवहार को वांछित दिशा व गति के अनुरूप ढाला जा सकता है, परंतु अफसोस आज भी कक्षा-शिक्षण केवल चॉक व टॉक द्वारा ही किया जा रहा है।

विश्व में तकनीकी दृष्टि से जो प्रगति हो रही है उसको ध्यान में रखकर शिक्षाविदों और मनोवैज्ञानिकों ने कहा है कि शिक्षा में तकनीकी और तकनीकी में शिक्षा के पूर्ण सामंजस्य के द्वारा ही गुणात्मक अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तनों के साथ परिणाम प्राप्त हो सकेंगें।

समस्या कथन – 'नागौर जिले के माध्यमिक स्तर पर विज्ञान विषय के विधार्थियो की शैक्षिक उपलब्धियो और उनके आत्म सम्प्रत्यय पर स्व अनुदेशन शिक्षण-अधिगम सामग्री पैकेज के प्रभावों का अध्ययन शोध शीर्षक में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण'

शैक्षिक उपलब्धि – शिक्षा के क्षेत्र में स्थापित ज्ञान को शैक्षिक उपलब्धि कहा जाता है। शिक्षा के द्वारा प्राप्त ज्ञान की परीक्षा का परिणाम-स्वर शैक्षिक उपलब्धि ह

आत्म सम्प्रत्यय-व्यक्ति का स्वयं के प्रति 'दृष्टिकोण' के निर्माण से सम्बन्धित है। वह अपने बारे में क्या सोचता है? उसकी क्या क्षमताऐ हैं? क्या दुर्बलताऐं है, आदि। अवधारणा अमूर्त है जो सहज बोध से संबंधित है स्वयं के बारे में 'बोध' ही आत्म सम्प्रत्यय है।

अध्ययन के उद्देश्य – नागौर जिले के सरकारी और गैर सरकारी माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों पर स्व-अनुदेशन शिक्षण अधिगम सामग्री पैकेज का उनकी शैक्षिक उपलब्धि एवं आत्म-सम्प्रत्यय पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :

1. सरकारी और गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों पर स्व-अनुदेशन शिक्षण अधिगम सामग्री पैकेज का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. सरकारी और गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों पर स्व-अनुदेशन शिक्षण अधिगम सामग्री पैकेज का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

न्यादर्श :- कुल छात्र - 200

* प्रोफेसर (शिक्षा विभाग) टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** शोध निदेशक, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
*** शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

सरकारी विद्यालय के छात्र- 100

गैर सरकारी विद्यालय के छात्र-100

शोध में प्रयुक्त उपकरण :-

स्वअनुदेशन शिक्षण अधिगम सामग्री पैकेज - स्वनिर्मित।

आत्म सम्प्रत्यय प्रश्नावली (प्रमापीकृत)- डॉ0 राजकुमार सारस्वत।

शैक्षिक उपलब्धि पूर्व परख व पश्चपरख पत्र- स्वनिर्मित।

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन -

1. **सरकारी और गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों पर स्व-अनुदेशन शिक्षण अधिगम सामग्री पैकेज का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।**

तालिका 1 (निचे देखे)

तालिका 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या - परिकल्पना का मूल्यांकंन तालिका 1 तथा 2 के माध्यम से किया गया तालिका 1 के द्वारा सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों पर स्व-अनुदान शिक्षण अधिगम सामग्री पैकेज का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर का मूल्यांकन किया गया जिसमें देखा गया कि सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर है सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि गैर सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों से अधिक है।

इसी प्रकार तालिका 2 सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के नियन्त्रित समूह के विद्यार्थियों पर स्व-अनुदेशन शिक्षण अधिगम सामग्री पैकेज का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर मूल्यांकन किया गया जिसमें भी देखा गया कि सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों के अधिक है।

अत: उपरोक्त परिकल्पना अस्वीकृत हो जाती कि सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर नहीं है सरकारी विद्यालयों की शैक्षिक उपलब्धि गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्च स्तर की है।

2. सरकारी और गैर सरकारी विद्यालयों की विद्यार्थियों पर स्व-अनुदेशन शिक्षण अधिगम सामग्री पैकेज का उनके आत्म सम्प्रत्यय पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका 3 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या - परिकल्पना के मूल्यांकन तालिका संख्या 3 के माध्यम से किया गया जिसमें देखा गया कि सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों पर स्व अनुदेशन शिक्षण अधिगम सामग्री पैकेज का उनके आत्म सम्प्रत्यय पर सार्थक अन्तर है। सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों का आत्म सम्प्रत्यय उच्च स्तर का है।हमारी यह परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

निष्कर्ष :

1. सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर है सरकारी विद्यालयों की शैक्षिक उपलब्धि गैर सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्च स्तर की है।
2. सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों का आत्म सम्प्रत्यय उच्च स्तर का है।

उपयोगिता :

1. कम्प्यूटर आधारित पावर पाउंट, विडियो आधारित जीव विज्ञान व अन्य विज्ञान विषयों को समन्धित क्रिया प्रणालिओं का प्रदर्शन कर विषय वस्तु को रोचक व ग्राह्य बना सकते हैं।
2. विषय वस्तु सम्बन्धित विशेषताओं, गुणधर्म व क्रियाओं आदि पर पाठयोजना विकसित कर शिक्षण करना चाहिए।

भावी शोध हेतु सुझाव :

1. शोधकर्ता द्वारा शोध अध्ययन माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप चयनित किया, भावी शोधकर्ता यह अध्ययन उच्च माध्यमिक विद्यालयों व शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों में भी कर सकते हैं।
2. प्रस्तुत शोध अध्ययन शैक्षिक उपलब्धि व आत्म-सम्प्रव्यय तक सीमित रखा गया, इस पैकेज का उपयोग अन्य इकाईयों पर भी किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आशुवेल, डेविड. पी. (1963) दी साईकोलोजी ऑफ मीनिंगफुल वर्बल लर्निग, ग्रुने एण्ड स्टारटन, न्यूयार्क.
2. अग्रवाल, सुनिता (1998) पी.एच.डी. एज्यूकेशन, गौहाटी यूनिवर्सिटी, गाईड: डॉ. प्रवीण अख्तर.
3. अग्रवाल. वाई.पी. एण्ड मोहंती, मनीषा (1998) इंडियन एज्यूकेशन रिव्यू वोल्यूम 34 (2), 57- 66.
4. अग्रवाल, आर. (1995) पी.एच.डी. एज्यूकेशन रोहेलखण्ड यूनीवर्सिटी गाईड प्रो. वीनाशाह.
5. अडवाल, एस.वी. (1968) दी थर्ड इण्डियन ईयर, बुक लॉव इज्यूकेशन (एज्यूकेशनल रिसर्च) न्यू देहली: नेशनल काउन्सिल ऑफ एज्यूकेशन रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग, पृष्ठ 317

तालिका 1

क्र.	चर	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतंत्रतावी कोटी	मध्यमानअन्तर	टी-मान	सार्थकता
1.	सरकारी विधालयों के विधार्थी	50	56.52	11.56	98	8.17	4.12	सार्थक
2	गैर सरकारी विधालयों के विधार्थी	50	48.35	7.88				

तालिका 2

क्र.	चर	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतंत्रतावी कोटी	मध्यमानअन्तर	टी–मान	सार्थकता
1.	सरकारी विधालयों के विधार्थी	50	48.33	8.24	98	6.15	3.45	सार्थक
2	गैर सरकारी विधालयों के विधार्थी	50	42.18	9.52				

तालिका 3

क्र.	चर	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतंत्रतावी कोटी	मध्यमानअन्तर	टी–मान	सार्थकता
1.	सरकारी विधालयों के विधार्थी	100	47.04	18.9	98	8.80	3.60	सार्थकय
2	गैर सरकारी विधालयों के विधार्थी	100	38.24	15.4				

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

साहित्य और जीवन मूल्य

डॉ. अन्ना राम शर्मा * रीतिका मोंगा **

प्रस्तावना - साहित्य में तत्कालीन समाज के मूल्यों का चित्रण होता है। साहित्यकार का कर्त्तव्य मात्र यथार्थ का वर्णन नहीं है, बल्कि जीवन और समाज कैसा होना चाहिए, यह बताना भी होता है। यही मूल्य हैं, जिसका चित्रण हर लेखक अपनी रचनाओं में करता है। इन मूल्यों से समाज अपने लिये मार्ग ग्रहण करता है। यथार्थ चित्रण में रचनाकार बदलते मूल्यों को रेखांकित करता है। अत: मूल्य और साहित्य अन्योन्याश्रित हैं। धर्मवीर भारती के अनुसार 'साहित्य मनुष्य का ही कृतित्व है और मानवीय चेतना के बहुविधि प्रत्युत्तारों में से एक महत्वपूर्ण प्रत्युत्तार है। इसीलिये हम आधुनिक साहित्य के बहुत से पक्षों को या आयामों को केवल तभी बहुत अच्छी तरह से समझ सकते हैं, जब उन्हें मानव मूल्यों के इस व्यापक संकट के संदर्भ में देखने की चेष्टा करो।'[1] साहित्य चूंकि जीवन को प्रभावित करता है, अत: पाठकों के मूल्यों को भी प्रभावित करता है। समाज के जीवन मूल्य साहित्यकारों के विचारों से, कथा साहित्य में चित्रित स्थितियों से प्रभावित प्रेरित होते हैं। उदाहरण के लिये 'चाक' या 'मुझे चांद चाहिए' जैसे उपन्यासों में अविवाहित मातृत्व का जिस प्रकार समर्थन किया गया है, वह किसी हद तक समाज में स्त्री मुक्ति का मानदंड बनने लगा है। दूसरी ओर अपने समय के मूल्यों से साहित्यकार प्रभावित भी होता है और उसका चित्रण, चर्चा अपने साहित्य में करता है। द्विवेदी युगीन काव्य में आत्मोत्सर्ग, राष्ट्रप्रेम, त्याग, सेवा, जीवन मूल्य थे, जो गांधी जी के विचारों से और स्वाधीनता आंदोलन से प्रेरित थे, जिसका चित्रण तत्कालीन काव्य रचनाओं में मिलता है, लेकिन प्रयोगवाद तक आते आते व्यक्तिवादी मूल्यों की प्रतिष्ठा हो गई थी।

जीवन मूल्य - साहित्य की परिभाषा 'साहितस्य भाव: साहित्यम्' करके की गई है। इसका अर्थ है जो हित करता है वह साहित्य है। यदि ऐसा है तो यह हित शाश्वत् मानव मूल्यों की स्थापना और सुरक्षा के बिना संभव नहीं है। ये शाश्वत् जीवन मूल्य हितकारी होते हैं। अत: उनका चित्रण साहित्यकार अपनी रचनाओं में करता है। साहित्य का उद्देश्य मात्र आनंदाभूति या विचारोत्तोजना नहीं बल्कि वह पाठकों को वास्तविकता का अहसास कराता हुआ जीवन मूल्यों के प्रति विश्वास जगाता है। इसीलिये साहित्य के संदर्भ में जीवन मूल्यों को जानना जरूरी है। साहित्य मनुष्य के जीवन की झलक प्रस्तुत करता है और मानवीय मूल्यों के प्रति पाठकों का विश्वास बढ़ाता है। 'साहित्य जो मानवीय संस्कृति, सभ्यता और व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति है और जो जीवन को आंदोलित और प्रेरित करने की क्षमता से सम्पन्न है। मानव मूल्यों के अभाव में युग के सामने कोई आदर्श नहीं रख पाता, उसकी उपयोगिता का ऐसी स्थिति में अवमूल्यन हो जाता है।'[2] मानवीय मूल्यों के विवेचन या चित्रणा बिना साहित्य मात्र मनोरंजन का साधन बन जाएगा। प्रेमचन्द ने भी स्वीकार किया था कि साहित्य का उद्देश्य मात्र मनोरंजन करना नहीं, जीवन की आलोचना है। इस आलोचना में जड़ और बोझ हो गये मूल्यों को अस्वीकार और शाश्वत् तथा प्रगतिशील मूल्यों को स्वीकारा जाता है। यह स्वीकार साहित्य में प्रगतिशील तथा शाश्वत् मूल्यों के चित्रण में समाविष्ट है। किसी भी साहित्यकार की शिक्षा, संस्कार, अनुभव और प्रभावनुसार उसके मूल्य विकसित होते हैं। आचरण के जिन तौर-तरीकों को वह उचित मानता है, उन्हीं का समर्थन वह अपनी रचनाओं में प्रत्यक्ष या पात्रों के जरिये करता है। अत: जीवन मूल्यों के विवेचन बिना किसी कृति का विवेचन अधूरा है। साहित्य जीवन के विभिन्न क्षेत्रों को अपने में समाविष्ट करता है। साहित्यकार से भिन्न अन्य सभी विद्वानों का संबंध जीवन अथवा संस्कृति के किसी एक पहलू विशेष से होता है, जबकि साहित्यकार का दायित्व पूरी संस्कृति के मूल्यात्मक विकास का होता है।

इसलिये 'साहित्य वर्तमान समाज व्यवस्था से प्रभावित होता है और उसे प्रभावित करता है। संपूर्ण साहित्य का इतिहास इसी बात की पुष्टि करता है कि जब-जब मूल्य रूढ़ होकर किसी युग की नई दृष्टि और नए यथार्थ के प्रति उदासीन एवं निरूपयोगी हुए हैं, तब-तक साहित्यकार ने इस प्रकार की स्थिति रीतियों से संघर्ष किया है।[3] हरिशंकर परसाई के अनुसार, 'साहित्य के मूल्य जीवन मूल्यों से बनते हैं। वे रचनाकार के एकदम अंतर से पैदा नहीं होता।[4]

मानव मूल्य और साहित्य - हर लेखक अपने मूल्यों को अपनी रचनाओं में व्यक्त करता है। डॉ. नामवर सिंह संकेत करते हैं कि 'साहित्य में प्रमुखता आंतरिक मूल्यों या मनोगत मूल्यों की होती है, किन्तु ये मूल्य कहीं न कहीं समाज से जुड़े होते हैं तथा मानव समाज की निर्मिति में सहायक होते हैं। जीवन में अच्छे-बुरे दोनों ही प्रकार के तत्व होते हैं। इनमें हम उन्हीं तत्वों को ग्रहण करते हैं, जिनमें विकास के प्रगति के सूत्र मौजूद रहते हैं।[5] कई बार साहित्यकार मान्य या प्रतिष्ठित मूल्यों को नकारकर नए मूल्यों को प्रतिष्ठित करता है। नारी और दलित विमर्श के साहित्य में नारी और दलित जीवन से सम्बन्धित ऐसे अनेक प्रगतिशील मूल्य स्थापित किये गये हैं। साहित्यकार का जीवन दर्शन ही उसके मूल्यों को निर्धारित करता है, वही उसके मूल्यों का निर्माण करता है। अपनी रचनाओं में वह इसी का चित्रण करता है।

रीतिकालीन कवियों ने भोगवादी मूल्यों को प्रश्रय दिया। प्रेमचन्दोत्तरयुग में गांधीवादी मूल्यों को साहित्य में उतारा गया। इसीलिये कहा गया कि राजनीति में गांधी जी जो कर रहे थे, उसे प्रेमचन्द ने साहित्य में किया। एक ही लेखक के साहित्य में भी बदलते मूल्यों का दर्शन किया जा सकता है। जैसे प्रेमचंद के आरंभिक साहित्य में दिखाई देने वाला आदर्शोन्मुखी

* शोध निर्देशक, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** शोधार्थी (हिन्दी साहित्य) टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

यथार्थवाद जो परिवर्ती साहित्य में यथार्थोन्मुखी आदर्शवाद में परिवर्तित हो गया था या छायावादी कवि निराला पंत ने छायावादी रोमांटिक मूल्यों को छोड़कर समाजवादी मूल्यों को अपनाया। 90 के दशक में साहित्यकार 'मूल्य संक्रमण' का चित्रण अपने साहित्य में अधिक करते दिखाई देते हैं। यह वह दौर है जब भौतिक साधन सम्पन्नता के बावजूद मनुष्य असंतुष्ट और दुखी है। 'नव उदारवाद और आर्थिक विकास की नई समृद्धियों, ऐश्वर्यों ने नई पीढ़ी के आदर्श और सुख के केन्द्र परिवर्तित कर दिये हैं।' हिन्दी उपन्यासों में मूल्य संक्रमण की इस स्थिति का चित्रण दो रूपों में मिलता है।

'प्रथमत: इस रूप में कि घटनाओं और पात्रों के माध्यम से इस परिवर्तित मूल्य दृष्टि का परिचय दिया गया है और दूसरे, चिंतन मनन के स्तर पर इस मूल्य परिवर्तन पर अपनी सोच प्रस्तुत करते हुए मूल्य क्षरण पर अपनी पीड़ा को अभिव्यक्ति दी गई है।'[6] स्पष्ट है साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में मूल्यों के टूटने का चित्रण किया है और उसके प्रति चिंता भी व्यक्त की है।

निष्कर्ष – 'मूल्य' शब्द का प्रयोग अर्थशास्त्र में कीमत और दर्शनशास्त्र में आचरण के मानदण्ड के अर्थ में प्रयुक्त होता है। अपने आदरणीय जनों का अनुकरण, संस्कार, अनुभव और विवेक के आधार पर व्यक्ति अपने आचरण के कुछ सकारात्मक हितकारी तरीके अपनाता है, इन्हें जीवन-मूल्य कहा गया है।

परम्परा और सर्व सम्मति से समाज विशेष के भी अपने सदस्यों के लिये आचरण के मानदण्ड होते हैं। इन्हें सामाजिक मूल्य कहा जा सकता है। मूल्यों से सम्बन्धित विभिन्न विषयों के अध्ययन मनन को अंग्रेजी में 'एंजिओलोजी' तथा हिन्दी में 'मूल्य मीमांसा' कहा गया है।

साहित्य और मूल्यों का अन्योन्याश्रित संबंध है। अपने जीवनानुभव समय और समाज तथा किसी विशिष्ट या अनेक विचारधाराओं के प्रभाव से बने जीवन दर्शन से साहित्यकार अपने लिये जीवन मूल्यों का चुनाव करता है। अपने साहित्य में प्रत्यक्ष या पात्रों के माध्यम से वह उन्हें व्यक्त करता है। इस प्रकार साहित्यकार अपने साहित्य में व्यक्त विचारों से अपने समय और समाज के पाठकों को भी प्रभावित करता है। इसलिये साहित्य का अध्ययन और मूल्यांकन रचनाकार द्वारा उसमें व्यक्त मूल्यों के संदर्भ में करना आवश्यक हो जाता है। इससे साहित्य में चित्रित समाज द्वारा अपनाए मूल्यों का बोध होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. धर्मवीर भारती, मानव मूल्य और साहित्य, भूमिका, पृष्ठ 2
2. डॉ. रमेश देशमुख, आठवें दशक की हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य, पृष्ठ 25
3. हिन्दी अनुशीलन मार्च से जून 2007, पृष्ठ 121
4. हरीशंकर परसाई, नव भारत जबलपुर 25 जनवरी, 1987, हिन्दी अनुशीलन मार्च से जून 2007, पृ. 121
5. श्याम बिहारी राय, शुक्लोत्तर काव्य चिंतन, पाश्चात्य परिप्रेक्ष, पृ. 364 ; डॉ. रजनीश भारद्धाज, पृ. 49
6. डॉ. पुष्पपाल सिंह, भूमण्डलीकरण और हिन्दी उपन्यास, पृ. 265

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Diabetic food and Health Benefits of Fenugreek Seeds

Kapil Bala Panchal*

Introduction - Fenugreek is grown mainly in China, India, Turkey, Canada, Australia, Northern and Southern Africa and Southern Europe. Its a legume plant. Fenugreek (Triganella foenon-graecum L.) constitute high quality foods that delivery nutritional and functional advantages at a low price.[1] Fenugreek is one of India's main exports. Fenugreek has been long known as a potent herb in traditional medicine. It's seeds contain protein with a desirable amino acid profile, lipids and biogenic elements. Fenugreek seeds are also a rich source of saponins, flavonoids, choline, carotene, essential oils containing trigonelline and other functional elements.[2] The protein contain of fenugreek seeds was determined in the range of 235.0 g. kg.[3] to 246.0 kg.[4] (Mahfooz et al., 2012), and lipid content in the range of 40 to 100 g. kg.[5] (Sulieman et al. 2008a). Fenugreek seeds contain significant amount of Fe, P, Ca, Zn and Mn and they are abundant in vitamins A, B, C and nicotinic acid.[6] Due to their unique and anti-diabetic, blood lowering, cholestrol lowering, anticarcinogenic anti-microbial properties, both leaves and seeds are consumed as a remedy for various health contiditions. Fenugreek is an ecofriendly plant that fixes atmospheric nitrogen.[7]

Plant Physiology - Distribution of fenugreek is reported to be worldwide because of characteristic to adopt to different climatic conditions and environments. Fenugreek plant has natural draught resistant ability and it can also grow well in the areas with moderate to low rain falls, its temperature requirement is as low as 10-15°C, but it can neither grow well in extreme high temperature nor in extreme low temperature and specially show resistant to grow in the area covered with snow. In Greece fenugreek is grown in both the season in summer and winter because of its adaptive nature.

Fenugreek traditional uses - Fenugreek was reported to be used as remedy and as primary medicine not only for human but also for the cattle. Use of fenugreek as traditional medicine is known from the 15th century Fenugreek dried seeds and leaves were used in different forms for curing many diseases and symptoms which reflects upon some infections. Paste prepared from fenugreek seeds were used to treat eczema, rash or other causes of inflamation. Few of the traditional uses shown in table -

Table 1 (see in next page)

Health of Benefits of Fenugreek Seeds - Food has a direct effect on blood glucose. Some foods raise blood glucose more than others. An important part of managing diabetes is knowing what and how much to eat, and following an eating plan that fits your lifestyle while helping to control blood glucose. The three main nutrients found in foods are carbohydrates (carbs), proteins and fats.

Carbohydrates (carbs) - Carbs are the starches, sugar and fiber in foods such as grains, fruits, vegetables, milk products and sweets. They raise blood glucose faster and higher than other nutrients in foods: proteins and fats. Knowing what foods contain carbs and the amount of carbs in a meal is helpful for blood glucose control. Choosing carbs from healthy sources like vegetables, fruits and whole grains (high fiber) are preferred over carbs from sources with added sugars, fat and salt.

Proteins - Proteins are a necessary part of a balanced diet and can keep you from feeling hungry. They do not directly raise your glucose like carbs. However, to prevent weight gain, use portion control with proteins. In people with type 2 diabetes, protein makes insulin work faster, so it may not be a good idea to treat low blood sugar with protein shakes or mixes. Using 15 grams* of fast-acting carbs that contain glucose, like juice, other sugar-sweetened beverages, glucose gel or tablets is the preferred way to treat low blood sugar.

Fats - Fats are necessary part of a balanced diet, especially healthy fats from fatty fish, nuts and seeds. They do not raise blood glucose but are high in calories and can cause weight gain.

Aim to include all three nutrients to balance your meals.

Making healthy food choices. Your dietitian or diabetes educator can help you develop an eating plan that is right for you and fits into your lifestyle. Healthy eating for diabetes is healthy eating for the whole family.

Here are some guidelines for healthy eating:

1. Enjoy having regular meals with proper portion sizes. Your healthcare professional can help you learn to make healthy food choices and proper portion sizes.
2. Eat a variety of nutrient-rich foods in each meal, including healthy fats, lean meats or proteins, whole grains and low-fat dairy in appropriate portion sizes.
3. Choose fiber-rich foods, such as fruits, vegetables and whole grains (bran cereals, whole wheat pasta, brown

*Research Scholar (Psychology) D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA

rice) as often as possible.
4. Try alternatives to meat, such as lentils, beans or tofu.
5. Choose calorie-free liquids, such as unsweetened tea, coffee or water.
6. Choose sugar substitutes.
7. Choose lower-salt options.

Visualizing food portion size: It's in your hands. Your choice of food and how much you eat is relative to your blood glucose level. If you eat more than you need, your blood glucose will rise. To help manage your diabetes, having a good sense of portion control is an important skill. Luckily, you already have some tools — your hands.

Conclusion - Fenugreek is used as spices for preparation of various dishes as well as to cure many diseases. Fenugreek established itself as a medicinal plant due to its different activities such as anticancer, antiinflammatory, antiseptic, aphrodisiac, astringent, bitter, demulcent, emollient, expectorant, anthelmintic, wound healing and gastro protective. Not only that it is one of the primary supplement used for type II diabetics or non insulin diabetes mellitus (NIDDM). Fenugreek is not only a very rich source of polysaccharide galactomannan but also it is the source of saponins such as diosgenin, yamogenin, gitogenin, tigogenin and neotigogens. It also contains flavonoids, amino acid, alkaloids and other bioactive constituents like mucilage volatile oils etc. Not only valuable activities it has some side effects too as it may increase the risk of bleeding may reduce the potassium level in the blood. The consumption of fenugreek has been proved safe for human life and may be easily implemented for health benefit through its rich fibre content and other bio active cormorants. Fenugreek seeds helps not only to reduce the low density cholesterol and triglycerol but also reduce blood sugar level with its high concentration of phytochemicals.

References :-

1. Moyer et al. 2002, Ahmed, et al. 2016.
2. Srinivasan 2006m Neghwal Goswami, 2012.
3. ISSA et al. 2014.
4. Mahfouz et al. 2012.
5. Sulieman et al. 2008
6. Moradi Kor Moradi 2013.
7. Pie Trzak, 2011.

Table 1

S.	Plant Part	Against disease or symptoms	Reference
1.	Seeds	Chapped lips, stomach, irritation, mouth ulcers	Duke 1986
2.	Soaked seeds	constipation	Fazil and Hardmen 1968, Rosengarten 1969.
3.	Decoction	Tuberculosis illness, sore throat, infection of stomach, intestine and ganglia remedy for gonorrhea and vernin	Schauenberg and Paris, 1990. Fazil and Hardman, 1968.
4.	Poultice of Seeds	Gouty pains, neurolgia, sciatica, swollen glands, wounds, furncless fistulas, tumors, sores, skin irritation, abscesses and carbuncles	Sharma 1996,Potterton 1983
5.	Crushed seeds with powdered chared	For treating bruises, swellings, boils, ulcers and sweeling of testicles	Potterton 1983, Bunney 1984, Regor 1992
6.	Seeds	* Constipation and diarrheas * For abdominal pain, chilblains, cholechystosia, fever, hernia impotence, hypogastrosis, nephrosis * To prepare the base of a medical confection called 'laddoo' * For healing of inflammation and supparations. * Antibacterial activity * Remedy for diabetes * As substitute of insulin * Anti diabetic activity * Anti tumor activity * To induce labour during child birth * For treating weakness and odema	Evans 1991, Sharma 1996. Duke, 1986 Rouk and Mangesha, 1963 Fluck, 1988 Bhatti et al. 1996 Evans 1991 Khosla 1995 Sharma 1996 Olivor-Bever 1986 Daound 1932 Singhal 1982 Evans 1991 Yoshikawa 1997 Basch 2003
7.	Fenugreek tea	Soothing to the intestinal canal	Potterton 1983
8.	Alcoholic fenugreek extracts	To expel poisons and unwanted materials from the human body	Howard 1987.
9.	Leaves and Seeds	Reduces blood pressure and congestion, lowers blood cholestrol	Sowmja, P 1999 Roberts, KT 2012
10.	Steroids flavonoids alkaloids	Raw material for hormones and therapeutic drugs	Blank I 1996.
11.	Seeds	Reduced the glycemic index in diabetic patient and manage long term complications of diabetes	Sowmya P. 1999Gupta et al. 2001

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

A Study On Customer Satisfaction Towards SBI Life Insurance At Bilaspur

Niket Shukla*

Abstract - We live in a risky world. Forces, largely outside our control, that makes threats our financial well-being, constantly surround us. Thus, some of us will experience the premature and dreadful death of a beloved family member; others will experience the loss or destruction of their property from natural disasters. Still others will experience poor health from cancer, heart attacks, and other diseases. In addition, some of us will be totally and permanently disabled from a crippling automobile accident or a catastrophic illness. Finally, others will experience the traumatic effects of a liability lawsuit. They're all built into the working of the Universe, waiting to happen. Therefore Risk is pervasive conditions of human existence. The history of the insurance sector in India reveals that it has witnessed complete dynamism for the past two centuries approximately. With the establishment of the Oriental Life Insurance Company in Kolkata, the business of Indian life insurance started in the year 1818. SBI Life Insurance is a joint venture between State Bank of India and BNP Paribas Cardiff.
Key Words - Customer Satisfaction, Life Insurance.

Introduction - Every human being has the tendency to save to protect them from risks or events of future. Insurance is one form of savings where in people try to assure themselves against risks or uncertainties of future. It is assurance against risks or events or losses. People can save their earnings either in the form gold, fixed assets like property or in banking and insurances. All the savings of people of a country account for gross domestic savings. In India, although savings rate is high but people prefer to invest either in gold or fixed assets so that they can make money out of it. Hence insurance sector is still untapped in India.

The sbi life insurance in Indias largest insurance company. It's insurance company establish was 1 July 1965 at Bilaspur, The insurance sector in India has completed all the facets of competition –from being an open competitive market to being nationalized and then getting back to the form of a liberalized market once again. The history of the insurance sector in India reveals that it has witnessed complete dynamism for the past two centuries approximately. With the establishment of the Oriental Life Insurance Company in Kolkata, the business of Indian life insurance started in the year 1818. SBI Life Insurance is a joint venture between State Bank of India and BNP Paribas Cardiff. SBI owns 74% of the total capital and BNP Paribas Cardiff the remaining 26%. SBI Life Insurance has an authorized capital of Rs. 2,000 crores and a paid up capital of Rs 1,000 crores SBI Life has a unique multi-distribution model encompassing vibrant Banc assurance, Retail Agency, Institutional.SBI Life extensively leverages the State Bank Group relationship as a platform for cross-selling insurance products along with its numerous banking product packages such as housing loans and personal loans. SBI's access to over 100 million accounts across the country provides a vibrant base for insurance penetration across every region and economic strata in the country, thus ensuring true financial inclusion. Agency Channel, comprising of the most productive force of over 80,000 Insurance Advisors, offers door to door insurance solutions to customers.

Indian Regulatory Development Authority - In 1999, the Insurance Regulatory and Development Authority (IRDA) was constituted as an autonomous body to regulate and develop the insurance industry. The IRDA was incorporated as a statutory body in April, 2000. The key objectives of the IRDA include promotion of competition so as to enhance customer satisfaction through increased consumer choice and lower premiums, while ensuring the financial security of the insurance market.

Role Of IRDA:

1. Protecting the interests of policyholders.
2. Establishing guidelines for the operations of insurers, and brokers.
3. Specifying the code of conduct, qualifications, and training for insurance intermediaries and agents.
4. Promoting efficiency in the conduct of insurance business.
5. Regulating the investment of funds by insurance companies.
6. Specifying the percentage of business to be written by insurers in rural sectors.
7. Handling disputes between insurers and insurance in-

*Assistant Professor (Management) Dr. C. V. Raman University, Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

termediaries.

Problem Statement - A research problem in general refers to some difficulty which the company or organization experiences in contact of a theoretical or practical situation and wants to obtain a solution for the same.

The study analyses the customer's satisfaction level and understanding about life insurance products at SBI Life, which will be useful for the company in understanding the needs and expectations of the customers and also knowing about the awareness level of SBI Life insurance.

This understanding will facilitate the company in designing the suitable and competitive insurance plans and to gain the competitive advantage over its competitors, which will contribute in increasing the sales of the company and ultimately increasing the market share.

Objectives Of The Study

1. To study the functioning of insurance industry.
2. To study the customer perception towards the product and services of SBI Life Insurance.
3. To study customer satisfaction towards SBI Life Insurance at Bilaspur city.

Scope Of The Study - The study is conducted in SBI Life insurance based on the information furnished by the organization.

1. The result of this research would help the company to have a better understanding about the consumer's perception towards life insurance.
2. The study also enables the company to focus the consumer's preferences and expectations on the product which they offer.

Research Methodology

Research Design: The research design adopted here is Descriptive Research design.

Sample Size: Sample size of 100 individuals was selected on the basis of convenient sampling technique.

Sampling Techniques: As the samples are selected as per the convenience, the sampling method adopted is convenience sampling.

Source Of Data: The main source of information for this study is based on the data collection. Data collected are both primary and secondary in nature.

Research Instrument: Self Structured questionnaire have been used.

Analysis, Observations And Interpretation

Weighted Average Method - The weighted average method is similar to an arithmetic mean that is the most common type of average where instead of each of the data points contributing equally to the final average, some data points contribute more than others. Weighted average method is defined as an average that takes into account the proportional relevance of each component, rather than treating each component equally.

$$\text{Net score} = \frac{\text{(weight for column * no. of respondents)}}{\text{Total weight}}$$

Simple Average Method - The mean is the most commonly-used type of average and is often referred to simply as the average. If the list is a statistical population, then the mean of that population is called a population mean. If the list is a statistical sample, we call the resulting statistic a sample mean.

Percentage = No. of respondents AND Total respondents

SWOT Analysis

Strength

1. No. 1 Private Life Insurance Company in India (as on 2015-16).
2. Leverages the State Bank Group Relationship as a platform for cross- selling insurance products.
3. As it sells its products through banc-assurance division of SBI, therefore less need on spending money for establishing separate branch offices.
4. Market share of 18.34% among private life insurers and a total market hare of 6.44%.
5. SBI·s access to over 100 million accounts across the country provides for a vibrant base for insurance penetration in the country.
6. Growth at a rate of 40 %.
7. IRDA has never banned any of SBI Life's product. Only private life insurance company to have posted profits (Rs 276 crores for the year ended March 31st, 2010) and declared bonus.

Weakness:

1. Less sales force than others (LIC·s 3 field advisor : SBI·s 1 field advisor)
2. Low productivity of banc-assurance people.
3. People at top management/decision making level are from SBI. So, typical PSU attitude in many aspects.
4. Hassle free online purchase of insurance policy is not available.
5. Is less aggressive in generating business compared to other private life insurance players.

Opportunity:

1. As only 12 percent of the 40 crores insurable population is insured, thus, a huge opportunity to reach out to more people.
2. It has an edge over LIC as far as service is concerned. So, it can grab more market share from LIC by giving it a tough competition.
3. Not so much requirement on establishment of Brand (already have a good brand image of SBI).
4. A huge revolutionary change (PARIBARTAN) in SBI is going to happen, so there is an immense opportunity for SBI Life in future.

Threats:

1. Huge competition from other pre-existing 22 players in the Life Insurance sector in India.
2. New entrants in the pipeline of the life insurance business.
3. New tie-ups of competitors with innovative distribution channels.
4. The New Insurance guidelines from September ·10 onwards is really a big challenge for SBI Life's business.

Findings

1. The customers are very satisfied with the performance of the company. They feel the company has given a lot of importance to the needs of customers and have come out with innovative and great products.
2. Most of the respondents feel that their concerns were resolved very well as and when required.
3. The products or the policies are really good as per the customers; they are highly satisfied with the benefits and features of the policies.
4. The advisors are rated to be very helpful.
5. The advisors have performed very well in simplifying the complications involved in buying the policies.
6. The advisors have displayed high level of positive qualities like friendly nature, patience, enthusiasm, good listening and efficient responses.
7. The advisors have mostly been updating the customers with the newly launched products or policies.

Suggestions And Recommendations

1. The company may promote all the products individually than just promoting its brand as a life insurance.
2. The advisors may always update their customers with the new product launched by the company.
3. Transferring of the phone call to the right person should become faster and effective in the customer care department.
4. The customers sometimes felt that the advisors were not very punctual.
5. There is improvement required in the case of customer waiting time for their question to be addressed.
6. The customer's service department has to improve their product knowledge and communication skills in regional languages.
7. Some of the customers feel that the advisors were not very confident when they met. The advisors should improve their communication skills.

Conclusion - SBI Life Insurance Company Ltd at Bilaspur is performing extremely well as per this research. Most the factors are being taken care very well which makes SBI Life the best insurer in the market. With the creative and innovative culture of the company it has been successful in creating a nice image in the minds of customers. As per the customers most are highly satisfied with the company and its products. The insurance advisors who keep the direct contacts with the customers are performing very well. These advisors represent the company and the customers are highly satisfied with the knowledge, skills and the enthusiasm that they have in serving the customers and advising them for the best investment options they have. There are few improvements like transferring the call to the right person in time, the waiting time for the call to be attended and the updating of the new products being launched. The customer service department is also performing very well and the customers are satisfied with its performance. They don't find any difficulty when they call up to this department and their problems are resolved in no time.

References :-

Books Referred:

1. BERI. G C – Marketing research – Third edition Tata Mc graw Hill publication
2. Donald R. Copper, Pamela S Schinder – Business Research Methods – Eight edition Tata Mc Graw Hill publication
3. M J Etzel, B J Walker, William J Stanton – Fundamentals of Marketing Management, TMH, 13th edition, 2005
4. Philip Kotler, Gary Armstrong: Principles of Marketing, prentice hall of India, 11th edition, 2006

Journals And Magazines:

1. Annual report (IRDA)
2. India business journal

Websites Referred:

1. Insurance regulatory development authority, http://www.irdaindia.org/
2. SBI Life Insurance company Ltd., http://www.sbilife.co.in/
3. Wikipedia , http://en.wikipedia.org/wiki/Insurance
4. Life insurance corporation of India, http://www.licindia.in/

****

मध्यप्रदेश में वनों की घटती हुई स्थिति - कारण और निदान

अनीता चौधरी* डॉ. दिनेश श्रीवास्तव**

प्रस्तावना - वन प्रकृति की विस्मयकारी देन है। सभ्यता के विकास के पूर्व भू-पटल का अधिकांश भाग वनों के श्री सौन्दर्य से शोभायमान था, लेकिन सभ्यता के विकास एवं जनसंख्या की असीमित वृद्धि के कारण वनों का क्रूरता के साथ व्यापक विनाश हुआ है। भारत भूमि के संदर्भ में वनों के विनाष के उपर्युक्त कारण स्वयं स्पष्ट हैं। अनेकानेक स्थानों पर बस्तियां और नगर स्थापित हो गये हैं। खेती के लिये वनों का समतलीकरण किया गया है। यातायात के लिये मार्गो का निर्माण हुआ है और ईधन के रूप में वृक्षों को व्यापक मात्रा में नष्ट किया गया है। इस प्रकार वनों के क्षेत्र में होने वाली कमी के कारण भारत भूमि दिन-प्रतिदिन अपने सौन्दर्यमान हरित आवरण से विहीन होती जा रही है।

शब्द कुंजी - वनों के कम होने के कारण, संरक्षण हेतु निदानात्मक उपाय, जनजागरूकता।

उद्देश्य - वनों की घटती हुई स्थिति के कारणों का विश्लेषण कर वनों के संरक्षण हेतु अपनाये जा सकने वाले उपायों का उल्लेख करते हुए जनमानस में पर्यावरण के प्रति जनचेतना जागृत करना ही इस शोधपत्र का उद्देश्य है।

प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से मध्यप्रदेश भारत के सबसे समृद्ध राज्यों में से एक है। मध्यप्रदेश का क्षेत्रफल 3,08,252 वर्ग किलोमीटर है, जिसमें से 94,689 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में वन हैं। भारत के सम्पूर्ण राज्यों में सबसे अधिक वन मध्यप्रदेश में ही हैं। देश में उत्पादित सम्पूर्ण वनोपजों के 29 प्रतिशत की पूर्ति प्राकृतिक सम्पन्नता का धनी मध्यप्रदेश ही करता है।

मध्यप्रदेश में वनों का वर्गीकरण - मध्यप्रदेश राज्य की भौगोलिक एवं जैविक विविधता कई प्रकार के वनों से सुषोभित है। मध्यप्रदेश में कांटेदार जंगलों से लेकर उपोष्णकटिबंधीय पहाड़ी वनों तक कुल 18 प्रकार के वन हैं। वैधानिक दृष्टिकोण से प्रदेश के वनों को तीन प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है-

(1) आरक्षित वन - यह अत्यधिक महत्व के वन क्षेत्र हैं। भूमि कटाव, बाढ़ की रोकथाम, जलवायु आदि की दृष्टि से आवश्यक होने के कारण इन्हें आरक्षित वनों की श्रेणी में रखा गया है। इन वनों में पशुओं को चराने की अनुमति नहीं है।

(2) संरक्षित वन - इन वनों के लिये संरक्षित वनों के समान कड़े नियम हैं। इन वनों में पशु चराने एवं लकड़ी काटने की सुविधा प्राप्त है।

(3) अवर्गीकृत वन - यह ऐसे वन हैं, जिन पर सरकार का कोई नियंत्रण नहीं है। बिना किसी अनुमति के इन वनों को काटा जा सकता है और पशुओं को चराया जा सकता है।

तालिका - 1 : वैधानिक दृष्टिकोण से मध्यप्रदेश का वनक्षेत्र

क्र.	वन क्षेत्र का प्रकार	कुल भौगोलिक वन क्षेत्र	वन क्षेत्र का प्रतिशत
1	आरक्षित वन	31098 वर्ग कि.मी.	32.84
2	संरक्षित वन	61886 वर्ग कि.मी.	65.36
3	अवर्गीकृत वन	1705 वर्ग कि.मी.	01.80
	कुल वन क्षेत्र	94689 वर्ग कि.मी.	100.00

स्त्रोत - वार्षिक प्रतिवेदन/वन विभाग, म.प्र.शासन/2017

उपयुर्वत तालिका का विश्लेषण प्रदर्शित करता है कि प्रदेश में वन क्षेत्र के 32.84 प्रतिशत क्षेत्र में आरक्षित, 65.36 प्रतिशत क्षेत्र में संरक्षित तथा 1.80 प्रतिशत क्षेत्र में अवर्गीकृत वन हैं।

मध्यप्रदेश में वनों क्षेत्र में परिवर्तन - वन विभाग मध्यप्रदेश शासन के प्रतिवेदन के अनुसार मध्यप्रदेश के गठन के समय वर्ष 1955-56 में वन क्षेत्रफल 172460 वर्ग कि.मी. था जो कि तत्कालीन मध्यप्रदेश के कुल क्षेत्रफल 443455 वर्ग कि.मी. का 38.89 प्रतिशत था। इंडिया स्टेट ऑफ फॉरेस्ट रिपोर्ट वर्ष 2017 के आंकड़ों के अनुसार मध्यप्रदेश में वनक्षेत्र 77414 वर्ग कि.मी. हैं जो कि वर्तमान क्षेत्रफल 308252 वर्ग कि.मी. के 25.11 प्रतिशत है, अर्थात् विगत् लगभग 60 वर्षों में मध्यप्रदेश के वन क्षेत्र में लगभग 14 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई है जो कि आर्थिक एवं पर्यावरणीय दृष्टि से गंभीर स्थिति का सूचक है।

विगत 10 वर्षो में प्रदेश के वन क्षेत्रों में परिवर्तन को निम्न तालिका में प्रदर्षित करने का प्रयास किया गया है -

तालिका 2 **- मध्यप्रदेश के वन क्षेत्र में परिवर्तन - (वर्ग कि.मी. में)**

वनों का प्रकार	वर्ष 2007	वर्ष 2011	वर्ष 2015	वर्ष 2017
अत्यधिक सघन वन	6647	6640	6586	6563
मध्यम सघन वन	34965	34986	34837	34571
खुले वन	36046	36074	36003	36280
स्क्रब	6391	6396	6394	6279
गैर-वन	224203	224156	224432	224559
कुल वन क्षेत्र	77658	77700	77426	77414
वनों का प्रतिशत	25.19	25.21	25.11	25.11

स्त्रोत -इंडिया स्टेट ऑफ फॉरेस्ट रिपोर्ट - 2011/2015/2017 के प्रतिवेदन के अनुसार

उपर्युक्त तालिका का विश्लेषण प्रदर्शित करता है कि वर्ष 2007 में

* शोधार्थी (वाणिज्य) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** वाणिज्य विभाग, शासकीय नर्मदा महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

मध्यप्रदेश में वन 77658 वर्ग किलोमीटर थे, जो वर्ष 2017 की स्थिति में 77414 वर्ग किलोमीटर हो गये हैं। इन 10 वर्षों में मध्यप्रदेश में 244 वर्ग किलोमीटर वन क्षेत्र कम हो गया है। हालांकि खुले वनों के क्षेत्र में इस अवधि में वृद्धि दृष्टिगोचर हो रही है, तथापि महत्वपूर्ण सघन वन क्षेत्र कम हो गया है। तालिका के विश्लेषण के अनुसार मध्यप्रदेश में वर्ष 2017 की स्थिति में 77414 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में वन हैं, जिनमें अत्यधिक सघन वन क्षेत्र 6563 वर्ग किलोमीटर, मध्यम सघन वन क्षेत्र 34571 वर्ग किलोमीटर तथा खुला वन क्षेत्र 36280 वर्ग किलोमीटर है।

इंडिया स्टेट ऑफ फॉरेस्ट रिपोर्ट के अनुसार प्रदेश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल में केवल 77414 वर्ग किलोमीटर (25.11 प्रतिशत) क्षेत्र में ही वन हैं तथा 2,24,559 वर्ग किलोमीटर (72.86 प्रतिशत) क्षेत्र वन विहीन है। वन क्षेत्र में 2.13 प्रतिशत क्षेत्र में अत्यधिक सघन वन, 11.21 प्रतिशत क्षेत्र में मध्यम सघन वन तथा 11.77 प्रतिशत क्षेत्र में खुले वन हैं। प्रदेश के 2.03 प्रतिशत क्षेत्र (6279 वर्ग किमी) में वनों की सघनता 10 प्रतिशत से भी कम है।

मध्यप्रदेश में वनों की घटती हुई स्थिति के कारण – वन हमारे जीवन के आधार स्तंभ है तथा पर्यावरण संरक्षण में इनका प्रबल योगदान है। भारत में वनों की स्थिति के बारे में पर्यावरण एवं वन मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार वन ह्रास के मामले में मध्यप्रदेश दूसरे स्थान पर है। प्रदेश में वनों की घटती हुई स्थिति के प्रमुख कारण निम्न हो सकते हैं –

1. अवैध कटाई – वनों की घटती हुई स्थिति का मूल कारण वनों की अवैध कटाई है। अवैध कटाई का आशय ऐसी कटाई से है, जिसमें बिना किसी अनुमति के अवैज्ञानिक तरीके से वृक्षों को काटा जाता है। वनों की अवैध कटाई के परिणामस्वरूप पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव, वनों में रहने वाले दुर्लभ किस्म के वन्य प्राणियों का लोप, भूमि का अनुपजाऊ होकर मरूस्थल का विस्तार, वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण तथा भूमि प्रदूषण जैसी परिस्थितियां उत्पन्न हो जाती हैं।

2. अतिक्रमण – स्वतंत्रता के पश्चात् वन भूमि पर अतिक्रमण किया जाना एक प्रमुख समस्या रही है। वन विभाग मध्यप्रदेश शासन के प्रतिवेदन के अनुसार भूमि की उत्पादकता कम होने तथा बढ़ती हुई आबादी के कारण कृषि योग्य नई भूमि की बढ़ती हुई मांग, वन संरक्षण अधिनियम, 1980 लागू होने के पूर्व वन भूमि पर अनाधिकृत कब्जाधारियों को कृषि कार्य हेतु वन भूमि का नियमितीकरण तथा अधिकतर अवर्गीकृत तथा संरक्षित वनों का सर्वेक्षण न होना एवं असीमांकित रह जाना आदि वन भूमि पर अतिक्रमण के प्रमुख कारण हैं।

3. अवैध चराई – विगत वर्षों में प्रदेश में पशु संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है। बढ़ती हुई पषु संख्या वनों के बिगड़ने पर स्पष्ट रूप से प्रभाव डालती है। एक सर्वेक्षण में यह स्पष्ट हुआ है कि प्रदेश में पशुओं की संख्या की तुलना में वन क्षेत्र सीमित हैं। पशुओं के रौंदे जाने के कारण उपजाऊ धरती कड़ी हो जाती है और दोबारा जंगल उगने की स्थिति लगभग समाप्त हो जाती है।

4. अग्नि से हानि – मनुष्य की लापरवाही अथवा अन्य किसी कारण से वन क्षेत्र में लगने वाली आग से वन संसाधनों को अत्यधिक क्षति पहुचती है। वन विभाग के प्रशासकीय प्रतिवेदन में स्वीकारा गया है कि वन क्षेत्रों में घटित होने वाले अग्नि प्रकरण वनों के पुनर्उत्पादन में बाधक बने हुए हैं।

5. विविध प्रयोजनों के लिये वन भूमि का हस्तांतरण – नवगठित मध्यप्रदेश में समाज की बढ़ती हुई मांगों की पूर्ति, निस्तार व्यवस्था के अत्यधिक प्रसार, वन ग्रामों के विकास के अंतर्गत वनों में सड़क निर्माण, कृषि कार्य हेतु वन भूमि में अतिक्रमण, सड़क निर्माण, बांध आदि के लिये वन भूमि का हस्तांतरण इत्यादि कारणों से न केवल वन घनत्व में कमी आई है, बल्कि शेष उपलब्ध वनों पर भी दबाव तेजी से बढ़ रहा है।

निदान एवं उपसंहार – वन विनाश के उपर्युक्त कारणों को दृष्टिगत रखते हुए यह नितांत आवश्यक है कि वनों का संरक्षण एवं संवर्धन किया जाए। वनों की कटाई के सम्बंध में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिये कि वनों के संरक्षण के बारे में सर्वोत्तम उपाय अपनाने के पश्चात् ही कटाई कार्यक्रम हाथ में लिया जाये, जिससे वनों के संवर्धन की प्रक्रिया आगे बढ़ सके। देश की तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण वन भूमि को कृषि कार्यों, वृहत जल परियोजनाओं, उद्योगों आदि के लिये उपयोग में लाया जा रहा है। यह प्रवृत्ति वन विकास की दृष्टि से अत्यधिक चिंतनीय है। इस हेतु वृहत चिंतन एवं पर्यावरण विशेषज्ञों की राय को गंभीरता से लिये जाने की आवष्यकता है। प्रदेश के आर्थिक एवं पर्यावरणीय विकास के लिये मध्यप्रदेश राज्य के वन महत्वपूर्ण संसाधन है, जिनका संरक्षण एवं उचित रीति से विदोहन करने के लिये समुदाय की भागीदारी को प्राथमिकता दी जानी चाहिये।

बढ़ती हुई जनसंख्या की बढ़ती आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये प्रदेश के वन संसाधनों को सुरक्षित एवं उत्पादनशील बनाए रखना तथा सतत् वृक्षारोपण करके वन क्षेत्रों में निरंतर वृद्धि करते रहना वर्तमान समय की सबसे बड़ी चुनौती है। प्रदेश में वनों की लगातार होती जा रही कमी के कारण न केवल मानव जीवन प्रभावित हो रहा है, बल्कि वन्य जीव जगत के लिये भी खतरा पैदा होता जा रहा है। प्रदेश के वनों का संरक्षण करना न केवल सरकार का अपितु आमजनों का भी मुख्य दायित्व होना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वार्षिक प्रतिवेदन, 2016-17/वन विभाग, म.प्र.शासन
2. वन सांख्यिकी, 2001 वन विभाग, म.प्र.शासन
3. इण्डिया स्टेट फॉरेस्ट रिपोर्ट, 2017

****

पर्यटन के विविध आयाम (ऐतिहासिक, धार्मिक, सामाजिक)

वन्दना पाठक* डॉ. पंकज माहेश्वरी**

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश भारत का हृदय स्थल है। यह पर्यटको के आकर्षण का केन्द्र है।प्राचीन काल में लोग प्राय: धार्मिक उद्देश्य से यात्राए करते थे परन्तु अब यात्रा व पर्यटन के दृष्टिकोण में परिवर्तन आया है। वर्तमान समय में पर्यटक केवल धार्मिक उद्देश्य से ही नही बल्कि सामाजिक, राजनैतिक, व्यवसायिक उद्देश्य से भी यात्राए करते है। मध्यप्रदेश प्राकृतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक पर्यटन स्थलो से परिपूर्ण है। पर्यटन ने देश विदेश को एक कर दिया है।वर्तमान समय में परिवहन के साधनो का विकास एवं संचार प्रणाली की तीव्र उन्नति के कारण पर्यटन आसान हो गया है।पर्यटको की संख्या मे लगाातार वृद्धि होने के कारण यहां का आर्थिक व सामाजिक स्तर भी बढा है। मध्यप्रदेश में पर्यटन एक उद्योग के रूप में विकसित हो रहा है।जिससे हमारे राज्य को इससे अपार सम्भावनाए है। भारत मे अतिथि देवो भव: की पुरानी धारणा है। समाज मेजबान की भूमिका निभाता है।और पर्यटक को अतिथि का दर्जा दिया जाता है। अन्त में समाज सेवा प्रदाता और लाभ हासिल करने वाले की भूमिका में रहता है।जहां पर्यटको की संख्या अधिक होगी वह क्षेत्र अधिक विकसित होगा और जहां पर्यटको की संख्या कम होगी वह क्षेत्र अधिक विकसित होगा।

शोध सारांश – भारत प्राकृतिक, सांस्कृतिक व धार्मिक दृष्टि से विविधताओ का देश है।यहां की प्राकृतिक सुन्दरता व प्राचीन धरोहर पर्यटको को अपनी ओर आकर्षित करती है।मध्यप्रदेश भारत का हृदय स्थल है।यहां ऐतिहासिक स्थलो की संख्या अधिक है।यद्यपि प्राचीन काल के कुछ धार्मिक स्थल भीं विद्यमान है।यहां की संस्कृति, प्रथाए, परम्पराए, रहन जितनी सभ्यता पुरानी है।उतना ही प्राचीन मध्यप्रदेश का इतिहास है।यहां पंचमढी, अमरकंटक जैसे प्राकृतिक –सहन अन्य संस्कृतियो से अलग है।इन स्थलो की यात्रा करके इसको करीब से समझा जा सकता है।यहां की परम्पराए समृद्ध है तथा यहा की लोकसंस्कृति बहुआयामी है। स्थल है।चित्रकूट, उज्जैन, ओंकारेश्वर धार्मिक तीर्थ स्थल है।तथा ग्वालियर, माण्डू अपनी ऐतिहासिकता को प्रदर्शित करतें है। विभिन्न जातियो व धर्म के लोग जब एक दूसरे के सम्पर्क मे आते है तो इसका लाभदायक प्रभाव पडता है।इस प्रकार पर्यटन संस्कृतियो के बीच आदान प्रदान का एक साधन है।वर्तमान समय मे पर्यटन एक उद्योग के रूप में विकसित हो रहा है क्योकि इससे प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से स्थानीय व अन्य लोगो को रोजगार मिल रहा है।इसके साथ ही साथ यह होटल, रेस्टोरेण्ट, यात्रा ,व्यापार ,परिवहन तथा विपणन की सुविधाओ के विकास की सम्भावना बढाता है।पर्यटन के ,द्वारा उद्योगो, हाथकरघा, दस्तकारी वस्तुओ के उत्पादन को प्रोत्साहन मिलता है।परिणामस्वरूप लोगो के सामाजिक व आर्थिक जीवन स्तर मे सुधार हुआ हैं। पर्यटन राष्ट्रीय एकता में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। तथा प्रकृति तथा संस्कृति का संरक्षण करता है।

अध्ययन की सुविधा के लिए हमने पर्यटन को तीन भागो में बांटा है।जो कि निम्न प्रकार है :–

ऐतिहासिक पर्यटन – भारत एक ऐतिहासिक धरोहरो का देश है।इसमे मध्यप्रदेश का मुख्य स्थान है। मध्यप्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों मे कई ऐतिहासिक स्थल मंदिर, मस्जिद, प्राचीन किले, पुराने कुंए एवं प्राचीन खंडहर देखने को मिलते है। पर्यटन के विकास में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। पर्यटन के द्वारा मनुष्य विभिन्न प्रकार के स्थलो का भ्रमण करता है। तथा उस स्थान से जुडी कई प्रकार की जानकारी प्राप्त करता है। प्रत्येक ऐतिहासिक स्थल अपनी अलग कहानी कहता है। किसी विशेष ऐतिहासिक स्थल को देखकर वहां की भौगोलिक स्थिति, आर्थिक संरचना, इतिहास, सामाजिक मान्यताए, रीति रिवाज, प्रथाए, परम्पराए, कला तथा संस्कृति के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। पर्यटन के द्वारा हमारे लिए यह जानना आसान हो गया है। परिवहन के साधनो के विकास से दुनिया बहुत छोटी हो गई है। पर्यटन के क्षेत्र में ऐतिहासिक स्थलो की जानकारी से यही तात्पर्य है कि हम अधिक से अधिक अपने इतिहास को जाने और भविष्य का निर्धारण करे। कहा भी गया है कि जो व्यक्ति अपने देश या अपने बीते दिनो से शिक्षा नही लेता वर्तमान और भविष्य उसका सम्मान नही करता तथा वह कभी उन्नति नही कर पाता।प्राचीन काल में अनेक स्मारक ऐसे बनाये गए थे जिनसे भारत की संस्कृति और सभ्यता के सम्पन्नता का बोध होता हैं ऐसे कई कलात्मक स्मारक है जिनसे तत्कालीन समाज की गतिविधियो की जानकारी प्राप्त होती है। ये स्मारक भारत की विविध सामाजिक एवं धार्मिक संस्कृतियो को सुरक्षित रखे हुए है। इन स्मारको में विभिन्न तरह के भवन, दुर्ग, मंदिर,स्तूप, गुफाएं आदि है। प्राचीन भारत में कला धर्म से प्रभवित थी जिसके परिणाम स्वरूप विभिन्न ऐतिहासिक स्थल धर्म से ओत–प्रोत है। चट्टानो को काटकर सुन्दर गुफाए बनाई गयी, स्तूपो का निर्माण किया गया, बुद्ध के अवशेषों पर गोलाकार गुम्बदनुमा आकृति बनाई जाती थी सांची और अमरावती के स्तूप ऐतिहासिक स्तूप तो है साथ ही बौद्धो के इतिहास के गवाह है। अधिकांश प्राचीन स्मारको का निर्माण राजकीय संरक्षण में हुआ था तथा ये कलात्मक स्मारक शांति के सूचक है। अशांति काल में कला का विकास सम्भव ही नही है। पर्यटन के द्वारा हम अपने इतिहास को जाने तथा इतिहास को संरक्षित रखे। यही हमारा मुख्य कर्तव्य होना चाहिए। पर्यटक अक्सर शांति की तलाश में ऐतिहासिक स्थलो पर घूमने जातें है। वहां शांति का आनन्द उठातें है। और उसी ऐतिहासिक इमारतो को क्षति पहुंचाते हैं जो कि हमारे लिए एक निन्दा का विषय है। हमें

* शोधार्थी, अर्थशास्त्र अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला –उज्जैन (म.प्र.) भारत

उन प्राचीन ऐंतिहासिक किलो दीवारो को क्षति पहुंचाने का कोई अधिकार नही है। हमें तो अपनी आने वाली पीढी के लिए उसे संरक्षित करके रखना है।ऐतिहासिक किले हमारी धरोहर है। ये हमारे इतिहास के गवाह है। पुराने राजमहलो को देखकर हमारा इतिहास से साक्षात्कार होता है। इन्हे देखने ही तो देश विदेश से पर्यटक आतें हैं इससे हमारे देश को विदेशी मुद्रा की प्राप्ति होती है। और हमारे देश का आर्थिक विकास होता है।

धार्मिक पर्यटन – धार्मिक पर्यटन में धार्मिक स्थलो का महत्वपूर्ण योगदान है।यहां पर विभिन्न धर्मो के लोग निवास करते हैं। तथा विभिन्न धर्मो के लोग अपने अपने धार्मिक स्थलो की ओर आकर्षित होते हैं भारत में हिन्दू धर्म का विशेष स्थान है। इसको मानने वालो की संख्या अधिक है। इसी कारण देश में हिन्दू धर्म के धार्मिक स्थल अधिक है लाखो लोग प्रतिवर्ष धार्मिक यात्रा हेतु भिन्न भिन्न स्थलो पर जातें है। तीर्थ स्थलो पर उचित सुविधा उपलब्ध कराने के लिए सरकार व नीजि पर्यटन संघ सदैव प्रयासरत रहते हैं इसके अलावा कई स्वयं सेवक संघ भी सुरक्षा के लिए कार्य करते है। ये पर्यटन धार्मिक दृष्टि से भी लाभप्रद है। धर्म पूर्ण रूप से आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक सामंजस्य है। हिन्दू धर्म में धार्मिक स्थलो का महत्वपूर्ण स्थान है। यह स्थल सम्पूर्ण भारत में चारो दिशाओ में विद्यमान है। मोक्ष प्राप्ति के लिए हिन्दू चार धामो की यात्रा करते है। जो कि उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम दिशाओ में स्थित है। भारत में पर्यटन उद्योग तीर्थस्थलो पर निर्भर करता है। बहुत छोटे छोटे स्थानो का विकास धार्मिक पर्यटन के कारण हुआ हैं। भारत में धार्मिक पर्यटन के द्वारा विभिन्न रोजगार के साधन उपलब्ध कराकर अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाया जा सकता है। सांस्कृतिक एवं धार्मिक समारोहो का सुन्दर ढंग से आयोजन कर विदेशी पर्यटको के आकर्षण का केन्द्र बन सकता है।मध्यप्रदेश का खजुराहो देशी और विदेशी पर्यटको को आकर्षित करता है। यहां बहुत अधिक संख्या में विदेशी पर्यटक आते है।इसी तरह मध्यप्रदेश में ओरछा स्थित रामराजा का मंदिर पर्यटको को आकर्षित करता है। यह धार्मिक स्थान के साथ ही एक ऐतिहासिक नगरी है। इसी तरह मध्यप्रदेश में नदी किनारे बसे कई तीर्थस्थल है। जहां मेले उत्सवो का आयोजन किया जाता है। उज्जैन नगरी क्षिप्रा नदी के किनारे बसी हैं यहां महाकालेश्वर का ज्योर्तिलिंग स्थित है। जो कि बारह ज्योर्तिलिंग मे से एक है। जहां हर वर्ष कार्तिक मेला और बारह वर्षो में एक बार सिंहस्थ का मेला लगता है। जहां लाखो की संख्या में पर्यटक आतें है। ओंकारेश्वर नर्मदा नदी के किनारे स्थित है। जहां बारह ज्योर्तिलिंगों में से एक ज्योर्तिलिंग स्थित है। इस प्रकार मध्यप्रदेश में दो ज्योर्तिलिंग स्थित है। जहां लगातार धार्मिक कारणो से पर्यटको का आना जाना लगा रहता है। ऐसे मध्यप्रदेश में कई स्थान है। जहां हर वर्ष धार्मिक कारणो से मेले का आयोजन किया जाता है। इन आयोजनो से बडी संख्या में पर्यटक आते हैं स्थानीय लोग को रोजगार की प्राप्ति होती है। उनकी आय में वृद्धि होती है। उस धार्मिक स्थल जहां पर लोग केवल धार्मिक कारणो से जाते थे अब केवल धार्मिक नही बल्कि व्यवसायिक उद्देश्य को लेकर भी पर्यटन होने लगा है। और छोटे से गांव या कस्बो ने बडे शहर का रूप ले लया है। वर्तमान समय में बस जरूरत इस बात की है। नदी किनारे बसे धार्मिक स्थलो को गंदा न करे नदियो मे कूडा कचरा न डाले इससे पर्यावरण प्रदूषित होने लगता हैं और ऐसे स्थानो पर पर्यटको की संख्या धीरे धीरे कम होने लगती है।

समाजिक पर्यटन – पर्यटन एक ऐतिहासिक, धार्मिक, प्राकृतिक प्रतिक्रिया होने के साथ ही यह एक सामाजिक प्रतिक्रिया हैं। यह न केवल सामाजिक परिवर्तन का कारण है अपितु सामाजिक संबंधों में भी वृद्धि करता है। यह राष्ट्रीय एकता की भावना जागृत करता है। सामाजिक पर्यटन ज्ञान में वृद्धि के साथ मनोरंजन का भी साधन है। आज की भाग–दौड भरी जिंदगी में यह तनाव को कम करने में सहायक है। पर्यटन के द्वारा सामाजिक एकता मे वृद्धि होती है। पर्यटको का प्रभाव स्थानीय लोगो के रहन–सहन व जीवन शैली पर तो पडता ही है।साथ ही पर्यटक भी उस स्थान विशेष की सामाजिक संस्कृति से प्रभावित होते है। तथा वे यहां की संस्कृति से इतने अधिक प्रभावित होते है। कि वे बार बार यहां आना पसन्द करते है। पर्यटन अपनी मातृभूमि की वर्तमान सामाजिक परिस्थितियो का प्रतिबिम्ब है।हमारे सामने जब किसी देश, समाज, धर्म, संस्कृति का नाम आता है। तो सबसे पहले हमारा ध्यान उस देश या समाज की प्राचीन परम्पराओ पर जाता है।प्राचीन परम्पराओ व संस्कृति को पर्यटन स्थल के कलाकृतियो मे उकेरी नक्काशी से सहज रूप में समझा जा सकता है। यदि हम प्राचीन काल के शैल चित्रो को देखते है तो उस समय की परम्परा व संस्कृति का अनुमान हो जाता है। उस समय विशेष में महिलाओ की क्या स्थिति थी उनका समाज में क्या स्थान था आदि बातो की जानकारी कलाकृतियो को देखकर स्पष्ट हो जाती है। मध्यप्रदेश में कई सामाजिक, धार्मिक अवसरो पर मेले व उत्सवो का आयोजन किया जाता है।इस प्रकार के मेले व आयोजन के पीछे भी कई धार्मिक व सामाजिक कारण होते है। यहां पर विभिन्न प्रकार की फसलो के पकने व कटने का समय अलग अलग होता है वह सब कुछ जलवायु और मौसम पर निर्भर करता है। फसल कटने के बाद आराम का समय होता है। तो स्थानीय लोग उस समय को आनन्द व उल्लास मे बदल देते है। इस प्रकार हमारे भारतीय जीवन में अनेक पर्वो व मेलो का आयोजन किया जाता है। पर्यटको को ये मेले अपनी ओर आकर्षित करने लगे और पर्यटको को आकर्षित करने के लिए प्रचार प्रसार भी किया जाता है। इस प्रकार के मेले के आयोजन से स्थानीय शिल्प कला, मूर्तिकला, लघु उद्योग धन्धो से निर्मित वस्तुओ की बहुत अधिक बिक्री होती है। जिससे स्थानीय लोगो की आय में वृद्धि होती है। परिणाम स्वरूप जीवन स्तर में वृद्धि होती है। मशीनीकरण और सेचार के युग में हमारी लोक कला तथा शिल्पकला का पतन हो रहा है फिर भी कुछ लोक कलाए तथा शिल्प अभी बचे हुए है जिनको हम जानते है। मशीनीकरण के युग में कुछ कलाए लुप्त तथा अनुपयोगी हो गई है।ऐसी वस्तुए अब राष्ट्रीय संग्रहालय मे रखी गई है। इनमे हर कला जीवन के एक महत्वपूर्ण पहलू को स्पष्ट करती है। पर्यटक भिन्न भिन्न संस्कृतियो को उनके पहनावे आभूषणों,कृषि,संगीत के सामान,फर्नीचर आदि से पहचाना जाता हैं परम्परा का निर्वाह कला में हमेशा होता आया है। कला की जीवित परम्परा समाज की संस्कृति है। इस प्रकार समाज और संस्कृति का आपस में गहरा संबंध है।पर्यटन के द्वारा हमें भिन्न संस्कृतियो का ज्ञान होता है।मनुष्य हमेशा से जिज्ञासु रहा है वह अन्य सामाजिक परिवेश की संस्कृतियो का जानने व उसे अपनाने का प्रयास करता रहा हैं यह हमारी राष्ट्रीय एकता का बहुत बडा तत्व है। सामाजिक पर्यटन के कारण पर्यटको की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही हैं जो कि हमारी राष्ट्रीय आय का बहुत बडा स्त्रोत है।

निष्कर्ष – ऐतिहासिक धार्मिक तथा सामाजिक पर्यटन का विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता हैं कि पर्यटन हमारे जीवन का आधार है। यदि हम एक स्थान से दूसरे स्थानो पर घूमने फिरने नही जायेंगे तो हमारा जीवन नीरस हो जायेगा। अर्थव्यवस्था की गति रूक जायेगी रोजगार कम हो जायेगा अत: हमें चाहिए की हम पर्यटन को प्रोत्साहन दे अपने आस पास जितने भी

पर्यटन स्थल है। उन्हे स्वच्छ और सुरक्षित रखें। तभी राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी। वर्तमान समय में पर्यटन ने उद्योग का रूप ले लिया है। यह सेवा प्रदाता के रूप मे हमारे सामने उभर कर आ रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गोयल राजेश (2011), 'पर्यटन एवं परिवहन', वन्दना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, ISBN No. - 978-81-89949-25-9-
2. गुप्ता शिवसहाय (2011), 'पर्यटन के विविध स्वरूप' मोहित बुक्स इन्टरनेशनल, नई दिल्ली - 110002, ISBN No. 978-93-80748-009-
3. राव बालकृष्ण (2007), 'मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ पर्यटन' अजय प्रकाशन, जयपुर-3, ISBN No. 81-902596-1-X-
4. गोयल राजेश (2011), 'पर्वतीय पर्यटन - भौतिक सुविधाओं का विकास', वन्दना पब्लिकेशन्स, दरियागंज, नई दिल्ली, ISBN No. 978-81-89949-24-2-
5. दर्शक हंसराज (2007), 'भारत देशाटन', विश्व पुस्तक केन्द्र, नई दिल्ली, ISBN No. - 812-810-7-011-9-
6. संजयकांत भारद्वाज (2013), 'भारत में पर्यटन विकास', हेमन्त पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, ISBN No. 978-93-81793-01-5.
9. कुरूक्षेत्र, नई दिल्ली.
10. योजना, नई दिल्ली.
11. टाइम्स ऑफ इण्डिया.
12. पर्यटन डाइजेस्ट, भोपाल.

वेबसाईट्स :

1. http://www.mp.gov.in
2. http:// www.tourismindia.com.
3. http://www.google.com.in
4. http://www.wikipedia.com
5. http://www.mptourism.com
6. http://www.naidunia.jagran.com

****

अशासकीय विद्यालय के कक्षा नवम् स्तर के विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि पर अधिगम आव्यूह की प्रभावशीलता का अध्ययन

नलिनी शर्मा *

Abstract - The present paper is focussed on a study of effectiveness of Learning strategy with reference to Achievement on science of class IX students, a sample of 47 students of class IX was taken from high school of Ujjain. The data were collected by using science Achievement Test developed by researcher. The data were analysed through t-test. The findings revealed that at high school level there were significant difference found in science Achievement of students of experimental group and control group.

प्रस्तावना – शिक्षा मानव विकास की पूर्ण अभिव्यक्ति है, अर्थात् शिक्षा सीखना नहीं वरन् मस्तिष्क की शक्तियों का अभ्यास व विकास है। अत: शिक्षा एक जटिल, गतिशील रचनात्मक एवं संवेदनशील प्रक्रिया हैं। इसमें शिक्षण का संबंध शिक्षक से है एवं अधिगम का संबंध अधिगमकर्ता से है। जहाँ शिक्षण एक कला है। कला सतत् परिवर्तनशील रहती है और विकासोन्मुख होती हैं इसलिए शिक्षण परिवर्तनशील और विकासोन्मुख है। व्यापक रूप से शिक्षण जीवन में निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। यह त्रिमुखी हैं: अर्थात् इसके तीन मूल तत्व है : शिक्षक, छात्र और विषय। जिसमें से शिक्षा की प्रक्रिया के अन्तर्गत दो महत्वपूर्ण प्रक्रियाएँ **'शिक्षण'** एवं **'अधिगम'** के रूप में है। इस शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में **'अधिगम'** केन्द्र बिन्दु है। अधिगम आधुनिक मनोविज्ञान का अति महत्वपूर्ण आयाम है क्योंकि अधिगम का संबंध अधिगमकर्ता (विद्यार्थी) से होता है एवं अधिगम की क्रिया मानवीय व्यवहार और मानसिक क्रियाओं के अनेक पहलुओं को प्रभावित करती है। बालक के व्यवहार में अभ्यास तथा अनुभूति के परिणाम स्वरूप वांछित दिशा में परिवर्तन हेतु विद्यालय की भूमिका अहम होती है, परन्तु पर्याप्त सुविधाओं वाले विद्यालयों में भी अभिभावकों, प्रबन्धकों एवं शिक्षकों को विद्यार्थियों की शैक्षिक सम्प्राप्ति (उपलब्धि) से पूर्णत: सन्तोष नहीं होता है। इस कारण कक्षा-शिक्षण के उपरान्त भी विद्यार्थियों को अतिरिक्त शिक्षण जिन्हें 'कोचिंग क्लास' कहा जाता है, में जाने की आवश्यकता पड़ती है। इस हेतु अभिभावकों शैक्षिक प्रशासक एवं अन्य संस्थाओं के माध्यम से शैक्षिक गुणवत्ता को लेकर विद्यार्थी की शैक्षिक सम्प्राप्ति (उपलब्धि) से संबंधित होते अनेक विचार-विमर्श है, परन्तु इस समय वास्तव में यह स्पष्ट विचार होना आवश्यक है कि, विद्यार्थी की सम्प्राप्ति का संबंध उसके अधिगम स्तर से होता है। जब विद्यार्थी के उपलब्धि स्तर में कमी होती है तो उसके व्यक्तित्व में चिडचिडाहट अकेलापन, विषय के प्रति अरूचि आदि समस्याएँ आने लगती है जिससे उसकी उपलब्धि और निम्न स्तर पर जा सकती है। इस हेतु यह महत्वपूर्ण लगता है कि विद्यार्थियों की अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाने के लिए उपाय किये जाएं। इस हेतु पाठ्यवस्तु में निहित अवधारणाओं की समझ विकसित करने के लिए विविध प्रकार के अधिगम अनुभव प्रदान करने की योजना बनाकर अध्यापन किया जाए तो विद्यार्थियों की अधिगम उपलब्धि में वृद्धि होने की संभावना हो सकती है। प्रस्तुत शोध पत्र के अन्तर्गत शोधकर्ता द्वारा विद्यार्थियों के अधिगम स्तर में वृद्धि करने की दृष्टि से कुछ गतिविधियों का संयोजन कर उसे अधिगम आव्यूह के रूप में प्रयुक्त करने की योजना बनाई गई है।

अधिगम आव्यूह की अवधारणा – शिक्षा के संदर्भ में तकनीकी के विकास के कारण शिक्षा को उत्पाद के रूप में देखा जाने लगा है। अधिगम प्रक्रिया को सरल एवं स्थायी बनाने के उद्देश्य से शिक्षण विधियों, पाठ्यपुस्तक की प्रकृति, शैक्षिक उद्देश्य, अधिगम के प्रकार तथा विद्यार्थियों की रूचि एवं योग्यताओं आदि को ध्यान में रखकर कई गतिविधियों का संयोजन किया गया है, इसे अधिगम आव्यूह रचना कहते हैं- अर्थात् 'अधिगम आव्यूह से तात्पर्य वे अभिवृत्तियों और व्यवहार हैं जिनसे अधिगमकर्ता का अभिमुखीकरण लक्ष्य की ओर होता है।'

अधिगम आव्यहू की परिभाषा – 'Behaviours of a learner that are intended to influence how the learner processes information' **– Later Mayer (1988)**

मेयर के अनुसार अधिगम आव्यूह, अधिगमकर्ता के वे व्यवहार है- जो अधिगमकर्ता के सूचना प्रक्रम को प्रभावित करते है। यहाँ सूचना प्रक्रम से तात्पर्य है विद्यार्थियों में सूचना ग्रहण कर व्यवस्थित करने की प्रक्रिया की क्षमता का विकास करना। सूचनाओं का विश्लेषण करने में काम आने वाली बौद्धिक क्रियाएँ- अवलोकन, व्याख्या, निष्कर्ष, शाब्दिक व अशाब्दिक प्रतीकों का उपयोग आदि योग्यताओं को विद्यार्थी में विकसित किया जाता है। अत: यहाँ यह स्पष्ट है कि अधिगम आव्यूह से तात्पर्य कक्षा शिक्षण में सम्मिलित उन गतिविधियों से है, जिनके प्रभाव से अधिगमकर्ता उन व्यवहारों की करने को प्रेरित होगें। अत: अधिगम आव्यूह द्वारा विषयवस्तु (Content) में सम्मिलित शिक्षण बिन्दु से संबंधित ऐसी स्थितियों का निर्माण करना जिससे अधिगमकर्ता में तर्क, विश्लेषण, प्रयोग, समझ, समस्या समाधान, निर्णय लेने की क्षमता एवं चिंतन को प्रेरित किया जा सके। इस हेतु आव्यूह रचना का मुख्य स्वरूप इस प्रकार है-

1. विद्यार्थी भिन्न-भिन्न स्थुल तथ्यों के आधार पर अनेक क्रियाओं एवं उदाहरणों का प्रयोग कर अपनी बौद्धिक क्रियाओं द्वारा स्वयं नियम

* शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

या सिद्धान्त तक पहुँच सके।

2. विद्यार्थी द्वारा शब्दों के माध्यम से अर्थ ग्रहण कर अपने शब्दों में व्याख्या करना सीखना।
3. प्रयोग करने हेतु अवसर देना ताकि सीखे गये ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर विद्यार्थी प्रयोग कर विश्लेषण कर सके आदि।
4. स्मरण एवं समझ के आधार पर तर्क शक्ति को विकसित करना।

उद्देश्य – अशासकीय विद्यालय के प्रयोगात्मक समूह एवं नियंत्रित समूह के विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि के मध्यमानों की तुलना करना।

परिकल्पना – अशासकीय विद्यालय के प्रयोगात्मक समूह एवं नियंत्रित समूह के विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि के मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा।

प्रविधि – प्रस्तुत शोध एक प्रयोगात्मक अध्ययन है, अत: इस अध्ययन हेतु प्रायोगिक अभिकल्प को प्रयुक्त किया गया है। चयनित विद्यालय में कक्षा नवम् के दो वर्गों में से एक वर्ग को प्रयोगात्मक समूह तथा दूसरे वर्ग को नियंत्रित समूह के रूप में लिया गया।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध कक्षा नवम् के विद्यार्थियों पर किया गया, जो कि उज्जैन शहर में स्थित अशासकीय मॉडल हायर सेकेन्डरी स्कूल में सत्र 2017-18 में अध्ययनरत् रहे। इन विद्यार्थियों की आयु 14 से 16 वर्ष हैं। चयनित इकाई का अध्यापन अधिगम आव्यूह द्वारा किया एवं न्यादर्श के रूप में चयनित विद्यालय के कक्षा नवम् के विद्यार्थियों की संख्या का विवरण तालिका क्र. 01 में प्रस्तुत है।

तालिका क्र. 01 – प्रदत्त संग्रह हेतु न्यादर्श का विवरण

क्र.	लिंग	प्रयोगात्मक समूह	नियंत्रित समूह	कुल
1	बालक	15	20	35
2	बालिका	07	05	12
	कुल	22	25	47

तालिका क्र. 01 के अनुसार चयनित विद्यालय के उच्च माध्यमिक स्तर के कक्षा नवम में 35 बालक तथा 12 बालिकाएँ (कुल 47) विद्यार्थी न्यादर्श में सम्मिलित हैं। प्रयोगात्मक समूह में कुल 22 विद्यार्थी जिसमें बालक 15 एवं बालिकाएँ 07 हैं। इस प्रकार नियंत्रित समूह में कुल 25 विद्यार्थी सम्मिलित है, जिनमें से 05 बालिकाएँ एवं 20 बालक हैं।

उपकरण – शोधकर्ता द्वारा निर्मित विज्ञान उपलब्धि परीक्षण की सहायता से विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि का मापन किया गया।

प्रदत्त संकलन प्रक्रिया – चयनित विद्यालय के कक्षा नवम् के दो वर्गों में से एक को प्रयोगात्मक समूह के रूप में दूसरे समूह को नियंत्रण समूह के रूप में लिया गया। प्रयोगात्मक समूह का शिक्षण 'अधिगम आव्यूह' द्वारा किया गया। नियंत्रित समूह का शिक्षण 'परम्परागत विधि' द्वारा किया गया। दोनों समूहों पर शिक्षण के पश्चात विज्ञान उपलब्धि परीक्षण प्रशासित किया गया।

प्रदत्त का विश्लेषण – कक्षा नवम् स्तर पर विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि के मध्यमानों की तुलना के लिए टी-परीक्षण (t-test) का उपयोग किया गया।

प्रदत्त विश्लेषण का परिणाम – प्रदत्त संकलन करने के पश्चात् उद्देश्य अनुसार प्रदत्त का विश्लेषण तथा व्याख्या की गई। प्राप्त परिणाम उद्देश्यानुसार अग्रलिखित बिन्दु में प्रस्तुत है –

अशासकीय विद्यालय के प्रयोगात्मक समूह एवं नियंत्रित समूह के विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि के मध्यमानों की तुलना के लिए M, SD, N तथा t के मान का विवरण –

तालिका क्रमांक 02 – अशासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि के मध्यमानों का विवरण

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	प्रमाप विचलन	df	t-value
प्रयोगात्मक समूह	22	24.09	4.78	45	4.621**
नियंत्रित समूह	25	18.32	3.77		
कुल	47				

** 0.01 स्तर पर सार्थक

तालिका क्र. 02 के अनुसार t का मान 4.621 पाया गया, जो 45 (df) के लिए 0.01 स्तर पर सार्थक पाया गया अर्थात प्रयोगात्मक एवं नियंत्रित समूह के विद्यार्थयों की विज्ञान उपलब्धि के मध्यमानों में सार्थक रूप से भिन्नता पायी गयी। अत: इस सन्दर्भ में अध्ययन की शून्य परिकल्पना 'अशासकीय विद्यालय के प्रयोगात्मक समूह एवं नियंत्रित समूह के विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं होगा' अस्वीकृत की जाती है। इनके विस्तृत अध्ययन के लिए दण्ड आरेख क्र. 01 का निर्माण किया गया।

दण्ड आरेख क्रमांक 01 – अशासकीय विद्यालय के प्रयोगात्मक एवं नियंत्रित समूह के विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि के मध्यमानों की तुलना

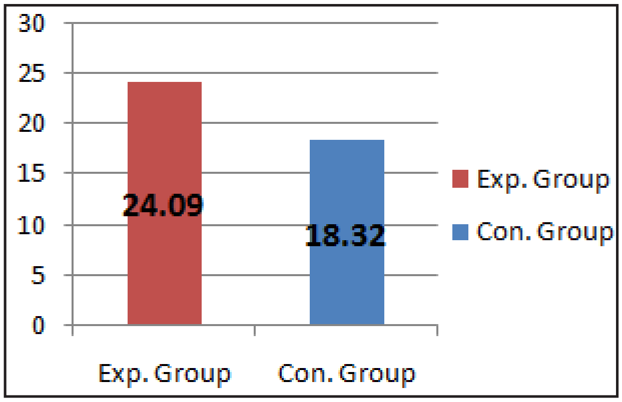

दण्ड आरेख क्रमांक 01 से स्पष्ट होता है कि प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि के मध्यमानों (M = 24.09), नियंत्रित समूह के विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि के मध्यमान (M = 18.32) से सार्थक रूप से उच्च स्तर के पाए गए।

निष्कर्ष–उक्त शोध अध्ययन से स्पष्ट है कि परम्परागत शिक्षण एवं अधिगम आव्यूह द्वारा शिक्षण करने पर विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में उपलब्धि के प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर पाया गया। अत: स्पष्ट है कि विद्यार्थियों की विज्ञान विषय की उपलब्धि पर अधिगम आव्यूह द्वारा शिक्षण का सकारात्मक प्रभाव पाया गया।

शैक्षणिक उपयोगिता :

1. प्रस्तुत शोधकार्य विद्यार्थियों को सूचना, तथ्यो, प्रत्ययों, का निर्माण एवं वर्गीकरण करने, क्रमबद्ध करके अधिगम स्तर में वृद्धि की ओर प्रोत्साहित करता है।

2. प्रस्तुत शोधकार्य विद्यार्थियों में संज्ञानात्मक एवं रचनात्मक संक्रियाओं एवं कौशलों के विकास में सहायक है।
3. प्रस्तुत शोधकार्य से बालकों (विद्यार्थियों) में विषयवस्तु के प्रति ज्ञान, बोध संश्लेषण, विश्लेषण एवं मूल्यांकन में सहायता मिलेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कोहली, वि.के. (1992), 'विज्ञान कैसे पढ़ाए', हरियाणा : विवेक पब्लिशर्स
2. वर्मा, प्रीति एवं श्रीवास्तव, डी.एन. (2001), 'आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान', आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर.
3. Best, W-John and Kahn & V. James (2008), Research in Education, New Delhi : Prentice Hall of India.
4. सिंह, अरूण कुमार (2012), 'संज्ञानात्मक मनोविज्ञान', दिल्ली : मोतीलाल बनारसीदास.
5. तोमर, लज्जाराम (2014), 'भारतीय शिक्षा के मूल तत्व', नई दिल्ली : सुरूचि प्रकाशन.

****

भारत का समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम

राजेश कुमार कुशवाहा* डॉ.प्रभु प्रकाश पांण्डये**

प्रस्तावना – भारतीय ग्रामीण समाज सदा से वैश्विक आकषर्ण का केन्द्र रहा है। इसका सरल शांत सामाजिक, आर्थिक जीवन प्राचीन समय से सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक वैज्ञानिको को आकर्षित करता रहा हैं। **आन्द्रे बेते –**लिखते है कि गॉव केवल वह स्थान नही है जहॉ लोग रहते है। यह वह अभिकल्पना है जिसमे भारतीय सभ्यता के आधारभूत मूल दिखाई देते है।

महात्मा गॉधी जी का कहना था कि भारत की आत्मा गॉव मे बसती है।भारत ऐसा पहला देश है जहॉ पर स्थानीय स्वशासन के प्राचीन कालीन प्रमाण मिलते है। यहॉ प्राचीन समय से ही स्थानीय स्वशासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी जहॉ का प्रमुख्य ग्रामीण होता था ग्रामीण जीवन और ग्राम सभा का वर्णन वेदिक काल के विभिन्न ग्रंथो मे मिलता है।

उद्देश्य – इस कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रो मे निवास करने वाली ग्रामीण जनसंख्या की आय व जीवन स्तर मे सुधार लाना व उनके जीवन उन्नयन हेतु विभिन्न योजनाओ के माध्यम से ऐसी सुविधाए उपलब्ध करना है जिससे वे गरीबी रेखा को पार कर सकें।

किये गये कार्यो की समीक्षा – डॉ. राकेश अग्रवाल 2014 ने अपने प्रस्तुत शोध 'प्रबंध ग्रामीण विकास पर नई आर्थिक नीति का प्रभाव मे एक विश्लेषणात्मक अध्ययन' ने बताया कि आर्थिक विकास एक सत्त प्रक्रिया है जिससे लोगो को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रोजगार प्राप्त होता है।

डॉ. प्रमोद कुमार बिदौल्यिा (1993) ने आपने शोध अध्ययन मे कहॉ है कि विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रो का आर्थिक विकास करने हेतु निरन्तर प्रयास हुए है तथा ग्रामीण जन जीवन मे सुधार के लिये आवश्यक कदम उठाये जाते रहे है।

समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम – भारत मे समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न सरकारी योजनाओ को शामिल किया जाता है जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण स्तर पर समस्त ग्रामीणो को आर्थिक विकास जो नवीन साधनो, तकनीको, ऋणो, को ग्रामीण स्तर पर एक समान रुप से लागू करना है। ग्रामीण स्तर पर व्यक्ति योग्य होने के बाद भी सरकारी योजनाओ का पूर्ण लाभ प्राप्त नही कर पाता है।जिसका कारण जानकारी का अभाव, वर्तमान समय मे केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा अपने विभागो उपक्रमो द्वारा अनेक योजनाओ का क्रियान्वयन किया जा रहा है।भारत मे भारत सरकार विभिन्न कल्याणकारी योजनाओ को अधिकतम कल्याण के लिए क्रियान्वित कर रही हैं। जिसमें कुछ योजनाये जैसे मनरेगा, राष्ट्रीय ग्रामीण अजीविका मिशन, भारत निर्माण आदि का शामिल किया गया है।

दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल योजना – दीनदयाल योजना ग्रामीण स्तर पर जीवन यापन करने वाले बेरोजगार युवाओ के लिए प्रारम्भ की गई हैं यह एक कौशल विकास कार्यक्रम भी है इस योजना का शुभारम्भ पंडित दीनदयाल उपाध्याय की 98वीं जयंती के विशेष अवसर पर केन्द्रीय मंत्री नितिन गडकरी व वैंकेया नायडू द्वारा 25सितम्बर 2014 को प्रारम्भ की गई थी।

रोशनी आदिवासियो के लिए कौशल विकास योजना – नक्सल प्रभावित जिलो के आदिवासी परिवारो व युवाओं के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा 7जून 2013 को रोशनी योजना का शुभारम्भ किया गया था। यह योजना सभी योजनाओ मे नवीन व प्रेरणा से ओत-प्रोत योजना है इसे एक कौशल योजना भी कह सकते है।

स्वच्छ भारत मिशन – 2 अक्टूबर 2014 को महात्मा गांधी जयंती के विशेष अवसर पर प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा इस योजना का शुभारम्भ किया गया था।महात्मा गांधी की 150 जयंती के अवसर पर वर्ष 2019 तक सम्पूर्ण भारत को स्वच्छ बनाने का लक्ष्य रखा गया है।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना मनरेगा – यह अधिनियम 2005 के अनुरुप 2 फरवरी 2006 को महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना मनरेगा के रुप मे प्रारम्भ की गई थी इस योजना का लाभ गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले गरीब परिवार के व्यक्तियो के लिए प्रारम्भ की गई है जिसमे काम करने का अधिकार प्रदान किया जाता है।

कुटीर ज्योति योजना – इस योजना को वर्ष 1988-89 मे लागू किया गया था जिसका मुख्य उद्देश्य भारत के अनुसूचित जाति, जनजाति ,के परिवारो को जो गरीबी रेखा के नीचे जीवन -यापन कर रहे है। उन परिवारो के लिए ग्रामीण स्तर पर लागू की जाती है। जिसके माध्यम से गरीब परिवार अपने जीवन स्तर मे सुधार ला सकते है। ऐसे परिवार के लोगो को बिजली कनेक्शन के लिए 400 रुपये की बिजली प्रदान की जाती है।

सर्व शिक्षा अभियान – सम्पूर्ण भारत मे वर्ष 2000-2001 से सर्वशिक्षा अभियान चलाया जा रहा है। जिसका मुख्य उद्देश्य 6से 14 वर्ष के आयु वाले बच्चो को नि:शुल्क शिक्षा व्यवस्था प्रदान करना है जो कि एक मौलिक अधिकार है इस कार्यक्रम को पूर्व प्रधानमंत्री अटलबिहारी बाजपेयी द्वारा शुरु किया गया था। वर्तमान समय मे इस कार्यक्रम मे होने वाले व्यय को केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा 50:50प्रतिशत का योगदान प्रदान किया जाता है।

भारत मे समग्र ग्रामीण विकास हेतु विभिन्न योजनाये संचालित की जा रही है। जिसमे सरकारी ग्रामीण विकास कार्यक्रम की योजनाये शामिल की

* शोधार्थी (वाणिज्य) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अमरपाटन, जिला - सतना (म.प्र.) भारत

जाती है। **जो निम्नानुसार है :-**

1. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना।
2. महिला समृद्धि योजना।
3. ग्रामीण युवा स्वरोजगार योजना।
4. इंदिरा आवास योजना।
5. प्रधानमंत्री रोजगार योजना।
6. सुनिश्चित रोजगार योजना।
7. प्राथमिक विद्यालयो के लिए पोषाहार योजना।
8. सामाजिक सुरक्षा योजनायें।
9. मेक इन इंडिया योजना।
10. वनबंधु कल्याण योजना।
11. नेत्रत्व विकास योजना।
12. गैस सिलेन्डर योजना या उज्ज्वला योजना।
13. हथकरघा योजना।
14. एकीकृत वस्त्र योजना।
15. एकीकृत वन विकास योजना।
16. श्रम सुधार योजना।
17. बाल संरक्षण योजना।
18. गरीबी उन्मूलन योजना।
19. अनाज बैंक योजना।

भारत मे समग्र विकास के लिए सरकार द्वारा अन्य विभिन्न प्रकार की योजनाये/कार्यक्रम शामिल किये जाते है। जिनका एक मात्र उद्देश्य ग्रामीण स्तर पर नागरिको का आर्थिक सुधार जिसमे ग्रामीणो लोगो का रहन-सहन, शिक्षा व रोजगार कार्यक्रम /योजनाये शामिल है जो कि महिला बाल-विकास ,अनुसूचित जाति विभाग, अनुसूचित जनजाति, कल्याण, पिछडा वर्ग, कल्याण विकलांग योजना आपदा प्रबंधन, सामाजिक, जागरुकता, सामाजिक सुरक्षा, राष्ट्रीय ग्रामीण मिशन, पिछडा क्षेत्र अनुदान कोष ,ग्रामीण व्यापार केन्द्र आदि विभिन्न योजनाये /कार्यक्रम समग्र विकास को बढावा प्रदान कर रहे है। जो हमारे नैतिक अधिकारो को बढावा प्रदान करेंगा।

निष्कर्ष - समग्र ग्रामीण विकास का क्रार्यक्रम, ग्रामीण विकास के लिये महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है इसके क्रियान्वयन के द्वारा ग्रामो मे आर्थिक समृद्धि आयी है ग्रामीणो की आय एंव रोजगारो मे वृद्धि हुई है और ग्रामीणो के जीवन स्तर मे सुधार हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीवास्तव डॉ.ओ.एस.मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास ,मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
2. कपूर ,सुर्दशन कुमार भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था ,राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर

****

Disinvestment and Its Effect on Indian Economy

Dr. Suresh Shravan Patil*

Abstract - 1991 we Accept New Economic policy that is Called New Economic policy and the main change took place in Indian Economy the license policy change into free trade policy. Indian Economy has three sectors public, private and Public-Private that means co-operative Sector.

Disinvestment is a Instrument to Increase Efficiency of our Industry and service Sector so when Government have no Money to Development for Indian Economy they sell the Share of Public Sector and that is the Definition of Disinvestment. I want to study of Disinvestment and effect, Impact and Achievement in Indian Economy.

After Many years we present our central deficit Budget that means our income is less than our Expenditure . and to solve the deficit problem we take decision to Disinvestment in our Public Sector.

Introduction - Indian Economy most of the efficiency isn't usedproperly .because the new technology and skill development programme is not available in our Country and to develop these things Finance is most important. To raise finance we took decision that in our public sector share sell and develop the public Sector. And gain foreign Currency from export policy. Other thing that to develop our Basic sector that is Education, Public Health and family Health .we take debt from many years from other country or International organizations.

Review of literature:

1. **Neelam Jain (2002)** : Privatization and Disinvestment in Public Sector Undertakings I India in this article she Explains that National policy Initiative like privatization, liberalization and globalization in Indian Economy. And to develop fast economy the public sector is reduced and so the government took decision of disinvestment .
2. **NandDhameja(2003):**Is one of the opinion that the Clock on Public Sector Undertaking has taken a full turn. Once seen as the engine of industrial growth .most of the state enterprises become a big drain on public money a decade or so later. The article analyses the strategy, economic and administrative exercise behind the process of disinvestment.
3. **R. Nagaraj (2005) :**Disinvestment and Privatization in India– Assessment and Options ownership reform in public sector enterprises initiated since 1991 has yielded minimal recipts. The opinion was that since large firms were being selected, the chances of success would be very high.
4. **GargPrakash (July 2011):**Impact of Disinvestment on Corporate performance – state and economic reforms that commenced in 1990 met with strong opposition from other political parties slowing down the process and infusing inefficiency and lethargy into the entire process. He studies how disinvestment has improve the performance of public sector units, if correct and timely implementation is carried out.

Objective of the Study :

1. To analyse the change some Government disinvestment industries after new Economic policy.
2. To study the change in Labour efficiency and productivity in the Industries.
3. To suggest some suggestion to Government about disinvestment.

Methodology - The data for the study of concern subjet is used from many sources ofgovernmentstastical published document . like annual Report ,Public survey Economic and political weekly , other Reputed Journals and World Bank Report.

Hypothesis:

1. Disinvestments increase the Efficiency of Labor in public sectors.
2. Disinvestment enhance the overall production in several industries after New Economic reforms.

Disinvestment Phases - After 1991 the decision of disinvestment taken many times and the changes in Indian Economy as Follows:

Table 1 (see in last page)

Table 1 shows that the total amount release from disinvestment is 5,371.11 crore and it use to develop infrastructure and other economic growth. And to improve the deficit of our central government

Industries Reserve for public Sector prior 1991

1. Arms and Ammunition and allied items of defence equipment.
2. Atomic energy.
3. Iron and steel.
4. Heavy casting and forginings of iron and steel.

*Associate Proffesor (Economics) KKHA Arts SMGL Commerce and SPHJ Science College, Neminagar Chandwad, Distt. Nashik (Maharastra) INDIA

5. Heavy plant and machinery required for iron and steel production, for mining.
6. Heavy electrical plants .
7. Coal and lignite.
8. Mineral Oils.
9. Mining of iron ore, chrome ore, gypsum.
10. Mining and processing copper, Lead, zink, tin.
11. Minerals specified in the schedule to the Atomic Energy.
12. Aircraft.
13. Air transport.
14. Rail transport.
15. Ship building.
16. Telephones, Telephone cable, Telegraph wireless apparatus (including radio receiving sets.)
17. Generation and distribution of electricity.

Industries Reserve for public Sector After July, 1991

1. Arms and Ammunition and allied items of defence equipment, aircraft and warship.
2. Atomic energy.
3. Coal and Lignite.
4. Minaral Oils.
5. Mining of iron ore, chromeore, gypsum, sulphur, gold and dimond.
6. Mining of copper, zine,tin, molybdenum and wolfram.
7. Minerals specified in the scheduled to Atomic Energy Order,1953.
8. Railway transport.

Table 2 - Oil and Natural Gas Corpporation(ONGC) :

Year	Reported Net Profit (In Crore)	Number of Outstand-ing shares (In Crore)	Earnings Per share (In Crore)
1991-92	405.7	142.5934	2.85
1992-93	788.5	142.5934	5.53
1993-94	1588.1	142.5934	11.14
1994-95	2346.3	142.5934	16.45
1995-96	1945.4	142.5934	13.64
1996-97	2033.6	1142.5934	14.26
1997-98	2677.8	142.5934	18.77
1998-99	2754.5	142.5934	19.32
1999-2000	3639.47	142.5934	25.45
2000-01	5228.78	142.5934	36.67
2001-02	6192.33	142.5934	43.43
2002-03	10529.32	142.5934	73.84
2003-04	8664.45	142.5934	60.76
2004-05	12983.05	142.5934	91.05
2005-06	14430.78	142.5934	101.20
2006-07	15642.92	213.8873	73.14
2007-08	16701.65	213.8873	78.09
2008-09	16126.32	213.8873	75.40
2009-10	16767.56	213.8873	78.39

Source: several profit and Loss Accounts of ONGC

This table shows that the Efficiency of these companies are improvement and the profit from the shares also increase so the some industries are good signal to Disinvestment and the Reason that ONGC sell oil in our Indian market at level of International prices. The demand elasticity of Oil is not change concern to demand and so prices of oil is constant in Indian market.

Table 3 - Disinvestment in 2002-2003

1	Name of the Enterprise	Mode of Disinvestment	Recipts (in crore)
2	HZL	Strategic sale of 26% 1.46% equity disinvested in favourofemployees.	445.00 6.18
3	Maruti Udyog Ltd.	Control premium for sell off to Suzuki	1000.00
4	IPCL	Strategic sale of 26%	1491.00
5	ITDC	Sale of 10 properties	272.81
6	MFIL	Residual sale of 26% equity	44.08
7	CMC	6.06 % equity disinvested in favour of employees.	6.07
8	Total		3265.17

Source: Ministry of Disinvesment reply tom Loksabha.

From the data we know that 1991-92 to 2002-2003 central government set the target of amount from disinvestment after next session year 2003-04 to 2007-08 the government target is Rs. 14,500 and GOVT Received 15,547 crore this session. out of this 12,741.62 corer receipts through sale of minority shareholding in CPSEs. In 2004 -05 the target was reduced to 4,000 Crore and share sales of NTPC, ONGC spillovers and IPCL shares to employees pushed the total receipts to Rs. 2,764.87 crore.

Table 4 - Disinvestment from 1991- 1992 to 2009 -2010

1	Item	Amount Realised (Rs. In Crore)	Percentage
2	Receipts through sale of minority shareholding in CPSEs	39,617.91	68.68
3	Receipts through sale of minority shareholding of one CPSE to another CPSE	1317.23	2.28
4	Receipts through Strategic sale	6.344.35	11.01
5	Receipts from other related transactions	4,005.17	6.94
6	Receipts from sale of residual shareholding disinvested CPSEs companies	6.398.27	11.09
	Total	**57,682.93**	**100.00**

Source: Department of Disinvestment, Government of India

Indian economy was crises in this period because the our budget in fiscal deficit. So we need some financial support and second thing is Gulf war is happened .so we form disinvestment commission in 1997 and took a decision of Disinvestment from Indian Market.

Effect of Disinvestment on Indian economy:

1. Ownership Transfer to private Sector - The disinvestment procedure transfer the ownership to private sector because the private companies or person can sale the share of concern company and so the control of all

authority are private .for example: MarutiUdyoglimited sale his maximum share in this period and so the India parlmentary system is collapsed due to this system.

2. Objectives of Disinvestment are failure - The objectives of this disinvestment are to achieve the more and more employment and high production in various industries but it is not success because only sale procedure is completed and the employment isn't increase.

3. Labour improve their efficiency - The disinvestment start and the labour improve their efficiency because if the labour are not improve their capacity to produced more goods and services the industry will take decision to disinvestment and due to disinvestment the owner of that industry will change so the labour improve their capacity. And many of industry became in good position .

4. Governmentdeclare many industry as Weak - After Disinvestment Indian Govt. declare lot of industry as ill industry and due to this matter the private industrialist control the Economy. And socialist concept is abolish in India. This concept is useful for common man.

Conclusion - Disinvestment start in Indian Economy and the private Enterprise developed and Govt. responsibility is finish towards the people of the country. After 1991 the new economic policy start and the objective of new economic policy is privatization .and the disinvestment policy help to new policy. In this policy common man is out of economic flow. Because in private policy there are no reservationfor SC/ST/OBC/NT and other Backward classes.

References :-

1. R nagaraj , "Disinvestment in India,I Lose and you gain."
2. Disinvestment Commission Report, 1999
3. Economic Survey, 1991-2008
4. Planning Commission Report, 2003
5. SudhirNaib, "Disinvestment in India."
6. Department of Disinvestment, Ministry of finance,(Online) http://www.divest.nic.in

Websites:

1. http:www.ircc.iitb.ac.in
2. http: www.divest.nic.in
3. http: www.economictimes.indiatimes.com

Table 1 - Disinvestment In 1998-99

Name of the Enterprise	Mode of disinvestment	No. of shares sold(in crore)	Receipts (in Crore)
CONCOR	Domestic issue	0.9000	221.65
GAIL	Divested/ sold to instructional investors Cross holding by ONGCCross holding by IOC	3.0610 4.0840 4.0840	181.78 245.04 245.04
IOC	Cross holding by ONGC	3.1272	1208.96
ONGC	Cross holding by ONGCCross holding by GAIL	12.5349 2.7719	2034.96 450.00
VSNL	GDR issue	1.0000	783.68
Total		31.5630	5371.11

Source: public enterprise survey, 1998-99 VOL-I

****

उत्तराखण्ड राज्य निर्माण में उत्तराखण्ड के गांधी इन्द्रमणी बड़ोनी की भूमिका

डॉ. अर्चना जोशी *

प्रस्तावना – वेदों में देवभूमि उत्तराखण्ड को रत्नगर्भा की संज्ञा दी है, सदियों से यहाँ पर संत, महापुरूषों ने जन्म लेकर मनसा, वाचा, कर्मणा राष्ट्र सेवा के लिए अपना जीवन समर्पित किया है। इतिहास साक्षी है कि स्वतंत्रता आंदोलन से लेकर पृथक राज्य निर्माण तक की संघर्ष यात्रा में असंख्य क्रांतिकारियों ने कई यातनायें सह कर, अपना सर्वस्व मातृभूमि के लिए समर्पित कर दिया और इसी जनसंचेतना से ही विजय सदैव यहा के जन साधारण की हुई तथा विरोधी शक्तियाँ परास्त हुई।

प्रत्येक स्थान का अपना एक इतिहास होता है, जो उस स्थान के निर्माण की यात्रा पर प्रकाश डालता हैं इस इतिहास का निर्माण किसी एक घटना का त्वरित परिणाम नहीं होता और न ही ये अल्पविधि में निर्मित होता हैं वस्तुत: यह एक क्रमबद्ध प्रक्रिया है, जो उस क्षेत्र के वीर नायकों के राजनीति, धार्मिक एवं सांस्कृतिक योगदान का परिणाम होती है। वर्तमान उत्तराखण्ड राज्य का इतिहास भी ऐसे ही कई बलिदानों का मूक साक्षी व सफल परिणाम है। ये बलिदान एक ऐसे आत्मनिर्भर उत्तराखण्ड के लिए दिये गये, जो हर आयाम से राष्ट्र के विकास में मजबूत कड़ी बनकर उभरें।

भौगोलिक दृष्टि से भी उत्तराखण्ड की अपनी एक विशिष्ट स्थिति है। इसके धरातल, जलवायु, वनस्पति, जीव–जन्तु तथा निवासियों में कुछ ऐसी विशिष्टतायें हैं, जो निकटवर्ती अन्य प्रदेशो में नहीं पायी जाती। इसी प्रकार यहाँ के निवासियों की ऐतिहासिक परम्पराओं, सामाजिक व धार्मिक मान्यताओं की विशेषतायें भी विभिन्न कालक्रम में पल्लवित हुई हैं। विभिन्न स्थानों से आयी लघु समाज संस्कृति, विविध नृवंशों तथा भाषा समूहों ने इन विशिष्टताओं को आधार व अस्मिता प्रदान की है।

लम्बे समय से नैसर्गिक सौन्दर्य से परिपूर्ण, अपार प्राकृतिक संसाधनों से सम्पन्न, हिम जल धाराओं से सुसज्जित ये पर्वतांचल समुचित व अनुकूल विकास नीति के अभाव में दुर्दशा की ओर अग्रसर था। इन विपरीत परिस्थितियों में पर्वतीय क्षेत्र की प्रबुद्ध, जागरुक एवं संवेदनशील विभूतियों ने समुचित चिन्तन के बाद पृथक उत्तराखण्ड राज्य की कल्पना व पैरवी की।

इस पुनीत कार्य में जन–साधारण की शक्ति को आंकने, उसे सही दिशा देने और संघर्ष की मंद गति को तीव्र करने के लिए समय–समय पर कई परिवर्तनकारी व्यक्तित्व मुख्य परिदृश्य में आये, जिन्होने आन्दोलन की दिशा बदल दी, राज्य आंदोलन के इस दौर में ऐसे ही परिवर्तनकारी व्यक्तित्व थे– 'इन्द्रमणी बडोनी', जिन्होंने हिंसा, विरोध की राजनीति को अहिंसा और सिद्धान्तों की राजनीति में बदलकर अपनी दूरदर्शिता से आंदोलन का रुख मोड़ दिया। असाधारण व्यक्तित्व व समर्पित युगदृष्टा के रूप में वह इद्रमणी बडोनी ही थे, जिन्होनें राज्य प्राप्ति के संघर्ष में अग्रिम पंक्ति पर खड़े होकर अन्तिम पंक्ति पर खड़े व्यक्ति को भी इस आंदोलन से जोड़ दिया। उनके नेतृत्व से लोकतांत्रिक संघर्षो व क्षेत्रीय आकांक्षाओं के इस आंदोलन में एक नवीन अध्याय जुड़ गया। **'आज दो, अभी दो'** के नारे का आह्वाहन कर उन्होंने प्रत्येक पर्वतवासी को उसके अधिकार का बोध कराया।

किसी भी क्षेत्र के विकास में वहाँ के जन–प्रतिनिधियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पहाड़ों की आवाज को लखनऊ दिल्ली तक पहुँचाने के लिए योग्य नेतृत्व का अभाव रहा। इन्हीं परिस्थितियों में राजनीति को नई दिशा देने तथा पर्वतीय संवेदनाओं के स्तरों को मुखर करने के लिए इन्द्रमणी बडोनी ने राजनीति में कदम रखा। ग्राम प्रधान, ब्लाक प्रमुख से तीन बार विधायक चुने जाने व इस अवधि में पर्वतीय जन की संवेदनाओं से जुड़कर अलग पर्वतीय राज्य हेतु किये गये उनके संघर्ष, लगातार आंदोलनरत होकर पर्वतीय राज्य की कल्पना को उत्तराखण्ड राज्य के रूप में स्थापित करने में उनके प्रयास, मील के पत्थर के रूप में स्मरणीय रखे जा जायेंगे।

पृथक राज्य की सोच – राजनीतिक जीवन के लम्बे अनुभव ने इन्द्रमणी बडोनी को सिखाया कि जब–जब पर्वतीय क्षेत्र के प्रतिनिधित्व की आवाज को दबाया जाता है, तब–तब पर्वतीय क्षेत्र विकास के मार्ग से एक कदम पीछे खिसक जाता है। इसी पक्षपात व भेदभाव की नीति के विरोध में वे पृथक राज्य बनाने के प्रबल पक्षधर थे। किन्तु उनकी दृष्टि में ये पृथक राज्य मात्र एक भौगोलिक विभाजन नहीं था और न ही यह पृथकता की आवाज थी, बल्कि पृथक राज्य निर्माण के पीछे उनकी एक ही सोच और एकही तर्क था कि राज्य निर्माण के पश्चात् ही हमारे संसाधन हमारे विकास के काम आयेंगे और इस प्रकार उत्तराखण्ड राज्य एक खुशहाल व विकसित प्रदेश के रूप में राष्ट्र के उन्नति में प्रमुख भूमिका निभायेगा।

इन्द्रमणी बडोनी ने अपनी पृथक राज्य के प्रति सोच व उसके औचित्य को सिद्ध करने के लिए विधानसभा लखनऊ में एक विधायक के रुप में स्पष्ट रूप से अपना वक्तव्य रखा था, जिसका शीर्षक था–**'पृथक पर्वतीय राज्य क्यों ?'** इस वक्तव्य के पीछे उनका विचार नीतिनियन्ताओं को यह बताना था कि पृथक राज्य की स्थापना से पर्वतीय जनता अपना भविष्य संवारने के लिये, अपने क्षेत्र के विकास के लिए उत्सुक होगीं क्योंकि तब यहाँ कीजनता का अस्तित्व अपने हाथ में होगा, जनता और सरकार के मध्य सीधा सम्बन्ध आपसी विश्वास ,त्याग व श्रम की भावना को प्रोत्साहित करेगा और उस खाई को पाटने में समर्थ होगा, जो वर्षो के भेदभाव से उपजी है। पृथक पर्वतीय राज्य की आवाज एक सम्मिलित संस्कृति, एक इतिहास, समान भूगोल और एक सी समस्याओं वाले प्रदेश की आवाज है, जिसकी अवहेलना संभव नहीं है।

पृथक पर्वतीय राज्य सम्मेलन – इन्द्रमणी बडोनी राज्य आंदोलन की

* सम्बद्धीकरण–डी0एस0बी0 परिसर, कुमाऊ विश्वविद्यालय, नैनीताल (उत्तराखण्ड) भारत

आवाज 70 के दशक से ही उठा रहे थे। इस दौरान 'पर्वतीय राज्य परिषद' व 'कुमाऊँ मोर्चा' जैसे संगठनों के साथ एकजुट होकर इस आंदोलन को तेज करने में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। दिनांक 23 व 24 अक्टूबर 1971 को देहरादून में 'पर्वतीय राज्य सम्मेलन' का आह्वाहन किया गया। सम्मेलन में दो प्रश्नों पर खुलकर बहस हुई– **'उत्तराखण्ड राज्य क्यों ?' और 'राज्य कैसे ?'** इस सम्मेलन में इन्द्रमणी बडोनी ने अपनी सकारात्मक उपस्थिति दर्ज करायी और राज्य हितों के प्रति अपनी संवेदनशीलता का परिचय देते हुए जोर देकर कहा कि– **'जो भी पर्वतीय राज्य के लिये आगे आयेगा मैं उसे और भी आगे बढ़ाने के लिये आगे आऊँगा। पर्वतीय राज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। यह हमसे कोई भी नहीं छीन सकता। ये इस धरती पर जन्म लेते ही हमें प्राप्त हुआ हैं यह अधिकार हमें हमारे संविधान ने दिया है।'**

तदोपरान्त इस सम्मेलन में **'इन्द्रमणी बडोनी'** के विचारों पर सभी ने अपनी सहमति प्रकट करते हुए निम्न चार प्रस्ताव पास किये गये :

1. उत्तराखण्ड पर्वतीय राज्य के औचित्य को स्वीकार करते हुए भारत सरकार से मांग की गई कि उत्तर प्रदेश के आठों जिला (तद्समय) को मिलाकर अलग राज्य का दर्जा दिया जाये।
2. उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा गठित पर्वतीय विकास परिषद को समाप्त करने की मांग।
3. उत्तराखण्ड पर्वतीय राज्य आंदोलन को जनव्यापी बनाने के प्रयासों में जनता से पूरा–पूरा सहयोग लेते हुए जनसंघर्ष समितियों का गठन किया जाये।
4. उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय की स्थापना के लिये प्रस्ताव।

इस सम्मेलन के सफल आयोजन के पश्चात् पृथक राज्य समर्थकों का मनोबल ऊँचा हो गया। इस दौरान इन्द्रमणी बडोनी राज्य प्राप्ति मांग के प्रथम पंक्ति के नेतृत्वकर्ता में शामिल हो गये और वे आजीवन इस मांग के लिये संघर्षरत रहे।

उत्तराखण्ड में अलग विश्वविद्यालय की मांग और आंदोलन को लेकर इन्द्रमणि बडोनी ने विधानसभा लखनऊ में अपने ओजस्वी भाषण में स्पष्ट कहा कि कुमाऊँ और गढ़वाल में विश्वविद्यालय के विषय पर मतभेद नहीं होना चाहिये और दोनों क्षेत्रों में विश्वविद्यालय खोले जाने चाहिये। आखिरकार एक लम्बे संघर्ष के बाद 1793 में दोनों मंडलों में विश्वविद्यालय की स्थापना हुई।

अब इन्द्रमणी बड़ोनी भाषण, पत्रिकाओं, सम्मेलन के माध्यम से पृथक राज्य की मांग को जन–जन तक पहुँचाने के लिये तत्पर हो गये। इसी दौरान वे पर्वतीय राज्य तदर्थ समिति के सदस्य बने। 28 मई 1972 को उन्होनें 'युगवाणी' के माध्यम से पर्वतीय राजय के औचित्य व पर्वतीय क्षेत्रों की दुर्दशा पर एक लेख के माध्यम से प्रकाश डाला, जिसका शीर्षक था–**'पर्वतीय राज्य परिषद–एक निवेदन'**, इस लेख में उन्होनें स्पष्ट रूप में यह कहा है कि –**'मध्य हिमालय में रहने वालों की समस्याओं का समाधान तथा भारत की सुरक्षा और सार्वभौमिकता के लिये आठ पर्वतीय जिलों के आर्थिक, सामाजिक विकास के लिये पर्वतीय राज्य का निर्माण ही एकमात्र हल है।'**

उत्तरांचल परिषद के सदस्य के रूप में योगदान – इसी बीच 7 जून 1972 को नैनीताल में **'उत्तरांचल परिषद'** गठन किया गया, जिसकें पृथक पर्वतीय राज्य से उत्तराखण्ड का सर्वांगीण विकास होगा । इन्द्रमणी बडोनी ने, अपने तर्को से पर्वतीय क्षेत्र की जनता व सरकार को सोचने पर विवश कर दिया कि वास्तव में पर्वतीय जिला का विकास पृथक राज्य के बाद ही सम्भव हैं अपनी विधायककाल की व्यस्तता के बीच भी वे विभिन्न सभाओं का आयोजन कर जनसमुदाय को संगठित करने का प्रयास करते रहे। 12 नवम्बर, 1972 को 'उत्तरांचल परिषद' नैनीताल शाखा का उद्घाटन भी उनके द्वारा किया गया। 07 दिसम्बर 1972 को टिहरी में उत्तरांचल परिषद संयोजक के तत्वाधान में इन्द्रमणी बडोनी की अध्यक्षता में एक बृहद सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें दूरस्थ व दुर्गम क्षेत्रों से हजारों की संख्या में ग्रामीण जनता ने जोर–शोर से प्रतिभाग लिया और उनके उत्साह ने यह सिद्ध कर दिया कि पर्वतीय क्षेत्र के लिये अलग राज्य की मांग अबढूर की कौड़ी नहीं है। सम्मेलन में **'उत्तरांचल परिषद'** का संविधान भी पारित हुआ। शनै–शनै– पृथक राज्य की मांग जन आंदोलन का रूप ले चुकी थी। इन्द्रमणी बडोनी ने इस आंदोलन में गढ़वाल व कुमाँऊ–दोनों क्षेत्रों हेतु कभी भी क्षेत्रीयता एवं अलगाववाद का समर्थन नहीं किया, बल्कि वे सदैव संगठित संघर्ष के पक्षधर रहें। बागेश्वर में सरयू नदी के तट पर आठों पर्वतीय जिलो का उत्तरांचजल परिषद सम्मेलन में विशाल जन समूह को सम्बोधित करते हुये कहा था कि 'उत्तरांचल परिषद' एक गैर राजनीतिक संगठन है, जिसमें सभी विचार धाराओं के लोगों का स्वागत है। हमारी लड़ाई राजनीतिक सत्ता हथियाने के उद्देश्य से नहीं वरन आर्थिक विकास की लड़ाई है। यहाँ के विकास का एकमात्र विकल्प उत्तरांचल राज्य है।'

अपने सम्पूर्ण विधायक काल में इन्द्रमणि बड़ोनी राज्य प्राप्ति के लिये सतत प्रयासरत रहे। उन्होनें कमेटियों, सम्मेलनों,भाषणों आदि के द्वारा जनता को उसके अधिकारों से अवगत कराया ओर ये विश्वास दिलाया कि जिस दिन हम राज्य प्राप्ति का संकल्प लेकर एकजुट हो जायेंगे, सत्ता को हमारे आगे झुकना ही पड़ेगा।

उत्तराखण्ड राज्य आंदोलन व उत्तराखण्ड क्रांति दल में भूमिका – पृथक पर्वतीय राज्य की मांग के लिये सक्रिय 53 प्रतिनिधियों में 24 जुलाई, 1979 को मसूरी में कुमाँऊ विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डी0डी0 पन्त के नेतृत्व में एक सम्मेलन में पृथक राज्य की स्थापना के लिये **'उत्तराखण्ड क्रांति दल'** का गठन किया गया। इस सम्मेलन में इन्द्रमणी बडोनी भी प्रमुख रूप से उपस्थित थे और उनकी उपस्थिति में सभी लोगों ने पृथक पर्वतीय राज्य प्राप्ति का संकलन लिया।

वस्तुत: तद्समय यह दल एक आम राजनीतिक पार्टी नहीं थी बल्कि पर्वतीय मांग से जुड़े बौद्धिक नेतृत्व के मस्तिष्क की उपज थी, जिसमें धर्म, जाति, वंश, लिंग का भेद नहीं था और न ही ये अलगाववाद व पृथकतावाद का स्वर था। ये तो एक अधिकार की मांग के लियेबना संगठन था, जो कर्तव्य से लदी पर्ववतीय जनता को एक लम्बे अरसे से वंचित रहे उसके अधिकारों को दिलाने के लिए तत्पर था।

संरक्षक के रूप में भूमिका – एक पृथक पर्वतीय इकाई के गठन के पीछे इन्द्रमणी बडोनी का विचार स्वयं को पहचानने, अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता से रूबरु होना था क्योंकि उनका मानना था कि इसको बिना पहचाने पृथक अस्तित्व की कल्पना ही मुश्किल थी। अपने इसी विचार को साकार करने के लिये उन्होनें 16–17 मार्च, 1980 को ऋषिकेश में उत्तराखण्ड क्रांति दल के अधिवेशन में उत्तराखण्ड क्रांति दल की सदस्यता ग्रहण की। उनहें इस दल के संरक्षण का दायित्व दिया गया और उन्होनें आजीवन इस पद की गरिमा को समझा और निभाया। संरक्षक के रूप में उनके द्वारा कृत आंदोलन व निर्णयों का विवरण निम्नवत है :

1. 1980 के विधानसभा चुनाव।

2. 22 मई, 1982 को इन्दिरा गाँधी को पृथक पर्वतीय राज्य की माँग के औचित्य सहित ज्ञापन देना।
3. पर्वतीय क्षेत्र में शराब की लत के कारण हो रहे पारिवारिक दुर्दशा के दृष्टिगत नशा विरोधी आंदोलन, जिसमें 'नशा नहीं, रोजगार दो' के स्तर मुखर हुये।
4. जनसभा व पद यात्राओं द्वारा जन-जागरण।
5. उत्तराखण्ड राज्य संघर्ष हेतु समय-समय पर विभिन्न संदर्भो में जन आंदोलन व सांकेतिक भूख-हड़ताल।
6. मातृशक्ति व युवाओं को आंदोलन से जोड़ने का लगातार प्रयास। अपनी जन सभाओं में वे जोर देकर कहते-'प्रत्येक परिवार का एक व्यक्ति इस आंदोलन में अपनी आहुति देगा, तभी आंदोलन रूपी यह यज्ञ सम्पन्न होगा।'
7. 1988 की पदयात्रा द्वारा कुमाँऊ-गढ़वाल के एकीकरण का प्रयास।
8. लघकु नाटक व नाटिकाओं के मंचन से जन-जन को जोड़ने का प्रयास
9. सदैव लोकतांत्रिक मान्यताओं पर आस्था रखते हुये, हिंसा के विरुद्ध अहिंसा को अपना शस्त्र बनाकर जन संदेश देना।
10. वन अधिनियम 1980, जिसके द्वारा सिविल वनों की किसी भी प्रकार की कटाई प्रतिबंधित कर दी गयी थी, का विरोध। क्योंकि इस अधिनियम के कारण विकास से सम्बन्धित निर्माण कार्यो में अवरोध आ गया था, जिससे एक नवीन जनआंदोलन का उदय हुआ।
11. पेड़ काटों आंदोलन-1989 मे उक्रांद ने विकास योजनाओं में आड़े आ रहे पेड़ों को एक आंदोलन के रूप में काटना शुरु किया। पौड़ी गढ़वाल, अल्मोड़ा जिले के द्वाराहाट व टिहरी में जनता के सहयोग से यह आंदोलन चला। इन वन कटान के कारण इन्द्रमणी बड़ोनी को गिरफ्तार भी किया गया।
12. 1989 के लोक सभा व विधान सभा चुनाव, जिसके बाद राज्य की मांग हेतु जन मानस व जन-समूह आर-पार के निर्णायक संघर्ष के लिए तैयार थे।

पौड़ी का ऐतिहासिक आमरण अनषन – जुलाई, 1994 में मुलायम सिंह सरकार द्वारा मंडल कमीशन की संस्तुतियों, जिसमें पिछड़े वर्गो को राजकीय सेवाओं में 27 प्रतिशत आरक्षण की संस्तुति भी दी गयी थी, को लागू करने का निर्णय लिया गया। उत्तराखण्ड में पिछड़ा वर्ग मात्र 3 प्रतिशत था। अत: इस आरक्षण के विरोध में युवाओं में आक्रोश भर गया, जिसके फलस्वरूप 02 अगस्त 1994 को पौड़ी मुख्यालय में पंचायतों के परिसीमन, उत्तराखण्ड को आरक्षण की परिधि में लिये जाने, जिल कैडर सभी विभागों मे लागू करने, उत्तराखण्ड राज्य की शीघ्र घोषणा की मांगों को लेकर इन्द्रमणी बडोनी के नेतृत्व में 8 आंदोलनकारी पौड़ी जनपद मुख्यालय पर आमरण अनशन पर बैठे। इस अनशन में जन सहभागिता एक इतिहास बन गई। सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह के पथ पर चलते हुए इन्द्रमणी बडोनी ने राज्य प्राप्ति की जो अलख जगाई थी, उसी लौ अब जन-जन तक फैल चुकी थी, मधुमेह के मरीज होने के कारण ये भूख हड़ताल उनके लिए बहुत हानि कारक थी, परन्तु उनके चेहरे का उत्तोज आंदोलनकारियो के लिए प्रेरणा बन गयी थी। 07 अगस्त 1994 को प्रशासन को अनशनकारियों का अनशन समाप्त कराने के प्रयासों में लाठीचार्ज के साथ-साथ कई राउण्ड की गोलियाँ चलानी पड़ी। रातों रात इन्द्रमणी बडोनी को आयुर्विज्ञान संस्थान मेरठ में भेजा दिया गया, वहाँ भी उनका अनशन जारी रहा।

उत्तराखण्ड का गाँधी – इन्द्रमणी बडोनी को इस आमरण अनशन ने आंदोलन को निर्णायक मोड़ पर खड़ा कर दिया। अब स्थिति 'करो या मरो' की थी। इतिहास में ये अनशन दूसरी 'अगस्त क्रांति' बन गया। प्रशासन की क्रूरता और इन्द्रमणी का शांति पूर्वक प्रतिरोध को देखते ही बनता था। इसी दौर में उनके आजीवन सत्य, अहिंसा को अपने जीवन मल्य में समाहित करने के कारण उन्हें 'उत्तराखण्ड के गांधी' की संज्ञा दी गयी। अब वे जन नायक बन चुके थें उनके अथक प्रयासों, गाँधीवादी दर्शन के प्रति अगाध आस्था एवं अहिंसात्मक प्रतिरोध को प्रसिद्ध विदेशी अखबार 'वाशिंगटन पोस्ट' ने यू रिपोर्ट किया :

'अगर आज की तारीख में भारत में गाँधी को देखना हो तो उत्तराखण्ड आंदोलन के सूत्रधार इन्द्रमणी बडोनी को देखें।'

अन्तत: 2 सितम्बर 1994 को जनता की अपील पर 32 वें दिन पौड़ी में अपना अनशन समाप्त कर उनके द्वारा पुन: राज्य आंदोलन की बागडोर संभाली गई। उनके जीवन में महात्मा गाँधी के अहिंसक नेतृत्व में चला राष्ट्रीय आंदोलन एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत रहा और वह आजीवन उन्हीं सिद्धान्तों पर अडिग रहे।

आंदोलन की तीव्रता के साथ-साथ पुलिस प्रशासन की बर्बरता में भी वृद्धि हुई। लाठी चार्ज व फायरिंग का कई बार प्रयोग हुआ। सितम्बर 1994 में खटीमा व मसूरी कांड ने इस आक्रोश को चरम पर पहुँचा दिया था।

संयुक्त संघर्ष समिति – 29 अगस्त 1994 को नैनीताल में विभिन्न दलों के स्थानीय नेता एकत्रित हुए और संघर्ष समिति (संयुक्त) के गठन का प्रस्ताव पारित किया गया। इस समिति के संरक्षक के रूप में इन्द्रमणी बड़ोनी को चुना गया, जिनके तत्वाधान में अलग उत्तराखण्ड राज्य की तुरन्त घोषणा करने, खटीमा-मसूरी नरसंहार काण्डों की न्यायिक जाँच कराई जाने, हरिद्वार जिले का प्रस्तावित उत्तराखण्ड राज्य में शामिल करने सम्बन्धी आदि प्रस्ताव पारित किये गयें साथ ही समिति द्वारा जनता एवं आंदोलनकारी संगठनों से असहयोग आंदोलन से जुड़ने व इस क्रियान्वित करने हेतु अपील की गई। राजनीतिक दलों के नेताओं से भी अपील की गयी कि ये अपने दलगत अहं, आग्रहों, पूर्वाग्रहों व स्वार्थो को छोड़कर आंदोलनकारियों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर आंदोलन को निर्णायक मुकाम तक पहुँचाने में योगदान दें।

02 अक्टूबर की दिल्ली रैली का आह्वान व रैली में अराजकता – उत्तराखण्ड संयुक्त संघर्ष समीति के आह्वान पर दिल्ली रैली की भव्य एवं व्यापक तैयारियों व दिल्ली जाने वालों की असीमित भीड़, भारी जन-समूह को रोकने के लिये मुजफ्फरनगर प्रशासन ने अवरोध लगाये और 02 अक्टूबर को आंदोलनकारियों पर लाठी चार्ज किया। इसमें कई आंदोलनकारी शहीद हुये, कई महिलाओं से अभद्रता की गयी और अराजक शक्तियों द्वारा दिल्ली में मंच पर उद्बोधन के मध्य इन्द्रमणी बडोनी पर पत्थर फैके गये, जिसमें वे घायल भी हुई। सरकार को भी अलग राज्य हेतु ज्ञापन उनके द्वारा दिया गया। इन्द्रमणी बडोनी के नेतृत्व में उत्तराखण्ड आंदोलकारियों से नरसिंम्हा राव सरकार की वार्ता भी हुई।

आजीवन राज्य आंदोलन के प्रति समर्पित 'उत्तराखण्ड का यह गाँधी' अपने अंतिम समय में भी राज्य की परिकल्पना करते रहे। राज्य निर्माण शिल्पी के रूप में उन्होने आंदोलन को जन्म दिया, आकार देकर उसे सदैव अहिंसा, सत्य के समर्पित दायरे में रखने का प्रयास किया। यह विधि की विडम्बना ही थी कि राज्य प्राप्ति से मात्र 01 वर्ष पूर्व 18 अगस्त, 1999 को सतत् चैतन्य उत्तराखण्ड के गाँधी चिरनिंदा में लीन हो गये। उनका अंतिम संदेश था-

'स्वयं को हारा हुवा न समझे व लक्ष्य हासिल होने तक उत्तराखण्ड

का परचम लहराते रहें।'

पृथक उत्तराखण्ड राज्य निर्माण की भूमिका तैयार करने वाले ऐसे अहिंसा के पुजारी के त्याग का राज्य हमेशा ऋणी रहेगा।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उत्तराखण्ड आजकल : जुलाई 2005, पृष्ठ- 32
2. जन्तवाल, नारायण सिंह : पूर्व विधायक, नैनीताल साक्षात्कार।
3. धाद : हिमालयी सरोकारों का दस्तावेज, संपादक सुरेश नौटियाल, पृष्ठ संख्या - 249।
4. नैनीताल समाचार : ग्यारवहां जन्मवार पृष्ठ- 2
5. नौटियाल, बालकृष्णन : साक्षात्कार
6. पाण्डे, प्रयाग : देवभूमि का रण, पृष्ठ 87
7. बिष्ट, प्रताप सिंह : उत्तराखण्ड राज्य आंदोलन का ऐतिहासिक अध्ययन, अप्रकाशित शोध ग्रंथ, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, पृष्ठ- 13
8. भट्ट, त्रिलोक चन्द्र : उत्तराखण्ड आंदोलन, पृथक राज्य आंदोलन। पृथक राज्य आंदोलन एक ऐतिहासिक दस्तावेज, पृष्ठ- 214
9. युगवाणी : साप्ताहिक पत्रिका दिनांक 24.10.1971 पृष्ठ- 1,2
10. रावत दर्शन सिंह : लेख इन्द्रमणि बड़ोनी पुण्य स्मृति ग्रंथ प्रकाशन गढ़केसरी
11. सकलानी मुनि राम : लेख उत्तराखण्ड के गौरव पर्वतीय गांधी स्वर्गीय इन्द्रमणि बड़ोनी गढ़केसरी।
12. शुक्ला अपराजिता : जसवन्त सिंह बिष्ट 'जीवन वृत', अप्रकाशित शोध ग्रंथ, कुमाऊँ विश्वविद्यालय।

****

शिक्षा में सुधार की पहली शर्त अपनी राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली : एक दृष्टिकोण

डॉ. धनंजय सिंह *

शोध सारांश – वर्तमान प्रपत्र का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि मानव का सर्वांगिण विकास ही शिक्षा का केन्द्र बिन्दु होना चाहिए अर्थात् विद्यार्थी के भीतर के छुपे हुए गुणों को बाहर निकालना, इनमें तार्किक व आलोचनात्मक शक्ति को जन्म देना, इन्हें विभिन्न ज्ञान विज्ञान की बातों को सिखाना, साथ ही साथ मनुष्य जाति की आजतक की जो उपलब्धियाँ है, जो कुछ सीखा या जाना है जो श्रेष्ठ है, अगली पीढ़ी को हस्तान्तरित करना और जीवन-यापन के साधन उपलब्ध कराने के साथ-साथ इनमें भारतीय दृष्टि और तद्जनित संस्कार समाहित करना ही शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए अर्थात् यह प्रपत्र भारत में अंग्रेजों द्वारा थोपी गयी शिक्षा प्रणाली जो वर्तमान में भी चल रही है, के स्थान पर अपनी राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली को लागू करने का आह्वान करती है।

मुख्य शब्द– सर्वांगीण विकास, तार्किक व आलोचनात्मक शक्ति, भारतीय दृष्टि, तद्जनित संस्कार और राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली।

प्रस्तावना – शिक्षा प्रणाली प्रकृति से ही एक सतत् प्रक्रिया है जो प्रथमत: शैशवास्था से आरम्भ होकर प्रौढ़ावस्था में से गुजरती है और इनमें आवश्यक रूप से कई प्रकार की विधियों और ज्ञान के स्रोतों का अनुक्रम बन्धन होता है। सत्य ही भारतीय मनीषियों में जहाँ मनुष्य को शिक्षा तथा विवेक के आधार पर जगत के अन्य जीवों से श्रेष्ठ बताया है, समाज में व्यवस्था, स्थिरता, प्रवाह और जीवन्तता लाने का उत्तरदायित्व शिक्षा का है, किन्तु यह अपेक्षा तत्कालीन समाज की अनुकूल परिस्थितियों के मध्य ही सम्भव है। यदि समाज शिक्षा के प्रति अपने दायित्वों की पूर्ति में इमानदार नहीं बन पाया तो शिक्षा अपनी चैतन्यता के बीच चिन्तन प्रारम्भ कर देगी। संक्षेप में समाज और शिक्षा की अन्योनाश्रिता एक-दूसरे की जीवन्तता हेतु अपरिहार्य है। समाज को अनुकूल बनाने के अतिरिक्त व्यक्ति के मानसिक विकास, चारित्रिक नैतिक विवेक सम्बन्धी विकास में शिक्षा की अप्रतिम भूमिका के हम सभी कायल है। अपना मूल्यांकन करने की क्षमता तथा वैचारिक दृढ़ता आज के सन्दर्भ में अत्यन्त समीचीन है। **वास्तविक अर्थों में शिक्षा का केन्द्र मानव के व्यक्तित्व का विकास करना, व्यक्ति का समाजीकरण करना तथा उसको समाज की नैतिक तथा भौतिक संरचना के अनुकूल बनाने में है।**

विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या आज शिक्षा के केन्द्र में मानव का सर्वांगीण विकास प्राथमिक है? निर्विवाद रूप से इसका उत्तर नहीं होगा। यदि शिक्षा और एजुकेशन दोनों शब्दों के निहितार्थों में समायोजन कर देखें तो यह स्पष्ट हो जायेगा। 'शिक्ष' धातु से निकले शिक्षा शब्द का अर्थ है सिखाना अर्थात् विद्यार्थी को विभिन्न ज्ञान-विज्ञान की बातों को सिखाना एवं जीवन-यापन के साधन उपलब्ध कराना। जबकि ग्रीक भाषा के Educare शब्द से उत्पन्न एजुकेशन का अर्थ है To draw out something अर्थात् बच्चे में छिपे हुए गुणों को बाहर निकालना, साथ ही मनुष्य जाति की अबतक की जो उपलब्धियाँ हैं, जो कुछ भी जाना सीखा है, तथा जिसे श्रेष्ठ मानता है उसे अगली पीढ़ी को हस्तान्तरित करना। मैं नि:संकोच कहना चाहूँगा कि आज हम शिक्षा का पहला उद्देश्य सिखाने का कार्य जैसे-तैसे कर रहे हैं लेकिन हम विद्यार्थियों में छिपी प्रतिभा को निकालने तथा श्रेष्ठतम को अगली पीढ़ी को देने का काम ठीक ढंग से नहीं कर रहे हैं और इसका एकमात्र और मूल कारण है हमारी अपनी कोई शिक्षा प्रणाली का नहीं होना।

किसी भी देश की राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की जड़ को देखे तो पता चलेगा कि उसके भीतर एक खास श्रद्धा, खास दृष्टि और उसके अनुरूप प्रयोजन और उद्देश्य छिपे हुए रहते हैं। शिक्षा प्रणाली उसपर से विकसित होती है और अपना स्वरूप ग्रहण करती है। जैसी श्रद्धा, जैसी दृष्टि होनी वैसा ही कालान्तर में उसका रूप हो जायेगा। आजकल हमारे यहाँ जो शिक्षा प्रणाली प्रचलित है उसकी श्रद्धा और दृष्टि मेकाले की दी हुई है जिसका प्रयोजन और उद्देश्य था अंग्रेज शासकों द्वारा की हुई रचना की आवश्यकताओं की पूर्ति। पर वे आवश्यकतायें राष्ट्रहित की नहीं थी। उनका प्रयोजन यह नहीं था कि सारे देश के लोग स्वतंत्र, समझदार और उद्यमी बनकर सच्चे लोकतंत्र को जन्म दें। उनका प्रयोजन स्वयं मेकाले द्वारा अपनी माँ को लिखे पत्र की इन पक्तियों से स्पष्ट है-उसने लिखा था कि भारत में लागू की गई उसकी शिक्षा प्रणाली के फलस्वरूप जो गुलाम भारतीय मानसिकता विकसित होगी उससे वह स्वतंत्रता का सपना भी नहीं देखेगा। वह जमाना अब बीत गया और स्वराज व लोकतंत्र आया है, अत: ऊपर की सभी बातों में परिवर्तन होना ही चाहिए। लेकिन आजतक वह बदली नहीं है, बदलने का दिखावा किया जाता रहेगा लेकिन वह बदलेगी भी नहीं क्योंकि श्रद्धा की कमी है। मेकाले की दी हुई आत्मा कालग्रस्त हो गयी है तब भी उसका हाड़ पिंजर खींचा जा रहा है और उसी में कुछ लोग स्थापित स्वार्थ-सुख का अनुभव करते हैं।

ऐसा नहीं है कि अंग्रेजों द्वारा थोपी गयी शिक्षा प्रणाली के विरुद्ध आवाज नहीं उठी, बल्कि स्वामी दयानन्द, रविन्द्रनाथ ठाकुर, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गाँधी ने अंग्रेजी की प्रतिक्रिया में एक दूसरी शिक्षा प्रणाली की खोज की, किन्तु उसके औचित्य को जानते समझते हुए भी हमारे गुलाम मानसिकता वाले नव अभिजात शासक वर्ग पुनर्जागरण काल के कार्य मागों को पूरा करने में पूरी तरह असमर्थ रहा जिस कारण न तो वह

*असिस्टेण्ट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग, पी0पी0एन0 (पी0जी0) कालेज, कानपुर (उ.प्र.) भारत

साम्राज्यवादियों से सम्बन्ध विच्छेद कर सका न ही रुढ़िवादी, घिसीपिटी, ऊबाऊ और थका देने वाली शिक्षा प्रणाली में तब्दीली कर सका। **जिस अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली के बारे में इमानदार अंग्रेज भी मानते थे कि यह प्रणाली मात्र इन्सट्रक्शन देती है एजुकेशन नहीं, जैसा कि 1948 में जब पाकिस्तान बनने की प्रक्रिया में था लार्ड रेवन ने ब्रिटिश शासन को लिखे एक पत्र में कहा था–Here we proprided enducation for mind only and not for character तब भी यह विडम्बना ही कहीं जायेगी कि अंग्रेजों का Director of Public Instruction स्वतंत्र भारत का Director of Education हो गया, जहाँ कोई एजुकेशन है ही नहीं।**

भारत में औपनिवेशिक काल से चली आ रही शिक्षा प्रणाली न तो तार्किक शक्ति को विकसित कर सकी और न ही आलोचनात्मक शक्ति को जन्म दे सकी और हमारी परीक्षा प्रणाली! इसका सार बड़ा ही लज्जाजनक है। पाठ्य पुस्तक की बात तो दूर गेसपेपर जैसी घटिया किताबों को निकालना और उत्तरपुस्तिका पर उगलना ही भारतीय शिक्षा व्यवस्था की परीक्षा प्रणाली है। हमारे जो साथी प्रतिभा के लिये इतने चिन्तित हैं क्या उन्होंने कभी इन पहलुओं पर विचार करने का कष्ट किया है। इनमें कौन सी प्रतिभा प्रदर्शित होती है कि रसायनशास्त्र का एक शोधछात्र बैंक की क्लर्की के लिये विवश हो। प्रतिभा का चयन मूल्यांकन पद्धति पर बहुत कुछ निर्भर करता है और हमारे यहाँ माध्यमिक से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक उत्तरपुस्तिकाओं के मूल्यांकन का जो तरीका अपनाया गया है उसके बारे में कुछ नहीं कहना ही बेहतर होगा। वास्तविकता यह है कि आज सर्वांगीण विकास नहीं, ज्यादा से ज्यादा धन अर्जित करना शिक्षा का ध्येय बन चुका है।

स्वतंत्रता के बाद से ही शिक्षा प्रणाली को बदलने की आवश्यकता महसूस की जाती रही। राधाकृष्णन आयोग, सेन्ट्रल एडवाइजरी बोर्ड, के0जी0 सिघल कमेटी, कोठारी आयोग जाने कितनी कमेटियाँ और आयोग बने, कई सुझाव आये, लेकिन आमूल परिवर्तन नहीं हो पाया। आज फिर कसरत की जा रही है किन्तु जब तक दृष्टि से परिवर्तन नहीं होगा, भारतीय मूल्यों, आदर्शों, संस्कृति के प्रति अटूट श्रद्धा विकसित नहीं होगी, यह सबकुछ कोरा भाषणबाजी बनकर रह जायेगा। **इसलिए आज सबसे पहली जरूरत है एक भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति की। एक ऐसी नीति जिसका शुरू से आखिर तक एक ही उद्देश्य हो–प्रत्यक्ष कार्य। क्योंकि विचारों को चाहे कितनी ही उत्तेजना दीजिए जबतक हम कार्य प्रवृत्त नहीं होते, वे निरर्थक ही है। आज हिन्दुस्तान के युवको को कार्यकर्त्ता बनने की जरूरत है–ऐसे कार्यकर्त्ता जिनके चरित्र का शिक्षा द्वारा इसप्रकार निर्माण हुआ हो कि वह स्वभावत: कार्य में, वास्तविक योग्यता में, सेवा में परिणित हो जाय।** हिन्दुस्तान को ऐसे जवान नागरिकों की जरूरत है जो परिस्थिति और परम्परानुसार जिस किसी क्षेत्र में जाय वहाँ कुछ अच्छा काम करके दिखा सके। **पाठ्यक्रम के प्रत्येक विषय का उद्देश्य यही है कि बच्चों का जीवन ठीक वैसा ही हो जैसा कि उसे होना चाहिए। प्रत्येक विषय जीवन के धर्म को, विधि और उद्देश्य को खोलकर रख दे।** साथ ही एक शिक्षक के रूप में हमें यह सदैव स्मरण रखना होगा कि हमारा बुद्धिक्षेत्र वास्तविकताओं से अधिक रुढ़िगत विश्वासों से भरा हुआ है। सच्ची शिक्षा के मानी यह नहीं है कि हम बच्चों के दिमाग में कोरी जानकारी ठूँस दे। हम शिक्षा सम्बन्धी उन रुढ़ियों और ढकोसलों के अन्दर बुरी तरह कैद कर दिये गये हैं जो अब पुराने और बेकार साबित हो गये है।

मनुष्य निर्माण का वातावरण तैयार करना एक लम्बी प्रक्रिया है, इसमें सालों लगेंगे और वास्तव में यह तभी सम्भव है जब अपनी बुनियादी शिक्षा नीति बना ली जाय, क्योंकि कोई भी राष्ट्र कुछ महापुरुषों से बड़ा नहीं होता बल्कि यह औसत लोगों से बनता है। सामान्य समझ सरकारी कर्मचारी, व्यापारी, ठेकेदार, या राजनीति को जीविका का साधन मानने वाले लोग पैदा नहीं करते। न्यूनतम मूल्यों की समझ या तो परिवार सिखा सकता है या अध्यापक। परिवार में भी लिटरेट तो बहुत होते हैं एजुकेटेड कम, साथ ही उसकी अपनी कई समस्यायें भी हैं, अत: केवल अध्यापक से ही यह अपेक्षा की जा सकती है। अत: राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाते समय नौकरशाहों और राजनेताओं के बजाय अध्यापकों की अधिक भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए।

मानव के भौतिक, सामाजिक, मानसिक अरौर आत्मिक उत्थान के लिये शिक्षा आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है। लेकिन **संविधान के दिशा निर्देशक सिद्धान्तों में यह लिखा होने के बावजूद कि हर बच्चे को शिक्षा मिलनी चाहिए, आज भी देश की एक–तिहाई आबादी निरक्षर है तथा नई आने वाली पीढ़ियों के भी दो तिहाई बच्चे पाँचवीं तक नहीं पहुँच पाते, विश्वविद्यालयों में अनुशासन एक समस्या बना हुआ है, शिक्षा का स्तर उत्तरोत्तर गिरता जा रहा है, फीस बढ़ती जा रही है, शिक्षा के नाम पर नित्य नई दुकाने खुलती जा रही हैं। देश को इस जहालत के स्तर पर बनाये रखने की सम्पूर्ण जिम्मेदारी लूट–खसोट पर आधारित इस संकटग्रस्त व्यवस्था की है जिसने दोहरी शिक्षा प्रणाली के द्वारा पैसे वालों के लिये तो सर्वसुविधा सम्पन्न शिक्षा मुहैया करा रही है और बाकी आबादी को अधकचरी शिक्षा या यों कहें कि अशिक्षा के दलदल में ढकेल रही है या फिर चरवाहा स्कूल या टिचिंग शाप्स के हवाले कर रही है। यह स्थिति बदलनी चाहिए। किन्दु इस स्थिति को बदलने की क्षमता रखने वाले सरकार में उच्च पदस्थ महानुभावों को शिक्षा के निजीकरण में कोई दोष ही दिखाई नहीं दे रहा है।**

साक्षरता और शिक्षा के क्षेत्र में भारत की गिनती दुनिया के सबसे पिछड़े देशों में की जाती है आज प्राथमिक शिक्षा की स्थिति बदहाल है, उपेक्षित है। **एस0आर0डी0 की एक रिपोर्ट (School Review and Development Report)** के अनुसार पूरे भारत के सरकारी स्कूलों में शिक्षकों की भारी कमी है। इस रिपोर्ट के आंकड़े भारत की शिक्षा व्यवस्था की बदहाल स्थिति को व्यक्त करने के लिए काफी है। शिक्षा के अधिकार कानून के अनुसार आदर्श छात्र शिक्षक अनुपात 30:1 या 35:1 के बीच होनी चाहिए जबकि यह रिपोर्ट बताती है कि पूरे भारत में लगभग 105630 प्राथमिक और माध्यमिक सरकारी स्कूल एक शिक्षक के भरोसे चला रहे है। एक शिक्षक के भरोसे चल रहे स्कूलों में हमारा मध्यप्रदेश प्रथम स्थान पर है जहाँ 17874 स्कूल एक शिक्षक चला रहे हैं। उत्तरप्रदेश का द्वितीय स्थान है जहाँ 17602 स्कूल एक शिक्षक के भरोसे चल रहे हैं। तीसरे स्थान पर राजस्थान है जहाँ 13575 स्कूल में केवल एक ही शिक्षक है और चौथे स्थान पर आन्ध्रप्रदेश है जहाँ 9540 स्कूल एक शिक्षक के भरोसे चल रहे है, **(संसद में यह रिपोर्ट केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री उपेन्द्र कुशवाहा द्वारा प्रस्तुत की गयी)** जबकि यू0पी0 में ही शिक्षक बनने की राह देख रहे बी0टी0सी0 या बी0एड0 और टीईटी पास कम से कम पाँच लाख युवक–युवतियाँ बेरोजगार है। पूरे देश में इस प्रकार के बेरोजगारों की स्थिति काफी चौकाने वाली होगी। **प्राथमिक शिक्षा की दशा एस0ई0आर0 रिपोर्ट**

2014 से स्पष्ट होती है। इस रिपोर्ट के अनुसार कक्षा–3 के करीब 78 प्रतिशत और कक्षा–5 के लगभग 50 प्रतिशत छात्र कक्षा–2 की पाठ्यपुस्तक नहीं पढ़ पाते हैं, हम जानते है कि पढ़ना एक बुनियादी कौशल है जिसको सीखकर छात्र उच्च शिक्षा की ओर अग्रसर होता हैं किन्तु आंकड़े इस ओर इंगित कर रहे हैं कि जिस बुनियाद पर शिक्षा की इमारत खड़ी होनी है वह बुनियाद ही खोखली है। इस रिपोर्ट के अनुसार कक्षा–2 में पढ़ने वाले 20 प्रतिशत छात्र 1 से 9 तक की संख्या की पहचान नहीं कर पायें। 2010 में गिने छात्रों की संख्या 10 प्रतिशत थी अर्थात् 2010 से 2014 तक देखे तब हालत बद से बदत्तर होते चले जा रहे है। जो प्राथमिक शिक्षा की निराशाजनक स्थिति को दर्शाता है।

राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के निर्माण में जिन आधारभूत और मूलतत्वों को ध्यान में रखना होगा वह होगा स्वभाषा के माध्यम का स्वाभाविक सिद्धान्त, और शारीरिक श्रम का तत्व। शिक्षा की वर्तमान पद्धति किसी भी तरह देश की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करती। उच्च शिक्षा की तमाम शाखाओं से अंग्रेजी भाषा को माध्यम बना देने के कारण उसने उच्च शिक्षा पाये हुए मुट्ठी भर लोगों तथा अनपढ़ जनसमुदाय के बीच एक स्थाई दीवार सी खड़ी कर दी है। इसकी वजह से जन साधारण तक छन छन कर ज्ञान के जाने में बड़ी रूकावट पड़ गयी है। अंग्रेजी को इस तरह अत्यधिक महत्व देने के कारण शिक्षित लोगों पर इतना अधिक भार पड़ गया है कि प्रत्यक्ष जीवन के लिए उनकी मानसिक शक्तियाँ पंगु हो गयी हैं और वे अपने ही देश में विदेशियों की भाँति बेगाने हो गये हैं। इसी तरह सदियों से शिक्षा और श्रम का अलगाव आज भी कायम है। यह भावना विकसित हो गयी है कि शारीरिक श्रम केवल कम पढ़े या अनपढ़ों के लिये हैं। यह प्रवृत्ति शिक्षितों को उत्पादक कार्य के सर्वथा आयोग्य बना दिया है और शारीरिक दृष्टि से भी उनका बहुत नुकसान किया है।

अन्त में मैं नीति निर्माताओं और विशेष कर अध्यापक बन्धुओं से एकबात कहकर अपनी बात समाप्त कर रहा हूँ। **केवल अध्यापक ही है जो भौतिक, सामाजिक मूल्यों को बहुत प्रभावी ढंग से उठा सकता है और इन मूल्यों के प्रति विद्यार्थियों मे ंचेतना पैदा कर सकता है।** हमने बहुत मूल्यों को निर्धारित किया और माना कि सभी प्राणियों में श्रेष्ठ मनुष्य है। वह इसलिये क्योंकि उसमें विवेक होता है जो दूसरे जीवों में नहीं होता। विवेक सबसे बड़ी शक्ति है जो सम्यक शिक्षा से विकसित होती है और यह मनुष्य के सामने विकल्पों का द्वार खोल देती है। व्यक्ति संस्कारों के आधार पर विकल्पों का चुनाव करता है और संस्कार पनपते है एजुकेशन से। भारतीय दृष्टि जीवों में अभेदता को स्वीकार करती है। यह व्यापक दृष्टि हमारे अन्दर सम्वेदना, करुणा, सहानुभूति और कर्त्तव्य बोध उत्पन्न करती है। मनुष्य ने जब भी अपने को स्वामी मान लिया, समस्यायें उत्पन्न हुई। **हम यह भारतीय दृष्टि एवं तद्जनित संस्कार भारतीय शिक्षा प्रणाली में समाहित कर सके तथा भावी पीढ़ी के विद्यार्थियों को दे सकें तो सम्भवतः यह हमारी सबसे बड़ी उपलब्धि होगी।**

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. देवराज, एन0 के0 : भारतीय शिक्षा दर्शन, उ0प्र0 हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, लखनऊ, 1975
2. थापर, : एन्सिएन्ट इन्डियन सोशल हिस्ट्री, देलही, 1978
3. यादव, बी0एन0एस0 : सोसाइटी एण्ड कल्चर इन नार्दर्न इण्डिया, सेन्ट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद, 1973
4. महात्मा गाँधी : बुनियादी शिक्षा, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, 1958
5. पाण्डेय, राम सकल : भारतीय शिक्षा दर्शन, विनोद प्रकाशन, आगरा, 1994
6. ओड, एल0के0 : शिक्षा की दार्शनिक पृष्टभूमि, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1994
7. अशोक, जे0 देसाई : प्रॉबलम्स ऑफ टीचर एजुकेशन इन इण्डिया, इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन, 2012
8. जनसत्ता, 08 दिसम्बर, 2015
9. m.patrika.com, 09 Aug. 2016
10. असर (ASER : Annual Status of Education Report) रिपोर्ट, 2014
11. तोमर, लज्जा राम : भारतीय शिक्षा के मूल तत्व, सुरुचि प्रकाशन केशवकुंज झण्डेवाला, नई दिल्ली, 1991
12. पाठक, पी0डी0 एवं त्यागी, जी0एस0डी0 : भारतीय शिक्षा के आयोग कोठारी कमीशन सहित, आगरा पब्लिकेशन, आगरा, 2008
13. प्रसाद, राजेन्द्र : भारतीय शिक्षा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011
14. पाण्डेय, राम सकल : शिक्षा : वर्तमान संदर्भ में, विकल्प प्रकाशन, इलाहाबाद, 2011
15. कुमार, नरेश : राष्ट्रीय शिक्षा, विक्रम प्रकाशन, दिल्ली, 2001

****

दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति विद्यार्थियों के सामाजिक स्तर, समायोजन एवं शैक्षिक उपलब्धि में सम्बन्ध का अध्ययन

डॉ. भंवर लाल नागदा* रेखा खराड़ी **

प्रस्तावना - आदिकाल से ही भारत विभिन्न धर्मो, मतावलिम्बियों, संस्कृतियों, प्रजातियों, जातियों और जनजातियों की कर्मभूमि रहा है। इन सभी ने यहाँ की सामाजिक व्यवस्था और संगठन के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है और इन्हें एक विशिष्ट स्वरूप प्रदान किया है। जाति प्रथा, जनजाति, ग्राम व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था, कर्म एवं पूर्नजन्म के सिद्धान्त और संस्कार व्यवस्था भारतीय समाज के प्रमुख आधार है।

जनजातियाँ भारत की 8.43 प्रतिशत जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती है। जनसंख्या की दृष्टि से भारत के विभिन्न प्रान्तों में असमानता पायी जाती है। मध्यप्रदेश में इनकी जनसंख्या सभी राज्यों से अधिक हैं। उसके बाद महाराष्ट्र, ओड़िसा, गुजरात, राजस्थान, झारखण्ड, छत्तीसगढ़, आन्ध्रप्रदेश तथा पश्चिम बंगाल राज्य आते हैं। राजस्थान भारत के उत्तर-पश्चिम में स्थित है जो क्षेत्रफल की दृष्टि से प्रथम तथा जनसंख्या की दृष्टि से सांतवा स्थान रखता है। राजस्थान का दक्षिण भू-भाग जनजाति बाहुल्य क्षेत्र है।

शोध अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्त्व - मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य समाज में रहकर बहुत कुछ सीखता है। जन्म के पश्चात् प्रत्येक बालक का सम्पर्क माता-पिता से रहता है। कुछ बड़ा होने पर वह परिवार के अन्य सदस्यों में आता है और कुटुम्ब, ग्राम, क्षेत्र आदि के लोगों से सम्पर्क स्थापित करता है। परिवार के द्वारा उत्साह दिलाने पर और उनकी देखरेख में वह विभिन्न अवसरों पर जाति एवं समूह के लोगों के सम्पर्क में आता है। धीरे-धीरे उसका सम्पर्क दायरा बढ़ने लगता है। वह हम उम्र के बालकों व गुरुजनों के सम्पर्क में आता है।

बालक ज्यों-ज्यों बड़ा होता है, उसकी जरूरतमंद वस्तुओं की आवश्यकता होती है, उसकी इच्छाए अन्नत होती चली जाती है, लेकिन सभी माता-पिता, परिवार बालकों की इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर पाते है। कुछ परिवार ही ऐसे होते है जिनका सामाजिक स्तर, अच्छा होने से वे सम्पन्न होते है जो अपने बच्चे की प्रत्येक ख्वाईश पूरी करते है। किन्तु सभी का सामाजिक स्तर समान नहीं होता। जिन बालकों की ख्वाईश पूरी करते है। किन्तु सभी का सामाजिक स्तर समान नहीं होता। जिन बालकों की ख्वाईश माता-पिता या परिवार पूरी नहीं कर पाते। उन बालकों में हीन भावना आना स्वाभाविक है, किन्तु सभी बालक एक से नहीं होते। कुछ बच्चे ऐसे समझदार भी होते है जो अपने परिवार की आर्थिक स्थिति को समझकर जो मिलता है उसी में संतोषकर लेते है। अनावश्यक जिद्द नहीं करते है और जो उपलब्ध हो जाता है। उसी से गुज़ारा चला लेते है। यही समायोजन है।

शोध अध्ययन उद्देश्य :

1. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों के सामाजिक स्तर की वस्तुस्थिति ज्ञात करना।
2. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्राओं के सामाजिक स्तर की वस्तुस्थिति ज्ञात करना।
3. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं के सामाजिक स्तर में अन्तर ज्ञात करना।
4. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों की समायोजन क्षमता का पता लगाना।
5. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्राओं की समायोजन क्षमता का पता लगाना।
6. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं की समायोजन क्षमता में अन्तर ज्ञात करना।
7. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि का पता लगाना।
8. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि का पता लगाना।
9. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर ज्ञात करना।
11. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति विद्यार्थियों के सामाजिक स्तर एवं शैक्षिक उपलब्धि के बीच सह-सम्बन्ध ज्ञात करना।

शोध परिकल्पनाएँ :

1. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं के सामाजिक स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
2. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं की समायोजन क्षमता में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
3. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
4. दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति विद्यार्थियों के

* पर्यवेक्षक, मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय,उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय,उदयपुर (राज.) भारत

सामाजिक स्तर एवं शैक्षिक उपलब्धि के बीच कोई सह–सम्बन्ध नहीं होता है।

न्यादर्श चयन – शोध की न्यादर्श के रूप में सर्वप्रथम दत्त संकलन के लिये निम्न प्रकार से न्यादर्श को प्रयोग में लिया गया। प्रस्तुत शोध हेतु दक्षिणी राजस्थान के 3 जिले का चयन यादृच्छिक न्यादर्शचयन विधि से और जनजाति छात्र–छात्राओं का चयन सौद्देश्य न्यादर्श प्रणाली द्वारा किया गया। विद्यालयों का चयन निम्न पद्धति के आधार पर किया गया है।

शोध अध्ययन विधि – शोधकर्त्ता ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया।

शोध में प्रयुक्त उपकरण – प्रत्येक शोधकार्य की महत्त उपकरणों पर निर्भर करती है। सफल अनुसंधान के लिये उचित उपकरणों का चयन बहुत ही महत्त्वपूर्ण होता है। एक विशिष्ट अध्ययन के लिये उपकरणों का चुनाव अध्ययन के उद्देश्य की सीमा, प्रयुक्त उपकरणों की उपलब्धि, परिणामों के फलांकन, विश्लेषण और व्याख्या आदि पर निर्भर करता है। अत: प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा निम्न उपकरण का प्रयोग किया गया।

1. सामाजिक स्तर : स्वनिर्मित उपकरण
2. समायोजन : मानकीकृत उपकरण
3. शैक्षिक उपलब्धि विद्यार्थियों के गतवर्ष के प्राप्तांक प्रतिशत

दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं क सामाजिक स्तर में अन्तर

सारणी संख्या – 1

क्र.	वर्ग	N	मध्यबिन्दु	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मूल्य	वि.विवरण
1.	छात्र	150	105	120.43	10.30	1.28	अन्तर सार्थक नहीं है
2.	छात्रा	150	105	118.4	11.85		

298^0 डिग्री स्वतन्त्रता के अंश पर 'टी' का सारणी मूल्य =

0.05	0.01
1.97	2.60

व्याख्या – उपर्युक्त सारणी सं. 1 को देखने से ज्ञात होता है कि दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं के सामाजिक स्तर का मध्यमान क्रमश: 120.43 व 118.4 आया, जो कि मध्यबिन्दु 105 से अधिक है। इसी प्रकार मानक विचलन क्रमश: 10.30 व 11.85 प्राप्त हुआ। 'टी' का मान 1.28 आया जो कि 'टी' के सारणी मूल्य से कम है। अत: अन्तर सार्थक नहीं कहा जा सकता है। अर्थात् परिकल्पना सं. 1 को स्वीकृत किया जाता है।

दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं के भावनात्मक समायोजन स्तर की तुलना (प्रतिशत में)

सारणी संख्या – 2

वर्ग	श्रेणी	स्तर	अंक भार	भावनात्मक समायोजन (%)
छात्र	A	उत्कृष्ट	5 और उससे नीचे	4.00
	B	अच्छा	6 से 12	28.00
	C	सामान्य	13 से 21	68.00
	D	असन्तुष्ट	22 से 30	0.00
	E	अति असन्तुष्ट	31 से ऊपर	0.00
छात्रा	A	उत्कृष्ट	5 और उससे नीचे	4.00
	B	अच्छा	6 से 14	36.00
	C	सामान्य	15 से 22	60.00
	D	असन्तुष्ट	23 से 31	0.00
	E	अति असन्तुष्ट	32 से ऊपर	0.00

व्याख्या : भावनात्मक समायोजन

उपर्युक्त सारणी सं. 2 को देखने से ज्ञात होता है कि 68 प्रतिशत छात्रों ने 13 से 21 अंकों के बीच (उच्च प्राप्तांक) अंक प्राप्त किये है, जबकि 60 प्रतिशत छात्राओं ने 15 से 22 अंकों के बीच (उच्च प्राप्तांक) अंक प्राप्त किये है जो यह दर्शाता है कि छात्र एवं छात्राओं भावात्मक रूप से अस्थायी है।

इसी प्रकार 28 प्रतिशत छात्रों में 6 से 12 अंकों के बीच (न्यूनतम प्राप्तांक) अंक प्राप्त किये है, जबकि 36 प्रतिशत छात्राओं ने 6 से 14 अंकों के बीच (न्यूनतम) अंक प्राप्त किये है, जो यह दर्शाता है कि ये छात्र एवं छात्राऐं भावनात्मक रूप से स्थायी है। दोनों ही श्रेणी के मात्र 4–4 प्रतिशत छात्रों एवं छात्राओं ने 5 और उससे कम अंक प्राप्त किये है। जो यह दर्शाता है कि वे भावनात्मक रूप से तटस्थ है।

अत: उपर्युक्त विश्लेषण एवं व्याख्या से स्पष्ट होता है कि छात्रों एवं छात्राओं के भावनात्मक समायोजन में विशेष अन्तर परिलक्षित नहीं होता है।

दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं के सामाजिक समायोजन स्तर की तुलना (प्रतिशत में)

सारणी संख्या – 3

वर्ग	श्रेणी	स्तर	अंक भार	सामाजिक समायोजन (%)
छात्र	A	उत्कृष्ट	5 और उससे नीचे	0.00
	B	अच्छा	6 से 12	60.0
	C	सामान्य	13 से 21	40.00
	D	असन्तुष्ट	22 से 30	0.00
	E	अति असन्तुष्ट	31 से ऊपर	0.00
छात्रा	A	उत्कृष्ट	5 और उससे नीचे	0.00
	B	अच्छा	6 से 14	72.00
	C	सामान्य	15 से 22	28.00
	D	असन्तुष्ट	23 से 31	0.00
	E	अति असन्तुष्ट	32 से ऊपर	0.00

व्याख्या : सामाजिक समायोजन

उपर्युक्त सारणी सं. 3 को देखने से ज्ञात होता है कि 40 प्रतिशत छात्रों ने 13 से 21 अंकों के बीच (उच्च प्राप्तांक) अंक प्राप्त किये है, जबकि 28 प्रतिशत छात्राओं ने 15 से 22 अंकों के बीच (उच्च प्राप्तांक) अंक प्राप्त किये है जो यह दर्शाता है कि छात्र एवं छात्राओं शान्त एवं सन्तुष्ट होने से सामाजिक समायोजन आसानी से कर लेते है।

इसी प्रकार 60 प्रतिशत छात्रों में 6 से 12 अंकों के बीच (न्यूनतम प्राप्तांक) अंक प्राप्त किये है, जबकि 72 प्रतिशत छात्राओं ने 6 से 14 अंकों के बीच (न्यूनतम) अंक प्राप्त किये है, जो यह दर्शाता है कि इन छात्र एवं छात्राओं का उग्र स्वभाव है। इसलिये वे छात्राएँ सामाजिक समायोजन आसानी से नहीं कर पाती है।

अत: उपर्युक्त विश्लेषण एवं व्याख्या से स्पष्ट होता है कि छात्रों एवं छात्राओं के सामाजिक समायोजन में विशेष अन्तर परिलक्षित नहीं होता है।

दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं के शैक्षणिक समायोजन स्तर की तुलना (प्रतिशत में)

सारणी संख्या - 4

वर्ग	श्रेणी	स्तर	अंक भार	शैक्षणिक समायोजन (%)
छात्र	A	उत्कृष्ट	5 और उससे नीचे	0.00
	B	अच्छा	6 से 12	32.00
	C	सामान्य	13 से 21	68.00
	D	असन्तुष्ट	22 से 30	0.00
	E	अति असन्तुष्ट	31 से ऊपर	0.00
छात्रा	A	उत्कृष्ट	5 और उससे नीचे	0.00
	B	अच्छा	6 से 14	32.00
	C	सामान्य	15 से 22	68.00
	D	असन्तुष्ट	23 से 31	0.00
	E	अति असन्तुष्ट	32 से ऊपर	0.00

व्याख्या : शैक्षणिक समायोजन

उपर्युक्त सारणी सं. 4 को देखने से ज्ञात होता है कि 68 प्रतिशत छात्रों ने 13 से 21 अंकों के बीच (उच्च प्राप्तांक) अंक प्राप्त किये है, जबकि 68 प्रतिशत छात्राओं ने 15 से 22 अंकों के बीच (उच्च प्राप्तांक) अंक प्राप्त किये है जो यह दर्शाता है कि छात्र एवं छात्राएँ अपनी शैक्षणिक एवं अशैक्षणिक गतिविधियों में उनका समायोजन निम्न स्तर का रहता है।

इसी प्रकार 32 प्रतिशत छात्रों में 6 से 12 अंकों के बीच (न्यूनतम प्राप्तांक) अंक प्राप्त किये है, जबकि 32 प्रतिशत छात्राओं ने 6 से 14 अंकों के बीच (न्यूनतम) अंक प्राप्त किये है, जो यह दर्शाता है कि ये छात्र एवं छात्राऐं विद्यालयी गतिविधियों में रूचि दिखाते है।

अत: उपर्युक्त विश्लेषण एवं व्याख्या से स्पष्ट होता है कि छात्रों एवं छात्राओं के शैक्षणिक समायोजन में विशेष अन्तर परिलक्षित नहीं होता है। अर्थात तीनों् ही प्रकार की समायोजन क्षमता में विशेष अन्तर नहीं होने से परिकल्पना सं. 2 को स्वीकृत किया जाता है।

दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति छात्रों एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि तुलनात्मक सारणी (प्रतिशत में)

सारणी संख्या - 5

ग्रेड	स्तर	अंक भार	छात्र	छात्रा
A+	उत्कृष्ट	70 प्रतिशत से ऊपर	4.00	0.00
B	बहुत अच्छा	60 से 69 प्रतिशत तक 18.00	18.00	20.00
C	अच्छा	50 से 59 प्रतिशत तक	52.00	52.00
D	सामान्य	36 से 49 प्रतिशत तक	26.00	28.00

व्याख्या : शैक्षिक उपलब्धि

उपर्युक्त सारणी 5 को देखने से ज्ञात होता है कि छात्र वर्ग में मात्र 4 प्रतिशत छात्र ही ऐसे पाये गये, जिन्होंने 70 प्रतिशत या उससे अधिक अंक प्राप्त कर उत्कृष्ट श्रेणी (A+ ग्रेड) हांसिल कर पाये। जबकि छात्राओं के वर्ग में कोई भी उत्कृष्ट श्रेणी प्राप्त नहीं कर सकी।

इसी प्रकार छात्र वर्ग में मात्र 18 प्रतिशत छात्र ही ऐसे पाये गये, जिन्होंने 60 से 69 प्रतिशत अंकों के बीच अंक प्राप्त कर बहुत अच्छा (A ग्रेड) हांसिल कर पाये, जबकि छात्राओं के वर्ग में 20 प्रतिशत छात्राऐं ऐसी थी, जिन्होंने 60 से 69 प्रतिशत अंकों के बीच अंक प्राप्त कर बहुत अच्छा (A ग्रेड) हांसिल की है।

दोनों ही वर्ग (छात्र एवं छात्राऐं) में 52-52 प्रतिशत ने 50 से 59 अंकों के बीच अंक प्राप्त कर अच्छा (B ग्रेड) हांसिल की है।

इसी प्रकार 26 प्रतिशत छात्रों एवं 28 प्रतिशत छात्राओं ने 36 प्रतिशत से 49 प्रतिशत अंकों के बीच अंक प्राप्त किये है। जिन्हें सामान्य/साधारण विद्यार्थियों की श्रेणी (C ग्रेड) मिली है।

अत: स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि छात्रों एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में विशेष अन्तर नहीं होने से परिकल्पना सं.3 को स्वीकृत किया जाता है।

दक्षिणी राजस्थान में माध्यमिक स्तर के जनजाति विद्यार्थियों के सामाजिक स्तर एवं शैक्षणिक उपलब्धि के बीच सह-सम्बन्ध

r = -056

अर्थात् मध्यम ऋणात्मक सहसम्बन्ध पाया गया।

अत: परिकल्पना सं. 4 को अस्वीकृत किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 : पालको की समस्याओं का अध्ययन

वनमाला गडोईया *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध–पत्र में शिक्षा अधिकार अधिनियम 2009 के विषय में विस्तृत लेख लिखा गया है इस अधिनियम के प्रमुख उपबन्धो का उल्लेख किया गया है। इस अधिनियम के लागू होने के बाद से प्रवेश लेने वाले बच्चों के पालको को किन–किन समस्याओं का सामना करना पडा इसका अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन हेतु इन्दौर शहर के निजि विघालय को अध्ययन क्षेत्र के लिए चुना है जिसमें शिक्षा प्राप्त करने वाले 20 बच्चों के माता–पिता से सक्षात्कार अनुसूची व अवलोकन द्धारा समस्याओं आधार पर निष्कर्ष व सुझाव प्रस्तृत किए गए है।

प्रस्तावना – भारत में साक्षरता दर बढाने के लिए सरकार ने समय–समय पर कई प्रयास किए इन प्रयासो में एक सराहनीय कदम शिक्षा के अधिकार अधिनियम 2009 के रुप मे उठाया यह अधिनियम 1 अप्रेल 2010 से सम्पूर्ण भारत(जम्मू–कश्मीर) को छोड कर लागू किया गया। इस अधिनियम को संविधान के भाग 3 मौलिक अधिकारों के अनुच्छेद 21 (क) में जोडा गया।

अधिनियम के प्रमुख प्रावधान अग्रलिखित है :

1. किसी भी पडोस के स्कूल में बच्चों की प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था हो।
2. यह अधिनियम छह से चौदह वर्ष के बच्चों का प्रारम्भिक शिक्षा प्रदान करने के लिए नि:शुल्क प्रवेश देना व फीस माफ करने का प्रावधान करता है।
3. इस अधिनियम द्धारा गैर–प्रवेश दिए गए बच्चे के लिए उचित आयु में प्रवेश दिए जाने का प्रावधान किया गया है।
4. इस अधिनियम के द्धारा निजी स्कूलों मे 25% प्रतिशत बच्चों का बिना किसी शुल्क के नामांकित करेगें।
5. यह अधिनियम प्रतिष्ठापित मुल्यों के अनुरुप पाठ्यक्रम के विकास के लिए प्रावधान करता है जो बच्चों के समग्र विकास को व प्रतिभा को निखारने में सहायक होगा।
6. यह उपयुक्त रूप से प्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति के लिए प्रावधान करता है अर्थात् अपेक्षित प्रवेश और शैक्षिक योग्यताओं के साथ अध्यापक स्कूलों मे कार्यरत् होगें।

उद्देश्य– नि:शुल्क एंव अनिवार्य शिक्षा अधिनियम से प्रभावित परिवारो की आर्थिक स्थिति को जानना तथा बच्चों की शिक्षा के प्रति पालको की जागरूकता का अध्ययन करना इस हेतु इस अधिनियम द्धारा शिक्षा प्राप्त करने वाले 20 बच्चो के परिवारो से मिलकर साक्षात्कार अनुसूची से अधिनियम के विषय मे जानकारी प्राप्त करना मुख्य उद्देश्य है।

अध्ययन पद्धति – प्रस्तुत शोध पत्र में अध्ययन इकाई के रूप में इन्दौर शहर के निजि स्कूल का चयन किया गया जिसमें शिक्षा के अधिकार द्धारा प्रवेश लिए गए 20 बच्चो के पालको की समस्याओं कों सक्षात्कार अनुसूची व अवलोकन विधि द्धारा जानकर तालिकाओं के माध्यम से स्पष्टीकरण व विश्लेषण किया गया है।

तालिका 1 के द्धारा स्पष्टीकरण

क्र.	पालको से प्राप्त जानकारी	सहमत	असहमत	योग
1	बच्चों को पढाने के माध्यम मे कठिनाई आती है।	70%	30%	100%
2	पाठ्य सामग्री की लागत अधिक होती है।	65%	35%	100%
3	स्कूल के अन्य क्रियाकलाप के लिए खर्च लगता है।	55%	45%	100%
4	स्कूल वाहन पर अतिरिक्त पैसा खर्च होता है।	67%	33%	100%
5	क्या आप बच्चो के साथ स्कूल में भेदभाव से सहमत है।	11%	89%	100%
6	आपको स्कूल की मीटींग में जाने में संकोच होता है।	69%	31%	100%
7	क्या आप व स्कूल प्रशासन के मध्य मतभेद होता है।	17%	83%	100%
8	आपके अन्य बच्चों व इस योजना में अध्ययनरत बच्चों में मतभेद होता है।	76%	24%	100%
9	क्या आप इस योजना से संतुष्ट है।	72%	28%	100%
10	क्या आप इस अधिनियम में सुधार चाहते है।	85%	15%	100%

तालिका का विश्लेषण :

1. शिक्षा के अधिकार अधिनियम के माध्यम से पढाने वाले बच्चो के अधिकतर पालकों को अपने बच्चों को अग्रेंजी माध्यम के स्कूलों में पढाने में खुशी तों है परन्तु 70% पालकों को अपनें बच्चों को उनके गृहकार्य कराने में कठिनाई होती है व 30% सूचना दाता इस बात से असहमत है।
2. 65% सूचना दाता को पाठ्य सामग्री की लागत अधिक लगती है उनका

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

मानना है कि उनके दूसरे बच्चें की पाठ्य पुस्तक से इनका खर्च अधिक प्रतीत होता है परन्तु 35% सूचना दाता को यह खर्च ठीक ही लगा।

3. शिक्षा के अधिकार अधिनियम के अंतर्गत अध्ययन करनें वाले बच्चों के 55%अभिभावकों का मानना है कि इन स्कूलों में अन्य क्रियाकलापों पर अतिरिक्त खर्च होता है जैसे–चार्ट, हाउस ड्रेस, मेप, चित्र व सांस्कृतिक कार्यक्रमो की पोषक के लिए खर्च आदि 45% अभिभावक यह सामान्य खर्च ही मानते है।
4. बच्चों को स्कूल भेजने के लिए स्कूल वाहन पर खर्च के लिए 67% पालको यह खर्च अधिक लगता है परन्तु 33% माता पिता इस वहन को सामान्य ही मानते है।
5. इस योजना में पढाने वालों बच्चों के पालकों में से 11% सूचना दाताओं ने भेदभाव की शिकायत को स्वीकार किया परन्तु 89% इस बात से असहमत है।
6. 69% पालको ने अपनी सहमती जताई की उन लोगो का स्कूलों में जानें मे सकोंच होती है वहाँ टीचर से बात करनें मे स्वयं को हीन समझते है तथा 31% पालक इस बात से असहमत है।
7. शिक्षा के अधिकार अधिनियम व्द्वारा अध्ययनरत बच्चों के अभिभावक व स्कूल प्रशासन के मध्य मतभेद के प्रश्न पर 17% पालको ने सहमती जताई व 83% पालकों ने किसी भी प्रकार के मतभेद से इंकार किया है।
8. उन पालको ने यह समस्या बताई जिनका एक बच्चा इस अधिनियम के व्द्वारा अध्ययन कर रहा है व दूसरा किसी भी सरकारी या पडोस की स्कूल मे पढ रहा है दोनों बच्चों में पाठ्य समाग्री व युनीफार्म देख कर जलन व हीन भावना की शिकायत होती है ऐसी सहमती 76% पालको ने बताई तथा 24% पालक ऐसे किसी भी मतभेद से असहमत है।
9. इस अधिनियम के प्रति पालको की राय में 72% पालक संतुष्ट व सहमत है तथा 28% पालक असंतुष्ट है।
10. शिक्षा के अधिकार अधिनियम मे सुधार के लिए 15% पालको ने अपनी असहमती जताई व इस विषय में 85% पालको ने सुधार हेतु सुझाव दिए – इन पालको का मानना है कि इस अधिनियम को कक्षा 12वी तक बच्चो के लिए बढाया जाए तथा सरकार बच्चों को अन्य सुविधाओं को भी उपलब्ध कराए ताकि उनके बच्चों को जिन असुविधाओं का सामना करना पड रहा है वह समस्याएं दूर हो ।

सुझाव व निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध पत्र मे प्राप्त जानकारी के आधार पर यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि सरकार व्द्वारा चलाई जा रही इस योजना को और अधिक बेहतर बनाया जाया ताकि शिक्षा के प्रतिशत मे वृद्धि हो इस हेतु इस अधिनियम को कक्षा 12वी तक बढाया जाए व जिन स्कूलों में गरीब बच्चों को प्रवेश दिया गया है उनके साथ किसी भी भेदभाव न हो इस बात का विशेष ध्यान रखा जाए तथा जो माता–पिता साक्षर नहीं है उनके साथ स्कूल प्रशासन व टीचर उचित व्यवहार करे उनकी समस्या को समझे ताकि उन पालको किसी भी प्रकार का संकोच व परेशानी न हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर ।

****

Some Accidental Discoveries in Change a Human Life

Dr. Anjeli Garg*

Introduction - From the prospect discovery of antimalarial drug as a protozoal infection treatment within the seventeenth century to Alexander Fleming's accidental encounter with Penicillium mildew in 1928, a number of medicine's most significant advances have occurred through fluke. examine seven of them here.

Fortuitous accidents - Accidents in medicine: the concept sends chills down your spine as you put forward thoughts of misdiagnoses, erroneously pharmaceuticals, and incorrectly amputated limbs. however whereas accidents within the examining area or on the table will be too bad, even tragic, those who occur within the laboratory will typically result in spectacular advances, life-saving treatments, and Nobel Prizes. A apparently insignificant finding by one research worker results in a breakthrough discovery by another; a medical man methodically following the solution to a medical riddle over a few years suddenly includes a "Eureka" moment; a individual WHO chooses to check a stuff in his culture instead of agitated it out stumbles upon one thing entirely new. think about the subsequent historic cases:

Quinine - The story behind the prospect discovery of the anti-malarial drug antimalarial could also be additional legend than truth, however it's withal a story ought to have note. The account that has gained the foremost currency credits a South yank Indian with being the primary to search out a medical application for antimalarial. in keeping with legend, the person unknowingly eaten antimalarial whereas suffering a protozoal infection fever in an exceedingly jungle high within the chain of mountains. Needing urgently to quench his thirst, he drank his fill from alittle, bitter-tasting pool of water. close stood one or additional kinds of chinchona, that grows from South American nation to Bolivia on wet slopes higher than five,000 feet. The bark of the chinchona, that the autochthonal individuals knew as quina-quina, was thought to be toxic. however once this man's fever miraculously abated, he brought news of the medicative tree back to his tribe, that began to use its bark to treat protozoal infection. Since the primary formally noted use of antimalarial to fight protozoal infection occurred in an exceedingly community of Jesuit missionaries in Lima, South American country in 1630, historians have surmised that Indian tribes tutored the missionaries the way to extract the chemical antimalarial from bark. In any case, the Jesuits' use of antimalarial as a protozoal infection medication was the primary documented use of a matter to with success treat AN communicable disease. to the current day, quinine-based anti-malarials ar wide used as effective treatments against the expansion and copy of protozoal infection parasites in humans.

Smallpox vaccination - In 1796, medico, a British person and doc, had a brainstorm that ultimately junction rectifier to the event of the primary immunizing agent. A young farm worker had told him however those who narrowed vaccinia, a harmless illness simply picked up throughout contact with cows, ne'er got pox, a deadly scourge. With this in mind, medico took samples from the open vaccinia sores on the hands of a young farmhand named Sarah Nelmes and inoculated eight-year-old James Phipps with pus he extracted from Nelmes' sores. (Experimenting on a toddler would be anathema these days, however this was the eighteenth century.) The boy developed a small fever and some lesions however remained for the foremost half unharmed. some months later, medico gave the boy another injection, this one containing pox. James didn't develop the illness, and also the plan behind the fashionable immunizing agent was born. although doctors and scientists wouldn't begin to know the biological basis of immunity for a minimum of fifty years when Jenner's initial immunization, the technique of protection against pox victimization the human strain of vaccinia before long became a standard and effective observe worldwide.

X-Rays - X-rays became a very important tool for medical diagnoses, however their discovery in 1895 by the German scientist Wilhelm Conrad Röntgen had very little to try to to with medical experimentation. Röntgen was finding out cathode rays, the light stream of electrons used these days in everything from televisions to fluorescent lightweight bulbs. One earlier someone had found that cathode rays will penetrate skinny items of metal, whereas another showed that these rays may illuminate a fluorescent screen placed an in. or 2 removed from a skinny atomic number 13 "window" within the glass tube. Röntgen wished to see if he may see cathode rays escaping from a glass tube utterly lined with black cardboard. whereas acting this experiment, Röntgen detected that a glow appeared in his

*Assistant Professor (Mathematics) Mahamaya Rajkiya Mahavidyalaya, Sherkot, Bijnor (U.P.) INDIA

darkened laboratory many feet removed from his cardboard-covered glass tube. initially he thought a tear within the paper overlay was permitting lightweight from the high-voltage coil within the gas-discharge tube to flee. however he shortly realised he had happened upon one thing entirely totally different. Rays of sunshine were passing all through the thick paper and showing on a fluorescent screen over a yard away. Röntgen found that this new ray, that had several characteristics totally different from the beam he had been finding out, may penetrate solids and even record the image of an individual's skeleton on a photographic negative. In 1901, the primary year of the accolade, Röntgen won for his accidental discovery of what he known as the "X-ray," that physicians worldwide shortly adopted as a customary medical tool.

Allergy - Charles Henry M. Robert Richet, a French biologist, created many experiments testing the reaction of dogs exposed to poison from the tentacles of ocean anemones. a number of the dogs died from allergic shock, however others survived their reactions and created full recoveries. Weeks later, as a result of the recovered dogs appeared fully traditional, Richet wasted no time in reusing them for a lot of experiments. They got another dose of anemone poison, this point abundant smaller than before. the primary time the dogs' allergic symptoms, together with expulsion, shock, loss of consciousness, and in some cases death, had taken many days to totally develop. however this point the dogs suffered such serious symptoms simply minutes once Richet administered the poison. although Richet was nonplused by what had happened, he completed he couldn't disregard the surprising results of his experiment. Later, he noted that his ultimate conclusions concerning the dogs' affliction were "not in the least the results of deep thinking, however of a straightforward observation, virtually accidental; in order that I actually have had no alternative benefit than that of not refusing to examine the facts that given themselves before American state, fully evident." Richet's conclusions from his findings came to create the theoretical basis of the medical study and treatment of allergies. He eventually proved that there was a state referred to as hypersensitivity reaction that was the associate degreetithesis of prophylaxis: once associate degree allergic subject is exposed to an matter a second time, he or she is even a lot of sensitive to its effects than the primary time. rather than building immunity to the substance through exposure (prophylaxis), the allergic subject's immunity becomes greatly reduced. In 1913 Richet received a laurels for his discovery and articulation of diseases of hypersensitivity reaction.

Insulin - Frederick G. Banting, a young Canadian doctor, and academician John J.R. Macleod of the University of Toronto shared a award in 1923 for his or her isolation and clinical use of internal secretion against polygenic disorder. Their work with internal secretion followed from the prospect discovery of the link between the exocrine gland and blood-sugar levels by 2 alternative doctors on the opposite facet of the Atlantic decades earlier. In 1889, German physicians Joseph von Mering and accolade Hermann Minkowski removed the exocrine gland from a healthy dog so as to check the role of the exocrine gland in digestion. many days when the dog's exocrine gland was removed, the doctors happened to note a swarm of flies feeding on a puddle of the dog's piss. On testing the piss to see the reason for the flies' attraction, the doctors completed that the dog was secreting sugar in its piss, a proof of polygenic disorder. as a result of the dog had been healthy before the surgery, the doctors knew that they'd created its diabetic condition by removing its exocrine gland and so understood for the primary time the connection between the exocrine gland and polygenic disorder. With additional tests, von Mering and Hermann Minkowski complete that a healthy exocrine gland should secrete a substance that controls the metabolism of sugar within the body. tho' several scientists tried vainly to isolate the actual substance free by the exocrine gland when the Germans' accidental discovery, it absolutely was Banting and Macleod WHO established that the mysterious substance was internal secretion and started to place it to use because the initial actually valuable means that of dominant polygenic disorder.

Pap smear - Dr. martyr Saint Nicholas Papanicolaou's likelihood observation, whereas doing a genetic study, of cancer cells on a slide containing a specimen from a woman's female internal reproductive organ spawned the routine use of the questionable "Pap smear," a straightforward check that has saved countless girls from the ravages of female internal reproductive organ cancer. In 1923, Papanicolaou undertook a study of canal fluid in girls, in hopes of observant cellular changes over the course of a cycle. In feminine guinea pigs, Papanicolaou had already noticed cell transformation and wished to corroborate the development in human females. It happened that one in every of Papanicolaou's human subjects was laid low with female internal reproductive organ cancer. Upon examination of a slide made of a smear of the patient's canal fluid, Papanicolaou was astounded to get that abnormal cancer cells may be plainly ascertained below a magnifier. "The initial observation of cancer cells within the smear of the orifice," he later wrote, "gave ME one in every of the best thrills I ever full-fledged throughout my scientific career." Papanicolaou quickly completed that doctors may administer a straightforward check to assemble a sample of canal fluid and check it for early signs of female internal reproductive organ and different cancers.

Penicillin - The identification of Penicillium mould by Dr. Alexander Fleming in 1928 is one amongst the known stories of medical discovery, not solely as a result of its accidental nature, however additionally as a result of antibiotic has remained one amongst the foremost vital and helpful medication in our arsenal, and its discovery triggered valuable analysis into a spread of different valuable antibiotic medication. whereas researching the influenza within the summer of 1928, Dr. Fleming noticed that some mould

had contaminated a influenza culture in one amongst his petri dishes. rather than throwing out the ruined dish, he set to look at the musty sample a lot of closely. Fleming had reaped the advantages of taking time to scrutinize contaminated samples before. In 1922, Fleming had accidentally shed one amongst his own tears into a microorganism sample and noticed that the spot wherever the tear had fallen was freed from the microorganism that grew all around it. This discovery peaked his curiosity. when conducting some tests, he all over that tears contain associate degree antibiotic-like catalyst that would fend off minor microorganism growth. Six years later, the mould Fleming ascertained in his Petri dish reminded him of this 1st expertise with a contaminated sample. the realm close the mould growing within the dish was clear, that told Fleming that the mould was deadly to the potent coccus microorganism within the dish. Later he noted, “But for the previous expertise, i might have thrown the plate away, as several bacteriologists have done before.” Instead, Fleming took the time to isolate the mould, eventually categorizing it as happiness to the Penicillium. when several tests, Fleming realised that he had discovered a non-toxic antibiotic substance capable of killing several of the microorganism that cause minor and severe infections in humans and different animals. His work, that has saved unnumberable lives, won him a laurels in 1945.

Keep that mind open - For all you would-be chemist Prize-winners, keep in mind the one attribute that tied of these lucky strikers together: openmindedness. because the yankee man of science Henry once noted, “The seeds of nice discoveries ar perpetually floating around USA, however they solely settle down in minds well ready to receive them.” This feature originally appeared on the location for the star program Cancer soul.

References :-

1. Esamai F, Ayuo P, Owino-Ongor W, Rotich J, Ngindu A, Obala A, Ogaro F, Quoqiao L, Xingbo G, Guangqian L. Rectal dihydroartemisinin versus intravenous quinine in the treatment of severe malaria: a randomised clinical trial. East Afr Med J. 2000;77(5):273–278.
2. World Health Organization. The global eradication of smallpox. Final report of the global commission for the certification of smallpox eradication. In History of International Public Health No. 4. Geneva, World Health Organization, 1980
3. Theocharopoulos N, Chatzakis G, Damilakis J. Is radiography justified for the evaluation of patients presenting with cervical spine trauma? Med Phys. 2009;36:4461–70
4. Tanavarasethee B et al. The potential of using enzyme-linked immunospot to diagnose cephalosporin-induced maculopapular exanthems Acta derm venereol. 93:1, 2013
5. Minang JT et al. Nickel, cobalt, chromium, palladium and gold induce a mixed Th1- and Th2-type cytokine response in vitro in subjects with contact allergy to the respective metals Clin Exp Immunol. 146:3, 2006a
6. Minang JT et al. Nickel-induced IL-10 down-regulates Th1- but not Th2-type cytokine responses to the contact allergen nickel Clin Exp Immunol. 143:3, 2006b
7. Jacobsen L.V., Sogaard B., Riis A. Pharmacokinetics and pharmacodynamics of a premixed formulation of soluble and protamine-retarded insulin aspart. Eur J Clin Pharmcicol. 2000; 56: 399-403
8. Ferlay J, Soerjomataram I, Dikshit R, Eser S, Mathers C, Rebelo M, et al. Cancer incidence and mortality worldwide: Sources, methods and major patterns in GLOBOCAN 2012. Int J Cancer. 2015;136:E359–86
9. Sanders WL. Treatment of typhoid fever: a comparative trial of ampicillin and hloramphenicol. Br Med J. 1965 Nov 20;2(5472):1226–1227.
10. Dawkins AT, Jr, Hornick RB. Evaluation of antibiotics in a typhoid model. Antimicrob Agents Chemother (Bethesda) 1966;6:6–10

****

बहुजन शासक शाहू छत्रपति का भारतीय समाज के उत्थान में योगदान

अमिता वानखेड़े *

प्रस्तावना – शाहू छत्रपति का जन्म तब हुआ जब इस देश में धर्म के नाम पर अपराध, शिक्षा के नाम पर अज्ञानता और देवत्व के नाम पर पापकर्म बढ़ रहा था।

उस समय एक रूढीवादी संस्कृति बेकार के रीतिरिवाज, कर्मकाण्ड और मानवता के शोषण संबंधी जाल कुछ शक्ति सम्पन्न लोगों ने बिछा रखे थे। इस दौरान सबसे अधिक उपेक्षित और शोषित वर्ग शुद्रों और उत्पीड़ितों का था। जो अपनी पहचान बनाने के लिए प्रयासरत था।

इस अंधकारभरे समय में एक किरण न्याय और असाधारण व्यक्ति के रूप में शाहू छत्रपतिजी वे कोल्हापुर के रिजंट अप्पा साहेब घाटके के घर माता राधाबाई के गर्भ से 26 जून 1874 ई. को जन्म लिया था। उनके पुर्वज छत्रपति शिवाजी के वंशज थे। बचपन में शाहू का नाम यशवंतराव था।

तथापि 2 अप्रैल 1894 ई. कोल्हापुर की विधवा रानी आनंदी बाई द्वारा गोद लेने के पश्चात वह शाहू छत्रपति के नाम से जाने गए। अपने 22 वर्ष के शासन काल में उन्होंने अनेक प्रजा हितेशी कार्य किये जैसे समाज एवं संस्कृति उत्थान के लिए कार्य, अस्पष्यृता निवारण के क्षेत्र में कार्य, जातीय विषमता को समाप्त करने का प्रयत्न व संघर्ष, स्थापत्यकाला, नृत्यकला, चित्रकला, गायन, मनोरंजन के क्षेत्र में विभिन्न खेलखुद, कुश्ती, रंगमंच, शिकार के शौकीन धर्म निरपेक्ष राज्य की स्थापना व कल्पना को मुर्तरूप दिया।

उत्पीडितों और गरीब पिछड़े वर्गो में लोगों को शिक्षित करने के लिए उन्होंने 1896 ई. में कोल्हापुर के 122 गॉवों में विद्यालय तथा बहुत से शिक्षक, प्ररिक्षक विद्यालयों की स्थापना की। उनके उत्कृष्ट प्रशासन, न्याय और कड़ी मेहनत के फलस्वरूप 8 मई 1888ई. को पहली रेल लाईन की स्थापना हुई तथा 1900 ई. को दुरभाष सेवा आरंभ हुई।

वर्ष 1902 में ही उन्होंने पिछड़े वर्ग के लोगों के लिए आरक्षण नीति की घोषणा की जिसे एक ऐतिहासिक कार्यवाही माना गया।

विधवा पुर्न विवाह अधिनियम 1917 में लागु किया गया तथा अंतरजातीय विवाह अधिनियम 1918 को बनाते हुअे उन्होने राष्ट्र व मानवता के प्रति अपनी निष्ठा प्रमाणित की। 1918 में कम कीमत मुल्यपर खाद्यान आदि खरीदने के लिए 'खुदरा कीमत केन्द्र' खोलने की घोषणा की।

जनवरी 1919 में उन्हों ने सभी सरकारी अस्पतालों को ये निर्देश दिए की गरीबों, अछुतों और उत्पीडितों की सेवा को प्राथमिकता दे। 1920 में उन्होंने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के नेतृत्व में आयोजित एक विशाल रेली को संबोधित किया, और उत्पीडितों की उन्नती संबंधी अपना अभियान डॉ. बी.आ. आम्बेडकर को सौपने की घोषणा की क्योकि वह अम्बेडकर से सहमत थे और डॉ. अम्बेडकर के प्रति उनके मन में पुरा विश्वास था।

6 मई 1922 को महान व्यक्तित्व व उपेक्षित और दलितों, पिछडों के मसीहा छत्रपति शाहू महाराज, न्याय, साहस, आशा, संघर्ष और ज्ञान के प्रकाश की उम्मीद सहित इस धरा से विदा हो गये।

निष्कर्ष – शाहू छत्रपति गांधीवाद से भी अप्रभावी नहीं रहे होंगे। उन्होंने सारे समाज सुधार के कार्य अपने राज्य में प्रारंभकर एक अनोखी मिसाल पेश की।

शाहू छत्रपति को उनके सामाजिक कल्याण के लिए मानवतावादी की उपाधि भी दी जा सकती है, क्योंकि मानव जीवन की महत्ता को समझते हुअे अपना संपुर्ण जीवन न्यौछावर कर दिया।

अत: 20 सदी में मानवतावाद के सशक्त प्रवक्ता के रूप में हम उन्हें देख सकते है।

संदर्भ ग्रथ सूची :-

1. केब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया भाग 5
2. मानव अधिकार आन्दौलन के महान योद्धा
3. धनजंय कीर – राजर्शी शाहू छत्रपती
4. राजर्शी शाहू महाराज महिला उत्तम कोबले
5. शाहू छत्रपत्ती आणि लोकमान्य,य. दी. फडके
6. लोक राजा शाहू छत्रपति, डॉ. रमेश जाघव

* शोधार्थी (समाज विज्ञान) अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

Models Of Information Seeking Behaviour : An Overview

Pradyumna Kumar Panigrahi* Dr. Mega Arora**

Abstract - The human being requires information through various methods such as examination, testing, etc. to make his life easier. In the process, he uses the information available by applying different patterns. Library professionals always try to understand why and how library users seek information. Technological changes and innovations over the years have transformed libraries from ordinary repositories of printed matter into portals. This study aims at explaining the information needs, the behaviour of human beings, behaviour towards seeking information and models of information seeking behaviour.
Keywords - Information needs, Information behaviour, Information seeking behaviour, Information seeking behaviour model.

Introduction - Human activity is incomplete without information and is a basic need without which life is futile. Information seeking leads for a human being to take decisions, plan and work towards any development activity. In this highly competitive environment, those who have the right information at the right time will only succeed.

Ever since the inception of the Internet, there has been a sea change in the way informational needs have been created, accessed and consumed. This has had a huge impact on the communication system across the world. With the introduction of new technologies such as tablets, Smartphone and e-books, the way consumers consume information will change dramatically. Information, as defined by Reitz (2004), is "all the conclusions, ideas, and creative works of human intelligence and imagination that are formally and informally conveyed in any way.

Information professionals always want to understand the process of library users in seeking information to improvise information provision. Technological advances and innovations over the years have transformed libraries from ordinary repositories of printed matter into portals into the information universe. Libraries are no longer reservoirs of standing books/documents. Information Communication Technologies (ICT) has led to dramatic changes in the way libraries are collected, stored and distributed.

Information - Information means processed data or data which can be converted into a meaningful and useful form for a specific user. Information in the technical sense can be described as a series of symbols that can be interpreted as a message (Doraswamy, 2017). The word information is derived from the Latin word 'Informatio' which means "to give form to mind", 'instruct' or "teach".

Definitions of Information - Shannon and Weaver (1949) defined "Information as any stimulus that reduces uncertainty".

H. Shera (1972) defined information as "a message, a signal or a stimulus that possesses a response potential".

Line (1974) mentioned that "information need is what an individual ought to have for his work, his research, his edification, his creation etc".

According to Davies (1976) **"**Information as processed data into a form that is meaningful to the recipient and is of real or perceived value to take present decision or in future".

Ford (1980) defined "information as the structure of any text which is capable of changing the image structure of recipient".

Webster's International Dictionary (1994) defines "Information as:

a) Facts or figures ready for communication or use as distinguished from incorporated in a formally organized branch of knowledge.
b) The process by which the form of an object of knowledge is impressed upon the apprehending mind so as to bring about the state of knowing".

This study mentioned that information is the primary requisite for any user to construct meaning for developing the procedure of learning.

Information Needs - Information is the desire to gather information for satisfying our conscious or unconscious needs. This term "Needs" is referred to in the old literature as science. According to Hijorland (1997), Information needs are "closely related to the idea of importance: if something is relevant to a person in relation to a task, one can say that the person needs information about the task".

***Research Scholar (Faculty of Library & Information Science) Mandsaur University, Mandsaur (M.P.) INDIA**
**** Assistant Professor (Faculty of Library & Information Science) Mandsaur University, Mandsaur (M.P.) INDIA**

Human Behaviour - Human behaviour is the manifestation of what is already imbibed through culture, relationships, feelings, morality, relationships, hypnosis, beliefs, values and genetics. Human behaviour is dependent on several factors like "emetics', social norms, beliefs, and relationships". Attitude is "the degree to which a person has a positive or unfavorable assessment of the behaviour in question." This is reflected in the behaviour we express on a regular basis in our day to day work.

Information Behaviour - Taylor (1991) said that "Information behaviour can be called a set of human behaviour in relation to sources and channels of information, including both active and passive search and use of information.

"Information behaviour' is a term used for describing human beings behaviour in dealing with information. Information behaviour is used for the arts used in the library and in computer technology, which refers to the discipline in several studies for understanding human relations.

Information Seeking Behaviour - The term "information seeking behaviour" was developed in the second half of the 20th century. It took several years for this discipline to be a core component of information science. To find out and search the literature for information seeking behaviour it is necessary to explore the domains of information needs as well as information seeking behaviour. Information behaviour is the activity of a person who intends to seek information and transmit it. The term Information behaviour, in reality, is the way how people seek and utilize information in their life.

Definitions of Information Seeking Behaviour - Wilson (2000) describes "information behaviour as the totality of human behaviour in relation to sources and channels of information, including both active and passive information-seeking, and information use. He also suggests that information seeking behaviour is the purposive seeking information as a consequence of a need to satisfy some goal. During the time of seeking, the individual may consult with formal and informal sources".

Krikelas (1983) mentioned, "Information-seeking behaviour begins when one understands the existence of an information need and ends when that need is believed to have been satisfied."

Wilson (2009) stated that "the seeker turns to formal and informal sources of information and is ultimately satisfied or dissatisfied with the end result".

In a similar way, an individual can collect information for using it on his own or to enhance knowledge.

The above definitions show that information-seeking behaviour is a search with a motive for satisfying the quench for information. For the purpose of seeking information, the individual may get utilize journals, magazines, books, e-resources or newspapers and so on.

Digital technology has changed today's information world and is an integral component for everything from birth certificate to booking a movie show, to reservation for trains, flight or buses. As Bhattacharjee, Bhattarjee & Sinha (2013) mentions "It has penetrated everywhere and it makes our life comfortable and easy". Digital technology is helpful in retrieving accurate information within a very short time. Nowadays, books, journals, newspapers and reports are also available in digitized form. Maximum information seekers prefer to get their required information in digital format instead of print format.

Models of Information Seeking Behaviour - Models are known as the diagram or a structure for representing an idea or thinking pertaining to a particular idea or concept. It defines the relationship between elements in a theoretical perspective. Information seeking models schematically describes the process of information seeking. According to Wilson (1999), "Most information-seeking behaviour models are generally the statements, often in the form of diagrams that attempt to explicate an information-seeking activity, the causes and consequences of that activity, or the relations among stages in information-seeking behaviour". The models of information seeking behaviour aims to represent the process as to how the information needs will be fulfilled by the seeker and the stages that follow. During the process, the user may go ahead with enormous data which may be formal or on formal and it may lead to success or failure.

Over the period of time, several models have been made to understand the process of information seeking by eminent researchers across the world.

Some of the popular models of information seeking behaviour are as below:

Wilson's model (1981) - Wilson in the model states that "information seeking behaviour arises from the need for information perceived by the user at different stages or sequences. To satisfy this need, the user makes demands on formal or informal sources of information or services".

Blom's Task Performance Model (1983) - Blom (1983) in his study "developed the task performance model based on the needs and use of information among scientists. The model is based on the following four propositions.

a. Information service should contribute to the successful performance of a task.
b. Information is a crucial input in decision-making, problem-solving, and planning of activities aimed at increasing knowledge.
c. Information needs to entail the requirements for information necessary for the fulfillment of a task.
d. The problem area, purpose, and methods of a scientific field, the environmental factors, and the personal attributes of the researcher interact during the performance of the task".

Dervin's Model (1983) - In this study, the researcher has made, "the sense-making theory consists of four major elements: Situation – a particular the period in space and time that provides context for the information problem, Outcome – the end result of the sense-making activity, Gap – the barriers (e.g., uncertainty) between the situation and

desired outcome, Bridge – the means by which the gap between the situation and outcome is crossed (Dervin, 1983). Dervin presented these elements in terms of a Triangle: situation, gap/bridge, and outcome".

Ellis's (1989) Behavioral Model of Information Searching Strategies - Ellis in the research study has prepared the model for understanding the perceptions of social science researchers. Categorically speaking, the study has been done upon the ideas and concepts of "psychologists, educationalists, economists, sociologists, historians, geographers and political scientists at the University of Sheffield of United Kingdom". The results were sub-categorised by Ellis into 6 major categories to understand the pattern of their information seeking. They are :

1) starting, 2) chaining, 3) browsing, 4) differentiating, 5) monitoring, and 6) extracting.

Kuhlthau's Information Search Process (1991) - Kuhlthau's for studying the information search process (ISP) model in the year 1991 gave significance to two aspects: "affective and cognitive during the process of information searching". Subsequently, it came to be known as Kuhlthau's six-stage process of information seeking behaviour in the field of library and information science. The six stages are - "(1) task initiation: uncertainty; (2) topic selection: confusion, sometimes anxiety; (3) pre-focus exploration: confusion, frustration, sometimes threat and doubt; (4) focus formation: optimism, the confidence of ability to complete task; (5) information collection: realization of extensive work to be done, direction, confidence; (6) presentation: relief, sometimes satisfaction and dissatisfaction".

Dervin's sense-making metaphor (1992) - Dervin (1992) in this model lays emphasis on "the questions about the nature of the situation and also clearly depicts the challenges that an information seeker faces in reaching the desired outcome by utilizing the information to bridge up the gap".

Sandstrom's Optimal Foraging Theory (1994) - According to Sandstrom (1994), 'information foraging' was classified as "the activities which are connected to assessing, seeking and handling of information sources in the networked environment. The key assumption of this theory is that individuals are motivated by self- interest, that is individualism factors are most important. These interests are defined in terms of some specific goal that highlights the content of the individual's choices. Sandstrom found a continuum of two types of foraging strategies:

i) Specialists, who focus on a single high-density 'patch' of sources encountered via informal communication and draw heavily on sources in their personal collections; a
ii) Generalists who gather sources from a wide variety of "patches", a strategy that requires deliberate searching and other labour-intensive techniques".

Leckie Et Al's Model of the Information-Seeking of Professionals (1996) - According to Leckie, et. al. (1996) information-seeking behaviour is a general model and thereby "decided to group the model with task performance and task-based models in work-related contexts". Leckie et. al., in their study analysed and highlighted on "how the professional's work roles and tasks influence his or her information seeking behaviour. The study was conducted to examine the information-seeking the behaviour of librarians, academics, researchers, doctors, nurses, engineers, lawyers, and many others. They noted that these studies examine how information practices embedded within professional work, how those information-related practices function to contribute to the professional's work, and whether or not those practices can be improved or changed for the better".

Wilson's Model (1996) - In this model is specified that information needs will be fulfilled if "information processing and use becomes an essential part of the feedback loop". The model draws attention to the interrelated nature of information behaviour theory, whether the theory is drawn from other disciplines or from the research traditions of information science.

Cheuk Wai-Yi's information-seeking and using (ISU) process model (1998) - Cheuk Wai-Yi developed the information-seeking and using (ISU) a process model to illustrate the dynamic and diverse information-seeking the behaviour exhibited by each "individual-in-situation".The model states that "human information-seeking and using behaviour" create the situations that prompt the information need.

Choo's (1998) Behavioural Model of Information-Seeking - This model is similar to Aguillar's (1967) model in several ways like the "modes of environmental scanning". Choo in the study "combined and extended Aguilar's modes of environmental scanning and Ellis's information-seeking behaviour model into a new behavioural model of information-seeking on the Web. Choo identified four main modes of information-seeking on the Web: undirected viewing, conditioned viewing, informal search and formal search".

Wilson's Model (1999) - In this yet another information seeking model by Wilson in the year 1999, the information-seeking process like Dervin's sense making the metaphor was stressed upon. This model is popularly known as the Macro-model. Three important aspects of this model are as follows:

1. "Why information seeking is more likely to occur in response to some needs more than others.
2. Why some information sources are more used by the users than others.
3. Why user's opinions of their own competence influence their success in meeting an information goal".

Model Proposed by Urquhart and Rowley (2007) - Urquhart and Rowley (2007) in their model represented the information seeking behaviour of students using e-resources. The model has laid emphasis on macro and

micro factors which plays a significant part in influencing the pattern of Information Seeking Behavior of students. According to Urquhart and Rowley (2007), “the micro factors are the factors that are related to the personality of a student which includes search strategy, information literacy, pedagogy, discipline etc. The macro factors include information resource design, information learning technology infrastructure, organizational knowledge and culture, policies and funding etc.”

Conclusion - Information seeking models are significant to understand the information seeking process in a systematic manner. There have been several models proposed by researchers across the globe with different settings influenced by several elements. The models are very different from each other and elucidate varied patterns in searching for information by different groups of people involved. The models are essential as they lay the platform for further studies and understanding the concept of information searching thereby, developing the field of library and information science.

References :-

1. **Tubachi, Padmavati (2018).** Information Seeking Behaviour: An Overview. Retrieved from: https://www.researchgate.net/publication/330521546_INFORMATION_SEEKING_BEHAVIOR_AN_OVERVIEW
2. **Aydin, Alperen Mehmet (2017).** Cognition to collaboration: user-centric approach and information behaviour theories/models. *Information Science: the international journal of an Emerging Transdiscipline. v.20.*
3. **G. H. Kumar, Hemantha (2017).** Information seeking behaviour: An overview. Indian Journal of Library Science and Information Technology, January-June, 2017; 2(1): 23:27.
4. **Kundu, Dipak Kumar (2017).** International Journal of Library and Information Studies Vol.7(4), pp. 393-405. Retrieved from: http://www.ijlis.org/img/2017_Vol_7_Issue_4/393-405.pdf
5. **Rather, MudasirKhazer and Ganaie, Shabir Ahmad (2017).** Information Seeking Modelsin the Digital Age. pp. 4515-4527. Retrieved from: https://www.researchgate.net/publication/318014040
6. **Savolainen, Reijo (2017).** Information sharing and knowledge sharing as communicative activities. Information Research, 22 (3). Reetrieved from:https://files.eric.ed.gov/fulltext/EJ1156371.pdf
7. **Bhattacharjee, Sudip and Sinha, Manoj Kumar (2016).** Models of Information Seeking Behaviour: An overview. Asian Journal of Multidisciplinary studies. 4(5), pp.266-268. https://www.researchgate.net/publication/303475719_Asian_Journal_of_Multidisciplinary_Studies_Models_ of_Information _Seeking_ Behaviour_An_Overview.
8. **Wilson, T.D. (2016).** A general theory of human information behaviour in *Proceedings of ISIC, the Information Behaviour Conference, Zadar, Croatia, 20-23 September, 2016: Part 1*. *Information Research, 21*(4), paper isic1601. Retrieved from http://InformationR.net/ir/21-4/isic/isic1601.html (Archived by WebCite® at http://www.webcitation.org/6mHhPSeiP)
9. **Thukaram, K. (2015).** *Information Seeking Behaviour of Research Scholars at Central University Libraries in Hyderabad: A Study,* Indian Journal of Information Sources and Services , 5(2), pp. 39-44 retrieved from: www.trp.org.in
10. **Esew, Michael. et. al… (2014).** An Overview of Users Information Seeking Behaviour on Online Resources. IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS), 19(1), 9-17.Retrieved from: https://www.researchgate.net/publication/272716640_ An_Overview_of_Users_Information_Seeking_Behaviour_on_Online_Resources
11. **Bates, Marcia J. (2010)** Information Behavior In *Encyclopedia of Library and Information Sciences, 3rd Ed.* Marcia J. Bates and Mary Niles Maack, Eds. New York: CRC Press, vol. 3, pp. 2381-2391. (Also available online at subscribing libraries.) Retrieved from: https://pages.gseis.ucla.edu/faculty/bates/articles/information-behavior.html
12. **Kumar, Dhrminder and Gupta, Sangeeta (2006)**. Management Information Systems, Excel Books, pp. 04-04.
13. **Tubachi, Padmavati (n.d.).** Information seeking behaviour: An overview Retrieved from: https://www.researchgate.net/publication/330521546_INFORMATION_SEEKING_BEHAVIOR_AN_OVERVIEW
14. https://www.definitions.net/definition/human+behavior
15. https://en.wikipedia.org/wiki/Information_needs

****

Problem and Prospects of Digital Libraries in Technical Universities of UP& MP : A Comparative Study

Anand Kumar* Dr. Ashwani Yadav**

Abstract - Students of technical courses need to refer different books in order to understand the complex topics. Students' perspective becomes wider only when they study books of various authors. Their approach becomes more logical, scientific and realistic. Considering the importance of libraries enough emphasis is being given by the universities on the process of digitalization of libraries. E-resources are being subscribed by the libraries to provide best learning platform to the students. What are the problems in the development of digital libraries in technical universities of Uttar Pradesh and Madhya Pradesh and what are their prospects; to understand it in detail this study was taken into hand. Three cities of MP and three cities of UP were selected for this studied. An effort was made to know the problems and prospects of digital libraries from the students' perspective. Seven aspects were taken into consideration namely adequacy of funds, availability and speed of internet, use of e-books, use of audio books, use of video lectures and attitude of library staff towards digitalization.
Keywords - digital libraries, adequacy of funds, speed of internet, e-books, video lectures.

Introduction - Library is very essential for the growth of knowledge. It is the treasure of knowledge that develops intellect of the readers. For the college students use of library is of immense importance; for the technical courses higher use of library is even more significant. It is an era of internet where things are being done online. Knowledge is also available online on so many platforms. It's not only the printed books that are the source of knowledge. Students of technical universities can avail the facility of digital libraries where they can study so many books of national and international authors. They can refer to numerous journals and they can attend video lectures. All these facilities seem so impressive and convincing but to what extent all these facilities are available and are being used by the students of technical courses like engineering this study was conducted. The question is not that whether digital libraries are useful or not; the question is that to what extent we are executing the digitalization and how appropriately it is being utilized.

Namrat Joshi (2014) stated that digital libraries are still in initial stage of growth in India. Libraries need to be provided with big database in CDS, DVDs and external hard discs to provide online as well as offline study material to the students. It will be helpful to avoid several meaningless routine activities of traditional libraries. Digital library must comprise information in digital form in a very organized and scientific manner so that it can be acquired as and when required.

Khub Ram Yadav (2018) digital libraries require less space to run the operations and disseminate the knowledge even with the limited resources. The same database can be used at the same time by the multiple users which is not possible in traditional physical libraries. The cost of initial setup is little higher in digital libraries but it will be back in terms of extra benefits. Students can access such libraries 24X7. Librarians must enhance their skill set. Technological advancements are taking place very rapidly so it is challenging for the librarians to keep themselves updated. Brundaban Nahak and Partha Sarathi Patra (2014) With the development of information and communication technology globalization of information is happening. In changing scenario libraries have become the necessity. It is very important for the librarian to manage data, documents and to understand the artificial intelligence. Traditional libraries are also turning into the open access libraries and automated libraries to provide better facilities to their readers. Gradually the change is taking place towards completely digital library. Still we see there are many libraries suffering from shortage of computers, softwares are not updated, laser printers are still not available, scanners are outdated or non-operational; so proper maintenance and uses of these devices are also required. Technicians need to be appointed in library because librarian can't do all such things.

Mahesh G. and Rekha Mittal (2008) it is very important to manage the digital library effectively. For that purpose proper care of the copyright laws need to be done. With the excessive digitalization; piracy and plagiarism is taking place. Librarian should make student understand this

*Research Scholar (Faculty of Library & Information Science) Mandsaur University, Mandsaur (M.P.) INDIA
** Asst. Prof. & Head (Faculty of Library & Information Science) Mandsaur University, Mandsaur (M.P.) INDIA

phenomenon that reproducing the information for any commercial purpose is infringement of law. Besides that they are also required to maintain the hardware, software and archives. It has been seen that there is shortage of trained staff but with the usage of technology present staff can also learn from online tutorials and provide benefit to the students and the faculties of the university.

Sample - Technical university students of Uttar Pradesh were chosen randomly from Lucknow, Allahabad and Agra city. Technical university students of Madhya Pradesh were chosen randomly from Bhopal, Indore and Jabalpur. Through the structured questionnaire opinion of 50-50 students from each city were collected. In all 150 students of Uttar Pradesh and 150 students of Madhya Pradesh were selected for this study.

Table 1 - Sample Size

City	No. of respondents	City	No. of respondents
Lucknow	50	Bhopal	50
Allahabad	50	Indore	50
Agra	50	Jabalpur	50
Total (Uttar Pradesh)	150	Total (Madhya Pradesh)	150

Hypothesis - There is no significant difference in the problems and prospects of digital libraries in technical universities of Uttar Pradesh and Madhya Pradesh

Research analysis - Respondents' viewpoint was collected on 5 point scale on the basis of their satisfaction and agreement with facilities of digital libraries of their technical university. The research has shown that there is inadequacy of funds. Funds are not an issue in the development of digital libraries. There are sufficient funds its scor is 82.40% in UP and 84.80% in MP. As far as the availability of e-journals are considered their score is 73.60% percent in MP and 70.80% in UP. Similarly for the availability & speed of internet the score of MP was a bit higher than UP. In the usage of e-books, audio books and video lectures; it was seen that audio books are being used least. Audio books usage score is 34.80% in MP and 24.40% in UP. Video lectures are also not much popular among students. They are not attending video lectures; its score is just 51.20% in MP and 44.20% in UP. Attitude of library staff for digital library is quite well it is a 70.40% in MP and 64.40% percent UP. So the problem mainly lies with the uses of the resources rather than the availability of resources.

Table 2 (see in next page)
Chart 1 (see in next page)

In all seven aspects digital libraries of technical universities of MP seems better than UP. The overall result based on these seven aspects for digital libraries of UP is 57.80% while it is 64% for MP. To ascertain whether this difference is significant or insignificant independent sample T test was done.

Independent Sample T Test

State	N	Mean	Std. Deviation	t	df	Sig. (2-tailed)
UP	150	2.89	0.89	3.164	298	0.002
MP	150	3.20	0.76			

T test shows that the significance value is 0.002 which is less than 0.05 so the difference is significant and it can be said that status of digital libraries in technical universities of MP is significantly better than MP.

Conclusion - Digital libraries are contributing well. Madhya Pradesh is better than Uttar Pradesh as far as the problems and prospects of digital libraries are concerned. It has been observed that scarcity of funds is not an issue in the growth of digital libraries; reasonably good amount of funds are available. Though, availability of internet and its speed can be improved. Attitude of library staff is reasonably good but if we could motivate them with regular refresher courses and knowledge enhancement they would be able to generate interest among students towards the usage of e-books, audio books and video lectures. It has been observed that students are not fully using the facilities available in the digital libraries; that's why the concept of digital library is still not providing the desired results in MP and UP.

References :-

1. Namrata M. Joshi (2014) Digital Library and Library Networks in India, Global Journal of Academic Librarianship. Volume 3, Number 1, P. 37-44
2. Khub Ram Yadav (2018) Development of digital library in India issues and challenges: Role of librarian in digital environment, International Journal of Advanced Educational Research, Volume 3, Issue 1, P. 425-427
3. Brundaban Nahak and Partha Sarathi Patra (2014) 9th Convention PLANNER, Dibrugarh University, Assam, P.336-347
4. Mahesh G. and Rekha Mittal (2008) Digital Libraries in India: A Review, Libri, Volume. 58, P. 15–24

Table 2 - Problems and Prospects of Digital Libraries in Technical Universities of UP & MP

Criteria	Uttar Pradesh		Madhya Pradesh	
	Total Score	Average Score	Total Score	Average Score
Adequacy of funds	618	4.12	636	4.24
Availability of e-journals	531	3.54	552	3.68
Availability & speed of internet	488	3.25	515	3.43
Use of e-books	402	2.68	480	3.20
Use of audio books	183	1.22	261	1.74
Use of video lectures	332	2.21	384	2.56
Attitude of library staff	483	3.22	528	3.52
Average	434	2.89	479	3.20

Chart 1 - Problems and Prospects of Digital Libraries in Technical Universities of UP Vs MP

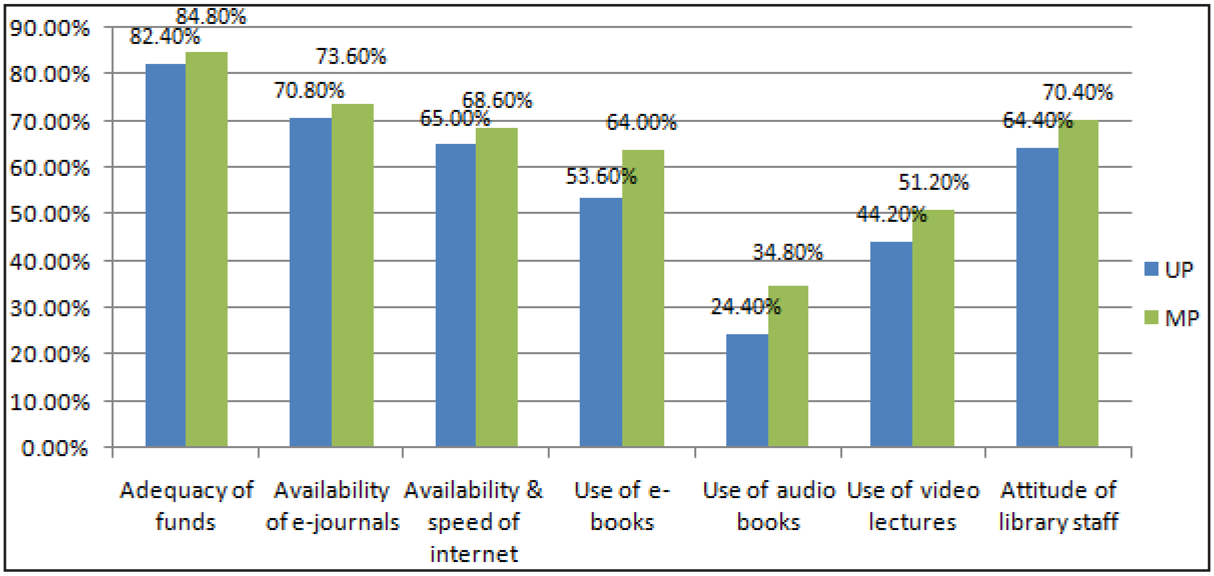

****

Information Needs And Seeking Behaviour Of Faculty Members Of Geetanjali University, Udaipur (Rajasthan): A Study

Pradyumna Kumar Panigrahi* Dr. Mega Arora**

Abstract - The current study was analyzed for information needs and seeking behaviour of faculty members of Geetanjali University (GU),Udaipur (Rajasthan). The data collected through the questionnaire and the analysis shows that faculty members show greater interest in the basic collection of the library. As well as they prefer to seek electronic information and the influence of ICT is more on GU faculty members. A total of 170 questionnaires were distributed to the respondents, of which 120 were received with a response rate of 70.59 %. It is observed that 98 (81.67%) faculty members seeking the information for teaching / guiding students and 69 (57%) respondents use the textbooks/reference books of the library. The highest respondents are 107(89.16%) using E-Resources for their academic activities.
Keywords - Information needs, Information seeking behaviour, E-resource, Internet.

Introduction - Information is the basic needs of a human being. Since the earliest times of human civilization, information has always been important. In the present era, people can't live without information. The reason for this is that information has become an inevitable need for people. (de Silva, et. al. 2016). It plays an important role in decision-making, planning and any development activity. In this highly competitive environment, those who have the right information at the right time will only succeed. Information professionals are always eager to understand why and how users seek information to improve information provision. Technological advances and innovations that have taken place over the years have transformed libraries from a mere warehouse of printed matter into portals to the universe of information. Libraries are no longer stagnant book/ document tanks. Information Communication Technologies (ICT) has led to radical changes in the way libraries collect, store and disseminate information.

Information Seeking Behavior - Information seeking is the process of gathering and receiving information in various ways. It is a dynamic and changeable process, despite its formal attributes for problem-solving. It usually depends on the situation, but it also largely depends on the individual who executes it. The search for information is strongly influenced by personality (personality is a model of characteristics of thoughts, feelings and behaviour that distinguishes one person from another) of a person. Information seeking behaviour (ISB) is the result of recognizing some of the needs perceived by the user, which consequently requests formal systems such as libraries and information centres or another person to meet the perceived information need. (Upadhyay and Dang, 2014).

Library users search for information from various sources, such as books, magazines, electronic resources, research reports, news publications, and various types of reference sources, which includes atlases, dictionaries, encyclopedias, newspapers, directories, etc. The search for information is a continuous process. To fulfill the professional duties and to solve the problems of the clients, the library must have a complete collection, as well as a competent librarian who understands the needs of its users. Once the librarian understands what are the information needs of the users, he/she can take necessary actions to fulfill the requirements. (Patel and Chaudhari, 2015).

Definition of Information Seeking Behaviour - Wilson (1999, 2000) defined information behavior as "those activities a person, may engage in when identifying his or her own needs for information, searching for such information in any way and using or transferring that information".

Information seeking behaviour is a broad term, which involves a set of activities that an individual takes to express information needs, seek in information evaluate and select information, and finally uses this information to satisfy his/ her information needs.

The present study has been designed to find out the various aspects of information seeking behaviour of faculty members of Geetanjali University, Udaipur, Rajasthan.

Geetanjali University - Geetanjali University (GU), is established in 2011 at Udaipur, Rajasthan with a vision to promote quality medical education and research which will benefit the society. This University consists of 5 colleges/

*Research Scholar (Faculty of Library & Information Science) Mandsaur University, Mandsaur (M.P.) INDIA
** Assistant Professor (Faculty of Library & Information Science) Mandsaur University, Mandsaur (M.P.) INDIA

institutions such as:
1) Geetanjali Medical College & Hospital, 2) Geetanjali Dental Research Institute, 3) Geetanjali College of Physiotherapy, 4) Geetanjali Institute of Pharmacy, and 5) Geetanjali College & School of Nursing.

The Library - Each institution/college of the GU has its library on the premises. All the faculty members and students are allowed to use the library of their own college. But, the Geetanjali Medical College & Hospital Library is the central library of Geetanjali University. Students and faculty members of all the college/institutions of GU are allowed to use the central library. The central library is a reference library. Only the faculty members of the Geetanjali Medical College & Hospital are allowed to issued two books for one week only. The central library has the latest collections of books, journals, magazines, newspapers and subscriptions of online journals (Proquest online journals).

Objectives of the study - The objectives of the present study are:

i. To identify the sources and methods of information seeking by the faculty members of Geetanjali University, Udaipur, Rajasthan.
ii. To examine the purpose of information seeking by the faculty members of Geetanjali University
iii. To identify the use of various library resources by the faculty members.
iv. To examine the library services and its use by the faculty members.
v. To identify the problems faced by the faculty members during seeking information from the library.

Scope and Limitation of the study - The scope of the study is to find out the information needs and seeking behaviour of the faculty members of Geetanjali University. However, the study is limited to

1. The Geetanjali University, Udaipur, Rajasthan and not any other university of the Udaipur division of Rajasthan state.
2. Among various users of the library, the study is limited to the faculty members of Geetanjali University, Udaipur and not any other staff or student.
3. Among different aspects, the study is confined to the information needs of the faculty members only not any other aspects.

Size of Sample - The target population of the present study consists of the faculty members of different departments of Geetanjali University, Udaipur, Rajasthan which are 170 in numbers. It includes faculty members of different categories such as Professor, Associate Professor and Assistant Professor.

Literature Review - Literature searches are primarily used to find out what has been published on one's research topic or to find background information on a certain topic and find out missing links in the process of research in a particular field.

The following are the detail of reviewed literature related to Information needs and seeking behaviour.

Balaji, N. G. and Ragavan, S. Srinivasa. (2016) noted that information needs and seeking are time consuming and the library makes it easier for faculty members and researchers to access information easily. Library staff should assist faculty members and researchers in finding information. Online information systems need to be improved, online books, journals and databases must be subscribed and made available for use.

Bilawar, Prakash Bhairu and Pujar, Shamprasad, M. (2016) examines the impacat of e-literacy on information seeking behaviour of university profefssors in Maharashtra. The study concludes that e-literacy enables university teachers to improve their e-information retrieval skills effectively and independly for informed decision-making.

Jayaraman, S and Subramanian, B. (2013) identified information seeking behaviour of faculty members of Karpagam University in Coimbatore, India. The survey revealed that most of the respondents seek information for the preparation of lectures. Books were ranked as the most important source for educational and research purposes. Respondents generally use the online searching facility of the library and consider Karpagam University library collection, services and facilities to be adequate to meet their information needs.

Kumar, Anil. *et al.* (2014) conducted a study to find out the information seeking behaviour of the research scholars & faculty members of Life Science discipline, Kurukshetra University, Kurukshetra. **).** The survey results show that respondents use the library to gather the information they need. Based on the findings, it was proposed to increase the speed of the internet.

Mahapatra and Panda. (2001) gives an idea of the different behavioral approaches of working journalists (WJs) when searching and seeking information. The analyzes data obtained from 226 WJs representing the leading daily newspapers in the state. The discovery of the study shows that WJs visit libraries and information centers to find specific information useful for their journalistic activities.

Patel and Chaudhari. (2015) investigated the information seeking behaviour of the post graduate faculty members of the four agricultural universities of Gujarat. The study found the internet is the best source for updating the knowledge and for information seeking and their purpose of information seeking was to keep up with the latest development in the field. Textbooks are important resources for teaching and research papers and e-journals are important resources for research.

Satpathy and Rout (2012) analyses the information needs and seeking behavior of faculty members at the Engineering College in Bhubaneswar, Orissa. The data analysis reveals that the primary purpose of information seeking is for research work and teaching, and the faculty members prefer electronic resources rather than print resources to need their information. The library is also the main source of information about them. The study offers some steps to improve the library system and services so that it can meet

the information needs of teachers in a more effective.

Methodology for the study - This study was carried out using a survey method. The research instrument adopted for the study was a questionnaire. The instrument was structured to compare relevant information about information needs and seeking behaviourof the faculty members of Geetanjali University, Udaipur (Rajasthan). The data collected through the questionnaire are analyzed using simple percentages for easy analysis and interpretation.

Data analysis and Interpretations - In this section, the study bring into view the data on the information needs and seeking behaviour of the faculty members of Geetanjali University located at Udaipur (Rajasthan).

Distribution of Questionnaire and response received - A detailed questionnaire prepared and 170 questionnaires were distributed among the faculty user of the Geetanjali University Central Library. A total of 120 responded and the response rate is 70.59 %.The analyses of the collected data are presented in tabular form. All the data are mentioned in the table are number of respondents and percentage.

Table 1.Distribution of Questionnaire and response received

S.	Questionnaire distributed	No. of responded	Percentage (%)
1	170	120	70.59 %

Sources and Methods of Information Seeking - The faculty members of Geetanjali Univeristy, Udaipur used a wide variety of information sources and methods for their information seeking. Wilson (1981), and other researchers such as Ellis (1989, 1993, 1997) and Wallis (2006) pointed out that different needs lead to different informational behaviour. Medical academic staff needs information for their teaching and research activities as well as for medical practice. It is an important task, and the information is more vital for medical practice than research and teaching because the medical diagnosis depends on the information of the doctors. Considering this, the researcher asked several questions regarding the sources of information in which medical faculty members may tend to look when they have entered a certain type of information.

The Table-2 presents the data regarding the various sources, methods and techniques used by the faculty members of the Geetanjali University for seeking their information and the researcher find that some typical majority of the faculty members consulted with either frequently or for sometimes or even rarely. All the received data are mentioned in numbers of responded and percentage also. Frequently browsing the books / journals consists of 51.67% , sometimes 24.17%, rarely 17.5 % and never browsing the books/journals are 6.66 %. Go to the library / browse the library catalogue is 31.67% frequently, 21.67% sometimes, 36.66% rarely, and never go to the library / browse the library catalogue is 10 % only. Search through internet are 71.67 % of faculty members frequently searching, 18.33 % search for sometimes, 4.17 % rarely and 5.83 % never search on the internet for collecting information. Consult with professionals are 12.5 % frequently, 21.67% sometimes, 50.83% rarely and 15% never used consult with professionals. Ask / discuss with colleagues are 17.5 % frequently, 31.67 % sometimes, 39.17% rarely and 11.66 % never ask / discuss with colleagues.

Table-2 (see in last page)

Purpose of Information Seeking - There may be different purposes for seeking information which is determined by the needs and requirement of the population. In considering this phenomenon into mind this researcher enquired some questions to the faculty members of Geetanjali University.

The Table 3 explores the data analysis of the different purpose of information seeking of the faculty members of the Geetanjali University, Udaipur. The data shows that 81.67% of faculty members of Geetanjali University seek information for teaching or guiding the students. 72.5% of the faculty members have responded for seeking information for Keeping up with current developments. 42.5% of the faculty members have responded for seeking information for writing a book or article/research report. 37.5% of the faculty members have responded for seeking information for workshop and seminar presentation and 52.5% of faculty members have responded for seeking information for medical practice.

Table-3 (see in last page)

Use of Library Resources - The faculty members of Geetanjali University (GU), Udaipur were asked to indicate their use of various library resources in their University Library. Table-4 reveals the use of different library resources by the faculty members. The uses of textbooks / reference books are concerned; it was found that 57% of faculty members in the Geetanjali University frequently avail these services, while 37% of faculty members of GU indicated that they sometimes make use of these services. Moreover, 6% of the faculty members rarely or never use the textbooks/reference books available in the library. So far as the uses of journals/magazines, it was found that 51% of faculty members use these resources frequently in their University Library, while 42% of faculty members indicated that they sometimes make use of these resources. Moreover, 7% of faculty members rarely or never use this journals /magazines section of the library. Similarly, regarding the use of E-Books and E-Journals, the data shows that 77% of faculty members use these facilities frequently, while 17% of faculty members use these for sometimes and 6% of faculty members rarely or never use these facilities. About the use of newspapers in the library, the data shows that 8% of faculty members use this facility frequently, while 21% of faculty members use this facility sometimes and 71 % of faculty members using this service for rarely or never. So far as the uses of CD/DVD resources are concerned, it was found that 10% of faculty members frequently avail these facilities. Again, 67% of respondents are involved in this activity for some times and 23% of faculty

members rarely or never use this facility. The analysis of the Thesis/Dissertation/Project Report shows that 1.67% of faculty members use this resources frequently, but 72.5% of faculty members use sometimes and 25.83% of faculty members rarely or never use this facility.

Table-4 (see in last page)

Use of Library Services -The Table-5 shows the data analysis of the use of library services. The main services of the library are the circulation system which is dealing with the issue/return of the library documents. The researcher found that 44% of the faculty members use these services frequently, while 46% of faculty members indicated they sometimes use these services and 10% of faculty members rarely or never use the circulation services available in the library. The uses of reference section services concerned, it was found that 22% of faculty members use these facilities frequently. Again 45% of respondents use these services sometimes and 33% of total sample rarely or never use this section. Regarding the accessing of OPAC (Online Public Access Catalogue) concerned, the data shows that 37 % of faculty members use this service frequently, while 36% of faculty members use this service sometimes and 27% of faculty members rarely or never use this service. Regarding uses of Photocopy services concerned, the data shows that 14% of faculty members use this service frequently, 78% of faculty members use this service sometimes and 8% of faculty members rarely or never use this facility. The data about new arrival notification shows that 44% of faculty members use this service frequently, 46% of faculty members use this service sometimes and 10% of faculty members rarely or never use this service.

Table-5 (see in last page)

The Satisfaction of Library Resources - Satisfied or not satisfied by the faculty members upon the library resources were analysed in Table-6. The researcher found a good score of 65% of faculty members fully satisfied, 25.83% of faculty members somewhat satisfied and 9.17 % of faculty members are not satisfied with the textbooks/reference books section of the library. About the Journals and Magazines section of the library, it was found that 69.17% of faculty members are fully satisfied, 19.17 % of faculty members are somewhat satisfied and 11.66% of faculty members are not satisfied. As far as the opinion on E-Books and E-Journals resources 75.84 % of faculty members are fully satisfied, 18.33 % of faculty members are somewhat satisfied, and 5.83 % of faculty members are not satisfied with these resources. The data received for the thesis/dissertations/project report concerned, it reveals that 54.17% of faculty members are fully satisfied, 33.33% of faculty members are somewhat satisfied but 12.5 % of faculty members are not satisfied with this resources. About the CDs/DVDs resources, as per the analysed data it shows that 63.33 % of faculty members are fully satisfied, 31.67 % of faculty members are somewhat satisfied and 5 % of faculty members are not satisfied with these resources. Regarding the satisfaction level of newspaper section shows that 31.67 % of faculty members fully satisfied, 60% somewhat satisfied and 8.33% not satisfied with these resources.

Table-6 (see in last page)

The Satisfaction of Library Services - The Table-7 shows the satisfaction levels of library services of faculty members. The opinion on circulation (issue/return of books) service is concerned 45 % of faculty members fully satisfied, while 40.83% of faculty members somewhat satisfied and 14.17 % of faculty members not satisfied. About the utilization of reference section found that 21.67% of faculty members fully satisfied, 52.5% of faculty members somewhat satisfied and 25.83% of faculty memberswere not satisfied. The satisfaction level of using the OPAC shows that 31.67 % of faculty members fully satisfied, while 53.33% of faculty members somewhat satisfied and 15 % of faculty members not satisfied. Regarding the using of photocopy services, the data of satisfaction level shows that 26.67% of faculty members fully satisfied, while 53.33% of faculty members somewhat satisfied, and 20% of faculty members not satisfied with this service. There is another service that is new arrival notification of the library documents and its satisfaction level of data shows that 31.67% of faculty members are fully satisfied, while 47.5 % of faculty members are somewhat satisfied and 20.83% of faculty members are not satisfied with this service.

Table-7 (see in last page)

Experienceofusing ICT and E-Resources - The faculty members in the surveyed were asked to indicate how long they have been using ICT and E-Resources. Table-8 explains the numbers of respondents and the percentage of respondents within the bracket who used the ICT and Library's electronic resources. The table represents 5.83% of faculty members using ICT and E-Resources for less two years, while 10% of faculty members are using these facilities more than two years and 84.17 % of faculty members using these facilities more than 4 years for seeking of information.

Table-8. Experience of using ICT and e-resources

S.	Less than 2 year	2 – 4 years	More than 4 years
1	7 (5.83 %)	12 (10%)	101(84.17 %)

Time spending in surfing Internet / E-Resources per day - The faculty members of Geetanjali University were asked to mention how much time they daily spent in the use of the internet for seeking information. The data explains in the Table-9 that about 3.33 % of respondents use the Internet / E-Resources for less than one hour per day, while 47.5 % of respondents using the Internet /E-Resources for more than one hour per day and 49.17 % of respondents using these facilities more than 2 hours per day.

Table -9Time spending in surfing Internet / E-resources per day.

S.	Less than 1 hour	1 – 2 hours	More than 2 hours
1	4 (3.33 %)	57 (47.5 %)	59(49.17 %)

Influence of ICT / E-Resources on Academic Activities - The respondents were asked to indicate the influence of ICT / E-Resources on their academic activities. The Table-10 reveals 72.5 % of faculty members improve the study/ research activities, while 65% of faculty members improve professional development and learning activities and 61.66% of faculty members using ICT/ e-resources for improve communication. A higher score of 89.16% of faculty members access e-resources for develop their latest and quick information.

Table-10 (see in last page)

Problems faced in Seeking Information.

In every organization or institution, there might be some problems, for achieving its goal. Geetanjali University is also one institution, there must be some problems. Therefore, the questionnaire for this study indicated the area by asking the faculty members to mention the problems they faced while their seeking of information in the library. The Table-11 explain the data analysis of problems faced while seeking information by the faculty members in the library.The researcher listed five problems and asked the faculties about their views. The sample population of 0.83 % members responded that they are facing problems of unavailability of required / latest materials in the library. About the library materials are not properly arranged in the library, the data shows that 1.67 % of faculty members says that they are facing these problems. The library timing is problems for 0.83 % of respondents. Lack of technical support is one of the problems for 0.83 % of faculty members. Similarly, lack of training in using the electronic resources for 1.67 % of faculties in their seeking of information.

Table -11 (see in last page)

Major findins of the study - The Key findings from the study are identified, based on data received from respondents. It is presented below:

1. A total of 170 questionnaires were distributed to the respondents, of which a tremendous questionnaire, i.e. 120 were received with a response rate of 70.59 %. (Table-1).
2. Among the 120 respondents, 86 (71.67%) are searching their needed information through the internet. (Table-2).
3. It is found from the data that majority i.e. 98 (81.67%) of faculty members seeking the information for Teaching / guiding students. (Table-3).
4. It is also found that for updating in medical practices 63 (52.5 %) respondents require latest information. (Table-3).
5. Majority of respondents i.e. 69 (57%) faculty members of the Geetanjali University use the textbooks /reference books of the library frequently. (Table-4).
6. The majority of the respondents i.e. 53(44%) use the circulation (issue/return) system of the library very frequently.(Table-5).
7. It is observed that i.e. 91(75.84%) of faculty members fully satisfied with the E-Books / E-Journals of the library.(Table-6).
8. Regarding the circulation section, 54 (45%) of faculty members fully satisfied.(Table-7).
9. The highest numbers of respondents i.e 101(84.17%) respondents using the ICT and E-Resources more than 4 years.(Table-8).
10. It is found that 59(49.17%) of respondents are using the Internet /E-Resources more than 2 hours daily. (Table-9).
11. A higher score of 107 (89.16%)of respondents access to the latest and quick information for their academic developmentthrouth the E-resources. (Table-10).

Suggestions and Conclusion - The analysis and the results of the study reveals that the main objective of the faculty members of Geetanjali University are studies and teaching and also for updating latest information on medical practices. The selection of the library materials should fulfill the need and requirements of the library users. Therefore, the librarians must be aware of how the faculty members seek information. The first preferences given by the faculty for seeking information are E-books, E-journals. Faculty members are also using the internet is the main tool for searching their required information. The library should look into developing the latest materials as required by the faculty members and subscription to more number of e-resources as per the requirements of the users. User education about library using as well as using of electronic resources are must and should be carried out as a seminar or workshop training.

References :-

1. **Balaji, N. G. and Ragavhan, S. Srinivasa (2016).** Information seeking behavior of faculty membersand research scholars of Bangalore University: ACase Study. *International Journal of Research in Library Science,*2(2), 38-43. Retrieved from: http://www.ijrls.in/wp-content/uploads/2016/08/Information-seeking-behavior-of-faculty-members-and-research-scholars-of-Bangalore-University-A-Case-Study.pdf.
2. **Bilawar, Prakash Bhairu and Pujar, Shamprasad M (2016).** Impact of e-information literacy on information seeking behavior of University teachers. *Annals of Library and Information Studies,* 63, (September), 176-181. Retrieved from: http://nopr.niscair.res.in/bitstream/123456789/35697/1/ALIS%2063%283%29%20176-181.pdf.
3. **Bhattacharjee, Sudeep. *etal.* (2015).** Information needs and information seeking behaviourof college library users of Cacherdistrict,Assam: A case study, International Journal of Emerging Trends in Library and Information Society, 2(1) , pp. 11-24.

4. **deSilva,PradeepaUdayanganiandChandrawamsa, P. Sandhamali (2016).** Information Needs and Information Seeking Behavior of Students at Higher Educational Institutes: With Special Reference to CINEC Maritime Campus, Sociology and Anthropology 4(6), pp.494-499.
5. **Ellis, D(1989).**A Behavioural approach to information retrieval system design.*Journal of Documentation*, 45(3), pp.171-212.
6. **Ellis, D. and M. Haugan (1997).**Modelling the information seeking patterns of engineers andresearch scientists in an industrial environment.*Journal of Documentation*, 53, pp.384-403.
7. **Ellis, D., D. Cox, et al., (1993).**A comparison of the information seeking patterns of researchers inthe physical and social sciences.*Journal of Documentation*, 49, pp.356-369.
8. https://www.geetanjaliuniversity.com/
9. **Jayaraman, S and and Subramanian, B. (2013).** Information Seeking Behaviour of FacultyMembers of Karpagam University in Coimbatore, India: A Study. *Indian Journal of Information Sources and Services,* 3 (1), 21-25. Retrieved from: http://www.trp.org.in/wp-content/uploads/2016/10/IJISS-Vol.3-No.1-Jan-June-2013pp.21-25.pdf.
10. **Kalbande, D.T. and Sonwane, Shashank. (2011).** Information seekingbehavior of the students at MPKV, RHURI (M.S.): A case study.1(2), pp.21-31.
11. **Kumar, Anil. *et. al*. (2014).**Information seeking behaviour by the research scholars & faculty members: a survey study of Kurukshetra University, Kurukshetra in the disciplines of life science. *IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR- JHSS),* 19(6), pp.119-138. Retrieved from: www.iosrjournals.org › iosr-jhss › papers › Vol19-issue6 › Version-4
12. **Mahapatra, R. K. and Panda, K. C. (2001).** State of Information Seeking and SearchingBehaviour of Working Journalists in Orissa: A Study. Annals of Library an Information Studies, 48 (4), 133-138. Retrieved from: http://nopr.niscair.res.in/bitstream/123456789/17908/1/ALIS%2048(4)%20133-138.pdf
13. **MozhdehSalajegheh and ZouhayrHayati (2009).** Modelling Information Seeking Behaviour Patterns of Iranian Medical School Academic Staff.Libri, 2009, vol. 59, pp. 290–307.
14. **Patel, Urjita and Chaudhari, B. K. (2015**).Information Seeking Behavior of FacultyMembers of the Agriculture Universities in Gujarat. International Journal of Research inHumanities& Soc. Sciences, 3(7), pp. 20-26**.**
15. **Satpathy, Sunil and Rout, UdayNath. (2012)**. Information Needs and Seeking Behaviour of faculty Members : A Case Study of Premier Engineering College of Orissa. *International Journal of Information Library and Society*, 1 (1), 27-36. **Retrieved from: http://www.publishingindia.com/GetBrochure.aspx?query=UERGQnJvY2h1cmVzfC8xMjY2LnBkZnwvMTI2Ni5wZGY**
16. **Singh and Naidu (2015).**Information Seeking Behaviour of Engineering College Student in Indore City. 10.13140/RG.2.1.1605.3840. Confrence paper, 2015.
17. **Upadhyay, Sandeep Kumar and Dang, Tanu. (2014).** Information Needs & Information Seeking Behaviour of Students of Administration Institutions in National Capital Region of Delhi.International Journal of Education and Science Research Review, 1(5), pp.108-112
18. **Wilson, T. D. (1981).**On User Studies and Information Needs. Journal of Documentation, 37, 3-15. Retrieved from:http://dx.doi.org/10.1108/eb026702
19. **Wilson, T. D. (1999).**Models in information behavior research. Journal of Documentation, 55,249-270.
20. **Wilson, T.D. (2000).** Human information behavior, *Information Science*, 3(2):49-55. Retrieved from: https://www.researchgate.net/profile/Tom_Wilson25/publication/270960171_Human_Information_Behavior/links/57d32fe508ae601b39a42875/Human-Information-Behavior.pdf

Table-2 Source and Methods of Information Seeking

S.	Source and Methods of Information Seeking	Frequently	Sometimes	Rarely	Never
1	Browse the books / journals	62 (51.67 %)	29(24.17 %)	21 (17.5%)	8(6.66 %)
2	Go to the library / browse the library catalogue	38 (31.67 %)	26 (21.67 %)	44(36.66 %)	12 (10%)
3	Search through internet	86 (71.67 %)	22(18.33%)	5 (4.17 %)	7(5.83 %)
4	Consult with professionals	15(12.5 %)	26 (21.67 %)	61(50.83 %)	18(15 %)
5	Ask / discuss with colleagues	21(17.5 %)	38 (31.67 %)	47 (39.17 %)	14 (11.66 %)

Table-3 Purpose of Information Seeking

S.	Purpose of Information Seeking	Yes	No	Can't say
1	Teaching / Guiding students	98 (81.67 %)	7 (5.83 %)	15 (12.5 %)
2	Keeping up with current developments	87 (72.5 %)	20 (16.67 %)	13 (10.83%)
3	Writing a book or article / research report	51 (42.5 %)	48 (40 %)	21 (17.5 %)
4	Workshop and Seminar Presentations	45 (37.5%)	39 (32.5 %)	36 (30 %)
5	Latest information in Medical Practice	63 (52.5%)	18(15 %)	39 (32.5 %)

Table-4 Use of Library Resources

S.	Library Resources	Frequently	Sometimes	Rarely/Never
1	Text Books /Reference books	69 (57 %)	44 (37 %)	7 (6 %)
2	Journals / magazines	61(51 %)	51 (42 %)	8 (7 %)
3	E-Books / E-Journals	92 (77 %)	21 (17 %)	7 (6 %)
4	Newspapers	10(8 %)	25 (21 %)	85(71 %)
5	CD / DVD	12 (10 %)	80 (67 %)	28 (23 %)
6	Thesis /Dissertation/Project Report	2 (1.67 %)	87(72.5 %)	31(25.83 %)

Table-5 Use of Library Services

S	Library Services	Frequently	Sometimes	Rarely/Never
1	Circulation(Issue/return)	53(44 %)	55 (46 %)	12 (10 %)
2	Reference section	27(22 %)	53 (45 %)	40 (33 %)
3	OPAC (online Public Access Catalogue)	45 (37 %)	43(36 %)	32(27 %)
4	Photocopy services	17 (14 %)	93(78 %)	10 (8 %)
5	New Arrival	53 (44 %)	55 (46 %)	12 (10 %)

Table-6. The Satisfaction of Library Resources

S.	Library Resources	Fully Satisfied	Some what satisfied	Not Satisfied
1	Text books / reference books	78 (65 %)	31 (25.83 %)	11 (9.17 %)
2	Journals / Magazines	83 (69.17 %)	23 (19.17 %)	14 (11.66 %)
3	E-books / E-Journals	91 (75.84 %)	22 (18.33 %)	7 (5.83 %)
4	Thesis / dissertations / Project Report	65 (54.17 %)	40 (33.33 %)	15 (12.5 %)
5	CDs / DVDs	76 (63.33 %)	38 (31.67%)	6 (5 %)
6	Newspapers	38 (31.67 %)	72 (60 %)	10 (8.33 %)

Table-7 Satisfaction of Library services.

S.	Satisfaction of library Services	Fully satisfied	Somewhat satisfied	Not satisfied
1	Circulation (Issue / Return of Books)	54 (45 %)	49 (40.83 %)	17 (14.17 %)
2	Reference Section	26 (21.67 %)	63 (52.5 %)	31 (25.83 %)
3	Online Public Access Catalogue (OPAC)	38 (31.67 %)	64 (53.33 %)	18 (15 %)
4	Photocopy services	32 (26.67 %)	64 (53.33 %)	24 (20 %)
5	New Arrival Notifications	38 (31.67 %)	57 (47.5 %)	25 (20.83 %)

Table-10 Influence of ICT in academic activities.

S.	Activities	Yes	No	Can't say
1	Improve the study / research activities	87 (72.5 %)	14 (11.67 %)	19 (15.83 %)
2	Improve professional development and learning activities	78 (65 %)	22 (18.33%)	20 (16.67%)
3	Improve communication	74 (61.66 %)	17 (14.17 %)	29 (24.17 %)
4	Access to latest and quick information	107 (89.16 %)	2 (1.67 %)	11 (9.17 %)

Table -11 Problems faced in Seeking Information.

S.	Types of Problems	Yes	No	Can't Say
1	Unavailability of required / latest materials	1(0.83%)	114 (95%)	5 (4.17%)
2	Library materials are not properly arranged	2(1.67%)	110(91.67%)	8(6.67%)
3	Library timing is not suitable	1(0.83%)	105(87.5%)	14(11.67%)
4	Lack of technical support	1(0.83%)	111(92.5%)	8(6.67%)
5	Lack of training in using electronic resources	2(1.67%)	114(95%)	4(3.33%)

****

An Analysis of the Relationship between Financial Knowledge and Risk Tolerance

Nikita Jain* Prof. J. K. Jain**

Abstract - Financially knowledgeable and well-informed public have beneficial effects on the soundness and efficiency of the financial system. The present paper is an attempt to throw some light on how financial knowledge is associated with the risk profile of individuals. Here, in this paper, the respondent's risk profile means the level of his/her risk tolerance.Therefore, theresearch paper has investigated the relationship between respondent's financial knowledge and their risk tolerance. Correlation analysis was used to analyse the data from 385 respondents selected from Sagar city in Madhya Pradesh. The results indicated that the relationship between respondent's financial knowledge and risk tolerance is positive, moderate and statistically significant.
Keywords - Financial Knowledge, Risk Tolerance.

Introduction - Money management is a critical intellectual competency and an essential component of an individual's success in life.Financial knowledge is a state of understanding about finance and money management. This understanding equips a person with the skills needed to realize financial security of himself and his family and thus survive and achieve lifetime well-being. In simple words it can be stated that some basic knowledge of key financial concepts and the ability to apply some numeracy skills in financial situations is called as financial knowledge. Financial knowledge develops an individual's ability to respond competently to life events to survive in a modern society. The common thread of financial knowledge is positive financial outcomes resulting from proficient competence in key financial activities and concepts.

Harlow and Brown (1990) defined financial risk tolerance as the extent to which an individual is personally capable and willing to accept the likelihood of an uncertain financial outcome in exchange for the possibility of a higher financial return.A large number of studies have been conducted in the field ofbehavioural and personal finance exploring the impact of demographic variables on risk tolerance of individuals. The researchers more or less agree that financial risk tolerance of individuals is affected by their demographic characteristics. Although, demographic factors have shown a significant impact on risk tolerance of individuals, they provide only a partial explanationof the variance in risk tolerance.Therefore, there are number of variables that may be important determinants of risk tolerance but they have not received equal attention.

The role played by financial knowledge in risk tolerance is one, that has received relatively limited attention. Thus, this paper aims to investigate the relationship between respondent's financial knowledge and their risk tolerance.

Objective - To study the relationship between respondent's financial knowledge and their risk tolerance. Here, in this paper, the respondent's risk profile means the level of his/her risk tolerance.

Data collection and Sample Size - The study is based on primary data collected through interview schedule.Data was collected from 385 respondentsof Sagar city,which is situated in the state of Madhya Pradesh. To achieve the objective of this paper, random sampling technique was used to choose the sampleswhich ensured that each element in the population has an equal chance of being included in the sample.

Statistical test/tools used for the analysis - The data was analysed using Statistical Package for Social Sciences version 24.0 and MS Excel.Correlation analysis was employed to investigate the association/relationship between financial knowledge and risk tolerance.Correlation measures the degree of relationship/association between two or more variables. The correlation coefficient gives a mathematical value for measuring the strength of the linear relationship between two variables.The sign of a correlation coefficient describes the type of relationship between the variables being correlated. A correlation can be either positive or negative. The linear correlation coefficient can take values between +1and -1, both values inclusive, whereas zero indicates that there is no relationship.

Data Analysis and Interpretation - Based on the objective of the study and to achieve the objectives, the following hypothesis was formulated

H_0: There is no significant relationship/correlation between

*Research Scholar (Commerce) Dr.Harisingh Gour University, Sagar (M.P.) INDIA
** Professor (Commerce) Dr. Harisingh Gour University, Sagar (M.P.) INDIA

respondent's financial knowledge and their risk tolerance/ risk profile

H_1: There is a significant relationship/correlation between respondent's financial knowledge and their risk tolerance/ risk profile

Table 1 Correlations

		Financial Knowledge	Risk Tolerance
Financial Knowledge	Pearson Correlation	1	.393**
	Sig. (2-tailed)		.000
	N	385	385
Risk Tolerance	Pearson Correlation	.393**	1
	Sig. (2-tailed)	.000	
	N	385	385

**. Correlation is significant at the 0.01 level (2-tailed).

The results of correlation between respondent's financial knowledge and their risk tolerance/risk profileare presented in Table 1. SPSS output provided a matrix of the correlation coefficients for the two variables. Underneath each correlation coefficient both the significance value of the correlation and the sample size of 385, on which it is based are displayed. Each variable is perfectly correlated with itself, therefore r = 1 along the diagonal of the table. The results also indicate that the correlation between respondent's financial knowledge and their risk tolerance/ risk profile is 0.393.

The p value for the correlation coefficient is 0.000, which is less than 0.01. Thus, null hypothesis is rejected. Hence, we can gain confidence that there is a genuine relationship between respondent's financial knowledge and their risk tolerance/risk profile.This implies that the correlation coefficient between respondent's financial knowledge and their risk toleranceis positive, moderate and statistically significant.

Conclusion and Suggestions - In the light of the present research work and on the basis of the above results it can be concluded that level of financial knowledge has significant positive relationship with risk profile/risk tolerance indicating that individuals with higher financial knowledge will be willing to take informed higher risk.

India is among the world's most efficient financial markets in terms of technology, regulation and systems.Financial knowledge is most important for India as it is a developing country with problem of poverty in addition to illiteracy and population.Financial knowledge is an essential element in enabling people to understand risk associated with financial products and to manage their financial affairs, thereby making an important contribution to the soundness and efficiency of the financial system and performance of the economy.Financial knowledge is also an important adjunct for promoting financial inclusion and ultimately financial stability of the Indian economy.

References :-

1. A. Mouna and J. Anis, "The Factors Forming Investor's Failure: Is Financial Literacy a Matter? Viewing Test by Cognitive Mapping Technique," *Cogent Economics & Finance,* vol. 3, p. 1057923, 2015.
2. A. Lusardi, "Risk Literacy," *Italian Economic Journal,* vol. 1, pp. 5-23, 2015.
3. P. Davies, "Towards a Framework for Financial Literacy in the Context of Democracy," *Journal of Curriculum Studies,* vol. 42, no. 2, pp. 300-316, 2015.
4. F. Nawaz, "Microfinance, Financial Literacy, and Household Power Configuration in Rural Bangladesh: An Empirical Study on Some Credit Borrowers," *Voluntas: International Journal of Voluntary and Nonprofit Organizations,* vol. 26, pp. 1100-1121, 2015.
5. K.-M. Yu, A. M. Wu, W.-S. Chan and K.-L. Chou, "Gender Differences in Financial Literacy Among Hong Kong Workers," *Educational Gerontology,* vol. 41, no. 4, pp. 315-326, 2015.
6. L. Arrondel, M. Debbich and F. Savignac, "Stockholding in France: The Role of Financial Literacy and Information," *Applied Economics Letters,* vol. 22, no. 16, pp. 1315-1319, 2015.
7. C. J. Totenhagen, D. M. Casper, K. M. Faber, L. A. Bosch, C. B. Wiggs and L. M. Borden, "Youth Financial Literacy: A Review of Key Considerations and Promising Delivery Methods," *J Fam Econ Iss,* no. 36, pp. 167-191, 2015.

****

Customer Satisfaction: A Positive Impact on Banking Services

Arti Padiyar* Dr. C.M. Mehta**

Abstract - Today every bank wants to satisfy its customer because it increases efficiency and goodwill of the bank. When a customer is satisfy with the banking services provided by bank then it creates a good impact on bank. The employees or officers of the bank take a big interest in performing their task regarding customer. They work with more ease. As the customer is satisfied there should be an impact on banking services like on cash, credit, efficiency and goodwill etc. So, for all these impact on banking services customer satisfaction is needed.
Keywords - Banking, Customer, Satisfaction, Services, goodwill, Efficiency etc.

Introduction - As we know that banks work more efficiently after the satisfaction of customer. Once the customer is satisfied banking services creates a good impression on goodwill of the bank. Bank provides several facilities to customer. When the customers are satisfied with the banking services it creates a positive impact on bank. Bank allows customer to take part in banking facilities offered by bank. The customer satisfaction level decides what impact is occurred in cash, credit and loan. These banking terms are increased just because of customer satisfaction. To know more impact on banking services the goodwill and efficiency of bank is also increased. If customer satisfaction is more the goodwill and efficiency of bank is also more. So, customer's satisfaction impact on banking services is also needed for better advancement of banking services.

Customer Satisfaction - Satisfaction is the customer's fulfillment. It is a judgment that a product or a service feature, or the product or service itself, provides a pleasurable level of consumption related fulfillment. In minimal technical terms, this definition can be translated to mean that satisfaction is the customer's evaluation of a product or service. It is also important to recognize that, to measure the customer satisfaction at a particular point of time as it were static, satisfaction is a dynamic, moving target that may evolve over the time, influenced by a variety of factors. Particularly when product usage or the service experience takes place over the time, satisfaction may be highly variable depending on which point the usage or experience cycle is focused on.

Banking facility provided by bank - We know there are several banking services are provided to customer for their satisfaction. From opening a bank account in a bank and also other facility of bank emerges a customer to take active part in banking facility. For better advancement bank provides various facility like IT enabled banking services, 24*7 ATM facilities, loan facility, credit facility, and other govt. plan facilities with more ease. So, these banking facilities create a good impression on customer and they use these facilities with more ease. As the customer is satisfied with the banking services the officers of the bank also works with more efficiency. Banking services are more preferable for customer because the entire money related problem is solved by bank. Customer is fully assured that there money is safe and saved in bank with more new innovative technique. Thus, banking services achieved a big way of providing these services to their customer with more ease.

Technological developments in banking - In India, banks as well as other financial entities have already entered in the information technology and computer networking. The era of reforms has bestowed on the banking sector a new found dimension has enabled it to move closer to international best practices. The financial reforms and the introduction of regulatory norms related to capital adequacy, income recognition, asset classification and provisioning have enhanced the functioning of Indian banks as well as their accountability. The financial foundation of our economy i.e. banking is today a robust and vibrant sector finding its strength in various aspects like improvement in technology, core banking facilities, increase in its retail activities, healthy competition, growing number of banking products for the household as well as the corporate sector and improved financial performance.

Need and scope of study - It is very necessary for every bank to create a positive impact on banking services. Every positive response of customer satisfaction defines the

*Research Scholar (Commerce) Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
**HOD & Prof. (Commerce) Govt. Arts Commerce & Science College, Nagda, Ujjain (M.P.) INDIA

bank's goodwill or reputation. For this purpose bank tries to provide good services to their customer. For earning a good reputation a bank need to satisfy its customer with its services in a good manner. The scope of the study is Ratlam district with 10 public sector banks.

Research methodology- Research methodology is a basic idea of solving a problem. It is a process by which the right hypothesis and different tests are applicable to that research. It is a way to know why a particular test is applicable to the particular research.

The object of the research is clear as it is stated earlier. According to the research we find the positive impact of customer satisfaction in public sector banks. For this purpose questionnaires are prepared. There are 43 officers and 5 questions are asked to each officer. So, overall 215 views of officers are obtained in Ratlam district. These are fulfilled by the officers of the bank. Methods of data collection include both the primary data and secondary data. The primary data is collected through questionnaire which is filled by the officer. It is the view of officer that is it a positive impact of customer satisfaction on public sector banks or not. The questionnaires are prepared using Likert's 5 scale with 5 terms named excellent, good, moderate, bad and worst. The secondary data is from published or unpublished source.

There are some problems occur in this research study. The research is wide as it covers the Ratlam district using 10 public sector banks. So, the place where the bank is situated is far and not much facility is available for conveyance. There is a sample of 5 officers from each bank but due to lack of staff in bank 5 officers are not available from some bank. Sometimes officers also unable to understand the for which work we are coming. The limit of the study limits the jurisdiction mainly the district where the research is done.

Sample design - The sample design of the research work is 10 public sector banks. These 10 banks covered the tehsils of the Ratlam district. A sample of 3 to 5 officers is taken in each bank. So, approximately 10 banks cover 43 officers. The design of the sample is about 43 officers in Ratlam district. But this sample design is evaluated using Likert's 5 scales. Likert's 5 scale includes the 5 basic terms named excellent, good, moderate, bad and worst.

Tools of analysis - After the sample design is prepared tools are used for analysis of research. In this research we use the ANOVA test. The ANOVA test refers to the analysis of variance. This test is used where the samples are more than two. The research samples are more than two that is why ANOVA test is applied. This test include between sample variance and within sample variance. To test the samples using ANOVA test the formula is-

$$Fc = \frac{\text{between sample variance}}{\text{within sample variance}}$$

According to Likert's 5 scale the above three terms named excellent, good & moderate indicates positive nature and below two terms indicates the negative approach or nature. This tool is applied on the table given below of 10 public sector banks in Ratlam District. It is an analysis of whether there is a positive impact of customer satisfaction on banking services in Ratlam district or not. The hypothesis is

Ho: There is no significant impact of customer satisfaction on banking services (Null Hypothesis)

Against,

H1: There is a significant impact of customer satisfaction on banking services (Alternate Hypothesis)

The analysis table shows whether there is a positive impact of customer satisfaction on banking services or not.

Table 1 (see in last page)

In Ratlam District

$$Fc = \frac{\text{between sample variance}}{\text{within sample variance}}$$

$$= \frac{215}{5}$$

$$= 43$$

Here in Ratlam District the table value is more than the calculated value in the term excellent and good. But the table value of moderate is less than the calculated value. Here in these three terms two terms are above from calculated value and one is less than the calculated value. So, the null hypothesis Ho is rejected and the alternate hypothesis H1 is accepted.

According to % in Ratlam district 100% officers says that the impact of customer satisfaction on banking services is positive in nature.

Results and discussion- From the above analysis using Likert's 5 scale and tool ANOVA test with 5 terms excellent, good, moderate, bad and worst. The result of the above research is that there is a significant impact of customer satisfaction on banking services in Public sector banks. Hence our alternate hypothesis is accepted.

Suggestions - Proper banking staff may help in achieving the goodwill of the bank. There is a proper channel of communication between bank and the customer. Efficient facilities are provided by bank to customers. Banking facilities are according to customer need etc.

Conclusion - According to the above research it is concluded that the impact of customer satisfaction on banking services is positive in nature. From the above table it is clear that 100% officers say that the impact of customer satisfaction on banking services is positive in nature. Thus we say that the impact of customer satisfaction on banking services is high and it indicates the positive result. The conclusion of the above research is that there is a positive impact of customer satisfaction on banking services in public sector banks.

References: -

1. Jain Dr. S.C. : 'Commercial Bank Management' 2010 Kailash Pustak Sadan, Bhopal
2. Kothari C.R. & Garg Gaurav : 'Research Methodology methods & techniques' 2014, New Age International

(P) Limited Publishers

3. Ojha Shiv Kumar & Ojha Archna : 'Indian Economy' Bodhik Prakashan ki Abhinav Prakarti

Websites: -

1. www.google.com
2. www.wekepedia.com

Table 1 : Analysis table of officers for impact of customer satisfaction on banking services

District/Particular	Ratlam	Jaora	Alot	Sailana	Piploda	Bajana	Total	%
Excellent	28	28	29	29	22	05	141	65
Good	10	13	21	11	03	10	68	32
Moderate	02	04	-	-	-	-	06	3
Bad	-	-	-	-	-	-	-	-
Worst	-	-	-	-	-	-	-	-
Total	40	45	50	40	25	15	215	100

(Study based on survey)

****

खरगोन जिले की जनजातियों में साक्षरता की स्थिति: एक अध्ययन

मनीषा सावले *

शोध सारांश – किसी भी समाज में साक्षरता का महत्वपूर्ण योगदान होता है, जिसमें जनजातियों की साक्षरता की भी अपनी भुमिका होती है। प्रस्तुत शोध पत्र में जनजातियों में शिक्षा व साक्षरता की स्थिति का अध्ययन करता है। शिक्षा विकास की एक अनिवार्य शर्त है और साक्षरता शिक्षा की पहली सीढी शिक्षा ही विकास के नए–नए रास्ते सुझाती है और उचित शिक्षा के माध्यम से ही किसी देश का विकास होता है , देश के अधिकांश लोग आज भी शिक्षा पाने से वंचित है , जिसका एक वर्ग जनजाति समाज का भी है। आज भी वह जनजातियां साक्षरता व शिक्षा की दृष्टि से पिछडे हुए है। साक्षरता के वृद्धि न होने से जनजातियां शिक्षा की स्थिति बहुत ही दयनीय व असंतोषजनक है।

प्रस्तावना – जीवन को सुसंस्कारित एवं विवेकशील बनाने के लिए शिक्षा का बडा महत्व है। साक्षरता का भी उद्देश्य निरक्षरों को सुसंस्कृत नागरिक बनाकर उन्हे सामाजिक और आर्थिक शोषण से मुक्त करना है। साक्षरता सामाजिक और आर्थिक शोषण से मुक्त करता है। साक्षरता सामाजिक क्रांति का सूत्रपात है। नए आर्थिक युग का आधार व राष्ट्रीय एकता एवं विकास का अभिमान है। साथ ही सामाजिक कुरीतियों एवं अंधविश्वासों को दूर करना, लिंग भेद की भावना को दूर करना है। किसी भी देश का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि वहां के लोग कितने जागरूक है। शिक्षा मनुष्य के सोच और आचरण में गुणात्मक परिवर्तन का माध्यम है।

अनुसूचित जनजाति देश की कुल आबादी का 8.14 प्रतिशत है। क्षेत्रफल की दृष्टि से लगभग 15 प्रतिशत भू–भाग पर अनुसुचित जनजातियां निवासरत है। मध्यप्रदेश भारत की संपूर्ण जनजातीय जनसंख्या का सर्वाधिक जनसंख्या (14.65 प्रतिशत) वाला प्रदेश है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार प्रदेश की कुल जनसंख्या 7,26,26,809 में जनजातीय जनसंख्या 1,53,16,784 है। यह राज्य की कुल जनसंख्या का 21.09 प्रतिशत है। चूंकि मध्यप्रदेश को सर्वाधिक जनजातीय जनसंख्या वाला राज्य कहा जाता है। जहां साक्षरता व शिक्षा की स्थितियों में अभी भी सुधार नही हो पाया है। तथा सरकार इन जनजातियों के शैक्षिक विकास हेतु कई योजनाओं व कार्यक्रमों द्वारा प्रयत्न किये जा रहे है। जो कि आदिम जाति कल्याण विभाग द्वारा संचालित भी हो रहे है। इसके बावजूद कई जनजाति क्षेत्रो में इनका लाभ पाने से वंचित है। आज भी इस जनजातीय समाज को अशिक्षा,गरीबी,बीमारी,बेरोजगारी आदि कई समस्याओं से गुजरना पड रहा है। जो कि हमारे राष्ट्र के विकास व शिक्षा के मार्ग में बाधा उत्पन्न कर रहे है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र अध्ययन का उद्देश्य जनजातियों की साक्षरता की स्थितियों को जानना तथा जनजातियों की साक्षरता दर व कुल साक्षरता दर की तुलना कर इनमें हुई वृद्धि को ज्ञात करना। साथ ही खरगोन जिले में जनजातियों के शिक्षण सस्थानों की स्थिति जानना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत अध्ययन द्वितीयक आंकडो पर आधारित है। जिनमें सरकारी आंकडों, पुस्तके, पत्र पत्रिकाओं, इन्टरनेट आदि का उपयोग कर शोध कार्य को पूर्ण किया गया है।

खरगोन जिले की जनजातियों में साक्षरता की स्थिति – सम्पूर्ण भारत में 2001 की जनगणनानुसार साक्षरता का प्रतिशत 65 प्रतिशत था जो कि बढकर 2011 की जनगणनानुसार भारत में साक्षरता 74.04 प्रतिशत हुई। तथा मप्र में 2001 की जनगणनानुसार साक्षरता का प्रतिशत 63.7 था जो कि 2011 में बढकर 70.63 प्रतिशत है। मप्र के इन्दौर संभाग का जनजातीय बाहुल्य जिले में से एक खरगोन (पश्चिम निमाड) जिला है। खरगोन जिल में स्त्री पुरूष साक्षरता का प्रतिशत तालिका में दर्शाया गया है :–

तालिका क्रमांक 1 – खरगोन जिले में कुल साक्षरता दर

वर्ष	व्यक्ति	पुरूष	महिलाएं
1991	41.2	55.4	26.1
2001	63.0	74.7	50.6
2011	64.0	74.0	53.7

(**स्त्रोत** :– भारत की जनगणना 1991,2001,2011 म.प्र.)

उपर्यक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि खरगोन जिले में 2011 की जनगणनानुसार कुल साक्षरता में 74.0 प्रतिशत पुरूष और 53.7 प्रतिशत महिलाएं साक्षर है। अत: यहां महिला साक्षरता दर पुरूष साक्षरता दर से कम है।

तालिका क्रमांक 2 – ग्रामीण और नगरीय साक्षरता दर

वर्ष	कुल	ग्रामीण साक्षरता	नगरीय साक्षरता
2001	63.0	60.1	78.1
2011	64.0	60.2	83.0

(**स्त्रोत** :– भारत की जनगणना 2001,2011 म.प्र.)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 2001 की जनगणनानुसार ग्रामीण साक्षरता 60.1 प्रतिशत है तथा नगरीय साक्षरता 78.1 प्रतिशत है। 2011 की जनगणना में बढकर यह 60.2 प्रतिशत तथा 83.0 प्रतिशत हो गया है। तालिका से जिले की ग्रामीण एवं नगरीय साक्षरता में काफी अंतर दिखाई देता है। ग्रामीण साक्षरता से नगरीय साक्षरता में अत्यधिक वृद्धि हुई है।

तालिका क्रमांक 3 – भगवानपुरा विकासखण्ड मे जनजातियों की साक्षरता की स्थिति जनगणना 2011

* शोधार्थी (समाजकार्य) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) भारत

क्रमांक	विकल्प	साक्षरता का प्रतिशत
1	महिला	31.61
2	पुरूष	41.37
	कुल	36.46

स्त्रोत :- Census of India 2011, District Census Handbook: Khargone (West Nimar) Bhopal , Directorate of Census Operations, Madhya Pradesh)

भगवानपुरा विकासखण्ड में 2011 की जनगणनानुसार ग्रामीण साक्षरता का कुल प्रतिशत 39.41 है जहाँ स्त्री साक्षरता का प्रतिशत 33.83 व पुरूष 45.04 है। जिसमें जनजातियों की साक्षरता का प्रतिशत 36.46 रहा । अत : यहां स्त्री साक्षरता पुरूष साक्षरता की तुलना में कम है।

चुंकि भगवानपुरा विकासखण्ड एक जनजातीय बाहुल्य विकासखण्ड है यहां भील , भिलाला व बारेला जनजातियों की जनसंख्या अत्यधिक है।

खरगोन जिल में शैक्षणिक संस्थाओं की स्थिति - वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार जिले में 1000 पुरूषो पर 963 स्त्रियां है तथा साक्षरता का प्रतिशत 63 है। जिले में 07 आदिवासी विकासखण्ड (खरगोन, सेगांव, गोगांवा, झिरन्या,भगवानपुरा,भीकनगांव एवं महेश्वर) तथा 02 सामुदायिक विकासखण्ड (बडवाह एवं कसरावद) है। जिले में विभागान्तर्गत 02 वृहद एकीकृत आदिम जाति विकास परियोजनाएं खरगोन एवं महेश्वर संचालित है।

आदिवासी विकासखण्डो मे संचालित शैक्षणिक संस्थाओं का संचालन/नियोजन , जनजातीय कार्य विभाग एवं अनुसुचित जाति कल्याण विभाग द्वारा किया जाता है तथा सामुदायिक विकास खण्डो संचालित शैक्षणिक संस्थाओं का संचालन/ नियोजन शिक्षा विभाग द्वारा किया जाता है।

खरगोन जिले में निम्नानुसार शैक्षणिक संस्थाऐ एवं विभागीय छात्रावास आश्रम संचालित है।

वर्ष 2017-18 के अनुसार :-

क्र.	शैक्षणिक संस्थाऐ	संस्था संख्या	कुल दर्ज संख्या	अ.ज.जा. की दर्ज संख्या
1	प्राथमिक विद्यालय	1771	94456	67677
2	माध्यमिक विद्यालय	552	51988	32563
3	हाईस्कुल	94	26008	14023
4	उ.मा.वि. (उत्कृष्ट सहित)	60	13232	5884
	योग :-	2477	185684	120247

निष्कर्ष - स्वतंत्रता के बाद साक्षरता के क्षेत्र में जो प्रगति होनी थी, वह आज इतनी नही हो पाई यह एक सोचनीय स्थिति अवश्य है। जहां तक ग्रामीण क्षेत्रो की जनजातिय महिला साक्षरता का प्रश्न है, वह पुरूषो की अपेक्षा काफी न्यून है। साथ ही जिले में महिला पुरूषो की साक्षरता दर (1991-2011) में वृद्धि को देखा जा सकता है। अत: निष्कर्ष तौर पर यह कहा जा सकता है कि साक्षरता शिक्षा का पहला पायदान है। भगवानपुरा विकासखण्ड में जनजातियों की साक्षरता जनगणना 2011 के अनुसार असंतोषजनक है यद्यपि सरकारी प्रयत्नों से जागृति अवश्य आई है फिर भी अधिकांश जनजातियों के पुरूष एवं स्त्रियाँ अशिक्षित है जिसका प्रमुख कारण आर्थिक , स्वास्थ्य , शिक्षा की समस्या प्रौद्योगिकी की जानकारी की कमी , गरीबी , बेरोजगारी आदि है। इन जनजातियों की साक्षरता व शिक्षा में सुधार हेतु शासन को ठोस व कारगर कदम उठाए जाने चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुरूक्षेत्र सितम्बर 2004
2. भारत की जनगणना 1991,2001, मप्र
3. भारत की जनगणना 2011, जनसंख्या के अन्तिम आंकडे
4. Census of India 2011, District Census Handbook: Khargone (West Nimar) Bhopal , Directorate of Census Operations, Madhya Pradesh
5. सहायक आयुक्त जनजातीय कार्य विभाग खरगोन वर्ष 2017-18

क्र	आवासीय संस्थाऐं	संख्या	कुल दर्ज संख्या	अजजा की दर्ज संख्या	गैर अनु.जजा की दर्ज संख्या	कुल स्वीकृत सीट
1	आवासीय विद्यालय	1	210	192	18	249
2	एकलव्य आदर्श आवासीय विद्यालय	1	114	114	0	420
3	कन्या शिक्षा परिसर आदिवासी छात्रावास	5	924	888	36	2450
1	महाविद्यालयीन छात्रावास	4	210	210	0	कुल स्वीकृत सीट 210 बालक 1 कन्या 3
2	सीनीयर छात्रावास	66	3369	3300	69	3380 बालक 49 कन्या 17
3	जुनियर छात्रावास	2	84	80	4	100 बालक 1 कन्या 1
	आश्रम :-					कुल स्वीकृत सीट
1	शासकीय आश्रम	45	2935	2935	0	2935 बालक 21 कन्या 24
2	अनुदान प्राप्त आश्रम ग्राम बबलई	2	125	125	0	125 बालक 1 कन्या 1

(**स्त्रोत** :- सहायक आयुक्त जनजातीय कार्य विभाग खरगोन वर्ष 2017-18)

****

Woman : Drivers of Globalisation

Dr. Shikha Yadav*

Abstract - Globalization has a huge impact on the lives of women in developing countries. The impact of economic globalization on women empowerment is muted when controlling for the effect of social globalization. Social globalization improves women rights and empowers women. The treatment of women economic rights as an inferior form of rights. The exploitation of women in the sector denies women workers their rights to representation and compensation. The economic integration of women into the marketplace is secondary to the advancement of their fundamental rights, represented by political and social rights.
Key words - Globalization, Fundamental rights and Social rights.

Introduction - Globalization is a process of increasing interdependence, interconnectedness and integration of economies and societies to such an extent that an event in one part of the globe affects people in other parts of world. We have often heard of global culture and integration of the world economy. However, as this process is not consistent throughout the world, it leads to conflict and fragmentation.

Women Rights Accelerates Economic Globalization - Gender equality is critical to the development process. The process of globalization may have resulted in new avenues of growth, but due to unequal distribution of its benefits women have been adversely affected in many cases. It calls for creating opportunities for women to be part of this development process. Merely enacting legislation will not help. What is required is its proper implementation. Gender equality is not just the concern of half of the worlds population; it is a human right because no society can develop economically politically or socially when half of its population is marginalized.

According to a United Nations Development Fund for Women's report (1997), over the past two decades the process of globalization has contributed to widening inequality within and among countries, coupled with economic and social collapse in parts of Sub-Saharan Africa and countries in transition like in Eastern Europe. Globalization is tied to momentous political changes of the present era such as the rise of identity politics, transnational civil society, and new forms of governance and universalization of human rights. Concerning economic inequalities, women are seen to be exploited by Transnation -al Corporations with the collusion of their governments. Trade liberalization policies have led to the decline of small-scale and subsistence farming in developing and less developed countries because western countries, sell heavily subsidized agricultural products to the developing or less developed countries. As a result, many female farmers who have been pushed of their land have sought employment in export processing zones, at lower wages than their male counterparts in their countries.

Over the ages, women in India have faced the problems such as patriarchy and social pressure; caste based discrimination and social restrictions; inadequate access to productive resources; poverty; insufficient facilities for advancement; powerlessness and exclusion etc. However, the new circumstances created by globalization are diverse, encompass all women in the country and cover almost all aspects of their life.

Globalization has undermined the traditional role of women in homemaking, farming, livestock, animal husbandry, handicrafts, handlooms etc. and resulted in a relatively better environment for women. Women have *more jobs*, become more active in avenues generally reserved for men, have played a more prominent role in society and not just restricted to the household. Globalization has posed a *major challenge to the institution of patriarchy* in India. As women take up jobs and achieve social mobility, they have also begun to stand up for their rights. As nuclear families have become more common, it has become easier for women to assertively claim their rights and ask for equality in an environment not stuck in ancient mores. Marrying within the same caste has become less important, and women have in many cases reserved the right to marry whoever they choose irrespective of caste.

Globalization has increased the number of low paid, part time and exploitative jobs for women. Increased prices due to open economy demand more cope up with changes from women. With increasing nuclear families, the older women's life has become pitiable, sometimes spending their later days in old age homes and isolation. The feminization

***Assistant Professor, Deptt. of Chemistry, Govt. Degree College, Shivrajpur, Kanpur (U.P.) INDIA**

of population has further aggravated this problem. Similarly, male migration from rural areas to urban centres has put the women under triple burden of home making, farming and job in rural sector. At the same time, migration of women for economic reasons has led to increased exploitation including sexual exploitation and trafficking.

Impact of Globalization on Women's Development - Thus, globalization has both positive and negative effects for women as any other phenomenon has but it is our responsibility to see that women as important components, both as receivers and drivers, of globalization claim their rights and also perform the obligations with it. Such holistic approach is beneficial for women. Many countries participate in international economy through exports, creates new employment opportunities. Many countries have increased its participation in international trade. Women's employment opportunities have increase and they are also contributing in family expenses which support the creation of new resources and raise the level of income of family. With increase in family income the help of globalization and social choices of women has increased. When we talking about impact of globalization on women the service sector is equally important to industrial sector.

Augmentation of women movements through exposures at the international level will help bring about major changes in the economic, social and political lives of women. Employment in advanced sectors has opened up for qualified women. Attitudinal changes towards women's role in the family due to good education benefits surely help in the development of healthy women. Positive approach to economic and cultural migration will facilitate women to be exposed to better prospects at the international level

Conclusion - Social and political globalization on women's right is the primary focus in global human rights conceptions and justifications around the world. The literature on globalizations effect on women's rights is the analysis of foreign direct investment and its impact on domestic women's economic rights. The literature indicates that an increase in women's economic rights, measured by ordinal legal protection have a positive and statistically significant relationship with economic globalization. My analysis for women would have a tremendously positive impact on global development and improves population around the world. Policy makers must extend these legal protections to women to advance their own economic interests.

References :-

1. Afshar, Haleh, ed. 1998. Women and Empowerment: The Politics of Development.Basingtoke, England: Macmillan.
2. Apodaca, Clair. 1998.Measuring Women's Economic and Social Rights Achievement. Human Rights Quarterly 20(1):139-72.
3. Clark, Robert, and Richard Anker. 1993. Cross-National Analysis of Labor Force Participation ofOlder Men and Women. Economic Development and Cultural Change 41 (3): 489- 512.
4. Moghadam, Valentine M. 1999. Gender and Globalization: Female labor and women's mobilization. Journal of World Systems Research 2: 367-388.
5. Sassen, S.(1996). Toward a feminist analytics of the global economy. Indiana journal of Global Legal Studies, 4(1), 7-42.
6. Schultz, T. Paul. 1990. Women's Changing Participation in the labor Force: A World Perspective. Economic Development And Cultural Change 38(3):457-487.
7. Tzannatos, Zafiris. 1999 Women and labor Market Changes in the Global Economy: Growth Helps, Inequalities Hurt, and Public Policy Matters World Development, 3: 551-569.
8. Wright, S. (1995) Women and the global economic order: A feminist perspective. The American University Journal of International Law and Policy, 10(2), 861-887.

****

A Study of Consumer Buying Behavior of White Goods in Bhopal

Minhal Haider* Dr. BMS Bhadoriya**

Abstract - Consumer durables have risen as one of the quickest developing businesses in India. When seen as extravagance things, buyer durables today have become a fundamental device of ordinary use for the Indian working-class families. The biggest contributing division among durables is white merchandise, otherwise called customer apparatuses, similar to climate control systems, fridges, blender processors, wet processors, and clothes washers. Shoppers' perspectives and buy inclinations have been tremendously changing everywhere throughout the world for as far back as not many years especially in the Indian white merchandise showcase because of the section of remote brands which make overwhelming rivalry just as an expansive decision for purchasers. Each advertiser is compelled to discover factors for which purchasers give a lot of significance and how far they are happy with these components. Right now the buy conduct and disposition of purchasers towards chose white products, for example, fridge, clothes washer, blender processor, wet processor, and climate control system. The examination is engaging in nature and information was gathered through very much organized on the web and disconnected surveys with an example size of 200. The investigation has been done in the Bhopal area of Madhya Pradesh state in India. The principal destinations of the examination are to discover factors that impact purchasers for the acquisition of white products and the significance given for the choice of retail outlet for their buy. The fulfillment level of the buyers towards the items, their involvement with the retail outlet during the Purchase and after-deals administration is by all accounts idealistic.
Keywords - purchase behavior; consumer; white goods; product; service.

Introduction - Shoppers, their methods for settling on buy choices and the standards they search for when taking such choices are continually developing, and consequently, their investigation speaks to a subject of incredible enthusiasm to economic scientists over the world. This is even more valid on account of high inclusion items, for example, white merchandise whose buy is commonly normal and is gone before by a long dynamic procedure given that this kind of item speaks to a high money related speculation for family units (Govind, 2012). Over the span of this examination, here it is available the white products area including its details and particularities, talk about the Kotler and Keller (2009) purchasing choice process and distinguish the criteria customers search for when making a white merchandise buy. This data will at that point be confirmed inside the Indian setting with the assistance of a customer center gathering, which will address questions identifying with the dynamic procedure including the personality of the primary chief, the inspirations driving their buy, the sources from where they get their data from just as the important criteria they base their decisions on. White Goods and their Specificities Generally used to assign a wide scope of local apparatuses which are predominantly for kitchen or clothing use, and which were verifiably plant completed in white finish, white merchandise include cooling apparatuses, for example, fridges, coolers and refrigerators, cooking apparatuses like microwave and electric stoves, and home clothing and dishwashing apparatuses including clothes washers and garments dryers.

They are separated from what experts allude to as "darker products, for example, TVs, video recorders, howdy fi frameworks, phones, PCs, and cameras since white merchandise are considered as "efficient merchandise" that expansion people's optional time, while the last is alluded to as "time utilizing products" as they increment the apparent nature of optional time. Moreover, white products are normally observed as secretly devoured necessities that are expended out of general visibility and that for all intents and purposes everybody claims. Their buy is intensely represented by the item's characteristics instead of by the impacts others apply. Certain attributes describe and are regular to every single white great, they incorporate effortlessness and scale-concentrated creation, item likeness, low presentation to mechanical headways, restricted innovative work, and long item future.

The investigation of customer conduct centers around how people settle on choices to invest their accessible assets like energy, cash, and exertion on utilization related

* Research Scholar (Commerce) Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor & Head (Commerce) MLB Girls College, Bhopal (M.P.) INDIA

things (Schiffman and Kanuk, 1997). The purchasing procedure is a mix of mental and physical exercises that closes with a real buy practically day by day. Subsequently, it is intriguing to consider the association inside "what we purchase" and "why we get it". Right now, assume the main job in the client dynamic. The acquisition of an item is both mental and physical activity. Sheth and Mittal 2004, these exercises are called practices, and their outcome is a blend of assortment determinate by the connections inside the kind of client and his/her job.

Review Of Literature

Anand Thakur and Hundal (2008) proposed that both country and urban shoppers varied in their view of clothes washer as a thing of need. The urban buyers were exceptionally impacted by the clothes washer contrasted with the country and liked to place them in the 'need' class.

Mumtaz Ali, Jing Fengjie and Naveed Akhtar Qureshi (2010) gave an itemized perspective on the purchasers' perspective and explored the level of relationship of six elements like value, family structure, the nation of the starting point, age, culture, and promoting on purchasing conduct of products and ventures. From the investigation, it is comprehended that cost becomes related to the item.

Minakshi Thaman and Priya Ahuja (2010) examined the purchaser conduct in the acquisition of TV, fridge and nourishment processor concerning salary level. Purchasing intentions contrasted in different salary classes.

Amutha and Nasrin Sulthana (2011) has said that that the demeanor of individuals in Chennai city has gotten changed because of different reasons, for example, refreshed innovation, improved status and impact of reference gathering. The ad is only a significant deal of advancement technique. From the discoveries of the investigation among lower pay gatherings: Price was significant thought and in center salary gathering, brand notoriety was one of the most significant affecting variables.

Anil Kumar and Jelsey Joseph (2012) examined the buyer buy conduct of urban and the country working ladies buyers towards durables and opined that the urban and provincial markets fundamentally varied from one another in considering general and item explicit components while settling on their buy choices for durables. The difference in shopper disposition and inclinations has been happening over the world for as far back as a couple of years particularly in the white products advertise. The section of outside brands made a substantial rivalry. Each advertiser is obliged to discover the elements for which the purchasers are giving more significance and their fulfillment level moreover. Without such an understanding, advertisers think that it's difficult to address the client's issues and needs.

Need Of The Study - In current days, more families have two working grown-ups (a couple) who accomplish pretty much their family unit undertakings around evening time after work. Thus, both the fridge and clothes washer has become an indivisible piece of each family. In a hot atmosphere nation like India, cooling has become a need of current life as opposed to its previous discernment as an extravagance item. The acquisition of these household items needs high association and affects purchaser conduct and their method of living. This investigation assists advertisers with understanding the dynamic at the decision of the purchasers and create suitable promoting programs so as to enrapture the shoppers.

Objectives Of The Study:

1. To study the buying behavior for selected whitegoods
2. To identify the factors that influences the buyersduringthepurchaseofwhitegoods.
3. Basedontheresultsrecommendationswillbe given to themarketers.

About The Study - This is a profound investigation of shopper conduct for purchaser's decision brands to buy white merchandise through buyer studies. The examination is exploratory in nature and is subsequently engaging. The point of the examination comprises of shoppers planting the strong or white merchandise under investigation (portable, fridge and forced air systems) living in Bhopal city as it were. The complete example of shoppers is 200 arranged. A sum of 100 customers is taken as an example for the examination.

To contemplate the particular items versatile, fridge, clothes washer, blender processor, wet processor, and climate control systems are chosen. Choice of the above items due to generally utilized in purchasers who have a place with the white-collar class family. White-collar class families can bear to buy the above items in a simple manner and many working-class families can buy at a similar value run.

The other explanation behind picking these items specifically are:

1. The item is broadly utilized in all classifications of family
2. The purchaser is aware of procurement a marked item to keep up their way of life
3. A sign of ad offers that create brand inclinations dependent on the mental idea of the shopper must be available.

For information assortment, a poll is essential and utilized as an apparatus for the examination which was isolated into two sections. The piece of poll was planned for getting essential data of the shoppers, for example, age, instruction, conjugal status, occupation, month to month salary, and so forth., and in the second piece of the investigation the point by point data for the item, for example, Clothes washer, wet processor, blender processor, fridge, and forced air systems under the investigation has been incorporated.

Research Methodology - The retreat and flow situation on white products is examined and hence the present investigation goes under unmistakable research. The example size of the investigation is 500. Essential information has been gathered from the respondents by utilizing a very much organized, non-camouflaged survey. Optional information for the examination was gathered from

books, diaries, investigate articles, magazines, reports, papers, and sites.

Product Selection - To identify the products for the present study, the products used for the studywere

1. Air Conditioner
2. Refrigerator
3. Washing Machine
4. Mixer Grinder
5. Wet Grinder

Sample Design - A sample is a representative part of the population. The Probability method of Systematic Random sampling method was followed for study to choose thesample respondents. The researcher has decided to select a sample size of 200 household respondents for different brands of product preferred by consumers. 100 respondents have beenselected from the major area of Bhopal district.

Results And Discussions

Table: 1 Details of Respondents

Gender	Male	137	68.5
	Female	63	31.5
Locality	Urban	100	50
	Rural	100	50
Age Group	Below 20	21	10.5
	21-30 Years	77	38.5
	31-40 Years	54	27
	Above 40 Years	48	24
Family Monthly Income	Less than 20000	11	5.5
	20001-30000	38	19
	30001-40000	95	47.5
	Above 40000	56	28
Educational Qualification	Higher Secondary	17	8.5
	Graduate	89	44.5
	Post Graduate	37	18.5
	Professional	57	28.5

From Table 1, it shows that68.50% of the respondentswere male, half of them were from urban and rural respectively, 38.50% respondents belonged to the age group of 21-30 years, 47.50% of the respondent's family monthly income was Rs. 30,001-40,000, 44.50% of the respondents were graduates.

Table: 2 Products Demented by the Respondents

Products	No		Yes	
	N	%	N	%
Air Conditioner	28	14	172	86
Refrigerator	11	5.5	189	94.5
Washing Machine	7	3.5	193	96.5
Mixer Grinder	3	1.5	197	98.5
Wet grinder	5	2.5	195	97.5

Table 2 specifies that 98.5% of the respondents own Mixer grinder, 97.50% of the respondents own we grinder, 96.50% of the respondents own washing machine and 94.50% of the respondents and refrigerator and lastly 86% of the respondents had air conditioners.

Media Of Advertisement - Advertising aims to promote the sales of a product or service and also to notify themasses about its structures. It is a current means of communicatingthevalueofaproductorservice with people at large. It uses different types of appeals to connect to consumers spread across the globe. The advertising industry provides a platform for the business entities to spread awareness about the products and services offered bythem.

Table: 3 (see in next page)

From the above table it is clear that respondents have given first rank to television second rank to radio, print as third rank, four to displays/exhibitions and rank five to hoardings and banners.

Respondents Influenced By Others Opinions - People believe another individual to be credible for a variety of reasons, such as perceived experience, attractiveness, knowledge, etc. Those with access to the media may use this access in an attempt to influence the public. An attempt was made to find out if therespondents are influenced by others opinion.

Table: 4 Influence by other people

S.	Influenced Opinion	No. of Respondents	%
1	Yes	196	98
2.	No	4	2
	Total	**200**	**100**

From the above table it infers that 98% of the respondents were influenced by others opinion about white goods and the remaining 2% of the respondents were not influenced by others opinion.

Sources Of Influence In Purchasing White Goods - People's opinions or behaviors can be changed as a result of social influences from amultitude of resources and individuals. The following table provides thats our ces of influence in purchasing white goods.

Table: 5 Sources of influences in purchasing white goods

S.	Sources of Influence	No. of respondents	%
1	Spouse	158	79
2	Family	29	14.5
3	Friends	8	4
4	Relatives	5	2.5
	Total	**200**	**100**

Factors Influencing The Purchase Decision Of Consumer Whitegoods - The marketing group must facilitate the consumers to acton their purchase intention.The organization can use a variety of techniques to achieve this.The relevant internal psychological process that is associated with purchase decision is integration. Once the integration is achieved, the organization can influence the purchase decisions much more easily. Consumer goods are normally more valued, high priced products and not frequently purchased products. The following table presents the opinion of the respondents about the factors influencing the purchase decision of consumer white goods.

Table: 6 (see in next page)

From the above table it is clear that three major influencers for purchasing decision; 72% of the respondents have strongly agreed with the factor of "Price" and 67% for "Quality", 4and 64.50% for celebrity.

Suggestions - Demand for consumer white goods is more volatile since it moves rapidly or disperses quickly in relation to business conditions. Marketers separate the current demand for white goods in terms of replacement old products and expansion of the total stock demand for such goods.

Consumers prefer high valued consumer white goods of well established brands.The marketers and manufacturers of the consumer goods must try to convert the brand consciousness into brand loyalty for their well established brands. The consumer behavior in this direction should properly be exploited by the manufacturers and dealers to maximize theirsales.

The buyers of consumer goods have largely shown their preference to make extensive enquiry from the dealers of different brands of the products. This trait should be matched with all the buyers in order to avoid post purchase dissatisfaction about the quality and performance of the products. The buyers of the consumer goods should insist that all the technical information are revealed on the use of durable products to enable them to use the products without any technical fault leading to frequent repairs,free servicing of the durables by dealers during the guarantee period insisted upon the buyers.

Conclusion - The market for consumer goods is becoming more competitive now a days. Therefore, the producer of white goods products should understand consumer interest much to find higher sale of their products. Marketers communicate with consumers and try to convince through every possible media. Highly inevitable to produce goods as preferred by the customer, ashe is the kingpin around whom the entire marketing activity revolves. Thus, a marketer who understands the behavior of the consumers and plan his marketing strategies to suit the needs and aspirations of the target market will definitely have an advantage over his competitors.

References :-

1. P.Sathya and C.Vijayasanthi, "Consumer behaviour towards consumer durable products in thiruvarur district", International journal of science and research, May 2016, pp 1612-1616.
2. Losarwar. S.G., "Consumer Behaviour towards Durable Products –A Study with reference to Marathwada Region", Indian Journal of Marketing, November 2002, pp.6-9.
3. Ruche Trehan and Harman Deep Singh, "A Comparative Study on Urban and rural Consumer", Indian Journal of Marketing, Vol.XXXIII, No.8, August 2003, pp.7-11.
4. Dr. Hitesh D. Vyas, "Consumer Purchase ofConsumer Durables: A Factorial Study",International Journal of Management & Strategy,July-December, 2010, Vol.1, No.1, pp. 1- 8/13.
5. Consumer Behaviour By-Ramanuj Majumdar Consumer Behaviour and Marketing Communication – By Kazmi
6. Venkateswara. M. and Reddy. B., "Marketingof TV sets – A Study of External and Internal Influence on Consumer Behaviour", Indian Journal of Marketing, Vol.27 (8): 20-24, August1997.

Table: 3 Different media of advertisement

Media	1		2		3		4		5		Total	
	N	%	N	%	N	%	N	%	N	%	N	%
Print	46	23	37	18.5	39	19.5	71	35.5	7	3.5	200	100
Radio	53	26.5	21	10.5	43	21.5	17	8.5	66	33	200	100
TV	112	56	42	21	23	11.5	17	8.5	6	3	200	100
Hoardings & banners	63	31.5	41	20.5	39	19.5	29	14.5	28	14	200	100
Displays & exhibits	19	9.5	36	18	25	12.5	43	21.5	77	38.5	200	100

Table: 6 Factors influencing purchasing decision

Factors	SDA		DA		NN		A		SA	
	N	%	N	%	N	%	N	%	N	%
Price	11	5.5	15	7.5	8	4	22	11	144	72
Colour	65	32.5	43	21.5	26	13	39	19.5	27	13.5
Brand	7	3.5	13	6.5	23	11.5	69	34.5	88	44
Offer	5	2.5	9	4.5	11	5.5	41	20.5	134	67
Discounts	9	4.5	15	7.5	22	11	55	27.5	99	49.5
Technical features	9	4.5	13	6.5	17	8.5	39	19.5	122	61
Quality	10	5	12	6	19	9.5	51	25.5	108	54
Shape & size	5	2.5	7	3.5	63	31.5	28	14	97	48.5
Brand image	11	5.5	15	7.5	29	14.5	41	20.5	104	52
Model & design	19	9.5	11	5.5	23	11.5	44	22	103	51.5
Celebrity	6	3	9	4.5	23	11.5	33	16.5	129	64.5

****

महाराजा यशवंतराव होलकर (प्रथम) का राजस्थान के राज्यों से खण्ड़नी वसूली अभियान

संध्या गर्ग *

यशवंतराव होलकर का उत्कर्ष – तुकोजीराव (प्रथम) की मृत्यु के पश्चात् होलकर राज्य में उसके पुत्रों के मध्य एक भ्रातघातक उत्तराधिकार युद्ध हुआ और उसी उत्तराधिकार युद्ध में महाप्रतापी एवं शक्ति संचयी यशवंतराव होलकर का अभ्युदय हुआ। उस समय राजपूताना के अनेक राजवंशों एवं सिंधिया राजवंश में इस प्रकार की गृहकलह व्याप्त थी। [1] उसके शक्ति संचय अभियान के दौरान उसे कई साथियों से अनन्य सहयोग की प्राप्ति हुई, जिसमें लाला भवानीशंकर, फतहसिंह माने, शामराव महाडिक पिम्पले, बालाजी कमलाकर, हरनाथ कुंवर, रामसिंह, पाराशर दादा, सारंगपुर का वजीर हुसैन, मीर घासी तथा मर्दान अली, रामपुरा का नजीब खां, भोपाल का काले खां तथा सदरूद्दीन खां, मेवाड़ का जफर अली के नाम उल्लेखनीय है।[2] उसी मध्य विख्यात पिण्डारी नेता अमीर खां ने यशवंतराव के शुजालपुर स्थित राणोगंज शिविर में उससे भेंट की, दोनों के मध्य हिस्सेदारी को लेकर विचार विनिमय और शर्तें तय की गई, पश्चात् उसे यशवंतराव की सेवा में ले लिया गया।[3] यशवंतराव के भावी अभियानों में अमीर खां उसका अतिविशिष्ठ सहयोगी बना रहा। यशवंतराव के शक्ति संचय अभियान में उस समय तक दिल्ली तथा रूहेलखण्ड के पठान, खानदेश, हैदराबाद तथा अर्काट के मुस्लिम, भील तथा पिण्डारी सम्मिलित थे।[4]

शक्ति संचय के पश्चात् यशवंतराव होलकर ने सर्वप्रथम अपने ज्येष्ठ भ्राता काशीराव के खिलाफ युद्ध छेड़ दिया। ई. 1798 में कसरावद के युद्ध में काशीराव के फ्रेन्च सेनापति शेवेलियन दुरदनेक को पराजित किया और महेश्वर स्थित पैतृक गादी पर उसने अधिकार कर लिया। महेश्वर में ही उसका राज्याभिषेक सम्पन्न हुआ और उसने देवी अहिल्या के कोष पर अधिकार कर लिया। राज्याभिषेक के पश्चात् उसने अपने अनुचरों को यथायोग्य सम्मानित किया।

आंग्ल शक्ति का अभ्युदय और यशवंतराव होलकर का पूना त्यागना तथा राजस्थान की ओर उसका रूख – ई. 1802 का वर्ष दक्षिण के अभियान के लिए यशवंतराव के गुंजायमान पराक्रमों के साथ आरंभ हुआ। यह वर्ष पेशवा बाजीराव (द्वितीय) तथा उसके राज्य के लिए महान वित्तीयां लेकर आया। यशवंतराव होलकर ने ई. 1802 में इस दृढ़ संकल्प के साथ पूना पर आक्रमण किया था कि वह अपने प्रिय विठोजी के हत्यारे पेशवा को कभी भी चैन की सांस नहीं लेने देगा। साथ ही उसने पेशवा से यह भी अनुरोध किया था कि उसे होलकर राज्य का औपचारिक स्वामी मान लिया जाये, किन्तु पेशवा ने उसकी एक न सुनी। फलत: उसने ई. 1802 में पेशवा और सिंधिया की संयुक्त सेना को पराजित किया। पूना के युद्ध में पराजित होने के पश्चात् पेशवा बाजीराव (द्वितीय) अंग्रेजों की शरण में चला गया और उसने ई. 1802 मे अंग्रेजों से बेसिन की सन्धि कर ली। बेसिन की इस सन्धि की सम्पूर्ण मराठा संघ में भयंकर प्रतिक्रिया हुई। इस सन्धि को क्रियान्वित करके पेशवा बाजीराव ने मराठा स्वतंत्रता का अन्त कर लिया। [5] बेसिन की इस सन्धि से मराठों के सम्मुख अब आंग्ल हस्तक्षेप से अपनी स्वतंत्रता की रक्षा का एक जटिल प्रश्न उत्पन्न हो गया। पेशवा के छोटे भाई चिमनाजी ने स्वयं पेशवा के इस कृत्य की कटु आलोचना की थी।[6]

ई. 1803 में अंग्रेजों ने सिंधिया और भोसले को भी पराजित कर इनसे अपनी अधीनता स्वीकार करा ली थी। सन् 1805 में कलकत्ते से दिल्ली तक और ग्वालियर से कर्नाटक तक भारत में अंग्रेजों का प्रभाव कायम हो गया था।[7] मराठों की पारस्परिक ईर्ष्या व कलह के कारण मराठा संघ को आघात पहुंचा और बेसिन सन्धि के माध्यम से ब्रिटिश श्रेष्ठता किसी एक राज्य पर नहीं अपितु मराठा संघ पर लागू हो सकी।[8]

बेसिन की इस सन्धि से आंग्ल शक्ति इस बात के लिए वचनबद्ध हो गई थी कि यथासंभव पराजित पेशवा बाजीराव (द्वितीय) को पूना की गद्दी पर पुन: बैठाया जाय, अत: अंग्रेज, यशवंतराव होलकर पर निरंतर दबाव डाल रहे थे कि वह अतिशीघ्र पूना को त्यागकर लौट जाये। लगातार ब्रिटिश दबाव एवं आर्थिक कठिनाइयों के चलते 13 मार्च, 1803 ई. को उसने पूना त्याग दिया। पूना त्यागने के पश्चात् उसने अपना रूझान राजस्थान के राज्यों पर केन्द्रीत किया।

यशवंतराव होलकर और उदयपुर राज्य – दक्षिण को त्यागने के पश्चात् यशवंतराव होलकर ने राजपूताना की ओर अपना रूख किया। सेना के व्यय, वेतन और भरण–पोषण के लिए उसे धन की अत्यधिक आवश्यकता थी, अत: उसने नाथद्वारा को लूटा और नाथद्वारा के पुजारी तथा वहां के लोगों से उसने तीन लाख रूपये वसूल किये।[9] नाथद्वारे की सम्पत्ति लूट कर वह बनैड़ा और शाहपुरा पहुंचा। इन दोनों स्थानों से भी उसने लूटमार कर धन वसूल किया।

जब यशवंतराव होलकर उदयपुर पहुंचा तब होलकर के आने की खबर को सुनकर उदयपुर का शासक घबरा गया, तब वहां के राणा ने सन्धि के लिए उसके पास अजीतसिंह नामक राजपूत को भेजा। तब होलकर ने उदयपुर से 40 लाख रूपये की मांग की। इतने रूपयों का इंतजाम कहां से किया जायेगा? राणा के सम्मुख यह समस्या थी, किन्तु इस रकम को अदा किये बिना किसी प्रकार छुटकारा भी नहीं मिल सकता था। राणा ने जैसे–तैसे निवासियों से रुपया लेने का कार्य आरम्भ किया और रानियों के आभूषणों को बेच कर कुल 12 लाख रुपया जमा किया गया, किन्तु अभी भी बहुत बड़ी रकम बाकी थी। बाकी धन की अदायगी के लिए राजपरिवार और नगर के प्रमुख व्यक्तियों को होलकर के पास गिरवी रखा गया।[10] इसके पश्चात् होलकर की सेना ने भिन्न–भिन्न इलाकों और दुर्गों पर हमला करके उसने

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अगणित रुपया वसूल किया।

उदयपुर से रकम की वसूली के लिए यशवन्तराव ने बालाराम सेठ को उदयपुर में ही छोड़ दिया, ताकि वह धन की अधिक से अधिक वसूली कर सके। मेवाड़ राज्य की यह दुर्दशा दस वर्ष तक निरन्तर चलती रही।

यशवन्तराव होलकर ने जयपुर पर आक्रमण किया और जयपुर राज्य से उसने बलपूर्वक 18 लाख रूपये वसूल किये।

यशवन्तराव होलकर और जोधपुर राज्य के संबंध - अंग्रेजों के विरूद्ध मानसिंह राठौर - यशवन्तराव मैत्री गठबंधन - 24 दिस.,1805 ई. में सम्पन्न हुई राजपुर घाट की अपमानजनक सन्धि से यशवन्तराव होलकर अत्यधिक अपमानितएवं प्रतिशोध से धधक रहा था। वह कम्पनी सरकार से अपने इस अपमान का बदला लेना चाहता था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसे अभी भी शक्तिशाली मित्र की तलाश थी, जो फिरंगियों के विरूद्ध उसकी मदद कर सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसने राजस्थान पर नजर दौड़ाई। उसे यह भान हुआ कि मारवाड़ (जोधपुर) नरेश मानसिंह राठौर उसके इस उद्देश्य में सहायक सिद्ध हो सकता है। मानसिंह और अंग्रेजों के मध्य भी कोई अच्छे संबंध नहीं थे। जोधपुर पर मानसिंह राठौर के राज्यारूढ़ होते ही पोकरण का ठाकुर सवाईसिंह चम्पावत उसके विरुद्ध षड्यंत्र करने लगा, साथ ही मानसिंह को दौलतराव सिन्धिया से भी भय था।

अत: अपनी राजनीतिक स्थिति के सुदृढ़ीकरण के लिए मानसिंह ने यशवन्तराव होलकर से सम्पर्क स्थापित करना उचित समझा। होलकर का वांछित सहयोग प्राप्त करने के लिए मानसिंह ने अपने प्रतिनिधि भण्डारी कल्याणदास और गेहलोत जीवनदास को दिस.ई.1803 में यशवन्तराव होलकर के पास भेजा।[11] बदले में होलकर ने भी मानसिंह को टीका भेजकर सम्मानित किया, साथ ही मैत्री के लिए अपने प्रतिनिधि पण्डित बलवन्तराव को जोधपुर भेजा।[12] होलकर का प्रतिनिधि 10 जनवरी, ई.1804 को मानसिंह से मिला।[13] उधर मानसिंह अंग्रेजों से भी सन्धि के लिए चचरित था, तभी आंग्ल-होलकर संबंध बिगड़ने लगे। मानसिंह को दोनों में से एक को चुनना था, अत: उसने होलकर का चयन मैत्री संबंधों के लिए किया। होलकर-राठौर के मध्य 'नांद' नामक ग्राम में अजमेर के निकट सात दिन तक वार्ता चली। अन्तत: 17 जनवरी, ई.1804 को कौलनामें पर हस्ताक्षर हो गये। कौलनामें की शर्तें इस प्रकार थी-[14]

1. अजमेर और साँभर का प्रदेश जिस पर दौलतराव सिन्धिया ने अधिकार कर रखा है, उन प्रदेशों को होलकर पुन: राठौर को दिलवायेगा।
2. जयपुर के मामलात का अंतिम निर्णय राठौर नरेश की उपस्थिति में होगा।
3. होलकर की सहायता के लिए मानसिंह अपनी सेनाएं भेजेगा।
4. होलकर के परिवार को जोधपुर में शरण दी जावेगी।

सन्धि की शर्तो के अनुसार अप्रेल, ई.1804 में राठौर शासक मानसिंह ने होलकर के परिवार को मारवाड़ आने का निमंत्रण दिया। जून, 1805 ई. होलकर का परिवार जोधपुर पहुंचा। होलकर परिवार की दो रानियां लाड़ाबाई और तुलसाबाई, यशवन्तराव की पुत्री भीमाबाई, पुत्र मल्हारराव तथा भतीजा हरिराव प्रमुख थे। इनके साथ गणपतराव, पण्डित वायाजी फड़नवीस, हरिसिंह कुमेदार, राजाराम, बबिया भायाजी और नीनोमाचन्द्र भी थे।[15] मानसिंह ने होलकर परिवार को चैनपुरा में ठहराया था। इनका शानदार स्वागत हुआ और मानसिंह होलकर की रानियों का राखीबन्ध भाई बन गया।[16]

मेहमानों की खातिर-तवज्जों, आव-भगत और आतिथ्य व्यय के लिए राठौर शासक ने गोड़वाड़ के चार हजार रुपयों की आय की जागीर, भसूड़ी गांव और दो हजार रुपयों की आय का रूगोली गांव दिया गया था।[17] लगभग चार वर्ष तक होलकर का परिवार जोधपुर नरेश के यहाँ आतिथ्य में बना रहा और जुलाय, ई. 1809 में उक्त परिवार पुन: होलकर से जा मिला।[18]

'नांद सम्मेलन' में अमीर खां भी यशवन्तराव होलकर के साथ था। नांद सम्मेलन में मुलाकातों से मानसिंह राठौर और होलकर के परिवार में घनिष्ठता स्थापित हो गई थी। दोनों नरेशों ने एक ही पाट पर बैठकर खाना खाया।[19] नांद सम्मेलन के मध्य ही मानसिंह और अमीर खां के मध्य मतभेद उत्पन्न हो गया था, अत: वह पश्चातवर्ती बैठकों में अनुपस्थित रहा और रूष्ट होकर अजमेर चला गया था।[20]

होलकर परिवार ने राठौर मानसिंह के साथ मैत्री संबंधों को बनाए रखा। प्रतिवर्ष रक्षाबंधन के अवसर पर तुलसाबाई और लाड़ाबाई, मानसिंह राठौर को राखियाँ भेजती थी और इस उपलक्ष्य में राठौर शासक भी उन्हें बहुमूल्य उपहार भेजा करता था।[21]

होलकर-राठौर की यह मैत्री नांद नामक ग्राम में हुई थी, इसलिए इतिहास में यह 'नांद सम्मेलन' के नाम से विख्यात है । इस नांद सम्मेलन का पूर्ण विवरण जोधपुर राज्य की ख्यात : भाग 4, पृ. 41 में इस प्रकार दिया हुआ है-

'हुलकर जसवंतराय आयो, गांव नाद रे नाके डेरा हुआ' जसवंतराय रे सामाँ पधारण रो ने बराबर बैठण रो हंजूर ना फुरमायो' पिण जसवंतराय तो कयो के 'मारे तो महाराज मालक है' छड़ा घोड़ा सू महाराज रे ड़ेरे उरो आयो, पिणमन में बेराजी हुवो .... दु तरफा सिर पाव भिज-मानियॉ मेले जी. महाराज जलूसी असवारी कर हुलकर रे डेरे पधारीया. हाथी रे हवदे विराजीया. लारे खवासी में नीबाज रा ठाकुर सुरताणसिंघजी बैठ चवंर कीयो. ने जीवणी बाजू बगली हाथी उपर आउवा रा ठाकुर वखतावरसिंघ जी बैठ चंवर कीयो। नेडावी वाजू बगली हाथी उपर रीयॉ रा ठाकुर बिडदसिंघ बेस चंवर कीयो. सारा सरदारां रे सिले कियोड़ी थी, सो जयवंतराय राठोडां री फौज देख राजी हुवो, अर महाराज सू अरज करी वे उदेपुर परणीजण री मरजी हुवै तो कूच कराइजे सो उदेपुर परणाय लाऊं. ने जैपुर लेण री मरजी हुवै तो कूच कराइजे सो. जयपुर खाली कराय लेवाँ. तरै हजूर फुरमायो -'सोबेदार थारो भरोसो इसो इज है. पण दूतरफी दुरूस्ताई होय गई. फेर काम री पड़सी तो थे किस अलगा हो तरै जसवंतराय कयो के आपरो रूको आवसी जिण वखत आयो (रे) सूँ पछै जसवंतराय कोई दिन उठै रहै दिखणा री तरफ कूच कीयो।'[22]

यशवन्तराव को पूर्ण आशा थी कि अंग्रेजों के विरूद्ध इस संघर्ष में उसको मानसिंह का पर्याप्त सहयोग प्राप्त होगा, किन्तु उदयपुर की राजकुमारी कृष्णाकुमारी के विवाह के प्रश्न को लेकर जयपुर, जोधपुर और उदयपुर राज्यों में भयंकर विरोध उत्पन्न हुआ। मानसिंह स्वयं कृष्णाकुमारी से विवाह के लिए समउत्सुक था, अत: वह कृष्णाकुमारी के विवाह प्रकरण में उलझ कर रह गया और यशवन्तराव होलकर को उसके सहयोग की उम्मीद त्याग देनी पड़ी। इस प्रकार नांद सम्मेलन को आंशिक रूप से ही सफल माना जा सकता है।

यशवन्तराव होलकर और कोटा के शासक जालिमसिंह झाला के संबंध - पानीपत के तृतीय युद्ध में पेशवा की पराजय होने के कारण मराठों का बल क्रमश: क्षीण होता जा रहा था, किन्तु पेशवाओं का हास मराठों का हास नहीं था। सिन्धिया, होलकर, गायकवाड़ तथा भोसला सामन्त स्वतंत्र होकर अपनी शक्ति को पुष्ट करने में लगे थे। यद्यपि मराठों के संगठन मेंशिथिलता अवश्य आई थी तथापि राजपूताना और मध्य भारत के राजपूत मराठोंके आतंक से मुक्त नहीं हो पाये थे। कोटा रियासत को मराठों से सर्वाधिक खतरा

था। कोटा की सीमा एक ओर होलकर के राज्य से तथा दूसरी ओर सिन्धिया के राज्य से मिली हुई थी, इसलिए होलकर और सिन्धिया दोनों का दबाव कोटा पर निरन्तर बना रहता था।

कोटा के सर्वेसर्वा जालिमसिंह ने कई बार मराठा सामन्तों की मांगों को पूरा किया किन्तु उनकी मांगों का कभी अन्त ही नहीं होता था, जिससे कोटा राज्य बड़ा तंग रहता था, कोटा के महाराव गुमानसिंह, उदयपुर के राणा अरिसिंह तथा मारवाड़ के विजयसिंह ने एक समय मराठों के निष्कासन के लिए नाथद्वारा में एकत्र होकर परामर्श भी किया था,[23] किन्तु इन तीनों के निश्चय का क्या हुआ? विदित नहीं होता।

जिस समय जिराल्ड लेक के नेतृत्व में अंग्रेजों का यशवन्तराव होलकर से युद्ध हुआ और कर्नल मॉनसन अपनी सेना के साथ होलकर के विरूद्ध युद्ध करने के लिए कोटा से गुजरा तब जालिमसिंह ने मॉनसन की सहायता के लिए कोटा की एक सैनिक टुकड़ी उसे प्रदान की थी। इस सैनिक टुकड़ी के नायक पलायथे के जागीरदार अमरसिंह थे।[24] उसी समय होलकर की सेना दो भागों में विभक्त थी – एक का नेतृत्व खान बगंस कर रहा था और दूसरी का हरनाथ दादा। इस युद्ध में पलायथे के जागीरदार अमरसिंह मारे गये। साथ ही हरनाथ दादा ने कप्तान लूकन को भी मौत के घाट उतार दिया था।[25]

अमरसिंह और लूकन के धराशाही होते ही कर्नल मॉनसन मुकुन्दरा घाटी[26] से पलायन करता हुआ कोटा की तरफ भागा किन्तु जालिमसिंह ने उसे कोटा में प्रवेश नहीं होने दिया। कर्नल मॉनसन के प्रकरण में होलकर से अनबन होने पर भी जालिमसिंह होलकर की मित्रता को बहुमूल्य और हितकर समझता था।[27]

कोटा का राज्य तो सूबेदार मल्हारराव के काल से ही खण्ड़नी देता आ रहा था। पीपल्या के युद्ध में भी यशवन्तराव होलकर ने कोटा राज्य से 3 लाख रुपये खण्ड़नी बतौर वसूल किये थे।[28] कोटा राज्य के साथ होलकर के पुश्तैनी और मधुर संबंध थे। खण्ड़नी वसूली के घाव जालिमसिंह के हृदय में चाहे कितने भी कसकते रहे हो तथापि वह होलकर राजवंश के लोगों से स्नेह और सदाशयता के ही संबंधों को बनाए रखता था। यशवन्तराव होलकर जालिमसिंह को 'काका' कहकर संबोधित किया करता था और जालिमसिंह उसे 'भतीजे' के नाम से पुकारा करता था।[29] प्रेम और स्नेह के ये संबंध यशवन्तराव होलकर की मृत्यु के बाद भी स्थायी बने रहे। जब यशवन्तराव के पुत्र मल्हारराव होलकर (द्वितीय) का भानुपरा में राज्यारोहण हुआ तब भी उस अवसर पर उपस्थित होकर जालिमसिंह ने अपनी शुभकामनाएं प्रेषित की और नवीन शासक के प्रति अपना सम्मान प्रकट किया।[30] तुलसाबाई के राज्य प्रबंधन में भी जालिमसिंह आवश्यक मदद प्रदान करता था। सेठ बालाराम के कत्ल के पश्चात् जब दीवान तात्या जोग मराठा दल का नेता बना तब गफूर खां के नेतृत्व वाले मुस्लिम दल से उसका विरोध प्रारंभ हो गया था। अन्ततः तब दोनों दलों में समझौते के लिए कोटा के जालिमसिंह की ही मध्यस्तता स्वीकार की थी।[31]

कोटा के राज्य में कई दक्खिनी (दक्षिणी) मराठों को जागीरे भी प्राप्त थी। ऐसे दक्षिणी मराठा ब्राह्मणों में होलकर के दीवान तात्या जोग (महादेव विठ्ठल किवे) का नाम उल्लेखनीय है। कोटा स्थित 'सरोला' का ठिकाना दक्षिणियों मराठों का एक उल्लेखनीय ठिकाना था। होलकर के दीवान की जागीर में जुलमी (चेचट) नामक ग्राम जागीरी के अन्तर्गत था। दक्खिनी ब्राह्मण और मराठों कोकोटा की जागीरी में कुल 71 गांव प्राप्त थे, जिनकी आमदनी 1 लाख 28 हजार थी। मराठा सामन्त चाहते थे कि कोटा राज्य में उनके मातहत जागीरदारों की संख्या बढ़ती रहे। कोटा में मराठा जागीरदारों की संख्या 39 थी। जिनमें होलकर, सिन्धिया तथा पवार द्वय के सम्मिलित जागीरदार थे। इन मराठा जागीरदारों की बढ़ती हुई संख्या जालिमसिंह को बहुत अखरती थी,[32] किन्तु वह मराठा सामन्तों के दबाव के कारण बेवस था। राजपूत जमीदारों की भांति मराठा जागीरदारों की भी कोटा दरबार में बड़ी प्रतिष्ठा थी। कोटा राजदरबार में जन्म दिन तथा त्यौहारों के अवसर पर इन मराठा जमीदारों को भी सिरोपाव (सिर से पैर तक के वस्त्र) भेंट इत्यादि से सम्मानित किया जाता था,[33] किन्तु ज्यों-ज्यों मराठा सामन्तों का कोटा से आधिपत्य घटता गया त्यों-त्यों मराठा जमीदारों का भी कोटा से शनैः शनैः बल घट गया था।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ.रघुबीरसिंह : पूर्व आधुनिक राजस्थान (ई.1527-1947), पृ. 215, 220, 221, 225
2. अ.ना.भागवत : भवानीशंकर बक्षीयांची रोजनिशी, खण्ड़-5, पृ. 50-51
3. मालकम : ए मेमायर ऑफ सेन्ट्रल इण्डिया, जि.1, पृ.203 – सिंधिया राज्य के संस्थापक राणोजी सिंधिया का देहावसान शुजालपुर (म.प्र.) में हुआ था। आज भी उनकी सुन्दर छत्री राणोगंज स्थित शुजालपुर में उनकी स्मृति को ताजा कर रही है – मालकम, जि.1, पृ. 117
4. मार्टिन : वेलेजली डिस्पेचेस, जि.4, पृ. 189
5. डॉ. रघुबीरसिंह : पूर्व आधुनिक राजस्थान, पृ. 221
6. सर देसाई : मराठों का नवीन इतिहास, जि.3, पृ. 408
7. डॉ. मथुरालाल शर्मा : कोटा राज्य का इतिहास, भाग 2, पृ.489
8. पी.ई.रॉबर्ट्स : इण्डिया अण्डर वेलेजली, पृ. 193
9. टॉड : राजस्थान का इतिहास (हि.अ.), पृ. 279
10. – वही –, पृ. 281
11. हकीकत बही, नं. 8, पृ. 444
12. – वही –, पृ. 450
13. – वही –
14. अर्जी बही, नं.5, पृ. 105 जोधपुर
15. व्ही.व्ही.ठाकुर : होलकरशाहीचा इतिहासांची साधने, जि.2, पृ. 70
16. हकीकत बही, नं.9, पृ. 3-4-37
17. – वही –, पृ. 37
18. – वही –, पृ. 3-4-22
19. डॉ. रघुबीरसिंह : पूर्व आधुनिक राजस्थान, पृ. 243
20. हकीकत बही, नं.9, पृ. 3-4-22
21. – वही –, पृ. 37
22. जोधपुर राज्य की ख्यात, भाग 4, पृ. 41
23. डॉ. मथुरालाल शर्मा : कोटा राज्य का इतिहास, भाग 2, पृ.467
24. – वही –, पृ. 490
25. ओवेन : वेलेजली डिस्पेचेज, पृ. 477
26. मुकुंद दर्रा (मुकुंदरा घाटी) : महाराव माधवसिंह की मृत्यु के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र मुकुंदसिंह कोटा रियासत का शासक बना। तब उसने अपनी सीमा पर हाड़ौती और मालवा के मध्य एक नवीन मार्ग का निर्माण कराया और उस मार्ग का नाम 'मुकुंद दर्रा' अथवा 'मुकुंद द्वार' रखा गया। इसी मुकुंदवाड़ा दर्रे से अथवा मुकुंदरा घाटी से सेनापति मॉनसन पराजित होकर भागा था – टॉड : राजस्थान का इतिहास (हि.अ.), पृ.

781
27. डॉ. मथुरालाल शर्मा : कोटा राज्य का इतिहास, भाग 2, पृ.497
28. – वही –, पृ. 495
29. टॉड : राजस्थान का इतिहास (हि.अ.), पृ. 814
30. मालकम : ए मेमायर ऑफ सेन्ट्रल इण्डिया, जि.1, पृ. 283
31. मिल तथा विल्सन : दि हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इण्डिया, जि.8, पृ. 123
32. डॉ. मथुरालाल शर्मा : कोटा राज्य का इतिहास, भाग 2, पृ. 533
33. – वही –

****

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के अंतर्गत महिलाओं की स्थिति का अध्ययन (इंदौर जिले के संदर्भ में)

डॉ. खुशबू जैन*

शोध सारांश – भारतीय संसद द्वारा 2 फरवरी 2006 को राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 योजना ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार शुरु करने के लिए प्रारम्भ की गई। ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा कार्यान्वित राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (नरेगा) 2005 सरकार का प्रमुख कार्यक्रम है, जो गरीबों की जिंदगी से सीधे तौर पर जुड़ा है और जो व्यापक विकास को प्रोत्साहन देता है। यह अधिनियम विश्व में पहला ऐसा अधिनियम है जिसमें रोजगार की गारंटी दी जाती है। इसका मकसद है। ग्रामीण क्षेत्रों के परिवारों की आजीविका सुरक्षा को बढाना। इसके तहत हर घर के वयस्क सदस्यो को एक वित्तीय वर्ष में कम से कम 100 दिनों का रोजगार दिए जाने की गारंटी है। यह रोजगार शारीरिक श्रम के संदर्भ में है और उस वयस्क व्यक्ति को प्रदान किया जाता है जो इसके लिए राजी हो। इस अधिनियम का दूसरा लक्ष्य टिकाऊ परिसम्पत्तियों का सृजन करना, ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण व विकास करना और ग्रामीण निर्धनों की आजीविका के आधार को मजबूत बनाना। इस अधिनियम का मकसद सूखे जंगलों के कटान, मृदा क्षरण जैसे कारणों से पैदा होने वाली निर्धनता की समस्या से भी निपटना है ताकि रोजगार के अवसर लगातार पैदा होते रहें।

प्रस्तावना – भारत एक कृषि प्रधान एवं ग्रामीण बाहुल्य राष्ट्र है। ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत परिवार का मुख्य व्यवसाय सामान्यत: कृषि है और भारत की कृषि मानसून पर निर्भर है ।जो अनिश्चित है। जिसके कारण अल्प वर्षा व अति वर्षा की स्थिति बनी रहती है जिससे कि ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार का कोई अन्य साधन उपलब्ध न होने के कारण बेरोजगारी व्यापक रूप में विद्यमान है। हमारे देश में बेरोजगारी व जनसंख्या वृद्धि जैसे ज्वलंत समस्या भयावह रूप ले चुकी है तथा जिस अनुपात में जनसंख्या वृद्धि हो रही है उसी अनुपात में कृषि एवं कृषि पर आधारित कार्यो का अभाव है । जिससे ग्रामीण क्षेत्र में निवासरत परिवार को रोजगार उपलब्ध करा पाना संभव नहीं है । अत: रोजगार उपलब्ध न होने के कारण ग्रामीण शहरों की ओर पलायन करने लगे है। गांव से शहरों की ओर पलायन पर रोक लगाने व निवास स्थान पर रोजगार उपलब्ध कराने, ग्रामीण परिवार के जीवन स्तर में सुधार हेतु व महिला श्रमिकों में सशक्तिकरण लाने हेतु केंद्र सरकार द्वारा 5 सितंबर 2005 को रोजगार गारंटी अधिनियम पारित किया गया । जिसके अंतर्गत प्रत्येक वित्तीय वर्ष में ग्रामीण परिवार को 150 दिन के रोजगार की गारंटी दी जाती है। यह पहली ऐसी योजना है जिसमें गारंटी युक्त रोजगार उपलब्ध कराया जाता है। अपने 2008 से यह कानून भारत के सभी गांवों में लागू है। इस अधिनियम में समयबद्ध रोजगार गारंटी और 15 दिन के भीतर मजदूरी का भुगतान आदि शामिल हैं। इसके अंतर्गत राज्य सरकारों को प्रोत्साहित किया जाता है कि वे रोजगार प्रदान करने में सावधानी बरतें क्योंकि रोजगार प्रदान करने के खर्च का 90 प्रतिशत हिस्सा केन्द्र वहन करता है। इसके अलावा इस बात पर भी जोर दिया जाता है कि रोजगार शारीरिक श्रम आधारित हो जिसमें ठेकेदारों और मशीनों का कोई दखल न हो। अधिनियम में महिलाओं की 33 प्रतिशत श्रम भागीदारी को भी सुनिश्चित किया गया है। श्रम मद पर 60 प्रतिशत और सामग्री मद में 40 प्रतिशत व्यय किये जाने की अधिकतम सीमा निश्चित की गयी है।

शोध का उद्देश्य:-

1. मनरेगा में ग्रामीण महिलाओं के शहरों की ओर होने वाले पलायन को रोकना।
2. मनरेगा में महिलाओं की स्थिति के बारे में जानना।
3. मनरेगा में महिलाओं की समस्याओं का अध्ययन एवं निराकरण करना।

शोध प्रविधि – शोध में प्राप्त समंको को आवश्यक जांच शोध अध्ययन का मूलभूत आधार शोध सामग्री, समंक व सूचनाओं का एकत्रीकरण होता है । प्राप्त समंको का संग्रहण, वर्गीकरण, सारणीयन व प्रस्तुतीकरण किया गया है व विश्लेषणात्मक तुलना करने के बाद ही सम्मिलित किए गए है । शोध प्रबंध में सांख्यिकीय परिसीमाओ व आपवादों को भी ध्यान में रखा गया है। इनके अलावा प्रश्नावली का चयन, निर्देशन विधि का उपयोग, समंको का ग्राफीय प्रदर्शन कर विश्लेषण व निर्वाचन किया गया है ।

शोध परिकल्पनाएं :

1. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना से महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ बनेगी ।
2. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, ग्रामीण महिलाओं के शहरों की ओर पलायन को रोकने में सहायक होगी।

मनरेगा का परिचय – महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना अधिनियम ग्रामीण परिवारों के जीवन से जुड़ा है और उनके जीवन स्तर को उठाने के लिए कृतसंकल्प है। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों के अकुशल मजदूरों के लिए प्रति वर्ष 150 दिन की मजदूरी की गारंटी देना है ,जो मेहनत मजदूरी करके अपने परिवार की रोजी-रोटी चलाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी को दूर करने व ग्रामीणों को शहरों की ओर पलायन को रोकने के लिए केंद्र सरकार द्वारा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना 2 फरवरी 2006 को आंध्र प्रदेश के अनंतपुर जिले के बांदापल्ली ग्राम से लागू किया गया। इसके पश्चात प्रथम चरण में इस योजना को देश के अत्यंत पिछड़े हुए 200 ग्रामीण जिले में लागू किया गया और वित्तीय वर्ष 2007-08 में 130 जिले, इसमें और शामिल किए गए तत्पश्चात 1 अप्रैल 2008

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) एम. बी. खालसा महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

को तृतीय चरण में भारत के शेष 585 ग्रामीण जिलों में लागू किया गया। 2 अक्टूबर 2009 को राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के नाम को संशोधित कर महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना कर दिया गया। यह योजना भारत सरकार की योजना है जिसे मंत्रालय द्वारा ग्रामीण विकास हेतु लागू किया गया है। यह योजना ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले ग्रामीण परिवारों को रोजगार प्रदान करती है। योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण परिवारों को उनके निवास स्थल पर ही रोजगार उपलब्ध कराना है।

इसके अतिरिक्त महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के निम्न उद्देश्य है -

1. जल संवर्धन एवं संरक्षण करना, सूखे की रोकथाम करना।
2. सिंचाई नहर एवं सिंचाई कार्यों सहित परंपरागत जल स्त्रोत संरचनाओं का पुनृद्धार।
3. भूमि विकास का कार्य, बाढ़ नियंत्रण एवं जल निकासी संबंधित कार्य।
4. बारहमासी ग्रामीण पहुंच मार्ग।
5. ग्रामीण भारत में रहने वाले सर्वाधिक कमजोर लोगों को रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाकर उनके सामाजिक सुरक्षा सुरक्षित करना।
6. समाज के हाशिए पर स्थित समुदायों विशेष रूप से महिलाओं, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के अधिकारों को कानून द्वारा सशक्त बनाना।
7. जमीनी स्तर पर पंचायती राज संस्थानों को मजबूती प्रदान करके लोकतंत्र को सशक्त बनाना।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना अपनी सामाजिक सुरक्षा, आजीविका सुरक्षा और लोकतांत्रिक शासन के माध्यम से ग्रामीण भारत में समग्र प्रगति का एक शक्तिशाली औजार बन गया है। इस योजना का क्रियान्वयन सभी ग्राम पंचायतों द्वारा किया जाता है। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के अंतर्गत महिलाओं को 1/3 आरक्षण दिया जाता है। इसके अतिरिक्त महिलाओं को मातृत्व भत्ता, कार्यस्थल पर शिशुग्रह, पेय जल और छप्पर उपलब्ध कराया जाता है। इस योजना के अंतर्गत मजदूरी के भुगतान में कोई लैंगिक भेदभाव नहीं किया जाता जिससे सामाजिक समानता बनी रहती है।

आंकड़ों का एकत्रीकरण एवं विश्लेषण

तालिका
इंदौर जिले के विकासखंडवार पंचायतों एवं ग्रामों की संख्या 2018 की स्थिति के अनुसार

विकासखण्ड	ग्राम	पंचायत
इन्दौर	150	64
महू	196	73
सांवेर	144	75
देपालपुर	174	100
कुल	664	312

तालिका 1 - (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

रेखा चित्र का स्पष्टीकरण :-

उपरोक्त रेखा चित्र से स्पष्ट होता है कि वित्तीय वर्ष 2013-14 मे मनरेगा के अंतर्गत कुल 1392040 श्रमिकों में से 638766 महिला श्रमिकों को रोजगार दिया गया जो कुल का 54.1% है। 2014-15 वर्ष में कुल 1290777 श्रमिकों की संख्या है जिसमें 595423 महिला श्रमिकों की संख्या है जो कुल का 53.87% है। इसी प्रकार 2015-16 वर्ष में कुल श्रमिकों 911633 जिसमें 387530 महिला श्रमिकों की संख्या है, जो कुल का 57.4% है वर्ष 2016-17 में कुल 1046808 श्रमिकों में 415239 महिला श्रमिकों को रोजगार दिया गया है, जो कुल का 60.3% है तथा 2017-18 वर्ष में भी कुल 1252657 श्रमिक है, जिसमें 362557 महिला श्रमिकों ने रोजगार प्राप्त किया है जो की कुल का 71.06% है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है। मनरेगा के अंतर्गत महिलाओं को प्राप्त रोजगार का प्रतिशत 33 आरक्षण से अधिक है जिसके माध्यम से महिला की स्थिति सुदृढ़ हुई है। अत: मेरी प्रथम परिकल्पना जो कि मैंने की थी कि 'मनरेगा योजना से महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ बनेगी' मेरी यह परिकल्पना सही सिद्ध हुई है।

तालिका 2 - मनरेगा के अंतर्गत अर्जित मानव दिवस का विवरण वित्तीय वर्ष 2013-14 से 2017-18 तक

वर्ष	प्रतिदिन अर्जित आय
2010-11	117.54
2011-12	127.67
2012-13	133.34
2013-14	142.04
2014-15	150.32
2015-16	168.59
2016-17	181.89
2017-18	190.23

Source- www.mp.nrega.in

आरेख 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

रेखा चित्र का स्पष्टीकरण :-

उपरोक्त रेखा चित्र से स्पष्ट होता है कि मनरेगा के अंतर्गत देय मजदूरी, मजदूरी अधिनियम के आधार पर निर्धारित की जाती है। वर्ष 2010-11 मे प्रतिदिन प्रति व्यक्ति अर्जित आय 117.54 रुपए, वर्ष 2011-12 में 127.67, वर्ष 2012-13 में 133.34, वर्ष 2013-14 में 142.04, वर्ष 2014-15 में 150.32, वर्ष 2015-16 में 168.59, वर्ष 2016-17 में 181.89, वर्ष 2017-18 में 190.23 रुपए प्रतिदिन प्रति व्यक्ति अर्जित आय निर्धारित की गई है। इस प्रकार मनरेगा में मजदूरी वृद्धि से महिला श्रमिको की शहरों की ओर होने वाले पलायन में कमी आई है। अत: मेरी द्वितीय परिकल्पना जो कि मैंने की थी कि 'मनरेगा योजना महिलाओं के शहरों की ओर पलायन को रोकने में सहायक होगी' मेरी यह परिकल्पना भी सही सिद्ध हुई है।

समस्याएं:-

1. कार्यस्थल पर समुचित सुविधा का अभाव होता है।
2. महिला श्रमिकों के अशिक्षित होने से मजदूरी भुगतान में मेटो के द्वारा गड़बड़ी की जाती है।
3. मनरेगा में श्रमिकों को भुगतान बैंकों व डाकघरों के माध्यम से होता है। अतरू महिला श्रमिकों को बैंकों की औपचारिकताएं पूरी करने में कठिनाई होती है।
4. महिला श्रमिकों की फर्जी मस्टर रोल बनाया जाता है, जिससे महिलाएं

योजनाओं के लाभ से वंचित हो जाती है।

5. महिला श्रमिकों को मातृत्व भत्ता, बेरोजगारी भत्तो का ज्ञान नहीं होता है।
6. महिला श्रमिकों को शिकायत निवारण प्रणाली के बारे में जानकारी नहीं होती है
7. ठेकेदारों के द्वारा महिला श्रमिकों के साथ दुर्व्यवहार किया जाता है।
8. महिलाओं को ग्रामीण रोजगार उपलब्ध कराया जाता है।

समाधान:-

1. कार्यस्थल पर समुचित सुविधा जैसे पेयजल, छप्पर,प्राथमिक चिकित्सा मुहैया करायी जानी चाहिए। अगर 06 साल से कम आयु के 05 या ज्यादा बच्चे हो तो झूलाघर की व्यवस्था की जानी चाहिए और झूलाघर की देखरेख के लिए महिला श्रमिक की नियुक्ति भी की जानी चाहिए।
2. महिला श्रमिकों को मेटो की जानकारी के बारे में शिक्षित किया जाना चाहिए ताकि वह इन गड़बड़ियों से बच सकें।
3. महिला श्रमिकों के खाते खुलवाने के लिए बैंकों डाकघरों को स्वयं आगे आना चाहिए तथा बैंकों व डाकघरों को ही खाते खुलवाने से संबंधित औपचारिकताएं पूरी करनी चाहिए।
4. महिलाओं श्रमिकों को मातृत्व भत्ता, बेरोजगारी भत्ता व शिकायत निवारण प्रणाली के बारे में जानकारी दी जानी चाहिए।
5. ठेकेदार द्वारा महिला श्रमिकों के प्रति दुर्व्यवहार किए जाने पर सरकार द्वारा उचित कार्यवाही की जानी चाहिए।
6. जहां तक संभव हो सके महिलाओं को ग्रामीण सीमा के 05 किलोमीटर के अंदर ही रोजगार उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

सुझाव:-

1. ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षित परिवार के सदस्यों को प्रशिक्षित कर कुशल कार्यों में सम्मिलित करना चाहिए ताकि प्रत्येक वर्ग के शिक्षित और अशिक्षित श्रमिकों को रोजगार प्राप्त हो सके।
2. योजना में कर्मचारियों की नियुक्ति स्थाई तौरपर की जानी चाहिए जिससे कार्यों का विशिष्टकरण होगा जिसका लाभ श्रमिकों व सरकार दोनों को प्राप्त होगा।
3. ऐसे कार्य जो मशीन की सहायता से किए जाते है उन पर रोक लगानी चाहिए ताकि ग्रामीण परिवारों को अधिक से अधिक रोजगार मिल सके।
4. सरकार द्वारा किसी उच्चाधिकारी से सामाजिक अंकेक्षण करवाना चाहिए ताकि भ्रष्टाचार जैसी विसंगति को रोका जा सके।
5. सरकार को ठेकेदारों की नियुक्ति पर रोक लगाना चाहिए जिससे ग्रामीण परिवार अधिकाधिक लाभान्वित हो सके।
6. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना में श्रमिकों द्वारा रोजगार के लिए किए गए आवेदन की जांच कर ही जॉब कार्ड का वितरण किया जाना चाहिए।
7. मनरेगा के अंतर्गत किए गए कार्यों की गुणवत्ता बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।
8. योजना में श्रमिकों द्वारा रोजगार के लिए किए गए आवेदन की जांच कर ही जाब कार्ड का वितरण किया जाना चाहिए।
9. सरकार द्वारा समय पर निधि का भुगतान किया जाना चाहिए जिससे मजदूरों को भुगतान करने में किसी प्रकार की कठिनाई का सामना ना करना पड़े।

निष्कर्ष - इस प्रकार कहा जा सकता है कि महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना राज्य सरकार की अच्छी प्रभावी योजनाओं में से एक है। जिसमें ग्रामीण महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ हुई है। इस योजना का ग्रामीण महिलाओं में सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। योजना के माध्यम से देपालपुर का ग्रामीण विकास हुआ है देपालपुर में महिलाओं को अधिक रोजगार मिला है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. फडिया,डॉ.बी.एल,शोधपद्धतियां,साहित्य भवन पब्लिकेशन
2. अनुसंधान परिचय ,पारसनाथ, राय, सी.पी. अनुसंधान परिचय
3. महात्मा गांधी नरेगा समीक्षा, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005 पर शोध अध्ययनों का संकलन 2010-11 से 2017-18
4. ग्रामीण तथा नगरीय समाजशास्त्र, साहित्य भवन 2007, प्रोफेसर एम. एल .गुप्ता, डॉ. डी .डी. शर्मा
5. भारत में ग्रामीण समाज, डॉ अमित अग्रवाल, विवेक प्रकाशन दिल्ली
6. मध्य प्रदेश का आर्थिक विकास, श्रीवास्तव प्रो.ओ.एस.
7. रिसर्च मैथोलॉजी, गोपाल लाल जैन, मंगलदीप पब्लिकेशन जयपुर
8. सामाजिक शोध व सांख्यिकी, रविंद्र मुखर्जी
9. आगे आए लाभ उठाएं, जनसंपर्क विभाग, मध्यप्रदेश
10. मनरेगा अधिनियम अंतर्गत सतर्कता एवं निगरानी समिति का गठन एवं दायित्व, पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग, भोपाल, मध्यप्रदेश
11. राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजना गारंटी अधिनियम, खेतरपाल लॉ पब्लिकेशन अधिनियम
12. आदिवासियों का सहारा ,राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, राजपूत उदय सिंह
13. एंपावरमेंट इफेक्ट ऑफ द एन.आर.ई.जी.एस. ऑन वूमेन वर्कर्स,अ स्टडी इन फॉर स्टेटस
14. सोशल इकोनामिक एंपावरमेंट आफ विमेन अंडर नरेगा ,नेशनल फेडरेशन फॉर इंडियन वीमेन
15. ग्रामीण क्षेत्र के विकास में मनरेगा योजना की भूमिका कुमार संतोष एंड रेनू प्रकाश
16. दैनिक समाचार पत्र : दैनिक भास्कर, नवभारत, पत्रिका ,नईदुनिया
17. साप्ताहिक समाचार पत्र : रोजगार और निर्माण, रोजगार खबर

Website :-

1. www.nrega.nic.in
2. www.mp.nrega.in
3. www.rural.nic.in
4. hhttps://nregarep2.nic.in/netnrega/dynamic2/dynamicreport_new4.aspx

तालिका क्रमांक 1

इंदौर जिले में मनरेगा के अंतर्गत महिला श्रमिकों की स्थिति वित्तीय वर्ष 2013–14 से 2017–18 तक

क्र.	ब्लॉग	वर्ष 2013–14			वर्ष 2014–15			वर्ष 2015–16			वर्ष 2016–17			वर्ष 2017–18		
		कुल	महिला	प्रतिशत	कुल	महिला	प्रतिशत	कुल	महिला	प्रतिशत	कुल	महिला	प्रतिशत	कुल	महिला	प्रतिशत
1.	देपालपुर	737502	344307	53.31	638095	300257	52.94	526112	224772	57.28	446771	165605	62.93	557176	111272	80.03
2.	इन्दौर	125375	58096	53.66	125054	57563	53.97	54146	23220	57.12	68961	29470	57.27	106293	37691	64.54
3.	महू	284984	126377	55.65	270187	120137	55.54	198706	82972	58.24	357552	145178	59.40	369848	136946	62.97
4.	सांवेर	244179	109986	54.96	257441	117466	54.37	132669	56566	57.36	173524	74986	56.79	219340	76648	65.06
		1392040	**638766**	**54.11**	**1290777**	**595423**	**53.87**	**911633**	**387530**	**57.49**	**1046808**	**415239**	**60.33**	1252657	362557	**71.06**

Source- www.mp.nrega.in

आरेख क्रमांक 1

इंदौर जिले में मनरेगा के अंतर्गत महिला श्रमिकों की स्थिति वित्तीय वर्ष 2013–14 से 2017–18 तक

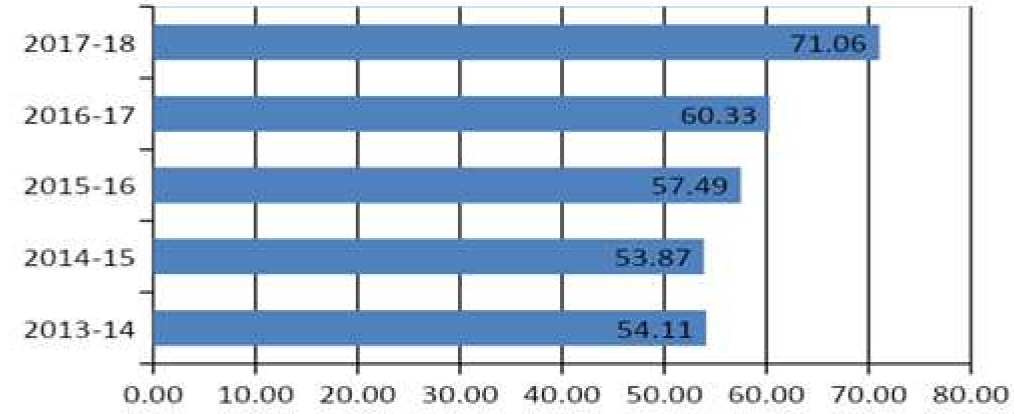

आरेख क्रमांक 2

इंदौर जिले में मनरेगा के अंतर्गत अर्जित मानव दिवस का विवरण वित्तीय वर्ष 2013– 14 से 2017– 18 तक

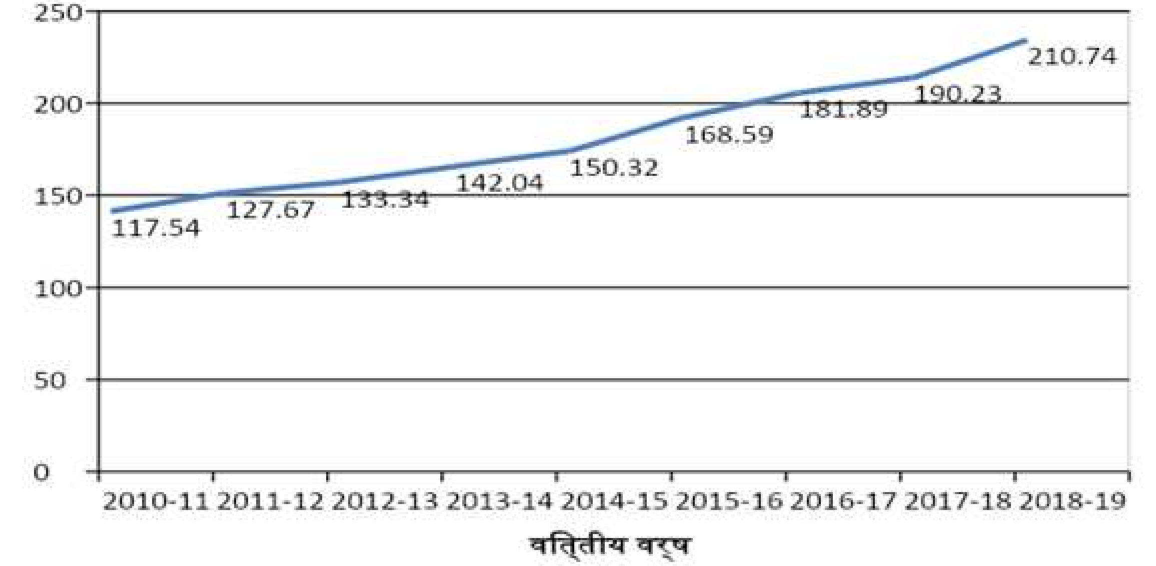

****

बजट एवं बजट द्वारा नियंत्रण तंत्र की प्रभावशीलता का विश्लेषण (राष्ट्रीय ताप विद्युत् निगम का एक प्रकरण अध्ययन)

सुनील कुमार विश्वकर्मा * डॉ. विकास सराफ **

शोध सारांश – यह अध्ययन, राष्ट्रीय ताप विद्युत् निगम (सिंगरौली, रिहंद एवं विन्ध्यनगर इकाई) में बजट और बजटीय नियंत्रण तंत्र की प्रभावशीलता का विश्लेषण, प्रभावित करने वाले कारकों का एक प्रकरण अध्ययन किया गया हैं, चूंकि संसाधन सीमित होने के साथ-साथ संगठन ऐसे साधनों की तलाश करता है जिसके द्वारा वह अपने निष्पादन एवं प्रदर्शन में सीमित संसाधनों के साथ जो लक्ष्य निर्धारित करता है वह प्राप्त कर सके। इसलिए, कम से कम संभव लागत पर अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए बजट और बजटीय नियंत्रण की अवधारणा को अपनाना चाहती हैं तथा साथ ही साथ कई हितधारकों के लिए अपने नेतृत्व के दायित्वों को पूरा करती हैं। बदलते परिवेश को देखते हुए, जिसमें अब संगठन कार्य करती हैं, जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बजट, जो एक सतत प्रबंधन गतिविधि है, को गतिशील व्यापारिक परिवेश में बदलाव के अनुकूल होना चाहिए।
शब्द कुंजी – बजट, बजटीय नियंत्रण तंत्र, प्रभावशीलता का विश्लेषण।

प्रस्तावना – संसाधन सीमित होते हुए भी माल और सेवाओं के उत्पादन में शामिल मानव कारक द्वारा सीमित संसाधनों को बर्बाद करने या उपयोग करने की प्रवृत्ति होती है। विभिन्न संगठनो के एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा करने के साथ, केवल कुछ ही जो कम से कम संभव लागत का उत्पादन करने में सक्षम हैं, व्यापार में बढ़ती प्रतिस्पर्धा से बचेंगे। इसलिए, यह व्यवसाय में बने रहने के लिए संभावित न्यूनतम लागत पर उत्पादन करने के लिए किए गए प्रत्येक कदम व्यवसाय के लिए सर्वोपरि है एवं लाभप्रदता तथा स्थिरता बनाये रखते हुए कॉर्पोरेट उद्देश्यों को भी प्राप्त करता है। अतः, सीमित कारकों और दीर्घकालिक उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए संगठन की गतिविधियों की यथार्थवादी योजना बनाने की आवश्यकता है। इसे प्राप्त करने के लिए, बजट एवं उसके नियंत्रण तंत्र को प्रभावशाली बनाने की आवश्यकता हैं क्योकि यह लंबे समय से एक कंपनी के प्रबंधन में एक आवश्यक उपकरण के रूप में माना जाता रहा है।

वित्तीय प्रबंधन में एक उपकरण के रूप में बजट नियमित रूप से निष्पादन योजनाओं एवं बजट अनुमोदन तैयार किये जाते है जो निष्पादन लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से विभिन्न गतिविधियों में प्रदर्शन लक्ष्यों, उत्पादन और परिणामों का वर्णन करते हैं। यह बजट अवधि में निर्धारित वार्षिक योजनाओं के अंतर्गत प्रत्येक उद्देश्य के लिए प्रदर्शन का स्तर बनाती हैं (लार्सन, 1999)।

बिजली उत्पादन कंपनियों में बजट प्रक्रिया एक नीति के रूप में वित्तीय कुशलता को बढ़ता है। उदाहरण के लिए, यह दर्शाता है कि प्रबंधन द्वारा विभिन्न विभागों और प्रमुख क्षेत्रों में धन कैसे वितरित किया जाता है। यह लागत और अनावश्यक खर्च को कम करने और मुनाफे को बढ़ाने के लिए योजना और पूर्वानुमान करने में मदद करता है ताकि कंपनी अपनी कॉर्पोरेट दृष्टि और लक्ष्य को पूरा कर सके और कंपनी को अपने ऋणों को पूरा करने में सक्षम कर सके (हॉर्नग्रेन, 1990)।

इसलिए, यह कहा जा सकता है कि बजट एक पैरामीटर है जो लोगों, विभागों, मंत्रालयों और संगठनों की वास्तविक उपलब्धि को मापता है, जबकि बजटीय नियंत्रण यह सुनिश्चित करता है कि स्थापना के समग्र वित्तीय और नीतिगत उद्देश्यों के अनुसार वास्तविक परिणाम सकारात्मक या नकारात्मक हैं।

साहित्य की समीक्षा – आज के समय में होने वाले पर्यावरणीय परिवर्तन से निगमों की कार्य पद्धति तेजी से बदल रही हैं जो न केवल उत्पादन प्रणाली, उपरकण परिवर्तन और नई तकनीक के उपयोग को प्रभावित करती हैं, बल्कि संगठनात्मक प्रदर्शन और प्रबंधन दर्शन को भी प्रभावित कर रही हैं, इसलिए इस रिपोर्ट में अध्ययन करने के लिए पृष्ठभूमि, समस्या का विवरण, अध्ययन का उद्देश्य, कार्यक्षेत्र, उद्देश्यों और महत्वपूर्ण अध्ययन शामिल हैं जो कि व्यापार संगठनों पर हैं जहां तक बजटीय नियंत्रण और प्रदर्शन का संबंध है।

बजट एवं बजट प्रक्रियाओं संबंधित अवधारणायें बाईबल में भी मिले हैं, जिसमे यह पाया गया कि खजाने के लिखित आदेश के बिना कुछ भी नहीं दिया जाता था। इतिहासकारों एवं पुरातात्विक खोजों से हमें यह पता चलता हैं कि इजिप्ट देश में अगले सात सालों के लिए अनाज का बजट एवं उसका भण्डारण किया जाता था ताकि अकाल के समय उस अनाज भण्डारण का उपयोग किया जा सके। सर्वप्रथम बजट की शुरुआत सन 1920 में बड़े औद्योगिक संगठनों में लागत और नकदी प्रवाह को प्रबंधित करने के लिए एक उपकरण के रूप में शुरू किया गया था।

भारत देश में सर्वप्रथम बजट की शुरुआत ब्रिटिश शासन द्वारा ईस्ट-इंडिया कंपनी के माध्यम से 7 अप्रैल, 1860 में हुआ था। पहला भारतीय बजट 18 फरवरी, 1896 को जेम्स विल्सन द्वारा प्रस्तुत किया गया था। मिस्टर विल्सन भारत परिषद के वित्त सदस्य थे जिन्होंने भारतीय वायसराय को सलाह दी थी। वह एक स्कॉटिश व्यवसायिक, अर्थशास्त्री एवं राज्यनैतिक भी थे। उन्होंने स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक की स्थापना किया।

सामान्यतः, संगठन वित्तीय, मानव, पूंजी और अन्य सहित कई

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** प्रोफेसर एवं निदेशक, विद्यासागर प्रबंधन संस्थान, भोपाल (म.प्र.) भारत

संसाधनों का उपयोग करते हैं। संगठनात्मक उद्देश्यों और लक्ष्यों को प्राप्त करने में प्रमुख संसाधनों में से एक वित्तीय संसाधन है। हालांकि, उद्देश्यों को हासिल करने के लिए बजट को प्रभावी ढंग से तैयार किया जाना चाहिए और उसका पालन करना चाहिए।

अत: यहाँ रणनीतिक प्रबंधन और बजट को एकीकृत करने की आवश्यकता होती है। इन लेखकों ने अवधारणा की है कि प्रभावी होने के लिए, बजट को संगठन की रणनीतियों, उचित रणनीतिक योजना और प्रदर्शन प्रबंधन प्रक्रियाओं के साथ गठबंधन किया जाना चाहिए, और उन प्रक्रियाओं को शामिल करना चाहिए जो मूल्य आधारित, परिणामी और निरंतर हो। समकालीन अध्ययनों से पता चलता है कि प्रभावी राजकोषीय नियमों वाली सरकारें बजट अनुशासन को मजबूत करती हैं। ये नियम बजट की तैयारी और उपयोग के लिए औपचारिक और अनौपचारिक प्रक्रियाओं पर ध्यान केंद्रित करते हैं, (बी.पी.बी. 2007)।

बजट की अवधारणा – बजट वित्तीय खाका है जो भविष्य के लिए एक फर्म की योजना को योग्य बनाता है। यह एक विस्तृत योजना है जो किसी निश्चित अवधि में वित्तीय और अन्य संसाधनों के अधिग्रहण और उपयोग को रेखांकित करती है। फ्लेमहोल्ट्ज (1983) के अनुसार, एक संगठन में एक बजट प्रभावी नियोजन और नियंत्रण के लिए एक तंत्र के रूप में कार्य करता है। स्किक (1999) ने कहा कि संगठनात्मक लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए किसी भी संगठन में बजट का मुख्य उद्देश्य योजना और नियंत्रण के लिए है।

आज के व्यवसायिक जगत में, संगठनों ने योजनाओं और नियंत्रण कार्यों में योगदान करने के लिए तैयार की जाने वाली कई प्रक्रियाओं और तकनीकों का विकास किया है। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण और व्यापक रूप से इन प्रक्रियाओं का इस्तेमाल बजट के रूप में होता है। बजट मुख्यत: पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की स्थापना, वास्तविक प्रदर्शन परिणामों की रिपोर्टिंग और पूर्वनिर्धारित लक्ष्य के अनुसार प्रदर्शन के मूल्यांकन के रूप में कार्य करता हैं। बजट नियंत्रण प्रणाली सर्वत्र हैं और यह वित्तीय नियोजन के लिए एक आवश्यक उपकरण के रूप में माना जाता है।

बजटीय नियंत्रण का उद्देश्य राजस्व और व्यय का पूर्वानुमान लगाना है जोकि एक मॉडल के माध्यम से, जिसमे व्यवसाय का प्रदर्शन कैसा होना चाहिये, किया जा सकता हैं। यदि व्यवसाय संबंधी कुछ रणनीतियां, घटनाएँ एवं योजनायें पूरी हो जाती है तो वो आर्थिक रूप में प्रदर्शित होता हैं (चर्चिल, 2001)। बजट की अवधारणा को अच्छी तरह समझने के लिए, हमें इसके उद्देश्य पर विचार करने की आवश्यकता है।

बजट का उद्देश्य – भविष्य में बजट नियोजन हेतु कुछ प्रमुख बिंदु नीचे दिए गए हैं:

1. संगठन के लाभ और वित्तीय स्थिति को बढ़ाने के अंतिम उद्देश्य के साथ योजना और नियंत्रण में सुधार करना।
2. प्रबंधन को विशेष रूप से संचालन और वित्तीय समस्याओं पर ध्यान केंद्रित करने के लिए मजबूर करना ताकि उनके लिए प्रभावी योजना बनाई जा सके।
3. सभी हितधारकों को संतुष्ट करने की दृष्टि से उत्पादन के विभिन्न कारकों का समन्वय करना।
4. संगठन में संगठनात्मक उद्देश्यों को संप्रेषित करने के लिए।

बजट नियोजन के चरण – बजट तैयार करने के लिए निम्नलिखित चरणों की स्थापना की जानी चाहिएरू

1. **एक बजट मैनुअल का अस्तित्व**: मैनुअल में बजट की तैयारी और उपयोग से संबंधित व्यक्तियों, प्रक्रियाओं, रूपों तथा रिकॉर्ड की जिम्मेदारियों को नियंत्रित करने वाले स्थायी निर्देश होते हैं।
2. **बजट समिति का गठन**: समिति में मुख्य कार्यकारी अधिकारी और कार्यात्मक क्षेत्रों के प्रतिनिधि शामिल होते हैं जैसे कि वित्त, उत्पादन, बिक्री, इंजीनियरिंग आदि । समिति को बजट की तैयारी के लिए कार्यक्रम तैयार करना होता है।
3. **प्रमुख बजट कारक की पहचान करना**: वह कारक जो गतिविधियों के स्तर को सीमित करता है (जैसे कुशल श्रम की कमी, अपर्याप्त कच्चे माल, इत्यादि) जिसकी सीमा पहले कार्यात्मक बजट तैयार करने से पहले निर्धारित की जानी चाहिए।
4. **बजट अवधियों की स्थापना**: बजट को नियंत्रण अवधि में स्थापित किया जा सकता है जो साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक या वार्षिक रूप से हो सकता है।
5. **मास्टर बजट की तैयारी**: यह विभिन्न कार्यात्मक बजट (बिक्री बजट, उत्पादन बजट, उत्पादन लागत बजट, संयंत्र उपयोग बजट, पूंजीगत व्यय बजट, बिक्री और वितरण बजट और नकद बजट) का समेकन है। मास्टर बजट को व्यापक आय के बजटीय वक्तव्य और वित्तीय स्थिति के बजटीय वक्तव्य में संक्षेपित किया जा सकता है। मास्टर बजट और नकद बजट दोनों को वित्तीय बजट के रूप में वर्णित किये जाते है।

बजटीय नियंत्रण – बजटरी नियन्त्रण को लागत व प्रबन्धन लेखाकार संस्थान (CIMA) द्वारा इस प्रकार परिभाषित किया गया है: 'नीति की आवश्यकताओं के लिए कार्यवाहकों के दायित्वों से बजट का सम्बन्ध स्थापित करते हुए एवं बजट के परिणामों से वास्तविक सतत् तुलना करने (उस नीति के उद्देश्य में व्यक्तिगत क्रिया अथवा उसके पुनरीक्षण के लिए आधार प्रदान करने के द्वारा सुरक्षित) को बजटरी नियन्त्रण कहेंगे'।

वाशिंगटन डीसी के नेशनल एसोसिएशन ऑफ स्टेट बजट ऑफिस (2008) ने बजटरी नियन्त्रण को उस युक्ति के प्रयोग के रूप में परिभाषित किया है जिसका उपयोग निर्धारित समय में सुस्पष्ट लक्ष्यों को प्राप्त करने की ओर नियोजन व कार्यपालन में किया जाता है एवं नियन्त्रण कार्यकलाप व गतिविधियाँ संचालित की जाती हैं। इसमें निश्चयपूर्वक कहा जाता है कि प्रभावी व दक्ष नियन्त्रण-तन्त्र के बिना कोई भी नियोजन-प्रणाली सफल नहीं हो सकती।

प्रभावी बजटरी नियन्त्रण तन्त्र के आवश्यक तत्त्व:-

1. समय-सीमा को घटाना जिसमें बजट को अपडेट करना व सम्पन्न करना है (अर्थात् कम से कम अवधि में यह सब कर देना)।
2. भूमिकाएँ व दायित्व स्पष्ट करना कि बजट-सम्बन्धी आवश्यक जानकारियाँ कौन-कौन प्रदान करेगा।
3. बजट प्रक्रिया में उभर रहे व्यापार-संचालन प्रतिरूप को प्रदर्शित करना।
4. योजना-निष्पादन को देखने के एक माध्यम के रूप में बजट का प्रयोग।
5. यह प्रत्येक कार्यवाहक के कार्यों व दायित्वों को निर्धारित करता एक औपचारिक अभिलेख है।
6. बजट के विकास, व्याख्या व प्रयोग में प्रबन्धकों का प्रशिक्षण।
7. बजट का पुनरीक्षण जहाँ उन्हें उपयुक्त व उपयोगी बनाने के लिए संशोधन आवश्यक हों।
8. बजट का सटीक एकीकरण व प्रबन्धकों को इनसे प्रभावीरूपेण अवगत कराना।

9. इससे सामूहिक कार्य-प्रवृत्ति पनपाने में प्रबन्धकों की सहायता हो जाती है जहाँ बजट प्रक्रिया में सहभागिता को प्रेरित किया जाता है।

समस्या का विवरण – कई व्यापारिक निगम बजट रूपों, लागतों को कम करने और दक्षता को अधिकतम करने के लिए विकसित और व्यापक बजटीय नियंत्रण प्रणाली की आवश्यकता को स्वीकार रहे हैं। बजटीय नियंत्रण नकदी के रूप में एवं किसी भी चोरी, अपशिष्ट, अत्यधिक उपयोग या स्टॉक आउट जैसी प्रक्रियाओं के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह व्यावासिक प्रदर्शन को खराब कर सकते है। नेशनल थर्मल पावर कार्पोरेशन (NTPC) ने यह स्वीकार किया है कि इसका प्रदर्शन बजट नियंत्रण प्रणालियों से प्रभावित है। पिछले साल के प्रदर्शन के अनुसार, वित्तीय वर्ष 2016-17 एवं 2017-18 में होने वाले शुद्ध लाभों **(वर्ष 2016-17 में रु. 9,385 करोड़ तथा वर्ष 2017-18 में रु. 10,343 करोड़)** का अंतर बजटीय मुनाफे को प्रदर्शित करता हैं। यहाँ शोधकर्ता द्धारा नेशनल थर्मल पावर कार्पोरेशन (छढझउ) के बजट एवं बजट द्धारा नियंत्रण तंत्र की प्रभावशीलता का विश्लेषण करने में रुचि ली हैं।

शोध प्रश्न – अध्ययन निम्नलिखित शोध प्रश्नों द्धारा निर्देशित किया गया हैं :

1. क्या आप बजट की अवधारणा से अवगत हैं?
2. क्या आपको लगता है, कंपनी की वित्तीय गतिविधियों की निगरानी और नियंत्रण के लिए बजट आवश्यक हैफ
3. आपके संगठन के बजट में समयावधि क्या है?
4. बजट की समीक्षा कितने अंतराल में की जाती है?
5. पिछले वर्ष के बजट विचलन (:) को इंगित करें?
6. संगठन में किस स्तर का प्रदर्शन होता हैं?
7 क्या संगठन अपने लक्ष्य को निर्धारित समय सीमा के भीतर निष्पादित करता है?

शोध की परिकल्पनाएँ

- H_{01} – राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम में प्रभावशाली बजट एवं बजट द्धारा नियंत्रण तंत्र कार्यरत नहीं है।
- H_{a1} – राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम में प्रभावशाली बजट एवं बजट द्धारा नियंत्रण तंत्र कार्यरत है।

शोध प्रविधि – डेटा एकत्र करने में इस शोधकर्ता द्धारा अपनाए गए तरीके प्रत्यक्ष साक्षात्कार, अवलोकन और प्रश्नावली का उपयोग के रूप में हैं। कंपनी के कर्मचारियों और अधिकारियों दोनों से सामान्य प्रश्नों के माध्यम से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से साक्षात्कार एवं निम्नलिखित सांख्यकीय परीक्षण विधि का प्रयोग करते हुये परिणाम प्राप्त किये गये हैं।

- X^2 (Chi Square)
- सहसंबंध गुणांक विधि (Correlation Coefficient)

वर्तमान अध्ययन में, हितग्राहियों से प्रतिक्रियाएं SPSS 21.0 सांख्यिकीय सॉफ्टवेयर एवं MS-Excel में एकत्रित, कोडित और सारणीबद्ध की गई। एकत्रित किए गए डेटा का विश्लेषण वैध उपकरण और प्रक्रियाओं की एक श्रृंखला के माध्यम से किया गया हैं।

जनसंख्या, नमूना और नमूना तकनीक – यह अध्ययन एन.टी.पी.सी. निगम (सिंगरौली, रिहंद एवं विन्ध्यनगर इकाईयों पर) के विशेष संदर्भ के साथ कंपनी के बजट एवं बजट द्धारा नियंत्रण तंत्र की प्रभावशीलता का विश्लेषण पर केंद्रित है। गहराई से और व्यापक अध्ययन करने के लिए, 400 उत्तरदाताओं को यादृच्छिक रूप से चुना गया।

परिणाम

- राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम में प्रभावशाली बजट एवं बजट द्धारा नियंत्रण तंत्र कार्यरत नहीं है।

Table No.1,2,3 & 4 (see in next page)

- **X^2 (Chi Square) परीक्षण –** NTPC के कर्मचारियों/अधिकारियों का बजट की अवधारणा से अवगत, कंपनी की वित्तीय गतिविधियों की निगरानी और नियंत्रण के लिए बजट की आवश्यकता, संगठन के बजट में समयावधि, बजट की समीक्षा का अंतराल एवं पिछले वर्ष के बजट विचलन के प्रतिशत का तथा प्रदर्शन के स्तर उच्च एवं लक्ष्य को निर्धारित समय सीमा के भीतर निष्पादित करने के सम्बन्ध में अध्ययन किया गया है। इस हेतु सांख्यकीय परीक्षण विधि X^2 (Chi Square) परीक्षण का प्रयोग किया गया जहाँ सभी चरों का परिणाम सार्थक रहा। जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि, उपरोक्त सभी चरों का बजट एवं बजट द्धारा नियंत्रण तंत्र की प्रभावशीलता से मजबूत सम्बन्ध होता है।
- **सह-सम्बन्ध परिक्षण –** बजट एवं बजटीय नियंत्रण तंत्र की प्रभावशीलता के विश्लेषण हेतु चरों के मध्य सह-सम्बन्ध परिक्षण किया गया तथा पाया गया कि इनके बीच ($P\text{-Value}<0.05$) एक महत्वपूर्ण सकारात्मक संबंध हैं। यह निहित है कि बजट एवं बजटीय नियंत्रण तंत्र की प्रभावशीलता को बढ़ाने में उपरोक्त चरों को सकारात्मक और मध्यम रूप से प्रभावित किया है।

परीक्षणों से यह पाया गया कि शून्य परिकल्पना विपरीत वैकल्पिक परिकल्पना को स्वीकार किया गया है। जिससे यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम में प्रभावशाली बजट एवं बजट द्धारा नियंत्रण तंत्र कार्यरत है।

विचार-विमर्श – परीक्षण किए गए परिकल्पनाओं और प्रत्यक्ष साक्षात्कार का पता लगाने से निम्नलिखित बातों का पता चलता है:

1. बदलते व्यापारिक परिवेश ने बजट को विकसित करने और लागू करने के लिए संगठनों की आवश्यकता को सुनिश्चित किया है, यह सुनिश्चित करने के लिए, वित्तीय वर्ष और संगठन के प्रमुख उद्देश्यों पर विचार किया जाना चाहिए।
2. एन.टी.पी.सी. में कर्मचारियों एवं अधिकारियों द्धारा प्राप्त डेटा के परीक्षण से यह पता चलता हैं कि संगठन में सभी विभाग पूरी तरह बजट प्रक्रिया में शामिल होते हैं, क्योंकि विभागीय प्रमुख अपने कर्मचारियों की पूरी भागीदारी के साथ बजट तैयार करते हैं।
3. लक्ष्य के समुचित और त्वरित उपलब्धि के लिए नियमित आधार पर सभी कर्मचारियों को बजट सम्बन्धी दिशा निर्देश एवं उद्देश्य से अवगत कराया जाना चाहिए।
4. एक संरचित संगठन के रूप में, एन.टी.पी.सी. में एक औपचारिक संगठनात्मक संरचना मौजूद है, जिसके माध्यम से नियंत्रण उद्देश्यों के लिए जिम्मेदारियां सौंपी जाती हैं, ये नियंत्रण कर्मचारियों के कामकाजी प्रदर्शन को प्रभावित करते हैं।

निष्कर्ष – इस शोध द्धारा एन.टी.पी.सी. में बजट एवं बजट नियंत्रण तंत्रों के अस्तित्व को स्थापित किया, वहां प्रदर्शन और बजटीय नियंत्रण के प्रभावों को भी निर्धारित किया। इस शोध ने यह जांच की कि बजटीय नियंत्रण एन.टी.पी.सी. की 3 इकाइयों में प्रदर्शन को कैसे प्रभावित करता है, इसका उपयोग सुविधा निर्णय लेने वाले नमूने का उपयोग करके के लिए किया गया हैं, और उत्तरदाताओं से डेटा एकत्र करने के लिए ड्रॉप पिक तकनीक

का उपयोग किया गया हैं।

ऊपर उठाए गए प्रासंगिक शोध प्रश्नों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता हैं कि काफी संख्या में कर्मचारी एवं अधिकारी संगठन की बजटीय प्रणाली से अवगत हैं तथा बजट एवं उसके नियंत्रण तंत्र में निचले स्तर के कर्मचारियों की काफी भागीदारी होती है। यह भी पता चला कि संगठन में निष्पादन एवं प्रदर्शन प्रतिवर्ष अग्रसित हैं, जो संगठन को उनके लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए पर्याप्त है।

अनुशंसा – उपर्युक्त निष्कर्ष के आधार पर संगठन में प्रभावी बजट एवं बजट नियंत्रण तंत्र हेतु निम्नलिखित महत्वपूर्ण कदम उठाने चाहिए:

1. वित्त विभाग को सभी मौजूदा मानकों की समीक्षा करनी चाहिए और उन उपायों को प्रस्तुत करना चाहिए जो वित्तीय संसाधनों के रिसाव को रोकने के लिए आंतरिक नियंत्रण प्रणाली को कड़ा कर सके।
2. बजट और बजटीय नियंत्रण प्रणाली को समझने के लिए बहुत जटिल नहीं होनी चाहिए।
3. बजट लक्ष्यों की प्राप्ति को बढ़ाने के लिए, समयानुसार संसाधन उपलब्ध कराए जाना आवश्यक हैं।
4. जैसा कि पर्यावरण गतिशील है, बजट की समीक्षा की जानी चाहिए तथा समय-समय पर समायोजन किया जाना चाहिए, यदि आवश्यक हो।
5. प्रबंधन को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि श्रमिक निर्धारित बजट लक्ष्य अनुसार प्रदर्शन करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. गुप्ताबी. एन., सांख्यिकी, साहित्य भवन प्रकीन, आगरा 1972।
2. आर. के. शर्मा एवं शशि के. गुप्ता, वित्तीय प्रबंध, कल्याणी पब्लिकेशन, लुधियाना, 1999।
3. डॉ. एस. एम. शुक्ला एवं डॉ. एस. पी. सहायब सांख्यिकी के सिद्धान्त, साहित्य भवन पब्लिकेशंस (प्रा.) लि., आगरा, 2013।
4. एम. एल. अग्रवाल, परिव्यय लेखांकन, साहित्य भवन, आगरा, 1975।
5. R.N.Anthony, V. Govindarjan (2003), Management control systems, McGraw Hill, New-York.
6. I.M. Pandey (1999), Financial Management, Vikas Publishing house Pvt. Ltd., New Delhi (8th edition).

जर्नल/शोध ग्रंथ/पत्रिका :-

1. Arwidi, O., & Samuelson, L. A. (1993). The development of budgetary control in Sweden—researches note. Management Accounting Research, 4(2), 93-107.
2. Cardos, I., R., Pete, S., and Cardos, V., D. (2014). Traditional Budgeting versus Beyond Budgeting: A literature review. Economic Science Series, Vol 23, Iss 1, pp 573 – 581.
3. Chong, K. M., & Mahama, H. (2014). The impact of interactive and diagnostic uses of budgets on team effectiveness. Management Accounting Research, 25(3), 206-222.
4. Greg Hager, Ginny Wilson (2001), Performance based budgeting: Concepts and examples adopted by Program review and Investigations, Legislative research commission (Research Report No. 302).
5. M.A. Covaleski, J.H. Evans, J.L. Luft, M.D. Shields, (2003), Budgeting research: Three theoretical perspectives and criteria for selection integration, Journal of Management Accounting Research (3-49).
6. Milani, K. (1975). The relationship of participation in Budget-setting to Industrial Supervisor Performance and Attitudes: A Field Study, The Accounting Review (April 1975), pp 274-284
7. Richard D. Young (January 2011), Performance-Based Budget Systems, Usc Institute For Public Service And Policy Research

Table No.1 - Test Statistics

	Awareness regarding concept of budget	Is budget essential for monitoring and controlling of financial activities	Time dimension does budget cover	How often is the budget reviewed	Budget Variance (%) in the previous year
Chi-Square	320.410a	278.890a	410.900b	253.460b	218.660b
df	1	1	3	3	3
Asymp. Sig.	.000	.000	.000	.000	.000

Table No.2 - Test Statistics

	level of performance of the organization	The organization execute its target within the stipulated deadline
Chi-Square	441.360a	216.090b
df	3	1
Asymp. Sig.	.000	.000

Table No. 3 - Correlations

		Awareness regarding concept of budget	Is budget essential for monitoring and controlling of financial activities	Time dimension does budget cover	How often is the budget reviewed	Budget Variance (%) in the previous year
Awareness regarding concept of budget	Pearson Correlation	1	.011	.007	.042	.014
	Sig. (2-tailed)		.828	.886	.403	.778
	N	400	400	400	400	400
Is budget essential for monitoring and control ling of fin-ancial activities	Pearson Correlation	.011	1	-.063	.003	.007
	Sig. (2-tailed)	.828		.212	.947	.896
	N	400	400	400	400	400
Time dimension does budget cover	Pearson Correlation	.007	-.063	1	.042	.035
	Sig. (2-tailed)	.886	.212		.403	.486
	N	400	400	400	400	400
How often is the budget reviewed	Pearson Correlation	.042	.003	.042	1	-.039
	Sig. (2-tailed)	.403	.947	.403		.434
	N	400	400	400	400	400
Budget Variance(%) in the pre-vious year	Pearson Correlation	.014	.007	.035	-.039	1
	Sig. (2-tailed)	.778	.896	.486	.434	
	N	400	400	400	400	400

*. Correlation is significant at the 0.05 level (2-tailed).

Table No. 4 - Correlations

		level of performance of the organization	The organization execute its target within the stipulated deadline
level of performance of the organization	Pearson Correlation	1	.054
	Sig. (2-tailed)		.284
	N	400	400
The organization execute its target within the stipulated deadline	Pearson Correlation	.054	1
	Sig. (2-tailed)	.284	
	N	400	400

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

घाटे की वित्त व्यवस्था का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

डॉ. स्वाति शर्मा *

शोध सारांश – किसी देश की आर्थिक स्थिरता, आर्थिक विकास एवं पूर्ण रोजगार को प्राप्त करने के लिए सरकार को अपनी आय, व्यय एवं ऋण को सुनियोजित तरीके से व्यवस्थित करते हुए देश की अर्थव्यवस्था में उपयोग करना होता है। इस हेतु वह राज नीति बनाती है जिसे राजकोषीय नीती कहतें है। राजकोषीय नीति के द्धारा किसी निश्चित समयाविधि में आय एवं व्ययों पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए अनेक तकनीकों का सहारा लिया जाता है जिसमें से तीसरी तकनीक घाटे की वित्त व्यवस्था नीति है प्रस्तुत शोध पत्र में घाटे की वित्त व्यवस्था नीति का भारतीय अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया जा रहा है।

शब्द कुंजी – घाटे की वित्त व्यवस्था।

प्रस्तावना – जब किसी देश के सरकार की कुल व्यय कुल आय से अधिक होता है तो सरकार को घाटा होता है। सरकार को घाटा होता है। सरकार इस घाटे को पूरा करने के लिए केन्द्रीय बैंक तथा जनता से ऋण लेती है या दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि केंद्र सरकार नई मुद्दा का सृजन करती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत में घाटें कि वित्त व्यवस्था का अर्थ अतिरिक्त मुद्दा सृजन से लगाया जाता है। भारतीय योजना आयोग के शब्दों में 'घाटे की वित्त व्यवस्था शब्द का उपयोग बजट घाटे द्धारा सार्वजनिक व्यय में प्रत्यक्ष वृद्धि को बताने के लिए किया जाता है चाहे यह घाटा राजस्व मद में हो अथवा पूंजी मद में । इस नीति का सार तत्व यह है कि सरकार अपनी आय से ज्यादा व्यय करती है, आय सरकार को करों, ऋण, लोक उद्यम से आय आदि स्त्रोतों से प्राप्त होती है। आय-व्यय के इस घाटे को सरकार पोषित करने के लिए या तो पिछली जमाओं का उपयोग करती है या केन्द्रीय बैंक से ऋण लेती है तथा अतिरिक्त मृदा का सृजन करती है।'

भारत सरकार प्रांरम्भ से लेकर वर्तमान पंचवर्षीय योजनाओं में अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक वित्त की पूर्ति के लिए घाटें की वित्त व्यवस्था का सहारा लेती रही है। पिछले चार वर्षो में भारत के सकल घरेलु उत्पाद में राजस्व घाटा, प्रथमिक घाटा एवं राजकोषीय घाटा का विश्लेषण निम्न तालिका में से किया गया है।

केन्द्र सरकार के घाटे की प्रवृत्तियां

(सकल घरेलु उत्पाद के प्रतिशत में)

वर्ष	राजस्व घाटा	प्राथमिक घाटा	राजकोषीय घाटा
2014-15	2.9	1.9	4.1
2015-16	2.5	2.0	3.9
2016-17	2.3	1.2	3.5
2017-18	1.9	0.7	3.2

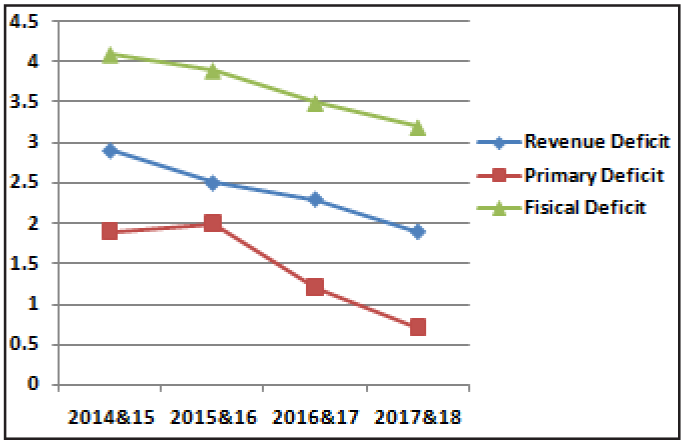

निष्कर्ष – प्राथमिक राजस्व घाटे में 2015-16 के अतिरिक्त घटने की प्रवृत्ति एवं राजस्व घाटा एवं राजकोषीय घाटे में भी लगातार घटने की प्रवृत्ति पाई जा रही है। राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट अधिनियम 2003 के अनुसार निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक विवेकपूर्ण राजकोषीय नीति का अनुसरण करते हुए भारतीय अर्थव्यवस्था लक्ष्य प्राप्ति हेतु अग्रसर हो रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दत्तसुंदरम्, भारतीय अर्थव्यवस्था
2. मिश्र एवं पूरी, भारतीय अर्थव्यवस्था
3. डॉ. वी.सी. सिन्हा, व्यावसायिक पर्यावरण, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स
4. प्रतियोगिता दर्पण वार्षिकांक अर्थशास्त्र
5. रमेश सिंह, भारतीय अर्थव्यवस्था, मेक ग्रीव हील एजुकेशन
6. अतिराम, भारतीय अर्थव्यवस्था प्रतियोगिता दर्पण

* सहा. प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. राधाबाई शासकीय नवीन कन्या महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

Financial Appraisal And Position Of Ranbaxy Laboratories Limited

Dr. Vinay Kumar*

Abstract - The Indian pharmaceutical industry was estimated to grow at 20 percent compound annual growth rate (CAGR) over the coming five years, as per India Ratings, a Fitch group company. Ranbaxy was incorporated in 1961 and went public in 1973. For the year 2010, the company recorded Global sales of US $ 1868 million. The company has a balanced mix of revenues from emerging and developed markets that contribute 50% and 44% respectively. In 2009, North America, the company's largest market contributed sales of US $ 660 million, followed by Europe garnering US $ 272 million and Asia clocking sales of US $ 468 million.
Key words - Pharmaceutical industry, Annual growth, respectively.

Introduction - In financial accounting, a balance sheet or statement of financial position is a summary of the financial balances of a sole proprietorship, a business partnership or a company. Assets, liabilities and ownership equity are listed as of a specific date, such as the end of its financial year. A balance sheet is often described as a ''snapshot of a company's financial condition''. Of the basic financial statements, the balance sheet is the only statement which applies to a single point in time of a business' calendar year.

A standard company balance sheet has three parts: assets, liabilities and ownership equity. The main categories of assets are usually listed first and typically in order of liquidity. Assets are followed by the liabilities. The difference between the assets and the liabilities is known as equity or the net assets or the not worth or capital of the company and according to the accounting equation, net worth must equal assets minus liabilities.

Another way to look at the same equation is that assets equal liabilities plus owner's equity. Looking at the equation in this way shows how assets were financed : either by borrowing money (liability) or by using the owner's money (owner's equity). Balance sheets are usually presented with assets in one section with the two sections "balancing".

A business operating entirely in cash can measure its profits by withdrawing the entire bank balance at the end of the period, plus any cash in hand. However, many businesses are not paid immediately; they build up inventories of goods and they acquire buildings and equipment. In other words: businesses have assets and so they cannot, even if they want to, immediately turn these into cash at the end of each period. Often these businesses owe money to suppliers and to tax authorities, and the proprietors do not withdraw all their original capital and profits at the end of each period. In other words businesses also have liabilities.

Balance sheet account names and usage depend on the organization's country and the type of organization. Government organizations do not generally follow standards established for individuals or businesses.

If applicable to the business, summary values for the following items should be included in the balance sheet: Assets are all the things the business own, this will include property tools, cars, etc.

1. Assets

1.1 Current assets

1. Cash and cash equivalents
2. Inventories
3. Accounts receivable
4. Prepaid expenses for future services that will be used within a year

1.2 Non-current assets (Fixed assets)

1. Property, plant and equipment
2. Investment property, such as real estate held for investment purposes
3. Intangible assets
4. Financial assets (excluding investments accounted for using the equity method, accounts receivables, and cash and cash equivalents)
5. Investments accounted for using the equity method
6. Biological assets, which are living plants or animals. Bearer biological assets are plants or animals which bear agricultural produce for harvest, such as apple trees grown to produce apples and sheep raised to produce wool.

1.3 Liabilities

1. Accounts payable
2. Provisions for warranties or court decisions

***MBA, M.Com (ABST), Ph.D.(Commerce) Maharaja Ganga Singh University, Bikaner (Raj.) INDIA**

3. Financial liabilities (excluding provisions and accounts payable), such as promissory notes and corporate bonds
4. Liabilities and assets for current tax
5. Deferred tax liabilities and deferred tax assets
6. Unearned revenue for services paid for by customers but not yet provided

1.4 Equity

The net assets shown by the balance sheet equals the third part of the balance sheet, which is known as the shareholder's equity. It comprises:

1. Issued capital and reserves attributable to equity holders of the parent company (controlling interest)
2. **Non-controlling interest in equity**

Formally, shareholder's equity is part of the company's liabilities they are funds "owing" to shareholders (after payment of all other liabilities); usually, however, "liabilities" is used in the more restrictive sense of liabilities excluding shareholders' equity. The balance of assets and liabilities (including shareholders' equity) is not a coincidence. Records of the values of each account in the balance sheet are maintained using a system of accounting know as double-entry bookkeeping. In this sense, shareholders' equity by construction must equal assets minus liabilities, and are residual.

Regarding the items equity section, the following disclosures are required:

1. Numbers of shares authorized, issued and fully paid, and issued but not fully paid
2. Par value of shares
3. Reconciliation of shared outstanding at the beginning and the end of the period
4. Description of rights, preferences, and restrictions of shares
5. Treasury shares, including shares held by subsidiaries and associates
6. Shares reserved for issuance under options and contracts
7. A description of the nature and purpose of each reserve within owner's equity.

The comparative balance sheet analysis is the study of the trend in the same item, group of items and computed items in two or more balance sheet of the same business enterprises on different dates. The changes in periodical items reflect the conduct of a business. The changes can be observed by a comparison of the balance sheet at the beginning and at the end of a period and the changes can help informing an opinion about the progress of the enterprises.

In this study financial statements of selected textile companies have been analysed. A time horizon of five years has been selected. In this chapter position statement or balance sheet or various companies has been analysed.

1.5 Position statement of Ranbaxy Laboratories Limited - Balance sheet of Ranbaxy Laboratories Limited has been given in Table – 4.1

Table – 4.1 (see in next page)

1.6 Analysis of Position Statement of Ranbaxy Laboratories Limited - The Table No. 4.1 shows the position statement or balance sheet of Ranbaxy Laboratories Ltd. After analyzing it is clear that there has been increase in total assets. The Equity share capital in increasing. Equity share capital was Rs. 186.22 crore as on 31.03.2006 which became Rs. 210.21 crore as on 31.03.2010

There is some pending share application money against which the share allotment is still pending. Earlier such pending share application money was Rs. 0.28 crore as on 31.03.2006 which has now become Rs. 175.85 crore as on 31.03.2010. the reserves and surplus which were Rs. 2190.80 crore as on 31.03.2006 increased to Rs. 3748.54 crore as on 31.03.2010.

The amount of secured loan is decreasing. This was Rs. 353.49 crore as on 31.03.2006 which decreased to Rs. 175.83 crore as on 31.03.2010. These were maximum Rs. 365.07 crore as on 31.03.2008. The amount of unsecured loan is increasing from year to year. It was 676.31 crore as on 31.03.2006 and as on 31.03.2010 it became Rs. 3172.55 crore.

The net block of fixed assets increased to Rs. 1593.41 crore as on 31.03.2010 from Rs. 1199.97 crore as on 31.03.2006. The gross block of fixed assets in increasing. Amount of accumulated depreciation is also increasing. The amount of capital work in progress is also fluctuating. This was Rs. 432.84 crore as on 31.03.2006 which become Rs. 414.92 crore as on 31.03.2010.

The investment may be treated a source of extra income for any enterprise. Investment is useful at the time of diversity. The investment of the company has also increased considerably. Form Rs. 762.78 crore as on 31.03.2006, it reached at Rs. 3833.69 crore as on 31.03.2010.

The amount of current assets. Loans, advances is increasing year by year. The current assets were Rs. 2409.08 crore as on 31.03.2006 which became Rs. 6509.97 crore as on 31.03.2009 but after this year it decreased to Rs. 5486.90. The amount of current liabilities is also increasing or decreasing along with current assets. Net current assets was Rs. 1011.52 crore as on 31.03.2006 which increased to Rs.1938.67 crore as on 31.03.2009 but it decreased and became Rs. 1640.97 crore as on 31.03.2010

Contingent liabilities of the company are increasing. Contingent liabilities were Rs. 202.40 crore as on 31.03.2006 which rose at a level of Rs. 261.05 crore as on 31.03.2010. Increase in contingent liabilities is not healthy situation for the company.

Conclusion - Ranbaxy views its R & D capabilities as a vital component of its business strategy that will provide a sustainable, long-term competitive advantage. The company has pool of over 1,200 R & D personnel engaged in path-breaking research.

Ranbaxy is among the few Indian pharmaceutical companies in India to have started its research program in

the late 70's, in support of its global ambitions. A first-of-its-kind world class R & D centre was commissioned in 1994. Today, the company has multi-disciplinary R & D centers at Gurgaon, in India, with dedicated facilities for generics research and innovative research. The R & D environment reflects its commitment to be a leader in the generics space offering value added formulations and development of NDA/ ANDAs, based on its Novel Drug Delivery System (NDDS) research capability. Ranbaxy's first significant international success using the NDDS technology platform came in September 1999, when the company out-licensed its first once-a-day formulation to a multinational company.

In July 2010, Ranbaxy's New Drug Discovery Research (NDDR) was transferred to Daiichi Sankyo India Pharma Private Limited as part of the strategy to strengthen the global research and development structure of the Daiichi Sankyo Group. While NDDR will now become an integral part of Daiichi Sankyo Life Science Research Center in India, based in Gurgaon, Ranbaxy will continue to independently develop and later commercialize the anti-malarial new drug, Arterolane + PQP, which is currently in Phase III trials. Ranbaxy will also explore the further development of late stage programs developed by NDDR in the last few years, including the development programs in the GSK collaboration. Within Ranbaxy, R & D of generics will now get a sharper focus, as the company is increasingly working on more complex and specialist areas.

References :-

1. Choudhary S.B., Management Accountancy, Delhi, Kalyani Publisher.
2. Goodman, Sam R., Techniques of Profitability Analysis, (Wiley-Inter Science, New York).
3. Johan, N. Myer, Financial Statement Analysis (Prentice Hall, New Jersey).

Table – 4.1 – Balance Sheet of Ranbaxy Laboratories Limited

(Rs. In Crore)

	Mar ' 10	Mar ' 09	Mar ' 08	Mar ' 07	Mar ' 06
SOURCES OF FUNDS					
Owner's Fund					
Equity Share Capital	210.21	210.19	186.54	186.34	186.22
Share Application Money	175.85	175.66	1.18	0.88	0.28
Preference Share Capital	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00
Reserves & Surplus	3,748.54	3,330.92	2,350.68	2,162.79	2,190.80
Loan Funds					
Secured Loans	175.83	162.07	365.07	224.29	353.49
Unsecured Loans	3,172.55	3,563.30	3,137.96	2,954.31	676.31
Total	**7,482.98**	**7,442.14**	**6,041.43**	**5,528.61**	**3,407.10**
USES OF FUNDS					
Fixed Assets					
Gross Block	2,620.92	2,386.75	2,261.48	2,133.57	1799.32
Less : Revaluation Reserve	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00
Less Accumulated Depreciation	1,027.52	930.07	791.96	699.54	599.35
Net Block	1,593.41	1,456.68	1,469.52	1,434.03	1,199.97
Capital Work-in-progress	414.92	428.77	327.42	301.88	432.84
Investments	3,833.69	3,618.03	3,237.55	2,679.95	762.78
Net Current Assets					
Current Assets, Loans & Advances	5,486.90	6,509.97	2,922.42	2,620.99	2,409.08
Less Current Liabilities & Provisions	3,845.92	4,571.31	1,915.49	1,508.24	1,397.56
Total Net Current Assets	1,640.97	1,938.67	1,006.93	1,112.76	1,011.52
Miscellaneous expenses not written	0.00	0.00	0.00	0.00	0.00
Total	**7,482.99**	**7,442.15**	**6,041.42**	**5,528.62**	**3,407.11**
Note :					
Book Value of Unquoted Investments	3,569.70	3,348.65	3,106.69	2.00	0.00
Market Value of Quoted Investment	380.72	267.93	280.46	14.27	0.01
Contingent liabilities	261.05	252.85	201.00	159.40	202.40
Number of Equity shares outstanding (in Lacs)	4,204.17	4,203.70	3,730.71	3,726.87	3,724.42

****

Significance of Airborne fungi : Diversity and Molecular Identification

Shadma Siddiqui* CBS Dangi**

Aerobiology - Aerobiology deals with the study of airborne biological particles including pollen grains, microflora, and related climatic changes. American Scientist,F.C. Meier (1930) first introduced the term aerobiology in a project which involved study of airflora (Boehm and Leuschner, 1986; Benninghoff,1991). Study of air is known since Vedic period (Gaur *et al.*, 2011; Martin,2006). The importance of aerobiology in relation to health of living organisms and environmental pollution is a point to be consider.Airborne biological contaminants known as bioaerosols include bacteria, fungi, viruses and Pollens. Several activities occurring in nature release particulate matter and microbial spores in air. This comprises of successive steps, occurring in continuous way that are dependent on method of transportation of particles and their biological effect along with environmental effects (Bovallius,1987).

Studying dispersal pattern of airborne fungal spores is important to understand dissemination, spread and movement, particularly the pathogenic ones in the atmosphere (Saad, 2003)**.**Several processes contribute in increasing microbial load in air. Bioaerosol released from organic waste treatment is of great public concern because of the potential health impacts on workers and local residents. Bioaerosol generation during composting is regulated by different factors such as decomposition of plant and other organic material being treated.Microflora present in air is extremely important since their exposure harms human, plants and animal life in various ways (Martin, 2006).It is well known fact that small percentage of infectious agents present in air are responsible for spread of majority of infectious agent/ microorganisms thus to control them is one of the biggest challenge (Fiegel, 2006).Changes in phenology can be measured by monitoring spores, microbiota, pollens etc(Benninghoff, 1991; Galan *et al.,* 2017).

Fungi are ubiquitous in nature and cosmopolitan in distribution. There are more than 80,000 species of fungi and these have evolved elaborate mechanisms for their dispersal. The spores produced forms a normal component of outdoor air and also of indoor environment such as store houses, hospitals, libraries, residential building etc. Due to their small size, spores remain suspended in the atmosphere for a long time. When inhaled by susceptible individuals they cause respiratory disorders. Fungal spores are universal atmospheric components generally recognised as important causes of allergy in respiratory tract of human.

Identification of taxa of infectious agent present in air is difficult. Both classical and modern methods of identification of microflora are being used today. The former includes cultural and microscopic methods. The limitation of these methods are that only culturable form can be identified and complete information of all forms cannot be studied. Modern methods involve molecular biological approaches like 16 S rRNA, 18 S rRNA, DNA finger printing etc. (Beggs, 2017). Perring (2015) carried out measurement of fluorescent airborne particles containing PBAP using WIBS instrument.

Factors affecting density of mycoflora present in air - Variety of microorganisms are found in air. They mainly come from water, soil, decomposing organic matter, woods, human and animal activity. Among microorganism, fungal spores density predominant in air (Shivakumara, 2002). Being saprophytic in nature they are actively involved in decomposition of leaves, wood, and other organic matter derived from plant and animal. Generally, spores of fungi get drifted through winds and are transported to distant places. Airborne fungal spores occur in every kind of environment because of their sizes, light weight, saprophytic nature, and aerodynamic properties (Swapna and Lalchand, 2016). The active dispersal of spores of fungi is also important source of fungal spores in air. Fungi belonging to Ascomycetes and basidiomycetes discharge wet spores actively in air and are major source of biogenic aerosol (Elbert, 2007).

Many factors determine the density of microorganism present in any environment. Physical parameters like temperature and humidity effects the ability of microflora to survive in air (Sudharsanam*et al.*, 2012; Stetzenbach*et al.*, 2002). Excessive humidity and moisture present on the surface of walls and ceilings enable fungi to colonize indoor environment. In addition,variety of organic matter present

*Department of Microbiology, Sant Hirdaram Girls College, Bhopal (M.P.) INDIA
** Department of Biotechnology, Ram Krishna Dharmarth Foundation University, Bhopal (M.P.) INDIA

in indoor environment also support the growth and survival of airborne fungi. Overcrowding of indoor atmosphere, improper design of houses, along with lack of proper ventilation further influence the survival of microorganisms (Sudharsanam*et al.,* 2012). The adverse effects of Indoor air flora may result in health problems thereby increasing human mortality. Density of spores, air velocity above the surface, texture of the surface, and vibration of contaminated material regulate the density of fungal spore present in any environment (Gorny*et al.*, 2001).Studies done to characterize aero-flora revealed that the geographical area greatly influence density and type of air flora. Fungal spores are main constituents of coarse organic particulate matter (PM) of air in the summer season, both in urban and in suburban environments, and contribute an appreciable fraction to total aerosol mass in the coarse size fraction (Bauer *et al.*, 2008).

Sharma *et al.,*(2011) compared airborne fungi present in indoor and outdoor home environment of children's suffering from asthama and non-asthmatic children. They observed correlation between illnesses such as rhinitis-asthma and exposure to fungi in house hold environment. They also summarised that seasonal distributions of fungi are indicator for respiratory disorders among patients suffering from allergy or asthma in Delhi.

Outdoor airfungal flora - The density of fungi in air alters in accordance with geographical regions and seasons, besides the physical parameters such as wind direction, humidity, temperature, precipitation and altitude (Adhikari*et al.*, 2004). The most prevalent species found in outdoor environment are *Aspergillus sp.,Penicillium sp., Alternaria, Fusarium., Helminthosporium,* (Karuppasamy,2013; Ogo´rek,2017; Raj,2016). Cao *et al.,* (2014) reported a greater percentage of eukaryotic microorganism in particulates (PM2.5–10 mm) as compared to particles <2.5 mm in diameter while studying Beijing smog event.

Fred and Blessing (2011) carried out studies on indoor and outdoor air quality of major hospital of Benin City, Nigeria and isolated *Aspergillus niger, Aspergillus flavus, Botryodiplodiaacerina, Rhizopusstolonifer, Nigosporazimm, Mucor*sp.*, Monillainfuscans, Penicillium*sp.*, Candida* sp. and *Trichoderma viridis.* They found no significant difference between the microbial population obtained during the wet and dry seasons in hospitals studied. In other studies conducted by Saikumari and Saxena (2016) 76 species belonging to 32 genera were isolated from vegetable market area, surrounding area of factories and Government school of Pandurangapuram village, Khammam district, Telangana, India and found species of *Aspergillus, Alternaria, Penicillium, Rhizopus, Mucor, Fusarium* etc. predominantly in air.

Indoor air fungal flora - Safe and healthy indoor environment is very important for every human being. A normal human breathapproximately, $10m^3$ of air every day of which its 80 -95% time is spent in indoor environment (Dacarro*et al.*, 2003).Various biotic and abiotic factors associated with different types of housing will determining the bioaerosol load of indoor air. Indoor fungal contamination depends on numerous factors, including moisture, ventilation, temperature, organic matter present in building materials but also on outdoor fungal load (Medrela-Kuder, 2003; Oliveira *et al.*, 2003). Several studied have displayed that healthy houses having low humidity in indoor environment does not show presence of indoor fungi like *Penicillium* and *Aspergillus* while only outdoor species of fungi like *Cladosporium*were found (Ogo´rek*et al.*, 2017). On the contrary, in sick houses and buildings with high indoor humidity allows fungal growth mainly of *Penicillium* sp. and *Aspergillus* sp. with concomitant release of conidia and fragments into the atmosphere. The intoxication probably results from a chronic exposure to volatile organic compounds and mycotoxins produced by *Penicillium* sp., *Aspergillus* sp. and *Stachybotrys*(Cabral, 2010).

Shivkumar*et al.*, (2007) have analysed the microbial contamination (CFUs/plate) in air and observed 4 times higher density of fungi during working sessions as compared to prior working sessions. They also demonstrated decrease in aerosols at the end of the working days. Similar results have been found in studies done by Hoseini (2012). Srinivas *et al.*, (2007) found predominance of *Aspergillus* species in indoor environment. They emphasised threshold limit value (TLV) and biological exposure indices values should coordinated for each area in the city which will serve as a guide to control health hazards (Srinivas *et al.*, 2007).

Humans and their activities are also potential sources of fungi in indoor environment. Hanson *et al.*, (2016) studied density of human-associated fungi, and found relatively low, abundance of the human-derived taxon *Malassezia* (Prakash *et al.*,2019). His findings were similar to Adams *et al.*, (2013) in which indoor samples from a students' dormitory complex showed low copiousness of *Malassezia*. In addition, both these studies have shown higher percentages of the fungi like *Leptosphaerulina*, *Cladosporium*, *Alternaria*, *Penicillium*, *Aspergillus*, *Rhizopus*and *Mucor*. Most of these fungal taxa found in indoor environment were associated with soil, water or plant (Sing, 2010; Palmero, 2011; West, 2015).Concentrations of airborne fungi in six different medical wards of Aizawl Civil Hospital in north eastern India indicated higher degree of contamination but less diversity can be seen during autumn than summer. A total of 13 genera of fungi were recorded from the atmosphere. Among them a majority belonged to Deuteromycotin (Karuppasamy*et al.*, 2013). Some species of *Aspergillus andPenicillium* can cause extreme allergic reaction or respiratory and other related diseases in humans *(***Swapna, 2016). Swapna (2016)** found that concentration of mycoflora was highest in the month of August, September and October as compared to May, June and July**.**

The airborne spores of *Alternariaabundans*, *Arthriniumkogelbergense, Cryptococcus curvatus, Discosia* sp., *Fomesfomentarius*, *Microdochiumseminicola* and

Trametes were discovered for the first time in air of natural and artificial underground sites (Rafa³Ogo´rek, 2017). A survey of Central India was conducted to study fungal bioaerosols for period of three years (2007-2009) wherein total of 41 fungal species belonging to 21 genera were identified belonging to*Alternaria*, *Aspergillus*, *Cladosporium*, *Curvularia*, *Fusarium*, *Penicillium*, *Phoma* and *Trichothecium*.

Rosas *et al.,* (1997) found that the ratio of aeroflora of indoor and outdoor to be 3:1. They studied 30 samples of houses and the flora count was more than 2000 per cfu m^3. They have shown predominance of *Cladosporium-herbarum*, *Penicilliumaurantiogriseum* and *P. chrysogenum* both in airborne and settled dust, although their concentrations of spores was greater in indoors than out, indicating a possible indoor source of fungal propagules.

Correlations between environmental condition such as temperature, relative humidity, duration of sun light and agents of air pollution have been found statistically significant (Sen, 2008). While no significant correlation was observed among fungal genera and environmental variables during investigations done on indoor and outdoor micro-fungi in six residential houses in Tekirdag City (Sen, 2008). Hoseini*et al.*, (2012) have reported that indoor outdoor relation, is associated with high passenger population in closed spaces. They reported that indoor air quality with reference to fungi, in subway was worse than the outdoor air. Density of Fungi was found significantly correlated with the number of passengers (p 0.05; r = 0.68) and RH % (p0.05; r = 0.43). Sixteen genera of fungi were isolated among which predominant genera in indoor and outdoor air were *Penicillium* sp. (34.88 %) and *Alternaria*spp. (29.33 %) of total airborne fungi.

Air-sampling - Size, type and number of airborne particles in any air sample differs greatly. Which is dependent on factors such as time of day, weather, season and geographical location. Thus while analysing Aeroflora the location, site of sampling, time and duration of operation are to be carefully observed and recorded, to ensure a representative sample is taken. Also, the type of sampling device used is imperious as each sampler has different sampling efficiencies and is suited for particular form of analysis. Various kinds of sampling techniques are known since ages, in 1940s to 1960s, several improvementsin structure of samplers were done that allowed a quantitative mycological analysis of the atmosphere coupled with the use of agar culture media. These developments allowed, for the first time, a detailed study of the fungal populations present in indoor and outdoor atmospheres. Sedimentary sampling, chemical methods applied to impinger's collection liquid, and selected molecular methods can be useful in this context (Cabral, 2010).Sampling methods in the 1940s to 1960s are the formidable six-stage Andersen impactor; dichloran-glycerol-18 agar which is a good isolation and growing medium for indoor fungi, other methods for air mycological analysis is the fungal spore source strength concept. The types of air sampling devices and their principles are described in Figure 1.

Figure 1 (see in last page)

Table 1 (see in last page)

Table 2: Type of air samplers used by various researchers for isolation and identification of air flora.

Air Sampler	References
Burkard Personal Slide	Adhikari*et al.*,2000, Das *et al.*,2008,Das etal.,2012, Roy *et al.*,2017.
Andersen single stage	Cho *et al.*,2018
Andersen two stage	Adhikari*et al.*,2000, Das etal.,2012.
Rotorod sampler, UK	Chattopadhyay *et al.*,2007
Hirst Apparatus	Caillaud*et al.*,2018

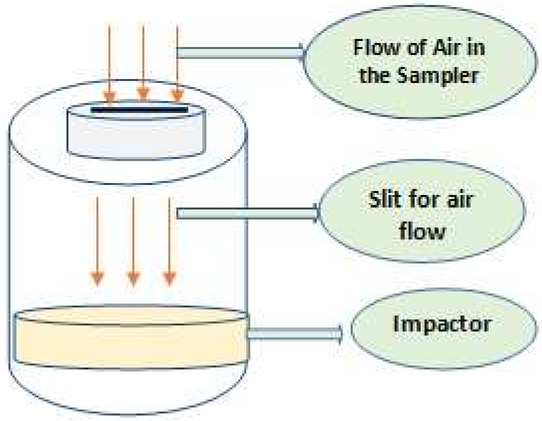

Slit Impactor Sampler

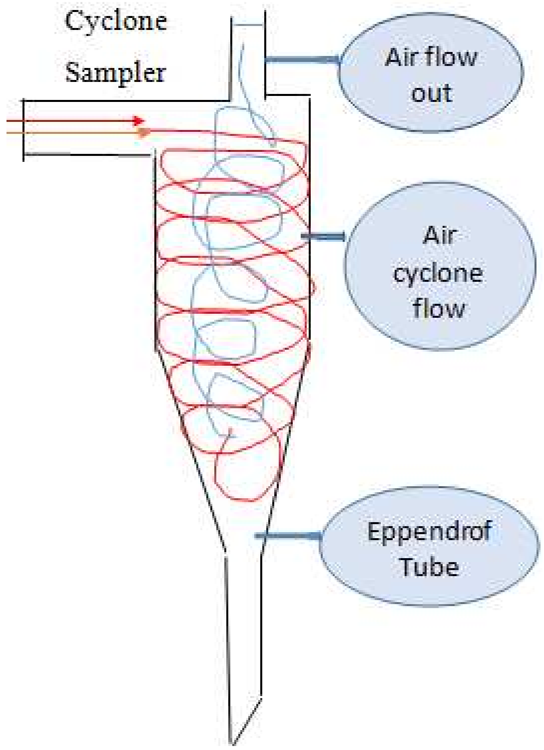

Molecular approaches used for identification of fungi -

Fungi are eukaryotic microorganisms with a diverse metabolism which make them different from other eukaryotes. Till date not much is known about existing fungal diversity in nature. The isolation, characterization and identification of filamentous fungi present in air in any region is important for proper diagnosis and specific treatment towards allergic symptoms induced by inhaled allergens (Kakde, 2015).

Many cultural and molecular techniques aid in studying and identifying diversity of fungi in aerosols. The identification and quantification of air mycoflora is necessary to estimate the accompanying risks and to find exposure threshold. Emergence of bioaerosol sampling and analytical techniques have greatly improvised knowledge related to air flora and their different constituents in various indoor environments (Ghosh *et al.*, 2015).

Hawksworth (2001) have suggested that sequencing of environmental DNA may help in determining diversity more accurately. Blackwell *et al.,* (2006) carried out revolutionary work in fungal systematics through use of DNA sequencing technologies and analytical methods for identification of fungi. Similarly, Hibbett *et al.,*(2013) used modern molecular tools for species level identification of fungi. Phylogenetic relationships studies of fungi causing allergies can be done using morphological, biochemical and genomic study. (McLaughlin *et al.*, 2009).

In 18th century and prior, identification of fungi were carried out by studying type of colony, colour of substrate and aerial mycelium, reverse colour of colony. Observation of macro and micro characteristics of fungi under microscope is preliminary step used for identification of fungi. The shape of conidia, conidiophore, septation, presence of rhizoids, perfect stage etc(Johnson, 1946; Stewart, 1939; Fusillo, 1952). Different types of media have been used for isolation and identification of fungi. The media used includes corn meal agar, Littman's oxgall agar, soil extract agar, Sabouraud dextrose agar etc (Swaebly*et al.*, 1950; Shapiro *et al.*, 1956; Prospero and Reyes, 1955;Walker and Huppert, 1960) Study of biochemical, characteristic is given lesser importance in identification of fungi as compared to morphological and molecular characterization (Tsuchiya *et al.*, 1956).

The protein profiling and assay of volatile compound is of importance in identifying allergens (Lewis and Hopper, 1955) Matrix Assisted Laser Desorption Ionization Time of Flight Mass spectrometry is quick and easy method used for identification of fungi. Till date database is available only to assist identification of medically important fungi and yeast. Becker *et al.*, (2014) used MALDI-TOF mass spectrometry for identification of 390 clinical isolates of which 95.4% of the isolates were correctly identified at species level, without considering LogScore values. On applying Brukers' cutoff value for reliability (LogScore>1.70), 85.6% of the isolates were correctly identified.

Molecular methods employed for identification of fungi includes, DNA barcoding, DNA array technology, Multiplex tandem PCR, Real time PCR, Padlock probe technology with rolling circle amplification, Loop-mediated isothermal amplification (LAMP). DNA barcoding technique involves sequencing of a standard DNA region and agreed upon position in the genome. Default barcode genes for fungi are ITS (Internal Transcribed Spacer) of approximately 0.4-0.6 KB and D1D2 region of LSU rDNA of approximately 0.5-0.7KB. Hebert and co-workers proposed the use of a universally recognised gene—a DNA barcode—for biological identification some years ago (Hebert *et al.*, 2003; Hajibabaei*et al.*, 2007; Tsui*et al.*, 2011). Other optional genes include protein-coding genes (â-tubulin, calmodulin, EF-1á, RPB 1 & 2,), SSU rDNA, IGS (Intergenic spacer region). DNA sequencing of the internal transcribed spacer (ITS) and large subunit (LSU) regions of rRNA, followed by comparative sequence analysis, has been the 'gold standard' for molecular identification of most fungi, particularly of culturable fungi (Tsui*et al.*, 2011). The ITS region is the most frequently sequenced genetic marker of fungi and it is routinely used to address research questions relating to systematics, phylogeny and identification of strains and specimens at and below the species level. (Begerow*et al.*, 2010).

Analysis of the rRNA genes and of the benA and cmd sequence data indicates the presence of three isogenic isolates belonging to a genetically distinct species of the genus Penicillium. (Davolos*et al.*, 2012). Phylogenetic analysis of sequences of the ITS region of the rRNA gene cluster of Aspergillus and other fungal species in addition to â-tubulin and calmodulin genes is of great importance for identification of fungi (Samson *et al*., 2007; Varga*et al.* 2007; Noonim*et al.* 2008).The results obtained by the amplification of the selected genes by PCR method for the detection of aflatoxigenic *Aspergillus* species were found to be significantly correlated withtoxigenic and aflatoxin production by isolated *Aspergillus* species studied using thin-layer chromatography . Presently several Bioinformatic databases such as DNA database, GenBank(Sayers *et al.,* 2016), UNITE (Nilsson *et al.,*2018), MycoBank Database (Robert *et al*., 2013), Index fungorum, GOLD (Reddy *et al*., 2017), etc are being employed for identification up to species and strain level.

References:-

1. Adams, R.I., Miletto, M., Taylor, J.W., Bruns, T.D.(2013). The Diversity and Distribution of Fungi on Residential Surfaces. *PLoS ONE*., 8(11): e78866
2. Adhikari, A., Sen, M.M., Bhattacharya, S.G., Chanda, S.(2000). Incidence of allergenically significant fungal aerosol in a rural bakery of West Bengal, India.*Mycopathologia*.,149(1):35-45.
3. Adhikari, A., Sen, M.M., Gupta-Bhattacharya, S., Chanda, S.(2004). Airborne viable, non-viable, and allergenic fungi in a rural agricultural area of India: a 2-year study at five outdoor sampling stations.*Sci Total Environ.*,326(1-3):123-41.
4. Bauer, H., *et al.,*(2008). Significant contributions of fun-

gal spores to the organic carbon and to the aerosol mass balance of the urban atmospheric aerosol. *Atmos Environ*., 42:588–593.

5. Becker, P.T., de Bel, A., Martiny, D., Ranque, S., Piarroux, R., Cassagne, C., Detandt, M., Hendrickx, M.(2014).Identification of filamentous fungi isolates by MALDI-TOF mass spectrometry: clinical evaluation of an extended reference spectra library. *Med Mycol*., 52(8):826-34.
6. Begerow, D., Nilsson, H., Unterseher, M., Maier, W.(2010). Current state and perspectives of fungal DNA barcoding and rapid identification procedures. *ApplMicrobiolBiotechnol*., 87:99–108.
7. Beggs, J.P., Šikoparija, B., Smith, M.(2017). Aerobiology in the International Journal of Biometeorology, 1957–2017. *International Journal of Biometeorology*., 61:51–58.
8. Benninghoff, W.S.(1991). Aerobiology and its significance to biogeography and ecology. *Grana*.,30(1):9-15.
9. Blackwell, M. *et al.*,(2006). Research coordination networks: a phylogeny for kingdom Fungi (Deep Hypha). *Mycologia*.,98:829– 837.
10. Boehm, F. and Leuschner, R. M.(1986). " Advances in Aerobiology ", Proceedings of the Third International Conference on Aerobiology, BirkhäuserVerlag, Boston.
11. Bovallius, A. and Roffey, R.(1987). Aerobiology and Spread of Microbial *Diseases. Defence Science J*., 37(2):185-204.
12. Cabral, J.P.S.(2010). Can we use indoor fungi as bioindicators of indoor air quality? Historical perspectives and open questions. *Science of the Total Environment.,*408:4285–4295.
13. Caillaud, D., Cheriaux, M., Charpin, D., Chaabane, N., Thibaudon, M.(2018). Outdoor moulds and respiratory health.*Rev Mal Respir*., 35(2):188-196.
14. Cao, C., Jiang, W., Wang, B., Fang, J., Lang, J., Tian, G., *et al.*,(2014). Inhalable microorganisms in Beijing's PM2.5 and PM10 pollutants during a severe smog event. *Environ. Sci. Technol*., 48(3):1499–1507.
15. Chattopadhyay, B.P., Das, S., Adhikari, A., Alam, J.(2007). Exposure to varying concentration of fungal spores in grain storage godowns and its effect on the respiratory function status among the workers. *IndHealth*.,45(3):449-61.
16. Cho SY, Myong JP, Kim WB, *et al*.(2018) Profiles of Environmental Mold: Indoor and Outdoor Air Sampling in a Hematology Hospital in Seoul, South Korea. Int J Environ Res Public Health.15(11):2560.
17. Dacarro, C., Picco, A.M., Grisoli, P., Redolfi, M.(2003). Determination of aerial microbiological contamination in scholastic sports environment. *Journal of Applied Microbiology*.,95:904–912.
18. Das, S. andBhattacharya, S.G.(2008). Enumerating outdoor aeromycota in suburban West Bengal, India, with reference to respiratory allergy and meteorological factors.*Ann Agric Environ Med*., 15(1):105-12.
19. Das, S. andBhattacharya, S.G.(2012). Monitoring and assessment of airborne fungi in Kolkata, India, by viable and non-viable air sampling methods.*Environ Monit Assess.,*184(8):4671-84.
20. Davolos, D., Pietrangeli, B., Persiani, A.M., Maggi, O.(2012). Penicillium simile sp. nov.revealed by morphological and phylogenetic analysis. *International Journal of Systematic and Evolutionary Microbiology*.,62:451–458.
21. Elbert, W., Taylor, P.E., Andreae, M.O., Pöschl, U. (2007). Contribution of fungi to primary biogenic aerosols in the atmosphere: Wet and dry discharged spores, carbohydrates, and inorganic ions. *Atmos Chem Phys*., 7:4569–4588.
22. Fiegel, J., Clarke, R., Edwards, D.A.(2006). Airborne infectious disease and the suppression of pulmonary bioaerosols. *Drug Discovery Today*.,11(1-2):51–57.
23. Fred, E.O. and Blessing, I.O.(2011). Microbiological Indoor and Outdoor Air Quality of Two Major Hospitals in Benin City, Nigeria. Sierra Leone *Journal of Biomedical Research*.,3(3):169-174.
24. Fusillo, M.H., Learnard, D.L., Dozier, S.M.(1952). A simplified technic for the identification of Moniliaalbicans (Candida albicans). *Am J ClinPathol*., 22(1):83-5.
25. Galán, C. *et al.*,(2017). Recommended terminology for aerobiological studies. *Aerobiologia.*,33(3):293–295.
26. Gaur,S. andKaushik,P.(2011).Biodiversity of vesicular arbuscular mycorrhiza associated with *catharanthusroseus, ocimum* spp. and *asparagus racemosus* in Uttarakhand state of Indian central Himalaya.*International Journal of Botany*.,7(1):31-41.
27. Gorny, R.L., Reponen, T., Grinshpun,, S.A., Willeke K.(2001). Source strength of fungal spore aerosolization from moldy building material. *Atmospheric Environment*.,35(28):4853–4862.
28. Hajibabaei, M., Singer, G.A.C., Hebert, P.D.N., Hickey, D.A.(2007). DNA barcoding: how it complements taxonomy, molecular phylogenetics and population genetics. *Trends Genet*.,23:167–172.
29. Hanson, B. *et al.*,(2016). Characterization of the bacterial and fungal microbiome in indoor dust and outdoor air samples: a pilot study. *Environmental Science Processes & Impacts*.,18(6):713-24.
30. Hawksworth, D. L.(2001). The magnitude of fungal diversity: the 1.5 million species estimate revisted. *Mycological Research*.,105:1422–1432.
31. Hebert, P.D.N., Cywinska, A., Ball, S.L., deWaard, J.R.(2003). Biological identifications through DNA barcodes. *Proc R SocLond B*., 270:313–321.
32. Hibbett, D.S. and Taylor, J.W.(2013). Fungal systematics: is a new age of enlightenment at hand? Nat Rev. *Microbiol*., 11:129-33.
33. Hoseini, M., Jabbari, H., Naddafi , K., Nabizadeh, R.,

et al.,(2012). Concentration and distribution characteristics of airborne fungi in indoor and outdoor air of Tehran subway stations. *Aerobiologia*.,29(3):355-363.

34. Johnson, E.A.(1946). An Improved Slide Culture Technique for the Study and Identification of Pathogenic Fungi. *J Bacteriol*.,51(6):689-94.
35. Kakde, U.B.(2015). Study Of Fungal Bioaerosols And Microbiological Deterioration & Degradation Of Library Material. *International Journal Of Researches In Biosciences, Agriculture And Technology*.,2(3):393-398.
36. Karuppasamy, C., Lalsanglura, R., Kannan, R., Saravanakuma.(2013). A preliminary assessment of aerofungal allergens from the wards of civil hospital aizawl. *International Journal of Environmental Sciences*.,4:3.
37. Lewis, G.M. and Hopper, M.E.(1955). Histologic study of fungus cultures; an aid in identification. *AMA Arch Derm*.,72(4):362-70.
38. Martin, P.M.V. and Martin, E.G.(2006). 2,500-year evolution of the term epidemic. *Emerging Infectious Diseases*.,12(6):976–980.
39. McLaughlin, D.J., Hibbett, D.S., Lutzoni, F., Spatafora, J.W., Vilgalys, R.(2009). The search for the fungal tree of life. Trends. *Microbiol*.,17:488-97.
40. Medrela-Kuder, E.(2003). Seasonal variations in the occurrence of culturable airborne fungi in outdoor and indoor air in Cracow. *IntBiodeteriorBiodegrad.*, 52:203–5.
41. Meir, F. C.(1930). Collecting microorganisms from Arctic atmosphere. *Sci. Mo., New York*.,40:5-20.
42. Nilsson, R.H., Larsson, K-H, Taylor, A.F.S., Bengtsson-Palme, J., Jeppesen, T.S., Schigel, D., Kennedy, P., Picard, K., Glöckner, F.O., Tedersoo, L., Saar, I., Kõljalg, U., Abarenkov, K.(2018). The UNITE database for molecular identification of fungi: handling dark taxa and parallel taxonomic classifications. *Nucleic Acids Research.*,47(D1):D259–D264.
43. Noonim, P., Mahakarnchanakul, W., Varga, J., Frisvad, J.C., Samson, R.A.(2008). Two novel species of Aspergillus section Nigri from Thai coffee beans. *International Journal of Systematic and Evolutionary Microbiology.*,58:1727–1734.
44. Ogo´rek, R., Kozak, B., Vis¡n¡ovska ,Z., Tanc¡inova, D.(2017). Phenotypic and genotypic diversity of airborne fungal spores in Dema¨novska´ Ice Cave (Low Tatras, Slovakia). *Aerobiologia.*,34(1):13-28.
45. Oliveira, M., Ribeiro, H., Abreu, I.(2003).Annual variation of fungal spores in atmosphere of Porto. *Ann Agric Environ Med*., 12:309–15.
46. Palmero, D., Rodríguez, J.M., de Cara, M., Camacho, F., Iglesias, C., Tello, J.C.(2011). Fungal microbiota from rain water and pathogenicity of Fusarium species isolated from atmospheric dust and rainfall dust. *J IndMicrobiolBiotechnol*., 38(1):13-20.
47. Perring, A.E. *et al.*,(2015). Airborne observations of regional variation in fluorescent aerosol across the United States. *Journal of Geophysical Research: Atmospheres.*,120:1153–1170.
48. Prospero, M.T. and Reyes, A.C.(1955).The efficacy of corn meal agar, soil extract agar and purified polysaccharide medium in the morphological identification of Candida albicans. *Acta Med Philipp*.,12(2):69-74.
49. Raj, R. and Joshi, N.(2016). A Comparative study of aeromycoflora in traffic and residential areas of Haridwar City, India. *International Journal of Current Microbiology and Applied Sciences*.,5(6):161-170.
50. Reddy, T.B.K., Mukherjee, S., Stamatis, D., Bertsch, J., Ovchinnikova, G., Verezemska, O., Isbandi, M., Thomas, A.D., Ali R., Sharma, K., Kyrpides N.C.(2017). Genomes OnLine Database (GOLD) v.6: data updates and feature enhancements. *Nucleic Acids Res*., 45:D446–D456.
51. Robert, V., Vu, D., Amor, A.B.H., van de Wiele, N., Brouwer, C., Jabas, B., Szoke, S., Dridi, A., Triki, M., *et al*.,(2013). MycoBank gearing up for new horizons. *IMA Fungus*.,4(2):371–379.
52. Rosas, I., Calderdn, C., Martinez, L., Ulloa, M., Lacey, J.(1997). Indoor and outdoor airborne fungal propagule concentrations in Mexico City. *Aerobiologia.*,13:23-30.
53. Roy, S., Chakraborty, A., Maitra, S., Bhattacharya, K.(2017). Monitoring of airborne fungal spore load in relation to meteorological factors, air pollutants and allergic symptoms in Farakka, an unexplored biozone of eastern India.*Environ Monit Assess.,*189(8):370.
54. Saad, S.G.(2003). Integrated environmental management for hospitals. *Indoor and Built Environment*., 12(1-2):93-98.
55. Saikumari, D. and Saxena., N.(2016). Isolation of Allergic Fungal Microflora from the Aero-Spora of Khammam District, India. *International Journal of Current Microbiology and Applied Sciences*.,5(12):486-492.
56. Samson, R.A., Varga J., Witiak S.M.(2007). The species concept in *Aspergillus*: recommendations of an international panel. *Studies in Mycology*.,59:71–73.
57. Sayers, E.W., Clark, K., Karsch-Mizrachi I., Lipman, D.J., Ostell, J.(2016) GenBank. *Nucleic Acids Res*., 44:D67–D72.
58. Sen, B. and Asan, A.(2008). Fungal flora in indoor and outdoor air of different residential houses in Tekirdag City (Turkey): Seasonal distribution and relationship with climatic factors. *Environmental Monitoring and Assessment*.,151(1-4):209–219.
59. Shapiro, E.M., Mullins, J.F., Pinkerton, M.E.(1956). Direct identification of Candida albicans on Littman's oxgall agar. *J Invest Dermatol*.,26(1):77-80.
60. Sharma, R., Deval, R., Priyadarshi, V., Gaur ,S.N., Singh, V.P., Singh, A.B.(2011). Indoor fungal concentration in the homes of allergic/asthmatic children in Delhi, India. *Allergy Rhinol (Providence)*.,2(1):21-32.
61. Shivakumar, K.M., Prashant, G.M., Shankari, M.G.S., Reddy, S.V.V., Chandu G.N.(2007). Assessment of at-

mospheric microbial contamination in a mobile dental unit. *Indian J Dent Res.*, 18(4):177-80.
62. Shivakumara, H. B.(2002). Aeromycology of Shimoga city. Ph.D. Thesis, Botany.,Karnatak University. pp 1-3.
63. Sing, D., Sing, C.F.(2010). Impact of direct soil exposures from airborne dust and geophagy on human health. *Int J Environ Res Public Health*.,7(3):1205-23.
64. Srinivas, T., Lakshmia, A.K., Prasuna, R.G.,Veronica, S.A.(2007). Bioallergens in the air of selected areas in Visakhapatnam. *J Environ Sci Eng.,*49(4):287-92.
65. Stetzenbach, L.D.(2002). Introduction to Aerobiology; in Hurst CJ, Crawford RL, Knudsen G, McInerney M, Stetzenbach LD (eds): Manual of Environmental Microbiology, ed 2. ASM Press, Washington DC, pp 801-813.
66. Stewart, R.A.(1936). The Identification of Fungi Causing Disease in California. *CalWest Med.*, 50(1):4-6.
67. Sudharsanam, S., Swaminathan, S., Ramalingam, A., Thangavel, G., Annamalai, R., Steinberg, R., Balakrishnan, K., Srikanth, P.(2012). Characterization of indoor bioaerosols from a hospital ward in a tropical setting. *Afr Health Sci.*, 12(2):217-25.
68. Swaebly, M.A., Christensen, C.M., Grahek, T.A.(1950).Tests of different media for the collection and identification of air-borne saprophytic fungi. *J Allergy*.,21(5):404-8.
69. Swapna, P.K.andLalchand, P.D.(2016).Fungal biodiversity of a library and cellulolytic activity of some fungi. *Indian J Pharm Sci.*, 78(6):849-854.
70. Tsuchiya, T., Fukazawa, Y., Kawakita, S.(1956). A method for the rapid identification of the genus Candida. *MycopatholMycol Appl.*, 10(3):191-206.
71. Tsui, C.K.M. *et al.*,(2011). Molecular techniques for pathogen identification and fungus detection in the environment. *IMA Fungus*.,2(2):177-189.
72. Varga J., Due M., Frisvad J.C., Samson R.A.(2007). Taxonomic revision of *Aspergillus* section *Clavati* based on molecular, morphological and physiological data. *Studies in Mycology*.,59:89–106.
73. Walker, L., and Huppert, M.(1960).Corn meal-tween agar: an improved medium for the identification of Candida albicans. *Am J ClinPathol.*, 33:190-4.
74. West, J., and Kimber, R.(2015). Innovations in air sampling to detect plant pathogens. *Ann Appl Biol.*, 166(1):4-17.

Figure 1

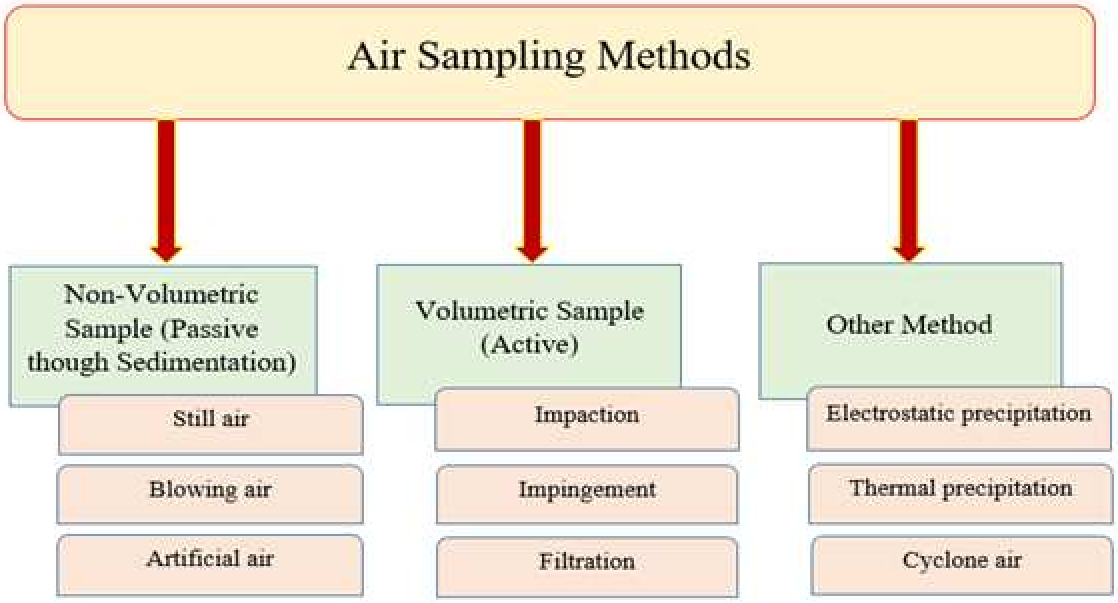

Table 1 :Commonly Used Volumetric Sampler for Aero-Fungal Spore

Sample Collection Method	Sampler	Comments
Slit impaction	Burkard spore traps	Can traps 3.7 µm particles size, one-day and 7 days sampling heads, required for Microscopy, bio and immuno chemistry, molecular biology analysis
	Burkard Personal sampler	
	Air-O-Cell cassette	
Sieve impaction	Andersen 6 stage	Can trap 7.0 to 0.65 µm particles size, best for culturable aero-fungi. Allow for species identification and for other analysis tools
	Andersen 2 stage	
	Andersen 1 stage	
	Aerotech 6	
	Burkard sampler (agar plate)	
	SAS (Surface Air Sampler)	
Liquid impinge	AGI-30	Can collect air particles range from 2–40 ìm in size . Required for various analysis for air samples like microscopy, culturing, biochemistry, Immunochemistry, Molecular biology, Flow cytometry and Image analysis.
	Biosampler	
Filtration	Microbial air sampler with HEPA filter	Disposable plastic cassettes with filters size from 25 to 47 mm in diameter. Various analytical methods can be applied on sample collected by filtration.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

मध्यप्रदेश के चयनित सार्वजनिक उपक्रम मध्यप्रदेश स्टेट हस्तशिल्प एवं हाथकरघा निगम लिमिटेडमें कार्मिकों की कार्य कुशलता में प्रशिक्षण तथा विकास की भूमिका

राखी कुशवाहा*

शोध सारांश – भारत एक विकासशील देश है। भारत को विश्व का एक समृद्धशाली राष्ट्र बनाने के लिए यह आवश्यक है कि राष्ट्र का सर्वोन्मुखी विकास किया जाये परन्तु बढ़ती हुई आबादी और तदजन्य मौलिक समस्याएं भारतीय अर्थव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव डाल रही हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि आने वाले वर्षो मेंप्रतिवर्ष एक करोड़ के हिसाब से जनसंख्या में वृद्धि होगी और यह वृद्धि विशेषकर ग्रामीण अंचलों में होगी। इसके विपरीत ग्रामीण अंचलो में मौजूदा आबादी के पालन–पोषण के लिये भी भूमि पर्याप्त नहीं है। अतिरिक्त श्रम शक्ति में वार्षिक वृद्धि और उसे खपाने की क्षमता कृषि में न होने के कारण गैर कृषि क्षैत्र के अन्तर्गत लाभदायक रोजगार प्रदान करने की आवश्यकता अनुभव की जा रही है अन्यथा यह अतिरिक्त श्रम शक्ति आर्थिक विकास में भयानक अवरोध उत्पन्न कर सकती है। इस भयानक स्थिति से उबरने के लिये रास्ता खोजने की कोशिश की गई, अन्ततोगत्वा यह पाया गया कि आज की स्थिति में सरल तकनीक एवं पद्धति पर आधारित उद्योगों पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

प्रस्तावना – विगत एक दशक से औद्योगिक क्षेत्र में तेजी से विकास हुआ है तथा सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों का औद्योगीकरण में विशेष रुप से उल्लेखनीय योगदान दिया है। आर्थिक रुप से सार्वजनिक उपक्रमों ने देश के कमजोर क्षेत्रों को मजबूत किया है, रोजगार के अवसर को बढ़ाया है तथा आर्थिक सामाजिक पहलू में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में सहायता प्रदान की है। ये सार्वजनिक उपक्रम सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीएनपी) को ऊपर उठाने के लिए तथा उत्पादन में सुधार हेतु संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग करने में सक्षम है। इसलिए किसी भी उद्योग का विकास संबंधित सभ्यता के विकास का पर्याय बन गया है। यह भी सत्य है कि संगठनों के स्वास्थ्य के लिए ज्ञान और कौशल विकास महत्वपूर्ण है।

आज हम सूचना युग में रहते हैं, जहां हर संस्था की पूंजी बौद्धिकता पर निर्भर करती है। अत: बौद्धिक पूँजी को बनाए रखने और सुधारने प्रमुख तरीकों में से एक है, इसलिए उपक्रमों द्वारा प्रदत्त प्रशिक्षण की गुणवत्ता उसके मूल्य को प्रभावित करती है। सुशिक्षित कर्मचारी के विकास में लागत कम रहती है तथा प्रशिक्षण कर्मचारी प्रतिधारक को प्रभावित करता है और व्यय के बजाय निवेश के रुप में देखा जाता है व उच्च रिटर्न पैदा कर सकता है। प्रशिक्षण का उद्देश्य संगठनात्मक प्रयास है जिसका उद्देश्य कर्मचारियों को उन कार्यो के कुशल निष्पादन के लिए आवश्यक बुनियादी कौशल प्राप्त करने में मदद करना है जिसके लिए वे काम पर रखे गये हैं। दूसरी तरफ विकास कर्मचारियों को अतिरिक्त कर्तव्यों का पालन करने और संगठनात्मक पदानुक्रम में महत्व के पदों को संभालने के लिए किए गए कार्यो से सम्बन्धित है। प्रशिक्षण एक अल्पकालिक शैक्षिक प्रक्रिया है, जो एक व्यवस्थित और संगठित प्रक्रिया का उपयोग करते हुये कर्मचारियों के लिए तकनीकी ज्ञान और कौशल के मार्ग खोलती है।

प्रशिक्षण कर्मचारियों के कौशल, व्यवहार और योग्यता में परिवर्तन तथा संगठन के प्रति दृष्टिकोण को बदलता है। प्रशिक्षण एक संगठन के सदस्यों की सहायता करने, संगठन द्वारा आवश्यक ज्ञान, कौशल, सदस्यों की सहायता करने, संगठन द्वारा आवश्यक ज्ञान, कौशल, योग्यता और दृष्टिकोण को प्राप्त करने और लागू करने के प्राथमिक उद्देश्य के लिए किये गये शिक्षण और सीखने की गतिविधियों को संदर्भित करता है। कर्मचारी विकास मानव संसाधन विकास की महत्वपूर्ण उपप्रणाली है, जो संगठन को बढाने की इच्छा रखता है, समाज की बदलती जरुरतों के अनुरुप परिवर्तन होना अपेक्षित हैं। प्रशिक्षण के माध्यम से उपक्रम के प्रदर्शन और एक बदलते समाज की आवश्यकता के बीच की खाई को निष्प्रभावी बनाया जा सकता है।

साहित्य समीक्षा

मित्ताल, एस और मिश्रा, एम (2017) ने अपने अध्ययन में प्रभावकारी प्रशिक्षण और विकास के संदर्भ में सार्वजनिक उपक्रमों की प्रतिस्पर्धात्मकता में बताया कि कार्मिकों के प्रदर्शन को बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम की प्रभावशीलता को मापना आवश्यक हो जाता है। इस अध्ययन के लिए वर्णनात्मक शोध पद्धति को दो सौ और तीन वैध प्रश्नावली का प्रयोग किया गया, जो सरल यादृच्छिक नमूना तकनीक पर आधारित था। इस अध्ययन के निष्कर्षो के परिणाम से ज्ञात होता है कि प्रशिक्षण और विकास कार्मिकों के कौशल और ज्ञान को तथा उनके प्रदर्शन और संगठनात्मक प्रभावशीलता के प्रभावित करता है।

पोसिंदु और एस. निर्मला (2017) ने अपने अध्ययन महिला उद्यमशीलता विकास में एम.एस.एम.ई. की भूमिका में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों के माध्यम से महिलाओं की उद्यमशीलता के विकास के लिए उपलब्ध प्रशिक्षण की योजनाओं पर केन्द्रित है। मौजूदा महिला उद्यमियों के लिए एम.एस.एम.ई., सूक्ष्म और लघु उद्यम, क्लस्टर विकास कार्यक्रम (एमएसई–सीडीपी) और अन्य योजनाओं का प्रतिस्पर्धा के मूल्य, प्रौद्योगिकी की प्रगति, सर्वोत्तम मैकेनाइज्ड तरीके से अभ्यास, उत्पादों को बढ़ावा देने, रोजगार के निर्माण आदि को बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण प्रदान करता है। सभी आयामों से निरन्तर समन्वित प्रयासों से महिलाओं के लिए उद्यमशीलता की गतिविधि में बढोतरी

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

करने का मार्ग प्रषस्त किया जा सकता है जिससे परिवार की सामाजिक एवं आर्थिक विकास में योगदान दिया जा सके।

शोध अध्ययन के उद्देश्य – शासकीय तंत्र में प्रशिक्षण और विकास प्रणाली को दोषमुक्त एवं व्यवस्थित किस प्रकार बनाया जा सके ज्ञात करना।

प्रस्तावित शोध मध्यप्रदेश के चयनित मध्यप्रदेश स्टेट हस्तशिल्प एवं हाथकरघा निगम लिमिटेड में कार्मिकों की कार्य कुशलता में प्रशिक्षण तथा विकास की भूमिका का अध्ययन मे सविचार निर्दशन विधि अपनाई गई एवं सूचनाओं को एकत्रित कर परिणाम तक पहुंचा गया है। प्रस्तुत शोध प्रबंध प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों की प्रकार के समकों पर आधारित है। प्राथमिक संमक के लिए प्रश्नावली का प्रयोग किया गया तथा 100 कार्मिकों का चयन किया गया। द्वितीयक संमक के लिए कार्यालय, ग्रंथालय, वार्षिक रिपोर्ट्स एवं विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं से जानकारी प्राप्त की गई। प्रस्तावित शोध एवं साधनों की सीमाओं और शोध विषय की आवश्यकता को ध्यान मे रखते हुए दैव निर्दशन विधि का प्रयोग किया गया।

नमूना आकार– सार्वजनिक उपक्रम मध्यप्रदेश स्टेट हस्तशिल्प एवं हाथकरघा निगम लिमिटेड में 100 कार्मिकों का चयन किया जिन्होंने प्रशिक्षण लिया तथा अपने कार्य पर प्रयोग किया।

नमूना क्षेत्र –सार्वजनिक उपक्रम मध्यप्रदेश स्टेट हस्तशिल्प एवं हाथकरघा निगम लिमिटेडका हेडऑफिस भोपाल है, अत: भोपाल से ही सभी कार्मिकों का चयन किया गया।

यअनोवा परीक्षण–'अनोवा परीक्षण' का प्रयोग किया गया। सभी प्रश्न लिकर्ड स्केल पर आधारित थे तथा प्रशिक्षण के पहले व प्रशिक्षण के उपरान्त उनकी कार्यकुशलता में वृद्धि ज्ञात करने के लिए उपरोक्त टेस्ट का उपयोग किया। लिकर्ट स्केल 1 से 5 पाइंट पर आधारित था तथा कार्मिकों की संतुष्टि स्तर मापन के लिए यही उपयुक्त माध्यम है।

निर्दशन विधि का प्रयोग–प्रस्तुत शोध प्रबंध के अध्ययन के विस्तार के कारण संगणना पद्धति का प्रयोग संभव नहीं था। अत: निर्दशन विधि के प्रयोग द्वारा विषय का उद्देश्यपूर्ण बनाया गया तथा निर्दशन विधि से प्रतिनिधि समंकों को एकत्र किया गया।

न्यादर्श का आकार (सेम्पल साइज) 100 उत्तरदाताओं का चयन किया गया।

तालिका क्र. 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

चार्ट क्र. 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

मध्यप्रदेश स्टेट हस्तशिल्प एवं हाथकरघा निगम लिमिटेडके कार्मिकों में आवष्यकता अनुरुप प्रशिक्षण के सन्दर्भ में 49 प्रतिशत पूर्णत: संतुष्ट 19 प्रतिशत संतुष्ट, 11 प्रतिशत तटस्थ, 11 प्रतिशत असंतुष्ट व केवल 10 प्रतिशत पूर्णत: असंतुष्ट थे,प्रशिक्षण विषय की प्रासंगिकताके सन्दर्भ में 35 प्रतिशत पूर्णत: संतुष्ट 25 प्रतिशत संतुष्ट, 10 प्रतिशत तटस्थ, 15 प्रतिशत असंतुष्ट व केवल 15 प्रतिशत पूर्णत: असंतुष्ट थे,समग्र विकासके सन्दर्भ में 20 प्रतिशत पूर्णत: संतुष्ट 30 प्रतिशत संतुष्ट, 10 प्रतिशत तटस्थ, 20 प्रतिशत असंतुष्ट व 20 प्रतिशत पूर्णत: असंतुष्ट थे,आत्ममूल्य में वृद्धिके सन्दर्भ में 36 प्रतिशत पूर्णत: संतुष्ट 27 प्रतिशत संतुष्ट, 7 प्रतिशत तटस्थ, 11 प्रतिशत असंतुष्ट व 19 प्रतिशत पूर्णत: असंतुष्ट थे,नेतृत्व गुणों का विकासके सन्दर्भ में 35 प्रतिशत पूर्णत: संतुष्ट 25 प्रतिशत संतुष्ट, 14 प्रतिशत तटस्थ, 10 प्रतिशत असंतुष्ट व 16 प्रतिशत पूर्णत: असंतुष्ट थे,प्रदर्षन का मूल्यांकनसन्दर्भ में 30 प्रतिशत पूर्णत: संतुष्ट 20 प्रतिशत संतुष्ट, 15 प्रतिशत तटस्थ, 10 प्रतिशत असंतुष्ट व केवल 25 प्रतिशत पूर्णत: असंतुष्ट थे,तकनीकी ज्ञानके सन्दर्भ में 30 प्रतिशत पूर्णत: संतुष्ट 24 प्रतिशत संतुष्ट, 17 प्रतिशत तटस्थ, 13 प्रतिशत असंतुष्ट व 16 प्रतिशत पूर्णत: असंतुष्ट थे।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध में कार्मिकों के प्रशिक्षण व कार्यकुशलता पर बल दिया गया है। चयनित सार्वजनिक उपक्रम के कार्मिकों का मत प्रशिक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करने की कोशिश की गयी है। चर विश्लेषण के आधार पर सात कारकों के मान को ज्ञात किया गया है, यह इस प्रकार हैं – आवश्यकता अनुरूप प्रशिक्षण, विषय की प्रांसगिता, समग्र विकास आत्ममूल्य मे वृद्धि, नेतृत्व गुणों का विकास, प्रदर्शन का मूल्यांकन व तकनीकी ज्ञान। यह सभी कारकों का सार्वजनिक उपक्रमों में कार्मिकों की कार्यकशुलता में प्रशिक्षण तथा विकास की भूमिका में योगदान देते हैं। प्रस्तुत शोध में सुझाव दिये गये है जिससे प्रशिक्षण प्रणाली को और अधिक त्रुटि रहित किया जा सके। प्रशिक्षण एवं विकास मानव संसाधन का अन्तरंग हिस्सा है, जो भारतीय अर्थव्यवस्था या किसी भी संस्था के विकास में योगदान देता है। अत: प्रत्येक संस्था को कार्मिकों के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता व उसके विकास पर ध्यान देना होगा। प्रशिक्षण कार्यक्रम को योजनाबद्ध संचालन पर जोर दिया गया है। प्रस्तुत शोध में प्रशिक्षण पद्धतियों की महत्ता एवं सार्वजनिक उपक्रमों में इसकी क्रियात्मक उपादेयता के सन्दर्भ में प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तुत शोध में निम्न सुझाव दिये गये हैं –

1. प्रशिक्षण कार्यक्रम की रुपरेखा व संरचना इस प्रकार की होना चाहिए कि कार्मिकों को नये कौशल विकास का अवसर प्राप्त होता रहे।
2. प्रशिक्षण कार्यकम की अवधि कार्मिकों के सुविधा अनुसार होनी चाहिए ताकि वे एकाग्र मन से सीख सकें।
3. समय–समय पर प्रशिक्षणकर्ता द्वारा कार्मिकों को प्रेरित किया जाना चाहिए ताकि वे अपनी कार्यकुशलता में वृद्धि कर सके।
4. प्रशिक्षण विधि में प्रायोगिकता पर बल देना चाहिए ताकि वे अपनी योग्यताओं को विकसित कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विभागीय प्रकाशन, वार्षिक प्रतिवेदन 2011 से 2017 तक मध्यप्रदेश स्टेट हस्तशिल्प एवं हाथकरघा विकास निगम लिमिटेड।
2. Abdul et, al. (2012) Training and Development Practices in Public Sector Enterprises. Information Management & Business Review. Vol. 4 Issue 1, p8.
3. Abraham's (1989) "Developing a Culture of High Performance," Indian Journal of Industrial Relations, Vol,37(1): 421-433.
4. Aggarwal B.P., (1981), "PSUs: A Study of their Policies and Progress", New Delhi, pp. 11.
5. Aguinis, H., Kraiger, K.,"Benefits of training and development for individuals and teams, organizations, and society". Annual Review of Psychology, Vol. 60, pp. 451–474, 2009.
6. Akhtar et, al. (2011) Extent of training in PSUs and its Impact on employees' motivation and involvement in job. Interdisciplinary Journal of Contemporary Research in Business. Vol. 2 Issue 12, p793.
7. Akilandeswari P. & Jayalakshmi (2014) A Study of Effectiveness of Training in PSUs. International Journal of Recent Advances in Organizational Behaviour and Decision Sciences (IJRAOB) –Volume 1 No. 1, pp. 35-44.

8. Alan Barrett, Philip J. O'Connell,(2001). "Does Training Generally Work? The Returns to In-Company Training", *Industrial and Labour Relations Review*, 54(3), PP: 647-660.
9. Blanchard P. N. and Thacker J.W., (1998) "Effective Training: Systems, Strategies and Practices", Prentice Hall, New Jersey.
10. Bloom, B.S., Hastings, J.T. & Mal Daus, G.F., (1971). "Evaluation Methods", Handbook on Formative and Summative Evaluation of Student Learning, New York, McGraw Hill.
11. Chahal, A. (2013) A Study of Training Need Analysis Based Training and Development: Effect of Training on Performance by Adopting Development Based Strategy. International Journal of Business and Management Invention. Volume 2 Issue 4, PP.41-51.
12. Chakrabarty, K. C., (2012) Human Resource Management in M.P. Civil Supplies Corporation- Need for a New Perspective. HR Conference of Public Sector Banks at Mumbai.
13. Vinayasamoorthy A. (2008) Globalization and recent trends in PSUs, Banking Finance. Vol 21, No. 2, pp 9-14.
14. William A. Deterline, (1977). "Credibility in Training, Part III", Training and Development Journal, ASTD, 31(2), PP: 6-10.

तालिका क्र. 1 – कारक विश्लेषण (मध्यप्रदेश स्टेट हस्तशिल्प एवं हाथकरघा निगम लिमिटेड)

	पूर्णत: संतुष्ट	संतुष्ट	तटस्थ	असंतुष्ट	पूर्णत: असंतुष्ट
आवश्यकता अनुरुप प्रशिक्षण	49	19	11	11	10
प्रशिक्षण विषय की प्रासंगिकता	35	25	10	15	15
समग्र विकास	20	30	10	20	20
आत्ममूल्य में वृद्धि	36	27	7	11	19
नेतृत्व गुणों का विकास	35	25	14	10	16
प्रदर्शन का मूल्यांकन	30	20	15	10	25
तकनीकी ज्ञान	30	24	17	13	16

चार्टक्र. 1 कारक विश्लेषण (मध्यप्रदेश स्टेट हस्तशिल्प एवं हाथकरघा निगम लिमिटेड)

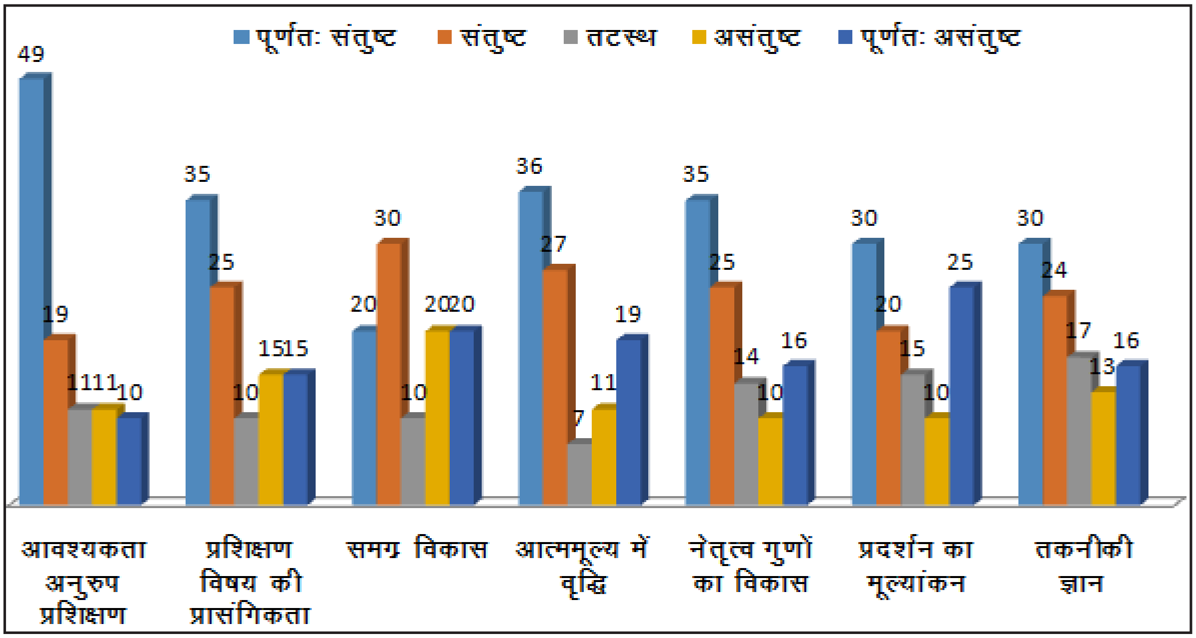

****

महिला सशक्तिकरण: एक कदम समानता की ओर

प्रो. रेणु जटाना* कन्हैया लाल**

प्रस्तावना – मानव सभ्यता के आरम्भ से नर व नारी परिवार के मूल अंग रहे हैं। वे दोनों नदी के दो किनारों की तरह है जिनके मध्य जल की तरह जीवन धारा बहती हैं। एक की अनुपस्थिति दुसरे को अधुरा बना देती हैं। इसके बावजूद समाज में लैंगिक असमानता के कारण नारी की दशा दयनीय प्रतीत होती हैं तथा आज प्रत्येक क्षेत्र में महिला सशक्तिकरण की मांग की जा रही है। महिला सशक्तिकरण को विश्व स्तर पर सभी क्षेत्रों में प्रगति हासिल करने या सतत विकास प्राप्त करने के लिए एक प्रमुख तत्व के रूप में मान्यता प्राप्त है। ऐसे परिदृश्य में महिला सशक्तिकरण का अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है। यह शोध पत्र इसी दिशा में किया गया एक प्रयास हैं। अत: इस शोध पत्र में शक्ति, सशक्तिकरण व महिला सशक्तिकरण की अवधारणा से परिचित कराते हुए महिला सशक्तिकरण की आवश्कता एवम महिला सशक्तिकरण की दिशा में उठाये गये कदमो का अध्ययन किया गया हैं।

शब्द कुंजी – सभ्यता, लैंगिक असमानता, सतत विकास, शक्ति, सशक्तिकरण, महिला सशक्तिकरण।

परिचय – मानव विकास की सम्पूर्ण यात्रा में नारी का स्थान गरिमामय तथा उसका योगदान सर्वोपरि रहा हैं। 'किसी समाज की गरिमा और संस्कृति का पता उस समाज में महिलाओं की स्थिति से लगाया जा सकता है।'[1] इस संबंध में जवाहरलाल नेहरू का कथन भी प्रासंगिक है कि 'लोगों को जगाने के लिए, यह वह महिला ही है जिसको सबसे पहले जागृत करना है। एक बार जब वह आगे बढ़ती है, तो घर चलता है, गाँव चलता है, देश चलता है और इस तरह हम कल के भारत का निर्माण करते हैं।'[2] लेकिन भारतीय समाज में नारी का स्थान सदैव एक समान नही रहा है। सामाजिक परिस्थितियों में बदलाव के साथ साथ नारी को विभिन्न स्थितियों से गुजरना पड़ा है। कभी उसे देवी तुल्य मान कर पूजा गया तो कभी रिवाजो की बेड़ियों में जकड़ कर पशु तुल्य व्यवहार भी किया गया। वर्तमान में लैंगिक असमानता के कारण उत्पन्न सामाजिक विषमता को समाप्त करने हेतु हेतु महिला सशक्तिकरण आज एक अनिवार्य आवश्कता बन गयी हैं। क्योंकि महिला सशक्तिकरण 'महिलाओं की क्षमताओं को बढ़ाना और उन्हें सशक्त बनाना आर्थिक वृद्धि और समग्र विकास में योगदान करने का सबसे सुरक्षित तरीका है।'[3] लेकिन व्यावहारिक रूप से आज भी महिला सशक्तीकरण एक भ्रम है। दिन-प्रतिदिन महिलाएं विभिन्न सामाजिक बुराइयों का शिकार हो रही हैं।

शोध पत्र का उद्देश्य :

1. शक्ति व सशक्तिकरण की आधारभूत अवधारणा से अवगत कराना।
2. महिला सशक्तिकरण की अवधारणा से अवगत कराना।
3. महिला सशक्तिकरण के विभिन्न संकेतक तथा आयामों को रेखांकित करना।
4. महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता /महत्त्व, बाधाओ तथा इस दिशा में उठाये गये कदमो को रेखांकित करना।

अध्ययन प्रविधि – शोध प्रविधियों का चुनाव शोध की प्रकृति एवं प्रकार पर निर्भर करता है। चूंकि प्रस्तुत शोध की प्रकृति वर्णनात्मक है, अत: शोध हेतु द्वितीयक तथ्यों का उपयोग किया गया है। द्वितीयक तथ्यों के संकलन हेतु पुस्तकों, शोध-पत्रिकाओं, सम्पादित ग्रन्थों एवं इन्टरनेट का प्रयोग किया गया है। शोध की पद्धति मूलत: वर्णनात्मक है जिसमें सहायक पद्धतियों के रूप में ऐतिहासिक पद्धति, सामग्री विश्लेषण, पुस्तकालयी अध्ययन पद्धति इत्यादि का उपयोग किया गया है।

सशक्तिकरण की अवधारणा – 'शक्ति' शब्द सशक्तिकरण का प्रमुख शब्द व केंद्र बिंदु है। इंटरनेशनल एन्साइक्लोपीडिया ऑफ वीमेन (1999) के अनुसार, शक्ति का अर्थ है क्षमता और किसी के जीवन को वांछित सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक लक्ष्यों या स्थिति के लिए निर्देशित करना।[4] वेबस्टर के न्यू वर्ल्ड डिक्शनरी (1982) के अनुसार, 'सशक्त' शब्द का अर्थ शक्ति बनाना या उत्पन्न करना है।[5] सशक्तिकरण शब्द का उपयोग कई अलग-अलग संदर्भों में और कई अलग-अलग संगठनों द्वारा किया जाता है। उदाहरण के लिए, सशक्तिकरण से संबधित साहित्य को शिक्षा के क्षेत्र में, सामाजिक कार्य, मनोविज्ञान, 1960 के दशक में अमेरिकी कट्टरपंथी राजनीति और उत्तर और दक्षिण में सामुदायिक विकास समूहों के साथ-साथ नारीवादी और विकास संगठनों के काम में पाया जाता है।[6] शक्ति को आमतौर पर दो तरीकों से परिभाषित किया जाता है: (1) प्राप्त करने की क्षमता के रूप में क्या चाहता है और (2) दूसरों को सोचने, महसूस करने, कार्य करने के लिए प्रभावित करने की क्षमता और / या उन तरीकों पर विश्वास करें जो आगे किसी की रुचि रखते हैं।[7] यह संबंधपरक अवधारणा दो प्रकार की शक्ति में परिलक्षित होती है – व्यक्तिगत और सामाजिक शक्ति। 'शक्ति' शब्द 'सशक्तिकरण' का प्रमुख शब्द है जिसका का तात्पर्य भौतिक संपत्ति, बौद्धिक संसाधन और विचारधारा पर नियंत्रण है। भौतिक संपत्ति (श्रम, धन और धन तक पहुंच) जिस पर किसी भी प्रकार नियंत्रण स्थापित किया जा सकता है यथा- भौतिक, मानव, वित्तीय, जैसे कि भूमि, जल, जंगल, लोगों के निकाय और एजेंसियां के द्वारा। ज्ञान की जानकारी, विचारों को बौद्धिक संसाधनों में शामिल किया जा सकता है। विचारधारा पर नियंत्रण का प्रतीक है, उत्पन्न करने की क्षमता, प्रचार करने की क्षमता, विश्वासों के विशिष्ट सेटों को बनाए रखने और संस्थागत करने की क्षमता, सिद्धांतों,

* विभागाध्यक्ष (बैंकिंग एवं व्यावसायिक अर्थशास्त्र विभाग) यू सी सी एम एस,उदयपुर (राज.) भारत
**शोधार्थी (बैंकिंग एवं व्यावसायिक अर्थशास्त्र विभाग) यू सी सी एम एस,उदयपुर (राज.) भारत

मूल्य व्यवहार, क्रिया और व्यवहार 'वस्तुतः' यह निर्धारित करते हैं कि लोग कैसे सोचते हैं, और एक सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक वातावरण में कार्य करते हैं।[8]

सशक्तिकरण शब्द व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाता है, लेकिन शायद ही कभी परिभाषित किया गया। शब्द लोकप्रिय होने से बहुत पहले, महिलाएं अपने जीवन पर नियंत्रण पाने के बारे में बोल रही थीं और घर और समुदाय में उन्हें प्रभावित करने वाले निर्णयों में, सरकार और अंतर्राष्ट्रीय विकास नीतियों में भाग लेती। 'सशक्तिकरण' शब्द इस अर्थ को उजागर है: नियंत्रण प्राप्त करना, भाग लेने की भावना और निर्णय लेने की भावना। हाल ही में, इस शब्द ने अंतरराष्ट्रीय संगठनों और संयुक्त राष्ट्र सहित विकास एजेंसियां की शब्दावली में प्रवेश किया है।[9] 'सशक्तिकरण' एक सक्रिय, बहुआयामी प्रक्रिया है जो महिलाओं को उनकी पूर्ण पहचान का एहसास करने और जीवन के सभी क्षेत्रों में शक्तियां में सक्षम बनाती है। शक्ति कोई वस्तु नहीं है जिसका लेन-देन किया जायेय न ही इसे भिक्षा के रूप में दिया जा सकता है।'शक्ति प्राप्त करनी होगी और एक बार अधिग्रहित होने के बाद, इसे अभ्यास, निरंतर और संरक्षित करने की आवश्यकता है।'[10] अन्य शब्दों में, सशक्तीकरण एक बहुआयामी सामाजिक प्रक्रिया है जो लोगों को अपने जीवन पर और अपने समाज में उन मुद्दों पर कार्रवाई करके नियंत्रण हासिल करने में मदद करती है जिन्हें वे महत्वपूर्ण मानते हैं। सशक्तीकरण सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और आर्थिक क्षेत्रों में और विभिन्न स्तरों पर होता है जैसे कि व्यक्ति, समूह और समुदाय और यथास्थिति, विषम शक्ति संबंधों और सामाजिक गतिशीलता के बारे में हमारी धारणाओं को चुनौती देता है।[11] 'इस प्रकार, सशक्तीकरण बहुआयामी है और किसी के जीवन को आकार देने के लिए सभी क्षेत्रों (सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक) में चुनाव और कार्रवाई की स्वतंत्रता के विस्तार को संदर्भित करता है। इसका तात्पर्य संसाधनों और निर्णयों पर नियंत्रण भी है।'[12]

सशक्तिकरण के तत्व – सशक्तिकरण के तत्व के विषय में अभ्यंकर एवं अय्यर (2001)[13] के मतानुसार, ऐसे अनेक उदाहरण है, जहां गरीबों ने, सरकारों ने, नागर समाज और निजी क्षेत्रों ने एक रणनीति के तहत् सशक्तिकरण की शुरूआत की और उसके सकारात्मक परिणाम पाए। इन प्रयासों का अध्ययन करने से सशक्तिकरण के चार प्रमुख तत्व सामने आते है:-

1. सूचनाओं तक पहुंच
2. समावेश एवं भागीदारी
3. उत्तरदायित्व
4. स्थानीय संगठन की क्षमता

ये चारों तत्व एक दूसरे से निकट संबंधी है और परस्पर सहक्रिया में काम करते हैं।

पीटरसन एन.ए., लुई जे.बी., अक्कालाईन एम.एल. और स्किंडर (2005)[14] के अनुसार, सशक्तिकरण की विवेचना के दौरान हमारे समक्ष इसके तीन प्रमुख तत्व उभरकर आते हैं –

1. सशक्तिकरण बहुआयामी है क्योंकि इसके समाजशास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं अन्य कई पक्ष होते हैं।
2. सशक्तिकरण स्तरों में पाया जाता है यथा व्यक्तिगत, समूह तथा समुदाय।
3. सशक्तिकरण एक सामाजिक प्रक्रिया है क्योंकि यह दूसरो के साथ संबंधों के दौरान उत्पन्न होती है।

जेंडर एवं सेक्स में अंतर[15] – जेंडर सांस्कृतिक रूप से और सामाजिक रूप से निर्मित भूमिकाओं, प्रतिक्रिया-गैर-जिम्मेदारियों, विशेषाधिकारों, महिलाओं और पुरुषों, लड़कों और लड़कियों की अपेक्षाओं और उम्मीदों को दर्शाता है। क्योंकि ये सामाजिक रूप से निर्मित हैं, वे समय के साथ बदल सकते हैं और एक स्थान से दूसरे स्थान पर भिन्न हो सकते हैं।

सेक्स पुरुषों और महिलाओं के बीच जैविक अंतर है। यह उन भौतिक विशेषताओं को संदर्भित करता है जिनके साथ हम पैदा हुए हैं। नर और मादा को सार्वभौमिक रूप से समझा जाता है। यह समझ समय के साथ या एक जगह से दूसरी जगह नहीं बदलती।

हम सभी विभिन्न पूर्व धारणाओं के साथ बड़े होते हैं कि महिला या पुरुष कैसे बात करते हैं / व्यवहार करते हैं। उदाहरण के लिए, हम यह मानने के लिए तैयार हैं कि महिलाएं अधिक बात करती हैं, या महिलाओं का खाना बनाना और बच्चों का पालन-पोषण करना या पुरुषों का रोना नहीं है। यह धारणा समाज द्वारा निर्मित है। हालांकि, लिंग की भूमिकाएं समय के साथ बदल सकती हैं। उदाहरण के लिए, वर्तमान समय में महिलाएँ अपनी जिम्मेदारियों को घर के भीतर और बाहर दोनों ओर संतुलित करती हैं। आज हम पाते हैं कि अधिक से अधिक पुरुष कुछ घरेलू कामों में योगदान देकर महिलाओं का समर्थन करते हैं।

महिला सशक्तिकरण : प्रस्तावना – विश्व बैंक के अनुसार सशक्तिकरण विकल्प बनाने के लिए और इच्छित कार्यों और परिणामों में उन विकल्पों को बदलने के लिए व्यक्तियों या समूहों की क्षमता बढ़ाने की प्रक्रिया है। जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने विषय में निर्णय लेने के लिए समर्थ एवं स्वतंत्र होता हैं। इस दृष्टिकोण से नारी का सशक्तिकरण एक सर्वांगीण व बहुआयामी दृष्टिकोण है, जो विकास की मुख्य धारा में महिलाओं की पर्याप्त व सक्रिय भागीदारी देने में विश्वास रखता है। नेहरु जी का मानना था कि 'राष्ट्र के उत्थान के लिए महिलाओं का उत्थान होना चाहिए, अगर एक महिला का उत्थान होता है, तो समाज और राष्ट्र का उत्थान होता है।'[16] स्पष्ट है कि सशक्तिकरण के अंतर्गत महिलाएँ अपने आर्थिक स्वावलम्बन, राजनैतिक भागीदारी व सामाजिक विकास के लिए आवश्यक विभिन्न कारकों पर पहुँच व नियंत्रण प्राप्त करती हैं तथा अपनी शक्तियों व सम्भावनाओं तथा अधिकारों व जिम्मेदारियों के प्रति जागरूक होती हैं।

महिला सशक्तिकरण का अर्थ एवं परिभाषा – नारी सशक्तिकरण से तात्पर्य नारी को आत्मनिर्भर बनाना एवम नारी को समाज में समानता प्रदान करना है। यूएनडीपी (UNDP) नारी सशक्तिकरण को सिर्फ इसलिए महत्व नहीं देता कि यह मानव अधिकार है, बल्कि इसके माध्यम से हमारे सदियों से चले आ रहे विकास के लक्ष्यों को पूरा करने का और सतत् विकास के मार्ग में लैंगिक समानता और सामाजिक न्याय को भी शामिल करना है। यह लैंगिक समानता, गरीबी में कमी, लोकतांत्रिक शासन, संकट की रोकथाम, पर्यावरण और सतत् विकास में महिलाओं की भागीदारी, सशक्तिकरण को एकीकृत करने के लिए वैश्विक और राष्ट्रीय प्रयासों का समन्वय करता है। सशक्तिकरण से अभिप्राय विभिन्न आयामों (आध्यात्मिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक) में शक्ति को व्यक्ति और समुदाय में बढ़ाने से है। इसके फलस्वरूप सशक्त, और आत्मविश्वास से युक्त महिला समूह निर्मित हो सकता है।

यूनिफेम के अनुसार नारी सशक्तिकरण का अर्थ है[17] – नारी सशक्तिकरण से स्त्री-पुरुष के संबंधों को समझा जा सकता है और उन तरीकों को समझा जा सकता है जो इसे बदल सकें।

1. निर्णय लेने की क्षमता को विकसित करना–स्वयं का मूल्य समझते हुए।
2. स्वयं की क्षमता पर विश्वास कर अपने जीवन के सभी निर्णय स्वयं ले सकें।
3. सामाजिक परिवर्तन की दिशा समझने की और संगठित करने की क्षमता विकसित करना – राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था बनाने की दिशा में।

सशक्तिकरण का मतलब महिलाओं को पुरुषों के खिलाफ खड़ा करना नहीं है। वास्तव में, इसका मतलब है कि पुरुष और महिला दोनों अपनी बदलती भूमिकाओं और स्थिति का एहसास करते हैं और एक समतावादी समाज के संदर्भ में सामंजस्यपूर्ण जीवन जीने के लिए आम सहमति विकसित करते हैं। इसका अर्थ है काम की भूमिकाओं का पुनर्वितरण, बदलती दुनिया और दृष्टिकोण के लिए उनके मूल्यों का पुनर्वितरण और एक दूसरे के साथ नए प्रकार के समायोजन, समझ और विश्वास को विकसित करना। परिवार और समाज में लोकतांत्रिक मूल्यों को ले जाने के लिए महिलाओं का सशक्तिकरण एक नई विचारधारा है ।[18] सशक्तिकरण महिलाओं को उनके जीवन के सभी क्षेत्रों में उनकी पहचान, क्षमता और शक्ति का एहसास करने के लिए सक्षम करने की एक सक्रिय प्रक्रिया है ।[19]

महिलाओं के सशक्तीकरण का मतलब महिलाओं को समान दर्जा देना है। यहां पुरुषों और महिलाओं के बीच शक्ति का संतुलन बराबर है और न ही एक पक्ष का दूसरे पर प्रभुत्व है। महिलाओं को उनके अधिकारों और कर्तव्यों के बारे में जागरूकता बढ़ाने के साथ–साथ संसाधनों तक पहुंच माध्यम से महिलाओं को सामाजिक–आर्थिक रूप से सशक्त बनाना, उनके लिए अधिक सुरक्षा की दिशा में एक निर्णायक कदम है। सशक्तीकरण में उच्च साक्षरता स्तर और उनके लिए शिक्षा, महिलाओं और बच्चों के लिए बेहतर स्वास्थ्य सेवा, उत्पादक संसाधनों के बराबर स्वामित्व, आर्थिक और वाणिज्यिक वर्गों में भागीदारी बढ़ाना, अपने अधिकारों और जिम्मेदारियों के बारे में जागरूकता, जीवन स्तर में सुधार और आत्मनिर्भरता, आत्मसम्मान और आत्मविश्वास प्राप्त करना, स्व– शामिल हैं। इस प्रकार महिला सशक्तीकरण की रूपरेखा शामिल करती है महिलाओं के कल्याण को, बुनियादी जरूरतें की संतुष्टि, संसाधनों तक पहुंच, जो पुरुषों के साथ–साथ निर्णय लेने में लैंगिक समानता और नियंत्रण की भागीदारी को प्राप्त करने के लिए कर्तव्यनिष्ठा, जो समानता और सशक्तीकरण के अंतिम स्तर को संदर्भित करता है। संक्षेप में, महिला सशक्तीकरण का दर्शन, भारतीय समाज की पूर्ण आवश्यकता है ।[20]

महिला सशक्तिकरण के लक्षण/विशेषताएं निम्नलिखित हैं:[21]

1. महिला सशक्तिकरण महिलाओं को शक्ति प्रदान करता है । यह महिलाओं को बेहतर जीवन में सहायता करती है ।
2. महिला सशक्तिकरण उन्हें अधिक आत्मविश्वास और स्वतंत्रता की भावना का विकास करता है।
3. महिला सशक्तिकरण से महिलाओं को अपने अधिकारों को समझने और सबसे प्रभावी तरीके से अपने और दूसरों के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को निभाने के लिए शक्ति प्राप्त करने की एक प्रक्रिया है।
4. महिला सशक्तिकरण पुरुष प्रधान समाज द्वारा लगाए गए भेदभाव का विरोध करने की क्षमता या शक्ति देता है।
5. महिला सशक्तिकरण महिलाओं को अपनी आत्मनिर्भरता बढ़ाने के लिए संगठित करने में सक्षम बनाता है।
6. महिला सशक्तिकरण महिलाओं को अधिक स्वायत्तता प्रदान करता है।
7. महिला सशक्तिकरण का अर्थ है भौतिक संपत्ति, बौद्धिक संसाधन और विचारधारा पर महिलाओं का नियंत्रण।
8. महिला सशक्तिकरण पारंपरिक शक्ति समीकरणों और संबंधों को चुनौती देता है।
9. महिला सशक्तिकरण समाज के सभी संस्थानों और संरचनाओं में लिंग आधारित भेदभाव को समाप्त करता है।
10. महिला सशक्तिकरण का अर्थ है घरेलू और सार्वजनिक स्तरों पर नीति और निर्णय लेने की प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी।
11. महिला सशक्तिकरण का मतलब मौजूदा लिंग और सामाजिक संबंधों की दमनकारी शक्ति को उजागर करना है।
12. अक्षमताओ, विकलांगताओ और असमानताओं को दूर करने के लिए महिला सशक्तिकरण उन्हें जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए अधिक शक्तिशाली बनाता है।
13. महिला सशक्तिकरण उन्हें जीवन के सभी क्षेत्रों में उनकी पूर्ण पहचान और शक्तियों का एहसास करने में सक्षम बनाता है।
14. सशक्तिकरण का अर्थ महिलाओं को समान दर्जा देना भी है।
15. सशक्तिकरण का अर्थ है ज्ञान और संसाधनों तक अधिक पहुंच प्रदान करना, निर्णय लेने में अधिक स्वायत्तता, अपने जीवन की योजना बनाने की अधिक क्षमता और रीति रिवाज आधारित विश्वास और अभ्यास द्वारा उन पर लगाए गए बंधनों से मुक्ति।
16. महिला सशक्तिकरण समाजशास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, पारिवारिक और आर्थिक क्षेत्रों में और विभिन्न स्तरों जैसे व्यक्ति, समूह और समुदाय के भीतर होता है।
17. महिलाओं का सशक्तिकरण एक गतिशील प्रक्रिया है, जो महिलाओं की क्षमताओं को बढ़ाती है ताकि वे संरचनाओं और विचारधाराओं को बदल सकें जो उन्हें अधीन बनाए रखती हैं।
18. महिला सशक्तिकरण जागरूकता और क्षमता निर्माण की एक प्रक्रिया है।

महिला सशक्तिकरण के आयाम – सशक्तिकरण की सभी अवधारणाएं पांच मुख्य आयामों पर जोर देती हैं; व्यक्तिगत या व्यक्तिगत, आर्थिक, सामाजिक / सांस्कृतिक, पारिवारिक और राजनीतिक। घर, समुदाय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय: अधिकांश इन आयामों का संयोजन को संबोधित कर रहे हैं और अलग–अलग डोमेन को प्रभावित करने के रूप में सशक्तिकरण की प्रक्रिया को देखते हैं।[22] इस धारणा के मूल में स्त्री–पुरूष को एक दूसरे का पूरक समझते हुए समतामूलक व्यवस्था विकसित करने की भावना निहित है। इस प्रक्रिया के अनेक आयाम हैं, जैसे –

1. शैक्षिक सशक्तिकरण
2. स्वास्थ्य सशक्तिकरण
3. आर्थिक सशक्तिकरण
4. सामाजिक सशक्तिकरण
5. विधिक सशक्तिकरण
6. राजनैतिक सशक्तिकरण
7. भावनात्मक सशक्तिकरण

महिला सशक्तिकरण के संकेतक [23] –महिलाओं के लिए चौथे विश्व सम्मेलन बीजिंग, 1995 ने महिला सशक्तीकरण के मूल्यांकन के लिए

गुणात्मक और मात्रात्मक संकेतक प्रस्तावित किए :

महिला सशक्तिकरण के गुणात्मक संकेतक :

1. आत्म सम्मान में वृद्धि, व्यक्तिगत और सामूहिक आत्मविश्वास।
2. बड़े पैमाने पर समुदाय को प्रभावित करने वाले मुद्दों पर मुखरता, ज्ञान और जागरूकता के स्तर में वृद्धि और विशेष रूप से महिलाओं के स्वास्थ्य, पोषण, प्रजनन अधिकार, कानूनी अधिकार, साक्षरता इत्यादि पर कार्यक्रम के आधार पर।
3. व्यक्तिगत अवकाश और बच्चे की देखभाल के समय में वृद्धि या कमी।
4. नए कार्यक्रम के परिणाम के रूप में महिलाओं के काम के बोझ में वृद्धि या कमी।
5. परिवार और समुदाय में भूमिकाओं और जिम्मेदारियों में बदलाव।
6. घरेलू हिंसा तथा महिलाओं और बालिकाओं पर हिंसा के अन्य रूप के स्तर में उल्लेखनीय वृद्धि या कमी।
7. सामाजिक और अन्य रीति-रिवाजों जो महिला विरोधी हैं जैसे बाल विवाह, दहेज, विधवा भेदभाव इत्यादि की प्रतिक्रियाएं और परिवर्तन।
8. महिलाओं की भागीदारी जैसे सार्वजनिक बैठक में भाग लेने वाली महिलाएं, प्रशिक्षण कार्यक्रमय महिलाएं अपने से जुड़ी अन्य घटनाओं में भागीदारी की मांग कर रही हैं इत्यादि के स्तर में उल्लेखनीय परिवर्तन हैं।
9. घर में व्यक्तिगत और समुदाय साथ ही साथ महिलाओं के संगठन में महिलाओं द्वारा सौदेबाजी / बातचीत की शक्ति में वृद्धि।
10. सूचना एकत्र करने की क्षमता और पहुँच में वृद्धि तथा न केवल परियोजना के बारे में ज्ञान, बल्कि लेकिन उनके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है।
11. महिलाओं के समूहों को स्पष्ट करना / ग्राम स्तर, जिला, ब्लॉक और राज्य स्तर पर संगठन और सामंजस्य का गठन।
12. महिलाओं और बालिकाओं के प्रति भेदभाव की ओर समुदाय सदस्यों के बीच सामाजिक दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन होते हैं।
13. घर के भीतर और बाहर महिलाओं के आर्थिक योगदान के बारे में जागरूकता और मान्यता।
14. महिलाओं का फैसला- जिस तरह का काम वह कर रही है; उसकी आय और व्यय उसके नियंत्रण में है या वह अभी भी परिवार में पुरुष सदस्यों के अधीन है।

महिला सशक्तिकरण के मात्रात्मक संकेतक :

1. जनसांख्यिकीय रुझान: मातृ / मृत्यु दर, प्रजनन दर, लिंग अनुपात, जन्म के समय जीवन प्रत्याशा, शादी की औसत आयु
2. विभिन्न विकास कार्यक्रम में भाग लेने वाली महिलाओं की संख्या।
3. सामुदायिक संसाधनों / सरकारी योजनाएँ / सेवाएँ जैसे: शिशु गृह, साख- बचत समूह, सहकारी समितियों, स्कूलों, कुओं इत्यादि पर अधिक नियंत्रण।
4. भौतिक स्थिति / पोषण के स्तर में सार्थक परिवर्तन।
5. पुरुष / महिला साक्षरता के स्तर में परिवर्तन - प्राथमिक, माध्यमिक और वयस्क साक्षरता की नामांकन और प्रतिधारण दरों सहित।
6. स्थानीय स्तर पर राजनीतिक संगठनों में महिलाओं की भागीदारी।

महिला सशक्तिकरण का महत्व / कारण :[24] **-** कमेला बेसिन (1992) एक सवाल पूछती हैं - महिलाओं को सशक्त होने की आवश्यकता क्यों है। उनके अनुसार सतत विकास के लिए महिलाओं को केन्द्रित करना होगा। महिलाओं के सशक्तिकरण का मतलब है, बेसिन के अनुसार कई चीजें है जैसे :

1. इसका अर्थ है महिलाओं के योगदान और ज्ञान के विकास को पहचानना।
2. इसका अर्थ है महिलाओं को अपने स्वयं के भय, अपर्याप्तता और हीनता की भावनाओं से लड़ने में मदद करना।
3. इसका अर्थ है उनके स्वाभिमान और आत्म-गौरव को बढ़ाना
4. इसका अर्थ है कि महिलाएं अपने शरीर को नियंत्रित करती हैं
5. इसका अर्थ है कि महिलाएँ आर्थिक रूप से स्वतंत्र और आत्मनिर्भर हो रही हैं
6. इसका अर्थ है महिलाएँ भूमि जैसे समृद्धि संसाधनों को नियंत्रित करने वाली
7. इसका अर्थ है विशेष रूप से घर के भीतर महिलाओं के काम के बोझ को कम करना
8. इसका अर्थ है महिला समूह और संगठन बनाना और उन्हें मजबूत बनाना
9. इसका अर्थ है पोषण करने की समानता को बढ़ावा देना।

महिला सशक्तिकरण के समक्ष बाधाए - मुख्य समस्याएं जो पिछले दिनों में महिलाओं द्वारा सामना की गई और आज भी कुछ हद तक हैं:[25]

1. शिक्षा का अभाव
2. वित्तीय बाधाओं
3. पारिवारिक उत्तरदायित्व
4. कम गतिशीलता
5. जोखिम सहन करने की कम क्षमता
6. उपलब्धि के लिए कम आवश्यकता
7. उपलब्धि के लिए महत्वाकांक्षा की अनुपस्थिति
8. निम्न सामाजिक स्थिति

कुछ अन्य बाधाए [26]

9. परिवार और कैरियर के बीच संतुलन
10. पुरुष प्रधान समाज
11. वित्ता की कमी
12. सशक्तिकरण कौशल का अभाव
13. सीमित प्रबंधकीय कौशल
14. तकनीकी जागरूकता का अभाव
15. सामाजिक सांस्कृतिक बाधाएं
16. सामाजिक दृष्टिकोण
17. प्रेरणा की अनुपस्थिति
18. कानूनी औपचारिकताएं

भारत में महिला सशक्तिकरण की दिशा में उठाये गये कदम (संवैधानिक व अन्य भारतीय कानून) - महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए भारत सरकार द्वारा कई उपाय किए गए हैं। भारतीय संदर्भ में कुछ लिंग प्रतिबद्धताएं इस प्रकार हैं:[27]

1. संवैधानिक प्रावधान।
2. कानूनी प्रावधान- महिला विशिष्ट कानून और महिलाओं को प्रभावित करने वाले कानून।
3. महिलाओं के समर्थन करने वाली नीतियां।
4. महिला विशिष्ट कार्यक्रम।

अन्य उपाय :

5. महिलाओं के उत्थान के लिए संस्थागत तंत्र और सांविधिक और स्वायत्ता संगठन।
6. पंचवर्षीय योजनाएँ और महिलाओं का विकास।
7. जेंडर बजटिंग।

महिलाओ हेतु नीतिगत प्रतिबद्धताएं[28] **–**

संवैधानिक उपबंध – महिला पुरुष समानता की प्रतिबद्धता नीति निर्माण के सर्वोच्च स्तर पर अर्थात भारत के संविधान में भली–भांति स्थापित है। महिलाओं के लिए बनाए गए कुछ महत्वपूर्ण संवैधानिक उपबंध निम्न प्रकार है :

अनुच्छेद 14 राजनीतिक आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में समान अधिकार एवं अवसर।

अनुच्छेद 15 लिंग के आधार पर भेदभाव निषिद्ध।

अनुच्छेद 15 (3) महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक भेदभाव का अधिकार।

अनुच्छेद 39 आजीविका के समान साधन तथा समान कार्य के लिए समान वेतन।

अनुच्छेद 42 कार्य की न्यायोचित एवं मानवीय दशाएं तथा प्रसूति सुविधाएं।

अनुच्छेद 51 (क) (ड) महिलाओं के प्रति अपमानजनक प्रथाओं के त्याग का मौलिक दायित्व।

राष्ट्रीय महिला शक्ति संपन्नता नीति 2001 में यह परिकल्पित है कि महिला उन्मुख परिपेक्ष को बजट प्रक्रिया में एक प्रचालनात्मक कार्यनीति के रूप में शामिल किया जाएगा।

इन उपबंधो को कानूनी ढांचे के द्वारा लागू एवं पूरित किया जाता है ऐसे कुछ कानून निम्न प्रकार है

महिला विशिष्ट कानून

1. अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम 1956
2. प्रसूति सुविधा अधिनियम 1961
3. दहेज निषेध अधिनियम 1961
4. स्त्री अशिष्ट रूपण (निषेध) अधिनियम 1986
5. सती प्रथा (निवारण) अधिनियम 1987
6. घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005

आर्थिक कानून

1. कारखाना अधिनियम 1958
2. न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948
3. समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976
4. कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948
5. बागन श्रम अधिनियम 1951
6. बंधित श्रम पद्धति (उत्पादन) अधिनियम 1976

संरक्षण कानून

1. दंड प्रक्रिया संहिता 1973 के संगत उपबंध
2. भारतीय दंड संहिता के विशेष उपबंध
3. विधि व्यवसायी (महिला) अधिनियम 1923
4. प्रसवपूर्व निदान तकनीक (विनियमन एवं दुरुपयोग निवारण) अधिनियम 1994

सामाजिक कानून

1. कुटुंब न्यायालय अधिनियम 1984
2. भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम 1925
3. गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम 1971
4. बाल विवाह अवरोध अधिनियम 1929
5. हिंदू विवाह अधिनियम 1955
6. हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 (वर्ष 2005 में यथा संशोधित)
7. भारतीय विवाह विच्छेद अधिनियम 1969

सारांश – समाज में नारी की अहमियत दर्शाने के लिए श्री श्री रविशंकर का यह कथन काफी सार्थक है 'समाज के विकास में महिलाओं की भूमिका का अत्यधिक महत्व है। वास्तव में, यही वह एकमात्र चीज है जो यह निर्धारित करती है कि क्या समाज मजबूत और सामंजस्यपूर्ण है या अन्यथा नही। महिलाएं समाज की रीढ़ की हठी हैं।'[29] भारतीय संस्कृति में नारी को देव तुल्य मान कर माँ लक्ष्मी, माँ सरस्वती, माँ दुर्गा इत्यादि के रूप में पूजा गया है। लेकिन वक्त के साथ चीजे बदलती गयी। वह नारी जो वैदिक युग में उच्च स्थान पर आसीन थी वह वर्तमान में विभिन्न तरह की लैंगिक बाधाओ का सामना कर रही है। आज समाज पितृ सत्ता के रूप में परिवर्तन हो गया है नतीजतन नारी समाज के हासिए पर आ गयी है। जिसके उत्थान हेतु लम्बे समय से सशक्तिकरण की मांग की जाती रही है। महिलाओं सशक्तिकरण मूलत: पारंपरिक रूप से वंचित लोगों को/ महिलाओं की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक स्थिति के उत्थान की प्रक्रिया है। यह विषमताओं से उनकी रक्षा करने की प्रक्रिया है। चूँकि 'महिलाएं महत्वपूर्ण मानव अवसंरचना हैं और उनका सशक्तिकरण एक राष्ट्र के विकास परिदृश्य में परिवर्तन करता है।'[30] अत: महिला सशक्तिकरण से एक ऐसे समाज का निर्माण होता है जहां महिला निर्भय होकर अपनी क्षमता का पूर्ण उपयोग करके पुरुष के साथ कंधे से कन्धा मिला कर विकास के नये आयाम स्थापित कर सकती है। महिलाओ की उपेक्षा करके विकास संभव नही है। जैसा कि स्वामी विवेकानंद कहते है,'जब तक महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं होता है, तब तक दुनिया के कल्याण का कोई मौका नहीं है। एक पक्षी के लिए एक पंख पर उड़ना संभव नहीं है।'[31]

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Sachidananda, A.N., Women's Rights – Myth and Reality, Patna, Sinha Insititute of Social Studies, I983, p.3.
2. Kochurani, Joseph, Women Empowerment A Conceptual Analysis, Vimala Books and Publications, Kanjirappally, 2005, p.38.
3. United Nations Development Programme (UNDP), Human Development Report 1996, New York, 1996, p.6.
4. Digumaruti BhaskaraRao, and Digumarui PushpaLatha (Eds.) International Encyclopedia of women, Vol.2, New Delhi: Discovery Publishing House ,1999, p.33.
5. New World Dictionary, Webster Second College Edition : New York, 1982
6. Zoe Oxaal and Sally Baden (1997), Gender and Empowerment: Definitions, Approaches and Implications for Policy, Institute of Development Studies, Brighton. P.1.
7. Parenti M.1978 . Power and powerless New york St.Martin's press
8. Apte, J. S. 1995. Education and Women's empowerment: Indian Journal of Adult Education.Vol. 56, No.3,

July- September.

9. Karl, Marilee. 1995: Women and Empowerment Participation and Decision making: Zed Books Ltd. London and New Jersey.
10. Pillai.J.K (1995), Women and Empowerment, Gyan Publishing House, New Delhi, p.21.
11. Sharma Sheetal, "Empowerment of women and property, rights key to rural development", Kurukshetra, 54, No. 8, June 2006, p. 14.
12. Arundhati Chattopadhy, "Women and entrepreneur-ship", Yojana, Vol. 49, No. 1, January 2005, p. 27.
13. Abhyankar, S. and Iyer,P. (2001). ¯Why Some Village Water and Sanitation Committees Are Better than Others. Internal presentation, March 27. World Bank, South Asia Region, Water and Sanitation Program, Washington, D.C
14. Peterson N.A., Lowe J.B., Aquilino M.L. & Schnider J.E. ; Linking social conesion and international empowerment: Support and new implications for theory. Journal of community Psychology, 33(2). (2005).PP. 233-244.
15. Development, Ministry of Women and Child. Gender Budgeting Handbook. New Dehli: Government of India, October 2015. P.1.
16. Leela Menon, "Women and Social attitude", Kerla Calling, March 2004, p. 5.
17. Oxfam, 1995, The Oxfam Handbook of Relief and Development, Oxfam, Oxford
18. Uplaonkar Ambarao, "Empowerment of women", Mainstream, XLIII, No. 12, March 12, 2005, p. 20.
19. Syed, Afzal Peerzade and Prema Parande, "Economic Empowerment of Women: Theory and Practice," Southern Economist, 43 No.21, March 1, 2005, p.8.
20. Ambarao, Uplaonkar, op.cit., p.20.
21. J.B. Rubby, "Microfinance and women empowerment - A study of Kudumbashree project in Kerala", Mahatma Gandhi University, Kottayam, July 2008, PP.27-28.
22. J.B. Rubby, op.cit., p.32.
23. J.B. Rubby, op.cit., pp. 43-44.
24. Kamla Basin, "Education for Women Empowerment-Some reflection", Adult Education Development, March 1992.
25. hhttps://www.slideshare.net/puneetsharma5688/women-empowermentpuneet-sharma?qid=79a468a1-66b3-464e-8558-bc557ed063bc&v=&b=&from_search=1
26. Veeragandham, Anusha and Kamesh AVS. "Economic Empowerment of women in the context of development : A Conceptual Review." Journal of Advance Management Research (Vol.05 Issue-05, (December 2017)): 486-495.
27. Goyal, Anjali. Women Empowerment Through Gender Budgeting-The Indian Context. 23 December 2017 <www.wcd.nic/gb/unifem.ppt>.
28. Yojna 50, No. 07, October 2006, p.19.
29. hhttps://www.srisriravishankar.org/work/service-social-programs/womens-empowerment
30. Kunhaman M, Globalisation- A Subaltern Perspective, Trivandrum: Centre for subaltern studies, 2002,p.39.
31. Yojana 45, No. 8, August 2001, p. 4.

****

महाभारत में प्रतिपादित स्वास्थ्यरक्षण विधियाँ

डॉ. विनोद कुमार शर्मा *

प्रस्तावना – महर्षि कृष्णद्वैपायन वेदव्यास द्वारा प्रणीत महाभारत विष्ववाङ्मय का उत्तमोत्तम एवं विशालतम ऐतिहासिक महाकाव्य है। अष्टादश पर्वों में विभक्त इस महाकाव्य को 'शतसाहस्त्री संहिता' के नाम से अभिहित किया गया है। नामकरण के सम्बन्ध में महाभारत में कहा गया है– महत्तवाच्च भारवत्तवाच्च महाभारतमुच्यते[1]। महाभारत आर्यसंस्कृति तथा भारतीय सनातन धर्म का महान् ग्रन्थ एवं अमूल्य रत्नों का अपार भण्डार है। यह इतिहासग्रन्थ 'पञ्चम वेद' भी कहलाता है। महाभारत के सम्बन्ध में यह कथन सर्वथा सत्य है–

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।।[2]

जिस शास्त्र में हितमय, अहितमय, सुखमय, दु:खमय, आयु तथा आयु के लिए हितकर और अहितकर द्रव्य, गुण, कर्म; आयु का प्रमाण एवं लक्षण द्वारा प्रतिपादन होता है उसका नाम आयुर्वेद है–

हिताहितं सुखं दु:खमायुस्तस्य हिताहितम्।
मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेद: स उच्यते।।[3]

आयुर्वेदशास्त्र परम पुण्यजनक है ऐसा वेदज्ञों का मत है। यह शास्त्र इहलोक तथा परलोक के लिए हितकर है अर्थात् अभ्युदय और नि:श्रेयस् प्रदान करने वाला है–

तस्यायुष: पुण्यतमो वेदो वेदविदां मत:।
वक्ष्यते यन्मनुष्याणां लोकयोरुभयोर्हितम्।।[4]

महाभारत में आयुर्वेद – महाभारत के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि उस काल में आयुर्वेद विद्या उन्नत दशा में थी। अष्टाङ्गचिकित्सा[5] में कुशल, हितैषी और स्नेही वैद्य शरीर को स्वस्थ रखने के लिए सर्वदा प्रयत्नशील रहते थे।[6] वे औषधि–सेवन एवं पथ्यभोजन आदि नियमों के पालन के द्वारा रोगी के शारीरिक कष्ट और मानसिक सन्ताप को दूर करते थे।[7] महाभारत में मुनि कृष्णात्रेय को चिकितसाशास्त्र का ज्ञाता कहा गया है–

देवर्षिचरितं गार्ग्य: कृष्णात्रेयश्चिकित्सितम्।[8]

स्वास्थ्य का लक्षण – स्वस्थ शब्द से ष्यञ् प्रत्यय लगाकर स्वास्थ्य शब्द निष्पन्न है। इसका अर्थ है–कुशलता, नीरोगता अर्थात् तन्दुरुस्ती। महाभारत के अनुसार शरीर में स्थित वात, पित्त और कफ इन तीनों धातुओं का संघर्ष चलता रहता है।[9] इन तीनों धातुओं की समता का नाम ही स्वास्थ्य है–

शीतोष्ण चैव वायुश्च त्रय: शरीरजा गुणा:।
तेषां गुणानां साम्यं यत्तदाहु: स्वस्थलक्षणम्।।[10]

सत्तव, रजस् और तमस् ये तीनों मन के गुण हैं। इन तीनों का सम अवस्था में रहना मानसिक स्वास्थ्य का लक्षण है–

सत्तवं रजस्तम इति मानसा: स्युस्त्रयो गुणा:।
तेषां गुणानां साम्यं यत्तदाहु: स्वस्थलक्षणम्।।[11]

इस प्रकार शरीर तथा मन की स्वाभाविक अवस्था का नाम ही स्वास्थ्य है।

वस्तुत: शरीर के तीन धातु वात, पित्त और कफ कर्मजन्य माने गये हैं। इनके समुदाय को 'त्रिधातु' कहते हैं। आयुर्वेद के विद्वानों ने भगवान् को भी 'त्रिधातु' संज्ञा प्रदान की है।[12]

व्याधि के प्रकार – महाभारत के अनुसार व्याधि अर्थात् रोग दो प्रकार के होते हैं–शारीरिक और मानसिक। इन दोनों की उत्पत्ति एक–दूसरे के सहयोग से होती है। क्योंकि शरीर अस्वस्थ हो तो मन भी स्वस्थ नहीं रहता और मन की अषान्ति शरीर को अस्वस्थ बना देती है–

द्विविधो जायते व्याधि: शारीरो मानसस्तथा।
परस्परं तयोर्जन्म निर्द्वद्वं नोपपद्यते।।[13]

जो रोग शरीर में उत्पन्न होता है उसे शारीरिक व्याधि कहते हैं और जो रोग मन में उत्पन्न होता है उसे मानसिक व्याधि कहा जाता है–

शरीरे जायते व्याधि: शारीर: स निगद्यते।
मानसे जायते व्याधिर्मानसस्तु निगद्यते।[14]

आयुर्वेद के प्रयोजन – आयुर्वेदशास्त्र के दो प्रयोजन बतलाये गये हैं– (1) स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा तथा (2) व्याधि से युक्त व्यक्ति का व्याधि–परिमोक्ष। प्रथम है रोगों की उत्पत्ति को रोकने का उपाय और द्वितीय है उत्पन्न हुए रोगों के प्रषमन का उपाय। मुनि सुश्रुत का कथन है–

इह खल्वायुर्वेदप्रयोजनं व्याध्युपसृष्टानां व्याधिपरिमोक्ष: स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणं च।[15]

महामुनि चरक के अनुसार औषध (भेषज) भी दो प्रकार की होती हैं। प्रथम तो वे हैं जो स्वस्थ पुरुष के लिए ओजस्कर हैं अर्थात् बल को बढ़ाती हैं और जीवनशक्ति प्रदान करती हैं। द्वितीय वे हैं जो आर्त (रोग से पीडित) मनुष्य के रोग को नष्ट करती हैं–

स्वस्थस्यौजस्करं किञ्चित्किञ्चिदार्तस्य रोगनुत्।[16]

महाभारत में शारीरिक धातुवैषम्य अथवा अथवा मानसिक गुणवैषम्य के प्रकट होने पर उनमें पुन: समता स्थापित करना ही चिकित्सा का प्रयोजन बतलाया गया है। पित्त की वृद्धि से कफ का ह्रास तथा कफ की वृद्धि से पित्त का ह्रास होता है। इसलिए एक की कमी होने पर दूसरे को बढ़ाकर समानता स्थापित करना ही चिकित्सक का कार्य है। मानसिक व्याधि में इसी प्रकार हर्ष के द्वारा शोक का उपषम होता है। सत्तवादि गुणों में भी एक की वृद्धि से दूसरे का ह्रास होता है। अत: शरीर अथवा मन की चिकित्सा करने के लिए विषमता का कारण खोजकर समता स्थापित करने की व्यवस्था की जानी चाहिए।[17]

महाभारत में प्रसंगत: अनेक स्वास्थ्यरक्षण एवं व्याधिपरिमोक्ष विधियों

* प्रभारी प्राचार्य, प्राध्यापक एवं अध्यक्ष (संस्कृत) पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत

का प्रतिपादन हुआ है, जो आज भी प्रासंगिक तथा लाभप्रद हैं। प्रस्तुत शोधकार्य महाभारत में प्रतिपादित स्वास्थ्यरक्षण विधियों पर केन्द्रित है।

महाभारत में प्रतिपादित स्वास्थ्यरक्षण विधियाँ

(क)साधारण नियम – समीक्ष्य महाकाव्य में स्वास्थ्यरक्षा के अनेक साधारण नियमों का निर्देश हुआ है। यथा – सूर्योदय से पूर्व जागरण, दन्तधावन, नित्य स्नान[18], दिन में न सोना[19], रात्रि में स्नान न करना[20], नग्न होकर स्नान न करना[21] इत्यादि। परिमित व्यायाम को स्वास्थ्य के लिए गुणकारी बतलाया गया है। नित्य स्नान करने वाले व्यक्ति को दस लाभ प्राप्त होते हैं–बल, रूप, स्वरशुद्धि, स्पष्ट उच्चारण की शक्ति, शारीरिक कोमलता, सुगन्ध, लावण्य तथा सुन्दरी नारी की प्राप्ति–

गुणा दश स्नानशीलं भजन्ते
बलं रूपं स्वरवर्णशुद्धि:।
स्पर्शश्च गन्धश्च विशुद्धता च
श्री: सौकुमार्यं प्रवराश्च नार्य:।।[22]

(ख)भोजन के नियम – महाभारतकार ने मिताहार के छह गुण बतलाये हैं – आरोग्य, आयु, बल, सुख, अनिन्द्यता तथा उत्तम सन्तान की प्राप्ति –

गुणाश्च षण्मितभुक्तं भजन्ते
आरोग्यमायुश्च बलं सुखं च।
अनाविलं चास्य भवत्यपत्यं
न चैनमाद्यून इति क्षिपन्ति।।[23]

खाद्य पदार्थ स्वास्थ्यरक्षण का प्रमुख साधन है। अत: स्वास्थ्य के अनुकूल भोजन करना चाहिए। तिक्त, कसैला, मधुर अथवा स्वादिष्ट और हितकर भोजन अमृत के समान लाभप्रद होता है।[24] किन्तु जो व्यक्ति परिणाम का विचार किए बिना मोहवश पथ्य को छोड़कर अपथ्य का भोजन करता है उसके जीवन का अन्त वहीं से प्रारम्भ हो जाता है–

पथ्यं मुक्त्वा तु यो मोहाद् दुष्टमश्नाति भोजनम्।
परिणाममविज्ञाय तदन्तं तस्य जीवितम्।।[25]

भोजन करने की विधि के सम्बन्ध में निर्देश है कि पैर धोकर मौनभाव से पूर्वाभिमुख होकर भोजन करना चाहिए।[26] सायं–प्रात: एकाग्रचित्त होकर भोजन करना चाहिए और बीच में कुछ भी नहीं खाना चाहिए।[27] आहार के पूर्व और पश्चात् भलीभांति हाथ–पैर धोकर तीन बार आचमन करना चाहिए।[28] बैठकर ही भोजन करना चाहिए। चलते–फिरते, बातचीत करते हुए या लेटकर भोजन करना उचित नहीं है।[29] भोजन करने के पश्चात् कुल्ला करके मुख धो लेना चाहिए।[30] भोजन करने के अनन्तर दौड़ना उचित नहीं है।[31]

स्वास्थ्यलाभ की दृष्टि से महाभारत में अनेक पदार्थों को अखाद्य अथवा अपेय माना गया है। यथा – आक (अर्क) के पत्तो नहीं खाने चाहिए, क्योंकि वे खारे, कटु और रूखे होते हैं। उनका परिणाम तीक्ष्ण होता है। अर्कपत्र खाने से व्यक्ति अन्धा हो सकता है।[32] श्लेष्मान्तक फल (लिसोड़े) भी अखाद्य हैं, क्योंकि उन्हें खाने से तेज क्षीण हो जाता है।[33] पीपल, वट तथा गूलर के फल, सन का शाक[34] एवं मांस सर्वदा अखाद्य हैं जबकि दही और सत्तू रात्रि में त्याज्य हैं।[35] नवजात बछड़े वाली गाय का दूध नहीं पीना चाहिए क्योंकि वह हानिकारक होता है–

क्षीरन्तु बालवत्सानां ये पिबन्तीह मानवा:।
न तेषां क्षीरपा: केचिज्जायन्ते कुलवर्धना:।।[36]

(ग) प्रसाधन – उत्तम स्वास्थ्य की दृष्टि से कतिपय प्रसाधनों का उपयोग भी उचित बतलाया गया है। उदाहरणार्थ – केशों को सँवारना, आँखों में अंजन लगाना, दन्तधावन, मुखप्रक्षालन आदि कार्य दिन के प्रथम प्रहर में ही कर लेने चाहिए।[37] श्वेत पुष्प, रक्त कमल, कुवलय तथा सोने की माला धारण करनी चाहिए।[38] स्नान के उपरान्त ललाट पर गीला चन्दन लगाना चाहिए।[39] शरीर पर राई, चन्दन, बिल्व, तगर तथा केसर का उबटन लगाना चाहिए।[40] वट की जड़ तथा प्रियंगु को एक साथ पीसकर उसका उबटन लगाना भी लाभप्रद होता है–

घृष्टो वटकषायेण अनुलिप्त: प्रियंगुणा।[41]

(घ) त्याज्य कार्य – समीक्ष्य महाकाव्य में स्वास्थ्यरक्षार्थ अनेक वर्जनीय कार्यों का भी उल्लेख हुआ है। कहा गया है कि जो व्यक्ति ढेले फोड़ना, तिनके तोड़ना, नख चबाना इत्यादि कार्य करता है तथा सदा अशुद्ध रहता है ऐसा कुलक्षणयुक्त मनुष्य कभी दीर्घायु नहीं होता–

लोष्ठमर्दी तृणच्छेदी नखखादी च यो नर:।
नित्योच्छिष्ट: संकुसुको नेहायुर्विन्दते महत्।।[42]

दूसरे लोगों के पहने हुए वस्त्र और जूते नहीं पहनने चाहिए।[43] उत्तर तथा पश्चिम की ओर सिर करके सोना[44], प्रात:काल देर तक अर्थात् सूर्योदय तक एवं सायंकाल में सोना वर्जित है।[45] गीले वस्त्र पहनना और स्नान किये बिना अंगराग लगाना भी अनुचित है।[46] अच्छिष्ट अवस्था में अथवा भीगे पैर शयन नहीं करना चाहिए। जूठे हाथों से मस्तक का स्पर्श नहीं करना चाहिए क्योंकि समस्त प्राण मस्तक के ही आश्रित हैं।[47] सायंकाल गोधूलि वेला में विद्या पढ़ना और भोजन करना उचित नहीं है।[48] इसी प्रकार रात्रि में श्राद्धकर्म करना तथा भोजन करके क्षौरकर्म (केशसंस्कार) भी त्याज्य हैं।[49]

(ङ) व्याधियों के सामान्य कारण – रोगों की उत्पत्ति के अनेक सामान्य कारणों का महाभारत में निर्देश किया गया है, जिनका परिहार करके अनेक व्याधियों से बचा जा सकता है। वे हैं–असमय में अपनी प्रकृति के विरुद्ध भोजन, हानिकर पदार्थों का सेवन, अतिभोजन, अभोजन[50], दूषित अन्न–पान अथवा परस्पर विरोधी गुण वाले पदार्थों का एक साथ भक्षण, गरिष्ठ अन्न का भोजन[51], अतिव्यायाम, अतिकामुकता, मलमूत्र के वेग को रोकना[52], दिवानिद्रा[53], इत्यादि।

निष्कर्ष – निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि ज्ञान–विज्ञान के विराट विश्वकोष महाभारत में आयुर्वेद के प्रयोजन स्वास्थ्य–लक्षण, व्याधियों के सामान्य कारण एवं विविध स्वास्थ्यरक्षण विधियों का प्रतिपादन हुआ है। इस महाकाव्य में निर्दिष्ट साधारण नियम, भोजन नियम, एवं प्रसाधन सम्बन्धी निर्देशों का पालन करके स्वास्थ्य की भलीभाँति देखभाल की जा सकती है। त्याज्य कार्यों का परिहार करके स्वास्थ्य की सतत् रक्षा की जा सकती है। अथ च, व्याधियों की उत्पत्ति के कारणों का निदान करके व्याधियों से बचा जा सकता है। महाभारत में स्वास्थ्यरक्षण के साथ–साथ व्याधिपरिमोक्ष की विधियों का भी प्रतिपादन हुआ है। अत: उन पर भी शोधकार्य किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ :–

1. महाभारत, आदिपर्व, 1/274
2. तदेव, आदिपर्व, 62/53
3. चरकसंहिता, सूत्रस्थान, 1/40
4. तदेव, सूत्रस्थान, 1/42
5. नाड़ी, मल, मूत्र, जिह्वा, नेत्र, रूप, शब्द तथा स्पर्श ये आठ चिकित्सा के प्रकार माने गये हैं।
6. काच्चिद् वैद्याश्चिकित्सायामष्टाङ्गायां विषारदा:।
   सुहृदश्चानुरक्ताश्च शरीरे ते हिता: सदा।। महाभारत, सभापर्व, 5/91
7. कच्चिच्छारीरमाबाधमौषधैर्नियमेन वा। तदेव, सभापर्व, 5/90

8. तदेव, शान्तिपर्व, 210/21
9. शरीरस्य यथा राजन् वातपित्तकफैस्त्रिभि:। तदेव, भीष्मपर्व, 84/41
10. तदेव, शान्तिपर्व, 16/11
11. तदेव, शान्तिपर्व, 16/13
12. त्रयो हि धातवः ख्याताः —त्रिधातु मां प्रचक्षते।। तदेव, शान्तिपर्व, 342/86-87
13. तदेव, आश्वमेधिकपर्व, 12/1
14. तदेव, आश्वमेधिकपर्व, 12/2
15. सुश्रुतसंहिता, 1/12
16. चरकसंहिता, चिकित्सास्थान, 1/3
17. महाभारत, शान्तिपर्व, 16/12-15
18. तदेव, अनुशासनपर्व, 104/43-44
19. स्यादस्वप्नश्च दिवास्वपन्। तदेव, अनुशासनपर्व, 93/12
20. न नग्नः कर्हिचित् स्नायान्न निषायां कदाचन। तदेव, अनुशासनपर्व, 104/51
21. तदेव, अनुशासनपर्व, 104/66
22. तदेव, उद्योगपर्व, 37/33
23. तदेव, उद्योगपर्व, 37/34
24. यस्तु तिक्तं कषायं वा स्वादु वा मधुरं हितम्।
    आहारं कुरुते नित्यं सोऽमृतत्तवाय कल्पते।।तदेव, शान्तिपर्व, 139/80
25. तदेव, शान्तिपर्व, 139/81
26. तदेव, अनुशासनपर्व, 104/56,62
27. सायंप्रातष्च भुञ्जीत नान्तराले समाहितः। तदेव, अनुशासनपर्व, 104/94
28. अन्नं बुभुक्षमाणस्तु त्रिर्मुखेन स्पृषेदपः।
    भुक्त्वा चान्नं तथैव त्रिर्द्विः पुनः परिमार्जयेत्।। तदेव, अनुशासनपर्व, 104/55
29. तदेव, अनुशासनपर्व, 104/60,95
30. आचम्य चैकहस्तेन परिप्लाव्यं तथोदकम्। तदेव, अनुशासनपर्व, 104/100
31. तदेव, अनुशासनपर्व, 104/122
32. स तैरर्कपत्रैर्भक्षितैः क्षारतिक्तकटुरूक्षैस्तीक्ष्णविपाकैश्चक्षुष्युपहतोऽन्धो बभूव। तदेव, आदिपर्व, 3/51
33. श्लेश्मातकी क्षीणवर्चाः ——। तदेव, वनपर्व, 34/28
34. पिप्पलं च वटं चैव शणशाकं तथैव च।
    उदुम्बरं न खादेच्च भवार्थी पुरुषोत्तमः।। तदेव, अनुशासनपर्व, 104/92
35. तदेव, अनुशासनपर्व, 104/93
36. तदेव, अनुशासनपर्व, 125/66-67
37. प्रसाधनं च केशानामञ्   जनं दन्तधावनम्।
    पूर्वाह्न एव कार्याणि देवतानां च पूजनम्।। तदेव, अनुशासनपर्व, 104/23
38. तदेव, अनुशासनपर्व, 104/83-84
39. स्नातस्य वर्णकं नित्यमार्द्रं दद्याद् विषाम्पते।तदेव, अनुशासनपर्व, 104/85
40. प्रियंगुचन्दनाभ्यां च बिल्वेन तगरेण च।
    पृथगेवानुलिम्पेत केसरेण च बुद्धिमान्।। तदेव, अनुशासनपर्व, 104/87-88
41. तदेव, अनुशासनपर्व, 125/52
42. तदेव, अनुशासनपर्व, 104/15
43. उपानहौ च वस्त्रं च धृतमन्यैर्न धारयेत्। तदेव, अनुशासनपर्व, 104/28
44. उदक्शिरा न स्वपेत तथा प्रत्यक्शिरा न च। तदेव, 104/48
45. तदेव, अनुशासनपर्व, 104/43
46. न चानुलिम्पेदस्नातवा स्नात्वा वासो न निर्धुनेत्। न चैवार्द्राणि वासांसि नित्यं सेवेत मानवः।।तदेव, अनुशासनपर्व, 104/52
47. (क)स्वप्तव्यं नैव नग्नेन न चोच्छिष्टोऽपि संविषेत्। उच्छिष्टो न स्पृषेच्छीर्षं सर्वे प्राणास्तदाश्रयाः।। तदेव, अनुशासनपर्व, 104/67-68
    (ख) नार्द्रपादस्तु संविषेत्। तदेव, अनुषासनपर्व, 104/61
48. सन्ध्यायां न स्वपेद् राजन् विद्यां न च समाचरेत्। न भुञ्जीत च मेधावी तथायुर्विन्दते महत्।। तदेव, अनुशासनपर्व, 104/118
49. नक्तं न कुर्यात् पित्र्याणि भुक्त्वा चैव प्रसाधनम्। तदेव, अनुशासनपर्व, 104/119
50. तदेव, आश्वमेधिकपर्व, 17/8-9
51. दुष्टान्नामिषपानं च यदन्योन्यविरोधि च। गुरु चाप्यमितं नातिजीर्णेऽपि वा पुनः। तदेव, आश्वमेधिकपर्व, 17/10
52. व्यायाममतिमात्रं च व्यवायं चोपसेवते। सततं कर्मलोभाद् वा प्राप्तं वेगं विधारयेत्।। तदेव, आश्वमेधिकपर्व, 17/11
53. रसाभियुक्तमन्नं वा दिवा स्वप्नं च सेवते। तदेव, आश्वमेधिकपर्व, 17/12

सन्दर्भग्रन्थसूचनिका :-

1. चरकसंहिता (महामुनिचरक), व्याख्याकार-जयदेव विद्यालंकार, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, नवम संस्करण 1975
2. भास्वती (संयुक्ताङ्क पञ्चम एवं षष्ठ), महात्मा गान्धी काशी विद्यापीठ, वाराणसी में प्रकाशित डॉ. विनोद कुमार शर्मा का शोधपत्र 'महाकवि कालिदास के साहित्य में स्वास्थ्यरक्षण एवं व्याधिपरिमोक्षविधियाँ'
3. महाभारत (वेदव्यास), अनुवादक - नारायण दत्त शास्त्री पाण्डेय, गीताप्रेस, गोरखपुर, तेरहवाँ संस्करण, सं. 2067
4. महाभारतकालीन समाज (सुखमय भट्टाचार्य), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1966
5. संस्कृत-शास्त्रों का इतिहास (आचार्य बलदेव उपाध्याय), शारदा मन्दिर, वाराणसी, 1969
6. संस्कृत-हिन्दी कोष (वामन शिवराम आप्टे), मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1989
7. सुश्रुतसंहिता (महामुनि सुश्रुत), व्याख्याकार - पण्डित शम्भूनाथशास्त्री, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

****

Systematic Paleontological Contributions of Cretaceous Inoceramid Bivalves excavated from from Bagh Beds

Mamta Pathrade* Dr. Sandhya Batwe**

Abstract - The Inoceramids are the important biostratigraphic group of extinct fossils of Cretaceous period. They are cosmopolitan worldwide in allocation. This is more prominent group and abundant in quantity and diversity than any other group of Bivalves in the study area. Inoceramid bivalves first existed in the Permian and became dominant during the Jurassic and Cretaceous period. Cretaceous inoceramid bivalves were scrutinized from an extensive literature survey biogeographic data and identification from Geological survey of India at Kolkata. The Inoceramids are good bioindicators for considering the stratigraphy and age of rock formation. Extensive Inoceramus fossil collection from late Cretaceous at Bagh beds has been done to construct lithological, biostratigraphic and chronostratigraphic framework. Many paleontologists had tried for bagh beds basin analysis but still it needs more excavations for confirmation of biodiversity.
Key words - Inoceramids, Bagh beds, bioindicator, Cretaceous, Bivalve.

Introduction - Inoceramid bivalves come under an extinct family Inoceramidae for clam-like bivalves. Inoceramids fossils are recorded from oceanic sediments of Permian to latest Cretaceous in age. Inoceramids had a tendency to live in upper bathyal and neritic surroundings. Some of them were noted to have giant size. It was suggested by paleontologists that the giant size of some species was an adaptation for life in the muddy bottom waters, with a correspondingly large gill area that would have permitted the animal to survive in the absence of oxygen. Inoceramids are a valuable biostratigraphic group of bivalves that disappeared at the end of the Cretaceous period. During the Jurassic and Cretaceous period, the Inoceramids became dominant components of many level-bottom communities and achieved global dispersion. They are found in an extensive range of facies and surroundings, signifying that they had a comparatively wide ecological tolerance at the genus and species level. The Bagh Beds is a significant paleontological unit in the Narmada Valley. These beds involve Nimar Sandstones, Nodular Limestone and Bryozoan Limestone. They show uneven thickness ranging from 8 to 45 meter in the Bagh area of Dhar district. *Keatinge (1857) first recorded the existence the fossiliferous bed near Chirakhan village and* Duncan *(1865) made a detailed study of the fossils and correlated the fauna of the Bagh Beds with the European Upper Greensand and lower chalk fauna.* Along with other fossil groups, Bose (1884) in his memoir on Bagh Beds had described some bivalve species. Very long back Mukerjee (1938) explored few bivalve fossils from Bagh Beds and later than Chiplonkar (1939), Badve(1972), Chiplonkar and Badve(1973), Dassarma and Sinha (1975), Pawar (2006), Pathrade et al. (2012) and Khatri & Pathrade (2016) recorded some other species of bivalves from Bagh Beds.

This paper focuses on the systematic paleontology of two inoceramid species from the Bagh Beds area of Dhar.

Materials And Methods - Two specimens of Inoceramid bivalves were collected from Bagh Beds. In the laboratory, the collected specimens are carefully cleaned by brushing and washing with water and then left to dry in air. The specimens were investigated and identified using a hand lens. The samples were photographed by using digital camera. These fossils were identified and classified according to Moore (1969) "the Treatise on Invertebrate Paleontology and their verification was carried out at "Geological Survey of India" CHQ, Curatorial division, Kolkata, West Bengal**.**

Result And Discussion

Systematic Paleontology

Class	:	Bivalvia Linne, 1758
Subclass	:	Pteriomorphia Beurlen, 1944
Order	:	Pterioida Newell, 1965
Sub Order	:	Pterriina Newell, 1965
Super Family	:	Pteriacea Gray, 1847
Family	:	Inoceramidae Giebel, 1852
Genus	:	*Inoceramus* Sowerby, 1814

***(1) Inoceramus cripssi* Mantell var. *reachensis* Etheridge**

(Fig. 1)

Synonymy:

(i) 1910 *Inoceramus cripssi* Mantell var. *reachensis* Etheridge; Woods, p. 278, pl. 48, figs. 45.

*Department of Zoology, Swami Vivekanand Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.) INDIA
**Department of Zoology, Govt. P.G. College, Khargone (M.P.) INDIA

(ii) 1975 *Inoceramus cripssi* Mantell var. *reachensis* Etheridge; Dassarma and Sinha, p. 25, pl. II,figs. 6.

Material: Single specimen. B. N.19.

Dimensions: B. N.19.
Length 50mm
Height 56 mm

Description: Shell thick, moderately convex between umbo and ventral margin. The shell margins are broadly rounded. The ventral margin makes a semicircle with anterior and posterior margins. The ornamentation is characterized by concentric ribs which are closely spaced and gently curved.

Remarks: *Inoceramus cripssi* Mantell is a cosmopolitan species, ranging in age from Cenomanian to Campanian. Single specimen of this species in the present mega faunal assemblage have been identified as belonging to *Inoceramus cripssi* var. *reachensis* Etheridge, described from the Bagh area by Dassarma and Sinha (1975, p. 25, pl. 2, fig. 6). Present specimen appears to be having a higher than longer shell.

Locality: Bagh of district Dhar, Madhya Pradesh.

Horizon: Nodular Limestone.

Fig. 1 *Inoceramus cripssi* Mantell var. *reachensis* Etheridge, right valve

***(2) Inoceramus concentricus* Parkinson, 1910**

(Fig. 2 A,B)

Synonymy:

(i) 1822 *Inoceramus concentricus* Parkinson; Sowerby, p. 183, pl. 8CCV, figs. 16.

(ii) 1828 *Inoceramus gryphaeoides*; Sowerby, p. 161, pl. dl xxxiv, fig. 1.

(iii) 1846 *Inoceramus concentricus* Park.; d' Orbigny, p. 566.

(iv) 1846 *Inoceramus concentricus* Park.; Leymerie, pl. V, fig. 12.

(v) 1877 *Inoceramus concentricus* Park.; Schliiter, p. 255.

(vi) 1911 *Inoceramus concentricus* Park.; Woods, p. 265, pl. XLVI, figs. 110.

(vii) 1912b *Inoceramus concentricus* Woods, p. 4, figs. 59.

(viii) 1972 *Inoceramus concentricus* Park.; Badve, p. 235, pl. XXIII, figs. 1,8,9.

(ix) 1975 *Inoceramus concentricus* Park.; Dassarma and Sinha, p. 23, pl. I, fig. 4.

Material: Single specimen with both the valves. B. N. 15.

Dimensions: B. N. 15.
Length 40mm
Height 62mm

Description: The species is noticeably high and obvious**.** It possess umbones which are curved and sharp anteriorly. It is up to 3/5 th of the height from the umbones, the anterior is a little concave and then it combines with the ventral margin, sweeping with a convex outline. The posterior side has a rather broad outline and extended out in the form of an ear. From the dorsal side, at 1/3 rd of the height, the shell is tumid and thick. Unequal convexity is visible in the valves; The left valve is a bit more convex. Intervening depressions are found on the surface which is also curved with low folds. The one on the left valve is weaker and feeble. The fold bears about 45 concentric ribs and these come to an end posteriorly on the ear. The anterior region of the valves makes a right angle with the plane found in between the valves and the anterior region is concave. The posterior part of the valve is slightly extended but not as convex as the anterior portion under the umbones.

Remarks: The species agrees with *Inoceramus concentricus*from the upper Greensand. The only notable difference that can be seen in collected specimen is the difference in the convexity of two valves which is less than seen in the other specimens. However this valve is considered as having more local variations and hence this is not sufficient to justify for separating and placing it under different variety.

Locality: Chirakhan of district Dhar, Madhya Pradesh.

Horizon: Nodular Limestone

Fig. 2 *Inoceramus concentricus* Parkinson, A: Right valve B: Dorsal view (Both valves)

Conclusion - The Bagh beds in the Narmada Valley of Madhya Pradesh, India yielded a rich and varied invertebrate fossil fauna. During the mid Cretaceous Period Marine condi tions intruded far into the Indian cratun, and the techtonic breakup of the greater Gondwana super continent gave rise to Nimar intracratonic basinal belts across the region. The lower Narmada basin is one Cretaceous seaway along the Narmada-son graben. The Bagh Group comprises a series of limestone and Marls deposited in Shallow marine environment that have become richly fossiliferous in places. The recent collection of fossils from Bagh Beds have yielded.

The bivalves described in this research work, have the dominance of Inoceramids, which also points to a very

shallow nature of the Bagh basin as has already been proved by ammonite study.

References :-

1. Keatinge, R. H., On Neocomian fossils from Bagh and its neighborhood. *Jour. Bomb. Br. Roy. As. Soc. Ind*., 5, 621-625, (1857).
2. Duncan, P. M., Description of the Echinodermata from the strata on the south-eastern coast of Arabia and at Bagh on the Narbada in the collection of the geological society. *Quart. Jour. Geol. Soc. London*, 30(4), 349-363, (1865).
3. Bose, P. N., Geology of the lower Narbada valley between Nimawar and Kawant. *Mem. Geol. Surv. Ind*., 21(1), 1-72, (1884).
4. Mukerjee, P. N., Geology of Gujarat and Southern Rajputana. *Rec. Geol. Surv. Ind*., 73(2), 163-208, (1938).
5. Chiplonkar, G. W., Lamellibranchs from the Bagh Beds. *Proc. Ind. Acad. Sci*., 10B (4),255-274, (1939).
6. Moore, R. C., Treatise on invertebrate paleontology Pt. N - Bivalvia vol. 1 & 2 (of 3). Geol. Soc. Amer. and University Kansas press, Kansa,1-952, (1969).
7. *Badve,* R.M.. Stratigraphy and Palaeontology of the Bagh Beds of Narbada valley. *Ph. D. thesis,* University of Poona, Maharashtra, (1972.)
8. *Chiplonkar, G.W. and Badve, R.M.,. Palaeontology of the Bagh Beds- Pt. I Bivalvia (Excluding Inoceramidae and Ostracea). Jour. Pal. Soc. Ind., 17:67-114., (1973).*
9. Dassarma, D. C. and Sinha, N. K., Marine Cretaceous formations of Narmada Valley (Bagh Beds), Madhya Pradesh and Gujarat. *Mem. Geol. Surv. Ind. Palaeontologia Indica* new *series*, 42,1-123, (1975).
10. Parwar, R., Studies on animal fossils of Jirabad, Dhar, Madhya Pradesh, *Ph. D. Thesis,* Devi Ahilya University, Indore, (M.P.),1-193, (2006).
11. Pathrade, M., Khatri, A., Vasundriya, R. and Jain, R., Bivalvia of Bagh Beds District Dhar, Madhya Pradesh. *The Asian Jour. of Animal Sci.*, 7 (2), 121-125, (2012).
12. Khatri, A. and Pathrade, M, Palaeontological Aspects of Some Inoceramids Species of Bagh Beds (Upper Cretaceous) Madhya Pradesh (India), *Jour. Research Lin,* XV (2), (2016).

****

The Socio -Economic status of Fishermens in Dejla Dewada Reservoir Tehasil Bhagwanpura, District Khargone (M.P.)

Dr. Sandhya Batwe* Mamta Pathrade**

Abstract - The Socio – economic servey of fishermen at Dejla Dewada Reservoir mainly consist study of age group and educational qualification. The health status of any country depends on the socioeconomic status and the per capita income of its citizens socio-economic. status refers to an individual's portion within a hierachical social stretcher which is one of the important determinates of health status socio-economies status is the foremost issue in the contemporary world especially in the developing world many programmers and policies have been implemented to improve the socioeconomic status of population in rural areas.

The physico-chemical quality of water bodies plays an important role in the production of pisciculture. In the determination of productivity, morphometry of water body, biomass etc., play a very important role. Proper management and exploitation may enhance the productivity of water which in turn is directly related with food chain and food web structure of water body. In the determination of productivity, planktons are key organisms. Information about fresh water planktonic organisms are scanty in India.

Keyword- Socioeconomic, Educational, level illiterate.

Introduction - The role of fish in an aquatic environment is an essential link in the food chain and they are capable of affecting the entire aquatic biota. The aquatic biology has been attempted by many workers with the aim to find out the taxonomic structure of various water bodies. A community in an ecosystem is not just a haphazard grouping of animals and plants, which live independently from each other, but is characteristics taxonomic composition with definite trophic relationship and metabolic patterns. In the determination of productivity planktons are key organisms. According to Dutton and Levine (1989), socio-economic status is "a composite measure that typically incorporates economic status, measured by income; social status, measured by education; and work status, measured by occupation . Rathod & Ningshen (2012), noted that Socio-econommic status is an economic and sociological combined total measure of person`s work experience and of family`s economic and social position relative to others, based on income, education, and occupation. Krieger et al. (1997) define socioeconomic position as 'an aggregate concept that includes both resource- based and prestige-based measures, as linked to both childhood and adult social class position'! Socio-economic status refers to the position of individuals, families, households, or other aggregates on one or more dimensions of stratification. these dimensions include income. education, prestige, wealth, or other aspects of standing that member of society deem salient. Socio-economic status is often considered a personal demographic variable; however, Socio-economic status can also reflect aspects of an individual`s broader environment. As a result, it can be measured at the individual level. Socio, economic status related work also done in M.P by Sharm, A. and Mudgal L.K. (2004) Bakawala and kanhara (2012) , Joshi and Rawal (2015) .

Study Site - District Khargone is situated in the south west part of the Madhya Pradesh, along the border of state Maharshtra. From the beginning it remains an important place from the historical as well as cultural point of view. With the lapse of time, demand of water increased and to meet the water demand of the near by area in 1897 a water reservoir came into functional form named Dejla Dewada Reservoir on a small river Kunda near village named Bhagwanpura. Catchment area of the reservoir was 23.30 sq. Km. From the present study it may be concluded that there were only minor differences in physico-chemical and biological parameters of all the four sampling sites selected for this study.

Material and Method - The study was based on the data collected mainly from primary sources through personal interview using comprehensive and pre-tested schedules. Fishermen occupational features are classified in to fishing, fishing related other activates. analysis was also carried out to determine the differences in fishing income and market returns etc the study perid one year 2013 to December 2013

Result and Discussion - The analysis of the age structure of the fishermen showed that 31-40 years age group was mainly engaged in fishing (34.83%)than 21-30 years of

*Department of Zoology, Govt. P.G. College, Khargone (M.P.) INDIA
**Department of Zoology, Swami Vivekanand Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.) INDIA

age group was engaged in fishing (27.74%), after than 41-50 years (13.54%), 51-60 years (12.25%) and above 60 years (11.61%) group comes .

Table 1:1 Distribution of age group of sample of fishermen of the study area of Dejla Dewada reservoir

Age group

	20-30	31-40	41-50	51-60	Above 60
No. of fisherman	43	54	21	19	18
Percentage %	27.74	34.83	13.54	12.25	11.61

Table 1:2 Distribution of educational group of sample of fisherman of the study area of Dejla Dewada reservoir

Educational group

	Only sign but illiterate	I-V Class	VI-VIII Class	IX-XII Class	Above XII
No. of fisherman	36	47	33	18	21
Percentage %	23.22	30.32	21.29	11.61	13.54

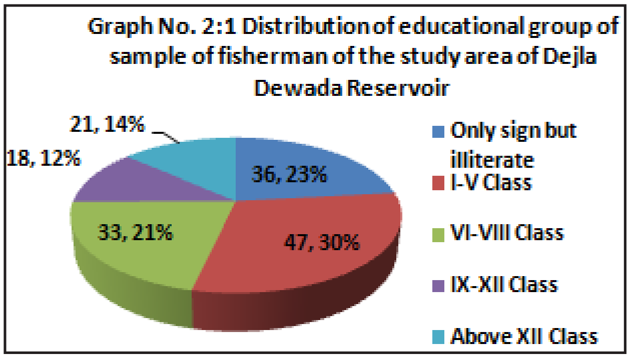

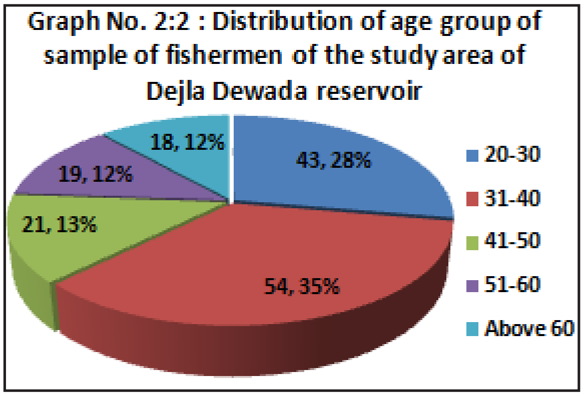

Below 20 years age group is mostly school going group hance it was not considered in the present study . this showed that above 40 years as the age increases the intimacy of fishermen towards fishing decreases. Another opinion state that, this was due to given up of the their work (transfer of parental job) to ther son .

Education is very important socio-economic aspects.In the field observation and based on the analysis the educational attachment of mambers of fishermen of Dejla Dewada Reservoir have been grouped in to five categories viz.only sign but illiterate , literate with class 1-5 ,6-8,9-12 and about 12. and presant study 23.32%people belong to 1-5 class ,29.391% to 6-8,11.61% above 9-12 and 13.64% to group of only sign but illiterate. , Illiteracy is positively related with high birth rate and low income along with less awareness. Table 1.1 to 1.2 and Graph 2.1 to 2.2.

In comparison to the above the C.I.F.R.I. unit Hoshangabad during their survey (1958-66) covered800 km of the river in M.P. nearly 285 villages were covered in their survey only 2600 fishermen the year . Accoding C.I.F.R.I. in 1958-66 active fishermen population is 3.2 fishermen/km. whereas according to the fisheries department, it is 6.1 km in 1967-71 period.

According to the IIMA (1983) the fisherman in general, belong to the weaker section of the society. they are socially, economically and educationally backward. in view of the fishing intensity and population per kilometer, where in they hardly get 2 to 3 kg. fish per day per head, their income is fairly low and they live much below the poverty line.

Conclusion - Socio-economic condition of fishermen was conducted during the study period . Interview of fishermen were taken .the study of socio-economic characteristics like age and educational status and daily income of members of fishermen could be developed throug increasing education and giving technical support .

Regular monitoring of the Dejla Dewada Reservoir at Khargone is very important as it is the major source of freshwater. The reservoir is also a source of water for irrigation and thus its water quality should be maintained. It is apparent that much attention should be paid on further studies of the physico-chemical and biological parameters of the Dejla Dewada Reservoir. Over all the socio-economic status of fishermen is very poor .

Suggestion - Following are the few suggestions for the improvement of socio- economic condition of population of the village :

1. To improve the educational status of the people in the study area by set up new primary and secondaty schools.
2. To provide primary health care services and creates awareness about health among the villagers.
3. To provide electricity services to the all people of village.
4. Job oriented programmes should be implemented in the village level.
5. To introduce various employment programmes for the youth population to reduce the burden of unemployment.
6. To introduce subsides programmes for various activities, especially, agriculture, social services and credit.

References :-

1. Alkadasi Noman (2009): Study of fish fauna of Lakkavalli Lake, Karnataka with respect to environment variables Mawhoub, Karnataka. Env.Con. Jour. Vol. 10(3) : 21-24
2. Badola, S.P. (1979). Ecological studies on the Ichthyo-fauna of some freshwater resources of Garhwal Re-

gion, M..Phil Thesis, Garhwal University.

3. Biswas, Asit K.(1998) : Water resources: Environmental Planning, management and development, Tata Mc. Graw Hill Publishing Company Limited, New Delhi. Pp 1-737.
4. Bakawale S.and Kanhere R., Socio-economic status of fishermen in West Nimar MP, Naveen Shodh Sansar, 1(2), 85-87 (2012)
5. C.I.F.R.I. 1958-66, present Hydrobiological and fishery status of Narmada Valley, Directorate of fisheries Madhya Pradesh, Reports.(1967-71)
6. Dutton, D.B., and Levis, S.(1989), Overview, Methodological Critique, and Reformulation, in J.P.Bunker, D.S.Gomby, and B.H.Kehrer(Eds.), Pathways to Health. Meln Park, CA: the Henry J.Kaiser Family Foundation, pp.29-69.
7. Joshi S. and Rawal R. (2014) , Awareness status of Fishermen in Mahashwar tehsil, dist, Khargone, india Res. Jour. of animal, Veterinary and Fishery Science Vol. 2(3),30-33, March (2014)
8. Rathod, G.r., Ningshen, A., (2012), Measuring the Socio-Economic Status of Urban below Poverty Line Families in Imphal City, Manipur; A Livelihoods Study, International Jouranl of Marketing, Financial Services & Management Research, Vol. 1(12), pp.62-69.
9. Krieger, N., Williams, DR., Moss, HW.(1997), Measuring Social Class in US Public Health Research: Concepts, Methodologies, and Guidelines. Annul.Rev. Public Health 18:341-78.
10. Eddy, S. (1934) : A Study of the fresh water Plankton Communities Illinois, Biol. Monogr, 12 (4): 1-93.
11. Edmondson, W.T. (1977) : Population dynamics and secondary production: Ergeb. Limnoi., 56-64
12. Ganapati, S.V. (1964).A five year investigation of Almati reservoir. Part IV, Zooplankton. Env.Hlth., 6: 65-74.
13. IIMA Report Economic status of fishermen, IIMA Report, I, 29(1983).
14. Sharma, A. and mudgal L.K (2004): fish diversity of yashwant sagar reservoir Indore (M.P). Him J. Env. Zool. 18(2):117-119.

****

An Analytical Study on Funds Utilized under Janbhagidari Scheme & Self Finance in Selected Government Colleges of Dhar District

Dr. Mahesh Gupta* Aarti Bansal**

Abstract - The study is very important in today's environment where education has given more emphasize to compete in the world. The changes in the environment have created threats to today's entire education world as education has become mushrooming within the internal and external problems. Hence, this study has focused on the procedure for funds raised by the Janbhagidari scheme and its proper utilization under the heads as per laid down by the UGC. The study further concluded about the important parameters which are essential for the utilization of funds which would be betterment for the Government colleges. As in competitive scenario and the advent of foreign universities, the survival of these institutions is becoming difficult and to fit in this competitive world they have to adhere the rules and regulations in delivering the quality of education. Hence, combined efforts have to put for competing and building the brand of Government colleges.

Introduction - Higher Education in India is at cross roads. With the new millennium, while there was phenomenal growth in the number of B-Schools, the benchmarks were on the rise. The globalization doesn't seem to have happened just to the industry but also to Indian B- Schools, expansion of B- Schools (in Number) doesn't look to line with the challenges posed by the globalization of Indian Education for higher learning. In India there is a growing awareness about getting higher education, which might stand a standard test of quality. Should the globalization of education in India become a reality in terms free movement of faculty and freedom of operations across the globe, the Indian higher educational institutions might have to lake initiatives, to stand up to the challenge. The solution is to be:

1. While the affiliated colleges are needed to be more autonomy both financial and academic, the autonomous institutions have to strengthen their curriculum.
2. For the affiliated colleges to upgrade their competencies. Financial autonomy will be the key and academic autonomy, the major driver. The established institutions have to strengthen their curriculum by improving the standards in terms of faculty & research, industry interaction, use of technology and case method.
3. Increasingly open economies and decreasing governmental controls are allowing companies to break geographical barriers. After the fall of the socialist economies, a new order is emerging, which is a heady mixture of laissez-faire capitalism and controlled socialism. Countries are varying with each other for a slice of the economic pie, as old fears and knee-jerk protectionism disappears behind a haze of prosperity.

From the foregoing considerations it is clear that there is need for systematic research to assess the applicability of modern managerial techniques to the administration of education. Since research and development in this important sphere may take some time to be organized in all the countries, a regional mechanism could usefully undertake this work, along with the training of national personnel in the new techniques of management. Education being one of the most rapidly expanding about intensive activities, a need exists to concentrate on the development of an Education being one of the most rapidly expanding labor- intensive activities, a need exists to concentrate on the development of a strong management force to guide it.

Review of Literature

Prathap G. and K. Ratnavelu (2015) carried out an analysis of educational schemes for leading higher education institutions in Malaysia using bibliometric data from the latest (2014) release of the Scimago Institutions Rankings (SIR). The complete performance chain: input–output–excellence–outcome–productivity using indicators that represent quantity, quality and productivity dimensions were tracked by the study. It is expected that public universities will continue to strengthen their research productivity to enhance their image locally as it will be a good marketing strategy.

*Professor (Commerce) Shri Atal Bihari Vajpayee Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Shri Atal Bihari Vajpayee, Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

Research Methodology Mohamed, et.al. (2014) pointed out that the Higher Education Institutions in Egypt are undergoing important changes involving the development of performance, they are implementing strategies to enhance the overall performance of their universities using ICT, but still the gap between what is existing and what is supposed to be for the self-regulation and improvement processes is not entirely clear to face these challenges. In this paper, the study has provided a model to construct unified Composite Index (CI) based on a set of SMART indictors emulate the nature of higher education systems in Egypt. The outcomes of the proposed model aim to measure overall performance of universities and provide unified benchmarking method in this context.

Arif, S. and Ilyas, M. (2013)focused on educational schemes of private universities in Lahore, Pakistan. They explored various magnitudes of educational schemes which exert an effect on life and the attitude of teachers. This quantitative study took 360 members of university and analyses their perception towards educational schemes. This study also investigated the educational schemes effects on employee commitment, engagement, job involvement, management support and reputation of the university.

Nema, G. & Nagar, D. (2013) according to their study titled 'Factors Determining the Excellence of Curriculum Design at Graduate Level'Higher Education had always been the interesting issue for discussion among the professionals and academicians. Several schemes have been introduced by the Higher Education to revamp the management education so that the gap between industry and academics can be reduced. The curriculum is being revised from time to time at both post graduate and undergraduate level to reduce the gap between the theory and practical. More focus is being put on research, development of communication skills and professional attitude, as and when the curriculum is revised. The study attempts to find out the factors determining the Excellence of Curriculum Designed at Undergraduate level.

Research Gap - This study has been undertaken the Government schemes for improving the teaching methodology, infrastructure, facilities, students' welfare, technology, placements etc. which are responsible for measuring the efficacy of schemes and its effective implementation so that everyone can be benefitted from the government schemes as no other previous studies have considered all these components in examining the efficacy of schemes. This study has bridged the gap to measure the implementation and outcomes of the schemes. Many studies were examined by the researcher to identify the variables but in this study the researcher has incorporated factors which owns the responsibility for performance of Government colleges. This study is unique in concept which has paved the way for other researchers to explore more factors as country wise, State wise, many differences occur and findings may also vary.

Objective of the Study - The objective is determined for this research study:

1. To know the impact of fund utilization on the performance of selected Government Colleges in Dhar District.

Research Type: The study is descriptive Research.

Research Area: The study was carried out in Dhar District.

Universe: Population in the study refers to the Government Colleges in Dhar District.

Sampling Unit: For the purpose of the study the questionnaires were distributed to the Management of Government Colleges of Manawer, Dharampuri and Dhamnodin Dhar District.

Sampling Method: For the purpose of this research, the purposive sampling has been used.

Sample Size: Sample is the subset of the population. Sample size selected for the purpose of this study is comprised ofThree Government Colleges in Dhar District.

Data Collection: The secondary data were collected from Records, Financial Statements of Colleges, National and International Journals, Working papers and Conference Proceedings, unpublished documents of Libraries, Dissertations. Moreover, relevant information and data were collected from the reports of Janbhagidari, Inspection and Audit of the Colleges under study.

Time Span: It is a micro research study analyzing the trends and impact of the application and utilization of fund. This research is confined to the span of last five year from 2014-15 to 2018.

Results & Discussions

The Statistics on the Fund Utilization under the Heads of Janbhagidari Scheme - Under this Janbhagidari scheme Government Colleges- District Dhar were selected and to measure the impact of these funds on the development of colleges, the last four years data were compiled as these are enough to present the actual utilization of fund. There are two heads one is income that is generated by fees, bank interest or Grant received by the Government and on the other expenditure that is to be spent on construction, infrastructure facilities, repairing, Guest Honoraria, computer instalment, Wi-Fi connection, administrative expenses, students activity expenses, maintenance charges, electricity and others.

In the table given below which shows the income and expenditure of Government PG College, Manawer, District Dhar from 2014-15 to 2017-18 under the Janbhagidari scheme:

Table 1: Financial Statement (Under Janbhagidari Scheme) of Government College, Manawer, District Dhar (in Rs)

Parameter /Year	2014-15	2015-16	2016-17	2017-18
Income	877495	2097014	2124582	4849677
Expenditure	517731	2022018	2034158	3060645
Percent of exp.	59%	96.4%	95.7%	63.1%

Source: Compiled from Balance Sheet

From the table on the financial statement shows the percentage of expenditure from the generated income from the sources of Janbaghidari scheme in terms of utilization of funds in various activities for the last four years from 2014-15 to 2017-18 FY. It is depicted that in 2014-15 it was 59 per cent funds were utilized and after the ensuing years it was increased due to activeness. As in 2015-16 it was 96.4% and then slightly decreased to 95.7% in 2016-17. In 2017-18 it was decreased to 63.1%. So it is concluded that funds were utilized in satisfactory manner but in 2017-18 the funds had not been properly utilized even there were many points on which funds would have been utilized but lack of proper planning and not support from the top management, it was not fully utilized. There should be more need to focus on the skill based activities of students for better placement, training programmes of Faculty etc. so that proper utilization of funds can be achieved. If we can ponder on the income, then it shows that in 2014-15 it was Rs. 877495 increased to Rs. 4849677 in 2017-18.

Table 2: Financial Statement (Under Janbhagidari Scheme) of Government College, Dharampuri, District Dhar (in Rs)

Parameter /Year	2015-16	2016-17	2017-18
Income	265042	370596	1265931
Expenditure	265042	238029	758334
Percent of exp.	100%	64.2%	59.9%

Source: Compiled from Balance Sheet

From the table on the financial statement shows the percentage of expenditure from the generated income from the sources of Janbaghidari scheme in terms of utilization of funds in various activities for the last three years from 2015-16 to 2017-18 FY. It is depicted that in 2015-16 it was 100 per cent funds were fully utilized. In 2016-17 it was 64.2% ad decreased to 59.9% in 2017-18. So it is concluded that before two years back, the funds were utilized fully but in ensuing years, lack of planning, somewhere it was the fault of Management. There were so many reasons for the utilization of funds but there should be more focused on the planning so that development can take place and the quality of education aso be enhanced.

Table 3: Financial Statement (Janbhagidari Fund) of Government College, Dhamnod District, Dhar

Parameter /Year	2014-15	2015-16	2016-17	2017-18
Income	362526	362449	413291	2237381
Expenditure	No expense	208769	274453	1325645
Percent of exp.	00%	57.59%	66.4%	59.2%

Source: Complied from Balance Sheet

The above table shows the financial statement of Janbhagidari funds utilized by Government College, Dhamnod District, Dhar. It states that in 2015-15, no funds were utilized even the Government had granted for expenses on various heads. But in 2015-16 it was utilized 57.59% under various heads like salary, administrative expenses, travelling, exams. Organizing meetings, students etc. and it was increased to 66.4% in 2016-17 but again decreased to 59.2% in 2017-18. Hence, it is concluded that there is a problem in decision making in time and no planning is made on how to make expenses which are necessary. On the other hand, the grant is increased from 362526 Rs. in 2014-15 to Rs. 2237381 in 2017-18.

Hypothesis of the Study

H_1: Funds are utilized properly by Government colleges received under Janbhagidari Scheme.

Table 4: T-Test on Funds Utilization

Dimension	T-Value	Sig.
Funds Utilization under Janbhagidari Scheme	6.608	.001*

*0.05 level of significance

The above table is based on income and expenditures of funds received under Janbhagidari scheme for selected colleges in Dhar District. The value of T is 6.608 at .001 level of significance so the hypothesis is accepted and concluded that Funds are utilized properly by Government colleges received under Janbhagidari Scheme.

Conclusion - Education being one of the most rapidly expanding about intensive activities, a need exists to concentrate on the development of an Education being one of the most rapidly expanding labor- intensive activities, a need exists to concentrate on the development of a strong management force to guide it. In last few years Dhar has became educational city for students. The government schemes have helped students to achieve in education sports as well as in cultural activities. Various schemes implemented in colleges improves the higher education and gives the opportunities to SC/ST and minority students. The PAB meeting held on every year and grants to various colleges of States. The study has paved the way for moving towards the excellence of performance of Government colleges by making a holistic approach towards quality teaching, accessibility, HR policy, ICT facility, Administration, Research & Development, Infrastructure, construction, etc. help in giving the best output in building the image of Government colleges.

The trading or the orientation of personnel to function more effectively in a new role should precede the organizational creation of that role. In the words of Coombs "Unless educational systems are well-equipped with appropriately trained modern managers- who, in turn, are well equipped with good information flows, modern tools of analysis, research, and evaluation, and are supported by well-trained teams of specialists- the transition of education from its semi-handicraft state to a modern condition is not likely to happen. Instead, the educational crisis will grow steadily useful clues in the practices-including the concepts and methodologies of systems analysis and of integrated long-range planning- of other sectors of society which have already made great strides in this direction."

Suggestions - Adopt a socialized tuition fee scheme by SUCs and allocate increased funding to student financial assistance programs by the national government coupled with improved targeting of the financial assistance to poor students in order to help SUCs achieve some balance between the need to improve resource generation and the need to ensure the poor's access to higher education;

1. Enjoin SUCs to offer programs which are not part of their core mandates provided they operate the delivery of said programs on a self-sustaining basis by charging tuition fees that approximate the amount need for full cost recovery; Strengthen the financial management of IGPs to ensure that SUCs' IGPs are making a positive net contribution to the coffers of SUCs;
2. Focus the use of the internally generated income of SUCs on their core mandates by revisiting the allocation for production in CMO 20-s2011 and rationalizing the allowances and other benefits that may be charged against the internally generated income of SUCs;
3. Resolve the inconsistency between the provisions of COA Circular No. 2000-002 and those of the General Appropriations Act with respect to the use of SUCs' internally generated income for the creation of new positions and the payment of salaries and allowances of regular/ permanent, contractual, and part-time faculty; Improve expenditure programming and procurement planning so as to minimize delays in project implementation to ensure that the benefits are realized sooner rather than later;
4. Explore greater flexibility in the use of some of the fiduciary fees (e.g., library fees, athletic fees)
5. Competitive relationship helps in organizational efficiency, but sometimes it creates politics also. People, who are not confident about their capability, engage themselves in leg pulling. On the other hand in a cooperative atmosphere employees work enthusiastically and feel comfortable.
6. To maintain good relationship, seniors should support socialization of new comers. Top management should take care of personnel welfare.
7. To further raise the academic standards by associating teaching-learning with innovative practices, extension lectures, organization of seminars and workshops, research activities and support of technology.
8. To create a congenial atmosphere of research and involve all the teachers in the research activities.
9. To collaborate with other institutions in order to be benefited from their experience and to motivate the faculty to follow their best practices.
10. To collect fund from members of Janbhagidari and other local members to enhance funding and interest of local bodies in government education system.
11. To improve the transition and On-time graduation and post-graduation rate.
12. To increase the progression percent of the students to the higher studies.

References:-

1. Arif S., & Ilyas M., (2013). Schemes for Teachers of Private Universities in Pakistan. Quality Assurance in Education, Emerald Group Publishing Limited. 21(3), 282-298.
2. Geeta Nema & D. Nagar (2013) 'Factors Determining the Excellence of Curriculum Design at Graduate Level' Published in NAAC Sponsored national Conference Proceedings.
3. Mohamed Rashad M El-Hefnawy, Ali Hamed El-Bastawissy & Ali Hamed El-Bastawissy (2014) Benchmarking the Higher Education Institutions in Egypt using Composite Index Model. (IJACSA) International Journal of Advanced Computer Science and Applications. Special Issue on Extended Papers from Science and Information Conference 2014 pp.92-103.
4. Nalwade, K. M, & Nikam, S., R., (2013). Effective implementation of schemes in Academic: A Review of Literature. International Journal of Scientific Research, 2(2), 214-216.
5. Panga & ParulSharda (2012) Innovative Teaching-Learning Practices: Impact Work Environment on Implementation of Quality' Published in Journal of Higher Education, Vol 8, No,3, pp.234-241.
6. Prathap G. and K. Ratnavelu (2015) Educational Schemes' performance evaluation of leading higher education institutions in Malaysia. Current Science, Vol. 109, No. 6, 25, pp.1159-1164.
7. Prathap G. (2014). The Performance of Research-Intensive Higher Educational Institutions in India. Current Science, Vol. 107, No. 3, pp.389-396.
8. Saveeta Sethi & Priyanka Mahida (2012) Student Involvement: A Developmental Theory for Higher Education. Journal of College Student Development , 40(5).
9. Singh K.S. & O. P. Singh (2015) Educational Scehmes in Higher Educational Institutions: A Strategic Approach towards Teacher's Excellence. International Journal of Advance Research in Computer Science and Management Studies Research Article / Survey Paper / Case Study Available online at: www.ijarcsms.com. Volume 3, Issue 9, pp180-186.
10. Tabassum, A. (2012). Interrelations between Utilization of Educational Schemes and Management Support in the Private Universities of Bangladesh, European Journal of Business and Management, 4(2), 78-89.

****

Deforestation : Alarming Situation For Mankind

Rachna Mathur*

Introduction - Deforestation is one of the major causes to the environmental degradation which is affected by the agents like small farmers, ranches, loggers and plantation companies. There is a broad consensus that expansion of cropped areas and pastures are a major source of deforestation. The term 'deforestation' describes the complete long term removal of tree cover. The loss forest cover influences the climate and contributes to a loss of biodiversity. The economic activity is adversely affected by siltation, flooding, soil degradation and reduced timber supplies. Thus, in turn, threatens the livelihood of people.

Deforestation is definitely one of the most troubling of all problems which has plagued our environment. It is important more than ever to take care of the green cover or else it can jeopardize the existence of life on Earth. It is owing to the presence of green trees that we get the oxygen needed to breathe in.

However, because of excessive exploitation by humans, it has been seen that the trees are being cut down mercilessly. This act of cleaning the green cover is known as deforestation.

Over the last century there has been tremendous growth in the urban population. This growth, however, has not been uniform. Growth in urban areas in less developed regions of the world has been especially rapid, increasing at an average rate of 2% annually compared with 0.5% in more developed regions. This trend is expected to continue with most of the less developed countries faced with the challenge of absorbing the majority of the future population growth (United Nations, 2015a). Increased urbanization is a major concern for less developed countries since they often lack the infrastructure and basic services (e.g., water, sanitation and healthcare) necessary to absorb the increasing number of people. Unable to adequately meet the demands of the growing population, slums have emerged and continue to proliferate in many less developed countries. Currently, about 1 billion people live in slums, with most slum dwellers located in less developed countries, which accounts for about 30% of their urban population. The presence of slums has regional and global implications, impacting areas such as education, health and child mortality, and political and social exclusion, among many other things. Deforestation is the permanent removal of trees to make room for something besides forest. This can include clearing the land for agriculture or grazing, or using the timber for fuel, construction or manufacturing.

Forests cover more than 30% of the Earth's land surface, according to the World Wildlife Fund. These forested areas can provide food, medicine and fuel for more than a billion people. Worldwide, forests provide 13.4 million people with jobs in the forest sector, and another 41 million people have jobs related to forests.

Forests are a resource, but they are also large, undeveloped swaths of land that can be converted for purposes such as agriculture and grazing. In North America, about half the forests in the eastern part of the continent were cut down for timber and farming between the 1600s and late 1800s, according to National Geographic.

Forests can be found from the tropics to high-latitude areas. They are home to 80% of terrestrial biodiversity, containing a wide array of trees, plants, animals and microbes, according to the World Bank, an international financial institution. Some places are especially diverse — the tropical forests of New Guinea, for example, contain more than 6% of the world's species of plants and animals. Forests provide more than a home for a diverse collection of living things; they are also an important resource for many around the world. In countries like Uganda, people rely on trees for firewood, timber and charcoal. Over the past 25 years, Uganda has lost 63% of its forest cover, Reuters reported. Families send children — primarily girls — to collect firewood and kids have to trek farther and farther to get to the trees. Collecting enough wood often takes all day, so the children miss school.

Deforestation and forest degradation are the biggest threats to forests worldwide. Deforestation occurs when forests are converted to non-forest uses, such as agriculture and road construction. Forest degradation occurs when forest ecosystems lose their capacity to provide important goods and services to people and nature.

Over half of the tropical forests worldwide have been destroyed since the 1960s, and every second, more than one hectare of tropical forests is destroyed or drastically degraded. This intense and devastating pressure on forests is not limited to the tropics – an estimated 3.7 million hectares of Europe's forests are damaged by livestock,

*Lecturer (English) M. S. Govt. Girls College, Bikaner (Raj.) INDIA

insects, diseases, forest fires, and other human-linked activities.

Nature-based solutions such as forest landscape restoration (FLR) can help countries reverse the effects of deforestation and degradation and regain the ecological, social, climatic and economic benefits of forests.

FLR brings people together to identify and implement the most appropriate restoration interventions in a landscape. It seeks to accommodate the needs of all land users and multiple land uses.

FLR is not just about planting trees – it can include multiple activities like agroforestry, erosion control and natural forest regeneration. FLR also addresses the underlying drivers of forest loss. For example, it provides farming communities living in and around forests with knowledge on sustainable agricultural methods that do not rely on destroying forests.

Countries and other land owners are committing to FLR through the Bonn Challenge – a global effort to restore 150 million hectares of degraded and deforested land by 2020 and 350 million hectares by 2030, launched by IUCN and Germany in 2011. The Bonn Challenge has so far generated pledges from governments and organisations to restore over 156 million hectares. But deforestation is having another worrisome effect: an increase in the spread of life-threatening diseases such as malaria and dengue fever. For a host of ecological reasons, the loss of forest can act as an incubator for insect-borne and other infectious diseases that afflict human. One billion of whom are among the world's poorest. This means there are many people depending on forests for survival and using them to hunt and gather raw products for their small-scale agriculture processes. But in developing countries such as Borneo, Indonesia, Vietnam, Brazil, or Mexico, land tenure systems are weak. This allows big businesses to get these lands and use them for other ends, disrupting local people's lives.

Locals then have to make one of two choices. They can decide to abandon "their" land and migrate somewhere else, avoiding conflict and embracing the challenge of a new different life. Or they can stay and work for the companies exploring it in remote plantations – often getting unfair wages and working under inhumane conditions. In some countries like Mexico, plantations' owners are often forced to share their profits with local cartels to keep their families alive and to avoid having their crops burned.

How can we stop deforestation? According to OECD, the human population is expected to continue to increase and reach over 9 billion people by 2050. At the current rate of consumption, and with more people inhabiting Earth, the need for more space to grow food and extract natural resources is only likely to increase – depending, of course, on tech development such as artificial foods. As the demand for food or raw materials like cotton or minerals increases, so does the need to turn forests into farmland, pastureland, or mining spots. Under this broader perspective, how can we stop deforestation? s consumers we can choose to buy less industrial and transformed products such as cookies, crips, noodles or cosmetics that use plenty of palm oil. Instead, we can go for a home-made approach with fewer chemicals and food preservatives which is better for both the planet and our health.

However, if you are not willing to make such changes – because they are time consuming – you can still consume more responsibly while keeping your lifestyle. To this regard, you can buy products from brands adopting eco-friendly business practices. When it comes to food, buying directly to small farmers using agroforestry practices is the best choice for the planet.

Green business concerns re-use and recycling. Green methods of production and utilization of resources can immeasurably reduce deforestation. Particularly, it's the focus on re-using items, reducing the use of artificial items, and recycling more items. Paper, plastics, and wood are linked to the destruction of forests and other natural resources.

By focusing on recycling paper, plastics, and wood products as well as adopting responsible consumerism, it means there will be less dependence on the natural resources and trees. It will also reduce government and company imports of raw-materials from forest regions in other parts of the world.

Community forestry is whereby local communities together with their local government and other local organizations such as schools, corporate, and universities join hands to start localized tree planting programs and management of their local forests. On various occasions such as public holidays, opening ceremonies, environment days, or other periodic localized activities, concerned local citizens can create awareness and plant trees.

This can be done within the surrounding areas as a method of boosting environmental sustainability and keeping the local forests viable. All local learning institutions, hospitals, local government headquarters, and the rest of the community can ensure trees are planted and the local forests are protected against damage as a way of finding solutions to the deforestation menace

Due to the nature and extent of forest destruction, efforts to stop the human activities can be complemented by laws and regulation at governmental and organizational levels. As much as people increasingly become aware of deforestation consequences, some people focus more on the immediate economic gains at the expense of the long-term environmental damage.

This attitude has encourages illegal logging for timber and other valuable resources like rubber and palm oil. Therefore, stopping deforestation and preserving the natural vegetations demands rules, laws, and regulations from organizations and governments to aid in enforcing forest preservation policies. Laws on timber, wood fuel, farming, and land use among other forest resources must be advanced and enforced to limit deforestation.

References :-

1. Agarwal, Anil and S. Narain. Towards Green Villages, Centre for Science and Environment, New Delhi.
2. Agarwal, Anil. 1987. Between Need and Green. The Wasting of India arid Green in India
3. The Fight for Survival. Centre for Science and Environment, New Delhi, pp. 181. Agarwala, V.D. 1965.
4. Forests of India, New Delhi. Ali, S. and S.D. Ripley. 1980. Handbook of birds of India and Pakistan.
5. BNHS, Oxford. Anonymous. Wasting People, Wasting The Earth. (Poverty and the Environment Portion).
6. Anonymous. 1989. Social Forestry Project - Tamil Nadu - Phase II {1988/89 - 1992/93) - Re-edited Appraised Project Document - Madras, February.
7. Centre for Science and Environment. 1982. The State of India's Environment - A citizens report, New Delhi.
8. Food and Agriculture Organisation. 1991. Second Interim Report on the State of Tropical Forests by Forests.
9. Kalpana Sharma. 1993. "Narmada Project: Built on broken promises" - Survey of the Environment
10. Ministry of Environment and Forests. 1989. Wetlands, Mangroves and Biosphere Reserves. Government of India, New Delhi.

****

भारत में लोक सेवको की भर्ती की प्रक्रिया एवं पारदर्शिता तथा निष्पक्षता

प्रो. रामशंकर* बिनय कुमार गुप्ता**

प्रस्तावना – किसी भी संगठन को व्यवस्थित रूप से संचालन के लिए मानव शक्ति की आवश्यकता होती है। इसके लिए भर्ती नियम बनाए जाते है, जिसमे वहाँ के कार्य की प्रकृति के आवश्यकता अनुसार कुशल एवं योग्य व्यक्तियों के चयन करने के लिए मापदंडो का समावेश होता है। अर्थात भर्ती की प्रकिया में अभ्यर्थियों से उन सभी गुणो की अपेक्षा की जाती है जो पदो के वर्गीकरण के अनुसार संपादित करने में निपुण/दक्ष हो। कार्मिको के चयनमे इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि भर्ती द्वारा उस संगठन के प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति में बृद्धि हो अन्यथा इसके विपरीत अकुशल व्यक्ति का चयन उस संगठन के उदेश्यों की प्राप्ति में बाधक सिद्ध होते है जिससे संगठन का मनोबल, अभिप्रेरणा, अनुशासन की समस्या भी पैदा करता है साथ ही वैसे लोग साधनो का अपव्यय भी करते है। अब प्रश्न उठता है की इन योग्य लोगो का चयन किस प्रकार किया जाए की कुशल एवं निपुण व्यक्ति का चयन किया जा सके । इसके लिए विभिन्न प्रकार की पद्धतियाँ और प्रक्रिया विभिन्न संगठनो में अपनाई जाती है।

विषय का शीर्षक 'लोक सेवको कि भर्ती प्रक्रिया' तक सीमित है अतएव हमे अध्ययन में लोक सेवकों कि भर्ती तक चर्चा करना समीचीन होगा । भारतीय दंड सहिता की धारा 21 के 12 वे विवरण के अनुसार 'सरकारी सेवारत्त या वेतन पाने वाला व्यक्ति लोकसेवक की श्रेणी में आता है', किन्तु लोक सेवक के रूप में सैनिक, न्यायिक तथा औधोगिक सेवाओ के कार्मिक सम्मिलित नहीं होते है। भर्ती का अर्थ ई0 एन0 ग्लेडन के शब्दो में 'लोक सेवा का इतिहास एक प्रकार से अधिकारियों की भर्ती की कहानी है'। अर्थात प्रशासकीय संरचना में भर्ती की प्रकिया का सम्पूर्ण कार्य प्रशासनतंत्र की दृष्टि से केंद्रीय महत्व का है क्योकि भर्ती के द्वारा ही लोक सेवाओ का स्तर और योग्यता निश्चित होती है तथा इसी पर शासन की उपयोगिता और शासनतंत्र के संबंध का निर्धारण होता है।

चूंकि भारत में केवल केंद्रीय सरकार के अधीन लोक सेवक के रूप में लगभग 34 लाख लोग कार्यरत्त है और दूसरी तरफ राज्यो के अधीन कार्यरत्त लोक सेवको की संख्या जोड़ी जाए तो करोड़ो में होगी । भारत सरकार के सभी मंत्रालयों/कार्यालयो एवं राज्यों के अधीनस्थ कार्यालयो में कार्यरत्त लोक सेवको के भर्ती प्रकिया भी पद के अनुरूप अलग-अलग है। अबतक संघ लोक सेवा आयोग के एक आँकड़े के अनुसार लगभग चौदह हजार से भी अधिक भर्ती नियम गठित/संशोधित किए जा चुके है।

भारत में सिविल सेवा भर्ती – भारत में लोक सेवा अतीत से विरासत में मिला है जो की ब्रिटिश शासन ने 1858 में जब भारत में सत्ता का बागडोर संभाली तब अधिकारी तंत्र की स्थापना कर विशेष कर उच्च सेवीवर्गी को अपने हितो के लिए पदस्थापित किया। उस समय ईस्ट इंडिया कंपनी का एक ही उद्देश्य था कि इस देश के संसाधनो को अपने हितों के लिए उपयोग करना था। उस समय का तंत्र मालिक और नौकर जैसा था क्योकि शीर्ष पदो पर प्राय: अंग्रेज काबिज होते थे और निम्न पदों पर भारतीय। अंगजो से 15 अगस्त 1947 को सत्ता का हस्तानंतरण ही सम्पूर्ण सरकारी तंत्र बदल गया। 26 जनवरी 1950 को नया संविधान के लागू होते ही भारतीय लोक सेवा के सामने नई चुनौतियां पैदा हो गयी ।भारतीय संविधान में अनुच्छेद 309 के अंतर्गत केंद्र या राज्य सरकार को यह अधिकार प्राप्त है कि वह लोक सेवको कि भर्ती के लिए भर्ती नियम बनाए जिसमे सेवा कि शर्तो को समुचित विधेयकों द्वारा नियमित, नियंत्रित व संचालित करें। सन 1951 में संसद ने अखिल भारतीय सेवा अधिनियम को पारित किया जिसमे अखिल भारतीय सेवा के लोक सेवको के लिए सेवा शर्तो को नियमित तथा संचालित करता है। लोक सेवको कि भर्ती कि पद्धति और सेवा के विभिन्न शर्ते जो कि संवैधानिक प्रावधानों के अंतर्गत बनाए गए नियमो द्वारा क्रियान्वित की जाती है। अनुच्छेद 309 के द्वारा प्रदत संवैधानिक अधिकार के भीतर रहकर ही नियम का निर्माण करना है अन्यथा इसके अतिक्रमण होने पर नियम को निरस्त किया जा सकता है। नियोजन और लोक सेवा में संरक्षण के भी प्रावधान प्रासंगिक अनुच्छेद 11, 14, 144, 310(1) और 311 है।

भर्ती के स्वरूप – भर्ती के लिए दो विचारधारा प्रचलित है- नकारात्मक भर्ती और सकारात्मक भर्ती। खुली प्रतियोगिता परीक्षा द्वारा योग्यता के आधार पर भर्ती की जाती जिससे गलत लोगो को भर्ती से रोका जाता है साथ ही राजनैतिक प्रभाव को भी समाप्त किया जाता है एवं पक्षपात मुक्त तथा लूट प्रणाली के स्थान पर योग्यता को प्राथमिकता देकर एवं जातीय प्रभुत्व को समाप्त भी समाप्त किया जाता है। इस प्रकार खुली प्रतियोगिता परीक्षा के आधार पर सर्वश्रेष्ठ, सक्षम, योग्य व्यक्ति का चयन होता है जिससे सकारात्मक भर्ती को बढ़ावा मिलता है। अनुचित माध्यम के द्वारा भर्ती की प्रक्रिया को नकारात्मक भर्ती के रूप में स्थापित किया गया है।

पदों का वर्गीकरण – भारत में जब ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन था। उस समय पदों को कवेनेंटेड और अनकवेनेंटेड (Covenanted & Uncovenanted) दो वर्गो में विभक्त किया गया था। 1887 के एचिसन आयोग कि अनुशंसा पर इसे तीन भागो वर्गीकृत किया गया -(i) इंपीरियल सेवाएँ (Imperial Services), (ii) प्रांतीय सेवाएँ (Provincial Services) और (iii) अधीनस्थ सेवाएँ (Subordinate Services) किन्तु 1912 में इन्सिलंग्टन आयोग ने अस्वीकार कर इसे दो भागो में करने का अनुशंसा किया -(i) उच्चतर सेवा (ii) निम्नतर सेवा। अब आगे चलकर

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (राजनीति विज्ञान) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

वर्ष 1930 में इसे प्रथम- अखिल भारतीय सेवा एवं द्वितीय-केंद्रीय सेवा तथा विदेश सेवा के रूप में बांटा गया जिसे समूह के रूप में प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी, अधीनस्थ सेवा के बाद निम्न सेवा का वर्ग विन्यास किया गया। परंतु तृतीय वेतन आयोग 1973 मे, ने समूह एवं पदों को चार भागो में विभक्त किया गया जिसे समूह 'क', 'ख', 'ग', और 'घ' के रूप में वेतन एवं कार्य के आधार पर सुनिश्चित किया गया था जिसे सरकार ने स्वीकार किया। किन्तु छठवे वेतन आयोग ने 'घ' श्रेणी श्रेणी को समूह 'ग' में संविलियन कर तीन समूह तक में ही सीमित कर दिया जिसका जिसे सातवें वेतन आयोग ने भी उसी रूप में स्वीकार किया जो निम्न प्रकार है :-

1. वेतन मैट्रिक्स में स्तर 10 से 18 तक वेतन पाने वाला केंद्रीय सिविल पद को समूह 'क' श्रेणी में रखा गया है।
2. वेतन मैट्रिक्स में स्तर 6 से 9 तक वेतन पाने वाला केंद्रीय सिविल पद को समूह 'ख' श्रेणी में रखा गया है।
3. वेतन मैट्रिक्स में स्तर 1 से 5 तक वेतन पाने वाला केंद्रीय सिविल पद को समूह 'ग' श्रेणी में रखा गया है।

सेवा कर्मियों की योग्यता - विश्व के सभी प्रजातांत्रिक देशों में योग्यता की पद्धति को अपनाया गया है। भारत में भर्ती में योग्यता का सिद्धांत 1853 ई. में अपनाया गया । भारत में योग्यता आधारित आधुनिक सिविल सेवा की अवधारणा 1854 में ब्रिटिश संसद की प्रवर समिति की लार्ड मैकाले की रिपोर्ट के उपरांत साकार हुई। इस प्रक्रिया में अभ्यर्थियों को खुली संयुक्त प्रतियोगिता परीक्षा आयोजन कर योग्य एवं उपयुक्त व्यक्तियों का चयन किया जाता है।

इसमे प्राय: लिखित परीक्षा, साक्षात्कार, कार्य निष्पादन मूल्यांकन, पूर्व अनुभव, समूह परिचर्चा मनोवैज्ञानिक जांच परीक्षण, शारीरिक जांच परीक्षण, पूर्व रिकार्ड जैसे अतिविशिष्ट कार्य ,प्रशस्ति पत्र, पुरस्कार इत्यादि शामिल है। लिखित परीक्षा द्वारा समान्य ज्ञान, किसी विषय के तर्क संगत विश्लेषण क्षमता, मूल्यांकन आदि की परख की जाती है। लिखित परीक्षा दो प्रकार की हो सकती है :- 1. निबंधात्मक परीक्षा एवं 2. वस्तुनिष्ठ परीक्षा। निबंधात्मक परीक्षा द्वारा बौद्धिक क्षमता, अभिव्यक्ति क्षमता, स्मरण शक्ति, तर्क पूर्ण विवेचन की योग्यता एवं विचारो में स्पष्टता की जांच करने का प्रयास किया जाता है किन्तु वस्तुनिष्ठ परीक्षा द्वारा एक प्रश्न के कई उत्तर विकल्प के में दिये जाते है जो कि वास्तविक जानकारी के अभाव में सभी उत्तर एक समान लगते है और भ्रम पैदा हो सकता है अगर सही ज्ञान नहीं है तो इस विधि में समय कि पाबंदी होती है और उत्तर में केवल सही का निशान लगाना होता है जिसे संगणक द्वारा जांच किया जाता है।

भर्ती के श्रोत एवं भर्ती के अभिकरण - भर्ती के दो श्रोत है - बाह्य श्रोत और आंतरिक श्रोत है। बाह्य श्रोत से अभिप्राय सीधी भर्ती से है जिसमें अधिकरणो के द्वारा योग्यता के आधार पर भर्ती की जाती है और दूसरा आंतरिक श्रोत है जिसमे विभागीय कर्मी से ही चयन कर रिक्ति को भरा जाता है जिसमे पदोन्नति, प्रतिनियुक्ति, स्थानांतरण, संविलियन, पुनर्नियुक्ति शामिल है। इसके लिए विभागीय पदोन्नति चयन समिति के द्वारा निर्धारित प्रक्रिया अपनाकर चयन किया जाता है। सीधी भर्ती के लिए निम्न अधिकरणो के द्वारा की जाती है :-

1. संघ लोक सेवा आयोग - संघ लोक सेवा आयोग संविधान के अनुच्छेद 315 के तहद स्थापित संवैधानिक निकाय है। भारत में उच्च सिविल पदों पर केंद्रीय सरकार के लिए कार्मिको भर्ती सबसे प्रतिष्ठित अभिकरण है। उच्च लोक सेवाओं के लिए प्रतिवर्ष संघ लोक सेवा आयोग द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर स्नातक उतीर्ण अभ्यर्थियों से आवेदन आमंत्रित किए जाते है। जिसमे भारतीय प्रशासनिक सेवा,भारतीय वन सेवा, डिफेंस सेवा, भूवैज्ञानी, आर्थिक सेवा एवं संख्याकिकी सेवा, चिकित्सा सेवा, डिफेंस एवं नेवल, अभियंत्रण सेवा, सिविल सर्विस आदि जिसमे सिविल सर्विस के लिए प्रत्येक वर्ष लगभग 800-1000 लोग भर्ती किए जाते है। संयुक्त परीक्षा के लिए सम्पूर्ण भारत के 45 परीक्षा केंद्र बनाए जाते है। इसके लिए उम्र सीमा 21 से 32 वर्ष निर्धारित है जिसमे एस.सी. एवं एस.टी. को 5 वर्ष एवं ओ.बी.सी को 3 वर्ष का छुट प्राप्त है। परीक्षा में बैठने के अवसर समान्य वर्ग के लिए 6 बार ओ.बी.सी के लिए 9 बार एवं एस.सी., एस.टी. के लिए यह नियम लागू नहीं होता है। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है :- पता संघ लोक सेवा आयोग, धौलपुर हाउस, शाहजहाँपुर रोड, नई दिल्ली- 110011, वेबसाइट http://www.upscigov.in, ऑन लाइन आवेदन के लिए https://upsconline.nic.in संख्या 011-23385271, 011-23381125, 011-23098543

प्रारम्भिक परीक्षा - सिविल सर्विस के लिए 200-200 अंको का 2 प्रश्न पत्र बहुविकल्प होता है जिसे उत्तर देने के लिए एक प्रश्न पत्र के लिए 2 घंटे का समय निर्धारित है। प्रथम प्रश्न पत्र में आर्थिक सामाजिक विकास, राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय घटनाएँ, भारतीय इतिहास, भारतीय राज्य व्यवस्था, भूगोल आदि के प्रश्न पुछे जाते है। दूसरे प्रश्न पत्र में निर्णय एवं समस्या समाधान, अग्रेजी भाषा की समझ, मूलभूत संख्या विषय का ज्ञान, विश्लेषण योग्यता, सामान्य बोध, तर्क क्षमता आदि से प्रश्न आते है। प्रारम्भिक परीक्षा के प्रश्न पत्र-II केवल अहर्क परीक्षा होगा जिसमे न्यूनतम 33% अंक लाना अनिवार्य है किन्तु प्रश्न पत्र के प्राप्तांक को मेघा के लिए कुल अंको पर निर्धारित किया जाता है।

मुख्य परीक्षा - सिविल सर्विस प्रारम्भिक परीक्षा में उतीर्ण होने पर मुख्य परीक्षा के लिए अहर्क होते है ,मुख्य परीक्षा के लिए 2013 से जो लागू है वह निम्न प्रकार है :-

प्रश्न-I	निबंध-अभ्यर्थी के परसंद की भाषा में	250 अंक
प्रश्न-II	भाषा- कोई भी आधुनिक भारतीय भाषा, केवल अहर्क अंक की अनिवार्यता	300 अंक
प्रश्न-II	अंग्रेजी-केवल अहर्क अंक की अनिवार्यता	300 अंक
प्रश्न-IV	सामान्य ज्ञान-I भारतीय विरासत, संस्कृत, इतिहास, भूगोल, विश्व एवं समाज	250 अंक
प्रश्न-V	सामान्य ज्ञान-II संविधान, राज्यव्यवस्था, सामाजिक न्याय, अंतराष्ट्रीय संबंध	250 अंक
प्रश्न-VI	सामान्य अध्ययन-III प्रौधोगिकी, आर्थिक विकास, पर्यावरण, जैव विविधता, सुरक्षा, आपदा प्रबंधन।	250 अंक
प्रश्न-VII	सामान्य अध्ययन-IV नैतिकता, सच्चरित्रता, अभिरूचि	250 अंक
प्रश्न-VIII	किसी एक वैकल्पिक विषय का प्रश्न-पत्र-I	250 अंक
प्रश्न-IX	वैकल्पिक विषय का प्रश्न-पत्र-II	250 अंक
	कुल अंक लिखित परीक्षा	2350 अंक
	भाषा तथा अंग्रेजी के 600 अंक घटाकर शेष बचे	1750 अंक
	साक्षात्कार	275 अंक
	कुल योग	2025 अंक

भर्ती की प्रक्रिया - किसी भी भर्ती अभिकरण की सफलता तभी मानी

जाती है जब योग्य, कर्मठ, ईमानदार, उच्च गुणवत्ता, नैतिकता वाले व्यक्ति का चयन करने में सफल हो और अभिकरण की छवि समाज में निष्कलंक, भ्रष्टाचार मुक्त, पारदर्शी हो इसके लिए निम्न प्रक्रिया अपनाई जाती है :-

1. विभिन्न मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों में रिक्त होने वाले पदों एवं नौकरियों की आवश्यकता की सूचना ज्ञात करना।
2. पद के अनुरूप भर्ती नियमो की शर्तों, योग्यताओं एवं अन्य पहलुओं का निर्धारण।
3. आवेदन पत्र का प्रारूप इस प्रकार तैयार करना की उस अभ्यर्थी के बारे में शैक्षणिक योग्यता, अनुभव, अभिरुचि, विशिष्ट उपलब्धि का सविस्तर जानकारी का समावेश किया जा सके।
4. पद की वर्गीकरण, योग्य अभ्यर्थियों को आकर्षित करने के लिए कार्य की प्रकृति का उल्लेख, रोजगार सूचना को सभी संचार के माध्यमों द्वारा अधिकतम जन मानस तक विज्ञापन से पहुँचाना।
5. अभ्यर्थियों द्वारा प्राप्त आवेदन पत्रो का सूक्ष्मता से परीक्षण कर योग्य आवेदको का सूची तैयार कर पंजीकृत करना।
6. विभिन्न स्तरीय संयुक्त परीक्षा, साक्षात्कार, तथा अन्य जांच जो कि पूर्व निर्धारित हो का आयोजन करना उसके उपरांत परिणाम का प्रकाशन।
7. विभिन्न दस्तावेजों का भौतिक सत्यापन।
8. अंतिम चयन सूची को रिक्ति के अनुसार संबन्धित मंत्रालय या विभाग को मेघा क्रम एवं उनके द्वारा दिये गए विकल्प का समायोजन कर अनुशंसा करना तथा सफल उम्मीदवार को सूचित करना।
9. अभिकरण द्वारा अनुशंसित अभ्यर्थी को निर्धारित औपचारिकता पूर्ण करने पर उस विभाग के नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा नियुक्ति पत्र जारी किया जाना और
10. नियुक्ति पत्र के आधार पर उस पद पर कार्य ग्रहण करने के समय और तिथि को पदस्थापन किसी भी भर्ती प्रक्रिया का अंतिम चरण है।

कम्प्यूटर आधारित परीक्षा से निष्पक्षता और पारदर्शिता :-

1. यह अधिक प्रभावी है और पर्याप्त सुरक्षोपाय होने के कारण, परीक्षा की उक्त पद्धति अधिक विश्वसनीय, प्रभावी और ठोस है। इसमे मानवीय हस्तक्षेप बहुत कम है जिससे परीक्षा में धोखाधड़ी के खतरे कम हो जाते है।
2. प्रश्न प्रबंधन और प्रशासन में अधिक लचिलापन तथा ज्यादा गोपनीयता है। पूर्ण स्वचालित प्रक्रिया होने के कारण इसमे परिणामो की ज्यादा सटीकता है और शीघ्र परिणाम प्राप्त होते है।
3. कई बार छद्म नाम से दूसरे के नाम पर कोई परीक्षा देने का आरोप भी लगता था इसलिए डिजिटल फिंगर-प्रिंट दस्तावेज सत्यापन के समय अभ्यर्थियों से संग्रह किया जाता है जिससे वास्तविक पहचान में सहायक होता है। बायोमीट्रिक पंजीयन प्रणाली में परीक्षा आरंभ होने से पूर्व अभ्यर्थियों के फिंगर-प्रिंट और छाया चित्र लेती है। इससे परीक्षा में बैठने वाले की पहचान को सत्यापित करने में आसानी होती है।
4. इससे बेहतर आकडा प्रबंधन होता है, जो अधिक प्रभावी ढंग से विश्लेषण करने और रिपोर्ट तैयार करने में योगदान करता है।
5. वर्तमान में रिक्तियों की सूचना एवं मांग सीधे मंत्रालय/विभागों ऑनलाइन संग्रहण अनिवार्य कर दिया गया है फलस्वरूप शीघ्रता से पदों को भरने में आसानी हो गयी है। आयोग द्वारा विभिन्न पदों के रिक्ति का विज्ञापन अपने-अपने वेबसाइट पर अपलोड कर देने से तत्काल सूचना प्राप्त हो जाता है जबकि पहले साप्ताहिक समाचार पत्र का अवलोकन करने की प्रतीक्षा करना होता था।
6. संगणक आधारित लिखित परीक्षा, अभ्यर्थियों से उत्तर कुंजियों के बारे में प्राप्त आपत्तियों को भी ऑनलाइन मांगी जाती है एवं पुन: संशोधित कर अपलोड किया जाता है।परीक्षा के दौरान सी सी टी वी कैमरा द्वारा मॉनिटर किया जाता है।
7. दस्तावेज सत्यापन और कौशल परीक्षा से संदर्भित सूचनाए वेबसाइट पर अपलोड किया जाता है। आवेदक के उत्तर ,प्रश्नो के उत्तर कुंजियाँ और अभ्यर्थियों के संगणक आधारित परीक्षा के प्राप्त अंक भी वेबसाइट पर अपलोड किए जाते है जिसे उत्तर तथा अंकों को लॉग-ऑन कर देखा जाता है।
8. कोई विशेष सूचना या परीक्षा तिथि आदि में बदलाव के सूचना ई मेल, एस एम एस के माध्यम से संप्रेषित किया जाता है।
9. संगणक आधारित पद्धति ऑनलाइन प्रशिक्षण की व्यवस्था 'एनिमेटिक वॉक थ्रु मॉड्यूल' को उपलब्ध कराया गया है जो अभ्यर्थी सुदूर ग्रामीण क्षेत्र में रहते है वे पूर्व अभ्यास कर सकेंगे ।

2. कर्मचारी चयन आयोग - भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों विभागों और अधीनस्थ कार्यालयों तथा सीएजी एवं महालेखाकारों कार्यालय में गैर तकनीकी समूह 'ग' और 'ख' के अराजपत्रित पदों पर भर्ती की जाती है। इसके अलावा कुछ विभागीय परीक्षा भी आयोजित करता है तथा विभिन्न कर्मचारी चयन आयोग का स्थापना सरकार के संकल्प के द्वारा किया गया है द्वारा समूह 'ख' तथा 'ग' श्रेणियों में अराजपत्रित गैर तकनीकी एवं तकनीकी पदों की प्रतियोगी परीक्षा के द्वारा की जाती है। परीक्षा की पद्धति अलग-अलग है जिसमे संयुक्त स्तरीय परीक्षा में बहुविकल्पीय और वस्तुनिष्ठ प्रकार के होते है। यहाँ के सभी पदो के लिए साक्षात्कार समाप्त कर दिया गया है। साक्षात्कार में भ्रष्टाचार के आरोप लगते थे अतएव सरकार ने 2016 से इसे समाप्त कर दिया गया ताकि सिर्फ मेघा के आधार पर चयन सुनिश्चित की जा सके ।

संयुक्त स्नातक स्तर (सीजीटी) चार चरणों में प्रतियोगिता परीक्षा के माध्यम से चयन किया जाता है जिसके द्वारा सहायक लेखा अधिकारी, सहायक अनुभाग अधिकारी,सहायक, आयकर निरीक्षक, उत्पाद कर निरीक्षक, सहायक प्रवर्तन अधिकारी, निरीक्षक (परीक्षक), सीबीआई उप निरीक्षक, पोस्टल निरीक्षक, प्रवर श्रेणी लिपिक आदि विभिन्न मंत्रालयों/विभागो/अधिकरणो में नियुक्ति हेतु चयन प्रक्रिया संपन्न की जाती है जो राजपत्रित एव अराजपत्रित होते है।

1. सीजीएल टियर-I, कम्प्यूक्टर आधारित परीक्षा या सीबीटी-1 के नाम से जाना जाता है जिसमे समान्य बुद्धि और तर्क, समान्य जागरूकता, मात्रात्मक रुझान,अँग्रेजी कंपरिहेंशन के प्रश्न पुछे जाते है इसके लिए समय अवधि 60 मिनट निर्धारित है कुल 100 प्रश्न होते है जिसे एक प्रश्न 2 अंको का होता है यानि कुल 200 अंक का एक प्रश्न पत्र होता है।

2. सीजीएल टियर-II, कम्प्यूक्टर आधारित परीक्षा या सीबीटी-2, इस प्रश्न पत्र में मात्रात्मक परीक्षा, अँग्रेजी भाषा, कंपरिहेंशन, सांख्यिकी और समान्य अध्ययन (वित्त और अर्थशास्त्र) के प्रश्न पुछे जाते है जिसमे कुल 500 प्रश्न होते है जिसके लिए 800 अंक निर्धारित है तथा इसके लिए समय 120 मिनट दिया जाता है।

3. सीजीएल टियर-III यह कम्प्यूटर आधारित परीक्षा पेन और पेपर द्वारा वर्णात्मक होता है जिसके लिए 100 अंक तथा समय 60 मिनट

निर्धारित है इसे किसी एक भाषा हिन्दी या अँग्रेजी में लिखना होता है।

4. सीजीएल टियर- IV, यह परीक्षा कंप्यूटर प्रवीणताके लिए लिया जाता है जहां भर्ती नियमो में डाटा इंट्री स्किल टेस्ट (जहां लागू हो)जैसे की टैक्स सहायक जो की समूह 'ग' के लिए लिया जाता है।

3. रेल भर्ती बोर्ड – सम्पूर्ण भारत में 21 रेलवे भर्ती बोर्ड की स्थापना की गयी है। यह विश्व का सबसे बड़ा नियोक्ता है। संप्रति 16 लाख से भी अधिक कर्मचारी है। रेलवे भर्ती बोर्ड द्वारा 'ग' श्रेणियों में तकनीकी और गैर तकनीकी अराजपत्रित पदों की प्रतियोगी परीक्षा के द्वारा की जाती है। इस बोर्ड द्वारा सीधे और विभागीय सीमित प्रतियोगिता परीक्षा आयोजित की जाती है। वेतनमान पे मैट्रिक्स 1 से लेकर पे मैट्रिक्स 7 तक के विभिन्न पदो का चयन किया जाता है। यहाँ के सभी परीक्षाएँ बहुविकल्पीय होते है इसलिए इसे कर्मचारी चयन आयोग के तुलना में स्तर कम आका जाता है। सभी भर्ती बोर्डो पर निगरानी के लिए रेलवे बोर्ड भर्ती प्रकोष्ठ स्थापित किया गया है।

4. राज्यो के लोक सेवा भर्ती आयोग या अधीनस्थ चयन आयोग – भारत के संविधान द्वारा स्थापित प्रत्येक राज्य लोक सेवा आयोग का गठन संवैधानिक निकाय के रूप में किया जाता है वर्तमान में 29 लोक सेवा आयोग विभिन्न राज्यो में स्थापित किए गए है। राज्यों के सेवाओं के भर्ती के लिए परीक्षाओ का संचालन करना। समूह 'ख' राजपत्रित एवं अराजपत्रित तथा समूह 'ग' की भर्ती की जाती है।

5. रोजगार कार्यालय – वैसे पदो पर भर्ती का दायित्व है जो उपरोक्त में से किसी अभिकरण द्वारा चयन नहीं किया जाता है।

ये सभी अभिकरण चयन प्रक्रिया को पक्षपात रहित, निष्पक्ष, पारदर्शिता बनाए रखने करने के लिए अधिकृत है।

मूल्यांकन :-

1. जिस प्रकार भारत में लोक सेवा में भर्ती के लिए आकर्षण है वैसा अमेरिका में नहीं है और न ही भारत जैसा वहाँ एक लोक सेवक को ज्यादा प्रतिष्ठा मिलता है। अमेरिका पूंजीवादी देश होने के कारण निजीकरन का बोलबाला है तभी वहाँ के निजी कंपनियों के अधिकारियों को ज्यादा प्रतिष्ठा है जबकि भारत में इसके विपरीत है किसी निजी कंपनी के मुख्य कार्यकारी निदेशक (सीएमडी) का पद का प्रस्ताव दे और दूसरी तरफ भारतीय प्रशासनिक अधिकारी का पद ऑफर दिया जाए तो वह भारतीय प्रशासनिक अधिकारी (आईएएस) बनना चाहेगा।
2. बाह्य भर्ती या सीधी भर्ती लोकतांत्रिक मूल्यों के अनुरूप होता है जिसमें अवसर के समानता होती है। इस प्रकार के भर्ती में सर्वश्रेष्ट प्रतिभाओं को स्थान मिलता है तथा नए विचारों एवं आदर्शो से ओत-प्रोत मेघावी लोक सेवक का आगमन होता है। संगठन के भीतरी एकाधिकार पर लगाम कसती है। इसके दूसरा पहलू यह भी है कि सीधी भर्ती से आए हुए कर्मचारियों में व्यवहारिक ज्ञान का अभाव होता है तथा इसकी पूर्ति के लिए अनेकों वर्ष का कार्य अनुभव व प्रशिक्षण कि आवश्यकता होती है जिसमे समय कि अधिकता और खर्चीला दोनों ही है। नए लोगो के आने से विभागीय कर्मी हतोत्साहित होते है जिसका प्रभाव कार्य कुशलता पर पड़ता है। इसके पीछे कारण है कि प्रौढ़, युवाओं से प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकते है।
3. संघ लोक सेवा आयोग द्वारा सिविल सेवा के सीधी भर्ती के दौरान जून 1991 में आईसीएस कि प्रारम्भिक के प्रश्न पत्रो के लीक हो जाने और नई दिल्ली में खुलेआम बेचे जाने से इसके प्रतिष्ठा एवं विश्वसनीयता को आघात पहुँचा है। संघ लोक सेवा आयोग के सदस्य एस डी कार्णिक जो की महाराष्ट्र लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष रह चुके थे उनके ऊपर भी भर्ती घोटाले के आरोप लगे थे। इसी प्रकार हरियाणा, बिहार, पंजाब, राजस्थान, म. प्र. राज्यों के लोक सेवाओं के भर्ती अभिकरण पर भ्रष्टाचार के आरोप लगे है। कर्मचारी चयन आयोग, रेलवे भर्ती बोर्डो आदि भी इस कलंक से धुले नहीं है, आए दिन समाचार पात्रो में अभिकरणो के बारे में भर्ती कि प्रक्रिया में भ्रष्टाचार के आरोप लगते रहते है। फिर भी कुछ घटनाओं को छोड़ उपरोक्त सभी भर्ती अभिकरणो में संघ लोक सेवा आयोग इस सभी में आज भी विश्वसनीय है।
4. किसी भी भर्ती में साक्षात्कार की प्रक्रिया द्वारा उस अभ्यर्थी के आंतरिक गुणो को परखने के प्रयास किया जाता है परंतु इसके आड़ में भ्रष्टाचार का भी जन्म हुआ है, साक्षात्कार के पद्धति पर अनेकों बार अंगुली उठती रहती है और यह स्वाभाविक भी है, क्योकि आयोग के सदस्यों कि इच्छा पर निर्भर होता है कि किसे कितना अंक देना है इसका कोई मापदंड नहीं है। वर्तमान में सिविल सेवा में 275 अंक के साक्षात्कार लिए जाते है जो चयन में बहुत अधिक महत्व है यानि 1750 अंक के लिखित परीक्षा के 10% अंक साक्षात्कार का नियत करना चाहिए जो की 175 अंक का होना चाहिए । कई विद्धानो ने तो साक्षात्कार के अव्यवहारिक और अवैज्ञानिक माना है। भारत सरकार ने इसी तारतम्य में 1 जनवरी 2016 से समूह 'ख' और समूह 'ग' के भर्ती में साक्षात्कार कि अनिवार्यता को समाप्त करने पीछे यही उदेश्य था कि भेद-भाव, धांधली को रोका जा सके और निष्पक्ष भर्ती हो सके ।
5. संघ लोक सेवा आयोग के प्रश्न पत्रो और 11 विषयों की लिखित परीक्षा बहुत उबाऊ जैसा है तथा यह परीक्षा विश्वविद्यालय के परीक्षा के आधार पर आधारित है जिससे कई बार किसी अभ्यर्थी किसी विषय में बहुत अधिक और किसी विषय में बहुत कम अंक प्राप्त होने से ऐसी आशंका प्रतीत होती है जो भाग्यवाद को बढ़ावा मिलता है किन्तु लंबे और विस्तार से उत्तर लिखने के कारण अभ्यर्थी के ज्ञान, तार्किक क्षमता,विश्लेषण कि योग्यता का परख किया जाता है जिससे समस्या को समझने, संतुलित भाषा में लिखने, विश्लेषित करने, विचारो कि क्रमबद्धता, सम्प्रेषण कि भावना, विश्वविद्यालयी परीक्षा के समान होने से सहज महसूस करना आदि इसके गुण है। वस्तुनिष्ठ प्रश्न को तार्किक बनाने में बहुत समय लगता है, इससे ज्ञान का वृहद रूप से परीक्षण नहीं हो पता है। इसमे अंदाज से भी प्रश्नों के उत्तर सही हो सकते है और किसी के भाग्य का सितारा चमक सकता है। इस प्रकार के प्रश्न से परीक्षा का प्रयोजन पूरा नहीं होता है। किन्तु इसका दूसरा पहलू भी है जिसमे इस प्रकार के प्रश्नो के उत्तर का निष्पक्ष जांच संभव है, कम खर्चीला है, अभ्यर्थी से त्वरित निर्णय लेने कि क्षमता का पता चलता है। निश्चित ही कुछ गुण है तो कुछ अवगुण भी विद्यमान है।
6. रेलवे भर्ती बोर्ड ,कर्मचारी चयन आयोग के साथ-साथ संघ लोक सेवा आयोग के भी कई प्रश्न पत्र बहूविकल्प वाले होते है जिसमे कई संभावित उत्तर के बीच एक सही उत्तर छुपाया गया होता है जिसे चुनना होता है इस पद्धति द्वारा भर्ती के दोष को अनेकों विद्धानों ने अभिमत व्यक्त किए है की यह पद्धति अभ्यर्थी के अभिव्यक्ति, सकारात्मक योग्यता ज्ञात नहीं किया जाता । इस प्रकार के ज्यादातर अधीनस्थ

सेवा द्धारा समूह 'बी' और समूह 'सी' के लिए किया जाता है जिसमे गणित, समान्य ज्ञान, भाषा, समान्य विज्ञान आदि के सही – गलत का चुनाव करना होता है इसके द्धारा जिसमे मेघा की शुद्धता 100% होती है किन्तु वास्तविक अभिव्यक्ति से अभ्यर्थी कोसो दूर होते है। इसलिए भर्ती के अतीत की पद्धति को बदला जाना चाहिए।

7. उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग ने साक्षात्कार लेने के पुरानी प्रक्रिया में बदलाव करते हुए एक अत्यंत ही सराहनीय कदम उठाया है जिससे किसी भी अभ्यर्थियों से साक्षात्कार बोर्ड उसका नाम, पता, धर्म,जाति नहीं पुछेगा और केवल रोल नंबर से ही साक्षात्कार लिया जाएगा। गोपनियता और निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिए जो भी पैनल होगा उसे यह ज्ञात नहीं होगा कि उसे किस अभ्यर्थी या किस-किस रोल नंबर के साक्षात्कार लेने है। उसी प्रकार अभ्यर्थी को भी यह ज्ञात नहीं होगा कि उसे किस पैनल में साक्षात्कार देनी है यह सब केवल आधा घंटा पहले निर्धारित किया जाता है जिससे कि निष्पक्षता, भाई-भतीजावाद, भ्रष्टाचार, धांधली, क्षेत्रवाद रोकने में मदद मिलती है। इस प्रकार के आदर्श प्रणाली को सभी अभिकरण को अनुसरण करना चाहिए ताकि साक्षात्कार के लिए जोड़ तोड़ कर अभ्यर्थी को सफल कराने के विसंगतियो को दूर किया जा सके।

8. किसी भी भर्ती निकाय के कर्मी कोई भी गलत कदम उठाने के पूर्व अनेकों बार यह सोचता है कि अगर सूचना के अधिकार अधिनियम के अधीन अंक पत्र, लिखित परीक्षा के कॉपी आदि को मांग कर साक्ष्य के रूप में उपयोग कर अपराधिक प्रकरण दर्ज कराया जा सकता है। साथ ही कट ऑफ मार्क्स बताने, प्रतियोगी परीक्षार्थियों को मॉडल पश्न पत्र उपलब्ध कराने, स्केलिंग का खुलासा करने कि प्रथा भी गलत कार्य करने वाले को भय पैदा करता है। पारदर्शिता के मामले में उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग और बिहार राज्य लोक सेवा आयोग अन्य राज्यों के अपेक्षा बहुत आगे है ।

9. साक्षात्कार के बारे में एक रिपोर्ट जो कि 'इन्टरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एकजमिनेशन इन्कायरी' से ज्ञात हुआ है कि 300 अंको के साक्षात्कार में एक अभ्यर्थी को पैनल के एक सदस्य ने प्रथम स्थान पर रखा तो दूसरे सदस्य ने उसे बीसवे स्थान पर रखा। इस प्रकार एक अभ्यर्थी के साक्षात्कार पैनल से सदस्यों ने अलग-अलग अंक दिये जिसमे 72 से 92 अंको का अंतर पाया गया। इस अध्ययन से स्पष्ट है कि साक्षात्कार पद्धति विश्वसनीय नहीं है।

10. भर्ती के पद्धति में कमियों को दूर करने के लिए सभी मंत्रालय/विभागो/ कार्यालयो/अधीनस्थ कार्यालयो आदि के लिए राष्ट्रीय स्तर पर एक समान परीक्षा आयोजित कि जानी चाहिए और उच्च योग्यता वाले को ऊँचे पद पर नियुक्ति योग्यता के अनुरूप पद दिया जाए तथा निम्न योग्यता वाले को निम्न पदो पर नियुक्ति का प्रावधान किया जाना चाहिए और शैक्षणिक डिग्री कि आवश्यकता को समाप्त कर देना चाहिए।

उपरोक्त तथ्यो से स्पष्ट है कि भारत में भर्ती अधिकरणो में अभी अनेकों सुधार कि आवश्यकता है जिससे कि कुशल लोक सेवको कि भर्ती संभव है। पारदर्शिता के लिए संप्रति जो कदम भर्ती एजेंसियों द्धारा उठाए गए है वे सराहनीय है किन्तु इसे और प्रभावी बनाने हेतु उत्तर पुस्तिकाओ को भी प्रकटन किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 कटारिया डॉ. सुरेन्द्र, भारतीय लोक प्रशासन, 11वां संसकरण, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, नई दिल्ली 2014

2 गुप्ता सुनील, सिंह कमाल कुमार, सुशासन, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, तीसरा आवृति -2016

3 जैन डॉ. सी. एम. एवं शर्मा हरिश्चंद्र, लोक से विवर्गीय प्रशासन, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर, नई दिल्ली

4 अवस्थी प्रो.आनंद प्रकाश, तुलनात्मक लोक प्रशासन, तृतीय संस्करण 2006, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, नई दिल्ली

5 मानव संसाधन प्रबंधन, एम.पी.ए.-14 ,इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, नई दिल्ली, 2016

6 कटारिया डॉ. सुरेन्द्र, कार्मिक प्रशासन, आर.बी.एस पब्लिशर्स, जयपुर, 2009

7 अवस्थी डॉ. अमरेश्वर एवं महेश्वरी डॉ. श्रीराम महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, 2004

****

म.प्र. में विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) का रोजगार सृजन के क्षेत्र में योगदान का एक अध्ययन

योगेन्द्र सिंह ठाकुर* डॉ. ऋषि शर्मा **

शोध सारांश – म.प्र. उद्योग क्षेत्र में एक उभरता हुआ राज्य है। म.प्र. की केन्द्रीय भौगौलिक स्थिति के कारण संभार तंत्र एवं आपूर्ति श्रृंखला के क्षेत्र में म.प्र. एक विशेष राज्य बनता जा रहा है। म.प्र. सरकार की औद्योगिक संवर्धन नीति 2010 तथा संशोधित नीति (2014) के द्धारा म.प्र. की अधोसंचरना के विकास के लिये विशेष प्रयास किये जा रहे है। म.प्र. सरकार की सिंगल विंडो नीति के द्धारा उद्योग संवर्धन के प्रयास किये जा रहे है। त्वरित निवारण सिंद्धांत पर अमल करके औद्योगिक इकाइयों की समस्याओं का निपटान जल्द संभव हो सकता है। विश्व स्तर पर जहाँ कहीं भी सेज का निर्माण हुआ है वहाँ पर औद्योगिक प्रगति नये आयामों के साथ आगे बढ़ी है। व्यापारिक सुगमता के आधार पर म.प्र. में विशेष रूप से पीथमपुर में विशेष आर्थिक क्षेत्र की स्थापना की गई है। सर्वप्रथम 1947 में प्यूटोरिकों में सेज की स्थापना हुई थी।

शब्द कुंजी – आर्थिक क्षेत्र, डेट्रायड, एकल-खिड़की, औद्योगिक संवर्धन नीति, व्यापारिक सुगमता।

प्रस्तावना – म.प्र. में इन्दौर को मिनी बाम्बे कहा जाता है। औद्योगिक अवसरों को और अधिक विश्व स्तरीय बनाने के लिये सेज की स्थापना की गई है। बढ़ती मांग एवं व्यापारिक प्रतियोगिता का सामना करने के लिये क्षेत्र का निर्माण आवश्यक हो गया था। म.प्र. में औद्योगिक आधारभूत ढाँचे की बहुत कमी है। अन्य राज्यों की तुलना में औद्योगिक तथा व्यापारिक सुगमता में म.प्र. का स्थान काफी पिछड़ा है। संपूर्ण विश्व के लिये यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि थी। म.प्र. में इन्दौर के पास स्थित 'पीथमपुर' में सेज औद्योगिक क्षेत्र उत्पादन एवं रोजगार सृजन की नई परिभाषाएं गढ़ रहा है। इन्दौर में सेज की स्थापना उसकी भौगौलिक स्थित के कारण और महत्वपूर्ण हो गई है। विशेष आर्थिक क्षेत्र जोन को फ्री ट्रेड जोन, एक्सपोर्ट प्रोसेसिंग जोन, इंडस्ट्रियल स्टेट, फ्री पोर्ट अरवन इंटरप्राइजेस आदि केटेगरी में बाँटा गया है।

रोजगार के प्रकार – मूल रूप से रोजगार को स्थायी तथा अस्थायी रोजगार के रूप में देखा जाता है। सामान्यत: इसे पाँच तरह से विभाजित किया जाता है। स्थायी रोजगार वह होता है जो साधारणत: सरकारी नौकरी या स्थायी वेतन प्रदाता द्धारा प्रदान किया जाता है। अस्थायी रोजगार वह होता है जो नियमित वेतन प्रदान नहीं करता है। बाकी सभी प्रकार के रोजगार इन्हीं दो क्षेत्रों के अंतर्गत आते है।

इन्दौर जिलें का संक्षिप्त परिचय – म.प्र. का 'मिनी मुंबई' एक वृहत व्यापारिक क्षेत्र है। यहां पर आई.टी. पार्क तथा आई.आई.एम. जैसे संस्थान है। 19.718 वर्ग कि.मी. में इस शहर का फैलाव है। यहाँ की जनसंख्या 32,72,335 है। यहाँ पर सांवेर रोड, पोलोग्राउंड हतोद, शिवाजी नगर, भागीरथपुरा, राऊ, लक्ष्मी नगर आदि औद्योगिक क्षेत्र है। इन्दौर नगर में 12,726 रजिस्टर्ड औद्योगिक इकाइयाँ है। इस शहर में उत्पादित सामान का निर्यात करने हेतु एयर कार्गो कांपलेक्स भी है। 21 से ज्यादा विशाल औद्योगिक इकाईयां है। यहाँ प्रतिवर्ष 7 से 8% की दर से औद्योगिक इकाईयाँ बढ़ रही है।

साहित्य समीक्षा – कुमार राजन (2006) के अध्ययन से ज्ञात होता है कि म.प्र. राज्य में सेज क्षेत्रों के परिचालन एवं उन्हें विकसित करने की पूर्ण क्षमता है। म.प्र. सभी प्रकार के खनिज पदार्थों से परिपूर्ण राज्य है। यहाँ की भौगोलिक स्थिति भी सकारात्मक है।

गर्वनमेंट आफ इंडिया (2017) की रिपोर्ट के अध्ययन से पता चलता है कि म.प्र. में विशेष आर्थिक क्षेत्र जोन बनाने से म.प्र. में फ्रूड प्रोसेसिंग, कृषि उपकरण नियति तथा इंजीनियरिंग क्षेत्र से संबंधित उत्पाद विदेशी मुद्रा कमाने वाले क्षेत्र बनकर उभरे है।

राजकपिला उमा कपिला (2014) के अध्ययन में सुझाव देती है कि भारत में जिन-जिन राज्यों ने सेज को नहीं अपनाया है उन राज्यों को तुरंत ही इस दिशा में निर्णय लेना चाहिये उससे उनकी जी.डी.पी. में सुधार होगा। नए-नए रोजगार के अवसर होंगे।

अध्ययन की आवश्यकता – म.प्र. एक उभरता हुआ औद्योगिक क्षेत्र है। यहाँ पर भारत की बड़ी-बड़ी कंपनियाँ लॉजिस्टिक्स के क्षेत्र में निवेश कर रही है। भंडारण व्यवसाय भविष्य में म.प्र. का विशेष व्यवसाय बनकर उभरेगा। अंबानी ग्रुप म.प्र. में 40 जगहों पर विशेष भंडार ग्रह खोल रहा है। सरकारी प्रयास एवं म.प्र. राज्य भंडारग्रह नीति 2012 भी म.प्र. को 'भंडारण हब' बनाने की और तेजी से कार्य कर रही है। सेज से सभी क्षेत्रों को एक-दूसरे से व्यावसायिक सहारा मिलता है ऐसे में इस प्रगतिशील विषय का अध्ययन और प्रांसगिक हो जाता है।

अध्ययन का महत्व :

1. रोजगार सृजन की संभावनाओं को परखना।
2. औद्योगिक संवर्धन नीति के परिणामों को जांचना।
3. म.प्र. में सेज के विकास की संभावनाओं का पता लगाना।
4. सेज स्थापना के दूरगामी परिणामों का जाँचना।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. म.प्र. के विशेष आर्थिक क्षेत्रों का अध्ययन करना।

* शोधार्थी, विधिक इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट, भोपाल (म.प्र.) भारत
** एच.ओ.डी., सागर इंस्टीट्यूट ऑफ रिसर्च एण्ड टेक्नॉलाजी एक्सीलेंस, भोपाल (म.प्र.) भारत

2. रोजगार सृजन की स्थिति का परीक्षण करना।
3. विशेष आर्थिक क्षेत्र की चुनौतियों का अध्ययन करना।
4. आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन की म.प्र. में चुनौतियों का अध्ययन करना।

शोध अंतराल – अभी तक क्षेत्र पर कई प्रकार के शोध हुए तथा इनमें क्षेत्र के विभिन्न आयामों को परखा गया। वर्तमान में संपूर्ण देश में रोजगार एक अहम मुद्दा है। पूर्व के शोध कार्यों में रोजगार पर शोधात्मक लेख बहुत सीमित मात्रा में है दूसरे लंबे समय अंतराल के कारण उनके निष्कर्षों को और अधिक सटीकता की आवश्यकता है। इसलिये **'म.प्र. में विषेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) का रोजगार सृजन के क्षेत्र में योगदान का एक अध्ययन'** शोध पत्र हेतु चुना गया।

अध्ययन की समयावधि – 1 नवंबर 2017 से 31 जनवरी 2018 के बीच अध्ययन किया गया।

अध्ययन की सीमाएं :

1. शोधपत्र के लिये समय सीमा का अभाव था। विषय का विस्तार इतना अधिक है कि सूक्ष्म अध्ययन इसके लिये पर्याप्त नहीं है।
2. सांख्यिकीय उपकरणों की अपनी सीमाएं होती है।
3. उपलब्ध समंक संतोषप्रद नहीं थे। इसलिये सूक्ष्म शोध का सामान्यीकरण कठिनाई से किया जा सका।
4. द्वितीयक समंक संग्रहण के द्वारा सीधे-सीधे आर्थिक प्रगति को समझना आमजन के लिये कठिन है इसलिये उन पर नियंत्रण रखा गया।

परिकल्पना :

1. विशेष आर्थिक क्षेत्रों के द्वारा म.प्र. में रोजगार के अवसरों में वृद्धि नहीं हुई है।
2. विशेष आर्थिक क्षेत्रों के द्वारा म.प्र. में रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई है।

प्रस्तावित शोध कार्य की विधि – अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये प्राथमिक एवं द्वितीय समंकों का उपयोग किया गया। तथ्यों का विश्लेषण कर निष्कर्ष की दिशा में आगे बड़ा गया। सुविधापूर्वक निर्णय नमूने इन्दौर जिले के 25-25 व्यक्तियों के समूह बनाकर प्राप्त किये गये। तत्पश्चात् प्रश्नावली आरोपित की गई। समूह में 20 महिलाओं तथा 30 व्यक्तियों से रोजगार सृजन को जाँचने प्रश्न पूछे गये। उत्तरदाओं की औसत उम्र 38 वर्ष थी।

सेज एवं रोजगार सृजन एक अध्ययन – भारत में विशेष औद्योगिक क्षेत्र की दृष्टि से देखा जाये तो आंध्रप्रदेश (22) सेज के साथ प्रथम स्थान पर है। दूसरे स्थान पर तमिलनाडू (18) सेज के साथ द्वितीय तथा कर्नाटक (13) क्षेत्र के साथ तृतीय स्थान पर है। सबसे कम सेज उड़ीसा में है। महाराष्ट्र राज्य के पास (12) विशेष औद्योगिक क्षेत्र है। तथा गुजरात राज्य (9) औद्योगिक क्षेत्रों के साथ अपने आर्थिक माडल के लिये संपूर्ण भारत में एक प्रगतिशील राज्य का दर्जा लिये हुए है। म.प्र. में (6) विशेष आर्थिक क्षेत्र जोन स्थापित है। संभार तंत्र एवं आपूर्ति श्रृंखला के क्षेत्र में इन विशेष औद्योगिक क्षेत्रों का अमूल्य योगदान है।

वर्ष	रोजगार सृजन	वृद्धि	प्रतिशत
2012-13	1019146	174230	20.62
2013-14	1074904	55758	5.47
2014-15	1239845	164941	15.35
2015-16	1591381	351538	28.35
2016-17	1688337	96956	6.09

स्त्रोत डिपार्टमेंट ऑफ कामर्स इंडस्ट्रीज नई दिल्ली 2017-18

2012-13 में रोजगार वृद्धि दर 20.62: रही जबकि 2013-14 से 2017-18 तक क्रमश: 5.47%, 15.35%, 28.35%, 6.09% तथा 2017-18 में 17.11% रोजगार वृद्धि दर सकारात्मक परिमापों की और संकेत करती है।

अनुसंधान उपकरण – समंक संग्रहण हेतु 50 व्यक्तियों के समूह पर प्रश्नावली पर आधारित प्रश्न आरोपित किये गये। सेज क्षेत्र के द्वारा रोजगार सृजन के क्षेत्र में वृद्धि पर उनका योगदान पर प्रश्न पूछे गये। साथ ही अवलोकन, परीक्षण, साक्षात्कार, प्रश्नावली, अनुसूची, माध्य आदि का उपयोग किया गया।

अवलोकित तथा प्रत्याशित मानों की तुलना/काई-वर्ग मान की गणना

प्रतिक्रिया वर्ग	Fo	Fe	Fo-Fe	$(Fo-Fe)^2$	$\frac{(Fo-Fe)^2}{Fe}$
हाँ	28	25	03	9	0.36
नहीं	22	25	03	9	0.36
योग	50	50		N^2 =	0.72

सार्थकता स्तर .05/व .01 df = 3.841

काई वर्ग मान का परिगणित मान X^2 = 072 का मान .05 तथा .01 स्तरों पर सारणी मानों से कम है। अत: शून्य परिकल्पना को निरस्त किया जा सकता है। दोनों प्रतिक्रिया वर्ग की संख्या एक समान नहीं है। निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि सर्वेक्षण के परिणाम H1 परिकल्पना अर्थात् हाँ के सही होने का संकेत करते है।

सामान्यीकरण :

1. सेज के पास रोजगार सृजन की अपार संभावनाए है। म.प्र. में लगभग 19 औद्योगिक विकास केंद्र है तथा 7000 कि.मी. लंबी रेल्वे लाइनों का जाल इसकी मदद करता है।
2. उत्पादन तथा सेवा प्रदाता कंपनियों की संख्या 58% है। लगभग 18500 लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया गया है। पीथमपुर क्षेत्र में ही लगभग 41,900 मिलियन रूपयों का निवेश हुआ है। 2017 तक कुल व्यवसाय 1,23,000 मिलियन डालर रहा है जो कि एक बड़ी उपलब्धि है।
3. यहाँ 4 औद्योगिक क्षेत्र, एक सरकारी आई.टी. पार्क (क्रिस्टल), तीन प्रायवेट आई.टी. पार्क तथा छिंदवाड़ा में एक और आई.टी. पार्क की स्थापना की जा रही है।
4. निरसंदेह रोजगार निर्माण के क्षेत्र में सेज एक बड़ी भूमिका अदा कर रहा है।
5. संभारतंत्र एवं आपूर्ति श्रृंखला को सशक्त बनाने में सेज का योगदान बहुत उच्च है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि म.प्र. में विशेष आर्थिक क्षेत्र नवीन रोजगार निर्माण में मील का पत्थर साबित हो रहा है, साथ ही इस क्षेत्र से भंडारण तथा लॉजिस्टिक गतिविधियों को बढ़ावा मिल रहा है। शुष्क बंदरगाह के रूप में विकसित किये गये म.प्र. के विभिन्न शहर जैसे मंडीदीप, पंवारखेड़ा, पीथमपुर, रतलाम तथा ग्वालियर आदि शहरों के बीच विशेष संपर्क सड़क का निर्माण करना चाहिये। प्रथम फेज में नजदीकी कारीडोर जैसे मंडीदीप तथा पंवारखेड़ा दूसरे पीथमपुर तथा रतलाम आदि विशेष औद्योगिक क्षेत्रों को स्काई लाइन परियोजना, या रोप-बे से जोड़ना चाहिये। (सीधे कंटेनर को जमीन से ऊपर रोप-बे की तरह विशेष रूप से तार पर लटकाकर भेजना) परियोजना को संभारतंत्र अभियान के रूप में पंच वर्षीय

योजना बनाकर उस पर देश की सरकारो को, राज्य सरकारों को अमल करना चाहिये इससे रोजगार क्षेत्र में एक नई क्राँति आयेगी।

सामान्य सुझाव :

1. म.प्र. सरकार को संभारतंत्र कंपनियों के लिये विशेष रियायती कर प्रणाली अपनाना चाहिये।
2. विशेष त्वरित निर्यात संर्वधन इकाइयों की स्थापना करनी चाहिये।
3. रूग्ण इकाईयों को पुनर्जीवित करने हेतु विशेष स्थापना करनी चाहिये।
4. प्रधानमंत्री शहरी सड़क विकास की स्थापना तथा उसके द्वारा दस वर्षीय ग्यारंटीड सड़क निर्माण करवाना चाहिये इससे सेज क्षेत्रों को निर्वाद रूप से कच्चा माल तथा उत्पादक वस्तुए आसानी से राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुँच सके।
5. म.प्र. में विशेष आर्थिक क्षेत्र के द्वारा एक नये औद्योगिक परिवेश का निर्माण किया गया हैं। औद्योगिक विकास संवर्धन नीति 2014 ने औद्योगिक विकास को एक नई शांति दी है।
6. म.प्र. में ग्वालियर, रतलाम, मंडीदीप, पीथमपुर, पँवारखेड़ा शुष्क बंदरगाह के रूप में विकसित किये जा चुके है।
7. म.प्र. में 12.9 औद्योगिक क्षेत्र तथा 10 औद्योगिक विकास पार्क बनाये गये है। निस्संदेह सभी क्षेत्र आज लाखों लोगों को रोजगार प्रदान कर रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुमार राजन (2006) – सेज केप्चरिंग भी फारेन मार्केट, सदर्न इकोनामिस्ट, संस्करण 45, पी.पी.– 75–80?
2. गर्वनमेंट ऑफ इंडिया (2006) डिपार्टमेंट ऑफ कामर्स, मिनिस्ट्री ऑफ कामर्स एण्ड इंडस्ट्री – नई दिल्ली।
3. गर्वनमेंट ऑफ इंडिया रिपोर्ट (2017)
4. https://www.mapsoindia.com
5. https://www.wikipedia.com
6. https://economictimes.com
7. Jw.fooster (1961) Industrial dynamicspp. 10 to 40.
8. Economic survey of 2015, 2016, 2017
9. www.sezindis.nic.in.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

आदिकवि वाल्मीकि रामायण मे कन्या के प्रति माता पिता और समाज की धारणा

डॉ. पंकज कुमार सिंह *

कन्या के प्रति माता पिता और समाज की धारणा एवं उसकी पारिवारिक स्थिति – रामायण में माता पिता के साथ कन्या के सम्बन्ध को प्रेममय बतलाया गया है। कन्या परिवार में पून्या थी। महाभारत में बताया गया है कि माता पिता कन्या को बह्मा दारा दिया गया धरोहर समझते थे। अपने घर में कन्या का रहना अत्यल्प काल (विवाह पर्यन्त) के लिए जानकार उसका काफी सम्मान करते थे। सामान्य परिवारो को अपेक्षा राजघरानो में कन्या का विशेष सम्मान था। राजा जनक अपनी पुत्री सीता को प्राणों से भी बढ़कर प्रिय मानते थे। इसीलिए वे अपनी कन्या का विवाह सुयोग्य वर से करना चाहते हैं। महाभारत में भी लिखा है कि सीता अपने पिता के प्राणों के समान थी। द्रौपदी भी अपने पिता सें अगाध प्रेम करती थी। अत्यन्त प्रिय होने के कारण ही राजा जनक ने अपनी कन्या को 'वीर्यशुल्का' घोषित कर दिया है। सीता अयोनिजा है। फिर भी जनक उसे स्वयं उत्पन्न पुत्री से भी बढ़कर मानते हैं और अत्यन्त प्रेमपूर्वक उसका लालन पालन करते हैं। माण्डवी एवं श्रुतकीर्ति के प्रति भी उनके पिता कुशध्वज द्वारा दिये गये किसी प्रकार की अवमानना का उल्लेख नहीं है। आदिकवि ने महर्शि विश्वामित्र के मुख से एक बार इनकी सुन्दरता की प्रशंसा करवायी है। यह केवल विश्वामित्र को उक्ति नहीं, अपितु राजा जनक ने भी आगे इसका समर्थन किया है। यह वृतान्त कन्या के प्रति माता-पिता के सुन्दर विचार का परिचायक है। महाभारत में भी कन्या को सुन्दर एवं स्नेहिल पारिवारिक स्थिति का परिचय प्राप्त होता है। कन्या के जन्म से आनन्दित होकर उसके संस्कार और शिक्षा का प्रबंध करके माता-पिता उसका विशेष लाड-प्यार से लालन-पालन करता थे।
पिता की रक्षा एवं माता के संरक्षण में उसके लिए सुख और मनोरंजन के पर्याप्त साधनों का प्रवन्ध किया जाता था। माता पिता उसके भविष्य की चिन्ता में उसके लिए सुयोग्य वर की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहते थे। पिता की गोद में बैठकर नीतिशास्त्र का पाठ सुनाने वाली द्रोपदी पितृस्नेह में पली हुई बालिका का एक चित्र प्रस्तुत करती है। पिता स्नेह से पुत्री का आलिंगन करता [1] और सिर सूंघता था। [2] गरीब परिवार में भी पिता-पुत्री का परस्पर व्यवहार प्रेमपूर्ण रहता था, जैसा कि एक ब्राह्मण और उसकी कन्या का था। [3] आश्रम में रहनेवाले कण्व का भी शकुन्तला के प्रति नितान्त स्नेह था। [4]

महाभारत कालीन कन्या की पारिवारिक स्थिति से रामायण काल में भी उसकी स्थिति का अनुमान किया जा सकता है क्योंकि दोनों ग्रन्थ प्राय: एक ही युग का प्रतिनिधित्व करते हैं। इससे प्रतीत होता है कि कन्या की पारिवारिक स्थिति अच्छी थी। माता पिता या परिवार के अन्य सदस्य उसे हीन दृष्टि से नहीं देखते थे। यह बात अवश्य थी कि कन्या के संबंध में प्रचलित परम्परागत धारणा का प्रभाव जनमानस पर तो था ही। पुत्री की अपेक्षा पुत्र को अधिक स्नेह दिया ही जाता था। सुमन्त ने अंगराज रोमपाद की पुत्री शान्ता के लिए महाभागा [5] अर्थात् सौभाग्यशालिनी विशेषण का प्रयोग किया है। सुमन्त द्वारा प्रयुक्त इस विशेषण से अनुमान होता है कि लोगों के मन में कन्या के प्रति कोई दुर्भावना नहीं थी। यदि कन्या के नाम से ही लोगों को घृणा होती तो उसके लिए 'महाभागा' विशेषण का प्रयोग नहीं किया जाता। धर्मात्मा राजर्षि कुशनाभ को घृताची अप्सरा से उत्पन्न सौ पुत्रियाँ थीं। आदिकवि ने उनके शील-सौन्दर्य एवं सुचरित्र की भी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। [6] वहां कन्या के लिए निन्दापरक किसी शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है। गाधि की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए विश्वामित्र ने अपनी बहन सत्यवती का नाम अत्यन्त श्रद्धा एवं प्रेमपूर्वक लिया है। उन्होंने उसकी सच्चरित्रता, सत्यप्रतिज्ञता एवं धर्मनिष्ठा की प्रशंसा भी की है। [7] इससे तत्कालीन समाज में भाई-बहन के परस्पर प्रेम का अनुमान होता है। इस प्रसंग में अभिव्यक्त विश्वामित्र के श्रद्धा भाव से ही परिलक्षित होता है कि लोग कन्या निन्दक नहीं थे। कन्या के प्रति लोगों के हृदय में श्रद्धा स्नेह एवं सहानुभूति के भाव भरे हुए थे। गंगातट पर विश्वामित्र श्रीराम से मेना के गर्भ से उत्पन्न हिमाचल सुता गंगा और उमा की उत्पत्ति की कथा बतलाते हैं। [8] उस स्थल पर भी कवि ने सामान्य भाषा का प्रयोग किया है। वहाँ कन्या के प्रति घृणा के बोधक किसी शब्द का प्रयोग नहीं है। विश्वामित्र ने अत्यन्त प्रेम और श्रद्धा पूर्वक उनकी उत्पत्ति की कथा सुनायी है। उन्होंने दोनों कन्याओं को वन्दनीय ही बतलाया है।[9] विश्वामित्र की इस उक्ति में तो कन्या को सामान्य स्तर से उठाकर अत्यन्त प्रतिष्ठित पद पर रख दिया गया है। विश्वामित्र ने यह भी कहा है कि हिमवान् ने अपनी पुत्री उमा को अप्रतिम प्रभावशाली भगवान् शंकर को समर्पित किया है [10] जिससे भविष्य में उसे किसी प्रकार का कष्ट न हो। इस उद्धरण से कन्या के प्रति पितृ प्रेम का पता चलता है।

कन्या धार्मिक दृष्टि से भी पवित्र मानी जाती थी। प्रात:काल दशरथ को जगाने के लिए मांगलिक उपचारों को लेकर कन्या बहुल स्त्रियाँ राजद्वार पर उपस्थित होती है। कन्या को पवित्र एवं उनका दर्शन शुभ माना जाता था। इसीलिए अधिक संख्या में वे ही उपस्थित हुई हैं। यह प्रसंग कन्याओं की सामाजिक प्रतिष्ठा को सिद्ध करता है। लोगों की यह धारणा थी कि पुत्र के चरित्र निर्माण में पिता के चरित्र का योगदान होता है तथा माता के चरित्र का प्रभाव कन्या के चरित्र पर पड़ता है।[11] इसीलिए पिता पुत्र और माता-पुत्री में संस्कारगत चरित्र-साम्य दृष्टिगोचर होता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रामायण काल में कन्या का जीवन

* पीएच.डी. (संस्कृत विभाग) जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार) भारत

सुखद एवं प्रतिष्ठित था।[12] सामाजिक जन उन्हें प्रतिष्ठापूर्वक दृष्टि से देखते थे। कन्या के संबंध में लोगों की भावना उदार थी। परन्तु रामायण में कहीं कहीं ऐसा भी कहा गया है कि सम्मान की इच्छा रखने वाले सभी लोगों के लिए कन्या का पिता होना दुख का ही कारण है।[13] रामायण में राजा दशरथ एवं सगर की पुत्र प्राप्ति की उत्सुकता एवं व्याकुलता का उल्लेख हुआ है[14] लेकिन किसी की पुत्री-प्राप्ति की आकांक्षा की चर्चा नहीं हुई है। इससे ऐसा अनुमान होता है कि यद्यपि समाज में कन्या की निन्दा नहीं की जाती थी, लेकिन पुत्र का ज्यादा महत्व दिया जाता ही था। पुत्र के जन्म से लोगों को अपेक्षाकृत अधिक प्रसन्नता होती थी। महाभारत में भी कन्या के प्रति जन-सामान्य की ऐसी ही धारणा दिख पड़ती है।[15] महाभारत में पुत्र जन्म की प्रशंसा पुत्र को नितान्त आवश्यकता जन्म से प्राप्त होने वाले ऐहिक तथा पारलौकिक लाभ आदि विषयों पर बार बार जोर दिया गया है। पुत्र अपने पितरो का नरक से उद्धार करता था।[16] अतः परम सुख का साधन था किंतु पुत्री महान कष्ट देने वाली कहलाती थी।[17] इसीलिए राजा द्रुपद को पत्नी पार्वती ने शिखण्डिनी के जन्म पर अपने सपत्नियों की अवहलना के भय से उस पुत्री को पुत्र के रूप में प्रकट किया है।

रामायण काल में पितरों के उद्धार के लिए पुत्र की आवश्यकता समझी जाती थी। महाराज दशरथ भी इसीलिए पुत्र प्राप्ति हेतु उत्सुक दिखाये गये हैं। मनुष्य की इस आवश्यकता की पूर्ति कन्या से संभव नही थी। दूसरा कारण था कन्या की विवाहकालिक कठिनाईयां। रामायण के उत्तारकाण्ड में स्पष्ट कहा गया है कि कन्या को कैसा पुरुष वरण करेगा इसका पता नहीं चलता। अतः उसके माता-पिता को सतत् चिन्ता बनी रहती है। इतना ही नहीं कन्या को वरण करने वाले पुरुष का कुल भी चिन्ताओं में पड़ जाता है कि न जाने वधु घर बसाने वाली, सुशील एवं सच्चरित्र होगी या दुष्टा, कर्कशा एवं सर्वनाशकारिणी। वरमाला भवालकर ने इस बात का समर्थन करते हुए लिखा है कि महाभारत काल में भी कन्या की शीलरक्षा, विवाह एवं भविष्य उनके सुख आदि की चिंता ही उनके कष्ट कारक कहलाने का कारण। रामायण के पूर्ववर्ती साहित्य में भी कन्या के संबंध में जन सामान्य की ऐसी ही धारणा थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वही, अनुशासन 78/14
2. वही, उद्योग 95/20-21
3. वही, आदि. 145/34-37 एवं 147/1-12
4. वहीं, 67/30-33
5. कन्या चास्य महाभाग शन्तानाम भविष्यति । वा.रा.1/11/3
6. अथ ताश्चारुसर्वाड्.गो रुपणापतिमा भुवि ।
   उद्यानभूमिमागम्य तारा इव घनान्तरे ॥
   ताः सर्वा गुणसम्पन्ना रुपयौवनसंयताः । वही, 1/32/14-15
7. वही, 1/34/7-9
8. वहीं, 1/35/16
9. वही, 1/35/22
10. उग्रेण तपसा युक्तां ददौ शैलीवरः सुताम् ।
    रुद्राय प्रतिरूपाय उमां लोकनमस्कृताम् ॥ वही, 2/35/21
11. मङगलालभ्यनीयानि प्राशनीयान्युपस्करान् ।
    उपानिन्युस्तथा पुण्याः कुमारी बहुलाः स्त्रियः ॥ वही, 2/65/9
12. सत्यश्चात्र प्रवादोऽयं लौकिकरू प्रतिभाति मा ।
    पितृन् समनुजायन्ते नरा मातरमङ्गना ॥ वही, 2/35/28
13. कन्यापितृत्वं दु:खहि सर्वेषां मानकांक्षिणाम् ।
    न ज्ञायते च कः कन्यां परयेदिति कन्यके । वही, 7/9/9
14. अयोध्याधिपतिवीर पूर्वमासीन्नराधिपः ।
    सागरो नाम धर्मात्मा प्रजाकामः स चाप्रजः ॥ वही, 7/38/2
15. पुत्रानिच्छेत्पावनार्थ पितृणाम् । महा. शांति. 169/6
    पुत्रलाभो हि कौन्तेय सर्वलाभाद् विशिष्यते । वही. अनुशासन. 50/96 तथा 103/5
16. वही, आदि. 59/19, उद्योग. 116/8
17. वही, आदि. 68/52-57

****

वर्तमान भारतीय लोकतंत्र में मतदान व्यवहार की चुनौतियाँ एवं संभावनायें

अभिजीत सिंह *

प्रस्तावना – वर्तमान भारतीय लोकतंत्र में भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है परन्तु इसके समक्ष विभिन्न प्रकार की समस्यायें एवं चुनौतियाँ उत्पन्न हुई है। इन समस्याओं में प्रमुखत: सम्प्रदायवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद, गरीबी हिंसा, अपराधीकरण, क्षेत्रीय विभिन्नतायें मतदान व्यवहार, अशिक्षा, सामाजिक एवं आर्थिक विषमता, जनसंख्या विस्फोट आदि है। जब तक इन समस्याओं का समाधान नहीं किया जाता जब तक भारत विकास की ओर अग्रसर नहीं हो सकता और न ही लोकतंत्र की पराकाष्ठा को प्राप्त कर सकता है।

लोकतंत्र में सभी को मतदान करने का अधिकार दिया गया है। जिस व्यक्ति के पास मत देने का अधिकार नहीं होता है वह अपंग के समान है। लोकतंत्र को मजबूती प्रदान करने के लिए मतदान का आवश्यक अंग बनाया गया है। आज भी कई देशों में मतदान करने का अधिकार प्राप्त नहीं है। जबकि सुशासन के लिए अच्छे उम्मीदवार का चयन कर सोच विचार कर मतदान करना चाहिए। मतदान करते समय जातिवाद आड़ें नहीं आना चाहिए। वर्तमान राजनीति में भ्रष्टाचार बहुत बढ़ गया है। इसके लिए दोषी और कोई नहीं बल्कि मतदाता ही है। एस0डी0एम0 ईश्वर सिंह राठौर ने कहा कि राष्ट्रीय मतदाता दिवस की शुरुआत करना भारत निर्वाचन आयोग की अनूठी पहल है। नये मतदाता बनने जा रहे 18 वर्ष के युवा मतदाताओं को अपनी जिम्मेदारियों से अवगत कराने का यह एक महत्वपूर्ण आयाम है। 18 वर्ष के प्रत्येक युवाओं का नाम मतदाता सूची में जुड़वाना हम सभी आ उत्तरदायित्व है। नवीन मतदाताओं का नाम मतदाता सूची में जुड़ गया है। मतदाता बनना उनके लिए गौरव की बात है। एस0डी0एम0 शंकर लाल शर्मा ने निर्वाचन अधिकारी का पत्र पढ़कर सुनाया, कार्यक्रम के दौरान कलेक्टर ने नवीन मतदाताओं को माला पहनाकर स्वागत किया साथ ही उन्हें मतदाता पहचान पत्र भी वितरित किया।

मताधिकार – भारतीय लोकतंत्र में चुनाव प्रक्रिया के अलग–अलग स्तर है लेकिन मुख्यतौर पर संविधान में पूरे देश के लिए एक लोकसभा तथा पृथक–पृथक राज्यों के लिए अलग विधानसभा का प्रावधान है। भारतीय संविधान के भाग–15 में अनुच्छेद 324 से अनुच्छेद 329 तक निर्वाचन की व्याख्या की गयी है। अनुच्छेद–324 निर्वाचकों का अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण का निर्वाचन आयोग में निहित होना बताता है। संविधान के अनुच्छेद–324 में ही निर्वाचन आयोग को चुनाव सम्पन्न कराने की जिम्मेदारी दी गयी है। 1989 तक निर्वाचन आयोग केवल एक सदस्यीय संगठन था लेकिन 16 अक्टूबर 1989 को राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचना जारी कर दो अतिरिक्त निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति की गयी।

लोकसभा की कुल 543 सीटों में राज्यों से अलग–अलग संख्या में प्रतिनिधि चुने जाते है। इस प्रकार अलग–अलग राज्यों की विधानसभाओं के लिए अलग–अलग संख्या में विधायक चुने जाते है। नगरीय निकाय चुनाव का प्रबन्ध राज्य निर्वाचन आयोग करता है। जबकि लोकसभा और विधानसभा चुनाव भारत निर्वाचन आयोग के नियंत्रण में होते है। जिसमें वयस्क मताधिकार प्राप्त मतदाता प्रत्यक्ष मतदान के माध्यम से सांसद एवं विधायक चुनते है। लोकसभा एवं विधानसभा दोनो का ही कार्यकाल 5 वर्ष निर्धारित होता है। इसके चुनाव के लिए सबसे पहले निर्वाचन आयोग अधिसूचना जारी करता है। अधिसूचना जारी होने के पश्चात सम्पूर्ण निर्वाचन प्रक्रिया के तीन भाग होते है :– नामांकन, निर्वाचन तथा मतगणना। निर्वाचन की अधिसूचना जारी होने के बाद नामांकन पत्रों को दाखिल करने के लिए 7 दिनों का समय मिलता है। उसके पश्चात् एक दिन उसकी जाँच पड़ताल के लिए रखा जाता है। तत्पश्चात् दो दिन नाम वापसी के लिए दिये जाते है। ताकि जिन्हें चुनाव नहीं लड़ना है वे आवश्यक विचार विमर्श के बाद अपना नामांकन वापस ले सके।

राष्ट्रपति एवं उपराष्ट्रपति एवं राज्यसभा सदस्यों के चुनाव प्रत्यक्ष न होकर अप्रत्यक्ष रुप से होते है। इन्हें जनता द्वारा चुने गये जनप्रतिनिधि सुनते है। चुनाव के वक्त पूर्ण प्रशासनिक मशीनरी चुनाव के नियंत्रण में कार्य करती है। चुनाव की घोषणा होने के पश्चात् आचार संहिता लागू हो जाती है और हर राजनीतिक दल उसके कार्यकर्ता एवं उम्मीदवार को आदर्श आचार संहिता का पालन करना होता है।

लोकतंत्र में मतदाता जागरुकता अभियान का महत्व – 'हम भारत के नागरिक लोकतंत्र में आस्था रखते हुए शपथ लेते है कि हम अपने देश की लोकतांत्रिक परम्पराओं तथा स्वतंत्र, निष्पक्ष तथा शांतिपूर्ण चुनाव की गरिमा बनाये रखेगें तथा प्रत्येक चुनाव में निर्भयता तथा धर्म, नस्ल जाति, समुदाय भाषा या किसी प्रलोभन से प्रभावित हुए बिना मतदान करेगें', यह शपथ है जिसे पिछले तीन वर्षो के दौरान योग्य मतदाताओं में लोकप्रियता मिली है। इस शपथ में चुनावों के प्रति युवा भारत की सोंच बदल दी है। इसके लिए भारत निर्वाचन आयोग की चरणबद्ध मतदाता, शिक्षा तथा निर्वाचन भागीदारी (एस0वी0ई0ई0पी0) की पहल सराहनीय है। निर्वाचन आयोग की महत्वपूर्ण पहल के रुप में (एस0वी0ई0ई0पी0) ने मतदाता में मतदाताओ की भागीदारी में वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए चुनाव प्रक्रिया के प्रत्येंक पक्ष को जीवन्त किया है। विगत कुछ वर्षो के दौरान मतदाता पंजीकरण विशेषकर चुनावों में 10 से 15 प्रतिशत से बढ़कर 30 से 35 प्रतिशत हो गया है और 2010 के पश्चात् हुए लगभग सभी राज्य विधानसभा चुनावों में बड़ी संख्या में मतदाता वोट डालने आये। इसमें युवाओं और महिलाओं की भागीदारी अधिक रही। निर्वाचन प्रबंध प्रक्रिया के केन्द्र

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) विक्रमादित्य कालेज, विजयनगर, जबलपुर (म.प्र.) भारत

में मतदाता पंजीकरण तथा निर्वाचक शिक्षा है। लेकिन गुणवत्ता तथा मात्रा की दृष्टि से भारत में मतदाता भागीदारी आदर्श भागीदारी वाले लोकतंत्र से अभी भी दूर है। पंजीकरण मतदाता फोटो पहचानपत्र/पहचान प्रमाण, मतदाता केन्द्र स्थान, ई0वी0एम0 उपयोग, चुनाव समय, आदर्श आचार संहिता में क्या करें, उम्मीदवारों या उनके सहयोगियों द्धारा मतदाताओं के कमजोर वर्ग को प्रभावित करने के लिए धन, बाहुबल तथा शराब का उपयोग जैसे विषयों में मतदाता को क्या जानना चाहिए और वह वास्तविक रुप से क्या जानता है इसमें फर्क है। यह देखा गया है कि मतदाता जागरुकता अभियान हमेशा मतदाताओं को वास्तविक मत देने वाले के रुप में नहीं बदलता, मतदाता जागरुकता में वृद्धि के उद्देश्य को प्राप्त करने, वोट डालने वाले मतदाताओं की संख्या बढ़ाने के लिए निर्वाचन आयोग ने प्रणालीबद्ध मतदाता, शिक्षा तथा निर्वाचक भागीदारी कार्यक्रम प्रारम्भ किया है ताकि मतदाता को सुचित, शिक्षित तथा प्रेरित किया जाये और उनकी मदद की जा सके जिससे भारतीय लोकतंत्र को अधिक भागीदारी वाला तथा सार्थक बनाया जा सके। एस0वी0ई0ई0पी0– एक नजर में, मतदाता व्यवहार सर्वेक्षण राज्य तथा जिला स्तर पर एस0वी0ई0ई0पी0 योजनाओं का निरुपण राज्य स्तर के लिए राज्यकर्मी तथा जिला स्तर पर कोर समूह सरकारी विभाग के साथ सहयोग सी0ए0ए0ओ0 मीडिया तथा संगठनों के सहयोग से राष्ट्रीय मतदाता दिवस तथा राज्य स्तर पर प्रतिष्ठित लोगों की पहचान भविष्य का मार्ग किसी भी मतदाता शिक्षा कार्यक्रम का उद्देश्य लोगों को उपयुक्त सूचना उपलब्ध कराना है। यदि अभियान में सार्वभौमिक रुप से मतदाताओं को कवर किया जाता है तो व लोकतंत्र के लिए बड़ी सफलता होगी। एस0वी0ई0ई0पी0 के बैनर तले मैराथन, रैलियाँ, जूलूशों, क्विज प्रतियोगितायें, फिल्म प्रदर्शन, नुक्कड़ नाटक, एस0एम0एस0 तथा हेल्प लाइनों के युवाओं के अलगाव शहरी उदासीनता तथा मतदान के बारे में धीमी गति से नैतिक प्रचार जैसी खाइयों को एन0आर0आई0 पंजीकरण, मतदाताओं को कम भागीदारी के लिए सेवा जैसी एस0वी0ई0ई0पी0 की गतिविधियों से पाटा जा रहा है। भारत निर्वाचन आयोग व्यक्ति के मत की शक्ति तथा उसकी अधिकारिता के बीच गहरे आपसी सम्बन्धों को जानने के लिए निरन्तर प्रयासरत है।

लोकतंत्र में मतदान का विशेष महत्व हैं। मतदान करना हर नागरिक का परम कर्तव्य है। भारत विश्व में सबसे बड़ें प्रजातंत्र की श्रेणी में आता है। देश में मिलीजुली संस्कृति भाषा में विभिन्नता होने के बाद भी समस्त नागरिको को मतदान का अधिकार प्राप्त है। पाँच वर्ष मे एक बार सुअवसर प्रदान करने की व्यवस्था बनाई गयी है। अपनी समझ व परख के अनुरुप बिना किसी भय संकोच व दबाव के जाति धर्म को आधार मानकर वोट देने में स्वविवेक से ऐसी सरकार चुने जो सर्वगुण सम्पन्न व्यक्तियों के संचालित हो। देश में वर्तमान समय में नौजवान वर्ग जागरुक है। शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा, रोजगार के विकास को देखते हुए उचित दल को चयन करने की आवश्यकता है। स्वविवेक व बिना दबाव के वोट डाला जाये तथा अपने अधिकारों को उपयोग अवश्य किया जाये। शहर व कस्बा अपना है। इसको ठीक ढंग से संचालित करने वाले भी हम सब की मर्जी से चुने जाये इसके लिए एकजुटता से मतदान करना होगा। इस चुनाव में देश का भविष्य निर्धारित होता है। बूथ पर पहुँचकर स्वयं मतदान करते हुए औरो को भी प्रेरित करने का कार्य करना होगा।

भारतीय लोकतंत्र में मतदान का महत्व – आधुनिक जनतंत्रों के मतदान के महत्व तथा उसकी प्रणाली के सम्बन्ध मे विभिन्न सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये है। इन सिद्धान्तों के फलस्वरुप आवश्यकता के समय संघर्ष निवारण की सामाजिक प्रविधि के रुप में शासन सत्ता के प्रति अनुवृत्ति प्राप्त करने के ढंग के रुप में, सामाजिक संघर्ष के रुप में, उचित परिस्थितियों में उचित निर्णय प्राप्त करने की पद्धति के रुप में, सामाजिक आवश्यकताओं तथा असंतोषों की व्यवस्था के रुप में तथा अल्पसंख्यकों को राज्य के लाभों से वंचित रखने की व्यवस्था से बचने के ढंग के रुप में मतदान को मान्यता प्राप्त हुई है। हाल में, इस समस्या पर यथेष्ट ध्यान दिया जाने लगा है कि जिन्हें मताधिकार प्राप्त है वह किस सीमा तक इस अधिकार के प्रयोग में भाग लेने का कष्ट करते है। इस विषय में की गयी खोज के अनुसार उन लोकतंत्रात्मक देशों के लोक मतदान में अधिकतम संख्या में भाग लेते है। 'अनिवार्य मतदान' की व्यवस्था अपनाई गयी है। अनिवार्य मतदान का सिद्धान्त सर्वप्रथम विस्तार के साथ स्विजरलैण्ड के सेन्ट गैलिन नामक कैन्टन ने अनिवार्य किया गया। जिसके लिए सन् 1835 ई0 में इस कैन्टन में जिला परिषद के चुनाव में अकारण भाग न लेने वालो के लिए विधान द्धारा अर्थदण्ड की व्यवस्था की गयी है। यह व्यवस्था स्विस नागरिकों को मताधिकार के उत्तरदायित्व का अनुभव कराने में सफल हुई, साथ ही इस व्यवस्था के फलस्वरुप मतदाताओं को मतदान में सम्मिलित होने के लिए उन्हें घर से बाहर लाने की राजनीतिक संगठनों का कार्यभार भी हल्का हुआ है। इस प्रकार बबेरिया ने सन् 1881 ई0 में, बुल्गेरियाँ ने सन् 1882 ई0 में तथ बेल्जियम ने 1893 ई0 में अनिवार्य मतदान की व्यवस्था अपनाई। बबेरिया की व्यवस्था के अनुसार यदि मतदाताओं की पूरी संख्या के एक तिहाई से अधिक लोग मतदान में भाग नहीं लेते है तो अनुपस्थित मतदाताओं को पुनः चुनाव कराने का पूरा व्यय वहन करना पड़ेगा। बेल्जियम ने अनुपस्थित मतदाताओं के लिए तीन प्रकार के दण्ड निर्धारित किये। जिसमें अर्थदण्ड, सार्वजनिक भस्तसना तथा मताधिकार अपहरण सम्मिलित है।

अनिवार्य मतदान के विपक्ष में सामान्यतः यह कहा जाता है कि यह व्यवस्था आधारित आपत्ति करने वालो के लिए कोई स्थान नहीं छोड़ती तथापि मतदान ना करने वालो का चरित्र उतना महत्वपूर्ण विषय नहीं है जितना इस बात पर ध्यान देना कि मत प्राप्त करने के लिए किन साधनो का प्रयोग किया जाता है। यदि किसी देश में अनुचित साधनों द्धारा विशिष्ट उद्देश्यों एवं स्वार्थो की पूर्ति के लिए सचेष्ट राजनीतिक संगठन मतदाताओं को मतदान में सम्मिलित होने की प्रेरणा देते है तथा इस प्रकार अपने पक्ष में उनके मत संग्रह करते है तो निश्चय ही निर्वान तथा मतदान का प्रबन्ध सरकार के हाथों सौपना अधिक श्रेयकर होगा। जिससे यह कार्य अधिक उत्तरदायित्व के साथ सम्पन्न हो सके।

मतदान व्यवहार की चुनौतियाँ एवं सम्भावनायें – सम्प्रदायवाद, क्षेत्रवाद, जातिवाद, भ्रष्टाचार, धनबल, अपराधीकरण, मतदान का अपर्याप्त प्रतिशत अन्दर से या बाहर से समर्थन कर सरकार बनाना और गठबन्धन धर्म इत्यादि वे प्रमुख व्याधियाँ है जिनके दुष्प्रभाव से भारतीय लोकतंत्र में जनगण की गतिशील सहभागिता एवं स्वस्थ्य भूमिका निरन्तर द्रवित हो रही है। फलतः भारतीय लोकतंत्र का समावेशी स्वरुप कुण्ठित हो रहा है। वस्तुतः भारतीय संसदात्मक व्यवस्था में कुछ प्रमुख चुनौतियों का समाधान हो जाए तो उसका स्वरुप निःसन्देह अभीष्ट आकार प्राप्त कर लेगा। ये प्रमुख चुनौतियाँ हैं –

1. मतदान का संतोषजनक प्रतिशत तथा
2. राजनीति का अपराधीकरण व धनबल का प्रदर्शन।

1. असन्तोषजनक मतदान का प्रतिशत – 1950 में भारत का संविधान पूर्णत गणतंत्र बन गया था परन्तु किसी भी जनतांत्रिक गणतंत्र की मूलभूत

आवश्यकता 'मतदान' वर्तमान में भी वांछनीय प्राथमिकता के अभाव से ग्रस्त है।

तालिका-1 में 1952 से 2014 तक के मतदान प्रतिशत प्रदर्शित किये गये है इसके अवलोकन से स्पष्ट होता है कि प्रत्येक सामान्य निर्वाचन में मतदान का प्रतिशत वांछनीय नहीं रहा है। कतिपय वर्षो यथा 1984 और 2014 में यह प्रतिशत संतोषजनक रहा है परन्तु यह दोनो वर्ष क्रमश: भावुकता एवं लहर तथा मीडिया प्रयोजित आरोपो से अछूता नहीं है अर्थात मतदान के यह प्रतिशत जनगण के स्वत: स्फूर्ति लोकतांत्रिक आचरण का परिणाम नहीं है।

तालिका-1 : भारतवर्ष के सामान्य निर्वाचन-1952 से 2014

निर्वाचन वर्ष	मतदाता (प्रति 10 लाख में)	मतदान (प्रति 10 लाख में)	मतदान का प्रतिशत
1952	173.2	79.1	45.7
1957	193.7	92.4	47.7
1962	217.7	120.6	55.4
1967	250.6	153.6	61.3
1971	274.1	151.6	55.3
1977	321.2	194.3	60.5
1980	363.9	202.7	56.9
1984	400.1	256.5	64.1
1989	498.9	309.1	62.0
1991	592.6	343.3	57.9
1996	592.6	343.3	57.9
1998	602.3	373.7	62.0
1999	619.5	371.7	60.00
2004	67.5	389.9	58.1
2009	716.0	-	56.9
2014	814.0	-	66.4

1962 में हुए तीसरे आम चुनाव में 55.42 प्रतिशत मतदान वोट डालने आये इसमें महिलाओं का प्रतिशत मात्र 46 प्रतिशत था। 1967 में 61.33 और 1971 में 55.30 प्रतिशत मतदान हुआ। आठवीं लोकसभा के लिए 1980 के चुनाव 56.92 प्रतिशत मतदान हुआ था। 1984 में 64.1, 1989 में 61.95, 1991 में 56.93 और 1996 में 57.84 प्रतिशत मतदान हुआ। बाहरवी लोकसभा के लिए 1998 में 61.97 प्रतिशत लोगों ने वोट डाला। इन उल्लिखित वर्षो में नवीनतम निर्वाचन से पूर्व सर्वाधिक मतदान का प्रतिशत 1984 मे रहा है। यह आम चुनाव इन्दिरा गाँधी की हत्या के पश्चात् सम्पन्न हुआ था अर्थात् मतदाताओं के भावुक होने के तथ्य से प्रत्येक सहमत है। तत्पश्चात् प्राप्त मतदान प्रतिशत उल्लेखनीय की श्रेणी में नही कहा जा सकता।

1962 के तीसरें आम निर्वाचन में मतदान का प्रतिशत 55.42 प्रतिशत रहता है और 2009 की पन्द्रहवी लोकसभा में यह 59.7 प्रतिशत रहता है तो निश्चित ही राष्ट्र के नीतिनियंताओं की सदायता पर प्रश्नचिन्ह लगता है। 1952 मे भारत वर्ष की साक्षरतादर जीवन प्रत्याशा, मृत्यु दर सड़क एवं परिवहन अथवा अन्य सामान्य सुविधाजनक सुविधाओंजनक सेवाओं का जो प्रतिशत था वह 2014 में श्रेष्ठतम ही हुआ है। इसके पश्चात् भी मतदान का प्रतिशत उल्लेखनीय न हो पाना भारतीय राजनीतिक व्यवस्था की स्वस्थ्य गतिशीलता को संदेहास्पद बताता है।

तालिका-2

भारतवर्ष के सामान्य निर्वाचनों में पुरुष/महिला मतदान का प्रतिशत

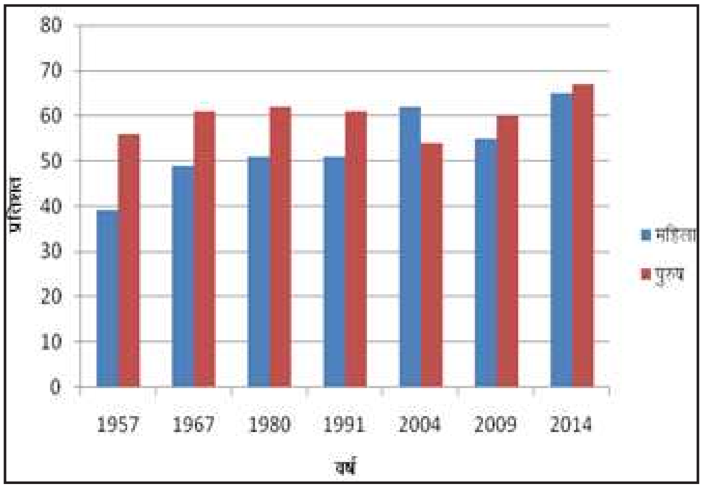

1957 में कुल 48 प्रतिशत मतदान हुआ था। जिसमें 56 प्रतिशत पुरुष 39 प्रतिशत महिलायें मतदाता थी। 1967 में कुल मतदान 61 प्रतिशत हुआ था। जिसमें महिला-पुरुष का मत प्रतिशत क्रमश: 49 एवं 61 रहा था। 1980 में कुल मतदाता लगभग 57 प्रतिशत थे। जिसमें महिलायें 51 प्रतिशत और पुरुष 62 प्रतिशत थे। 1991 में कुल मतदान, महिला मतदाता एवं पुरुष मतदाता का प्रतिशत क्रमश: 56, 51 एवं 61 था। 2004 के चौहदवें सामान्य निर्वाचन में कुल मतदान 58 प्रतिशत था। जिसमें 62 प्रतिशत पुरुष मतदाता और 54 प्रतिशत महिला मतदाता थी। 2009 के चुनावी समर में मतदान लगभग 58 प्रतिशत हुआ था। जिसमें महिला मतदाता 55 प्रतिशत थी और पुरुष मतदाता 60 प्रतिशत थे। 2014 के नवीनतम निर्वाचन में कुल मतदान एवं स्त्री-पुरुष मतदान की स्थिति क्रमश: 66, 65 एवं 67 प्रतिशत थी।

तालिका-2 के अवलोकन से स्पष्ट है कि प्रत्येक निर्वाचन में महिला मतदाताओं का प्रतिशत निरन्तर बेहतर होता रहा है। जहाँ तक प्रश्न इस तथ्य का है कि महिला प्रत्याशियों की संख्या प्रतिशत की स्थिति क्या है? तो प्रत्युत्तर में यह अवश्य स्वीकारा जा सकता है कि महिला प्रत्याशियों के प्रतिशत में कतिपय वृद्धि तो हुई है परन्तु यह वृद्धि पूर्णरुपेण संतोषजनक नहीं कही जा सकती।

2. राजनीतिक अपराधीकरण एवं धनबल - ऐसा प्रतीत होता है कि राजनीति का अपराधीकरण प्राचीन कथन हो गया है। इसके स्थान पर 'अपराध का राजनीतिकरण' अधिक प्रासंगिक है। एक व्यक्ति जब अपराध करते-करते चरम पर पहुँच जाता है तो किसी राजनीतिक दल की सदस्यता ले लेता है और निर्वाचित होकर प्राय: मंत्री पद प्राप्त कर संसद अथवा विधान सभा में विधि निर्माण अथवा नीति निर्माण का सादृश्य कार्य करने लगता है। 2004 से सितम्बर 2013 के मध्य सम्पन्न होने वाले समस्त लोकसभा, विधानसभा के चुनाव व उपचुनाव में प्रस्तुत होने वाले 62847 शपथपत्रों के विश्लेषण उपरान्त यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि 11030 (अट्ठारह प्रतिशत) प्रत्याशियों पर 19984 गंभीर अपराधिक मामले-हत्या, बलात्कार, अपहरण, फिरौती, भ्रष्टाचार एवं डकैती है। यह आंकड़ा प्रत्येक 5 प्रत्याशी पर 1 के अनुपात में है। गंभीर आपराधिक मामलों में 1229 मामले हत्या, 2632 मामले हत्या का प्रयास और 496 मामले भारतीय दण्ड संहिता के उल्लंघन से सम्बन्धित है। इनमें से 68 बलात्कार के मामले है और 455 अन्य आपराधिक मामले है जो महिलाओं के साथ हुए है। लगभग 978

मामले भारतीय दण्ड संहिता के उल्लंधन से सम्बिन्धित है और 1004 मामले लूटपाट और डकैती से सम्बन्धित है। तालिका-3 का अवलोकन करने से स्पष्ट हो जाता है कि गंभीर आपराधिक दोषियों द्वारा मात्र प्रत्याशी के रुप में निर्वाचन प्रक्रिया में सहभागिता ही नहीं की जाती है अपितु विजयश्री को भी ग्रहण किया जाता है।

तालिका-3 : गंभीर आपराधिक दोषी प्रत्याशियों और निर्वाचन प्रतिनिधियों का प्रतिशत

गम्भीर अपराधों की संख्या	प्रत्याशियों की संख्या	प्रत्याशियों का प्रतिशत	निर्वाचित प्रतिनिधियों की संख्या	निर्वाचन प्रतिनिधियों का प्रतिशत
50	5	0.01	1	0.01
40	9	0.01	2	0.02
30	17	0.03	3	0.03
20	50	0.08	17	0.19
10	152	0.24	50	0.57
5	433	0.69	127	1.44
4	627	1.00	184	2.09
3	971	1.54	270	3.07
2	1533	2.44	416	4.73
1	2700	4.30	678	7.71
0	5253	8.36	1187	13.50

तालिका-3 से स्पष्ट है कि विभिन्न प्रकार के अपराधों से आरोपित प्रत्याशी मात्र निर्वाचन से ही सहभागी नहीं होते अपितु निर्वाचित होकर विधायिका में पहुँचकर नीति निर्माण में अपनी सक्रिय भूमिका का निर्वहन करते है। इस प्रकार धनबल का भी लज्जाहीन प्रदर्शन भारतीय चुनाव की परम्परा बन चुकी है। वस्तुत: भुजबल और धनबल एक ही सिक्के के दो पहलू है।

भारतीय लोकतंत्र में भुजबल और धनबल दोनो का अन्योनश्रित सम्बन्ध स्थापित हो चुका है। प्रत्येक राजनीतिक दल द्वारा प्रत्याशियों के चयन का आधार उसके निर्वाचित होने की क्षमता मात्र होती है। प्रत्याशी द्वारा निर्वाचित होने की क्षमता का अर्जन काले धन से किया गया है अथवा काले कारनामें से इससे किसी भी राजनीतिक दल का प्राय: कोई सरोकार नहीं रहता है। तालिका-4 में इसी तथ्य की पुष्टि की गयी है कि प्रत्येक राजनीतिक दल में मात्र प्रत्याशियों के विजयी होने की क्षमता का आकलन किया गया है। प्रत्याशी के चरित्र और आचरण का विश्लेषण करने की आवश्यकता कोई भी राजनीतिक दल स्वीकार नहीं करता है।

तालिका-4 (अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका-4 में राजनीतिक दलों में अपराधियों के प्रायोजित एवं संज्ञान घुसपैठ, धनबल के आंकडों का प्रदर्शन किया गया है।

निष्कर्ष – भारतीय लोकतंत्र और मतदान व्यवहार अग्रलिखित चुनौतियों से ग्रस्त हैं :-

1. वर्तमान समय में सामान्य जनता राजनीति से दूरी बनाये रखने में ही अपनी सच्चरित्रता और शान्ति का एक बड़ा कारण स्वीकारता है। यह लोकतांत्रिक राजनीति की मूल्याहीनता का द्योतक है।
2. भारतीय जनतंत्र की स्थायी प्रवृत्ति में यह भावना बन गयी है कि कोई नृप होय हमें का हानि – फलत: मतदान का प्रतिशत कुप्रभावित होना अस्वाभाविक नहीं है।
3. कुछ लोगों की मान्यता है कि राजनीति में जाना आज सेवाभाव का प्रतिफल नहीं है, अपितु मेवाखात की प्रेरणा इसका कारण है।
4. मतदान का प्रतिशत कम रहना फलत: किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न होना व्यस्थिर सरकारों और गठबन्धन धर्म जैसी प्रवृत्तियों का कारण बनता है। भारतवर्ष में गठबन्धन धर्म की अधार्मिकता से प्रत्येक जन-गण अवगत है।
5. राजनीतिक और समाजशास्त्रीय प्रवृत्तियों पर विगत वर्षो में सम्पन्न होने वाली जनमत संग्रह स्पष्ट करते है कि राजनीतिक भ्रष्टाचार में वृद्धि हुयी है।
6. मुख्य सतर्कत आयुक्त के विवाद में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के पश्चात् संस्थानिक प्रतिबद्धता शब्द युग्म बहुत चर्चित हुआ है। यदि एक दोषी अधिकारी किसी संस्था का प्रतिबद्धता से समझौता कर सकता है, उस संस्था की प्रतिबद्धता से जो कि संसद की उपज है तो आरोपित सांसद अथवा विधायक, संसद एवं विधानसभा की संस्थानिक प्रतिबद्धता के कितने प्रखर सिद्ध होगें स्वयं स्पष्ट है, जबकि ये दोनो संवैधानिक संस्थाएँ हमारे जनतंत्र की सर्वोच्च प्रतीक है।

सम्भावनाएँ – भारत में वर्तमान राजनीति को अव्यवस्था एवं अराजकता का कारण स्वीकार किया जाता है। इसमें तत्काल सुधार की आवश्यकता है तभी राजनीति को स्वतंत्रता संग्राम के काल की प्रतिष्ठा पुन: प्राप्त होगी। इसमें युवा वर्ग की भूमिका अहम् मानी जा सकती है। यह स्मरण रहे कि लोकतंत्र ही युवाओं की राजनीतिक प्रक्रिया में ससम्मान भागीदार बनाता है। अत: अभिव्यक्ति और सहभागिता के अधिकार का जनतान्त्रिक प्रयाकग अनिवार्य है। युवा वर्ग को लोकतांत्रिक संस्कृति को अपना आचरण बनाना होगा।

जय प्रकाश नारायण ने 'भारतीय राज व्यवस्था की पुनर्रचना : एक सुझाव' एक सुझाव में कहा है – लोकतंत्र की समस्या मूलत: नैतिक समस्या है। जब तक लोगों में नैतिकता की भावना नहीं होगी तब तक संविधान और राजनीतिक प्रणाली के बावजूद लोकतंत्र ठीक से काम नही कर सकता। वर्तमान उद्योगवाद ने जिस भौतिकवादी प्रवृत्ति की सृष्टि बना रखी है। उसके साथ लोकतंत्र मेल नहीं खाता। वास्तव में इससे हमारी सांस्कृतिक एकता भी खतरे में पड़ रही है। राजनीतिक जीवन तो दूषित हो ही रहा है।' भारतीय लोकतंत्र को इस सबक को कण्ठस्थ करना होगा।

प्रतिनिधियों को वास्तविक अर्थो में जनप्रतिनिधि बनाना अत्यन्त आवश्यक है। वर्तमान नवीनतम निर्वाचनों तक कोई भी जनप्रतिनिधि वास्तविक बहुमत प्राप्त नहीं कर सका है।। इसके लिए एक पी0टी0पी0 अर्थात वर्तमान निर्वाचन व्यवस्था का प्रक्षालन अनिवार्य है। आनुवातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली को कतिपय संशोधनों के साथ वैकल्पिक व्यवस्था के रुप में स्वीकारा जा सकता है।

यह एक गम्भीर विडम्बना है कि प्राप्त मतों की संख्या के अनुरुप कोई भी राजनीतिक दल स्थान प्राप्त नहीं करता है। यह निश्चय ही जनता के मतों का संवैधानिक सम्मान नहीं है। अत: राजनीतिक दलों को प्राप्त मतों के अनुरुप ही उन्हें स्थान भी प्राप्त हो। यह परिवर्तन अनिवार्यत: होना चाहिए।

किसी अपराध में आरोपित को निर्दोष सिद्ध होने तक निर्वाचन प्रक्रिया में सहभागी होने का अधिकार नहीं होना चाहिए। विशेष न्यायालय बनाकर ऐसे विषयों को तीव्रगति से निपटाने का प्रयास होना चाहिए।स्वतंत्रता के समय विस्टन चर्चिल ने भारतीय नेताओं को सत्ता सौपने का विरोध किया था। उनके विरोध का आधार था कि भारतीय नेता सत्ता संमालने के योग्य

नहीं है। भारतीय लोकतंत्र में जिस प्रकार के प्रहसन खेले जाते है उसमें कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि चर्चिल आंशिक रुप से सही थे। भारतीय राजनीति में आपराधिक पृष्ठभूमि वाले नेताओं को हतोत्साहित करके ही उनसे मुक्ति मिल सकती है। इस सम्बन्ध में पटना उच्च न्यायालय के दो निर्णयों का उल्लेख आवश्यक है। पहला निर्णय 9 जुलाई 2003 को आया था तथा दूसरा निर्णय अप्रैल 2004 में आया था। पहले निर्णय का निष्कर्ष था कि, कानून तोड़ने वाले और कानून का पालन करने वाले व्यक्तियों में अन्तर है। कानून तोड़ने वाला, कानून के पालन करने वाले के बराबर नहीं है। कानून का उल्लंघन करने वाला व्यक्ति न्याय, स्वतंत्रता समानता और भाईचारा का दावा नहीं कर सकता। ऐसे लोगों को कानून का मजाक उड़ाने और राजनीति में अपनी ताकत दिखाने का अधिकार नहीं है। सम्बन्धित चुनाव का मजाक उड़ाने और राजनीति में अपनी ताकत दिखाने का अधिकार नहीं है। सम्बन्धित चुनाव अधिकारी को ऐसे लोगों की उम्मीदवारी रद्द कर देना चाहिए क्योंकि चुनाव के समय भी कानून के प्रति उनमें सम्मान की भावना नहीं होती है। अप्रैल 2004 के फैसले का आधार वह बहस है जिसका प्रारम्भ इस प्रश्न से हुआ कि उम्मीदवार अगर जेल में है और उसे वोट देने का हक नहीं है तो क्या वह चुनाव लड़ सकता है? इसका जवाब 'नहीं' में दिया गया। फैसले में निर्वाचक और मतदाता में भी सूक्ष्म अन्तर बताया गया। निर्वाचक वह है जिसे वोट देने का अधिकार है, जबकि मतदाता वह है जो वास्तव में वोट देता है। कोई भी निर्वाचक उम्मीदवार हो सकता है जनप्रतिनिधि कानून 1951 कहता है अगर कोई व्यक्ति जेल में है तो वह वोट नहीं दे सकता। इस आदेश का अर्थ है कि कोई कैदी निर्वाचक नहीं होता इसलिए वह किसी पद के लिए चुनाव नहीं लड़ सकता। इस प्रकार उच्च न्यायायल ने उन लोगों के चुनाव में खड़ा होने पर प्रतिबन्ध हेतु निर्वाचन आयोग से कहा, जिसके खिलाफ गम्भीर आपराधिक आरोप है चाहे उनके विरुद्ध अपराध सिद्ध हुआ हो या नहीं। नि:सन्देह इसी प्रकार के निर्णयों एवं आदेशों द्वारा ही अपराधियों को राजनीति में आने से हतोत्साहित किया जा सकता है।

प्रत्याशी के निर्वाचन का पूरा व्यय सरकार द्वारा वहन किया जाना चाहिए।

राजनीति दलों के लिए संगठन के चुनाव कराना अनिवार्य कर दिया जाना चहिए और वह चुनाव निर्वाचन आयोग की देखरेख में होना चाहिए। जनतंत्र के ताने-बाने से बने राजनीतिक दल ही लोकतंत्र के सच्चे वाहक हो सकते है।

महिलाओं और युवाओं को स्वस्थ मतदान हेतु प्रेरित करना अत्यन्त आवश्यक है।

मतदान को अधिकार नहीं कर्तव्य की अवधारणा से सुसज्जित करना होगा। प्रत्येक मतदान को किसी प्रकार के आर्थिक, नैतिक, शासकीय अथवा सामाजिक प्रोत्साहन से संयुक्त करना होगा। स्वस्थ मतदान ही सुसंस्कृत लोकतंत्र का शिलान्यास है।

मतदान का कर्तव्य के रुप में प्रचार प्रसार अभी भी पर्याप्त नहीं है। इस कार्य में और सघन एवं सतत् प्रयासों की आवश्यकता है तभी भारतीय लोकतंत्र में मतदान व्यवहार की चुनौतियों से निपटा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Lokniti, Org.infect.in oX0 18.07.2014 को अवलोकित।
2. चतुर्वेदी पंकज (2013) मतदान से दूरी जनसत्ता दिनांक 27.10.2013 नई दिल्ली पृ0 11
3. कुमार संजय (2014) महिला मतदाता, हिन्दूस्तान नई दिल्ली दिनांक 5.4.14 पृ0 101
4. शास्त्री, त्रिलोचन (2014) टुवर्डस डिक्रिमिनलाइजेशन इकोनामिक एण्ड पालिटिकल वीकली, 04-1-14, मुम्बई पृ0 341
5. दत्ता, भास्कर, गुप्ता, पूनम (2014)- कैम्ब्रिहेट्स विद् क्रिमिनल चार्जेज, ई0पी0 डब्लू, दि 25 1.14 मुम्बई पृ0 341
6. रामकृष्णन, वेकटेश (2015) जनसेटलिंग आडर्स, फ्रन्टलाइन, चेन्नई 1.11.2013 पृ0 41
7. गोपालस्वामी एन (2013) ऑफ पालिटिशियंस द हिन्दू 27.7.13 नई दिल्ली, पृ0 11

तालिका–4 : मतदान में धन और अपराध की दुरभि संधि (सभी विधानसभा, लोकसभा और राज्यसभा निर्वाचन 2004 सितम्बर 2013)

राजनीति दल	गम्भीर अपराधों में आरोपित निर्वाचित आरोपियों का प्रतिशत	आरोपित प्रत्याशियों की औसत सम्पत्ति (लाख में)	आरोपित निर्वाचित प्रत्याशियों की औसत सम्पत्ति (लाख में)	अपराधों में आरोपित विजयी प्रत्याशियों की औसत सम्पत्ति (लाख में)	गम्भीर अपराधों में आरोपित वजयी प्रत्याशियों की औसत सम्पत्ति (लाख में)
भा0रा0 कांगेस	34	432.6	581.2	801	675.6
भाजपा	40	179.7	288.4	340.2	387.4
बसपा	16	125.9	213.7	256.2	278.3
सपा	31	152.6	416.7	412.5	546
सीपीआई (एम)	34	27.3	21.2	20.9	23.1
एन0सी0पी0	26	140.7	356.2	331.5	414.5
जे0डी0(यू)	50	133.3	361.6	85.5	92
ए0आई0टी0सी0	48	136.8	131.3	79.7	98.8
जे0डी0(एस)	15	473.4	772.8	366.6	616.7
आर0जे0डी0	25	57.3	70.2	76	89.9
सी0पी0आई0	24	28	29	22	35.9
एस0एस0	33	122.5	227.9	261.5	339.5
ए0आई0ए0डी0एम0के0	73	203.8	280.6	539.4	479.9
आर0एल0डी0	18	119.4	379.1	694.6	790.3
डी0एम0के0	59	501.6	294.6	290.8	489.7
टी0डी0पी0	56	561.4	872.2	613.1	276.8
बी0जे0डी0	75	101.3	110	62.5	573.7
एस0ए0डी0	50	602	627	873.4	1734
ए0जी0पी0	14	62.5	77.2	54.1	23.2
आई0एन0डी0	6	54.6	720.4	1125.60	1512.10

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Greening Of The Supply Chain: The Need Of The Hour

Sheetal Sharma*

Abstract - Environment is an indispensible part of mankind and pollution in environment is creating greater problems in present state. Environment initiative across a large supply base can be overwhelming, as toxic gases are emerged from industries and vehicles. The recent EPI ranking of India is very low and a big issue in the country is to search out possibilities in environmental monitoring in supply chain. Green supply chain management needs to be developed adequately. For a planned success of industry there is requirement for improvement in business and environmental performance. GSCM is an effective way to differentiate a company from its competitors. The study proposes a comprehensive model for GSCM. The model goes from environmentally sound applicability of SCM research and practice, Green purchasing, Cleaner production techniques, Reduce or eliminated waste and finally Achieving market share by reducing environment risk. The study adds a novel contribution to the body of knowledge in the development of a systematic analysis to establish green practices in industries.

Introduction - *"We are living on this planet as if we had another one to go."* – **Terri Swearingen**

Firms in twenty-first century are Globalizing at a faster pace and Industrialization is coming hand in hand. With the growing numbers of industries environment sustainability is a big issue in contemporary world.

Opportunities for buyers are increasing with increasing Globalization. Buyers are increasing their focus on environment improvement, which increases the need for suppliers to boost environmental performance.

Global warming and carbon dioxide emissions are increasing and it is a challenge to produce new product and innovate new supply chains in accordance with natural environment. Green Revolution is being realized as most important driver for future business opportunities. Green Supply Chain Management is carrying forward this philosophy of Green Revolution. EPI ranking of India is lowest of all the BRICS countries. The recent ranking of India is 155 out of 178 countries of world. With the vigorous growth industries are being pressurized to reduce costs and this had badly affected the environment.

According to Wang et al, (2003) the management of environmental strategies is effectively managed by Green supply chain. Environmental management systems (ISO14001) along with quality management systems (ISO9000) are becoming popular with the developments of international standards for management systems. To cope up with ever increasing pollution in every field it is a need of hour to find out alternate ways in business organizations. Supply chain managers have not given much attention regarding eco-friendliness till now. But a collaborated effort is required to bring out modifications in traditional supply chain.

Research background - "The basic notion of supply chain management is grounded on the belief that efficiency can be improved by sharing information and by joint planning an overall supply chain focusing on integrated management of all logistical operations from original supplier procurement to final consumer acceptance."(Bowersox and Closs, 1996)

The negative impact of firms and their supply chains on natural environment can be minimized through green supply chains. In the wake of concerns regarding climate change, pollution, and non-renewable resource constraints, firms are heeding stakeholder demands regarding corporate citizenship behavior and performance (Sarkis,2001; deBurgos Jime´nez and Ce´spedes Lorente, 2001).A green supply chain focus requires working with suppliers and customers, analysis of internal operations and processes, environmental considerations in the product development process, and extended stewardship across products' life-cycles (Corbett and Klassen, 2006; Mollenkopf, 2006).

Below is the model given by Korean Government for Environment sustainability

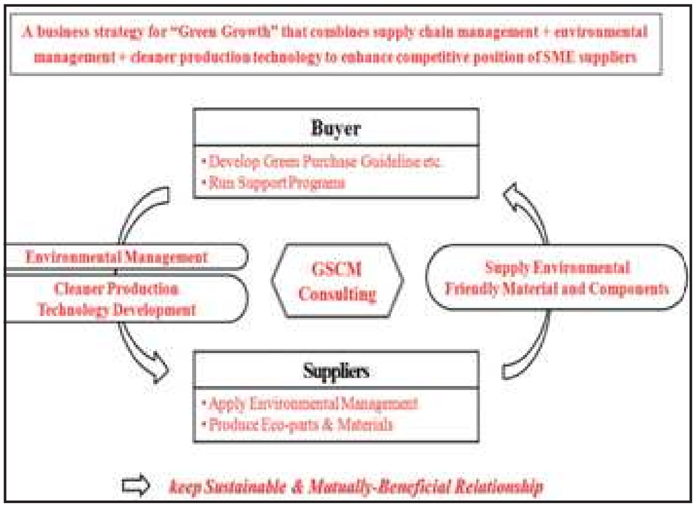

*Research Scholar, Guru Jambheshwar University of Science and Technology, Hisar (Haryana) INDIA

In the above model Korean government proposed business strategies for Green growth in the light of buyer suppliers relationship in environmentally sustainable situations.

Need for present study - The research is focused on greening of supply chain in India for three main reasons

1. First the environment is deteriorating at a fast pace, a large population is being adversely affected by this natural deterioration.
2. Second the Supply chain managers need to focus on recovery of present supply chain status in the environment paradigm.
3. Encouraging novel ways to make all stakeholders aware for use of eco-friendly products and processes.

Developing Conceptual framework - Environmental issues in corporate supply chain management make major contribution in overall strategy of corporate. Support of top management is required to carry on the practice of GSCM in an organization. Proper environmental training at all levels of supply chain can cope up the new changes brought forward. The Socio-economic development of India can only be carried out by bringing environmental sustainability.

The study develops a Green framework to help concerned organizations in carrying out supply chain management. It goes on in a circular motion where people in marketing and design section develop a new idea of product. The new product with perfect marketability and non-faulty designs are innovated keeping an eye on environmental impact. Further it goes on by selecting suppliers and processes that contribute in reducing harm to our environment.

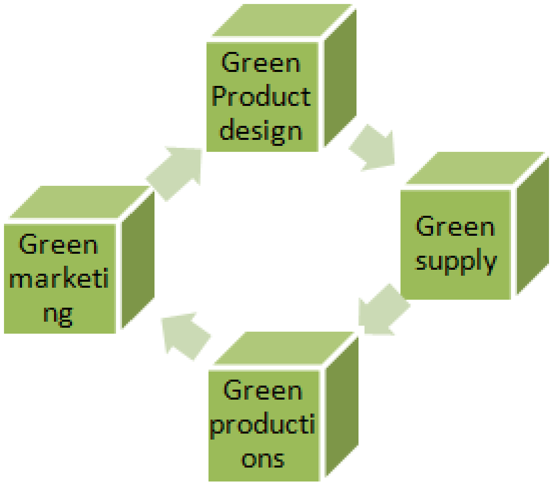

A. Green Product design - Green design is required to reduce environmental impact of products and process by cutting costs and increasing product marketability. For adoption of GSCM the support of senior management is crucial because it will be needed for process adjustments or cultural changes. The company had to comply with environmental legal requirements. For enhancing product's environmental impact company seeks to develop products together with clients. In designing of product the policies relating to material reduction, reuse of parts and recycling of product after use needs to be observed. Design of product is such to avoid or reduce toxic or hazardous materials.

B. Green Supply - Suppliers are such selected that comply with environment management standards and has an ISO 14001 certificate. Suppliers providing the basic raw material are monitored to extend environmental concern. Selection of suppliers is in order to use wastes of some other companies. Adoption of green purchasing by the firms is essential when firms are concerned about the sustainability of environment in all over the world. Thus the firm has to select the supplier on the basis of environment criteria. Compliance statements need to issue for the product supplier. In Taiwenese companies large concerns work with their upstream suppliers and downstream buyers to achieve industrial waste minimization goal.

C. Green Production - Production techniques aims to be more cleaner. The equipments bought by company are used to make cleaner products. Clean processes include reduction of noise and compliance with emission standards. Several manufacturing concerns are going green so as to reduce waste.

Equipments that are used are reliable, fast and efficiently energy saver. Cleaner production techniques not only benefit the environment but also impact all stakeholders. The Government offers tax-breaks for green manufactures. These companies are given better rates by insurance companies. If the money is saved then costs will be low and customers will not have to pay much.

Reduced emissions of green house gases, consuming less water in production activities are some requirements in eco-friendly perspective. The disposal methods used by companies have high influence on environmental issues. Suitable waste management techniques should be adopted to dispose off harmful industrial wastes.

D. Green Marketing - Recycling of waste materials of company and making awareness in consumers of eco-friendly products by focusing on sales and marketing. In order to shift demand toward eco-friendly goods and services, it is important to not only promote the supply of eco-friendly goods and services, but also to promote prioritizing the purchase of eco-friendly goods and services. Green marketing approach provides market leadership to the firm, as it delivers many benefits for the organizations and brings them at the top of competition pyramid. This market philosophy also attracts consumers because of their goal to benefit the whole of the society. Organizations can consolidate relationships with current customer and to gain new ones in future. The Indian industries should work more on GSCM model for improvements on implementation of good supply chain management.

Conclusion - GSCM if applied effectively can make a huge difference regarding cleanliness of environment. But at the same time it is also true that there are lots of hurdles in its way. Increased cost and burdens act as obstacles in adopting GSCM but at the same time it also activates as value boosting potion of a firm for longer period of time. Lack of

information regarding practices to be followed and lack of human resources to carry on the green practices is also one reason for resistance in adopting GSCM.

In today's environmental demands, prevention of global warming can trigger firms to show remarkable commitment to adopt green practices such as recycle, reuse and reduce materials.

Organizations interested in green technologies also need great amount of support from Government.

The proposed model can be helpful in analysis of different practices to be proposed in future supply chain management to provide ecological balance along with the economic one.

References :-

1. Diane Mollenkopf Hannah Stolze Wendy L. Tate Monique Ueltschy, (2010),"Green, lean, and global supply chains", International Journal of Physical Distribution & Logistics Management, Vol. 40 Iss 1/2 pp. 14 - 41
2. Wang, Y., Wang, N., & Sun L., (2003). The Basic Principles of Green Supply Chain Management. *Engineering Science.* Vol. 5, No.11, pp. 82-87.
3. Rao, P. (2002). "Greening the Supply Chain a New Initiative in South East Asia." International Journal of Operations & Production Management 22 (6): 632–655.
4. Mohanty, R. P., and S. G. Deshmukh. (1998). "Managing Green Productivity: Some Strategic Directions." Production Planning & Control 9 (7): 624–633.
5. Zhu, Q., Sarkis, J., (2004). Quality Management and Environmental Practices: An Analysis of different Size Organizations in china. *Journal of Environmental Quality Management,* Vol. 13, No.3, pp. 53-64.
6. Zhu, Q., Sarkis, J., Kee-hung L. (2006): Green supply chain management implications for ¯closing the loop" Transportation Research, Part E 44, (2008) 1-18.
7. Zhu, Q., Sarkis, J., and Lai, K., (2007). Green supply chain management: pressures, practices and performance within the Chinese automobile industry. *Journal of Cleaner production,* Vol. 15, pp. 1041-1052
8. Jinsoo Kim & Jongtae Rhee (2012) An empirical study on the impact of critical success factors on the balanced scorecard performance in Korean green supply chain management enterprises, International Journal of Production Research, 50:9, 2465-2483, DOI:10.1080/00207543.2011.581009
9. R.P. Mohanty & Anand Prakash (2014) Green supply chain management practices in India: an empirical study, Production Planning & Control, 25:16, 1322-1337, DOI: 10.1080/09537287.2013.832822
10. P. Sabari Ragavendran, (2015),"Management ingredients to embrace the new paradigm: green", European Business Review, Vol. 27 Iss 3 pp. 318 - 333.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

लोकगीतों में संस्कारों की अभिव्यंजना

जयमाला वागद्रे *

प्रस्तावना – मन के भावों को शब्दों के माध्यम से व्यक्त करना ही अभिव्यंजना कहलाता है। सुप्रसिद्ध काव्यशास्त्री बेनेदेत्तो क्रोचे काव्य में अभिव्यंजनावाद के प्रवर्तक है जिन्होंने सहज ज्ञान को अभिव्यंजनावाद का अभिन्न अंग माना है। उनका मानना था कि अभिव्यंजना सहज ज्ञान के बिना सम्भव नहीं है। वे सहजानुभूति को ही अभिव्यंजना मानते हैं जो मानव की आंतरिक अनुभूति होती है। अभिव्यंजना को पारिभाषित करते हुए डॉ. मंजू तिवारी लिखती हैं–'अभिव्यंजना वैयक्तिकरण की जागरूक चेष्टा है। तात्पर्य यह है कि कवि या कलाकार की अनुभूतियाँ मात्र भावात्मक स्तर तक नहीं रह जाती अपितु उनको रूपात्मक स्थिति प्रदान करनी पड़ती है। यह रूपात्मक स्थिति प्रदान करना ही अभिव्यंजना है।'[1] अत: कहा जा सकता है कि लोक कवि के मन में जो भावनाएँ परिस्थितिनुसार जन्म लेती हैं, ये अमूर्त भावनाएँ अभिव्यंजना द्वारा एक परिष्कृत रूप ग्रहण करती है जो लोक साहित्य में गीतों के रूप में हमें प्राप्त होती है। इस प्रकार लोक के मन में उठने वाले भाव उसकी अभिव्यंजना है जो विविध रसों से युक्त है, जो कल्पना में समाहित है तथा प्राकृतिक और सहज स्वाभाविक है। वास्तव में अभिव्यंजना गीतों के शिल्प का तत्व है परन्तु हम यहाँ संवेदना के रूप में इस तत्व का अध्ययन करेंगे। चूंकि कल्पना में ही अभिव्यंजना निहित है अत: इस कल्पना को समझने के लिए हमें गीतों के शिल्प का सहारा लेना होगा। लोकगायकों की कल्पना को हम गीतों के शब्दों के माध्यम से ही समझ सकते हैं क्योंकि कल्पना की शाब्दिक अभिव्यंजना लोकगीतों द्वारा रूपात्मक विन्यास ग्रहण कर लोक में प्रसारित होती है।

लोक–जीवन में सम्पन्न होने वाले समस्त संस्कार वाचिक परम्परा के रूप में गीतों के माध्यम से स्वयं को कालजयी व सनातन बनाये हुए हैं। संस्कारों के उद्देश्य तथा संस्कारों के आयोजन से प्राप्त होने वाली मानसिक शांति का अनुभव हमें इन गीतों के माध्यम से होता है। शायद गीत भी ऐसे ही अस्तित्व में आये, संस्कारों के आयोजन के अवसर पर वहाँ उपस्थित लोगों ने जो देखा, जो अनुभव किया वे समस्त अनुभव भावों के रूप में मानस मन में उद्वेलित होते रहे और फिर शब्दों के माध्यम से गीतों के रूप में अभिव्यंजित हुए। इसी कारण इन गीतों के माध्यम से हमें समस्त संस्कारों की जानकारी मिलती है तथा उनसे किस तरह हमारी अंतर्मन की भावनाएँ जुड़ी है इसका मूर्तरूप देख पाते हैं। जन्म संस्कार के गीतों में स्त्रीमन की व्यथा, माता–पिता की प्रसन्नता, परिवारजनों का हर्ष सभी शब्दों के माध्यम से अभिव्यंजित होता है। गीत नहीं होते तो समस्त लोक एक–दूसरे की भावनाओं को किस तरह समझ पाता यह कहना कठिन ही है।

संस्कार गीतों में अभिव्यंजना पक्ष को समझने के लिए हम निम्न बिन्दुओं का आधार लेंगे–

1. हृदयजनित उल्लास की अभिव्यंजना
2. भाव–प्रेरित अभिव्यंजना
3. वियोग भावना की अभिव्यंजना

1. हृदयजनित उल्लास की अभिव्यंजना – लोक में विचरण करता हुआ प्रत्येक गीत लोक के हृदयजनित उल्लास की अभिव्यंजना है क्योंकि लोकगायक अपनी मस्ती में गाता है इसीलिए इन गीतों में आकर्षण होता है यदि संस्कार गीतों की बात करें तो प्रत्येक संस्कार के अवसर पर गाया जाने वाला संस्कार गीत न केवल उस अनुष्ठान को रसमय बनाता है अपितु उस संस्कार से जुड़ी बातों को भी लोक तक पहुँचाता है। सोहर गीतों में परिवार की प्रसन्नता 'सोहर' गाते समय परिलक्षित होती है। बच्चे के जन्म पर बुआ का नेग मांगना, बच्चे का नामकरण, अन्नप्राशन, मुंडन संस्कार, यज्ञोपवीत, विवाह संस्कार, इन सभी अनुष्ठानों के गीतों में न केवल लोक में व्याप्त लोकाचारों का वर्णन होता है अपितु लोकमानस की एक–एक अनुभूति स्फुरित होती दिखाई देती है।

2. भाव–प्रेरित अभिव्यंजना – लोकगीत (संस्कार गीत) वास्तव में सामूहिक मनोजगत की स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। सामूहिक मनोजगत द्वारा जब–जब सामाजिक परिवर्तनों को आत्मसात किया जाता है तब–तब लोक साहित्य भी इन परिवर्तनों से उत्पन्न मानसिक, भावात्मक प्रतिक्रियाओं से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित होकर, आधुनिक जीवन–दशाओं में अपने आप को जीवंत बनाये रखता है। ये प्रतिक्रियायें ही लोकगीत (संस्कार गीत) हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी भावों का हस्तांतरण करते हैं।

3. वियोग जनित अभिव्यंजना – लोक में विदाई तथा मृत्यु के गीत वियोग जनित अभिव्यंजना के अंतर्गत सम्मिलित किये जा सकते हैं। विदाई का क्षण कभी भी किसी के लिए सुखद नहीं हो सकता और इस भाव दशा में विदाई गीत जब गाये जाते हैं तब न केवल बेटी के परिवारजनों की अपितु विवाह मंडप में उपस्थित समस्त आगंतुकों की आँखें करूणा से डबडबा जाती हैं। लोक गायिकाएँ भी अश्रुपूरित नेत्रों से इन गीतों का गायन करती हैं। बेटी का विवाह के पश्चात् परायी हो जाना, इस अवसर पर उसकी बचपन की स्मृतियों को दोहराना तथा माता–पिता द्वारा बेटी को दी जाने वाली सीख, इन सभी बातों को गीतों के माध्यम से बताया जाता है तब सम्पूर्ण वातावरण मार्मिक हो उठता है।

कुछ उदाहरण द्दष्टव्य हैं–

'ये गढ़ा सून भइगे, कहाँ बसे जा गौरइया।
रानी अस पोसे जदुरैया, गढ़ा सून भइगे।
कोयल अस बोले जदुरैया, गढ़ा सून भइगे।
X X X X X

*अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, दमुआ, जिला - छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

X X X X X

कहाँ बसे जाय के चिंरैया, ये गढ़ सून भइगे।[2]

उक्त गीत में बेटी के बिछोह के भावों को अत्यंत सुन्दर तरीके से अभिव्यंजित किया गया है। जिस बेटी को रानी की तरह पाला-पोसा गया, कोयल के समान मधुर बोलने वाली वह चिंरैया महल सूना करके न जाने कहाँ बस गई ? गीत को सुनकर हर एक माता-पिता के मन की वेदना साकार हो उठती है यही लोक की करूणामय अभिव्यंजना है।

मराठी विदाई गीत-

'लेक सासऱ्याला जाती डोळयाला ग येती गंगा
नेनंत्या ग मयनाला महिन्याची बोली सांगा
लेक सासऱ्याला जाती वाईट ग नको मानू
नेनंती ग बाई माझी आठा दिसा तुला आनू'[3]

विदाई गीत में माता-पिता के मन की व्यथा को उजागर किया गया है। बेटी के ससुराल जाते समय उनकी आँखों से अश्रु थमने का नाम नहीं ले रहे हैं। वे बोझिल मन से बेटी को समझाते है कि आठ दिनों में ही तुम्हें हम लिवा लायेंगे। इस प्रकार विदाई के दु:खद क्षणों का वर्णन विदाई गीतों में प्राप्त होता है। संस्कार गीत में मातृ हृदय के भावों की अभिव्यंजना अद्वितीय है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि लोककवि अपनी अनुभूति को अभिव्यंजित करने हेतु भाषा का सहारा लेता है। वह प्रयासरत रहता है कि जो अनुभूति उसे हुई है गीतों द्वारा लोक को भी वही अनुभूति हो। वास्तव में इन गीतों की रचना तभी होती है जब अनुभूति चरम सीमा पर हो और भाषा का सही प्रयोग हों। अनुभूति का सौन्दर्य उचित अभिव्यंजना से ही प्रभावी बनता है। अनुभूति के साथ अभिव्यक्ति का उचित संतुलन ही गीतों में चमत्कार उत्पन्न करता है। लोकगायकों को होने वाली अनुभूति के विषय में विद्या विन्दु सिंह कहती हैं- 'लोक साहित्य परिवेश या प्रकृति का निरीक्षण खुली आँखों से करता है और तब आँखें बंद कर उसे कल्पना और सपनों में भरता है। वह जो कुछ भी उसके बारे में कहता है अनुभव से कहता है। वह सूरज से समय की माप करता है, तारों से रात की गहरायी का अनुमान करता है। वह ऋतु मंगल मनाता है। जीवन की हर भावना को प्रकृति के सादृश्य से अभिव्यक्त करना लोक साहित्य की अपनी विशिष्ट भंगिमा है।'[4] विद्या विन्दु सिंह का मानना है कि लोकगायक अपनी कल्पना को ही शब्द प्रदान कर लोक को समर्पित करता चलता है और इन लोकगीतों की रचना तभी होती है जब अनुभूति चरम सीमा पर होती है। अनुभूति के साथ अभिव्यक्ति का उचित संतुलन ही गीतों में चमत्कार उत्पन्न करता है। यही संस्कार गीतों के विषय में भी होता है। जब संस्कारों की अभिव्यक्ति लोकगीतों के माध्यम से सम्पूर्ण लोक में विस्तार पाती है समस्त वातावरण संस्कारमय हो जाता है। ये गीत इतने प्रभावशाली होते हैं कि लोक के मानस पटल पर अपनी अमिट छाप छोड़ते हैं जिससे लोक अपने अंतर्मन की अनुभूति को शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त कर समस्त संस्कारों में आनन्द प्राप्त करते हैं। लोकगीत जीवन के समस्त संस्कारों का श्रृंगार करते दिखाई देते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. मंजू तिवारी: हिंदी गीतिकाव्य परंपरा और मीरा,प्रका.-राजकमल प्रकाशन दिल्ली,सं.-2004,पृ.250
2. डॉ.दुर्गा पाठक:छत्तीसगढ़ी एवं बुंदेली लोकगीतों का तुलनात्मक अध्ययन,प्रका.-साहित्य संगम इलाहा.,सं-1994,पृ.162
3. श्री न.शे. पोहनेकर: जा माझा माहेरा,प्रका.-महाराष्ट्र राज्य लोक साहित्य समिति, पृ.21
4. डॉ.विद्या विन्दु सिंह:घर की भाषा घर का भाव,प्रका.-राजेश प्रकाशन दिल्ली,सं.-2008,पृ.102

****

बाल श्रम उन्मूलन का विकल्प : शिक्षा

डॉ. रेखा माली (PDF)*

प्रस्तावना – बाल श्रमिक यानी हमारे समय की त्रासदी को भोगता समाज का एक खामोश घटक। एक ऐसी अकस्मात घटना सा जिसकी यातना हर पल बढ़ने पर है। करोड़ों बच्चे पेट की क्षुधा शांत करने को खतरनाक परिस्थितियों में खुद को झोंके हुए हैं। वे गुलामी से भी बदतर हालात से जूझ रहे हैं और बेहद जोखिम वाले काम करने के लिये विवश हैं। इनसे समाज और मानवता के सरोकार कहीं दूर जा छिटके लगते हैं। बाल श्रमिक मानवीय दुराचारों की कड़ी बन गए हैं। विडंबना यह है कि इनकी शिनाख्त तो है परंतु परिचय नहीं।

बालश्रम का मसला विश्व एजेंडे में सबसे ऊपर होना चाहिए लेकिन ऐसा नहीं है। एक प्रकार से उदासीनता में इनका वजूद सिमटकर रह गया है। इधर भारत में भी बाल श्रमिकों की व्यथा व्यथित कर देने वाली है। सामंती मानसिकता लोगों के दिमाग से अभी गई नहीं है। इसी के चलते घरों में घरेलू नौकरों के तौर पर काम कर रहे बच्चों का शोषण और उत्पीड़न जारी है। उनका मानसिक, दैहिक और यौन शोषण किया जाता है। सच तो यह है कि बाल श्रमिक मानवीय शोषण का सबसे घिनौना और वीभत्स रूप है। कई मामलों में तो यह प्रथा दासता और गुलामी के काफी करीब है। कारण, बाल श्रमिक का पूरा अस्तित्व ही मालिक के मिजाज पर निर्भर रहता है। भिन्न सांस्कृतिक धरातलों पर भी समस्या में कोई फर्क दिखाई नहीं पड़ता। दासता उसका आंतरिक तौर पर निहित हिस्सा होता ही है।

दुनिया के हर देश में समृद्ध घरों में एक अदद घरेलू नौकर होता है। ज्यादातर मामलों में बालक या बालिका ही इस भूमिका के बोझ तले दबे मिलेंगे। मध्यम तथा उच्चवर्गीय परिवारों में तो यह प्रथा व्यापक रूप से प्रचलित है। यहां तक कि निम्न मध्यमवर्गीय परिवारों तक में घरेलू नौकर रखने की प्रवृत्ति पनप रही है। घरेलू नौकर को बहुत मामूली पगार और अंशकालिक आधार पर रखा जाता है। घरेलू नौकर बालक या बालिका हो तो फिर उसका मेहनताना खाने-पीने और कपड़े लत्ते तथा रहने के ठौर-ठिकाने में ही पूरा कर लिया जाता है। यह ऐसा वर्ग है जिसकी टीस पर किसी का ध्यान नहीं जाता। उस पर ढाए जाने वाले जोर-जुल्म का बाहरी समाज नोटिस नहीं लेता। कह सकते हैं कि घरेलू नौकरों पर जुल्म को एक तरह से सामाजिक स्वीकृति तथा सहमति हासिल है। तकनीकी तौर पर घरों में सटने वाला बालश्रम जोखिम भरा नहीं माना जाता। बाल श्रमिक (प्रतिषेध एवं नियमन) कानून, 1986 में घरेलू नौकर के काम को 'खतरनाक' नहीं मानते हुए वर्जित श्रेणियों की परिधि से बाहर रखा गया है। बाल श्रमिकों की बेहतरी के लिए कई देशों में कानून जरूर बनाए गए हैं लेकिन उनका कार्यान्वयन नहीं हो पाता। काम के घंटे, साप्ताहिक छुट्टी जैसी बातों का इन कायदे-कानूनों में जिक्र है लेकिन इनसे कितनों का भला हो पाता है, इस बारे में कुछ नहीं कह सकते।

घरेलू नौकरों की ठीक-ठीक संख्या कितनी है? इस लिहाज से कोई विश्वसनीय आंकड़ा उपलब्ध नहीं है - न तो राष्ट्रीय स्तर पर, न ही अंतरराष्ट्रीय स्तर पर। फिर भी अनुमान है कि घरेलू बाल श्रमिकों की संख्या करोड़ों में हैं। बहरहाल, बाल श्रमिकों संबंधी जो आंकड़े उपलब्ध हैं, उनसे किसी निष्कर्ष पर सहज पहुंचना संभव नहीं है। राष्ट्रीय सर्वेक्षण नमूना द्धारा 1979 में किए गए सर्वेक्षण के अनुसार देश के कुल बाल श्रमिकों में से 10 से 20 प्रतिशत घरेलू नौकर हैं। विश्व में बच्चों की स्थिति संबंधी युनिसेफ की रिपोर्ट (1979) के अनुसार भारत में 15 वर्ष से कम आयु के बालकों में 17 प्रतिशत घरेलू नौकर हैं। रिपोर्ट में इस प्रवृत्ति की तरफ भी ध्यान दिलाया कि अधिकांश घरों में घरेलू कामकाज के लिए नौकर के तौर पर बच्चों को तरजीह दी जाती है। यह प्रवृत्ति शहरों और गांवों - दोनों जगह समान रूप से देखी जाती है।

अलबत्ता, गांव-देहात में काश्तकार-खेतिहर परिवारों के साथ परंपरा से कुछ जातियां व वर्ग जुड़े होते हैं। इनके बच्चे-बड़े सभी मालिक परिवारों के कामकाज में जुटे मिलते हैं। यह परिदृश्य बहुत कुछ हद तक सामंती दौर का परिदृश्य उभारता है। यह स्थिति आज भी है तो मात्र इसलिए कि दूरदराज के अंतिम आम जन में चेतना का संचार नहीं हो पाया है। यह भी एक बड़ा कारण है, जिससे कि बाल मजदूरों की बाबत् किए गए अध्ययन-सर्वेक्षण में इस पीड़ित वर्ग को अपेक्षित भागीदारी देखने को नहीं मिलती। सो, इस बारे में आंकड़े समुचित नहीं हैं। वे इतने अपर्याप्त हैं कि उनका संरक्षण किया जाना बेमानी-सी कसरत लगती है, उनसे कोई निष्कर्ष पा लेना तो बहुत दूर की बात है। घरेलू नौकर के रूप में कामकाज करने वाले बच्चे सर्वाधिक संवेदनशील होते हैं और सर्वाधिक शोषण के शिकार भी होते हैं क्योंकि उनके अस्तित्व का स्वरूप संगठित नहीं है। उनके हितों की रक्षा करना इस कारण से कठिन कार्य हो गया है।

खेती पर छाया संकट सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों के छात्रों को अपनी चपेट में ले लेता है। उनकी पढ़ाई चौपट हो जाती है। दिवालिया होते किसान अपने बच्चों से स्कूल-कालेज छुड़वा देते हैं। उन्हें अपने साथ खेतों में काम पर लगा लेते हैं। जिन परिवारों के पास ज्यादा खेत नहीं हैं, वे मयबच्चे शहरों की ओर पलायन कर जाते हैं।

घरेलू बाल श्रमिकों में अधिकांश बच्चे वे कार्य करते हैं, जो गैरजरूरी होते हैं, कतई महत्वपूर्ण नहीं होते। लड़कियां भी घरों में काम करती मिल जाएंगी। उनकी स्थिति लड़कों की तुलना में कहीं अधिक खराब होती है।

सार्वजनिक या सामाजिक जिंदगी तो जैसे उनके नसीब में ही नहीं होती। बालश्रम अपने आप में एक प्रकार का अभिशाप है। यह एक ऐसी

*मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

विकराल समस्या है जिसका कोई ओर-छोर नहीं है। यातनामयी इतनी कि उससे पार पाने की तमाम कोशिशें बिला जाती हैं। ***पीस ट्रस्ट*** नामक संस्था की अगुवाई में तमिलनाडु में 14 तक वर्ष की आयु के बच्चों का एक सर्वेक्षण किया गया। सर्वेक्षण के दौरान ग्यारह हजार दो सौ बच्चों की पहचान की गई। ये सभी बच्चे घरों में काम करते थे। इनमें तीन हजार ऐसे थे, जो सरकारी कर्मचारियों के घरों में काम करते थे।

कई अन्य सर्वेक्षणों से पता चला है कि घरेलू काम और मरम्मत के काम में सर्वाधिक बाल मजदूर हैं। बाल मजदूरी का सबसे चिंताजनक पहलू यह भी है कि घरेलू बाल श्रमिकों में लड़कियों की संख्या अधिक है। भारत सरकार द्वारा तैयार श्रम शक्ति रिपोर्ट (1998) के अनुसार घरेलू नौकरों में लड़कियों की संख्या लड़कों के मुकाबले ढाई गुना अधिक है। कैथोलिक विशप्स कांफ्रेंस आफ इंडिया ने अस्सी के दशक में बारह शहरों में बाल श्रमिकों का सर्वेक्षण किया था। इसका एक आकलन यह भी था कि इनमें 78 प्रतिशत लड़कियां थीं। इसी तरह विभिन्न मानवाधिकार या बालश्रम संबंधी कार्यदलों की रिपोर्टों में हिंसा और दुराचार की शिकार ज्यादातर लड़कियां होती हैं। बाल मजदूरी का एक अन्य दुखद पक्ष यह है कि बहुत कम उम्र में बच्चों को मेहनत मजदूरी के शिकंजे में कस दिया जाता है। चेन्नई में अरुणोदय तथा एंटी स्लेवरी इंटरनेशनल ने एक सर्वेक्षण (1999) किया था। सर्वेक्षण के दौरान जिन 80 प्रतिशत बच्चियों से बात की गई उनमें से 25 प्रतिशत ने 9 वर्ष की आयु से पहले ही काम करना शुरू कर दिया था। लगभग 55 प्रतिशत बच्चियां ऐसी थीं, जो 9 से 12 वर्ष की आयु के दौरान ही घरेलू नौकरानी बन गई थीं। कटु सचाई तो यह है कि निर्धन परिवारों की लड़कियां बहुत कम उम्र (छह-सात साल की आयु) में ही घरेलू नौकरानी बन जाती हैं। भारत में महिला शिक्षा पर राष्ट्रीय समिति ने अपनी रिपोर्ट (1974) में पाया कि कुछ किशोरियां सिर्फ अपनी कमाई के बूते पर अपने बीमार मां-बाप और भाई-बहनों समेत पूरे परिवार का भरण-पोषण कर रही हैं। रिपोर्ट के अनुसार 'इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि देशभर में लड़कियां मुफ्त में घर का सारा काम करती हैं और इसी वजह से उन्हें स्कूल नहीं भेजा जाता। इसके साथ ही लड़कियों के अपने परिवेश से कट जाने का डर भी मां-बाप को उन्हें स्कूल भेजने से रोकता है।'

इन्हीं कारणों से उच्च प्राथमिक शिक्षा स्तर पर लड़कियों को स्कूल छोड़ देने की दर ज्यादा है। इसलिए लड़कियो के स्कूलों में टिकने की दर भी कम है, भले ही उन्हें प्राथमिक कक्षाओं में स्कूल भेज दिया जाए। ग्रामीण क्षेत्रो में कई जगह प्राथमिक स्कूल होने के बावजूद लड़कियों की शिक्षा अधूरी रह जाती है क्योकि वहां उच्च प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा की कोई सुविधा नहीं होती तथा लैगिक रूप से असुरक्षित होने की दुहाई देकर उन्हें ज्यादा दूर स्थित स्कूल में पढ़ने नहीं भेजा जाता। इस संदर्भ में एक और विचारणीय प्रश्न यह है कि शिक्षा तंत्र में जिस प्रकार लड़को को अपनी प्रतिभा के अनुरूप पढ़ने का अवसर मिलता है, उतने ही मौके लड़कियों को हासिल हैं या नहीं? अक्सर शिक्षकों के दिमाग में अनचाहे पूर्वाग्रह लड़कियों के प्रति रहते हैं। यही स्थिति स्कूलों में प्रबंधकों और सहपाठियो के मन में रहती है। इससे भी लड़कियां घबराती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों और वंचित जातियों-समुदायों व जनजातियों से संबद्ध तथा विकलांग लड़कियों के लिए ये सभी समस्याएं लड़कों के मुकाबले कहीं ज्यादा बढ़ जाती हैं। सर्वविदित है कि भारत में दो-तिहाई या उससे भी ज्यादा संख्या में महिलाएँ अनपढ़ हैं और उनमें से भी आधी प्राथमिक शिक्षा तक हासिल नहीं कर सकी हैं।

औपचारिक स्कूली शिक्षा में शिरकत को बाल मजदूरों को पहचानने का एक पैमाना माना जा सकता है तो भी तमाम बच्चे सीधे-सीधे इस वर्ग में नहीं आते। ऐसे बच्चे भी हैं जो दोनों काम कर रहे हैं। वे स्कूल में भागीदारी के साथ ही कामधंधा भी करते हैं। लेकिन इनकी संख्या ज्यादा नहीं है। बाल श्रमिक के संदर्भ में 'नौकर' शब्द पर ज्यादा बल दिया जाता है। इसे ज्यादा प्राथमिकता मिली है। लोक प्रचलन में घरेलू नौकर के लिए श्रमिक या मजदूर शब्द प्रयुक्त नहीं होता। स्कूल नहीं जाने वाले बच्चों (विशेषकर लड़कों) में स्कूल छोड़ने वालों की संख्या कभी स्कूल नहीं जाने वालों की तुलना में बहुत अधिक है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि लड़कियों को प्राय: स्कल नहीं भेजा जाता। लड़के-लड़कियों के स्कूल छोड़ने या स्कूल में दाखिला नहीं लेने का कारण प्राय: गरीबी बताया जाता है। अन्य अनेक कारण भी गिनाए जाते है। बच्चों की पढ़ाई में रुचि नहीं होने की बात जोर शोर से कही जाती है लेकिन उनकी पढ़ाई की तरफ मां-बाप की उपेक्षा या उदासीनता का जिक्र बहुत कम होता है।

खेती पर छाया संकट सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों के छात्रों को अपनी चपेट में ले लेता है। उनकी पढ़ाई चौपट हो जाती है। दिवालिया होते किसान अपने बच्चों से स्कूल-कॉलेज छुड़वा देते हैं और उन्हें अपने साथ खेतों में काम पर लगा लेते हैं। जिन परिवारों के पास ज्यादा खेत नहीं है, वे मय बच्चे शहरों की ओर पलायन कर जाते हैं। यह पलायन अक्सर सामान्य से अधिक रहता है। यहां के तीनों सरकारी हाईस्कूलों पर कृषि संकट का असर पड़ा है। परिवारों की मदद के मद्देनजर पढ़ाई छोड़ने वाले ज्यादातर बच्चे पढ़ाई की तरफ फिर कभी नहीं लौटते। इसलिए कि मजदूरों का ठेकेदार उन्हें मजदूरी के लिए जिले से बाहर ले जाता है। गणपुर के पूर्व सरपंच के. रमेश कहते हैं - 'लोग पलायन के समय काम के लिए अपने बड़े बच्चों को भी साथ ले जाते हैं। पीछे छोटे बच्चों को अकेला कैसे छोड़ा जा सकता है?' गणपुर की दलित बस्ती में बहुत कम लोग दसवीं कक्षा तलक पहुंचे हैं। कृष्ण भी दसवीं तक पहुंचा लेकिन इस साल उसे स्कूल छोड़ना पड़ा। वह बताता है कि अगर उसके मां-बाप को उससे काम कराने की जरूरत नहीं रही तो वह फिर स्कूल लौटेगा। वह कहता है, 'मेरे पंद्रह दूसरे सहपाठियों ने भी स्कूल छोड़ दिया। इनमें थोड़े पैसे वाले परिवारों के बच्चे भी हैं।' उसका पड़ोसी कन्हैया बताता है, 'इस बस्ती के पांच सौ लोग हाल में ठेका मजदूरी करके लौटे हैं। दूसरे पांच सौ लोग अभी मजदूरी करने निकले हैं। यहां करने को एक दिन का काम भी नहीं है। बच्चे ऐसे में स्कूल कैसे जा सकते हैं?' इन गांवों में तीसियों बच्चे मिल जाएंगे, जिन्होंने इसी सत्र में पढ़ाई छोड़ी है।

अनंतपुर जिले में कल्याण दुर्ग के सरकारी डिग्री कालेज के लेक्चरर जयराम रेड्डी कहते हैं, 'कई छात्र तो अपनी छात्रवृत्तियां तक लेने नहीं लौटे। इस साल 28 हजार रुपये की छात्रवृत्ति राशि लौटानी पड़ी। छात्रवृत्ति ढाई सौ रुपये महीने की है लेकिन मजदूरी के लिए पलायन को विवश हुए गरीब छात्रों को छात्रवृत्ति की राशि से ज्यादा राहत नहीं मिलती।' प्राचार्य जी. मालन्ना मानते हैं कि शिक्षा के बढ़ते व्यावसायीकरण और निजीकरण जैसे कारणों ने खेती का संकट बढ़ाया है। इससे शिक्षा क्षेत्र भी प्रभावित हुआ है। बाल मजदूरों की संख्या में इजाफा हुआ। नौनिहालों को मजदूर बनना पड़ा। अनौपचारिक शिक्षा से इन हालात पर काबू पाया जा सकता है।

आंध्र-प्रदेश के मेडक जिले (जहीराबाद से 15 किमी. दूर) के मचनूर गांव स्थित 'पाचा साले' या ग्रीन स्कूल ने इस मामले में मिसाल कायम की है। पंद्रह एकड़ में फैले इस स्कूल में दी जा रही शिक्षा आम स्कूलों में दी जा रही औपचारिक शिक्षा पद्धति से भिन्न है। महत्वपूर्ण बात है कि बच्चों को वे चीजें सीखने में मजा आ रहा है, जो बाद के उनके जीवन में बहुत काम आएंगी।

दोपहर तक पढ़ाई होती है। दोपहर बाद कुम्हारगीरी, बढ़ईगीरी, राजमिस्त्री का काम, जिल्दसाजी, दर्जीगीरी, जड़ी–बूटी के इस्तेमाल संबंधी हुनर सिखाए जाते हैं। यहां अधिकांश बच्चे अधबीच स्कूली पढ़ाई छोड़ चुके हैं। एक गैरसरकारी संगठन ***'डेकन डेवलपमेंट सोसायटी'*** इस स्कूल को चला रही है। यह संगठन इस क्षेत्र में कोई 15 वर्ष से कार्यरत है। पारंपरिक फसलों और कृषि जैव विविधता के संरक्षण की दृष्टि से इस संगठन ने उल्लेखनीय कार्य किया है। इस इलाके के ज्यादातर बच्चे ऐसे हैं जो मजदूरी करते हैं या घर के कामों में मां–बाप की मदद करते हैं। मवेशी चराते हैं या खेती करते हैं। यह जानना दिलचस्प है कि यहां पढ़े छात्रों में से अब तक 63 छात्र एसएससी (SSC) की परीक्षा में बैठ चुके हैं और 40 से अधिक छात्रों ने इस परीक्षा को सम्मानजनक स्थान के साथ पास किया हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

छिन्दवाड़ा जिले में शस्य गहनता प्रतिरूप में परिवर्तन का अध्ययन

दिलीप ढोबाले* डॉ.बी. टेंभरे **

शोध सारांश – भारत देश तथा म.प्र. अपितु छिन्दवाड़ा जिले की अर्थव्यवस्था भी कृषि प्रधान है। वर्तमान समय में भी जिले की कृषि व्यवस्था में बहुत कम परिवर्तन हुआ है। अध्ययन क्षेत्र की लगभग 75 प्रतिशत अर्थव्यवस्था कृषि कार्यो पर आधारित हैं। यह परिस्थिति कृषि के महत्व को स्पष्ट करती है। क्षेत्र में उत्तरोत्तर बढ़ती जनसंख्या एवं कम होता हुआ कृषि भूमि अनुपात कृषि भूमि पर बढ़ते जनसंख्या अनुपात को स्पष्ट करता है फलस्वरूप निरन्तर बढ़ती हुई खाद्यान्न की मांग को परिणामस्वरूप न केवल कृषि उत्पादकता में वृद्धि आवश्यक है, अपितु उत्पादकता में वृद्धि के लिये शस्य गहनता में उच्चतम वृद्धि आवश्यक है। उच्च शस्य गहनता का तात्पर्य है कृषि क्षेत्र में फसलों की आवृत्ति से है। अर्थात् एक निश्चित कृषि क्षेत्र पर एक फसल वर्ष में कितनी बार फसले उत्पन की जाती है। जो कृषि में तकनीकी आर्थिक, प्राकृतिक, सांस्कृतिक एवं भौतिक परिस्थितियों के द्वारा नियंत्रित होती है।प्रस्तुत शोध पत्र में इन्हीं तथ्यों को विश्लेषित करने का प्रयास किया है।
शब्द कुंजी – शस्य गहनता, शुद्ध बोया गया क्षेत्र, द्विफसली क्षेत्र।

प्रस्तावना – कृषि प्राचीन समय से वर्तमान समय तक जीवन निर्वाह का प्रमुख साधन है। स्थानिक एवं सामाजिक संदर्भ में इसके अनुपात में परिवर्तन हो रहें है। कृषि भूमि पर बढ़ती जनसंख्या एवं उनके पालन-पोषण के लिये निरन्तर विविध प्रकार की आवश्यकताओं एवं गतिविधियों ने कृषि स्वरूप को जीवन निर्वाह से व्यापरिक कृषि की तरफ मोड़ दिया है। परिवर्तन की इस प्रक्रिया से अध्ययन क्षेत्र की शस्य गहनता भी अछुती नहीं रहीं है। क्षेत्र की शस्य गहनता ने केवल क्षेत्र की में कृषि उत्पादकता की पूर्ति करता है, अपितु क्षेत्र की सांस्कृतिक एवं आर्थिक गतिविधियों के विकास को स्पष्ट करती है। अध्ययन क्षेत्र की अर्थव्यवस्था में कृषि का न केवल महत्वपूर्ण स्थान है बल्कि आज भी यह 75 प्रतिशत जनसंख्या के जीविका का साधन है। जनसंख्या की निरन्तर वृद्धि के कारण कृषि भूमि पर पोषण भार बढ़ रहा है और प्रतिव्यक्ति कृषि भूमि अनुपात में ह्रास हो रहा है, क्योंकि जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि हो रहीं है। कृषि भूमि विस्तार एक सीमा के बाद संभव नहीं है, अत: कृषि भमि में क्षैतिज विस्तार के तुलना में उर्ध्वाधर विस्तार संभव है जो शस्य गहनता में वृद्धि कर कृषि भूमि उत्पादन में वृद्धि ला सकता है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री के रूप में अध्ययन किया है। इसके हेतु साक्षात्कार और विद्वानों का मार्गदर्शन लिया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – म.प्र. के गठन के साथ जिला छिन्दवाड़ा 1 नवम्बर 1956 को अस्तित्व में आया है। म.प्र.राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्र के 3.85 प्रतिशत भूभाग पर स्थित जिला सतपुड़ा पर्वत श्रेणी के दक्षिण में स्थित 21°28' से 22°49' उत्तरी अक्षांश एवं 78°40' से 79°24' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित लगभग 11815 वर्ग कि.मी. क्षेत्र पर आबद्ध है। प्रशासनिक दृष्टिकोण से 11 विकासखण्डों एवं 13 तहसीलों में विभक्त है। कुल भौगोलिक क्षेत्रफल के 42.57 प्रतिशत भाग पर कृषि योग्य भूमि, शुद्ध बोया गया क्षेत्र 504502 हेक्टेयर, द्विफसली क्षेत्र 2.29.285 हेक्टेयर, तथा 388185 हेक्टेयर क्षेत्र पर वन पाया जाता है। 2011 की जनगणनानुसार 2090306 जनसंख्या निवास करती है। कुल जनसंख्या में 45 प्रतिशत जनसंख्या कृषि या कृषि से संबंधित कार्यों में संलग्न है। यह तथ्य कृषि अर्थव्यवस्था का द्योतक है।

अध्ययन के उद्देश्य – अध्ययन की सुविधा के अनुसार प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्यों को निम्न वर्गों में विभक्त किया गया है-

1. अध्ययन क्षेत्र में शस्य गहनता को ज्ञात करना।
2. अध्ययन क्षेत्र में शस्य गहनता के स्थानिक एवं सामयिक परिवर्तन को ज्ञात करना।
3. अध्ययन क्षेत्र में शस्य प्रतिरूप को ज्ञात करना।

आंकड़ों के स्त्रोत – प्रस्तुत शोध पत्र के अध्ययन के लिये विकासखण्डवार 1990 एवं 2018 के कृषि संबंधि द्वितीयक आंकडे, सहायक संचालक जिला सांख्यिकी कार्यालय छिन्दवाड़ा, भूअधीक्षक कार्यालय, छिन्दवाड़ा एवं जनगणना 2011 के आंकडे सांख्यिकी कार्यालय से प्राप्त किये गये। शस्य गहनता के विश्लेषण के लिये सिंह जसवीर एवं सिंह बी.बी.भूगोल वेत्ताओं द्वारा प्रतिपादित निम्न सूत्र का प्रयोग किया गया है।

$$\text{शस्य गहनता} = \frac{\text{कुल फसल क्षेत्र}}{\text{शुद्ध बोया गया}} \times 100$$

शस्य गहनता:-

सारणी क्रमांक 1 : जिला छिन्दवाड़ा शस्य गहनता एवं परिवर्तन

क्रं.	विकासखण्ड	शस्य गहनता		परिवर्तन
		1990	2018	1990-2018
1.	छिन्दवाड़ा	122.97	178.13	31.20
2.	मोहखेड़	117.18	167.11	29.88
3.	तामिया	111.72	126.45	11.65
4.	जुन्नारदेव	108.54	133.42	18.64
5.	परासिया	114.98	157.00	26.76
6.	अमरवाड़ा	112.07	129.05	13.16
7.	हर्रई	106.08	128.98	17.76
8.	चौरई	117.36	172.85	32.10
9.	सौंसर	107.14	111.41	3.83

*शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (भूगोल) रानी दुर्गावती, शासकीय महाविद्यालय, मण्डला (म.प्र.) भारत

10.	बिछुआ	113.65	136.69	16.85
11.	पाढुंर्ना	113.87	138.39	17.71
	कुल	113.60	145.45	21.90

स्त्रोत-जिला सांख्यिकी पुस्तिका 1990,
अधीक्षक भू अभिलेख कार्यालय छिन्दवाड़ा 2018

सारणी क्रमांक 1 के तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अध्ययन अवधि के प्रारंभिक वर्ष में 113.60 प्रतिशत शस्य गहनता पायी जाती थी, जो अध्ययन अवधि के अंतिम वर्ष में 21.90 प्रतिशत वृद्धि के साथ 145.45 प्रतिशत शस्य गहनता अध्ययन क्षेत्र में पायी जाती है। अध्ययन क्षेत्र में अध्ययन अवधि के प्रारंभिक वर्ष में सर्वाधिक छिन्दवाड़ा विकासखण्ड में 122.97 प्रतिशत एवं सबसे न्यनूतम हर्रई विकासखण्ड में 106.08 प्रतिशत पायी जाती है। अध्ययन अवधि के अंतिम वर्ष में अध्ययन क्षेत्र के छिन्दवाड़ा विकासखण्ड में सर्वाधिक 178.73 प्रतिशत एवं सबसे न्यूनतम सौंसर विकासखण्ड में 111.41 प्रतिशत शस्य गहनता पायी जाती है।

सारणी क्रमांक 1 के तथ्यों का विश्लेषण करने से ज्ञात हुआ कि अध्ययन क्षेत्र में अध्ययन अवधि के दौरान शस्य गहनता में सर्वाधिक चौरई विकासखण्ड में 32.10 प्रतिशत एवं सबसे न्यूनतम सौंसर विकासखण्ड में 3.83 प्रतिशत परिवर्तन शस्य गहनता में हुआ है शेष विकासखण्ड में अनुपातिक रूप से शस्य गहनता प्रतिशत में वृद्धि हुई है इसके लिये मुख्य जिम्मेदार कारक वर्षा की पर्याप्तता, सिंचाई, सुविधाओं के साथ रासायनिक उर्वरक, उन्नत बीज तकनीकी आगतों में वृद्धि के साथ द्विफसलीय क्षेत्र में विस्तार के कारण शस्य गहनता में वृद्धि हुई है।

शस्य गहनता प्रतिरूप

(i) उच्च शस्य गहनता के विकासखण्ड – अध्ययन अवधि के प्रारंभिक वर्ष में छिन्दवाड़ा, चौरई, मोहखेड़ उच्च शस्य गहनता में सम्मिलित थे जो अध्ययन के अंतिम वर्ष में 70 प्रतिशत विकासखण्डों की वृद्धि के साथ छिन्दवाड़ा, चौरई, मोहखेड़, परासिया, पाढुंर्ना, बिछुआ, जुन्नारदेव, अमरवाड़ा, हर्रई एवं तामिया में उच्च शस्य गहनता पायी जाती है। उच्च शस्य गहनता मुख्यत: सिंचाई सुविधाओं में विस्तार के साथ रासायनिक उर्वरकों के साथ उन्नत बीज तकनीकी आगतों के अधिक उपयोग के साथ द्विफसलीय क्षेत्र में विस्तार से पायी जाती है।

(ii) मध्यम शस्य गहनता के विकासखण्ड – 110 से 115 प्रतिशत के मध्य शस्य गहनता के विकासखण्डों के इस श्रेणी में सम्मिलित किया गया है। अध्ययन अवधि के प्रारंभिक वर्ष में परासिया, पाढुंर्ना, बिछुआ, अमरवाड़ा एवं तामिया विकासखण्ड में मध्यम शस्य गहनता पायी जाती है। वहीं अंतिम वर्ष में -400 प्रतिशत विकासखण्डों की गिरावट के साथ मात्र सौंसर विकासखण्ड में मध्यम शस्य गहनता पायी जाती है। यह परिवर्तन मुख्यत: अध्ययन अवधि के प्रारंभिक वर्ष के सभी विकासखण्डों के अध्ययन अवधि के अंतिम वर्ष में उच्च शस्य गहनता में सम्मिलित होने से हुआ है। यद्यपि मध्यम शस्य गहनता वर्षा की कमी तथा सिंचाई सुविधा के विस्तार में कमी के साथ रासायनिक उर्वरक उन्नत बीज कम उपयोग तथा कम उपजाऊ भूमि है।

(iii) निम्न शस्य गहनता के विकासखण्ड – 110 से कम शस्य गहनता प्रतिशत वाले विकासखण्डों को इस श्रेणी में रखा गया है। अध्ययन क्षेत्र के प्रारंभिक वर्ष में जुन्नारदेव, सौंसर एवं हर्रई में निम्न शस्य गहनता पायी जाती है। अध्ययन अवधि के अंतिम वर्ष में कोई भी विकासखण्ड इस श्रेणी में सम्मिलित नहीं है। अर्थात् सभी विकासखण्डों में मध्यम एवं उच्च शस्य गहनता के श्रेणी में सम्मिलित हो गये है। यद्यपि निम्न शस्य गहनता वर्षा का अभाव सिंचाई सुविधाओं के अभाव के साथ उन्नत बीज रासायनिक उर्वरकों के अभाव के कारण निम्न शस्य गहनता पायी जाती है।

उपसंहार – उपरोक्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में लगभग एक तिहाई से अधिक विकासखण्डों में उच्च शस्य गहनता पायी जाती है अर्थात् शस्य गहनता प्रतिशत में वृद्धि अंकित हुई है क्योंकि क्षेत्र में सिंचाई, रासायिनक उर्वरकों का उपयोग, उन्नत बीज तथा आधुनिक आगतों के प्रयोग से भूमि की उपजाऊ क्षमता बढ़ी है। तथा जिससे कृषक एक हीं भूमि पर फसल की गहनता में वृद्धि कर वर्ष में कई फसलों का उत्पादन कर रहा है। परन्तु जनसंख्या वृद्धि के तुलना में यह एक सीमा तक हीं संभव है। इसके बाद शस्य गहनता में वृद्धि संभव नहीं है। इसलिये कृषि क्षेत्र में लागत और आगत को भी ध्यान में रखना होगा। कृषि क्षेत्र में और अधिक विकास करने की आष्यकता हैं जिससे कृषि शस्य गहनता एवं उत्पादन में वृद्धि हो सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Bhatiya S.S. (1967): A new measure of agricultural efficiency in U.P. India, Economic geography vol.43 P.P. 32-37
2. तिवारी आर.सी. (2004): कृषि भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद पृ.क्रं. 112-113
3. जनगणना 2011 जिला सांख्यिकी कार्यालय छिन्दवाड़ा
4. जिला सांख्यिकी पुस्तिका छिन्दवाड़ा (1990)
5. जीन्सवार, अधीक्षक भू अभिलेख कार्यालय छिन्दवाड़ा
6. Sinha A.M. (1995) Gazeteer of India, District Chhindwara

सारणी क्रमांक 2 : जिला छिन्दवाड़ा: शस्य गहनता प्रतिरूप

क्रं.	वर्ग	शस्य गहनता स्तर	विकासखण्डों के नाम		कुल विकासखण्डों का अनुपात		परिवर्तन
			1990	2018	1990	2018	1990-2018
1	उच्च	115 से अधिक	छिन्दवाड़ा, चौरई, मोहखेड़	छिन्दवाड़ा, चौरई, मोहखेड़, परासिया, पाढुंर्ना, बिछुआ, जुन्नारदेव, अमरवाड़ा, हर्रई, तामिया	27.27	90.90	70
2	मध्यम	110 से 115	परासिया, पाढुंर्ना, बिछुआ, अमरवाड़ा, तामिया	सौंसर	45.45	9.9	-400
3	निम्न	110 से कम	जुन्नारदेव, सौंसर, हर्रई,	निरंक	27.27	निरंक	निरंक
		कुल	11	11	100	100	

स्त्रोत-जिला सांख्यिकी पुस्तिका 1990, अधीक्षक भू अभिलेख कार्यालय छिन्दवाड़ा 2018

समाज उत्थान हेतु गौतम बुद्ध का नैतिक चिन्तन

डॉ. के.पी. आजाद*

प्रस्तावना – सत् सम्बन्धी एकतत्ववादी एकान्त धारणा में आचारदर्शन का क्या स्थान हो सकता है, यह चिन्तन का विषय है? यदि सत् ब्रह्म भेदातीत है तो न तो उसमें वैव्यक्ति साधक की सत्ता बनती है और न शुभाशुभ के लिए कोई स्थान हो सकता है। आचारदर्शन में बन्धन और मुक्ति के प्रत्यय भी मात्र काल्पनिक ही रह जाते हैं। यदि ब्रह्म से भिन्न कोई सत्ता है ही नहीं, तो फिर न तो कोई बन्धन में आने वाला ही शेष रहता है, न मुक्त होने वाला ही। यदि जीवात्मा अज्ञान से बन्धन में आता है। और ज्ञानात्मक साधना द्वारा मुक्त होता है, तो जीवात्मा भी तो ब्रह्म से अभिन्न है। इसका अर्थ तो यह होगा कि ब्रह्म भी बन्धन में है, जो स्वयं में ही एक उपहास्यस्पद धारणा है। यदि यह कहा जाए कि जीव विवर्त है तो फिर जीव के सम्बन्ध में होने वाले बन्धन और मुक्ति भी विवर्त होगें और बन्धन और मुक्ति के विवर्त होने पर सारी नैतिकाता भी विवर्त होगी। ऐसी विवर्तमूलक नैतिकता का क्या मूल्य रहेगा?

'जो यहाँ पुण्य और पाप का परित्याग करके, ब्रह्मचारी रहता हुआ, ज्ञान मार्ग से लोक में विचरता है वह भिक्षु कहा जाता है।'[1] सत् के स्वरूप की चर्चा एवं नैतिक समीक्षा करने के बाद अब हम बौद्ध दर्शन की तत्वयोजना की व्याख्या के आधार पर तुलना करेंगे। तत्व अर्थात् सामाजिक चिन्तन को अनिवार्य रूप से स्वीकार करता है। यहाँ तक जीवन में कर्म करने की ओर प्रवृत्ता करने के लिए अधिकांश तर्क तात्विक हैं। प्रथम तत्वमीमांसा और फिर उससे आचरण के दिशा-निर्धारण के प्रयत्न। इन्हीं चिन्तन के स्थलों के आधार पर देखा जा सकता है[2] कि आचारदर्शन भी उसके तत्वदर्शन पर ही टिका हुआ है। इस प्रकार जहाँ जैन और बौद्ध दर्शन में तत्व चिन्तन को फलित करते हैं। वहीं तत्व चिन्तन के आधार पर आचारण के नियमों को प्रतिपादित करते हैं। जैन और बौद्ध परम्परा से इन दोनों प्रक्रियाओं को भिन्न-भिन्न अर्थों में स्वीकार किया गया है। जहाँ तक उसका दृष्टिकोण पाश्चात्य विचारकों के परिणाम स्वरूप भी स्पिनोजा के अधिक निकट लगता है। क्योंकि तत्व चिन्तन का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। वे उसके तत्वदर्शन के स्वरूप के आधार पर निकले गये नैतिक तर्कों को आधार मानता है। ये आधार नीतिशास्त्रीय तत्वज्ञान या तत्व चिन्तन पर आधारित विषय है।[3] इतना ही नहीं, इस सन्दर्भ में आलोचकों को उत्तर देते हुए वे अधिक बल प्रदान करते हैं। क्योंकि सामाजिक चिन्तन तत्व के ज्ञानमूलक आधार होना आवश्यक है।[4]

भगवान बुद्ध कहते है कि 'वह बड़ो की सेवा करे, ईर्ष्यालु न हो, उचित समय पर गुरुओं का दर्शन करे, धर्म कथा सुनने का उचित क्षण जाने और कहे गए उपदेशों को आदर के साथ सुने।'[5] इस प्रकार जैन और बौद्ध में यह निर्विवाद के रूप में स्वीकार किया गया है। इस तात्पर्य के उपरान्त ही तत्व चिन्तन के आधार पर अपरिहार्य सम्बन्ध स्थापित किया गया है। जहाँ भी जैन और बौद्ध की परम्पराओं में तात्विक समस्याओं को नैतिक दृष्टि से हल करने का प्रयत्न किया गया है। वहाँ तात्विक बुद्धि के बल पर हल किया गया है। जहाँ जैन और बौद्ध परम्पराओं में तत्व चिन्तन की दृष्टि में रखकर परमार्थ या तत्व के स्वरूप की विवेचना करता है। तत्व चिन्तन के निर्माण के कारण ही सम्पूर्ण जगत् के सामाजिक आधार पर नैतिक जीवन के नियमों को प्रतिफल स्वरूप फलीभूत किया गया है। तत्व चिन्तन का निष्कर्ष वाक्य है। इस तत्व का स्वरूप आधार वाक्य है और नैतिक नियम निष्कर्ष वाक्य के रूप में स्थापित किया गया है, क्योंकि समाज में अनेक प्रकार की विसंगतियाँ विद्यमान है। समाज में एक प्रकार का वर्ग संघर्ष दिखाई देता है। एक वर्ग कहता है कि हम गरीबों के लिए यह संसार हैं ही नहीं, दूसरा वर्ग कहता है कि समाज में गरीब नहीं होगे तो काम कौन करेगा। इस प्रकार की विचारधारा मानव के विकाश में बाधक साबित हो रही है। अब प्रश्न तीसरा उठता है कि एक व्यक्ति के पास अधिक धन है दूसरे व्यक्ति के पास धन ही नहीं है। जो धनहीन है वह अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाता है कि हमारा हिस्स दिया जाय। इसीलिए कार्लमार्क्स पूजीपति और निर्धन की बात करते हैं। जो पूँजीपति है वह निर्धन का हमेशा शोषण करना चाहता है। जो निर्धन है वह हमेंशा अपनी आवाज अधिकार के लिए उठाता है। किन्तु उसकी सुनने वाला कौन है? इन सभी समस्याओं का निदान गौतम बुद्ध अपने तत्वचिन्तन में करते हैं। गौतम बुद्ध का सिद्धान्त है कि मानव जीवन के लिए नैतिकता के मार्ग से बढ़कर कोई मार्ग नहीं है। क्योंकि नैतिकता के बल पर किसी भी अमीर या गरीब के हृदय को जीता जा सकता है।

'बोधिसत्त्व मृत्यु एवं जन्म के नाश में यह उपाय हमारा एक प्रबल आश्रय होगा।'[6] परमसाध्य या नैतिक आदर्श को परमार्थ या सत् के रूप से प्रकट किया गया है। इस सम्बन्ध में भी किसी दर्शन में उसका क्या स्थान होगा। इस बात पर निर्भर करता है।

'धर्मोपदेशक को निडर होकर सत्य का प्रतिपादन करना चाहिए। उसमें सदाचार और दृढ़ संकल्प में बद्धमूल प्रतिपादन की क्षमता होनी चाहिए।'[7] इन्द्रियानुभव, बुद्धि और अन्तर्दृष्टि आदि विविध साधनों के द्वारा जानने का प्रयत्न किया जाता है। वहाँ इस प्रकार के साधनों की विविधताओं तथा वैचारिक दृष्टिकोणों की विभिन्नता से विविध रूप हो स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। इन्हीं बातों के परिणाम स्वरूप ही ऋग्वेद के ऋषि कहते हैं कि **'एकं सद् विप्रा: बहुधा वदन्ति'** एक ही सत् को विद्वान् अनेक प्रकार से कहते हैं।[8] जिन्होंने मात्र इन्द्रिय-अनुभवों की प्रामाणिकता को स्वीकार कर उसे समझने का प्रयत्न किया है। इसके परिणाम स्वरूप उन्हें वह अनेक और परिवर्तनशील तत्वों के रूप में प्रतीत हुआ है। जिन्होंने इन्द्रिय-अनुभवों की प्रामाणिकता में संदेह कर केवल बुद्धि के माध्यम से उसे समझने का प्रयास

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, रामपुर नैकिन, जिला - सीधी (म.प्र.) भारत

किया, उसे अद्वय, अव्यय और अविकार्य (अपरिणामी) पाया।

संक्षेप में सत् सम्बन्धी दृष्टिकोणों की विभिन्नताओं का परिणाम भी उत्पन्न किया जाता है –

1. इन्द्रियानुभव, बौद्धिक ज्ञान, अन्तर्दृष्टि के द्वारा ही ज्ञान के साधनों की विविधता का वर्णन किया गया है।
2. व्यक्तियों के दृष्टिकोणों में ज्ञानात्मक स्तरों के आधार पर वैचारिक परिवेशों की विभिन्नताएँ भी स्थापित होती है।
3. भाषा की अपूर्णता तथा तज्जनित अभिव्यक्ति सम्बन्धी कठिनाइयाँ का तात्विक दृष्टि से समाधान किया जा सकता है।
4. सत् एक पूर्णता के आधार पर ज्ञाता और ज्ञेय के लिए प्रमाणित माना गया है। इसके ज्ञात होने के उपरान्त ही ज्ञाता मनस् उसका ही एक अंश माना गया है। इस अंश के परिणाम स्वरूप ही पूर्णरूपेण नहीं जाना सकता। इस प्रकार हमारे ज्ञानी की आंशिकता भी सत् सम्बन्धी दृष्टिकोणों की विविधता का कारण है।

बुद्ध उस सत्य ज्ञान के अपरिहार्य सम्बन्धों को स्वीकार करते हैं, वरन् ऐसी सत्य ज्ञान को, जो नैतिक जीवन की समस्याओं से सम्बन्धित न हो उनका कोई अर्थ नहीं है। बुद्ध की दृष्टि में इस प्रकार के समस्त तत्वों को विवाद की दृष्टि से ब्रह्मचर्यावास के लिए उपयुक्त नहीं है। प्रो. व्हाइटहेड का बौद्ध धर्म के बारे में यह कहना ध्यान देने योग्य है कि वह इतिहास में अनुप्रयुक्त तत्वमीमांसा का सबसे महान् दृष्टान्त प्रस्तुत करतें है।[9] प्रो. हरियन्ना भी लिखते हैं कि बुद्ध के उपदेश में हमें शुद्ध तत्वमीमांसा का कोई सिद्धान्त नहीं मिलेगा। वह सैद्धान्तिक तत्वमीमांसा के विरूद्ध थें।[10] बुद्ध के द्वारा तत्वमीमांसा की निरर्थकता के सम्बन्ध में मालुंक्यपुत्ता को दिये गये उपदेशों के माध्यम से सिद्ध होता है। फिर भी–हे मालुंक्यपुत्त, यदि कोई मनुष्य अपने शरीर में बाण का विशैला शल्य चुभाने के उपरान्त उसे छटपटाहट का सामना करना पड़ता है। इससे आप्त मित्र शल्य–क्रिया करने वाले वैद्य को बुला सकेगा। किन्तु यदि वह रोगी उससे कहे कि मैं इस जगत् शल्य को तब तक हाथ नहीं लगाने दूँगा, जबतक कि मुझे इन प्रश्नें के उत्तार नहीं प्राप्त हो जाते हैं। कि यह तीर किसके द्वारा मारा गया है ? वह मारने वाला कौन था? किस वर्ण का था वह काला था या गोरा ? उसका धनुष किस तरह का था ? धनुष की रस्सी किन तत्वों के मिश्रण से बनी हुई थी ? इस प्रकार के प्रश्नों पर विचार तत्वमीमांसा की दृष्टि से किया गया है। यहाँ तक मालुंक्यपुत्त, उस परिस्थिति में वह मनुष्य को इन बातों को जानने के पहले ही मर जायेगा। इस प्रकार जो कोई इस बात पर अड़ा रहेगा कि उससें इस जगत् के शाश्वत बातों का कोई न कोई कारण होगा। यहीं कारण है कि अशाश्वत, आदि बातों का स्पष्टीकरण करना परम आवश्यक माना जाता है। इसके बिना मैं ब्रह्मचर्य आचरण का पालन नहीं करूँगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. धम्मपदं, पृष्ठ 142
2. विशेष द्रष्टव्य– गीता, अध्याय 2/4/11/13 और 18
3. नीतिशास्त्र का सर्वेक्षण, पृष्ठ 287
4. नीतिशास्त्र का सर्वेक्षण, पृष्ठ 293
5. डॉ. भिक्षु धर्मरक्षित, सुत्तनिपात, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2003, पृष्ठ 81
6. स्वामी द्वारिकादासशास्त्री, बुद्धचरितम्, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, 2013, पृष्ठ 140
7. पॉल कारुस, बुद्ध गाथा, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरककार, दिल्ली, 2012,
8. ऋग्वेद, 1/164/46
9. रिलीजन इन दी मेकिंग, पृष्ठ 39
10. भारतीय दर्शन की रूपरेखा, पृष्ठ 139.

****

म.प्र. के आर्थिक विकास में कृषि का महत्व एवं योजनाएं

निशा विश्वकर्मा* डॉ. एस.सी. हर्णे**

शोध सारांश – वित्त वर्तमान समय की आवश्यकता है। बिना वित्त के वर्तमान में सफल होना असंभव सा हो गया है। भारत एक कृषि प्रधान देश है। आर्थिक क्षेत्र की प्रत्येक क्रिया के संचालन और विस्तार के लिये वित्त या साख की आवश्यकता होती है। यह बात ग्रामीण क्षेत्र के साथ-साथ कृषि पर भी लागू होती है। कृषि क्षेत्र की अपनी ही कुछ खास विशेषताऐं होती हैं, जिसके कारण कृषि साख औद्योगिक एवं अन्य क्षेत्रों से भिन्न होती है। यही कारण है कि कृषि के विकास के लिए पर्याप्त मात्रा में साख सुविधायें उपलब्ध नहीं हो पातीं। कृषि में स्थाई लागत के लिये जहां बड़ी मात्रा में पूंजी की आवश्यकता होती है, वहीं बीज, उर्वरक, कीटनाशक, कृषि यंत्र आदि के लिये भी ऋणों की जरूरत होती है। कृषि व्यवसाय में बचत की राशि कम होने के कारण कृषकों को अपनी खेती के लिये दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है। कृषकों को कृषि कार्य के लिए वित्त में किसी भी प्रकार की कठिनाई न हो, इसलिए शासन के द्वारा कृषकों के लिए अनेक योजनाऐं संचालित की जाती रही है।

प्रस्तावना – कृषि मानव सभ्यता की सबसे प्राचीन उद्यमों में से एक है, क्योंकि प्राचीन समय में मानव के पास औद्योगिक तकनीक का ज्ञान नहीं के बराबर था। इसलिए वह अपने आसपास की भूमि अथवा स्वयं की भूमि पर कृषि कार्य अपने जीवन निर्वाह हेतु करता था, जो अपनी परिपक्व अवस्थाओं में पहुंच चुकी थी। अठारहवीं शताब्दी तक देश में कृषि उन्नत अवस्था में थी। भारत में अंग्रेजों के आगमन के पश्चात् उनके मिलों में बने माल की बिक्री अनियोजित षड़यंत्र के कारण कृषि की अवनती प्रारंभ हो गयी। औपनिवेशक व्यवस्था ने कृषि क्षेत्र में विभिन्न परिवर्तन किये, ताकि वे अपनी औद्योगिक क्रांति के लिए कच्चा माल उत्पादित कर सके। इस नीति के अंतर्गत अंग्रेजी शासकों ने कृषि क्षेत्र में जमींदारों का नया वर्ग खड़ा कर दिया और काश्तकारों तथा किसानों से लगान प्रारंभ कर दिया। धीरे-धीरे कृषि की अवनति प्रारंभ हो गई और किसान निर्धन होने लगे और कृषि व्यवसाय केवल जीवन निर्वाह का साधन बनकर रह गया, लेकिन शासन के द्वारा स्वतंत्रता के बाद बिचौलियों को समाप्त करने के लिए समय-समय पर आवश्यक कदम उठाये गये।

वर्तमान में कृषि एवं उद्योग का भी गहरा संबंध है। औद्योगीकरण की सफलता काफी सीमा तक कृषि पर निर्भर होती है। कृषि में सुधार एवं विकास के लिए बिना औद्योगीकरण केवल एक स्वप्न मात्र है। उद्योग धन्धे का प्रमुख भोजन कच्चा माल होता है। कच्चे माल के बिना निर्मित माल की कल्पना भी नहीं की जा सकती और कच्चा माल हमें उन्नत कृषि से ही उपलब्ध होता है। इसलिए'सुकरात' ने भी कहा है – 'जब खेती फलती-फूलती है, तब सब धन्धे पनपते हैं, किन्तु जब भूमि को बन्जर छोड़ दिया जाता है, तब अन्य सभी धन्धे नष्ट हो जाते हैं।' वास्तव में कृषि ही देश के आर्थिक ढांचे की रीढ़ की हड्डी है।

मध्यप्रदेश में वित्त की आवश्यकता – कृषक चाहे मध्यप्रदेश का हो या भारत के किसी भी स्थान का, प्रत्येक कृषक को मुख्य रूप से दो उद्देश्यों के लिये ऋणों की आवश्यकता होती है। प्रथम – कृषि कार्य को सुचारू रूप से चलाने के लिए कृषकों को सिंचाई, बीज, उर्वरक, कृषि यंत्र आदि। द्वितीय – कृषकों को अपनी घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति जैसे खाद्यान्न, कपड़ा, मकान निर्माण, विवाह आदि के लिए। प्रथम ऋण का उद्देश्य आय में वृद्धि एवं लाभ कमाना होता है। द्वितीय ऋण घरेलू निजी उद्देश्य को पूरा करना होता है। इससे आय में किसी भी प्रकार की वृद्धि नहीं होती।

वर्तमान में म.प्र. में कृषि ऋण के अनेक स्त्रोत हैं। इन्हें दो भागों में बांटा जा सकता है।

कृषि ऋण के स्त्रोत

संस्थागत स्त्रोत	**गैर संस्थागत स्त्रोत**
1. सहकारी संस्थायें	1. महाजन
अ) प्राथमिक सहकारी समितियां	2. व्यापारी
ब) जिला सहकारी बैंक	3. बड़े कृषक
स) राज्य सहकारी बैंक	4. जमींदार
2. भूमि बन्धक या भूमि विकास बैंक	
3. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	
4. व्यापारिक बैंक	
5. सरकार	
6. राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक	

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीय समंकों पर आधारित है। यह संकलन – पत्र पत्रिकाओं, ग्रंथालयों, पुस्तकों आदि से लिया गया है।

प्रस्तुत शोध के उद्देश्य – प्रत्येक शोधार्थी अपने शोध के कुछ उद्देश्य निश्चित करता है। उसी के आधार पर शोध कार्य सम्पन्न किया जाता है। उद्देश्यों के आधार पर शोध कार्य करने में आसानी होती है। प्रस्तुत शोध पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नानुसार हैं :-

1. मध्यप्रदेश में कृषि कार्य से जुड़े परिवारों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. कृषि कार्य करने वाले परिवारों की आय वृद्धि का पता लगाना।
3. कृषि से संबंधित समस्याओं एवं कठिनाईयों का पता लगाना।

*शोधार्थी (वाणिज्य) बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** निर्देशक एवं विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय नर्मदा महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

4. कृषि विकास हेतु शासकीय योजनाओं की समीक्षा करना।
5. कृषकों को शासन की योजनाओं के प्रति जागरूक करना एवं योजनाओं का अधिकतम लाभ लेने हेतु प्रेरित करना।

शोध अध्ययन का महत्व - प्रस्तुत शोध अध्ययन द्वारा मध्यप्रदेश के कृषि विकास में शासकीय योजनाओं के मूल्यांकन का महत्व इसलिए बढ़ जाता है, क्योंकि इससे रोजगार, स्वरोजगार, उत्पादन के क्षेत्र की वर्तमान स्थिति एवं भविष्य की संभावनायें दृष्टिगोचर हो सकेगी, जिससे मध्यप्रदेश के कृषकों को बेहतर विकल्प के रूप में इस साधन को अपनाने की प्रेरणा प्राप्त हो सके एवं वे शासकीय योजनाओं का पूर्ण लाभ उठा सके। म.प्र. शासन के द्वारा कृषकों के लिए अनेकों योजनाएं चलाई जा रही हैं, जो इस प्रकार हैं :-

1. कृषक मित्र योजना
2. राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना
3. अन्नपूर्णा योजना
4. बलराम ताल योजना
5. सघन कपास योजना
6. आइसोपाम योजना
7. गन्ना विकास योजना
8. लघु सिंचाई योजना के अंतर्गत नलकूप कल्याण योजना।

म.प्र. में कृषि - मध्यप्रदेश एक कृषि प्रधान राज्य है। प्रदेश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या की आजीविका का साधन कृषि पर निर्भर है। मध्यप्रदेश के सकल घरेलू उत्पाद में (GSDP) कृषि का योगदान 2005-06 में था, जो 2013-14 में बढ़कर 33.22 प्रतिशत हो गया। कृषि विकास की विभिन्न योजनाओं के द्वारा कृषि की उत्पादकता बढ़ाने के प्रयास किये जा रहे हैं। मध्यप्रदेश में कृषि की स्थिति को निम्न तथ्यों की सहायता से समझा जा सकता है।

मध्यप्रदेश की कृषि वृद्धि दर :-

तालिका 1 : (1996-97 से 2013-14) प्रतिशत में

1996-97	2000-01	2005-06	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14
5.63	- 26.27	7.04	0.24	18.17	18.63	23.28

Source - CSO of Minister of Agriculture (2013-14)

मध्यप्रदेश में कृषि की वृद्धि दर 2004-05 की कीमत के आधार पर 2000-01 को छोड़कर (- 26.27) लगातार बढ़ती रही है। वर्ष 2010-11 में यह 0.24 के निम्न स्तर पर रही। 2011-12 में पुन: बढ़ना प्रारंभ होकर 2013-14 में 23.28 प्रतिशत पहुंच गई, जो भारत में सर्वाधिक रही।

वाणिज्यिक फसलें - म.प्र. की मुख्य वाणिज्यिक फसल कपास एवं गन्ना है। गन्ने की तुलना में कपास प्रमुख वाणिज्यिक फसलों का उत्पादन की बुवाई अधिक क्षेत्र में की जाती है। 2009-10 में 74.81 हजार हेक्टेयर में गन्ना एवं 630 हजार हेक्टेयर में कपास बोया गया था, जो 2013-14 में बढ़कर गन्ना 102 हजार हेक्टेयर और कपास 580.74 हजार हेक्टेयर हो गया। वाणिज्यिक फसलों में वृद्धि को निम्न तालिका से समझा जा सकता है :-

तालिका 2 : मध्यप्रदेश की मुख्य वाणिज्यिक फसल (हजार मिट्रिक टन)

फसलें	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14
गन्ना	185.07	196.94	196.94	276.01	280.10
कपास	746.05	1017.55	1164.12	1173.27	1236.10

स्त्रोत :- आर्थिक समीक्षा म.प्र. आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय 2015-16, पृ. 41.

गन्ना उत्पादन 2009-10 में 185.07 हजार मिट्रिक टन से बढ़कर।

गन्ना उत्पादन 2013-14 में 280.10 हजार मिट्रिक टन 2009-10 से बढ़कर

कपास उत्पादन 2013-14 में 1236.10 हजार मिट्रिक टन हो गया।

अध्ययन की समस्या - मध्यप्रदेश में कृषकों की संख्या अधिक है। कृषि कार्य यहां प्रमुख कार्य है एवं यह जीवन निर्वहन का साधन बना हुआ है। कुछ कृषक तो बड़े कृषक हैं, जो जागरूक भी हैं, लेकिन छोटे कृषक पुरानी परम्परागत तरीकों से ही कृषि कार्य कर रहे हैं। इससे इनकी आर्थिक स्थिति में वृद्धि नहीं हो पा रही है। इसका मुख्य कारण अशिक्षा, पूंजी की कमी, जोखिम वहन करने की क्षमता में कमी, जागरूकता का अभाव, अध्ययन की प्रमुख समस्या है।

अध्ययन के सुझाव - शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत सुझाव निम्न हैं :-

1. वर्तमान समय की आवश्यकता को देखते हुए शिक्षा के स्तर में सुधार की आवश्यकता है।
2. कृषकों को शिक्षित करना एवं नई-नई तकनीक एवं योजनाओं की जानकारी देने के लिए प्रशिक्षण प्रोग्राम व कार्यशाला का आयोजन करना।
3. समय-समय पर कृषकों को वित्त/पूंजी के लिए ऋण उपलब्ध कराना।
4. कृषि अनुसंधान पर जोर दिया जाना चाहिए, जिसका मुख्य उद्देश्य 'कम लागत पर अधिक उत्पादन' हो, जिसे कृषकों तक इनके लाभदायक परिणाम की जानकारी तुरन्त पहुंचाए जाने की व्यवस्था की जाना चाहिए।

शोध अध्ययन का निष्कर्ष - अल्प विकसित देशों से आर्थिक विकास में कृषि की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है। अल्पविकसित राष्ट्र, जिनका प्रमुख व्यवसाय कृषि है, अपने सीमित साधनों द्वारा आर्थिक विकास की ऊंची दर तब तक प्राप्त नहीं कर सकते, जब तक कि वे आधारभूत कृषि उद्योग को उन्नत न कर लें। कृषि की उन्नति इस क्षेत्र के आर्थिक विकास की कृषि योजनाओं से है, जिससे किसानों के विकास के साथ-साथ मध्यप्रदेश का भी विकास हुआ है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. कृषि अर्थशास्त्र - डॉ. एस.सी. जैन
2. भारतीय अर्थव्यवस्था - डॉ. ऋतु तिवारी, (म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल)
3. ग्रामीण एवं भारतीय अर्थव्यवस्था - श्री सुबहसिंह यादव
4. मध्यप्रदेश शासन की कल्याणकारी योजनाएं एवं कार्यक्रम

****

Social Norms & Antisocial Conduct - Dalit Lives Through The Eyes Of Bama & Valmiki

Tripti Sadana* Dr. Parneet Jaggi**

Abstract - Bama one of the first Dalit women writers, portrays her emotional journey and feelings in her very famous 'Karukku'. This book, originally written in Tamil, encompasses autobiographical phases of her life as a dalit and metaphorically describes the usual lives of dalits in India. Similarly in Sangati, Bama portrayed how conversion to Christianity has, brought irreversible disadvantages to Dalit community and made their position even worse, especially for Dalit women. Om Prakash Valmiki, the other most popular writer in dalit literary works, has portrayed the life of Bhangis in his widely appreciated book titled as 'Joothan'. Valmiki has done a tremendous work in Joothan, to depict how Dalit lives were dependent and influenced by the upper caste. This research paper is an attempt to explain the grieved impact of such oppression on dalits, as portrayed by Bama & Valmiki in their respective literary works.

Introduction - Initiated by Dr. B.R. Ambedkar, Dalit literature has prospered as a ground-breaking movement to change the mindset of exploited community of dalits. Ambedkar states: "Immaculateness is rich and white or whitish, pollution is poor and dull. Shrouded forces of riches can be effectively followed in each primitive Brahminical idea of the perfect. Material setting of immaculateness and magnificence and noticeable quality and direction and solaces is likewise riches. Monetary division is reflected in the social characterizations. In any case, it ought not to be enrolled that station is racial or economic"(Ambedkar 49). The act of distance was lawfully abrogated by the Constitution of India in 1950. Despite that, even today, Dalits are exposed to extraordinary types of social and financial separation and segregation, physical and mental agony. When they make an effort to combat for their rights, they face anguish and threats from upper class resulting in harsh assaults and carnage. Female dalits are more vulnerable to such social inequity. They get discriminated on the basis of both gender and caste.

Dalit literature is more concerned about the problems faced by dalits in their routine lives and the cause of their origin. Christened as Faustima Mary Fatima Rani, Bama was born in a Dalit Christian family in Tamil Nadu. Karukku is a successful attempt of Bama to exemplify that education can help eradicate any kind of oppressions and let any community flourish in every aspect of life. The whole idea of using education as one of the bravest weapons, is supported by the protagonist's brother as well, who motivate her to educate herself to thrive in life and get out of repression enforced by upper caste.

In Sangati, Bama concentrates on work load which is daily done by Dalit females both at home and outside in addition to the beatings & scolding of their drunkard husbands. Dalit women are usually subjected to violent treatment by upper class landlords, the police and even by Dalit men in their homes. While, in Kurukku, Bama has recorded autobiographical episodes of her life since her childhood till the adulthood. Along with other family members, she was the victim of severe gruesome behaviour of upper castes through social separation, untouchability & suppression. Bama believes that empowerment of Dalits is possible only through education, employment and by them taking pride in their own identity. Karukku means Palymra leaves, with their serrated edges on both sides; they are like a double edged sword. Karukku highlights the oppression borne by Dalits at the hands of the police, the Panchayat, the upper castes and the church. Bama also highlights how Dalit women are oppressed further by Dalit men at home.

In Sangati, Bama concentrates on work load which is daily done by Dalit females both at home and outside in addition to the beatings & scolding of their drunkard husbands. Dalit women are usually subjected to violent treatment by upper class landlords, the police and even by Dalit men in their homes. While, Karukku talk about various types of violent oppression of Dalits, specifically on the paraiyar caste. The prominent feature of these literary works is that the God-like reputed organisations such as church too oppresses the Dalits even after they get converted into Christians. Karukku depicts how Dalit Christians are not allowed to sing in the church choir, are forced to sit separately away from the upper caste Christians, and are not allowed to bury their dead in the cemetery within the

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Supervisor, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

village, behind the church, but are made to use a different graveyard beyond the outskirts. The parayars converted to Christianity in order to escape the caste oppression at the hands of the orthodox Hindus. Bama points out that the church distorts the real image and teachings of Christ and preaches docility, meekness and subservience to the faithful while suppressing the radical, lacerative teachings of Jesus.

In Joothan, Valmiki enlightened the poor shape of food available to Bhangis. Throughout the country, several communities have widely varying food habits. It is well known that food is closely linked to ideas of the sacred and the wicked, and varies along the scale of social diversity. As far as Dalits food is concerned, Bhangis are far behind than rest of the nation. Valmiki, also discussed the religious habits of Dalits being influenced by the upper caste. The Bhangi community has its own God and Goddess because they were not permitted to worship the same God or Goddess as does the upper caste. It shows that how Dalits are influenced by them.

Valmiki also asserts that education is the only medium to escape the trap of Conspiracy. Being disgusted with blind Hindu orthodoxy, he denies his identity as a Hindu and interrogates the he wondered why one has to be a Hindu to be a good human being. Such moments of helplessness in the life of someone are capable to stir his faith in the established principles of life and the same happened with Valmiki. Such experiences made one thing clear in his mind that untouchability needs to be removed, abolished from the psyche of an average Indian and then only equality can be experienced.

On one hand, Valmiki holds Society as responsible for sorrows & painful life of Dalits; on the other, Bama presents Dalit women as bravely fighting back, often subverting their oppressor's ploys to put them down. Valmiki unravels the complicity between patriarchy and caste oppression. He argues that Dalits must find access to education (not merely primary but persevere to reach gains of higher education) and help in organizing, consolidating and unifying groups bound by oppression by different institutions that are in fact complicit, hand-in-glove, and inter-dependent. He shows how educated dalits as well as uneducated but organized dalits can work to break such a hegemonic nexus. Bama views herself as a "Dalit feminist" and ticks off Marxist writing that tends to become propagandist.

Bama and Valmiki might see possibilities of deliverance for oppressed Dalit in action backed by specific ideological thought. However, their writing never betrays any form of political rhetoric or shrill noises of a particular mode of thought. Both the writers Bama and Valmiki differ in their techniques of portraying their pain and anger, yet share a common agony in their writings, that make their stand out as unique voices and visions.

References:-

1. Ambedkar BR, Dr. Babasaheb Ambedkar. Writings and speeches, Vol.1:49; compiled by Vasant Moon. Bombay: Education Department, Government of Maharashtra, 1989.
2. Bama, Karukku Trans. Lakshmi Holmstrom.2nd ed. New Delhi: Oxford University Press, 2012.
3. Sehgal, Vikrant. "Empowerment of Dalit Women in Bama's Sangati" Socio-Political Concerns in Dalit Literature. Print.
4. Valmiki, Omprakash. "Joothan: A Dalit's Life." Columbia University Press, 2003.
5. Mukherjee, Arun Prabha. "Introduction in Omprakash Valmiki's Joothan: A Dalit's Life." New York: Columbia University Press, 2003.

****

उदयपुर जिले में भूमि उपयोग एवं संभावनाएँ - कृषि हेतु भूमि उपयोग एवं संभावनाऍ

डॉ. सौरभ त्यागी *

प्रस्तावना - प्रकृति का अस्तित्व परिवर्तन में निहित है। प्रकृति में विद्यमान मानव एवं भूमि ऐसे अन्योन्याश्रित घटक है जो समय, की आवश्यकतओं एवं क्षमता के अनुरूप क्रियाशील रहते है। भूमि मानव की वह क्रिडागन पटल है जहां वह अपनी समस्त क्रियाएं सम्पन्न करता है। मानव की गरीमा मय क्रिया कलाप भारतीय संस्कृति के रूप में जानी जाती है। मिट्टी के पंच तत्व के रूप में प्रमुख है जिसे तिलक लगाकर नमन वंदन किया जाता है। अन्न, रस एवं जल जो मानव आहार की प्रमुख आवश्यकता है, जो धरती के स्त्रोत है।

वर्तमान युग में मानव एवं भूमि के अनुपात में अन्तर शीघ्र गति से बढ़ रहा है। जिसका मुख्य कारण देश में जनसंख्या की बढ़ती हुई प्रतिशत वृद्धि दर है। आर्थिक विकास की विश्व होड़ ने मानव अर्थव्यवस्था में तीव्र गति से परिवर्तन किया है। जिसने राष्ट्र, प्रदेश एवं क्षैत्र तक को प्रभावित किया है। यही कारण है कि वर्तमान में भूमि भूगोल का ही नहीं प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में अधिकांश विषय एवं संकायों के अध्ययन का मुख्य आधार है।

राजस्थान के 33 जिलों में से एक उदयपुर जिला है जिसका ऐतिहासिक शहर उदयपुर **'झीलों की नगरी'**, **'राजस्थान का कश्मीर'** एवं **'पूर्व का वेनिस'** उपनामों से प्रसिद्ध है। उदयपुर राजस्थान के दक्षिण मध्य में $23^{0}46'$ से $25^{0}5'$ उत्तरी अक्षांश व $73^{0}90'$ से $74^{0}35'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित जो कि 13419 वर्ग किमी. में फैला हुआ है तथा इसकी समुद्रतल से ऊँचाई 577वर्ग मीटर आंकी गयी है। इसके पूर्व में चित्तौड़गढ़, उत्तर में राजसमंद, उत्तर-पश्चिम में पाली, पश्चिम में सिरोही, दक्षिण में डूंगरपुर तथा दक्षिण-पूर्व में प्रतापगढ़ स्थित है। उदयपुर का औसत तापमान अधिकतम 43^{0} से 44^{0} के मध्य रहता है तथा न्यूनतम तापमान 5^{0} से 6^{0} के मध्य रहता है। वार्षिक वर्षा 670 मिमी. से 920 मिमी. के मध्य होती है परन्तु वर्ष 2006 इसका अपवाद है जब 1787.80 मिमी वर्षा हुई थी।[1]

उदयपुर जिले में मुख्यत: लाल लोमी मिट्टी पाई जाती है जो कि पानी को अधिक समय तक सोख कर रख सकती है। इस मिट्टी में लौह अयस्क के ऑक्साइड पाये जाते हैं परन्तु नाइट्रोजन, फास्फोरस व कैल्शियम लवणों की कमी होती है। इस मिट्टी में चावल, मक्का, चना, गेहूँ, गन्ना आदि पैदा किये जा सकते हैं। उदयपुर के पूर्वी भाग में मिश्रित लाल व काली मिट्टी भी पाई जाती है जो कपास व मक्का व आदि फसलों के लिए अच्छी है। उदयपुर की प्रमुख खाद्यान फसलों में गेहूँ, जौ, मक्का, चावल, चना, एवं व्यापारिक फसलों में तिल, सरसों, मूंगफली, कपास, गन्ना, तम्बाकू, अमरूद, नींबू, आवला, सीताफल, गुलाब व मिर्च हैं।

उदयपुर की कृषि भूमि उपयोग प्रकार का अध्ययन करने से पूर्व उदयपुर जिले की भूमि की गुणवत्ताओं को जानना आवश्यक है जिसे भूमि के प्रकार के आधार पर निम्नलिखित तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है-

तालिका-1 : उदयपुर जिले की भूमि का प्रकार

क्र.	भूमि के प्रकार	कुल क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	तहसील जहां उपलब्ध है
1	काली भूमि	74477	मावली, गिर्वा, भीण्डर
2	रेड क्ले	147219	सलूम्बर, कोटड़ा, सराड़ा, खैरवाड़ा
3	हैवी क्ले	322346	गोगुन्दा, झाडोल, गिर्वा

स्त्रोत- कार्यालय, जिलाधीश (भू.अ.), उदयपुर

भूमि उपयोग एक क्रिया है जिसमें न्यूनतम प्रयासों से भूमि से खाद्यान्न व अन्य कृषि गत उत्पादनों की अधिकतम उत्पादकता लेना है। जनसंख्या संरचना के आधार पर भूमि के आदर्श उपयोग की योजना प्रस्तुत की जा सकती है। अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत भूमि उपयोग प्रारूप का अध्ययन निम्नलिखित भूमि उपयोग श्रेणियों के अन्तर्गत होता है-

1. जंगलात
2. कृषि अयोग्य भूमि

(अ) पहाड़

(ब) मानव बसाव

(स) मरूस्थलीय एवं क्षारीय भूमि

3. कृषि योग्य बंजर भूमि
4. पड़त भूमि
5. वास्तविक बोई गई भूमि
6. समस्त बोई गई भूमि
7. दुपज भूमि

उपर्युक्त वर्णित श्रेणियों के अनुसार जिले की भूमि का वर्गिकरण करने पर हमें यह ज्ञात होता है कि जिले में कृषि योग्य भूमि का प्रतिशत बहुत कम है इसके साथ ही समय के साथ यह और भी कम होता जा रहा है जो कि चिंता और शोध का विषय है। जिले की भूमि के उपयोग के बारे में विस्तृत विवेचना करने से पूर्व भूमि उपयोग की वस्तुस्थिति का ज्ञान कर लेना आवष्यक है। जिले में भूमि उपयोग का वितरण व विगत दषकों में इसमें परिवर्तन की तुलना को निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है-

तालिका-2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

जिले के कुल भौगोलिक क्षेत्र सन् 2011 में 1462109 हैक्टेयर है जिसमें वनों के अन्तर्गत 27.72 प्रतिशत, कृषि अयोग्य भूमि का 34.31 प्रतिशत इसमें कृषि के अतिरिक्त प्रयुक्त भूमि में 34.31 प्रतिशत भूमि योग्य

* सहआचार्य (भूगोल) पेसिफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

बंजर भूमि है जो कुल भूमि का 8.98 प्रतिशत क्षेत्र है जिसका जिले के भविष्य में कृषि विस्तार के लिए उपलब्ध कराया जा सकता है। चरागाह के अन्तर्गत मात्र 6.21 प्रतिशत भूमि है जो गुणात्मक दृष्टि से निम्न स्तर की है। पड़त भूमि कुल भूमि के 6.86 प्रतिशत भाग पर फैली हुई है। जिसे विशेष प्रयास कर जोत भूमि के अन्तर्गत लाया जा सकता है। वास्तविक बोई गई भूमि एवं दुपज कुल भूमि का 15.86 व 13.03 प्रतिशत है। जिले में 2001-11 की तुलना में 2011-18 में कुल भूमि का क्रमश: 6.68 व 4.16 प्रतिशत वन, 16.08 व 17.91 प्रतिशत वास्तविक बोई गई भूमि 15.86 व 13.03 प्रतिशत समस्त बोई गई भूमि 1.65 व 1.04 प्रतिशत दुपज भूमि है। इसके अन्तर्गत कमी व वृद्धि हुई है। वहीं कृषि योग्य बंजर भूमि में यह वृद्धि क्रमश: 8.89 व 10.98 प्रतिशत है जो कृषि भूमि उपयोग योजना के प्रतिकूल है। अत: जिले में इस भूमि की वृद्धि व ह्रास का आशय है कि कृषि विस्तार की योजनाएं सार्थक रूप से लागू नहीं हो पा रही है।

विगत दस वर्षो का अध्ययन करने पर कृषि योग्य बंजर भूमि में वृद्धि हुई है। इस और उचित ध्यान न देने के कारण यह वृद्धि हो रही है जो वर्ष 2001-11 में 8.66 प्रतिशत हो गया था किन्तु जागरूकता के कारण इसका अधिक विस्तार न होने दिया गया जिससे 2011-18 तक इसका प्रतिशत 8.98 तक रहा। अत: 2001-11 में वृद्धि 1.95 प्रतिशत थी व 2011-18 तक 0.32 प्रतिशत वृद्धि रही।

जिला भू अभिलेख विभाग से प्राप्त आँकड़ों से जिले का तहसीलवार विश्लेषण करने पर निष्कर्ष निकलता है कि वर्ष 2001-11 में सर्वाधिक कृषि अयोग्य भूमि सराड़ा में 153387 हेक्टेयर (30.58 प्रतिशत) है। अन्य तहसीलों में यथा सलूम्बर 16.57 प्रतिशत, गिर्वा 15.90 प्रतिशत, कोटड़ा 8.42 प्रतिशत, खैरवाड़ा 6.80 प्रतिशत, झाड़ोल 6.03 प्रतिशत, धरियावद 5.14 प्रतिशत, वल्लभनगर 4.82 प्रतिशत, गोगुन्दा 3.19 प्रतिशत है तथा सबसे कम मावली तहसील में 2.57 प्रतिशत है।

जिले के सभी तहसीलों में भूमि उपयोग का तहसीलवार स्वरूप जिसमें वन, कृषि अयोग्य भूमि, चारागाह, पड़त भूमि, बंजर, वास्तविक बोई गई तथा समस्त बोई गई एवं दुपज भूमि के हेक्टेयर व प्रतिशत में भूमि उपयोग के विस्तृत अध्ययन करने पर सुस्पष्ट होता है कि -

- जिले की कुल भूमि में 405327 हेक्टेयर क्षेत्र में वन है। जो कुल भूमि का 27.72 प्रतिशत है। जिसमें कुल वन क्षेत्र का 19.12 प्रतिशत भाग झाड़ोल तहसील में है। उदयपुर जिले में ये प्रतिशत झाड़ोल तहसील में सर्वाधिक है जो राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार है तथा सन्तुलित है। जबकि अन्य तहसीलों में गिर्वा में 9.35 प्रतिशत धरियावद में 8.50 प्रतिशत, गोगुन्दा में 7.19 प्रतिशत है। लेकिन तहसील मावली में मात्र 0.08 प्रतिशत वन कुल भू-क्षेत्र में विस्तृत है जो बहुत कम है। वनों के कम होने का कारण यहाँ के क्षेत्र का पहाड़ी होना है, अत: यहां झाड़ियां सर्वाधिक होती है। इसके अतिरिक्त वनीय क्षेत्रों को मानवीय आवश्यकता की पूर्ति के लिए काट दिया लिया जाता है। इससे मिट्टी के कटाव में तीव्रता, वाष्पीकरण को नियन्त्रित करना व भूमि की नमी को बनाए रखना आदि प्रभावित हो रहे है साथ ही भूमि के स्तर में गिरावट आई है।
- उदयपुर जिले में कृषि अयोग्य भूमि के अन्तर्गत 501641 हेक्टेयर क्षेत्र में आता है जो कुल भूमि का 34.31 प्रतिशत है। अगर इसको भू अभिलेख वृत के अनुसार देखते है तो सराड़ा में 30.58 प्रतिशत, सर्वाधिक कृषि अयोग्य भूमि है, जबकि सबसे कम मावली में 12981 हेक्टेयर (2.57 प्रतिशत) है इसके अतिरिक्त सलूम्बर में 16.57 प्रतिशत, गिर्वा में 15.9 प्रतिशत, कोटड़ा में 8.42 प्रतिशत, खैरवाड़ा 6.80 प्रतिशत, गोगुन्दा में 3.19 प्रतिशत है। सिंचाई के माध्यम से इस प्रकार की भूमि को कम करने का प्रयास किया गया है एवं उसे उपयोगी बनाया गया है, परन्तु कुछ ऐसे क्षेत्र है जिसमें बिल्कुल कृषि कार्य नहीं हो सकता है। क्योंकि इसमें पहाड़ी, उसर, मानव बसाव क्षेत्र क्षारीय व पथरीली क्षेत्र, चट्टानी भाग व जलाशय क्षेत्र आते है।
- जिले में कृषि योग्य बंजर भूमि का विस्तार 131352 हेक्टेयर है जो कि कुल भूमि का 8.98 प्रतिशत है। उदयपुर जिले में इसका कृषि योग्य बंजर भूमि का विस्तार भू-अभिलेख वृत्ता के अनुसार सभी तहसीलों में असमान है। सर्वाधिक मावली तहसील में 16.68 प्रतिशत है व सबसे कम कोटड़ा (2.36 प्रतिशत) तहसील में है। इसके अतिरिक्त गिर्वा 14.23 प्रतिशत, वल्लभगर 13.80 प्रतिशत, गोगुन्दा 12.99 प्रतिशत, सराड़ा 12.93 प्रतिशत, सलूम्बर 5.57 प्रतिशत, धरियावद 5-85 प्रतिशत, खैरवाड़ा 5.29 प्रतिशत, झाड़ोल में 3.07 प्रतिशत कृषि योग्य बंजर भूमि है। वर्ष 1990-91 की तुलना में इसका विस्तार अधिक हुआ है। वर्तमान में वर्षा की कमी के कारण जलाशय भी सुखते जा रहे है। अत: सिंचाई के अभाव में भी कृषि योग्य भूमि बेकार पड़ी रहती है।
- उदयपुर जिले में चरागाह भूमि वर्ष 2000-01 में 90832 हेक्टेयर है जो कुल 6.21 प्रतिशत है। इसमें गिर्वा तहसील में 14600 (16.07 प्रतिशत) है। वर्षा की अनियमितता के कारण चरागाह क्षेत्र कम होते जा रहे है। जिले में सबसे कम क्षेत्र झाड़ोल तहसील 5.20 प्रतिशत व सर्वाधिक क्षेत्र गिर्वा का 16.07 प्रतिशत चरागाह ग्रस्त है। जबकि धरियावद में 11.76 प्रतिशत, मावली 10.69 प्रतिशत, गोगुन्दा में 9.84 प्रतिशत, सलूम्बर में 9-49 प्रतिशत, सराड़ा में 7.35 प्रतिशत, कोटडा में 6.13 प्रतिशत क्षेत्र चरागाह क्षेत्र है। उदयपुर जिले में पानी की उपलब्धता के कारण भूमि फसलों का विस्तार आधिक है। इस कारण भी चरागाह भूमि का क्षेत्र कम है। वर्तमान में सरकार द्वारा अनुपजाऊ व व्यर्थ पड़ी भूमि को भी चरागाह में बदलने का कार्य किया जा रहा है।
- वर्ष 2001-11 में उदयपुर जिले में पड़त भूमि 100255 हेक्टेयर है जो कुल भूमि का 6.86 प्रतिशत है। सबसे कम धरियावद में 7.62 प्रतिशत व सर्वाधिक गिर्वा तहसील में 13.56 प्रतिशत है इसके अतिरिक्त सलूम्बर में 11.70 प्रतिशत, मावली में 10.64 प्रतिशत, सराड़ा में 9.17 प्रतिशत, वल्लभनगर में 9.57 प्रतिशत, झाड़ोल में 9.16 प्रतिशत, गोगुन्दा में 8-11 प्रतिशत और कोटड़ा में 7.87 प्रतिशत है। वर्ष 2000-01 की तुलना में 2.03 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

जिले में समस्त बोई गई भूमि सन् 2017-18 के अनुसार 255912 हेक्टेयर क्षेत्र पर विस्तृत है। जो कुल भूमि का 17.50 प्रतिशत है। समस्त बोई गई भूमि में वास्तविक बोई गई भूमि व दुपज भूमि सम्मिलित है। इसका सर्वाधिक भाग गिर्वा तहसील का 54.37 प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त अन्य तहसीलों में बहुत ही कम क्षेत्र है। वल्लभनगर 7.86 प्रतिशत, धरियावद 7.33 प्रतिशत, मावली 5.67 प्रतिशत, सलूम्बर 5.52 प्रतिशत, झाड़ोल 4.15 प्रतिशत, सराड़ा 4.12 प्रतिशत, खैरवाड़ा 4.74 प्रतिशत, कोटड़ा में 3.74 प्रतिशत व सबसे कम गोगुन्दा तहसील में 2.51 प्रतिशत है। विगत दस

वर्षो में इस क्षेत्र में 9.05 प्रतिशत की कमी हुई है।

उदयपुर जिले में पड़त भूमि का क्षेत्र कुल भूमि क्षेत्र का 6.8 प्रतिशत है। वर्ष 2001-11 में यह 6-86 प्रतिशत व वर्ष 2011-18 में 8.60 प्रतिशत थी। अर्थात् वर्ष 2011-18 में पड़त भूमि में 3.7 प्रतिशत की वद्धि रही है। वहीं 2001-11 की तुलना में 2010-11 में पड़त भूमि क्षेत्र में सर्वाधिक क्षेत्र गिर्वा तहसील में व सबसे कम क्षेत्र कोटडा तहसील में है। 2001-11 में सबसे कम क्षेत्र गोगुन्दा में 8.11 प्रतिशत था। पड़त भूमि में वृद्धि का कारण पर्याप्त जानकारी के अभाव में भूमि उपयोग में अनियमितता और सिंचाई के लिए जल की उपलब्धता का अभाव रहा है। वहीं दूसरी और विगत वर्षो में कृषि अयोग्य भूमि में उत्तारोत्तार कमी आई है। वर्ष 2001-11 में 35.99 प्रतिशत है तथा वर्ष 2011-2018 में इसका प्रतिशत 34.31 प्रतिशत रह गया जो कि वर्ष 2001-2011 की तुलना में 1.68 प्रतिशत कम रहा है।

उपर्युक्त आँकड़ों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि उदयपुर जिले की भौगोलिक स्थिति पहाड़ी होने के कारण कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता कम है तथा विगत वर्षों में उपलब्ध भूमि में भी विभिन्न कारणों से लगातार कमी आ रही है। इस प्रकार की कमी से एकतरफ कृषि उपज पर प्रभाव पड़ रहा है वहीं दूसरी तरफ अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार पर भी इसका प्रभाव पड़ रहा है। अत: इस विषय पर गहन शोध कर उपाय खोजने की आवष्यकता है।

संभावनाएँ – उदयपुर जिले की भौगोलिक स्थिति और उपलब्ध भूमि के विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त होते हैं कि संभवत: कुछ सामान्य नीतिगत एवं व्यवहारिक उपायों से भी कृषि भूमि की उपयोगिता को बढाया जा सकता है साथ ही कृषि भूमि की उपलब्धता में हो रही लगातार कमी को रोका जा सकता है। इसके लिए निम्न संभावनाएँ हैं-

- प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि कृषि योग्य बंजर भूमि में यह वृद्धि क्रमश : 8.89 व 10.98 प्रतिशत है जो कृषि भूमि उपयोग योजना के प्रतिकूल है। अत: जिले में इस भूमि की वृद्धि का आशय है कि कृषि विस्तार की योजनाएं सार्थक रूप से लागू नहीं हो पा रही है। वर्तमान समय में तकनीकी प्रयत्नों के द्वारा बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाया जा सकता है और फसलों के उत्पादन में उत्तारोत्तार वृद्धि की जा सकती है।
- यह एक ऐसी भूमि है, जिसको साफ करके खेती के अन्तर्गत लाया जा सकता है। सरकारी संस्थाओं ने इस कार्य में सहयोग भी दिया है। वर्तमान में कृषि जगत में क्रान्तिकारी परिवर्तनों से व्यक्तिगत स्वामित्व एवं कृषकों द्वारा वाणिज्यिक फसलों के उत्पादन की ओर बढ़ती प्रवृति के कारण बंजर भूमि पर विकास को नये नये आयाम दिये जा रहे है, जिसके उदाहरण जिले में नमूने के तौर पर देखे जा सकते है।
- जिले में कृषि अयोग्य प्रकार की भूमि 34.31 प्रतिशत भू - भाग के अन्तर्गत आती है। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार सर्वाधिक बंजर, पहाडी व उसर भूमि का फैलाव सराड़ा तहसील में है। जो उदयपुर के दक्षिणी क्षेत्र में स्थित है। उदयपुर जिले में अरावली पर्वत श्रृंखला का विस्तार होने से बंजर व पथरीली भूमि की अधिकता है। कृषि के अतिरिक्त प्रयुक्त भूमि की मात्रा के वितरण में मार्बल व्यवसाय सर्वाधिक विकसित होने से तथा नगरीयकरण के फलस्वरूप इस भूमि की मात्रा अधिकाधिक देखी जा सकती है। इस प्रकार की भूमि का उपयोग यद्यपि कृषि कार्यो के लिए नहीं किया जा सकता है परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से यह कृषि योग्य भूमि को बढ़ा सकता है। इस प्रकार की भूमि के आवासीय और व्यावसायिक उपयोग पर बल दिया जाना चाहिए जिससे कृषि योग्य भूमि का इन कार्यों में उपयोग ना हो और वह सिर्फ कृषि के लिए उपलब्ध रहे।
- जिले की लगभग 8.60 प्रतिशत भूमि पड़त भूमि है जो समय पर वर्षा न होना, सिंचाई के लिये पानी उपलब्ध न होना, किसान की असमर्थता व मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने के लिए भी पड़त भूमि रखी जाती है। यह भूमि कुछ समय खाली रहने पर यह अपनी उर्वरा शक्ति फिर से प्राप्त कर लेती है। पड़त भूमि में वृद्धि का प्रमुख कारण पर्याप्त जानकारी के अभाव में भूमि उपयोग में अनियमितता और सिंचाई के लिए जल की उपलब्धता का अभाव रहा है। इस प्रकार की भूमि के उपयोग से सम्बंधित जागरूकता फैला कर इसका समुचित उपयोग किया जा सकता है।
- भूमि उपयोग की तालिका से स्पष्ट है कि कृषि अयोग्य भूमि में कमी एवं वृद्धि स्थानीय तहसील की भौतिक एवं भौगोलिक दशाओं के कारण हो रही है अत: सभी तहसीलों में भूमि की प्रवृतियां एक समान नहीं होने से कृषि भूमि का प्रारूप व विकास का सही नियोजन नहीं हो रहा है। इसके लिए तहसील स्तर पर भूमि का अध्ययन और उसके उपयोग के तरीके सुझाये जाने आवष्यक है।
- जिले में विगत कुछ वर्षो में वास्तविक बोई गई भूमि में कमी आई है, इसके संभावित कारणों में जनसंख्या वृद्धि व पानी की कमी को प्रमुख माना जा रहा है। इसके अतिरिक्त मृदा की उर्वरता में कमी के साथ जलवायु सम्बन्धी तत्वों का प्रभाव फसलों के उत्पादन एवं वितरण पर पड़ता है। इस प्रकार की भूमि के उपयोग की कमी के कारणों पर पर्याप्त शोध किया जाना आवष्यक है तथा प्राप्त कारकों का निवारण किया जाना चाहिए।

निष्कर्षता: कहा जा सकता है कि जिले की भौगोलिक स्थिति का इसकी भूमि की उपयोगिता पर गहरा प्रभाव होता है। चूकि उदयपुर जिला अरावली पर्वत श्रेणी पर स्थित है अत: भौगोलिक विषमता का होना यहाँ सामान्य बात है। इसके साथ ही औद्योगिक विकास, जनसंख्या वृद्धि और उदयपुर शहर के अनियोजित विकास ने भी कृषि भूमि के उपयोग को प्रभावित किया है। राज्य सरकार तथा सम्बंधित विभागों द्वारा पर्याप्त नियोजन तथा कृषि भूमि के विकास के प्रति सजग प्रवृति इसके विकास और संरक्षण में सहयोग कर सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजस्थान सांख्यिकी-2009, आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय, राजस्थान, 2010-11
2. रामकुमार गुर्जर एवं बी.सी. जाट, भारत का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2009
3. जिला भू-अभिलेख विभाग, कार्यालय जिलाधीश, उदयपुर
4. एच.एस.शर्मा व एम.एल.शर्मा, राजस्थान का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर 2013

तालिका-2 : उदयपुर जिले के भूमि उपयोग का तुलनात्मक अध्ययन वर्ष 2001-11 से 2011-18

भूमि उपयोग का वर्गीकरण	क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)		भूमि उपयोग (प्रतिशत में)		परिवर्तनप्रतिशत में
	2001-11	2011-18	2001-11	2011-18	
जंगलात	405327	405328	27.72	29.00	+1.28
कृषि अयोग्य भूमि	501641	501640	34.31	32.13	-2.18
कृषि योग्य बंजर	131352	13353	8.98	10.98	+2.00
चारागाह	90832	90831	6.21	5.20	-1.01
पड़त भूमि	100255	100254	6.86	8.60	+1.74
वास्तविक बोई गई भूमि	231846	231847	15.86	13.03	-2.83
वृक्षों के झुण्ड	856	855	0.06	1.06	+1.00
कुल भूमि	1462109	14621010	6.68	4.16	-2.52
समस्त बोई गई भूमि	255912	255911	17.5	8.05	-9.45
द्विपज भूमि	24066	24065	1.65	1.04	-0.61

स्त्रोत- कार्यालय जिलाधीश (भू.अ.), उदयपुर

****

आदिवासी महिला नेतृत्व की भूमिका

प्रियंका झाला*

प्रस्तावना – जैसा कि सभी परिचित है 90 के दशक के प्रारंभिक काल में तत्कालीन केंद्र सरकार ने पंचायतों को नया स्वरूप देने और वंचित सामाजिक समूहों को उचित स्थान प्रदान करने की दृष्टि से नया प्रारूप प्रस्तुत किया। इस अधिनियम को अनेक क्षेत्रों में परिवर्तनकारी कदम के रूप में स्वीकार किया गया। निरूसंदेह यह अधिनियम पूर्व की पंचायत व्यवस्था से पूर्णतया भिन्न और नया स्वरूप लिए हुए हैं।

सन 1992 के पंचायतीराज अधिनियम की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पंचायत की संस्थाओं को संसद और विधानसभाओं की तरह ही संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है अर्थात अब पंचायती राज संस्थाओं को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। इनका चुनाव भी हर 5 वर्ष में होना सुनिश्चित किया गया है। यही बात रेखांकित करने योग्य है। दूसरा प्रावधान धरातल कि इन संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी को सुनिश्चित किया गया है। इसी कारण पहले जहां एक तिहाई महिलाओं का आरक्षण था उसे अनेक राज्यों में 50% कर दिया गया है।

देश की आधी आबादी इन्हें युगो-युगो से इन संस्थाओं में आने की कोई गुंजाइश नहीं थी वहां इनकी उपस्थिति आवश्यक कर दी गई है। इसे हम क्रांतिकारी कदम कह सकते हैं। महिलाओं के लिए की गई यह व्यवस्था केवल वार्ड पंच तक ही सीमित नहीं है, बल्कि सरपंच, प्रधान एवं जिला प्रमुख तक के पदों में आरक्षण के माध्यम से महिला वर्ग की उपस्थिति निर्धारित की गई है। इस अधिनियम के प्रावधान और भी हैं लेकिन हमारा उद्देश्य यहां धरातल कि इन संस्थाओं में महिला एवं विशेषतया आदिवासी महिलाओं की भागीदारी और इस वर्ग में उभरता नेतृत्व को रेखांकित करते है।

प्रस्तुत लेख में अध्ययन के अनुसार संक्षेप में महिला जनप्रतिनिधियों की भागीदारी का वर्णन किया जा रहा है। हमारे शोध अध्ययन में महिला जनप्रतिनिधियों के शैक्षणिक, सामाजिक, आर्थिक और विविध प्रसंगों का अध्ययन किया गया है। इसमें ज्ञात हुआ है कि पंचायती राज में आदिवासी महिला जनप्रतिनिधियों के उभरते नेतृत्व के संबंध में समाज के हर वर्ग स्तर पर स्वीकृति मिल चुकी है। जनप्रतिनिधियों से जब पूछा गया कि आपके समाज में महिलाओं की भागीदारी को पुरुष समाज स्वीकृत कर चुका है। इसके उत्तर में 90% प्रतिनिधि नेताओं ने उत्तर में यही कहा कि अब पुरुष वर्ग ने बदलते संदर्भ में उन्हें पंचायतों के अंदर उन्हें समुचित आदर व स्थान देना शुरू कर दिया है। दूसरा प्रश्न प्रतिनिधि महिला नेतृत्व से पूछा गया कि आपके पंचायत में सरपंच, उपसरपंच या पंचायत समिति में जाने से आपको कैसा महसूस हो रहा है ? अधिकांश महिला प्रतिनिधियों ने कहा कि उन्हें वहां जाने से जो सम्मान मिलता है उससे वे प्रसन्न है। कुछ महिलाओं ने यह भी कहा कि नए नियम के तहत हमें जो सम्मान मिला है वह ग्रामीण समाज में पहले कभी नहीं मिला।

तीसरा प्रश्न इन प्रतिनिधियों के भागीदारी का था जब उनसे पूछा गया कि क्या आप ग्राम और पंचायत समिति स्तर पर बातचीत या बहस में भाग लेती है, तो लगभग सभी ने कहा हम जो हमारे गांव के लिए विकास के कार्य करवाने होते हैं उनमें खूब भाग लेते हैं। कई महिलाओं ने तो बताया कि हमारे कहने के कारण ही नालियां और सीसी रोड का निर्माण हुआ है। इनको देखकर हमें बड़ा गर्व होता है कि हमारी भी इन संस्थाओं में बराबरी की भागीदारी है।

चौथा प्रश्न शैक्षणिक योग्यता को लेकर था हमने अपने अध्ययन में पाया कि अधिकांश महिला नेता शिक्षित नहीं है, लेकिन अब परिस्थितियों में परिवर्तन आ रहा है। कुछ एक पंचायतों एवं पंचायत समितियों में दसवीं, बारहवीं, बीए, बीएड पास प्रतिनिधियों की संख्या भी धीरे-धीरे बढ़ रही है। यह परिवर्तन हमें आशा दिलाता है कि धरातल कि इन संस्थाओं में आने वाले समय में पढ़ी लिखी महिलाओं की भागीदारी सरपंच, उप सरपंच, प्रधान और उप प्रधान स्तर पर शिक्षित महिलाओं की वृद्धि हुई है।

सारर्थ यह कहना कदाचित गलत नहीं होगा कि विगत 10 वर्षों में धरातल कि इन संस्थाओं में महिला भागीदारी बढ़ रही है। महिलाओं में भी इस बात का अहसास है कि वह अब एक सम्मानजनक और जिम्मेदार पद पर आसीन है। आदिवासी अंचल में शिक्षा का प्रचार-प्रसार तेजी से बढ़ रहा है। अधिकांशत लड़कियों की स्कूलों में भी वृद्धि देखी जा सकती है। पंचायती राज की संस्थाओं में शिक्षित महिलाएं अधिक से अधिक भाग लें इसकी गुंजाइश बनती नजर आ रही है।

References :-

1. Balwant Rai Mehta, `Some Recent Trends in Panchayati Raj in India', Indian Journal of Public Administration, Vol, VIII, No. 4, October-December, 1962.
2. L.M. Singhvi, `Public Opinion is of utmost Importance' Kurukshetra, Vol XXXVIII , No. 6, March ,1989.
3. Prakash N.V. Rao, `Operational Dynamics of Panchayati Raj', Kurukshetra, June, 1987.
4. Prakash Chandra Suri, `Panchayati Raj- Power to the People', The Hindustan Times, New Delhi, June 2, 1993.

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

Ethnobotanical Significance of *Malvastrum coromandelianum* (L.)Gracke

Harsha Hinge* D.K. Billore Sanjay Vyas*****

Abstract - Ethnobotany term was coined by J.W. Harshberger in the 1895. It is a study of plants and humans; this represent good relationship between wild plants and the communities who reside in remote and far distant areas of forest and they utilize wide variety of plant resources fulfilment of their daily requirement. The first interest of humans in plant life dates back to the initial times when in views of his continued existence ,he soon accepted the need to become familiar with the plants of his environment and in food crop development. Concomitantly with the earliest need of plants for food there was a wholehearted awareness of the values of medicine. This knowledge descended from generation to generation in the form of folklore. This knowledge has now emerged as a science of Ethnobotany. False Mallow, Broom Weed, Clock Plant, Prickly Malvastrum is common name of *Malvastrum coromandelianum* (L.) Gracke .It belongs to family malvaceae. In tribal areas it is known as kheranti.The ethanobotanical survey reveals that this plants parts like root, leaf,bark ,flower and seeds used in treatment of diseases and also shows antiinflammatory, analgesic, antinociceptive, antibacterial, and antidysenteric activity, and the information were collected through indigenous tribal health practitioner man who sells medicines in local market of tribal and semi tribal areas.
Key words - *antinociceptive, clock plant, Harshberger, folklure, antidysentric.*

Introduction - Ethno botany term was coined by J.W. Harshberger in the 1895. It is a study of plants and humans; this represent good relationship between wild plants and the communities who reside in remote areas of forest and they utilize wide variety of plant resources for fulfillment of their requirement. This knowledge descended from generation to generation in the form of folklore. In present study, the information about plant was obtained during frequent field trips of local market of tribal and semi-tribal pockets of Khargone, Dhar, and Indore districts of Madhya Pradesh. False mallow, Broom weed, Clock plant, Prickly Malvastrum ,is common name of Malvastrum coromandelianum (L.) Gracke. It is belongs to family Malvaceae and herbaceous in habit. It is terrestrial plant.It is widely distributed throughout the world in all climatic condition tropical and sub-tropical and also extending in to temperate region.

Methodology- According to indigenous tribal health practitioners who sells medicines in local market these plant species (see in figure 1.1) is utilized by local people against various diseases. Mode of preparation and how tribal taken plant parts as medicine enlisted in table 1.

Result and discussion - Whole plant, leaves, flowers, seeds, root and root bark used for the treatment of various diseases. These plant part is effective against antidote, Anti-inflammatory sores, wound joint pain, muscular pain, jaundice, dysentry, sore throat, Lung and cough diseases, diabeties, fever, diarrhea. Plants are the main source of drugs which is mainly used by tribal area.i.e.in studied districts. The plant species or plant part used by them is very easily available and affordable. Mode of preparation and Mode of administration are also simple and convenient.and observation clearly shows that this plant has no side effects as tribal says.

Conclusion-Plants are the main source of drugs which is mainly used by tribal area.i.e.in studied districts. The plant species or plant part used by them is very easily available and affordable. Mode of preparation and Mode of administration are also simple and convenient. and observation clearly shows that this plant has no side effects as tribal says. The treatment given by the tribals is found very effective .There is need to raise awareness among people about documentation and to assist them for cultivation and conservation of the plant to local people of the area to meet their own medicinal needs.

References :-

1. Shukla , A.N., Srivastava,S., and Rawat A.K.S. 2010 An ethnobotanical study of medicinal plants of Rewa district , Madhya Pradesh Indian journal of traditional knowledge Vol.9(!), January 2010, pp191-202
2. Rai, R. 2012 Ethnobotanical Studies on Korku Tribes of Madhya Pradesh Forestry Bulletin, 12 (2), 2012

*Department of Botany, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.) INDIA
** Department of Botany, Govt. College, Rau, Distt. Indore (M.P.) INDIA
*** Department of Botany, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.) INDIA

3. Balkrishna, A. , Shrivastava , A., Shukla ,B.K.., Mishra R.K.., and Joshi, B.,2010 Medicinal plants of Morni hills Shivalik range, Panchkula, Haryana Journal of Non-Timber forest Products 25 (1) 1-14,2018
4. Bhattacharya, K., Mandel, S.,(2013) Study of diversity of the dicotyledonous medicinal plants of the district of Burdwan, West Bengal International journal of current research vol.5 Issue ,pp1635-1643, july,2013
5. Nag,K., and zia- ul-Hassan 2013 Ecological study of medicinal wild herbs in Mayur Garden at Bhopal city, Madhya Pradesh, India advances and applied science research, 2013 4(4):155-159
6. Bharti,V.K.,(2015) Ethno-medicinal plants used by the tribal people of shahdol district , Madhya Pradesh for the treatment of Rheumatism International journal for research in applied science and engineering technology, Volume 3 issue XII December 2015 ISSN :2321-9653

Observation table 1 Plant part and their uses

Plant part	Used as for medicine	Mode of preparation
Whole plant	Antidote, Antiinflamatory,Arthritis, Aphrodisiac, Dysentry , Jaundice, Joint pain, Muscular pain, Sore throat , Cough , Resolvent , Emollient	Cut the fresh plant in small pieces and boiled it with water until becomes halved.Make a dry powder of whole plant boiled with water until it becomes halved.
Leaf	Wound and sores, Ring worm	Applied paste of crushed leaves
Leaf	Dysentry, Jaundice, Diabetic,	Leaf decoctionLeaf and bark decoction
Leaf	Skin allergy and skin diseases, Diarrhea, Vomiting , Heartburn,	Hot extract with other plants.Leaf infusion
Flower	Diaphoretic and Pectoral Lung and cough diseases	Whole flower decoction
Seeds	Dysentry, Inflammed sores, used as emollient, resolvent and cooling agent	Decoction
Seeds	Premature ejaculation of semen due to erotica	Dry seed powder with sugar is given twice a day.

Figure 1.1 ***Malvastrum coromandelianum L.(Gracke)***

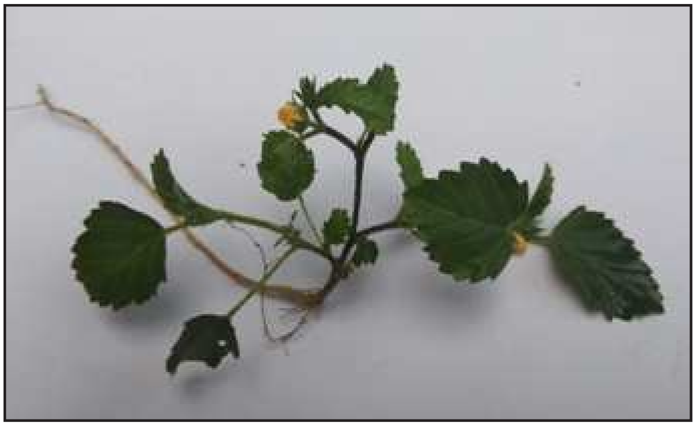

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण शिक्षा एवं संपोषित विकास

डॉ. रेनू जैन*

प्रस्तावना - रवीन्द्र नाथ ठाकुर के शब्दों में, 'ज्ञान ही सत्य है और सत्य से बढ़ कर संसार में अन्य कुछ नहीं।' हमें सत्य चाहिये किसी सुविधा और सम्मान के लिए नही वरन् अपनी आत्मा को प्रच्छन्नता से युक्त कराने के लिए विस्तार ही जीवन है, संकोच मृत्यु। आज हमारी कोई भी समस्या संकरी बुनियाद पर हल नहीं हो सकती।'यत्र विश्व भवत्येकं नीडं',[1] 'सर्वभूतहितेरत:','वसुधैव कुटुम्बकम्' के आदर्श को सामने रखते हुए भूमण्डलीकरण और बदलते मूल्यों के इस दौर में शिक्षा का ऐसा स्वरूप होना चाहिए जो न केवल व्यक्तिगत संभावनाओं और छिपी प्रतिभाओं को उजागर करें अपितु उसकी विषय वस्तु तथा प्रक्रिया समसामयिक जगत की आवश्यकताओं के अनुरूप विवेक देने वाली हो।

पृथ्वी पर मानव का अस्तित्व सुरक्षित पर्यावरण एवं प्रकृति पर ही निर्भर है। आज समसामयिक मूल्य-बोध के अभाव में मानव और पर्यावरण के सम्बन्ध सहज समन्वयात्मक न हो कर शोषण लोभ और आर्थिक व्यावसायिकता पर आधारित हो गए हैं। वर्तमान में यह मूल्यों का ह्रास शिक्षा के लिए गंभीर चुनौती है। नैतिक, प्राकृतिक और आध्यात्मिक शिक्षा द्वारा स्वयं को, अपने कर्त्तव्यों को, जीवन ओर प्रकृति के सम्बंधो को समझते हुए मानव को अपनी प्राथमिकताओं का निर्धारण कर अपनी प्रबुद्धता का परिचय होना होगा।[2]

आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी - ये जगत् के पाँच केन्द्रीय तत्त्व, पंच महाभूत प्राणि-जगत् को सब ओर से आच्छादित करने के कारण पर्यावरण कहलाते हैं (परित: आवृणोति इति पर्यावरण, परि+आवरण) पर्यावरण में जो भी जैविक (समस्त सजीव प्राणी, वनस्पतियाँ, पशु तथा मनुष्य) और अजैविक (भौतिक और रासायनिक) घटक हैं सब ब्रह्ममय है।[3] परमात्मा की सत्ता के अन्तर्गत प्रकृति अपना कार्य करती है। विश्व का संचालन करने वाला समष्टि एवं प्राकृतिक नियम 'ऋत'[3] हैं। यह सत्तार ईश्वरीय नैतिक जगत् में सत्य और धार्मिक जगत में 'यज्ञ' की धारणा के रूप में विद्यमान थी।

ब्रह्म द्वारा सृष्टि के आरंभ में मानव की उत्पत्ति के साथ यज्ञ[4] की उत्पत्ति का उल्लेख मिलता है। यज्ञ में त्याग और ग्रहण की क्रिया एक साथ चलती रहती है। जीवन का संतुलन आदान प्रदान के नियम के सुरक्षित रहने में ही है। सम्पूर्ण संसार चक्र एक विराट यज्ञ है जिसमें सूर्य, चन्द्र, तारे, वायु, पृथ्वी, औषधियाँ, वनस्पतियाँ, पशु-पक्षी सभी अपनी-अपनी आहुतियाँ दे रहे हैं। 'यज्ञ-भाव' ही संसार चक्र की धुरी हैं।

पर्यावरण[5] प्राकृतिक रूप से विद्यमान पारिस्थितिकी तालमेल है। एक दूसरे से सम्बंधित एक दूसरे पर निर्भर प्रकृति के समस्त तत्त्व सुचारू रूप से तभी विकसित हो सकते हैं जब इनमें संतुलन हों। ऋग्वेद के पृथ्वी सूक्त में मनुष्य और प्रकृति के अन्योन्य सम्बंध की व्याख्या 'यद् पिण्डे तद् ब्रह्माण्डें (जो कुछ शरी में है वही ब्रह्माण्ड में है) कह कर की गई है। यजुर्वेद में 'वायु, तेज, जल, पृथ्वी, दिन-रात सभी संतुलित रहते हुए सुख समृद्धि प्रदान करें।'[6] 'आकाश, वायुमंडल, पृथ्वी, जल और पौधे शान्तिमय हों।'[7] इस प्रकार की प्रार्थनाएँ की गई हैं।

प्रकृति परमात्मा की व्यवस्थापिका शक्ति है इसमें तनिक भी अप्राकृतिक तत्त्व या असामान्यता उत्पन्न होना प्रदूषण कहलाता है। मानव सभ्यता के विकास के फलस्वरूप मानव कृत अनेक गतिविधियों के कारण जब पर्यावरण अपना संतुलन खोने लगता है प्रकृति की त्रिगुणात्मक साम्यावस्था भंग हो जाती है तो वह नाशकारिणी हो जाती है। बढ़ती जनसंख्या प्राकृतिक संतुलन बनाए रखने वाले जीवन-सामग्री देने वाले, वन्य प्राणियों के आवास-वनों की कटाई से बढ़ी हुई प्राण घातक कार्बन डाई-ऑक्साइड भूमंडल के ताप को ही नही बढ़ा रही वरन् सल्फर डाई-ऑक्साइड को उत्पन्न कर अम्लीय वर्षा को भी जन्म दे रही है। कार्बन-डाई ऑक्साइड बढ़ने से जलवायु परिवर्तन कृषि को प्रभावित करता है। ध्रुवों की बर्फ पिघलने से समुद्र का तल उठता है और खारे पानी में डूबी खेती योग्य जमीन की उर्वरा शक्ति क्षीण हो जाती है। रसायनिक खाद कीटनाशक कूड़ा करकट तथा वैज्ञानिक द्रव्य के कारण धरती उर्वरता खो रही है। कारखानों के अवशिष्टों से अमृत जल विष हो रहा है। आणविक विस्फोटों, वाहनों से निकलते जहरीले धुएँ की कार्बन मोनोक्साइड रक्त में हिमोग्लोबीन को प्रभावित करती है। नाइट्रोजन ऑक्साइड फ़ेफड़ों में कैंसर, निमोनिया, मसूड़ो में सूजन आदि बीमारियाँ उत्पन्न करती हैं। ओजोन पर्त में छेद होने से सूर्य की तेज किरणे सीधी पृथ्वी पर आक्रमण कर त्वचा के कैंसर जैसे रोग उत्पन्न कर रही हैं।

पर्यावरणीय शोषण की विकृतियाँ, प्रचण्ड ताप, समय से पूर्व गर्मी की आहट, आँखों से ओझल हो गयी वर्षा तो कभी बेमौसम बरसात आदि हमें सचेत कर रही हैं कि प्रकृति और अधिक मानव हस्तक्षेप नहीं सहन कर सकती। 1972 में स्वीडन में मानव पर्यावरण पर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स में पर्यावरण प्रदूषण के कारणों पर विचार हुआ तथा पर्यावरणीय संकट से बचने के लिए हर स्तर पर पर्यावरण शिक्षा दिए जाने पर बल दिया गया। सौर मंडल में पृथ्वी ही ऐसा ग्रह है जिस पर जीवन संभव है इसे पर्यावरण शिक्षा द्वारा नष्ट होने से बचाना है। यह वर्तमान को बचाए रखनें, भविष्य को सुरक्षित रखने, समस्याओं के हल और बचाव की शिक्षा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में पर्यावरणीय शिक्षा के महत्तव को देखते हुए विचार वस्तु किया गया है -

'पर्यावरण के प्रति चेतना विकसित करने की परम आवश्यकता है यह बच्चों से आरंभ होकर सभी वर्गों एवं सभी वन्य वर्गो में होनी चाहिए

* एसोसिएट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र) आर्य कन्या डिग्री कालेज संघटक, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

पर्यावरणीय शिक्षा चेतना सभी विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के शिक्षण का अंग बने।'

पर्यावरण संरक्षण के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक संधियाँ की गई, सम्मेलन आयोजित किए गए, संगठन बनाए गए राष्ट्रीय और उत्तार प्रदेश के स्तर पर भी अनेक प्रयास किए गए। इन प्रयासों की सफलता के लिए सर्वप्रथम आवश्यकता है (प्रकृतिवादी शिक्षा के प्रचार द्धारा आध्यात्मिक दृष्टिकोण विकसित करने की, मूल्य-बोध की, तभी प्रकृति के साथ संवेदनशील सम्बन्धों का विकास होगा) अतीत की ओर लौटने की।

आज हमारे सम्मुख अस्तित्व का संकट उत्पन्न हो गया है इन संकट के क्षणों में अपने पूर्वजों के अनुभव का सहारा लेना होगा। हमारे पूर्वज प्रकृति को जीवन का स्रोत मानते थे और उसमें दैवी शक्ति की कल्पना करते थे। वेदों, उपनिषदों, महाभारत, मनुस्मृति, दुर्गासप्तशती आदि ग्रंथों में प्रकृति को अत्यंत उच्च स्थान दिया गया है। पर्यावरण के समस्त कारकों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए धावा, पृथिवी, वर्जन्य, आग्ने, सूर्य, जल, वरूण सभी को दैवी रूप प्रदान किया गया।[8] सूर्य को विश्व की आत्मा, जल को दैवी आप, पृथ्वी को माता, जल और वृक्ष को मित्र के रूप में माना गया। श्वेताश्वतर उपनिषद् मे कहा गया है जो चेतना जल में, अग्नि में, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में, औषधियों में एवं वनस्पति में व्याप्त है उसे नमस्कार है।[9] जल को समस्त औषधियों का आगार और शांतिदायक कहा गया है।[10]

मनुष्य यदि प्रकृति को अपनी ही तरह परम सत् का अंश मान ले उसके प्रति कृतज्ञता का मान रखें तो पर्यावरण असंतुलन और संकट से मुक्ति मिल सकती है। प्रकृति के नियमों के विपरीत आचरण करने वाला अनेक विकारों, व्याधियों से ग्रस्त हो जाता है। वन्य प्राणी, अनेक जीव-जन्तु, पेड़-पौधों के फूल पत्तों जैसा ही एक रंग धारण कर शत्रुओं से जीवन की रक्षा कर अस्तित्ववान रहते हैं। ये जीव-जन्तु भी हमारे लिए उपयोगी हैं भूमि की उर्वरता इन्हीं सूक्ष्म जीवियों पर निर्भर है यदि इनकी संख्या कम हो जाए तो प्रकृति विकृति में बदल जाती है। संभवत: इसीलिए अनेक वन्य प्राणी देवी-देवताओं के वाहनो के रूप में पूज्य माने गऐ हैं।[11]

पयार्वरण संरक्षण को शुद्ध करने में यज्ञ की भी महती भूमिका है। यज्ञ की सूक्ष्म ऊर्जा तरंग प्रकृति के समस्त घटकों के भीतर पहुँच कर वहाँ विद्यमान प्रदूषण व विषाक्तता को मिटा कर उपयोगी तत्त्वों का संचार कर सकती है। विषैली गैंसो में कमी आने से जनसमुदाय में सकारात्मक प्राण ऊर्जा का संचार होता है। आस-पास के क्षेत्रों में उत्पादक क्षमता में वृद्धि होती है। यज्ञीय ऊर्जा से पोषित सूर्य किरणों को धरती पर विद्यमान जलीय स्रोत अच्छी तरह से अवशोषित कर लेते हैं। इससे प्रकृति की 'रिसाइक्लिंग प्रणाली' संतुलित रहती है। वैदिक ऋषि सूर्य की किरणों से मृत प्राय शक्ति विहीन भूमि को उर्वरक बनाने का अनुरोध करते हैं इन्हीं ऋतुगणों (सूर्य की किरणों) ने आकाश और पृथ्वी के बीच सुरक्षा कवच के रूप में अयन मंडल का निर्माण किया है। आज पृथ्वी की आंतरिक पर्त की गति धीमी होने से चुम्बकीय क्षेत्र कमजोर हो रहा है, जगह-जगह छेद हो रहे हैं परिणामत: सौर विकिरण और कॉस्मिक किरणे सीधे धरती पर आकर प्रभावित अंगों पर कैंसर जैसे रोग कर रही हैं।

अथर्ववेद में हम पाते हैं कि यज्ञ करने से ओजोन परत (सुरक्षा कवच) भी पुष्ट हो सकती है। 'यह विस्तृत देवी स्वरूपा पृथ्वी शुद्ध संकल्पों से युक्त होकर चर्म रूपी ढाल अपने संरक्षण के लिए धारण करें'- यज्ञीय प्रक्रिया से इसे पुष्ट करने का संदेश दिया गया है। यज्ञ से वातावरण सुगंधित होता है[12] तथा ऐसी गैसे उत्पन्न होती हैं जो वातावरण का परिष्कार करती हैं यज्ञ को अम्लीय वर्षा से बचने का एक मात्र उपाय भी कहा गया है।

पर्यावरणीय असंतुलन को ठीक करने का एक महत्तवपूर्ण उपाय है वनीकरण। प्राचीन वैदिक संहिता में मानव-जीवन के दीर्घायु होने के लिए लता, वनस्पति, वृक्ष व नदी का महत्तव प्रतिपादित है। (नमोवृक्षेभ्य:, यजु. 16.17, 16.20)। जन्तु-जगत् और वनस्पति जगत् एक दूसरे से खाद्य-शृंखला से जुड़े हैं। प्राणि जगत् ऑक्सीजन ग्रहण करता है, कार्बन डाई-ऑक्साइड छोड़ता है यह कार्बन डाई-ऑक्साइड पौधों द्धारा अपना भोजन बनाने में प्रयोग होती है और बदले में पौधे ऑक्सीजन छोड़ते हैं इससे दोनों गैसों का सही अनुपात बना रहता है।

वनों का भूजल संरक्षण और बाढ़-नियंत्रण में भी योगदान है। वनों की उपस्थिति से जल का पृथ्वी में सोखना बढ़ता है। वहीं वृक्षों की सघनता व गहनता पानी में वेग को रोककर बाढ़ से होने वाली क्षति से समाज को बचाती है।

वनों से वन्य प्राणियों के आवास की समस्या, ऋतु परिवर्तन, वायु, जल-भूमि, ध्वनि-प्रदूषण, बाढ़ नियंत्रण, सूखे की समस्या, भूमि कटाव, मरूस्थलीकरण जैसी समस्याओं से मुक्त होकर पर्यावरणीय संतुलन को बनाया जा सकता है।

बच्चे ही भविष्य के कर्णधार हैं। आज पर्यावरण संरक्षण की विश्वव्यापी समस्या के निदान स्वरूप आरंभ से ही उनमें पर्यावरण के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास किया जाना चाहिए और शिक्षकों के निर्देशन में सर्वप्रथम विद्यालय से ही इसका क्रियान्वयन आरंभ होना चाहिए। पर्यावरण शिक्षा बहुत समय पूर्व से ही पाठ्यक्रम में जोड़ दी गई है। इसका व्यवहारिक प्रयोग होना चाहिए। पढ़ाई, खेलकूद तथा अन्य अनेक प्रतियोगिताओं के समान कक्षा, परिवेश की स्वच्छता, साजसज्जा आदि की भी प्रतियोगिता और पुरस्कार होने चाहिए। विद्यालय परिसर हरा-भरा, सुगंधित पुष्पों की क्यारियों से युक्त हो। कक्षाएँ खुली और हवादार हो विद्यालय में समय-समय पर हवन, धार्मिक-सभाएँ, प्रवचन, नैतिक कक्षाएँ आदि हों। उदाहरणों द्धारा, लघु नाटिकाओं, वार्त्ताओं आदि के द्धारा प्रदूषण की प्रक्रिया और निदान समझाया जाए। पौधों और जीव-जन्तुओं का पर्यावरणीय संतुलन में योगदान स्पष्ट किया जाए। पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता और उसके उपायों को प्राकृतिक संसाधनों के महत्तव को उदाहरण सहित समझाया जाए। पानी की टंकी की समय-समय पर सफाई, कीट नाशक दवाई का डाला जाना, कैंटीन की स्वच्छता आदि पर भी सबका ध्यान होना चाहिए। विद्यालय घनी आबादी वाले क्षेत्र में नही होना चाहिए अन्यथा ध्वनि प्रदूषण की संभावना होगी इसके निदान के लिए ध्वनि-अवरोधक कक्ष होने चाहिए। आज पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में प्रेम, दया, बलिदान, सामन्जस्य सौजन्य, सदाचार, संचय, शुचिता, सहिष्णुता आदि मूल्यों की शिक्षा द्धारा प्रकृति प्रेम, जीवों के प्रति प्रेम अहिंसा का भाव, वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना उत्पन्न की जा सकती है। बढ़ी जनसंख्या पर नियंत्रण के साथ, औद्योगिक तकनीक में सुधार, महानगरों के विस्तार पर प्रतिबंध, वृक्षारोपण आदि विधियों की सफलता मूलत: मानव के आंतरिक परिवर्तन पर, सामाजिक दृष्टिकोण पर निर्भर करती है। विकास और पर्यावरण को परस्पर पूरक मानते हुए प्राकृतिक संसाधनों के अनियंत्रित दोहन की हेतु उपभोक्ता संस्कृति को नकार, आर्थिक उदारीकरण को साकार करते हुए, एक जागरूक समाज का विकास करना है। पर्यावरण के प्रति सचेत नागरिकों का निर्माण करना, जो आने वाली पीढ़ी को कम से कम एक स्वच्छ प्राणवायु तो प्रदान करे सके। वस्तुत: टिकाऊ विकास वही है जो आने वाली पीढ़ियों की आवश्यकताओं

को पूरा करने की योग्यता को बिना जोखिम में डाले वर्तमान की आवश्यकताओं को पूरा कर सके।[13]

यही हमारी संपोषित विकास की धारणा है 1987 में बरन्टलैंड रिपोर्ट `Our Common future' में उसे परिभाषित करते हुए कहा गया है कि संपोषित विकास का अर्थ वर्तमान में लोगों की आवश्यकताओं व आकांक्षाओं को इस प्रकार पूरा करना है कि आगे वाली पीढ़ियों की अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने की सामर्थ्य पर कोई आँच न आए।

संपोषित विकास केवल तभी सम्भव है जब पर्यावरण का संरक्षण एवम् उसमें सुधार किया जाए इसके अतिरिक्त कोई भी विकास पथ तभी संपोषित है यकुल पूँजी सम्पत्ति या तो स्थिर रहे या उसमें वृद्धि होती रहे।[14] पर्यावरण की सम्यक् शिक्षा के द्धारा ही हम संपोषित विकास के लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अथर्ववेद की यह भावना सम्पूर्ण विश्व को एक घोसले के रूप में देखता है जिसमें सभी राष्ट्र प्रेम और सहयोग से रह रहे हैं।
2. ऋग्वेद में कहा गया है कि बुद्धिमानों से अपेक्षा है कि वे प्रकृतिगत दैवी-नियमों की मर्यादा में रहे अर्थात् प्रकृति के संतुलन को बिगाड़े नहीं।
   न ता मिनान्ति मायिनो न धीराव्रतां देवानां प्रथमा ध्रुवाणि
   न रोहसी अद्रुहा वेधामिर्न पर्वता विनमे तस्थिवांस:।
   ऋ 2 मं 3 स्.56-2989/
3. गीता में भगवान श्री कृष्ण ने पर्यावरण प्रकृति के आठ अंगों से समस्त ब्रह्माण्ड को आच्छादित माना है।
   भूमिरापोनलो वायु: एवं मनोबुद्धिरेव च
   अहंकार इतीयं में मिला प्रकृतिरब्टधा। गीता 7/4
4. यईशावास्यम् सर्वमिदं यत्किंच जगत्यांजगत्।
   ऋतं च सत्यं चामद्धित्त्पसाध्य जायत् ऋ 10/190/1
   यसत्यं बृहद्ब्रतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञ:
   पृथिवी धारयन्ति। अथर्ववेद 12/1/1
   सहयज्ञा: प्रज: सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापति:
   अनेन प्रसाविष्यहवेष वोडस्तित्वष्ट कामधुक् ।। गीता 3.10
5. इनसाक्लोपीडिया ब्रिटैनिका के अनुसार पर्यावरण उन दशाओं, प्रणालियों और प्रभावों का योगफल है जो जीवों और उनकी प्रजातियों के विकास, जीवन और मृत्यु को प्रभावित करता है।
6. शं नो वात: पवतां शं नस्तपतु सूर्य:
   शं न: कनिक्रदद देव: पर्जयो अभिवर्षतु। शुक्लयजुर्वेद संहिता 36/30
7. यजुर्वेद में प्रार्थना की गई है कि आकाश, वायुमण्डल, पृथ्वी जल और पौधे शांतिमय हो। ऊँ द्यौ शान्ति: अन्तरिक्ष शान्ति: पृथ्वी शान्ति: आप: शान्ति: ओषधय: शान्ति: वनस्वतय: शान्ति विश्वेदेवा शान्ति: ब्रह्मशान्ति सर्व शान्ति: शान्तिदेव शान्ति: सामा शान्ति रोधे ऊं शान्ति: शान्ति: शान्ति:।
8. प्रकृति की दिव्यता के प्रति हिन्दू विचार उनकी प्रकृति पूजा के रूप में लासित होते हैं: पार्थिवा: दिव्या: पराव: अरण्यानुत वै मृगा: शकुन्तान् पाक्षि बूमस्ते नो मुन्च त्वं हस:। अथर्व 11.6.8।
9. यो देवोऽग्नौ योडप्सु यो विश्वं भुवन माविवेश
   य ओषधीषु यो वनस्पतिषु तस्मै देवाय नमो नम:।
   श्वे. उप.
10. आपसु ये सोमो..........................ऋ. 1, 23.20
11. हेस-सरस्वती, सिंह-महाकाली, बैल-शिव,
    गधा-शीतला देवी, भैंसा-यमराज। पशु-पूजा का भाव
    अवतारों से सम्बंधित है- मत्स्य, कच्छप तारिंह, वराह आदि।
12. यस्तेगन्ध: पृथिवि सम्बभूव विग्रव्योसधयो यम आप।
    अथर्ववेद 12.23
13. 1987 की पर्यावरण और विकास के विषय में विश्व आयोग की जो रिपोर्ट Our Common Future नाम से प्रकाशित हुई उसमें टिकाऊ विकास का यह नारा प्रसिद्ध हुआ।
14. David w. Pearce and Jeremy J. Warford world without end, (Washington D.C. world Bank 1993) P-2

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Synthesis, Structural Characterization and Biological Aspects of O, N- Donar Schiff base ligand and its Fe(III), Co(II), Ni(II) and Zn(II) complexes

Rajiv Kumar Singh* Dr. Anand Sharma**

Abstract - A mono-functional bidentate Schiff base derived from 2-hydroxy-1-naphthaldehyde with o-toluidine and its four novel complexes of Fe(III), Co(II), Ni(II) and Zn(II) have been synthesized. Schiff base ligand and its metal complexes have been characterized by elemental analysis, molecular weight detrminations, molar conductance measurements, UV-vis., IR and ^{1}H-NMR spectral studies. The IR spectral data suggest the involvement of naphtholic oxygen after deprotonation and azomethine nitrogen in coordination to the central metal ion. The free ligand and its complexes have also been assessed in-vitro against a variety of fungal and bacterial strains.
Keywords - Bidentate Schiff base, 2-hydroxy-1-naphthaldehyde, Metal complexes, Spectral studies, Anti-microbial activities.

Introduction - Despite the numerous attempts to develop new structural prototypes in the search for new effective antibacterial compounds, the Schiff bases still remain as one of the most versatile type of compounds against microbes and, therefore, are useful structures for further molecular exploration. The imine or azomethine (›C=N-) group present in such compounds has been shown to be critical to their biological activities[1,2]. Schiff bases can stabilize different oxidation states of various metal ions, thereby offering the possibility to control the properties of transition metal complex in magnetism, catalysis, electronic spectra etc. 2-hydroxy-1-naphthaldehyde has been used widely to synthesize a large number of Schiff ligands and their metal complexes [3]. Transition metal complexes with Schiff base ligand not only display their intriguing chemical structures but also show many useful properties and applications in various fields [4].

In view of the above all facts, We repot herein the synthesis and characterization of O,N- donor Schiff base ligand (HL) and its four novel complexes of iron(III), Cobalt (II), Nickel (II) and Zinc (II). Further, the antimicrobial activities of the Schiff base and its complexes have also been assessed against a number of microorganisms and a comparision of the potenrial has been made therefrom.

Experimental - Ferric chloride hexahydrate, Cobalt chloride hexahydrate, nickel chloride hexahydrate, zinc chloride and m-nitroaniline were purchased from E.Merck and used without further purification. 2-hydroxy-1-naphthaldehyde was obtained from Hi-media and used as received. All other chemicals and solvents used were of AR grade.

Synthesis of Schiff base ligand (HL) - A mixture of of 2-hydroxy-1-naphthaldehyde (0.5 mol,10 ml) and o-toluidine (0.5 mol,10 ml) in ethanol was heated under refluxed for 1.5 hours at 60-65^{o}C. The solution was cooled to room temperature to obtained the yellow needle shaped crystals. These were washed with ethanol, dry ether and subsequently dried over anhydrous $CaCl_2$ in dasiccator.

Synthesis of metal complexes - The complexes were synthesized by refluxing the reaction mixture of metal salts)ethanol and double distilled water) and respective ligand in 1:2 molar ratios in benzene for 3 to 5 hours.On cooling, the resulting coloured complex precipitated out, which was filtered by suction, washed several times with ethanol and finally by ether and dried over anhydrous $CaCl_2$ in the desiccator. The purity of the compounds was checked by TLC using silica gel G.

Physical Measurements and Analytical data - Microanalysis of carbon, hydrogen and nitrogen of the compounds were carried out on Carlo Erba 1108 elemental analyzer. Metal contents were analyzed by AAS technique. Chloride was determined by standard procedure reported in the literature [5] . IR spectra were recorded on a Perkin-Elmer infrared spectrophotometer in the range 4000-400 cm^{-1}using KBr pallates. Electronic spectra of the complexes were recorded on a Helious-alpha spectrophotometer. The ^{1}H-NMR spectra of the compounds were recorded on a Bruker Avance 300 MHz in $CDCl_3$ or DMSO-d_6 using TMS as an internal standard. Molar conductance was measured at room temperature in DMSO using a dip type cell electrode. The molecular weights were determined by Rast

* Research Scholar (Chemistry) School of Chemical Sciences, Govt. M.V.M., Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor (Chemistry) School of Chemical Sciences, Govt. M.V.M., Bhopal (M.P.) INDIA

camphor method.

Antimicrobial studies - The antibacterial activity of compounds were evaluated by disc diffusion method against Escherichia coli and Staphylococcus aureus. Streptomycin was used as reference standard. The antifungal activity of the compounds were screened against two pathogenic fungi, Candida albicans and Aspergillus niger by the agar plate technique using Fluconazole as standard [6].

Results and discussion - The observed molar conductance (8.9 to 16.7 ohm^{-1} cm^{2} mol^{-1}) of all the complexes in 10^{-3} M dimethyl sulfoxide solutions indicate they are non-electrolytes and their monomeric nature has been confirmed my molecular weight determinations[7]. The resulting complexes are non-hygroscopic, airstable and coloured solids. The analytical results of the ligand and its metal complexes are enlisted in Table-1.

Table-1 (see in last page)

Infrared spectra - In order to study the binding mode of Schiff base to the central metal ion in complexes, the IR spectra of the free ligand is compared with the spectra of corrosponding complexes. The important absorption frequencies of the ligand with its complexes and their assignments are enlisted in Table-2.

Table-2 (see in last page)

The IR spectra of the metal complexes show significant changes compared to the Schiff base ligand. A medium intensity band at 1638 cm^{-1} due to the √ (C=N) mode of azomethine group. This band shifts to lower wave numbersby 10-28 cm^{-1} in all the complexes, suggesting the coordination of the azomethine nitrogen to the metal ion. This is further substained by the presence of a new band at 482-469 cm^{-1} assignable to √ (M-N) [8]. The characteristic naphtholic √ (O-H) mode due to the presence of hydroxyl group at ortho position in the free ligand was observed at 3416 cm^{-1}. A band at 1296 cm^{-1} due to √ (C-O) phenolic in the ligand spectrum has been shifted to the higher wave number in the spectra of the complexes. Such shift of √ (C-O) band most probably supports the formation of M-O bond. The complexes also showed medium intensity bands at appropriate positions in the far infrared region 580-596 cm^{-1} and 492-469 cm^{-1} due to √ (M-O) and √ (M-N) modes respectively [9-14]. The presence of coordinated water molecules in Fe(III), Co(II) and Ni(II) complexes is revealed by apperance of a broad band around 3400-3500 cm^{-1} due to √ (O-H) mode[15]. The overall IR data suggests the monofunctional bidentate nature of the ligand in the complexes.

^{1}H NMR Spectra - In the ^{1}H NMR spectrum of the Schiff base ligand, a singlet was observed at 9.56 ppm which can be assigned for azomethine proton. This peak has shifted to the downfield region in the complexes indicating that the coordination of azomethine (›C=N-) to the metal ion. This ligand also show a signal for the naphtholic (-OH) proton at 13.39 ppm. This signal shifted downfield in the spectra of complexes indicating the coordination of oxygen of the –OH group with metal ion. The multiplets between 6.69-8.60 ppm are assigned to the naphthylidene aromatic protons[16-17].

Electronic spectra - The electronic spectra of the complexes were measured in DMSO. In the high spin Fe(III) complex, the ^{6}S free ion ground term is the only sextuplet term arising from d^{5} and it does split in the crystal field. All the electronic transitions are thus spin-forbidden, as well as Laporte forbidden, so that ligand field bands are very weak[18]. The Co (II) complex exhibits three characteristic bands at 11096, 18630 and 23575 cm^{-1} assignable to the ${}^4T_1g(F) \rightarrow {}^4T_2g(F)$, ${}^4T_1g(F) \rightarrow {}^4T_1g(P)$ and ${}^4T_1g(F) \rightarrow {}^4A_{2g}(F)$ electronic transitions and thus the octahedral geometry can be attributed to it. The electronic spectra of Ni (II) complex display three absorption bands at 10450, 16600 and 25695 cm^{-1}. These have been assigned respectively to the transition ${}^3A_2g(F) \rightarrow {}^3T_2g(F)$, ${}^3A_2g(F) \rightarrow {}^3T_1g(F)$ and ${}^3A_2g(P) \rightarrow {}^3T_{1g}(P)$ also corresponding to the octahedral geometry[19]. The Zn (II) complex do not exhibits any characteristic d-d transitions and may have tetrahedral geometry.

Thus, on the basis of all above studies the expected structures of the Schiff base and its complexes may be represented as shown in Fig.-1

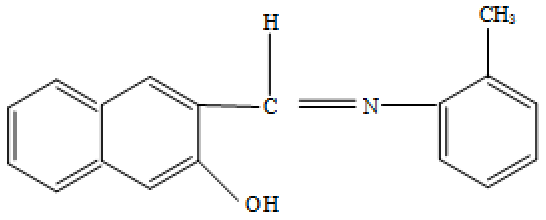

schif f base (HL)

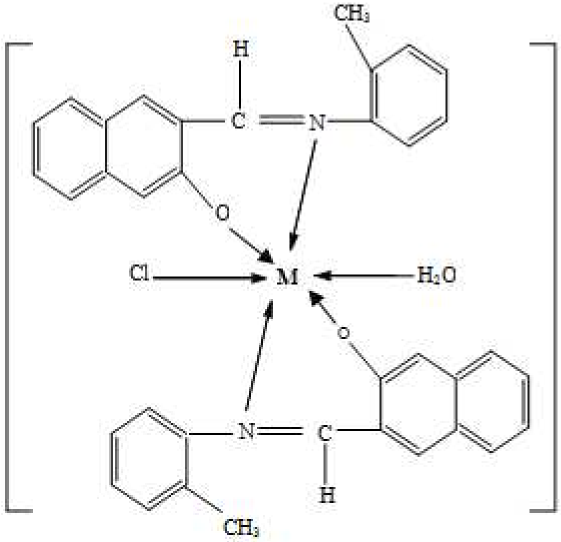

M= Fe(III)

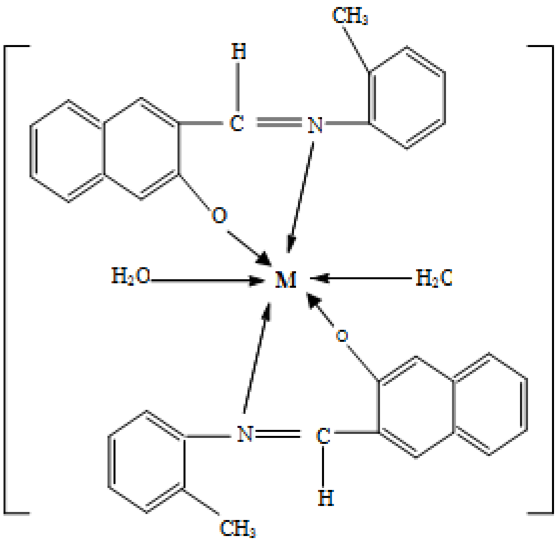

M= Co(II) and Ni (II)

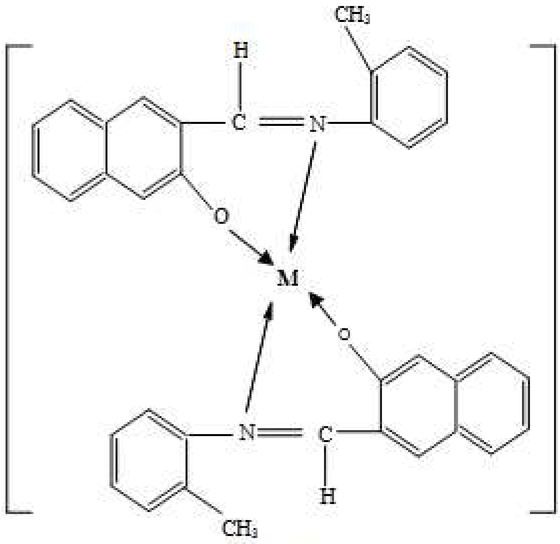

M= Zn (II)

Fig.- 1: Prososed structure of the Schiff base ligand and its metal complexes

Antimicrobial activity - The free ligand and its respective metal complexes were tested for their *in-vitro* growth inhibition against standard strains including two bacteria namely, Escherichia coli,Staphylococcus aureus and two fungi namely, Candida albicans, Aspergillus niger. The results were compared with those of the standard drug Streptomycin for bacteria and Fluconazole for fungi. The results are summarized in Table-3.

Table – 3 (see in next page)

Conclusion - A series of Fe(III), Co(II), Ni(II) and Zn(II) complexes were synthesized with neutral bidentate O, N-donor Schiff base ligand (LH) derived from 2-hydroxy-1-naphthaldehyde and o-toluidine and characterized by various physical spectroscopic techniques. The results demonstrate that Fe(III), Co(II) and Ni(II) complexes have an octhedral geometry and Zn(II) complex has a tetrahedral geometry through the involvement of naphtho oxygen atom and azomethine nitrogen atom. The antimicrobial data of these compounds reveals that the complexes show remarkable activity than the parent ligand.

Acknowledgment - Authors are thankful to the Principal, Govt. M. V. M., Bhopal (M.P.) for providing the laboratory facilities the work needed to be accomplished. Authors extend their thanks to SAIF, CDRI, Lucknow for spectral analysis. Authors are also thankful to BIMR, Gwalior (M.P) for help in testing antimicrobial activity.

References:-

1. E.A. Elazahany, K.H. Hegab, S. K. H. Kalil, N. S. Youssef, *Aust. J. Basic and Appl Sci.*, 2008, 2, 210.
2. C. A. M. A. Huq, S. Fouzia, *Indian j. Chem.*, 2015, 54, 551.
3. K.Kadhiravansivasamy, S. Sivajiganesan, *Mod. Chem. Appl.*,2017,5, 197.
4. A. Nejo, G. A. Kolawole and A.O. Nejo, J. Coord. Chem.,2010,63,4398.
5. A. I. Vogel, A Text Book of Quantitative Inorganic Analysis, ELBS, London, 1978.
6. A. L. Barry, The antimicrobial susceptibility tests,Principle and Practices, 1976.
7. K.Poonia, M. Swami, A. Chaudhary, R. V. Singh, *Indian J. Chem*., 2008, 47, 996.
8. H.Keypour, A. Shooshtari, M. Rezaeivala, M. Bayat, H. A. Rudbari, Inorg. Chim. Acta, 2016, 440, 139.
9. Y. Prashanthi, Shiva Raj,J. Sci. Res.,2010, 2, 114.
10. V. M. Naik, M. I. Sambrani, N. B. Mallur, *Indian J. Chem.*, 2008, 47, 1793.
11. N. R. Rao, V. Rao, G. V. Reddy, M. C. Ganorkar, *Indian J. Chem.*, 1987, 26, 1887.
12. T. R. Rao, M. Sahay, R. C. Aggarwal, *Indian J. Chem.*, 1985, 24, 649.
13. R. L. Dutta, A. Syamal, *Indian J. Chem.*, 1996, 35, 681.
14. I. H. Bukhari, M. Arif, J. Akbar, A. H. Khan, *Pak. J. Bio. Sci.*, 2005, 8, 614.
15. K. Nakamoto, Infrared Spectra of Inorganic and Coordination Compounds, Wiley Interscience, New York, 1970,p.424.
16. Y. Prashanti, S. Raj, *J. Sci. Res.*, 2010, 2, 114.
17. R. M. Silverstein, G. C. Bassler, C. T. Morril, Wiley John and Sons, 1981, 4, 241.
18. S. Chandra, A. Kumar, *J. Indian Chem. Soc.*, 2006, 83, 993.
19. C. J. Ballhausin, Introduction to ligand field theory, New York, Mc Graw Hill, 1967.

Table-1 : Analytical data of Schiff base ligand and its metal complexes

Compound	Color	M.P.(^{0}C)	Yield (%)	Molecular weight Found / (Calcd.)	Found / (Calcd.)%			
					C	H	N	M
LH($C_{18}H_{15}NO$)	Yellow	120	89	229(261)	81.847 (82.75)	5.68 (5.74)	5.027 (5.36)	_
Fe(L)$_2$.Cl.H_2O	Yellowish Green	198	85	619(629.34)	65.00 (68.64)	4.25 (4.76)	3.69 (4.44)	8.86 (9.14)
Co(L)$_2$.2H_2O	Dirty Green	151	86	602(614.93)	65.58 (70.26)	5.01 (5.20)	3.80 (4.55)	8.69 (9.27)
Ni(L)$_2$.2H_2O	Light Green	320	89	599(614.69)	69.69 (70.27)	4.86 (5.20)	4.10 (4.55)	8.63 (8.00)
Zn(L)$_2$	Red	208	82	550(585.38)	74.00 (73.79)	4.80 (4.78)	5.02 (4.78)	10.17 (10.90)

Table-2 : IR absorption frequencies of Schiff base ligand and its metal complexes

Compounds	$\surd$ (O-H) Naphtholic	$\surd$ (C=N) Azomethine	$\surd$ (C-O)	$\surd$ (O-H) Coordinated water	$\surd$ (M-O)	$\surd$ (M-N)
LH($C_{18}H_{15}NO$)	3416 br	1638 s	1296 m	-	-	-
Fe(L)$_2$.Cl.H_2O	-	1616 s	1302 m	3460 br	585 w	482 w
Co(L)$_2$.2H_2O	-	1612 s	1310 m	3400 br	580 w	469 w
Ni(L)$_2$.2H_2O	-	1620 s	1301 m	3500 br	585 w	491 w
Zn(L)$_2$	-	1610 s	1300 m	-	575 w	476 w

Table – 3 Antimicrobial data of Schiff base ligand and its metal complexes

Inhibition zones (mm)

	Gram positive	Gram negative	Fungai	
Compound	StaphylococcusAureus	Escherichiacoli	Candida albicans	Aspergillusniger
LH($C_{18}H_{15}NO$)	18.5	16	14	11.5
Fe(L)$_2$.Cl.H_2O	18	12	11.5	10
Co(L)$_2$.2H_2O	20	14.5	13	11.5
Ni(L)$_2$.2H_2O	20	21.5	17.5	12
Zn(L)$_2$	19.5	16.5	15.5	12
Straptomycin	23	25	_	_
Fluconazol	_	_	20	22

****

Effects of Tannery Effluents on Sediments of Ganga River Specially Heavy Metals at Jajmau, Kanpur (India)

Yajuvendra Singh* Dr. Anand Sharma**

Abstract - The study of the quality of Ganga River water pollution is selected as it is not an ordinary liquid but is the elixir of life. Water is essential for the survival of not only the human life but also for any form of life. In Kanpur (India) a large number of leather industries are situated at Jajmau, area on the bank of river Ganga. These industries, which use mainly toxic chemicals, are the largest contributor to the pollution of the ground water as well as river water of Jajmau area in Kanpur. In the industrial waste-water, the concentration of Heavy and transition metals is extremely high. The parameters like Temperature, DO, P^H, Turbidity, Electrical conductivity, BOD , TDS, TSS are found to be more then the allowable limit in some ground water and river water samples of areas under study. The Heavy metals such as Cr, Fe, Pb, As, Cd, Zn were present in significant quantities. Samples were collected from four sites from different locations at Jajmau area of Kanpur. After analyzing selected metals and found that the heavy metals levels in sediment collected from downstream area were higher than upstream area of Jajmau Ganga river deu to disposal of tannery effluents in water bodies and Ganga river.
Key Words - Trace metals, Ganga river sediment.

Introduction - In Uttar Pradesh, the district Kanpur lies between 80^o 21" East longitudes and 26^{o}28" North Longitude. Kanpur is the highly populated city along the river Ganga in UP. The sewage generation in Kanpur is approximately 400 million liters per day (MLD) and this sewage is discharged through hundred of drains that and into the river. The industrial city Kanpur has many industries and factories situated within the city area. Out of these industries and factories, many of them are releasing contaminants and pollutants directly into the Ganga river. However, one of the major sources of pollution of Ganga River in Kanpur are leather tanneries. Kanpur is also known as the leather city of the India due to the large number of leather tanneries and related industries situated there.

In February 2016, a report by the state government's Ganga pollution control unit (GPCU) at Kanpur it was revealed that the BOD and TSS in the discharge do not meet the standard norms. However, unlike the Bhingawan STP, the technology used in Jajmau STP is activated sludge, which is an established well known sewage treating technology.

Jajmau is a hub of leather tanneries and many of these units release their chemicals effluents into the drain before it reaches in the plant for treatment. The main disadvantage with Jajmau STP is that it is not designed to treat chemical effluents. Trace metals are the main constituents of the waste matter. It has been found that the chromium were still present in treated matter in a high volume. The waste matter discharged into the water ended up at the bottom level and acts as a pollution sink and also as a source of that.

The toxic heavy metals mixed to Ganga River through Nallas and drain and increase toxicity of water, therefore continuous water quality monitoring is necessary. The aim of present work is compare the quality of ground water and Ganga river water with their permissible standards of drinking water and to determine the heavy metal Cr, Fe, Pb, As, Cd, Zn content in river Ganga in Jajmau area of Kanpur.

Materials And Methods - Water samples were collected from four sampling areas in which two taken from Ganga river water and two taken from ground water (tubewell and dugwell) in Jajmau area of Kanpur. The samples were collected in polythene bottles and study was examined from one year on summer, winter and rainy season. The sample bottles used were previously sinked in 10% HNO_3 overnight and rinsed. The collected unfiltered samples were acidified by adding 2 ml of concentrated HNO_3 per liter of the sample for avoid precipitation of heavy metals. The sample bottles were capped tightly and stored at 4^{o}C to prevent evaporation. The pH of water samples was determined using pH-meter with electronic glass electrode (LI 127 of Elico, India) and conductivity was measured by conductivity meter (Systronics 304).

In the experiment the quantity of trace metals like Iron, Arsenic, Cadmium, Lead, Zink and Chromium present in

* Research Scholar (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahaviyala, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahaviyala, Bhopal (M.P.) INDIA

the collected samples were determined by treating 0.5 gram sample with concentrated HNO_3, made up to 25 ml volume and the result was determined by the spectrometer. With the help of elutriation process the particles were separated depending upon their density, shape and size. This method is very useful for the separation of particles smaller than 1 micron. This elutriation process was accomplished when the samples were shaked in 1:5 ratios for at least 24hour. The heavy particles were separated by a centrifugal motion at a speed of approximately 7,000 rpm for one hour at a temperature of 4 ºC. This resultant elutriate was kept at 4 ºC till all the analysis is not performed. In a further step, this elutriate were acidified and now it can directly be used for calculation of quantity of trace metal present in the samples with the help of an atomic absorption spectrophotometer.

Table-Showing sampling stations and station detail

S.	Station code	Station detail
1.	S1	Tubewell , Jajmau
2.	S2	Dugwell, Jajmau
3.	S3	Near Kanpur Lucknow highway bridge, Jajmau
4.	S4	After CETP, Jajmau

Results And Discussion - All the four water samples had been analyzed for temperature, pH, turbidity, DO, COD, BOD, TDS, TSS, total alkalinity, and heavy metals Cr, Fe, Pb, As, Cd, Zn. Water contains a high concentration of heavy metals. Due to various physical and chemical reactions which take place in the river water like adsorption, hydrolysis and co-precipitation only a small quantity of free metal ions remains dissolved in water and the rest quantity got deposited at the bottom level. The statistical result variation of physico-chemical parameters for water samples are represented in table 1, 2, 3&4.

Table 1. Analyzed physico-chemical parameters of the Tube well of Jajmau

Parameters	2016-2017			2017-2018	
	Winter	Summer	Rainy	Winter	Summer
Temperature	22	34	27	23	35
pH	8.1	8	8.1	8.1	8.1
Turbidity	3.3	3.5	5.2	4.2	4.6
DO (mg/l)	8.2	8	8	8.5	8.5
COD (mg/l)	860	860	857	858	860
BOD (mg/l)	378	375	378	377	37
TDS (mg/l)	162	166	156	171	173
TSS (mg/l)	5	9	13	10	9
Total Alkalinity	212	211	213	214	217
Chromium (mg/l)	0.453	0.452	0.453	0.455	0.451
Iron (mg/l)	.43	.43	.43	.44	.44
Lead (mg/l)	.21	.22	.22	.21	.21
Arsenic (mg/l)	0.10	0.10	0.10	0.10	0.10
Cadmium (mg/l)	.007	.007	.008	.007	.007
Zinc (mg/l)	.02	.02	.02	.02	.02

Table 2. Analyzed physico-chemical parameters of the Dug well of Jajmau

Parameters	2016-2017			2017-2018	
	Winter	Summer	Rainy	Winter	Summer
Temperature	19	33	31	17	30
pH	6.7	6.9	7	6.8	6.9
Turbidity	6.2	7.5	10.2	6.1	6.2
DO (mg/l)	8	8.2	8.5	8.5	8
COD (mg/l)	840	837	840	839	838
BOD (mg/l)	367	364	365	367	364
TDS (mg/l)	453	462	449	453	460
TSS (mg/l)	41	36	43	41	43
Total Alkalinity	106	103	103	99	99
Chromium (mg/l)	0.453	0.454	0.452	0.454	0.453
Iron (mg/l)	1.3	1.3	1.3	1.3	1.3
Lead (mg/l)	ND	ND	ND	ND	ND
Arsenic (mg/l)	0.10	0.10	0.10	0.10	0.10
Cadmium (mg/l)	.007	.007	.008	.007	.007
Zinc (mg/l)	.01	.01	.01	.01	.01

Table 3. Analyzed physico-chemical parameters of the sample 3 of river Ganga at Jajmau

Parameters	2016-2017			2017-2018	
	Winter	Summer	Rainy	Winter	Summer
Temperature	21	33	26	22	34
pH	8	8	8.1	8.1	8.2
Turbidity	3.3	3.5	5.2	4.2	4.6
DO (mg/l)	8.2	8	8	8.5	8.5
COD (mg/l)	755	753	754	756	755
BOD (mg/l)	285	286	285	283	285
TDS (mg/l)	162	166	156	171	173
TSS (mg/l)	5	9	13	10	9
Total Alkalinity	212	211	213	214	217
Chromium (mg/l)	0.467	0.467	0.465	0.463	0.466
Iron (mg/l)	.43	.43	.43	.44	.44
Lead (mg/l)	.21	.22	.22	.21	.21
Arsenic (mg/l)	0.10	0.10	0.10	0.10	0.09
Cadmium (mg/l)	.007	.007	.008	.007	.007
Zinc (mg/l)	.02	.02	.02	.02	.02

Table 4. Analyzed physico-chemical parameters of the sample 4 of river Ganga at Jajmau

Parameters	2016-2017			2017-2018	
	Winter	Summer	Rainy	Winter	Summer
Temperature	21	33	26	22	4
pH	8.1	8	8.1	8.1	8.2
Turbidity	3.4	3.5	5.1	4.3	4.7
DO (mg/l)	8.1	8.1	8	8.4	8.4
COD (mg/l)	770	769	768	770	769
BOD (mg/l)	290	289	288	290	289
TDS (mg/l)	164	168	154	171	173
TSS (mg/l)	6	10	14	11	8
Total Alkalinity	214	210	212	213	218
Chromium (mg/l)	2.812	2.813	2.812	2.814	2.811

Iron (mg/l)	.44	.45	.43	.45	.45
Lead (mg/l)	.22	.21	.21	.22	.21
Arsenic (mg/l)	0.09	0.09	0.10	0.09	0.09
Cadmium (mg/l)	.007	.008	.008	.007	.008
Zinc (mg/l)	.02	.02	.02	.02	.02

The average seasonal variation in temperature of groundwater and river water samples in the sample area or the area under study was from 17 to 35 degree centigrade. pH of the samples was from 6.7 to 8.2. The pH value less than 7 indicates that the sample water was slightly acidic and it is due to the presence of minerals in the water. Measurement of turbidity shows the transparency in the water. It ranges from 3.3 to 10.2 NTU. However, as per the ISI Standard the prescribed limit of turbidity for drinking water is 10 NTU (ISI). In the collected samples the oxygen deficiency were never noticed. DO content was between the range from 7.9 to 8.5 milligram per litter in the study area in all the season during the study period where as the allowable limit for DO given by WHO is 5.0 milligram per litter. COD was in a range from 755 to 860 milligram per litre. BOD ranges from 285 to 378 mg/l during our study. The permissible limit of BOD is also 5 mg/l as given by WHO.

The main cause of TDS in the water is due to the presence of Bicarbonate, sulphate, sodium, calcium, chloride, magnesium ions. In the study area TDS vary from 154 to 462 milligram per liter. As per the ISI guidelines, the allowable limit of TDS is 500 milligram per liter. In our present study phenolphthalein alkalinity was absent in all the samples and methyl orange alkalinity was found between 97 milligram per liter to 222 milligram per liter. It simply indicates that there is an absence of hydroxyl and carbonate alkalinity and presence of bicarbonate. However, as per the guidelines given by USPHS, the allowable limit for total alkalinity is 120 milligram per liter.

The average concentration of trace metals are given in Tables. From the table it is clear that the increase in concentration of trace metal in river water is rapid approx. around 2-fold for most of the metals. The concentration of As and Pb about no change and that of Cr showed a rapid increase. The pollution in the river water is worsened in the last ten years. There is drastic increase in the concentration of Chromium in the samples due to a large number of leather industries are situated at Jajmau, area on the bank of river Ganga.

If we compare above result with the average of Indian River System (IRS) it was found that lead and Chromium were high in concentration; among these metals Chromium was extremely high. The same result was found when we compare our result with World River System (WRS).

Conclusion - In results of present study we found that the Ganga River is highly polluted due to discharge of tannery industrial effluent. This tannery industrial effluent is clustered on the bank of river in Kanpur. The contamination level at the bottom in the downstream area has been increased drastically as compared to that mentioned 10 years back. However, the trace metals were not mixed in water in significant amount, but a serious effect on seed germination was noted. The river ecology is also subjected to higher risk of pollutants exposure. Ganga river water from Jajmau area is highly polluted and is not suitable for most of the beneficial uses of water except for irrigation, fish culture and industrial cooling.

References :-

1. Paul D. , Annals of Agrarian Science, (2017), 278-286.
2. Igwe, P.U. et al., International Journal of Advanced Engineering Research and Science 2017, 4(12), 128-137.
3. Deoli Kanchan B, . Aaron A . Ind J Global Ecol Environ. 2017, 5(3), 133-143.
4. Shanmugasundharam A, Kalpana G, Mahapatra SR , Sudharson ER. Appl Water Sci. 2015.
5. Richa S , Manindra M , Prashant S ,Rakesh S , Rajendra D ,Krishna PS, Sanjay G. 2014. Appl Water Sci. 2014
6. Bartarya SK, Deoli Kanchan B. Global J Eng Design Technol. 2012, 1(1), 11-22.
7. SP Gorde, MV Jadhav. 2013. J Eng Res Appl. 2013, 3(6), 2029-2035.
8. Futter, J. Ceaser, E. Barbour, D. Butterfield, R. Sinha, R.Nichols, C. Hutton and D.Leckie, Environmental science processes and impacts, 2015.
9. S. Hasan, Internatioanl Journal of Advance Research in Science, Engineering and Technology, 2015, 2(1).
10. S. Singh and S. Nath, Universal Journal of Environ - mental Research and Technology, 2015, 5(5), 251-258.
11. R. Pandey, D. Raghuvanshi and D. N. Shukla, Advances in applied science research, 2014, 5(4),181-186.
12. R. Pandey, D. Raghuvanshi, B. Tripathi, V. Pandey and D. N. Shukla, Asian Journal of Biochemical and Pharmaceutical Research, 2014, 3(4).
13. D. Raghuvanshi et al. Bulletin of Environment, Pharmaclogyand Life science, 2014.
14. Naseema K. et al., Journal of Applied Chemistry, 2013, 5(3), 80-90..
15. Anjum P. et al., International Journal of computational Engineering Research, 2013, 3(4), 134-137.

****

जैन दर्शन में प्रमा ज्ञान एक दार्शनिक विवेचन

श्रीमति प्रीति जयसवाल (सोनी)*

प्रस्तावना – प्रत्यक्ष अनुमान शब्द। व्यवहार की दृष्टि से ज्ञान का अर्थ जानना, समझना या परिचित होना होता है। प्रत्येक प्राणी अपने इंद्रियों के द्वारा ज्ञान प्राप्त करता है। अध्यात्म की दृष्टि से ज्ञान का अर्थ परमज्ञान है, जिसके द्वारा मनुष्य वस्तु की प्रकृति या वास्तविकता को जानता है। परमज्ञान का अर्थ है– आत्मा को जानना, आत्मा का साक्षात्कार करना। ज्ञान–साधन आत्मज्ञान प्राप्त करने का साधन है। परमज्ञान प्रमा है। प्रमा का अर्थ है– प्रत्यक्ष ज्ञान, प्रतिबोध, यथार्थ ज्ञान। यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने का उपाय प्रमाण की रीति हैं। जाननेवाला प्रमाता है। ज्ञान का अवलंबन ज्ञेय अथवा प्रमेय है। तत्त्वज्ञान प्राप्त करने का साधन अर्थात् प्रमा का करण प्रमाण है। भारतीय दर्शनों में चार्वाक केवल इंद्रियों के द्वारा प्राप्त ज्ञान को ही प्रत्यक्ष प्रमाण मानता है। नैयायिक चार प्रमाण मानते हैं– प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान एवं शब्द। वेदांती और मीमांसक इन चार प्रमाणों के अलावा अनुपलब्धि और अर्थापत्ति को भी प्रमाण मानते हैं। सांख्य दर्शन में प्रत्यक्ष, अनुमान, और शब्द प्रमाण मान्य हैं। बौद्धों ने प्रत्यक्ष और अनुमान दो भेद किए हैं– 'प्रत्यक्ष अनुमानं च'। जैन दर्शन में प्रमाण या निर्णायक ज्ञान आत्मा का गुण है। कहीं–कहीं तो ज्ञान और आत्मा को एक ही मान लिया गया है। भेद दृष्टि से आत्मा ज्ञाता है, एवं ज्ञान जानने का साधन। व्यवहारनय में आत्मा और ज्ञान में भेद है, किंतु निश्चयनय में आत्मा और ज्ञान में कोई भेद नहीं है। अभेद दृष्टि से ज्ञाता और ज्ञान दोनों आत्मा है। व्यवहारदृष्टि से केवली सभी द्रव्यों को जानता है। परमार्थत: आत्मा को ही जानता है। ज्ञान का सामान्य धर्म है कि वह अपने आपको जानता हुआ ही दूसरे पदार्थ को जनता है। इसीलिए ज्ञान को स्वपरभासी कहा गया है। जिस प्रकार सूर्य अपने को प्रकाशित करता है तथा संसार की अन्य वस्तुओं को भी प्रकाशित करता है, उसी प्रकार ज्ञान भी स्वपरभासी है। राजप्रश्नीय सूत्र के अनुसार निर्ग्रन्थ पाँच प्रकार के ज्ञान मानते हैं– आभिनिबोधिक ज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्यायज्ञान, केवलज्ञान। अवधिज्ञान, मन: पर्यायज्ञान और केवलज्ञान ही प्रत्यक्ष के भेद है। क्षेत्र, विशुद्धि आदि की दृष्टि से इनमें तारतम्य है।

आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान परोक्ष ज्ञान के भेद हैं। आभिनिबोधिकज्ञान को मतिज्ञान भी कहते हैं। श्रुतज्ञान का आधार मन है। मतिज्ञान का आधार इन्द्रियाँ और मन दोनों है। मति, श्रुतादि के अनेक अवांतर भेद हैं। जैन दार्शनिकों ने प्रमाण का दो भेद किया है– प्रत्यक्ष और परोक्ष (प्रमाणं द्विधा। प्रत्यक्षं परोक्षं च)। प्रत्यक्ष ज्ञान जैन दर्शन की ज्ञान–मीमांसा में प्रत्यक्ष ज्ञान की अर्थवत्ताा अन्य भारतीय दर्शनों में मान्य अर्थवत्ता से भिन्न है। जैन दर्शन में आत्मप्रत्यक्ष (इंद्रियों से निरपेक्ष ज्ञान को) को ही वास्तविक प्रत्यक्ष माना गया है और इंद्रियों के माध्यम से ग्रहीत ज्ञान को परोक्ष अथवा अप्रत्यक्ष ज्ञान माना गया है। परवर्ती काल में प्रत्यक्ष को इंद्रिय–प्रत्यक्ष एवं नोइन्द्रिय–प्रत्यक्ष इन दो भागों में बाँटा गया। इंद्रिय–प्रत्यक्ष में इंद्रियजन्य ज्ञान को स्थान मिला, जो वास्तव में इंद्रियाश्रित होने से परोक्ष है। नोइंद्रिय–प्रत्यक्ष में वास्तविक प्रत्यक्ष रखा गया, जो इंद्रियाश्रित न होकर सीधा आत्मा से उत्पन्न होता है। इंद्रियप्रत्यक्ष जैनेत्तार दृष्टि का, जिसे लौकिक दृष्टि कहा जा सकता हैं, प्रतिनिधित्व करता है। नोइंद्रियप्रत्यक्ष जैन दर्शन की वास्तविक परंपरा का ही द्योतक है। जैन दर्शन में ज्ञान से अभिप्राय सम्यक् ज्ञान से है और यही प्रमाण है। जिस प्रकार से जीव एवं अजीव पदार्थ अवस्थित हैं, उस प्रकार से उसको जानना सम्यक् ज्ञान है। मिथ्याज्ञान में असंगत, असंबद्ध एवं वचन–विरोधी ज्ञान का आभास होने के कारण इसको अप्रमाण माना जाता है। मिथ्याज्ञान के तीन भेद हैं– कुमति, कुश्रुत एवं कुअवधि। प्रमाण एवं नय जैन दर्शन में सम्यक् ज्ञान के दो भेद बताये गये हैं– प्रमाण ज्ञान एवं नयज्ञान। जैन दर्शन में प्रमाण के साथ–साथ नय को भी ज्ञान का साधन माना गया है। प्रमाण ज्ञान अंशभेद किये बिना पदार्थ को समग्र भाव से जानता है। जो पदार्थ जिस रूप में अवस्थित है, उसे उसी रूप में स्वीकार करनेवाला ज्ञान प्रमाण है।

वस्तु अनंतधर्मात्मक है और प्रत्येक पदार्थ में विविध गुण एवं उसके अनंत पर्याय हैं। वस्तु को उसके एक–एक धर्म (एकांत) द्वारा जानना नयज्ञान है। सम्यक् एकांत नय है। सम्यक् अनेकांत प्रमाण है। सामान्यत: प्रमाण समग्र वस्तु का ज्ञान देनेवाला होता है, जबकि नय वस्तु के किसी अंशविशेष का अर्थात् एकांगी ज्ञान प्रदान करते हैं। 'प्रमाण' तथा 'नय' दोनों के द्वारा किसी विषय का यथार्थ ज्ञान प्राप्त किया जाता है (प्रमाणनयैरधिगम)। प्रमाण और नय में मात्र इतना अंतर है कि प्रमाण सकलादेशी है और नय विकलादेशी है। अतीन्द्रिय ज्ञान या नोइंद्रियप्रत्यक्ष प्रत्यक्ष का लक्षण वैशद्य या स्पष्टता है 'विशद: प्रत्यक्षम्' अर्थात् जिसके प्रतिभास के लिए किसी प्रमाणांतर की आवश्यकता न हो अथवा जो 'यह इदंतया प्रतिभासित होता हो, उसे वैशद्य कहते हैं (प्रमाणान्तरा व्यवधानेन विशेषवत्तया वा प्रतिभासनं वैशद्यम)।' पारमार्थिक अपरोक्ष ज्ञान वह है, जिसमें इंद्रियादि की सहायता के बिना आत्मा और ज्ञेय वस्तुओं का साक्षात् संबंध होता है। चार्वाक तथा मीमांसकों को छोड़कर शेष सभी भारतीय दार्शनिक मान्यताएँ अतींद्रिय ज्ञान में विश्वास करती हैं। आधुनिक मनोवैज्ञानिक भी अतींद्रिय ज्ञान की तथ्यात्मकता स्वीकार करते हैं। अपरोक्ष ज्ञान (अतींद्रिय ज्ञान) तीन प्रकार के होते हैं– अवधि, मन: पर्याय तथा केवल ज्ञान। अवधि ज्ञान इंद्रियों तथा मन के निमित्त के बिना रूपी पदार्थों और उनकी कुल पर्यायों को स्पष्ट जानना अवधिज्ञान है। अवधि का विषय केवल रूपी पदार्थ हैं, अर्थात् जिसमें रूप, रस, गंध तथा स्पर्श हो, वही अवधि–ज्ञान का विषय बनता है। अवधि ज्ञान की सीमा लोकाकाश तक ही

* शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

है। मन:पर्याय अवधि ज्ञान से रूपी पदार्थ का ज्ञान होता है जबकि मन: पर्याय ज्ञान से दूसरों के मनोद्रव्य की पर्यायों का ज्ञान होता है (तदन्तभागे मन: पर्यायस्य)। अवधि ज्ञान और मन:पर्याय ज्ञान में गुणात्मक एवं स्वरूपात्मक अंतर है। मन:पर्यायज्ञानी भूत, वर्तमान एवं भविष्य तीनों कालों के मनोगत विचारों को जानता है। इंद्रिय अथवा मन की सहायता के बिना द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की मर्यादा सहित रूपी पदार्थों को प्रत्यक्ष जानना अवधि ज्ञान है तथा द्रव्य क्षेत्र, काल और भाव की मर्यादा सहित मन की पर्यायों को प्रत्यक्ष जानना मन:पर्याय ज्ञान है। अवधि और मन:पर्याय ज्ञान में विशुद्धता, क्षेत्र, स्वामी और विषय की भिन्नता होती है। यह मनुष्य क्षेत्र तक सीमित है तथा गुण के कारण उत्पन्न होता है। अवधि ज्ञान में मन के ज्ञान से अर्थ का ज्ञान होता है, क्योंकि मन:पर्याय ज्ञान से साक्षात् अर्थ-ज्ञान का होना असंभव है, उसका विषय रूपीद्रव्य का अनंतवाँ भाग है। मन:पर्याय ज्ञान दो प्रकार का होता है- ऋजुमति और विपुलमति। क्षेत्र और कालापेक्षा की दृष्टि से विपुलमति ज्ञान, ऋजुमति ज्ञान से विस्तीर्ण और गंभीर होता है। विपुलमति ज्ञान में सभी प्रकार के मानसिक रूपी पदार्थों का ज्ञान होता है। इसमें अपने तथा दूसरों के जीवन-मरण, सुख-दु:ख, लाभ-अलाभ इत्यादि का भी ज्ञान होता है। ऋजुमति ज्ञान होकर छूट भी जाता है, किंतु विपुलमति विशुद्ध ज्ञान है तथा वह केवलज्ञान होने तक बना रहता है, छूटता नहीं। ऋजुमति क्षणस्थायी होता है, जबकि विपुलमति स्थायी। इस प्रकार अवधिज्ञान एवं मन:पर्याय ज्ञान साधना की उत्तारोत्तर विकसित सीढ़ियाँ हैं।

केवल ज्ञान का विषय सर्वद्रव्य और उसकी सब पर्यायें हैं अर्थात् केवल ज्ञान एक ही साथ सभी पदार्थों और उनकी सभी पर्यायों को जानता है। केवल ज्ञानी लोक और अलोक दोनों को जानने लगता है। गवान् महावीर की जीवनगाथा में केवल ज्ञान प्राप्ति का विवरण मिलता है। केवल ज्ञान की प्राप्ति के क्रम में सर्वप्रथम मोहनीय कर्म का क्षय होता है, तदनंतर पाँच ज्ञानावरण कर्म, चार दर्शनावरण कर्म तथा पाँच अंतराय कर्मों का क्षय करने के बाद अंतत: तिरसठ प्रवृत्तियों का नाश करके केवलज्ञान प्राप्त होता है। आत्मा की ज्ञान-शक्ति का पूर्ण विकास या आविर्भाव ही केवलज्ञान है। केवलज्ञान शुद्ध-निर्मल, सकल परिपूर्ण असाधारण एवं अनन्त है।केवलज्ञान सकल प्रत्यक्ष होने के कारण संपूर्ण है। प्रत्यक्ष ज्ञान के इन तीनों भेदों में अवधिज्ञान एवं मन:पर्याय ज्ञान की सीमाएँ निर्धारित हैं, इसीलिए इनको विकल ज्ञान कहा गया है। केवल ज्ञान सकल ज्ञान है, सफल ज्ञान है क्योंकि यह पूर्ण ज्ञान है। केवल ज्ञान में समस्त द्रव्यों की तीनों कालों की पर्यायें एक साथ ज्ञात होने पर भी प्रत्येक पर्याय का विशिष्ट स्वरूप प्रदेश, काल, आकारादि विशेषताएँ स्पष्ट ज्ञात होती हैं। संपूर्ण प्रदेशों की अविकल सत्ता केवली के ज्ञान का स्पष्ट विषय होती है। परोक्ष ज्ञान (इंद्रिय प्रत्यक्ष) आत्मा जब इंद्रिय और मन के माध्यम से ज्ञेय को जानता है, तब वह परोक्ष ज्ञान है। जैन परंपरा इंद्रियों के माध्यम से ग्रहीत ज्ञान को परोक्ष ज्ञान कहती है, जबकि जैनेत्तर भारतीय दर्शन प्राय: मानते हैं कि इंद्रियों से प्रत्यक्ष ज्ञान तथा अन्य साधनों से परोक्ष ज्ञान प्राप्त होता है। परवर्ती जैन चिंतकों ने भारतीय दार्शनिक मतवादों के प्रभाव के कारण इंद्रियों के माध्यम से ग्रहीत ज्ञान को लौकिक दृष्टि से 'प्रत्यक्ष' नाम दिया है। नन्दि सूत्रकार ने इसे 'इंद्रिय प्रत्यक्ष' तथा जिनभद्र ने 'संव्यवहार प्रत्यक्ष' नाम से अभिहित किया है, किंतु तत्त्वार्थाधिगम सूत्र में जिनभद्र की विचारधारा से असहमति व्यक्त की गई है। वस्तुत: मतिज्ञान एवं श्रुतज्ञान के उपयोग के समय इंद्रिय या मन निमित्त होते हैं, इसलिए पर-अपेक्षा के कारण उन्हें परोक्ष कहा गया है, स्व-अपेक्षा से पाँचों प्रकार के ज्ञान प्रत्यक्ष हैं। मन का संबंध एक साथ एक इंद्रिय से ही होता है। इस कारण परोक्ष ज्ञान में एक काल में एक पदार्थ की एक ही पर्याय ही जानी जा सकती है। लौकिक प्रत्यक्ष ज्ञान दो प्रकार के हैं, जिन्हें मति और श्रुति की संज्ञा दी गई है। श्रुतिज्ञान मतिपूर्वक ही होता है, जबकि मतिज्ञान के लिए आवश्यक नहीं कि वह श्रुतिपूर्वक ही हो। मति ज्ञान (आभिनिबोधिक ज्ञान) इंद्रिय और मन से उत्पन्न होनेवाला ज्ञान मतिज्ञान है। आगमों में मतिज्ञान को आभिनिबोधिकज्ञान कहा गया है। उमास्वाति ने मति, स्मृति, संज्ञा, चिंता और अभिनिबोध को एकार्थक बताया है, तो भद्रबाहु ने इसके लिए ईहा, अपोह, विमर्श, मार्गणा, गवेषणा, संज्ञा, स्मृति, मति, प्रज्ञा शब्द का प्रयोग किया है। मन को सर्वार्थग्राही इंद्रिय कहा गया है- 'सर्वार्थग्रहणं मन:।' उपादान आत्मा ही होता है, उसके कार्य के समय निमित्त मात्र आरोप कारण होता है। आचार्य उमास्वामी ने मतिज्ञान को 'सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष' भी कहा गया है। मतिज्ञान इंद्रिय-प्रत्यक्ष के चार भेद हैं- अवग्रह, ईहा, अवाय या अपाय एवं धारणा। अवग्रह इंद्रिय और अर्थ का संबंध होने पर नाम आदि की विशेष कल्पना से रहित सामान्य मात्र का ज्ञान अवग्रह है (अक्षार्थयोगे दर्शनानन्तरमर्थ-ग्रहणमवग्रह:)। अवग्रह ज्ञान में निश्चित प्रतीति नहीं होती कि किस पदार्थ का ज्ञान हुआ है। अवग्रह ज्ञान के दो प्रकार हैं- व्यंजनावग्रह तथा अर्थावग्रह। अर्थ और इंद्रियों के संयोग के पूर्व का अव्यक्त ज्ञान व्यंजनावग्रह है। यह चक्षु तथा मन के बिना होता है। अर्थावग्रह सामान्य ज्ञान रूप होता है, संयोग रूप नहीं। इसलिए यह चक्षु और मन से होता है, इन दोनों का विषयग्रहण सामान्य ज्ञान रूप ही है। इसे व्यक्त ज्ञान कहा गया है। जैसे यदि कोई व्यक्ति सो रहा है और उसे पुकारा जाता है, तो प्रथम बार के कुछ शब्द कान में जाकर शान्त भाव में टकराकर रह जाते हैं तथा उनकी अभिव्यक्ति नहीं होती, पुन: तीन-चार बार पुकारने पर कान में अत्यधिक शब्द एकत्र हो जाते हैं, तब उसे यह ज्ञान होता है कि 'कोई बुला रहा है।' लेकिन बार-बार पुकारने के बाद 'उसे कोई बुला रहा है' का ज्ञान होता हैं।

निष्कर्ष - इन दोनों परिस्थितियों में पहली स्थिति व्यंजनावग्रह की है तथा दूसरी अर्थावग्रह की। ईहा इंद्रियार्थ सन्निकर्ष से उत्पन्न सामान्य प्रतीति के फलस्वरूप दृश्य विषय के गुणों के ज्ञान की इच्छा ही ईहा है (अवगृहीतार्थ की विशेषकांक्षणमीहा)। यद्यपि ईहा में पूर्ण निर्णय नहीं हो पाता, फिर भी ज्ञान निर्णय की ओर झुक अवश्य जाता है। ईहा संशय की स्थिति नहीं है, क्योंकि इसमें ज्ञान का झुकाव न स्वीकारात्मक होता है और न ही नकारात्मक। इसका उदाहरण है कि पुकारनेवाला पुरुष है या स्त्री? अवाय ईहितार्थ का विशेष निर्णय अवाय है- 'ईहितविशेष निर्णयो वाय:।' जो गुण पदार्थ के अंदर नहीं है, उनका निवारण अवाय है और जो गुण पदार्थ में है, उनका स्थितिकरण धारण है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आचार्य देवेन्द्र मुनि, नीति शास्त्र (जैन धर्म के सन्दर्भ में) यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, संस्करण 2000, पृष्ठ 52
2. आचार्य देवेन्द्र मुनिजी, धर्म और जीवन, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, संस्करण 1997 पृष्ठ 9
3. तत्वार्थ सूत्र अ.1सू.1 पृष्ठ 126
4. छगनलाल जैन, तत्वार्थसूत्र, अ.भा. श्री राजेन्द्र जैन श्वे.तीर्थ पेढ़ी (ट्रस्ट) श्री मोहन खेड़ा तीर्थ, राजगढ़ जिला, धार (म.प्र.) जुलाई 2006 पृष्ठ 7
5. अध्यात्मसार पृष्ठ 180
6. पं. सुखलाल संघवी, तत्त्वार्थसूत्र, प्रकाशक पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान वाराणसी, पुनर्मुद्रण सन् 1985 पृष्ठ 125

मालती जोशी की कहानियों में व्याप्त भाषिक सौन्दर्य

अनीता भदौरिया* प्रो. विजयलक्ष्मी राय**

प्रस्तावना – भारत जैसे बहुभाषी देश में साहित्य ही एकमात्र साधन है जो संपूर्ण राष्ट्र जीवन को एकता के सूत्र में पिरोने का कार्य करता है। साहित्य की भाषा कोई भी हो वह देश काल एवं वातावरण में अपनी अमिट छाप छोड़ती है, आधुनिक युग में साहित्य की सर्वाधिक गतिशील विधा के रूप में कहानी विधा को लिया जाता है जिसका प्रभाव समूचे पाठक जगत में अत्यधिक है। आधुनिक युग में कहानी विधा साहित्य की सर्वश्रेष्ठ कलाकृति के रूप में स्थापित हो चुकी है, कहानी का निर्माण इस प्रकार होना चाहिए कि कहानी में अपने अंतरंग के साथ बहिरंग तत्व शामिल हो सके, कहानी का सभी तत्वों से सुगुम्फित होना आवश्यक है। अगर रचनाकार को सृष्टा कहा गया है तो उसकी रचना निश्चित है सृष्टि होगी। यथा निर्माण के समय सृष्टा को जिस प्रकार सुनियोजित तकनीकि की आवश्यकता होती है ठीक उसी प्रकार साहित्य में खासकर कहानी एवं उपन्यासों में भाषा का महत्व है उच्च कोटि का भाषा ही किसी भी कहानी की प्रसिद्धि का कारण होती है। भाषा के द्वारा ही रचना की सफलता और असफलता निर्भर करती है। अत: भाषा पर ही रचना की सफलता का पूरा भार होता है। भाषा में अनेक तत्वों का मिश्रण ना होकर एक नवीन कलात्मक अभिव्यक्ति होती है जिसके द्वारा आकार प्रदान करने का संपूर्ण दायित्व साहित्यकार के पास ही होता है। नई कहानीयों में भी भाषा का महत्व कम नही है, हिंदी कहानियों में खासकर नई कहानी में मालती जोशी एक अत्यंत उल्लेखनीय नाम है उन्होंने अपनी कहानी विधा में भाषा को अत्यधिक महत्व प्रदान किया है। किसी भी रचनाकार के लिए विषय वस्तु के चयन के साथ ही उसके प्रस्तुतीकरण के लिए भाषा चयन अत्यंत ही दुष्कर कार्य होता है। मालती जी के समक्ष भी कहानियों के भाषा को लेकर अनेक प्रश्नों की श्रंखला तैयार हुई किंतु उन्होंने अपने सृजन में भाषा पक्ष को सही शब्दो एवं स्वरो के द्वारा नई उर्जा एवं शक्ति प्रदान की।

मालती जोशी की कहानियों में भाषा – मनुष्य अपने भावों और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए भाषा का प्रयोग करता है। अत: भाषा को अभिव्यक्ति का सर्वश्रेष्ठ माध्यम माना जाता है। साहित्य में भाषा का अत्यंत महत्व है।कृतित्व निर्माण में कृतिकार सहज ही भाषा से जुड़ जाता क्योंकि इसके बिना तो किसी भी प्रकार के साहित्य का निर्माण असंभव है। मालतीजी की कहानियों की भाषा आम आदमी की भाषा है। उनकी भाषा यथार्थ निरूपण की मायावी शक्ति रखती है। भाषा कथानक के अनुरूप पात्रों के कथन में स्पष्ट अवलोकित होती है। साहित्य के स्तर के अनुसार भाषा के रूप में परिवर्तन स्वाभाविक है। मालतीजी ने सभी साहित्यिक विधा में अलग ही सजीव भाषा का प्रयोग किया। विशेषकर उनकी कहानियां जो मध्यम वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है, अत: भाषा के प्रयोग में भी उन्होंने अत्यंत सावधानी का प्रयोग किया है। उनकी भाषा में आलंकारिता ,प्रतीकात्मकता, सूक्तिमयता, काव्यमयी भाषा ,पात्रानुकूल भाषा ,प्रसंगानुकूल भाषा, आदि विशेषता पाई जाती है। आवश्यकता अनुसार मुहावरे का प्रयोग भी उनकी कहानियों में मिलता है। मालती जी की कहानियों की भाषा में यथानुसार संगीतात्मकता, व्यंगपूर्ण भाषा तथा डट्स की भाषा का प्रयोग भी भरपूर पाया जाता है। मध्यम वर्गीय समाज में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग आम हो गया है जोकि मालती जी की कहानियों में भी दिखाई देता है वेल डन,ओके, इट्स नट पसिबल, आदि शब्द दिखाई देते।

तत्सम ,तद्भव ,देशज ,विदेशी शब्द तथा लेखिका की मातृभाषा मराठी का प्रयोग भी सुविधानुसार पात्र संवाद में अवलोकित होता है।

मालती जोशी जी ने अपनी कहानियों में डट्स का प्रयोग बड़े पैमाने पर कर डट्स भाषा की उपयोगिता को बढ़ाया है। डट्स भाषा ने उनकी रचना में चार चांद लगाए हैं। डट्स भाषा मुख्यत: शब्दों में अंतराल के कारण भाषा में सांकेतिकता आ जाती है।'आखिर शर्त', 'पिया पीर ना जानी', 'कन्यादान', 'वो तेरा घर वह मेरा घर', आदि कहानियों में डट्स भाषा का खुलकर प्रयोग किया है।

'तो बोलिए ना ....'

'मैं सोच रहा था..........................'

'वह कब आ गए पर शायद..........................'

मुहावरों के प्रयोग के द्वारा भी कहानियों में सजीवता लाने की कला का प्रयोग मालती जोशी जी ने बखूबी किया है।

'मिसेज मल्होत्रा से रोज फ्री लिफ्ट मिलती है ना इसलिए आगे पीछे घूमती रहती है।'

'बाबूजी तो खैर हमेशा मिट्टी के माधव रहे हैं।'

मालती जी ने अपनी कहानियों में बकरा बनाना, ईट का जवाब पत्थर से देना, मिट्टी का माधो ,हाथ कंगन को आरसी क्या, नाच ना जाने आंगन टेढ़ा, आदि मुहावरों का प्रयोग कर कहानियों को और अधिक सजीव बना दिया है।

मालती की कहानियों में लज्जा ,नारी ,भय, बराबर है, क्रोध, चंदन, मुख ,यौवन, अग्नि , बाप ,आंख ,आग माँ आदि तद्भव शब्दों का प्रयोग बहुतायत में किया गया है।

मालतीजी की स्वयं की बोली मराठी थी अत: मराठी शब्दों का प्रयोग स्वाभाविक ही जान पड़ता है।

दादा ,ताई ,पाहन, रंगोली आदि मराठी शब्द यदा-कदा दिखाई दे ही जाते हैं देशज शब्दों का प्रयोग भी इनकी कहानियों को वास्तविकता से जोड़ता है।

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** प्रोफेसर एवं कन्ट्रोलर ऑटोनोमस, शा.म.ल.ब.कन्या स्वशासी महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

चटखनी ,चाय वाय, आदि मालतीजी की कहानीयोंमें भाषा की एक महत्वपूर्ण विशेषता चित्रात्मक भाषा का प्रयोग है, उनकी भाषा में यह जादू है कि वह किसी भी घटना का सजीव चित्र प्रस्तुत करने की क्षमता रखती है। व्यंग्यपूर्ण भाषा के प्रयोग से भी मालती जी अछूती नहीं है।

'परमरम्य भारत देश के कर्णपुर नामक नगर में साधुराम नामक एक वैष्य निवास करता था।'

मालतीजी की कहानियां अधिकांशत: मध्यमवर्ग पर ही लिखी गई है, अत: पात्रों के अनुसार उनकी आयु शिक्षा तथा परिवेश के अनुसार भाषा का प्रयोग प्रसंगानुकूल करना मालती जी की भाषा की विशेषता है। मालतीजी की कहानियों में सूक्तियों का सुंदर प्रयोग भी स्पष्ट दिखाई देता है, जैसे सत्य कल्पना से कोसों दूर होता है, शिक्षा और संस्कार में बहुत फर्क होता है। मोरी रंग दे चुनरिया,पटाक्षेप, मन न भए दस बीस आदि कहानियों में सूक्तियों का प्रयोग देखा जा सकता हैं ।

मालती जी की कहानियां अलंकारिक भाषा के सुंदर प्रयोग का सजीव प्रमाण है। अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि सभी अलंकारों का प्रयोग उन्होंने खुलकर किया है। जैसे सफेद फूलों वाले आसमानी फ्रॉक में रसिका परी लग रही थी।

अत: अलंकारिकता का प्रयोग भी मालती जी की कहानियों में दिखाई देता है। अत: कहा जा सकता है कि मालती जी की कहानियों में काव्यामयता, सूक्ति, मुहावरों, देसी, विदेशी शब्दों का यथोचित प्रयोग उनकी कहानियां मैं प्राण डाल देते हैं। उनकी कहानियों की भाषा पाठक को सोचने पर मजबूर नहीं करती बल्कि उन्हें अपने आकर्षण में बांध लेती है। उनकी भाषा यथार्थ की उपस्थिति कराने की क्षमता रखती है। मालती जोशी की ज्यादातर कथाएं मधयवर्ग और पारिवारों के बीच रची गई हैं, जो सामान्यत: शहरी और कस्बों की पृष्ठभूमि के हैं। बढ़ते शहरीकरण से हरियाली सिमटती जा रही है तथा बढ़ते परिवार आंगनों को खत्म कर कमरों में परिवर्तित हो रहे हैं। ऐसे में निश्चित रुपसे हमारी आधुनिक कहानियों में भी प्रकृति का हिस्सा लगातार घट रहा है। फिर भी उनकी कुछ कहानियों में प्रकृति संबंधी संवेदना विभिन्न रूपों में प्रदर्शित हुई है और उनके पात्रों से, उनके संवेदना और मानव का रिश्ता बहुत नजदीक का है। संवेदना भावना के स्तर पर और मानसिक स्तर पर मनुष्य को प्रभावित करती है। महाकवि वाल्मिकी के भीतर का कवि एक पक्षीको बाणों से बिंधता देखकर जाग गया था। उसकी पीड़ा को उन्होंने अपने अंत में महसूस किया और उनके हृदय से कविता फूट पड़ी। संवेदना मानव का अनिवार्य तत्व और मानव साहित्य का अविभाज्य अंग। मानव की मानव के प्रति संवेदना ही साहित्य सृजन की आधार भूमि है। मानव के प्रति संवेदना से रहित साहित्य निरर्थक और खोखला ही नहीं बल्कि समाज के लिए बगैर किसी उपयोग का साबित होगा। इसलिए हर प्रभावशाली सर्जक के पीछे उसकी गहन संवेदना सक्रिय भूमिका निभाती है। यह संवेदना ही लेखक को पाठक और समग्र समाज से जोड़ती हैं। संवेदना किसी भी व्यक्ति का आतंरिक तत्व हो सकता है। लेकिन उसके इस अंतर्मन का विस्तार जब समाज के अंतिम छोर पर खड़े व्यक्ति तक होता है तो उसकी रचनात्मकता को सामाजिक स्वीकार्यता और आदर प्राप्त होता है। यह संवेदना अक्सर देश,काल और परिस्थितियों से भी परे जाकर कालातीत होती है क्योंकि समय चाहे जितना भी बदले हमारेमूल्य और आदर्श एक से बने रहते हैं। संवेदना इन सबको अपने साथ लेते हुए रचनात्मकता में ढलती जाती हैं।

मालती जोशी का महत्व इस जरिए भी प्रतिपादित किया जा सकता है कि वे परिवार की संवेदना का सार्वकालिक मूल्य ढोकर चलती हैं। ऐसे वक्त में जब मनुष्य और परिवारों से संवेदना क्षरित हो रही है, वे इस सार्वभौमिक तत्व को बचाने के लिए लेखन करती हैं। उनका लेखन चाहे बहुआयामी न हो, परिवार के जरिए वे इस तत्व को जीवित रखने की कोशिश करती हैं, जिसमें परिवार की एक इकाई का प्रेम, स्नेह और ममत्व दूसरे के प्रति जीवित रहे और संवर्धित हो। उनकी संवेदना का यही मूलतत्व है, जिसका रक्षण वे धौर्य और कुशलता के साथ कर रही हैं।

निष्कर्ष – आधुनिक काल में वैज्ञानिक और औद्योगिक विकास के कारण सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में परिवर्तन आया। पुराने मूल्य टूटने लगे, सामाजिक आंदोलन और शिक्षा के कारण नारी संबंधी दृष्टिकोण बदलने लगा और आज की नारी पुरुष प्रधान व्यवस्था और शोषण के विरोध में चुनौती बनकर खड़ी है। 1975 के अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष ने इस दृष्टिकोण के विकास में योगदान दिया है। इसी काल में यूरोप में एवं भारत में नारीवादी चिंतन उभरकर सामने आया। नारीवादी चिंतन को आधार बनाकर साहित्य–सृजन हुआ और नारीवाद की अवधारणाएं स्पष्ट होने लगीं। नारीवाद के संबंध में अनेक लोगो ने अस्पष्ट तथा गलत धारणाएं बनाये रखी हैं। ऐसा भी समझा जाने लगा कि नारी द्धारा लिखा जाने वाला साहित्य अर्थात नारीवादी साहित्य है, किंतु ऐसा नहीं है। जो साहित्य नारी के हक के लिए लिखा जाता है वह नारीवादी साहित्य। फिर चाहे वो किसी पुरुष ने लिखा हो। इस बीच मालती जोशी अपवाद के रुप में एक स्थापित रचनाकार हैं, जिनकी कहानियों में जीवंत समाज के सक्रिय और सजीव पात्रों को बुनकर एक भरा–पूरा संसार रचा जाता है। परिवारों के बीच गढ़ी जाने वाली कहानियां हमारे उस समाज का प्रतिनिधित्व करती हैं, जिसमें हम तमाम निराशाओं और कुंठाओं के बावजूद जीने का प्रयास करते हैं। इन कठिन परिस्थितियों से निकलने के लिए मालती जोशी का शिल्प विन्यास बहुत ही सहज और सरल भाषावली का इस्तेमाल करते हुए बगैर किसी उलझाव के कथावस्तु को पाठकों तक पहुंचाने में सफलता प्राप्तकरता है। सामान्य बोलचाल की भाषा और पात्रों के अनुकूल संवादों का प्रयोग करते हुए मालती जोशी की शिल्प संरचना उनकी कहानियों को सम्प्रेषणीयता प्रदान करती हैं। उनके शिल्प का सीधा संबंध उस संवेदना से है, जो वे अपनी कहानियों के माध्यम से उभारने में कामयाब होती हैं। इतिहास को अगर देखा जाए तो अपनी बात को कहे जाने के लिए सभी रचनाकार एक विशिष्ट शिल्प को अपनाते हैं, जो उनकी अपनी शैली कहलाती है। मालती जोशी ने अपनी नारी पात्रों को परिस्थितियों से हताश होने वाली नारी न बताकर उसे दृढ़तापूर्वक समस्याओं का सामना करते हुए दिखाया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जोशी मालती – मन न भये दस बीस 1981 साक्षी प्रकाशन।
2. जोशी मालती – बोल री कठपुतली 1985 किताब घर प्रकाशन।
3. जोशी मालती – बाबुल का घर 1992 साक्षी प्रकाशन।
4. जोशी मालती – मोरी रंग दी चुनरिया 1992 साक्षी प्रकाशन।
5. जोशी मालती – रहिमन धागा प्रेम का2002 परमेश्वरी प्रकाशन।
6. www.hindisamy.com
7. www.prabhatbooks.com
8. gadyakosh.org

****

प्रोजेक्ट उत्कर्ष की वस्तुस्थिति का तुलनात्मक अध्ययन

प्रो. शशि चित्तौड़ा* गायत्री भारद्वाज**

प्रस्तावना – पिछले कुछ समय से यह आवश्यकता महसूस की जा रही थी कि आज के सूचना तकनीकी के युग में विद्यार्थियों को किस प्रकार परम्परागत पुस्तकों के अतिरिक्त प्रभावी और रोचक तरीके से अध्यापन कराया जायें। उक्त संदर्भ में प्रोजेक्ट उत्कर्ष इस कमी को दूर कर सकता है। इसके माध्यम से कम्प्यूटर आधारित शिक्षण उपयोगी सिद्ध हुआ।

प्रोजेक्ट उत्कर्ष की शुरूआत मोईनी फाउण्डेशन द्वारा की गई। यह फाउण्डेशन एक शैक्षिक ट्रस्ट है। इसकी स्थापना 2012 में जयपुर में हुई, इसके संस्थापक श्री अरविन्द थानवी एवं निदेशक डॉ. विजय व्यास है। इस ट्रस्ट का मिशन 'गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अधिकार'। यह ट्रस्ट क्वालिटी ऐज्यूकेशन पर कार्य करता है। इस फाउण्डेशन का निर्माण प्रौद्योगिकी संरक्षण रोजगार कौषल क्विज आधारित अधिगम के लिए किया गया।

प्रोजेक्ट उत्कर्ष – सरकारी स्कूलों में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए जिला कलेक्टर महोदय की पहल पर मोईनी फाउण्डेशन, जयपुर व शिक्षा विभाग द्वारा क्विज एकेडमी के सहयोग से प्रोजेक्ट 'उत्कर्ष' की शुरूआत की गई।

प्रोजेक्ट उत्कर्ष के उद्देश्य :

1. **सरल व रूचिपूर्ण स्व-अध्ययन (Self Learning) –** क्विज एकेडमी के द्वारा अधिगमन प्रक्रिया को सरल एवं रूचिकर बनाना व विद्यार्थियों को स्वअध्ययन के लिए प्रेरित करना।
2. **स्मार्ट क्लास व ई-लर्निंग –** विद्यालय में उपलब्ध कम्प्यूटर लैब का उपयोग स्मार्ट क्लास एवं ई-लर्निंग के लिए करना।
3. **रिमोट मॉनिटरिंग –** अध्यापक व विद्यार्थी के नियमित अभ्यास की रिमोट मॉनिटरिंग द्वारा ऑनलाईन मॉनिटर करना।
4. **प्रदर्शन बेंचमार्किंग –** संख्यात्मक डाटा का संग्रह कर विद्यार्थियों, अध्यापकों व विद्यालय का परिणाम विश्लेषण करना।

शोध के उद्देश्य :

1. उदयपुर व जयपुर जिले के सरकार विद्यालयों में प्रोजेक्ट उत्कर्ष की वस्तुस्थिति का पता लगाना।
2. उदयपुर व जयपुर जिले के सरकारी विद्यालयों में प्रोजेक्ट उत्कर्ष की वस्तुस्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना – उदयपुर व जयपुर जिले के सरकारी विद्यालय में प्रोजेक्ट उत्कर्ष की वस्तुस्थिति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

विधि – सर्वेक्षण विधि।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध के लिए शोधार्थी द्वारा उदयपुर व जयपुर के 30 विद्यालयों का चयन किया गया, जिसमें से 15 विद्यालय उदयपुर से व 15 विद्यालय जयपुर से लिये गये।

उपकरण – प्रस्तुत शोध कार्य में शोधार्थी द्वारा उत्कर्ष की वस्तुस्थिति का पता लगाने के लिए चैकलिस्ट का निर्माण किया गया। प्रधानाध्यापकों के लिए चैकलिस्ट का निर्माण किया गया।

तालिका 1 : प्रधानाध्यापकों के अनुसार जयपुर में प्रोजेक्ट उत्कर्ष की वस्तुस्थिति

विवरण	प्रधानाध्या-पकों की संख्या	प्रतिशत
विद्यालय में पर्याप्त कम्प्यूटर है	8	53.33%
कम्प्यूटर कक्ष है	10	66.67%
कम्प्यूटर सही अवस्था में है	6	40.00%
सभी शिक्षक कम्प्यूटर को संचालित करने में दक्ष /निपुण है	8	53.33%
कम्प्यूटर को संचालित करने वाले शिक्षक पर्याप्त संख्या में है	7	46.67%
इंटरनेट सुविधा उपलब्ध है	10	66.67%
विद्यार्थियों की तुलना में कम्प्यूटर पर्याप्त है	8	53.33%
सभी विद्यार्थी कम्प्यूटर द्वारा पढ़ते है	11	73.33%
विद्यालय में विद्युत आपूर्ति पर्याप्त रुप से होती है	7	46.67%
विद्यालय में नवीनतम कम्प्यूटर पर्याप्त संख्या में है	5	33.33%
पाठ्यपुस्तक संबंधी शिक्षण सामग्री को कम्प्यूटर में प्रदर्शित करने के लिए स्केनर की व्यवस्था है	9	60%
औसत		**54%**

तालिका 2 : प्रधानाध्यापकों के अनुसार उदयपुर में प्रोजेक्ट उत्कर्ष की वस्तुस्थिति

विवरण	प्रधानाध्या-पकों की संख्या	प्रतिशत
विद्यालय में पर्याप्त कम्प्यूटर है	18	60%
कम्प्यूटर कक्ष है	22	73.33%
कम्प्यूटर सही अवस्था में है	22	73.33%
सभी शिक्षक कम्प्यूटर को संचालित करने में दक्ष /निपुण है	20	66.67%

* मार्गदर्शिका, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड-टू-बी विश्वविद्यालय), उदयपुर (राज.) भारत
**शोधार्थी, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड-टू-बी विश्वविद्यालय), उदयपुर (राज.) भारत

कम्प्यूटर को संचालित करने वाले शिक्षक पर्याप्त संख्या में है	16	53.33%
इंटरनेट सुविधा उपलब्ध है	24	80.00%
विद्यार्थियों की तुलना में कम्प्यूटर पर्याप्त है	18	60%
सभी विद्यार्थी कम्प्यूटर द्धारा पढ़तें है	24	80%
विद्यालय में विद्युत आपूर्ति पर्याप्त रुप से होती है	16	53.33%
विद्यालय में नवीनतम कम्प्यूटर पर्याप्त संख्या में है	14	46.67%
पाठ्यपुस्तक संबंधी शिक्षण सामग्री को कम्प्यूटर में प्रदर्शित करने के लिए स्केनर की व्यवस्था है	24	80%
औसत		**66.06%**

तालिका 3 : जयपुर व उदयपुर के प्रधानाध्यापकों के अनुसार प्रोजेक्ट उत्कर्ष की वस्तुस्थिति का तुलनात्मक अध्ययन

विवरण	**जयपुर प्रधानाध्या-पकों का प्रतिशत**	**उदयपुर प्रधानाध्या-पकों का प्रतिशत**
विद्यालय में पर्याप्त कम्प्यूटर है	53.33%	60%
कम्प्यूटर कक्ष है	66.67%	73.33%
कम्प्यूटर सही अवस्था में है	40.00%	73.33%
सभी शिक्षक कम्प्यूटर को संचालित करने में दक्ष /निपुण है	53.33%	66.67%
कम्प्यूटर को संचालित करने वाले शिक्षक पर्याप्त संख्या में है	46.67%	53.33%
इंटरनेट सुविधा उपलब्ध है	66.67%	80.00%
विद्यार्थियों की तुलना में कम्प्यूटर पर्याप्त है	53.33%	60%
सभी विद्यार्थी कम्प्यूटर द्धारा पढ़तें है	73.33%	80%
विद्यालय में विद्युत आपूर्ति पर्याप्त रुप से होती है	46.67%	53.33%
विद्यालय में नवीनतम कम्प्यूटर पर्याप्त संख्या में है	33.33%	46.67%
पाठ्यपुस्तक संबंधी शिक्षण सामग्री को कम्प्यूटर में प्रदर्शित करने के लिए स्केनर की व्यवस्था है	60%	80%
औसत	**54%**	**66.06%**

तालिका 1 से स्पष्ट है कि विभिन्न पहलुओं के आधार पर जयपुर में प्रोजेक्ट उत्कर्ष की वस्तुस्थिति औसतन 54% ही अच्छी है जबकि तालिका 2. से स्पष्ट है कि विभिन्न पहलुओं के आधार पर उदयपुर में प्रोजेक्ट उत्कर्ष की वस्तुस्थिति औसतन 66% अच्छी है।

टी परिक्षण के आधार पर टी का आंकलित मान 2.35 है जो कि 5% सार्थकता स्तर पर उसके तालिका मान 1.96 से अधिक है अत: यह अंतर सार्थक है जिसके कारण प्रथम परिकल्पना को अस्वीकृत किया जाता है। उदयपुर व जयपुर जिले के सरकारी विद्यालयों में प्रोजेक्ट उत्कर्ष की वस्तुस्थिति में सार्थक अन्तर है।

स्थान	**औसत**	**मनक विचलन**	**टी का आंकलित मान**
जयपुर	54%	12.09	2.35
उदयपुर	66.06%	12.09	

वर्तमान में प्रासंगिकता :

1. कंप्यूटर के साथ ही स्कैनर व प्रिंटर की भी व्यवस्था संतोषप्रद रूप से की जानी चाहिए।
2. कंप्यूटर लैब में पावर बैकअप के लिए उपयुक्त बैटरी लगाई जानी चाहिए।
3. इंटरनेट की सुविधा में भी कई बार अड़चनें आ जाती है, इस पर ध्यान देने के लिए हार्डवेयर विशेषज्ञ भी स्कूल में नियुक्त किया जाना चाहिए। विशेषज्ञ सेवाओं की आउटसोर्सिंग कर देने मात्र से समस्या का समाधान नहीं हो पाता है।
4. कमजोर विद्यार्थियों को कंप्यूटर चलाने की विशेष ट्रेनिंग दी जानी चाहिए, जिससे कि वे कंप्यूटर चलाने से घबराए नहीं।
5. विद्यालय के निर्धारित कालांश के अतिरिक्त भी विद्यार्थियों को कंप्यूटर प्रयोग की सुविधा दी जानी चाहिए जिससे कि वह उनकी रुचि और ज्ञान में अभिवृद्धि हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. facebook.com/projectutkarsh.
2. http://www.moine.org
3. http://www.projectutkarsh.org
4. कपूर, डॉ. उर्मिला : 'शैक्षिक तकनीकी', आगरा : साहित्य प्रकाशन।
5. शर्मा, डॉ. संदीप एवं पारीक अलका (2000) : 'शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा-कक्ष प्रबन्धन', जयपुर : शिक्षा प्रकाशन।
6. शर्मा डॉ. आर.ए. : 'अध्यापक शिक्षा एवं प्रशिक्षण तकनीकी', मेरठ, आर. लाल बुक डिपो।

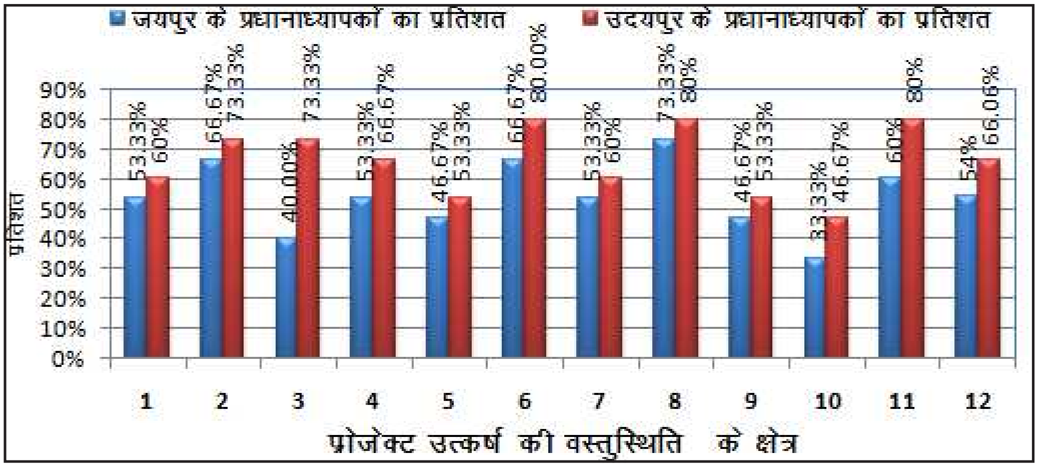

धार्मिक केन्द्रों का स्थानीय निवासियों की आय पर प्रभाव का आर्थिक अध्ययन

डॉ. पारस जैन* लवेश पोरवाल**

प्रस्तावना – यह एक सर्वविदित तथ्य है कि भारत राष्ट्र परम्पराओं से समृद्ध राष्ट्र है। शाही आयोग ने कहा कि भारत परम्पराओं की दृष्टि से एक अजायबघर है। किसी भी देश के आर्थिक विकास में अनेक तत्व योगदान करते है एवं सामाजिक एवं आर्थिक तत्व किसी भी देश की विकास प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। प्राचीन भारतीय विचारकों ने लोगों में सन्तोष ही परम सुख है, परोपकार, सेवा भावना एवं धार्मिक भावनाएं भरकर उन्हें आर्थिकता से विहिन कर दिया था। यदि व्यक्ति सन्तोष ही करते तो उसका विकास ही अवरूद्ध हो जाता है एवं किसी राष्ट्र की समस्त जनता ऐसी किसी भावनाओं से प्रेरित हो तो समस्त राष्ट्र का विकास अवरूद्ध हो जाता है। अत: यदि किसी राष्ट्र को विकास के मार्ग पर आरूढ़ होना है तो उसे इन धार्मिक कारकों को सकारात्मक मोड़ देना होगा।

भारत में राष्ट्र में विभिन्न धर्म पोषित है क्योंकि भारत एक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र है। यहां हिन्दु, मुस्लिम, सिक्ख, इसाई, जैन, बौद्ध इत्यादि धर्म विद्यमान है। इन धर्मो के प्रति भारत की जनता की गहरी आस्था है एवं इन धर्मो के देवी-देवताओं के कई मंदिर भारत वर्ष में स्थित है। भारत में जनता धार्मिक केन्द्रों के प्रति आस्थावान है एवं प्रतिवर्ष भारत के निवासी इन आस्था केन्द्रो पर जाते रहते है एवं वहां दान तथा दक्षिणा देकर अपनी धार्मिक परम्पराओं का निर्वहन करते है। इस सन्दर्भ में दक्षिण क्षेत्र (आंध्रप्रदेश) के तिरूपती बालाजी, महाराष्ट्र में साई बाबा, सिद्धी विनायक, केदारनाथ, बद्रीनाथ, वैष्णोदेवी इत्यादि उल्लेखनीय है।

इन जन आस्था के केन्द्रों के आस पास बड़ा बाजार विकसित हो गया है एवं प्रतिवर्ष इन स्थलों पर लाखों देशी एवं विदेशी पर्यटक दर्शनार्थी आते है एवं अपनी श्रद्धा एवं सामर्थ्य के अनुसार व्यय करते है। इस कारण ये क्षेत्र एक बडे बाजार के रूप में उभरकर सामने आये है। इन क्षेत्रों में कई प्रकार की आर्थिक गतिविधियां होने लगी है। जिससे इन क्षेत्रों के निवासियों एवं अन्य क्षेत्रों के लोगों की आय में काफी वृद्धि हो गई है।प्रस्तुत शोध पत्र में धार्मिक एवं जन आस्था के केन्द्रों का स्थानीय निवासियों की आय पर हुए प्रभाव का अध्ययन किया गया है।

सन्दर्भ साहित्य का पुनरावलोकन – सन्दर्भ साहित्य का पुनरावलोकन किसी भी शोध की आधारशिला है। यह भावी शोध की आधारशिला का निर्माण करता है। इससे शोधकर्ता को यह पता चलता है कि शोध शीर्षक पर वर्तमान समय तक क्या कार्य हो चुका है एवं आगामी समय में किस दिशा की ओर बढ़ना है।

यह शोध विषय का एक नितान्त ही नवीन शोध विषय है जिस पर शोध कार्यो का नितान्त अभाव है। यहां तक कि शोधकर्ताओं द्वारा इस विषय पर आज तक सोचा ही नही गया है। यहां हमने शोध शीर्षक से सम्बृद्ध विषयों पर विभिन्न शोधकर्ताओं द्वारा किये गये शोध कार्यो को सूत्रबृद्ध कर उनके निष्कर्षो को प्रस्तुत करने का प्रयास किया जो इस प्रकार है:-

जेनिफर एफ ईप्ले (2012) ने अपने शोध में इण्डोनेशिया के आर्थिक विकास में धार्मिक मान्यताओं की भूमिका का विवेचन प्रस्तुत किया है। उन्होंने बताया कि देश के आर्थिक विकास में धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक तथा राजनैतिक कारकों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। ये कारण एक दूसरे पर अंतनिर्भर है एवं विरोधी भी है। इन गहरे सम्बन्धों का मुख्य कारण धार्मिक संगठन है। इन संगठनों में मुसलमान संगठन अधिक है। इन संगठनों के कुछ लोग सरकार में भी सक्रिय है। कई बार आम जनता एवं सरकार के बीच इन धार्मिक कारणों के कारण विवाद हो जाता है। इस क्षेत्र में कई गैर सरकारी संगठन भी कार्यरत है जो कि जनता की भावनाओं को भड़काकर जन सामान्य के भावी जीवन के साथ खिलवाड़ करते है। स्पष्ट है कि यदि देश का विकास करना है तो इन धार्मिक संगठनों को जनता के जीवन में आशावाद का संचार कर सकारात्मक सोच को विकसित करना होगा तभी आर्थिक विकास सम्भव है।

जॉन एफ. मैकुले एवं ई. बोर्ड (2013) ने अपने शोध पत्र में धार्मिक विश्वास एवं लोकतन्त्र पर अपना मत प्रकट किया है। इस शोध पत्र मे अफ्रीका में धर्म एवं लोकतन्त्र के अन्तसम्बन्धों पर विचार प्रकट किये गये है। उन्होंने बताया कि जो नागरिक अपने धर्म के प्रति अगाध विश्वास रखते है, वो अपने देश की सरकार उनके कल्याण के लिये ही कार्य करती है। सरकार में यह आस्था विभिन्न रखते है कि सरकार उनके कल्याण के लिए कार्य करती है। सरकार में यह आस्था विभिन्न धार्मिक समुदायों के अनुसार भिन्न-भिन्न थी। निष्कर्ष में इन्होंने बताया कि धार्मिक आस्था एवं विश्वास का राजनीतिक आस्था एवं भागीदारी पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

एम. बी. स्मिथ (2009) ने अपने शोध पत्र में आर्थिक विकास में आथिक एवं गैर आर्थिक तत्वों की भूमिका का विवेचन प्रस्तुत किया है। उन्होनें बताया कि किसी भी देश के आर्थिक विकास को निर्धारित करने वाले मुख्य आर्थिक तत्व पूंजी श्रम एवं प्राकृतिक संसाधन है जबकि गैर आर्थिक कारकों में सांस्कृतिक, धार्मिक एवं सामाजिक प्रथाएं है। उन्होंने इरान का उदाहरण लेकर बताया कि इरान में धार्मिक तत्वों ने देश के आर्थिक विकास को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया है। धार्मिक तत्वों ने निवासियों में ब्राहय आडम्बर भरा है। ये दिखावा करने को आतुर है परन्तु कार्य करने को नहीं अत: निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि धार्मिक कारको ने इरान के आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न की है।

*विभागाध्यक्ष अर्थशास्त्र विभाग, ज.रा.ना.रा. विद्यापीठ (डीम्ड टू. बी. विश्वविद्यालय), उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, अर्थशास्त्र विभाग, ज.रा.ना.रा. विद्यापीठ (डीम्ड टू. बी. विश्वविद्यालय), उदयपुर (राज.) भारत

एलन, लेहर (2011) ने अपने शोध पत्र में संयुक्त राज्य अमेरिका में आर्थिक एवं जनांकिकीय विकास में धर्म के योगदान का विवेचन प्रस्तुत किया है। यहां उन्होंने बताया कि आर्थिक तत्वों ने मानवीय पूंजी, श्रम आपूर्ति, पूंजी संचय एवं प्रजनन दरों पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। उन्होंने बताया कि धार्मिक तत्वों ने देश के आर्थिक विकास को नकारात्मक रूप से ही प्रभावित किया है। अध्ययन से पता चलता है कि भिन्न- भिन्न धार्मिक समुदायों की जन्म एवं प्रजनन दरें भिन्न-भिन्न है। कई समुदायों में महिलाओं में पुरुषों की अपेक्षा कम है। रोजगार की अनुपलब्धता ने महिलाओं की स्थिति को दयनीय बना दिया है। यदि देश को अधिक विकास के स्तर तक पहुँचाना है तो धार्मिक कारकों को सकारात्मक रूप देना होगा।

अध्ययन के उद्देश्य - धार्मिक एवं जन आस्था के केन्द्रों का स्थानीय निवासियों की आय पर हुए प्रभाव का अध्ययन करना

परिकल्पना - धार्मिक एवं जन आस्था के केन्द्रों का स्थानीय निवासियों की आय पर कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नही हुआ है।

शोध प्रविधि - प्रस्तुत शोध पत्र की शोध प्रविधि निम्नवत् है:-

अध्ययन क्षेत्र का चयन - भारत एक परम्परागत राष्ट्र है जहां रीति-रिवाज, धार्मिक मान्यताओं तथा आदर्शो का उच्च स्थान है। यहां के निवासी धार्मिक आस्था से ओत-प्रोत है। यहां के निवासियों के जीवन पर धार्मिक मान्यताओं एवं आस्थाओं का व्यापक प्रभाव होता है। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि धार्मिक कारण आर्थिक विकास को नकारात्मक रूप से प्रभावित करते है अर्थात् बाह्य आडम्बर, दिखावा, धर्म के नाम पर ठगी तथा प्राचीन धार्मिक विचार जैसे संतोष ही परम सुख है इत्यादि विकास के मार्ग में अवरोधक है। भारत राष्ट्र इन धार्मिक मान्यताओं से जकडा हुआ है क्योंकि ये यहां के निवासियों के जीवन का हिस्सा है। भारत के लोग नित्य कई मंदिरों में देवताओं के दर्शन करते है एवं यहां तक कि विदेशी पर्यटक भी मंदिरों में दर्शन करते है। यहां के मंदिर अति भव्य, वास्तुकला से ओत-प्रोत एवं दर्शनीय है। जो पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है। यहां की स्थापत्य कला को देखने लोग बरबस आकृष्ट हो जाते है। अत: इस बात का आंकलन अतिआवश्यक है कि भारत के आर्थिक विकास में धार्मिक स्थलों का क्या योगदान है तथा कैसे हम इसे और प्रेरित कर सकते है। अत यहां हमने धार्मिक स्थानों के स्थानीय विकास पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करने हेतु राजस्थान राज्य का चयन उद्देश्यपूर्वक किया है। यहां हमने धार्मिक स्थलो को आर्थिक विकास पर प्रभाव का सूक्ष्म आंकलन करने हेतु उदयपुर संभाग का चयन किया है।

उदयपुर संभाग मूलत छह जिलों में विभक्त है। यथा उदयपुर, राजसमन्द, डूंगरपुर, बांसवाडा, प्रतापगढ़ एवं चितौडगढ। इन क्षेत्रों में कई विख्यात मंदिर, मस्जिद एवं गुरुद्धारे आदि है। जैसे उदयपुर में जगदीश मंदिर, एकलिंग जी. नागदा, जगत का अम्बिका मंदिर, केसरिया जी का जैन मंदिर। बांसवाडा में अर्थुणा के मंदिर, त्रिपुरा सुन्दरी मंदिर, भुंगडा दरगाह, छींछ का ब्रह्मा मंदिर इत्यादि। डूंगरपुर में राज राजेश्वर एवं देवसोमनाथ, बेणेश्वर, गलियाकोट दरगाह। चितौडगढ में सांवलिया जी, कालिका माता, भदेसर भैरव, आवरी माता, शनि मंदिर कपासन दरगाह, नौ गज पीर। राजसमन्द में श्रीनाथ जी एवं द्वारिकाधीश मंदिर एवं प्रतापगढ में गौतमेश्वर मंदिर तथा भवरमाता के मंदिर उल्लेखनीय है।

इन धार्मिक आस्था के केन्द्रों ने स्थानीय विकास में विकास केन्द्र का कार्य किया है। इन केन्द्रों की अर्थव्यवस्था काफी हद तक इन धार्मिक केन्द्रों पर निर्भर है। यहां के लोग रोजगार हेतु भी इन पर निर्भर है। अत: इस बात का आर्थिक आंकलन अति आवश्यक हो जाता है कि इन धार्मिक आस्था के केन्द्रों ने आर्थिक विकास एवं स्थानीय जन जीवन को किस प्रकार प्रभावित किया है। अत: हमने हमारे शोध में समस्त उदयपुर संभाग के मुख्य मंदिरो, मस्जिदों, जैन मंदिरों एवं अन्य धर्मो के आस्था केन्द्रों को सम्मिलित किया है।

प्रतिदर्श प्ररचना - प्रस्तुत शोध में हमने उदयपुर के मुख्य धार्मिक आस्था के केन्द्रों को सम्मिलित किया है। जिलें में कई धार्मिक आस्था के केन्द्र है। हमने इन केन्द्रो के स्थानीय आर्थिक विकास एवं जनजीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का सूक्ष्म आंकलन करने हेतु निम्न धार्मिक आस्था के केन्द्रो का चयन उद्देश्यपूर्वक किया है।

उदयपुर- 1. जगदीश मंदिर, 2. एकलिंग जी, 3. केशरीया जी,

उत्तारदाताओं का चयन - प्रस्तुत शोध में धार्मिक आस्था के केन्द्रों का स्थानीय सामाजिक, आर्थिक विकास एवं जन-जीवन पर पड़ने वाले सूक्ष्म प्रभावों का अध्ययन करने हेतु आनुपातिक सरल यादृच्छिक पद्धति के माध्यम से प्रत्येक जन आस्था केन्द्र के समीप स्थायी रूप से निवासरत, व्यापार करने वाले व्यापारियों एवं मंदिरों या आस्था केन्द्रों के कर्मीयों में से 24 उत्तारदाताओं का चयन किया गया है। अत: कुल 24 उत्तारदाताओं का चयन किया है। हमारा कुल प्रतिदर्श 24 उत्तारदाता है।

आंकडो का संकलन - प्रस्तुत शोध प्राथमिक आंकडो पर आधारित है। प्राथमिक आंकड़ों की प्राप्ति स्वयं शोधकर्ता द्वारा विशिष्ट रूप से तैयार अनुसूची के माध्यम से की गई है।

आंकडो का विश्लेषण - संकलित आंकडो का विश्लेषण विभिन्न सांख्यिकीय विधियों यथा प्रतिशत औसत, सहसम्बन्ध, प्रतीपगमन, t परीक्षण किया गया है।

निष्कर्ष एवं विवेचन - यहां हमने उत्तरदाताओं से यह जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया कि क्या धार्मिक आस्था के केन्द्रों के समीप रोजगार प्राप्त करने वालों की आय में क्या परिवर्तन हुआ है। यहां हमने प्रत्येक धार्मिक स्थल से रोजगार प्राप्त उत्तरदाताओं का यादृच्छिक रूप से चयन किया एवं उनसे आय के आंकडे प्राप्त किये है। हमने इनका विश्लेषण स्टूडेन्ड के t परीक्षण के अन्तर परीक्षण द्वारा किया है। यहां निम्न शून्य परिकल्पना की गई है।

H_O : धार्मिक आस्था के केन्द्रों के विकास से उत्तरदाताओं की आय में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नही हुआ है।

तालिका 1 : उत्तरदाताओं की आय में परिवर्तन

उत्तरदाता	आय (हजार में)		अन्तर	S	t मूल्य	P मूल्य
	धार्मिक स्थलों के विकास के पूर्व	धार्मिक स्थलों के विकास के पश्चात्				
I	15	30	15	50.40	4.56	.002
II	10	40	30			
IIII	20	50	30			
IV	30	80	50			
V	30	100	70			
VI	20	80	60			
VII	30	70	40			
VIII	20	50	30			
IX	30	90	60			

X	40	110	70			
XI	30	100	70			
XII	20	70	50			
XIII	20	80	60			
XIV	40	80	40			
XV	50	100	50			
XVI	10	70	60			
XVII	20	80	60			
XVIII	20	90	70			
XIX	30	90	60			
XX	20	80	60			
XXI	10	50	40			
XXII	15	85	70			
XXIII	20	80	60			
XXIV	20	80	60			

स्त्रोत : आगणित

$$t = \frac{D}{S}\sqrt{n}$$

$$= \frac{47.08}{50.40}\sqrt{24}$$

$$= 4.56$$

यहां स्वातंत्रय अंश = n –1 = 24–1 = 23

यहां 23 स्वातंत्रय अंश पर t का सारणी मूल्य 1.71 जबकि t का आंकलित मूल्य 4.56 है। स्पष्ट है कि आंकलित मूल्य, सारणी मूल्य से कम हैं अत: हमारी शून्य परिकल्पना गलत सिद्ध होती है एवं निष्कर्ष प्राप्त होता है कि धार्मिक आस्था के केन्द्रों के विकास से उत्तरदाताओं की आय में वृद्धि हुई है। यही निष्कर्ष P का मूल्य से भी प्राप्त होते है जो कि सार्थकता स्तर 0.05 से कम है।

उत्तरदाताओं द्वारा परिवार पर व्यय में परिवर्तन – यहां हमने उत्तरदाताओं से यह जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया कि धार्मिक आस्था के केन्द्रों के विकास से उत्तरदाताओं द्वारा उनके परिवार पर किये जये रहे व्यय में क्या परिवर्तन हुआ है। इसका परीक्षण करने हेतु हमने t के अन्तर परीक्षण का उपयोग किया है। यहां निम्न शून्य परिकल्पना की गई है।

H_O : धार्मिक आस्था के केन्द्रों के विकास होने से उत्तरदाताओं द्वारा परिवार पर किये जाने वाले व्यय में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नही हुआ है।

$$t = \frac{D}{S}\sqrt{n}$$

$$= \frac{28.83}{15.16}\sqrt{24}$$

$$= \frac{28.83}{15.16}\ 4.89$$

$$= 7.65$$

यहां t का आंकलित मूल्य 7.65 है जबकि 24 स्वातंत्रय स्तर पर t का सारणी मान 1.71 है। आंकलित मूल्य, सारणी मान से अधिक है अत: शून्य परिकल्पना गलत है एवं यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि धार्मिक आस्था के केन्द्रों के विकास से उत्तरदाताओं द्वारा परिवार पर किये जा रहे व्यय में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। यही निष्कर्ष P मूल्य से भी प्राप्त हुए जो कि सार्थकता स्तर 0.05 से कम है।

तालिका 2 : परिवार के व्यय में परिवर्तन

उत्तरदाता	आय (हजार में) धार्मिक स्थलों के विकास के पूर्व	धार्मिक स्थलों के विकास के पश्चात्	अन्तर	S	t मूल्य	P मूल्य
I	10	20	10	15.16	7.65	0.0012
II	15	30	15			
IIII	20	40	20			
IV	30	50	20			
V	20	40	20			
VI	22	40	18			
VII	15	30	15			
VIII	10	30	20			
IX	8	30	22			
X	5	25	20			
XI	10	30	20			
XII	10	35	25			
XIII	15	40	25			
XIV	20	50	30			
XV	20	50	30			
XVI	25	60	35			
XVII	30	70	40			
XVIII	30	60	30			
XIX	20	70	50			
XX	25	70	45			
XXI	20	40	20			
XXII	10	40	30			
XXIII	10	40	30			
XXIV	15	45	30			

स्त्रोत : आगणित

सुझाव:

1. धार्मिक स्थलों पर गन्दगी की समस्या एक आम बात है जो पर्यटकों को आकर्षित करने में एक बहुत बड़ी बाधा है। सरकार को इन धार्मिक स्थलों पर सफाई व्यवस्था पर समुचित ध्यान देना चाहिये।
2. धार्मिक स्थलों पर अत्यधिक भीड–भाड रहती है अत: धार्मिक स्थलों के प्रबन्ध को एवं सरकार को भीड़ पर नियन्त्रण हेतु सकारात्मक नीति अपनानी चाहिये। इस हेतु पुलिस कर्मियों एवं स्थानीय युवाओं की भी सहायता ली जा सकती है।
3. धार्मिक स्थलों पर दर्शनार्थियों के रहने की सुविधाओं का अभाव रहता है। सामान्यतया या तो ये होटल अत्यधिक मंहगे होते है या फिर बिल्कुल खराब अत: धार्मिक स्थलों के प्रबन्धन बोर्ड एवं सरकार द्वारा मध्यम श्रेणी के होटल एवं धर्मशालाओं का विकास करना चाहिये ताकि दर्शनार्थियों को ठहरने की समुचित सुविधा प्राप्त हो सकें।
4. धार्मिक स्थलों पर होने वाली आय के समुचित प्रबन्धन की व्यवस्था होनी चाहिये क्योंकि अधिकांश धार्मिक स्थलों पर होने वाली आय एवं व्यय का समुचित लेखा–जोखा नही रखा जाता है जिससे सरकार को राजस्व की हानि होती है। स्पष्ट है कि सरकार को इस दिशा में व्यापक कदम उठाने चाहिये।

5. अधिकांश धार्मिक स्थलों के आस-पास बाजार केन्द्रो का समुचित विकास हो चुका है परन्तु इन बाजारों का विकास अति अस्त-व्यस्त ढंग से किया गया है जिससे जहां एक और आवागमन एवं यातायात में बाधा उत्पन्न होती है। वही दूसरी और भीड-भाड की समस्या से दर्शनार्थियों को कई समस्याओं का सामना करना होता है अत: सरकार इन बाजारों का विकास व्यवस्थित रूप से मास्टर प्लान के हिसाब से करना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Jannifer L. Eplay, “Development issues and the role of religious organization in Indonesia”, published online by University of Mirchigan, 2012
2. John F. Macune and E. Board, “Religious movement and Democracy’’, 2013
3. S.B. Smith “Religious faith and democracy”, Evidence from the afro barometer surveys, Sept 2009, working paper, 113, published online
4. Allen Lehar, “Role of religion in demographic development”, Research abstract, Vol., Pg-24, 2011
5. Adsera, A. (2006a) “Religion and Changes in Family-Size Norms in Developed Countries.” Review of Religious Research 47(3):271-286.
6. Alatas S.F. (2002). Religion, values and capitalism in Asia, in C.J.W.-L. Wee, (ed.) *The State, Culture and Capitalism in Southeast Asia*, Singapore: Institute of Southeast Asian Studies, 107- 126.
7. Alesina, A.F. and Glaeser, E.L (2004). *Fighting Poverty in the US and Europe: A world of difference*, Oxford: Oxford University Press.
8. Alon, I. and G. Chase (2005). Religious freedom and economic prosperity, *The Cata Journal* 25(2), 399-406.
9. Asherson, N. (1995). *Black Sea*, New York: Hill and Wang.
10. Barro, R.J. and R.C. McClearly (2003). Religion and Economic Growth Across Countries, *American Sociological Review* 68(5), 760-781.
11. Beugelsdijk S. (2005). A Note on the Theory and Measurement of Trust in Explaining Differences in Economic Growth, *Cambridge Journal of Economics* 30, 371-387.
12. Blum. U. and L. Dudley (2001). Religion and Economic Growth: Was Weber right? *Journal of Evolutionary Economics* 11, 207 -230.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

विकलांग व्यक्ति अधिकार अधिनियम 2016: एक अवलोकन

अमिता जोशी* डॉ. प्रार्थना निगम**

शोध सारांश – भारत का संविधान अपने सभी नागरिको के लिए समानता, स्वतंत्रता, न्याय व गरिमा सुनिष्चित करता है और स्पष्ट रूप से यह दिव्यांग व्यक्तियों समेत एक संयुक्त समाज बनाने पर जोर डालता है। हाल के वर्षो में दिव्यांगों के प्रति समाज का नजरिया तेजी से बदला है। यह माना जाता है कि यदि दिव्यांग व्यक्तियों को समान अवसर तथा प्रभावी पुनर्वास की सुविधा मिले तो वे बेहतर गुणवत्तापूर्ण जीवन व्यतीत कर सकते हैं। यह शोध पत्र पर्सनस विद डिसबिलिटी एक्ट 2016 का एक छोटा सा अवलोकन एवं वर्णन मात्र है जो व्यावसायिक समाज कार्याकर्ता, मानव अधिकार कार्यकर्ता, व्यावसायिक पुर्नवास कार्यकर्ता एवं दिव्यांगजनों के लिए कार्यरत संस्थानों आदि के लिए इस अधिनियम को समझने के लिए सहायक सिद्ध हो सकता है, जिससे कि वे इस अधिनियम को मूर्त रुप देने में अपना कुछ योगदान प्रदान कर सके। इस शोध पत्र में अधिनियम के विभिन्न अनुच्छेदों का वर्णन किया गया हैं। अधिनियम के नीति, नियमों का पालन एवं उल्लंघन करने पर किस प्रकार के दण्डनीय अपराध हो सकते है इसका वर्णन किया गया है। पर्सनस विद डिसेबिलिटी एक्ट 1995 के प्रावधान, पर्सनस विद डिसेबिलिटी बिल 2014 आदि के प्रावधान में संशोधन एवं परिवर्तन का अवलोकन किया गया है। इस अधिनियम की स्थापना का मुख्य उद्देश्य दिव्यांगजनों को समाज की मुख्य धारा में लाना, उनके आर्थिक, सामाजिक, मानसिक स्तर एवं आत्म सम्मान में वृद्धि करना है। जिससे वे स्वतंत्र एवं स्वावलंबी जीवन यापन कर सकें।

प्रस्तावना – भारतीय संविधान की रुपरेखा को समाज के दुर्बल एवं दिव्यांग लोगों की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए बनाया गया हैं। हमारे संविधान के कई हिस्सों में हमें ऐसे कानून एवं प्रावधान मिलतें हैं, जिसमें शारीरिक एवं मानसिक रुप से दुर्बल (अशक्त) व्यतियों के लिए सामाजिक एवं आर्थिक सुरक्षा की दृष्टि से बनाए गए है।

जैसा की संविधान की अनुसुची 7 की सूची 2 की प्रविष्टि 9 में बताया गया है कि दिव्यांगजनों के कल्याण के लिए मानव संसाधन एवं कल्याण मंत्रालय प्रधान मंत्रालय के रुप में कार्यरत है। जिसमें दुर्बल एवं बेरोजगारों की सहायता, को व्यवहारिक रुप में परिणित करने के लिए केन्द्रीय एवं राज्य सरकारें भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहीं है।

इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य पर्सनस विद डिसेवलिटी एक्ट के नियम कानून एवं नीतियों पर प्रकाश डालना है, जिससे यह ज्ञात हो सके कि यह अधिनियम क्या है ? इस अधिनियम के क्या अधिकार है ? जो दिव्यांगजनों को डब्ल्यूएचओ, केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारों द्वारा प्रदान किये गये है। यह शोध पत्र पर्सनस विद डिसेबिलिटी एक्ट 2016 का एक छोटा सा अवलोकन एवं वर्णन मात्र है जो व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता, मानव अधिकार कार्यकर्ता, व्यासायिक पुर्नवास कार्यकर्ता एवं दिव्यांगजनों के लिए कार्यरत संस्थानों आदि के लिए इस अधिनियम को समझने के लिए सहायक सिद्ध हो सकता है, जिससे कि वह इस अधिनियम को मूर्त रुप देने में अपना कुछ योगदान प्रदान कर सके।

भारत में सन् 2007 में यूएनसीआरपीडी (यूनाइटेड नेशंस कन्वेंशन ऑन राइटस ऑफ पर्सनस विद डिसेबिलिटी) हस्ताक्षर करने के पश्चात पर्सनस विद डिसेबिलिटी अधिनियम 1995 (जो कि पीडब्ल्यूडी एक्ट 1995, के नाम से जाना जाता है) में सन् 2010 के कई बैठकों एवं ड्राफ्टिंग प्रक्रियाओं के बाद यूएनसीआरपीडी के अनुसार प्रावधानों में परिवर्तन करना प्रारंभ किया गया जो संसद के दोनों सदनों एवं राष्ट्रपति द्वारा 28 दिसम्बर 2016 में राईटस ऑफ पर्सनस विद डिसेबिलिटी एक्ट 2016 (आरपीडब्ल्यूडी एक्ट 2016) के नाम से पारित एवं प्रभावित हुआ। जिसका मुख्य उद्देश्य दिव्यांग व्यक्तियों की आत्म गरिमा, व्यतिगत अधिकार, व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं स्वयं द्वारा स्वतंत्र रुप से जीवन जीने का अधिकार षामिल किया गया है। यह प्रावधान विभेदीकरण समाज में दिव्यांगजन का पूर्ण एवं प्रभावी रुप से भाग लेने, एवं मानव एवं अमानवीय विविधता से दिव्यांगजनों के कुछ अलग होने को स्वीकार्यता एवं सम्मानपूर्ण स्थिति, अवसरों में एक उपलब्धता, पुरुष एवं महिलाओं में समानता, दिव्यांग बच्चों के अधिकार एवं उनके कार्य करने की क्षमता के प्रति सम्मान का भाव बनाए रखने पर जोर देता है। यह अधिनियम दिव्यांगजनों के प्रति समाज कल्याण की भावना से ऊपर उनके मानव अधिकार एवं संबंधित बातों पर अधिक ध्यान देता है।

2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 121 करोड है, जिसमें से 2.68 करोड दिव्यांग है जो कुल जनसंख्या का 2.21 प्रतिशत है। आज हम उस सदी में हैं, जिसमें सतत विकास के लिए समावेशी विकास को मुख्य धारा माना गया है। इस प्रकार के विकास के लिए दिव्यांगजनो के विकास को समाहित करना अति आवश्यक है। साथ ही दिव्यांगजनो को सशक्त बनाना अति अवश्यक है।

दिव्यांगता की परिभाषाएँ :-

1) ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी के अनुसार –'किसी व्यक्ति की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति जो उस व्यक्ति की गतिशीलता, समझ और उसकी कार्य क्षमता को सीमित करती है।'

2) कैंब्रिज यूनिवर्सिटी के अनुसार– 'किसी प्रकार की बिमारी, क्षति या स्थिति जो किसी व्यक्ति को कुछ करने से रोकती है या बाध्य करती है, जो

*शोधार्थी, समाज कार्य, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविघालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** असिसटेंट प्रोफेसर, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविघालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

एक सामान्य व्यक्ति आसानी से कर सकता है।

3) इंटरनेशनल क्लासिफिकेशन ऑफ इम्पेयरमेंट डिसेबिलिटी एण्ड हेंडिकैप्ड के अनुसार :-

'व्यक्ति में उम्र, लिंग, सामाजिक, सांस्कृतिक कारकों, क्षति अक्षमता के कारण जो नुकसान या पिछडापन हो जाता है, उसे दिव्यांगता कहते है।'

दिव्यांगता केवल एक शारीरिक समस्या ही नहीं है बल्कि यह एक कठिन सामाजिक परिस्थिति है जो किसी व्यक्ति के शारीरिक विशेशताओं एवं उसके समाज की विशेशताओं के मध्य समन्वय के स्तर को दर्शाती है और इस प्रकार की समस्याओं का सामना करने एवं उससे ऊपर उठने के लिए दिव्यंगजनो को सामाजिक एवं वातावरणीय बाधाओं को पार करना आवष्यक होता है।

राईटस ऑफ पर्सनस विद डिसेबिलिटी एक्ट 2016 – यह अधिनियम विकलांगजन (समान अवसर, अधिकार, सुरक्षा एवं पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 की पुर्नस्थापना करके बनाया गया है। यह अधिनियम 28 दिसम्बर 2016 को लागू किया गया जिसमें भारत द्धारा संयुक्त राष्ट्र संघ सम्मेलन में हस्ताक्षरित, विकलांगजनो के लिए जो कानून एवं अधिकार बताए गए है, सभी प्रावधनों को शामिल किया गया है। अब यह अधिनियम राईट ऑफ पर्सनस विद डिसेबिलिटी 2016 के नाम से जाना जाता है। जो यूनाइटेड नेशन कन्वेंशन ऑफ पर्सनस विद डिसेबिलिटी के सभी प्रावधानों की पूर्ति करता है।

इस अधिनियम के अनुसार पूर्व में बताई गई 7 अक्षमताओं के स्थान पर 21 अक्षमताओं का वर्णन किया गया है, जिसे केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति द्धारा और बढाया जा सकता है। इनमें से कुछ दिव्यांगताएं निम्न है – अंधापन, कम दृष्टि, बहरापन, गूंगापन या बोलने में कठिनाई, कई प्रकार की बिमारीयॉ, कुष्ठ रोग आदि।

किसी भी व्यक्ति को दिव्यांग तभी माना जाएगा जब उपरोक्त विकलांगताओं में से एक या अधिक विकलांगताओं ने 40 प्रतिशत से अधिक ग्रसित किया हो।

अब यह प्रश्न उठता है कि यदि हमारे पास पहले से ही विकलांगता से संबंधित कानून उपलब्ध है तो हमें दिव्यांगजनों के लिए किसी नए अधिनियम की आवश्यकता क्यों है ?

सभी प्रकार के प्रावधानों में सामानता – संयुक्त राष्ट्र संघ की संधि के अनुसार मानव अधिकार मुख्य रुप से दो प्रकार के कानूनी दायरों से बंधे हुए है। एक इन्टर नेशनल कन्वेंशन ऑन सिविल एण्ड पॉलिटिकल राईट्स (आई सी सी पी आर) और दुसरा इन्टर नेशनल कन्वेंशन ऑन इकोनॉमिकल, सोशल एण्ड कल्चरल राईट्स (आई सी आई आई सी आई) है।

लक्षित समूह के लिए विशेष प्रावधान – पहले से लक्षित समूह के मानवाधिकारों के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर निम्न प्रावधान संचालित है–

1) सी.ई.डी.ए.डब्ल्यू.– महिलाओं के लिए।

2) सी.आर.सी – बच्चों के लिए।

3) रीफ्यूजी के लिए प्रावधान – रीफ्यूजी के लिए।

अबाध्य प्रकृति के प्रावधान – पूर्व समय में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकलांगों के लिए जितने भी प्रावधान वैश्विक समुदाय द्धारा अपनाए गए है। वे सभी प्रकृति में विकलांगों के अधिकारों के लिए नीति एवं गाईड लाईन उपलब्ध कराते हैं, जो अनुशंसात्मक है। इन प्रावधानों के क्रियानवयन पर किसी भी प्रकार की कानूनी बाध्यता नहीं होती, जबकि ऐसे प्रावधान जो कानूनन रुप से विकलांगों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए अधिनियम के रुप में मान्य किए गए वे निम्न है –

1) मानसिक रुप से मंद व्यक्तियों के अधिकारों के लिए प्रावधान 1971।

2) विकलांगजन अधिकार प्रावधान 1975।

3) विकलांग व्यक्तियों को प्रोत्साहन के लिए वैश्विक कार्यक्रम 1982।

4) विकलांगजनों के समान अवसर के लिए मानक नियम 1993।

प्रावधान संबंधी सामान्य जानकारी

कन्वेंशन ऑन राईटस ऑफ पर्सनस विद डिसेबिलिटी

कुल अनुच्छेद – 50

अपनाया गया –13 दिसम्बर 2006

लागू किया गया – 3 मई 2008

कुल हस्ताक्षरकर्ता – 159 कुल सहभागी – 157

वैकल्पिक प्रोटोकॉल

कुल अनुच्छेद – 18

कुल वैकल्पिक प्रोटोकॉल की संख्या – 01

अपनाया गया – 13 दिसम्बर 2006

लागू किया गया – 3 मई 2008

कुल हस्ताक्षरकर्ता – 96 कुल सहभागी – 85

प्रावधान के उद्देश्य – इस प्रावधान का दिव्यांगजनों के सुरक्षा, मौलिक स्वतंत्रता, समान मानवाधिकार, आगे बढाना एवं उनके आत्म सम्मान को बढावा देना है।

अधिनियमानुसार दिव्यांगजन किसे माना गया है?

अनुच्छेद 1 – के अनुसार उस व्यक्ति को विकलांग माना गया है जो दीर्घकालीन शारीरिक, मानसिक बौद्धिक या संवेगात्मक क्षति से ग्रसित हो, जिसके कारण वह व्यक्ति अपने समाज में पूर्ण रुप से हिस्सा ले पाने में असमर्थ हो।

दिव्यांगता के प्रकार –

1) शारीरिक – अपंगता, अंधत्व, पोलियो, अंग विच्छेदन।

2) मानसिक – मस्तिष्क पक्षाघात, मनोविदलता, मंदता।

3) बौद्धिक – डाउन सिण्ड्रोम, फ्रिंगल एक्स सिण्ड्रोम, एनजलमेन सिण्ड्रोम प्रोडर विलि सिण्ड्रोम।

4) संवेदी – बहरापन अंधत्व आदि।

दीर्घकालीन विकलांगता (एलटीडी) – ऐसी विकलांगता जो व्यक्ति के जीवन में दीर्घकाल के लिए रही हो, जिसका वर्णन इस प्रावधान में किया गया है। परन्तु इसकी परिभाषा कई लॉगटर्म डिसेबिलिटी इन्शोरेंस पॉलिसी एवं सरकारी नियमों के अनुसार निम्न दी गई है –

'ऐसी दिव्यांगता जो व्यक्ति को विगत 12 माह से अधिक समय के लिए हुई हो।'

राज्य सरकारों के लिए सामान्य बाध्यताऍं –

अनुच्छेद 4 –

1) दिव्यांग व्यक्तियों के प्रति विभेदीकरण को खत्म करने के पर्याप्त कदम उठाए जाए, चाहे वह किसी व्यक्ति, संस्था अथवा किसी निजी संस्था द्धारा हो।

2) दिव्यांगता से संबंधित सामान, सेवाऍ, उपकरण एवं सुविधाओं के विकास एवं शोध को बढावा देना।

अनुच्छेद 5 – समानता एवं गैर–भेदभाव।

अनुच्छेद 6 – दिव्यांगता एवं महिलाऍं –

दिव्यांगता के कारण किसी भी महिला के साथ किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए।

राज्य सरकार भी इस बात से आश्वस्ति होनी चाहिए कि किसी महिला के किसी भी कार्य को लेकर कोई भेदभाव नहीं हो एवं उसके मौलिक एवं मानवाधिकार सुरक्षित हो।

अनुच्छेद 7 – राज्य सरकारों द्वारा दिव्यांग बच्चों के साथ बिना किसी भेदभाव के आधारभूत स्वतंत्रता एवं समानता एवं उनके मानवाधिकारों की रक्षा हो, इस बात की सुनिश्चितता होनी चाहिए। राज्य सरकार इस बात को भी सुनिश्चित करें जिसमें दिव्यांग बच्चों को विचारों को व्यक्त करने की स्वतंत्रता हो जो उन्हे प्रभावित करते है।

अनुच्छेद 8 (जागरुकता बढाना)– राज्य सरकारें दिव्यांगजनों की दक्षता एवं गुण एवं क्षमताओं के बारे में समाज को जागरुक करनें एवं दिव्यांगजनों के प्रति सम्मान की भावना को बढाने के लिए हर सम्भव प्रयास सुनिश्चित करें। राज्य सरकारों को श्रमिक बाजार एवं अन्य कार्य स्थलों पर दिव्यांगजनों की भागीदारी सुनिष्चित करना होगा।

अनुच्छेद 13 (एक्सेस टू जस्टिस) – राज्य सरकारों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि किसी भी दिव्यांगजन को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से न्याय प्राप्ति प्रभावी ढंग से हो। राज्य सरकारों द्वारा प्रशासनिक न्याय विभाग एवं नीति निर्धारण के क्षेत्र में कर्मचारियों को उचित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

अनुच्छेद 24 (शिक्षा) – राज्य सरकारों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि दिव्यांगजनों को बिना किसी भेदभाव एवं समान अवसर के साथ शिक्षा प्राप्त हो।

1) ब्रैल लिपि या अन्य लिपि वैकल्पिक माध्यम, वार्तालाप एवं संवाद के अन्य माध्यमों को, अध्ययन के लिए उपलब्ध कराया जाए।

2) कोई भी दिव्यांगजन अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा से वंचित ना रहे।

3) श्रवण बाधितों का साईन भाषा एवं भाषाई परख के लिए आवश्यक सुविधाएं प्रदान की जाए।

दिव्यांगजनों के अन्य अधिकार

अनुच्छेद 10 – जीवन जीने का अधिकार।

अनुच्छेद 14 – व्यक्ति की स्वतंत्रता एवं सुरक्षा का अधिकार।

अनुच्छेद 15 – क्रूर, अमानवीय, प्रताडना, स्तरहीन व्यवहार या दण्ड से स्वतंत्रता का अधिकार।

अनुच्छेद 16 – शोषण, प्रताडना एवं अभद्र व्यवहार से स्वतंत्रता का अधिकार।

अनुच्छेद 18 – राष्ट्रीयता एवं गतिशीलता का अधिकार।

अनुच्छेद 19 – संवाद एवं स्वतंत्र व्यक्तिगत जीवन जीने का अधिकार।

अनुच्छेद 22 – निजता का अधिकार।

अनुच्छेद 33 – (राष्ट्रीय स्तर पर क्रियान्वयन एवं मॉनीटरिंग) – राज्य सरकारों को अपने प्रशासनिक स्तर पर एक या अधिक ऐसे केन्द्रों की स्थापना करनी होगी जो इस अधिनियम से संबंधित समस्या एवं बातों के समाधान एवं क्रियान्वयन के लिए कार्यरत हो। सरकार द्वारा इस अधिनियम के प्रावधानों को प्रत्येक स्तर पर सही रुप से क्रियान्वयन के लिए आपस में समन्वय स्थापित करने का कर्तव्य भी सरकार का होना चाहिए।

अनुच्छेद 34 से 39 (आर.पी.डब्ल्यू.डी. एक्ट के लिए समिति गठन) – इस समिति का गठन इस प्रावधान की देखरेख समन्वय एवं क्रियान्वयन के लिए किया गया है, जिसमें राज्य सरकार द्वारा 18 सदस्य निर्वाचित किए जाते है जो हर जाति, वर्ग, स्थान के विभिन्न भागों का प्रतिनिधित्व करतें है जिसमें स्त्री एवं पुरुष दोनों की समान रुप से सदस्यता होती है एवं यह समिति दिव्यांगता विशेषज्ञों को भी सदस्य के रुप में चुनती है।

वैयक्तिक शिकायत – यह अधिकार वैकल्पिक प्रोटोकॉल के अंतर्गत आता है जिसमें समिति राज्य सरकारों द्वारा निर्धारित प्रावधानों के अनुसार जो भी हिंसा हो रही है, उसका व्यक्तिगत रुप से परीक्षण कर सकती है।

भारत में दिव्यांगों के लिए अधिकार – अनुच्छेद 14 – समानता का अधिकार।

अनुच्छेद 41 – राज्य शासन द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने, बेरोजगारी के कारण सार्वजनिक सुविधा या सहायता देना, वृद्धाश्रम, बिमारी एवं दिव्यांगता से सुरक्षा के लिए प्रभावी कदम उठाने का अधिकार है।

पर्सनस विद डिसेबिलिटी (इक्वल ऑपर्चुनिटी, प्रोटेक्शन ऑफ राईटस एण्ड फुल पार्टिसिपेशन) एक्ट 1995।

उद्देश्य –

1. दिव्यांगजनो की समान एवं पूर्ण भागीदारी को सुनिश्चित करना।
2. दिव्यांगजनो के आर्थिक एवं सामाजिक अधिकारो को संरक्षण एवं बढ़ावा देना।

सामान्य रूपरेखा – इस अधिनियम मे 74 अनुच्छेद है।

अधिनियम के अंतर्गत अधिकारो की सुरक्षा –

- **शिक्षा –** प्रत्येक विकलांग बच्चा जिसकी उम्र 18 वर्ष या उससे कम है, उचित वातावरण में अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। (धारा 26)
- **आरक्षण –** कम से कम 3 या निम्नलिखित प्रत्येक विकलांगताओ मे से कम से कम 1 विकलांग व्यक्तियों के लिए आरक्षण देना होगा।

(1) अंधत्व या कम दृष्टि (2) बधिर /मूक

(3) शारीरिक विकलांगता (चलने फिरने मे समस्या) या मस्तिष्क आघात जो भी।

उपरोक्त किसी भी विकलांग को पूर्व काल मे हुआ हो, कार्य की प्रकृति के अनुसार किसी भी विकलांगता मे छूट प्रदान की जा सकती है।

- **सकारात्मक कदम –** विशेष उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भूमि वितरण मे प्राथमिकता योजना सरकार एवं प्राधिकरण द्वारा प्राथमिक रूप से विकलांगो के लिए रियायती दरो पर भूमि का वितरण करने की योजना बनाना जिसमें – मकान, व्यवसाय शुरू करना, विशेष सम्बन्ध केन्द्र का निर्माण, विशेष विद्यालयो का निर्माण, शोध केन्द्रों का निर्माण, विकलांग उद्यमियो के लिए स्थापना।
- गैर भेदभाव एवं अधिनियम का संचालन :–

1) यातायात एवं गैर भेदभाव – ऐसे प्रावधान जिसमें रेल, बस, जहाज एवं हवाई जहाजों के निर्माण में ऐसे विशेष मानकों का ध्यान रखना जो कि विकलांगजनो के लिए उपयोगी एवं सुविधाजनक हो, विशेषकर शौचालय।

2) सडक एवं गैर भेदभाव – प्रावधान के अनुसार ऐसा उपाय करना जिसमें नैत्रहीनों के लाभ के लिए सार्वजनिक सडकों पर लाल बत्ती एवं श्रवण संकेतों की स्थापना शामिल है, व्हील चेयर उपयोगकर्ता की पहुॅच के लिए फुटपथ पर बनाए जाने वाले कर्व और ढलान नैत्रहीनों या कम दृष्टि वाले व्यक्ति के लिए जेबरा क्रासिंग की सतह पर उत्कीर्ण, उचित स्थानों पर चेतावनी के संकेत आदि किया जाना है।

3) सार्वजनिक स्थानों पर सहज वातावरण का निर्माण।

4) सरकारी नौकरियों में गैर भेदभाव।

- **प्रर्वतन तंत्र –** इस अधिनियम के प्रभावी रुप से क्रियानवयन के लिए केन्द्रीय स्तर पर राष्ट्रीय समन्वय समिति एवं राज्य स्तर पर राज्य समन्वय समिति कार्यरत है।

विकलांगों के अधिकारों के उल्लंघन एवं किसी भी प्रकार के फण्ड के विभाजन में किसी भी प्रकार कि त्रुटि या विवाद होने पर मुख्य आयुक्त एवं आयुक्त पर्सनस विद डिसेबिलिटी ही निर्णय लेने में समर्थ होंगे जो सभी स्तर की समितियों की मॉनिटरिंग करने कर कार्य भी करेंगे।

पीडब्ल्यूडी एक्ट 1995 एवं पीडब्ल्यूडी बिल 2014 में तुलनात्मक अध्ययन (अगले पृष्ठ पर देखे)

अधिकार एवं पात्रता – विकलांग व्यक्ति अपने अधिकारों का दूसरों के साथ समान रुप से आनंद ले सके, यह सुनिष्चित करने एवं उसके प्रभावी उपायों के लिए उपयुक्त सरकार पर यह जिम्मेदारी डाली गई है।

कुछ चिन्हित विकलांग एवं ऐसे व्यक्ति जिन्हें सहायता की बहुत आवश्यकता है, के लिए कुछ अतिरिक्त लाभ भी मुहैया कराए गए है जैसे– उच्च शिक्षा में आरक्षण (5 प्रतिशत से कम नहीं), सरकारी नौकरी (4 प्रतिशत से कम नही), भूमि के आवंटन में आरक्षण, गरीबी उन्मूलन योजनाएँ (5 प्रतिशत आवंटन) आदि।

चिन्हित की गई विलांगता का प्रत्येक व्यक्ति जो 6 से 18 वर्ष की आयु का है उसे मुफ्त शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होगा। सरकारी संस्थानों एवं सरकारी सहायता प्राप्त संस्थानों को विकलांग बच्चों को समेकित शिक्षा प्रदान करना होगा।

प्रधान मंत्री सुलभ भारत अभियान को मजबूत करने के लिए निर्धारित समय सीमा में सार्वजनिक भवनो में (सरकारी एवं निजी दोनों) पहुँच सुनिश्चित करने पर बल दिया गया है।

महत्तवपूर्ण तथ्य –

1. दुनिया की कुल आबादी का लगभग 10 प्रतिशत या 650 मिलियन लोग विकलांगता के साथ जीवन यापन कर रहे है, जो दुनिया की सबसे बडी अल्पसंख्यक जनसंख्या है।
2. यूएनडीपी (यूनाईटेड नेशन्स डेवलपमेंट प्रोग्राम) के अनुसार दिव्यांगजनों की आबादी का 80 प्रतिशत विकासशील देशों मे निवास करता है।
3. विष्व बैंक के अनुसार दुनिया में 20 प्रतिशत सबसे गरीब व्यक्ति, विकलांग है एवं अपने ही देशों में सबसे ज्यादा पीडित है।
4. विशेष रुप से महिलाएँ एवं लडकियॉ दुर्व्यवहार की चपेट में है। सन् 2004 में भारत के उडीसा राज्य में एक छोटे से सर्वेक्षण में बताया की वस्तुत: सभी विकलांग महिलाओं को घर पर पीटा जाता था। 25 प्रतिशत जो मानसिक रुप से अक्षम थी, उनके साथ बलात्कार किया गया एवं 6 प्रतिशत महिलाओं के पूर्णरुप से निष्फल कर दिया गया था।
5. यूनेस्को के अनुसार 30 प्रतिशत युवा जो सडकों पर अपना जीवन यापन करतें हैं, विकलांग है।
6. यूनेस्को के अनुसार विकासशील देशों मे रहने वाले 90 प्रतिशत विकलांग बच्चे विद्यालय नहीं जाते है।
7. अन्तराष्ट्रीय श्रम संघ का कहना है कि दुनिया के 386 मिलियन लोग जो कामकाजी आयु के है उनमें से कुछ देशों मे 80 प्रतिशत विकलांग व्यक्ति बेरोजगार है क्योंकि अक्सर नियोक्ता यह मानतें है कि विकलांग व्यक्ति काम करने मे असमर्थ होते है।

निष्कर्ष – विकलांगजनों के आर्थिक, सामाजिक, मानसिक एवं सर्वागिण विकास के लिए यह बहुत आवश्यक है कि उन तक डब्ल्यूएचओ, सरकार, गैर सरकारी एवं शैक्षिक संगठनों द्वारा जो सुविधाएं प्रदान की जा रहीं है एवं उनसे संबंधित कानूनों की पूर्ण जानकारी पहुँचाई जाए। यह तभी सम्भव है जब विकलांगों को उनके अधिकारों के प्रति जागरुक किया जाएगा, ऐसे अधिकार जो उन्हें समाज द्वारा प्राप्त है, ऐसे अधिकार जो उन्हें सरकार द्वारा प्राप्त है। यह तभी सम्भव है जो विकलांगों में शिक्षा का प्रसार होगा उन्हें समाज में सम्मान की दृष्टि से देखा जाएगा एवं वे आर्थिक रुप से सक्षम एवं आत्मनिर्भर बनेंगे इन सभी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने पर्सनस विद डिसेबिलिटी अधिनियम 1995 में संशोधन की आवश्यकता महसूस की एवं सर्व सम्मति से राईट्स ऑफ पर्सनस विद डिसेबिलिटी अधिनियम 2016 को मूर्त रुप प्रदान किया।

संदर्भ ग्रथं सूची –

1. Rao GP, Ramya VS, Bada MS. The rights of persons with Disability Bill, 2014: How “enabling” is it for persons with mental illness? Indian J Psychiatry. 2016;58:121–8.
2. Report of the W.H.O. Expert Committee on Disability Prevention and Rehabilitation Technical Report Series, 663 (W.H.O., Geneva, 1981)
3. Disability: Situation, Strategies and Policies (1986).
4. Plan of Action for the Year 1981 (General Assembly Resolution No. A/RES/34/154 of January 30, 1980)
5. Childhood blindness in India. Journal of Indian Medical Association, Oct. 2001; 99(1 0): 557-60.
6. Gopal L, Sharma T, Ramachandran S, Shanmugasun -daram R, Asha V, Retinopathy ofprematurity: a study. Indian J Ophthalmol 1995;43:59-61
7. Olney, M.F. & Brockelman, K.F. (2003). Out of the disability closet: Strategic use of perception management by select university students with disabilities. *Disability & Society, 18 (1)*
8. Pascarella, T.J. & Chapman D.W. (1983). A multi institutional path analysis validation of Tinto’s model of college withdrawal. *American Educational Research Journal, 20*,87-102.
9. Samuels, E. (2003). My body my closet: Invisible disability and the limits of coming out discourse. *GLQ, 9 (1-2)*
10. https://www.who.int/home/search?query=persons+with+disability &page=1 &pagesize=10&sortdir=desc
11. https://www.who.int/data/gho/gho-search
12. http://socialjustice.gov.in/Home/SiteSearch?Search=rpwd%20act
13. https://www.disabled-world.com/definitions/disability-definitions.php
14. http://www.disabilityaffairs.gov.in/uploaad/uploadfiles/files/RPWD/ACT/2016.pdf
15. https://www.unicef.org/search?force=0&query=handicapped+children
16. https://www.who.int/home/search?query=handicapped+chidren&p age=1&pagesize=10&sortdir=desc&sort=relevance

17. https://www.india.gov.in/website-department-empowerment-persons-disabilities

18. https://www.india.gov.in/topics/social-development/disabled

पीडब्ल्यूडी एक्ट 1995 एवं पीडब्ल्यूडी बिल 2014 में तुलनात्मक अध्ययन –

तत्व	विकलांग जन अधिनियम 1995	विकलांग जन बिल 2014
परिभाषा	इसमें विकलांगता का चिकित्सकीय मॉडल अपनया गया एवं निम्न विकलांगताओं को शामिल किया गया – नैत्रहीन,कम दृष्टि, कुष्ठरोग,बधिर,अपंग,मंद मानसिक रोगी।	इसमें 19 प्रकार की परिस्थितियों को शामिल किया गया जिसमें कम दृष्टि, दृष्टिहीनता, सेरेब्रल पाल्सी, बधिर, हीमोफीलिया, मूक, बौद्धिक अक्षमता, मानसिक बिमारी, मॉसपेशीय दूर्विकास, मल्टिपल स्क्लरोसिस, सीखने में बाधा, भाषा एवं भाषण की असमानताएं, सिकलसेल, रोग थैलिसिमिया, तंत्रिका संबंधी रोग एवं कई विकलांगताएं।
पर्सनस विद डिसेबिलिटी	चिकित्सकीय के मानकों के आधार पर प्रमाणित व्यक्ति जो कम से कम 40 प्रतिशत विकलांगता से प्रभावित हो।	वह व्यक्ति जो दीर्घकालीन शारीरिक,मानसिक बौद्धिक,संवेदी विलंगता के साथ किसी व्यक्ति या समाज के साथ पूर्ण या प्रभावी भागीदारी में अपने आप को असमर्थ महसूस करता हो।
क्रियान्वयन समिति	विकलांगता के लिए मुख्य आयुक्त एवं राष्ट्रीय एवं राज्य समन्वय समिति।	उपयुक्त सरकार द्वारा केन्द्रीय एवं राज्य विकलांगता कमीशन।
सार्वजनिक भवनों तक पहुॅच	अनिवार्य प्रावधानों में ऐसे प्रावधानों का अभाव जिसमें भवन निर्माण के समय विकलांगों की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाये।	1) सार्वजनिक स्थानों पर ऐसे भवनों का निर्माण किया जाए जिसमें विकलांगता के लिए सम्पूर्ण सुविधा उपलब्ध हो, और जो केन्द्रीय कमीशन की गाईड लाईन के अनुसार हो। 2) यदि कोई सार्वजनिक भवन का निर्माण या निर्माण का प्रस्ताव कमीशन के नियमानुसार नहीं होता है तो उसे ना तो पूर्ण निर्माण का प्रमाण पत्र दिया जाएगा और ना ही उसे सार्वजनिक उपयोग के लिए अनुमति दी जाएगी।
अपराध एवं दण्ड	कोई प्रावधान नही	1) यदि किसी व्यक्ति द्वारा किसी प्रावधान नियम या कानून का उल्लंघन किया जाता है तो उसे कुछ अवधि का कारावास जो कि छः माह तक बढाई जा सकता है, या रु 10000 (दस हजार) या परिस्थिति अनुसार दण्ड दिया जा सकता है जो दो साल तक एवं कम से कम रु 50000(पचास हजार) से लेकर रु 500000(पॉच लाख) तक बढाया जा सकता है।
समिति अधिकरियों के लिए दण्ड	कोई प्रावधान नहीं	अ) समिति के सदस्यों के लिए दण्डनीय अपराध होगा तो कम से कम छः माह का होगा। जिसे पॉच साल तक बढाया जा सकता है – 1) इरादतन सार्वजनिक स्थान पर किसी विकलांग व्यक्ति का अपमान करना। 2) किसी भी विकलांग व्यक्ति पर हमला या उसे अपमानित करने या किसी विकलांग महिला के आत्मसम्मान को ठेस पहुॅचाना। 3) विकलांग व्यक्ति जिस पर किसी का नियंत्रण है, वह स्वैच्छिक रुप से या जानबूझ कर उस विकलांग का भोजन या पानी आदि पर पाबंदी लगाता हो। 4) किसी बच्चे या महिला के विकलांग होने पर उनकी इच्छा के विरुद्ध उनका यौन शोपण करना या उस स्थिति का उपयोग करना, किसी भी व्यक्ति का स्वैच्छा से चोंट, क्षति या किसी भी प्रकार का शारीरिक हस्तक्षेप करना या विकलांगों के उपयोग मे आने वाले उपकरणों का उपयोग करना।
विशेष न्यायालय	कोई प्रावधान नहीं	राज्य सरकारों द्वारा अधिनियम के अंतर्गत आने वाले अपराधों के शीघ्र निराकरण के उद्देश्य से उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की सहमति से सत्र में न्यायालय विशेष, न्यायलय होगा।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना के योगदान का एक अध्ययन (बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड में अनुसूचित जाति एवं जनजाति की आर्थिक उत्थान में के विशेष संदर्भ में)

डॉ. के.के.शर्मा *

शोध सारांश – भारतीय आर्थिक नियोजन के लक्ष्यों में आर्थिक समानता का लक्ष्य प्रमुख रहा है, परन्तु छ: दशक उपरान्त भी इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो पाई है। योजना आयोग के अनुसार वर्ष 2009-2010 में 37.2 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता रेखा के नीचे रह रही थी। वर्ष 2011-12 में यह अनुपात घटकर 29.8 प्रतिशत हो गया, फिर भी ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वालों की संख्या 22.09 करोड़ थी। इसमें अधिकांशत: कृषि मजदूर, लघु एवं सीमान्त कृषक तथा गैर कृषि गतिविधियों में कार्यरत दिहाड़ी कामगार हैं। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 66 वें रिपोर्ट के अनुसार भारत के ग्रामीण जनसंख्या का 60 प्रतिशत लोगों की दैनिक आय 35 रूपये से भी कम है। देश की एक चौथाई से भी अधिक आबादी को पौष्टिक भोजन की बात तो दूर इनके पास न तो बच्चों को शिक्षित करने की क्षमता है, न स्वास्थ्य सुविधायें उपलब्ध हैं। संयुक्त बाल कोष की मानव विकास स्वास्थ्य चुनौती 2004 की रिपोर्ट में बताया गया है कि विश्व के 3 कुपोषित बच्चों में से एक भारत में है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के 61 वे दौरे के अनुसार गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वालों की संख्या देश के पांच राज्यों में सर्वाधिक उड़ीसा 46.4 प्रतिशत, बिहार 41.1 प्रतिशत, छत्तीसगढ़ 40.9 प्रतिशत, झारखण्ड 4.3 प्रतिशत एवं उत्तराखंड में 39.6 प्रतिशत है। जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा विशेष कर भूमिहीन कृषि श्रमिक, सीमान्त किसान, अनुसूचित जाति एवं जनजाति और अन्य पिछडे वर्ग जैसे घटक सामाजिक और वित्तीय बहिष्करण से पीड़ित हैं। तदनुसार सरकार की नीतियाँ इन वर्गों के आर्थिक और सामाजिक उत्थान की ओर लगाई गई हैं ताकि प्रत्येक को उत्थान के लाभ लेने में समर्थ बनाया जा सके और समाज के हासिए पर बैठे वर्गों को मुख्यधारा में लाया जा सके।

शब्द कुँजी– अजजा- अनुसूचित जनजाति, अजा- अनुसूचित जाति, S.G.S.Y- स्वर्ण जयन्ती ग्राम श्रोज़गार योजना, आई.आर.डी.पी.- समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ट्राइसेम- ग्रामीण युवा रोज़गार प्रशिक्षण कार्यक्रम, डवाकरा- ग्रामीण महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम, एम.डब्लू.एस.- दस लाख कुओं की योजना, जे.के.एल.- गंगा कल्याण योजना, एस.एच.जी.- स्व-सहायता समूह, डी.आर.डी.ए- जिला ग्रामीण विकास अभिकरण, J.R.Y.। जवाहर रोजगार योजना।

प्रस्तावना – भारत में गरीबी रेखा के नीचे जी रहे लोगों की सामाजिक आर्थिक सक्षमता हेतु पूर्व कार्यक्रमों समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP), ग्रामीण युवा स्वरोज़गार प्रशिक्षण कार्यक्रम (ट्राइसेम), ग्रामीण महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम (ड्वाकरा), गंगा कल्याण योजना (JKL) तथा दस लाख कुओं की योजना (MWS) की समीक्षा तथा पुनर्गठन के परिणाम स्वरूप 01.04.1999 से स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना का नये स्वरोज़गार कार्यक्रम के रूप में प्रारम्भ किया गया है, जिसमें स्वरोज़गार के सभी पहलू शामिल है, जैसे- ग्रामीण गरीबों के स्वसहायता समूहों को संगठित करना, प्रशिक्षण तथा क्षमता निर्माण, समूह गतिविधियों का आयोजन, ऋण, प्रौद्योगिकी, आधारभूत सुविधाएँ और विपणन सहायता आदि। जिसका मुख्य उद्देश्य- **एक निश्चित समय सीमा के अन्दर आय में पर्याप्त वृद्धि सुनिश्चित कर गरीबी रेखा से नीचे के सहायता प्राप्त परिवारों को गरीबी रेखा से ऊपर लाना है।**

योजना को केन्द्र व राज्यों के बीच 75:25 अनुपात में वित्त पोषित किया जाता है। योजना को छत्तीसगढ़ राज्य के सभी जिलों में लागू किया गया है। गरीबी उन्मूलन योजनाओं की श्रृंखला में 'नाबार्ड' द्वारा चलायी जा रही स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना, बैंक लिंकेज कार्यक्रम देश का सबसे बड़ा और सबसे तेजी से बढ़ने वाला लघु वित्त पोषण कार्यक्रम है। गरीबी रेखा से नीचे के जीवन-यापन करने वाले परिवारों की जनगणना द्वारा अभिज्ञात तथा ग्रामसभा द्वारा विधिवत् अनुमोदित सूची, योजना के अन्तर्गत परिवारों को दी जाने वाली सहायता का आधार होता है। भारत सरकार कमजोर वर्गो के आर्थिक विकास को प्रथम आवश्यकता मानकर 'स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना' के अन्तर्गत लक्ष्य समूह में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिये 50 प्रतिशत महिलाओं के लिए 40 प्रतिशत तथा विकलांगों के लिए 3 प्रतिशत आरक्षण के जरिए इन कमजोर वर्गों के लिए विशेष सुरक्षात्मक उपाय किये है। व्यक्तिगत स्वरोज़गारी अथवा स्वसहायता समूहों के लिए योजना के अन्तर्गत सहायता सरकार द्वारा अनुदान परियोजना लागत के 30 प्रतिशत अधिकतम 7500 रूपये है। अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिए अनुदान परियोजना लागत 50 प्रतिशत अधिकतम 10,000 लाख रूपये तथा सिंचाई परियोजनाओं के लिए अनुदान की कोई वित्तीय सीमा नहीं है। योजना के क्रियान्वयन में जिला ग्रामीण विकास अभिकरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शंकर समिति नामक अंतर्मंत्रालय समिति की सिफारिशों पर जिला ग्रामीण विकास अभिकरण को सुदृढ़ बनाने तथा इसे और अधिक व्यावसायिक प्रभावी बनाने

*प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डी. पी. विप्र महाविद्यालय, बिलासपुर (छत्तीसगढ़) भारत

के लिए 01 अप्रैल 1999 से केन्द्र द्वारा प्रायोजित एक नई योजना जिला ग्रामीण विकास अभिकरण प्रशासन शुरू किया गया है। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना का क्रियान्वयन पंचायती राज संस्थाओं, बैंकों, संबंधित विभागों तथा गैर सरकारी संगठनों की सक्रिय भागीदारी से किया जा रहा है। योजना के तहत् हितग्राहियों (स्वरोजगारियों) को 3 वर्ष के भीतर गरीबी रेखा से ऊपर लाने का प्रयास किया जा रहा है।

बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड अनुसूचित जाति एवं जनजाति बाहुल्य, वनाच्छादित, अल्पविकसित अर्थव्यवस्था की विशेषताओं एवं समस्याओं से परिपूर्ण है, जहां औद्योगिक विकास नगण्य, साथ ही स्वास्थ्य, आवास एवं रहन-सहन का स्तर भी निम्न है। यहां आय का मुख्य स्त्रोत वनोपज संग्रहण, कृषि एवं कृषि मजदूरी है, जिससे पर्याप्त आय प्राप्त नहीं हो पाती है ऐसी परिस्थिति में रोज़गार (स्वरोज़गार) की महती आवश्यकता में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना का महत्व स्वत: स्थापित हो जाता है।

प्रस्तुत शोध पत्र स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना की भूमिका (बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड में अनुसूचित जाति एवं जनजाति की आर्थिक उत्थान में के विशेष संदर्भ में) पर किया गया है। जिसके अन्तर्गत अनुसूचित जाति एवं जनजाति को प्राप्त विशेष प्राथमिकता का लाभ, योजना का वित्तीय लक्ष्य एवं उपलब्धियों का अध्ययन किया गया है। इसके साथ योजना की कमियों को उद्घाटित कर भविष्य में योजना को बेहतर बनाने हेतु सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोधपत्र का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति एवं जनजाति के आर्थिक उत्थान में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना के भूमिका का अध्ययन करना है। जिसके लिए निर्धारित उद्देश्य निम्न है:-

1. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना के वित्तीय लक्ष्य एवं उपलब्धियों का अध्ययन करना (द्वितीयक समंकों के आधार पर)।
2. अनुसूचित जाति एवं जनजाति के व्यक्तियों को योजना के अन्तर्गत दी जाने वाली विशेष प्राथमिकताओं से होने वाले लाभ, आय संरचना, उपभोग क्रिया, व्यवसाय की विद्यमानता एवं ऋणग्रस्तता आदि का मूल्यांकन करना (प्राथमिक समंकों के आधार पर)।
3. इस योजना के वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था की कार्य कुशलता, पर्याप्तता और बैंकों की भूमिका का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ – प्रस्तुत अध्ययन हेतु निम्न शून्य परिकल्पनाओं की जांच की गयी:-

1. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना का अनुसूचित जाति एवं जनजाति की आर्थिक प्रगति में योगदान नहीं के बराबर है।
2. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना के अन्तर्गत अनुसूचित जाति एवं जनजाति के समुदाय को विशेष प्राथमिकता नहीं प्राप्त हो रही है।
3. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना के अन्तर्गत वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था, कार्य कुशलता एवं बैंकों का सहयोग अपर्याप्त है।

शोध प्रविधि – बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड के अन्तर्गत कुल 81 ग्राम पंचायतों में से 25 ग्राम पंचायतों (आमागोहन, भैंसाझार, बिल्लीबंद, चपोरा, छतौना, डाडबछाली, धनरास, धूमा, जोगीपुर, कलारतराई, कलमीटार, करगीकला, करगीखुर्द, करहीकछार, करका, केन्दा, खोंगसरा, लिटिया, लूफा, नागचुंआ, पटैता, शिवतराई सिलपहरी, तेन्दुआ और उपका) का चयन दैव निदर्शन पद्धति से किया गया तथा चयनित ग्राम पंचायतों के योजना द्वारा लाभान्वित अनुसूचित जाति के 45 एवं जनजाति के 175 हितग्राहियों (स्वरोज़गारियों) को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। इसी क्रम में योजना से लाभान्वित न होने वाले अनुसूचित जाति एवं जनजाति के क्रमश: 45 एवं 175 गैर-हितग्राही परिवारों का भी अध्ययन किया गया है, जिससे स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना का अनुसूचित जाति एवं जनजाति की आर्थिक उत्थान पर पड़ने वाले योगदान को ठीक-ठीक ज्ञात किया जा सके। प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार एवं अवलोकन द्वारा जानकारियों को प्राप्त कर उनका बिन्दुवार विश्लेषण किया गया है। इस प्रकार अनुसूचित जाति एवं जनजाति की आर्थिक उत्थान में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना के योगदान को प्राथमिक समंकों द्वारा वस्तुस्थिति जानने की कोशिश की गई है। जिला ग्रामीण विकास अभिकरण प्रशासन, विकासखण्ड कार्यालय, जिला सांख्यिकी कार्यालय, भू-अभिलेख, बैंक, कृषि, सिंचाई विभाग, ग्राम पंचायत, प्रकाशित समाचार पत्र-पत्रिकों, ग्रामीण विकास मंत्रालय के समंक एवं अन्य सम्बन्धित साहित्य से द्वितीयक समंक प्राप्त किये गये हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में एकत्रित किये गये समंकों के विश्लेषण के लिए आवश्यकतानुसार विभिन्न सांख्यिकीय विधियों जैसे-प्रतिशत्, औसत, सामान्तर माध्य, प्रमाप विचलन, विचरण गुणांक, सहसम्बन्ध एवं t-टेस्ट आदि का प्रयोग कर उचित निष्कर्ष तक पहुंचने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन की सीमाएँ – प्रस्तुत अध्ययन में बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड के विभिन्न ग्राम पंचायतों में अनुसूचित जाति एवं जनजाति की जनसंख्या को ध्यान में रखकर कोटा विकासखण्ड का चयन किया गया है और अनुसूचित जातियों के 45 एवं अनुसूचित जनजातियों के 175 हितग्राही परिवारों तथा अनुसूचित जातियों के 45 एवं अनुसूचित जनजातियों के 175 गैर-हितग्राही परिवारों का अध्ययन किया गया है। इस प्रकार शोध पत्र को अनुसूचित जनजाति समुदाय पर केन्द्रित किया गया है। अध्ययन हेतु 2015-16 से 2019-2020 के आंकड़ों तथा जानकारियों का प्रयोग किया गया है।

परिणाम एवं निष्कर्ष – अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष के अनुसार बिलासपुर जिले के कोटा विकासखण्ड में स्वर्ण जयन्ती ग्राम रोज़गार योजना के तहत जिन गांवों में स्वसहायता समूह का निर्माण हुआ, वहाँ से गरीबी एवं बेरोज़गारी ने भागना शुरू किया जिससे योजना को पूरे राज्य में मूर्त रूप देने के लिए स्वसहायता समूह निर्माण को एक जन आन्दोलन का रूप दे दिया गया। S.G.S.Y. से देश के ऊपर बेरोज़गारी एवं गरीबीरूपी कलंक को मिटाकर आर्थिक विकास के क्षेत्र में देश के मानचित्र में उभरने में सहायक पाया गया। स्थायी आय सृजन करने व निर्धनतारूपी कोढ़ को मिटाने के लिए रोज़गार की दशा में स्वसहायता समूह की अवधारणा ग्रामीण विकास मंत्रालय की एक सार्थक क्रांतिकारी सोच पाया गया। योजना की असफलता में बाधक तत्वों का विश्लेषण करने पर इसका कारण स्वसहायता समूह द्वारा निर्मित समानों को एक अच्छा बाज़ार एवं बैंकों का अपेक्षित सहयोग नहीं मिलना पाया गया। यह सत्य है कि जब बैंक इस दिशा में बहुत आगे बढ़कर साथ नहीं दे तो रोज़गारोन्मुखी सरकार की यह अति महत्वाकाँक्षी योजना दम तोड़ देगी किन्तु प्रस्तुत शोधपत्र से यह भी स्पष्ट है कि S.G.S.Y. योजना से रोज़गार, आय में सुधार हुआ साथ ही एकजुट होकर सामाजिक कुरीतियाँ नारी उत्पीड़न, छुआछूत, ऊँच-नीच के भेदभाव को मिटाने में सहयोग प्राप्त हुआ। सरकारी प्रयास के साथ-साथ, गैर सरकारी स्वतंत्र स्वैच्छिक संगठन की भूमिका इस कार्यक्रम की सफलता का आवश्यक अंग हो सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. पुस्तक :

1. पन्त, जे.सी. (1984), *अर्थशास्त्र के सिद्धांत*, द्वितीय पूर्णत: संशोधित संस्करण, साहित्य भवन, आगरा।
2. पन्त, जे.सी.(1989-90), *जनांकिकी*, 5वाँ संशोधित संस्करण, गोयल पब्लिशिंग हाऊस सुभाष, मेरठ – 2।
3. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम, के.पी.एम. (1990), *भारतीय अर्थव्यवस्था*, 20वाँ संस्करण।, एस.चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।
4. सुन्दरम, के.पी. एम. (1995), भारतीय अर्थव्यवस्था, 25वाँ संस्करण, श्रीचंद कम्पनी लि. नई दिल्ली।
5. सिन्हा, वी.सी. एवं सिन्हा, पुष्पा (1989), *श्रम अर्थशास्त्र*, नेशनल पब्लिशिंग हाउस दरियागंज, नई दिल्ली।
6. श्रीवास्तव, एस.बी.(1985), *जनांकिकीय सिद्धांत*, तकनीकी एवं अध्ययन, चतुर्थ संस्करण, शिक्षा साहित्य प्रकाशन, मेरठ।
7. Mishra, S.N. (2003). Rural Employment & Traysem : A Case study From Rajasthan, B.R. Pub., New Delhi.
8. Mishra, S.N. & Madan, G.R (1984) Rural Employment & Trysem India's Developing Village, & Print House, Laucknow.
9. Murthy, K.L.N. (2003), Planning for Integrated Area Development : A Case Strudy from Andhra Pradesh, Atlantic Pub., New-Delhi.
10. Narayan, S. (2003), Dimensions of Development in Trabal: Bihar, B.R.Pub., Nwe Delhi.
11. Rajagopal, (2003), Indian Agriculture: An Analysis of Backward & Foreword linkages, B.R. Pub., New Delhi.

2. पत्रिका :

1. Devi, R.Uma, A Study on Swarnajayanti Gram Swarozgar Yojana Scheme in Generating Self – Employment opportunities, IJSST Vol.1 No.9
2. Karamvir. Appraisal of SGSY. Indian Streems Research Journal, July 2013, ISSN 2230-7850, Vol.-3.Issue-6.

3. शासकीय प्रकाशन एवं प्रतिवेदन:

1. Evaluation of SGSY in Selected Blocks of M.P., 2007, Planning Commission, New Delhi.
2. Report of the Committee on Credit Related Issued Under SGSY, February 2009, DoRD MoRD GOI.
3. वार्षिक रिपोर्ट 2010-11, योजना आयोग, भारत सरकार।
4. वार्षिक रिपोर्ट 2010-11, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
5. वार्षिक रिपोर्ट 2011-12, योजना आयोग, भारत सरकार।
6. वार्षिक रिपोर्ट 2011-12, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
7. विशेष रिपोर्ट, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं अनूसूचित जनजाति आयोग, भारत सरकार।

4. वेबसाइट:

1. wwww.rural.nic.in
2. wwww.planningcommission.gov.in
3. wwww.woridbank.org
4. wwww.cag.gov.in
5. wwww.indiastat.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

भारतीय संस्कृति एवं परिवर्तन

डॉ. अंजू श्रीवास्तव*

प्रस्तावना – भारत की प्राचीन संस्कृति का इतिहास अत्यन्त गौरवशाली है। इसने सभ्यता के अति प्राचीन काल से ही विश्व में अतीव आदरपूर्ण स्थान प्राप्त किया। ऋग्वेद में स्पष्टत: कहा गया है कि 'सा संस्कृति प्रथम विश्ववारा' अर्थात् आदि संस्कृति विश्ववारा अथवा विश्व के कल्याण के लिये थी। भारतीय सांस्कृति की इस उदात्त भावना का ही परिणाम था कि जहाँ प्राचीन विश्व की समाकालीन संस्कृतियाँ पूर्णतया काल-कवलित हो गयी वहाँ भारतीय संस्कृति आज भी जीवन्त तथा सबसे लिये प्रतिमान या आदर्श स्वरूप है। ऐसी गरिमामयी संस्कृति का अध्ययन समस्त भारतीयों को गौरवान्वित करता है।

भारतीय संस्कृति की कुछ ऐसी विशेषतायें हैं जो विश्व के अन्य देशों की संस्कृतियों में दृष्टिगत नहीं होतीं। अपने विशिष्ट तत्वों के कारण ही भारतीय संस्कृति ने विश्व के देशों में अपनी महत्ता को बनये रखा है। इन्हें हम निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत रख सकते हैं-

प्राचीनता – भारतीय संस्कृति का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। भारत में सभ्यता का उदय तथा विकास ईसा के कई शदियों पूर्व हुआ। प्रागैतिहासिक उपकरणों से पता चलता है कि विश्व के अन्य भागों के साथ ही भारत में भी मानव संस्कृति का प्रारम्भ हुआ था। सैन्धाव सभ्यता की खोज से भारतीय संस्कृति की प्राचीनता बढ़ गयी है तथा आज हमारे पास यह विश्वास करने के लिये पर्याप्त आधार है कि मिस्त्र तथा मेसोपोटामिया की सभ्यताओं की भाँति भारत की भी अपनी एक स्वतंत्र सभ्यता थी जो अधिकांश अंशों में समकालीन सभ्यताओं की अपेक्षा कहीं अधिक विकसित एवं गतिशील थी। मिस्त्र एवं मेसोपोटामिया के समान भारत देश की मानव सभ्यता का जनक होने का दावा कर सकता है जहाँ उन विचारों, विश्वासों एवं क्रियाओं का सूत्रपात हुआ जिन्होंने कालान्तर में विश्व इतिहास एवं सभ्यता का प्रादुर्भाव भारत के बहुत बाद में हुआ। इस प्रकार भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में सर्वप्रमुख है।

आध्यात्मिकता – आध्यात्मिकता अथवा धार्मिकता एक प्रकार से भारतीय संस्कृति का प्राण है जिसने इसके सभी अंगों को प्रभावित किया है। प्राचीन भारतीयों ने ऐहिक सुखों का महत्त्व समझते हुए भी उन्हें अपनी जीवन पद्धति में गौण स्थान प्रदान किया। प्राचीन समाज में पुरुषार्थों का विधान एवं आश्रम-व्यवस्था का प्रतिपादन मनुष्य की आध्यात्मिक साधाना के ही प्रतीक है। जीवन का चरम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति है तथा अन्य सभी पुरुषार्थ-धर्म, अर्थ एवं काम-इसमें सहायक हैं। इनमें धर्म की प्रमुखता दी गयी है जो जीवन की सभी अवस्थाओं में व्यक्ति की क्रियाओं को प्रेरित एवं प्रभावित करता है। जो धर्म के द्वारा उन्नति करे वही विद्वान एवं गुणवान कहा गया है। धर्म के माध्यम से ही जीवन यापन करने वाला मनुष्य अन्ततोत्वा मोक्ष की प्राप्ति करता है।

ग्रहणशीलता – भारतीय संस्कृति की एक विशेषता उसकी ग्रहणशीलता है। उसमें प्रतिकूल परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाकर अपने में समाहित कर लेने की अद्भूत शक्ति है। ऐतिहासिक काल से लेकर मध्य काल के पूर्व तक भारत पर अनेक जातियों के आक्रमण हुए। इनमें यवन, शक, कुषाण, हूण आदि प्रमुख है। भारतीय संस्कृति ने पहले तो इनके प्रबल प्रहार को शान्त एवं गम्भीर भाव से झेला तथा फिर क्रमश: इन विदेशियों को अपनी धारा में प्रवाहित कर लिया। उन्होंने ब्राह्मण तथा बौद्ध धार्मो को ग्रहण किया तथा भारतीय संस्कृति के प्रचारक एवं उन्नायक बन गये। शक महाक्षत्रप रुद्रदामन् वैदिक धर्म एवं संस्कृति का पोषक था जबकि कुषाण शासक कनिष्क ने न केवल बौद्ध धर्म ग्रहण किया अपितु उसके प्रचार-प्रसार में अपने साम्राज्य के सभी साधानों को भी लगा दिया। हिन्द-यवन मिलिन्द (मेनाण्डर) ने बौद्ध संघ में 'अर्हत्' पद प्राप्त किया। क्रूर एवं बर्बर हूणों ने शैव धर्म ग्रहण किया। पूर्व मध्य काल के तुर्क भी भारतीय संस्कृति के प्रभाव से नहीं बच सके। यह सब संस्कृति की ग्रहणशीलता का ही परिणाम था।

समन्वयवादिता – भारतीय संस्कृति समन्वयवादी है। प्राचीन समय से ही अनन्त भेदों के बीच वैचारिक एकता तथा समानता की स्वीकृति की बात कही गयी है। ऋग्वैदिक ऋषियों ने इस सम्बन्ध में अपना मन्तव्य प्रकट करते हुए स्पष्टत: लिखा है : 'समान मंत्र, समान समिति, समान मन, समान सबकी प्रेरणा, समान सबके हृदय, समान सबके मानस, समान सबकी स्थिति....'। भारतीय मनीषियों ने अतिवादी विचारधाराओं का विरोध किया है तथा मध्यम मार्ग का उपदेश दिया है। अतिशय आसक्ति एवं विरक्ति दोनों ही त्याज्य हैं। भौतिक सुखों का उपभोग करते हुए भी उनसे लिप्त न होने का उपदेश दिया गया है। भारतीय व्यवस्थाकारों ने मानव जीवन में चारों पुरुषार्थों के विधान द्वारा भौतिक एवं आध्यात्मिक सुखों के बीच समन्वय स्थापित करने का सुन्दर प्रयास किया है। मानवता के महान् पुजारी महात्मा गौतम बुद्ध समन्वयवादी थे। गीता में ज्ञान, कर्म एवं भक्ति के बीच समन्वय स्थापित किया गया है जो सभी के लिये अनुकरणीय हैं। हिन्दू धर्म की यह सर्वप्रमुख धारणा रही है कि 'ईश्वर एक है तथा संसार के सभी धर्म सच्चे और अच्छें हैं।' भारतीय समाज की वर्णाश्रम व्यवस्था भी विभिन्न वर्गो एवं मानव जीवन की विभिन्न अवस्थाओं के बीच समन्वय स्थापित करने के उद्देश्य से बनाई गयी थी। सुप्रसिद्ध सम्राट अशोक ने पारस्परिक मेल-मिलाप, प्रीति एवं सहानुभूतिपूर्ण एकत्व को ही विभिन्न वर्गो के लिये जीवन का श्रेष्ठ मार्ग घोषित किया है (समवाय एवं साधु)। 'समवाय' अथवा समन्वय की अवधारणा ने ही भारत के दीर्घकालीन इतिहास के समस्त राजनैतिक एवं सांस्कृतिक विकास को नियंत्रित करते हुए उसे एकता के सूत्र में आबद्ध होने

* ऐसोसिएट प्रोफेसर (समाजशास्त्र) आर्य कन्या डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

के मार्ग पर अग्रसर किया है। समन्वय की यह प्रवृत्ति विश्व के किसी अन्य संस्कृति में दिखायी नहीं देती। भारतीय संस्कृति को विश्व इतिहास में समन्वय का एक महान प्रयोग कहा जा सकता है।

धार्मिक सहिष्णुता – भारतीय संस्कृति धार्मिक विषयों में सहिष्णुता का उपदेश देती है। धर्मान्धाता एवं संकुचित मनोवृत्ति इसमें नहीं मिलती। प्राचीन भारत में धर्म के नाम पर अत्याचार एवं रक्तपात प्राय: नहीं हुआ है। भारतीय मनीषा ने ईश्वर को एक, सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान् आदि मानते हुये विभिन्न धर्मों एवं मतो को उस ईश्वर तक पहुंचने के भिन्न–भिन्न मार्ग बताया है।

भारत में विश्व के प्राय: सभी प्रमुख धार्मो के लोक निवास करते हैं। यहाँ के लोगों की भाषायें भी भिन्न–भिन्न हैं। ये समस्त विषमतायें किसी भी बाहरी पर्यवेक्षक को खटक सकती है तथा उसे यह संदेह हो सकता है कि भारत एक देश न होकर छोटे–छोटे खण्डों का विशाल समूह है जहाँ प्रत्येक की अपनी अलग–अलग संस्कृति है। किन्तु इन प्राकृतिक एवं सामाजिक स्तर की विभिन्नताओं के मध्य एकता की एक अविच्छन्न कड़ी है जिसकी हम उपेक्षा नहीं कर सकते। हर्बर्ट रिजले ने उचित ही लिखा है 'भारत में अनेक प्राकृतिक एवं सामाजिक विविधाताओं, भाषा, प्रथाओं तथा धार्मिक विभिन्नताओं के बीच हिमालय से कन्याकुमारी तक एक निश्चित आधारभूत समरूपता अब भी देखी जा सकती है। वस्तुत: यहाँ एक समान भारतीय चरित्र एवं व्यक्तित्व है जिसे हम घटकों में विभाजित नहीं कर सकते।'

देश की मौलिक एकता को प्रोत्साहन देने में कला का भी योगदान रहा है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सूर्य, बुद्ध, तीर्थङ्कर आदि की प्रतिमायें सम्पूर्ण देश में प्राय: एक ही लक्षण तथा मुद्रा में प्राप्त होती हैं। इन्हें देखने से ऐसा लगता है कि समान कलाकारों द्वारा ये निर्मित हुई है। कला के कुछ माँगलिक प्रतीकों यथा–स्वस्तिक, धर्मचक्र, कमल, पूर्णघट आदि को सम्पूण्र देश में मान्यता प्रदान की गयी थी। पाषाण एवं गुहा स्थापत्य में भी क्षेत्रीय विशेषताओं के साथ–साथ समान भारतीय तत्व परिलक्षित होते हैं।

भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में भारी विषमताओं के बावजूद हमें एक प्रकार की एकता के दर्शन होते हैं। वर्णाश्रम धर्म, संस्कार, पुरुषार्थ आदि सभी समाजों के लिये आदर्श स्वरूप रहें हैं जिन्हें स्थापित एवं प्राप्त करने के निमित्त न्यूनाधिक रूप में सर्वत्र प्रयास हुए हैं। वर्णाश्रम धर्म तो हिन्दू संस्कृति का आधार–स्तम्भ है। भौतिक सुख एवं वैभव के प्रति भारतीयों का दृष्टिकोण प्राय: समान रहा है। धर्म के अनुसार धान का उपार्जन, उससे अपना तथा कुटुम्ब का पोषण, योग्य पात्रों को दानादि एवं अन्य धार्मिक का उपार्जन, उससे अपना तथा कुटुम्ब का पोषण, योग्य पात्रों को दानादि एवं अन्य धार्मिक कार्यो में उसका ० ही धान की प्रति भारतीयों का दृष्टिकोण रहा है। आर्थिक संगठन एवं संस्थायें भी प्राय: सम्पूर्ण देश में समान थीं। एक भाग के व्यापारी एवं व्यवसायी दूसरे भाग में जाते तथा धान्धा करते थे। इन सबका राष्ट्रीय एकता को बढ़ाने में योगदान रहा। व्यापारियों के पारस्परिक लेन–देन में राज्यों की सीमायें बाधाक नहीं होती थीं। राज्यों एवं राजाओं के परिवर्तन होते रहने पर भी आर्थिक ढाँचा प्राय: एक समान बना रहा।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति में बाह्य एवं दृश्यमान विषमताओं के मध्य एक सारभूत मालिक एकता है जिसकी कोई भी उपेक्षा नहीं कर सकता। यह विभिन्नता में एकता ही भारतीय संस्कृति की सर्वप्रमुख विशेषता है।

सौ वर्ष पहले के भारत के साथ यदि आज के भारत की तुलना की जाए तो भारतीय समाज के हर दिशा में हुए असंख्य परिवर्तनों को देखकर हमें स्वयं ही आश्चर्य होगा। आधुनिक भारत में नगरीकरण, औद्योगीकरण, संस्कृतीकरण, परिश्चमीकरण, लौकिकीकरण सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन एवं सामाजिक आन्दोलन के फलस्वरूप इस देश में परिवर्तन को न केवल गति मिली है अपितु बहुमुखी परिवर्तन हो रहे हैं। भारत में सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन मुख्य है।

वर्तमान युग में परिवार के परम्परागत कार्यो में परिवर्तन आता जा रहा है। व्यक्ति के ऊपर से पारिवारिक नियन्त्रण धीरे–धीरे समाप्त होता जा रहा है। परिवार के बड़े–बूढ़ों के प्रति मन में श्रद्धा व सम्मान की भावना क्रमश: कम होती जा रही हैं शिक्षा का उत्तरदायित्व परिवार के स्कूल और कॉलेज को मिलता जा रहा है। पहले परिवार के कुछ आर्थिक कार्य भी होते थे। औद्योगीकरण के कारण कल–कारखाने खुलने से अब परिवार के आर्थिक कार्य भी मिल व कारखानों के द्वारा बड़े पैमाने में किए जा रहे हैं। इससे परिवार का आर्थिक महत्त्व धीरे–धीरे कम होजा जा रहा हैं पहले मनोरंजन का केन्द्र परिवार था, परन्तु आज मनोरंजन करवाने का कार्य बाहरी समितियों के द्वारा पूरा होता है। इस प्रकार अनेकों परिवर्तनों ने परिवार के ढाँचे को पूर्णत: बदल दिया है।

संयुक्त परिवार का विघटन आज निरन्तर संयुक्त परिवार का विघटन हो रहा है। जाति–प्रथा में परिवर्तन जाति–प्रथा हिन्दू समाज की एक महत्त्वपूर्ण संस्था है। आधुनिक युग में इस प्रथा में परिवर्तन उत्पन्न होता जा रहा है। जातिवाद की भावना अब धीरे–धीरे समाप्त होती जा रही है। पहले जाति में जो खान–पान सम्बन्धी प्रतिबन्ध पाए जाते थे वे आज धीरे–धीरे शिथिल होते जा रहे हैं अब लोग साथ बैठकर खाना खाते हैं। यह कारण जाति–प्रथा सम्बन्धी नियम ढीले होते जा रहे हैं। जाति–प्रथा की दूसरी विशेषता यह थी कि प्रत्येक जाति के निश्चित पेशे होते थे, जैसे धोबी का काम कपड़े धोना, नाई का बाल बनाना इत्यादि परन्तु आधुनिक युग में शिक्षा के कारण या लोगों के दृष्टिकोण में परिवर्तन होने के कारण तथा औद्योगीकरण के कारण असंख्य प्रार के पेशों के पनप जाने के कारण जाति के परम्परागत पेशों में आज क्रान्तिकारी परिवर्तन हो गये हैं। आज पेशे जाति के आधार पर नहीं बल्कि योग्यता के आधार पर किए जाते हैं चाहे वह पेशा उनकी जाति के अनुसार हो अथवा नहीं।

बाल–विवाह के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन हिन्दू विवाह प्रथा में बाल–विवाह प्रथा का एक प्रमुख स्थान है। बाल–विवाह प्रत्येक समाज के लिए एक अभिशाप है। बाल–विवाह नगरों की अपेक्षा ग्रामों में अधिक देखने को मिलते हैं। परन्तु आज नगर के साथ–साथ ग्रामीण युवक भी बाल–विवाह से सम्बन्धित बुराइयों को समझने लगे हैं, इस कारण यह प्रथा निरन्तर घटती जा रही है। सरकार ने भी बाल–विवाह प्रथा की हानियों को देखते हुए बाल–विवाह निषेध कानून बनाए। इनमें 'शारदा एक्ट, 1929', सबसे प्रमुख है। इसके अतिरिक्त 'हिन्दू–विवाह व तलाक अधिनियम, 1955', ने भी बाल–विवाह पर पूर्ण निषेध लगा दिया। इसके अन्तर्गत शादी के समय लड़के व लड़की की आयु क्रमश: कम से कम 21 व 18 वर्ष होनी चाहिए। कानून का उल्लंघन करने वाले को कारावास या जुर्माना या दोनों दण्ड देने का विधान है।

विधवा–पुनर्विविाह के सम्बन्ध में परिवर्तित दृष्टिकोण –वैसे विधवा–विवाह भारतीय समाज में धर्म के प्रतिकूल अपशकुन माना या समझा जाता रहा है परन्तु आधुनिक समय में विधवा–विवाह के सम्बन्ध में लोगों के दृष्टिकोण परिवर्तन होता जा रहा है। विधवा–स्त्री समाज में अभागिन मानी जाती रही है, इसी कारण उन्हें कई प्रकार के सामाजिक नियोग्यताओं का शिकार बनकर दुखद जीवन व्यतीत करना पड़ता था। इस स्थिति से इस

देश की 3.16 करोड़ विधवाओं को मुक्ति दिलाने के लिये सन् 1856 में विधवा–पुनर्विवाह अधिनियम पास किया गया। इसके अतिरिक्त अपने नैतिक आधारों पर भी विधवा–विवाह को उचित ठहराया जाता है और इसीलिये आज काफी संख्या में विधवा–पुनर्विवाह हो रहे हैं जोकि वास्तव में भारतीय समाज में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है।

दहेज–प्रथा के प्रति परिवर्तित दृष्टि –हिन्दू–विवाह की अनेक समस्याओं में से एक समस्या दहेज–प्रथा की भी है। दहेज–प्रथा एक विकट समस्या है। इसके कारण समाज में अनेक दुष्परिणाम उत्पन्न हो गये हैं। आज पढ़े–लिखे शिक्षित लोग इस प्रथा को उचित नहीं मानते हैं। सरकारी कानूनों ने इस दिशा में काफी सहायता की है। इस प्रकार धीरे–धीरे दहेज–प्रथा के उन्मूलन की आशा की जा सकती है।

सामुदायिक जीवन का हास भारत की सामाजिक संरचना में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ है कि अब निरन्तर सामुदायिक भावना का हास होता जा रहा है। आज औद्योगीकरण, नगरीकरण तथा वैश्वीकरण के फलस्वरूप समूह के आकार में अत्याधिक वृद्धि हो रही है, जैसे–जैसे नगरों का आकार बढ़ रहा है वैसे–वैसे वैयक्तिक सम्बन्ध भी कम होते जा रहे हैं। अवैयक्तिक सम्बन्धों का अर्थ है घनिष्ठ सम्बन्ध या 'हम' की भावना का अभाव। जब समुदाय में 'हम' की भावना समाप्त हो जाती है, तो प्रत्येक समूह या व्यक्ति अपने–अपने स्वार्थों की पूर्ति में लग जाता है और उस अवस्था में उसे समाज के सामान्य स्वार्थों का नहीं अपितु केवल अपने ही स्वार्थों का ध्यान रहता हैं सामुदायिक जीवन में यह एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है।

स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन – आज भारतीय सामाजिक संरचना में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन स्त्रियों की स्थिति में हुआ है। आज पहले की तरह स्त्री, पुरुा की दासी न होकर उसकी सहभागी या सहयोगी है। वर्तमान समय में नौकरी के अवसर केवल पुरुष को न होकर स्त्रियों को भी उपलब्धा हैं। स्त्रियाँ भी पढ़–लिखकर इस लायक हो गई हैं। कि व नौकरी कर सकें। इसका परिणाम यह हुआ कि स्त्रियाँ घर से बाहर काम करने को जाती हैं और पैसा कमाती हैं। अब स्त्रियाँ आर्थिक तथा अन्य मामलों में परिवार पर कम निर्भर हो गई हैं। उनमें आत्म–विश्वास तथा आत्म–सम्मान की भावना पनपी है। स्वतन्त्र होने या रहने की इच्छा ने पारिवारिक प्रतिबन्धों से उनको विमुक्त कर दिया है, पर्दा–प्रथा कम हो गई है और स्त्रियों को आत्मविकास का अवसर मिला है।

प्रेम–विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, विलम्ब–विवाह और तलाकों का आधिक्य–पाश्चात्य संस्कृति के सम्पर्क में आने, शिक्षा के प्रार व प्रौद्योगिकीय, परिवर्तनों के फलसवरूप युवक–युवतियों के साथ–साथ पढ़ने–लिखने, कारखानों या दफ्तरों के साथ–साथ काम करने तथा स्वतन्त्रतापूर्वक मेल–मिलाप करने का अवसर प्राप्त हुआ है। फलतः प्रेम विवाह व अन्तर्जातीय विवाह के अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई हैं। विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि प्रेम–विवाह प्रायः असफल रहते हैं क्योंकि उसमें रोमांस व उद्वेग का तत्व अधिक होता है। यदि प्रेम–विवाह अन्तर्जातीय–विवाह हुआ और यदि पति–पत्नी की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में अत्यधिक विभेद हुआ तो वे एक–दूसरे से अनुकूलन करने में बहुधा असफल रहते हैं और परिवार विवाह–विच्छेद द्वारा या तो टूट ही जाता है या फिर पारिवारिक जीवन में कलह–तनाव आदि के तत्त्वों का राज्य होता है। उसी प्रकार आज लड़कियों तथा लड़कों को शिक्षा प्राप्त करने नौकरी करने तथा अन्य प्रकार से आत्मविकास करने का जो अवसर प्राप्त है उसके फलस्वरूप आज विलम्ब–विवाह करने की ओर लोगों की प्रवृत्ति अधिक देखने को मिलती है। यह सभी विवाह के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है।

पूँजीवाद का विकास पहले इस देश में कृषि अर्थ–व्यवस्था थी, पर अब अनेक प्रकार के प्रौद्योगिकी परिवर्तनों के फलस्वरूप देश में पूँजीवाद का विकास हुआ है। आज आर्थिक उत्पाद गृह–उद्योगों में नहीं अपितु बड़े–बड़े मिल और कारखानों में मशीनों द्वारा बड़े पैमाने पर होता है। इसके लिए काफी धन की आवश्यकता होती है और इस कारण आर्थिक उत्पादन के साधाना पर पूँजीपतियों का अधिकार हो गया है और अन्य सभी पूँजीहीन व्यक्तियों के लिये जीविका पालन का केवल एक ही रास्ता रह गया है और वह यह है कि वे अपने श्रम को बेचकर पेट पालें। इस पूँजीवाद के विकास के फलस्वरूप भारतीय समाज में दो वर्ग विकसित हो गये हैं–पूँजीपति वर्ग और श्रमि वर्ग।

ग्राम–उद्योगों का हास भारत में औद्योगीकरण के फलस्वप ग्रामीण उद्योगों का बुरी तरह हास हुआ है, क्योंकि इस देश में ग्रामों के कुटीर उद्योगों और शहरों के बड़े–बड़े उद्योगों के बीच न तो कोई समन्वय है और न ही किसी प्रकार का श्रम–विभाजन–फलतः बड़े पैमाने में मशीन द्वारा जिन सस्ती चीजों का उत्पादन होता है, उनसे प्रतियोगिता करना ग्रामीण उद्योगों में बनी चीजों के लिये सम्भव नहीं होता है। इससे ग्रामीण उद्योगों का निरन्तर हास ही होता जा रहा है, यद्यपि सरकारी प्रयत्न ग्राम–उद्योगों को प्रोत्साहित करने की दिशा में ही है।

3. जीवन–स्तर में परिवर्तन (Changes in Standard of Living)– भारतीय समाज के आर्थिक जीवन के एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन भारतीयों के जीवन स्तर से सम्बन्धित है। आज इस परिवर्तन से सम्भवतः कोई ही भारतवासी अछूता न हो। आज मोटरसाइकिल, रेडियो, टी.वी., पक्के मकान, सोफासेट, फ्रिज आदि ग्रामों तक में देखने को मिलते हैं। जोकि पहले बड़े–बड़े शहरों में देखने को मिलते थे स्कूटर व मोटर साइकिल तो आज आम चीज हो गई है। पहनने–ओढ़ने के दृष्टिकोण एवं खाने–पीने के सम्बन्ध में भी परिवर्तन आते जा रहे हैं। आज गाँव वाला भी पैण्ट व बुशर्ट या सूट पहनता है, साथ ही कुर्सी व मेज पर खाना अधिक पसन्द करता हैं वास्तव में यह सभी उच्च जीवन–स्तर के ही परिचायक हैं।

आय में वृद्धि आर्थिक में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन भारतीयों की आय में अत्याधिक वृद्धि का होना हैं आज प्रति व्यक्ति औसत आय पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है। चालू मूल्यों के आधार पर प्रति व्यक्ति सन् 1960–61 में 305 रु. थी जो सन् 2002–03 में बढ़कर अनुमानतः 10,964 रु. हो गई। यदि भारतीय कृषक की आय को ही लिया जाए तो देखा जाएगा कि उसकी आय में भी महत्त्वपूर्ण वृद्धि हुई है। इसका कारण मुख्यतः विज्ञान की देन है। कृषि के वैज्ञानिक तरीकों ने उसके कृषि उत्पादन को बढ़ा दिया है। अब वह थोड़े समय में अधिक उत्पादन कर सकता है। और बचे हुए समय को किसी अन्य धन्धो में लगा देता है। कृषि, उद्योग, व्यापार और वाणिज्य के क्षेत्र में देश जैसे–जैसे प्रगति करता जा रहा है, यहाँ के लोगों की आय में भी वैसे–वैसे वृद्धि हो रही है।

औद्योगीकरण भारतीय सामाजिक संरचना के आर्थिक पक्ष का एक महत्त्वपूर्ण औद्योगीकरण है। इस औद्योगीकरण, वैश्वीकरण तथा उदारीकरण ने भारतीय समाज के महत्त्वपूर्ण आधारों व संस्थाओं कोभी बदल दिया है। इन प्रक्रयाओं के फलस्वरूप एक ओर देश का उत्पादन बढ़ा है, बड़े पैमाने पर उत्पादन होने लगे हैं और देश की राष्ट्रीय आय बढ़ी है। तो दूसरी ओर इनसे अनेक समस्याओं का भी जन्म हुआ है। आज इसके कारण ही निवास–स्थानों की कमी तथा गन्दी बस्तियों का विकास हुआ है।

औद्योगीकरण के फलस्वरूप वर्ग-संघर्ष और औद्योगिक झगड़ों को भी प्रोत्साहन मिला है, क्योंकि औद्योगीरण से पूँजीवादी व्यवस्था पनपी है जिससे कि श्रमिकों का अत्यधिक शोषण हुआ है। जैसे-जैसे मजदूर संगठित होने लगे और उनमें अपने अधिकार से सम्बन्ध में जागरूकता उत्पन्न हुई वैसे-वैसे औद्योगिक झगड़े भी बढ़ने लगे।

महँगाई व बेरोजगारी में वृद्धि भारतीय आर्थिक जीवन में आज निर्धानता एवं बेरोजगारी में वृद्धि हो रही है। यह ठीक है कि औसतन प्रति व्यक्ति आय बढ़ी है, परन्तु यह भी ठीक है कि विकराल रूप से बढ़ती हुई महंगाई ने आम जनता की कमर तोड़ दी है। भारत के सामने सर्वाधिक बड़ी चुनौतियों में से एक अतिरिक्त श्रम बल को रोजगार प्रदान करना ही नहीं, बल्कि पिछले कुछ वर्षों से चली आ रही संचित बेरोजगारी के बैकलाग को भी कम करना है। समग्र रोजगार (संगठित व असंगठित दोनों क्षेत्रों में) की औसत वार्षिक वृद्धि दर 1972-78 की अवधि में 2.75 प्रतिशत से निरन्तर कम होकर 1987-94, में 2.43 हो गई थी। परन्तु 1993-2000 की अवधि में यह पुन: घटकर 0.98 प्रतिशत रह गई।

कृषि उत्पादन में उन्नति भारत में कृषि उद्योग में पर्याप्त उन्नति हुई है। इसका कारण प्रमुख रूप से कृषि कार्यों में रसायनिक खाद, मशीनों तथा कृषि के आधुनिक तरीकों का उपयोग है। आज हमारी सरकार का यह प्रयत्न जोरों पर चल रहा है कि कृषि को वैज्ञानिक ढंग से किया जाए। नए तरीकों से खेती करने से उत्पादन भी अधिक होगा और साथ ही समय की भी बचत होगी; इस बचे समय को किसान अन्य किसी कार्य में लगा सकेगा। आज सहकारिता खेती के भी महत्त्वपूर्ण फल प्राप्त हो रहे हैं; कई गुना पैदावार भी बढ़ गई है। अनाज के मामले में भारत आज आत्मनिर्भर है।

सूचनातंत्र का प्रसार ग्रामीण क्षेत्रों में सूचनातंत्र के प्रसार की विलुप संभावनाएँ प्रकट हो रही हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना क्रांति की प्रतीक दूरदर्शन एवं विपुल टी.डी./अन्य टेलीफोन सेवाएँ, सूचना प्रसार और जनजागरण का माधयम बन गई है। और अब वहाँ कम्प्यूटर के प्रवेश की बारी है। केरल, तमिलनाडु जैसे प्रदेशों में विशाल पैमाने पर कम्प्यूटर ने ग्रामीण क्षेत्रों में न केवल दस्तक दे दी है वरन् प्रशासन से जुड़ी सेवाओं और ग्रामीण क्षेत्र की अन्य आवश्यकताओं की आपूर्ति का सूत्रपात कर चुका है। प्रशासन ग्रामीणों के द्वार तक पहुँच चुका हैं क्योंकि भू-अभिलेख, रजिस्ट्रेशन दस्तावेज, दिन-प्रति-दिन के बाजार मूल्य और अन्य समाचार बड़ी संख्या में वहाँ पी.सी. के माधयम से प्राप्त हो रहे हैं। केरल के मछुआरे सेलफोन (मोबाईल) से मछली मारने के बाद आस-पास के बाजारों में तुलनात्मक बाजार दरें ज्ञात कर लाभप्रद मंडियों में मछलियाँ ले जाने लगे हैं। इस प्रकार अनेक प्रदेशों में सूचना क्रांति ने अर्थव्यवस्था के तृतीय सेक्टर-सेवा सेक्टर में रोजगार की असीमित संभावनाएँ उत्पन्न कर दी हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में परिवर्तन आज सभी जाति के बच्चों को समान रूप से शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार प्राप्त है। केवल इतना ही नहीं, पिछड़ी जातियों के बच्चों को अधिकाधिक शिक्षित करने के उद्देश्य से उन्हें कई प्रकार की सुविधाएँ दी जा रही है। आज शिक्षा के उद्देश्यों को भी फिर से परखा जा रहा है और उसके अनुसार शिक्षा को केवल किताबी शिक्षा तक ही सीमित न रखकर उसको उत्तरोत्तर व्यावहारिक बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। इस सम्बन्ध में गाँधी जी द्वारा प्रस्तुत 'बेसिक शिक्षा योजना' को लागू करने के सम्बन्ध में प्रयत्नशीलता बढ़ रही है। शिक्षा के धार्मिक आधारों में परिवर्तन हो जाने के फलस्वरूप आज वैज्ञानिक व तकनीकी शिक्षा पर अधिक बल दिया जाता है। कई प्रकार के अनुसन्धान कार्यों को आज प्रोत्साहित किया जाता है। शिक्षा के प्रसार व प्रचार में सरकार का उत्तरदायित्व अत्यधिक बढ़ जाना भी इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है। इसीलिए सरकार की ओर से शिक्षा के विस्तार के लिये अनेक प्रयत्न किए जा रहे हैं जैसे उत्तर प्रदेश में प्रारम्भिक शिक्षा को नि:शुल्क कर देने की योजना लागू कर दी गई है। और साथ ही बेसिक शिक्षा का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया है।

गाँवों में भी इस दिशा में परिवर्तन आज देखने को मिलता है। सरकार की ओर से स्त्रियों को नि:शुल्क शिक्षा, प्राइवेट शिक्षा देने की सुविधा, छात्रवृत्तियाँ आदि देकर शिक्षा के विषय में प्रोत्साहित किया जा रहा है। उदाहरण के लिए अनेक राज्य सरकारों ने दसवीं कक्षा तक लड़कियों की शिक्षा नि:शुल्क कर दी है। फलत: 2001 में महिला साक्षरता का प्रतिशत बढ़कर 53.79 हो गया है। पुरुष साक्षरता दर 75.3 प्रतिशत हैं अगर सम्पूर्ण जनसंख्या को ले तो साक्षरता दर 64.8 प्रतिशत है। साक्षरता आन्दोलन या प्रौढ़ शिक्षा आन्दोलन शिक्षा के क्षेत्र में एक और उल्लेखनीय परिवर्तन है। रात्रि-पाठशाला आदि में प्रौढ़ों को शिक्षित करने की दिशा में अनेक क्रियात्मक कदम करसारी तथा गैर-सरकारी तौर पर उठाये जा रहे हैं।

सांस्कृतिक जीवन में परिवर्तन आज की परिवर्तित परिस्थितियों में सांस्कृतिक जीवन में अनेक परिवर्तन हो गये हैं।

धार्मिक जीवन में परिवर्तन धार्मिक क्षेत्र में भी व्यावसायिक मनोभाव का विकास इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है। आज लोग धर्म को आजीविका का एक साधान बना लेते हैं। तीज-त्यौहार में उल्टा-सीधा मन्त्र पढ़कर एक घण्टे की धार्मिक क्रिया को ही मिनटों में निबटाकर अधिकाधिक जजमानों के यहाँ से दक्षिण बटोरना आज पुजारी और पण्डितों का एक धंधा बन गया है। प्राय: सभी तीर्थ-स्थानों में भी पण्डों में यहीं व्यवसायिक मनोभाव देखने को मिलता है। बड़ी-बड़ी धर्मशालाओं में यात्रियों से किराया वसूल करना तो एक सामान्य विषय है। अनेक तीर्थ-यात्राओं का आयोजन व्यावसायिक आधार पर अधिकाधिक मुनाफा कमाने केलिए संगठित एजेन्सियों के द्वारा किया जाता है।

पश्चिमीकरण भारत के सांस्कृतिक जीवन का आज विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होगा कि इसके सभी पक्षों पर पश्चिमी संस्कृति की छाप पड़ी है और उसके फलस्वरूप महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुये हैं। उदाहरण के लिए, जाति-पाँ ओर छुआछूत के सम्बन्ध में, विधवा-पुनर्विवाह या अन्र्जातीय विवाह के सम्बन्ध में हमारे मूल्यों तथा आदर्शों में अनेक परिवर्तन हो गये हैं। उसी प्रकार पश्चिमी प्रभाव से प्रभावित होकर आर्य समाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, रामकृष्ण मिशन आदि अनेक संगठनों का न केवल विकास हुआ है बल्कि उनके द्वारा सामाजिक सुधार आन्दोलनों को क्रियात्मक रूप दिया गया है। पश्चिमीकरण के फलस्वरूप ही आज हमारे विचार, भावनाओं, आदर्शों, मूल्यों तथा सिद्धान्तों में अनेक परिवर्तन हुए हैं।

व्यक्तिवादी आदर्शों का विकास आज सांस्कृतिक जीवन में जो परिवर्तन हुये हैं। उनमें व्यक्तिवादी आदर्शों का विकास अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। प्रौद्योगिकी विकास के साथ-साथ एक ओर धन का महत्त्व बढ़ा है और दूसरी ओर व्यक्तिगत कुशलता का। प्रत्येक व्यक्ति आज यह जानता है कि वर्तमान समाज में उनकी प्रतिष्ठा जाति या परिवार गौरव पर उतनी अधिक निर्भर नहीं करती जितनी की धान तथा व्यक्तिगत गुणों पर। इस कारण प्रत्येक व्यक्ति आज केवल अपने लिये ही सोचता है और अपने व्यक्तित्व का अधिकतम विकास चाहता है। फलत: आज व्यक्तिगत हितों के सामने सामूहिक हितां की बलि चढ़ जाती है और समाज में विघटनात्मक तत्तव क्रियाशील हो जाते हैं। परिवार से लेकर राजनीतिक तक आज इसी व्यक्तिगत

आदर्शों का बोलबाला है। सत्ता या पद के लालच से लोग समूह के हितों की कुछ भी परवाह नहीं करते।

नैतिक जीव में परिवर्तन पहले लोग नैतिक नियमों का पालन करना अपना पवित्र कर्त्तव्य समझते थे, पर अब व्यक्तिवाद के विकास के साथ-साथ नैतिकता धीरे-धीरे दुर्बल होती जा रही है। उदाहरण के लिए आज एक विधायक बिना किसी नैतिक सिद्धान्त की परवाह किए केवल सत्ता के लालच से अपने दल को छोड़कर दूसरी पार्टी में जा मिलता है। सार्वजनिक स्वास्थ्य का कुछ भी धयान न रखते हुए आज एक भारतीय व्यापारी आटे के साथ खड़िया मिट्टी मिला देने में या मलाई में ब्लाटिंग पेपर की तह लगा देने में कुछ भी संकोच नहीं करता हैं एक दवा-फरीश नकली दवाओं को बेचकर कितने ही अमूल्य जीवनों के साथ खिलवाड़ करने से सकुचाता नहीं नैतिकता के इस पतन के कारण ही आज भारतीय समाज में अपराधा, व्यभिचार, भ्रष्टाचार, आर्थिक घोटालों और झूठ का अधिक बोलबाला है। केवल शहर के लोग ही इस नैतिक पतन के शिकार नहीं हैं अपितु भारतीय गाँव में भी यह मर्ज फैल चुका है।

मीडिया द्वारा सामाजिक परिवर्तन शिक्षा तथा साक्षरता के प्रसार के उपरांत मीडिया या जन संचार के प्रति परम्परागत समाजों में एक विशिष्ट आकर्षण उत्पन्न हुआ हैं आज भी भारत के दूरदराज के क्षेत्रों में अखबार में लिखी या रेडियो, टी.वी. से सुनी गई बातों पर प्रत्यक्ष मौखिक वक्तव्यों से अधिक विश्वास किया जाता है। जन-साधारण के बीच मीडिया की यह विश्वसनीयता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं यह भारत का सौभाग्य है कि यहाँ मीडिया को अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हैं यही कारण है कि देश में पत्र-पत्रिकाओं की संख्या तेजी से बढ़ रही है। महापुरुषों ने मीडिया के माधम से भी सामाजिक परिवर्तन की अलख जगाई थी। स्वतन्त्रता से पूर्व भारतीय प्रेस का एक स्पष्ट मिशन, था, वह था भारत की स्वतन्त्रता। स्वतन्त्रता की इस लड़ाई के दौरान ही मीडिया (प्रेस) ने सामाजिक कुरीतियों से लड़ने का संघर्ष भी समानांतर रूप से जारी रखा। सती प्रथा, मूर्ति पूजा, बाल विवाह, अंधाविश्वासों, कुरीतियों, महिला पुरुष भेदभाव, अस्पृश्यता तथा शोषण के विरुद्ध सामाजिक वातावरण निर्मित करने में मीडिया ने अहम भूमिका निभाई।

जन चेतना उन्मुख कार्यक्रमों को जनसाधारण तक पहुँचाना। सरकारी तंत्र ने यह कार्यक्रम रेडियो, टी.वी. तथा पत्र-पत्रिकाओं सहित जनसंचार के अन्य माध्यमों यथा, मेला, रैली, कठपुतली नृत्य, लोकगीत लोक नृत्य, प्रदर्शनी, प्रभात फेरी, कैंप, सभा, संगोष्ठी तथा नुक्कड़ नाटकों इत्यादि के माध्यम से संचालित किए। इन कार्यक्रमों में मुख्यत: नशापान का विरोध, बाल विवाह का तिरस्कार, परिवार नियोजन का महत्त्व, जनसंख्या विस्फोट की भयावहता, निरक्षता के कलंक, अस्पृश्यता की अमानवीयता, कुपोषण के दुष्परिणाम, बालविवाह तथा छोटी आयु में माँ बनने की हानियाँ, बंधुआ मजदूरी का अभिशाप, पानी बिजली, गैस डीजल तथा पेट्रोल की बचत, पेड़-पौधों तथा जीवों का संरक्षण, प्रदूषण की समस्या, शोर का दुष्प्रभाव, स्वच्छता का महत्त्व, जल-मल की निकासी, संक्रामक रोगों से बचाव, मानवाधिकारों का प्रसार, महिला सशक्तिकरण, पिछड़े वर्गों के अधिकार, सांप्रदायित सौहार्द, बच्चों, वृद्धों असहायों तथा नि:शक्तजनों की रक्षा, टीकाकरण, मताधिकार, स्वच्छ प्रशासन, नागरिक-कर्त्तव्य तथा अंधविश्वासों के विरुद्ध सकारात्मक संदेश देने का सार्थक प्रयास किया गया है। निस्सन्देह इन सभी जनचेतना उन्मुख कार्यक्रमों का जनसाधारण के मनोमस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय संस्कृति की विरासत, पुखराज जैन
2. भारत का इतिहास, इलिएट डारसन
3. भारतीय समाज का संस्कृति, पी0सी0 खरे
4. भारतीय समाज व संस्कृति, डॉ0 जी0 के0 अग्रवाल
5. समाज शास्त्र, शर्मा एण्ड गुप्ता
6. धार्म दर्शन का सर्वेक्षण, डॉ0 डी0 डी0
7. पाण्डेय भारतीय दर्शन/ज्ञान, मीमांसा
8. एवं तत्व मीमांसा, डॉ0 हृदय नारायण मिश्रा

****

छत्तीसगढ़ राज्य की खाद्य सुरक्षा योजना के अन्तर्गत लाभार्थी अन्त्योदय परिवार का एक अध्ययन

राकेश कुमार गिरि*

शोध सारांश – खाद्य अधिकार की दिशा में पहला कदम है। हालांकि इस कानून के प्रति अनुसन्धानकर्ता की व्यक्तिगत मान्यताएं है, खासकर लक्षित और आबादी के कुछ हिस्से को कानून से बाहर रखने के संदर्भ में, इस कानून के क्रियान्वयन के मुद्दे पर ही फोकस करूंगा। खाद्य सुरक्षा कानून लागू करने में हम ब्राजील के अनुभवों से कुछ महत्वपूर्ण बातें सीख सकते है। ब्राजील विश्व में ऐसा पहला देश है, ब्राजील विश्व में ऐसा पहला देश, जिसने भोजन के अधिकार को कानूनी जामा पहनाया। यह ब्राजील सरकार के चर्चित 'फोम जीरो' या 'जीरो हंगर प्रोग्राम' का हिस्सा था, जो विश्व में खाद्य सुरक्षा कायम करने के प्रयासों के रूप में काफी सराहा गया। सन् 2010 में एक संविधान संशोधन के जरिये भोजन के अधिकार को ब्राजीली संविधान के सामाजिक अधिकारों की सूची में जोड़ा गया और इससे जारो हंगर प्रोग्राम को स्थायी कानूनी आधार मिल गया। जीरो हंगर परियोजना का क्रेंद्र बिंदु आधारभूत नीतियों और संपूरक नीतियों का एक बेहतर संयोग था। इस संयोग की आवश्यकता तीन महत्वपूर्ण कारकों के आधार पर महसूस की गई थी। पहला, उच्च आय वर्ग की निम्न सकल मांग और बेरोजगारी से हो रहा विशेष किस्म का विकास, दूसरा खाद्य की कीमतों और मजदूरी के बीच के संबंधों से उपजी निम्न क्रयशक्ति और तीसरा बाजार से समाज के निर्धन वर्ग का निष्कासन जीरो हंगर प्रोग्राम की सफलता का मूल कारण मजबूत राजनीतिक इच्छाशक्ति रही है। भूख के खात्मे का सामाजिक और व्यक्तिगत तौर पर देखने के बजाय इसे राष्ट्रीय मुद्दा माना गया। नये राष्ट्रपति के कार्यकाल में इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन के लिए तीन विशेष निकायों का गठन किया गया। पहला, खाद्य सुरक्षा और भूख से जुड़ा हएक असाधारण मंत्रालय, दूसरा एक राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा परिषद(इसमें 18 राज्य मंत्री और 36 गैर-सरकारी प्रतिनिधी रखे गए थे।) और तीसरा, राष्ट्रपति के लिए एक विशेष सलाहकार निकाय। इन कदमों से जाहिर होता है कि इस कार्यक्रम को कितनी अहमियत दी गई थी।

शब्द कुँजी– जीरो हंगर प्रोग्राम, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा परिषद, गैर-सरकारी प्रतिनिधी, खाद्य असुरक्षा।

प्रस्तावना – किसी आपदा के समय खाद्य सुरक्षा कैसे प्रभावित होती है ? किसी प्राकृतिक आपदा जैसे, सूखे के कारण खाद्यान्न्ना की कुल उपज में गिरावट आती है। इससे प्रभावित क्षेत्र में खाद्य की कमी हो जाती है। खाद्य की कमी के कारण कीमतें बढ़ जाती हैं। कुछ लोग ऊँची कीमतों पर खाद्य पदार्थ नहीं खरीद सकते। अगर यह आपदा अधिक विस्तृत क्षेत्र में आती है या अधिक लम्बे समय तक बनी रहती है, तो भुखमरी की स्थिति पैदा हो सकती है। व्यापक भुखमरी से अकाल की स्थिति बन सकती है। अकाल के दौरान बड़े पैमाने पर मौतें होती हैं जो भुखमरी तथा विवश होकर दूषित जल या सड़े भोजन के प्रयोग से फैलने वाली महामारियों तथा भुखमरी से उत्पन्न्ना कमज़ोरी से रोगों के प्रति शरीर को प्रतिरोधी क्षमता में गिरावट के कारण होती है। भारत में जो सबसे भयानक अकाल पड़ा था, वह 1943 का बंगाल का अकाल था। इस अकाल में भारत के बंगाल प्रांत में तीस लाख लोग मारे गए थे। यद्यपि भारत में लोगों का एक बड़ा वर्ग खाद्य एवं पोषण की दृष्टि से असुरक्षित है परन्तु इसे सर्वाधिक प्रभावित वर्गों में निम्नलिखित शामिल है : भूमिहीन में थोड़ी अथवा नगण्य भूमि पर निर्भर है पारंपरिक दस्तकार पारम्परिक सेवा प्रदान करने वाले लोग अपना छोटा-मोटा काम करने वाले कामगार और निराश्रित तथा भिखारी शहरी क्षेत्रों में खाद्य की दृष्टि से असुरक्षित वे परिवार है जिनके कामकाजी सदस्य प्राय: वेतन वाले व्यवसाय और अनियत श्रम बाजार में काम करते है। यह कामगार अधिकतर मौसमी कार्यो में लगे है और इनको इतनी कम मजदूरी दी जाती है कि मात्र वे जीवित रह सके।

समाज का अधिक गरीब वर्ग तो हर समय खाद्य असुरक्षा से ग्रस्त हो सकता है परंतु जब देश भूकंप, सूखा, बाढ़, सुनामी, फसलों के खराब होने से पैदा हुए अकाल आदि राष्ट्रीय आपदाओं से गुज़र रहा हो, तो निर्धनता रेखा से ऊपर के लोग भी खाद्य असुरक्षा से ग्रस्त हो सकते हैं। 1970 के दशक में खाद्य सुरक्षा का अर्थ तथा आधारिक खाद्य पदार्थों की उपलब्धता (स,रा 1975) अमर्त्य सेन ने खाद्य सुरक्षा का एक नया आयाम जोड़ा और हक़दारियों के आधार पर खाद्य तक पहुँच पर ज़ोर दिया। हक़दारियों के अभिप्राय राज्य या सामाजिक रूप से उपलब्ध करायी गई अन्य पूर्तियों के साथ-साथ उन वस्तुओं से है जिनका उत्पादन विनिमय बाजार में किसी व्यक्ति द्धारा किया जा सकता हैं। तदनुसार, खाद्य सुरक्षा के अर्थ में काफी परिवर्तन हुआ है। विश्व खाद्य शिखर सम्मेलन, 1995 में यह घोषणा की गई कि 'वैयक्तिक, पारिवारिक, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय तथा वैश्विक स्तर पर खाद्य सुरक्षा का अस्तित्व तभी है, जब सक्रिय और स्वस्थ जीवन व्यतीत करने के लिए आहार संबंधी जरूरतों और खाद्य पदार्थों को पूरा करने के लिए पर्याप्त, सुरक्षित एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थों को पूरा करने के लिए पर्याप्त, सुरक्षित एवं पौष्टिक खाद्य तक सभी लोगों की भौतिक एवं आर्थिक पहुँच सदैव हो' (खाद्य एवं कृषि संगठन 1996, पृष्ठ 3)। इसके अतिरिक्त घोषणा में यह भी स्वीकार किया गया कि 'खाद्य तक पहुँच बढ़ाने में निर्धनता का उन्मूलन किया जाना परमावश्यक है।'

अध्ययन के उद्देश्य एवं परिकल्पनाएँ – प्रत्येक शोधपत्र कार्य किसी विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किया जाता है। प्रस्तावित शोधपत्र छत्तीसगढ़

* शोधार्थी एवं अतिथि व्याख्याता (अर्थशास्त्र) किरोड़ीमल शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायगढ़ (छ.ग.) भारत

राज्य की खाद्य सुरक्षा योजना के अन्तर्गत लाभार्थी अन्त्योदय परिवार का एक अध्ययन के अग्रांकित उद्देश्य निर्धारित किये गये है-

अध्ययन के उद्देश्य :

1. खाद्य सुरक्षा योजना का अन्त्योदय परिवार के परिवारों पर प्राप्त उपलब्धियों की विवेचना करना।
2. अन्त्योदय परिवार की भूख एवं कुपोषण उन्मूलन में खाद्य सुरक्षा योजना को प्रभावी बनाने में छत्तीसगढ़ सरकार की व्यवस्था के क्रियान्वयन का मूल्यांकन करना।
3. अध्ययन क्षेत्र के अन्त्योदय परिवार के लिए खाद्य सुरक्षा योजना की संभावनाओं का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ - शोधार्थी द्वारा सत्यान्वेषण एवं किसी तथ्य के निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए अवधारणाओं का होना आवश्यक है, ताकि अध्ययनकर्ता इस बात की जानकारी प्राप्त कर ले कि उसकी परिकल्पना कहाँ तक उचित थी। परिकल्पनाओं का होना इसलिए भी आवश्यक है कि वह अपने अध्ययन की दिशा निर्धारित कर सके और जिसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील हो सके। इस संदर्भ में निम्न परिकल्पनाएँ की गई है-

1. छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा योजना का अध्ययन क्षेत्र में विशेषकर अन्त्योदय परिवार के लिए भोजन उपलब्धता में वृद्धि हुई है।
2. छत्तीसगढ़ राज्य में खाद्य सुरक्षा योजना के कारण अन्त्योदय परिवार की आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है।

अध्ययनकर्ता ने अध्ययन के दौरान पाया कि कोटा विकासखण्ड में खाद्य सुरक्षा योजना का व्यापक प्रभाव पड़ा है। खाद्य सुरक्षा योजना का अध्ययन हेतु चुने गये हितग्राहियों से भरायी गई अनुसूची के आधार पर ली गई परिकल्पना के मूल्यांकन हेतु सहायक सिद्ध हुई। ग्रामीण इलाकों की 75 प्रतिशत आबादी को इस कानून का लाभ पहुंचेगा जिसमें न्यूनतम 46 प्रतिशत प्राथमिकता वाले परिवार होंगे तथा बाकि सामान्य परिवार वाले होंगे। शहरी क्षेत्रों को भी दूसरे दायरे में रखा गया है जहां करीब 50 प्रतिशत आबादी इससे लाभान्वित होगी। इनमें 26 प्रतिशत गरीबी-रेखा के नीचे आने वाले परिवार तथा बाकी सामान्य परिवार होंगे। अनुसूची के प्रश्नों का हितग्राहियों द्वारा दिये गये उत्तर को प्रतिशत विधि के माध्यम से निराकरण किया गया है जिसका उल्लेख क्रमश: निम्नवत् है-

1. ग्राम से राशन दुकान की दूरी पर 50 उत्तरदाताओं ने बताया कि उचित मूल्य की दुकान 1 कि.मी. के अंदर व्यवस्था है जबकि दो उत्तरदाताओं ने इसे 2 कि.मी. के अंदर होना पाया।

राशन दुकान की दूरी	1 कि.मी.	2 कि.मी.	3 कि.मी.
उत्तरदाताओं की संख्या प्रतिशत में	76%	21%	3%

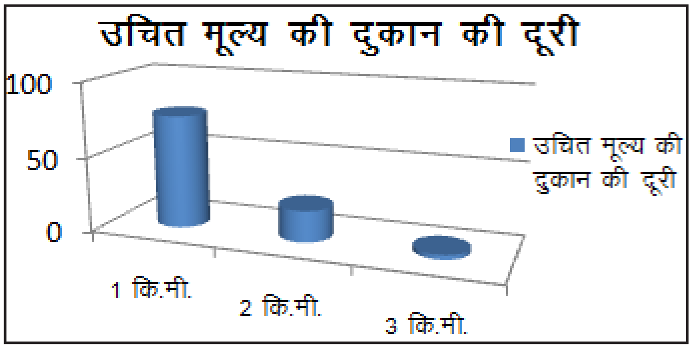

2. क्या आपके पास राशनकार्ड है? इसके उत्तर में अध्ययनकर्ता ने पाया कि 40 हितग्राहियों के पास राशनकार्ड पाये गये जबकि 10 हितग्राही ऐसे थे जिनके पास राशनकार्ड नहीं थे या उन्होंने नहीं बनवाया।

राशनकार्ड की उपलब्धता	हाँ	ना
उत्तरदाताओं की संख्या प्रतिशत में	88%	12%

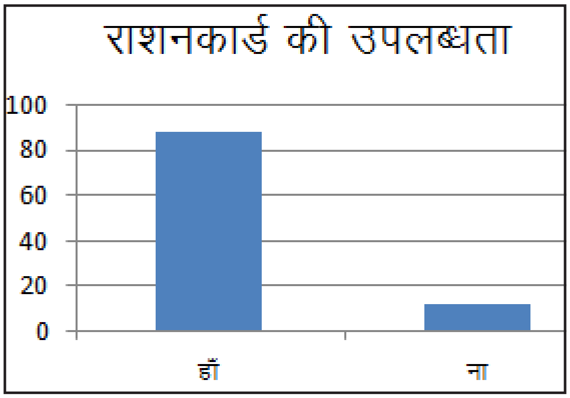

3. आपके परिवार में राशन की खपत कितनी है राशन की दुकान से कितनी सामग्री प्राप्त होती है और उसकी गुणवत्ता कैसी है ? इस प्रश्न में हितग्राहियों ने अपने राशनकार्ड के रंग के मुताबिक राशन प्राप्ति की बात स्वीकार की। अनुसंधानकर्ता ने यह पाया कि निर्धनता रेखा के नीचे रहने वाले परिवारों को अपने खपत के अनुसार राशन सामग्री हो जाती है और वे राशन सामग्री की गुणवत्ता से संतुष्ट पाये गये।

राशन सामग्री की गुणवत्ता के संकेत	खराब	सामान्य	अच्छा	बहुत अच्छा	अन्य
उत्तरदाताओं की संख्या प्रतिशत में	5%	10%	75%	5%	5%

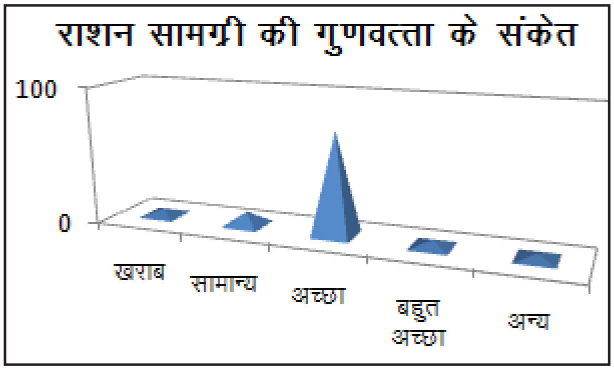

परिकल्पनाओं का मूल्यांकन - अध्ययनकर्ता द्वारा ली गई दो परिकल्पनाओं में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये :

1. **प्रथम परिकल्पना** - छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा योजना का अध्ययन क्षेत्र में विशेषकर अन्त्योदय परिवार के लिए भोजन उपलब्धता में वृद्धि हुई है। अध्ययनकर्ता ने अनुसूची एवं प्रत्यक्ष साक्षात्कार के आधार पर स्तरीत निदर्शन के आधार पर प्रतिशत विधि का अनुप्रयोग करते हुये यह पाया कि वास्तव में अध्ययन क्षेत्र कोनचरा में छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा योजना का विभिन्न रंगों के कार्डधारी परिवारों के लिए भोजन की उपलब्धता में नि:संदेह वृद्धि हुई है।
2. **द्वितीय परिकल्पना** - छत्तीसगढ़ राज्य में खाद्य सुरक्षा योजना के

कारण अन्त्योदय परिवार की आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है। अध्ययनकर्ता ने अपने अध्ययन के दौरान स्तरीत निदर्शन के माध्यम से चुने गये 50 परिवारों की आर्थिक स्थिति का आंकलन करने के पश्चात् पाया कि छत्तीसगढ़ राज्य की खाद्य सुरक्षा योजना का अध्ययन क्षेत्र के इन परिवारों की आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण एवं सार्थक सुधार हुआ है जिससे वे अपने आर्थिक क्रियाकलापों में चयन की समस्या का निदान सरलता से कर रहे है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली उचित मूल्य पर वस्तुयें उपलब्ध कराकर खाद्यान्न समस्या को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। खाद्यान्नों के मूल्य जहाँ एक ओर देश के कीमत स्तर को प्रभावित करते हैं, वहीं दूसरी ओर सामान्य उपभोक्ता भी प्रभावित होते है। हमारे दैनिक जीवन में उपयोग होने वाले वस्तुओं की मूल्य वृद्धि लोगों के असन्तोष का कारण बनती है। मूल्य नियंत्रण हेतु सरकार द्वारा कई प्रकार के उपाय किये जाते है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली उसमें से एक उपाय है। लोगों को विशेषकर समाज के गरीब एवं एक सीमा से कम आय प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को उचित मूल्य पर आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति और वितरण के सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अर्थव्यवस्था की स्थाई विशेषता माना गया है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली से आशय उपभोक्ता वस्तुओं को सार्वजनिक रूप से इस प्रकार वितरित करने से कि वे सभी उपभोक्ताओं को निर्धारित मूल्य पर उचित मात्रा में प्राप्त हो सके। इस प्रकार सार्वजनिक वितरण प्रणाली से आशय ऐसी वितरण प्रणाली से है, जिसमें :-सरकार का सहयोग आवश्यक होता है तथा सरकार द्वारा नियुक्त मध्यस्थ विक्रेता ऐसी वस्तुओं का विक्रय करते हैं। सार्वजनिक वितरण प्रणाली का सीधा सम्बन्ध भूख से सुरक्षा अर्थात् दो वक्त के भोजन की गारण्टी, जिसकी आवश्यकता भारत के 29.8 प्रतिशत (2009-10) आबादी अर्थात् 35 करोड़ लोग जो गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रहे है, के लिये है। रोटी, कपड़ा मकान मानव जीवन की की मूलभूत आवश्यकता है, यदि हम देश की जनसंख्या के हिसाब से सामान्य जनता के उचित दर पर खाद्यान्नों की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध नहीं करा पायेंगे उस स्थिति में देश की आर्थिक उदारीकरण की संरचना को नुकसान पहुँचेगा तथा पर्याप्त भोजन के अभाव में सामाजिक कल्याण, न्याय एवं उन्नति की परिकल्पना करना भारत जैसे विशाल लोकतन्त्र के लिये निरर्थक होगा।

समस्याएँ :

1. थोक व खुदरा बाजारों में कृषि जिंसों की कीमतों पिछले चार वर्षो में ऊंची रही हैं पर किसानों को खुदरा कीमतों का आधें से भी कम मिला हैं।
2. कृषि उपजों के सुरक्षित भंडारण की पर्याप्त व्यवस्था नहीं हैं जिससे बाहर रखा अनाज खराब हो जाता हैं।
3. बढ़ते कृषि रसायनों के प्रयोग से भूमि के उपजाउपन और उत्पादों की गुणवत्ता में कमी आ रही है।
4. खाद्य-प्रसंस्करण के तकनीकी ज्ञान और दक्षता की कमी है। दुनिया के प्रसंस्करण खाद्य बाजार में भारत की हिस्सेदारी मात्र 1 से 1.5 प्रतिशत है।
5. दूसरें को भोजन/अन्न देने वाला किसान स्वयं ऋणग्रस्तता तथा ब्याज के बोझ के कारण आत्महत्या के दलदल में फँसता जा रहा हैं।
6. खेती योग्य जमीन का क्षेत्रफल कम होता जा रहा हैं इसका कारण बढ़ता शहरीकरण और मशीन आधारित औद्योगिकीकरण हैं।
7. कहीं सूखा तो कहीं बाढ़ जैसी प्राकृति आपदाएं उत्पादकता को प्रभावित करता हैं जलवायु परिवर्तन खाद्य संकट पैदा कर रहा हैं।

सुझाव :

1. गेहूँ धान दलहन व तिलहन की उत्पादकता बढ़ाने के लिए जैव प्रौद्योगिकी को बढ़ाया जाना चाहिए।
2. औद्योगिक इकाइयां लगाने के लिए बेधार व परती पड़ी भूमि का उपयोग किया जाना चाहिए।
3. कृषि भूमि की रक्षा व बचाव के लिए पर्याप्त कानूनी उपाय किए जाने चाहिए ।
4. भूख मिटाने की जिम्मेदारी जिनकी हो उन्हें जिम्मेदारी न निभाने के लिए दंडित जाने की प्रभावी व्यवस्था हो।
5. सार्वजनिक वितरण प्रणाली में खाद्यान्न का आबंटन घर में उपभोक्ताओं की संख्या पर आधारित हो।
6. स्नेह-भोज शादी समारोहों में प्रीति भोज के बाद बचे भोजन की बरबादी पर प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए।
7. किसानों को आसान शर्तो पर कब ब्याज पर ऋण उपलब्ध कराना एवं फसल बीमा अनिवार्य कराना होगा।
8. बंजर भूमि सुधार कार्यक्रमों द्वारा कृषि क्षेत्र को बढ़ाना होगा।
9. अधिक उपज देने वाली किस्मों में सुधार एवं उपलब्धता सुनिश्चित करनी होगी।
10. वर्षा आधारित क्षेत्रों में संकर किस्मों को विकसित करना होगा।

चुनौतियाँ- देश की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को लंबे समय तक सतत् बनाए रखना एक कठिन चुनौती है,क्योंकि आबादी में लगातार विस्तार हो रहा है, शहरीकरण बढ़ता जा रहा है और नागरिकों की आमदनी बढ़ने से भोजन की मांग और विविधता में भी वृद्धि दर्ज की जा रही है । यदि इस भावी परिदृश्य को वर्ष 2005 के नजरिए से देखा जाए तो भारत की आबादी लगभग 1.65 अरब तक और प्रति व्यक्ति आमदनी 4,01,839 रूपये तक पहुंचने की संभावना है। उस समय देश में 50 प्रतिशत से अधिक आबादी शहरी क्षेत्रों में बसी होगी जिससे कृषि के आधार को चोट पहुंचने की आशंका जताई जा रही है । अध्ययनों से पता चला है कि यदि देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में सात प्रतिशत की वृद्धि दर मानी जाए तो वर्ष 2005 में अनाज की मांग 50 प्रतिशत तक बढ़सकती है, जबकि फलों,सब्जियों और पशु उत्पादों में 100 से 300 प्रतिशत तक की वृद्धि हो सकती है। इसका एक अर्थ यह भी है कि प्रति व्यक्ति कैलोरी मांग 3000 किलो कैलोरी से अधिक हो सकती है। इसके लिए खाद्यान्नों की उत्पादकता वर्तमान 25,000 किलो कैलोरी प्रति हेक्टेयर प्रतिदिन से बढ़ाकर 46,000 किलो कैलोरी प्रति हेक्टेयर प्रतिदिन के स्तर पर ले जानी होगी। इस हिसाब से अनुमान लगाया गया है कि देश में खाद्यान्नों की मांग 45 करोड़ टन तक पहुंच सकती हैं । इसी तरह दालों, खाद्य तेलों, दूध, माँस, अंडा, फलों, सब्जियों,चीनी तथा अन्य कृषि जिंसों की मांग भी इसी अनुपात में या इससे अधिक बढ़ सकती हैं । उत्पादकता के इस स्तर तक पहुंचने की संभावनाओं से पहले कुछ कठिन बाधाओं पर ध्यान देना और उनका आंकलन करना आवश्यक है। गर्माती धरती या 'ग्लोबल वार्मिंग' की वैश्विक विपदा को खाद्य सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा माना जा रहा हैं।

निष्कर्ष- वैज्ञानिक अनुमान बताते है कि यदि हम औसत तापमान की बढ़ोत्तरी पर कोई सार्थक रोक लगा नही पाते तो सन 2050 तक औसत तापमान में 2.2 से 2.9 डिग्री सेल्सियस तक की वृद्धि हो सकती हैं। इससे रबी और खरीफ फसलों के साथ फलो,सब्जियों,दूध उत्पादन तथा मछली

उत्पादन पर भी चोट पड़ने की संभावना जताई जा रही है। अनुमान है कि तापमान बढ़ोत्तरी के वर्तमान रूख के अनुसार वर्ष 2050 तक गेहूँ के कुल उत्पादन में 01 करोड़ 17 लाख टन तक की कमी आ सकती है। आंध्र प्रदेश, तमिलनाडू और कर्नाटक में बारानी चांवल का उत्पादन 10-15 प्रतिशत तक बढ़ सकता है, परंतु पंजाब और हरियाणा में इसमें 15-17 प्रतिशत की गिरावट आ सकती है। देश के अन्य क्षेत्रों में भी चांवल का उत्पादन 6-18 प्रतिशत तक गिर सकता है। सन 2050 तक दूध के उत्पादन में लगभग डेढ़ करोड़ की गिरावट की आशंका जताई गई है। तापमान बढ़ने से हमारे देश के शीतोष्ण क्षेत्रों में उगने वाले फलों के क्षेत्र और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता हैं। इसी तरह सागरों और नदियों का औसत तापमान बढ़ने से मछली उत्पादन पर भी बुरा असर पड़ेगा। खाद्य सुरक्षा को सतत् बनाए रखने के लिए आवश्यक भूमि की उपलब्धता भी लगातार कम होती जा रही है। वर्ष 2050 में प्रति व्यक्ति भूमि उपलब्धता 2010-11 के 0.13 हेक्टेयर से घटकर मात्र 0.09 हेक्टेयर रह जाएगी जो एक चिंता का विषय हैं। इसके साथ कृषि भूमि का लगातार अन्य विकास कार्यो तथा आवास के लिए उपयोग होना भी खाद्य सुरक्षा के लिए एक संकट हैं। इसी तरह सिंचाई के पानी की लगातार कमी होना भी एक गंभीर संकट की ओर इशारा करता हैं। अनुमान है कि तमाम प्रयासों के बावजूद देश की 50 प्रतिशत से अधिक कृषि फसलें बारानी दशाओं में उगाई जाएँगी,यानी वर्षा पर निर्भर रहेगी। इस देश में प्रति हेक्टेयर उत्पादकता को बढ़ाना अधिक कठिन हो जाएगा। कृषि के लिए ऊर्जा की कमी,भूमि का क्षरण और जैव विविधता का ह्रास भी खाद्य सुरक्षा के लिए एक प्रमुख खतरा माना जा रहा है जिसमें पोल्ट्री और मछली पालन भी शामिल हैं। खाद्य सुरक्षा जनता तक पहुँचाना एक बहुत चुनौती हैं। प्राथमिकता वाले परिवारों की पहचान में सावधानी बरतनी होगी इसका पूरा दारोमदार सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर हैं। उचित भंडार न होने के कारण भारत में हर साल हजारों टन अनाज बर्बाद हो जाता है। आज भी लाखों मैट्रिक टन अनाज खुले में पड़ा हैं। देश में 415 लाख टन अनाज केवल पन्नियों में ढका रहता है। अनाज का एक- एक दाना महत्वपूर्ण हैं अत: खाद्य सुरक्षा के लिए हर दाने की महत्ता समझने की जरूरत हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अहलूवालिया डी (1993):- पब्लिक डिस्ट्रीब्युशन ऑफ इंडिया कवरेज टारगेंटिग लिडेजेस (फूड पॉलेसी 18 फरवरी 1993 पेज नं. 60)
2. चन्द्रभान (2012):- अनाज का एक-एक दाना महत्वपूर्ण (कुरूक्षेत्र मार्च 2012 पेज नं. 8-12)
3. प्रो. मोदी के.एम. (2012) :- खाद्य सुरक्षा: चुनौतिया और समाधान (कुरूक्षेत्र मार्च 2012 पेज नं. 13-17)
4. अनन्दा डी (2012):- स्टेट रिस्पाँस टू फूड सिक्यूरिटी : अ स्टडी ऑफ पब्लिक डिस्ट्रीब्युशन
5. अरूण ए.के. (2012):- बाजार की गिरफ्त में पोषाहार और स्वस्थ (योजना 2012 पेज-19-22)
6. डॉ. कोचर नवीन व झारिया मणिकांत (2012) :- भविष्य के लिए अत्यंत आवश्यक खाद्य सुरक्षा(कुरूक्षेत्र मार्च 2012 पेज नं. 23-28)

****

उत्तर प्रदेश में मतदान व्यवहार के प्रमुख घटकों का 17वीं विधानसभा चुनाव के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषणात्मक अध्ययन

विकाश कुमार दीक्षित*

शोध सारांश – उ0प्र0 की सत्रवीं विधानसभा का चुनाव 11 फरवरी 2017 से 08 मार्च 2017 के बीच सम्पन्न हुआ, चुनाव आयोग ने कुल सात चरणों में इस चुनाव को संपादित करवाया। 404 सदस्यों वाली विधानसभा में एन0डी0ए0 ने 324, बहुजन समाज पार्टी व समाजवादी पार्टी गठबंधन को 67 तथा कांग्रेस एवं अन्य को मात्र 12 सीटे ही मिल पायी तथा सीट रिक्त रही। 17वीं विधानसभा में कुल 61प्रतिशत मतदान हुआ। इस चुनाव की सबसे बड़ी बात मतदान के प्रमुख कारकों यथा जाति, सम्प्रदाय, धन, शिक्षा, क्षेत्रवाद इत्यादि पर नरेन्द्र मोदी का आभा मण्डल तथा उनका 'मीडिया के सम्मुख प्रस्तुतीकरण' का प्रबंधन ही हावी रहा। इस चुनाव में जनता 'जातिवाद' एवं 'क्षेत्रवाद' की ओछी राजनीति को नकार दिया तथा नये प्रकार का मतदान व्यवहार देखने को मिला चुनाव पश्चात एक मुख्यमंत्री एवं दो उपमुख्यमंत्रियों को जातिगत अभियांत्रिकी को संतुष्ट व समन्वित करने हेतु शपथ दिलाई गयी।

शब्द कुंजी – चुनाव, मतदान व्यवहार, राजनीति, उत्तर प्रदेश विधानसभा।

प्रस्तावना – 'मतदान व्यवहार' वास्तव में लोकतंत्र की मशीनरी का ईंधन है। जिससे समस्त प्रजातंत्र, हमारी स्वतंत्रता, अधिकार व कर्तव्यों को निरूपित करता है। सैमुअल एस0जे0 एल्डरसिवेल्ड ने अपने शोधपत्र थ्योरी एण्ड मैथेड इन वोटिंग बिहैवियर रिसर्च में वर्णित करते हैं कि मतदान व्यवहार नई कोई शोध का विषय न होकर पूर्व में सुसंगत तथा असंगत समझे जाने वाले कारको का मतदान के परिप्रेक्ष्य मे उत्प्रेरक या अनुत्प्रेरक की क्रियाशीलता का अध्ययन है।'मतदान व्यवहार' मे उन कारकों या घटकों का अध्ययन किया जाता है, जिसने मतदान की गति को बढ़ाया, मंद किया या स्थिर किया। उत्तर प्रदेश जातीय विविधता, क्षेत्रीय भिन्नता एवं भाषायी असमरूपता वाला प्रांत है। सनद हो कि इस प्रांत मे लगभग 21 प्रतिशत दलित मतदान हैं, जिन पर बसपा के अस्तित्व मे आने के बाद मायावती का स्पष्ट वर्चस्व रहा है, 40 प्रतिशत पिछड़ा वर्ग मतदाताओं में मुलायम सिंह की सपा का वर्चस्व रहा है, इसके साथ-साथ 11 प्रतिशत मुसलमान सपा, बसपा तथा कांग्रेस मे मतदान करता है, ध्यातव्य हो कि भाजपा का वोट धर्म से निर्धारित होता आया है। उत्तर प्रदेश मे लगभग 23 प्रतिशत अगड़ी जातियां है, जो भाजपा, कांग्रेस व अन्य पार्टियों को मतदान करती है।

'सम्प्रदाय' के रूप में 79.73 प्रतिशत हिन्दू भाजपा व अन्य राजनीतिक दलों के वोट बैंक के रूप में जाना जाता है तथा 19प्रतिशत मुस्लिम भी गैर भाजपा दलों को मतदान करता आया है। ध्यान रहे उ0प्र0 में श्रीराम जन्म भूमि मंदिर आन्दोलन के पश्चात ही हिन्दू बनाम मुस्लिम की राजनीति प्रारम्भ हुई, जिसका सीधा फायदा भारतीय जनता पार्टी को मिला। इसी प्रकार सन् 1990 के पश्चात पिछड़ा वर्ग तथा मुस्लिम केन्द्रित राजनीति का लाभ मुलायम सिंह यादव को मिला ठीक इसी प्रकार सन् 1984 मे गठित बसपा के दलित मुस्लिम गठजोड़ की राजनीति लक्ष्य था कि किसी प्रकार अगड़ी जातियों के नेतृत्व को चुनौती दी जा सके परन्तु मायावती के शानदार राजनीतिक कौशल से उत्तर प्रदेश मे अपने धुरविरोधी ब्राम्हण समुदाय को साथ लाकर 15वीं विधानसभा में प्रचण्ड जीत अर्जित कर सरकार बनाई। इसी प्रकार सोलहवीं विधानसभा चुनाव में बसपा के विरूद्ध सत्ताविरोधी लहर का लाभ मुलायम सिंह यादव के नेतृत्व वाली 'सपा' ने 16वीं विधानसभा ने किया परन्तु 17वीं विधानसभा में उ0प्र0 के मतदान व्यवहार ने सभी को चौंका दिया तथा भाजपा नेतृत्व वाले गठबंधन ने जातीय राजनीति को समाप्त कर दिया तथा राजनीति के पंडितो को असहज कर दिया।

अध्ययन का उद्देश्य – उक्त शोधपत्र मे अध्ययन के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं- 17वीं विधानसभा चुनाव मे मतदान व्यवहार का विश्लेषण करना, पूर्व विधानसभा चुनावों के परिप्रेक्ष्य मे 17वीं विधानसभा चुनाव का विश्लेषण करना तथा परंपरागत मतदान व्यवहार निर्धारित करने वाले कारकों की वर्तमान परीदृश्य में समीक्षा करना।

अनुसंधान क्रियाविधि (शोध प्रवधि) – प्रस्तुत शोधपत्र की अनुसंधान प्रकृति वर्णनात्मक एवं विष्लेषणात्मक है। शोधपत्र मे प्रयुक्त डाटा विभिन्न संदर्भ पुस्तकों व समकालीन पत्र-पत्रिकाओं से लिया गया, जिनका स्रोत द्वितीयक हैं।

मतदान व्यवहार से आशय – 'गोल्डमैन एवं शेल्डन' के अनुसार मतदाताओं को अपना मत किसे एवं क्यों देने की प्रवृत्ति हेतु प्रेरित करने वाले कारकों को मतदान व्यवहार कहा जाता है। चुनाव मे मतदान की प्रक्रिया तथा जन सहभागिता ही प्रतिनिधिक लोकतंत्र के आधारशिला है, वस्तुत: अनेक कारण जैसे जाति, धर्म, नेतृत्व, विचारधारा आदि कारक होते हैं, जो मतदाता के निर्णय निर्माण मे सहायता करते हैं। इसी प्रक्रिया को मतदान व्यवहार की प्रक्रिया कहा जा सकता है। मतदान व्यवहार का अध्ययन वास्तव में चुनाव मनोवैज्ञानिकता का अध्ययन है। अत: राजनीतिक मनोवैज्ञानिकता के पहलू की प्राथमिकता मतदान व्यवहार की आधारशिला है। संक्षेप में मतदान व्यवहार मे मतदान की संतुष्टि को प्रभावित करने वाले घटकों का समुच्चय ही मतदान व्यवहार है।

उत्तर प्रदेश विधानसभा में मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाले

* सहा. प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) डॉ. रामप्रकाश स्मारक महाविद्यालय, परास, घाटमपुर, कानपुर नगर (उ.प्र.) भारत

प्रमुख कारक :

जाति एवं मतदान व्यवहार –उत्तर प्रदेश की राजनीति मे कांग्रेस के अवसान के बाद वस्तुत: 'जाति–नीति' राजनीति ही सत्ता का निर्धारण करती आयी है। ज्ञात हो कि उत्तर प्रदेश की 79 जातियाँ पिछड़ा वर्ग को सृजित करती हैं इनकी जनसंख्या प्रदेश की कुल जनसंख्या लगभग 40प्रतिशत है। पिछड़ी जातियों में यादव, कुर्मी तथा जाट जिनकी आबादी 18प्रतिशत है, शेष अति पिछड़ी जातियां जिनमें कहार, लुहार, कुम्हार आदि हैं। ध्यातव्य हो कि उत्तर प्रदेश के विभिन्न राजनीति के क्षत्रप इसी की देन है। जैसे– मुलायम सिंह यादव, अहीर/यादव समुदाय के हैं, सोनेलाल पटेल कुर्मी/पटेल समुदाय के थे, अजीत सिंह जाट हैं। संयुक्त रूप से पिछड़ा वर्ग के मतदाता लगभग 146 विधानसभा सीटों मे स्पष्ट वर्चस्व रखते हैं ठीक इसी प्रकार दलित वर्ग लगभग 66 विधानसभा सीटों मे स्पष्ट वर्चस्व रखता है। दलितों मे मुख्यता जाटव तथा अन्य दलित जातियों यथा बाल्मीकि, खटीक, कोरी, धोबी इत्यादि आती है। इनकी आबादी कुल का प्रदेश की जनसंख्या 21.5 प्रतिशत है। जो बुन्देलखण्ड मे 25प्रतिशत, दोआब में 26 प्रतिशत तथा पूर्व में 22 प्रतिशत है। केवल जाटव कुल दलित आबादी का 56 प्रतिशत है दूसरे नम्बर पर पासी 16प्रतिशत कोरी तथा बाल्मीकि 15 प्रतिशत अर्थात पांच जातियां दलितों की कुल आबादी का 90 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व करती है।

मायावती के नेतृत्व वाली बसपा के गठन के पश्चात यह जातियां बसपा का आधारभूत वोट बैंक रही हैं। इसी प्रकार सवर्णो की आबादी कुल प्रदेश की जनसंख्या के 25–28 प्रतिशत है। जिसमें ब्राम्हण आबादी 14प्रतिशत (लगभग) है, क्षत्रिय 4–5 प्रतिशत तक तथा शेष वैश्य, कायस्थ इत्यादि है। अत: जाति अभियांत्रिकी के आधार पर ही उत्तर प्रदेश की राजनीति की दिशा व दसा तय होती है।

उप क्षेत्रवाद एवं मतदान व्यवहार – भारतीय राजनीति मे क्षेत्रवाद एक अपरिहार्य सत्य बन चुका है, उत्तर प्रदेश की राजनीति में भी क्षेत्रवाद का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। वास्तव में इसे 'क्षेत्रवाद' के स्थान पर 'उपक्षेत्रवाद' कहा जा सकता है। उत्तर प्रदेश भी इस उपक्षेत्रीयता की राजनीति से गम्भीर रूप से ग्रसित है। इस उपक्षेत्रवाद के प्रमुख भौगोलिक तथा अर्थिक कारक है। सनद हो कि इसी आधार पर सन् 2000 में उत्तर प्रदेश का बंटवारा किया था तब उत्तराखण्ड राज्य बना था। वर्ष 2011 में मायावती ने भी उत्तर प्रदेश को पूर्वांचल, बुन्देलखण्ड, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और अवधप्रांत मे बांटने का प्रस्ताव विधानसभा में पारित कर केन्द्र को भेजा था तब तत्कालीन केन्द्र सरकार ने इस प्रस्ताव को वापस कर दिया था। ध्यातव्य हो कि पश्चिमी उत्तर प्रदेश की राजनीति जाट, किसान तथा गन्ना को लेकर चलती आयी है। वहीं इटावा परिक्षेत्र मे मुलायम का सिक्का चलता आया है। जब बात बुन्देलखण्ड की करे तो महोबा, झांसी, जालौन, हमीरपुर, बांदा, चित्रकूट आदि क्षेत्र बेहद पिछड़ा क्षेत्र है। कृषि के लिहाज से भी सिंचाई इत्यादि की कमी से इस क्षेत्र को बेहद अल्प विकसित परिक्षेत्र कहा जाता है। इसी प्रकार पूर्वांचल के विषय में जहां के 28 जिले पूरे प्रदेश की राजनीति निर्धारित करते हैं, एक बार समाजवादी नेता स्वर्गीय जनेश्वर मिश्र ने कहा था कि उत्तर प्रदेश को बादशाहत का रोग लग गया था वह अपने अपने बारे में नही बल्कि देश के बारे में सोंचता रहा ठीक इसी प्रकार पूर्वांचल उत्तर प्रदेश के विषय में सोंचता रहा। कभी माफिया तो कभी तमाम बाहुबलियों ने भी पूर्वांचल की राजनीति के प्रभावित किया परन्तु आर्थिक स्थिति बेहद खराब रही वर्ष 2011–12 मे यहां प्रति व्यक्ति आय 13,058 (सालाना) थी जब कि उत्तर प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय 18,244 (सालाना) थी। ज्ञात हो कि पूर्वांचल में सोनभद्र को छोड़ दिया जाये तो समूचा पूर्वांचल खनिज दृष्टि से बंजर ही कहा जायेगा परन्तु फिर भी क्षेत्रवाद की दृष्टि से पूर्वांचल का उत्तर प्रदेश की राजनीति मे बेहद अहम योगदान हैं।

नेतृत्व एवं मतदान व्यवहार – उत्तर प्रदेश की राजनीति में नेतृत्व का प्रभाव या नेतृत्व केन्द्रित राजनीति का अन्य राज्यों की भांति प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। स्वतंत्रता के पश्चात लगभग दो दशक की राजनीति के पश्चात प्रभावशाली नेतृत्व चौधरी चरण सिंह के रूप में मिला वे उत्तर प्रदेश के दो बार मुख्यमंत्री रहे उनको 'किसानों का चैंपियन' भी कहा जाता था उनकी पार्टी 'भारतीय क्रांति दल' ने उनके नेतृत्व मे जैसा 'किसान' को आधार बनाकर सच्चे अर्थो ने पहली बार जमीनी वोट बैंक तैयार किया था शायद वैसा सम्पूर्ण भारत में कभी नही देखने को मिला। उन्हीं की जागरूकता का परिणाम है कि पश्चिमी उत्तर प्रदेश आज भी किसान राजनीति का गढ़ बना हुआ है। तत्पश्चात कमलापति त्रिपाठी हेमवती नंदन बहुगुणा एवं नारायण दत्त तिवारी व्यापक जनाधार वाले नेता रहे। इसके पश्चात वी0पी0 सिंह, श्रीपति मिश्रा एवं वीर बहादुर सिंह नाम उल्लेखनीय जहां नेतृत्व वास्तव में मतदाताओं को विचारधारा की अपेक्षा अधिक रूचिकर लगा।

गैर कांग्रेसी उत्तर प्रदेश के राजनीति के क्षत्रिपों मे मुलायम सिंह यादव, मायावती एवं कल्याण सिंह सर्वाधित करिश्माई नेतृत्व वाले राजनीतिज्ञ हैं। मुलायम सिंह यादव (नेता जी) तीन बार तक उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री रहे। उन्होने अपनी पिछड़ा वर्ग अभियांत्रिकी में मुस्लिम सम्मिलन कर राजनीतिक नेतृत्व की पराकाष्ठा रही है। उत्तर प्रदेश के पिछड़ा वर्ग वोट बैंक मे मुलायम सिंह यादव के अतिरिक्त अन्य कोई सफल नेता नहीं रहा तथा उत्तर प्रदेश के सर्वाधित सफल राजनेता उनको कहा जाये तो अतिशयोक्ति न होगी। वास्तव में 16वीं विधानसभा का जनादेश सच्चे अर्थों मे मुलायम सिंह यादव को प्रदत्त जनादेश था।

इसी प्रकार बसपा की राष्ट्रीय अध्यक्षा मायावती (बहन जी) भी करिश्माई नेतृत्व की राजनेता है। मायावती की पार्टी का भले ही गठन कांशीराम के द्वारा किया गया हो परन्तु दलित मतदाताओं मे उनकी पकड़ का नेता विशेषकर उत्तर प्रदेश में दूसरा नहीं हुआ। उनका सक्रिय राजनीति जीवन सन् 1984 में शुरू हुआ था तथा 1989 में बिजनौर से लोकसभा सदस्य निर्वाचित हुई तत्पश्चात उत्तर प्रदेश की चार बार मुख्यमंत्री निर्वाचित हुई तथा 15वीं विधानसभा में उन्होने पूर्ण बहुमत की सरकार बनाई, अत: मायावती के नेतृत्व को करिश्माई नेतृत्व कहना अतिशयोक्ति होनी।

कल्याण सिंह उत्तर प्रदेश में भाजपा का अरसे तक चेहरा रहे हैं, उनकी लोधी वोटों पर पकड़ सर्वविदित है तथा हिन्दुत्व की विचारधारा एवं बाबरी मस्जिद विध्वंश के कारण उनको न केवल उत्तर प्रदेश वरन् उत्तर प्रदेश से बाहर भी अच्छी मतदाताओं पर पकड़ रखते थे। उनको उत्तर प्रदेश का दो बार मुख्यमंत्री बनने का सौभाग्य मिला। इसी इसी प्रकार राष्ट्रीय नेतृत्व, जैसे नरेन्द्र मोदी, सोनिया गांधी, राहुल गांधी, राजनाथ सिंह, योगी आदित्यनाथ, अखिलेश यादव आदि भी भारी जनाधार वाले नेता हैं जिनकी मतदान व्यवहार को प्रभावित करने की बेहतर क्षमता है।

लोक लुभावावन योजनाएं एवं मतदान व्यवहार – उत्तर प्रदेश में लोक लुभावन योजनाएं की मतदान को प्रभावित करने वाला कारक है, वर्तमान समय मे प्राय: सभी राजनीतिक दल वोट लेने के लिये ऐसी योजनाओं की घोषणा अपने चुनावी घोषणा पत्रों मे करते रहते हैं। जैसे कांग्रेस के नेतृत्व वाली यू0पी0ए0–2 की सरकार बनाने में किसान ऋण माफी का विशेष

योगदान था उसी प्रकार 16वीं विधानसभा मे मुलायम सिंह की लैपटॉप योजना तथा 17वीं विधानसभा चुनाव मे भाजपा की प्रादेशिक ऋण माफी योजना का मतदान प्रभावित करने वाली घोषणाएं साबित हुई।

मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाले अन्य कारण – उत्तर प्रदेश में मतदान मे व्यवहार को प्रभावित करने वाले अन्य कारण निम्न लिखित हैं–

1. सत्ता विरोधी लहर (एण्टी इनकमबैंसी फैक्टर)
2. मतदाताओं की साक्षरता
3. विचारधारा
4. लोकप्रिय चुनावी नारे
5. मतदाताओं के व्यक्तिगत सम्बंध
6. सम्प्रदायवाद की उग्रता
7. उपभाषावाद
8. चुनावों मे धन बल का प्रयोग
9. राजनीतिक दलों की कार्यशैली
10. न्यायपालिका के द्धारा प्रदत्त निर्णय

उत्तर प्रदेश की 17वीं विधानसभा चुनाव एवं मतदान व्यवहार – उ0प्र0 की 17वीं विधानसभा चुनावों मे चुनाव आयोग द्धारा 7.7 करोड़ पुरूष मतदाता, 6.3 करोड महिला मतदाता तथा 6483 ट्रांसजेन्डर मतदाताओं की सूची तैयार की गयी। कुल 61प्रतिशत मतदाताओं ने चुनाव मे भाग लिया। 11 मार्च 2017 को चुनावी नतीजे घोषित किए गए, जिसमें भारतीय जनता पार्टी को 39.7प्रतिशत मतदाताओं ने वोट किया तथा 384 सीटों मे 312 सीटे जीतने मे कामयाब रही। इसके वोट प्रतिशत में 24.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार भाजपा को 265 सीटो का सीधे लाभ उत्तर प्रदेश में हुआ। जो अपने आपमे एक कीर्तिमान है। विपक्षी दलों मे सपा को 22प्रतिशत मत मिले तथा कुल 47 सीटे जीतने मे कामयाब रही सनद हो कि उसको इस चुनाव में विगत चुनाव की अपेक्षा कुल 177 सीटों को गवाना पड़ा, बसपा को 22.2प्रतिशत मत मिले तथा कुल 19 सीटें जीतने मे कामयाब रही तथा उसको कुल 61 सीटे पूर्व विधानसभा की गंवानी पड़ी, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को मात्र 07 सीटे ही मिल सकीं।

उत्तर प्रदेश की 17वीं विधानसभा मे भाजपा के जीत के प्रमुख कारक :

सत्ता विरोधी लहर – 17वीं विधानसभा चुनावों मे भाजपा की जीत का सबसे बड़ा कारण उत्तर प्रदेश में सत्ता विरोधी लहर थी जिसको मुख्यमंत्री अखिलेश यादव समझने मे नाकाम रहे। पारिवारिक कलह तथा सुलह–समझौतों का लम्बा दौर मतदाताओं को रास नहीं आया। जनता के बीच अखिलेश की स्वीकार्यता के बावजूद कई मंत्री स्वयं को सुपर सी0एम0 प्रस्तुत करते रहे। जिससे आजिज होकर मतदाताओं ने सपा से मोहभंग कर लिया।

बेमेल गठबन्धन – उत्तर प्रदेश में माया–मुलायम का विरोध व प्रतिद्धंदिता जगजाहिर रही, दोनों के मतदाता आपस में अलग–अलग विचारधारा के होने के कारण आपस में सहयोग नहीं कर सके। पूर्व के अनुभवों के कारण सपा व बसपा का एक साथ आना दोनों दलों के कार्यकर्ता हृदय से स्वीकार कर सके। अत: मतदाताओं के कोप का भाजन दोनों को बनना पड़ा।

नरेन्द्र मोदी का करिश्माई नेतृत्व – वास्तव में भाजपा ने 2017 के विधानसभा चुनाव मोदी नेतृत्व मे लड़कर चुनाव से पूर्व ही बढ़त हासिल कर लिया था। माया–मुलायम नेतृत्व से असंतोष तथा कांग्रेस का नेतृत्व संकट भी भाजपा के विजय में सहयोगी रहा। सनद हो कि नरेन्द्र मोदी का नेतृत्व ही प्रमुख रूप से भाजपा के विजय मे सहयोगी रहा। सनद हो कि नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व मे भाजपा ने 2014 के लोकसभा के चुनाव में 80 में से 71 सीटों पर एक तरफा जीत दर्ज की थी तकरीबन 33 महीने बाद भी उक्त लहर विद्यमान रही, जो भारतीय की बहुत बड़ी घटना थी।

जातिगत प्रबंधन – भाजपा नेतृत्व ने 'गैर जाटव तथा गैर यादव' के साथ चुनाव प्रबंधन किया, जिससे भाजपा को यादव व जाटव के अतिरिक्त पिछड़ा तथा दलित वोटर के साथ सवर्ण मतदाताओं का पूर्ण साथ मिला तथा भाजपा की विजय का मार्ग हो सका।

हिन्दू मतदाताओं का ध्रुवीकरण – राम मंदिर निर्माण की प्रबल सम्भावना को तलाशने के लिये कहीं न कहीं मतदाताओं ने भाजपा का साथ दिया। सनद हो कि इस चुनाव मे सपा, बसपा तथा कांग्रेस मुस्लिम मतदाताओं को साधने में लगी रहीं जब कि भाजपा नें हिन्दू मतदाताओं को ध्रुवीकृत कर पूरा समीकरण अपने पक्ष में कर लिया तथा कैराना जैसी घटनाओं ने हिन्दू वोटरों का ध्रुवीकरण कर दिया।

मीडिया एवं सोशल मीडिया का प्रबन्धन – भारतीय जनता के मुख्य चुनावी चेहरे प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की लगभग हर चुनावी रैली का विभिन्न मीडिया चैनलों ने लाइन प्रसारण किया, जिसका आम मतदाता के मन पर भाजपा के पक्ष में सकारात्मक प्रभाव पड़ा। इसके साथ–साथ सोशल मीडिया पर भी भाजपा के पक्ष में संगठित अभियान चलाए गये, जिसका प्रभाव भारतीय जनता पार्टी के पक्ष में हुआ इसके परिणाम स्वरूप भाजपा चुनाव जीत सकी।

भाजपा का बूथ मैनेजमेण्ट – भारतीय जनता पार्टी ने अपने संगठन को बेहद मजबूत किया, शहरी क्षेत्रों मे पार्टी का व्यापक जनाधार पहले ही मजबूत था तथा ग्रामीण क्षेत्र जो सपा व बसपा के गढ़ माने जाते थे वहां पार्टी ने बूथ स्तर तक संगठित टीम तैयार किया तथा कई बार बूथ अध्यक्षों को राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह व प्रदेश अध्यक्ष केशव प्रसाद मौर्या के साथ सीधे संवाद के अवसर प्रदान किए गए जिससे आम कार्यकर्ताओं का मनोबल बढ़ा तथा भाजपा को जीत प्राप्त हुई।

निष्कर्ष – भारतीय जनता पार्टी की उत्तर प्रदेश मे प्रचण्ड जीत ने पुराने तथा परम्परागत मतदान व्यवहार के घटकों को दर–किनार कर दिया। उत्तर प्रदेश मे नारायणदत्त तिवारी के मुख्य मंत्रित्व काल के पश्चात पहला ऐसा चुनाव था जो 'जाति' गत राजनीति से ऊपर था। इस चुनाव मे क्षेत्रवाद व वर्गवाद की वर्जनाएं टूट गयी तथा विकास, राम मंदिर निर्माण एवं किसान ऋण माफी जैसे मुद्दे भाजपा को जीत दिलाने मे समर्थ रहे। ध्यातव्य हो कि इन सबसे ऊपर नरेन्द्र मोदी का घटना प्रस्तुतीकरण व मीडिया का आकर्षण बनाएं रखना भी प्रमुख कारक थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सैम्युअल एस0जे0 एल्डरसेविल्ड : थ्योरी एण्ड मैथेड इन वोटिंग बिहैवियर रिसर्च द जनरल ऑफ पॉलिटिक्स शिकागो जनरल्स वॉल–13 नवम्बर, 1951
2. शालिनी शर्मा, गुंजन भटनागर, डायनिमिक्स ऑफ अण्डर डेवलपमेण्ट ऑफ उत्तर प्रदेश–2016 मानक पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
3. महेन्द्र प्रताप सिंह : इण्डियन पॉलिटिकल सिस्टम चतुर्थ संस्करण पीअर्सन एजूकेशन–2018 राज पब्लिकेशन नई दिल्ली।
4. राजन पाण्डेय, मनीष तिवारी, 'बैटल ग्राउण्ड यू0पी0 पॉलिटिक्स इन द लैण्ड ऑफ राम' 2012 केन्डल एडीशन (ई–बुक)

Evaluation of Primary Metabolites from Selected Medicinal Plants

Ankush Johar* Ankita Anand Neha Puri*** Ajit Kumar Swami**** Manas Mathur*****

Abstract - Biochemical studies of the individual plant parts is a necessary prerequisite in order to evaluate their importance in the over all metabolism of the plant. In the present study various plant parts of selected medicinal plants were evaluated, separately for their metabolite content. Maximum amount of total soluble sugars were observed in leaves of *Leeamacrophylla* and lipids were present in leaves of *Globbamarantia* , starch and protein in leaves of *Leeamacrophylla* while phenols in stem of *Leeamacrophylla.* The overall content of primary metabolites were found to be more in *L. macrophylla* as compared to*Globbamarantia*
Keywords - Biochemical; Metabolites; *LeeaMacrophylla*; *GlobbaMarantia.*

Introduction - Biochemical studies of the individual plant parts is anecessary prerequisite in order to evaluate their importance in the over all metabolism of the plant, as well as the role of specific substances that may be produced as direct or indirect products of metabolism in same physiological processes.

Metabolism comprises coordinate series of coupled enzymatic conversions in living organisms. Hence, carbohydrates, proteins, amino acids, chlorophyll, vitamins, hormones, phenols etc are basic building blocks of plant without which the plant life is hampered.

Carbohydrates comprise the bulk of organic matter of plants having storage and skeletal function, in addition to their involvement in the basic metabolism of all organisms. Comparative distribution of carbohydrates in the plant kingdom has been well studied (Bell, 1962). Different methods for determining reducing sugars, sucrose and starch have been described in detail (McCready, 1950; Loomis, 1973; Cronin &Smith, 1979; Niranjan&Katiyar, 1979).

Proteins are complex nitrogenous biopolymers and areubiquitous components of all living tissues. They have indispensable function in cellular architecture, catalysis metabolic regulation and are an important weapon in the defense arsenal of many higher organisms. Plant proteins have been well reviewed (Utsumi& Makoto, 1987) and a method for estimation of total protein content had been described by different workers (Lowry *et al*, 1951; Osborne, 1962)

Lipids are molecular organic compounds, composed largely of carbon and hydrogen and are essential for cell growth. They combine with carbohydrates and proteins to form the major component of plant and animal cells. Phenolic compounds comprise a wide range of plant metabolites, which bear at least one hydroxyl group attached to an aromatic ring system.

Various workers described that the phenolic substances are the active products of cellular metabolism and of great importance as they act as analog of growth hormones (Walker, 1975). Based on their chemical structures more than 10 classes of polyphenols have been identified (Bravo, 1998.).

Leea contains a 70 species and belongs to Vitaceae family. *Leeamacrophylla* is reported to possess significant anti-cancerous property Traditionally, powder of leaves mixed with honey is given to patient having cancer. Leaf juice is used as local anti-inflammatory agent and used in boils, arthritis, gout and rheumatism. A paste of the leaf is applied to cuts and wounds. Roots are used in fracture and healing cut injury. Roots are used externally to allay pain used for ringworm and guinea worm; it has astringent, styptic and antiseptic activity. The plant parts are also used by local communities in headache, body pain, rheumatic pain,cold, cough etc. including other medicinal uses in goiter, gastric tumor, lipoma and tetanus (Kirtikar and Basu, 1981)

Globba L. is the third largest genus of the Zingiberaceae. *Globbamarantia*are distributed throughout

*Department of Biochemistry, Mewar University, Gangrar, Chittorgarh (Raj.) INDIA
** Department of Biochemistry, Mewar University, Gangrar, Chittorgarh (Raj.) INDIA
***Department of Biochemistry, Mewar University, Gangrar, Chittorgarh (Raj.)
****Department of Biotechnology , Seminal Applied Sciences Pvt. Ltd, Jaipur (Raj.) INDIA
***** School of Agriculture, Suresh Gyan Vihar University, Mahal Road, Jaipur (Raj.) INDIA

tropical (and parts of subtropical) Asia, ranging from India to southern China, south and east to the Philippines and New Guinea. The plant contains some phyto-chemicals like sterols, flavonoids and also bears some antimicrobial activities. Tuber paste is applied on the scalp to reduce high temperatures for refrigerant and fever(Kirtikar and Basu, 1981)

Material and Methods

Experimental Plants - Different Plant parts of *L. macrophylla* (Leaves and stem)and *G. marantia* (Leaves and stem) were separated, dried and powdered for evaluationof various primary metabolites.

Carbohydrates

Total Soluble Sugars

Extraction: The dried test materials (50 mg each) were homogenized in a mortar and pestle with 20 ml of 80% ethanol separately and left overnight. Each sample was centrifuged at 1200 rpm for 15 min; the supernatants were collected separately and concentrated on a water bath using method of Loomis and Shull (1973). Distilled water was added to make up the volume up to 50 ml and processed further for quantitative analysis.

Starch

Extraction: The residual mass obtained after extraction of total soluble sugars of each of the test samples was suspended in 5.0 ml of 52% perchloric acid (Mc Cready*et al,* 1950). Later, 6.5 ml of water was added to each sample and the mixture was shaken vigorously for 5 min.

Quantitative Estimation: 1ml aliquot of each sample was used for the estimation of carbohydrates using the phenol-sulphuric method of Dubois *et al* (1951). A standard regression curve of standard sugar (glucose) was prepared. A stock solution of glucose 100 ìg/ml was prepared in distilled water. From this solution, 0.1 to 0.8 ml was pipette out into eight separate test tubes and volume was made up to 1 ml with distilled water. These tubes kept on ice; 1 ml of 5% phenol was added in each tube and shaken gently. 5 ml of conc. sulphuric acid was rapidly poured so that the steam hits the liquid and tubes were gently shaken during the addition of the acid. Finally the mixture was allowed to stand on a water bath at 26-30^oC for 20 min. The characteristic yellow orange colour was developed. The optical density was measured at 490 nm using spectrometer (Carlzeiss, Jena DDR, VSU 2 P), after setting for 100% transmission against a blank (distilled water). Standard regression curve was computed between the known concentrations of glucose and their respective optical density, which followed Beer's Law.

All samples were analyzed in the same way as described above and contents of the total soluble sugars and starch were calculated by computing optical density of each of the samples with standard curve.

Proteins

Extraction: The test samples (50 mg each) were separately homogenized in 10 ml of cold 10% trichloroacetic acid (TCA) for 30 min and kept at 4^oC for 24 h. These mixtures were centrifuged separately and supernatants were discarded. Each of the residues was again suspended in 10 ml of 5% TCA and heated at 80^oC on a water bath for 30 min. The samples were cooled, centrifuged and the supernatants of each were discarded. The residue was then washed with distilled water, dissolved in 10 ml of 1N NaOH, and left overnight at room temperature (Osborne, 1962).

Quantitative Estimation: Each of the above samples (1ml) was taken and the total protein content was estimated using the spectrophotometer and method of Lowry *et al* (1951). A regression curve of the standard protein (bovine serum albumin, BSA) was prepared. A stock solution of BSA (Sigma Chem. Co., St. Louis, USA) was prepared in 1N NaOH (1mg/ml). Eight concentrations (ranging from 0.1 to 0.8 mg/ml) were separately measured in test tubes and the volume of each was made up to 1ml by adding distilled water. To each, 5ml of freshly prepared alkaline solution (Prepared by mixing 50 ml of 2% Na_2CO_3 in 0.1 N NaOH and 1 ml of 0.5% $CuSO_4$. 5 H_2O in 1% Sodium potassium tartarate) was added and kept at room temperature for 10 min. In each sample 0.5 ml of Folin-Ciocalteau reagent (commercially available reagent was diluted with equal volume of distilled water just before use) was added rapidly with immediate mixing and optical density of each sample was measured after 30 min at 750nm using spectrophotometer against the blank (Lowry *et al,* 1951). Five replicates of each concentration were taken and the average value was plotted against their respective concentrations to compute a regression curve.

All samples were processed in the same manner and the concentration of the total protein content in each sample was calculated by referring the optical density of each sample with standard curve. Five replicate samples were taken in each case and mean value was calculated.

Lipids

Extraction and Quantification: The test samples were dried, powdered and 100 mg was macerated with 10 ml distilled water, transferred to a conical flask containing 30 ml of chloroform and methanol (2/1: v/v;Jayaraman, 1981). The mixture was thoroughly mixed and left overnight at room temperature in dark for complete extraction. Later, 20 ml of chloroform mixed with 2 ml of water were added and centrifuged. Two layers separated, the lower layer of chloroform, which contained all the lipids, was carefully collected in the pre weighed glass vials and the coloured aqueous layer of methanol which contained all the water soluble substances and thick pasty inter face layer were discarded in each test sample. The chloroform layers were evaporated to dryness and weighed. Each treatment was replicated thrice and their mean values calculated.

Phenols

Extraction: The deproteinized test materials (200 mg each) macerated with 10 ml of 80% ethanol for 2 h, and left overnight at room temperature. The mixtures were centrifuged and the supernatants were collected separately and maintained up to 40 ml by adding 80% ethanol.

Quantitative Estimation: Total phenol content in each sample was estimated by the spectrophotometer method of Bray and Thorpe (1954). It included the preparation of a regression curve of standard phenol (Tannic acid). A stock solution of tannic acid was prepared by mixing 40 mg of standard phenol in 1 ml of 80% ethanol. Eight concentrations ranging from 0.1 to 0.8 ml were prepared in test tubes and volume was raised to 1 ml with 80% ethanol. To each test tube, 1ml of Folin-Ciocalteau reagent (commercially available reagent was diluted by distilled water in 1:2 ratio just before use) and 2ml of 20% sodium carbonate solution was added and the mixture was shaken thoroughly. The samples were placed in boiling water for 1 min and cooled under running water. These reaction mixtures were diluted to 25 ml by adding distilled water and the optical density was read at 750nm against a blank (Bray & Thorpe, 1954). The optical density of each sample was plotted against the respective concentration of total phenols to compute a regression curve. The concentrations in the test samples were calculated by referring the respective optical density of test samples against standard curve of tannic acid.

Results and discussion

Primary metabolites

L. macrophylla

The maximum content of total soluble sugars was observed in leaves (52.33 mg/gdw) and in stem it was in lower quantity (46.24 mg/gdw). Starch content was more in leaves (28.55mg/gdw) as compared to stem (23.89 mg/gdw). Maximum content of proteins was present in leaves (406 mg/gdw) as compared to stem . Quantitatively total lipids was found to be more in leaves as compared to stem (83.33 mg/gdw). Total phenol content was found to be more in stem (11.84 mg/gdw) than leaves (9.13 mg/gdw). Except Phenols all metabolites were found to be more in leaves **(Table 1)**

Table 1 (see in next page)

G. marantia

The maximum content of total soluble sugars was observed in stem (44.26 mg/gdw) as compared to leaves (32 mg/gdw). Starch content was more in stem (19.76mg/gdw) as compared to leaves (17.58 mg/gdw). Maximum content of proteins was present in leaves (291 mg/gdw) as compared to stem (256.78 mg/gdw). Quantitatively total lipids was found to be more in leaves (84mg/gdw) as compared to stem. Total phenol content was found to be more in leaves(10.76 mg/gdw) than stem **(Table 2)**

Table 2 (see in next page)

Niranjan and Katiyar (1979) evaluated the range of crude proteins (22-31%), total carbohydrates (9.68-11.80%) and total lipids (1.61-3.91%) in selected leguminous plants. Stem, leaves and seeds of *M.sativa*contained total soluble sugars and protein, which were found to be higher than those reported by (Duke, 1981a, 1982b). Aerial plant parts and seeds of *T. foenumgraecum(fenugreek)* also showed higher amount of total carbohydrates and protein compared to the amount reported earlier by Duke &Ayensu, (1985). Seeds of *C. tora*exhibited 44%higher content of protein than those reported by Oudhia (2002). In seeds of *C. occidentalis*, the level of sugar and starch (5.1 and 2.2 parts in 100g) were also found to be higher compared to the amount examined. All the metabolites, except proteins, were present in more quantity in *D. robusta*than in *D.indica*.

Moreover, it was observed that in different plant parts of *A. squamosa,* proteins and lipids were in the range of 18.9-23% and 3-8% respectively, which was higher as compared to the content as reported in the fruits of *A.squamosa*by Pinto &Cordeiro (2005). Phenol content was highest in roots and stem of *A.squamosa*followed by *Cassia* sps and *D.robusta*compared to all other experimental plants plants. The protein and lipid content of *M. oleifera*pods (2.5% and 0.1%, respectively) and leaves (6.7% and 1.7%, respectively) as compared to earlier findings was much less than the amount estimated in the present investigation. *M. dioica*has been reported to be rich in a carbohydrate (Rashid, 1976), which was also observed in the present investigation. There are other reports on the evaluation of primary metabolites in relatedspecies (Lissil, 1980). The difference in the content may be attributed to the various geographical niches in which these plants must be growing (Butcher, 1977).

Conflict of Interest - The authors declares that there is no conflict of interest

References :-

1. Bell DJ (1962) Carbohydrates. In: M. Florkin and H.S. Masoneds. Comparative Biochemistry. Academic Press, New York; 3, pp. 288-355.
2. McCready RM, Guggoiz J, Silviera V and Owens HS (1950). Determination of starch and amylase in vegetables. Anal Chem. 22: 1156-1158
3. Loomis WE and Shull CA 1973. Methods in Plant Physiology, (McGraw Hill Book Co., New York,).\
4. Cronin DA and Smith S (1979). A simple and rapid procedure for the analysis of reducing total and individual sugars in potatoes. Potato Res. 22: 99-105
5. Niranjan GS and Katiyar SK (1979).Chemical analysis of some wild leguminous seeds. J Indchem Soc. 56(7): 722-725
6. Utsumi S and Makoto K (1987). Seed proteins: Present situation and review of research and application. KagakutoSeibustu. 25(1): 62-67 8
7. Lowry O H, Rose HN, Broug J, Farr AL and Randall RJ (1951). Protein measurement with the Folin-phenol reagent. J BiolChem. 193: 265-275.
8. Osborne DJ (1962).Effect of kinetin on protein and nucleic acid metabolism in Xanthium leaves during senescence. Plant Physiol. 37: 595-602
9. Walker JRL (1975). Biology of Plant Phenolics. InstBiol Stud Biol. 54: 1-57
10. Bravo L (1998) Polyphenols: chemistry, dietary sources, metabolism, and nutritional significance. Nutr Rev. 56:

317-333

11. Loomis WE and Shull CA 1973. Methods in Plant Physiology, (McGraw Hill Book Co., New York,).
12. Dubois M, Gills KA, Hamilton JK, Rebers PA and Smith F (1951). Colorimetric method for determination of sugars and related substances. Anal Chem. 28: 350-356
13. Jayaraman J. 1980. Laboratory Manual in Biochemistry, (Wiley Eastern Limited, New Delhi, 1981) pp. 96-97.
14. Bray HG and Thorpe WV (1954).Analysis of phenolic compounds of interest in metabolism. Meth Biochem Anal. 1: 27-52
15. Niranjan GS and Katiyar SK (1979).Chemical analysis of some wild leguminous seeds. J Indchem Soc. 56(7): 722-725
16. Duke JA and Ayensu ES (1985). Medicinal Plants of China Reference Publications, Inc. ISBN 0-917256-20-4. Details of over 1,200 medicinal plants of China and brief details of their uses
17. Oudhia P. Charota or Chakod. (2002). New Crop Resource Online Program, Center for New Crops and Plant Procucts, Purdue University. USA
18. Pinto AC de Q., MCR Cordeiro, SRM de Andrade, FR Ferreira, HA de C. Filgueiras, RE Alves and DI Kinpara (2005) Annona species, International Centre forUnderutilised Crops, Universtyof Southampton, Southampton, UK
19. Rashid MM (1976). Bangladesh Shabjee 1st ed. Bangla Academy, Dhaka, Bangladesh. P. 494
20. Lissil N. (1980). Purification and partial characterization of tolactones from *Momordicacharantia* L. Experimentia 36(5): 524-527
21. Butcher DN (1977). Secondary products in tissue cultures. In: J. Reinert and Y.P.S. Bajaj eds. Applied and fundamental aspects of plant cell, tissue and organ culture. Springer-verlag, Berlin; pp 668-693
22. Kirtikar KR, Basu BD. 1981 Indian Medicinal Plants, 1 Edn. Vol. III, (International Book Publishers, Dehradun, India. pp 676.

Table 1 : Total levels of various Primary Metabolites (mg/gdw) in *L. macrophylla*

Samples	Total Soluble Sugars	Starch	Proteins	Lipids	Phenols
Stem	46.24(±0.18)	23.89(±1.26)	332(±0.78)	31.27(±0.18)	11.84(±0.44)
Leaves	52.33(±0.44)	28.55(±0.81)	406(±1.69)	83.33(±0.56)	9.13(±0.88)

Table 2 Total levels of various Primary Metabolites (mg/gdw) in *G. marantia*

Samples	Total Soluble Sugars	Starch	Proteins	Lipids	Phenols
Stem	44.26.(±0.17)	19.76(±0.84)	256.78(±0.57)	31.34(±0.18)	8.56(±0.54)
Leaves	32(±0.33)	17.58(±0.67)	291(±1.26)	84(±0.38)	10.76(±1.29)

****

छत्तीसगढ़ राज्य की लघु वनोपज बहेड़ा के उत्पादन एवं विपणन का आर्थिक अध्ययन

राकेश कुमार गिरि *

शोध सारांश – भौतिक पर्यावरण और उसमें रहने वाले सभी जीव मिलकर पारितंत्र बनाते हैं। ये जीव एक दूसरे को तथा अपने भौतिक पर्यावरण को प्रभावित करने के साथ-साथ उससे प्रभावित भी होते हैं। पारितंत्र तालाब जैसा छोटा या वन जैसा विशाल भी हो सकता है। वनों का भी एक पारितंत्र होता है। इसमें रहने वाले सभी प्राणी और पौधे एक-दूसरे पर आश्रित होते हैं तथा आपस में घनिष्ट रूप से जुड़े होते हैं। एक के बिना दूसरे के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

शब्द कुँजी– पारितंत्र, भौतिक पर्यावरण, वनों के संरक्षण, अराष्ट्रीयकृत वनोपज, अकाष्ठीय वनोपज।

प्रस्तावना – हमारी सभ्यता और संस्कृति का वन वृक्षों से अत्यंत घनिष्ट सम्बंध है। वन हमारी सभ्यता और संस्कृति के जन्मदाता और हमारी आध्यात्मिक और भौतिक समृद्धि के उन्नायक है; कहा जाता है कि वृक्ष ही जल है, जल ही अन्न है और अन्न ही जीवन है। देश की आर्थिक समृद्धि के लिए भी वनों के संरक्षण की तीव्र आवश्यकता है। अतिवृष्टि, अकाल, बाढ़, रेगिस्तान आदि विषम समस्याओं पर काबू पाने के लिए वनों के संरक्षण के हर संभव प्रयास करने होंगें। पर्यटन की दृष्टि से भी वनों का विकास एवं संरक्षण होने चाहिए क्योंकि इससे विदेशी मुद्राएं प्राप्त होती है। लघु वनोपज का उपयोग अनेक उद्योगों में कच्चे माल के रूप में किया जाता है इनसे अनेक लघु तथा कुटीर उद्योग चलाये जाते हैं वनों से पशुओं के लिए चारा भी मिलता है जिससे वन्य पशु-पक्षियों का पालन-पोषण होता है। यहां कुछ ऐसी वनस्पतियॉ तथा जड़ी-बूटियां वृक्षारोपण के साथ-साथ वृक्षों की रक्षा तथा उनकी उचित देखभाल के लिए चेतना उत्पन्न करने पर ही देश की खुशहाली एवं सुंदरता निर्भर है। छत्तीसगढ़ राज्य के वन क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की अकाष्ठीय वनोपज बहुतायत में उपलब्ध हैं। राष्ट्रीयकृत वनोपज के सम्बन्ध में लघु वनोपज संघ के पास विस्तृत जानकारी उपलब्ध है, परन्तु अराष्ट्रीयकृत वनोपज पर कोई रायल्टी न होने के कारण संग्रहण अपनी इच्छानुसार किसी को भी विक्रय का संग्रहण कर स्थानीय ग्रामीणों द्वारा वर्ष के विभिन्न समय में इन वनोपजों का संग्रहण कर स्थानीय हाट बाजारों में छोटे व्यापारियों को विक्रय किया जाता हैं। ये छोटे व्यापारी राज्य की मुख्य लघु वनोपज बाजारों के व्यापारियों को माँग के अनुरूप वनोपज उपलब्ध कराकर अपना कमीशन या मूल्य प्राप्त करते है। बड़े व्यापारियों द्वारा उपरोक्तानुसार संग्रहित वनोपज को आवश्यकतानुसार ग्रेडिंग करते हुए देश की विभिन्न मंडियों में या लघु वनोपज पर आधारित उद्योगों को विक्रय किया जाता है। प्रत्येक वर्ष राज्य में संग्रहित किए जाने वाले लघु वनोपज की अधिकांश मात्रा इस प्रकार अन्य राज्यों की मंडियों या उद्योगों हेतु भेजी जाती है क्योंकि राज्य के अंतर्गत लघु वनोपज आधारित उद्योगों का विकास अपर्याप्त है। अकाष्ठीय वनोपज संग्राहकों को उचित मूल्य दिलाने हेतु छत्तीसगढ़ शासन द्वारा छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज संघ की स्थापना की गई है। छत्तीसगढ़ लघु वनोपज संघ द्वारा राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज जैसे- तेन्दूपत्ता, साल बीज, हर्रा, गोंद वर्ग 1 एवं 2 को प्राथमिक वनोपज समितियों के माध्यम से संग्रहण कर निविदा/नीलाम के द्वारा विक्रय किया जाता है। इसके अतिरिक्त लघु वनोपज अराष्ट्रीयकृत होने के कारण, ग्रामीण बिना रायल्टी के संग्रहण कर स्थानीय बाजार में विक्रय करने हेतु स्वंतत्र है।

बहेड़ा के मुख्य उत्पादन क्षेत्र – बहेड़ा के फल एवं गुठली का वार्षिक उत्पादन 29,700 क्विंटल है। राज्य में इसका वार्षिक व्यापार रू. 2.50 प्रति किलो के दर से रू. 74.25 लाख का होता है। बहेड़ा के मुख्य उत्पादन क्षेत्र वनमंडल एवं उनके स्थानीय बाजारों का उल्लेख तालिका क्र.1 में किया गया है, जिससे ज्ञात होता है कि बहेड़ा का मुख्यत: कांकेर, पूर्व सरगुजा, दुर्ग, महासमुंद एवं राजनांदगांव वनमंडलों में अधिक मात्रा में उत्पादन होता है, साथ ही अन्य वन मंडलो में भी इसकी पैदावार होती है। अत: संग्रहण हेतु वनमंडलों का चिन्हांकन कर भविष्य रणनीति तय की जा सकती है।

तालिका 1 बहेड़ा के मुख्य उत्पादन क्षेत्र

क्र.	उत्पादन हेतु उपयुक्त जिला यूनियन	स्थानीय बाजार	वार्षिक उत्पादन मात्रा (क्विं में)
1	जगदलपुर	माचकोट, जगदलपुर	1000
2	कांकेर	संबलपुर, चारामा, कोरर	2600
3	पूर्व भानुप्रतापपुर	अंतागढ, आमाबेंडा	500
4	उत्तर कोण्डागांव	फरसगांव	1500
5	दक्षिण कोण्डागांव	कोण्डागांव, हीरापुर	1000
6	नारायणपुर	बेनूर, छोटेडोंगर	500
7	धमतरी	बोरई, बेलगांव, सांकरा, दुगली, धमतरी	1000
8	रायपुर	बेलारी, सलिहा, धनसीर	1000
9	पूर्व रायपुर	गरियाबंद, धवलपुर, छुरा, पाण्डुका	500
10	उदंती	मैनपुर, तौरंगा	500
11	महासमुंद	बसना, पिथौरा	2000
12	दुर्ग	बालोद, डोंडी, गुरूर	2500

* शोधार्थी एवं अतिथि व्याख्याता (अर्थशास्त्र) किरोड़ीमल शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायगढ़ (छ.ग.) भारत

13	राजनांदगांव	राजनांदगांव	1000
14	खैरागढ़	साल्हेवार, मोहगांव	500
15	बिलासपुर	डिण्डौरी, लोरमी, तखतपुर	1500
16	कोरबा	कोरबा	500
17	धरमजयगढ़	तैलुंगा, धरमजयगढ़	700
18	दक्षिण सरगुजा	उदयपुर, सूरजपुर, अम्बिकापुर	3000
19	उत्तर सरगुजा	रघुनाथपुर, प्रतापपुर, वाड्रफनगर	1000
20	पूर्व सरगुजा	धोरपुर, कुसुमी	6000
21	कोरिया	सोनहत, बैकुण्ठपुर	400
22	मनेन्द्रगढ़	बिहारपुर, केल्हारी	500
	योग		29,700

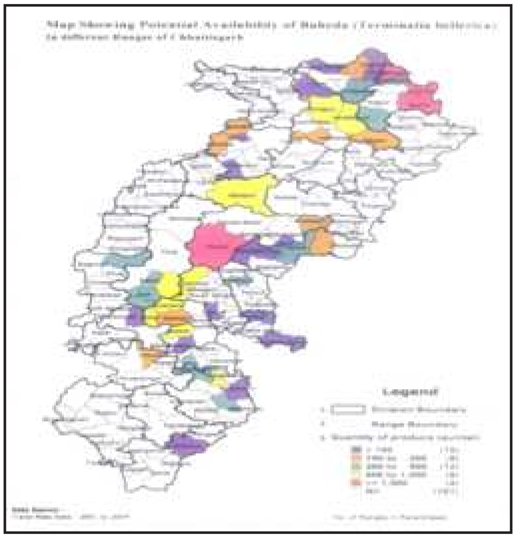

बहेड़ा के राज्य एवं देश में मुख्य बाजार – बहेड़ा का उत्पादन राज्य में अधिक होने के साथ ही साथ इसके औषधीय गुणों के कारण इसकी खपत औषधि निर्माण इकाईयों में ज्यादा है। राज्य में धमतरी एवं अन्य स्थानीय बाजारों में इसकी विपणन व्यवस्था अच्छी है। साथ ही देश के अन्य राज्यों में से उत्तर प्रदेश एवं दिल्ली मे इसकी मांग ज्यादा होने के कारण इन राज्यों में बहेड़ के व्यापारियों का चिन्हांकन कर या औषधि निर्माण इकाईयों से मांग एवं दर पर समझौता कर अच्छे मूल्य प्राप्त किए जा सकते है। उक्त राज्यों के एवं अन्य राज्यों के बाजारों का उल्लेख नीचे दर्शाये तालिका क्रं. 2 में किया जा रहा हैं।

तालिका 2 (निचे देखे)

निष्कर्ष एवं सुझाव– प्रस्तुत अध्ययन के दौरान शोधार्थी ने पाया कि अराष्ट्रीयकृत गैर औषधीय लघु वनोपज के उत्पादन में जो कि परिवहन की जानकारी अनुज्ञा पत्र एवं बाजार सर्वे के अध्ययन पर आधारित है। कुछ प्रजातियों की उपलब्धता अधिक एवं शेष की उपलब्धता कम है। अध्ययन से स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ राज्य की महत्वपूर्ण गैर औषधीय लघु वनोपज का वार्षिक अनुमानित उत्पादन पांच लाख पचास हजार क्विंटल से अधिक होता है। छत्तीसगढ़ राज्य की महत्वपूर्ण गैर औषधीय लघु वनोपज से वार्षिक अनुमानित मूल्य छै: हजार चौर सौ लाख रूपये से अधिक विपणन होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. खन्ना लक्ष्मण सिंह, वन विज्ञान
2. खन्ना लक्ष्मण सिंह, वन उघोग
3. डी.एन., वन आदिवासी एवं पर्यावरण
4. सिन्हा वी.सी.,श्रम अर्थव्यवस्था
5. डॉ. जथार एवं बैरी, श्रम अर्थशास्त्र

तालिका 2 : बहेड़ा के राज्य एवं देश में विक्रय बाजार

छत्तीसगढ़ राज्य के	अन्य राज्य	वार्षिक विक्रित मात्रा (क्विं. में)	मुख्य बाजार	वार्षिक विक्रित मात्रा (क्विं. में)
मुख्य बाजार धमतरी, रायपुर, बिलासपुर, राजनांदगांव, अंबिकापुर	दिल्ली	3335	दिल्ली	3335
	उत्तर प्रदेश	3560	कानपुर	1074
			लखनऊ	467
			बनारस	425
	बिहार	1300	पटना	500
			हाजीगंज	200
	तमिलनाडू	1225	सेलम	430
			चेन्नई	500
योग		9420		6931

****

उज्जैन जिले में उद्यमिता विकास की विभिन्न योजनाओं के माध्यम से उद्यमियों के मध्य रोजगार की उभरती संभावनाएँ एक अध्ययन

जुनेद नागौरी*

प्रस्तावना - आधुनिक युग को औद्योगिक युग की संज्ञा दी जाए तो इस बात में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। बिना औद्योगीकरण के आज कोई भी देश आर्थिक विकास की कल्पना नहीं कर सकता है। आज संपूर्ण विश्व में जनसंख्या मे निरंतर वृद्धि हो रही है। बढ़ती जनसंख्या के कारण आज संपूर्ण विश्व में बेरोजगारी विकराल रूप धारण करती जा रही है। यह समस्या आज के समय में दिनो-दिन बढ़ती ही जा रही है। इस गंभीर समस्या का का हल सिर्फ एक ही है उद्यमिता विकास की अवधारणा को स्वीकार करना। देश में उद्यमिता विकास की अवधारणा को स्वीकार करके ही आज के समय की प्रमुख समस्या बेरोजगारी को दूर किया जा सकता है।

उद्यमिता की अवधारणा - उद्यमिता से आशय व्यक्ति की ऐसी प्रवृत्ति या योग्यता से है। जिसके माध्यम से वह व्यवसाय में आने वाले अनेक जोखिमों का सामना करता है। वह जोखिमों से घबराता नहीं बल्कि उनका जमकर मुकाबला करके अपने व्यवसाय को लाभों की और ले जाता है। वह भूमि, पूँजी, श्रम, संगठन, साहस का प्रबंध करके अपने व्ययवसाय का कुशलतापूर्वक संचालन करता है। इस यह भी कहा जा सकता है कि उद्यमिता एक नवप्रर्वतनकारी क्रिया है।

उद्यमिता की परिभाषा - जोसेफ शुम्पीटर के अनुसार, 'उद्यमिता एक नवप्रर्वतनकारी कार्य है। यह स्वामित्व की अपेक्षा एक नेतृत्व का कार्य है।' पीटर एफ. ड्रकर के अनुसार, 'व्यवसाय में अवसरों को अधिकाधिक करना अर्थपूर्ण है, वास्तव में उद्यमिता की यही सही परिभाषा है।'

शोध के उद्देश्य - हमारे देश में बेरोजगारी की समस्या ज्वलंत रूप धारण करती जा रही है। वर्तमान में बेरोजगारी अभिशाप का रूप धारण करती जा रही है। योग्यता होने के बावजूद भी आज हमारे देश में व्यक्ति रोजगार की तलाश में भटक रहे है। सरकार के द्धारा बेरोजगारी को दूर करने के अनेकों प्रयास किये जा रहे है। शासन के माध्यम से हमारे देश के युवाओं को स्वरोजार उपलब्ध कराने हेतु उद्यमिता विकास की अनेको योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है। प्रस्तुत शोध के माध्यम से उज्जैन जिले में उद्यमिता विकास की योजनाओं का अध्ययन करके युवाओं में उद्यमिता की भावनाओं का आँकलन करके उद्यमियों में रोजागर की संभावनाओं का पता लगाना है। जिसके निम्नलिखित उद्देश्य है जो कि इस प्रकार है :-

1. जिले में रोजगार के क्षेत्र में उद्यमियों हेतु संचालित विभिन्न योजनाओं की संभावनाओं का आँकलन करना।
2. बेरोजगारी की समस्या को दूर करने में उद्यमिता विकास की योजनाओं का आँकलन करना।
3. जिले में उद्यमियों के लिए स्वरोजगार के अवसरों का पता लगाना।

शोध प्रविधि :- प्रस्तुत शोध को द्धितीयक समंको की सहायता से इसके साथ ही समाचार पत्र में प्रकाशित आँकडे, व्यक्तिगत परीक्षण व व्यक्तिगत अनुभव की सहायता से विश्लेषण करते हुए पूर्ण किया गया है।

उज्जैन जिले में उद्यमिता विकास की विभिन्न योजनाओं की सहायता से उद्यमियों के लिए उत्पन्न रोजगार के अवसर - वर्तमान में उज्जैन जिले में निवास करने वाले उद्यमियो में स्वरोजगार की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है। शासन द्धारा संचालित उद्यमिता विकास की विभिन्न योजनाओं के सहायता से जिले में रोजगार सृजन तीव्र गति से बढ़ रहा है।

जिले में शासकीय योजनाओं के माध्यम उद्यमिता विकास का आँकलन तालिका 1 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक - 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका क्रमांक 1 में उज्जैन जिले में प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम की स्थिति पर प्रकाश डाला गया है। प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के अन्तर्गत जिला व्यापार उद्योग केन्द्र, उज्जैन को वर्ष 2010-11 से वर्ष 2016-17 तक की अवधि के दौरान जिले के 509 हितग्राहियों को रोजगार सृजन कार्यक्रम की सहायता से लाभान्वित करने के लक्ष्य प्राप्त हुए।

तालिका 1 में योजना के माध्यम से स्वीकृत ऋण की स्थिति को भी दर्शाया गया है। वर्ष 2010-11 से वर्ष 2016-17 तक कुल 432 हितग्राहियों को उपरोक्त योजना के माध्यम से ऋण की स्वीकृति प्राप्त हुई है। जो निर्धारित लक्ष्य का 84.87 प्रतिशत है। तालिका में ऋण वितरण की दशा को भी समझाने का प्रयास किया गया है। वर्ष 2010-11 से वर्ष 2016-17 तक कुल 350 हितग्राहियों को ऋण का वितरण किया गया है। जो निर्धारित लक्ष्य 68.76 प्रतिशत रहा है। इसी प्रकार प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के अन्तर्गत वर्ष 2010-11 से वर्ष 2017-18 तक कुल 6.96.5 लाख रू. की राशि इस योजना पर व्यय की गई है।

तालिका क्रमांक - 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका क्रमांक 2 का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होता है कि वर्ष 2014-2015 में से वर्ष 2018-2019 तक कुल 2835 हितग्राहियों को लाभान्वित करने के लक्ष्य प्राप्त हुए। जिसके अर्न्तगत वर्ष 2014-15 में 545, वर्ष 2015-16 में 650, वर्ष 2016-17 में 740, वर्ष 2017-18 में 900 हितग्राहियों को लाभान्वित करने के लक्ष्य प्राप्त हुए। इस प्रकार उपरोक्त तालिका के दर्शाए गये विगत पाँच वर्षो में कुल 3031 हिग्राहियों को प्रधानमंत्री स्वरोजागार योजना के अर्न्तगत ऋण की स्वीकृति प्रदान की गई। जिसके अनुसार वर्ष 2014-15 में 619, वर्ष 2015-16 में 726, वर्ष 2016-2017 में 759, वर्ष 2017-18 में 927 हितग्राहियों को इस योजना की सहायता से वर्षवार ऋण की स्वीकृति प्रदान गई। इस प्रकार

* सहायक अध्यापक, श्री गुरू सांदीपनी इन्सट्ीट्यूट ऑफ मैनेजमेन्ट ,उज्जैन (म.प्र.) भारत

निर्धारित लक्ष्य की तुलना में ऋण स्वीकृति की सफलता का प्रतिशत वर्ष 2014-15 में 113.57 प्रतिशत, वर्ष 2015-16 में 111.69 प्रतिशत, वर्ष 2016-17 में 102.56 प्रतिशत, वर्ष 2017-18 में 103 प्रतिशत रहा है। इस प्रकार सारणी का अध्ययन करने पर यह पाया गया कि कुल निर्धारित लक्ष्य से हितग्राहियों को प्रदान किये जाने वाले ऋण की तुलना करने की हितग्राहियों को ऋण की सुविधा की सफलता विगत पाँच वर्षो में 106.91 प्रतिशत रही है। इस प्रकार पिछले पाँच वर्षो में कुल 2879 हितग्राहियों को ऋण का वितरण किया गया। जिनकी जिनकी वर्षवार स्थिति एवं सफलता का प्रतिशत को निम्न प्रकार दर्शाया गया है। वर्ष 2014-15 में 548 (100.55 प्रतिशत), वर्ष 2015-16 में 686 (105.53 प्रतिशत), वर्ष 2016-17 में 740 (100 प्रतिशत), वर्ष 2017-18 में 905 (100.55 प्रतिशत) रही है।

जिले में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना की स्थिति - वर्ष 2001-02 से स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का क्रियान्वयन किया जा रहा है। इस योजना का लाभ जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापपन करने वाले व्यक्तियों का मिल रहा है। वर्ष 2012-13 में इस योजना के अन्तर्गत 1655 हितग्राहियों को लाभान्वित किया गया जिसके अन्तर्गत अनुसूचित जाति के 796 एवं अनूसूचित जनजाति के 19 हितग्राही शामिल है, इनमें महिला हितग्राहियो की संख्या 858 है। इस योजना के अन्तर्गत हितग्राहियों को 719.11 लाख रूपये का ऋण उपलब्ध करवाया गया। वर्ष 2013-14 से स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना बंद हो गई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उद्यमिता प्रकाशन एस.बी.पी.डी पेज न. 1 एवं 42
2. जिला व्यापार उद्योग केन्द्र से प्राप्त आँकडे

तालिका क्रमांक - 1 : उज्जैन जिले में प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम की स्थिति (वर्ष 2010-11 से 2017-18 तक)

क्र.	वर्ष	लक्ष्य	उपलब्धियाँ					
			स्वीकृत	प्रतिशत संख्या	वितरण	प्रतिशत	व्यय की जाने वाली राशि (लाख रू. में)	व्यय राशि का प्रतिशत
1.	2010-11	50	निरंक	निरंक	निरंक	निरंक	निरंक	निरंक
2.	2011-12	50	66	132	39	78	42.17	5.12
3.	2012-13	48	82	170.83	58	120.83	98.78	12.00
4.	2013-14	74	91	122.97	84	113.51	151.00	18.34
5.	2014-15	74	71	95.946	38	5.13	102.65	12.47
6.	2015-16	53	59	111.32	52	98.11	88.80	10.78
7.	2016-17	94	31	32.97	30	31.91	142.30	17.29
8.	2017-18	66	32	48.48	24	36.36	70.80	8.72
	योग	509	432	84.87	350	68.76	696.5	100

(स्त्रोत :- जिला व्यापार उद्योग केन्द्र, उज्जैन)

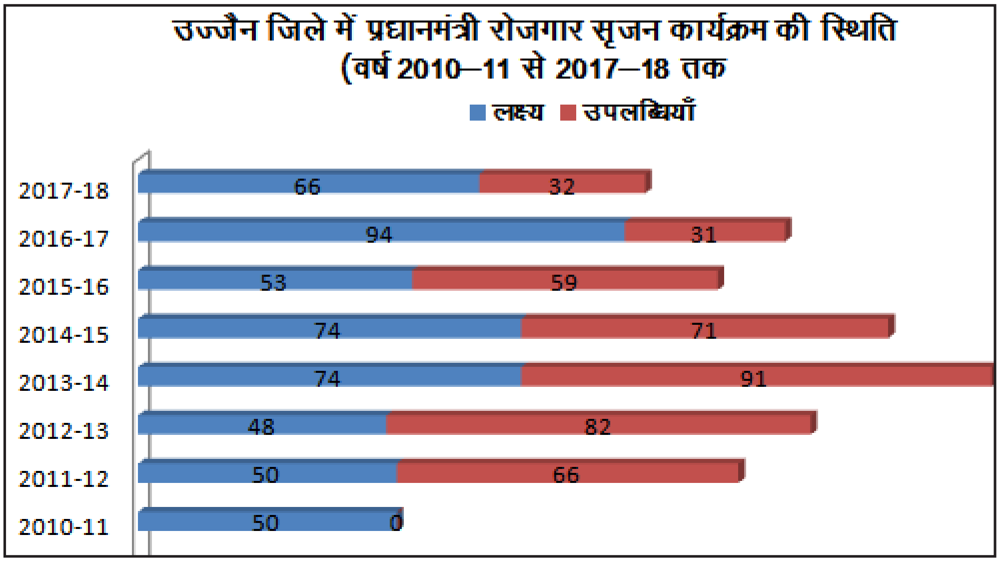

क्रमांक – 2 : उज्जैन जिले में मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत केन्द्र को प्राप्त लक्ष्य एवं उपलब्धियों की स्थिति (वर्ष 2014–15 से 2017–18 तक) योजना का प्रारंभ : 01 अगस्त, 2014

क्र.	वर्ष	लक्ष्य	उपलब्धियाँ			
			स्वीकृत	प्रतिशत	वितरण	प्रतिशत
1.	2014–15	545	619	113.57	548	100.55
2.	2015–16	650	726	111.69	686	105.53
3.	2016–17	740	759	102.56	740	100
4.	2017–18	900	927	103	905	100.55
	कुल	2835	3031	106.91	2879	101.55

(स्त्रोत :– जिला व्यापार उद्योग केन्द्र,उज्जैन)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Women Participation in Mass Movement in India at the time of Pre and Post-Independence

J. Ben Anton Rose* Prof. Ram Shankar**

Introduction - *"When the history of India's fight for independence comes to be written, the sacrifice made by the women of India will occupy the foremost place",*

-Mahatma Gandhi.

Feminism - The concept of feminism is a product of western society. Feminism simply means advocacy of women's rights on the grounds of political, social and economic equality to men. Feminism is the social theory or political movement supporting the equality of both the sexes in all aspects of public and private life. In the context of the rise of modern western feminist movements of the early nineteenth and twentieth century and the status of women in the Indian societies, the participation of women in the Indian freedom struggle generally and more particularly the women's participation in the Quit India Movement can be analyzed. Women's participation in the Indian freedom struggle added to the legitimacy of the Indian freedom struggle. Their active participation not only changed their goals but also organized the activities. The political participation of women was equally approved and appreciated by men who otherwise want them to be perfect wives at home. A sense of responsibility and dedication towards one's own country led them to organize and fight for achieving the ends.

The years after independence proved to be the site of a severe setback for feminists. Despite the acceptance of the principle of equality between men and women, its implications were not fully worked out. Women continued to be the victims of several forms of discrimination in and out of the home in independent India. Disillusionment was setting in but gradually. In the nineteen seventies constitutional guarantee of equality was denounced as sham and the movement which started in the seventies and eighties was a very different one, growing out of a number of radical movements of the time. A large number of women's organizations were born and old ones revitalized by the nineteen eighties. A special category of women's activism was born characterized by new dimensions. It is in this context that the present paper makes an attempt to understand these various aspects of the women's movement and to track the changes witnessed by it in the post independent era. New debates and issues are emerging with the evolution in the women's movement which needs to be tackled by it besides the old ones there.

Women entered the political arena through all of these channels. Besides mobilizing them, the need was also felt to interconnect analysis of women's oppression into their political involvements[1]. The resumption of the women's movement saw the involvement of women in various campaigns and agitations. The state was confronted with many questions that the women's movements were raising regarding land rights; the gender-blinded nature of development; laws pertaining to dowry, divorce, etc. From the early seventies onwards, a host of new ideas and movements developed on the radical left and also within the socialist movement. Women played the most militant role in the movement and with the development of a 'women's consciousness', gender-based issues like the problem of wife beating began to be raised by them.

Women Participation and Mass Movements in India - Women's participation, performance and portrayal[2] in media are the three important dimensions of study for the social science researchers of modern time, especially for the feminists. Because for the empowerment and development of the women section, it is very important to give them proper environment where they can raise their voices against the inequalities and the gender-gap they are experiencing in our male dominated or patriarchal societies. Improving the status of women, in every aspect, is regarded as the only way to eradicate this gender gap and achieving a better quality of life for the women.

Political participation is a process by which people take part in political activities. Exercising voting rights during elections is one of the important political activities of the people. Participation of women in this political activity is almost equal to men. Political participation is not just casting vote. It includes wide range of other activities- like membership of political party, electoral campaigning, attending party meetings, demonstrations, communication with leaders, holding party positions, contesting elections, membership in representative bodies, influencing decision making and other related activities.

*Research Scholar (Political Science) Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Research Guide (Political Science) Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA

Political participation is broadly defined as being a process through which individual plays a role in political life of his society, has the opportunity to take part in deciding what the common goals of that society are and the best way of achieving these goals. Political participation refers to actual participation in these voluntary activities by which members of the society share in the selection of rules and directly or indirectly in the formulation of public policy. With this understanding of political participation, the evidence shows that in most of the countries participation of women is not impressive as the number of women participating in active politics is smaller compared to men. Women who are able to acquire decision making power are mostly from urban and elite groups. Large mass of women is kept out of political arena due to various reasons. There was no serious attempt to accommodate women in politics. In many countries' women had to wage long battles to get their rights. Despite that, they were not able to get rightful position in the arena of politics.

In India, there has been little analysis of the relationship between progressive movements and political parties. This needs to be addressed, to the better understand the dynamics and possibilities of the relationships. History clearly demonstrates the leading role that movements play in shifting the public agenda and opening up the space for far reaching social and environmental reforms. These advances, can be more far-reaching when progressive MPs and political parties work in union to develop campaigns and effect change. Women's political engagement at the state level has devoted a great deal of attentions in which states have undermined gender inequality. Women's interest are not adequately addressed by most of the political parties because of male patriarchial structure in Indian society. But women have played important and prominent roles in state, national and grass-roots levels in social movements but much less attention to political parties are given. There are the stances of representation and participation of women's are ignored. Those women who have played leading roles in political parties have solemnly addressed women's interests and questions of gender inequality.

Democracy and Women's Participation - Democracy is considered to be a part of both the solution and problem. Civil society gives rise not only to feminist and human rights movements, but also to chauvinist ethnic and religious nationalist movements, which have strong ties with parties. Therefore, democratisation may paradoxically be linked with the growth of anti-democratic movements. Regarding women, the ethnic and religious parties have some unique features. In general, women have given less access to institutional power within the party. They may involve in activities such as armed combat that break with their traditional gender roles. In nationalist terms, their goals often undermine women's rights.

The most important gains women achieved were in the courts and bureaucracy, not in the electoral arena. The government appointed women to some key posts, and created bodies to investigate women's conditions and make recommendations. The National Commission on the Status of women was the most significant among them. Cases that were lodged in the court often remained there for a long time, legal battles diverted women's interest and identities. They could seek redress while placing pressure on the courts and segments of the bureaucracy to address the conditions of marginal groups[3].

Both grass roots movements and the feminist movement put less effort into electoral parties and has less impact on it. Unlike a range of other social movements, the women's movement played a relatively small role in two social elections that removed the Congress Party from power (in 1977 and 1986). For total democracy in 1977, the Gandhian Socialist leader Jayaprakash Narayan organised the movement for total democracy which brought the downfall of Congress and election of the Janata Party. V. P. Singh resigned from Congress a decade later and formed the Jan Morcha (Peoples' Front) a non-political movement that brought new groups into politics and helped bring the National Front to power in 1989. During this time women's movement began to interact more closely with political parties and the state.

A description on the social movements in India will never be complete if the genre of women's movements is not mentioned. In fact, the women's movement was initiated in India as a part of the social reform movement in the nineteenth century, thanks to the efforts of social reformers like Raja Rammohan Roy, Ishwarchandra Vidyasagar etc. Around the turn of the century, however, women in India were gradually mobilised for participation in public life generally around the issues which concerned them. Slowly the women associated with the Congress Party started demanding political rights including equal franchise, representation in the legislature etc. Women's organizations like the Women's Indian Association, All India Women's Conference (AIWC), which started working from the 1920s mostly in the field of spreading education and raising awareness among women, continued well in the post-Independence period as well, with branches proliferating all over India.

The supporters of the Anti-corruption Movement have been analyzed in ternris of gender in her research work, A gendered reading of the Anna Hazare phenomenon, The researcher draws a comparison between the involvement of women in the freedom struggle of India and that in the present Anti-Corruption Movement led by Hazare. Apart from highlighting on the various social stigmas still attached with them, according to the article, women are bereft of their needs even after their huge support for the nation's independence. The involvement of women participation in political movement like the fight against corruption has been questioned as to whether leads to any fruitful outcome for the female section of the society. Though the masses of women who heeded Gandhi in freedom struggle failed to

achieve political and social equality alongside men in society, the researcher concludes with the view that the increased participation of women in the Hazare led movement will at least help to channel the demands of the women in greater platform so that their needs are equally identified and responded[4].

Corruption in India the writer considers the uprising of Anna and his fight against corruption is justifiable and in fact a sign that common masses are ready to face such unfair acts through popular protests. The article mainly revolves round the incorporation of politicians, having criminal records as Members of Parliament, and the loss of faith of citizens in the political system. Hazare's fight is seen in the light of positive development but at the same time raises a question on the time frame required to pass such a law since such happenings are not unfamiliar along the political course of the nation after independence. The question of political criminals is described at length with a brief analysis of various parties and the number of politicians having criminal records. But everything done under the light of corruption and which in turn is linked with the popular movement by Anna. Though the enactment of Lokpal is essential for restoring faith of people in politics, the writer clearly states that it is not the final aspect for checking corruption of all types but at least would provide an opportunity to curb the level of corruption and establish a vibrant economy[5].

Review of literature during the course of study summarizes, interprets, periodicals and analytically evaluates existing literature in order to establish current knowledge of various issues related to the area of study. The purpose for doing so is to assist the ongoing research in developing theoretical and empirical study. The literature of review may resolve a dispute, establish the need for additional research, or define a topic of inquiry.

Objectives of the Study- The objective of this paper is to analyses the women participation in Mass Movements in India at the period of Pre and Post-Independence. However, in order to make the research more meaningful, following specific objectives are laid down.

1. To study the condition Conditions in India those were responsible for the Mass Movements.
2. To study the women participation in the Mass Movements in India.
3. To provide suggestions.

Research Method - In the present study an attempt has been made to analyses the Women participation in Mass Movements in India at the period of Pre and Post-Independence. The study has been based on secondary information. The information relating to the comparative study of Indian Democratic Conditions, Characteristics of the women participation in Mass Movements, their impact on Mass Movements in India has been compiled from various Reference Books, Research Articles, Economics & Political Weekly, Magazines, Journals dealing Political issues, periodical, Newspapers and google.com etc.

Women Participation in Mass Movement Pre-Independence Period -In India, such behavior of men is routed deeply in society. India is a male dominated country and where women are always ill-treated by society. Since childhood women are taught to become subordinated to male member. Women are not taught to know about their rights and equality. Practically, women are now exercising greater influence in many professions, politics, administrative departments and many other fields. We can see lot of development also in the field of awareness amongst women of their rights however, still the day is far when they will enjoy the basic right of freedom and fundamental rights guaranteed by the constitution. Women who forms half of the population but they are at the bottom of all decision making in terms of social, politics even at their home as well. The existence of women in positively taking part in the various field is very low. Women 's participation and role is more notable in todays society because of changing values, increase in literacy rate, participation in politics, management and economy. From 19th century, these changes were seen in the status of women in modern India.

The swadeshi movement, some portion of the Indian independence movement and the creating Indian nationalism, was a financial technique went for expelling the British Empire from power and enhancing monetary conditions in India by following the standards of swadeshi (independence), which had some achievement. Techniques of the Swadeshi movement included boycotting British items and the restoration of residential items and generation forms. It was most grounded in Bengal and was additionally called "Vande Mataram Movement**"**. "The women of India ought to have as much offer in winning Swaraj as men. Presumably in this quiet struggle woman can surpass man by many a mile. We realize that a woman is any day better than man in her religious commitment. What's more, now that the governments have hauled the woman into the line of flame, I trust that the woman all over India will respond to the call and sort out themselves," Mahatma Gandhi bid in to the Indian women to enter the struggle for India's freedom.

Indian women relationship with the freedom struggle took another dimension with the development of mainstream governmental issues of the Gandhian congress mass movements. The women's participation before Gandhi was in a restricted manner for instance in Swadeshi Movement in Bengal (1905-11) and Home Rule Movement. They likewise went to sessions of Indian National Congress. In any case, the involvement of extremely huge number of women in freedom struggle started with Gandhi who gave extraordinary job to women. The nationalist articulations of women in the freedom struggle should be dissected from following points of view:

1. That women drew in with Nationalist countries regardless of requirements of social practices like the purdah framework, backwardness and low level of

female education.

2. That women took part in INM through two parallel procedures. a) The training of the public circle - women took an interest in the roads without trading off on their local qualities. b) The politicization of the residential circle - women took care of circumstances in their families when nationalism entered families through the exercises of their spouses and children.

3. That women utilized the representative collection of the INM and the political dialect of Gandhi to encourage their own participation." The participation of women in public area began amid Non-Cooperation Movement (NCM) in 1920, when Gandhi activated expansive number of women. Anyway the participation of women a long way from dynamic and they could take an interest just from inside the residential circle. Anyway the degree and power of this control or isolation inside the local circle fluctuated from family unit to family, network to network, class to class and district to area. In spite of the fact that the household circle and its chain demonstrated detrimental for women to partake in public space however this very isolation composed their exercises in the local circle. Without the male who might be imprisoned for his involvement in nationalist movement, woman turned into the passionate help. Women composed themselves as both imparters and beneficiaries of national data.

The role played by the women folk in the Quit India Movement of 1942[6] is a story of devotion, sacrifice and patriotism and it will go down in history as the most remarkable contribution towards the attainment of swaraj. The women actively participated in the Satyagraha Movement[7] and undertook different constructive works in a planned and effective way. The protests against the British oppression were demonstrated by women in thousands by taking out processions, holding meetings and demonstrations. The women volunteers spoke in the meetings held in different villages throughout the country to propagate Gandhi's motto of 'do or die' and spread the message of Quit India.

By 9th August 1942 the leading women leaders like Sarojini Naidu, Meera Ben and Sushila Nayar were confined along with Gandhi at the Aga Khan's palace Poona. The arrests of the national and local leaders caused tremendous uproar among the people. The masses were invigorated with a new spirit employed their full strength and energy for the cause of the freedom. The Quit India Movement being leaderless deflected in one and many ways from the Gandhian policy of non-violence. The Movement was characterized by extremists' activities like attacking the government buildings, damaged railway tracks and sabotaged military supply lines. The increasing government atrocities contributed to the increase of violent activities among the masses.

Women Participation in Mass Movement in Post-Independence Period - The Constitution of India adopted a parliamentary form of government. The government functions at different levels. At the apex level, there is the national government and governments at states and union territories. At the centre, the parliament consists of two houses i.e. the Upper House called the Rajya Sabha or the council of states and the Lower House called the Lok Sabha (House of People). At the state level, the upper house is called the Legislative Council and the Lower House is called the Legislative Assembly. Each state has its own local self governments known as Panchayati Raj Institutions both at urban and rural areas Rural Panchayati Raj Institution has three tier structures consisting of the Zilla Panchayat at the district level, Taluk Panchayat at the taluk level, and Gram Panchayat at the village level.

The Constitution of India, one of the greatest documents ever produced came into force in the year 1950 guarantee justice, liberty and equality to all citizens. The preamble of the Constitution of India resolved to secure to all its citizens justice, social, economic and political, liberty of thought, expression, belief, faith, and to worship, equality of status and opportunity and to promote among them fraternity assuring the dignity of individual and the unity of nation. To attain this, the Constitution guarantees fundamental rights. Specific articles and amendments have been enacted to ensure that women and children enjoy the Constitutional rights. The Constitution not only grants equality of treatment to women but also calls upon the state to adopt measures favoring women neutralizing the socio-economic, educational and political disadvantages that they face. The following are the various provisions in the constitution which ensures equality between men and women.

In post-Independent India in the 1970s, one of the most significant among the women's movements was the Shahada agitation and the subsequent formation of the labour union by the Bhil landless labourers; the trigger for the movement was the rape of two Bhil women by the landlords who were extremely repressive and exploitative in nature. In protest, the Bhil women led demonstrations with militant slogans and revolutionary songs, simultaneously persuading their male counterparts of the necessity to join the Union and developing solidarity against the landlords. Another landmark in the history of the women's movement in India was the Self-Employed Women's Association (SEWA) movement in Ahmedabad by Ela Bhatt, which started in 1972. "Women involved in various trades in the informal sector were brought together by their shared experiences such as low earnings, harassment at home, harassment by contractors and the police, poor work conditions, nonrecognition of their labour to list just a few. Apart from collective bargaining, the movement strove to improve working conditions through training." The Progressive Organisation of Women (POW) in Hyderabad (1974) embracing the concept of equality and economic independence of women, worked against gender oppressive structures in society like the division of labour

on sexual lines, indiscrimination in payment structure etc.

Conclusion - In India, the women's movement has confronted the challenge of accommodating caste inequality within reserved seats for women. Inspite of complexities revolves round the question of how reservations should be implemented, women's movements concur overall in their support. The stronger democratic institutions and practices are, the greater the opportunities this affords women to achieve representation through the party system. In India, has a long history of democracy, numerous and varied political parties, open and regular elections have ensured that political parties have sought the support of the female electorate. This has often resulted in expedient appeals to women's interests, and also increased women's awareness of their powers. Women's movements are coming to form alliances with political parties encircling round a variety of issues. But democracy[8] presents its own challenges. The very alliance between certain civil society groups and political parties that is a product of democracy has also led parties to co-opt the demands of autonomous women's groups. The success of the movement and the party were thus inversely correlated. Many prominent women played leading role in the freedom movement. This trend continued unabatedly in the Quit India days. Women once enjoyed considerable freedom and privileges in the spheres of family, religion and public life; but as centuries rolled on, the situation went on changing adversely. Whatever that may be the Indian women during the nationalist movement continued this tradition, burdens of tears and toils of the long years of struggle were borne by women sometimes as wives, sometimes as mothers and sometimes as daughters as cheerfully. The program of self-imposed poverty and periodical jail going was possible only because of the willing cooperation of the family women. In the resistance movements in the villages the illiterate women played passive but contributory part as comrade to their men folk. The Quit India Movement opened a new vista for Indian women. They got introduced with a new kind of liberalism and social status which was unknown to them before. Quit India Movement drew the largest number of women to the fore front. It was a struggle substantially waged by the womanhood. The positive achievement since independence is an important factor outweighing this debate and controversy. There is the need to celebrate diverse strengths of the Indian women's movement especially its ability to meet challenges from different quarters, that is, challenges from communalism, caste movements etc. From its present position, the Indian feminist movement has a strong enough base on which to build for the future.

References :-

1. **Gurmeet, Dharm Raj Panwar,** "An Analysis upon the Role of Women in Different Movements of Indian Independence", in Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education, Multidisciplinary Academic Research.
2. **Himashree Patowary**, "Portrayal of Women in Indian Mass Media: An Investigation", Journal of Education & Social Policy Vol. 1 No. 1; June 2014.
3. **Raashida Gull and Aneesa Shafi**, "Indian Women's Movement after Independence" International Research Journal of Social Sciences, ISSN 2319 –3565 Vol. 3(5), 46-54, May (2014).
4. **Balasubramaniann, B. (2011),** A gendered reading of the Anna Hazare phenomenon. E-International Relations. http://www.e-ir.info/2011/10/14/a-gendered-reading-of-the-annahazare-phenomenon/
5. **Sanchez, A. (2012)** "India: the next superpower? Corruption in India". London School of Economics and Political Science, London, UK. www.lse.ac.uk/IDEAS/publications/reports/pdf/SR010/sanchez.pdf
6. **Papari Mala Bhuyan,** "Women and the quit India Movement 1942", Journal of Business Management & Social Sciences Research (JBM&SSR) ISSN No: 2319-5614 Volume 5, No.3, March 2016.
7. **Gurmeet, Dharm Raj Panwar,**"An Analysis upon the Role of Women in Different Movements of Indian Independence", in Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education, Multidisciplinary Academic Research.
8. **Dr. Namrata Kothari,** "The role of Political Parties in New Social Movements with special reference to Women's in India", IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS) Volume 22, Issue 6, Ver.10 PP 07-13 e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845. June. 2017.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

चर्म निर्मित सामग्री के विपणन की चुनौतियां - स्थिति एवं संभावना (छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में)

डॉ.के.एल.टाण्डेकर* डॉ. आर.आर. कोचे**

प्रस्तावना – भारतीय चर्म उद्योग ने पिछले 60 वर्षो में जो ख्याति प्राप्त की है। उसका दूसरा उदाहरण भारतीय अर्थव्यवस्था में दिखाई नही देता। पहले भारत चर्म सामग्री के कच्चे माल की आपूर्तिकर्ता के रूप में जाना जाता था। वहीं आज अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में चर्म निर्मित सामग्री निर्यातक देशों में तीसरे स्थान पर है। विदेशी मुद्रा अर्जन में इस क्षेत्र की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। इस क्षेत्र में आज 14 लाख से अधिक लोगों को रोजगार मिला हुआ है। देश में आज चर्म निर्मित उद्योग की लगभग 5000 से अधिक छोटी-बड़ी इकाईया है जो इस क्षेत्र में लगी है।

उदारीकरण के युग में भारत के इस औद्योगिक क्षेत्र को विश्व स्तर पर एक अलग पहचान मिलती जा रही है क्योंकि विश्व में कुल उपलब्ध चर्म उत्पादन का 12% भाग उत्पादन में सम्पन्न होता है। भारत में उत्पादित चर्म सामग्री के विपणन की संभावनायें अमेरिका, वियतनाम, सोवियत रूस जैसे विकसित देशों में अधिक दिखाई दे रही है। आज कुल चर्म विपणन का 25% भाग अकेले जर्मनी को जाता है। किन्तु देश में इस उद्योग जो संतुलित विनाश होना चाहिए था, उसमें कही न कही कमी दिखाई दे रही है।

चर्म निर्मित सामग्री के सामने विपणन की सबसे बड़ी चुनौती इस क्षेत्र में स्थापित 65% भाग असंगठित क्षेत्र में विद्यमान होना है। इसके लिये पर्याप्त पूंजी कुशल तकनीकी सबसे बड़ी बाधा के रूप मे विद्यमान है। आवश्यकता इस बात की है कि इस क्षेत्र को आधुनिक व्यापार एवं विपणन व्यवस्था से कैसे जोड़ा जायें। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हमें जो उपलब्धि प्राप्त हुई है उसमें संगठित क्षेत्र से मात्र 35% उद्योगों की भूमिका रही है। असंगठित क्षेत्र में स्थापित 65% उद्योग जिनके पास कच्ची सामग्री की बहुलता है किन्तु उसके रखरखाव का अभाव स्थानीय आवश्यकता के अनुरूप ही वस्तु का निर्माण, इनके द्वारा उत्पादित वस्तु का विपणन स्थानीय बाजार में होना, उत्पादित वस्तु का उचित मूल्य न मिलना, बिचौलियों द्वारा ठगे जाना आदि चुनौतियाँ आज चर्म उद्योग उत्पादकों के समक्ष विद्यमान है।

जहाँ तक छत्तीसगढ़ जैसे नवगठित राज्य का सवाल है यहाँ कि अर्थव्यवस्था कृषि जैसे एक फसलीय अनुत्पादक ढ़ाचे पर निर्भर है जिसने पलायन को जन्म दिया है। छत्तीसगढ़ में चर्म उद्योग के विपणन की समुचित व्यवस्था कृषि व्यवस्था के पूरक व्यवसाय का स्थान ग्रहण कर बड़ी मात्रा में मानव संसाधन पलायन को रोकने में अहम भूमिका निभाई जा सकती है। यद्यपि छत्तीसगढ़ में भी शेष भारत की भाति चर्म सामग्री का उत्पादन असंगठित हाथों में ही है। सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि 20% सहकारी क्षेत्र को छोड़कर शेष 30% भाग आज भी असंगठित क्षेत्र में काम कर रहा है। इसका मूल कारण है छत्तीसगढ़ में चर्म निर्मित सामग्री के विपणन की व्यवस्था का विकास न होना, शासन द्वारा इस क्षेत्र को उपेक्षित रखा जाना आदि। परिणाम स्वरूप बड़ी मात्रा में कच्ची सामग्री महाराष्ट्र, बिहार, उत्तर प्रदेश, आंध्रप्रदेश, पश्चिम बंगाल आदि राज्यों में बिचौलियों के माध्यम से विक्रय कर दी जाती है।

छत्तीसगढ़ में चर्मकारों को इस कच्ची सामग्री के विपणन से बहुत कम आय प्राप्त होती है। इसका मुख्य कारण कच्ची चर्म सामग्री के रखरखाव की तकनीकी के ज्ञान का अभाव, भंडार गृहों का अभाव बड़े स्तर पर औद्योगिक इकाईयों की स्थापना का न होना, आर्थिक स्थिति का कमजोर होना अशिक्षा प्रमुख है। स्थानीय चर्मकार शोषण के शिकार हो रहें है, जबकि छत्तीसगढ़ स्थापित प्रमुख उद्योग सीमेंट,लोहा, इस्पात, रसायन, उर्जा, उत्खनन आदि क्षेत्रों में वृहत रूप से चर्म निर्मित सामग्री की मांग है। अकेले भिलाई स्पात संयंत्र प्रतिवर्ष 60-70 लाख रूपये कि बूट ग्लोबस एवं अन्य चर्म निर्मित सामग्री की मांग करता है। छत्तीसगढ़ क्षेत्र के कच्चे माल से निर्मित सामग्री पड़ोसी राज्यों द्वारा आपूर्ति की जाती है। परिणाम स्वरूप इस क्षेत्र को दोहरे नुकसान का सामना करना पड़ रहा है। एक ओर कच्ची सामग्री से कम मूल्य की प्राप्ति दूसरी ओर वही निर्मित सामग्री का महंगे दामों पर खरीदा जाना साथ ही संभावित रोजगार के अवसर की कमी होना है। यदि स्थानीय कच्ची सामग्री का उपयोग कर यहाँ के चर्म शिल्पियों को सहकारिता के आधार पर या शासन द्वारा इन्हे संगठित क्षेत्र में लाकर यहाँ की स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप चर्म सामग्री का विपणन किया जाये तो इसके निम्नलिखित फायदें होंगे -

1. स्थानीय मांग के अनुरूप सस्ती चर्म वस्तुओं की पूर्ति की जा सकेगी।
2. प्रदेश को विदेशी मुद्रा भी अर्जित हो सकेगी।
3. स्थानीय लोगों को रोजगार प्राप्त हो सकेगा।
4. कच्चे माल के विक्रय से होने वाले शोषण से मुक्ति मिल सकेगी।
5. स्थानीय संसाधन (मानव एवं भौतिक) को पलायन होने से रोका जा सकेगा।
6. कृषि के पूरक उद्योग के रूप में विकसित किया जा सकेगा।

उपरोक्त उपलब्धियाँ तभी संभव है जबकि छत्तीसगढ़ में इस उद्योग के प्रति सकारात्मक सोच पैदा की जाए तथा स्थानीय कच्चे माल की गुणवत्ता के लिए चर्म स्वाच्छेदन, चर्म शोधन, चर्म शिक्षण का समुचित प्रशिक्षण एवं व्यवस्थापन किया जाये। इसके अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय मापदण्डों पर आधारित वस्तुओं को बनाने का प्रशिक्षण दिया जायें। ताकि आज के

* प्राचार्य, शासकीय डॉ. बाबा साहब भीमराव आम्बेडकर स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगांव, जिला - राजनांदगांव (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगढ़, जिला - राजनांदगांव (छ.ग.) भारत

उदारीकरण वैश्वीकरण के युग में हमारे चर्म शिल्पी प्रतिस्पर्धा में टिक सकें और अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का लाभ अर्जित कर सकें। साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उपलब्ध बाजारों की मांग के अनुरूप चर्म शिल्पी वस्तु का निर्माण कर सकें। तथा पंचायत स्तर पर 'एक शैड के नीचे' सभी स्थानीय चर्मशिल्पी अपनी वस्तु का विक्रय कर उचित मूल्य प्राप्त कर सकें। यह शैड स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय आवश्यकताओ के अनुरूप अच्छी पैकिंग लैबलिंग के माध्यम से गुणवत्ता को बरकरार रखते हुए स्थानीय चर्म व्यवसाय को सम्मानजनक स्थान प्रदान कर सकें।

आज के इस नवीन अर्थव्यवस्था में जितना अधिक महत्व उत्पादन का है उससे कही अधिक महत्व वस्तु के विपणन का है। हमारे चर्म शिल्पी इस विपणन व्यवस्था में न टिक पाने के कारण शोषण और उपेक्षा के शिकार हो रहें है। अत: स्थानीय पंचायतों सहकारिता पर आधारित 'एक शैड योजना' सरकार द्वारा प्रोत्साहन पूंजी आधुनिक तकनीकी प्रशिक्षण की उपलब्धता के माध्यम से छत्तीसगढ़ में चर्म उद्योग के विकास की पर्याप्त संभावनायें दिखाई देती है। आवश्यकता इस बात की है कि इस संभावनाओं को कार्यरूप में परिणित किया जायें जिसके लिए राजनैतिक प्रतिबद्धता, प्रशासनिक सजगता, नियोजन बद्ध कार्यक्रम जैसे महत्वपूर्ण कदम उठाने होंगे ताकि 21वी शताब्दी में छत्तीसगढ़ राज्य को एक सशक्त राज्य के रूप में स्थापित किया जा सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उद्यमिता समाचार पत्र-उद्यमिता विकास केन्द्र, 60 जेलरोड़, जंहागीरा बाद भोपाल, जनवरी 95 अंक, दिसंबर 2000 अंक।
2. योजना प्रकाशन एवं सूचना मंत्रालय, पटियाला हाउस, नई दिल्ली, 15 दिसंबर 94
3. ग्रामीण चर्म उद्योग एक परिचय- खादी ग्रामोधोग आयोग, ग्रामोदय 3 एरला रोड विले पारले पश्चिम बंबई 400056
4. प्रसाद आर. आर.- चमार एण्ड कन्टील्युटी एमंग सिडयुल्ड काष्ट लेदर आर्टिसंस शेरा नेशनल इंस्टीट्यूट आफॅ सरल डेव्हलपमेंट हैदराबाद 1986

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Role of Micro, Small, and Medium Enterprises (MSMEs) in Reducing Unemployment in India

Dr. K.L.Tandekar* Dr. E.V. Revaty**

Abstract - MSMEs is the abbreviation of Micro Small and Medium Enterprises. . In a country like India, where capital is limited and unemployment is wide spread, growth of MSMEs is vital in order to achieve balanced economic growth. The strength of MSMEs lies in their wide spread dispersal in rural, semi-urban and urban areas, fostering entrepreneurial base, shorter gestation period, and equitable distribution of income and wealth. The problem of unemployment is very acute in the country now a-days, especially among educated youths, and it is seriously engaging the attention of the governments both at the Centre and in the States. . It is the biggest employer after agriculture sector, despite the fact that agriculture sector's contribution to GDP is less than MSME. According to the reports 40% of India's gross industrial output is contributed by MSME, 45% of India's total export is from MSME and it is India's second largest Employer after Agriculture. Undoubtedly the MSME sector significantly supports in reducing unemployment in the country and it is India's engine of growth. Considering the economic importance of this sector, Government of India has enabled a separate Act, Micro, Small & Medium Enterprises Development Act, 2006 (MSMED) on June 16, 2006, which was notified on October 2, 2006. The advantage of this sector is it requires less investment, thus creating employment on a large scale, and reducing the unemployment and underemployment problems. MSME has played a prominent role in the development of the country in terms of creating employment opportunitiesMSME has employed more than 50 million people. The Micro, Small and Medium Enterprises (MSMEs) are the largest generator of employment.
Key Words - MSMEs, Unemployment and Underemployment, Economic Growth.

Introduction - MSMEs are playing a vital role in overall economic development of a country, like India where millions of people are unemployed or underemployed. Unemployment is one of the burning problems of the country today. This sector solves this problem through providing immediate largescale employment, with lower investments. According to Dr. Manmohan Singh (Former PM and a famous Economist), "The key to our success in employment lies in the success of manufacturing in the small scale sector." The economic development of any country primarily depends upon the establishment of industries, which require sufficient amount of capital. In a country like India, where capital is limited and unemployment is wide spread, growth of MSMEs is vital in order to achieve balanced economic growth. The strength of MSMEs lies in their wide spread dispersal in rural, semi-urban and urban areas, fostering entrepreneurial base, shorter gestation period, and equitable distribution of income and wealth. The problem of unemployment is very acute in the country now a-days, especially among educated youths, and it is seriously engaging the attention of the governments both at the Centre and in the States. Development of MSMEs can provide a way out of the present distressing situation created by widespread unemployment. Production of small articles of everyday use with the help of small machines will offer employment opportunities to many people with limited capital resources. These enterprises have vast and unlimited scope in India. The small industries play a vital part in our economic life and are destined to take a larger share in our national economy in the years to come.

Objective of the Study - To study and understand the importance of MSMEs in reducing the unemployment of the country, and to support in economic growth of the country as well.

Limitation of the Study - The study is based on the annual report 2017-18 of ministry of Micro, Small and Medium Enterprises, government of India, which is the latest report till the date so the data and information have took in to consideration up to the year 2015-16.

Research Methodology

1. Type of Research: Descriptive research.
2. Research Approach: Quantitative.

Sources of Data and Information: According to the nature of the study, all information and figures are collected from reliable secondary sources, such as websites, departmental reports, and print and electronic media etc.

***Principal, Govt. Dr. Baba Sahab Bhimrao Ambedkar Post Graduate College, Dongargaon, Distt. – Rajnandgaon (C.G.) INDIA**
**** Asst. Professor (Commerce) Govt. Nehru PG College Dongargarh, Distt. – Rajnandgaon (C.G.) INDIA**

What is MSMEs ?

MSME is the abbreviation of Micro Small and Medium Enterprises. According to the provision of MSME Development Act, 2006 these are classified in to two classes which are as under

1. Manufacturing Enterprises - The enterprises engaged in the manufacture or production of goods, or employing plant and machinery in the process of value addition to the final product having a distinct name or character or use. The manufacturing enterprises are defined in term of investment in Plant and Machinery. The limit for investment in plant and machine in manufacturing sector for Micro Enterprises does not exceed twenty 5 lakh rupees, for Small Enterprises more than twenty 5 lakh rupees but does not exceed 5 crore rupees, and for Medium Enterprises more than 5 crore rupees but does not exceed 10 crore rupees.

2 Service Enterprise- The enterprises engaged in providing or rendering of services and are defined in term of investment in Equipment. The limit for investment in Equipments in Service sector for Micro Enterprises does not exceed 10 lakh rupees, for Small Enterprises more than 10 lakh rupees but does not exceed 2 crore rupees and for Medium Enterprises more than 2 crore rupees but does not exceed 5 crore rupees.

NOTE : Amendment of Section 7 of the MSMED Act approved by Union Cabinet as follows, to enhance ease of doing business.

Micro enterprises: Annual turnover less than or equal to Rs. 5 crore.

Small enterprises: Annual turnover more than Rs. 5 crore but does not exceed Rs. 75 crore.

Medium enterprises: Annual turnover more than Rs. 75 crore but does not exceed Rs. 250 crore.

Table 1.1- Distribution of Enterprises Category Wise(Numbers in lakh)

Sector	Micro	Small	Medium	Total	Share (%)
Rural	324.09	0.78	0.01	324.88	51
Urban	306.43	2.53	0.04	909.00	49
All	**630.52**	**3.31**	**0.05**	**633.88**	**100**

The Micro sector with 630.52 lakh estimated enterprises accounts for more than 99% of total estimated number of MSMEs. Small sector with 3.31 lakh and Medium sector with 0.05 lakh estimated MSMEs accounts for 0.52% and 0.01% of total estimated MSMEs, respectively. It is very clear that out of total number of MSMEs micro sector is in dominant position, because it is about 99% of overall MSMEs.

MSMEs and Employment - As per National Sample Survey73rd round conducted during the period 2015-16, MSME sector has been creating approx 11.10crore jobs in the rural and the urban areas across the nation. The activity wise distribution of MSMEs is shown in below table wise distribution of MSMEs is shown in table 2.1.

Table 2.1 (See in next page)

From the **table 2.1**, 360.41 lakh jobs are availed in Manufacturing, 387.18 lakh in Trade and 362.82 lakh in Other Services in the rural and the urban areas across the country. In this dimension trade sector is in first(35%), other services is in second(33%) and manufacturing sector is in third position(32%) for providing jobs in the country, of overall MSMEs.

The report further shows employment distribution in rural and urban areas of the country through MSMEs sector up to the year 2015-16, which is given below

Table 2.2- Distribution of Employment in Rural and Urban Areas (Number in lakh)

Sector	Micro	Small	Medium	Total	Share(%)
Rural	489.30	7.81	0.60	497.71	**45**
Urban	586.88	24.06	1.16	612.10	**55**
All	**1076.19**	**31.95**	**1.75**	**1109.81**	**100**

Micro sector with 630.52 lakh estimated enterprises provides employment to 1076.19 lakh persons, which accounts for around 97% of total employment in the sector. Small sector with 3.31 lakh and Medium sector with 0.05 lakh estimated MSMEs provides employment to 31.95 lakh (2.88%) and 1.75 lakh (0.16%)persons of total employment in MSME sector, respectively.

Conclusion - The contribution of MSME to other sectors has been immensely instrumental. It is the biggest employer after agriculture sector, despite the fact that agriculture sector's contribution to GDP is less than MSME. According to the reports 40% of India's gross industrial output is contributed by MSME, 45% of India's total export is from MSME and it is India's second largest Employer after Agriculture. Undoubtedly the MSME sector significantly supports in reducing unemployment in the country and it is India's engine of growth. Considering the economic importance of this sector, Government of India has enabled a separate Act, Micro, Small & Medium Enterprises Development Act, 2006 (MSMED) on June 16, 2006, which was notified on October 2, 2006. The advantage of this sector is it requires less investment, thus creating employment on a large scale, and reducing the unemployment and underemployment problems. Moreover, this sector has survived almost all threats emerging out of still completion from both domestic and international market. MSME has played a prominent role in the development of the country in terms of creating employment opportunities-MSME has employed more than 50 million people. The Micro, Small and Medium Enterprises (MSMEs) are the largest generator of employment. However, it is essential that they have access to training, incubator support to develop and execute their ideas and credit to finance their ventures. The contents of the NEP would include measures for creating awareness among these units to leverage the facilities offered to them by and the government and simplifying processes through which they can avail these facilities.

References :-

1. M.Chinara & H.S. Rout (2017) "Micro Small and Medium Enterprises (MSMEs) in Emerging India "New Century Publications. Annual Report2017-18, Ministry

of MSMEs, Govt. of India

Websites:

1. www.msme.gov.in
2. www.india.gov.in
3. www.wikipedia.com
4. www.scribd.com
5. Newspapers: DNA bhaskar, Nawa Bharat Chronicle, Hidustan Times.

Table 2.1- Estimated Employment in MSME Sector (Broad Activity Category Wise)

Broad Activity Category	Rural Employment (in lakh)	Urban Employment (in lakh)	Total Employment (in lakh)	Share (%)
Manufacturing	186.56	173.86	360.41	**32**
Trade	160.64	226.54	387.18	**35**
Other Services	150.53	211.69	362.22	**33**
All	**497.73**	**612.09**	**1109.81**	**100**

****

रविदास और संतकाव्य

डॉ. त्रिभुवन कुमार साही *

प्रस्तावना – रविदास भक्तिकाल के निर्गुण काव्यधारा के ज्ञानाश्रयी शाखा के संत कवि है समाज की तथाकथित निम्न जातियों का प्रतिनिधित्व रचनात्मक स्तर पर संत काव्य में दिखता है। इस तरह संत काव्य आत्मगौरव का काव्य है। निम्न जाति से संबद्ध होने का मलाल रैदास को नहीं है और यह उनकी रचनाधर्मिता के हक में गया है उनकी यह स्वीकारोक्ति कि ऐसी मेरी जाति विख्यात चमारा, चरन सरन रैदास चमैया प्रकारांतर से रैदास के संतत्व को गरिमा देती है और आत्मगौरव की यात्रा का पहला चरण भी बनता है। ईश्वर के निर्गुण रूप की उपासना के क्रम में ढाँचा-साँचा रैदास को नागवार लगता है। पूजा और मूर्ति की तमीज को रैदासी संतत्व खारित करता है। रामानन्द के बारह शिष्यों में इनका भी स्थान है, जिससे यह सिद्ध होता है कि धर्म की भावात्मकता उंच-नीच का नहीं मानती है, वहां मानव-मात्र की उपस्थिति को ही सबसे अच्छा माना गया है।

अपने समकालीनों में रैदास का सम्मान है कबीर-मीरा प्रभृति सहृदयों ने इनकी स्तुति की है। रैदास के फुटकर पद 'वाणी' नाम से संकलित है। इनकी पदों की विशेषता है कि आदि गुरू ग्रंथ साहिब में इनके चालीस पद संकलित है।

रैदास अपनी उतम जीवन-शैली, उत्कृष्ट साधना-पद्धति तथा उल्लेखनीय आचरण के कारण आज भी भारतीय धर्म-साधना के इतिहास में प्रात: स्मरणीय है, रैदास ने अपने पदों में साधन के आभ्यांतरिक पक्षों को स्थान दिया है। बाह्याडंबर और दिखावे को उनका कृतित्व और व्यक्तित्व अस्वीकारता है। यह अस्वीकार कबीर के विद्रोह की तरह न होकर तुलसी के विनय की तरह का है। रैदास के पदों की आत्मा तो निर्गुण है पर शरीर सगुणोपासक की तरह भाव विह्लता से बन सना है उपासना के चरम पर कवि का जागतिक परिचय मुखरित हो जाता है और वह राम की रट लगाने लगता है।

अब कैसे छूटै रामा, नाम रट लागी,
प्रभुजी तुम चंदन हम पानी, जाकी अंग-अंग बास समानी,
प्रभु जी तुम धन बन हम मोरा जैसे चितवय चंद चकोरा

भावसता का चरमसता में विलीन हो जाने की व्याकुलता ही रैदास के भक्ति की पहचान हैं ब्रजभाषा की सादगी लिए संप्रेषण की सहजता ओढ़े कविता भाव-भाषा दोनों में द्वैत को मिटाती है। ज्ञाता और ज्ञेय का द्वैत भी मिट जाता है आत्मनिवेदन और परमात्म बिरह की पीड़ा की जटिलता प्रेमानुभूति की सहजता से और निखर जाती है रैदास का जीवन और उनकी रचना दोनों में सादगी है, सहजता है, जीवन में जो जितना सहज है कविता में भी वह उतना ही सरल होगा, विशेषकर भक्ति के संदर्भ में, कबीर की सहजता और तुलसी की विनयशीलता को जोड़कर जो बनेगा वह होगा रैदास, 'रैदास की भक्ति का ढाँचा निर्गुणवादियों का ही है किन्तु उनका स्वर कबीर जैसा आक्रामक नहीं है।'[1]

सहजशैली में निरीह आत्मसमर्पण का ऐसा निरभ्र रूप रैदासी संतत्व की अकेली उपलब्धि है, जो भक्तिकाल के महान कवियों की श्रेणी में उन्हें ला खड़ा करती है, 'रैदास की कविता की विशेषता उनकी निरीहता है, वे अनन्यता पर बल देते हैं, रैदास में निरीहता के साथ-साथ कुंठाहीनता का भाव द्रष्टव्य है।'[2]

ईश्वर के निर्गुण रूप को स्वीकार कर उसकी उपस्थिति को सार्वभौमिक करते हैं जिसकी काव्यमयी तसदीक 'थावर जंगम कीट पतंगा पूरि रह्यो हरिहाई' के रूप में होती है। साथ ही ज्ञानतत्व की मीमांसा भी रैदास यह कहकर छेड़ते हैं कि 'गुन निर्गुन कहियत नहिं जाकें, मन को निर्मल करो', पवित्रता को सिराहना बनाकर ईश्वर की स्तुति करो इस वर्ग के साथ कि जैसा प्रभु को मानो वह वैसा ही है।

समाज के बिगड़े रूप को, पथभ्रष्ट होते प्रतिमानों को, वस्तुवादी होते संबंधों को, स्वार्थी होते समर्पण को, मुनाफे में ढ़लती अपेक्षाओं को, अहँकारी होती आकांक्षाओं को रैदास की निरीहता और उनका अनाडंबर चुनौती देता है, यह चुनौती प्राणस् चेतना को अभिभूत करता है, साथ ही यह बताता है कि जीवन की सादगी ही जीवन का सब से बड़ा श्रृंगार है, अलंकार है, प्रभु जी तुम स्वामी, हम दासा का अनुरागी हृदय आज और प्रासंगिक और वरणीय हो गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास, वि.ना. त्रिपाठी, पृ. 24 ओरियंट ब्लैकस्वान, 2001/2
2. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास, वि.ना. त्रिपाठी, पृ. 24 ओरियंट ब्लैकस्वान, 2001

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी विभाग) सूरज सिंह मेमोरियल कॉलेज, कँाकेर रोड, राँची (झारखण्ड) भारत

राजपूताना के एकीकरण में जनमानस की भूमिका

डॉ. सुनीता मीना*

प्रस्तावना – किसी भी देश के जनमानस में राजनैतिक चेतना का विकास किसी आकस्मिक घटना का परिणाम न होकर विगत शताब्दी अथवा अर्द्धशताब्दी में घटित विभिन्न घटनाओं की सम्मिलित प्रतिक्रिया होती है। राजनैतिक चेतना के परिणामस्वरूप ब्रिटिश शासन के लिये सबसे अधिक गहरी भारतीय प्रतिक्रिया भारत में एक प्रभावी और राष्ट्रवादी जन आंदोलन के विकास में दिखाई देती है। एक संगठित आंदोलन के रूप में भारतीय राष्ट्रवाद का उदय 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से माना जा सकता है। यद्यपि इस राष्ट्रवाद की जड़े 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में उत्पन्न हुए कुछ आंदोलनों और कुछ व्यक्तियों के प्रयासों में तलाशी जा सकती है और अधिक निश्चित्ता के साथ यदि कहा जाये तो भारतीय राष्ट्रवाद का प्रारंभ और भी पहले का माना जा सकता है। और इस तथ्य की पुष्टि के प्रमाण भारतीय इतिहास में देखे जा सकते हैं कि वे परिस्थितियां और दृष्टिकोण भारत में पहले से ही मौजूद थे जो आधुनिक राष्ट्रवाद के जटिल स्वरूप के निर्धारण में सहायक सिद्ध हुए।

भारत में राष्ट्रवाद का प्रारम्भिक स्वरूप प्रादेशिक स्तरों पर भी उभरता दिखाई देता है, क्योंकि भारत के अनेक भागों में प्राचीन गौरव और शक्ति की ऐसी सशक्त परम्पराऐं देखने को मिलती हैं जो सम्मिलित धाराओं के रूप में राष्ट्रवादी आंदोलन में भी परिलक्षित हुई। इस कड़ी में वीर प्रसूता भूमि कहलाने वाले राजपूताना तथा इसकी विभिन्न रियासतों में राजनैतिक चेतना एवं जागृति के स्वरूप एवं प्रभाव का विश्लेषण करने पर कई महत्वपूर्ण तथ्य उभर कर आते हैं।

राजपूताना में देशी रियासतों की राजनीतिक स्थिति – भारत में स्थित 562 देशी राज्यों में भारत का 2/5 क्षेत्र और 25 प्रतिशत जनसंख्या सम्मिलित थी। देशी राज्यों का क्षेत्र ब्रिटिश भारत के प्रांतों के क्षेत्रों में घुला मिला था। समस्त राज्यों का संयुक्त क्षेत्र 7 लाख 20 हजार वर्ग मील था और उनकी आबादी 9 करोड़ 30 लाख थी। आबादी कहीं अधिक और कहीं कम थी। 2/3 या 6 करोड़ 20 लाख आबादी केवल 20 राज्यों में थी। शेष 3 करोड़ 10 लाख आबादी 542 राज्यों में थी। इन सभी देशी रियासतों में राजतन्त्रात्मक शासन व्यवस्था थी और इन पर विभिन्न महाराजाओं, नवाबों, राजाओं तथा जागीरदार और जमींदारों का प्रत्यक्ष शासन था। कुछ रियासतें इतनी बड़ी थी जितने फ्रांस और इंग्लैण्ड जैसे देश तथा कुछ इतनी छोटी थी कि उनको नाखूनी राज्य अथवा बौनी रियासतें कहा जा सकता है जिनका क्षेत्रफल एक वर्गमील से भी कम था।

देशी रियासतें समस्त भारत में बिखरी हुई थी। इनका सबसे बड़ा भू-भाग राजपूताना के अन्तर्गत आता था किन्तु ये भी छोटी बड़ी रियासतों में विभक्त था। राजपूताना में 19 राज्यों के शासकों को तोपों की सलामी लेने का अधिकार था। इनमें उदयपुर, डूंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़ एवं शाहपुरा गुहिल शासकों के अधीन थे। बूंदी, कोटा एवं सिरोही पर हाड़ा चौहानों का शासन था। जयपुर एवं अलवर पर कच्छवाहा राजाओं का शासन था। जोधपुर, बीकानेर एवं किशनगढ़ पर राठौड़ों का शासन था। भरतपुर एवं धौलपुर पर जाटों का शासन था। झालावाड़ झालों के अधीन था। टोंक पर पिंडारियों का शासन था। दांता, कुशलगढ़, नीमराणा तथा लावा को गैर सलामी रियासत कहा जाता था। इनके अतिरिक्त केन्द्र शासित प्रदेश भी राजपूताना के अंतर्गत आता था।

रियासती शासकों का आन्तरिक प्रशासन – बीसवीं सदी का रियासती राजस्थान अतीत की वैभवशाली ईमारतों के बचे-खुचे अवशेषों के समान था। जहाँ गरीब जनता सामन्तशाही के बोझ तले दबी हुई थी। यहाँ न तो किसी प्रकार की वास्तविक प्रतिनिधियात्मक संस्थाऐं विद्यमान थी न ही मूल अधिकार और न ही कानून व्यवस्था का कोई नामो निशान था।

देशी रियासतें, निरंकुश, स्वेच्छाचारी ब्रिटिश साम्राज्य के अनियंत्रित राज्यक्रम की दासता को बनाये रखने के यंत्र के समान कार्य कर रहीं थीं। तथा भारतीय प्रगति के मार्ग में एक बड़ी बाधा के समान थीं। अंग्रेज रेजिडेन्ट रियासतों के वास्तविक शासक और राजाओं के मालिक के समान व्यवहार करते थे। उनके पास विस्तृत अलिखित अधिकार थे।

राज्य की समस्त आय पर राजा का पूर्ण अधिकार था। जनता की शिक्षा, स्वास्थ्य और चिकित्सा इत्यादि पर नाममात्र खर्च किया जाता था, राज्य की आय का अधिकांश भाग शासक अपने व्यक्तिगत ऐशो आराम पर उड़ाते थे। यदि औसत निकाले तो प्रत्येक भारतीय राजा के पास 11 पदवियां, 5.8 पत्नियां, 12.6 बच्चे, 9.2 हाथी, 2.8 निजी रेल डिब्बे, 3.4 रॉल्स राएस कारें थीं। और प्रत्येक ने 22.9 शेरों का शिकार किया था।राजाओं की आय की कोई सीमा नहीं। लार्ड कर्जन रियासती राजाओं को शासन के अयोग्य अज्ञानी तथा अनुशासनहीन छात्र कहते थे। राजा की सत्ता को राज्य के भीतर कोई चुनौती देने वाला नहीं था ऐसे में उनकी बर्बर निरंकुशशाही राज्य व्यवस्था जारी थी। ऐसी स्थिति में प्रतिनिधियात्मक संस्थाओं का कही नामों निशान तक नहीं था।

इसी प्रकार 1903 ई. में लार्ड कर्जन ने देशी राजाओं को अच्छे प्रशासन की नसीहत देते हुए कहा कि 'राजाओं को अपनी प्रजा का स्वामी होने के साथ साथ अपनी प्रजा का सेवक भी होना चाहिये। राज्य का राजस्व केवल शासक के आमोद प्रमोद के लिये सुरक्षित नहीं है अपितु प्रजा के कल्याण के लिये भी है।'

रियासतों में न्याय की बहुत बुरी व्यवस्था थी। जिस व्यक्ति पर राजा को संदेह होता है उसके खिलाफ विशेष न्यायालय बिठाकर उसे मनमानी

* सहायक आचार्य (इतिहास) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

सजा दे दी जाती थी।

विश्व के बदलते परिदृश्य तथा ब्रिटिश भारत के घटनाक्रम के प्रभावस्वरूप देशी रियासतों के राजनीतिक वातावरण पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। परन्तु जनचेतना का मूल कारण शोषण पर आधारित मध्ुगीन समाज व्यवस्था में देखने को मिलता है। कृषक आंदोलनों ने राजपूताना की रियासतों में ग्रामीण स्तर पर विभिन्न राजनीतिक संगठनों की पहुँच को सुगम बना दिया। राजपूताना में जनजागृति का प्रारम्भ इन्हीं कृषक आंदोलनों की देन है। इनके अतिरिक्त राज्य में जनजागृति के कुछ अन्य कारण भी थे जैसे-

01. रियासती जनता में जागरण का बीज बोने वाला शिक्षित मध्यमवर्ग था। यह मध्यमवर्ग आम जनता में राजनीतिक जागरण और राष्ट्रप्रेम की भावना का संचार करना चाहता था। राजपूताना के नवजागरण का अग्रदूत यही वर्ग था।

02. स्वामी दयानंद सरस्वती और उनके आर्य समाज का भी राजपूताना की रियासती जनता के जनमानस पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। स्वामी दयानन्द ने राजपूताना में आगमन पर कहा था कि मेरी इच्छा है कि मैं रियासती राजा और महाराजाओं को सही मार्ग पर लाकर आर्य नस्ल को एकता प्रदान कर सकूँ।

03. क्रांतिकारी आन्दोलन की असफलता ने राजपूताना की जनता को यह जता दिया कि शांति पूर्ण आन्दोलनों के माध्यम से ही राज्य में संवैधानिक प्रगति का मार्ग खुल सकता है। गांधीजी का मानना था- 'रियासती जनता अपने पैरों पर स्वयं खड़ी होगी तभी रियासतों में जनजागृति आ सकती है। गांधी का यही दर्शन रियासती जनता के लिए वरदान सिद्ध हुआ और राजपूताना की जनता स्वयं अपनी मुक्ति का मार्ग खोजने लगी।'

इस प्रकार राजपूताना की जनता के मानस में जनचेतना का संचार हुआ और अब प्रांतीय स्तर के संगठनों की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। जिसके फलस्वरूप, 1919 में राजस्थान सेवा संघ, 1918 में राजपूताना मध्य भारत सभा इत्यादि राजनीतिक संगठनों की स्थापना हुई। इन संगठनों ने सराहनीय कार्य किया किन्तु राजपूताना में आधारभूत स्तर पर राजनीतिक चेतना जागृत करने का सर्वाधिक श्रेय राजस्थान सेवा संघ को है।

इस जन-जागृति को देखकर एक ऐसे केन्द्रीय संगठन की आवश्यकता महसूस की जाने लगी जो देशी रियासतों में चलने वाले आन्दोलन को दिशा निर्देश दे सके और इसकी चरम परिणती अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद के गठन के रूप में हुई। इसका प्रथम अधिवेशन 17-18 दिसम्बर 1927 को बम्बई में हुआ। इसका मुख्य उद्देश्य देशी रियासतों में उत्तरदायी सरकार की स्थापना करना था। इस अधिवेशन में राजपूनाता की जनता का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रमुख नेताओं में विजय सिंह पथिक, रामनारायण चौधरी और जयनारायण व्यास प्रमुख थे। राजपूताना में देशी राज्य लोकपरिषद की गतिविधियों का केन्द्र अजमेर को बनाया गया। 1931 में रामनारायण चौधरी ने 'राजस्थान देशी राज्य परिषद' की स्थापना की।

1933 में राजपूताना की सभी रियासतों के लिये देशी राज्य लोक परिषद की क्षेत्रिय इकाई के गठन का प्रयास किया गया। किन्तु स्थानीय नेताओं के आपसी सामंजस्य के अभाव में यह प्रयास विफल ही हुए क्योंकि प्रत्येक देशी रियासत में विभिन्न राजनीतिक समस्याएं थी और वे अपने स्थानीय स्त्रोतों पर इतना अधिक निर्भर थे कि किसी बाहरी विचारधारा पर निर्भर रहना कठिन था। इसलिए राजपूताना की रियासतों में वास्तविक जनजागृति व जनचेतना का संचार अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद की स्थानीय शाखाओं ने किया जिन्हें हम प्रजामण्डल या लोकपरिषद के नाम से जानते हैं। 1931 से 1946 ई. के बीच राजपूताना की लगभग सभी रियासतों में प्रजामण्डलों का गठन किया गया। इन प्रजामण्डलों ने राजपूताना के स्वतंत्रता संग्राम में अपना विशेष योगदान दिया। ग्रामीण व दूर दराज के आदिवासी क्षेत्रों तक अपनी पहुंच बनाई तथा आम जनता को प्रजामण्डल की गतिविधियों से जोड़कर उनके अन्तर्मानस में जन चेताना का संचार किया।

राजपूताना के जन-आन्दोलनों का उद्देश्य - ब्रिटिश भारत की जनता के समक्ष उसके जन-आन्दोलनों के संचालन को लेकर स्पष्ट उद्देश्य था, विदेशी शासन से मुक्ति। तब रियासती जनता के जन-आंदोलनों के क्या उद्देश्य रहे होंगे? रियासती जनता अंग्रेजी शासन के अधीन भी नहीं थी, तो क्या वे निरंकुश राजतंत्र के प्रतीक अपने राजा महाराजाओं को पद से हटाना चाहती थी? या फिर उनका क्रोध सिर्फ ठिकानेदारों तक सीमित था। क्या वे प्रशासनिक व्यवस्था में सिर्फ सुधार चाहते थे या पूरी तरह व्यवस्था परिवर्तन के पक्षधर थे? क्या हम इसे स्वतन्त्रता का आन्दोलन कहें? इन सभी प्रश्नों के उत्तर के लिये यहाँ पर राजपूताना की जनता के जन-आंदोलनों के उद्देश्यों का विश्लेषण करने की कोशिश की गई है।

राजपूताना की रियासतों में चलाया गया यह जन-आंदोलन एक दिलचस्प विषय है। वास्तव में इस आन्दोलन का उददेश्य प्रारम्भ में सुधारों की मांग तक सीमित था, परन्तु जैसे-जैसे परिस्थितियाँ परिवर्तित होती गई तथा जनचेतना का संचार विस्तृत होता गया, राजपूताना की जनता के आन्दोलन के उददेश्य भी विस्तृत और परिष्कृत होते गये। अगर हम यहां के कृषक आन्दोलनों को देखें तो एक ही बात सामने आती है कि इन आन्दोलनों में या तो भूमि सुधारों की माँग थी, किसान 145 प्रकार के लाग-बागों से दबे हुए थे, उनका विरोध था, या फिर किसी स्थानीय अधिकारी या राज्य के दीवान का विरोध था। एक भी ऐसा आन्दोलन नहीं था। जिसमें किसी रियासत के राजा को हटाने की बात कही गयी थी बल्कि यही बात कही गयी थी कि महाराजा की छत्रछाया में ही उत्तरदायी शासन की स्थापना की जाये और इस माँग पर ही जोर दिया जाता रहा। राजा महाराजा विदेशी शासक नहीं थे इसलिए सत्ता के विरूद्ध किये जा रहे आन्दोलन में उनको शामिल नहीं किया जाना उचित ही था लेकिन जब उनकी ज्यादतियाँ ज्यादा हो गयी और यह महसूस किया जाने लगा कि वे किसी भी प्रकार से उत्तरदायी शासन को अच्छी तरह नहीं चलने देंगे तो उनका जुआ भी कंधे से उतार फैंकने में जनता ने ढील नहीं दी।

दूसरी तरफ नगरीय संघर्ष आन्दोलन को अभिव्यक्ति देने वाले प्रजामण्डल संगठन जहाँ मुख्यत: शासन के विभिन्न स्तरों पर जन-सहभागिता, नागरिक स्वतन्त्रताओं की सुनिश्चित्ता व रक्षा तथा देशी रियासतों के शासकों के अधीन उत्तरदायी शासन की स्थापना की मांगो तक सीमित राजपूताना के प्रजामण्डल आन्दोलन की विशिष्टता यह थी कि इसके आन्दोलन द्विउद्देशीय थे। इनका प्रथम उददेश्य उत्तरदायी शासन की स्थापना करना था और द्वितीय उददेश्य भारत के लिए स्वतंत्रता प्राप्त करना था।

राजपूताना के प्रजामण्डल आन्दोलन की प्रेरणादायी मातृ संस्था 'अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद' को कहा जा सकता है। जिसका प्रारम्भिक उददेश्य राजाओं की अधीनता में पूर्ण उत्तरदायी सरकार की स्थापना करना था किंतु 1939 ई. तक आते-आते इसने अपना उददेश्य पूर्ण प्रतिनिधियात्मक शासन के साथ-साथ, देशी रियासतों को भारतीय

संघ में सम्मिलित करवाना भी निर्धारित कर लिया था।

इस प्रकार स्पष्ट है कि 1940 तक आते-आते देशी राज्य लोक परिषद का उद्देश्य रियासती जनता को उत्तरदायित्वपूर्ण शासन दिलवाना तथा उनका ब्रिटिश भारत की गतिविधियों के साथ तालमेल बिठाना था। राजपूताना की विभिन्न रियासतों में स्थापित प्रजामण्डल, प्रजापरिषद, लोकपरिषद के स्थानीय नेताओं ने देशी राज्य लोक परिषद व ब्रिटिश भारत में हो रही गतिविधियों के मार्ग दर्शन में तथा स्थानीय परिस्थितियों से जूझते हुए रियासतों में जन-आंदोलन के झण्डे को बुलंद रखा। 1931 से 1947 के मध्य चलाए जा रहे स्वाधीनता आन्दोलन के दो ही लक्ष्य थे - कृषि सुधारों का श्रीगणेश करना तथा राजनीतिक सुधारों का सूत्रपात करना था। एक तीसरा और महत्वपूर्ण कार्य ब्रिटिश भारत की स्वाधीनता के साथ रियासती भारत के भाग्य को जोड़ना था। इस प्रकार सामान्य जनमानस ने प्रजामण्डल जैसी संस्थाओं से जुड़ कर देशी रियासतों के भारत में विलय के मार्ग को प्रशस्त करने का असामान्य कार्य किया।

विलीनीकरण में जनमानस की भूमिका - सन् 1935 तक आते-आते देशी रियासतों में जन जागृति के स्पष्ट लक्षण दिखाई देने लगे थे। विभिन्न रियासतों व उनके ठिकानों में स्थान-स्थान पर कृषक आन्दोलन चल रहे थे, व जनता उद्वेलित होती जा रही थी। परन्तु देशी रियासतों के आन्दोलन सुदृढ़ केन्द्रीय संगठन व सही दिशा निर्देशन के अभाव में अस्त-व्यस्त थे। जनता के पास अपना कोई रचनात्मक कार्यक्रम नहीं था। देशी राज्य लोक परिषद को भी स्पष्ट नहीं था कि प्रजा को विरोधस्वरूप कौन सा मार्ग ग्रहण करना चाहिये? अन्याय सहें या प्रतिकार करें। यदि कोई आन्दोलन किया जाये तो वह किस रूप में और किस ढंग से किया जाये। देशी राज्यों की प्रजा की सबसे बड़ी समस्या यह थी, की उसे कोई भी राजनीतिक दल सहायता नहीं देना चाहता था। कांग्रेस व गांधी रियासती मामलों में पूरी तरह 'अहस्तक्षेप' की नीति का अनुसरण कर रहे थे।

1938 ई. तक आते आते कांग्रेस के समाजवादी विचारधारा वाले वर्ग जिसमें जवाहरलाल नेहरू, जयप्रकाश नारायण जैसे नेता थे इन्होंने देशी रियासतों के विषय में कांग्रेस की अहस्तक्षेप की नीति का विरोध किया। जवाहरलाल नेहरू ने मारवाड़ जक्शन पर एकत्र जनता से कहा था कि 'रियासती मामलों में मुझे दिलचस्पी है और रियासतों में क्या-क्या होता है? यह मुझे मालूम रहता है।' इधर अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद ने कांग्रेस के समक्ष ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी कि वह देशी रियासतों के विषय मे सोचे तथा इस विचार को मानने को तैयार हो कि 'देशी रियासतों की समस्या को सुलझाये बिना भारत की समस्या का समाधान संभव नहीं है।' इधर गोलमेज सम्मेलन तथा संघीय शासन प्रणाली के विषय में राजाओं के नकारात्मक व अड़ियल रवैये के कारण कांग्रेस राजाओं की कटू आलोचक बन गयी। ऐसी स्थिति में 1938 के हरिपुरा अधिवेशन में कांग्रेस ने रियासतों से सम्बन्धित प्रसिद्ध प्रस्ताव पास किया कि- 'इसलिए कांग्रेस आदेश देती है कि रियासतों की कांग्रेस समितियां, कार्य समिति के निर्देशन में कार्य करें।........ रियासतों की भीतरी लड़ाई कांग्रेस के नाम पर नहीं लड़ी जानी चाहिए। रियासतों के संघर्ष को जारी रखने के लिए स्थानीय स्तर पर प्रजामण्डलों का निर्माण किया जाये। रियासती आन्दोलन के प्रति कांग्रेस ने सहानुभूति जताई तथा कहा कि पूर्ण उत्तरदायी शासन की स्थापना अब दूर नहीं है।' दो रेलगाड़ियां अलग-अलग जा रहीं थी - उन्हें मिलाकर एक ही ट्रेन का वर्तमान रूप दे दिया गया और संचालन का दायित्व गाँधी के हाथों में सौप दिया गया। हरिपुरा अधिवेशन के पश्चात् भी काफी समय तक कांग्रेस ने देशी राज्यों में गहरी रूचि नहीं ली जिसका प्रमुख कारण अखिल भारतीय स्तर पर उसे बड़ी समस्याओं का निराकरण करने में सक्रिय रहना था। अंतत: 1939 ई. के त्रिपुरी अधिवेशन में अध्यक्ष सुभाष चन्द्र बोस ने कहा कि 'देशी रियासतों की जनता में 'अभूतपूर्व जनजागृति' देखने को मिली है। कांग्रेस को देशी रियासतों से सम्बन्धित हरिपुरा प्रस्ताव परिभाषित करने की आवश्यकता है।'

रियासती प्रजा की जनचेतना में उत्तरोत्तर वृद्धि - अब तक रियासती आन्दोलन का उद्देश्य 'राजाओं की अधीनता में उत्तरदायी सरकार की स्थापना करना था। किन्तु देशी राज्य लोक परिषद के उदयपुर अधिवेशन के पश्चात् स्थानीय प्रजामण्डल आन्दोलन का उद्देश्य रियासतों को भविष्य में बनने वाले स्वतंत्र भारतीय संघ का एक अभिन्न अंग मानते हुए शांति पूर्ण एवं न्यायोचित उपायों से पूर्ण उत्तरदायी सरकार की स्थापना करना था।' राजपूताना की रियासतों के प्रजामण्डल संगठनों ने अपने संविधान से 'राजाओं की छत्रछाया में' शब्द को हटा दिया। जयपुर प्रजामण्डल ऐसा करने वाली प्रथम संस्था थी।

देशी राज्य लोक परिषद ने 1939 के अपने लुधियाना अधिवेशन में एक प्रस्ताव पास करके भारतीय संघ में स्वतंत्र प्रशासनिक इकाई के रूप में देशी रियासतों की जीव्यता 20 लाख जनसंख्या, 50 लाख वार्षिक राजस्व निर्धारित किया। जिसको बाद में 50 लाख जनसंख्या और 8 करोड़ राजस्व के रूप में बढ़ा दिया गया। वास्तव में यह मात्र एक छोटा सा प्रस्ताव था किन्तु प्रतिकात्मक रूप से अत्यन्त महत्वपूर्ण था। यह रियासतों के जनमानस की स्वतंत्र भारत में एक बड़ी प्रशासनिक इकाई बनने की अकांक्षा का प्रतीक था। 1939 ई. में द्वितीय विश्व युद्ध के समय भी कांग्रेस व देशी राज्य लोक परिषद के मध्य रियासतों से सम्बन्धित नीति निर्माण में सामंजस्य बना रहा। इस दौरान राजाओं और युद्ध से संबन्धित समस्याओं पर लोक परिषद, कांग्रेस से दिशा निर्देश प्राप्त करती रही। कांग्रेस ने देशी रियासतों की जनता को प्रांतीय कांग्रेस कमेटियों में जनसंख्या के आधार पर सीटों का आरक्षण प्रदान करने के लिए एक समिति का गठन किया, जिसमें जवाहरलाल नेहरू, भूलाभाई देसाई, वल्लभभाई पटेल और जे.बी. कृपलानी प्रमुख थे। देशी राज्य लोकपरिषद की रियासती जनता में बढ़ती हुई प्रतिष्ठा के कारण ब्रिटिश सरकार ने कभी भी देशी राज्य लोक परिषद को रियासती जनता का प्रतिनिधि न मानकर, अपने कठपुतली राजाओं को ही रियासती जनता का प्रतिनिधि माना। 1940 ई. तक आते-आते रियासती जनता का एकमात्र ध्येय बन गया, उत्तरदायी शासन की प्राप्ति। महात्मा गांधी राजाओं की कटु आलोचना करते थे 1916 ई. से ही वे राजाओं को जनता का ट्रस्टी बनने की सलाह देते थे। उनका मानना था कि प्रत्येक राजा अपनी प्रजा का सेवक है और वास्तविक मालिक प्रजा है। राजाओं को अपनी स्वेच्छाचारिता और शाहीतंत्र का परित्याग कर देना चाहिये। कुछ राजाओं की मनोवृत्ति तो गाधीजी के प्रति इतनी अधिक उपेक्षापूर्ण थी कि वे उनकी या उनके नाम से कही गयी किसी बात को सहन नहीं कर सकते थे। 7 और 9 अगस्त, 1942 को बम्बई सम्मलेन में कांग्रेस ने भारत छोड़ो प्रस्ताव पारित किया। देशी रियासतों के जन-प्रतिनिधियों ने भी इसमें भाग लिया। गाँधीजी ने इस सम्मेलन में रियासतों के प्रतिनिधियों को स्पष्ट किया की ब्रिटिश भारत में भावी संघर्ष का नारा 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' होगा तथा देशी रियासतों में राजाओं अंग्रेजों का साथ छोड़ो होगा। अगर शासक अंग्रेजों से सम्बन्ध विच्छेद करने की मांग ना माने तो प्रजामण्डल आंदोलन आरम्भ कर दें।

राजाओं ने इस बात के पूरे प्रयास किए कि परमोच्च शक्ति उन्हें या तो

लौटा दी जाए अथवा समाप्त कर दी जाए। उनके पूरे प्रयास रहे कि ब्रिटिश भारत में जिस प्रकार जनता का प्रतिनिधित्व, वहाँ के नेतागण कर रहे थे, उसी प्रकार रियासतों में प्रजा का नेतृत्व राजाओं के द्वारा मान लिया जाना उचित है। कैबीनेट मिशन के समक्ष दिखावा करने के उद्देश्य से नरेन्द्र मण्डल के चांसलर भोपाल नवाब ने जनता को कुछ अधिकार प्रदान करने की घोषणा की। इसे 'राजाओं की ओर से प्रजा को प्रदान किया गया अधिकार पत्र' (बिल ऑफ पीपल्स राइट्स) कहा गया। नेहरू ने इस पर टिप्प्णी करते हुए कहा कि 'इस घोषणा पत्र की जांच तो इसके वास्तविक क्रियान्वयन पर होगी। राजपूताना की जनता में इस घोषणा के प्रति कोई उत्साह नहीं पाया गया क्योंकि एक तो ये बहुत देर से की गई घोषणाएं थीं वहीं विभिन्न राज्यों से दमन और शोषण की जो खबरें आ रहीं थीं उससे राजाओं की कथनी और करनी में अंतर दूर से ही दिखाई पड़ता था।' जब राजाओं को लगने लगा कि अब अंग्रेज भारत से जाने वाले है और राजाओं पर से अंग्रेजों का संरक्षण हटने वाला है तब कहीं जाकर राजाओं की नींद खुली और उन्हें राजनीतिक विभाग द्वारा चार वर्ष पूर्व दी गयी चेतावनी का मतलब समझ में आया। इसलिये राजाओं ने इस तरह की सुधारवादी घोषणा कि किन्तु तब तक बहुत विलम्ब हो चुका था।'

संवैधानिक प्रगति व रियासतों का भारतीय संघ में विलय – समाजवादी नेता जयप्रकाश नारायण ने कहा 'कि वायसराय तथा उनका राजनीतिक विभाग भारतीय राजाओं को भारतीय स्वतंत्रता के मार्ग में बाधा के रूप में इस्तमाल करता रहा है। उन्होंने भारतीय राज्यों में प्रजातान्त्रिक आन्दोलन को कुचलने के लिये राजाओं के साथ मिलकर षड़्यत्र किया है। देशी रियासतों की जनता के प्रतिनिधि के रूप में अंग्रेजों ने हमेशा रियासती शासकों को प्राथमिकता दी। रियासती जनता का प्रतिनिधित्व करने वाली देशी राज्य लोक परिषद को हमेशा हतोत्साहित किया तथा भारत के संवैधानिक विकास से सम्बन्धित किसी भी बातचीत में उसे शामिल नहीं किया। राजाओं ने देशी राज्य लोक परिषद द्वारा स्वयं को रियासती जनता का प्रतिनिधि बताने का घोर विरोघ किया। तथा 'नरेन्द्र मण्डल' को इसके विरोधी संस्थान के रूप में प्रश्रय दिया। यहाँ तक की बटलर कमेटी ने भी रियासती जनता का प्रतिनिधित्व करने वाली देशी राज्य लोक परिषद को रियासती जनता का प्रतिनिधि मानने से मना कर दिया। अत: 1929 ई. के लोक परिषद के अधिवेशन में बटलर कमेटी की जमकर आलोचना की गयी। इसी प्रकार साइमन कमीशन ने भी देशी रियासतों की समस्या को समझने का प्रयास नहीं किया। देशी रियासतों की जनता ने 1929 ई. में प्रारम्भ होने वाले गोलमेज सम्मेलन में प्रतिनिधित्व की मांग की तथा राजाओं के देशी रियासतों का प्रतिनिधि होने के दावे को खारिज किया।

लार्ड माउंटबेटन ने अपनी 3 जून, 1947 की घोषणा में परमोच्चसत्ता के विलोपन की घोषणा की तथा देशी रियासतों के शासकों को खुली छूट दे दी कि वे या तो भारत अथवा पाकिस्तान में विलय कर सकते हैं अथवा पूरी तरह स्वतंत्र रह सकते हैं। किन्तु देशी रियासतों की जनता, उनके प्रजामण्डल तथा देशी राज्य लोक परिषद और उसके सहयोगी राष्ट्रीय दल के दबाव के फलस्वरूप रियासती शासकों को भारतीय संघ में विलय के लिये मजबूर होना पड़ा। रियासती जनता व उनके स्थानीय कार्यकर्ताओं ने अपने राजाओं और जागीरदारों पर दबाव बनाया कि वे भारतीय संघ से अलग रहने की सोच ही ना सकें। रियासतों में चल रहे लोकप्रिय प्रजामण्डल आन्दोलनों विशेषकर राजस्थान के लोकप्रिय आन्दोलनों के कारण ही रियासतों का भारतीय संघ में विलय सम्भव हो सका।

देशी रियासतों की जनता ने ब्रिटिश भारत की अपेक्षा अधिक विकट समस्याओं का सामना किया। उनकी यह लड़ाई दो मोर्चो पर एक साथ चली। वे अपने अधिकारों की मांग के लिये प्रत्यक्षत: तो देशी राजाओं और उनके तंत्र से लड़ते दिखाई देते थे किंतु इस राजतंत्र की पीठ पर ब्रिटिश सरकार का मजबूत हाथ था। यही कारण था कि देशी रियासतों के शासकों ने प्रजा को शासन में भागीदारी देने के लिए सैकड़ों प्रकार के दिखावटी जतन तो किये किन्तु वास्तव में वे प्रजा की आवाज को कुचलने में लगे रहे। अपने सिंहासन और राजमुकुटों को बचाने के लिये राजाओं ने देश के साथ भयानक खेल खेला किन्तु वे समय की धड़कन को नहीं पहचान पाये और अपने ही पापाचार में नष्ट हो गये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मोहनलाल गुप्ता- ब्रिटिश भारत में राजपूताने की रोचक व ऐतिहासिक घटनाऐं पृ. 246-247
2. जरमनी दास, 'महाराजा' पृ. 356
3. मंजू गुप्ता- स्वतंत्रता संग्राम एवं जमनालाल बजाज पृ. 102
4. एफ. के. कपिल - राजपूताना स्टेट्स (1817-1950) पृ. 121
5. उर्मिला फडनीस- टूवर्ड्स द इन्टिग्रेशन ऑफ इण्डियन स्टेट्स पृ. 80
6. विद्या हेमचन्द्र छगानी- ओपन लैटर टु द वायसराय एण्ड गवर्नर जनरल ऑफ इण्डिया, दिनांक 22 नवम्बर 1929, अरविन्द प्रिटिंग प्रेस मुम्बई पृ. 2
7. 1941 का गीत, गांवों की पुकार स्वाधीनता के गीत राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर, 1987ई.
8. जोधपुर जागीर रिकॉर्ड फाइल नं ब/3/4, भाग-एक 1932, राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर।
9. विक्रमादित्य चौधरी -राजस्थान के किसान आंदोलन पृ. 25-30
10. रिपोर्ट ऑफ ऑल इण्डिया स्टेट्स पीपल्स कॉन्फ्रेंस, हेल्ड एट बोम्बे 1927, पृ. 1
11. ऑल इण्डिया स्टेट्स पीपल्स कॉन्फ्रेंस फाईल न0 25/6 नेहरू मेमोरियल म्यूजियम एण्ड लाइब्रेरी नई दिल्ली।
12. सुमनेश जोशी - राजस्थान में स्वतंत्रता संग्राम के सेनानी, जयपुर 1976 पृ. 266
13. जेम्स टॉड- एनल्स एण्ड एन्टिक्यूटिज ऑफ राजस्थान टव्स्.प कलकत्ता 1884 पृ. 161
14. विनीता परिहार - राजस्थान में उत्तरदायी शासन के लिए संघर्ष पृ. 141
15. रिपोर्ट ऑफ द 52 इण्डियन नेषनल कांग्रेस, त्रिपुरी (जबलपुर) दिनांक 10 से 12 मार्च 1939 पृ.656, इण्डियन नेशनल कांग्रेस पेपर्स, नेहरू मेमोरियल म्यूजियम नई दिल्ली।
16. एम.के.गांधी - द इण्डियन स्टेट्स प्राब्लम, अहमदाबाद 1941 पृ. 65
17. विश्वामित्र, दिनांक 4 अगस्त 1942 प्रेस कंटिंग्स, राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर।
18. माउंटबेटन स्पीचिज- टाइम ओनली टू लुक फॉरवर्ड 1947 - 48 लंदन, 1949 पृ. 13-18

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

पंचायती राज में महिलाएं : चुनौतियां और समाधान

डॉ. हनुमान प्रसाद मीना*

प्रस्तावना – पंचायतीराज संस्थाओं में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी को आरक्षण के माध्यम से संवैधानिक आधार प्रदान किया गया। इस अधिनियम के अन्तर्गत एक तिहाई अर्थात् 33 प्रतिशत पदों पर महिलाओं के लिए आरक्षण का प्रावधान है। इसमें अनुसूचित जाति/जनजाति की महिलाऐं भी सम्मिलित हैं। इस अधिनियम का उद्देश्य प्रशासन में दलितों, आदिवासियों, पिछड़े वर्गों तथा सदियों से उपेक्षित महिला वर्ग की राजनीतिक सहभागिता को सुनिश्चित करना था। पुरूष प्रधान भारतीय समाज में ग्रामीण स्तर पर आरक्षण के बिना किसी महिला का ग्रामीण स्थानीय स्वशासन में भागीदार बनना कठिन कार्य था किन्तु 73 वें संविधान संशोधन के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं को पंचायतीराज संस्थाओं में भागीदारी का अवसर प्राप्त हुआ है। उपरोक्त संशोधनों ने प्रारम्भिक अवस्था में महिलाओं के अधिकारों को न केवल सुनिश्चित किया अपितु उन्हें जन प्रतिनिधि के रूप में प्रत्यक्ष भागीदारी का भी अवसर प्रदान किया। प्रारम्भिक चुनौतियों, संशय एवं अपवादों के पश्चात् ग्रामीण महिलाऐं अपनी क्षेत्रीय समस्याओं का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम होने लगी हैं। साथ ही साथ अपने प्रयासों से महिला जागरूकता, निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं की सहभागिता एवं व्यक्तित्व निर्माण की ओर उन्मुख हो रही हैं। पंचायतीराज की सबसे बड़ी सफलता यही है कि इसने महिलाओं को राजनीतिक एवं सामाजिक सशक्तिकरण का अवसर प्रदान किया है।

किसी भी देश में लोकतांत्रिक संस्थाऐं तभी सशक्त हो सकती हैं जब प्रत्येक वयस्क नागरिक महिला एवं पुरूष के भेद से उपर उठकर अपने अधिकारों का प्रयोग कर सके। भारतीय सन्दर्भ में पंचायतीराज इसका सटीक प्रमाण है। पंचायतीराज संस्थाओं में महिला जनप्रतिनिधियों की सक्रिय सहभागिता तथा गतिविधियों के सम्पादन में प्रकट होने वाली कठिनाईयों तथा समस्याओं की चर्चा करना आवश्यक हैं

अशिक्षा एवं जानकारी का अभाव–राजस्थान में महिला साक्षरता दर बहुत कम (52.66) प्रतिशत होने के कारण पंचायतीराज संस्थाओं में निर्वाचित अधिकांष महिलाऐं अशिक्षित हैं। या केवल साक्षर ही है जो कि उनकी राजनीतिक भागीदारी में सबसे बड़ी बाधा है। अशिक्षित महिला प्रतिनिधियों को बाहरी सम्पर्क तथा सभाओं में भाग लेने तथा भाषण देने में हिचक महसूस होती है। साथ ही ये महिलाऐं पंचायतीराज संस्थाओं की दैनिक गतिविधियों के सम्पादन में भी सक्षम नहीं हो पाती हैं। ग्राम विकास से सम्बन्धित अनेक कार्य जनप्रतिनिधियों को करने होते है। और इन सब कार्यो को क्रियान्वित करने के लिए विभिन्न सरकारी दफ्तरों तथा सरकारी अधिकरियों और कर्मचारियों से सम्पर्क करना पड़ता है। और इस कार्य में ये शिक्षित अथवा अल्पशिक्षित महिलाऐं अयोग्य सिद्ध हो जाती हैं। अध्ययन की गयी महिला जनप्रतिनिधियों में से 41.9 प्रतिशत ने महसूस किया है। कि अशिक्षित महिलाओं को पूर्ण जानकारी नहीं होती है तथा वे अनुभवहीन होने के कारण अपने कार्यो के लिए दूसरों का सहारा लेती हैं।

भारतीय सामाजिक संरचना –भारतीय समाजिक संरचना में कुछ ऐसे तत्व विद्यमान है, जो एक ओर सामाजिक व्यवस्था एवं अनुशासन स्थापित करने में सहायक हैं, वहीं दूसरी ओर न केवल महिलाओं की राजनैतिक क्रियाशीलता में ही नहीं वरन् महिलाओं के सर्वतोन्मुखी विकास में बाधक भी सिद्ध होते हैं। हमारे समाज की सामजिक–आर्थिक संरचना ही इस तरह की है कि संविधान प्रदत्त समाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक अधिकारों का समुचित ढंग से उपयोग करने का उन्हें अवसर ही उपलब्ध नहीं हो पाता है। सामान्य सर्वेक्षणों से भी सामने आता रहा है कि पुरूष स्वयं राजनीति में भाग लेने के लिए अपनी पत्नी से अनुमति की आवश्यकता नहीं समझता, किन्तु पत्नी को राजनीतिक क्रियाकलापों में भाग लेने की लिए पति से अनुमति लेनी पड़ती है। यदि पत्नी बिना अनुमति अथवा पति के मना करने पर भी राजनीतिक क्रियाकलापों में भाग लेती है। तो वह पुरूष के लिए असहनीय हो जाता है उसके पति की अहं भावना को ठेस पहुचती है जबकी वास्तविकता यह है कि पिता, पति, पुत्र या अन्य पारिवारिक पुरूष सदस्यों के सहयोग के बिना महिलाओं की राजनीतिक क्रियाशीलता अत्यधिक दुष्कर है। भारत की 75 प्रतिशत जनता गाँवों में निवास करती है। ग्रामीण महिलाऐं घरेलू कार्य व सन्तानोत्पत्ति के आदर्श को अपनाते हुए परिवार की परिधि से बाहर निकलने के विषय में कम ही सोच पाती हैं, क्योंकी उनकी अपनी चेतना भी घर की चार दीवारों के भीतर ही सिमित है। उनका सम्पूर्ण सामाजीकरण मुख्य रूप से घर के भीतर के कार्यो की भूमिका के औचित्य का ही है।

घरेलू उत्तरदायित्व –निर्वाचित महिला जनप्रतिनिधियों का कहना है कि सभी घरेलू गौण उत्तरदायित्वों को पूरा करने की जिम्मेदारी भी उन्हीं की है भले ही उन्हें पंचायतीराज के किसी भी कार्य के लिए कहीं भी जाना हो, महिला प्रतिनिधियों का कहना है कि जब वे घर से बाहर चली जाती हैं तो घर का कार्य रह जाता है। महिलाऐं अपने घरेलु उत्तरदायित्वों से मुँह नहीं मोड़ सकती हैं। महिलाऐं ही घर की देखभाल, बच्चों व पालतु जानवरों की देखभाल करती हैं। पुरूष कभी भी उनके इन कार्यो में सहयोग करना पसन्द नहीं करता। चाहे घर के सभी सदस्य भूखे बैठे रहेंगे महिला देर–सवेर कहीं से भी आऐगी तो भोजन पकाने से लेकर घर के समस्त कार्यो की जिम्मेदारी उसी की मानी जाऐगी। परिणामस्वरूप 29.3 प्रतिशत महिला जनप्रतिनिधि घरेलु कार्यो के कारण पंचायत मीटिंगों में उपस्थित नहीं हो पाती तथा जनप्रतिनिधि के रूप में कुछ कार्यो को करना उनके लिए मुश्किल हो जाता है।

राजनीतिक अनुभव की कमी–महिला जनप्रतिनिधियों में से 30प्रतिशत

* सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

ने माना है कि उनको राजनीति का अनुभव नहीं है, इसलिए वे पंचायतीराज संस्थाओं के नियम व क्रियाकलापों के विषय में अधिक ज्ञान नहीं रखती, और न ही विकास सम्बन्धी कार्यो का अनुभव होने के कारण वे अपने जनप्रतिनिधित्व से सम्बन्धित कर्त्तव्यों का पूर्ण पालन कर पाती हैं। अध्ययन की गई महिलाओं में 25.2 प्रतिशत महिलाऐं परिवार एवं रिष्तेदारों की राजनीतिक महत्वाकांशा के कारण ही राजनीति में सदस्य बनती हैं। लगभग 78.8 प्रतिशत महिला जनप्रतिनिधि बाहर की दुनियाँ के विषय में अपने पति व पारिवारिक सदस्यों से सुचनाऐं प्राप्त करतीं हैं। 16.67 प्रतिशत महिलाऐं चुनाव प्रचार के दौरान स्वयं अपने लिए कभी वोट मांगने गई ही नहीं। 44.1 प्रतिशत महिलाओं ने पंचायतीराज की जानकारी पंचायती राज प्रशिक्षणों से ही प्राप्त की है। पुरूषों को महिलाओं की तुलना में अधिक राजनीतिक अनुभव होने का मुख्य कारण है कि पुरूष का कार्यक्षेत्र घर के बाहर माना जाता है जबकि महिलाऐं घर तक ही सीमित रह जाती हैं।

महिलाओं में व्यक्तिगत रूचि का अभाव –पंचायतीराज संस्थाओं में निर्वाचित महिला जनप्रतिनिधियों में से 24.8 प्रतिशत महिला जनप्रतिनिधियों में पंचायतीराज संस्थाओं में कार्य करने के प्रति रूचि नहीं पायी गयी है। क्योंकी अध्ययन की गई महिलाओं में से 23.0 प्रतिशत के परिवार में से पुरूष सदस्य किसी न किसी प्रकार से राजनीतिक से जुड़े रहें हैं। इन महिलाओं के परिवारों में पूर्व से ही राजनीति परिवेशश था जिसके कारण इनको पुरूष सदस्यों ने राजनीति में न रहते हुए भी राजनीतिक लाभ प्राप्त करने का माध्यम बनाया।

महिला आरक्षण व्यवस्था में चक्रानुक्रम (रोटेशन) पद्धति–इस पद्धति के कारण कुछ महत्वपूर्ण तथ्य सामने आए हैं मौजूदा महिला आरक्षण प्रणाली के तहत पहली बार चुनी गई प्रतिनिधियों में से सिर्फ 14.3 प्रतिशत ही दूसरी या तीसरी बार गैर आरक्षित चुनाव क्षेत्र से चुनी जाती हैं, जबकी पुरूषों में यह प्रतिशत 37 था। पहली बार चुनी गई 85.5 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों के लिए उनके राजनीति में प्रवेश करने में आरक्षण ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। किन्तु आरक्षण की घूर्णन प्रक्रिया के कारण दूसरी बार महज 14.3 प्रतिशत महिलाऐं ही चुनी गई, जिन महिला प्रतिनिधियों से बात की गई, उनमें से 11 प्रतिशत ने पुन: चुनाव लड़ा लेकिन पराजित हुई, जबकी 39 प्रतिशत ने रोटेशन के कारण चुनाव लड़ा ही नहीं। स्पष्ट है कि पुन: चुनाव न लड़ने का यह प्रतिशत महिलाओं के लिए आरक्षित सीटों की रोटेशन व्यवस्था पर पुन:विचार की ओर संकेत करता है।

महिलाओं की आर्थिक पराधीनता – महिलाओं की आर्थिक पराधीनता भी राजनीतिक क्रियाशीलता में महत्वपूर्ण बाधक तत्व है। नारी की आर्थिक पराधीनता मूलरूप से महिलाओं की राजनीतिक क्रियाशीलता में ही नहीं वरन् महिलाओं की निम्न स्थिति एवं उनकी पराधीनता का भी मूल कारण है। यह समाज का नियम है कि उत्पादन के साधनों पर जिसका भी वर्चस्व होता है, वही निर्णयात्मक स्थिति में होता है। आदि कृषि पर आधारित समष्टिमूलक मातृ सत्तात्मक अनार्य, द्रविड़ कबीले, पितृ सत्तात्मक पशुपालक आर्य कबीले से परास्त हो गये। पशुओं के स्वामी व लोहे की कला के माहिर आर्यो ने जब हल बैल से खेती प्रारम्भ की तो सारी व्यवस्थायें बदलने लगी। मातृसत्तात्मकता, पितृसत्तात्मकता में परिवर्तित होने लगी और आर्थिक परतन्त्रता ने उन्हें पूर्ण रूप से पराधीन बना दिया। मध्ययुग के सामंती काल तक आते–आते नारी मात्र पुरूष के उपभोग की ही वस्तु बन कर रह गई।

असुरक्षा का भय:–दिन–प्रतिदिन देश में महिलाओं के विरूद्ध अनैतिक एवं हिंसक वातावरण के कारण समाज में असुरक्षा का भय व्याप्त होता जा रहा है, जिसके कारण पंचायतीराज व्यवस्था में महिला जनप्रतिनिधियों का कार्य व व्यवहार भी प्रभावित होता रहा है। महिला प्रतिनिधियों के साथ छेड़छाड़, बलात्कार, यौन शोषण, मारपीट, तथा अन्य हिंसात्मक अपराध इत्यादि की घटनाऐं समय–समय पर सामने आती रहीं हैं। उदाहरण के लिए – 14 जुलाई 2007 को आन्ध्रप्रदेश के गोदावरी जिले की श्रंगवृक्षम पंचायत की महिला सदस्य धूला रत्नम को षड़यंत्रपूर्वक जिन्दा आग में जला दिया गया। राजस्थान में टोंक जिलें के एक गाँव की महिला सरपंच छवि राजावत तथा उनके पिता के साथ विपक्षी गुट ने रंजिश के कारण मारपीट की। इस तरह के अनगिनत उदाहरण दिये जा सकते हैं जो महिलाओं के विरूद्ध असुरक्षा का वातावरण बनाते हैं। और ऐसे वातावरण में महिलाओं को घर के बाहर निकलकर कर पंचायतों के कार्य हेतु विभिन्न सरकारी कार्यालयों के चक्कर काटना, दूसरे शहर जाकर रात्रि ठहराव करना असुरक्षित महसूस होता है। इसका प्रभाव उनके मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ता है जिसके कारण उनका राजनीति से मोहभंग होता है। तथा उनके पद सम्बन्धी क्रियाकलाप भी प्रभावित होते हैं। इस प्रकार से कहा जा सकता है कि पंचायतीराज व्यवस्था की प्रगति में ये तत्व बाधक बन रहे हैं साथ ही ये पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी पर भी नकारात्मक प्रभाव डाल रहे हैं।

पंचायतीराज व्यवस्था के सफल संचालन में आने वाली सामान्य बाधाऐं

वित्तीय संसाधनों की निश्चितता – वित्त ही आधुनिक प्रशासनिक व्यवस्थाओं का आधार है। पंचायतीराज संस्थाओं की मूल समस्या सम्प्रभूता की कमी तथा वित्तीय संसाधनों का अभाव है। विशेषत: ग्राम पंचायतों के पास ऐसे कोई ठोस संवैधानिक कर लगाने की शक्ति या क्षेत्र नहीं है, जो इन्हें आर्थिक रूप से सुदृढ कर सके। कुछ केन्द्रीय योजनाओं तथा राज्य सरकारों के द्वारा देय अनुदानों के आधार पर ही पंचायतों का वित्तीय संचालन हो पाता है। तमिलनाडू सरकार द्वारा ग्राम पंचायतों, पंचायत संघों (समिति) तथा जिला पंचायतों (परिषद्) को 10:45:45: के अनुपात में वित्तीय सहायता दी जाती है। ग्राम पंचायत को जहां सर्वाधिक अनुदान की आवश्यकता है, उसे ही सबसे कम अनुदान मिल रहा है। ग्राम पंचायतों की वित्तीय स्थिति सुधारने के लिए ऐसे संवैधानिक उपबन्ध करने की आवश्यकता है, जिससे की ग्राम पंचायत को कर लगाने का विशिष्ट क्षेत्र तथा अधिकार मिल जाए। उदाहरण स्वरूप गाँव से गुजरने वाले वाहनों, दुकानों, मेलो, संस्थाओं, आयोजनों तथा व्यवसायों इत्यादि पर ग्राम पंचायत को कर लगाने का एकाधिकार देना चाहिये। ताकि अन्य कोई सरकार या संस्था इन विषयों पर कर एकत्र न कर सके। जन आक्रोश की आशंका में ग्राम पंचायतें 'गृहकर' भी नहीं वसूलती हैं, जबकी गृहकर का रूपया गाँव विकास में प्रयुक्त होते देख अधिकांश ग्रामवासी सहर्श शुल्क प्रदान करतें है। पंचायतीराज तथा नगरीय स्वशासन संस्थाओं की वित्तीय समस्याओं के समाधान के लिए राज्य वित्त आयोग के गठन का प्रावधान कर दिये जाने से एकायक ऐसा लगता है कि इन संस्थानों की वित्तीय स्थिति सुधरने ही वाली है, किन्तु सच्चाई यह है कि अधिकांश राज्यों में प्रथम वित्त आयोगो ने केवल अनुदान की दर बढ़ाने अथवा राज्य के कुल बजट का 2 से 4 प्रतिशत हिस्सा स्थानीय संस्थाओं को देने की शिफारिशें की हैं। स्थायी रूप से वित्तीय स्त्रोत सुनिश्चित करने तथा नवाचार करने की दिशा में आयोग गम्भीर मनन तथा ग्रामीण क्षेत्रों का अध्ययन नहीं कर पाये। वस्तुत: सत्ता के विकेन्द्रीकरण के भारत में केवल नारे लगते हैं। प्रत्येक शीर्ष सत्ता चाहती है कि उसके अधीन कार्यरत संस्था या संरचना उसके निर्देशों के अनुसार चलें तथा आत्मनिर्भर न बन पाये क्योंकी यदि निम्न स्तरीय सत्ता ही आत्मनिर्भर

हो गई तो उच्च सत्ता का महत्व ही क्या रह जाता है।

नौकरशाही व्यवस्था में यथोचित संशोधन–पंचायतीराज व्यवस्था के समुचित विकास व जन –प्रतिनिधियों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु वर्तमान प्रशासनिक कार्य प्रणाली में यशोचित संशोधन आवश्यक है। ग्राम पंचायतों के द्वारा विकास कार्यो को मूर्त या व्यवहारिक स्वरूप प्रदान करने में नौकरशाही व्यवस्था साधक के स्थान पर बाधक ही अधिक सिद्ध हुई है। सैद्धान्तिक दृष्टि से पंचायतीराज संस्थाऐं अधिकार सम्पन्न कुशल तथा सक्षम दिखाई देती हैं, लेकिन वास्तविकता कुछ और ही है। राजस्थान के झालावाड़ जिले के एक सरपंच ने राज्य सरकार के पास अपना त्यागपत्र भेजते हुए प्रार्थना की थी कि उसे सरंपच के पद से मुक्त करके 'कृपया 'ग्रामसेवक' पद पर नियुक्ति दी जाए' सरपंच की यह वेदना भारत में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का कटु यथार्थ है हमारी त्रासदी यह है कि प्रत्येक नीति योजना या कार्यक्रम का निर्माण उच्च स्तरीय लोकसेवकों या नौकरशाहों द्वारा होता है। यही नौकरशाही इस तथ्य को भली–भाँती समझती है कि किन प्रावधानों के माध्यम से वह जनप्रतिनिधियों पर हावी रह सकती है। अत: पंचायतीराज संस्थाओं के प्रत्येक चरण तथा प्रत्येक गतिविधि में सरकारी कर्मचारियों की अनुमति आवश्यक बना दी गई है, जबकि संविधान में 29 विषय ऐसे रखे गए हैं, जो प्रत्यक्षत: पंचायतीराज संस्थाओं के अधीन होने चाहिये। इस दिशा में राजस्थान सहित कुछ प्रान्तों में आधे–अधूरे ढंग से विषयों का हस्तान्तरण हुआ है। अत: पंचायतों के निर्माण कार्यो में केवल ग्रामीणों की स्वीकृति ही पर्याप्त मानने का प्रावधान कर देना चाहिये ताकि भ्रष्टाचार को पनपने का अवसर नहीं मिल सके तथा कम से कम वे जनप्रतिनिधि जो ईमानदार, परिश्रमी तथा कर्त्तव्य निष्ठ है उन्हें कठिनाईयों का सामना नहीं करना पडे।प्रशासनिक व्यवस्था में भ्रष्टाचार को खत्म करने हेतु सरकार को कड़ें कदम उठाने चाहिऐ

जनप्रतिनिधियों पर यथोचित नियंत्रण–ग्राम पंचायतों में पंच तथा सरंपच एक ही दल के हों तथा उनकी आपसी समझ सुदृढ़ हो तथा वे अनैतिक कार्यो में लिप्त हो जाये। तो उन्हें किस प्रकार नियन्त्रित किया जाए, इसकी व्यवस्था पंचायतीराज प्रणाली में नहीं है। इसी प्रकार सरपंच व पंचों को जवाबदेह बनाने के लिए सशक्त विपक्ष की व्यवस्था भी नहीं है। अत: यह नहीं कहा जा सकता है कि पंचायतीराज व्यवाहरिक रूप में लोकतान्त्रिक व्यवस्था का विकेन्द्रीकरण है। भारत में पंचायतीराज संस्थाओं के त्रिस्तरीय ढांचे के प्रारम्भ की अनुशंसा करने वाली बलवन्तराय मेहता समिति ने इन संस्थाओं के प्रारम्भ से पूर्व ही प्रशासनिक अकुशलता, भ्रष्टाचार तथा प्रमुख जातियों के एकाधिकार की आशंका प्रकट कर दी थी। समिति ने यह सुझाया था कि इन समस्याओं से मुक्ति पाने के लिए पंचायतीराज के प्रशासनिक, संगठनात्मक तथा संरचनात्मक ढांचे में आवश्यकतानुसार परिवर्तन किये जाने चाहिये। राजस्थान में तो संविधान संशोधन अधिनियम के पश्चात् पंचायत के सदस्यों हेतु साक्षरता का उपबन्ध भी हटा दिया गया है। शिक्षा के प्रसार तथा पंचायतों की कार्य कुशलता के लिए यह आवश्यक है कि सरपंच एवं पंच अधिक शिक्षा प्राप्त चाहे न हो, तो कम से कम साक्षर अवश्य हो, ताकि वे सरकारी आदेश एवं योजना नियम इत्यादि पढ़ और समझ सकें। मध्यप्रदेश, बिहार, पंजाब, तथा हिमाचल प्रदेश के अतिरिक्त अन्य राज्यों ने 'न्याय पंचायत' या ग्राम कचहरी को भी समाप्त कर दिया है, जबकि आज भी अधिकांश मामले ग्राम पंचायतें स्वयं निपटाने में सक्षम है तथा उनमें ऐसा करने की स्वाभाविक रूचि एंव प्रवृति भी दिखाई देती है क्योंकी ऐसा बहुत बार होता है, जब सामाजिक मूल्यों तथा परम्पराओं का उल्लंघन होने पर उस प्रकरण का निस्तारण केवल स्थानीय स्तर की संस्था ही कर सकती है। जनता, जनप्रतिनिधि को जो भी जिम्मेदारी देती है उसका उन्हें अहसास होना चाहिये जिला प्रमुखों, प्रधानों को गाँव–गाँव में दौरे करने चाहिये। वहाँ रात्रि विश्राम करना चाहिए, ऐसा करने पर उन्हें जनता से फीडबैक मिलेगा। यह फीडबैक जनप्रतिनिधि उपर तक भेजें ताकि सही तस्वीर सामने आ सके।

जन सहभागिता में वृद्धि–सामुदायिक विकास कार्यो को गति एवं सफलता प्रदान करने के लिए स्थानीय जन–समूह का समर्थन तथा सहयोग नितान्त आवश्यक है। प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर अद्यतन निर्मित सभी कार्यक्रमों में जन–सहभागिता बढ़ाने की ओर ध्यान देने का आग्रह किया जा रहा है, किन्तु वास्तविकता यह है कि शासन के कार्यों में जनता की भागीदारी लगभग नगण्य रहती है। और परिणामस्वरूप वह कार्यक्रम पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं कर पाता है। परिवार नियोजन की अवधारणा का प्रचार, शिक्षा व स्वास्थ्य के प्रति चेतना, बाल–विवाह की रोकथाम, दहेज पर प्रतिबन्ध, भ्रष्टाचार नियन्त्रण तथा अन्य बहुत से सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में जनता की सहभागिता व्यापक रूप से सुनिश्चित न होने के कारण ही इन कार्यक्रमों को वांछित सफलता प्राप्त नहीं हुई है। राजनीतिक तथा प्रशासनिक कारणों से जनता तथा शासन के मध्य एक खाई खुदी रहती है। एक ओर शासन अपने कार्यो में गोपनीयता, कठोरता तथा संकीर्णता की प्रवृत्तियां अपनाता है वहीं दूसरी और जन–साधारण अपने को स्वतन्त्र देश का नागरिक समझते हुऐ प्रत्येक कल्याणकारी कार्य का दायित्व केवल सरकार के कंधो पर रखना चाहता है। शासन सत्ता में आम जनता की भागीदारी सुनिश्चित करना के लिए महिलाओं को एक–तिहाई स्थानों (राजस्थान में 50 प्रतिशत) पर तथा अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं पिछडें वर्गो को उनकी जनसंख्या के अनुसार आरक्षण दिया गया है।महिला तथा आर्थिक सामाजिक रूप से पिछड़ी जातियों को पंचायतीराज संस्थाओं में मिले प्रतिनिधित्व के पष्चात् जन–सहभागिता में नि:सन्देह अभिवृद्धि होनी अपेक्षित है।

प्रोत्साहन योजनाऐं –राजस्थान राज्य वित्त आयोग (प्रथम) की अनुशंसा पर राज्य सरकार ने श्रेष्ठ कार्य करने वाली ग्राम पंचायतों, पंचायत समितियों तथ जिला परिषदों को पुरस्कृत करने की योजना शुरू की थी। योजनान्तर्गत राज्य स्तर पर गरीबी उन्मूलन तथा विकास कार्यक्रमों की समयबद्ध क्रियान्विति करने वाली जिला परिषदों को प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय पुरस्कार के रूप में क्रमश: आठ, पांच, तथा तीन लाख रूपये प्रदान किये जाते हैं। तथा संभाग स्तर पर पंचायत समितियों को क्रमश: पांच, तीन तथा दो लाख रूपये एवं जिले में ग्ग्रम पंचायतों को दो लाख तथा पचास हजार रूपये के तीन पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं। चूंकि पुरस्कार एक प्रेरणा का कार्य करता है, अत: बहुत–सी ग्राम पंचायतें इस योजना की घोषणा के पष्चात् सक्रिय हो चुकी हैं। राजस्थान सरकार के समाज कल्याण विभाग द्वारा भी ग्राम पंचायतों के लिए एक प्रोत्साहन योजना संचालित हो रही है। अनुसूचित जाति कल्याण एवं विकास से सम्बन्धित कार्यक्रमों में श्रेष्ठता प्राप्त करने वाली ग्राम पंचायतों को राज्य स्तर पर 50 हजार का प्रथम पुरस्कार तथा 25 हजार का द्वितीय पुरस्कार एवं जिला स्तर पर पंचायत को तीस हजार का पुरस्कार प्रदान किया जाता है। इस प्रकार की योजनाओं में कारण प्रतियोगिता की कुशलता विकसित हो सकती है। इसी प्रकार केन्द्रीय पंचायतीराज मन्त्रालय भी श्रेष्ठ कार्य करने वाली पंचायतीराज संस्थाओं को पुरस्कार प्रदान करता है। एक अन्य क्रांन्तिकारी कदम के माध्यम से आन्ध्रप्रदेश, हरियाणा, महाराष्ट्र एवं राजस्थान में पंचायतों के माध्यम से

जनसंख्या नियंत्रण का कार्य किया गया है। राजस्थान पंचायतीराज एक्ट 1994 के अनुसार कोई भी सदस्य जिसके दो से अधिक सन्तान होगी वह इस व्यवस्था में सम्मिलित नहीं हो सकेगा। इस कानून के माध्यम से जनप्रतिनिधि छोटा परिवार रखने के लिए विवश हो रहे हैं। तथा इसका सीधा प्रभाव आम जनता पर पड़ता है।

निष्कर्षत: ग्राम पंचायतों के माध्यम से गाँवों के सर्वागीण विकास को गति प्रदान करने तथा कल्याणकारी गतिविधियों को लोकप्रिय बनाने के लिए यह आवश्यक है कि पंचायतीराज संस्थाओं की संरचना एवं कार्य प्रणाली का विषद अध्ययन कर तुलनात्मक रूप से श्रेष्ठ पाये जाने वाले प्रावधानों को राष्ट्रीय स्तर पर क्रियान्वित किया जाए, ताकि बापू का ग्राम स्वराज का सपना साकार हो सके। यह भी आवश्यक है कि 'पंचायती' (विवाद निस्तारण में मध्यस्थता) तथा 'राज' (सत्ता) को एक स्थान पर लाया जाए। अभी स्थिति यह है कि पंचायत का काम तो ग्राम पंचयतों, पंचायत समितियों तथा जिला परिषदों को सौंप दिया गया है। जबकी 'राज' नौकरशाही के पास है।

पंचायतीराज जन प्रतिनिधियों से प्राप्त सुझाव

पंचायतों की कार्य प्रणाली को सुव्यवस्थित करने व समस्याओं को दूर करने हेतु निम्नलिखित सुझाव जनप्रतिनिधियों से प्राप्त किये गऐ हैं।

1. पंचायतों के सुदृढीकरण हेतु सभी वर्गो के व्यक्तियों में एकता, सहयोग तथा सामंजस्य की भावना बढाकर, आर्थिक विषमता को दूर कर, विभिन्न दृष्टिकोणों, क्षेत्रों व संस्थाओं के बीच संवाद नियोजन किया जाये।
2. पंचायत जनप्रतिनिधियों को आवश्यकतानुसार प्रशिक्षण सुविधाऐं उपलब्ध करवायी जानी चाहिये।
3. पंचायतीराज संस्थाओं की निजी आय में वृद्धि हेतु इन संस्थाओं को करारोपण की अधिक छूट दी जाऐं तथा मण्डी टेक्स के नियमों में प्रावधित अनुपातिक राशि पंचायतीराज संस्थाओं को उपलब्ध करवाई जाये।
4. अधिकांश पंचायत समितियाँ तथा पंचायतें स्टाफ की कमी से जूझ रही हैं। अत: तत्काल रिक्त पद भरे जाऐं एवं पंचायत समितियों में निष्पादित किये जाने वाले कार्यो के आकार को दृष्टिगत रखतें हुए अपेक्षित स्टाफ उपलब्ध करवाया जाए।
5. पंचायतीराज संस्थाओं के तीनों स्तरों पर अदालती मुकदमों की भरमार है। ऐसी परिस्थिति में विकास अधिकारी सहित बहुत से कार्मिकों का समय अदालतों में नष्ट होता है। तथा इन अधिकारियों को विधि सम्बन्धी जानकारी भी नहीं है। अत: सुझाव है कि जिला परिषद् तथा पंचायत समिति स्तर पर विधि परामर्षी का पद सृजित किया जाए।
6. तीनो स्तरों की पंचायतीराज संस्थाओं के अधीन कार्यरत लोकसेवकों का जब सम्बन्धित विभाग स्थानान्तरण करें तो पंचायतीराज संस्थाओं से अवष्य परामर्ष किया जाना चाहिये।
7. ग्राम पंचायत स्तर पर ग्रामसेवक के अतिरिक्त एक अन्य लिपिक तथा सहायक कर्मचारी भी पदस्थापित किया जाना चाहिये।
8. ग्राम सभा में लिए गए निर्णयों का सम्मान होना चाहिये तथा उसके अनुरूप किसी कार्य की क्रियान्विति हो तो उस पर रोक नहीं लगनी चाहियें।
9. पंचायतों से जुड़े समस्त लोकसेवकों की कार्यप्रणाली का अंकेक्षण किया जाना चाहिये।
10. विकासात्मक सूचनाओं का शीघ्रातिषीघ्र गाँव तक व्यापक स्तर पर प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिये।
11. पंचायतों में बढ़ती औपचारिकताओं को कम किया जाये तथा पंचायत में प्रत्येक सदस्य को मार्गदर्शिका उपलब्ध करवायी जानी चाहिये।
12. पंचायतीराज संस्थाओं के चुनावों में मतदान व्यवस्था को अनिवार्य करते हुए उन मतदाताओं पर 50 रूपये तक का दण्ड लगाया जाना चाहिये जो मतदान प्रक्रिया में भाग नहीं लेते हैं इससे राजनीतिक सत्ता पर योग्य प्रतिनिधि ही आरूढ़ होंगे और राष्ट्र एक निश्चित दिशा में प्रगति कर सकेगा।
13. स्थानीय स्तर पर सभी संसाधनों (मानव, प्राकृतिक तथा आर्थिक) पर नियत्रण करके उनका पंचायत द्वारा विकास किया जाये, इस तथ्य पर जोर दिया जाना चाहिए जिससे इन संसाधनों के दुर उपयोग को रोका जा सकें।
14. किसी भी पंच या संरपच के वर्ष की एक तिहाई बैठकों से अधिक में अनुपस्थित रहने पर उसका पद रिक्त किये जाने की कार्यवाही की जानी चाहिये।
15. वित्तीय व्यवस्था को सुधारने हेतु पंचायतों को ऋण की सुविधायें प्रदान की जानी चाहिये जिसके लिए पंचायतीराज वित्त निगम का गठन किया जाना चाहिये।
16. साक्षरता, आयु इत्यादि के साथ-साथ प्रधान तथा सरंपच के लिए कुछ निश्चित वर्ष तक के अनुभव को भी उसकी योग्यता या पात्रता मापदण्ड में निर्धारित किया जाना चाहिये।
17. पंचायत के निर्वाचित प्रतिनिधियों को राजनीति में सक्रियता तथा जागरूकता हेतु प्रशिक्षण शिविरों के माध्यम से प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये।
18. जन सामान्य में विशेष मुद्दों के प्रति जागरूकता एवं दिलचस्पी पैदा की जानी चाहिये तथा उन्हें अहसास करवाया जाना चाहिये कि ये सभी विकास कार्य उन्हीं के लिए किये जा रहे हैं। ग्रामीण जनता को व्यक्तिगत या सामुदायिक स्तर पर जनकल्याण के कार्यक्रमों में भूमिका अदा करने हेतु प्रेरित किया जाना चाहिये। सरकार या सम्बन्धित योजना विभाग के लिए यह आवश्यक है कि वे जनसामान्य को किये जा रहे विकास कार्यो की जानकारी दें क्योंकी जानकारी से उनमें सार्वजनिक राजकार्य के प्रति जागरूकता आयेगी व इससे उत्प्रेरण होगा और उत्प्रेरण का परिणाम सकल कार्यवाही पर क्रियान्वित होगा।
19. जिस किसी क्षेत्र में विद्युत कटौती की जाए या कोई महत्वपूर्ण कार्यक्रम हो तो सरपंच तथा अन्य जनप्रतिनिधियों को भी सूचित किया जाना चाहिये।
20. शहरी क्षेत्रों के समीप स्थित ग्राम पंचायतों के सरपंचो को सम्बन्धित नगर विकास न्यास में प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिये।
21. पंचायतीराज संस्थाओं में विशेषत ग्राम पंचायत स्तर पर अतिक्रमण मुकदमें तथा विवादों की बहुत सारी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती है। अत: ग्राम पंचायत स्तर पर पुलिस कर्मचारी भी उपलब्ध करवाऐ जाने चाहिये।
22. ग्राम पंचायतों में नियुक्त किये गए ग्राम सेवक विभिन्न विभागों से आए अधिशेष कर्मचारी यथा-केटल गार्ड, नाका गार्ड आदि लगाये गये हैं, जिन्हें पंचायतीराज की कार्यप्रणाली का न तो अनुभव है और न ही उनमें पर्याप्त कौशल है। इस प्रकार के अक्षम कर्मचारियों से ग्राम पंचायतों का कार्य निष्पादित नहीं हो सकता है। बेहतर कार्य निष्पादन हेतु ग्राम सेवक पद पर कम से कम स्नातक स्तर का व्यक्ति पदस्थापित किया

जाना चाहिये।

23. पंचायतों को दिये गये दायित्वों के सफल निष्पादन हेतु समस्त स्तर के जनप्रतिनिधियों हेतु न्यूनतम शैक्षिक योग्यता निर्धारित की जानी चाहिये।
24. ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में मस्टरोल (एम0बी0, माप पुस्तिका) उपयोगिता प्रमाण पत्र, पूर्णता प्रमाण पत्र, निविदा, वाउचर, फोटो तथा अन्य बहुत सारी प्रक्रियाओं के कारण ग्राम पंचायत स्तर पर जटिलताऐं उत्पन्न हो गई हैं। अतः सुझाव है कि इन प्रक्रियाओं में सरलता लायी जाए। केवल पूर्ण कार्य की माप एवं गुणवत्ता के आधार पर मूल्यांकन होना चाहिये।
25. पंचायत समिति तथा जिला परिषद सदस्यों और पंचो को जो मानदेय दिया जा रहा है। वह नाममात्र का है। इसके अभाव में ये सदस्य पंचायतीराज संस्थाओं में अपनी रूचि प्रदर्शित नहीं कर पा रहे हैं।
26. विकास अधिकारी का पद किसी भी स्थिति में प्रतिनियुक्ति पर नहीं भरा जाना चाहिये। अपितु इस पद हेतु राजस्थान विकास सेवा का गठन करके एक स्थायी तथा सक्षम अधिकारी पदस्थापित किया जाना चाहिये।
27. ग्रामसभा में कोरम की न्यूतम अनिवार्यता को कठोरता से लागू किया जाना चाहिये इस प्रयोजन हेतु ग्राम सभा बैठक की तिथि पर्याप्त समय पूर्व तय की जानी चाहिये और व्यापक प्रचार–प्रसार की कार्यवाही सुनिश्चित की जानी चाहिये ताकि ग्रामसभाऐं अपने निर्दिष्ट दायित्वों को पूर्ण करने में सफल बन सके। बी0पी0एल0 के चयन के समय ग्रामसभा पूर्ण कोरम को सुनिश्चित करने के लिए एक राजपत्रित अधिकारी ग्राम सभा में अवष्य पहुचना चाहियें।
28. क्षेत्रीय भ्रमणों के लिए जिला प्रमुख तथा प्रधान को वर्तमान में उपलब्ध वाहन सुविधा में कई शर्ते लगा रखी हैं, फलस्वरूप ये जन प्रतिनिधि इस तरह के नियमों के कारण असुविधा महसूस करतें हैं। बेहतर पर्यवेक्षण की दृष्टि से उन्हें स्थायी रूप से वाहन उपलब्ध करवाया जाए ताकि ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का पर्यवेक्षण बेहतर ढंग से हो सके।
29. प्रधान तथा जिला प्रमुख के पास स्वयं का निजी स्टाफ होना चाहिये जिसमें एक निजी सहायक, एक टाइपिस्ट तथा एक सहायक कर्मचारी अवश्यक हो।
30. विभागों के हस्तान्तरण के समय पर्याप्त मात्रा में बजट तथा विभाग से सम्बन्धित तकनीकी उपकरणों एवं संसाधनों का भी हस्तान्तरण होना चाहिये।
31. पंचायतीराज संस्थाओं को जिन विभागों का हस्तान्तरण किया जाए, वह विस्तृत, सम्पूर्ण तथा स्पष्ट दिशा निर्देशों के साथ अपेक्षित स्टाफ एवं बजट सहित हस्तान्तरित किया जाए। वर्तमान में कोष कार्य तथा कार्मिकों के आधे –अधूरे हस्तानतरण के कारण निचले स्तर पर असमंजस की स्थिति अनुभव की जा रही है।

महिला जनप्रतिनिधियों के राजनैतिक सशक्तिकरण में आने वाली बाधाओं को दूर करने के उपाय – महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण से यहाँ पर यह तात्पर्य नहीं कि सम्पूर्ण नारी समाज राजनीति के खेमें में ही कूद पडे और सत्ता का उपयोग करें अपितु आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं को पुरूषों के समकक्ष समाज में सम्मान दिया जाए एवं उन्हें भी महत्वपूर्ण समझा जाए। उन्हें जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रवेश करने के समान अवसर उपलब्ध करवाये जाऐं, जिससे वे एक सजग प्रहरी की भाँति राजनीति के क्षेत्र में प्रवेश कर नारी वर्ग के अधिकारों की सुरक्षा करने के साथ–साथ, देश के विकास में अपना पूर्ण योगदान दे सकें। नारी की वर्तमान स्थिति को दृष्टि में रखते हुए, यदि निम्नांकित प्रयास किये जाऐं तो महिलाऐं अन्य क्षेत्रों की भांति राजनीति के क्षेत्र में भी प्रवेष कर महिला वर्ग के सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक अधिकारों को सुरक्षा प्रदान करने के साथ–साथ देश के विकास में भी निष्चय ही अपना बहुमूल्य योगदान दे सकेंगी।

73 वें संविधान संशोधन के अन्तर्गत पंचायतीराज संस्थाओं में महिलाओं को मिले एक –तिहाई आरक्षण के पश्चात् राजस्थान में हुए चुनावों में वे न केवल बड़ी संख्या में दूसरी बार चुनकर आयी हैं अपितु उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाई है। इसे और अधिक सफल व प्रभावी बनाने के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं।

1. **प्रशिक्षण कार्यक्रमों का विस्तार –** यद्यपि अनेक प्रशिक्षण संस्थान विकास कार्यकर्ताओं की प्रशिक्षण सम्बन्धी कई तरह की अत्यंत आवश्यक जरूरतों को पूरा करने में लगे हुए हैं। लेकिन स्वशासन की प्रक्रिया से जुडे पंचायतीराज महिला जनप्रतिनिधियों के लिए प्रशिक्षण सुविधाओं की कमी अब भी महसूस की जा रही है। इसलिए दो प्रमुख क्षेत्रों में प्रशिक्षण के लिए आवश्यक नीति बनायी जानी चाहिये, प्रथम महिला जनप्रतिनिधियों द्वारा अपनी जिम्मेदारी और स्वशासन प्रक्रिया को स्पष्ट में न समझ पाने की समस्या का समाधान, द्वितीय पंचायतीराज प्रणाली के माध्यम से सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन लाने के लिए प्रशिक्षण की कारगर नीति और विधियों का विकास। अक्सर यह देखने में आता है कि महिला जनप्रतिनिधियों में पंचायतीराज संस्थाओं के कार्य एवं उनके अधिकारों व कर्त्तव्यों की जानकारी का अभाव पाया गया है इसलिए आवश्यक है कि ग्राम स्तर पर अधिक से अधिक गहन प्रशिक्षण आयोजन किये जाये तथा आयोजित प्रशिक्षणों में व्यवहारिक जानकारी अधिक दी जाये तथा महिलाओं को खुला वार्तालाप करने एवं उनकी शंकाओ के समाधान करने आदि की प्रशिक्षण में पूर्ण व्यवस्था हो, प्रशिक्षण ग्राम पंचायत एवं जिला स्तर पर समय–समय पर आयोजित किये जाने की समयबद्ध सारणी निर्धारित की जाये।महिला जनप्रतिनिधियों को पंचायतीराज संस्थाओं में उनके संवैधानिक अधिकारों एवं दायित्व शक्तियों ओर कर्त्तव्यों की जानकारी दी जानी चाहिय
2. **शिक्षा व साक्षरता अभियान –** पंचायतीराज महिला जनप्रतिनिधियों का अपने कर्त्तव्यों के निर्वहन तथा राजनीतिक सहभागिता में अभिवृद्धि हेतु शिक्षित होना आवश्यक है। अतः शिक्षा के प्रसार व साक्षरता सम्बन्धि अभियान चला कर पंचायतीराज संस्थाओं की महिला जनप्रतिनिधियों को पूर्णतः साक्षर बनाने का अभियान चलाया जाना चाहिये। स्वयंसेवी संगठन षिक्षण संस्थाओं के अतिरिक्त राष्ट्रीय साक्षरता मिषन भी दूर दराज के अविकसित क्षेत्रों में विशेषतः, अशिक्षित महिला प्रतिनिधियों को साक्षर बनाने व जन कार्यो के सम्बन्ध में अवगत करवाने में अग्रणी भूमिका निभा सकता है।पंचायत संस्थाओं के चुनाव में सम्मिलित होने हेतु शिक्षा सम्बन्धी कानून लागू करके शिक्षित महिला जनप्रतिनिधि प्राप्त कर सकती है। शिक्षा ज्ञान का ही नहीं अपितु गुणों व संस्कारों की प्राप्ति का माध्यम है अतः जब शिक्षित महिला जनप्रतिनिधि चुन कर आऐंगी तो पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं की भूमिका सही अर्थों में सार्थक
3. **नियमित वेतन भत्तों की व्यवस्था –** किसी भी पद पर कार्यरत कार्मिक वह चाहे सरकारी कर्मचारी हो अथवा जनप्रतिनिधि तब तक कार्य करने के लिए प्रेरित नहीं होगा जब तक उसे कोई आर्थिक लाभ या भत्ता

प्राप्त नहीं हो रहा हो। पंचायतीराज संस्थाओं में जनप्रतिनिधियों को नाममात्र के वेतन भत्तो तथा वाहन सुविधा निश्चित दिनों के लिए शर्तों के साथ मिल रही है। सांसद तथा विधायक भी जनप्रतिनिधि होते हैं तथा पंचायतीराज संस्थाओं के प्रतिनिधि भी जन प्रतिनिधि ही होते हैं। जब उन्हें अच्छा वेतन तथा भत्ते तथा अलग से सांसद विधायक कोष मिल रहा है। तो पंचायतीराज संस्थाओं के प्रतिनिधियों को भी अलग से कोष नहीं तो कम से कम जायज मेहनताना अवश्य मिलना चाहिये।

वित्तीय अधिकार– पंचायतीराज संस्थाओं को आवंटित राशि से विकास कार्यों हेतु जो राशि सीधी ग्राम पंचायत को भेजी जाती है, उसमें से कुछ निष्चित भाग वार्ड सदस्यों को आवंटित कर दिया जाना चाहिये तथा पंचायतीराज संस्थाओं एवं जिला परिषद सदस्यों को भी अलग से राशि आवंटित की जाये ताकि वे अपने कोटे की आवंटित राशि में से विकास कार्य करवा सकें। वर्तमान में केवल सरपंच ही वित्तीय अधिकार रखता है। अन्य सदस्यों के पास आर्थिक शक्तियाँ नहीं हैं। वित्तीय शक्तियों के अभाव में अन्य सदस्यों की भूमिका नगण्य रहती है। अत: प्रत्येक निर्वाचित प्रतिनिधि को वित्तीय अधिकार दिये जाने चाहिये।

4. विशेष ग्राम सभा – समय–समय पर केन्द्र व राज्य सरकारें महिलाओं से सम्बन्धित मुद्दों पर ध्यानाकर्षण के लिए विशेष प्रयत्न करती रहीं हैं। इसी प्रकार का प्रयत्न, अक्टूबर 2012 में किया गया जब सभी ग्राम पंचायतों से अक्टूबर, 2012 में किसी भी दिन महिला केन्द्रित मुद्दों पर सभा आयोजित करने का अनुरोध किया गया। इसी प्रकार के और प्रयत्न करने की आवश्यकता है। इस प्रकार की पंचायतें एवं महिला सभा, बालिकाओं एवं महिलाओं की समस्याओं को दूर करने के लिए विशेष कार्यवाही करेंगी। जैसे सार्वजनिक स्थलों पर उत्पीड़न, घरेलू हिंसा समय से पूर्व मातृत्व, भोजन एवं चिकित्सा सेवा का अपर्याप्त प्रबन्ध इत्यादि। इस प्रकार के प्रयत्न करने से न केवल पंचायत महिला प्रतिनिधि अपितु समस्त महिला समाज लाभान्वित होगा। तथा महिलाऐं सशक्तिकरण की दिशा में एक ओर कदम उठायेंगी। इस प्रकार विशेष महिला ग्राम सभाओं के आयोजन से महिला जनप्रतिनिधि व ग्राम पंचायतों की महिलाओं में आत्मविश्वास जगेगा। जिसका लाभ समस्त समाज को होगा।

5. पारिवारिक उत्तरदायित्वों को सहज बनाया जाए– परिवार समाज की महत्वपूर्ण इकाई है, और महिला परिवार में धूरी की भूमिका अदा करती है। प्रकृति ने महिला को संतति–जनन का जो विशेष उत्तरदायित्व सौंपा है, उसके कारण परिवार में माँ, पत्नी बहू, के नाते पूरे परिवार के घरेलू उत्तरदायित्वों का भार महिला के उपर आ पड़ता है।

हमारे देश की सामाजिक संरचना एवं परम्पराऐं भी स्त्री एवं पुरूष के प्रति सामान व्यवहार नहीं करती। जबकि शिशु जन्म के लिए स्त्री एवं पुरूष दोनों ही पूर्ण रूप से उत्तरदायी होते हैं, इसलिये उनके पालन–पोषण का पूर्ण उत्तरदायित्व पति और पत्नी दोनों का ही है। न कि केवल महिला का। जबकी वर्तमान में महिलायें आर्थिक सहभागिता के लिये कन्धे से कन्धा मिलाकर पुरूष के साथ चलने एवं जीवन रूपी नाव को खेने में बराबरी का साथ निभाने का प्रयास कर रही है। ऐसी स्थिति में समस्त पारिवारिक उत्तरदायित्व केवल नारी पर ही छोड़ दिये जाए यह उचित नहीं है।

अब आवश्यकता इस बात की है कि चाहे स्त्री हो या पुरूष दोनों ही पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक उत्तरदायित्वों को समान रूप से वहन करें। साथ ही आवश्यकतानुसार यथा सम्भव एक दूसरे को पूर्ण सहयोग करें, ताकि सम्पूर्ण राष्ट्र प्रगति के पथ पर अग्रसर हो सके। महिलाओं की राजनैतिक क्रियाशीलता हेतु पारिवारिक सदस्यों का सामंजस्य भी अति आवश्यक है। पति–पत्नी ही नहीं अपितु परिवार के सभी सदस्यों को एक दूसरे की प्रतिभा, योग्यता को पहचानते हुए आपसी सौहार्द की भावना से उनकी निहित शक्तियों के प्रकटीकरण एवं उपयोग के अवसर प्रदान करते हुए प्रत्येक स्तर पर उदार, प्रगतिशील दृष्टिकोंण अपना कर यथासंभव उन्नति के पथ पर अग्रसर करने का प्रयत्न करना चाहिये। अधिकारों के साथ–साथ उत्तरदायित्वों को भी वहन करना होगा। किसी होड़ प्रतिद्वंदिता या नारेबाजी से नहीं, वैचारिक शक्ति का संबल लेकर सुनियोजित ढंग से सामाजिक परिवर्तन के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहना होगा।

6. महिलाओं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोंण का विकास– वर्तमान युग प्रतियोगिता का युग है। यद्यपि भारतीय कानून महिलाओं को पूर्ण समानाधिकार प्रदान करता है किन्तु अधिकांश महिलाओं की स्थिति आज भी अत्यन्त सोचनीय है आज भी हम सदियों पुरानी उन सड़ी गली रूढ़ियों एवं परम्पराओं में जी रहे हैं। जो महिलाओं की ही प्रगति में नहीं वरन् सम्पूर्ण देश के विकास में बाधक होने के साथ–साथ घातक भी सिद्ध हो रही हैं। अत: आवश्यकता इस बात की है कि बुद्धि एवं तर्क के आधार पर हम प्राचीन विकृत रूढ़ियों एवं परम्पराओं का परित्याग कर वैज्ञानिक ढंग से सोचने–समझने का प्रयास करें। ताकि हम स्वयं को विश्व उपयोगिता की दौड़ में अग्रिम पंक्ति में लाकर खड़ा कर सकें।

वास्तविकता यह है कि महिलाओं के लिए हमने बडे-बडे पदो पर आसीन होने के मार्ग तो खोल दिए, किन्तु उनके प्रति एक गहरी व विस्तृत सोच रखने में अक्षम है। हम महिलाओं के प्रति अपने हृदय के द्वार अभी तक नहीं खोल पाए हैं। वह महिला चाहे किसी भी पद पर आसीन हो या फिर पंचायतीराज संस्थाओं से जुड़ी हुई महिला जनप्रतिनिधि हो, सभी के प्रति समाज विशेषकर पुरूष वर्ग की सोच नकारात्मक रहती है वे उनकी योग्यताओं और क्षमताओं पर बराबर सन्देह करतें रहते हैं। यहाँ तक की उनका अपना परिवार भी उनके प्रति पूर्वाग्रहों से ग्रस्त रहता है निर्बल मान कर उन्हें संरक्षित करने का प्रयास करता है। ये बात और है कि संरक्षण के नाम पर महिला जनप्रतिनिधियों के पति अथवा पुत्र उनके अधिकारों को ही हस्तगत कर लेते हैं। यही कारण है कि भारतीय पंचायतीराज संस्थाओं में सरपंच पति, सरपंच पुत्र, प्रधान पति, प्रधान पुत्र जैसे अस्तित्व हीन पदों का बोलबाला रहा है। महिलाओं को केवल कानूनी अधिकार प्रदान कर दिये जाने मात्र से वे समानाधिकार का उपभोग कर सकने में सक्षम नहीं है। यहाँ पर आवश्यकता है सामाजिक परिवर्तन की ओर वह सामजिक परिवर्तन न तो एक दिन में संभव है और न केवल महिलाओं के ही सामर्थ्य की बात है। वस्तुत: सामाजिक परिवर्तन तभी सम्भव होगा जब स्त्री और पुरूष दोनो ही सामाजिक परिवर्तन हेतु प्रयास करें।

इसके साथ ही आवश्यकता इस बात की भी है कि भारतीय नारी को जिसे जन्म से ही भेदभाव का सामना करना पड़ता है। पुरूष से स्वयं को हीन समझने की पारिवारिक शिक्षा प्रदान की जाती है फलस्वरूप अंत तक पत्नी बनने पर भी वह स्वयं को हीन समझने लगती है। यह हीन भावना महिलाओं के विकास में बाधक है। इस स्थिति से निपटने के लिए महिलाओं को चाहिये कि वे स्वयं के मन से हीन भावना को निकालें पंचायतीराज में जनप्रतिनिधि महिलाऐं विशेष रूप से शिक्षित महिलाओं का दायित्व है कि वे ग्रामीण महिलाओं के अन्दर निहित योग्यता एव प्रतिभा को प्रबुद्ध करने का प्रयास करें ताकि वे स्वयं को हीन भावना से पृथक रख सकें।

जहाँ एक और महिलाऐं हीन भावना से ग्रसित दिखाई देती हैं, वहीं दूसरी ओर पुरूषों में भी अंहकार की भावना घर कर चुकी है, जिसके फलस्वरूप वे सभी स्त्रियों को शारीरिक, बौद्धिक एवं सभी दृष्टियों से हीन एवं स्वयं को सर्वोपरि समझते हैं इसलिए वे राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं का प्रवेश उचित नहीं समझते उनमें पूर्वधारणा जन्म ले लेती है, कि महिलाऐं राजनीति के क्षेत्र के लिए योग्य नहीं हैं। अत: पुरूषों को भी चाहिये कि वे महिलाओं के प्रति पूर्वाग्रहों का परित्याग करें और उन्हें भी प्रबुद्ध नागरिक समझें। यद्यपि यह सही है कि पुरूषों की भांति महिलाओं को भी समुचित शिक्षा, स्वस्थ वातावरण एव सही दिशा निर्देश मिले तो उनमें लगन, ईमानदारी, निष्ठा, त्याग एवं परिश्रम करने की क्षमता इतनी अधिक होती है कि वे पुरूषों की तुलना में श्रेष्ठ प्रमाणित हो सकती हैं।

इस प्रकार की भावनाओं का प्रादुर्भाव करने के लिए जन सम्पर्क के समस्त साधनों जैसे-रेडियों, टेलिविजन, सामाचार पत्र, चलचित्र, विचार, गोष्ठियाँ, महिला संगठन चर्चा आदि-आदि का प्रयोग कर समाज में स्वस्थ वातावरण के निर्माण का प्रयास किया जाना चाहिये।

7. आन्तरिक चेतना का प्रादुर्भाव- किसी भी अधिकार को प्राप्त करने के लिए मेहनत, संघर्ष, प्रयत्न और त्याग करना पडेगा। पंचायतीराज में महिला आरक्षण के लिए कोई संघर्ष या आंदोलन नहीं चलाया गया था। यह अधिकार महिलाओं को बिना माँगे मिल गया था। न तो ग्रामीण महिलाऐं संगठित होकर संघर्ष की प्रक्रिया में उतरीं और न ही उनकी समझ व चेतना में इस अधिकार के विषय में कोई जागरूकता आई है। इसलिए जो हक उन्हें मिलता है उसे समझने की चेतना जगानी आवश्यक है ताकि जिस उद्देश्य को लेकर महिला आरक्षण का प्रावधान किया गया था। वह पूरा हो सके।

8. पंचायतीराज संस्थाओं में वास्तविक सदस्य ही भाग ले- अभी तक पंचायतीराज संस्थाओं में महिला प्रतिनिधियों के परिवार के पुरूष ही भाग लेते आ रहे हैं। यदि ऐसा ही चलता रहा तो कितने ही प्रयास हम या सरकार कर लें महिलाऐं अपनी वास्तविक स्थिति प्राप्त नहीं कर पाऐंगी इसलिए दृढतापूर्वक, पंचायत की बैठकों में महिला प्रतिनिधियों के साथ आए पुरूषों को बैठकों में सम्मिलित होने से रोकना होगा। जून, 2009 में तात्कालीन पंचायतीराज मंत्री भरत सिंह ने जयपुर में होने वाली महिला प्रतिनिधियों की सेमिनार में महिलाओं के साथ आए पुरूषों को बैठक में भाग नहीं लेने दिया । इसी तरह की प्रतिबद्धता हर ग्राम पंचायत समिति व जिला परिषद में होने वाली बैठकों में दिखानी होगी। तभी महिला सरपंच जब स्वयं बैठकों में भाग लेगी तो उनमें आत्मविश्वास आऐगा। धीरे-धीरे उनका संकोच दूर होगा तथा बैठकों में क्या मुददे उठतें हैं, किस तरह प्रस्ताव लाते हैं और पास होते हैं, आदि बातें सीख पाऐंगी।

9. पंचायतीराज विभाग के कर्मचारियों की मनमानी पर अंकुश - पंचायत समिति के अधिकारी व कर्मचारी महिला संरपचों की नहीं सुनते हैं जब सरकारी प्रशासन ही चेतना शून्य रहेगा, जो कि अपेक्षाकृत समझदार व शिक्षित है तो इन महिला जनप्रतिनिधियों से कैसे उम्मीद कर सकते हैं कि वे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हों जबकि ये केवल साक्षर ही होती हैं और बाहर की दुनिया से लगभग अनजान होती हैं।

महिला जनप्रतिनिधियों में से अधिकांश ने सरकारी प्रशासन द्वारा सहयोग नहीं दिए जाने की बात साक्षात्कार के दौरान स्वीकार की। इसलिए यहाँ आवश्यकता इस बात की है कि पंचायतीराज संस्थाओं में कार्यरत सरकारी अधिारियों एवं कर्मचारियों के व्यवहार को नियंत्रित करने हेतु सरकार को कुछ ठोस कदम उठाने चाहिये इन संस्थाओं में कार्यरत सरकारी प्रतिनिधियों का व्यवहार उत्तरदायित्व और निष्ठा से परिपूर्ण होना चाहिये वे जनप्रतिनिधि विशेषकर महिला जनप्रतिनिधियों के पथ प्रदर्शक होने चाहिये।

सचिव या ग्रामसेवक महिला प्रतिनिधि का सहयोग नहीं करते हैं, ऐसे सचिव या पटवारी की शिकायत होने पर प्रशासन को तुरन्त कार्यवाही करनी चाहिये ताकि एक महिला जनप्रतिनिधि अपना काम बिना बाधा के कर सके।

10. पुरूष सहयोगी द्वारा महिलाओं को प्रशिक्षित किया जाये- यह तर्क दिया जाता है कि सरपंच अथवा प्रधान पति ही इन महिला प्रतिनिधियों के सारे कार्य करतें हैं तो सबसे पहले उस पुरूष वर्ग को इस बात का अहसास कराया जाए कि वह महिला प्रतिनिधियों की कमजोरी बनने के बजाए उनकी ताकत बनें। स्वयं सारा कार्य करने की अपेक्षा पुरूषों द्वारा पंचायत के प्रत्येक कार्य को उन्हें सीखाना चाहिये ताकि वह महिला प्रतिनिधि सशक्त बन सके, क्योंकि एक महिला का सशक्त होना उसके परिवार की तरक्की का भी धोतक है। अत: अपने परिवार और आगे चलकर सारे समाज के सुधार के लिए सरपंच पति, प्रधानपति कहलाने वाले पुरूषों को महिला प्रतिनिधियों का संबल बनना चाहिये न कि उनकी बैसाखी। जुलाई, 2014 में सरकार ने फैसला किया है कि ऐसी महिला सरपंच, पंच अथवा प्रधानों के विरूद्ध सख्त कार्यवाही की जायेगी। जिनका कार्य उनके परिवार का पुरूष सदस्य सम्भालता हो, ऐसी महिला सरपंचों को अपने पद से हाथ भी धोना पड़ सकता है। सरपंच पतियों, प्रधान पतियों की अब ख़ैर नहीं।

11. एक अन्य कारण, जो महिला प्रतिनिधियों की प्रगति के मार्ग में बाधा उत्पन्न करता है, वह है राजस्थान में सदियों से चली आ रही पर्दा प्रथा। जिसके कारण महिला जनप्रतिनिधि चाहकर भी कुछ नहीं बोल पातीं हैं। वह पर्दा प्रथा ही है। जिसके कारण योग्य, तथा, शिक्षित होने के पष्चात् भी महिलाऐं अपनी योग्यता का पूरा लाभ नहीं उठा पातीं हैं। अत: सर्वप्रथम तो घूँघट प्रथा को समाप्त करने के उपाय करने होंगे, तभी उनमें आत्मविश्वास आऐगा, क्योंकीं अधिकांश महिला सरपंच बैठकों में इसलिए नहीं बोल पाती है, क्योकीं उन्होंने घूँघट किया हुआ होता है। उनके सामने बैठे ग्रामवासी ससुराल पक्ष के होते हैं। अत: उनमें यह चेतना जागृत की जाए कि जब तक वह घूँघट या पर्दा करती रहेंगी, तब तक आगे नहीं बढ़ सकेंगी और जो पद उन्हें प्राप्त हुआ है उस पद को न्याय नहीं मिल पाएगा। मौजूदा व्यवस्था के सारे जन-विरोधी चरित्र पहचानने के बाद भी महिला, जो दुनियाँ का आधा हिस्सा है, उसे राजनीति के हर प्रकरण में भाग लेना चाहिये मगर हम इस बात पर स्पष्ट है कि बिना सही दिशा तथा सही वैकल्पिक राजनीति के जितनी भी महिलाऐं पदों पर आरूढ़ होंगी, वे सभी इसी भ्रष्ट व भेदभाव पूर्ण व्यवस्था को ही मजबूत करेंगी।

इस प्रकार अपनी अनेक कमियों और दुर्बलताओं के बावजूद राजस्थान में पंचायतीराज ग्रामवासियों की जीवन-पद्धति का केन्द्र बनता जा रहा है। अशिक्षित जनता जातिगत और धर्मगत अन्धविश्वास, परम्परागत लोकतांत्रिक, सामाजिक और पारिवारिक ढांचे, परिपक्व राजनीतिक प्रबुद्धता की कमी आदि के कारण पंचायतीराज की उपलब्धियों का कम अंकन करने तथा पंचायतीराज की आलोचना करने की एक सामान्य प्रवृति विकसित हो गयी है। इससे इनकार करना कठिन है कि पंचायतीराज व्यवस्था ने देश के राजनीतिकरण तथा आधुनिकीकरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। पंचायतीराज संस्थाओं के चुनावों और इसके कार्यकलापों ने ग्रामजीवन में एक नयी जागृति उत्पन्न की है। अब ग्रामवासियों का शोषण उस तरह नहीं किया जा सकता जिस प्रकार पूर्व में महाजन व जमीदार वर्ग करता था। वोट

की कीमत समझी जाने लगी है, ग्रामीण जनता और विशेषतया महिलाओं की हिस्सेदारी बढ़ी है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकृत संस्थाऐं स्वशासन की इकाईयों के रूप में विकसित हो रही हैं, ग्रामीण नेतृत्व पनपता जा रहा है, गाँवों की अवेहलना करना सरल कार्य नहीं रह गया है।

अन्तत: निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं के समक्ष चुनौतियों की संख्या कम नहीं है। हर कदम पर महिला जनप्रतिनिधियों को चुनौतियाँ स्वीकार करनी है और चुनौतियों को स्वीकार करके ही वे अपना उत्तरदायित्व निभा सकतीं हैं। पंचायतीराज संस्थाओं में महिला सशक्तिकरण समाज, सरकार तथा व्यवस्था के संयुक्त प्रयासों से ही सम्भव है। पहल स्वयं महिलाओं को ही करनी है, अपनी शक्ति को पहचानना है और निरन्तर विकास के पथ पर अग्रसर होना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 डॉ. महिपाल – 'पंचायतीराज की व्यवस्था के चार वर्ष: एक मूल्यांकन' कुरूक्षेत्र नई दिल्ली मई 1997
2 डॉ शारदा गोस्वामी – पंचायतीराज में महिला आरक्षण औचित्य व भूमिका, एक निबन्ध
3 दुर्गादास वसु – भारत का संविधान
4 मीना विजय – राजस्थान में पंचायतीराज महिला आरक्षण सीकर जिले के विशेष सन्दर्भ में
5 के.बी. सक्सेना–'पंचायत और महिलाऐं 'कुरूक्षेत्र' नई दिल्ली, फरवरी 1989
6 डॉ. निशान्त सिंह – पंचायती राज व्यवस्था
7 डॉ. प्रवीण शुक्ला – महिला सशक्तिकरण – बाधाऐं एवं संकल्प
8 पंचायती राज : महिला नेतृत्व की अभिवृत्तियाँ : सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक –प्ररिपेक्ष्य में राजेश धाकड़ का
9 अप्रकाशित, शोध प्रबन्ध राजस्थान विश्वविद्यालय
10 आर.पी. जोशी रूपा मंगलानी –भारत में पंचायतीराज
11 डॉ. भीमसिंह चौहान – 'राजस्थान के पंचायतीराज में महिलाओं का योगदान'
12 आदर्श शर्मा – पंचायतीराज में महिला आरक्षण : औचित्य एवं सम्भावनाऐं, सम्पादक, आर.पी. जोशी, रूपा मंगलानी

****

आँगनवाड़ी कर्मियों पर मानदेय व्यय का लेखकीय अध्ययन (राजसमन्द जिले के संदर्भ में)

प्रो. अनिता शुक्ला* मनीष श्रीमाली**

प्रस्तावना – आँगनवाड़ी भारत में ग्रामीण माँ और बच्चों के देखभाल केंद्र है। बच्चों के भूख और कुपोषण से निपटने के लिए एकीकृत बाल विकास सेवा कार्यक्रम के भाग के रूप में, 1975 में भारत सरकार द्वारा शुरू किया गया था। आँगनवाड़ी का अर्थ है 'आंगन आश्रय'। इस प्रकार का आँगनवाड़ी केंद्र भारतीय गांवों में बुनियादी स्वास्थ्य देखभाल प्रदान करता है। यह भारतीय सार्वजनिक स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली का एक हिस्सा है। मूल स्वास्थ्य देखभाल गतिविधियों में गर्भनिरोधक परामर्श और आपूर्ति, पोषण शिक्षा और अनुपूरक, साथ ही पूर्व-विद्यालय की गतिविधियों शामिल हैं। केंद्रों को मौखिक रीहाइड्रेशन नमक, बुनियादी दवाओं और गर्भ निरोधकों के लिए डिपो के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

आँगनवाड़ी कर्मियों की भूमिका – आँगनवाड़ी कार्यकर्ता उसी गाँव की होती है तथा वह गाँव के स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों और उसकी आवश्यकताओं से पूरी तरह से अवगत होती है क्योंकी वह अपने क्षेत्र में परिवारों के साथ संपर्क बनाए रखती है। वह आँगनवाड़ी की प्रमुख कार्यकता है। आँगनवाड़ी कार्यकर्ता द्वारा प्रत्येक माह प्रत्येक बच्चों के वजन की जाँच करना तथा विकास कार्ड में दर्ज करना। 6 वर्ष कम आयु के बच्चों के लिए मातृ एवं बाल सुरक्षा कार्डों का रख-रखाव करना तथा करना तथा दौरे पर आए चिकित्सा अथवा अर्द्ध-चिकित्सा कर्मियों को कार्ड दिखाना। 3-6 वर्ष के आयुवर्ग में बच्चों के लिए विद्यालय पूर्व गैर औपचारिक गतिविधियों को संचालित करना। स्थानीय रूप से उपलब्ध भोजन तथा स्थानीय व्यजंनों के आधार पर व्यंजन ह सूची की आयोजना करते हुए 0-6 वर्ष के बच्चों, गर्भवती स्त्रियों तथा शिशुओं की देखरेख करने वाली माताओं के लिए अनुपूरक पोषणयुक्त आहार की व्यवस्था करना। स्वास्थय एवं पोषण शिक्षा प्रदान करना तथा शिशुओं को अपना दूध पिलाने/शिशुओं एवं आहार संबंधी प्रक्रियाओं पर माताओं को परामर्श देना। सार्वजनिक स्वास्थ्य केंद्र (पीएचसी) के कर्मचारियों को टीकाकरण और स्वास्थय जाँच तथा साथ ही प्रसवपूर्व और प्रसवोत्तार जाँच में सहायता करना। घरों में दौरों के दौरान बचों में विकलांगता की पहचान करना तथा उन मामलों को निकटतम पीएचसी अथवा जिला विकलांगता पुनर्वास केंद्र में भेजना। दस्त, हैजा आदि के आपातकालीन मामलों को स्वास्थय केंद्र में भेजना। किशोरों के लिए विभिन्न स्कीमों के क्रियान्यवन में मदद करना। सहायिका द्वारा बच्चों को स्वच्छता की शिक्षा और उनके लिए गर्म पोषाहार बनाने का कार्य करती है। बच्चों को घरों से केन्द्र तथा केन्द्र से घर तक सुरक्षित लाने-छोड़ने का कार्य करती हैं। आशा-सहयोगिनी स्वास्थ्य सम्बन्धित सेवाओं को देने हेतु घरों का सर्वेक्षण करती है तथा संदर्भ सेवा देने का कार्य करती है। कुल मिलाकर तीनों आपसी समन्यवय से कार्य करती हैं।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. आँगनवाड़ी केन्द्र के कर्मियों के मानदेय का वित्तीय वर्ष 2014 से 2018 तक 4 वर्षो का अध्ययन करना।
2. आँगनवाड़ी केन्द्र के कर्मियों के मानदेय के बारे में मूल्यांकन करना।

निदर्षन तथा अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन हेतु राजसमन्द जिले की आठ परियोजनाओं का चयन किया गया है जिसके कुल 1109 आँगनवाड़ी केन्द्रों में से प्रति परियोजना 20 केन्द्र के अनुसार 160 आँगनवाड़ी केन्द्रों का चयन किया गया हैं। प्रत्येक आँगनवाड़ी केन्द्र से आँगनवाड़ी कार्यकर्ता, सहायिका, सहयोगिनी को मिलाकर 3 कर्मियों का चयन करतु हुए 480 कर्मियों का चयन किया गया है।।

शोध पद्धति – इस अध्ययन की प्रकृति लेखकीय है। पाठीय दृष्टि से पुस्तकालय वर्णनात्मक प्रकृति को स्पष्ट करती है शोध प्रविधि में अनुसंधान पद्धति एक महत्वपूर्ण पक्ष है जिसे स्पष्ट किए बिना कोई भी अनुसंधान पूरा नहीं हो सकता है। तथ्य संकलन में विभागीय बजट का निरीक्षण एवं आँगनवाड़ी कर्मियों के व्यय के ब्यौरे का संकलन कर विभिन्ना मदों का अध्ययन किया जावेगा।

सारणी 1 : आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय पर व्यय (01अप्रेल 2014 से 31मार्च 2015)

आंगनवाड़ी कार्यकर्ता	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	18001	7980	25981	8364048
सहायिका	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	1500	815	2315	4444800
सहयोगिनी	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	0	1600	1600	3072000
480	37502	18375	55877	24244896/-

स्त्रोत:- कार्यालय उपनिदेशक महिला एवं वाल विकास विभाग, राजसमन्द

उपरोक्त सारणी संख्या 01 में आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय पर 2014-15 में हुए व्यय का विवरण दिया गया है जिसमें यह पाया गया कि 160 आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 18001रू

* विभागाध्यक्ष, लेखान्कन विभाग, जनार्दन राय नागर, राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, लेखान्कन विभाग, जनार्दन राय नागर, राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

और राज्य सरकार द्वारा 7980रू तथा कुल 25981रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 8364048रू व्यय किए गए। सहायिका के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 1150 रू और राज्य सरकार द्वारा 815 रू तथा कुल 2315रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 4444800रू व्यय किए गए। आशा सहयोगिनी के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 0 रू और राज्य सरकार द्वारा 1600 रू तथा कुल 1600रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 3072000रू व्यय किए गए। कुल तीनों कर्मियों के मानदेय व्यय में 24244896रू व्यय किए गए।

सारणी 2 : आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय पर व्यय (01अप्रेल 2015 से 31मार्च 2016)

आंगनवाड़ी कार्यकर्ता	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	18001	7980	25981	8364048
सहायिका	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	1500	815	2315	4444800
सहयोगिनी	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	0	1600	1600	3072000
480	37502	18375	55877	24244896/-

स्त्रोत:- कार्यालय उपनिदेशक महिला एवं वाल विकास विभाग, राजसमन्द

उपरोक्त सारणी संख्या 02 में आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय पर 2015-16 में हुए व्यय का विवरण दिया गया है जिसमें यह पाया गया कि 160 आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 18001रू और राज्य सरकार द्वारा 7980रू तथा कुल 25981रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 8364048रू व्यय किए गए। सहायिका के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 1150 रू और राज्य सरकार द्वारा 815 रू तथा कुल 2315रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 4444800रू व्यय किए गए। आशा सहयोगिनी के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 0 रू और राज्य सरकार द्वारा 1600 रू तथा कुल 1600रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 3072000रू व्यय किए गए। कुल तीनों कर्मियों के मानदेय व्यय में 24244896रू व्यय किए गए।

सारणी 3 : आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय पर व्यय (01अप्रेल 2016 से 1मई 2016)

आंगनवाड़ी कार्यकर्ता	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	18001	7980	25981	25981
सहायिका	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	1500	815	2315	2315
सहयोगिनी	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	0	1600	1600	1600
480	37502	18375	55877	55877/-

स्त्रोत:- कार्यालय उपनिदेशक महिला एवं वाल विकास विभाग, राजसमन्द

उपरोक्त सारणी संख्या 03 में आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय पर 01अप्रेल 2016 से 1मई 2016 में हुए व्यय का विवरण दिया गया है जिसमें यह पाया गया कि 160 आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 18001रू और राज्य सरकार द्वारा 7980रू तथा कुल 25981रू मासिक व्यय किए गए। सहायिका के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 1150 रू और राज्य सरकार द्वारा 815 रू तथा कुल 2315रू मासिक व्यय किए गए। आशा सहयोगिनी के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 0 रू और राज्य सरकार द्वारा 1600 रू तथा कुल 1600रू मासिक व्यय किए गए। कुल तीनों कर्मियों के मानदेय व्यय में 55877रू व्यय किए गए।

सारणी 4 : आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय पर व्यय (01जून 2016 से 31मार्च 2017)

आंगनवाड़ी कार्यकर्ता	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	18001	10380	28381	9132048
सहायिका	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	1500	1065	2565	4924800
सहयोगिनी	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	0	1850	1850	3552000
480	37502	23675	61177	24512488/-

स्त्रोत:- कार्यालय उपनिदेशक महिला एवं वाल विकास विभाग, राजसमन्द

उपरोक्त सारणी संख्या 04 में आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय पर 01जून 2016 से 31मार्च 2017 में हुए व्यय का विवरण दिया गया है जिसमें यह पाया गया 160 आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 18001रू और राज्य सरकार द्वारा 10380रू तथा कुल 28381रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 9132048रू व्यय किए गए। सहायिका के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 1500 रू और राज्य सरकार द्वारा 1065 रू तथा कुल 2565रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 4444800रू व्यय किए गए। आशा सहयोगिनी के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 0 रू और राज्य सरकार द्वारा 1800 रू तथा कुल 1800रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 3552000रू व्यय किए गए। कुल तीनों कर्मियों के मानदेय व्यय में 24512488रू व्यय किए गए।

सारणी 5 : आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय पर व्यय (01अप्रेल 2017 से 31मार्च 2018)

आंगनवाड़ी कार्यकर्ता	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	18001	10380	28381	9132048
सहायिका	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	1500	1065	2565	4924800
सहयोगिनी	केन्द्रीय सहायता	राज्य निधि	मासिक मानदेय	मानदेय पर व्यय
160	0	1850	1850	3552000
480	37502	23675	61177	26740896/-

स्त्रोत:- कार्यालय उपनिदेशक महिला एवं वाल विकास विभाग, राजसमन्द

उपरोक्त सारणी संख्या 05 में आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय पर 01अप्रेल 2017 से 31मार्च 2018 में हुए व्यय का विवरण दिया गया है जिसमें यह पाया गया 160 आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के मानदेय मद में केन्द्र सरकार

द्वारा 18001रू और राज्य सरकार द्वारा 10380रू तथा कुल 28381रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 9132048रू व्यय किए गए। सहायिका के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 1500 रू और राज्य सरकार द्वारा 1065 रू तथा कुल 2565रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 4924800रू व्यय किए गए। आशा सहयोगिनी के मानदेय मद में केन्द्र सरकार द्वारा 0 रू और राज्य सरकार द्वारा 1850 रू तथा कुल 1850रू मासिक व्यय किए गए और वार्षिक 3552000रू व्यय किए गए। कुल तीनों कर्मियों के मानदेय व्यय में 26740896रू व्यय किए गए।

निष्कर्ष – 01 अप्रेल 2014 से 31 मार्च 2018 तक राजसमन्द जिले में आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय की मद में वित्तीय वर्ष 2014-15 में राशि 24244896 रूपये का व्यय हुआ जो वर्ष 2015-16 मेंराशि 24244896रूपये का व्यय हुआ और वर्ष 2016-17 में राशि 24512488 रूपये का व्यय हुआ तथा वर्ष 2017-18 में राशि 26740896 रूपये का व्यय हुआ।

सुझाव – आंगनबाड़ी वर्कर और कार्यकर्ता हो के साथ सबसे बड़ी समस्या उनके मानदेय को लेकर है जो वर्कर सरकार नजरिये से मात्र कुछ घंटे ही कार्य करती है हकीकत में वो 10 घंटे से भी ज्यादा कार्य करती है केंद्र व राज्य सरकार आँगनवाड़ी को किसी भी श्रेणी में नहीं मानती। मानदेय का भुगतान का भी कोई समय निश्चित नही है आँगनवाड़ी वर्कर की आर्थिक स्थिति बहुत दयनीय है

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आँगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय के प्रावधान पत्र क्रमांक-एफ,2(1) बजट/मानदेय वृद्धि/CIDS/12/62816, जयपुर, दिनांक 16/05/2016।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

जनजातीय विकास का आर्थिक योगदान : एक अध्ययन

संदीप कुमार सिंह *

प्रस्तावना – जनजातीय विकास का आर्थिक योगदान सबसे महत्वपूर्ण है। मूल रूप से कुछ जनजातीय समूह हैं जिनकी घटती हुई आवादी या स्थिर जनसंख्या और साक्षरता का निम्न स्तर है। इनकी आर्थिक स्थिति मूल रूप से बहुत ही पिछड़ापन है। ये समूह जनजातीय समाज का सबसे कमजोर वर्गों में से एक हैं, क्योंकि वे संख्या में बहुत कम हैं। जनजातीय समुदाय में उन्होंने सामाजिक एवं आर्थिक विकास का कोई महत्वपूर्ण स्तर प्राप्त नहीं किया है तथा वे सामान्यत: अवसंरचना एवं प्रशासनिक समर्थन वाले सुदूर क्षेत्रों में निवास करते हैं। इस प्रकार से आर्थिक स्थिति दिनों–दिन कमजोर होती जा रही है। जनजातीय समुदाय में दिनों–दिन पिछड़ापन भी आ रहा है।

उनके अत्यधिक पिछड़ेपन और कमजोर होने के कारण उन्हें आरक्षण नीति को लागू किया गया था। इस प्रकार से सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक रूप से कमजोरी रहीं वह मूल रूप से उनके साथ होने वाले आर्थिक विसंगति है। इस प्रकार से उनकी आबादी का मूल परिणाम ही समाज की एक कसौटी के रूप में रूकने का प्रयास करता है। फिर भी समाज में उत्पन्न होने वाली समस्या हमेशा से आर्थिक पिछड़ापन रहा है। उनकी आबादी के घटते रुझान को रोकने के लिए प्राथमिकता दिया बहुत ही महत्वपूर्ण माना जाता है। अन्तत: यह बात विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह पर देखने को मिलती है।

इन्हें शासन स्तर पर प्रदान की जाने वाली योजनाओं के आधार पर नियोजित करना परम आवश्यक होता है। आज देश की आर्थिक स्थिति के रूप में समाज में अनेक प्रकार की विंसगति विद्यमान है। फिर भी सामाजिक जीवन यापन करने के लिए समाज में किसी भी व्यक्ति या समुदाय के लिए अर्थ का होना आवश्यक होता है।[1]

जनजातीय वर्ग में होने वाली आर्थिक कमजोरी को राज्य एवं केन्द्र सरकार दोनों मिल कर नियोजित करती है। उसी प्रकार उनके विकास हेतु पर्याप्त धनराशि प्रदान की जाती है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में जनजातीय विकास का आर्थिक योगदान एक अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक शोध सामाग्री के आधार पर तथ्यों का संकलन किया गया है। इसके हेतु पत्र–पत्रिकाओं, साक्षात्कार और विद्वानों का मार्गदर्शन लिया गया है। इस प्रकार से विश्लेषणात्मक अध्ययन करने के उपरान्त अधिक महत्वपूर्ण किया जा सकता है।

समस्या :

1. जनजातीय समाज में आर्थिक रूप से पिछड़े पन की समस्या।
2. जनजातीय समाज में आर्थिक विपन्नता की समस्या।
3. आर्थिक असमानता के कारण शिक्षा का न होना।
4. आर्थिक रूप से कमजोर होने पर चिकित्सा सुविधाएं न मिल पाना।
5. आर्थिक रूप से कमजोर होने पर न्याय न मिल पाना।

उद्देश्य :

1. जनजातीय वर्ग में आर्थिक विकास हेतु विभिन्न योजनाओं के द्धारा प्रोत्साहित करना।
2. शासन की योजनाओं का लाभ मिलना।
3. शासन द्धारा समय पर छात्रवृत्ति आदि से प्रोत्सहन देना।
4. विकास की दिशा में शासन स्तर पर कारगर कदम उठाना।
5. शिक्षा हेतु प्रात्साहित करना।
6. समाज में जनजागरूकता हेतु प्रचार प्रसार करना।
7. समावेशी शिक्षा और बच्चों को निशुल्क शिक्षा प्रदान करना।
8. समुचित चिकित्सा व्यवस्था करना।

समाधान – सामाजिक विकास लिए केन्द्रीय क्षेत्र के रूप में प्रायोजित होने वाले राज्यों से इन योजनाओं के पर्याप्त धनराशि आवंटित किया जाना अतिआवश्यक होता है।[2] मध्यप्रदेश के विभिन्न समाजों में संरचनाओं के संगठन के निर्माण में उपरी आधार पर विभिन्नता दिखाई देती है। उस प्रकार से मूल निहित भावनाओं के रूप में पर्याप्त समानताओं के आधार पर देखने के लिए मिलता है। सामाजिक स्वरूपों में परिवार, क्लब, व्यापारिक संगठन और धार्मिक सम्प्रदायों के आधार पर राजनीतिक दल और राष्ट्र आदि के आधार पर विवेचन किया जाता रहा है। सामाजिक संगठन के आधार पर इनका आर्थिक विसंगतियों के परिणाम स्वरूप में विवेचन मिलता है। वहाँ राजनीतिक दलों के द्धारा क्लब की सदस्यता का होना ऐच्छिक रूपों पर आधारित होता रहा है।[3]

जनजातीय वर्ग में अनेक प्रकार के सामाजिक संगठन पर निर्माण आदि के आधार निर्माण करने के लिए सभी समूहों से नातेदारी और स्थानीय रूपों पर आधारित होता है। जनजातीय वर्ग के रूप में सामाजिक संगठन के अन्तर्गत परिवार, वंश–समूह, भ्रातृदल, गोत्र आदि प्रमुख रूप से विद्यमान है।[4]

जनजातीय विकास के लिए छोटे–छोटे लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना से सहायता मिलती है। उत्पादन और विकास को प्रभावी बनाने के लिए इस प्रकार के न्यूनतम समर्थन मूल्यों की आवश्यकता होती है। जिससें लघु उत्पादों के रूप में वनों से उत्पादित होने वाले विपणन का समर्थन हो सकें। एक प्रकार का लघु वन उत्पादों की मूल्य श्रृंखला के विकास की गति आज धीमी पड़ गई है।[5]

उनके लिए सामाजिक सुरक्षा उपायों के प्रबन्धन में केन्द्रीय सरकार द्धारा प्रायोजित योजनाओं को न्यूनतम समर्थन मूल्य के माध्यम से लघु वन उत्पाद के विपणन एवं लघु वन उत्पादों की मूल्य श्रृंखला में परिवर्तन

* शोधार्थी (भूगोल) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

जरूर हुआ है। इसके लिए इसका एकाधिकार और प्राथमिक संसाधनों की विकास दिशा को सुनिश्चित किया जाना आवश्यक होता है।

आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने वाली मात्र एक जनजाति स्वयं की सम्पूर्ण आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम है। जहाँ तक शिकार करना, पशुचारण, फल-फूल एकत्रित करना, कृषि कार्य करना। गृह-उद्योगों में सामिल होना आदि के द्वारा स्वयं अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति जनजाति के सदस्य करते हैं। यहाँ तक इनका आर्थिक स्त्रोत जड़ जंगल और जमीन है। जो भौगोलिक वातावरण को स्वच्छ बनाये रखने में इनकी भूमिका रही है। इनका जीवन जंगलों के बीच में होकर गुजरता है। इनकी विचारशीलता वस्तुओं का आदान-प्रदान आदि सभी समाज की प्रवृत्ति है। किन्तु इनकी परम्परा बिल्कुल सभी सांस्कृतिक एकता से अलग है।[6] इनका आर्थिक परिदृश्य हमेशा से विचारणीय प्रश्नों को लेकर रहा है। जो मूल रूप से समाज में अर्थ ही सभी साधन की पूर्ति करता है।

उनके एकत्रीकरण और प्राथमिक संसाधनों का भण्डारण, पैकेजिंग, परिवहन आदि की व्यवस्था करना। उसके लिए विभिन्न देशों की प्रणाली को स्थापित करना। उसके लिए उचित मौद्रिक वापसी सुनिश्चित करने के लिए प्रणाली को स्थापित करना चाहिए। छोटे-छोटे उद्योग धन्धों को चालू करने हेतु सरकार को कर्ज दिया जाना। उससे व्यक्ति स्वयं अपना जीवन यापन कर सकें। इस प्रकार से इन्हें ही लागत आदि व्यवस्था में सहयोग प्राप्त होगा।[7]

उससे बिक्री आय में से राजस्व का हिस्सा उन्हें प्राप्त होगा इससे सरकार को टैक्स प्राप्त होगाा। इस प्रकार से समाज में अनेकों प्रकार की प्रक्रिया से जुड़ना पडेग़ा। इन प्रक्रियाओं को लक्ष्य तक स्थापित करने के लिए उस कार्य को पूर्ण किया जाना अधिक उचित ही प्रतीत होता रहता है। इसका लक्ष्य प्रक्रिया के स्थायित्व के लिए अन्य मुद्दों का समाधन स्वयं सरकार करती है।[8]

इस प्रकार की योजनाओं से राज्य में पर्याप्त धानराशि आवंटित करने की आवश्यकता होती है। फिर भी विशेष रूप से कमजोर जनजाति समूहों के द्वारा अन्य विकास की योजनाओं का परिणाम किसी केन्द्रीय योजनाओं को संचालित करने में किया जाता है। इस प्रकार से यह एक हाथ ठेला योजना के अन्तर्गत उन्हें आर्थिक सहायता प्रदान की गई इससे उनके विकास होगें। इसके अतिरिक्त अलग योजनाएँ भी आरंभ की गई। इस बीच ज्ञान और प्राप्त किए गए अनुभव का आधाार उनकी योजना को अधिाक प्रभावी बनाने में सहायता किया गया है।[9] इस कार्य क्षेत्र में इन योजना में अनुसूचित जनजातियों में अभिज्ञात विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह शामिल किए गए हैं। यह योजना अत्यंत लचीली है और यह प्रत्येक राज्य को उन क्षेत्रों पर धयान केन्द्रित करने में सक्षम बनाती है, जिन्हें वे अपने विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूहों के लिए संगत तथा उनके सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश के लिए उपयुक्त सिद्ध होती है। इन्हीं योजनाओं के अन्तर्गत आने वाली क्रिया-कलापों में कोई भी आवास, भूमि की समतलीकरण, वृक्षारोपण आदि के लिए योजना के अंतर्गत आने वाले कार्यकलापों में आवास, भूमि संवितरण, भूमि विकास, कृषि विकास, पशु विकास के सड़कों का निर्माण प्रकाश संबंधी आयोजन किया जाता है। ऊर्जा के गैर-परंपरागत स्रोतों की संस्थापना, सामाजिक सुरक्षा विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह को उपलब्ध कराई गई है। इससे व्यापक सामाजिक-विकास के लिए अभिप्रेरित किया गया है। उसे अन्य कोई नवाचारी क्रिया कलाप का संचालन करना। इन योजना के अंतर्गत अनेक निधियां उन मदों /कार्यकलापों के द्वारा उपलब्ध कराया जाना आवश्यक होता है। इस प्रकार से जो विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूहों के जीवन, संरक्षण और विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण और उपयोगी सिद्ध होगा।

इन योजना का कार्यान्वयन किसी भी संरक्षण-सह-विकास योजनाओं को राज्य सरकारों और संघ राज्य क्षेत्रों के द्वारा जनजातीय समूह ने पांच वर्षो के लिए स्वयं द्वारा किए गए आधाारभूत या अन्य सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़ों के द्वारा उनका निवास स्थान विकास के दृष्टिकोण को अपनाकर तैयार किया जाना अधिक उपयुक्त माना गया है। फिर भी मंत्राालय की परियोजना और मूल्यांकन की समिति ने इन्हें अनुमोदित किया है। इस प्रकार के संरक्षण-व-विकास योजनाओं में प्रत्येक वित्त वर्ष के प्रावधानों के अनुरूप ही इसका कार्यान्वयन किया जाना अधिक उपयुक्त होता है। यह अभिकरण का भी उल्लेख किया जाना उचित ही माना गया है। फिर भी राज्य सरकार एवं संघ राज्य क्षेत्रों के प्रशासनिक दायित्वों को महत्वपूर्ण माना गया है। उस प्रकार के राज्य में पाए गए सभी विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूहों के लिए समानुपातिक रूप से वार्षिक रिपोर्ट और वित्तिय संसाधन प्रदान किया जाता है।

निष्कर्ष - जनजातीय वर्ग में कार्यों की गुणवत्तापरक, कार्योन्मुखी होने की नीतियों का निर्धारण किया गया है। उससे नीति आधारित अनुसंधान करने की सांस्थानिक संसाधन क्षमताओं में वृद्धि करना अतिआवश्यक होता है। इस आधार पर अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक विकास के लिए स्थापित की गई। इस योजना को शीर्ष संस्था माना जाता है। यह निगम के जनजातीय कार्य मंत्राालय के द्वारा इन्हें संयमित और संचालित किया जाता है। इसका प्रबंधान केन्द्रीय सरकार, भारतीय औद्योगिक विकास बैंक; की गति देने के लिए आईडीबीआई, भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन संघ लि. के प्रतिनिधियों द्वारा अनुसूचति जनजातियों इत्यादि से ख्याति प्राप्त व्यक्तियों के प्रतिनिधियों के साथ निर्देशक बोर्ड द्वारा किया जाना सुनिश्चित माना गया है। फिर भी निगम ब्याज की रियायती दर की वित्तीय सहायता उपलब्धा करना भी इन्हें आर्थिक रूप सें समुन्नत करना है। अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक विकास हेतु संचालित करना आवश्यक है। यहाँ तक अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक विकास के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने हेतु जनजातीय कार्य मंत्रालय द्वारा प्रसारित किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बी.आर. अम्बेडकर, 'एविडेंस बिफोर द साउथबोरो कमेटी, बाबासाहेब अम्बेडकर, राइटिंग्स एंड स्पीचिज' खंड 1,शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र सरकार, मुम्बई 1979, पृष्ठ 243-278
2. बी.आर. अम्बेडकर, 'एविडेंस बिफोर द साउथबोरो कमेटी' पृ. 255.56
3. अश्विनी देशपांडे, 'सोशल जस्टिस थ्रू एफेरमेटिव एक्शन इन इंडिया', वर्किंग पेपर सीरिज, संख्या 314, पॉलिटिकल इकोनॉमी रिसर्च इंस्टीटयूट, मेसाशूएट्स यूनिवर्सिटी, एम्हेरस्ट, फरवरी 2013, पृष्ठ 3.5
4. गिरीश कुमार सिंह, विश्व की प्राचीन सभ्यताएँ, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2009 पृष्ठ 59
5. एम.एल. गुप्ता एवं डी.डी. शर्मा, समाजशास्त्र, पृष्ठ 491
6. अशोक डी. पाटिल भीलों की संस्कृति, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2002, पृष्ठ 20

7. डॉ. एम.एल. वर्मा भीलों की सामाजिक व्यवस्था, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी नई दिल्ली, 1989 पृष्ठ 45
8. डॉ. श्यामाचरण दुबे म.प्र आदिवासी अनुसंधान परिषद, भोपाल, पृष्ठ 51-55
9. प्रो. एस.सी. दुबे , मानव और संस्कृति, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1960, पृष्ठ 40-43

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

विपिन बिहारी के साहित्य में दलित महिला के अस्मिता की तलाश

कल्पना नि.शेवाळे *

प्रस्तावना – 'अस्मिता' का आशय पहचान से है। जिसका का अर्थ है– 'अपने होने का बोध' में ही मनुष्य होने का बोध, उसकी निजता और उसका सामाजिक, जातीय गौरव भी जुड़ा हुआ है। अस्मिता में संबंधित अस्तित्व की उपस्थिति का भाव निहित है। 'अस्मिता में व्यक्ति अनंत संभावनाओं का पुंज होने के कारण सामाजिक बंधनों, मान्यताओं एवं परंपराओं से अपने को बाँधकर स्वतंत्र व्यक्तित्व के विकास को अवरुद्ध नहीं करना चाहता। व्यक्ति समाज में रहकर भी सामान्य प्राणियों की तुलना में अपनी 'अस्मिता' स्थापित करना चाहता है, जिससे उसकी 'खास पहचान' बनाना चाहता है। मनुष्य की अपनी 'अस्मिता' होती है, जिसका बोध उसके जन्म,जाति, व्यवहार, भाषण, स्वर, चाल, स्वभाव आदि से होता है। यही तत्व व्यापक स्तर पर किसी बृहत्तार समुदाय में व्याप्त होकर जातिगत या राष्ट्रीय स्तर पर 'अस्मिता' का निर्माण करते हैं।

तात्पर्य यही है कि दमित समुदाय की 'अस्मिता' से जुड़े विभिन्न संदर्भो में उसकी 'आइडेंटिटी' ही ऐसा प्रमुख मुद्दा है, जो उसकी जिंदगी के विभिन्न रूपों की प्रतिक्रिया में जन्मा है। आज कई आंदोलन उभरे हैं, जो अपनी अस्मिता के लिए लड़ते है, जो अपनी व्यक्तिगत पहचान से जातिगत पहचान बनाना चाहते हैं। व्यक्तिगत अस्मिता ही तो फिर जातिगत अस्मिता बन जाती है। जिसके लिए उसे संघर्ष करना पड़ता है। पुरुष की नजर में नारी मनुष्य नहीं बल्कि एक वस्तु है, जिसे वह जब चाहे तब रख सकते हैं या जब चाहे तब हकाल सकते हैं। इसलिए तो स्त्रियों को पुरुषों के बने बनाए भी विधानों का पालन करना पड़ता है। उसकी कोई अपनी 'अस्मिता' नहीं है। जो पुरुष कहेगा वही वह करती है।

प्राचीन काल में नारी की स्थिति उन्नत दिशा की ओर प्राप्त थी लेकिन मनु के पश्चात थी उसे अबला बनाया गया। तब से भारतीय समाज में स्त्री होना मानो एक अभिशाप समझा जाता है। भारतीय समाज पुरुष प्रधान समाज रहा है, जहां आदिकाल से स्त्री–पुरुषों की इच्छा अनुसार जीवन–यापन करती है। उसे किसी ने कभी सार्थक व्यक्तित्व नहीं माना। लेकिन राख के भीतर दबी आग की चिंगारी के समान नारी अस्मिता समय–समय पर अपना रूप दिखाती आई है और आज नारी को स्वतंत्र–चेतना नागरिक के रूप में स्वीकार किया जा रहा है। उसे अपने स्वतंत्रता के लिए कई लड़ाइयां लड़नी पड़ी स किंतु आज भी जिस रूप में स्वतंत्रता मिलनी चाहिए उस रूप में दिखाई नहीं देती स आज भी नारी परावलंबी है। वह अपने पहचान के लिए आज भी लड़ रही है।

दलित साहित्य परंपरा का इतिहास काफी पुराना है। आरंभिक दशा में यह स्पष्ट जरूर था स विविध दलित लेखक साहित्य के जरिए अपना पूर्वानुमान, वर्तमान की दुर्दशा लिख रहे थे। अपने 'अस्मिता' के प्रति सजग हो रहे थे जिसे देख सकते हैं। जिसमें विपिन बिहारी प्रमुख दलित साहित्यकार है। इनके संपूर्ण दलित साहित्य के मूल में अस्मिता की खोज हो रही है। देखा जाए तो संपूर्ण दलित साहित्य के मूल्य में 'अस्मिता' की खोज ही होती है। लेखक अपने व्यक्तित्व के साथ–साथ अपने समुदाय और समाज का जीवंत चित्रण करता है। समाज में अपनी 'अस्मिता' स्थापित करना चाहता है। 'अस्मिता–संपन्नता की सुविधा और तैयारी के बिना अधिकारों का कोई अर्थ नहीं स व्यक्तित्व–संपन्न तो सब कुछ ले सकता है। कोई न दे तब भी वह अपने अधिकार अर्जित कर लेता है और अर्जित अधिकारों को कौन छीन सकता है ? व्यक्तित्व संपन्न के हाथों ही तो सब कुछ सुरक्षित भी रह सकता है, अपनी आजादी, अपनी सुरक्षा, अपनी अस्मिता।'[1] जगदीश्वर चतुर्वेदी कहते हैं– 'स्त्री अस्मिता की जंग का पहला स्तर है स्त्री आंदोलन और स्त्री जाति की अब तक की उपलब्धियों की हर कीमत पर रक्षा करना, इनका, साथ ही स्त्री अस्मिता के लिए मसलों, सवालों को स्त्री आंदोलन और वैचारिक संघर्ष के केंद्र में लाना।'[2]

सवर्ण स्त्रियों की तरह ही दलित स्त्रियां भी घर परिवार में गुलामी का जीवन जीने के लिए विवश होती है। हिंदू धर्म के अनुसार चार वर्ण हैं, पांचवा वर्ण बन जाता है दलित स्त्री का, क्यों कि इस स्त्री का शोषण अन्य समाज के साथ–साथ उसका अपना समाज भी करता है। जब तीनों वर्ण दलितों का शोषण करते हैं तब दलित समाज अपने इस शोषण का क्रोध स्त्री पर अत्याचार करके उतार लेता है। सामाजिक अन्याय के साथ स्त्री अपने घर के लोगों के अन्याय का शिकार होती रही है। स्त्री को किसी भी वर्ग–वर्ण में जीवन के महत्वपूर्ण मुद्दों पर स्वतंत्र चिंतन करने का निर्णय लेने का अधिकार कभी भी नहीं दिया गया।

भारतीय स्त्री विमर्श की एक वृहद हस्ताक्षर प्रभा खेतान का मंतव्य है की, 'रोजमर्रा की जिंदगी की निजी घटनाओं का सटीक वर्णन जितना महिला लेखिकाओं द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है, उतना पुरुषों द्वारा नहीं।'[3] दलित आत्मकथाकार अपने अस्तित्व और अस्मिता को स्थापित करने के बाद ही लिखने बैठता है। आत्मकथा का लेखक व्यक्तिगत चिंतन से सामाजिक चिंतन की ओर अग्रसर होता है। व्यक्तिगत जीवन से सामाजिक जीवन की ओर उन्मुख होता है। जिसमें दलित लेखक अपनी सामाजिक अस्मिता की तलाश, सामाजिक अन्याय और असमानता के प्रति विद्रोह और क्रांतिकारी सामाजिक परिवर्तन आदि बिंदुओं पर केंद्रित रहता है। जिसके कारण वह व्यक्तित्व के साथ–साथ अपने समुदाय और समाज का जीवंत चित्रण करता है। सुदेश बत्रा के अनुसार– 'वर्तमान में स्त्री के व्यक्तित्व के पहचान के लिए विभिन्न आंदोलन हो रहे हैं स इसके पीछे एक मात्र उद्देश्य नारी का सुनहरा भविष्य निर्माण है।'[4]

*शोधार्थी, हिंदी विभाग, मुंबई विश्वविद्यालय, कलिना सांताक्रुज पूर्व, मुंबई (महा.) भारत

कथा साहित्य के क्षेत्र में श्री विपिन बिहारी का नाम अग्रणी कहानीकारों के साथ गिना जा सकता है जिन्होंने नारी की अन्तर्कथा को और पुरुष प्रधान समाज में उसके आदिकाल से चले आ रहे उत्पीड़न को शिद्दत के साथ महसूस किया है। नारी उत्पीड़न, नारी नैराश्य एवं वर्तमान युग में पुरुष को धकियाकर आगे बढ़ने की नारी की आधुनिक सोच के द्वारा उत्पन्न विषमताओं का बहुत सटीक चित्रण इनके साहित्य में हुआ है। नारी के दमन और शोषण की कहानी अति पुरानी है। विपिन जी ने न केवल कहानी में निम्न वर्ग की नारी की स्थिति को अंकित किया है, बल्कि मध्यम वर्ग तथा उच्च वर्ग की नारियों के संघर्ष और शोषण को भी चित्रित किया है। आज वह भी अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही है। सामाजिक रुप से नारी को कैसे आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है, किन सामाजिक दबावों के बीच रहती है वह इसको पूरी संवेदनशीलता के साथ उन्होंने अपने साहित्य के आधार पर उकेरा है।

कहानी संग्रह 'चील' की प्रथम कहानी है 'दुर्गा वाहिनी', जिसमें लेखक ने दर्शाने का प्रयास किया है कि स्त्री की स्थिति आज भी दयनीय बनी हुई है। बलात्कार एक ऐसा करना है जिसके आगे श्री पराजित ही हो जाती है और स्त्री की दबंगता उसके आगे बौनी सिद्ध हो जाती है। यद्यपि अपने पर आने पर स्त्री कुछ भी कर सकती है, एक स्त्री का बलात्कार हो जाने पर महिला नेता अर्चना दीक्षित स्त्रियों की भीड़ इकट्ठा करके एक आंदोलन की आंधी ला देती है जिसके समक्ष पुलिस प्रशासन भी घबराने लगता है किंतु न तो आदिकाल में सभी स्त्रियां लक्ष्मीबाई, गार्गी और रत्नावली थी और आज के युग में सभी अर्चना दीक्षित, अत: ब्लड ग्रुप स्त्री थाने से भाग जाती है और अर्चना दीक्षित एवं उसका आंदोलन व्यर्थ हो जाता है। इसी कहानी में कहानीकार ने अर्चना दीक्षित एवं उसके पति रितेश के बीच हुए वार्तालाप के द्वारा बड़े ही सहज रूप से स्पष्ट कर दिया है कि दांपत्य जीवन एक ऐसी गाड़ी है जिसमें पति-पत्नी के आपसी पूर्ण सहयोग से ही सफलता पूर्वक खींचा जा सकता है। इसी संग्रह की दूसरी कहानी 'कायर' जो सोच के धरातल पर इस संग्रह की सर्वोत्तम कहानी कही जा सकती है।

पुरुष समाज स्त्री की अस्मिता की बात को कितनी सहजता से डालता है इसे मनी प्रिया आर.ने कुछ इस प्रकार व्यक्त किया है- 'बलात्कार जैसी साधारण सी बात पर ऐसा आसमान सिर पर उठा रही है जैसे प्रलय आ गया।'[5] कहानी 'कायर' की नायिका विनीता के तेवर भी इसी प्रकार के हैं स वह एक नौकरी शुदा स्त्री है तथा एक बेरोजगार युवक के साथ शादी कर लेती है। सुहागरात से लेकर दैनिक जीवन में वह अपने पति के साथ ऐसा व्यवहार करती है गोया वह स्वयं पति हो और उसका पति, उसकी पत्नी स खाना, चाय बनाने से लेकर घर के सभी कार्य उसका पति ही करता है। एक दिन एक साक्षात्कार हेतु जाने के लिए उसका पति जब विनीता से सौ-डेड-सौ मांगता है तो विनीता रुपए देने की जगह उसे डांट-डपट देती है। 'क्या तकलीफ है जो नौकरी तलाश रहे हो ? क्या एक औरत अपने मर्द का भरण-पोषण नहीं कर सकती स सिर्फ मर्द ही उसके लिए अधिकृत है।'[6]

'मेरे सम्मान को चोट लगती है।'

'कैसी चोट ?'

'यह तुम्हें पता नहीं है क्या ?'

'इतने में थक गए स एक औरत कैसे जाती है उम्र भर ?'

किंतु महेश, विनीता का पति आत्महत्या कर लेता है प्रतिक्रिया स्वरूप, लाश के चले जाने के बाद विनीता के मुंह से अनायास ही शब्द निकल पड़े- 'कायर कहीं के, इतना भी न सह सके तुम।' इस प्रकार कहानीकार ने आदिकाल से नारी पर होते आ रहे पुरुषों की ज्यादतियों एवं स्त्री की सहन करते चली जाने की क्षमता को भी परोक्ष रूप से दर्शा दिया है। 'बंद दरवाजा' संग्रह की तीसरी कहानी है। कहानी की नायिका नैना, पुरातन विचारों और बंधनों को जो मात्र स्त्री जाति पर लगाए जाते रहे हैं को तोड़कर स्त्री-पुरुष की बराबरी की पहल करती है। 'चील' संग्रह की अंतिम कहानी है जिसमें एक स्त्री द्वारा विभिन्न रूपों में झेलते उत्पीड़न को बड़े ही विशद रूप में उद्घाटित किया गया है। मुस्लिम निम्नवर्गीय परिवार पर बुना गया कहानी का ताना-बाना, पति की ज्यादती के कारण बार-बार प्रसव पीड़ा को झेलती पत्नी और दाने-दाने को मोहताज घर में बच्चों की बढ़ती संख्या, सबकी पीड़ा को देखती, झेलती बड़ी पुत्री रुकैया स इस प्रकार आदिकाल से विभिन्न रूपों में झेले जाते रहे उत्पीड़न तथा वर्तमान में उस उत्पीड़न से मुक्ति के लिए प्रयासरत श्री की कसमसाहट को विपिन जी ने अपने साहित्य में व्यक्त किया है। यद्यपि लेखक ने नारी के स्वतंत्र अस्तित्व की पक्षधरता की है किंतु शालीनता के साथ नारी मुक्ति की पक्षधर था लेखक ने की है। पुरुष को धकियाकर या पुरुष को अपमानित करके, या अपनी इज्जत को दांव पर लगाने की पक्षधरता लेखक ने अपने साहित्य में बिल्कुल नहीं की है।

'पत्थर की लकीर' कहानी में सुनयना निम्न जाति से है। अच्छा खासा वह पढ़ जाती है। कॉलेज में उसका संपर्क देवेंद्र शर्मा से होता है। वह दोनों एक दूसरे को पसंद करने लगते हैं और शादी के बंधन में भी बंधने को तैयार हो जाते हैं पर जब दोनों के माता-पिता शादी पक्की करनेवाले होते हैं तो सुनयना,देवेंद्र शर्मा से शादी करने से इंकार कर देती है। कहती है कि वह एक ब्राह्मण घर की बहू नहीं बनेगी और कहती है कि- 'मैं तथाकथित अवर्ण परिवार से हूँ स ब्राह्मण घर में ब्याहे जाने पर भले ही आप लोग आत्मसात कर ले मुझे, लेकिन एक वर्ग मुझे कभी आत्मसात नहीं करेगा स हो सकता है इस बात का उलाहना मुझे जिंदगी भर सुनना पड़े तो कतई बर्दाश्त नहीं होगा स युगो से भले ही हमारी जाति अवर्ण मानी जाती रही हो लेकिन हमारे वर्ग की औरतें भोगी जाती रही सवर्णो द्वारा स देवेंद्र के साथ ब्याह के बाद मान्यताएं खत्म नहीं होगी स खत्म तभी होगी जब आपकी लड़कियां हमारे घर में एक सहमति के साथ आए स लेकिन ऐसा नहीं होगा तो फिर 'मैं यह सच है कि मेरी उम्र का मेरे बराबर पढ़ा लिखा कोई कुँवारा नहीं मिलेगा मेरी जात में स मैं कम पढ़े लिखे से ब्याह कर लूँगी स लेकिन देवेंद्र से नहीं करूंगी स हमारा वर्ग काफी निर्धन, पिछड़ा अशिक्षित है। मैं पढ़ी-लिखी, ब्याह होने पर भी मैं अपने वर्ग से कट ही जाऊंगी न, तो मेरे पढ़ने लिखने का फायदा किसे मिलेगा ?'[7] सुनयना का यह सोचना कि यदि वह अपने वर्ग को छोड़कर सवर्ण वर्ग के लड़के से शादी करेगी तो इसका फायदा केवल सवर्ण वर्ग को ही प्राप्त होगा, इस तथ्य की पुष्टि करता है कि चेतना से भरी हुई लड़की है जो केवल अपने बारे में नहीं अपितु अपनी पूरी जाति के बारे में सोच रही है। सुनयना की चेतना संपूर्ण वर्ग को विकसित दिशा की ओर उन्मुख होने के लिए प्रेरित कर रही है।

संघर्ष का जीवंत नारा विपिन बिहारी ने अपने साहित्य के जरिए दिखाया है। वस्तुत: विपिन बिहारी सामाजिक अंतर्विरोध के स्वयं भोक्ता है, इसलिए इनमें यथार्थ से गहरे संपृक्ति का भाव है और उनके पात्र लड़ाकू और संघर्षशील है।

एक बहुचर्चित कहानी 'पहचान' में दलित और औरत के दैहिक शोषण की गाता है। 'लाजोय का उपभोग जमींदार उसके बेटे दोनों करते हैं स गर्भवती होने पर उससे किनारा कर लेते हैं। किंतु मां नंदकेसरी नवजात शिशु को लेकर जाकर जमींदार के पैरों पर डाल आती है, इसलिए कि उन्हें भी लाज

आए स 'डाकिनी' इनकी प्रसिद्ध कहानी है। इसमें दलित महिला अपनी अस्मिता और अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्षरत है। स्त्री जिसे हमारे शास्त्रों में देवीतुल्य माना गया है, स्त्री का शोषण नई बात नहीं है। जहां तक दलित स्त्री के शोषण का प्रश्न है उसे समाज में शोषित करने के कई प्रकार है। पहला स्त्रीगत शोषण और दूसरा दलित विशेष में जन्म लेने का शोषण' चाहे राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त की 'दो कौर रोटियां मिलती है और धोतीयां चार नारी तेरा यही मूल्य तो करता है संसार' जिसमें विपिन बिहारी की लाजो स्त्री हो या नगचंपवा, सुरेखवा,सुनयना या सुकनी हो। इन सभी स्त्रियों को समाज की तथागत परिस्थितियों के सामने लगातार शोषित होना पड़ रहा है। सुकनी और लाजो के साथ किया गया व्यभिचार, बलात्कार बदस्तूर जारी है। लगातार स्त्री सहती आ रही है। अगर वह सुनयना के रूप में समाज के सामने अपनी योग्यता के बल पर अलग पहचान बनाना चाहती है तो उसके साथ वही होता है जो सुनयना के साथ हुआ स कठपुतली कि विवेका नित्य शोषित हो रही है और चुप है। जाति के नाम पर महिलाओं पर किया गया शोषण अमानवीय है, जघन्य है,निंदनीय है।

पुरुषवादी वर्चस्व ने स्त्री के गले में सतीत्व, मातृत्व के फंदे डालकर उसे अपना गुलाम बनाया हुआ है। आज भी स्त्री सुरक्षित नहीं है ! क्यों ? आज भी भ्रूण हत्या कांड हो रहे हैं स जन्म लेने के अधिकार से वंचित किया जा रहे हैं। किस लिए ? पूंजीवाद और उपभोक्तावाद के शिकंजे ने उसे वस्तु में तब्दील कर दिया है। यह सब साहित्य के द्वारा नारी को तमाम स्त्री पात्रों के रूप में लगातार छटपटाते, सिसकते हुए हम देख सकते हैं। कहानी संग्रह में 'पहचान' कहानी की 'लाजोय का संबंध एक तथाकथित पिता और पुत्र जवहरा तथा दशरथवा दोनों से है क्योंकि चिख-चिखकर कहता है कि समाज उनके दलितों को किस तरह रौंद रहा है। 'आधे पर अंत' कहानी संग्रह में दलित अपनी इज्जत को पहले महत्व देते हैं बाकी चीजें बाद में,उनकी हिम्मत नहीं होती कि लड़की कुंवारी बने स एक तो नया समाज उन्हें चौन से जीने नहीं देगा स समाज में दलित स्त्री के शोषण पर रचनाकार अपनी मार्मिक अभिव्यक्ति लाजो के पिता 'लोकनाथ' कुछ इस तरह करवाता है। 'देखा नहीं गया था लोकनाथ से गुस्सा भी नहीं आ रहा था, रुलाई भी नहीं आ रही थी, क्या करता, हाथ पांव नहीं है उसके ? हरिजन चमार की बेटी नहीं हो स जब बेटी हो तो उसका बाप किसी बाबासाहेब के घर मजूर न हो और मजूर भी हो तो बेटा भी हो तो बेटी देख नगर ना हो, सुंदर न हो, नहीं तो यह बबुआन सत्तार का बूढ़ा भी उसे भोगना चाहता है और बीस बरस का लौंडा छोरा भी।'[8]

यहां स्त्री के शोषण की मार्मिक अभिव्यक्ति दिखाई देती है। वास्तव में बुनियादी अधिकार हनन की शिकार हुई दलितों औरतों और बच्चियों की स्थिति अत्यंत शोचनीय हुई है। ठीक कुलीन औरतों पर पुरुष वर्चस्व के दो आयाम है। वे अपने ही सभ्यता के पुरुष और गोत्र उसूलों का शिकार होती है। सभ्यता का पुरुष दंभ भी उसे नहीं छोड़ता स यह वक्तव्य हम 'आधे पर अंत' कहानी संग्रह में पत्थर की लकीर कहानी को लेकर करें तो ठीक ही रहेगा। 'एक दिन गजब हो गया था स स्कूल से आ रही थी सुनयना उसके पीछे लगाता उसके क्लास का अखोरी लाखों बाबू का भतीजा स सुनयना अकेली पड़ गई थी स लड़के-लड़कियां उससे कुछ दूर निकल गए थे स सरपट जा रही थी कि पीछे से सीटी बजाई थी अखोरीने स उसने इस पर ध्यान नहीं दिया था, लेकिन मुड़कर कनखियों से देखा था पीछे।'[9]

जिसे शरीर के नाम पर औरत को और चमड़ी के नाम पर इंसान को लाचार बनाया जाता है उसे उन तमाम वर्चस्ववादी नीतियों को अपनाना पड़ता है जो उसके नीचे अधिकार के खिलाफ है। औरत की अस्मिता के साथ पुरुष का जुनून पेप्सी की बोतल के समान 'यूज एंड थ्रोय का रवैया अपनाता है। जिस तरह 'पहचान' कहानी के लाजो का शोषण इसलिए किया जाता है कि वह एक मजदूर की पुत्री थी उसी तरह ' पत्थर की लकीर' में सुनयना को तथा दुस्साहस अखोरी इसलिए करता है क्योंकि वह एक चपरासी की बेटी है। वैश्वीकरण यह ग्लोबलाइजेशन का जमाना तो आया परंतु वह दलित महिला अतिक्रमण बलात्कार और छेड़छाड़ से फिसल कर देह धंधे तक आ गई सफेदपोश वर्ग शत के अंधेरे में तो इन दलित महिलाओं के शरीर से अपने शरीर की तपन जरूर ठंडी करना चाहता है परंतु दिन के उजाले में यह वर्ग तुमसे अस्पृश्यता का व्यवहार करता है। 'बदस्तूर' कहानी में नगचंपवा तथा सुरेखवा के साथ रात में रंगरेलियां मनाने वाले के होटल में जब दोनों ननंद-भोजाई जाती है तो दुकान का मालिक उनके साथ जो बर्ताव करता है वह वास्तव में महिला समाज के सामाजिक शोषण की पराकाष्ठा है। इस प्रकार आज नारी को विपिन जी ने सहस्त्र मानवीय रूप में चित्रित करते हुए नारी के अस्तित्व को स्वतंत्र रूप में दृढ़तापूर्वक स्वीकार किया है। जीवन की वास्तविकताओं और समस्याओं से उनकी कहानियां जुड़ी हुई है। 'पहचान' कहानी की लाजो स्त्री पात्र, 'पत्थर की लकीर' कहानी की सुनयना स्त्री पात्र, 'मुक्का' कहानी की सुकनी स्त्री पात्र स 'बदस्तूर' कहानी की नगचंपवा और सुरेखवा स्त्री पात्र स इन सभी कहानियों में नारी का स्वरूप तथा नारी का आधुनिक युग में बदला हुआ सशक्त रूप दिखाई देता है।

आज स्त्रीयों को सामाजिक न्याय पून: हासिल करने के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है। चाहे वह हिंसात्मक या दोनों स यही संघर्ष हमें विपिन जी के 'आधे पर अंत' कहानी संग्रह में दिखाई देता है। बेहद से ऊपर उठकर सोचने की क्षमता औरतों में है पर उसे मात्र में बांधे रखने की कला वर्चस्ववादी पुरुष माहिर है। उसके पास इसके लिए तर्क भी है कि बलात्कार जैसी साधारण सी बात पर ऐसा आसमान सिर पर उठा रही है जैसे प्रलय आ गया स ऐसे में स्त्री अगर अपनी ईमानदारी, मेहनत और भोलेपन को पहचानने वाले किसी शख्सियत का सपना देखती है तो उसमें कोई आश्चर्य नहीं। विपिन बिहारी जी कहते हैं- 'प्रत्येक पुरुष के भीतर एक नारी बैठी हुई होती है और प्रत्येक नारी के भीतर एक पुरुष बैठा हुआ होता है। कहां हुआ यदि सच है तो वह सच मुझ में कुछ उतरता हुआ लगता है। मैं यह नहीं समझता कि मैं एक नारीवादी रचनाकार हूं स उसका प्रवक्ता हूं स मैं इसका दंभ भी नहीं भरता स इतनी कुब्बत ही नहीं है कि मुझ में इतना बड़ा जोखिम उठा पाऊं।'[10]

छदम सभ्यता का प्रचार करनेवालों में स्त्रियों की मांग बड़ी मात्रा में है। यह स्त्रियाँ कुछ तो देह व्यापार में धकेल दी जाती है और कुछ विदेशों में चुपचाप तस्कर कर दी जाती है। जब नारी के शारीरिक शोषण की बात की जाती है, तो पहला बड़ा आश्चर्य इस बात का होता है कि जब सामान्य वर्ग की नारी या उच्च सामान्य वर्ग की स्त्री-पुरुष की धाग दृष्टि से नहीं बच पा रही है। तो फिर भला इन बेचारीयों की क्या बिशात कि अपनी अस्मिता बचा सके कभी-कभी ऐसा भांग होता है कि इनका जीवन शायद नीचे खसोटने के लिए ही बना है। खेत मेड के किनारे, घर के ओसारे में और जानवरों के तबेलो में जब जहां मौका मिला इनकी चीख निकाल दी गई और इनको लगातार नोचा गया। आधुनिक फार्म हाउस जो की खेत खलिहानों का ही नया रूप है। इनमें यदा-कदा ऐसी घटनाएं घटती रहती है। आज मनुष्य हमाम के भीतर और बाहर दोनों जगह नंगे हो रहे हैं स फर्क केवल इतना ही है कि हम आपके भीतर शरीर से नंगे होते हैं और बाहर विचारों से स हमाम से बाहर विचार शून्यता और संवेदना रहित स्थिति होती है। सवाल यह उठता है कि कितनी महिलाएं बलात्कार जैसी पुरुष की इस घृणित और पशु प्रवृत्ति

से बचती होगी स सभी में न उतनी जागरूकता है न हिम्मत स कितनी महिलाएं फूलन देवी बनकर हथियार उठा लेती है। इतनी मायावती होकर संसद में आप बैठती है। उनमें से कोई बेनजीर भी नहीं बन पाती और उमा देवी और ऋतं बरा जैसा वे न मनीषा वर्मा की तरह जूडो कराटे न जानती है। लगता है कि उनमें अधिकांश मर-मिटने, बलात्कार सहने के लिए ही पैदा हुई है। वहां उनकी नियति भी है। जब तक वैचारिक स्तर पर परिवर्तन नहीं होता तब तक उनका यौन शोषण जारी रहेगा स इज्जत की परवाह किए बगैर जब इसके खिलाफ आवाज उठाएगी और ताकत का प्रतिकार करेगी तब वह दफ्तर, घर और खेत-खलिहान तक रक्षित हो पाएगी।

कुदरत ने स्त्री-पुरुष को एक सा नहीं बनाया है। यद्यपि एक-दूसरे के पूरक जरूर बनाया हैं स स्त्री-पुरुष के सहयोग एवं सहकारिता के बलबूते पर ही संसार बसा हुआ है। पुरुष सत्तात्मक समाज में स्त्री-पुरुषों के संबंधों में विषमता, विकृतियां, विचित्रता, समस्याएं बढ़ गई है। मानव की आवश्यकताएं बढ़ गई है। उन्हें पाने के लिए विभिन्न मानवीय जीवन का खोखला पर, काम और आर्थिक कुंठाओं के आधार पर मानव अपनी असलियत भूल चुका है। नारी के प्रति देखने का दृष्टिकोण बदलना या मानसिकता बदलना और उसे 'मानव' समझना और बराबरी का हक व अधिकार देना है। उन्हें एक मानव जीवन देना, जो उनका नैतिक हक है, जिसे पुरुष-सत्तात्मक समाज ने छीन लिया है। नारी ने अपनी अस्मिता को जागृत रखकर विद्रोहिणी बनकर अपने अस्तित्व, स्वत्व को प्राप्त करते हुए दायित्व बोध से सजग रहना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अस्मिता की तलाश- रूपा सिंह ,पृष्ठ-41,अयन प्रकाशन,1999
2. प्रथम दशक के हिंदी साहित्य में स्त्री एवं दलित विमर्श- सं.प्रा रविंद्र ठाकरे, पृष्ठ-19 ,चिंतन प्रकाशन,2016
3. प्रथम दशक के हिंदी साहित्य में स्त्री एवं दलित विमर्श- सं.प्रा रविंद्र ठाकरे, पृष्ठ-53 ,चिंतन प्रकाशन,2016
4. प्रथम दशक के हिंदी साहित्य में स्त्री एवं दलित विमर्श- सं.प्रा रविंद्र ठाकरे, पृष्ठ-39, चिंतन प्रकाशन,2016
5. चील-विपिन बिहारी, पृष्ठ-8 ,विभोर प्रकाशन, 2005
6. चील-विपिन बिहारी, पृष्ठ-30,विभोर प्रकाशन, 2005
7. हिंदी दलित कहानियों के स्वर- डॉ. सोनिया माला, पृष्ठ-125,नमन प्रकाशन,2017
8. आधे पर अंत- विपिन बिहारी, पृष्ठ-38,अतिश प्रकाशन, 2001
9. आधे पर अंत- विपिन बिहारी, पृष्ठ-48,अतिश प्रकाशन, 2001
10. दलित जीवन का अधिकार और निर्मला पुतुल की कविता- मनीप्रिया आर.,पृष्ठ-72

****

भारतीय ग्रामीण महिलाओं की प्रस्थिति एवं सामाजिक न्याय

डॉ. ज्योति उपाध्याय* कु0 सुमन मौर्य **

प्रस्तावना – किसी भी देश का विकास इस बात पर निर्भर करता है कि उस देश की आधी आबादी अर्थात् महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक प्रस्थिति कैसी है? डॉ. भीमराव अम्बेडकर की मान्यता थी कि महिला की प्रगति के बिना समाज की प्रगति सम्भव नहीं है। समाज में महिला की प्रस्थिति को डॉ. अम्बेडकर समाज की प्रगति का मापदण्ड मानते थे। भारतीय समाज में महिलाओं की जनसंख्या कुल आबादी के 48.53 प्रतिशत है। 2011 की जनगणना के अनुसार जब हम जनसंख्या की दृष्टि से ग्रामीण महिलाओं का अवलोकन करते है तो पाते है कि एक तरफ जहाँ ग्रामीण पुरुषों की जनसंख्या 42,77,81,058 है तो वहीं दूसरी तरफ ग्रामीण महिलाओं की जनसंख्या 40,59,67,794 है जो पुरुषों की जनसंख्या से कम है। इसलिए विकास की प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी दिए बिना देश की समृद्धि और उन्नति सम्भव नहीं है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था के इतिहास में महिलाओं की प्रस्थिति का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि महिलाओं की प्रस्थिति लम्बे विवाद का विषय रही है। सत्य तो यह है कि भारतीय समाज में महिला की प्रस्थिति विभिन्न कालों में अलग-अलग रही है। अत: विकास का वहीं समय अच्छा माना जा सकता है जब समाज की सभी इकाइयां समाज-निर्माण में मिल-जुलकर अपना योगदान देती है तथा उसका लाभ सभी तक समान रूप से पहुंचता है।

वेदों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि ऋग्वैदिक काल में भारतीय महिलाओं की प्रस्थिति सम्मानजनक थी। यद्यपि इस काल में परिवार पितृसत्तात्मक थे और पुत्रों की कामना की जाती थी। पिता की मृत्यु के बाद पुत्र सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होता था, किन्तु पुत्री उस सम्पत्ति की उत्तराधिकारी तब होती थी जब उसका कोई भाई नहीं होता था। लेकिन महिलाएं अपने जीवन-साथी को चुनने के लिए स्वतंत्र थी एवं पर्दा-प्रथा नहीं थी।

उत्तरवैदिक काल में एक ओर यह कहा जाता था कि जहाँ स्त्री का सम्मान होता है वहां देवता निवास करते है वहीं दूसरी ओर यह कहा जाने लगा कि स्त्री स्वतंत्रता योग्य नहीं है। बचपन में स्त्री की रक्षा पिता करता है, युवा में पति और बुढ़ापे में पुत्र रक्षा करता है। इस काल में सामाजिक संकीर्णता ने अपनी जड़े जमा ली और महिलाओं के अधिकारों का घोर हनन होना प्रारम्भ हो गया।

जब स्वार्थ, अन्याय और शोषण अपनी चरम सीमा पर पहुंच गए, तब उनके विरुद्ध आवाज उठाई गई। 19 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हिन्दू समाज में महिलाओं के शोषण के खिलाफ होने वाले आन्दोलन ने निर्योग्यताओं को चुनौती दी। 1813 में ब्रिटिश पार्लियामेंट द्वारा प्रथम बार ईस्ट इण्डिया कम्पनी को सभी वर्गों में शिक्षा के प्रसार पर जोर देने के लिए कहा गया, लेकिन कम्पनी ने भारतीय मनोवृत्ति के विरुद्ध महिला शिक्षा को मानते हुए कोई महत्व नहीं दिया। इसके बाद भारत में भी महिलाओं की प्रस्थिति को सुधारने के लिए कुछ प्रगतिशील भारतीयों ने प्रयत्न किए, लेकिन ये सभी प्रयत्न व्यक्तिगत स्तर के थे। अत: सरकार द्वारा इन्हें संरक्षण प्रदान नहीं हो सका।

1828 में सर्वप्रथम राजा राममोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना करके सती प्रथा के विरुद्ध आन्दोलन किया, जिसका परिणाम यह निकला कि 1829 में कानूनी रूप से इसे समाप्त कर दिया गया। राजा राममोहन राय ने महिलाओं को सम्पत्ति के अधिकार देने, बाल-विवाह समाप्त करने एवं महिलाओं में शिक्षा का प्रसार करने के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किए। ईश्वरचन्द विद्यासागर ने व्यक्तिगत स्तर पर महिलाओं की प्रस्थिति में सुधार लाने के लिए विधवा विवाह और बहुपत्नी विवाह सम्बन्धी परम्परागत नियमों का विरोध किया तथा महिला शिक्षा को महत्व दिया। इन्हीं प्रयत्नों से 1856 में विधवा विवाह कानून पास हो गया। अनेक प्रगतिशील महिलाओं, जैसे- दुर्गाबाई देशमुख, रमाबाई और रूखमाबाई आदि ने महिलाओं को अपने अधिकार मांगने और समाज में एक सम्मानपूर्ण पद प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया।

बीसवीं शताब्दी में महिलाओं की प्रस्थिति में सुधार लाने के लिए 1917 में 'महिलाओं की भारतीय समिति' स्थापित हुई। महिलाओं को जागरूक करने के लिए महिला संगठनों जैसे- भारतीय स्त्री मंडल, पूना सेवा सदन, सरोजनी दत्ता महिला समाज आदि की स्थापना हुई।

स्वतंत्रता के बाद महिलाओं की प्रस्थिति में सुधार हुआ। किन्तु व्यावहारिक रूप में आज भी महिलाएं पितृसत्तात्मक मानसिकता की शिकार बनी हुई हैं। आज भी परिवार में पुत्र को ही अधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है। पुत्री को एक बोझ समझा जाता है। उसे अपने ही परिवार में अपमानित किया जाता है। इस प्रकार पुत्री का जन्म एक अभिशाप है।

भारत गाँवों का देश है। जनगणना 2011 के अनुसार आज भी यहाँ 68.9 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती है। भारतीय गाँव प्रारम्भ से ही सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े हुए है। पिछड़े हुए ग्रामीण जगत में महिलाओं की दशा अत्यन्त दयनीय है। ग्रामीण महिलाओं के पिछड़ेपन के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं-

1. **अशिक्षा :-** जनगणना 2011 के अनुसार जब हम साक्षरता दर का ग्रामीण एवं नगरीय आधार पर अवलोकन करते है तो पाते है कि एक तरफ

* उपाचार्य एवं विभागाध्यक्ष,समाजशास्त्र अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (समाजशास्त्र) समाजशास्त्र अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

जहाँ ग्रामीण साक्षरता दर 67.8 प्रतिशत है तो वहीं दूसरी तरफ नगरीय साक्षरता दर 84.1 प्रतिशत है। अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण साक्षरता दर नगरीय साक्षरता दर से कम है। गाँव में आज भी लोग अशिक्षित है। जब हम साक्षरता दर की दृष्टि से ग्रामीण महिलाओं का अवलोकन करते है तो पाते है कि एक तरफ जहाँ ग्रामीण पुरुषों की साक्षरता दर 77.2 प्रतिशत है तो वहीं दूसरी तरफ ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर 57.9 प्रतिशत है। अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता दर ग्रामीण पुरुषों की साक्षरता दर से कम है। ग्रामीण लोग लड़कियों को पढ़ाना नहीं चाहते है। उनकी रूढ़िवादी धारणा है कि लड़की पढ़-लिखकर क्या करेगी? उसे तो केवल घर में ही रहना है। परिवार एवं पति द्वारा दिए गए धार्मिक उपदेश ही उनकी एकमात्र शिक्षा है। इन रूढ़िवादी उपदेशों को मानने का मुख्य कारण अशिक्षा है। शिक्षा जिससे व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास होता है महिलाओं को उससे ही वंचित रखा जा रहा है। अशिक्षा के कारण ही उनका शोषण बढ़ता जा रहा है। अतः महिलाओं को शिक्षित करना परम आवश्यक है।

2. **संयुक्त परिवार :-** संयुक्त परिवार महिलाओं के पतन का प्रमुख कारण है। संयुक्त परिवार भारत की अनोखी परम्परा है जिसमें परिवार की सत्ता पुरुषों के हाथ में रहती है। पुरुषों को ही सम्पत्ति-सम्बन्धी और अन्य सामाजिक अधिकार मिले होते है। पुरुष परिवार के कार्यो का संचालक और नियंत्रक होता है। संयुक्त परिवार में महिलाओं को कोई भी अधिकार नहीं मिला होता है। महिलाओं को दबाकर रखना पारिवारिक सम्मान समझा जाता है। संयुक्त परिवार में महिला की अपनी कोई इच्छा नहीं होती है। वह परिवार में गूंगी और अंधी बनकर शोषित होती रहती है। समाज के डर से वह परिवार के खिलाफ आवाज नहीं उठा सकती है।

3. **आर्थिक निर्भरता :-** प्राचीन काल से ही पत्नी भरण-पोषण के लिए अपने पति पर निर्भर रही है। इसीलिए पति को 'भर्ता' कहा गया है। इसका मुख्य कारण यह है कि सदैव ही महिलाओं का घर से बाहर जाकर नौकरी करना पारिवारिक सम्मान के विरुद्ध समझा जाता है। अतः ग्रामीण महिलाएं स्वयं किसी प्रकार का कार्य नहीं कर सकती है जिससे उन्हें धन की प्राप्ति हो सकें। महिलाओं को व्यावहारिक रूप से सम्पत्ति-सम्बन्धी अधिकार प्राप्त नहीं है। अतः आर्थिक मामलों में महिलाओं को अपने पति पर ही निर्भर रहना पड़ता है, जिसके कारण उन पर पुरुषों का आतंक आज भी बना हुआ है। अशिक्षा ने भी उन्हें इस स्थिति में सहयोग दिया है। अशिक्षा के कारण उनका आर्थिक क्रिया करना सम्भव नहीं है। अतः स्पष्ट है कि आर्थिक निर्भरता के कारण ग्रामीण महिलाओं की प्रस्थिति दिन-प्रतिदिन निम्न होती जा रही है।

4. **परिवार का पितृसत्तात्मक स्वरूप :-** हिन्दू परिवारों का स्वरूप पितृसत्तात्मक है। पितृसत्तात्मक परिवार में बच्चों का वंश-परिचय पिता के परिवार पर निर्भर होता है एवं विवाह के बाद पत्नी को पति के घर में जाकर रहना होता है। साथ ही पारिवारिक मामलों में और सम्पत्ति के बारे में सम्पूर्ण अधिकार पिता का ही होता है। पिता ही परिवार को नियन्त्रित एवं संगठित करता है। परिवार के इस स्वरूप से ही स्पष्ट है कि ऐसे परिवारों में महिलाओं की प्रस्थिति पुरुषों की प्रस्थिति से निम्न होती है।

5. **कुलीन-विवाह :-** कुलीन-विवाह-प्रथा भी महिलाओं की निम्न प्रस्थिति होने का मुख्य कारण है। इस प्रथा के अन्तर्गत लड़की का विवाह अपने बराबर या ऊँचे कुलों में ही करना होता है जबकि लड़को को अपने से नीचे कुलों में विवाह करने की छूट है। इस प्रथा के कारण प्रत्येक पिता या अभिभावक अपनी लड़की का विवाह ऊँचे से ऊँचे कुल में करना चाहता है जिससे कि ऊँचे कुलों के लड़कों को प्राप्त करने के लिए लोगों में आपस में प्रतियोगिता-सी होने लगती है। यह प्रतियोगिता प्रायः कटु रूप धारण कर लेती है एवं इस दौड़ में सामान्य दर्जे के माता-पिता को पर्याप्त कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। फलतः लड़कियों के जन्म से ही लोग घबराने लगते हैं। अतः यह भावना भी महिलाओं की प्रस्थिति को दयनीय बनाती है।

6. **बाल-विवाह :-** बाल-विवाह भी महिलाओं की निम्न प्रस्थिति के लिए जिम्मेदार है। छोटी उम्र में विवाह हो जाने के कारण महिलाओं की शिक्षा का स्तर निम्न हो जाता है जिसके फलस्वरूप अज्ञानता बढ़ जाती है एवं अल्पवयस्क वधुएँ वयस्क पुरुष के प्रभाव में सरलता से आ जाती है और छोटी उम्र में ही गृहस्थी की समस्याओं से पीड़ित हो जाती है, जिसके फलस्वरूप महिला को शिक्षा ग्रहण करने तथा व्यक्तित्व विकास का अवसर नहीं मिल पाता है। कम उम्र में विवाह होने की वजह से महिलाएं रोगग्रस्त हो जाती है जिससे महिलाओं का स्वास्थ्य खराब हो जाता है। ग्रामीण लोगों की धारणा है कि बाल-विवाह करने से माता-पिता को मोक्ष की प्राप्ति होती है जिससे उनका जीवन सार्थक हो जाता है। ग्रामीण लोग सरल जीवन और उच्च विचार में विश्वास करते है किन्तु अपने स्वार्थ के लिए अपनी बेटी को कष्टकर जीवन जीने के लिए विवश करते है।

7. **परम्परा व रूढ़ियां :-** भारतीय ग्रामीण समाज परम्परा और रूढ़ियों से प्रभावित है। दहेज प्रथा, पर्दा-प्रथा आदि कुप्रथाओं के कारण समाज में महिलाओं की प्रस्थिति निम्न है। जब तक इन कुप्रथाओं को समाप्त नहीं किया जायेगा तब तक ग्रामीण समाज परम्परा और रूढ़ियों में जकड़ा रहेगा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय ग्रामीण समाज में महिलाओं की दयनीय प्रस्थिति का प्रमुख कारण अशिक्षा, संयुक्त परिवार, आर्थिक निर्भरता, परिवार का पितृसत्तात्मक स्वरूप, कुलीन-विवाह, बाल-विवाह, परम्परा व रूढ़िया आदि है। ग्रामीण महिलाओं की प्रस्थिति को सुदृढ़ करने के लिए उन्हें शिक्षा प्राप्त करने के लिए जागरूक करने की जरूरत है ताकि वे शिक्षा के महत्व को समझ सकें और अपने भविष्य का निर्माण कर सकें।

सामाजिक न्याय :- सामाजिक न्याय का तात्पर्य है कि समाज के कमजोर वर्गों विशेष रूप से महिलाओं को जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं- भोजन, वस्त्र, एवं मकान की पूर्ति हो, कमजोर वर्गो को विकास का उचित अवसर मिले। व्यक्ति द्वारा व्यक्ति के शोषण को रोका जाए तथा आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो।

ऑगस्टाइन ने सामाजिक न्याय को परिभाषित करते हुए लिखते है, 'न्याय एक व्यवस्थित और अनुशासित जीवन व्यतीत करने तथा उन कर्त्तव्यों के पालन करने में है जिसकी मांग व्यवस्था करती है।' बार्कर के अनुसार, 'न्याय का अर्थ है प्रत्येक व्यक्ति द्वारा उस कर्त्तव्य का पालन, जो उसके अनुकूल है। नागरिकों को अपने वर्ग की चेतना तथा सार्वजनिक जीवन में उसकी अभिव्यंजना ही राज्य का न्याय है।'

मेरियम के अनुसार, 'न्याय उन मान्यताओं और प्रक्रियाओं का योग है जिसके माध्यम से प्रत्येक मानव को वे भी अधिकार और सुविधा प्रदान की जाती है जिन्हें समाज उचित मानता है।'

जॉन राल्स के अनुसार,'एक सामाजिक व्यवस्था का न्याय मुख्यतः इस बात पर आधारित है कि समाज में मूलभूत अधिकार और कर्त्तव्य कैसे है?'

अतः सामाजिक न्याय की मांग है कि समाज के कमजोर वर्गो और महिलाओं को अपनी सामाजिक, आर्थिक असमर्थताओं पर काबू पाने और अपने जीवन-स्तर में सुधार करने के योग्य बनाया जाए और गरीबों के बच्चों, महिलाओं एवं अशक्त व्यक्तियों की सहायता की जाए तथा इस प्रकार

एक शोषण विहीन समाज की स्थापना की जाए। समाज के कमजोर वर्गो और महिलाओं का विकास किए बिना, सामाजिक न्याय की स्थापना नहीं हो सकती है।

सामाजिक न्याय अभी भी महिलाओं को प्राप्त नहीं हो सका है। महिलाओं की प्रस्थिति आज भी दयनीय है। सरकार द्वारा उनकी प्रस्थिति में सुधार लाने के लिए प्रयत्न किये गये है किन्तु वे सभी उपबंध अभी तक केवल कागजी व सरकारी दस्तावेजों तक ही सीमित होकर रह गए है। इन सबका परिणाम यह निकला है कि महिलाओं की जनसंख्या पुरुषों की जनसंख्या से कम है और दिन-प्रतिदिन अत्याचार की घटनाएं बढ़ती जा रही है। आज भी महिलाओं को सामाजिक न्याय से वंचित होना पड़ रहा है। सती प्रथा को कानूनी तौर पर समाप्त करने के बावजूद आज भी हमारे समाज में महिलाओं को आत्महत्या करने के लिए मजबूर किया जाता है। यही कारण है कि आधुनिक और सभ्य समाज में भी आए दिन ये घटनाएं घट रही है। हमारा समाज जन्म से ही महिला को उपेक्षा का पात्र मानता है।

महिलाओं के साथ हो रहे भेदभाव से विकास की प्रक्रिया को ठेस पहुंचती है। महिलाओं के साथ भेदभाव समाज में परिवार से लेकर विभिन्न स्तरों पर हो रहा है। भेदभाव की घटनाओं में सबसे महत्वपूर्ण पारिवारिक हिंसा की घटनाएं है जो अतीत में ही नहीं, अपितु अभी भी बड़े पैमाने पर हो रही है। बलात्कार के मामले 2011 में 24206 और 2012 में 24923, 20 मिनट में एक महिला बलात्कार का शिकार होती है। 2013 में 35565 महिलाओं और लड़कियों का अपहरण किया गया, 42968 के साथ छेड़छाड़ तथा 8570 महिलाएं यौन शोषण की शिकार हुई। पारिवारिक हिंसा की घटनाओं में से अधिकांश घटनाएं सार्वजनिक रूप से प्रकट नहीं हो पाती। महिलाएं समाज में लाज के डर से, शिक्षा के अभाव में, असुरक्षा के भय से, समाज में समुचित सहयोग न मिलने के कारण और कानूनों के अभाव में भी पारिवारिक हिंसा की शिकार होती रहती है।

आज भी महिलाओं का विकास समाज के सभी क्षेत्रों में समान रूप से नहीं हो पाया है। परम्परा, रीति-रिवाज, धर्म, प्रथा आदि के कारण महिलाओं की प्रस्थिति दयनीय होती जा रही है। भारतीय संविधान महिलाओं को समानता, स्वतंत्रता, सम्पत्ति, शिक्षा, संविधानिक उपायों तथा शोषण के विरुद्ध अधिकार प्रदान करता है। महिलाओं की हितों की रक्षा के लिए विशेष कानून लागू किये गये है जैसे- विशेष विवाह अधिनियम 1954, हिन्दू विवाह अधिनियम 1955, हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 और दहेज निरोधी अधिनियम 1961 आदि।

क्या महिलाएं इन अधिकारों के प्रति जागरूक है? क्या वे वास्तव में इन अधिकारों का उपयोग कर रही है? जागरूकता का स्तर चार तथ्यों पर निर्भर करता है: महिला की व्यक्तिगत पृष्ठभूमि, उसका सामाजिक वातावरण, उसका अपना दृष्टिकोण और उसका आर्थिक आधार, फिर भी जागरूकता का स्तर बहुत कम है। परन्तु हम यह नहीं मानते कि अधिकारों की जागरूकता से महिलाओं की प्रस्थिति स्वयं उठ जायेगी। बल्कि इसके लिए शिक्षा, समानता, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक सशक्तिकरण भी आवश्यक है।

सरकार द्वारा उठाये गये कदम कुछ ऐसा आभास देते है कि ऐसे सांस्कृतिक और संरचनात्मक परिवर्तन लाए गए है कि महिलाओं को शिक्षा, रोजगार, राजनैतिक भागीदारी में पुरुषों के समान अवसर प्रदान किये गये है। उनके शोषण में कमी आयी है तथा उन्हें ऐसे संगठनों के विकास के लिए उन्मुख किया गया है जो उनकी समस्याओं में रुचि लेते है। परन्तु सत्य यह है कि ये परिवर्तन दिखावा मात्र है, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं की प्रस्थिति में परिवर्तन नहीं हुआ है। व्यवहार में महिलाओं को दिये गये अधिकार नहीं मिल रहे है और वे आज भी पुरुष की दासता की शिकार बनी हुई है।

सामाजिक विधानों ने महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक अधिकार दिए है। लेकिन मात्र अधिकार प्राप्त होने से उन्हें इन अधिकारों के लाभ प्राप्त करने के लिए प्रेरित नहीं कर सकता है। कानून महिलाओं को पिता की सम्पत्ति में हिस्सा लेने का अधिकार दे सकता है, उन्हें जीवन-साथी चुनने का अधिकार दे सकता है तथा पति को तलाक देने का अधिकार दे सकता है। लेकिन सच यह है कि कितनी महिलाएं इन अधिकारों का प्रयोग करने के लिए जोर डालती है? इसका कारण यह है कि अशिक्षा ने उन्हें परम्परागत मूल्यों से चिपकाया हुआ है। साहस की कमी उन्हें साहसी कदम उठाने से रोकती है। शिक्षा से महिलाओं का सर्वांगीण विकास होगा जिससे वे अपने अधिकारों का मांग कर सकती है और अपना जीवन सुखमय बना सकती है।

महिलाओं को विकास की मूलधारा में सम्मिलित करने, उन्हें सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनीतिक दृष्टि से समानता और उन्नति का मार्ग प्रशस्त कराने हेतु अभी तक किये गये नीतियों, संविधान संशोधनों, कानूनों, योजनाओं और कार्यक्रमों का बहुत कम परिणाम सामने आ रहे है। लेकिन इनकी गति को संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है। इसकी गति में तीव्रता लानी होगी।

महिलाओं की प्रस्थिति को सुदृढ़ करने, उन्हें पुरुष के समकक्ष करने और समाज में बराबरी का अवसर प्रदान करने के लिए अभी बहुत बड़े प्रयास की जरूरत है। जो कि असम्भव नहीं है लेकिन कठिन जरूर है। सम्पूर्ण सरकारी तथा व्यक्तिगत प्रयास, योजनाएं, कार्यक्रम और कानूनी संरक्षण के द्वारा ही महिलाओं को शोषण से छुटकारा मिल सकता है, जो उनके सुन्दर भविष्य को बनाने में सहायक होगा।

पितृसत्तात्मक समाज में महिलाओं को बराबरी का दर्जा तभी मिल सकता है जब वे आर्थिक रूप से स्वतंत्र होंगी। आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने के लिए महिलाओं को शिक्षित होना आवश्यक है। जब महिलाएं आर्थिक रूप से स्वतंत्र होंगी तो पुरुषों पर आर्थिक निर्भरता कम होगी, परिवार में उनका महत्वपूर्ण योगदान होगा जिससे समाज में उन्हें सम्मान की दृष्टि से देखा जायेगा और स्त्री-पुरुष असमानता समाप्त होने लगेगी।

अत: महिलाओं को शिक्षित, आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर एवं अधिकार सम्पन्न बनाना है जिससे उनमें निर्णय लेने की क्षमता का विकास हो सकें तभी महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक प्रस्थिति सुदृढ़ होगी और उन्हें सामाजिक न्याय मिल सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह, रामगोपाल; 2002; 'डॉ. अम्बेडकर का विचार-दर्शन'; भोपाल; मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी; पृ. सं. 146
2. ओझा, एस.के.; 2018; 'जनसंख्या एवं नगरीकरण'; इलाहाबाद; बौद्धिक प्रकाशन; पृ. सं. 5, 10
3. सिंहल, लता; 1991; 'भारतीय संस्कृति में नारी'; दिल्ली; परिमल पब्लिकेशन्स; पृ. सं. 9
4. तुलसीराम; 18 जुलाई 1998; 'स्त्री होना ही दु:ख है'; नई दिल्ली; राष्ट्रीय सहारा; पृ. सं. 4
5. सिंह, राजबाला एवं सिंह, मधुबाला; 2006; 'भारत में महिलाएं'; जयपुर; आविष्कार पब्लिशर्स; पृ. सं. 9,10

6. ओझा, एस.के.; 2018; 'जनसंख्या एचं नगरीकरण'; इलाहाबाद; बौद्धिक प्रकाशन; पृ. सं. 5
7. डॉ. लवानिया, एम. एम. एवं जैन, शशी; 2011; 'ग्रामीण समाजशास्त्र'; जयपुर; रिसर्च पब्लिकेशन्स; पृ.सं. 157
8. मुकर्जी, रवीन्द्र नाथ; 1964; 'भारतीय समाज व संस्कृति'; दिल्ली; विवेक प्रकाशन; पृ. सं. 310, 311
9. डॉ. लवानिया, एम. एम. एवं जैन, शशी; 2011; 'ग्रामीण समाजशास्त्र'; जयपुर; रिसर्च पब्लिकेशन्स; पृ.सं. 157
10. शर्मा, डॉ. माता प्रसाद; 2007; 'मानवाधिकार एवं शिक्षा'; जयपुर; कविता प्रकाशन; पृ. सं. 57
11. उपाध्याय, डॉ. ज्योति; जनवरी 2014; 'महिला उत्पीड़न एक सामाजिक अभिशाप'; नटराज सार्थक संकेत समाज विज्ञान शोध पत्रिका; वर्ष-02, अंक-02; बड़वानी; नटराज समाज विज्ञान शोध संस्थान; पृ. सं. 15,
12. आहुजा, राम; 2007; 'भारतीय समाज'; जयपुर; रावत पब्लिकेशन्स; पृ. सं. 123, 127

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

काला पहाड़ : लोक जीवन की अभिव्यक्ति

संदीप कुमार यादव *

प्रस्तावना – समाज में लोक जीवन की परम्परा सदियों पुरानी है, लेकिन साहित्य में इसका विस्तार स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अधिक दृष्टव्य होता है। फणीश्वरनाथ 'रेणु' इसके प्रथम अध्येता है। मैला आंचल प्रथम रचना है, जिसमें लोक जीवन की अभिव्यक्ति विस्तार से दृष्टिगोचर होती हैं। इस परम्परा का प्रचलन आगे के साहित्यकारों में अधिक देखने को मिलता है। यही नहीं इसकी एक प्रवृत्ति भी चल पड़ी है। फणीश्वरनाथ रेणु के अतिरिक्त इस विचारधारा को आगे बढ़ाने वालों में नागार्जुन, रांगेय राघव, उदयशंकर भट्ट, देवेन्द्र सत्यार्थी, राही मासूम रजा, श्रीलाल शुक्ल, रामदरश मिश्र, अब्दुल विस्मिल्लाह, हिमांशु जोशी, शैलेश मटियानी, राजेन्द्र अवस्थी, मनहर चौहान, भैरवप्रसाद गुप्त, वीरेन्द्र जैन, संजीव आदि का नाम सर्वोपरि है।

'लोक शब्द अपने आप में एक व्यापक शब्द है इसके साथ जुड़ने वाला शब्द अपनी अर्थवत्ता खोकर लोक के अर्थ में समाहित हो जाता है, इसकी व्युत्पत्ति के संदर्भ में विद्यानिवास मिश्र लिखते है कि यह शब्द रूच/लुच से है जिसका अर्थ प्रकाशित होना है और प्रकाशित करना भी है, जो सामने प्रकाशित दिख रहा है और जो प्रकाशित कर रहा है।'[1] इसी प्रकार संस्कृत शब्द कोश में 'लोक शब्द की उत्पत्ति 'लोक' में धञ् प्रत्यय लगाने से है, जिसका एक अर्थ प्रकाश भी है।[2] अर्थात् लोक का अर्थ प्रकाश या छाया से है। लोक शब्द का एक अर्थ 'भुवन' संसार, खण्ड आदि भी बताया गय है। यहाँ पर इसी अर्थ में लोक को देखा जायेगा।

काला पहाड़ उपन्यास में मेवात अंचल के उन सभी तत्वों को प्रकाशित किया गया है जो लोक जीवन में घटित होते है। लोक जीवन को प्रस्तुत करने से पूर्व मेवात की भौगोलिक पहचान को समझना जरूरी है। दिल्ली-अलवर राजमार्ग पर बसा मेवात अंचल का छोटा सा गाँव नगीना और उसके आस-पास के गांवों नूह, साकरस, भदास, फिरोजपुर, झिरका आदि के बीच स्थित 'काला पहाड़' जिससे सुबह और शाम होने का एहसास हो मेवात अंचल की एतिहासिक विरासत है। इस भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले लोग मेव कहलाते है। काला पहाड़ उपन्यास में भगवानदास मोरवाल ने इनका परिचय दिया है – 'वास्तव में, मेव एक पुरानी क्षत्रिय क़ौम है, जिसने बाद में इस्लाम कुबूलकर लिया था। ज्यादातर हिस्टोरियंस की एक ही राय है कि मेवों के पुरखे चंदरवंशी और सूरजवंशी राजपूत थे जो तोमर, चौहान, राठौर और यादव के नाम से जाने जाते हैं। कुछ मेवों को खासकर राजपूतों की तीन शाखाओं यानी वंशों और पालों की बारह उप-शाखाओं से जोड़ते हैं, ये शाखाएँ हैं – यादव, तोमर और कछवाह।'[3] स्पष्ट है कि मेवात की इसी भौगोलिक और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर जीवन के विविध रंगों की झलक हम देख सकते है। शिक्षा, दीक्षा, स्वास्थ्य, खान-पान, रहन-सहन, मनोरंजन, नौटंकी, कला-संस्कृति आदि को लोक जीवन का अंग माना जा सकता है।

उपन्यास के प्रमुख पात्र सलेमी, मनीराम, रोबड़ा, बुद्धन, नवी खाँ, बाबू खाँ, बनवारी सुलेमान, चौधरी अतर मुहम्मद, चौधरी करीम हुसैन, हरसाय, सुभान खाँ, छोटे लाल, सूरज, तरकीला, रामदेई, रूमाली, रमजानो, मेमन तथा फजरी आदि के माध्यम से लोक जीवन की झाँकी प्रस्तुत की गयी है। ये सभी पात्र उन संघर्षों की कथा कहते हैं जिनके जीवन में समस्याओं से लड़ने का अपार साहस है, क्योंकि लोक जीवन में आधुनिक जीवन शैली के विपरीत प्राथमिक संसाधनों या यूं कहे कि घरेलू साधनों से उपचार किया जाता है। लोक जीवन की यही शैली आज साहित्य में विस्तार पा रही है। काला पहाड़ उपन्यास से पूर्व बहुत से उपन्यास लिखे गये, जो अलग-अलग क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं। फणीश्वरनाथ रेणु का मैला-आँचल, परती परिकथा, राही मासुम रजा का आधा गाँव, रामदरश मिश्र का पानी के प्राचीर, जल टूटता हुआ, श्रीलाल शुक्ल का रागदरबारी आदि इसी प्रकार के उपन्यास है।

भगवानदास मोरवाल ने काला पहाड़ में उन्हीं तत्वों को दिखाया है जिनसे लोक जीवन की पुष्टि होती है। यातायात नियमों के उल्लंघन में एक ऐसी गाड़ी का चालान होता है जिसके लिए कानून की किताब में कोई नियम नहीं है, क्योंकि यह गाड़ी देशी जुगाड़ से बनी है – 'लक्कड़बुग्गाऽऽ! अकबकाते हुए थानेदार कुर्सी से लगभग उछलते हुए बोला। उसने गरदन झटक कर सिपाही की ओर देखा तो सिपाही ने कोई जवाब नहीं दिया लेकिन जब ड्राइवर ने ही हाथ बाँधे विस्तार से, बेहद भोलेपन के साथ नए वाहन के बारे में बताया तब कही जाकर थानेदार की जान में जान आई।'[4] यह गाड़ी जिसका कोई कानूनी रिकार्ड नहीं दरअसल यह बैलगाड़ी का आधुनिकतम रूप है, जिसमें बैल की जगह किर्लोस्कर इंजन लगाया जाता है और यह भारत ही नहीं दुनिया की न ही किसी फैक्ट्री में बनती है।

त्यौहारों में मौसम विशेष के अनुसार खेल-कूद के होने वाले आयोजन लोक की पहचान होते है। तीज के अवसर पर पतंगबाजी का खेल गाँवों में एक-दूसरे की प्रतिष्ठा का प्रश्न बन जाता हैं नगीना और साकरस की पतंगबाजी का अद्भुत दृष्य 'काला पहाड़' में दिखाया गया हैं – 'चंदू परधान की छत द्वारा पराजय स्वीकार करते ही विजयोत्सव के इस नायक को वहीं लाला नौबत राय की छत पर जमा ठट्टे ने कंधों पर उठाकर ख़ुशियाँ मनानी शुरु कर दी।'[5] इसी तरह नौटंकी का आयोजन भी लोगों की रूचि के अनुसार क्षेत्र विशेष में मनाये जाते है। उपन्यास का नायक सलेमी इसी प्रकार की नौटंकी का वर्णन करता है – 'पूस की उस बर्फ-सी पिघलती रात को सलेमी कैसे भूल सकता है, जिसमें भोंदू के नोहरे में तीन-चार तख़्तों को जोड़कर बनाए गए मंच पर जब-जब कृष्णाबाई का जिस्म लरजता, तब-तब लगता जैसे उसकी शिराओं में खून की बजाय किसी ने पिघला हुआ शीशा उडेल

* शोधार्थी (हिंदी) विक्रम विश्वविद्यालय,उज्जैन (म.प्र.) भारत

दिया है।'[6] इस तरह की नौटंकी का आयोजन मनोरंजन होता है, जो अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग तरह से होती है।

लोक जीवन की झाँकी सावन की हरियाली और पेडों पर पड़ने वाले झूलों के बिना अधूरा है, क्योंकि क्षेत्र विशेष में गाये जाने वाले गीत लोकभाषा का परिचायक होते है। विरहिणी के उदास होठों से पिया मिलन की आस का ये गीत कुछ इसी तरह का है -

'पाँच सुपारी मेरे हाथ
बामण बूझण मैं चली
कह बमणा मेरे मन की बसी बात
कद बगदेगो मेरो सायबा ?'[7]

लोकगीत की तरह धार्मिक लोक जीवन का भी अपना महत्व होता है जो विविध अवसरों पर अपने देवता के लिए गाये जाते है। दादाखानू की मजार पर चढ़ने वाली गलेप पर औरतों की ओर से बड़ी सादगी से गीत गाये जाते है। कुछ गीत का कुछ अंश स्पष्ट है -

'पिपलिया झकझाल री
जहाँ सय्यद को थान
सय्यद बड़े औलिया
अम्मा तेरी ढो रई ब्यार
घेर लई सब गावड़ी
घेरो मोहन ग्वाल .....।'[8]

पंचायतों में होने वाले फैसले गाँव के सभी लोगों को मान्य होते है, क्योंकि सदियों से चली आ रही इस परम्परा का सम्मान कानून से दूर रह कर किया जाता है। पंचायत के फैसले के खिलाफ कोई भी व्यक्ति सरकारी कानून का सहारा नहीं ले सकता और यदि कोई इसके खिलाफ जाता है तो उसे बिरादरी से अलग कर दिया जाता है। बाबू खाँ पुत्र सलेमी को जब छेड़छाड़ के एक मामले में फैसला सुनाया जाता है तो सलेमी पंचायत के फैसले का सम्मान करते हुए अपने पुत्र पर अधिकार के साथ टूट पड़ता है - 'सलेमी ने धीरे-से दाएँ पाँव से पणहा निकाली और अपने सामने खड़े बाबू पर एक झटके के साथ यह कहते हुए तड़ातड़ बरसानी शुरू कर दी, कमीण, यारसू तो तू पैदा होते मर जातो ...... तैने आज मेरी ढकी-ढकाई उघाड़ दी.....।'[9] आम जीवन में गाली सामान्य बात है। काला पहाड़ में ऐसे ही कुछ दृष्यों को रेखांकित किया गया है - 'संजा के आरोप को सुनते ही हरसाय के जिस्म में मानो आग लग गई। पूरा शरीर मारे गुस्से के काँपने लगा, बिगड़ा खानदान की ..... रंडी राँड.... हम हराम की खाते हैं, ... दारीकी के ऐसा रहपटा उड़ाऊँगो के छेल ई छेल मूतेगी।'[10] हरसाय के गाली का जवाब संजा भी गाली से ही देती है - 'और अबके मेरा खानदान के बारा में कुछ कही न तो भडुआ, तेरी मूँछ्ने उघाड़ के चूतड़न पे लगा दूँगी।'[11] लोक जीवन में गाली रोजमर्रा की घटनाएँ है और इनका महत्व खण्ड विशेष में ही दिखाई देता है। यही घटनाएँ तो लोक जीवन को सजीव बनाती है, क्योंकि सभ्य समाज में इसका प्रचलन नहीं है।

लोक जीवन की एक झलक शादी-विवाह के अवसरों पर देखने को मिलती है, जिसका अलग ही महत्व है। कुछ ऐसे ही प्रसंगों के माध्यम से लोक जीवन को समझ सकते है। शादी से पूर्व लड़की वाले लड़के के घर आते है और शादी किस तारीख को होनी है तय किया जाता है। इसी अवसर पर औरतें गीत गाती है -

'बनड़ा खड़ो सड़क पर अनार माँगे री
अपनी माँ सू रूपिया हजार माँगे री
अपने बाबा सू रूपिया हजार माँगे री
अपनी भावज सू सारो सिंगार माँगे री
बनड़ा खड़ो सड़क पे ....।'[12]

इसी अवसर पर बारात जाने से पूर्व चाक पूजन होता है। यह विवाह की एक प्रचलित परम्परा है जिसमें औरतें कुम्हार के घर जाकर मिट्टी के बर्तन बनाने वाले चाक की पूजा करती है। इस अवसर पर कुछ गीत गाये जाते है जो इस प्रकार है -

'चौबारा पे मशीन चलावे दरजी को
या कुर्ती ए अपणा जेठ लू दिखाऊँगी
वही तो देवेगो याको दाम.....।'[13]

इसी तरह विवाह के दिन लड़के की माँ का भाई भात करने की रस्म अदा करता है। इसमें भाई अपनी बहन को आर्थिक मदद देता है। इस प्रसंग का वर्णन गीत के माध्यम से प्रस्तुत है -

'भाई अच्छो भरियो भात, बहाण टोटा में,
थाली में डेढ़ हजार, मोहर लोटा में
मैं हँसली-कठला पहर खड़ी कोठा में,
भाई अच्छो भरियो भात, बहाण टोटा में......।'[14]

विवाह के बाद विदाई के अवसर पर औरतें नम आँखों से लड़की को विदा करती है। हिलकियों और सिसकियों के बीच एक गीत प्रस्तुत है -

मैं तो अपणा कटक दल ए ले चली बाबल,
अब अपणा नगर सू बसियो
मैं तो तीन दिनाँ भारी होगी बाबल,
अब अपना नगर सू बसियो।'[15]

लोक जीवन की ये परम्पराएँ संस्कृति को समृद्ध करती है और यही लोक की सबसे मजबूत कड़ी है। इन सभी परम्पराओं को एक सूत्र में पिरोने का कार्य यदि हो तो यह परम्परा सदियों तक विद्यमान रहती है। काला पहाड़ में एक ऐसे ही पुरोहित का वर्णन किया गया है जो लिखित रूप में एक पाण्डुलिपि रखता है जिसमें खण्ड विशेष की सभी समस्याओं, घटनाओं का वर्णन मिलता है। लोक जीवन की इस परम्परा का आख्यान नत्थू के माध्यम से स्पष्ट है - 'जिजमान, खाँईं ई तो छोटी-सी बात है.... अजी हमारे पुरजान्ने तो गोर-गजनवी से लेके बाबर-बलबन और तिहारे हसन खाँ मेवाती तलक की पुरोहिताई करी है ......।'[16] लोक में प्रचलित इस अद्‌भुत कला का दूसरा कोई उपाय नहीं था, लेकिन आधुनिक युग में यह कला बिखर-सी गयी है या ये कहे कि इसके अनेक रूप सरकारी पाण्डुलिपियों में मिल जायेंगे।

मेवाती लोक जीवन का यह माध्यम समाज के अन्य क्षेत्रों के जीवन से कुछ अलग जरूर है, लेकिन साहित्य में इसकी विशालता नये रूप में प्रस्तुत हुई है। इससे पूर्व मेवात की पृष्ठभूमि को आधार बनाकर साहित्य नहीं रचा गया है, बल्कि छोटे-छोटे स्वरूपों में इसका प्रस्तुतीकरण जरूर हुआ है। लोक जीवन की इस झाँकी को जिस विराटता के साथ दिखाया गया उससे स्पष्ट है कि रहन-सहन, खेत-खलिहान, रीति-रिवाज, धर्म-संस्कृति आदि के अंतर्गत ही लोकजीवन को समझाया गया है और ये ही तत्व अन्य संस्कृतियों में भी प्रगाढ़ रूप में दिखाई देते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विद्यानिवास मिश्र, लोक और लोक का स्वर
2. वामन शिवराम आप्टे, संस्कृत-हिन्दी कोश, पृ. 1327.
3. भगवानदास मोरवाल, 'काला पहाड़', राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली,

पृ. 93.
4. वही, पृ. 10.
5. वही, पृ. 41.
6. वही, पृ. 42.
7. वही, पृ. 49.
8. वही, पृ. 56.
9. वही, पृ. 65.
10. वही, पृ. 231.
11. वही, पृ. 231.
12. वही, पृ. 107.
13. वही, पृ. 118.
14. वही, पृ. 120.
15. वही, पृ. 145.
16. वही, पृ. 191.

****

हिंदी वेब पोर्टल : चुनौतियां और संभावनाएं

प्रो. रफी मोहम्मद शेख *

शोध सारांश – वेबसाइट और वेब पोर्टल को इन्टरनेट की आत्मा कहा जाना ही न्यायोचित प्रतीत होता है। इंटरनेट पर शब्द, अंक, चित्र, ध्वनि या विडियों के द्धारा डाटा एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा और देखा जाता है। इंटरनेट क्रांति के बाद यहां पर दी जाने वाली सेवाओं के लिए वेब पेजेस के साथ ही पोर्टल का उपयोग किया जाता है। वेबपेज अपने आपमें परिपूर्ण होता है जबकि विभिन्न वेब पेजेस और ई–मेल, खोज, लिंक जैसी कई सुविधाओं से युक्त वेब पेजेस को वेब पोर्टल कहा जाता है। वर्तमान में पाठकों में इस पोर्टल की क्रेज बहुत अधिक बढ़ा है। इसी को देखते हुए हिंदी के लगभग सभी समाचार–पत्रों और समाचार–एजेंसियों ने स्वतंत्र रूप में अपने समाचार साइट्स को वेब पोर्टल के रूप में विकसित किया है। यहां तक कि आकाशवाणी और टेलीविजन चैनल ने भी अपना रूप बदलकर अपने इंटरनेट संस्करण शुरू किए है। वेब पर ऑनलाइन सहित्यिक पत्रिकाओं की संख्या भी निरंतर बढ़ रही है। साथ ही ब्लॉग के आगमन से भी हिंदी वेब पोर्टल और साहित्य अधिकाधिक समृद्ध हो रहे हैं। साहित्यकार अपने ब्लाग के जरिए वैश्विक पाठक से जुड़ कर हिंदी भाषा और साहित्य को विश्व स्तर तक पहुंचा रहे हैं। तकनीकी अवरोध एवं फोण्ट की समस्याओं से भी हिंदी वेब मीडिया अब धीर–धीर मुक्त हो रहा है। वेब पोर्टल के क्षेत्र में इतनी मजबूत पकड़ बनने के बावजूद भी हिंदी वेब पोर्टल के सामने आज भी साक्षरता, आर्थिक स्त्रोत तथा विश्वसनीयता जैसी चुनौतियां है। वेब पोर्टल के क्षेत्र में प्रतिदिन नए–नए आयाम विकसित हो रहे हैं। वेब पोर्टल के क्षेत्र में कॅरियर की बहुत अधिक संभावनाएँ है। इस क्षेत्र का तकनीकी ज्ञान, भाषा और सूचना कौशलआपको एक बेहतर कॅरियर और रोजगार का अवसर प्रदान करता है।

शब्द कुंजी – वेब पोर्टल, तकनीकी अवरोध, चुनौतियां, कॅरियर, रोजगार, संभावनाएं।

प्रस्तावना – आज का युग संचार क्रांति का युग है। संचार क्रांति की इस प्रक्रिया में जनसंचार माध्यमों के भी आयाम बदल रहे हैं। आज की वैश्विक अवधारणा के अंतर्गत सूचना एक हथियार के रूप में परिवर्तित हो गई है। सूचना जगत गतिमान हो गया है, जिसका प्रभाव जनसंचार माध्यमों पर पड़ा है। समाचार–पत्र, पत्रिकाओं से लेकर रेडिओ और टेलीविजन जैसे पारंपरिक माध्यमों की जगह आज वेब मीडिया ने ले ली है। परंपरागत पोर्टल से बिलकुल भिन्न कम्प्यूटर और इन्टरनेट के माध्यम से संचालित एवं विभिन्न सेवाएं प्रदान करने वाले पोर्टल को वेब पोर्टल कहा जाता है। मीडिया के परिप्रक्ष्य में देखें तो पोर्टल ने ऑनलाइन पत्रकारिता, इंटरनेट पोर्टल तथा सायबर जर्नलिज्म के कई रूप सामने रखे हैं। इसकी पहुंच किसी एक पाठक, गाँव, शहर या एक देश तक सीमित नहीं है,बल्कि सम्पूर्ण विश्व तक होती है। इसे प्रिंट मीडिया, रडियो और टेलीविजन का मिला–जुला रूप भी कह सकते हैं, चूंकि इसमें समाचारों को पढ़ा भी जा सकता है तथा सुना और देखा भी जा सकता है। इसमें टेक्स्ट, पिक्चर्स, ऑडियो और वीडियो का प्रभावकारी रूप से प्रयोग किया जाता है। इसमें वेब सूचना यहां से वहां रखी जा सकती है, वही संरक्षित कर कई सालों तक सुरक्षित रखी जा सकती है। किसी पुरानी घटना से जुडी सूचनाएं अगर सुरक्षित यानी सेव की गई है तो वे नए हालात में नए सन्दर्भो में काम आ सकती है। इसमें सूचना और समाचारों के अतिरिक्त लेख, कविता, कहानी, उपन्यास, व्यंग्य, फीचर, साक्षात्कार, समीक्षा तथा समसामयिक विषयों पर आलेख भी प्रदर्शित होतें हैं। वेब पोर्टल ने सामाजिक सरोकार से जुड़े मुद्दे को काफी विस्तार दिया है। जहां कल तक मीडिया पर एक खास वर्ग तथा खास विषयों का दबदबा रहा है, वहीं पर पोर्टल ने समाज से जुड़े मुद्दे का उठाने ने काफी मदद की है। इस तरह वेब पोर्टल साहित्यिक विधाएं, ज्ञान–विज्ञान, मनोरंजन, प्रादेशिक, राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय अद्यतन खबरों से भरपूर होती है।

विषय विश्लेषण – वर्तमान में कम्प्यूटर और सूचना संजाल (इंटरनेट) का सांमजस्य और सम्बन्ध बहुत अधिक हो गया है। विश्व में अधिकांशत: अंग्रेजी भाषा में इंटरनेट की सामग्री का उपयोग होता है लेकिन भारत, चीन, जापान, रूस जैसे देशों में क्षेत्रीय भाषाओं को भी उतना ही महत्व मिलता है। भारत हालांकि हिंदी इंटरनेट में बहुत आगे नहीं है, लेकिन उसके बावजूद इसके महत्व और प्रसार को नकारा नहीं जा सकता है। इसका प्रसार लगातार और तेजी से बढ़ रहा है लेकिन इसके साथ ही इसमें आ रही परेशानियों और सुधार पर काम भी तेजी से चल रहा है। धीरे–धीरे यह आम भारतीयों का नेट बनने की तरफ अग्रसर हो रहा है।

इसके साथ ही वेब पोर्टल और वेब साइट के रूप में अपनी सामग्री को सारी दुनिया के सामने भी रखा जा रहा है। आज यह सबसे प्रचलित माध्यम है न केवल सब तक अपनी बात पहुंचाने का बल्कि विज्ञापन से लेकर प्रसिद्धि पाने तक का। यहां पर सारी दुनिया आपकी बात सुनकर अपने घर बैठे ही आपके काम की सराहना, आलोचना या सलाह दे सकती है। जब तक यह आम लोगों तक नहीं पहुंच पाएगा, तब तक इसका लक्ष्य सफल नहीं हो सकता है और न ही इसके उद्देश्य पूरे हो सकते हैं। इसी कारण भारतीय भाषाओं और खासकर हिन्दी भाषा में इसके प्रचार की ज्यादा जरूरत है। इससे ज्यादा जरूरत प्रस्तुत सामग्री के सही तरह से होने और प्रस्तुतिकरण की भी है। भारतीय वेब पोर्टल और वेबसाइट का इतिहास एवं विकास के साथ ही भविष्य में इनकी संभावनाओं पर शोध की आज आवश्यकता है, साथ ही यह हमारे लिए बहुत उपयोगी भी होगा।

* सहायक प्राध्यापक (कम्प्यूटर विभाग) पमब गुजराती वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

अंग्रेजी में ऑनलाइन पत्रकारिता की शुरुआत हिंदी से पहले हुई। भारत में 1995 के उतरार्द्ध में चेन्नई से प्रकाशित द हिन्दू (अंग्रेजी) ने अपना पहला इन्टरनेट संस्करण देना शुरू किया। इसके बाद तो एक से एक प्रतिष्ठित समाचार–पत्रों ने अपने–अपने इन्टरनेट संस्करण तैयार किए। लेकिन हिंदी में फोण्ट जैसी एवं अन्य तकनीकी समस्याओं के कारण समाचार–पत्रों के इन्टरनेट संस्करण आने में काफी समय लगा। 4 दिसंबर 1996 को इंदौर के अखबार नईदुनिया ने 'वेबदुनिया' नाम से हिंदी समाचार पोर्टल लॉन्च कर हिंदी वेबपोर्टल के क्षेत्र में एक नए युग का सूत्रपात किया। 2 मई 1996 को आकाशवाणी ने भी अनलाइन सूचना सेवा का प्रायोगिक संस्करण आरंभ किया। 90 के दशक के उत्तारार्द्ध में महत्वपूर्ण हिंदी दैनिकों ने तेजी से अपने समाचार साइट का विकास प्रारंभ किया। इनमें नवभारत टाइम्स, राष्ट्रीय सहारा, पांचजन्य, इंडिया टुडे, आगरा न्यूज, मीडिया मंच, प्रवक्ता, भड़ास, ब्लग प्रहरी, बीबीसी हिंदी सेवा आदि समाचार पत्रों के जाल संस्करण भी उपलब्ध हो गए। इसी सूची में समाचार एजेंसियों को भी समाहित किया जा सकता है, जिसमें यूनीवार्ता, पीटीआई, आरएनआई आदि प्रमुख है।

विश्व की प्रमुखतम आईटी कम्पनियां भी भाषाई महत्ता के अर्थशास्त्र का भांपते हुए अब लगातार हिंदी में समाचार पोर्टल का संचालन करने लगी है, जिसमें याहू, गूगल हिंदी एमएसएन, रेडिफ डॉट कॉम, सत्यम ऑनलाइन, विमेन इन्फोलाईट आदि कुछ बड़े पोर्टल है। विकिपीडिया का हिंदी वर्जन भी हिंदी सहित हिंदी पोर्टल को गति देने में लगा है। इस दरमियान विदेशों में खासकर अमेरिका, जापान, जर्मनी आदि देशों में हिंदी की महत्वपूर्ण वेबसाइट अस्तित्व में आयी, जिनमें अभिव्यक्ति, अनुभूति, भारतदर्शन, हिंदी नेस्ट, साहित्यकुंज आदि प्रमुख है। इन्टरनेट पर मुक्त लेखन की नई विधा ब्लॉग के आगमन से भी हिंदी वेब पोर्टल समृद्ध हो रही है। हिंदी ब्लॉगिंग की आरंभ 21 अप्रैल 2003 को हुआ थी, जब आलोक कुमार ने हिंदी के पहले ब्लॉग नौदोग्यारह का प्रकाशन किया। ब्लॉग मुक्त सृजन का मंच है। इसके माध्यम से किसी भी तरह की अनुभूति को स्वछंद रूप में अभिव्यक्ति करने की पूरी छूट होती है। ब्लॉग पर विभिन्न विषयों की महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध होती है, जिसमें राजनीति, धर्म, मीडिया, साहित्य, पत्रकारिता, सिनेमा, स्वास्थ्य, खान–पान, कला, शिक्षा, संस्कार, खेती–बाड़ी, ज्योतिष, समाज सेवा, पर्यटन, तकनीकी, वन्य जीवन, नियम कानून इत्यादि प्रमुख है। इसकी महत्ता और उपयोगिता को समझकर कई विचारक और साहित्यकार अपने ब्लॉग के जरिए वैश्विक पाठकों के बड़े वर्ग से जुड़े हुए है। कुछ वर्ष पूर्व तक इक्का–दुक्का ब्लॉगर इंटरनेट पर थे, लेकिन आज देखते ही देखतें यह संख्या हजारों तक पहुंच चुकी है। अर्थात् हिंदी वाले भी इस दिशा में पीछे नहीं है।

हिंदी वेब मीडिया के अपेक्षित विकास एवं लोकप्रियता में गुणात्मक वृद्धि नहीं होने के पीछे मुख्य कारण उचित तकनीकी का अभाव है। इसी के चलते अब तक हम अंग्रेजी वेब मीडिया की तुलना में पीछे चल रहे हैं। इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध हिंदी पत्रकार और आलोचक विष्णु खरे का मानना है कि अगर दृढ़ इच्छाशक्ति दिखाई जाए तो हिंदी में वेबसाईट और वेब पोर्टल भी अंग्रेजी के साथ–साथ कदम से कदम मिलकर चल सकते हैं। यदि वांछित तकनीकी शोध के साथ –साथ कॉपीराइट एवं अन्य सम्बन्धित विविध कठिनाईयों को लगातार दूर करने के प्रयास किए जाते हैं।

तकनीकी अवरोध दूर करने की दृष्टि से पिछले कुछ वर्षों में भारत सरकार के नेशनल सेंटर फॉर सॉफ्टवेयर टेक्नालॉजी मुंबई, सी–डैक पुणे, इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ इन्फार्मेशन टेक्नालॉजी हैदराबाद आदि संस्थान और माइक्रोसॉफ्ट, याहू, रेडिफ, रेट हेट आदि जैसी वेब कंपनियों ने हिंदी समेत सभी भारतीय भाषाओं की लगभग तमाम समस्याओं को हल करने का प्रयास किया है। भाषा तकनीक में विकसित उपकरणों को जनसामान्य तक पहुंचाने हेतु बाकायदा पोर्टल और वेबसाइट के द्वारा व्यवस्था की गई है, जहां भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालय की वेबसाइट पर लॉगिन करके सीडी मुफ्त में बुलवाई जा सकती है। वहीं इनमें से आवश्यक एप्लिकेशन या सॉफ्टवेयर डाउनलोड भी किए जा सकते हैं। सी–डैक ने हिंदी भाषा सिखाने हेतु लीला नामक वेबसाईट उपलब्ध करवाई है। इस वेबसाईट के माध्यम से हिंदी के साथ भारतीय भाषाओं की पढ़ाई ऑनलाइन मुफ्त प्रदान की जा रही है। माइक्रोसॉफ्ट ने यूनिकोड आधारित फोण्ट मंगल को विण्डोस एक्सपी ऑपरेटिंग सिस्टम के साथ उपलब्ध करवा देने से हिंदी प्रेमियों को फोण्ट की समस्याओं से छुटकारा मिल गया है। माइक्रोसॉफ्ट की ही भाषा इंडिया नामक परियोजना भी है, जो कार्य के लिए मदद कर रही है।

पोर्टल के क्षेत्र में अगर अपनी साख बनाएं रखनी है तो निश्चित ही कुछ सिद्धान्तों का पालन करना आवश्यक होता है। आज समाज में जनसंचार के अनेकानेक साधन उपलब्ध है और इन सब में अपना स्थान बनाएं रखना हिंदी वेब पोर्टल के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। वेब अभिव्यक्ति का मुक्त मंच होने के कारण इस माध्यम में सूचनाओं की विश्वसनीयता को लेकर हमेशा सतर्क रहना पड़ता है। पब्लिसिटी के लिए अनैतिकता को बढ़ावा न मिलें इसकी ओर ध्यान देना जरुरी होता है। बिना सत्यापन के किसी जानकारी को वेब पर स्थान देने से इस पोर्टल की गरिमा धूमिल हो सकती है। वेब पोर्टल का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। अधिकाधिक लोगों तक सूचना को पहुंचाने के लिए यह सबसे सरल माध्यम है, परंतु इससे लाभान्वित होने के लिए व्यापक क्षेत्र तक इन्टरनेट की पहुंच और हर पाठक वर्ग का साक्षर होना आवश्यक होता है। शहरों के लिए तो कोई समस्या नहीं है पर ग्रामीण या आंचलिक भागों में, पहाड़ी इलाकों में बिजली का अभाव या सिग्नल की पहुंच कम है। ऐसे में वेब पोर्टल को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाना भी बड़ी चुनौती है। पोर्टल से प्रसारित सामग्री का जनोपयोगी होना अपेक्षित होता है। इसलिए वेब पोर्टल को शिक्षाप्रद और ज्ञानप्रद बनाना आवश्यक है। वेब मीडिया को संचालित करना और उसे निरंतर अपडेट रखना भी बड़ा कठिन कार्य होता है। इसके लिए आर्थिक रूप से सक्षम होना जरुरी है, लेकिन अन्य मीडिया में जिस प्रकार विज्ञापनों द्वारा आर्थिक स्त्रोत प्राप्त किए जा रहे है, उस प्रकार का काम वेब मीडिया द्वारा कम होता है। इस प्रकार की विभिन्न मुश्किलों और चुनौतियों का सामना कर हिंदी वेब पोर्टल को प्रतिष्ठित करना होगा।

वेब पोर्टल के क्षेत्र में कॅरियर की बहुत अधिक संभावनाएं है। संचार क्रांति के इस युग में लोग अखबार से ज्यादा इन्टरनेट के माध्यम से खबरों को जानना ज्यादा पसंद करते है। इसीलिए पोर्टल का कोर्स या इस क्षेत्र का सर्टिफिकेट अथवा डिप्लोमा कोर्स करने के बाद किसी भी ऑनलाइन न्यूज पोर्टल से जुड़कर एक वेब पत्रकार तथा तकनीकी विशेषज्ञ के रूप में काम कर सकते है। इसके अतिरिक्त बतौर फ्रीलांसर भी इस क्षेत्र में बहुत स्कोप है। इस तरह आपको एक साथ कई वेबसाईट में अपनी सेवाएं देने का अवसर मिल सकता है। खेल, साहित्य, कला, तकनीकी, स्वाथ्स्य, संस्कृति जैसी लोकोपयोगी साइट पर कॅरियर की उज्ज्वल संभावनाएं है।

निष्कर्ष – भारत में मोबाईल तकनीकी और फोन सेवा प्रदान करनेवाले टेलिकॉम अप्रेटर भी इसके प्रसार में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। एंड्राइड मोबाइल्स हो या फिर अन्य साधन जिनके माध्यम से कहीं भी किसी

भी समय हम सूचना तुरंत प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार से कहा जा सकता है कि पोर्टल के क्षेत्र में प्रतिदिन नए-नए आयाम विकसित हो रहे हैं। मुद्रित माध्यम से आरंभ हुआ पोर्टल आज इंटरनेट के जरिए विश्वव्यापी बन चुका है। सूचना, लेखन, तकनीक एवं विविध विधाओं का स्वरुप इलेक्ट्रनिक पोर्टल में बदल गया है। व्यापक परिप्रेक्ष्य में हिंदी वेब पोर्टल ने हिंदी भाषा और साहित्य को विश्व जनमानस से जोड़कर हिंदी को अंतर्राष्ट्रीय मंच उपलब्ध कराया है। भारत सरकार ने भी पोर्टल को अधिमान्यता देकर कॅरियर और रोजगार के अधिकाधिक अवसर उपलब्ध कराएं हैं। इसके अलावा भारत के कई विश्वविद्यालयों और शिक्षा प्रतिष्ठानों में ऑनलाइन पोर्टल पाठ्यक्रमों का जिस गति से विकास हो रहा है, उसे देखकर निश्चित रूप से हिंदी वेब पोर्टल का भविष्य उज्ज्वल दिख रहा है। जैसे ही हम कुछ समस्याओं को खत्म कर लेंगे, वैसे ही पोर्टल अपने आप में संपूर्ण हो जाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विजय प्रभाकर काम्बले, भारतीय भाषाओं में कम्प्यूटर और विश्वजाल का विकास
2. माथुर श्याम (2010), वेब पत्रकारिता , राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
3. संपा. हंसराज सुमन, एस. विक्रम (2010), वेब पत्रकारिता,श्री. नटराज प्रकाशन, दिल्ली, 29
4. शालिनी जोशी, शिवप्रसाद जोशी (2012), वेबपत्रकारिता : नया मीडिया नये रुझान, राधाकृष्ण प्रकाशन, नईदिल्ली, पृष्ठ 32
5. पचौरी सुधीश (2002), नये जनसंचार माध्यम और हिन्दी, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नईदिल्ली।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Government Schemes And Poverty Alleviation In Urban U.P.

Yatindra Kumar Jha* Dr. Amit Kumar**

Abstract - Widespread urbanization is a twentieth century phenomenon. In 2000, the world's urban population had increased to almost 2.9 billion, about 47 per cent of the total population. Today Asian countries have emerged as most populous countries. More than 27 per cent population of India resides in urban areas and the larger cities are swelling due to increasing urban population and migration from rural and semi-urban areas. The structural reforms and the associated development strategies launched in 1991 are expected to accelerate rural urban migration and boost the pace of urbanization. The demographic and economic growth in India is likely to be concentrated in and around fifty to sixty large cities with population of about a million or more. There is migration from villages to town and cities which results in growth of metropolitan cities since they provide multiple avenues, services and amenities viz. education, health care, employment, business and entertainment options etc. People also migrate for economic opportunities and urban life styles. Though urbanization brings about development in the social, economic and cultural spheres of life but sometimes it disturbs the ecological system. Rapid and unplanned growth of urban agglomeration generates a series of negative environmental and social effects. Today urban India presents a very pathetic scene. Cities have become a site of rotting garbage, degrading drainage system and shocking night soil removal system. Besides, poor have practically no access to covered toilets and in many towns and cities, the majority have to defecate in the open. The untreated sewage being dumped into the nearest water body leads to health hazards.
Key Words - Government Scheme**,** Decentralization, Urbanization, Urban Governance, Poverty, Alleviation.

Introduction - India is one of the least urbanized countries in the world because between 1951 and 2001, the level of urbanization increased by 13 percentage points only.Widespread urbanization is a twentieth century phenomenon. In 2000, the world's urban population had increased to almost 2.9 billion, about 47 per cent of the total population. Today Asian countries have emerged as most populous countries. More than 27 per cent population of India resides in urban areas and the larger cities are swelling due to increasing urban population and migration from rural and semi-urban areas. The structural reforms and the associated development strategies launched in 1991 are expected to accelerate rural urban migration and boost the pace of urbanization. The demographic and economic growth in India is likely to be concentrated in and around fifty to sixty large cities with population of about a million or more. There is migration from villages to town and cities which results in growth of metropolitan cities since they provide multiple avenues, services and amenities viz. education, health care, employment, business and entertainment options etc. People also migrate for economic opportunities and urban life styles. Though urbanization brings about development in the social, economic and cultural spheres of life but sometimes it disturbs the ecological system. Rapid and unplanned growth of urban agglomeration generates a series of negative environmental and social effects. Today urban India presents a very pathetic scene. Cities have become a site of rotting garbage, degrading drainage system and shocking night soil removal system. Besides, poor have practically no access to covered toilets and in many towns and cities, the majority have to defecate in the open. The untreated sewage being dumped into the nearest water body leads to health hazards.

India is one of the least urbanized countries in the world because between 1951 and 2001, the level of urbanization increased by 13 percentage points only. However, it has the second largest urban population in the world and more than two third of it lives in the 393 cities that have population of over one lakh. The four mega cities viz., Mumbai, Kolkata, Delhi and Chennai with a population of more than 7 million each in 2011 account for almost one fourth of population living in cities. As per 2011 census, 296 million population i.e. 28.3 per cent of 1129 million total population of India is residing in 4368 cities and towns in the country, where as in 2001, 27.8 per cent population lived in urban areas. The decadal growth in urban population during 2001-2011 has been 33.5 per cent whereas at the beginning of the 20th century, only 10.8 per cent of total 218 million population of the country resided in cities and towns. The number of million plus cities has increased to 35 in 2001 from 12 in 1981 and 23 in 1991. These 35 million plus cities account for 107.9 million urban population of the country.

* Research Scholar, Department of Sociology, OPJS University, Churu (Raj.) INDIA
** Associate Professor, Department of Sociology, OPJS University, Churu (Raj.) INDIA

As we approach 21st century Indian polity has been striving for establishing democratic goals through modernizing its political and administrative institutions. With a change in development paradigms, the focus of development planning has shifted to participatory development with social justice and equity. It called for decentralized administration ensuring people's participation in decision making and giving priorities to their local needs. The 73rd and 74th Constitutional Amendment Acts, 1992 made the provision for ensuring local self governance through empowering local bodies. Thus, the units of the local self governments were given statutory status and state governments were given the mandatory provisions for establishing three tiers of local governments both in rural and urban areas. Importantly, the local bodies have become the units of the governments to have a share in decision making and active participation in development process for social-economic development of the region. The constitution of 74th Amendment Act, 1992, has marked the beginning of a historical reform to decentralize power at the grass root level in urban areas of the country. This act has provided a constitutional form to the structure and mandate of municipalities to enable them to function as an effective democratic institution of local self government. One of its important objectives is to promote people's participation in planning, provision and delivery of civic services. It introduced some fundamental changes in the system of municipal governance with a new structure, additional devolution of functions, planning responsibilities, new system of fiscal transfers and empowerment of women and the weaker sections of the society. There have been significant changes in the institutional structure for the financing and management of basic services in the post decentralization period. In order to improve the urban infrastructure and strengthening the delivery of municipal services, Government of India has invested a huge amount on new infrastructure development schemes viz. Jawaharlal Nehru Urban Renewal Mission, Urban Infrastructure Development Scheme for Small and Medium Towns and Integrated Housing and Slum Development Programme. JNNURM has been implemented in 63 selected cities of the country while other programmes are being implementing in all the towns and cities of the country. JNNURM focuses on improving governance and providing urban basic services to poor while UIDSSMT is being implemented for the small and medium towns and IHSDP is focusing on improvement of urban slums, housing conditions and developing infrastructure for urban poor. In the state of Uttar Pradesh, 7 towns viz. Lucknow, Kanpur, Varanasi, Allahabad, Agra, Meerut and Mathura have been selected under JNNURM.

Urban poverty is a major challenge before the urban managers and administrators of the present time. Though the anti-poverty strategy comprising of a wide range of poverty alleviation and employment generating programmes has been implemented but results show that the situation is grim. Importantly, poverty in urban India gets exacerbated by substantial rate of population growth, high rate of migration from the rural areas and mushrooming of slum pockets. Migration alone accounts for about 40 per cent of the growth in urban population, converting the rural poverty into urban one. Moreover, poverty has become synonymous with slums. The relationship is bilateral i.e. slums also breed poverty. This vicious circle never ends. Most of the world's poor reside in India and majority of the poor live in rural areas and about one-fourth urban population in India lives below poverty line. If we count those who are deprived of safe drinking water, adequate clothing, or shelter, the number is considerably higher. Moreover, the vulnerable groups such as Scheduled Castes, Scheduled Tribes, minorities, pavement dwellers etc., are living in acute poverty. Housing conditions in large cities and towns are depicting sub human lives of slum dwellers. With the reconstruction of poverty alleviation programmes in urban India, it is expected that social and economic benefits will percolate to the population below the poverty line.

However, eradication of poverty and improving the quality of life of the poor remain one of the daunting tasks. Again, about 81 million persons in urban areas were reported living below poverty line during 2004-2005. Importantly, Uttar Pradesh, Maharashtra, Madhya Pradesh, Andhra Pradesh and Bihar account for larger share in urban poor. The percentage of urban poor was recorded highest in Orissa (44.3 per cent), Madhya Pradesh (42.1 per cent), Uttar Pradesh (30.6 per cent), Bihar (34.6 per cent) and Maharashtra (32.2 per cent). Indian poverty is predominant in the rural areas where more than three quarters of all poor people reside, though there is wide variation in poverty across different states. Moreover, progress in reducing poverty is also very uneven across different states of the country.

Though several programmes of poverty alleviation have been initiated by government but effective dent on poverty could not be ensured. The schemes had certain limitations, which ultimately resulted in poor results or failure. Environment Improvement of Urban Slums (EIUS) launched in 1972 provided physical infrastructure and could not cover social services like health, education, community development, etc. The scheme could not help in preventing growth of new slums.

Similarly UBSP was designed to foster Neighbourhood Development Committees in slums for ensuring the effective participation of slum dwellers in developmental activities and for coordinating the convergent provisions of social services, environmental improvement and income generation activities of the specialist departments. The low level of resource allocation for the scheme led to sub critical releases to the state governments, which consequently gave low priority to the scheme. Importantly, NRY scheme was launched in 1989 to provide employment to the unemployed through setting up of micro-enterprises and wage employment through shelter upgradation works and

creation of useful pubic assets in low income neighborhoods. The scheme could not yield good results due to shortfall in employment generation on account of some states not taking up labour intensive schemes. Importantly, progress under Housing and Shelter Upgradation Scheme was recorded slow growth due to non-completion of the necessary documentation and procedural formalities. Interestingly, PMIUPEP was launched in 1994 and sought to improve the quality of life of the urban poor by creating a facilitating implementation. The scheme provided for the creation of a National Urban Poverty Eradication Fund (NUPEF) with contribution from private sector. The National Slum Development Programme (NSDP) was initiated in 1996 as a centrally sponsored scheme. The scheme highlighted on the creation of community structures as the basis for slum development and gives the maximum possible leeway to the states, ULB's and the community development societies at the slum level to plan and carry out development works as per the local assessed needs. The SJSRY was initiated in 1997 and was designed to replace the UBSP. During the year 2009 , the scheme was revamped while in the subsequent years National Urban Livelihood Development Mission in selected cities was launched by Ministry of Housing and Urban Poverty Alleviation, Government of India, The Mission envisages to empower urban poor and poverty alleviation through institutional development, SHGs based micro financing , social mobilization of urban poor, skill training and placement, promoting self employment and micro enterprises. The Mission has made provision of interest subsidy rather than capital subsidy. In order to improve the living conditions of urban poor, Government of India has introduced the draft policy for Habitat and Housing, Slum Free Cities and has also established a task force for empowerment of urban poor, Swachchh Bharat Mission, Housing for all, Rajiv Awas Yojana, Rajiv Rin Yojana, etc.

Concept of Urban Poverty - Poverty generally arises from lack of income or assets. The low income of the poor can be attributed to the following problems facing them: (i) Low access to financial resources and production assets which are necessary to sustain the micro-enterprises beyond day today basis, (ii) Monopolistic control over micro-enterprises by larger entities which, through control over inputs and/or insecurity of wage employment, compel the poor to accept lowest wages and to work overtime without pay. The urban poor have low access to formal education, health services, shelter and safe living environments. Moreover, poverty is also perpetuated by division of labour and time, away from income earning uses and towards daily physical, environmental and energy management tasks, necessary to sustain life itself. This diversion further limits chances of investing household resources in skill attainment and enterprises.

Poverty has been measured on the basis of nutritional requirement, monthly per capita expenditure and housing conditions. Thus income-based poverty lines set for the whole country do not allow for high costs of living in cities. No single poverty line can take into account the large differences in the availability and cost of food, shelter, water sanitation and health care services. Housing poverty has been defined by UNCHS as lack of safe, secure and healthy shelter with basic infrastructure like piped water and adequate provision for sanitation, drainage and removal of household's wastes. The definition of poverty line in India was set for the first time in 1962 by a working group after taking into account the recommendations of the Nutrition Advisory Committee of the Indian Council of Medical Research (1958) regarding balanced diet. The working group proposed the poverty norm in money terms in urban and rural areas. It was based on broad judgment of minimum caloric need. Importantly, the Planning Commission in 1977 constitutes a Task Force on projections of Minimum Needs and Effective Consumption Demand. It defined the poverty line as a per capita consumption expenditure level which meets the average per capita daily caloric requirement of 2400 calories in rural areas and 2100 calories in urban areas long with a minimum of non-food expenditure. The Planning Commission constituted the Expert Group on estimation and number of poor in 1989. It did not redefine the poverty line but estimated separate poverty line for each state by desegregating the national level poverty line. It used the state-wise consumer price index of industrial workers for updating urban poverty line.

The poverty is broadly defined in terms of material deprivation, human deprivation and a range of other deprivations such as lack of voice, vulnerability, violence, destitution, social and political exclusions, and lack of dignity and basic rights. In India, and indeed throughout the world, the conventional approach equates poverty with material deprivation and defines the poor in terms of incomes or levels of consumption. The Planning Commission has defined poverty in terms of the level of per capita consumer expenditure sufficient to provide an average daily intake of 2400 calories per person in rural areas and 2100 calories per person in urban areas, plus a minimal allocation for basic non-food items. There is no doubt that material deprivation is a key factor that underlines many other dimensions of poverty. Despite uncertain progress at reducing material deprivation, there has been greater progress in human development in the states throughout the 1990's. Human Development Indicators capture important dimensions of well-being and reflect not just the rate of growth in the economy but also levels and quality of public spending. Effective public spending on basic services (education, health, water and sanitation) can compensate for limited capacity of the poor to purchase these services through the market. Education is a key indicator of human development. Many desirable social and economic outcomes are limited to rising levels of education, particularly education of women and of socially vulnerable groups. Health status is another key indicator of human development. Vulnerable, powerlessness, exclusion and

social identity crises are some of the issues related with human poverty. Vulnerability is a fact of life for the poor. They are distressed not only by current low levels of resources and incomes, but also by the possibility of falling into deeper poverty and destitution. The poor are at risk because they lack the income, the assets and the social ties that protect the better off from the impact of unexpected setbacks. Illness requires expensive treatment; the temporary or permanent disability of a breadwinner or a natural or man-made disaster can obliterate a poor household's small savings. Death, disability, disease, etc. are such factors, which are linked with vulnerability.

Literature Review:

Several studies have been conducted on urban poor and poverty alleviation programme in India by various universities and research organization. Institutions have also studied on governance also, but we need more studies on the issues. There is increasing focus on Reforming Public Services in India through urban good governance.

In urban sociology, the study of city and the progress of urbanization are the centre point of attention. Various sociologists like Burgess and Park (1925), Writh (1938), Devis (1965, 1969), Frank (1971) and Wallerstein (1974) etc. have focused their attention on the process of urbanization and its impact on changing society in general and on urban society in particular.

In Indian society the process of urbanization and its impact has attracted the attention of several sociologists like Dube (1955), Ghurye (1961), Gore (1968), D' Souza (1968), M. S. A. Rao (1970) and

Srinivas (1976). However, their perspective has been different from that of poverty and growth aspects. Considering the problem urban poverty and growth of slums in big and metropolitan cities of the country.

Several sociologists like Desai and Pillai (1972), Venkatrayappa (1972), Wiebe (1975), T. K. Majumdar (1977, 83), K. R. Rao and M. S. A. Rao (1984) and Dhadeva (1989) have studied the urban society in the perspective of the aggravated situation of slums and urban poor. Though these sociologists have stressed that slums are the hutment locality of urban poor where people live in a sub-standard manner, yet they have not explained how the dynamics of several elements related to their social, economic and cultural situations sustain and perpetuate the phenomenon of the urban poverty at the macro level.

Though these scholars have not conducted any micro scoping study of urban soceity in the context of the Indian society, but the subject has attracted the attention of several Indian social scientists in general and sociologists in particular. Among social scientists, Mishra (1978), Kundu (1980), Rao (1983), Joshi (1989), Mehar (1998) and Mohan (2009) etc. have explored the study of urbanization and its effects on Indian cities in different perspectives.

World Bank (2006)[1] in its report on Reforming Public Services in India highlighted the common factors that influence the delivery of public services in India and demanded for restructuring of public services in India.

Singh (2006)[2] in his paper on "Restructuring of Municipal Services in India" maintained that there has been considerable debate in India about the indifferent quality of public service delivery which remains poor on a whole. Though, decentralization initiatives have brought about institutional changes in municipal services, yet urbanization, unplanned urban development and inadequate infrastructure of resources have stressed urban services. These services have not been able to keep pace with the fast growing population.

Dhar (2006)[3] in his paper on "Good Governance, Civil Service Reforms and Decentralization" said that in developing countries like India, full transition to market systems has to be very wisely and continuously brought about or ills the impacts of change can be inequitable and even catastrophic. He highlighted the need of a bold, effective and credible state which trusts people, which governs through policy and bold, open, people's friendly action.

Singh (2007)[4] in his paper on "Fostering Excellence in Public Services in India" remarked that independence India has been constantly endeavoring to bring efficiency, particularly in public service delivery through more accountability, transparency and responsiveness.

Singh (2008)[5] in his report on "Decentralized Urban Governance in India" highlighted the need for introducing municipal reforms and strengthening the urban local governments for delivering public services to urban poor.

Pintu (2006)[6] in his paper on "People's Centered Development and Participatory Urban Governance" said that in the emerging scenario, under a liberalized regime and in the context of participatory democracy, movements, action groups and the like are representatives of a vibrant civil society have introduced new conceptions of power and politics. They have initiated new modes of organizations, emphasizing self government and decentralization.

Benjamin and Bhuwneshwari (2006)[7] in their paper on "Urban Futures of Poor Groups in Chennai and Bangalore" highlighted the emerging issues in the era of post-74th Constitutional Amendment and their implications on urban poor. They called for local accountability and strengthening of parastatals and local bodies for empowering urban poor.

Singh (2007)[8] in his paper on "Urban Poverty in India" discussed in detail the nature, extent, dimensions and magnitude of urban poverty in India. He also reviewed the plans and policies for urban poverty alleviation.

World Bank (2002)[9] in its report on "Challenges of Poverty in Uttar Pradesh" highlighted the incidence and dimensions of poverty in the state of Uttar Pradesh. The report maintained that about 8 per cent of world's poor live in Uttar Pradesh alone.

Planning Commission (2007)[10] in its Uttar Pradesh Development report elaborated the governance framework and social development.

Krueger (1993)[11] maintained that accelerated growth

and social welfare improvements have a lot to do with strong leadership and a well functioning bureaucracy.

Mauro (1995)[12] said that bureaucratic inefficiency could affect growth indirectly or directly by leading to a misallocation of investment among sectors.

Hart, Shleifer and Vishny (1997)[13] have maintained that private provision is likely to work well for some public goods but not at all well for some others.

Oates (1972)[14] said that decentralization is the transfer of decision making from the highest level of the government to quasi autonomous units of the local government. The strong merit of decentralization is that it enables the government to be more responsive to local needs, tastes and financial viability.

Methodology - The present study will be empirical in nature and based mainly on primary data collected through field survey. Besides survey and analysis of primary data, secondary data and pertinent literature will be compiled from published and documented sources for getting insights on the topic of the research. The study will focus on national perspective however; the field survey will be confined to the state of Uttar Pradesh. We will select Lucknowcity for in-depth study. The study will cover urban slum dwellers, street vendors, manual scavengers and other urban poor who have been benefited under various inclusive programmes and schemes. Besides the survey of urban poor and slum dwellers, the people's representatives and officials of ULBs, NGOs and other stakeholder agencies engaged in implementation of urban poverty alleviation programmes, schemes, and delivery of basic services to urban poor will also be contacted. We will select about 300 urban poor including manual scavengers, street vendors and slum dwellers in the city. The field survey will be conducted with the help of structured interview schedules. Two sets of interview schedules for urban poor including scavengers, street vendors, and slum dwellers, and municipal officials and people's representatives of ULBs, NGOs and other stake holding agencies will be developed. The interview schedules will contain the relevant questions, research points and scales of view perception related to awareness, sensitization, participation, impact etc. of programmes, schemes and projects. The secondary data will be compiled from the municipal records, reports and documents. Besides, previous surveys, reports, studies and other relevant research work will also be consulted. The filled-in interview schedules will be thoroughly checked and processed with the help of relevant statistical tools and techniques including appropriate software and tabulation. The primary and secondary data will be interpreted, discussed and analyzed. The central tendencies, results, conclusions and trends and patterns will be drawn out from the analysis of data. Besides, the pertinent literature will be critically reviewed for insight stimulation on the topic of research. The policy measures and action plan will be based on the analysis of research findings and critical appreciation of pertinent literature.

Findings - Skills are essential to improve productivity, incomes, and access to employment opportunities. Thus, poverty reduction strategy should focus on vocational education and training since vast majority people living in poverty cannot afford and have access to training opportunities, which are commercially managed. International Labour Organization has invested in the field of employment intensive infrastructure programmes.It has now widely recognized that these programmes are effective in bringing much needed income to poor families and their communities. Financial investment in jobs and employment may create addition opportunities to poor youth. The labour intensive projects should respect standards, promote gender equality and encourage enterprise development through contracting systems. The entrepreneurship development may promote income generating enterprises and livelihood development. This will also promote self-employment among educated unemployed youth. Interestingly, it is impossible to build an enterprise without access to credit. Micro-finance activities should be promoted, strengthened and encouraged along with entrepreneurship for enabling poor to borrow for productive purposes.

Participation and inclusion are central to new approach to poverty reduction. Cooperatives and people's associations including Self Help Groups are ideal instruments in such a strategy. Cooperatives have proved to be a key organized form in building new models to combat social exclusion and poverty. Similarly, SHG's are proving crucial instrument for availability of micro-finance and social empowerment of poor. Significantly, discrimination is a basis for social exclusion and poverty. Promoting gender equality and eliminating all forms of Discrimination at work are essential to defeating poverty. Child labour is both a cause and a system of poverty. In order to ensure effective functioning of SJSRY, formation and strengthening of community development societies is imperative. The community development structure may be formed and strengthened effectively only through community organizers and active role of nongovernment organizations including civil societies. Similarly, training and entrepreneurship development among the urban poor may be ensured through public private partnership involving non-government organizations.

1. The state government should setup Urban Poverty and Slum Improvement Task Force. This task force may be allowed to give direction and control of the functioning of Urban Poverty Alleviation . programme including JnURM and IHSDP. City-wide master plans for slum upgradation should be drawn up with the objective of removing the slum characteristics of the selected settlements. Slum mapping along with biometric survey is imperative for the inclusive development of the cities.

2. Capacity building is essential for developing communication and interpersonal skills among the people responsible for providing for the needs of the urban poor,

for improving the level of services and satisfaction of the beneficiaries, and for providing coordinated services from a number of line agencies.

3. The wage employment component under SJSRY should be used only for building assets and infrastructure relating to the urban poor, and not for general municipal works. The requirement should be selected by the beneficiaries themselves and implementation should be from such lists of works identified by the beneficiaries. Poverty elimination is impossible unless the economy generates opportunities for investment, entrepreneurship, job creation and sustainable livelihoods.People living below poverty need voice to obtain recognition of rights and demand respect. They need representation and participation in urban planning and implementation of urban poverty alleviation programmes.

4. Skills are essential to improve productivity, incomes and access to employment opportunities. Therefore, it is imperative to have a major component of vocational education and training in poverty reduction strategies. Policies to reduce eradicate poverty need to address both the demand and supply sides of the labour market. Urban poverty reduction can not be possible without integrating the rural poverty. Thus, there is equally need of addressing poverty reduction and employment generation in rural areas to check the migration of rural poor to urban centres.

5. Training systems need to become more flexible and responsive to rapidly changing skill requirements. Reform should focus on how learning can be facilitated, not just on training for specific occupational categories.There is also imperative need of increasing the investment in training and skill development for sustainable livelihoods.

6. Small and micro enterprises constitute a large and growing share of employment and are generally more labour intensive. However, small business development requires management skills to survive and grow.Self help group based micro financing may be an effective instrument for empowering urban poor and promoting micro and small enterprises for livelihood development.

Conclusion - Eradicating poverty calls for the coordination of policies that focus on different dimensions of life of people living in poverty. Coordination and cooperation among various stake holding agencies is imperative to effectively implement the urban poverty alleviation programmes. The Civil Societies and Public Sector Participation is imperative and it should be strengthened through community mobilization, participation and entrusting NGOs by government agencies Public-private partnership is to be further strengthened through state level policy environment and support. The creative role of corporate sector in delivery of civic services and empowering poor may be explored through creating enabling environment and effective participation of corporate sector by providing incentives. The community participation should be ensured in planning and designing of the development projects including housing.

References :-

1. World Bank (2006), Reforming Public Services in India, Sage Publications, New Delhi.
2. Singh, A.K. (2006), Restructuring of Municipal Services in India, Indian Journal of Public Administration, Vol. LII (3), July-September.
3. Dhar, T.N. (2006), Good Governance, Civil Service Reform & Decentralization, Indian Journal of Public Administration, Vol. LII (3), July-September.
4. Singh, A.K. (2007), Decentralized Urban Governance in India, Project Report, Regional Centre for Urban Environmental Studies, Lucknow.
5. Singh, A.K. (2008), Urban Poverty Alleviation Programmes in India, Working Paper, Regional Centre for Urban Environmental Studies, Lucknow.
6. Pinto, M.R. (2006), People Centred Development and Participatory Urban Governance: The Mumbai Experience, IN Local Governance in India: Decentralization & Beyond, Edited by Jayal, N.G. et.al., Oxford University Press, New Delhi.
7. Benjamin, S. & Bhuvneshwari, R. (2006), Urban Futures of Poor Groups in Chennai & Bangalore: How These are Shaped by the Relationships between Parastatals & Local Bodies, IN Local Governance in India: Decentralization & Beyond, Edited by Jayal, N.G. et. al., Oxford University Press, New Delhi.
8. Singh, A.K. (2007), Urban Poverty in India, IN India in Global Economy, Edited by G.R. Krishnamoorthy & A.K. Singh, Serials Publications, New Delhi.
9. World Bank (2002), Poverty in India: Challenge of Uttar Pradesh, World Bank, Delhi.
10. Planning Commission (2007), Uttar Pradesh Development Report, Academic Foundation, New Delhi
11. Kruger, A.O. (1993), The Political Economy of Policy Reform in Developing Countries, MIT Press, Cambridge.
12. Hart, Oliver et.al. (1997), The Proper Scope of Government, Theory and an Application t Prisons, Quarterly Journal of Economics, November
13. Oates, W.E. (1972), Fiscal Federalism, Harcourt Brace, Jovanovich, New York.
14. ODSG, Overseas Development Paper No. 19, Urban Poverty, Overseas Development Study Group, London.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

संस्कृत साहित्य में नाटक : एक अध्ययन

राम प्रसाद वर्मा *

प्रस्तावना – नाटक नेत्र–मार्ग से हृदय को चमत्कृत करता हुआ दिखाई देता है। इससे किसी वस्तु को देखने का आनन्द उसके सुनने की अपेक्षा कहीं अधिक होता ही हैं काव्य में रसानुभूति के लिए अर्थ का समझना नितान्त आवश्यक होता है, परन्तु नाटक में इसकी आवश्यकता नहीं रहती। इसलिए नाटक की समता चित्र से की गई है जिस प्रकार चित्र भिन्न–भिन्न रंगों के सम्मिश्रण से हृदय दर्शकों के चित्त में रस का स्रोत बहाता है, ठीक उसी प्रकार नाटक भी वेशभूषा, नेपथ्य, साजसज्जा आदि उचित संविधानों से दर्शकों के हृदय पर एक अमिट प्रभाव डालता है तथा उनके हृदय में आनन्द का उदय कराता है। संस्कृत के प्रसिद्ध आलंकारिक वामन ने इसीलिए काव्यों में रूपक को विशेष महत्व प्रदान किया है। रूपक की श्रेष्ठता का एक और भी कारण है। काव्य की विशद रसानुभूति के लिए जिस कवित्वमय वातावरण की आवश्यकता होती है उसकी सृष्टि सभी नहीं कर सकते। वह तो कल्पना से प्रसूत होती है। इस लिए काव्य का रसास्वाद सहृदयों को ही हुआ करता है, परन्तु अभिनय में तो रसोपयोग की सकल सामग्री वेशभूषा, नाना प्रकार के परदों आदि संविधानों के द्वारा उपस्थित की जाती है। रसानुभूति के लिए वातावरण स्वयं उपस्थित हो जाता है। उसकी कल्पना करने की आवश्यकता ही नहीं रहती। यही कारण है कि साधारण व्यक्तियों के लिए भी काव्य की अपेक्षा नाटक का आकर्षण विशेष प्रभावशाली होता है। इसी से नाटक कवित्व की चरम सीमा माना जाता है–नाटकान्तं कवित्वम्।

समस्या – नाटक की आज समस्या होती है, क्योंकि कोई भी पत्र उस नाटक को प्रस्तुत करने के लिए अनेक प्रकार के प्रश्नों से अपने–आप को घिरा हुआ पाता है। इससे समाज में विभिन्न प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न हो रही है। जिसका शिकार ग्रामीण जन–जीवन ही नहीं बल्कि अधिक मात्रा में शहर के लोग भी हो रहे हैं। उस नाटक का अर्थ समझना बहुत ही आवश्यक हो जाता है।

उद्देश्य – नाटक का उद्देश्य अत्यन्त महत्वशाली है। भरत ने नाट्य को 'सार्ववर्णिक' वेद कहा है; क्योंकि अन्य वेद केवल द्विजमात्र के लिए उपयोगी तथा उपादेय होते हैं, परन्तु नाट्य का उपयोग प्रत्येक वर्ण के लिए है। प्रत्येक व्यक्ति इस आनन्द का अधिकारी माना गया है। नाटक का प्रभाव किसी एक ही प्रकार की अभिरुचिवाले लोग के ऊपर नहीं होता, प्रत्युत यह सार्वजनिक मनोरंजन होने के कारण समाज के लिए ग्राह्य तथा उपादेय होता हैं। नाटक का विषय भी सीमित नहीं होता, प्रत्युत तीनों लोकों के भावों का अनुकीर्तन इसमें रहता है। यह शक्तिहीनों के हृदय में शक्ति का संचार करता है, शूरवीरों के हृदय में उत्साह बढ़ाता है, अज्ञानियों को ज्ञान प्रदान करता है और विद्धानों में विद्धत्ता का उत्कर्ष करता है। नाटक है लोकवृत्त का अनुकरण।

इस विशाल विश्व के पट पर सुख–दु:ख की जो प्रवृत्तियाँ अपना खेल दिखाया करती हैं तथा मानव–जीवन को सुखमय या दु:खमय बनाती हैं उन सबका चित्रण नाटक का अपना विशिष्ट उद्देश्य है। इसलिए भरतमुनि का कहना है कि कोई भी ज्ञान, शिल्प, विद्या, योग अथवा कर्म ऐसा नहीं है जो इस नाट्य में नहीं दिखलाई पड़ता। इसलिए कालिदास ने भिन्न रुचिवाले लोगों के लिए नाटक को एक सामान्य मनोरंजन का साधन बतलाया है। इस प्रकार आनन्द के साथ चरित्र को उदार बनाना, जीवन के स्तर को उदात्त तथा आदर्श बनाना नाटक का जागरूक उद्देश्य है।

कालिदास ने मालविकाग्निमित्र की प्रस्तावना में सूत्राधार के मुख से स्पष्ट ही प्रश्न करवाया है कि प्रख्यात कीर्तिवाले भास, सौमिल्ल, कविपुत्र आदि कवियों के प्रबन्धों को छोड़कर कालिदास की कृति का इतना अधिक आदर क्यों हो रहा है? इस प्रश्न से अच्छी तरह मालूम पड़ता है कि कालिदास के समय में भास के नाटक अत्यन्त लोकप्रिय थे। साथ ही कालिदास की महनीयता भी किसी प्रकार संदिग्ध नहीं है, वह भी लक्षित होता है।

समाधान – कालिदास की दीर्घ सांसारिक अनुभूतियों तथा लोकव्यवहार की गाढ़ प्रवीणता का परिचय हमें उनके नाटकों से मिलता है। उन्होंने तीन नाटकों का प्रणयन किया है। ये मानव हृदय की विभिन्न परिस्थितियों में उदीयमान वृत्तियों का चित्रण लोकव्यवहार के साथ पूर्ण सामंजस्य से करते हैं इन नाटकों में प्रेममूलक आख्यान को ही कविवर ने कथावस्तु के रूप में परिगृहीत किया है, परन्तु यहाँ प्रेम की नाना अवस्थाओं का दिग्दर्शन बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग से किया गया है। 'मालविकाग्निमित्र' में प्रतिकूल परिस्थिति में रहकर भी राजसी अन्त:पुर में पनपने वाले यौवन–सुलभ प्रेम का चित्र है, तो 'विक्रमोर्वशीय' में यौवन की उद्दाम वासना से उत्पन्न, कामुक पुरुष को प्रेमिका के विरह में एकदम पागल बना देने वाले प्रेम का निरूपण है। 'शाकुन्तल' की स्थिति इन दोनों से भिन्न है। वहाँ तपस्या तथा साधना के द्वारा, वियोग की ज्वाला से विशुद्ध बनने वाले काम की प्रेम में परिणति का अभिराम चित्र प्रस्तुत किया गया है। कालिदास के इन तीनों नाटकों का वस्तु तथा रस की दृष्टि से अनुपम वैशिष्ट्य है।

'मालविकाग्निमित्र' में शुवंशीय नरेश अग्निमित्र तथा मालविका के प्रेम का अभिराम चित्रण ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का आश्रय लेकर कमनीयता के साथ अंकित किया गया है। कवि ने राजाओं के अन्त:पुर की चहारदीवारी के भीतर विकसित होने वाले काम, रानियों की परस्पर ईर्ष्या, राजा की कामुकता, महिषी धारिणी की धीरता तथा उदात्तता का चित्रण बड़ी सुन्दरता से किया गया है।

परंतु राजा का विदूषक गौतम दो नृत्य–शिक्षकों में झगड़ा लगा देता है। उन दोनों को अपनी श्रेष्ठता के विवाद का निर्णय कराने के लिए राजा की

*संस्कृत विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्याल, रीवा (म.प्र.) भारत

मदद लेनी पड़ती है। और, राजा स्वयं यह मामला तपस्विनी कौशिकी के हवाले कर देता है। वह वस्तुत: मालविका की पक्षधारिणी है, जो मालविका और उसके भाई (जो अनुरक्षकों पर किये गये आक्रमण के समय मारा गया था) की रक्षिका रह चुकी थी। वह शिक्षकों की अपनी सर्वश्रेष्ठ शिष्या को प्रस्तुत करने का आदेश देती है। गणदास मालविका को ले आता है। उसके गान और नृत्य से सब आनंदित होते है। उसके सौंदर्य पर मुग्ध राजा अपूर्व आनंद प्राप्त करता है। वह विजयिनी होती है। तीसरे अंक में दृश्यस्थल बदल जाता है। धारिणी के आदेश से मालविका, कवि-समय के अनुसार, अपने चरण-स्पर्श अशोक को कुसुमित करने के लिए उद्यान में आती है। विदूषक के साथ राजा लता की ओट से उसे देखता है। उसकी छोटी रानी इरावती भी ऐसी ही करती है। उसके मन में इस नयी नायिका के प्रति शंका और सौतिया डाह है। गुप्त रूप से राजा मालविका और उसकी सखी का वार्तालाप सुनता है। वह अनुभव करता है कि मालविका भी उसीकी भाँति प्रेम करती है। वह बाहर निकलकर उसका आलिंगन करता हैं इरावती सहसा प्रकट होकर और राजा के समीप पहुँचकर उसका अपमान करती है। धारिणी मालविका को बंदी बना लेती है। जिससे प्रेम-व्यापार आगे न बढ़ सके। परंतु कौशिकी की सहायता से विदूषक समस्या को सुलझाने में समर्थ सिद्ध होता है। वह ढोंग करता है कि उसे साँप ने काट खाया है। उपचार के लिए एक रत्न की आवश्यकता पड़ती है जो रानी की मुद्रिका में हैं उस काम के लिए रानी मुद्रिका दे देती है, किन्तु उसका उपयोग मालविका को मुक्त कराने के लिए किया जाता है। प्रेमियों के मिलन की व्यवस्था की जाती है। इरावती की सुदृढ़ सतर्कता के कारण फिर बाधा पहुँचती है। भाग्यवश, राजा को अन्दर से भयभीत नन्हीं राजकुमारी वसुलक्ष्मी की रक्षा के लिए जाना पड़ता है, और इस प्रकार उसका संकट हलका हो जाता है। पाँचवें अंक में दो अप्रत्याशित समाचारों के आने से वह उलझन सुलझ जाती है। दूत विदर्भ के राजकुमार पर प्राप्त विजय का संवाद और युद्धबंदियों को लेकर आते हैं। गायिकाओं के रूप में दो लड़कियाँ रानी के समक्ष उपस्थित होती हैं। वे रानी की परिचारिकाओं में कौशिकी और अपनी भट्टिनी मालविका को पहचान लेती हैं। कौशकी बतलाती है कि राजकुमारी की स्वरूपता (identity) के विषय में उसकी चुप्पी का कारण भविष्यवाणी का अनुसरण है। इसके अतिरिक्त, अग्निमित्र का पिता पुष्यमित्र उत्तार से विजय का समाचार लेकर भेजता है, अश्वमेघ के अश्व की रक्षा करते हुए धारिणी-पुत्र वसुमित्र ने सिंधु-तट पर यवनों को पराजित किया है। (सनातन धर्म के अनुसार यज्ञ वंधनमुक्त होकर एक वर्ष तक घूमता रहता है। उसके बाद ही राजा को चक्रवर्ती की उपाधि के लिए अश्वमेघ करने का अधिकार प्राप्त होता है।) मालविका ने अशोक को कुसुमित करके जो सेवा की है उसके उपलक्ष्य में धारिणी को उसके लिए एक पुरस्कार देना है। अपने पुत्र की सफलता के समाचार से आनंदित होकर वह प्रसन्नतापूर्वक अग्निमित्र को मालविका से विवाह करने का अधिकार देती है।

निष्कर्ष – इरावती क्षमा-प्रार्थना करती है, और सबकुछ आनंद के साथ समाप्त होता है। पुष्पमित्र, अग्निमित्र और वसुमित्र स्पष्टतया शुंग-राजवंश से गृहीत पात्र हैं। यह राजवंश पुष्यमित्र के द्वारा 178 ई. पू. में अंतिम मौर्य राजा को सिंहासन च्युत करके प्रतिष्ठित हुआ था। उसके समय में यवनों के साथ संपर्क का अभिलेख मिलता है। अश्वमेघ असंदिग्ध रूप से परंपरागत है, परन्तु साथ ही इसमें समुद्रगुप्त के यज्ञ का संकेत हो सकता है, जो आरंभिक गुप्त-काल के इतिहास की सर्वाधिक महत्तवपूर्ण घटना है, क्योंकि उससे इस वंश का साम्राज्य-सबंधी प्रभुत्व स्थापित हुआ। रूपक का शेष भाग प्रसामान्य प्रतिमान पर आधारित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सूर का श्रृंगार वर्णन, डॉ. रमाशंकर तिवारी, चौखम्बा भवन, वाराणसी, पृष्ठ 25
2. महाकवि कालिदास-डॉ. रमाशंकर तिवारी, चौखम्बा भवन, वाराणसी, चतुर्थ संस्करण, 1986, पृष्ठ 45
3. महाकवि शूद्रक-डॉ. रमाशंकर तिवारी, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 81
4. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर, प्रथम संस्करण, पृष्ठ 26

****

Effect of Cadmium on morphometric and biochemical plant parameters of *Trigonella foenum - graecum* L.

Manish Singh* Soumana Datta**

Introduction - In an agriculture-based country like India, livestock production is of utmost vitalityand plays a key role in providing employment especially in Indian agriculture and rural economy. Livestock adds 9% to National GDP and 25% to agricultural GDP respectively and contribution from livestock is about 15-20% to the farmer's household income (Hegde, 2006).Nutrition plays a major role by driving the functional efficacy, and efficiency of the livestock production system. The fodder from common cereal crops are rich in energy and the leguminous crops are rich in proteins. The green fodder crops are known to be the best source of nutrients as compared to concentrates and hence useful in bringing down the cost of feeding and reduce the need for the purchase of feeds from the market(Roy *et.al*., 1993).

Heavy metal contamination of soil is a far more serious problem than air or water pollution because heavy metals are usually tightly bound by the organic components in the surface layers of the soil. Consequently, the soil is an important geochemical sink which accumulates heavy metals quickly and usually depletes them very slowly by leaching into groundwater aquifers or bioaccumulating into plants (Infotox, 2000). Heavy metals can also be very quickly translocated through the environment by the erosion of the soil particles to which they may adsorb or bound and redeposited elsewhere. Industrial processing and intensive agricultural practices, resulting in the contamination of forage, feed, and water, are sources of Cd exposure for farmed ruminants. From here, they migrate into the food chain by direct or indirect usage of respective crops. Although some heavy metals like Cu, Fe, Mn, Zn are required for the growth of plants in trace amounts but prove fatal if present beyond their maximum permissible limits (Freitas *et al.,* 2010). Various heavy metals along with the cd, viz., arsenic, copper, cobalt, lead, manganese, mercury, nickel, and zinc are reported to cause genotoxicity upon reaching the living systems (Chandra *et al.,* 2005; Bertin *et al.,* 2006).

Cd accumulates over time, primarily in the kidney and liver (Langlands *et al*., 1988). Cd can cross various biological membranes and, once intracellular, to bind to ligands with exceptional affinity. Cd is a known human carcinogen (Filipic *et al*., 2006).Exposure to low Cd concentrations can also adversely affect bovine reproduction (Kreis *et al*., 1993). Cd contamination in food crops and their effects on human health have not been extensively reported.An improved understanding of the interaction of Cd with other elements may provide the key to understanding the effects of Cd on health. Therefore, in the present investigation, the effects of heavy metal Cadmium (Cd) on fodder plant *Trigonella foenum-graecum* from Rajasthan state was studied.

Material and methods - Certified seeds of *Trigonella foenum-graecum* were obtained from Durgapura Agriculture Research Station, Jaipur. The seeds were stored in sterilized glass stoppered bottles.

1. Morphometric evaluation of plant parameters under Cd stress - Uniform, healthy and viable seeds were taken for the experiment. The seeds were surface sterilized with 0.01% mercuric chloride solution for three minutes and thoroughly washed with distilled water three times each for 5 minutes and then dried with a paper towel. Dry seeds were placed in 90-mm-diameter Petri dishes on a layer of Whatman No. 1 filter paper with a thin uniform pad of sterilized cotton placed beneath, and then moistened with 6 different cadmium sulfate concentration (*i.e*.,10, 50, 100, 200, 500 and 1000ppm),and seeds also grown in distilled water as a control. Seeds were kept at room temperature (25°C ± 1°C) under normal light for germination.

Each treatment includes 3 Petri dishes as replicates which contain 10 healthy and homogenous seeds (10 Seeds/ Petri dish) arranged in a concentric ring and equidistant from each other on the filter paper. 30 seeds of *Trigonella foenum-graecum* were used. The emergence of radical (not less than 2 mm) was considered an indication of successful germination. The number of germinated seeds was counted daily until there was no further seed germination. The total number of seeds germinated was recorded. The length of plumule and radical was recorded on the 10^{th} after germination. For radical and plumule length and fresh and dried weight average of 10 seedlings was taken. The data thus obtained were used to calculate germination percentage, the kinetics of plumule emergence, seedling length, fresh and dry weight, growth index, and seed vigor. Following formulae were used to calculate the parameters:

*Department of Botany, University of Rajasthan, Jaipur (Raj.) INDIA
** Department of Botany, University of Rajasthan, Jaipur (Raj.) INDIA

(a) Seed germination percentage = $\frac{\text{No. of seeds germinated}}{\text{Total no. of seed sowed}} \times 100$

(b) Shoot and Root Length (cm) - The length of root and shoot were separately measured of 10 days old seedlings with the help of a ruler (in cm).

(c) Fresh and dry weight (gm) - After proper washing, excess water was removed and then the fresh weight of seedling was measured, and for dry weight the seedling was dried in an oven at 80^{o}C for 24 hours and then weighed.

2. Biochemical evaluation of plant parameters under Cd stress - For biochemical evaluation, seeds were sown in experimental pots andhydroponic systems in the Department of Botany, University of Rajasthan Jaipur. The various attributes considered for the present work were studied at a different time interval after germination. The following attributes were analyzed for fenugreek crop:

(a) Protein estimation - The leaf proteins of control and treated plants extracted by Lowry *et al*., 1951 method. Alkaline $CuSO_4$ catalyzes the oxidation of aromatic amino acids with subsequentreduction of sodium-potassium molybdate tungstate of Folin's reagent giving a purple color complex the intensity of the color is directly proposition to the concentration of the aromatic amino acid in the given sample solution. For extraction, grind 500mg of 10 days old plant sample with pestle and mortar in 5-10 ml of the phosphate buffer. Centrifuge the homogenate at 8000 rpm for 20 min. Collect the supernatant and repeat the extraction 4-5 times. Combine the supernatants and make the volume to 50 ml with phosphate buffer. Take 0.1 ml of the above extract and add 0.1 ml of 20% TCA. Keep it for half an hour and centrifuged at 8000rpm for 20 min. Wash the pellet with acetone twice and again centrifuge it. Discard the supernatant. Dissolve the pellet in 5 ml of 0.1 N NaOH and mix well till it gets dissolved. For estimation,a suitable aliquot (1 ml) of the above solution is taken and adds to it 4.5 ml of freshly prepared alkaline copper sulfate reagent. Mix properly and after 10 min add 0.5 m of Folin's reagent. Mix the content instantaneously. Allow the color to develop for 30 min. Record the absorbance at 660 nm after setting the instrument with reagent blank which contains 1 ml of 0.1 N NaOH instead of the sample aliquot. In another set of tubes take suitable aliquots of BSA solution (in a range of 10-100µg) make the total volume to 1 ml with 0.1 N NaOH and develop the color as described above. Draw a standard curve of absorbance at 660 nm versus µg of BSA. From the standard graph the amount of protein in the given unknown solution is calculated and expressed as mg gm^{-1} fw of leaves.

(b) Total soluble sugar - Total soluble sugar was estimated by using anthrone reagent (Dubois *et al*., 1951). 25mg ofthe sample was crushed in 10 ml of 80% ethanol and then centrifuged for 10 minutes at 4000rpm. Take the supernatant as an extract. Add 0.1ml of the extract to 4ml of the anthrone solution and heated for 10 minutes in boiling water and was allowed to cool at room temperature. The intensity of blue-green color was measured in UV-VIS spectrophotometer at 625 nm against a reagent blank (anthrone reagent was responsible for color development). The sugar content was estimated from a standard curve prepared with a known concentration of glucose.

(c) Estimation of Phenols - The deproteinized test materials (200mg each) were macerated with 10 mL of 80% ethanol for 2 hours, and left overnight at room temperature. The mixtures were centrifuged, and the supernatants were collected separately and maintained up to 40 mL by adding 80% ethanol.Total phenol content in each sample was estimated by the spectrophotometer method of Bray and Thorpe, 1954. It includes the preparation of a regression curve of a standard phenol (Tannic acid). A stock solution of tannic acid was prepared by mixing 40 mg of standard phenol in 1 mL of 80%ethanol. Eight concentrations ranging from 0.1 to 0.8 mL were prepared in the test tube and volume was raised to 1mL by addition of 80% ethanol. To each test tube, 1mL of Folin-Ciocalteau reagent (commercially available reagent was diluted by distilled water in 1:2 ratio just before use) and 2 mL of 20% sodium carbonate solution was added and the mixture was shaken thoroughly. The samples were placed in boiling water for 1 min and cooled under running water. These reaction mixtures were diluted to 25 mL by adding distilled water and optical density was read at 750 nm against a blank. The optical density of each sample was plotted against the respective concentration of total phenols to compute the regression curve. The concentrations in the test samples were calculated by referring the respective optical density of the test sample against a standard curve of tannic acid (or standard phenol).

(d) Lipid Estimation - The test sample was dried, powdered and 100mg was macerated with 10 mL distilled water, transferred to a conical flask containing 30 mL of chloroform and methanol (2/1: v/v; Jayaram, 1981). The mixture was thoroughly mixed and left overnight at room temperature in dark for complete extraction. Later, 20 mL of chloroform mixed with 2 mL of water was added and centrifuged. Two layers were separated, the lower layer of chloroform, which contained all the lipids, was carefully collected in the pre-weighed glass vials and the colored aqueous layer of methanol which contained all the water-soluble substances and thick interface layer were discarded in each test sample. The chloroform layers dried *in vacuum* and weighed. Each treatment was repeated thrice and their mean values were calculated.

Results and Discussion - The accumulation of heavy metals in agricultural soils is of increasing concern due to the food safety issues and potential health risks as well as its detrimental effects on soil ecosystems (Qishlaqi and Moore, 2007). The heavy metal concentration in the soil solution plays an important role in controlling metal bioavailability to plants. Presently, due to constraints in the availability of freshwater for irrigation, wastewater is being used for irrigation of agricultural fields resulting in toxic metal

contamination. Heavy metals are either leach into ground or surface water and enter into the growing food crops (Janos *et al.,* 2010). From here, they migrate into the food chain by direct or indirect usage of respective crops. Although some heavy metals like Cu, Fe, Mn, Zn are required for the growth of plants in trace amounts but prove fatal if present beyond their maximum permissible limits (Freitas *et al.,* 2010). Various heavy metals along with the cd, viz., arsenic, copper, cobalt, lead, manganese, mercury, nickel, and zinc are reported to cause genotoxicity upon reaching the living systems (Chandra *et al.,* 2005; Bertin *et al.,* 2006).

Therefore, in the current investigation, the effect of cadmium stress on morphometric and biochemical plant parameters of fodder plant *Trigonella foenum-graecum* was tested. For that, seeds of *Trigonella foenum-graecum* sown in 3 treatment groups of pots of triplicates of three experiments each were observed for every undertaken experiment.

1. Morphometric observation of plant parameters under Cadmium stress

(a) Seed germination percentage - Seed germination is a vital developmental event in plants and considered an important growth stage that is frequently subjected to high mortality rates. The percentage of germination has been used as an indicator of heavy metal toxicity in plants. The effect of metals on the development and reproduction of plants can be firstly quantified by determining the germination characteristics of seeds (Munzuroglu and Geckil, 2002). The effect of heavy metals on seed germination depends on their ability to penetrate the seed coat and disturb various physiological processes involved in germination (Khattab, 2004; Faheed, 2005; Wang and Zhou, 2005).

The seeds of *Trigonella foenum-graecum* were screened for cadmium salt tolerance deriving germination percentage. Results indicated that Cadmium stress given in the form of Cadmium sulfate had a significant inhibitory effect on germination percentage. By increasing concentrations of cadmium sulfate, the germination percentage gradually decreased concerning the control in the groups treated with increasing concentrations of cadmium sulfate from 10, 50, 100, 200, 500, and 1000 ppm. Treatment on the seeds of *Trigonella foenum-graecum* exhibited only 73% germination at 10 ppm, 60% at 50 ppm, and null at 100 ppm or higher treatment. However, 100% germination under control condition when cadmium sulfate was absent (0 ppm). The effect of cadmium stress on seed germination of *Trigonella foenum-graecum* is shown in Table-1 and Figure-1(a), 1(b)

The inhibition percentage of germination in *Trigonella* was high in heavy metals stress. In high-level treatments, germination percentages were detrimentally affected, implying that a higher concentration of cadmium was not conducive to seed germination. This may be attributed to depression of oxygen uptake and physiological disturbance in the mobilization of reserved food materials (Mondal *et al.*, 2013). $CdCl_2$ and $HgCl_2$ (0.05-50 mM) have reduced seed germination and the shoot development with an increase of metal concentrations and exposure time (Alhelal, 1995).

Table-1: Effect of Heavy Metal Cd on Seed Germination (%) in *Trigonella foenum-graecum* (Values are means of three replicates each)

Concentration of $CdSO_4$ (in ppm)	0	10	50	100	200	500	1000
Seed Germination (%)	100	73	60	-	-	-	-

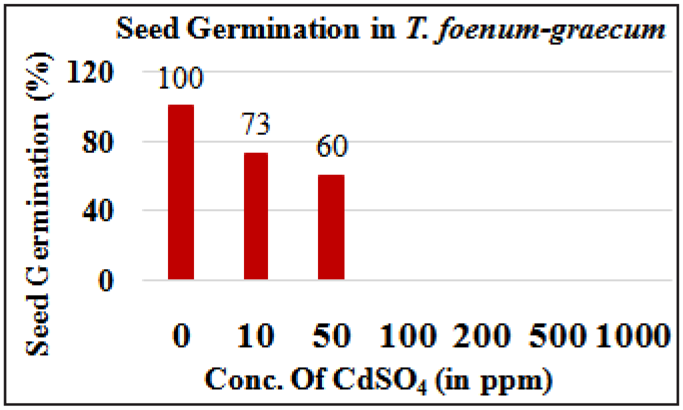

Figure-1 (a): Effect of Heavy Metal Cdon Seed Germination (%) in *Trigonella foenum-graecum*

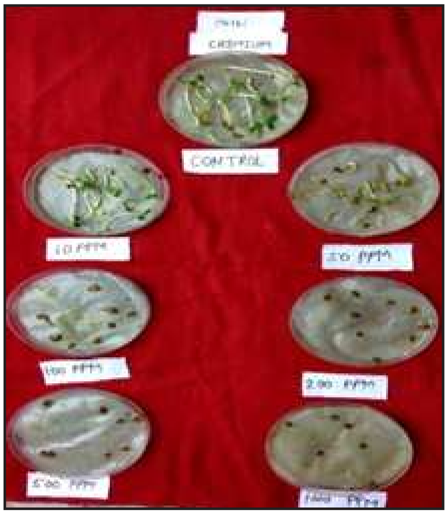

Figure-1 (b): *Trigonella foenum-graecum*seeds under Cd stress of varied concentration

(b) Shoot Length - In the present study, the results recorded significant reductions in shoot length with all the treated groups from 10, 50, 100, 200, 500, and 1000 ppm concentrations of cadmium sulfate salt as compared with the control in *Trigonella foenum-graecum*. Shoot length was decreased from 4 cm in control to 2.4 cm and 1.1 cm at 10 and 50 ppm respectively. No growth was observed at higher concentrations (100, 200, 500,and 1000 ppm) of cadmium sulfate. The effect of cadmium stress on shoot length of *Trigonella foenum-graecum* has been shown in Table-2 and Figure-2.

The reasons for the inhibition effect of heavy metal to plant growth were probably due to a series of physical and chemical reactions between excess heavy metal and soil components which changes soil properties, thus affecting soil fertility levels (Cieslinski *et al*., 1996; Chang and Wu, 2005). However, the level of significance varied in different varieties, cadmium sulfate levels, and at different durations. Mukherjee and Dalal, 2014 demonstrated that root and shoot length was drastically changed under heavy metal stress. After the accumulation of heavy metals, the length of root and shoot were decreased. There was a decrease in root and shoot length in *Trigonella foenum graecum* under lead and cadmium stress. Pb and Cd treated *Trigonella foenum-graecum* showed a decreased level of tolerance indices which also dose-dependent and Cd shows the maximum effect for the decreased root length. Perveen *et al*., 2011 also showed that Cd treated *Trigonella foenum-graecum* was exhibit blackening of the root system (Godbold and Kettner, 1991). Ahmad *et al*., 2005 reported that there was a significant decrease in root and shoot length in lead and cadmium treated *Trigonella*.

Table-2: Effect of Heavy Metal Cdon Shoot Length (cm) of Seedlings in *Trigonella foenum-graecum*(Values are means of three replicates each)

Concentration of $CdSO_4$ (in ppm)	0	10	50	100	200	500	1000
Shoot Length (cm)	4	2.4	1.1	-	-	-	-

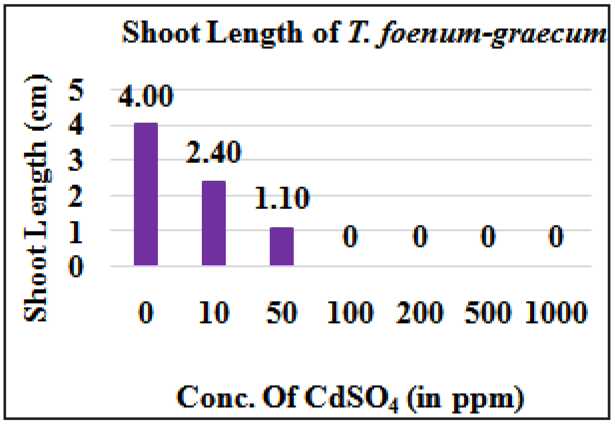

Figure-2: Effect of Heavy Metal Cdon Shoot Length (cm) of Seedlings in *Trigonella foenum-graecum*

(c) Root Length - In the present study, similar to shoot length, root length has also been adversely affected under-treated concentrations of cadmium sulfate. Under non-stressed conditions, when cadmium sulfate was absent (0 ppm), root length in *T. foenum-graecum* was 4.2 cm. In treated groups, it was noticed that the root length was decreased at 10 ppm and 50 ppm to 1.5 cm and 0.4 cm, and further, there was no growth was observed. The effects of cadmium stress on root length of *Trigonella foenum-graecum* have been shown in Table-3 and Figure-3.

In the present study, similar to shoot length, root length has also been adversely affected under various concentrations of cadmium sulfate. Zayneb *et al*., 2015 reported that cadmium affected various plant growth parameters. Its accumulation was markedly lower in shoots as compared to roots, reducing root biomass by almost 50 %. Chugh and Sawhney, 1995 also investigated the deleterious effect of cadmium on fenugreek á- and â-amylase, which were quite sensitive to metal: both were affected equally by35%and46% inthepresenceof0.25 mMand0.50 mM cadmium, respectively.

Table-3: Effect of Heavy Metal Cd on Root Length (cm) of Seedlings in *Trigonella foenum-graecum*(Values are means of three replicates each)

Concentration of $CdSO_4$ (in ppm)	0	10	50	100	200	500	1000
Root Length (cm)	4.2	1.5	0.4	-	-	-	-

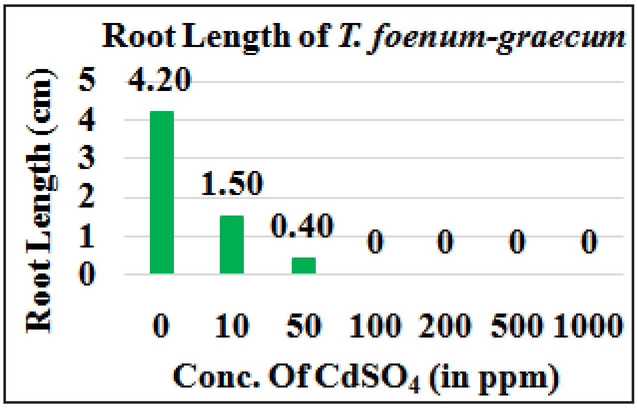

Figure-3: Effect of Heavy Metal Cd on Root Length (cm) of Seedlings in *Trigonella foenum-graecum*

(d) Fresh weight of seedlings - The fresh weight of untreated seedlings in *Trigonella foenum-graecum*was 0.06g. A decrease in weight was observed with 0.04 and 0.02 g at 10 and 50 ppm and further no growth was observed at higher concentrations. The effects of cadmium stress on the fresh weight of *Trigonella foenum-graecum* are shown in Table-4 and Figure-4.

The fresh weight of seedlings in *Trigonella foenum-graecum* was significantly affected by increasing Cd dosage. Pirselova *et al*., 2016 reported that each of the tested doses of Cd resulted in a decrease of root fresh weight by 31.70 and 28.68%. Biyani *et al*., 2019 also described that Cd stress caused a significant decrease in shoot fresh and dry weight. The fresh and drybiomass accumulation of Cd-treated plants was significantly lower than in plants that were adequately supplemented with Fe (+Fe/+Cd). The greatest reduction was observed in "Fe/ +Cd plants after 10 days of treatment, whereas this effect was reversed after the addition of Fe to the plants (+Fe/ +Cd), even in the presence of Cd treatment.

Table-4: Effect of Heavy Metal Cd on Fresh Weight (g) of Seedlings in *Trigonella foenum-graecum*(Values are means of three replicates each)

Concentration of $CdSO_4$ (in ppm)	0	10	50	100	200	500	1000
Fresh Weight (g)	0.06	0.04	0.02	-	-	-	-

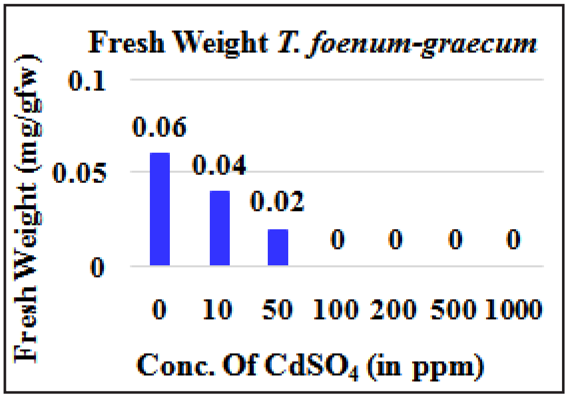

Figure-4: Effect of Heavy Metal Cd on Fresh Weight (g) of Seedlings in *Trigonella foenum-graecum*

2. Biochemical observation of plant parameters under Cadmium stress

(a) Protein content - There was a slight decrease in the protein content of *Trigonella foenum-graecum* from control 42.62mg/g at 10 ppm level (37.62 mg/g) and the slight increase at 50 ppm level (38.96 mg/g) was obtained compared to control. The effects of cadmium stress on the protein content of *Trigonella foenum-graecum* is shown in Table-5 and Figure-5

Abiotic stress may inhibit the synthesis of some proteins and promote others (Ericson and Alfinito, 1984). In different crop plant heavy metal toxicity also reduced the level of proteins (Tamas *et al*., 1997). Various types of grains developed on the cadmium treated soils also show a lower level of protein content (Salgare and Achareke, 1992). Cd stress could trigger the production of free ROS and result in oxidative damage in plants.

Table-5: Effect of Heavy Metal Cd on Protein content (mg/g) in the Seedlings of *Trigonella foenum-graecum* (Values are means of three replicates each)

Concentration of $CdSO_4$ (in ppm)	0	10	50	100	200	500	1000
Protein content (mg/g)	42 .62	37 .62	38 .96	-	-	-	-

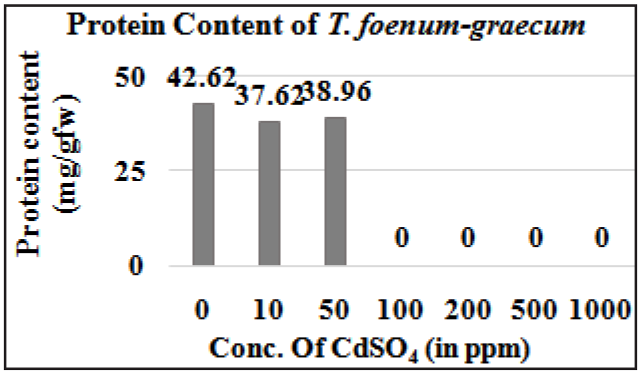

Figure-5: Effect of Heavy Metal Cd on Protein content (mg/g) in the Seedlings of *Trigonella foenum-graecum*

(b) Total Soluble Sugar content - The soluble carbohydrate content in *Trigonella foenum-graecum* was higher at non treated conditions with 3.4 mg/g. Initially the decrease in the TSS content was obtained in *Trigonella foenum-graecum* with 1.8 mg/g and 2.2 mg/g at 10 and 50 ppm level and further no content was exhibited at higher concentrations (100, 200, 500 and 1000 ppm concentrations) of Cd stress. The effects of Cd stress on the total soluble sugar content of *Trigonella foenum-graecum* is shown in Table-6 and Figure-6.

Sugar metabolism has adversely affected the plants grown under stressed conditions (Jha and Dubey, 2004). Saleh and Garni, 2006, reported that more than 5mg/kg concentration of Cd inhibited the total carbohydrate content. Ci *et al*., 2009, also demonstrated that the total soluble sugar concentration decreased in four wheat (*Triticum aestivum* L.) lines differing in cadmium (Cd) tolerance were subjected to 50 µM $CdCl_2$ from the three-leaf stage for 24 days.

Table-6: Effect of Heavy Metal Cd on TSS content (mg/g fresh weight) in the Seedlings of *Trigonella foenum-graecum* (Values are means of three replicates each)

Concentration of $CdSO_4$ (in ppm)	0	10	50	100	200	500	1000
TSS content (mg/gfw)	3.4	1.8	2.2	-	-	-	-

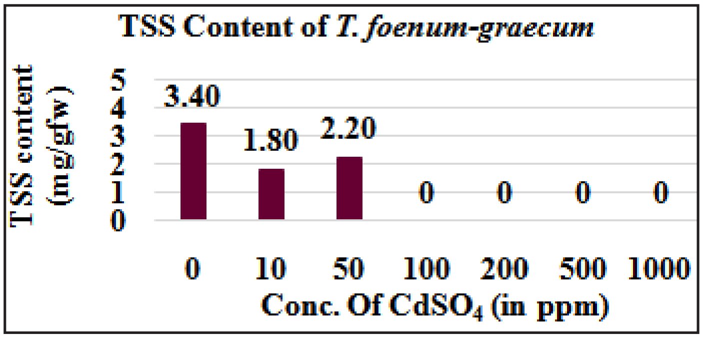

Figure-6: Effect of Heavy Metal Cd on TSS content (mg/g fresh weight) in the Seedlings of *Trigonella foenum-graecum*

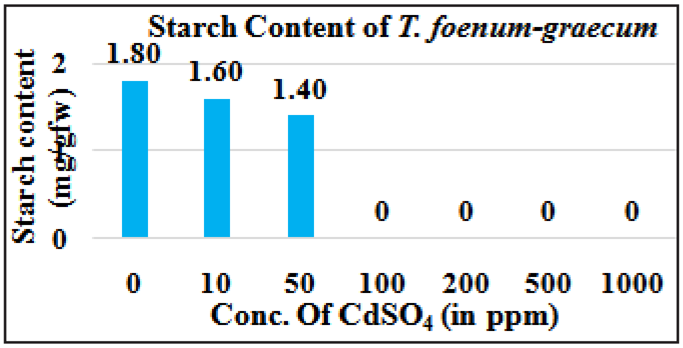

(c) Phenol content - The phenol content at the control conditions of *Trigonella foenum-graecum* was 2.8 mg/g, it reduces to 2.2 mg/g at 10 ppm level, and then it was observed to increase at 50 ppm upto 4.3 mg/g which is greater than control. However, no phenol content was observed at higher Cd stress concentrations. The effects of Cd stress on phenol content of *Trigonella foenum-graecum* is shown in Table-8 and Figure-8.

Patel *et al*., 2013 results agree with the findings of

Hamid *et al*., 2010 who found that the phenolic content of plants was decreasing with increasing levels of heavy metal. These reports justify the initial decline in the phenol content. Korat *et al*., 2019 also studied the total phenol content from seedlings (10, 20, and 30 days after germination) of different fenugreek genotypes that were found statistically significant for a different stage. Among the genotypes, the mean total phenol content varied from 0.424 to 0.570 mg g^{-1}. In the case of 10 to 30 days after germination, there was an increase in the total phenol content in a leaf of all fenugreek genotypes. At 30 days, among the 10 genotypes the total phenol was remained significantly higher in JFG-80 (0.759 mg g^{-1}) and the lowest was found in GM-2 (0.527 mg g^{-1}). Mukherjee and Dalal, 2014, reported that lead and cadmium stressed *Trigonella* shows a marked increase level of total phenol in a dose-dependent manner and a higher concentration of cadmium shows maximum level. It was also revealed gradual accumulation of proline and total phenols in seedling leaves. Phenols in plants may perform useful effects through free radicals scavenging (Chun *et al*., 2003). This also reflects an increase in antioxidant activity and the reason why phenol content was increased at higher Cd levels.

Table-8: Effect of Heavy Metal Cd on Phenol content (mg/g fresh weight) in the Seedlings of *Trigonella foenum-graecum* (Values are means of three replicates each)

Concentration of $CdSO_4$ (in ppm)	0	10	50	100	200	500	1000
Phenol content (mg/gfw)	2.8	2.2	4.3	-	-	-	-

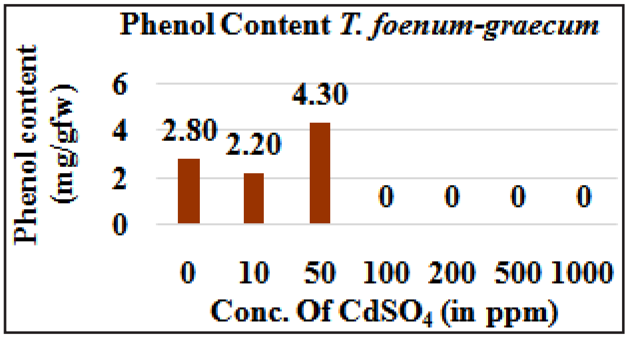

Figure-8: Effect of Heavy Metal Cd on Phenol content (mg/g fresh weight) in the Seedlings of *Trigonella foenum-graecum*

(d) Lipid content - Lipid peroxidation (MDA) is a biochemical marker for free radical-mediated injury. Under the oxidative stress MDA is the final product of lipid peroxidation and the most prominent indicator of oxidative stress in various stressed plants (Sima *et al*., 2012). As per the results obtained in the present study, a decrease in lipid content was observed in *Trigonella foenum-graecum* with increasing Cd concentration. Lipid content of the control group was 10 mg/g which was reduced to 3.33 mg/g at 10 ppm but at 50 ppm it was found to be 6.66 mg/g and further no lipid content was determined at higher concentrations of Cd stress. The effects of Cd stress on the lipid content of *Trigonella foenum-graecum* have been shown in Table-9 and Figure-9.

In the study conducted by Zhan *et al*., 2017, the levels of lipid peroxidation and cell death were higher in Cd-treated seedlings compared with those of the controls. Similarly, in another study as well, *Trigonella foenum-graecum* in response to cadmium stress showed significantly higher doses of MDA than the control and it was greatly affected by the highest doses of Cd. All the concentrations of Cd treatment effect MDA production.

Table-9: Effect of Heavy Metal Cd on Lipid content (mg/g fresh weight) in the Seedlings of *Trigonella foenum-graecum* (values are means of three replicates each)

Concentration of $CdSO_4$ (in ppm)	0	10	50	100	200	500	1000
Lipid (mg/gfw)	10	3.33	6.66	-	-	-	-

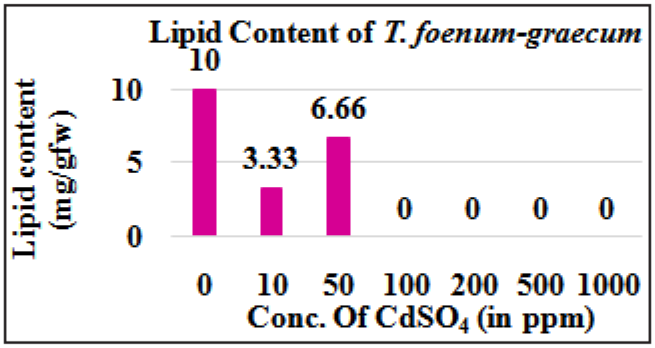

Figure-9: Effect of Heavy Metal Cd on Lipid content (mg/g fresh weight) in the Seedlings of *Trigonella foenum-graecum*

References :-

1. Ahmad, S.H., Reshi, Z., Ahmad, J. and Iqbal, M. (2005): Morpho-anatomical responses of *Trigonella foenum-graecum* Linn. To induced cadmium and lead stress. J. of plant biology. Vol. 48(1), pp. 64-84.
2. Alhelal, A. A. (1995): Effect of cadmium and mercury on seed germination and early seedling growth of Rice and Alfalfa. J. Univ. Kuwait. Sci. Vol. 22, pp. 76-83.
3. Arnon DI. (1949). Copper enzymes in isolated chloroplasts, polyphenoxidase in *Beta vulgaris*. Plant Physiol; 24:1-15.
4. Bertin G and Averbeck D. 2006. Cadmium: cellular effects, modifications of biomolecules, modulation of DNA repair and genotoxic consequences Biochimie, 88, 1549-1559.
5. Biyani, K. Tripathi, D. K. Lee, J. H. Muneer S. 2019. Dynamic role of iron supply in amelioration of cadmium stress by modulating antioxidative pathways and peroxidase enzymes in mungbean. *AoB Plants,* Vol 11(2).

a. . Bray HG and Thorpe WV. 1954. Analysis of phenolic compounds of interest in metabolism. Meth. Biochem. Anal. 1:27-52.

6. Chandra S, Chohan LKS, Murthy RC, Sexana PN, Pande PN, and Gupta SK. 2005. Comparative

biomonitoring of leachates from hazardous solid waste of two industries using Allium test, Science Total Environmental. 347, 4652.

7. Chugh L.K.and .SawhneyS.K. 1996. Effect of cadmium on germination, amylases and rate of respiration of germinating pea seeds. Environmental Pollution. Vol 92 (1). Pages 1-5

8. Chun OK, Kim DO, Lee CY. Superoxide radical scavenging activity of the major polyphenols in fresh plums. Journal Agriculture and Food Chemistry. 2003; 51:8067-8072.

9. Cieslinski G, Neilser GH, Hogue EJ (1996). Effect of soil cadmium application and pH on growth and cadmium accumulation in roots, leaves and fruit of strawberry plants. Plant Soil, 180: 267-271.

10. Organization of the United Nations, Rome and International Livestock Research Institute, Nairobi.

11. Ericson, M. C. and Alfinito, A. E. (1984): Proteins produced during salt stress in tobacco cell cultures. Plant Physiol. Vol. 74, pp. 506-509.

12. Faheed, I.A. (2005) Effect of lead stress on the growth and metabolism of *Eruca sativa* M. seedling. Acta Agronomica Hungarica 53: 319-327.

13. Filipic M. , T. Fatur, M. Vudrag. **Molecular mechanisms of cadmium induced mutagenicity** Hum. Exp. Toxicol., 25 (2006), pp. 67-77

14. Freitas M, Gomes A, Porto G and Fernandes E. 2010. Nickel induces oxidative burst, NF-kappa B activation and interleukin-8 production in human neutrophils, Journal Biology Inorganic Chemistry. 15, 1275-1283.

15. Godbold, D. L. And Kettner, C. (1991): Lead influences root growth and mineral nutrition of *Picea abies* seedlings. J. Plant. Physiol. Vol. 139, pp. 95-99.

16. Goyer R.A. **Nutrition and metal toxicity** Am. J. Clin. Nutr., 61 (1995), pp. 646S-650S

17. Hamid N, Bukhari N, Jawaid F. 2010: Physiological responses of *Phaseolus vulgaris* to different lead concentrations. Pak. J. Bot. 42, 239-246.

18. Hasan, S. A., Fariduddin, Q., Ali, B. Hayat, S. and Ahmad, A. (2009): Cadmium: Toxicity and tolerance in plants. J. Environ. Biol. Vol. 30 (2), pp. 165-174.

19. Hegde NG. “Positive Attitude for Good Health and Happiness”. Nature Cure Ashram, Urulikanchan, Pune (2006).

20. Ibrahium, M. I.; Hegazy, A. I. Iron bioavailability of wheat biscuit supplemented by fenugreek seed flour. World Journal of Agricultural Sciences, Dubai, v. 5, p. 769-776, 2009.

21. Infotox CC. 2000. Environmental Health Risk Assessment - Methyleyclopentadienyl Manganese Tricarbonyl (MMT) as an Automotive Performance Enhancer in Petrol in South Africa. Document No 009-2000.

22. Janos P, Vavrova J, Herzogova L and Pilarova V. 2010. Effects of inorganic and organic amendments on the mobility (leachability) of heavy metals in contaminated soil: A sequential extraction study, Geoderma, 159, 335– 341.

23. Jayaraman J. 1981. Laboratory Manual in Biochemistry. Wiley Eastern Limited, New Delhi. pp 96-97

24. Jha, A. B. and Dubey, R. S. (2004): Carbohydrate metabolism in growing ice seedlings under arsenic toxicity. J. Plant Physiol. Vol. 161, pp. 867-872.

25. Jiang, M. & Zhang, J. 2001. Effect of abscisic acid on active oxygen species, antioxidative defense system and oxidative damage in leaves of maize seedlings. Plant and Cell Physiology, 42: 1265-1273.

26. Khattab, H. (2004) Metabolic and oxidative responses associated with exposure of *Eruca sativa* (Rocket) plants to different levels of selenium. International Journal of Agriculture & Biology 6: 1101-1106.

27. Korat A. N, Kavathiya YA, Lakhani NS, Kandoliya UK and BA Golakiya. (2019) Nutritional and antioxidant components of fenugreek (*Trigonella foenum-graecum* L.) seedlings. Journal of Pharmacognosy and Phytochemistry. 8(1): 443-447

28. Kreis,I.A. , M. deDoes, J.A. Hoekstra, C. de Lezenne Coulander, P.W. Peters, G.H. Wentink. **Effects of cadmium on reproduction, an epizootological study**. Teratology, 48 (1993), pp. 189-196

29. Langlands, J.P. , G.E. Donald, J.E. Bowles. **Cadmium concentrations in liver, kidney, and muscle in Australian sheep and cattle.** Australian Journal of Experimental Agriculture 28(3) 291 - 297

30. Lowry, OH., Rosebrough, NJ., Farr, AL. and Randall, RJ. (1951). Protein measurement with the Folin phenol reagent. *J. Biol. Chem.,* 193: 265-275

31. Mondal, N. K. Das, C. Roy, S. Datta J. K. and Banerjee A. (2013). Effect Of Varying Cadmium Stress On Chickpea (*Cicer Arietinum* L) Seedlings: An Ultrastructural Study. Annals of Environmental Science, Vol 7, 59-70.

32. Mukherjee, M. and Dalal, T. (2014): Early seedling growth and accumulation of proline and phenol in *Trigonella foenum-graecum* under heavy metal stress. Vol. 31(8), pp. 1271-1273.

33. Munzuroglu, O. and Geckil, H. (2002) Effect of metals on seed germination, root elongation, and coleoptile and hypocotyl growth in *Triticum aestivum* and *Cucumis sativus*. Arch. Environ. Contan. Toxicol. 43: 203-213.

34. National Research Council (1996). ”*Sorghum*”. Lost Crops of Africa: Volume I: Grains. National Academies Press.

35. National Research Council **Mineral Tolerance of Domestic Animals.** National Academy of Sciences Press, Washington DC, USA (1980)

36. NIN Report. 1987. Use of fenugreek seed powder in the management of noninsulin dependent diabetes mellitus. NIN, ICMR, Hyderabad, India.

37. Ouzir, M, El Bairi, K, Amzazi, S (2016). “Toxicological properties of fenugreek (Trigonella foenum graecum)”. Food and Chemical Toxicology. 96: 145–54.

38. Pirselova B, Kuna R. Lukac, P. Havrlentova M. 2016. Effect of Cadmium on Growth, Photosynthetic Pigments, Iron And Cadmium Accumulation Of Faba Bean (*Vicia Faba* Cv. *Astar*). Agriculture (Po¾ nohospodarstvo), 62, 2016 (2): 72"79
39. Qishlaqi A and Moore F. 2007. Statistical Analysis of Accumulation and Sources of Heavy Metals Occurrence in Agricultural Soils of Khoshk River Banks, Shiraz, Iran. American Eurasian Journal of Agricultural & Environmental Science, 2 (5): 565573.
40. Raju J, RP Bird, 2006. Alleviation of hepatic steatosis accompanied by modulation of plasma and liver TNF-alpha levels by *Trigonella foenum graecum* (fenugreek) seeds in Zucker obese (fa/fa) rats. Int J Obesity, 30: 1298–1307.
41. Rodriguez-Serrano, M. " Romero-Puertas, M.C. " Pazmino, D.M. " Testillano, P.S. " Risueno, M.C. " Del Rio, L.A. – Sandalio, L.M. 2009. Cellular response of pea plants to cadmium toxicity: Cross talk between reactive oxygen species, nitric oxide, and calcium. In Plant Physiology, vol. 150, no. 1, pp. 229–243.
42. Roy, D (1993). Reap more biomass through diversity in forestry. Intensive Agriculture. XXXI (5-8): 23-26
43. Saleh, M., Al-Garni, S. (2006): Increased heavy metal tolerance of cowpea plants by dual inoculation of an arbuscular mycorrhizal fungi and nitrogen fixer *Rhizobium bacterium*. Afr. J. Biotechnol. Vol. 5, pp. 133-142.
44. Salgare, S. A. and Acharekar. (1992): Effect of industrial pollutant on growth and content of certain weeds. J. Nature Conserv. Vol. 4, pp. 1-6.
a. .Sima, G., Fatemeh, Z. and Vahid, N. (2012): Determination of peroxidise activity, total phenolic and flavonoid compounds due to lead toxicity in *Medicago sativa* L. Adv. In Environ. Biol. Vol. 6 (8), pp. 2357-2364.
45. Sreeramulu US (1994). J. Ind. Soc. Soil Sci. 42: 525-532.
46. Tamas, L., Huttova, J. and Zigova, Z. (1997): Accumulation of stress protein in intracellular space of barley leaves induced by biotic and abiotic factors. Biol. Plant. Vol. 39, pp. 387-394.
47. Wang, S. *et al.* Accumulation of heavy metals in soil-crop systems: a review for wheat and corn Environ. Sci. Pollut. Res., 24 (18) (2017), pp. 15209-15225
48. Zayneb C, Bassem K, Zeineb K, Grubb CD, Noureddine D, Hafedh M, Amine E. (2015). Physiological responses of fenugreek seedlings and plants treated with cadmium.Environ Sci Pollut Res Int. 22(14):10679-89
49. Zhan, Y.H. Zhang, Zheng, C.H.Q. Huang, Z.H. and Yu, C.L. (2017). Cadmium Stress Inhibits the Growth of Primary Roots by Interfering Auxin Homeostasis in *Sorghum bicolor* Seedlings. J. Plant Biol. 60:593-603

****

निर्धनता उन्मूलन और रोजगार - जवाहर रोजगार योजना

डॉ. सुरेन्द्र कुमार * डॉ. अजय कुमार **

शोध सारांश – भारत गाँवों में बसा है। गाँवों की सबसे गम्भीर एवं जटिल समस्या गरीबो एवं बेरोजगारी ही है। आजादी के बाद से ही गाँवों के विकास के क्रम में सबसे गरीब एवं कमजोर तबके के लोगों के जीवन स्तर को ऊपर उठाने का प्रयास चल रहा है, इसके बावजूद 40 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या गरीबी रेखा के निचे है, अर्थात इनकी वार्षिक आय सातवीं पंच वर्षीय योजना के अनुसार 6400 रूपये से कम है सातवी पंच वर्षीय योजना में यह भी स्वीकार किया गया है कि तीव्र गति से औद्योगिक विकास के बावजूद अतिरिक्त ग्रामीण जनसंख्या को संगठित औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार उपलब्ध नहीं कराया जा सकता। अत: गहन कृषि, ग्रामीण विकास उद्योगों के विस्तारीकरण एवं अन्य ग्रामीण आर्थिक क्रियाओं एवं पूँजी निर्माण सम्बन्धी योजनाओं के माध्यम से ही अतिरिक्त रोजगार का निर्माण करना होगा।

शब्द कुंजी – गरीबी एवं बेरोजगारी, औद्योगिक विकास, जवाहर रोजगार योजना, इन्दिरा आवास योजना, पंचवर्षीयोजना।

प्रस्तावना – ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी अपने आप में गरीबी एवं पिछड़ेपन का एक मूल कारण है। इसकी गुरूत्वा प्रदूषण का रूप धारण करती जा रही है। फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों का अर्थिक एवं सामाजिक पर्यावरण असंतुलित होता जा रहा है। और विकास के आयाम बढ़ते जा रहे है। चौथी पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण क्षेत्रों में गरीब लोगों को रोजगार दिलाने हेतु श्रम प्रधान कार्यक्रम, यथा-लघु, सिंचाई, भू-रक्षण एवं रोजगारोन्मुख विशिष्ट कार्यक्रमों के विस्तार को योजना के उद्देश्यों में सम्मिलित करते हुए यह स्वीकार किया गया कि देश श्रम शक्ति विस्फोट काल प्रवेश कर गया है। त्वरित विकास और असमानता को कम करने के लिए उत्पादक रोजगार के अवसरों का विस्तार महत्वपूर्ण है। रोजगर ही एक ऐसा विश्वासनीय उपाय है जिसके द्वारा निर्धनता के नीचे रहने वाली आबादी को उपर उठाया जा सकता है। इसी दृष्टिकोण से इस योजना में लघु कृषक विकास एजेन्सी, सुखग्रस्त क्षेत्रों की परियोजनओं एवं ग्रामीण रोजगार के अन्य विशिष्ट कार्यक्रमों पर बल दिया गया। छठी पंचवर्षीय योजना में भी सामाजिक न्याय के उद्देश्य पर बल दियागया। उन्मूलन एवं रोजगार कार्यक्रमों के समन्वय का प्रयास किया गया। योजना के प्रारूप में स्पष्ट रूप से कहा गया कि कृषि और उद्योग दोनों का एक साथ समन्वय कर विकास किया जायेगा जिससे विनियोग, उत्पादन और रोजगार में तीव्र गति से विकास का प्ररूप तैयार हो सकेगा। इस योजना में राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम को एक साथ इसलिए लागू किया गया की निर्धनता उन्मूलन और रोजगार कार्यक्रम के बीच समन्वय स्थापित हो सके। ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम एवं स्वरोजगार योजना को संचालित कर इस योजना में 360 मानक मानव वर्ष रोजगार पैदा करने का निश्चय किया गया। सातवी पंचवर्षीय योजना ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार वृद्धि के उद्देश्य से राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, समान्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम एवं ट्रायसेम जैसे कल्याणकारी कार्यक्रमों को और अधिक तत्परता के साथ लागू किया गया। योजना के अनुरूप 1985-86 एवं 1986-87 में क्रमश: 230 करोड़ एवं 443 करोड़ रूपये परिव्यय के लिए आवंटित किये गये। ग्रामीण भूमिहीन रोजगार प्रत्याभूत योजना पर उक्त वर्षो में क्रमश: 400 करोड़ और 633 करोड़ रूपये व्यय करने का निश्चय किया गया। सातवीं पंचवर्षीय योजना के ही अन्तिम वर्ष में 1989-90 में जवाहर रोजगार योजना प्रारम्भ की गयी जो आठवीं योजना काल में भी लागू है। आठवीं पचवर्षीय योजना का जो प्ररूप तैयार किया गया है उसमें राजगार के अवसारो में 3 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य है। साथ ही इस योजना में सार्वजनिक क्षेत्रप्रतिशत कृषि और ग्रामीण क्षेत्रों के लिए लाभदायक कार्यक्रमों और परियोजनाओं में लगाने का प्रस्ताव किया गया है। इन योजनाओं में रोजगार सम्बन्धी योजनाएँ प्रमुख है। यह जवाहर रोजगार योजना अप्रैल 1989 में ग्रामीण बेरोजगारी पर सीधा प्रहार कर गरीबों के जीवन-स्तर में आवश्यक सुधार के लिए घोषित की गयी। यह कोई नयी योजना नहीं है बल्कि केन्द्र द्वारा पहले से संचालित राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (एन0 आर0 ई0 पी0) और ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम (आर0 एल0 ई. जी. पी.) को मिलाकर उनके स्थान पर यह नयी योजना दी गयी है जो पूरे देश में 01-04-1989 से नये उत्साह, नयी आश के साथ लागू की गयी। इस योजना के मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा के नीचे रह रहे बेरोजगार लोगों के लिए अतिरिक्त रोजगार का सृजन करना, ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले गरीब लोगो की आय में वृद्धि करने के उद्देश्य से आर्थिक और सामजिक आधारभूत सुविधाओं का सृजन करना एवं इनके फलस्वरूप ग्रामीण जीवन का गुणात्मक विकास करना है। इस योजना मे यह भी स्पष्ट किया गया है कि रोजगार देने में अनुसूचित जाति औ अनुसूचित जन जाति के लोगों को प्रथिमिकता दी जायेगी। नियोजन में माहिलओं की संख्या कम-से-कम 30 प्रतिशत होगी। साथ-ही-साथ निर्धन समूह को प्रत्यक्ष एवं नियमित लाभ देने के उद्देश्य से सामुदायिक परिसम्पत्तियों का निर्माण भी करना है जिसके फलस्वरूप ग्रामीणों का आर्थिक और सामाजिक आधारभूत ढाँचा मजबूत हो सके और उसके बलपर ग्रामीण अर्थव्ययवस्था का तेजी से विकास हो सके और गरीबों की आय में वृद्धि हो सके। इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए 2100 करोड़

* प्रभारी प्राचार्य, भद्रकाली महाविद्यालय, इटखोरीचतरा (झारखण्ड) भारत
** विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र विभाग) आर0पी0एस0 डिग्री महाविद्यालय, मदनपुर, चन्द्रपुरा, बोकारो (झारखण्ड) भारत

रूपये का प्रावधान किया गया। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि इतनी बड़ी रकम कोई भी सरकार ने ग्राम पंचयातों को अभी तक नहीं दी थी। इस योजना पर हाने वाले कुल व्यय का 80 प्रतिशत इस योजना के अन्तर्गत ग्रामण विकास के लिए पंचायतों द्वारा वार्षिक योजना बनायी जायेगी। जो परियोजना उस वार्षिक योजना में शामिल रहेगी, उन्हीं का कार्यनवयन उस वर्ष में किया जायेगा। योजना का उद्देश्य गाँवों का आर्थिक विकास और ग्रामीण जीवन को सुखी और सुन्दर बनाना है। यदि पंचायत अपने क्षेत्र के लिए। विकास की दीर्घकालीन योजना बना ले तो उसके आधार पर वार्षिक योजना बनाने में सुविधा होगी। स्पष्ट है कि पंचायत के स्तर पर बड़ी एवं मध्यम योजनाएँ जिनमें बड़ी रकम और बड़ी तकनीकी दक्षता की आवश्यकता होगी, नहीं ली जा सकती है। पंचायत रतर पर तो सिर्फ कृषि, घरेलू उद्योग, सिंचाई, आवागमन, सफाई विद्यालय एवं औषधालय-भवन आदि से सम्बन्धित छोटी-छोटी योजनाएँ ही ली जा सकती है। पंचायत स्तर पर उपलब्ध सूचनाएँ एवं आंकड़े ही दीर्घकालीन योजना का आधार होगा। जवाहर रोजगार योजना के क्रियान्वयन का दायित्व ग्राम पंचायतों का होगा। जैसा कि उपर कहा गया है यह कोई नयी योजना नहीं बल्कि रोजगार सम्बन्धी दोनों पुरानी योजनाओं को एक में मिलाकर कार्यान्वियन का भारत सरकारी पदाधिकारियों की जगह पर ग्राम पंचायतों को दे दिया गया है और सरकारी पदाधिकारी उसका निरीक्षण करेंगे तत्तपश्चायत प्रतिवेदन प्रस्तुत करगें। जिन ग्राम पंचायतों की जनसंख्या 3000 से 4000 तक होगी उन्हें प्रति वर्ष 80 हजार रूपये से लाख रूपये तक योजनओं का कार्यान्वियन के लिए दिया जायेगा। पहले की रोजगार योजनएँ सिर्फ 55 प्रतिशत पंचायतों में लागू थी लेकिन यह योजना देश भर की सभी ग्राम पंचायतों में लागू की गई। इस योजना के लिए केन्द्र द्वारा राज्यों को धनराशि का आवंटन वहाँ के निवासियों की निर्धनता एवं गरीबी की सघनता के आधार पर किया जायेगा। पुन: राज्यों द्वारा जिलों को धन राशि का आवंटन क्षेत्र के पिछड़ेपन के आधार पर किया जायेगा अर्थात् जो जिला अधिक जायेगी। इसके लिए मुख्य तीन आधार होगें। जिले के कुल जनसंख्या के अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति की जनसंख्या का अनुपात। (2) कुल मजदूरों की जनसंख्या में कृषि मजदूरों की जनसंख्या का अनुपात (3) कृषि उत्पादकता का स्तर। जो धनराशि ग्राम पंचायत को प्राप्त होगी उसका 25 प्रतिशत इन्दिरा आवास पर व्यय हागा। यह खर्च जिला ग्रामीण विकास अभिकरण के द्वारा किया जयेगा। इन्दिारा आवास के सम्बन्ध में जो निर्देश पहले से दिये गये है उसके अनरूप ही कार्य होगा। इस में भी पहले अधुरी परियोजनाएँ पुरी की जायेगी, फिर उपलब्ध राशि के अनुकल नयी परियोजना ली जायेगी। इन्दरा आवस योजना के अर्न्तगत बनने वाले घरो पर लागत इस प्रकार होगी। (1) घर पर खर्च -6000 रूपये। पहाड़ी बाढ़ ग्रस्त तथा काली मिट्टी वाले क्षेत्र में -7000 रूपये तक। (2) शौचाल्य और धुआ रहित चुल्हा - 1200 रूपये। (3) सामुदायिक सुविधाओं के लिए सरंचना 3000 रूपये - जहाँ इसकी आवश्यकता न हो घर बनाने में लगायी जा सकती है। (4) राजस्व विभाग की ओर से गृहविहीनों के गृह स्थल को विकसित करने के लिए सामान्य क्षेत्र में 760 रूपये और पहड़ी क्षेत्र में 860 रूपया अनुदान देने का प्रावधान है। इन्दिरा आवास योजना के अन्तर्गत घरों के विभिन्न नक्शे उपलब्ध है। आवश्यकता अनुसार उसमें परिवर्तन भी किये जा सकते है। परन्तु उसका पिलिन्थ एरिया कम से कम 17 से 20 मीटर आवश्य होना चाहिए। घर में रसोई, धुआ रहित चुल्हा और शौचालय की व्ययवस्था अवश्य होनी चाहिए। स्थान का निर्धारण वहाँ की अवश्यकता, प्राकृतिक स्थिति और जलवायु को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। हर प्रखण्ड मेंइस योजना के अन्तर्गत गृह निर्माण होना चाहिए। इसके बाद जिला अभिकरण से पंचायत को जो राशि प्राप्त होगी, उसका व्ययय निम्न तरह से किया जायेगा (1) प्राशासनिक कार्यो के लिए —5 प्रतिशत- (2) सम्पदाओं के रख-रखाव के लिए एन0 आर0 ई0 पी0 एवं आर0 एल0 ई0 जी0 पी0 के अर्न्तगत अबतक सृजित योजना - 10 प्रतिशत (3) अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जन जाति से सम्बन्धित योजनओं के लिए 1275 प्रतिशत (4) कृषि उत्पादन वृद्धि परियोजनओं के लिए 29.75 प्रतिश (5) पानी की परियोजना के लिए 21.25 प्रतिश (6) सड़क एवं भवन पर व्यय के लिए जो परियोजनाएँ दो पंचायतो से सम्बन्धित होगी उन्हें दोनों पचायत मिलकर पूरी करेंगी। परियोजनाओं का काम गति से होना चाहिए कि वे समय पर अनुमानित लागत के अन्तर्गत पूरी हो जाय। सामान्त: एसी ही परियोजनाएँ ली जानी चाहिए जो एक साल के अन्दर पूरी की जा सकें। तकनीक या किसी अन्य कारण से यदि पूरी न हो सके तो दूसरे साल अवश्य पूरी हो जानी चाहिए। ग्राम पंचायत परियोजनाओं की उपादयेता पर पूर्णत: विचार करके उनका चयन करती है। ऐसी ही पिरयोजनाएँ ली जाती है जो गाँव के विकास मं सहयक होती हैं। जिनसे अधिकाधिक लोगों को रोजगार मिलता है और ऐसी परिसम्पत्ति सृजित हो सके जिसे सलक्षित वर्गो के लोगों का विकास सम्भव होता है। ऐसी परियोजनाएँ भिन्न हो 21.25% सकती है, जैसे सिंचाई का प्रबन्ध, जल का निकासी पेय जल का प्रबन्धन वृक्षारोपण, ग्रामीण सड़क विद्यालय चिकित्सालय, भण्डार गृह एवं खाद, बीज इत्यादि। इनमें ले जो भी परियोजना ली जायेगी उसे तकनीकी दृष्टि से उपयुक्त होनी चाहिए और समबन्धित विभाग से उसका अनुमोदन होना चाहिए। जवाहर रोजगार योजना के अन्तर्गत परियोजनाओं का चयन पंच्यातों की कार्यपालिका समिति द्वारा होगा। पंचायत के द्वारा किया गया चौयन निर्णायक और अंतिम होगा। किसी भी स्तर पर उसके द्वारा सविकृत परियोजनाओं के जगह पर दूसरी परियोजनाएँ नही जोड़ी जायेगी। इसके लिए कार्यपालिका समिति द्वारा वार्षिक योजना बना ली जायेगी और उस पर पंचायत की आम सभा की स्वीकृति ली जायेगी। आम सभा की सविकृति के बाद तकनीकी सवीकृत लेनी पड़ती है, जिसके लिए परियोजनाएँ प्रखण्ड विकास पदाधिकारी के पास भेज दी जाती है। समान्यत: पंचायतो से परयोजनाओं की मोटी रूप-रेखा ही आती है। अत: प्रखण्ड विकास पदाधिकारी अभिन्ताओं उनका प्रावकलन बनवाकर कन्यिअभियन्ता/सहायक अभियन्ता/कार्यपालक अभियन्ता से उनकी तकनीकी जाँच कर लेते है। वैसी ही परियोजनाएँ ली जाती है जो तकनीकी की दृष्टि से ठीक हो। कनिष्ठ अभियन्ता 10 हजार रूपये, सहायक अभियन्ता 1 लाख रूपये और कार्यपालक अभियन्ता 5 लाख रूपये तक की परियोजनाओं को तकनीकी स्वीकृति देने के लिए सक्षम है। तकनीकी जाँच का कार्य दो सप्ताह में पूरा करना है। तकनीकी जाँच में ठीक पाये जाने पर प्रखण्ड विकास पदाधिकारी ध्यान देते है कि परियोजना पंचायत की वार्षिक योजना में सम्मिलित हो, पूरे वर्ष में मिलने वाली राशि की 25 प्रतिशत से अधिक की परियोजना नहीं है, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के लिए निर्धारित राशि का उपयोग उनसे सम्बन्धित परियोजनाओं पर हो रहा है और पंचायत -स्तर पर विभिन्न परियोजनाओं में होने वाले खर्च का 50 प्रतिशत शर्तो के अनुरूप होती है तो प्रखण्ड विकास पदाधिकारी उन्हें कार्यान्वयन के लिए पंचायत को वापस भेज देते है। यदि उनके अनुरूप नहीं है तो पुनर्विचार के लिए पंचायत को भेज दी जाती है, ताकि पंचायत इसमें आवश्यक सुधार कर

सके। सबकी जानकारी के लिए पंचायत के अन्तर्गत लीगई परियोजनाओं की सूचित लागत सहित एवं उसके लिए मिली धन राशि को एक पट्टी पर लिख कर सर्व साधारण को सूचित कर दिया जाता है। इस योजना के अन्तर्गत अधुरी परियोजनाओं को प्राथमिकता दी जाती है। एन0 आर0 ई0 पी0 और आर0 एल0 ई. जी. पी. के अन्तर्गत 1999 को जो राशि उपलब्ध थी और अभिकरण के पास जो 20 प्रतिशत राशि उपलब्ध है उनसे अधुरी परियोजनाओं को पूरा करना है। यदि एक वर्ष में ये परियोजनाएँ पूरी हाने वाली नही हो तो उनकी प्राथमिकता तैयार कर लेनी होगी। अर्थात् जिनका 75 प्रतिशत काम हो गया हो, उसे सबसे पहले, उसेक बाद 50 प्रतिशत काम पूरा होने वाली परियोजनओ को और अन्त में 25 प्रतिशत तक पूरी हुई परियोजनाओं को प्रथमिकता दी जानी चाहिए। जो परियोजनाएँ विभिन्न विभागों द्धारा पहले लीगयी थी, परन्तु पुरी नही हो सकी थी उन्हे उन सम्बन्ध विभागो द्धारा पुरा किया जायेगा।

निष्कर्ष – जोवाहर रोजगार योजना के अन्तर्गत सबसे अहम बात यह है कि कोई भी काम ठेका पर नही कराया जायेगा। कोई सरकारी कर्मचारी, मुखीया या कार्यकरणी का कोई सदस्य पंचायत के नाम से या और किसी प्रकार प्रत्यक्ष या परक्ष रूप से अभिकर्ता का काम नही करेगे अर्थात कोई भी व्ययक्ति अपने व्ययक्तिगत है सियत से अभिकर्ता नही होगा, परन्तु अनुसुचित जाति/जन जाति के सदस्य जिन्हे निजी लाभ के लिए कोई परियोजन दी गई हो, वे इसके अभिकर्ता के रूप में काम कर सकते है। इस योजना के सभी काम स्थानीय श्रमिको या लाभावन्वितो की समिति के द्धारा होगा। स्वंय सेवी संस्थाओं को भी अभिकर्ता बनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बिहार सरकार साख्यिकी एवं मूल्यांकन निदेशालय
2. मिन्हास वी. एस. नियोजन एवं गरीबी नई दिल्ली,
3. सिंह दुर्जन साल भारत में गरीबी का जिम्मेदार कौन योजना (हिन्दी) 31 मई 2001 प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस नई दिल्ली
4. डॉ. त्रिवेदी हरिवल्ल ग्रामीण गरीबी तथा बेरोजगारी निवारण, कुरुक्षेत्र जुलाई 2004 पटियाला हाऊस, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली
5. भारत सरकार इकोनोमिक सर्वे 2000-2001
6. भारत सरकार इण्डिया, 2000
7. नकोनोमिक टाईम्स 24 दिसम्बर 2000 एवं 25 जुलाई 2001

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

जनजातीय वर्ग में परम्परिक ज्ञान का भौगोलिक अध्ययन

संदीप कुमार सिंह *

प्रस्तावना – जनजातीय वर्ग में अपने परम्परागत और धार्मिक मान्यताओं के आधार पर इनकी जीवन शैली विल्कुल अलग प्रतीत होती है। इससे समाज में होने वाली सामाजिक परिवर्तन के कारण एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में विद्यमान है। धर्म और विश्वास की सांस्कृतिक और भौगोलिक परिदृश्यों के आधार पर उनमें शक्ति विद्यमान है। यहाँ तक जड़ी-बूटियों का ज्ञान उनके परम्परिक जीवन का आधार रहा है। फिर भी उनमें अर्थ और विश्वास की पारस्परिक आदान-प्रदान और व्यापार के विनिमय में विश्वास और धार्मिक रूप से यह परिवर्तन आना बहुत जरूरी होती है। यहाँ तक इनके विश्वास की परम्पराओं में आज भी लोग विश्वास की भावना से ओत-प्रोत होकर कार्य करते हैं। फिर भी समाज में एक विशेष रूप से संसाधन की एकता का स्वरूप दिखाई देता है।

जनजातियों में जीवन भर एक प्रकार का प्राकृतिक पूजा का आधार इनकी अपनी सामाजिक और परम्परिक परम्परा रहा है। यहाँ तक इनका जीवन सादा और सुदृढ़ रूप से कार्य करने की शक्ति विद्यमान है। फिर भी जनजातीय समुदाय में होने वाले अन्याय और अत्याचार के लिए ये स्वयं की युद्ध करते हैं। उनमें उन्हें सफलता भी मिलती है।

इनमें प्रकृति पूजा की विधि विद्यमान है। जैसे पीपल, महुआ, नीम, बरगद, कटहल, आंवला, ताड़, खजूर आदि की पूजा करते हैं। इनका मानना है कि इससे देवता हमारी रक्षा करेंगें। मुझे आत्मिक शान्ति भी मिलेगी। फिर भी सामाजिक परिवर्तन के आधार पर समाज में होने वाले परिवर्तन के कारण उन्हें ही विकास का साधन दिखाई देता है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक तथ्यों के आधार पर अध्ययन किया गया है। इसके साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं आदि के द्वारा भी अध्ययन किया गया है। यहाँ तक जनजातीय समुदाय द्वारा साक्षात्कार के माध्यम से भी अध्ययन के आधार को समावेशित किया गया है।

उद्देश्य :

1. परम्परिक ज्ञान परम्परा का अध्ययन करना।
2. इस प्रकार से इनके जीवन में अनेक प्रकार की सामाजिक संरचना का आधार उनकी जीवन पद्धति और जड़ी-बूटियाँ होती है।
3. जनजातीय वर्ग में प्राचीन ज्ञान परम्परा का अध्ययन करना।
4. आर्थिक विकास के लिए प्रोत्साहन करना।
5. धर्म निरपेक्षतापूर्ण मूल्यों की ओर अग्रसर होना।
6. नीम, पीपल की पूजा विधि से उनके मन को शान्ति प्राप्त होती है। इसके आधार का अध्ययन करना।
7. जंगल से प्राप्त होने वाली विभिन्न जड़ी-बूटियों का अध्ययन करना।

समाधान – जनजातीय वर्ग के जीवन में प्रकृति पूजा पर आधारित है। यहाँ तक इनके जीवन में जनजातीय समाज में स्थापित होने वाले स्थानीय संस्थाओं के विकास के आयाम को तैयार करना। इसके नेतृत्व का शक्ति पुंज होना भी युवावर्ग के विकास का एक माडल तैयार करना भी उन ज्ञान की परम्पराओं में विद्यमान है।

जनजातीय समाज में एक निश्चित संहिता होती है। जो परिस्थितिकीय तंत्र के मुख्य तत्वों को संयमित रखने का कार्य करती है। इस प्रकार से टोटमवाद के आधार पर पर्यावरण की पारिस्थितिक तंत्रों को मूलगामी माना जाता है।

यहाँ तक समाज में सामाजिक जीवन की कुछ भिन्न क्रियाओं को परिवर्तित करने की कोशिस करता है।

प्रत्येक कार्य की प्रतिक्रिया के होने से मानव स्वभाव में आदान प्रदान करने के लिए वैचारिक प्रवाह के परिणामस्वरूप पारिवारिक एवं सामाजिक सौहार्द्र को प्रेम और सहानुभूति के आधार पर आज तक उसे जिन्दा रखा है।

इसे ही लोकोपकारक जीवन की विधा माना जाता है। यहाँ तक इनमें शिष्टाचार, त्यौहार और मौसम परिवर्तन के लिए एक सूचकांक को निर्धारित करता है। चाहे वह संगीत पर आधारित हो या क्रीड़ा आदि पर आधारित होने का दावा करता हों। इस प्रकार से संगीत में लय, ताल, मानव की शारीरिक थकान को दूर करता है।

विकास की दूसरी अवस्था ने समूह के वैवाहिक जीवन में जिसमें पुरूषों के एक समूह को एक स्त्री आदि के द्वारा यह कार्य सम्पन्न होता है। यहाँ तक उनकी तीसरी अवस्था एक विकास से प्रारम्भ होती है। जो विकास के लिए एक प्रकार से स्त्री और पुरूष का होना आवश्यक होता है।

परिवार एक आधारभूत संरचना है। जिसे सामाजिक संस्था के नाम पर जाना जाता है। यहाँ तक इस संतान के लिए समुचित पालन-पोषण सम्बन्धी नियमों और उत्पत्ति सिद्धान्तों के आधार पर क्रियाओं का नियमन करना पड़ता है।

एक परिवार और विवाह का रक्त सम्बन्ध या गोद लेने के विभिन्न बन्धनों के परिणामस्वरूप सभी व्यक्तियों का एक-समूह में विद्यमान है। एक प्रकार से गृहस्ती का निर्माण करता है। यहाँ तक दूसरों की प्रतिक्रिया का निर्माण करना एक पति पत्नी माता-पिता, लडके-लड़की, भाई-बहन के रूप में अपने सामाजिक कार्यों को किया गया है। यहाँ तक सामान्य सांस्कृति का संगठन और परिवर्धन करने में जनजातीय वर्ग की अपनी मान्यताएँ स्वत: स्पष्ट होती है।

जनजातीय वर्ग में कई तरह के दृष्टिगोचर रूपों में स्पष्ट परिलक्षित होते दिखाई देते हैं।

इस प्रकार के कथन से पितृवंशीय और मातृवंशीय परिवार के साथ

*भूगोल विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

द्वितीयक विवाह की सम्मति प्राप्त होती है। तृतीय प्रकार के संयुक्त परिवार और विवाह का संचालन उसकी प्रकार से होता है। जहाँ तक सामान्य रूपों में जनजातीय परिवार में दिखाई देती है। इस प्रकार के कार्य में एक संस्था जैसे कार्य उनके जीवन में दिखाई देने लगता है।

परिवार की सत्तात्मक व्यवस्था पिता-से पुत्र में पुत्र से पुत्र में इस प्रकार से चलती रहती है। जहाँ तक मेरा मानना है कि यह विवाह के उपरान्त स्त्री नहीं, परन्तु पुरूष अपनी सुसराल में आकर रहता है। यहाँ तक सम्पत्ति पर लड़कियों का अधिकार पूरी तरह से होता है।

इस सम्पत्ति की पूर्णतः अधिकारी होती है। मानव जाति के परिवेश में जीवित रहने के लिए अनेक प्रकार की क्रियाएँ की जाती थी। फिर भी उन्होंने मानवीय आवश्यकताओं के आधार पर जनजातीय समुदाय के पर्यावरण की रक्षा आदि का सरलता से वनों की सघनता को संजोये रखने का प्रयास किया है।

यहाँ तक जनजातियाँ किसी भी देश और राज्य की अपनी पहचान है। उनके द्वारा जंगलों को सजाया गया है।

उनकी अपनी रीति-रीवाज और परम्पराएँ होती है। फिर भी उनके जीवन में अनेक प्रकार की समस्याएँ रहती है। जिसकी पूर्ति आर्थिक रूप से किया जा सकता है।

आदिवासी परिवार में कुछ रीति-रिवाज और मान्यताएँ विद्यमान है। उनके लिए उन्हें दैविय सिद्धान्त के अनुरूप कार्य करती है। फिर भी समाज में आये दिन होने वाले वातावरण के परिणाम स्वरूप समाज में विद्यमान है।

1. रीति-रिवजा और अनेक दैविय मान्यताओं को स्वीकार करने की परम्परा विद्यमान है।
2. सामूहिक रूप से शादी विवाह की परम्पराएँ जो आम जन से भिन्न परम्पराओं का निर्वहन करना पड़ता है।
3. जनजातीय वर्ग में संस्कृति कला और नृत्यों आदि का मनोरंजन की दृष्टि से देखना आदि।
4. जनजातीय समुदाय में त्यौहारों और परम्पराओं में विद्यमान होने की प्रणाली का होना आवश्यक होता है।
5. जनजातीय ग्रामीण परम्पराओं का निर्वहन करना अतिआवश्यक होता है।

इनमें समूह परम्परा का होना अधिक उचित पाया जाता हैं फिर भी एक परिवार के साथ घुल-मिल कर रहना पसंद करते हैं। इनके जीवन में कोई भी सामाजिक समस्या को आपस में मिलकर निपटाते हैं।

निष्कर्ष - जनजातीय वर्ग की अपनी ज्ञान की परम्परा से यह निष्कर्ष निकलता है कि इनकी रीति-रिवाज रूढ़ियाँ और परम्पराएँ, प्रथायें आदि स्पष्ट दिखाई देती है। फिर भी अपनी परिस्थितियों के बल पर यहाँ तक पहुँच पाये हैं। आज बहुत अधिक परिवर्तन हो गया है। इससे प्रशासन यदि उनकी परम्पराओं पर ध्यान नहीं दिया तो पूरी तरह से समाप्त हो जायेगा। इसके लिए प्रशासन स्तर पर प्रोत्साहन देकर जनजातीय संस्कृति और ज्ञान की परम्पराओं को संजोए रखें।

इससे समाज और राष्ट्र दोनों की एक सांस्कृतिक एकता की छाप अलग ही दिखाई देगी। इस प्रकार से समाज में यदि प्रोत्साहन मिलता है। वे और अधिक अच्छे से कार्य को करेंगें। जनजातीय समुदाय में समानता हिन्दू समाज की तरह ही पाई जाती है। यहाँ तक समाज में रहने वाले सभी लोगों को निमंत्रण दिया जाता है। उनके साथ उत्सव के रूप में मनाया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वैद्य, नरेश कुमार, जनजातीय विकास मिथक एवं यथार्थ, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003, पृष्ठ 25
2. दुबे, डॉ. एच.एन., भारत की प्रारम्भिक संस्कृतियाँ एवं सभ्यताएँ, शारदा प्रकाशन, इलाहाबाद, 2003, पृष्ठ 36
3. पाटिल, डॉ. अशोक डी., भील जनजीवन और संस्कृति, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, 1998, पृष्ठ 1
4. पराडत्कर, डॉ. मोरेश्वर दिनकर, वैदिक संस्कृति का विकास (वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक भारतीय सांस्कृतिक प्रगति की तात्विक आलोचना), हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर (प्राइवेट) लि. बम्बई, 1957, पृष्ठ 40

****

Impact of Demonetization on Indian Banking Sector

Pravinkumar M. Lonare*

Abstract - India has carried out demonetizationexercises twice before, in 1946 and1978.In Jan 1978 episode, currency worth INR 1.46 bn (1.7% of total notes incirculation was demonetized. Of this INR 1.0 bn (or 68%) was tendered back.In 1978 the value of demonetizationwas very small (only 0.1% of GDP). However, the 2016 demonetization effort covers 86% of the total currencyin circulation (11% of GDP).On 8th November 2016 night at 8.15 P M Prime Minister of India Mr. Narendra Modi in his unscheduled television address to the nation announced that the currency notes of 500 and 1000 denomination will not be a legal tender money from midnight. Government took this step of demonetizing the currency as a tool to fight against black money and corruption in Indian Economy.
Keywords - demonetization, cashless transactions, credit, tax evasion etc.

Introduction - Lastly, demonetization has been tried as a tool to modernize a cash-dependent developing economy and to combat corruption and crime (counterfeiting, tax evasion). In 2016, the Indian government decided to demonetize the 500- and 1000- rupee notes, the two biggest denominations in its currency system; these notes accounted for 86 percent of the country's circulating cash. With little warning, India's Prime Minister Narendra Modi announced to the citizenry on Nov. 8, 2016, that those notes were worthless, effective immediately – and they had until the end of the year to deposit or exchange them for newly introduced 2000 rupee and 500 rupee bills.

Chaos ensued in the cash-dependent economy (some 78 percent of all Indian customer transactions are in cash), as long, snaking lines formed outside ATMs and banks, which had to shut down for a day. The new rupee notes have different specifications, including size and thickness, requiring re-calibration of ATMs: only 60 percent of the country's 200,000 ATMs were operational. Even those dispensing bills of lower denominations faced shortages. The government's restriction on daily withdrawal amounts added to the misery, though a waiver on transaction fees did help a bit.

Small businesses and households struggled to find cash and reports of daily wage workers not receiving their dues surfaced. The rupee fell sharply against the dollar.

The government's goal (and rationale for the abrupt announcement) was to combat India's thriving underground economy on several fronts: eradicate counterfeit currency, fight tax evasion (only 1 percent of the population pays taxes), eliminate black money gained from money laundering and terrorist financing activities, and to promote a cashless economy. Individuals and entities with huge sums of black money gotten from parallel cash systems were forced to take their large-denomination notes to a bank, which was by law required to acquire tax information on them. If the owner could not provide proof of making any tax payments on the cash, a penalty of 200 percent of the owed amount was imposed.

History of Demonetization

1. Rs 1,000 and higher denomination notes were first demonetized in January 1946 and again in 1978.
2. The highest denomination note ever printed by the Reserve Bank of India was the Rs 10,000 note in 1938 and again in 1954.
3. But these notes were demonetized in January 1946 and again in January 1978, according to RBI data.
4. Rs 1,000 and Rs 10,000 bank notes were in circulation prior to January 1946.
5. Higher denomination banknotes of Rs 1,000, Rs 5,000 and Rs 10,000 were reintroduced in 1954 and all of them were demonetized in January 1978.
6. The Rs 1,000 note made a comeback in November 2000.
7. Rs 500 note came into circulation in October 1987.
8. However, this is the first time that Rs 2,000 currency note is being introduced.
9. Bank notes in Ashoka Pillar watermark series in Rs 10 denomination were issued between 1967 and 1992, Rs 20 in 1972 and 1975, Rs 50 in 1975 and 1981 and Rs 100 between 1967-1979.
10. The banknotes issued during this period contained the symbols representing science and technology, progress and orientation to Indian art forms.
11. In the year 1980, the legend Satyameva Jayate — 'truth alone shall prevail' — was incorporated under the national emblem for the first time.
12. In October 1987, Rs 500 banknote was introduced with the portrait of Mahatma Gandhi and Ashoka Pillar watermark.

*Assistant Professor (Economics) Bhawabhuti Mahavidyalaya, Amgaon, Distt. Gondia (Maharashtra) INDIA

13. Mahatma Gandhi (MG) series banknotes - 1996 were issued in the denominations of Rs 5, (introduced in November 2001), Rs 10 (June 1996), Rs 20 (August 2001), Rs 50 (March 1997), Rs 100 (June 1996), Rs 500 (October 1997) and Rs 1,000 (November 2000).
14. The Mahatma Gandhi Series - 2005 bank notes were issued in the denomination of Rs 10, Rs 20, Rs 50, Rs 100, Rs 500 and Rs 1,000 and contained some additional/new security features as compared to the 1996 MG series.
15. The Rs 50 and Rs 100 banknotes were issued in August 2005, followed by Rs 500 and Rs 1,000 denominations in October 2005 and Rs 10 and Rs 20 in April 2006 and August 2006, respectively.

Review of Literature.

Nithin and Sharmila (2016) studied demonetization and its impact on Indian Economy. They opined that demonetization has short term negative impact on different sectors of the economy and such impacts are solved when the new currency notes are widely circulated in the economy. They also argued that the government should clear all the problems created due to demonetization and help the economy to work smoothly.

Nikita Gajjar (2016) deliberated a study on Black Money in India: Present Status and Future Challenges and Demonetization. She described the framework, policy options and strategies that Indian Government should adapt to tackle with this issue and the future challenges to be faced by the Government.

Vijay and Shiva (2016) examined demonetization and its complete financial inclusion. They felt that the rewards of demonetization are much encouraging and the demonetization is in the long-term interest of the country. They expressed that it had given temporary pain but it taught financial lessons. It influenced banking industries to do considerably investment on digitalization of banking services.

Manpreet Kaur (2017) conducted a study on demonetization and impact on Cashless Payment System. He said that the cashless system in the economy has many fruitful benefits less time-consuming, less cost, paper less transaction etc. and he expected that the future transaction system in all the sectors is cashless transaction system.

Lokesh Uke (2017) researched on demonetization and its effects in India. He studied positive and negative impact of demonization in India. The study was based on secondary data available in newspaper, magazines etc. The main purpose of demonetization is to eradicate the black money and diminish the corruption. He expressed that Government of India has become success to some extent. Demonetization had negative impact for a short duration on Indian financial markets. But he said that the real impact will be shown in future.

Impact of Banking Sector

1. Decline in currency in circulation on account of demonetization led to a surge in bank deposits.
2. Total currency in circulation declined by about 8,800 billion (8.8 lac crores). This, in turn, was largely reflected in sharp increase of about 6,720 billion (6.72 lac crores) in aggregate deposits of the banking system even after outflows in NRI deposits during the period.
3. Between end-December 2016 and early March 2017, there was a net increase in currency in circulation by about 2,600 billion. During this period, deposits with banks also declined moderately.
4. As per data for October 28, 2016 (prior to demonetization) and February 17, 2017 (latest available), aggregate deposits of SCBs increased by 5,549 billion during the period.
5. Bulk of the deposits so mobilized by SCBs have been deployed in: (i) reverse repos of various tenors with the RBI; and (ii) cash management bills (CMBs) issued under the Market Stabilization Scheme (which is a part of investment in government securities in the balance sheet of banks).
6. The 100% cash reserve requirement (CRR) on incremental deposits meant that banks did not earn any interest on Rs 3 lakhs crores of deposits for nearly a fortnight.
7. The waiver of ATM charges would result in banks losing Rs 20 in every transaction.
8. The waiver of merchant discount rate on cards would result in banks losing 1% in every card transaction.
9. Banks use third parties like cash logistics companies for cash transportation. Moving out Rs 15 lakh crore of currency notes and moving in Rs 7 lakh crore plus from currency chests would have cost several thousand crore.
10. As banks have been focused on exchanging currency notes, they have not been able to sell any loan products.
11. Some SME businesses have seen their sales drop 50–80% and could default in their instalments. They wont immediately be classified as NPAs because of some relaxations, but if the delay persists bank NPAs might worsen.
12. Uncertainty has resulted in drop in spending on high value items from credit cards. These are the transactions which are converted into EMIs and banks earn from them. The Positive Impact on Top ten Banks.

Conclusion - The demonetization of the currency (Rs. 500 and Rs. 1000 notes) on 8th November 2016 was one of the step taken by government of India. This decision way fetch positive results in the long term. This study concluded that the step of demonetization improved the liquidity position of the scheduled commercial banks in India and banks invested the excess amount in various investment opportunities which helped the banking sector to increase their profitability position. It is also concluded that the objective to open the Pradhan Mantri Jan DhanYojna Account has been realized and people used PMJDY

accounts during demonetization period which will change the attitude of the customers to use physical currency and customers will shift to digital banking services which will again be helpful for the banking sector as well as customers.

References :-

1. Gulati, Singh, Gurbir, (Jan. 2017) Impact of Demonetization on Textile industry, www.indiaretailing.com
2. Das, Samantak, (Jan. 2017), impact of Demonetization on Real estate, Chief Economist and national director, Knight Frank, www.livemint.com
3. Malik, Anghshu, (Jan. 2017), Impact of Demonetization on FMCG Products, Chief Operating Officer at AdaniWilmar Ltd., www.livemint.com
4. Kapoor, Mahimam, (2016), Impact of Demonetization on Banking Sector, www.bloombergquint.com
5. Dec. 2016, PTI, New Delhi, www.dnaindia.com
6. How will Demonetization impact India and Indians?,www.newsbyteapp.com

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Impact of Performance Appraisal System on Employees Motivation of an Organization

Aditya Kothari* Dr. Pallavi Pattan**

Abstract - The Employee performance is the quality of association and Employee performance has customarily been agreed prime concentration by human resource managers. Thus, various performance appraisal techniques have after some time been formulated to help set up worker's exhibition. Accordingly, by the sought to investigate effectiveness of performance appraisal systems and its effect on employee motivation.

Performance appraisal is a broadly talked about idea in the field of execution the executives. The significance agreed to execution evaluation frameworks to some extent emerges from the idea of the present business condition, which is set apart by the need to accomplish hierarchical objectives just as stay pertinent in seriously serious markets through unrivaled worker execution. The associations can anyway control how representatives play out their occupations. Furthermore, execution the board inquire about shows that a noteworthy number of workers will in general want to play out their occupations well as a major aspect of their individual objectives just as an exhibit of steadfastness towards the association. By embracing most recent research targets, related to building up the directing job of execution examination as an inspiration apparatus just as potential difficulties and discoveries show the nearness of huge positive results when the association utilizes execution evaluation as an inspiration instrument.

Further, which the examination finds that the utilization of more than one evaluation procedures helps yield more prominent fulfillment and thusly to higher persuasive levels.The Researcher right now to the appraisal of the connection between representative presentation assessments to survey the moderate job of inspiration.
Keywords - Performance Appraisal and Management Appraisal Compensation. Execution Management, Employee Appraisal, Human Resource.

Introduction - Performance appraisal plays a key role to measure the employee's performance and help the organization to check the progress towards the desired goals and objectives (Ijbmr, 2012). Now organizations are using performance appraisal as a strategic approach by coordinating the human resource functions and business policies. They are focuses on it as it is a broad term that covering number of activities like examines employees, improve abilities, maintain performance and allocate rewards (Fakharyan,Jalilvand, and Dini, 2012).

Performance appraisal help aligns individual goals and objectives with the organization goals. The system engages, motivates employees and thereby directs them toward achieving the strategic goals of the organization (Verhulp, 2006).

Good organization performance refers to the employee's performance. Satisfactory performance of employees does not happen automatically. Managerial standards, Knowledge and Skill, Commitment and Performance appraisalseffecting employee's performance. But we are focusing on performance appraisal. The history of performance appraisal is quite brief. Its roots can be traced in the early 20th century to Taylor's pioneering time and motion studies. The performance appraisal system start in practiced mainly in the 1940s and with the help of this system, merit rating was used for the first time near the Second World War as a method of justifying an employee's wages (Lillian & Sitati,2011). There are number of banks in Pakistan that using the performance management system for making better their employee's performance because it leads to achieve organizational performance. However performance appraisal is very important process but it deemed to be the"weak point" of managing human force (Pulakios, 2009).

Therefore performance appraisal is important to manage employee's work effectively. (Armstrong, 2001) tells performance as behavior – the way in which organization's teams and individuals get work done.(Mooney, 2009) suggested that performance is not only related to results but it also relates with activities and behaviors of employeesthat they adopted to achieve their given goals. (Dessler, 2005) define performance appraisal as "comparing the employee's present and past performance to his/her performance standards".

*Research Scholar, Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA
** Asst. Prof. (Commerce) DAVV, Mateshwari Sugani Devi Girls College, Indore (M.P.) INDIA

HRM aim at constantly the competency requirements of different individual to perform the job assigned to them, effectively and provides opportunities for developing these competencies. As HRM deals with humans it is necessary to keep a check on their performance after regular interval of time given jobs, it is necessary to corrective actions term or there is need to appraisal their performance. The process of appraising for doing their work effectively is known as performance appraisal system. It is very essential to understand and improve the employee's performance appraisal is the basis for HRD. It was viewed that performance appraisal was useful to decide upon employee promotion/transfer, salary determination and the like. Its roots in the early 20th century can be traced to Taylor's pioneering Time and motion studies.

As a distinct and formal management procedure used in the evaluation of work performance, appraisal really dates from the time of the Second World War - not more than 60years ago. Yet in a broader sense, the practice of appraisal is a very ancient art. In the scale of things historical, it might well lay claim to being the world's second oldest profession.

Performance appraisal measures the qualitative and quantitative aspects of job performance. Performance appraisal is an integral part of HRM and HRM deals with personnel is people. "People" is the important and valuable resource that every organization or institution has in the form of its employees. Dynamic people can build dynamic organization. Effective employees can contribute to the effectiveness of the organization. HRM has multiple goals, which include employee's competency development, employee motivation development and organization development. Employees require a variety of competencies, knowledge, attitude, skills in technical area; Managerial areas, behavioral and human relations areas and conceptual area to perform different tasks or functions required by their jobs.

There is a basic human tendency to make judgments about those one is working with, as well as about oneself. Appraisal, it seems, is both inevitable and universal. In the absence of a carefully structured system of appraisal, people will tend to judge the work performance of others, including subordinates, naturally, informally and arbitrarily. The human inclination to judge can create serious motivational, ethical and legal problems in the workplace. Without a structured appraisal system, there is little chance of ensuring that the judgments made will be lawful, fair, defensible and accurate.

Performance appraisal systems began as simple methods of income justification. That is, appraisal was used to decide whether or not the salary or wage of an individual employee was justified. Earlier, motivational researchers were aware that different people with roughly equal work abilities could be paid the same amount of money and yet have quite different levels of motivation and performance .These observations been confirmed in empirical studies. Pay rates were important, yes; but they were not the only element that had an impact on employee performance. It was found that other issues, such as morale and self-esteem, could also have a major influence.

Literature Review:

There has been large number of researches in past several decades on performance appraisal (Bretz, Milkovich& Read, 1992; Fisher, 1989). Performance appraisal sounds simple but researches tell us that it is commonly used in performance feedback and identify individual employee's strengths and weaknesses (Ruddin, 2005). The use of performance appraisal system by business and industry has been counted between 74 to 89 percent (Murphy & Cleveland, 1991). Performance appraisal systems are used for different purposes in which include Human resource decisions, evaluation and feedback (Cleveland, Murphy & Williams, 1989). The different work that was dominated by psychologists that concentrated on the psychometric characteristics of appraisal for supervisors in their performance evaluation (Milkovich&Wigor, 1991).

Psychologist focused on employee's reaction to appraisal and sharedview in which performance appraisal take place (Levy, 2000; Levy & Williams, 2004). Nasud argued that evaluation structure is important tool that recover the value of employees performance (Nasud, 1999). Performance appraisal establishes reward system that will combine the effort of leaders and the worker of organization to the commongoals of their organizations (Cleveland, Murphy, & William, 1989). For achieving high performance goal of organization performance appraisal is very important component of human resource management. The information gathered and performance appraisal provide basis for recruitment and selection, training and development of existing staff, and motivating and maintaining a quality human resource through correct and proper rewarding of their performance (Lillian, Mathooko, &Sitati ,2011). Performance appraisal is often including performance management system. Performance management systems manage and align all the organization, resources in order to achieve the highest possible performance (martin, 1998). (McMaster, 1994; Williams, 2002) argued that performance management involve determining the strategic objective, establish team goals, plan of performance developed, Analyze the performance (by using appraisal system) identified need of development and Assign rewards.

The different techniques are used for performance appraisal that is can be divided as Traditional and non-traditional form. The traditional form of appraisal is also known as "Free Form Method" it is just involved the overseeing and description of employee performance by his boss or superior (IJBMR, 2012).

From the last few years the non-traditional form of appraisal is common in practices (Coens and Jenkins, 2000; Lawler, 2000). (Dorfman, 1986; Locke &Latham, 1984; Latham &Wexley, 1981) Mostly these techniques are used

in throughout world for appraisal method. 1. Assessment center 2. Behaviorally anchored rating scales (BARS) 3. Human resource accounting method 4.360 Degree Performance Appraisals 5.Management by objectives (MBO).

Assessment centre involves the informal events, tests and assignment that are given to the group of employees to evaluate their competencies (Ijbmr, 2012). Behaviorally Anchored Rating Scales is new method that is consist of predetermine critical areas of performance or it is set of behavior statements that describe important job qualities what is good and what is bad (Dargham, 2000).Human resource accounting method the performance of employee is evaluated in term of contribution and cost of employees (Ijbmr, 2012).(Sharma, 2012)360 degree involves the feedback of employee's performance by anyone who has contact with employee in organization. In 360 degree includeSelf-appraisal, Superior appraisal, Subordinate appraisal, Peer appraisal. These methods are less structured then the traditional method which is less focuses on the rankings and ratings and more emphasis on arranging meetings between employees and supervisor (Sharma, 2012).

Employee's Performance: High employee's performances lead an organization and have greater opportunities for employees then those who have low performance (Vans cotter, 2000). "Performance is related to that organization hires the person to do and do well"(Campbell 1993).

Theoretical Framework - The organization goals are divided and they incorporate the employee work plan. Performance appraisal involves what is expected to employees and employees remain in the focused of supervisor (Casio, 2003).

Evaluation involves employee performance comparison with the objectives that has been described in the beginning of the appraisal period (Lillian, Mathooko & Sitati, 2012).Evaluation tells about the performance of employee that which employees have met their goals. Regular assessment make able to employees to focus his attention on that what is expected to him give feedback to employees and motivates him too (Casio, 2003). Positive feedback tells employee that his work done well and also illustrates what is needed to improved. The good appraisal and supervisor must communicate to employee that how the performance of them can improved and motivates him (Lillian, Mathooko & Sitati, 2012).

Objectives Of Performance Appraisal:

1 The Salary increase Performance appraisal plays a role in making decision about salary increase which, normally salary increase of an employee depends performing his job status.
2. Pay may be disclose how well an employee is attaining performance at their individual level and how much he should be compensated by way of salary increase for an employee.
3. In allotment of Promotion Performance appraisal plays significant role where promotion is based on merit and seniority. Performance appraisal discloses how an employee is working in his present job and what his strong and weak points are which rates, it can be decided whether he can be promoted to the next higher position.
4. Training and Development Performance appraisal tries to identify the strengths and weakness of an employee on his present job, for overcoming weakness of employees.
5. Pressure on Employees Performance appraisal puts a sort of pressure on employees for better performance. If the employees are conscious that they are being appraised in respect of certain factors and their future largely depends on such appraisal.
5. Identifying systemic factors that are barriers to, or facilitators of, effective performance.
6. To confirm the services of probationary employees upon their completing the probationary period satisfactorily, to improve communication. Performance appraisal provides a format for dialogue between the superior and the subordinate, and improves understanding of personal goals and concerns.
7. To determine whether HR programs such as selection, training and transfer have been effective or not by considering performance appraisal aspect in it.

Methodology - The development and administrative work are taken into consideration. According to the universal compensation scheme, the employed staff staff will be paid bonuses for very good results during the period evaluated, provided with result oriented performance in regular work has to be calculated adding previous achievements.

A. Statement of the Problem - Much of literature dealing with Human Resource Management and its issues recognize the importance of performance appraisal system which occurs in the organization. All organization faces the problem of directing the energies of their staff to the task of achieving business goals and objectives. In doing so, organization need to devise means to influence and channel the behaviors of their employees so as to optimize their contributions. Performance appraisals constitute one of the major management tools employed in this process. The continuous evolution of organization towards the changes creates a great impact in the life of the business still, the business leaders are relying on the capacity of the people and their performance towards their job and roles in the organization. Whether a profitable or non – profitable organization, the people has been essential resources in the organization. Various strategies had been effectively used for the employee according to their different needs and areas that needs to sustain. However, there is a little attention given in enhancing the employee performance appraisal system. The present study was under taken to clarify certain questions related to the care phase of performance appraisal through regular assessment of

progress toward goals focuses the attention and efforts of an employee or a team.

Scope of the Study - This study provide appraisal feedback to employees and thereby serve as reflecting mirror for personal and career development and allow the management to take effective decision against drawbacks for the well being of the employee's development to improve employee work performance as helping management to realize and use their full potential in carrying out their firms mission. This study helps to know the level of importance of appraisal system.The payroll and compensation decision, training and development needs, promotion, demotions transfer which including job analysis and providing superior support, assistance and counseling giving strength to job performance & personal qualities of an employee in organization.

Need of the Study - This study helps building progress towards organizational goals, that helps the superior to have a proper judgment to extract work with their subordinates.which ensure organizational effectiveness through correcting the employee for standard and improved performance and suggesting the changes in employee behavior,providing information about the performance ranks/ helps to counsel/ facilitate fair and equitable compensation.

Hypothesis of the Study - Null hypothesis is used for testing. It is a statement that no difference exists between the parameter and statistics being compared to it and also alternatively hypothesis is the logical opposite of the null hypothesis in a present study pertaining to development as stated.

Hypotheses 1: There is the significant relationship exist between performance appraisal and employees performance.

Hypotheses 2: Motivation positively affects the relationship of performance appraisal and employees performance.

Results & Discussion - Performance is what is expected to be delivered by an individual or a set of individuals within a time frame. What is expected to be delivered could be stated in terms of results or efforts, tasks and quality, with specification of conditions under which it is to be delivered, Feeding forward coaching has the power to turn everyday employees into engaged Employee's at workplace and which coaching inspires employees stability to give extra discretionary effort drive excellent results in the competitive atmosphere. The documentation that you maintained during the performance review period serves you well as you prepare for an employee's performance review. Never get into a performance review without any preparation. If any failure is expected or found, which will miss key opportunities for feedback and improvement, and the employee will not feel encouraged about his successes for a long term commitment in an organization.

Conclusion - Every employee in an organization increases the productivity and goodwill of every company. An employee, being an individual is treated as assets in the organization. So the organization should mainly emphasis performance appraisal techniques and its development programme. Both the appraiser and appraise should realize the principle and use the tool of appraisal system in a constructive way for the prosperity of the organization. The performance appraisal technique prevailing in the organization is fair. Employees are satisfied with the present performance appraisal system that is a traditional one.

As many new appraisal techniques are emerged, the organization can implement modern technique which would be more effective.

Suggestions - The techniques used for performance appraisal are very traditional which is to be modernized in future for good prospect of the employees. Increase the awareness level of employees during the performance appraisal period. It will be better if the management provides incentives to employees so it will boost in their work and productivity and also extend the probation period up to 2 years. Separate rating committee to be fixed during the appraisal period. So that there is no rating biases and personal prejudice will occur. The performance rating is very helpful for management to provide employee counseling during the appraisal. Performance appraisal is purely based on appraisal system and the rating helps to fix increment for workers make them retained in the organization. Supervisors should maintain cordial relationship with workers and offers recognitions of the employee's efforts and provide guidance to workers.

References:-

1. Ali, d. (2008). "Providing comprehensive system design and performance appraisal of staff banking system." Journal of Industrial Management Science Department5( ): 103-115
2. Brumbach, G. (2003) "Blending the We/Me in Performance Management. Team Performance Management." International Journal. Vol 9, no 7/8, pp167-173. Choudhury, M. S. (2009). "Enhancing motivation and work performance of the
3. Idrisb, A. R. (2010). "Principal's practices in the performance appraisal for teachers Implementation."The Qualitative Report. Vol 13, no.4, pp 544-559.In Al-Sharqiah South Zone's Schools in Oman." science directs2: 3839–3843.
4. Kuvaas, B. (2006), "Performance appraisal satisfaction and employee outcomes: mediating and moderating roles of work motivation", International Journal of Human Resource Management Vol. 17 (3), pp. 504-522.
5. Langridge, D. (2004) "Performance appraisal and development renovate Rother Homes
6. Leila Najafi, Y. H., Mohammad Ghiasi, Reza Shahhoseini, Hasan Emami (2011). "Performance Evaluation and its Effects on Employees Job Motivation in Hamedan City Health Centers." Australian Journal of Basic and Applied Sciences5(12): 1761-1765.

Management."Human Resource Management Journal. Vol 12, no.1, pp 8-9.

7. Panatika, S. A. B. (2012). "Impact of Work Design on Employee Psychological Strain

8. Selena, U. (2011). "Measuring Employee Expectations in a Strategic Human

9. Shubhangi Sharma, S. S., Priyanka Singh and Pratibha Singh (2012). "Performance Appraisal and Career Development." International Journal of Business and Management 2(1): 8-16.

10. Usage, criteria and observations."The Journal of Management Development. Vol 20, no.9

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

A Study on Corporate Governance Practices in India

Dr. Sanjeev Kumar Bansal*

Abstract - The primary driver mentioned behind the corporate governance practice is the interest of the stakeholders. Indian corporate governance has taken major steps toward becoming a system capable of inspiring confidence among institutions and increase foreign investors. The overall purpose of study is provide an overview of various components of corporate governance and the conclusion of study is idea about how much important corporate governance is for all types of corporations and how these corporations get benefits from corporate governance practices.
Key Words - Accountability, Stakeholders, corporate, foreign investors.

Meaning of Corporate Governance - Corporate governance refers to the way by which a corporation is governed. It is the technique which helps companies to maintain the balance between its internal affairs and stakeholders, i.e. shareholders, management, customers, suppliers, financiers, government and society etc. provide material and non material information at its outside parties. Governance means control and corporate governance means to control and managed the corporations. Corporate governance concept emerged in India after the second half of 90s centaury due to liberalization and deregulation of industries and business and was introduced by the Industry association confederation of Indian industry, as a voluntary measure to be adopted by Indian companies. After that it obtained a mandatory status in early 2000s through the introduction of clause 49 of listing agreement, as all companies (of a certain size) listed with stock exchanges were required to comply with these

Need for Corporate Governance - Need for corporate governance arise due to separation of management from ownership. For a firm success it is necessary to concentrate on both aspects social as well as economic. It needs to protect the interest of stakeholders and to be fair with producers, shareholders, communities etc. It needs to serve its all responsibilities in a best possible manner. Transparency in any business is pre requisite condition for the growth, profitability and stability of any business. The need for good corporate governance arise due to growing competition amongst business in all economic sectors at national as well as international level.

Definitions of Corporate Governance - Cadbury committee (1), 1 992 defined corporate governance as such:

1. Corporate governance is the system by which companies are directed and controlled. It encompasses the entire mechanics of the functioning of a company and attempts to put in place a system of checks and balances between the shareholders, directors, auditors, employees and the management
2. Corporate governance is the system by which business corporations are directed and controlled. The corporate governance structure specifies the distribution of rights and responsibilities among different participants in the corporation, such as, the board, managers, shareholders and spells out the rules and procedures for making decisions on corporate affairs. By doing this, it also provides the structure through which the company objects are set and the means of attaining those objectives and monitoring performance.

Definition of corporate governance by the institute of company secretaries of India is as under:

1. Corporate governance is the application of best management practices, compliance of law in true letter and spirit and adherence to ethical standards for effective management and distribution of wealth and discharge of social responsibilities for sustainable development of all stakeholders.

Objective of Corporate Governance :

1. To eliminate or mitigate conflicts of interest.
2. To maintain transparency in the operation of business
3. To maintain fairness in dealings of business
4. To protect the interest of shareholders
5. To develop an efficient organizational culture
6. To aid in achieving social and economic goals
7. To mitigate wastages, corruption, Red tapism etc.
8. To ensure that the assets of the company are used efficiently and productively and in the best interest of its investors and other stakeholders.

Pre Requisite for Good Corporate Governance - Good corporate governance is primarily based upon the personal beliefs, values and ethics which configure the organizational values, beliefs and actions of its board. The board as a main functionary is responsible to ensure value creation

*Sr. Lecturer, Department of A.B.S.T., S.N.D.B. Govt. P.G. College, Nohar (Raj.) INDIA

for its stakeholders. It required clearly designed duties and powers of board presence of proper system for guiding, monitoring, reporting and controlling presence of visionary goals and mission to grow the Organization. Pillars of good corporate governance:- The pillars of successful corporate governance are:-

1. Accountability
2. Fairness
3. Transparency
4. Stakeholder management

All six are important in running the business enterprise successfully and forming solid professional relationship among its stakeholders i.e. board directors, managers, employees, customers, regulators and most importantly shareholders.

Accountability: To account is to give a description or depiction of something that happens or happened. Accountability would therefore be taken to literally mean the process of giving and account of an event. The board should communicate to the company's shareholders and other stakeholders at regular intervals a fair balanced and understandable assessment of how the company is achieving its business purpose and meeting its other responsibilities. Accountability is defined as the assignment of responsibility to specified persons or groups within the corporate enterprise for undertaking definite tasks to produce certain results or outcome and holding such persons or groups responsible for doing the assigned task properly.

Fairness : Fairness means treating all stakeholders including minorities reasonably equitably and provide effective redress for violations, establishing effective communication mechanism is important to ensure just and timely protection of resources and people asset as well as correcting of wrongs.

Transparency : Transparency means having nothing to hide that allows its process and transactions observable to outsiders. It also makes necessary disclosure, informs anyone affected about its decisions. Transparency is a critical component of corporate governance because it ensures that all of entity's actions can be checked at any given time by an outside observer. Inefficiency and lack of transparency in corporate governance that often lead to scandals and frauds are major challenges facing the corporate world. These have bumpered the smooth functioning of companies and stock markets and have negative effect on the long term investment which is crucial for sustained growth of economy.

Stakeholder Engagement : Those changed with governance should identify the key stakeholders and how they interact with the business and how they are engaged with to ensure the best outcome for the organization. Committees of corporate governance:

1. Cadbury committee, U. K.
2. Green bury committee, USA
3. Kings commission, South Africa.

In 1995, CII confederation of Indian Industry gave code of best practices of desirable code of conduct. CII code was voluntary code i.e. depended upon the company.

1. Blue Ribbon committee,
2. USA Flangel committee

In 1999 SEBI formed a committee known as Kumar Mangalam Birla committee on corporate governance under the chairmanship of Kumar Mangalam Birla and gave the report in 2000 and it has certain recommendations and majority of these are mandatory. It is no longer known as Kumar Mangalam Birla but known as SEBI guidelines under clause 49 of listing agreement.

Guidelines :

1. At least 50% outsiders on Board of directors.
2. Audit committee should be independent.
3. Remuneration committee should be independent

Conclusion - Corporate governance practices are playing an important role in the growth of companies. So the conclusion of study is that this moral practice should have to follow by all organizations for smooth running of business, for formulating good corporate image, to increase the transparency in corporate affairs and at the end to protect the interest of its stakeholders.

References :-

1. Bhardwaj N, Rao BR, Corporate governance practices in India: A case study Asia pacific Journal of Research. 2014
2. Patel R, Patel S. Corporate governance in oil & gas sector: An empirical Investigation Interest. Journal of Research in commerce, IT & Management, 2012; 2(8):92-100
3. Irani jamshed J., Report of the expert committee to advise the government on the New Company law (2005) Philip kotler, "what consumerism means for marketers, "Harvard Business Review, May- June 1972,P.49.
4. India means Business: How the Elephant earned its strips', Kshama v Kaushik, and Kaushik Dutta, Oxford 2012, Page 324.
5. Mukherjee, Diganta and Ghosh, tejomoy," An analysis of corporate performance and governance in India, styudy of some selected Industries," Discussion paper 04-19, available at: http:// www.isid.ac.in/" pu/ dispapers/ dp04-19.pdf.
6. Sharma Pk. Corporate governance in automobile industry in India International journal of marketing, financial services and management Research 2013;2(5):123-140.
7. Arsoy Ap,Crowther D. Corporate governance in Turkey: Reform and convergance social responsibility journal.2008:4(3):407-421.

****

A Study on Customer Relationship Management

Dr. Sunanda K. Deshpande*

Abstract - Customer Relationship Management (CRM) is concerned with developing brand loyalty and customer loyalty to the maximum possible level to maintain long-term customer relationship. It focuses totally on customers and the organisation's entire functions related to value creation and value delivery. It Customer Relationship Management (CRM) is a process acquiring customers by understanding their needs, attracting new customers through customer strategic approaches. The focus on Customer Relationship Management is beneficial to both the organisation and the customers. The organisation benefit from reduction in customer acquisition costs, generation of more loyal customers, expansion of customer base, the possibility to expand the business.This paper focus on various aspects associated with Customer Relationship Management.It focus on customer retention, Building customer relationship its strategies for building relationship.
Keywords - Natural floaters, chronic complainers, Perception gaps, Loyalty Programmes.

Introduction - Customer Relationship Management is necessary for any organisation to increase market share and the customers visit and buy goods from organisation again and again. In the modern era it is need of the organisation to maintain Customer Relationship Management and focus on customers. Organisation must maintain profitable customer relationship, for that organisation must take care of their customers, the market share, sales volume and profits. Organisation must focus on customer. The customer-focused business

1. Customersare focus on all business plans and activities
2. Customers are focus of all activities
3. Customers views influence business decisions
4. Customers find easy to do business
5. Customer-friendly systems and structure are used
6. Customer appear at the top of the organisational chart

Customer Retention : It is the policy of any organisation to find out the reasons and maintain customer relationship management and if customers are move to other organisation then it will affect the goodwill of the organisation, so now customer relationship management is need for any organisation to focus on CRM and attract their customers.Customers left Organisation due to many reasons, some reasons are us under:

1. If the price of a product very high, customer tally the price of the product with other organisation and brand, if the price is high the customer immediately left the organisation and switch off to other brand.
2. If the customer is not satisfied with the service i.e. pre-sales, during sales and after sales then customer left the organisation and switch off to other organisation.
3. If other organisation offers new product with better features and quality then customer left the organisation and switch off to other organisation.
4. If other organisation offers augmented benefits then customer left the organisation and switch off to other organisation.

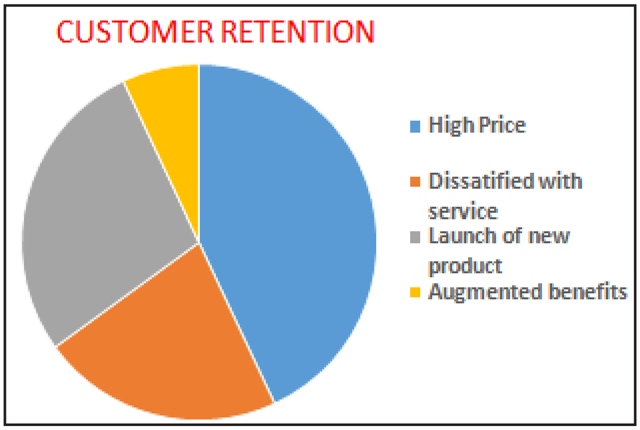

Lose Customers:

1. Die – one percent
2. Move away to new location- three percent
3. Natural floaters- four percent
4. Move on recommendation of family or friends- five percent
5. Find somewhere cheaper- nine percent
6. Chronic complainers
7. Go elsewhere as indifferent needs- sixty eight percent

*Assistant Professor, Samarth Mahavidyalaya, Lakhani, Distt. Bhandara (Maharashtra) INDIA

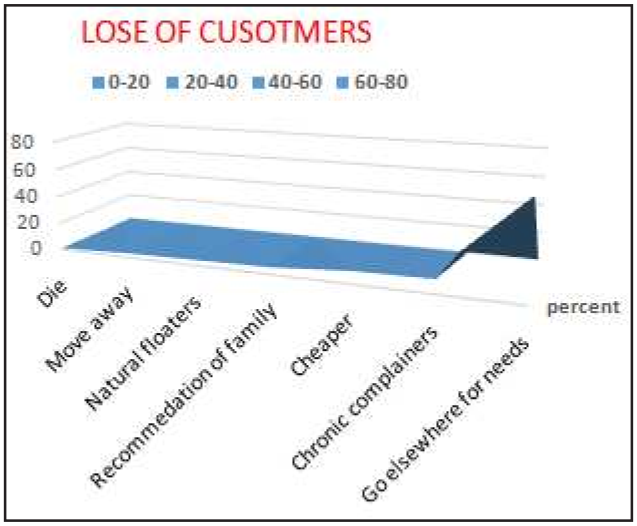

Any organisation analyse the reasons behind losing customers and plan for a customer retention programme to build long-term customer relations. The value of retaining existing customers is critical in saturated market.

Building Customer Relationship:

Customer Satisfaction : Customer satisfaction is the extent to which a product's perceived performance matches a buyer's expectations. If the customer's expectation is fulfilled then the customer is highly satisfied.

Customer Value : Customer buys from the company that offers the highest customer perceived value, which is the customer's evaluation of the difference between all the benefits and all the costs of product or services.

Five Common perception Gaps : Perception gaps are the difference between the organisation and its customers view its products or service:

1. Gap between organisations thinks customer wants and what customers actually buys.
2. Gap between organisations thinks customer has buy and what customer perceive they received.
3. Gap between service quality the organisation is being provided and what customer perceives being provided.
4. Gap between customer's expectation of service quality and the service quality the company actually delivers.
5. Gap between marketing promises and company's actual delivery.

Strategies For Building Relationship : The strategies for building and maintaining customer relationship will vary from company to company. The variations will depend on factors like nature of business, its size, its market share, nature of product type, volume of sales, geographic spread or concentration, socio-economic status and lifestyle of the customers concerned.

1. People : All employees within the company have an important role in Customer relationship management. Every employee should understand work towards satisfying the customers.

2. Product : The product or service must constantly provide value addition. The expectations of customer keep on changing and may increase due to many reasons. A customer satisfied with given product or service now soon become dissatisfied customers.

3. Service : Customers expect quality service during pre-sales, sales and after sales phases. The company set standards for quality of service to it satisfy its customers.

4. Competitive Advantage : Customers always compare the products, services and style of operation of a company with competitors to decide their future purchases.

5. Customer clubs : Customer clubs is another way to promote relationship. Such clubs will focus a sense of mutual belonging, understanding and sharing of common problems and emotions.

6. Loyalty Programmes : Many companies offer frequency marketing programmes or loyalty programmes that reward customers who buy frequently or use a service frequently.

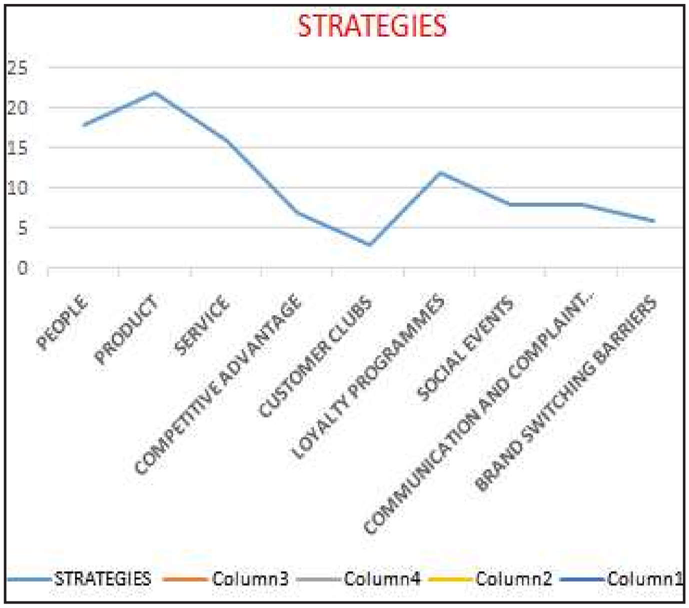

Conclusion:

1. For any company the customer is the king and company should maintain its customer relationship management and
2. If company manage the customer then it increases the profit of the company and
3. The goodwill of the company will maintain. So it is important for the company to maintain their customers, for that
4. Company must see the retention of customers and see why company lose the customers and
5. Company should form strategies for build a customer.
6. Company must listen the complaint of the customer and maintain a record to sort out the problem.
7. Company should check the price of the product and see whether the customers are satisfied with the price of the product and if the customers thought that the price of the product or service is more and they attracted towards the competitors company then

company should change the price policy.

8. The company should check whether the customers are satisfied pre-sale service and past sales service or not. If the customers are not happy then company should find out the reasons behind them and see how the customers should happy and if the company think that the sales policy is not according to customers then company should change the sales policy.
9. The company should innovate the newproduct to attract the customers.
10. Company should form Customer clubs to promote relationship.
11. Such clubs will focus a sense of mutual belonging, understanding and sharing of common problems and emotions.
12. Companies marketing programmes or loyalty programmes that reward customers who buy frequently or use a service frequently. Thus,
13. Company build customer relationship so that the customers should not left the company.

References:-

1. C.R. Kothari, Research Methodology, New Age International Publishers (117-145) 9. Dr. B. Janakiram, Training and Development, Biztantra, (98-151)
2. L.M. Prasad, Principles & Practice of Management , Sultan Chand & Company
3. Dr. T.N. Bhagoliwal, Personnel Management and Industrial Relation, ShaityaBhawan, Agra.
4. T.P. Gopalaswamy, Marketing Management,Wheeler Publishing, New Delhi.
5. Philip Kotler, Marketing Management, Prentice Hall of India.
6. Datta D., Vrinda Publishing Ltd., Marketing Management, New Delhi.
7. Dibb. Simkin, Marketing - Concept and Strategies, Pride and Farrell.
8. Theodore Levitt, The Marketing Imagination, Free Press publishing Ltd.
9. RajanSaxsena, Marketing Management, McGraw Hill.
10 Singh &Sukhpal, Vikas publishers, Marketing Management, New Delhi.
11 Modern Marketing Management Theory, Critical issues in the philosophy of Marketing Science, Shelby hunt, South-western college publishing.
12. www.globalmarketing
13. www.marketingstrategy
14. www.marketpolicy
15. www.matketstrategy.co.in
16. www.customerpolicy.co.in
17. www.newmarketpolicy.co.in
18. www.retentionpolity.com
19. www.strategiesofcompany.com
20. www.salespolicy.co.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Information Technology and Cloud Security

Bharat Batham*

Abstract - In cloud computing IT (statistics technology) associated assets like infrastructure, platform and software can be applied the usage of net primarily based gear and alertness through internet. right here groups are shifting to the cloud computing a few quicker than others. however, moving to the cloud gives the organization with some of dangers to assess. facts safety is the most vital threat for plenty businesses. that is due to the fact the highbrow belongings, change secrets, in my view identifiable facts, or other touchy facts can be powered with the aid of shielding statistics.

This paper classified cloud protection based totally at the 3 service fashions of cloud computing SaaS, PaaS and IaaS. Attributes for each kind of protection has also diagnosed and in short defined here. We as compared securities furnished in distinctive services by world's first-class recognised cloud service providing agencies inclusive of Amazon AWS, Google App Engine, windows Azure and so forth. considering cloud security class. furthermore, we protected tips for agencies who've determined to move their facts into the cloud, however pressured to choose the excellent provider issuer for their agency regarding records security.
Keywords - Cloud Computing, Information Security.

Introduction - The idea of cloud computing is a blessing of modern-day IT where resources like infrastructure, or platform, or software program associated offerings may be to be had via net as an on-call for self-provider foundation which may be rapidly provisioned and launched with minimal control effort or carrier vendors interaction. non-public, public, hybrid and community are the four deployment models of cloud computing. 3 carrier types of cloud computing are software as a carrier (SaaS), Platform as a service (PaaS) and Infrastructure as a provider (IaaS). The cloud computing architecture follows this sort of principle that for any given model cloud carrier vendors play a crucial role for garage, manipulation and transportation of information so safety of records has grow to be a pretty important concerns at gift.

This paper categorised cloud safety based on the three provider models of cloud computing and identifies attributes for each form of protection. This additionally compares security offerings furnished by global's exceptional known cloud services supplying groups. section 2 describes the history of cloud computing. section 3 identifies specific security regions of cloud computing. This segment in brief describes every safety region including comparison of cloud provider providing companies on corresponding regions. finally, we are able to finish our paper with hints.

Background - Salesforce.com arrived in 1999. It changed into one of the first milestone in cloud computing. Salesforce.com changed into the pioneer of turning in employer packages via a easy website . In 2002, Amazon net services furnished a collection of cloud-based services thru the Amazon Mechanical Turk which encompass storage, computation and human intelligence. In 2006, Amazon released its Elastic Compute Cloud (EC2). EC2 become a industrial web service which lets in small agencies and individuals to run their own computer applications. "Amazon EC2/S3 become the primary broadly on hand cloud computing infrastructure provider", said Jeremy Allaire, CEO of Brightcove, which affords its SaaS online video platform to united kingdom television stations and newspapers. In 2009, a large milestone got here as net 2.zero hit its stride. Google and others commenced to provide browser-based business enterprise applications, via offerings. Google Apps. is the first-class example of this. Cloud adoption sees increased increase. conferences, workshops, tasks comprising universities, enterprise institutions and governments are dealing with this topic. on the studies report compiled on behalf of middle for the safety of countrywide Infrastructure (CPNI), an in depth evaluation of cloud computing, focusing at the capacity benefits and dangers in addition to figuring out mitigation advice to reduce vulnerability turned into furnished with the aid of Deloitte. principal target of that briefing was records security practitioners from companies. Like CPNI ome reports and papers have already been published discussing cloud safety associated troubles but to the high-quality of my know-how no paper precisely on facts protection in cloud computing is published yet.

Cloud Security - Cloud computing services impact economies of scale and create sturdy, meshed infrastructures. It transfers our critical business facts from

*Research Scholar, Rabindranath Tagore University, Bhopal (M.P.) INDIA

the corporate community to the cloud. To provide increased levels of safety to assist sensitive company utility or records, we advocate the subsequent areas ought to be taken into consideration for the security of cloud computing:

Infrastructure Security - Infrastructure may be defined as services that make clouds and cloud offerings to be had to cease consumer customers and the delivery mechanisms to the cloud and between the diverse additives in the cloud. regardless of the cloud kind is personal or public and anywhere the provider is SAAS, PAAS or IAAS, the foundational infrastructure of a cloud ought to be inherently comfy. Cloud computing companies distribute to statistics centres round the arena in which land and labour are much less expensive to save money and keep prices low. companies need to verify that their statistics is included at a standardized degree based on their necessities, no longer best on the legal guidelines of the usa wherein the facts is transacted, transmitted or stored. previous to signing with a provider those forms of controls can be written into the provider degree agreement (SLA). To make certain infrastructure safety a few extra factors that need to be in the test list of cloud users are physical safety, network Infrastructure security, Firewalls, get right of entry to control Lists (ACLs), Availability (performance and anti-DoS), security policies (which include centers/services could be available to clients), far flung get right of entry to, mobile access and platforms, Virtualization problems, Environmental controls, disaster recuperation, identity/ authentication/federation, Staffing/employee heritage tests and so forth.

Cloud Service and its Provider's Name Description

1. Amazon AWS - AWS Datacenter are housed in a state of art facilities where physical access is strictly controlled not only at the perimeter butalso at building ingress points. AWS authority use professionalsecurity staff, video surveillance, intrusion detection systems, andother electronic means. To access data centre, authorized staff needto pass two-factor authentication for at least two times. Unauthorized person like visitors, contractors, etc. are required topresent identification, signed in and continually escorted byauthorized staff. Datacenter information and access are provided toemployees and only those contractors who have a legitimatebusiness need for such privileges. For both employees andcontractors, privileges for access to Datacenter is immediatelyrevoked if his/her business need is fulfilled. Log of all physicalaccess to Datacenter is routinely audited by the authority ofAWS.

2. Force.com - Datacenter of Salesforce is top-tier Datacenter collocated in dedicated space. Security facilities like carrier-level support,including 24-hour manned security, foot patrols and perimeterinspections, biometric scanning for access, dedicated concretewalled Datacenter rooms, computing equipment in accesscontrolled steel cages, video surveillance throughout facility andperimeter are provided. Beside this, building engineered for localseismic, storm and flood risks and tracking of asset removal alsoavailable.

3. Google App Engine - A full-time information security team is employed in Google. The team includes some of the world's foremost experts in information,application, and network security. Responsibilities for thecompany's perimeter defence systems, security review processes, and customized security infrastructure, as well as for developing, documenting, and implementing Google's security policies andstandards is done by the security team.

4. Go Grid - GoGrid, AT&T and Verizon shares same Datacenter. The Datacenter is furnished with state-of-the-art video and audiomonitoring equipment and 24 hours on-site guards. All peopleentering the building are required to register with the security officeand leave a valid ID while in the building. Those not on the accesslist are not allowed into the building without an escort. Visitors arechecked for second time prior to entry into Datacenter on thesecond floor. The GoGrid NOC is staffed for 24 hours all the yearround and a direct line-of-site view into the Datacenter isprovided[8].

5. Rack Space - Rack Space insures ID card protocols, biometric scanning rotocols and round-the-clock internal and outside surveillance monitoraccess to every Datacenter. Only authorized Datacenter personnelare granted access credentials to Datacenter. No one else can enterthe production area of the Datacenter without prior clearance and anappropriate escort. Every Datacenter employee undergoes multiple International Journal of Information Technology

6. Windows Azure -Windows Azure executes in geographically distributed Microsoft facilities It shares space and utilities with other Microsoft OnlineServices. Each facility is designed to run 24 hours and utilizevarious measures to help protect operations from network outages,power failure and physical intrusion. Datacenter of Windows Azurefollows industry standards for physical security and reliability.They are administered, managed and monitored by Microsoftoperations personnel. They are designed for "lights out"operation. With traditional security measures like locks andkeys, the security system also use alarms, biometrics cameras andcard readers.

Application Security - The use of hardware, software and procedural strategies to protect programs from outside threats is called software protection. safety features constructed into packages. The possibility to get admission to, regulate, scouse borrow or delete sensitive statistics or control applications via hackers can be minimized by way of a legitimate software protection habitual[6]. these days, packages become greater often reachable over networks, as a result, at risk of a extensive style of threats. in the long run, protection becomes an increasingly vital challenge all through development. application firewall is the most primary software countermeasure. here countermeasure manner actions taken to make sure utility safety. The operation of other systems like, Public Key Infrastructure (PKI) systems, protection token services, identity and get

entry to control (IAM) systems and other utility stages (e.g. databases) influences at the same time as walking an utility in the cloud. Dependencies on those structures render configuration management greater complex than with traditional deployment. in the case of application safety factors like protection layout lifestyles cycle, Authentication, session management, records input Validation, statistics Integration/change, Vulnerability trying out, mistakes handling, AntiMalware, Anti-spam, Patching, APIs, Proxies, application Sand-boxing, Incident response, computer virus/ issue tracking, Versioning and many others. are want to be taken into consideration. desk II states evaluation of six cloud service imparting businesses concerning utility safety.

Information Security - The term "information security" manner protecting records and facts systems from unauthorized get right of entry to, use, disclosure, disruption, modification, or destruction so as to provide integrity, confidentiality and availability. right here, integrity means guarding in opposition to unsuitable information amendment or destruction, and consists of making sure statistics non-repudiation and authenticity. Confidentiality way maintaining legal restrictions on disclosure and access, along with manner for protecting proprietary and personal privacy facts. And availability approach making sure timely and dependable get admission to and use of statistics. Cloud computing gives computing and storage sources on call for without the want for inner infrastructure which ensures fee-saving benefits. as the generation association will become extra popular, additional cloud computing security features are necessary to make sure the ongoing protection of the confidentiality, availability, and integrity of organization information.

The physical limitations of statistics and transferring that data among trusted companions securely and reliably is modified by means of cloud computing. To make sure the latest safety skills are being used nicely, this capability of cloud computing will require encryption and consider fashions being constantly evaluated. by using the use of the right service issuer inside the cloud, this functionality may be more desirable. To make sure data security statistics garage and privacy security need to be remember.

Data Storage Security - For Data Storage Security Data storage zoning, Data tagging, Data retention policies, Datapermanence/deletion, Data classification, Locality requirements, etc. have to be in the check list.

Data Privacy Security - Backup, Archiving, Multi-tenancy issues, Recovery, Privacy/privacy controls, prevention, Malicious data aggregation, Encryption (at-rest, in-transit, key management, Federal informationprocessing standards/Federal information security management act), Digital signing/integrity,attestation, Data leak prevention etc. are need to be considered for Data Privacy Security.

Audit and Legal Compliances - Audit and legal compliances also play a vital role to ensure security. Few components like Frauddetection, Forensics, Auditing, SLAs, Monitoring, Accreditation, Compliance, Legal issues, Regulations, Public communication plans, Locality requirements, Discovery, Logging etc. areneed to be considered for security reasons.

Recommendations - audience of this phase are those organizations who've already determined to move their records into the cloud, and now choosing which provider provider can be fine for his or her organization regarding records security. We advocate the subsequent will assist them to pick out proper one.

1. Decide sensitivity of your corporation's facts with admire to shield touchy information like in my opinion identifiable statistics, intellectual property, or other alternate secrets. Now, thinking about the importance of your statistics pick the proper deployment model which includes non-public model, public model, hybrid model or network model of cloud.
2. All cloud carriers offer a positive stage of safety blessings for their clients, but in keeping with your personal safety needs create a check-list with the help of an information protection expert. Make sure that your IT department professionals remain involved even as making ready the test-list.
3. Also recall geographical area of Datacenter's of cloud provider carriers.
4. Now pick out which cloud carrier company serves you pleasant according to the take a look at-list.
5. To reduce threats, evaluate the cloud provider's software/hardware/different system sourcing security, worker historical past check procedure, supply chain practices and HR.
6. To lessen the guarantee burden, not unusual controls evaluations want to be used based totally on ISO 27000 and 28000 standards.
7. The felony dangers like subpoenas, e-discovery and jurisdictional issues as well as technology licensing issues want to be addressed inside the settlement.
8. obviously, there will be a shift in abilties in IT departments as businesses migrate to the cloud. Our advice is to train organisation's humans and assist them reap that ability shift so that company may be plenty greater successful because it actions ahead.
9. finally, within 24 hours language obligatory on the spot notification of serious safety events with ongoing protection reviews want to take into consideration inside the contract with cloud provider company.

Conclusions - Cloud computing era allows customers for advanced, quicker services and to keep sources, improve services, and higher safety. The critical traits of cloud computing is it's on-call for provisioning, measured offerings, network get right of entry to, elasticity and useful resource pooling which dramatically reduce procurement and running charges and substantially growth the efficiency and effectiveness of services. agencies, have realized the advantages of this era are transferring to the cloud a few quicker than others which affords the agency with some of dangers to evaluate. Our take a look at advocate, protec-

tion of information is the most important hazard as cloud computing conveys a change within the physical boundaries of statistics and transferring that records between depended on partners reliably and securely. To make sure total statistics protection all areas of protection like infrastructure, software, information garage and privacy and criminal troubles are need to be protected. An enterprise calls for cautiously analyse its safety infrastructure, oversight ability, threat profile and contractual responsibilities truly as they may be considerable barriers to transferring statistics garage and applications to the cloud surroundings. To make certain the ultra-modern protection capabilities are getting used properly, consider fashions want to be continuously evaluated and special attention would require on comfy encryption. it could be more advantageous by using deciding on the right provider issuer in the cloud that meets agencies commercial enterprise wishes. before imparting the seller, an employer must organized the nature of the facts being saved or transacted with designated safety and prison requirements applicable to their commercial enterprise desires. era must hold to improve in securing statistics extra robustly which may be without problems carried out by means of the service providers. So if chance and security issues are at the forefront with all different performance and function issues, moving to cloud primarily based structure can be rewarding. If offerings get higher this way, commercial enterprise for both companies and clients will flourish to new stage of recognition.

References :-

1. Ronald L. Krutz, Russell Dean Vines, Cloud Security: A Comprehensive Guide to Secure Cloud Computing, 2010.
2. Roger A. Grimes, Cloud Security Deep Dive: A new security model for a new era, Info world, SPECIAL REPORT, AUGUST 2011
3. Amazon Web Services: Overview of Security Processes, May 2011
4. Deloitte, Information security briefing 01/2010, center for the protection of national infrastructure(CPNI) , march 2010
5. computerweekly.com, A history of cloud computing, first published in March 2009, Available from: http://www.computerweekly.com
6. TechTarget,http://searchsoftwarequality. techtarget.com/definition/application-security
7. Salesforce.com inc., https://trust.salesforce.com
8. GoGrid, http://www.gogrid.com
9. Rackspace US inc., http://www.rackspace.com
10. Amazon Web Services, http://aws.amazon.com/security
11. Google, http://www.google.com/apps/intl/en/business/infrastructure_security.html
12. Charlie Kaufman, RamanathanVenkatapathy, Windows Azure Security Overview v1.01, August, 2010
13. Legal Information Institute of Cornell University Law School, http://www.law.cornell .edu/uscod e/text/44/3542
14. Dexter Duncan, Xingchen Chu, Christian Vecchiola and RajkumarBuyya, The Structure of the New IT Frontier: Cloud Computing – Part I, Manjrasoft Pty Ltd and Cloud Computing and Distributed Systems (CLOUDS) Laboratory, Department of Computer Science and Software Engineering, The University of Melbourne, Australia
15. Security Guidance for Critical Areas of Focus in Cloud Computing V2.1, Prepared by the Cloud Security Alliance, December 2009

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

सहकारी समितियों द्वारा कृषि उत्पादों का विपणन : एक अध्ययन

मंगलेश भालेराव *

शोध सारांश – कृषि उत्पादों की खरीद और बिक्री सहकारी समितियाँ भारत में फलों और सब्जियों के समग्र विपणन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। 1980 के दशक के बाद से, सहकारी समितियों द्वारा नियंत्रित उत्पादन की मात्रा में तेजी से वृद्धि हुई है। कृषि उत्पादों की खरीद और बिक्री की सोसाइटी द्वारा विपणन किए गए फलों और सब्जियों में केले, आम, अंगूर, प्याज और कई अन्य शामिल हैं।

कृषि विपणनक्या है ? – कृषि विपणन के अन्तर्गत वे सभी सेवाएँ आ जातीं हैं जो कृषि उपज को खेत से लेकर उपभोक्ता तक पहुँचाने में करनी पड़तीं हैं।

भारत एक कृषि प्रधान देश है और देश की अर्थव्यवस्था में कृषि की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। देश की राष्ट्रीय आय, रोजगार, जीवन-निर्वाह, पूंजी-निर्माण, विदेशी व्यापार, उद्योगों आदि में कृषि की सशक्त भूमिका को नकारा नहीं जा सकता है। देश की लगभग 70 प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर है, वहीं लगभग 64 प्रतिशत श्रमिकों को कृषि क्षेत्र में रोजगार प्राप्त है।

पिछले कुछ वर्षों में चावल, गेहूं, तिलहन, गन्ना तथा अन्य नकदी फसलों की पैदावार में वृद्धि हुई है। यही कारण है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के सराहनीय योगदान होने के साथ-साथ विश्व में भी विश्व में कृषि क्षेत्र की साख बनी हुई है। चाय तथा मूंगफली के उत्पादन में भारत का विश्व में पहला स्थान है तो चावल के उत्पादन में दूसरा तथा तम्बाकू के क्षेत्र में तीसरा स्थान प्राप्त है।

कृषि विपणन के अंतर्गत वनीय, बागानी और अन्य कृषि उत्पादों के भंडारण,प्रसंस्करण व विपणन के साथ-साथ कृषिगत मशीनरी का वितरण और अंतर-राज्यीय स्तर पर कृषि वस्तुओं का आवागमन भी शामिल है। इनके अलावा कृषि उत्पादन में वृद्धि हेतु तकनीकी सहायता प्रदान करना और भारत में सहकारी विपणन को प्रोत्साहित करना भी कृषि विपणन गतिविधियों के अंतर्गत आता है कृषि विपणन में परिवहन, प्रसंस्करण, भंडारण, ग्रेडिंग आदि जैसे गतिविधियां शामिल हैं। ये गतिविधियां हर देश की अर्थव्यवस्था में बहुत अहम् भूमिका निभाती हैं।

कृषि विपणन की कमियां

1. बाजार मध्यस्थ – कृषि बाजार व्यवस्था में किसान तथा उपभोक्ताओं के बीच मध्यस्थ काफी जरुरी होते हैं। परन्तु अभी हाल में जो बाजार व्यवस्था है इसमें मध्यस्थों की संख्या जरुरत से अधिक है, जिसके कारण किसानों से उपभोक्ताओं तक कृषि उत्पादों के पहुंचने तक उनकी कीमत में कई गुना वृद्धि हो जाती है। उपभोक्ता बाजार में जो भाव चुकाते है उसकी तुलना में किसानों को बहुत कम दाम मिलता हैं।

2. कम लाभ – किसी भी बाजार व्यवस्था में मध्यस्थों की सेवा लेना अनिवार्य है, लेकिन आज परिस्थिति ऐसी है जिसमें वो अपनी सेवाओं की तुलना में अधिक लाभ प्राप्त कर रहे हैं जो गलत है। इस विषय पर किये गए अनुसंधान में यह जान्कारी सामने आयी है की ग्राहक द्वारा खर्च किये गए धन का मात्र 40 से 50 प्रतिशत हिस्सा ही किसानों को प्राप्त होता है और बाकी के 50 से 60 प्रतिशत बाजार खर्च तथा मध्यस्थों के लाभ में चले जाते हैं, इसके उपर काम करने की काफी आवश्यकता है।

3. मूलभूत सुविधाओं का आभाव – कई गांवों में आज भी मूलभूत सुविधाएं जैसे- परिवहन, वेयर हॉउस आदि सेवाओं का आभाव है और इसमें कई प्रकार की कमिया हैं। अधिकांश सड़कें कच्ची सड़कें हैं जो मोटर वाहनों के लिए ठीक नहीं है और उपज धीमी गति से चलने वाले परिवहन जैसे बैल गाड़ियों से ढोए जाते हैं।

4. कृषि बाजार भाव निर्धारण नीति में खामी – आज कृषि बाजार में उपज की भाव निर्धारित करने की जो व्यवस्था उसमें कई खामियां हैं आज भी नियंत्रित बाजारों में कृषि जिसों की सही प्रकार से नीलामी नहीं होती है। कई बाजारों में तो व्यापारी आपस में मिलकर कृषि उत्पादों का भाव निर्धारित कर, किसानों को उचित भाव नहीं मिलने देते। कई बाजारों में तो खुली नीलामी भी नहीं की जाती है।

5. कृषि उत्पादों की ग्रेडिंग – किसानों में अपने कृषि उत्पादों को सही प्रकार से ग्रेडिंग करने की प्रवृति नहीं है इससे भी उनकों बहुत नुकसान उठाना पड़ता है और बजार में उचित कीमत नहीं मिल पाती है।

6. ऋण व्यवस्था – किसानों के लिए ऋण की सरल व्यवस्था होनी बहुत जरुरी है। प्राय: देखा गया है की ग्रामीण क्षेत्रों के किसान ऋण के लिए व्यापारी के पास ही जाते हैं, जिससे इन किसानों को अपने कृषि उपज को उसी व्यापारी के पास ही बेचने की मजबूरी बन जाती है जिससे किसान की विक्रय शक्ति में कमी आती है।

7. सहकारी बाजारों का विकास – कृषि उत्पादन को देखते हुए आज भी हमारे यहां पर पूर्ण संख्या में सहकारी बाजारों का विकास नहीं हुआ है। कई स्थानों पर इस प्रकार के सहकारी बाजारों का प्रयास निष्फल हुआ है, अत: इन समस्याओं को हमारी व्यवस्था से दूर करने की बहुत अधिक जरूरत है।

कृषि विपणन की प्रणाली को सुधारने के उपाय – आजादी के बाद भारत सरकार ने कृषि विपणन की प्रणाली को बेहतर बनाने के लिए कई तरह के उपायों को अपनाया है, विनियमित बाजारों की स्थापना करना, गोदामों का निर्माण करना, उपज श्रेणी निर्धारण व मानकीकरण का प्रावधान, बाट और माप का मानकीकरण,ऑल इंडिया रेडियो पर कृषि फसलों की बाजार में कीमतों का दैनिक प्रसारण, परिवहन सुविधाओं में सुधार आदि महत्वपूर्ण उपायों में से एक हैं।

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

1. नियमित बाजार के संगठन – नियमित बाजारों को विक्रेताओं और बिचौलियों के शोषण से किसानों को बचाने के उद्देश्य से स्थापित किया गया। ऐसे बाजार का प्रबंधन एक मार्केट कमेटी दवारा किया जाता है, जिसमें राज्य सरकार, स्थानीय निकायों, आर्हतिया, बिचौलियों और किसानों के प्रत्याशी होते हैं।

इस प्रकार, सभी के हितों पर समिति का प्रतिनिधित्व होता है। ये समितियां सरकार द्धारा एक निश्चित अवधि के लिए नियुक्त की जाती हैं। अधिकांश राज्य सरकारों और संघ राज्य क्षेत्रों ने कृषि उपज बाजारों (कृषि उत्पादन विपणन समिति अधिनियम) के नियमन के लिए अधिनियम प्रदान किये हैं।

2. ग्रेडिंग और मानकीकरण – कृषि विपणन प्रणाली में सुधार की उम्मीद तब तक नहीं की जा सकती जब तक कृषि उत्पादों के ग्रेडिंग और मानकीकरण पर विशेष प्रयास ना किये जाएं। सरकार ने यह काफी जल्दी पहचान लिया और कृषि उत्पाद (श्रेणीकरण एवं विपणन) अधिनियम को 1937 में पारित किया गया था। शुरुआत में, ग्रेडिंग को भांग और तंबाकू के लिए शुरू किया गया था।

सरकार ने नागपुर में एक केंद्रीय गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगशाला और कई क्षेत्रीय सहायक गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगशाला स्थापित किये हैं। महत्वपूर्ण उत्पादों के नमूने बाजार से प्राप्त कर लिए जाते हैं और उनके भौतिक और रासायनिक गुणों का इन प्रयोगशालाओं में विश्लेषण किया जाता है। इस आधार पर, ग्रेड तैयार किये जाते हैं और अधिकृत पैकर एगमार्क प्रमाणों को जारी करते हैं। (एगमार्क केवल कृषि विपणन के लिए एक संक्षिप्त नाम है)।

3. मानक वजनों का प्रयोग – इसके अंतर्गत सही माप तौल के माध्यम से उत्पादों को तुला जाता है ताकि किसानों को उनके उत्पादों का सही मूल्य प्राप्त हो सके।

4. गोदाम और भंडारण की सुविधा – इसके अंतर्गत सरकार किसानों को अपने उत्पादों को इकट्ठा करने की सुविधा देती है ताकि उत्पादों की मूल्य बृद्धि का फायदा उठाया जा सके।

5. बाजार सूचना का प्रसार – इस सुविधा में किसानों को हाल के बाजार मूल्यों की जानकारी उपलब्ध करायी जाती है।

6. सरकार खरीद और कीमत तैयार करती है – सरकार हर साल खाद्यानों का न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित करती है ताकि किसानों को ज्यादा उत्पादन के लिए प्रोत्साहित किया जा सके और अधिक उत्पादन की स्थिति में भी किसानों को उत्पादों का सही मूल्य दिया जा सके।

भारत मे कृषि बाजार के साथ जुडी कुछ प्रमुख संस्थाएँ

1. किसान कॉल सेंटर
2. सुचना प्रसार माध्यम
3. राज्य कृषि बाजार बोर्ड
4. सेंट्रल वेयर हाउस कोर्पोरशन
5. फूड कारर्पोरशन ऑफ इंडिया (एफ. सी. आई.)
6. नेशनल एग्रीकल्चर कोआपरेटिव मार्केटिंग फेडरेशन (नेफेड)
7. एग्रीकल्चरल प्रोडक्ट्स एक्सपोर्ट डेवलपमेंट अथॉरिटी (एपिडा)

भविष्य का कृषि संकट – खेती को उद्योग में तब्दील करने की बातें कई सालों से होती रही हैं, लेकिन अब कारपोरेट हितों के चलते इसे अमलीजामा पहनाने की तैयारियाँ जोर–शोर से दिखाई देने लगी हैं।

राज्यों और केन्द्र की सरकारों समेत 'विश्व व्यापार संगठन' सरीखे देशी–विदेशी संस्थान अव्वल तो किसानी को किसानों के बोझ से मुक्त करना चाहते हैं और दूसरे सीमित होती कृषि भूमि में बाजारों के लिये भरपूर उत्पादन के मार्फत मुनाफा कूटना चाहती हैं। ऐसे में किसानी अब किसानों की बजाय कारपोरेट का धंधा बनती जा रही है।

लगता है, अब भारत किसानों का देश नहीं कहलाएगा। यहाँ खेती तो की जाएगी, लेकिन किसानों के द्धारा नहीं, खेती करने वाले विशालकाय कारपोरेट्स होंगे। आज के अन्नदाता किसानों की हैसियत उन बंधुआ मजदूरों या गुलामों की होगी, जो अपनी भूख मिटाने के लिये कारपोरेट्स के आदेश पर अपनी ही जमीनों पर चाकरी करेंगे।

इस समय देश में खेती और किसानों के लिये जो नीतियाँ और योजनाएँ लागू की जा रही हैं उसके पीछे यही सोच दिखाई देती है। कारपोरेट हितों ने पहले तो षड्यंत्रपूर्वक देश की ग्रामीण उद्योग व्यवस्था तोड़ दी और गाँवों के सारे उद्योग धन्धे बन्द कर दिये। स्थानीय उत्पादकों को ग्राहकों के विरुद्ध खड़ा किया गया।

विज्ञापनों के जरिए स्थानीय उद्योगों में बनी वस्तुओं को घटिया व महंगा और कम्पनी उत्पादन को सस्ता व गुणवत्तापूर्ण बताकर प्रचारित किया गया और यहाँ की दुकानों को कम्पनी के उत्पादनों से भर दिया गया। इस गोरखधंधे में स्थानीय व्यापारियों ने भी कोई कसर नहीं छोड़ी। उन्होंने अपने व्यापार और देशी उद्योगों के पैरों पर खुद कुल्हाड़ी मारकर उसे कारपोरेट के हवाले कर दिया। अब उद्योग, व्यापार और खेती पर कारपोरेट्स एक–के–बाद–एक कब्जा करते जा रहे हैं।

प्राकृतिक संसाधन, उद्योग और व्यापार पर तो उन्होंने पहले ही कब्जा कर लिया था। अब वे खेती पर कब्जा जमाना चाहते हैं ताकि कारपोरेट उद्योगों के लिये कच्चा माल और दुनिया में व्यापार के लिये जरूरी उत्पादन कर सकें।

कारपोरेट खेती के हित में छोटे किसानों के पास पूँजी की कमी, छोटी जोतों में खेती का अ–लाभप्रद होना, यांत्रिक और तकनीकी खेती कर पाने में अक्षमता आदि के तर्क गढ़े गए। कहा गया कि पारिवारिक खेती करने वाले किसान उत्पादन बढ़ाने में सक्षम नहीं हैं। इस तर्क की आड़ में कारपोरेट्स ने प्रत्यक्ष स्वामित्व या पट्टा या लम्बी लीज पर जमीन लेकर खेती करने या किसान समूह से अनुबन्ध करके किसानों को बीज, कर्ज, उर्वरक, मशीनरी और तकनीक आदि उपलब्ध कराकर खेती करने का जुगाड़ कर लिया।

खेती की जमीन, कृषि उत्पादन, कृषि उत्पादों की खरीद, भण्डारण, प्रसंस्करण, विपणन, आयात–निर्यात आदि सभी पर कारपोरेट्स अपना नियंत्रण करना चाहते हैं। दुनिया के विशिष्ट वर्ग की भौतिक जरूरतों को पूरा करने के लिये जैव ईंधन, फलों, फूलों या खाद्यान्न की खेती भी वैश्विक बाजार को ध्यान में रखकर करना चाहते हैं। वे फसलें, जिनसे उन्हें अधिकतम लाभ मिलेगा, पैदा की जाएँगी और अपनी शर्तो व कीमतों पर बेची जाएँगी। अनुबन्ध खेती और कारपोरेट खेती के अनुरूप नीतिगत सुधार के लिये उत्पादन प्रणालियों को पुनर्गठित करने और सुविधाएँ देने के लिये नीतियाँ और कानून बनाए जा रहे हैं।

दूसरी हरित क्रान्ति के द्धारा कृषि में आधुनिक तकनीक, पूँजी–निवेश, कृषि यंत्रीकरण, जैव तकनीक और जीएम फसलों, ई–नाम आदि के माध्यम से अनुबन्ध खेती, कारपोरेट खेती के लिये सरकार एक व्यवस्था बना रही है। डब्ल्यूटीओ का समझौता, कारपोरेट खेती के प्रायोगिक प्रकल्प, अनुबन्ध खेती कानून, कृषि और फसल बीमा योजना में विदेशी निवेश, किसानों के संरक्षक सीलिंग कानून को हटाने का प्रयास, आधुनिक खेती के लिये

इजराइल से समझौता, खेती का यांत्रिकीकरण, जैव तकनीक व जीएम फसलों को प्रवेश, कृषि मंडियों का वैश्विक विस्तारीकरण, कर्ज राशि में बढ़ोत्तरी, कर्ज ना चुका पाने में अक्षमता पर खेती की गैरकानूनी जब्ती, कृषि उत्पादों की बिक्री की शृंखला, सुपरबाजार, जैविक ईंधन, जेट्रोफा, इथेनॉल के लिये गन्ना और फलों, फूलों की खेती आदि को बढ़ावा देने की सिफारिशें, निर्यातोन्मुखी कारपोरेटी खेती और विश्व व्यापार संगठन के कृषि समझौते के तहत वैश्विक बाजार में खाद्यान्न की आपूर्ति की बाध्यता आदि सभी को एकसाथ जोड़कर देखने से कारपोरेट खेती की तस्वीर स्पष्ट होती है।

इस समय देशी-विदेशी बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ रॉथशिल्ड, रिलायंस, पेप्सी, कारगिल, ग्लोबल ग्रीन, रॅलीज, आयटीसी, गोदरेज, मेरी को आदि के द्वारा पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, तामिलनाडु, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, गुजरात, छत्तीसगढ़ आदि प्रदेशों में आम, काजू, चीकू, सेब, लीची, आलू, टमाटर, मशरुम, मक्का आदि की खेती की जा रही है।

उच्च शिक्षित युवा जो आधुनिक खेती करने, छोटी दुकानों में सब्जी बेचने, प्रसंस्करण करने आदि के काम कर रहे हैं, उनमें से अधिकांश कारपोरेटी व्यवस्था स्थापित करने के प्रायोगिक प्रकल्पों पर काम कर रहे हैं।

भारत में किसी भी व्यक्ति या कम्पनी को एक सीमा से अधिक खेती खरीदने, रखने के लिये सीलिंग कानून प्रतिबन्धित करता है। इसके चलते कारपोरेट घरानों को खेती पर सीधा कब्जा करना सम्भव नहीं है। इसलिये सीलिंग कानून बदलने के प्रयास किये जा रहे हैं।

कुछ राज्यों में अनुसन्धान और विकास, निर्यातोन्मुखी खेती के लिये कृषि व्यवसाय फर्मों को खेती खरीदने की अनुमति दी गई है, कहीं पर कम्पनियों के निदेशकों या कर्मचारियों के नाम पर खेती खरीदी की गई है, तो कहीं राज्य सरकारों ने नाम मात्र राशि लेकर पट्टे पर जमीन दी है। बंजर भूमि खरीदने या किराये पर लेने की अनुमति दी जा रही है।

कृषि में किसानों की आय दोगुनी करने के लिये नीति आयोग का सुझाव यह है कि किसानों को कृषि से गैर कृषि व्यवसायों में लगाकर आज के किसानों की संख्या आधी की जाये, तो बचे हुए किसानों की आमदनी अपने आप दोगुनी हो जाएगी।

आयोग कहता है कि कृषि कार्यबल को कृषि से इतर कार्यों में लगाकर किसानों की आय में काफी वृद्धि की जा सकती है। अगर जोतदारों की संख्या घटती रही तो उपलब्ध कृषि आय कम किसानों में वितरित होगी। वे आगे कहते हैं कि वस्तुत: कुछ किसानों ने कृषि क्षेत्र को छोड़ना शुरू भी कर दिया है और कई अन्य कृषि को छोड़ने के लिये उपयुक्त अवसरों की तलाश कर रहे हैं। किसानों की संख्या 14.62 करोड़ से घटाकर 2022 तक 11.95 करोड़ करना होगा। जिसके लिये प्रतिवर्ष 2.4 प्रतिशत किसानों को गैर-कृषि रोजगार से जोड़ना होगा।

एक रिपोर्ट के अनुसार आज देश में लगभग 40 प्रतिशत किसान अपनी खेती बेचने के लिये तैयार बैठे है। केन्द्रीय वित्त मंत्री ने संसद में कहा था कि सरकार किसानों की संख्या 20 प्रतिशत तक ही सीमित करना चाहती है। अर्थात यह 20 प्रतिशत किसान वही होंगे, जो देश के गरीब किसानों से खेती खरीद सकेंगे और जो पूँजी, आधुनिक तकनीक और यांत्रिक खेती का इस्तेमाल करने में सक्षम होंगे। यह सम्भावना उन किसानों के लिये नहीं है जो खेती में लुटने के कारण परिवार का पेट नहीं भर पा रहा है। इसका अर्थ यह है कि आज के शत-प्रतिशत किसानों की खेती पूँजीपतियों के पास हस्तान्तरित होगी और वे किसान कारपोरेट होंगे।

किसानों की संख्या 20 प्रतिशत करने के लिये ऐसी परिस्थितियाँ पैदा की जा रही हैं कि किसान स्वेच्छा से या मजबूर होकर खेती छोड़ दे या फिर ऐसे तरीके अपनाए जिसके द्वारा किसानों को झाँसा देकर फँसाया जा सके। किसान को मेहनत का मूल्य न देकर सरकार खेती को घाटे का सौदा इसीलिये बनाए रखना चाहती है ताकि कर्ज का बोझ बढ़ाकर उसे खेती छोड़ने के लिये मजबूर किया जा सके।

निष्कर्ष - जो किसान खेती नहीं छोड़ेंगे उनके लिये अनुबन्ध खेती के द्वारा कारपोरेट खेती के लिये रास्ता बनाया जा रहा है। देश में बाँधों, उद्योगों और इंफ्रास्ट्रक्चर के लिये पहले ही करोड़ों हेक्टर जमीन किसानों के हाथ से निकल चुकी है। अब बची हुई जमीन धीरे-धीरे उन कारपोरेट्स के पास चली जाएगी जो दुनिया में खेती पर कब्जा करने के अभियान पर निकले हैं। लूट की व्यवस्था को कानूनी जामा पहनाकर उसे स्थायी और अधिकृत बनाना कारपोरेट की नीति रही है।

भारत में जब अंग्रेजी राज स्थापित हुआ था तब जमींदारी कानून के द्वारा लूट की व्यवस्था बनाई गई थी। लगान लगाकर किसानों को लूटा गया था। अनुबन्ध खेती, कारपोरेट खेती जमींदारी का नया प्रारूप है। अब केवल लगान नहीं, खेती के हर स्तर पर लूट की व्यवस्था बनाकर खेती ही लूटी जा रही है। देश खाद्यान्न सुरक्षा, आत्मनिर्भरता को हमेशा के लिये खो रहा है। यह परावलम्बन राष्ट्रीय सुरक्षा के लिये भी बड़ा खतरा है। भारत फिर से गुलामी की जंजीरों में बँधता जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Critical Evaluation of Protection of Human Right Act, 1993

Firoz Ansari*

Introduction - India is the biggest democracy in the world. Being a democratic country one of the main objectives is the protection of the basic rights of the people. Government of India has given due consideration to the recognition and protection of human rights. The Constitution of India recognizes these rights of the people and shows deep concern towards them.

Objectives Of The Study - The proposed work has been conducted to fulfill the following objectives:

1. To study the role of human right commission of India.
2. To study the role of Indian Administration of Justice delivery system.
3. To study emphasis on social, economic, political, cultural and psychological development of every member of the society.

Research Methodology - The methodology of this proposed work is descriptive and required informations are collected from different primary and secondary sources like books, journals, research articles, different government documents etc.

Constitution of India provides safeguards for the protection of human rights, however, for the effective implementation of the human rights Government of India has enacted the 'Protection of Human Rights Act, 1993', which provides for the establishment of the National Human Rights Commission, State Human Rights Commission in various states and also the Human Rights Courts at the district level and Indian judiciary is also working to protect the human rights of the people of India as well as to provide speedy remedy to the victim of human right violation. Despite such efforts by the Government sought objectives have not yet been achieved due to the following reasons:

i. Though Constitution of India has enumerated various rights but there are large number of people who are not even aware of these rights guaranteed by the Constitution due to their vulnerable conditions and struggle of every day survival. These are the people who are mostly victims of human rights violation but they cannot think to approach court as they are more worried about their daily wages instead of protecting their basic human rights.

ii. Though Constitution enshrined duties of the State under Part IV i.e. Directive Principles of State Policy to enacts laws and to work for the welfare of the people of India in various spheres whereas these directive principles are not enforceable in the Courts and one cannot approach court if the Government does not enforce these principles.

iii. The Human Rights Commission is expected to be completely independent in its functioning. But there is no provision for the independence of the Commission. In fact, there are provisions in the Act which draw attention to the dependence of the Commission on the Government these are discussed as follow:

a) Commission is dependent upon the Government for its human resources for its functions as per Section 11 of the Act.

b) Finance is considered as the blood of an organization. Section 32 of the Act makes the commission dependent on central government for its finances as the section stated that "the Central Government shall pay to the Commission by way of grants such sums of money as it may consider fit".

c) Human Rights commission is only fact finding body and it has got no power to adjudicate upon the disputed facts and also to issue any order to any party or government so as to be complied with.[1] The Commission's findings are only advisory to the government. It is on the discretion of the government whether to accept or reject the findings and recommendations of the commission as there is no provision which makes the recommendations binding on the government.

d) Commission does not have power to constitute special investigation teams for purposes of investigation and prosecution of offences arising out of violations of human rights.

iv. Unlike Supreme Court and High Courts Commission cannot inquire into any matter which is pending before state human rights commission or before human rights courts despite the gravity of matter concern as provided under Section 36(1) of the Act.

v. Act has puts 1 year limitation period for seeking redressal of grievances before the human rights commissions. Human rights commissions cannot investigate an incident if the complaint was made more

*Assistant Professor, Faculty of Law, Agra College, Agra (U.P.) INDIA

than one year after the incident as provided under Section 36 clause 2. Therefore, a large number of genuine grievances go unaddressed if victim fails to approach the commission on time due to whatsoever reasons.

vi. It is not mandatory on the State government to established state human rights commission and human rights courts. Sections 21 provide "A State Government may constitute a body to be known as the……… (name of the State) Human Rights Commission to exercise the powers conferred upon, and to perform the functions assigned to, State Commission under this chapter". Section 30 provide that "For the purpose of providing speedy trial of offences arising out of violation of human rights, the State Government may, with the concurrence of the Chief Justice of the High Court, by notification, specify for each district a Court of Session to be a Human Rights Court to try the said offences."

Role Of The Judiciary - Only provision for the fundamental rights does not fulfill the objective of 'protection of dignity of an individual', but free enjoyment of the rights has to be ensured. Therefore, Article 32 guarantees right to constitutional remedies, i.e. right to move to Supreme Court to enforce fundamental rights.

It is constitutional mandate of judiciary to protect human rights of the citizens. Supreme Court and High Courts are empowered to take action to enforce these rights. Machinery for redress is provided under Articles 32 and 226 of the constitution. An aggrieved person can directly approach the Supreme Court or High Court of the concerned state for the protection of his/her fundamental rights, redress of grievances and enjoyment of fundamental rights. In such cases Court are empowered to issue appropriate order, directions and writs in the nature of Habeas Corpus, Mandamus, Prohibition, Quo-Warranto and Certiorari.

Judiciary is ultimate guardian of the human rights of the people. It not only protects the rights enumerated in Constitution but also has recognized certain un-enumerated rights by interpreting the fundamental rights and widened their scope. As a result people not only enjoy enumerated rights but also un-enumerated rights as well.

Supreme Court in Maneka Gandhi v. Union of India,[2] interpreted the right to life and to widen its scope and deduced un-enumerated right such as "right to live with human dignity". Supreme Court propounded the theory of "emanation" to make the existence of the fundamental right meaningful and active. Thereafter, in many cases court such as ***People's Union for Civil Liberties and another v. State of Maharashtra and others***,[3] ***Francis Coralie Mullin v. The Administrator, Union Territory of Delhi***[4] held that right to life includes right to live with human dignity. Therefore, through the judicial interpretations various rights have been recognized though they are not specifically provided in Part III of the Constitution.

The rule of locus standi, i.e. right to move to the court, whereby only aggrieved person can approach the court for redress of his grievances has been relaxed by the judiciary. Now court through public interest litigation permits public spirited persons to file a writ petition for the enforcement of rights of any other person or a class, if they are unable to invoke the jurisdiction of the Court due to poverty or any social and economic disability. In ***S.P. Gupta v. Union of India and others***,[5] Supreme Court held that any member of the public can approach the court for enforcing the Constitutional or legal rights of those, who cannot go to the court because of poverty or any other disabilities. Person can even write letter to the court for making complaints of violation of rights. Public interest litigation is an opportunity to make basic human rights meaningful to the deprived and vulnerable sections of the community. To assure vulnerable section social, economic and political justice, any public spirited person through public interest litigation can approach the court to protect their rights on behalf of aggrieved persons who cannot approach the court themselves due to their vulnerable conditions. Similar observations have been made by Supreme Court in various judgments such as in ***Bandhua Mukti Morcha v. Union of India***,[6] ***Ramsharan Autyanuprasi and another v. Union of India and Others***,[7] ***Narmada Bachao Andolan v. Union of India***.[8] Therefore, public interest litigation has become the tool for the protection of human rights of the people in India.

The oppressed sections of the society are more prone to the violation of human rights. Most vulnerable sections of society are children, women and socially and educationally weaker sections of society. Judiciary has taken many steps to ensure protection of human rights of these sections.

Children are more prone to exploitation and abuse. The rights of the children are needed to be specially protected because of their vulnerability. For this reason ***United Nations Convention on the Rights of the Child was adopted in 1989***[9]. This convention brings together children's human rights, as children require safety and protection for their development. Judiciary is playing a commendable role in protecting the rights of children from time and again.

There are various instances where judiciary intervened and the rights of children. In the case of Labourers working on ***Salal project v. State of Jammu and Kashmir***[10], Supreme Court held that child below the age of 14 years cannot be employed and allowed to work in construction process. Court has issued various directions related to child labour. ***Supreme Court in Vishal Jeet v. Union of India***[11] asked governments to setup advisory committee to make suggestions for eradication of child prostitution and to evolve schemes to ensure proper care and protection to the victim girls and children. ***The Supreme Court further in Gaurav Jain v. Union of India***[12] showed its concern about rehabilitation of minors involved in prostitution and held that juvenile homes should be used for rehabilitation of them and other neglected children.

Mumbai High Court in Public at large v. State of Maharashtra[13] rescued children from flesh trade and passed order for checking sexual slavery of children and for their rehabilitation. Children are not only prone to sexual abuse but they are also sometimes kept as bonded labourers as was in the case of ***People's Union for Civil Liberties (PUCL) v. Union of India***[14] where the Supreme Court released child labourers and also ordered for grant of compensation to them. Concern of the Supreme Court about the protection of rights of children does not ended here it reiterated the importance of compulsory primary education vis-a-vis eradication of child labour in the case of ***Bandhua Mukti Morcha v. Union of India***.[15]

Supreme Court in ***Sakshi v. Union of India***[16] highlighted the need to establish procedure that would help the child victim to testify at ease in the court and held that proceedings should be held in cameras. Delhi High Court in ***Sheba Abidi v. State of Delhi***[17] observed that child victims are entitled to get support person during trial and also established that child victims can testify outside the court environment.

Women are considered weak in our society which has resulted in the backwardness of women in every sphere. Women remains oppressed ones and are often denied basic human rights. They are subjected to violence in society whether it is within four walls of the house or at workplace. Despite the provision of right to equality enshrined under Article 14 of the Constitution, they are subjected to discrimination. Gender is considered to be the most important factor as for as Indian labour market is concerned. Discrimination against women laborer in terms of wage payments is a very common phenomenon in India. Wages earned by women are generally lesser than their male counterparts.[18] However, Article 39 of the Constitution guarantees the principle of equal pay for equal work for both men and women. Despite the guarantees of equal rights to women still they are not equally treated with men. Supreme Court has played remarkable role in protection of their rights such as in case of ***Associate Banks officers Association v. State Bank of India***,[19] Supreme Court protected the rights of women workers and held that women workers are in no way inferior to their male counterparts and hence there should be no discrimination on the ground of sex against women. In ***State of Madhya Pradesh v. Pramod Bhartiya***[20] Supreme Court held that under Article 39 the State shall direct its policy towards securing equal pay for equal work for both men and women.

Article 21 i.e. protection of life and personal liberty was invoked for the dignified life for the prostitutes by Supreme Court in case of ***State of Maharashtra v. Madhukar Narayan Mandlikar***[21] held that even a woman of easy virtue is entitled to privacy and no one can evade her privacy. In ***Bodhi Satwa Gautam v. Subra Chakarborty***[22] Supreme Court has held that rape is a crime against basic human rights. Supreme Court laid down guidelines for protection of women against sexual harassment at work place in case of Vishaka v. State of Rajasthan[23] and reiterated the same in ***Medha Kotwal Lele v. Union of India.***[24] Guidelines for ensuring the safe work environment for women were given and made it mandatory for employer to take responsibility in cases of sexual harassment at work.

Supreme Court also protected the rights of workman in ***BALCO Employees Union (Regd.) v. Union of India,***[25] ***Consumer Edu. & Research Centre v. Union of India***.[26] In ***People's Union for Democratic Rights v. Union of India***[27] the Supreme Court stated that releasing persons from bonded labour was connected to rehabilitation process in order to give full remedy. In ***Workmen v. Rohtas Industries***[28] the Supreme Court observed that the right to equality became instrumental in protecting right of workers against unreasonable closures and discriminations in payment of pensions.

Judicial system protects the rights of its citizens including prisoners. The Supreme Court by interpreting Article 21 of the Constitution protected and preserved the rights of the prisoners. In case ***Prem Shankar v. Delhi Administration***[29] Supreme Court held that practice of using handcuff and fetters on prisoners violates the guarantee of human dignity. A landmark judgment in ***D.K. Basu v. State of West Bengal***,[30] protected the rights of the prisoners and laid down various guidelines for arrest and detention to prevent the custodial violence and observed that right to life include right to live with human dignity. Similarly Court in ***Sheela Barse v. State of Maharashtra***[31] dealt with an issue of mistreatment of women in police station and court laid down various guidelines for the protection of rights of women in custodial/correctional institutions. Further in ***Citizens for Democracy v. State of Assam and others,***[32] Supreme Court held that handcuffing and tying with ropes is inhuman and in utter violation of human rights guaranteed under the international laws and the laws of the land. Court directed that handcuffs or other fetters shall not be forced on prisoners- convicted or under trial while lodged in jail or even while transporting, police and jail authorities shall have no authority to direct handcuffing of any inmate of jail or during transportation without permission from the magistrate. While executing of arrest warrant person arrested cannot be handcuffed without obtaining orders from magistrate.

Therefore, Judiciary is playing a crucial role in the protection of the human rights of the people from time and again by expanding the scope of the rights and recognizing new rights with the need of time. Judiciary has expanded the scope of right to life to include entitlements which are vital for the enjoyment of right to life with dignity. Courts have protected right of the people in numerous cases whether it is a right against violence in custody, to live in a pollution free environment, right to health, right to adequate wages of the workers, safety of the women at workplace, compensation to rape victim and rights of the child laborers and so on.

Conclusion - The Judiciary in India plays a significant role

in protecting human rights. The Indian Courts have now become the courts of the poor and the struggling masses and left open their portals to the poor, the ignorant, the illiterates, the downtrodden, the have-nots, the handicapped and the half-hungry, half-naked countrymen. In the end we have suggested that regarding the subject matter of the proposed work which involve various moral, socio-economic, cultural, political, human right education, dignity of the individuals, social security, social justice, clean and healthy environment and equality issues.

References :-

1. J.S. Badyal, Abc of Political Science 73 (Raj publishers (Regd.), Jalandhar, 2005).
2. Dr. S. Subramanian, Human Rights International Challenges Vol.1 3 (Manas Publication, New Delhi, 1997).
3. S.K. Kapoor, International Law & Human Rights 800(Central Law Agency, Allahabad, 17th edition 2009).
4. Supra note 6 at 886. 23
5. Shayan Javeed and Anupam Manuhaar, “Women and Wage Discrimination in India: A Critical Analysis March 19 –
6. Justice J.S. Verma, Second Justice M. Hidayatullah Memorial Lecture “Protecting Human Rights through the Judicial Process” on 21 December 2002 at Raipur, 15, available at http://nhrc.nic.in/Documents/JHidya Memo-II.pdf (Last visited on August 8, 2016). 29
7. These recommendations were made on the basis of the National Seminar on “Prison Reforms” held on 13 - 14 November, 2014, the National workshop on “Human Rights Defenders” held on 19 February, 2015, National Conference on “Leprosy” held on 17 April, 2015 and State Mental Health Secretaries held on 5 September, 2015 “Journal of the National Human Rights Commission”, vol.14 at 335 – 355(2015).
8. Arun Ray, National Human Rights Commission of India: Formation, Functioning, and Future Prospects 518 (Khama Publisher, New Delhi, 2nd edn., 2004).
9. Case No. 1150\6\2001-2002, 6 March 2002.
10. Case No: 1351/12/2001-2002(FC).
11. Shashi Motilal and Bijayalaxmi Nanda, Human Rights, Gender and Environment 113 (Allied Publishers Pvt. Ltd., Mumbai, 2010).
12. P. Sukumar Nair, Human Rights in a Changing World 35(Gyan Publishing House, New Delhi, 2011).
13. S.N. Chaudhary, Human Rights and Poverty in India: Theoretical Issues and Empirical Evidences, Vol. 5, 216 (Concept Publishing Company, New Delhi, 1st edn., 2005).
14. State of Karnataka v. Union of India and another, (1977) 4 SCC 608. 37
15. Abdul Jabbar Hague (2019), Challenges of corruption and good governance: a human rights perspective in India, Indian Bar Review, Vol. 46(1), 77-92.
16. Kapoor Madhu (2017), Human rights and justice in the orbit or duty, Indian Human Rights Law Review, Vol. 8 (2), 174-182.
17. Das Atin Kumar and Haque Abdul Jabbar (2017), Law relating to violation of women rights in India: An analysis from the Human Rights perspective, Indian Human Rights Law Review, Vol. 8 (2), 225-237.
18. Oza Dr. Rashnii M. (2016), Secularism and human rights in India : a contextual analysis of equality under International Human Rights Law (With special reference to Religious Minorities), AIR 8-13.
19. *Singh Smita and Sharma H.K. (2014),* Human Right Of Child : Forced Eviction And Child, Manglam-Year 05 (02),Vol. IX, August 2014 ISSN-0976-8149, P-I-8
20. Shabbir Mohammad (2012), Human Right in the 21st Century, Published in India by Cyber Tech Publications, New Delhi.
21. Lakshmi K. Vijaya (2009), Women’s Rights are Human Rights, AIR, 22-30.
22. *Subramanium Gopal* (2008)*,* Contribution of indian judiciary to social Justice principles underlying the universal Declaration of human rights, Journal of The Indian law Institute, Vol. 50(4): 593-605
23. Sikri A.K. (2006), *Human Rights and Indian Judiciary,* The Official Journal of NALSA, Vol. VII, Issue 4, p. 55-84

****

A Study of Career Expectations at Senior Secondary Students of Uttar Pradesh Madarsa Board

Mohammed Iqbal Yusuf Ansari* **Dr. Naseem Ahmad****

Abstract - The present study was undertaken to investigate the career expectations of senior secondary students of U.P madarsa board. The study was conduct to 431 senior secondary level students of U.P Madrsa board studying in different madrsas of Uttar Pradesh by using random sampling techniques from various government and non-government managed madrsas within the age range of 16-18 years. The finding of the study revealed there is no significant difference in career expectations with regard to gender. Another finding of the study was the average career expectations of the students of U.P Madrsa board.
Keywords - career expectations, madrsa board, senior secondary level, gender.

Introduction - Every human being has a will power to become something different in his own area like society teaching, Medical, Engineering etc. Here is this will power recognized as career expectations for a Learner. These expectations carries & transform his behaviour in to a competent personality and these expectations works as a goal for his life, we can say some other words goal of life. Career expectations drive the behaviour of a learner. From the beginning emphasis on career expectation has evolved to encompass all subject areas and has moved from the vocational education and training (VET) fields to higher education. This career expectation to explore the context and issues surrounding the role, nature and purposes of learning outcomes, including an evaluation of their positive and negative aspects and a consideration of alternative approaches to express, measure and evaluate learning.

Objectives of the study - Every research must have some objectives to achieve. The present study aimed at achieving the following objectives:

1. To Explore career expectations of U.P. Madarsa Board Students.
2. To find out the career expectations and gender differences.

Hypothesis - To every problem, there may be more than one solution. As for that matter formulated following hypotheses.

1. H_1 The career expectations of U.P. Madarsa Board Students is satisfactory.
2. $H_{1.1}$ The career expectations of U.P. Madarsa Board Male Students is satisfactory.
3. $H_{1.2}$ The career expectations of U.P. Madarsa Board Female Students is satisfactory.
4. $H_{1.3}$ There is no significance of Male and Female Students of career expectations of U.P. Madarsa Board.

Research Methodology - Present study is based on survey method. A lot of students studies in various Madarsa in Uttar Pradesh. A Sample frame is a source material from which a sample is taken it is a collection of all those with in a population who can be sampled Sample will take from various Madarsa in U.P. base on simple random method. Sample and analytical frame will use in this study.

Population and Sample - The population area of present study is state of Uttar Pradesh, India. The sample was drawn from seven different Madarsas of Amroha, Bareilly, Raebareli and Sitapur Districts which are recognized with U.P. Board of Madarasa Education. Only Alim (first & second year) students were selected as participants of the study. The sample for the investigation comprises 431 boys and girls from various government funded and non-funded madarsas. Participants were 237 male and 194 female students, who were ranged in age from 16 to 18 years. The sample was obtained through multi stage random sampling. The madarsas were considered as a cluster and sample randomly selected. In each selected madarsa has several sections of Alim (Arbi & Persian) and among these, one section was selected randomly. All the students of randomly selected classes were considered as a cluster and formed the final sample of the study. The random sampling procedure has been adopted for the investigation.

Instrumentation - Self-made tool use its Career Expectations Scale (CES).

Data Analysis and result discussion - Mean, standard deviation, and *t*-test was used for correlations and mean differences using SPSS. The results obtained thereby have been presented and interpreted. The analysis and interpretation has been presented on the basis of the

* Research Scholar, Department of Education, Shri Venkateshwara University, Gajraula (U.P.) INDIA
** Research Supervisor, Department of Education, Shri Venkateshwara University, Gajraula (U.P.) INDIA

following objective.

Finding: 1

	N	Range	Mini -mum	Maxi -mum	Mean	Std. Deviation
CE	431	88	63	151	115.53	11.603

Table shows the score distribution of the total sample. The students of the U.P Madarsa board secured minimum 63 and maximum 151 marks in Career Expectations Schedule (CES) which having the range 88(which are distributed range 88). The mean is 115.53 of the total secured marks of students. We can say the students of U.P Madarsa board are aware about their careers according to CES tool norms. It also revealed that the students of U.P Madarsa board think about their career and future prospects of their education and want to get social status on behalf of their educational achievements.

Level	Score Range	Total No.	
		N	%
Strongly Agree	139.5 And Above	02	0.70
Agree	108.5 - 139.5	333	77.26
Undecided	77.5 – 108.5	93	21.58
Disagree	46.5 – 77.5	02	0.46
Strongly Disagree	15.5 And Below	00	00
		431	100

It is revealed from table that near about 1% students of total population is firmly determined about your career and future prospects. More than two third (77.26%) students of total population is aware their career and future education. It is very high percentage of aware students.

It also revealed from the table that 21.58% students of total population in ambiguity and undecided about their career. There is no candidate found who strongly contempt the career while near about negligible percentage 0.46 of candidates fined which are unaware about the career.

Finding: 2

	N	Range	Mini -mum	Maxi -mum	Mean	S. D
CE	237	88	63	151	115.43	10.685

Table shows the score distribution of the total Male sample. The students of the U.P Madarsa board secured minimum 63 and maximum 151 marks in Career Expectations Scale (CES) which having the range 88(which are distributed range 88). The mean is 115.43 of the total secured marks of Male students. We can say the Male students of U.P Madarsa board are aware about their careers according to CES tool norms. It also revealed that the Male students of U.P Madarsa board think about their career and future prospects of their education and want to get social status on behalf of their educational achievements.

Level	Score Range	Total No.	
		N	%
Strongly Agree	139.5 And Above	02	0.84
Agree	108.5 - 139.5	191	80.60
Undecided	77.5 – 108.5	42	17.72
Disagree	46.5 – 77.5	02	0.84
Strongly Disagree	15.5 And Below	00	00
		237	100

It is revealed from table that 0.84% students of total Male population firmly determined about their career and future prospects. More than two third (80.60%) students of total Male population is aware their career and future education. It is very high percentage of aware students.

It also revealed from the table that 17.72% students of total population in ambiguity and undecided about their career. There is no candidate found who strongly contempt the career while near about negligible percentage (0.84) of candidates fined which are unaware about the career.

Finding: 3

	N	Range	Mini -mum	Maxi -mum	Mean	S. D
CE	194	72	79	151	115.64	12.662

Table shows the score distribution of the total Female sample. The students of the U.P Madarsa board secured minimum 79 and maximum 151 marks in Career Expectations Schedule (CES) which having the range 72(which are distributed range 88). The mean is 115.64 of the total secured marks of Female students. We can say the Female students of U.P Madarsa board are aware about their careers according to CES tool norms. It also revealed that the Female students of U.P Madarsa board think about their career and future prospects of their education and want to get social status on behalf of their educational achievements.

Level	Score Range	Total No.	
		N	%
Strongly Agree	139.5 And Above	01	0.52
Agree	108.5 - 139.5	142	73.20
Undecided	77.5 – 108.5	51	26.28
Disagree	46.5 – 77.5	00	00
Strongly Disagree	15.5 And Below	00	00
		194	100

It is revealed from table that 0.52% students of total Female population firmly determined about their career and future prospects. Near about two third (73.20%) students of total Female population is aware about their career and future education. It is very high percentage of aware students.

It also revealed from the table that 26.28% students of total population in ambiguity and undecided about their career. There is no candidate found who strongly contempt and unaware about the career and future prospects.

Finding: 4

	GENDER	N	Mean	S. D	t-Value
CE	Male	237	115.43	10.685	0.18
	Female	194	115.64	12.662	

Table shows the score of U.P. Madarsa Board Male and Female students. It shows t-Value 0.18 which represents significant level at 0.05 level hence null hypothesis is rejected .The obtained mean values of male and female are 115.43and 115.64 respectively. It also revealed average level of career expectations for both male and female students. Besides this a little bit difference between the mean indicates the respectively high career expectations of Female students.

Educational Implications - The present research focused

on investigating the career expectations of senior secondary level of U.P. madarsa board students and exploring the group differences, gender variation (i.e. male and female). The findings of the study revealed important facts through which various educational implications can be drawn might be implemented in near future in the prolific as well as rigorous process of education for preparing competent and skilful human beings who are the need of this hour-

1. On behalf of findings suggested that, there is too much need to motivate the madarsa students both male and female to get their goal of lives and to produce good results & learning outcomes.It is suggested that teachers should orient and refresh/update about latest teaching learning and motivational techniques.
3. There should great need to run activities and programs about awareness of professional careers, employment, innovative methods of teaching learning, and utilization of ICT for madarsas especially.
4. There should run activities and programes about awareness in regard of women education issues especially in female madarsas.
5. There should conduct attitude, aptitude, interest, intelligence, and personality etc. psychological tests for madarsa students.
6. There should conduct career guidance and counselling sessions for madarsa students.

References :-

1. Agrawal, S.(1982). The study of causes and their remedial measures of two groups of X^th^ and XII^th^ class of relatively identical intelligence but differing in education achievements. Unpublished Ph.D. Thesis Gorakhpur University.
2. Froehlich, Sharon W. (2007) Gender Differences in Intelligence Theory, Achievement Motivation and Attribution Style.Effects on Choice of Science, Math and Technology Careers. A Thesis Submitted to the Department of Psychology of the State University of New York.
3. Anastasi, A. (1962). Psychological testing. (2nd ed.). New York: The Macmillan Company.
4. Best, J.W., & kahn, J.V. (2008). Research in education (10thed.). New Delhi: Pearson Prentice Hall.
5. Bipin, A. (2007). Measurements and Evaluation in psychology and education, Agra: vinod pustak mandir.
6. Buch, M.B. ‘’ A survey of educational research its survey. NCERT. N.D.
7. Kerlinger, F.N. (2007). Foundation of behavioral research (India) Delhi: Surjeet publications.
8. Kandiko, C.B. & Mawer, M.(2013). Students expectations and perceptions of higher education: Executive summary, London: Kings learning institute.

****

माध्यमिक स्तर के सरकारी एवं निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के समायोजन स्तर का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. मोहम्मद नूर आलम अंसारी *

प्रस्तावना – छात्रों के व्यक्तित्व के निर्माण में विद्यालय का विशेष महत्व है। वर्तमान परिदृश्य में नित्य नये पाठ्यक्रमों के बोझ, विद्यालयी क्रिया-कलापों की व्यस्तता तथा कार्य के बढ़ते दबाव आदि कारक प्रत्येक छात्रों के व्यवहार कोप्रभावित कर रहे हैं।विद्यालयी उपलब्धि के अधिक अच्छे परिणाम का उन पर निरन्तर दबाव बना रहता है। जिससे छात्रों का विद्यालयी समायोजन प्रभावित होता है। इसकी पुष्टि मारजोल्फ (1976) विद्यालयी परिस्थिति भी बालक के समायोजन को प्रभावित करते हैं तथा गोस्वामी (1980) के अध्ययनों से होती है। जीवन की घटनाओं तथा तनाव भी व्यक्ति के समायोजन को सार्थक रूप से प्रभावित करते है किम एवं अन्य (2003)। भट्ट एवं पाटिल (1961)के अनुसार व्यक्ति के समायोजन में परिवार, लिंग, तथा संवेगों का सार्थक प्रभाव परिलक्षित होता है पटेल (1980)के अध्ययनों से भी इसकी पुष्टि होती है। शर्मा (1997) के अनुसार लिंग का प्रभाव समायोजन क्षमता पर पड़ता है। पुरूष एवं स्त्रियाँ अलग-अलग तरीके से समायोजित व्यवहार अपनाते है। व्यक्ति के समायोजन पर आयु का भी प्रभाव पड़ता है रेड्डी (1966), कक्कर (1964)। कृष्णा (1992) के अनुसार व्यक्ति का स्वास्थ्य, सामाजिक स्थिति भी उनके समायोजन को प्रभावित करते है।

माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों में उनकी विद्यालयी समायोजन में किन-किन तथ्यों का प्रभाव पड़ता है अथवा उनका विद्यालयी समायोजन का स्तर क्या है। अर्थात किन परिस्थितियों से विद्यालयी समायोजन को अच्छा किया जाय। इन सभी बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुये शोधकर्ता को यह जिज्ञासा हुई कि सरकारी एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों की समायोजन स्तर का अध्ययन किया जाय। प्रस्तुत शोध अध्ययन विद्यार्थियों की समायोजन स्तर क्या है। इसी पर आधारित है।

समस्या कथन – 'माध्यमिकस्तर के सरकारी एवं निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के समायोजन का अध्ययन।'

प्राविधिक शब्दों का अर्थ एवं परिभाषा – अध्ययन में प्रयुक्त प्राविधिक शब्दों के अर्थ निम्नलिखित रखी गई –

माध्यमिक स्तर – माध्यमिक स्तर से आशय उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निर्धारित कक्षा 09 से 10 तक के उन विद्यालयों से है। जो माध्यमिक शिक्षा परिषद, उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रमों एवं नियमों के अनुरूप चल रहे है।

सरकारी विद्यालय – सरकारी विद्यालय से आशय उन विद्यालयों से है। जिनमें कक्षा 09 से 10 तक के पठन-पाठन का कार्य माध्यमिक शिक्षा परिषद, उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रमों एवं नियमों के अनुरूप है तथा इसके लिए उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा इन विद्यालयों की वित्तीय व्यवस्था की पूरी सुविधा उपलब्ध की जाती है।

निजी विद्यालय – निजी विद्यालय से आशय उन विद्यालयों से है। जिनमें कक्षा 09 से 10 तक के पठन-पाठन का कार्य माध्यमिक शिक्षा परिषद, उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रमों एवं नियमों के अनुरूप किया जाता है परन्तु इसके लिए उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा इन विद्यालयों को वित्तीय सहायता नहीं उपलब्ध करायी जाती है।

समायोजन क्षमता – प्रस्तुत शोध अध्ययन में समायोजन क्षमता से आशय छात्रों द्वारा विद्यालयी परिस्थिति में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के दौरान किये गये उनके कार्यो से है। इस संदर्भ में डॉ. रामजी श्रीवास्तव एवं डॉ. बीना श्रीवास्तव द्वारा निर्मित विद्यालयी समायोजन अनुसूची मापनी द्वारा विद्यार्थियों के विद्यालयी समायोजन को मापित किये जाने से है।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नांकित है – माध्यमिक स्तर के सरकारी तथा निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के समायोजन स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएं – प्रस्तुत अध्ययन में उपरोक्त शोध उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए निम्नलिखित परिकल्पनाओं का निर्माण एवं परीक्षण किया गया है –

Ho_1 : माध्यमिक स्तर के सरकारी तथा निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के समायोजन स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

$Ho_{1.1}$: माध्यमिक स्तर के सरकारी तथा निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के सामाजिक समायोजन स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

$Ho_{1.2}$: माध्यमिक स्तर के सरकारी तथा निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के गृह समायोजन स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

$Ho_{1.3}$: माध्यमिक स्तर के सरकारी तथा निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के स्वास्थ्य समायोजन स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

$Ho_{1.4}$: माध्यमिक स्तर के सरकारी तथा निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के विद्यालयी समायोजन स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

$Ho_{1.5}$: माध्यमिक स्तर के सरकारी तथा निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के संवेगात्मक समायोजन स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

$Ho_{1.6}$: माध्यमिक स्तर के सरकारी तथा निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के व्यक्तिगत समायोजन स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध विधि एवं जनसंख्या – प्रस्तुत शोध अध्ययन सर्वेक्षण शोध विधि पर आधारित है। इस शोध अध्ययन हेतु उत्तर प्रदेश के देवरिया जनपद में

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर, बी0एड0 विभाग, स्वामी देवानन्द पी0जी0 कालेज, मठलार, देवरिया (उ.प्र.) भारत

अवस्थित सरकारी तथा निजी माध्यमिक विद्यालयों में वर्ष 2017-2018 में पढ़ने वाले छात्रों को जीवसंख्या के रूप में सम्मिलित किया गया।

प्रतिदर्श चयन विधि एवं प्रतिदर्श – प्रस्तुत अध्ययन में प्रयोज्यों के चयन हेतु यादृच्छिक विधि का प्रयोग किया गया। इस सन्दर्भ में सर्वप्रथम देवरिया जनपद के सभी विद्यालयों के नाम पर्ची पर लिखे गये। तत्पश्चात उन विद्यालयों के पर्ची को एक में मिला दिया गया, इसके बाद उनमें से 10 सरकारी विद्यालयों तथा 10 निजी विद्यालयों की पर्ची को निकाला गया। जिन विद्यालयों की पर्ची को अध्ययन में सम्मिलित किया गया। पुन: उसी विद्यालय के कक्षा 09 वीं एवं 10 वीं के छात्रों को पुन: इसी विधि के आधार पर 20-20 छात्रों को अध्ययन में सम्मिलित किया गया।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण –

1. समायोजन मापनी (डॉ. रामजी श्रीवास्तव एवं डॉ. बीना श्रीवास्तव)

सांख्यिकीय विश्लेषण – प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण हेतु शोधकर्ता द्वारा आंकड़ों की प्रकृति के अनुरूप मध्यमान (Mean), मानक विचलन (Standard Deviation) तथा t-test का प्रयोग शोध अध्ययन में किया गया।

प्रमुख परिणाम – शोध के इस भाग में प्रदत्तों के विश्लेषण से प्राप्त परिणामों का सारांश प्रस्तुत किया जा रहा है :-

परिणाम 1 :-

	विद्यालय	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य
समायोजन	सरकारी	200	356.73	29.362	2.16*
	निजी	200	361.56	25.021	

शून्य परिकल्पना Ho_1 के सन्दर्भ में t- मूल्य मान 2.16 प्राप्त हुआ जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक पाया गया। अत: सम्बंधित शून्य परिकल्पना Ho_1 को अस्वीकार्य किया जाता है और यह निष्कर्ष निकलता है कि माध्यमिक स्तर पर सरकारी तथा निजीदोनों ही विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों में समायोजन का स्तर भिन्न-भिन्न है।

परिणाम 1.1 :-

	विद्यालय	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य
सामाजिक	सरकारी	200	55.66	8.131	1.60
समायोजन	निजी	200	56.68	7.295	

शून्य परिकल्पना $Ho_{1.1}$ के सन्दर्भ में t- मूल्य 1.60 प्राप्त हुआ जोकि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं पाया गया। अत: शून्य परिकल्पना को स्वीकार किया जाता है और यह निष्कर्ष निकलता है कि माध्यमिक स्तर पर सरकारी तथा निजीदोनों ही विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों में सामाजिक समायोजन का स्तर समान है।

परिणाम 1.2 :-

	विद्यालय	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य
गृह	सरकारी	200	57.98	5.863	1.40
समायोजन	निजी	200	58.62	5.191	

शून्य परिकल्पना $Ho_{1.2}$ के सन्दर्भ में t- मूल्य 1.40 प्राप्त हुआ जोकि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं पाया गया। अत: शून्य परिकल्पना को स्वीकार किया जाता है और यह निष्कर्ष निकलता है कि माध्यमिक स्तर पर सरकारी तथा निजीदोनों ही विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों में गृह समायोजन का स्तर समान है।

परिणाम 1.3 :-

	विद्यालय	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य
स्वास्थ्य	सरकारी	200	60.97	8.845	0.18
समायोजन	निजी	200	61.10	8.108	

शून्य परिकल्पना $Ho_{1.3}$ के सन्दर्भ में t- मूल्य 0.18 प्राप्त हुआ जोकि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं पाया गया। अत: शून्य परिकल्पना को स्वीकार किया जाता है और यह निष्कर्ष निकलता है कि माध्यमिक स्तर पर सरकारी तथा निजीदोनों ही विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों में स्वास्थ्य समायोजन का स्तर समान है।

परिणाम 1.4 :-

	विद्यालय	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य
विद्यालयीय	सरकारी	200	64.71	6.792	1.77
समायोजन	निजी	200	65.65	6.069	

शून्य परिकल्पना $Ho_{1.5}$ के सन्दर्भ में t- मूल्य 1.77 प्राप्त हुआ जोकि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं पाया गया। अत: शून्य परिकल्पना को स्वीकार किया जाता है और यह निष्कर्ष निकलता है कि माध्यमिक स्तर पर सरकारी तथा निजीदोनों ही विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों में विद्यालय समायोजन का स्तर समान है।

परिणाम 1.5 :-

	विद्यालय	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य
संवेगात्मक	सरकारी	200	57.86	6.815	2.96*
समायोजन	निजी	200	59.43	6.190	

शून्य परिकल्पना $Ho_{1.5}$ के सन्दर्भ में t- मूल्य मान 2.96 प्राप्त हुआ जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक पाया गया। अत: सम्बंधित शून्य परिकल्पना $Ho_{1.5}$ को अस्वीकार्य किया जाता है और यह निष्कर्ष निकलता है कि माध्यमिक स्तर पर सरकारी तथा निजीदोनों ही विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों में संवेगात्मक समायोजन का स्तर भिन्न-भिन्न है।

परिणाम 1.6 :-

	विद्यालय	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-मूल्य
व्यक्तिगत	सरकारी	200	59.54	7.383	0.95
समायोजन	निजी	200	60.08	6.469	

शून्य परिकल्पना $Ho_{1.6}$ के सन्दर्भ में t- मूल्य 0.95 प्राप्त हुआ जोकि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं पाया गया। अत: शून्य परिकल्पना को स्वीकार किया जाता है और यह निष्कर्ष निकलता है कि माध्यमिक स्तर पर सरकारी तथा निजीदोनों ही विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों में व्यक्तिगत समायोजन का स्तर समान है।

निष्कर्ष – विद्यालयी परिवेश छात्रों के समायोजन स्तर को प्रभावित करते है। निजी विद्यालयों के वातावरण का प्रभाव सरकारी विद्यालयों की तुलना में छात्रों के समायोजन स्तर को अधिक अनुकूलता प्रदान करते है। अर्थात निजी विद्यालयों का वातावरण छात्रों के समायोजन स्तर में सकारात्मक रूप से सहायक है।समायोजन के विभिन्न पक्षों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि सामाजिक, गृह, स्वास्थ्य, विद्यालयी एवं व्यक्तिगत

समायोजन स्तर पर विद्यालय के सरकारी अथवा निजी होने का कोई प्रभाव नहीं परिलक्षित होता है परन्तु संवेगात्मक समायोजन में निजी विद्यालयों का परिवेश छात्रों के अधिक अनुकूल होता है। अर्थात निजी विद्यालयों का वातावरण छात्रों में संवेगात्मक भावों को अधिक स्थिरता प्रदान कर समायोजन करने में सहायक होते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Bhatt, A., Patil, D. et al.(1961). Adjustment patterns of youth in North India. *Psychological studies*, vol. 21 (1).
2. Goswami, N. (1980). Adjustment problems of school going girls and development of an adjustment inventory for their measurement. Unpublished Doctoral Ph.D Thesis (Education), Guwahati.
3. Kerlinger, F.N. (2007). Foundation of behavioral research (India) Delhi: Surjeet publications.
4. Kim, K.J., Conger. R.D. it al. (2003). Reciprocal influences between stressful life events and adolescent in eternalizing &Externalizing problems. *Child development*, vol. 74(1), 127.
5. Krishna, K.P.(1992). Differential adjustment in adolescents and youth.*Indian journal of clinical psychology*, vol. 9 (2), 169.
6. Marzolf, SS. (1976). Psychological diagnosis and counseling in the schools. New York. 13-15.
7. Patel, S. (1986).A Psychological study of High Achievers.Unpublished Doctoral Ph.D. Psychology, Gujrat University.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

भारत-म्यांमार सीमा पर चल रही देश विरोधी गतिविधियों को नियंत्रित करने मे भारत के प्रयास

संजय तिलकवार *

प्रस्तावना -

भारत (मणिपुर)-म्यांमार सीमा पर राष्ट्र विरोधी संगठन का एक दृष्य (स्त्रोत-सुबीर भौमिक)

विश्व के किसी भी देश के लिए सीमाओं का उचित प्रबंधन, राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है और इस प्रबंधन में सीमाओं की सुरक्षा करने, सीमा संबंधी हितों को पूरा करने तथा सीमापार अवैध घुसपैठ रोकने के लिए देश की प्रशासनिक, राजनयिक, सुरक्षा और आर्थिक एजेंसियों द्वारा समन्वय बनाते हुए सुनियोजित कार्यवाहियों की अपेक्षा सुनिश्चित रहती है। सीमावर्ती क्षेत्रों में शांति और सुरक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ रखने में सुरक्षा बलों के साथ-साथ सीमावर्ती राज्य एवं विशेषकर सीमा पर स्थित जनता का उत्तरदायित्व भी बढ़ जाता है।

भारत की अंतर्राष्ट्रीय भू-सीमाएं, म्यांमार (1,643 कि.मी.) सहित बांग्लादेश (4,096 कि.मी.), पाकिस्तान (3,323 कि.मी.), चीन (3,488 कि.मी.), नेपाल (1,751 कि.मी.), भूटान (699 कि.मी.) और अफगानिस्तान (106 कि.मी.) एवं समुद्री सीमाएं, म्यांमार के अलावा बांग्लादेश और पाकिस्तान से भी साझा करती है। उत्तर-पूर्वी सीमा पर स्थित म्यांमार, क्षेत्रफल के दृष्टिकोण से भारत की अपेक्षा छोटा देश है तथापि भौगोलिक संरचना के आधार पर सामरिक दृष्टिकोण से भारत की सुरक्षा हेतु इस देश की अवस्थिति महत्त्वपूर्ण हो जाती है। इसके अतिरिक्त पड़ोसी देश होने से भी म्यांमार का आर्थिक, राजनीतिक और रणनीतिक महत्व भी बढ़ जाता है। भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्रों के 8 राज्यों में से 4, अर्थात मिजोरम (510 कि.मी.), नागालैंड (215 कि.मी.), मणिपुर (398 कि.मी.) एवं अरुणाचल प्रदेश (520 कि मी.) की स्थलीय सीमाएं, म्यांमार की अंतर्राष्ट्रीय भू-सीमाओं से संलग्न होने और बंगाल की खाड़ी व हिन्द महासागर के उत्तर-पूर्वी भाग में अवस्थित होने के कारण सामरिक दृष्टिकोण से इस देश का भौगोलिक सीमावर्ती क्षेत्र भारत के लिए विशेष महत्व रखता है। इसके अतिरिक्त यह राष्ट्र दक्षिण-पूर्व एशिया का प्रवेश द्वार भी है, जो भारत की 'पूर्व की ओर देखो' नीति के क्रियान्वयन एवं पूर्वोत्तर क्षेत्रों में सुरक्षा, शांति, स्थिरता तथा विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

म्यांमार में सैन्य शासन (1962-2011) के प्रारंभिक दशकों में उदासीनता, उच्च नैतिकता की ओर पहल करने, लोकतांत्रिक सरकार के गठन और मानव अधिकारों के हित के प्रति समर्थन रहने से भारत ने महत्वपूर्ण रणनीतिक लाभ चीन के हाथों खो दिया किन्तु वर्ष 1990 के बाद से विदेश नीति पर सकरात्मक प्रभावी कार्यो को प्रारंभ करते हुए उत्तर-पूर्वी राज्यों की असंतुलित परिस्थितियों को संभालने का प्रयास किया है। भारत की विदेश नीति ने शीत युद्ध की समाप्ति और वैश्वीकरण के उभरते परिप्रेक्ष्य से निर्मित होकर म्यांमार के साथ संबंधों को विशेष महत्व प्रदाय किया है। वर्ष 2014 में प्रधानमंत्री **श्री नरेन्द्र मोदी जी** द्वारा **'पूर्व की ओर देखो'** नीति को क्रियान्वयन दृष्टिकोण से लागू की गई **'एक्ट ईस्ट पॉलिसी'** एवं 2017 में की गई म्यांमार की राजकीय यात्रा दोनों देशों के लिए **'मील का पत्थर'** साबित हुई है।

संचालित गतिविधियां - अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं के क्षेत्रों में उग्रवाद/ आतंकवाद की समस्या को समाप्त कर सीमावर्ती राज्यों में शांति, सुरक्षा, स्थिरता और क्षेत्र का विकास करना ही भारत सरकार की प्रथम प्राथमिकता रही है।

भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्रों का लगभग 90% भाग अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं से संलग्न है, जो जटिल भौगोलिक स्थिति के कारण सदैव संवेदनशील रहा है। पूर्वोत्तर क्षेत्र में 200 से अधिक जनजातियां निवासित है। इन क्षेत्रों के

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

नृजातीय समूह स्थानीय नागरिकों की अपेक्षा विशेष रूप से म्यांमार की सीमाओं से संलग्न क्षेत्रों में अर्थात सीमापार निवासरत् जनसमूहों के साथ अधिक जुड़े हुए है, जिससे राज्यों में सुरक्षा की स्थिति नृजातीय समूहों और विभिन्न आतंकवादी संगठनों की अलग-अलग प्रकार की मांगों के कारण विगत कई वर्षो से जटिल रही है। स्वतंत्रता के बाद से ही पूर्वोत्तर क्षेत्रों में जातीय विद्रोह और अलगाववादी आंदोलनों का उद्भव भारत की आंतरिक सुरक्षा, शांति और क्षेत्र में स्थिरता के लिए चुनौती रहा है। नागा, असमिया और मणिपुरी विद्रोही समूह म्यांमार के सीमावर्ती क्षेत्रों और पहाड़ी इलाकों में सुरक्षित शरणगाह से अपनी गतिविधियां संचालित करते रहे हैं। इन क्षेत्रों में पहाड़ी इलाके, समतल मैदान, ऊंचे पर्वत, गहरी नदी धाराएं तथा घने जंगलों का फायदा उठाकर उग्रवादी संगठनों द्वारा अस्थायी शिविर बनाकर हथियारों व मादक पदार्थो की तस्करी, लूटपाट, जबरन वसूली, अपहरण, हत्याएं, सशस्त्र कॉडर की भर्ती व प्रशिक्षण, अवसंरचनात्मक संस्थापनाओं पर विस्फोट और हमलों जैसी अवैध गैर कानूनी घटनाओं को अंजाम देते हैं। पूर्वोत्तर क्षेत्रों में लगभग 40 उग्रवादी संगठन सक्रिय हैं, जिसमें से मुख्यत:, नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैंड-खापलांग (NSCN-K), नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैंड-इशाक मुइवा (NSCN-IM), यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट ऑफ असम (उल्फा), नेशनल डेमोक्रैटिक फ्रंट ऑफ बोडोलैंड (NDFB), पीपुल्स लिबरेशन आर्मी (PLA), कंग्लीपाक कम्युनिस्ट पार्टी (KCP), इस्लामिक नेशनल फ्रंट (INF) एवं मणिपुर पीपुल्स लिबरेशन फ्रंट (MPLF) आदि विद्रोही समूह म्यांमार के सीमावर्ती क्षेत्रों-दुर्गम पहाड़ी इलाकों और घने जंगलों में सुरक्षित ठिकानों से अपनी गतिविधियों को संचालित करते हैं, जिन्हें चीन द्वारा समर्थित म्यांमार के सक्रिय विद्रोही संगठनों में से विशेषकर-काचिन इंडिपेंडेंस आर्मी (KIA) और अराकान आर्मी (AA)से सहायता प्राप्त होती रही है। आतंकवादी संगठनों द्वारा पूर्वोत्तर एवं म्यांमार की सीमावर्ती क्षेत्रों की जटिल भौगोलिक सीमाओं सहित अन्य पड़ोसी राष्ट्रों को सुगम आश्रयस्थल के रूप में उपयोग किया जाता रहा है तथा इन संगठनों को कुछ पड़ोसी राष्ट्रों का सहयोग भी प्राप्त होता है। पश्चिमी म्यांमार के पहाड़ी क्षेत्रों में गतिशील आश्रयस्थल एवं सुगम आसूचना नेटवर्क की उपलब्धता से पूर्वोत्तर क्षेत्रों के कई उग्रवादी संगठन समग्र रूप से समृद्ध हुए है। अतिनियोजित और रणनैतिक रूप से सुदृढ़ सीमापार के असामाजिक तत्व, राष्ट्र विरोधी उग्रवादी संगठन तथा राज्यों की राजनीतिक अस्थिरता पूर्वोत्तर क्षेत्रों के विकास में सबसे बड़ी बाधाएं है। भारत-म्यांमार द्वारा सीमावर्ती क्षेत्रों में निवासित जनसमुदायों की सुविधाओं के उद्देश्य से प्रारंभ की गई मुक्त आवागमन व्यवस्था (Free Movement Regime:FMR½ का दुरूपयोग आतंकवादियों और अपराधियों द्वारा घुसपैठ, हथियारों सहित मादक पदार्थो व सोने की तस्करी आदि अन्य अनैतिक कृत्यों के लिए किया जाता रहा है।

भारत के उत्तर-पूर्वी राज्यों में मुख्यत: मणिपुर और नागालैंड उग्रवादी गतिविधियों से सबसे अधिक प्रभावित राज्य हैं। इन राज्यों में उग्रवादी संगठनों की गतिविधियों और हिंसक वारदातों में आम नागरिकों सहित भारतीय सुरक्षा बलों के सैकड़ों सैनिक षहीद हो चुके है। इन संगठनों को चीन और पाकिस्तान की गुप्तचर आई.एस.आई. (Inter Services Intelligence) संस्था का समर्थन प्राप्त है, जिनका उद्देश्य भारत को किसी न किसी रूप में अस्थिर कर आर्थिक और सुरक्षा संबंधी क्षति पहुँचाना है। वहीं भौगोलिक रूप से मणिपुर राज्य के सीमावर्ती क्षेत्र के समीप स्वर्णिम त्रिभुजाकार की स्थिति अर्थात म्यांमार, लाओस एवं थाईलैंड देश की सीमाओं का संगम होने से उग्रवादी संगठनों को स्थिर रखने में आर्थिक सहायता प्रदान करता है। म्यांमार और बांग्लादेश जैसे पड़ोसी देशों में छोटे हथियारों की सुगम उपलब्धता इस क्षेत्र में उग्रवाद के निरंतर बने रहने का एक और कारक रहा है। उत्तरी-पूर्वी राज्यों में सक्रिय उग्रवादी संगठन भारत की सुरक्षा एजेंसियों की नजर से बचते हुए म्यांमार में शरण लेकर भारत विरोधी हिंसात्मक गतिविधियां संचालित करने के साथ-साथ मादक पदार्थों एवं अवैध हथियारों की तस्करी भी करते हैं। उग्रवादियों द्वारा भारतीय क्षेत्र में हथियारों का प्रदाय भारत में सक्रिय देश विरोधी तत्वों को किया जाता है जो इन हथियारों का प्रयोग भारतीय सुरक्षा बलों के विरूद्ध करते हैं।

चीन द्वारा म्यांमार की भौगोलिक स्थिति को केंद्रित करते हुए भारत-म्यांमार के बीच निष्क्रिय हुए संबंधों के सुअवसर का समुचित लाभ उठाकर म्यांमार से नजदीकी संबंध स्थापित कर कई अधोसंरचनात्मक परियोजनाएं प्रारंभ करते हुए भारत के उत्तर-पूर्वी राज्यों में भी घुसपैठ, हथियारों की आपूर्ति, सैन्य प्रशिक्षण आदि अन्य गतिविधियों के अलावा म्यांमार की नौसेना को सैन्य और तकनीकी सहयोग के एवज में भारतीय समुद्री नौसेना तक अपनी पहुँच बनाना शामिल है।

भारत द्वारा किए गए प्रयास – वर्ष 1990 के पूर्व तक भारत किन्हीं कारणों से म्यांमार के साथ सामंजस्य स्थापित करने में विफल था किन्तु 1991 से लागू 'पूर्व की ओर देखो' नीति पर प्रभावी कार्य प्रारंभ करते हुए उत्तर-पूर्वी राज्यों की असंतुलित परिस्थितियों को संभालने के प्रयास से शीत युद्ध की समाप्ति और वैश्वीकरण के उभरते परिप्रेक्ष्य से निर्मित होकर संबंधों को विशेष महत्व दिया गया है एवं म्यांमार की भौगोलिक अवस्थिति को ध्यान में रखते हुए प्राकृतिक संसाधनों, रणनीतिक उपस्थिति तथा क्षेत्र की सामरिक स्थिति को संज्ञान में लेते हुए आपसी संबंधों की नींव को सुदृढ़ किया है। भारत-म्यांमार के सीमा अनुबंध 1967 के अधीन दोनों देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय सीमा का उपबंध है जिसके अनुसार दोनों देशों के मध्य सीमांकन व सीमा प्रबंधन पर नियमित रूप से संवादों का आदान-प्रदान एवं सीमाओं पर पिलर स्थापित करने की कार्यवाही भी गतिशील है। दोनों देशों के मध्य साझी 1643 कि.मी. की स्थलीय सीमाओं में से 1472 कि.मी. के सीमांकन का कार्य पूर्ण हो चुका है, जिसमें से अरूणाचल का लोहित उपक्षेत्र-136 कि.मी. और मणिपुर राज्य का कबाऊ घाटी-35 कि.मी. दो असीमांकित भाग है। भारत के उत्तरपूर्वी राज्यों में मुख्य रूप से लगभग 11 उग्रवादी समूह सक्रिय हैं जिनके उन्मूलन के लिए वर्ष 2000 से सीमाओं पर समन्वित रूप से अभियान चलाए गए हैं। इन सभी देश विरोधी दलों और अग्रणी संगठनों को 22 जून, 2009 से विधिवरूद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967 के अधीन आतंकवादी संगठनों की अनुसूची में सम्मिलित किया गया है। दोनों देशों की सरकार के विमुद्रीकरण के अभियान से संचालित देश विरोधी गतिविधियों और वित्त संग्रह के कार्य को भारी नुकसान पहुँचा है। भारत सरकार द्वारा अलग-अलग जातीय दलों की बहुलता को ध्यान में रखते हुये केन्द्र सरकार ऐसे दलों के साथ बातचीत करने के लिए एक नीति का पालन कर रही है जो हिंसा छोड़ने तथा हथियार त्यागने को तैयार होने के साथ भारत के संविधान के ढ़ाचे के अंदर शांतिपूर्ण तरीके से अपनी समस्याओं के सामधान की मांग करते है परिणाम स्वरूप अनेक संगठन सरकार से वार्ता करने के लिए सामने आए है और कुछ संगठनों ने समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए है एवं जिन संगठनों ने अपना विघटन नहीं किया है उनके विरूद्ध केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बलों और राज्य पुलिस द्वारा कार्यवाई की जा रही है। भारतीय सेना ने वर्ष 2015 में भी म्यांमार सीमा में घुसकर इन

उग्रवादी समूहों के विरूद्ध कार्यवाही करते हुए उग्रवादियों समूहों के कई शिविर नष्ट किये हैं। वर्ष 1995 में दोनों देशों द्वारा सीमावर्ती क्षेत्रों में परस्पर सैन्य सहयोग से **'गोल्डन वर्ड ऑपरेशन'** द्वारा दर्जनों आतंकवादियों का सफाया किया गया एवं 2006 में भी एक संयुक्त कार्यवाई में एनएससीएन उग्रवादियों को बहुत नुकसान पहुँचाया था। वर्ष 2003 में भारत–म्यांमार ने संयुक्त सलाहकार आयोग का गठन कर द्विपक्षीय महत्व के कई मुद्दों जैसे रक्षा, सुरक्षा, व्यापार, वाणिज्य एवं विकास आदि पर विचार विमर्श कर आपसी संबंधों को प्रगाढ़ बनाने का सफलतापूर्ण प्रयास किया है। केन्द्र सरकार ने विद्रोही गतिविधियों के विरूद्ध कार्यवाही करने और असुरक्षित संस्थाओं तथा संस्थापनाओं को सुरक्षा उपलब्ध कराने के लिए राज्य प्राधिकारियों की मदद के लिए केन्द्रीय सशस्त्र पुलिसबल/सीएपीएफ तैनात किए है। नेपाल, भूटान, चीन, बांग्लादेश और म्यांमार के साथ लगी अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं पर सीमा रक्षा के कर्तव्य के लिए केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बलों की 413 कंपनियां और पूर्वोत्तर राज्यों में आंतरिक सुरक्षा और विद्रोह–रोधी अभियानों के लिए सीएपीएफ की 469 कंपनियों और 18 कोबरा दलों की तैनाती की है। भारत और म्यांमार के बीच सीमा विवाद से संबंधित मामलों का निराकरण करने के लिए एक संयुक्त सीमा कार्य समूह का गठन किया है।

निष्कर्ष – भारत ने **'पूर्व की ओर देखो'** नीति के अंतर्गत सीमापार आतंकवाद अथवा राष्ट्रीय सुरक्षा संबंधी चुनौतियों के विद्यमान रहते हुए म्यांमार के साथ संबंधों में कड़वाहट नहीं आने दी है, जिसके परिणामस्वरूप वर्तमान स्थिति में दोनों देशों द्वारा आतंकवादी संगठनों तथा राष्ट्र विरोधी समूहों पर अंकुश लगाने के लिए संयुक्त रूप से संसाधनों का उपयोग करना प्रारंभ कर दिया है जिसके परिणाम भी सकरात्मक प्राप्त हुए है, जो स्वागत योग्य है तथापि क्षेत्र में अपेक्षा अनुरूप पूर्ण रूप से सफलता प्राप्त होना शेष है। इसके अतिरिक्त भारत के पूर्वोत्तर राज्यों की सुरक्षा के अतिरिक्त चीन के बढ़ते प्रभावों को संतुलित करने हेतु म्यांमार की पूर्व, दक्षिण–पूर्व एशिया और दक्षिण एशिया के त्रिकोणीय संगम पर भू–रणनीतिक अवस्थिति, भारत की **'एक्ट ईस्ट पॉलिसी'** के क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

सुझाव:

1. सीमापार सीमा चौकियां की नियमित समीक्षा कर आवेश्यकतानुसार विशेष निगरानी उपकरण और अन्य अव–संरचनात्मक सहायता प्रदान कर सीमा चौकियों को ओर अधिक सुदृढ़ बनाना।
2. विधि प्रवर्तन और आसूचना ऐजेन्सियों को आधुनिकतम उपकरणों से लैस कर प्रभावी बनाना।
3. सीमा संबंधी विवादों में हितों को संज्ञान में लेते हुए गंभीरतापूर्वक निराकरण किया जाना तथा छोटे–छोटे विवादों को संजीदगी से संघर्ष में न बदलने देना।
4. सुरक्षा बलों और संयुक्त निगरानी समूहों द्वारा विद्रोही तत्वों के संबंध में सहमत बुनियादी नियमों के कार्यान्वयन की समय–समय पर समीक्षा की जाना।
5. राष्ट्र विरोधी तत्वों द्वारा शरणार्थियों को अनैतिक गतिविधियों में लिप्त किए जाने वाली कार्यवाहियों पर विशेष सतर्कता रखी जाना।
6. सुरक्षा बलों एवं स्थानीय पुलिस को विशेष संचार तकनीकों का प्रशिक्षण प्रदाय करना।
7. उग्रवादी संगठनों के वित्तीय स्त्रोतों पर नजर रखते हुए समुचित कार्यवाही की जाना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Mr. Wasbir Hussain, "**Insurgency in India's Northeast; Cross-Border Links & Strategis Alliances**", volume 17,February-2006.
2. World Focus; "**INDIA`S LOOK EAST POLICY**"-316, April 2006, New Delhi.
3. World Focus; "**NEW FACE OF MYANMAR**"-330, June 2007.
4- डॉ. अशोक कुमार द्विवेदी, **'भारत–चीन संबंधों की गति चुनौतियां एवं अवसर'** -2012, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
5. वर्ल्ड फोकस; **'आसियान संबंध के लिए भारत की प्राथमिकता' नमो: नरेन्द्र मोदी: भारत के नए प्रधानमंत्री,** अंक–28,जुलाई 2014, नई दिल्ली।

****

Innovations and Sustainable Development in Entrepreneurship

Dr. Suresh Shrawan Patil*

Abstract - The aim of this paper is to advance research on innovations used by the entrepreneur for the sustainable development of the business or the enterprise. This also facilitates the perception of opportunities to provide the creative ideas for development of business in near future. This paper also defines the scope of innovations, opportunities recognitions, training education and learning about sustainable entrepreneurship.

Innovations ideas and ways help the enterprise to adopt financially and socially sustained strategies to pursue the social goals and to reduce the various problems like unemployment and inequalities. It helps to promote the business, if opportunities of dynamic environment are grabbed, it leads to take advantage of favorable condition of organization in the favor of sustain development of the enterprise.

Entrepreneurial enterprises are increasingly recognized as a driving force for innovation and competitiveness, as one of the keys to achieving sustainable development. This research helps the organization to implement the policies in the favor of the enterprise development. It offers opportunities for future studies on the subject.
Keywords - Adopting organization innovations, sustainable entrepreneurship development, research agenda, demands for innovation services, innovations results.

Introduction - An enterprise's success was explained almost exclusively based on its economic performance. The purpose of entrepreneurship research was to generate economic gains or, in some cases, to create employment sources. an increasing number of researchers have started paying attention to the connection between sustainable development and entrepreneurship . Sustainable entrepreneurship is nowadays a mainstream that began with sustainable management and entrepreneurial initiative. Entrepreneurial enterprises are increasingly recognized as a driving force for innovation and competitiveness, as one of the keys to achieving sustainable development. The paper cannot and does not attempt to offer answers to all questions, rather it sets a stage for discussion, exploring some of the many ways in which sustainable innovative entrepreneurship is used in connection with sustainable development. The overall objective of sustainable development is to find an optimal interaction of economic, human, environmental and technological systems.

Innovations In Enterpreneurship - Innovative organization wants must have to prepare for renewing the offerings and its delivery process to its stakeholders to survive in today's globalised world. In the present paper, concept of innovation and entrepreneurship has been studied by the authors. The paper will also include examples of innovative entrepreneurs and how the innovation in products/services helps the business in survival and growth in present globalised market place.

Sustain Development In Enterpreneurship - Sustainable entrepreneurship obtains such main features as social responsibility, competitiveness, progressiveness, knowledge creation and usage, innovativeness, dynamism and seeks for business benefits creating social value Krisciunas and Greblikaite, 2007. Such an ambitious approach of entrepreneurship which does not only attempt to contribute to a sustainable development of the organisation itself but also to create an increasingly large contribution of the organization to sustainable development of the market and society as a whole requires substantial sustainability innovations Schaltegger and Wagner, 2011.The issues related to the environmental and social role that enterprises play are not recent and have been the subject of discussion since the last century. For example, many scientists insist on the idea that the planet cannot physically sustains for much longer the impact of current economic activity. However, over the last decade, the wish to understand the real impact and value of companies on society has grown exponentially. Indeed some authors talk about an economic paradigm shift. The traditional understanding of value creation merely in terms of economic profit has extended to cover non-economic gains.

Hence, we see Growing of a business concern is a very important part of entrepreneurship development. Growing by size, level of activities and operations conducted

*Associate Proffesor (Economics) KKHA Arts SMGL Commerce and SPHJ Science College, Neminagar Chandwad, Distt. Nashik (Maharastra) INDIA

number of people involved, etc accounts for growth of an enterprise but this growth cannot occur until the entrepreneur himself is ready to INNOVATE! Yes, until the entrepreneur is ready to take the risk to innovate new things he cannot grow his business.

Review Of Litrature

The Relationship between Entrepreneurship, Innovation and Sustainable Development. Research on European Union Countries- Mihaela Kardosa

The nexus of entrepreneurship, innovation and sustainable development is a subject of great interest nowadays, as society is looking for solutions leading to sustainable development. Given this context, the paper aims to put in connection sustainable entrepreneurship and sustainable development from both the perspectives of conceptual reflection in literature and a research on the European Union countries. The methodology is based on methods of analysis and synthesis, of interpretation and relevant comparisons. The research results point out that sustainable entrepreneurship, seen through the perspective of innovative SMEs, as considered in the research, is part of the support system for sustainable development, as entrepreneurial enterprises are increasingly recognized as a driving force for innovation and competitiveness, as one of the keys to achieving sustainable development. The research may be particularly important for both researchers and policy makers and offers opportunities for future studies on the subject.

Innovation And Entrepreneurship In Today's Scenario - Mr. Sanjay Manocha

Entrepreneurship can be viewed as a creative and innovative response to the environment and an ability to recognize, initiate and exploit an economic opportunity. An entrepreneur is an innovator who introduces something new in an economy. Entrepreneurship is doing things that are generally not done in the ordinary course of business. Innovation may be in; introducing a new manufacturing process that has not yet been tested and commercially exploited, introduction of a new product with which the customers are not familiar or introducing a new quality in an existing product, locating a new source of raw material or semi finished product that was not exploited earlier, opening a new market, hitherto unexploited, where the company products were not sold earlier, developing a new combination of means of production. Innovation involves problem solving and an entrepreneur is a problem solver. An entrepreneur does things in a new and a better way. A traditional businessman working in a routine manner is not entrepreneurial. Innovation leads to the dynamics that governs the interaction between science, industry, and society. Innovative organization wants must have to prepare for renewing the offerings and its delivery process to its stakeholders to survive in today's globalised world. In the present paper, concept of innovation and entrepreneurship has been studied by the authors. The paper will also include examples of innovative entrepreneurs and how the innovation in products/services helps the business in survival and growth in present globalised market place.

Entrepreneurship and Sustainability Goals - The Need for Innovative and Institutional Solutions **Adel Ben Youssef, SabriBoubaker, AnisOmri**

The relationship between entrepreneurship and sustainable development has received considerable attention from academics and policymakers, as society searches for solutions leading to sustainability. The role of innovation and institutional quality in reaching sustainability goals is one of the key areas tackled by the current sustainable development debate, particularly in developing countries. Using a modified environmental Kuznets curve model, this study attempts to better improve our understanding of the critical roles of innovation, institutional quality, and entrepreneurship in the structural change toward a sustainable future in Africa. The empirical results show that both formal and informal entrepreneurship are conducive to less environmental quality and sustainability in 17 African countries where the contribution of informal entrepreneurship is much higher compared to the formal one. However, the relationship between entrepreneurship and sustainable development becomes strongly positive when the levels of innovation and institutional quality are higher. This research makes a contribution to this important emerging research area in that it clarifies conditions through which countries and firms in Africa can move toward more sustainable products and services. Formalizing the informal sector can lead to the improvement of the environmental and economic performance.

The Development of Sustainable Entrepreneurship Research Field Paul - Sustainable entrepreneurship has received substantial recognition from academics and practitioners in the last decade, with a noticeable and rapidly increases of publications on the topic. Through bibliometric techniques and tools, this study allows mapping the main academic literature on sustainable entrepreneurship and analyzes the most substantial contributions to the advances of research in this field. The chronological analysis of literature from the Web of Science-Social Sciences Citation Index (WoS-SSCI) database—until 2017—provides new insights not previously reviewed, such as the journals, authors and articles more influential so far. As a result, 282 articles were retrieved, which were published in 140 journals and written by 663 authors affiliated to 413 institutions, from 50 countries. The analysis allowed identifying publication evolution over time, and provides clues about the opportunities for future research. Keywords: sustainable entrepreneurship; sustainability; sustainable opportunities; social entrepreneurship; environmental entrepreneurship

Motivations of sustainable entrepreneurship and their impact of enterprise performance in Gauteng Province, South Africa Charles Nhemachena AND McEdward Murimbika First published

Their paper discussed motivations of sustainable entrepreneurship in Gauteng Province, South Africa, and

estimated relationships between these motivations and enterprise performance. Despite the growing field of sustainable entrepreneurship, most of the available literature has been mainly theoretical and qualitative or has focused on developed countries. This paper contributes to addressing this gap through empirical analysis based on primary survey data from 91 sustainable entrepreneurs. Reliability of the performance and motivation scales were subjected to the Cronbach's alpha coefficient test, and the results were acceptable. The exploratory factor analysis indicated that the motivations of sustainable entrepreneurship factored into 4 dimensions: extrinsic, intrinsic, income security and financial independence, and necessity motivations. Regression analysis revealed that extrinsic and intrinsic motivations are important determinants of enterprise performance. These motivations can be targeted to promote sustainable entrepreneurship in addition to complementary support such as improving business management skills and competencies of sustainable entrepreneurs.

Importance Of Innovation In Entrepreneurship - Any business is integral to the economy. Without it, our economy would not survive. But a business must also sustain itself, be able to constantly evolve to fulfill the demands of the community and the people. In every business, it is imperative to be industrious, innovative and resourceful. Entrepreneurship produces financial gain and keeps the economy afloat, which gives rise to the importance of innovation in entrepreneurship. Entrepreneurs are innovators of the economy. It is not just the scientist who invents and come up with the solutions.

Entrepreneur seize the opportunity to innovate to make the lives more comfortable. And these solutions kept evolving to make it better, easier and more useful. Entrepreneurs must keep themselves abreast with the current trends and demands.

Entrepreneur, as innovators, see not just one solution to a need. They keep coming up with ideas and do not settle until they come up with multiple solutions. Innovation is extremely important that companies often see their employees' creativity as a solution. They come up with seminars and trainings to keep their employees stimulated to create something useful for others and in turn, financial gain for the company.

In business and economics, innovation is the catalyst to growth. With rapid advancements in transportation and communications over the past few decades, the old world concepts of factor endowments and comparative advantage which focused on an area's unique inputs are outmoded for today's global economy

Companies and enterprises keep innovation as part of their organization. Innovations contribute to the success of the company. Other factors that raises the importance of innovation in entrepreneurship is competition. It stimulates any entrepreneur to come up with something much better than their competition in a lower price, and still be cost-effective and qualitative.

Research Agenda - The main aim of this paper is to study about the innovations in entrepreneurship with sustainable growth and perception of opportunities to show creative business world to pursue them. And also find the ways in which enterprises adopt financially and socially strategies to pursue social goals. The research goal is to determine the role of sustainable entrepreneurship in supporting sustainable development within The European Union. The research methodology is specific for the purpose and the nature of the research and includes literature review, comparative analysis and synthesis of data, followed by a dissemination of the results in order to express a personal opinion regarding the research results. The literature review is based on bibliographic resources books, studies, articles and official documents e.g. strategies, reports in order to highlight the importance and the opportunity of the subject. The analysis and synthesis are based on processed and summarized data.

Reasons Of Demanding Innovation Services

1. **Learn new tools and strategies -** You're seeking solutions, not necessarily technologies. And you'll find them at Growing Innovations, both on display on the trade show floor and in discussions throughout the conference's two days. We intentionally invented Growing Innovations as neither a "tech" event nor as a typical grower show but as a forum for new, real-world solutions. We've taken inventory of your biggest pain points and have reached out to experts across North America to come to Vegas and help you overcome them.
2. **Challenge yourself to think differently -** It's easy to get into a rut, or to be change-averse. Our expert presenters will keep you on the cutting edge of innovation by showing you how their own solutions are being implemented in real-world growing situations.
3. **Expand your network -** How often do you get a chance to learn from growers of crops and production systems that are different from your own? As we laid the groundwork for this conference we heard a message loud and clear: Fruit growers are interested in learning from greenhouse ornamental growers, who in turn learn from vegetable growers, and so on. Networking and peer-to-peer interaction will be a key component of Growing Innovations.
4. **See things for yourself -** We're designing our exhibition area with one key objective in mind: to give you a chance to lay your hands on many of the innovations you've been hearing about. Our goal is to make our tradeshow floor like no other you've ever seen.
5. **Get inspired -** And last, as if Las Vegas alone were not enough to awaken your senses, you'll leave inspired to address your operation's thornier challenges and set up your operation for its best and most efficient year.

Objective Of Research :

a) To study entrepreneurship and innovation
b) To study role of the innovative entrepreneur in economy.

c) To study and present examples of innovative entrepreneurs

Interpretations/ Result - Innovations refer to those ideas and thoughts which were used to make the business effective and efficient and also helpful for business/ enterprise growth. It provides the opportunities to use the favorable conditions of business for the development of enterprise in any dynamic situation. Creative ideas change the status of any business. But to take the advantage of these innovations, entrepreneur must be aware regarding environment analysis i.e. SWOT analysis. So that, he/she can use it for the development of the organization.

There are some following points which should be kept in mind during innovation implementation for sustain growth of the business.

1. Defining scope of innovations
2. Opportunities recognition
3. Training education
4. Learning about sustainable entrepreneurship

Conclusion - Entrepreneurship has been cited as one of the solutions to meet future challenges such as climate change. Despite the fact that policy makers place great importance on entrepreneurship in moving ahead sustainable and inclusive development, the links between them remain unclear. Given this context, the purpose of our paper is to explore the conditions whereby entrepreneurship can simultaneously achieve economic growth and advance social and environmental objectives in Africa. Our empirical analyses provide interesting findings with regard to the sustainability process which have important policy implications. entrepreneurship is currently discussed as an important channel for fostering sustainability, there remains substantial uncertainty regarding the conditions needed to move toward sustainable products and services. This study constitutes a contribution in this direction; there remain substantial opportunities for further research in this emerging area. Among the several questions three appears as hot topics especially from the policy perspective: What characterizes sustainability-oriented entrepreneurship and how does it differ from traditional ones? What propels entrepreneurs to embrace a sustainable orientation? What is the role of networks, partnerships, and other social and organizational ties in advancing sustainable entrepreneurship? In addition to the insights and implications that this study proposes, there are several important limitations that should not go unmentioned. This study analyzes only the direct influences of innovation and institutional quality on the transition toward sustainable entrepreneurship. However, sustainable entrepreneurship is a complex process that could take place through several stages. For this reason, future work could extend this research framework by integrating moderating or mediating factor. Innovation and Entrepreneurship is more about creating a framework for innovation that can be used to compartmentalize current practices and shed light on their origins. To accurately point out, the least likely sources of innovation are from new knowledge and bright ideas. The insight into this alone, makes the concept well worth understanding.

References :-

1. Amit, R.; MacCrimmon, K.R.; Zietsma, C.; Oesch, J.M. Does money matter?: Wealth attainment as the motive for initiating growth-oriented technology ventures. J. Bus. Ventur. 2001, 16, 119–143.
2. BatraPromod, Batra Vijay, Outside the Box- Great Ideas that transformed Business, published by Promodbatra Vijay batra and Associates, New Delhi
3. BediKanishka, Management and Entrepreneurship, oxford university press, New Delhi
4. Hisrich D Robert, Peters P Michael, Shepherd A Dean, Entrepreneurship, sixth edition (2007), Tata McGraw-hill publishers, New Delhi
5. Oats David, A Guide to Entrepreneurship, second edition (2007), Jaico publishing house, Mumbai
6. http://smarteconomy.typepad.com/entrepreneurship_and_inno/ How to double and triple the success rate of all entrepreneurs in a country
7. http://hbswk.hbs.edu/item/6168.html/Do Innovation and Entrepreneurship Have to Be Incompatible with Organization Size?
8. http://creativityandinnovation.blogspot.com/ Creativity and Innovation Driving Business - Innovation Index
9. Peredo, A.M.; Haugh, H.M.; McLean, M. Common property: Uncommon forms of prosocial organizing. J. Bus. Ventur. 2017.
10. Stubbs, W. Sustainable entrepreneurship and B corps. Bus. Strategy Environ. 2017, 26, 331–344.
11. Garfiel, E. Arts and humanities journals differ from natural and social sciences journals: But their similarities are surprising. Essays Inf. Sci. 1982, 5, 5–11. 72.
12. Hicks, D. The difficulty of achieving full coverage of international social science literature and the bibliometric consequences. Scientometrics 1999, 44, 193–215.
13. Patzelt, H.; Shepherd, D.A. Recognizing opportunities for sustainable development. Entrep. Theory Pract. 2011, 35, 631–652.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Contribution of Garlic in the Treatment of Hypertension

Nisha Udhwani* Dr. Charanjeet Kaur**

Abstract - Hypertension (HTN or HT), also known as high blood pressure or arterial hypertension, is a chronic medical condition in which the blood pressure in the arteries is elevated. Blood pressure is expressed by two measurements, the systolic and diastolic pressures, which are the maximum and minimum pressures, respectively, in the arterial system. The systolic pressure occurs when the left ventricle is most contracted; the diastolic pressure occurs when the left ventricle is most relaxed prior to the next contraction. Normal blood pressure at rest is within the range of 100–140 mmHg systolic and 60–90 mmHg diastolic. Hypertension is present if the blood pressure is persistently at or above 140/90 millimeters mercury (mmHg) for most adults.
Keywords - Hypertension, Garlic, Health, Systolic and diastolic pressure.

Introduction - Hypertension is classified as either primary (essential) hypertension or secondary hypertension. About 90–95% of cases are categorized as primary hypertension, defined as high blood pressure with no obvious underlying cause. The remaining 5–10% of cases are categorized as secondary hypertension, defined as hypertension due to an identifiable cause, such as chronic kidney disease, narrowing of the aorta or kidney arteries, or an endocrine disorder such as excess aldosterone, cortisol, or catecholamines.

Dietary and lifestyle changes can improve blood pressure control and decrease the risk of health complications, although treatment with medication is still often necessary in people for whom lifestyle changes are not enough or not effective. The treatment of moderately high arterial blood pressure (defined as >160/100 mmHg) with medications is associated with an improved life expectancy.The benefits of treatment of blood pressure that is between 140/90 mmHg and 160/100 mmHg are less clear.

Classification of blood pressure for adults (JNC7)

Category	systolic,mm Hg	diastolic, mm Hg
Normal	90–119	60–79
High normal (Prehypertension)	120–139	80–89
Stage 1 hypertension	140–159	90–99
Stage 2 hypertension	160–179	100–109
Stage 3 hypertension (Hypertensive emergency)	≥180	≥110
Isolated systolic hypertension	≥140	<90

Garlic as a Potential Herb - Garlic (Allium sativum) has played an important dietary as well as medicinal role in human history. The role of garlic (Allium sativum) as a potential herb has been acknowledged for over 5000 years. Garlic and its various preparations are being readily consumed as a food and spice by various cultures for centuries. It was also documented as a choice of medical therapy to combat many diseases among Egyptians. Similarly, it is also considered as an imperative part of Indian traditional medicine, that is, Ayurveda, Tibbi and Unani, and so forth. In addition, it is also beneficial for the prevention of various aspects of cardiovascular disease including hypertension.

Methodology - Duration of the study has range between 0-3 months (Under observation with taken by medicine) and 3-6 months (its experimental group which providing garlic with medicine and dietary counseling.)

Hypertension	Hypertension
Control group	Experimental group
Only Medicine	Medicine +Garlic
No of Sample 25	No of Sample 25

The Investigation has been performed in total 50 subjects and the researcher selected 6 cardiology hospital and clinic from Gwalior.

The following names are given –

1. Government District Hospital Morar
2. Global Hospital Thatipur
3. Birla hospital Gole ka mandir
4. Parivaar hospital
5. Kalyan Memorial Hospital
6. Government kamla Raja Hospital

The sample has Hypertension subjects, who have consented to participate in the study. Age of the subjects are 30-60 years. The subjects attending the cardiac clinic will be selected for the study .

Results Table 1 & 2 (see in next page)

From the table 1 & 2 it is evident that there is no significant difference in the mean scores of diastolic pressure in the

*Research Scholar (Home Science) Govt. K.R.G. P.G. Autonomous College, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA
** Asso. Professor (Home Science) Govt. K.R.G. P.G. Autonomous College, Gwalior (M.P.) INDIA

first term (where the hypertensive patients were just observed and not given any dietary changes for three months) and in the second term (where the hypertensive patients were introduced with raw garlic in their daily diet routine along with the dietary counseling for the next three months) whereas there is a significant difference in the first term and third term (where the hypertensive patients continued to follow the same raw garlic natural supplement in their routine for next three more months i.e, six months), found in their diastolic pressure mean scores.

Discussion - "Diet has been known for years to play a key role as a risk factor for chronic diseases".

The Active Compounds in Garlic Can Reduce Blood Pressure - Cardiovascular diseases like heart attacks and strokes are the world's biggest killers. High blood pressure, or hypertension, is one of the most important drivers of these diseases. Human studies have found garlic supplements to have a significant impact on reducing blood pressure in people with high blood pressure .this is very easy to get because it is found each and every corner of city and country as well as every corner of the world .

Garlic is effective only when it is consumed regularly and in adequate amount. Many patients consume garlic, but they are not aware of the nutritional and therapeutic properties Of Garlic ,the quantity may be insufficient or the intake. In a study on awareness and usage of garlic among health professionals and adult subjects concluded that many adults' subjects were using garlic for their HTN. Garlic is effective only when it is consumed regularly and in adequate amount. Many patients consume garlic, but they are not aware of the nutritional and therapeutic properties Of Garlic, the quantity may be insufficient or the intake.

Conclusion - My Investigation of the concept of Garlic Supplement is the natural way for people and Garlic maintain the blood pressure of the patients. As the education increases there was increased consumption of garlic because of higher knowledge level which developed positive attitude towards garlic foods educated subject mostly had positive attitude and some have neutral attitude towards garlic as the subjects were exposed to better knowledge sources.

References :-

1. Mansell P, Reckless JP. Garlic—effects on serum lipids, blood pressure, coagulation, platelet aggregation, and vasodilatation. BMJ1991; 303:379–80 [editorial].
2. Koch HP, Lawson LD. Garlic: the science and therapeutic application of Allium sativum L. and related species. 2d ed. Baltimore: Williams & Wilkins, 1996.
3. Chaturvedi V, Bhargava B. Health Care Delivery for Coronary Heart Disease in India- Where are we Headed. Am Heart Hosp J 2007;5:32-37
4. Jump up to:a b c White WB (May 2009). "Defining the problem of treating the patient with hypertension and arthritis pain". The American Journal of Medicine. 122 (5 Suppl): S3– 9. doi:10.1016/j.amjmed.2009.03.002. PMID 19393824. Retrieved 2009-06-22.
5. Lawson LD. Garlic: a review of its medicinal effects and indicated active compounds. In: Lawson LD & Bauer R, editor. Phytomedicines of Europe. Chemistry and Biological Activity. Series 691. American Chemical Society, Washington, DC; 1998. pp. 176–209.

Table no. 1 — Table showing the summary of pair wise comparisons of SYSTOLIC PRESSURE between the terms of assessment

Pair wise Comparisons

(I) term of assessment	(J) term of assessment	Mean Difference (I-J)	Std. Error	Sig.(a)	95% Confidence Interval for Difference(a)	
		Lower Bound	Upper Bound	Lower Bound	Upper Bound	Lower Bound
1	2	15.720(*)	2.662	.000	8.870	22.570
	3	38.120(*)	3.825	.000	28.275	47.965
2	1	-15.720(*)	2.662	.000	-22.570	-8.870
	3	22.400(*)	2.330	.000	16.405	28.395
3	1	-38.120(*)	3.825	.000	-47.965	-28.275
	2	-22.400(*)	2.330	.000	-28.395	-16.405

Table no. 2 —Table showing the summary of pair wise comparisons of DIASTOLIC PRESSURE between the terms of assessment

Pair wise Comparisons

(I) term of assessment	(J) term of assessment	Mean Difference (I-J)	Std. Error	Sig.(a)	95% Confidence Interval for Difference(a)	
		Lower Bound	Upper Bound	Lower Bound	Upper Bound	Lower Bound
1	2	-1.960	1.971	.990	-7.033	3.113
	3	5.240(*)	1.808	.024	.588	9.892
2	1	1.960	1.971	.990	-3.113	7.033
	3	7.200(*)	1.873	.002	2.381	12.019
3	1	-5.240(*,>MLK)	1.808	.024	-9.892	-.588
	2	-7.200(*)	1.873	.002	-12.019	-2.381

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Human Resource Management in Military Operations

Saurabh Dubey*

Abstract - The military, comprising of the Army, Navy, Marines, Coast Guard, and Air Force, and furthermore known as the Armed Forces, will be powers approved to utilize deadly and/or lethal power, and weapons, to help the interests of the state and a few or the majority of its natives of better Human resource management. The undertaking of the military is typically characterized as protection of the state, and its subjects, and the indictment of war against another state. The military may likewise have extra endorsed and non-authorized capacities inside a general public, including, the advancement of a political motivation, ensuring corporate financial interests, inner populace control, development, crisis administrations, social services, and guarding imperative territories. The military may likewise work as a discrete subculture inside a bigger common society, through the improvement of independent foundations, which may incorporate lodging, schools, utilities, coordinations, wellbeing and medicinal, law, nourishment creation, account and saving money.
Key Words - Armed forces , Human Resource Management.

Introduction - The calling of soldiering as a feature of a military is more seasoned than written history itself. The absolute most persisting pictures of the established artifact depict the power and accomplishments of its military heads. The Battle of Kadesh in 1274 BC 139 was one of the characterizing purposes of Pharaoh Ramses II's rule, and is commended in bas-help on his landmarks. A thousand years after the fact, the main head of brought together China, Qin Shi Huang, was so resolved to inspire the divine beings with his military may, he was covered with a multitude of earthenware soldiers.[1] The Romans were devoted to military issues, leaving to family numerous treatises and compositions, just as countless cut triumphal curves and triumph segments. The main recorded utilization of the word military in English, spelled militarie, was in 1585. It originates from the Latin militaris (from Latin miles, signifying 'trooper') through French, however is of questionable historical underpinnings, one recommendation being gotten from *mil-it- – going in a body or massThe word is currently distinguished as meaning somebody that is talented being used of weapons, or occupied with military administration, or in fighting. As a thing, the military as a rule alludes for the most part to a nation's military, or some of the time, all the more explicitly, to the senior officers who direction them. when all is said in done, it alludes to the physicality of military, their work force, gear, and physical zone which they involve.

As a descriptor, military initially alluded just to warriors and soldiering, yet it before long widened to apply to arrive powers as a rule, and anything to do with their calling. The names of both the Royal Military Academy (1741) and United States Military Academy (1802) mirror this. In any case, at about the season of the Napoleonic Wars, 'military' started to be utilized in reference to military overall and in the 21st century articulations like 'military administration', 'military insight', and 'military history' envelop maritime, marine and aviation based armed forces perspectives. In that capacity, it presently implies any action performed by furnished power work force.

History - Military history is frequently viewed as the historical backdrop all things considered, not simply the historical backdrop of the state militaries. It varies to some degree from the historical backdrop of war, with military history concentrating on the general population and organizations of war-production, while the historical backdrop of war centers around the development of war itself even with evolving innovation, governments, and topography.

Military history has various features. One fundamental aspect is to gain from past achievements and errors, to all the more viably take up arms later on. Another is to make a feeling of military convention, which is utilized to make durable military powers. Still another might be to figure out how to avert wars all the more viably. Human learning about the military is to a great extent dependent on both recorded and oral history of military clashes (war), their taking an interest armed forces and naval forces and, all the more as of late, aviation based armed forces. There are two kinds of military history, albeit practically all writings have components of both: elucidating history, that serves to annal clashes without offering any announcements about the causes, idea of lead, the completion, and impacts of a contention; and expository history, that tries to offer proclamations about the causes, nature, consummation, and fallout of contentions – as a methods for inferring learning and comprehension of contentions all in all, and

*Research Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA

counteract reiteration of oversights in future, to recommend better ideas or strategies in utilizing powers, or to advocate the requirement for new innovation.

Association - In the entire history of mankind, each country had diverse requirements for military powers. How these requirements are resolved structures the premise of their arrangement, hardware, and utilization of offices. It additionally figures out what military does regarding peacetime, and wartime exercises.

Every single military power, regardless of whether substantial or little, are military associations that have official state, and world acknowledgment accordingly. Associations with comparable highlights are paramilitary, common resistance, local army, or other – which are not military. These shared characteristics of the state's military characterize them.

Work force - Subordinated military work force, for the most part known as fighters, mariners, marines, or pilots, are equipped for executing the many particular operational missions and undertakings required for the military to execute strategy mandates. Similarly as in the business endeavors where there may be, in a corporate setting, chiefs, directors and different staff that complete the matter of the day as a major aspect of business tasks or attempt business venture the board, the military likewise has its schedules and undertakings. Amid peacetime, when military staff are generally utilized in armies or changeless military offices, they for the most part direct authoritative assignments, preparing and training exercises, and innovation support. Another job of military work force is to guarantee a ceaseless substitution of leaving servicemen and ladies through military enrollment, and the support of a military hold.

Order - The principal prerequisite of the military is to set up it as a power with the capacity to execute national resistance strategy. Perpetually, despite the fact that the approach might be made by arrangement producers or strategy examiner, its usage requires explicit master information of how the military capacities, and how it satisfies jobs. The first of these aptitudes is the capacity to make a firm power equipped for following up on approach as and when required, and in this way the main capacity of the military is to give military order. One of the jobs of military direction is to make an interpretation of strategy into solid missions and undertakings, and to express them in wording comprehended by subordinates, by and large called requests. Military direction make powerful and effective military association conceivable through assignment of power which include authoritative structures as vast as military regions or military zones, and as little as detachments or units. The direction component of the military is frequently a solid impact on the hierarchical culture of the powers.

Knowledge - The following prerequisite comes as a genuinely fundamental requirement for the military to distinguish conceivable dangers it might be called upon to confront. For this reason, a portion of the directing powers and other military, just as frequently regular citizen faculty partake in recognizable proof of these dangers. This is on the double an association, a framework and a procedure altogether called military knowledge (MI).

The trouble in utilizing military knowledge ideas and military insight techniques is in the idea of the mystery of the data they look for, and the secret nature that knowledge agents work in acquiring what might be plans for a contention acceleration, inception of battle, or an attack. A critical piece of the military insight job is the military examination performed to evaluate military ability of potential future aggressors, and give battle displaying that comprehends factors on which correlation of powers can be made. This evaluates and qualify such proclamations as: "China and India keep up the biggest military in the World" or that "the U.S. Military is viewed as the world's strongest". Guerrilla structure Albeit a few gatherings occupied with battle, for example, activists or opposition developments, allude to themselves utilizing military phrasing, remarkably 'Armed force' or 'Front', none have had the structure of a national military to legitimize the reference, and ordinarily have needed to depend on help of outside national militaries. They additionally utilize these terms to hide from the MI their actual abilities, and to awe potential ideological enlisted people.

Having military insight agents take an interest in the execution of the national protection approach is imperative, since it turns into the primary respondent and analyst on the arrangement anticipated vital objective, contrasted with the substances of distinguished dangers. At the point when the insight announcing is contrasted with the strategy, it ends up feasible for the national authority to consider designating assets well beyond the officers and their subordinates military pay, and the cost of keeping up military offices and military help administrations for them.

Financial aspects - All the more usually alluded to as guard financial aspects, this is the money related and fiscal endeavors made to asset and support militaries, and to back military tasks, including war. The way toward assigning assets is directed by deciding a military spending plan, which is controlled by a military account association inside the military. Military acquisition is then approved to buy or contract arrangement of products and enterprises to the military, regardless of whether in peacetime at a lasting base, or in a battle zone from nearby populace.

Ability improvement - Ability improvement, which is regularly alluded to as the military 'quality', is ostensibly a standout amongst the most unpredictable exercises known to humankind; since it requires deciding: key, operational, and strategic capacity prerequisites to counter the recognized dangers; vital, operational, and strategic tenets by which the gained abilities will be utilized; distinguishing ideas, strategies, and frameworks associated with executing the teachings; making plan details for the makers who might deliver these in sufficient amount and quality for

their utilization in battle; buy the ideas, techniques, and frameworks; make a powers structure that would utilize the ideas.

Conclusion - Military technique was one of a triumvirate of 'expressions' or 'sciences' that administered the lead of fighting, the others being: military strategies, the execution of plans and moving of powers in fight, and upkeep of a military.

The importance of military strategies has changed after some time; from the organization and moving of whole land armed forces on the fields of old fights, and cookroom armadas; to present day utilization of little unit ambushes, circles, siege assaults, frontal strikes, air attacks, attempt at manslaughter strategies utilized basically by guerrilla powers, and, now and again, suicide assaults ashore and adrift. Development of flying fighting presented its very own air battle strategies. Frequently, military trickiness, as military cover or confusion utilizing fakes, is utilized to confound the foe as a strategy. Operation can get success with Human Resource Management.

References :-

1. Principals and practices of management SCDL,pune
2. www.emotionalintelligence.com
3. www.tc.gc.ca
4. http://www.shrm.org
5. http://www.chforum.org
6. K. Aswathappa, human resource & personal management (3rd edition) TMH (2002), 39-50.
7. V. Lefter, A. Deaconu, A. Manolescu (coord), ' Human Resource Management", Pro Universitaria, (2012), 89.
8. http://www.scribd.com/doc/39382840/HRM-in-Indian-Defence#scribd MohitKabra on Oct15, 2010
9. https://en.wikipedia.org/wiki/Indian_Armed_Forces
10. http://www.globalsecurity.org/military/library/report/2003/htar-chapter13.
11. http://www.globalsecurity.org/military/library/report/2003/htar-chapter13.pdf
12. Principals and practices of management SCDL,pune
13. www.itsa.org
14. www.iteris.com
15. www.emotionalintelligence.com
16. www.tc.gc.ca
17. http://www.shrm.org
18. http://www.chforum.org
19. http://www.humanlinks.com
20. http://www.quickmba.com
21. http://en.wikipedia.org/wiki/porter_jeneric_strategies
22. http://www.its.dot.gov/index.htm
23. Biswajeet, Pattanayak, Human resource Management; PHI (2 nd edition), 309-326

****

IFRS as Indian Accounting Standards for Similarity in Financial Reporting in India : Challenges & Benefits

Dr. Sanjeev Kumar Bansal* Raj Kumar Singhal**

Abstract - International Financial Reporting Standards (IFRS) are issued by the International Accounting Standards Board (IASB), a committee of 14 members who are from nine different countries work together to develop global accounting standards. At present, there are two sets of accounting standards that Generally Accepted Accounting Principles (GAAP), USA based and International Financial Reporting Standards (IFRS) have been issued by International Accounting Standards Board (IASB), London based. Generally Accepted Accounting Principles (GAAP) are very different in nature but based on a few basic principles of GAAP rules. India also set up its own accounting standard namely Indian Accounting Standard (Ind-AS) from April, 2015 to fulfilling all the requirement of IFRS in the country for matching the gap between IFRS and Indian accounting standards. This study is based on secondary data tries to investigate the benefits & challenges of IFRS application from which India can draw a lesson towards implementation of IFRS, converged Ind-AS and recommends must do reflections for a successful takeover. It highlights main benefits of IFRS adoption to include; enhanced transparency & comparability; improved quality of accounting information; reduced cost of processing information; augmented cross border investments & acquisitions; substantiated economic growth and financial stability. It recommends to the countries various prerequisites are necessary for effective application and conformance with IFRS to store full benefits. This paper also presents a literature about the benefits of adoption of IFRS and related implementation challenges, reflects for successful application of converged Indian Accounting Standards (Ind-AS). Finally the paper presents the significance of IFRS and challenges for implementation.
Key words - IFRS, IASB, GAAP, Standards, Financial Reporting.

Introduction - International Financial Accounting Standards (IFRS) are the Standards, Interpretations and Framework for the Preparation and Presentation of Financial statements adopted by the International Accounting Standards Board (IASB). International Accounting Standards were issued in the year 1973 and year 2001 by the board of the Internal Accounting Standards Committee (IASC). On April 1st, 2001 the new IASB took over the responsibility of setting International Accounting Standards from IASC. This body has continued to develop standards known as IFRS. In this journey India is an emerging economy in the world, it wants to integrate its financial reporting with rest of the economies of the world so that investors from worldwide will be able to understand the financial statements and the positions of the companies. The need to communication around the globe has been increased with the increase in global trade and international markets. Global adoption of prime IFRS are considerably observed in whole world so India can't be exempted in this move. For fulfilling the norms of IFRS convergence process was started back in 2004 and achieved in August 2006 on the formation of the IFRS task force. India followed convergence method of IFRS for implementation it is a process whereby domestic accounting standards are gradually aligned with IFRS with consequent intent to full compliance. In this reference a full convergence has been achieved through differences between IFRS and domestic accounting standards of the countries that may fulfill the requirements as per IFRS.

Structure of IFRS: International Financial Reporting Standards are principle based set of standards that establish broad rules and also dictate specific treatments; there are Fifteen (15) IFRS, Twenty eight (28) IAS, Seventeen (17) IFRIC and Ten (10) SICs, which have following categories:

Table 1 : International Financial Reporting Standards with introduced year

Reporting Standards	Issued Year	No. of Standards
International Financial Reporting Standards (IFRS)	Issued after 2001	15
International Accounting Standards (IAS)	Issued before 2001	28
Interpretations Originated from the International Financial Reporting Interpretations Committee (IFRIC)	Issued after 2001	17
Standing Interpretations Committee (SIC)	Issued before 2001	10

It is however; strongly encouraged that countries

*Sr. Lecturer, Department of A.B.S.T., S.N.D.B. Govt. P.G. College, Nohar (Raj.) INDIA
** Research Scholar, M.G.S. University, Bikaner (Raj.) INDIA

ultimate goal for convergence plan should be full adoption of IFRS and probably with allowance to minimal exceptional cases pertinent to social and economic settings of a respective country. Other countries which had have used convergence path, include China; Denmark & Singapore, Australia, Canada & South Africa for unlisted Companies. The need for Local rules convergence with IFRS in India is partly a function of recent opening of its economy which is linked with strong economic growth, rising of foreign exchange reserve and global recognition of its technological competencies. This has notably necessitated a move towards making Indian accounting system globally acceptable (Bhattacharya, 2012) which is necessary in enabling Indian companies to compete in global markets. This is observed integrated global economies, cross border mergers & acquisitions and interdependencies of capital markets which can never be ignored. Keeping this in mind, Accounting Standard Board (ASB) of Institute of Chartered Accountants of India (ICAI) decided to form an IFRS task force in August 2006. Moreover, based on the recommendation of this task force, the Council of ICAI in 269th meeting decided to fully converge with IFRS from the accounting periods commencing from 1st April 2011 and expected to end by April, 2014. Notwithstanding, it didn't mean that every company would follow IFRS in India they were firstly applicable to publicly accountable and large sized entities. In the process of convergence or adoption of roadmap of(Indian Accounting Standards (Ind-AS) was diversified in three phases, first phase on April 1st, 2011, second phase on April 1st, 2013 and final third phase on April 1st, 2014. This was notified by the Ministry of Corporate Affairs (MCA) on January 22nd, 2011.With the convergence progress of IFRS in India two sets were issued and applied, one is Indian Accounting Standards (Ind-AS) and second one is Indian GAAP both are mandatory under Sec (211C) of the Companies Act.

The adoption and subsequent application of IFRS are counted as result in the landscape change for financial reporting in India as they personate the most commonly accepted global accounting framework. The Ind-AS were initially set to be obligatory for listed, public interest entities and large sized organizations with effect from April 1st, 2011. The move proved futile and observed to be due to failure to meet the timeframe and unresolved tax issues among others. However, the failure Indian Government emphasized and proved its unrepentant commitment towards convergence, thus another adoption dates has recently been announced in February 16th, 2015. Finance Minister announced the budget in 2014 than he urged an urgent need to adopt the current Indian Accounting standards converged with IFRS in this the revised timeline for adoption of Ind-AS largely converged but not identical to IFRS have been notified. The adoption of revised Ind- AS expects to start in April 1st, 2015 and at the end of April 1st, 2017. According to ICAI 39 Ind-AS converged to IFRS are in issue and uploaded on MCA website, till the present we have converged fifteen Ind-AS as per IFRS rest accounting system is running as accordance IAS (Table2). With the global IFRS acceptance and consequent application it is therefore possible to collect evidence about the extent to which the IFRS benefits the capital markets.

Table 2 : List of Ind AS and corresponding IFRS.

(Ind-AS)	Title	Correspond -ing IFRS
(Ind-AS) 101	First time adoption of Indian Accounting Standards	IFRS 1
(Ind-AS) 102	Share –based payment	IFRS 2
(Ind-AS) 103	Business Combinations	IFRS 3
(Ind-AS) 104	Insurance contracts	IFRS 4
(Ind-AS) 105	Non-current Assets held for sale and Discontinued Operations	IFRS 5
(Ind-AS) 106	Exploration for and Evalu- ation of Mineral Resources	IFRS 6
(Ind-AS) 107	Financial Instruments: Disclosures	IFRS 7
(Ind-AS) 108	Operating Segments	IFRS 8
(Ind-AS) 109	Financial Instruments	IFRS 9
(Ind-AS) 110	Consolidated Financial Statement	IFRS 10
(Ind-AS) 111	Joint Arrangements	IFRS 11
(Ind-AS) 112	Disclosure of Interests in Other Entities	IFRS 12
(Ind-AS) 113	Fair Value Measurement	IFRS 13
(Ind-AS) 114	Regulatory Deferral Accounts	IFRS 14
(Ind-AS) 115	Revenue from Contracts with Customers	IFRS 15

IFRS in Indian context at present: Accounting Standards Board (ASB) formulates and issues accounting standards in India which are more or less in line with IFRS except few legal, regulatory and economic environment. Council of the Institute of Chartered Accountants of India (ICAI) opined in May 2006 that adopting IFRS was considered and supported by the ASB. IFRS task force was set up to provide a road map for convergence and it decided to converge with IFRS from the accounting period commencing on or after 1 April 2011. In the country, Ministry of Corporate Affairs (MCA) of the Central Government has persuaded the process of convergence of Indian Accounting Standards with IFRS after a wide range of consultative process with all the stakeholders in pursuance of G-20 commitment and as result Thirty five Indian Accounting Standards converged with International Financial Reporting Standards Conversion is much more than a technical accounting issue. Indian AS (the converged IFRS standards) in India may significantly affect a company's day to-day operations and may even impact the reported profitability of the business itself. On 2nd January 2015, the Press Information Bureau, Government of India, Ministry of Corporate Affairs (MCA) issued a note outlining the various phases in which Indian Accounting Standards

converged with IFRS (Ind-AS) which is implemented in India for Companies. Mostly Indian Companies are reporting their financial statements as per Indian Accounting Standards prepared by Institute of ICAI. These Standards are quite similar to IFRS, till date, ICAI has issued 39 Accounting Standards (Ind-AS) covering many areas. The companies which have adopted IFRS and smoothly working on patterns are Infosys Ltd, Wipro Ltd, Dr. Reddys Lab Ltd, Bharti Airtel Ltd, Sterlite Industries Ltd, Tata Motors Ltd, Seimens Ltd, Tata Consultancy Ltd, Great Eastern Energy Corporation Ltd and Noida.

Indian Accounting system throughout the last few decades of the 20th century there has been significant economic development in India. We look at India's accounting system as it is an important developing country with the second largest population after China and the fourth largest in terms of purchasing power. Although the countries accounting system is largely based on the Companies Act-1956, there was a paradigm shift in government policies and attitudes towards regulation since the 1991 economic crisis. Since economic reforms of 1991, towards a market based economy, it has become one of the fastest growing economies in the world. The Accounting system of India and regulations are based on social system model which is defined as systems formulated and implemented by social entities with the objective of fulfilling social functions. It is expected that factors such as colonization, imperialism, war, and economic concerns are the factors which play animportant role in hortative change. Using the social system model in the political, economic and cultural aspects of a society bring about the development and changes in its Accounting systems and regulations in India.

Review of Literature - The implementation of IFRS removes the accounting confusion from the investor's mind because of similarity in accounting process. The convergence of IFRS with Indian Standards was beneficial to the country for similarity in accounting system. The use IFRS to various countries similarly seen to Indian benefits. The IFRS implementation significantly reflect more respondents rated as difficult, considerable, or serious, rather than as easy or little, items making up General Issues with IFRS and Accounting Issues. Single set of high quality standards would be in public interest and provide a uniform language for financial reporting will have a positive impact overall. Small and midsized industry will face challenge in terms of scarcity of expertise. Costs will also be incurred for upgrading the IT system. In reference of numerous challenges, adoption of IFRS in India has changed the contents of financial statements. The firms and companies will be easy in accounting and financial statements by using IFRS if their stakeholders are conversant with such new standards.

Objectives - We have worked with the following objectives in present research paper:

1. To study of IFRS and Indian Accounting Standard (IndAS).
2. To understand the procedure for issue of IFRS and Indian Accounting Standard.
3. To evaluate the challenges and benefits while adaption of IFRS in India.

Research Methodology - The present research work is the combinations of descriptive and exploratory nature where the challenges, remedies and benefits will be explore to follow the IFRS procedures. The research work also provides an insight on the future prospects by following the convergence process. The used data and information are based on secondary sources which are collected through various websites and journals, as well as published books.

Scope of the Study - The adoption of IFRS will increase the international business which leads to the economic growth and development of a country as well as increase the foreign investment inflow into the country. The IFRS would increase the comparability between the Financial Statements of various companies across the world. The industry also would be able to enhance the capital from the foreign markets at lower cost if it may create confidence in the minds of investors that our Financial Statements meet with the rest of the world Accounting Standards. The adaptation of Indian accounting standards with the IFRS would reduce different accounting requirements prevailing in various countries thereby enabling the enterprises to reduce the cost of compliances.

Need of the Study - The impact of globalization and harmonization is currently being witnessed around the world, so the need to adoption of IFRS is becoming increasingly evident; certain jurisdictions have been quicker adoption of International Financial Reporting Standards, as well as highlighting the need for the adoption of IFRS.

IFRS Adoption Procedure in India: In the year 1949, Indian government to streamline accounting practices in the country established Institute of Chartered Accountants of India by passing ICAI Act, 1949. Accounting Standard Board was constituted by ICAI in the year 1977 with a view to harmonize the diverse accounting policies and practices in India. The other objectives of the board are; to consider and designate the new domain for Accounting Standards, formulation of Accounting Standards, review the existing Accounting Standards and revise as per need, adaptation of Indian accounting standards with IFRS. In the year 2006, a task force was set up by ICAI with the objectives to lay down a road map for convergence of IFRS in India on the basis of recommendations and public opinions on IFRS adoption which were made by the task force, the adoption of IFRS was made in three phases with the three step process by the accounting professionals in India as following:

1. **Phase I:** The companies which were belonging to category of NIFTY 50, SENSEX 30, whose securities were listed on stock exchanges outside from India, which may be listed or not, having total net worth greater than 1,000 crores will convert their opening balance sheets if the financial year starts on or after April 1st, 2011 in as per the

prescribed accounting standards that are convergent with IFRS.

2. **Phase II:** The companies having total net worth more than 500 crores but less than 1,000 crores, whether listed or not, will be converged their opening balance sheet as at April 1st, 2013 if their financial year begins on or after April 1st, 2013 as per the notified accounting standards which are in convergent with IFRS.

3. **Phase III:** The listed companies having total net worth of 500 crores or less will have to convert their opening balance sheet as at April 1st, 2014 if their financial year begins on or after April 1st, 2014 whichever is later, as per the notified accounting standards that are in convergent with IFRS.

4. **Assessment the Impact of IFRS:** In first step, the firms have to assess the impact of IFRS adoption on Accounting and Reporting Issues in the firm's business. The firm will then identify the key conversion dates and accordingly IFRS training plan will be laid down. The firm will have to identify the key Financial Reporting Standards after the training plan confirmation that will apply to the firm and also remove the variation among current accounting standards being followed by the firm and IFRS. The firm will have to identify the loopholes in the existing system.

5. **Preparations for IFRS Implementation:** This second step will perform the activities which are needed for IFRS implementation process as documentation of IFRS Accounting Manual. The firm will improve the internal reporting systems and processes for making the convergence process fair, various exemptions are given in IFRS-1 which may be identified and applied for ensuring that the IFRS are applied properly and homologically, control systems have been designed and put in proper place.

6. **Implementation:** Third and lastly, the first activity must be to prepare an opening Balance Sheet at the date of transition to IFRS.A smooth understanding of the impact of the convergence from Indian Accounting Standards to IFRS is to be maintained which will follow the whole exercise of IFRS. First time application of IFRS needs to various type of training although various difficulties may also be faced. To ascertain a proper convergence from Indian Accounting Standards to IFRS, regular training to staff and addressing all the problems that would be faced while performing the implementation is also needed.

Challenges for IFRS implementation in India: The challenges in application of IFRS in India are as under:

Fair Value Accounting - The use of fair value accounting may bring instability to the financial statements it is very stiff to arrive at the fair value and valuation experts also feel stiff to shift from historic method to fair value method. Besides, adjustments to fair value results in gains or losses which are shown in the income statements. Though this may be included in calculating distributable profit is also questionable issue. The fair value financial reporting under IFRS got scuffled in the present economic fluctuations in global financial markets and institutions. On the basis of fair value accounting banks and other organizations would be needed to accept place to place valuation of assets.

Training - One of the biggest issues in application of IFRS is that shortage of training programmes and courses on IFRS in India. IFRS foundation is offering Online IFRS program, diploma and certificate courses and also The ICAI has started IFRS Training programs interested parties. Although, there is a large gap between required professional and trained professionals available.

Taxation - Convergence of IFRS would affect the financial statements and consequently the tax liabilities, thus the taxation laws must be addressed the adjustment of tax liabilities germinated on convergence from Indian accounting standards to IFRS. A fully renewal in Tax Laws is the major challenge faced by the Indian accounting system which includes some major changes in Tax Laws in order to maintain tax authorities to recognize IFRS-Compliant accounting statements. It is extremely very important that the tax laws recognize IFRS complaint accounting system otherwise it would duplicity for the business entities.

Auditing - The audit firms in India are also affected because they have to audit at the fair value accounting according to the IFRS without proper guidance, currently these audit firms are performing the audit as per the cost concept accounting. IFRS are applied without proper audit guidance by the ICAI, so it may be unjustified to expect from the auditing authorities to discharge their duties as per the new Companies Act, 2013. This is also challenging for local audit firms, which hardly may have fewer availability of resources through affiliated firms. The audit firms would be needed to consider elements of their systems of quality control. Indian firms of auditing may encounter challenges in establishing policies & procedures, hiring, training to personnel, to provide a reasonable assurance that the audit personnel would obtain knowledge to perform audits as per IFRS.

Other changes - International expertise shows that companies would be required proper preparation time to plan a fair transition and to communicate the effect of transition to all stakeholders. The regulators need for an active debate amongst companies, industrial associations and investors on the impact relating to the transition of IFRS.

Benefits to India in Adopting IFRS - The whole World's economies have been benefited by adopting IFRS for financial and accounting reporting purposes. In review of literature previous studies have reflected various benefits of IFRS adoption, especially better financial and accounting information for all the related stakeholders in following manners:

1. **Easy availability of Funds in Global Capital Markets:** Since the last two decade, India has emerged as a strong economy on world's map. Indian firms are not only establishing the plants abroad but also acquiring other firms across the world so they need funds at small cost which is available in other Capital Markets like American, European and Japanese. The adoption of IFRS not only helps Indian

Firms in accessing world Capital Markets for funds but also funds are available at cheaper cost.

2. **Easier Global Comparability:** The whole world Firms are using IFRS to reflecting their financial records so the adoption of IFRS by Indian firms, the comparison of two becomes easier. Various stakeholders like investors also find it easy to compare the financial records following the similar reporting process. Majority of Indian companies are accessing European capital markets, preparing and presenting the financial records on the basis of IFRS which helps to the firms in easy accessibility of funds from world's capital markets.

3. **Easy Listing across the Border:** Indian firms are requiring funds for expansions to their business which is not limited to the boundaries of the country because these firms are acquiring firms abroad also and getting listed in European and American Capital Markets through raising funds. One of the major requirement of getting listed on European Markets is Accounts must be meet as per IFRS requirements so few Indian firms which have been raised the funds from the European Capital Markets, have started preparing the Financial records as per IFRS.

4. **Better record Financial Reporting:** In application and adoption of IFRS is expected to result will be better of financial reporting due to similarity of Accounting Principles. The IFRS follows a concept of smooth value which may help to the Indian firms to present their true worth of Assets. Though a single body (IASB, London) is consistently preparing IFRS, which are reliable and easy to adopt for better quality of financial statements.

5. **Elimination of Multiple Reporting:** Large Business and corporate Houses of the country like TATA, BIRLA, AMBANI and ADANI have companies registered in India as well as broadly in European and American capital markets. These companies registered in India and prepare financial statements as per Indian Accounting Standards in other ways these firms registered in other countries so they have to maintain their financial records as per respective country reporting standards. But adoption of IFRS ensures to solve this reporting standards difficulty of multiple financial reporting standards by these companies so they now can follow a single set of Financial Reporting as IFRS.

Conclusion and Implications of the Study - The present study is limited to desktop and library review to investigate the challenges and remedies as benefits of IFRS adoption by which India may draw a lesson towards application of IFRS converged to Ind-AS. The paper reflects notable IFRS benefits to improve quality of financial reporting; elimination of multiple reporting standards and ensuring easy to making decision; easy listing across the border and reduce cost of capital. Further, the paper reports that the IFRS are not free from the challenges, as inclusive of complicated nature; insufficient qualified personnel; fair value intent of standards which undergo from availability of liquid data; and lack of coordination between financial reporting regulators. Finally the paper concludes that the benefits for IFRS convergence are real but not automatic in other hand challenges in the way of adoption and convergence can't be ignored thus the recommendation to all the stakeholders that they must participate actively for a successful move.

References :-

1. Barth, M. E., Wayne R. L., Lang M. H., (2008). International Accounting Standards and Accounting Quality. Journal of Accounting Research. Vol. 46, 467-498.
2. Beria, Kumar, S., (2010). IFRS in real estate- A technical area mare than just accounting and reporting. The Chartered Accountant Journal. Vol. 58 (12), pp 1963-1973.
3. Bhatacharjee, S and Islam, Z. M. (2009). Problems of Adoption and Application of IFRS in Bangladesh. International Journal of Business and management. Vol. 4 (12).
4. Bhattacharya, Joydes (2012). Revised schedule VI- A scientific approach towards preparation of financial statements? The Chartered Accountant Journal. Vol. 61 (3), pp 444-452.
5. Callao, S. & Lainez, Jose, A. (2000). The effects of Accounting Diversity on international financial Analysis: Empirical Evidence. The International Journal of Accounting. Vol. 35 (1), pp.65-88.
6. Chamisa E. E. (2000). The relevance and observance of IASC standards in developing countries and the particular case of Zimbabwe. The International Journal of Accounting. Vol. 35 (2), 267-286.
7. D'souza, & Dolphy, (2007). IFRS the way forward. The Chartered Accountant Journal. Vol. 55 (11), pp 1692-1695.
8. D'souza, Dolphy (2014): 'Managing the pitfalls for Ind-AS adoption in India'. Available on: http://articles.economictimes.indiatimes.com/2014- 0829/news/53362679_1_indian-gaap-indian-mnc-mca.
9. Dancey, K (2012): 'The future of accounting –A Canadian perspective', The Chartered Accountant Journal, Vol. 61 (1), pp 77-80.
10. Daske, H., Hail, L., Leuz, C. and Verdi, R (2008) 'Mandatory IFRS reporting around the world: early evidence on the economic consequences', Journal of Accounting Research, 46 (5), pp.1085-1142.
11. Deloitte (2011): 'Ind AS consideration for Board and Audit Committees', Available on http://www.iasplus.com/en/publications/india/ind-asconsi-derations-for-boards-and-audit-committees.
12. Deloitte (2015). Indian GAAP, IFRS and Ind AS: A Comparison', Available onhttp://www.iasplus.com/en/publications/india/indian-gaapifrs-and-ind-as-a-comparison/view.
13. Deloitte (2015). Preface to International Financial Reporting Standards. Available on - http://www.iasplus.com/en/standards/other/preface.
14. Ding Yuan, Hope Ole-Kristian, Jeanjean, Thomas and StolowyHeme, (2007). Differences between Domestic

Accounting Standards and IAS: measurement, Determinants and Implications. Journal of Accounting and Public Policy. Vol. 26, 1-38.

15. World Bank Group. (2014). Global economic prospects, World Bank report, Vol. 9, June, 2014, Washington DC.
16. www.ifrs.org.
17. www.pwc.services.in.
18. www.iasplus.com.
19. www.mca.gov.
20. www.icai.org.
21. www.google.com.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Urban Banks and Women Empowerment : An Empirical Study with Special Reference to Bhopal

Juhi Sharma* Dr. Saroj Chhajed**

Abstract - The present study seeks to examine the role of urban banks and its impact on economic and social empowerment of women. The study used multi-stage stratified proportionate random sampling technique in the selection of the representative district, mandal/taluka, villages and households. Empirically acclaimed logistic regression model has been employed for analyzing significant impact of plausible socio-economic factors on women empowerment. The study found that the socio-economic indicators have undergone significant changes. It also emerged that there has been an increase in women participation in the household decision making process. The study suggests that the government should prepare suitable plans and programmes for the social and economic empowerment of women. The study also suggests that policy measures such as increase in frequency of SHG meeting, SHG training programme, increase in loan amount and ensuring effective utilization of the loan, may be the useful initiatives to enhance women empowerment, income and employment opportunities.
Keywords - Urban banks; Self Help Group-Bank Linkage Programme; Women Empowerment; Decision Making.

Introduction - In the recent decades, poverty reduction has become a major focus area for development planners across the globe. This increasing stress on poverty alleviation has become necessary since it was seen that even though countries like India have made rapid strides in all possible fields, vast sections of society continue to languish in conditions of acute poverty (Kabeer,2003; David, et al., 2004) . The fruits of development were not equitably shared-between different regions, social classes and even among members of the same social class. Poverty can no longer be considered as the suffering of a few individuals. When poverty is very widespread, it would mean that a very significant portion of the population is particularly vulnerable to scourges like malnutrition, ill-health, illiteracy, ignorance, deprivation and having to live in near sub-human conditions. It is now widely accepted that infrastructure like flyovers, high-rise buildings, gigantic dams, sleek cars and space exploration centres would be almost meaningless if, side by side, we have millions going to sleep on empty stomach or having to cover their bodies (and protect their dignity) with rags (Datt and Ravallion, 2002; and Dhaongde,2002; Sharma, 2001). In recent times, poverty is no longer being treated as 'divinely ordained. Governments can no longer afford to let conditions of poverty to remain unaddressed, since there is a great risk of the feeling of deprivation taking violent forms. Unemployment doles may be a fairly feasible poverty reduction solution in developed countries, but these would be a severe drain on the already strained resources of developing countries. Added to that is the loss of 'dignity' of the beneficiaries (Rustagi, 2004; and Satish, 2005).

The global experience has been that women are the major victims of poverty. It is sad to say that many men in such situations may choose to 'drown their sorrows' in a bottle of liquor. A woman, on the other hand, will seldom seek such an 'escape route'. In most cases, she will tend to do her best to see that her children have at least something to eat (even if she has to stay hungry for days on end). She will make do with what little resources available to her to keep the house running. No wonder, in a slightly different context, it has been said that "Educate a man and you would have educated an individual; educate a woman and you would have educated an entire family" It would, therefore, make economic sense to make women important players in the poverty reduction programmes. As already mentioned, countries like India cannot afford to hand out unemployment does to the large army of the unemployed. One alternative is to devise empowerment strategies which would impart a feeling of self-confidence to the beneficiaries and tap the latent entrepreneurial talent in them. One observation is that many of the poor are unable to access banks for loans (for taking up income-generation activities) since they generally have no collateral (like property documents) to offer. Micro-finance, through SHGs, is helping a large number of the rural poor (mostly women) to improve the quality of life of their families. The improved financial condition is helping the beneficiaries to become more assertive about their rights and entitlements. This is

*Govt. Sarojini Naidu Girls P G College, Bhopal (M.P.) INDIA
** Govt. Sarojini Naidu Girls P G College, Bhopal (M.P.) INDIA

the backdrop against which the present paper is framed. In the light of the background provided above, the present study seeks to examine the process of women empowerment and changes in the economic status of SHG members in particular and rural women in general. With this broad issue in mind, the following objectives were set for the study, to study socio-economic analysis of SHGs in Selected villages in Bhopal and to examine how far the urban banks could explore the possibility of women's participation in decision making, relating to family affairs. This paper is divided into five sections. The first section presents background of the study. The second section describes studies to review of literature related to the subject. Section three present the data and methodology, while the fourth section is analyze results and discussion and finally the summary and conclusion.

Review of Literature

The research works pertaining to the very theme of interdependence between urban banks and some socio-economic factors is very rich and it is imperative to sketch a brief narrative of this literature. The socioeconomic empowerment of women through SHGs was explored by Vijayalakshmi and Valarmathi (2008). They pointed out that poverty and empowerment are the major problems in India, and they suggested ways to overcome these two problems through microcredit, i.e., through SHG which is considered as a potential instrument for combating poverty in a sustainable manner. They also found that many have expressed the desire of an improvement in their level of income, assets, wealth, and standard of living. The contribution made by the urban banks programme initiated by Sahyadri Grameen Bank in Thyagarthi village in Shimoga district of Karnataka was evaluated by Raghavendra (2001). The analyses revealed a significant change among the group members in diversifying income- generating economic activities. The researcher found that the urban banks programme was financially sustainable. The members reported that they no more borrowed from moneylenders. It was found that the members of the SHG formed by the forward community created their own capital base. It was observed that there was a great potential for implementing various programmes for the rural poor through SHGs. Some other studies, for instance, Rahman, et. al. (2010), have also assessed the impact of urban banks of rural development schemes on the livelihoods of the rural poor in Bangladesh. They results show that household income, productivity of crops and livestock, expenditure, and employment increased significantly due to the productive use of the finance availed by the beneficiaries. In this study, the logit-model showed that socio-economic factors like age, number of family members in farming, total land size and clients' ethics and morals of the clients had a positive and significant influence on household income. They concluded that micro investment program had brought about significant and positive changes in the lives of the clients. Micro investment programmes have helped in significantly reducing rural poverty. They recommended that the programme should be replicated in other rural areas of Bangladesh, in order to accelerate economic activities of the poor. Such a finding is also supported by Latif (2001), who measured the effects of microcredit on the household saving of Bangladeshi borrowers. He observed that land size and family size had influence on consumption and calorie intake of rural Bangladeshi households. The study found that saving- income ratio was significantly higher for the participants than for the non-participants. Akter, et. al. (2010) surveyed the impact of community-based organisation (CBO) loans on livelihood improvement. The study found significant improvements in the socio-economic conditions of the beneficiaries. These included; greater awareness, increase in family income, assets, better clothing and food intake and improved sanitation. It was also found that the women participation in the household decision making increased.

Social mobilization envisages education and organization of the poor for improved socioeconomic status through collective efforts. In this dynamic process, the poor will be empowered enough to come out of the dependency syndrome as well as poverty. As a means of empowerment, the social mobilization process involves continuous awareness campaigns among the poor by facilitators/social animators so that the poor can participate in the development process, and thereby, access the basic amenities and resources for socioeconomic betterment. It also provides a suitable framework for holism in development, first, by catering to the needs and aspirations of the poor, and second, by seeking to engineer socioeconomic change on the basic of self-reliance (Radhakrishna and Shovan, 2005). Therefore, as argued, whenever increased self-confidence does not automatically lead to empowerment, it may still contribute decisively to a woman's ability and willingness to challenge the social injustices and the discriminatory systems that she faces. This implies that as women get financially better-off, their self-confidence and bargaining power within the household increase, which indirectly lead to their empowerment. Finally, the empowerment is a process in which the impact of the urban banks program may take a long time before it is significantly reflected in the observable measures of women empowerment (Cheston and Kuhn, 2002). Hashemi et al. (1996) also found that access to credit is also associated with higher levels of mobility, political participation and involvement in 'major decision making' for particular credit organizations.

The impact of urban banks programs on women is not always positive. Women who have set up enterprises benefit only from small increases in income at the cost of heavier workloads and repayment pressures. Sometimes their loans are used by men in the family to set up enterprises, or sometimes women end up being employed as unpaid family workers with little benefit. It has also been seen that in some cases, women's increased autonomy has been temporary

and has led to the withdrawal of male support. It has also been observed that small increases in women's income have lead to a decrease in male contribution to certain types of household expenditure (Mayoux, 1997). Empowerment of people is a complex process by which the marginalized people become aware of the power dynamics at work in the life context and develop skills and capacity for gaining some control over their lives without infringing upon the rights of others (Rawlands, 1997). In the development context, it is essentially a change of social relations, change in the attitudes of non-poor as well emphasizing the need for re-negotiations in regard to access and control over resources. A core methodology of social mobilization was suggested for inclusion in the poverty policy frameworks of national and international agencies (Susil, 2001).

Sharma (2001) focused on the exclusive role of SHG in women empowerment and found that significant changes in the living standard of SHG members have taken place, in terms of increase in income levels, assets, savings, borrowing capacity and income generating activities. Similarly, (Sudha et al., 2002) found that participation of women in the SHGs led to their empowerment in areas like, house-management, leadership, economic status, health and sanitation. The self-confidence among women increased due to participation in the SHGs. Conspicuously, women were more empowered when their participation was high in meetings and interactions with different officials. Further a few studies an attempt to study the impact of SHGs on the generation of income and employment was done by (Gangaiah et al., 2006), who found that the loans provided by SHGs had a favorable impact on income generation in the village.

Puhazhendhi and Satyasai (2001) found that the involvement of the rural poor in SHGs significantly contributed to their social empowerment, as measured by improvement in their confidence, their position within the family, improved communication skills and other behavioral changes. They found that SHG, as an institutional arrangement, could positively contribute to the economic as well as social empowerment of the rural poor and the impact on the latter was more pronounced than the former. Furthermore few studies Puhazhendhi and Badatya (2002) stressed on the also social empowerment of sample SHG members, in terms of self-confidence, involvement in decision making, better communication, etc., improved in a significant way. Anand (2002), in his study attempted to show the performance of selected SHGs in Bhopal and assessed their impact on empowering women. One important observation was that all the members had savings after joining the group. It was also observed that a few members were dominating the groups year after year. In this study, it has been further observed that microcredit through SHGs has created a positive impact on the families of the members.

Scope of the Study - SHGs are fast emerging as a powerful tool for socioeconomic empowerment of the poor in the rural areas. In India, SHGs represent a unique approach to financial intermediation. The approach combines access to low-cost financial services with a process of self management and development for the women who are SHG members. SHGs are seen to confer many benefits, both economic and social. It enables women to expand their savings and access the credit which banks are increasingly willing to lend. SHGs can also be community platforms from which women become active in village affairs, stand for local elections or take action to address social or community issues. The present study aims to examine how far the urban banks could explore the possibility of women's participation in decision making, relating to family affairs.

Several studies indicate that self help group programmes often in the form of credit or micro credit schemes and savings have succeeded in changing the lives of poor women by making way for enhanced income and increased self esteem. This is a testable proposition for the state of Bhopal in India since it has been witnessing a massive growth in SHGs in last few years. This study is undertaken to analyse the structure, conduct and performance of self help groups and their impact on women in six villages in Bhopal. In the light of the background provided above, the present study aims to examine how far the urban banks could explore the possibility of women's participation in decision making, relating to family affairs.

Data and Methodology - The study is based on a field survey .

Empirical Analysis - In the following section, a brief note on logit model is given. Since one dependent variable namely, women decision making is qualitative variable, logistic regression model has been employed for analysis of impact of some socio- economic factors on them.

An attempt is made to examine the impact of women decision making in household matter. More specifically, this section explores the proximate determinants of the two dimensions mentioned above. Logistic regression model has been employed for analysis of impact of some socio-economic variables. Since women decision making has been defined by the dummy variable, the study employed the logit regression analysis as the OLS (multiple regression) is not appropriate to the present context. The decision making behavior has undergone changes after the SHG respondents were exposed to the urban banks activities. It is observed that factors such as SHG member age, member marital status, member spouse education and training exert considerable influence on the member decision making. Accordingly, it is hypothesized that the decision making by the members is influenced by factors such as, members age, members education, member marital status, members yearly income, member type of family, member's spouse education, member's spouse income, member household income, members takes loan frequently, member member's borrowed loan amount, member participating training program etc.

Results and Discussion - The program brings in its wake

various economic benefits to SHG members in terms of increased asset creation, enhanced saving and borrowing habits, increased income, higher employment, and improved social lives. The urban banks impacted the social empowerment of sample SHG members in a significant way. The various SHG activities resulted in improving the decision-making capacity of SHG members.

The Decision Maker of the Family: To understand who is the decision maker in the family, data were collected on purchase/sale of household assets, family savings, children's education and marriage, using a 4-point scale, i.e., (i) SHG Member, (ii) Husband, (iii) Both (Wife and Husband) and (iv) Joint Family Members. It is commonly observed that in a family some decisions are exclusively taken by the spouse i.e., head of the family, while some are exclusively taken by the housewife, and the other decisions are taken jointly by both spouse and wife. There are some other decisions, which are exclusively taken by other members in the family, like the children, parents-in-law, married sons, etc. Of the 582 members, at the time of joining the group, majority had reported that household decisions were taken by their husbands. Now, majority of the members report that household decisions are taken by them jointly with their husbands.

It reveals that women's role in household decisions increased after joining the SHGs. This is because of the experience gained by the members by attending trainings and meetings. Undoubtedly, training and meeting plays an important role in sharing information, carrying out financial transactions, decision making and enhancing the bargaining power of the SHG members. Compulsory attendance of members in the training and meetings are one of the prerequisites for smooth functioning of the group. It is one of the indicators to ensure the active participation of members in the business of the group in a democratic manner. Table 3 shows that out of 582 selected sample members, nearly 49% have reported that household decisions are taken jointly with their husbands, followed by 32% who reported that their husbands generally take decisions in their family, 12% who reported that household decisions are taken by themselves (SHG members), and 7% of the members reported that usually all family members take the decisions together. According to the norms of the patriarchal society, it is usually the head or the male members of the household who take certain key decisions. It was found that the increased participation of women in the decision-making processes empowers women in the true sense. Joint decision making in the purchase of business items is observed among all the members belonging to all the villages under study. Thus, it can be concluded that the involvement of spouse is more common for all types of decisions among all the group members.

It is further observed that among all selected regions in Bhopal, the percentage of members who reported that household decisions are taken jointly with their husbands. The joint decision making by women improved significantly in all aspects investigated. The study found that in all the selected villages majority of all social group members reported that they make household decisions jointly with their husbands in their families. The percentage is found to be highest among the OCs, followed by the BCs.

Overall, the participation of women in decision-making process increased after joining the SHGs. Further, it is informed that the social indicators have been assumed to play an important role in successful implementation of various urban banks programmes. It is observed that the impact of urban banks is relatively more pronounced on the social aspects than on the value of the economic aspects. Thus, it can be ratified that social indictors have made a significant impact on members' decision making by bringing a positive shift in their social conditions. Further, the social indictors have been assumed to play an important role for successful implementation of various urban banks programmes. As virtually all those who participated in urban banks programme were women, use of social indicators enabled them to move ahead in their economic status on a sustained basis.

Summary and Conclusion - The urban banks system has brought about an unprecedented change in the lifestyles of women in rural areas. The streamlining and effective operation of credit system will entirely transform rural lives. The empowerment through SHGs would impact rural women by giving them immense confidence to mould their lives and that of their families. In this light, the present study examined the financial status of women in pre-and post-SHG scenarios and also investigated the impact of micro financing on women. For the purpose, the study has examined various economic benefits to SHG members in terms of increased asset creation, enhanced saving and borrowing habits, increased income, higher degree of empowerment and improved social lives. The empirical examination shows that the SHG- bank linkage programme has a positive impact on decision making by women in household matters. In addition, it has brought about changes in their attitudes against social evils such as gender discrimination and the dowry system, and it has enabled them to advocate for equal property rights, education, the fair treatment of girls and widow remarriage. Empirical findings suggest that participation and decision making by women members is positively influenced by SHG members' age, marital status, income, family type, along with economic factors, have statistically significant impact on decision making. The major findings of the study are that urban banks activities have altered the living condition of the SHG members, and these activities have also contributed to social empowerment of women. The major findings of the study are (i) urban banks activities have altered the living condition of the SHG members, (ii) these activities have also contributed to social empowerment of women. However, policy measures such as an increase in frequency of SHG meeting, SHG training programme, increase in the loan amount and ensuring effective utilization

of the loan, may be the useful initiatives to enhance women empowerment, income and employment opportunities.

References :-

1. Afifi, AA & Clerk, V (1990). Computer Aided Multivariate Analysis (2nd ed.), New York Va Nostrand Reinhold.
2. Akter. R, M.A.Bashar and M.K. Majumder and Sonia B. Shahid (2010), "Effect of Community Based Organization Microcredit on Livelihood Improvement", J. Bangladesh Agril.Univ. Vol.8. No.2, pp.277-282.
3. Anand Jaya S (2002), "Self-Help Groups in Empowering Women: Case Study of Selected SHGs and NHGs", Discussion Paper No. 38, Kerala Research Programme on Local Level Development, Centre for Development Studies, Thiruvananthapuram.
4. Borbora Saundarjya and Mahanta Ratul (2001), "Micro Finance Through Self-Help Groups and its Impact: A Case of Rashtriya Gramin Vikas Nidhi Credit and Saving Programme in Assam", Indian Journal of Agricultural Economics,Vol.56, No. 3, pp.449-450.
5. Cheston S and Kuhn L (2002), "Empowering Women Through Urban banks: A Case Study of Sinapi Aba Trust, Ghana. USA", Opportunity International, available at http://videos.opportunity.org/website/ Empowering- Women-Paper. pdf. Retrieved on March, 2008.
6. Datt G and Ravallion M (2002), "Is India's Economic Growth Leaving the Poor Behind?", The Journal of Economic Perspectives, Vol. 16, No. 3, pp. 89-108.
7. David S Gibbons (2004), "Financing Micro Finance for Poverty Reduction", Shelter. Vol.7,No. 1,pp. 57-60. Deshmukh Ranadive J (2004), "Women's Self-help Groups in Bhopal: Participatory Poverty Alleviation in Action", World Bank, Washington DC.
8. Dhongde S (2002), "Measuring the Impact of Growth and Income Distribution on Poverty in India", Journal of Income Distribution, Vol. 16, No. 2, pp. 25-48.
9. Gangaiah C, Nagaraja B and Vasudevulu Naidu C (2006), "Impact of Self-Help Groups on Income and Employment: A Case Study", Kurukshetra, March, pp.18-23.
10. Hashemi SM, Schuler SR and Riley AP (1996), "Rural Credit Programs and Women's Empowerment in Bangladesh", World Development, Vol.24, No. 4, pp.635-653.
11. Kabeer N (2003), Gender Mainstreaming in Poverty Eradication and Millennium Development Goals: A Handbook for Policy-Makers and other Stakeholders, Commonwealth, London.
12. Khandker S R, Hussain S and Zahed K (1998), "Income and Employment Effects of Microcredit Programmes: Village-Level Evidence from Bangladesh", Journal of Development Studies, Vol. 35, No. 2, pp. 96-124.
13. Latif, M.A. (2001), "Income, consumption and poverty impact of infrastructure development", The Quarterly Journal of the Bangladesh Institute of Development Studies, Vol. 28, No. 3, pp. 1-36.
14. Mayoux L (1997), "The Magic Ingredient? Urban banks and Women's Empowerment", A Briefing Paper prepared for the Micro Credit Summit, Washington. (2001), "Tackling the Down Side: Social Capital, Women's Empowerment and Micro-Finance in Cameroon", Development and Change, Vol.32, No.3, pp.421-450.
15. Pallavi Chavan and Ramakumar R (2002), "Micro Credit and Rural Poverty: An Analysis of Empirical Evidence", Economic and Political Weekly, Vol.37, No.10, p.958.
16. Puhazehdhi V (2000), "Evaluation Study of Self Help Groups in Tamil Nadu", National Bank for Agriculture and Rural Development,Mumbai.
17. Puhazehdhi V and Satya Sai (2001): "Economic and Social Empowerment of Rural Poor Through Self-Help Groups", Indian Journal of Agricultural Economics, Vol. 56, No. 3, pp.450-452.
18. Puhazhendhi V and Badatya KC (2002), "SHG-Bank Linkage Programme for Rural Poor in India: An Impact Assessment", Microcredit Innovations Department, National Bank for Agriculture and Rural Development, Mumbai.
19. Radhakrishna and Shovan Roy (2005), Handbook of Poverty in India: Perspectives, Polices and Programmes, Oxford University Press, New Delhi.
20. Raghavendra, T S (2001), "Performance Evaluation of Self Help Groups: A Case Study of Three Groups in Shimoga District", Indian Journal of Agricultural Economics, Vol. 56,No. 3, pp. 466-467.
21. Rahman Mizanur and Fariduddin Ahmad (2010), "Impact of urban banks of IBBL on the rural poor's livelihood in Bangladesh: an empirical study", International Journal of Islamic and Middle Eastern Finance and Management Vol. 3. No. 2, pp. 168-190
22. Rawlands J (1997), Questioning Empowerment: Working with Women in Honduras, Oxford, UK. Ryan, TP (1997). Modern Regression Method, New York Wiley.
23. Rustagi (2004), "Significance of Gender-Related Development Indicators: An Analysis of Indian States", Indian Journal of Gender Studies. Vol. 11, No. 3,pp. 291-343.
24. Satish P (2005), "Mainstreaming of Indian Micro Finance", Economic and Political Weekly, Vol. 40, No. 17, pp.1731-1739.
25. Sebastian Titus AP(2001), "Impact of Micro Credit Programmes of NGOs on Rural Women", IASSA Quarterly, Vol. 20. No.2, p.136.
26. Sharma KC (2001),"Micro Financing Through Self-Help Groups", Indian Journal of Agricultural Economics,Vol.56, No. 3,pp. 460-461.
27. Sudha Rani K, Uma Devi D and Surendra G (2002), "SHGs-Micro-Credit and Empowerment", Social Welfare,Vol. 48, No. 11, pp.18-22.
28. Susil Sirivardana (2001),"The Core Methodology of

Social Mobilization in Women's Empowerment as a Transformative Strategy for Poverty Eradication", SAPNA Regional Center, New Delhi.

29. Tabachnick, BG. and Fidell, LS (2001).Using Multivariate Statistics (3rd Edition), Needham Heights, MA, Allyn and Bacon.

30. Vijayalakshmi, R and G Valarmathi (2008), "Socio-Economic Empowerment of Women Through Self Help Groups (SHGs)",Daniel Lazar and P Palanichamy (Eds.), Urban banks and Poverty Eradication: Indian and Global Experience, New Century Publication, pp. 243-255.

****

भागवतकालीन पारिवारिक जीवन

डॉ. बिहारी लाल मीना *

प्रस्तावना – परिवार मानव जीवन की एक नैसर्गिक संस्था है। यही समाज-निर्माण की मूलभूत इकाई है। मानव जीवन में इसकी सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, जीवशास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक उपयोगिता स्वत:सिद्ध है। स्त्री-पुरूष का सहजीवन उनकी मूलभूत आवश्यकता है। इनके बीच शारीरिक सम्बन्ध की भूख बहुत गहरी होती है। इस तथ्य को ध्यान में रखकर भारतीय संस्कृति में जीवन में काम की महत्ता को स्वीकार कर उसे पुरूषार्थ-चतुष्टय में स्थान दिया गया है। परिवार नामक संस्था स्त्री पुरूष के सहजीवन को मान्यता प्रदान कर उनकी काम भावना को धार्मिक मर्यादा में बांधती है। परिवार संस्था ही वंशपरम्परा की वृद्धि के द्वारा मनुष्य के जातीय सातत्य को सम्भव बनाती है। इसी प्रयोजन की सिद्धी हेतु भारतीय संस्कृति में पितृऋण की धारणा कल्पित की गयी। मृत्यु और अमरत्व दो ध्रुव विरोधी वस्तुएँ है किन्तु परिवार द्वारा दोनो का समन्वय हुआ है। व्यक्ति भले ही मर जाते हैं, किन्तु विवाह और परिवार द्वारा मानव जाति अमर हो गई है[1]। व्यक्ति परिवार में न केवल आत्मसंरक्षण पाता है अपितु उसकी छत्रछाया में ही प्रेम, त्याग आदि गुणों के संस्कारों को भी आत्मसात करता है। परिवार से प्राप्त संस्कारों के बल पर वह भावी जीवन में सभ्य और सुसंस्कृत सामाजिक व नागरिक जीवन का निर्वाह करने में सफल होता है। परिवार सांस्कृतिक मूल्यों, परम्पराओं और सभ्यजीवन की आदतों को अनवरल रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में पहुँचाता है। अत: यह सभ्यता और संस्कृति का निष्ठावान वाहक भी है। परिवार में रहकर व्यक्ति धार्मिक जीवन का सम्यक् परिपालन भी कर सकता है। हमारे मत में व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के जीवन में सर्वविध सुन्दर परिवेश के निर्माण एवं उसकी चहुँमुखी प्रगति में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से परिवार नामक संस्था का महनीय योगदान होता है। पारिवारिक शान्ति अथवा तनाव का प्रभाव व्यक्ति के सार्वजनिक जीवन पर भी पड़ता है। सम्भवत: इसकी महत्ता को ध्यान में रखकर ही अथर्ववेद में माता-पिता और पुत्र, भाई-भाई, भाई-बहिन और पति-पत्नी के मध्य परस्पर स्नेहभाव की कामना की गई है[2]।

भागवत सभ्यता में परिवारजनों के मध्य सम्बन्धों एवं उनकी महत्ता का निरूपण इस प्रकार है-

माता-पिता – भागवत सम्भ्यता में माता-पिता का महत्व सबसे अधिक समझा जाता था। भागवत में कहा गया है कि मानव शरीर पुरूषार्थ चतुष्टय का साधन है, किन्तु माता-पिता इस शरीर के भी जन्मदाता और उसका पालन पोषण करने वाले हैं। इस रूप में मनुष्य पर अपने माता-पिता का अत्यधिक कर्ज होता है। यदि कोई मनुष्य सौ साल जीवित रहकर माता पिता की सेवा करता रहे, तब भी वह उनके उपकार से उऋण नहीं हो सकता। अत: जो मनुष्य समर्थ होकर भी माता-पिता की तन, मन और धन से सेवा नही कर सकता वह नरक का भागी बनता है। उसे तो जीते जी मुर्दा ही समझना चाहिए। एकादश स्कन्ध में कहा गया है कि संसार में माता-पिता का आगमन पुत्रों के लिए कल्याणकारी होता है[3]। माता-पिता दोनों की सन्तानों के लिए उक्त महिमा निरूपण के वाबजूद तथ्य यह है कि भागवतकालीन परिवार पितृसत्तात्मक था। परिवार में अधिकार, उत्तरदायित्व और सम्मान की दृष्टि से पिता का स्थान सबसे श्रेष्ठ था। भागवत में कहा गया है कि पुत्र उत्पन्न करने में माता तो धौकनी के समान है। वास्तव में पुत्र पिता का ही है, क्योंकि पिता ही पुत्र के रूप में उत्पन्न होता है[4]। भागवत में पिता को ही मनुष्य का प्रथम गुरू माना गया है[5]। वही पुत्र की शिक्षा का प्रबन्ध करता था[6], वही पुत्र के भरण-पोषण का उत्तरदायी था[7]। भागवत में प्रजापालन के कारण राजा को भी पिता माना जाता था[8]। भागवत युग में पिता को अधिकार था कि वह पुत्र को बेच भी सकता था। अजीगर्त ने अपने पुत्र शुन:शेप को रोहित को बेच दिया था[9]। भागवत में पिता के समान माता की महिमा व उसके अधिकारों का वर्णन नही मिलता फिर भी व्यवहार में माताएँ पुत्रों के लिए अत्यधिक वन्दनीय थीं। कृष्ण जब हस्तिनापुर से द्वारका आये, तब सबसे पहले सातों माताओं के चरणों में सिर रखकर प्रणाम किया[10]। भागवत में माता को पृथ्वी की मूर्ति कहा गया है[11]। आपस्तम्ब धर्मसूत्र में कहा गया है कि माता की सदैव सेवा ही करनी चाहिए भले ही वह पतिता हो गई हो[12]। भागवत में यशोदा ने दूसरे के पुत्र को औरस पुत्र से भी अधिक दुलार से पालन कर भारतीय समाज में आदर्श मातृत्व का सुन्दर प्रतिमान रखा है।

पति-पत्नी – श्रीमद्भागवत पुराण में पत्नी की महिमा का विशद निरूपण हुआ है। वह गृहिणी रूप में गृहस्थी रूपी गाड़ी का अनिवार्य चक्र मानी गई है[13]। गृहिणी रूप में पत्नी के पति पर इतने उपकार होते हैं कि वह जन्म जन्मान्तर में भी उन्हें चुका नही सकता[14]। पत्नी को पति की अर्धांगिनी माना जाता था[15]। वह पति की सहधर्मिणी थी। कोई भी यज्ञादि कर्मकाण्ड पत्नी के बिना पूर्ण नहीं माना जाता था[16]। पत्नी त्याग निन्दित कर्म माना जाता था[17]। पत्नी के प्रति सम्मान व प्रेम में कोई कमी न थी। पति भी पत्नी की भावनाओं का सम्मान करते थे। तृतीय स्कन्ध में मेत्रेय जी का कथन है कि जिसके द्वारा धर्म, अर्थ और काम की सिद्धी होती है, अपनी ऐसी पत्नी की कामना कौन पूर्ण नही करेगा[18] ? यह कथन तत्कालीन लोक सामान्य दृष्टिकोण को व्यक्ति करता है। पारिवारिक जीवन की दूसरी तस्वीर यह भी थी कि कुछ लोगों को अपनी एक पत्नी पर अधिक प्रेम व दूसरी पर दासी तुल्य वर्ताव था। राजा उत्तानपात का सुनीति के प्रति दासी के समान भी प्रेम न था[19]। राजा चित्रकेतु भी अपनी सन्तानहीन पत्नियों को पत्नी नही मानता था[20]। दूसरी और श्रीमद्भागवत में पत्नी के कर्तव्यों का निर्देश करते हुए पति की सेवा ही स्त्री का सर्वप्रमुख कर्तव्य निरूपित किया गया है[21]। स्त्री के लिए

* एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत राजकीय महाविद्यालय,गंगापुर सिटी (राज.) भारत

उसका पति ही परमेश्वर बतलाया गया है[22]। धर्मशास्त्रों और स्मृतियों में भी पति की सेवा ही स्त्री का प्रमुख कर्तव्य बतलाया गया है। याज्ञवल्क्य का कथन है कि स्त्रियों का कर्तव्य है कि पति की आज्ञा का पालन करे, यही स्त्रियों का परम धर्म है[23]। रामायण में भी पत्नी के लिए पति ही देवता कहा गया है। सीता कहती है कि पति ही स्त्री का देवता है[24]।

पुत्र – भागवत युग में परिवार में पुत्र का महत्व अत्यधिक था। विवाह का उद्देश्य ही प्रमुख रूप से सन्तानोत्पत्ति था[25]। पुत्र का पारिवारिक, सामाजिक व धार्मिक महत्व था। वह न केवल परिवार की वंशवृद्धि करने वाला था वरन् समाज में यह धारणा प्रचलित थी कि पुत्र ही पिता को नरक से बचाता है[26] तथा पुत्र के द्वारा ही पिता पुण्य लोकों को प्राप्त करता है[27]। समाज में तीन ऋण की धारणा प्रचलित थी। पुत्र उत्पन्न होने पर ही व्यक्ति पितृऋण से मुक्त माना जाता था[28]। पितृलोक की कल्पना ने भी पुत्र के महत्व को बढ़ा दिया था। पुत्रहीन व्यक्ति इसलिए भी दु:खी रहता था कि उसकी मृत्यु के उपरान्त उसके पूर्वजों को पिण्ड़दान नहीं मिलेगा[29]। पुत्र ही पिता का उत्तराधिकारी होता था। भागवत में अनेक राजाओं के अपने पुत्रों को गृहस्थी का भार सौंपकर वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण करने का उल्लेख मिलता है[30]। पुत्र की उक्त महत्ता के कारण ही पुत्र प्राप्ति की कामना से अनेक राजाओं द्वारा पुत्रेष्टि यज्ञ किये जाने के वर्णन मिलते हैं[31]।

भागवत में पिता की सेवा ही पुत्र का सबसे बड़ा धर्म[32] व उनकी आज्ञापालन ही पिता की सबसे बड़ी सेवा बताया गया है[33]। पिता की आज्ञा पालन के आधार पर तीन प्रकार के पुत्र माने गये हैं। उत्तम पुत्र वह माना गया है जो बिना कहे पिता की आज्ञा का पालन करें। कहने पर पिता की आज्ञा–पालन करने वाला पुत्र मध्यम श्रेणी का माना गया है। जो अश्रद्धा से पिता की आज्ञा का पालन करता है, वह अधम कोटि का पुत्र है। जो किसी भी प्रकार की आज्ञा पालन नहीं करता, वह पुत्र कहलाने लायक न होकर पिता का मलमूत्र ही कहा गया है[34]। जिसके कार्यो से माता–पिता का सुयश मिट्टी में मिल जाय, उन्हे अधर्म का भागी होना पड़े और सबका विरोध हो जाय, ऐसे कुपुत्र की अपेक्षा भागवत में पुत्रहीन होना ही अच्छा बताया गया है[35]। तैत्तिरीय उपनिषद में पुत्र के लिए कहा गया है कि माता–पिता की देवता के समान उपासना करनी चाहिए[36]। मनु का भी कथन है कि पुत्र के उत्पन्न होने में माता–पिता जो कष्ट उठाते हैं, सैकड़ो वर्षो में भी उनका बदला चुकाना सम्भव नहीं है[37]।

भागवत में सुपुत्रों एवं कुपुत्रों दोनों प्रकार के पुत्रों के उदाहरण मिलते हैं। एक ओर राजा ययाति के चार पुत्रों– यदु, तुर्वसु, द्रह्यु और अनु के उदाहरण है, जिन्होने अपने पिता की आज्ञा का पालन नहीं किया। वही ययाति पुत्र पुरू पितृ–भक्ति का उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसने पिता का बुढ़ापा स्वयं लेकर उन्हे अपनी जवानी दे दी। एक और अग्रसेन के पुत्र कंस का चित्रण है, जिसने राज–पाट के लिए अपने पिता को कारागार में बन्द कर दिया था। दूसरी और पितृ–भक्त राम का चित्रण है, जिसने अपने पिता के सत्य की रक्षार्थ राजपाट को तृणवत त्यागकर वन की राह लेना ही श्रेयस्कर समझा।

इस पुराण में नन्द बाबा और माता यशोदा ने कृष्ण का अपने औरस पुत्र के समान प्रेमपूर्वक पालन–पोषण करके भारतीय संस्कृति में पुत्र की परिभाषा को नवीन, यथार्थ और मानवीय अर्थ प्रदान किया। भागवत के अनुसार जिन्हें पालन–पोषण न कर सकने के कारण स्वजन सम्बन्धियों ने त्याग दिया है, उन बालकों को जो लोग अपने पुत्र के समान लाड़ प्यार से पालते हैं, वे ही उनके असली माँ–बाप हैं[38]।

पुत्री – प्राचीन भारत में कन्या जन्म अप्रसन्नता का कारण माना जाता था। मनु ने पुत्री जन्म को विषाद का हेतु माना है[39]। भागवत सभ्यता में पुत्र की आकांक्षा अधिक की जाती थी। पुत्र–कामना से पुत्रेष्टि यज्ञ की भाँति पुत्री की चाहत में किसी प्रकार के अनुष्ठान का वर्णन नहीं मिलता। पुत्री–चाहत के प्रमाण न मिलने पर भी भागवत युग में उसके प्रति माता–पिता के स्नेह और सम्मान के उदाहरण मिलते हैं। दक्ष प्रजापति का अपनी पुत्रियों पर अत्यधिक स्नेह था[40]। राजा मान्धाता ने अपनी पुत्रियों को वर चयन की पूर्ण स्वतन्त्रता दी[41]। नवम स्कन्ध में शुक्राचार्य का अपनी पुत्री देवयानि के प्रति अपार स्नेह का बोध होता है[42]। भारतीय साहित्य में पुत्री स्नेह के अन्यत्र भी कई उदाहरण मिलते हैं। भवभूति ने उत्तररामचरित में लिखा है कि शिशु रूप में हँसती, मुस्कुराती, तोतली बोली बोलती, नन्हें–कोमल–सुन्दर मुखकमल से कन्या माता–पिता के हृदय को प्रसन्नता से भर देती है[43]। कालिदास ने पुत्री की विदाई के समय पिता कण्व के हृदय की पीड़ा का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है[44]।

भागवत काल में कन्या को वर के चुनाव की पर्याप्त स्वतन्त्रता थी। कन्या द्वारा स्वयं अपना वर चुनने के कई उदाहरण मिलते हैं। विवाह के लिए स्वयंवर सभा के आयोजन की प्रथा प्रचलित थी, जहाँ अपने योग्य वर का वरण कन्या स्वयं करती थी। यथा सीता, रूक्मिणी आदि के विवाह हेतु स्वयंवर सभा का आयोजन किया गया था। सम्भवत: वर के चुनाव की स्वतन्त्रता राजकुल की कन्याओं को अधिक थी[45]। दूसरी ओर कन्याओं के लिए योग्य वर की खोज प्राय: कन्या का पिता ही करता था[46]। पिता के न होने पर इस दायित्व का निर्वहन कन्या के भाई द्वारा किया जाता था। विवाह के अवसर पर कन्या के माँ बाप द्वारा उसे बहुमूल्य उपहार दिये जाते थे[47]। मांगलिक उत्सवों व समारोहों पर पुत्री पिता के घर उपस्थित होती थी तथा माता–पिता के दिये हुए गहने, कपड़े आदि स्वीकार करती थी4[8]। पुत्र न होने पर पुत्री का पुत्र ही व्यक्ति का उत्तराधिकारी माना जाता था। नाती ही मरणोपरान्त उसे तिलांजली देता था, पिण्ड़दान करता था और उसके ऋण चुकाता था[49]। मनु ने भी पिता की सम्पत्ति में पुत्री का अधिकार माना है[50] तथा पुत्र के न होने पर नाती को ही स्वकीय पुत्र बनाने का विधान किया है[51]।

भागवत काल में विवाह पूर्व कन्याओं का अक्षत योनि रहना अनिवार्य माना जाता था। विवाह पूर्व किसी पूरूष से यौन सम्बन्ध बनाने वाली कन्या कुल पर दाग मानी जाती थी। बाणासुर की पुत्री ऊषा का ऐसी ही युवती के रूप में चित्रण हुआ है[52]। पति के रहते जार पुरूष की सेवा करने वाली पुत्री पितृ–कुल के लिए कलंक और पिता व पति दोनों के कुल को घोर नरक में ले जाने वाली मानी जाती थी[53]। भारतीय संस्कृति में पितृ–कुल द्वारा पुत्री को ससुराल में उत्तम व्यवहार का उपदेश दिया जाता है। कालिदास के अभिज्ञानशाकुन्तलम नाटक में पिता कण्व पुत्री शकुन्तला को पति व उसके कुल के प्रति उत्तम व्यवहार की शिक्षा देते हैं[54]। भागवत में भगवान का गोपियों के प्रति उपदेश है कि पति, पुत्र व पतिकुल की सेवा ही स्त्री का धर्म है[55]।

भाई – भागवत–सभ्यता में भाई का स्थान अत्यन्त गरिमापूर्ण था। पिता के पश्चात बड़ा भाई ही उसका उत्तराधिकारी होता था। ज्येष्ठ भ्राता पिता तुल्य सम्मान का पात्र व अनुकरणीय माना जाता था। भागवत में कहा गया है कि जो धर्मज्ञ भाई अपने बड़े भाईयो के श्रेष्ठ मार्ग का अनुसरण करता है, वही सच्चा भाई है[56]। भागवत से विदित होता है कि भीमसेन आदि भ्रातागण अपने ज्येष्ठ भ्राता युधिष्ठिर की आज्ञाओं का पूर्ण रूप से पालन करते थे[57]। ज्येष्ठ भ्राता का विवाह पहले होता था। बड़े भाई से पूर्व विवाह करने वाला कनिष्ठ भ्राता परिवेत्ता कहलाता था तथा लोकनिन्दा का पात्र भी माना

जाता था[58]। मनु का भी कथन है कि बड़ा भाई छोटे भाईयों का पिता के समान पालन करें और छोटे भाई उसके साथ पुत्र के समान आचरण करें[59]। भागवत में भाई को इन्द्र की मूर्ति बताया गया है[60]। इस पुराण में भाईयों के बीच प्रगाढ़ सम्बन्ध के अनेक उदाहरण मिलते हैं। भरत का आदर्श भाई के रूप में निरूपण हुआ है, जिसने राम के वियोग में राजपाट त्यागकर एक सन्यासी जैसा जीवन व्यतीत किया[61]। भातृस्नेह के कारण ही लक्ष्मण राम के साथ वन को गये। सत्राजित ने दिव्य स्यमन्तक मणि अपने भाई प्रसेन को धारण करने को दी। भातृप्रेम के कारण ही ध्रुव ने अपने भाई उत्तम की मौत का बदला लेने के लिए सैकड़ो यक्षों को मौत के घाट उतार दिया। रामायण में भी भाई की महिमा का तलस्पर्शी विवेचन हुआ है। रावण की शक्ति से लक्ष्मण के मूर्छित हो जाने पर राम का कथन है कि प्रत्येक देश में स्त्रियाँ मिल सकती हैं, देश-देश में जाति भाई उपलब्ध हो सकते हैं, परन्तु ऐसा कोई देश मुझे नहीं दिखाई देता, जहाँ सगा भाई मिल सके[62]।

भागवत में बहिनों के प्रति भी भाईयों के प्रेमपूर्ण व्यवहार के उल्लेख मिलते हैं। पिता की अनुपस्थिति में बड़ा भाई ही उनका संरक्षक होता था। सन्तर्दन ने अपनी बहिन भद्रा का कृष्ण के साथ विवाह किया[63]। प्रारम्भ मे कंस का भी अपनी बहिन देवकी पर अत्यधिक स्नेह था[64]। वसुदेवजी का अपनी कुन्ती आदि बहिनों के प्रति पितृतुल्य व्यवहार था[65]। भागवत में कंस को क्रूर भाई के रूप में चित्रित किया गया है, जिसने अपनी बहिन देवकी को कारागार में ड़ाल दिया था तथा उसकी सन्तानों को मार ड़ाला था। किन्तु भागवत में कंस को देवकी के प्रति क्षमा याचना करते हुए भी प्रदर्शित किया गया है[66]।

दास-दासियाँ - भागवतकालीन समाज में दास-दासियाँ परिवार के अंग माने जाते थे। दासियाँ वस्तु की तरह दहेज में दी जाती थीं। भागवत में दासियों को दहेज में दिये जाने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। यथा राजा देवक ने अपनी पुत्री देवकी की शादी में 200 सुकुमारियाँ दहेज में दीं[67]। शुक्राचार्य की पुत्री देवयानि के विवाह में शर्मिष्ठा को दासी के रूप में दिया गया था[68]। दासियाँ घर का सारा काम करती थीं। कृष्ण की सभी पत्नियों के साथ सेवा करने के लिए सैकड़ों दासियाँ रहती थीं[69]। तथापि कतिपय प्रसंगों में स्वामी दासियों के साथ गुप्त रूप से यौन सम्बन्ध बना लेते थे। राजा ययाति ने शर्मिष्ठा के साथ उसकी प्रार्थना पर यौन सम्बन्ध बनाया7[0]। अजामिल के विषय में भी कहा गया है कि दासी के साथ उसका सदाचार नष्ट हो गया था[71]। कालिदास के मालविकाग्निमित्रम नाटक से भी दासियों के साथ स्वामियों के गुप्त यौन सम्बन्धों का पता चलता है।

निष्कर्ष - भागवतकालीन परिवारिक जीवन के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि तदयुगीन पारिवारिक जीवन उदात्त मूल्यों से युक्त, पारस्परिक स्नेह व सम्मान से भरपूर था। पुत्र द्वारा माता-पिता की सेवा, पिता के रूप में व्यक्ति के उत्तरदायित्व, पति-पत्नी के बीच मधुर सम्बन्ध, परिवार के प्रति स्त्रीधर्म का परिपालन, बेटी के प्रति स्नेह-दुलार और बड़े भाई का पितातुल्य सम्मान आदि श्रीमद्भागवत में प्रतिबिम्बित ऐसे महान आदर्श हैं, जो सदियों से भारतीय समाज की प्रेरणा रहें हैं। आज भी इन आदर्शो का परिपालन परिवारिक जीवन को सुखद, शान्त एवं स्नेहसिक्त बना सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हरदत्ता वेदालंकार कृत 'हिन्दू परिवार मीमांसा', पृ. 1
2. अथर्ववेद 3.30.2-3
3. श्रीमद्भागवत पुराण गीता प्रेस गोरखपुर 11.2.4
4. वही, 9.20.21
5. वही, 10.80.32
6. वही, 5.9.6
7. वही, 9.7.20
8. वही, 9.10.51
9. वही, 9.7.20
10. वही, 1.11.28
11. वही, 6.7.29
12. आपस्तम्ब धर्मसूत्र, 1.10.28.9
13. श्री. भा. पु. 4.26.15
14. वही, 3.14.20
15. वही, 4.26.18
16. वही, 10.23.28
17. वही, 6.1.65
18. वही, 3.14.16
19. वही, 7.8.18
20. वही, 6.14.40
21. वही, 10.29.24
22. वही, 6.18.33
23. याज्ञवल्क्य स्मृति, 1.77
24. रामायण अयोध्या काण्ड, 39.31
25. श्री. भा. पु. 11.5.13
26. वही, 9.20.22
27. वही, 4.20.46
28. वही, 5.2.2
29. वही, 4.14.24
30. वही, 4.23.2-3, 5.4.5
31. वही, 3.5.1, 9.6.25, 9.7.9, 9.20.35
32. वही, 6.7.28
33. वही, 3.24.13
34. वही, 9.18.44-45
35. वही, 4.13.44
36. मातृदेवो भव पितृदेवो भव। तैत्तिरीय उपनिषद, 1.11.2
37. मनुस्मृति, 2.227
38. श्री. भा. पु. 10.45.22
39. मनु. 4.185
40. श्री. भा. पु. 4.2.1
41. वही, 9.6.40
42. नवम स्कन्ध 18वाँ अध्याय
43. उत्तररामचरित, 4.7
44. अभिज्ञानशाकुन्तलम, 4.6
45. श्री. भा. पु. 9.20.15
46. वही, 3.23.52
47. वही, 3.22.23, 10.68.50-51
48. वही, 4.3.9
49. वही, 10.56.37-38

50. मनु. 9.130
51. वही, 9.127
52. श्री. भा. पु. 10.62.27-28
53. वही, 9.3.20-21 व 10.29.26
54. अभिज्ञानशाकुन्तलम, 4.18
55. श्री. भा. पु. 10.29.32
56. वही, 6.5.31
57. वही, 1.10.30
58. वही, 9.22.14-15
59. मनु. 9.108
60. श्री. भा. पु. 6.7.29
61. वही, 10.56.13
62. वाल्मीकि रामायण, युद्ध काण्ड, 101.15
63. श्री. भा. पु. 10.58.56
64. वही, 10.1.29-30
65. वही, 30.1.27
66. वही, 10.4.15-17
67. वही, 10.1.32
68. वही, 9.18.28-29
69. वही, 10.59.45
70. वही, 10.18.32-36
71. वही, 6.1.21

****

Non Government Education Institution Approach Towards Promotion of Sports With Education

Nidhi Verma*

Introduction - Our co-curricular activities not only make the students active and energetic but also enable to harness the in-depth potential of students.

- **YashBirla,** Chairman, Yash Birla Group

Purposes of Sports with education - Is it generally considered, by school authorities and by parents, that sports and games are an essential function of schooleducation as well as intellectual development.Generally speaking,although in widely differing degree, the educational authorities and the parents recognize that training in sport forms an integral part of education by the same right as intellectual training.

The objective of education with sports is the enrichment of the educational experiences of students within the context of the educational mission. As such, sports should be educational and contribute to the overall education of all students,. Other objectives of educational sports logically follow from the educational mission: citizenship, sportsmanship, fair play, teamwork, respect, and health and welfare of all students not only during the mid-education years but continuing into adulthood.

Non-Government educational Institute vision towards sports - At the same time, in certain countries the place assigned to sport in education remains theoretical rather than practical.In some cases (Indi,) a major obstacle is presented by shortage of credits and facilities. In others, like Norway, the dispersion of educational activity over a great number of small institutions, in addition to the length of the winter season, prevents the programme of physical and sporting activities from attaining the desired level.

Most of the Non-Government educational Institute vision towards sports is not much serious its because of the primary goal of the institute, they prefer educational point over the sports cause of this most of the time they work as private institutions and they don't get any govt. funds for promoting sports.

That's the root because they will more focus on the academic education. Because that's the bread butter for them to run the organization smoothly.

The other reason in private education parents will not be interested their child goes for sports in the education institute.

Sport, Education and Child and Youth Development - Physical activity is vital to the holistic development of young people, fostering their physical, social and emotional health. The benefits of sport reach beyond the impact on physical well-being and the value of the educational benefits of sport should not be under-estimated.

Physical education and sport have an educational impact. Changes can be seen in

(i) Skills development and performance and
(ii) Educational potential. This shows the positive relationship between being involved in physical activities and psychosocial development.

Sport and physical education is fundamental to the early development of children and youth and the skills learned during play, physical education and sport contribute to the holistic development of young people. Through participation in sport and physical education, young people learn about the importance of key values such as: honesty, teamwork, fair play, respect for themselves and others, and adherence to rules.

It also provides a forum for young people to learn how to deal with competition and how to cope with both winning and losing. These learning aspects highlight the impact of physical education and sport on a child's social and moral development in addition to physical skills and abilities.

In terms of physical and health aspects of child and youth development, there is an overwhelming amount of evidence that focuses on the (mostly positive) effects of sport and exercise on physical health, growth and development.

SOME EFFORTS BY NON GOVERNMENT EDUCATION INSTITUTION FOR PROMOTING SPORTS WITH ACADEMICS IN INDIA

- **Bombay Physical culture Association's College of Physical Education, Mumbai -** BPCA's College of Physical Education runs by Bombay Physical Culture Association. It is a premier college which provides education mentally morally relating to physical education. Its aim is to prepare qualified teachers in the field of physical education.
- **College of Physical Education, Pune -** College of Physical Education is a constituent unit of BhartiVidyapeeth Deemed University. It is recognized by NCTE. All the

*Research Scholar, Rabindranath Tagore University, Bhopal (M.P.) INDIA

courses are self-financed in nature.

- **Amity School of Physical Education and Sports Sciences, Noida -** Amity School of Physical Education and Sports Sciences is also known as ASPESS Noida. It is approved by National Council of Teacher Education. It is aimed at providing high academic standards to its students.

These are the some education institutions who is doing serious efforts for promoting sports with the academics, and try to producing quality sports persons with their academic achievement. So that if the player is not interested of fail in sports he or she will do the other things with the use of academics knowledge.

Government Initiative towards promoting sports with education - Considering the developmental aspect of sports, the Government of India has also introduced 'Panchyat Yuva Krida Aur Khel Abhiyan (PYKKA)' to generate sports culture at the grass-root level. The objectives of the scheme are to provide sports infrastructure/equipments at the Panchyat level and to encourage youth in rural areas to participate in sports. Various competitions are organised from block-level to national-level to achieve these objectives. Planning Commission approved Rs 1,500 crore for this project in the 11th Five-Year Plan.

Sharing his views on importance of sports education, Yash Birla, Chairman, Yash Birla Group, said, "Our cocurricular activities not only make the students active and energetic but also enable to harness the in-depth potential of students. It enhances knowledge in many areas like sports, arts, life skills, etc.

Which benefits the student as well as the school. We celebrate annual day, sports day along with all National and regional festivals to develop positive attitude towards society and environment."

Arun K Khetan, Chief Executive Officer, Sports Education Development India Ltd (SEDIL) said the proposal by the government would improve the sports infrastructure and facilities currently offered.

"Boards like the Central Board of Secondary Education (CBSE) already have sports as a integral part of their schools. But in the overall space, the rigour, focus and subsidies that are required are missing. The National Sports Talent Search System will give the much-needed fillip to sports, through the budgetary allocation for it," said Khetan. Industry players believe that organization's like SEDIL, which is involved in all-round sports and fitness solutions in the country, will see a growth in their business.

The head of an international school based in south Mumbai said though large private schools offer sports and allied activities as a part of co-curricular activities; it is primarily the smaller schools and government institutions that would be benefitted from this provision.

"In schools, especially in Tier II/III towns, there are hardly any proper facilities or professionals for sports education. If a sport becomes a part of the curriculum, not only will schools take it seriously, they will also have to appoint professional bodies to manage these activities. However, it is not clear if the government will pay for these additional costs," said a senior education consultant.

At present, companies like SEDIL engage with individuals, students, schools and parents to promote sports and fitness. SEDIL for instance, has its cricket division, to present comprehensive and structured cricket development programs.

SEDIL also has 'Ready Steady Go', its physical education division, which is responsible for conducting comprehensive, progressive, age-appropriate health & fitness activities in schools through a quality and research-based curriculum. Under its special games division, it also has the future endeavor of Archery India Academy to create awareness of the sport.

Several other institutions in this space are also expected to see business generation if sports is taken seriously in India. KOOH Sports, for instance, is a sports company in the country, that its CEO Prabhu Srinivasan says is the only one to deliver end-to-end services in the sports domain by initiating interest in kids through in-school sports education programs, nurturing talent via specialized sports academies and a platform to promote the sporting talent of the country.

The platform is one of India's biggest athletic initiatives called 'Speedstar'. KOOH Sports launched Speedstar (a national hunt to find the country's fastest sprinter) two years ago with the same intent. The platform focuses on the talent that comes from rural parts of the country.

Srinivasan said that the company is currently working with more than 3,00000 children from over 80 schools, 15 specialized academies and the talent platform.

Rural sports too, is a space that has been paid little attention to, say school principals. The principal of a Kolkata-based school explained that Indians games like kabaddi, kite flying and martial arts are neglected, since there are neither many professionals teaching these sports, nor are they taught at big sports academies. "Making rural sports prominent will ensure that more companies will enter this space," she said.

Conclusion - Officials in the education and sports institutes have welcomed plans by the new government at the Centre to promote sports education in schools.

Industry officials said if the government's stated plans fructified in the future, not just would sports become a serious activity in school but sports education companies would also play a bigger role in having structured programs in sports.

Sports education brings educational principles into the field of sports. This does not include conventional sports training, but covers all aspects of sports education and development of students through structured programs.

"Health and fitness and their importance has been neglected for the longest time in the Indian education

system. Research suggests the productivity of a child increases by 30 per cent if he/she engages in physical activity. We are really glad the government took note and came forward with such an initiative. This will help garner interest in rural sports and more importantly, about health and fitness. While talent search creates the excitement, there is a need for a well-rounded Programme that create a meaningful movement or change,”

Reference :-

1. Personal Research.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Medical Negligence Against Professional Doctors

Ramesh Kumar Shukla*

Abstract - Medical negligence is not very uncommon; every now and then cases of medical negligence are reported in the electronic media. Medical Negligence is doing something that one is not supposed to do, or failing to do something that one is supposed to do. It is important to know what constitutes medical negligence. A doctor owes certain duties to the patient who consults him for illness. A deficiency in this duty results in negligence. A basic knowledge of how medical negligence is adjudicated in the various judicial courts of India will help a doctor to practice his profession without undue worry about facing litigation for alleged medical negligence. This study is planned to give a briefing about the legislative process and guidelines for doctors so that a better understanding of medico legal issues.

Introduction - Medical negligence, now days have become one of the serious issues in India. Our experience tells us that medical profession, one of the noblest professions, is not immune to negligence which at times results in death of patient or complete / partial impairment of limbs, or culminates into another misery. Medical negligence or malpractice can be defined as "Doing something which a prudent and reasonable man would not do, or omission to do something which a reasonable man would do"[1] or in other terms, it can also be defined as "Want of reasonable degree of care and skill or will full negligence, on the part of a medical practitioner in the treatment of a patient with whom a relationship of professional attendant is established, so as to lead to his bodily injury or the loss of his life."Negligence arises if the following things are satisfied:

- **Duty –** Existence of a duty of care by the doctor
- **Dereliction –** The physician must conform to the standard of a "prudent physician" under similar circumstances
- **Direct causation –** Failure to exercise a duty of care must lead to damage
- **Damage –** The damage should be of a type that would have been foreseen by a reasonable physician.

High degree of negligence is necessary to prove the charge of criminal negligence u/s 304-A IPC. For fixing criminal liability on a doctor or surgeon, the standard of negligence required to be proved should be as high as can be described as "gross negligence". It is not merely a lack of necessary care, attention and skill.

The Supreme Court held that "Thus a doctor can't be held criminally responsible for patient's death unless his negligence or incompetence showed such disregard for life and safety of his patient as to amount to a crime against the State". Court further adds, "Thus, when a patient agrees to go for medical treatment or surgical operation, every careless act of the medical man can't be termed as 'Criminal'. It can be termed 'Criminal' only when the medical man exhibits as gross lack of competence or inaction and wanton indifference to his patient's safety and which is found to have arisen from gross ignorance or gross negligence.

Aims and Objectives of the project is to present a study on medical negligence in India with references to Madhya Pradesh.

Essential Ingredient of Negligence - Negligence is simply the failure to exercise due care. The three ingredients of negligence are as follows:

1. The defendant owes a duty of care to the plaintiff.
2. The defendant has breached this duty of care.
3. The plaintiff has suffered an injury due to this breach.

Medical negligence is no different. It is only that in a medical negligence case, most often, the doctor is the defendant. There are certain definitions and questions that tend to be understood.

Liabilities of Professional Doctors

1. When does a duty arise? It is well known that a doctor owes a duty of care to his patient. This duty can either be a contractual duty or a duty arising out of tort law. In some cases, however, though a doctor-patient relationship is not established, the courts have imposed a duty upon the doctor. In the words of the Supreme Court "every doctor, at the governmental hospital or elsewhere, has a professional obligation to extend his services with due expertise for protecting life" (Parmanand Kataria vs. Union of India). These cases are however, clearly restricted to situations where there is danger to the life of the person. Impliedly, therefore, in other circumstances the doctor does not owe a duty.

2. What is the duty owed?The duty owed by a doctor towards his patient, in the words of the Supreme Court is to "bring to his task a reasonable degree of skill and knowledge" and to exercise "a reasonable degree of care" (Laxman vs. Trimback). The doctor, in other words, does not have to adhere to the highest or sink to the lowest degree

*Researcher Scholar, LNCT University, School of Legal Studies, Bhopal (M.P.) INDIA

of care and competence in the light of the circumstance. A doctor, therefore, does not have to ensure that every patient who comes to him is cured. He has to only ensure that he confers a reasonable degree of care and competence.

3. **Reasonable degree of care -** Reasonable degree of care and skill means that the degree of care and competence that an "ordinary competent member of the profession who professes to have those skills would exercise in the circumstance in question." At this stage, it may be necessary to note the distinction between the standard of care and the degree of care. The standard of care is a constant and remains the same in all cases. It is the requirement that the conduct of the doctor be reasonable and need not necessarily conform to the highest degree of care or the lowest degree of care possible. The degree of care is a variable and depends on the circumstance. It isused to refer to what actually amounts to reasonableness in a given situation.

Thus, though the same standard of care is expected from a generalist and a specialist, the degree of care would be different. In other words, both are expected to take reasonable care but what amounts to reasonable care with regard to the specialist differs from what amount of reasonable care is standard for the generalist. In fact, the law expects the specialist to exercise the ordinary skill of this speciality and not of any ordinary doctor. Though the courts have accepted the need to impose a higher degree of duty on a specialist, they have refused to lower it in the case of a novice.

Another question that arises is with regard to the knowledge that is expected from a doctor. Should it include the latest developments in the field, hence require constant updating or is it enough to follow what has been traditionally followed? It has been recognised by the courts that what amounts to reasonableness changes with time. The standard, as stated clearly herein before requires that the doctor possess reasonable knowledge. Hence, we can conclude that a doctor has to constantly update his knowledge to meet the standard expected of him. Furthermore, since only reasonable knowledge is required, it may not be necessary for him to be aware of all the developments that have taken place.

4. **When does the liability arise?** The liability of a doctor arises not when the patient has suffered any injury, but when the injury has resulted due to the conduct of the doctor, which has fallen below that of reasonable care. In other words, the doctor is not liable for every injury suffered by a patient. He is liable for only those that are a consequence of a breach of his duty. Hence, once the existence of a duty has been established, the plaintiff must still prove the breach of duty and the causation. In case there is no breach or the breach did not cause the damage, the doctor will not be liable. In order to show the breach of duty, the burden on the plaintiff would be to first show what is considered as reasonable under those circumstances and then that the conduct of the doctor was below this degree. It must be noted that it is not sufficient to prove a breach, to merely show that there exists a body of opinion which goes against the practice/conduct of the doctor.

With regard to causation, the court has held that it must be shown that of all the possible reasons for the injury, the breach of duty of the doctor was the most probable cause. It is not sufficient to show that the breach of duty is merely one of the probable causes. Hence, if the possible causes of an injury are the negligence of a third party, an accident, or a breach of duty care of the doctor, then it must be established that the breach of duty of care of the doctor was the most probable cause of the injury to discharge the burden of proof on the plaintiff.

5. **When there is no liability -** A doctor is not necessarily liable in all cases where a patient has suffered an injury. This may either be due to the fact that he has a valid defence or that he has not breached the duty of care. Error of judgment can either be a mere error of judgment or error of judgment due to negligence. Only in the case of the former, it has been recognised by the courts as not being a breach of the duty of care. It can be described as the recognition in law of the human fallibility in all spheres of life. A mere error of judgment occurs when a doctor makes a decision that turns out to be wrong. It is situation in which only in retrospect can we say there was an error. At the time when the decision was made, it did not seem wrong. If, however, due consideration of all the factors was not taken, then it would amount to an error of judgment due to negligence.

How Constitutes Medical Negligence?Failure of an operation and side effects are not negligence. The term negligence is defined as the absence or lack of care that a reasonable person should have taken in the circumstances of the case. In the allegation of negligence in a case of wrist drop, the following observations were made. Nothing has been mentioned in the complaint or in the grounds of appeal about the type of care desired from the doctor in which he failed. It is not said anywhere what type of negligence was done during the course of the operation. Nerves may be cut down at the time of operation and mere cutting of a nerve does not amount to negligence. It is not said that it has been deliberately done. To the contrary it is also not said that the nerves were cut in the operation and it was not cut at the time of the accident. No expert evidence whatsoever has been produced. Only the report of the Chief Medical Officer of Haridwar has been produced wherein it said that the patient is a case of post-traumatic wrist drop. It is not said that it is due to any operation or the negligence of the doctor. The mere allegation will not make out a case of negligence, unless it is proved by reliable evidence and is supported by expert evidence. It is true that the operation has been performed. It is also true that the Complainant has many expenses but unless the negligence of the doctor is proved, she is not entitled to any compensation.

It is now a settled principle of law that a medical practitioner will bring to his task a reasonable degree of

skill and knowledge and must exercise a reasonable degree of care.

Neither the very highest nor the very lowest degree of care and competence judged in the light of circumstances in each case is what the law requires. Judged from this yardstick, post-operative infection or shortening of the leg was not due to any negligence or deficiency in service on the part of the opposite party Appellant. Deficiency in service thus cannot be fastened on the opposite party.

What is the standard of care? In a case that led to visual impairment as a side effect, the following observations were made. The literature with regard to lariago clearly mentioned that the side effect of this medicine if taken for a longer duration can effect eyesight but this is not a fact in this case. Besides, there is no expert evidence on record to show that use of this medicine caused damage to the patient's eyesight. Even for arguments sake, if it is accepted that this medicine caused damage to the patient's eyesight, if the Respondent-doctor is one who has advised his patient to use this medicine after an examination in which he found the patient to be suffering from malaria, in that case as well the doctor-Respondent cannot be held guilty of negligence or deficient in his service. However, as stated above in this case the medicine has been used by the patient in low doses for a few days and there is no expert evidence to show that the use of medicine has affected his eyesight. Therefore, the Complainant-Appellant has failed to prove that the Respondent was negligent and deficient in his duty as a doctor.

Conclusion - Mere inadvertence or some degree of want of adequate care and caution might create civil liability but would not suffice to hold doctor criminally liable."To convict, therefore, a doctor, the prosecution has to come out with a case of high degree of negligence on the part of the doctor. The courts have, therefore, always insisted on the case of alleged criminal offence against doctor, causing death of his patient during treatment, that the act complained against the doctor must show negligence or rashness of such a higher degree as to indicate a mental state, which can be described as totally apathetic towards the patient. Such gross negligence alone is punishable".

Court further adds, "Criminal responsibility carries substantial moral overtones. Some of life's misfortunes are accidents for which no body is morally responsible, others are wrong for which responsibility is diffuse, yet others are instances of culpable conduct & constitutes grounds for compensation & at times for punishment. To distinguish between these categories requires careful, morally sensitive & scientifically informed analysis".

References :-

1. Tamuli RP. Medicolegal Investigation of Medical Negligence in India: A Report of Forensic Autopsy Case. J Forensic Sci Med 2016;2:167-70.
2. Pillay VV. Textbook of Forensic Medicine and Toxicology. 16th ed. Hyderabad: Paras Medical Publisher; 2011. p. 31-3.
3. Reddy KS. The Essentials of Forensic Medicine and Toxicology. 33rd ed.Hyderabad: K Suguna Devi; 2012. p. 32-8.
4. Dr. Akhil Kumar Jain v. Lallan Prasad, II (2004) CPJ 504
5. Ajay Kumar v. Dr. Devendra Nath, II (2004) CPJ 482
6. Dr. Akhil Kumar Jain v. Lallan Prasad, II (2004) CPJ 504
7. PUNEET YADAV, LL.M FINAL, NATIONAL LAW INSTITUTE UNIVERSITY (NLIU),LL.M, Final Semester (Science, Technology & Law), National Law Institute University (NLIU), Bhopal

****

Cyber Crimes Against Women

Rajeev Kumar*

Abstract - Any criminal activity that uses a computer either as an instrumentally, target or means for perpetuating further crimes comes within the ambit of cyber crime. The origin of cyber crime is to be found in the growing dependence on computers in modern life. In the present 21st century where everything from microwave ovens and refrigerators to nuclear plants are being run by computer, cyber crime has assumed sinister application. Cyber crime is the latest and perhaps the most complicated problems in the cyber world. Cyber crime may be said to be those species, of which genus is the conventional crime and where either the computer is an object or subject of constituting crime.
Key Words - Pornography, Obsession for love, Revenge & hate.

Meaning of Cyber Crime - A generalized definition of cyber crime may be "unlawful acts wherein the computer is either a tool or target or both". The computer may be used as a tool in these kinds of activity- financial crimes, sale of illegal articles, pornography, online gambling, intellectual property crime, e-mail spoofing, forgery, cyber defamation, cyber stalking. The computer may however be target for unlawful acts in these cases- unauthorized access to computer/ computer system/computer networks, theft of information contained in the electronic form, e-mail bombing, data didling, salami attacks, logic bombs, Trojan attacks, internet time thefts, web jacking; theft of computer system, physically damaging the computer system etc.

Cyber crime has been a problem as early as the late 1970's. With the ever-changing technology, cyber crime offenders are right there, keeping up with new ways to attack possible Internet victims: While the Internet can bring purpose and even joy to our technological lives, it .has a way of creating its negative side effects too. 'Computer crime' or 'cyber crime' refers to any crime that involves a computer and a network; where the computers may or may not have played an instrumental part in the commission of a crime: 'Net crime' refers, more precisely, to criminal exploitation of the Internet Issues surrounding this type of crime have become high-profile, particularly those surrounding hacking, copyright infringement; child pornography, and child grooming. There are also problems of privacy when confidential information is lost or intercepted, lawfully or otherwise.

Types of Cyber Crimes against Women - Cyber-Stalking 'Cyber stalking' occurs when a person is followed and pursued online. Their privacy is invaded, their every move is watched. It is a form of harassment, and can disrupt the life of the victim and leave her/ him very afraid and threatened. Stalking or being 'followed' is the problem that many people, especially women, are familiar with. Sometimes these problems (harassment & stalking) can occur over the Internet. This is known as cyber stalking. So 'stalking' can be defined as a willful conduct involving repeated or continuing harassment of another individual that actually causes the victim to feel terrorized, frightened, intimidated, threatened, harassed or molested. In Cyber stalking, the internet is used to pursue, harass or contact another in unsolicited fashion. The term can also apply to a "traditional" stalker who uses technology to trace and locate the victim and their movements more easily. A cyber stalker's intent is to harm their intended victim, using the anonymity and untraceable distance of technology. In many situations, the victims can never discover the identity of the cyber stalkers who hurt them, despite their lives being completely upended by the perpetrator. Main' targets of cyber stalking are mostly females, children, emotionally weak or unstable etc. It is believed that over 75% of the victims are female. 1 The motives behind cyber stalking may be:

- Sexual harassment
- Obsession for love
- Revenge and hate
- Ego and power trips

Cyber stalkers can be categorized into three types - The Common Obsession Cyber Stalker the common obsession stalkers refuse to believe that their relationship is over. Do not be misled by believing such stalkers are harmlessly in love.

The Delusional Cyber Stalker - The next type is of the delusional stalkers. They may be suffering from some mental illness like schizophrenia etc & have a false belief that keeps them tied to their victims. They assume that the victim loves them even though they have never met. A delusional stalker is usually a loner & most often chooses victims who are married woman, a celebrity or doctors, teachers, etc. Those in the noble & helping professions

* Research Scholar, School Of Legal Studies, LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA

like doctors, teachers etc. are at often at risk for attracting a delusional stalker. Delusional stalkers are very difficult to shake off.

The Vengeful Cyber Stalker - These cyber stalkers arc angry at their victim due to some minor reason- either real or imagined. Typical examples are disgruntled employees. These stalkers may be stalking to get even & take revenge and believe that “they” have been victimized. Ex-spouses can turn into this type of stalker.

The Delhi Police had registered India’s ‘First Case of Cyber stalking. One Mrs. Kohli complained to the police against the person who was using her identity to chat over the Internet at the website `**www.mirc.com**’ mostly in the Delhi channel for four consecutive days. Mrs. Kohli further complained that the person was chatting on the Net, using her name and giving her address and was talking in obscene language. The same person was also deliberately giving her telephone number to other chatters encouraging them to call her at odd hours. Consequently, Mrs. Kohli received almost 40 calls in three days mostly at odd hours, even from remote places such as Kuwait, Cochin, Bombay and Ahmedabad. The said calls created havoc in the personal life and mental peace of Mrs. Kohli, ultimately she decided to report the matter. Consequently, the IP addresses were traced out and the police investigated the entire matter and ultimately arrested Mr. Manish Kathuria, and a case was registered against him under section 509 of the Indian Penal Code (IPC)

Harassment through E-Mails - It means the act of harassing a user of the Internet using E-MAIL, usually by sending salacious, abusive, or intrusive messages. It is not a new concept. It is very similar to harassing through letters. ‘Harassment’ includes blackmailing, threatening, bullying, and even cheating via email. E-harassments are similar to the letter harassment but creates problem quite often when posted from fake IDs. Harassment consists of the intentional crossing of your emotional or physical safety boundaries. The legal definition of ‘harassment’, according to Black’s Law Dictionary, is:

“A course of conduct directed at a specific person that causes substantial emotional distress in such person and serves no legitimate purpose” or “Words, gestures, and actions which tend to annoy, alarm and abuse (verbally) another person.” Recently email account of the daughter of a legend music maestro was hacked into by an offender and he took control of some very private photographs, stored in the inbox of her email inbox. Her father moved a complaint to Union Home Ministry that his daughter is being blackmailed and threatened via email by some unknown person. Later the complaint was referred to the Delhi Police and the investigation of the case was taken up by Inspector Pawan Kumar under the supervision of ACP Sanjeev Yadav of elite special cell of Delhi Police. The unknown accused person allegedly blackmailed and threatened the girl via email that he would make some of her photographs public as found in her email inbox, if his demand of 100,000 dollar is not fulfilled by her. The aforesaid officers of elite wing of the Delhi Police, the special cell, did a commendable job. The special cell cops traced the Internet Protocol address (IP address) from which the emails were sent. The IP address can be tracked from the header of the email IDs. The. extortive emails sent by the offender were found to be sent mostly from Gmail account. The police tracked down one of the IP address to a residential address located at Mumbai and nabbed the accused person, whose name came to be known as Junaid Jameel Ahmed Khan who confessed his crime. The cops seized the hard disk of the computer from which the alleged emails were sent, prepared the mirror image of the same and the hard disk was sent to the Forensic Science Laboratory, Hyderabad for further analysis. The cops also seized the passport of the offender through which it was found that the offender was at Dubai on the same date when the extortive emails from Dubai were received by the girl, which clearly corroborates the offence committed by the offender. The police have seized and preserved the crucial digital evidences and other documentary evidences which would prove the guilt of the accused person. The special cell cops registered the case under Section 386 Indian Penal Code which deals with offence of extortion. The maximum punishment for such a crime, if proven guilty, is 10 years’ imprisonment. The offence is cognizable and non-bailable. The accused although hacked the email, but the police at the preliminary investigation stage did not invoked Section 66 of the Information Technology Act, because the modus operandi of the offender was not known as how he took control of the private photographs, which during investigation and seizure of the computer become apparent that the same has been copied into his computer by hacking the email ID and then Section 66 IT Act was added. The material evidence seized by the cops proved the involvement .of the offender as the IP address was also traced out to be of his residence.

Cyber Pornography - There is no settled definition of ‘pornography’ or `obscenity’. Pornography on the Internet is available in different formats. These range from pictures and short animated movies, to sound files and stories. The Internet also makes it possible to discuss sex, see live sex acts, and arrange sexual activities from computer screens. Although the Indian Constitution guarantees the fundamental right of freedom of speech and expression, but it has been held that a law against obscenity is constitutional.

The Supreme Court has defined ‘obscene’ as: offensive to modesty or decency; lewd, filthy, repulsive. Section 67 of the IT Act is the most serious Indian law, penalizing cyber pornography. Other Indian laws that deal with pornography include the Indecent Representation of Women (Prohibition) Act and the Indian Penal Code. Section 67 of the IT Act states:

“Whoever publishes or transmits or causes to be published in the electronic form, any material which is

lascivious or appeals to the prurient interest or if its effect is such as to tend to deprave and corrupt persons who are likely, having regard to all relevant circumstances, to read, see or hear the matter contained or embodied in it, shall be punished on first conviction with imprisonment of either description for a term which may extend to five years and with fine which may extend to one Lakh rupees and in the event of a second or subsequent conviction with imprisonment of either description for a term which may extend to ten years and also with fine which may extend to two Lakh rupees."

The Arzika case - Pornography and obscene electronic content has continued to engage the attention of the Indian mind. Cases pertaining to online obscenity, although reported in media, often have not been registered. The Arzika case was the first in this regard.

The Air Force Bal Bharti School case 2 - This case demonstrated how Section 67 of the Information Technology Act 2000 could be applicable for obscene content, created by a school going boy.

State of Tamilnadu Vs. Dr L. Prakash 3 - This was the landmark case in which Dr L. Prakash was sentenced to life imprisonment in a case, pertaining to online obscenity. This case was also landmark in a variety of ways since it demonstrated the resolve of the law enforcement and the judiciary as not to let off the hook one of the very educated and sophisticated professionals of India.

Email Spoofing - It is an e-mail activity in which the sender address and other parts of the e-mail header are altered to appear, though the e-mail originated from a different source, because core SMTP doesn't provide any authentication, it is easy to impersonate and forge emails. It is usually fraudulent, but can be legitimate. It is commonly used in spam and phishing e-mails to hide the origin of the e-mail message. By changing certain proper-ties of the e-mail, such as the From, Return-Path and Reply-To fields (which can be found in the message header), ill-intentioned users can make the e-mail appear to be from someone other than the actual sender. The result is that, although the e-mail appears to come from the address indicated in the From field (found in the e-mail headers), it actually comes from another source 4.

Most UNDELIVERABLE emails are sent by computers infected with email-type viruses, such as the KLEZ virus. These viruses infect the computers which do not have virus protection. Once the computer is infected, these viruses scan the address book and the inbox of the infected machine gathering email addresses. After gathering email addresses, the virus generates virus-infected email messages, randomly putting the harvested addresses that it found during its scan into the TO: and FROM: fields of bogus emails. The email may also contain a copy of the virus disguised as an attachment. These viruses act as an SMTP server, that is, they send these emails out when the infected computer is online. These email viruses are smart enough, as they do not use the actual email address of the infected computer. It is very likely that someone who has your email address on their computer got an email-spoofing virus and placed your email address into the FROM field of the bogus email. If the email bounces back, that is, if it is rejected by a receiving email server, it is sent back to your email address rather than to the computer from which it originated.

Prevention of Cyber Crime - Prevention is always better than cure. It is always better to take certain precaution while operating the net. Mumbai Police Cyber crime Cell, advocates the 5P mantra for online security: Precaution, Prevention, Protection, Preservation and Perseverance 5. A citizen should keep in mind the following things:

1. To prevent cyber stalking, avoid disclosing any information pertaining to one self. This is as good as disclosing your identity to strangers in public place.
2. Always avoid sending any photograph online particularly to strangers and chat friends as there have been incidents of misuse of the photographs.
3. Always use latest and up date anti virus soft-ware to guard against virus attacks.
4. Always keep back up volumes so that one may not suffer data loss in case of virus contamination
5. Never send your credit card number to any site that is not secured, to guard against frauds.
6. Always keep a watch on the sites that your children are accessing to prevent any kind of harassment or depravation in children.
7. It is better to use a security programme that gives control over the cookies and send information back to the site as leaving the cookies unguarded might prove fatal.
8. Website owners should watch traffic and check any irregularity on the site. Putting host-based intrusion detection devices on servers may do this.
9. Use of firewalls may be beneficial.
10. Web servers running public sites must be physically separately protected from internal corporate network.

Conclusion - Capacity of human mind is unfathomable. It is not possible to eliminate cyber crime from the cyber space. It is quite possible to check them. It is evident that no legislation has succeeded in totally eliminating cyber crime from the world. The only possible step is to make aware of their rights and duties (to report cyber crime as collective duty towards the society) and further making the application of laws more stringent to check crime.

References :-

1. Parthasarthy Pati - Cyber Crimes (2003) P. 79.
2. Mani's "A practical approach to Cyber laws". Kamal Publishers. First Edition, 2008.
3. Dr. Amita Verma "Cyber Crimes and Laws" Central Law Publishers. First Edition, 2009.
4. Rodney D. Ryder "Guide to Cyber Laws" Wadhwa Publications. Second Edition, 2003.
5. Various websites related with the issue.

Judicial Activism and its Parameters

RajPal Singh*

Abstract - In the process of adjudication, situations may arise to meet which; the legislature concerned has not made any provision for, since it is oftentimes not possible to provide for complicated situations which may arise in future. What then are the judges to do?. There are also innumerable situations which are deliberately left by the legislature for the exercise of the discretion of the judges by making their own rules depending on the demands of the situation. Our constitution has vested in the Supreme and the High Court to power to issue writ of various kinds. Though ordinarily, the jurisdiction of the supreme court on the High Courts to issue writs in ordinarily to be invoked by aggrieved parties, there are innumerable occasions when such aggrieved persons are unable to move the court for relief owing to their in ability or difficulty to do so.

The Supreme Court of India played a vital role in almost every part of the society through its self generated concept of judicial activism.

Keywords - Judicial Activism, Judicial Review, Masses Discrimination, Judicial Restraint, Activism & Self restraint.

Introduction - Indian constitution does not contain the term 'Judicial activism' but it has become an integral part of the present day functioning of the judiciary. There are different versions of 'Judicial activism' in legal literature. There are perhaps few major causes behind failure in defining the terms 'Judicial activism'

First term 'Judicial activism' takes on vastly a different colour in different parlance depending upon who is using it. Some politicians termed it as 'Judicial anarchy' judicial over activism and judicial despotism.[1] Albeit, in the eye of critics, the Indian Judiciary is also acting as a 'Super Executive"[2] Second cause in this that scholars deny the very existence of the term "They are of the view that the judiciary is doing its plain and nothing more. Kuldeep Singh, J. Former judge of Supreme Court of India blazed this new trend.[3] Some other 'Legal-eagles' steered the same course and referred to Judicial activism as 'Myth'[4] or as a 'farcical term'[5]

However, the judicial activism which has been a uniquely American development has been defined in many ways. [6]

According to the chamber's 20th Century Dictionary 'Activism' Means a policy of Vigorous action of a philosophy or creative well.

In Webster's new Twentieth Century dictionary (unabridged) the word "Activism" has been stated to mean "The doctrine or policy of being active or doing things with decision.

Black's dictionary defines, Judicial Activism as follows.

"As Judicial Philosophy which motivates judges depart from strict adherence to judicial precedents in favour of progressive and new social politics which are not always consistent with the restraint expected of appellate judges. It is commonly calling market by decisions calling for social engineering and occasionally their decisions represent intrusions into legislative and executive maters.[7]

If the dictionary meaning as taken into consideration, the criticism on judicial activism loses much of its teeth Justice Cardozo said.

"The law has its epochs of ebb and flow, The flood tides are on us. The old order may change yielding place to new, but the transition is never an easy process."

Judicial activism, therefore, means an activism by taking recourse to judicial process which in turns means judicial pronouncement on different intricate issues where by new legal philosophy can be evolved.

Ashok Kumar Johri writes - "Judicial activism" in fact, is not distinctly separate concept from usual judicial activities. The expression "Activism' Lexically as well as in ordinary parlance, means 'being active' doing things with decision and the expression 'activist' should mean 'one who favours intensified activities" in this sense ever judge is, or at least should be an activists, as justice Krishna Iyer observed, Every Judge is an activist either on the forwards gear or reverse.[8]

Thus Ashok Johri preferred sweeping generalization while referring every judge as an "activist." However from this observation we can easily make out that activism or otherwise depends on the judges personal subjectivity.

Whereas former CJ.JS Verma, has been more emphatic in laying down the exact norms of sufficient activist criterion. The learned judge has remarked.

Judicial Activism is required only when there is inertia in others. Proper judicial activism is that which ensures proper functioning of all organs and the best Kind of Judicial

*Research Scholar, School Of Legal Studies, LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA

activism is that which brings about results with the least judicial intervention if everyone else is working, we do not have to step in.[9]

According P.M. Bakshi conceptualizes the term 'Judicial activism' as follows – Judicial activism does not carry any statutory definition, in a rough manner, it is understood as connoting that function of judiciary which represents its active role in promoting justice. What is "Active" could itself be a matter of difference in opinion or, at least the expression of different shades of view, with varying emphasis in one sense, one can say that the court displays activism, whenever it affords a positive relief. In this sense, activism is not a new concepts, because the award of specific performance of a contract represents the grant of a positive relief. Instead of granting substituted remedy, such as damages, the court would be assisting the parties in realizing their legitimate expectations as per contract. Similarly, a degree for eviction granted in favour of owner of a property presents an "Active" elements because, the defendant is force to act in favour of the plaintiff.[10]

Justice PN Bhagwati[11] has vividly and elegantly explained judicial activism as under :-

"The Indian Judiciary has adopted an activist goal-oriented approach in the matter of interpretation of fundamental right. The judiciary has expanded the frontiers of fundamentals rights and in the process rewritten some parts of the constitution through a variety of techniques of judicial activism. The supreme court judiciary in India has undergone a radical change in the last few years and it is now increasingly being identical by justice as well as by people as" the last resort for the purpose of the bewildered. The Judicial activism has all though been beneficial for the mass of people, but any luminaries suggested own views. There is no precise definition that has been agreed on 'Judicial activism' either by a court or by any jurist. There has been a discernible facture on the part of every concerned quarter to give a comprehensive definition on this concept. However, what everyone seems to agree upon is the relation between the judicial power and judicial activism. Obviously the judiciary under any type of constitution can play an active role, when it performs on or many or all of the following functions.

(1) While interpreting the meaning and scope of a statutory provision or the statute itself made by a competent legislature.
(2) While maintaing the balance between a federation and its federating units or among the units per se.
(3) While upholding the supremacy of the constitution when such a question has been brought before it (in an adversarial system of Justice)
(4) While proteding the fundamental rights and freedom of the citizens and others of they are guaranteed by a written constitution.
(5) While dealing with institutional conflicts viz the conflicts between legislature, executive and judiciary, and
(6) While interpreting the constitution itself with due regard to the intention of the frames of the constitution etc.

In all the above situations, the judiciary in a constitutional democracy can play an active role through the means of judicial review. However the judiciary can also refuse to entertain a question when brought or referred to it, either for adjudications or for its opinion. In such a case, the judiciary can assert its power of such refusal on grounds like lack of jurisdiction or doctrine of political questions. The manner, degree and level of activism may vary depending on the limitations imposed by the constitution and other factors which include the comparative strengths and stability of the other two organs of the state and the willingness of the judiciary on the whole play a political role in changing society.

Judicial Review – It means the power of the higher judiciary to test the validity of any law passed by legislature or any executive action taken by the executive branch of the state including administrative actions taken by the instrumentality of the state. It also means to exercise this power in fields precluded for interference by the judiciary it this preclusion seems to generate monopolistic or undemocratic system of working or seems generate injustice, exploitation of the massage discrimination and arbitrariness or concentration of power to few.

Judicial restraint is also related to judicial activism. Judicial restraint is the anti-thesis of the term judicial activism. It denotes self control exercised by the judiciary. In modern perspective this term denotes clinching to very legalistic approach which prefers orthodoxy and refuses to adopt dynamical needs of a changing society.

While explaining the meaning of activism and "Self Restraint" Robert posner said, "Many judicial decisions implicating activism and self restraint have nothing to do with the power of the court, but rather dealt with the power of the other branches. Any activism or restraint is limited public law, it is not extended to private law. "The broad meaning of" restraint, according to posner is nothing but the structural restraint to limit the courts power over other government institutional.[12]

According to Ahron Barak, "Activism and self restraint are two extremes of continuum we can speak of degrees and activism and degree of self restraint, there are no criteria for defining activism & self restraint.[13]

The judiciary has its own roles to play in the democracy. It cannot adopt hands off policy when unconstitutional steps are being taken by the government or when it come to its notice that the basic human rights, granted under the constitution is violated flagrantly with the active connivance the state. Bandhua Mukti Morcha case[14] Labour Case,[15] MC Mehta,[16] Hussainara Khatoon[17] Menka Gandhi,[18] and vishakha,[19] are some of the land mark cases concerning this approach.

The era of activism on issue of land reform and right to property and emergency activism typified in Shivkant Shukla manifests reactionary judicial activism, while the progressive judicial activism commences with Golaknath & Keshavanand cases culminates wholly different genre of social action litigation[20]

The judiciary never crossed its limits, but the executive

is doing it routinely. After the elections are over, the Governments forgets its accountability to the people. It is the judiciary who keep it in check. The constitution of India is based on the principle of "Check and balance" The question often is raised about the accountability of judiciary, but those who argue such, forget the facts that judicial accountability is fixed within the provisions of the constitution. The judges accountability rests with their conscience, while doing justice defending his order under public interest litigation, Hon'ble justice PN. Bahagwati the former chief Justice of India said "Article 32(2) requires the courts to enforce the fundamental rights through appropriate proceedings[21] In (First) judges case, Desai J. Said, "Judges are independent of the broad accountability to the nation and its indigent and injustice ridden millions[22]

Why Article 141 provides that the law declared by the Supreme Court is binding to all? Therefore neither their approach can be termed as either activist or over reach or restraint. In Every decision, in the words of chief justice Marshall, "They are expounding the constitution." And if the executive feels that the order as unconstitutional, they can challenged the same before the larger bench to set things right. There were instances when the larger bench realized that the order in question suffers from want of justice, they over ruled it.

The arguments that activists approach of the court put hindrance to the government in formulating its policies and enacting the legislations is also not correct. If people see the records, very few acts have been annulled by the Supreme Court in last sixty-Four years. As pointed out by Mr. S.Sorabjee "Law are not invalidated because the court disapproves the policy underlying the legislation or its wisdom. Statistics and research would establish that in vast majority of cases legislation especially Socio- economic legislation has been upheld" About framing of the policy, the court has declared first in Bank Nationalization and then Balco that it did not come in the way of economic policy of the government

Das Govind said regarding the issue of activism and restraint – "The court has throughout sought to be defender of rights of the people against the excess of executives – when the executive was seek or negligent the court were obliged to step into to ensure that the needs of the people have been meeting.

Conclusion - The constitution of India recognizes the Supreme court of India and the high court of the concerned state as "Constitutional court," having power to curtail all those legislative Act, executive acts and policies which are against the spirit of our great constitution. In the democracy. One may not have faith in the wisdom of the politician but one always up faith in the wisdom of the learned judges. The history of the sixty four years of the Indian Judiciary and the hundred of its pronouncements has proved on point beyond reasonable doubt that it is only and only the judiciary who has proved its institutional integrity and efficiency.

Thus the above explanation and conceptions it maybe said that judicial activism is nothing but a short of discharge of obligation on the part of the judiciary whatever its form may be, for judiciary has an obligation to expand and develop law so as to respond to hopes and aspirations of the people. While the executive and legislature failing to discharge their duties, could the judiciary be blamed for its activism? Certainly not here, judicial activism fills vaccum that non activism of the other institutions have created. Judicial activism in other words is, in effect, "democratisation" of the judicial process.

Judicial activism is the most essential part of judicial administration because the Government runs by the laws made by legislature as well as made by judiciary is not immune from mistake without judicial activism executive and legislature (Organ of the Government) shall become unbridled horse. Parameter of public interest litigation has glorious records for more than four Decades in Indian judiciary .

References :-

1. Surya Deva "Who will judged the judges. A critical preview of judicial activism", Delhi University law journal val 1997 P.P. 30-40 at page 30
2. Harshwardhan, Judial Acticism in India, Indian Journal of Politics val 26 Hos 1.2 1992 PP 134-49 al page 134
3. The Indian Express, January 5, 1997 at page 6
4. S.B. Jaisinghani, "It is Judiail Assertion" The Indian express. December 23, 1998 Page 6
5. H.D. Shourie "Should P.T.L. Be curbed" The times of India, February 23, 1997 Page 18
6. Jerry M. Berry. "Lobbging for the people the political Behaviour of public interest croceps, prevention university press, New Jersey, 1997 Page 6
7. Black's dictionary of law – Judicial activism definition Page 760
8. Ashok K. Johari, "Judicial Activism and social transformation" U.P. Journal of Political science, Val-1 No.1 January to Jun 1989 Page 26-37 at page 28
9. Justice Verm's Judicial Philosophy in the Indian Express January 23, 1998 at Page 7
10. Experts from Speech delivered on 26 April 1997 at Sardar Vallabh Bai Patel National Police Academy Hydrabad quoted in new dimension of justice page 84-85
11. Justice P.N. Bhagwati, Enforcement of fundamental rights, role of the court. Indian Bar Review vol 24 (1 & 2) 1997 Page 17
12. Ahron Barak Activism and self Restraint in "Constitutionalism Human Rights band the rule of law
13. Ibid 227
14. (1984) 3 S.C. 161
15. A.I.R. 1987 S.C. 656
16. A.I.R.1986 S.C. 180
17. (1980) 15 SCC 81
18. A.I.R. 1978 SC 597
19. (1997) 6 SCC 241
20. Judicial Activism in India Satho, Oxford 2005 (XIV)
21. Judicial Activism in India satheo, Oxford 2005, (Page 200)
22. A.I.R. 1982 SC 445

Recent Advances and Challenges in Compton Scattering from Heavier Metals&Directional Compton Profiles of Mo

M. D. Sharma*

Abstract - As Compton scattering is a powerful technique for the determination of electronic structure of materials,with the advent of high resolution in spectrometers, in the past two decades. Several measurements on single crystal materials have been carried out to determine electron momentum distribution using this technique. In this paper, I present a review of such studies on heavier metals and emphasis is made towards the challenges encountered.
Keywords - Compton scattering, Electron momentum distribution, Heavy metals, High resolution, Single Crystals.

Introduction - To determine the electronic structure of a material the use of Compton scattering has grown considerably in the last three and half decades. As this technique provides a test of *ab*-initio electronic structure theories, it is acknowledged as one of the most direct ways to test electron wave functions.

In this paper I present methodology of this technique through a measurement taken on single crystals of Mo. A review of studies on heavier metals is presented. Newer techniques are considered as well as emphasis on difficulties encountered in the interpretation of results is mentioned in brief. It is worthy to mention here that extensive work on low Z materials viz. simple metals, ionic crystals & semiconductors has been reported [1] earlier.

Experiment - In this technique one measures the intensity distribution of energy broadened Compton scattered radiation called Compton line shape or Compton Profile. Within the frame work of the Impulse approximation the non-relativistic double differential cross-section is proportional to the Compton profile $J(p_Z)$, which is the projection of the electron momentum density p (**p**) along the scattering vector direction. So, we get ground state momentum distribution of electron in the sample.

I used gamma-ray Compton spectrometer in which a radioactive source ^{241}Am provides the beam of photons of energy 59.54keV. As its half life is 458 years, its strength remains almost constant. An energy dispersive Ge detector is used to determine energy distribution photons scattered through a fixedangle as shown. Our spectrometer is similar to that of Manninen and Pakkari[2]

Molybdenum is a member of VI A group of periodic table having bcc structure with lattice constant **a**=5.9458 a.u.. It is extremely refractory and melts at 2610 C which makes it a very commonly used part of high temperature furnaces. It forms compounds like carbides, silicides and some of its metallic glasses have technological importance.

It was suggested by Sharma et al [3] to carry out measurements on single crystals of Mo for a better understanding of electronic structure and rigrous test of theoretical band structure calculations via the comparison of anisotropy of Compton profiles (difference between Compton profiles of two different orientations).

$\Delta J(\mathbf{p}_z) = J_{hkl}(\mathbf{p}_z) - J_{h'k'l'}(\mathbf{p}_z)$

We measured Compton Profiles along the three principal orientations of Mo

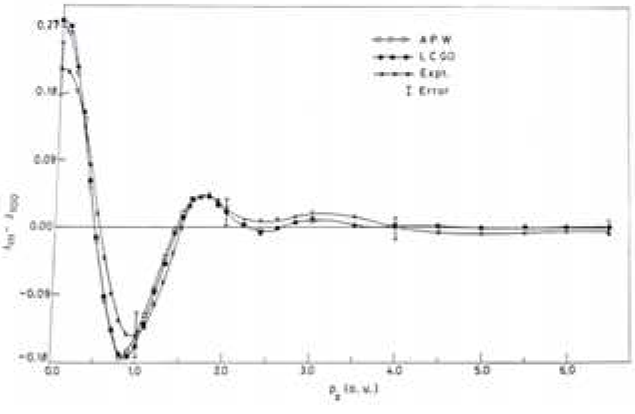

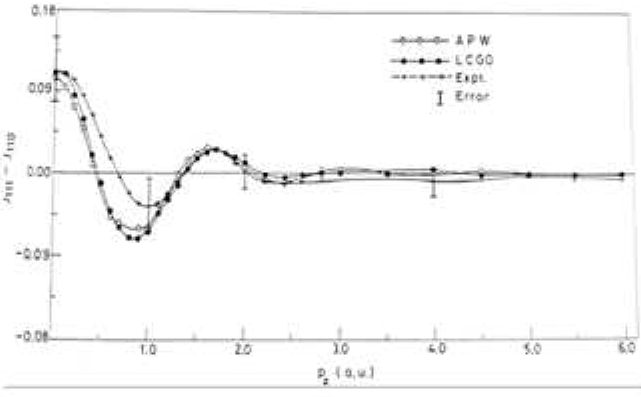

*Department of Physics, Govt. Dungar College, Bikaner (Raj.) INDIA

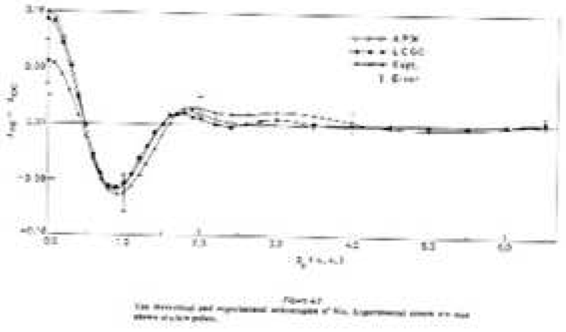

The anisotropic part of the momentum density measured via difference profiles is very well represented by APW and LCGO [4] models and is able to explain Fermi Surface Topology. For the discrepancies in theory and experiment for absolute profiles the directional dependent electron - electron correlation (LP correction) is required and inclusion of spin orbit coupling term in more refined band structure.

Studies of 5d metals – Investigation of electronic structures in heavy metals of the 5d group are few. Theoretical cp for Ta & W were first reported by Papnicolaouetal [5], Timms &Cooper[6] reported directional Cp in Pb using 412 keV& 59.54 keVã-rays. Later on Pandya etal [7] measure Cp of Pt. Studies on heavy metals like polycrystalline Sm, Yb, terbium has been carried out by group of Ahujaetal [8,9].

Advancements in technique:

(A). Since gammer-ray methods has low resolution, hence the synchrotron based experiments are of utmost interest for Compton spectroscopists.Synchrotron radiation is produced by high energy electrons travelling along a curved trajectory. These have high a brightness, coherence, monochromaticity and polarisation.Circularly polarised radiation is extremely useful for study of Magnetic Compton profiles.

1. Small beam size makes it possible to study small single crystals without loss of intensity.
2. High flux enables high resolution using imaging plate detectors time is also saved.
3. Incident beam energy is adjustable according to the experiment.
4. Magnetic EMD can be measured.

Due to these advantages, more and more researchers are using it.

(B). When a mono energetic beam of electrons in place of photon is used to measure EMD, it is called electron Compton scattering. The resolution is excellent & it has large cross-section. Though it is limited to low Z solids &thin films only.Recently Compton profile of few layer graphene is investigated using its technique[10]. They found valence CP bymeasuring EELS in a TEM and compared the results based on local density approximation band theory. They concluded that the ground state electronic density is more delocalised in graphene than in graphite.

Challenges - Still a lot of theoretical work is required to match and explain the experimental data.Bremsstrahlung, IA and impurity of primary radiation always create a challenge to experimental data.

Summary - In this paper, I report directional CP of Mo and review of CP of heavier metals. Also advancement and challenges regarding the technique are pointed in brief.

References:-

1. Cooper M.J. rep Progr Physics **48**, 415 (1985)
2. Manniner S. &Paakkari T. Nucl Inst. And Method **155**, 115(1978)
3. Sharma B.K., Ahuja B.L., Singh H. and Mohammad F.M., Pramana – J. phys. **40,** 399(1993)
4. Jani A.R., Tripathi G.S., Berner N.E. and Callaway J.,Phys. Rev.**B40** 1593(1989)
5. Papanicolaou N.I. and Bacalis N.C. &Papaconstantopolous D.A. Phys. Stat. sol. (b) **187**, 597(1986)
6. Timms, D.N. and Cooper M.J., Z. Naturforsch**48a**, 489(1993)
7. Pandaya R.K. Phys. Stat. sol. (b) **187**, (1997)
8. Ajuha B.L., Z. Nauturforsch**60a**, 512(2005)
9. Ajuha B.L., Malhotra H., Sharma M., Indian J. phy**79**, 239(2005)
10. Zhenbao Feng, Xiaoyan Zhang, Yoshiharu Sakurai, Zongliang Wang, Hefu Li &Haiquan Hu, Nature research (2019)**9**: 17313

****

कोयला श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा का अध्ययन (कोरबा जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. कृष्णकुमार शर्मा*

शोध सारांश – कोयला उद्योग प्रारंभ से ही शोधार्थियों का शोध का विषय रहा है। कभी श्रमिकों के जीवन स्तर को लेकर, औद्योगिक संबंधो को लेकर तो कभी उत्पादन क्षमता इत्यादि। वास्तव में औद्योगिक उत्पादकता मुख्य रूप से प्रबंध और श्रम की निपुणता पर निर्भर करती है, जो उद्योग की अर्थिक विकास को गतिप्रदान करती है। इसके लिए उस उद्योग विशेष में निहित श्रम कल्याण जैसे– शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास की सुविधाएँ एवं सामाजिक सुरक्षा के विभिन्न पहलुओं की भूमिका पर औद्योगिक शांति, श्रमिक संतोष, अच्छी कार्य दशाएँ निर्भर करती है। जिनका श्रमिकों की गतिविधियों से प्रत्यक्ष एवं उत्पादकता तथा राष्ट्रीय आय से सीधा संबंध होता है। इन बिन्दुओं के परिप्रेक्ष्य में छत्तीसगढ़ के एक प्रमुख औद्योगिक केन्द्र कोरबा में स्थित दक्षिण पूर्व कोयला प्रक्षेत्र में कार्यरत श्रमिकों के श्रम कल्याण से प्राप्त सुविधाएँ एवं सामाजिक सुरक्षा के विभिन्न पहलुओं का उत्पादकता पर प्रभाव एवं औचित्य का व्यष्टि स्तर पर जाँच अत्यंत सार्थक एवं महत्वपूर्ण हैं।

शब्द कुँजी – औद्योगीकरण, मानव संसाधन, सेवारत श्रमिक, उचित नियोजन एवं श्रम कल्याण।

प्रस्तावना – भारत में औद्योगिक मजदूरों की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। इनके लिए अनेक कारण उत्तरदायी हो सकते हैं, किन्तु इसके लिए प्रमुख रूप से अशिक्षा/पारिवारिक पृष्ठभूमि को जिम्मेदार माना जा सकता है। कोयला श्रमिकों के संदर्भ में यह बात और अधिक सार्थक हो जाता है। तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो समाज में ऐसा मान लिया जाता है कि कोयला श्रमिकों की औसत पारिश्रमिक दूसरे श्रमिकों से अधिक होता है, लेकिन सुरक्षा की दृष्टि से इसका जीवन कहीं ज्यादा असुरक्षित होता है, तथा उन पर किए जाने वाले सुरक्षात्मक उपाय न्यून होते है। इन सभी कारणों का प्रभाव कोयला श्रमिकों की जीवन की असुरक्षा और उसके जीवन स्तर पर पड़ता है। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि कोयला श्रमिकों का यथार्थ वैज्ञानिक अध्ययन किया जाए और इन पर श्रम कल्याण और सामाजिक सुरक्षा की वास्तविक स्थिति का परीक्षण किया जाए।

अध्ययन क्षेत्र के चुनाव के लिए किसी भी शोधकर्ता को कुछ महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखा जाता है – उस विशेष संस्थान की भौगोलिक स्थिति, आर्थिक सुविधा, समय की उपलब्धता, उत्तरदाता की प्रकृति आदि। इन सभी दृष्टिकोण से एस.ई.सी.एल. कोरबा कोयला प्रक्षेत्र मेरे लिए अनुकूल रहा है, जो विषय चयन का प्रमुख कारण रहा है।

उद्देश्य – प्रत्येक शोध कार्य किसी विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किया जाता है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए शोधपत्र **कोयला श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा का अध्ययन (कोरबा जिले के विशेष संदर्भ में)** के अग्रांकित उद्देश्य निर्धारित किये गये है–

1. श्रमिकों एवं प्रबंधको के मध्य मानवीय एवं औद्योगिक संबंधों की जानकारी प्राप्त करना।
2. सेवायोजकों एवं श्रमिक संघ संगठनों के बीच पारस्परिक संबंधों का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पनाएँ – शोधार्थी द्वारा सत्यान्वेषण एवं किसी तथ्य के निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए अवधारणाओं का होना आवश्यक है, ताकि अध्ययनकर्ता इस बात की जानकारी प्राप्त कर लेवे कि उसकी परिकल्पना कहाँ तक उचित थी, साथ ही परिकल्पनाओं का होना इसलिए भी आवश्यक होता है कि वह अपने अध्ययन की दिशा निर्धारित कर उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील हो सके। इसी सन्दर्भ में शोधार्थी द्वारा निम्न परिकल्पनाएँ की गई है– **कार्य की दशाओं (कार्यकारी वातावरण) में परिवर्तन मानकों के अनुकूल हुआ है।**

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – अनुसंधान कार्य करते समय अनुसंधानकर्ता को अध्ययन क्षेत्र का स्पष्ट एवं समुचित जानकारी होना आवश्यक है, ताकि अनुसंधानकर्ता उचित एवं उपयुक्त सामग्री का संकलन, वर्गीकरण, सारणीयन कर सके और सार्थक निष्कर्ष ज्ञात कर सके। प्रस्तावित शोध पत्र में – 'कोयला श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा के पहलुओं का विस्तृत अध्ययन किया गया है।'

शोध उपकरण–सांख्यिकी उपकरण– प्रस्तुत शोध पत्र के अध्ययन के लिए विषय से सम्बन्धित तथ्यों के संकलन के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार शोध प्रबन्ध में प्राथमिक आँकड़ों के लिए मुख्य रूप से **कोयला श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा का अध्ययन (कोरबा जिले के विशेष संदर्भ में)** पर केन्द्रित किया गया है। इसके लिये निम्न रीतियों का अनुप्रयोग किया गया है–

1. प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसन्धान
2. अप्रत्यक्ष मौखिक अनुसन्धान
3. स्थानीय स्त्रोतों और उत्तरदाताओं से सूचना–प्राप्ति
4. लाभार्थी परिवारों के सूचना देने वाले सूचकों द्वारा अनुसूची भरवाकर सूचना प्राप्त करना
5. अध्ययन वर्ष–2019 से वर्ष–2020 के आँकड़ों तथा जानकारियों के प्रयोग अवलम्बित है।

शोध व्याख्या– सामाजिक सुरक्षा की धारणा उतनी ही पुरानी है, जितना कि समाज, क्योंकि आदिकाल से ही प्रत्येक समाज अपने सदस्यों की

* सह प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डी.पी. विप्र महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

आवश्यकताओं की पूर्ति करने के प्रयास में किसी–न–किसी रूप में सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता रहा है। पहले सुरक्षा प्रदान करने का उत्तरदायित्व देश में परिवार, जाति तथा धार्मिक संस्थाओं के माध्यम से निभाया जाता था, किन्तु समाज कल्याण की अवधारणा की स्वीकृति के साथ–साथ यह उत्तरदायित्व राज्य द्वारा स्थापित विशिष्ट संगठनों द्वारा किया जाने लगा है।

भारत में सामाजिक सुरक्षा की वर्तमान व्यवस्था– भारत में सामाजिक सुरक्षा की निम्न लिखित व्यवस्थाएँ है:–

1. **श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम –** यह अधिनियम सन् 1923 में पास किया गया और 1 जुलाई 1924 को लागू किया गया था। इस अधिनियम में सन् 1926, 1929, 1933, 1937, 1938, 1939, 1946, 1956 और 1962 में संसोधन किया गए हैं। यह अधिनियम सेवायोजकों पर दायित्व डालता है कि वे श्रमिकों को उन दुर्घटनाओं के लिए जिनके कारण मृत्यु हो जाती है अथवा सात दिन से अधिक के लिए वे पूर्ण रूप से या अपूर्ण रूप से अयोग्य हो जाते हैं, क्षतिपूर्ति प्रदान करें। कुछ व्यवसयामनित बीमारियों के लिए भी क्षतिपूर्ति करने के प्रावधान है। यह अधिनियम रेलवें कर्मचारियों और अधिनियम की अनुसूचि–खख में निर्दिष्ट किसी पद पर व्यक्तियों पर लागू होता है। अनुसूचि–खख में कारखानों बागानों, मशीन से चलने वाले वाहनों के संचालन, निर्माण–कार्यो और जोखिम वाले कुछ अन्य व्यवसायों में कार्यरत व्यक्ति शामिल हैं। स्थायी व पूर्ण विकलांगता होने पर न्युनतम क्षतिपूर्ति राशि 90 हजार रूपयें और मृत्यु होने पर 80 हजार रूपयें निर्धारित की गई है। कर्मचारी की आयु और वेतन के हिसाब से मृत्यु होने पर अधिकतम क्षतिपूर्ति 4.56 लाख रूपयें और स्थायी पूर्ण विकलांगता होने पर 5.48 लाख रूपयें निर्धारित किया गया हैं।

2. **कामगार मुआवजा या क्षतिपूर्ति (संशोधन) अधिनियम 2000–** कामगार क्षतिपूर्ति अधिनियम (1923) को संशोधित करने विधेयक लोकसभा एवं राज्यसभा द्वारा पारित किए जाने के बाद राष्ट्रपति की स्वीकृति के साथ कामगार क्षतिपूर्ति (संशोधन) अधिनियम 2000 लागू हो गया हैं। इस अधिनियम के दौरान मृत्यु अथवा विकलांगता होने की दशा में कर्मचारी अथवा उनके परिजानों को दी जाने वाली क्षतिपुर्ति में वृद्धि प्रावधान हैं। स्थायी व पूर्ण विकलांगता होने पर न्युनतम मुआवजा राशि रू. 1,40,000 और मृत्यु होने पर रू. 1,20,000 निर्धारित की गई है। कर्मचारी की आयु और वेतन के हिसाब से मृत्यु होने पर अधिकतम मुआवजा रू. 9.14 लाख और स्थायी पूर्ण विकलांगता होने पर रू. 10.97 लाख और निर्धारित किया गया है। इस अधिनियम को 23 दिसम्बर, 2009 से कर्मचारी मुआवजा (संशोधन) अधिनियम 2009 कर दिया गया हैं।

3. **मातृत्व हितलाभ –** स्त्री श्रमिकों के लिए बच्चा पैदा होने के पहले और बाद में आराम भोजन और चिकित्सा की व्यवस्था के लिए सन् 1929 में बम्बई सरकार ने मातृत्व हितलाभ अधिनियम पास किया। इसके बाद सन् 1930 में मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र सन् 1938 में, उत्तरप्रदेश सन् 1939 में, बंगाल सन् 1943 में, पंजाब सन् 1944 में, बिहार सन् 1952 में, व केरल सन् 1955 में इसके अंतर्गत भी हितलाभ की व्यवस्था है।

केन्द्रीय सरकार ने सन् 1941 में काम करने वाली स्त्रियों के लिए मातृत्व हित लाभ अधिनियम बनाया। मातृत्व हितलाभ में विभिन्नता दूर करके एकरूपता लाने के लिए केन्द्रीय सरकार ने सन् 1961 में मातृत्व हितलाभ एक्ट पास किया। सन् 1972 में इस अधिनियम में संशोधन भी किये गए। एक स्त्री श्रमिक 160 दिन से अधिक कार्य करने मातृत्व हितलाभ पाने की अधिकारी हो जाती है, सन् 1972 में इस अधिनियम में कुछ संशोधन भी किए गए है। यह अधिनियम कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 के तहत् आने वाले कर्मचारियों को छोड़कर खानों, कारखानों, सर्कस, उद्योग और बागान तथा दुकानों और प्रतिष्ठानों पर लागू होता है, जहाँ 10 या इससे अधिक व्यक्ति कार्यरत है।

मातृत्व हित लाभ अधिनियम 1961 में नए संशोधन किए गए। 10 अगस्त 2016 को मातृत्व लाभ अधिनियम 1961 में संशोधन को स्वीकृति प्रदान की गई। संशोधित विधेयक में नौ से अधिक कर्मचारियों वाले प्रतिष्ठानों में कामकार महिलाओं के लिए मातृत्व अवकाश की अवधि 12 से बढ़ाकर 26 हफ्ते कर दी गई है। विधेयक में अवकाश का लाभ प्रदा की संभावित तारीख से आठ हफ्ते लिया जा सकता है। 1961 के मूल कानून में यह अवधि छह हफ्ते की थी। अगर महिलाओं को जिन्होनें तीन महीनों से कम उम् के बच्चे को कानून गोद लिया है, 12 हफ्ते का अवकाश दिया जाएगा। साथ ही सरोगेसी के जरिये संतान सुख सुख पाने वाली महिला को भी इतने ही हफ्ते का लाभ दिया जाएगा। यह अवधि उस तारिख से मानी जाएगी जब बच्चें को गोद लिया गया हो या सरोगेसी के जरिये संतान पाने वाली महिला को बच्चा सौंपा गया हो। संशोधित विधेयक में 50 या इससे अधिक कर्मचारियों वाले संस्थाओं में क्रेच की सुविधा मुहैया कराने को कहा गया है। साथ ही महिलाओं को दिन में चार बार क्रेच जाने की सुविधा देने को भी कहा गया है। नए विधेयक में काम के प्रकृति इजाजत दे तो महिलाओं को घर से काम करने की भी सुविधा देने की बात कही गई है। इसके अलावा प्रतिष्ठानों से कहा गया है कि वे महिला कर्मचारी की नियुक्ति के समय मातृत्व लाभ के बारे में जानकारी लिखित और ई–मेल के रूप में उपलब्ध कराएँ। यह अधिनियम दस या उससे अधिक व्यक्तियों के रोजगार वाले सभी प्रतिष्ठानों पर लागू है। ये संशोधन संगठित क्षेत्र के लगभग 18 लाख कार्यरत महिला कर्मचारियों को लाभ प्राप्त होगा। इस विधेयक में 50 या उससे अधिक कर्मचारियों वाले प्रतिष्ठानों के लिए शिशुगृह (क्रेच) की स्थापना के प्रावधान को अनिवार्य कर दिया गया हैं।

4. **कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948 –** भारत में सामाजिक बीमा के दिशा में यह प्रथम प्रयास कहा जा सकता है। कमचारी राज्य बीमा अधिनियम प्रो. वी.पी. अदरकर द्वारा सन् 1944 में प्रस्तुत योजना को संशोधित रूप है, सन् 1945 में प्रस्तुत योजना ने प्रो. अदरकर की योजना पर विशेष विचार करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय कार्यालय के दो विशेषज्ञों एम. स्टेक तथा आर राव को आमंत्रित किया। उनकी सिफारिशों के आधार पर 6 नवम्बर 1946 को एक बिल प्रस्तुत किया जो अप्रैल 1948 में कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम के रूप में पास हुआ।

1. **अधिनियम का क्षेत्र –** यह अधिनियम पूरे देश में प्रभावशाली है। यह अधिनियम उन समस्त कर्मचारियों पर लागु होता है जिनका मासिक वेतन 6,500 रू. से अधिक नहीं है और जो ऐसे चिरस्थायी कारखानों में लगे हुए है जिनमें विद्युत शक्ति का प्रयोग होता है तथा जिनमें 20 या अधिक व्यक्ति काम करते है। 1 मई 2010 से रू. 15,000 तक मासिक वेतन पाने वाले कर्मचारी इस बीमा योजना का लाभ ले सकते है।

2. **प्रशासन –** इस योजना का प्रशासन कर्मचारी राज्य बीमा निगम द्वारा किया जाता हैं। इसमें कर्मचारियों व मालिकों के केन्द्रीय व राज्य सरकारों तथा लोकसभा व डॉक्टर पेशे के कुल मिलाकर 39 प्रतिनिधि सदस्य है।

3. **वित्त व्यवस्था –** इस योजना की वित्त व्यवस्था कर्मचारी राज्य बीमा कोष से होती है। इस कोष का निर्माण श्रमिकों व सेवायोजकों के अंशदान

केन्द्रीय व राज्य सरकारों के अनुदान तथा स्थानीय सत्ता, व्यक्तियों या संस्थाओं के दान व उपहार से होता है। राज्य सरकारें विभिन्न व्यक्तियों की देखभाल और चिकित्सा पर होने वाले व्यय का कुछ भाग देती है। आजकल निगम तथा राज्य सरकार के बीच इसका अनुपात तीन और एक है। परंतु जिस तिथि से परिवारों को भी चिकित्सा सुविधा प्रदान की जाने लगी है, अंशदान घटकर 1/8 कर दिया गया है।

4. अंशदान – इस निधि में जनवरी 1997 से नियोजक मजदूरी का 4.75 प्रतिशत और श्रमिक मजदूरी का 1.75 प्रतिशत योगदान देते है। चिकित्सा पर व्यय में राजकीय सरकारों का भाग 12.5 प्रतिशत तक है। नियोजक नियोजिता योगदान के अतिरिक्त केन्द्र एवं राज्य सरकारें भी इस योजना को चलाने में योगदान देती है।

5. हितलाभ – कर्मचारी राज्य बीमा के अर्न्तगत 5 लाभ प्रदान किए जाते हैं। पंचदीप शब्द इन पाँच लाभों का द्योतक है। जिनमें से 4 लाभ अर्थात बीमारी, मातृत्व, हितलाभ, और आश्रित हितलाभ नकदी में प्रदान कि जाते है। और पाँचवा लाभ अर्थात चिकित्सा हितलाभ और गैर-मौद्रिक रूप से प्रदान किये जाते है।

6. बीमारी संबंधी हितलाभ – किसी भी बीमा किए हुए श्रमिक को बीमारी सर्टिफिकेट के आधार पर उपलब्ध होता है। किसी एक वर्ष में लगातार बीमार के लिए यह लाभ 91 दिन के अधिकतम समय के लिए नकद भुगतान के रूप में उपलब्ध होता है। दैनिक बीमारी संबंधी लाभ की मात्रा औसत दैनिक मजदूरी के आधे के बराबर है। जिस बीमा हुए श्रमिक को बीमारी संबंधी लाभ होगा, उसकी चिकित्सा किसी डिस्पेन्सी या निगम के अधिन संस्था द्वारा होना चाहिए।

7. मातृत्व हितलाभ – यह स्त्री श्रमिकों को गर्भवती होने की स्थिति में दिया जाता है, यह हितलाभ कम से कम 12 सप्ताह तक (6 सप्ताह बच्चा पैदा होने से पूर्व और 6 सप्ताह बाद में) दिया जाता है।

8. अंग हानि सुविधा – यह सुविधा किसी श्रमिक को औद्योगिक दुर्घटना या चोट की हालात में दी जाती है। अंगहीन लाभ क्षति की मात्रा पर निर्भर है। अस्थायी अंगहानि में श्रमिक को मजदूरी का 70 प्रतिशत अंगहानि काल में वेतन दिया जाता है। स्थायी पूर्ण हानि की स्थिति में श्रमिक को जीवनभर मजदूरी के 70 प्रतिशत तक मासिक पेंशन दी जाती है।

9. आश्रित हितलाभ – यदि किसी बीमित कर्मचारी की काम के समय में दुर्घटनाग्रस्त होकर मृत्यु हो जाती तो उसके आश्रितों को पेंशन प्राप्त होती है। आश्रितों से आशय उसकी विधवा पत्नी, वैधानिक पुत्रों और वैधानिक अविवाहित पुत्रियों से है। ये पेंशन अग्रलिखित दरों से सामयिक भुगतान के रूप में दी जाती है।

- कर्मचारी की विधवा स्त्री के लिए उसके जीवन पर्यन्त अथवा पुर्नविवाह कर लेने तक पूर्ण दर का का 3/5 वां भाग दिया जाता है।
- मृत कर्मचारी के प्रत्येक पुत्र के लिए 18 वर्ष की आयु तक 2/5 वां भाग दिया जायेगा तथा उसकी प्रत्येक अविवाहित पुत्री को 18 वर्ष की आयु तक या शादी होने तक पूर्ण दर का 2/5 वां भाग दिया जाएगा।

5. चिकित्सा सुविधा यह सुविधा उन श्रमिकों को उपलब्ध होगी जो बीमारी संबंधी लाभ या प्रसूति और अंगहीन लाभ के लिए प्रार्थना करें। बीमारी, चोट या प्रसूति अवस्था में इसकी अर्थ मुफ्त चिकित्सा उपलब्ध कराना होगा। यह चिकित्सा बीमा हुए श्रमिक के समस्त परिवार के लिए उपलब्ध होगी। पिछले कुछ वर्षों में निगम द्वारा कुछ ऐसे श्रमिकों को भी जो क्षय रोग, कैंसर, कुष्ठ और मानसिक रोगों से ग्रस्त है सुविधा देने का प्रयास भी किया गया हैं। बीमा किए हुए व्यक्तियों और उनके आश्रितों को अतिविशिष्ट सुविधाएँ उपलब्ध कराना कर्मचारी राज्य बीमा योजना का विशेष लक्षण हैं। सन् 1997-98 के दौरान ओपन-हार्ट सर्जरी, गुर्दा लगाने और कैंसर आदि के गंभीर इलाज के 1,000 रोगियों को सहायता प्रदान की गयी। सहायता की राशि 25,000 से लाख रूपये के बीच थी।

6. कर्मचारी भविष्य निधि और विविध उपलब्ध अधिनियम, 1952- यह अधिनियम जम्मू तथा कश्मीर को छोड़कर उन सभी कारखानों पर लागू होता है जिसमें 20 या अधिक श्रमिक कार्य करते हैं। इस अधिनियम के अन्तर्गत कर्मचारियों को सेवानिवृत्ति पर कई प्रकार के लाभ उपलब्ध है। वर्तमान में अधिनियम 1829 प्रतिष्ठानों पर लागू है। इस अधिनियम के अन्तर्गत तीन योजनाएँ तैयार की गई है-

1. कर्मचारी पेंशन योजना 1952, 2. कर्मचारी पेंशन योजना, 1955 3. जमा राशि से जुड़ी कर्मचारी बीमा योजना 1978, कर्मचारी भविष्य निधि संगठन अनेक सेवाएँ उपलब्ध कराता है जैसे - प्रतिष्ठान के सदस्यों द्वारा दी गई धनराशि का संग्रहण सदस्यों के खातों की देखरेख तथा सदस्यों और उनके आश्रितों को विभिन्न लाभकारी योजनाओं के तहत धनराशि का वितरण।

2. कर्मचारी भविष्य निधि योजना, 1952 - कर्मचारी भविष्य निधि योजना 1952 के प्रावधान के तहत एक कर्मचारी अपने प्रतिष्ठान में अनिवार्य जमा पूँजी के बल पर अपने को वित्तीय दृष्टि से सुरक्षित महसूस करता है। वर्तमान में अधिनियम के तहत लाभ पाने वाले कर्मचारियों की वेतन-सीमा 6,500 रूपयें मासिक है। 1 नवम्बर 1990 से प्रावधान किया गया है कर्मचारी फैक्टरी प्रतिष्ठान में नियुक्त होने की तिथि से ही भविष्य निधि का सदस्य हो जाएगा। 31 मार्च 2009 तक के आँकड़ों के अनुसार इस योजना के अन्तर्गत 5,73,063 प्रतिष्ठान और उद्योग है जिनके 470.72 लाख सदस्य है। वर्ष 2007-08 के दौरान 61,024 नए प्रतिष्ठान और उद्योगों को इस योजना में शामिल किया गया।

3. कर्मचारी पेंशन योजना, 1995 - कर्मचारी पेंशन योजना 1995, 16 नवम्बर 1995 से लागू हुई। इसका उद्देश्यों वृद्धावस्था में आर्थिक रूप से मजबुत बनाए रखना है 16 नवम्बर 1995 से भविश्य निधि कोष की सदस्यता लेने वाले नए सदस्य अनिवार्य रूप से इस योजना के सदस्य बन पाते है। कर्मचारी भविष्य निधि योजना 1995 लागू होने के साथ ही कर्मचारी परिवार (पेंशन योजना 1971 समाप्त हो गई तथा इस योजना के सदस्य नई योजना के सदस्य बन गए) कर्मचारी पेंशन योजना, 1995 सदस्यों तथा उनके परिवारों को निम्न लाभ उपलब्ध कराती हैं।

1. मासिक सदस्य पेंशन
2. पूर्ण विकलांगता पेंशन
3. पूंजी का प्रतिलाभ
4. पेंशन राशि के एक तिहाई का विनिमय
5. विधवा/विधुर पेंशन
6. बाल पेंशन
7. अनाथ पेंशन
8. विकलांग बच्चों के पेंशन
9. नामजद व्यक्ति को पेंशन
10. आश्रित माता/पिता को पेंशन

इस योजना के अंतर्गत धन की राशि व्यवस्था के लिए भविष्य निधि

में नियोक्ता की ओर से दिए जाने वाली मासिक वेतन की 8.33 प्रतिशत धनराशि को पेंशन कोष में जमा करा दिया जाता है। इसके अलावा केन्द्र सरकार वेतन 1.16 प्रतिशत के बराबर योगदान करती हैं। अधिकार पेंशन राशि 1 जून 2001 से 5000 रूपये से बढ़कर 6,500 रूपयें कर दी गई है।

4. जमा राशि से जुड़ी कर्मचारी बीमा योजना 1976 – सामाजिक सुरक्षा की एक अन्य महत्वपूर्ण योजना जमा राशि से जुड़ी कर्मचारी बीमा योजना 1976 है। इसे कर्मचारी भविष्यनिधि और छूट–प्राप्त भविष्य निधियों के सदस्यों के लिए अगस्त 1976 से लागू किया गया। इसके अनुसार कर्मचारी की मृत्यु होने पर उसके उत्तराधिकारी को भविष्य निधि में जमा धनराशि भी मिलेगी जो पिछले 12 महीनों में निधि में जमा औसत अधिवेश के बराबर होगी। इस योजना के अन्तर्गत अधिकतम भुगतान 60 हजार रूपयें होगा और इसके लिए कर्मचारियों को कोई अंशदान नही करना होगा।

5. आनुतोषिक भुगतान अधिनियम 1972 – यह अधिनियम उस प्रत्येक फैक्टरी, खान तेल क्षेत्र, बागान बंदरगाह, रेल्वे कंपनी, दुकान अथवा संस्थान, मोटर यातायात, उद्योग, अन्तर्देशीय जलपरिवहन संस्थाओं, स्थानीय निकायों क्लबों वाणिज्य व उद्योग मंडल न्याभिकर्ता कार्यालयों, कंपनियों, सोसाइटिक संघों तथा सर्कस जैसे संचल दलों पर लागू होता है जिसमें कि 10 या इससे अधिक कर्मचारी काम करते है। अधिनियम के अंतर्गत कोई भी कर्मचारी 5 वर्ष सेवा में रहने के बाद यदि अधिवार्षिकि या सेवानिवृत्ति या त्यागपत्र या मृत्यु या असमर्थता या सेवा समाप्ति के कारण यदि नौकर से अलग होता है तो वह आनुतोषिक प्राप्त करने का अधिकारी हो जाता है। मृत्यु अथवा असमर्थता की स्थिति में 5 वर्ष की सेवा की शर्त आवश्यक नहीं है और मृत्यु की स्थिति में आनुतोषिक का भुगतान उसके उत्तराधिकारी को किया जाता है।

एक्ट के अन्तर्गत सेवायोजकों द्धारा कर्मचारी को प्रत्येक वर्ष की सेवा पूरी होने या छः महीने से अधिक भाग की सेवा के लिए संबंधित कर्मचारी को रोजगार खत्म होने पर उससे पिछले तीन महीनों में मिलने वाली मजदूरियों के औसत पर आधारित पन्द्रह दिन की मजदूरी की दर से अनुग्रह रकम दिया की कुल मात्रा 20 महीने की मजदूरी से अधिक नहीं होगी जिसकी अधिकतम सीमा 3,50,000 रूपयें है।

6. सामाजिक सुरक्षा अधिनियम, 2008 – भारत सरकार ने असंगठित श्रमिक कानून बनाया गया जो सामाजिक सुरक्षा अधिनियम 2008 के नाम से है। यह अधिनियम राष्ट्रीय स्तर पर संवैधानिक राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा देने कि सिफारिश करता है।

निष्कर्ष– कोयला उद्योग में लागू श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा अधिनियम के प्रावधानों के उद्देश्य के अनुरूप क्रियान्वयन हुआ है। जिससे श्रम कल्याण में वृद्धि हुई है।

एस.ई.सी.एल. कोरबा कोयला प्रक्षेत्र में कोयला उद्योग में लागू श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा जैसे– कामगार क्षतिपूर्ति अधिनियम, कोयला खान भविष्य निधि तथा विविध प्रावधान, मातृत्वकालीन लाभ अधिनियम तथा ग्रेच्युटी भुगतान अधिनियम, श्रमिक पेंशन योजना 1987, परिवार पेंशन योजना के प्रावधानों का उद्देश्य के अनुरूप क्रियान्वयन हुआ है। जिससे श्रम कल्याण में वृद्धि हुई है। कोरबा कोयला प्रक्षेत्र में श्रमिकों को भविष्य निधि से वर्ष 2014–15 में 35.87 करोड़ रूपये जो बढ़कर 2018–19 में 63.14 करोड़ रूपये राशि का भुगतान किया गया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

Books :

1. भगोलीवाल, टी.एन. (1983), 'श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक संबंध' मेरठ संजीव प्रकाशन।
2. भगोलीवाल, टी.एन. (1995), 'श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक संबंध', प्रकाशन साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
3. मामोरिया एवं जैन (2005) 'भारतीय अर्थशास्त्र', प्रकाशन साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
4. मिश्र, पुरी (2006) 'भारतीय अर्थव्यवस्था' प्रकाशन हिमालया पब्लिशिंग हाउस।
5. सिन्हा, वी.सी. (1988) – 'श्रम अर्थशास्त्र', नई दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस।
6. पाटनी, आर.एल. (1983) – 'सेवीवर्गीय प्रबंध एवं औद्योगिक संबंध', मेरठ संजीव प्रकाशन।

Journals, Magazines & Reports:

1. Coal Mines Welfare Organisation, Annual Report 1992-93.
2. Coal India Corporate Journal, Calcutta.
3. Economic Survey India, Govt. (2006-07)
4. Indian Economic Association Annual, A profile (2012).
5. Indian Journal of Economics (2012-13).
6. Indian Mines Geological Survey of India, Calcutta.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

सामाजिक न्याय की अवधारणा और डॉ0 भीमराव अम्बेडकर : एक अवलोकन

सत्येन्द्र सिंह *

प्रस्तावना – न्याय, मानव समाज की आधारभूत आवश्यकता है। न्याय के अभाव में सुखी, शान्त व उन्नतशील समाज की कल्पना नही की जा सकती लेकिन, समाज में न्याय की स्थापना का काम आसान नही है। यह एक ऐसा आदर्श है जिसे हासिल करने के लिए कोशिश तो आदिकाल से ही की जाती रही है फिर भी मानव इतिहास में शायद ही कभी ऐसा समय आया हो जब समाज पूरी तौर पर न्यायपूर्ण रहा हो। मनुष्य स्वतन्त्र पैदा जरूर हुआ है लेकिन वह स्वतन्त्र कभी रह नही पाया। ऐसे गुलाम बना दिया गया उसे जैसे वह स्वतन्त्र रहने योग्य है ही नही। लेकिन मनुष्य को गुलाम किसी और ने नही बनाया बल्कि स्वंय मनुष्य ने ही बनाया है। चाहे ईश्वर के नाम पर हो, वेद-पुराणो के नाम पर, बाइबिल अथवा कुरान के नाम पर। इसके अतिरिक्त ताकत, सत्ता अथवा पैसे के बल पर भी मनुष्य ने, मनुष्य को, गुलाम बना कर रखा और जहॉ आजादी नही गुलामी हो वहॉ न्याय की अपेक्षा कैसे की जा सकती है? यह सच है कि खोई हुई आजादी और खोये हुए अधिकार भीख से नही मिला करते क्योंकि आजादी और अधिकार मॉगे नही जाते अपितु बल अथवा ताकत या फिर दोनो के इस्तेमाल से छीने जाते है। इसलिए इन्हे पुन: हासिल करने के लिए संघर्ष करना होता है।

सामाजिक न्याय की अवधारणा – एक विचार के रूप में सामाजिक न्याय की बुनियाद सभी मनुष्यो को समान मानने के आग्रह पर आधारित है। इसके मुताबिक किसी के साथ सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पूर्वाग्रहो के आधार पर भेदभाव नही होना चाहिए। हर किसी के पास इतने न्यूनतम संसाधन होने चाहिए कि वे 'उत्तम जीवन' की अपनी संकल्पना को धरातल पर उतार सके। विकसित हो या विकासशील, दोनो ही तरह के देशो में राजनीतिक सिद्धान्त के दायरे में सामाजिक न्याय की इस अवधारणा और उससे जुड़ी अभिव्यक्तियों का प्रमुखता से प्रयोग किया जाता है लेकिन इसका मतलब यह नही है कि उसका अर्थ हमेशा सुस्पष्ट ही होता है। सिद्धान्तकारो ने इस प्रत्यय का अपने-अपने तरीके से इस्तेमाल किया है। व्यावहारिक राजनीतिक के क्षेत्र में भी, भारत जैसे देश में सामाजिक न्याय का नारा वंचित समूहो की राजनीतिक गोलबंदी का एक प्रमुख आधार रहा है। उदारवादी मानकीय राजनीतिक सिद्धान्त में उदारवादी-समतावादी से आगे बढ़ते हुए सामाजिक न्याय के सिद्धांतीकरण में कई आयाम जुड़ते गये है मसलन, अल्पसंख्यक अधिकार, बहुसंस्कृतिवाद, मूलनिवासियों के अधिकार आदि। इसी तरह नारीवाद के दायरे में स्त्रियो के अधिकारों को लेकर भी विभिन्न स्तरों पर सिद्धांतीकरण हुआ है और स्त्री सशक्तीकरण के मुद्दो को उनके सामाजिक न्याय से जोड़ कर देखा जाने लगा है।[1]

यद्यपि एक विचार के रूप में विभिन्न धर्मो की बुनियादी शिक्षाओं में सामाजिक न्याय के विचार को देखा जा सकता है लेकिन अधिकांश धर्म या सम्प्रदाय जिस व्यवहारिक रूप में सामने आया था बाद में जिसे तरह उनका विकास हुआ उनमें कई तरह के ऊँच-नीच और भेदभाव जुड़ते गये। समाज विज्ञान में सामाजिक न्याय का विचार उत्तर-ज्ञानोदय काल में सामने आया और समय के साथ अधिकाधिक परिष्कृत होता गया। क्लासिकल उदारवाद ने मनुष्यों पर से हर तरह की पुरानी रूढ़ियो और परम्पराओं की जकड़न को खत्म किया। इसके तहत हर मनुष्य को स्वतन्त्रता देने और उसके साथ समानता का व्यावहार करने पर जोर जरूर था लेकिन ये सारी बाते औपचारिक स्वतन्त्रता या समानता तक की सिमटी हुई थी। बाद में उन्नीसवीं सदी की शुरूआत में कई उदारवादियों ने राज्य के हस्तक्षेप द्वारा व्यक्तियों की आर्थिक भलाई करने और उन्हे अपनी स्वतन्त्रता को उपभोग करने में समथ बनाने की वकालत की। कई यूटोपियाई समाजवादियसों ने भी एक ऐसे समाज की कल्पना की जहॉ आर्थिक, सामाजिक या सांस्कृतिक आधार पर लोगों के साथ भेदभाव न होता हो। सपष्टत: इन सभी विचारो में सामाजिक न्याय के प्रति गहरा सरोकार था। इसके बावजूद माक्र्स ने इन सभी विचारों की आलोचना की और जोर दिया कि न्याय जैसी अवधारणा की आवश्यकता पूंजीवादी के भीतर ही होती है क्योंकि इस तरह की व्यवस्था में उत्पादन के साधनों पर कब्जा जमाये कुछ लोग बहुसंख्यक सर्वहारा का शोषण करते है। उन्होने क्रान्ति के माध्यम से एक ऐसी व्यवस्था कायम करने का लक्ष्य रखा जहॉ हर कोई अपनी क्षमता के अनुसार काम करने और अपनी आवश्यकता के अनुसार चीजे हासिल करने की परिस्थितियॉ प्राप्त हो।[2]

लेकिन बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में मार्क्सवाद और उदारवाद का जो व्यावहारिक रूप सामने आया वह उनके आश्वासनों जैसा न हो कर विकृत था। मार्क्सवाद से प्रेरित रूसी क्रान्ति के कुछ वर्षो बाद ही स्तालिनवाद की सर्वसत्तावादी संरचनाएँ उभरने लगी। वही उदारवाद और पूँजीवाद ने आंतरिक जटिलताओं के कारण दुनिया को दो विश्व-युद्धो, महामंदी, फान्सीवाद और नाजीवाद जैसी भीषणताओं में धकेल दिया। पूँजीवाद को संकट से उबारने के लिए पूजीवादी देशो में क्लासिकल उदारवादी सूत्र से लेकर कीसंवादी नीतियों तक हर सम्भव उपाय अपनाने की कोशिश की गयी। इस पूरे संदर्भ में सामाजिक न्याय की बाते नेपथ्य में चली गयी या सिर्फ इनका दिखावे के तौर पर प्रयोग किया गया। इसी दौर में उपनिवेशवाद के खिलाफ चलने वाले संघर्षो में मानव-मुक्ति और समाज के कमजोर तबकों के हकों आदि की बाते जोरदार तरीके से उठायी गयी। खास तौर पर भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में सभी तबको के लिए सामाजिक न्याय के मुद्दे पर गम्भीर बहस चली। इस बहस से ही समाज के वंचित तबकों के लिए संसद

* शोध छात्र (यूजीसी-एस0आर0एफ0), राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

एवं नौकरियों में आरक्षण, अल्पसंख्यको को अपनी आस्था के अनुसार अधिकार देने और अपनी भाषा का संरक्षण करने जैसे प्रावधानों पर सहमति बनी। बाद में ये सहमतियॉ भारतीय संविधान का भाग बनी।[3]

इसी के साथ–साथ मानवीय उदारवादी सिद्धान्त में राज्य द्वारा समाज के कुछ तबको की भलाई या कल्याण के लिए ज्यादा आय वाले लोगो पर टैक्स लगाने का मसला विवादास्पद बना रहा। किसने पूँजीवाद को मंदी से उबारने के लिए राज्य के हस्तक्षेप के जारिये रोजगार पैदा करने के प्रावधानो का सुझाव दिया, लेकिन फ्रेड्रिख हेयक मिल्टन फ्रिडमैन और बाद में रॉबर्ट नॉजिक जैसे विद्धानो ने आर्थिक गतिविधियों में राज्य के हस्तक्षेप की आलोचना की ।इन लोगों का मानना था कि इससे व्यक्ति की स्वतन्त्रता और आर्थिक आजादी को चोट पहुचाती है। जॉन रॉल्स ने 1971 में अपनी पुस्तक 'अथियरी ऑफ जस्टिस' में ताकतवर दलीले दी आखिर क्यो समाज के कमजोर तबको की भलाई के लिए राज्य को सक्रिय हस्तक्षेप करना चाहिए। अपनी थियरी में रॉल्स शुद्ध प्रक्रियात्मक न्याय की अवधारणा प्रस्तुत करते हुए वितरणमूलक न्याय के लक्ष्य को हासिल करने की कोशिश करते हुए दिखाई देते है। अपने न्याय के सिद्धान्त में उन्होने हर किसी को समान स्वतन्त्रता के अधिकार की तरफदारी की। इसके साथ ही भेदमूलक सिद्धान्त के माध्यम से यह स्पष्ट किया कि सामाजिक और आर्थिक अंतरो को इस तरह समायोजित किया जाना चाहिए, कि इससे सबसे वंचित तबके को सबसे ज्यादा फायदा हो।[4]

बाद के वर्षो में रॉल्स के सिद्धांत की कई आलोचनाएॅ भी सामने आयी, जो दरअसल सामाजिक, न्याय के संदर्भ कई नये आयामों का प्रतिनिधित्व करती थी। इस संदर्भ में समुदायवादियों और नारीवादियो द्वारा की गयी आलोचनाओं का विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है। समुदायवादियों ने सामान्य तौर पर उदारवाद और विशेष रूप से रॉल्स के सिद्धांत की इसलिए आलोचना की, कि इसमें व्यक्त्यिों की अणुवादी संकल्पना पेश किया गया है। रॉल्स जिस व्यक्ति की संकल्पना करते है वह अपने संदर्भ और समुदाय से पूरी तरह कटा हुआ है बाद में 1980 के दशक के आखिरी वर्षो में, उदारवादियो ने समुदायवादियों की आलोचनाओं को उदारवाद के भीतर समायोजित करने की कोशिश की जिसके परिणामस्वरूप बहुसंस्कृतिवाद की संकल्पना करने की कोशिश की जिसके परिणामस्वरूप बहुसंस्कृतिवाद की संकल्पना सामने आयी। इसमें यह माना गया कि अल्पसंख्यक समूहो के साथ वास्तविक रूप से तभी न्याय हो सकता है जब उन्हे अपनी संस्कृति से जुड़े विविध पहलुओ की हिफाजत करने और उन्हे सार्वजनिक रूप से अभिव्यक्त करने की आजादी मिले। इसके लिए यह जरूरी है कि इनके समुदायिक अधिकारो को मान्यता दी जाए। इस तरह सैद्धांतिक विमर्श के स्तर पर बहुसंस्कृतिवाद ने सामाजिक न्याय की अवधारणा में एक नया आयाम जोड़ा।[5]

यहॉ उल्लेखनीय है कि साठ के दशक से ही परिचय में नारीवादी आंदोलन, नागरिक आधिकार आंदोलन, गे लेस्बियन और ट्रांस जेडंर आंदोलन और पर्यावारण आंदोलन तथा उभरने लगे थे। बाद के दशकों मे इनका प्रसार ज्यादा बढ़ा और इन्होने सैद्धन्तिक विमर्श को भी गहाराई प्रदान की। मसलन, नारीवादियों ने उदारवाद और रॉल्सवादी रूपरेखा की आलोचना की अपने विश्लेषण द्वारा उन्होने पितृसत्ता को नारीवादियों के समान हक के रास्ते में सबसे बड़ी रूकावट के रूप में रखाकित किया। इसी तरह गे– लेस्बियन और ट्रांस–जेडर लोगो ने समाज में 'सामान्य' या 'नार्मल' की वर्चसवी रूपरेखा पर सवाल उठाया और अपने लिए समान स्थिति की मॉग की। नागरिक अधिकार आन्दोलनो द्वारा पश्चिम में खास तोर पर अमेरिकी समाज में काले लोगो ने अपने लिए बराबरी की मॉग की। मूल निवासियो ने भी अपने सांस्कृतिक अधिकारों की मॉग करते हुए बहुत सारे आंदोलन किये है। बहुसंस्कृतिवादियों ने अपनी सैद्धांतिक रूपरेखा में इन सभी पहलुओं को समेटने की कोशिश की है। इस सभी पहलुओं ने सामाजिक न्याय के अर्थ मे कई नये आयाम जोड़े हैं इससे स्पष्ट होता है कि विविध समूहो मे लिए समाजिक न्याय का अलग–अलग अर्थ रहा है।[6]

असल में विकासशील समाजों में पश्चिमी समाजो की तुलना में सामाजिक न्याय रैडिकल रूप में सामने आया है मसलन, दक्षिण अफ्रीका में अश्वेत लोगों ने रंगभेद के खिलाफ और सत्ता में अपनी हिस्सेदारी के लिए जोरदार संघर्ष किया। इस संघर्ष की प्रकृति अमेरिकी में काले लोगों द्वारा चलाये गये संघर्ष से इस अर्थ में अलग थी कि दक्षिण अफ्रीका मे काले लोगों को ज्यादा दमनकारी स्थिति का सामना करना पड़ रहा था। इस संदर्भ में भारत का उदाहरण भी उल्लेखनीय है। बहुसंस्कृतिवाद ने जिन सामुदायिक अधिकारों पर जोर दिया। उनमें से कई अधिकार भारतीय संविधान में पहले से ही दर्ज है। लेकिन यहॉ सामाजिक न्याय वास्तविक राजनीति में संघर्ष का नारा बन कर उभरा। मसलन, भीमराव अम्बेडकर और उत्पीड़ित जातियों और समुदायों के कई नेता समाज के हसिये पर पड़ी जातियो को शिक्षित और संगठित होकर संघर्ष करते हुए अपने न्यायपूर्ण हक को हासिल करने की विरासत रच चुके थे। इसी तरह पचास और साठ के दशक में राममनोहर लोहिया ने इस बात पर जोर दिया कि पिछड़ों, दलितो, अल्पसंख्यकों और स्त्रियों को एकजुट होकर सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष करना चाहिए। लोहिया चाहते थे कि ये समूह एकजुट होकर सत्ता और नौकरियों में ऊँची जातियो के वर्चस्व को चुनौती दे। इस पृष्ठभूमि के साथ नब्बे के दशक के बाद सामाजिक न्याय भारतीय राजनीति का एक प्रमुख नारा बनता चला गया। इसके कारण अभी तक सत्ता से दूर रहे समूहों को सत्ता की राजनीति के केन्द्र मे आने का मौका मिला। गौरतलब है कि भारत में भी पर्यावरण के आन्दोलन चल रहे थे लेकिन ये लडाइयॉ स्थानीय समुदायों के अपने जल जंगल और जमीन, के संघर्ष से जुड़ी हुई है। इसी तरह विकासशील समाजों में अल्पसंख्यक समूह भी अपने खिलाफ पूर्वाग्रहो से लड़ते हुए अपने लिए ज्यादा बेहतर सुविधाओं की मॉग कर रहे है। इस अर्थ में सामाजिक न्याय का संघर्ष लोगों के अस्तित्व और अस्मिता से जुड़ा हुआ संघर्ष है।[7]

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर और सामाजिक न्याय – भारत में विशेषकर हिन्दू समाज में व्याप्त सामाजिक अन्याय ने ही डॉ0 अम्बेडकर को सामाजिक न्याय के स्वरूप और विषय पर चिन्तन करने के लिए बाध्य किया। जहॉ सभी क्षेत्रों में अन्याय, शोषण तथा उत्पीड़न होगा, वही न्याय की धारणा उद्भूत होगी। डॉ0 अम्बेडकर ने न्याय की परिभाषा 'न्याय, सामान्यत: स्वतंत्रता, समानता और भातृ भाव का ही दूसरा नाम है।' के रूप में कही। भारत को आजादी मिली और राजनीतिक जनतंत्र की स्थापना की गई जबकि डॉ0 अम्बेडकर कहते थे कि भारतीयों को मात्र राजनीतिक जनतंत्र से ही संतुष्ट नही होना चाहिये बल्कि एक सामाजिक जनतन्त्र भी बनाना चाहिए। क्योंकि राजनीतिक जनतंत्र से नही बल्कि सामाजिक स्वतन्त्रता से व्यक्ति आगे बढ़ता है विचार सम्पन्न होता है और अपने को अनेक रूपों में अभिव्यक्त करता है उसे कला एवं साहित्य के लिए भी अवसर मिलते है जिससे व्यक्ति के अन्तर्गत छिपी हुई प्रतिभाएॅ जागृत होती है और वह अपने भाग्य का निर्माण भी स्वयं करता है।

अम्बेडकर ने भारतीय व्यवस्था की दो केन्द्रीय विशेषताओं पर आक्षेप

किया। एक सांस्कृतिक रूप से लागू की गई असमानता एवं दुसरी आर्थिक असमानता। उनके सम्पूर्ण लेखनो एवं क्रियाओं में एक सामान्य सूत्र है – भारत में क्रान्ति सामाजिक–आर्थिक रूपान्तरण के लिए एक सास्कृतिक क्रान्ति आवश्यक है। एक ऐसी क्रान्ति जो न केवल भूतकालीन संस्कृति का विनाश करेगी वरन् इसके स्थान पर किसी मूल्यवान वस्तु का निर्माण भी करेगी।[8]

अम्बेडकर एक क्रान्तिकारी थे। अस्पृश्यता, हिन्दुत्व एवं ब्राह्मण जाति के विरूद्ध लड़ाई का उन्होने नेतृत्व किया। वे निश्चयी थे कि जाति व्यवस्था ने केवल अन्यायी है वरन् अनैतिक भी है। उन्होने एक नए विधान की स्थापना की, एक नए धर्म (नव बौद्धवाद) जिसका आधार हिन्दुत्व की सुस्पष्ट अस्वीकृति था। अम्बेडकर ने जाति व्यवस्था की प्रचण्ड आलोचना की। उनके लिए जातिवाद एवं अस्पृश्यता के विरूद्ध लड़ाई उनके कार्यक्रम में केन्द्रीय थी। अत: वे जाति द्वारा प्रस्तुत दो आधुनिक उपागमों के कटु आलोचक थे। उनके मतानुसार दोनों ही जातिवाद का वास्तविक समाधान न कर सके। उनकी यह मान्यता थी की समाज को स्वतन्त्रता, समानता एवं बन्धुत्व के तीन मूलभूत सिद्धान्तो पर आधारित होना चाहिए।[9]

उनका कहना था कि यदि जाति को नष्ट करना है तो वेदों और पुराणों में इसके धार्मिक आधार को भी नष्ट करना चाहिए। इन धर्म ग्रन्थों में विश्वास एक विधिकृत वर्ग नीति से अधिक कुछ नही है जो ब्राह्मणों की पक्षधर है 'यदि आप व्यवस्था में दरार लाना चाहते है तो आपको वेदों और शास्त्रो जो तर्क नैतिकता का कोई भाग अस्वीकार करते है पर वारूद लगाना होगा। स्मृतियों के धर्म को आपको नष्ट करना होगा।' उन्होने घोषित किया। कि हिन्दुत्व में न तो नैतिकता है न क्रान्तिकारी शक्ति और नही सामाजिक उपायोगिता, वरन् इसने एक विशिष्ट वर्ग के हितो को ही उन्नत किया।[10]

अम्बेडकर ने यह स्पष्ट रूप से देख लिया था कि यदि उनके संघर्ष को सफल होना है तो ब्राह्मणवादी हिन्दुत्व से धार्मिक प्रतीकवाद के साथ प्रत्यक्ष लड़ाई करनी होगी। धार्मिक प्रतीकवाद के बिना, दलितो का प्रश्न, उच्च जातियों द्वारा पथप्रदर्शित नव राष्ट्रवाद के तर्क में सदैव के लिए खो जाएगा। इसी बोध के कारण उन्होने दलितो की समस्या के लिए मार्क्सवादी भौतिकवादी समाधान को अस्वीकार किया। चूंकि जाति भेदभाव शुद्ध आर्थिक परिधि से परे तक गए थे। अत: उनका केवल एक आर्थिक तर्क द्वारा समाधान नही किया जा सकता था।[11]

अम्बेडकर ने जाति एवं उसके सुधार सम्बंधी गॉधी के दृष्टिकोण को भी अस्वीकार किया। गॉधी यह समझते थे कि वर्ण व्यवस्था के माध्यम से प्राचीन हिन्दुओ ने एक आदर्श सामाजिक व्यवस्था को प्राप्त कर लिया था। गॉधी के अनुसार 'वर्ण के सिद्धान्त का यह अर्थ कि प्रत्येक व्यक्ति धर्म–कर्तव्य के रूप में अपने पूर्वजो के वंशानुगत व्यवस्था को करेगा वह अपनी आजीविका इसी के माध्यम से अर्जित करेगा' इसके ठीक विपरीत अम्बेडकर को यह विश्वास था कि भारत में एक आदर्श समाज को अभी तक प्राप्त करना बाकी है। उनके लिए प्राथमिकता यह नही थी कि हिन्दुत्व या हिन्दू समाज को आभामय किया जाए, वरन् एक नए समान, स्वतन्त्र, खुले, गैर सस्तरणवादी आधुनिक भारत का निर्माण उनकी प्राथमिकता थी।[12]

अम्बेडकर के मतानुसार 'यह कहना गलत है कि अस्पृश्यकता की समस्या एक सामाजिक समस्या है अस्पृश्यता की समस्या मूल रूप से एक राजनीतिक समस्या है।' इसीलिए अम्बेडकर ने दलितों की मुक्ति एवं उन्नति के लिए अपने क्रांतिकारी आन्दोलन को प्रारम्भ किया। 20 जुलाई, 1942 को उन्होने नागपुर में घोषणा की –'न्याय हमारे साथ होने के कारण मैं यह नही देखता हूँ कि हम किस प्रकार अपना युद्ध हार सकते है। यह युद्ध मेरे लिए पूर्ण आनन्द की बात है। अपने पूर्णतम् अर्थ में यह युद्ध आध्यात्मिक है। इसमें कुछ भी भौतिक अथवा स्वार्थपूर्ण नही है क्योंकि हमारा संघर्ष ही हमारी स्वतन्त्रता है यह मानव सम्मान के उद्धार के लिए एक युद्ध है, जिसे हिन्दू समाज व्यवस्थ द्वारा दमित एवं विकृत किया गया और यदि इस राजनीतिक संघर्ष में हिन्दू विजय प्राप्त करते है और हम हार जाते है तो यह दमित और विकृत की जाती रहेगी। मेरी आपके लिए निर्णायक सलाह है, शिक्षित हो, संगठित हो एवं संघर्ष करों, स्वयं पर विश्वास रखो और कभी भी आशा मत छोड़ों।' इस प्रकार अम्बेडकर अस्पृश्यता के मुद्दे को भारतीय राजनीतिक के केन्द्र में रख सके।

अम्बेडकर ने व्यथा के साथ यह अनुभव किया कि हिन्दुत्व के अन्तर्गत ही अस्पृश्य कभी भी समान प्रस्थिति प्राप्त करने में सक्षम नही होगे और उचित व्यवस्था प्राप्त करेंगे। वे इस बात के भी कामल थे कि हिन्दू सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत ही अस्पृश्यों के लिए व्यक्ति एवं समूह गतिशीलता कठिन थीं इस सन्दर्भ में उन्होने सामाजिक उद्धार के लिए दो सम्भवनाओं को देखा अस्पृश्यों की राजनीतिक एकता तथा सामूहिक उद्धार के लिए दो सम्भावनाओं को देखा अस्पृश्यों की राजनीतिक एकता तथा सामूहिक रूप से धर्म परिवर्तन। इसलिए 1936 में उन्होने दूसरे धर्म मे जाने की बात की 'हॉलाकि मै जन्मना एक हिन्दू हूँ मैं एक हिन्दू के रूप में मरूगॉ नही' (31 मई, 1936 मुम्बई)। यद्यपि उन्होने 1935 के शिमला सम्मेलन में ही धर्म परिवर्तन की चर्चा कर दी थी।

अम्बेडकर के धर्म परिवर्तन के आह्वान ने हिन्दू नेतृत्व को काफी अशान्त कर दिया। अनेक नेताओं ने उनको समझाने का प्रयास किया कि वे अपनी योजना में आगे ने बढ़े। अम्बेडकर ने आश्चर्य व्यक्त किया कि सवर्ण हिन्दू, जिन्होने अस्पृश्यों के लिए कभी भी भाईचारे की भावना नही दिखाई, अचानक ही उनसे अनुनय कर रहे है कि वे हिन्दुत्व के गुट के अन्तर्गत ही रहे। चूकि सवर्ण हिन्दू सदियां से अस्पृश्यो के साथ बुरा बर्ताव करते रहे है व उन्हे अपमानित करते रहे है तो उन्हे हिन्दू गुट के अन्तर्गत रखने में वे अब अचानक क्यों इतनी रूचि ले रहे है। इसके बाद उन्होने 14 अक्टूबर, 1956 के दिन, लम्बे विचार–विमर्श एवं बौद्धधर्म के पक्ष में जानबूझकर लिए गए निर्णय के पश्चात्, नागपुर में प्रात: 9 : 30 पर अपनी दीक्षा ली। इसमें पॉच लाख महार एकत्र हुऐ थे, जिन्होने बौद्ध धर्म को उसी दिन अपना लिया। अम्बेडकर द्वारा बौद्ध धर्म को अपनाना उस सब के विरूद्ध एक कड़ाविरोध था जिसरसे करने में हिन्दू असफल रहे। उनके लिये स्वराज का कोई अर्थ नही था यदि वह अस्पृश्यों की दासता को भी समाप्त नही करता है।

निष्कर्ष – अत: कहा जा सकता है कि समाजिक न्याय के नारे ने विभिन्न समाजो में विभिन्न तबको को अपने लिए गरिमामय जिंदगी की माँग करने और उसके लिए संघर्ष करने के लिए प्रेरित किया है। सैद्धान्तिक विमर्श में भी यूरोपियाई समाजवाद से लेकर वर्तमान समय तक सामाजिक न्याय में बहुत सारे आयाम जुड़ते गये है। यह भी उल्लेखनीय है कि विकसित समाजों की तुलना में विकासशील समाजों में सामाजिक न्याय का संघर्ष बहुत ज्यादा संरचनात्मक था जिसे हिंसा और कई मौको पर राज्य की हिसां का भी सामना करना पड़ा है लेकिन सामाजिक न्याय के लिए चालने चाले संघर्षो के कारण इन समाजो में बुनियाद बदलाव हुए है। कुल मिलाकर समय के साथ सामाजिक न्याय के सिद्धातीकरण में कई नये आयाम जुड़े है और एक संकल्पना या नारे के रूप में इसने लम्बे समय तक खामोश या नेपथ्य में रहने वाले समूहो को भी अपने के लिए जागृत किया है।

भारत में इसके लिए डॉ0 अम्बेडकर ने समाज व्यवस्था में संशोधन नही वरन् मौलिक परिवर्तन के उद्देश्य को लेकर अस्पृश्यता का अन्त और जाति व्यवस्था का उन्नमूलन चाहते थे। उनके अनुसार वर्ण एवं जाति भिन्न नही है वर्ण से जाति उत्पन्न हई जिसकी चरम विकृति अस्पृश्यता है। उन्होने महसूस किया कि राजनैतिक लोकतन्त्र, सामाजिक लोकतन्त्र के बिना अधूरा है। अत: उन्होने समाज की अवस्स्थ परम्पराओं को समाप्त कर समानता पर आधारित नया समाज बनाने का प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दुबे, अभय कुमार, (सं0), समाज विज्ञान विश्वकोश, खण्ड-6, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ0 2036
2. वही, पृ0 2037
3. वही, पृ0 2037
4. वही, पृ0 2037
5. वही, पृ0 2038
6. वही, पृ0 2038
7. वही, पृ0 2038
8. माइकल, एस0एम0, (सं0), आधुनिक भारत में दलित : दृष्टि एवं मूल्य, द्वितीय संस्करण, सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2015, पृ0 101
9. वही, पृ0 101
10. वही, पृ0 102
11. वही, पृ0 102
12. वही, पृ0 102
13. सिंह, रामगोपाल, सामाजिक न्याय, लोकतंत्र और जाति व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 1999
14. सिंह, तेज, (सं0), अम्बेडकरवादी विचारधारा और समाज, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
15. कुमार अरूण, (सं0), उदारीकरण, भूमण्डीकरण एवं दलित, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2009

****

मध्य गंगा बैराज के (जनपद बिजनौर में) पारिस्थितिकी व पर्यावरणीय प्रभाव

कु. दीपा* डॉ. भूदेव सिंह**

शोध सारांश – जल धरती पर सभी के जीवन के सम्पोषण के लिए अनिवार्य है। यह समस्त संसार में समान रूप में वितरित नहीं होता है तथा इसकी उपलब्धता वर्ष के दौरान एक जैसे स्थानों पर एक समान भी नहीं होती। विश्व के एक हिस्से में पानी का अभाव है तथा वह सूखाग्रस्त है तो विश्व के दूसरे हिस्से अधिक जल होने के कारण उपलब्ध संसाधनों का अनुकूलतम प्रबन्ध करने में चुनौतियों का सामना करते है। नि:सन्देह नदियां प्रकृति का एक महान वरदान है तथा विभिन्न सभ्यताओं के विकास में यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही है। फिर भी कई अवसरों पर नदियां, बाढ़ के समय लोगों के जीवन एवं सम्पत्ति के साथ विनाशकारी खेल खेलती है। अत: नदियों के जल के कुशल प्रबन्धन के लिए यह आवश्यक है कि विभिन्न नदी किनारों (बेसिनों), जो गहन सर्वेक्षण करने के उपरान्त तकनीकी रूप से सम्भावन तथा आर्थिक रूप से व्यवहार्य पायी गई है, के लिए विशिष्ट योजनाएं बनाई जानी चाहिए। प्रस्तुत शोध पत्र में बांध और जलाशय, त्वरित सामाजिक आर्थिक विकास के लिए नदी जल का सदुपयोग करना तथा सूखा एवं बाढ़ से प्रभावित विश्व की वृहत जनसंख्या के कष्टों को कम करने के लिए दोहरी भूमिका निभा रहे है। इस तथ्य पर ध्यान आकर्षित किया गया है।

प्रस्तावना – उ0प्र0 के जनपद बिजनौर की पश्चिमी सीमा पर स्थित मध्य गंगा बैराज परियोजना का निर्माण भी बिजनौर का आर्थिक विकास करने के उद्देश्य से किया गया था। गंगा नदी पर बैराज बनने और इस पर पुल के निर्माण का कार्य सन् 1984 ई0 को पूरा हुआ और प्राचीन काल से चली आ रही समस्याओं का समाधान हुआ। कोई भी बांध और जलाशय निम्नलिखित मानवीय मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करने में उल्लेखनीय योगदान देते है–

1. पेयजल और औद्योगिक उपयोग हेतु जल
2. सिंचाई
3. बाढ़ नियंत्रण
4. जल विद्युत उत्पादन
5. अन्तर्देशीय नौ परिवहन
6. मनोरंजन

मध्य गंगा बैराज परियोजना ने भी बिजनौर की इन सभी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करके समस्याओं का काफी हद तक समाधान किया है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र में मध्य गंगा बैराज के द्वारा बिजनौर जनपद पर पड़ने वाले पारिस्थितिकी व पर्यावरणीय प्रभावों का अवलोकन करते हुए इसके सकारात्मक एवं नकारात्मक पक्षों को प्रस्तुत करना है, साथ ही इससे होने वाले नुकसान के लिए बेहतर सुझाव ढूंढकर उन्हें दूर किया जा सके तथा भविष्य में यह बांध परियोजना एक सफल बांध परियोजना के रूप में जानी जाये।

शोध विधि – प्रस्तुत शोध पत्र साहित्यिक अवलोकन द्वितीयक एवं प्राथमिक समंकों पर आधारित है। द्वितीय समंकों का संकलन पत्र, पत्रिकाओं, शोध पत्रिकाओं एवं सांख्यिकी विभाग द्वारा निर्गत वार्षिकी से किया गया है। प्राथमिक समंकों का संकलन, सर्वेक्षिका द्वारा स्वयं संदर्भित क्षेत्र के कृषकों, अन्य व्यक्तियों तथा मध्य गंगा बैराज विभाग के कर्मचारियों से अनुसूचि के माध्यम से किया गया है। समंकों का विश्लेषण सांख्यिकी विधियों का प्रयोग करके किया गया है।

पारिस्थितिकी व पर्यावरण प्रभाव : विश्लेषण – गंगा नदी विश्व भर में अपनी शुद्धिकरण क्षमता के कारण जानी जाती है। लम्बे समय से प्रचलित इसकी शुद्धिकरण की मान्यता का वैज्ञानिक आधार भी है। वैज्ञानिक मानते है कि इस नदी के जल में बैक्टीरियोफेल नामक विषाणु होते है, जो जीवाणुओं व अन्य हानिकारक सूक्ष्म जीवों को जीवित नहीं रहने देते है। एक राष्ट्रीय सार्वजनिक रेडियो कार्यक्रम के अनुसार इस कारण हैजा और पेचिश जैसी बीमारियों के होने का खतरा बहुत ही कम हो जाता है, जिससे महामारियां होने की संभावना बड़े स्तर पर टल जाती है। मध्य गंगा बैराज का पारिस्थितिकी व पर्यावरण पर सकारात्मक प्रभाव इस प्रकार देखा जा सकता है–

1. हस्तिनापुर वन्यजीव अभ्यारण उ0प्र0 राज्य के मेरठ में स्थित राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्य है, इसकी स्थापना 1986 में की गई थी। बैराज से निकाली गयी नहर जो इस अभ्यारण में निवास करने वाली प्रजातियों के जीवन का आधार है तथा हस्तिनापुर अभ्यारण्य में गंगा बैराज के पास 23 बारहसिंगों की पुष्टि वन विभाग के द्वारा की गयी है। 2073 वर्ग किमी क्षेत्र में फैले इस अभ्यारण्य में मृग, सांभर, चीतल, नीलगाय, तेंदुआ, जंगली बिल्ली के अलावा पक्षियों की भी अनेक प्रजातियां देखी जा सकती है।
2. मध्य गंगा बैराज को पारिस्थितिकी व पर्यावरण का सबसे अच्छा उदाहरण इसी बात से माना जा सकता है कि हर साल हजारों की संख्या में विदेशी पक्षी यहां आते है। वर्ष 2015 में इन साइबेरियायी पक्षियों

* शोधार्थी, एम0जे0पी0 रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.) भारत
** शोध निर्देशक एवं एसो. प्रोफेसर (अर्थशास्त्र विभाग) आर0एस0एम0 कालेज, धामपुर (उ.प्र.) भारत

की 38 प्रजातियों में 1881 पक्षी मिले थे, जो एक अच्छे पारिस्थितिकी तंत्र का सूचक है।

वर्ष	प्रजातियां	पक्षियों की संख्या	आगमन का समय
2015	38	1881	नवम्बर से मार्च
2016	46	2700	
2019	48	3000	

इन पक्षियों में डारटर, ब्लू रॉक, पिनटेल, लार्ज एरागेट, ग्रेलग ग्रीस, बेंडर ग्रीस, पोस्टर पनकोन, कामन टेल आदि आते है, जो ईरान मंगोलिया, जर्मनी, इंग्लैण्ड, तिब्बत, बेल्जिम आदि देशों से सर्दियां शुरू होते ही आना शुरू कर देते है।

3. बैराज बांध बनने के कारण भी यह नदी अपनी जैव विविधता और पर्यावरणीय तंत्र (भौतिक, रासायनिक, और जैविक अखण्डता) को बरकरार रखती है।
4. बाढ़ या सूखा के बाद अपने आपको दोबारा उसी स्थिति में लाने की क्षमता, गाद या मिट्टी परिवहन, पोषक तत्वों का चक्रीकरण और ऊर्जा विनिमय जैसी महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं को सुचारू रूप से चलाने की क्षमता इसमें है।
5. मध्य गंगा बैराज की पारिस्थितिकी व पर्यावरण प्रभाव के संदर्भ में उत्तरदाताओं का दृष्टिकोण–

उत्तरदाताओं का प्रकार	दृष्टिकोण		योग
	सकारात्मक	नकारात्मक	
1. कृषक	125 (83.3%)	25 (16.7%)	150
2. बैराज के कर्मचारी	40 (80%)	10 (20%)	50
3. अन्य	60 (60%)	40 (40%)	100
योग	225 (75%)	75 (25%)	300

1. सर्वे में 300 उत्तरदाताओं की सूची में लगभग 150 कृषकों ने पर्यावरण पर बैराज के प्रभावों के प्रति अपने दृष्टिकोण को व्यक्त किया जिसमें 83% कृषक इसके प्रति पर्यावरण पर पड़ने वाले सकारात्मक पहलुओं को बताते है एवं कुल 16.7% कृषक नकारात्मक दृष्टिकोण रखते है।
2. करीब 50 कर्मचारियों से बात करके पता चला है कि 80% बैराज के कर्मचारी इसके सकारात्मक पक्ष को बताते है तथा 50 में कुल 10 कर्मचारियों ने पारिस्थितिकी पर बैराज के नकारात्मक पक्ष को बताया है।
3. अन्य 100 व्यक्तियों में से 60 व्यक्ति बैराज से पर्यावरण को होने वाले फायदे की बात करते है परन्तु 40 व्यक्तियों ने इससे पर्यावरण को होने वाले नुकसान के विषय को उजागर किया।

समस्याएँ – मध्य गंगा बैराज परियोजना से सम्बन्धित मुख्य समस्याएँ निम्नलिखित है–

1. बैराज परियोजना के आस–पास का वन एवं कृषि क्षेत्र पानी में डूब जाते है जिससे इन क्षेत्रों से मिलने वाली चरान व चुगान से लोग वंचित हो जाते है।
2. बैराज बांध के कारण पानी रूकने से मछलियों की कई प्रजातियां समाप्त हो जाती है।
3. नदी प्रवाह का स्वरूप नदी में रहने वाले जीवों के आवासों पर प्रभाव डालता है। नदी के ऊपरी तथा मध्य भाग में बने बांध नदी के प्रवाह को नियंत्रित करते है। इस प्रकार के अवरोध (निर्माण) नदी प्रवाह के स्वरूप को रूपांतरित करके गंभीर रूप से नदी के स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकते है।
4. बैराज परियोजना के जलाशयों में पत्ते, टहनियाँ और जानवरों की लाशे नीचे जमती है और सड़ने लगती है। तालाब के नीचे इन्हें आक्सीजन नहीं मिलती है जिस कारण मीथेन गैस बनती है जो कार्बन डाई ऑक्साइड से ज्यादा ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ाती है।

संकलित सुझाव – प्रस्तुत शोध के संदर्भ में उत्तरदाताओं से समंकों का संकलन करते समय मध्य गंगा बैराज के पारिस्थितिकी एवं पर्यावरणीय संरक्षण हेतु जो सुझाव संकलित किये गये हो वे निम्न प्रकार है–

1. बैराज के आस–पास के क्षेत्रों में पानी की निकासी के लिए बंदो का निर्माण होने की आवश्यकता है जिससे कृषि एवं वन क्षेत्र में आने वाली बाढ़ से बचा जा सके।
2. गंगा में सफाई अभियान पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। इससे मछलियों की होने वाली लुप्त प्रजातियों एवं जैव विविधता के क्षरण को दूर किया जा सकता है।
3. मध्य गंगा बैराज को बड़े स्तर पर पर्यटन स्थल के रूप में विकसित करने की जरूरत है क्योंकि यहां हर साल हजारों की संख्या में साइबेरियायी पक्षियों की प्रजातियां आती है जो पारिस्थितिकी तंत्र का अच्छा सूचक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक समाचार पत्र–हिन्दुस्तान, दैनिक जागरण, आमर उजाला
2. Madhya Ganga Project Detail
3. सांख्यिकीय पत्रिका जनपद बिजनौर
4. कुरुक्षेत्र
5. Websites – irrigation.up.nic.in

****

A Study on Current Scenario of Entrepreneurship in India

Dr. Rekha Lakhotia*

Abstract - The Entrepreneurial Development is not a recent concept that has suddenly caught the attention of the government of our nation. It has been there since the Vedic age and has continued to influence the culture and economy or our country down the ages. Today it is considered to be an important tool of development, industrialization and a solution to the perennial problem of unemployment. In the present paper an attempt has been made to study the evolution of Entrepreneurship in India and the current scenario of entrepreneurship in the development of a nation. The data used in the study are mainly from the secondary source. This paper discourses challenges of entrepreneurship and its current scenario in India.
Keywords - Entrepreneurship, Gem (Global Entrepreneurship Monitor), Entrepreneur, GoI (Gross Operating Income).

Introduction - An entrepreneur is a person who operates a new venture and also inherits some risks and is able to look at the environment, The great ones are ready to be laughed at and criticized in the beginning because they can see their path ahead and are too busy working towards their dream, True entrepreneurs are resourceful, passionate and drive to succeed and improve The term "entrepreneurship" comes from the French Verb "entreprendre" and the German word "unternehmen", both means to"undertake"By grave and Hofer in1891 defined the entrepreneurial process as involving all the functions, activities, and actions associated with perceiving of opportunities and creation of organizations to pursue them-.

Entrepreneurship is the act of creating a business or businesses while building and scaling it to generate a profit. Entrepreneurship is not a word that describes the struggle of a common person who puts all his efforts to build something of his/her own, it is also something that reflects the *growth* of the country. When it comes to entrepreneurship, several things come to the mind like the day-to-day functioning of an organization, gathering funds, manpower, resources and much more. But it's about time that we give a thought to what it is offering for the growth of the country.

Entrepreneurship is basically the practice of starting a business in order to earn profit on newfound opportunities. Entrepreneurship is a challenging task as many businesses which start fail to take off. Entrepreneurship has many uncertainties especially when new products are created for which there is no existing market. Entrepreneurship affects economic growth in various ways. It is through entrepreneurship that important innovations enter the market leading to new products or production process which eventually increases efficiency through bringing competition in the market.

Current scenario of entrepreneurship in India:

1. There are ample opportunities in small businesses are there in India.
2. Such opportunities will transform India in coming future. For such transformation to happen there need to be supporting for both at government and societal level.
3. The scope of entrepreneurship development in our country is tremendous.
4. Entrepreneurship Monitor (GEM) ranks India ninth amongst entrepreneurial countries. It is highest amongst 28 countries in "Necessity based entrepreneurship", while 5th from the lowest in "opportunity-based entrepreneurship".
5. Research indicates that opportunity-based entrepreneurs contribute more to overall economic growth than necessity-based entrepreneurs, this is an evidence to that fact that entrepreneurship in India is still far from what it could be.
6. Further, among medium or low income countries, while China's nascent and new entrepreneurs appear to be the most growth oriented, with more than 10% of them anticipating high growth, the early stage entrepreneurial activity in India is marked by low levels of growth expectations.
7. India's rank in Ease of Doing business is 130 (out of 189 countries) for the year 2016. It is not at all encouraging for an economy like India. It was 134 in 2015 where it has improved by four points. the position of India as compared to other nations. India is well behind even smaller nations like Mexico in terms of its ranking in Ease of doing business. One of the key initiatives by the government of India has been "Startup

*Associate Professor (Commerce) IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA

India, Standup India" to help boost entrepreneurship. It was launched in January 2016. The main idea behind it was

a. It provides incentives such as three-year income tax exemption and concessions on capital gain tax to start-up ventures
b. Under the initiative, the GoI will create a fund worth INR 100b (US$1.5b) to back start-ups
c. The GoI has announced the establishment of a Start up Hub, which acts as a single point of contact for interactions with the government.
d. The initiative entails the establishment of the Atal Innovation Mission for promotion of R&D including 500 tinkering labs, 35 public-private sector incubators, 31 innovation centers at national institutes, 7 research parks and 5 new bio cluster.
e. It has also been identified more than 550 Angel investors in India. The growth is projected as far as 2000 new startups created each year by 2020 and the job creation from these entrepreneurs go from 65-75k as of today to 250-300k.

Global Entrepreneurship Monitor (GEM) ranks India ninth amongst entrepreneurial countries. It is highest amongst 28 countries in "Necessity based entrepreneurship", while 5th from the lowest in "opportunity-based entrepreneurship". Research indicates that opportunity-based entrepreneurs contribute more to overall economic growth than necessity-based entrepreneurs, this is an evidence to that fact that entrepreneurship in India is still far from what it could be. Further, among medium or low income countries, while China's nascent and new entrepreneurs appear to be the most growth oriented, with more than 10% of them anticipating high growth, the early stage entrepreneurial activity in India is marked by low levels of growth expectations. This is despite the tremendous high levels of potential entrepreneurial activity as perceived by the non entrepreneurially active population in the country. India's rank in Ease of Doing business is 13.

Challenges faced by entrepreneurs in India - India offers abundant opportunities for entrepreneurs these days. But vis-à-vis opportunities, India also offers a plethora of challenges an entrepreneur should thread through to be successful.

Funding - Funding is a problem for entrepreneurs all over the world. In India, the problem is even more aggravated as in India, there is pretty much only one legal way of getting money for business take debt from bank. The risk-averse banking style followed in India does not even lend to small businesses, so getting money for starting up is almost impossible. So, the entrepreneurs are left with only 2 options – either use your own savings or take debt at exorbitant rates from money lenders.

Majority of the funding comes from close friends or the entrepreneur's savings. Banks lending especially under policy restrictions form another portion and the new age mechanisms like venture capitalists, angel investors, private equity has miniscule presence. In the recent past, the rise of concepts such as micro finance, micro equity and mutual guarantee associations have provided options to the small-time entrepreneurs who are just setting up their shop.

Socio-Cultural factors - India has a risk-averse culture. We love jobs with job security and even the brightest of our graduates want to find a job at the end of their studies. Even when a person vies to take up entrepreneurship, the pressure from family prevents him from taking the risk. This environment is one of the main reasons why entrepreneur -ship stifles in India.

The constraints in the Indian psyche such as the caste system and the way women are looked down upon also add problems to the risk takers who want to go and beat the world.

Policies and Bureaucracy - India is one of the toughest destinations in the world to do business. It takes 35 days to start a business in India (11-point procedure) and years to close a business. If the business is in labor intensive manufacturing sector, then closing is almost impossible legally. The restrictions imposed on an entrepreneur by our dilapidated policies, bureaucracy and government machinery is almost stifling. Major overhaul is required in our policies related to labor, agriculture etc if we want to see more entrepreneurs budding out.

Infrastructure - Infrastructure is a major issue faced by entrepreneurs in India. As suggested by Arjun Kalyanpur of Teleradiology, an entrepreneur has to by default have a mechanism to generate his own power in the power deficient India. The situation of infrastructure including power, road and rail, airways, logistics are poor in India putting a strain on small time entrepreneurs who are already struggling with resource crunch.

Role of entrepreneur in india in economic development

1. Wealth Creation and Sharing: By establishing the business entity, entrepreneurs invest their own resources and attract capital (in the form of debt, equity, etc.) from investors, lenders, and the public. This mobilizes public wealth and allows people to benefit from the success of entrepreneurs and growing businesses. This kind of pooled capital that results in wealth creation and distribution is one of the basic imperatives and goals of economic development.

2. Create Jobs: Entrepreneurs are by nature and definition job creators, as opposed to job seekers. The simple translation is that when you become an entrepreneur, there is one less job seeker in the economy, and then you provide employment for multiple other job seekers. This kind of job creation by new and existing businesses is again is one of the basic goals of economic development. Therefore the Govt. of India has launched initiatives such as *Startup India* to promote and support new startups, and others like the *Make in India* initiative to attract foreign companies and their FDI into the Indian economy. All this in turn creates a lot of job opportunities and is helping in augmenting our standards to a global level.

3. Balanced Regional Development: Entrepreneurs setting up new businesses and industrial units help with

regional development by locating in less developed and backward areas. The growth of industries and business in these areas leads to infrastructure improvements like better roads and rail links, airports, stable electricity and water supply, schools, hospitals, shopping malls and other public and private services that would not otherwise be available. Every new business that locates in a less developed area will create both direct and indirect jobs, helping lift regional economies in many ways. The combined spending by all the new employees of the new businesses and the supporting jobs in other businesses adds to the local and regional economic output. Both central and state governments promote this kind of regional development by providing registered MSME businesses various benefits and concessions.

4. GDP and Per Capita Income: India's MSME sector, comprised of 36 million units that provide employment for more than 80 million people, now accounts for over 37% of the country's GDP. Each new addition to these 36 million units makes use of even more resources like land, labor and capital to develop products and services that add to the national income, national product and per capita income of the country. This growth in GDP and per capita income is again one of the essential goals of economic development.

5. Standard of Living: Increase in the standard of living of people in a community is yet another key goal of economic development. Entrepreneurs again play a key role in increasing the standard of living in a community. They do this not just by creating jobs, but also by developing and adopting innovations that lead to improvements in the quality of life of their employees, customers, and other stakeholders in the community. For example, automation that reduces production costs and enables faster production will make a business unit more productive, while also providing its customers with the same goods at lower prices.

6. Exports: Any growing business will eventually want to get started with exports to expand their business to foreign markets. This is an important ingredient of economic development since it provides access to bigger markets and leads to currency inflows and access to the latest cutting-edge technologies and processes being used in more developed foreign markets. Another key benefit is that this expansion that leads to more stable business revenue during economic downturns in the local economy.

7. Community Development: Economic development doesn't always translate into community development. Community development requires infrastructure for education and training, healthcare, and other public services. For example, you need highly educated and skilled workers in a community to attract new businesses. If there are educational institutions, technical training schools and internship opportunities, that will help build the pool of educated and skilled workers.

A good example of how this kind of community development can be promoted is Azim Premji, Chairman of Wipro Limited, who donated Rs. 27,514 crores for promoting education through the Azim Premji Foundation. This foundation works with more than 350,000 schools in eight states across India.

So, there is a very important role for entrepreneurs to spark economic development by starting new businesses, creating jobs, and contributing to improvement in various key goals such as GDP, exports, standard of living, skills development and community development.

Conclusion - Entrepreneurship has been on the rise as a global phenomenon much before India began becoming sensitive to the development of entrepreneurship. However the awareness towards the path of entrepreneurship is now picking up a quick pace in our own country, and as a matter of fact is seen as one of the countries that is par excellence with the rest of the Asian countries as far as growing entrepreneurship is concerned. There are ample opportunities in small Businesses in India and such opportunities will transform India in the coming future. For such transformation to happen there need to be support both at the governmental and societal level. For the government it is important to realize that the goal of small business owners will be to remain self-employed. Such people may not need financial assistance, but they will need marketing and legal assistance to sustain themselves. Practical and cost-effective programs need to be developed to address their needs because self-employed people will represent an important segment in economic revitalization.

References :-

1. Patankar, Vishnu. (2017). A Study on Experiences of Indian Entrepreneurial Communities.
2. http://www.innovationiseverywhere.com/the-state-ofindia-startup-ecosystem-here-comes-the-growth-and10000-startups/
3. http://www.doingbusiness.org/~/media/GIAWB/Doing%20Business/Documents/Annual-Reports/English/DB16-Full-Report.pdf
4. http://www.doingbusiness.org/~/media/GIAWB/Doing%20Business/Documents/Annual-Reports/English/DB15- Full-Report.pdf
5. http://toostep.com/insight/entrepreneurship-in-ancientperiod
6. KalraManjeet, Entrepreneurship Development and Planning ,AITBS Publishers, New Delhi,
7. Gulati Kapil, Sharma Suniel, :Entrepreneurship in India", Indian Journal of Economics Finance & Management, Vol 2, No 1, 2013
8. Kumari Indira, A study on Entrepreneurial Development Process In India, Indian Journal of Research, Vol 3, Issue 4 April 2014.

****

21वीं सदी की हिन्दी पत्रकारिता में भारतेंदु की प्रासंगिकता : एक मूल्यांकन

संकर्षण परिपूर्णन*

शोध सारांश – 21 वीं सदी में हिन्दी पत्रकारिता की पुनर्संरचना की बात जोर पकड़ने लगी है। आवाज थोड़ी धीमी जरूर है लेकिन वो दिन-प्रतिदिन लगातार बढ़ती चली जायेगी। यह समय तमाम तरह के प्रश्नों और अंर्तद्वन्द्वों से जुड़ी है और इसका एकमात्र उत्तर भारतेन्दु है।
शब्द कुंजी– हिन्दी पत्रकारिता, भारतेन्दु, साहित्यिक, ग्लैमरस, युवा पीढ़ी, उपनिवेशवाद।

प्रस्तावना – हिन्दी पत्रकारिता जो कभी अपनी आरंभिक अवस्था में 'साहित्यिक' पत्रकारिता के नाम से भी जानी जाती रही, उसमें साहित्यिक सामग्रियों का गौण होना तथा ग्लैमरस हो जाना इस बात के लिए अभिप्रेरित करता है कि इस हिन्दी पत्रकारिता के युग पुरूष भारतेंदु की पत्रकारिता का पुनरावलोकन किया जाए।

भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी पत्रकारिता को एक ऐसा आयाम दिया जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि हिन्दी पत्रकारिता के वे जनक हैं और उनके बाद की हिन्दी पत्रकारिता एवं हिन्दी साहित्य का मूल आधार भी भारतेंदु की धारा ही रही है। इसकी जन-जन में स्वीकार्यता इतनी बढ़ चुकी थी कि इसी के तर्ज पर हिन्दी भाषा में और भी अखबार निकलने शुरू हो गये, विशेषकर हिन्दी प्रदेशों और हिन्दी संपादकों के द्वारा। सही अर्थो में हिन्दी भाषा का मानकीकरण इनके कार्य पद्धति ने किया। **डॉ0 रामचन्द्र तिवारी** ने उपरोक्त भावना को कुछ इस प्रकार व्यक्त किया है कि – '*इस युग के पत्रकारों ने हिन्दी पत्रकारिता को जीवित रखने, उसे पुष्ट करने, पत्रों की स्वतंत्रता और हिन्दी भाषा की रक्षा एवं उन्नति के लिए जी तोड़ प्रयास किए। विभिन्न समस्याओं को समाज के सामने रखकर भारतेंदु कालीन पत्रकारों ने देश की अमूल्य सेवा की। इस युग के लेखकों में भाषा की परख, विचारों के प्रति निष्ठा और जिंदादिली थी। संपादकों का जीवन त्याग और संघर्षमय था। आगे चलकर जो जागृति देश में पैदा हुई, उसका समारंभ इसी काल में हुआ। भारतेंदु बाबू हिन्दी पत्रकारिता के पुरोहित थे और हिन्दी पत्रकारिता में उनका वही स्थान है जो बांग्ला पत्रकारिता में राजाराम मोहन राय का था*'[1]

जिस पत्रकारिता का आरंभ निश्चित उद्देश्यों के साथ हुआ जिसका अनुकरण कर भारतेंदु यहिन्दी पत्रकारिता के युग पुरूष बन गए, उसी मूल तत्व को गायब कर देना मतलब पत्रकारिता रहा ही नहीं। इसके अलावा भारतीय हिन्दी पत्रकारिता विकसित तो हुई पर दशा दूसरों की संस्कृति और बाजारवाद पर निर्भरता बढ़ती गई। कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में बाजार के कारण पत्रकारिता, मीडिया में परिवर्तित हो गया तो बाजार के मूल में 'डिजिटलीकरण' है।

भारतेंदु हरिश्चन्द्र और उनके समकालीन पत्रकारों का नाम यूँ ही इतिहास से लेकर वर्तमान में नहीं लिया जाता क्योंकि इनके प्रयासों से जो हिन्दी नयी चाल में ढ़ली और हिन्दी पत्रकारिता जिस रूप में विकसित हुई वो पत्रकारिता समाज के सामने है। उस समय संपादक वास्तव में पत्रकारीय आदर्शों के साथ चलते थे। नित नवीन पत्रकारिता में नये विषयों को समाहित करते थे। उस वक्त जन समुदाय या पत्रकार दीर्घा इस बात से ग्रसित नहीं रहता था कि हमें व्यावसायिकता के साथ कितना तालमेल बैठा पाते हैं। इनकी पत्रकारिता निश्चित तौर पर आज के व्यावसायिक पत्रकारिता की तरह उत्तम नहीं थी, लेकिन अपने उद्देश्यपरक सिद्धांतों के कारण सर्वोत्ताम थी। भारतेंदु की हिन्दी पत्रकारिता में लोकप्रिय 'कविवचन सुधा' को सच्ची पत्रकारिता के कारण अपने व्यावसायिक लाभ को त्यागना पड़ा था लेकिन आज ऐसा कोई उदाहरण हमारे समक्ष प्रस्तुत नहीं है-'*कभी जमाना था-जब हिन्दी पत्रों के संपादक एक के बाद एक जेल जाने की कतार में खड़े थे। इलाहाबाद का स्वराज्य साप्ताहिक स्मरणीय है, जिसमें लिखा रहता था-चाहिए 'स्वराज्य' के लिए एक संपादक। वेतन : दो सूखी रोटियाँ, एक गिलास ठंढ़ा पानी और हर संपादकीय के लिए दस साल जेल।*'[2]

स्थिति सचमुच भयावह है क्योंकि पत्रकारिता को विकसित करने के लिए ग्लैमरस के जो तौर-तरीके अपनाएँ जा रहे हैं उससे समाज के आखिरी पंक्ति में बैठे व्यक्ति की समस्याएँ खुद मिट जा रही है। इस संदर्भ में 21 वीं सदी और हिन्दी पत्रकारिता में एक आलेख के माध्यम से **अमरेन्द्र किशोर** की पंक्ति पठनीय है- '*अफसोस है कि प्रांतीय स्तर पर और कस्बों में आज कोई प्रेरक और ठोस व्यक्तित्व नहीं है। राष्ट्रीय स्तर पर भी नहीं है। तो सत्य और असत्य के बीच फासलें शायद ही बच सके हैं। अब न्याय के लिए आफत बुलाना कोई नहीं चाहता। अत: इक्कीसवीं शताब्दी की हिन्दी पत्रकारिता और आदिवासी समाज के बीच भला कैसा संबंध हो सकता है? अभी तो नैतिक पतन के रास्ते और खुलेंगे। देह की नुमाइश, पैसे के प्रदर्शन और हवा-हवाई संस्कृति के महिमामंडन का दौर अभी आना बाकी है। काल के इस दुरूह और दुर्लंध्य दौर में बस इतना ही कहना है, मर्यादा प्रभु तुम्हीं रख लीन्हों।*'[3]

वस्तुत: हिन्दी पत्रकारिता गाँवों, कस्बों और आदिवासी या दलित का प्रतिनिधित्व करती है। भारतेंदु की पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ने से प्रतीत होता है कि तत्कालीन परिस्थितियों में इनकी समस्याएँ उठाई जाती थी, लेकिन आज तो एक गहरी विभाजन रेखा खींची जा चुकी है हिन्दी पत्रकारिता और अन्य के बीच। कारण बाजार और ग्लैमरस पत्रकारिता और राजनीति का काफी गहरा संबंध है। 21 वीं सदी में गाँव से लेकर महानगरों तक साहित्य के प्रति लगाव, चिंतन, उत्सुकता आदि की कमियाँ हैं कारण भी स्पष्ट है

* सहायक प्राध्यापक (पत्रकारिता एवं जनसंचार) राँची विश्वविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

घुटन में स्वच्छ विचारों का जन्म भी कैसे हो सकता है? और इसके मूल में आज की युवा पीढ़ी भी हैं, क्योंकि स्वच्छंदतावादी विचारधारा के साथ-साथ पाश्चात्य मूल्यों पर खुद को ढ़ालना। इससे व्यवसाय से लेकर शिक्षा तक और रहन-सहन से लेकर मौलिक सृजनात्मकता तक। इस संदर्भ में **विद्यानिवास मिश्र** के द्वारा दृष्टिकोण प्रासंगिक है- *'नई पीढ़ी के पत्रकार पत्रकारिता की परंपरा को तोड़ रहे हैं, लेकिन प्रश्न यह है कि परंपरा से नई पीढ़ी क्या समझती है? विरोध रूढ़ियों से होना चाहिए। परंपरा रूढ़ि नहीं है। परंपरा रूढ़ियों को तोड़ते हुए बड़ी बनती है। आगे जाना ही परंपरा है। वह बाधक क्यों हो? मैं परंपरा में ही जन्मा, बढ़ा और आगे बढ़ना चाहता हूँ। पत्रकार भी परंपरा से अपने को पूर्ण बना सकते हैं। लेकिन वे परंपरावादी न बनें।'*[4]

निश्चित तौर पर भारतेंदु के द्वारा और विद्यानिवास मिश्र के द्वारा आरंभ की हुई पत्रकारिता आज के समय की आवश्यकता है। इनका सीधे निशाना वर्तमान हिन्दी पत्रकारिता की मशाल को आगे ले जाने वाले नवयुवक पत्रकारों से है जिनके भीतर वो आग ही नहीं है जो पत्रकारीय परंपरा की रक्षा कर सके। इसके पीछे उनका तर्क ये होता है कि आज नया युग है, पारंपरिक पत्रकारिता की परंपरा की कोई कीमत नहीं। थोड़े से समय में बहुत ऊँचाई तक जाने की चाह शायद वर्तमान समय की गिरती हिन्दी पत्रकारिता का बहुत बड़ा कारण है। ग्रामीण पत्रकार जो अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन बड़ी ही संजीदगी से कर रहे हैं लेकिन उनकी बेहतरीन खबरों के अनुसार उन्हें मुनाफा नहीं दिया जाता है। उसे हिन्दी पत्रकारिता की मजबूती कहें या आधारस्तम्भ कि जो ग्रामीण परिवेश और संस्कृति रही आज 21 वीं सदी की पत्रकारिता में कमजोर हो गये हैं। आज भी भारत के कई-गाँवों में अच्छे स्कूल, अस्पताल, सड़कें, छोटे-छोटे उद्योग आदि की गंभीर समस्याएँ पड़ी है जो बाजारवाद के इस दौर में शिथिल हो गई है।

'राजनीतिक और सामाजिक जागरूकता के बावजूद ग्राम्यांचल आज भी शहरी मध्यवर्ग के शोषण का शिकार है-यह देख रहा है ग्रामीण पत्रकार और यह भी कि सरकार को सर्वाधिक राजस्व देने वाला गाँव जो सबसे कम हिस्सा अपने विकास के लिए पा रहा है वह भी किस प्रकार बिचौलिये उदरस्थ करते जा रहे हैं।'[5]

वस्तुत: क्षेत्रीय पत्रकारिता जितनी अधिक सशक्त होगी उतनी ही राष्ट्रीय पत्रकारिता और हिन्दी पत्रकारिता भी मजबूत होगी। भारतेंदु हरिश्चन्द्र की हिन्दी पत्रकारिता का अगर विश्लेषण करें तो यह कहा जा सकता है कि उस दौर की पत्रकारिता ग्रामीण जन-समुदायों को अखबार की जगह देते थे। पत्रकार अगर दलाल बन जाए और साहित्यकार व्यापारी बन जायें तो न ही पत्रकारिता और न ही साहित्य अपने निहित मानवीय संवेदनाओं और आदर्शो से संबंधित सेवा-सुश्रुषा कर पायेगा। इस खतरा को महसूस करते हुए **डॉ0 चमन लाल गुप्त** कहते हैं -*'साहित्यकार व्यापारी न बन जाए और साहित्य सस्ते मनोरंजन और कुत्सित वासनाओं की तृप्ति का उत्पादन न बन जाये यह खतरा है। अपमिश्रित भाषा और संस्कृति उसे भ्रष्ट कर सकती है। मूल्यहीनता उसे निरर्थक बना सकती है।'*[6]

पत्रकारिता के संदर्भ में एक बात प्रचलन में है कि अगर कोई सवाल पत्रकारिता के दायित्तवों और निर्वहनों से करता है तो वे उसके बचाव में उन तर्कों को प्रस्तुत करते है। जो उन्हें सही बनाता हो। ऐसा विचार कहीं न कहीं एकपक्षीय बनता है। बात पक्ष या विपक्ष की नहीं, गलत या सही की नहीं बल्कि क्या है और क्या होना चाहिए। इस संदर्भ में एक बात संदर्भित है **जवाहरलाल नेहरू** के शब्दों में - *'पुराने मालिकों-प्रकाशकों पर यह आरोप लगता था कि वे अपने व्यक्तिगत या वर्गगत हितों के लिए समाचार-पत्रों का इस्तेमाल करते थे। जहाँ निजी हित नहीं होते थे, वहाँ भी व्यक्तिगत आग्रहों और मान्यताओं का प्रचार होता था। ऐसे प्रकाशकों, संपादकों में प्रेस जगत् के वरिष्ठ और सम्मानीय नाम शामिल हैं। अपने या किसी वर्ग के विचारों के प्रचार का माध्यम अखबारों को बनाने के जितने भी दोष गिनाए जाएँ, पर एक बात तो तय है कि ऐसे मालिक-प्रकाशक अपने आपको सामाजिक दायित्तव से मुक्त नहीं मानते थे। सच तो यह है कि सामाजिक सरोकारों की गहनता के कारण ही वे स्वयं भी प्रेस के काम में एक प्रभावी पक्ष बन जाते।'*[7]

एक और महत्वपूर्ण बात ये है कि एक तरफ तो भूमंडलीकरण के सकारात्मक प्रभाव पड़ रहे हैं वहीं दूसरी तरफ इसके एक ऐसे प्रभाव भी देखने को मिल रहे हैं जिस कारण चीजें काफी हद तक खराब होती जा रही है। जनमुद्दे, पर्यावरण तथा कृषि आदि विषयों पर ध्यान देने के मामले में हिन्दी अखबार पिछड़ रहे हैं। जगह-जगह जल की समस्या, पेड़ों की कटाई, किसानों की आत्महत्या, किसी स्त्री या दलित के साथ गलत आचरण से जुड़ी खबरें अखबारों का हिस्सा नहीं हो पाती है, क्योंकि सारा का सारा स्थान तो ग्लैमर आदि से जुड़ी खबरें तथा विज्ञापनों ने ले ली है। आज के दौर में जिस तरीके से विचार के स्तर पर, खबरों के स्तर पर, प्रस्तुति के स्तर पर या रूचियों के स्तर पर भारतीय समाज और हिन्दी पत्रकारिता में विदेशी तड़का लगा हुआ है उससे कहीं भी देशीपन नजर नहीं आता है। कभी जमाना था कि भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने उपनिवेशवाद का विरोध किया था। सिर्फ विरोध ही नहीं बल्कि अपनी पत्रकारिता और पत्रकारीय छवि को इससे बचाकर भी रखा था।

'भारतेंदु युग की हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं ने औपनिवेशिक सत्ता की कारगुजारियों को सामने रखकर जनता में अलख जगाने का महान कार्य किया।'[8]

सवाल फिर वहीं से शुरू होता है कि चाहे वो हिन्दी पत्रकारिता हो या साहित्य, दोनों कहीं न कहीं समाज और राष्ट्र का निर्माण करता है न तो राजनीति निरूद्देश्य हो सकती है और न ही पत्रकारिता। जब बात राष्ट्र और समाज की हो तो सोद्देश्य कार्य करना लाजिमी है। भारतेंदु की हिन्दी पत्रकारिता के फलक का विस्तार काफी ज्यादा था। शायद इसी कारण से उनके द्वारा प्रकाशित या संपादित मुख्यत: तीन पत्रों ने मानवीय संबंधों और समाज के वैज्ञानिक स्थिति को जिस तरीके से अपनी लेखनी में उतारा उसी कारण से ये आज भी एक आदर्श संस्था है-हिन्दी पत्रकारिता और हिन्दी साहित्य के लिए। इनके इसी वैशिष्ट्यता के विषय में **रामविलास शर्मा** कहते हैं- *'भारतेंदु ने साहित्यिक हिन्दी को सँवारा, साहित्य के साथ हिन्दी के नए आंदोलन को जन्म दिया, हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय और जनवादी तत्तवों को प्रतिष्ठित किया।'*[9]

इस कारण भारतेन्दु मिशन के उद्देश्यों को अपनी कार्य-संस्कृति में क्रियान्वित करते थे जिससे राष्ट्रवादी आंदोलनों को ताकत मिल सके। आज के पत्रकारों और संपादकगणों में इसकी नगण्यता के कारण ही हिन्दी पत्रकारिता सशंकित है। इस कारण आज भारतेंदु भी प्रासंगिक है और उनकी पत्रकारिता और साहित्य भी।

निष्कर्ष - उपरोक्त कारणों से भी भारतेंदु हरिश्चन्द्र की हिन्दी पत्रकारिता को अपने कार्य पद्धति में लाने की आवश्यकता बढ़ गई है, क्योंकि उनके समय के पत्रकार या वो खुद भाषा के जानकार, समाचारों की समझ, पत्रकारीय दायित्तवों की प्रधानता आदि के साथ-साथ साहित्य की संवेदनाओं और समाज की आवश्यकताओं को समझते थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तिवारी डॉ0 रामचंद्र, पत्रकारिता के विविध रूप, 1995, आलेख प्रकाशन, नई दिल्ली, 24-25
2. गुप्ता आशा, हिन्दी पत्रकारिता की विकास यात्रा-तब से अब तक, 2002, कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 3
3. किशोर अमरेन्द्र, सं0 अमरेन्द्र कुमार एवं निशांत सिंह, इक्कीसवीं सदी और हिन्दी पत्रकारिता, 2006, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 40
4. पूर्वोक्त, 139
5. सिंह बच्चन, हिन्दी पत्रकारिता के नये प्रतिमान, 1989, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 34
6. सं0-गौतम मीरा, अंतिम दो दशकों का हिन्दी साहित्य, 2008 , वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 146
7. कुमार बिजेन्द्र, हिन्दी पत्रकारिता और भूमंडलीकरण, 2007, श्री नटराज प्रकाशन, नई दिल्ली, 111
8. पूर्वोक्त, 324
9. शर्मा रामविलास, भारतेंदु हरिश्चन्द्र और हिन्दी नवजागरण की समस्याएँ, 1999, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 154

****

Indian Economy After Implementation Of GST-A Study

Dr. Rekha Lakhotia*

Abstract - GST (Goods and Service tax)is the biggest indirect tax reform of India. GST is a single tax on the supply of goods and services. It is a destination based tax. GST will subsume Central Excise Law, Service Tax Law, VAT, Entry Tax, Octroi, etc. It is implemented on July 1,2017. It. is regarded as a major taxation reform.. GST was planned to be implemented in 2010, but was postponed due to political issues and conflicting interest of stakeholders. It is the replacement of all Indirect taxes in India like Central Excise Tax, VAT/Sales Tax, Service tax, etc.The GST based taxation system brings more transparency in taxation system and increases GDP rate from 1% to 2% and reduces tax theft and corruption in country. GST is considered to be a significant step in the reform of indirect taxation in India. Amalgamating of various Central and State taxes into a single tax would help mitigate the double taxation, cascading, multiplicity of taxes, classification issues, taxable event, and etc., and leading to a common national market.

VAT rates and regulations differ from state to state. On the other hand, GST brings in uniform tax system across all the states. 97 per cent of all items has 18 percent or lower tax .

The paper highlights the background of the taxation system along with advantages and challenges of GST implementation.

Keywords - Goods and service tax; Indian economy. Tax System, Indirect tax, reforms.

Introduction - The Goods and Services Tax (GST) is a vast concept that simplifies the giant tax structure by supporting and enhancing the economic growth of a country. GST is a comprehensive tax levy on manufacturing, sale and consumption of goods and services at a national level . After bringing GST into practice, there had been amalgamation of Central and State taxes into a single tax payment. It also enhanced the position of India in both, domestic as well as international market. The government has proposed a 4-tier tax structure for all goods and services under the slabs- 5%, 12%, 18% and 28%. . All types of public services of the Government (Railways, Postal and Telegraphs, Public Sector Enterprises, Banks and Insurance, Health and Education services),any service transactions between employer and employee either as service provider, receiver, or vice-versa, education services provided by non-government schools and colleges, health services provided by non-government agencies, any unbranded food item are exempted from Goods and Services Tax .

Research Methodology - This paper is based on secondary data collected from sources available like various websites of Indian Government like Finance Ministry (finmin.gov.in), GST Council (gstcouncil.gov.in), GST Council Archives (gstindia.com), and many more. The data is also collected from different journal papers, annual reports, newspaper reports and magazines.

Objectives of the study - To gain a deep understanding of GST taxation system and its evolution.

1. Understanding the concept of new taxation system introduced - Goods and Services Tax (GST) in India.
2. To evaluate the advantages and challenges of GST.
3. To understand the impact of GST on Indian Economy.

Scope of the Study - This paper provides a detailed insight about implementation of GST tax among various sectors of the country. After implementation of goods and service tax , the tax rates have become uniform and has also overcome lots of shortcomings in the Indian taxation system with regard to indirect taxation. The Good and Services Tax would surely be highly advantageous for major areas of the Indian economy.

GST Tax Rates on some common items:

Tax Rates	Products
5%	Household necessities such as edible oil, sugar, spices, tea, and coffee (except instant) are included. Coal , Mishti/Mithai (Indian Sweets) and Life-saving drugs are also covered under this GST slab
12%	This includes computers and processed food
18%	Hair oil, toothpaste and soaps, capital goods and industrialintermediaries are covered in this slab
28%	Luxury items such as small cars , consumer durables like AC and Refrigerators, premium cars, cigarettes and aerated drinks , High-end motorcycles are included here.

Upcoming products in GST Rates Slab - The Government is going on with some new tactics to bring in

*Associate Professor (Commerce) IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA

some of the products under GST system. As hinted by Finance Minister, Arun Jaitley, there could be an inclusion of products under GST with the reduction of GST rates on some products. Major products which can come under GST rates slab includes :

1. Petroleum products- Petrol and Diesel
2. Land
3. Electricity
4. Others

Impact on Economy - The important GST rates impacts in the Indian economy are-

1. **Increase in Competition**: After the GST has been imposed, there has been seen a fall in prices of goods and services which ultimately has brought the final consumer to have less tax burden on the goods and services. There is seen a great scope of increased production, thus, increase in competition.
2. **Simple Tax Structure**: GST has simplified the calculation of tax with the adoption of single taxation system. Under this, multipl taxation has been aborted which ultimately saves time and money.
3. **Uniform Tax Regime**: Previously, there used to be multiple tax at every stage of supply chain, where the taxpayer got confused. But now, with GST, it is easier for the taxpayer to pay uniform tax.
4. **Increase in Exports**: There has been seen a fall in the cost of production after the GST got imposed. This in return has brought competitiveness towards the international market resulting in rise in exports.

Benefits of GST Implementation:

For business and industry

1. **Easy compliance**: A robust and comprehensive IT system would be the foundation of the GST regime in India. Therefore all tax payer services such as registrations, returns, payment etc would be available to the tax payers online which would make compliance easy and transparent.
2. **Uniform tax rates and structures**: GST will ensure that indirect tax rates and structures are common across the country thereby increasing certainty and ease of doing business. In other words, GST would make doing business in the country neutral, irrespective of the choice of doing business.
3. **Removal of cascading**: A system of many tax credits through the value chain and across boundaries of states, would ensure that there is a minimum cascading of taxes. This would reduce hidden cost of doing business.
4. **Improved competiveness**: reduction in transaction costs of doing business would eventually lead to an improved competitiveness for the trade and industry.
5. **Gain to manufacturers and exporters**: the subsuming of major central and state taxes in GST complete and comprehensive set-off of input goods and services and phasing out of central sales tax (CST) would reduce the cost of locally manufactured goods and services. This will increase the competitiveness of Indian goods and services in the international market and give boost to Indian exports.

For central and state Governments

1. **Simple and easy to administer**: Multiple indirect taxes at central and state levels are being replaced by GST. Backed with robust end to end IT system, GST would be simpler and easier to administer than all the other indirect taxes of the central and state levied so far .
2. **Better control on leakage**: GST will result in better tax compliance due to robust IT infrastructure. Due to the many transfer of input tax credit from one state to another in the chain of value addition, there is an inbuilt mechanism in the design of GST that would incentivize tax compliance by traders.
3. **Higher revenue efficiency**: GST is expected to decrease the cost of collection of tax revenues of the Government and will therefore lead to higher revenue efficiency.

For Consumer:

1. **Single and transparent tax proportionate to value of Goods and services**: Due to multiple indirect taxes being levied by the centre and state with complete or no input tax credits available at progressive stages of value addition, the cost of most goods and services in the country today are laden with many hidden taxes. Under GST there would be only one tax from the manufacturer to the consumer, leading to transference of taxes paid by the final consumer.
2. **Relief in overall tax burden**: Because of efficiency of administration and prevention of leakages the overall tax burden on most commodities will come down which will benefit consumer.

Challenges - The following are indentified as major challenges for the success of GST in India:

1. There are various definitional issues related to manufacturing, sale, service, valuation etc. arises. these needs to be rationalized.
2. Several transactions take the character of sales as well as services, thus there is complexity in determining the nature of transaction.
3. The mechanism of imposing taxes, exemptions, abatements, other benefits are different in state and centre. .
4. Existing law has resulted in significant number of issues related to interpretation or various provisions and the category of the products and the nature of services.
5. Administration mechanics of the centre and state and even in different states is different.
6. A simple tax structure can bring greater compliance, thus increasing number of tax payers and in turn tax revenues of Government.
7. GST will ensure competitive pricing. Tax paid by final consumer will come down in most cases.
8. Lower prices will help in boosting consumption which is beneficial.

Conclusion - The concept of GST was introduced and proposed in India a few years back, but implementation has been done by the current BJP government under the leadership of Prime Minister Shri Narendra Modi on July 1,

2017. The new government was in strong favor for the implementation of GST in India by seeing many positive implications as discussed above in the paper. All sectors in India - manufacturing, service, telecom, automobile and small SMEs will bear the impact of GST. One of the biggest taxation reform- GST will bind the entire nation under a single taxation system rate. As forecasted by experts, GST will improvise tax collections and boost up India's economic development and break all tax barriers between Central and State Governments. No doubt, GST will give India a clear and transparent taxation system, but it is also surrounded by various challenges as discussed in this paper. There is need for more analytical based research for successful implementation.

References :-

1. Mehra P (2015) Modi govt.'s model for GST may not result in significant growth push. The Hindu
2. Garg, Basic concepts and Features of Goods and service Tax in India, 2014
3. Dash, BharateeBhusana; Raja, Angara V(2013):" Intergovernmental Transfers and Tax Collection in India: Does the Composition of Transfers Matter?" In "Public Budgeting &Finance",Blackwell Publishing Ltd(Maiden).
4. Eigner, Richard M (1959):" Business And Economics– Public Finance, Taxation, Political Science" in "National Tax Journal",June, 1959 , National Tax Association (Washington)
5. GST India.com (2016, March 21). Basic concepts of GST (Part - 13) - Constitutional amendment for GST. Retrieved from http://www.gstindia.com/basic-concepts-of-gst-part-13-constitutional-amendment-for-gst/

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Relation Between Patient and Doctor

Ramesh Kumar Shukla*

Abstract - The duties which a doctor owes to his patient are clear a person who holds himself out ready to give medical advice and treatment impliedly undertakes that he possessed of Skill and knowledge for the purpose such a person when consulted by Patient owes him Certain duties, Viz a duty of care in deciding whether to undertake the case a duty of care of an deciding what treatments to give or a duty of care in the administration of that treatments. A breach of any these duties give a right of action for negligence to the Patient. The Practitioner must bring his risk a reasonable degree of skill and knowledge and must exercise a reasonable degree of care and the greater are his qualification and experience, the higher degree will be standard of care expected from doctors.

Introduction - Since the earlier times the co-relationship of patient and doctor was based on trust and confidence. The rapid growth of super specialty corporate hospital has totally changed the co-relationship of patient and doctor based on trust and confidence. The Personal link of doctor and patient relationship is not seen anymore. The biog Medical institutions. Have become profit oriented. Consumer s are fully aware of their rights to seek good service.

Definition of Doctor - According to the Madhya Pradesh Civil Services (Medical Care) Rule 112, the accepted medical system is as follows :-

Any government servant can get medical treatment in any one of the Ayurvedic, Unani, Homeopathic or Viochemical system of medicine instead of allopathic medicine system and this medicine will be reimbursed to the extent and extent prescribed in the rules for the treatment of such drugs. The bills will be accepted one the signature of the authorized medical authority and on the signature of the Principal/Divisonal Officer of Ayurveda/ Superintendent/CMHO of Concerning District of the dispensary in cases of medicines outside the patients.

Legitimate, Hakim or Homeopathic or Viochemical doctor in charge of such dispensaries will be authorized medical officer.

In section 2 (d) of the Medical Termination of Pregnancy Act, 1971, a registered medical practitioner is defined as follows :-

A registered Medical Practitioner means a medical practitioner who has passed qualification in medicine, as contained in section 2(4) of the Indian Medical act, 1956 and whose name is included in the register of the State Medical Council and the field of Obst & Gynecology are trained or have experience in concerning subject

Under the Indian Medical Council Act, 1956, the mandatory qualification for doctors is a graduate in the medical field related to the university established by law, along with the qualification under international medical education should be equivalent to graduation and recognized. The same, according to the Medical Termination of presence Act, 1971, a physician is required to register or be enrolled in the State Medical Council.

In terms of law, a doctor is a qualified person who is registered in the State Medical Council under the local law for the time being. Unregistered person cannot do medical practice. It he does such an act, it will be punishable as per Medical Council of India Norms.

In D.K Joshi v State of Uttar Pradesh[1] the Supreme Court determined that it is the duty of the District Magistrate, Chief Medical Officer, to identify and punish unauthorized medical practitioner.

In another case, Karthik Chandra Mandal V. State[2] the court has said that the doctor can do medicine in the same way in which he is educated and trained and his degree in recognized. Therefore, the district Magistrate should be complained against the fake doctor (Jhola Chhap)

Essential Elements of Medical Negligence - Negligence is thus a conduct and not a mental elements, it differ from an international act but are must not that all the careless acts do not constitute negligence. The elements of negligence under medical professions are :-

1. Operation of wrong patients.
2. Injecting anesthesia in fatal doses or in wrong disease;
3. Amputation of wrong organ and operation of wrong limb, removal of wrong organ or error in legation of duet;
4. Leaving tourniquets too long, resulting in gangrenes,
5. Leaving instrument or sponge inside the part of body operated upon;
6. Applying too light plasters or splints which may caused gangrene. Or paralysis.
7. Transforming wrong Blood.

*Researcher Scholar, LNCT University, School of Legal Studies, Bhopal (M.P.) INDIA

The constitution of India in its part IV enshrining the directive principles of state policy , vide Article 47 stipulates that " The State shall regard the raising of the level on nutrition and the standard of living of its peoples and the improvement of public health as among its primary duties and in particular. The state shall endeavor to bring about prohibition of the consumption except for medical of intoxicating drinks and drugs which are injurious to health

Duty in Medical Profession - In the case of specialists, a higher degree of skill is needed.

In **Dr. N. Ummar v. K.M. Hameed**,[3] biopsy was conducted on the patient by pathologist and illness was wrongly diagnosed as Tuberculosis, while the patient actually suffered from cancer. As a result of the wrong diagnosis by expert in pathology, the patient died. Holding the pathologist liable to pay compensation, the Kerala High Court said that it was a clear case of professional/medical negligence. The court observed:

When a person who possesses sufficient qualifications in the field, is ready to give medical advice and treatment as an expert in that field, he impliedly undertakes that he possesses all sufficient skill and knowledge for such medical advice or treatment. Such a person has a duty to diagnose the illness and to decide the treatment to be given and the proper medicines to be administered. [4]

Doctor's duty to Attend to a patient - If the specialist doctor does not care to attend to a patient admitted in the emergency ward of a hospital and the patient dies, the doctor would be liable to pay compensation.

In Sishir Rajan Saha v. The State of Tripura[5] the petitioner's son, Ashim Saha while coming from Agartala to Udaipur on scooter met with an accident He was admitted to the emergency ward of the G.B. Hospital, Agartala. The Senior Specialist Doctor, Dr. P. Roy was not available in the hospital. He was repeatedly called to attend to the patient. He was busy attending to his private patients and did not bother to come to the hospital to attend to the accident victim. Ashim Saha succumbed to his injuries. Dr. P. Roy was held liable to pay Rs. 1,25,000 as compensation for the death of the deceased.

Directions were also issued to all the Government hospitals to upgrade the medical services.

Duties and obligations of the doctor to the patient - In the Geneva Declaration of the World Medical Association, the doctor has been told that 'the health of the patient is my first duty'. International medical practice states that "any act or advice which causes mental, physical impairment of a person, should be applied to the benefit of that person". When the patient is present to a doctor for diagnosis, then there is an association between the doctor and the patient. Where the duty of the patient to accept the advice of the doctor in the sequence of treatment, the same doctor also has some duties and responsibilities towards the patient, which is as follows: -

(i) Standard care of the patient - It is the duty of every physician that in the treatment of the patient, the standard level of the doctor in the concept of appropriate standard level will be the same as what other doctors of the same community do in the same situation.

(ii) Patience, Humility and Confidentiality - It is necessary for the doctor to be patient and the doctor should give sufficient time for the treatment of the patient. Only after proper investigation, reached a decision. Maintain humility in dealing with the patient and do not make them public in the confidentiality of the information received from the patient related to the disease.

(iii) Taking care of the patient - It is not possible for the doctor to remain fully engaged in each medical work or to leave the patient under the assistant's care due to the needful, in such a situation, not to be careless about the patient. needed. If treatment is to be discontinued, the patient should be informed beforehand. It is malpractice to discontinue treatment of the patient without prior notice.

(iv) Use of standard equipment - It is the duty of the doctor to take proper care of the equipment used in the treatment and use standard equipment in the treatment of the patient. Maintain cleanliness, availability of equipment.

(v) Standard Assistant - It is the duty of physicians to keep in mind the qualifications and experience of other employees, junior doctors, who are used for their assistance. Only qualified and capable person should be accepted as an assistant in the treatment of the patient, otherwise not.

(vi) Use of non-standard medicine prohibited - Doctors should not use non-standard medicines in the treatment of the patient. Drugs should be written in clear and correct form based on their nickname and place of production. If possible, information should be given to the patient in the regional language about the use of the drug, etc. and it is also necessary that the possible results of the medicine should be told to the patient or his / her guardian before consumption.

(vii) Use of standard procedure in medicine - According to the branch of medical science in the treatment of the patient, standards of medicine should be followed. One should not do medicine on the basis of the standards of other medical science branch, having the qualification in one branch, this situation should be adopted in medicine and surgery. Here standard treatment refers to the method and treatment adopted by other people of a group in the same situation.

(viii) Standard Campus - Standard Campus means - The premises must be registered on the basis of those standards where hospitals, nursing homes etc., where the standards of the premises used in medical treatment have been set by the State. The duty of maintaining the cleanliness of the campus and proper quality of campus management is at the doctor and the hospital.

(a) Contact with experts - It is necessary for the doctor to check the patient from time to time with appropriate specialists keeping in view the complexity of the disease, if it is necessary, then the patient should be treated on the

basis of the opinion of the experts, because one doctor is all The patient cannot be treated. Therefore, the help of experts should be taken.

(b) Restriction in inspection, consultation time - It is important for the doctor to be available regularly and on time instead of doing his business. Do not do any other work during the period of inspection and at the time of consultation, so that the patient remains calm and concentration and the patient is not inconvenienced.

(c) Time and Risk Information - It is the duty of the physician to inform the patient or his / her guardian the time taken in treatment and the risk of surgery for the diagnosis and before performing any risky act as much as possible. Get approval from.

(d) Patient documents - The doctor should take proper care and arrangement of all X-rays, test reports, operation reports, medicine sheets etc. related to the patient's disease. When the patient is admitted to the hospital or nursing home for treatment, when required as per the requirement, the patient should provide the documents.

(e) Obtaining patient consent for treatment - The role of the patient and his or her assistants along with their awareness rights is important in the prevention of medical negligence during treatment. Basic Right to Information That statutory right to information is helpful in reducing medical and legal errors.

The Court in Dr. Prabha Manchanda ACJ[6] against Sameer Kohli, laid down five principles regarding consent during treatment, of which the following are important: -

1. Before starting treatment, the doctor will seek the real and valid consent of the patient. That consent should be obtained from the patient based on sufficient knowledge of the nature of the treatment process.
2. Only consent given for diagnosis cannot be considered as consent for treatment of disease (Jitmanchajap Jatanjumdaj). It also means that the consent given for any specific remedial procedure for lifesaving will be valid for the other treatment procedure adopted for the survival.
3. For the treatment of the patient, the information given to the patient by the doctor for obtaining the consent of the patient is not necessary to be very precise and comprehensive. The scale of this determination is that the medical person should consider it appropriate and normal.
4. The Supreme Court also determined that the correct and proper procedure of treatment in the absence of consent to medical treatment does not make the treatment statutory.

Thus the Supreme Court has introduced and introduced the concept of genuine consent of the patient during medical treatment as compared to symbolic informed consent in the Indian legal system.

In essence, before the treatment, during and after treatment, the patient should have the availability of the standard information about the treatment and the relevant documents.

Conclusion - Thus, a doctor who does not possess a degree of fouls to exercises the required degree of skill or care and cautions to treat the illness of his patient, is said to breach of his legal duty such failure of breach of duty is said to constitute "Negligence" and the doctor is said to be negligent, then the doctors is liable for damages for his negligence in his profession to his patient.

References :-

1. (AIR 2000 (S) SCC 80),
2. (AIR 2003 (NOC 24 MP)
3. DP Narimha Rao Vs. Jayprakash, AIR 1989 AP 207 at Page No. 215
4. A.I.R. 2014 (NOC) 49 (ker.)
5. AIR. 2002 Gauhati 102.
6. AIR 2008 SC 1385

****

Right to constitutional Remedies and Judicial Activism

RajPal Singh*

Abstract - The Constitution of India recognizes the Supreme Court of India and the High Courts of the concerned State as Constitutional Courts, having power to curtail all those legislative Acts, executive acts & policies which are against the spirit of our great Constitution. The Constitutional Courts do so while entertaining a case or PIL and Suo Motu even, when circumstances warrant so at occasions, the Supreme Court has even issued his guidelines in common public interest on the subject, being represented inadequately and insufficiently by the law of the time. This judicial activism has although been beneficial for the mass people, but many luminaries suggest self restraint for the judiciary against such a practice in these words, It is not the function of the judiciary to make law or to interfere in policy decisions, as the same is assigned to the Legislative & Executive respectively.
Key Words - Access to Justice, remedy, Organ of Govt., Locus Standi.

Introduction - Right to constitutional remedies has been provided under Article 32 of the constitution.

But right to remedy as per traditional ordinary procedure is available to person who has suffered legal injury. Regarding right to remedy in Exparte Sidebotham[1] (case of Locus Standi) following vies were expressed:

Judicial redress is the basis of entitlement to judicial redress is personal injury to property, body, mind or reputation arising from violation, actual or threatened, of the legal right or legally protected interest of the person, seeking said redress. Here the question was whether the appellant could be said to be a person aggrieved so as to be entitled to maintain the appeal, the court was of the unanimous view that the appellant was not entitled to maintain the appeal because he was not a person aggrieved by the decision of the lower court.

James L.J. said, the narrow interpretation of the expression person resulted in stultification of the growth of law in regard to judicial remedies.

Side botham case was approved and followed in a number of cases for the purpose of determining Locus Standi. In Re ReedBowen and Co.[2], the court made it clear that when James L.J. said that a person aggrieved must be a man against whom a decision has been pronounced which has wrongfully refused him of something, he obviously meant that the person aggrieved must be a man who has been refused something of which he had a right to demand.

According to this rule it is only a person who has suffered a specific who can bring an action for judicial redress. In other words, when an applicant has a legal right or a legally protected interest, the violation of which would result in a legal injury to him, there must be a corresponding duty owed by the other party to the applicant.

But with the passage of time it was realized that public interest cannot be kept away from being redressed and hence in the United Kingdom, the Attorney General is entrusted with the function of enforcing due observance of law. The Attorney General in his capacity as guardian of the public interest can act suo motu to restrain a public authority from exceeding its powers.[3] The Attorney General is the machinery for judicial redressing of public injury and protection of social, collective or what Cappellati calls diffuse rights and interests.[4]

In redressal of public grievances British court also played significant role and it were the Lord Denning's dynamic judgments in Mc whirter[5] and the three Blackburn cases[6] wherein it was clearly established enforcing a public duty against a statutory or public authority.

In Attorney General v. Independent Broadcasting Authority,[7] Mc whirter brought an action for injunction against the Broadcasting Authority to restrain if from Telecasting a film which did not comply with the statutory requirements, and the showing of which would therefore be illegal. He relied upon the News Paper reports, what the film offensive to public feeling.[8] Lord Denning considered the question whether Mc Whirter had locus standi to bring the action when leave to bring a relator action[9] was refused by the Attorney General. He affirmatively said that, Mc Whirter has sufficient interest to bring the action since he had a television set for which he had paid a licence fee and his susceptibility would be offended like that of many others watching television if the film was shown in breach of the statutory requirements. It may be noticed that "in this case the duty which was sought to the enforced against Broadcasting Authority was one which was sought to the enforced against Broadcasting Authority owed to the general public and not to any specific individual or class or group of

*Research Scholar, School Of Legal Studies, LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA

individuals."

Lord Denning followed Mc Whirter case[10] in R.v. Greater London Council, Exparte Blackburn,[11] to accord standing to Blackburn to maintain an action for an order of prohibition for preventing the Greater London council from allowing contrary to law, the exhibition of pornographic films. Here again the duty owed by the Greater London Council was to the general public and not to any specific or determinate class or groups of persons and there was no one who could claim that a specific legal injury was caused to him by the exhibition of pornographic films. Even then, Lord Denning concluded that Blackburn was entitled to maintain and action because he had sufficient interest, "he was a citizen of London. His wife was a rate payer, he has children who may be harmed by the exhibition of pornographic films.

Lord Denning emphasized that if Blackburn had no sufficient interest, no other citizen had, and in that event no one would be able to bring an action for enforcing the law and the transgression of law would continue to be unabated. However, the House of Lords in Gouriet v. Union of Post Office Workers[12], took the view that the Attorney General alone can sue for enforcing the observance of law and if he refused to give his consent to a relator action such refusal was not reviewable by the courts and without such consent, a member of the public could not maintain his action. This decision is clearly erroneous and shows the high water mark of abdication of judicial power which is likely to stultify the development of public law in the United Kingdom. The action in Gouriet case was an relator action and not an application for a writ.

The US Supreme Court realized the constitutional obligation of reaching to all segments of society particularly the black Americans of African origin. The courts craftsmanship and innovation is reflected in one of the most celebrated path breaking judgment of the US Supreme Court in Oliver Brown v. Board of Education of Topeka.[13] Perhaps, it would accomplish the constitutional obligation and goal. In this case, the courts have carried out their own investigation and in the judgment it is observed that "Armed without own investigation" the courts held that all Americans including Americans of African origin can study in all public educational institutions. This was the most significant development in the history of American judiciary.

The US Supreme court dismissed the traditional rule of standing in Association of Data Processing Service organization v. William B. Camp.[14] The court observed that a plaintiff may be granted standing whenever he/she suffers an injury in fact economic or otherwise.

In another celebrated case Olive B. Barrows v. Leola Jackson,[15] the court observed as under:

"But in the instant case, we are faced with a unique situation in which it is the action of the State Court which might result in a denial of constitutional rights and in which it would be difficult if not impossible for the persons whose rights are asserted to present their grievance before any court. Under the peculiar circumstances of this case, we believe the reasons which underlie our rule denying standing to raise another's rights, which is only a rule of practice, are outweighed by the need to protect the fundamental rights which would be denied by permitting the damages action to be maintained."

In environment cases, the Us supreme court has diluted the stance and allowed organizations dedicated to protection of environment to fight cases even though such societies are not directly armed by the action.

In United States v. Students Challenging Regulatory Agency Procedures (SCRAP),[16] the Court allowed a group of students to challenge the action of the railroad which would have led to environmental loss.

In Paul J. Trafficante v. metropolitan Life Insurance Company,[17] the court held that a landlord's racially discriminatory practices towards non whites inflicted an injury in fact upon the plaintiffs, two tenants of an apartment complex, by depriving them of the social benefits of living in an integrated community.

The latest example of curative writ petition is CBI v. Keshub Mahindra,[18] wherein holding that no charge under Section 304, Part-II or under sections 324, 326, 429 with or without the aid of section 35, Indian Penal Code could be framed against the accused on material led by prosecution and direction that on the material led charge under section 304-A, Indian Penal Code, could be made out against accused in keshub Mahindra v. State of M.P.,[19] was challenged on the ground that such decision thwarted powers of trial court under section 216, Criminal Procedure Code to enhance charges. The apex court held that ground raised is based in wrong assumption. No decision by any court could nullify express provision of an Act or Code. Moreover, decision in question qualified all findings given and observations made therein by words "on material produced by prosecution" and at this stage. Decision as such cannot be read as removing Sections 323. 386, 397, 399 from Criminal Procedure Code, Moreover, curative review has been sought after 14 years without explanation. Accordingly curative petition was dismissed.

Thus, from the entire looking of the cases mentioned above, it is clear that right to constitutional remedy is also one of fertile spheres for judicial activism. By active role court has devised new tool namely public interest litigation (PIL) and curative writ petition.

Conclusion - In the democracy, one may not have faith in the wisdom of the politician but one always up faith in the wisdom of the learned judges. the history of the seventy one year of the Indian Judiciary and the hundreds of its pronouncements has proved one point beyond reasonable doubt that it is only and only the judiciary who has proved its institutional integrity and efficiency.

References :-

1. (1880) 14 Ch. D. 458.
2. (1887) 19 Q.B.D. 174.
3. De Smiths: Judicial Review of Administrative Action,

p. 411, 4th Edn.

4. See Cappellati: Access to justice, p. 250 Vol. III, the traditional doctrine of standing attributes the right to sue either to private individual or who holds the right which is in need of judicial protection or in case of public rights to the State itself, which can sue in courts through its organs. The State representing the public is the holder of the public rights it alone can sue for redress of public injury or vindication of public interest.
5. Attorney General v. Independent Broadcasting Authority, (1973) All E.R. 689.
6. R.v. Greater London Council, Exparte Blackburn, (1976) 3 All E.R. 184: R. v. Metropolitan Police Commissioner, Exparte Blackburn and another, (1973) 1 All E.R. 324: (1968) 1 All E.R. 763.
7. (1973) I AII E.R. 689 at p. 693.
8. (1973) 1 All E.R. 689 at p. 692: The film included a fat rigal, stripping to the waist, daubing her breasts with paint and then painting a canvas with them. She also throws paint down a lavatory pan to from weird patterns. This one she calls Flush Art. In another scene the film shows a discussion between a young girl and a man dressed as a Hell's Angel on how they can have sx. She says she will do it at 60 mph on his motorcycle.
9. A relator action is an action brought by the Attorney General at the relation (i.e. at the instance) of some other person claiming an injunction or declaration or both in order to prevent some breach of law. See H.W.R. Wade: "Administrative Law", p. 530-531, 5th Edn., ELBS & Clarendron Press Oxford.
10. Attorney General v. Independent Broadcasting Authority, (1973) All E.R. 689.
11. (1974) 3 All E.R. 184.
12. 1978 AC 482.
13. 247 US 483. 489-493 (1954).
14. 397 US 150 (1970)
15. 346 U.S. 249 (1953)
16. 412 UA 669 (1973)
17. 409 U.S. 205 (1972)
18. AIR 2011 Supreme Court 2037 at page 2039-2040.
19. 1996 (6) SCC 129.

****

प्रदूषण समस्या-ग्वालियर जिले के संद्रर्भ में

डॉ. कौशलेन्द्र सिंह*

शोध सारांश – ग्वालियर भारत कें मध्य में स्थित अत्यंत ही महत्वपूर्ण जिला हैं। ग्वालियर भारत की राजधानी दिल्ली और भारत की औद्योगिक राजधानी मुबंई दोनों के एक सीधी भौगोलिक रेखा पर स्थित हैं। भारत में पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण की ओर यदि लम्बवत रेखायें खीचतें हैं तो ग्वालियर लगभग मध्य में स्थित हैं।

प्रस्तावना – जिले की नदियां मौसम के कारण, गर्मियों में अधिकांश सूख जाती है तथा कूड़ा एवं मल आदि अन्य गंदगी गिरने से प्रदूषित हो जाती हैं। यही हाल झील एवं तालाब के जल का हो रहा है, जिससे वह प्रदूषित हो रहे हैं।, क्योंकि कृषि उत्पादन आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण पहलू है, किन्तु उससे जिले की मृदा प्रभावित हो रही हैं।

ग्वालियर में प्रदूषण की समस्या सतह जल तक सीमित नहीं है। भूमिगत जल भी उत्याधिक प्रदूषित हो रहा है। ग्वालियर जिले में भूमिगत जल में नाइट्रेड की मात्रा चिंताजनक स्तर पर पहुंच गई है। भूमिगत जल का स्तर नीचा होता जा रहा है। जल पीने लायक नहीं रहता हैं, उसी प्रकार कारखानों से निकलने वाले कचरे के ढेर से निकलने वाले जल के टूटे नलों या कच्ची जमीन से रिसते हुए भूमिगत जलागार में जा मिलने से भी भूमिगत जल प्रदूषित होता है।

ग्वालियर में नगरीकरण तेजी से हो रहा है। ग्वालियर की नित बढ़ती आबादी के कारण एक ओर जल की मांग बढ़ती जा रही है, तो दूसरी ओर जल के विभिन्न प्रकार के उपयोग के पश्चात् दूषित जल अधिक मात्रा में निकलता है। इसके अतिरिक्त ग्वालियर में गृह या कारखानों का निर्माण विभिन्न डिब्बा बंद सामग्री का उपयोग तथा अन्य घरेलू टूट-फूटे सामानों का कूड़ा बड़े पैमाने पर निकलता रहता है। इन सभी को जलाश्रयों या नालों में फेक दिया जाता है।

ग्वालियर में कूड़े के व्यवस्थित ढंग से निस्तारण में नगर पालिकाएँ असक्षम हैं। कूड़ा प्राय: सड़कों पर पड़ा रहा है, जो वर्षा जल के साथ प्रभावित होकर नदियों और जलाशयों में पहुँच जाता है। घरेलू एवं सार्वजनिक शौचालयों से निकले मलमूत्र भी नालों से नदियों एवं अन्य जलाशयों में छोड़ दिये जाते हैं।

ग्वालियर शहर में पीने के जल को मोतीझील प्लांट से प्रदाय किया जाता है। तिघरा बांध से भी जल नहर द्वारा मोतीझील प्लांट में भेजा जाता है, किन्तु गत् दस वर्षो से मोतीझील का जल कई-कई दिन छोड़कर प्रदाय किया जाता हैं इसके अतिरिक्त जल जो भी प्रदाय किया जाता है, वह प्रदूषित होता रहता है,

मोतीझील की सफाई भी न होने के कारण गंदा पानी आता हैं। यह मोतीझील प्लांट लगभग 75 वर्ष पहले बनवाया गया था, जब आबादी कम थी, किन्तु वर्तमान में आबादी बढ़ चुकी है, जिसके लिये प्लांट की क्षमता को बढ़ाना होगा, जिसके प्रस्ताव भी शासन को भेजे गये हैं। इसके अतिरिक्त ग्वालियर शहर एवं संपूर्ण जिले में नलकूप एवं हैण्डपंप लगाये गये हैं जो अधिकांश सूख चुके हैं, क्योंकि जल स्तर प्रतिवर्ष कम होता जा रहा है। स्वर्ण रेखा नदी जो अब नाला बन चुकी हैं, जनकताल, सागरताल एवं बैजाताल भी वर्तमान में प्रदूषित हो रहे हैं।

आज के औद्योगिक युग में ग्वालियर जिले में भी विभिन्न प्रकार के उत्पादक एवं उपभोक्ता पदार्थो का बड़े पैमाने पर उत्पादन हो रहा है। इन कारखानों में उत्पादन हेतु विभिन्न प्रकार के खनिजों का कच्ची सामग्री के रूप में उपयोग किया जाता हैं। उदाहरण के लिये ग्वालियर शहर के समीपवर्ती क्षेत्रों मालनपुर, बानमोर, बाराघाट, घिरोगी क्षेत्रों में लोहा इस्पात के निर्माण के लिये कच्चे लोहे के अतिरिक्त कोयला, चूना, पत्थर, मैंगनीज आदि खनिजों का, सीमेंट के उत्पादनों में चूना पत्थर का उपयोग होता है।

ताँबे के निर्माण के लिये ताँबा धातु जो विभिन्न आवंछित पदार्थो के साथ डाल कर मिलाना पड़ता है। उसी प्रकार एल्यूमीनियम के लिये भारी मात्रा में बॉक्साइड मिलाना पड़ता हैं। इन खनिजों का इस्तेमाल करने से स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ता हैं। वायु प्रदूषण दूसरा सबसे बड़ा स्त्रोत पेट्रोल से चलने वाले इंजनों से निकलने वाले धुएँ में कार्बन मोनाऑक्साइड तथा सीसा होता हैं डीजल से चलने वाले वाहनों में कार्बन की सूक्ष्म कणिकाओं के साथ-साथ हाईड्रोकार्बन, नाइट्रोजन तथा सल्फर के विभिन्न ऑक्साइड भी निकलते हैं। यह ऑक्साइड वायु मंडल में द्वितीयक कणीय पदार्थो का फोटो रसायन विधि से निर्माण करते है, इससे धूम उत्पन्न होता है जो मनुष्य के लिये हानिकारक होता है।

वायु प्रदूषण का तीसरा स्त्रोत औद्योगिक पदार्थो का निर्माण करने वाली कारखानों से निकले कचरे का ढेर है। इन कचरों के ढेर से विभिन्न प्रदूषित गैसें निकलती हैं, जो वायु मंडल को विषाक्त करती है।

ग्वालियर जिले में विकास के नाम पर उद्योग स्थापित किये गये हैं। जिनमें लघु, मध्यम एवं वृहद उद्योग हैं। लघु उद्योग जिला उद्योग केन्द्र के माध्यम से, खादीग्राम उद्योग के माध्यम से तथ समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के माध्यम से स्थापित हुए हैं।

यह उद्योग शहर के वातावरण को प्रदूषित कर रहे हैं। इन उद्योगों से निकलने वाला धुआँ जहरीली गैसें वातावरण को प्रदूषित कर रही हैं। यद्यपि उद्योग आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण घटक है। बिना उद्योगों के आर्थिक विकास संभव नहीं हैं। जिले के समीपवर्ती क्षेत्रों में जैसे मालनपुर, बानमोर, घिरोंगी, बिरलानगर, महाराजपुरा आदि केन्द्रों में उद्योग लगे हुये हैं, जिसका

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) ऋषीश्वर महाविद्यालय, फूप, जिला भिण्ड (म.प्र.) भारत

प्रभाव भी ग्वालियर के वातावरण को प्रदूषित करने में सहायक हैं, इससे आर्थिक विकास तो हो रहा है, किन्तु वर्तमान में प्रदूषण बढ़ रहा है।

आर्थिक विकास का तीसरा घटक सेवा क्षेत्र हैं। इसके अंतर्गत आर्थिक विकास के नाम पर सड़कों एवं वाहनों का विकास तो किया जा रहा है, किन्तु वायु प्रदूषण एवं ध्वनि प्रदूषण दोनों ही बढ़ रहे हैं। ग्वालियर में जहां विभिन्न सड़कों में चलने वाली मशीनों एवं सड़कों पर मोटर गाड़ियों की भरमार होती है। ध्वनि प्रदूषण का स्तर उँचा होता है। इसके अतिरिक्त रेल मार्गो के अतिरिक्त हवाई अड्डा महाराजपुरा तथा शहर में लगे जनरेटर द्वारा ध्वनि प्रदूषण अत्यधिक पाया जाता है। उसी प्रकार ध्वनि विस्तारक यंत्रों की सहायता से भाषण या प्रचार स्थलों, मेलों तथा भीड़ भरे सार्वजनिक स्थलों पर भी भारी शोर के कारण शहर में ध्वनि प्रदूषण का उच्च स्तर होता है।

ग्वालियर शहर की सड़कों की हालत जर्जर है, जिससे धूल मिट्टी के कण वायु को प्रदूषित कर रहे हैं और हानि पहुंचाते हैं, जिससे अनेकों बीमारियां होती है। ग्वालियर शहर में विकास के नाम पर नई सड़कें बनाई जा रही हैं, जगह-जगह पर सड़कें खुदी हुई हैं, जिससे धूल उड़ती है। इसके अतिरिक्त शहर में चलने वाले वाहनों का शोर भी प्रदूषण करता है। यह ध्वनि प्रदूषण शहर में रॉक्सी का पुल तथा फूलबाग क्षेत्र में अधिक पाया जाता हैं। यहां पर अधिक शोर तथा प्रदूषण होता हैं। शहर में वायु ध्वनि प्रदूषण करने वाले वाहनों में टैम्पो तथा टैक्सी अधिक हैं।

अतः पर्यावरण तथा आर्थिक विकास की समस्या है। आर्थिक विकास में प्राकृतिक संसाधन का दोहन होता है, जिससे पर्यावरण प्रदूषण बढ़ता है। अतः पर्यावरण और आर्थिक विकास एक सिक्के के दो पहलू हैं, किन्तु आर्थिक विकास इस प्रकार किया जाए, जिसमें पर्यावरण की क्षति न हो। यह समस्या ग्वालियर जिले की नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व की है।

इसके लिये इस प्रकार के उपाय किये जाने चाहिये, जिससे आर्थिक विकास तो हो किन्तु पर्यावरण की क्षति कम से कम हो, ऐसी तकनीकी विकसित की जानी चाहिये, जिससे पर्यावरण प्रदूषण कम से कम हो, ऐसे नियम बनाये जाने चाहिए जो पर्यावरण प्रदूषण को रोकने में सहायक हो और ऐसे उपाय किये जाने चाहिए जो पर्यावरण प्रदूषण को रोकने में सहायक हों, तथी आर्थिक विकास होने पर पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उत्पन्न नहीं हो सकेगी।

मध्य प्रदेश में समग्र स्तर पर देखा जाए तो सभी प्रकार के प्रदूषण को देखा जा सकता है। प्रदेश के बड़े शहरों इंदौर, भोपाल, गवालियर, जबलपुर आदि में जल तथा वायु का प्रदूषण तेजी से बढ़ रहा है। वाहनों की संख्या में अकल्पनीय वृद्धि से धुएं की समस्या उग्र रूप ले रही है। इन शहरों में वायु प्रदूषण खतरनाक तरीके से बढ़ रहा है, साथ ही इन शहरों में ध्वनि प्रदूषण भी तीव्र गति से बढ़ रहा है। अनियंत्रित यातायात संकरी सड़कों पर भीड़ वाहनों का शोर, हवाई जहाजों का शोर इन शहरों की पहचान बनती जा रही है।

ग्वालियर में कृषि उत्पादन विगत् दशक में तेजी से बढ़ा हैं। ग्वालियर एक कृषि प्रधान जिला हैं। जिले के प्रत्येक गाँव में फसलों के अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने की चाह में किसानों ने अंधाधुध तरीके से रसायनिक उर्वरकों का उपयोग किया हैं, जिससे खेतों की मिट्टी तथा फसलें धीरे-धीरे जहरीली होती जा रही हैं। इस जहरीले खाद्यान्न का उपयोग करने के कारण लोग विभिन्न रोगों से ग्रस्त हो रहे हैं, साथ ही जिले के ग्रामीण क्षेत्रों के तालाब, पोखर, नदियों का पानी भी जहरीला होता जा रहा है।

ग्वालियर जिले में बढ़ते शहरीकरण ने नगर का तेजी से विस्तार किया है, जिससे शहरी कचरें की समस्या बढ़ती जा रही है। शहर में कूड़ा-करकट, अपशिष्ट और पोलोथिन की थैलियों के अंधाधुंध प्रयोग ने शहरी भूमि को प्रदूषित कर दिया है और यह भूमि प्रदूषण ग्रामीण क्षेत्रों में भी तेजी से फैल रहा है।

ग्वालियर जिले में औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थो एवं हानिकारक रसायनें ने तालाबों के पानी को जहरीला बना दिया हैं। इस कारण गाँव तथा शहर की जनसंख्या के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा हैं।

ग्वालियर जिलें में नदियों, तालाबों, पोखरों आदि का जल प्रदूषित होने कारण कई प्रकार की बीमारियां फैल रही हैं, जैसे - दस्त, हैजा, पीलिया, मिनी ज्वाइंडिस आदि इन रोगों से जिले की बड़ी आबादी प्रभावित हैं। जल जनित रोगों के कारण जिले में बड़ी मात्राा में लोगों की अकाल मृत्यु हो रही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गंभीर, संजय कुमार - वायु एवं जल प्रदूषण हिन्दी बुक सेन्टर, नई दिल्ली, 2003
2. मुखर्जी, डॉ. रवीन्द्र नाथ - पर्यावरण प्रदूषण, एवं डॉ. भरत अग्रवाल साहित्य भवन, आगरा 1987
3. नौटियाल, शिवानंद - पर्यावरण समस्या और समाधान, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली 2004
4. सुखलाल, घनश्याम - पर्यावरण प्रदूषण हिन्द बुक सेन्टर नई दिल्ली, 1999
5. प्रो. जगदीश सिंह - पर्यावरण एवं संविकास राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2001

****

रासायनिक शस्त्रास्त्रों के प्रभाव

डॉ. गिरीश शर्मा * डॉ. वीरेन्द्र कुमार शर्मा **

शोध सारांश – प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध के समरतंत्र का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होता है कि रासायनिक युद्धकर्म के अंतर्गत मुख्यत: 8 प्रकार के रासायनिक एजेंट/शस्त्रास्त्र उपयोग में लाये गये, जिन्हें युद्धरत विभिन्न पक्षों द्वारा अपने शत्रु के विरूद्ध आक्रमण करने अथवा आक्रमण से रक्षा करने के लिये उपयोग में लाया गया। यह निम्न प्रकार हैं– 1. अश्रुकारक, 2. धूमकारक, 3. ज्वलनशील, 4. श्वसन रोधी, 5. फेफड़ों के लिए हानिकारक, 6. बुद्धिक्षायक, 7. प्राणघातक, 8. नर्व गैस

प्रस्तावना – रासायनिक शस्त्रास्त्रों के प्रकारों को उनके द्वारा छोड़े जाने वाले प्रभावों के आधार पर निम्नानुसार विभाजित किया जा सकता है।

1. अश्रुकारक रासायनिक एजेंट (Lachrimators Agents) – रासायनिक युद्ध के इतिहास के अंतर्गत प्रथम विश्व युद्ध में जिन विषाक्त पदार्थों का प्रयोग किया गया उनमें सबसे पहले अश्रु उत्पादक पदार्थों का प्रयोग किया गया था। अश्रु उत्पादक पदार्थों का विशेष प्रभाव आंखों पर पडता है आंखों से आंसू बहने लगते हैं और अस्थाई तौर पर अन्धापन तक उत्पन्न हो जाता है। युद्ध में जिस मात्रा में इन रसायनों का उपयोग किया गया उससे वायु में इनका घनत्व बहुत कम था। इसी कारण गम्भीर दुर्घटना के उदाहरण नहीं मिले। इसी कारण अश्रु उत्पादक पदार्थों को पहले तो विषाक्त रसायनों की श्रेणी में ही नही माना गया। आरम्भ में इन रसायनों के प्रयोग पर कोई विरोध प्रकट नहीं किया गया।

खुले मैदानों में इनका विशेष महत्व नहीं है क्योंकि वायु में फैलकर इनका घनत्व कम हो जाता है। हॉ, बन्द जगहों में जैसे खाई, खन्दकों में अश्रु उत्पादक पदार्थ से भरे ग्रेनेड, गोलों आदि से वायु में इनके वाष्प की काफी मात्रा बनी रहती है और इसी कारण प्रभाव भी अपेक्षाकृत व अधिक तीव्र होती है।

अश्रु उत्पादक पदार्थों को मुख्यत: पर दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

पहली श्रेणी के अंतर्गत साधारण अश्रु उत्पादक रसायन आते हैं, जिनका वायु में साधारण से अधिक मात्रा न हो तो केवल आंखों पर ही प्रभाव पडता है।

1. साधारण अश्रु उत्पादक पदार्थों की श्रेणी में निम्नलिखित रसायन रखे जा सकते हैं। ये रसायन प्रथम विश्व युद्ध में फ्रांस, जर्मनी, ब्रिटेन और अमरीकी सेनाओं ने उपयोग किये थे। ये है – एथिल ब्रोमो ऐसीटेट, जाइलाइल ब्रोमाइड, बेन्जाइल ब्रोमाइड, ब्रोमोमिथाइल इथाइल कीटोन, इथाइल आयडो ऐसिटेट, बेन्जाइल आयोडाइड, ब्रोमो बेन्जाइल सायनाइड, क्लोरो ऐसीटो फीनोन।
2. दूसरी श्रेणी विषाक्त अश्रु उत्पादक रसायनों की है। ये रसायन आंखो के अतिरिक्त शरीर के अन्य भागों पर भी प्रभाव डालते हैं। विशेषकर फेफडों पर प्रभाव डालते हैं क्लोरोपिक्रिन और फिनाइल कार्बिलेमिन क्लोराइड रसायनों का तो अधिक हानिकारक प्रभाव फेफडों पर ही पडता है और अश्रु उत्पादक प्रभाव कम होता है।

विषाक्त अश्रु उत्पादकों में निम्नलिखित रसायन गिनाए जा सकते हैं, जिन्हें फ्रांस, जर्मनी और सोवियत संघ ने भी विश्व युद्ध में प्रयोग किया। क्लोरो ऐसीटीन, ब्रोमो ऐसीटोन, आयडो ऐसीटोन, ऐक्रोलीन, क्लोरोपिक्रिन, फिनाइल कार्बिलेमीन क्लोराइड।

वर्तमान में अश्रुकारक रसायनों का प्रयोग भीड को नियंत्रण करने, प्रदर्शनकारियों को तितर बितर करने के काम में लाया जाता है। इन अश्रुकारक रसायनों का संक्षिप्त विश्लेषण निम्नानुसार है–

1. इथाइल ब्रोमो ऐसीटेट ($CH_2BrCOOC_2H_5$) - इथाइल ब्रोमो ऐसीटेट पारदर्शक द्रव है। इसका विशिष्ट घनत्व 1.5 है इसका क्वथनांक 1680 सेंन्टीग्रेड है। यह द्रव लौह धातु के साथ प्रतिक्रिया नहीं करता। यह द्रव पानी में अघुलनशील है। जल द्वारा इसका मन्द गति से जलीय विश्लेषण होता है।

2. क्लोरो ऐसिटोन (CH_3COCH_2CL) - क्लोरीन का यौगिक होने के काराण इसकी बडी तीखी गन्ध होती है। वायु में इसकी सान्द्रता 0.018 केवल 0.01 मिलीग्राम प्रति लीटर हो तो आंख में अश्रुधारा बहने लगती है। 0.10 मिलीग्राम प्रति लीटर की सान्द्रता एक मिनट के बाद असह्य हो जाती है। 2.30 मिलीग्राम प्रति लिटर की सान्द्रता में 10 मिनट तक खडे रहने का घातक प्रभाव हो सकता है। अत: यह द्रव इथइल ब्रोमो ऐसीटेट की तरह की विषाक्त है। मुखौटों में प्रयुक्त चारकोल क्लोरो ऐसीटोन को अवशोषित कर लेता है। अत: इससे बचाव का साधन बडा सरल था। इसी कारण क्लोरो ऐसीटोन का प्रयोग शीघ्र ही बन्द कर दिया गया।

3. जाइलाइल ब्रोमाइड ($C_6H_4CH_3CH_2Br$) - जाइलाइल ब्रोमाइड एक अत्यन्त शक्तिशाली अश्रु उत्पादक पदार्थ हैं। अत्यन्त संवेदनशील व्यक्ति तो 0.00027 मिलीग्राम प्रति लिटर की नगण्य सान्द्राता पर ही आंखें में जलन महसूस करने लगते हैं। लेकिन अश्रु धाराा बहने के लिए वायु में इसकी सांद्रता 0.0018 मिलीग्राम प्रति लिटर होना आवश्यक है। 0.015 मिलीग्राम प्रतिलिटर की सान्द्रता केवल एक मिनट में ही असहनीय हो जाती है। 5.60

* प्राध्यापक (सैन्य विज्ञान) शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (सैन्य विज्ञान) ऋषीश्वर महाविद्यालय, फूप, जिला भिण्ड(म.प्र.) भारत

मिलीग्राम प्रति लिटर की सान्द्रता 10 मिनट में ही घातक सिद्ध हो सकती है।

4. बेन्जाइल ब्रोमाइड ($C_6H_5CH_2Br$) - बेन्जाइल ब्रोमाइड टॉल्यूइन के ब्रोमीनीकरण से प्राप्त की जाती है। विशुद्ध अवस्था में यह एक पारदर्शक द्रव है। इसका विशिष्ट घनत्व 1.44 है। इसका क्वथनांक 2010 सेन्टीग्रेड है और इसकी वाष्प वायु से 6 गुनी भारी होती है। यह पानी में अघुलनशील है। बेन्जाइल ब्रोमाइड का वाष्प दाब 200 सेन्टीग्रेड पर केवल 2.00 मिलीमीटर पारे की ऊँचाई के समान है। 200 सेन्टीग्रेड पर वाष्पशीलता मात्र 2.4 मिलीग्राम प्रति लिटर है। इसी विशेषता के कारण इसका प्रभाव एक स्थान पर काफी देर तक बना रहता है।

5. ब्रोमो ऐसीटोन (CH_3COCH_2Br) - 200 सेन्टीग्रेड पर ब्रोमो ऐसीटोन का वाष्प दाब 9 मिलीमीटर (पारा) है और वाष्पशीलता 75 मिलीग्राम प्रति लिटर है। अधिक वाष्पशीलता होने के कारण युद्ध के मैदान में इसकी अधिक सान्द्रता पाई गयी थी। अत: इसे विषाक्त, अश्रु उत्पादकों की श्रेणी में रखा जाता है। ब्रोमो ऐसीटोन द्रव की बूंदें शरीर की चर्म से स्पर्श करने पर फफोले डाल देती है। ये फफोले वैसे जल्दी ही ठीक हो जाते हैं। यदि ये फफोले शरीर के संवेदन शील अंगो पर पडें तो बडी पीडा होती है। जर्मन सेना ने इसका प्रयोग तोप और मोर्टार के गोलों में किया। ऐसीटोन पदार्थ की मांग अन्य उपयोगों के लिए बढ़ गई थी। अत: इसका अधिक प्रयोग नहीं हुआ।

6. ब्रोमो मिथाइल इथाइल कीटोन ($CH_3COCHBrCH_3$) - ऐसीटोन की मांग अन्य अद्योगों के लिए बढ़ गई थी। अत: जर्मनी में ब्रोमो मिथाइल कीटोन का उपयोग किया जाने लगा। फ्रांस में भी ब्रोमो मिथाइल इथाइल कीटोन के मिश्रण का प्रयोग किया जलगा। यह हल्के पीले रंग का द्रव है। इसका विशिष्ट घनत्व 1.43 है। इसका क्वथनांक 1450 सेन्टीग्रेड है। इसकी वाष्प वायु से 5.2 गुना भारी होती है। क्वथनांक के निकट इसका कुछ अंश विच्छेदित भी हो जाता है। इसका वाष्प दाब 140 सेन्टीग्रेड पर 15 मिलीमीटर पारे की ऊँचाई है।

बीस डिग्री सेन्टीग्रेड पर इसकी वाष्पशीलता 34 मिली ग्राम प्रति लिटर है। अन्य ब्रोमीन यौगिकों की तरह इसे भी सीसे के अथवा इनेमिल पालिश किये हुए कन्टेनरों में भरा जाता है। अश्रु उत्पादक प्रभाव के लिये इस पदार्थ की वायु में सान्द्रता कम से कम 0.0126 मिलीग्राम प्रति लिटर होनी चाहिए। 0.016 मिलीग्राम प्रतिलिटर है। इस सान्द्रता पर वायुमण्डल में दस मिनट ठहरने पर घातक प्रभाव पड़ सकता है। अधिक वाष्पशीलता होने के कारण वायुमण्डल में इसकी सान्द्रता शीघ्रता से बढ़ाई जा सकती है। अत: इसे विषाक्त अश्रु उत्पादक पदार्थों की श्रेणी में रखते है।

7. आयडो ऐसीटोन (CH_3COCH_2I) - आयडो ऐसीटोन हल्के पीले रंग का द्रव है जिस का विशिष्ट घनत्व 1.8 है। इसका क्वथनांक 1020 सेन्टीग्रेड है। वायु के सम्पर्क में आने से आयडो ऐसीटोन द्रव भूरे रंग का हो जाता है। गर्म करने से यह विच्छेदित हो जाता है। यदि इसे एक सप्ताह तक रखा रहने दिया जाए तो इसका डाइ आयडो ऐसीटोन बन जाता है। यह बडा तीखा द्रव है। इसकी विषाक्तता अन्य हैलोजन कीटोनों से अधिक है। फ्रांस ने इसका उपयोग थोडे ही समय किया। ब्रिटेन में भी इस यौगिक को तैयार किया गया किन्तु सम्भवत: युद्ध क्षेत्र में प्रयोग नहीं किया गया।

8. इथाइल आयडो ऐसीटेट ($C_2H_5COOCH_2I$) - इस द्रव की न्यूनतम अश्रु उत्पादक सान्द्रता वायु में 0.0014 मिलीग्राम प्रति लिटर है। 0.015 मिलीग्राम प्रतिलिटर की सान्द्राता असहा हो जाती है। 1.5 मिलीग्राम प्रति लिटर की सान्द्राता में खडे रहने से घातक प्रभाव पड सकता है। यह द्रव युद्ध में पहले प्रयुक्त किए गए अन्य रसायनों की अपेक्षा अधिक विषाक्त पाया गया। वाष्पशीलता कम होने के कारण इसकी अधिक सान्द्रता युद्ध क्षेत्र में नहीं पायी गई। सान्द्रता बढ़ाने के लिए इस द्रव के साथ अल्कोहल मिला दिया जाता है जिससे वाष्पशीलता बढ़ जाती है। ब्रिटेन को ब्रोमीन की अपेक्षा आयोडीन दक्षिणी अमरीका से आसानी से आसानी से उपलब्ध थी अत: इस यौगिक का प्रयोग किया गया।

9. बेन्जाइल आयोडाइड (C_6HSCH_2I) - अश्रु उत्पादक गुण में बेन्जाइल ब्रोमाइड से यह दुगना प्रभावकारी है। इसकी न्यूनतम प्रभावकारी सान्द्रता 0.002 मिलीग्राम प्रति लिटर है। 0.03 मिलीग्राम प्रति लिटर मनुष्य के लिए असहनीय हो जाती है। 3.0 मिलीग्राम प्रति लिटर की सान्द्रता 10 मिनट में ही घातक सिद्ध हो सकती है। इसकी वाष्पशीलता 200 सेन्टीग्रेड पर केवल 1.2 मिलीग्राम प्रति लिटर है अत: इसे बेन्जाइल क्लोराइड के साथ 50:50 के मिश्रण में प्रयोग किया गया।

10. एक्रोलीन (CH_2CH CHO) - ऐक्रोलीन एक शक्तिशाली अश्रु उत्पादक पदार्थ है जिसका आंख और गले दोनों पर भी एक साथ प्रभाव पड़ता है। यदि इसकी सान्द्रता अधिक हो तो फेफड़ों पर भी असर हो जाता है। 0.007 मिलीग्राम प्रति लिटर की सान्द्रता पर ही भारी मात्रा में आंसू निकलने लगते हैं और नेत्र श्लेष्मा में खुजलाहट और दु:खन होने लगती है और गले की श्लेष्म झिल्ली पर भी असर हो जाता है। 0.05 मिलीग्राम प्रतिलिटर की सान्द्रता असहाय हो जाती है। 0.35 मिलीग्राम प्रति लिटर की सान्द्रता दस मिनट में ही घातक हो जाती है। अधिक विषाक्तता होने के कारण ऐक्रोलीन को विषाक्त अश्रु उत्पादक पदार्थों की श्रेणी में रखा गया है।

11. ब्रोमोबेन्जाइल सायनाइड (C_6H_5CHBr CH) - इसके प्रभाव से गले की श्लेष्म झिल्ली और आंखो में खुजली होने लगती है। आंखो में बहुत ऑसू निकलते है और सिर में दर्द हो जाता है। ब्रोमो ऐसीटोन की तुलना में यह सात गुना अश्रु उत्पादक पदार्थ है। इसकी विशिष्ट गन्ध होती है जिसके कारण यदि इसकी सान्द्रता 0.000087 मिलीग्राम प्रति लिटर हो तो इसे पहचाना जा सकता है। मात्र 0.00015 मिलीग्राम प्रति लिटर की सान्द्रता से ही आंखो में ऑसू आने लगते है। 0.0008 मिलीग्राम प्रति लीटर की सान्द्रता असहनीय हो जाती है। 0.90 मिली ग्राम प्रति लिटर की सान्द्रता 30 मिनट में घातक सिद्ध हो सकती है। सैनिक उपयोग की दृष्टि से इस पदार्थ में तीन कमियॉ पायी जाती है। ब्रोमीन के कारण विशेष प्रकार के कन्टेनर बनाने पडते है। इसे धीरे–धीरे इसका रासायनिक विच्छेदन होता रहता है। तीसरा दोष यह है कि उष्मा के प्रति यह रसायत बड़ा संवेदनशील है। तोप के गोलों में भरने पर कठिनाई होती है। गोले में रखे अन्य पदार्थ के विस्फोट से ताप बहुत बढ जाता है। उच्च ताप के कारण इसका रासायनिक विच्छेदन हो जाता है।

12. क्लोरो ऐसीटो फीनोन ($C_6H_5COCH_2$ CL) - शुद्ध अवस्था में यह रंगहीन मणिभ पदार्थ है। इसका विशिष्ट घनत्व 1.3 है जो 59 सेन्टीग्रेड ताप पर पिघल जाता है। द्रव 247 सेन्टीग्रेड पर उबलने लगता है। कम सान्द्रता में वायु में मिला हो तो इसकी गन्ध सेबों के बाग की गन्ध से मिलती जुलती है। 20 सेन्टीग्रेड पर इसका वाष्प दाब 0.013 मिली मीटर पारे की ऊॅचाई के तुल्य है। इसकी वाष्पशीलता भी केवल 0.106 मिलीग्राम प्रति लिटर है।। जल में यह बहुत कम घुलनशील है। जल में इसका रासायनिक विच्छेदन नही होता। उबालने पर भी इसका रासायनिक विच्छेदन नही होता। अत: इसे द्रव अवस्था में भी गोलों, बमों, ग्रेनेडों में भरा जा सकता है। विस्फोटक का भी इस रसायन पर कोई प्रभाव नही पडता। अत: इसे उच्च

विस्फोट के साथ मिश्रित करके भी उपयोग में लाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Agents, C.W. (2007), James a Romano.
2. Gupta, Ramesh C. (2009) Hend Book of Toxicology of Chemical war fare agents.
3. Mauroni. Al (2011), Chemical and Biological warfare.
4. Talent. Jim (2012) World a risk.
5. Trucker, Jonathan B. (2013), War of Nerves.
6. Mathur R. (2017) Chemical Weapons.
7. Sen. A.K. (2017) Defense Against Chemical and Biological Agents-DRDO.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

A Hazard To Civilization: Cyber Terrorism

Surendra Singh* Prof. D.C. Upadhyay**

Abstract - Good and bad has co-existence considering the start of the world. where first one accommodates all matters which are crucial for wellness of all while other ones connotes negativity. Regrettably era cannot be point out as an exception of this rule. The internet and its technology has unfolded many possibilities for all international locations to expand their economies. On one hand our scientist, technocrats are the usage of this advanced stream of science for betterment of all and to make India self-based and secure from assault of our enemies while alternatively a very properly dependent corporations (impartial or state backed) are also using those technologies as a device to make INDIA susceptible and helpless. Cyber criminals carry out various acts like cyber stalking, harassment, defamation, hacking, and so on collectively we name it cybercrime. When those activities are controlled by prepared organization systematically and deliberately we time period it as CYBER TERRORISM.

Cyber terrorism is a nicely-deliberate and prepared use of technology by cyber professionals resides outside and inside the u.s.a . for anti-national sports. Although our government is nicely capable to fight against such demanding situations it calls for guide, attention and alertness from people.

This paper highlights a number of the fundamentals of cyber terrorism. This paper similarly discusses about the threats of cyber terrorism and the existing reputation of various cybercrimes in India. This paper ambitions at developing recognition on cybercrime and indicates take a look at on cybercrime.

Key Words - Cyber Terrorism, Hacking, Information Technology.

Introduction - In present era of fierce competition every country is struggling to secure its future. Technology is a mighty tool which helps in cost efficiency and excellence, which are require to be enriched and profitable, with its web based approach. Almost whole world is adopting this new form of information science for the development of their people and launching various programme based on information and communication technology, termed, e-governance and this programme are witnessing that these projects are improving the efficiency of government by maintaining transparency, accessibility and quick responsiveness. Although it is the brighter or positive sides of Information and Communication Technology .There are some bad elements in the society who doesn t, want peace, harmony and constructive environment in country. Therefore they are using all possible tools, methods, for their malafied intentions and technology is no exception to it.

Various terrorist groups are adopting ICT as a tool to disrupt law and order of a country. Cyber terrorism is an organized criminal activity committed by one person or group of persons to disturb a genuine transaction.

This can include use of information technology to organize and execute attacks against networks, computer systems and telecommunications infrastructures, or for exchanging information or making threats electronically. Examples are hacking computer systems, introducing viruses to vulnerable networks, web site defacing, Denial-of-service attacks, or terrorist threats made via electronic communication.

1. Offense against individual - "*Man is born free but that was his last moment to enjoy that one*".

Every person reside in a society is bound to certain laws, conventions, rules which protect any individual to disturb law and order of the society. At the same time these laws provide certain rights to that individual to protect him. Constitution of India provides Right to privacy to any individual. Right to privacy is a part of the right to life and personal liberty enshrined under Article 21 of the Constitution of India. With the advent of information technology the traditional concept of right to privacy has taken new dimensions, which require a different legal viewpoint. With the passage of time cybercrimes has become much complicated and challenging.

Present status of computer-generated crime in India - The Nation Crime Records Bureau (NCRB), Ministry of Home Affairs has released Cyber Crime Statistics for the 2016 year, which again shows rapid increase in cybercrime by 50% on year to year basis from 2015 to 2016. The statistics mainly show cases Registered under Cyber Crimes by Motives and Suspects (States & UTs): The maximum offenders came from the 18-30 age group.

*Researcher, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor, State Law College, Bhopal (M.P.) INDIA

Among states, the highest incidents of cybercrime took place in Maharashtra (907) followed by Uttar Pradesh (682) and Andhra Pradesh .

The maximum cybercrime arrests of four hundred twenty six (426) under the IT Act took place in Maharashtra and Andhra Pradesh was a distant second with 296 arrests, followed by Uttar Pradesh with 283 arrests.

In percentage terms, the state that saw the most dramatic increase in cases registered under the IT Act was Uttarakhand at 475% (from 4 cases to 23); Assam a close second with 450% (from 28 cases to 154). Interestingly, the picture postcard union territory, Andaman and Nicobar islands, registered an eye-popping increase of 800% (two cases in 2012 to 18 in 2013) in the same category.

The Delhi city has registered 131 cases of cybercrime cases which is an increase of 72.4 percent as compared to last year 2012. Whereas Lakshadweep, Dadar and Nagar Haveli reported no cybercrime cases for the year 2013. Also Cyber Crime activities seem to rare in the northeastern states. In 2013, only one case each was registered in Nagaland and Mizoram.

2. Information protection and records stealing- The information technology can be misused to get government secrets and data of private individuals and the Government and its agencies which are sensitive and important in nature. Government owned network usually contains valuable information concerning defense, nuclear and other departments which the Government will not wish to share otherwise. The same can be targeted by the terrorists to facilitate their activities, including destruction of property. It must be noted that the definition of property is not restricted to moveable or immovable alone.

Thus, if any person without permission of the owner or any other person who is in charge of a computer, computer system or computer network -

a. Accesses or secures access to such computer, computer system or computer network.
b. Downloads copies or extracts any data, computer data base or information from such computer, computer system or computer network including information or data held or stored in any removable storage medium;
c. Damages or causes to be damaged any computer, computer system or computer network, data, computer data base or any other programme residing in such computer, computer system or computer network;

She/he shall be liable to pay damages by way of compensation not exceeding one crore rupees to the person so affected. The expression "Computer Database" means a representation of information, knowledge, facts, concepts or instructions in text, image, audio, video that are being prepared or have been prepared in a formalized manner or have been produced by a computer, computer system or computer network and are intended for use in a computer, computer system or computer network The expression "Damage" means to destroy, alter, delete, add, modify or re- arrange any computer resource by any means. These provisions make it clear that secret information appropriation and data theft by the cyber terrorists will be dealt with punitive sting and monetary impositions.

3. Crime against Nation - Any individual is a basic element of nation .Thus any crime against any individuals is serious concern for any government as for maintaining law and order is concern but there are various other vurnibilities which can be named by crime against Nation which are as follows:

A. Challenges before administration - E-governance is replacing traditional governance in almost each country .India is also adopting e-governance in form of e-administration.

The aim of e-governance is to make the interaction of the citizens with the government offices (G to P) easy to share information with transparency and reliability . In a democracy, people govern themselves and they cannot govern themselves properly unless they are aware of social, political, economic and other issues confronting them. It is noticeable that the immediate goal of all cyber terrorist activities is to collapse a sound communication system, which includes an e-governance base. Thus, by a combination of virus attacks and hacking techniques, the e-governance base of the government can be caused to be collapsed. This would be more deleterious and disastrous as compared to other tangible damages, which were caused by the traditional terrorist activities. Similarly, the terrorists to the common detriment of the nation at large can illegally obtain information legitimately protected from public scrutiny by the government in the interest of security of the nation. Thus, a strong e-governance base with the latest security methods and systems is the need of the hour.

B. Denial of services attack - Availability of system when require is the core of any sound and robust network system. This has much importance in case of network related to government's organizations because it contains matter data related to interest of Nation and any breach of any information's resides in these system might be harm full for whole country. So there must be robust & secure information security measures in network availed by government for communication and networking. In India, reason online security experts, the apathy towards strengthening online security stems from the fact that the maximum attacks we have seen are defacing a site or largely sending denial of services.

C. Network Damage and Disruptions - The main aim of cyber terrorist activities is to cause networks damage and their disruptions. This activity may divert the attention of the security agencies for the time being thus giving the terrorists extra time and makes their task comparatively easier. This process may involve a combination of computer tampering, virus attacks, hacking. According to Indian Computer Emergency Response Team around 6000 Indian websites were defaced in 2009.

Recommendation - Although it's very big challenge before government to fight with hidden war in form of cyber

terrorism because some time these activities may be organized and planned by enemy country/s rather than an individual or any small group but by using following precautions we can minimize the possibilities to commit these crime-

1. Necessary steps must be taken to enable concerning bodies.
2. Computer security and awareness training.
3. Continuing awareness and education regarding terrorist trends and methodologies.
4. Future readiness to defend against attacks.
5. Establishment of special court, e-court, in which complain can register on-line and on the date of hearing video conferencing should be used to avoid physical presence.
6. Sensitive information should not be stored in the computer systems which are connected to the internet.
7. Background of outsourcing agencies should be check prior to outsource any assignment, task to maintain information security inform of authenticity, confidentiality and authenticity of data.
8. Special training programme for judicial officers to deal with cases related to cybercrimes.
9. Effective use of intelligence gathered from all sources.
10. Ministries and departments have been advised to update IT systems and carry out. regular audits to ensure an error-free system.
11. There must be a specific police force to deal with cybercrimes in the country.
12. Separate laws for each of the classification of cybercrime instead of amending the Information Technology Act.
13. Creation of special enforcement agencies to deal exclusively with cyber laws.
14. Government should impose a ban on websites that exclusively display pornography and hate speeches.
15. Continued enhancement of resources which are essential to make Network mush secure and robust.
16. Public/Private interaction to get mixes approach of advanced technology and expert implementation mechanism.
17. Organizations possessing critical information must implement information security. management practices based on ISO 27001.
18. Cyber ethics should be including as a subject in various curriculum at school and college level.
19. Establishment of e-cops in those city which contains economic importance.
20. Promotion of Research and Development in the field of information security.
21. A techno-legal panel for provide training to various concerning departments.
22. Last but not the least creation of awareness among each and every part of administration and society.

Conclusion - Cyber terrorism is not a movement or just attack but a war. nicely planned, properly designed and organized war that's more dangerous than traditional assault. Hackers assault with bots, viruses and Trojans as opposed to planes or armored motors and missiles and systematically create "trapdoors" to invade servers and computers and metal passwords of high significance .So there ought to be long-term approach to combat with this new and advance form of terrorism .incorporated technique is require for this in which cooperation of our Political bodies, Judiciaries, management, and above of all common humans is inevitable.

References:-

1. http://www.cyberlawtimes.com/cyber-crime-statistics-india-2013-2014
2. http://www.crime-research.org/library/Cyber-terrorism.htm
3. http://www.ncsl.org/research/telecommunications-and-information-technology/cyberstalking-and-cyberharassment-laws.aspx (Dec 5,2013)
4. http://www.digitalattackmap.com/understanding-ddos/
5. http://cybercrime.org.za/data-theft/
6 http://ibnlive.in.com/news/cyber-crimes-up-by-51-per-cent-in-india-maharashtra-ap-karnataka-top-list/482969- 3.html
7. Chip Magazine. Special Edition . Mumbai
8. http://www.acronymfinder.com/Association-of-Public-Internet-Access-Provider-%28India%29- %28APIAP %29.html
9. Official Website of NASSCOM
10. Cyber Crime Cell, Mumbai PHISHING.mht
12. file:///C:/Documents%20and%20Settings/sai/Local%20Settings/Temp/Temporary%20Directory% 201%20for%20cyberterrorism.zip/CYBER% 20TERRORISM %20AND%20ITS%20SOLUTIONS%20AN%20 INDIAN%20 PERSPECTIVE.htm

****

Cyber Terrorism: A Critical Review

Surendra Singh* Prof. D.C. Upadhyay**

Introduction - After 9/11, it has become a trend for the militant outfits to avail cyber assistance in order to achieve extremist missions. The Kosovo conflict in 2001 which also 'inspired' defacement of numerous NATO websites and denial of services by hackers who supported the anti NATO activities (Denning, 2010) and the 1997 Internet Black Tiger's attack on Sri Lankan embassy which involved 800 emails carrying extremist messages to 'disrupt the communications' (Denning, 2001), were some of the early evidences of 'cyber terrorism'. The 9/11 attack saw typical execution of cyber attack by Al Qaeda against the US government, which carried not only the threat messages, but also defaced many websites, disrupted internet communication for government as well as civil amenities (Denning, 2010) and also created a huge empathy among the Muslim hackers to support the militant forum in their jihad. The trend thus turned highlights to Muslim jihadists and their cyber terrorism activities against governments, from non-Muslim fundamentalist groups against governments.

In India, cyber terrorism has emerged as new phenomena. The probe against the 2008 serial blasts in citieslike Ahmedabad, Delhi, Jaipur, and Bangalore found considerable evidences of cyber terrorism (NDTV Correspondent, 2010); the 2008 attack on Mumbai Taj Hotel, which is now famously known as 26/11 and the 2010 blast in the holy city of Varanasi also had trails of cyber terrorism (NDTV Correspondent, 2010). Ironically, most of these incidences involved Muslim Jihadists like the Indian Mujahiddin. However, an analysis on news reports on extreme usage of cyber communications would show that spreading of terror messages targeting State Heads or claiming responsibilities for terror attacks had been done by non- Muslim youths as well. However, all these incidences indicate two main aspects of cyber terrorism, namely, gathering of information and spreading of the terror through cyber communications for disruption of national security and peace.

After the 26/11 attack, the Indian government had brought into effect a set of proposed amendments to the Information Technology Act 2000, which has specific provisions for combating cyber terrorism. The provision under section 66F discusses about cyber terrorism in the broadest sense. This provision actually lays down the punishment to be meted out for actors of cyber terrorism. The definition of the term cyber terrorism is glaringly missing in the said legal provision. To strengthen the law on cyber terrorism, the Indian government had further proposed a set of Rules in 2011,[5] which promises to tighten the loose loops. In this chapter, I claim that, this particular law has addressed cyber terrorism from a holistic aspect; however, loopholes still exist to withhold the proper execution of the laws for prosecuting the accused. Further, in this chapter I aim to analyze the provision of this law in the light of internationally established nuances of cyber terrorism. This chapter will address the problem from three different angles, namely:

1. The myth and truth about 'cyber terrorism'.
2. Could laws regulate this issue?
3. Whether Indian laws really address the issues of cyber terrorism in the light of freedom of speech.

Background - Even though the issue of cyber terrorism has attracted huge attention from cyber criminologists, cyber law specialists and social science researchers, very few researches have been done for analyzing the legal issues involved in cyber terrorism in India. Globally, the issue of cyber terrorism has been analyzed from four main angles, namely the missions that are involved in cyber terrorism (Denning, 2010), the methods that are followed for achieving the ultimate purpose of cyber terrorism (Denning,

Some researches have established that cyber terrorism includes two main types of activities, viz., cyber crime and misuse of information technology, and therefore it would be wrong to assume that cyber terrorism is a new kind of cyber crime (Schjolberg, 2007). It may be worthy to note that the types of cyber crimes that are involved in cyber terrorism may vary from identity theft (Wykes & Harcus, 2010), to denial of service attack (Denning, 2010). At the same time, the extremists may leave a trail in the cyber space after the real terrorist activity has taken place (Wykes & Harcus, 2010). This may necessarily include visits to the websites, sending emails etc. but the question, which remains, is how the police and law and justice

*Researcher, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor, State Law College, Bhopal (M.P.) INDIA

machinery combat this overall misuse of technology in the name of Jihad? Due to lack of proper infrastructure and easy methods of deletion of the evidences, it may become impossible for security experts and the police to track the trouble creator (Jewkes, 2010). Further, some studies have also shown that before 9/11, cyber terrorism was not particularly associated with jihad, but with demands from the extremist groups from the government (Denning, 2010).

After 9/11, the term cyber terrorism has been mostly associated with the cyber warfare between Muslim fundamentalists and the government, especially the US and those national governments who support US policies and rules and regulations (Wykes & Harcus, 2010).

The term cyber terrorism has been attempted to be defined from various angles. According to the definition provided by the US national infrastructure protection centre (2001), cyber terrorism may mean a criminal act perpetrated by the use of computers and telecommunication capabilities resulting in violence, destruction and/or disruption of services to create fear by causing confusion and uncertainty with a given population with the goal of influencing a government or population to conform to particular political, social or ideological agenda (Denning, 2010, p. 198).

Given the fact that cyber terrorism includes criminal misconduct and trespass in the cyber space, Schjolberg (2007) had pointed out that domestic courts therefore play great role in combating cyber terrorism.

Core characteristics of cyber terrorism - Cyber terrorism has some universal characteristics, which are as follows:

1. It is done to convey a particular destructive or disruptive message to the government(s).
2. There are various methods to convey this message, viz., through denial of services, sending threatening emails, defacing of government websites, hacking and cracking of crucial governmental systems or ‘protected systems’, disrupting the civil amenities through destroying the proper working of the digital information systems, etc.
3. It could affect the computers and the networks as a whole, it could also affect the governing system, and it could affect the population of target area to create threat.
4. Computer and digital communication technology are used as a main tool to achieve extremist purposes.
5. The whole act could be motivated by religious, social or political ideologies.
6. It is mostly done by hi-tech offenders.

For elaborating these characteristics, I take up the 26/11 Mumbai terror attack case. Even though the media had highlighted the phenomenal terrorist attack on crucial business and Jewish settlements in Mumbai, the Indian Ministry of Home affairs in their annual report (2010) had released a detailed nexus between digital technology and the (mis)use of the same by extremists. Oh, Agrawal, and Rao (2011) and LaRaia and Walker (2009) had corroborated the usage of cyber technology to extremist use to present the scenario of cyber terrorism which engulfed India as well as the whole world. Both Oh et.al (2011) and LaRaia and Walker (2009) have elaborated how satellite phones, GPS and various websites were widely used for fulfilling the mission of the extremists. Without going into the details, it could be said, that, unlike the Al Qaeda attack on the twin towers in the US in 9/11, or the Tamil Tiger’s email attacks to computers in the Sri Lankan embassies, in India, the cyber terrorism scenario has not been expanded to attack on the machines or the network widely. On the contrary, the term cyber terrorism has been broadly used by the media especially to identify the usage of cyber space and /or cyber technology to aide the terrorist activities, gain information about the target place and population, recruitment and motivation etc.

There are several reports on the hacking and defacement of Indian government websites. Some of the examples are the 2010 hacking and defacement of the CBI website by the Pakistani hackers, who called themselves ‘Pakistan cyber army’, wherein the hackers had put up a message stating ‘Pakistan cyber army is warning the Indian cyber army not to attack their websites’ (NDTV Correspondent, 2010). The website was affected, but not the regular emailing services. The media stated that the experts hoped that it was a mere defacement and not the case data vandalizing because the server hosting the website was different from the one, which managed confidential correspondences (NDTV Correspondent, 2010). During the period of January to June 2011, a total of 117 government websites had been defaced (Saxena, 2011). Some important websites like the website of National Investigation Agency (NIA) was also affected, but it was temporarily disabled and not hacked. Investigation on these offences is still going on. Experts had suggested that regular cyber security audits could prevent such attacks (NDTV Correspondent, 2010). Such types of attacks actually fulfill the qualities of cyber attacks against government. Basing on this very assumption, Duggal commented on the web defacement of the CBI website as an act of cyber terrorism (NDTV Correspondent, 2010).

Indian interpretation of cyber terrorism - A minute analysis of the 26/11 Mumbai attacks would show that cyber communication between the terrorists and usage of cyber technology by them to be acquainted with the target population and the place, created similar devastating results in India. In July 2011, the digital technology was further used for bomb blasts in a crowded city market in Jhaveri Bazaar, Mumbai. The 2010 Varanasi blast case also saw the usage of cyber communication wherein the Indian Mujahiddin claimed responsibility for the blast.

Awakened by this, the Government of India took strong steps to strengthen the cyber security, including prohibition of terrorist activities through cyberspace by way of amending the existing Indian information Technology Act, 2000. The provision that was specifically inserted in this legislature for this purpose was section 66F which

defines and describes cyber terrorism. Section 66F mentions that

(1) Whoever-

(A) With intent to threaten the unity, integrity, security or sovereignty of India or to strike terror in the people or any section of the people by –

(i) Denying or cause the denial of access to any person authorized to access computer resource; or

(ii) Attempting to penetrate or access a computer resource without authorisation or exceeding authorized access; or

(iii) Introducing or causing to introduce any Computer Contaminant.

and by means of such conduct causes or is likely to cause death or injuries to persons or damage to or destruction of property or disrupts or knowing that it is likely to cause damage or disruption of supplies or services essential to the life of the community or adversely affect the critical information infrastructure specified under section 70, or

(B) Knowingly or intentionally penetrates or accesses a computer resource without authorisation or exceeding authorized access, and by means of such conduct obtains access to information, data or computer database that is restricted for reasons of the security of the State or foreign relations; or any restricted information, data or computer database, with reasons to believe that such information, data or computer database so obtained may be used to cause or likely to cause injury to the interests of the sovereignty and integrity of India, the security of the State, friendly relations with foreign States, public order, decency or morality, or in relation to contempt of court, defamation or incitement to an offence, or to the advantage of any foreign nation, group of individuals or otherwise, commits the offence of cyber terrorism.

(2) Whoever commits or conspires to commit cyber terrorism shall be punishable with imprisonment which may extend to imprisonment for life'.

These are gruesome acts which is done with an intention to threaten the security, sovereignty and integrity of India or strike terror in the minds of people or a section of people; and which may result in death and injury to people, damage to properties, disruption of civil services which are essential to the life of a community, and also affects the critical information infrastructure.

However, in the case of 26/11 Mumbai attacks, it could be seen that terrorists had used communication services not to hack or block the protected information, but to aide the terrorists to carry on with the massacre. The intercepted messages that were availed by the Government of India during the prosecution of the Mumbai attack case would clearly show the extremists were communicating purely on the basis of their personal freedom of speech. However, when looked at the communication in total, it could be seen that this speech was carried on to disrupt the peace, security and sovereignty of India and thereby it looses its nature of a protected speech under Art 19A of the Constitution of India. At the same time, it is an act of terrorism. In the definition provided by section 66F, this particular aspect is glaringly absent. The Information Technology Act, 2000 (amended in 2008) had painstakingly taken efforts to secure protected systems, which is defined by Section 70. "The appropriate Government may, by notification in the Official Gazette, declare any computer resource which directly or indirectly affects the facility of Critical Information Infrastructure, to be a protected system." Explanation added to this section further explains that "Critical Information Infrastructure" would mean that vital computer resource regarding national security, economy, public health and safety, which if destructed or damaged, shall have a "debilitating impact" on these issues.

'Cyber terrorism' was coined in 1996 by Barry Collin, who defined the term as the "convergence of cybernetics and terrorism" (cited in Krasavin, 2002, para 6) However, the definition was not stagnated in this meaning alone. Various researchers have attempted to define the term from various angles, which include the usage of the term to mean using information technology with political motivation to attack on civilians (Pollit, 1997 cited in Krasavin, 2002). This term has further gained popularity due to the media, who interpreted the term from mischievous pranks to terrorize others (Krasavin, 2002), to even serious attacks like the Mumbai attack ((NDTV Correspondent, 2010).

It could therefore be seen that cyber terrorism could be defined depending upon the term's linguistic usage and interpretation of the same through various approaches. As I had mentioned earlier, cyber terrorism is a holistic term. This includes general usage of the cyber space, which would also aide to terrorist purposes. Oh et.al (2010) had showed that apart from general websites giving details about Mumbai target areas, the terrorists had extensively used Twitter posts made by common people togather information about the current status of situations. Most of these posts were made in connection of warning people about sensitive areas, blood donation camps that were set up to supply blood to the wounded, information for friends and relatives. Apparently, these posts were well within their constitutional limits; however, they fed unconstitutional missions. From these points, it could be seen that the present law failed to understand the reach of terrorist's physical communication to cyber space. This failure had further motivated more cyber usage for terrorist purposes.

Conclusion - Apparently a legislation made to safeguard the e-commerce, cannot be pulled in to protect non-commercial issues including extremist communications and ideologies that are hatched in the cyber space. In India, extremist activities which are carried out to disrupt the sovereignty and integrity are strictly regulated the Prevention of Terrorism Act, 2002 (repeal ordinance, 2004), besides various provisions under the Indian Penal code, especially

chapter VI, which deals with offences against the State. The prime focus of these legislations is to restrict terrorist activities in India. As such, they also emphasize on the forensic evidences that could trace the motive, the master plan as well as the master planner and the executers of such plans. With the growth of digital communications, the Indian Evidence Act has also adopted the cyber forensic specimens as evidences for the extremist ideologies and activities. A minute analysis of the Information Technology Act,2008 would show that the language of the provisions, especially section 69 F, fails to recognize the inherent meaning of terrorism through cyber space. Rather, this law remained a shadow of the existing anti terrorism legislations. Vandalizing the cyber space could definitely be termed as cyber terrorism, but cyber communication carried out to vandalize the peace of civil society must not be ignored.

Nothing but a focused law could be the only answer for preventing cyber terrorist activities in India. It could be seen that Information Technology Bill 2006 had a larger holistic statement of objects and reasons. Para 1 and 2 of the statement of objects and reasons of this Bill stated as follows:

The Information Technology Act was enacted in the year 2000 with a view to give a fillip to the growth of electronic based transactions, to provide legal recognition for e-commerce and e-transactions, to facilitate e-governance, to prevent computer based crimes and ensure security practices and procedures in the context of widest possible use of information technology worldwide. With proliferation of information technology enabled services such as e- governance, e-commerce and e-transactions, protection of personal data and information and implementation of security practices and procedures relating to these applications of electronic communications have assumed greater importance and they require harmonisation with the provisions of the Information Technology Act. Further, protection of Critical Information Infrastructure is pivotal to national security, economy, public health and safety, so it has become necessary to declare such infrastructure as a protected system so as to restrict its access.

However, the amended Act of 2008 does not show case these objects and reasons. Here lies the pivotal focus of my argument. A law meant for safeguarding electronic commerce could go to save the personal data of the individuals, but it may not successfully envelop the issues of terrorism, even though such terrorist move could disrupt the commercial transactions through cyber space and thereby cause financial loss to the nation. In order to make the present Information Technology Act, 2008 a focused legislation to prevent cyber atrocities, especially cyber terrorism, the following recommendations could be adopted:

1. The statement of object and reasons must be stretched to cover crimes committed in the cyber space, and not limited to safeguard electronic commerce and related communications only.
2. Cyber terrorism must be broadly defined to include the usage of cyber space and cyber communication.
3. The language of Section 66F must be stretched to cover cyber communication that is carried out with intent to fulfill terrorist missions. Further, the provisions of section 69, which speaks about power to issue for interception or monitoring or decryption of any information through any computer resource, must be included in the ambit of section 66 E. This could form a new chapter dedicated for cyber terrorism and extremist speeches in the main legislation.

References :-

1. Collin, B. (1996). The Future of CyberTerrorism. Proceedings of 11th Annual International Symposium on Criminal Justice Issues, The University of Illinois at Chicago.
2. Denning, D. E. (2001). Cyberwarriors: Activists and Terrorists turn to cyberspace. *Harvard International Review*, *XXIII*(2), 70-75.
3. Denning, D. E. (2010). Terror's Web: How the Internet is transforming Terrorism. In Y. Jewkes & M. Yar (Eds.), *Handbook of Internet Crimes* (pp. 194 - 213). Cullumpton: Willan Publishing.
4. Duggal, P. (May 30, 2011). Cyber Terrorism – Some legal perspectives. Retrieved 12 August 2011from http://neurope.eu/cybersecurity2011/?p=47
5. Halder D. (7 August 2011). The café with better responsibility. Retrieved 12 August 2011 from http://cybervictims.blogspot.com/2011/08/cafe-with-better-responsibility.html
6. Jewkes, Y. (2010). Public Policing and Internet crime. In Y.
7. Jewkes & M. Yar (Eds.), *Handbook of Internet Crimes* (pp. 525 - 545). Cullumpton: Willan Publishing.
8. Krasavin, S. (2002). What is Cyber-terrorism? Retrieved on 12 August 2011 from http://www.crime- research. org/library/Cyber-terrorism.htm.
9. LaRaia, W., & Walker, M. C. (2009). The Siege in Mumbai: A Conventional Terrorist Attack Aided by Modern Technology. In M. R. Haberfeld., & A.V. Hassell. (Eds.), *A*
10. *New Understanding of Terrorism* (pp. 309-340). New York: Springer.
11. NDTV Correspondent (2010). Hacked by 'Pakistan cyber army', CBI website still not restored. Retrieved 12 August 2011from http://www.ndtv.com/article/india/hacked- by- pakistan-cyber-army-cbi-website-still-not-restored-70568

****

भारत में महिला सशक्तिकरण-राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक सहभागिता का एक अध्ययन

डॉ. अशोक कुमार त्यागी *

प्रस्तावना - राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक सहभागिता का एक अध्ययन वैदिक युग में भारतीय समाज में महिलाओं का पुरूषों के समान शिक्षा, धर्म, राजनीति, संपत्ति व उत्तराधिकार के अधिकार प्राप्त थे। निर्णय-प्रक्रिया में सहभागिता थी। पुरूषों के समान स्वतंत्रता और शील तथा सम्मान की रक्षा करना एक अहम् कर्तव्य माना जाता था। वैदिक युग में महिलाओं की स्थिति काफी अच्छी थी। मध्य युग में पितृ सत्तात्मक और पुरूष प्रधान समाज में स्त्री-पुरूष असमानता स्वीकृत थी। लिंग भेद के आधार पर स्त्री पुरूष की भूमिका निर्णित थी और स्त्रियों की स्थिति घर तक सीमित हो गई। यह स्त्रियों की स्थिति की दृष्टि से एक कलंक का युग माना जाता है। इसके लिये अनेक धारकों में से महत्वपूर्ण विदेश आक्रान्ताओं का भारत पर आक्रमण रहा है। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन काल में शिक्षा सुधार के कुछ प्रयास प्रारम्भ हुये। भारत में स्वतंत्रता के पश्चात लोकतांत्रिक व्यवस्था के कारण पुन: महिलाओं की स्थिति में बदलाव आने लगा।

आज महिलायें राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय परिदृश्य में व्यवसाय के प्रत्येक कार्यक्षेत्र में अपनी पहचान कायम कर रही है। इतना ही नहीं बल्कि समान पद पर आसी एक महिला की पुरूष की कार्यप्रणाली के साथ तुलना की जाये तो महिला पुरूष से एक कदम आगे ही है। यह स्थिति नारी के लिये पूर्णत: स्वाधीन, स्वाभिमानी, आत्म निर्भरता व समानजनक है। कही यह भ्रम तो नहीं है। क्या वास्तव में नारी अपने आपकों स्वतंत्र व सुरक्षित महसूस करती है।

संयुक्त राष्ट्र संघ विकास कार्यक्रम की मानव विकास रिपोर्ट - 1995 के अनुसार 'महिलाओं की क्षमता में बढ़ोत्तारी और उन्हें अपनी समझ से काम करने का अधिकार प्रदान करना न केवल अपने में महत्वपूर्ण है बल्कि आर्थिक दृष्टि व विकास में योगदान का सर्वाधिक विश्वसनीय तरीका है। रिपोर्ट में पुन: आगे कहा गया है- लिंग की समानता के बिना मानव विकास असम्भव है। जब तक महिलाओं को विकास प्रक्रिया से दूर रखा जायेगा तब तक विकास में विषमता बनी रहेगी। स्थायी मानव विकास का अर्थ-विकास के आदर्शो को लिंग समानता से जोड़ना।'

भारत की सामाजिक संरचना संवेदनशीलता की बुनियाद पर रखी गई है। आज लोकतांत्रिक व्यवस्था में विश्व का सबसे बड़ा संविधान बनाने व अपनाने के बाद भी क्या भारत में समाज को महिलाओं के अनुकूल बना पाये है। नन्ही मासूम बच्चियाँ दुनिया में जन्म लेने से पूर्व ही क्रूरता एवं निर्दयता से समाप्त कर दी जाती है। बच्चियाँ माँ के गर्भ के अन्दर भी सुरक्षित नहीं है तो भला समाज में कैसे सुरक्षित हो सकती है। कन्या भ्रुण हत्या के प्रभाव के कारण न केवल लड़कियों की जन्म दर घटती जा रही है, बल्कि लिंग अनुपात भी तेजी से घट रहा है। निम्न तालिका घटते लिंग अनुपात स्पष्ट दर्शाती है।

तालिक-1

वर्ष	लिंग अनुपात (प्रति हजार पुरूषों पर महिलाओं की संख्या)
1901	972
1911	964
1921	955
1931	950
1941	945
1951	946
1961	941
1971	930
1981	934
1991	927
2001	933

2001 मध्य प्रदेश में 919

आज आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं को उनकी शक्ति के बारे में जागृत किया जायें। जिससे व सामाजिक विकास की प्रर्वतक बन सकें। महिलाये जब तक अपनी शक्ति, क्षमता व आत्म विश्वास को जागृत नहीं करेगी। तब तक बाहय धारक उन्हे सशक्त नहीं बना सकता है। समस्त समाज से देश भी मजबूत होता है और समाज को सशक्त बनाने के लिये नारी को जागरूक एवं सशक्त बनाया जाये।

महिला को जागरूक एवं सशक्त बनाने हेतु उनकी सत्ता के स्वरूप के निर्धारण और सहभागिता को बढ़ाना होगा। राजनीतिक शक्ति संरचना व निर्णय प्रक्रिया से जुड़े कार्यकलापों में सशक्त व सुनिश्चित भागीदारी ही महिलाओं को राजनैतिक रूप से सशक्त कर सकती है। असमानता पर आधारित लैगिक संबधों में परिवर्तन के लिये आवश्यक है कि वर्तमान पैविक सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था में सत्ता व शक्ति के मुख्य केन्द्र बिन्दुओं यथा- राष्ट्र राज्य, बाजार व नागरिक समाज का नेतृत्व करने के लिये महिलायें आगे आये। स्वयं को प्रभावित करने वाकी योजनाओं व नीतियों को सत्ता के गलियारों में पैठ बनानी होगी। जिससे निर्णयों को प्रभावित कर सके। महिलाओं की उन्नति व विकास के लिये आवश्यक है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र विशेष कर राजनीति में उनका सशक्तिकरण हो, उनकी सहभागिता का स्तर उच्च हो। ऐसा होने पर लैंगिक आधार पर समतापूर्ण समाज की स्थापना

* 26, छतरपुर, नई दिल्ली-74, भारत

होगी। महिलाओं के राजनैतिक सशक्तिकरण हेतु- स्त्री-पुरूष के मध्य समानता, महिलाओं की स्वयं की क्षमताओं का पूर्ण विकास, महिलाओं का प्रतिनिधित्व और निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं का अधिकार जैसे महत्वपूर्ण एवं आधारभूत सिंह दांतों को अनिवार्य रूप से लागू करना होगा।

वास्तविकता यह है कि राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका बहुत सार्थक नहीं है। निर्णय प्रक्रिया में सशक्त भागीदारी के आभाव में प्राय: उन्हे संसाधनों का असमान वितरण, अपने हितों की उपेक्षा का सामना करना पड़ता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि राजनीति में महिला सहभागिता के मुद्दे को अधिक सशक्त ढंग से उठाया जाये। यद्यपति पिछले कई दशकों से चले आ रहे महिला आन्दोलनों की प्रभावशाली उपलब्धियाँ रही है, परन्तु इसके पश्चात भी राजनीतिक शक्ति संरचना में उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व देखने को नहीं मिलता। आज भी पूरे विश्व में औसतन 12-13 प्रतिशत मलिहायें ही विधायी संस्थाओं हेतु निर्वाचित हो रही है। भारत में भी कमोवेश यही स्थिति है।

इस शोध पत्र में भारत में राष्ट्रीय स्तर पर महिला सशक्तिकरण के सन्दर्भ में उनकी राजनीतिक सहभागिता से संबंधित निम्न बिन्दुओं का किया गया अध्ययन प्रस्तुत है-

1. महिलाओं की सहभागिता हेतु किये गये प्रयास।
2. महिलाओं की सहभागिता संबंधि प्रवृत्तियों का अध्ययन।
3. महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता के मार्ग में आने वाली समस्यायें।
4. महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता दृष्टि हेतु उठाये जाने वाले कदम।

भारत में राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता हेतु सवैधानिक स्तर पर सार्थक किये गये है। भारतीय संविधान द्वारा स्त्रियों को राजनीतिक समानता का अधिकार एक प्रगतिशील कदम था जो तत्कालीन समय में विश्व के आधुनिक व विकसित कहे जाने वाले उन्नत देशों के राजनीतिक आदर्शो से भी बढ़कर था। भारत में महिलाओं से संबंधित सुधार आन्दोलनों का प्रारम्भिक रूप पारिवारिक ढाँचे के अर्न्तगत ही उनकी स्थिति को सुधारने तक सीमित था। भारत में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता से संबंधित मुद्दा पहले-पहल स्वतंत्रता संग्राम के दौरान चर्चित हुआ। जिसमें स्वयं महिलाओं की सक्रिय सहभागिता थी। सर्वप्रथम 1917 में सरोजनी नायडू के नेतृत्व में भारतीय महिलाओं ने राजनीति में स्त्रियों के प्रतिनिधित्व का मुद्दा उठाया और उस समय इस मांग का अर्थ सर्वभौमिक मताधिकार से था। 1921 के सुधार अधिनियम ने महिलाओं को यह अधिकार प्रदान किया। परन्तु यह केवल उन गृहणियों तक सीमित था जो सम्पन्न व शिक्षित थी। ब्रिटिश शासकों ने स्त्रियों को कभी भी एक राजनैतिक के रूप में नहीं देखा।

भारत में विभिन्न सवैधानिक प्रावधानों की सहायता से महिलायें अनेकों क्षेत्रों में सफलतापूर्वक महत्वपूर्ण भूमिकाओं का निर्वाह कर रही है, परन्तु उनकी राजनीतिक भूमिकाओं की आज तक भी बहुत अधिक निर्णायक नहीं माना जा सकता। यह सत्य है कि गैर परम्परागत राजनीतिक गतिविधियों जैसे-पर्यावरण संबंधी आन्दोलन, मद्य निषेध आन्दोलन आदि के सन्दर्भ में महिलाओं के न केवल भूमिका सफलतापूर्वक निर्वाह किया है बल्कि सत्ता व शक्ति के पदों पर बैठे लोगों को अपनी गतिविधियों से प्रभावित करते हुये उनके मध्य अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराई है। ऐसा करने वाली महिलाओं मे सुदूर ग्रामीण अंचल की अशिक्षित व साधनहीन महिला से लेकर शिक्षित व सम्पन्न तक तबके महिलायें भी शामिल रहीं है। उत्तारांचल का त्रांचल का 'चिपको आन्दोलन' आंधप्रदेश का 'अरक' विरोधी आन्दोलन तथा वनवासियों के पुर्नवास हेतु किया जा रहा नर्मदा बचाओं आन्दोलन आदि में महिलाओं की भागीदारी से सभी परिचित है। परन्तु सक्रिय, प्रत्यक्ष चुनावी राजनीति मुख्यत: पुरूष प्रभुत्व का क्षेत्र ही रहा है जिससे महिलाओं की सहभागिता, अनुपातिक रूप से हमेशा से ही बहुत कम है। (महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता संबंधी)।

स्वतंत्रता पश्चात भारत प्रवृत्तियों का अध्ययन अथवा पुनरावलोकन मुख्यत: चुनावों में मतदाताओं व प्रत्याशियों के रूप से राजनीतिक प्रक्रिया में उनकी भागीदारी के आधार पर की जा सकती है। राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न संसदीय चुनावों में उनके प्रतिनिधित्व के आधार पर अध्ययन संभव है।

तालिका-2 : विभिन्न चुनावों में मतदाताओं की संख्या व मतदान प्रतिशत का लैंगिक विभाजन

चुनाव वर्ष	मतदाताओं की कुल संख्या मिलियन में			मतदान प्रतिशत		
	महिला	पुरुष	कुल	महिला	पुरुष	कुल
1952	उ.न.	उ.न.	173.2	उ.न.	उ.न.	61.2
1957	उ.न.	उ.न.	193.7	उ.न.	उ.न.	62.2
1962	102.4	113.9	216.3	46.6	62.0	55.0
1967	119.4	129.6	249.0	55.5	66.7	61.3
1971	उ.न.	उ.न.	274.1	उ.न.	उ.न.	55.3
1977	154.2	167.0	321.2	54.9	65.6	60.5
1980	170.3	185.2	355.5	51.2	62.2	56.9
1984	192.3	208.0	400.3	59.2	68.4	64.0
1989	236.9	262.0	498.9	57.3	66.1	61.9
1991	234.5	261.0	498.3	51.4	61.6	56.7
1996	282.8	309.8	592.6	53.4	62.1	57.9
1998	289.2	316.7	605.9	57.9	65.7	61.9
1999	295.7	323.8	619.9	55.6	63.9	59.9
2004	321.9	349.5	671.4	53.3	61.7	57.6

चुनाव सम्बन्धी आकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि विभिन्न लोकसभा चुनावों में महिला मतदाताओं की संख्या में क्रमश: वृद्धि की सामान्य प्रवृत्ति दिखाई दी है। प्रथम व द्वितीय लोकसभा चुनाव के मतदाताओं का लैंगिक विभाजन उपलब्ध नहीं है। तृतीय लोकसभा चुनाव में जहाँ महिला मतदाताओं का प्रतिशत 46.6 था वहीं 1967 में बढ़कर यह प्रतिशत 55.5 हो गया। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार महिला मतदाताओं का उच्चतम प्रतिशत (59.2) 1984 के चुनावों में रहा। आंकड़ों से स्पष्ट है कि लगभग सभी चुनावों में 50 प्रतिशत से अधिक महिलाओं ने मतदाता के रूप में सहभागिता की है तथा यह प्रतिशत 55, 57 व 59 तक भी रहा है। परन्तु यहाँ यह स्पष्ट करना भी उचित होगा कि इस रूप में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता हमेशा पुरुषों से कम रही है तथा सभी चुनावों में महिला व पुरूषों के मध्य यह अन्तर 8 से 16 प्रतिशत तक रहा है।

तालिका-3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

प्रत्याशी मामले में तो स्त्रियों व पुरुषों के मध्य यह अन्तर स्पष्टत: बहुत अधिक है। आकड़ों से स्पष्ट है सभी चुनावों में पुरूष उम्मीदवारों की तुलना में महिला उम्मीदवारों की संख्या बहुत कम है तथा निर्वाचित महिलाओं का प्रतिशत भी कुल के अनुपात में बहुत कम है। इस प्रकार लगभग 50 प्रतिशत जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाले महिला समुदाय का राजनीतिक प्रतिनिधित्व क्रमश: बढ़ने के पश्चात भी अनुपातिक रूप में बहुत कम है। महिला उम्मीदवारों की उच्चतम संख्या 1996 में 599 थी

जबकि पुरूष उम्मीदवारों की संख्या प्रत्येक चुनाव में हजारों में रही है। 1996 के चुनावों में तो यह कि कुल महिला उम्मीदवारों में से निर्वाचित होने वाली महिलाओं का प्रतिशत, पुरूषों की तुलना में हमेशा से उच्च रहा है, जबकि प्राय: यह देखा जाता है कि सम्बन्धित राजनीतिक दल अपनी महिला प्रत्याशियों की 'जीते जा सकने' वाले क्षेत्रों से उम्मीदवार नहीं बनाते है। केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् में स्थान पाने वाली महिलाओं को अधिकाशत: क्रम महत्वपूर्ण विभागों का कार्य आंबटित किया जाता है। जिससे निर्णय प्रक्रिया को वे बहुत कम प्रभावित कर पाती है। दलगत स्तर पर सहभागिता के संदर्भ में भी स्थिति कमोबेश ऐसी ही दिखाई देती है। राजनीतिक दलों की आन्तरिक दलीय संरचना में महिलाओं का अपर्याप्त प्रतिनिधित्व देखा गया है। महत्वपूर्ण पार्टी पदों पर इक्की-दुक्की महिलाओं को ही स्थान मिल पाता है। दलों की दिन-प्रतिदिन की गतिविधियों में भी लैंगिक समानता हेतु किसी भी प्रकार के प्रयास की प्रतिबद्धता नहीं दिखाई देती है यद्यपि लगभग सभी दलों ने अपने चुनावी घोषणा पत्र में संसद व प्रान्तीय विधान सभाओं में महिलाओं हेतु 33 प्रतिशत आरक्षण का वायदा किया है, परन्तु विगत कुछ वर्षो से किसी एक या दूसरे कारण से इस प्रस्ताव का संसद में पारित किया जाना बाधित रहा है एक दूसरे के धुर विरोधी राजनीतिक दलों में भी महिलाओं को आरक्षण देने के इस मुद्दे पर मौन व अप्रत्यक्ष साझेदारी बनी हुई है।

स्वतन्त्रता के पश्चात राजनीतिक जीवन में महिलाओं की धीमी परन्तु क्रमश: बढ़ती सहभागिता के बावजूद, राजनीतिक प्रक्रिया पर आज भी उनका प्रभाव बहुत अधिक नहीं है। महिलाओं की स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने के लिए आज आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें प्रदत्ता संवैधानिक समानता को एक सशक्त साधन के रूप में उपयोग किया जाये। महिलाओं से सम्बन्धित राष्ट्रीय समिति की रिपोर्ट में कहा गया है कि संख्या की दृष्टि से महिलाएं अल्पसंख्यक नहीं मानी जा सकती, परन्तु स्थिति व राजनीतिक शक्ति में असमानता के कारण उनमें अल्पसंख्यकों के लक्षण बढ़ते जा रहे हैं। जहाँ तक स्त्रियों के अधिकारों का प्रश्न है, संविधान द्वारा घोषित नई सामाजिक व्यवस्था के मूल्यों और समकालीन भारतीय समाज की वास्तविकताओं के मध्य जो खाई है, वह आज भी उतनी ही गहरी और चौड़ी है जितनी कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय थी। गाँधीजी का मत था कि राजनीतिक अधिकारों को साध्य नहीं बल्कि एक बड़े लक्ष्य की पूर्ति का साधन मात्र माना चाहिए, परन्तु गाँधीजी के इस संदेश को भूलते हुए आज राजनेता व राजनीतिक दल राजनीतिक शक्ति व अधिकारों को ही साध्य मान बैठे हैं। यही कारण है कि प्राय: राजनेता इस 'साध्य' का बटवारा महिलाओं के साथ करना चाहते और इसी कारण जब कभी भी राजनीतिक शक्ति संरचना में महिलाओं को समान दर्जा देने की कोई चर्चा होती है, तो प्राय: तत्काल ही इस विचार का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष विरोध शुरू होता जाता है। इसी कारण आज तक भी भारतीय महिलाएं राजनीतिक प्रक्रिया में एक समान सहयोगी की भूमिका निभाने में असफल रही हैं।

इस संदर्भ में महिलाओं से सम्बन्धित राष्ट्रीय समिति की रिपोर्ट का यह सुझाव अत्यंत सार्थक व उपयोगी माना जा सकता है कि निर्णय लेने की प्रक्रिया में महिलाओं की सक्रिय सहभागिता व उन्हें अधिक अवसर प्रदान करने के लिए स्थानीय शासन की प्रतिनिधि संस्थाओं में उनको सहभागिता के विशेष और अधिकाधिक अवसर दिये जाएं। रिपोर्ट में सिफारिश की गई कि ग्राम स्तर पर सांविधिक पंचायतें स्थापित की जाएं तथा नगरपालिका स्तर पर उनके लिए स्थान आरक्षित हों। इस सुझाव के अनुरूप, स्वतंत्रता के पश्चात किया जाने वाला सबसे सार्थक प्रयास, महिलाओं के लिए सबसे नीचे स्तर की प्रशासनिक इकाईयों-ग्राम पंचायत व नगरीय स्थानीय निकायों के 33 प्रतिशत स्थानों को आरक्षित करना माना जा सकता है। क्रान्तिकारी कहा जा सकने वाले 73वां व 74वां संविधान संशोधन एक ऐसा सकारात्मक कदम है जो कि महिलाओं के समान राजनीतिक शक्ति संरचना में उनकी भागादारी में भी निश्चित रूप से अँगूठा लगाने या हस्ताक्षर मात्र करने से प्रारम्भ करने से प्रारम्भ हुई यह सहभागिता अब धीरे-धीरे परिपक्व होकर प्रत्यक्ष रूप लेने लगी है तथा अधिक सकारात्मक तथ्य यह है कि इस सक्रियता को विस्तृत सामाजिक स्तर पर स्वीकार्यता भी प्राप्त हो रही है। महिला सशक्तिकरण हेतु आवश्यक है कि स्वयं उन नीतियों व योजनाओं के निर्माण में सहभागी हो जो उनके लिये बनायी जा रही है। यह तभी संभव है जबकि वे स्वयं भी उस राजनीतिक व्यवस्था का अंग हो जो नीति निर्माण व क्रियान्वयन के लिये जिम्मेदार है। इसके लिये आवश्यक होगा की निचले स्तर पर महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता हेतु किये गये प्रयोगों को विस्तृत राष्ट्रीय स्तर पर पहुँचाया जाये। राजनीति शक्ति संरचना व निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी से ही महिलायें समानता के अपने अधिकार को प्राप्त करने के साथ-साथ सशक्तिकरण की दिशा में भी आगे बढ़ेगी।

राजनीतिक सहभागिता में बाधक तत्व- स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी महिलाओं की असमान राजनीतिक भागीदारी से प्रदर्शित होता है कि आज भी सभी समाजों में संरचनात्मक, अभिवृत्यात्मक व सांस्कृतिक बाधायें तथा महिलाओं हेतु पूर्व निर्धारित लैंगिक भूमिकायें उनके राजनीतिक सशक्तिकरण के मार्ग में प्रमुख रूकावट है। उन्हें नेतृत्व हेतु सक्षम नहीं माना जाता। राजनीतिक सहभागिता के माध्यम से महिला सशक्तिकरण की बात जोर-जोर से उठाने वाले राजनीतिक दल स्वयं जीते जा सकने वालेय संसदीय क्षेत्रों से महिला उम्मीदवारों को खड़ा करने में एक स्पष्ट हिचकिचाहट दिखाते है। आज भी अधिकांश राजनीतिक दलों में महिला सहभागिता का प्रतीकात्मक महत्व ही अधिक है। संभवत: यही कारण है कि संसद व राज्य विधान सभाओं में महिला आरक्षण सम्बन्धि दलों के पुरूष सदस्य यह समझ व सहन करने में स्वयं को असमर्थ पा रहे हैं कि सदन का एक तिहाई हिस्सा महिलाओं का हो। लम्बे समय से लगभग पुरूष एकाधिकार वाले इस क्षेत्र में इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं की हिस्सेदारी उनकी समझ से परे हैं जबकि वस्तुत: 50 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व 33 प्रतिशत के ही करने की बात है। एक मुद्दा यहाँ और है। ग्राम पंचायतों व स्थानीय निकायों में महिलाओं को प्राप्त भागीदारी अब धीरे-धीरे प्रतीकात्मक से वास्तविक सहभागिता का रूप लेती जा रही है। स्थानीय प्रशासन में भागीदारी से इन महिलाओं में अब अधिकार चेतना व दायित्व बोध जाग्रत हो रहा है तथा इस विकेन्द्रित लोकतान्त्रित व्यवस्था में वे अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज करा रही है। इस स्थिति को देखते हुए ही, शायद अपने एकाधिकार में खलल पड़ने के डर से राजनीतिक दल, राष्ट्रीय स्तर पर इन प्रयोग को करने कि हिम्मत नहीं जुटा पा रहे हैं।

यह भी देखा जाता है कि बिना पारिवारिक व विशेष रूप से पति या पुरूष सदस्यों के सहयोग के महिलाओं के राजनीतिक जीवन में प्रवेश की संभावना लगभग शून्य होती है। राजनीति में उनका प्रवेश प्राय: पत्नी, बेटी या बहन के रूप में पारिवारिक विरासत को संभालने के लिये होता है। निचले स्तर के कार्यकर्ता के रूप में कार्य करते हुए अपनी राजनीतिक पहचान बनाने वाली महिलाओं की संख्या बहुत कम है। साथ ही राजनीतिक का अपराधिकरण, अराजक तत्वों का राजनीति में बढ़ता महत्व भी ऐसे कारक

हैं जो महिलाओं को राजनीतिक सहभागिता से रोकते हैं। संक्षेप में, राजनीति के माध्यम से महिला सशक्तिकरण के मार्ग में आने वाले बाधक तत्वों को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

सामाजिक बाधाएं/चुनौतियाँ- निम्नलिखित सामाजिक स्थितियां कुछ हद तक महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता को सीमित करती है:

1. घर के बाहर कार्य करने की स्थिति में घर-परिवार व कार्यक्षेत्र के दोहरे दायित्व का निर्वाह करने की बाध्यता, महिलाओं की राजनीतिक गतिविधियों को सीमित कर देती है। यही कारण है कि राजनीतिक जीवन में उनकी संलग्नता उस प्रकार की नहीं हो पाती जैसी कि पुरूषों की होती है।
2. निश्चित लैंगिक भूमिकाओं के निर्वाह हेतु महिलाओं का समाजीकरण होना।
3. प्रजनन कार्य व शिशु पालन-पोषण का एकांगी दायित्व।
4. अशिक्षा व तुलनात्मक रूप से निम्न शैक्षणिक स्तर।
5. पारम्परिक श्रम विभाजन के अनुरूप निर्धारित प्रदत्ता भूमिकाओं के निर्वाह में अधिक समय व श्रम का व्यय होना।

राजनीतिक बाधाएं/चुनौतियाँ- कुछ राजनीतिक बाधाएं भी ऐसी है जो कि स्त्री को राजनीतिक जीवन में प्रवेश करने व सक्रिय होने से रोकती हैं -

1. अत्यधिक धन व शारीकि बल पर आधारित निर्वाचन प्रणाली का वर्तमान स्वरूप महिलाओं के लिए राजनीतिक सहभागिता को कठिन बना देता है।
2. राजनीतिक दलों की संरचना व एजेण्डा चूंकि मुख्यत: पुरूष-परिप्रेक्ष्य में ही निर्धारित होता है, अत: स्वयं नगण्य ही दिखाई देती है। हँ, राजनीतिक पारिवारिक पृष्ठभूमि से जुड़ी कुछ महिलाएं राजनीतिक दलों में सक्रिय भूमिका का निर्वाह तो कर रही हैं, परन्तु उनमें से भी अधिकांश से भूमिका प्रतीकात्मक मात्र बन कर रह जाती है।
3. सशक्त सम्प्रेषण सफल राजनीतिक जीवन का महत्वपूर्ण उपकरण है। अपर्याप्त प्रशिक्षण व बाह्य जीवन में पर्याप्त अन्त: क्रिया के अभाव में महिलाओं की सम्प्रेषण क्षमता प्राय: पुरूषों के समान सशक्त नहीं होती है। यह कभी भी उनकी राजनीतिक सफलता में बाधक तत्व बनती है।

राजनीतिक सहभागिता वृद्धि हेतु संभावित प्रयास उठाए जा सकने वाले कदम - राजनीतिक रूप से महिलाओं को सशक्त व सक्षम बनाने, राजनीतिक जीवन में उनके प्रवेश को प्रोत्साहित करने तथा उनकी राजनीतिक भागेदारी में वृद्धि के संदर्भ में निम्न प्रयास महत्वपूर्ण हो सकते हैं-

1. राज्य का यह कर्तव्य होना चाहिए कि वह अपने समस्त नागरिकों, जिसमें महिलाएं भी शामिल हों, की राजनीतिक प्रक्रिया में लोकतांत्रिक उपस्थिति दर्ज करायें। राजनीति में महिलाओं की आवाज सुने जाने, उनके विचारों के समान, राजनीतिक प्रतिनिधित्व के असंतुलन की समाप्ति व महिला नेतृत्व के पोषण का एकमात्र आधार उनकी अर्थपूर्ण सहभागिता ही हो सकती है। अत: सहभागिता करने व सहभागिता वृद्धि हेतु महिलाओं को प्रोत्साहित करना एक प्रमुख आवश्यकता है।
2. निर्वाचन प्रणाली के वर्तमान स्वरूप के कारण भी लोकतांत्रिक संस्थाओं में महिलाओं का कम संख्यात्मक प्रतिनिधित्व देखा जाता है। अत: निर्वाचन प्रणाली के वर्तमान स्वरूप पर पुनर्विचार किये जाने की आवश्यकता है।
3. आज एक ऐसे 'मैकेनिज्म' के विकास की आवश्यकता है जिससे निर्णय प्रक्रिया के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं की भागीदारी हो तथा नीति निर्माण व क्रियान्वयन दोनों ही में उनकी सहभागिता सुनिश्चित हो।
4. सार्वजनिक जीवन से सम्बन्धित नीतियों के निर्माण में उनके सार्थक योगदान हेतु, स्थानीय से राष्ट्रीय स्तर पर चुनाव प्रक्रिया में अधिकाधिक नामांकन हेतु उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
5. लैंगिक न्याय व समानता के मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता दिखाते हुए राजनीतिक दलों को भी, दलीय संस्तरण के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं के प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करना चाहिए।
6. आज मजबूती से कहा जा सकता है कि 73 व 74 वें संविधान संशोधन के पश्चात ग्राम पंचायतों व स्थानीय निकायों के लिए चुनी गई महिलाओं की सहभागिता अब केवल प्रतीकात्मक नहीं रही गयी है। स्वयं की स्थिति, अधिकारों व कर्तव्यों के प्रति, उनकी जागरूकता में निश्चित रूप से वृद्धि हुई है। आवश्यकता है राजनीतिक प्रक्रिया के इस निम्नतम स्तर पर निर्वाचित लाखों महिलाओं को एक दूसरे से जोड़ने की, जिससे स्थानीय से विस्तृत राष्ट्रीय स्तर तक वे अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज करा सकें और शायद यही देखकर राष्ट्र के नीति नियता, केन्द्रिय संसद व राज्य विधान सभाओं में भी उनकी अनिवार्यता सहभागिता हेतु, अधिक सकारात्मक प्रयास करें।

निष्कर्ष - भारत में महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए राजनीतिक सहभागिता अत्यंत आवश्यक है शक्ति व सत्ता में भागदारी तथा निर्णय निर्माण की प्रक्रिया में महिलाओं के शामिल होने से ही धरातल पर महिलाओं अथवा बलिकाओं कि स्थिति में मूलभूत अंतर आ सकेगा। तभी समाज में महिलाओं के प्रति भेदभाव सच्चे अर्थो में समाप्त हो सकेगा। वास्तविकता तो यह है कि जब तक निर्णय प्रक्रिया में सम्पूर्ण मानव आबादी के इस आधे भागी की आवाज नहीं सुनी जायेगी, हमारी निर्वाचन संस्थाओं व कार्यपालिका की निष्पक्षता पर प्रश्न चिन्ह लगा रहेगा। वस्तुत: समाजीकरण की निश्चित प्रकार की प्रक्रिया तथा विविध सामाजिक दबावों के कारण औसत भारतीय महिला इन क्षेत्रों में स्थान प्राप्त करने में स्वयं को अक्षम महसूस करती है। महिला सशक्तिकरण हेतु अत्यंत आवश्यक है कि प्रशासनिक संरचना के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं की गुणात्मक व साथ ही संख्यात्मक सहभागिता भी अनिवार्य रूप से हो। शक्ति संरचना में महिलाओं की सहभागिता करना, उन्हें समानता दिलाने या उनके आनुपातिक व विस्तृत सामाजिक मुद्दों को, महिलाओं व समाज के संदर्भ में की सहभागिता के महत्व को समझना होगा। वस्तुत: महिलाओं का राजनीतिक सशक्तिकरण स्वयं में एक उद्देश्य ही नहीं बल्कि समानता पर आधारित व्यवस्था मे प्रभावशाली परिवर्तन के लक्ष्य को प्राप्त करने का एक साधन भी माना जा सकता है। ऐसा होने पर ही सही अर्थो में महिलाओं की समाज में स्थिति में गुणात्मक परिवर्तन हो सकेगा। राजनीतिक सहभागिता से महिलाओं का वास्तविक अर्थों में सशक्त, जागरूक होने से भारतीय समाज में समता की स्थापना हो सकेगी। भविष्य में महिलाओं अथवा बालिकाओं के साथ भेदभाव नहीं हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. साधना आर्य, निवेदिता मेनन, जिनी लोकनीता- नारीवादी: संघर्ष के मुद्दे, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-2001
2. डॉ. सुभाष कश्यप, भारत का सांविधानिक विकास और संविधान, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-

2004
3. योजना पत्रिका, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार।
4. Rathore L.S.Haggi S.A.M., Political theory and Oeganisation, Eastern Book Lacknow, 2006
5. Srinivas M.N, social Change in Modern India, Bombay, Oriant Longman,1972
6. Jaggar A.M. Fominist Politics and Humman Nature, Hasvester Press, 1983
7. Kuljit Kaur, Domistic Violence Act 2005: A Step Towards Upholding the Rights of Women, Nyaya Deep, Journal of NAZSA, vol-VIII Issue-4 Oct 2007- New Delhi

तालिका–3 : विभिन्न चुनावों में प्रत्याशियों व निर्वाचित व्यक्तियों का लैंगिक विभाजन

चुनाव वर्ष	उम्मीदवारों की कुल संख्या	महिला			पुरुष		
		कुल उम्मीदवार	निर्वाचित उम्मीदवार	निर्वाचित उम्मीदवारों का प्रतिशत	कुल उम्मीदवार	निर्वाचित उम्मीदवार	निर्वाचित उम्मीदवारों का प्रतिशत
1952	1874	उ.न.	उ.न.	उ.न.	उ.न.	उ.न.	उ.न.
1957	1518	45	27	60.0	1473	467	31.1
1962	1985	70	35	50.0	1915	469	24.0
1967	2369	67	30	44.8	2302	490	21.3
1971	2484	86	21	24.4	2698	499	18.5
1977	2439	70	19	27.1	2369	523	22.1
1980	4620	142	28	19.7	4478	514	11.2
1984	5574	164	42	25.6	5406	500	9.2
1989	6160	198	27	13.6	5962	502	8.4
1991	8699	325	37	11.4	8374	484	5.8
1996	13952	599	40	6.7	13353	503	3.8
1998	4750	274	42	15.7	4476	500	11.2
1999	4648	284	49	17.2	4364	494	11.3

****

Medical Negligence in Indian Penal Code

Ramesh Kumar Shukla* Prof. (Dr.) Narendra Kumar Thapak**

Abstract - Criminal Negligence is the gross and culpable neglect or failure to exercise that reasonable and proper care and precaution to guard against injury either to the public generally or to an individual in particular, which having regard to all the circumstances out of which the charge has arisen, it was the imperative duty of the accused person to have adopted. If a medical practitioner fails to provide appropriate care and attention to the patient which should be provided by a skilled person under those circumstances then this is said to be Medical Negligence. It is a commission or omission of an act by a Medical Professional which deviates from the accepted standards of practice of the medical community, leading to an injury to the patient.

Introduction - In the Indian Penal Code, the medical profession is invariably placed in a different category from that of ordinary people. Some oral examples of the Indian Penal Code, enacted long back in the year 1860, provided that the physician was not liable for medical negligence. According to Section 88, a work done in good faith with the consent of a person for the benefit or benefit of a person who is not a victim of death, the doctor shall not be liable for that.

The general rule of criminal law is also that the death caused by the subject can never be justified on the basis of consent, but if a person, for whose benefit or interest, is made an act, Can give its consent, even if there is a possibility of death due to that act.

But it is necessary that the person doing such an act should not have the intention of causing the death of the person doing such work, the argument of this is taken by the medical negligence doctor generally.

Criminal neglect is a gross neglect of doing something that a reasonable person does, keeping all the circumstances in mind. The act of negligence is primarily an act of haste and is contrary to any important task and even if done, it is done without proper thought - vigilance and vigilance. The person committing such acts of death or causing bodily harm does it in a rash manner or being totally inattentive about the consequences of his work.

Criminal neglect or negligence can have two consequences -

1. That the death of a person as a result of neglect,
2. That a result of neglect is a paroxysmal or extreme ravage.

The Indian Penal Code, 1860, provides for both types of criminal neglect.

Medical negligence - Deaths because of medical negligence are quite common in India but somehow a large number of such cases do not reach the stage of trial. However, there is no doubt that if death by rashness or negligence is proved, section 304-A, of the Indian Penal Code is attracted. Where a registered Homeopathic doctor having first studied the effect of such a combination; and the patient died of poisoning, it was held that the doctor was guilty under this section as his act amounted to causing death by rashness.

Similarly, where a Unani doctor (hakim) who had no knowledge whatsoever about the treatment by penicillin injections, administered to a patient a procain penicillin injection immediately after which the patient perspired profusely, vomitted and died, it was held that there was no doubt that he had committed an offence under section 304-A.

304-A. Causing death by negligence - Penal Code a provision dealing with such a matter did exist but somehow the same could not find a place in the Indian Penal Code at the time of its enactment. This section was added in the Code by Act XXVII of 1870. A similar crime under English criminal law is known as manslaughter by negligence. Three other sections in the Indian Penal Code, that is to say, sections 336, 337 and 338 also deal with rash or negligent acts but these are with respect to endangering life or personal safety of others, causing hurt in such matters and causing grievous hurt in such matters respectively.

Rash or negligent act- Rashness and negligence have nowhere been defined in the Code. However, it can be said that rashness is an overhasty act, opposed to a deliberate one done without due care and caution, while negligence is an utter disregard for the life and safety of others.

It is clear from the language of the section, presence of rashness and negligence both is not necessary; death

*Research Scholar (Law) LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Supervisor (Law) LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA

must have been caused by doing either any rash or any negligent act. The word 'act' should be interpreted in the light of sections 32 and 33 as including illegal omission and a series of acts or a series of illegal omissions also.

Not amounting to culpable homicide - The language of the section makes it plain that the death caused by any rash or negligent act to be made punishable under this section must not amount to culpable homicide. Since culpable homicide under the Code may be both not amounting to murder and amounting to murder, this in effect means that death under this section should neither amount to culpable homicide not amounting to murder nor murder. Deliberate deaths caused by running over victims by motor vehicles, many a time by hired assasins, should thus be punishable as murders or culpable homicides not amounting to murder, as the case may be, and not under section 304-A of the Code.

Burden of proof - The burden of proof in a case under this section is as usual on the prosecution. Merely because a death has resulted by an accident does not mean that a presumption against the accused must be drawn and he must be asked to explain as to why should be not be held guilty of the same.

Proof of medical neglect by prosecution - Where it cannot be proved on behalf of the prosecution that the accused surgeon made any expectation in the first or second surgery of the patient, the deceased, which resulted in the death of the alleged patient, the conviction and sentencing of the accused, surgeon was abolished.

Where the accused was a nurse, there was an incurrence of death as a result of the injection, the post-mortem report did not confirm that the death was due to the injection, in such a case, the accused was charged under section 304 (a) of the Indian Penal Code.) Cannot be held guilty.

1. **Correct knowledge required -** The offense of committing death by injection of pencil by a person possessing any knowledge and knowledge of medicine will be punishable under Section 304 (a) of the Indian Penal Code.

2. **Required neglect to be standard degree -** To assign criminal liability to a physician or surgeon, the standard of neglect required to be proved must be high enough to be described as "gross neglect" or "negligence". It is not just the lack of necessary careful attention and skill.

When the patient agrees to go for medical treatment or surgery, every negligent act of a doctor cannot be termed "criminal". It can only be called a "criminal" if the physician exhibits a tremendous degree of competence or inaction and uncontrollable indifference to the safety of his patient and who is found to have arisen in gross ignorance or any expectation.

Where the death of the patient results only from judgment or accidental error. There should not be any criminal liability attached to it, only some amount of indifference or lack of adequate caution and vigilance can create a civil liability, but it will not be appropriate to justify it criminally.

During medical treatment, action cannot be taken against the doctor for every accident or death. Criminal prosecution of physicians without adequate medical opinion specifying the doctor guilty would be grossly unfair to the community, because if the courts are to impose criminal liability on hospitals and physicians for everything that goes wrong, then doctors will be more concerned about their safety than providing the best treatment to their patients. This will reduce mutual trust between physician and patient. Every accident or misfortune in a hospital or doctor's diagnosis center is not a "gross act of neglect" to consider him for a crime of criminal expectation. Determining the amount of negligence and neglect caused by the death of his patient is a difficult task. have work.

For conviction of the doctor for the alleged criminal act, there should be evidence of standard negligence and intentional wrongdoing, i.e. a higher level of conduct morally blameworthy.

Therefore, in order to prove the doctor guilty, the prosecution should come after the case with a high degree of neglect on the part of the doctor, only due care, precaution and lack of attention or redundancy can create civil liability, but not criminal liability.

Therefore, the courts have always been against the death of the patient by the doctor during treatment, it should denote a high degree of neglect or inattention, which specifies his mental state, which is completely indifferent to the patient. As can be described, such "gross neglect" is punishable.

According to the medical opinion submitted by the prosecution, the cause of death was "not to place a properly sized bandaged endothelial tube, which prevented suction of blood in the respiratory tract of the wound."

If this work imposed on the doctor is accepted to be true, then it can be described as a neglectful work, because there was lack of due caution and precaution. For this act of neglect, he may be right in the delinquent, but cannot be described as so much carelessness or gross neglect of his lack of due caution and tact, which makes him criminally criminal.

Therefore, no case of negligence and gross neglect has been constituted against the doctor under section 304 (a) of the Indian Penal Code for confronting the trial of the offense.

3. **Causing hurt by act endangering life or personal safety of others -** During the operation of the doctor where allegations of neglect or negligence are made against the doctor, it will be necessary to prove that the doctor was not cared for during the operation. "Ignorance" is a relative term in place of time and personal dependent, where any level of caution required in relation to an act is not fixed by law, such caution would be necessary, exercised by an appropriately intelligent person in the circumstances of the case. She goes.

Sections 337 and 338 of the Indian Penal Law provide for the neglect and complete abuses caused by neglectful work.

4. As per Section 337 of Indian Penal Code - Whoever shall cause a person to be hurt by any act of hastiness or neglect, which causes danger to human life or the personal injury of others, shall be punishable with imprisonment for a term which may extend to six months. Or by fine, which can be up to five hundred rupees, or both, will be punished.

5. Required Proof - To bring an offense under Section 337, the following conditions should be met -

1. That the accused had done something,
2. That the accused did that act with impatience or neglect,
3. That the accused had done the above work with such impatience or neglect that he was hurt.

10. 338 Causing grievous hurt by act endangering life or personal safety of Others - Whoever, by acting with such impatience or neglect, which causes harm to human life or other person, will cause great harm to a person, with imprisonment of either kind, which may extend to two years, Or in fine which can be up to one thousand rupees, or both will be punished.

11. Required Proof - To bring an offense under Section 338, the following conditions should be met -

1. That the accused had done something,
2. That the accused had done that work in rashness or neglect
3. That the accused had done the said work with such impatience or neglect that it had caused great harm.

It is clear from the above sections that in order to attract Section 337 or 338, it would be necessary for the accused to act so grossly or neglectfully that would endanger the safety of human life or other persons and cause serious injury to another person. Where a person carries out a duty towards another, the level of caution will be the same, which is appropriate and the level of caution that the other person preferentially uses in the execution of such duty. In order to attract Section 338, neglect or inadvertence should be of a level which can create criminal liability, which is different from civil liability.

Therefore, where a qualified experienced physician had applied for cataract in good faith with the consent of the patient under authorized medical practice and the patient lost his eye due to failure of the operation, it cannot be said that the accused under section-338 will be guilty

His act will be safe under Section 88 of Indian Penal Code, the complainant has not made any specific statement which can prove the neglect of the accused, it was appropriate to dismiss the complaint.

Above section must be read along with sections 336 and 337 of the Code. The concept of rashness and negligence has been explained under the discussions of section 304-A of the Code. Whereas section 337 is attracted when hurt is caused, section 338 is attracted when grievous hurt.

Intentional act on the part of an offender negatives rashness or negligence.

Running over a boy sleeping on a road by allowing a cart to proceed unattended along the road was held to be punishable under this section.[4] A husband having sexual intercourse with his eleven year old wife resulting in her death was held guilty under this section.

This will amount to rape as well under clause 6 of the section 375 of the Code. Where a school building collapsed resulting in deaths of a large number of students and grievous and simple injuries to many, the manager of the school could not be held guilty under this section as he had not controlled its construction. If the evidence so warranted a case against the construction engineer or supervisor could be brought. The municipal authorities also could have been more careful by holding periodical inspections and then the tragedy could have been averted.

It may be kept in mind with respect to motor accident cases that non-possession of driving licence or not blowing the horn cannot be ipso facto interpreted as rashness or negligence. Similarly, blowing the horn may not necessarily mean absence of rashness or negligence on the part of a driver.

The offence under section 338 is cognizable, bailable and compoundable when permitted by the court trying the case, and is triable by any magistrate.

Conclusion - It is evident in discussion of above cases, particularly, in Medical negligence cases, the hospital authorities are under a duty independent of vicarious liability to take care to ensure that its treatment units are properly staffed and equipped in order to cop up with the medical needs of the people.

References :-

1. Juggan Khan v. State, AIR 1965 SC 831.
2. Khusaldas v. State, AIR 1960 MP50
3. 2. Dr. S.Das Vs State, 2006 Cr.L.J. 1148 Mumbai
4. Ruplekha Vs State of M.P., 2006(3) M.P.L.J.120 M.P.
5. Malkaji v. Emp., (1884) Unrep Cr C 198.
6. Queen Emp. V. Hurre Mohun Mythee, (1890) 18 Cal 49.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Horizons of Judicial Activism

Rajpal Singh* Dr. Anushka Nayak**

Abstract - There are different horizons of judicial activism wherein the higher judiciary, in particular, the Supreme Court of India has played crucial activist role. Apart from, other parts of the constitution, Part III which guarantees fundamental rights has been and is the bed sheet where the Supreme Court of India has played activist role and created new norms and rights which would have never been thought of by the maker of the constitution. In this chapter we propose to analyze activist role played by the higher courts in different sphere of the constitution.

Introduction - The Constitution of India recognizes the Supreme court of India and th High Courts of the concern state as Constitution of Court having power to curtail all those legislative Acts, executive acts and policies whose are against the spirit of our great constitution. The constitutional Courts do so while entertaining a case are PIL (public Interest Litigation) and suo motu even, when circumstances warrant so.

Article 12 and Judicial Activism defined the term of state - In Raman D. Shetty v. International Air Port Authority,[1] the International Airport authority a statutory body was held to be authority. Bhagwati, J. speaking for the court pointed out that the corporations acting as instrumentality or agency of government would obviously be subject to the same limitation in the field of constitutional or administrative law as the government itself, though in the eye of the law they would be distinct and independent legal entities. If the government acting through its officers is subject to certain constitutional and public law limitations, it must a fortiori, that the government acting through the instrumentality or agency of corporations should equally be subject to the same limitations.

The court also developed the general proposition that an or agency of the government would be regarded as an 'instrumentality' or state within Article 12 and laid down some tests to determiner a body could be regarded as an instrumentality or not. These tests are as thus:

Is the body in question wholly controlled by the government not only in its making of policy but also carrying out its function? Is the entire share capital held by the government? Is the administration of the body in the hands of the government: appointed directors and are they subject to government control in the discharge of the functions? Does the state exercise deep and pervasive control over the body in question? Does the body enjoy monopoly status conferred or Protected by the state? Whether the operation of the corporation is an important public function? These tests are not exhaustive but only indicative or illustrative. The Courts have to decide in each case whether the body in question falls within the purview of Article 12. The doctrine of instrumentality was further explained and applied by the apex Court in Some Prakash Rekhi v. Union of India.[2]

In Some Prakash Rekhi case certain undertakings were nationalized and were vested in the Central Government under an Act of parliament which provided that all these undertakings would be transferred to a government company. Consequently, these undertakings were transferred to the Bharat Petroleum Corporation; a government company registered the Indian Companies Act. Thus the result of nationalization of undertakings was that the body was semi-statutory and semi-non statutory. It was non statutory in origin (as it was registered); it also was orgnized by the Act in question and thus had some 'statutory flavour' in its operation and functions.

The court held that undertakings were authority under Article 12. The court emphasized that the true test for the purpose whether a body was an 'authority' or not was not whether it was formed by a statute or under statute, but it was "functional".

Bhagwati, J. speaking for the unanimous five judge bench reiterated that the tests for determining as to when corporation falls within the definition of State in Article 12 state were finally summarized by Bhagwati, J. in Ajay Hasia v. Khalid Mujib[3] which are as follows:

1. Where the financial assistance of the State is so much as to meet almost entire expenditure of the corporation, it would afford some indication of the corporation being impregnated with government character.
2. Whether the corporation enjoys monopoly status which is state conferred or State protected.
3. Existence of deep and pervasive State control may afford an indication that the corporation is a State agency or instrumentality.
4. If the functions of the corporation are of public

*Research Scholar (Law) LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Supervisor & Associate Professor (Law) LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA

importance arid closely related to organ of the government.

In M.C. Mehta v. Union of India,[4] without deciding the question finally, in an unanimous opinion of the Supreme Court Bhagwati, J. has advanced strong arguments for including even the non-government companies within the meaning of state if' for reasons of state control and regulation and the kind of public function they are performing, they satisfy the test of being an instrumentality or agency of the government.[5]

In pursuing the definition of 'State' in Article 12 the court has again and again reminded that what state is for the purposes of Art. 12 need not be state for other purposes. For the purpose of wider application of the fundamental rights State has to be defined liberally, but not for other purposes.

After the above discussed cases there has been c:atena of cases wherein a number of bodies have been declared to be an authority under Article 12. This is very long and we do not think to mention this list because enumeration of these cases authorities to be held state do not affect any the propositions laid down in the aforesaid leading cases. In all, from the entire analysis of case laws it is amply and elegantly clear that the apex t by its creative role has extended and expanded the meaning of State' under Article 12 for the purpose of enforcing the fundamental rights by reading as part of "other authorities" almost all governmental, Semi-governmental, quasi-governmental, autonomous and other authorities and institutions. These authorities include Banks, public-corporations, governmental aided educational institutions, and governmental companies.

Rule of Law and Judicial Activism - The doctrine of Rule of law was propounded by A.V. dicey,[6] in caption "Rule of Law" as follows:

That "rule of law," which forms a fundamental principle of the constitution, has three meanings, or may be regarded from three different points of view.

There can be with us nothing really corresponding to the "administrative law" (droit administrative) or the "administrative tribunals' (tribuncux administrative) of France. The notion which lies at the bottom of the administrative law to foreign countries is, that affairs or disputes in which the government or its servants are concerned are beyond the sphere of the civil courts and must be dealt with by special and more or less official bodies. This idea is utterly unknown to the law of England, and indeed is fundamentally inconsistent with our traditions and customs that in short, the principles of private law have with us been by the action of the courts and Parliament so extended as to determine the position of the Crown and of its servants; thus the constitution is result of the ordinary law of the land.

One of the best expositions of the concept of equality in existing legal 1iterature is contained in the Opinion of Judge Tanaka - the Japanese member of the International Court of justice – in the South Africa Cases (Second Phase, 1966).[7] Although a dissenting opinion, it is of such high juristic quality that it has been published (as an appendix) in Ian Brownlie's well known compilation, Basic Documents on Human Right. The importance of this Opinion, Brownlie says, arises from two sources, first, the lack of sound analysis of the concept. in legal literature at large; and, second, the prominence of the principle of equality or the standard of non-discrimination in legislation and other instruments concerning.

The cardinal importance of Judge Tanaka's dissenting opinion, in first considering the content of the principle of equality (which was then applied to the question of apartheid), Judge Tanaka said:

"Examining the principle of equality before the law we consider that it is philosophically related to the concepts of freedom and justice ... The principle to treat equal equally, and unequal according to its inequality, constitutes an essential content of the idea of justice.

Briefly, a different treatment is permitted when it can be justified by the criterion of justice. One may replace justice by the concept of reasonableness generally referred to by the Anglo-American school of law.

Justice or reasonableness as a criterion for the different treatment logically excludes arbitrariness. The arbitrarines which is prohibited, means the purely objective fact and not the subjective condition of those concerned. Accordingly, the arbitrariness can be asserted as discrimination without regard 'to motive or purpose."

The principle of equality, according to Judge Tanaka, was binding not only on administrative and judicial organs of the State but also on legislators:

It was on this exalted bench-mark (critically, "that legislators unreasonably") that the practice of apartheid was declared to be "fundamentally unreasonable and unjust"! The unreasonableness and injustice did not depend upon the intention of motives of the Mandatory (South Africa) because (in the words of the Judge), a "distinction on a racial basis is in itself contrary to the principle of equality, which is of the character of natural law, and accordingly illegal."

The Constitution of India guarantees the rule of law in sense of right to equality through Articles 14 to 18. In this series of constitutional provisions the Article 14 is the most significant. It has been given a highly activist magnitude in recent years and thus it generates a large number of Court cases.

The New Doctrine'—Doctrine of Arbitrariness - Judicial Activism with regard to rule of law enshrined in Article 14 of the Constitution starts with the decision of Constitution bench in Royappa case (1974)[8] wherein what is now sometimes disparagingly called the new doctrine', 'the doctrine of arbitrariness'[9] was for the first time propounded. This doctrine has enriched the jurisprudence of the Court in case the apex Court played very high degree of activist role This is how the new doctrine was formulated by

Bhagwati J. Joined in the decision by Chandrachud and Krinsna lyer JJ.:

The basic principle which, therefore, informs both Articles 14 and 16 is equality and inhibition against discrimination. Now, what is the content and reach of this great equalizing principle?

But this conclusion in Royappa was virtually no more than an side; the :decision in the case did not reflect any conscious or critical application of that new approach to Article 14 because, on the merits, the three Judges (concurring with their other two brethren, Chief Justice Ray and Justice Falekar) held that the displacement of' Chief Secretary Rovappa from his post by the Government of Tamil Nadu did not, on the facts, attract even the expanded interpretation of Article 14.

A few months later in M. Chliaganlal v. Greater Bombay Municipality[10]. Bhagwati, J., again in a Concurring opinion, speaking for himself and Krishna lyer, J. P.N. Bhagwati J:, emphasised

"Article 14 enunciates a vital principle which lies at the core of our republicanism and shines like a beacon light pointing towards the goal of classless egalitarian socio-economic order which we promised to build for ourselves when we made a tryst with destiny on that fateful day when we adopted our Constitution. If we have to choose between fanatical devotion to this great principle of equality and feeble allegiance to it, we would unhesitatingly prefer to err on the side of the former as against the latter."

And further he said.[11]

"What the equality clause is intended to strike at real and substantial disparities …. and arbitrary or capricious actions of the executive and it would be contrary to the object and intendment of the equality clause to exalt delicate distinctions, shades of harshness and theoretical possibilities of prejudice into legislative mequality or executive discrimination."

It was Maneka Gandhi's case[12] that put its iinprirnatur on the new interpretation of Article 14. 1-lere, the Constitution Bench of the Court said (6:1) that the word 'law in Article 21 meant a lav that vvas not unreasonable not arbitrary and which (conformed to the mandate of Article 14; that if the procedure prescribed by a law-such as the Passport Act 1967.

The constitutionality of laws enacted by a competent legislature; and secondly, because courts would pay due deference to the will of the legislature and its collective wisdom as to the circumstances requiring differential treatment.

Conclusion - Thus the Judicial activism is not against the constitution but it is against those who have operated the constitution for their own visited interest and landed the country in mire. All the institution, such as the state executive legislatures, parliament, Governor, The president of India etc. Are expected to implement the constitutional mandate. But if the said institutions have not taken the grievances of peoples of India seriously and failed to redress the same, and conversely the are alleging that the apex court is usurping jurisdiction assigned to other co- organs of the government it is merely an irony of the state of affairs against the judicial activism.

References :-

1. (1979) 3 SCC 489: AIR 1979 SC 1628.
2. AIR 1981 SC 212.
3. AIR 1981 SC 487.
4. (1987) 1 SCC 395.
5. Later in Union Carbide Corp. v. Union of India, (1991) 4 SSC 584, 607, 08 (para 14): AIR 1992 SC 248 the Supreme Court has clarified that "M.C Mehta case …. This court could not reach the conclusion the Shriram (the delinquent company) came within the meaning of 'State' in Article 21 ad be subjected to a proceeding under Article 32 of the constitution."
6. A.V. Dicey, An Introduction to the study of the Law of the Constitution, Third Indian Reprint, 2000, at page 202.
7. Dissenting Opinion of Judge Tanaka – South West Africa Case (Second Phase) 1966, Reports of Judgments: Advisory Opinions and Orders of the International Court of Justice 1966, at 284-316: extract reproduced in Ian Brownlie (ed), Basic Documents on Human Rights (Oxford: Clarendon Press, 3rd ed., 1992) at pp. 569-598.
8. E.P. Royappa v. State of Tamil Nadu, AIR 1974 SC 555.
9. Seervai is critical of the New Doctrine: he submits that the old doctrine is clearly right and the new doctrine clearly wrong" See Seervai, Constitutional law of India, 4th ed., pp. 436-440.
10. (1974) 2 SCC 402 at pp. 435-436: AIR 1974 SC 2009 at page 2029.
11. Ibid at p. 450 & p. 2039.
12. Maneka Gandhi v. Union of India AIR 1978 SC 597 (decided by a Constitution Bench consisting of secen judges).

****

Higher Education and Administration

Dr. Ashok Kumar Tyagi*

Introduction - To coordinate the various activities of colleges and universities, different types of administrators are needed. It's not unusual for experienced teachers to be interested in directing activities beyond the classroom. By working at the administrative level, educators can have a greater impact on the direction of a particular institution and the education system as a whole. Some common positions in postsecondary administration include that of provost, dean, president and vice-president, department director and registrar. While specific job responsibilities can vary from institution to institution, deans and provosts are generally responsible for setting budgets and hiring faculty. Provosts usually outrank deans and report to a vice-president, president, chief executive officer or board of directors. University registrars may handle student transcripts and school registration information.

The general higher education and training that takes place in a university, college, or Institute of technology usually includes significant theoretical and abstract elements, as well as applied aspects (although limited offerings of internships or SURF programs attempt to provide practical applications). In contrast, the vocational higher education and training that takes place at vocational universities and schools usually concentrates on practical applications, with very little theory. In addition, professional-level education is always included within Higher Education, and usually in graduate schools since many postgraduate academic disciplines are both vocationally, professionally, and theoretically/research oriented, such as in the law, medicine, pharmacy, dentistry, and veterinary medicine. When employers in any profession consider hiring a college graduate, they are looking for evidence of criticalthinking, analyticalreasoning skills, teamworking skills, information, literacy, ethical judgment, decision-making skills, communication skills (using both text and speech), problem solving skills, and a wide knowledge of liberal arts and sciences. However, most employers consider the average graduate to be more or less deficient in all of these areas. In the United States, there are large differences in wages and employment associated with different degrees. Medical doctors and lawyers are generally the highest paid workers, and have among the lowest unemployment rates. Among undergraduate fields of study, science, technology, engineering, math, and business generally offer the highest wages and best chances of employment, while education, communication, and liberal arts degrees generally offer lower wages and a lower likelihood of employment.

Universities in India have evolved in divergent streams with each stream monitored by an apex body, indirectly controlled by the Ministry of Education and funded jointly by the state governments. There are most universities are administered by the States, however, there are 18 important universities called Central Universities, which are maintained by the Union Government. The increased funding of the central universities gives them an advantage over their state competitors. The University Grants Commission estimated that in 2013–14, 22,849 Ph.Ds and 20,425 M.Phil degrees were awarded. Over half of these were in the fields of Science, Engineering/Technology, Medicine and Agriculture. As of 2014–15, over 178,000 students were enrolled in research programs.

Apart from the several hundred state universities, there is a network of research institutions that provide opportunities for advanced learning and research leading up to a PhD in branches of science, technology and agriculture. Several have won international recognition. 25 of these institutions come under the umbrella of the CSIR – Council of Scientific and Industrial Research and over 60 fall under the ICAR – Indian Council of Agricultural Research. In addition, the DAE – Department of Atomic Energy, and other ministries support various research laboratories. The National Institute of Technology (NITs), Indian Institutes of Information Technology (IIITs), Indian Institutes of Technology, Netaji Subhash University of Technology is among the most prestigious institutions within the technology sciences. Indian Institute of Science (IISc) and Indian Institute of Science Education and Research (IISERs) are the premier research institutes in the field of science education and research. There are several thousand colleges (affiliated to different universities) that provide undergraduate science, agriculture, commerce and humanities courses in India. Amongst these, the best also offer post graduate courses while some also offer facilities for research and PhD studies.

Technical education has grown rapidly in recent years.

* 26 , Chhatarpur, New Delhi-74, INDIA

of 27.3 million students enrolled in undergraduate studies, about 4.5 million are in engineering fields. With recent capacity additions, it now appears that the nation has the capability to graduate over 500,000 engineers (with 4-yr undergraduate degrees) annually, and there is also a corresponding increase in the graduation of computer scientists (roughly 50,000 with post-graduate degree). In addition, the nation graduates over 1.2 million scientists. Furthermore, each year, the nation is enrolling at least 350,000 in its engineering diploma programs (with plans to increase this by about 50,000). Thus, India's annual enrollment of scientists, engineers and technicians now exceeds 2 million. Across the country, tertiary enrollment rates have increased at a compound annual growth rate of 3.5% in the 5 years preceding 2016. Current enrollment stands at 34.58 million, over 15% more than the 29.2 million enrolled in 2011.

International league tables produced in 2006 by the London-based Times Higher Education Supplement(THES) confirmed Jawaharlal Nehru University (JNU)'s place among the world's top 200 universities. Likewise, THES 2006 ranked JNU's School of Social Sciences at the 57th position among the world's top 100 institutes for social sciences. In 2017, THES ranked the Indian Institute of Science as the eighth best "small university" in the world. A small university was defined as one with less than 5000 students. In 2015, the institute also became the first Indian institute to make it to the top hundred in the THES list of engineering institutes. It was ranked 99.

The University of Calcutta was the first multi-disciplinary university of modern India. According to The Times Higher Education Supplement's survey of the world's top arts and humanities universities, dated 10 November 2005, this university, ranked 39, was the only Indian university to make it to the top 50 list in that year. Other research institutes are the Saha Institute of Nuclear Physics, the Asiatic Society, and the Indian Statistical Institute. The National Law School of India University is highly regarded, with some of its students being awarded Rhodes Scholarships to Oxford University, and the All India Institute of Medical Sciences is consistently rated the top medical school in the country. Indian Institutes of Management (IIMs) are the top management institutes in India.

The private sector is strong in Indian higher education. This has been partly as a result of the decision by the Government to divert spending to the goal of universalisation of elementary education. Within a decade different state assemblies have passed bills for private universities, including Birla Institute of Technology and Science, Institute of Finance and International Management, Xavier Labour Relations Institute, ICFAI University, Dehradun, O. P. Jindal Global University and many more.

India is also the leading source of international students around the world. More than 200,000 Indian students are studying abroad. They are likely to be enrolled in master's programs with engineering focus which provide them opportunities to enhance career potential. In recent times several international institutes have also reached out to India offering their courses to Indian students. A US based institute in 2015 announced its accounting courses for Indian students.

Accreditation - Indian law requires that universities be accredited unless created through an act of Parliament. Without accreditation, the government notes, "These fake institutions have no legal entity to call themselves as University/Vishwvidyalaya and to award 'degree' which are not treated as valid for academic/employment purposes." The University Grants Commission Act 1956 explains,

"The right of conferring or granting degrees shall be exercised only by a University established or incorporated by or under a Central Act carlo bon tempo, or a State Act, or an Institution deemed to be University or an institution specially empowered by an Act of the Parliament to confer or grant degrees. Thus, any institution which has not been created by an enactment of Parliament or a State Legislature or has not been granted the status of a Deemed to be University, is not entitled to award a degree."

Accreditation for higher learning is overseen by autonomous institutions established by the University Grants Commission:

- All India Council for Technical Education (AICTE)
- Distance Education Bureau (DEB)
- Indian Council of Agricultural Research (ICAR)
- Bar Council of India (BCI)
- National Assessment and Accreditation Council (NAAC)
- National Council for Teacher Education (NCTE)
- Rehabilitation Council of India (RCI)
- Medical Council of India (MCI)
- Pharmacy Council of India (PCI)
- Indian Nursing Council (INC)
- Dental Council of India (DCI)
- Central Council of Homeopathy (CCH)
- Central Council of Indian Medicine (CCIM)
- Veterinary Council of India (VCI)

The University Grants Commission has provided guidelines about fake universities/institutions and degrees, including a list of such schools.The issue of assessing and assuring the quality of Indian higher education is a challenge. Instead of aiming for 'world-class' universities through rankings, policy framework must improve the processes that enable accountability through data collection and reporting on parameters of institutional quality. The government should leverage this tool to improve quality of the overall system.A study was done on autonomous colleges by the Centre for Public Policy Research (CPPR) in Kerala recommended that grading should be done for such institutions to improve their overall performance.

Graduation market - This is a chart of India as per Census 2001.

Degree	Holders
Total	**37,670,147**
Post-graduate degree other than technical degree	6,949,707
Graduate degree other than technical degree	25,666,044
Engineering and technology	2,588,405
Teaching	1,547,671
Medicine	768,964
Agriculture and dairying	100,126
Veterinary	99,999
Other	22,588

Brief outlines of the six principles of educational administration are discussed in this article. The principles are:

(1) Structural Democracy,
(2) Operational Democracy
(3) Justice
(4) Equality of Opportunity
(5) Prudence and
(6) Adaptability, Flexibility and Stability.

1. Structural Democracy - Being the first principle of educational administration in the modern era it puts stress on democracy in structural perspective. It implies "the exercise of control" in democracy. The meaning of exercise of control in this light should be such that, it helps the students as future citizens in fulfilling their needs and requirements tending to their self-realization, safeguard the democratic government and welfare of people at local, state and national levels.This exercise of control refers to the meaning of democracy by treating each human being as, "a living, growing and potentially flowering organism." Hence in this principle of educational administration the educational administration has to practise the principles of democracy both in structural and functional form.

2. Operational Democracy - This principle of educational administration gives priority on the practical aspect of democracy as a way of life and form of governance. To this, the essence of democracy is to give importance on the dignity of every individual and assisting him to understand his self in this context this principle considers democracy as a matter of spirit, way of life and a mode of behaviour. Keeping this in view it is the task and responsibility of an educational administrator to focus on day to day happenings in relation to democratic society in educational perspective that are relevant in wider extent. Because this sort of democracy seeks to make democracy more practical rather than formal. For example a school or an educational institution is regarded as the society in miniature or a small society. It means the entire picture of the society has been reflected in the school. The same situation lies in case of a democratic society like ours where people expect the school or an educational institution will do a lot for actualizing democracy as a matter of spirit, way of life and a mode of behaviour practically.

In this light, it should be the function of the educational administrator to achieve it for which he may take the view of the students, consult with the staffs, specialists, expects and community members before taking any decision. This result in the emergence of a good and effective social order by the school or educational institution as an agency of education. Overall speaking this type of democracy as a principle of educational administration gives importance on practicability and relevance of day to day happenings of democracy in relation to educational perspective so far its administrative aspect is concerned.

3. Justice - Generally speaking justice refers to provide every individual his due in the society by honoring his individuality. This meaning of justice is the essence of democracy. As justice is one of the basic hallmarks of democratic administration, it is regarded as an essential principle of educational administrating which is democratic in form and practice. For practicing justice in educational administration there is the need and essentiality of giving due reward and share to every individual to his efforts and achievements.Besides, every individual is to be given task or assignment in accordance with his needs, requirements, abilities, aptitudes etc. Hence the educational administrators for practicing justice as one of the principles of educational administration must be judicious while dealing with employees, students and public. But in Practice it is not happening as the educational administrators very often arbitrarily exercise discretionary powers and too narrowly apply uniform rules in one point. And uniformity of rules in educational administration does not provide equality which is necessary to safeguard the individuals in another point. This nature of the educational administrator goes against the very essence of justice as it is to be free from such bias nature of them. Hence the educational administrators have to reduce this tendency to minimum for making justice beneficial, healthy and impartial in nature and approach as a principle of modern educational administration.

4. Equality of Opportunity - One of the important social objective of education is to equalize opportunity or facility for enabling the backward or under privileged classes and individuals to use education as a means for improvement of their condition.

5. Prudence - This principle "Prudence" is closely related to intelligent economy which implies quality control. In order to ensure quality control in the field of education, educational administration has to make expenditure on education by accepting it as an investment on human resource. Because without necessary expenditure on education there will be no question of quality in it and then what about the matter of quality control?

It is evident from several studies that now in educational administration there lies a lot of wasteful expenditure for which the system of check and balance is essential. The system of check and balance is prudential in nature which seeks to protect an educational institution or organisation, an enterprise from mis-behaviours and mis-appropriation by an official or authority as misuse of power and funds

that creates mischief.It is known to one and all that misuse of power and money leads to the loss of public in general. Hence like general administration in educational administration there is the necessity of the system of "check and balance" to prevent such misuse. This will be done if educational administration accepts it as its principle in real situation.

References :-

1. "Higher Education, National Informatics Centre, Government of India". Education.nic.in. Archived from the original on 18 July 2011. Retrieved 1 Septem -ber 2010.
2. Rukmini S. (4 August 2015). "Only 8.15% of Indians are graduates, Census data show". The Hindu. Retrieved 1 April 2016.
3. "Latest Statistics on Indian Higher Education". DrEducation.com. 17 July 2012. Retrieved 28 August 2012.
4. "Statistics – Ministry of Human Resource Development" (PDF). mhrd.gov.in.
5. "Central Universities". ugc.ac.in. Retrieved 6 June 2011.
6. "List of State Universities" (PDF). 27 May 2011. Archived from the original (PDF) on 15 May 2011. Retrieved 6 June 2011.
7. "Deemed University – University Grants Commission". ugc.ac.in. 23 June 2008. Archived from the original on 29 November 2010. Retrieved 6 June 2011.
8. "Private Universities – University Grants Commission". ugc.ac.in. 1 August 2011. Archived from the original on 17 February 2012. Retrieved 1 August 2011.
9. "The Institutes of National Importance" (PDF). Archived from the original (PDF) on 7 October 2009.
10. Coates, Ken; Morrison, Bill (2016), Dream Factories: Why Universities Won't Solve the Youth Jobs Crisis, Toronto: Dundurn Books, ISBN 9781459733770.

****

Personality Traits of B.Ed. Students : A Case Study

Ashish Kumar*

Abstract - Personality is made up the characteristic patterns of thoughts, feelings, and behaviors that make a person unique. It arises from within the individual and remains fairly consistent throughout life. While there are many different theories of personality, the first step is to understand exactly what is meant by the term personality. The word personality itself stems from the Latin word persona, which referred to a theatrical mask work by performers in order to either project different roles or disguise their identities. It is the total quality of the individual's behavior. Individual affects other individuals through his personality. Thus personality is manifested in his various activities. In short personality is the total quality of behavior, attitudes, interest, capacities, aptitudes and behavior patterns which are manifested in his relation with the environment.
Keywords - Personality, Persona, Manifested, aptitudes, attitudes.

Introduction - Personality also known as personology is the study of the person, that is, the whole human individual. Most people, when they think of personality, are actually thinking of personality differences - types and traits and the like. This is certainly an important part of personality psychology, since one of the characteristics of persons is that they can differ from each other quite a bit. But the main part of personality psychology addresses the broader issue of what is it to be a person."

A brief definition would be that personality is made up of the characteristic patterns of thoughts, feelings and behaviors that make a person unique. In addition to this, personality arises from within the individual and remains fairly consistent throughout life.

Some other definitions of personality - "Personality refers to individuals' characteristic patterns of thought, emotion, and behavior, together with the psychological mechanisms — hidden or not — behind those patterns. This definition means that among their colleagues in other subfields of psychology, those psychologists who study personality have a unique mandate: to explain whole persons." (Funder, D. C., 1997)

"Although no single definition is acceptable to all personality theorists, we can say that personality is a pattern of relatively permanent traits and unique characteristics that give both Consistency and individuality to a person's behavior." (Feist and Feist, 2009)

Significance of the Study - Education is a life living process. Education means all round development of the child. Through education one can take decision independently. With the help of education the power of thinking increases. One can improve his or her personality by education.

Ones attitude toward challenges his/her face when seeking to achieve a goal or when trying to complete a task can help to determine whether he/she will be a success or failure in that goal or task.Having positive personal character traits will not only allow you achieve various tasks, but it also can be a strong indication of being a success in general.

In view of the above, the need of the proposed study is vividly clear and the study was quite justified to undertake. Therefore researcher decided to conduct the research on the topic mentioned below-

Statement of the Problem - "Personality Traits of B.Ed. Students : A Case Study"

Objective of the study - The study was designed to achieve the following objectives:-

1. To study the Personality traits of B.Ed students.
2. To study the Personality traits of B.Ed girls students.
3. To study the personality traits of B.Ed. Boys students.

Hypotheses of the Study - To achieve the objectives of the present study the following hypotheses were formulated:

1. There is no significant difference exists between Personality traits of B.Ed boys students.
2. There is no significant difference exists between Personality traits of B.Ed girls students.

Method of Research - The researcher proposes random purposive method for the study.

Population of the Study - B.Ed. students of a self finance college situated in Sri Ganganagar district of Rajasthan will comprise population of the study.

Sample of the Study - A sample is small proportion selected for observation and anylysis. By observing the characteristic of the sample, one can make certain inferences about the characteristics of the population from which it is drawn. The essential requirement of any sample is that it is representative of the population. Miller (1977)

***Research Scholar, Janardan Rai Nagar Rajasthan Vidhyapeeth University, Udaipur (Raj.) INDIA**

states the scope of generalization of the findings depend on the representativeness of the whole population.

In the present study 10 students will be selected randomly as the sample of the study including both boys and girls.

Tool Used for Research - Researcher will be used some questions from personality tool 16PF (by RB Cattell's)) for collecting the data regarding the research accordingly.

Major Findings of the Study - A person might have a dash of openness, a lot of conscientiousness, an average amount of extraversion, plenty of agreeableness and almost no neuroticism at all. Or someone could be disagreeable, neurotic, introverted, conscientious and hardly open at all.

Conclusion - The present study indicates different types of personality traits of B.Ed. students. More or less their family circumstances and nature of course is affecting them.

Openness is shorthand for "openness to experience." People who are high in openness enjoy adventure. They're curious and appreciate art, imagination and new things. The motto of the open individual might be "Variety is the spice of life."

People low in openness is just the opposite: They prefer to stick to their habits, avoid new experiences and probably aren't the most adventurous eaters. Changing personality is usually considered a tough process, but openness is a personality trait that's been shown to be subject to change in adulthood. In a 2018 study, people who took psilocybin, or hallucinogenic became more open after the experience. The effect lasted at least a year, suggesting that it might be permanent.

Speaking of experimental drug use, California's try-anything culture is no myth. A study of personality traits across the United States released in 2013 found that openness is most prevalent on the West Coast.

Conscientiousness - People who are conscientious are organized and have a strong sense of duty. They're dependable, disciplined and achievement-focused. You won't find conscientious types jetting off on round the-world journeys with only a backpack; they're planners.

People lows in conscientiousness are more spontaneous and freewheeling. They may tend toward carelessness. Conscientiousness is a helpful trait to have, as it has been linked to achievement in school and on the job.

Extraversion - Extraversion versus introversion is possibly the most recognizable personality trait of the Big Five. The more of an extravert someone is, the more of a social butterfly they are. Extraverts are chatty, sociable and draw energy from crowds. They tend to be assertive and cheerful in their social interactions

Introverts, on the other hand, need plenty of alone time, perhaps because their brains process social interaction differently. Introversion is often confused with shyness, but the two aren't the same. Shyness implies a fear of social interactions or an inability to function socially. Introverts can be perfectly charming at parties — they just prefer solo or small-group activities.

Agreeableness - Agreeableness measures the extent of a person's warmth and kindness. The more agreeable someone is, the more likely they are to be trusting, helpful and compassionate. Disagreeable people are cold and suspicious of others, and they're less likely to cooperate.

References :-

1. Allinson, C.W., and Hayes, J. "The cognitive style index: a measure of intuition-analysis for organisational research", Journal of Management Studies (33:1), January 1996, pp 119–135.
2. Armstrong, S. J. (2000). The influence of individual cognitive style on performance in management education. Educational Psychology, 20, 323-339.
3. Bajwa, H. S., & Virk, N. (2006). The Academic Achievement in relation to Personality, Stress and Wellbeing. Miracle of Teaching, 6 (1).
4. Botwin, M.D., Buss, D.M., & Shackelford, T.K. (1997). Personality and mate preferences: Five factors in mate selection and marital satisfaction. *Journal of Personality, 65,* 107-136.
5. Dheeman, M. S., A study of aptitudes, personality traits and achievement, motivation and academic over achieves and under achievers, Ph.D. psychology, R.S.U 1979.
6. Agarwal, Nidhi and Sharma, Madhu (2007). ‾A matter of styles in Education , *Asian Journal of Psychology & Education*, 69(5),2-6.doi: 10.5281/zenodo.3813617.
7. Agarwal, Nidhi; Kumar, Puneet and Mishra, Sugam (2010). ‾Need to acquire democratic competency by Teacher Educator in Global Scenario , Maa Omwati Journal of Education Research & Development Vol. 1 No. 1; ISSN: 0976-1365.
8. Gosling, S. D., Rentfrow, P. J. & Swann Jr., W. B. (2003). A very brief measure of the Big-Five personality domains. *Journal of Research in Personality, 37*, 504-528.
9. http://www.livescience.com/41313-personality-traits.html

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Women Empowerment - Human Rights

Nidhi Bala*

Abstract - Simply stated, a right is a claim of an individual recognized by the society and the state obviously a proper definition of the tern right has three ingredients. First, it is a claim of the individual, second individual should receive recognition by the community and finally political recognition. Rights are just like moral declarations unless they are protected by the state. According to H.J. Laski. "Rights, in fact, are those conditions of social life without which no man can seek, in general, to be himself at his best. For since the state exists it make possible that achievement, it is only by maintaining rights that its end may be secured!' Human rights : a modified version of natural rights and civil rights, which are coupled with each other, and has assumed a significance of its own ever since the formulation of the Universal Declaration of Human Rights by the Human Rights commission and their adoption by the General Assembly of the United Nations in 1948. Elinoar Ruzwert, the them president of united Nations General Assembly, declared that instead of "Rights of man, She declared as Human Rights" in 1948, so that, 'women rights' or 'women' were included in this declaration. Human rights that are applying to all human beings therefore human rights are universal, all human beings come under human rights and holders of human rights without any discrimination, every human being has their rights, and these rights protect especially human existence.
Key words - women empowerment, Human rights, women rights, recognized, society, obviously, definition, ingredients, community, political, declarations, protected, achievement, secured, civil rights, significance, adoption.

Introduction - Simply stated, a right is a claim of a individual recognized by the society and the state obviously a proper definition of the tern right has three ingredients. First, it is a claim of the individual, second individual should receive recognition by the community and finally political recognition. Rights are just like moral declarations unless they are protected by the state.

The rights have a moral character whether Human rights. Natural rights political, economic, social moral and social, moral and civil rights, in other words, they are the rights which a society properly organized on the basis of good will should recognize. And rights are not only related to social welfare, they also related to a dynamic character.

According to H.J. Laski. "Rights, in fact, are those conditions of social life without which no man can seek, in general, to be himself at his best. For since the state exists it make possible that achievement, it is only by maintaining rights that its end may be secured!'

According to Gilchrist - "Rights arise, therefore, from individuals as members of society, and from the recognition that, for society there is ultimate good which may be reached by the development of the power inherent in every individual!" So in this way they are the rights which a society organized on the basis of good will should recognize.

However, the most important point, which was highlights the "Humanism and also Human rights: that is, according to Marxism as Well as New leftism, seems new society in which man has a free happy and dignified life, Marx termed it "thereof human emancipation': man is free all sorts of exploitation and oppression, Glorious human values prevail.

Human rights - A modified version of natural rights and civil rights, which are coupled with each other, and has assumed a significance of its own ever since the formulation of the Universal Declaration of Human Rights by the Human Rights commission and their adoption by the General Assembly of the United Nations in 1948. Elinoar Ruzwert, the president of United Nations General Assembly, declared that instead of "Rights of man, She declared as Human Rights" in 1948, so that, 'women rights' or 'women' were included in this declaration.

Now -a- days, human rights are become more important and giving more importance to them because from the grass root level, it means family level to Inter national level every aspect which is related to development, security, welfare of the people etc., related to human rights or comes under human rights moreover any decision which was taken and which is taking by the governments of any nation is related to human rights, The human rights are depend on basic rule of "All are equal, no discrimination" this is the aim of human rights.

Human rights that are applying to all human beings therefore human rights are universal, all human beings come under human rights and holders of human rights without any discrimination, every human being has their rights, and these rights protect especially human existence.

*Research Scholar, Janardan Rai Nagar Rajasthan Vidhyapeeth University, Udaipur (Raj.) INDIA

In this regard, one can recognize a positive tendency of acceptance of human rights by states, a growth of an international institutionalization for the protection of human rights and a progress of the mechanisms for monitoring human rights performances by states to respect the Universality of human rights and some small steps by the corporate world.

Because human rights establish moral boundaries so, Human rights do not shop before fractions, cultures, etc.

Status of Women - Traditional Indian literature gave high respect to women e.g. in Vedic period women leads equal status with men. Manu had said "where women are honoured, the Gods are pleased but where they are not, no sacred rite yields any reward".

Yagnavalkya said, "women are the embodiment of all divine virtues on earth., and the Ramayana and Mahabharata gives full credit to women.

After that, slowly women were treated by barbarous customs like "Sati" [burning of widow on the funeral pyre of her husband denial of right to remarry to widows, female infanticide, existence of "devadasi" system, child marriages, etc., Women suffered from lots of disabilities. Women is psychologically felt inferior to men, physically women is dubbed as dull and dud, intellectually no wisdom and socially, women has a place lower than man, she is made to lead second class citizenship or subordinate life, women is considered ineligible for all public life, they confine to four walls, or family -mothering the babies, even in family life, they always secondary, these are all caused by man's domination or atrocities and the main weakness point of women is physically they are very weaker than men. Almost half of the women population dependent always at one, or the other time, on man, be, he a father, husband or the son, yet the women , today is no more a commodity to be bought and sold at man's whims.

Over the years, the women movement has developed a theory of power of society which sees the relationship between the sexes as one of in equality subordination and oppression and which sees this as a problem of political power than a fact of nature. Feminist regard the distinction between men and women not merely biological, but also sociological and thereafter political, men and women are biologically different, but they are seen, regarded and structured socially as different gender, The masculine gender, being physically strong and having made himself as the in charge of the external or what may be called public, exploits woman by considering her as an inferior being, a slave, and commodity.

In Indian culture women are subjected to gender discrimination right from the births. The female infanticide is widely prevalent even though it is highly in practice; an estimated 1.2 million lives were snuffed out either through abortion or post natal murders. The girls are also allowed to remain under nourished and, therefore, the female mortality rate is much higher than that of boys. Girl children are denied the proper educational facilities, nourishment and medical facilities. Parents and other family members think that they are burden to the family.

The gender bias not only reflected on one aspect, it society reflects on political, social, economic each and every point in the society reflects by the gender bias, even in jobs also it shows impact. In many places of India and world wide, women are denied job opportunities, because the men folk more equipped to the job, and they feel that for women right place is kitchen and rearing children. Women also have to face sexual harassment, and the position of dalit women is so worst these are all live example to discrimination which was facing by women folk.

In political aspect, while the women's vote in terms of numbers is not much behind that of the men, their representation in legislative bodies has been very poor. The highest representation of Loksabha was in 1984 and that too eight percent. and allover the India the State Assemblies also have a meager representation from women folk, so, women are slowly alienated from the political system.

Not surprising women are used like surrogates to their men folk be-cause after introducing 73'd Amendment Act in 1992, according to this Act 1/3 seats reserved for women, so reserved quota would be filled by the wives, daughters, etc, relations, women's representations in political field, and decision making bodies is very low.

There have many social legislations designed to achieve betterment of women, but they remain as paper tigers, rarely to be followed. In present times, the number of women either government or private offices is increasingly tremendously but compare to women population it is very low, And it will be wrong to state that as a result of all these efforts all the women in India have emancipated.

Still the male domination of the society was a fact. And women were suffering immense social envious and social oppression within the family, and also in the society. They were also suffering from illiteracy, ignorance, and economically dependent position etc. Polygamy was in practice still it is continuing, women not even the right to divorce (just like a "curse.]

In this context the Indian constellation included human rights in the fundamental rights to protect every individual right, and for the protection of human rights so many provisions existed by the Indian constitution. In the same way, in 1993 the Indian government established Human rights commissions at both central and state level to strength-en the human rights and proper implementation.

In India, even though a largest democratic country suffering from human rights problems. Like children, women, etc., so many long lasting problems are here E.g.: 'women issue' is a chronic problem, so many number of rape cases are reading in every day news papers even 4 years children also victimized to this cruel behaviour, still unashamed violations of human rights are took place in all parts of the world especially with chronic problems. In this way number of international and regional instruments has

drawn attention to Women human rights issues.

CEDAW: UN convention on the Elimination of All Forms of Discrimination against women adopted in 1979, and after eight year CEDAW came into force. CEDAW noted as, The International Bill of Rights for Women. In addition, required proper safe guards for their realization, be-cause conferment of rights is not enough or sufficient.

It is essential that governments should protect and promote people's rights moreover protection of rights, it is not only duty of governments similarly, and people also must be vigilant. Therefore, It is the Proud spirit of citizens, less than the letter of the law, that is their most real safeguard.

In 1993, 45years after the Universal Declaration of Human Rights was adopted, and the UN world conference on Human Rights in Vienna confirmed that women rights were human rights.

And if anyone or any where, in identifying neglect of women's rights as human rights violation and in drawing attention to the relationship between gender and human rights violations should be punished. And this was a step forward in recognizing the rightful claims of women folk who were sharing half of the humanity.

The CEDAW defines the right of women to be free from all forms of Discrimination and also look action to protect this right. Under CE-DAW look many actions to protect women's rights such as prepared one agenda for national action to end discrimination, for achieving equality between men and women for equal access, equal opportunities in all the fields such as education, health, employment etc., introduced core principles. So CEDAW is the only human rights treaty which has creates a new world for women and women's rights.

In 1994, the International Conference on Population and Development in Cairo (ICPD] articulated and affirmed the relationship between advancement and fulfillment of rights and gender equality and equity. The ICPD declared in their programme of action that, the achievement of sustainable development depends on women empowerment and political social, economic improvement, so ICPD recognized that, the highly important and essential of women empowerment.

In 1995, the fourth world conference on women in Beijing discussed in wider range on women's rights and the gender equality, women's empowerment as one of the eight Millennium Development goals. (But many promises have not yet to be kept.]

Conclusion - Women are suffering low socio- economic, political inequalities over the past decade, and women empowerment is a new challenge for all and still women getting less money than men, even same kind of work, Gender based violence [never ending] increasing of trafficking on women etc., these are all for instance of women condition at world wide.

The commission [(EDAM trying to identify emerging trends, injustice, discriminatory practices against women for the purposes of formulation of right and useful policies, and initiate development strategies to protect women's human rights as well as gender equality.

When social, economic, political emancipation is possible and healthy development of democratic process free from corruption and free from criminalization of politics took place in the society when women's political participations is possible for women empowerment and emancipation.

References :-

1. J.C. Johari, contemporary political theory, P.229.
2. LC. Johari, contemporary political theory, P.No. 657.
3. By Dr. Peter Kirchs chlaeger, Co-Director of the centre of Human Rights Education, university of Teacher Education of central Switzerland Lucerne
4. SS. Awasthy, Indian Government and politics, P.408
5. S.S. Awasthy, Indian Government and politics, P. 409
6. S.S.Awasthy, Indian Government and politics, P.No. 411
7. S.S. Awasthy Indian Government and politics, P.No. 410
8. Laski, OP, cit., P. 89.

****

Cow Milk: Miraculous Complete Meal

Dr. Sumitra Meena*

Abstract - Cow milk is a widely consumed health beverage across the world. Especially we Indians cannot live without our trusted cow milk and known for its innumerable health benefits and it is a perfect replacement for a complete balanced diet. Cow milk has some unique nutrients, which cannot be compared with any other milk. This is an old trusted form of health drink, which necessary for the holistic development of the body.

Cow milk is extremely nutritious and has an array of nutrients, which makes it a wholeItself. Cow milk is the store house of quality proteins that helps in giving strength to the building block of cells. It contains nine essential amino acids and calcium, as well as nutrients including Vitamin B12 and iodine. It also contains magnesium, which is important for bone development and musclefunction, and whey and casein, which have been found to play a role in lowering blood pressure.Cow milk is essential in strengthening your immune system and repair the damaged cells and tissues.

Introduction - Composition of milk of every mammalian species is unique in its sense and specifically designed in order to meet the requirement of the particular mammal species. Humans are only the species That drink the milk of another species, particularly cow milk.Cow milk has been used globally for its nutritive and medicinal values in all age groups. There are references on cow milk in ancient Vedas.

Cows are the most common type of large domesticated ungulates. They are a prominent modern

Member of the subfamily Bovinae, are the most wide spread species of the genus Bos, and are most commonly classified collectively as Bos taurus.

Cows were first domesticated between 8,000 and 10,000 years ago.

Cow milk is constituted of water-87%, carbohydrates (lactose) – 4.8%, fat-4%, protein – 3.4%Minerals – 0.8% and vitamins, Casein forms about 80% and Whey protein forms about 20% of the total protein content in the milk. Glycoproteins are found in trace fraction. Thus casein becomes the major source of supply of essential amino acids (except sulphur containing amino acids-methionine and cysteine).The cow milk has four times more protein and seven times high mineral contents than human milk.

Health Benefits of Cow Milk - Due to presence of calcium, cow milk is highly associated with the development and maintenance of bones and muscles. Drinking cow milk on a regular basis helps in enhancing our core strength and thus prevents, the risk of osteoporosis and osteoarthritis. Apart fromquality protein, cow milk is rich source of calcium, vitamin D, phosphorus and magnesium. The combination of these essential nutrients are highly beneficial for the overall development of our body.

Cow milk is an essential brain-food. It has an abundance of vitamin B12 is known to improve our memory power.It is very important for overall brain development of a growing child.Cow milk is rich of numerous essential nutrients and is widely considered as a healing food. It has rich fat , calcium, phosphorus, potassium which helps in regulating and maintaining elevated blood pressure.It also has an important acid which is called conjugated Linoleic Acid (CLA) that lowers the growth of bad cholesterol, and thus keeps our heart healthy.Cow milk contains higher amounts of conjugated linoleic acid and omega-3 fatty acids, which are linked to many health benefits, including a reduced risk of diabetes and treatment of heart diseases.Just one cup(244 grams) of whole cow milk obtains

Calories	-	146
Protein	-	8 grams
Fat	-	8 grams
Calcium	-	28% of the RDA
Vitamin D	-	24% of the RDA
Riboflavin(B2)	-	26% of the RDA
Vitamin B12	-	18% of the RDA
Potassium	-	10% of the RDA
Phosphorus	-	22% of the RDA
Selenium	-	13% of the RDA

*Associate Professor and Head Deptt. Of Zooogy, Govt. College, Gangapurcity (Raj.) INDIA

Conclusion - Cow Milk is a nutrient- rich liquid food produced by the mammary glands of cow. It contains carbohydrates, proteins, minerals and antibodies that strengthen the Immune system and thus reduces the risk of many diseases. Cow milk is a good source of protein and calcium as well as nutrients including Vitamin B12 and iodine. It also contains magnesium, which is important for bone development and muscle functions.

Drinking cow milk on a regular basis helps in enhancing our strength and prevents.The risk of osteoporosis and osteoarthritis. It is widely recognised as a nutritious drink for people of all ages.

References : –

1. Mishra et al. Status of milk protein, beta-casein variants among India milch animals, Indian J. Animal Sciences, 2009; 79(7):722-725.
2. France Marangoni, Luisa Pellegrino, Elvira Verduci, Andrea Ghiselli., Cow Milk consumption and Health; A Health Professional Guide. Journal of American CollegeOf Nutrition 38(6): 1-12 September 2018
3. W L Cloeys, S Cardoen, G Daube, J D Block. , Raw or Heated Cow Milk Consumption; Review of Risks and Benefits. Food Control 31(1) 251-262, 2013

****

नेहरू एवं भारी उद्योग

डॉ. जोगेन्द्र सिंह *

शोध सारांश – जवाहरलाल नेहरू स्वतंत्र भारत के निर्माता थे। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पंडित नेहरू ने भारी उद्योगों पर बल दिया क्योंकि बिना भारी उद्योगों के देश का विकास नहीं किया जा सकता था। द्वितीय पंचवर्षीय योजना महालनोविस योजना पर आधारित थी जिसका लक्ष्य समाजवादी समाज की स्थापना करना था। 1958 में एग्रो सोसाइटी की स्थापना की गई यहीं से भारत में आधुनिक खेती की शुरूआत मानी जाती है। इस योजना में लौह इस्पात उद्योग, रसायन उद्योग, इंजीनियरिंग एवं मशीन निर्माण उद्योग को बढ़ावा दिया गया। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में स्टील कारखाने भिलाई, दुर्गापुर, राउरकेला स्थापित किये गये। परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना भी 1958 में भाभा की अध्यक्षता में हुई। नेहरू की दूरदर्शिता के कारण ही आज हमारे देश की गिनती विश्व के सम्पन्न देशों में की जाती है।

प्रस्तावना – यह नेहरू जी ही थे जिन्होंने भारत को आधुनिक जगत से जोड़ने के लिए नए विचारों को ग्रहण किया। यह नेहरू की ही सूझबूझ थी कि भारत में औद्योगिक क्रांति के सपनों को साकार कर लिया गया। औद्योगिकरण के बिना इस्पात, सीमेंट, खाद और कीटाणुनाशक उद्योग जो कृषि विकास के लिए आवश्यक साधन थे। भारी उद्योगों के विकास का आधार दूसरी पंचवर्षीय योजना रही। औद्योगिक विकास के लिए विज्ञान व वैज्ञानिक तरीकों का बड़े स्तर पर प्रयोग किया गया। पंचवर्षीय योजनाओं ने भारी उद्योगों के विकास में उल्लेखनीय योगदान दिया। 'भारी उद्योगों के विकास के पीछे नेहरू सरकार का मुख्य उद्देश्य समाज में व्याप्त सामाजिक समस्याओं व बेरोजगारी का सकुशल उपाय तलाश करना तथा आर्थिक विकास में तेजी से प्रगति करना था।'[1]

नेहरू द्वारा आरंभ की गई औद्योगिक नीतियों पर देश में काफी चर्चा हुई। उनके प्रयासों के आधार पर उद्योग धंधों में कोई ऐसा क्षेत्र नहीं था जिसमें भारत ने तेजी से प्रगति न की हो। भारत, यूरोप व अमेरिका से भारी उद्योग धंधों की स्थापना में एक शताब्दी पीछे रहकर भी आज संसार में चौथे नंबर पर पहुंच गया है और जल्द ही विश्व के अग्रणी देशों में अपना नाम दर्ज करा लेगा। जिस प्रकार देश की आर्थिक प्रगति और विकास के नेहरू ने योगदान दिया उससे ऐसा प्रतीत होता है कि उनको अर्थ जगत का बहुत अधिक ज्ञान था। एक मझें हुए अर्थशास्त्री की तरह उन्होंने कहा कि उद्योगों को बढ़ाएं बिना आधुनिक विश्व से मुकाबला नहीं किया जा सकता। इस्पात उद्योग उनकी नजर में आर्थिक क्षमता का प्रतीक था। आज भी देश के आर्थिक विकास में इस्पात के महत्व को नकारा नहीं जा सकता क्योंकि भारी उद्योग का विकास इस बात पर ही टिका हुआ है। उनके अथक प्रयासों से ही राउरकेला, भिलाई, दुर्गापुर में इस्पात के कारखाने लगाए गए।[2]

'नेहरू ने भारी उद्योगों के संदर्भ में आर्थिक विचारों को 1948 और 1956 की औद्योगिक नीतियों के रूप में प्रस्तुत किया। उनको इस बात का अच्छी प्रकार से ज्ञान था कि भारत जैसे पिछड़े देश में जहां पूंजी एवं उच्च तकनीकी का अभाव है विकास की प्रक्रिया को निजी उद्यमियों पर नहीं छोड़ा जा सकता।'[3] इसलिए औद्योगिक नीतियों में उन्होंने बड़े आधारभूत एवं महत्वपूर्ण उद्योगों के विकास की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली। देश के करोड़ों लोगों को विकास के लिए उन्होंने औद्योगिक विकास की नींव का आधार लोकशाही रखा जो भी देश के लिए योजना बनाई जाएगी उसमें भारत के सभी लोगों की राय ली जाएगी। यह उनकी समझ थी। इन योजनाओं की समय-समय पर विशेषज्ञ जांच करते थे। नेहरू का उद्देश्य था कि कुछ क्षेत्र सरकार के लिए रिजर्व कर दिए जाएं बाकी निजी क्षेत्र में उद्योगपतियों को पूर्ण स्वतंत्रता दी जाएगी।

नेहरू कुटीर उद्योग के पक्षधर नहीं थे उन्होंने भारी उद्योगों के विकास पर ही बल दिया वह औद्योगिक विकास का आधार भारी उद्योगों को ही मानते थे। 'जब वह इस्पात के कारखानों की योजना बना रहे थे तब अमेरिका जैसे बड़े देश ने उनके सामने प्रस्ताव रखा था कि भारत को बड़े इस्पात के कारखाने लगाने की क्या आवश्यकता है कच्चा लोहा देकर वह अमेरिका से तैयार माल ले सकता है।'[4] नेहरू द्वारा अमेरिका का यह प्रस्ताव ठुकराने का असर आज भारत में दिखाई देता है। इस्पात उत्पादन में आज भारत की गिनती विश्व के बड़े देशों के साथ की जाती है उनकी दूरदर्शी सोच की वजह से भारत में छोटी से छोटी वस्तुएं निर्मित की जा रही हैं देश में बड़े-बड़े कारखाने निर्मित हुए है जिनके द्वारा करोड़ों व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ है।

'सारे भारत में कहीं उनके द्वारा उठाए गए कदमों की सराहना की गई तो कहीं आलोचना का शिकार होना पड़ा लेकिन उन्होंने यह ठान लिया था कि साधारण जनता के हितों को ध्यान में रखकर ही निर्णय लिए जायेगें। इस्पात कोयला और तेल इन तीन उद्योगों को सार्वजनिक क्षेत्र में सम्मिलित किया गया। यदि नेहरू अपने उद्देश्यों पर अटल नहीं रहते तो इस्पात और तेल के औद्योगिकरण की दिशा में बहुत दूर जाना संभव नहीं होता। भारी औद्योगिकीकरण के सम्बन्ध में उस समय रूस ने आर्थिक एवं तकनीकी सहायता देने का वचन दिया था वह भारत के भारी औद्योगिक विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण रहा।'[5]

नेहरू का भारी उद्योगों के प्रति एक सर्वाधिक कारगर कदम यह था कि उन पर व्यक्तिगत स्वामित्व समाप्त कर उसे सरकारी नियंत्रण में ले लिया था। तत्कालीन परिस्थितियों को देखा जाए तो अनुमान लगाया जा सकता है कि बड़े उद्योगों के विकास के बिना भारत के विकास की बात करना

* असिस्टेंट प्रोफेसर (इतिहास) अब्दुल रज्जाक (पी0जी0) कालिज, जोया अमरोहा (उ.प्र.) भारत

बेईमानी है। 'नेहरू औद्योगिकीकरण विकेंद्रीकरण में विश्वास रखते थे कि भारत में जहां तक प्रश्न लघु व मध्यम वर्गीय उद्योगों का है तो उन पर साधारण जनता का अधिकार होना चाहिए। लेकिन प्रश्न यदि बड़े उद्योगों का हो तो उस पर एक क्षेत्र अधिकार राज्य का होना चाहिए।'[6] कुछ कारोबार निम्नलिखित है जिनको सार्वजनिक क्षेत्र में लगाने का प्रयास किया गया।

1. सिंदरी फर्टिलाईजर्स एंड केमिकल्स (प्राईवेट) लिमिटेड।
2. नांगल फर्टिलाईजर्स एंड केमिकल्स (प्राईवेट) लिमिटेड।
3. हैवी इलेक्ट्रिकल्स (प्राईवेट) लिमिटेड।
4. हिन्दुस्तान मशीन टूल्स (प्राईवेट) लिमिटेड।
5. हिन्दुस्तान एंटीबायोटिक्स (प्राईवेट) लिमिटेड।
6. नेशनल इंडस्ट्रियल डेवलपमेंट कॉरपोरेशन (प्राईवेट) लिमिटेड।

भारी उद्योगों के माध्यम से यूरिया और डबल साल्ट के निर्माण के लिए योजना तैयार की गई थी। कर्मचारियों को प्रशिक्षण भी दिया गया तथा कारखानों में मजदूरों के हितों के कार्य किए गए। मजदूरों के लिए आवास सुविधाएं कल्याण केन्द्र एवं बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था की गई। 'देश में भारी बिजली के सामान बनाने के लिए हेवी इलेक्ट्रिकल्स प्राईवेट लिमिटेड भोपाल में स्थापित की गई। इस परियोजना के लिए प्राविधिक सलाहकार के रूप में ब्रिटिश फर्म नियुक्त की गई थी और इस परियोजना का नियंत्रण करने के लिए अगस्त 1956 में एक कंपनी बनाई थी।'[8]

कोयले का उत्पादन नेहरू के कार्यकाल में 60 मिलियन टन प्रति वर्ष तक पहुंच गया था। स्वतंत्रता के बाद सबसे महत्वपूर्ण कार्य राष्ट्रीय खनिज कार्य नीति का निर्धारण करना था। '6 अप्रैल 1948 में औद्योगिक नीति के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव पारित किया गया। इसके द्वारा खनिज उद्योग को केन्दीय नियंत्रण में ले लिया गया। इसका एक कारण यह भी था कि इस उद्योग में उच्च स्तर की कार्यकुशलता तथा काफी मात्रा में पूंजी लगाने की आवश्यकता थी।'[9] इसके बाद पंचवर्षीय योजनाओं में कोयला उद्योग में उत्पादन को ऊर्जा का मूल स्त्रोत निर्धारण करके प्रगति की गई।

पंचवर्षीय योजनाएं	अवधि	प्राथमिक क्षेत्र	लक्ष्य की दर	वृद्धि दर
प्रथम योजना	1951 –1956	**कृषि बिजली सिंचाई**	2.1	3.6
द्वितीय योजना	1956 –1961	**भारी उद्योग**	4.5	4.2
तृतीय योजना	1961 –1966	**खाद्य, उद्योग**	5.6	2.8

प्रथम पंचवर्षीय योजना 34.40 मिलियन टन वार्षिक
द्वितीय पंचवर्षीय योजना 55.56 मिलियन टन वार्षिक
तृतीय पंचवर्षीय योजना 67.73 मिलियन टन वार्षिक
उपरोक्त तालिका में कोयला उत्पादन का विवरण [10]

निसंदेह नेहरू ने जो योजनाएं बनाई उनसे देश को मजबूत औद्योगिक ढांचा प्राप्त हुआ। उनके कार्यकाल में ट्रांस्पोर्टेशन उद्योग, पर्यटन उद्योग, कांट्रैक्टिंग एवं वाणिज्य क्षेत्रों का तीव्र विकास और विस्तार हुआ। इन क्षेत्रों के प्रसार से नियोजन के अवसरों तथा राष्ट्रीय आय में वृद्धि, पूंजी निवेश अंतर, क्षेत्रीय विषमताओं में कमी, पिछड़े क्षेत्रों का विकास, विभिन्न भारी व लघु उद्योगों के विकास को भी बहुत मिला और गरीबी कम करके भारत को तीव्र विकास की ओर अग्रसर कर उन्होंने भारतीय औद्योगिक जगत को नई दिशा दी।

विकास की इस मंजिल पर पहुंचने के लिए यह आवश्यक था कि भारत में आर्थिक सामाजिक विषमता का अंत किया जाता और समाज में धन का न्याय पूर्ण वितरण किए जाने को वरीयता दी जाती। धन का वितरण न्यायपूर्ण बनाने के लिए सबसे बड़ी बाधा देश में उत्पादन की कमी थी उत्पादन ही नहीं था तो न्यायपूर्ण वितरण किस वस्तु का किया जाता। वितरण तभी न्याय पूर्ण हो सकता है। जब उत्पादन बढ़ता और उत्पादन वृद्धि के लिए देश का औद्योगिकरण करना आवश्यक था। इसी बात को ध्यान में रखकर उनके नेतृत्व में भारत सरकार ने स्वतंत्र भारत की प्रथम औद्योगिक नीति की 1948 में घोषणा की थी। इस घोषणा में मिश्रित अर्थव्यवस्था को भारत के लिए उपयुक्त व्यवस्था घोषित किया गया था। उन्होंने मिश्रित अर्थव्यवस्था से तात्पर्य यह बताया था–'औद्योगिक क्षेत्र में निजी उद्योग और सार्वजनिक उद्योग साथ–साथ चल सकते हैं हमारा उद्देश्य भारी उद्योगों को बड़े पैमाने पर बढ़ावा देना है क्योंकि इसके बिना भारत के विकास और उद्योग क्षेत्र की प्रगति के बारे में बात करना व्यर्थ है।'[11]

'अंग्रेजों के शासन काल में भारत में जो थोड़े बहुत निजी उद्यम पनप रहे थे उनको राष्ट्रीय कृत करने में भारत सरकार द्वारा पूंजी और साधनों को लगा देना उस समय उचित नहीं समझा गया क्योंकि भारत में पूंजी की वैसे भी कमी थी। लेकिन हमें भारी उद्योगों को स्थापित करना है और उसके लिए हर संभव प्रयास किया जाएगा।'[12] पंडित नेहरू के नेतृत्व में तत्कालीन भारत सरकार का यह दृढ़ विश्वास था कि पूर्ण राष्ट्रीयकरण उन देशों के लिए तो लाभदायक हो सकता था जहां राज्य के पास पर्याप्त साधन हो परन्तु भारत जैसे विकासशील, अल्पविकसित,साधनहीन राष्ट्र के लिए यह व्यवस्था अधिक उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकती। क्योंकि यहां वित्तीय और तकनीकी साधन बड़े सीमित थे। उनके अनुसार मिश्रित अर्थव्यवस्था समय की मांग थी और इस अर्थव्यवस्था से ही संभव था कि निजी उद्योग भी राष्ट्रीय विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते थे।

1948 में नेहरू ने एक भाषण में कहा था कि समय और परिस्थितियों की मांग यह है कि दोनों क्षेत्र आपसी सहयोग से भारत के विकास के लिए साथ–साथ कार्य करें। यदि दोनों क्षेत्र में कोई भी तालमेल नजर आया तो भारत बहुत जल्दी आर्थिक विकास के मार्ग पर अग्रसर होगा। नेहरू की प्राथमिकता यह थी कि सार्वजनिक क्षेत्र में ऐसे उद्योगों को लाया जाए जिन पर देश की जनता के हित के लिए राज्य का स्वामित्व और नियंत्रण रखना जरूरी था। उनके नेतृत्व में यह निश्चय किया गया कि देश के प्रति रक्षा संबंधों का तथा आधारभूत व भारी उद्योगों को सार्वजनिक क्षेत्र में रखा जाना चाहिए। 1948 की औद्योगिक नीतियों में सरकारी स्वामित्व केवल 3 उद्योगों तक सीमित रखा गया था।

1. गोला बारूद।
2. अणु शक्ति तथा
3. रेलवे।

छह अन्य उद्योगों में नए संस्थान प्रारंभ करने का अधिकार सरकार ने अपने पास रखा था। जो इस प्रकार थे कोयला, इस्पात, विमान उत्पादन, जलपोत निर्माण, तार एवं टेलीफोन उद्योग तथा खनिज पदार्थ। इन उद्योग में विद्यमान निजी कारखाने राष्ट्रीकरण से मुक्त रखे गये थे। इन निजी कारखानों का राष्ट्रीकरण कम से कम 10 वर्ष तक स्थगित कर दिया गया तथा शेष औद्योगिक क्षेत्र सामान्य निजी उद्योगों के लिए छोड़ दिया गया।[13]

इस प्रकार यह कहना उचित होगा कि नेहरू के कार्यकाल के दौरान आरंभ की गई तीन पंचवर्षीय योजनाओं में औद्योगिक उत्पादन में 6 प्रतिशत

की वृद्धि हुई। नेहरू के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण बात यह है कि नेहरू युग में भारी औद्योगिक उत्पादन में विविधता का समावेश आया तथा इलेक्ट्रानिक्स पेट्रोकेमिकल्स जैसे अधुनातन औद्योगिक इकाईयों को प्रश्रय मिला जोकि भारी उद्योगी साम्राज्य की विकास उन्मुख प्रवृत्तियों की द्योतक है। उनकी शासन अवधि में भारत के भारी औद्योगिक उत्पादन में लगभग 6 गुनी वृद्धि हुई थी जो उनके कार्यकाल को सराहनीय बनाती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी, राष्ट्र की धरोहर, जवाहरलाल नेहरू, लोक राज प्रकाशन, नई दिल्ली, 1989, पृ0-47।
2. आठवां वर्ष, पब्लिकेशन डिविजन, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, दिल्ली दिसम्बर 1985, पृ0-60।
3. आनंद शंकर शर्मा, दिव्य पुरूष नेहरू, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 1966, पृ0-52।
4. ज्ञानचंद सोशलिस्ट ट्रांस्फॉरमेशन आफ इंडियन इकोनामी, स्टडी इन सोशल एनालिसिस एलाइड पब्लिकेशन, मुंबई, 1965 पृ0-130।
5. जवाहरलाल नेहरू के भाषण, पृष्ठ-89।
6. डॉ0 वेदव्रत शर्मा, जवाहरलाल नेहरू एक समाजवादी दार्शनिक, लक्ष्मी प्रकाशन संस्थान, इंदौर, 1991, प्रष्ठ-134।
7. सुनील गुहा, आजादी का 11 वर्ष, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी जंतर मंतर रोड, नई दिल्ली, 1957, पृष्ठ-73।
8. वही।
9. डॉ0 सीताराम सिंह नेहरू के आर्थिक विचार, खनन भारती, नेहरू विशेषांक, 1968, पृष्ठ-221
10. सुनील गुहा, पूर्वोक्त, पृष्ठ-77।
11. वीरेन्द्र सिंह, नेहरू जी और औद्योगिक वैज्ञानिक चेतना, महाराष्ट्र मानस, पंडित जवाहरलाल नेहरू विशेषांक, नवीन प्रकाशन, मुंबई, दिसम्बर 1989, पृष्ठ-48।
12. द टाइम्स ऑफ इंडिया, अंग्रेजी दैनिक दिल्ली से प्रकाशित नेहरू मैमोरियल म्यूजियम एंड लाइब्रेरी, नई दिल्ली, 1965, पृष्ठ-7।
13. विज्ञान प्रगति, सिफर से शिखर तक, भारतीय विज्ञान के 60 वर्ष सितंबर 2007, पृष्ठ-28।

****

मलिन बस्तियों में स्वच्छता उन्नयन के सामाजिक-आर्थिक पक्ष

भगवान दास पाल*

प्रस्तावना – वैश्वीकरण एवं उदारीकरण के परिणामस्वरूप नगरीकरण में तीव्र वृद्धि समस्त विकासशील देशों में जारी है। इसी क्रम में भारत में भी नगरों की जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है। 2001 की जनसंख्या के आँकड़ो के अनुसार जहाँ भारत में 35 दश लाखी महानगर थे, वहीं 2011 में यहां 53 दश लाखी महानगर हो गये हैं। ऐसी स्थिति में महानगरों में मलिन बस्तियों की वृद्धि स्वाभाविक ही है। इन मलिन बस्तियों में स्वच्छता की चुनौतियां भी कम नही हैं। इन मलिन बस्तियों में स्वच्छता से संम्बधित जो सुधार किये गये, वो काफी सीमित मात्रा में हैं। स्वच्छता में सुधार की कमी के कई कारक हैं। जैसे- हितधारकों द्वारा स्वच्छता को प्राथमिकता में न रखना, अपर्याप्त वित्त, स्वच्छता सुधार में उच्च तकनीकि का अभाव, लोगों की सहभागिता का अभाव, निजी क्षेत्र के निवेश की उदासीनता आदि। कुछ अतिरिक्त कारक भी है। जो मलिन बस्तियों में स्वच्छता के संकट को उत्पन्न करते हैं। जैसे- स्वच्छता सुधार के लिए वास्तविक संचालक के माँग में कमी तथा समस्याओं के पहचान की जटिलता एवं स्वच्छता से संम्बधित सेवाओं की पहुँच आदि।

इस शोध पत्र में विशेष रूप से स्वच्छता के गैर-स्वास्थ्य लाभ तथा मलिन बस्तियों में स्वच्छता के उन्नयन में आने वाली सामाजिक व आर्थिक जटिलताओं जैसे पक्षों को षामिल किया गया है।

मलिन बस्तियों की वृद्धि – पिछले 15 वर्षो में अनियोजित तरीके से जिस गति से नगरीकरण की मात्रा में वृद्धि हुयी है। उससे महानगरों में मलिन बस्तियों की संख्या में काफी इजाफा हुआ है। भारत में 2001 में मलिन बस्तियों में रहनें वाले लोगों की जनसंख्या जहाँ 5.23 करोड़ थी, वहीं 2011 में मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगों की जनसंख्या 6.55 करोड़ हो गयी। कुल मलिन बस्तियों का 38 प्रतिशत चार बड़े महानगरों में विद्यमान है। इन बस्तियों का विकास उदारीकरण के बाद औद्योगिक गतिविधियों के बढ़नें से हो रहा है।

विश्व विकास रिपोर्ट के अनुसार आर्थिक गतिविधियों के बढ़ने से नगरों की तरफ लोगों का आकर्षण तेजी से बढ़ रहा है। जिससे ये अवैध बस्तियाँ नगरों के आस-पास तेजी से बढ़ती जा रही हैं। वर्तमान में यू.एन.डी.पी. ने विश्व स्तर पर मलिन बस्तियों में रहने वाले लगभग 100 मिलियन लोगों के जीवन स्तर में सुधार, उनकी बस्तियों में स्वच्छता, स्वास्थ्य, शुद्ध पेयजल की आपूर्ति आदि के लिए शताब्दी विकास लक्ष्य निर्धारित किया है। जिसके अन्तर्गत 2020 तक इन बस्तियों में सुधार का लक्ष्य रखा गया है।

भारत जैसे विकासशील देश में अनियोजित तरीके से अवैध बस्तियाँ नगरों के बाहरी इलाकों, कुड़े के ढेरों, रेलवे लाइनों के किनारों पर बसती जा रही हैं। इसका प्रमुख कारण गरीबी, नगरीय भूमि की कमी, लीज पर ली गयी जमीनों की कमी, नगर के बाहरी हिस्से में आधारभूत संरचनाओं की कमी, नगर में मिलने वाली सुविधाओं के आकर्षण के चलते इन मलिन बस्तियों की संख्या में वृद्धि निरंतर जारी है। सरकार द्वारा इन बस्तियों के उन्नयन हेतु बनाई गयी नीतियाँ, प्रशासनिक अक्षमता, लोगों में जागरूकता की कमी के चलते जस की तस बनी हुयी हैं। इन बस्तियों में ज्यादातर गाँव से आने वाला गरीब परिवार होता है। जो कि सस्ते आवासों की तलाश में इन बस्तियों का सहारा लेता है। इन बस्तियों में प्राय: आधारभूत संरचनाओं जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता आदि की कमी पायी जाती है। जिससे यहाँ विभिन्न प्रकार के संक्रामक व असंक्रामक बिमारियों की अधिकता होती है। वर्तमान में दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, बंगलुरू, चेन्नई जैसे महानगरों में तेजी से मलिन बस्तियों की संख्या में वृद्धि होती जा रही है।

मलिन बस्तियों में स्वच्छता की दशा : मलिन बस्तियों में जनसंख्या घनत्व बहुत अधिक पाया जाता है। गलियाँ अत्यन्त सँकरी तथा नालियाँ खुली होती हैं। ऐसी स्थिति में इन गलियों में साफ-सफाई करना काफी मुश्किल होता है। नालियाँ खुली होने के कारण जब उनमें अवसाद की मात्रा ज्यादा होती है, तो नाली का पानी इन गलियों में फैल जाता है। बरसात के दिनों में नालियों की क्षमता कम होने के कारण बारिश का पानी, इन बस्तियों के घरों में प्रवेश कर जाता है। जिससे इन बस्तियों में शीलन बनी रहती है। इस शीलन के कारण अनेक बिमारियाँ उत्पन्न होती रहती है। इन बस्तियों में शौचालयों की कमी के कारण लोग बस्तियों से थोड़ी दूरी पर खुले में शौच करते हैं। जिससे बारिश के दिनों में अक्सर इन बस्तियों में डायरिया, कालरा, टाइफाइड या अन्य विषाणुजनित बिमारियाँ फैलती रहती हैं। जिन घरों में शौचालय है, वे भी सेफ्टी टैंक ना बनाकर बल्कि खुली नालियों में मल-जल को प्रवाहित करते हैं। जिससे गलियों में गन्दगी फैलती रहती है।

गाँव से नगरों की ओर अच्छे जीवन स्तर की तलाश में निरंतर प्रवसन होता है। जिससे इन बस्तियों का अनियोजित विकास होता रहता है। तथा समस्याएँ जस की तस बनी रहती हैं। इन प्रवसित लोगों का आशियाना इन मलिन बस्तियों में ही बसता है। इन बस्तियों में षुद्ध पेयजल का अभाव, गन्दे पानी के निकलने की उचित व्यवस्था का ना होना, बस्तियों से निकलने वाले सूखे व गीले कचरे के निपटान की उचित व्यवस्था का अभाव, लोगों में स्वच्छता संम्बन्धी जागरूकता में कमी के कारण इन बस्तियों में समस्याएँ बहुत अधिक रहती है। प्रशासनिक अक्षमता के कारण नगर को मिलनें वाली सुविधाओं तक लोगों की पहुँच न होने के कारण, इन बस्तियों की स्वच्छता की दशाएँ अत्यंत दयनीय होती हैं।

स्वच्छता एवं स्वास्थ्य के बीच संबन्ध : स्वच्छता और स्वास्थ्य एक दूसरे से घनिष्ट रूप से अन्तर्सम्बन्धित हैं। मलिन बस्तियों में डायरिया के प्रसार

* शोधाथी (भूगोल) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

से वहाँ रहने वाले बच्चों में कुपोषण की समस्या बहुत अधिक होती है। कुपोषण और भुखमरी के द्वारा बच्चों की प्रतिरोधक क्षमता में कमी आती है। आर्थिक समस्याओं के चलते लोगों का जीवन स्तर निम्न स्तरीय होता है। विश्व बैंक के आँकड़ों के अनुसार विश्व स्तर पर पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों की होने वाली मौतों में से, 15 प्रतिशत मौतें विकासशील देशों में निम्न या मध्यम आय वर्ग के लोगों के बच्चों में डायरिया के कारण होता है। 90 प्रतिशत डायरिया से संबन्धित बिमारियों का मुख्य कारण साफ-सफाई एवं शुद्ध पेयजल का अभाव है।

यदि हम स्वच्छता में सुधार का मुल्यांकन करें तो, जहाँ स्वच्छता की स्थिति में सुधार है। वहाँ बच्चों में पोषण का स्तर भी अच्छा है। तथा डायरिया से संबन्धित बिमारियों में भी कमी देखी गयी है। मलिन बस्तियों में रहने वाले बच्चों एवं बड़ों की शौच संबन्धी आदतों में सुधार की आवश्यकता है, जिससे आस-पास गन्दगी न रहे तथा पर्यावरण भी स्वच्छ बना रहे। जिससे डायरिया से संबन्धित बिमारियों में कमी आयेगी। मलिन बस्तियों में सीवर की उचित व्यवस्था न होने के कारण पानी आस-पास के गड्ढों एवं नालियों में जमा रहता है, जिससे मच्छरों व मक्खियों की संख्या में निरंतर वृद्धि होती रहती है। ये मक्खी व मच्छर बहुत सी संक्रामक बिमारियों जैसे- कालरा, डायरिया, डेंगू, टाइफाइड आदि के वाहक होते हैं। जिससे इन बस्तियों में निरंतर बिमारियां फैलती रहती हैं। डायरिया सामान्यत: पांच वर्ष से कम उम्र के बच्चों में अधिक पाया जाता है। जिससे वे कुपोषण के शिकार होते रहते हैं, तथा उनका शारीरिक व मानसिक विकास अवरूद्ध हो जाता है।

स्वच्छता सुधार की प्रगति में कमी : स्वच्छता सुधार के लिए सरकार द्वारा स्वच्छ भारत मिशन 2 अक्टूबर 2014 से प्रारम्भ किया गया। जिसका लक्ष्य 2 अक्टूबर 2019 तक सम्पूर्ण देश को खुले में शौच से मुक्त करने का था। किन्तु वर्तमान में प्रशासनिक अक्षमता, लोगों में जागरूकता की कमी, भ्रष्टाचार के कारण केवल फाइलों में कामों की चर्चा तथा जमीनी स्तर पर काम ना होना जिससे स्वच्छता में काफी धीमी गति से प्रगति हो रही है। महानगरों में जहाँ उच्च या मध्यम वर्ग के लोगों का निवास है, वहाँ साफ-सफाई पर्याप्त मात्रा में दिखाई देती है। वहीं नगरों के पुराने मोहल्लों एवं मलिन बस्तियों में अभी भी साफ-सफाई में कोई विशेष प्रगति नही दिखाई दे रही है। मलिन बस्तियों में जहाँ शौचालय की व्यवस्था है, वहाँ उचित जलापूर्ति के अभाव के कारण लोग शौचालयों की साफ-सफाई नही कर पाते हैं। जिससे वे खुले में शौच करने को मजबूर हैं।

अपर्याप्त सार्वजनिक वित्त : भारत में स्वच्छता को पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय के अर्न्तगत रखा गया है। स्वच्छता के जो लक्ष्य सरकार द्वारा निर्धारित किये गये हैं। उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पर्याप्त धनराशि सरकार द्वारा उपलब्ध नहीं हो पा रही है। इस मंत्रालय के बजट में सरकार द्वारा निरंतर कमी की जा रही है। वर्ष 2017-2018 में 23939 करोड़ का बजट निर्धारित किया गया है। जो सम्पर्ण देश की जनसंख्या को देखते हुए अत्यन्त कम है। स्वच्छता संबन्धी कार्यक्रमों में निजी क्षेत्र के निवेश की मात्रा भी काफी कम है। जिससे इस कार्यक्रम को समय सीमा के अन्दर पूरा करना काफी मुश्किल है।

उपयुक्त तकनीकी समाधान की कमी : मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगों की आय निम्न तथा जनघनत्व बहुत अधिक है। इन बस्तियों में घरों से निकलने वाले मल-जल के उचित प्रबन्धन के लिए तकनीकि का अभाव है। शौचालयों में फ्लश की व्यवस्था न होने के कारण इन शौचालयों की साफ-सफाई नही हो पाती है, तथा प्रत्येक घरों तक जलापूर्ति की उचित व्यवस्था न होने के कारण साफ-सफाई में दिक्कत होती है। यदि प्रत्येक घरों से निकलनें वाले मल-जल को सीवर लाइन से जोड़ दिया जाए, प्रत्येक घरों में सेफ्टी टैंक का निर्माण करा दिया जाए तथा जलापूर्ति की उचित व्यवस्था करा दी जाए तो निश्चित रूप से स्वच्छता सुधार के सकारात्मक प्रभाव दिखेंगें।

मलिन बस्तियों में स्वच्छता सेवाएं उपलब्ध कराने में जटिलता : ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो मलिन बस्तियाँ अधिकांशत: नगरों के उपेक्षित स्थानों में बस गयी हैं। यहाँ आवास बहुत घने पाये जाते हैं। गलियाँ इतनी सँकरी होती हैं, कि हम इन बस्तियों में साफ-सफाई की नई तकनीकों का प्रयोग नही कर पाते हैं। यदि सीवर लाइन इन बस्तियों में डालनी हो तो काफी घरों को हटाना पड़ेगा। जो कि सम्भव नहीं है। इन बस्तियों में आवास बहुत छोटे होते हैं, तथा शौचालय भी बहुत कम स्थानों पर बनाये जाते हैं। शौचालयों में सेफ्टी टैंक आदि बनाना काफी जटिल काम है। जिससे इन बस्तियों में अधिकांशत: शौचालयों की पाइप लाइन खुली नालियों में जोड़ दिये जाते हैं। इसके अलावा इन बस्तियों में मकान मालिकों व किरायेदारों के बीच विवाद की स्थिति भी बनी रहती है। निम्न आय के लोगों का सकेन्द्रण होने के कारण, इनकी आय काफी कम होती है, जिससे ये साफ-सफाई के लिए एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप करते रहते हैं। जिससे साफ-सफाई की समस्या इन क्षेत्रों में बनी रहती है।

मलिन बस्तियों के राजनीतिक निहितार्थ : ये बस्तियाँ अधिकांशत: सरकारी जमीनों, सड़कों के किनारे, रेलवे लाइनों के किनारे, कूड़े-कचरें के ढेर पर बस जाती हैं। ऐसी स्थिति में इन बस्तियों में यदि सुधारात्मक कार्य किया जाए, तो कई प्रशासनिक, न्यायालयी तथा राजनीतिक समस्याएँ आती हैं। राजनीतिक पार्टियाँ अपने वोटर के रूप में तो उनका इस्तेमाल कर लेती हैं। किन्तु जब इन बस्तियों के कायाकल्प की बात आती है, तो कई समस्याएँ बताकर उनसे मुँह मोड़ लेती हैं। इस प्रकार इन बस्तियों में स्वच्छता की समस्याओं का कोई विशेष हल नही निकल पाता है।

स्वच्छता की परिभाषा की स्पष्टता एवं निगरानी की कमी : अभी तक स्वच्छता का कोई एक निश्चित मापदण्ड तैयार नहीं किया जा सका है। जिससे स्वच्छता को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जा सके। स्वच्छता के मानक अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग हैं। कहीं शुद्ध पेयजल के लिए कुछ मानक निर्धारित हैं, तो दूसरी जगह के लिए अलग मानक निर्धारित हैं। स्वच्छता के निगरानी की यदि बात की जाए तो, निगरानी प्राय: उन क्षेत्रों में की जाती है। जहाँ लोग पहले से ही जागरूक हैं। जो बस्तियाँ नियोजित तरीके से बसायी गयी हैं। उनमें स्वच्छता का स्तर बेहतर होता है। वहीं मलिन बस्तियों की निगरानी का मौका प्रशासनिक अधिकारियों को मिलता ही नहीं है, जबकि इन्ही बस्तियों की निगरानी सबसे अधिक होनी चाहिए क्योंकि इन्हीं बस्तियों से उत्पन्न होने वाली संक्रामक बिमारियाँ पूरे शहर को प्रभावित कर सकती हैं।

निष्कर्ष : निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं, कि सर्वप्रथम हमें इन मलिन बस्तियों का सही तरीके से सर्वेक्षण करना चाहिए। इसके पश्चात इन बस्तियों में माँग आधारित स्वच्छता सुविधाएँ उपलब्ध करानी चाहिए। स्वच्छता के जो गैर-स्वास्थ्य लाभ हैं। जैसे- सामाजिक-आर्थिक इनके बारें में लोगों को जागरूक करना चाहिए। इन बस्तियों में स्वच्छता संबन्धी नवाचारों को लागू करने में जो जटिलता आ रही है, उसका तकनीकि के माध्यम से समाधान करने का प्रयास होना चाहिए। इनके यहाँ शिक्षा का स्तर काफी कम है। जिससे इन्हे स्वच्छता संबन्धी कार्यक्रमों एवं योजनाओं के बारे में विशेष

रूप से जागरूक करने के लिए कोई कर्मचारी नियुक्त करना चाहिए। जिससे वे इन बस्तियों में रहने वाले लोगों को जागरूक कर सकें। इस प्रकार यदि हमें स्वच्छता के लक्ष्य को पाना है, तो हमें इन मलिन बस्तियों के कायाकल्प के लिए दृढ़तापूर्वक प्रयास करने होंगें।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. J. B. Isunju and others, Socio-Economic aspects of improved sanitation slums: A review, available at www.sciencedirect.com, 2011.
2. WHO/UNICEF: Report of the third meeting of the advisory group Geneva: WHO/UNICEF; 2004.
3. Word Bank :Reshaping economic geography. Washington: Word Bank; 2009.
4. Peterson C, Mara D, Curtis T. Pro-poor sanitation technologies. Geoforum, 2007.
5. Government of India Ministry of Drinking water and Sanitation, Annual Report 2017-2018,
6. wwww.jalsakti-ddws.gov.in, 2018.
7. WHO. Preamble to the constitution of the world health organization, in: International health conference 19-22 june 1946, New York.
8. Government of India Economic survey- Union Budget 2017-2018,https://www.indiabudget.gov.in/economicsurvey/, volume II, 2018.

****

सैलानी टापू : मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम के आर्थिक आय में सम्भावनाओं का एक नया आयाम

टीना यादव* डॉ. कृष्णकांत शर्मा **

प्रस्तावना – समाज के बदलते मूल्यों के संदर्भ में पर्यटन के प्रकार और प्रगति का निर्धारण होता है। प्राचीन काल से ही मानव किसी न किसी रूप में अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए देशाटन, तीर्थाटन या पर्यटन करता रहा है। इस कार्य में सभी लोग परोक्ष या अपरोक्ष रूप से जुड़कर इसे एक लाभकारी विषय के रूप में देखते हैं। आर्थिक उदारीकरण के इस दौर में योग, अध्यात्म, चिकित्सा, शांति, प्रदूषण आदि को लेकर भी पर्यटन का विस्तार हो रहा है। प्राकृतिक पर्यटन मानव हृदय के अत्यंत निकट होता है, इसी को ध्यान में रखते हुए मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम ने 24 मई 2017 को ओंकारेश्वर के पास सैलानी टापू की स्थापना की। इसी श्रृंखला में शोधार्थी द्वारा मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम को सैलानी टापू से आय विषयक अध्ययन कर शोध आलेख प्रस्तुत किया गया है।

सैलानी टापू – मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम का सैलानी टापू ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग एवं ओंकारेश्वर बाँध के बैकवाटर में विदेशी पर्यटन स्थलों की तर्ज पर विकसित किया गया है।

इस टापू का शुभारंभ पर्यटन निगम के स्थापना दिवस 24 मई 2017 को किया गया। यह टापू 3 एकड़ के क्षेत्र में 15 करोड़ रूपये व्यय कर विकसित किया गया। ओंकारेश्वर बाँध परियोजना में बैकवाटर हमेशा लबालब रहता है। इसे ध्यान में रखते हुए ही निगम ने इसे निर्मित किया है।

होटल में सागौन की लकड़ी से 22 कॉटेज एवं एक सर्वसुविधायुक्त सुइट बनाया गया है। कॉटेज का एक दिन व्यतीत करने का शुल्क रू.5999/- एवं सुइट का शुल्क रू.8990/- है। यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य को और बढ़ाने के लिए प्रत्येक कॉटेज के बाहर एक छोटा बगीचा भी बनाया गया है। यहाँ जलक्रीड़ा हेतु बोटक्लब भी है, एवं सैलानियों के लिए रेस्टोरेंट में स्वादिष्ट व्यंजन 24 घटें उपलब्ध है।

इस टापू का जगंल के बीचों बीच होना इसकी मुख्य विशेषता है। जिसके चलते यहाँ का प्राकृतिक सौन्दर्य अत्यधिक मनभावन लगता है। चारों ओर से पेड़-पौधों से आच्छादित होने से यहाँ मौसम में सदैव ठंडक बनी रहती है। गर्मी के मौसम में भी यहाँ सैलानी दिन में भी खुले मौसम का आनंद प्राप्त कर सकते हैं। गर्मी में मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम के एक ओर प्राकृतिक स्थल हनुवंतिया में पानी नीचे उतर जाता है, किन्तु सैलानी टापू पर सदैव पानी लबालब भरा रहता है, साथ ही यहाँ पर बड़ी संख्या में वन्यजीव भी हैं। सैलानी टापू की नर्मदा नदी से दूरी लगभग 60 किलोमीटर है।

मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम की होटल सैलानी टापू के वर्ष 2017-2018 का आय व्यय विवरण

तालिका क्रमांक – 1

S.	Head Name	2017-18
	Income	
1	Catering Income	2027766.82
2	Cold drink Income	174138
3	Confectionary Income	216166
4	Conferencing Income	60738
5	Cruise Boat Income	37475.64
6	Entry Fees	227604.20
7	Fees From Film Shooting	0
8	Festival Advance Interest	0
9	Grain advance Interest	2384
10	House Rent Deduction	79455
11	Ice-Cream Income	17774.96
12	Lodging Income	96349665
15	Mechanized Boat Income	1060610.95
16	Mineral Water Income	0
17	Misc. Income	400303.68
18	Speed Boat Income	1754756.52
19	Staff Meal Income	85683
20	Water Scooter Income	0
	TOTAL	**15779823.33**
	Expenditure	
1	Annual Repairs	8000
2	Bank Charges	17942
3	Beverages	0
4	Boat Club Misc. Expenses	19454
5	Books & Periodicals	6350
6	Cleaning Material	225022.16
7	Coal & Fuel	203006
8	Cold drink purchase a/c	34847
9	Computer Pheripheral Expenses	0
10	Confectionary Expenses	184684.59
11	Conveyance Expenses	0
12	CPF Employer Contribution	328965
13	Crockery	0
14	Cutlery	0
15	Electric Goods	33530

* शोधार्थी, शासकीय माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** ग्रंथपाल, शासकीय महाविद्यालय, कायथा, जिला उज्जैन (म.प्र.) भारत

16	Electricity Charges	1322174
17	Entertainment Charges	70078
18	Events	0
19	Fcc	17430
20	Fresh Supply	760961.45
21	Furnishing Material	0
22	Generator Expences	54813
23	Hotel Expences	486873.69
24	Hotel Rent	238050
25	House Rent	0
26	Ice-Cream Expenses	84474.41
27	Insurance	60302
28	Insurance of vehicles	23100
29	Labours Charges (wages)	1589979
30	Labour Welfare Contribution	-220
31	Laundary Charges	90000
32	Linen Ecpenditure	17348
33	Liveries to staff	86262
34	Medical Reimbursment	28989
35	Mineral Water Expenses	74140.80
36	Misc. Expences	13848.38
37	Mobile Expenses	0
38	Office Expenses	24557
39	Pay & Allowance (Gross pay by HO)	2997608
40	Petrol & Diesel	0
41	Petrol/oil & Lubricant (POL)	203496.10
42	Petrol/oil & Lubricant (Boats)	699083.38
43	Postage, Telegram & Telephone	515.20
44	Pre-operating Expenses	532694
45	Provision supply	1213884.75
46	Publicity Expenses	0
47	Rate & Taxes (Others)	0
48	Repair & Maintanance (Boats)	40
49	Repair & Maintanance of Building	47815
50	Repair & Maintanance of Garden	36300
51	Repair & Maintanance of others	28088
52	Repair & Maintanance vehicles	10084.96
53	Rounding Off	0
54	Stationary & Printing	4625
55	Telephone Expences (mobile set)	6732
56	Toll Tax of Vehicles	1680
57	Training Expenses	1500
58	Transport Misc. Expences	3500
59	Transportation Charges	10000
60	Travelling Allowance	9795
	TOTAL	**11912402.87**

स्रोत – सैलानी टापू रिसॉर्ट, मध्यप्रदेश पर्यटन विभाग।

आय विवरण – तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सैलानी टापू रिसॉर्ट में सर्वाधिक आय केटरिंग से रू.2027766/–, स्पीड बोट से आय रू.1754756/–, मशीनीकृत बोट से आय रू.1060610/– हुई वहीं क्रूज़ बोट से अपेक्षाकृत कम आय हुई जोकि रू.37475/– रही। इसीप्रकार कई अन्य मदों से भी आय प्राप्त हुई कुल आय रू.15779823/– रही।

व्यय विवरण – उपर्युक्त तालिका से ज्ञात होता है कि सैलानी टापू रिसॉर्ट में निम्नानुसार व्यय हुए। सर्वाधिक राशि पे–अलाउंस पर व्यय की गई जो रू2997608/– थी। लेबर चार्जेस पर रू.1589979/– पेट्रोल/ऑइल ल्युब्रिकेंट (बोट) से रू.699083/– एवं होटल खर्च पर रू.486073/– व्यय हुए। इस प्रकार कई अन्य मदों में भी व्यय दर्शाया गया है, कुल व्यय रू.11912402/– रहा। इस प्रकार कुल आय रू.15779823/– के विरूद्ध व्यय रू.11912402/– रहा जिससे शुद्ध लाभ रू.3867420/– हुआ। जलक्रीड़ा हेतु सैलानी टापू एक उत्कृष्ट एवं उत्तम स्थान है। पहले वर्ष के विश्लेषण से ही ज्ञात होता हैकि सैलानी टापू मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम के लिए आय का एक असीम सम्भावनाओं वाला क्षेत्र सिद्ध हो सकता है। प्रकृति का सौन्दर्य सदैव ही मानव मन को आकर्षित करता है। इसी उद्देश्य से सैलानी टापू की स्थापना की गई थी, जिसमें मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम सफल भी रहा। यहाँ से निगम की आर्थिक आय में निरंतर योगदान प्राप्त हुआ है। सैलानी टापू के विस्तारीकरण, सौन्दर्यीकरण, नवीनीकरण का प्रयास निगम निरंतर कर रहा है। जिससे आगामी वर्षों में यहाँ से होने वाली आय में भी वृद्धि दृष्टिगोचर होगी। आगामी समय में यहाँ फिल्म की शूटिंग से एवं वॉटर स्कूटर तथा अन्य साधनों के द्वारा आय में और वृद्धि की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सैलानी टापू रिसॉर्ट, मध्यप्रदेश पर्यटन विभाग।
2. विभागीय प्रशासकीय प्रतिवेदन, मध्यप्रदेश शासन, पर्यटन विभाग
3. वर्षिक प्रतिवेदन मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम, भोपाल।
4. वर्षिक रिर्पोट, पर्यटन मंत्रालय, भारत सरकार।
5. http://www.mptourism.in
6. sailaniresort@mp.gov.in
7. http://www.mptourism.com
8. www.tourism.gov.in

****

उज्जैन तहसील में ग्रामीण बस्तियों की प्रमुख समस्याओं का भौगोलिक अध्ययन

रविराज सिंह गोरास्या*

शोध सारांश – ग्रामीण अधिवासों के वितरण एवं व्यवस्था का निर्धारण उस क्षेत्र के प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक परिवेश के जटिल प्रभावों द्वारा होता है। प्राकृतिक वातावरण के तत्व यथा- प्रादेशिक स्थिति, उच्चावच, भू-गर्भिक संरचना, अपवाह तंत्र, जलवायु, मिट्टी अधिक महत्वपूर्ण है। जिनके उपयुक्त होने पर ही ग्रामीण अधिवास विकसित होते हैं। सांस्कृतिक तत्वों से मार्ग एवं परिवहन के साधन, भूमि उपयोग, बाजार एवं सेवा केन्द्रों की स्थिति धार्मिक तथा कृषक समाज की सामूहिक प्रवृत्तियां, वैज्ञानिक एवं तकनीकि ज्ञान मुख्य है।

किसी क्षेत्र का इतिहास वहां के निवासियों के राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक जीवन के विकास एवं परिवर्तन का लेखा-जोखा है। सांस्कृतिक भू-दृश्य के प्रतीक के रूप में अधिवास मानव का सृजनात्मक प्रवृत्ति के मुख्य तत्व हैं। जिनका वितरण, प्रकार एवं प्रतिरूप ऐतिहासिक तथ्यों से पूर्णत: प्रभावित होता है। ग्रामीण अधिवास मुख्यत: प्राथमिक कार्यों में संलग्न कृषकों से सम्बन्धित होते हैं। ग्रामीण अधिवास मानव द्वारा भू-अधिग्रहण की प्रक्रिया, व्यवस्था तथा समूहन को परिभाषित करता है। ग्रामीण अधिवास का उद्‌भव एक सतत् प्रक्रिया है। जो पर्यावरण के प्रत्येक प्रतिबन्धक एवं आकर्षण शक्तियों द्वारा नियन्त्रित होता है। अर्थात प्राकृतिक वातावरण के अवयवों वनस्पतियों एवं जीव-जन्तुओं के विकासात्मक प्रक्रिया के अनुरूप मानव अधिवास का भी विकास प्रक्रियात्मक रूप से सम्पन्न होता है।

शब्द कुंजी – प्रादेशिक स्थिति, उच्चावच, भू-गर्भिक संरचना, अपवाह तंत्र, जलवायु, मिट्टी।

प्रस्तावना – ग्रामीण समुदाय कई प्रकार से नगरीय समुदाय से भिन्न होता है। ग्रामवासियों तथा ग्रामों का प्रकृति से प्रत्यक्ष तथा निकट सम्पर्क पाया जाता है। वहां मनुष्य और प्रकृति के मध्य अन्त:क्रिया का स्वरूप अधिक प्रत्यक्ष, निकट और घनिष्ठ होता है। कृषि, पशुपालन आदि कोई प्राथमिक क्रिया ग्रामीण अर्थव्यवस्था की आधार होती है। विश्व के प्राय: सभी देशों में ग्रामीण समाज एवं अर्थव्यवस्था नगर की तुलना में पिछड़ी हुई होती है। भारत जैसे- विकासशील देश में अनेक प्रकार की ग्रामीण समस्याएं पाई जाती हैं। जो नगरीय समस्याओं से भिन्न हैं। ग्रामीण समस्याएं उन देशों में और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। जहां देश की अधिकांश जनसंख्या ग्रामों में निवास करती है। और कृषि, पशुपालन, आखेट आदि से जीविका प्राप्त करती है। ग्रामीण समस्याएं वहां अधिक हैं जो आर्थिक दृष्टि से विपन्न है। और जहां अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण और निर्धन, अशिक्षित और रूढ़िवादी है। विकसित देशों में जहां अधिकांश जनसंख्या नगरों में रहती है। और अर्थव्यवस्था उद्योग एवं व्यापार प्रधान है। वहां ग्रामीण समस्याएं जटिल नहीं हैं। किन्तु विकासशील देशों में आर्थिक, तकनीकि, सामाजिक, सांस्कृतिक आदि सभी क्षेत्रों में पिछड़ेपन के कारण उनके प्रकार की समस्याएं इतनी विकराल और जटिल रूप में पाई जाती हैं। कि उनका समाधान करना देश के सम्मुख चुनौती बन जाता है।

अर्थ : मानव द्वारा निर्मित गृहों का संगठित समूह अधिवास कहलाता है। ग्रामीण अधिवासो में मुख्यत: किसान निवास करते हैं। जहां कृषक अपने जीविकोपार्जन के लिए विशेष रूप से कृषि अथवा उससे सम्बन्धित कार्यों में लगा रहता है। इन सभी कृषि उत्पादों का मुख्य आधार कृषक का फार्म होता है। इन फार्मो से किसान का अत्यन्त निकट का सम्बन्ध होता है। इस प्रकार गांव एक सुस्पष्ट पृथक भौगोलिक ईकाई है। जिसका अपना व्यक्तिगत जीवन और व्यक्तित्व होता है। जो भू-दृश्य का मुख्य अंग है। प्राय: प्रत्येक मैदानी गांव अपनी संरचना में केन्द्रित होते हैं। जिनके चारों ओर अनेक प्रकार के भूमि उपयोग प्रतिरूप देखने को मिलते हैं।

परिभाषा : आर. एल. सिंह के अनुसार 'ग्रामीण अधिवास भूगोल में ग्रामीण अधिवासों का अध्ययन दो आधारों में किया जाता है। एक तो भूमि को अधिग्रहित करने की प्रक्रिया में जुटाई गई सुविधाएं और दूसरे इन सब सुविधाओं का समूहीकरण।'

शोध अध्ययन का उद्देश्य : उज्जैन तहसील ग्रामीण बस्तियों से घिरी हुई तहसील है। जिनमें अनेक गांव आते हैं। जिनकी अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण है। तथा गांव की अनेक सामाजिक, आर्थिक, समस्याओं से ग्रस्त है। इनमें निर्धनता, बेरोजगारी, अशिक्षा, यातायात साधनों एवं मार्गो का अभाव, स्वास्थ्य, मनोरंजन आदि सुविधाओं की कमी तथा सामाजिक कुरीतियां प्रमुख हैं। उपरोक्त सभी समस्याओं का सारगर्भित अध्ययन प्रस्तुत करना है।

विधितंत्र : प्रस्तुत अध्ययन द्वितीयक आंकडो पर आधारित है। यह आंकड़े तहसील कार्यालय, आवास कार्यालय, सांख्यिकीय कार्यालय, शोध पत्र, शोध ग्रन्थ आदि के माध्यम से संकलित कर अध्ययन किया गया है।

उज्जैन तहसील का सामान्य परिचय : उज्जैन तहसील मध्यप्रदेश की सात तहसीलों में सबसे प्रमुख है। जो जिला मुख्यालय एवं सम्भाग मुख्यालय भी है। तहसील का विस्तार 23°00' उत्तरी अक्षांश से 23°17'30'' उत्तरी अक्षांश तथा 75°37' पूर्वी देशान्तर से 76°00' देशान्तरों के मध्य पाया जाता है। इसका क्षेत्रफल 782.06 वर्ग किलोमीटर जनसंख्या 157351 (2011 जनगणना के अनुसार), जनसंख्या घनत्व 201 व्यक्ति प्रति वर्ग

* शोधार्थी, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

किलोमीटर, लिंगानुपात 966, साक्षरता 69.38 प्रशित, दशकीय वृद्धि दर 18.10 प्रतिशत है।

उज्जैन तहसील की समस्याएं : योजना आयोग के अनुसार 1993-94 में लगभग 37.3 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे जीवन निर्वाह कर रही थी। वर्ष 1973-74 यह प्रतिशत 56.4 था जो नियोजन काल में क्रमशः घट रहा है। भारत में व्यापक निर्धनता के लिए अनेक आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक कारक उत्तरदायी हैं। जिनमें अपर्याप्त कृषि उत्पादन, बढ़ती जनसंख्या, बेरोजगारी, भूमि का असमान वितरण, अशिक्षा, अज्ञान, अपव्यय प्रमुख है। निर्धनता के कारण देश की एक तिहाई से अधिक जनसंख्या की भरपेट भोजन, रहने के आश्रय (आवास), पहनने को वस्त्र जैसी आवश्यकताओं की पूर्ति नही हो पाती है। जिसके कारण वह शारीरिक तथा मानसिक रूप से सार्थक कार्यो को करने योग्य नही रह पाती है। और निम्न जीवन स्तर व्यतीत करने के लिए विवश होती है। ग्रामीण बस्तियों के भूमिहीन खेतिहर श्रमिक इस श्रेणी में आते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में गरीबी उन्मूलन के लिए महत्वपूर्ण प्रयास किए गए हैं। और प्रत्येक योजना में भारी धन का उपयोग किया गया है, जिसके परिणामस्वरूप ग्रामीण जनता के जीवन स्तर में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। किन्तु व्यापक अशिक्षा, अज्ञान, अंधविश्वास तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या आदि के कारण गरीबी उन्मूलन के प्रयास उतने सफल नही हो पा रहें हैं। जितने होने चाहिए।

1. आवासीय समस्या : उज्जैन तहसील के ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक निर्धनता और पिछड़ेपन के कारण आवासीय गृहों की समस्या भी चिंतनीय है। यद्यपि ग्रामीण अधिवासीय समस्याएं बिल्कुल एक सी नहीं हैं। किन्तु आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए इस क्षेत्र अधिकांश लोगों के पास रहने के लिए या तो उपयुक्त घर नही है। ग्रामों में भूमिहीन खेतिहर, मजदूरों तथा अन्य अल्प आय या आय विहीन लोग आर्थिक विपन्नता के कारण अपना निजी घर बनाने में असमर्थ हैं। कुछ लोग खाली पड़ी भूमियों पर या काम के बदले भू-स्वामियों से प्राप्त भूमियों पर अस्थाई झोपड़िया बनाकर जीवन निर्वाहन करते हैं। प्रधानमंत्री आवास योजना के माध्यम से कुछ सुधार देखने को मिला है।

2. स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं : उज्जैन तहसील की ग्रामीण बस्तियों के निवासियों को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं नही मिल पाती हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में डॉक्टर की कमी, दवाओं की आपूर्ति समय से नही होती है। जिस कारण अधिकांश ग्रामीण लोग तहसील मुख्यालय से चिकित्सीय सुविधाएं प्राप्त करते हैं। तहसील मुख्यालय में भी स्टाफ की कमी है। जिसके कारण सभी को समुचित चिकित्सीय सुविधाएं नही मिल पाती हैं। इसके अतिरिक्त लोगों के पास पैसों का अभाव होने के कारण जल्दी इलाज नही करवाते हैं।

3. आधारभूत सुविधाओं का अभाव : ग्रामीण बस्तियों में जल सम्बन्धी, स्वच्छता, पक्की सड़के, पक्के मकान, बिजली, स्वच्छ वातावरण की कमी है। बस्तियों में कच्चे मार्गों एवं गलियों के कारण साफ-सफाई की व्यवस्था सही ढंग से नही हो पाती है। लोगों के जीवन स्तर में सुधार के लिए आधारभूत संरचनाओं का विकास किया जाना चाहिए।

4. घूसखोरी : उज्जैन की ग्रामीण बस्तियों के निवासियों को सरकारी सुविधाएं दिलाने के नाम पर स्थानीय स्तर सरपंच एवं सचिव घूस लेते हैं। यदि लोग इसका विरोध करते हैं। तो उनको सुविधाओं से वंचित कर दिया जाता है।

5. शैक्षणिक सुविधाओं का अभाव : यहां की ग्रामीण बस्तियों के स्कूलों में आधारभूत शैक्षिक सुविधाओं की कमी है। शिक्षक समय पर स्कूलों में नही आते हैं। मिड-डे मील योजना के तहत बच्चों को खाना उचित गुणवत्तापूर्ण नही दिया जाता है। कभी- कभी भोजन नही भी बनाया जाता है। यहां के अधिकांश स्कूलों में स्वच्छ पानी की व्यवस्था का अभाव देखा गया है।

6. जागरूकता की कमी : यहां के ग्रामीण लोगों में जागरूकता की कमी देखी गई है। लोगों को सरकारी योजनाओं के बारें में जानकारी न होने के कारण उन सेवाओं का लाभ नहीं ले पाते हैं। क्योंकि सरकारी योजनाओं के बारें में जानकारी प्राप्त करने का कोई तंत्र नही है।

7. झगड़ा करने की प्रवृत्ति : ग्रामीण बस्तियों के लोगों में छोटी-छोटी बातों को लेकर झगड़ा करने की प्रवृत्ति होती है। ये झगड़े मार्गों, घर बनाना, साफ-सफाई, नलकूप, बच्चों को झगड़े, आपसी मनमुटाव आदि को लेकर झगड़े होना आम बात है।

सुझाव :

1. ग्रामीण बस्तियों में साफ-सफाई की नियमित व्यवस्था करने के लिए सफाईकर्मियों की नियुक्ति की जानी चाहिए।
2. ग्रामीण बस्तियों में जागरूकता अभियान के तहत् शिक्षा का प्रचार-प्रसार करना चाहिए, जिससे लोग शिक्षित होकर अपना आर्थिक विकास कर सके।
3. ग्रामीण बस्तियों में स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं की उपलब्धता सुनिश्चित किया जाना चाहिए। ग्रामीण लोगों को बिमारियों के प्रति जागरूक करना चाहिए, जिससे उनका इलाज में खर्च होने वाले पैसों की अन्य आवश्यक कार्यो में उपयोग कर सके।
4. ग्रामीण बस्तियों में रोजगारमूलक शिक्षा को बढ़ावा देना चाहिए।
5. ग्रामीण स्कूलों में खेल-कूद के उपकरणों एवं शिक्षकों की व्यवस्था करनी चाहिए, जिससे ग्रामीण बच्चे खेल-कूद में अपना भविष्य बना सके।
6. ग्रामीण बस्तियों पानी की समस्या के लिए नलकूप की व्यवस्था करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त नल-जल योजना को लागू करने चाहिए। इसके तहत् प्रत्येक 100 मी. पर सरकारी नलकूपों की व्यवस्था करनी चाहिए।
7. कृषि कार्यो के लिए सरकारी बोरवेल की योजना का क्रियान्वयन करना चाहिए। जिससे गरीब कृषक कृषि फसलों का सिंचाई के माध्यम से उत्पादन बढ़ा सके।
8. अकृष्य भूमि पर ग्रामीण बस्तियों नियोजित तरीके से बसाना चाहिए, जिससे कृषि कार्यो वाली भूमि को बचाया जा सके।

निष्कर्ष : उज्जैन तहसील की ग्रामीण बस्तियों में शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात मार्ग, आधारभूत संरचनाओं का निर्माण आदि के विकास की आवश्यकता है। इनके विकास के माध्यम से ग्रामीण जीवन स्तर में सुधार किया जा सकता है। ग्रामीण बस्तियों जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की कमी को आधारभूत संरचनाओं के विकास के माध्यम से दूर किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ. मौर्य, एस.डी., (2013), अधिवास भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
2. राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी समाधान (2008)।
3. तिवारी, शारदा, नगरीय समाजशास्त्र।

****

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि में परंपरागत शिक्षण के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. विजय पाराशर *

प्रस्तावना – वर्तमान समय में हमारे भारत में अनेक राष्ट्रीय आर्थिक राजनीतिक सामाजिक समस्या है। जिसका समाधान शिक्षा के माध्यम से हो सकता है जिस देश में शिक्षित व्यक्ति की संख्या अधिक है उस देश में विकास की गति अन्य दूसरे देशों की अपेक्षाकृत अधिक है इसलिए यह अत्यंत आवश्यक हो गया है कि इस संभव प्रयास कर देश के प्रत्येक नागरिक को शिक्षा कर शिक्षा प्रदान कर उन्हें शिक्षित किया जाए शिक्षण प्रक्रिया में सहयोग प्रदान करने वाले विभिन्न साधनों में शिक्षक का स्थान सर्वोच्च है परंतु आज के इस भौतिकवादी युग में ऐसे अनेक कारण हैं जिससे शिक्षा का स्तर दिन पर दिन गिरता जा रहा है राष्ट्रीय शिक्षा नीति के दस्तावेज में यह कहा गया है कि कोई भी राष्ट्र अपने अध्यापकों के स्तर से ऊपर नहीं उठ सकता सरकार और समाज को ऐसी परिस्थितियां बनानी चाहिए जिनसे अध्यापकों का निर्माण और सृजन और बढ़ने की प्रेरणा मिले अध्यापकों को इस बात की स्वतंत्रता होनी चाहिए कि वह नए प्रयोग कर सकें और संप्रेषण की उपयुक्त विधियां और अपने समुदाय की समस्याओं और क्षमताओं के अनुरूप नए उपाय निकाल सकें।

इस दृष्टि को ध्यान में रखते हुए स्किनर महोदय ने शिक्षण में नई मशीनों का प्रादुर्भाव किया है जिससे राष्ट्र अपनी आकांक्षाओं की प्राप्ति में सफल हो वर्तमान समय में शिक्षा पर सम्यक विचार किया जाए तो शिक्षा के तीन ध्रुवों में से अध्यापक एक महत्वपूर्ण ध्रुव है लेकिन शिक्षक का चुनाव सही ढंग से हुआ तो ठीक है अन्यथा शिक्षण प्रक्रिया लुंज पुंज होकर समाप्त हो जाएगी।

हमारे भारत के मूल संविधान में यह वर्णित है कि देश के सभी बच्चे शिक्षित हो और 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चों को निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार प्राप्त हो इसके साथ ही पाठ्यक्रम सुधार और उपयोगी शिक्षा विधियों पर भी जोर दिया जा रहा है लेकिन फिर भी हम भारत के सभी राज्यों में शिक्षा के इस लक्ष्य को पूरा नहीं कर पा रहे हैं।

उपरोक्त सभी समस्याओं को ध्यान में रखकर शिक्षाविदों ने ऐसी विधि का अविष्कार किया जिसमें शिक्षक छात्र की सहभागिता से अपनी योग्य शक्ति के अनुसार अधिगम उद्देश्यों तक पहुंचा जा सके।

परंपरागत शिक्षण – परंपरागत शिक्षण में शिक्षक का स्थान प्रधान माना जाता है और छात्र का स्थान गौण होता है छात्रों की सभी क्रियाओं को शिक्षण दिशा प्रदान करता है कि वे क्या सोचे, क्या करे तथा कैसे करें, शिक्षण के समय छात्र केवल एक तोता का कार्य करता है और शिक्षक क्रियाशील रहता है। परंपरागत शिक्षण एवं स्मृति स्तर तक सीमित रहती है तथा उस का मुख्य उद्देश्य बालक को सिखाना होता है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. उच्च माध्यमिक स्तर के बालक बालिकाओं के शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव का अध्ययन करना।

चंद्रकला (1976) द्वारा मेरठ विश्वविद्यालय में हाई स्कूल कक्षा में संस्कृत व्याकरण शिक्षण के विभिन्न विधियों का प्रायोगिक अध्ययन किया गया अध्ययन का उद्देश्य सामान्य और निम्न शैक्षणिक उपलब्धि संस्कृत व्याकरण प्रोग्राम के प्रकार्यात्मक प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना था तीन वैकल्पिक उपचार जैसे अभिक्रमित अनुदेशन व्याख्यान विधि और परंपरागत विधि का प्रयोग उपलब्धि के तीनों स्तर पर किया गया सिंह (1977) ने स्वत: अनुदेशन सामग्री का निर्माण हाई स्कूल स्तर पर जीवन जीव विज्ञान में किया एवं इसकी परंपरागत शिक्षण विधि से तुलना की जिस विद्यार्थियों जिन विद्यार्थियों को स्वच्छता अनुदेशन सामग्री से पढ़ाया गया। उनकी उपलब्धि 8 7.5% थी यह अनुक्रम अभिक्रमित अभिक्रम की प्रभाविता को प्रकट करता है आर. नाथन (2007) ने उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में परंपरागत शिक्षण की तुलना में अभिक्रमित अनुदेशन को अधिक सफल पायास्किन्नर (1958) अपने प्रयोगों को अभिक्रमित अनुदेशन तथा परंपरागत शिक्षण की प्रभाविता का अध्ययन करके यह निष्कर्ष प्राप्त किया कि अभिक्रमित अनुदेशन परंपरागत शिक्षण की तुलना में श्रेष्ठ है क्योंकि यह वैयक्तिक भिन्नता को विभिन्नता को ध्यान में रखने के साथ-साथ जटिल अधिगम परिस्थिति में तात्कालिक प्रबलन प्रदान करके उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों का निराकरण करती है स्मिथ (1962) में 128 छात्रों पर अभिक्रमित अनुदेशन और परंपरागत विधि की तुलना दोनों समूहों के अंतिम परीक्षण में कोई अंतर नहीं पाया गया परंतु अभिक्रमित अनुदेशन से सीखने में 30 मिनट का समय लगा वे हसन (1962) ने अपने अध्ययन में परंपरागत विधि से पढ़ाए गए समूह तथा अभिक्रमित अनुदेशन से पढ़ाए गए समूह में कोई अंतर नहीं पाया परंतु अभिक्रमित अनुदेशन द्वारा शिक्षण से गणित कौशल प्राप्त करने में कम समय लगा जो शिक्षण परंपरागत विधि से 1 वर्ष का समय लेता था वह 14 सप्ताह में ही पूरा कर लिया गया।

उपरोक्त शोध अध्ययन से स्पष्ट होता है कि उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की परंपरा शिक्षण के प्रभाव के संदर्भ में अध्ययन किए गए परंतु शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के संदर्भ में अध्ययन नहीं किया गया इसलिए शोधकर्ताओं ने शोध का विषय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव का

* वनस्थली विद्यापीठ, निवाई (राज.) भारत

अध्ययन रखा गया है।

शोध अध्ययन की परिकल्पना :

1. उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव का सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।
2. उच्च माध्यमिक स्तर के बालक बालिकाओं के शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव का सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

शोध विधि– इस शोध अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन में मध्यप्रदेश के हरदा जिले के सरस्वती ज्ञान मंदिर उच्च माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत कक्षा नवमी के विद्यार्थियों का चयन किया गया है।

प्रदत्तो के स्रोत – प्रस्तुत समस्या के लिए सदस्यों के स्त्रोत प्राथमिक है शोध अध्ययन हेतु हरदा जिले के सरस्वती ज्ञान मंदिर उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों को प्रदत्ता के रूप में लिया गया है।

शोध प्रक्रिया :

1. शोध अध्ययन हेतु सरस्वती ज्ञान विद्या मंदिर उच्च माध्यमिक विद्यालय का चयन किया गया है।
2. शोध अध्ययन हेतु विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के आंकड़ों को एकत्रित किया गया।

अध्ययन की परिसीमाएं :

1. प्रस्तुत अध्ययन मध्य प्रदेश के हरदा जिले में स्थित सरस्वती ज्ञान मंदिर उच्च माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों पर किया गया है।
2. प्रस्तुत अध्ययन में उच्च माध्यमिक विद्यालय के कक्षा 9वी में अध्ययन कर रहे विद्यार्थियों के परिणामों को लिया गया है।

तालिका संख्या 1 : उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के संपूर्ण प्राप्तांको के मध्यमान ,मानक विचलन, मानक त्रुटि की सार्थकता

स्तर	कुल विद्यार्थी	स्तरानुसार विद्यार्थी	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि
निम्न		34	342.06	28.91	4.96
औसत	80	33	455.06	34.41	5.99
उच्च		13	513.78	298.99	10

तालिका संख्या 1 में उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव की सार्थकता की गणना की गई गणना अनुसार विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव में कुल 8 0 में से 34 विद्यार्थियों के प्राप्तांक निम्न स्तर के पाए गए जिनका मध्यमान का मान 342.06 है तथा 33 विद्यार्थियों के प्राप्तांक औसत स्तर के पाए गए जिनका मध्यमान और और 455 . 0 6 है तथा 13 विद्यार्थियों के प्राप्तांक उच्च स्तर के पाए गए जिनका मध्यमान 51 3.78 है प्राप्त आंकड़ों की गणना के आधार पर कहा जा सकता है कि उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के मध्यमान, मानक विचलन, मानक त्रुटि की सार्थकता सबसे अधिक उच्च स्तर की पाई गई है।

तालिका संख्या 2 : उच्च माध्यमिक स्तर के बालक बालिकाओं के शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव के संपूर्ण प्राप्तांको मध्यमान ,मानक विचलन, मानक त्रुटि की सार्थकता –

क्र.	परम्परागत शिक्षण	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	स्वतंत्रता	टी–मान
1	बालक	41	408.02	101.64	15.87	78	0.255
2	बलिकाऐं	39	413.15	76.02	12.17		

तालिका संख्या 2 में उच्च माध्यमिक स्तर के बालक बालिकाओं के शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव की सार्थकता की गणना की गई गणना अनुसार बालक बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान का मान 408. 02 तथा 413.15 है मानक विचलन का मान 101 .64 तथा 76.02 है एवं टी परीक्षण का अवकलित इस मान 0.255 है जो कि 0.05 विश्वास के स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक तालिका मान से अधिक है अतः परिकल्पना उच्च माध्यमिक स्तर के बालक बालिकाओं के शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव की सार्थकता में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता अस्वीकृत होती है।

शोध निष्कर्ष एवं विवेचना – उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव का अध्ययन इस शोध में किया गया जिसमें परंपरागत शिक्षण के कुल 80 विद्यार्थियों को लिया गया तथा आंकड़े एकत्रित कर उनकी गणना की गई जिससे यह निष्कर्ष मिला उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के मध्यमान, मानक विचलन ,मानक त्रुटि की सार्थकता सबसे अधिक उच्च स्तर की पाई गई है उच्च माध्यमिक स्तर के बालक बालिकाओं के शैक्षिक उपलब्धि का परंपरागत शिक्षण के प्रभाव की सार्थकता में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

भावी शोध हेतु सुझाव – प्रस्तुत शोध का भविष्य में निम्न प्रकार से विस्तार कर सकते हैं –

1. शोध को उच्च माध्यमिक स्तर के अतिरिक्त विश्वविद्यालय स्तर पर भी कार्य किया जा सकता है।
2. मध्य प्रदेश के अलावा अन्य राज्यों में भी शोध किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पांडे, कल्पलता (2007) शिक्षा मनोविज्ञान ,टाटा मैकग्रा हील पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
2. माथुर एस. एस. 2001 एजुकेशन साइकोलॉजी विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
3. कपिल एच.के. (1995) सांख्यिकी के मूल तत्व विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
4. राय, पारसनाथ पारक नाथ (2006) अनुसंधान परिचय द्वादशम संस्करण लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा।

****

New Liberalism Policy of India - A Historical Study

Sachin Mujumdar*

Introduction - The (NEP) neo-liberalism Policy is not just a government policy, and it is neither entirely new nor merely monitory. Earlier it's introduced in 1991, it basically elaborates the demands of the elite standard peoples, and more precisely, the demands of hegemonic fractions of the local and international capitalist class at a particular stage in the development of Indian and global capitalism. The NEP seeks to create conditions in which domestic and foreign capitalist can invest money to make lot of money, not only by using marginal natural assets like land, water, forests and minerals, but also by using assumption and other non-productive resources and by exploiting cheap skilled and unskilled labor. An important goal is also to attract foreign capital and strengthen the position of Indian business in the fight for export markets and to obtain foreign technology and capital. The NEP model pursues the goal of transforming India into a world power by making it an office, a laboratory (for pharmaceutical and biotech companies, for example), and a factory for international capital, based on (relatively) cheap labor, both skilled and unskilled. To achieve this goal, the big business makes specific demands on the state, including: deregulation of private businesses; privatization of government businesses; trade liberalization; granting of permission to foreign capital to own businesses in India; enactment of tax cuts and other incentives for businesses; reduction or complete withdrawal of government benefits for the poor; and complete freedom to hire and fire labor.

Liberalism Word Comes - From the Latin word **Liberalis** , it means "Free Person" or who wants to be free. Liberalism is not a clear ideology, it has various meanings or we can say it is very broad ideology; it depends on person to person that in which sense he wants to use it. According to Oxford Concise Dictionary Liberalism means "The belief that it is the aim of politics to preserve individual's right and to maximize freedom of choice. This idea was born in England during the middle of seventeenth century.[1] This word had been used up to 1769 for pre-political ways but latter it was used in other terms. The Scottish historian William Robertson and his friend Adam smith used this word 'Liberal" in a political way. Adam smith used to say "If all nations were to follow the liberal system of free exportation and free importation then they would be like one great empire and famines would be prevented."

Growth Of The Liberalism - Before the ideology of Classical Liberalism, in that era (from 17th century to 18th century) idea of capitalism was not functioning there and at that time (Medieval European Society) State and Market could be described in these words **DESPOTIC[2]** &**TYRANNICAL[3]**, because in that time or era State and Market was controlled by selected persons or individual and they used to control it according to their personal interest. King and Church was the controller of state and Market. Although this class was only the 4% of the Society but despite this ratio these are the Supreme of the Society and Church, in this Category we can add Landed Aristocracy also. In the very Bottom of this Society peasants and Poor persons were doing their work for the Upper Class of Society. Upper class didn't want to change in this Hierarchy because of their Convenience and Supremacy'. Hence Liberalism started from the Bottom class of the Medieval European Society.

American Revolution started in 1600 for the freedom against the Britain. In that time 13 British colonies were established in North America near the France colonies. France and Britain both were wanted to their possession on these colonies and for this war was continued between them up to 07 years. After getting the victory in that war the policy of Britain had been changed towards the colonies, they wanted to impose some tax on those colonies for the defense expenditure. In 1775 The American Revolution was in its peak hence in 1976 all 13 colonies proclaimed itself "Independent" by Declaration of Independence. Because of Rectification of Independence on 04 July 1776 Americans celebrate Independence Day on this Date.

International Scenario For New Liberalization - After the World War-2 every nation had the vision of the economic development and they added it as a main concern from their nation's Priority list. All nations were interested to increase their GNP per capita by adopting a high level Programmes which could assumed the maximum possible growth rates for their desired economic development. On Primary stage all policy makers and economist could not understand the factor which were affecting the economic development ,even they could not relate that economic development may effected by some social problems like

*Research Scholar, Jagran Lake city University, Bhopal (M.P.) INDIA

Poverty , unemployment and inequality.

With the comparison of developed countries some developing countries made satisfactory growth towards their economic development but in spite of this development it was not a development due to some basic problems which has mentioned in previous Para like ; Poverty, unemployment and inequality. Poverty problems could not erased in developing countries and the same case had the unemployment and inequality.

To know the meaning of this ideology first we should know the system of **International trade** system . Whenever any country deals with another country in the terms of business, either they have to selling some goods or buying some goods it's called the International Trade and there are some certain words used in this Trade as a **Expor**t and **Import.**

Balance Of Trade - It may be understood Whenever one country sell some goods or service to another country and gets money by this selling then it's called Export and if that company buying some goods or service from another country and gives money for that goods or service then it's called Import.

If the Total export is more than Total import then it is a Trade Surplus but if it is a less than Total import then it is a situation of Total Deficit. In Trade Surplus a country has a less expenditure with high income and it is a gainful condition for that country but in Trade Deficit a country has a high expenditure with less income and it is a condition of economic loss for that company.

(GATT) General Agreement on Trade and Tariff. According to the GATT rules Agriculture and Textiles were excluded from it and they were not regulating by GATT. This was not an Organization it was an Agreement.

In Afterwards years situation of international trades were changing rapidly because GATT was dealing with only Tariff barriers but by the 1970s Non-Tariff Barriers were also increasing and by the 1980s one new comparative advance came in Trades in the form of Services. Developing countries were also adopting the **Export-Oriented Growth**. In the light of all these demands of the time, international community was thinking about necessity of new system for International Trade System.

Emergence Of WTO - With the concern of 128 countries in 1994 one agreement was made with the sign of all countries which is called **Marrakesh Agreement.** By this Marrakesh Agreement **WTO** came intoexistence on o1 of January 1995.

Developing countries wanted to include Trade in agriculture and textiles under the WTO and Developed countries wanted to include of service and intellectual property right under the WTO, hence both countries were agreed with this bargain and WTO became first International Trade Organization. In the view of intellectual persons, it was the "Grand Bargain".

World Trade Organization settled some Fundamental Principles for regulate the world Trade system in a better way**. Reciprocity, Most Favored Nation and National Treatment** was imposed on every country.

Cause Of Underdevelopment - Underdeveloped countries are in a middle stage they have something like developed countries, the basic infrastructure, technology, but whole modern amenities and richness are not available for every citizen because of inequality of money and prosperity, some people are poor and some are very rich and some has a middle class richness.

Underdevelopment is a big problem for those countries who wants to adopt economic liberalism because it is true without economical growth and development one nation or country cannot compete with the international market and trade.

India and Economic Liberalism - After independence India had to develop its economic growth as well as economic development, for trying to get this aim one concept from Russia was taken by India towards the economic reforms in the form of "The Five Year Plan". By this planning of five year from 1951 to 1991 India made 07 times five year plan, the last five year plan's period was working from 1985 to 1990.

All this five years plan had different target and results but in 1991, due to excessive import rate cooperatively export Indian economy was going very down and India had a problem of foreign exchange which was left only for 15 days, with this reasons and all other reasons Indian government decided to adopt SAP (Standard Adjustment Program) and by adopting this policy Indian government accepted 03 conditions of that Program which were promoting the economic liberalism.

Those three conditions were follows;

1. Deregulate the economy.
2. Reduce Public Spending.
3. Adopt free market policy for Privatization & Globalization.

Finally adopting these 03 policies Indian economy were changing and for this new changes all Trade sector was also interested and trying to seek opportunities for them. What was these LPG and which type of compulsion derived these decision, all questions were demanding the appropriate answer to know this LPG as mentioned below:

1. **Liberalization**
2. **Privatization**
3. **Globalization**

After adopting these policies India opened its gate for International market and Indian company were allowed to do business with international community. One major policy of globalization was the "**Outsourcing"** , it means any company whether it is an Indian or foreigner can hire any other country's service for their work and it can be done by telephonic or data transfer or by office work.

Conclusion - BY Adopting this LPG Indian government had become a part of International trade System and India had also opened its gate for International investment, Trade and Foreign currency. From 1991 Indian economy was

changed and its consequences were coming in next two decades, it was also a separation from old economy policy and time to come out from those policies which were not working with the rapidly changing world.

References :-

1. www.politicalsciencenotes.comliberalism: introduction, origin,growth and elements.
2. A person, specially a ruler, who has unlimited power over other people, and often uses it unfairly and cruelly.
3. Using showing or relating to the unfair and cruel use of power over other people in a country, group, etc.
4. Commission constituted in 1950 by Indian government for economical and individual growth.
5. Development of Industries for growth and better infra-structure.

****

ऋतुकालीन लोकगीत कजरी की 'अखाड़ा परम्परा' (पूर्वी उत्तर प्रदेश की कजरी के सन्दर्भ में)

लीना प्रकाश शाक्या* डॉ. नीतू गुप्ता **

प्रस्तावना – लोक संगीत वह संगीत है, जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने मनोभावों की अभिव्यक्ति गाकर, बजाकर व नृत्य कर व्यक्त करता है। लोक संगीत दो शब्दों का समायोजन है। लोक + गीत – जिसका अर्थ सहजता से लगाया जा सकता है, जो सरल, सहज, सुगम बन्धन रहित और परिवर्तनशील है, वही लोक संगीत है, क्योंकि लोक गीत का आधार लोक रूचि या जन रूचि है। लोक गीत के तीन अंग माने गये है–भाव, शब्द, स्वर। भाव को अतरंग शब्द और स्वर को बहिरंग शब्द माना गया है।

लोक गीत के तीनों अंग एक दूसरे के पूर्ण आश्रित है। अन्य के अनुसार– लोक संगीत के पाँच अंग माने जाने चाहिये जिसके अर्न्तगत– लय, ताल, भाव, शब्द, स्वर। क्योंकि कोई भी गीत किसी कविता के रूप में नहीं गाया जाता अपितु उसे लय बद्ध कर ताल में गाया जाता है, यह लोक गीत का कोई बन्धन नहीं है। अपितु यह लोक गीत की सौन्दर्य वृद्धि में सहायक है। लोक गीत संस्कृति का संरक्षण, सवंर्धन करने के साथ– साथ संस्कारों, धर्म आदि को स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध है।

सम्पूर्ण भारतवर्ष में ऋतुओं की चर्चा की जाये तो हम पाते है, कि प्रमुख रूप से चार व गौढ़ रूप से छ: ऋतुयें है। ग्रीष्म ऋतु– चैत, बैसाख, ज्येष्ठ, आषाण, वर्षा ऋतु– सावन, भादों, क्वार, कार्तिक, शीत ऋतु–अगहन, पूस, माह, फागुन। हमारे पूर्वज द्वारा आज भी ऋतुओं की गणना जनवरी फरवरी से नहीं वरन् माघ, फागुन, चैत, वैसाख आदि से की जाती है। ऋतुओं के सन्दर्भ में लोक गीत की चर्चा की जाये तो चैत में चैती गायन, बैसाख, जेठ, असाढ़ में चौमासा, सावन में कजरी, भादों व क्वार में चैती व चौमासा, छठी माई गीत, कार्तिक में कजरी व फागुन में फगुआ गीत गाये जाते हैं, यदि हम पूर्वी क्षेत्र की ओर दृष्टिपात करें तब यही पाते है, कि वहाँ की सर्वाधिक गायी जाने वाली लोक विधा कजरी है।

कजरी सावन माह से सम्बन्धित गीत विधा है जिसमें कृष्णपक्ष की अष्टमी व शुक्ल पक्ष की अष्टमी को त्यौहार के रूप में मनाया जाता है जिसके अन्तर्गत मा विंध्याचल देवी से सम्बन्धित कजरियाँ गायी जाती है। शुक्ल पक्ष की तीज का त्यौहार मनाना पूर्वी उत्तर प्रदेश में प्रचलित है। चूँकि शोध पत्र ऋतुकालीन लोकगीत कजरी की 'अखाड़ा परम्परा' व उसका बदलता स्वरूप के सन्दर्भ में है अत: यहाँ हम कजरी विधा के सन्दर्भ में चर्चा करेगें।

कजरी ऋतु सम्बन्धी गीतों में प्रधान रूप से एक विशिष्ट विधा है। मुख्यत: सावन के महीने में जब काले काले बादल मेघ वर्ष ने के लिये गरज कर आते हैं, उनकी श्यामल, कजरारी, घोर घटा और वन– उपवन के फूल, हरे– भरे, पडे-पौधे, रंग– बिरंगे, सुमन– पुष्प से सुगन्धित हो उठती है, ऐसे ही मनभावन वातावरण में मन प्रसन्नता से भर जाता है व हृदय में प्रसन्नता का संचार उमड़ने लगता है, वहीं जिन भावों की अभिव्यक्ति काव्य के लक्षणो में पिरों कर गेय रूप में प्रस्पुटित होती है, वही कजरी या कजली कहलाती है।

यथा–**हमका मेला में चलिके घुमावा पिया**
झुलनी गढ़ावा पिया ना ।
अलका, टिकुली हम लगइवे
मगिया सिन्दुर से सजइवे,
हमरी अगुरी में मुनरी पहिनावो पिया
मेला में घुमावा पिया ना ।।

कजरी गायन का मुख्य श्रेय पूर्वी उत्तर प्रदेश में स्त्रियो को जाता है, ऐसा माना जाता है कि कजरी एक अति प्राचीन शैली है, जिसका उदभव सृष्टि के साथ हुआ। कजरी शब्द की उत्पत्ति के संदर्भ में– कजरी शब्द की उत्पत्ति कजला देवी से मानी जाती है वहीं अनेक विद्वान अपनी अपनी अलग व्याख्या देते हुए कहते हैं, कि कजरी शब्द संस्कृत के कज्जल शब्द से बना जो बहुअर्थी है, जैसे काले बादल या वर्षा की काली घटा अर्थात जल युक्त बादल से कजरी शब्द की उत्पत्ति मानी गयी है। काजल के समान कजरारे बादल को देख कर संयोग से भरे हृदय में शीतलता के अनुभव की कल्पना फलस्वरूप मुखरित होती हुई गीतों का निर्माण करती है। उन्ही गीतो को कजरी के नाम से सम्बोधित किया जाने लगा। बनारस और मिर्जापुर की कजरी ऋतुओं से सम्बन्धित वियोग संयोग श्रंगार से सभी पक्षों को पूर्णरूप से अभिव्यकत करती है।

पूर्वी उत्तर प्रदेश की विंध्याचल देवी की आराधना, पूजा, अर्चना को अधिक महत्व दिया जाता है और मैया के स्नान के समय, केश काढ़ने के समय व श्रंगार के समय जो गीत गाये गये वे कजरी कहलाये। क्योंकि विंध्याचल देवी काजल के समान काली प्रतीत होती है। इस कारण विद्वानों ने इन गीतों को कजलिया कहा है। पूर्वी उत्तर प्रदेश के लोग काली देवी व विंध्याचल देवी के पुजारी है। अत: जो भी हो इस लोकगीत का जन्म मां विंध्यवासिनी के प्रशस्ति गान के रूप में हुआ और यही मत अधिकांश विद्वानों द्वारा तर्क संगत प्रतीत होता है महाकाली कजला देवी की स्तुति में रचे गये व गाय जाने वाली लोकगीत विधा बोल चाल की भाषा मे कजरी या कजली कहलाये।

यथा–**असरा लगा के अइली, शरण में तोहार ए हो छटी मइया ।**
भर दा तू गोदिया हमार ए हो छटी मइया

* शोधार्थी (संगीत विभाग) दयालबाग एजूकेशनल इस्टीटयूट, आगरा (उ.प्र.) भारत
** शोध निर्देशिका (संगीत विभाग) दयालबाग एजूकेशनल इस्टीटयूट, आगरा (उ.प्र.) भारत

भर दा तू गोदिया हमार ए हो छटी मइया ।।

कजरी की ऐतिहासिक'अखाड़ा परम्परा'

गुरू शिष्य परम्परा का निर्वाह करने वाले इस लोक कला के घराने को अखाडा परम्परा नाम दिया गया। इन अखाडों के नाम लोक कला के उस्ताद व खलीफाओं के नाम पर रखा गया। इन अखाडों की अपनी अलग अलग विशेषता है तथा उनके द्वारा प्रस्तुत सामग्री के विषय वस्तु में भी भिन्नता पायी जाती है। जहां की कजरी होती है वहीं की अखाडा परम्परा का नाम उसमें निहित रहता है। वाराणसी के भैरों जी के अखाडे का नाम दूर दूर तक प्रसिद्ध है वहीं कई अखाडे ऐसे भी हुए जिनमें न केवल कजरी अपितु विरह, दोहे, कुंडलियां व धनाक्षरी इत्यादि छन्दों की रचना भी हुई।

उत्तर प्रदेश में हर ऋतु के व हर प्रान्त के लोक संगीत की अलग पहचान है। प्रत्येक ऋतु और प्रत्येक प्रान्त के पर्व देश की संस्कृति और सौन्दर्य बोध के परिचायक हैं। शरद ऋतु में छठ के गीतों से गांव गली गूंजती है। बसन्त में चैती और होली के स्वरों की धमक रंगों की मस्ती का आलम जगाती है। फिर बरसात का कहना ही क्या। जब बालद उमड़ कर कालिमा लपेटे हुए पानी लाते हैं तब कजरी के इन अखाड़ों में मेला सा लगने लगता है–

मेला म लइके चलो बलमू, हमका झुलनी झुलइवे।

कजरी गीतों की धुन विशेष प्रकार की होती है। कजरी की विशेष धुन में गाया जाने वाला किसी भी विषय पर आधारित गीत वर्षा ऋतु में गाया जा सकता हैं क्योंकि कजरी गीतों में विषय वस्तु में कम व सांगतिक धुनें अधिक होती हैं। वर्षा में मेघों को देखकर किसान प्रसन्नचित मन से झूम उठता है। वर्षा की प्रतीक्षा समाप्त हो जाती है मल्हार और कजरी के भाव उभरने लगते हैं। खेत खलियानो में शुरीले कन्ठों से निकले स्वर कजरी का स्वरूप धारण करते हैं। बाग बगीचों में झूला झूलती हुईं युवतियां मनभावन कजरी गा उठती है –

यथा–**सावन का महीना मेहा रिमझिम बरसे, ठन्डी ठन्डी ब्यार बादल बरसे है।**

सावन का महीना सुहावना होता ही है।सावन मास में हर गांव में बाग या तालाब के किनारे लगे विशाल वृक्षों पर झूले डाले जाते हैं। वहीं इन झूलों को सुसज्जित कर झूलों पर नर, नारियाँ आनन्द उठातें हैं व सावन में कजरी के गीतों का एक सम्मेलन सा होने लगता है। कजरी गाने का प्रचार बनारस व मिर्जापुर क्षेत्र में काफी प्रसिद्ध है, जो कि पूर्वी उत्तर प्रदेश के ही जिले है। वहां सावन के दिनों में कजरी के दंगल भी हुआ करते हैं, जिनमें दो पक्ष होते है। जब गायक अपने स्वर से धिर आई री बदरिया सावन की गाने लगते हैं तब वास्तव मे एक मनोहारी समा सा बंध जाता है और सचमुच ही यह दृष्य देखने योग्य होता है।

अखाड़ों के नाम:–

मतिराम का बैरागी अखाड़ा – मतिराम अपने समय के प्रमुख खारिया थे इनका अखाड़ा शिवदास जहांगीर के समकालीन था इस अखाड़े के गायकों द्वारा राष्ट्रीय सांस्कृतिक ऐतिहासिक हास्य–व्यंग्य व रंगारिक सभी प्रकार की कजरिया लिखी जाती थी इस अखाड़े के अब बहुत कम गायक हैं जो हैं वह अपनी रोजी–रोटी से अधिक परेशान रहते हैं और निर्बल वर्ग के अधिाक हैं।

इनके प्रमुख शिष्य शिवराम शर्मा बहुत सहज और सहृदय व्यक्ति इन्होंने भी बाद में अपना अखाड़ा बनाया इनकी शिक्षा में गायक हरि शंकर बाबा राम गुरु दाता राम शिव प्रसाद आदि प्रमुख थे।

इमामन का अखाड़ा – यह खड़ा बहुत प्राचीन है जहांगीर के पुत्र इमाम ने भी अपना अखाड़ा बनाया व कजरी गायन में बहुत नाम कमाया कजरी की विभिन्न प्रकारों की शुरुआत इन्हीं के अखाड़े से हुई।

अखाड़े का नाम – श्री पंच दशनाम जूना अखाड़ा, श्रीमहंत का नाम सचिव श्री हरिगिरी जी महाराज पता बड़ा हनुमान घाट वाराणसी

कजरी पर्व – मिर्जापुर में विशाल भवन माँ विंध्याचल देवी के मंदिर मे ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष के प्रथम रविवार से ढाई दिन का एक पर्व मनाया जाता है जिसे **'परावन'** नाम दिया गया। अत: परावन की इस अवधि में बनारस मिर्जापुर दोनों क्षेत्रों के बाजार बंद रहते थे। लोग विंध्य क्षेत्र के विभिन्न पूजा स्थलों में निवास करने एवं मां शक्ति की उपासना करने जाते थे।

इसी अवधि में कजली के खलीफा तथा उस्ताद अपनी शिष्य मंडली के साथ विंध्याचल देवी की विशेष पूजा करते थे। इस पूजन को **'खंजरी'** के नाम से संबोधित किया जाता था। इसी पूजन के साथ साथ सरस्वती बंदना जिसे **'सुमरिनी'** कहा जाता था कजरी गाकर कजरी का महोत्सव मनाते थे। इसी अवसर पर नये शिष्यों को दीक्षित भी किया जाता था। कालक्रम के बदलते परिवेश में कजरी महोत्सव की यह परम्परा धीरें धीरें लुप्त प्राय: होती जा रही है। कजरी महोत्सव के दो मास पश्चात् कजरी का त्योहार भाद्रपद कृष्ण तृतिया को मनाया जाता है। परन्तु उसके पूर्व संध्या से ही सारी रात्रि कजरी गाते हुए सारी रात जागरण किया जाता है।

कजरी गायन व उसका बदलता स्वरूप – कजरी गायन की शुरूआत कब, कहाँ, कैसे हुई यह कहना अत्यन्त कठिन है। लेकिन पूर्वी उत्तर प्रदेश के लोगो का मानना है, कि सर्वप्रथम यह गीत कजला देवी को प्रसन्न करने के लिये किसी मुस्लिम शायर के द्वारा गाया गया था और यह गायन सुनकर माँ भगवती ने भक्त शायर को वरदान दिया कि जो तुम्हारी इस शैली में गीत रच कर जो भी भक्त मुझे सुनायेगा उसे मेरी भक्ति सहज ही प्राप्त हो जायेगी। आज भी पूर्वी उत्तर प्रदेश के अखाड़ों में उतरने से पर्वू पहलवान माँ के धाम में कजरी गाता है व काजल का टीका लगाने की प्रथा प्रचलित है। कजरी का गायन वर्षो पूर्व से किया जा रहा है और यह ही नही कजरी लोक विधा को आज प्रतिष्ठित रूप प्रदान किया गया व इसके मंच प्रदर्शन किये जा रहे है। आज के परिवेश में कजरी गायन मठ, मंदिरों, मेलों, उत्सवों आदि तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि आज कजरी गायन मंच प्रदर्शन की विधा बन चुकी है।

मिर्जापुर में सर्वाधिक कजरी गायी जाती है और इसके गायन हेतु कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। जिसमें कजरी कलाकार ही नहीं अपितु ताल वादक, खंजरी, ढोलक, झांझ आदि की सगंति के साथ पूर्ण सौन्दर्यात्मकता प्रदान कर प्रस्तुतिकरण किया जाता है। आज पूर्वी क्षेत्र में अनेक त्योहारों उत्सवों पर मंडलियों को एकत्रित कर कजरी कार्यक्रम की प्रतियोगितायें आयोजित की जाती है। सावन के मेला में कजरी कार्यक्रम का प्रस्तुतिकरण किया जाता है जिसके अन्तर्गत कजरी गायक कलाकार को सम्मानित किया जाता है।

अत: निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं, आज हमारी लोक संस्कृति संस्कार हमारे लोकगीतों के माध्यम से संरक्षित है। जो कलाकार आज भी प्रकाश में नहीं आये है। या जो आर्थिक रूप से सुदृढ़ न होने के कारण समाज मात्र में ही गायन करके रोजगार चला रहे है। उनके लिये हमारी सरकार को आर्थिक सहायता उपलब्ध करानी चाहिए अर्थात सरकारी संस्थाओं से सहायता आर्पेक्षित है, जिससे समाज में योग्यता का व स्वाभिमान का बहिस्कार न हो अपितु सस्कृति संरक्षित रहे व कलाकार बनते रहे, नित नवीन सकारात्मक बदलाव होते रहें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लोक संगीत लक्षण एवं स्वरूप-डॉ0 प्यारेलाल श्रीमाल,संगीत मार्च-2002
2. लोकगीतो के सन्दर्भ और आयाम, डॉ0 शान्ति जैन
3. ऋतुकालीन लोकगीतों मे शास्त्रीय संगीत के तत्व (उत्तर प्रदेश के सन्दर्भ मे) डॉ0 सुमन
4. हिन्दी साहित्य कोश- डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय
5. प्रान्तीय संगीत: विविध पक्ष- प्रो0 सुधा सहगल

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Indian Scenario and Industrial Relation

Sachin Mujumdar*

Introduction - Work prevail the lives of human society and its various aspect in the form of management and employees, both individually and collectively, and always remain a main feature of organizational life.

The concept of Employee Relations requiresproper recognition then only it can be defined properly. Basically the term used "Industrial Relations"[1] designate a relationship between workers and management in a particular industry and it was started from after the Industrial Revolution[2] when the economic and social changes were taking place all over the world. The history or roots of Industrial relations denotes a long constant inevitable fight between labour and management and emergence of Trade Unions[3] and its conflict of rights.

The term "Industrial Relation" denotes a complex relationship which spring up in work situations in work place. Management and the workers are the part of same game; they come together due to their own interest as a salary and profit. To comprehend the concept of Industrial Relation some definitions would be necessary.

One of the most important definitions which clarify the Industrial Relation in a elegant manner of human relationship is given by J. Henry Richardson[4]. According to him "Industrial Relation is the art of living together for purpose of production." The parties involved in Industrial relations, the workers and the employers, have a common purpose-production. Both parties involves with each-other with their own willingness with the commitment to work together. This definition shows us a human face or a model status of a Industrial Relation but it doesn't say about a conflict and disputes and its solution among the both parties. The area of Industrial relations has very flexible form, many dimensions are yet to explode with various aspects and day by day it is crossing its boundaries with the scenario of new era.

Prior to independence Industrial Relations used to deal with very narrow, regulated and controlled aspects but after globalization this dealing had changed and a new definition and area has to developed with an aggressive and dynamic approach towards the industrial Relations. This requires a highly flexible policy for business and workers welfare.

Development of Industrial Relation In India Prior To Freedom - India was immoderately a provincial and agricultural economy during ancient and primitive time, it was the time when Trade and business were not expended very far and a few persons used to do that with person to person or group of persons with in the boundary of their village. Business was carried on by small manufacturer in their cottages. Trade was accepted by one person on the basis of family business means it was just like a hereditary. Employer and employee relation was not existed on the contrary there was merely a slave and owner relationship was common in that time. Business was performed only basis of small scale and on day to day basis.

The Indian traditional art and craft were inadequately spoiled by the invaders up to 700 years approximately and for surviving their art and craft the craftsman were wondering from one place to another place but by this escaping they were losing their elegant art and traditional skills. Unfortunately they had become just a slave of rich man. The situation improved in the time of Mughals, the development of varnishing, tailoring, and leather work had spread in India.

After the Mughals during the British Raj things were going in very wrest position because of Industrial Revolution and the exploitation of workers by the owners of industries the one way profit game was being played by the factory owners. This was totally a very unequal relationship between the poor Labour and Powerful Employers. In fact it was the upgrade version of slavery which had to change into a Master and Servant Relationship. In the addition of this situation government adopted the policy of "Laissez-Faire" and later on enforced penalty on workers for breaches of contract.

Hence the British government made statutory regulation of Industrial relation through the Defense of India Rules but after the ending of World War II, by the help of tripartite deliberation[5] during the 1942-46 Trade Dispute Act had revised into Industrial Dispute Act, 1947 which was applicable for the whole India.

Tripartite deliberation led the important roll to settle Industrial Relation in India ,it not only helped the maintain healthy relation between employer and employee even it cleared the some necessary definition of Minimum wage fixation(1944), constitution of tripartite industrial committees (1944), Health insurance scheme (1945) , Provident fund

*Research Scholar, Jagran Lake city University, Bhopal (M.P.) INDIA

scheme(1950) which later on made the way to pass 03 most important and significant Act of labour laws like Minimum Wages Act,1948, the Employees state Insurance Act,1948 and the Employees Provident Funds Act,1952. After gating Independence Indian Legislation made more labour welfare law and it created new relation between employer and employee.

Emergence Of Industrial Relation In Post Independence In India - After gating independence India gets its own Constitution our leaders tried hard to achieve all those goals and dreams which had to yet come in the reality. The Directive Principals and the Fundamental Rights were the important part of our constitution, by which not only rights should be given to all citizens even Duties and goals also be remembered. In the freedom struggle labour problem and struggle was also running simultaneously.

As per model of "Welfare State" government tried to achieve social and economic growth aim but with the Industrial development many new problems were coming and giving challenges to Legislature and Courts to solve those problems with the new concepts of Industrial Relations.

In the period of 1956, by the Industrial Policy Resolution government facilitated the growth of public undertaking in states and centre. This was the endeavor to present a role model of industrial relations as "Model-Employers".

In the year of 1957 schemes like participation in management and workers education and voluntary code of discipline and voluntary code of conducts were introduced.

In 1975 constitutional amendment (Article 43 A)[6] provided workers participation and added chapter VB in the Industrial Dispute Act 1947. After that many governments followed that way to provide measures for protection of workers interests and formation of workers welfare.

In the years of 1980- 1990 judicial activism was the main factor, by delivering the protective judgments towards the labour class and welfare of their lives, court left tremendous impact on the Industrial Relation. This period was consisted with the amendment of Industrial Dispute Act of sec (2A, 9A, 11A, 17B& chapter V B), ContractLabour (R&A) Act, 1972. Even provision of sec 10 of Contract Labour Act, automatic absorption (on the completion of substantial years) was also interpreted.

In the age of globalization and after adoption of neoliberal policy by India in 1991, huge changes were coming in the relation between employer and labour. Competitiveness with global markets and quality control according to international standards industries faced great pressure and automatically this pressure had to shift to labour class for better performance and production. These changes were created a new definition of Industrial Relation.

Labour welfare policy was not the aim of new Social and economical policy, it has seen and cleared in the Second National Commission on Labour in 1998. Contract Labour on all the activities and retrenchment of workman without government permission (wherever the strength is less than 300), were the example of recommendation of N.L.C 1998.

In the consonance of new economical policy and Industrial Relation thejudiciary was also changing its verdict. Denial ofAbsorption of contract Labour and Classification of labour as a permanent employee by the Apex Court is the sign of new Industrial Relation.

Prior To The Independence In The British Raj - Some labour legislation was existed. The excessive exploitation of the workers and desire of maximum profit earning of employer was the root cause of the emergence of labour legislation in that time. Due to the poor conditions of the Tea garden of the Assam British government made the "The District Emigrant Labour Act, 1832 and "Workmen's Breach of Contract Act, 1859 were enacted but these Act were designed more for the purpose of ensuring a steady supply of labours to the tea gardens in Assam, than for protecting the interests of the laborers, even in this Act the desertion of the tea garden by the laborers was the criminal offence. The same circumstances was existed with the 'First Factory Act of 1881' because this Act was also the result of the "Lancashine textile magnates" it was enacted forincreasing the cost of production of Indian textiles by reducing the hours of work and improving other conditions. This Act was also made for the protection of the interests of the Lancashine industrialist. After this Act many legislation were enacted in British Raj with the very idea of British legislation. The reflection of England's Law was in labour legislation and all those Acts which were enacted that time somehow were adjusting with the Indian traditions and background. Some of those were " Workmen's Compensation Act,1923", "The Indian Mines Act,1923" , "The Trade Union Act,1926" and " The Payment of wages Act,1936" ,.

The formation of "International Labour Organisation" and its Recommendations towards the whole labour community wherever they worked in any country helped to make such laws by which their poor working conditions can be changed. Indian Labour Legislation also got benefits from the ILO's recommendations and made some fruitful amendments in Labour Legislation for the labour reforms policy. The impact of ILO can be judged in Indian constitution also when see in the Article 39,41,42,43,43A, all Article denotes the reforms of Labour policy and influenced the labour legislation.

Labour laws were inacted in British Raj due to their policy of maximum benefits without any interruption and pragmatic approach towards the Trades and business. After independence Indian legislation also made somelabour laws and brought few amendments but the reason had changed, instead of profit gaining it was the concept of "Welfare State". Basically the aim of labour laws, seeks to regulate the relations between an employer or a class of employers and their employees.

The Labour legislation can be categorized upon many

principles according to Indian Constitution and its Directive Principles. **"Principal of Protection", Principal of Social Justice", "Principal of Regulation", "Principal of Welfare", "Principal of Social Security", "Principal of Economic Development",** etc. These principal reflects in labour laws to achieve constitution's Provisions.

Industrial Relation In The Light Of Government Policy - After getting Independence government adopted the policy of Laissez Faire (non-interference) between the employer and employee and they can settle their disputes by the way whatever they want but earlier due to concept of Welfare State and Directive Principal of Economic and Social growth, government decided to intervene in Industrial Relation and made some protective legislations for some other reasons also as follows;

1. Due to pressure of International LabourOrganisation and Indian Labour Commission.
2. Philosophical idea of trusteeship government developed the instruments of voluntarism.
3. Constitutional Obligation to fulfill "pledges and Promises" according to Preamble.

Industrial Relations are the subject of 'Concurrent' (Article-254), it means the Central government and State government both have jurisdiction over these matters.

Hence According to Directive Principles and other Articles of Constitution State shall make their policy towards the Industrial Relation and try to maintain a harmonious atmosphere between employer and labour class.

Constitutional Background Of Indian Labour Legislation - There are two purposes in Preamble of Indian Constitution in the context of labour legislation, first, what is the source of legislation and second, what is the objective of that legislation, regarding the labour legislation, it can be said that Preamble is the source of any legislation including the labour legislation and in that Preamble all those principles Like ,;

1. Justice, Social, Economic and Political Security
2. Liberty of thoughts, Expression, Belief, Faith and worship.
3. Equality of status and of opportunity
4. Fraternity, assuring the dignity of the individual and unity and integrity of nation.

States that to convert all these principals on ground reality legislation must be enacted including the labour legislation. To get as a reality of all those principles which are mentioned in Preamble asa vision, in the form of protective legislation, social legislation, social security legislation, welfare legislations and industrial relation legislation they all enacted in various form of labour laws.

Constitution does not concern only State work; it has specific aim and liability towards the individual, to fulfill its liability Part III of constitution deal with Fundamental Rights like;

1. The Right to Equality (Article 14 to 18)
2. The Right to Freedom (Article 19 to 19)
3. The Right against Exploitation (Article 19 to 22)
4. The Right to Constitutional Remedy (Article 32 to 35)

These fundamental rights have been given to all citizens of India as a guarantee to protect against any repressive work of State, therefore in **Article 12** of the Constitution the definition of 'State' has clearly defined, in that definition term 'Other Authorities' includes any instrumentality or agency of the government whether an individual or a corporation like "Life India Insurance" or a Company like "Steel Authority of India". In any disputes regarding labour or Industrial Relation the employer is covered in the definition of "Other Authorities".

Article 14 and 15deals the Right of Equality and Equal protection of law towards the citizens of India but in Labour legislation it gives impression that reasonable classification is permissible in service by employer regarding post and wages without any prejudice. Every employee has right to save himself from exploitation and protect against unreasonable classification in the light of Equal Protection of law.

Article 16 (1) and (2)of the constitution provides Equality of opportunity to all citizens but in labour legislation it gives Equal opportunity to get employment under the States in any government or Private sectors.

Article 19with its various sub clauses provides freedom of Association, freedom to carry on Trade or business with freedom of speech; in labour legislation all these provisions are necessary for Industrial Relation, to make unions or any other type of freedom which are necessary for healthy Industrial Relation and harmony.

Article 21deals with the impression of personal liberty except according to procedures established by law, but in labour legislation it is a Right to live and do work with human dignity in workplace without any exploitation.

Whereas the**Article 23**deals with the Rights against Exploitation and prohibits the traffic of human beings, in labour legislation this Article gives rights against Exploitation against employer, and also prohibits the forced labour with the provision of punishable offence, the **Article 24 also** prohibits the employment of children below the age of 14 years in factories, mines, or any industry.

Conclusion - All this rights are futile without Constitutional Remedy; therefore in our Constitution from **Article 32 to 35**have provisions that any citizen of India may file petitioned against the State for protecting his Fundamental Rights whether it is a government authority or private employer.

Hence these entire Provisions of Indian constitution guarantee to citizens of India about their fundamental rights and by all this provisions labour legislation also benefited in the service of Labour class.

References :-

1. The relation between management and workers in industry.
2. A rapid major changes in an economy marked by the general introduction of power driven machinery or by an important changes in the prevailing types and methods of use of such machines.
3. An organization for people who all do the same type of

work. Trade unions try to get better pay and working conditions for their members.

4. J. Henry Richardson (2003) an introduction to the study of industrial Relation vol-5.
5. The three parties meeting regarding implementation of International Labour standard (Employer and employee representative and Government).
6. Participation of workers in management of Industries and falls under part iv Directive principles of State Policy.

****

दिव्यांग अधिकार अधिनियम 2016 का विश्लेषणात्मक अध्ययन

गायत्री यादव* डॉ. कुसुम दीक्षित**

शोध सारांश – भारत में दिव्यांगों को लेकर एक विकराल समस्या उत्पन्न हो गई है, और यह सभी समस्या का समाधान विधि पूर्ण ढंग से तभी संभव हो सकेगा जब उस विषय को लेकर कोई प्रभावी कानून बनाया जाए। भारत में दिव्यांगों को लेकर पहले विधि सन 1955 में बनाई गई थी, इस विधि का नाम दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम 1955 रखा गया था। कुछ और नियम का निर्माण किया गया, इसके अंतर्गत राष्ट्रीय स्तर पर दिव्यांग केंद्रीय सलाहकार बोर्ड एवं राष्ट्रीय न्यास की स्थापना की गई।

शब्द कुंजी – दिव्यांग, अधिकार, संवैधानिक, गरिमा।

प्रस्तावना – विश्व में दिव्यांगों की जनसंख्या कुल जनसंख्या का 10 प्रतिशत है । इस 10प्रतिशत में 80प्रतिशत दिव्यांगोंका प्रतिशत विकासशील देशों को हैं। इस विशाल जनसंख्या को यूंही असहाय नहीं छोड़ा जा सकता अत: अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सन 2006 से संयुक्त राष्ट्र संघ में इनकी हालत सुधारने के लिए कार्य किया जा रहा है । भारत में दिव्यांगों को लेकर सन 1995 में एक अधिनियम पारित किया गया था, यह अधिनियम दिव्यांगों की बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकता के अनुरूप नहीं था। अत: संयुक्त राष्ट्र संघ की अनुशंसा के आधार पर 3 दिसंबर 2006 को एक और अधिनियम पारित किया गया जिस की अधिसूचना 3 मई 2008 को लागू की गई जिसे विश्व के 138 देशों ने स्वीकार किया । **दिव्यांग अधिकार अधिनियम 2016** को पारित किया गया जिसका मुख्य उद्देश्य रखा गया कि यह अधिसूचना दिव्यांग जनों के अधिकार जो कि संयुक्त राष्ट्र संघ के आधार पर बनाए गए है, उन्हें प्रभावी बनाया जा सके। इन सिद्धांतों को प्रतिपादित करने का उद्धेष्य दिव्यांगों की गरिमा और व्यक्तित्व के लिए आदर्श परिस्थितियां तैयार करना, उन्हें बिना किसी भेदभाव के आगे बढ़ने में मदद किया जाए और एक गरिमामई वातावरण तैयार किया जा सके जिससे दिव्यांगों को समाज में पूर्ण एवं प्रभावी भागीदारी निभाने का अवसर प्राप्त हो पाए। उन्हें सभी मानवीय अधिकार, संवैधानिक अधिकार, विधिक अधिकार प्राप्त हो जो राज्य सरकार के द्वारा सभी के लिए प्रदान किए गए हैं। भारत में दिव्यांगों को लेकर एक विकराल समस्या उत्पन्न हो गई है, और यह सभी समस्या का समाधान विधि पूर्ण ढंग से तभी संभव हो सकेगा जब उस विषय को लेकर कोई प्रभावी कानून बनाया जाए। भारत में दिव्यांगों को लेकर पहले विधि सन 1955 में बनाई गई थी,इस विधि का नाम दिव्यांग व्यक्ति अधिनियम 1955 रखा गया था। कुछ और नियम का निर्माण किया गया, इसके अंतर्गत राष्ट्रीय स्तर पर दिव्यांग केंद्रीय सलाहकार बोर्ड एवं राष्ट्रीय न्यास की स्थापना की गई। इस की धारा 30 में मुख्य आयुक्त और अपर आयुक्त की व्यवस्था की गई । पर यह अधिनियम भी दिव्यांगों की समस्याओं को सुलझाने में असमर्थ ही रहा यही कारण है कि अंतरराष्ट्रीय अभिसमय जो 2003 में बनी थी जिसमें 2006 में यह प्रावधान किया गया था कि दिव्यांगों को लेकर प्रत्येक देश नए अधिनियम बनाएं और अभिसमय की अनुशंसा को लागू करने के लिए 2016 में दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम बनाया गया। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य 13 दिसंबर 2006 की अनुशंसा को बिना किसी भेदभाव के इस तरह से दिव्यांग जनों के कल्याण के लिए लागू किया जाए जिससे वे गरिमामई वातावरण में अपना सर्वागीण विकास कर सकें, तथा सभी देशों में इसका लाभ दिव्यांगों को मिल सके। इस अधिनियम में एक नए सरकारी विभाग का नाम दिव्यांगजन सशक्तिकरण विभाग बनाया गया जिसको यह जिम्मेदारी दी गई कि सरकार राज्य सरकार एवं गैर सरकारी संस्थाएं दिव्यांगों के विकास हेतु कार्य कर सकें।

दिव्यांग व्यक्तियों को आम आदमी की तरह मानवीय अधिकार एवं संवैधानिक अधिकार एवं विधिक अधिकार प्राप्त हो सके। 1995 के अधिनियम में केवल सरकार की बात कही गई थी जबकि इस अधिनियम में इन्हें बड़ा कर दिया गया दिव्यांगों को नौकरी में आरक्षण 3 प्रतिशत से बढ़ाकर 4 प्रतिशत कर दिया गया तथा इस अधिनियम के अंतर्गत अनुशंसा की गई है कि दिव्यांगों को यातायात एवं परिवहन के साधनों में ऐसी सुविधाएं दी जाएं जिससे कि वह अपने कार्यस्थल पर पहुंच सके।

विधिक विश्लेषण : दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम 2016 – 7 दिसंबर 2016 को पारित किया गया इस अधिनियम में कुल 102 धाराएं हैं जिसे 17 अध्याय में विभाजित किया गया है तथा 1 अनुसूची जोड़ी गई है इस अनुसूची में धारा 2 के अंतर्गत शारीरिक व मानसिक दिव्यांगता के विशिष्ट प्रकारों को शामिल किया गया है, इसमें बौनापन, दृष्टि, हास मानसिकता तथा अन्य विकृति को भी शामिल किया गया है।

अध्याय 1 की धारा 1 से 2 तक की धाराओं को शामिल किया गया है। धारा 2 में कुछ परिभाषा दी गई जिसमें समुचित सरकार तथा दिव्यांग जनों को परिभाषित किया गया है। सार्वजनिक भवन से तात्पर्य कोई भी सरकारी या निजी भवन है जिसका उपयोग जनता के लिए या जनता के द्वारा किया जाता है जैसे शैक्षणिक एवं व्यवसायिक संस्थान पुनर्वास से तात्पर्य दिव्यांगों की अनुकूलता एवं उनके बौद्धिक एवं मनोवैज्ञानिक पर्यावरणीय सामाजिक कार्यो को करने के उद्देश्य से बनाने हेतु है।

अध्याय 2 में दिव्यांग अधिकार के बारे में बताया गया है जिसमें धारा

* शोधार्थी, रविन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष, रविन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

3 धारा 15 तक में यह दर्शाया गया है कि समुचित व्यवस्थाओं का निर्माण सरकार के द्वारा किया जाना चाहिए दिव्यांग जनों या अन्य व्यक्तियों के अनुरूप समान एवं क्षमता में गरिमामई व्यवहार किया जाना चाहिए धारा 5 में दिव्यांग व्यक्ति को समाज में जीने का अधिकार हेतु सरकार के प्रयासों का वर्णन किया गया।

अध्याय 3 में शिक्षा के बारे में बताया गया है जिससे धारा 16 से लेकर 18 तक दर्शाया गया है।

अध्याय 4 में धारा 19 से 30 तक का प्रावधान है जिसका संबंध कौशल विकास और नियोजन से है। धारा 19 में समुचित सरकार के द्वारा दिव्यांग जनों के लिए नियुक्त का भी प्रावधन है। ऋण उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई है, धारा 23 में सरकारी स्थापना संस्थान में एक शिकायत प्रकोष्ठ का गठन दिव्यांगों की शिकायत के अन्वेषण हेतु किया गया है अध्याय 5 में दिव्यांग व्यक्तियों को बेरोजगारी भत्ता का भी प्रावधान किया गया है

अध्याय 6 में दिव्यांग जनों के लिए विशेष प्रावधान किया गया है तथा धारा 31 तक का प्रावधान किया गया है इसमें 6 से 18 वर्ष तक के प्रत्येक दिव्यांग के लिए निशुल्क शिक्षा का अधिकार भी शामिल है धारा 34 में प्रत्येक समुचित सरकार दिव्यांग जनों को नौकरी में आरक्षण की व्यवस्था है।

अध्याय 7 में केवल एक धारा है जिसमें उच्च सहायता की आवश्यकता वाले दिव्यांग जनों के लिए विशेष उपबंध का प्रावधान है धारा 38 में किसी व्यक्ति या गैर सरकारी संगठन के द्वारा आवेदन दे सकेंगे और ऐसे दिव्यांग जनों को विशेष शिक्षा के लिए विशेष प्रशिक्षण का चुनाव किया जाएगा। अध्याय 8 में धारा 39 से 48 तक का प्रावधान है।

समुचित से तात्पर्य केंद्रीय सरकार और राज्य सरकार से है समुचित सरकार धारा 41 में बस अड्डे रेलवे स्टेशन हवाई अड्डे पर दिव्यांग जनों की सुविधा हेतु व्यवस्था करेगी।

अध्याय 10 में विनिर्दिष्ट दिव्यांग का प्रमाण सदस्यता का उल्लेख है। इस अध्याय में केंद्रीय सरकार से अपेक्षित किया गया है कि वह सदस्यों को प्रमाण पत्र सक्षम अधिकारी द्वारा दिव्यांग प्रमाण पत्र दिया जाए।

अध्याय 11 में केंद्र सरकार और राज्य सरकार के द्वारा दिव्यांग विभाग की स्थापना करेगा। जिला स्तर पर समितियां बनाई जाएगी।

अध्याय 12 में दिव्यांग जनों के लिए राज्य आयुक्त केंद्र सरकार द्वारा नियुक्त किए जाएंगे जिसका उल्लेख किया गया है इस धारा में दर्शाया गया है वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।

अध्याय 13 में दिव्यांगों के लिए विशेष व्यवस्था की गई है जिसमें राज्य सरकार द्वारा प्रत्येक विशेष न्यायालय के संचालन हेतु विशेष लोक अभियोजक की नियुक्ति करेगी जिसे 7 वर्ष का अनुभव रखने वाले अधिवक्ता अभियोजक के रूप में नियुक्त किया जाएगा।

अध्याय 14,15 तथा 16 में दिव्यांगों से संबधित अपराध अपराधियों का उल्लेख किया।

अध्याय 17 में धारा 96 से लेकर धारा 102 तक का उल्लेख है। इसमें केंद्र सरकार और राज्य सरकार को दिव्यांगों के लिए नियम बनाने में कोई कठिनाई आती है तो कठिनाई का निवारण करने का प्रावधान दिया गया है।

मूल्यांकन - 1995 के अधिनियम की धारा 101 को समाप्त कर दिया गया है और उसके स्थान पर 2016 की अधिसूचना को लागू किया गया है। 2016 की अधिसूचना अंतरराष्ट्रीय माहौल के अनुकूल बनाया गया है इसमें प्रत्येक देश को यह सुविधा प्रदान की गई है कि दिव्यांगों के लिए 2006 में जो अनुशंसा की गई थी उनके अनुसार ही विधि का निर्माण करें दिव्यांगता व्यक्ति के लिए अभिशाप है जिसमे एक मनुष्य का बस नहीं होता जिसके दुष्परिणामों को कम करने के लिए दिव्यांगों को यह विश्वास दिलाना आवश्यक है कि दिव्यांगता में उनका कोई कसूर नहीं है, अत: इस हेतु सरकार के अलावा समाज का भी यह कर्तव्य है कि वह एक ऐसे अवसर की स्थापना करें जिससे दिव्यांग व्यक्ति को अपनी दिव्यांगता का अपराध बोध महसूस ना हो र उन्हें शुभ अवसर के रूप में देखें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मानव अधिकार :- बसंती लाल बाबेल पेज नंबर 15 प्रकाशक सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन इलाहाबाद
2. भारत का संविधान :-जय जय राम उपाध्याय पेज नंबर 225 प्रकाशक सेंट्रल लॉ एजेंसी संस्करण 2008
3. मानव अधिकार:- एस के कपूर पेज नंबर 120 प्रकाशन सेंट्रल लॉ एजेंसी वर्ष 2008
4. अंतर्राष्ट्रीय विधि एवं मानवाधिकार :-पेज नंबर 655 अग्रवाल प्रशासक सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन

****

भारत में दिव्यांगों हेतू संवैधनिक प्रावधान

गायत्री यादव* डॉ. कुसुम दीक्षित**

शोध सारांश – भारत में दिव्यांगों की जनसंख्या धीरे-धीरे बढ़ती जा रही है उनकी स्थिति दयनीय होती जा रही है क्योंकि उनके लिए पारिवारिक तथा सामाजिक स्तर पर देश तथा देश के स्तर पर अभी तक कोई विशिष्ट कार्य नहीं हो पाया है दिव्यांगता ईश्वर द्वारा प्रदत अभिशाप मानकर सहन कर लिया जाता है जबकि आधुनिक समय में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर दिव्यांगों के लिए अनेक कार्य किए जा रहे हैं। उनके जो परिणाम सामने आए हैं उनसे यह सिद्ध होता है कि दिव्यांगता अभिशाप नहीं है।

शब्द कुंजी – दिव्यांग, अधिकार, संवैधानिक अनुछेद अंतरराष्ट्रीय,राष्ट्रीय,विधि ।

प्रस्तावना – पूरे विश्व में दिव्यांगों की जनसंख्या इतनी अधिक है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उनके बारे में इस दृष्टि से सोचा जाने लगा है कि उन्हें प्रकृति का अभिशाप ना मानकर उनके लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विधिक अधिकार एवं मानवीय अधिकारों पर विचार किया जाना चाहिए। यही कारण है कि संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्रत्येक देश में यह विधि द्वारा निर्धारित किया जाए कि दिव्यांग व्यक्ति को विधिक अधिकार दिलवाया जा सके। भारत भी यूएनओ का एक हस्ताक्षरकर्ता देश है, इसीलिए भारत में भी विधि के माध्यम से दिव्यांग लोगों के हितों की रक्षा करने के लिए प्रावधान किए गए हैं । सर्वप्रथम 1995 में दिव्यांग जनों की रक्षा करने के लिए और उनके जीवन को बेहतर बनाने के लिए सन 1995 में कानून बनाया गया जिसके अंतर्गत उन्हें कुछ सुविधाएं और अधिकार प्रदान किए गए पर वह उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ रहा था 2016 में दिव्यांग जन अधिकार विधेयक पारित किया गया इसके अंतर्गत सभी सरकारी भवनों को जून 2019 तक दिव्यांग जनों के अनुसार बनाना तथा मार्च 2018 तक 10 प्रतिशत परिवहन के साधनों को उनके अधिगमहेतु बनाने व रेलवे स्टेशनों को भी उनके अनुरूप सुविधाओं को बढ़ाना उनके लिए अलग कंपार्टमेंट की व्यवस्था करना तथा विकलांगता की परिभाषा में बदलाव करते हुए मौजूदा विकलांगों की अपंगता को 7 से बढ़ाकर 21 प्रतिशत कर दी गई है। सरकारी नौकरी में 3प्रतिष्त के आरक्षण को बढ़ाकर 4 कर दिया गया है विकलांगता से पीड़ित 6 से 18 वर्ष तक के बच्चों के लिए निशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की गई है तथा सरकार से घोषित शिक्षण संस्थानों को आवश्यक रूप से दिव्यांग बच्चों को समावेशी शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की गई है। इस अधिनियम में दिव्यांग जनों को वित्तीय सहायता देने के लिए राष्ट्रीय नीति का निर्माण किया गया है, जिला न्यायालय द्वारा प्रत्येक जिले में विकलांग संरक्षण केंद्रों की व्यवस्था की जाएगी तथा दिव्यांगों से संबंधित मामले को निपटाने के लिए जिले में विशेष न्यायालय बनाए जाएंगे उपरोक्त सारे प्रयास दिव्यांग जनों के जीवन को बेहतर बनाने की कवायद के साथ हमारी सोच में भी बदलाव आना चाहि। जिले स्तर पर राज्य स्तर पर और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर दिव्यांगों को सुविधाएं शिक्षा नौकरी में आरक्षण इस प्रकार से मिलना चाहिए कि इस अभिशाप को एक सुअवसर के रूप में स्वीकार । सहानुभूति के स्थान पर सामान्य जीवन बिता सकें । भारत सरकार ने सुगम भारत अभियान आरंभ किया है जिसके अंतर्गत दिव्यांग जनों के लिए एक सक्षम बाधा रहित वातावरण सुनिश्चित करना है उसमें तीन प्रमुख उद्देश्य हैं प्रथम परिवहन प्रणाली में सुगमता लाना एवम् आईसीटी के माध्यम से दिव्यांगों को सशक्त बनाना शामिल हैं। वर्ष 2016 में सरकार द्वारा पुस्तकालय की शुरुआत की गई थी जहां दिव्यांग जनों को इंटरनेट के माध्यम से पुस्तके उपलब्ध कराई जाएगी नेत्रहीन व्यक्तियों के लिए अलग से बैठने की व्यवस्था की जाएगी जहां मोबाइल फोन टेबलेट कंप्यूटर का उपयोग करके नेत्रहीन पढ़ सकेंगे । विकलांगों को यूटीआई पहचान पत्र दिया जाएगा उनके लिए विशेष सुविधाएं दी जाएंगी पचास हजार दिव्यांगों को कौशल प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गई है तथा यह उदेश्य रखा गया है कि पच्चीस हजार दिव्यांग जनों को कौशल प्रशिक्षण दिया जाए और नौकरी में 4 प्रतिशत आरक्षण दिया जाए।

दिव्यांगो को लेकर परिवार के लोगों को बहुत अधिक व्यथीत होने की आवश्यकता नहीं है दिव्यांगों को शिक्षा के स्तर पर तथा नौकरी के स्तर पर राष्ट्रीय स्तर एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अधिक शुभ अवसर एवं संरक्षण प्रदान किए जाने की आवश्यकता है। अब दिव्यांगता को अभिशाप नहीं माना जाना चाहिए सोच में परिवर्तन लाने की आवष्यकता है । इस प्रकार की विषम परिस्थितियों को यदि परिवार, समाज, सरकार और अंतरराष्ट्रीय संगठन यदि सकारात्मक दृष्टिकोण से ले तो इस स्थिति को सकारात्मक दृष्टिकोण के द्वारा सुधारा जा सकता है। यह एक सामान्य तथा अकाट्य सत्य है कि दिव्यांग व्यक्तियों ने सामान्य व्यक्ति के मुकाबले ग्रहण करने की क्षमता अधिक होती है और अगर इस दिशा में उन्हें प्रोत्साहन एवं संरक्षण प्रदान कर सुअवसर दिलवाया जाए तो वह भी अपना योगदान देश के विकास में दे सकते हैं। दिव्यांगों को लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ में अपने सम्मेलन यूएनडीपी मे अपने उद्देश्य हेतु प्रत्येक देश को सचेत किया है कि वह अपने अपने देश में कानून बनाकर दिव्यागों को विधिक अधिकार एवं मानवीय अधिकार दिलवाए ।

मुंबई राज बनाम मुंबई एजुकेशन सोसाइटी ए आई आर 1954 एस सी 61 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह स्पष्ट किया था कि राज्य अपने

* शोधार्थी, रविन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष, रविन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

समस्त नागरिकों के लिए शिक्षा की व्यवस्था करें इन नागरिकों में दिव्यांग बच्चे भी शामिल हैं अनुच्छेद 21 में जीने के अधिकार को लेकर यह प्रावधान किया गया है कि 6 से 14 वर्ष की आयु के बच्चे जिसमे दिव्यांग भी शामिल हैं को निशुल्क एवं आवश्यक शिक्षा मिलनी चाहिए। दिव्यांग अधिकार अधिनियम 2016 उद्देश्य है कि दिव्यांगों को बोझ ना मानते हुए उन्हें उनकी हैसियत के अनुसार ही कार्य करने की व्यवस्था की जानी चाहिए संवैधानिक अधिकारों में अंकित सिविल राजनीतिक एवं आर्थिक अधिकार भी शामिल हैं दिव्यांग लोगों को अपना परिवार बनाना नौकरी करना दासता से मुक्ति और प्रत्येक व्यक्ति को रोजगार पाने का अधिकार है। इस मामले में किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जा सकता विश्व की जनसंख्या का 10 प्रतिशत दिव्यांगों का होता है दिव्यांग योजना का निर्माण करें जिससे दिव्यांगों के अधिकारों का संरक्षण हो सके और संविधान में भी दिव्यांगों हेतु संवैधानिक प्रावधान है

सारांश – 3 दिसंबर को अंतरराष्ट्रीय दिव्यांगदिवस के रूप में सारी दुनिया मनाती है जिसकी सिफारिश संयुक्त राष्ट्र ने की है यह इस बात को दर्शाता है कि पूरे विश्व में दिव्यांगों को लेकर एक सामूहिक प्रयास किया जा रहा है। विश्व की 10 प्रतिशत दिव्यांग जनसंख्या को राज्य सरकार की तरफ से वह सभी सुविधाएं एवं आरक्षण का लाभ मिलना चाहिए जिससे वह प्रकृति के द्वारा प्रदत अभिशाप को शुभ अवसर में बदल सके। 4 दिसंबर 2019 को टाइम्स ऑफ इंडिया भोपाल में एक विशिष्ट लेख के द्वारा सोनू गोलकर की प्रगति की समीक्षा की गई थी दिव्यांगों को उनकी उपलब्धियों को समाचार पत्रों में एवं दूरदर्शन तथा अन्य प्रचार प्रसार के माध्यमों में दिखाया जाना चाहिए ताकि वे और अच्छे कार्य हेतु प्रेरित हो सकें केंद्र सरकार और राज्य सरकार तथा जिला प्रशासन भी मिलकर दिव्यांगों के लिए समन्वय स्थापित करें ताकि दिव्यांग बच्चों का और अधिक विकास किया जा सके

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मानव अधिकार :–बसंती लाल बाबेल पेज नंबर 9 प्रकाशक सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन इलाहाबाद
2. भारत का संविधान:– जय जय राम उपाध्याय पेज नंबर 220 प्रकाशक सेंट्रल लॉ एजेंसी संस्करण 2008
3. मानव अधिकार:– एसके कपूर पेज नंबर 129 प्रकाशन सेंट्रल लॉ एजेंसी वर्ष 2008
4. अंतर्राष्ट्रीय विधि:– एवं मानवाधिकार पेज नंबर 694 अग्रवाल प्रशासक सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

मेवाड़ राज्य के सरदारगढ ठिकाने (डोडिया राजवंश) का ऐतिहासिक परिचयात्मक अध्ययन

डॉ. हेमेन्द्र सिंह सारंगदेवोत *

प्रस्तावना – मेवाड़ के प्रथम पोलिटिकल एजेन्ट और मेवाड़ के इतिहास को अन्तरर्राष्ट्रीय ख्याती दिलाने में अग्रगण्य कर्नल जेम्स टॉड के शब्द मेवाड़ एवं उसके राजकुल की महिमा का बखान करते है। इसी लेखक की मेवाड़ की जागीरदारी प्रथा के बारे में राय को उद्धृत करना भी समीचीन होगा क्योंकि जागीरदारी प्रथा ही प्रशासन का आधार रही है–'राजस्थान में मेवाड़ राज्य की जागीरदारी प्रथा काफी सबल थी इस राज्य का महत्व अन्य राज्यो की अपेक्षा अधिक था। आक्रमणकारियों के इस राज्य पर जितने अत्याचार हुए थे, वैसे अत्याचार अन्य राज्यो को सहने नही पड़े थे इसके उपरान्त भी मेवाड़ की जागीरदारी प्रथा सदा सजीव और सबल होकर रही। जिस समय दिल्ली का मुगल शासक शिथिल और कमजोर हो गया था उस समय भी मेवाड़ राज्य की जागीरदारी प्रथा दृढ़ता के साथ चल रही थी।'[1]

'मेवाड़ में उमरावों के अधिकार व विशेषाधिकार राजपूताने के अन्य राज्यो की तुलना में अधिक है। ठिकानो में वही व्यवस्था छोटे रूप में देखी जा सकती है जो केन्द्र में महाराणा की होती थी वे खास अवसरों पर खासा रूक्का मिलने पर ही महाराणा की सवारी में शामिल होते थे। दरबार में उनका स्थान युवराज से ऊपर होता था। उमराव के दरबार में पहुँचने पर सभी खड़े होकर स्वागत करते थे। इस अवसर पर अपने पद एवं मर्यादा के अनुसार उनका सम्मान होता था।'[2]

मेवाड़ की जागीरदारी व्यवस्था को स्थापित करने में उमरावों की राज्य के प्रति निष्ठा व कर्तव्य भावना का समावेश था। मेवाड़ के 16 उमरावों के प्रथम श्रेणी के ठिकानों में से एक सरदारगढ ठिकाना राजपूताना के मेवाड़ राज्य में दक्षिण राजस्थान के राजसमन्द जिले में 25.14' उत्तरी अक्षांश और 74' पूर्वी देशान्तर पर चन्द्रभागा नदी के दाहिने तट पर स्थित है। पहाड़ी पर स्थित सरदारगढ ठिकाने का दुर्ग समुद्र तल से 1984 फीट की ऊंचाई पर स्थित है। लावा सरदारगढ ठिकाना उदयपुर (मेवाड़ की राजधानी) से 50 मील उत्तर पूर्व की ओर स्थित है। सरदारगढ ठिकाने या कस्बे का प्राचीन नाम लावा था। डोडिया राजपूतो की जागीरी में 26 गांव मेवाड़ महाराणा द्वारा राजस्व पट्टे अर्थात जागीरी में पदत्त थें। जिनसे 24000 हजार राजस्व की आय ठिकाने को प्राप्त होती थी और जिसमें से 1390 रूपये सरदारगढ ठिकाने के ठाकुर द्वारा मेवाड़ महाराणा को नज़र (छटूंद या भेंट) कर दिये जाते थे।[3]

डोडिया वंश का उदय और मेवाड़ में आगमन – महाराणा शंभूसिंह व महाराणा सज्जनसिंह के काल में चारण कवि कायमदान दधिवाड़िया व कविराजा श्यामलदास दधिवाड़िया द्वारा लिखित दीपंगकुल प्रकाश ग्रंथ के अनुसार परशुराम द्वारा पृथ्वी से क्षत्रिय कुलो का 21 बार संहार कर देने के उपरांत नवीन क्षत्रिय वर्ण की उत्पत्ति के लिये किये गये यज्ञो में से एक में यज्ञ वाट में आरोपित कदली– कुसुम (डोड़े) से डोड़िया वंश की उत्पत्ति मानी जाती है। दूसरे मत के अनुसार यज्ञ द्वारा रक्षक रूप में स्थित होने से उसे डोड़िया (यज्ञवाट के द्वार का रक्षक या प्रतिहार) नाम दिया गया। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भारत के पश्चिमी द्वार (पश्चिमी भारत) के रक्षक होने से भी इन्हें द्वारपाल या डोड़िया उपाधि दी गई।[4] चूंकि डोडिया का राज्य सिन्ध, सौवीर और सौराष्ट्र, कठियावाड़ तक व्याप्त था जिसकी पश्चिमी सीमा ईरान या अफगानिस्तान थी। अत: इन्हे पश्चिमी धरा का रक्षक या द्वारपाल कहना उचित प्रतीत होता है।[5]

डोड़िया वंश का पौराणिक व ऐतिहासिक विवरण अग्रानुसार है। अग्निवंश, यजुर्वेद/सामवेद, शांडिल्य वशिष्ट गौत्र, कुलदेवी चामुण्डा माताजी, माध्यन्दिनी/वाजसनेयी शाखा, गांडिल्य/आसित/देवल प्रवर, विरूद्ध–चूडंग, पदवी द्वारपाल आदि।[6]

डोड़िया राजपूतो का मेवाड़ में स्थायी रूप से आगमन 14वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ परन्तु इससे पूर्व मेवाड़ महारावल रतनसिंह प्रथम (1297–1303) ई. के काल में दिल्ली के तुर्क सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के खिलाफ हुए चित्तौड़गढ के जौहर व साके में सार्दुलगढ़ (कठियावाड़ गुजराज) के राव जसकरण डोडियां अपने पांच हजार अश्वारोही सैनिको और भाई बन्धुओ के साथ मेवाड़ की रक्षार्थ लड़कर मुसलमानो के खिलाफ काम आयें।[7]

तत्श्पचात 1383 में मेवाड के महाराणा लाखा की माता श्री सोलंकनी जी द्वारका दर्शन हेतु जब कठियावाड़ से अपने मेवाड़ी सैनिको सहित गुजर रही थी तब काबा लुटेरो के एक दल ने मेवाड़ी फौज को घेर लिया। फलत: मेवाड़ी सेना के संख्या में कम होने के कारण राव जसकरण डोड़िया की पांचवी पीढ़ी का वंशधर उम्मेदगढ़ का रावसिंह डोडियां अपने दोनो पुत्रो कालू और धवल सहित काबो की फौज पर आक्रमण करते हुए टूट पड़ा और स्वयं राव सिंह युद्ध में काम आया पर काबो पर विजय प्राप्त कर ली गई और मेवाडी राजमाता सोलंकनी जी को ससम्मान मेवाड़ी सीमा तक पहुंचाकर कालू और धवल डोड़िया पुन: ठिकाने (गुजरात) लौट गये।[8] फलस्वरूप मेवाड़ महाराणा लाखा (1383–1411 ई.) ने धवल डोड़िया को रतनपुर व नन्दराय और मसूदा की पांच लाख रूपये वार्षिक आय का जागीर पट्टा प्रदान किया। कालू डोड़िया ने मालवा में स्वयं अपनी तलवार के बल पर अपना राज्य (मालवा ऐजेन्सी में ताल, मन्डावल, सुखेड़ा, पिपलौदा आदि ठिकाने) स्थापित किये।[9]

ठाकुर धवल डोडियां महाराणा लाखा की राजमाता की काशी तीर्थयात्रा

* अतिथि व्याख्याता, इतिहास सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

के समय उनका सरंक्षक बनकर उनके साथ गया एवं गुगल या गुगौर के छप्पर घाटे के हाकिम शेर खान को युद्ध में पराजित कर उसका लवाजमा और खजाना लूट लिया और महाराणा को नजर किया। ठाकुर धवल की सेवाओ से प्रसन्न होकर महाराणा लाखा ने धवल के छोटे पुत्र (हरकू या हरगोविन्द या नरेन्द्र) को बदनौर की जागीर 1373 ई. में प्रदान की। 1393 ई में दिल्ली के शासक गयासुद्दीन तुगलक द्वितीय से हुए युद्ध में मेवाड़ को विजय दिलाकर ठाकुर धवल डोड़िया और हरकू बदनौर के समीप काम आये।[10]

मेवाड़ महाराणा मोकल के समय 1397 ई. में डोड़िया ठाकुर सलहा या सबलसिंह नागौर हाकिम फिरोज खान की सेना के साथ लड़कर काम आए व मोकल की प्राण रक्षा करते हुए इनके पुत्र रतनसिंह काम आए। ठाकुर सबलसिंह के उत्तराधिकारी ठाकुर नरसिंह डोड़िया ने गायो की हत्या करने वाले नागौर के मुस्लिम शासक या हाकिम से लड़कर मेवाड़ को विजय दिलाई एवं (वि.सं. 1524) 1466 –67 ई0 में महाराणा कुंभा के समय हुए इस युद्ध में ठाकुर नरसिंह डोड़िया वीरगति को प्राप्त हुए।[11]

1527 ई. में दिल्ली के शासक बाबर के खिलाफ हुए खानवा युद्ध में मेवाड़ महाराणा सांगा की तरफ से लड़कर डोड़िया ठाकुर कर्णसिंह अपने पुत्र अमरसिंह व पौत्र सुजानसिंह सहित रण में खेत रहें।[12] डोड़िया ठाकुर भाण चित्तौड़गढ के दूसरे जौहर व साके में 1535 ई में बहादुरशाह गुजराती की फौज से लड़कर अपने प्राण न्यौछावर किये। इस दानवीर भाण ने हरिदास महियारियां नामक चारण कवि को डोड़ियां वंश की विरूदावली पढने के कारण प्रसन्न हो 700000 रूपयें बख्शी या भेंट में दियें।[13]

1567 ई. में ठाकुर सांडा डोड़िया ने मुगल शासक अकबर के खिलाफ लड़कर चित्तौड़ के तीसरे साके में अपना बलिदान दिया।[14] 1576 ई. में मुगल शासक अकबर द्वारा कछवाहा राजा मानसिंह के नेतृत्व में भेजी गई मुगल सेना के खिलाफ महाराण प्रताप के नेतृत्व में लड़कर डोड़िया ठाकुर भीमसिंह अपने भाई कर्मसिंह व दो पुत्रो हम्मीरसिंह व गोवर्धन सिंह सहित रण में खेत रहे।[15]

डोड़िया ठाकुर गोपालदास ने महाराणा प्रताप के साथ रहकर मुगलो से कई लड़ाईयां लड़ी और महाराणा अमरसिंह (1597–1620 ई.) के काल में मुगल सेनापति अब्दुल्ला खां की सेना से लड़कर वीरगति प्राप्त की। डोड़िया ठाकुर जयसिंह के पुत्र रणछोड़दास मुगल शाहजादे परवेज की सेना से वीरतापूर्वक लड़कर देसूरी में काम आये जबकि ठाकुर जयसिंह स्वयं लुटेरे उपद्रवी मेरों से लड़कर काम आये लेकिन उनके उत्पात का दमन कर डाला।[16]

सरदारगढ – डोड़िया ठाकुर नवलसिंह एक शक्तिशाली योद्धा भगवतभक्त पुण्यात्मा व्यक्ति था और कवियों व विद्धानो का पोषक और काव्यरसामृत का पिपासु भ्रमर था। ठाकुर नवलसिंह डोड़िया महाराणा राजसिंह प्रथम (1652–1680) के साथ रहकर औरंगजेब की सेना से लोहा लिया।[17] डोड़िया ठाकुर हठीसिंह को महाराणा अमरसिंह द्वितीय (1698–1710 ई.) ने कुवारियां की जागीर प्रदान की। ठाकुर हठी ने मुगल सेनापति रणबाज खां मेवाती के खिलाफ 1711 ई. में हुई बाधनवाड़ा की लड़ाई में वीरतापूर्वक युद्ध करते हुए मेवाड़ को विजय दिलाई।[18]

डोड़िया ठाकुर हठीसिंह का भाई इन्द्रभाण के पुत्र सरदारसिंह को महाराणा जगतसिंह द्वितीय (1734–1751 ई.) ने लावा का ठिकाना प्रदान किया, जहां ठाकुर सरदारसिंह ने परकोटे व बुर्ज सहित एक विशाल गढ का निर्माण पहाड़ी पर करवाया। इस दुर्ग के गृह प्रवेश के अवसर पर महाराणा ने इस दुर्ग व ठिकाने का नाम सरदारसिंह के नाम पर ही सरदारगढ़ रखा।[19]

ठाकुर लक्ष्मणसिंह – डोड़िया जागीरदार राजवंश के ठाकुर सरदारसिंह के उत्तराधिकारियों के आगे की वंशावली अग्रानुसार रही – ठाकुर सांवतसिंह, ठाकुर जोरावरसिंह, ठाकुर मनोहरसिंह, ठाकुर सोहनसिंह, ठाकुर लक्ष्मणसिंह, ठाकुर अमरसिंह।[20]

इस प्रकार मेवाड़ में बाहर से आए बलिदानी सामन्ती में सर्वप्रथम डोड़िया राजपूतो का प्रवेश हुआ। ठाकुर धवल डोड़िया से लेकर ठाकुर नवल डोड़िया तक 10 पीढियां लगातार मेवाड़ राज्य की रक्षार्थ रण में स्वयं का बलिदान करते हुए काम आयी। यह ठिकाना मेवाड़ के प्रथम श्रेणी के 16 ठिकानो में से एक रहा है।[21]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शर्मा धर्मपाल, मेवाड़ संस्कृति एवं परम्परा, पृ. 111 प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर, 1999
2. वाल्टर्स, सी.के.एफ., बायोग्राफिकल स्केचेज ऑफ दि चीफ्स ऑफ मेवाड़ (भूमिका) प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर
3. सं. जावलिया ब्रजमोहन, कायमदान एवं श्यामलदास विरचित दीपंग कुल प्रकाश, ठि. सरदारगढ का इतिहास, पृ..सं. 14–16, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर 1995 ई Biographical Sketches of the chief of the mewar, ग्रन्थाक 3/397, 350,पृ.स.–33, मेवाड़ इतिहास खण्ड में संग्रहित, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर।
4. जावलिया ब्रजमोहन, कायमदान एवं श्यामलदास विरचित दीपंग कुल

प्रकाश, ठि. सरदारगढ का इतिहास, पृं.स. 15-16 पुरोहित राजेन्द्र नाथ, मेवाड़ दरीखाने के रीतिरिवाज एवं संस्कार, पृ.सं. 66, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2005 ई.।

5. शर्मा धर्मपाल, मेवाड़ संस्कृति एवं परम्परा, पृ.सं. 215, प्रताप शोध प्रतिष्ठान उदयपुर।
6. सरदारगढ़ ठिकाने की तवारीख, पृ.सं. 1, हस्तलिखित ग्रंथ संग्रह, ग्रंथ संख्याक 108, गौरीशंकर हीराचन्द औझा संग्रह, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर
7. सरदारगढ़ ठिकाने की तवारिख, पृ.सं. 2; walter col. C.K.M Biographical Sketches of the chief of the mewar हस्तलिखित ग्रंथ संग्रह, ग्रंथांक 239, कविराजा श्यामलदास संग्रह, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर भाटी हुकुमसिंह, महाराणा प्रताप ऐतिहासिक अध्ययन, पृ.सं. 108, राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी जोधपुर (राज.)।
8. सरदारगढ़ ठिकाने की तवारीख, पृ.सं. 3 राठौर गोपालसिंह, हमारे गौरव, पृ.सं. 75, प्रकाशक, गोपालसिंह राठौर,चित्तौड़गढ 2012 ई.।
9. सरदारगढ़ ठिकाने की तवारीख, पृ.सं. 3-4 कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग - प्रथम, पृ.सं. 306, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली 1986 ई.
10. सरदारगढ़ ठिकाने की तवारीख, पृ.सं. 8
11. वही, पृ.सं. 12; महाराणा रायमल (1473-1506) ने माण्डू के जफर खां से युद्ध करने से पूर्व कर्ण सिंह डोडियां को चंचलो घोड़ा प्रदान किया, राणावत प्रतापसिंह, सिसोदवंश का संक्षिप्त इतिहास एवं महाराणा मोकल के वंशज कितावत सिसोदिया, पृ.सं.190-113, हिमांशु पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2004 ई.
12. सरदारगढ़ ठिकाने की तवारीख, पृ.सं. 13
13. कविराजा श्यामलदास, वीर विनोद, भाग - 2 खण्ड 1, पृ.सं. 81; संपादक लोकेन्द्रसिंह चुण्डावत, लेखक राठौर उम्मेद सिंह, ऐतिहासिक गढ़ चित्तौड़ पृ. सं. 109, राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर 2003 ई, धमोरा सवाई सिंह, चित्तौड के जौहर व साके पृ. सं. 31, राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर 2008 ई, शर्मा नारायण लाल, महाराणा उदयसिंह पृ. सं. 85-89 मदर इण्डिया पब्लिकेशन दिल्ली 2009 ई।
14. सरदारगढ़ ठिकाने की तवारिख, पृ.सं. 19-21, राणावत सज्जन सिंह गुप्ता के.एस., दिवेर विजय अंक, महाराणा प्रताप से संबधित स्त्रोत एंव संस्थान, पृ.सं. 69, महाराणा प्रताप स्मारक समिति, उदयपुर 2002 ई. गुप्ता मोहनलाल, उदयपुर, जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, पृ. 180, नवभारत प्रकाशन, जोधपुर 2004 ई. राठौर उम्मेदसिंह, महाराणा प्रताप और हल्दीघाटी पृ. 29 शार्दल स्मृति संस्थान, धोली, भीलवाड़ा, 2005 ई.।
15. सरदारगढ़ ठिकाने की तवारिख, पृ.सं. 19-21, राणावत सज्जन सिंह गुप्ता के.एस., दिवेर विजय अंक, महाराणा प्रताप से संबधित स्त्रोत एंव संस्थान, पृ.सं. 69, महाराणा प्रताप स्मारक समिति, उदयपुर 2002 ई. गुप्ता मोहनलाल, उदयपुर, जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, पृ. 180, राठौर उम्मेदसिंह, महाराणा प्रताप और हल्दीघाटी पृ. 29
16. सरदारगढ़ ठिकाने की तवारीख, पृ.सं. 22-26
17. पुरोहित डॉ. उषा, महाराणा राजसिंह कालीन राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, पृ.सं. 72-73, सूर्य नगरी प्रकाशन जोधपुर, 2004 ई भट्ट राजेन्द्र शंकर, महाराणा रायसिंह और औरंगजेब, पृ.सं. -194 राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2010 ई.
18. सरदारगढ़ ठिकाने की तवारीख, पृ.सं. 31-36
19. वही, पृ.सं. 40-42
20. ओझा गौरीशंकर हीराचंद , उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग -2, पृ.सं. 925-927, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2006 ई.
21. सं. जावलिया ब्रजमोहन, कायमदान एवं श्यामलदास विरचित दीपंग कुल प्रकाश, ठि. सरदारगढ का इतिहास, पृ..सं. 4

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

भारतीय समाज में अंर्तजातीय विवाह अवधारणा - औचित्य एवं सामाजिक परिदृश्य

डॉ.के.एल. टाण्डेकर * डॉ. राजेन्द्र कुमार शर्मा ** श्रीमती तूलिका चक्रवर्ती ***

प्रस्तावना - वैदिक काल में भारतीय समाज में कर्मव्यवस्था थी जिसे ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य शुद्र का नाम दिया गया था उन दिनों विवाह जातियों में जकड़ी व्यवस्था नहीं थी किन्तु कालांतर में भारतीय समाज की विडम्बना ये रही है कि कर्म आधारित व्यवस्था को जन्म से जोड़ दिया गया जन्म आधारित व्यवस्थाने एक ऐसे समाज का निर्माण किया जिससे विभिन्न वर्गो के ऊँच नीच छोटे बड़े जातियों के समूह में विभाजित कर दिया और विवाह जैसी महत्वपूर्ण व्यवस्था को समाज से जोड़ दिया भारतीय सामाजिक परिप्रेक्ष्य में आज भी विवाह केवल व्यक्तिगत ना होकर पारिवारिक व्यवस्था भी है, भारतीय समाज की सांस्कृतिक विभिन्नताओं को देखे तो अलग अलग क्षेत्रों में भाषा, खान-पान, पहनावा, रहन सहन, पर्व त्यौहार, रीति रिवाज इत्यादि में बहुत अंतर है, मानसिक परिपक्कता के बिना मात्र शारिरिक आकर्षण के फलस्वरूप प्रेम/अर्न्तजातीय विवाह की बाते प्रारम्भिक रूप में तो महज गौंड लगती है बाद में अनेक परेशानिया उत्पन्न होने के कारण अर्न्तजातीय विवाह का अंत संबध विच्छेद या अलगाव पर समाप्त होता दिखाई देता है।

जाति प्रथा को अनेक समाजशास्त्रियों एवं विद्वानो ने विकास में बाधक तत्व माना है, और इसके निराकरण के लिए अनेक प्रयासो में एक सजग और कारगार प्रयास अर्न्तजातीय विवाह को माना है, इसलिए संविधान में अर्न्तजातीय विवाह संबधित अनुच्छेद और अनुबंध भी जोड़े गए साथ ही समय-समय पर कानून निर्माण एवं नीति निर्माण करके अर्न्तजातीय विवाह को प्राथमिकता दिया जाता रहा है, इसके पीछे उद्देश्य यही रहा है कि दोनो में जाति प्रथा का उन्मूलन जल्द से जल्द हो और देश विकास के शिखर तक पहुंचने का रास्ता निश्चित कर सके समाज में जातियों को पूर्वाग्रहो से समाप्त करने के लिए सरकार अर्न्तजातीय विवाह को बढ़ावा दे रही है इसके लिए अर्न्तजातीय विवाह के प्रति लोगो की सोच बदल रही है।

अवधारणा - विवाह एक सामाजिक संस्था है इस संस्था का उद्ग मनुष्य समाज के साथ हुआ समय तथा काल के साथ चाहे इसका स्वरूप भिन्न रहा हो, परन्तु विवाह तो विवाह ही था और है, जनजाति समाज से लेकर आधुनिक समाज के बीच विवाह की संरचना तथा स्वरूप भिन्न रहे है परन्तु विवाह का आधार अपरिवर्तित रहा है, अर्न्तजातीय विवाह ऐसा विवाह है जो एक पुरूष तथा एक स्त्री को जो कि विभिन्न जाति समूहो के है जब वह परिवार नामक समिति का गठन करने के लिए एक सत्र में बंधते है तो वह विवाह अर्न्तजातीय विवाह कहलाता है।

समय-समय पर व्यवस्था में वर्ग परिवर्तन किए जा रहे है, जिससे की समाज में भेदभाव जाति बंधन को समाप्त किया जा सके भारतीय संविधान के अनुसार भारत का हर वयस्क नागरिक अपनी पंसद से विवाह करने के लिए स्वतंत्र है लेकिन जाति और सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत समाज द्वारा इस तरह की स्वतंत्रता प्रदान नहीं की गई है यहां केवल जाति के अंदर विवाह करने का ही सिद्धान्त मान्य है, हालाकि अब पश्चिमीकरण और आधुनिकता से प्रभावित होकर वर्षो ये चली आ रही ऐसी सड़ी-गली मान्यताओ को हमारा युवा वर्ग चुनौती देने लगा है और अपनी इच्छा और पंसद से विवाह करने के अपने अधिकारो की मांग कर रहे है।

भारत में वर्तमान समाज के बदलते परिदृश्य मे मनुष्य के जीवन में अर्थवता उसके सामाजिक मानको से जुड़ी हुई है भारतीय समाज प्राचीन से अर्वाचीन की मात्रा में अनेक संघर्ष देते है, प्राचीन भारतीय समाज में कर्म मूलक वर्ण व्यवस्था की शुरूवात हई परंतु कालांतर में यह वर्ण व्यवस्था कर्म से हटकर जाति में केन्द्रित हो गई। समाज में उच्च वर्ग और निम्नवर्ग दो अलग अलग धारणाऐं बन गई है और दोनो वर्गो के मध्य परस्पर संघर्ष आरम्भ हो गया है वर्तमान में स्वतंत्र भारत के 72 वर्ष की समय सीमा पूर्ण होने पर भी विभिन्न धर्मालंबियो द्वारा अधिनियम पारित कर विवाह शर्त उद्धेश्य निर्धारित कर दिए है जिसके फलस्वरूप अर्न्तजातीय विवाह को खासकर ग्रामीण क्षेत्रो में निवास करने वाली 74.3 प्रतिशत लोग मान्यता प्राप्त करने से परहेज करते है ऐसे विवाह को समाज विरोधी संज्ञा प्रदान करते है वही दूसरी ओर पूंजीपति वर्ग अपने समकक्ष धनबल एवं एष्वर्यता के बल पर अर्न्तजातीय विवाह को बढ़ावा देते दिखाई पड़ रहे हैं।

विवाह सामाजिक जीवन की एक महत्वपूर्ण संख्या है विभिन्न समाजो में विवाह के रूप में चाहे कितनी भी विभिन्नताएं क्यो न हो लेकिन एक संस्था के रूप में विवाह सभी समाजो में अनिवार्य मानी जाती है क्योकि भारतीय समाज में परम्परागत विवाह एक धार्मिक संस्कार के रूप में माना जाता है और धार्मिक नियम विधियां कुछ समस्याएं कुरीतियां एवं प्रथाऐं जन्म ले ली है और ले भी रही है जो समाज के विकास में विभिन्न प्रकार के धार्मिक अवरोध उत्पन्न कर रहा है भारतीय समाज में अर्न्तजातीय विवाह को एक दण्डनीय अपराध माना जाता है और विवाह करने वाले को घर परिवार और समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता था कही कही प्रेम विवाह करने वाले को मौत के घाट उतार दिया जाता था, आज कुछ हद तक ऐसी घटनाएं देखने सुनने को मिल रही है लेकिन वर्तमान समय में समाज दकियानुसो परम्पराओं से बाहर

*प्राचार्य, शासकीय डॉ. बाबा साहब ऑम्बेडकर महाविद्यालय, डोंगरगांव, जिला- राजनांदगांव (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय रानी सूर्यमुखी देवी महाविद्यालय, छुरिया, जिला- राजनांदगांव (छ.ग.) भारत
*** अतिथि व्याख्याता (कम्प्यूटर सांइस) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोंगरगढ़ जिला- राजनांदगांव (छ.ग.) भारत

निकल रहा ही जिसके कारण समाज में काफी बदलाव आ रहा है क्योकि उनमें परम्परागत मूल्यो, आदर्शो और रूढ़ियो के प्रति मोह भंग हो रहा है।

भारतीय समाज अर्न्तजातीय विवाह का औचित्य – अर्न्तजातीय विवाह समाज के जाति भेद को कम करने मे मील का पत्थर साबित हो रहा है, अर्न्तजातीय विवाह ने एक तरफ धार्मिक कट्टरता पर कुठारा घाट किया है, वही दुसरी ओर समाज में सांस्कृतिक आदान प्रदान की शुरूआत भी की है समाज में व्याप्त कुरूतियां और असमानता समाज को खोखला कर रहीं है अर्न्तजातीय विवाह उन सब सामाजिक समस्याओं के खिलाफ एक सशक्त कदम है, जिसे सिर्फ सामाजिक धार्मिक और राष्ट्रीय एकता का परिचायक मानना ही संगत पूर्ण नहीं है क्योकि आज यह वैज्ञानिकता की कसौटी में भी खरा उतरा है अर्न्तजातीय विवाह से उत्पन्न संतान तीव्र और तीक्ष्ण बुद्धि की होती है तथा उनमें आनुवांशिक बीमारियों के होने की संभावनाएं की समाप्त हो जाती है इसलिए वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अर्न्तजातीय विवाह का भारतीय समाज में औचित्य पूर्ण महत्व है।

भारतीय समाज में अर्न्तजातीय विवाह का औचित्य यानी एक जाति के युवक युवतियों का दूसरी जाति से विवाह करना सही है, एक शोध मुताबिक भारतीय समाज में मात्र 11 प्रतिशत शादियां ही अर्न्तजातीय होती है, जबकि 21 प्रतिशत शादियां जाति अंतर्गत की जाती है। अर्न्तजातीय विवाह की शुरूवात माया नगर मुम्बई से हुई जिसका कारण औद्योगिक नगरी और फिल्म इंडस्ट्रीज का होना है, सबसे ज्यादा 149 अर्न्तजातीय विवाह 1963 में बाम्बे में हुई, 1958 में एक सर्वे के मुताबिक अधिकांश माता पिता ने अपने बच्चों का अर्न्तजातीय विवाह करने की इच्छा जाहिर की आंकड़ों के मुताबिक भारत के होने वाली कुल अर्न्तजातीय विवाह में 96.5 प्रतिशत प्रेम विवाह होता है, भारत में ऑनर किलिंग का कारण भी है जिसके तहत् 97 प्रतिशत विवाह होना पाया गया गोवा में सबसे ज्यादा 20.69 प्रतिशत सिक्किम में 20 प्रतिशत पंजाब में 19 प्रतिशत तथा सबसे कम मेघालय व राजस्थान में है। छ0ग0 में 3.4 प्रतिशत जिसने मुस्लिम महिलाएं आगे है, भारत में मिडिल क्लास के 57 प्रतिशत लोग हाई क्लास के 66 प्रतिशत लोग अर्न्तजातीय विवाह की ओर आकर्षित हुए है।

शादियां विवाह जीवन का एक बहुत ही अहम हिस्सा है, और विवाह करने के लिए आपकी इच्छा पंसद खुशी सब होना जरूरी है, शादी करने के लिए अपने मन के अनुसार जाति धर्म और रंग चुनने का भी पूरा अधिकार है, सोचिए कि लड़का लड़की अलग अलग धर्म को मानने वाले हो किन्तु दोंनो एक दुसरे से प्रेम करते है और शादी करना चाहते है तो इस प्रकार के विवाह को अर्न्तजातीय विवाह कहा जाता है, अंतर का अर्थ होता है भिन्नता अलग–अलग दो भिन्न जातियों के मध्य विवाह करना औचित्य पूर्ण प्रतीत हो रहा है विभिन्न कानूनों द्वारा भी अर्न्तजातीय विवाह को बढ़ावा मिला है। 1872 में विशेष विवाह अधिनियम पास हुआ और 1923 में इसमें संशोनधन किया जिसमें अर्न्तजातीय विवाह की वैधानिक अड़चने दूर हो गई और सभी धर्मो में अर्न्तजातीय विवाह वैध माने गए दहेज प्रथा ने भी अर्न्तजातीय विवाह को पुष्ट करने का कार्य किया है आज राष्ट्रीय एकता हेतु अर्न्तजातीय विवाह को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है।

बदलते सामाजिक परिवेश में शिक्षा का प्रसार सूचना प्रौद्योगिकी ने न केवल परिवार में पुरूषो को अर्न्तजातीय विवाह बल्कि परिवार की बेटियों का भी सुयोग्य वर तलाश में अर्न्तजातीय विवाह से परे एक नयी सोच की ओर अग्रसर किया है आज लोग अपने जाति से विवाह कर पारिवारिक मूल्यो नैतिकता व परम्परा को बनाये रखने वाली घटिया सोच को पीछे कर श्रेष्ठ जीवनसाथी की तलाश में अर्न्तजातीय विवाह को एक महत्वपूर्ण पथ की तरह देखते है। ज्यादातर स्त्री पुरूष जाति बंधनो से परे अपने पंसद के लड़की व लड़के न केवल अपने प्रेम को विवाह की संज्ञा देने के लिए अर्न्तजातीय विवाह कर रहे सामाजिक भेदभाव व असामानता को दूर करते हुए व समाज में एकता व दूसरे जाति व समुदाय के प्रति समान की भावना को बढ़ा रहे, डॉ0जी0एस0 धुरिये ने अर्न्तजातीय के महत्व को बतलाते हुए लिखा है 'विभिन्न संबधो को दृढ करने की तथा राष्ट्रीयताओं के पोषण के लिए अर्न्तजातीय विवाह के द्वारा रक्त का एकीभाव एक प्रभावशाली साधन है।'

अर्न्तजातीय विवाह एवं सामाजिक परिदृश्य – समाज में मान्यता न मिलने पर तथा एक व्यवस्थित ढांचा न मिलने के बाद भी आज अर्न्तजातीय विवाह पहले की अपेक्षा अधिक हो रहे है तथा इसके विरोध की गहनता भी घट रही है, शिक्षा, दूर संचार माध्यमों की सुविधा व आवागमन की सुविधा से सम्पर्क सुविधा ने इस क्षेत्र का प्रसार अधिक किया है, तथा इस प्रकार की वैवाहिक नातेदारी को बनाने में सहायता प्रदान की है आधुनिक युग में शिक्षा की विधि तथा समझने के तरीके में नवीनीकरण हुआ है। आज आधुनिकरण व अद्योगिकरण के इस दौर में नए समाज का समाजीकरण हुआ है, जो पुराने लोकाचार प्रथाओ से बाहर आकर नूतन उन्नति की ओर परिवार के रूप में उभर रहा है, जो नित्य नयापन चाहता है नए सांस्कृतिक आयाम तथा परसंस्कृति को देखने व परखने की जिज्ञासा तथा भेदभाव रहित जन्य में विश्वास करने वालो का एक तबका उभर कर सामने आ रहा है जो अर्न्तजातीय विवाह का पक्षधर है। मानवता तथा लहू के रंग पर विश्वास करता है जहां जाति–जाति की हीनभावना सांस नहीं ले पाती वहां अर्न्तजातीय विवाह के पुष्प पल्लवित तथा पुष्पित होते है, इसके लिए स्वच्छ मन का वातावरण तथा प्रेम की खुशबू से उद्यान सींचने वाले माली ही इसके उत्तराधिकारी होते है, समाज में जाति के अधार पर होने वाले भेदभाव और विभाजन को दूर करने में अर्न्तजातीय विवाह की संख्या बढ़ेगी वैसे वैसे ही धीरे धीरे जातिगतपूर्वाग्रह कम होते जाएगें।

अर्न्तजातीय विवाह ने विगत कुछ वर्षो से लोगो के मन में बदलाव लाया है, आज देश के विभिन्न शहरो में 40 से 50 प्रतिशत लोगो ने अर्न्तजातीय विवाह को अपना लिया है और अपने इच्छा के अनुसार विवाह भी अलग अलग जातियों के बीच करने लगे है, बहुत से माता पिता भी स्वयं अपने बच्चों का अर्न्तजातीय विवाह करवा रहे है, ताकि उनके बच्चों को सुयोग्य जीवन साथी मिल सके अर्न्तजातीय विवाह अब किसी वर्ग विशेष तक सीमित न रहकर सभी वर्गो व जातियों पर अपना विशेष प्रभाव डाल रहा है, आज हमारा समाज लड़के लड़की को समान रूप से देखता है, ऐसे में अर्न्तजातीय विवाह करने वाले माता पिता/अभिभावक की संख्या में भी काफी इजाफा हुआ है हलांकि कुछ जातियों में लिंग भेद की समस्या आज भी रूकावट की दीवार बन कर खड़ी नजर आती है महिलाऐं समाज का एक ऐसा पहलू है जिसके बिना समाज का संचालक असंभव है अर्न्तजातीय विवाह दो तीन दशको में समाजिक स्तर पर अधिकाधिक स्वीकार्य होते जा रहे है, परिणामस्वरूप नए सामाजिक और सांस्कृतिक परिदृश्य का सृजन हुआ है। अर्न्तजातीय विवाह समाज और लोक संस्कृति को समन्वित और परिवार्जित करने के साथ साथ दो पृथक समुदायो के बीच सेतु की भूमिका निभाते है जिससे स्थानीय एवं क्षत्रीय परिवेश से हटकर एक विस्तृत स्वरूप 'वसुदेव कुटुबंकम' के भाव प्रफुलित होते है।

अर्न्तजातीय विवाह के लाभ – वर्तमान समय में अर्न्तजातीय विवाह का

प्रचलन शहरीकरण के चलते निरंतर बढ़ रहा है क्योकि ज्यादा से ज्यादा युवा महिला पुरूष जाति के बंधन से परे अपनी पंसद से शादी करना चाहते है, सर्वोच्च न्यायालय ने भी इसे राष्ट्रीय मान्यता प्रदान कर दी है इससे अर्न्तजातीय विवाह के कई लाभ है जिनको ध्यान में रखकर समाज की सोच में भी बदलाव आ रहा है।

1. **जातिवाद का भेदभाव दूर होना–** अर्न्तजातीय विवाह से समाज में समाज में व्याप्त असमानता, स्पृश्यता, जातिवाद का भेदभाव समाप्त होता है, तथा समाज में समरसता का वातावरण निर्मित होता है जो राष्ट्रहित एवं समाजहित में है वैवाहिक संबध इस प्रकार की समस्या को दूर करने में अर्न्तजातीय विवाह सार्थक सिद्ध हो रहे है, जहां सामाजिक सौहद्रता का माहौल बना है वही जीवन की कुठाओं से बाहर निकलकर लोग सुख और प्रसन्नता का अनुभव कर रहें है

2. **बौद्धिक उपलब्धि –** रक्त संबधियो से विवाह करने पर कुछ जैनेटिक बीमारिया उत्पन्न होती है अर्न्तजातीय विवाह के द्वारा इन परेशानियों से काफी हद तक बचा जा सकता है, सर्वेक्षण से यह बात सामने आई है कि अर्न्तजातीय विवाह से उत्पन्न संतानो का बौद्धिक स्तर अधिक ऊँचा होता है।

3. **अन्धविश्वास तथा पाखण्ड का अंत –** अर्न्तजातीय विवाह समाज में व्याप्त कुरितियों जैसे पाखण्ड अन्धविश्वास जातिवाद, दहेज प्रथा आदि कुरूतियों को मिटाने के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध हो रहे है

4. **दूसरे धर्म तथा समाज की इज्जत बढ़ेगी –** अपने जाति के साथ साथ दूसरे जाति व धर्म के प्रति दोनों के मन में सदभाव उत्पन्न होंगे दूसरे धर्म के प्रति समान व आदर भाव बढ़ेगा जब हम दूसरे धर्मो की अच्छाइयों को ग्रहण करेगें तब उनके प्रति हमारे मन में इज्जत बढ़ेगी।

5. **जीवनसाथी के चुनाव में व्यापकता –** अर्न्तजातीय विवाह सुयोग्य जीवन साथी के चुनाव में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है क्यांकि एक ही धर्म व जाति के छोटे से दायरे से बाहर आकर व्यापकता से जीवन साथी चुनने से संकीर्ण विचार धाराओ से मुक्ति मिलती है ही तथा विवाहो की समस्याओं से उसको जो कठिनाईयां होती है उससे वह परे हो जाता है।

6. **पर्दाप्रथा की समाप्ति –** अर्न्तजातीय विवाह के आपसी मेज जोल से पर्दा प्रथा की समाप्ति होती है यह प्रथा सांस्कृतिक अवरोध का कार्य करता है, धार्मिक आंचल में विशेषकर मुस्लिम समुदाय में इसका विशेष महत्व है परंतु इसको कुछ अथ समुदायो में भी विभिन्न प्रकार से स्वीकार किया जाता है अर्न्तजातीय विवाह को प्राथमिकता देकर आधुनिक समाज में एक नवीन संरचना का निर्माण करेगा।

7. **लोग जागरूक होंगे तथा उनके मन में बदलाव आयेगा –** अर्न्तजातीय विवाह ने इन कुछ वर्षो में लोगो के मन में बदलाव लाया है आज लगभग भारत के शहरों में अधिकाशं लोग इसे अपना रहे है उनके सोच में भी बदलाव आ रहा है।

8. **दहेज प्रथा की समाप्ति –** अर्न्तजातीय विवाह दो हृदय को एक सूत्र में बांधने वाला बंधन है, जहां केवल भावो और प्राकृतिक विचारो का पुंज होता है और माया मोह से दूर लालच तथा आर्थिक कुंठाओ से ग्रसित लोगो के लिए एक सीख है।

9. **बाल विवाह पर प्रतिबंध –** हमारे देश में बाल विवाह प्रथा का प्रचलन रहा है जो ग्रामीण क्षेत्रो में अधिक देखने को मिलता है, इसे परम्पराओं और प्रथाओ एवं धर्म की संज्ञा भी दी जाती है किन्तु वर्तमान में इस कुंठित विचारधारा से बाहर निकलकर अर्न्तजातीय विवाह जैसी विचारधारा को स्वीकार किया जा रहा है यह नई स्थापना बाल विवाह पर अंकुश लगाता है

अर्न्तजातीय विवाह की समता वनस्पति जगत में होने वाले Cross Pollination से की जा सकती है जिसके परिणाम स्वरूप उत्पन्न प्रजाति अधिक श्रेष्ठ व पुष्ट होती है, अत: जैविक दृष्टि से स्वास्थ्य एवं अधिक संतति की उत्पत्ति में अर्न्तजातीय विवाह सहायक होता है परन्तु वनस्पति जगत की यह श्रेष्ठ उपलब्धि पशुओं में नहीं है यह एक विचारणीय प्रश्न है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप से हम कह सकते है कि अर्न्तजातीय विवाह दो भिन्न व्यक्तियों के बीच होता है, अपनत्व तथा समान का भाव ही हर विवाह की सफलता की कूंजी है भविष्य में जैविक लाभ सुखी परिवार अमन और शान्ति के लिए तथा बदलते नए विश्व में दृढ़ता से अपना स्थान बनाने के लिए हमें अर्न्तजातीय विवाह की सराहना करते हुए इसे अपनाने के लिए सामाजिक परिदृश्य में परिवर्तित लाना एवं अपनाना होगा अर्न्तजातीय विवाह संबंधो में जहां सकारात्मक परिणाम है वही नकारात्मक प्रतिफल सामाजिक विरोध बहिष्कार के रूप में देखने को मिलते है यदि परिवार की ऐसे विवाह में रजामंदी नहीं होती है तब परिवार समुदायो के मध्य वैमनस्यता और असहिष्णुता की स्थिति का निर्माण होते देर नहीं लगती, परिवेश तनावयुक्त हो जाता है। मानवीय संवेदनाओं, कोमल भावनाओं पर कुठारघात करते हुए पाश्विक भाव को पनपने का अवसर निर्मित होता है, सामाजिक स्वीकार्यता के अभाव में ऐसे विवाह संबध विकसित होने के पूर्व ही अवसाद ग्रस्त हो जाते है। अत: युवाओं को चाहिए कि अर्न्तजातीय विवाह परिवार की रजामंदी से ही करे जिससे उनका भविष्य उज्जवल एवं सुख शांति से भरा हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय समाज में अर्न्तजातीय विवाह का औचित्य एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण – शोध संगोष्ठी शोध सारांश स्मारिका 2018
2. भारतीय राजपत्र
3. अर्न्तजातीय विवाह आलेख–इंटरनेट

****

उज्जैन जिले के आर्थिक विकास में महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा संचालित योजनाओं का अध्ययन (वर्ष 2010-11 से 2014-15)

डॉ. हेमलता ललावत*

प्रस्तावना – संपूर्ण भारतीय समाज में लगभग आधी आबादी स्त्रियों की है। किंतु स्त्रियों के पास वास्तविक सम्मान नहीं है। उन्हें उपेक्षित, दयनीय, पिछड़ा हुआ एवं दोयम दर्जे की स्थिति प्राप्त है। वर्ष 1975 को अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के रूप में मनाया गया। महिलाओं को सामाजिक, और सशक्त बनाने की पहल की गई उपर्युक्त दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार एवं अन्य राज्य सरकार द्वारा कई कानून तथा योजनायें बनाई गई है। इन योजनाओं को गति प्रदान करने के लिये ही भारत सरकार द्वारा मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय को एक विभागीय स्वरूप देते हुए उसके मार्गदर्शन एवं निर्देशन में सन् 1985 में महिला एवं बाल विकास विभाग की स्थापना की गई। महिला एवं बाल विकास कार्यक्रमों के पीछे मूल तथ्य यह है कि महिला एवं बच्चों को विशेष तौर पर कम आय वर्ग के लिए तथा उनके उत्थान के लिए समुचित प्रयास किए जाएं एवं उन महिलाओं को इस दृष्टि से उद्योग की सुविधा उपलब्ध कराई जाए जिससे उनकी आय में वृद्धि हो सके। ताकि बच्चों के पालन आदि में निर्वाचन रूप से अपने को समर्थ कर सके। वर्ष 1985 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय एवं बाल विकास कार्यक्रमों द्वारा उनका कल्याण करना है। महिला बाल विकास विभाग द्वारा उज्जैन जिले में सन् 1986 से विभिन्न योजनाएं क्रियान्वित की गई। उज्जैन जिले में 8 तहसीलें हैं तथा उज्जैन जिले की नगरी जनसंख्या में सबसे अधिक जनसंख्या उज्जैन नगर की है। कुल जनसंख्या लगभग 1986864 है जिसमें लगभग 1189465 पुरुष एवं लगभग 1135961 स्त्री है।

उज्जैन जिले में महिला एवं बाल विकास की योजनाओं की क्रियान्वयन की स्थिति निम्नानुसार है :-

1. लाड़ली लक्ष्मी योजना – बालिका जन्म के प्रति जनता में सकारात्मक सोच, लिंगानुपात में सुधार, बालिकाओं की शैक्षणिक स्तर तथा स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार तथा उनके अच्छे भविष्य की आधारशिला रखने के उद्देश्य से लाडली लक्ष्मी योजना संचालित की गई है। यह योजना 1 अप्रैल 2007 से, महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा संचालित की जा रही है

2. उषा किरण योजना – घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005 नियम 2006घरेलू हिंसा से जिसमें शारीरिक, मानसिक, आर्थिक और भावनात्मक आदि प्रकार की हिंसा शामिल है। महिला को संरक्षण एवं सहायता का अधिकार उपलब्ध कराता है।

3. मंगल दिवस का आयोजन – आंगनवाड़ी की सेवाओं को लोकप्रिय तथा जन सामान्य को आकर्षित करने, सामुदायिक सहभागिता बढ़ाने तथा पूरक पोषण आहार व्यवस्था में परिवर्तन के साथ-साथ कुछ नवीन गतिविधियों के अंतर्गत आंगनवाड़ी केंद्रों पर के प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ मंगलवार को निम्न कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

1. गोद भराई कार्यक्रम
2. अन्नप्राशन कार्यक्रम
3. जन्म दिवस कार्यक्रम
4. किशोरी बालिका दिवस

4. मुख्यमंत्री महिला सशक्तिकरण योजना – उक्त योजना का उद्देश्य 14 से 35 वर्ष तक की किशोरी बालिकाओं तथा महिलाओं में उद्यमिता के प्रति जागरूकता पैदा करना, स्वरोजगार के अवसरों की जानकारी देकर दीर्घकालीन आर्थिक विकास के लिये युवतियों एवं महिलाओं को तैयार करना है।

5. लाडो अभियान – 2013 से बाल विवाह रोको अभियान को वृहद रूप देते हुये पूरे वर्ष बाल विवाह रोकने का अभियान तैयार किया गया। उज्जैन जिले में 2014 से क्रियान्वित हुआ।

6. दत्ताक ग्रहण योजना – सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा अनाथ और बेसहारा बच्चों के पुनर्वास एवं सामाजिक पुर्नस्कीकरण हेतु नियमानुसार गोद दिये जाने की कार्यवाही की जाती है।

तालिका क्रमांक 1.1 : उज्जैन जिले में लाडली लक्ष्मी योजना की जानकारी

क्र.	वर्ष	स्वीकृत प्रकरणों की संख्या
1.	2010-11	7807
2.	2011-12	11282
3.	2012-13	10074
4.	2013-14	4216
5.	2014-15	10064

स्त्रोत : उज्जैन जिले के महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा प्राप्त आंकडे

उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वित्तीय वर्ष 2010-11 में स्वीकृत प्रकरणों की संख्या 7807 है। इसी प्रकार 2011-12, 2012-13, 2013-14 तथा 2014-15 में क्रमश: 11282, 10074, 4216 एवं 10064 प्रकरणों की संख्या है। अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि लाडली लक्ष्मी योजनाओं का सर्वाधिक लाभ महिलाओं को 2011-12 में हुआ जिसकी स्वीकृत प्रकरण की संख्या 11282 है।

तालिका क्र. 1.2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1.2 से स्पष्ट है कि वर्ष 2010-11 में 102 शिकायत प्राप्त हुई जिसमें न्यायालय में प्रस्तुत व निराकरण की संख्या 20 है। इसी तरह वर्ष 2011-12, 2012-13, 2013-14, 2014-15 में शिकायतों की संख्या क्रमश: 99, 110, 317 तथा 524 है। जिसमें प्रकरणों की संख्या 20, 32, 52, 148, 217 है जबकि निराकरण प्रकरणों की संख्या क्रमश:

* 7/3 किशनपुरा मैक्सी रोड,उज्जैन (म.प्र.) भारत

20, 30, 52, 148 तथा 163 है।

तालिका क्र. 1.3 : उज्जैन जिले में मंगल दिवस कार्यक्रम की जानकारी

क्र.	मंगल दिवस कार्यक्रम	हितग्राहियों की संख्या	प्रतिशत
1	हां	82	58.57
2	नहीं	58	41.43
		140	100.00

स्त्रोत :- व्यक्तिगत सर्वेक्षण द्वारा

बालिका से स्पष्ट है कि महिला हितग्राहियों को लाभ प्राप्त हुआ उनकी संख्या 82 है जिनका प्रतिशत 58.57 है। जिन्हें लाभ प्राप्त नहीं हुआ उनकी संख्या 58 है और प्रतिशत 41.43 है।

निष्कर्ष में कह सकते है कि मंगल दिवस कार्यक्रम से महिला हितग्राही को अधिक लाभ प्राप्त हुआ।

तालिका क्रमांक 1.4 : उज्जैन जिले में महिला सशक्तिकरण की जानकारी

क्र.	किशोरी बालिका दिवस की जानकारी	हितग्राहियों की संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	62	44.29
2.	नहीं	78	55.71
	कुल	140	100.00

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण द्वारा

तालिका क्रमांक 1.3 से ज्ञात होता है कि 62 महिलाओं और बालिकाओं को आर्थिक गतिविधियों द्वारा प्रशिक्षण प्राप्त हुआ जबकि 78 महिलाओं और बालिकाओं का मानना है कि उन्हें प्रशिक्षण प्राप्त नहीं हुआ। जिनका प्रतिशत 44.29 है जबकि जिन महिलाओं को प्रशिक्षण प्राप्त नहीं हुआ उनका प्रतिशत 55.71 है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि जिन महिलाओं और बालिकाओं को प्रशिक्षण प्राप्त नहीं हुआ उनका प्रतिशत अधिक है।

तालिका क्रमांक 1.5 : उज्जैन जिले में लाडो अभियान की जानकारी

क्र.	बाल विवाह रोकथाम की जानकारी	हितग्राहियों की संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	118	84.29
2.	नहीं	22	15.71
	कुल	140	100.00

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण द्वारा

तालिका क्रमांक 1.4 से स्पष्ट है कि जिले में 118 महिला हितग्राहियों द्वारा घरेलू हिंसा रोकने में सहायता की गई उनका प्रतिशत 84.29 जबकि 22 महिलाओं को सहायता प्राप्त नहीं हुई उनका प्रतिशत 15.71 है। अतः हम निष्कर्ष में कह सकते है कि लाडो अभियान के लाभार्थी हितग्राहियों की संख्या अधिक है।

कारण एवं समाधान :

1. योजना संबंधी जानकारी का अभाव रहता है।
2. प्रचार प्रसार समय पर नहीं होना
3. कागजी कार्यवाही अत्यधिक होना
4. योजना संबंधी राशि का समय पर भुगतान नहीं होना।
5. आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं का कम पढ़ा लिखा होना।
6. ग्रामीण महिलाओं को कच्चे माल लाने में असुविधा का सामना करना।
7. कुटीर उद्योग मैं बनी सामग्री को बेचने में कठिनाई होना।
8. महिला हितग्राही का अशिक्षित होना।
9. किराए के भवन में आंगनवाड़ी खोलना। बार-बार स्थानांतरित होते रहना।

सुझाव निम्नलिखित है:

1. योजना से संबंधित कागजी कार्यवाही सरल होना चाहिए।
2. हितग्राही महिलाओं को योजना के अंतर्गत राशि का समय पर भुगतान होना चाहिए।
3. कुटीर उद्योग में प्रशिक्षण एवं मार्गदर्शन की आवश्यकता है।
4. आंगनवाड़ी भवन का अधिक निर्माण करना होगा।
5. यातायात सुविधा का उपलब्ध होना।
6. प्रचार-प्रसार का जरिया बढ़ाना। टीवी और इंटरनेट के जरिए योजना का प्रचार करना।
7. आंगनवाड़ी कार्यकर्ता का समय पर वेतन का भुगतान होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ आशु रानी - महिला विकास कार्यक्रम
2. प्रशासनिक प्रतिवेदन - 2013 14 पृष्ठ क्रमांक 79
3. जसमीत लारेंज - आदित्य पब्लिशर्स नई दिल्ली 1999
4. डॉक्टर बंसीलाल - महिला एवं बाल कानून
5. आंगनवाड़ी समाचारीका - महिला एवं बाल विकास विभाग भोपाल मध्य प्रदेश
6. मासिक प्रपत्र - महिला एवं बाल विकास विभाग उज्जैन
7. विभागीय योजनाएं/अभियान संक्षिप्त स्वरूप कार्यक्रम अधिकारी, एकीकृत बाल विकास सेवा, जिला उज्जैन
8. विभागीय योजनाएं/अभियान कार्यक्रम अधिकारी, जिला महिला सशक्तिकरण अधिकारी जिला उज्जैन
9. इंदिरा मिस्र - गरीब महिला, उधार एवं रोजगार
10. एम ए अंसारी - महिला और मानवाधिकारी
11. डॉ रितु गुप्ता - महिला सशक्तिकरण एवं मध्य प्रदेश की योजनाएं
12. प्रतियोगिता दर्पण
13. दैनिक भास्कर
14. www.wcd.nic.in

तालिका क्र. 1.2 : उज्जैन जिले में उषा किरण की जानकारी

क्र.	वर्ष	प्राप्त शिकायतों की संख्या	न्यायालय में प्रस्तुत प्रकरण	निराकरण की संख्या	निराकरण का प्रतिशत
1	2010-11	102	20	20	100
2	2011-12	99	30	30	100
3	2012-13	110	52	52	100
4	2013-14	317	148	148	100
5	2014-15	524	217	163	75.11

****

भारतीय जीवन बीमा निगम एवं रिलायन्स इन्श्योरेन्स कम्पनी द्वारा संचालित पेंशन योजना का वर्ष 2010-11 से वर्ष 2014-15 तक का तुलनात्मक अध्ययन : उज्जैन जिले के विशेष संदर्भ में

डॉ. राजेन्द्र ललावत*

प्रस्तावना – वर्तमान समय में मनुष्य का विवेक उसकी क्षमता, दक्षता एवं सुरक्षा की भावना केवल पति-पत्नि और बच्चों तक ही सिमट कर रह गई है। जिसमें परिवार के मुखिया की मृत्यु हो जाने पर परिवार टूटने लगते हैं। जिससे आश्रितों को जीवनयापन में भी कठिनाई उत्पन्न होने लगती है। ऐसी दशा में व्यक्ति भविष्य को सुरक्षित करने के उद्देश्य से बचत विनियोग का सहारा लेता है। यह एक महत्वपूर्ण कारण है कि जीवन बीमा व्यवसाय अधिक विकसित हो रहा है।

भारतीय जीवन बीमा निगम की स्थापना वर्ष 1956 में हुई। उसका मुख्यालय मुंबई में है। यह भारत की सबसे बडी जीवन बीमा कंपनी है। भारतीय जीवन बीमा निगम के 8 आँचलिक कार्यालय और 101 संभागीय कार्यालय भारत के विभिन्न भागों में स्थित हैं और इसके पास 10 लाख से भी ज्यादा ऐजेन्ट है।

रिलायंस लाईफ इन्श्योरेन्स कंपनी की स्थापना 14 मई 2001 को हुई थी। कंपनी रिलायन्स कैपिटल का एक एकीकृत हिस्सा है, जो भारत में शीर्ष-रैंकिंग निजी आर्थिक सेवा कंपनियों में से एक है। इसका मुख्यालय मुम्बई में है तथा इस कम्पनी में 7 लाख पॉलिसी धारक एवं 1230 शाखाएँ है तथा इसके पास 124000 एजेन्ट है। वर्ष 2015 की स्थिति के अनुसार 40.15 अरब रू का कुल प्रीमियम है तथा इस कम्पनी के 150 अरब रू की सम्पत्तियाँ है।

भारतीय जीवन बीमा निगम एवं रिलायस लाईफ इन्श्योरेंस कम्पनी द्वारा निम्नलिखित प्लान संचालित किये जाते हैं :-

1. पेंशन प्लान
2. चाइल्ड प्लान
3. एंडोरमेंट प्लान
4. सिंगल प्रीमियम प्लान
5. ट्रेडिशनल प्लान

पेंशन प्लान – पेंशन प्लान को रिटायरमेंट प्लान के रूप में जाना जाता है। इसके तहत कोई व्यक्ति अपने रिटायरमेंट जीवन को सुरक्षित रखने के लिए अपनी वर्तमान आय का एक हिस्सा बचत के रूप में प्रयोग कर सकता है। कुछ लोग सोचते हैं कि उसके पास रिटायरमेंट के लिए पर्याप्त बचत है, लेकिन यह भी सत्य है कि बचत जल्द ही समाप्त हो जाती है, इसलिए उपयुक्त पेंशन प्लान की सहायता से कोई भी आसानी से अपने सेवानिवृत्ति के बाद के जीवन की रक्षा कर सकते हैं।

उचित पेंशन प्लान बीमा धारक को बिना किसी तनाव के व्यवस्थित तरीके से अपने रिटायरमेंट के बाद के जीवन का आनंद लेने की अनुमति देती है। यही कारण है कि पेंशन प्लान रखना महत्वपूर्ण है, जो बीमा धारक के स्वर्णिम वर्षो में एक रक्षक के रूप में कार्य करता है।

पेंशन प्लान के प्रकार – भारतीय जीवन बीमा निगम के पेंशन प्लान के निम्नलिखित प्रकार हैं :

1. **प्रधानमंत्री वय वंदन योजना –** वरिष्ठ नागरिकों के लिए यह भारतीय जीवन बीमा निगम पेंशन योजना 10 वर्षो में 8% प्रतिवर्ष देय मासिक (प्रतिवर्ष 8.3% के बराबर) की रिटर्न का आश्वासन देती है। यह योजना मासिक/त्रैमासिक/अर्द्धवार्षिक या पेंशन के वार्षिक भुगतान की अनुमति देती है।
2. **न्यू जीवन निधि –** यह एक पारंपरिक प्रॉफिट पेंशन योजना है। यह सुरक्षा और बचत सुविधाओं का एक संयोजन है। यह योजना मृत्यु की अवधि और मृत्यु की तिथि के दौरान जीवित रहने की तिथि प्रदान करती है।
3. **जीवन शांति –** यह योजना एक एकल प्रीमियम पेंशन योजना है, जिसके तहत बीमित व्यक्ति के पास तत्काल या आस्थगित एन्युरी चुनने का विकल्प होता है। इस योजना में तत्काल और आस्थगित वार्षिकी दोनों के लिए पॉलिसी की शुरुआत में गारंटीकृत दरें और एन्यूटी जीवनकाल के लिए देय है। इसे ऑफलाईन के साथ-साथ ऑनलाईन भी खरीदा जा सकता है।

रिलायंस लाईफ इन्श्योरेन्स के निम्नलिखित पेंशन प्लान है :

1. **रिलायन्स लाईफ इमीडियेट एन्युरी प्लान –** यह प्लान बीमा धारक को नियमित आय अर्जित करने में मदद करती है और यह निश्चित करती है कि व्यक्ति सेवानिवृत्ति के बाद अपने जीवन का आनन्द ले। यह एकल प्रीमियम पालिसी है, जहाँ बीमा धारक अपनी बीमा जरूरतों के अनुसार पर्याप्त वार्षिकी विकल्प चुन सकते हैं चुने हुए वार्षिकी विकल्प के आधार पर बीमा धारक को नियमित वार्षिक आय प्राप्त होती है।
2. **रिलायन्स लाईफ स्मार्ट पेंशन योजना –** रिलायन्स लाईफ स्मार्ट पेंशन प्लान किसी व्यक्ति को उसकी सेवानिवृत्ति के बाद नियमित आय प्रदान करने की अनुमति देता है।

भारतीय जीवन बीमा निगम एवं रिलायंस लाइफ इंश्योरेंस के पेंशन प्लान का तुलनात्मक अध्ययन – निम्न तालिका में उज्जैन जिले की पेंशन योजना के संबंध में जानकारी प्रदान की गई है जिसमें वर्ष 2010-11 से वर्ष 2014-15 तक भारतीय जीवन बीमा निगम एवं रिलायंस लाइफ इंश्योरेंस की जानकारी दी गई है साथ ही 5 वर्षों के कुल व्यवसाय में से

* 7/3 किशनपुरा मैक्सी रोड,उज्जैन (म.प्र.) भारत

पेंशन योजना का प्रीमियम एवं उसका प्रतिशत भी दिया गया है–

तालिका क्रमांक 1(अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1 के विश्लेषण ज्ञात होता है कि वित्तिय वर्ष 2010–11 में भारतीय जीवन निगम द्वारा 5837.06 लाख का कुल प्रीमियम प्राप्त किया गया। जिसमें से 299.85 लाख रूपये का पेंशन योजना के अंतर्गत कुल प्रीमियम प्राप्त हुआ। जिसका प्रतिशत 5.0 है। इसी तरह वर्ष 2011–12, 2012–13, 2013–14, 2014–15 में क्रमश: 3493.75, 3451.43, 3606.57, 2794.22 लाख रूपये कुल प्रीमियम (व्यवसाय) प्राप्त हुआ जिसमें से 209.63, 241.60, 172.57 व 167.65 लाख रू का पेंशन योजना के अन्तर्गत कुल प्रीमियम प्राप्त हुआ जिसका प्रतिशत क्रमश: 6.0, 7.0, 5.0 व 6.0 है।

रिलायन्स लाइफ इन्श्योरेन्स कम्पनी द्वारा वर्ष 2010–11, में कुल प्रीमियम राशि 187.80 लाख रू प्राप्त हुआ इसमे से 70.00 लाख रू की प्रीमियम पेंशन योजना से प्राप्त हुई जिसका प्रतिशत कुल व्यवसाय का 37.43 है। इसी तरह वर्ष 2011–12, 2012–13, 2013–14, 2014–15 में कुल प्रीमियम क्रमश: 145.10, 165.00, 179.00, व 433.5 लाख रू प्राप्त हुआ। इसमें से पेंशन योजना में 42.00, 55.00, 63.00, व 49.00 लाख रू प्रीमियम प्राप्त हुआ जिसका प्रतिशत क्रमश: 28.95, 33.00, 35.20 तथा 11.30 है। रिलायन्स लाईफ इंश्योरेंस कम्पनी का पेंशन योजना का व्यवसाय श्रेष्ठ है।

भारतीय जीवन बीमा निगम एवं रिलायंस लाईफ इंश्योरेंस कम्पनी के पेंशन प्लान के दावों का तुलनात्मक अध्ययन – अग्रलिखित तालिका में उज्जैन जिले की पेंशन योजना दावों के संबंध में जानकारी प्रदान की गई है जिसमें वर्ष 2010–11 से वर्ष 2014–15 तक बीमा प्रमण्डलों की जानकारी दी गई है, साथ ही पाँच वर्षो के कुल पॉलिसियों की संख्या में से दावों का प्रतिशत दिया गया है।

तालिका क्रमांक 1.2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

पेंशन योजना दावों के उपरान्त तालिका 1.2 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि वित्तीय वर्ष 2010–11 में भारतीय जीवन बीमा निगम द्वारा पेंशन योजना के अंतर्गत 2466 पालिसियाँ की गई जिसमें से 2441 दावों का भुगतान निगम द्वारा किया गया जिनका प्रतिशत 99 है। इसी तरह वर्ष 2011–12, 2012–13, 2013–14, 2014–15 में क्रमश: 2750, 3411, 2112 व 1342 पेंशन योजना के तहत पॉलिसियाँ हुई जिसमें से 2733, 3393, 2103 तथा 1336 दावों का भुगतान भारतीय जीवन बीमा निगम द्वारा किया गया जिसका प्रतिशत कुल पॉलिसियों का क्रमश: 99.3, 99.5, 99.6 एवं 99.6 है।

वर्ष 2010–11 में रिलायंस लाईफ इंश्योरेंश कम्पनी द्वारा पेंशन बीमा योजना के तहत 150 पालिसियाँ की गई उनमें से 142 दावों का भुगतान कम्पनी के द्वारा किया गया जिसका प्रतिशत 94.7 है। वर्ष 2011–12, 2012–13, 2013–14, 2014–15 में क्रमश: 95, 102, 113 व 144 पेंशन योजना की पॉलिसियाँ हुई है जिसमें से 93, 100, 110 एवं 142 दावों का भुगतान कम्पनी द्वारा किया गया जिसका प्रतिशत पॉलिसियों का क्रमश: 97.9, 98.0, 97.3 तथा 98.6 है।

अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि रिलायंस लाइफ इंश्योरेंस कंपनी की तुलना में भारतीय जीवन बीमा निगम का पेंशन योजना का दावा भुगतान श्रेष्ठ है।

रिलायंस लाइफ इंश्योरेंस कंपनी की तुलना में भारतीय जीवन बीमा निगम की पेंशन योजना के व्यवसाय में कमी के निम्नलिखित कारण है–

1. निगम का पेंशन योजना का पॉलिसी प्रपत्र अस्पष्ट होता है।
2. भारतीय जीवन बीमा निगम द्वारा पेंशन योजना का व्यापक प्रचार–प्रसार नहीं होना एक महत्वपूर्ण कारक है।
3. कागजी कार्यवाही का अधिक होना।
4. निगम द्वारा बीमा धारकों को इस योजना की विस्तृत जानकारी नहीं दी जाती है।
5. अभिकर्ताओं के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में इस योजना की विस्तृत जानकारी नही दी जाती है।
6. भारतीय जीवन बीमा निगम के व्यवसाय की एक और प्रमुख समस्या दावे के भुगतान में कठिनाइयाँ हैं।
7. निगम अपने पॉलिसी धारकों से ऋण पर अधिक ब्याज लेता है।

रिलायंस लाइफ इंश्योरेंस कंपनी की तुलना में भारतीय जीवन बीमा निगम की पेंशन योजना के व्यवसाय की वृद्धि हेतु समाधान –

1. भारतीय जीवन बीमा निगम को पेंशन योजना की प्रीमियम दरों में कमी करना चाहिए।
2. निगम का पेंशन योजना का पॉलिसी स्पष्ट व सरल होना चाहिए।
3. निगम द्वारा पेंशन योजना का अधिक से अधिक प्रचार–प्रसार होना चाहिए।
4. कागजी कार्रवाइयों को सरल एवं कम होना चाहिए।
5. अभीकर्ताओं के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वालों को इस योजना का विस्तृत जानकारी दी जाना चाहिए।
6. निगम को अपने पॉलिसी धारकों पर कम से कम ब्याज लेना चाहिए।
7. भारतीय जीवन बीमा निगम को दावों एवं भुगतान की प्रक्रिया को सरल एवं सुगम बनाना चाहिए।
8. निगम द्वारा बीमा धारकों को इस योजना की पूरी जानकारी समय–समय पर दी जानी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. life insurance india – A.N. Agrawal
2. Problems of India life Insurance – P.C. Vashu
3. एल. आई. प्लान्स – निपुण रेडी
4. लाईफ इन्श्योरेन्स – ह्यूमबर
5. बीमा के तत्व – आर. के. विष्णोई
6. योगक्षेत्र – मासिक प्रत्रिका, भा जी बी डि जनवरी
7. वार्षिक डायरी, भारतीय जीवन बीमा निगम, मुंबई
8. निगम की वार्षिक रिपोर्ट, पब्लिकेशन डिपार्टमेंट
9. रिलायन्स लाईफ इन्श्योरेन्स की वार्षिक रिपोर्ट, मुंबई
10. www.licindia.com
11. www.reliancelife.com
12. www.policyx.com
13. www.myinsuranceclub.com
14. www.m.monycontrol.com

तालिका क्रमांक 1 : पेंशन बीमा योजना का व्यवसाय एवं प्रतिशत (लाख रू)

क्र.	वर्ष	भारतीय जीवन बीमा निगम			रिलायन्स लाईफ इन्श्योरेन्स		
		कुल प्रीमियम (लाख रू)	प्रीमियम (लाख रू)	प्रतिशत	कुल प्रीमियम (लाख रू)	प्रीमियम (लाख रू)	प्रतिशत
1	2010-11	5837.06	299.85	5.0	187.80	70.00	37.43
2	2011-12	3493.75	209.63	6.0	145.10	42.00	28.95
3	2012-13	3451.43	241.60	7.0	165.00	55.00	33.00
4	2013-14	3606.57	172.57	5.0	179.00	63.00	35.20
5	2014-15	2794.22	167.65	6.0	433.50	49.00	11.30
	पांच वर्षो का प्रीमियम औसत प्रतिशत			5.8			29.18

स्त्रोत : जीवन बीमा कम्पनी से प्राप्त जानकारी

तालिका क्रमांक 1.2 : पेंशन योजना दावों की संख्या एवं प्रतिशत

क्र.	वर्ष	भारतीय जीवन बीमा निगम			रिलायंस लाईफ इंश्योरेन्स		
		पालिसी की संख्या	दावों की संख्या	प्रतिशत	पालिसी की संख्या	दावों की संख्या	प्रतिशत
1.	2010-11	2466	2441	99.0	150	142	94.70
2.	2011-12	2750	2733	99.30	95	93	97.09
3.	2012-13	3411	3393	99.50	102	100	98.00
4.	2013-14	2112	2103	99.60	113	113	97.30
5.	2014-15	1342	1336	99.60	144	144	98.60
	पाँच वर्ष का प्रीमियम औसत प्रतिशत			99.40			97.62

****

सीहोर जिले की चयनित पंचायतों का बजट नियंत्रण एवं प्रबन्ध की प्रक्रियाओं का अध्ययन

देवेन्द्र सिंह परमार* डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा **

शोध सारांश –वर्तमान समय में पंचायती राज व्यवस्था स्थानीय प्रशासन का एक अभिन्न अंग हो चुकी है। इस व्यवस्था का उद्‌भव तथा इसका प्रादेशिक स्वरूप के बारे में कहना काफी कठिन है। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि स्थानीय प्रान्तों के निस्तारण के लिए पांच व्यक्तियों की सभी एक प्राचीन संस्था थी जिसका अस्तित्व अनेक राजनैतिक एवं सामाजिक परिवर्तनों के पश्चात् भी बना रहा है। वर्तमान समय में पंचायतों के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक कार्य किए जा रहे हैं एवं स्थानीय स्तर पर शासन संचालित किया जा रहा है। प्रस्तुत अध्ययन में पचायतों के द्वारा प्राप्त आय और उनके स्रोतों का विवरण प्रस्तुत किया जा रहा जिनमें ग्राम पंचायत द्वारा लगाए जाने वाले अनिवार्य कर, ग्राम पंचायत द्वारा लगाए जाने वाले गैर–राजस्व कर, राज्य शासन के सहायक अनुदान, राज्य वित्त आयोग की अनुशंसा पर प्राप्त अनुदान, ग्राम पंचायत को सांसद निधि से प्राप्त अनुदान, ग्राम पंचायत को विधायक निधि से प्राप्त अनुदान, ग्राम पंचायत की वार्षिक आय एवं ग्राम पंचायत द्वारा प्राप्त ऋण आदि बिन्दुओं का विस्तार से विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है।

शब्द कुंजी – बजटरी नियंत्रण, प्रबन्ध की प्रक्रिया, अनिवार्य कर, वित्त आयोग, पंचायत द्वारा प्राप्त ऋण।

प्रस्तावना – प्रत्येक व्यावसायिक क्रिया का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध वित्त से होता है। उत्पादन, विपणन, क्रय आदि क्रियाओं में वित्तीय पहलू का समावेश होता है। वित्त की समस्याओं का घनिष्ठ सम्बन्ध क्रय, उत्पादन और विपणन की समस्याओं से होता है। इस प्रकार सभी विभागों की क्रियाओं में वित्त की समस्या किसी न किसी रूप में निहित होती है।वित्तीय प्रबन्ध उन समस्त गतिविधियों का समावेश करता है जो भावी फण्ड बहाव की मात्रा एवं समय सम्बन्धी निर्णयों को प्रभावित करती है। वित्त, उत्पादन और विपणन के बीच वही कार्य करता है जो मशीन को चलाने में तेल पदार्थ का होता है। उत्पादन और विपणन सम्बन्धी निर्णयों में कुछ ऐसे भी पहलू होते है जो वित्तीय प्रबन्ध के क्षेत्र में नहीं आते, यद्यपि वे वित्त में प्रभावित करते हैं। उत्पादन की दशाओं में परिवर्तन या व्यवसाय के प्रबन्ध में कर्मचारियों की सहभागिता या विपणन और विज्ञापन तकनीकी में परिवर्तन आदि ऐसी समस्याएँ है जो मूलत: उत्पादक प्रबन्ध, कर्मचारी प्रबन्ध, विपणन प्रबन्ध के क्षेत्र में ही शामिल की जाएगी।

किसी भी संस्था में बजट के माध्यम से मौद्रिक नियंत्रण करने को बजटरी नियंत्रण कहते है। संसाधन सीमित होने की स्थिति में प्रत्येक संस्था का यह प्रयास होता है कि कम से कम लागत में अधिकतम लाभ अर्जित किया जा सकें।

बजटरी नियंत्रण के उद्देश्य :

1. नियोजन प्रकिया को व्यवस्थित रखना।
2. उत्पादन की लागत को सीमित व नियंत्रित करना।
3. संगठन में मितव्ययता तथा कार्य कुशलता को बढ़ावा देना।
4. संसाधनों का कुशलतम उपयोग करते हुए लाभ को बढ़ाना।

बजटरी नियंत्रण की प्रकिया :

1. बजट केन्द्रों की स्थापना करना।
2. बजट निर्माण हेतु उत्तरदायी कार्मिको का चयन करके उन्हें अधिकार व कार्य सौंपना।
3. बजट निर्माण हेतु आवश्यक सूचना एवं साधन प्राप्ति हेतु आवश्यक प्रबंध करना।
4. बजट के क्रियाशील स्तर का निर्धारण करना।

बजटरी नियंत्रण के लाभ :

1. संस्थान के संसाधनों का अधिकतम सदुपयोग सुनिश्चित किया जा सकता है।
2. कार्मिको के अधिकार, कर्तव्य व दायित्वों को सुनिश्चित करके अधिकतम कार्य कुशलता को प्राप्त किया जा सकता है।
3. मालिकों व कार्मिको के बीच सौहार्दपूर्ण वातावरण के निर्माण में सहायक होता है।
4. बजटरी नियंत्रण सुव्यवस्थित नियोजन में सहायक होता है।
5. यह व्यावसायिक कार्यो में स्थायित्व प्रदान करता है।
6. इससे उत्पादन लागत में भी कमी होती है।

बजटरी नियंत्रण की सीमाएँ –बजटरी नियंत्रण की कुछ सीमाएं भी है जो निम्न प्रकार से है –

1. इसकी सफलता कार्मिको की कार्यकुशलता व दक्षता पर निर्भर है।
2. बजटरी नियंत्रण पूर्वानुमानो पर आधारित होता है तथा कई कारको यथा बाजार की स्थिति, सरकारी नीतियों आदि से प्रभावित होता है। इस वजह से कई बार निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करना कठिन हो जाता है।
3. यह केवल बड़े संस्थानों व औद्योगिक घरानो के लिए ही उपयोगी है ,

* शोधार्थी (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

छोटे उद्योगों के लिए नहीं।

शोध समस्या चयन के आधार –सीहोर जिले की जिला योजनाओं का बजटरी नियंत्रण एवं वित्तीय प्रबन्धन एक विश्लेषणात्मक अध्ययन विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी विभागों द्वारा जानकारी का एकत्रीकरण किया जाता रहा है। पंचायती राज में जिला पंचायत मुख्य योजनाओं के संचालन की धुरी होता है तथा जिला पंचायत में जिले की वस्तु स्थिति तथा सूचनाओं का संग्रहण होता है। पंचायतों के माध्यम से ग्रामीण विकास की पुर्न:व्याख्या की जा सकती है। पंचायतों के आय के आधार एवं अन्य स्त्रोतों का तथ वर्तमान व्यय के स्वरूपों का अध्ययन किया जाता है। पंचायतीराज व्यवस्था के द्वारा गरीब परिवारों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए विभिन्न योजनाओं का संचालन किया जाता है। प्रस्तुत अध्ययन द्वारा यह विश्लेषण किया गया कि क्या सही मायनों में संचालित योजनाओं का संचालन पंचायतों के द्वारा किया जा रहा है और सही अर्थों में पंक्ति के अंतिम व्यक्ति तक योजनओं का लाभ पहुंच पा रहा है। उक्त सभी कारण प्रस्तुत अध्ययन की समस्या के चुनाव का प्रमुख कारण रहे।

अनुसंधान क्षेत्र का उद्देश्य –सीहोर जिले की चयनित पंचायतों काबजट नियंत्रण एवं प्रबन्ध की प्रक्रियाओं का अध्ययन करना।

शोध की प्रस्तावित उपकल्पना –सीहोर जिले की चयनित पंचायतों काबजट नियंत्रण और प्रबन्ध की प्रक्रियाआके मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

शोध अध्ययन क्षेत्र –मध्यप्रदेश के सीहोर जिले को प्रस्तुत अध्ययन के लिए चयनित किया गय।

अध्ययन का समग्र –प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र मध्य प्रदेश के सीहोर जिले में ग्राम पंचायतों के द्वारा सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिए संचालित विभिन्न योजनाओं से लाभन्वित समस्त परिवारों को अध्ययन के समग्र के रूप में सम्मिलित किया गया।

प्रतिचयन का आकार –प्रस्तुत अध्ययन हेतु **स्तरीकृत निदर्शन विधि** का उपयोग कर उत्तरदाताओं को चयनित कर अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। निम्नलिखित तालिका में निदर्शन में सम्मिलित की जाने वाली जनसंख्या को दर्शाया है।

तालिका 1 : अध्ययन क्षेत्र सीहोर जिले में उत्तरदाताओं का चयन

सीहोर जिला				
जनपद पंचायत				
सीहोर	आष्टा	इच्छावर	बुदनी	नासुल्लाह गंज
ग्राम पंचायत (दैव निदर्शन विधि)				
5	5	5	5	5
उत्तरदाता (उद्देश्य पूर्ण विधि)				
40	40	40	40	40
कुल उत्तरदाता 200				

निदर्शन –प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र मध्य प्रदेश के सीहोर जिले में कुल पाँच सीहोर, आष्टा, इच्छावर, बुदनी और नासुल्लाह गंज जनपद पंचायत हैं। जिनमें कुल 463 ग्राम पंचायम हैं। प्रत्येक जनपद पंचायत में से 5-5 ग्राम पंचायत इस प्रकार कुल 25 ग्राम पंचायतों का चयन किया गया और प्रत्येक ग्रांम पंचायत में से 8 उत्तरदाता इस प्रकार कुल 200 उत्तरदाताओं को चयनित कर अध्ययन में सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन की इकाई –प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र मध्य प्रदेश के सीहोर जिले में ग्राम पंचायतों के द्वारा सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिए संचालित विभिन्न योजनाओं से लाभन्वित चयनित परिवार को अध्ययन के इकाई के रूप में सम्मिलित किया गया।

समंकों का संकलन :

प्राथमिक संमक –प्राथमिक संमकों का संग्रहण निर्मित साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से अध्ययन क्षेत्र में जाकर उत्तरदताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क कर साक्षात्कार कर, क्षेत्र का निरीक्षण एवं अवलोकन तथा समुह चर्चा के माध्यम से एकत्र किये गये। साक्षात्कार अनुसूची में अध्ययन के उददेश्यों के अनुरूप प्रश्नों का समावेश किया गया।

द्वितीयक संमक –द्वितीयक संमक का संकलन पंचायतों द्वारा जिला योजनाओं का बजटरी नियंत्रण एवं वित्तीय प्रबन्धन से सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन, आदि के आधार पर किया गया है।

तकनीक एवं उपकरण –संमक एकत्रित करने हेतु अवलोकन पद्धति, समूह चर्चा, अनुसूची, साक्षात्कार पद्धति, अनौपचारिक वार्तालाप, एस. पी. एस. एस., सारणीयन एवं फोटोग्राफी का उपयोग किया गया है।

तथ्यों का विश्लेषण –सीहोर जिले की पंचायतों द्वारा जिला संचालित योजनाओं के बजटरी नियंत्रण एवं वित्तीय प्रबन्धन से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् संग्रहित समंकों को अलग-अलग नम्बर (कोड) दिये गये, इन कोड के आधार पर कम्प्यूटर द्वारा एस. पी. एस. एस. (SPSS) पैकेज का प्रयोग करते हुऐ तथ्यों का सारणीयन एवं सांख्यिकी विश्लेषण किया गया है।

विभिन्न अप्राचलिक परीक्षणों में काई वर्ग परीक्षण सर्वाधिक प्रचलित परीक्षण है जो दो या दो से अधिक समूहों में साहचर्य की माप करता है। अर्थात इसके द्वारा दो या अधिक आंकड़ा समूह की अंश तक सम्बन्धित हैं यह जानकारी प्राप्त की जा सकती है। यह परीक्षण वास्तविक या अवलोकित तथा अनुमानित या संभावित आवृत्तियों के बीच अन्तर की सार्थकता का परीक्षण करता है। प्रस्तुत अध्ययन में पूर्व में निर्मित परिकल्पनाओं के परीक्षण का विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है जो कि निम्न प्रकार है :-

शोध अध्ययन की उपकल्पना – सीहोर जिले में संचालित योजनाओं और हितग्राहियों के सामाजिक आर्थिक विकास के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

परिकल्पना प्रथम –

H_0 ग्राम पंचायत की आय और लगाए जाने वाले अनिवार्य करों के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

तालिका 2 **(अन्तिम पृष्ठ पर देखे)**

तालिका 2 में ग्राम पंचायत की आय और लगाए जाने वाले अनिवार्य करों से सम्बन्धित विवरण प्रस्तुत किया गया है। तालिका दिये गये आंकडों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 47 उत्तरदाताओं ने बताया कि ग्राम पंचायत के द्वारा अध्ययन क्षेत्र में भूमि एवं भवन पर ग्रह कर लगाया जाता है जिसमें से 29.8 प्रतिशत ने बताया कि ग्राम पंचायत को 50 हजार से कम आय प्राप्त होती है जबकि 38.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि ग्राम पंचायत को 50 हजार से एक लाख रूपये तक की आय प्राप्त होती है। 8.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि ग्राम पंचायत को एक लाख रुपये से 1.5 लाख रुपये तक आय प्राप्त होती है वहीं 8.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि ग्राम पंचायत को 1.5 लाख रुपये से 2 लाख रुपये तक आय प्राप्त होती है। 14.9 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि ग्राम पंचायत को एक लाख रुपये से 2 लाख रुपये इससे अधिक आय प्राप्त होती है।

कुल उत्तरदातओं में से 76 उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी ग्राम पंचायत के द्वारा निजी संड़कों पर कर लगाया जाता है जिसमें से 21.1 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया निजी सड़कों पर कर लगाए जाने से ग्राम पंचायत को पचास हजार रुपये तक की आय प्राप्त होती है जबकि 75 प्रतिशत उत्तरदाताओं के द्वारा बताया गया कि उनकी ग्राम पंचायत में निजी सड़कों पर कर लगाने से ग्राम पंचायत को पचास हजार रुपये से लेकर एक लाख रुपये तक की आय प्राप्त होती है। 3.9 प्रतिशत उत्तरदाताओं के द्वारा बताया गया कि ग्राम पंचायत को एक लाख रुपये से 1.5 लाख रुपये तक की प्राप्त होती है।

अध्ययन क्षेत्र में कुल 21 उत्तरदाताओं द्वारा बताया गया कि उनकी ग्राम पंचायत के द्वारा प्रकाश कर लगा आय प्राप्त की जाती है जिसमें से 14.2 प्रतिशत उत्तरदाताओं के द्वारा बताया गया कि उनकी ग्राम पंचायत में प्रकाश लगाकर 50 हजार तक की आय प्राप्त होती है जबकि 42.9 उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी ग्राम पचायत में प्रकाश के द्वारा पचास हजार से एक लाख रुपये तक की आय प्राप्त की जाती है। 42.9 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी ग्राम पंचायत में प्रकाश कर द्वारा एक लाख रुपये से लेकर 1.5 लाख रुपये तक की आय प्राप्त की जाती है।

अध्ययन क्षेत्र के कुल 15 उत्तरदाताओं के द्वारा बताया गया कि उनकी ग्राम पंचायत में व्यवसाय कर लगाया जाता है जिसमें से 26.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी ग्राम पंचायत में व्यवसाय कर द्वारा 50 हजार तक आय प्राप्त की जाती है जबकि 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी ग्राम पंचायत में व्यवसाय कर द्वारा एक लाख से 1.5 लाख तक आय प्राप्त की जाती है। 53.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी ग्राम पंचायत में व्यवसाय कर द्वारा 1.5 लाख से 20 लाख रुपये तक आय प्राप्त की जाती है।

अध्ययन क्षेत्र के 25 उत्तरदाताओं द्वारा बताया गया कि उनकी ग्राम पंचायत में बाजार कर द्वारा आय प्राप्त की जाती है जिसमें से 16 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा बताया गया कि बाजार कर द्वारा उनकी ग्राम पंचायत को पचास हजार रुपये तक की आय प्राप्त की जाती है, जबकि 16 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा बताया गया कि बाजार कर द्वारा उनकी ग्राम पंचायत को पचास हजार रुपये से एक लाख रुपये तक की आय प्राप्त की जाती है। 52 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा बताया गया कि बाजार कर द्वारा उनकी ग्राम पंचायत को एक लाख रुपये से 1.5 लाख रुपये तक की आय प्राप्त की जाती है वहीं 16 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा बताया गया कि बाजार कर द्वारा उनकी ग्राम पंचायत को 2 लाख रुपये इससे अधिक आय प्राप्त की जाती है।

अध्ययन क्षेत्र के 16 उत्तरदाताओं द्वारा बताया गया कि उनकी ग्राम पंचायत में पशु पंजीकरण की फीस द्वारा आय प्राप्त की जाती है जिसमें से 75 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा बताया गया कि पशु पंजीकरण की फीस द्वारा उनकी ग्राम पंचायत को पचास हजार रुपये तक की आय प्राप्त की जाती है, जबकि 25 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा बताया गया कि पशु पंजीकरण की फीस द्वारा उनकी ग्राम पंचायत को पचास हजार रुपये से एक लाख तक की आय प्राप्त की जाती है।

उपरोक्त उपकल्पना का परीक्षण के लिए ग्राम पंचायत की आय और लगाए जाने वाले अनिवार्य करों की तुलना के आधार पर काई-वर्ग परीक्षण किया गया है। काई-वर्ग परीक्षण से प्राप्त परिणामों को निम्न तालिका में दर्शाया गया है :-

	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson Chi-Square	170.690a	20	.000
Table Value	31.410		
N of Valid Cases	200		

उपर्युक्त उपकल्पना के सम्बन्ध में 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 20 स्वातन्त्र संख्या के लिए X^2 का सारणी मूल्य X^2_t = 170.690 है तथा X^2 का परिगणित मूल्य X^2_c = 170.690 (.000 प्रतिशत सार्थकता स्तर) प्राप्त है।

अर्थात 31.410<170.690 अर्थात $X^2_t < X^2_c$ है स्पष्ट है कि काई-वर्ग तालिका मूल्य से परिगणित मूल्य अधिक है। दोनों गुण स्वतन्त्र नहीं हैं इसलिए दानों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः शून्य परिकल्पना **'H_0 ग्राम पंचायत की आय और लगाए जाने वाले अनिवार्य करों के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।'**अस्वीकृत की जाती है।

परिकल्पना द्वितीय -H_0ग्राम पंचायत द्वारा प्राप्त ऋण के उद्देश्य एवं ग्राम पंचायत द्वारा प्राप्त ऋण की राशि के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

निष्कर्ष -अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण विकास योजनाओं केक्रियान्वयन के फलस्वरूप क्षेत्रीय विकास सम्भंव हुआ है। विकास की गति जागरूकता संवादप्रवाह कार्य के प्रति उत्साह एवं विवेक शीलता के फलस्वरूप विकास के स्तर में विविधता एवंसमानता के फलस्वरूप विकास कटिबन्ध निर्धारित हुए हैं। उच्च विकास कटिबन्ध की अपेक्षा निम्न एवंनिम्नत्तम विकास कटिबन्धो में शिक्षा, साक्षरता, तृतीय व चतुर्थ वर्ग के कार्य, मार्ग, मशीनीकरण, सेवाकेन्द्र, रोजगार, लाभाविन्त, स्वरोजगार, आवास, स्वास्थ्य सफाई, भवन सुरक्षा,खेल, जल,संबर्द्धन स्वच्छ पेयजल,सामाजिक सुरक्षा,पोषण आहार एवं खाद्य सुरक्षा कीउपलब्धता में सुधार हुआ है।

सुझाव -राज्य सरकार को एक ऐसी व्यवस्थित तथा तर्काधारित सहायता अनुदान प्रणाली बनानी चाहिए जो पारदर्शी, प्रगतिशील एवं न्याय संगत को राज्य सरकार के ग्रामीण विकास एवं पंचायत राज विभाग को नियमित रूप से प्रामाणिक एवं विश्वसनीय जानकारी एकत्रित करनी चाहिए जिससे यह राज्य वित्त आयोग द्वारा निर्धारित फार्मूला के आधार पर राज्य की पंचायती राज संस्थाओं को दिए जाने वाले अनुदान निर्धारण कर सके।

1. क्षेत्रीय स्तर पर पंचायतों के माध्यम से मनोरंजन, खेल एवं खेल मैदानों की व्यवस्था किया जाना उपयोगी होगा।
2. इसके साथ ही पंचायतों द्वारा क्षेत्रीय अधोसंरचना के संरक्षण एंव संधारण तथा शासकीय परिसम्पतियों पर हो रहे अतिक्रम को राजस्व एवं पुलिस विभाग और समाजिक समन्वय से मुक्त कराया जा सकता है।
3. पंचायत स्तर पर योजनाएँ प्राथमिक आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार हों, जिन्हें जनपद एवं जिला योजना समितियों में विशेषज्ञों की राय के आधार पर स्वीकृति हेतु उसी अनुरूप भेजा जावे, और राज्य योजनाओं में भी उन्हें तब्बजो देकर क्रियान्वन हेतु राशि स्वीकृति की जाकर जिला पंचायतों को उपलब्ध करायी जावे। जिससे अपनी विकास योजना के अनुरूप कार्य कर सके।
4. क्षेत्र में पाये जाने वाले गरीब अपात्र, हितग्राहियों की दयनीयता को दूर करने हेतु पंचायत एवं राज्य स्तर पर प्रावधान कर उन्हें गरीबों के अनुरूप सुविधाएँ उपलब्ध कराने हेतु प्रावधान किये जाने चाहिए।
5. लक्षित हितग्राहियों की संख्या नियंत्रित करने एवं वास्तविक गरीबों

को सम्मिलित करने हेतु मानवीय एवं नैतिक और भौतिक आधार पर चयन प्रक्रिया को पारदर्शी बनाया जाना उपयोगी होगा।

6. इसके साथ ही भुगतान प्रक्रिया को पारदर्शी बनाया जावे और कार्य बारम्बारता को छोड़कर ओसरे वार (वारी के आधार पर) दिया जावे।
7. पंचायतों में जनजागरूता अभियान चलाया जाकर सामुदायिक सहभागिता के प्रयास करना उपयोगी सिद्ध होंगे। विकास में अपनत्व की भावना विकसित होगी जो कार्य की गुणवत्ता में वृद्धि कारक होगी।
8. सरकारी एवं सामुदायिक परिसम्पत्तियों के अतिक्रमण को क्षेत्रीय स्तर पर समझाइस एवं शासकीय कार्यवाही कर दूर किया जाना आवश्यक है।
9. जनता जनप्रतिनिधियों एवं शासकीय कर्मचारियों को अपनी नकारात्मक सोच बदलकर विकास के प्रति सकारात्मक सोच कायम करनी होगी।
10. नैतिकता, कर्तव्य, निर्वहनता, ईमानदारी से कार्य, सामग्री, मूल्यांकन, उपयोगिता एवं गारन्टी निर्धारित कर विकास को स्थायित्व प्रदान करना होगा। तभी क्षेत्र का वास्तविक विकास सम्भव हो सकेगा।
11. टिकाऊ एवं संवाहनिक विकास के लिए विकास कार्यो का संरक्षण एवं संवर्द्धन आवश्यक है। कालान्तर में निर्माण कार्यो में मरम्मत एवं सुधार की आवश्यकता होती है। यदि समय पर देखभाल, मरम्मत एवं संरक्षण प्राप्त नही होता है, तो उससे जन धन एवं पारिस्थितिकीय हॉनियों का सामना करना पडता है। अत: प्रति वर्ष तैयार योजनाओं में संरक्षण और संधारण के लिए आवश्यक राशि शासन एवं सामुदायिक सहभागिता से जुटाकर विकास कार्यो को संरक्षण प्रदान कर अधिक समय तक चलने के लिए मजबूती प्रदान की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सेठ एम. एल., 'अर्थशास्त्र के सिद्धांत', लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 1997।
2. दुवे, एस. एन., 'आर्थिक विकास एवं नियोजन', सुमित पब्लिकेशन, जबलपुर, 1998।
3. देसाई, ए. आर. 'भारतीय ग्रामीण अर्थशास्त्र', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर एवं नई दिल्ली, 2004।
4. देसाई, बसन्त, 'पंचायती राज पावर टू द पीपल', हिमालय पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1970।
5. वाजपेयी, एस. आर., 'सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण', किताबघर, कानपुर 1995।
6. वाजपेयी, अशोक, 'पंचायती राज और ग्रामीण विकास', साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997।
7. त्यागी, महावीर सिंह, 'भारतीय शासन और राजनीति', राजीव प्रकाशन, मेरठ, 1992।
8. जोशी, आर. पी., भारद्वाज, अरुणा, 'भारत में ग्रामीण एवं शहरी स्थानीय शासन', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2009।
9. जैन, एस. सी., 'रूरल डवलपमेन्ट इन्स्टीट्यूशन एण्ड स्ट्रेटेजीस', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 1989।
10. जैन, बी. एम., 'शोध प्रविधि एवं क्षेत्रीय तकनीकि', रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर, 1989।
11. नारायण, इकबाल, 'पंचायती राज एडमिनिस्ट्रेशन इन राजस्थान', लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 1973।
12. नागर के. एन., 'सांख्यिकी के मूलतत्त्व', मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 1992।
13. नागर, विष्णुदत्ता एवं मेहत्ता बल्लभ दास, 'भारतीय अर्थव्यवस्था', म. प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमिक भोपाल, 2001।
14. अस्थाना, पी. एन., 'भारत में आर्थिक नियोजन', जवाहर पब्लिकेशन, आगरा, 1987।
15. अग्रवाल एवं अग्रवाल, 'वित्तीय प्रबंध', रमेश बुक डिपो, जयपुर, 1980।
16. अग्रवाल, ए. एन, 'भारतीय अर्थव्यवस्था स्वरूप, समस्याएँ एवं विकास', विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2002।
17. अग्रवाल, एम. एल. एवं गुप्ता, के. एल., 'उच्चतर लेखे', साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2010।

तालिका 2 : ग्राम पंचायत की आय और लगाए जाने वाले अनिवार्य करों के मध्य सार्थक सम्बन्ध का विवरण

लगाए जाने वाले अनिवार्य	ग्राम पंचायत की वार्षिक आय					कुल योग
	50 हजार से कम	50 हजार से एक लाख	1 लाख से 1.5 लाख	1.5 लाख से 2 लाख	2 लाख से अधिक	
भूमि एवं भवन पर ग्रह कर	14(29.8)	18(38.3)	4(8.5)	4(8.5)	7(14.9)	**47(100.0)**
निजी सड़कों पर कर	16(21.1	57(75.0)	3(3.9)	0(0.0)	0(0.0)	**76(100.0)**
प्रकाश कर	3(14.2)	942.9)	9(42.9)	0(0.0)	0(0.0)	**21(100.0)**
व्यवसाय कर	4(26.7)	0(0.0)	3(20.0)	8(53.3)	0(0.0)	**15(100.0)**
बाजार कर	4(16.0)	4(16.0)	13(52.0)	0(0.0)	4(16.0)	**25(100.0)**
पशु पंजीकरण की फीस	12(75.0)	4(25.0)	0(0.0)	0(0.0)	0(0.0)	**16(100.0)**
कुल योग	**53(26.5)**	**92(46.0)**	**32(16.0)**	**12(6.0)**	**11(5.5)**	**200(100.0)**

****

Swachh Bharat Abhiyan (2016-2017): Indore Model and Teachings for Other Cities

Priyanka Chourasiya* Dr. Manjari Gupta**

Abstract - Background: Indore, in Madhya Pradesh state along with overall in India ranked as the cleanest city for consecutive two years from 2016 and 2017. As open defection and the total sanitation is the major aim of the mission Swachh Bharat Abhiyan, city along with the various initiatives of Indore and municipal corporation is practicing and should follow the prospective model is to be adopted and shared with other cities for guidance towards cleanliness. Into this context the study was conducted in an exploratory nature for preparing the primary drivers for making city free from the sanitation problem and ODF city. **Methods:** To practice the sanitation, value chain that was constructed regarding the same that include the process of containment, emptying, transportation, treatment and disposing. A SWOT analysis was planned to know the status of the city on the behalf of the personal interview as well as the discussion on the focused group was carried out. **Result:** In the city Indore we identified the only 10% of the household respondent practices on the faecal sludge management out of another around 88% have a direct connection for the sewer. Also 12% of the left over sewages was untreated into natural and the open environment. Solid waste management was initiated all over cities including all the wards and the zones with the door to door collection. **Conclusion:** As the city Indore already had a good history and a satisfactory infrastructure since a very longer time, IMC on its basis made it possible to achieve the goal for the cleanliness.
Keywords - Swachh Bharat Abhiyan, Solid Waste Management, Value Chain for Sanitation.

Introduction - On 2nd October 2014 the Prime Minister of India Mr. Narendra Modi launched the Swachh Bharat Abhiyan with a view to promote cleanliness and aware people about the change they want to see in their surroundings the programme had seven aims discussed further in the paper. This programme was aimed with a view to make India clean and disease free, to build toilets in the villages and to eradicate the open urinating and garbage throwing practices and to remove the open defecation practice etc.

Every day the garbage generated by India is close to 60 million tonnes of garbage from which around 45 to 50 million tonnes is left untreated. About 10 million tonnes of waste daily is generated by the metros. Urban India by 2040 alone would be generating close to 170 million tonnes of garbage daily. The sewerage system in India is among the poorest in the world. Since millions of houses are yet to build toilets open defecation remains part of rural life in India. In India spitting and urinating in the open is very common practice for millions unmindful of the defacement it causes. These actions supports in increasing filthiness, causes illness which makes the country sicker. If these actions be avoided it will make India a clean place to live, will decrease diseases and will reduce burden on the economy hugely. Throwing the waste in the open is so common in India that Indians hardly think of using the bins or throwing garbage in the bins. We always point out and dislike the actions and throwing garbage in the open but we never think about our actions or work on it. Swachh Bharat Abhiyan (SBA) is a national campaign. The two essentials dimensions of the campaign are Action and Communication Programmes. This programme not only talks about eliminating the practices through building alternative facilities-toilets, waste disposal system, sewage system and recycling plant but it also aims at public communication campaigns to create wider awareness, induce pro healthy behaviour among the people remains the foundation of the campaign.

The ability of the media is huge and it has the capability to spread and make a great awareness about cleanliness, its advantages and provide the right ambience for the behaviour modifications. Mass media and attraction of the people make a topic popular, fashionable or worthy of attention. The newspapers, Media and Advertisement are likely to play a very significant role in educating and empowering the public towards cleanliness and swachhata campaign.

However, the government in May 2017 has claimed that over two lakhs villages have become free from open defecation. But the lack of facilities and inadequate process

*Assistant Professor, ISBA Institute of Professional Studies, Indore (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, Oriental University, Indore (M.P.) INDIA

for the solid waste is a big challenge for the government. Apart from this social media campaigns and advertisements focusing on behavior change and several initiatives by the media through promoting this campaign has been made. This paper analyses role of media and advertisement as the key player of this campaign in promoting and taking this message to the people and impact of the campaign on the people and attitude of public towards cleanliness.

Material and Methods

Objectives :

1. To perform a SWOT analysis evaluating the situation of sanitation in Indore city.
2. To determine the primary drivers for practicing sanitation.
3. To identify various teaching to be followed by the other cities.

Methodology

- **Study Period:** Annual year was targeted for 2016 to 2017.
- **Study Setting:** under the guidance of IMC, Indore city was basically targeted.
- **Study Design:** Qualitative and Quantitative methods were adopted for the present study.
- **Data Collection:** The nature of the data that was collected for the study was actually qualitative and quantitative both, where the Qualitative data collection was gathered into the form of group discussion in the nominal group as well as the structured questionnaire was designed and opted for quantitative method was and reviewing on the data was done.
- **Sample Size:** Group discussions for 6 respondents were selected and the 19 respondent for in-depth interview was targeted.

Data Capture Method

1. **Visited the field:** The location for waste collected and the plant for sewages treatment was checked.
2. **Group Discussion** with the random public, officers from waste handlers, representation or corporates for people is targeted.
3. With the primary drivers a depth interview was conducted.
4. The corporates officers and the sewages treatment plants were reviewed for the data sources.

Data Analysis - The ethno graph software (6.7) was adopted for analysis and transcribed data that was gathering through interview and discussion form.

Result - Situation of the sanitation in Indore city was determined through SWOT analysis.

Strength:

1. Eradicating of manual scavengers
2. Strategic planning and historical advantages for the underground system.
3. Limited slum population into city.
4. City which is known for commercial and education hug, city palaces with famous mandu utsav and jatra festival.
5. Hold of the political segment is also very strong.
6. The voluntarily participation for the cleanliness into the city boost the maintaining city clean.

Weakness:

1. The plant of treatment is wrongly location beside the residential area.
2. Law enforcement into the city hold is very low.
3. The inter-sectorial coordination is also very weak.

Opportunity:

1. Seeing that fascinating city Indore is known for cultural capital of Madhya Pradesh state, high and significant importance is given by the policy maker.
2. Involvement of various NGO's and ULB's are working for initiating practicing for cleanliness drive in the city Indore.
3. Majority of the population is literate so easily to communicate message.
4. Various private companies like Infosys, Bharti are initiating CSR into their respective companies.

Threats:

1. Sanitation situation may get affected if the monsoons get failed and possibility for scarcity of the water increased.
2. The burden on the current resource that exists can increase if the rapid growth in the population increases.
3. Newly entered industries into the city affecting the cultural status.

Management of Solid Waste in Indore city:

1. Dual bins were distributed and educate the society to segregate the garbage in proper manner.
2. In all the 85 wards and the 19 zones, the activity of door to door garbage collection was performed.
3. The wastage was dumped into vehicle are monitored through the GPS mode.
4. Centralized processing plants were setup in different location of the city for solid waste.
5. Also banned of using plastic bags makes a good impact in Indore City.
6. Regarding the location of toilet / penalties and the other violation he corporation authority launches a mobile app.
7. Also for the purpose of grievance redressal and the system feedback for the society, the online facilities were also provided.

Solid Wastage Collection in Indore City:

1. Total amount of the solid generated per day is 8000 TPD.
2. Total amount of the municipal solid waste was collected is 7500 TPD (93%).
3. No. of public dustbins: Existing 1500 and be proposed: 3000.
4. No. of vehicles for the transportation and the disposition is 468.
5. Area of land fill site 1400 TPD (18%).
6. % of household covered by door to door collection 6100 TPD.

7. Organic waste produced per day 550 Tonnes.
8. Total waste treated 6100 TPD (81%).

Conclusion - The faecal flow into the city may be easily get traced through the development of the value chain of sanitation in the Indore city. The disposing of the waste through the faecal sludge management can performed in an excellent way further in future, if wishes to be maintained cleanest city status for Indore city the threat and the weaker section for SWOT analysis should be properly addressed.

Limitation:

1. The study included the secondary data may cause the biasness into the collected information.
2. As possible data collected through various prospects, but still may have chances of information to be missed.

Abbreviation:SBA: Swachh Bharat Abhiyan**; ULB:** Urban Local Bodies; **MSW:** Municipal Solid Waste; **CSR:** Customer Social Responsibility; **TPD:** Tonne per Day; **SWM:** Solid Waste Management.

References:-

1. http://moud.gov.in/SwachchBharat
2. https://www.researchgate.net/publication/279201808_Swachh_Bharat_Mission_A_Step_towards_Environmental_Protection
3. http://sac.ap.gov.in/sac/UserInterface/Downlaods/SBM_ODF_Final-ilovepdf-compressed.pdf
4. https://m.dailyhunt.in/news/india/english/wittyfeed+india-epaper-witty/wondering+how+indore+became+india+s+cleanest+city+ here+s+what+you+need+to+know-newsid-84098185
5. https://audioboom.com/posts/7126822-indore-mein-ab-pre-wedding-shoot-trenching-ground-pe-hoga-rj-ravi
6. http://en.wikipedia.org/wiki/Open_defecation
7. http://opendefecation.org/
8. http://en.wikipedia.org/wiki/Swachh_Bharat_Abhiyan
9. http://swachhbharat.mygov.in/
10. http://sbm.gov.in/tsc/NBA/NBAHome.aspx

****

A Study of Customer Decision Making Process for Interior Design

Pawan Tiwari*

Abstract - In recent years different orders of house have been constructed, and the living standards of consumer have been change. At present the house design and decoration has enteredlot of houses and the design and decoration consumer of people has become more rational.All the consumers have their own needs, taste and preferences in their house designing and these needs make them make different decisions. These decisions can be complex depending on the consumer's opinion about a particular product, evaluating and comparing, selecting and purchasing among the different types of product. Therefore, understanding and realizing the core issue of the consumer behavior and process of consumer decision making and utilize the theories in practice is becoming a common view point by many companies and people.
Key Words - Consumer Behavior, Customer Decision making process, Interior Design.

Introduction - The Area of Consumer behavior research is focused on two major questions: how consumers go about making decisions (descriptive theories), and how decisions should be made (normative theories) (Edwards and Fasolo 2001). Research directives, aimed at researching how consumers should decide, have been emerging lately. Several critiques have appeared against the existing literature which focuses almost exclusively on the marketing perspective and neglects consumers and their difficulties in decision making (Bazerman 2001; Gronhaug, Kleppe, and Haukedal1987). Brief and Bazerman (2003, 187) developed the idea that 'creating true value for the consumer and, thus, adding value to society is one of the most obvious ways business organizations make the world a better place'. This notion of a consumer-focused approach is also supported by Bargh (2002), who believes consumer research should balance studies of how to influence consumers with studies of how consumers could defend themselves against and control such influences. One of the most influential areas within consumer behavior is consumer decision – making (Bargh 2002; Simonson et al. 2001; Bettman, Luce, and Payne 1998). At the conceptual level, various consumer decisions- making models have been proposed in the literature in recent decades.

With the development of the economy and improvement of aesthetics of the general public, the requirement of people for the quality of life and living space are higher and higher. In recent years different orders of residences have been constructed, and the living conditions of people have been amended. At present the house decoration has entered thousands of houses, and the decoration consumer of people has become more rational.

Interior design includes the spatial planning and the proportions of the room to make it aesthetically pleasing using particular techniques (eg the golden mean); interior decoration more often than not refers to color, texture, fabrics and furnishings.

Interior design takes training as well as talent, and these lessons will give you the know-how you need to design a room from floor to ceiling. You'll delve into color theory, industry trends, spatial arrangements, floor plans, traditional and modern interior design ideas, and other basics. In addition, you'll explore a range of careers in interior design and get inside tips for entering this exciting field.

Literature review

Rowley (1997) in his research work had commented that consumer buying process offers two useful perspectives: the decision-making process associated with consumer buying and the factors which affect the buying process. The author further stated that the consumers buying process can be divided into personal, psychological and social and cultural factors. The 'social factors', such as consumer's small groups, family, reference group, social roles and status can affect consumer responses and influence their buying behavior. 'Personal factors' such as age, lifecycle stage, occupation, education and economic situation, and 'Psychological factors' such as, motivation, perception, learning, beliefs and attitudes and personality, also play major roles in consumer decision-making process.

Blackwell et al (2001) defined consumer behaviour as a summation of acquisition, consumption and disposal of products or services. However, such definition falls short of the continuity of the processes. Based on this loophole, Arnoud et al. (2004) further proposed the circle of consumption that recognize purchasing processes as a loop, comprising acquisition of goods and services,

*Asst. Professor, K K College, Indore (M.P.) INDIA

consumption, as well as disposal of used goods. As far as the consumer decision process model is concerned, consumers need to go through seven steps before reaching their final decisions. These seven steps include need recognition, search for information, pre-purchase, evaluation, purchase, consumption, post-consumption evaluation and divestment (Blackwell et al., 2006).

Rayport and Jaworski (2003) study revealed that most of the consumer research would primarily base on these seven stages and howdifferent elements affect each stage of consumers' decisions, regardless of thedifferent terms and consolidation of stages. Colleagues, peers, friends and family members are highlighted as another important source of information by Kahle and Close (2006). Moreover, according to Kahle and Close (2006) the nature of influence of peers, friends and family members upon information search and consumer decision making process in general depends on a range of factors such as the nature of relationships, the level of personal influence, the extent of 'opinion leadership' associated with specific individuals etc. Koklic& Vida (2009) suggest that "prefabricated house purchasing is a high-involvement and emotionally charged products whose decision making process involves a lot of time, effort, and participants". Consumers take psychological and social factors into consideration as well as rational factors when making a decision and this makes the decision process complex. They define this type of purchase as "strategic decision making process which includes high involvement in the process; long-term commitment of resources; truncated budget available for other goods and services".

There are many reasons to why people consume and there are different factors that affects how people consume. First of all, the individuals own personal factors and living situations plays an important role. These are constantly changing, depending on at what stage in life the individual are. Age, gender, marital status, economic situation and personality are examples that contribute to the choices a consumer make when purchasing a product, and the choices are often reflections of these factors. Secondly, cultural factors are influential for the consumer, and according to Kotler et al. (2009), this is the most influential factor of all. The cultural factors consist of values and behaviours that are affected by others, This is contributing to affect the consumer because he or she will consume according to the groups references (Kotler et al. 2009, Solomon et al. 2010, Evans et al. 2008).

Objective of Study - The broad objective of the study is to examine the household Customer decision making process for interior design with special reference to Indore City. The objective of this study conducted by researcher to analyze the different stages of decision-making process in domestic Interior design. As per Reviews done by others there were variety of research has been conducted by different researchers at different places with variety of variables.

Consumer Buying Decision Process - The stages a buyer passes through in making choices about which products andservices to buy are the purchase decision process. People engaged in extended problem solving usually go throughall the stages of this decision process

1. Problem Recognition - The first stage of the consumer decision-making process is recognizing that onehas a need to fulfill or a problem to solve. A want exists when someone has anunfulfilled need and has determined that a product or service will satisfy that need. Forexample, the need to replace the family car might be triggered by its poor performance,by a change in family size, by an increase in family income, by a desire to have a carthat is in style, by a need for better gas mileage because of increased gas prices, and soon.Bruner (1987) points out that among the consumers, there seems to be twodifferent needs or problem recognition styles. Some consumers are actual state types,who perceive that they have a problem when a product fails to perform satisfactorily. Incontrast, other consumers are desired state type, for whom the desire for something newmay trigger the decision process.

2. Information Search - After recognizing a problem, a consumer begins to search for information, thenext stage in the purchase decision process. An information search has two aspects. Inan internal search, buyers search their memories for information about products thatmight solve the problem. If they cannot retrieve enough information from memory tomake a decision, they seek additional information from outside sources in an externalsearch.For example, a person is going to purchase a new car. The decision is morecomplicated, and he is motivated to search for more information. The decision to searchis based upon the perceived value of the information in relation to the costs of obtainingit. Most people buying a new car would probably like information on various models,options, fuel mileage, durability, passenger capacity and so forth. The trouble and timeit takes to get this data are less than the cost of buying the wrong car.

Punj and Stealin (1983) conducted studies to find out the amount of search thatconsumers undertake when they are in the purchase decision process. They used confirmatory factors analysis to show that high cost of searching and good brand knowledge were associated with less search activity for new automobiles.

3. Evaluation of Alternatives - Having recognized the problem of need and searched for information aboutpossible alternatives, the consumer arrives at the third stage of the decision-makingprocess: evaluation of the alternatives. When a satisfactory number of alternatives havebeen identified, the consumer must evaluate them before making a decision. Theevaluation may involve a single criterion, or several criteria, against which thealternatives are compared.A consumer buying a new car will usually consider engine performance, safety,reliability, mileage, interior design, maintenance history, social status, luxuriousfittings, price and brand name.Nakanishi and Bettman (1975) quote that an evaluation process may be toocomplex for many consumer goods; consumers may evaluate brands on two or threekey

attributes and eliminate brands if they are not adequate on any one attribute.

4 .Purchase Decision - After searching and evaluating, the consumer must decide whether to buy or not.Thus, the first outcome is the decision to purchase or not the alternative evaluated as themost desirable. If the decision is to buy, a series of related decisions must be maderegarding features, where and when to make the actual transaction, how to take deliveryor possession, the method of payment and other issues.Peterson, Balasubramanian and Bronnenberg (1997) forecast that early in thetwenty first century consumers will be purchasing food and other basic household needs via in-home television computer systems. The shopper will choose after viewing brandsand prices on the screen. So, the purchasing process itself may change dramatically inthe coming decades.

5. Post Purchase Behaviour - This is the final stage of the decision making process, where consumers comparethe product's performance against their expectations. Buyer's feelings and evaluation,after the sale, are significant for the marketer because they can influence repeat salesand develop 'brand loyalty' or stop the use of the product for ever. Many companiesregard satisfied customers as their best form of advertising.Kotler and Mantrala (1985) state that the larger the gap between expectation andperformance, the greater the consumer's dissatisfaction and they prove that someconsumers magnify the gap when the product is not perfect and they are highlydissatisfied; others minimize the gap and are less satisfied.

Finding/Suggestion & Conclusion - Variation in consumer behavior and decision making due to various factors influencing the behaviorfor purchasing interior design products. Present day consumers are as main key to the success or failure ofanIndustry. It is important to understanding consumer behavior is correctly.Growing globalcompetition and increasing number of companies and frequently changes consumer behavior producing goods and services is also causedthat marketers studied more to consumer behavior they produced the goods and services inaccordance with its in addition to identify asked to their asked and will create the moreloyalty in consumer.

Overall, it is argued that the study of consumer behavior and decision making is rapidly evolving as researchers recognize and implement new techniques and transdisciplinary perspectives to understand the nature of purchase and consumption behavior. This wider view attempts to study consumer behaviour in the light of rapidly evolving lifestyles, needs, taste and preferences, values, and social contexts.

In particular the buying process of consumer behavior and its decision making process is of more importance to marketing practitioners than the consumption process. From a practitioner's perspective consumer research is pertinent so as to enable him to understand changing consumer needs, wants, and motivations and thereby devise the most appropriate mix for his market

References :-

1. Bargh, J. A. 2002. Losing consciousness: Automatic influences on consumer judgment, behavior and motivation. *Journal of Consumer Research*
2. Bazerman, M. H. 2001. Reflections and reviews: Consumer research for consumers. *Journal of Consumer Research* 27 (4): 499–504.
3. Blackwell, R.D., Miniard, P.W. & Engel, J.E. (2006). *Consumer behaviour*, (10th Edition). Canada: Thompson, South-Western.
4. Bruner, G. C. (1987). The effect of problem recognition style on information seeking. *Journal of the Academy of Marketing Science, 15*(4), 33-41.
5. Edwards, W., and B. Fasolo. 2001. Decision technology. *Annual Review of Psychology* 52: 581–606.
6. Rayport, J.F., Jaworski, J.B. (2003), Introduction to E-commerce. New York: McGraw-Hill
7. Evans, M., Jamal, A., Foxall, G. (2008) Konsument beteende.Liber AB, Kristianstad
8. Ha, H., Janda. S. and Muthaly, S., (2010). "Development of brand equity: evaluation of four alternative models", Service Industries Journal, 30(6), pp. 911-928
9. Kahle L.R. and Close, A. (2006) "Consumer Behaviour Knowledge for Effective Sports and Event Marketing", Taylor & Francis, New York, USA
10. Koklic, M.K. & Vida, I. (2011). A Strategic Household Purchase: Consumer House Buying Behavior. Managing Global Transitions International Research Journal, 7(1), 74-96.
11. Kotler, P., Armstrong, G., Harker, M., Brennan, R. (2009) Marketing an introduction. education limited, Edinburgh Gate, Harlow, Essex
12. Perrey, J &Spillecke, D. (2011) "Retail Marketing and Branding: A Definitive Guide to Maximising ROI" John Wiley & Sons
13. Philip Kotler and Murali K. Mantrala, "Flawed Products: Consumer Responses andMarketing Strategies", Journal of Consumer Marketing, (Summer), 1985, pp. 32 – 41.
14. Punj, Girish N. and Richard Staelin, "A Model of Consumer Information Search Behaviour for New Automobiles", Journal of Consumer Research, Vol. 9, March 1983, pp. 65 - 73.
15. Rowley J (1997), "Focusing on Customers", Library Review, Vol. 46, No. 2, pp. 81-89, MCB University, UK.
16. Solomon, M., R., Bamossy, G., Askegaard, S., Hogg, M. K., (2010)Consumer Behaviour a European perspective, 4th edition, Pearson education, Harlow, Essex
17. Stefan Thomke, Eric Von Hippel, 'Customers as Innovators: A New Way to Create Value', Harvard Business Review, April 2002, pp. 234 - 262.
18. Trehan, M. &Trehan, R. (2011) "Advertising and Sales Management" FK Publications.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Social Entrepreneurship: A Growing Trend in Indian Business

Dr. Sanjay Patni*

Abstract - Social enterprises are the organizations which aim their efforts toward improving the general welfare of society and they apply market based strategies to achieve a social purpose. The movement includes both non profit and for profit organizations with non profit organizations using business models to pursue their mission and for profit organizations incorporating a social agenda into their business model. The focus of the article is to address the growing trends of social entrepreneurs in Indian business including the history of social entrepreneurship in India and the new initiatives taken by various social entrepreneurs. However, many of India's social entrepreneurs continue to struggle as the social venturing landscape lacks appropriate sources of financing, proper regulations, societal recognition and suitable information systems. A social entrepreneur identifies practical solutions to social problems by combining innovation, resourcefulness and opportunity. Committed to producing social value, these entrepreneurs identify new processes, services and products, or unique ways of combining proven practice with innovation to address complex social problems. Whether the focus of their work is on enterprise development, health, education, environment, labour conditions or human rights, social entrepreneurs are people who seize on the problems created by change as opportunities to transform societies. Therefore, it's the right time for various non governmental organizations (NGOs), governmental organizations and social entrepreneurs to come forward to encourage further development of social entrepreneurship in India.

Introduction - The idea of Social Entrepreneurship has become increasingly popular as social problems in our complex modern society have grown. In a way, it is a reaction to the 'bottom line' philosophy of modern big business with its emphasis on short-term profit to the detriment of any longterm benefit to society as a whole or the human component of the business itself. Social Entrepreneurship seeks to harness the practical dynamism of the successful businessman to enrich and help society, especially in countries where the individual is beset with problems of dire poverty and lack of opportunity. Peter Drucker[1] argues that social entrepreneurs "...change the performance capacity of society" (Gendron, 1996, p. 37) while Henton[2] et al. (1997) speak of 'civic entrepreneurs' as "...a new generation of leaders who forge new, powerfully productive linkages at the intersection of business, government, education and community". In spite of the varying definitions of social entrepreneurship, one commonality emerges in almost every description: the 'problem-solving nature' of social entrepreneurship is prominent, and the corresponding emphasis on developing and implementing initiatives that produce measurable results in the form of changed social outcomes and/or impacts.

Social entrepreneurship is a practice that integrates economic and social value creation which has a long heritage and a global presence. The global efforts of Ashoka, founded by Bill Drayton in 1980, to provide seed funding for entrepreneurs with a social vision; the multiple activities of the Grameen Bank, established by Professor Muhammad Yunus in 1976 to eradicate poverty and empower women in Bangladesh and the use of art to develop community programs in Pittsburgh by Manchester Craftsmen's Guild, founded by Bill Strickland in 1968; these are all on temporary manifestations of a phenomenon that finds its historical precedents in the values of Victorian liberalism. Entrepreneurs are innovative, highly motivated, and critical thinkers. When these attributes are combined with a drive to solve social problems, a social entrepreneur is born. Social entrepreneurs and social enterprises share a commitment of going ahead with a social mission of improving society.

In India, social entrepreneurship has been gaining ground in various sectors of the economy with more and more youth evincing interest in the field, including those from prestigious Indian Institutes of Management (IIM) and Indian Institutes of Technology (IIT). The focus of this paper is on the growing trends of social entrepreneurs in Indian business.

Social Entrepren vs. Non Profit Organizations - Social enterprises traditionally lean towards a non profit business model, as they are society oriented organizations. For the

*PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

social enterprise, their social mission is an explicit and central objective. This obviously affects their perception and assessments of opportunities. They purely focus on the social impact of their business activities not on wealth creation. Many commercial businesses are of a view that they are fulfilling various social needs along with their business motive to earn maximum profits, but social entrepreneurs are completely different from them. The social impact is the primary motive of their business.

Nowadays, the main aim of social enterprises is to generate a profit in order to pursue their social and environmental goals. The profit from a business can be reinvested with an aim to expand its service area for the welfare of the society. Similarly, the profit of a social entrepreneur can also be used to support a social cause, such as funding the programming of a non profit organization for social purpose. Moreover, a business can accomplish its social aim through its operations by employing individuals from disadvantaged backgrounds or by providing finance to those micro businesses which have difficulties in securing investment from mainstream lenders. In fact, there is a great difference between social entrepreneurs and nonprofit organizations on the basis of their goals and objectives. Social entrepreneurs are driven by social as well as financial goals whereas non profit organizations work purely for social purpose. The primary source of funds for social ventures is their earnings while non profit organizations rely on donations, and charitable contributions. The performance of social entrepreneurs is measured on the basis of social value delivered along with financial returns, while a non profit organization is evaluated merely on the basis of social value they have delivered. Social enterprises are run in an entrepreneurial setting, using marketing tools of commercial and social advertisements for selling their products and services in a sustainable manner, whereas non profit organizations are run much like most organizations relying on a social plan, fund raising, social outreach etc., selling services and products for free, all of which increase the risk of non sustainability. Grameen Bank, SKS Microfinacne, Rang De, Arvind Eye Care are recent examples of social entrepreneurs in India, whereas Help age India, CRY, AID etc. are recent examples of non profit organizations.

Growth and Initiatives of Social Entrepreneurship in India - Initially, the concept of social entrepreneurship used to be associated with corporate social responsibility and the provision of funds to charitable institutions to run philanthropic organizations on a small scale. Of late this concept has undergone transformation and has given birth to a large number of social enterprises. According to the survey states that there are 1.2 million non profit organizations in India, which engage nearly 20 million people as paid employees or on a volunteer basis. Over twenty six percent (26.5%) of these NPOs (Non Profit Organizations) were performing religious activities, the rest were secular bodies focusing on social development issues such as education, healthcare and community development. The estimated receipts of funds by these NPOs were $ 2.70 trillion (2009 2010). However, eighty percent (80%) of this was generated from local activities of community contribution and donations among these fifty one percent (51%) were self generated, while nearly thirteen percent (12.9%) came from donations – and over seven percent (7.1%) from loans. McClelland (1975) found that Indians have a social achievement motivation, which is characterized by a desire for contributing to a collective well being and achievement of super ordinate goals.

Similarly, the growth of some of the social entrepreneurs in the fields of health and power generation and their contribution to the welfare of society is briefly discussed in the following text.

Health Sector - Health care in India has a long tradition of voluntarism. For centuries, traditional healers have taken care of the health needs of their own community as a part of their social responsibility. They have used knowledge regarding the medicinal value of herbs and plants that has been passed down from previous generations. This tradition still exits, particularly in the tribal pockets of the country. Healthcare is one of India's largest sectors, in terms of revenue and employment, and the sector is expanding rapidly. During the 1990s, Indian healthcare grew at a compound annual rate of sixteen percent (16%). Today the total value of the sector is more than $34 billion. This translates to $34 per capita, or roughly six percent (6%) of GDP. By 2015, India's healthcare sector is projected to grow to approximately $50 billion. The private sector accounts for more than eighty percent (80%) of total healthcare investment in India. Various social entrepreneurs in the private health sector like Narayana Hrudayalaya Hospital of Cardiac Care, Arvind Eye Hospital, Shantha Biotech Lab and Water Health International play an important role.

Power Sector - India has historically failed to meet its power sector targets by a significant margin and, with tremendous opportunities ahead, the power sector continues to be affected by the shortfall in both generation and transmission (Klein, 2008). India fortunately has an active and growing social enterprises sector which is engaged in delivering required services to the community. Many of these social entrepreneurs have earned distinctions and awards for the valuable work they have done and are doing for the welfare of society. Among them is Dr Harish Hande, a social entrepreneur in the power sector who has contributed his services to provide power to an under serviced population. His company, SELCO, has been using solar technology to provide hundreds of thousands of households with 'clean' lighting. About 70 percent (70%) of the beneficiaries are small farmers who earn between Rs 100 to 200 a day and after reaching 80,000 clients across Karnataka and Kerala, SELCO has moved into Gujarat. This power generating system has ended the use of dirty and dangerous kerosene lamps and avoided emissions of approximately 24,000 tonnes of CO_2 released by the use of kerosene lamps.

Similarly, the former Silicon Valley techie Inderpreet Wadhwa's firm, Azure Power Pvt. Ltd., set up India's first private utility scale power plant in December 2009. The 1 megawatt (MW) plant is located in Awan, 40 km away from Amritsar, and today caters to 32 surrounding villages and the 20,000 people who reside there by providing electrical power into the Punjab Electricity Board's local grid. In effect, Wadhwa is a pioneer as he is the first entrepreneur to build a solar power plant of this scale in India's private sector and he took a long way round to get there. This project was financed by the US Overseas Private Investment Corporation. In order to encourage private participation, the Punjab State Electricity Board has signed a 30 year power purchase agreement with Azur Power. This will yield revenue of $ 0.03 a unit for the first ten years and $0.1786 a unit for the next 20 years.

Sources of Finance for Social Entrepreneurs in India - Social venture funds (SVFs) measure their investments on social, environmental and traditional financial returns. The fund measures returns in terms of financial, operational (internal processes and systems) and social impact (outcome and output). Output is the number of people who are impacted and outcome is how it has affected them. A few sources of funds available to social entrepreneurs in India are:

1. Acumen Fund
2. Song
3. Aavishkaar India Micro Venture Capital
4. Gray Matters Capital
5. Elevar Equity II

Challenges for Social Entrepreneurs in India - The positive feedback of success and attention will naturally encourage new entrants, driving more and more effective social entrepreneurial initiatives. Peredo & McLean (2006) indicate that there are nevertheless tremendous hurdles and challenges that many social entrepreneurs face while operating in India and that hinder the entrance of new social entrepreneurial ventures. Some of the major challenges are outlined in the following:

1. Lack of Education in Entrepreneurship
2. Lack of Financial Assistance
3. Social and Cultural Effect
4. Lack of Government support
5. Lack of Skilled Manpower

Conclusion - The Indian scene is full of possibilities and challenges. The country possesses capable human resources, and has made good progress in achieving scientific and technological capabilities. The economy has been witnessing rapid growth since the onset of liberalizations from 1991 onwards. Unfortunately social and environmental problems of the country are increasing year after year (Christie& Honig, 2006) which necessitates the extensive application of multidisciplinary approaches and entrepreneurial energy in the social and environmental sectors. As discussed earlier, India is experiencing an increase in social entrepreneurship and attempts by social entrepreneurs to find affordable solutions to various social problems of society. With changes in technology and increasing competition, social entrepreneurs have to become more dynamic.

"Unfortunately social and environmental problems of the country are increasing year after year which necessitates the extensive application of multidisciplinary approaches and entrepreneurial energy in the social and environmental sectors."

References:-

1. Bruton, G. D., Ahlstrom, D., & Li, H. L. (2010). Institutional Theory and Entrepreneurship: Where Are We Now and Where Do We Need to Move in the Future? *Entrepreneurship Theory and Practice*, 34(3),pp. 421 440.
2. ADB (2009). Asian Development Bank Study on "Institutions And Governance In The Poverty
3. Response" Poverty in the Philippines: Causes, Constraints And Opportunities,2009 pp 51.
4. Austin, J., Stevenson, H., & Wei Skillern, J. (2003). Social Entrepreneurship And Commercial
5. Entrepreneurship: Same, different, or both?. *Harvard Business Review pp.*04 029.
6. Chakraborty, S.K. (1987), *Managerial Effectiveness And Quality of Worklife: Indian Insights*, New Delhi, Tata McGraw Hill Publishing Co. Ltd.pp.169.
7. Christie, M. J., & Honig, B. (2006). Social Entrepreneurship: New Research Findings. *Journal of World Business*, pp 1 5, 44.
8. Dees and Anderson (2006), "Framing a Theory of Social Entrepreneurship: Building on Two Schools of Practice and Thought," in Research on Social Entrepreneurship: Understanding
9. and Contributing to an Emerging Field, *Association for Research on Non profit Organizations and Voluntary Action* (ARNOVA), 2006.
10. Frumkin, P. (2002). *Social Entrepreneurship On Being Nonprofits.* Cambridge, Mass.:
11. Harvard University Press pp.129 162.

Web Page References

1. http://www.aravind.com
2. http://www.ashoka.org
3. http://www.grameen info.org
4. http://www.acumenfund.org/
5. http://aavishkaar.in/AIMVCF.html

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Auditors Report - A Tool of Management

Dr. Nilesh Gangwal*

Abstract - Every art or skill needs a tool for its presentation. Better the tool more perfect is the presentation. A surgeon needs knife, a painter needs brush, an architect needs pencil, a writer needs a pen, and similarly management needs a report i.e. internal auditor's report, the ultimate tool which management can use for stream lining its own and very function of managing the affairs of the company. When it comes to using it as a tool by statutory auditors it gives them an inside affairs of the company that happened throughout the year/period. It helps them in deciding their focus area to arrive at their findings/opinion. It is obvious that internal auditors report plays a vital role in every manner. Many a times there are reference records which can be understood by mutually inter acting with each other and such interaction may be periodic depending on the volume of the business.
Keywords - audit, auditor, tool, statutory, management.

Introduction - The question arises how a report can be a tool. Before we address this let us understand what the contents of the report are. They can be summed up in brief as under:

1. It may be monthly, quarterly, six monthly or annually.
2. It gives the consolidated financial performance of the company for the period.
3. It gives comparative data of the company and also of the trade.
4. It gives the performance analysis as regards to sales, purchase, labour, administrative overheads, selling/ marketing overheads, employees overhead, product costing, profitability analysis, creditor's analysis, financial barometers, weakness and strength of the company, guideness notes for taking care of lacunas and also tips for better performances.

If we look at the above contents of a report definitely there is no need to give further explanation as to how it can be a tool for the management. The better are the comments and coverage's in an internal auditors report the more sharpen it becomes a tool for the management. Now it is their skill to use it for better creation/performance.

An auditor s report is considered as essential tool when reporting financial information to users, particularly in business. Since many third party users prefer, or even require financial information to be certified by an independent external auditor. Many auditees rely on auditors report to certify their information in order to attract investors, to obtain loans and to improve public appearance. Some have even stated that financial information without on auditors report is "essentially worthless" for investing purpose.

Objective - The internal auditors report is also indicative and helpful and may, at times, itself be an instrument for detection of errors and frauds. Such instance if observed and reported helps prevention of recurrence of such errors and frauds.

With the observation if any of this is purposeful or intentional it is disastrous for the company and taken care accordingly, but if it is unintentional it is an indication of the loose ends where management needs to keep precautions for further so as to not to let any mischievous person/ employees associated with company to take undue advantage of this.

Extent And Exposures Of Internal Auditors Report Reporting standards:

1) Quality and contents of an auditors report - The following quality and contents of an auditors report standards apply equally to all these reports with variations in the scope of these reports.

- On the completion of each audit assignment, the auditor should prepare a written report setting out the audit observations and conclusions in an appropriate form; its content should be easy to understand, free from ambiguity and supported by sufficient, competent and relevant audit evidence and be independent, objective, fair, complete, accurate, constructive and concise.

The audit report may be presented on other media that are retrievable by other users and the audit organizations.

- The report should include a description of the scope and coverage of audit, objective of audit, area of audit, main findings in respect of the efficiency, economy and effectiveness, aspects of the area which was audited and recommendations suggesting the improvements that are needed.
- The audit report should be complete. This requires that the report contain all pertinent information needed to satisfy the audit objectives, and to promote an adequate and

* PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

correct understanding of the matter reported. '

- Accuracy requires that the evidence presented is true and the conclusions be correctly portrayed. The conclusions should flow from the evidence. The report should include only information, findings and conclusions that are supported by competent and relevant evidence in the auditor's working papers and describe accurately the audit scope and methodology and presenting findings and conclusions in a manner consistent with the scope of audit work.

The audit report should be fair and not be misleading and should place the audit results in proper perspective. Clarity requires that the report be easy to read and understand. Timeliness requires that the audit report should be made available promptly to be of utmost use to all users, particularly to the auditee organizations and/or government who have to take requisite action.

2) Follow up of audit reports - Adequate, prompt and proper follow up action by the entity on and in the light of audit conclusions projected will enhance the effectiveness of audit and promote public accountability.

3) Report distribution - Written audit reports are submitted by the audit organization to the appropriate officials of the organization audited. Copies are also sent to other officials who may be responsible for taking action on audit observations and conclusions. However, the report is not a public document till it is presented to the legislature.

4) Reporting on compliance with laws and regulations and on internal control - This standard can be explained under two sections i.e. a) value for money/performance and b) audit of financial statements.

5) Fraud, illegal acts and other noncompliance - When auditors conclude based on evidence obtained, that fraud or an illegal act either has occurred or is likely to have occurred they should report relevant information. Auditors should also report other noncompliance that is material to the financial statements. In presenting material fraud, illegal acts or other noncompliance, auditors should ensure that standard for objectives, scope and methodology, audit results and presentation standards, as appropriate are observed. Management is responsible for taking timely and appropriate steps to remedy fraud or illegal acts that auditors report to it.

6) Deficiencies in internal control. Auditors should report deficiencies in internal control that they consider to be reportable conditions.

7) The form and content of audit opinion and report.

a) The form and content of all audit opinions and reports are based on the following general principle:

The opinion or report should be preceded by a suitable title or heading and should include reference to the objectives and scope of the audit. It should be presented as prepared by the auditor and identify those to whom it is addressed. The opinion or report should identify the area to which it relates. This includes information such as the name of the audited entity, the date and period covered by the financial statements and the subject matter that has been audited. It should indicate the auditing standards or practices followed in conducting the audit, and it should be available promptly to be of greatest use to readers and users, particularly those who have to take necessary action.

b) Unqualified opinion. This report is given when the auditor is satisfied in all material respects that the financial statements have been prepared using acceptable accounting bases and policies which have been consistently applied and the statements comply with statutory requirement and relevant regulations.

c) In certain circumstances the auditor may consider that the reader will not obtain a proper understanding of the financial statements unless attention is drawn to unusual or important matters.

d) Where the auditor is unable to form an opinion on the financial statements taken as a whole due to disagreement which is so fundamental that it undermines the position presented to the extent that an opinion which is qualified in certain respects would not be adequate, an adverse opinion is given. The wording of such an opinion makes clear that the financial statements are not fairly stated, specifying clearly and concisely all the matters of disagreement.

e) Reports on irregularities may be prepared irrespective of a qualification of the auditor's opinion. By their nature they tend to contain significant criticisms, but in order to be constructive they should also address future remedial action by incorporating statements by the audited entity or by the auditor, including conclusions or recommendations.

Conclusion - To sum up an internal auditors report is definitely a tool and a sharp tool for the management as well as the statutory auditors which help them to perform their part of the duty with due diligence and carefully. The purpose of audit report is to furnish management independent objective analysis, recommendations, and information concerning the activities reviewed. The audit report is a tool to help management and implement specific improvements.

References :-

List of Books :

1. Principles and Practice of Auditing—By Dinkar Pagare
2. Contemporary Auditing—By Kamal Gupta.
3. Auditing Information Systems—By Jack .J. Champlain
4. Auditing—By Dr.T.R.Sharma.
5. Fundamental of Auditing—By Gupta

Publication

1. Manual on internal audit.
2. Auditing and assurance standards and guidance notes.

Websites

1. www.icai org:—The institute of charted Accountants of India
2. www ifac. org—International Federation of Accountants

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

बी.एड विद्यार्थियों द्वारा शिक्षण अभ्यास प्रक्रिया में सूक्ष्म शिक्षण कौशलो के प्रभाव का अध्ययन

डॉ. घनश्याम शर्मा* जगदीश चन्द्र शर्मा **

शोध सारांश – बी.एड प्रशिक्षण के समय एक प्रशिक्षणार्थी को कई गतिविधियॉ करनी पडती है, जिससे उसमें अध्यापन कार्य में कुशलता प्राप्त हो सके। इसी क्रम मे सुक्ष्म शिक्षण की भी महत्वपूर्ण भूमिका है प्रस्तुत शोध पत्र मे हमने विभिन्न प्रशिक्षण संस्थानो का अध्ययन करके यह जानने का प्रयास किया है, कि विभिन्न शिक्षण कौशलो का प्रयोग शिक्षण के द्वोरान प्रशिक्षाणार्थी कितना करते है। हम केवल सात कोशलो के बारे मे अध्ययन करते हुए इस परिणाम पर पहुँचते है कि प्रशिक्षणार्थी में से भी महिला व पुरूष पशिक्षणार्थी के प्रयोग मे अन्तर आता है। तथा विभिन्न शिक्षण कोशल के प्रयोग मे भी अन्तर दिखाई देता है।
शब्द कुंजी – शिक्षण कौशल, सूक्ष्म शिक्षण, प्रशिक्षणार्थी, छात्राध्यापक, छात्राध्यापिका, प्रस्तावना कौशल।

प्रस्तावना – शिक्षण उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए अध्यापक को कक्षा में विभिन्न प्रकार कें व्यवहार करने पडते है और अपने व्यवहार के माध्यम से छात्रो मे वांछित परिवर्तन करने पडते है। यदि उसके प्रयास सुनियोजित सुव्यवस्थित तथा वैज्ञानिक ढंग पर आधारित होते है तो तो वह एक सफल शिक्षक बन सकता है एक शिक्षक कक्षा में विद्यार्थियो से अन्त: क्रिया कैसे करे कि वह उनमे वांछित परिवर्तन करने मे सफल हो सके, यह उसकी अध्यापन युक्तियो व शिक्षण कौशल पर निर्भर करता है शिक्षण कौशल के द्वारा ही कक्षा मे प्रभावी शिक्षण कार्य किया जा सकता है। इसलिये कहा गया है कि अध्यापन कौशलो का प्रर्दशन मात्र है।

सुक्ष्म शिक्षण :– अर्थ व परिभाषाए – सुक्ष्म शिक्षण शिक्षण की वह तकनीक है जिसमें तकनीक का प्रयोग करते हुए विशेष शिक्षण कौशलो के द्वारा हम कम समय मे अध्यापन का कार्य करते है दुसरे शब्दो में कहा जाए तो एक छोटे प्रकरण को लेकर एक सुक्ष्म समय के लिए तथा सुक्ष्म कक्षा के लिए तैयार पाठ योजना के अनुसार शिक्षण ही सुक्ष्म शिक्षण है।

लघु कथा लघु पाठ अवधि लघु पाठय सामग्री से शिक्षण करना अत: सुक्ष्म शिक्षण ऐसी शिक्षा विधि है अध्यापन की जटिलताओ एंव विस्तार को घटा कर उन्हे छोटा रूप प्रदान करती है।

बी.के. पासी के अनुसार – सूक्ष्म शिक्षण एक प्रशिक्षण तकनीक है जो छात्र अध्यापक से यह अपेक्षा रखती है की वे किसी तथ्य को थोडे से छात्रो को कम समय में किसी विशिष्ट शिक्षण कौशल के माध्यम से शिक्षा दे।

शिक्षा विश्वकोष के अनुसार – सूक्ष्म शिक्षण वास्तविक निर्मित तथा अध्यापन अभ्यास का न्यूनीकृत अनूमाप है जो शिक्षण प्रशिक्षण अनुसंधान मे प्रयुक्त किया जाता है।

डी. एलन के अनुसार – सुक्ष्म शिक्षण कम अवधि कम छात्रो तथा कम शिक्षण क्रियाओ वाली प्रविधि है।

एल. सी सिंह के अनुसार – सूक्ष्म शिक्षण शिक्षण का सरलीकृत रूप है जिसमें शिक्षक पॉच छात्रो के समूह को पॉच से दस मिनिट के समय में पाठ्यपुस्तक की एक छोटी सी इकाई का शिक्षण प्रदान करता है।

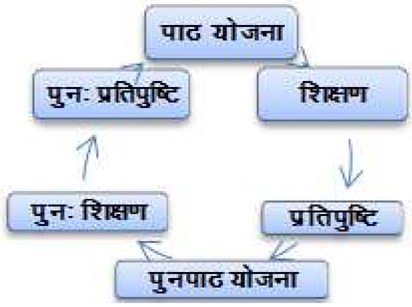

उक्त आधार पर कह सकते है कि सूक्ष्म शिक्षण ऐसी तकनीक है जिससे अल्पावधि में नियत पाठ इकाई के आधार पर एक कौशल पर सम्पूर्ण ध्यान केन्द्रित कर कतिम कक्षा परिस्थितियो में अल्पावधि में सिद्ध हस्त हुआ जा सकता है और पर्यवेक्षक के निर्देशन में त्रुटि निवारण भी सम्भव है सुक्ष्म शिक्षण चक्र कौशल मे सुधार हैतु यह क्रम जारी रहता है तथा इस चक्र से वांछित परिणाम प्राप्त किये जाते है।

शिक्षण कौशल – शिक्षण कार्य में प्राप्त कुशलता के लिए विभिन्न शिक्षण कौशलो का प्रयोग किया जाता है।इसके विस्तृत क्षेत्र को देखते हुए जिसमें से कुछ महत्वपूर्ण शिक्षण कौशलो को अध्ययन के लियें लिया है जिनका प्रयोग लगभग सभी शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयो में किया जाता है –

* प्राचार्य, महर्षि दाधीत शि.प्र. महाविद्यालय, केशवपुरा, कोटा (राज.) भारत
** प्राध्यापक, डॉ.ए.पी.जे.अब्दुल कलाम विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

उद्देश्य – किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उद्देष्यों का निर्धारण करना पड़ता है। बिना उद्देष्यों के व्यक्ति अपनी मंजिल तक नही पहुँच पाता हैं।

बी.डी. भाटिया के अनुसार – 'उद्देश्यहीन व्यक्ति उसी प्रकार भटकता रहता है जैसे लहरों के थपडो के बीच पतवार विहीन नौका।'

इसलिये हमने इस शोध पत्र के भी कुछ उद्देश्य निर्धारित किये है जो निम्न प्रकार से है –

1. छात्राध्यापको द्धारा प्रयुक्त शिक्षण कौशलो का पता लगाना व विश्लेषण करना।
2. छात्राध्यापिकाओं द्धारा प्रयुक्त शिक्षण कौशलो का पता लगाना व विश्लेषण करना।
3. विषयवार प्रशिक्षणर्थियों द्धारा प्रयुक्त शिक्षण कौशलो का पता लगाना व विश्लेषण करना।

समस्या – बी.एड विद्यार्थियों द्धारा शिक्षण अभ्यास प्रक्रिया में सूक्ष्म शिक्षण कौशलो के प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पनाएँ – शोधकर्ता द्धारा शोधकार्य को समुचित ढ़ग से पूर्ण करने के लिए परिकल्पना का निर्माण किया गया है जो इस प्रकार है –

1. छात्राध्यापको एव छात्राध्यापिकाओं द्धारा प्रयुक्त शिक्षण कौशलो में कोई सार्थक अन्तर नही है ।
2. विषयवार शिक्षण मे प्रशिक्षणर्थियों द्धारा प्रयुक्त शिक्षण कौशलो में कोई सार्थक अन्तर नही है ।

न्यादर्श – किसी भी अनुसंधान की विश्वसनीयता व असफलता न्यादर्श पर ही आधारित होती है। अत:शोध अध्ययन को व्यापक व गहन बनाने के लिये अधोलिखित आधार पर न्यादर्श का चयन किया गया है –

1. न्यादर्श की कुल संख्या 400 है। जिसका विभाजन निम्न प्रकार से किया गया है।

विषय	पुरूष	महिलाए
विज्ञान वर्ग	40	40
सामाजिक विज्ञान वर्ग	60	60
भाषा वर्ग	100	100
कुल	200	200

परिसीमन :

1. प्रस्तुत शोध में इन्दौर के शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयो को ही सम्मिलित किया गया है।
2. प्रस्तुत शोध में इन्दौर क्षेत्र के समस्त शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयो को लेना भी सम्भव नही था अत: केवल सह शिक्षा महाविद्यालय को ही अध्ययापन क्षेत्र में लिया गया है।
3. प्रस्तुत शोध में इन्दौर के शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयो में प्रयोग मे लाये जाने वाले विभिन्न शिक्षण कौशलो में से केवल सात कौशलो पर ही कार्य किया गया है।

उपकरण–मापन उपकरण – उपकरणो को अनुसंधान का मुकुट कह दिया जाए तो अतिशयोक्ति नही होगी क्योंकि इसके अभाव मे विभिन्न प्रकार के दत्तो का सकंलन असंभव हैं।प्रत्येक प्रकार के अनुसंधान के लिए नवीन दत्त संकलन हेतु नवीन क्षेत्र काउपयोग करते हुए कतिपय साधनों की आवश्यकता होती हैं। इन साधनों को ही शोध उपकरण कहते हैं। अत: उपकरण अनुसंधान रूपी भवन के लिए नींव कीईंट हैं। जिसकी अनुपस्थिति में एक अनुसंधानकर्ता अनुसंधान रूपी भवन कानिर्माण नहीं कर सकता।शोध विश्लेषण से पूर्व शोध कार्य हेतु आंकडे एकत्र किये जाते है उसके लिए किसी उपकरण की आवश्यकता होती है।

अत: प्रस्तुत शोधकार्य के लिए स्व निर्मित उपकरण (प्रश्नावली) का प्रयोग किया गया।

शोध विधि :– सर्वेक्षण विधि

विश्लेषण :

1. प्रशिक्षणर्थियो के द्धारा प्रयुक्त शिक्षण कौशलो में से 87 प्रतिशत छात्राध्यापको द्धारा पुनर्बलन कौशल का प्रयोग किया जाता है जबकि 13 प्रतिशत छात्राध्यापक पुनर्बलन कौशल का प्रयोग करते ही नही है अन्य कौशलो के प्रयोग को देखे तो छात्राध्यापको द्धारा इनका प्रयोग पुनर्बलन कौशल उददीपन परिवर्तन कौशल–67 प्रतिशत , प्रश्न सहजता कौशल–80 प्रतिशत ,उदाहरण कौशल–72 प्रतिशत, शैक्षिक उद्देश्य लेखन कौशल – 63 प्रतिशत श्याम पट्टलेखन कौशल–65 प्रतिशत व्याख्या कौशल–75 प्रतिशत प्रस्तावना कौशल–70 प्रतिशत प्रतिशत ही शिक्षण अभ्यास के दोरान प्रयाग करते है जबकि छात्राध्यापिकाओं द्धारा प्रयुक्त पुनर्बलन शिक्षण कौशल का प्रयोग प्रतिशत 94 है जबकि 06 प्रतिशत छात्राध्यापिकाओं पुनर्बलन कौशल का प्रयोग किया ही नही है अन्य कौशलो के प्रयोग को देखे तो छात्राध्यापिकाओं द्धारा इनका प्रयोग पुनर्बलन कौशल उददीपन परिवर्तन कौशल–72 प्रतिशत ,प्रश्न सहजता कौशल–82 प्रतिशत, उदाहरण कौशल–75 प्रतिशत, शैक्षिक उद्देश्य लेखन कौशल–68 प्रतिशत श्याम पट्टलेखन कौशल–75 प्रतिशत व्याख्या कौशल–82 प्रतिशत प्रस्तावना कौशल–81 प्रतिशत प्रतिशत ही शिक्षण अभ्यास के दोरान प्रयाग करते है।
2. विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि कौशलो के विभिन्न घटको का प्रयोग केवल 30–35 प्रतिशत छात्राध्यापको द्धारा ही किया जाता है जबकि छात्राध्यापिकाओं द्धारा यह प्रतिशत 60–65 प्रतिशत औसत के रूप मे आता है।
3. विश्लेषण से ज्ञात होता है कि विज्ञान वर्ग के छात्राध्यापको द्धारा विभिन्न कौशलो का प्रयाग का ओसत प्रतिशत 40 के लगभग रहता है छात्राध्यापिकाओं द्धारा यह प्रतिशत 65–70 प्रतिशत औसत के रूप मे आता है।
4. विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सामाजिक विज्ञान वर्ग के छात्राध्यापको द्धारा विभिन्न कौशलो का प्रयाग का ओसत प्रतिशत 57 के लगभग रहता है छात्राध्यापिकाओं द्धारा यह प्रतिशत 70–75 प्रतिशत औसत के रूप मे आता है।
5. विश्लेषण से ज्ञात होता है कि भाषा वर्ग के छात्राध्यापको द्धारा विभिन्न कौशलो का प्रयोग 50 प्रशिक्षणार्थियो द्धारा उच्य स्तर का रहा है 40 प्रतिशत प्रशिक्षणर्थी कौशलो का प्रयोग सामान्य स्तर पर ही करते है के लगभग रहता है छात्राध्यापिकाओं द्धारा यह प्रतिशत 80 प्रतिशत औसत के रूप मे आता है।

निष्कर्ष – समस्त प्रशिक्षणार्थियों द्धारा प्रयुक्त कौशलों मे सर्वाधिक प्रतिशत प्रस्तावना कौशल का रहा इस कौशल का प्रशिक्षणार्थियो द्धारा सर्वाधिक प्रयोग किया गया और इस कौशल में भी प्रश्नो का प्रयोग सर्वाधिक रहा छात्राध्यापिकाओं द्धारा प्रश्न कौशल तथा श्यामपट्ट कौशल का भी प्रयोग किया गया विज्ञान विषय के प्रशिक्षणार्थियों द्धारा श्याम पट्ट कौशल का भी प्रयोग किया गया तथा उनके द्धारा प्रर्दशन व उदाहरण कौशलो का भी प्रयाग किया गया सामाजिक विज्ञान के प्रशिक्षणार्थियो द्धारा प्रश्न सहजता

कौशल व प्रस्तावना कौशल का ही प्रयोग अधिक किया गया है। तथा भाषा के प्रशिक्षणार्थयों द्वारा उदीपन परिवर्तन कौशल व प्रश्नसहजता कौशल का ही उपयोग किया गया है अत: कह सकते है कि प्रशिक्षणार्थियो द्वारा विभिन्न कौशलो का प्रयोग किया जाता है लेकिन सबसे अधिक प्रस्तावना व प्रश्न सहजता कौशल का प्रयोग किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गीता गुलाटी, स्नेहलता चतुर्वेदी (2014) सूक्ष्म शिक्षण व शिक्षण कौशल राखी प्रकाशन आगरा।
2. लता अग्रवाल (2014) सुक्ष्म शिक्षण व अधीनस्थ प्रशिक्षण राखी प्रकाशन आगरा।
3. सूक्ष्म शिक्षण एवं पाठ योजनाए (2008) भावना पाण्डेय राखी प्रकाशन आगरा।
4. सूक्ष्म शिक्षण 2010 एल. सी. सिंह राखी प्रकाशनआगरा।
5. तिवारी गोविन्द (1989) शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के मूलाधार विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
6. पी एसनायडु (1992) शैक्षिक अनुसंधान के मूलतत्व प्रथम संस्करण विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
7. वर्मा, जी.एस. (2005) शैक्षिक तकनीकी लॉयल बुक डिपो, मेरठ
8. अस्थाना विपिन (2010-2011) शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी अग्रवाल पब्लिकेशन।
9. सिंह रामपाल (2013) शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी अग्रवाल पब्लिकेशन।
10. शर्मा आर.ए. (2006) शिक्षा अनुंसधान लाल बुक डिपो मेरठ।
11. श्रीवास्तव ए .वी. (2009) मनोविकृति विज्ञान अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
12. अमीरचन्द्र(2006) सामाजिक विज्ञान शिक्षण : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर।

****

हृदयेश की कहानीयों में स्त्री विमर्श

उर्मिला शर्मा *

प्रस्तावना – दिन गर्मी के हो या सर्दी के जब परिवार के सभी बच्चें एक साथ एक स्थान पर एकत्रित होते हैं और उनके साथ उनकी दादी या नानी हो तो उनकी सहज भावना यही होती हैं कि दादी, नानी हमें कहानी सुनाए। उनके द्धारा सुनाई गई कहानी जहाँ सुनने में अच्छी लगती हैं, वहीं वह प्रेरणा स्त्रोत भी होती हैं। कहानी से आनंद तथा जिज्ञासा की एक अनवरत धाारा, कहानी के अन्त तक प्रस्फुटित होती रहती हैं, और हमारे स्मृति पटल में कहीं ना कहीं अपना स्थान बना लेती हैं। कहानी सुनने की लालसा बच्चों के साथ-साथ हर उम्र के व्यक्तियों में होती हैं। आज के इस तकनीकी युग में जब सभी टेलिविजन, मोबाइल, विडियो गेम जैसे मनोरंजन के साधान में व्यस्त रहते हैं, फिर भी कहानी पढ़ना और सुनना आज भी सभी को अच्छा लगता हैं।साहित्य की विविध विधाओं में से सामाजिक यथार्थ कासबसे जीवंत चित्रण हमें कहानियों में मिलता है कहानीकार मात्र कला का साधक ही नही होता है वह व्यापक सामाजिक परिवेष का एक सजग दृष्टा भी होता है कहानीकार का यह दृष्टा रूप उसे जीवन व समाज के विभिन्न पक्षों का व्याख्याता भी बना देता है।इसी पक्ष में हम बात करते है स्त्री की, भारतीय परम्परा व चिन्तन में स्त्री का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है भारतीय समाज में सदियों से नारी चर्चा होती आयी है। हमारा अतीत भी इस बात का साक्षी है। साहित्य में भी नारी की भागीदारी तेजी से हो रही है।आदिकाल से ही नारी साहित्यकारों के लेखन का विषय रही है उन्होनें नारी के विभिन्न रूपो को साहित्य के माध्यम से उकेरा है ऐसे ही नयी कहानी के देहरी पर खडे होकर शुरू की गयी अपनी रचना यात्रा में हृदयेश नें स्त्रीयों को केन्द्र मे रखकर कुछ कहानीयाँ लिखी है।

हृदयेश जिनका जन्म 3 जूलाइ 1930 को शाहजहाँपुर (उत्तर प्रदेश) में हुआ था जिनका पुरा नाम हृदयनारायण महरोत्रा था।उनके परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत साधारण थी,इसलिए मात्र सत्ररह वर्ष की अल्प आयु में ही पिता के दबाव के कारण न्यायलय में लिपिक के पद पर कार्य आरम्भ कर दिया था।नौकरी करते हुए ही अपनी शिक्षा को आगे बढाते हुए हृदयेश ने हिन्दी में स्नातकोतर की उपाधी प्राप्त की।

हृदयेश का साहित्यिक जीवन में प्रवेश भी महज एक संयोग ही था उनके पास नतो साहित्यिक या सास्ंकृति पृष्ठभूमि थी ना ही आसपास ऐसा वातावरण ही था।वह पढ़ाई में अपने साथीयों से पिछड गयें तो लिखना या साहित्य को अपना क्षेत्र बनाना हीनभावना से उबरने का शायद एक प्रयास था।

हृदयेश ने स्त्री को केन्द्र में रखकर लिखी गयी कहानियाँ उसी दौर के लेखक भीष्म साहनी व अमर कान्त की तरह कम है।हृदयेश ने नारी को केन्द्र में रखकर जितनी भी कहानियाँ लिखी है वे सब मध्यवर्ग की स्त्री पात्र ही है। उनकी कहानियाँन तो स्त्री देह के भूगोल की कहानियाँना स्वीकृत अर्थ में स्त्री पुरूष सम्बन्धों की।हम यह भी मान सकते है कि हृदयेश ने एक भी प्रेम कथा नही लिखी है।स्त्री प्रेम को विषय वस्तु नही बनाया है,बल्कि स्त्रियों के संघर्ष को दिखाने का प्रयास किया है आर्थिक स्थिति कमजोर होने पर भी उनकी कहानियों के स्त्री पात्र इच्छाओं, आकांक्षाओं को दफनकरते हुए अपने आप को परिस्थितियों के अनुकुल ढाल लेती है।'गृहस्थी' कहानी में पति द्धारा पत्नी की गठिया की बीमारी के कारण महरी का इंतजाम करने पर पत्नी द्धारा यह कहकर मेहरी को वापस भेज दिया जाता है। 'हाँ आयी थी पर मैंने बर्तन मंजवाएँ नही एक तो वह महीने में दस बारह दिन नागा करेगी, दूसरे बर्तन साफ करने के लिए कुँए से पानी खीचनें में भी आनाकानी करेगी तो लगाने से क्या फायदा।'

हृदयेश ने अपनी कहानी 'सुहागिन माँ' में स्त्री के एक दूसरे रूप को ही प्रकट किया है कहानी मे माँ के ऐसे अन्धे प्रेम को दर्शाया है जिसमें जरूरत से अधिक लाड-दुलार संतान के अवगुणों को नजरअंदाज करते हुए अधिक स्नेह व लाड देना कितना भारी पडता है दिखाया गया है। एक दिन जब पुत्र द्धारा पति के हत्या के प्रयासकरता है तो माँ अपने पुत्र की ही हत्या कर देती है।

कही कही पर उन्होनें स्त्री के दो वर्गो को अपनी कहानीयों में दर्शाया है कुसुम जिस वर्ग की है वहाँ दिनरात चोका चक्की में खटकर पानी मिला छटांक भर दुध बिल्ली द्धारा पी जाने पर गालीया खाने व झोंटा नुचवाने की स्थिति आ जाती है,इसके विपरित अभिजात वर्ग की सुख सुविधाओं में पली-बडी सुमन के चैहरे पर एक अनोखी स्निग्धता और ताजगी छाई रहती है।बेटियां पौधों की तरह होती है जिस प्रकार पौधो को अंकुरण व विकास के लिए मुलायम मिट्टी, खाद, पानी, प्रकाश की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार एक लडकी को भी स्नेह, अपनत्व और उचित देखभाल की आवश्यकता होती है।नारी जब अपने सतीत्व को किसी वहशी इंसान की बदनियती से खो देती है तो यह त्रासदी उसकी सारी शोखी और चंचलता को समाप्त कर देतींहै,वह शान्त व खामोश होकर उदासी की चादर ओढ़ लेती है।ऐसे ही जब किसी नारी का विवाह के कुछ समय बाद ही सुहाग उजड जाता है,तो किस प्रकार उसका ससुराल में रहना मुश्किल हो जाता है कैसे कैसे ताने दियें जाते है पति के खत्म होते ही उसके ससुराल से सारे अधिकार छिन लियें जाते है।उसे घर से बेघर कर दिया जाता है पति विहीन नारी का मायके में भी कोई मान नही होता है।खास करके जब मायके में माता पिता नही हो और भाई भाभी का राज हो,ऐसी स्थिति में नारी किस प्रकार बेबस व लाचार होकर अपने बच्चों को पालने के लिए मायके में भाई-भाभी के ताने और दुत्कार सुनती है 'कलमूंही तेरा सत्यानाश हो' भाभी चीखी सफेद रक्त हीन

* सहायक प्राध्यापक, डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

गालो पर खून दौडकर जम गया,जब अन्दर की टीस दबाए नही दबी स्याह, गड्देदार आंखो में आसू निकलकर गाल की उभरी हुई हड्डी पर गीली रेखाए खीचते हुए उसकी फटी साडी को भिगोंने लगे।हृदयेश की कहानियों में निम्न मध्यम वर्ग की स्त्री पात्रों की अपनी इच्छाओं का दमन,बेबसी, लाचारी, दयनीय स्थिति को जहाँ अपनी कहानियों में उजागर किया है वही उन्होंनेइसी वर्ग की ऐसी नारी का भी चित्रण किया है जो अपनी जैविक आवश्यकताओं के प्रति सजग है। उसे वरीयता देने के उनके मुखर आग्रह में निम्न मध्यमवर्गीय विकल्पहीनता और पराश्रित सोच का एक सार्थक विकल्प मौजूद है।

बाबू हरेराम जिसे कभी सोच व कर नही सके उनकी लडकियों ने ऐसा कुछ करके उन्हें और उनकी जैसी सोच वाले लोगो को स्तब्ध वविजड़ित कर दिया इसी तरह 'तैयारी' की तेइस वर्षीया युवा पत्नी पति को गले का कैसंर होने पर बडे र्निविकार भाव से टाइप और शार्टहेण्ड सीखती है, और नौकरी के लिए मिस्टर गोयल की सलाह पर जब-तब उनसे मिलती रहती है जैसे वह अपने और अपनी बच्ची के सुरक्षित भविष्य की तैयारी कर रही हो एक आवेग शुन्य औरकुण्ठाहीन तैयारी।

हृदयेश ने स्त्री पुरूषों सम्बंधो को अपनी दाम्पत्य संबंधित कहानियों में चित्रित किया गया है जिसमें उन्होने कही एक दुसरे का इन्तजार करते हुए पति पत्नी जिनके लिए इंतजार की परिस्थितियाँ मात्र संयोग नही कहा जा सकता है और यही परिस्थितियाँ कभी कभी त्रासक या दुर्भाग्य पूर्ण भी हो जाती है।ऐसे ही परतो के नीचे की कहानी में पति को पत्नी का पत्र मिलता है किवह मायके से वापस आ रही है तो यह समाचार उसे सुखकर स्वाद देता है जो भाई की मृत्यु पर मायके गयी थी उसका अभाव पति के लिए चुभन भरा उसकी वैदना को त्रीव तर कर रहा था उसके साहचार्य ने उसे पत्नी का आदि बना दिया था वह आ तो रही है पर भाई की मृत्यु से अंसतुलित और टुटी हुई हो तो,क्या ऐसी हालत में उसे पाया जा सकता है?पर उसकी यह आशंका भ्रामक व निर्मूल निकलती है।

इस प्रकार हृदयेश ने स्त्री व पुरूष सम्बधों का जितना भी चित्रण अपनी कहानियों में किया है वह दाम्पत्य सम्बंधो की कहानियाँ है जिसमें दाम्पत्य सम्बंधो की ऊष्मा और ताप को अंकित करती है कही रसोई और चोके बर्तन के बीच जवान होती मामूली पढी लिखी लड़कियाँजो पड़ोस कर मांग कर लाई गयी पत्रिका के विज्ञापनो के जरिये जब तब अपनी इच्छाओं और आकाक्षों को सहलाती है।हृदयेश अपनी कहानियों के माध्यम से स्त्री व पुरूष सम्बन्धों की सारी जडता, विद्रूपता व विसंगतियों परिवेश के एक बडे केनवास पर अपने अनुभवों से उकेरते है उन्होने कही भी स्त्री देह व प्रेम सम्बन्धों को महत्व नही दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सम्पूर्ण कहानियाँ (प्रथम खण्ड) हृदयेश, भावना प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2011
2. सम्पूर्ण कहानियाँ (द्वितीय खण्ड) हृदयेश, भावना प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2011
3. सम्पूर्ण कहानियाँ (तृतीय खण्ड) हृदयेश, भावना प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2011
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2014

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Financial Specialists Perception Towards Investment with Reference to Other Traditional and Modern Tools

Kuldeep Agnihotri*

Abstract - There are numerous cutting edge and customary techniques in esteeming the exhibition of the organization among them EVA, CVA are present day techniques whereas EPS, ROI, ROE and so forth are a portion of the customary strategies. Present day and customary techniques are not just used to check the presentation of an organization be that as it may, it likewise utilized in speculation choices by the financial specialists. Harsh Stewart, overseeing accomplice of M/s Stern Stewart and Co. presented a changed idea of monetary benefit in 1990 for the sake of Economic worth Added (EVA) as proportion of business execution and CVA is just money thought in EVA. Right now endeavor is made to consider which technique is utilized by the financial specialists while taking the venture choices for example conventional strategies are current techniques. 100 respondents (Investors) are addressed and gathered their perspectives, we are accepting that there is no effect of conventional or present day strategies while taking venture choices by the speculators.

Introduction - An organization's genuine financial benefit or EVA is the sum it wins in overabundance of the expense of capital whereas CVA (Cash Value Added), It incorporates just money things, for example Income Before Depreciation Interest and Expense (EBDIT, balanced for non-money charges), working capital development and non-key ventures. An endeavor makes riches for its investors just when there are benefits left in the wake of meeting a charge on the capital utilized by the organization. There is proof that recommends that organizations that have concentrated on gaining an arrival on capital in abundance of the expense of capital have been the best in reliably expanding investor riches and furthermore manufactures trust in financial specialists to contribute And organizations that convey investor returns can get to bring down cost finances accordingly entering a valuable cycle rather than an endless loop. As firms progressively depend on the capital markets for reserves, those that have given great comes back to their speculators would be at a bit of leeway in raising further assets at beneficial terms. Since the essential target of business associations is regularly thought to be the boost of the abundance of its investors. By and by, numerous associations use benefit based measures as the essential proportion of their money related execution and as speculators the vast majority of the time utilizes benefit as a base to contribute. Two issues identifying with interest right now:

1. Profit disregards the expense of value capital. Organizations possibly create riches when they produce an arrival in overabundance of the arrival required by suppliers of capital – both value and obligation. In money related proclamations, the estimation of benefit takes into account the expense of obligation money, yet overlooks the expense of value account.
2. Traditional strategies like EPS, ROI, ROC and so forth utilize benefit and overlooks cost which is one of the most significant part in assessing the exhibition of an association. Venture choice taken by financial specialists dependent on conventional strategies which doesn't consider cost of capital may not be valuable now a days.

Literature Review

In most recent 15 years numerous articles managing hypothesis and utilization of EVA has been distributed out of which one article by Ms. Anitha , D. PhaniBhargavi(2010) titled "Speculators' Perception Towards Venture" diverse segment factors are considered and its impact on dynamic conduct in a hazardous circumstance. Dr. K. RAVICHANDRAN (2010) paper titled "An investigation on Investors Preferences towards different venture roads in Capital Market with unique reference to Derivatives" has led an elucidating research where is discovered that Derivatives goes about as a significant instrument for diminishing the chance associated with putting resources into securities exchanges for receiving the best outcomes in return. The speculators ought to be mindful of the different supporting and hypothesis methodologies, which can be utilized for decreasing their hazard. Dr. Gagan Kukreja (2018) paper title Investors "Discernment for Stock Market: Evidences from National Capital Region of India" has inferred that financial specialists needs to utilize best innovation to dissect and to put resources into share advertise, he additionally centered around teaching financial

*Assistant Professor (Commerce & Management) Pioneer Institute of Professional Studies, Indore (M.P.) INDIA

specialists with respect to share showcase , apparatuses and systems and different perspectives which will yield exceptional yield. DimitriosMaditinos, ZeljkoSevic, NikolaosTheriou (2017) paper title "Clients' discernments and venture procedures utilized in Athen's Stock Trade" has directed an exploration to discover the financial specialists recognition which incorporates CFO's, Officers of Athens Stock Exchange, intermediaries and individual financial specialists, which strategy they follow to break down and put resources into protections. In the previously mentioned surveys less work has been led on Value based techniques to measure the presentation of the firm and to put resources into protections. I have taken this examination to fill the hole which is found in previously mentioned investigate.

Research Questions and Hypothesis - The speculations to be tried are gotten from the idea that cutting edge strategies like EVA, CAV are the best measure for stock value valuation than conventional measures. In this manner this investigation suggests the accompanying conversation starters.

Is there a centrality connection between Modern techniques and Traditional strategies?

H0 – There is no critical distinction between Modern strategies and Traditional techniques

H1 – There is a critical distinction between Modern strategies and Traditional techniques

Objective of the Study -Essential target of the examination is to exactly test the declaration between Modern strategies also, conventional techniques for stock value valuation. Hence the goal of the investigation is triple,

1. To locate the best among Modern techniques and Traditional strategies.
2. To inspect the connection between Modern techniques and Traditional strategies.
3. Diverse investigation to foresee share cost.

Research Methodology

Data Collection and Sampling Design - So as to review financial specialist's observation identified with speculator's procedures an examiner was appropriated to different financial specialists putting resources into the organization's offers. They were all expected to have adequate information on filling examiner. The examiner comprises of general data on the respondent, financial specialists' discernments about various investigation utilized, for example, major examination, specialized investigation, portfolio examination or different ways to deal with esteem or foresee share costs. Speculators' observations about measures utilized customary techniques, for example, EPS, ROI, ROE and so on financial specialists' recognitions about measures utilized present day techniques, for example, EVA, EPS, CVA and so on. The overview endured a half year. It began mid June 2018 and wrapped up by mid December 2019.

Table 1: Response rate

Group	Distributed questioner	Returned questioner	Response rate
Shareholders	100	55	55

Analysis and Interpretation

Table 2: Age of the respondent

Class Interval	No of Respondent	Rate
18–27	60	60
28–37	19	19
38–47	9	9
48 – above	12	12

Analysis : 60% of investors who invest in securities or deals with valuing the firm belongs to the age group between 18-27 and 40 % belongs to age group between 28 & above.

Table 3: Respondent's education

Education	No of Respondent	Rate
Higher Education	05	05
Diploma	10	10
UG	35	35
PG	45	45
PhD	05	05

Analysis : 85% of the respondent are well educated who are either graduate or post graduate and 15% respondent are either diploma holder or with higher education.

Table 4: Monthly income of the Respondent's

Monthly Income	No of Respondent	Rate
5000 - 10000	07	7
10001 - 25000	11	11
25001 – 30000	39	39
30001 & above	40	40

Analysis: 79 respondents belong to the group whose monthly salary is more than 25000/- which comprises of 79 % of whole respondent.

Table 5: Experience in the field of investment of Respondent's

Exp. In Years	No of Respondent	Rate
0-5	25	25
6–10	10	10
11-20	25	25
21 and above	40	40

Analysis : 65% respondent are having more than 11 years of experience, 10% with more than 6 years and 25% having experience between 0 and 5 years.

Table 6: Respondent's designation in the company

Designation	No of Respondent	Rate
Shareholders	10	10
Manager	05	05
Analyst	12	12
Others	73	73

Analysis: 27% respondents are either shareholders or managers or analyst and rest of them belongs to other designations like brokers, lecturer, teachers etc.

Table 7: Methods used for stock price valuation

Methods	No of Res -pondent	Rate
Traditional Method (Like EPS, ROI, ROE etc.)	89	89
Modern Method (EVA, CVA, MVA etc.)	11	11

Analysis : 89 % respondent uses traditional methods like

EPS, ROI, ROE for stock price valuation and only 10 % used only modern methods like EVA, CVA, MVA etc.

Table 8: Measure used for stock price valuation under Traditional method

Methods	No of Respondent	Rate
EPS	54	54
ROI	13	13
ROE	13	13
Others	20	20

Analysis: In traditional method most of respondent i.e. 54 % uses EPS for stock price valuation, 27% uses ROI and ROE and 18% uses other method like NPV, P/E ratio etc.

Table 9: Measure used for stock price valuation under Modern method

Methods	No of Respondent	Rate
EVA	05	5
CVA	02	2
MVA	01	1
Others	92	92

Analysis : Only 8% of respondent uses only modern measures for stock price valuation and 92 % respondent uses either traditional method are combination of both.

Table 10: Analysis used to predict the share price or value of the firm

Methods	No of Respondent	Rate
Fundamental Analysis	64	64
Technical Analysis	18	18
Portfolio Analysis	9	9
Other Approaches	9	9

Analysis: 64% respondent uses fundamental analysis where as 36% uses either technical analysis or portfolio and other approaches to predict the share price or value of the firm.

Finding - 59.09% of speculators who put resources into protections or manages esteeming the firm has a place with the age bunch between 18-27 and 41.91 % has a place with age bunch between 28 and above. 80.18% of the respondent are knowledgeable who are either graduate or post graduate what's more, 19.82% respondent are either confirmation holder or with advanced education. 90 respondents have a place with the gathering whose month to month pay is more than 20000/ - which involves 81.81% of entire respondent. 63.63% respondent are having more than 11 long stretches of understanding, 09.09% with over 6 years and 27.27% having experience somewhere in the range of 0 and 5 years. 24.53% respondent are either investors or chiefs or examiner and rest of them has a place with different assignments like dealers, speaker, instructors and so forth 89.09% respondent uses conventional strategies like EPS, ROI, ROE for stock cost valuation and just 10.90% utilized just current techniques like EVA, CVA, MVA and so on. In conventional technique a large portion of respondent for example 54.54% utilizations EPS for stock value valuation, 27.29% utilizations ROI and ROE and 18.18% uses other strategy like NPV, P/E proportion and so on. As it were 7.25% of respondent uses just present day measures for stock value valuation and 92.75% respondent uses either conventional strategy are mix of both. 63.63% respondent utilizes principal investigation where as 36.37% uses either specialized examination or portfolio what's more, different ways to deal with anticipate the offer cost or estimation of the firm.

Conclusion - A large portion of the respondent doesn't know about present day strategies which can be utilized more successfully and productively to esteem the stock cost and to esteem the firm. 89.09% respondent uses conventional strategy for share value valuation, thus we dismiss H0 and acknowledge H1 i.e. There is a huge contrast among EVA and Traditional strategy, respondent want to utilize conventional strategy as opposed to current techniques. In conventional strategy respondent want to utilize EPS for investigation just as to put resources into various protections.

References :-

1. http://www.investing.com/rates-securities/india-10-year-securityyield-propelled outline
2. www.iosrjournals.org/iosr-jef/papers/icsc/volume-1/8.pdf
3. http://www.acmeintellects.org/pictures/AIIJRMSST/Jan2015/10-1-15.pdf
4. https://www.ici.org/pdf/rpt_risk.pdf
5. Stern Stewart and Company, "Why EVA works", http://eva.com/
6. http://economictimes.indiatimes.com/markets/stocks/stock-citeshttps://in.finance.yahoo.com/q/hp?s=TECHM.NS&a=02&b=31&c=2010&d=02&e=3
7. www.investopedia.com/terms/c/cva.asp
8. www.valuebasedmanagement.net/methods_cva.html
9. www.ripublication.com/gjfm-spl/gjfmv6n2_16.pdf

****

Role of E-Commerce in Insurance Industry

Dr. Rupesh Mittal* Dr. Ajay Soni**

Introduction - E-commerce consists of buying and selling of products and services over electronic systems such as the internet and other computer networks. E-commerce is a commercial activity dealing directly with the trading of goods and services and with other related business activities, in which the electronic communication medium plays a central role. These activities include the communication of information, the management of payment, the negotiating and trading of financial instruments and the management of transport.

The e-business can be used for three primary processes which help to enhance the business and they are;

1. The Production Process
2. Customer Centric Process
3. Employee Centric Process

The production processes is the first which include procurement, ordering and replenishment of stocks; processing of payments; electronic links with suppliers; and production control processes, among others.

The second is customer-focused processes, which include promotional and marketing efforts, selling over the Internet, processing of customers purchase orders and payments, and customer support, among others. An internal management process.

The third includes employee services, training, internal information-sharing, video-conferencing, and recruiting. Generally electronic applications enhance information flow between production and sales forces to improve sales force productivity.

The purpose of this paper is to find the benefits, challenges and success of e-commerce with special reference to Life Insurance Corporation of India.

Objective of the study - The main objectives of this paper are as follows:-

1. To identify the utility of e-commerce in LIC of India
2. To identify the challenges in order to adopt e-commerce in LIC of India
3. To identify the Success factors of using or implementing e-commerce in LIC of India.

Research Methodology - A series of interviews, not discussed in this paper, was conducted by means of categorized questionnaire with LIC of India and customers. The case study data helped to identify the list of benefits, challenges and success factors companies indicated were important in their move to e-commerce. A survey was developed, based on the discussion and survey with LIC of India offices and customers.

Primary Data - The primary data is collected through the following methods:

- **Questionnaire -** A questionnaire has been designed in order to collect the primary data from different categories of society which are as under:

  Professionals
  Businesses (Shopkeepers)
  Industrialists

- **Direct Personal Interview -** Direct Personal Interview has also been conducted with different officials of LIC of India in order to have an understanding about their feelings and thoughts over the impact of e-Commerce system.

Survey Method - In order to explore the success, challenges and benefits of e-commerce in LIC of India a questionnaire were design in two different ways:-

1. For LIC of India
2. For customers

This help to identify the implementation of e-commerce in LIC of India i.e. insurance sector.

The data gathered are evaluated by in order to explore the awareness and expectations of e-commerce, prior to their involvement and what subsequently turned out to be the case. The rating was on a scale from 1 (lowest impact or least important) to 3 (highest impact or most important).

Statistical Tools and Techniques - Chi Square test and Index based method is used while evaluating the objectives of the research and different other statistical tools have also been applied to carry out the present research work during the tenure of the research.

Evaluation of Objectives - To evaluate the objectives of benefits, challenges and success factors, in the insurance industry, statistical tools are used for computation. The following table shows the computation of each question of questionnaire which helps to determine or evaluate the benefits, challenges and success factors of using e-commerce in LIC of India. The evaluations of the questions

*Asst. Prof. (Computer) PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA
** HOD (Computer) PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

are summarized in the form of table.

For Benefit Factors:-

S	QUESTION/FACTOR
1	E-commerce is easy, quick and convenient.
2	E-commerce is clear, precise and easy to understand.
3	You are able to pay premium or access information from anywhere at point of time.
4	e-commerce saves time and physical efforts
5	e-commerce creates better business environment
6	e-commerce helps to increase governing capabilities and public participation.
7	e-commerce provides transparency.
8	e-commerce helps in simplifying the government processes.
9	e-commerce creates better relationship between citizens and businesses.
10	e-commerce helps to reduce operational cost
11	Secure transactions
12	More personalized customer service

The challenges are evaluated by following questions

S	Factors
1	Technological cost
2	Req. Of it staff
3	Lack of e-commerce knowledge
4	Budget
5	Security
6	Internet speed
7	Virus threats
8	Redefining the relationship between company, agents and customers
9	Convert old manual record into Computer oriented system
10	Technological challenges
11	Budget
12	Requirement of IT skilled staff
13	Internet Speed
14	Virus Threat
15	Customers Data Privacy
16	Lack of user support
17	Lack of Personal contact with customer
18	Government Policies
19	Lack of technological Knowledge
20	Linguistic barrior

By using e-commerce in LIC of India, the organization gains following success factors:-

S	Factors
1	Availability of 24*7 days services
2	Extension of Geographical Area
3	Decrease in Operational Cost
4	Increase in Administrative Services
5	Enhanced skill Employee

Observations

Benefits of E-Commerce in LIC of India - The uptake of e-commerce is influenced by its potential to create business value and by awareness of its participants of the potential benefits. A major reason for most companies, irrespective of size, to participate in business is to extract some benefit from it. E-commerce is no different. The benefits of e-commerce identified from the research are as follows:-

1. Business efficiency
2. Increased automation of processes
3. Transformation of traditional market chain.
4. Retained and expanded customer base
5. Reduced operation costs
6. Enhancing well-being and education of customers
7. Consumer loyalty
8. Competitive advantage
9. Convenient operations

Challenges for Adopting E-commerce in LIC of India - To extract benefits from e-commerce, it is important for businesses to overcome the e-commerce inhibitors and challenges. E-commerce challenges identified from the research are classified as -

1. Technological
2. Managerial
3. Business related

The technological issues comprises of Security concern, Web Site Issues and Software and Infrastructure cost.

The managerial challenges comprises of People and organizational issues and obtaining senior management support.

The Business challenge includes Customer service, Customers old habits and Legal issues.

Success Factors of Using E-Commerce in LIC of India - To maximize value from e-commerce business must identify and evaluate factors critical to success. The e-commerce success factors identified from the research are also divided into the same three categories

1. technological
2. managerial
3. business related

The technological issues consist of secure transactions, Web site functionality and features such as catalogues, frequently asked questions, CRM, decision support, Payment issues credit cards & e- payment Integration of web site to all business.

The managerial success factors consist of Effective project leadership – company vision, forming alliances with customers and maintains appropriate organizational structure

The Business success factors involves advertising methodology, quick respond time, better customer service

A significant proportion of the research reported to date has focused on the insurance sector with little reported work or research on the uptake of e-commerce in the insurance industry .Recent research explored from the perspective of LIC of India the three key areas of e-commerce benefits, challenges and success factors. This paper focuses on the responses from the insurance sector and customer.

Discussion - To maximize the potential of e-commerce,

business must be aware of the benefits, challenges and success factors of trading electronically. This research examined these factors in the insurance industry especially in LIC of India.

The main findings of the research presented in this paper are:

The major benefits of e-commerce adoption not anticipated by the sector are business efficiency, improved image, competitive advantage, increased automation of processes and increased business turnover.

The key challenges identified for the sector are the costs of the technology, the lack of knowledge of e-commerce, managing the change, budgeting and issues associated with linking back end systems. Secure transactions were not considered a major challenge for the sector; in contrast they were considered one of the success factors, along with effective project management, adequate resources, support from top management and rapid delivery of systems.

Participating companies correctly estimated the vast majority of challenges of e-commerce that lay ahead. Acquiring IT skilled people was, however, one significant challenge that was not correctly anticipated.

Conclusion - This studied has identified and confirmed the key factors for the insurance industry which helps to indicate the importance of e-commerce. The survey results confirm that the identified factors are not dissimilar across the sectors.

The study or research conclude that although implementing the e-commerce major at initial level is a tough, difficult and challenging task which does not guarantee the success after implementation. But if it can be done in a proper and defined manner then the organization will definitely gets the identified benefits and success between the major identified challenges.

Suggestions - After deeply studying the functions of organization, it seems that the implementation of e-commerce helps to grow but if LIC of India implements e-commerce for following services then it definitely helps to enhance customer base and so revenue will be increases. The services are:-

Service 1 : Online Issuing of new policies - This can be done by implementing digital signature concept.

Advantages - Customers can easily avail the new policies without going to the LIC offices. This may also cause to increase in revenue.

Disadvantage - Agents are one of the money collectors for LIC of India. It is one of the jobs which required less investment and in return agents get good commission.

In order to avoid the loss of job of agent the verification of documents can be done via agent's portal, so the workload of LIC gets reduced can agent can retain its job as well as salary.

Service-2 : Online solution of Claim Settlement - This can also be done by means of providing a customer identification number (CIN), which help customer to avail any services online. Customer just fills a form with mandatory details and the amount can be directly transferred into the customer's bank account.

Advantage - Customer does not need to visit the LIC office. The process becomes more transparent and chance of corruption should be minimized.

Other Suggestions :

1. LIC should provide collection of all services online
2. In order to promote e-commerce LIC should provide additional advantages to the customer.
3. Online grievances with escalation system should be implemented.

References :-

1. Department of LIC of India
2. http://www.licindia.in
3. http://www.irda.org
4. Text Book on e-commerce, Galgotia Publications
5. Yogshima, Journal of LIC of India.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Impact of Organizational Stress on Quality of Life in Indian Corporate World

Dr. Sanjay Bhavsar*

Abstract - Stress and quality of life is always interlinked. However the effect of organizational stress on quality of life of executives working in Indian corporate world has largely remained unstudied. Due to work stress the executives are becoming lonely, overburdened with their work, frustrated with their life, anxious, losing touch with emotional side. It has resulted into high labor turnover and the overall efficiency of any of the executive is coming down. The aim of the present study was to study the effect of organizational stress on domain of quality of life of executives. The executives are suffering on emotional grounds, loneliness, high level of fatigue, frustration, anxiety, facing competitive environment. This has also resulted into many health and mental problems and always phobia of losing the job. Study has overall findings of impact of stress on quality of life of executives through various dimensions.
Keywords - Organizational Stress, quality of life, executives, stress hurricane.

Introduction - Stress has always been a part of human existence. Its origin can be traced in the literature to the 17th century when it was identified with hardship, straits, adversity or affliction as meant by the Latin word: Stringere meaning force. In the 18th and 19th centuries, the meaning of stress changed to denote force, pressure, strain or strong effort with reference to an object or person. O stress has always been a part of human existence. Its origin can be traced in the literature to the 17th century when it was id organizational stress is considered as one of the leading problems in almost all professions around the world. In the past, there has been considerable research mainly in the developed countries on the nature, causes and effects of organizational stress on the physiological well being of employees. Organizational stress is defined as the experience of negative emotional states such as frustration, worry, anxiety, and depression attributed to work related factors. Organizational stress is an individual experience, depending on the traits of individuals, in that not all people react to events in the same way. According to substantial body of literature, corporative executives work can be very stressful occupation and their stress appears to have increased in recent decades. Executive and managers attribute their organizational stress on various aspects of the work environment (such as employees, corporate administration and organization system, organizational culture). Stressors that have been identified among working executive's include-role overload (being overwhelmed by the amount or complexity of work) role ambiguity (uncertainty about job description) conflicting job roles, lack of influence over the work environment, inadequate work environment, demands made by external agencies, poor relation with colleagues, poor relation with customers, lack of support from the immediate boss, corporate climate and culture. Organizational stress can result in physiological, physical and behavioral consequences for individuals. These outcomes, in their various forms can prove quite costly to individuals and organization to which they belong. For organization, these costs are not just monetary Organization's performance can be disputed or otherwise affected. For these reason, the reduction of organizational stress should be of great importance to corporate world. Physiological consequences include job dissatisfaction, reduced job commitment, anxiety, frustration and anger.

Physical consequences or organizational stress involve changes to normal bodily functioning.

The five major behavioral consequences identified in the literature are withdrawal, reduced performance, deteriorating collegial relations, substance abuse and accident. Prolonged occupational tress in teaching has been found resulting in both mental and physical ill health, ultimately having damaging effects on executive's professional efficiency and their quality of life. High stress results in the lowering of organizational functioning and functioning, Irrespective of one's age, education and background. Stress within organization may not only affect the physical and emotional well-being of an executive and their families, but it also effects the organization where they are working because it may impair the working relationship with customers and colleagues.

Job stress is a function of staff's self-concept, life situation and work related factors. So far, there tend to be few studies on job stress among sector wise executives in corporate world. However, there are strong indications of

*Assistant Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

high stress levels among staffs in higher institutions. In addition, life satisfaction can said to be linked demographic variables like years of service. It s also observed that there is little research on the relationship between job stress and well-being constructs like life satisfaction and quality of life.

Working conditions have an impact on overall life satisfaction through perceptions of the quality of working life. It influences life satisfaction through changing characteristics (interests, energy level, mood, personality, health etc.) of the person and the environment.

“Quality of life is defined as individual’s perception of their position in life in the context of the culture and value system in which they live and in relation their goals, expectations, standards and concerns”. It is a broad ranging concept, incorporating in a complex way individual’s physical health, psychological state, level of independence, social relationships, personal beliefs and their relationships to salient features of the environment. This definition highlights the view that quality of life is subjective, includes both positive and negative facts of life and is multidimensional. Thus, QoL includes the condition of life resulting from the combination of the effect of complete range of the factors such as those determining health, happiness and a satisfying occupation, education, social and intellectual attainments, freedom of actions and freedom of expressions.

Thus, the aim of the present study was to study the QoL of executives/managers in context of organizational role stress.

Data collections and Methods - The present study examined the effects of Organizational Role Stress on the quality of Life of the executives. Secondary data was collected from various sources and analyzed.

Analysis & Discussion - This October, stress deep fatigue and alienation from his family forced Mr. Gupta quit his job as a vice president in the institutional equitles teams at one of the biggest investment banks in Mumbai. He is 33. All this, he says collateral damage inflicted by the punishing pace of work at his former employer. “My work hours were terrible about 80-100 hours per week. I was not getting my time for my family and children. Health problems such as body aches and dizziness forced me to take a break”. He says, one month on, he feels energized and refreshed. He wants to stick with this slower pace of life- helping his children with school admission, concentrating n health and taking up things that interest him. Mr. Sehgal, a 39 years old advertising professional, has chucked his job not once, but twice, both for the same reason. The tipping point for his second break was being asked to work on Diwali. He was a creative director for a growing agency; this meant managing multiple assignments to steer the agency to a certain size, “I wanted to spend some time with my nephew and family on Diwali and realized that quality of life was far more precious than a fat pay cheque”, he says he took an off on Diwali and quit soon after. He is now a freelance writer and makes corporate films. “I keep getting calls from headhunters, but I will not go back to that life again”.

Gupta and Sehgal (both names changed on request) had enough savings to throw away their jobs.

But thousands of India Ins executives, entrapped in their stress-filled jobs due to poor saving and high EMIs, are sinking into emotional distress every day.

Sixty six percent of working professional in India are suffering loneliness, 77% wish they had someone to share their highs and lows with, and 63% feel they work harder than they want to because of competitive work environment, reveals a survey by Cadbury India. The survey polled over 2100 professionals in the 25-35 age groups in cities including Mumbai, New Delhi, Ahmedabad, Pune etc. The findings were released late last month.

Physiologists and counselors say they are treating more people for work place related emotional turn all. “The numbers of such cases have doubled over last year”, says Dr. Puneet Dwevedi, head of department (mental health and behavioral science) at Fortis Healthcare. “I treat three to four working professionals every day.

Cadbury did the survey as a part of an attempt to understand consumer psyche. It plans to use the data to craft its new advertising campaign this festive season.

Consulting firm PwC has also been studying work-life balance. Executives at the firm say the findings are alarming. “Our research tells us that around 72% of Indian Professionals work beyond regular working hours and around 92% of the population takes work home”, says Kaustubh Sonalkar, Executive Director, people and change practice at PwC. Ninety- five percent of the working population, ranging from morning sickness- checking their smart phones immediately after waking up.

“We working closely with company, but at times, our measures and advice do not get demonstrated in the right manner companies need to do much more rectify such situations”.

Younger professionals are more likely to be emotionally battered when they are faced with work place stress. “People who join the workforce early, take time to settle and adjust in their new working lives, may feel the peer pressure at times with multiple demands on their time”, says Anuranjita Kumar, Country Human Resource Officer at city India. City’s buddy program links up young professionals with more experienced colleagues to facilitate conversations on personal and professional issues and to guide them through the initial period. The buddy would be a professional who has been working in the bank for about two years and is not very senior, Kumar believes that having a strong mentor or a buddy at work can help alleviate loneliness and emotional disconnect among employees.

Physiologists say the problem is growing because work pressures are robbing people of time for emotional engagement. “We get a significant number of cases of professionals in the age group of 20-40, who feel they are

not getting sufficient time for family, friends, and recreation," says Dr. Sameer Malhotra, head of department (Mental Health and Behavioral Science) at Max Hospital. "Because of technology and the use of smart phones, they never switch off from work completely," he adds. This leads to anxiety, depressive symptoms and in some cases even seizure-like episodes.

Result - Above analysis indicates that Executives are facing intense stress pressure in the corporate. Frustration, deep fatigue, anxiety, leaving job is the outcomes of the stress. But all the executives cannot take the decision of leaving jobs since they are having poor savings and family obligations. So they have to continue with the same work pressure.

Executives are feeling lonely; they need someone with whom they can share their work stress. Executives have to work harder than they need to work, due to competitive environment.

More number of executive is working beyond their office hours and most of the executives are carrying their work load at home due to job stress. It has deeply impacted their quality of life along with their family members. Office hours are so extended due to smart phones, tablets and technology that executives suffer from morning sickness of checking smart phones immediately after waking up since to check any communication from the organization.

Young professionals joining the corporate early need more time to settle in their work place. But due to multiple demands from the organization and pressure of consistent performance has increased the job stress and adversely affected their quality of life. Some corporate are arranging programmes to reduce young professional's stress by interacting with senior colleagues.

Number of work stress cases reporting to psychiatrists and physiologist are at high since more number of executives is experiencing the problem of work stress due to which family life and quality of life is impacted. India emerging as a commercial hub, entry of more numbers of MNCs to India, intense competition in the market, emergences of buyers market, changing work cultures are the few area which are responsible for creation of stress hurricane for employees.

Conclusion - As India is emerging as a commercial hub globally, executives and managers are experiencing various organizational role related stress. Good quality of life for the executives and his family has become far difficult due to work stress. Various mental, physical and health problems are arising because of work stress which is impacting not only the individual alone but the organization and the industry is also adversely affected. Collective efforts by organization and executive, role related clearances, life style management and integrated efforts at individual, organization and industry level will certainly release the work stress and will definitely offer good quality of life.

References :-

1. Kyriacou C. Teacher Stress: Direction for further research Educ. Rev.2001; 53(1) :27-35 .
2. Munt V. The Awful truth: A Microhistory of teacher stress at weshwood High. Bri J. Socio Edu.2004;25(5):578-591.
3. McCormick J. Psychological distancing and teachers' attribution of responsibility for occupational tress in a catholic education system. Issues Educ. Res.2000; 10(1): 55-66.
4. Aluja A. Blanch A. Garcia LF. Dimensionality of the Maslach Burnout inventory in School Teachers: A study of several proposals. Europ J Psycho Assess 2005; 21(1): 67-76
5. Aluja A. Blanch A. Garcia LF. Dimensionality of the Maslach Burnout inventory in School Teachers: A study of several proposals. Europ J Psycho Assess 2005; 21(1): 67-76
6. Angerer JM. Job Burnout , J Employment Counseling 2003;40(3):98-107.
7. Hansen J. Sullivan BA. Assessment of work place stress: Occupational Stress, Its Cons and common Causes of Teacher Stress. In (unknown Ed.) measuring up: assessment Issue for Teachers, Counselors, Administrators, New York McGraw Hill 2003.
8. The WHO QoL group. The world Health Organization Quality of Life Assessment (WHO QoL) Position paper from the world health organization Sac. Sci. Med 1995; 41: 1403
9. The Economic Times report dated 2nd November 2013
10. Cadbury India Ltd. Survey October 2012
11. Current Updates from The Economic Times 2nd November 2012.

****

Education : Its Height and Depth

Dr. Pratiksha Vyas*

Abstract - The true meaning and purpose of education has been lost its significance today. The situation in schools, colleges or Universities is pretty confusing with several forces competing with each other in polluting the academic atmosphere. Educationist all over the country recognize the malaise, they have not been able to suggest a workable remedy. The problem persist due to the bottlenecks in the bureaucratic structure, Also there is the absence of a accountability of the different players such as the teacher, managements, Government students and even the parents.
Keywords - Dispels, Emancipation, Obliged, Stipulated, Maze, Concoction, Leveraged, Stream Lined, Resonate.

Introduction - Knowledge has always been represented by light, and ignorance has been symbolized by darkness. Hence education, the key to all knowledge and yet more knowledge, dispels the darkness and ushers in the light.

Education must not be confused here with literacy and learning the three letters. Nor is education confined to the 10+2+3 system. Education does not consist in collecting degrees or burying oneself in research. Education is a continuous process of learning which broadens our mental horizons and with our perspective. Education leads to the dissemination of knowledge, to the breaking down of all mental barriers and to a greater realization of self worth and better understanding of fellow beings.

If Person is uneducated he cannot think for himself, his family and for society. He is forced to blindly accept the dictates of other and this makes him servile as he lacks the ability to judge right from wrong. With education he is able to make this distinction, to realize the reason behind his forced servility and to stand up and demand redressed. This frees him from the shackles of servility and makes him a free individual. Know here is this truer than in women's education which has been the single important factor in women's emancipation?

Even **Swami Vivekananda** had said, "I don't consider a man to be educated who has learnt libraries by heart. If a man learns five Ideas, and applies them in his life, I consider him educated". Thus Swami Ji believed true education helped a person to think for himself. Let us all pledge ourselves to Shiva the destroyer as he goes about his Tandava Nritya to stamp out ignorance and let us make education transport us in the world of Tagore to that "Heaven of freedom".

Education awakens intelligence and developed life of human being. It aims to adjust the Rhythm of the individual life with the rhythm of society. This adjustment involves strengthening of character and consolidation of moral values.

Today due to heavy demands of modern consumer civilization even two and a half year old toddlers are being pushed out of comfort zone of their homes in to the strange world of the classroom and teachers. They are obliged to parrot. Education which is supposed to be rich, constructive, creative and a dialogical, process becomes monotonous and mechanical and is reduced to a mere business. Pleasure of learning seems to be a thing of past.

In a system that lays so much emphasis on achievement rather than developing the true potential of a student, who, then, is to be really blamed.

Schools from Nursery to middle level should be fashioned as children's clubs. The children's natural curiosity of how and why can be given more from prominence than following the stipulated syllabus. Before teaching, the teacher must create interest amongst the students. Again the teacher should feel responsible for a student's failure to learn.

It is well nigh impossible to judge a student's proficiency in a subject through a single examination of three hours. Again, it is sad Irony that the best teachers are supposed to be employed in govt. schools, while people prefer to send their wards to the private schools. School education in India is in a maze. One wrong step and you are lost forever.

At the time of appointment of teacher, besides their academic achievements, their real interest in education and dedication to teaching should also be made a qualifying criterion for the final selection. The present status of poor school teacher should be improved so that they command the same respect and dignity in society as do professional like doctors, engineers or civil servants.

Multimedia's impact on learning could be thought of similarly to that of kitchen electronics on cooking. You see, both cooking and learning have been deeply rooted in the traditions and rich diversity of practices we experience today. Just as cooking has arguably been enhanced by knowledgeable usage of kitchen electronics, it has, at the

*Assistant Professor, PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

same time, degraded the quality of cooking by situational time-saving concoctions. In a similar manner, multimedia has also served to both enhance student learning and detract from it.

There have been times when, in an effort to enhance student learning, effective educators have knowledgeably leveraged appropriate doses of selected multimedia to supplement the course content. In so doing, they had successfully aided the learner to achieve better learning outcomes for the needed objective. There have been other times when efforts to enhance teaching efficiency by leveraging media has actually unintentionally served to degrade the learning process. This can happen with a lack of attention given to multimedia's actual development costs, issues of accessibility, societal and political suitability, cultural awareness, flexibility and openness, interactivity, motivational value, as well as considerations of effectiveness (Pastula, 2002). There is a growing body of research that speaks to each of these practical guidelines for knowledgeably using multimedia in the learning context.

On the topic of creativity, author and speaker Rob Bell (2009) goes on to suggest that great designers know that it is not what is put into a piece of art that gives it life, but rather knowing what to take away to get down to the simple, pure, streamlined essence. Effective multimedia design carries no exception. Taking into account what we know about cognitive load theory for multimedia learning in the Cambridge Handbook of Multimedia Learning (Mayer, 2005); Schmitz presented an integrated model that informs instructional design for both verbal and pictorial channel comprehension. This model is known for recognizing that learners are able to effectively use multiple sensory modalities under certain conditions. The model accounts for sensory registers, working memory and long-term memory when emphasizing that learner comprehension is dependent on both the kind of content being delivered and how it is delivered. Such careful considerations seem to resonate with the passionate descriptions of a chef who takes great pride in their ingredient, preparation, and presentation.

Oral & practical learning should be given greater emphasis in the introductory stage. Writing should be introduced in the curriculum only after 2-3 years of schooling. Before writing we should encourage children to draw pictures of different shapes. Rhymes at kindergarten level should be in mother tongue so that children can enjoy and learn them effortlessly. Before teaching anything the teacher must create interest amongst the students.

Today the main problem with secondary education is our failure to treat it as merely preparation ground for university education. An independent entrance test could be offered by every institution. This could reduce the anxiety about the unevenness of marks offered by different boards. A separate independent autonomous body which conducts achievement tests in the field of student choice could be set up & commercialization of education should be stopped.

Innovative schools like Eklavya in Bhopal, Vasant Valley in Delhi, Sherwood in Nainital, and Rishi Valley in Andhra Pradesh, Which try to move away from the curriculum as possible.

References :-

1. Google
2. Wikipedia
3. Times of India
4. Spectrum Books
5. Web Service

****

ग्रामीण महिलाओं के परिवारों के जीवन स्तर को प्रभावित करने वाले कारको का अध्ययन (बलिया जिले के सोबईबान ग्राम के विशेष संदर्भ में)

डॉ. तृप्ति तिवारी *

शोध सारांश – ग्रामीण जीवन स्तर परिवार और समाज के उपभोग और प्रबंधकीय व्यवहार का दर्पण होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में पारिवारिक एवं कृषि कार्यो के प्रबंधन का मुख्य दायित्व महिलाओं का ही होता है। परिवार में सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति, संतानों की शिक्षा, रीतिरिवाज एवं परंपराओं का पालन, परिवार की आर्थिक सुरक्षा, कृषि कार्यों का संपादन, पारिवारिक आय और महिलाओं के प्रबंधकीय कौशल पर निर्भर करता है। अशिक्षा, जागरूकता की कमी, अपर्याप्त आय, सदस्यों की अधिक संख्या, आर्थिक परतंत्रता, कौशल की कमी आदि कारक ग्रामीण महिलाओं के कार्य निष्पादन को प्रभावित करते हैं। जिसमें प्रभाव निम्न जीवन स्तर के रूप में दृष्टिगत होता है। देश की अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण एवं समग्र ग्रामीण विकास के लिए सामर्थ्य संवर्धन एवं विस्तार के लिए महिलाओं को अनुकूल अवसर प्रदान किए जाने आवश्यक है।

प्रस्तावना – ग्रामीण परिवारों में सामान्यतौर पर निम्न एवं मध्यम जीवन स्तर की बहुलता देखी जाती है बहुत कम परिवारों में जीवन स्तर उच्च पाया जाता है। आर्थिक संसाधनों की कमी, अधिक संतानोपत्ति, अशिक्षा, अज्ञानता, अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, परंपराएँ जीवनस्तर उन्नत करने में उत्साह में कमी आदि ग्रामीण जीवन स्तर निर्धारण में प्रभावी भूमिका निभाते हैं। जीवन स्तर या रहन सहन का स्तर परिवार के जीने के ढ़ंग को प्रदर्शित करता है। परिवार अपनी आय के बड़े भाग को उपभोग पर व्यय करते हैं, उनका व्यय करने का तरीका उनके जीवन स्तर को निर्धारित करता है। रहन सहन का स्तर शब्द सामाजिक समूह के व्यवहार को अर्जित करने हेतु भी उपयोग में लाया जाता है और व्यक्तियों और परिवारों के प्रबंधकीय व्यवहार की भी व्याख्या करता है कि वे अपने लिए किसे महत्वपूर्ण मानते हैं जीने का तरीका शब्द का भी जीवन स्तर या रहन सहन के स्तर से जुड़ा हुआ है। जीवन स्तर से हमारा अभिप्राय उन आवश्यक पदार्थों, आराम एवं विलासिता के पदार्थों से है जिसमें उपभोग की किसी व्यक्ति अथवा वर्ग को आदत पड़ जाती है। इसी प्रकार ग्रामीण महिलाओं द्वारा किए गए प्रबंधन एवं लिए गए निर्णयों का सीधा प्रभाव ग्रामीण महिलाओं के पारिवारिक जीवन स्तर पर पड़ता है।

साहित्य का पुनरावलोकन – ग्रामीण जीवन स्तर से संबंधित साहित्य का पुनरावलोकन अग्रलिखित है।

द्विवेदी निधि (2012) : पूर्वी भारत के सिक्किम के ग्रामीण क्षेत्र में एक शोध अध्ययन में ज्ञात किया कि औसत रूप आय का उचित व विवेकपूर्ण उपयोग भी जीवन स्तर को निर्धारित करता है तो आय अधिक होने पर भी उसे व्यय करने के उचित तरीकों का ज्ञान नहीं है तो आय का बड़ा भाग अनावश्यक कार्यों में व्यय हो सकता है और अधिक आय होने के बाद भी जीवन स्तर उन्नत होने के स्थान पर निम्न या निम्नतर हो जाता है।

ग्रामीण परिवारों में आय के निश्चित साधन होते हैं पर धार्मिक, सामाजिक रीतिरिवाजों, प्रथाओं के अनुपालन हेतु आय का अधिकांष भाग व्यय कर देना, ऋण लेकर भी अनावश्यक खर्च करना, बाजार का तथा उचित मूल्यों की दुकानों का भुगतान के तरीकों का सही और पर्याप्त ज्ञान नहीं होना भी ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति को दिन-प्रतिदिन कमजोर करता है।

जे.बी. सुधा (1984) : ने ग्रामीण विकास या ग्रामीण परिवारों के उच्च जीवन स्तर के अंतर्गत शिक्षा को एक महत्वपूर्ण कारक मानते हुए कहा है कि ग्रामीण जनता को शिक्षित करके इनका सामाजिक आर्थिक सुधार किया जा सकता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का स्तर अत्यधिक कम है। ग्रामीण पुरूषों की तुलना में ग्रामीण महिलाओं में शिक्षा का स्तर निम्न पाया जाता है। शिक्षा उच्च जीवन स्तर को मापने का एक मुख्य पैमाना है। साक्षरता का स्तर, सामाजिक व सांस्कृतिक विकास का घोतक माना जाता है, लेकिन भारतीय ग्रामीण महिलाएँ इस क्षेत्र में सर्वाधिक पिछड़ी हुई हैं, जिसका सीधा प्रभाव उनके जीवन स्तर पर पड़ता है।

गायकवाड (1970) : ने अपने शोध अध्ययन में पाया कि गाँवों में उच्च आर्थिक स्तर वाले व्यकित विकास संबंधी सूचनाओं को जल्दी प्राप्त कर लेते हैं, क्योंकि उनके पास संचार साधन एवं बाह्य संपर्कों की अधिकता होती है। ये व्यक्ति आर्थिक स्तर से संपन्न होने के कारण महँगी वस्तुओं एवं अविष्कारों का भी लाभ अन्य की अपेक्षा जल्दी लेते हैं।

भारत देश अपने रीति-रिवाजों एवं प्रथाओं के पालन के लिए विख्यात है। इन धार्मिक सामाजिक रीति-रिवाजों, प्रथाओं और परंपराओं के निर्वाह में अत्यधिक धन व्यय होता है। प्रथाएँ समूह और समुदाय के लोगों का जीवन स्तर तय करने में बहुत प्रभावशाली भूमिकाएँ निभाती है।

शोध उद्देश्य – प्रस्तुत शोध उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन निम्नानुसार है :-

1. ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर में आय का प्रभाव ज्ञात करना।
2. ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर में शिक्षा का प्रभाव ज्ञात करना।

*सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान विभाग) गांधी महाविद्यालय, मिड्ढा, बलिया (उ.प्र.) भारत

3. ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर में सामाजिक व धार्मिक रीतिरिवाजों एवं प्रथाओं के प्रभाव को ज्ञात करना।

शोध परिकल्पना – प्रस्तुत शोध अध्ययन में ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन कर निम्नलिखित परिकल्पनाओं का निर्माण किया गया है।

1. ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर को आय प्रभावित करती है।
2. ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर को शिक्षा प्रभावित करती है।
3. ग्रामीण महिलाओं को सामाजिक व धार्मिक रीतिरिवाजों एवं प्रथाओं से उनके जीवन स्तर में प्रभाव पड़ता है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के **सोबईबान** ग्राम का चयन किया गया। बलिया जिले में कुल 2293 ग्राम हैं। ग्रामीण परिवारों में एकाकी एवं संयुक्त परिवार सम्मिलित है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में मूल रूप से ग्रामीण महिलाओं से संबंधित है। व्यवहारिक दृष्टिकोण से बलिया जिले की सभी ग्रामीण महिलाओं का अध्ययन संभव नहीं है इसीलिए उत्तरप्रदेश के आजमगढ़ मण्डल के बलिया जिले के **सोबईबान** ग्राम का चयन किया गया है। समय की सीमितता और व्यावहारिक सीमाओं को ध्यान में रखते हुए दैव निदर्शन विधि के द्धारा करनई ग्राम की 50 ग्रामीण महिलाओं का चयन कर शोध अध्ययन किया गया है।

परिणाम एवं विश्लेषण – प्रस्तुत शोध अध्ययन ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर को प्रभावित करने वाले कारक जैसे आय, शिक्षा, सामाजिक एवं धार्मिक रीतिरिवाजों एवं प्रथाओं का अध्ययन कर उनमें जीवन स्तर को प्रभावित करने वाले कारक से संबंधी प्राप्त आँकड़ों का निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक – 01 (अगले पृष्ठ पर देखे)

प्रस्तुत शोध अध्ययन के तालिका क्रमांक – 01 में सर्वेक्षित ग्रामीण महिलाओं से पूछे गए कथन अनुसार प्राप्त परिणाम के अवलोकन करने से ये परिलक्षित होता है कि सर्वेक्षित ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर को प्रभावित करने वाले कारक **आय** में **92 प्रतिशत ग्रामीण महिलाओं** का मानना है कि उनके जीवन स्तर को आय प्रभावित करती है, वहीं **8 प्रतिशत ग्रामीण महिलाओं** का मानना है कि उनके जीवन स्तर पर आय का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसी तरह **64 प्रतिशत ग्रामीण महिलाओं** का मानना है कि उनके जीवन स्तर को उन्नत बनाने के लिए शिक्षा प्रभावित करती है, जबकि **36 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएँ** मानती है कि शिक्षा का उनके जीवन स्तर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसी प्रकार **88 प्रतिशत ग्रामीण महिलाओं** का मानना है कि उनके जीवन स्तर को सामाजिक व धार्मिक रीतिरिवाज एवं प्रथाएँ प्रभावित करती है, वहीं **12 प्रतिशत ग्रामीण महिलाओं** का मानना है कि उनके जीवन स्तर पर इनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। जिससे यह परिलक्षित होता है कि सभी परिकल्पना सिद्ध होती हैं।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध अध्ययन के द्धारा प्राप्त परिणामों के आधार पर निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर को आय अत्यधिक प्रभावित करती है वहीं शिक्षा का जीवन स्तर को उन्नत बनाने में विशेष योगदान है साथ ही सामाजिक व धार्मिक रीतिरिवाजों व प्रथाओं से जुड़ी रहती है तो उनका पालन करते हुए अपने जीवन स्तर के साथ तालमेल बैठाना पड़ता है। उक्त कारण अनुसार आय विशेष रूप से जीवन स्तर को प्रभावित करती है। क्योंकि जैसी आय वैसा जीवन स्तर व रहन सहन का स्तर होता है। ग्रामीण विकास एक बहुउद्देशीय अवधारणा है जो मूल रूप से ग्रामीण समूह की आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक उन्नति से संबंधित है, जिसका मूल उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों की गरीबी, बेरोजगारी के उन्मूलन के साथ–साथ उनके जीवन स्तर को उन्नत दषा में पहुँचाना हे।

सुझाव – ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर को सुधारने हेतु सुझाव निम्नलिखित है।

1. ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति जीवन स्तर में सुधार के लिए आवश्यक है कि ग्रामीण महिलाओं के द्धारा संसाधनों के उपयोग एवं नियंत्रण में वृद्धि हो, शिक्षा, विभिन्न कौशल एवं क्षमता विकास, नेतृत्व क्षमता विकास द्धारा बुनियादी स्तर पर उन्हें सषक्त बनाया जाए।
2. ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए उन्हें कम्प्यूटर प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। व्यावसायिक केन्द्र, सरकारी व गैर सरकारी संस्थाओं द्धारा ग्रामीण महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने और आर्थिक दृष्टि से सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए क्योंकि सशक्त महिलाएँ पारिवारिक जीवन स्तर के उत्थान में रचनात्मक योगदान देती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. आहुजा राम, (2012) : ***सामाजिक अनुसन्धान,*** रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर एवं दिल्ली।
2. द्विवेदी निधि, (2012) : ***फीमेल फारमर्स व्यू टू लीव फारमिंग अ स्टडी ऑफ एरिया ऑफ सिक्किम इन नॉर्थ इर्स्टन इण्डिया,*** द इन्टरनेशनल जर्नल, रिसर्च जर्नल ऑफ कॉमर्स एण्ड बीहेब्यिर सांइस, वाल्यूम 1 नम्बर – 10, ISSN- 2251 – 1547.
3. गुप्ता एम.एल. एवं शर्मा, डी.डी. (1997) : ***भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र,*** साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, पृष्ठ – 49।
4. कुरूक्षेत्र (2013) : ***ग्रामीण भारत में सुधरता जीवन स्तर, विशेषांक,*** ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, अंक – 12।
5. मुखर्जी रवींद्रनाथ (1969) : ***सामाजिक शोध एवं सांख्यिकीय,*** विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
6. पाठक, एच.के., अग्रवाल डी.सी. (1984) : ***सांख्यिकीय विधियाँ,*** शिक्षा साहित्य प्रकाशन, मेरठ।
7. राजकुमार (2010) : ***आर्थिक उन्नति में महिलाओं का योगदान,*** महिला एवं विकास, प्रथम संस्करण, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, पृष्ठ क्र. 84–95।
8. राय पारसनाथ (1997) : ***अनुसंधान परिचय,*** लक्ष्मी नारायण, अग्रवाल, आगरा।
9. शाह अशोक (1997) : ***बालाधर में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम,*** कुरूक्षेत्र, ग्रामीण विकास मंत्रालय, फरवरी, पृष्ठ क्र. 72–74।

तालिका क्रमांक – 01 : सर्वेक्षित ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन

क्र.	जीवन स्तर को प्रभावित करने वाले कारक	ग्रामीण महिला N – 50					
		हाँ	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत	कुल योग	कुल प्रतिशत
1	क्या आपको लगता है कि आपके जीवन स्तर को आय प्रभावित करती है ?	46	92	4	8	50	100
2	क्या आपको लगता है कि शिक्षा जीवन स्तर को प्रभावित करती है ?	32	64	18	36	50	100
3	जीवन स्तर को सामाजिक व धार्मिक रीतिरिवाज एवं प्रथाएँ प्रभावित करती हैं ?	44	88	6	12	50	100

सर्वेक्षण पर आधारित।

****

असग़र वजाहत के उपन्यासों में स्त्री जीवन

राम रक्षा सिंह*

प्रस्तावना – समाज के विकास में हमेशा से स्त्री का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, किन्तु पितृसत्तात्मक समाज ने स्त्री को वह अवसर ही नहीं दिया, जिससे वह अपना स्वतन्त्र अस्तित्व स्थापित कर सके। प्राचीन काल से स्त्रियों को पुरूषों की तुलना में शारीरिक और बौद्धिक रूप से कमजोर समझा जाता रहा है तो वही कानून एवं धर्मग्रन्थ दोनों ने ही स्त्री जीवन की पराधीनता में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। प्राचीन ग्रन्थों में नारी जीवन के सन्दर्भ में तरह–तरह की उद्घोषणा की गई है जिसमें 'नारी की झाई पड़त अंधा होत भुजंग' से लेकर 'स्त्रियाँ स्वभावत: डिफैक्टिव हैं।' तक न जाने कितने अलंकृत शब्दों से उनकी आत्मा को दु:खित करने का प्रयास किया गया है। विचारक अरिस्टोटिल ने तो यहाँ तक कहा है कि – 'जो पुरूष कायर होते हैं वे अगली पीढ़ी में स्त्री बन जाते हैं।'[1] इन विभिन्न उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि समाज ने स्त्री को शोषण के अलावा अन्य कोई भी अधिकार देने की बात ही नहीं करता था। यहाँ तक कि उनका स्वयं के जीवन पर भी कोई अधिकार नहीं होता था। समाज की इस विषम परिस्थिति में भी स्त्रियों ने अपनी अस्मिता के रक्षा के लिए संघर्ष का मार्ग अपनाया। विश्व में स्त्रियों के लिए व्यापक अवसर प्रदान किये जाने की आवाज बहुत पहले ही उठ चुकी थी, किन्तु भारत में यह कार्य 19वीं सदी के उत्तरार्ध में पंडिता रमाबाई एवं सावित्री बाई फूले के प्रयत्नों ने स्त्रियों के अन्दर जो चेतना जागृत करने का काम किया वह अविस्मरणीय है।

स्त्री के प्रति विश्व समुदाय का ही नहीं अपितु भारतीय समाज का दृष्टिकोण प्रारम्भ से ही उपेक्षापूर्ण रहा है। लेकिन पिछले 50 वर्षों में स्त्रियों ने बहुत से क्षेत्रों में काफी तरक्की की है। कुछ औरतों के लिए कुछ सामाजिक बन्धन भी कम हुए हैं। कुछ कानून भी बदले हैं। हमारे संविधानों ने काफी हद तक स्त्रियों को बराबरी का दर्जा दिया है, परन्तु इन सबके बावजूद भी आज लगभग हर देश में स्त्रियों को न समान अधिकार है और न ही पूरी आजादी। वर्तमान समय में भी लगभग हर जगह पुरूष सत्ता का ही बोल बाला बना हुआ है। सुधार के इन प्रयासों अथवा आन्दोलनों से भारतीय स्त्री की स्थिति में बड़ा परिवर्तन घटित हुआ है– यह कहना बहुत समीचीन नहीं है। फिर भी रूढ़िया टूटी हैं। जड़ परम्पराएँ बहुत हद तक शिथिल हुई हैं। परन्तु उनको पूरी तरह से समाप्त होने में अभी विलम्ब है।

लेखक असग़र वजाहत ने स्त्री जीवन के संदर्भ में वर्तमान सामाजिक राजनीतिक स्तर का चित्रण किया है। उनका मानना है कि वैश्वीकरण के दौर में भी हमारा समाज महिलाओं के उन्नति के मार्ग में रोड़ा बना हुआ है। महिलाओं पर अत्याचार आम घटना के समान हो गया है। समाज में भले ही 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' के रूप में उसकी कल्पना की गयी हो। किन्तु वास्तव में उसका सम्मान नहीं किया जाता है। उपन्यास 'कैसी आगी लगाई' की भूमिका में लेखक का वक्तव्य है कि– 'आज दहेज के लिए औरत को जला देना सहज है; दंगाइयों का प्रिय खेल आदमियों, औरतों, बच्चों को आग में जला डालना है, क्योंकि वे जानते है इस अपराध को हमारा सभ्य समाज अपराध ही नहीं मानता और उसकी सजा ही नहीं है'[2] स्पष्ट है कि आज स्त्री शोषण के रूप में दहेज प्रथा महिलाओं के लिए कब्रगाह बन गया है किस तरह लोग दहेज के लिए महिलाओं के साथ मारपीट के साथ–साथ उन्हें जिन्दा जला देने तक में भी जरा सा संकोच नहीं करते हैं। इसका प्रमुख कारण जो उभरकर सामने आता है वह यह है कि आज जो भी कानून महिलाओं की सुरक्षा और उनके सामाजिक राजनीतिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए बनाये जा रहे हैं वह पूरी तरह से निष्प्रभावी हैं। जब तक लोगों के अन्दर कानून का भय नहीं होगा तब तक इस तरह की घटनाएँ समाज से समाप्त होने वाली नहीं हैं। जरूरत इस बात कि है कि मजबूत कानून के साथ–साथ उसका पालन भी मजबूती के साथ समाज में करवाया जाए।

परिवार समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है। परिवार में विभिन्न रक्त सम्बन्धों के लोग एक साथ निवास करते हैं। जिनमें प्रमुख रूप से लैंगिक आधार पर स्त्री और पुरूष इन दो वर्गों में परिवार नामक इकाई का विभाजन होता है इसी विभाजन के आधार पर स्त्री का शोषण पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है। अगर यह कहा जाए कि स्त्री शोषण और परिवार एक दूसरे के पर्यायवाची है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं है। प्राय: यह देखा जाता है कि परिवार या खानदान कितना ही उच्च कोटि का पढ़ा–लिखा क्यों न हो लेकिन महिलाओं के प्रति उनकी दृष्टि शोषणपरक मानसिकता से ग्रसित ही नजर आती है। उपन्यास 'बरखा रचाई' में अनु उर्फ अनुराधा सिंह हैं– 'हमें कुछ नहीं मालूम था कि आई0ए0एस0 क्या होता है पर हमारे पापा को बुरा कहा तो ये हमें अच्छा नहीं लगा। हम समझ गये कि यही हमारा पति है।'

वह हमारा हाथ पकड़कर घसीटने लगा। हम छुड़ाने लगे। उसे गुस्सा आ गया बोला– ठीक है तू सो जा...........देखे कब तक सोती है। जा उधर सो जा........कमरे के कोने में एक दरी बिछी थी.............हम दरी पर जाकर बैठ गये वह जूते उतारने लगा।

–देख यहाँ रहना है तो ढंग से रहना पड़ेगा..........लाट साहबी नहीं चलेगी ....हम बड़े टेढ़े आदमी हैं..................अच्छे–अच्छों को ठीक कर दिया है...........अब हमारा सेवा करना ही तेरा धर्म है............समझी।'[3] यहाँ यह द्रष्टव्य है कि समाज का वह वर्ग जो अशिक्षित और रूढ़िवादी परम्परा से ग्रसित लोगों के लिए एक आदर्श समाज के निर्माण में अपनी भूमिका निभा सकता था। लेकिन वह स्वयं ही उस रूढ़ परम्परा से ग्रस्त है जो स्त्री शोषण के लिए जिम्मेदार है। अत: स्त्री का स्वयं ही अपनी अस्मिता

* शोधार्थी, हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

की रक्षा करना होगा। अपने अधिकार के लिए लड़ना होगा, जो स्त्री अपने हित के बारे में सोच नहीं सकती, ऐसी स्त्री का शोषण एवं मरण निश्चित होता है। नियति के हाथों छले जाना और बात है, किन्तु स्वयं अपनी बुद्धि-विवेक का प्रयोग किये बिना छले जाना उसकी अपनी गलती होगी। समाज में ऐसा नहीं है कि केवल दुर्बल स्त्रियों का ही शोषण होता है। सबल स्त्रियाँ भी शोषण का शिकार बनती हैं। स्त्री की दुर्बलता स्वयं उसमें ही निहित होती है। यदि स्त्री चाहे तो उसके साथ हो रहे शोषण का प्रतिकार कर सकती है। किन्तु शोषण के प्रति उसकी उदासीनता ही उसका पूरा जीवन अभिशप्त कर देती है।

समाज में स्त्री जीवन की दुर्दशा के लिए केवल पुरुष ही जिम्मेदार नहीं है बल्कि एक स्त्री दूसरे स्त्री के शोषण में भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्राय: समाज में यह देखा जाता है कि सक्षम स्त्री अन्य स्त्रियों के शोषण से मुक्ति के लिए कोई प्रयास न करके वह स्वयं भी शोषण के कुचक्र रचती रहती है। उपन्यास 'पहर दोपहर' के पात्र असगर के माध्यम से उदाहरण प्रस्तुत है- 'जालिब की माँ के फोन लगातार हैदराबाद से आते थे और वह उन्हें टालता रहता था। अब शायद उसने ये 'रियलाइज' कर लिया था कि शादी वादी मजाक नहीं है और पैंतालिस साल की उम्र और कैरियर के इस मोड़ पर तो बिल्कुल ही नहीं। लेकिन शायद उसकी माँ बुरी तरह कमर कसे हुए थीं शायद वे नीना से पूरा बदला लेना चाहती थीं।'[4] उक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि स्त्री भी पुरूष के ही भांति स्त्री जीवन की दुर्दशा के लिए उत्तरदायी है। जालिब की माँ अपनी बहू से बदला लेने के लिए ही बेटे जालिब का दूसरा विवाह करने का उपक्रम रचती है जिससे बहू नीना को शोषण का शिकार बनाया जा सके। इस तरह के उदाहरण आज समाज में अधिकांश रूप में दिखाई देता है कि स्त्री अगर पुरूष के शोषण से बच भी जाती है तो स्त्री के शोषण रूपी कुचक्र में फंसकर रह जाती है।

प्रकृति मानव जीवन में कोई भेदभाव नहीं करती है। लेकिन मानव का प्रवेश जब समाज नामक इकाई में होता है तो वह धर्म, सम्प्रदाय, जाति, लिंग के आधार पर विभाजित नजर आने लगता है। इसी विभाजन की प्रक्रिया में लैंगिक विभाजन का प्रभाव समाज में महिलाओं पर सर्वाधिक रूप में दिखाई देता है। आज नारी केवल समाज में ही नहीं बल्कि घर-परिवार में भी विभिन्न रक्त सम्बन्धों में बंधकर भेदभाव का दंश सहन करती है। नारी जीवन के इसी तरह के भेदभाव को लेखक ने 'धरा अँकुराई' उपन्यास में साजिद और अनु उर्फ अनुराधा सिंह के वार्तालाप के माध्यम से दर्शाया है कि- 'हमारे समाज में- भारतीय समाज कह सकती हो- और ज्यादा सही कहना चाहो तो उत्तर भारतीय समाज कह लो-लड़कियों, औरतों को एक गुलाम जेहनियत देकर पाला-पोसा जाता है और वे पूरे जीवन उसी गुलाम मानसिकता में रहती है। तुम अपने पिता की बात नहीं टाल सकती हो चाहे वह कितना ही गलत क्यों न हो, यह क्या है? मैंने देखा है कि लड़कियों को नियन्त्रण में रखने का काम उन्हें शारीरिक रूप से कमजोर बना देने की सीमा तक किया जाता है। लड़कियों को कम खाना देना, लड़कों को ज्यादा और अच्छा खाना देना तो आम बात है।'[5] उपर्युक्त पंक्ति के माध्यम से समाज में लैंगिक आधार पर विभाजन की शिकार महिलाओं की स्थिति के सन्दर्भ में प्रकाश डाला गया है कि किस तरह घर-परिवार में स्वयं उसके ही माता-पिता जब उसके साथ भेदभाव करते हैं तो समाज में और किससे उम्मीद की जा सकती है कि उसका शोषण एवं भेदभाव नहीं होगा। अधिकांश भारतीय समाज में यह देखा जाता है कि जो पाबंदियाँ पुरूष समाज में महिलाओं के लिए होती है वह पुरूषों के लिए नहीं होती हैं। भारतीय घरों में महिलाओं के साथ भेदभाव की प्रक्रिया उसके जन्म के साथ ही शुरू हो जाती है जो पीढ़ी दर पीढ़ी चलती रहती है। स्त्री के इस लिंग आधारित भेदभाव के सन्दर्भ में स्त्रीवादी लेखिका सिमोन द बोउवर का कथन बिल्कुल सत्य प्रतीत होता है कि 'स्त्री पैदा नहीं होती बनाई जाती है'।

भारतीय समाज में स्त्रियों पर हो रहे शोषण एवं अत्याचार को लेखक असग़र वजाहत ने अपने उपन्यासों में प्रमुखता से दर्शाया है। वे महिलाओं में चेतना जागृत करने के पक्ष में है कि समाज में हो रही घटनाओं को वह केवल मूकदर्शक बनकर देखे ही नहीं बल्कि उस पर अपनी प्रतिक्रिया के साथ-साथ अपने अधिकारों की लड़ाई भी स्वयं लड़े। परिवार एवं समाज में स्त्रियों की दशा पर लेखक के मन में विद्रोही स्वर उभरता है। 'धरा अँकुराई' उपन्यास में अपनी अभिव्यक्ति देते हैं कि- 'अबे, औरतों को दड़बे में मुर्गियों की तरह रखने वालों तुम अपने आप को इन्सान कहते हो? जीवन भर अपनी औरत के साथ बलात्कार करने वालों तुम उन्हें अपनी पत्नी कहते हो और तुम्हें शर्म भी नहीं आती। बच्चों के बोझ और घुटन से उसकी असमय मृत्यु के जिम्मेदार लोगों तुम नैतिक हो? औरतों को लौडी बनाकर रखने वालों और उन पर शारीरिक मानसिक अत्याचार करने वालों तुम अपने को गौरवान्वित महसूस करते हो? परम्परा, मर्यादा, नेकचलनी के नाम पर औरत को बन्धक बनाने और खुद सरकारी साँड़ की तरह घूमने वालों तुम अपने को आदर्श मानते हो'[6] उक्त सन्दर्भ में लेखक का आक्रोश समाज में घटने वाली घटनाओं का यथार्थ प्रस्तुतीकरण से है कि किस तरह से लोग अपने परिवार में स्त्रियों और बच्चों के साथ अत्याचार और शोषण करते हैं उन्हें वह स्वतन्त्रता देने के पक्ष में नहीं है जिसे वह स्वयं अपने लिए चाहते हैं। समाज ने जिस तरह स्त्रियों के शोषण के लिए परम्परा एवं सामाजिक रूढ़ियाँ नामक हथियारों को स्त्रियों के विरूद्ध इस्तेमाल कर रहा है उससे आज समाज में स्त्रियों की स्थिति दास के समान होकर रह गई है।

अत: उपर्युक्त विवेचन एवं विश्लेषण के माध्यम से स्पष्टता के साथ कहा जा सकता है कि स्त्री जीवन में जो कुछ भी परिवर्तन घटित हुआ है वह उनके लिए पर्याप्त नहीं है उन्हें अपने अस्तित्व एवं अस्मिता के लिए पितृसत्तात्मक समाज से संघर्ष करना ही होगा तभी वह अपने लिए एवं स्वयं के भविष्य के लिए बेहतर समाज का निर्माण कर सकेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. रमणिका गुप्ता, स्त्री मुक्ति : संघर्ष और इतिहास, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, सं0-2017, पृ0सं0-64
2. असग़र वजाहत, कैसी आगी लगाई, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सं0-2007, पृ0सं0-VI
3. असग़र वजाहत, बरखा रचाई, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सं0-2009, पृ0सं0-187
4. असगर वजाहत, पहर दोपहर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सं0-2011, पृ0सं0-142
5. असग़र वजाहत, धरा अँकुराई, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सं0-2016, पृ0सं0-11
6. वहीं, पृ0सं0-85

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

पूर्व मध्ययुगीन काल तथा मालवा की वर्ण एवं जातिगत व्यवस्थायें

गुलाबराव डोंगरे* डॉ. श्रीमती विजेता चौबे**

प्रस्तावना – मध्ययुगीन भारत, प्राचीन भारत और आधुनिक भारत के बीच भारतीय उपमहाद्वीप के इतिहास की लंबी अवधि को दर्शाता है। अवधि की परिभाषाओं में व्यापक रूप से भिन्नता है, और आंशिक रूप से इस कारण से कई इतिहासकार अब इस शब्द को प्रयोग करने से बचते रहे। अधिकतर प्रयोग होने वाली परिभाषा में यूरोपीय मध्य युग की ही तरह मध्य युगीन काल को छठी शताब्दी से लेकर सोलहवी शताब्दी तक माना जाता है। इसे दो अवधियों में विभाजित किया गया है – प्रारंभिक मध्ययुगीन काल जो 6वीं से लेकर 13वीं शताब्दी तक और गत मध्ययुगीन काल जो 13वीं से लेकर 16वीं शताब्दी तक चला। यह काल 1526 ई. में मुगल साम्राज्य की शुरूआत के साथ ही समाप्त हो गया। एक वैकल्पिक परिभाषा में, जिसे हाल के लेखकों के प्रयोग में देखा गया है, जो मध्य कालीन काल की शुरूआत को आगे बढ़ा कर 10वी या 12वी सदी बताते है, इस काल के अंत को 18वी सदी तक धकेल देते है, हालांकि इस अवधि को प्रभावी रूप से मुस्लिम वर्चस्व से ब्रिटिश भारत की शुरूआत माना जा सकता है। इस प्रकार 8वी शताब्दी से 11वी शताब्दी की अवधि को पूर्व मध्ययुगीन काल कहा जायेगा।

***पूर्व मध्ययुगीन काल* –** पूर्व मध्ययुगीन काल के प्रारम्भ को लेकर इतिहासकारों के बीच मतभेद है, जहाँ कुछ इतिहासकार इसे गुप्त राजवंश के पतन के बाद 5वीं से 6वीं शताब्दी के बाद से शुरू हुआ मानते है, जबकि कुछ इसे 7वीं से 8वीं शताब्दी से शुरू हुआ मानते है। गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद और दिल्ली सल्तनत के शुरू होने के बीच भारतवर्ष कई छोटे राज्य में बंटा हुआ था, हालांकि कई साम्राज्यों ने इसे पुन:गठित करने की कोशिश की लेकिन ज्यादा समय के लिये नहीं कर के। इस में सबसे महत्वपूर्ण गुर्जर–प्रतिहार, पाल और राष्ट्रकूट साम्राज्य के त्रिपक्षीय संघर्ष और भारत पर मुस्लिम आक्रमण का शुरूआत रहा।

पूर्व–मध्ययुगीन के आलोच्य अवधि राजनीतिक दृष्टि से भले ही यह उथल–पुथल का युग रहा हो लेकिन सामाजिक– सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से इसमें विकास की एक निरन्तर प्रकिया विद्यमान रही है। इतना अवश्य है कि समय बीतने के साथ–साथ समृतिकारों द्वारा दी गयी व्यवस्था अधिक सुदृढ़ हो गयी थी और विभिन्न सामाजिक संस्थाओं ने अपना एक सुनिश्चित स्वरूप ग्रहण कर लिया था।

***पूर्व मध्ययुगीन काल एवं मालवा की वर्ण एवं जातिगत व्यवस्थायें* –** प्राचीन भारत के इतिहास में आठवी शताब्दी से बारहवी शताब्दी का काल सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। इस काल मे किसी भी जीवंत वस्तु की भांति ही भारतीय सामाजिक संगठन और अर्थव्यवस्था, राजनीति तथा विचारों के क्षेत्र में होने वाले परिवर्तन अत्यधिक सजग एवं गतिमान थे। इस काल के सामाजिक परिवर्तनों के पीछे कुछ आर्थिक घटनाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा जिन्होने प्राचीन सामाजिक व्यवस्था के प्रति लोगों का दृष्टिकोण बदल दिया। इस काल में व्यापार वाणिज्य का ह्रास हुआ। रोम साम्राज्य के पतन हो जाने के कारण पश्चिमी देशों के साथ भारत का व्यापार बन्द हो गया। इस्लाम के उदय के कारण भी भारत का स्थल मार्ग से होने वाला व्यापार प्रभावित हुआ। नगर तथा नगरीय जीवन में भी ह्रास हुआ । सामाजिक गतिशीलता के अभाव के फलस्वरूप एक सुदृढ़ स्थानीयता की भावना का विकास हुआ। पूर्व मध्यकाल के द्वितीय चरण से हम व्यापार–वाणिज्य की स्थिति में सुधार के लक्षण देखते है। दसवी शती के बाद भारत का व्यापार पश्चिमी देशों के साथ पुन: तेज हो गया जिससे देश की आर्थिक प्रगति को प्रोत्साहन मिला। पूर्व मध्यकाल की आर्थिक परिस्थितियों ने सामाजिक जीवन को प्रभावित किया। ग्यारहवी शताब्दी की एक रचना में सामाजिक पदों तथा जन्म के आधार पर सामाजिक विभाजन पर बल दिया गया है, न कि व्यवसाय के आधार पर। विभिन्न धर्मो के पुरोहितों को जहां एक ओर पाखंडी कहा गया है, वहीं दूसरी शेष समाज का वर्गीकरण छह वर्गो के आधार पर किया गया है।

पूर्व मध्ययुगीन मालवा में ब्राह्मण समाज तथा राज्य के प्रधान व्यक्ति समझे जाते थे। ह्वेनसांग ने प्राय: ब्राह्मणों को धार्मिक कार्य करते हुये ही बताया है। कुछ ऐतिहासिक प्रमाणों के अनुसार वे धार्मिक कार्य के अतिरिक्त राजनैतिक कार्यो को करते हुये, राजकीय पदो पर भी आरूढ़ होते थे। परमार राजाओं के राज्य काल में यह सन्धि–विग्रहक तथा यूतक होते थे। ब्राह्मणों के पश्चात मालवा मे क्षत्रियों का समाज में द्वितीय स्थान था। इनकी भी विभिन्न उपजातियां थी, यह कहना उचित होगा कि इस समय युद्ध प्रिय तथा शूरवीर होने के कारण विभिन्न जातियां क्षत्रियों में शामिल होते चली गयी। समाज में क्षत्रियों के बाद वैश्यों का स्थान था। इनका मुख्य कार्य कृषि तथा वाणिज्यिक सम्बन्धी था। जातिगत विशेषता के आधार पर वर्गीकरण के कारण इन्हे वणिक भी कहा जाता था। यह केवल अपने देश में ही नहीं वरन् दूरस्थ देशों में भी व्यापार कार्य करते थे। समाज में इनका स्थान इनकी धन–सम्पत्ति के आधार पर निर्धारित होता था। वैश्यों के पश्चात मालवा में शुद्रो को स्थान दिया गया था। इस समय में प्राचीन काल की अपेक्षा शुद्रों की स्थिति में सुधार हुआ पाया जाता है। यह व्यापार, लघु–उद्योग एवं सेवाकार्य में संलग्न थे। अन्य वर्णो के दिये हुये भोजन से जीवन–यापन करने के कारण इन्हें पद्जा से भी सम्बोधित किया जाता था। इनमें कई चारो वर्णो की स्थिति में जो अन्तर था, उसे देश का तत्कालीन दण्ड–विधान

* शोधार्थी (इतिहास) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (इतिहास) ज.हा. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

बिल्कुल स्पष्ट कर देता है। अपराधी जितने ही उच्च वर्ण का होता था, उस पर उतना ही कम जुर्माना किया जाता था। पाप के लिये प्राशचित भी जाति के अनुसार विभिन्न प्रकार का होता था।

पूर्व मध्यकालीन मालवा समाज की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है भी कि इस समय मिश्रित जातियों तथा की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हो गयी। परम्परागत चार वर्ण भी अनेकानेक जातियों में बिखर गये तथा कई नई जातियों को इन्होनें अपने अन्तर्गत समाहित कर लिया। पूर्व मध्य काल में ब्राह्मणों की अनेक उपजातियाँ बन गयी। इस समय ब्राह्मण वर्ग अब केवल अपने छह कर्तव्यों तक ही सीमित नहीं रहा, बल्कि मंत्री, पुराहित, न्यायाधीश आदि जैसे सरकारी पदों पर बने रहने के अतिरिक्त, सैनिक कार्यो को भी करना शुरू कर दिया। दृष्टांत के तौर पर, पृथ्वीराज चौहान को सेनापति स्कन्द नाम का ब्राह्मण था और सपदलालक्ष के शासक की सेना का नेतृत्व भी एक ब्राह्मण ने किया था। ग्यारहवी सदी के कश्मीरी लेखक क्षेमेन्द्र ने ऐसे ब्राह्मणों को उद्धृत किया है, जो कारीगरों और नर्तकों के कार्य करते थे, और वे शराब, मक्खन-दूध, नमक आदि वस्तुओं के कार्यो में भी शामिल थे। स्थान भेद के कारण उन्हें भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाने लगा। ब्राह्मणों की कार्यात्मक भिन्नता निम्नलिखित उपाधियों से भी स्पष्ट होती है - श्रोतिया, पंडित, महाराज-पंडित, याज्ञनिक, पाठक, उपाध्याय, ठाकुर, अग्निहोत्री आदि। ब्राह्मण के समान क्षत्रिय और वैश्य वर्ण भी पूर्व मध्यकाल में अनेक उपजातियों में बंट गया। आठवीं सदी के बाद क्षत्रियों के बीच भी अनेक जातियों की उत्पत्ति हुई। अकेले उत्तर की 36 राजपूत जातियों के नामों की सूचियां उस समय के ग्रंथों में दी गयी है। इन राजपूत जातियां की उत्पत्ति आबादी के विभिन्न वर्गो जैसे - कायस्थ एवं ब्राह्मणों से हुई। इन की उत्पत्ति कुछ आदिवासी जातियों से भी हुई थी और कुछ तो मूल रूप से इन्हीं से बनी थी। जाति वृद्धि की प्रक्रिया ने वैश्यों एवं शूद्रो को भी अछूता नहीं छोड़ा। जिस प्रकार ब्राह्मण जातियों की पहचान क्षेत्रीय संबंधता के साथ की गयी है, उसी तरह से वैश्य जातियों की पहचान भी की जाती है। इस तरह से वैश्यों को श्रीमाली, नागर, पालीवाल, दिसावत आदि कहा जाता था। इस काल की जातियों में सबसे बड़ी संख्या शूद्रों की थी। इससे स्पष्ट होता है कि शूद्र लोग ही सबसे अधिक प्रभावित हुये। इसी समय समा में अछूतों की संख्या में भी बहुत अधिक वृद्धि देखने में मिली। इनमें अधिकांशत: पिछड़ी जनजातियों के लोग शामिल थे, शूद्रो की जातियां अनेक प्रकार के कार्यो को सम्पन्न करती थी। वे कृषि-मजदूर, छोटे किसार, कारीगत, शिल्पकार, नौकर-चाकर थे। इस समय एक नव शिक्षित वर्ग का उदय हुआ। भूमि अनुदानों की अभूतपूर्व वृद्धि में भूमि के लेन-देन, स्वामित्व के प्रमाणों का रख-रखाव और भूमि की नाप के आंकड़ों को रखना जैसे कार्य भी निहित थे, इसका तात्पर्य यह हुआ कि एक ऐसे वर्ग की आवश्यकता थी, जो अपने कार्य में निपुण एवं पढ़ा-लिखा हो। इस तरह ग्यारहवी शती के समाज में चार वर्णो के अतिरिक्त एक नये वर्ग की उत्पत्ति हुई, जिसे कायस्थ कहते थे। लगभग एक दर्जन किस्म के लेखक एवं कागजात को रखनें वाले वर्गो में कायस्थ भी एक वर्ग था। गुप्त अभिलेखों में पहली बार कायस्थ शब्द को उद्धृत किया गया है, लेकिन उत्तर-गुप्त कालीन अभिलेखों में रिकार्ड रखने वालों के नामों का भरपूर मात्रा में उल्लेख हुआ है। इनमें, कायस्थों के अलावा करण, करणिक, पुस्तपाल, लेखक, दिविरा, अक्षरचांचू, धर्मलेखिन, अक्षय पटालिका आदि नामों का भरपूर उपयोग हुआ है। यद्यपि इन शिक्षित लोगों को विभिन्न वर्णो से भर्ती किया गया था, लेकिन बाद में ये एक जाति विशेष में परिवर्तित हो गये और इन पर भी कड़े प्रतिबंध लागू होने लगे।

उपसंहार - यद्यपि इस समय बहुत से परिवर्तन और रूपांतरण हुये, और इस तरह के परिवर्तन वर्ण विभेद की सीमाओं को लांघकर हो रहे थे, किंतु आठवी सदी के बाद के यह सामाजिक परिवर्तन न तो सौहार्दपूर्ण थे और न ही एक समान व्यवस्था की स्थापना के लिये थे। इस समय में कई तरह के सामाजिक तनावों की भी अभिव्यक्ति हुई। ब्राहम्णों ने अपने हितो के अनुरूप जो सामाजिक वर्गीकरण किया उसकी अपेक्षा में इस तरह के प्रयासों का लक्ष्य किसी समान समाज की स्थापना करना नहीं था। 8वी सदी के बाद और 13 सदी में तुर्की राज सत्ता के स्थापित होने तक जो सामाजिक संगठन विद्यमान थे, उनमें वर्ण -व्यवस्था में कुछ संशोधन हो जाने से शूद्रो का रूपान्तरण खेती करने वाली जातियों मे हुआ, जिसे कि वैश्यों के समीप आ गये, नयी वर्ण-संकर जातियों में विलक्षण वृद्धि हुई और असमान भूमि तथा सैनिक शक्ति के वितरण के कारण ऐसी सामंतीय व्यवस्था का उद्‌व हुआ जिसने वर्ण-व्यवस्था की सभी सीमाओं को लांघ दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, बैजनाथ, हर्ष एण्ड हिज़ टाईम्स, पृष्ठ 328.
2. बाण, हर्षचरित्, जिल्द 2, पृष्ठ 36 - मानाविवर्त्तरि वर्णाश्रम व्यवस्थानां.
3. काणे, पी. वी., हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, जिल्द 2, भाग 1, पृष्ठ 175-76
4. काणे पी. वी., हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र भाग 2, पृष्ठ 131-32
5. शर्मा, डी., अर्ली चौहान डायनेस्टी, पृष्ठ 238.
6. वैद्य, सी. वी., मेडीवल हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, जिल्द 2, पृष्ठ 185.
7. मजूमदार, बी. डी., दि सोशियों एकानॉमिक कण्डीशन ऑफ नार्दर्न इण्डिया, पृष्ठ 82.
8. राजपूताना का इतिहास, भाग 1, पृष्ठ 353-354.
9. कम्प्रेहेन्सिव हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, भाग 2, पृष्ठ 461.
10. भाटिया, पी. दि परमारज़, पृष्ठ 279.
11. धुर्वे, कास्ट एण्ड क्लास इन इण्डिया, पृष्ठ 50 तथा पृष्ठ 100

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Diversity Of Molluscan Fauna From Ransai Dam, Uran, Navi Mumbai, Dist. Raigad, Maharashtra

Aamod N. Thakkar*

Abstract - The present study was undertaken to identify the types of Molluscan fauna occurring in the Ransai dam, Tal. Uran, Navi Mumbai, Dist. Raigad, Maharashtra. The study was carried out for one year from March 2017 to February 2018.The Molluscan biodiversity of Ransai dam water was represented by total of 22 species, representing 6 orders, 12 families and 17 genera. Seasonal variability in molluscan diversity is discussed
Keywords - Mollusc, Diversity, Ransai dam, Seasonal.

Introduction - In case of invertebrates the second largest group on earth is Molluscs (Bouchet P. 2006). The molluscs are soft bodied animals with long evolutionary history and diversity (Bogan AE. 2008, Chiba S. 2007). The role of mollusks proved to be beneficial both cost-effectively as well as medicinally in the recent past (Wosu, 2003). Molluscan community structure and their diversity indicate the overall ecosystem health (Romano et al., 2005). Freshwater molluscs forms relationship between other organisms and environment (Ustaoðlu et al., .2001) They play an important role in aquatic ecosystems, providing food for many fish species and vertebrates (Cummins KS and Bogan AE 2006). The shells of several mollusc are in demand for ornamental trade, pharmacological products and in the manufacture of lime and cement (Narasimham et al, 1993; Jaiswar and Kulkarni, 2005) hence are known to face exploitation. The freshwater ecosystem in India harbours a rich diversity of molluscs representing 212 species belonging to 21 families of these 164 species were recorded from rivers and streams.(Anikit Kumar and Vipin Vyas 2012).

Till now extensive scientific research on ecological aspects of molluscan fauna has been carried out in India however data on species diversity of Mollusks of fresh water from raigad is scarce and of Ransai dam is not available. Hence the present study is undertaken to identify the types of Mollusks occurring in the Ransai dam, Uran, Navi Mumbai, dist. Raigad, Maharashtra.

Study area - Ransai Dam is a destination in Uran $18^{0}53'55''$N $73^{0}4'28''$E. It is located near Dighode Village. The dam was constructed in 1970. It is having 10MCM storing capacity. The dam supplies around 35MLD water to Uran Township, ONGC, defense installation, Nhava Sheva and nearly 22 villages in the Uran taluka. Till date no work has been done on diversity of Ransai dam. Hence present study has been undertaken.

Materials and methods - The Molluscan species were collected from dam The mollusc's shells were collected by hand picking, scraping method and through laboratory. The shells were washed with water to remove adhering debris without damaging and then dried. The Empty shells were also collected for identification. Collected shells having animals were brushed to clean the fouling biomass and mud. The shells were preserved in 5% formalin in glass bottles. Identification of fauna was by use of standard literature. (Waghmare et. al 2012; Apte 1988, Tonapi 1980).

Result and discussion - List of Molluscan fauna recorded at Ransai dam, Tal. Uran, Navi Mumbai, Dist. Raigad, Maharashtra, were from 6 orders, 12 families and 17 genera and 22 species as follows:

Class	Order	Family	Species
Gastropoda	Hygrophila	Lymnaeidae	*Lymnaea acuminata*
		Planorbidae	*Indoplanorbis exustus*
	Mesogas -tropoda	Thiaridae	*Tarebia lineata*
			Melanoides tuberculata
			Thiara scabra
		Viviparidae	*Bellamya dissimilis (Mueller)*
			Bellamya bengalensis
		Pilidae	*Pila viren*
			Pila globus
		Melonidae	*Melanoides tuberculata*
	Basom -mato -phora	Lymnaeidae	*Lymanea luteola*
		Planorbidae	*Gyraulus labiatus*

*Veer Wajekar Arts, Science and Commerce College, Mahalan Vibhag, Phunde, Uran Dist. Raigad (Mh.) INDIA

	Littorini -morpha	Littorinidae	*Cremnocon chus conicus*
	Stylomm -atophora	Arioplantidae	*Ariophanta bajadera*
			Cryptozona semirugata
Pelecypoda (Bivalvia)	Eulamell -brachiata	Unionidae	*Lamellidens corrianus*
			Lamellidens marginalis
			Indonaia caeruleus
			Parreysia corrugata
			Parreysia rajahensis
		Corbuculidae	*Corbicula peninsularis*
			Corbicula striatella

Discussion - The survey of one year from March 2017 to February 2018 showed a total of 22 species of molluscs representing 6 orders 12 families and 17 general. The Molluscan populations are good indicators of localized condition, indicating water quality. They also play important roles in the ecosystem structure and biodiversity. Molluscs are bio indicators of freshwater pollution (Harman W.N. 1974). The study showed seasonal variation in Molluscan fauna. The lowest density was observed in monsoon (June to September) may be due to unstable environmental conditions for molluscs with lower temperature and salinity. Similar results were reported by Patole,V.M. 2010. Maximum species diversity of gastropods was recorded during post-monsoon (October to January) and pre-monsoon (February to May). This could be correlated to the stable environment factors such as dissolved oxygen and salinity and decomposition of organic sediments (Raju et al, 2015). It is also reported that the post monsoon period is most favorable time for the Molluscan species (Poulami Paul et. al 2014). Among the three seasons the molluscan species shows lower diversity in mansoon season as compared to summer and rainy season (Dutta and Malhotra, 1986).

Conclusion - During present study observed a good diversity of molluscwas observed at Ransai dam. The present study provides the base line data for the fresh water molluscan diversity in Uran. Further long term research is needed to explore the diversity of molluscan, population estimation, its habitat, seasonal variations and threats being experienced by these animals.

References :-

1. Aniket Kumar and Vipin Vyas 2012 Diversity of Molluscan communities in River Narmada,India. *Journal of chemical, Biological and physical science 2(3):1407-1412.*
2. Apte, D. A., (1988). The book of Indian shells, Bombay Natural History Society, Oxford University Press, India pp 115.
3. Bogan AE. 2008, Global diversity of freshwater mussels (Mollusca, Bivalvia) in freshwater, Hydrobiologia; 595(1):139-147.
4. Bouchet P. 2006, The magnitude of marine biodiversity, In: Duarte CM, editor. The Exploration of Marine Biodiversity: Scientific and Technological Challenges. Madrid, Spain: Fundacion BBVA:32- 64.
5. Chiba S. 2007, Species richness patterns along environmental gradients in island land molluscan fauna. Ecology.;88(7):1738-1746.
6. Cummins KS and Bogan AE: Unionoida freshwater mussels. In (STURM, CF., PEARCE, TA. and VALDÉS, A. (Eds.). *The mollusks*: a guide to their study, collection, and preservation. Pittsburgh: American Malacological Society2006; P: 313-326.
7. Dutta SP and Malhotra YR: 1986, Seasonal variation in macro benthic fauna of Gandigarh stream (Miran Sahib), Jamm. Indian J. Eco.; 13: 138 -145 .
8. Harman WN: Snails (Mollusca: Gastropoda). In: Pollution Ecology of Fresh water Invertebrates, Hart CW Jr and Fuller SLH (Academic Press, New York). 1974.
9. Romano JA, McClellan-Green P, Rittschof D. 2005,Copper pyrithione and diuron toxicity in the non-target species, Lytechinus variegatus. Society for Integrative and Comparative Biology, San Diego, California.
10. Patole,V.M. 2010.Ecology and biodiversity Mangroves in Mochemad Estuary of Vengurla, South Konkan, Maharashtra.Ph.D. Thesis,University of Mumbai.
11. Poulami Paul., Panigrahi A K., Tripathy 2014 A Study of marine molluscs with respect to their diversity, relative abundance and species richness in north east coast of India. *Indian journal of applied research 4(12).*
12. Tonapi G T (1980) Fresh water animal of Indian Ecological approach Oxford and IBH Publishing Co., New Delhi, India p.341.
13. Ustaoðlu MR, Balýk S and Özbek M: Iþýklý Gölü (Çivril-Denizli)'nün Mollusca Faunasý, E.U. Journal of Fisheries and Aquatic Sciences, 2001; 18(1-2): 135-139.
14. Waghmare P. K,. Rao k.R., Shaikh T. A (2012) A correlation between freshwater Molluscan diversity with Bheema river pollution near Pandharpur, Maharashtra, India.*Trends in life science 1(3).*
15. Wosu L. O., 2003 " Commercial snail farming in West -Africa A guide, ApExpess Publishers, NSukka-Nigeria.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Effectiveness of Interactive Digital Classes of Science Teaching for the Students of Upper Primary School

Prof. Praveen Doshi* Ms. Jyotsna Jain**

Introduction - The invasion of Technology in our lives since the 1990s has been remarkable changed not only in India but in the whole world. When students use the technological devices for educational purposes, they are in far more active. In seeking knowledge as opposed to learning from a book or teacher. The imminent power in interactive digital classes in about to bring extravagant change in the normal mode of education to the advanced form. Interactive Digital classes includes latest media presentation with the help of modern techniques having small learning surroundings and smart learning tools.

Interactive Digital Classes the teacher works a facelator in learning by using chart, diagrams are replaced by a picture or gif of beating hearts and animated videos. To improve overall academic performance and to make the learning experience of student enjoyable the Kothari commission (1964-66) also recommended in rising standard in overall methods and in technique of education. Interactive Digital Classes is proving very useful in Teaching learning process of science. It makes the science subject very interesting for the students as well as for teachers.

Objectives of the study

1. To teach "traditional group" of Primary level students in science via traditional method.
2. To teach "Experimental Group" of upper primary level students in science via interactive digital classes approach.
3. To study the teaching effectiveness in Science via digital interactive classes as compared to traditional method to the students of upper primary school.

Methodology of Research

a) The present study was experimental in nature. The research design was "Two groups" pre-test/post test Design.

b) **Source of Data :** The student of VIII class has taken for the teaching of science.

c) **Sample of study :** The present study, the sample comprised 50 + 50 VIII class students studying in Abhinav Sr. Sec. School, Udaipur

1. Traditional groups - 50 Students.
2. Experimental group - 50 Students.

d) Tools for the study

Following self made tool was used as a tool to collect data from the students.

1. 30 lesson plan of same content was prepared for traditional and experimental group.
2. Achievement test as pre-test and post has been developed by the researcher.

Research Procedure

1. The selection of one school from all the English medium secondary schools of Abhinav Sr. Sec. School, Udaipur.
2. Two section of class VIII will be selected as sample from selected English medium secondary school.
3. The administrator of the school will be informed about the purpose of the study and will seek permission from the authority to conduct the research.
4. The content of NCERT Science textbook will be selected.
5. After that the administrators of the schools will be informed about the purpose of the study and will seek permission from the authority to conduct the research.
6. For the development of academic achievement in science teaching at secondary level with respect to, 30 lesson plans will be designed.
7. The researcher will prepare a pre achievement test for VIII class students and then test will be administered as pre-test and same will be used as post test.
8. The data will be collected pre-test, treatment and post-test.
9. After that the collected data will be organized, classified and statistically analyzed to draw the conclusion based upon the hypothesis of the study and the report will be prepared.
10. Then the collected data will be organized, classified and statistically analyzed to draw the conclusion based upon research problems.
11. After drawing a definite and well-formulated conclusion, recommendations will be made to solve or relieve the problem.

Data Collection - The section pertains to the study of the effect of "Digital Interactive Class" approach in terms of

***Former Principal and Dean, L.M.T.T. College, Dabok, Udaipur (Raj.) INDIA**
**** Research Scholar, L.M.T.T. College, Dabok, Udaipur (Raj.) INDIA**

achievement of learners. For this purpose, an achievement test in science was administered two points before starting the teaching the students of control group (traditional group) and experimental group (Digital interactive class approach.

Table 1.1 (see in next page)

1. The mean are S.D. of Pre test (achievement in science) show that the students taught by the traditional method and experimental method is 22.30, 22.57; and 3.66, 3.46. initially (before treatment given) the mean & S.D. of the pre-test scores of traditional and experiment group is likely to be the same. Hence, the group before given treatment in equivalent.
2. Category wise scores and percentage of pre-test scores of both traditional and experimental group is likely to be same. Hence before starting the treatment, research have tried to make both the group equivalent on the basis of mean & S.D.

Hypothesis 1 : There is no significance difference between the pre test score traditional and experimental group science student

Table 1.2 (see in next page)

Table 1.2 clearly shows that the computed t-value (.391) is less than the table value at .05 level of significance. Since the computed t-value is lesser than the table value, mean difference of two group is not significance. Hence, initially both the groups are equivalent.

Table 1.3 (see in next page)

1. The means and S.D. show that the students taught the digital interactive class-room method performed much better in science than that of the students who were largest through the traditional method.
2. It is observed that there is no student of the traditional method group in very high category of scores whereas 20% of the experimental group students of all under this category.
3. Moreover, the achievement level of 2% of the traditional method group student and 56% of the experimental group students is found to be under this category of scores which clearly shows that the digital interactive class room method is comparatively more effective further 82% of the traditional students and 24% of digital interactive class room method students are under the average achievement category of scores.
4. Four (4%) of the low category students and 14% of the lower category traditional group students are in these category of scores whereas in the experimental group no students is found to be in these categories of scores on the basis of post test scores.

Objectives 3: To study the teaching effectiveness in science via digital interactive classes approach and traditional method to upper primary level students.

Table 1.4 (see in next page)

Table 1.4 clearly shows that the computed t-value (12.63) is grater than the table value (2.68) at the .01 level of significance. Since the computed 't' value is greater than the table value, the null hypothesis is rejected.

It is clear that the mean difference is statistically significant.

Therefore it is concluded that the better performance of the experimental group may be due to the experimental treatment provided through the digital interactive class room approach.

Summary - In this article researcher represent the effect of "Digital interactive class approach on achievement of students of science and also present category wise scores and percentage of pre-test scores of the students of traditional method group and digital interactive (Experimental group) approach. Researcher also calculate t-value between pre-test scores of traditional & experimental group science students which was not significant. Research try to explain via t-value which is significant at .01 level between the scores of pre-test & post test of Experimental group after the treatment.

References :-

1. A Hand Book on Educational Research, NCTE, New Delhi. 1999.
2. Agrawal, J. C. (2002). Educational Research. New Delhi : Arya Book Depot.
3. BECTA. (2008). Harnessing technology schools survey 2007 : Analysis and key findings. Retrieved from http://partners.becta.
4. Best, J.W. & Khan (1992). Research in Education (6th Edition) New Delhi : Prentice Hall of India Pvt. Ltd.
5. Bano, N. and Ganaie, M. Y. (2016). Effect of Smart Classroom Learning Environment on the Performance of First Grade Students in Science. International Journal of Scientific Research and Education, Vol. 4 (2), p. 4938-4941, Feb. 2016.
6. Chauhan, C.P.S. (2010). Modern Indian Education : Policies, Progress, and Problems. New Deli : Kanishka Publishers.
7. Chauhan. S.S. (1985), Innovation in Teaching-Learning Process, Delhi, Vikas Publishing House.
8. Crow and Crow (1986). Educational Psychology, P. O. Pathak, Agra, Vinod Pustak Mandir, 1986, 239.
9. Das, R.C. (1985), Science Teaching in a school, Sterling Publishers Pvt. Ltd. New Delhi.
10. Das, I. (2003). The Attitude of Students and Teachers Towards Computers Education and Infrastructure Facilities in School of Assam. Indian Educational Abstract, Vol. 3 (2), 28.

Table 1.1 : Category-wise scores and percentage of pre-test scores (achievement test in science of the students of traditional method group and experiment Digital Interactive Class room group)

S.	C. I. of Pre-test Scores	Pre-test Scores (Achievement Test in Science)			
		Traditional Method group Student		Experimental Group (Digital Interactive Group)	
		Number N = 50	%	Number N = 50	%
A	41-50	X	X	X	X
B	31-40	1	2%	X	X
C	21-30	39	78%	37	74%
D	11-20	8	16%	13	26%
E	1-10	2	4%	X	X
			100%		**100%**

Table 1.2 : Mean, S.D. means difference and t-value of the pre-test scores of the traditional group and experimental method group

Groups	N	Mean	S.D.	Mean Diff.	t-value	.05 / .01 level of sign.
Traditional Method Group	50	22.30	3.66	.27	.391	NS
Experimental group (Digital interactive classroom group)	50	22.57	3.4			

df = 49
Table value at .05 level = 2.02
.04 level = 2.68

Table 1.3 : Category-wise scores and percentage of post-test (achievement test) scores of students of control group and experimental group after the treatment

S.	C. I. of Pre-test Scores	Categories	Post Test of Student (N - 50) of Traditional Group		Scores Students of Experimental Group (N=50)	
			Number N = 50	%	Number N = 50	%
A	41-50	V. High	X	X	10	20%
B	31-40	High	1	2%	28	56%
C	21-30	Average	41	82%	12	24%
D	11-20	Low	7	14%	X	X
E	1-10	V. Low	1	2%	X	X
				100%		**100%**
		Mean		**23.56**		**35.18**
		S.D.		**3.93**		**5.17**

Table 1.4 : Mean, S.D. means difference, t-value of the pre-test and post test scores of the traditional experimental group

Groups	Test	N	Mean	S.D.	Mean Diff.	t value	.05% level of significant
Traditional method group	Pre-test scores	50	23.56	3.93	11.62	12.63	.01 (Significance)
Digital Interactive method group (Experimental Group)	Post test scores	50	35.18	5.18			

df = 49
Table value at .05 level of significance 2.62

****

Emotional Intelligence among Secondary School Teachers

Dr. Anil Kumar* Pooja**

Abstract - Emotional Intelligence allows us to think more creatively and to use our emotions to solve problems. Emotional Intelligence probably overlaps to some extent with general intelligence. The emotionally intelligent person is skilled in four areas: Identifying emotions, using emotions, understanding emotions, and regulating emotions. The present study probed to find out the level of emotional intelligence among secondary school teachers. Survey method was employed. The sample consists of 400 secondary school teachers of Gurdaspur District, Punjab. This study shows that teachers teaching in both Govt. and Private schools are equally emotionally intelligent in all the areas like intra-awareness, self- regulation, motivation, empathy, and social skills of emotional intelligent.
Key Words- Emotional Intelligence, Secondary School Teachers, Gurdaspur, Govt. Schools, Private Schools.

Introduction - The term 'Emotional Intelligence 'refers to the ability of a person's personality to cope with effectively and appropriately according to the situation.

US psychologists John Mayer and Peter Salovey published the first formaldefinition of emotional intelligence in 1990. Their publication also claimed that it might be possible to assess and measure a person's emotional intelligence. Mayer and Salovey believed that emotional intelligence is a subset of social intelligence and is about a person's ability to:

(a) Perceive emotion in oneself and others.
(b) Integrate emotion into thought.
(c) Understand emotion in oneself and others.
(d) Manage or regulate emotion in oneself and others.

They have also described emotional intelligence as being 'knowledge of self and others' and, more specifically, 'the ability to monitor one's own and others' feelings and emotions, to discriminate among them and to use this information to guide one's thinking'.

Salovey and Mayer proposed a model that identified four different factors of emotional intelligence: the perception of emotion, the ability reason using emotions, the ability to understand emotion and the ability to manage emotions.According to Salovey and Mayer, the four branches of their model are, "arranged from more basic psychological processes to higher, more psychologically integrated processes. For example, the lowest level branch concerns the (relatively) simple abilities of perceiving and expressing emotion. In contrast, the highest level branch concerns about the conscious, reflectiveregulation of emotion" (1997).

Emotional intelligence was popularized as a result of Daniel Goleman's work. Goleman also claimed that 20% of success in life is down to IQ and 80% to EQ, although critics argue that he had little or no scientific evidence to back this up. Whilst Mayer and Salovey claim that there is research to show that IQ contributes to 25% of the success achieved by individuals, they cannot make similar quantifiable estimates about the impact of emotional intelligence on achievement.

Teachers play a crucial role in the development of emotional intelligence of children. It is said that Emotions are caught and taught. A teacher in modern content has to play a role of friend, philosopher and guide to its learners. In order to play these roles effectively it is essential for a teacher to have a balanced emotional intelligence. This paper is written to gain insight about the emotional intelligence among secondary school teachers.

Related Literature

Clarke (2006) : In the healthcare field, investigated how EI might be developed in the workplace, observing that several authors had voiced a desire to see such research performed. In part, such research was seen as desirable because prior research found an emotional component present in caring, an ability necessary for successful work performance in the healthcare field. Thus, the ability to deliberately and consciously develop not only the emotional component of caring, but also the ability to consciously control that emotional component would be seen as potentially providing positive workplace performance.

Ishak, Mohd. Noriah ; Iskandar I. Piet (2010) : "Emotional Intelligence of Malaysian teachers : A comparative study on teachers in daily and residential schools." This study tries to assess emotional intelligence of Malaysian teacher.

*Associate Professor (Education) Mahamaya Technical University, Noida (U.P.) INDIA
** Research Scholar (Education) Mahamaya Technical University, Noida (U.P.) INDIA

The study show that bothgroups have similar emotional intelligence profile. The study shows that residential school teachers have higher emotional intelligence when compared to daily school teachers.

Arvind Hans et al. (2013) conducted a study on emotional Intelligence among teachers: A case study of private educational institutions in Muscat. The Study foundthat the teachers of private educational institutions have high level of Emotional Intelligence.

Ashraf et.al (2014) : Conducted a study to know the association between Emotional Intelligence and Job satisfaction. The study also attempts to analyze how age, marital status, education experience of employee in a working environment influences his job satisfaction and emotional intelligence. Results concluded that there were ample evidences of significant relationship between job satisfaction and emotional intelligence with working experience and marital status influencing it considerably.

U W M R Sampath Kappagoda (2014), research the teachers who have high emotional intelligence show less work-to-family conflict and family-towork conflict. It is concluded that the possession of high emotional intelligence is more important when balancing work-family responsibilities.

A. Uma Devi1 and P. Chitti Babu (2015) conducted "A study on emotional intelligence among faculty members of selected engineering colleges in Kadapa region". The study found that, the possession of high Emotional Intelligence is more important when managing stress & emotions at workplace.

Objectives :

1. To find out the Emotional intelligence of selected secondary school teachers.
2. To find out the Emotional intelligence of selected secondary school teachers teaching in Government and Private Schools.
3. To compare the Emotional intelligenceof selected secondary school teachers teaching in Government and Private Schools.

Statement of the Problem

A Comparative Study of Emotional Intelligence Among Secondary School Teachers.

Methodology of Research

Method: Looking at the nature of study & variables survey method was adopted in the study.

Sample: Total 400 teachers were selected through random sampling of which 200 teachers were from Govt. schools and 200 teachers from Private schools of District Gurdaspur.

Tool: Self-made tool on emotional intelligence was used to collect the data for the study.

Data Collection - Data was collected from 24 secondary schools including 11 Government and 13 Private schools through random sampling of District Gurdaspur. Total 400 teachers were selected from these schools of which 200 teachers were from Govt. schools and 200 teachers from Private schools.

Statistical Analysis: For the analysis of the data, suitable statistical techniques like mean, S. D. andt–value were used.

Analysis Of Emotional Intelligence Of Teachers Teaching In Govt. And Private Schools & Their Comparison

Objective No.1:To find out the Emotional Intelligence of Total Secondary School Teachers.

Table no. 1

S.	Areas of Emotional Intelligence	Total no.of Statements	Cut Point Mean	Actual Mean
1	Intra-awareness	10	20	22.48
2	Self-regulation	9	18	20.05
3	Motivation	10	20	23.15
4	Empathy	11	22	26.26
5	Social skills	10	20	25.22
	Total Emotional intelligence	**50**	**100**	**117.16**

Interpretation: This Table shows that observed mean (actual) of total secondary school teachers in the 'Total Emotional Intelligence' area is 117.16 which is more than the cut-point mean 100. So, it reveals that the total secondary school teachers have good emotional intelligence. Thus, it can be concluded that all secondary school teachers are emotionally intelligent.

Objective no. 2 : To find out the Emotional Intelligence of Secondary School Teachers Teaching in Government and Private Schools

Table no. 2

S.	Areas of Emotional Intelligence	Total no.of Statements	Cut Point Mean	Govt. School	Private School
1	Intra-awareness	10	20	21.73	23.22
2	Self-regulation	9	18	19.92	20.2
3	Motivation	10	20	22.97	23.35
4	Empathy	11	22	26.33	26.13
5	Social skills	10	20	25.06	25.37
	Total Emotional Intelligence	**50**	**100**	**116.01**	**118.27**

Interpretation: The observed mean of secondary school teachers teaching in the Government and Private schools in the 'total emotional intelligence'area is 116.01 and 118.27. The cut-point mean (statement 50x2=100) is100. The actual mean of Government and Private school students are more than the cut point mean. So it is evident that the secondary school teachers of Government and Private school have 'emotional intelligence' in total areas.

Objective no. 3: To Compare the Emotional Intelligence of Secondary School Teachers Teaching in Government and Private Schools

Table no. 3 (see below)

Interpretation: The mean and standard deviation obtained of Government and Private school on 'total emotional intelligence 'area is 116.01, 7.83 and 118.27, 7.54. The t-value calculated for significant difference between mean scores is 0.1662 which is lesser than the table value (df=198) at 0.05 level of significance. So it is evident from this value that there is no significant difference regarding 'total emotional intelligence 'between Government and Private secondary school teachers. So, it reveals that the secondary school teachers of both the school are equally emotionally intelligent.

Main Findings - The main findings of the study are as follows:

1. It is found that sec. school teachers are emotionally intelligent in all the areas of emotional intelligence.
2. It was found that teachers teaching in both Govt. and Private schools are highly emotionally intelligent in all areas.
3. There is no significant difference regarding total emotional intelligence between Govt. and Private secondary school teachers. Both school teachers are equally emotionally intelligent.

Suggestions for further study :

1. The present study is limited to the secondary teachers of Gurdaspur District of Punjab. Due to this particular limitation, the result may be other than needed, the further research may include a large area and large sample.
2. A study like this can also be done with the male or female teachers in the rural and urban separately.

Conclusion - This study shows that secondary school teachers in both Govt. and Private schools are equally emotionally intelligent in all the areas of emotional intelligent like intra-awareness, self -regulation, motivation, empathy, and social skills.

References:-

1. Ahmad, J. & Khan, M. A. (2016). „A study of emotional intelligence of secondary school teachers in relation to their gender, locality and experience . Global Journal of Multidisciplinary Studies, Vol.5(2), pp. 175-181.
2. Bar-on, R. (1986). Emotional and social Intelligence, Handbook of Emotional Intelligence. San Francisco, Jossy Bos.
3. Clarke, N. (2006) "Developing emotional intelligence through workplace learning: Findings from a case study in healthcare", Human Resource Development International, vol. 9(4), pp. 447–465.
4. Dash, Devendra Nath : Naryan, Behera Prashad. (2004).„Teachers Effectiveness in Relation to Their Emotional Intelligence . Journal of Indian education, Vol. 30 (3), pp. 51-61.
5. Goleman, Daniel. (1985).Emotional Intelligence. New York: Bantam Books, 1985.
6. Hans, A., Mubeen, A. & Rabani, S. (2013). „A Study on Emotional Intelligence Among Teachers . Int. J. Appl. Innovation, Eng. Management, Vol. 2(7), pp. 359-366.
7. Indu, H. (2009). „Emotional Intelligence of Secondary Teacher Trainees . Edu.-tracks, Vol. 8(9).
8. Ishak, Mohd. Noriah. & Iskandar I. Piet. (2010). „Emotional Intelligence of Malaysian Teachers: A comparative study on teachers in daily and residential schools. Procedia – Social and Behavioural Science, Vol. 9, pp. 604-612.

Table no. 3

S.	Areas of Emotional Intelligence	Types of schools	Mean	S.D.	t. value	Significant on 0.01/0.05level
1.	Intra- awareness	Govt.(N=100) Private(N=100)	21.73 23.22	4.60591 3.49863	1.4285	Insignificant
2.	Self-regulation	Govt.(N=100) Private(N=100)	19.92 20.20	1.91338 2.26843	0.5220	Insignificant
3.	Motivation	Govt.(N=100) Private(N=100)	22.97 23.35	1.69712 1.85787	0.6008	Insignificant
4.	Empathy	Govt.(N=100) Private(N=100)	26.33 26.13	1.88362 1.76084	0.6008	Insignificant
5.	Social skills	Govt.(N=100) Private(N=100)	25.06 25.37	2.5833 2.48362	0.6485	Insignificant
	Total Emotional Intelligence	**Govt.** **Private**	116.01 118.27	7.83 7.54	0.1662	Insignificant

df= 198
Table value at 0.05 level= 1.97
Table value at 0.01 level= 2.60

****

निर्मितवाद पर आधारित प्रशिक्षण का छात्राध्यापकों की शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रभाव

प्रो. पी.सी. दोसी* देवी लाल जाट**

शोध सारांश – इस शोध आलेख में निर्मितवाद पर आधारित प्रशिक्षण का छात्राध्यापकों की शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रभावका अध्ययन किया गया, जिसका मुख्य उद्देश्य निर्मितवाद पर आधारित प्रशिक्षण का छात्राध्यापकों की शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रभाव ज्ञात करना था। इसके लिए शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध अध्ययन में राजस्थान के उदयपुर संभाग के प्रतापगढ़ जिले में स्थित धरियावद के सिद्धेश्वर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय के 60 छात्राध्यापकों को न्यादर्श के रूप में चुना गया, दत्तों के संकलन के लिए स्वनिर्मित उपकरण का प्रयोग किया गया है जिसके अन्तर्गत शिक्षण प्रभावशीलता प्रमापनी का निर्माण किया गया है। अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग कर दत्तों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन, एवं टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया। शोध में ज्ञात हुआ कि निर्मितवाद पर आधारित प्रशिक्षण का छात्राध्यापकों की शिक्षण प्रभावशीलता पर सार्थक प्रभाव होता है।

शब्द कुंजी – निर्मितवाद,प्रशिक्षण एवं शिक्षण प्रभावशीलता।

प्रस्तावना – जे.के. सूद के अनुसार – *'निर्मितवाद पूर्व अधिगम एवं नए अधिगम की अन्त:क्रिया को माध्यम से प्रत्येक छात्र के द्वारा ज्ञान की संरचना के महत्व को बल देता है।'*

निर्मित्तवाद सिद्धान्त यही बताता है कि शिक्षक छात्रों की व्यक्तिगत ढ़ाँचे को स्वयं तैयार करें, जिससे छात्र अपने संज्ञानात्मक ज्ञान को बढ़ा सके। शिक्षक को चाहिए कि इसके निर्माण के लिए स्वयं छात्रों से व्यक्तिगत रूप से जुड़े तथा शिक्षक विद्यार्थियों को सीखने के लिए बहुत अधिक क्षेत्रों से जुड़ने के लिए प्रोत्साहित करें। क्षेत्रों से जुड़ने के लिए अन्त:क्रिया, प्रभावशीलता, दक्षता, अन्वेषण करना तथा विश्लेषण करने की जरूरत शिक्षक 'निर्मित्तवादी शिक्षक' बन जाएगा, जिसका लक्ष्य छात्र में संज्ञानात्मक स्तर को बढ़ाना है, क्योंकि बालक समाज एवं बुद्धिजीवियों के बीच में सामंजस्य का बहुत अच्छा माध्यम हैं छात्रों के अधिगम के लिए शिक्षक बहुत ही अच्छा माध्यम है क्योंकि वह विद्यार्थियों सीखने के लिए उचित वातावरण प्रस्तुत करता है।

वस्तुत: सम्यक् शिक्षा वहीं है जो विद्यार्थी को जीवन की कठोर यथार्थपरक और जटिल समस्याओं का सामना करना सिखाएँ ताकि वे जीवन के स्पदंन को महसूस कर सकें और सभी तरह के सवालों को समझने के योग्य बन सकें, केवल परम्परागत ढ़ंग से विचार करते न रह जाए बल्कि कुछ नया करें। इसके लिए अध्यापक शिक्षा का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिससे शिक्षक मननशील बन सकें और अपन विद्यार्थियों को भी इस ओर अग्रसर कर सकें।

शिक्षक प्रत्येक छात्र में विचारों की अभिव्यक्ति, तर्कशक्ति एवं निर्णय लेने की शक्ति का विकास करने के लिए वाद-विवाद करता है तथा विद्यार्थियों की समस्याओं का समाधान करता है, अर्थात् जो कुछ भी शिक्षक सीखना चाहता है, वह सब विद्यार्थियों द्वारा ग्रहण करने की चेष्टा की जाती है। शिक्षकों में इन्हीं गुणों के कारण उनका व्यक्तित्व प्रभावी तथा अध्यापक में दक्षता का गुण मुख्य रूप से आता है। शिक्षक की शिक्षण दक्षता का प्रभाव स्वयं शिक्षक एवं विद्यार्थियों के व्यक्तित्व पर निश्चित रूप से पड़ता है।

राजस्थान राज्य के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने एन.सी.ई.आर.टी. आधारित उन पाठ्यपुस्तकों को विद्यालयों में प्रचलित कर, शिक्षण प्रारम्भ करवा दिया है जो कि (नवीन पाठ्यपुस्तकें) एन.सी.एफ.-2005 की निर्मित्तवादी अधिगम की मूल भावना पर आधारित है। परन्तु अध्यापक प्रशिक्षण का परिप्रेक्ष्य व्यवहारवादी है न कि निर्मित्तवादी। उक्त दोनों प्रकार के अध्यापक शिक्षा के प्रशिक्षणों में ज्ञान का हस्तान्तरण हो रहा है, न कि ज्ञान के निर्मित्तवादी प्रक्रिया को सीखाया जा रहा है। शिक्षा सामाजिक सन्दर्भो से संलग्न रहती है अत: सामाजिक निर्मित्तवाद में वाइगोटस्की ने बताया कि अधिगमकर्त्ता व सह अधिगमकर्त्ता दोनों ही कक्षा-कक्ष के सामाजिक व सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्यों में ज्ञान का निर्माण करते हैं, जिसमें दोनों चरों का प्रत्यक्षीकरण एवं भाषायी माध्यम स्थानीय अनुभवों से जुड़कर अपनी भूमिका को सार्थक बनाता है। अत: अध्यापक शिक्षा की विषयवस्तु, पाठ्यक्रम प्रशिक्षण की प्रक्रिया को जिज्ञासा उत्पन्न करने युक्त, अधिगम संसाधनों उपलब्धीकरण, ज्ञान-निर्मित्ता की पद्धत्तियों के विकास, विषयवस्तु व ज्ञान के सरलीकरण आदि प्रसंगों से सम्पन्न बनाते हुए हमें अध्यापक शिक्षा को निर्मित्तवादी अधिगम प्रक्रिया केन्द्रित बनाना है।

निर्मित्तवाद शिक्षण, छात्राध्यापक को उच्च स्तर के अधिगम से और विश्लेषण की योग्यताओं के प्रभाव से जोड़ता है। निर्मित्तवाद प्रयोगात्मक गतिविधियों के द्वारा विद्यार्थियों में बौद्धिक क्षमताओं का विकास करता तथा संज्ञानात्मक संरचना को बढ़ाता है। सामाजिक निर्मित्तवाद के ज्ञान का प्रभाव पड़ता है। जब व्यक्ति वातावरण से सम्बन्ध प्रशिक्षणार्थियों को यह ध्यान रखने की आवश्यकता है कि विद्यार्थियों में संकल्पना और सैद्धान्तिक विषयवस्तु के आधार पर अनुभव बौद्धिक क्षमता का विकास कर सके। यह प्रक्रिया अधिगमदाता तथा अधिगमकर्ता दोनों के लिए प्रभावशाली सिद्ध

* पी.एचडी.पर्यवेक्षक, भूतपूर्व प्राचार्य एवं अधिष्ठाता, लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, डबोक, उदयपुर (राज.) भारत
** पी.एचडी. छात्र, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

होगी।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. छात्राध्यापकों के प्रायोगिक और नियंत्रित समूह में **शिक्षण प्रभावशीलता** के सभी आयामों पर **पूर्व परीक्षण** के मध्यमानों के आधार पर तुलना करना।
2. **शिक्षण प्रभावशीलता** पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-1** के मध्यमानों के आधार पर तुलना करना।
3. **शिक्षण प्रभावशीलता** पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-2** के मध्यमानों के आधार पर तुलना करना।
4. **शिक्षण प्रभावशीलता** पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-3** के मध्यमानों के आधार पर तुलना करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पनाएँ :

1. छात्राध्यापकों के प्रायोगिक और नियंत्रित समूह में **शिक्षण प्रभावशीलता** के सभी आयामों पर **पूर्व परीक्षण** के मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. **शिक्षण प्रभावशीलता** पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-1** केमध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. **शिक्षण प्रभावशीलता** पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-2** के मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. **शिक्षण प्रभावशीलता** पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-3** के मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध की क्रियाविधि - प्रस्तुत शोध में प्रायोगिक विधि का प्रयोग किया गया। दत्ता संकलन के लिए शिक्षण प्रभावशीलता हेतु स्वनिर्मित उपकरण तथा निर्मितवाद सिद्धान्त पर आधारित पर पाठ-योजना का मॉडल द्वारा निर्माण किया गया। संकलित दत्तों का विश्लेषण शोधार्थी ने सांख्यिकी प्रविधियाँ मध्यमान, मानक-विचलन एवं टी-परीक्षण का प्रयोग कर किया गया है।

सारणीयन एवं विश्लेषण :-

सारणी संख्या - 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख संख्या - 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

छात्राध्यापकों के प्रायोगिक और नियंत्रित समूह में **शिक्षण प्रभावशीलता** के सभी आयामों पर **पूर्व परीक्षण** के मध्यमानों के आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण

व्याख्या - छात्राध्यापकों के प्रायोगिक और नियंत्रित समूह में **शिक्षण प्रभावशीलता** के सभी आयामों क्रमशः योजना,प्रस्तुतीकरण, प्रबन्धन, मूल्यांकन एवं चिन्तन कौशलपर **पूर्व परीक्षण** के मध्यमानों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया, टी-मान क्रमशः .86, 1.18, 1.85, 1.74 1.13 प्राप्त हुए। जो कि स्वतंत्रता के अंश 59 पर .05 स्तर के सारणीमान 2.00 से कम है।

सारणी संख्या - 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख संख्या - 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-1** के मध्यमानों के आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण

व्याख्या -

1. **योजना** :- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-1** में शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम **योजना** पर प्राप्त मध्यमान 41.81, 52.26 एवं मानक विचलन 12.89, 9.98 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 3.56 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

2. **प्रस्तुतीकरण** :- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-1** में शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम **प्रस्तुतीकरण** पर प्राप्त मध्यमान 47.63, 57.75 एवं मानक विचलन 12.24, 8.98 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 3.7 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

3. **प्रबन्धन** :- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-1** में शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम **प्रबन्धन** पर प्राप्त मध्यमान 29.65, 37.66 एवं मानक विचलन 10.08, 8.39 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 3.4 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

4. **मूल्यांकन** :- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-1** में शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम **मूल्यांकन** पर प्राप्त मध्यमान 24.28, 28.23 एवं मानक विचलन 7.41, 4.2 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 2.49 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .05 स्तर के सारणीमान 2.05 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया। इससे यह प्रदर्शित होता है कि छात्राध्यापकों द्वारा निर्मितवाद सिद्धांत के प्रायोगिक समूह के **पश्च परीक्षण-1** से प्रशिक्षण देने पर शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम **मूल्यांकन** पर प्रभाव **पूर्व परीक्षण** की अपेक्षा अधिक पाया गया।

5. **चिन्तन कौशल** :- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-1** में शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम **चिन्तन कौशल** पर प्राप्त मध्यमान 22.14, 27.42 एवं मानक विचलन 6.65, 5.6 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 3.4 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

सारणी संख्या - 3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख संख्या -3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-2** के मध्यमानों के आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण

व्याख्या :-

1. **योजना** :- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-2** में शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम **योजना** पर प्राप्त मध्यमान 41.81, 59.26 एवं मानक विचलन 12.89, 7.72 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 6.42 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28

पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

2. प्रस्तुतीकरण :- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-2** में शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम **प्रस्तुतीकरण** पर प्राप्त मध्यमान 47.63, 59.4 एवं मानक विचलन 12.24, 7.6 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 4.53 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

3. प्रबन्धन :- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-2** में शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम **प्रबन्धन** पर प्राप्त मध्यमान 29.65, 40.11 एवं मानक विचलन 10.08, 4.74 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 5.21 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

4. मूल्यांकन :- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-2** में शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम **मूल्यांकन** पर प्राप्त मध्यमान 24.28, 31.37 एवं मानक विचलन 7.41, 3.99 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 4.7 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

5. चिन्तन कौशल :- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-2** में शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम **चिन्तन कौशल** पर प्राप्त मध्यमान 22.14, 29.01 एवं मानक विचलन 6.65, 3.32 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 5.17 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

सारणी संख्या - 4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख संख्या - 4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-3** के मध्यमानों के आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण

व्याख्या

1. योजना :- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-3** में शिक्षण प्रभावशीलताके आयाम**योजना** पर प्राप्त मध्यमान 41.81, 55.73 एवं मानक विचलन 12.89, 10.44 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 4.66 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

2. प्रस्तुतीकरण:- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-3** में शिक्षण प्रभावशीलताके आयाम**प्रस्तुतीकरण**पर प्राप्त मध्यमान 47.63, 60.62 एवं मानक विचलन 12.24, 9.58 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 4.64 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

3. प्रबन्धन:- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-3** में शिक्षण प्रभावशीलताके आयाम**प्रबन्धन**पर प्राप्त मध्यमान 29.65, 36.43 एवं मानक विचलन 10.08, 7.96 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 2.94 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

4. मूल्यांकन:- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-3** में शिक्षण प्रभावशीलताके आयाम**मूल्यांकन**पर प्राप्त मध्यमान24.28, 29.4 एवं मानक विचलन 7.41, 4.46 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 3.32 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

5. चिन्तन कौशल:- छात्राध्यापकों के प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-3** में शिक्षण प्रभावशीलताके आयाम**चिन्तन कौशल**पर प्राप्त मध्यमान 22.14, 28.63 एवं मानक विचलन 6.65, 5.75 पाया गया। दोनों समूहों के बीच अन्तर ज्ञात करने हेतु टी-परीक्षण का प्रयोग किया गया, इसके लिए टी-मान 4.12 प्राप्त हूआ। जो कि स्वतंत्रता के अंश 28 पर .01 स्तर के सारणीमान 2.78 से अधिक है। अर्थात् दोनों समूहों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया।

निष्कर्ष :

1. शोध प्रारम्भ के पूर्व की स्थिति में छात्राध्यापकों के प्रायोगिक और नियंत्रित समूह के मध्यमानों में शिक्षण प्रभावशीलता को लेकर कोई सार्थक अन्तर प्राप्त नहीं हुआ।
2. छात्राध्यापकों द्वारा निर्मितवाद सिद्धांत के प्रायोगिक समूह के **पश्च परीक्षण-1** से प्रशिक्षण देने पर शिक्षण प्रभावशीलता के **आयाम**योजना, प्रस्तुतीकरण, प्रबन्धन, मूल्यांकन एवं चिन्तन कौशल पर प्रभाव **पूर्व परीक्षण** की अपेक्षा अधिक पाया गया।
3. छात्राध्यापकों द्वारा निर्मितवाद सिद्धांत के प्रायोगिक समूह के **पश्च परीक्षण-2** से प्रशिक्षण देने पर शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम योजना, प्रस्तुतीकरण, प्रबन्धन, मूल्यांकन एवं चिन्तन कौशल पर प्रभाव **पूर्व परीक्षण** की अपेक्षा अधिक पाया गया।
4. छात्राध्यापकों द्वारा निर्मितवाद सिद्धांत के प्रायोगिक समूह के **पश्च परीक्षण-3** से प्रशिक्षण देने पर शिक्षण प्रभावशीलता के आयाम योजना, प्रस्तुतीकरण, प्रबन्धन, मूल्यांकन एवं चिन्तन कौशल पर प्रभाव पूर्व परीक्षण की अपेक्षा अधिक पाया गया।

वर्तमान में प्रासंगिकता - इस आलेख से निर्मितवाद सिद्धान्त का प्रयोग करते हुए शिक्षण को प्रभावशाली व विद्यार्थियों के लिए रूचिकर बनाया जा सकता है। शिक्षण और सीखने की प्रक्रिया में निर्मितवाद बहुत महत्वपूर्ण है। बच्चे जितना अधिक सीखते हैं, सीखने में आनंद लेते हैं, बजाय इसके कि वे बस वैसे ही निष्क्रिय श्रोता रहें। शिक्षा प्राप्त करने का मतलब उसके बाद की समझ या रट के याद करने की सोच पर निर्भर करता है। निर्मितवाद सीखने

सोचने और आगे समझने के तरीके पर जोर देता है। रचनाकार के लिए, सीखना हस्तांतरणीय अधिनियम के रूप में रहता है, जिसका अर्थ है छात्र अपने विचारों को व्यवस्थित करने के लिये कक्षाओं मे निर्धारित सिद्धांत बनाते हैं। रचनात्मक मूल्यांकन के लिए छात्रों की पहल को संबंधित पत्रिकाओं, भौतिक मॉडलों, शोध रिपोर्टों, कलात्मक शिल्प ज्ञान की अभिव्यक्ति के लिए योग्यता और निवेश में जिससे उनकी रचनात्मकता जुड़ी हुई है, और यह उनका विकास करता है ,व्यक्तिगत रूप से चिह्नित किया जाता है। जैसे उनके वास्तविक जीवन के लिए ज्ञान प्राप्त किया वे बनाए रखते हैं और आगे स्थानांतरण करते हैं। रचनात्मक शिक्षक छात्रों को सशक्त बनाने और उन्हें सक्षम और महत्वपूर्ण महसूस करवाने के लिए कौशल और क्षमता विकसित करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **Acisli, S., Yalcin, A. S., Turgut, U. (2011)** Effects of the 5E Learning Model on Students' Academic Achievements in Movement and Force Issues. *Procedia Social and Behavioral Sciences,* 15, 2459–2462.
2. **Afolobi, F., & Akinyemi, O. A. (2009)** Constructivist Problem Based Learning Technique and the Academic Achievement of Physics Students with Low Ability Level in Nigerian Secondary Schools. *Eurasian Journal of Physics andChemistry Education,* 1(1), 45-51.
3. **Agogo, P. O., & Naakaa, D. A. (2014)** Effects of 5es Constructivist Instructional Strategy on Students' Interest in Senior Secondary Genetics in Gwer Local Government Area, Benue State, Nigeria. *Global Journal of Environmental Science and Technology,* 1(2), 15-19.
4. **Anyanwu, R. N. (2008)** The Implementation and Evaluation of a Constructivist Intervention in Secondary School Science Teaching in Seychelles. *Dissertation Abstract International*, 69(11), 4239A.
5. **Asthana, S. (2011*)*** *Designing an Intervention to Improve the Quality of Instruction in Environmental Science for Upper Primary Students* Unpublished M.Ed. Dissertation, University of Lucknow.
6. **Akar, E. (2005)** Effectiveness of 5E Learning Cycle Model on Students' Understanding of Acid-Base Concepts. *Dissertation Abstract International*, 65(08), 3145A.
7. **Akar, H. (2005)** *Impact of Constructivist Learning Process on Preservice Teacher Education Students' Performance, Retention and Attitudes.* Retrieved from. 222
8. **Banerjee, S. (2012)** Constructivist Approach in School Learning: Constructivism in Education with Special Emphasis on Science. *Education India Journal,* 1(3), 104-112.
9. **Bay, E., Gundogdu, K., & Kaya, H. I. (2010)** *The Perceptions of Prospective Teachers on the Democratic Aspects of the Constructivist Learning Environment.* Retrieved from https://www.eric.ed.gov.in.(ERIC Document Reproduction Service No. EJ900904) on 03/02/2012.

सारणी संख्या – 1 : छात्राध्यापकोंके प्रायोगिक और नियंत्रित समूह में **शिक्षण प्रभावशीलता** के सभी आयामों पर **पूर्व परीक्षण** के मध्यमानों के आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण

क्र.	आयाम	मध्यमान		मानक विचलन		टी–मान	सार्थकताका स्तर
		प्रायोगिक	नियंत्रित	प्रायोगिक	नियंत्रित		
1	योजना	41.78	38.70	12.90	15.30	0.86	असार्थक
2	प्रस्तुतीकरण	47.60	43.55	12.25	15.75	1.18	असार्थक
3	प्रबन्धन	30	24.70	10.15	10.06	1.85	असार्थक
4	मूल्यांकन	24.28	20.69	7.60	8.25	1.74	असार्थक
5	चिन्तन कौशल	22.15	19.80	6.65	9.30	1.13	असार्थक

स्वतंत्रता के अंश 59 पर .05 स्तर का सारणीमान = 2.00

.01 स्तर का सारणीमान = 2.66

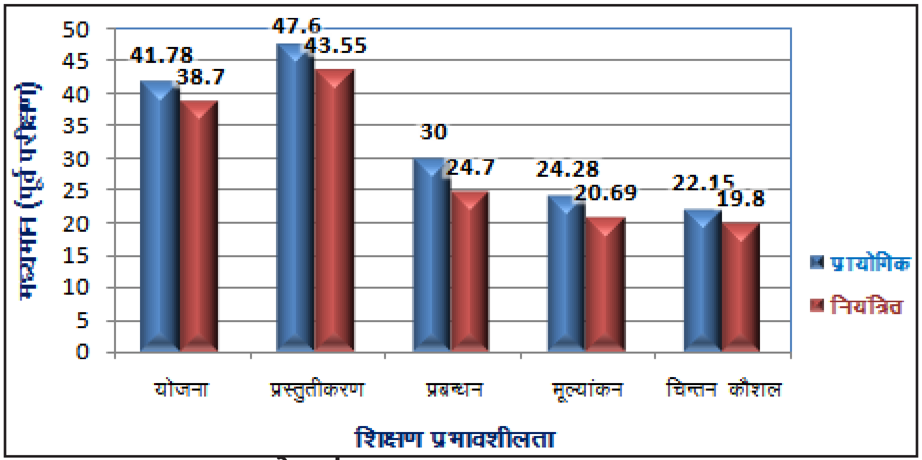

आरेख संख्या – 1

सारणी संख्या – 2 : शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण–1** के मध्यमानों के आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण

क्र.	आयाम	मध्यमान		मानक विचलन		टी–मान	सार्थकताका स्तर
		पूर्व	पश्च–1	पूर्व	पश्च–1		
1	योजना	41.81	52.26	12.89	9.98	3.56	.01
2	प्रस्तुतीकरण	47.63	57.75	12.24	8.98	3.7	.01
3	प्रबन्धन	29.65	37.66	10.08	8.39	3.4	.01
4	मूल्यांकन	24.28	28.23	7.41	4.2	2.49	.05
5	चिन्तन कौशल	22.14	27.42	6.65	5.6	3.4	.01

स्वतंत्रता के अंश 28 पर .05 स्तर का सारणीमान = 2.05

.01 स्तर का सारणीमान = 2.78

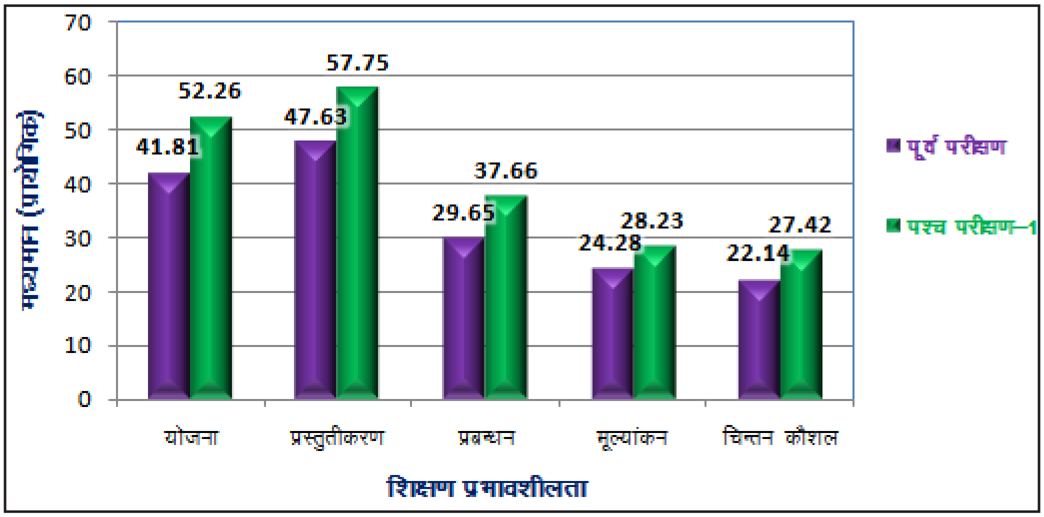

आरेख संख्या – 2

सारणी संख्या – 3 : शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण–2** के मध्यमानों के आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण

क्र.	आयाम	मध्यमान		मानक विचलन		टी–मान	सार्थकताका स्तर
		पूर्व	पश्च–1	पूर्व	पश्च–1		
1	योजना	41.81	59.26	12.89	7.72	6.42	.01
2	प्रस्तुतीकरण	47.63	59.4	12.24	7.6	4.53	.01
3	प्रबन्धन	29.65	40.11	10.08	4.74	5.21	.01
4	मूल्यांकन	24.28	31.37	7.41	3.99	4.7	.01
5	चिन्तन कौशल	22.14	29.01	6.65	3.32	5.17	.01

स्वतंत्रता के अंश 28 पर .05 स्तर का सारणीमान = 2.05

.01 स्तर का सारणीमान =2.78

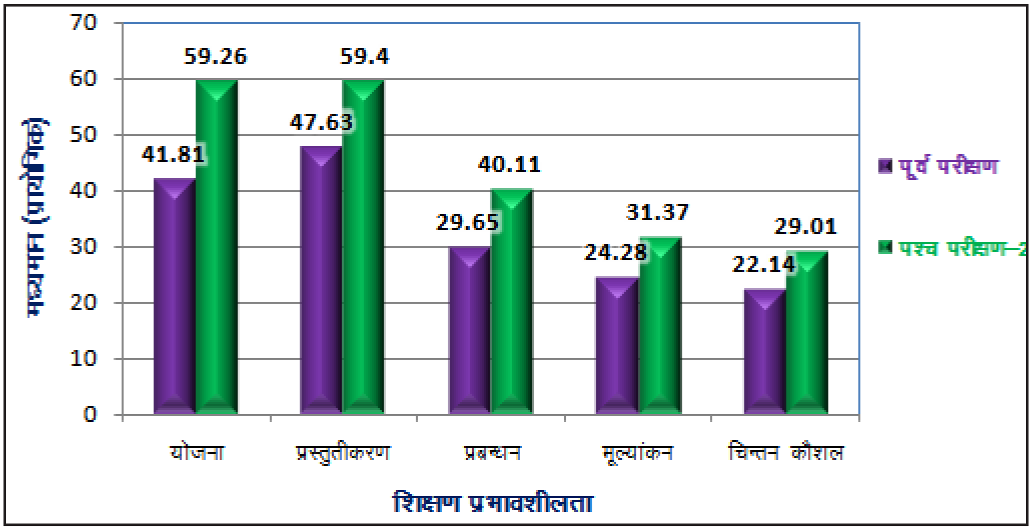

आरेख संख्या -3

सारणी संख्या - 4 : शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रायोगिक समूह का **पूर्व परीक्षण** और **पश्च परीक्षण-3** के मध्यमानों के आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण

क्र.	**आयाम**	**मध्यमान**		**मानक विचलन**		**टी-मान**	**सार्थकताका स्तर**
		पूर्व	**पश्च-3**	**पूर्व**	**पश्च-3**		
1	योजना	41.81	55.73	12.89	10.44	4.66	.01
2	प्रस्तुतीकरण	47.63	60.62	12.24	9.58	4.64	.01
3	प्रबन्धन	29.65	36.43	10.08	7.96	2.94	.01
4	मूल्यांकन	24.28	29.4	7.41	4.46	3.32	.01
5	चिन्तन कौशल	22.14	28.63	6.65	5.75	4.12	.01

स्वतंत्रता के अंश 28 पर .05 स्तर का सारणीमान = 2.05
.01 स्तर का सारणीमान =2.78

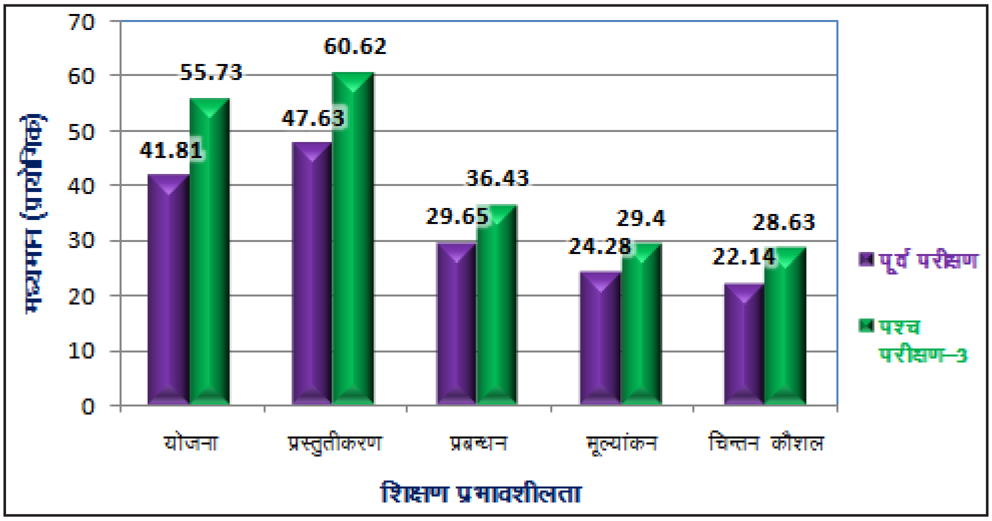

आरेख संख्या - 4

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Evaluation of Therapeutic Potency of *Cassia tora* Linn. In hot Semi Arid Region of Jaipur

Sangeeta jangir* Ajit kumar Swami**

Abstract - Nowadays microbial resistance is one of the major problem thus there has been a pressure on researchers to find a new way for the development of new antimicrobial drug by using herbals. *Cassia tora* is a traditional medicinal plant. In the present study the leaves and seeds of *Cassia tora* plant was evaluated against antimicrobial activity through agar well diffusion method. Methanol and chloroform solvent was used to prepare the plant extract subsequently it was evaluated against four fungal strain viz. *Penicillium funiculosum*, *Aspergillus Niger, Trichoderma ressei, Candida albicans* and four bacterial strain as *Staphylococcus aureus, Pseudomonas aeruginosa, Escherichia coli* and *Bacillus subtilis.* It was observed that maximum zone of inhibition was in leaves (13mm) against *Pseudomonas aeruginosa* and in fungus, besides other fungal colonies activity found against *Penicillium funiculosum*(18mm). Toxic free radicals cause harm in the body after metabolism thus plant derived dietary supplements and drug with antioxidant potential required. In this research *Cassia tora* leaf and seed evaluated to determine In-vitro antioxidant potential. While comparing the results it was determined that the seed of *Cassia tora* show more free radical scavenging activity(4.625uM/l/gm FW) than leaf. Lipid peroxidase content was found approximately 15times more in leaf as compare to seed(156.08, 10.85uM/l/gm FW respectively).
Keywords - Antimicrobial, in-vitro antioxidant, *Cassia tora* extract, comparative evaluation.

Introduction - It is well known that plants have great medicinal value and have been utilizing for many decades. Plants are tremendous source of biologically active compounds which contain therapeutic application[1]. Keeping in view, *Cassia tora* was used to find out novel compounds with strong antimicrobial and antioxidant activity. Because of development of multi-drug resistance in pathogenic microbes against antimicrobial drugs leads to look forward towards alternative sources like plants for therapeutic purpose with no side effects which are commonly used in making of synthetic drugs[2].

Free radicals generated after cellular metabolism and as a result of stress can cause damage to healthy cells inside the body. These free radicals can also be generated by smoking, tobacco, prolonged exposure to sunlight and heavy metals[3]. Sometimes free radicals deposit in the body and cause oxidative stress. This oxidative stress can cause major damage to cells which sometimes leads to cancer[4]. Oxidative stress can be prevented by antioxidants which mainly neutralize the side effects produced due to free radicals[5].

Cassia tora Linn. (Caesalpiniaceae) is an annual herb widely found in india as a rainy season weed and used in Africa, India and China as traditional medicine. As a ayurvedic medicinal plant *Cassia tora* Linn. used as a laxative, in leprosy, skin disorders, bronchitis, ringworms, cardiac disorders, cough, liver tonic and haemorroids[6]. In this research *Cassia tora* seed and leaf powder extract were evaluated for in-vitro antioxidant and antimicrobial activity.

Material and Methods

Plant material and preparation of extract - Plant material was collected from the surroundings of Jaipur, Rajasthan in the month of August to September 2017.The *Cassia tora* fresh leaves were washed with tap water and further with distilled water, dried at 50^{o}c for 48 hrs. further dried leaves and collected seeds were powdered in a grinder. The plant material (10gm each) was subsequently extracted with methanol and chloroform solvent (100ml each), incubated for 24 hrs. Later it was filtered by using Whatman NO.1 filter paper and dry filterate was obtained. Dried extract was dissolved in DMSO (Dimethyl Sulfoxide) (100mg/ml) to prepare final concentration. It was stored at 4^{o}c in airtight bottles till further use.

Bacterial and fungal cultures - Both gram positive *Staphylococcus aureus* ,*Bacillus subtilis* and gram negative *Escherichia coli*, *Pseudomonas aeruginosa* bacterial culture and in fungal culture *Trichoderma ressei, Aspergillus niger, Penicillium-funiculosum, Candida albicans* were used. Bacterial culture was maintained on Nutrient agar medium at 34^{o}c for 24 hrs. and fungal culture on PDA (Potato Dextrose agar) at 30^{o}c for 72 hrs. These cultures were regularly sub cultured within 25-30 days. All bacterial and

*Department of Biotechnology, Shri Jagdishprasad Jhabarmal Tibrewala University, Jhunjhunu (Raj.) INDIA
** Seminal Applied Sciences Pvt. Ltd., Jaipur (Raj.) INDIA

fungal cultures were collected from stock cultures of Microbiology Laboratory, SMS Medical College Jaipur (India).

Determination of antibacterial assay - Agar well diffusion method was used to determine antibacterial activity of chloroform and Methanol plant extract[7]. Nutrient agar medium(250ml) was prepared and transferred into the sterile petriplates. When it was solidified 1ml bacterial broth was added to each medium as a inoculum. After drying for 10 min. it was punched with wells of 6mm diameter and further wells were loaded with sample (60ul) and standard (40ul). Later it was incubated at 32^{o}c for 24 hrs. to determine the zone of inhibition.

Determination of antifungal Assay - The same method was used as for bacteria to determine the antifungal activity of experimental plant[8]. Fungal culture was maintained on potato dextrose agar, PDA (Merck, Germany). Potato dextrose agar medium(250ml) was prepared and added to sterile petiplates. Each PDA plate was inoculated with fungal strain(3ml diluted) after solidification. It was uniformly spread and extra strain was removed from each plate. Further wells of 6mm diameter punctured in each plate. Subsequently sample(80ul) and standard(40ul) was filled in to the wells. After 10 mints. Plates were incubated at 37^{o}c for 24 hrs and diameter of zone of inhibition was measured.

FRAP assay - Benzie and Strain (1996) procedure was followed to measure the free radical scavenging activity of plant extract[9]. This method is based on the principle of reduction of ferric-tripyridyl-triazine complex to its ferrous, colored form by the antioxidants found in the extract. The FRAP reagent contained 2.5 mL of a 10 mmol/L TPTZ (2,4,6- tripyridyl-s-triazine, Sigma) solution in 40 mmol/L HCl plus 2.5 mL of 20 mmol/L FeCl3 6H2O and 25 mL of 0.3 mol/L acetate buffer, pH 3.6 and was prepared freshly and warmed at 37^{o}C. Aliquots of 0.5 mL sample were mixed with 1.5 mL FRAP reagent and the absorbance of reaction mixture at 593 nm was measured spectrophotometrically after incubation at 37^{o}C for 10 mints. As the standard Gallic acid or ascorbic acid were used and final result was expressed as the concentration of antioxidants having a ferric reducing power equivalent to that of mg of standard used per gram sample.

Lipid per-oxidation activity - Hodges etal; 1999 method was used to measure the lipid per-oxidase activity with few modifications[10]. 0.2 gm sample (leaf or seed) crushed in 5ml 20 % TCA, centrifuged at 10,000 rpm for 10 mints. Supernatant (1ml) was added to 4ml (5%)TBA and (10%) TCA. Further it was heated in water bath at 95^{o}c for 25 mints. mixture was further allowed to cool after cooling OD of the mixture was measured spectrophotometrically at 532 nm and subsequently at 600 nm. Values were taken by the difference of both the absorbance. Control was taken with 10% TCA only.

Catalase activity - The antioxidant potential through catalase was measured by Aebi *et al.,* 1984 with the slight modifications[11]. 0.2ml of plant extract was taken and mixed with 2 ml of phosphate buffer and 0.8 ml H_2O_2. The catalase activity was measured spectrophotometrically and OD was taken at 240 nm for the duration of 1 minute. For determination of the activity of catalase molar extinction capacity was measured as unit/mg of protein.

Peroxidase activity - Chance etal ; 1955 method was used to measure the hydrogen peroxide scavenging activity of *Cassia tora*[12]. 0.1 ml sample was added to 2.4 ml phosphate buffer , 0.3 ml pyrogallol, 0.2 ml H_2O_2 and subsequently absorbance was taken at 420nm to measure the bioactivity.

Results and discussion

Table 1 (see in last page)

Figure 1 (see in last page)

Table 2 (see in last page)

Figure 2 (see in last page)

Table 3 (see in last page)

Figure 3 (see in last page)

The antibacterial activity of chloroform extract of leaf found more significant towards various tested organisms as compare to both the extracts of seed (Table1). Both chloroform and methanol extract of leaf produced highest inhibitory zone 15, 15 , 12, 13 against both gram positive and gram negative strains *Bacillus subtilis* and *Pseudomonas aeruginosa* respectively. The antifungal activity of both the extracts of leaf also produced significant inhibitory zone against *Aspergillus niger, Penicillium-funiculosum* and *Candida albicans* as 11mm, 15mm , 12mm, 18mm ,10mm, 11mm respectively. The methanolic extract of seed found with overall highest inhibitory zone of 19mm diameter against specific fungal strain *Trichoderma ressei* and significant activity towards *Penicillium-funiculosum* as 12mm diameter. All fungal strains except Candida albicans (10mm) found resistance against chloroform extract of seed (Table2). It was demonstrated that the leaf chloroform extract has shown more antibacterial activity to inhibit the growth of *Staphylococcus aureus, Bacillus subtilis, Pseudomonas aeruginosa*(fig.1). When it was comparatively studied among all extract Both the extract of leaf found with more potential of antifungal activity towards *Aspergillus niger, Penicillium funiculosum*, *Candida albicans*(fig.2). The present study indicated that leaf extract of *Cassia tora* Linn. have more antimicrobial activity and provide a idea towards better exploitation in pharmaceuticals. The presence of phytochemicals and their activity affected by plant species, part of plant and many climatic factors.. While examining the different enzymatic and non enzymatic antioxidant activity it was found that both leaf and seed have potent enzymatic antioxidant activity(Table3). The values of antioxidant activity was measured by taking absorbance and molar extinction coefficient (ODx[, OD-optical density and [-molar extinction coefficient) and showed as uM/l/gm fresh weight of extract. With comparative study of leaf and seed, free radical scavenging activity was found better in seed(4.625uM/l/gm

FW) than leaf(3.402uM/l/gm FW). Lipid peroxidase antioxidant activity has shown more significant(156.08uM/l/gm FW) in leaf than seed extract(10.85uM/l/gm FW). The Peroxidase and Catalase antioxidant activity comparatively was found more in leaf(2.5984um/l/gm FW) and seed(1.08um/l/gm FW) respectively(fig.3). In human body many factors as chemicals, ionizing radiation, UV rays and metabolic reactions leads to the production of reactive oxygen species which cause cell damage in many aspects and finally induce various diseases[(13)].Many edible and non edible plants have biological activity including antioxidant potential due to presence of phytoconstituents in their parts can be used to reduce the effects of reactive oxygen species. Although synthetic antioxidants have few limitations so natural antioxidants have gained more importance in present era. However Investigation revealed that *Cassia tora* exhibit significant antioxidant activity so it can be used as a supplement of natural antioxidants.

Conclusion - *Cassia tora* is one of the medicinally important plant contain phytochemicals and used in Ayurveda as well as Chinese medicine system. Previous research studies on seed and leaf revealed the pharmacological importance of *Cassia tora.* The present study indicated the antimicrobial and in-vitro antioxidant activity of seed and leaf extract of *Cassia tora* Linn. These experiments on effect of *C. tora* extract and some compound present in it justify the traditional use of this plant. There is no doubt that this plant is a great source of phytochemical compounds which can be used as drugs and provide a clue or lead towards modern drug design. Due to its medicinal benefits, it provide a great interest of researchers for further pharmacological investigation to explore unidentified compounds and their therapeutic use.

Acknowledgement - I would like to express my special thanks of gratitude to Dr. Ajit kumar and Dr. Manas Mathur Department of Biotechnology Seminal applied science Pvt. Ltd. Jaipur , Rajasthan, India for their continue support and guidance.

References :-

1. T Murali Krishna, Nilamani Venisetty Anti-microbial activity of *Cassia tora* leaves and stems crude extract *Helix Vol. 4:202-205 (2012)*
2. Iwu MW, Ducan AR, Okungi CO. New antimicrobials of plant orgin. In: Janik J. (ed.) Perspectives on new crops and new uses. *ASHS press, Alexandria*, VA, 1999; 457-462
3. Van Wijk R, Van Wijk EP, Wiegant FA, Ives J. Free radicals and low-level photon emission in human pathogenesis: State of the art. Indian J Exp Biol 2008;46:273-309.
4. Topdag S, Aslaner A, Tataroglu C, Ilce Z. Evaluation of antioxidant capacity in lung carcinoma. Indian J Thorac Cardiovasc Surg 2005; 21:269-71.
5. Dhaniya S, Parihar SK, Evaluation of antioxidant potential of *Dicoma tomentosa* and *Alhagi maurorum* leaf and stem powder, Journal of Drug Delivery and Therapeutics. 2019; 9(4-A):207-211
6. Wong SM, Wong MM, Seligmann O, Wagner H, New antihepatotoxic nephthopyrone glycosides from seeds of *Cassia tora*. Planta Medica 1989 ; 55:276-280.
7. Perez C, Paul M, Bazerque P. An antibiotic assay by the agar-well diffusion method. Acta. Biol. Med. Exp. 1990; 15:113-115.
8. Perez C, Paul M, Bazerque P. An antibiotic assay by the agar-well diffusion method. Acta. Biol. Med. Exp. 1990; 15:113-115.
9. Benzie IEF, Strain JJ. The ferric reducing ability of plasma **(**FRAP) as a measure of antioxidant power the FRAP assay. Anal Biochem. 1996; 239: 70-76.
10. Hodges DM Delong JM Forney CF Prange RK 1999 improving the thiobarbituric acid reactive substances assay for estimating lipid peroxidation in plant tissues containing interfering compounds Planta (1999) 207: 604-611
11. Aebi, H., Catalase. Methods Enzymol. 1984; 105, 121–126.
12. CHANCE. B. AND A. C. MAEHLY. 1955. Assay of catalase and peroxidases. Methods Enzymol. 2: 764-775.
13. Bauerova K, Bezek A. A role of reactive oxygen and nitrogen species in pathogenesis of rheumatoid disease. Gen Physiol Biophys 1999; 18: 15-20.

Table 1: Antibacterial activity of chloroform and methanol extract of *Cassia tora*

S.	Bacterial strain	Leaf		Seed		Standard Ciprofloxacin
		Chl. ZOI(mm)	Me. ZOI(mm)	Chl. ZOI(mm)	Me. ZOI(mm)	
1.	*Escherichia coli*	NA	NA	NA	NA	21
2.	*Staphylococcus aureus*	10	NA	NA	4	21
3.	*Bacillus subtilis*	15	15	NA	NA	21
4.	*Pseudomonas aeruginosa*	12	13	NA	NA	21

Note- Chl.-Chloroform , Me-Methanol, ZOI-Zone of inhibition, NA-No activity.

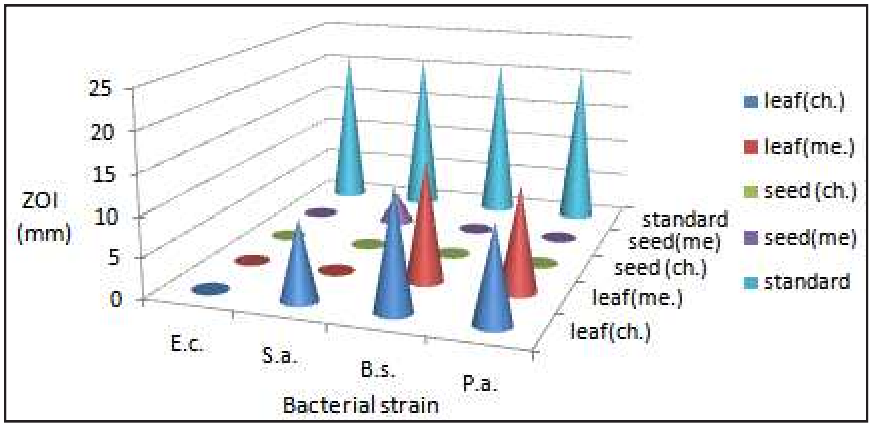

Figure 1: Graphical comparative view of antibacterial activity of Chloroform and Methanolic leaf and seed extract of *Cassia tora* with standard.

Note : E.c.- *Escherichia coli,* S.a.- *Staphylococcus aureus*, B.s.- *Bacillus subtilis,* P.a.- *Pseudomonas aeruginosa* , ch.- Chloroform, me.-Methanol, ZOI-Zone of inhibition.

Table 2: Antifungal activity of chloroform and methanol extract of *Cassia tora*

S.	Fungal strain	Leaf		Seed		Standard ketoconazole
		Chl. ZOI(mm)	Me. ZOI(mm)	Chl. ZOI(mm)	Me. ZOI(mm)	
1.	*Trichoderma ressei*	NA	NA	NA	19	32
2.	*Aspergillus niger*	11	15	NA	NA	32
3.	*Penicillium-funiculosum*	12	18	NA	12	32
4.	*Candida albicans*	10	11	10	NA	32

Note- Chl.-Chloroform , Me.-Methanol , ZOI-Zone of inhibition , NA-No activity.

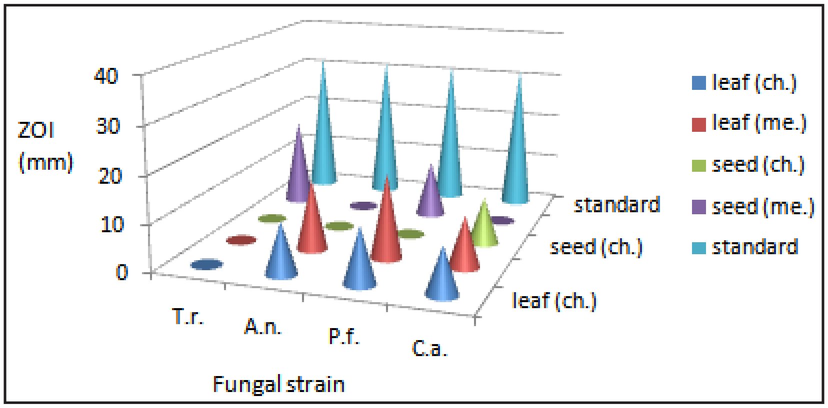

Figure 2: Graphical comparative view of antifungal activity of Chloroform and Methanolic leaf and seed extract of *Cassia tora* with standard.

Note : T.r.-*Trichoderma ressei*, A.n.-*Aspergillus niger*, P.f.- *Penicillium-funiculosum* ,C.a.-*Candida albicans,* ch.-Chloroform, me.-Methanol, ZOI-Zone of inhibition.

ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Table 3: In-vitro antioxidant activity of extract prepared from leaf and seed powder of *Cassia tora*

S.	Antioxidant assay	OD (nm)	Leaf Bioactivity (uM/l/gm fresh weight)	seed Bioactivity (uM/l/gm fresh weight)
1.	FRAP	593	3.402	4.625
2.	LPO	240	156.08	10.85
3.	POD	532	2.5984	0.7196
4.	CAT	420	0.48	1.08

Note- FRAP- ferric reducing antioxidant power LPO-Lipid peroxidase POD-Peroxidase CAT-Catalase. Bioactivity values are calculated as OD x [(OD is optical density , [is molar extinction coefficient)

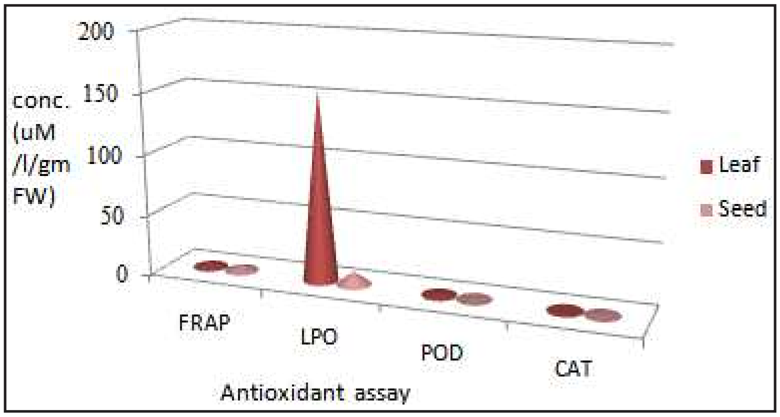

Figure 3: Comparative view of In-vitro antioxidant activity of leaf and seed extract of *Cassia tora*

****

A Study Of Mutual Funds As Long Term Investment Schemes With Special Reference To Retail Investors

Saloni Chauhan* Dr. Suresh Kataria Dr. Rakesh Dhand*****

Abstract - A mutual fund is a vehicle for pooling resources by issuing units to investors and investing funds in assets to meet the objectives stated in the offer document. Securities investments are dispersed throughout a diverse range of companies and sectors, which reduces risk. Because all stocks may not move in the same direction in the same proportion at the same time, diversification decreases risk. Mutual funds usually have a variety of schemes with various investment objectives that are launched on a regular basis. The current research will suggest techniques for effective branding, positioning, promotion, and distribution of Mutual Fund Schemes as long-term investment vehicles.
Keywords - Mutual fund, investment, revolution, digital technology, Securities.

Introduction - India's digital revolution has elicited numerous responses from around the world. The country is on the verge of a breakthrough, thanks to a slew of programs centered on digital technology. Since the declaration of demonetization on November 8, 2016, India has made a concentrated attempt to transition to a cashless economy. The events of the past few weeks of 2016 highlight both obstacles and enormous opportunity for India's mutual fund industry to flourish. With around Rs 14 lakh crore just entering through conventional banking channels, a huge new universe has emerged that is now not only a part of the financial fold but also potentially taxable. This will inspire people to think more about tax-advantaged investment opportunities that can also provide valuable information in the long run. Mutual funds may become one of the first alternatives for both short- and long-term investing as awareness grows. While mutual fund products are not ideal for all types of investors, the sector has experienced enormous growth, with assets under management exceeding 17 lakh crore INR and inflows of approximately 4 lakh crore in the last two years alone. Over the next financial year, the industry is expected to increase by more than 25%, compared to 14% to 15% this year. Traditional goods will continue to be popular. However, in order to appeal to a wider range of customers and attract additional investors, the industry will need to innovate and produce new specialized products.

Much of the rise in 2016 can be ascribed to an increase in the number of investor accounts, which have consistently increased monthly investments in equities mutual fund schemes. As more people moved away from the concept of large lump sum investments, systematic investment plans grew at an unexpectedly rapid rate, promoting more sustainable growth for the business. Mutual funds have had to be a low-cost, transparent institution over the past two years in order to channel savings into financial ventures. With the demonetization effect, rapid digitization, government incentives, regulatory incentives and a deliberate push for improving investor education, the next 2 or 3 years should see the assets under management reaching another great milestone. In the immediate future, with interest rate declining, it is reasonable to predict that debts funds will be drivers of the growth in the first half of 2017, while the effect of the goods and services tax will be felt in the second half.

The Mutual Fund (MF) Industry had a compared annual growth rate of 18 percent over past 10 years. Despite the Global economic slowdown of 2010 -13, there has been a remarkable increase in mutual funds investment in India. Till now, lack of awareness about financial instruments and prevalence of low financial knowledge resulted in a lower inflow of investments as compared to that in other BRICK nations like China and Brazil. However, factors such as favorable demographics, rising income levels and ongoing government initiatives continue to make it one of the most attractive sectors in the financial services industry. In an attempt to curb black money in the economy, the Prime Minister announced the demonetization of Indian high-value currency in November 2016.In the immediate future, with interest rate declining, it is reasonable to predict that debts funds will be drivers of the growth in the first half of 2017, while the effect of the goods and services tax will be felt in the second half.

Mutual fund - Before a mutual fund may collect funds from

*Research Scholar, School Of Studies In Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
** Professor, Govt. Girls P.G. College, Ratlam (M.P.) INDIA
*** Retd. Professor and DSW ,HOD, School Of Studies In Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

the public, it must be registered with the Securities and Exchange Board of India (SEBI), which supervises securities markets. As a result, mutual funds make saving and investing easy, convenient, and reasonable. Professional management, diversification, variety, liquidity, affordability, simplicity, ease of recordkeeping, strong government regulation, and complete disclosure are all advantages of mutual funds. Furthermore, all mutual fund dividends are exempt from taxation under the Income Tax Act of 1961. Short-term capital gains on the stock fund are also taxable at a rate of 15%.

Growth of the Mutual Fund Industry in India - The Indian Mutual Fund Industry began acting in 1963 with the arrangement of Unit Trust of India at the activity with the recommendation of Reserve Bank of India and Indian Government.

First Phase: 1964-1987 - The Indian Mutual Fund Industry was emerged 1964 when the Indian government, with a view to enlarge small savings and to channelize these savings to the stock markets. The Unit Trust of India was setup under the UTI Act, 1963. The first open- ended equity scheme Unit-64 was launched by UTI in1964.

Second Phase: 1987-1993 - Between 1963 to 1988 UTI was the industry's dominating player. At the time, the assets under control totaled at Rs. 67 billion. The government permitted other Public Sector Banks and Insurance Agencies to promote Mutual Fund Schemes, and the Securities and Exchange Board of India (SEBI) issued guidelines on share subsidies in 1993. SBI mutual fund was the first non-UTI mutual fund, launched in June 1987, followed by Canbank mutual fund in December 1987, Punjab National Bank mutual fund in August 1989, Indian Bank mutual fund in November 1989, Bank of India mutual fund in June 1990, and Bank of Baroda mutual fund in November 1990. (Oct. 92). The Mutual Fund of Life Insurance Corporation was created in June 1989, while the Mutual Fund of General Insurance Corporation was founded in December 1990.

Third Stage: 1993-2003 (Passage of Private Segment Assets) - In the time of 1994 another period began in Mutual Fund Industry in India. The first private mutual fund player was Kothari Pioneer (now merged with Franklin Templeton), came into existence which witnessed exponential growth of the industry. With the emergence of many foreign mutual funds the quantity of fund houses continued expanding and furthermore the business has seen a few mergers and acquisitions.

Fourth Phase: Since Feb. 2003 - UTI (Unit Trust of India) was bifurcated into two separate entities in Feb. 2003. The functioning of Unit Trust of India go under supervision of administration of India and does not go under the domain of the mutual fund.

Structure of Mutual Funds - Mutual Funds have their organizational structure as per the guidelines of SEBI. Mutual fund is considered as a trust having Sponsors, Trustee, Custodian and AMC (Asset Management Company). Functionaries of mutual funds are:-

- Sponsors
- Trustees
- AMC (Asset Management Company)
- Custodian
- Fund Manager

Sponsors - A sponsor must have a good track record, be in the financial services business for at least five years, have a reputation for fairness and honesty in all of his business dealings, and have a positive net worth (at least 40%) of the AMC. The sponsor must meet the eligibility requirements outlined in the mutual fund regulations. The sponsor should not be held responsible for any fraud because he or she has not been convicted of any crime.

Trustees - The Trustees are individuals with broad authority to oversee, supervise, and monitor the operations of Asset Management Companies. The trustees are merely a Board of Directors; the actual work is done by Asset Management Companies, which are appointed either by the trustees or by the Sponsors in accordance with the Trust-deed, and no more than 50% of the directors of AMCs should be affiliated with either sponsors, subsidiaries, or trustees.

AMC (Asset Management Company) - The sponsor or trustees must choose an asset management company (AMC) to handle the mutual fund's asset portfolio. In order to register with SEBI as an AMC, the applicant must meet certain qualifying conditions, according to mutual fund regulations:

- The AMC's directors must have appropriate professional expertise in financial services and must not have been found guilty of any faults or economic violations of any securities laws.
- The sponsor must own at least 40% of the AMC.
- No more than 50% of the directors of AMCs should be affiliated with the sponsors, subsidiaries, or trustees; and no director of an AMC can serve on the board of another AMC unless the board of the AMC of which he or she is a director has given their assent.

Custodian - According to mutual fund regulations, the mutual fund must choose a custodian to provide custodial services for the fund's schemes. The Securities and Exchange Board of India rules, 1996, require custodians to be registered. Custodian is a company that provides custodian services for mutual fund schemes.

Types of Mutual Funds - In the investment markets, there are a wide range of investors with diverse demands, ambitions, and risk tolerance capacities, such as a businessman who prefers high risk and seeks capital appreciation from his assets. As a result, supplying a single fund to all investors that meets all of their criteria is a difficult endeavor.

Types of Mutual Fund

Types of Mutual Fund

- **BY STRUCTURE**
  - OPEN ENDED FUND
  - CLOSED ENDED FUND
  - INTERVAL FUND
- **BY INVESTMENT OBJECTIVES**
  - GROWTH FUNDS
  - INCOME FUNDS
  - BALANCE FUNDS
  - MONEY MARKET FUNDS
- **OTHER SCHEMES**
  - TAX SAVING FUNDS
  - FUND OF FUNDS
  - INDEX FUNDS

RESEARCH METHODOLOGY - Essential information was obtained from a sample of 500 respondents (400 retail investors and 100 distributers) from various financial foundations and localities (i.e. Jabalpur and Indore) using a judgment assessing technique for the current research, which is exploratory and illuminating in character. The psychographic profile (states of mind, interests, and attitudes) of mutual fund investors, distributors, and financial advisors was quantified using a 5-interim Likert scale ranging from "strongly disagree" (measuring 1) to "strongly agree" (measured 5). Secondary data was gathered from RBI, SEBI, and AMFI Bulletins, as well as pertinent offline and online research distributions. The data was analyzed using several statistical tools such as frequency distribution, percentage, and arithmetic Mean to test theories and break down large contrasts. SPSS 20 was used to connect an Analysis of Variance test with a General Linear Model (Univariate Analysis). The factor variables are using to divide the population into groups. We may test null hypotheses about the effects of different factors on the approaches for different groups of a dependent variable using this General Linear Model system. We can look at how factors interact as well as the effects of individual components, some of which may be arbitrary. In addition, covariate effects and covariate communications with variables can be taken into account. The independent (indicator) factors are determined as covariates in regression analysis.

Research Hypotheses

H01: There is no significant difference among respondents opinion (demographic wise and type of respondents wise) regarding largely under-banked Indian population due to low level of Financial Inclusion.

H02: There is no significant difference among respondents opinion (demographic wise and type of respondents wise) regarding low level of financial literacy among the masses.

H03: There is no significant difference among respondents opinion (demographic wise and type of respondents wise) regarding Mutual Funds as long-term investment products.

RESULTS AND DISCUSSION - Data analysis and interpretation is an important part of research to find out the results and finding as the raw data have no meaning without the interpretation. The present research contains utilizing diverse Statistical instrument like Mean and Standard Deviation. The poll contained distinctive inquiries containing different Mutual Fund angles in regard of which the conclusions of the respondents are gathered. A specimen size of 500 respondents was taken (400 respondents from retail financial specialists and 100 from Distributors) to know the supposition of respondents in regards to common reserve conspires in India. The respondents needed to express their level of concurrence with an arrangement of explanations on five point Likert scale running from emphatically oppose this idea to emphatically concur. The present part is result of an experimental examination leading to accomplish inquire about targets. It contains Descriptive Statistics which speaks to mean esteem and standard deviation of every announcement, statistic profiles of respondents

Psychographic Profile of a Retail Mutual Fund Investor in India - The first goal was to determine the psychographic profile of an Indian retail mutual fund investor. The main goal was to learn about the psychographic characteristics of Indian retail investors. To achieve this purpose, eleven hypotheses were devised, and a total sample size of 500 was obtained, including 400 respondents from retail investors and 100 from distributors. To achieve this purpose, a Univariate test was used to verify the significant level (gender-wise, residence-wise, age-wise, occupation-wise, income-wise, and mutual fund stakeholder-wise) of a large number of guesses.

Underbanked Indian Population - On the basis of questionnaire Table 1 shows that 67.2 percent of respondents agree with the statement, followed by 20% who strongly agree, 7.6% who are neutral, and only 5.2 percent who disagree with the statement "The Indian population is largely under-banked with a low level of financial inclusion and under- penetration of Banking and Financial Services."

Table-1: Frequency Distribution of Indian Population Under-Banked

Responses	Frequency	Percentage
Disagree	26	5.2
Neutral	38	7.6
Agree	336	67.2
Strongly Agree	100	20.0
Total	**500**	**100.0**

Table 2 shows that the hypothesis (H01) was insisted upon by the majority of respondents across categories, with no significant differences in respondent feelings (gender-wise, residence-wise, age-wise, education-wise, income-wise, and mutual fund stakeholder-wise) in response to the research statement "The Indian population is largely under-banked with a low level of financial inclusion and participation in financial markets." As a result, the null hypothesis will be accepted, however it's worth noting that in the instance of occupation, the p-value is less than significant (0.05). **The null hypothesis is rejected in this case.**

The balanced R Squared estimation is 97.2 percent,

which refers to the percent of variation clarified by all components. Furthermore, based on the mean value (4.02) and S.D., as well as further statistical contrast across respondent assessments, it can be concluded that the null hypothesis is supported by the majority of respondents across all classes. "There is no significant variation in respondent view on "Indian population is significantly underbanked with poor financial inclusion and under-penetration of Banking and Financial Services."

Table-2: Univariate Analysis of Indian Population Under-Banked

Source	Type III Sum of Squares	Df	Mean Square	F	Sig.
Gender	0.66	1	0.66	1.36	0.24
Residence	0.02	1	0.02	0.04	0.83
Occupation	2.00	1	2.00	4.15	0.04*
Education	1.00	2	0.50	1.04	0.35
Age	0.61	3	0.21	0.42	0.74
Income	1.61	4	0.41	0.83	0.50
Mutual Fund Stakeholders	1.69	1	1.70	3.49	0.06

Financial Literacy Structure - According to the research statement, "Low level of financial literacy among the masses is responsible for limited reach/expansion of BFSI (Banking, Financial Services and Insurance) Sector in India," the majority of respondents (75.6 percent) agree with the research statement, followed by strongly agree (16.8%), neutral (7.2 percent), and disagree (0.4 percent).

Table-3: Frequency Distribution of Low Level of Financial Literacy

Responses	Frequency	Percent
Disagree	2	0.4
Neutral	36	7.2
Agree	378	75.6
Strongly Agree	84	16.8
Total	**500**	**100.0**

Table 3 shows that the majority of respondents believe there is no significant difference across categories (residence-wise, gender-wise, age-wise, occupation-wise, education-wise, and income-wise) in response to the research statement, "Low level of financial literacy among the masses is responsible for limited reach/expansion of BFSI (Banking, Financial Services, and Insurance)." So, **the null hypothesis (H02) is accepted**, yet there is a significant difference among mutual fund stakeholders in one scenario (p-value is less than 0.05). **The null hypothesis is rejected in this case.**

Mutual Fund Positioning as Long-Term Investment

According to Table 4, 55.2 percent agree, 37.6% strongly agree, 7.2 percent are neutral, 1.4 percent disagree, and only 0.4 percent strongly disagree with the research statement, "AMCs should position/market mutual funds as long-term investment products (with a desirable maturity period ranging from five to ten years)".

Table-4: Descriptive Statistics of Mutual Funds as Long-Term Investment

Responses	Frequency	Percent
Strongly Disagree	2	0.4
Disagree	7	1.4
Neutral	27	5.4
Agree	276	55.2
Strongly Agree	188	37.6
Total	**500**	**100.0**

Table 4 shows that the majority of respondents across categories agree with the hypothesis (H03), with no significant differences in respondents' opinions (gender, occupation, education, and income) on the research statement, "AMCs should position/market Mutual Funds as long-term investment products (with a desirable maturity period ranging from five to ten years)." As a result, the null hypothesis is accepted (p-value is more than 0.05). However, there are considerable differences in terms of residence, age, and mutual fund stakeholder (p- value is less than 0.05). The null hypothesis is rejected in this case.

The adjusted R Squared value is 97.8%, which is the percentage of variation explained by all variables. Furthermore, the majority of respondents across categories validate the null hypothesis, "There is no significant difference in respondents' opinion (demographic-wise and type of respondent-wise) regarding AMCs should position/ market mutual funds," based on the mean value (4.28) and S.D. (0.66), as well as little statistical difference among respondents' opinions.

Table -5: Univariate Analysis of Mutual Funds as Long-Term Investment

Source	Type III Sum of Squares	Df	Mean Square	F	Sig.
Model	9184.92[a]	14	656.06	1562.37	0.01
Gender	0.02	1	0.02	0.05	0.82
Residence	5.33	1	5.33	12.70	0.01*
Occupation	0.03	1	0.03	0.08	0.77
Age	3.31	3	1.10	2.63	0.04*
Education	0.93	2	0.46	1.11	0.32
Income	3.96	4	0.99	2.36	0.05
Mutual Fund Stakeholders	2.50	1	2.50	5.96	0.01*

Conclusion - The current study looks at the legislative structure that governs mutual funds, as well as the growth and performance of mutual fund schemes and investor perceptions of mutual funds. In India, the mutual fund industry continues to face challenges such as low investor knowledge and financial literacy, as well as access and reach limitations. The current study will benefit not only the Mutual Fund Industry, but also related financial sectors such as the Insurance and Pension Fund Industries (which share a common investor pool with the Mutual Fund Industry and invest significant amounts of money in the stock market), as well as regulatory bodies such as SEBI, IRDA, and

PFRDA, and industry associations such as AMFI. The study's scope could be expanded by just considering respondents from other occupations.

References :-

1. B, A. (2015). A Study on Factors Affecting Investing on Mutual Funds and its Preference of Retail Investors. *International Journal of Scientific and Research Publications, 5*(8), 11-18.
2. Bhayani M. (2017). A Study of Recent Trends in Indian Mutal Fund Industry. *International Research Journal of Engineering and Technology, 4* (4), 3581- 3583.
3. Café Mutual (Feb 2017). B15 assets on the rise, reach Rs. 2.86 lakh crore . Retrieved from http://cafemutual.com/news/trends/806-b15-assets-on-therise- reach-rs-286-lakh-crore
4. European ETF Market Outlook for 2016. Lyxor Asset Management. Retrieved fromwww.lyxor.com/uploads/tx./European_ETF_Market_Outlook_for_2016.
5. Financial Times. (June 2014).What are proposed collective pension plans?. Retrieved from https://www.ft.com/content/e5c29ee8-ea37-11e3-afb3-00144 feabdc
6. First Post (2016). Choosing funds on the basis of market capitalization. Retrieved from http://www.firstpost.com/investing/sponsored-choosing-funds- onthe-basis-of-market-capitalisation-2561832.html
7. Kumar V. (2016). Performance Evaluation of Private Sector Mutual Funds. *International Journal of Trend in Research and Development , 3*(1), 202-210.
8. Livemint (Jan 2017). Mutual Funds record highest growth in 7 years, Rs. 3.71 thillion added to their kitty Retrieved from http://www.livemint.com/ Money/Mutual-funds-the-highest-growth-in-7-yearsadd-Rs-3.htm
9. Ramanujam V. (2015). Growth and Performance of Indian Mutual Fund Industry During Past Decades. *International Journal of Advance Research in Computer Science and Management Studies , 3* (2), 283-290.
10. Sharma S. (2016). Mutual Funds in India: Evolution, Significance and Need for Study in Reference to ELSS Mutual Funds. *Scientific and Acedemic Publishing, 6*(4), 113-135.
11. Sharma P. (2016). The Development of Mutual Fund Industry in India. *International Journal of Research Granthallyah, 4*(7), 162-173.
12. The Tribune (2017, January). "Mutual fund investments rising in smaller towns: CAMS". Retrieved from http://www.tribuneindia.com/news/business/ mf-investments-rising-insmaller-towns-cams/342616.html
13. Towers et al (2016). Global Pension Fund assets hit record high in 2013. Retrieved from https://www.towerswatson.com/en-IN/Press/2014/02/Globalpe nsion-fund-assets-hit-record-high-in-2013
14. Unnamalai T. (2016). A Study on awarness of Investors About the Mutual Fund Investment in Musiri Taluk. *International Journal of Management, 7*(2), 115-122.

****

उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त अध्यापकों के कार्यमूल्य

डॉ. अमी राठौड़* किरण आमेटा**

शोध सारांश – शोधार्थी द्वारा पीएच.डी. स्तरीय शोध कार्य का मुख्य उद्देश्य उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त अध्यापकों की कार्य मूल्य का अध्ययन करना था।न्यादर्श चयन हेतु शोधार्थी ने उदयपुर जिले के उच्च प्राथमिक विद्यालयों के 1000 अध्यापकों पर संवेगात्मक बुद्धि प्रमापनी का प्रशासन कर न्यादर्श स्वरूप कुल 198 उच्च संवेगात्मक बुद्धि वाले अध्यापकों का चयन किया गया। दत्तों के संकलन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग करते हुए स्वनिर्मित संवेगात्मक बुद्धिलब्धि प्रमापनी एवं कार्यमूल्य प्रमापनी का प्रयोग उपकरण के रूप में किया गया। संकलित दत्तों का विश्लेषण मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-परीक्षण के माध्यम से किया गया था। शोध के निष्कर्ष स्वरूप पाया गया कि उच्च संवेगात्मक बुद्धि वाले ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों के कार्यमूल्य में सार्थक अन्तर होता है।

शब्द कुंजी – उच्च संवेगात्मक बुद्धि, कार्यमूल्य ।

प्रस्तावना – वर्तमान समय की शिक्षा में शिक्षा के भावनात्मक पक्ष की अवहेलना की जा रही है। ऐसे में संवेगात्मक बुद्धिलब्धि वाले शिक्षक छात्रों को भावी जीवन की चुनौतियों का सामना करने तथा समायोजन के लिए तैयार कर सकते है। यदि शिक्षक छात्रों को भावात्मक रूप से समझ कर ज्ञान दे सके, उनके डर, क्रोध, प्रसन्नता, भूख, उद्धेग आदि संवेगों को पहचान कर उनका शोधन कर सके, इन सबके लिए शिक्षक को संवेगात्मक बुद्धिलब्धि युक्त होना चाहिए।

इसके लिए यह आवश्यक है कि एक शिक्षक में उच्च संवेगात्मक बुद्धलब्धि का गुण विद्यमान हो, क्योंकि उच्च संवेगात्मक बुद्धि रखने वाले व्यक्ति सक्रिय तथा अपने आप को अनुकूलित रखते हैं तथा उनके कार्यमुल्य उत्कृष्ट कोटि को होते हैं।

प्रो. डोयले (1993) के अनुसार 'विद्यार्थियों के सर्वागीण विकास में कार्यमूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शिक्षक यदि विद्यार्थियों को समय-समय पर दिशा-निर्देशन प्रदान करें तो विद्यार्थियों के कार्यमूल्यों में गुणवत्ता आयेगी तथा विद्यार्थी प्रभावी तरीके से अपनी शैक्षिक उपलब्धि को अर्जित कर सकेगा।'

यह एक स्वयं सिद्ध मनोवैज्ञानिक साक्ष्य है कि जब हमें विश्वास हो जाता है कि अमुक कार्य करने की मेरे पास क्षमता एव मेहनत है तथा वह कार्य हमारे लिये उपयोगी भी है तो इन दोनों विचारों से हमें स्वत: ही प्रेरणा मिलती है कि कार्य को सफलतापूर्वक सम्पन्न कर दिया जाय और इसकी उपलब्धि या प्राप्त ज्ञान भी आगे कही न कहीं काम में आयेगा ही। इसी विचार को प्रो. ए. कल्स तथा विगफील्ड, 1985 ने कार्य-मूल्य दिया है जिसका सटीक अर्थ है कार्य करने का महत्व एवं उपयोग। चूंकि इसमें तीन बातें है - पूरा करने की सबल संभावना, स्वयं की संलग्नता-प्रयास, तथा भावी उपयोग, इसलिए एकल्स तथा विगफील्ड, 1993 ने इसके तीन मूल्य बतायें-

1. सम्प्राप्ति मूल्य या उपलब्धि मूल्य
2. अंतरंग मूल्य
3. उपयोगिता मूल्य

कार्य-मूल्य

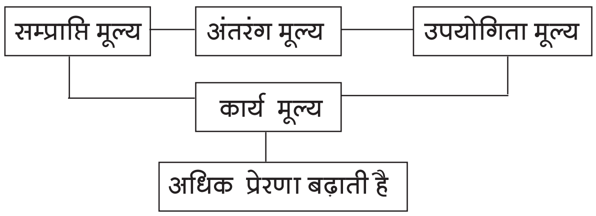

विद्यार्थियों के सर्वागीण विकास में इन समस्त कार्यमूल्यों का योगदान महत्वपूर्ण होता है।

उपरोक्त प्रस्तावना के आधार पर शोधार्थी ने निम्नलिखित उद्देश्यों का निर्धारण किया :-

उद्देश्य:

1. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त समग्र न्यादर्श अध्यापकों के कार्य मूल्यों का पता लगाना।
2. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों के कार्य मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त महिला एवं पुरूष अध्यापकों के कार्य मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ :

1. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों के कार्यमूल्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।
2. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त महिला एवं पुरूष अध्यापकों के कार्यमूल्य में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

शोध विधि – प्रस्तुत अध्ययन का संबंध किसी एक अध्यापक से न होकर उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त अध्यापकों के समूह से है,जिसके लिए **सर्वेक्षण विधि** अधिक उपर्युक्त है, क्योंकि सर्वे के द्वारा ही अध्यापकों के कार्यमूल्यों

*शोध निर्देशक, सहआचार्य, लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी (शिक्षा संकाय) जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड-टू-बी विश्वविद्यालय) उदयपुर (राज.) भारत

के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। यह वर्तमान स्थिति का स्पष्टीकरण तथा भावी-परिवर्तन में सहायक एवं वर्तमान व्यावहारिक समस्याओं का निर्धारण करती है, तथा मानव-व्यवहार के विभिन्न पक्षों के सम्बन्ध में जानकारी प्रदान करती है।

शोध में प्रयुक्त न्यादर्श – अनुसंधान कार्य में न्यादर्श का बड़ा महत्व है। प्रस्तुत शोधकार्य हेतु न्यादर्श का चयन करने के लिए निम्नलिखित सोपनों का प्रयोग किया गया है:-

1. सर्वप्रथम शोधार्थी ने उदयपुर जिले के 500 राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के नामों की सूची जिला कार्यालय से प्राप्त की। इस सूची के विद्यालयों के नामों की चिट्ठिया बनाकर लॉटरी विधि द्वारा 200 राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों का चयन किया।
2. संवेगात्मक बुद्धि उपकरण को अध्यापकों (N=1000) द्वारा प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर मध्यमान ± एक मानक विचलन (64.8+10=74.8) या इससे अधिक अंक प्राप्त करने वाले को उच्च संवेगात्मक बुद्धि वाले अध्यापक कहा गया है, जिनकी संख्या 198 प्राप्त हुई जो कुल न्यादर्श का19.8% प्राप्त हुआ।

शोध उपकरण – न्यादर्श चयन हेतु शोधार्थी द्वारा स्वनिर्मित संवेगात्मक बुद्धि लब्धि प्रमापनी का प्रयोग किया गया तथा शिक्षकों के कार्यमूल्य मापन हेतु स्वनिर्मित कार्यमूल्य प्रमापनी का प्रयोग किया गया।

शोध प्रविधि – आंकड़ों के संकलन के पश्चात् उनका विश्लेषण करने हेतु सांख्यिकी प्रविधि का प्रयोग किया जाता है। प्रस्तुत अध्ययन में शोधार्थी द्वारा निम्नलिखित सांख्यिकी का प्रयोग किया गया है :-

1. मध्यमान
3. मानक विचलन
4. टी-परीक्षण

शोध के परिणाम एवं निष्कर्ष :-

सारणी संख्या 1 : उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त समग्र न्यादर्श अध्यापकों के कार्य मूल्यों का प्रतिशत मध्यमान के आधार पर विश्लेषण

क्र.	क्षेत्र	N	कथनों की संख्या	कट-पोईन्ट मध्यमान	वास्तविक मध्यमान
1.	उपलब्धि मूल्य	198	12×3=36	36	40.00
2.	अंतरंग मूल्य	198	11×3=33	33	40.2
3.	उपयोगिता मूल्य	198	12×3=36	36	40.5

सारणी से निम्न परिणाम परिलक्षित होते हैं :-

1. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त समग्र अध्यापकों (N=198) द्वारा कार्य मूल्य प्रमापनी के उपलब्धि मूल्य क्षेत्र के 12 कथनों का वास्तविक मध्यमान 40.00 प्राप्त हुआ जो कट पोईन्ट मध्यमान (12×3=36) 36 से अधिक है।
2. कार्य मूल्य के आभास अंतरंग मूल्य के 12 कथनों पर उच्च संवेगात्मक समग्र अध्यापकों द्वारा व्यक्त राय का वास्तविक मध्यमान 40.2 प्राप्त हुआ जो कट पोईन्ट मध्यमान 36 से अधिक है। अत: उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त अध्यापकों के अन्तरंग मूल्य क्षेत्र पर सकारात्मक तथा संतोषप्रद परिणाम प्राप्त हुआ।
3. कार्य मूल्य प्रमापनी के क्षेत्र 'उपयोगिता मूल्य' पर समग्र अध्यापकों द्वारा व्यक्त राय का वास्तविक मध्यमान 40.5 प्राप्त हुआ जो कट पोइन्ट मध्यमान 36 से अधिक प्राप्त हुआ वास्तव 'उपयोगिता मूल्य' क्षेत्र के कथनों से प्राप्त राय के अनुसार उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त समग्र अध्यापक संतुष्ट तथा संतोष व्यक्त करते है।

सारणी संख्या 2 : (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख संख्या 1 : (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या –

1. कार्य मूल्य प्रमापनी के आयाम 'उपलब्धि' पर दोनों समूहों के लिए टी-मान 2.94 प्राप्त हुआ, जो कि df =196 के 0.01स्तर के सारणीमान 2.60 से उच्च है, जो यह दर्शाता हैं कि दोनों समूहों के मध्यमानों के बीच अन्तर सार्थक है।
2. कार्य मूल्य प्रमापनी के आयाम 'अंतरंग' पर दोनों समूहों के लिए टी-मान 3.78 प्राप्त हुआ, जो कि df =196 के 0.01स्तर के सारणीमान 2.60 से उच्च है, जो यह दर्शाता हैं कि दोनों समूहों के मध्यमानों के बीच अन्तर सार्थक है।
3. कार्य मूल्य प्रमापनी के आयाम 'उपयोगिता' पर दोनों समूहों के लिए टी-मान 3.80 प्राप्त हुआ, जो कि df=196के 0.01स्तर के सारणीमान 2.60 से उच्च है, जो यह दर्शाता हैं कि दोनों समूहों के मध्यमानों के बीच अन्तर सार्थक है।

सारणी संख्या 3 : (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

आरेख संख्या 2 : (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या –

1. कार्य मूल्य प्रमापनी के आयाम 'उपलब्धि' पर दोनों समूहों के लिए टी-मान 2.55 प्राप्त हुआ, जो कि df=196के 0.05स्तर के सारणीमान 1.97 से उच्च है, जो यह दर्शाता हैं कि दोनों समूहों के मध्यमानों के बीच अन्तर सार्थक है।
2. कार्य मूल्य प्रमापनी के आयाम 'अंतरंग' पर दोनों समूहों के लिए टी-मान 6.25 प्राप्त हुआ, जो कि df=196के 0.01स्तर के सारणीमान 2.60 से उच्च है, जो यह दर्शाता हैं कि दोनों समूहों के मध्यमानों के बीच अन्तर सार्थक है।
3. कार्य मूल्य प्रमापनी के आयाम 'उपयोगिता' पर दोनों समूहों के लिए टी-मान 3.33 प्राप्त हुआ, जो कि df=196के 0.01स्तर के सारणीमान 2.60 से उच्च है, जो यह दर्शाता हैं कि दोनों समूहों के मध्यमानों के बीच अन्तर सार्थक है।

निष्कर्ष :

1. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त ग्रामीण शिक्षकों की अपेक्षा शहरी शिक्षक अपने पास उपलब्ध साधन-सुविधाओं का भरपूर उपयोग करके अधिगम को अधिक स्थायी बनाते हैं तथा हर छात्र के सीखने के तरीके को समझकर उसके अनुरूप अपने शिक्षण कार्य को अधिक संयोजित करते हैं।
2. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त ग्रामीण शिक्षकों की अपेक्षा शहरी शिक्षक विद्यार्थियों की रूचियों एवं आवश्यकताओं का विशेष ध्यान रखकर अध्यापन इस तरह कराते हैं कि विद्यार्थियों की जिज्ञासा बढ़े, विद्यार्थी स्वयं सोचे, खोजे, देखे तथा निष्कर्ष निकाले।
3. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त ग्रामीण शिक्षकों की अपेक्षा शहरी शिक्षक विद्यार्थियों की योग्यता वृद्धि पर विशेष ध्यान देतें है तथा कोई विद्यार्थी अच्छा कार्य करता है तो उसकी प्रशंसा करते हैं।

4. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त पुरूष शिक्षकों की अपेक्षा महिला शिक्षक प्रत्येक पाठ के बिन्दु को व्यवस्थित एवं सार्थक बनाकर प्रस्तुत करती है तथा विद्यार्थियों से गलती होने पर डाँटने की बजाय गलती को सुधारने पर ज्यादा बल देती है।
5. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त पुरूष शिक्षकों की अपेक्षा महिला शिक्षक विद्यार्थियों के साथ उचित सम्पर्क करके संज्ञानात्मक सहभागिता तथा सम्बद्धता की आवश्यकता को अधिक बढ़ावा देती है।
6. उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त पुरूष शिक्षकों की अपेक्षा महिला शिक्षक उपयोगी शैक्षिक कार्यों को करवाने पर अधिक बल देती हैं तथा विद्यार्थियों को सीखने हेतु आत्मविश्वास को बढ़ाने में अधिक विश्वास रखती है।

वर्तमान में प्रासंगिकता – इस शोध आलेख के अध्ययन द्वारा उच्च संवेगात्मक बुद्धियुक्त अध्यापक अपने शिक्षण को कार्यमूल्य के साथ करते हुए विद्यार्थियों की अधिगम की ओर रूचि बढ़ाते हुए कक्षा कक्ष के वातावरण को अधिक अच्छा बना सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Verma, Yogindar (2007) : "Education Human Values for Human Excellenence".
2. Gupta, Dr. N.L. (1992) : "A Search for Human Values".
3. Singha, Madhuri; Yunus, Sabiha (2000) : "Values and Personality Disposition of University Teachers.
4. Gupta, Dr. N.L. (1992) : "Creativity and Values Education Perspectives".
5. Bagheeayalle, Mrs. Saroj : "The Cultural Values of Adolescents".
6. Harding, D.W. (1963) : "Social Psychology and Individual Values".
7. गोलवलकर, डॉ. श्रीमती शोभा; भाटी, श्रीमती सीमा सिंह : 'मूल्य शिक्षा'।
8. Allport, G.W. et al. (1931) : "Study of Values", Houghton Mifflin Co., Boston.
9. Allport, C.W., Vernon, P.E., & Lindrey, G. (1931-1960) : "A Study of values", Boston Houghton, Miffin.
10. Best, J.W. (1963) : "Research in Education" Prentice Hall of India, New Delhi.
11. Borg, W.R. Or Gallm (1973) : "Education Research An Introduction" Longmen Research, New Delhi.

सारणी संख्या 2 : उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों के कार्य मूल्यों का तुलनात्मक विश्लेषण

क्र.	प्रमापनी के आयाम	मध्यमान		मानक विचलन		टी-मान	.05/.01स्तर परसार्थकता
		समग्र शहरी अध्यापक (N=108)	समग्र ग्रामीण अध्यापक (N=90)	समग्रशहरी अध्यापक (N=108)	समग्र ग्रामीण अध्यापक (N=90)		
1.	उपलब्धि	41.5	38.5	6.0	8.1	2.94	.01 स्तर पर
2.	अंतरंग	41.6	38.6	7.7	8.4	3.78	.01 स्तर पर
3.	उपयोगिता	42.5	38.5	6.8	7.9	3.80	.01 स्तर पर

आरेख संख्या 1 : उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों के कार्य मूल्यों के मध्यमान

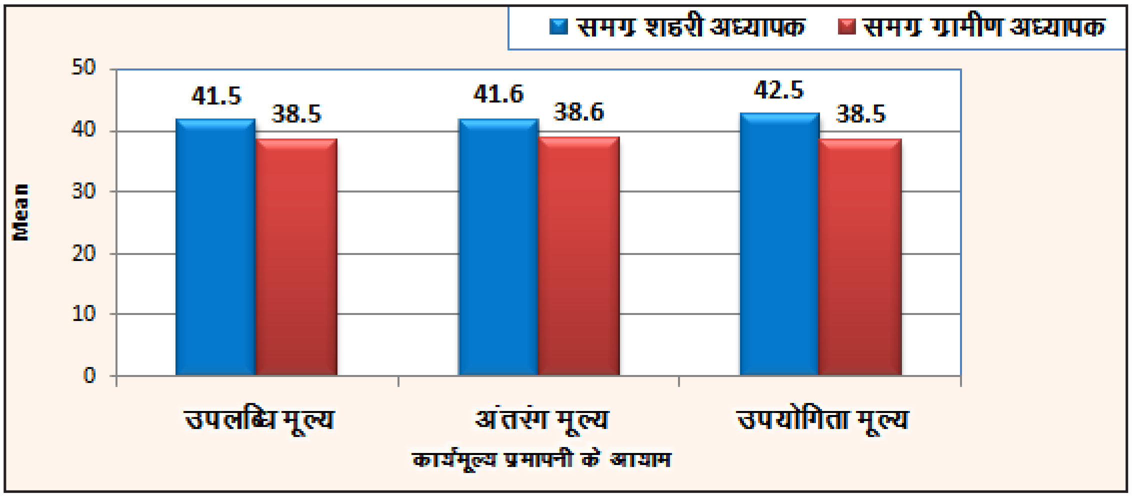

सारणी संख्या 3 : उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त महिला एवं पुरूष अध्यापकों के कार्य मूल्यों का तुलनात्मक विश्लेषण

क्र.	प्रमापनी के आयाम	मध्यमान		मानक विचलन		टी–मान	.05/.01स्तर परसार्थकता
		समग्र महिला (N=110)	समग्र पुरूष (N=88)	समग्र महिला (N=110)	समग्र पुरूष (N=88)		
1.	उपलब्धि	38.8	41.2	8.2	5.1	2.55	.05 स्तर पर
2.	अंतरंग	38.3	41.8	8.5	6.8	6.25	.01 स्तर पर
3.	उपयोगिता	39.0	42.0	8.1	5.3	3.33	.01 स्तर पर

आरेख संख्या 2 : उच्च संवेगात्मक बुद्धि युक्त महिला एवं पुरुष अध्यापकों के कार्य मूल्यों के मध्यमान

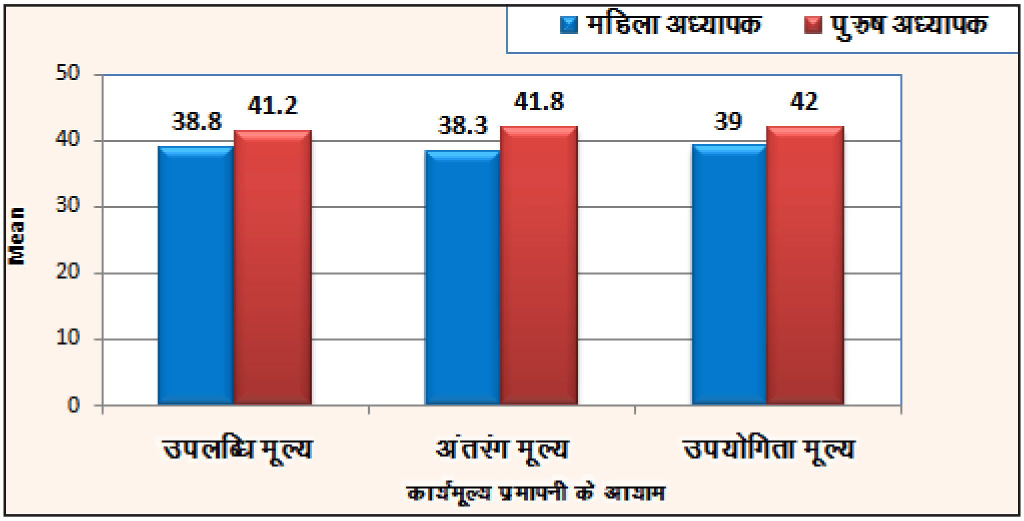

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Role of Brand Image in influencing Customers' buying behavior for Patanjali Products in Personal Care Category

Dr. Sonal Gupta *

Abstract - Patanjali products had undoubtedly created revolution in FMCG market with its presence as Indian product. Brand image of yoga guru Baba Ramdev has contributed indecisively in creating a positive image of Patanjali products among Indian households. The purpose of the study is to explore the role of brand image of Baba Ramdev in influencing buying behavior of customers for Patanjali products in personal care category. It also attempts to study the role of brand image in influencing customers' perception towards perceived risk and perceived quality among customers. A sample of 147 respondents were drawn through convenience sampling method. Study hypotheses were tested with ANOVA and t-test. Study result indicates that Baba Ramdev brand image puts significant impact on customers' buying behavior by affecting their perception towards perceived risk and perceived Quality in personal care category
Keywords- Brand Image, Buying Behavior, Perceived Quality, Perceived Risk, Personal Care.

Introduction - Out of the blues of big multinational brand names in FMCG, a new name Patanjali Ayurveda came in to existence in 2006 by yoga guru Baba Ramdev and Acharya Balkrishna. As the name incorporates Ayurveda the company utilizes the strategy of connecting Indian people with nature through their products and no wonders it succeeded. Baba Ramdev portrayed himself as the face of the brand. Well might be for consumers this came all of a sudden but it had started years back when baba Ramdev tried to connect people with yoga, nature and Ayurveda with his lifestyle and teachings. His years of brand building actually came as a resultant effect by the name of Patanjali Ayurveda.

Baba Ramdev pitched it very rightly in market, when most of the FMCG companies are providing chemical based products.

Present study aims to access the role of baba Ramdev's brand image in influencing customers buying behavior towards Patanjali products in personal care category. Moreover, it attempts to find the influence of brand image of Baba Ramdev on perceived risk and perceived quality among customers.

Objectives:

1. To examine the influence of Baba Ramdev's brand image on buying behavior of customers for Patanjali products in personal care category.
2. To study the influence of Baba Ramdev's brand image on customers' perception towards perceived risk for Patanjali products personal care category.
3. To explore the influence of Baba Ramdev's brand image on customers' perception towards perceived quality for Patanjali products personal care category.

Literature Review

For a company brand act as asset (Chen & Chang, 2008) A brand can be defines as a name, term, sign, symbol or design or a combination of all of these that intended to identify the goods and services of one seller or a group of sellers and to differentiate them from those of competitors" (Kotler, 1997, p. 443). Brand credibility is defined as the believability of brand intentions at a particular time (Erdem and Swait 2004).

Many studies in the past had found the importance of credibility of brand endorsers in influencing purchasing intentions of consumers (Agrawal & Kamakura, 1995). Consumer's perception consists of two phases one is brand reliability and his experience with the brand regarding its capability of performing what it promises (Erdem et al, 2002).

Farquhar (1990) suggested the perceived quality relates positively with brand credibility. Both goes parallel with one another. As credibility increase so as the perceived quality of product as a result it reduces perceived risk. Credibility is senders image value or characteristic that have the power to positively influence receiver in accepting the message transferred. (Ohanion ,1990)

The consumer behaviour is a combination of customer's buying awareness combined with external motivators lead to change in the consumer's behaviour (Kar, 2010).

Perceived quality can be defined "as the consumer's judgment about a product's overall excellence or superiority" (Zeithaml,1988). Perceived quality increases consumers'

*Associate Professor, Acropolis Technical Campus, Indore (M.P.) INDIA

confidence in product that leads to customer buying process (Pappu et al. ,2005)

Shiffman and Kanuk (2000) has defined the perceived risk as "the uncertainty consumers face when they cannot foresee the consequences of their purchase decisions".

Research Methodology - The study encompasses a descriptive research design. Primary and secondary both data were carried out to conduct the study. Data was collected through self-design survey instrument. Questionnaire was designed on Likert scale, the 5-point scale has a rating from 1=strongly disagree to 5=strongly agree.

Sample was drawn on the basis of convenience sampling technique from Indore city of Madhya Pradesh. In total 200 respondents were communicated through hard copy questionnaire and google form of the same. 158 responses came back and after checking missing values and other requirements 147 responses were found suitable for analysis.

Cronbach's coefficient alpha was applied to test the reliability of the self-designed questionnaire used in the study. The instrument was found reliable with alpha value of .74 which is acceptable and good according to past research. For face and content validity instrument was distributed to 57 subject experts for review. The questionnaire was edited according to review and then administered for the study among respondents.

The hypotheses of the study were tested through one way ANOVA and t-test.

Data Analysis

$H_{o1:}$ There is no significant influence of Baba Ramdev's brand image on customers buying behavior for Patanjali products in personal care category.

$H_{11:}$ There is significant effect of Baba Ramdev brand on customers buying behavior for Patanjali products in personal care category.

ANOVA -

One-way ANOVA

	Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
Between Groups	3.559	4	1.165	.740	.02
Within Groups	56.269	42	1.552		
Total	59.828	46			

Table value indicates that significance value is less than .05 hence null hypothesis is rejected and alternate is accepted Thus result shows that there is significant influence of Baba Ramdev's brand image on customers buying behavior for Patanjali products in personal care category.

H_{o2}:Baba Ramdev brand image has no significant role in influencing customers' perception perceived risk for Patanjali products in personal care category.

H_{12}:Baba Ramdev brand image has significant role in influencing customers' perception perceived risk for Patanjali products in personal care category.

Table (see in next page)

Results of t-test indicates that significant value is less than .05 hence null hypothesis H_{o2}: Brand image of Baba Ramdev has no significant role in significant role in influencing customers' perception towards perceived risk for Patanjali products in personal care category, is rejected and thus suggests that brand image of Baba Ramdev play significant role in influencing customers' perception towards perceived risk for Patanjali products in personal care category.

$H_{o3:}$ Baba Ramdev brand image has no significant role in influencing customers' perception towards perceived quality for Patanjali products in personal care category.

$H_{13:}$ Baba Ramdev brand image has no significant role in influencing customers' perception towards perceived quality for Patanjali products in personal care category.

Table (see in next page)

Results of t-test indicates that significant value is more than .05 hence null hypothesis $H_{o3:}$ Brand image of Baba Ramdev has no significant role in influencing customers' perception towards perceived quality for Patanjali products in personal care category, is rejected thus it implies that brand image of Baba Ramdev has significant role in influencing customers' perception towards perceived quality for Patanjali products in personal care category.

Conclusion and Discussions - Patanjali could be considered as the first FMCG brand name that have a yoga guru as its brand ambassador. It opens up a new space for research in the field of brand credibility and its impact on customer perception. Study results indicate that brand image of Baba Ramdev, a spiritual guru can influence buying decisions. The personality and knowledge of baba Ramdev inspire customers to own Patanjali products as they relate it with nature. Furthermore, the study also highlighted the positive impact of baba Ramdev image on customers perception in terms of its influence on perceived risk and perceived quality of Patanjali products in personal care category. Perceived risk and perceived quality provide customers ability to judge and differentiate between brands (Pappu. Et al, 2005).

Strategically the brand Patanjali has established itself as a lifestyle that is simple and pure. Baba Ramdev has well positioned its image as swadeshi in front of Indians especially when many FMCG companies were catering customers with chemical products.

The study concludes that Patanjali brand has rightly pick the need of the customers in fast moving life. The perception and reality of being closed to nature worked well with face of the brand Baba Ramdev.

References:-

1. Agrawal, J., Kamakura, W. A. (1995). The economic worth of celebrity endorsers: An event study analysis. Journal of Marketing, 59(3), 56-62.
2. Chen, C.F., and Chang, Y.Y. 2008. "Airline brand equity, brand preference, and purchase intentions – The

moderating effects of switching costs", The Journal of Air Transport Management", Vol.14, pp. 40-43.

3. Erdem, T & Swait, J. (2004). Brand credibility, Brand Consideration, and Choice. Journal of Consumer Research, 31, 191-198.
4. Erdem, T., Swait, J. and Louviere, J. (2002). The Impact of Brand Credibilty on Consumer Price Sensitivity, International Journal of Research in Marketing, 19, 1-19.
5. Farquhar, P. H. (1990). Managing Brand Equity, Journal of Advertising Research, 30, 4, 7-12.
6. Kar, M. (2010), "Consumer behaviour over the last 25 years", Oxirm Research Themes, Oxford Institute of Retail Management, The Retail Digest, pp. 46-53.
7. Kotler, P. (1997). Marketing Management, 7th Edition. Englewood Cliffs: NJ: Prentice-Hall.
8. Ohanian, R. (1990). Construction and validation of scale to measure celebrity endorser's perceived expertise, trustworthiness, attractiveness. Journal of Advertising , 324-340.
9. Pappu, R., Quester, P.G, and Cooksey, R.W. (2005). Consumer-based brand equity: Improving the measurement- empirical evidence. Journal of Product and Brand Management, Vol. 104, No. 3, pp.
10. Shiffman, L. & Kanuk, L. (Ed.). (2000). Consumer Behavior. Upper Saddle River, NJ: Prentice-Hall.
11. Zeithaml, V.A. (1988). Consumer perceptions of price, quality, and value: A means-end model and synthesis of evidence. Journal of Marketing, Vol. 52, No. 3, pp. 2-22. http://dx.doi.org/10.2307/1251446.

Paired Variables	**Paired Differences**					**t**	**df**	**Sig.(2-tailed)**
	Mean	**Std.Deviation**	**Std.ErrorMean**	**95% Confidence interval of the Difference**				
				Lower	**Upper**			
Pair 1-brand credibility-Perceived risk	.87	.90	.154	.50	1.00	5.23	49	.002

Paired Variables	**Paired Differences**					**t**	**df**	**Sig.(2-tailed)**
	Mean	**Std.Deviation**	**Std.ErrorMean**	**95% Confidence interval of the Difference**				
				Lower	**Upper**			
Pair 1-brand credibility-Perceived quality	.83	.88	.139	.54	1.07	4.52	49	.003

✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲

बजट तैयार करने में चित्तौड़गढ़ क्षेत्र के जन प्रतिनिधियों की भूमिका

बीना राणावत *

प्रस्तावना – 'बजट, सरकार के आय-व्यय का अनुमान मात्र नहीं है बल्कि यह एक प्रतिवेदन, एक अनुमान तथा एक प्रस्ताव, तीनों है या इसे होना चाहिए। यह एक ऐसा लेखा पत्र है जिसके माध्यम से कार्यपालिका, व्यवस्थापिका के सम्मुख आती है और विस्तार के साथ अतीत, वर्तमान और भविष्य की वित्तीय स्थितियों का प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है।' -एफ. डब्ल्यू. विलोबी

राज्य की उत्पत्ति के साथ ही वित्त का भी किसी ना किसी रूप में अस्तित्व रहा है। चूंकि राज्य की उत्पत्ति के उद्देश्यों में से सर्वप्रमुख उद्देश्य जनकल्याण है अत: सरकार द्वारा किये गये समस्त कार्यो का अंतिम उद्देश्य जनकल्याण ही होता है। प्रत्येक लोकतांत्रिक सरकार प्रत्येक वर्ष जनकल्याण हेतु अनेक योजनाओं, परियोजनाओं, कार्यक्रमों आदि का संचालन करती है। इन योजनाओं और परियोजनाओं के संचालन हेतु वित्त की आवश्यकता होती है जिसे सरकार प्रत्येक वर्ष बजट के रूप में विधायिका से स्वीकृत करवाती है। **भारत के संविधान** के **अनुच्छेद** 112 में इसे **'वार्षिक वित्तीय विवरण'** के रूप में वर्णित किया गया है।

यद्यपि बजट सरकार द्वारा वर्षभर प्राप्त होने वाली आय तथा किये गये और किये जाने वाले व्यय का विवरण होता है तथापि यह इससे भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण होता है। प्रथमत: यह समझने की आवश्यकता है कि बजट किसी लोकतांत्रिक सरकार की जनता के प्रति जवाबदेयता को सुनिश्चित करने का उपाय है जिसमें कार्यपालिका द्वारा जनता के द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित विधायिका के सामने अपने द्वारा वर्षभर किये जाने वाले कार्यो के लिए वित्तीय स्वीकृति हेतु बजट के रूप में प्रस्ताव रखा जाता है जिस पर पर्याप्त चर्चा, वाद-विवाद और संशोधन के बाद ही अनुमति प्रदान की जाती है। इस प्रकार से सरकार के कार्यो पर जनता द्वारा अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों के माध्यम से स्वीकृति प्रदान की जाती है। इस संबंध में लोकसभा के प्रथम अध्यक्ष **श्री जी.वी. मावलंकर** का कहना था-'यह एक मान्य सिद्धांत है कि वित्त विधेयक के किसी भी विषय पर चर्चा की जा सकती है और जनता की किसी कठिनाई पर प्रकाश डाला जा सकता है। इसका आधार यह सिद्धांत है कि किसी भी नागरिक से तब तक कोई कर ग्रहण नहीं किया जायेगा जब तक कि उसे संसद के माध्यम (जनप्रतिनिधि) से अपने विचार प्रस्तुत करने तथा असंतोष प्रकट करने का पर्याप्त अवसर प्राप्त नहीं हो जाये।'

दूसरी ओर बजट सरकार के आय-व्यय का लेखा-जोखा मात्र ना होकर सरकार पर विधिक नियंत्रण स्थापित करने का एक उपाय भी है। गहन दृष्टि से देखने पर यह ज्ञात होता है कि बजट एक ओर जनप्रतिनिधियों की सरकार के प्रति एवं सरकार के विरूद्ध शक्ति है तथा सरकार पर नियंत्रण स्थापित करने का साधन है। वहीं दूसरी ओर जनप्रतिनिधियों के लिए यह आमजन के प्रति अपने कर्तव्यों को पूर्ण करने के लिए एक अवसर के रूप में है। जनप्रतिनिधियों द्वारा बजट में सक्रिय भूमिका निभा कर अपने पद और इस अवसर का जनकल्याण के लिए भरपूर लाभ उठाया जाना चाहिए। सामान्यत: निम्नलिखित क्रियाएँ जनप्रतिनिधियों के लिएबजट का लाभ उठाने में सहायक हो सकती हैं-

सक्रियता – सामान्यत: फरवरी माह में बजट प्रस्तुत होने के 7-8 माह पूर्व ही बजट की तैयारियाँ प्रारम्भ हो जाती हैं तथा सितम्बर माह में सभी विभागों के विभागाध्यक्षों के पास बजट अनुमान तैयार करने हेतु निर्धारित प्रपत्र भेजा जाता है जिसमें प्रत्येक विभाग अपनी वर्षभर की आय-व्यय के आँकड़े भरता है तथा आगामी वर्ष के लिए माँगों या आवश्यकताओं का विवरण भी दिया जाता है। जनप्रतिनिधियों से यह अपेक्षा की जाती है कि जब विधायिका का सत्र नहीं चल रहा हो तबवे अपने क्षेत्र में भ्रमण कर सभी प्रकार की समस्याओं और आवश्यकताओं की सूची तैयार कर लेवें तथा सभी सम्बंधित विभागों को इन आवश्यकताओं से अवगत करवा कर उनकी माँग सूची में दर्ज करवा लेवें ताकि बजट के प्रारूप के साथ यह भी कार्यपालिका तक पहुँच जायें। इस प्रकार यह जनप्रतिनिधिकी सक्रियता पर निर्भर करता है कि वह अपने क्षेत्र में कितने अधिक सक्रिय हैं तथा क्षेत्र की अधिक से अधिक माँगों को सम्बंधित विभाग तक पहुँचा पा रहे हैं। चित्तौड़गढ़ के सभी विधायक समय-समय पर जनता के मध्य उपस्थित होते हैं और जनसुनावाई के माध्यम से जनता की समस्याओं को जानने का प्रयास भी करते हैं जिससे चित्तौड़गढ़ क्षेत्र की समस्याओं को सरकार के समक्ष रख सकें और शामिल करवा सकें।

सदन में उपस्थिति – जनप्रतिनिधियों की बजट में भूमिका के लिए सर्वाधिक आवश्यक तत्व उनकी सदन में उपस्थिति है। अगर जनप्रतिनिधि उपस्थित ही नहीं होंगे तो बजट सत्र में वो अपने क्षेत्र को प्रतिनिधित्व प्रदान कर पाने में विफल रहेंगे और क्षेत्र की माँगों और आवश्यकताओं को प्रस्तुत ही नहीं कर पायेंगे। राजस्थान की दसवीं एवं ग्यारहवीं विधानसभा के बजट सत्रों मेंचित्तौड़गढ़ क्षेत्र के जनप्रतिनिधि लगभग 28 से 37 प्रतिशत के अनुपात में सम्पूर्ण सत्र में अनुपस्थित रहे हैं। इसका परिणाम यह है कि राजस्थान की इतने प्रतिशत जनता और क्षेत्र का बजट सत्र में प्रतिनिधित्व नहीं हो पाया है और ना ही उनकी आवश्यकताओं पर चर्चा हो पायी है। अत: जनप्रतिनिधियों से यह अपेक्षा रहती है कि वह बजट सत्र एवं अन्य सत्रों में भी अपनी अधिकतम उपस्थिति दर्ज करवा कर कार्यवाही में भाग लें साथ ही सक्रिय रूप से प्रस्तावों पर अपने विचार एवं माँगे रखें।जहाँ एक ओर चित्तौड़गढ़ जिले के विधायकों की सदन में उपस्थिति कम हैं वहीं दूसरी ओर सदन में प्रश्न पूंछने में भी जिले के विधायक बहुत पीछे हैं। जिले के विधायकों की सक्रियता पर प्रश्न

* शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

चिह्न खड़ा होता है।

आय–व्ययक एवं माँगों पर चर्चा – सदन में एक निश्चित दिन आय–व्ययक प्रस्तुत किया जाता है तथा इसके बाद अध्यक्ष द्वारा निर्धारित दिन इस पर सम्पूर्ण रूप से या इसके अर्न्तगत किसी सिद्धांत के किसी प्रश्न पर चर्चा की जाती है। इस समय सदस्यों के पास अवसर होता है कि चर्चा में अपना पक्ष रख सकें तथा अपने क्षेत्र की आवश्यकताओं को इनसे सम्बंधित कर सकें। इसके अतिरिक्त विपक्षी दल के सदस्यों के पास यह अवसर होता है कि वह सरकार की नीतियों और योजनाओं की कमियाँ बताकर उनकी आलोचना कर सकें। जनप्रतिनिधियों की क्षेत्र में सक्रियता का एक लाभ यह भी होता है कि उन्हें अपने क्षेत्र की वस्तुस्थिति का ज्ञान होता है तथा उसमें उपस्थित समस्याओं की भी जानकारी रहती है जिन्हें वह बजट सत्र के दौरान प्रस्तावों से जोड़ कर प्रस्तुत कर सकते हैं। विधानसभा सदस्यों से यह अपेक्षा की जाती है कि उन्हें बजट सत्र से पूर्व अपने सम्पूर्ण क्षेत्र का जायजा ले लेना चाहिये या अपने कार्यकर्ताओं या स्थानीय प्रतिनिधियों से उनकी माँगों व आवश्यकताओं के बारे में विचार–विमर्श कर लिया जाना चाहिए जिससे सदस्य का बजट सत्र में आने से पूर्व एक पक्का होमवर्क हो जाये। इससे यह लाभ होगा कि बजट में प्रस्तुत की गई योजनाओं और कार्यक्रमों के साथ स्थानीय माँगों को जोड़ा जा सकेगा तथा अपने क्षेत्र के लिए बजट की योजना या अनुदान में विशेष माँग की जा सकेगी। साथ ही सदस्य को अपने क्षेत्र की स्थानीय समस्याओं को प्रस्तुत करने और उन्हें स्पष्ट रूप से सरकार तक पहुँचाने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं आयेगी। साथ ही किसी अन्य सदस्य द्वारा प्रस्तुत की गई समस्या, जो कि उनके क्षेत्र की समस्या से समानता रखती है का समर्थन किया जा सकेगा और उसका सन्दर्भ भी दिया जा सकेगा।

कटौती प्रस्ताव – बजट में प्रत्येक विभाग से सम्बंधित अनुदान माँगों पर विभागवार प्रत्येक व्यय पर चर्चा होती है। अनुदान माँगों पर कटौती के लिए सामान्यत: तीन कटौती प्रस्ताव आ सकते हैं यथा, नीतिगत कटौती प्रस्ताव, मितव्ययता सम्बंधित कटौती प्रस्ताव तथा प्रतीकात्मक कटौती प्रस्ताव। विपक्षी दल के सदस्यों के लिए सरकार पर नियंत्रण स्थापित करने और बजट की आलोचना करने के लिए यह एक स्वर्णिम अवसर की तरह है। यद्यपि सरकार के पास बहुमत होने की वजह से ये प्रस्ताव पारित नहीं हो पाते हैं परन्तु सदस्य इस रूप में अपना विरोध दर्ज करवा सकते है। सदस्य यदि सरकार की किसी नीति का विरोध कर रहे हैं तो वह नीति सम्बंधित कटौती प्रस्ताव ला सकते हैं जिसमें वास्तविक माँग की धनराशि को केवल एक रूपये के रूप में परिवर्तित करने का प्रस्ताव होता है तथा इस नीति के विकल्प के रूप में विपक्षी दल के सदस्यों द्वारा दूसरी नीति प्रस्तावित की जा सकती है। इस प्रकार सरकार द्वारा प्रस्तुत की गई नीति की आलोचना की जा सकती है।

दूसरी ओर विपक्षी दल के सदस्य यदि किसी वर्तमान में संचालित नीति या योजना की आलोचना करना चाहते हैं और उन्हें लगता है कि इसमें सरकारी धन का अपव्यय हो रहा है तो वे इस हेतु मितव्ययता सम्बंधित कटौती प्रस्ताव प्रस्तुत कर एक विशिष्ट राशि अनुदान में से कम करने का प्रस्ताव रख सकते हैं। इसी प्रकार सरकार को किसी विशिष्ट विभाग या योजना से सम्बंधित समस्या से अवगत करवाने के लिए प्रतीकात्मक कटौती प्रस्ताव लाया जा सकता है जिसमें सम्बंधित अनुदान की माँग में से 100 रूपये की कटौती का प्रस्ताव लाया जा सकता है। इस प्रकार सदस्य विपक्षी दल के सदस्य के रूप में किसी भी विभाग, क्षेत्र या योजना से सम्बंधित समस्या की ओर सरकार का ध्यान आकृष्ट कर अपनी उपस्थिति दर्ज करवा सकते हैं और सरकार का घेराव कर सकते हैं।

वार्षिक प्रतिवेदन – प्रत्येक वर्ष राजस्थान विधानसभा में लगभग 127 वार्षिक प्रतिवेदन, जिनमें राजस्थान लोक सेवा आयोग, राज्य मानवाधिकार आयोग आदि आयोग, विभिन्न विकास प्राधिकरण, अधिकरण, निगम, मण्डल, संघ, निदेशालय, विभाग, राजकीय उपक्रम आदि शामिल हैं,द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं तथा इन पर चर्चा होती है। कई ऐसे आयोग हैं जिनकी सिफारिशों को ना मानने पर सरकार द्वारा इस समय उसके लिए स्पष्टीकरण देना पड़ता है। विपक्षी दलों के सदस्यों के लिए यह सरकार को घेरने के अवसर की तरह है जहाँ उन मुद्दों पर सरकार की आलोचना की जा सकती है जिन पर आयोग की सिफारिशों को नहीं माना गया है। वहीं दूसरी ओर सभी सदस्य इन वार्षिक प्रतिवेदनों का अध्ययन कर विभागों व आयोगों की कमियों को उजागर कर सकते हैं और इसमें हो रही वित्तीय अनियमितताओं या अपव्यय या वित्त की कमी को सदन के सामने ला सकते हैं। साथ ही विभाग की किसी योजना में दिये जाने वाली राशि की कमी या वृद्धि पर बजट सत्र में प्रश्न उठाया जा सकता है। वार्षिक प्रतिवेदनों के अध्ययन से जनप्रतिनिधियों को अपने क्षेत्र में विभागों में कमियों की जानकारी मिलती है जिसे विधायिका में उठाया जा सकता है और सरकार का उनकी तरफ ध्यान आकर्षित किया जा सकता है।

बजट में कटौती – सामान्यत: सरकार द्वारा बजट में किये गये प्रावधान उस वर्ष किसी योजना पर होने वाले अधिकतम व्यय को प्रदर्शित करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक योजना पर प्रस्तावित व्यय को कम किये जाने की संभावना रहती है। संविधान के प्रावधान के अनुसार बजट में वर्णित व्यय के प्रावधानों को कम तो किया जा सकता है परन्तु वृद्धि नहीं की जा सकती है। अत: विपक्षी दल के सदस्यों के लिए यह उपयुक्त अवसर होता है जब वह बजट के प्रावधानों को कम करवा कर ऐसी योजनाओं या कार्यक्रमों में संभावित अपव्यय को रोक सकते हैं और योजनाओं की आलोचना कर सकते हैं साथ ही साथ करों के प्रावधानों को कम करवा कर जनता से वाहवाही लूट सकते हैं जो कि उनकी उपलब्धि के रूप में गिनी जायेगी।

समितियों के सदस्य के रूप में – विधान सभा में विशेष विषयों, मुद्दों व प्रस्तावों पर विशेष रूप से चर्चा व सुझाव के लिए विधायी समितियों का प्रावधान हैं जिसमें से चार वित्तीय समितियाँ, यथा–लोकलेखा समिति, राजकीय उपक्रम समिति तथा दो प्राक्कलन समिति हैं। जो जनप्रतिनिधि इन समितियों के सदस्य हैं वे सम्बंधित वित्तीय मामलों को इन समितियों में उठा सकते हैं तथा इन पर चर्चा एवं जाँच करवा सकते हैं जो कि अन्तत: बजट को प्रभावित करेगी। इसके अतिरिक्त भी विधायिका में कई प्रकार की समितियाँ होती हैं जिनमें अध्यक्ष या सदस्य के रूप में जनप्रतिनिधि अपनी सार्थक भूमिका निर्वाहित कर सकते हैं।

उपर्युक्त के अतिरिक्त जनप्रतिनिधियों को सरकार की गतिविधियों पर वर्ष भर नजर रखनी चाहिए जिससे उनकी वित्तीय अनियमितताओं की जानकारी रहें तथा इन वित्तीय अनियमितताओं के मुद्दों को बजट सत्र में उठाया जा सके। इसके अतिरिक्त सदस्य नियंत्रक एवं महालेखपरीक्षक के वार्षिक प्रतिवेदन के अध्ययन द्वारा भी विभिन्न विभागों की वित्तीय अनियमितताओं और कमियों के बारे में जान सकते हैं तथा बजट पर चर्चा और अनुदान की माँगों पर चर्चा के समय इनको प्रस्तुत कर सकते हैं।

सामान्यत: बजट बनाने में शासक दल का प्रभुत्व रहता है परन्तु झारखण्ड राज्य केवर्तमान मुख्यमंत्री श्री रघुवर दास द्वारा प्रारम्भ एक नवीन

परम्परा के अन्तर्गत विधान सभा के अध्यक्ष व सभी सदस्यों के साथ-साथ पूर्व मुख्यमंत्रियों तथा सांसदों से भी राज्य के बजट के लिए सुझाव आमंत्रित किये जाते हैं। इस प्रकार की स्वस्थ परम्पराएँ लोकतांत्रिक मूल्यों को बढ़ावा देती हैं।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि जनप्रतिनिधियों को दोहरी भूमिका में रहना आवश्यक है जहाँ एक ओरजनप्रतिनिधियों को जनता के बीच अपनी लगातार उपस्थिति बनाये रखनी चाहिए जिससे उनको वास्तविक स्थितियों का ज्ञान होता रहे वहीं दूसरी ओर विधायिका में अपने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व कर वे अपनी समस्याओं को प्रस्तुत कर सकते हैं। इस मामले में बजट सत्र जनप्रतिनिधियों के लिए वित्तीय मामलों के सन्दर्भ में सुअवसर के रूप में है जिसमें शासक दल व विपक्षी दल दोनों के सदस्य भरपूर लाभ उठा सकते हैं। परन्तु इसके लिए सर्वप्रमुख शर्त सदस्यों की सक्रियता है जो कि सदस्यों को प्रत्येक आर्थिक मामलों पर आवश्यक विषय-वस्तु उपलब्ध करवाती है तथा प्राप्त अवसरों के उपयोग की संभावना बढ़ाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **भारत का संविधान,** विधि एवं न्याय मंत्रालय, भारत सरकार
2. सुरेन्द्र कटारिया, **भारतीय लोक प्रशासन**, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2005
3. **बजट नियमावली**, वित्त मंत्रालय, राजस्थान सरकार
4. **प्रक्रिया एवं कार्य संचालन सम्बंधित नियम**, राजस्थान विधानसभा

****

भारत में जनजाति आवासीय विद्यालयों एवं उनकी स्थिति, कार्यप्रणाली और प्रदर्शन

भरत चौबीसा* डॉ. देवेन्द्रा आमेटा**

प्रस्तावना – जैसा कि हम सभी जानते हैं कि भारत की ताकत इसकी विविधता है और भारत की जनजाति आबादी इस विविधता का एक प्रमुख हिस्सा है। विभिन्न सांस्कृतिक समूहों के हजारों वर्षों मे आपस में मिलने-जुलने से भारतीय समाज की सामाजिक संरचना में भारी परिवर्तन हुआ है लेकिन आदिवासी आबादी ने अभी भी अपनी संस्कृति को बनाए रखा है।

यह जनजातीय संस्कृति भारत का प्रतिनिधित्व बहत ही अलग तरीके से करता है, खान-पान से लेकर पवित्र अनुष्ठानों तक भारतीय जनजातियों की दैनिक जीवनशैली में बड़ा अंतर है, जो की इस बात का भी सबसे अच्छा उदाहरण है कि इंसान इतनी बड़ी दक्षता से अपने ज्ञान को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक कैसे हूबहू पहुँचा सकता है।

लेकिन जैसे-जैसे हम नए, आधुनिक और वैश्वीकृत विश्व में अधिक से अधिक प्रवेश कर रहे हैं ये जनजातियाँ उनकी पृथक जीवनशैली और वन संस्कृति के कारण विभिन्न आयामों में 21वीं सदी के ग्रामीण-शहरी समाज से आज भी बहुत पीछे है। एक समाज या संस्कृति को विकसित करने के लिए व पृथ्वी पर बनाए रखने के लिए एक बुनियादी तरीका शिक्षा है। पहले तो शिक्षा समाज को विकसित करे और फिर समाज को इस काबिल बनाए की वो राष्ट्र निर्माण में योगदान कर सके।

वैसे तो शिक्षा किसी भी समय किसी को भी दी जा सकती है लेकिन स्कूली शिक्षा को जीवन की बुनियाद माना जाता है और यह हर स्तर पर महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। स्कूली शिक्षा का महत्व तब और बढ़ जाता है जब हमारा भारत इस इक्कीसवीं सदी के निकट भविष्य में हर पहलू में वैश्विक नेता बनने का लक्ष्य रख चुका हैं। भारत को अपने स्कूलों को उत्कृष्टता का केंद्र (centre of excellence) बनाने की जरूरत है जो वैश्विक नेताओं और उद्यमकर्ताओ का निर्माण कर सके। जवाहर नवोदय और केंद्रीय विद्यालय जैसे स्कूल सरकार द्वारा महत्वपूर्ण कदम हैं लेकिन बीसवीं सदी के अंत तक प्रमुख चिंता दूरदराज के इलाकों में रहने वाली जन-जातीय आबादी के लिए स्कूली शिक्षा थी।

आजादी के बाद जन जाति आबादी की शिक्षा के लिए पहल :

1. कोठारी आयोग (1964-66)- 'शिक्षा एक महत्वपूर्ण सामाजिक लक्ष्य है जो पिछड़ों और दलितों को एक अवसर देता है ताकि वे अपने सामाजिक पिछड़ेपन को दूर कर सकें।'
2. 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा के प्रावधान
   - आश्रम स्कूलों के अतिरिक्त आवासीय विद्यालयों की संख्या बड़ाना।
   - शिक्षित तथा होनहार अनुसूचित जनजाति युवकों को अपने क्षेत्र मे अध्यापन मे लगाना।
   - छात्रवृत्ति, तकनीकी शिक्षा और कौशल उन्नयन को बड़ाना।
3. नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020
   - कक्षा 5 तक मातृभाषा मे शिक्षा
   - जनजाति शिक्षा पर सरकारी खर्च बढ़ाना
4. बजट 2021-22 अनुसूचित जनजातियों के लिये प्रावधान
   - नए EMRS खोलना
   - पहाड़ी क्षेत्रों में EMRS खोलने के लिए बजट आवंटन को 38 करोड़ से बढ़ाकर 48 करोड़ कर दिया गया

एकलव्य मॉडल स्कूल व इनके जैसे अन्य जनजाति स्कूलों और आवासीय संस्थानों की नीति – जनजातीय शिक्षा या जनजातीय स्कूली शिक्षा मे बीसवीं शताब्दी के अंत से सकारात्मक बदलाव अनुभव किया है। जिसकी मुख्य वजह सरकार के कुछ महत्वपूर्ण कदम है जो जमीनी स्तर पर आसानी से देखे जा सकते है। अच्छा छात्र-शिक्षक अनुपात और जन-जाति बहुल क्षेत्रों में इनके लिए आवासीय विद्यालयों की स्थापना ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारत सरकार ने जन-जातियों की विशिष्ट संस्कृतियों को बचाने के साथ-साथ बहु-आयामी दृष्टिकोण के साथ भारत के संविधान के अनुच्छेद 275 (1) के तहत एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय (EMRS) संस्था की स्थापना की। बेहतर होस्टल सुविधा और प्रशिक्षित शिक्षकों के साथ उत्कृष्टता के केंद्र के रूप में कम से कम 20 हजार जनजाति आबादी के ऊपर ब्लॉक स्तर पर ये विद्यालय खोलने का लक्ष्य है। इन विद्यालयों की वजह से समाज मे सकारात्मक बदलाव साफ देखे जा सकते है। कुपोषण मे गिरावट और बैलेन्स्ड डाइट को जनजातियों की संस्कृति मे जोड़ना भी इन आवासीय विद्यालयों का ही महत्वपूर्ण योगदान है।

ईएमआरएस व अन्य जनजाति आवासीय विद्यालयों के पाठ्यक्रम का आधार आदिवासी खेलों जैसे तीरंदाजी, लोक कलाओं, औषधीय पौधों की पहचान के साथ अच्छा कौशल उन्नयन करना भी है। EMRS व्यावसायिक शिक्षा पर जोर देता है। पिछले वर्षों के आर्थिक सर्वेक्षणों से यह स्पष्ट है कि औद्योगिक उत्पादन क्षेत्र में अनुसूचित जनजाति की भागीदारी काफी बढ़ गई है।

भारत में आवासीय विद्यालयों की स्थापना का उद्देश्य :

1. 2020 तक माध्यमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण
2. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना
3. वंचित आबादी के बीच शिक्षा का स्तर सुधारने के लिए
4. ग्रामीण भारत में अंग्रेजी माध्यम शिक्षा का परिचय

* शोधार्थी, शिक्षा विभाग, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड-टू-बी) विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोध-निर्देशिका, सेवानिवृत्त सह आचार्य. लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय (सी.टी.ई.) डबोक, उदयपुर (राज.) भारत

एकलव्य और आवासीय विद्यालयों के 23 वर्ष – 1997 से 2020 तक, EMRS का जन-जातीय समुदाय पर अच्छा प्रभाव पड़ा, अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता दर 29.60% (जनगणना 1991) से बढ़कर 59% (जनगणना 2011) हो गई, लेकिन फिर भी यह राष्ट्रीय औसत 74% से बहुत पीछे है। कई पदक धारकों के साथ सभी स्तरों पर खेलों में भागीदारी काफी बढ़ गई है। इन विद्यालयों के छात्रों के परिवारों के बीच पोषण और आहार की आदतों के परिप्रेक्ष्य में काफी सकारात्मक बदलाव देखा गया है।

इन सभी अच्छे सुसंगत प्रयासों के बाद भी कुछ कमियाँ भी हैं, संसदीय स्टैंडिंग कमेटी की रिपोर्ट 2018 (चेयरपर्सन- श्री रमेश बैस)- 'जन जातियों के लिए शिक्षा योजनाएँ' के अनुसार ज्यादातर EMRS में खराब बुनियादी ढाँचा और अपर्याप्त शिक्षक है। 23 वर्षों के लंबे समय के बाद भी इन स्कूलों से निकले हुए छात्रों में कोई बड़ा उद्यमी, नेता या व्यापारी बनने का उदाहरण नहीं है। यह कहा जा सकता है कि एकलव्य विद्यालय अभी भी अपने मुख्य उद्देश्य से बहुत पीछे हैं।

इन आवासीय विद्यालयों की कार्यप्रणाली – ये आवासीय विद्यालय राज्य सरकार की कार्यपालिका के साथ राज्य कानूनों के तहत काम करते हैं। हालाँकि इन स्कूलों को एनसीईआरटी (NCERT) पाठ्यक्रम और सीबीएसई के दिशानिर्देशों के अंतर्गत चलाया जाता है। शिक्षकों की नियुक्ति के लिए अलग से भर्ती बोर्ड नहीं है। राज्य सरकार के शिक्षा विभाग से प्रतिनियुक्ति पर राज्य शिक्षा विभाग से साक्षात्कार विधि द्वारा शिक्षकों की नियुक्ति की जाती है। आवासीय विद्यालयों के शासन और प्रशासन के लिए सभी राज्यों में विभाग हैं जो IAS स्तर के अधिकारियों के अधीन काम कर रहे हैं। राज्यों के जनजातीय मामलों के मंत्रियों के साथ भारत सरकार के जनजाति मंत्रालय इन स्कूलों के संचालन की निगरानी करते है।

शिक्षकों को स्कूल परिसरों में रहने की जगह मिलती है, ताकि सीखने की प्रक्रिया बेहतर हो सके। छात्र अच्छी सुविधाओं के साथ होस्टल में रहते थे जहाँ वार्डन एक अभिभावक की तरह उनका ख्याल रखते है।

इन विद्यालयों में अतिरिक्त कक्षाएँ और कोचिंग सत्र आयोजित किए जाते हैं ताकि छात्र मेडिकल और इंजीनियरिंग प्रवेश परीक्षा की तैयारी कर सकें। इन स्कूलों में खेल, प्रदर्शन कला आदि जैसी अतिरिक्त गतिविधियाँ भी आयोजित की जाती है, ताकि छात्र का सर्वांगीण विकास हो सके।

इन आवासीय विद्यालय के छात्रों को निम्नलिखित मुद्दों का सामना करना पड़ता है

उत्तीर्ण छात्रों के सामने मुख्य मुद्दा आदिवासी समुदाय के बाहर बड़ी आबादी के साथ कम जुड़ाव है। समस्या का समाधान स्कूलों में 10% सीटों पर अन्य समुदायों को प्रवेश देकर किया जा सकता है ताकि छात्रों का प्रदर्शन बेहतर किया जा सके और देश की एकता को और मजबूत किया जा सके। एक अन्य पहलू यह भी है कि छात्रों के विद्यालय से निकलने बाद की कोई जानकारी रखने की व्यवस्था नहीं है। उच्च शिक्षा में प्रवेश के लिए और भविष्य के लिए इन छात्रों की एक ट्रैकिंग प्रणाली होनी चाहिए जिससे छात्रों को समय-समय पर मार्गदर्शन उपलब्ध हो सके।

शिक्षक भर्ती प्रणाली – EMRS व अन्य जनजाति आवासीय विद्यालयों में एक समस्या है, शिक्षकों व कर्मचारियों का चयन मौजूदा राज्य सरकार के शिक्षा विभाग के शिक्षकों मे से किया जाता है। अधिकांश समय यह देखा गया है कि शिक्षक इन विद्यालयों में व शिक्षण में बहुधा रुचि नहीं रखते हैं। इन शिक्षकों का इन विद्यालयों मे आने का मुख्य कारण अपने गृह नगर के पास नौकरी करने का होता है। इस समस्या का समाधान केंद्रीय विद्यालय और नवोदय विद्यालयों की तरह EMRS और अन्य आदिवासी आवासीय विद्यालयों के लिए एक अलग भर्ती प्रणाली बनाना है जिसमे सिर्फ वही लोग आ सके जो सच मे काबिल है और पिछड़े वर्गो के लिए कुछ करना चाहते है ताकि सीखने की प्रक्रिया को अच्छा बनाया जा सके।

'उत्कृष्टता के केंद्र' (centre of excellence) के रूप में आवासीय स्कूलों को विकसित करने का विचार – उत्कृष्टता का केंद्र बनाने के लिए मूल विचार छात्रों को बेहतर शिक्षा और व्यक्तित्व विकास करने में मदद करना है। छात्रों को कॅरियर काउंसलिंग प्रदान करना और इंजीनियरिंग और मेडिकल प्रवेश परीक्षा के लिए विशेष कोचिंग की व्यवस्था करना है।

स्कूल के पहले दिन से ही चरित्र निर्माण की प्रक्रिया प्रारम्भ करना एक मुख्य उद्देश्य है। ऐसी शिक्षा जो अच्छी संचार कौशल और वैश्वीकृत दुनिया की गहन समझ के साथ रोजगार पाना और पैदा करना सिखाती हो वो इन उत्कृष्टता के केंद्रों का मिशन हैं।

जैसा कि हम इस वैश्वीकृत युग में अपने भारत को आत्मनिर्भर और विश्व में अग्रणी बनाने के रास्ते पर हैं। ये स्कूल आदिवासी समुदाय में अच्छे नेता व अच्छे व्यापारी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं जो आदिवासी उत्पाद और आदिवासी अर्थव्यवस्था को एक साथ ला सके जिससे उनकी संस्कृति को वैश्वीक पहचान मिल सके।

राजस्थान में जनजाति आवासीय विद्यालय – राजस्थान में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या सभी जिलों में बिखरी हुई है, लेकिन दक्षिणी जिलों में जैसे कि डूंगरपुर, बांसवाड़ा, उदयपुर और सिरोही में जनजातियों की संख्या अधिक है। अनुसूचित जनजाति के लिए पहला आवासीय विद्यालय 2000 में MPRS की संस्था के रूप मे उदयपुर की कोटड़ा तहसील में स्थापित किया गया था। वर्तमान में 15 EMRS राज्य मे चल रहे है और कुछ और जल्द ही शुरू होने की स्थिति मे हैं। राज्य मे कुल 38 जनजाति आदिवासी विद्यालय हैं जिनमें EMRS, MPRS (मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शल स्कूल) और अन्य राज्य सरकार द्वारा संचालित आवासीय स्कूल शामिल हैं।

जनजातीय क्षेत्र विकास विभाग (टीएडी) और जनजातीय अनुसंधान संस्थान (टीआरआई) उदयपुर, राजस्थान में स्थित है, जो की सभी आदिवासी आवासीय विद्यालयों को संचालित करने में अहम भूमिका निभा रहे है। टीएडी और टीआरआई बजट आवंटन और अपनी महत्वपूर्ण सलाहों के माध्यम से इन स्कूलों की सहायता करते आए है। शिक्षा के लिए अनुसंधान, योजना और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में टीआरआई का काम सराहनीय है।

भारत में जनजाति आवासीय विद्यालयों का प्रदर्शन और उपलब्धि – विभिन्न सरकारी सर्वेक्षणों और रिपोर्टों से यह स्पष्ट है कि अनुसूचित जनजातियों के बीच साक्षरता दर मे बहुत सुधार हुआ है और इनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति और राष्ट्र की प्रगति में इनका समावेश बेहतर हुआ है। सामाजिक-सांस्कृतिक मिलन और राष्ट्रीय खेल समग्र व्यक्तित्व विकास में योगदान देते हैं। यह विद्यालय छात्र को सही रोशनी दिखाते है जिससे वो डॉक्टर, इंजीनियर, आईएएस, राजनेता या उद्यमी बन सके और समजसेवा कर सके। ये स्कूल विभिन्न राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों को आयोजित करते है जिनमे आदिवासी संस्कृति को एक मंच मिलता है जहाँ उनकी कला एवम् संस्कृति को नई पहचान मिलती है। पिछड़ों व वंचितों को सशक्त बना कर ये विद्यालय सीधे देश की अखंडता बनाए रखने और राष्ट्र निर्माण में योगदान दे रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

Phenological Observations in *Sterculia urens* and *Helicteres isora* in Aravali Hills of Jaipur District

R.P. Ahrodia* M. Kumar**

Abstract - *Sterculia urens*Roxb., a moderate-sized deciduous tree, bears leaves after monsoon for about four to five months upto November. Flowering starts in the month of February. Initiation of fruiting takes place in the month of February but it peaks in March and April.

Helicteres isora L. is sub deciduous large shrubs or small trees (also known as Indian screw tree or Marorphali). Flowering commences in May and continues up to September-November.

Keywords - Phenology, *Helicteres isora* L., *Sterculia urens*Roxb.,

Introduction - From time immemorial to date, there has been an accumulation of information on pollination biology or anthology (Robertson, 1904). Plant lovers have always shown a keen interest in the reproductive biology of plants and mechanism of fruiting. Plants, with their often elaborate and specialized floral designs and animals with their complex systems of behaviour, are ideal for exploring the process of adaptation for pollination. Much of the early research in pollination biology was devoted to describing these adaptations and the selective forces presumed to bring about them. Various environmental factors control the movement of pollen grains to the stigma. In the present study different aspects of floral biology which include the size of the flower, time of flowering, fruiting, the colour of flowers and pollen size and morphology were observed. The phenological aspects and *in vitro* pollen germination of two species namely, *Helicteres isora* and *Sterculia urens* have been done.

Materials and Methods - Phenology was studied in *Sterculia urens* and *Helicteres isora*. Observations of the phenological events in *Sterculia urens* were carried out throughout the year from Sept. 2002 to Aug. 2003 in Jamwa Ramgarh reserve forests and Amber hills (study sites) and of *Helicteres isora* from March 2003 to Feb. 2004 at two different locations in Jamwa Ramgarh reserve forest. Study sites were visited after every 15 days and the phenological characteristics, such as the unfolding of buds, leaf-fall, flowering, fruit formation, fruit fall and dehiscence and dispersal of seeds were noted.

Observations

Unfolding of leaves: In *Sterculia urens* and *Helicteres isora*, new foliage observed in the rainy season. Initiation of vegetative buds in *Sterculia urens* takes place in the month of June. Some differences were observed from tree to tree of the same site and both sites. In *Helicteres isora* new vegetative buds appeared in June.

Leaf-fall: It has been observed that yellowing of leaf commences in the last week of October and leaf fall starts in the month of November till the plant becomes nude in the month of January. Thus, plants of *Sterculia urens* bear leaves only for 4 or 5 months. Similarly, *Helicteres isora* yellowing starts in the month of November but leaf-fall was not as fast as in Sterculia urens and trees do not become nude as in *Sterculia urens*.

Flowering: The observations revealed that flower bud initiation in *Sterculia urens* takes place in the first week of February at Ramgarh but at Amber, it commences in the mid of February. Maximum flowering was observed after mid-March and continues up to the first week of April. In *Helicteres isora* initiation of flowering buds takes place during the month of May and continues up to September. Profuse flowering was observed in the month of September.

Fruiting: Fruit formation in *Sterculia urens* at Jamwa Ramgarh and Amber commenced at the end of February. Fully ripened fruits were observed in the month of April and May. In *Helicteres isora* fruit formation takes place in the month of November and continues up to February.

Fruit Dehiscence and Seed Dispersal: Fruit dehiscence is enhanced by temperature and wind in *Sterculia urens*. Most of the fruits when ripe open along the longitudinal slit and the ripened seeds are dispersed by biotic and abiotic factors. Dehiscence of fruits and dispersal of seeds were observed earlier at Jamwa Ramgarh site at the start of June. Fruits of *Helicteres isora* ripened during January and February, the process continuing up to March. Fruit fall and seed dispersal continue till the month of May and June.

Floral Morphology

Sterculia urens Roxb.

The inflorescence is a complex branched panicle, borne at the tips of vegetative branches, both male and bisexual

***Assistant Professor in Botany, Govt. N. M. College, Hanumangarh (Raj.) INDIA**
**** Lab No.2, Dept. of Botany , UOR, Jaipur (Raj.) INDIA**

flowers observed in same cluster but male more frequently than bisexual ones. The inflorescence emits a peculiar odour. Bisexual flowers are functionally females. Pollen grains of bisexual flowers are sterile. There is a small difference in the size of male and bisexual flowers. The size of flower is 4-7 mm. Pollen grains in male flowers are somewhat spherical to ellipsoidal, 28-30 ìm in size.

***Helicteres isora* L. -** The flowers are large, odourless, bisexual and zygomorphic with green tubular calyx, 5-fid at the apex, lobes often unequal. Petals 5, red.Very unequal, closely reflexed on the calyx, separate but with the claws closely hooked together.Staminal column adnate to the gynophore. The 10 anthers are grouped at the tip of the column. The syncarpous ovary is situated at the top of the column. The style is short and has a simple stigma that projects beyond the anthers and lies in an erect position. The pollen grains are smooth, yellow, and triangular, 25 ìm to 28 ìm in size and flattened. Insects and birds visit the flower at daytime. Honey bees and ants forage more of the flowers.

Discussion - Several workers have worked on pollen biology, *in-vitro* pollen germination, breeding and floral biology in *Theobroma cacao* of the family Sterculiaceae. Pollen morphological studies in the family have been carried out by Rao, 1950a; Melhem *et al*., 1976; Secco and Barth, 1984; Long *et al*., 1989 and Palacious *et al*. 1990. These studies reveal that pollen grains are triangular and oblately flattened in *Helicteres*, ellipsoidal in *Sterculia* and spherical in the rest of the plants belonging to the Sterculiaceae. Similar observations are recorded in the present study triangular and flattened pollen grains in *Helicteres isora*, ellipsoidal in *Sterculia urens* and spherical in *Gauzuma tomentosa*. Rao (1953) observed triporate pollen grains in *Sterculia colorata* Roxb., *S. foetida* L., *Guazuma tomentosa* Kunth., *Buettneria herbacea* Roxb., *Klienhovia hospita* L. and *Helicteres isora* L. Rao (1951) reported spherical smooth-walled and triporate pollen grains in *Melochia corchorifolia*. In *Pterospermum suberifolium* Lam., *P. acerifolium* Willd.and*Dombeya spectabilis* Bojer pollen grains are also triporate but the exine possesses spinescent outgrowths (Rao, 1949 and 1952). Pollen grains of *Waltheria indica* L. possess 4 germ pores (Rao, 1949). Heterostyly in Sterculiaceae has been studied in several taxa. Some authors have described pollen size dimorphism associated with heterostyly (Brizicky, 1966; Martin, 1967; Kohler, 1973; 1976; Bahadur and Reddy, 1977; Srikanth, 1981). Kohler (1976) observed pollen dimorphism in 23 distylous species of *Waltheria* except for *W. indica* and further showed the evolutionary tendencies in relation to heterostyly and considered tricolporate reticulate exine condition as a primitive and increased number of apertures (pantotreme), spinulose exine as an advanced condition. Flower phenological studies of Cacao jacare (*Herrania mariae*) were carried out by Venturieri and Silva (1997). In a study of phenology and floral biology of *Sterculia urens*Roxb., Khatoon and Pandey (2003) reported the initiation of the inflorescence and fruiting in the month of January and March and it has been confirmed by the present study too. Some taxonomic accounts have described *S. urens* as andromonoecious (Cooke, 1967; Mathew, 1983); others have described the species as polygamodioecious (Ramaswamy and Razi, 1973), monoecious (Bhattacharya and Johri, 1998), unisexual flowers (Verma *et al*., 1993) polygamous (Khatoon and Pandey, 2003). Floral sexuality described by Sunnichan *et al*. (2004) showed, that in *Sterculia urens* morphological bisexual flowers are functionally females and their pollen grains are sterile. Likewise, *S. urens* exhibits cryptic monoecy and is an andromonoecious plant. Similarly, *in-vitro* no germination was observed in pollen grains taken from bisexual flowers in the present study. Sunnichan *et al*. (2004) confirmed the self-incompatible nature of *Sterculia urens* by controlled pollinations. Earlier workers reported that entomophilous and ornithophilous pollination occurred in several taxa of this family. In *Theobroma sp*. this was reported by Soria and Wirth (1974); Soria et al. (1975); Kaufmann (1975); Winder (1978); Lucas (1981); Young (1981, 1985); Young et al. (1987); Ibrahim (1987) and Lucas (1977). Sunnichan *et al*. (2004) reported the same in *Sterculia urens* and Atluri *et al*. (2000) in *Helicteres isora* L. The role of pollen grains as the male partner in sexual reproduction of seed plants is no doubt very important. Self-incompatibility is common in the family Sterculiaceae as revealed by earlier workers. Lanaud *et al*. (1987); Adu *et al*. (1990) and Aneja *et al*. (1994) reported self-incompatibility and worked to overcome this problem in Theobroma cacao. Gigord *et al*. (1998) and Kaur and Sarreen (1992) reported self-incompatibility in *Dombeya acutangula* ssp. *acutangula* and *Pterospermum acerifolium* Willd. respectively. Similar results were observed in *Sterculia urens* by Sunnichan *et al*. (2004) who described it as late acting self-incompatibility or ovarian self-incompatibility.

References :-

1. *Robertson, C. Bot. Gaz. (Chicago) 37 (1904) 294-298.
2. Rao, C.V. Ibid. 29 (1950a) 130-137
3. Melhem, T.S.A., Silvestre, M.S.F. and Lucas, N.M.S. Hoehnea 6 (1976) 23-32.
4. Secco, R.S. and Barth, O.M. Pollen et Spores 26 (1984) 409-420.
5. Long, H., He, L.K., Huse, H.H. and Xu, X.H. J. South China Agri. Univ. 10(1) (1989) 23-32
6. *Palacios Chavez, R., Arreguin Sanchez, M.de La L. and Quiroz Garcia, D.L. Palynologica et Palaeobotanica 2(1) (1990) 63-81.
7. Rao, C.V. J. Indian Bot. Soc. 32(4) (1953) 208-238.
8. Rao, C.V. Ibid. 30 (1951) 122-131.
9. Rao, C.V. J. Indian Bot. Soc. 28 (1949) 237-244.
10. Rao, C.V. Ibid. 31 (1952) 250-260
11. Rao, C.V. J. Indian Bot. Soc. 28 (1949) 180-197.
12. Brizicky, G.K. J. Arnold Arbor. 47 (1966) 60-74.
13. Martin, F.W. Evolution 21 (1967) 493-499.

14. Kohler, E. Grana. 13 (1973) 57-64
15. *Kohler, E. Linn. Soc. Symp. Ser. London. 1 : 147-162. Ed. I.K. Ferguson and J. Muller, Academic Press, New York (1976)
16. Bahadur, B. and Reddy, N.P. Adv. Pt. Rep. Physiol (1977) 200-215
17. *Srikanth, R. Biosystematics of Waltheria indica complex (Sterculiaceae). Ph.D. thesis, Kakatiya University, Warangal (A.P.) (1981)
18. *Venturieri, G.A. and Silva, M.B. Boletim do Museu Paraense Emilio Goeldi. Serie Botanica 13(1) (1997) 31-47.
19. Khatoon, S. and Pandey, A.K. Advances in Plant Reproductive Biology (2003) 287-292.
20. Cooke, T. The flora of the presidency of Bombay Vol. III. Reprint Edition. Botanical Survey of India, Calcutta (1967)
21. *Mathew, K.M. The flora of the Tamil Nadu Carnatic Vol. II. The Rapinat Herbarium, Thiruchinapalli, India (1983)
22. Ramaswamy, S.. and Razi, B. Flora of Bangalore district. Prasararanga Univ. Mysore, India (1973)
23. Bhattacharya, B. and Johri, B.M. Flowering plants : taxonomy and phylogeny. Narosa Publ. House, New Delhi, India (1998)
24. Verma, D.M., Balakrishnan, N.P., and Dixit, R.D. Flora of Madhya Pradesh. Vol. I. Botanical Survey of India, Calcutta, India. (1993)
25. Sunnichan, V.G., MohanRam, H.Y. and Shivanna, K.R. Plant Syst. Evol. 244(3-4) (2004) 201-218.
26. *Soria, S. de J. and Wirth, W.W. Revista Theobroma 4(1) (1974) 3-12.
27. *Soria, S.de J., Tonosaki, S. and Moreno, J. Cacau Atualidades 12(3) (1975) 14-18.
28. *Kaufmann, T. Turrialba 25(1) (1975) 90-91.
29. *Winder, J.A. Bull. Entomo. Res. 68(4) (1978) 559-574.
30. *Lucas, P. Cafe Cacao The. 25(2) (1981) 113-120.
31. Young, A.M. J. Applied Ecology 18 (1981) 149-155.
32. Young, A.M. Experintia 41(6) (1985) 760-762.
33. *Young, A.M., Erickson, E.H. Jr., Strand, M.A. and Erickson, B.J. Insect Sci. Appli. 8(2) (1987) 151-164.
34. *Young, A.M., Erickson, B.J. and Erickson, E.H. Jr. Proceedings of the 10th International Cocoa Research Conference, Santo Domingo, Dominican Republic, 17-23 May 1987 (1987) 289-296.
35. *Ibrahim, A.G. Proceedings of the 10th International Cocoa Research Conference, Santo Domingo, Dominican Republic, 17-23 May 1987(1987) 303-306.
36. Lucas, P. Cocoa Research Institute of Nigeria : Proceedings, V International Cocoa Research Conference (1977) 134-144.
37. Atluri, J.B., Rao, S.P. and Reddi, C.B. Curr. Sci. 78 (6) (2000) 713-718.
38. *Lanaud, C., Sounigo, O., Amefia, Y.K., Paulin, D., Lachenaud, P. and Clement, D. 31(4) (1987) 278-282.
39. *Adu, A.Y., Novak, F.J. Klu, G.Y.P. and Lamptey, T.V.O. Euphytica 51(3) (1990) 219-225.
40. Aneja, M., Gianfagna, T., Ng, E. and Badilla, I. Hort. Sci. 29(1) (1994)15-17.
41. Gigord, L., Lavigne, C. and Shykoff, J.A. Oecologia 117(3) (1998) 342-352.
42. Kaur, J. and Sareen, T.S. Plant Cell Incompatibility Newsletter 24 (1992) 29-31.

* Not seen in original

Plate-1.1 ***Sterculiaurens***
A. Vegetative Stage B. Leaf fall Stage C. Flowering Stage
D. Fruiting Stage E. Seed maturation and Dispersal Stage

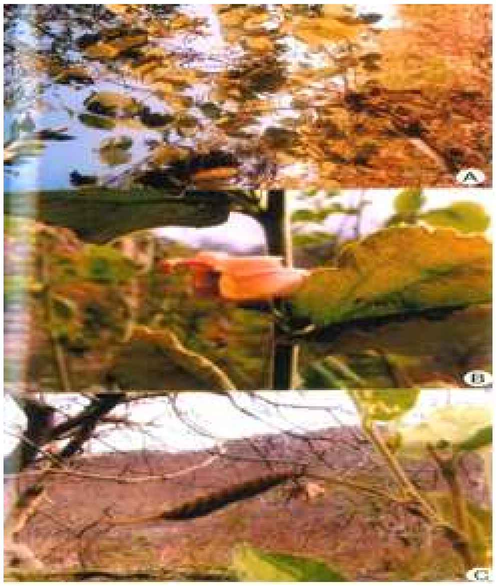

Plate-1.2 ***Helicteres isora***
A. Vegetative Stage B. Flowering Stage
C. Fruiting Stage

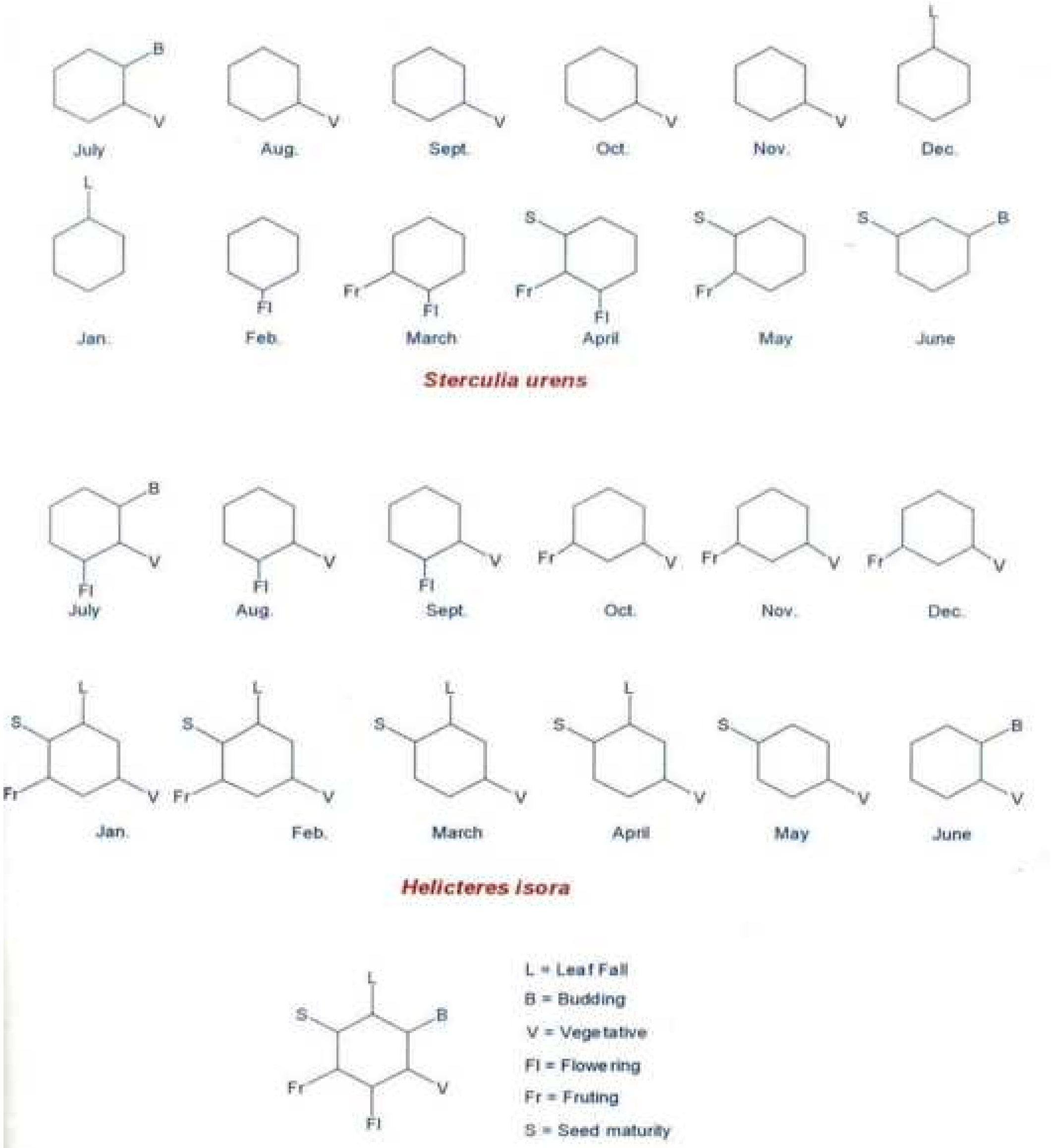

Figure -1.1 : Phenological Events of *Sterculia urens* and *Helicteres isora*

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Floristic Composition of Sacred groves in Jhunjhunu and Sikar, Rajasthan

Sunita Kumari* Dr. Parul Gupta**

Abstract - Sacred groves located in Jhunjhunu and Sikar districts of Rajasthan were explored and surveyed to know floristic composition in these sacred groves. In study area 111 plant species were identified belonging to 47 different families and 94 different genera. Out of total 111 different species 93 species were dicotyledons , 17 were monocotyledons and *Pteridium aquilinum* was the only gymnosperm that was recorded in study area. Fabaceae was most dominant family followed by Poaceae and Solanaceae.Acacia was most dominant genus followed by Euphorbia, Ficus and Solanum.
Key words - Floristic diversity, Flora, Sacred groves
Abbreviations - SG: Sacred grove.

Introduction - Sacred groves are patches of primeval forests that are being protected since time immemorial by the rural communities. These communities protect the forest/forest patches due to belief that these are abode of deities. A sacred grove may have single deity or multiple deity associations.

In present study area Bheruji, Devnarayan ji, Bihariji, Prithviraj ji, Mansha mata and Shakambhri mata are common deity's believed to be residing in these groves. Rural communities living around these groves have strong faith in deities associated with these groves and believe that if anyone cuts any tree or harms any animal in boundaries of sacred grove then whole village will face wrath of gods. Hence, conservation of flora and fauna in SGs is ensured with combination of faith and fear.

British government in colonial India destroyed around 1000 sacred groves as they needed timber for making sleepers of railway lines and for various other purposes. But present Governments are taking steps to restore and conserve sacred groves. Enactment of Forest Rights Act 2006 is one of the important steps that the Government has taken towards greater vision of conservation of forests and sacred groves. Forest Rights Act 2006 gives rights to local communities to allow them to manage and conserve their surrounding forest.

Due to better conservation of sacred groves by local communities these groves are richer in biodiversity in comparison to surrounding areas. Hence, present study was conducted to know the floristic composition of sacred groves in Jhunjhunu and Sikar districts of Rajasthan, which are not very much explored and documented.

Study Area: Jhunjhunu, Sikar and Churu districts comprise the Shekhawati region of Rajasthan. This region has hot summer where temperature touches 47-48° C, and in winter season temperature drops below 0° C. Even within a day there is high variance in temperature as in summers temperature may vary from 32° C in night to 48° C in afternoon. This region receives scanty rainfall mostly from south west monsoon during June to September. Due to such climatic conditions the vegetation is mostly xerophytes and rarely some hydrophytes are found. Jhunjhunu districtis located within the geographical limit of75°02' to 76°06' E, longitude and 27°38' to 28°31' N, latitude. And Sikardistrict is located within the geographical limit of 74°44' to 75°25' E longitude and 27°21' to 28°12' N, latitude.

Material and methods: Present study was carried out at Seethal bani (28°00' North, 75°52' East)&(27°62' North, 75°40' East) Shakambhari mata temple in Jhunjhunu and Sevali bheruji bani (27°38' North, 75°27' East)& Sundardas maharaj mandir baral(27°35' North, 75°22' East) in Sikar district of Rajasthan. A detailed field assessment was carried out to record different plant species present atthese 4 sacred grove sites. Field survey was carried out in different seasons to maximise the possibility of documentation of seasonal plants. Initial identification of plant species was done with the help of local people living around these sacred groves and thereafter plants were further identified with the help of floristic literature. Identified plant species are documented alphabetically by their botanical names. (Table 1)

Results and Discussion: In 4 sacred grove sites total 111 plant species belonging to 47 families and 94 genera were recorded. Herbs were the most dominant plant form at study area having 60 species followed by trees and shrubs having 36 and 15 species respectively. Fabaceae was most dominant family having 17 species followed by Poaceae and Solanaceae having 11 & 7 species

*B.B.D. Govt. College Chimanpura, Department of Botany, Rajasthan University, Jaipur (Raj.) INDIA
** Department of College Education, Government of Rajasthan, Jaipur (Raj.) INDIA

respectively.(Fig. 1)

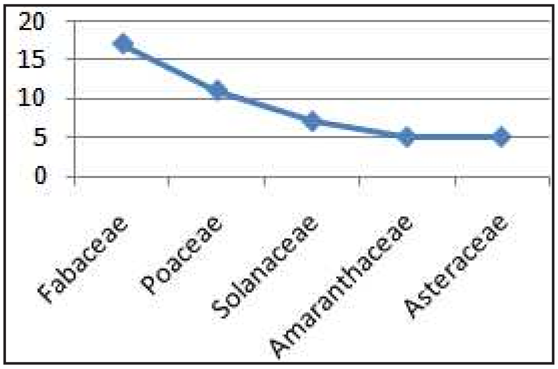

Figure 1: Top 5 dominant families in present study area

Acacia was most dominant genus having 4 species followed by Euphorbia, Ficus and Solanum having 3 species each. The species to genus ratio was 1.18 , genus to family ratio was 2.0 and species to family ratio was 2.36.

Table 1 (see in next page)

Table 2: Diversity of monots, dicots &gymnosperms in sacred groves of Jhunjhunu and Sikar

S.	Class	Species		Family		Genera	
		No.	%	No.	%	No.	%
1	Dicotyledons	93	83.78	39	82.98	77	81.91
2	Monocoty -ledons	17	15.32	7	14.89	16	17.02
3	Gymnosperm	1	0.90	1	2.13	1	1.06
	Total	111	100	47	100	94	100

From above analysis shown in Table 2, we can clearly see that the percentage occurrence of species(83.78%), family(82.98%) and genera(81.91%) of dicotyledons is almost identical at present study area and same is the case for monocotyledons. *Pteridium aquilinum* was the only gymnosperm identified in study area and same is very rare in study area. Plants of high medicinal value such as *Barleria prionitis,Aloe vera, Bryophyllum pinnatum,Chlorophytum borivilianum,Withania somnifera*were also recorded. This shows that these sacred groves are rich in biodiversity and are a valuable asset if conserved. These sacred groves are now facing threats in the form of various anthropogenic disturbances like soil mining, cutting of trees due to loss of faith, pollution and encroachment. Invasive species like *Prosopis juliflora*are another looming threat to these sacred groves as the rapid propogation of this species has changed the floristic composition of the area. Invasive species should be controlled by appropriate chemical or physical methods. This data may be useful for biodiversity management and for optimal planning for conservation of sacred groves which are one of the oldest technique of *in situ*conservation of biodiversity.

References :-

1. Balan A.P., Thomas B., Michael J. 2017. Floristic Diversity of Thevarmala Sacred Grove in Western Ghats, Kerala, India. International Journal of Advanced Research in Botany, 3(1):1-11.
2. Bhandary M.J., Chandrasekhar K.R. 2003. Sacred groves of dakshina kanada and udupi districts of Karnataka. Curr Sci., 85:655–1656.
3. Brandis, D. (1897). Indian Foestry. Oriental University Institute.
4. Chandrashekara U.M. 2011. Conservation and management of sacred groves in Kerala, KFRI Research Report No. 412, Kerala Forest Research Institute, Peechi.
5. Choudhary K. and Nama K.S. 2014. Phyto-diversity of Mukundara hills national park of Kota district, Rajasthan, India. Adv. Appl. Sci. Res., 5(1):18-23.
6. Gadgil M. and Vartak V.D. 1975. Sacred groves of India-A plea for continued conservation. Journal of the Bombay Natural History Society, 72(2):313– 320.
7. Gadgil M. and Vartak V.D. 1976. The sacred groves of Western Ghats in India. Economic Botany, 30:152–160.
8. Gairola S., Sharma C.M., Rana C.S., Ghildiyal S.K. and Suyal S. 2010. Phytodiversity (Angiosperms and Gymnosperms) in Mandal-Chopta Forest of Garhwal Himalaya, Uttarakhand, India. Nature and Science, 8(1):1 -17.
9. Gokhale V., Pala N.A., Negi A.K., Bhat J.A., Todaria N.P. 2011. Sacred Landscapes As Repositories Of Biodiversity A Case Study From The Hariyali Devi Sacred Landscape, Uttarakhand. International Journal of Conservation Science, 2(1):37-44.
10. Hangarge L.M., Kulkarni D.K., Gaikwad V.B., Mahajan D.M. and Gunale V.R. 2016. Plant diversity of sacred groves and its comparative account with surrounding denuded hills from Bhor region of Western Ghats. Bioscience Discovery, 7(2):121-127.
11. Jamir S.A. and Pandey H. 2003. Vascular plant diversity in the sacred groves of Jaintia Hills in northeast India. Biodiversity and Conservation 12:1497–1510.
12. Kandari L.S., Bisht V.K., Bhardwaj M. and Thaku A.K. 2014. Conservation and management of sacred groves, myths and beliefs of tribal communities: a case study from north-India. Environmental Systems Research, 3:16.
13. Khan M.L., Khumbongmayum A.D. and Tripathi R.S. 2008. The Sacred Groves and Their Significance in Conserving Biodiversity an Overview. International Journal of Ecology and Environmental Sciences 34(3):277-291.
14. Khaneghah A.A. 1998. Social and cultural aspects of sacred trees in Iran. Pages 123-127, In: Ramakrishnan, P.S., Saxena, K.G. and Chandrashekara, U.M. (Editors) Conserving the Sacred for Biodiversity Management. UNESCO and Oxford-IBH Publishing, New Delhi.
15. Khumbongmayum A.D. 2004. Studies on Plant Diversity and Regeneration of a few Tree Species in the Sacred Groves of Manipur. Ph.D. Thesis, North-Eastern Hill University, Shillong, India. 252 pages.
16. Khumbongmayum A.D., Khan M.L. and Tripathi R.S. 2005. Ethnomedicinal plants in the sacred groves of Manipur. Indian Journal of Traditional Knowledge, 4(1): 21-32.
17. King-Oliver I.E.D., Chitra V. and Narasimha D. 1997. Sacred groves: traditional ecological heritage. Int J Ecol Environ Sci., 23:463–470.

18. Meena D. and Singh D. 2012. Oran of Rohida: an endangered tree species of Rajasthan. Current Science, 103(12):25.
19. Meena K.L. and Yadav B.L. 2010. Studies on ethnomedicinal plants conserved by Garasia tribes of Sirohi district, Rajasthan, India. Indian Journal of Natural Products and Resources Vol. 1(4):500-506.
20. Meenakshi B., Chauhan N.S., Kak A. 2011. Dye yielding plants of Himachal Pradesh. J Econo Taxon Bot, 35(2):429–432.
21. Michaloud G. and Dury S. 1998. Sacred trees, groves, landscapes and related cultural situations may contribute to conservation and management in Africa. Pages 129-143, In: Ramakrishnan, P.S., Saxena, K.G. and Chandrashekara, U.M. (Eeditors) Conserving the Sacred for Biodiversity Management. UNESCO and Oxford-IBH Publishing, New Delhi.
22. Mishra B.P., Tripathi O.P., Tripathi R.S. and Pandey H.N. 2004. Effects of anthropogenic disturbance on plant diversity and community structure of a sacred grove in Meghalaya, northeast India. Biodiversity and Conservation, 13:421–436.
23. Mukhopadhyay D. 2008. Indigenous knowledge and sustainable natural resource management in the Indian desert, In: The Future of Drylands, Lee C. and Schaaf T.(eds.), Netherlands, Springer: 161-170.
24. Nair G.H., Gopikumar K., Krishnan P.G. and Kumar K.K.S. 1997. Sacred groves of India, vanishing greenery. Current Science, 72:697-698.
25. Qureshi R., Shaheen H., Ilyas, M., Ahmed W. and Munir M. 2014. Phytodiversity And Plant Life Of Khanpur Dam, Khyber Pakhtunkhwa, Pakistan. Pak. J. Bot., 46(3):841-849.
26. Pandey D.N. 1999. Sacred Forestry: The Case of Rajasthan, India. Sustainable Developments International:1-6.
27. Rajesh B. 2016. Sacred Groves: Floristic Diversity and their Role in Conservation of Nature. Forest Res 5:161.
28. Ramakrishnan P.S. 1998. Conserving the sacred for Biodiversity: The conceptual framework. Pages 3-15, In: Ramakrishnan, P.S., Saxena, K.G. and Chandrashekara, U.M. (Editors) Conserving the Sacred for Biodiversity Management. UNESCO and Oxford- IBH Publishing, New Delhi.
29. Ramakrishnan P.S. 2002. What is traditional ecological knowledge (TEK)? Pages 17-48, In: Ramakrishnan, P.S., Rai R.K., Katwal R.P.S. and Mehndiratta, S. (Editors) Traditional Ecological Knowledge for Managing Biosphere Reserves in South and Central Asia. Oxford and IBH Publishing, New Delhi.
30. Rodgers W.A. 1994. The sacred groves of Meghalaya. Man in India, 74:339-348.
31. Ramchandra, G. 2000. The Uniquiet. Woods, University of California Press.
32. Rampilla V. and Mahammad K.S. 2015. Ethno-Medicinal Plants in Sacred Groves in East Godavari District, Andhra Pradesh, India. European Journal of Medicinal Plants, 9(4):1-29.
33. Ray R. and Ramachandra T.V. 2010. Small sacred groves in local landscape/ : are they really worthy for conservation? Current Science, 98(9):1178–1180.
34. Sambandan K. and Dhatchanamoorthy N. 2012. Studies on the Phytodiversity of a Sacred Grove and its Traditional Uses in Karaikal District, U.T. Puducherry. Journal of Phytology, 4(2):16-21.
35. Singh G.S., Rao K.S. and Saxena K.G. 1998. Eco-cultural analysis of sacred species and ecosystems in Chhakinal watershed, Himachal Pradesh. Pages 301-314, In: Ramakrishnan, P.S., Saxena, K.G. and Chandrashekara, U.M. (Editors) Conserving the Sacred for Biodiversity Management. UNESCO and Oxford-IBH Publishing, New Delhi.
36. Singh H.B.K., Singh P.K. and Elangbam V.D. 1996. Indigenous bio-folklores and practices: its role in biodiversity conservation in Manipur. Journal of Hill Research, 9(2): 359-362.
37. Sinha B. and Maikhuri R.K. 1998. Conservation through ‘socio-cultural-religious practice’ in Garhwal Himalaya: A case study of Hariyali sacred site. Pages 289-299, In: Ramakrishnan, P.S., Saxena, K.G. and Chandrashekara, U.M. (Editors) Conserving the Sacred for Biodiversity Management. UNESCO and Oxford-IBH Publishing, New Delhi.
38. Shaheen H. and Shinwari Z.K. 2012. Phytodiversity and Endemic Richness of Karambar Lake Vegetation from Chitral, Hindukush-Himalayas. Pak. J. Bot., 44(1):15-20.
39. Sharma S.S.C.M., Gairola S., Ghildiyal S.K., Rana C.S. and Butola D.S. 2010. Phytodiversity (Angiosperms and Gymnosperms) in Chaurangikhal forest of Garhwal Himalaya, Uttarakhand, India. Indian Journal of Science and Technology, 3(3):267-275.
40. Singh S., Youssouf M., Malik Z.A. and Bussmann R.W. 2017. Sacred Groves: Myths, Beliefs, and Biodiversity Conservation—A Case Study from Western Himalaya, India. International Journal of Ecology, 2017:12.
41. Singh G.S. and Saxena K.G. 1998. Sacred groves in the rural landscape: A case study of Shekhala village in Rajasthan. In: Conserving the Sacred for Biodiversity Management, Ramakrishnan P.S. Saxena K.G. and Chandrashekara U.M. (eds.), Oxford and IBH Publishing Co. Pvt. Ltd.: 277-288.
42. Sultana A., Hussain M.S. and Rathore D.K. 2014. Diversity of tree vegetation of Rajasthan, India. Tropical Ecology, 55(3):403-410.
43. Vartak, V.D. 1983. Observation on rare, imperfectly known and endemic plants in the sacred groves of Western Maharashtra, In: S.K. Jain and R.R. Rao (Eds.), An Assessment of threatened plants of India, Botanical Survey of India, Howrah: 169-178.
44. Vartak V.D., Kumbhojkar M.S., Nipuge D.S. 1987. Sacred groves in tribal areas of Western Ghats: treasure trove of medicinal plants. B Medi Ethno Bot Res., 8:77–78.

Table 1: Floristic diversity of sacred groves of Jhunjhunu and Sikar

S.	Botanical name	Local name	Family	Habit	Class
1	*Abrus precatorius*	Chirmi	Fabaceae	Herbaceous	Dicot
2	*Abutilon indicum*	Kanghi	Malvaceae	Shrub	Dicot
3	*Acacia catechu*	Kheri	Fabaceae	Tree	Dicot
4	*Acacia leucophloea*	Rhonjh	Fabaceae	Tree	Dicot
5	*Acacia nilotica*	Babool	Fabaceae	Tree	Dicot
6	*Acacia Senegal*	Kumta	Fabaceae	Tree	Dicot
7	*Achyranthes aspera*	Latjeera	Amaranthaceae	Herbaceous	Dicot
8	*Adhatoda vasica*	Adusa	Acanthaceae	Shrub	Dicot
9	*Adina cordifolia*	Haldu	Rubiaceae	Tree	Dicot
10	*Aegle marmelos*	Beel	Rutaceae	Tree	Dicot
11	*Aerva pseudotomentosa*	Bui	Amaranthaceae	Herbaceous	Dicot
12	*Albizia lebbeck*	Siris	Fabaceae	Tree	Dicot
13	*Aloe vera*	Gwarpatha	Asphodelaceae	Herbaceous	Monocot
14	*Amaranthus viridis*	Cholai	Amaranthaceae	Herbaceous	Dicot
15	*Anogeissus pendula*	Dhok	Combretaceae	Tree	Dicot
16	*Argemone Mexicana*	Satyanashi	Papaveraceae	Herbaceous	Dicot
17	*Aristida adscensionis*	Lampro	Poaceae	Herbaceous	Monocot
18	*Artemesia scoparia*	Banno	Asteraceae	Herbaceous	Dicot
19	*Asparagus racemosus*	Satawari	Liliaceae	Herbaceous	Monocot
20	*Azadirachta indica*	Neem	Meliaceae	Tree	Dicot
21	*Barleria prionitis*	Vajradanti	Acanthaceae	Shrub	Dicot
22	*Bauhinia racemosa*	Jhinjho	Fabaceae	Tree	Dicot
23	*Boerhavia diffusa*	Santhi	Nyctaginaceae	Herbaceous	Dicot
24	*Bombax ceiba*	Semal	Malvaceae	Tree	Dicot
25	*Boswellia serrata*	Saler	Burseraceae	Tree	Dicot
26	*Bryophyllum pinnatum*	Patherchatta	Crassulaceae	Herbaceous	Dicot
27	*Butea monosperma*	Plash	Fabaceae	Tree	*Dicot*
28	*Calligonum polygonoides*	Phog	Polygonaceae	Shrub	Dicot
29	*Calotropis gigantea*	Vilayati aak	Apocynaceae	Shrub	Dicot
30	*Calotropis procera*	Aak	Asclepiadaceae	Shrub	Dicot
31	*Capparis decidua*	Ker	Capparidaceae	Tree	Dicot
32	*Capparis sepiaria*	Ker	Capparidaceae	Shrub	Dicot
33	*Cassia fistula*	Amaltas	Fabaceae	Tree	Dicot
34	*Cenchrus biflorus*	Bhanruth	Poaceae	Herbaceous	Monocot
35	*Centella asiatica*	Brahmi	Apiaceae	Herbaceous	Dicot
36	*Chenopodium album*	Chilwa	Amaranthaceae	Herbaceous	Dicot
37	*Chlorophytum borivilianum*	Seshmusli	Asparagaceae	Herbaceous	Monocot
38	*Cissus quadrangularis*	Hadjod	Fabaceae	Herbaceous	Dicot
39	*Citrullus colocynthis*	Gad tumba	Cucurbitaceae	Herbaceous	Dicot
40	*Cleome viscosa*	Sing li Ghas	Cleomaceae	Herbaceous	Dicot
41	*Clerodendrum phlomidis*	Arni	Verbenaceae	Shrub	Dicot
42	*Cocculus pendulus*	Pilwani	Menispermaceae	Shrub	Dicot
43	*Commelina benghalensis*	Moriyabati	Commelinaceae	Herbaceous	Monocot
44	*Commiphora wightii*	Gugal	Burseraceae	Tree	Dicot
45	*Convolvulus prostrates*	Sankhpushpi	Convolvulaceae	Herbaceous	Dicot
46	*Cordia dichotoma*	Lehsuwa	Boraginaceae	Tree	Dicot
47	*Crataeva nurvala*	Verna	Capparaceae	Tree	Dicot
48	*Crotalaria burhia*	Jhunda	Fabaceae	Herbaceous	Dicot
49	*Cynodon dactylon*	Doob	Poaceae	Herbaceous	Monocot
50	*Cyperus rotundus*	Gadari	Cyperaceae	Herbaceous	Monocot
51	*Dalbergia sissoo*	Sheesam	Fabaceae	Tree	Dicot
52	*Datura innoxia*	Dhatura	Solanaceae	Herbaceous	Dicot
53	*Datura metel*	Kala Dhatura	Solanaceae	Herbaceous	Dicot
54	*Dendrocalamus strictus*	Bans	Poaceae	Herbaceous	Monocot

55	*Desmostachya bipinnata*	Dab	Poaceae	Herbaceous	Monocot
56	*Digera muricata*	Ghundro	Amaranthaceae	Herbaceous	Dicot
57	*Digitaria ciliaris*	Jherni	Poaceae	Herbaceous	Monocot
58	*Echinops echinatus*	Oont kateli	Asteraceae	Herbaceous	Dicot
59	*Eucalyptus camaldulensis*	Safeda	Myrtaceae	Tree	Dicot
60	*Eucalyptus gunnii*	Guni	Myrtaceae	Tree	Dicot
61	*Euphorbia caducifolia*	Danda Thor	Euphorbiaceae	Shrub	Dicot
62	*Euphorbia hirta*	Dudhi	Euphorbiaceae	Herbaceous	Dicot
63	*Euphorbia neriifolia*	Thor	Euphorbiaceae	Shrub	Dicot
64	*Fagonia indica*	Dhamasa	Zygophyllaceae	Herbaceous	Dicot
65	*Ficus benghalensis*	Bargad	Moraceae	Tree	Dicot
66	*Ficus racemosa*	Gular	Moraceae	Tree	Dicot
67	*Ficus religiosa*	Peepal	Moraceae	Tree	Dicot
68	*Gisekia pharnaceoides*	Sureli	Molluginaceae	Herbaceous	Dicot
69	*Heliotropium strigosum*	Chiti ka fool	Boraginaceae	Herbaceous	Dicot
70	*Heteropogon controtus*	Surwala	Poaceae	Herbaceous	Monocot
71	*Indigofera linnaei*	Bekaria	Fabaceae	Herbaceous	Dicot
72	*Ipomoea cairica*	Bel	Convolvulaceae	Herbaceous	Dicot
73	*Lasiurus scindicus*	Sevann	Poaceae	Herbaceous	Monocot
74	*Leptadenia pyrotechnica*	Kheenp	Asclepiadaceae	Herbaceous	Dicot
75	*Leucas aspera*	Dargal	Lamiaceae	Herbaceous	Dicot
76	*Lycium barbarum*	Murali	Solanaceae	Shrub	Dicot
77	*Malvastrum coromandelianum*	Jangli Khariti	Malvaceae	Herbaceous	Dicot
78	*Mangifera indica*	Aam	Anacardiaceae	Tree	Dicot
79	*Maytenus emarginata*	Kankero	Celastraceae	Tree	Dicot
80	*Momordica balsamina*	Baad krelia	Cucurbitaceae	Herbaceous	Dicot
81	*Neolamarckia cadamba*	Cadomb	Rubiaceae	Tree	Dicot
82	*Ocimum americanum*	Bapchi	Lamiaceae	Herbaceous	Dicot
83	*Ocimum sanctum*	Tulsi	Lamiaceae	Herbaceous	Dicot
84	*Oxalis corniculata*	Khatti buti	Oxalidaceae	Herbaceous	Dicot
85	*Parthenium hysterophorus*	Gajar Ghas	Asteraceae	Herbaceous	Dicot
86	*Pedalium murex*	Dakhani Gokharu	Pedaliaceae	Herbaceous	Dicot
87	*Phoenix sylvestris*	Khajur	Arecaceae	Tree	Monocot
88	*Pongamia pinnata*	Karanj	Fabaceae	Tree	Dicot
89	*Prosopis cineraria*	Khejri	Fabaceae	Tree	Dicot
90	*Prosopis juliflora*	Vilayati babool	Fabaceae	Tree	Dicot
91	*Pteridium aquilinum*	Fern	Dennstaedtiaceae	Herbaceous	Gymnosperm
92	*Rhus mysorensis*	Dasar	Anacardiaceae	Shrub	Dicot
93	*Ricinus communis*	Arandi	Euphorbiaceae	Shrub	Dicot
94	*Saccharum munja*	Kuncha	Poaceae	Herbaceous	Monocot
95	*Saccharum spontaneum*	Kaans	Poaceae	Herbaceous	Monocot
96	*Salvadora oleoides*	Jaal	Salvadoraceae	Tree	Dicot
97	*Solanum indicum*	Tindra	Solanaceae	Herbaceous	Dicot
98	*Solanum surattense*	Nili kantili	Solanaceae	Herbaceous	Dicot
99	*Solanum xanthocarpum*	Paserghatali	Solanaceae	Herbaceous	Dicot
100	*Sporobolus diander*	chiria ka dana	Poaceae	Herbaceous	Monocot
101	*Tecomella undulate*	Rohida	Bignoniaceae	Tree	Dicot
102	*Tephrosia purpurea*	Kharsana	Fabaceae	Herbaceous	Dicot
103	*Terminalia arjuna*	Arjun	Combretaceae	Tree	Dicot
104	*Thespesia populnea*	Parish peepal	Malvaceae	Tree	Dicot
105	*Tinospora cordifolia*	Giloe	Menispermaceae	Herbaceous	Dicot
106	*Tribulus terrestris*	Chota Gokharu	Zygophyllaceae	Herbaceous	Dicot
107	*Tridax procumbens*	Runkhadi	Asteraceae	Herbaceous	Dicot
108	*Verbesina encelioides*	Jangli Surajmukhi	Asteraceae	Herbaceous	Dicot
109	*Withania somnifera*	Aswagandha	Solanaceae	Herbaceous	Dicot
110	*Zizyphus mauritiana*	Ber	Rhamnaceae	Tree	Dicot
111	*Zizyphus nummularia*	Jhadi Ber	Rhamnaceae	Shrub	Dicot

मध्यान्ह भोजन योजना की भूमिका का माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं की तुलना के आधार पर मूल्यांकन करना

डॉ. गंगाराम वास्केल *

शोध सारांश – भारत एक विकासशील देश है। इस देश के विकसित देशों की श्रेणी मे स्थापित होने में अनेक कारण जैसे– अत्यधिक जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी, भुखमरी, गरीबी आदि उत्तरदायी है। कोठारी कमीशन (1964-66) का कथन प्रांसगिक है कि – 'भारत के भाग्य का निर्माण उसकी कक्षाओं में हो रहा है'। अत: इसे दृष्टिगत रखते हुए भारत सरकार द्वारा समय–समय पर शिक्षा के महत्व को स्वीकारते हुए कई योजनाएँ प्रारम्भ की गयी, जिनके माध्यम से प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा का सफल क्रियान्वयन हो सके। यह योजना पूर्व प्रधानमंत्री श्री नरसिंहराव द्वारा 15 अगस्त 1995 से प्रारंभ की गई। इस योजना को क्रियान्वित करने का कार्य राज्य विज्ञान संस्थान, जबलपुर को सौंपा है। विज्ञान संस्थान ने राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली तथा गृह विज्ञान महाविद्यालय जबलपुर के सहयोग से इस परियोजना पर 1976–77 से कार्य आरंभ कर दिया है। इस शोध कार्य का उद्देश्य था मध्यान्ह भोजन योजना की भूमिका का माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं की तुलना के आधार पर मूल्यांकन करना। इस शोध कार्य की परिकल्पना मध्यान्ह भोजन योजना हेतु माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं के माध्यों के बीच कोई सार्थक अन्तर नहीं है। प्रस्तुत शोध एक सर्वेक्षण प्रकार का शोध था। इस समष्टि में से उद्देश्यपरक (Purposive) न्यादर्ष तकनीक द्वारा न्यादर्ष का चयन किया गया। न्यादर्ष का चयन धार जिले के 7 विकासखण्डों से विद्यालयों को याद्दच्छिक विधि से 200 माता एवं पिता (विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के माता–पिता) का चयन किया गया। प्रदत्त का विश्लेषण स्वतंत्र टी परीक्षण (Independent `t' test) एवं प्रतिशत मान विधि का उपयोग किया गया। कथन वार प्रतिशत विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि मध्यान्ह भोजन योजना की भूमिका के सन्दर्भ में, माता एवं पिता द्वारा प्राप्त समेकित प्रतिक्रियाएँ सकारात्मक रही व मध्यान्ह भोजन योजना की भूमिका को माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं के संदर्भ में प्रभावी पाया गया।

प्रस्तावना – भारत एक विकासशील देश है। इस देश के विकसित देशों की श्रेणी मे स्थापित होने में अनेक कारण जैसे– अत्यधिक जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी, भुखमरी, गरीबी आदि उत्तरदायी है। इन श्रेणी में एक अन्य कारण अशिक्षा भी है। निश्चित तौर पर शिक्षा किसी भी समाज व राष्ट्र के सर्वांगीण विकास का केन्द्र बिन्दु होती है। शिक्षा और शिक्षा संबंधी विभिन्न प्रक्रियाओं के सफल क्रियान्वयन के द्वारा ही समाज व राष्ट्र का सही दिशा में विकास सम्भव है। यहां कोठारी कमीशन (1964-66) का कथन प्रासंगिक है कि – 'भारत के भाग्य का निर्माण उसकी कक्षाओं में हो रहा है।' अत: इसे दृष्टिगत रखते हुए भारत सरकार द्वारा समय–समय पर शिक्षा के महत्व को स्वीकारते हुए कई योजनाएँ प्रारम्भ की गयी, जिनके माध्यम से प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा का सफल क्रियान्वयन हो सके। प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा के सफल क्रियान्वयन हेतु मध्यप्रदेश सरकार द्वारा संचालित योजनाएँ निम्नानुसारहै–1) पढ़ों और पढ़ाओ योजना, 2) बालिकाओं के शिक्षा के प्रयास,3) यूनिसेफ की शिक्षा योजनाएँ, 4) शाला सुविधाएँ, 5) शिक्षा गारण्टी योजना, 6) रूपांतरण योजना,7) जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, 8) शिशुओं की देखभाल और शिक्षा, 9) शिक्षक समाख्या परियोजना, 10) ऑपरेशन ब्लेक बोर्ड, 11) विकलांग बालकों की समेकित शिक्षा व्यवस्था, 12) औपचारिकेतर शिक्षा, 13) मनीषा योजना, 14) पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक नवीनीकरण, एवं 15) अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के बालकों के लिये विशेष कार्यक्रम।

इन योजनाओं की श्रेणी में एक योजना मध्यान्ह भोजन योजना भी है। मध्यान्ह भोजन योजना एक ऐसी योजना है, जिसका उद्देश्य विद्यालयों विशेषकर ग्रामीण विद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या में वृद्धि करना व शिक्षा के प्रति रुचि जागृत करना है। साथ ही यह विद्यार्थियों के उचित पोषण को भी सुनिश्चित करती है। भारत सरकार द्वारा इस योजना के सफल क्रियान्वयन हेतु भरसक प्रयत्न किए गए है। यद्यपि इन प्रयासों के बावजुद क्या यह योजना अपने लक्ष्यों को पूर्णतया प्राप्त कर चुकी है और क्या इसकी प्राप्ति में गुणवत्ता व शुद्धता को ध्यान मे रखा जा रहा है? सरल शब्दों में यह योजना अपने लक्ष्यों के सन्दर्भ मे उपयोगी रही या इसी दिशा में आगे बढ़ रही है या नहीं ? इन समस्त प्रश्नों के उत्तर खोजने की दिशा में ही शोधकर्ता द्वारा इस प्रकरण का शोध विषय के रूप में चयन किया गया है।

संवैधानिक लक्ष्य एवं उद्देश्य – भारत एक प्रजातांत्रिक देश है। यदि किसी राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक सुशिक्षित, सुसंस्कारित एवं सुव्यवस्थित होंगे, तो उस राष्ट्र का उतना अधिक विकास सहजता के साथ हो सकेगा, जिस राष्ट्र के नागरिक अशिक्षित होंगे उस राष्ट्र का विकास कदापि संभव नही हो सकता। शिक्षा के लिये नागरिकों पर पूंजी विनियोजन राष्ट्र की समृद्धि का प्रतीक है। भारत जैसे प्रजातांत्रिक देश के लिये इस विनियोजन का महत्व इस कारण और बढ़ जाता है कि भारत विशाल जनसंख्या वाला देश होने के साथ–साथ गरीबी बेकारी, भुखमरी, अशिक्षा, अज्ञानता एवं अंधविश्वास के अंधकार मे भटका हुआ देश है। इतने विशाल भू–भाग एवं जनसंख्या वाले देश को अल्प समय मे साक्षर एवं शिक्षित कर पाना असंभव नही तो दूभर अवश्य है।

भारतीय संविधान का प्रमुख लक्ष्य यह रहा है कि भारत का प्रत्येक बच्चा जिसकी आयु 6 से 14 वर्ष की है, को शासन द्वारा अनिवार्य एवं

* व्याख्याता, शिक्षा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

नि:शुल्क शिक्षा के प्रावधानों के अन्तर्गत शिक्षित किया जाना चाहिये ताकि बालक बालिकाओं में समझ उत्पन्न हो सके और वे राष्ट्रीय जीवन के प्रजातांत्रिक लक्ष्यों को पहचान सकें।

नागरिकों को उनके देश के प्रजातांत्रिक लक्ष्यों की जानकारी अनिवार्य है। जब तक प्रजातांत्रिक लक्ष्यों की जानकारी राष्ट्र के नागरिकों को नहीं होगी, तब तक उस राष्ट्र का प्रजातांत्रिक ढाँचा मजबूत बताना कदाचित कभी भी संभव न हो सकेगा। भारतीय संविधान के 64 वर्षो के अंतराल के उपरांत आज भी राष्ट्रीय जीवन को उसके नागरिक प्रजातांत्रिक दर्पण में देखकर प्रजातंत्र की जड़ों को मजबूत कर सके व राष्ट्रीय समृद्धि को अभिवृद्ध कर सकें। राष्ट्र का उसके नागरिकों को शिक्षित बनाने हेतु इस दिशा मे पूंजी विनियोजन महत्वपूर्ण पहलु है जिसका क्रियान्वयन किया जाना आवश्यक होगा।

राष्ट्र की शैक्षिक लक्ष्यों की दार्शनिक भूमिका में यह स्पष्ट किया गया है कि राष्ट्रीय जीवन की संवेदनशीलता को शाश्वत एवं अक्षुण्य बनाये रखने के लिये प्राथमिक स्तर की शिक्षा को सशक्त बनाना आवश्यक होगा। शिक्षा का सशक्तीकरण शिक्षा के राष्ट्रीय लक्ष्यों का आधार बिन्दु है। शिक्षा के राष्ट्रीय लक्ष्यों को इस प्रकार आंका जा सकता है।

मध्यान्ह भोजन से तात्पर्य – मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय, स्कूल शिक्षा एवं साक्षरता विभाग के दिशा निर्देशों के अनुरूप क्रियान्वित किया जाता है। प्रदेश में इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन के लिये पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग नोडल विभाग है जिसके अन्तर्गत मध्यप्रदेश मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम परिषद् कार्यक्रम के सम्पूर्ण नियोजन का दायित्व वहन करती है। कार्यक्रम का क्रियान्वयन भारत सरकार एवं राज्य सरकार के संयुक्त संसाधनों से किया जाता है। विद्यालय में बालकों को लगभग 6 घण्टे रहना पड़ता है और सायंकाल को जब उन्हें खाना मिलता है तो इस बीच लगभग 6:30 से 7 घण्टे का अन्तर पड़ता है। बालकों को भोजन हेतु इतना अन्तर उनके स्वास्थ पर विपरीत प्रभाव डालते हैं जबकि बच्चे बहुत क्रियाशील होते हैं व विद्यालय में पढ़ने खेलने मस्ती करने आदि में अत्यधिक शारीरिक ऊर्जा खत्म होती है। अत: उन्हे विद्यालय समय में भी भोजन (संतुलित) की व्यवस्था की जानी चाहिए। इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए 'विद्यालय के समय के बीच में विद्यार्थियों को भोजन दिया जाना ही मध्यान्ह भोजन कहलाता है।'

विकासशील देशों में स्कूल में बच्चों को खाना देने के कई कानून बनाये गये हैं। यूनेस्को (UNESCO) द्वारा भी बच्चों को दोपहर के समय दूध देने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। भारत में लगभग सभी राज्यों में यह योजना क्रियान्वित हो चुकी है।

मध्यान्ह भोजन का महत्व व उपयोगिता – वर्तमान में सरकार ने प्रत्येक गाँव में प्राथमिक शालायें खुलवा दी हैं। इन सरकारी स्कूलों में फीस नहीं लगती। साथ ही सरकार बालिकाओं को स्कूल यूनिफॉम, सभी विद्यार्थियों को किताबें, छात्रवृत्तियाँ भी प्रदान कर रही है, ताकि गरीब घर के बच्चे भी स्कूल में पढ़ सकें। इतना सब मिलने के बाद भी बच्चे नहीं पढ़ पाते, क्योंकि उन्हें संतुलित भोजन नहीं मिलता। भारत में कहीं-कहीं क्षेत्रों में इतनी गरीबी है कि बहुत से बच्चे स्कूल खाली पेट आते है। भूख के कारण पढ़ाई में उनका मन नहीं लगता। इस तरह पढ़ाई में वे पिछड़ जाते हैं और फिर स्कूल आना छोड़ देते हैं। यही कारण है कि प्राथमिक स्कूलों में सभी बच्चों को संतुलित भोजन देना जरूरी समझा। जिसे सन् 1997 से माध्यमिक स्तर तक की कक्षाओं के बच्चों को भी दिया जाने लगा है। इसी दृष्टि से मध्यान्ह भोजन का महत्व एवं उपयोगिता उल्लेखनीय है।

मध्यान्ह भोजन योजना की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि – मध्यप्रदेश में मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम का क्रियान्वयन वर्ष 1995 से प्रारंभ किया गया है, जिसके अंतर्गत समस्त शासकीय एवं शासन से अनुदान प्राप्त प्राथमिक शालाओं के विद्यार्थियों को कच्चा खाद्यान्न वितरित किया जाता था, परन्तु याचिका क्रं. 196/2001 के अनुक्रम में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पके हुये भोजन के वितरण का आदेश पारित किया गया। माह जनवरी 2004 से मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम के अंतर्गत प्रदेश में दलिया / खिचड़ी के स्थान पर विद्यार्थियों को गर्म पका हुआ भोजन उपलब्ध कराया जा रहा है। शैक्षणिक सत्र 2007 माह अक्टूबर से कार्यक्रम का विस्तार शैक्षणिक रूप से पिछड़े विकासखंडों की शासकीय एवं शासन से अनुदान प्राप्त माध्यमिक शालाओं में किया गया। भारत सरकार के निर्देशानुसार शैक्षणिक वर्ष 2008 से प्रदेश की सभी शासकीय एवं शासन से अनुदान प्राप्त माध्यमिक शालाओं में मध्यान्ह भोजन योजनाओं लागू किया गया।

रोजगार आवश्वासन योजना के अन्तर्गत प्रदेश के 313 विकास खण्डों में मध्यान्ह भोजन योजना कार्यक्रम 2 अक्टूबर 1995 से संचालित है। 50 जिलों के सभी आदिवासी विकास खण्डों में आदिम जाति कल्याण विभाग द्वारा एवं शेष विकास खण्डों में शिक्षा विभाग द्वारा कार्यक्रम संचालित है। भारत सरकार द्वारा नि:शुल्क खाद्यान्न उपलब्ध कराया जाता है। किन्तु खाद्यान्न वितरण का कार्य राज्य सरकारों द्वारा किया जाता है। इस योजना के संचालन का दायित्व प्रदेश में नोडल विभाग, ग्रामीण विकास विभाग एवं संचालक पंचायत को सौंपा गया है।

देश के विभिन्न भागों में हुए पोषण सर्वेक्षणों से निश्चित प्राथमिक शिक्षा से ज्ञात हुआ है कि पोषक तत्वों के अभाव से बालक अत्यधिक दुष्प्रभावित होते हैं उनकों प्रारंभिक अवस्था में शारीरिक वृद्धि और विकास के लिये पौष्टिक भोजन की विशेष रूप से आवश्यकता होती है, स्कूल जाने वाले बालकों की शारीरिक वृद्धि निरन्तर होती रहती है। इसलिये उनके भोजन में प्रोटीन की अत्यधिक मात्रा मिलनी चाहिये। बालक अत्यधिक क्रियाशील होता है इसलिये उन्हें अधिक ऊर्जा की एवं पोषक भोजन की आवश्यकता होती है।

मध्यान्ह भोजन योजना का क्रियान्वयन – भारत शासन के संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा जारी निर्देशानुसार तथा सर्वोच्च न्यायालय में दायर याचिका क्र. 196/2001 में पारित अंतरिम आदेश के पालन में देश के सभी शासकीय प्राथमिक शालाओं के छात्रों को शाला लगने के समय गर्म पका हुआ भोजन वितरित किया जाना अनिवार्य किया गया है जिसे सन् 1997-98 में माध्यमिक स्तर तक बढ़ा दिया गया है।

जापान में सन् 1800, ब्राजील में 1932, अमेरिका में 1946 से बच्चों को स्कूल में आकर्षित करने के उद्देश्य से यह योजना प्रारंभ की गई 1956 में तमिलनाडु में छोटे स्तर पर यह योजना शुरू की गई थी। मध्यप्रदेश में यह योजना पूर्व प्रधानमंत्री श्री नरसिंहराव द्वारा 15 अगस्त 1995 से प्रारंभ की गई।

मध्यप्रदेश में योजना का क्रियान्वयन – यह यूनीसेफ की परियोजना क्रमांक 4 है, जो कि प्राथमिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण के निरंतर विकास में सहायता हेतु प्रस्तावित है।

मध्यान्ह भोजन योजना की प्रमुख समस्याएँ – मध्यान्ह भोजन योजना की प्रमुख समस्याएँ अग्र है- 1) ग्रामीण क्षेत्र के अभिभावक एवं पालकगण का अशिक्षित होना।, 2) मध्यान्ह भोजन में शिक्षकों की रुचि का अभाव।,

3) विद्यालयों में शिक्षकों की कमी का होना।, 4) मध्यान्ह भोजन के कारण शिक्षण प्रक्रिया का एवं परिणामों का प्रभावित होना।, 5) मध्यान्ह भोजन में खाना बनाने वाले व्यक्तियों का अस्पृष्य जाति का होना (क्योंकि आज भी गांवों में जात -पात को मानते हैं)।, 6) समय समय पर आवंटन प्राप्त न हो पाना।, 7) मध्यान्ह भोजन योजना मे आने वाले खाद्यान की गुणवत्ता का अभाव।, 8) मध्यान्ह भोजन योजना में बनाये जाने वाले भोजन की गुणवत्ता।, 9) मध्यान्ह भोजन में दिये जाने वाला भोजन मेनू के अनुरुप वितरण का अभाव।, 10) संपन्न परिवार के बच्चों का मध्यान्ह भोजन ग्रहण नहीं करना।, 11) मध्यान्ह भोजन योजना में कार्यरत कर्मचारी के प्रति ग्रामिणों का दृष्टिकोण।, 12) विद्यालयों में किचन, बर्तन, जलाऊ लकड़ी इत्यादि की समस्या एवं 13) मध्यान्ह भोजन योजना के फलस्वरुप शिक्षकों पर पडने वाला अतिरिक्त कार्यभार।

औचित्य – मानव व्यक्तित्व के विकास एवं राष्ट्र की प्रगति में शिक्षा का अतुलनीय महत्व है। शिक्षा के माध्यम से समाज व राष्ट्र हेतु बुद्धिजीवी वर्ग का निर्माण होता है, जो राष्ट्र की उन्नति में अपना योगदान देता है।शिक्षा के सर्वव्यापीकरण को बढ़ावा देने व गुणवत्ता में सुधार के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा-समय-समय पर अनेक योजनाएँ प्रारंभ की गई हैं जैसे - निरोपचारिक शिक्षा, शिक्षा गारंटी योजना, आपरेषन ब्लेकबोर्ड योजना, सर्वशिक्षा अभियान, जिला-प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम आदि। इन योजनाओ में मध्यान्ह भोजन योजना भी एक है। यह योजना विद्यार्थियों के पोषण में सुधार के साथ समय-समय पर उनके प्रवेष, उपस्थिति, ठहराव व उपलब्धि से संबंधित है।

मध्यान्ह भोजन योजना निसंदेह एक अत्यंत महत्वाकांक्षी योजना है। पूर्व शोध कार्यो के समीक्षात्मक अध्ययन से ज्ञात होता है कि मध्यान्ह भोजन के मूल्यांकन से संबंधित कई शोध कार्य किए गए हैं जिनमें सेव्यास (1992), सक्सेना एवं मित्तल (1995), दुधे (1998), सोनी (2000), कानूनगो (2002), बाला (2003), जैन (2005), ठाकुर (2005), चौधरी (2008), वेटुकुरी एवं राजु (2009), लक्ष्मय्या व अन्य (2009)नाम्बियार एवं अन्य (2010), दीपालिका (2010), हिरानी (2010), पाल एवं ठाकुर (2011), नांगिया और पूनम (2011), भोयते और अय्यर (2011), बाबुलाल (2012), एवं पॉल व मण्डल (2012) द्वारा किये गये शोध कार्य शोधक को उपलब्ध हो पाए है। यद्यपि इन शोध कार्यों के द्वारा भी मध्यान्ह भोजन योजना के विविध पक्षों से संबंधित मूल्यांकन किया गया, परन्तु यह शोध कार्य सीमित संख्या में है। मध्य प्रदेश में मध्यान्ह भोजन योजना से सम्बंधित अल्प शोधकार्य शोधकर्ता को उपलब्ध हो पाये साथ ही मध्यान्ह भोजन योजना हेतु माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं के आधार पर मध्यान्ह भोजन योजना का मूल्यांकनसम्बन्धी कोई शोध कार्य शोधक को उपलब्ध नहीं हो पाया है। साथ ही मध्यान्ह भोजन योजना का शैक्षिक सन्दर्भो के प्रसंग में मूल्यांकन सम्बन्धी कोई शोध कार्य नहीं किया गया है। अतः इसे ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध विषय का चयन किया गया है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध कार्य का अग्र उद्देश्य था- मध्यान्ह भोजन योजना की भूमिका का माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं की तुलना के आधार पर मूल्यांकन करना।

परिकल्पना – प्रस्तुत शोध कार्य हेतु शून्य परिकल्पना का निर्माण किया गया- मध्यान्ह भोजन योजना हेतु माता एवं पिता की प्रतिक्रियाआ के माध्यों के बीच कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध का प्रकार – प्रस्तुत शोध एक सर्वेक्षण प्रकार का शोध है, जिसमें शिक्षा से संबंधी एक महत्वाकांक्षी योजना 'मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम की उपयोगिता' के मूल्यांकन हेतु 200 माता एवं पिता (विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के माता-पिता) का सर्वेक्षण किया गया।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध कार्य की समष्टि धार जिले के अन्तर्गत मध्यान्ह भोजन योजना में सम्मिलित माता एवं पिता (विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के माता-पिता) थे। इस समष्टि में से उद्देश्यपरक (Purposive) न्यादर्श तकनीक द्वारा न्यादर्श का चयन किया गया। न्यादर्श का चयन धार जिले के 7 विकासखण्डों से किया गया। प्रत्येक विकासखण्ड से एक-एक विद्यालय का यादृच्छिक रुप से चयन किया गया।

विकासखण्ड व विद्यालय वार अभिभावक की संख्या को दर्शाती तालिका

क्र.	विकाखण्ड का नाम	विद्यालय का नाम	अभिभावक
1	मनावर	प्राथमिक विद्यालय मनावर, तह.-मनावर जिला-धार, म.प्र.	25
2	धरमपुरी	प्राथमिक विद्यालय ग्राम-लोहारी, तह.-धरमपुरी जिला-धार, म.प्र.	27
3	उमरबन	प्राथमिक विद्यालय ग्राम-लवाणी, तह.-धार जिला-धार, म.प्र.	34
4	गंधवानी	प्राथमिक विद्यालय गंधवानी, तह.-गंधवानी जिला-धार, म.प्र.	20
5	ड़ही	प्राथमिक विद्यालय ड़ही, तह.-ड़ही जिला-धार, म.प्र.	33
6	निसरपुर	प्राथमिक विद्यालय ग्राम-भेसलाय, तह.-कुक्षी जिला-धार, म.प्र.	33
7	कुक्षी	प्राथमिक विद्यालय कुक्षी, तह.-कुक्षी जिला-धार, म.प्र.	30
		कुल	200

लिंग वार न्यादर्श संख्या को प्रदर्शित करती तालिका

क्र.	लिंग	संख्या
1.	माता	50
2.	पिता	50
	कुल	100

उपकरण – प्रस्तुत शोध कार्य हेतु माता एवं पिता (विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के माता-पिता) की प्रतिक्रियाओं के प्रदत्त एकत्रित किए गए। प्रतिक्रियाओं को ज्ञात करने हेतु शोधक द्वारा प्रतिक्रिया मापनी विकसित की गयी। प्रतिक्रिया मापनी में कुल 20 कथन थे। इन कथनों में सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों प्रकार के कथन सम्मिलित किए गए। इन कथनों की संख्या क्रमशः 10-10 थी। माता एवं पिता (विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के माता-पिता) की प्रतिक्रियाओं हेतु प्रतिक्रिया मापनी के प्रत्येक कथन पर तीन बिन्दु मापनी सहमत, अनिश्चित व असहमत का उपयोग किया गया। तीन बिन्दु मापनी पर सकारात्मक कथनों हेतु क्रमशः 3, 2 व 1 तथा नकारात्मक कथनों हेतु क्रमशः 1, 2 व 3 अंक भार का उपयोग किया गया। प्रतिक्रिया मापनी में मध्यान्ह भोजन योजना के विभिन्न पक्षों जैसे- नियमितता, मात्रा व गुणवत्ता, नामांकन व विरतता (ड्रापआउट) दर पर प्रभाव, स्वच्छता/साफ-सफाई, निरीक्षण कार्य, शिक्षण कार्य पर प्रशव,

अतिक्ति कार्य शर आदि के संबंधित कथन शामिल किए गए थे।

प्रदत्त संकलन – सर्वप्रथम धार जिले के 7 विकासखण्डों में चयनित विद्यालयों से चयनित न्यादर्श हेतु चयनित विद्यालयों के प्राचार्यो से अनुमति प्राप्त की गई। तत्पश्चात् न्यादर्श के रूप में चयनित माता एवं पिता (विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के माता-पिता) से आत्मीय संबंध स्थापित कर शोध का उद्देश्य स्पष्ट किया गया। उन्हें विष्वास दिलाया गया कि प्रस्तुत शोध से प्राप्त प्रतिक्रियाओं को पूर्णतया गोपनीय रखा जाएगा और केवल शोध कार्य हेतु उपयोग में लाया जाएगा। तत्पश्चात् समस्त माता एवं पिता से शोधक द्वारा निर्मित प्रतिक्रिया मापनी भरवायी गई। प्रतिक्रिया मापनी भरवाने के पश्चात प्रतिक्रिया मापनी के सकारात्मक एवं नकारात्मक कथनों का अंक भार के आधार पर फलांकन किया गया। इस प्रकार शोध हेतु चयनित न्यादर्श से मध्यान्ह भोजन योजना की भूमिका के प्रति प्रतिक्रियाओं के प्रदत्त एकत्रित कर लिए गये।

विश्लेषण विश्लेषण – 'मध्यान्ह भोजन योजना की भूमिका का माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं की तुलना के आधार पर मूल्यांकन करना।' इस उद्देश्य से संबंधित प्रदत्त का विश्लेषण 'स्वतंत्र 'टी' परीक्षण (Independent `t' test)' द्वारा किया गया।

तालिका (अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका से स्पष्ट है कि लिंग के लिए टी का मान .9 है, जिसके लिए स्वतंत्रता की कोटि= 198 पर, द्वि-पुच्छीय सार्थकता का मान .37 है, जो कि 0.05 से बड़ा है, अत: गणना से प्राप्त 'टी' का मान स्वतंत्रता की कोटि= 198 तथा 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं है, अर्थात् माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं के माध्य फलांकों में कोई सार्थक अंतर नहीं हैं। अत: इस स्थिति में शून्य परिकल्पना 'मध्यान्ह भोजन योजना हेतु माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं के माध्यों के बीच कोई सार्थक अन्तर नहीं है' निरस्त नहीं की जाती है। अत: निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि मध्यान्ह भोजन योजना हेतु माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं के माध्यों के बीच कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया अर्थात् माता एवं पिता की प्रतिक्रियाओं के सन्दर्भ में मध्यान्ह भोजन योजना को एक समान रूप से प्रभावी पाया गया।

विद्यार्थियों के माता एवं पिता के मध्यान्ह भोजन योजना के प्रति प्रतिक्रियाओं के माध्यों को दर्शाता रेखाचित्र

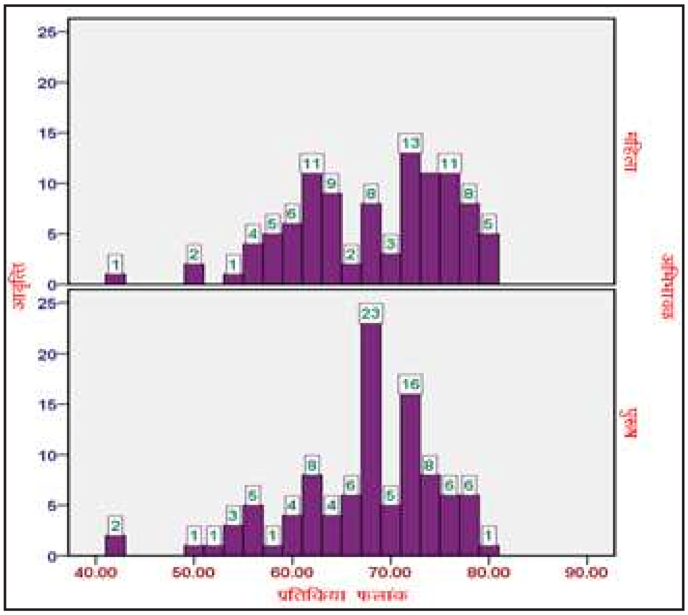

निष्कर्ष–अत: विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि मध्यान्ह भोजन योजना की भूमिका के सन्दर्भ में, माता एवं पिता (विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के माता-पिता) द्वारा प्राप्त समेकित प्रतिक्रियाएँ सकारात्मक रही व मध्यान्ह भोजन योजना की भूमिका को माता एवं पिता (विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के माता-पिता) प्रतिक्रियाओं के संदर्भ में प्रभावी पाया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **जैन, पी.** : 'मध्यान्ह भोजन योजना की पूर्ववर्ती कार्यप्रणाली एवं वर्तमान कार्यप्रणाली का शैक्षिक प्रक्रिया पर पढ़ने वाले प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन', अप्रकाशित लघु शोध प्रबंध, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, 2004-05.
2. **चौधरी, के. के.** : 'मिड-डे मील योजना के प्रति बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा संचालित प्राथमिक विद्यालय में कार्यरत् शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन', भारतीय आधुनिक शिक्षा, अक्टूबर 2009, पृ. 47-59.
3. **करजगावकर, ए.** : जनसंख्या वृद्धि पर शिक्षा का प्रभाव - उज्जैन जिले के विशेष सन्दर्भ में. अप्रकाशित शोध (पी-एच.डी.), विक्रम विष्वविद्यालय, उज्जैन, 1988.
4. कार्यालय कलेक्टर जिला इन्दौर (म.प्र.) द्वारा जारी किये गये आदेश- विषयमध्यान्ह भोजन कार्यक्रम का शैक्षणिक सन् 2008-09, 2007-08 में प्रभावी क्रियान्वयन करने बाबद्।
5. **हिरानी, के.** : मध्यान्ह भोजन की उपयोगिता : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन शासकीय माध्यमिक विद्यालय, अम्बोलिया, इन्दौर के संदर्भ में. एम.ए. (शिक्षा) लघुशोध, महात्मा गांधी ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना, 2009-2010.
6. **दीपालिका** : प्राथमिक विद्यालयों में मध्यान्ह भोजन एवं नि:शुल्क पुस्तकों के वितरण कार्यक्रम का विद्यार्थियों के नामांकन, बौद्धिक विकास एवं अध्ययन आदतों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, (पी-एच.डी.),(शिक्षा) शोध-ग्रन्थ, छत्रपति शाहू जी महराज विश्वविद्यालय, कानपुर, (उ.प्र.), 2010.
7. **ठाकुर एम.** : शासकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर पर चल रहे मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम का विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण के आधार पर मूल्यांकन, एम. एड.लघुशोध, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, 2005.
8. **म.प्र. शासन प्रकाशन** : म.प्र. शासन प्रकाशन पंचायत एवं ग्रामीण विकास 'मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम'
9. **ठाकुर, एम.** : शासकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर पर चल रहे मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम का विद्यार्थियों के प्रत्यक्षण के आधार पर मूल्यांकन, भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ, मई-जून, 2011. पृ. 7-14.
10. **मेहरोत्रा, एस. पी.**: 'प्राथमिक विद्यालयों में बच्चों के पोषाहार स्वास्थ्य स्थिति-भारतीय शैक्षिक समीक्षाएँ, बरेली जिले के सन्दर्भ में अध्ययन', अंक 48 (1), जनवरी 2011.

अभिभावकों के लिंगवार न्यादर्श संख्या, मध्यान्ह भोजन योजना की भूमिका के सन्दर्भ में प्रतिक्रियाओं के माध्य फलांक, मानक विचलन एवं टी मूल्य को प्रदर्शित करती तालिका

लिंग	न्यादर्श संख्या	माध्य	मानक विचलन	स्वतंत्रता की कोटि (df)	टी मूल्य	सार्थकता स्तर
माता	100	67.79	8.04	198	0.9	0.37
पिता	100	66.80	7.54			

सा.न.– 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं

****

Impact of Displacement Peoples of the Indira Sagar Dam Harsud

Vikram Singh Darbar *

Introduction - The Indian Government builds walls on rivers that devastate the lives of millions ofpeople. Since Independence Big Dams have displaced more than 35 million people in Indiaalone. What is it about our understanding of nationhood that allows governments to crush theirown people with such impunity? What is it about our understanding of 'progress' and 'nationalinterest' that allows (applauds) the violation of human rights on a scale so vast that it takes onthe texture of everyday life and is rendered virtually invisible?

But every now and then something happens to make the invisible visible, theincomprehensible comprehensible. Harsud is that something. It is literature.

History - Harsud is a seven hundred year old town in Madhya Pradesh, slated to be submergedby the reservoir of the Narmada Sagar Dam. The same Harsud where in 1989 tens of thousandsof activists gathered from across India, held hands in a ring around the town, and vowed tocollectively resist destruction masquerading as "Development". Fifteen years on, while Harsudwaits to sink, that dream endures on slender moorings.

The 262 meter high Narmada Sagar will be the highest of the high dams on theNarmada, its reservoir the largest in India. In order to irrigate 1,23,000 hectares of land it willsubmerge 91,000 hectares (!) This includes 41,000 hectares of prime dry deciduous forest, 249villages and the town of Harsud. 30% of the land slated to be serviced by irrigation canals isalready irrigated. Odd maths wouldn't you say? Those who have studied the Narmada SagarProject – Ashish Kothari of Kalpvriksh, Claude Alvarez and Ramesh Billorey - have warned usfor years that of all the high dams on the Narmada, the Narmada Sagar would be the mostdestructive. The Indian Institute of Science, Bangalore, estimated that up to 40% of thecomposite command areas of the Omkareshwar and Narmada Sagar could become severelywaterlogged.

In a note prepared in 1993 for the Review Committee, the Ministry ofEnvironment and Forests estimated the value of the forest that would be submerged as Rs33,923 crores. The note went on to say that if these costs were included, the proportion of Costto Benefit rendered the project unviable. The Wild Life Institute, Dehradun, warned of the lossof a vast reservoir of biodiversity, wildlife and rare medicinal plants. Its 1994 Impact Assessment Report to the Ministry of Environment said: The compensation of the combinedadversarial impacts of the Narmada Sagar Project and the Omkareshwar Project is neitherpossible nor is being suggested. These will have to be reckoned as the price for the perceivedsocio-economic benefit.

At a huge, recent protest rally here, the two businessmen joined the growing chorus of outrage over the planned $4 billion SardarSarovar dam. It will displace 70,000 people in all.

"No one wants to leave his home, but if we are forced to leave, the government must give us adequate compensation," Mr. Kumar said.

The Narmada controversy reflects a growing militancy against huge dam projects, which have long been a part of anti-poverty gospel.

After India's independence from Britain in 1947, Prime Minister Jawaharlal Nehru spearheaded dam construction, calling them "temples of development." Today, the government of Prime Minister Rajiv Gandhi, Nehru's grandson, still considers large dams as the best answer for drought-plagued and power-short areas.

Officials say harnessing the 800-mile-long Narmada could transform deserts in Gujarat and Rajasthan states into lush agricultural lands and improve the lives of needy Indians in Madhya Pradesh and Maharashtra states.

The SardarSarovar project would be the largest in the Narmada Basin Plan. It calls for constructing 30 large, 135 medium, and more than 3,000 small dams on the river and its tributaries. It is India's largest development scheme ever and one of the biggest in the third world.

The World Bank, which is providing $450 million for the SardarSarovar dam, agrees that big dams creating large reservoirs are needed in this semi-arid country. Most rainfall comes in the four summer monsoon months.

"The problems are mind-boggling. To satisfy the water needs of this country, you need large surface storage. There's no alternative," says Jerry Fauss, the World Bank official in charge of the project in New Delhi.

However, disillusionment with the project is spreading in the valley of the Narmada, a river considered by India's Hindu majority as most sacred - holier even than the Ganges.

*Research Scholar, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

The SardarSarovar dam would create the world's largest man-made lake, flooding tens of thousands of acres, eliminating forests, and submerging many religious shrines visited regularly by pilgrims.

The state of Gujarat, devastated by the century's worst drought in recent years, stands to gain the most from the project.

A lengthy and intricate canal network would carry water to more than half of the state's 19 districts. State officials tout the project as "Gujarat's lifeline."

However, in neighboring Madhya Pradesh, where most of those that would be relocated now live, and elsewhere in India, predictions are growing of a major ecological calamity. An army of environmentalists, scientists, and activists united against the project say that Gujarat and central government officials rammed through the project by overplaying the benefits and ignoring environmental warnings.

Two years ago, after almost a 40-year debate on the project, Mr. Gandhi's government gave the go-ahead. It turned aside predictions that the SardarSarovar and another large dam would involve an environmental cost of some $24 billion, and that the project would put tremendous financial strains on the states.

"Here is a project that is an environmental, social, and cultural disaster in the making," says Smitu Kothari, a New Delhi social activist opposing the dam.

While ecologists admit that river development is key for this desperately poor region of India, the opposition has largely coalesced around government handling of the resettlement question.

Opponents say medium-sized dams and other irrigation techniques could ease the need for big dams. Most of those to be displaced, who now reside in Madhya Pradesh, have been given the choice of staying in their home state or moving to Gujarat.

However, environmentalists say it's unclear where the land will come from to replace the farms of many displaced. For the many tribal people living along the river, there is no choice about leaving their homes.

"The tribal people here say they won't move to Gujarat because they would be considered inferior, their language is different, and their daughters couldn't be married," says MedhaPatkar, a Bombay social worker who has been working with tribes living along the river for years.

Endless delays by state officials in informing those to be displaced of their options has created a deep bitterness among many. Supporters of the dam say the resettlement package could come to about $15,000 per family, the best compensation package ever seen in India.

Earlier this year, dismayed by the slow progress and the growing opposition, the World Bank put pressure on the central and state governments to speed up the resettlement process. Satisfied with the steps taken, the bank this summer extended its assistance for another year.

However, Mr. Fauss adds, "our intent is to move ahead unless something else in the implementation stage breaks down. As for the resettlement issue, if gross injustices were perceived, we would take another look."

Yet in Harsud, opposition seems to be deepening. The government proposes to shift the residents of Harsud to a site seven miles away and to replace their land. But land will be compensated at prices below the going market rate, farmers say.

And many residents say they just don't trust the government. They point to the state capital, Bhopal, about 100 miles north, where victims of the 1984 gas leak have yet to be compensated.

"The government has offered us land for land, and shops for shops, but we're skeptical," says Anil Bhandari, a farmer and brick worker. "I don't trust the government. It makes promises and then goes back on them."

When one speaks of a life with dignity, one refers to the totality that theprinciple of compensation denotes as replacement value. It does notlimit itself to replacing land and the house but refers to this totality. Sothis principle goes beyond monetary compensation to other aspects thatcan be defined less as compensation and more as what Cernea calls (inthis volume) rebuilding their livelihood. Its first feature is the materialassets lost, not merely individual land but also the CPRs and othercommunity and individual assets owned according to the rural informaleconomy. The basic criterion for their compensation should be thereplacement of the livelihood lost, and not of just the market value ofindividual assets. This involves quantifying the loss suffered by the CPRdependents, of the non-timber forest produce like fodder, food, fertilizer,medicinal herbs, etc. and of community resources such as commonand pasture land and places of worship.

It also involves quantifying thelivelihood lost by artisans, barbers, agricultural laborers, nomads, andothers who make their livelihood from providing services, and dependon having customers. The cost of enabling them to begin life againmust be recognized and covered.

The next step is quantification of the social and cultural loss theDPs/PAPs suffer. This takes us back to what we have stated about landin general and the CPRs in particular that these are not merely materialassets of the rural poor, particularly tribal, communities. Around theselands they have built their culture, social relations, and their very identity.

As a result, people's loss results in the breakup of family and communityinstitutions and changed lifestyles. Then come social pollution and thenew diseases that emerge because of environmental degradation andmalnutrition (Mahapatra 1994), not to mention the psychological traumaIndia's Forced Displacement Policy and Practice 17of displacement. It remains a trauma even when displacement is withprior, informed consent, because the cultural, social, and other familyties are broken. It is much more so if it is forced and that is the case inmost projects. The law provides for poenadoloris or compensation forthe mental agony that a motor vehicle accident victim suffers.

One seesno reason that the DPs/PAPs who experience the psychological traumaof alienation from their livelihood should be denied a similarrecognitionóand benefit. Ways have to be found of quantifying thetrauma and of compensating materially the physical and psychologicalpain suffered.

References :-

1. Areeparampil, Mathew (1996), Tribals of Jharkhand: Victims of Development, NewDelhi: Indian Social Institute.
2. Bhaumick, Subir (2003), TripurasGumti Dam Must Go, The Ecologist Asia11 (no. 1, January-March), pp. 84-9.India's Forced Displacement Policy and Practice 25
3. Cernea, Michael M. (2007), Financing for Development: Benefit SharingMechanisms in Population Resettlement, Economic and Political Weekly,vol. 42, no. 12, no. 12, 24 March, pp.
4. New Economics of Resettlement: A Sociological Critique of the Compensation Principle, International Social Science Journal 175,pp. 37-43.
5. Safeguards and Reconstruction: A Model for Population Displacement and Resettlementí, in Michael M. Cernea andChristopher McDowell (eds), Risks and Reconstruction: Experiences ofResettlers and Refugees, Washington, DC: The World Bank, pp. 11-55.
6. (1999), Why Economic Analysis is Essential to Resettlement: ASociologistísView, in Michael M. Cernea (ed.), The Economics ofInvoluntary Resettlement: Questions and Challenges, Washington, DC: The World Bank, pp. 549.
7. CIL (1994), Resettlement and Rehabilitation Policy of Coal India Ltd., Calcutta: Coal India Ltd.
8. Dewan, Ritu and Sandhya Mhatre (1997), Runways Across Villages: Critique of theProposed New International Airport for the City of Mumbai, Mumbai:Himalaya Publishing House.
9. Dewan, Ritu and Michelle Chawla (1999), Of Development amid Fragility: A Societaland Environmental Perspective of Vadhavan Port, Mumbai: Popular Prakashan.
10. Dhagamwar, Vasudha (1997), The Land Acquisition Act: High Time for Change, in Walter Fernandes and Vijay Paranjpye (eds), Rehabilitation Policy and Law in India: A Right to Livelihood, New Delhi: Indian Social Institute, pp. 111-17.
11. Dutta, Deben (2003), Karbi-Langpi Hydel Project: Eight Wonders?, The AssamTribune, 14 July.
12. Ekka, Alexius and Mohammed Asif (2000), Development-Induced Displacementand Rehabilitation in Jharkhand: A Database on its Extent and Nature, NewDelhi: Indian Social Institute.
13. Fernandes, Walter (2007), Singur and the Displacement Scenarioí, Economicand Political Weekly, 42 (no. 3, 20-26 January), pp. 203-6.
14. (2004), Rehabilitation Policy for the Displaced, Economic and Political Weekly, 39 (no. 12, 20ñ26 March), pp. 1191-3.
15. (2000), From Marginalisation to Sharing the Project Benefits, in Michael M. Cernea and Christopher McDowell (eds), Risks and Reconstruction:
16. Experiences of Resettlers and Refugees, Washington, DC: The World Bank,pp. 205-25.

****

अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989: सामाजिक न्याय या प्रतिशोध का हथियार

कपिल देव अहिरवार *

प्रस्तावना – भारतीय समाज एक उच्च जाति से ग्रस्त समाज है। यहाँ के समाज का स्तरीकरण कठोर और वंशानुगत है। जाति व्यवस्था विभिन्न जातियों को एक पदानुक्रम में व्यवस्थित करती है जो 'जन्म से प्रवृत्त, धर्म द्वारा पवित्र और परंपरा द्वारा महिमामंडित' है, और क्योंकि यह पदानुक्रम भारतीय समाज का एक संस्थागत हिस्सा है। कुछ समूहों को अक्सर अछूत या दलित के रूप में संदर्भित किया जाता है, उनका पसंदीदा नाम, सैद्धांतिक सामाजिक पदानुक्रम के बहुत नीचे स्थित है और लंबे समय से सामाजिक कलंक से पीड़ित है। चूंकि दलित सैद्धांतिक रूप से अपवित्र हैं, इसलिए उन्हें भी पारंपरिक रूप से बहिष्कृत किया गया है। लंबे समय से चली आ रही इस कमी को पूरा करने के लिए, भारत के संविधान ने राज्य के कर्तव्य को 'लोगों के कमजोर वर्ग और विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को विशेष देखभाल के साथ बढ़ावा देने के लिए सुनिश्चित किया है। और उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाने के लिए। 'अनुसूचित जाति' (एससी) या 'अनुसूचित जनजाति' (एसटी) के रूप में संदर्भित समूहों में पूर्व अछूत और आदिवासी आबादी दोनों शामिल हैं, जो हालांकि अछूतों के बराबर नहीं हैं, वे भी इसी तरह के कलंक और बहिष्कार से पीड़ित हैं।

अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 हाशिए पर पड़े वर्ग को सामाजिक न्याय दिलाने के लिए तैयार किया गया है। हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने अधिनियम के दुरुपयोग पर चिंता व्यक्त की और कानून के तहत अभियुक्तों की बुकिंग की स्वत: गिरफ्तारी के खिलाफ फैसला सुनाया। हालांकि इस अधिनियम का उद्देश्य दलितों को और अधिक भेदभाव से बचाना है, हाल के आंकड़ों से पता चलता है कि बदले के आधार पर कई फर्जी मामले दर्ज किए गए हैं। वर्तमान लेख का उद्देश्य अधिनियम की वर्तमान प्रासंगिकता और उपयोगिता की खोज करना है और क्या इसने वांछित लक्ष्य प्राप्त किया है जिसके लिए इसकी परिकल्पना की गई थी।

परिचय – भारत में दलित दुविधा त्रासदियों की एक संपूर्ण डेटा शीट की तरह है। अनुसूचित जातियों के खिलाफ अत्याचारों की रोकथाम पर राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (एनएचआरसी) की 2010 की एक रिपोर्ट के अनुसार, हर 18 मिनट में एक दलित के खिलाफ एक अपराध किया जाता है। हर दिन औसतन तीन दलित महिलाओं का बलात्कार होता है, दो दलितों की हत्या होती है और दो दलित घरों को जला दिया जाता है। एनएचआरसी के आंकड़ों के मुताबिक के.बी. बिहार के पूर्व अतिरिक्त मुख्य सचिव सक्सेना, 37 प्रतिशत दलित गरीबी रेखा से नीचे रहते हैं, 54 प्रतिशत कुपोषित हैं, एक दलित परिवार में पैदा हुए प्रति 1,000 बच्चों पर 83 अपने पहले जन्मदिन से पहले, अपने पांचवें जन्मदिन से 12 प्रतिशत पहले मर जाते हैं, और 45 प्रतिशत निरक्षर रहते हैं।

डेटा यह भी दर्शाता है कि 28 प्रतिशत भारतीय गांवों में दलितों को पुलिस स्टेशन में प्रवेश करने से रोका जाता है। 39 फीसदी सरकारी स्कूलों में दलित बच्चों को खाना खाते समय अलग बिठाया गया है. 24 फीसदी गांवों में दलितों को उनके घरों तक डाक नहीं पहुंचती है और हमारे 48 प्रतिशत गांवों में उन्हें जल स्रोतों तक पहुंच से वंचित कर दिया गया है क्योंकि अस्पृश्यता एक कठोर वास्तविकता बनी हुई है, भले ही इसे 1955 में समाप्त कर दिया गया था। हम एक लोकतांत्रिक गणराज्य हो सकते हैं, लेकिन न्याय, समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व–चार बुनियादी सिद्धांतों का वादा किया गया था हमारे संविधान की प्रस्तावना में स्पष्ट रूप से सभी के लिए उपलब्ध नहीं हैं। गांवों में, शैक्षणिक संस्थानों में, नौकरी के बाजार में, और राजनीतिक युद्ध के मोर्चे पर दलितों पर अत्याचार और भेदभाव जारी है, जिससे उन्हें किसी भी क्षेत्र में या उनके जीवन के किसी भी मोड़ पर थोड़ी राहत मिलती है। राजनीतिक बयानबाजी, या कानूनों के निर्माण की कमी, यह कहने के लिए कि दलितों को कच्चा सौदा नहीं मिलना चाहिए।

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 और अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989, दलितों के खिलाफ अपराधों के लिए दंड निर्धारित करते हैं जो आईपीसी के तहत संबंधित अपराधों की तुलना में बहुत अधिक कठोर हैं। इन अधिनियमों के तहत विशेष रूप से दर्ज मामलों की त्वरित सुनवाई के लिए प्रमुख राज्यों में विशेष अदालतें स्थापित की गई हैं। स्वतंत्र जांच के बिना किसी व्यक्ति को उसकी स्वतंत्रता से वंचित करने के लिए पर्याप्त है।

निम्नलिखित बिंदुओं के आलोक में न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को समझना होगा:

मंत्री मनमोहन सिंह ने ''अस्पृश्यता'' की प्रथा की तुलना दक्षिण अफ्रीका में ''रंगभेद'' और नस्लीय अलगाव से की। दिसंबर 2015 में एससी और एसटी (रोकथाम)अदालत ने पुलिस की गिरफ्तारी की शक्ति को ही सीमित कर दिया हैय इसने अधिनियम को किसी भी तरह से सीमित नहीं किया है।

मुआवजे के प्रावधान इस प्रकार हैं – अत्याचारों का) संशोधन विधेयक, संसद द्वारा पारित, बनाया गयाकई महत्वपूर्ण परिवर्तन। नई गतिविधियों को अपराधों की सूची में जोड़ा गया। उनमें से अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति को साझा संपत्ति संसाधनों का उपयोग करने से, के किसी भी स्थान में प्रवेश करने से रोक रहे थे।

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

अधिनियम में उल्लेख किया गया है।

गिरफ्तारी की शक्ति आईपीसी से प्राप्त होती है, अधिनियम से नहीं। कोर्ट ने अपने आप में एससीध्एसटी एक्ट नहीं प्रक्रियात्मक कानून को परिभाषित किया है।

सार्वजनिक पूजा, और शिक्षा या स्वास्थ्य में प्रवेश करने सेसंस्थान। किसी भी उल्लंघन के मामले में, नए कानून में कहा गया है कि अदालत ने की गिरफ्तारी पर अपनी चिंता व्यक्त की है निर्दोष व्यक्ति जो पहले से ही जेलों में हैं।

अदालतें तब तक मान लेंगी जब तक कि अन्यथा साबित न हो जाए किआरोपी गैर–एससी/एसटी व्यक्ति को जाति या जनजाति की जानकारी थी

पीड़ित की पहचान – प्रसंग और पृष्ठभूमि: अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम से संबंधित सुप्रीम कोर्ट के हालिया फैसले को लेकर दलित समुदाय में व्यापक आक्रोश है। अदालत ने फैसला सुनाया है कि पहली रिपोर्ट के आधार पर गिरफ्तारी अनुचित है। केंद्र ने अपने फैसले पर पुनर्विचार करने के लिए अदालत में एक याचिका दायर की है, लेकिन अदालत ने अपने फैसले को बरकरार रखते हुए कहा कि उसने एससी / एसटी अधिनियम को छुआ तक नहीं है और निर्णय केवल निर्दोषों की रक्षा करने और संतुलन बनाए रखने की कोशिश करता है। दूसरी ओर दलित समुदाय ने इस फैसले को समाज के पहले से ही हाशिए पर पड़े क्षेत्र के हितों की रक्षा के लिए हानिकारक माना है क्योंकि इससे दलितों के खिलाफ अपराध में वृद्धि होगी। डॉ. सुभाष काशीनाथ महाजन बनाम महाराष्ट्र सरकार के मामले में अपना फैसला सुनाते हुए, बॉम्बे हाईकोर्ट के आदेश ने अनुसूचित जाति कर्मचारी के खिलाफ अपनी प्रतिकूल टिप्पणी के लिए प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफआईआर) को रद्द करने से इंकार कर दिया, शीर्ष अदालत ने कहा कि आरोपी नहीं होगा न्यायमूर्ति एके गोयल और न्यायमूर्ति यू यू ललित की पीठ ने कहा कि एससीध्एससी के तहत मामलों में गिरफ्तारी बिल्कुल भी अनिवार्य नहीं है। एसटी अधिनियम। एक लोक सेवक के लिए, अदालत ने कहा, गिरफ्तारी करने के लिए नियुक्ति प्राधिकारी की अनुमति आवश्यक होगी जबकि अन्य के लिए, वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक या डीएसपी की लिखित अनुमति आवश्यक होगी।

अदालत ने कहा कि यह न्यायिक रूप से स्वीकार किया गया है कि ''संपत्ति, धन, रोजगार और वरिष्ठता पर निजी नागरिक विवादों को निपटाने के लिए पंचायत, नगरपालिका या अन्य चुनावों में राजनीतिक विरोधियों के खिलाफ निहित स्वार्थों द्वारा कानून के दुरुपयोग के उदाहरण हैं। आरोपी के रूप में, जिसका इरादा विधायिका का नहीं है, जिसका इरादा कभी भी अत्याचार अधिनियम को ब्लैकमेल करने या व्यक्तिगत प्रतिशोध को खत्म करने के लिए एक साधन के रूप में इस्तेमाल करने का नहीं था,'' अदालत ने कहा। पीठ ने कहा कि कानून को बंधुत्व और समाज के एकीकरण के संवैधानिक मूल्यों को बढ़ावा देना चाहिए न कि जातिवाद को बढ़ावा देना चाहिए जो समाज और संवैधानिक मूल्यों के एकीकरण पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। यह देखते हुए कि एक निर्दोष नागरिक का उत्पीड़न, जाति या धर्म के बावजूद, संविधान की गारंटी के खिलाफ है और अदालत को इस तरह की गारंटी को लागू करना चाहिए, पीठ ने पुलिस के लिए एक प्रारंभिक जांच करना अनिवार्य कर दिया, जो एक सप्ताह से अधिक नहीं होगी। यह निर्णय लेने के लिए कि क्या कानून के मानकों के तहत प्राथमिकी दर्ज करने के योग्य है। कोर्ट ने यह भी कहा कि, किसी भी जाति के किसी भी व्यक्ति द्वारा केवल एकतरफा आरोप, जब इस तरह के आरोप स्पष्ट रूप से प्रेरित और झूठे हैं, को नहीं माना जा सकता है।

अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम: सामाजिक न्याय के लिए उपकरण: अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989 को भारतीय समाज की अधिनायकवादी प्रकृति की जांच करने और इसे अंधविश्वास और अतार्किक प्रवृत्तियों से मुक्त करने के लिए तैयार किया गया है। समाज में दलितों के हितों की रक्षा के लिए मुख्य रूप से अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम, 1955 की परिकल्पना की गई थी, लेकिन इसकी विभिन्न कमियों और सप्ताह के कारण सरकार को बदलाव करना पड़ा और नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम को अधिनियमित करना पड़ा। 1976 इस अधिनियम के तहत,धार्मिक और सामाजिक अक्षमताओं के परिणामस्वरूप 'अस्पृश्यता' को दंडनीय बना दिया गया है।

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के खिलाफ नए अपराध

1. किसी भी एससी और एसटी को फुटवियर से माला पहनाना।
2. हाथ से मैला ढोने या जानवरों या मानव शवों को ले जाने के लिए मजबूर करना।
3. एससी/एसटी को सार्वजनिक रूप से जाति के नाम से गाली देना।
4. किसी भी मृत अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के व्यक्ति का उच्च सम्मान में अनादर करना या अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के प्रति दुर्भावना की भावनाओं को बढ़ावा देने का प्रयास करना।
5. आर्थिक और सामाजिक बहिष्कार की धमकी देना या थोपना।
6. यौन प्रकृति के कृत्यों, शब्दों या इशारों का उपयोग करना।
7. एससी/एसटी महिलाकिसी अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की महिला को उसकी सहमति के बिना जानबूझकर यौन रूप से छूना अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को देवदासी के रूप में मंदिर में समर्पित करने का अभ्यास।
8. किसी भी अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति को सामान्य संपत्ति संसाधनों का उपयोग करने से रोकना, सार्वजनिक पूजा के किसी भी स्थान में प्रवेश करना जो जनता के लिए खुला हो, और किसी शिक्षा या स्वास्थ्य संस्थान में प्रवेश करना।
9. अनुसूचित जाति और अनुसूचित जाति के बल के सदस्यजनजातियाँ अपने घरों और आवासों को छोड़ देंगी।
10. अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की पवित्र वस्तुओं को विकृत करना अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के खिलाफ यौन शोषण, उन्हें यौन शोषण से छूना और भाषा का उपयोग करना।

10 साल से कम की सजा के प्रावधान के तहत अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों को चोट पहुंचाने, प्रताड़ित करने, धमकाने और अपहरण जैसे अपराधों को अधिनियम में अपराध के रूप में शामिल किया गया था। इसे पूर्व अधिनियम में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के 10 वर्ष और उससे अधिक की यातना के मामलों के साथ दंडनीय अपराध माना जाता था।

मामलों के निपटारे में तेजी लाने के लिए, विशेष अदालतों को विशेष रूप से अत्याचार निवारण अधिनियम के तहत अपराधों के लिए विशेष रूप से विशेष लोक अभियोजक के खिलाफ मुकदमा चलाने के लिए। विशेष

अदालतें अपराध का प्रत्यक्ष संज्ञान लेने और जहां तक संभव हो आरोप पत्र दाखिल करने की तारीख से दो महीने के भीतर सुनवाई पूरी करने की शक्ति देती हैं।

अन्य संवैधानिक प्रावधान: संविधान के अनुच्छेद 46 में, राज्य से यह अपेक्षा की जाती है कि समाज के कमजोर वर्गों विशेषकर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के शैक्षिक और आर्थिक हितों को ध्यान में रखते हुए, वे उन्हें सामाजिक अन्याय और शोषण से बचाएंगे। हर तरह की। शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण का प्रावधान अनुच्छेद 15 (4) में किया गया है। पदों और सेवाओं में आरक्षण का प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 16 (4), 16 (4ए) और 16 (4बी) में किया गया है। मूल अधिकारों के अलावा, अनुच्छेद 330, 332 और 335 में केंद्रीय और राज्य विधानसभाओं में इन समुदायों के लिए विशेष प्रतिनिधित्व और सीटों के आरक्षण के लिए तत्काल प्रावधान हैं। अनुच्छेद 338 से 342 और संविधान की पांचवीं और छठी अनुसूची में, अनुच्छेद 46 में दिए गए लक्ष्यों के लिए विशेष प्रावधानों के संबंध में काम करते हैं। स्वतंत्रता के इतने वर्षों के बाद भी, सामाजिक स्तर पर उनके साथ भेदभाव और उत्पीड़न का सामना नहीं किया जा सकता है। किसी भी सभ्य समाज में स्वीकार किया जाता है।

एनसीआरबी के आंकड़ों के मुताबिक – देश में हर 15 मिनट में दलित उत्पीड़न की घटना होती है. 6 दलित महिलाएं हर दिन रेप का शिकार होती हैं. 2007-2017 के दशक में देश में दर्ज दलित उत्पीड़न के मामलों में 66% की वृद्धि हुई

दलितों के खिलाफ मामले

रिपोर्ट किए गए वर्ष मामले

2014	–	40,401
2015	–	38,670
2016	–	40801

स्रोत: एनसीआरबी रिपोर्ट 2016

स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि कई कड़े प्रावधानों और सख्त नियमों के बावजूद वर्ष 2016 की तुलना में वर्ष 2017 में दलितों के खिलाफ अपराध में वृद्धि हुई है। देश में कई प्रकार की मनोवैज्ञानिक हिंसा हुई है। इस तरह वे एससी-एसटी एक्ट की तरह लगते हैं, एक ऐसा उपकरण जो उन्हें कई तरह की मानसिक हिंसा से बचा सकता है। इसलिए इस प्रावधान को हल्के में लेना किसी भी तरह से स्वीकार्य नहीं है।

एससी/एसटी एक्ट: प्रतिशोध का हथियार: मानवाधिकार संगठन हमेशा कहता रहा है कि अगर किसी गैर-क्रूर अपराध में केवल एफआईआर के आधार पर गिरफ्तारी का प्रावधान है, तो उसका दुरुपयोग होना तय है, दहेज विरोधी कानून इसका जीवंत उदाहरण है और एससी-एसटी एक्ट के कुछ मामलों में ऐसा ही दुर्व्यवहार होगा। ऐसे कई मामले हैं जहां आरोप विशुद्ध रूप से घृणा की भावना से प्रेरित हैं और बदला लेने की मांग कर रहे हैं। अदालत द्वारा उद्धृत एनसीआरबी डेटा 2015 के अनुसार। पुलिस ने जांच के बाद सिर्फ 5-16 फीसदी मामलों में क्लोजर रिपोर्ट दाखिल की। अदालत में 75 प्रतिशत मामलों को या तो समाप्त कर दिया गया, या अभियुक्तों को बरी कर दिया गया या उन्हें वापस ले लिया गया। उपर्युक्त आंकड़ों को ध्यान में रखते हुए निर्णय का उद्देश्य निर्दोषों के अधिकारों को सुरक्षित करना है। एक निर्दोष व्यक्ति को उचित सत्यापन के बिना झूठा फंसाया और गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है। जातिगत घृणा को बढ़ावा देने के लिए झूठी शिकायतें दर्ज करने के लिए जातिगत रेखाओं को धुंधला करने के बजाय अधिनियम का दुरुपयोग किया गया है। अत्याचार अधिनियम की वर्तमान कार्यप्रणाली ''जातिवाद को कायम रख सकती है'' यदि इसे लाइन में नहीं लाया जाता है और अदालत को ''निर्दोष के झूठे निहितार्थ'' की जांच करने के लिए हस्तक्षेप करने की आवश्यकता होती है।

निष्कर्ष – अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के खिलाफ अपराधों के निवारण के लिए है। यह अधिनियम ऐसे अपराधों के अभियोजन और ऐसे अपराधों से पीड़ित व्यक्तियों के लिए राहत और पुनर्वास का प्रावधान करता है। सुप्रीम कोर्ट का फैसला आने तक इस अधिनियम के तहत किए गए अपराध गैर-गारंटीकृत, संज्ञेय और अस्वीकार्य थे। अदालत का मानना है कि इस कानून में इन प्रावधानों का दुरुपयोग किया जा रहा है, इसलिए ऐसा संतुलन बनाए रखने और पुलिस की शक्तियों को कम करने के लिए किया गया है, यह पहली बार नहीं है जब सुप्रीम कोर्ट के किसी फैसले का सड़कों पर इस तरह विरोध किया गया हो, हाल ही में फिल्म को लेकर ऐसा भीषण माहौल देखने को मिला था 'पद्मावत'। यह आदर्श स्थिति होगी और स्वस्थ लोकतंत्र की इच्छा यह भी है कि इस तरह के निर्णयों को या तो स्वीकार कर लिया जाए या उनके खिलाफ पुनर्विचार याचिका दायर की जाए, जैसा कि सरकार ने किया था। लेकिन इस सवाल का जवाब कभी भी आसान नहीं रहा है, अगर किसी प्रावधान का दुरुपयोग किया जाता है, तो क्या उसे हटाने का एकमात्र विकल्प है?

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. सुभाष काशीनाथ महाजन बनाम महाराष्ट्र सरकार, 20 मार्च 2018
2. एनसीआरबी रिपोर्ट 2016
3. अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989
4. अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) संशोधन अधिनियम 2015
5. ब्लैकमेल के लिए इस्तेमाल हो रहा एससी/एसटी एक्ट, द हिंदू, 20 मार्च, 2018
6. सुप्रीम कोर्ट अपने एससी/एसटी एक्ट के फैसले पर कायम है, द हिंदू, 3 अप्रैल, 2018
7. द इंडियन एक्सप्रेस, 22 मार्च 2018

****

An Overview on Cleanth Brooks' 'The Language of Paradox'

Dr. Surendra Kumar Sao*

Abstract - Before the Second World War Formalism, Psychologi-cal Criticism, Archetypal Criticism and New Criticism were dominant. New Criticism was at its height from 1940 to 1960. It is an American critical movement characterized by its very close discussion of texts. The ideas of T.S. Eliot about literature in his critical essays and I.A. Richard's ideas of about how to discuss a text in Principles of Literary Criticism (1924) and Practical Criticism (1929), had greatly influenced this movement.
Keywords - Archetypal Criticism, Agrarians, Paradox, analogies, Pharsical, Phoenix.

Introduction - Life opens the door to literature; literature in turn leads to criticism. Criticism, therefore, works upon what literature creates. Any critical work has a particular insight, imagination, learning and command of language which makes it superior to the work that prompted it. Walter Pater, opines, "Criticism is the art of interpreting art. It serves as an intermediary between the author and the reader by explaining the one to the other" (Prasad 240). With the advent of the twentieth century new forms of criticism and innovative theo-ries of literature came into existence.

Cleanthes Brooks has been one of the foremost and the quintessential of the 'New Critics'. He is firmly entrenched in the New Critical canon. Along with R.P. Blackmur, Allen Tate, John Crowe Ransom and Robert Perm Warren, he was a central figure in the southern Agrarians. The Agrarians were drawn together by shared traditional. conservative values and likewise held common ideas about the nature of literary criticism. These ideas ultimately became the tenets of New Criticism. Brooks had practically applied the theories of Eliot, Richards, Empson. Leavis and even Winters in his works. Accord-ing to I.A. Richards, poetry is the completes mode of utterance and it tries to get as much out of words as possible. Empson. too has similar notions for he says any poet exploits the ambiguities in syntax and semantics to help him to express as much as possible in any given life of poetry. These critical principles act as the forerunner for Brooks' definition of poetry.

Brooks, in order to redefine his conception of poetry, puts forward three anlogies. His first analogy deals with the essential structure of poetry which is like that of architecture or painting. It resemble a ballet or. musical composition, it is a pattern of resolutions, balances and harmonizations. Not satisfied with this, he brings another powerful analogy. He says that the structure of a poem resembles a play. As in a drama everything is acted out rather than presented as a formula, so to in a poem there is a projection of attitudes. It works in a dramatic process. Next important analogy is his famous theory of 'paradox'. He says that "paradox spring from the very nature of the poet's language is a language in which the connota-tions play as great a part as the denotations" (con Davis, Schleifer 35). Irony, like paradox, is another indispensable tool in the poet's hand since it also implies 'the recognition of incongruities'.

A paradox is a self-contradictory statement which seems to be absurd. Yet it is interpretable in a way that makes good sense. Paradox hints at the ability of the writer to get on top of complicated ideas. It is frequently used to express the complexities of life, that do not easily lend themselves to simple statement. One such instance is the conclusion of John Donne's sonnet " Death, Be not proud".

One short sleep past, we wake eternally
And death shall be no more: Death, thousholt die (Abrams 201).

This statement, Death, thou shall die. is paradoxical because:

we cannot reconcile the idea of death with the idea of Death dying in any logical way. A paradox is used because this is the only way in which Donne can come to terms with the difficult Christian idea of life after death (Peck, Coyle l54).

Paradox became established as a widely used critical term with the publication of Cleanth Brooks' The Well Wrought Urn 11947). Taken from The Well Wrought Urn.
"The Language of Paradox" exemplifies the type of close reading that the New Critics concentrated on intellectually complex works such as the poems of Donne. The author's or poets intention behind writing his work was not their point concern. It was the poem which was looked at in isolation

*Asst. Professor (English) Late Shri Jaidev Satpathi Govt. College, Basna, Distt. Mahasamund (C.G.) INDIA

and the meaning was to be found exclusively in the words on the page. Brooks carefully points out that, "Scientific Language contains no trace of paradox, while paradox is appropriate and inevitable to poetry (con Davis, Schleifer 32). The tendency of science is necessarily to stabilize terms, to freeze them into strict denota-tions. In contrast the tendency at the poet is disruptive. Poets use connotations and mean-ings derived from the careful juxtaposition of terms. After all, poetry is built on metaphor and "the poet has to work by analogies" (32).

Brooks gives a perfect demonstration of the language of paradox in Wordsworth's sonnets, Donne's The Canonization and Shakespeare's play Romeo and Juliet.

The poetry of Wordsworth would not appear to promise many examples at the language of paradox. He usually prefers the direct attack. He insists on simplicity and rejects the complexities. Yet in one of his sonnet "By the sea", paradoxical situations can be detected, "It is a beauteous evening, calm and free / The holy time is quiet as a Nun / Breathless with adoration..."(33). The poet seems to be more worshipful than the girl, who walks beside him. The implication is that she should become nun like i.e. like the evening itself and respond to the holy time. Yet, "If thou appear untouched by solemn thought / The nature is not therefore less divine:" (33). The girl is filled with an unconscious sympathy for all of nature, not merely the grandiose and solemn. This is her unconscious worship. She is in communion with nature "all the year" and her devotion is continual.

However the actual paradox lies in the comparison of the evening to the nun. The calm of evening obviously means worship and it corresponds to the trapping of the nun. Thus it suggests Pharsical holiness which stands in contrast to the girls continual secret worship . So it seems that the poet generally used paradoxes unconsciously. Wordsworth himself stated that his general purpose was "to choose incidents and situations from com-mon life" (35) but the ordinary things should be preserved in the mind in an unusual aspect. Brook's view is that the paradoxes spring from the very nature of the poet's language, it is a spontaneous outburst.

In Donne's poem, The Canonization, Brooks rightly points out that, the basic metaphor of the poem involves a paradox since it treats profane love in terms of religious love. The conflict is finally resolved in the final stanza when the 'love's saint" give up this world to win a better, more intense world. "We can dye by it, if not live by love"(42)_. Their love story will secure them sainthood. This is their claim to canonization. The poem opens dramatically on a note of dramatic unfolding and anger. He suggests the metaphor in the very first stanza, "For God sake hold your tongue, and let me love, /... ruined fortune flout" (42). The poet says his friends not to waste their time in interrupting him in his love-making. They can rather confine themselves to his other infirmities i.e. paralysis, approach-ing old age and Yui«d fortune. The friends represent the practical world which regards love as a silly affection and the lovers have renounced this secular world. The conflict between the 'real' world and the world of 'love' in which the lover is absorbed runs parallel throughout the poem.

The torments of love, so vivid to the lover, in no way affect the real world. 'What merchant ships have my sighs drown'd ?"(42). It is in the second and the third stanza, that the poet shifts the tone of the poem, regulating it from the note of irritation with which the poem opens into a quite different tone by what may be called an analysis of love metaphor. The third stanza of very wonderful conceits. The nature of spontaneity in this poem is revealed by the brilliant conceits used like the burning tapers, and that of the eagle and the dove. One of the more important elements is the figure of the phoenix. Though the comparison to phoenix seems to be outlandish and most outrageous of all, but it really describes the lovers best and justifies their renunciation. For the phoenix is not two. but one, and it burns not to die, but to live again, "...we two being one. are it. We dye and rise the same..."(42).

In the last stanza, the theme receives a final complication. The lovers though reject life finally win the most intense life. The lovers in becoming hermits, find that they have not lost the world, but have gained the world in each other, which is more meaningful world. Brooke says." 1) Donne's imagination seems obsessed with the problem of unit) "(,40). It apparently violates science and common sense. It seems disordant and contradictory. Coleridge has given the classic description of its nature and power. It "reveals itself in the balance or discordant qualities: of sameness, with difference"(40).

Again in the case of Shakespeare, it is seen that the paradox comes again and again quite naturally. The basic metaphor of The Canonization is used by him in his famous play Romeo and Juliet. "In their first conversation, the lovers play with the analogy between the lover and the pilgrim to the Holy Land. Juliet Says:

For saints have hands, that pilgrims
hands do touch
And palm to palm is holy palmers" kiss"(40).

The image of palmers' is so intricately woven that it readily suggest to the lovers who have attained the heights of pilgrim. Brooks, with great insight and keen sensibility . shows how the very nature of Shakespeare's thought demands the use of paradoxes.

Conclusion - The very opening line of the essay makes a sweeping statement that, "the language of poetry is the language of paradox"(33). But inspire of such a demanding stature he attaches with paradox, "Brooks feels that people are ready to permit it only in epigram and satire"(Bhardwaj 83). The prejudice against paradox forces people "to regard paradox as intellectual rather than emotional, clever rather than profound, rational rather than divinely irrational "(33). He feels modem man accepts paradox only as a cheap trick and not as rhetoric device. Whatever the concept of paradox, one thing is certain that Brooks gives tremendous'

importance to paradox in his critical writing. This could be very well esti-mated from the fact that The Well Wrought Urn has the word 'paradox' more than hundred times between the covers. In a nutshell Brooks' contribution to our understanding and enjoyment of a large number of poems from Wordsworth and Shakespeare to Donne is indeed remarkable.

References :-

1. Abrams, M.H. A Glossary of Riterary Terms. Bangalore : Prism Book Pvt. Ltd. 1993.
2. Brooks, Cleanth. The Language of Pasadox. Newyorke Londen : A harvest Book Pub. 1947.
3. David, Robert Con. and Ronald Schleifer. Contemporary Literary Criticism. Hound Mills : Macmillan Press Ltd., 1984.
4. Peck, John and Coyle Martin. Hiterary Terms and Critism UK : Macmillan Press Ltd, 2002.
5. Prasad, Brijadish. An Introduction to English Criticism India : Trintyee Press Ltd. 1965.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Women Empowerment: Working Woman's Issue and Challenges

Anjana Jatav* Rajbala Vashishtha**

Abstract - Women's empowerment is a process in which women gain greater share of control over resources i.e. material, human and intellectual and financial resources. Empowerment of women signifies harnessing women power by utilizing their tremendous potential and encouraging them to work towards attaining a dignified and satisfying way of life through confidence and competence. Women have achieved greater position in different social spheres through their hard work and warfare. Simultaneously, with inclusion of new responsibilities, social responsibilities of women have increased. Presently, there is a sharp increment in number of working woman. This presents a bunch of new challenges. The paper presents a study on individual urban working woman's abilities to take control over their lives, employment, control over income & its expenditure, own health care, based on their age, education, household structure, number of children, wealth structure, and caste.

Introduction - The concept of women empowerment is not a new one. References to the term date back to the 1960s, particularly in the Afro-American movement and in Paolo Freire's theory based on the development of a critical conscience. At the Social Summit in Copenhagen in 1993 and the International Conference on Population and Development in Cairo 1994 Governments committed themselves to the empowerment of women. This commitment was operationalized and formulated into a clear action plan at the fourth world conference on women in Beijing 1995 where Governments committed themselves for woman as a key strategy for development: "Women's empowerment and their full participation on the basis of equality in all spheres of society, including participation in the decision-making process and access to power, are fundamental for the achievement of equality, development and peace".

The changes and the developments are coming in the form of amending several women specific legislations and implemented a plethora of programs and schemes for women's well-being and economic emancipation. Women found privileges in the constitutions of India, covering fundamental rights. The Directive principles of the state policy and fundamental duties etc. virtually assure equal status to women and provide special protection and to eliminate discrimination against women in different spheres of life. Women's are no longer a burden on the society. They are becoming independent socially and economically. They are gaining experience, becoming educated and working hard in order to make their own identity.

Now women empowerment has become the slogan and motto of many social reformers, governmental agencies and voluntary organizations. There is a long cherished wish among all the women to have better avenues in life in order to lead the life in a more fruitful way. However the concept women empowerment is a matter of controversy even now. Empowerment is a process of acquiring knowledge and awareness which enable them to move towards life with greater dignity and self assurance. In fact an empowered woman is a nation's strength.

Working Woman challenges - Educational attainment and economic participation are they key constituents in ensuring the empowerment of women. The economic empowerment of women is a vital element of strong economic growth in any country. Empowering women enhances their ability to influence changes and to create a better society. Other than educational and economic empowerment, changes in women's mobility and social interaction and changes in intra-household decision-making are necessary. In present scenario, a increasing rate of women employment have been observed. With higher education/professional education, women are employed in all sectors of works. However, in Indian context, somewhere, working women are bound with dual responsibilities. Many questions needs to be answered in this regards:-

1. Job and household works: do they work with their own will? Do they have to manage house hold work along with job at her own?
2. Job and cooperation from family: do working woman get support from family members, specially from her spouse?
3. Job and women health: with stretched life of working

*JDB Govt. Girls College, University of Kota, Kota (Raj.) INDIA
** JDB Govt. Girls College, University of Kota, Kota (Raj.) INDIA

woman, are they equally aware of her health.

4. Working women and family feud: Does their job make impact on family harmony, especially with her spouse?
5. Women's economic decision-making power: do they participate in the family's major economic decisions and have the freedom to make minor economic decisions on their own?
6. Their husband's control of them via intimidation and force, specifically, are they afraid to disagree with the husband for fear he will become angry with them, and does he ever hit or beat them?
7. Do her working affects the complete care of her child?
8. Their family size decision making power: do they participate in or control decisions about how many children to have?
9. Their physical freedom of movement: can they visit sites such as the local market, health center or fields outside the village without obtaining permission from other family members?
10. Do the working women feel herself as empowered woman?

Data Analysis - The present research paper is the collection and analysis of information through questionnaire to the women working in different departments and sectors at Kota city. The obtained response from 70 such working women are analyzed and presented in this paper. The working woman has dual responsibility and starched life but 100% woman have opinion that they work with her own will and satisfaction. Execution of household work is understood to be the moral and legitimate duty of woman. Women also take such work like preparation of food, dish up, managing clothing as a measure to share her affection and motherly hood. The data analysis revels that 10% women do all that at their own while such work of 20% working women are executed solely by servants/maids. Likewise, 15% women do all household work with the help of servant and 20% do with the help of family members and servant. 35% women does their household work with the help of their family members only. Most often, only women family members participate in helping while male participation in household work is very less.

85% of husbands are completely satisfied with his spouse's job while 10% are partially and 5 % are not satisfied. Women seem to be less careful about her own health issue. It is observed that most often they neglect themselves. For a woman, their children and husband are more prominent. Working women have more stretched life and simultaneously they need extra attention toward their health. The data revels that 70% woman have low BMI. Only 10 % women have normal BMI i.e. in the range of 18.5-25. 90% of women do not visit doctor for regular checkup. While working woman already have dual responsibility, she cannot fulfill all the expectation from her family members. Only 15 % of women are facing such feud in her life while 85% do not have any such tension. Out of those 15 % such working women 30% feel tension due to their husband and 35% each feel tension due to their children and family members.

Family participation is one of the important factor. Family participation not only means that how much time one can devote to their children and family members, it also mean a meaningful participation in society and joint family. Working woman have less time available for such family participation and such participation varies from nature of job, department of job in which she is working, rank of her job, distance of job place from her residence etc. Despite of such constraints, 60 % women are satisfied with their family participation while 40 % are not satisfied. Among satisfied woman, 85% are living in joint family. That reflects that family participation of working women in joint family is more satisfying.

Conclusion - Women empowerment is an essential element in national development. Since women constitute half of the population there can be no development unless the needs and interests of women are fully taken into account. In fact, empowered women are a nation's strength. Since development means improvement in the living conditions of the society, as a whole, it is logical to expect that this also mean improved status for women. Women have prove themselves in all sectors of society. Women have utilized the chances given to them and made considerable progress and that's why, woman now can not be underestimated. Working women have deep family values and high quality civilization. From the discussion and data analysis we conclude that there is a need to develop a sociological approach that views women's empowerment largely as a property of social systems, also stratification systems and their ideologies.

Working women have high value of satisfaction and self respect. Although it can be clearly concluded that life of working women is more stretched and they are less careful about her own health. They have bound with dual responsibilities. Women working at high rank in their job or having her spouse job equal or higher rank are found to be more satisfying. Working women living in joint family with their in-laws have good family participation. Working women feel themselves empowered as compare to others.

References :-

1. Batliwala, Srilatha. (1994). The meaning of Women's Empowerment: New Concepts from Action. Pp. 127-138.
2. Population Policies Reconsidered: Health, Empowerment and Rights. G. Sen, A. Germain, and L.C. Chen, eds. Cambridge, MA: Harvard University Press.
3. Gupta, N.L. (2003). Women's Education Through Ages, Concept. New Delhi: Publications Co.
4. Gurumurthy, A. (1998). Women's Rights and Status: Questions of Analysis and Measurement'. Gender in Development.
5. Rao, R.K. (2001) Women and Education, Delhi: Kalpaz

Publications
6. The women empowerment approach: A methodological guide 'Commission on Women and Development' (June 2007).
7. Journal of International Women's Studies Vol. 10 .2. (November 2008).
8. Dr. Kochurani Joseph, „Women Empowerment A conceptual Analysis , Vimala Books and Publications, Kanjirapally, (2005).
9. Dr.Digumarti Bhaskara Rao, MRS. Digumaruti Pushpa Latha „International Encyclopedia of Women; Vol.2, Discovery Publishing House, Delhi, (1999).
10. New World Dictionary, Webster Second College Edition, New York, (1982).
11. Sushama Sahay, „Women and Empowerment-Approach and Strategies, Discovery Publishing House, Delhi, (1998).
12. Rameshwari Pandya, „Women in changing India ,Serials publications,Delhi, (2008).
13. Jaspreet Kaur Soni, „Women Empowerment the substantial challenges, Authors press Delhi, (2008).
14. R.J.Hepzi Joy, „History and development of education of women in Kerala, Seminary publications, Thiruvanandapuram, (1995).
15. Women in India, Department of Economics and Statistics Thiruvananthapuram. (2001)
16. Kalyani Menon-Sen, A. K. Shiva Kumar "Women in India: How Free? How Equal?"(2001)
17. Mishra, R. C.. Towards Gender Equality. Authors press ISBN 81-7273-306-2. (2006)

****

Antidiabetic activity of Zinc doped Nanodiamonds in Streptozotocin induced diabetic rats *in vivo* and *in vitro*

Ankita Anand* Ajit Kumar Swami Neha Kumari*** Manas Mathur ******

Abstract - Nanodiamonds (NDs) are members of the broad family of nanocarbons. NDs have now gained world-wide attention due to their inexpensive large scale synthesis based on the detonation of carbon-containing highly flammable, small primary particle size (~4 to 5 nm) with narrow size distribution, shallow surface functionalization including bioconjugation, as well as high biocompatibility. Although there are few carbon nanomaterial-based medicinal products available in market. It is predicted that these properties of NDs will be carried forward for the development of biological agents for diagnostic probes, delivery vehicles, gene therapy, anti-viral and anti-bacterial treatments, tissue scaffolds, and the development of novel medical devices such as nanorobots. Diabetic rats were treated with 150 or 300 mgD kg doped nanodiamonds for 21 days and the antidiabetic effects were estimated by quantifyingmodifications in biochemical parameters in the serum and pancreatictissue. The headway of diabetes was significantly reduced after treatment. In treated rats, doped nanodiamonds showed very significantreduction in serum glucose and protein levels. Furthermore, histologic examinationof the pancreas from diabetic rats showed degenerative changes in â-cells. In conclusion, doped nanodiamonds utilize protective effects against STZinduceddiabetes.
Keywords- Antidiabetic; histopathology;doped nanodiamonds; streptozotocin.

Introduction - Nanoscience is the study of phenomena on the nanometre scale which is commonly indicated as 1-100 nm . Nanotechnology manipulates matter at the atomic, molecular or macromolecular level to develop objects on the nanometre scale, with the aim of formulating novel materials, devices and systems that have new properties and functions because of their small size. The definition of nanotechnology (Wagner et al. 2006) is rather broad and includes both nanotechnology-enabled materials and nanotechnology-enabled tools and processes. In recent years, researchers had gain attention to new analytical tools to visualize and study those structures and related functions in depth. This has further stimulated the research in nanoscience area, and has catalysed nanotechnology. Nanoparticles deals with new innovations in the field of biosensors, biomedicine and bio nanotechnology-specifically in the streams like Drug delivery, as medical diagnostic tools and as a anticancer agents.

Nanodiamonds (NDs) are members of the broad family of nanocarbons, which include nano-sized amorphous carbon, fullerenes, diamondoids, tubes, onions, horns, rods, cones, peapods, bells, whiskers, platelets, and foam (Shenderova et al.2002). NDs have now gained world-wide attention due to their inexpensive large scale synthesis based on the detonation of carbon-containing highly flammable, small primary particle size (~4 to 5 nm) with narrow size distribution, shallow surface functionalization including bioconjugation, as well as high biocompatibility. Although there are few carbon nanomaterial-based medicinal products available in market (Schwertfege et al.2008; Ros 1999). It is predicted that these properties of NDs will be carried forward for the development of biological agents for diagnostic probes, delivery vehicles, gene therapy, anti-viral and anti-bacterial treatments, tissue scaffolds, and the development of novel medical devices such as nanorobots (Freitas 2003;Bianco et al.2005;Kam et al.2005). Zinc oxide is an inorganic compound which has its own importance due to wide range of applications (Wang 2004). The structural, physical and optical properties of ZnO nanoparticles are explored for doping (Ghosh et al. 2014). The intensity behind doping is to modify the properties of nanoparticles. A number of studies have reported on Co doped ZnO nanoparticles(Kshirsagar et al.2007). In present research due to vast important properties of ZnO nanodiamonds they were used as doping agent as they did not show any toxicity.

Diabetes mellitus is a chronic disease that has occurred severe effects at global level. A huge population suffer from diabetes globally (Lin and Sun 2010).Many researches

*Department of Biotechnology, Mewar University, Chittorgarh, Gangrar (Raj.) INDIA
** Department of Nanobiotechnology, Seminal Applied Sciences Pvt. Ltd, Lal Kothi (Raj.) INDIA
*** Department of Nanobiotechnology, Seminal Applied Sciences Pvt. Ltd, Lal Kothi (Raj.) INDIA
**** Department of Biotechnology, Mewar University, Chittorgarh, Gangrar (Raj.) INDIA

elucidated the role of metals in glucose metabolism and their deficiency with diabetes. Vanadium (Thompson 2009), chromium (Wang and Cefalu 2010), magnesium (Wells 2008), and zinc (Chausmer 1998) have been proved to play a role in blood sugar maintenance and have been included in diabetes therapy.Nano medicine is bringing in daily is a strong incentive to research treatments particular to diabetes. As there is no clear indicator of when Diabetes could appear in a patient and no certain preventative measures to be taken, the focus of research. Thus keeping in views above facts present research has been focused on antidiabetic activity of zinc doped nanodiamonds in streptozotocin induced diabetic rats.

Materials and Methods

***In vivo* activity**

The investigations were conducted to observe the antidiabetic effect of ZnO doped Nano diamonds drug administered orally to adult mice *(Rattus norvegicus)*

Present study was approved by ethical committee of the Department of Zoology, University of Rajasthan, Jaipur, Rajasthan, India. Indian National Science Academy, New Delhi guidelines were followed for maintenance and use of the experimental animals. Colony bred, adult, male albino rats of 'wistar strain' (200±30 g) were housed in polypropylene cages and maintained under standard conditions of temperature (25±3°C), 12 h light/12 h dark cycle and 35-60% relative humidity. They were provided with standard rats feed in form of pellets procured from Hindustan Lever Ltd, Mumbai and water were given *ad libitum*. Only healthy rats were used for experiments. All the investigations were conducted in late winters and early spring to avoid seasonal variation, if any.

Drug Preparation

Surface modified doped nanodiamonds were dissolved in milique water at different doses (at dose level of 300mg/kg body weight)

Experimental Design

Diabetes was intraperitoneally induced in overnight fasted rats by a single injection of freshly prepared 0.2 ml solution of streptozotocin (50mg/kg b. wt. dissolved in 0.1mM sodium citrate buffer) and pH was adjusted to 4.5. After 72 hours of streptozotocin administration, blood glucose was measured and animals having fasting glucose levels above 250 mg/dl were considered as diabetic. The control rats were injected with 0.1mM sodium citrate buffer alone. The hyperglycemic rats were allowed to drink 2% glucose solution for the night to overcome the drug-induced hypoglycemia. Rats were randomized into four groups of 7 rats in each and the experiments were as set as follows –

Group I : (Control group): Rats orally received 0.5 ml distill water.

Group II : Diabetic group given streptozotocin intraperitonially.

Group III : Diabetic rats orally administered with zinc doped Nano diamonds which were dissolved in millique water (300 mg/kg b. wt./day) for 28 days.

Group IV :Diabetic rats orally administered with glibenclamide (0.3mg/kg b. wt. /day) dissolved in 0.5 ml distilled water for 28 days.

Biochemical Studies: Biochemical estimations were carried out in adult (6-8 weeks old) mice pancreatic tissue. Following methods were applied for the estimation of various parameters using established protocols

1. *Serum Glucose*

(Trinder 1969; Kaplan 1984; Kaplan and Lavernel 1983)

Calculation:

$$\text{Serum /Plasma Glucose (mgdL}^{-1}) = \frac{\text{Absorbance of test x conc. of standard}}{\text{Absorbance of standard}}$$

Conc. of standard= 100mg/dL^{-1}

2. *Protein* (Bradford 1976).

3. *Glutathione (GSH)*

(Moron et al.1979).

4. *Peroxidase Assay (POXA)*

(Chance and Maehly 1955).

4. *Serum Glutamic Oxaloacetic Transaminase (SGOT)*

(Thefeld et al.1974; Wallnofer et al.1974; Bergmeyer 1980).

Calculation: Concentration of SGOT (U/L^{-1}) = Δ A / Minutes x Factor (1745)

5. *Serum Glutamate Pyruvate Transaminase (SGPT)*

(Thefeld *et al.,*1974; Wallnofer *et al.,* 1974; Bergmeyer 1980).

Calculation

***SGPT (U/L^{-1}) = Δ A / Minutes x Factor*(1745).**

6. *Lipid Peroxidation*

(Ohkawa et al.1979).

7. *Superoxide Dismutase (SOD)*

(Marklund and Marklund 1974).

8. Serum urea

(Varley 1969)

9. *Albumin*

(Corcoran and Duran 1977)

10. *Creatinine*

(Varley 1969)

Acetyl choline esterase

(Ingkaninan et al.2003).

Results and Discussion

Effect of administration of extract of zinc doped Nano diamonds on biochemical parameters

Protein and SOD contents significantly decreased (21% and 83.2%) while GSH and LPO contents increased (124% and 126.96%) in pancreas of diabetic rats as compared to control. Oral administration ofnanodiamonds at 300 mg/kg b. wt. /day concentration for 21 days caused improvement in protein, SOD contents (137.49% and 213.63%) whereas LPO and GSH content declined significantly (33.57% and 72.72%). Similar trend was observed in glibenclamide (0.3 mg/kg b. wt./day) administered rats where, protein and SOD (137.49% and 313.63%) respectively) increased while LPO and GSH levels (53.21 % and 73.07%) level decreased significantly as compared to the control. When compared with antidiabetic drug treatment using glibenclamide, the

levels of GSH and LPO were decreased (20.88% and 22.88%) with that of Nanodiamonds treated rats.

In diabetic rats (Gr II), serum urea as well as glucose levels increased (146.20% and 307.92%, respectively) significantly as compared to control (**Table- 1a).** Oraladministration of nanodiamonds extract at300 mg/kg b. wt. /day dose for 21 days reduced significantly the serum urea 63.63% and serum glucose levels 11.33% respectively. In comparison to diabetic rats, glibenclamide (0.3 mg/kg b. wt./day) administration caused significant reduction in serum urea and serum glucose levels (77.05 % & 58.84%, respectively; (**Table -1b**).

Diabetes induction (group II) caused significant elevation in serum creatinine (475.26%), Serum Glutamic Oxaloacetic Transaminase (SGOT/ AST; 262.09%) andSerum Glutamate Pyruvate Transaminase (SGPT/ALT; 235.03%) when compared with group I. Administration of Nanodiamonds (Gr. III) for 21 days caused significant reduction in serum creatinine, SGOT and SGPT (32.80, 51.20, 40.40 %, respectively) and increase in protein and albumin levels (137.49% & 121.64%, respectively). Glibenclamide (0.3 mg/kg b. wt./day dose) caused highly significant decrease in serum AST and ALT level (55.57 and 50.43% respectively)and increase in protein and albumin levels (169.90 & 140.20 %, respectively; (**Table-2**)as compared to diabetic rats.

Table 1a. Effect of Zinc doped Nanodiamonds on tissue biochemical parameters in normal and streptozotocin-diabetic rats

	Glucose (mg/dL)	Creatinine (mg/dl)	Protein (mg g^{-1})
Control	202	0.93	56.54
Diabetic Ratstreated with streptozotocin	622	4.42	44.73
Diabetic + Nano diamond treated Rats (300mg/Kg dose level).	551.5	2.97	61.5
Diabetic + Glibenclamide	256	1.01	76.0

Table 1b (see in last page)
Table 2 (see in last page)

Pancreas histopathology - In present study, the pancreatic cells were destroyed with the help of streptozotocin. Following injection of streptozotocin. b Cells were selectively destroyed and the histopathogical study of stained b cells further confirmed this. Histopathological study of diabetic control rats showed almost completes destruction of b cells, which was due to the proper dose of streptozotocin used in this study. Pancreatic b cells exposed to streptozotocin manifested changes characteristic for NO• action, i.e. increased activity of guanylyl cyclase and enhanced formation of cGMP (Turk et al.1993). Doses of the nanodiamonds produced significant decrease in blood glucose level when compared to the control diabetic group, and had no significant difference from the glibinclamide group. There was significant difference between all the tested groups and the control diabetic group in basal, 12th and 28th day of treatment on serum cholesterol level. The results showed that there was significant decrease in serum level of triglycerides in the nanodiamonds treated group and glibinclamide group after 28 days of treatment when compared to control diabetic group**.** Diabetes was induced chemically using streptozotocin, which is a â cell toxic compound. Administration of nanodiamonds caused marked regeneration in pancreatic islets. The hypoglycemic effect of nanodiamonds may be due to the presence of insulin-like substances, stimulation of b cells to produce more insulin and high level of fiber, which interferes with carbohydrate absorption (Nelson et al. 1991), or the regenerative effect of nanodiamonds on pancreatic tissue (Shanmugasundaram et al. 1990).

Discussion - In the present investigation all the rats treated with STZ developed hyperglycemia. Streptozotocin is a potent cytotoxin of the islets of Langerhans and causes severe diabetes. (Brenna et al.2003) in the current study, the diabetic group had ominously increased serum glucose levels, whereas regular administration of nanodiamonds to diabetic rats reduced serum glucose levels, in addition to increasing serum insulin levels. Treatment of normal rats with nano diamonds had no adverse effects. The presence of active functional groups in nanodiamonds may potentiate glucose-induced insulin secretion from â-cells or cause its release from the bound form, thus decreasing serum glucose levels in treated diabetic rats. In this context, a number of other nanoparticles have been screened for their hypoglycemic effects. (Gupta and Gupta 2009) the present investigation revealed the presence of active molecules that may be liable for the stimulation of glucose uptake in peripheral tissues and regulation of the activity and expression of the rate-limiting enzymes involved in carbohydrate metabolism. (Gupta et al.2011) albumin is essential for appropriate delivery of body fluids in the middle of body tissues and intravascular compartments and functions as a plasma carrier by binding several hydrophobic hormones. (Zunszain et al. 2003) albumin also keeps the blood from leaking out of blood capillaries. Forker and Chaikoff (1951) Administration of STZ decreases serum albumin levels due to increased non-enzymatic glycosylation of protein. (Guthrow et al.1979) In the present study nanodiamonds treatment significantly elevated serum albumin concentrations, which is possibly associated with a decreased affinity of albumin towards glucose.

Conclusion - The experimental findings clearly indicate an opportunity to develop a potent antidiabetic drug from doped nanodiamonds.

Acknowledgement - The authors are thankful to Heads, Mewar University and Seminal applied Sciences for providing the necessary facilities to carry out the research work including Prof.Andrey, Department of Biophysics, St. Petersburg Russia for providing synthesised nanodiamonds.

Conflict Of Interest - The Authors declared that there are no conflicts of interests

References :-

1. Shenderova, O. A., Zhirnov, V. V., & Brenner, D. W. (2002). Carbon nanostructures. *Critical Reviews in Solid State and Material Sciences*, *27*(3-4), 227-356.
2. Schwertfeger, H., Fokin, A. A., & Schreiner, P. R. (2008). Diamonds are a chemist's best friend: diamondoid chemistry beyond adamantane. *Angewandte Chemie International Edition*, *47*(6), 1022-1036.
3. Da Ros, T., & Prato, M. (1999). Medicinal chemistry with fullerenes and fullerene derivatives. *Chemical Communications*, (8), 663-669.
4. Freitas Jr, R. A. (2003). Nanomedicine, Vol. IIA: Biocompatibility. *Landes Bioscience, Georgetown, USA*.
5. Bianco, A., Kostarelos, K., Partidos, C. D., & Prato, M. (2005). Biomedical applications of functionalised carbon nanotubes. *Chemical Communications*, (5), 571-577.
6. Kam, N. W. S., Liu, Z., & Dai, H. (2005). Functionalization of carbon nanotubes via cleavable disulfide bonds for efficient intracellular delivery of siRNA and potent gene silencing. *Journal of the American Chemical Society*, *127*(36), 12492-12493.
7. Wagner, V., Dullaart, A., Bock, A. K., & Zweck, A. (2006). The emerging nanomedicine landscape. *Nature biotechnology*, *24*(10), 1211-1217.
8. Wang, Z. L. (2004). Zinc oxide nanostructures: growth, properties and applications. *Journal of Physics: Condensed Matter*, *16*(25), R829.
9. Ghosh, A., Kumari, N., & Bhattacharjee, A. (2014). Investigations on structural and optical properties of Cu doped ZnO. *Journal of Nano Science and Nano Technology: Spring Edition*, *2*, 485-489
10. Kshirsagar, S. D., Inamdar, D., Gopalakrishnan, I. K., Kulshreshtha, S. K., & Mahamuni, S. (2007). Formation of room-temperature ferromagnetic Zn 1" x Co x O nanocrystals. *Solid State Communications*, *143*(10), 457-460.
11. Lin, Y., & Sun, Z. (2010). Current views on type 2 diabetes. *Journal of Endocrinology*, *204*(1), 1-11.
12. Thompson, K. H., Lichter, J., LeBel, C., Scaife, M. C., McNeill, J. H., & Orvig, C. (2009). Vanadium treatment of type 2 diabetes: a view to the future. *Journal of inorganic biochemistry*, *103*(4), 554-558.
13. Wang, Z. Q., & Cefalu, W. T. (2010). Current concepts about chromium supplementation in type 2 diabetes and insulin resistance. *Current diabetes reports*, *10*(2), 145-151.
14. Wells, I. C. (2008). Evidence that the etiology of the syndrome containing type 2 diabetes mellitus results from abnormal magnesium metabolism. *Canadian journal of physiology and pharmacology*, *86*(1-2), 16-24.
15. Chausmer, A. B. (1998). Zinc, insulin and diabetes. *Journal of the American College of Nutrition*, *17*(2), 109-115.
16. Trinder, P. (1969). Determination of glucose in blood using glucose oxidase with an alternative oxygen acceptor. *Annals of Clinical Biochemistry: An international journal of biochemistry in medicine*, *6*(1), 24-27.
17. Kaplan L.A., 1984. Glucose. Kaplan A et al. Clin Chem,The C.V. Mosby Co. St Louis. Toronto. Princeton;1032-1036
18. Kaplan A and Lavernel LS. 1983. Lipid Metabolism. In: Clinical Chemistry: Interpretation and Techniques, 2nd ed. Febiger, Philadelphia. pp. 333-336.
19. Bradford, M. M. (1976). A rapid and sensitive method for the quantitation of microgram quantities of protein utilizing the principle of protein-dye binding. *Analytical biochemistry*, *72*(1-2), 248-254.
20. Moron, M. S., Depierre, J. W., & Mannervik, B. (1979). Levels of glutathione, glutathione reductase and glutathione S-transferase activities in rat lung and liver. *Biochimica et Biophysica Acta (BBA)-General Subjects*, *582*(1), 67-78.
21. Chance B and Maehly AC. 1955. Assay of catalase and peroxidases. Methods. Enzymol. 2: 764 -775.
22. Thefeld, W., Hoffmeister, H., Busch, E. W., Koller, P. U., & Vollmar, J. (1974). Referenzwerte für die Bestimmungen der Transaminasen GOT und GPT sowie der alkalischen Phosphatase im Serum mit optimierten Standardmethoden. *DMW-Deutsche Medizinische Wochenschrift*, *99*(08), 343-351.
23. Wallnofer H, Schmidt E and Schmidt FW. (Eds.). 1974. Synopsis der Leberkrankheiten. Goerg Thieme Verlag, Stuttgart, Thefeld, Dtsch. Med Wschr. 99: 343.
24. Buege JA and Aust SD. 1978. Methods in Enzymology. Academic Press, New York, USA. 52: pp.302-314.
25. Ohkawa, H., Ohishi, N., & Yagi, K. (1979). Assay for lipid peroxides in animal tissues by thiobarbituric acid reaction. *Analytical biochemistry*, *95*(2), 351-358.
26. Marklund, S., & Marklund, G. (1974). Involvement of the superoxide anion radical in the autoxidation of pyrogallol and a convenient assay for superoxide dismutase. *European journal of biochemistry*, *47*(3), 469-474.
27. Corcoran, R. M., & Durnan, S. M. (1977). Albumin determination by a modified bromcresol green method. *Clinical chemistry*, *23*(4), 765.
28. Varley, H. (1969). Determination of blood urea by urease nesslarization method. *Practical clinical biochemistry,*, 158.
29. Ingkaninan, K., Temkitthawon, P., Chuenchon, K., Yuyaem, T., Thongnoi, W.,(2003). Screening for acetylcholinesterase inhibitory activity in plants used in Thai traditional rejuvenating and neurotonic remedies. Journal of Ethnopharmacology 89, 261–264.
30. Turk J, Corbett JA, Ramanadham S, Bohrer A and Mc

Daniel Ml. 1993. Biochemical evidence for nitric oxide formation from streptozotocin in isolated pancreatic islets. Biochem. Biophys. Res. Commun.197: 1458-1464.

31. Nelson RW, Ihle SL, Lewis LD, Salisbury SK and Bottoms GD. 1991. Effects of dietary fiber supplementation on glycemic control in dogs with alloxan-induced diabetes mellitus. Amer. J. Vet. Res.52: 2060-2066.

32. Shanmugasundaram ER, Gopith KL, Radha SK and Rajendran VM. 1990. Possible regeneration of the islets of langerhans in streptozotocin-diabetic rats given *Gymnema sylvestere* leaf extract. J. Ethnopharm. 30: 265-269.

33. Brenna, Ø., Qvigstad, G., Brenna, E., & Waldum, H. L. (2003). Cytotoxicity of streptozotocin on neuroendocrine cells of the pancreas and the gut. *Digestive diseases and sciences*, *48*(5), 906-910.

34. Gupta R and Gupta RS. 2009. Effect of *Pterocarpus marsupium* in streptozotocin-induced hyperglycemic state in rats: a comparison with glibenclamide. Diabetol. Croatica. 38 (2): 39-45.

35. Gupta, R., Sharma, A. K., Dobhal, M. P., Sharma, M. C., & Gupta, R. S. (2011). Antidiabetic and antioxidant potential of â sitosterol in streptozotocin induced experimental hyperglycemia. *Journal of diabetes*, *3*(1), 29-37.

36. Zunszain, P. A., Ghuman, J., Komatsu, T., Tsuchida, E., & Curry, S. (2003). Crystal structural analysis of human serum albumin complexed with hemin and fatty acid. *BMC Structural biology*, *3*(1), 6.

37. Guthrow, C. E., Morris, M. A., Day, J. F., Thorpe, S. R., & Baynes, J. W. (1979). Enhanced nonenzymatic glucosylation of human serum albumin in diabetes mellitus. *Proceedings of the National Academy of Sciences*, *76*(9), 4258-4261.

Table 1b : Effect of Zinc doped Nanodiamonds on tissue biochemical parameters in normal and streptozotocin-diabetic rats

	SOD(µlmol/ mgprotein)	Catalase(µlmol H2O2consumed/ minper mg protein)	LPO (nmol MDA /mg protein)	Peroxidase(µlmol H2O2consumed/ minpermg protein)	GSH (nmol/g Tissue)
Control	1.31	0.82	82.88	1.59	13.22
Diabetic Rats	0.22	0.19	105.23	0.34	16.5
Diabetic+Nano diamond treated Rats	0.47	0.48	69.90	0.61	4.50
Diabetic+ Glibenclamide	0.69	0.66	53.90	0.72	3.56

Table 2: Effect of the Zinc doped Nanodiamonds on serum biochemical parameters in normal and streptozotocin-diabetic rats

	SGOT(IU L^{-1}	SGPT(IU L^{-1}	Serum Urea (mg/dl)	Albumin (mg/dL)	Triglycerides (mg/dL)	LDH(µlmol/ mg protein)
Control	10.58	13.33	1.58	2.28	217	113.5
Diabetic Rats	27.73	31.33	2.31	0.97	256	132.2
Diabetic+Nano diamond treated Rats	13.53	18.67	0.84	1.18	148	47
Diabetic+Glibemicide	12.32	15.53	0.53	1.36	94	56.34

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Applications of Fuzzy Set Theory and Fuzzy Logic : An Overview

N. T. Katre *

Abstract - In our everyday life we make many statements which convey vagueness and imprecision that is the characteristic of natural language. Fuzzyness is one of the forms of uncertainty. Manyreal-world application problems involving imprecision or uncertaintycannot be described and handled mathematically by the classical set theory. Fuzzy set theory is of great utility as it provides an inventory of theoretical tools to deal with the imprecise and vague concepts expressed in natural language. This paper gives an overview of some important application areas of fuzzy set theory and fuzzy logic.
Keywords - Crisp set, Fuzzy set theory, Fuzzy logic, Membership function, Applications.

Introduction - One of the principal foundations of mathematics is the theory of sets (classical or crisp sets) which was originated in 1895 by the German mathematician George Cantor [1845-1918]. He defined a set as a collection of definite and distinguishable objects selected according to some rules or description. On many occasions we deal with several classes of objects and consider those objects which belong to our class of interest. Listing all the elements of the set exhaustively is one of the ways to describe the membership of a set. Classical sets are defined in such a way that any particular object is a member or non-member of the set, that is, the object is certainly in the set or certainly not in the set respectively. So, roughly speaking, a set can be considered as a container such that the objects are either in it or not in it. To discriminate between members and non-members of the classical set under consideration, the characteristic function is defined on the set which assigns a value respectively 1 and 0 to each individual in the universal set. So, in the theory of classical sets, it is not allowed that at the same time an element is in a set and not in a set.In our everyday life we make many statements which convey vagueness and imprecision that is the characteristic of natural language. In reality, many a times there arise the situationsinvolving imprecision or uncertainty where we can't say definitely whether an element x (decision variable) is a member or non-member of any set A.Such problems involving imprecision or uncertainty cannot be described and handled mathematically by the classical set theory. This led to the generalization of the classical concept of a set by introducing the concept of a fuzzy set, defined as a set where its elements have different degrees of membership lying between 0 (null) and 1 (total), i.e., in [0, 1].

Professor Lotfi Asker Zadeh from Berkeley University is the founder of the fuzzy set theory. He published his first famous research paper on this theory in 1965 and in next 10 years broadened the foundation of the theory by establishing fuzzy similarity relations, linguistic hedges, and fuzzy decision making. It is a remarkable achievement with deep insight. Zimmermann (1986) introduced recent applications of fuzzy set theory which simplifies the concepts of fuzzy sets. Since the introduction of the concept of a fuzzy set and fuzzy logic, many researchers in theoretical and applied mathematics have shown their interest to applying these concepts in their work. As a result, many research papers are published and several conferences are organized on this subject. This paper offers the notion and an overview of some important application areas of fuzzy sets and fuzzy logic.

Concepts of Fuzzy sets and Fuzzy logic - There are three basic methods to define a classical(or crisp) set in a given universal set U, namely, roster or list method, set builder or rule method and characteristic function method. Let U be the universal set and $A \subseteq U$. A set A is defined by a function, usually called a characteristic function, as

$$\chi_A(x) = \begin{cases} 1 & \text{for } x \in A \\ 0 & \text{for } x \notin A \end{cases} \quad \forall\, x \in U$$

Here $X_A : U \longrightarrow \{0,1\}$ For each $x \in U$,x is declared to be the member and non-member of A if X_A (x)=1 and X_A (x)=0 respectively. Thus, the crisp set is defined as a set where its elements have 1 (total) or 0 (null) degree of membership. Here X_A maps all $x \in U$ onto the points 0 and 1, hence crisp sets correspond to two-valued logic called Boolean logic where the statement can be true or false and nothing in between.

By allowing the degree of membership to be between

*Assistant Professor (Mathematics) NabiraMahavidyalaya, Katol (Maharashtra) INDIA

0 and 1, we come to Zadeh's(1965) concept of a fuzzy subset F of a universal set U which is defined through its membership function $\mu_F : U \longrightarrow [0,1]$. Thus, the member -ship function μ_F is a generalization of a characteristic function X_A as the two member set {0,1} is replaced by a closed interval [0,1]. Here $0 \leq \mu_F(x) \leq 1$ and we call $\mu_F(x)$ as the degree of membership of x in F . The fuzzy set F in the universal set U is defined as a set of ordered pairs:

$$F = \{(x,\ \mu_F(x)) \mid x \in U\}.$$

The concepts like young, beautiful, rich, near, short, tall, hot, intelligent, etc are fuzzy or vague which when translated in the form of membership functions give rise corresponding fuzzy sets.

As stated earlier, Boolean logic accepts only two values- Yes or No, True or False, i.e., 1 or 0. By using this one cannot talk about the concepts like- low, very low, medium, high, very high, etc. So, it became desirable to explore the multi-valued logic which assumes the truth value between 0 and 1. The logic whose truth values are taken between 0 and 1 is called a fuzzy logic as fuzzy sets are defined in terms of the membership functions which take the values between 0 and 1. Thus, fuzzy logic is a many-valued logic which deals with approximate reasoning or uncertainties in a given problem.

Fuzzy control is the most successful area of fuzzy systems. Fuzzy controllers are the special expert systems consisting of four components: fuzzification, a fuzzy inference engine, a fuzzy knowledge base and defuzzification. Fuzzy controllers are useful in solving control problems.

Applications of Fuzzy sets and Fuzzy logic - Human life is a collection of events of opposite character linked to certainty or uncertainty. Uncertainty was regarded as unscientific, nonproductive and unwanted and hence should be avoided by all possible means. In this regard efforts are made to develop scientific theories which lead to certainty. But in modern view, uncertainty is considered essential to science since there is a relationship between precision and uncertainty in a way that permitting more uncertainty tends to reduce complexity and increase credibility of the resulting model. This stage of transition from the traditional view to the modern view of uncertainty is characterized by the development of several new theories of uncertainty which are distinct from probability theory. Fuzzyness is one of the forms of uncertainty. Fuzzy set theory is a modeling language for vague and complex formal and factual structures. It allows controlling complex processes based on small number of expert rules.Fuzzy logic systems can use existing linguistic knowledge very successfully and treat uncertainty in an appropriate manner.Fuzzy control is one of the important application areas of fuzzy set. Fuzzy controllers are the special expert systems that employees knowledge base expressed in terms of relevant fuzzy inference rules and an appropriate inference engine to solve a given control problems.Fuzzy controller for cement kilns was the first commercially available fuzzy controller. The first consumer product was Matsushita's shower head (1986). Fuzzy controllers were implemented first time in an automatic-drive fuzzy control system for subway trains in Sendai city, Japan (1987).

Very large numbers of papers using fuzzy sets are being published in many subject areas that include: mathematics, computer sciences, engineering, decision sciences, health sciences, life sciences, physical sciences, chemical sciences, social sciences and humanities. In recent years, fuzzy sets have been extended to new types and these extensions have been used in many areas such as energy, medicine, material, economics, and pharmacology sciences.In this section, some applications of fuzzy set theory and fuzzy logic in various areas are overviewed:

(i) Mathematics: The applications of fuzzy set theory and fuzzy logic covered the generalization of traditional mathematics such as Classical set theory, Logic ,Topology, Graph theory, Abstract algebra, Information Theory, Measure Theory, Graph Theory, Linear Algebra, Cryptography, etc.

(ii) Computer science: Fuzzy systems and neural networks are established as universal approximators as recognized by Kosko (1992). Fuzzy systems provide a powerful framework for knowledge representation, while neural networks provide learning capabilities and exceptional suitability for computationally efficient hardware implementations. Fuzzy set theory and fuzzy logic in concern with the storage and manipulation of knowledge compatible with human thinkingincludes fuzzy databases, fuzzy information retrieval systems, and fuzzy expert systems.

A fuzzy automaton is applicable in fault-tolerant design, learning formal languages and grammars, pattern recognition, etc. As pattern recognition is a process of searching for structures in data and classifying these structures into categories having high or low degree of association, it is used in cluster analysis.Image processing is connected with pattern recognition in the sense that many pattern recognition problems are given in terms of digital images, e.g., printed and handwritten character recognition, automatic classification of X-ray images, fingerprint recognition, target identification, speech recognition, human face recognition, and classification of remotely sensed data.Fuzzy logic has its utility in software development process.

(iii) Engineering: Fuzzy sets and fuzzy logic have their utility inall engineering disciplines to various degrees; out of which in some disciplines mentioned below:

(a) Electrical Engineering: It is the first engineering discipline within which the utility of fuzzy sets and fuzzy logic was recognized due to the development of most significant systems: fuzzy controllers and fuzzy computer hardware based on fuzzy set theory. Fuzzy controllers, fuzzy image processing, robotics, electronic circuits for fuzzy

logic, fuzzy adaptive filters to nonlinear channel equilibrium, signal detection, fuzzy cognitive maps to qualitative circuit analysis, etc. are the areas of electrical engineering where methods based on fuzzy sets are useful. Fuzzy logic is used for interior daylight evaluation.

(b) Civil Engineering: The standards of safety required by the general public regarding civil engineering constructions such as buildings, bridges, dams, architectural design etc. are extremely high. The uncertainty in applying theoretical solutions to civil engineering project is large and thushow the designer make decisions in spite of the high uncertainty is very crucial.Fuzzy set theory and its applied areas such as fuzzy decision making, approximate reasoning, fuzzy control, fuzzy risk analysis, specialized expert systems, etc. are of great utility in assessment of fatigue in metal structure, damage in buildings after an earthquake, quality of highway pavements, control of traffic in cities, etc.

(c) Mechanical Engineering: Fuzzy set theory facilitate the whole engineering design process since it allow the designer to describe the designed artifact as approximately as desired at the early stages of the design process. The designer may express various dimensions of the design artifact by suitable fuzzy numbers, in particular triangular fuzzy numbers, to represent linguistic descriptions. Fuzzy controllers are applied in elevator control systems, traffic control systems, control of bulldozers, automobiles (antiskid brake systems, automatic transmissions), unmanned helicopter, stabilization of triple inverted pendulum, etc.

(d) Industrial engineering: Industrial engineering is concerned with the design, operation, and control of systems whose components are machines, material, human beings, and money. Fuzzy set theory, fuzzy control and fuzzy decision making are useful in solving technical, behavioral, ergonomic, organizational, economic, etc. issues of industrial engineering. Fuzzy set theory is very useful in industrial engineering, since fuzzy controllers, fuzzy expert systems, fuzzy decision making, fuzzy Petri nets are being used in various subject areas, viz.,modeling, manufacturing,statistical and multiple criteria decision-making, control of industrial processes, power systems, project management, financial management, technology management, production management, quality control, organizational design, optimization, risk analysis, human factors, simulation, forecasting, ergonomics, inventory control, safety engineering, flexible manufacturing systemsas well as linear and mathematical programming. Fuzzy controllers are applied in many industrial projects, e.g., chlorine control for water purification plants, air conditioning systems, control systems for cement kilns, project risk assessment, industrial automation and optimization,wastewater treatment process control, water purification plant control, quantitative pattern analysis for industrial quality assurance,power system operation, and planning optimization problemsetc.Fuzzy logic is the most popular artificial intelligence technique used in modeling of machining process such as to predict thesurface roughness and to control the cutting force. Fuzzy logic is also used in prediction, selection, monitoring, control andoptimization of machining process.

(e) Computer Engineering: Fuzzy set theory and fuzzy logic techniques play an important role in computer engineering that include: design of specialized hardware for fuzzy computing to increase operational speed via parallel processing,knowledge acquisition, knowledge representation, human-machine interaction, approximate reasoning, fuzzy rules of inference, software development processand defuzzification procedures for fuzzy controllers. An important contribution to fuzzy logic hardware is a design and implementation of fuzzy flip-flop.

(f) Chemical Engineering: Fuzzy logic techniques are useful in many fields of chemical engineering such as combustion processes, process controls, separation process, food produce, safety analysis, risk assessment, batch crystallizer, detection of chemical agents, gas recognition, fluidized catalytic cracking unit, target tracking, and kinetics, etc.

(g) Robotics: This subject area is concerned with the design and construction of machines that are having capability of human-like behavior. Approximate reasoning, fuzzy algorithms, fuzzy controllers, fuzzy pattern recognition and image processing, fuzzy databases, information retrieval systems, and fuzzy decision making are the components of fuzzy set theory that are essential to meet all the capabilities of an intelligent robot that include common-sense reasoning in natural language, high-level capabilities of pattern recognition and image understanding, refined motor controls, navigation, decision making.

(iv) Home appliances: Fuzzy logic techniques have been successfullyusedin many electrical and electronic domestic appliances for their better performance, which include washing machines, refrigerators, video cameras, vacuum cleaners, TV sets, heating ventilation and air conditioning (HVAC), transmission systems, etc.

(v) Medicine and Health care: Fuzzy set theory and fuzzy logic techniquesare a highly suitable and applicable basis for developing knowledge-based systems in medicine that help the medical expert in the process of interpretation of sets of medical findings and diagnosis of various diseases. Sanchez (1979) suggested an approach in which the physician's medical knowledge is represented as a fuzzy relation between symptoms and diseases. Other applications within the area of healthcare include use of database design and information storage and retrieval systems as a decision aid for medical diagnosis, the fuzzy controllers for various medical devices, the use of linguistic descriptions of symptoms and fuzzy decision makingto determine appropriate therapies, fuzzy expert system to help physicians in the treatment of diabetes and hospital staff in administrative, diagnostic, therapeutic, statistical, and scientific work, the use of linguistic variables for questionnaires to investigate the relation between social

stresses, psychological factors, age, family history, and the incidence of coronary disease,fuzzy inference system to evaluate orthodontic treatment, fuzzy automata for clinical monitoring, computer based automatic pattern recognition systems and image processing to analyze X-ray images and other visual data like electrocardiograms and electroencephalograms, speech recognition and speaker identification, fingerprint recognition, and fuzzy clustering for analysis and classification of chromosomes, the development of an index using a fuzzy approach to assess the health of the patient, fuzzymathematical programming in the waiting listmanagement,etc.A notable real life application is a Omron's fuzzy-logic-based and widely used blood pressure meter.

(vi) Management: One of the most fundamental activities of human beings is to make decisions. Fuzzification of classical theories of decision making, i.e., fuzzy decision making is of key importance for functions in the area of management, such as planning, inventory control, investment, personal actions, new product development, marketing, risk, safety, managing the things in bank, business, selection of staff, training systems and allocation of resources, as well as many other management disciplines. Fuzzy PERT and CPM techniques invented by Mazlum in 2015 are used in project handling.

(vii) Economics: Fuzzy set theory is useful in making economic predictions. Fuzzy preference theory is used in investigating equilibria of fuzzy non cooperative and cooperative games, fuzzy economic equilibria, and in making the theory of microeconomics more realistic.Fuzzy preference theory, fuzzy games, fuzzified methods for some problems of operations research,fuzzy decision-making are some categories of fuzzy set theory relevant to economics to various degrees.

(viii) Transportation: Fuzzy logic is very useful indecision making, planning,and modelingof traffic and transportation processes that include investment, services, maintenance, costs, infrastructures, vehicles, pavement rehabilitation, schedule and traffic signal control,automatic operations, accident analysisand prevention which are characterized by subjectivity, uncertainty, ambiguity, and imprecision.

(ix) Bioinformatics: Fuzzy logic and fuzzy technology are used to- increase the flexibility of protein motifs, align and characterize proteins, study functional and ancestral relationships between proteins, study differences between polynucleotides, analyze experimental expression data using fuzzy adaptive resonance theory, cluster genes from microarray data, align sequences based on a fuzzy recast of a dynamic programming algorithm, predict proteins subcellular locations from their dipeptide composition, sequence DNA using genetic fuzzy systems, process complementary DNA microarray images, classify amino acid sequences into different super families, etc. Fuzzy logic and fuzzy technology are used also in gene technology.

(x) Renewable energy: Fuzzy basedmodeling is being extensively used inrenewable energy systems.Fuzzy logic controllers are being widely used in solar photovoltaic applications for MPPT, wind energy systems, and for controlling the intermittent energy flow from the renewable energy sources.Fuzzy based hybrid models such as fuzzy AHP, fuzzy DEA, fuzzy GA, fuzzy PSO, fuzzy honey bee optimization are being explored in the modeling of solar, wind, bio- energy applications.

(xi) Soil sciences: Fuzzy systems are applicable in many concepts of soil science such asland evaluation, numerical classification of soil and mapping, modeling and simulation of soil physical processes, soil quality indices, fuzzy soil geostatistics, fuzzy measures of imprecisely defined soil phenomena, etc.

(xii) Agriculture: Fuzzy logic techniques are useful in enhancing the fertility and analyzing the environmental parameters like humidity, light, temperature, etc. which can affect the crop. Fuzzy logic controllers are used in atmosphere control, farming greenhouse.

(xiii) Decision making: Fuzzy set theory is useful in designing databases and information storage and retrieval systems necessary to handle imprecise information which are the components of decision making.Decision makingis of importance in many disciplines of social sciences, natural sciences, life sciences, and engineering.Triangular fuzzy model is useful for assessing critical thinking skills.

(xiv)Operations research and Statistics: Fuzzy set theory and fuzzy logic systems are useful in Programming problems, inventory control, risk analysis, project evaluation, regression analysis, possibility theory, probability theory, etc.

(xv) Education: Fuzzy logic techniques are useful in the evaluation of performance of the students as well as faculty members by analyzing the data related to performance, reasons, and information.The fuzzy MULTIMOORA is used to determine the ranking of students.

(xvi) Public utility services: Fuzzy set theory and fuzzy logic systems are useful in weather forecasting, determination of expected time of project completion and arrival and departure of public transport, solving traffic control and related problems, automation of electrical and electronic domestic appliances, total service quality management and its implication, transaction analysis, etc.

Conclusions - The literature review shows that there are lots of areas where fuzzy techniques are applied but very few of them are discussed in the paper.In this paper a brief overview of the applications of fuzzy set theory and fuzzy logic in the fields of mathematics, computer science, different fields of engineering, home appliances, medical and healthcare, management, economics, transportation, bioinformatics, renewable energy, soil sciences, agriculture, decision making, operations research and statistics, education, and public utility services is presented. Fuzzy set theory techniques are effective and powerful aid towards solving problems in areas where the dichotomical states of yes and no can not define or describe the actual situation.Fuzzy set theory, fuzzy logic and the other mathematical frameworks that deal with information and

uncertainty are very much useful in any field in which complexity arises.The development of fuzzy set theory is one of the remarkable achievements of the last century as it has a large applicability potential in many areas of decision making and information sciences where optimal solutions of the problems are required. In future, more extensions of fuzzy set theory and their applications will be possible.

References :-

1. George J. Klir and Bo Yuan, "Fuzzy Sets and Fuzzy Logic: Theory and Applications", PHI Learning Pvt. Ltd. New Delhi (2009).
2. George J. Klir and T. A. Folger, "Fuzzy Sets, Uncertainty, and Information", PHI Learning Pvt. Ltd. New Delhi (2010).
3. Timothy J. Ross, "Fuzzy logic with engineering applications", John Wiley & Sons Ltd. (2005).
4. H. J. Zimmermann, "Fuzzy Set Theory and Its Applications", London : Kluwer Academic Publisher (2001).
5. T. M. Karade, et al., "Elements of Calculus, Groups and Fuzzy Sets", SonuNilu (2010).
6. A. P. Burnwal, "On Application of Fuzzy Set Theory", Applied Science Periodical, Vol.10(1), (2008).
7. H. Singh, et al., "Real-Life Applications of Fuzzy Logic", Advances in Fuzzy Systems(2013),
8. M.Praharaj,"Application of Fuzzy Logic in Interior Daylight Evaluation", Elixir Sustain. Arc. 80 (2015) 31339-31344.
9. D. T. X. Duong and V.Ammarapala, "Fuzzy Logic Application in Transportation Problems", Proceedings of the 4th International Conference on Engineering, Project, and Production Management (EPPM 2013).
10. M.Akay et al., "Fuzzy sets in life sciences", Fuzzy Sets and Systems 90 (1997) 219-224.
11. Phuong, Nguyen Hoang and Kreinovich, Vladik, "Fuzzy Logic and its Applications in Medicine" (2000). Departmental Technical Reports (CS). Paper 498.
12. M.F. Abbod et al., "Survey of Utilisation of Fuzzy Technology in Medicine and Healthcare", Fuzzy Sets and Systems 120 (2001) 331–349.
13. S. S. Sikchi et al., "Fuzzy Expert Systems (FES) for Medical Diagnosis", International Journal of Computer Applications (0975 – 8887) Vol. 63(11), February 2013.
14. A. Torres and J. J. Nieto, "Fuzzy Logic in Medicine and Bioinformatics", Journal of Biomedicine and Biotechnology, Vol. 2006, Pages 1–7.
15. C. Kahraman, et al., "Applications of Fuzzy Sets in Industrial Engineering: A Topical Classification", StudFuzz**201**, 1–55 (2006).
16. T. Dereli, et al.,"Industrial applications of type-2 fuzzy sets and systems: A concise review", Computers in Industry 62 (2011) 125–137.
17. M. L. Abdullah, et al., "Fuzzy sets in the Social Sciences: An overview of related researches", JurnalTeknologi, 41(E) Dis. 2004: 43–54.
18. I. Ya. Subbotinand M. Gr. Voskoglou, "A Triangular Fuzzy Model for Assessing Critical Thinking Skills", International Journal of Applications of Fuzzy Sets and Artificial Intelligence (ISSN 2241-1240), Vol. 4 (2014), 173-186.
19. L. Suganthi, et al., "Applications of fuzzy logic in renewable energy systems – A review", Renewable and Sustainable Energy Reviews 48 (2015), 585–607.
20. M. R. H. Mohd Adnan et al., "Fuzzy logic for modeling machining process: a review", ArtifIntell Rev (2015) 43:345–379.
21. A. B. McBratneyand I.O.A. Odeh, "Application of fuzzy sets in soil science: fuzzy logic, fuzzy measurements and fuzzy decisions", Geoderma 77 (1997) 85-113.
22. A. Sarkar, et al., "Application of fuzzy logic in transport planning", IJSC Vol.3, No.2, May 2012.
23. W. Karwowski, "Potential applications of fuzzy sets in industrial safety engineering", Fuzzy sets and systems 19 (1986) 105-120.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों की आकांक्षा का अध्ययन

संगीता उपाध्याय* डॉ. हनुमान सहाय शर्मा **

शोध सारांश – प्रस्तुत आलेख में उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों की आकांक्षा का अध्ययन किया गया है। न्यादर्श के रूप में कुल 200 विद्यार्थी, 100 उच्च एवं 100 निम्न उपलब्धि प्राप्त विद्यार्थियों का चयन किया गया। दत्तों के संकलन हेतु एम.ए.शाह एवं स्व. डॉ. महेश भार्गव आगरा द्वारा निर्मित आकांक्षा स्तर मापनी का प्रयोग किया गया एवं शैक्षिक उपलब्धि के लिए गत वर्ष के वार्षिक परिणामों को लिया गया। प्राप्त दत्तों के विश्लेषण कार्य के लिए मध्यमान, मानक विचलन एवं टी परीक्षण का प्रयोग किया गया है। विश्लेषण से पाया गया कि निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के दोनों स्तरों लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक एवं प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक में सार्थक अंतर होता है।

शब्द कुंजी – शैक्षिक उपलब्धि, शारीरिक बाधित विद्यार्थी, आकांक्षा।

प्रस्तावना – लक्षण तथा मूल्य आदि को प्राप्त करने की इच्छा आकांक्षा कहलाती हैं तथा इन लक्ष्णों व मूल्यों के प्रति व्यक्ति की इच्छा की तीव्रता को ही आकांक्षा स्तर कहते हैं। आकांक्षा स्तर से व्यक्ति के तात्कालिक लक्षण का संकेत मिलता हैं जिसे एक व्यक्ति प्राप्त करने के लिए प्रयास करता हैं। शिक्षा में ऐसा कोई कार्यक्रम नहीं हैं जिनमें छात्रों की आकांक्षाओं का समावेश न हुआ हैं। लम्बें अर्से से आकांक्षा की महत्ता स्वीकार की गई हैं। **रेम्बो (1931)** ने आकांक्षा शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग किया उसने क्रोध दशा को जाँचने के लिए एक प्रयोग किया उसने छात्रों को उन कार्यो में लगाया जो बहुत कठिन थे। छात्रों ने अपनी ओर से उद्धेश्य बनाकर चुनौती पूर्ण कार्य को किया। रेम्बो ने छात्रों के इस तात्कालिक लक्ष्य को ही आकांक्षा स्तर के नाम से पुकारा। **होपे (1931)** ने आकांक्षा स्तर से संबंधित मनोवैज्ञानिक प्रयोग किया उसने छात्रों के सफलता विफलता प्रतिक्रियाओं एवं परिणामो से संबंधित लक्ष्य निर्धारण कर व्यवहार का अध्ययन किया। उसमें निष्कर्ष निकाला कि सफलता से आकांक्षा स्तर बढ़ता हैं और विफलता से आकांक्षा स्तर में अन्तर रहता हैं।

मैक्लीलैण्ड (1953) ने सिद्ध किया कि छात्रों में उपलब्धि पाने की प्रवृत्ति आकांक्षा स्तर को ऊँचा उठाती हैं। आकांक्षा स्तर का सम्बन्ध आत्मसम्मान से भी हैं। अत: व्यक्ति अपने व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में उच्च आकांक्षा रखता हैं। आकांक्षा स्तर मूलत: एक लक्ष्य निर्धारित व्यवहार हैं जब छात्र अपने समक्ष एक आदर्श लक्ष्य रखता हैं जैसे अधिक अंक लाना, वाचनगति सुधारना, कम समय में काम करना, उत्कृष्ट कार्य करना, अधिक याद रखना, अधिक कौशल प्राप्त करना, अधिक मात्रा में शामिल होना, प्रगति को बनाये रखना आदि। इस सन्दर्भ में यही ध्यान रखना हैं कि बच्चे भले ही लक्ष्य नहीं रखे, लेकिन किशोर छात्रों को तो अपने समक्ष अवश्य लक्ष्य रखना चाहिए। आकांक्षा स्तर की विभिन्न विद्धानों ने परिभाषा निम्न प्रकार से दी हैं –

प्रो. फ्रेंक (1935) ने पारिभाषित किया हैं – 'आकांक्षा स्तर का अर्थ हैं भावी निष्पादन जिसे व्यक्ति पहले के कार्य में प्राप्त निष्पादन स्तर को जानते हुए भावी निष्पादन स्तर पर पहुँचने की आशा ही आंकाक्षा स्तर हैं।'

आइजनेंक (1972, पृष्ठ 613) के अनुसार – 'आकांक्षा स्तर वह सम्भावित लक्ष्य हैं जो एक व्यक्ति स्वयं अपने कार्य निष्पादन के समय निश्चित करता हैं।'

हरलॉक (1978, पृष्ठ 209) के अनुसार – 'एक व्यक्ति द्वारा पहले प्राप्त किए गए लक्ष्य और आशा किये जाने वाले लक्ष्य के बीच भिन्नता ही उसका आकांक्षा स्तर हैं।'

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर आकांक्षा स्तर को इसकी प्रकृति के कारण संज्ञानात्मक अभिप्रेरणा कहा जाता हैं। प्रत्येक व्यक्ति में आकांक्षा स्तर भिन्न भिन्न पाया जाता हैं। आकांक्षा स्तर व्यक्ति के जीवन निर्माण को प्रभावित करता हैं। एक व्यक्ति क्या बनने की आकांक्षा रखता हैं वह इस दिशा में कितना प्रयास या सफलता प्राप्त करना चाहता हैं यह सब उस व्यक्ति के आकांक्षा स्तर पर निर्भर करता हैं आकांक्षा स्तर के कारण मानसिक संघर्ष भी उत्पन्न हो सकता हैं परन्तु यह बहुधा उन व्यक्तियों में होता हैं जिनका आकांक्षा स्तर उच्च श्रेणी का होता हैं। उच्च श्रेणी आकांक्षा स्तर के कारण जब योग्यताओं के अभाव में व्यक्ति इस स्तर के लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाता हैं तो वह चिन्तित, असन्तुलित या कुसमायोजित हो जाता हैं। व्यक्ति के व्यक्तिगत, प्रतिमान, मूल्य रूचियाँ-इच्छाऐं, सेक्स, प्रतिस्पर्द्धा, अभिभावकों की महत्वाकांक्षा सफलता-असफलता इत्यादि कारक आकांक्षा स्तर को प्रभावित करते हैं।

उद्देश्य:

1. निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर का अध्ययन करना।
2. उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर का अध्ययन करना।

* पीएच.डी. शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** पीएच.डी. पर्यवेक्षक, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

3. निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक का तुलनात्मक अध्ययन करना।

प्राकल्पनाएँ:

1. निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

शोध में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दावली – व्यक्ति द्धारा निर्धारित किया गया वह विशिष्ट लक्ष्य जिसकी प्राप्ति के लिए वह प्रयत्न करता है, आकांक्षा कहलाती है आकांक्षा स्तर वह सीमा है, जिस सीमा तक व्यक्ति अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता है व्यक्ति आकांक्षा के अनुसार उसमें निहित क्षमता के अनुसार उपलब्धि के लिए सतत् प्रयत्नशील रहता है आकांक्षा को निम्नांकित रूप से परिभाषित किया जा सकता है –

न्यू वर्ल्ड डिक्शनरी के अनुसार (1957) पेज 87 – 'आकांक्षा या Aspiration शब्द का अर्थ है महत्त्वाकांक्षा अर्थात् ऊँचे उठने की तीव्र चाह या आंकाक्षा का अर्थ व्यक्ति की उस इच्छा से है जिसकी वह पूर्ति करना चाहता है।'

वेबस्टर शब्दकोष के अनुसार – 'आकांक्षा का अभिप्राय: उत्कण्ठा से है जिसका अर्थ व्यक्ति की आगे बढ़ने की तीव्र अभिलाषा से है उत्कण्ठा व आकांक्षा एक शब्द के पर्यायवाची है जो कि उपयुक्त स्थान पर अलग-अलग रूप में प्रयुक्त किए जाते है।'

ई.बी. हरलॉक के अनुसार –'आकांक्षा से हमारा तात्पर्य किसी उदय, प्रसिद्धि, सम्मान से है आकांक्षा का अर्थ हम जहाँ है वहाँ से ऊँचे स्तर को प्राप्त करने की अच्छा रखने व उसके लिए प्रयास करने से है।'

विधि शास्त्र– प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए शोधार्थी ने अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु सर्वेक्षण विधि का चयन कर न्यादर्श चयन हेतु किशोरावस्था के 360 शारीरिक बाधित विद्यार्थियों में से 27 प्रतिशत उच्च उपलब्धि प्राप्त तथा 27 प्रतिशत निम्न उपलब्धि प्राप्त विद्यार्थियों का चयन किया गया। दत्तों के संकलन हेतु एम.ए.शाह एवं स्व. डॉ. महेश भार्गव आगरा द्धारा निर्मित आकांक्षा स्तर मापनी का प्रयोग किया गया एवं शैक्षिक उपलब्धि के लिए गत वर्ष के वार्षिक परिणामों को लिया गया एवं उपलब्धि परीक्षण का निर्माण को लिया गया। प्राप्त दत्तों के विश्लेषण कार्य के लिए मध्यमान, मानक विचलन एवं टी परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

सारणीयन एवं व्याख्या :-

सारणी संख्या 1 : निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के मध्यमान, मानक विचलन एवं श्रेणी

आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration)	निम्न शैक्षिक उपलब्धि		
	मध्यमान	मानक विचलन	श्रेणी
लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (Goal Discrepancy Score)	0.567	0.868	निम्न
प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक (Attainment Discre pancy Score)	0.639	0.774	अतिनिम्न

ग्राफ संख्या 1 : निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर का मध्यमान

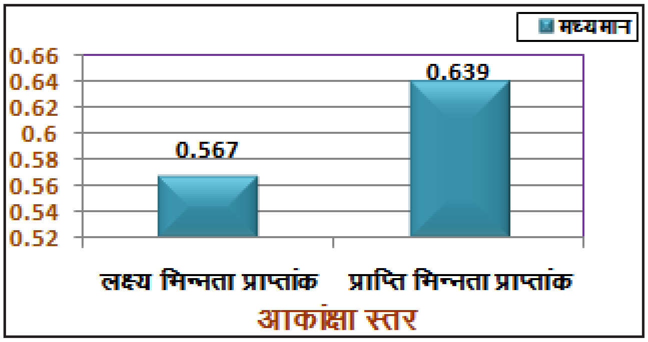

सारणी संख्या 1 एवं ग्राफ संख्या 1 को देखने पर स्पष्ट होता है कि:-

- निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (Goal Discrepancy Score) का मध्यमान 0.567, मानक विचलन 0.868 है जो कि निम्न श्रेणी है। तात्पर्य है कि धनात्मक लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक के आधार पर यह कहा जा सकता है की निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थी निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने में कुछ हद तक सफल हो पाते है।
- निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक (Attainment Discrepancy Score) का मध्यमान 0.639, मानक विचलन 0.774 है जो कि अति निम्न श्रेणी है। तात्पर्य है कि धनात्मक प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक के आधार पर यह कहा जा सकता है की निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों का वास्तविक निष्पादन वांछित निष्पादन की तुलना में अधिक होता है।

सारणी संख्या 2 : उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के मध्यमान, मानक विचलन एवं श्रेणी

आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration)	उच्च शैक्षिक उपलब्धि		
	मध्यमान	मानक विचलन	श्रेणी
लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (Goal Discrepancy Score)	1.478	0.608	सामान्य
प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक (Attainment Discre pancy Score)	-0.277	0.706	अतिनिम्न

ग्राफ संख्या 2 : उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर का मध्यमान

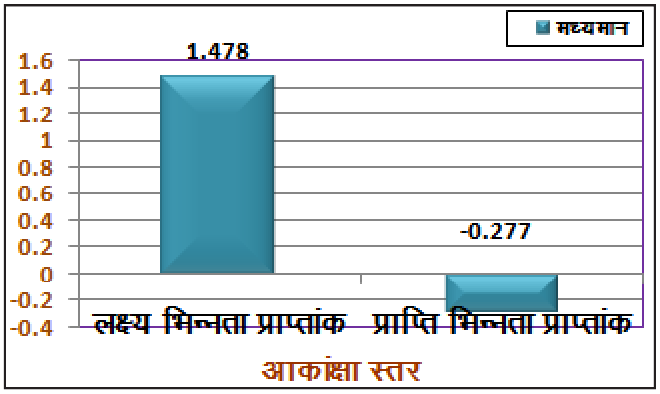

सारणी संख्या 2 एवं ग्राफ संख्या 2 को देखने पर स्पष्ट होता है कि:-

- उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (Goal Discrepancy Score) का मध्यमान 1.478, मानक विचलन 0.608 है जो कि सामान्य श्रेणी है। तात्पर्य है कि धनात्मक लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक के आधार पर यह कहा जा सकता है की उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थी निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने में सामान्यत: सफल हो पाते है।
- जबकि उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक (Attainment Discrepancy Score) का मध्यमान -0.277, मानक विचलन 0.705 है जो कि अति निम्न श्रेणी है। तात्पर्य है कि ऋणात्मक प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक के आधार पर यह कहा जा सकता है की उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों का वास्तविक निष्पादन वांछित निष्पादन की तुलना में कम होता है।

सारणी संख्या 3 : निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक की तुलना

	शारीरिक बाधित विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि	
	निम्न	उच्च
मध्यमान	0.567	1.478
मानक विचलन	0.868	0.608
N	100	100
माध्य अन्तर	0.9110	
''टी'' मान	8.593	
"p" मान	0.000	
सार्थकता	0.01 स्तर पर सार्थक	

ग्राफ संख्या 3 : निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक

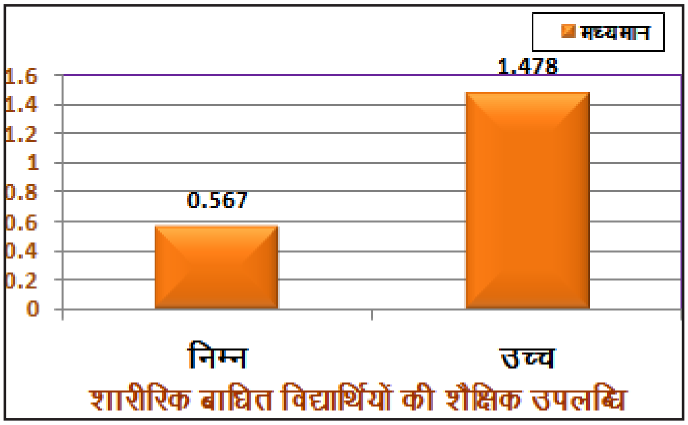

सारणी संख्या 3 एवं ग्राफ संख्या 3 को देखने पर स्पष्ट होता है कि निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (Goal Discrepancy Score) का मध्यमान 0.567 तथा उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (Goal Discrepancy Score) का मध्यमान 1.478 प्राप्त हुआ है।

निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (Goal Discrepancy Score) का माध्य अन्तर 0.911 प्राप्त हुआ तथा 'टी' मान 8.593 प्राप्त हुआ जो की 0.01 स्तर पर सार्थक है (सारणी मान df = 198, 0.05 स्तर पर 3.34 एवं 0.01 स्तर पर 3.79) तात्पर्य है कि निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (Goal Discrepancy Score) के मध्यमान प्राप्तांकों में सार्थक अंतर है।

मध्यमान प्राप्तांकों को देखने पर स्पष्ट होता है कि निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (Goal Discrepancy Score) उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों की तुलना में कम होता है।

सारणी संख्या 4 : निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक की तुलना

	शारीरिक बाधित विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि	
	निम्न	उच्च
मध्यमान	0.639	-0.277
मानक विचलन	0.775	0.705
N	100	100
माध्य अन्तर	0.916	
''टी'' मान	8.744	
"p" मान	0.000	
सार्थकता	0.01 स्तर पर सार्थक	

ग्राफ संख्या 4 : निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक

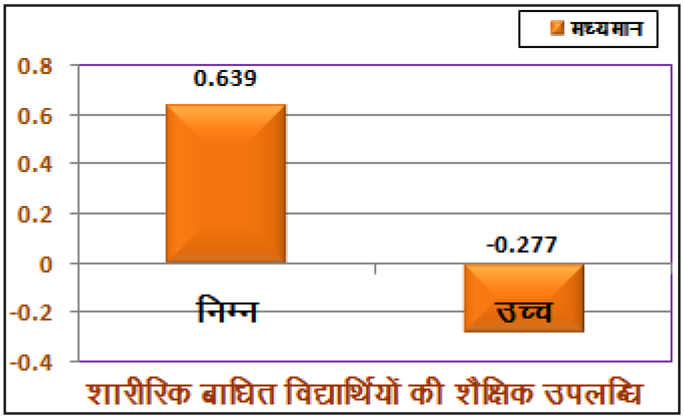

सारणी संख्या 4 एवं ग्राफ संख्या 4 को देखने पर स्पष्ट होता है कि निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक (Attainment Discrepancy Score) का मध्यमान 0.639 तथा उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक (Attainment Discrepancy Score) का मध्यमान -0.277 प्राप्त हुआ है।

निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक (Attainment Discrepancy Score) का माध्य अन्तर 0.916 प्राप्त हुआ तथा 'टी' मान 8.744 प्राप्त हुआ जो की 0.01 स्तर पर सार्थक है (सारणी मान df = 198, 0.05 स्तर पर 3.34 एवं 0.01 स्तर पर 3.79) तात्पर्य है कि निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के

आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक (Attainment Discrepancy Score) के मध्यमान प्राप्तांकों में सार्थक अंतर है।

मध्यमान प्राप्तांकों को देखने पर स्पष्ट होता है कि निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration) के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक (Attainment Discrepancy Score) उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों की तुलना में अधिक होता है।

निष्कर्ष:

1. निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थी निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने में कुछ हद तक सफल हो पाते है।
2. उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थी निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने में सामान्यत: सफल हो पाते है।
3. निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों का वास्तविक निष्पादन वांछित निष्पादन की तुलना में अधिक होता है।
4. उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों का वास्तविक निष्पादन वांछित निष्पादन की तुलना में कम होता है।
5. निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक के मध्यमान प्राप्तांकों में सार्थक अंतर है। निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों की तुलना में कम होता है। अर्थात् उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले विद्यार्थियों की तुलना में अधिक इसलिए होता हैं कि उच्च उपलब्धि वाले बालक परीक्षा परिणाम की प्राप्ति के बाद अगली परीक्षा प्राप्तांकों का लक्ष्य अधिक रखता है। जबकि निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले विद्यार्थी अपने आकांक्षा स्तर में अधिक परिवर्तन नहीं करते हैं।
6. निम्न एवं उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक के मध्यमान प्राप्तांकों में सार्थक अंतर है।
7. निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर के प्राप्ति भिन्नता प्राप्तांक उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले शारीरिक बाधित विद्यार्थियों की तुलना में अधिक होता है। इससे स्पष्ट होता हैं कि उच्च उपलब्धि वाले विद्यार्थियों का आकांक्षा स्तर वास्तविक प्राप्तांकों के स्तर की तुलना में कम होता है। जबकि निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले विद्यार्थियों का आकांक्षा स्तर वास्तविक प्राप्तांकों से अधिक होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आनन्द, डॉ. स्नेह (1999) 'शारीरिक बाधित बालक एक अध्ययन' राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर।
2. आरोग्य सेरेश फाखरी (2004) शारीरिक बाधितों को आगे बढ़ने का अवसर किया जाए।
3. भार्गव, डॉ. महेश; शाह, डॉ. एम.ए. (2006), आकांक्षा स्तर मापनी, नेशनल साइकॉलोजी कॉर्पोरेशन, आगरा
4. सिंह, डॉ. रामपाल; शर्मा, डॉ. ओ.पी. (2008) : 'शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
5. माथुर, डॉ. एच.एस. (2002) : 'शिक्षा मनोविज्ञान', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
6. डॉ. स्नेह आनन्द (1999) शारीरिक बाधित बालक एक अध्ययन राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर।
7. Conger John Hanemay (1977), Adolescence and Youth Psychological Development in a Changing World, New York : Harper and Row.
8. श्रीवास्तव डॉ. डी. एन. (2000) : 'अनुसंधान विधियाँ', साहित्य प्रकाशन, आगरा।
9. Tale, M. W. (1967) : "Statistics in Education and Psychology", P. 205.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Fashion Markets and Consumer Impulse Purchase Behavior : An Empirical Study

Dr. Abhishek Raizada*

Abstract - A major area of consumer behavior research is impulse purchase behavior. The definition of impulsive purchasing is still unclear even though there have been a lot of works done in this area. This article aims to highlight the classification of impulsive purchase behavior and discuss ways to influence the emotion of customers on products and further influence the behavior of customers through promotion choices.
Key Words- Customer Emotional Value, Fashion Attributes, Objective Attributes, Impulsive Purchase Behavior, Fashion Attributes.

Introduction - Buying impulsively has become more popular in our fast-paced society due to fashion consumption being everywhere. There are many similarities between impulsive purchasing and fashion. Despite the ease with which fashion can trigger consumers' emotional consumption behavior and impulsive purchase behavior, fashion is an easy way to induce consumer behavior that favors impulsive purchases. Historically, consumers who use fashion are impulsive buyers, as those products that are easiest for them to impulsively purchase are relatively more fashion products. Consumers' impulsive purchase behavior is influenced by the elements and effects of fashion. From three angles, this paper examines: firstly, which features of fashion products are able to evoke emotional identification in consumers in comparison with the objective attributes of products? Second, which fashion components are more likely than objective attributes to provoke impulsive purchase behavior among consumers? A third question is: to what extent do the subjective attributes of fashion products affect the internal transmission process of a consumer's impulse purchase?

Literature Review

It consists of purchases made without a plan in advance or in advance of purchase intention, but in response to emotional issues triggered by specific situations, resulting in purchases made immediately (Muruganantham&Bhakat 2013). The products that are associated with impulsive buying behavior have been studied extensively by Sherhorn, Reisch, and Raab (1990). In some types of products, consumers' impulsive purchase occurs because they are impulse purchase products, whereas, for older products, new products are more likely to provoke impulsive buys. Clothing consumers, jewelry consumers, and cosmetics purchasers have a tendency to impulsively purchase products. Based on similar emotional factors, fashion has an important influence on the impulsive purchase behavior of consumers as a psychological and spiritual feeling (Tremblay 2005). According to Park, Kim, and Forney (2006) fashion intervention and positive emotion also positively affect fashion-focused impulsive purchase behavior, which usually occurs among fashion innovators. They have characteristics such as excite-ness, indulgence, avant-garde, liberality, and distinctive personalities. Many elements of fashion are reflected in fashion products. Fashion products are most often characterized by novelty and aesthetic feeling (Liao 2019). The objective attributes of products selected for this study are the quality and function of products as the elements representing fashion attributes. According to subjective cognition, customer perceived value is what consumers perceive the value to be. Customers' consumption value is not just functional, but also emotional, social, and other. Sheth, Newman, and Gross (1991) noted that customer consumption value is not just functional, but also emotional, social, and other. An important element of customer perceived value is customer emotional value. According to Barbin, Darden, and Griffin (1994), consumers' shopping pursuit can be understood by looking at the value of practicality and hedonism. Effective and efficient methods are essential to the use of a product if it is to provide practical value. The subjective aspect of hedonic value differs from practical value because it is derived primarily from the satisfaction and enjoyment received from the process rather than the completion of tasks.

Research Model and Hypotheses - The fashion attributes of products and customers' emotional value and impulsive purchase behavior.

It is because fashion offers novelty and change that people have never experienced before that they pursue fashion, according to Veblen (1999). Having a personality and expressing themselves is what people strive for. According to Stroles (1974), fashion products are accepted

*Dean, School of Management, Baddi University of Emerging Science and Technology (H.P.) INDIA

not just for their functional value, but also because the products enhance style, beauty, social recognition, self-confidence, social status, and other social and psychological characteristics. The introduction of novelty plays a critical role in introducing self[1]inflammatory hedonism. This represents a way to seek pleasure. This method relies more on the emotion of the stimulus and its hidden desire and focuses on the fictional stimuli (Bauer et al., 1999). As a result of the imaginary artistic conception of individual thinking, the incentive to provide pleasure is derived from an emotional perspective. In this approach, people are increasingly seeking novelty, so they do not find comfort in familiar things. Greed and the dream are considered to be realized in those things that have not been experienced. Many marketing activities indirectly reveal the hidden reality to consumers and encourages them to purchase. New fashions showed novel characteristics when they were first introduced. They were advanced and unique compared to popular and accepted products. Due to the high level of attractiveness of new and beautiful fashion products, they are willing to pay a higher price (O'Shaughnessy & O'Shaughnessy 2002). Hence, the following hypothesis is made in this paper:

H_o: A positive impact on the emotional value of customers is provided by the attributes of fashion, namely novelty and aesthetic feeling.

H_1: As a result, fashion attributes are positively associated with customers' impulsive purchases, such as novelty and aesthetic appeal.

Objective attributes of products and customers' emotional value and impulsive purchase behavior

To give consumers the best selection of fashion products, Forney, Park and Brandon (2005) believe style, color, and design are not the only criteria for buying products. Aesthetics, quality, and price are also considered when deciding to buy products for fashion. Using the function and quality of products, one can obtain the emotional value of the customer by experience, that is, experience value, based on the objective qualities of products. Hence, the following hypothesis is made in this paper:

H_3: It is objective that customer emotional value of products is positively affected by product qualities and functions.

H_4: Item quality and function, objective characteristics of a product, are a favorable influence on the behavior of customers who make impulse purchases.

Customer emotional value and impulsive purchase behavior

As an entity of consciousness, emotions can be created by different environments and needs that produce different inner changes. Models or unified standards are unable to describe the type of consumer behavior generated by emotion. Economics from a rational point of view differs a little from this. It is also real that emotional factors affect a customer's decision to purchase (Tsai et al., 2015). Hence, the following hypothesis is made in this paper:

H_5: In the case of customers with emotional value, impulsive purchases are positively influenced.

Research Methodology - Design of questionnaires. Amos is used to analyze the structural equation models in this paper. Data analysis is done with SPSS software, and modelling is done with Amos. As part of the questionnaire design, six latent variables are observed: novelty, aesthetic feeling, quality, function, customer emotional value, and impulsive purchasing behavior. Rook and Fisher (1995) measured purchase behavior as an indicator of emotional acquisition, while Sweetney and Soutar (2001) measured customer emotional value as an indicator of customer perceptions. There are four parts to the questionnaire. As a first step, we consider the factors that affect the customer base. This part examines the fashion and the objective features of the product. A customer's emotional value is the second part of the scale. This third part measures impulsive purchasing behavior. Part four contains basic information. A Likert scale was used for both the second part of the scale and the third part.

Information gathering. A particular area of college students is the sample for this survey. A valid survey was conducted among college students in a certain area to understand their attitudes toward the purchase of new electronic products, namely smartphones. A reliable sample is one that produces consistent and stable results, i.e., it is reliable. In terms of reliability, Cronbach's * coefficient is currently the most commonly used standard. A Cronbach's coefficient higher than 0.7 indicates high reliability; a value below 0.35 indicates low reliability. The * value is reduced from 0.8 to 0.6 in this limited exploration. The Cronbach's correlation coefficients are shown in Table 1. According to the comparison, all of the scales meet the standards, and all of them are highly reliable.

Table1.Reliability and validity test results of the scale

Primary latent variable	Secondary latent variable	Cronbach'sá	Load factor	AVE
Fashion attribute	Novel	0.810	0.78	0.83
	Aesthetic feeling	0.760	0.69	0.76
Objective attribute	Quality	0.743	0.90	0.85
	Function	0.698	0.86	0.74
Customer emotional value		0.719	0.66	0.58
		0.805	0.73	0.82
Total scale		0.723		

An evaluation tool has validity when it can measure the measures the Research Institute will use with accuracy. Logic is a criterion for evaluating content validity, and average variance extracted (AVE) is a measure of structural validity. Table 2 provides test results indicating the level of model fit in general. The X2 observation index is commonly used to check whether a theory is applicable to a sample. However, the sample size has a large influence on the performance of the index. Standardization is done based

on the Chi-Square percentile ratio to the degree of freedom, and supplementary verification is done by NFI, CFI, and other indicators. Chi-square values in the range 3 to 5 are acceptable, although those less than 3 are considered unacceptable. The Chi-Square statistic is limited to 5 because there are too few samples in this study. Confirmatory factor analysis (CFA) was performed on each variable. This revealed that each factor had convergence validity; all measured items showed no cross-distribution, and they were basically included in the factors represented by each potential variable, which shows that the scale in the questionnaire has high discriminatory validity.

Table2: Model fitting index

Index name		**Result**	**Evaluate**
Absolute fitting index	CMINDF	2.64	Good
	RMSEA	0.048	Excellent
Relative fitting index	NFI	0.918	Good
	TLI	0.884	Fair
CFI	0.910	Good	

Results and Discussion

Conclusion: The research represents the verification of five hypotheses. Only the emotional value and impulsive purchase behaviors of customers are positively affected by the quality of products, though all other hypotheses are supported.

Results analysis: As a result of the analysis of the resulting equation models, we found that (1) the market attributes of a product have a positive influence on the customer's emotional value. It appears, however, that the value of a product's objective characteristics is only partially correlated with its emotional quality, and the health impact of quality is not statistically significant. There may be a reason for this, as consumer electronic products are becoming increasingly similar in quality, and the differences are not large enough to make the difference noticeable. (2) Fashion attributes and functional attributes have a positive impact on impulsive purchases when they are considered objective attributes. On the other hand, findings indicate that there is no significant difference between the two groups regarding impulsive purchasing behavior. Perhaps it is because fashion has become more and more popular, and functional fashion has become more and more popular. (3) Customer emotional value plays a significant role in controlling customer impulsive purchase behavior. That is, customer emotional value has a positive influence on customer impulsive purchase behavior.

A behavior of intense consumption is a specialized and unique purchase pattern that reflects the needs, desires, material, and spiritual interests of consumers. (Muruganantham&Bhakat, 2013) Behavior has more components than one might imagine. Accordingly, it is a topic of research that has theoretical and practical value in that it deals with how driving factors like fashion and emotion affect consumers' purchasing decisions. Sociology has a concept called fashion. The systematic research of marketing at home and abroad is somewhat lacking despite a large number of companies adding fashion elements to their products. This study hopes to be able to provide academics and enterprise practitioners some important theoretical background and research basis with the study of how fashion elements affect how customers feel about ownership and their impulsive consumption behavior.

In practical application, rapid changes in lifestyle and serious homogenization of products have contributed to impulsive purchases dominating consumer purchase behaviors. Consumers' impulsive purchase behavior can be affected by fashion attributes and objective characteristics as shown by the research. It is therefore through the perception and experience of products that the consumer decides to buy. Marketers need to comprehend and master the current development trend of fashion. It can induce customers' feelings about products and further affect their purchasing behavior by improving the fashion image and providing diversified functions. In the selection of promotion methods, marketing practitioners should try our best to create visual impact on consumers through the placement of products, so as to attract consumers, and through the on-site consumer experience, let consumers have zero distance contact with products, feel the fashion and function of products, and make them more inclined to purchase on site.

Limitations - In empirical research, there are certain limitations caused by a lack of resources and time. In the first place, the sample selected is only restricted to students at a certain college in a certain region. Because of this, the research conclusion can only be applied to smartphones. Future research can expand the samples and types of samples utilized in this study, as well as examine a wider assortment of consumer types and more products to see if the conclusions drawn in this study can be evaluated in a larger group of consumers and with a wider array of products. As a second disadvantage, this study solely considers fashion elements and the emotional value of the customer, without considering their cultural values. Research and improvements are still required to determine whether the results are suitable for explaining consumers' impulsive purchase behavior.

References :-

1. Kotler, P. and Keller, K.l. (2008), Marketing Management, 12th revised ed
2. Moller, K. and Anttila, M. (1987), "Marketing capability – a key success factor in small business?" Journal of Marketing Management, Vol. 3
3. Bhattacharyya, Dipak Kumar,(2004). Research Methodology. New Delhi. Excel Books.
4. Pa.Navanitham. (2013). Business Mathematics and Statistics. Trichy, Jai Publishers.
5. Bauman, K. E. Research Methods for Community Health and Welfare: An Introduction. NewYork, Oxford University Press, 2001.
6. DuBrin, A. J. Foundations of Organizational Behavior: An Applied Perspective. Englewood Cliffs, N. J., Prentic-Hall, 2014.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Solid Waste Management: Sources, Composition and Recycling

Dr. Pushpanjali Arya*

Abstract - Solid waste is any material which is produced as a by-product in the normal and fundamental activities of living which has no economic value, or is not useful to its owner, the owner being the waste generator. The human activities have resulted in large amount of solid wastes into the nature. Solid waste management is the major problem of our country. Present system in India cannot cope with the volumes of waste generated by an increasing population and this has significant impact on environment and public health. This paper offers knowledge about the various types of solid waste and attempts to study the vital role played by the man in solid waste management. This paper is based on secondary data.

Introduction - Man has always been an important part of environment. Since the early times man has produced and consumed the resources available to them. In both there is a waste or residue which when discarded ,disposed or emitted into the nature causes harmful effects on man and environment .In the initial stages of growth man left behind very few things which were not readily broken down and assimilated by environment. These things being few in number had no significant impact on the environment .So no one cared about the waste that was generated by the use of these resource .But the increasing pace of progress, urbanization, industrialization and growing human population resulted in rapid exploitation of resources , generating and releasing enormous quantities of wastes into the environment. The environmental conditions are constantly changing and the nuisance caused by the generated waste cannot be over looked as they are highly dangerous. This change is not for good. Man himself is responsible for the incredible harm dealt to the environment in the last 100 years. It is now realized that if waste generation continues indiscriminately than very soon it would be beyond rectification when some of the changes are irreversible.

Solid Waste Source of Generation:

Municipal wastes- Municipal wastes consist of household garbage, trash, sludge, wastes from streets and construction wastes. The amount of municipal waste has been rapidly increasing with rising urbanization and growing population. Growth of consumer markets involving packaging of items in cans, aluminum foils, plastics etc. have also increased municipal waste.

Bio- medical wastes- Diagnosis, treatment, immunization of human beings and animals or research activities produce bio- medical wastes. Discarded medicines disposable syringes, slabs, bandages, body fluids etc. are included in the bio-medical wastes.

Hazardous wastes-Any substance which when discarded creates danger to human health is referred to as hazardous waste .The waste is toxic in nature and effects human beings, flora , fauna and environment. The Hazardous wastes are; mercury, arsenic, thallium, calcium, bearing wastes, wastes from plants, pigments, glue, dyes, waste oil and oil emulsion, tarry wastes from refining tar, residues, toxic organics, phenols, asbestos, wastes from manufacturing of pesticides and herbicides, acids, alkaline etc.

Industrial wastes-Industrial wastes are those which arise from industrial activities and typically include rubbish, ashes, construction and demolition wastes special wastes and toxic substances. Large volume of industrial discharges adds to the growing load of untreated solid wastes.

Plastic wastes-Today plastic has been become an important item in our daily lives. Plastic are used to manufacture every day products such as beverage container, household items and furniture. Plastic is growing segment of the municipal solid waste. Plastic include- soft drink bottles, shampoo bottles, appliances, non degradable wastes- diapers, trash bags, cups etc.

Animals wastes-These include slaughter house wastes, animal carcasses, fishery wastes, leather and wool wastes etc.

Man and Solid Waste Management: Today we have accepted the close interrelationship between man and environment. We have realized that for every action there is an equal and opposite reaction if man affects the nature adversely then the nature in its own turn affects the very existence of mankind, plants and animals. Here the question is not "how to minimize solid wastes" but also "How to dispose solid wastes" The chaos has been created by the human actions so it is the sole responsibility of human to ensure the solution to the problem of solid wastes. The

*Associate Professor (Economics) G.P.G. College Kotdwar, Garhwal (Uttrakhand) INDIA

problem of solid waste has become so acute that even the dilution methods of solid wastes will not work. Man as a member of the society should follow some principals and values so as to ensure that proper management of the solid waste.

Human activities can play a major role in minimizing solid wastes and in fostering the disposal of solid waste. Following are certain possible things humans can do to ensure the proper management and disposal of solid wastes;

1. Reduce necessary consumption.
2. Before discharging a product as solid wastes one should confirm that it has no reuse.
3. Dispose wastes carefully and in an appropriate place.
4. Recycle wastes especially bio degradable ones like the kitchen wastes, for example- You can make a compost pit in your backyard.
5. Report any problem to the relevant authorities.
6. Start education centre to create awareness among the people about the harmful effects of solid waste and safer disposal of solid wastes.
7. To use garbage cleaning devices.
8. To set up biogas plants to use the cow dung.
9. To organize rallies/march about various environment issues.

Government and Non-Government Organisations in Solid Waste Management: The role played by the government includes:

1. Framing proper policies for solid waste management.
2. Implement laws for solid wastes management.
3. Collect useful data and information about the solid wastes condition of a place. This will help to identify the areas which have highest solid wastes.
4. Government should encourage the non government organizations and involve them in the wastes management and disposal process.
5. Investment in research and development to develop technologies which are eco-friendly.
6. The new rules allow the municipalities to levy user free for waste management and make individuals responsible for disposal of the garbage.
7. Producer responsibility has been introduced to separate waste in to three streams. Wet (Bio degradable), Dry (plastic, paper, metal etc), Domestic hazardous waste (diapers, napkins, empty containers, etc) and handover the segregate waste to authorized waste collectors or local bodies.

Techniques of Solid Waste Management: The treatment and disposal of solid waste has become very important in order to minimize the adverse effects of solid waste. Collection, transportation and final disposal of large amount of solid waste require a high level of management and technical expertise. The final disposal of solid wastes can be carried out by several methods which include:

Open dump: Uncovered area used to dump solid waste of all kinds. Waste remains untreated, uncovered and not segregated. Not an healthy method as the area becomes ground for flies, rats, and spreads diseases. Treatment by open dumps is to be phased out.

Landfills: Located in urban areas it is a pit dug in the ground. The garbage is dumped in the pit and is covered with soil. In this way garbage is dumped and sealed every day. After the landfill is full the area is covered with a thin layer of mud. This types of waste disposal method also creates contamination of water and surrounding area, it results in leaching.

Sanitary landfills: It is more hygienic methods of waste disposal. The landfill is built in a methodical manner to solve the problem of leaching. Lined with materials that are impermeable such as plastics and clay and are built over impermeable soil. More expensive method of solid waste disposal.

Composting -Due to shortage of space for landfills is bigger cities, the bio-degradable waste is allowed to degrade or decompose in an oxygen rich medium. Presence of oxygen leads to organic waste being converted in to CO2 and compost. This method recycles the nutrients and returns them back in to the soil as nutrients. It is clean, cheap and safe. It more over reduces the amount of disposable garbage.

The concept of four -R's:

Reduce:

1. Reduction in used raw materials.
2. Reduce demand for consumption.
3. Reduce demand for metallic product.

Reuse:

1. Discarded terms after use can be reused.
2. Villagers make silos from waste paper and other waste materials.

Recycle:

1. Recycling is the reprocessing of discarded materials into new useful products.

Refuse:

1. Refuse to buy new items. Instead use the ones that are already available with you.

Conclusions and Suggestions:

1. Solid wastes are being produced by both sides-the production side and consumption side. So measures should be adopted by both sides for its minimum creation and safer disposal.
2. What is being produced is being consumed so the major source of solid waste generation is production rather than consumption.
3. Man has to initiate the measures of solid waste management on war footing.
4. Methods of solid wastes management are unscientific like burning or incineration adopted to dispose hazardous wastes results in emission of toxic fumes in the environment.
5. Disposal of hazardous wastes in water bodies of municipal clumps leads to leaching of toxic substance in land and water.

6. The workers employed in unscientific hazardous wastes management are found to suffer from ailments and infections.
7. There is a dire need for systematic management of solid wastes adopting practices like prevention, minimization, reuse, recycle, recovery .Utilization and safe disposal of wastes.
8. The problem of solid waste can be minimized but not eliminated, so scientific techniques for solid waste management should be devised.

References :-

1. Deswal, S and Deswal, A, (2005)-"A Basic Course in Environmental Studies" Dhanpat Rai and Company. New Delhi
2. Deswal, S.S. and Deswal, A, (2003) -"Environment Engineering" D Dhanpat Rai and Company.NewDelhi
3. Kumar, Satish, Dr. Deepshikha,(2013-2014)" Environment Science", BBB Publication Pvt.Ltd. (Meerut)-Page no-133,134,135,138,139
4. Rai,A.N.(2007)",Environment Education", Goyal Brothers Prakashan, New Delhi
5. Sharma, Archana (2017),"Environment: Ecology, Climate Change, Global Warming, Biodiversity and Conservation," Unique Publisher (I) PVT. LTD. New Delhi- Page no.59, 60, 61.

****

A Study of Payment Banks' Contributions to Financial Inclusion

Dr. Mukesh Chauhan*

Abstract - The Indian banking sector has been set apart by an exponential development in volume and complexity over the past decade. However, it remains an unpleasant reality that genuinely necessary essential monetary administrations have not permeated to underprivileged what's more, more fragile areas, regardless of accomplishing sizeable advances in terms of financial viability, profitability and competitiveness. In this paper, financial inclusion and its challenges are explored in-depth, along with the solution for the same being payment banks and how they've helped in improving financial inclusion, introduced by the RBI in 2014. This paper also explores the scope, benefits and changes implemented upon the introduction of payment banks, and the current scenario of financial exclusion in our country.
Keywords- Payment banks, RBI, Financial Inclusion, Differentiated bank.

Introduction - An integrated and well developed money market organization is necessary not only for an effective monetary policy in any country but also for improving the operational efficiency of the banking system and modernizing its working in the context of long-term objectives of the overall development of the country. It is through the Money Market that the Reserve Bank of India comes into contact with the financial sectors of the economy and it is through varying the liquidity in the market and thereby influencing the cost and availability of credit that the bank achieves its economic objectives. The dichotomy in the Indian Money Market is a typical feature of the underdeveloped countries.

As in most developing countries, the Money Market in India also comprises two distinct sectors:

1. The Organized Sector;
2. The Unorganized Sector.

The Organized Sector consists of the Reserve Bank of India, the nationalized banks and other joint stock banks, Indian and foreign. A few years back, certain Quasi-Government bodies like the Life Insurance Corporation of India, the Unit Trust, Finance Corporation, etc., and large-sized joint stock companies also used to participate in the operations of the Money Market as lenders, the money lent by them usually termed as 'House Money'.

The Unorganized Sector, on the other hand, is concerned with money lenders and Non Banking Financial Corporations. As a result of this dichotomous character of the Money Market, the banking habits of the people are relatively less developed and the use of banking services tend to be confined to the large commercial centers.[1]

The Organized Banking System is broadly classified into two categories:

1. Scheduled Commercial Banks, and
2. Non Scheduled Commercial Banks.

The Reserve Bank of India, the supreme monetary and banking authority in the country, keeps the reserves of all commercial banks and hence is known as the 'Reserve Bank'. Commercial banks mobilize savings in the urban areas and make them available to large and small industrial and trading units mainly for working requirements. Banks combine payment services and lending. The reason they combine the two is economies of scope. An institution that offers one of the two services is soon tempted by complementarities to offer the other. As a result, banks have evolved both from institutions that began with payments and from those that began with lending. Scheduled Banks in India constitute those banks which have been included in the Second Schedule of Reserve Bank of India (RBI) Act, 1934.

The main obstacle of commercial banks is to manage liquidity or risk. The commercial banks can manage liquidity by improving the stability of funding, reducing the reliance on liability management, and managing market risk. Stability of funding relies on the Funding Gap. In order to fill the funding gap and achieve the objective of financial inclusion, to provide banking facilities to unbanked semi-urban and rural areas, the concept of Payment Bank has been introduced in India.

There are two kinds of banking licences that are granted by the Reserve Bank of India – Universal Bank Licence and Differentiated Bank Licence. Differentiated Banks (niche banks) are banks that serve the needs of a certain demographic segment of the population. **Small**

*Assistant Professor, Hada Rani Govt. College, Salumber, Udaipur (Raj.) INDIA

Finance Banks and **Payment Banks** are examples of differentiated banks in India. **Custodian Banks** and **Wholesale and Long-Term Finance banks (WLTF)** are newly proposed differentiated banks.

Differentiated banks are distinct from Universal Banks (Eg: Commercial Banks like SBI, HDFC, ICICI etc) as they are infused as niche segments. Niche banks typically target a specific market and tailor the bank's operations to this target market's preferences. The differentiation could be on account of capital requirement, the scope of activities or area of operations. As such, they offer a limited range of services/products or function under a different regulatory dispensation.[2]

Objectives of the Study:

1. To study the role of Payment Bank (PB).
2. To evaluate the concept of Payment Bank (PB) in achieving the objective of Financial Inclusion.

Research Methodology: The present study explores the said subject using a qualitative research approach. This research paper is purely based on the secondary sources of the data collected from books, journals, research article, and websites.

History of Payment Banks: RBI on 23rd September 2013 constituted a committee on Comprehensive Financial Services for Small businesses and Low-Income Households that was headed by Nachiket Mor. The committee submitted its report on 7th January 2014 and also recommended the formation of a new category (Payment Banks) among its other recommendations.

Draft guidelines for the license of Payment Banks and their list were released by RBI in February 2015. The license applications were evaluated by External Advisory Committee headed by NachiketMor who submitted its report on 6th July 2015 after examining the financial track record as well as governance issue on applicant entities.

On 19th August 2015, RBI gave the in-principle license to 11 entities to launch Payment Banks. The In-Principle License is valid for a period of 18 months and the concerned entities are required to fulfil entities are required to fulfil all the requirements within this period. They are not allowed to engage in banking activities in this period. After the fulfilment of all the conditions which are required to set up a Payment Bank, RBI will grant licenses under S. 22 of the BR Act, 1949.

Payment Banks ("PB") are to be registered as public limited companies under the Companies Act, 2013 and are to be licensed under Sec 22 of the Banking Regulation Act, 1949. PBs are to be given the status of scheduled banks under the section 42 (6) (a) of the Reserve Bank of India Act, 1934. However, the words "Payments Bank" have to be used by the companies in their name in order to differentiate it from other banks.

They will be governed by the provisions of the Banking Regulation Act, 1949; Reserve Bank of India Act, 1934; Foreign Exchange Management Act, 1999; Payment and Settlement Systems Act, 2007; Deposit Insurance and Credit Guarantee Corporation Act, 1961; and other relevant Statutes and directives. The guidelines will be reviewed by the RBI regularly. RBI's main aim to push for payments bank is to serve the need of different banking activities in the rural areas. This has both micro and macroeconomic benefits and serves the general public at large.

The advantage of Payment Banks over Traditional Banks: Interest Rates: The interest rate for a commercial bank is between 3.5 and 6 per cent. Payment banks are offering a really good deal in the case of interest rate with the highest being a 7.25%. Payment banks have a statutory limit of Rs. 1Lakh per account from individuals and small businesses.

Zero balance account: Payment banks offer a zero balance account or a no minimum balance account without any extra or hidden charge, unlike a commercial bank who levy charges if the customer doesn't hold a minimum balance in their account.[3]

Guidelines for Licensing: Let us now analyse the guidelines for licensing of PBs issued by the RBI to govern the PBs.

The scope of Activities: Acceptance of demand deposits: A maximum balance of Rs. 1Lakh per customer is allowed.Issuance of ATM/debit cards.They cannot issue credit cards.Payments and remittance services through various channels.

PBs can act as Business Correspondents ("BCs") of another bank, subject to the Reserve Bank guidelines on BCs.Distribution of non-risk sharing simple financial products like mutual fund units and insurance products, etc.

Internet Banking: RBI is open to PBs offering Internet Banking services, they are required to comply with RBI instructions on internet banking and all the other related guidelines.PBs can undertake utility bill payments etc. on behalf of its customers and the general public.

Deployment of Funds: PBs cannot undertake lending activities.Apart from amounts maintained as Cash Reserve Ratio (CRR) with the RBI on its outside demand and time liabilities. PBs are also required to invest minimum 75 per cent of its "demand deposit balances" in Statutory Liquidity Ratio (SLR) eligible Government securities/treasury bills with maturity up to one year and hold maximum 25 per cent in current and time/fixed deposits with other scheduled commercial banks for operational purposes and liquidity management.

Capital requirement: The minimum paid-up equity capital for payments banks shall be Rs. 100 crore.The payments bank will have a leverage ratio of not less than 3% which basically mean that its outside liabilities should not exceed 33.33 times its net worth (paid-up capital and reserves).

Promoter's contribution: The promoter's minimum initial contribution to the paid-up equity capital of the payment bank has to be at least 40% for the first five years after the commencement of business.

Foreign shareholding: It will be according to the FDI Policy

for private sector banks which is notified from time to time. The permitted limit right now is 74% out of which 49% can be through the automatic route and the remaining 25% beyond 49% will be through the government route.

Other Conditions: Operations have to be technology and network driven from Day I. Conforming to generally acceptable standards is a given.PBs should have a Customer Grievances Cell which is able to handle the customer complaints.

Procedure for Application: Applications should be in conformity with Rule 11 of the BR (Companies) Rules, 1949. They should be in the format as given in Form III and should be submitted to the Chief General Manager, Department of Banking Regulation, Reserve Bank of India, 13th Floor, Central Office Building, Mumbai – 400 001.

Procedure for RBI Decisions: An External Advisory Committee (EAC) which will consist of eminent professionals like bankers, chartered accountants, finance professionals, etc., will evaluate the applications.The decision to issue an in-principle approval for setting up a PB will be taken by the RBI. The RBI's decision in this regard will be final.The validity of the in-principle approval issued by the RBI will be 18 months.The names of applicants for bank licences will be placed on the RBI's website.

Stringent KYC Norms: The RBI has updated the Operating Guidelines for PBs with respect to KYC in the wake of Airtel Payments Bank rerouting of subsidies by creating Payments Bank accounts for subscribers validating mobile phone numbers.

The updated guidelines stand as follows:

1. "For the purpose of verifying the identity of customers at the time of commencement of an account-based relationship, Regulated Entities ("RE"), shall at their option, rely on customer due diligence done by a third party, subject to the following conditions:
2. Necessary information on such customers' due diligence carried out by the third party is immediately obtained by REs.
3. Adequate steps are taken by REs to satisfy themselves that copies of identification data and other relevant documentation relating to the customer due diligence requirements shall be made available from the third party upon request without delay.
4. The third party is regulated, supervised or monitored for, and has measures in place for, compliance with customer due diligence and record-keeping requirements in line with the requirements and obligations under the PML Act.
5. The third party shall not be based in a country or jurisdiction assessed as high risk.
6. The ultimate responsibility for customer due diligence and undertaking enhanced due diligence measures, as applicable, will be with the RE."
7. This is Section 14 of the Master Directions on KYC from Feb 25, 2016, by RBI which will now be used to regulate the PBs.
8. The previous operating guidelines for PBs allowed them to utilise the same KYC details as "of the same quality as prescribed for a banking company." However, the PBs have to follow the RBI Master Direction of KYC, and any amendments made to the same. This update has been mainly done to prevent the piggybacking that was seen in the case of Airtel Payments Bank accounts being opened with no discretion given to the customer. This was done by interpreting the previous guidelines that allowed the reuse of the authentication done by telecom companies by the associated Payments Bank with an intention to simplify account opening.[4]

List of Payment Banks in India:

1. Aditya Birla Nuvo
2. Airtel M Commerce Services
3. Cholamandalam Distribution Services
4. Department of Posts
5. FINO PayTech
6. National Securities Depository
7. Reliance Industries
8. Sun Pharmaceuticals
9. Paytm
10. Tech Mahindra
11. Vodafone M-Pesa
12. India Post (Starts operation by 21 Aug)

*Cholamandalam Distribution Services, Sun Pharmaceuticals and Tech Mahindra have surrendered their licenses.

Conclusion: The primary objective of setting up payments banks was to "further financial inclusion by providing small savings accounts and payments/remittance services to migrant labour workforce, low-income households, small businesses, other unorganized sector entities and other users, by enabling high volume-low value transactions in deposits and payments/remittance services in a secured technology-driven environment."

Payment banks, which were supposed to be the next big thing, sadly have not lived up to the hype so far. The jury is still out on whether the PBs will ever succeed in the country, but one thing is clear: it won't be easy for them to survive.

References:-

1. Khanna, P (2005) "Advanced Study in Money and Banking: Theory and Policy Relevance in the Indian Economy", Atlantic Publishers and Distributors, New Delhi, ISBN 81-269-0462-3, pp 347-55.
2. https://blog.ipleaders.in/what-is-payment-bank/.
3. https://www.civilsdaily.com/story/differentiated-banks/.
4. https://www.clearias.com/differentiated-banks-small-finance-banks-payment-banks/.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

महिला कर्मियों के संवैधानिक तथा कानूनी अधिकार

डॉ. किरण चौहान *

शोध सारांश – भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसमे पुरुष प्रधानता वर्तमान समय मे भी विद्यामान है, भले ही आधुनिक वर्तमान समय मे महिलाये भी पुरुष के समान कंधे से कन्धा मिलाकर कार्य कर रही है? परन्तु महिलाओं को आज भी अपने अधिकारो के लिये संघर्ष करना पड़ता है, दूसरी और महिलाओ के विरुद्ध अपराध लगातार बढते जा रहे है कानूनी ज्ञान के अभाव में महिलाये अपने अधिकारो से परिचित नही होती है, और जीवन भर शोषित होते रहती है। स्त्री की शारीरिक बनावट और मातृत्व कार्यो का पालन करना उनको जीवन यापन करने में बहुत सारी समस्याओ का सामना करना पडता है, और भी कारणो से स्त्री को सुरक्षित व संरक्षण की आवश्यकता होती है। इसलिये महिलाओ के पक्ष मे विशेष उपबन्धो की आवश्यकता होती है।

शब्द कुंजी – कानूनी अधिकार, महिला कर्मी, विधिक नियम, विधिक अधिकार, कानूनी ज्ञान, विभिन्न अधिनियमो का संरक्षण, संविधानिक अधिकार, कारखाना अधिनियम, कर्मकार, नियोजक।

प्रस्तावना – वर्तमान समय मे भारत देश कि महिलाये पुरुष से कंधे से कंधा मिलाकार रोजगार कर रही है और अब कोई भी क्षेत्र ऐसा नही बचा जिसमे महिलाये कर्मचारी न हो, और समय समय पर इनके लिए विधायिका द्धारा वैज्ञानिक तथ्यो के आधार पर कई उपबन्ध प्रावाधित किये है समय की आवश्यतानुसार कामकाजी महिलाओं के शारीरिक व मानसिक स्तर के आधार पर कई उपबन्ध निर्मित किये गये है जिसमें महिलाओ के बनावट, शरीरिक क्षमता के तारतम्य मे कर्मकारो के कार्य के घण्टे, उनका स्वास्थ्य व सुरक्षा हेतु ध्यान में रखागया है और उन्हे उनके अनुरुप व्यवस्था प्रदान की जाती है? विभिन्न अधिनियमों में भी महिला एवं बच्चो से संबंधित प्रावधान किये गये है। जिसमे उनका विकास हो सके।

भारतीय संविधान के अनुच्छेउ 39 में राज्य द्धारा स्वीकारित कुछ नीति तत्वों मे उपबन्धित किया गया है, कि राज्य अपनी नीति का अनुसरण इस प्रकार किया जायेगा, कि सुनिश्चित रुप से स्त्री और पुरुष सभी नागरिको को समान रुप से जीविका के पर्याप्त साधन प्रदान करेगा (उपलब्ध करेगा) जिसमें समान कार्य के लिए समान वेतन प्रदान करेगा, भारत के संदर्भ में न्याय संगत और मनोचित दशाओं एवं प्रसुति सहायता हेतु उपबन्ध का निर्देश देता है, इसी प्रकार संविधान का अनुच्छेद 43 स्त्री व पुरुष कर्मकारो के लिये निर्वाह मजदूरी आदि की व्यवस्था करने का निर्देष देता है। साथ ही अनुच्छेद 43 –क के अनुसार उद्योगो के प्रबंध मे स्त्री पुरुष कर्मकारो की भागीदारी सुनिश्चित करने का राज्य को निर्देश देता है और भारत राज्य में संविधान के भाग 4 में स्थापित नीति –निर्देशक तत्वो का अनुपालन में संघ तथा राज्य सरकारो के द्धारा समय – समय पर विभिन्न अधिनियम प्राप्त किये गये है जिनमें प्रसुति, प्रसुति अधिनियम, 1961, मजदूरी संदाय अधिनियम 1936, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948, बोनस संदाय अधिनियम 1965, निगम तथा कारखाना अधिनियम 1948, आदि प्रमुख। कुछा विशेष नियमों पर आधिारित या स्त्री पुरुष कर्मकारो के कार्य के आधार पर समानता लाने के उद्देश्य प्राप्ति कि गये है जैसे– समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, प्रमुख है प्रसूती सुविधा अधिनियम 1961, महिलाओ की शारीरिक बनावट के आधार पर विशिष्ट लैंगिक स्थिति के कारण निर्मित करने का प्रावधान उपबन्ध किया गया है, कर्मकार महिलाओ के संवैधानिक तथा कानूनी अधिकार कुछ प्रमुख प्रकार है –स्वास्थ,सुरक्षा, तथा काम के घण्टें।

कारखाना अधिनियम 1948 – कारखाने अधिनियम 1948 के कर्मचारियो के स्वास्थ, सुरक्षा,क्रतयाण का काम के घण्टे तथा अवयस्को के नियोजित करने के लिये कानून बनाये गये है, जिनमें से महिलओ के लिये पृथक से व्यवस्था की गई हे कारखानो अधिनियम 1948 की धारा 19 के अन्तर्गत पुरुष और स्त्री कर्मकारो हेतु स्वास्थ सुरक्षा के संदर्भ में अलग–अलग टॉयलेट बनाने का प्रावधान करती है। इसी प्रकार अधिनियम की धारा 27 रुई की धुनाई वाले सिखनो पर बच्चो एवं महिलाओ के नियोजन पर रोक लगाती है। धारा 34 के पालनानुसार किसी व्यक्ति को ऐसे स्थान पर जहॉ। उसकी क्षमता से अधिक भार उठाने, देने या दिलाने के लिये नियोजित नही किया जायेगा जिससे उसे क्षति होने की संभावना हो साथ ही महिलाओ एवं बच्चो की शारीरिक क्षमता के बाहर भार ढोने, सरकाने पर प्रतिबंधित नियम लागू करने राज्य सरकार अधिकृत है कल्याण संबंधित उपबन्ध– कारखाना अधिनियम के अध्याय 5 मे कार्मकारो के कल्याण संबंधी उपबंध है और महिलाओ एवं पुरुष के लिए धारा 42 के अन्तर्गत धुलाई की अलग–अलग व्यवस्था करती है, बैठने के लिये उचित व्यवस्था विश्राम के लिये बैठने की उचित व्यवस्था, केन्टीन, प्राथमिक उपचार, शरण गृह अदि की व्यवस्था का आदेशात्मक उपबन्ध है कई बार महिलाये नियोजन के दौरान शिशुओ को साथ मे लाती है। जिनके लिये शिशु गृह, विश्राम गृह की व्यवस्था करने का भी उपबन्ध है खेलने के लिये स्थान व सुरक्षा की व्यवस्थान का उपबन्ध धारा 48 के अन्तर्गत है जिसमें 8 वर्ष के बालक शामिल हे इसके लिये नियमावली बनाने का अधिकार राज्य सरकार को है।

कारखाना अधिनियम एवं कल्याण व्यवस्था के अन्तर्गत अध्याय 6 में व्यस्को के कार्य के घण्टो को निश्चित करने का उपबन्ध है साथ ही ओवर टाइम लेने पर मजदूरी दर क्या होनी चाहिये। श्रम विषयक राय कमीशन

* अतिथि विद्वान, राजीव गांधी शा.पी.जी.महाविद्यालय, अम्बिकापुर (छ.ग.) भारत

द्धारा अपनी रिपोर्ट मे स्पष्ट किया गया कि पुरुष की अपेक्षा स्त्रीयो को घरेलू काम भी करने पडतें है, धारा 66 के अनुसार स्त्री किसी कारखाने मे सुबह 6 बजे से शाम 7 बजे तक श्रम नही करेगी जिसकी मांग या अपेक्षा भी नही की जा सकती है, परन्तु राज्य सरकार उक्त नीति में बदलाव कर सकती है जैसे– मत्सय उपचार या मत्सय कैनिंग के कारोबार में माल के खराब होने के कारण नीति में कुछ ओवर टाईम एक निश्चित सीमा के अन्दर लिया जा सकता है, परन्तु रात के 10 से सुबह 5 बजे प्रात: तक नियोजन से मुक्त रखा जायेगा।

टी.सी.लिमिटेड (1991)[1] के मामले मे स्पष्ट है कि जिसमे कर्मचरियो को आन्तरिक परिक्षा में बैठने से मना कर दिया गया, जिसमें कहा गया कि रात की पॉलियो मे महिलाओं कार्य पर न बैठने देना अनुच्छेद 14 व 15 का उल्लघंन करता है, जिसमे केरल उच्चन्यायालय द्धारा निर्णित किया कि महिलाये केवल रात के 10 बजे से सुबह 5 बजे तक ही उपलब्ध नही है बाकी पालियो मे वे पुरुष के समान ही काम करने मे सक्षम है। अत: उन्हे परिक्षा मे बैठने का अधिकार है।

वर्तमान समय मे तकनीकी व्यवस्था के चलते ज्यादातर कार्य रात मे किये जाते है, जिनमे स्त्रीयो की उपस्थित रहती हैं, इसलिये रात की पालियो में स्त्रीया भी कार्य रकने लगी है, इस कारण 2005 मे केन्द्रीय सरकार द्धारा कारखाना अधिनियम में संशोधन करके महिलाओ को रात मे करने पर उनकी आवागमन व सुरक्षा की समुचित व्यवस्था प्रदान करने का प्रावधान करने की घोषणा की है।

इसी तरह यदि हम देखे तो महिला कामगारो को मातृत्व प्रसूती अवकाश प्रदान करने की व्यवस्था भी की गई है। जो एक अति सराहनीय कार्य है अत: कारखाना अधिनियम की धारा 79 के अन्तर्गत मजदूरी सहित छूटी की गणना मे किसी स्त्री कर्मकार द्धारा ली गई 12 सप्ताह से अधिक की प्रसूती छूट्टी का आंकलन करने का प्रावधान करती है। इसी तरह धारा 87 खतरनाक स्थानों पर महिला एवं बच्चों के नियोजन पर रोक लगाती है।

प्रसूती सुविधा अधिनियम – प्रसूती सुविधा अधिनियम– धरा 4 के अनुसार किसी उद्योग मे नियोजित महिला को प्रसव एवं गर्भपात के लिये 12 सप्ताह का आराम करने का वैधानिक अधिकार प्राप्त है, वही पर कई राज्यो में यह अबाढी 135 दिन कर दिया गया है और यह प्रावधान आदेशात्मक होता है, जिसका उल्लंघन करने पर नियोजक को दोष सिध्द किया जायेगा।

इसके साथ ही महिला को उसके व उसके बच्चे की सुरक्षा को ध्यान मे रखते हुये वणित्मा व भारी कार्यो को न कराने के लिये बान्धित है।

बी.शाह बनाम प्रिसाइडिंग लेबर कोर्ट, कोयम्बटूर –1977[2] के मामले मे उच्चतम न्यायालय द्धारा अवधारित किया गया, कि संविधान के अनुच्छेद 42 में अभिव्यक्त निर्देशो की बहुत उपयोगिता है यह अनुच्छेद महिला कर्मचारियो को अपना व अपने नवजात शिशु के पालन पोषण, अपनी क्षमता व उत्पादन शक्ति का पुन: संग्रह करने की अवसर करने की नीति प्रस्तुत करता है।

सी.बी.मुथम्मा बनाम भारत संघ –1979[3] उक्त मामले मे उच्चतम न्यायालय द्धारा उस नियम को असंवैधानिक घोषित कर दिया, जिसमें यह प्रतिबन्ध था कि यदि कोई स्त्री कर्मचारी विवाह करना चाहती है तो वह पहले सरकार से लिखित अनुमति प्राप्त करे और यदि सरकार इस बात से सन्तुष्ट हो जाये कि उसका विवाह हो जाने के उसमें कार्य में बाधा उत्पन्न होगी तो उसे उपना त्यागपत्र देना होगा। ऐसे ही इस नियामानुसार किसी विवाहित स्त्री को सेवा में नियुक्ति का अधिकर नही होगा– इस संबंध मे यदि विवाह से महिला कर्मचारीयो की सवो मे व्यवधान उत्पन्न होता है, तो पुरुष के कार्य मे भी उतना ही व्यवधान उत्पन्न होगा।

उच्चतम न्यायालय द्धारा गहा गया कि – इसी तरह महिला कर्मचारी को विवाह न करने संबंधी प्रावधान का उल्लेख **एयर इण्डियॉ बनाम नरगिस र्मिजा –1981**[4] का मामला स्पष्ट होता है कि इंण्डिया कॉपोरेशन के विनियम में यह उपबन्ध था कि कोई भी महिला एयर होस्टेज नियुक्ति के 4 साल तक या उसके अन्दर विवाह करने या प्रथम गर्भावस्था (जो भी पहले हो) होने पर सेवा मुक्त कर दीया जायेगी। उक्त विनियम के तहत उच्चतम न्यायालय द्धारा 4 साल मे विवाह करने शर्त को उचित माना परन्तु शर्त पूरा करने के पश्चात प्रथम गर्भावस्था पर महिला कर्मचारी को सेवा मुक्त करने की शर्त को अवैध घोषित कर दिया।

समान कार्य के लिये समान वेतन – भारतीय संविधान के भाग 3 मे प्रदत्त मौलिक अधिकारो के अन्तर्गत समान कार्य के लिये वेतन का अधिकार प्रदान नही किया गया है, परन्तु संविधान के भाग 4 के अनुच्छेद39 (घ) मे राज्य के नीति निर्देशक तत्व के रुप में यह उपबन्ध किया गया है कि पुरुषो और स्त्रीयो दोनो को समान कार्य के लिये समान वेतन हो, इसी सन्दर्भ में उच्चतम न्यायालय द्धारा **डी. एस नकारा बानाम भारत संघ 1983**[5] में कहा गया है, कि यदि संविधान का अनुच्छेद 14 व 16 का निर्वचन उद्देशिका और अनुच्छेद 39 (घ) को ध्यान में रखते हुये किया, जाये तो समान कार्य के लिये समान वेतन का सिद्धांत इन प्रावधानो द्धारा स्वत: ही प्रमाणित सिद्ध है, और इसी बात को पूर्ण करने के लिये समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976 गठित किया गया। यह अधिनियम स्त्री व पुरुषो को कर्मकार रुप मे समान पारिश्रमिक का भुगतान करने और नियोजन मे लिंग के आधार पर स्त्रियो के विरुद्ध विभेद किये जाने का निर्णय करने और उससे सम्बंधित विषयों पर उपबन्ध के लिये अधिनियमित किया गया है कि एक ही कम या समान प्रकृति के कम से आशय उस काम से है जिसमें काम करने की दशाये एवं अपेक्षित कौशल, प्रयत्न तथा उत्तरदायित्व मे कोई अन्तर नही है।

स्त्री व पुरुष को समान कार्य हेतु समान वेतन प्रदान करने का आदेश नियोजक को बाध्य करती है। जो अधिनियम की धारा 4 मे उल्लेखित है। जबकि धारा 5 एक समान प्रकृति के काम हेतु भर्ती, प्रोन्नति, प्रशिक्षण या समानांतरण आदि में स्त्रीयो के विरुद्ध किसी भी विभेद को समाप्त करती है। साथ की किसी भी तरह के विभेद करने वाले पर स्त्री अधिरोपित करती है।

वर्तमान समय मे कार्यस्थलो पर महिला कर्मकारो या कर्मचारियो का यौन शोषण किया जाने लगा है, जिससे रोकने की लगातार मांग नारी संगठनो द्धारा की जाती रही है, इसी के तहत् **दिल्ली डोमेस्टिक वर्किग वूमेंस फोरम बनाम भारत संघ –1995**[6] के मामले मे उच्चतम न्यायालय ने श्रमजीवी महिलाओ के साथ बढते हुये, यौन अपरराधो के प्रतिगंभीर चिंता व्यक्त करते हुये, इन मामलो के शीघ्र परीक्षण, पीडित को प्रतिकर प्रदान करने तथा उनके पुनर्वास के लिये अनेक विस्तृत मार्गदर्शक सिद्धांतो को निर्धारित किया है। इस तरह एक बहुत मामला उच्चतम न्यायालय के समक्ष आया था।

विशाखा बनाम राजस्थान राज्य 1997[7] के बहुचर्चित मामले मे उच्चतम न्यायालय ने नियोजन के दौरान यौन–शोषण के विरुद्ध यौन लौंगिक समानता के मानव अधिकार के प्रभावशाली प्रर्वतन के लिये कानून बनाने की आवश्यकता रेखांकित की तथा अधिनिर्धारित किया कि जब तक ऐसा कानून पारित नही होगा, तब तक न्यायालय के मार्गदर्शक सिद्धांतो को

लागू किये जाये उच्चतम न्यायालय के अनुसार यौन शोषण के अन्तर्गत ऐसा प्रत्यक्ष व उल्लंघन भरा अप्रसन्न व्यवहार शामिल है, जिसमें शारीरिक सम्पर्क करना या उसके लिये आगे बढना यौन सम्बन्ध बनाने की प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष लालसा प्रकट करना, सेक्स से भरे हुये कथन कहना, कमोत्तेजक लेख या चित्र दिखाना तथा इसी प्रकार के कोई रुप शारीरिक मौखिक या अमौखिक यौन प्राकृति का व्यवहार कृत्य, न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया कि यह नियोजकक या कार्यस्थल पर जिम्मेदार व्यक्ति या संस्थान का दायित्व होगा कि वे यौन शोषण के कृत्ये को रोकने के लिय सभी आवश्यक कदम उठाते हुये निवारण, समझौते या अभियोजन के लिये प्रक्रिया की व्यवस्था करे यौन शाषण को प्रतिबन्धित करेन के लिये कार्य स्थल पर प्रत्येक नियोजक या प्रभारी व्याक्ति चाहे पब्लिक सेक्टर में या प्राईवेट सेक्टर मे हो, उसे इस समस्या से निजात पाने के लिये निम्नलिखित कदम उठाने चाहिए।

1. परिभाषित कार्यस्थल पर यौन शाषण निषेध को नोटीफाई, प्रकाशित तथा प्रचारित करना चाहिये।
2. पब्लिक सेक्टर संस्थानो व सरकार के व्यवहार एवं अनुशासन से संबंधित नियमों तथा उपनियमों के अन्तर्गत यौन शोषण निषेध शामिल किया जाना चाहिये तथा अपराधो के विरुद्ध उचित दण्ड के लिय नियम मे व्यवस्था करे।
3. प्राईवेट नियोजको द्वारा औद्योगिक नियोजन अधिनियम 1946 के अन्तर्गत स्थाई आदेशों में उपयुक्त निषेधो को शामिल करने के लिये आवश्यक कदम उठाये जाने चाहिये।
4. कर्मकांडो की व्यवस्था मे कार्य, आयम, स्वास्थ्य तथा सफाई आदि की उचित व्यवस्था होनी चाहिये ताकि स्त्रीयो के विरुद्ध कार्यस्थल पर विपरीत तथा प्रतिकूल वातावरण न हो तथा किसी स्त्री को यह अहसास न होने पाये कि वह नियोजक के साथ या उससे संबंधित वातावरण में असुरक्षित है।
5. मार्गदर्शक सिद्धांतो मे महिला को अपनी इच्छा से सिमांतरित होने का या दोषी व्यक्ति को सिमांतरित करने का अधिकार उपलब्ध होना चाहिए।

प्रत्येक संस्थानो या विभागो मे किसी महिला की अध्यक्षता मे शिकायत समिति का गठन किया जाये, जो अद्यपी व्यक्ति के खिलाफ उचित जॉच कर सके तथा सरकारी, गैर सरकारी संगठनो की शिकायत समिति द्वारा वार्षिक रिर्पोट की गई कार्यवाही की सूचना के साथ सरकार को आवश्यक रुप से भेजी जानी चाहिये। उच्चतम न्यायालय के इस दिशा निर्देश को सअक्षर स्वीकार कर इसे लागू करने के आदेश पारति किये, गये और इसी के चलते संसद द्वारा राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम 1990 द्वारा महिलाओ के लिये एक आयोग का गठन भी किया गया जिसमें आयो का मुख्यत: कार्य महिलाओ को दी गई संवैधानिक और विधिक सुरक्षाओ से संबंधित विषयो का अध्ययन करना और निगरानी करना है।

जैसे कि भारतीय संवैधानिक के मौलिक अधिकारो वाले अध्याय मौलिक हेतु आवश्यक विशिष्ट व्यवस्थाआ करने का प्रावधान है। ठीक उसी तरह अनुच्छेद 51 (3) के अंतर्गत प्रत्येक नागरिक पर एक मौलिक।

दायित्व अधिरोपित करता है कि ऐसी प्रथाओ का परित्याग करें जो स्त्रीयो के सम्मान के विरुद्ध हो स्त्री कर्मकाडो को दी गई वैधानिक सुरक्षा इसी दायित्व की सम्पूर्ती है।

निष्कर्ष – अन्त: कहा जा सकता है, कि महिलाये चाहे वे घरो मे हो या कार्मिक संस्थानो में, सरकारी गैर सरकारी संस्थानो में कार्यरत हो उनके सम्मान व सुरक्षा का दायित्व भारत के प्रत्येक नागरिको का, संस्थाना के नियोजको व सरकारो का होना चाहिये, ऐसी कोई परम्परा या रीति का त्याग अति आवश्यक है जो इनके विरुद्ध निर्वाह की जाती हो अत: इन्हे भी समानता के साथ हर स्थान पर स्वीकार किया जाना चाहिये। भारत देश मे स्त्री को एक ओर देवी लक्ष्मी दूगर्र काली माना जाता है, उन्हे समय–समय पर पूजा जाता है, फिर उनके विरुद्ध यह अनुचित कार्य कैसे संभव होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. बी.शाह बनाम पिसाइजिंग लेबर कोर्ट कोयम्बटूर ए.आई.आर 1977. एस.सी 701.
2. सी.जी. मुथम्मा बनाम भारत संघ ए.आई.आर 1979. एस.सी 668.
3. एअर इंण्डिया बनाम नरार्मिस मिर्जा ए.आई.आर 1981. एस.सी 438.
4. डी.एस नकार बनाम भारत संघ ए.आई.आर 1983. एस.सी 165.
5. दिल्ली डोमेस्टीक वर्किंग विमेंश फोरम बनाम भारत संघ ए.आई.आर 1995. एस.सी. 183.
6. विशाखा बनाम राजस्थान राज्य ए.आई.आर 1997. एस.सी।
7. जय नारायण पाण्डे, भारत का संविधाना, श्रमिक विधिया, इलाहबाद पब्लिकेशन 2019।
8. प्रसूवी प्रसुविधा अधिनियम
9. न्यूनतम मजदूरी अधिनियम

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

ममलूक कालीन स्थापत्य कला का अध्ययन

डॉ. आनन्द गोस्वामी *

प्रस्तावना - दिल्ली सल्तनत के प्रथम राजवंश के नामकरण को लेकर इतिहासकारों में मतभेद है विभिन्न इतिहासकारों ने इसके अलग-अलग नाम जैसे- दास वंश, ममलूक वंश, इल्बारी वंश व प्रारंभिक तुर्क नाम दिया है क्योंकि इस वंश के 11 शासकों में केवल तीन कुतुबुद्दीन ऐबक , इल्तुतमिश व बलवन ही दास थे तथा सत्ता ग्रहण करने से पूर्व ये भी दासता से मुक्त कर दिये गए थे, वर्तमान में इतिहासकार हबीबुल्लाह द्वारा प्रस्तावित नाम ममलूक शासक ही सर्वमान्य है। हबीबुल्लाह ने मध्यकालीन मिस्र के इतिहास से उदाहरण लेकर यह नाम प्रस्तावित किया था जहां दास सेना नायकों द्वारा स्थापित वंश को ममलूक नाम दिया गया था। ममलूक अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ गुलामी के बंधन से मुक्त माता-पिता से उत्पन्न संतानों से होता है इस प्रकार 1206 ईस्वी से 1290 ईस्वी तक भारत पर शासन करने वाले शासकों को ममलूक वंश के नाम से संबोधित किया जाता है। ममलूक वंश में कुल 11 शासकों ने 84 वर्ष तक शासन किया ममलुक शासकों द्वारा स्थापत्य कला के क्षेत्र में जिन ऐतिहासिक इमारतों का निर्माण कराया है उनमें प्रमुख इमारतें निम्न है- कुवत उल इस्लाम मस्जिद, कुतुब मीनार , अड़ाई दिन का झोपड़ा, सुल्तान गढ़ी ,इल्तुतमिश का मकबरा ,हौज -ए - शम्सी तथा शम्सी ईदगाह, बदायूं की जामा मस्जिद ,बलबन का मकबरा आदि। यद्यपि ममलुक शासकों के समय में स्थापत्य कला का बहुत ज्यादा विकास नहीं हुआ फिर भी जितनी भी इमारतों का निर्माण हुआ है वे सभी ऐतिहासिक एवं स्थापत्य के क्षेत्र में महत्तवपूर्ण स्थान रखती हैं।

अध्ययन के उद्देश्य-इस अध्ययन के उद्देश्यों को हम निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से स्पष्ट कर सकते हैं :

1. ममलूक शासकों द्वारा निर्मित प्रमुख ऐतिहासिक इमारतों का अध्ययन करना।
2. ममलूक स्थापत्य कला का ऐतिहासिक महत्व।
3. ममलूक स्थापत्य शैली का अध्ययन करना।

सल्तनत कालीन स्थापत्य कला भारतीय और इस्लामी प्रभावों के सम्मिश्रण से उत्पन्न एक नवीन स्थापत्य कला है जो हिंद- इस्लामी शैली कहलाती है। इस शैली की प्रमुख विशेषता मेहराब व गुम्बदों का सुंदर प्रयोग है जिसे अरबों ने मुख्यत रोम से ग्रहण किया था। इस शैली में भारतीय क्षैतिज शैली व इस्लामी मेराब धरनी का सुंदर एवं संतुलित सम्मिश्रण था। मुस्लिम वास्तु शिल्पियों ने हिंदू मंदिर शैली की वक्र रेखी कंगनी, छोटे वर्गाकार स्तंभों और उत्कीर्णित रूपरेखाओं जैसे कमल को अलंकरण के लिए ग्रहण किया। वस्तुत: भारतीय और इस्लामी शैलियां प्रत्येक दृष्टिकोण से एक दूसरे से भिन्न थी। भारतीय शैली में स्तम्भों व बल्लियों का प्रयोग किया जाता था। जबकि इस्लामी शैली में मेहराबों का अधिक प्रयोग होता था। भवन निर्माण में भारतीय बड़े-बड़े भारी पत्थरों का प्रयोग करते थे जबकि इस्लामी शैली में छोटे व हल्की ईंटों का प्रयोग होता था। गारे के रूप में चूने व सुर्खी का प्रयोग इस्लामी शैली की विशेषता थी। दोनों शैलियों में मुख्य अंतर सजावट एवं अलंकरण में था। भारतीय शैली में मूर्ति का प्रयोग अधिक होता था जबकि इस्लामी शैली में सुलेख, विभिन्न ज्यामितीय आकार एवं आकृतियों व चमकीली टायलों का प्रयोग होता था। सुलेख के अंतर्गत कुरान की आयतों वाले अभिलेख के चौखटों का प्रयोग किया जाता था।

इस प्रकार अरबी लिपि ही कला का एक माध्यम बन गई। सजावट की मिश्रण पद्धति को अरबैस्क कहा गया। इण्डो - इस्लामी स्थापत्य कला का विकास क्रमिकरूप से हुआ है। इसका प्रथम चरण 1206 से 1290 ई. तक का था जो इतिहास में ममलूक काल के नाम से जाना जाता है। अत: यह शैली ममलूक शैली के नाम से प्रसिद्ध है। इसे प्रयोगात्मक व कामचलाऊ शैली भी कहा जाता है। ममलूक कालीन स्थापत्य कला इसका काल 1206 से 1290 ई. तक था। यह सल्तनत कालीन स्थापत्य कला का आरंभिक काल था। इस काल के आरंभिक भवनों में स्थापत्य कला शैली का झुकाव भारतीयता की ओर अधिक था इस समय के ऐतिहासिक भवन निम्नलिखित है।

कुव्वत-उल-इस्लाम-मस्जिद- दिल्ली में स्थित यह मंदिर हिंदू-मुस्लिम शैली पर निर्मित प्रथम भवन है। इसका निर्माण कुतुबुद्दीन ऐबक ने पृथ्वीराज चौहान पर विजय पाने की स्मृति में करवाया था। इस मस्जिद के संबंध में इतिहासकार जॉन मार्शल का मत है कि इसका निर्माण जैन मंदिर के धवंसावशेषों पर हुआ था। पहले यहां एक वैष्णव मंदिर था जिसे कालांतर में विष्णु मंदिर में परिवर्तित कर दिया गया था। इसी विष्णु मंदिर को तोड़कर ऐबक ने दिल्ली व भारत की प्रथम मस्जिद का निर्माण करवाया। इस मस्जिद के निर्माण में मंदिर के तोरण, स्तंभों व छत आदि का प्रयोग किया गया है इस पर बनी हुई आकृतियों को हटा दिया गया है या उनके स्थान पर बेल बूंटों का निर्माण किया गया।इस मस्जिद की सर्वोत्कृष्ट विशेषता उसका 'मकसूरा' एवं इसके साथ जुड़ा 'किबला लिवान' है। स्थापत्य कला की दृष्टि से यह पहला ऐसा उदाहरण है, जिसमें स्पष्ट हिन्दू प्रभाव परिलक्षित होता है

कुव्वत-उल-इस्लाम-मस्जिद के मुख्य बिन्दु:

1. कुतुबुद्दीन ऐबक ने दिल्ली विजय के उपलक्ष्य में तथा इस्लाम धर्म को प्रतिष्ठित करने के उदेश्य से 1192 ई. में 'कुत्ब' अथवा 'कुव्वत-उल-इस्लाम मस्जिद' का निर्माण कराया।
2. 1230 ई. में इल्तुतमिश ने मस्जिद के प्रांगण को दुगुना कराया।
3. अलाउद्दीन ख़लिजी ने इस मस्जिद का विस्तार कराया तथा कुरान की आयतें लिखवाई।
4. मस्जिद में लगी जाली, स्तम्भ एवं दरवाजे मंदिरों के अवशेष थे।

* एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चरखारी, जनपद- महोबा (उ.प्र.) भारत

5. इस मस्जिद में सर्वप्रथम इस्लामी स्थापत्य कला की मजबूती एवं सौन्दर्य जैसी विशेषताओं का उभारा गया है।
6. 'इण्डो-इस्लामिक शैली' में निर्मित स्थापत्य कला का यह पहला ऐसा उदाहरण है, जिसमें स्पष्ट हिन्दू प्रभाव दिखाई देता है।
7. मस्जिद 121 फुट लम्बे तथा 150 फुट चौड़े समकोणनुमा चबूतरे पर स्थित है।

कुतुबमीनार- यह दिल्ली में स्थित है इसका निर्माण 1199 ईस्वी में कुतुबुद्दीन ऐबक ने प्रारंभ किया तथा 1230- 31 ईसवी में इल्तुतमिश ने पूरा करवाया। प्रसिद्ध सूफी संत ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी के नाम पर इसका नाम कुतुब मीनार रखा गया। कुतुबमीनार का निर्माण मुअज्जिन की अजान देने के लिए किया गया था। यह कन्नौज विजय का स्मारक चिन्ह भी माना जाता है। इसकी ऊंचाई 242 फीट और नीचे से ऊपर की ओर पतली होती चली गई है। इसके बाहरी भाग पर अरबी तथा फारसी में लेख अंकित हैं। प्रारंभ में यह चार मंजिला था किंतु फिरोज तुगलक के समय चौथी मंजिल पर बिजली गिरने के कारण काफी क्षतिग्रस्त हो गया था। अत: फिरोज तुगलक ने उसे तुड़वाकर उसके स्थान पर दो मंजिलों का निर्माण करवाया। सिकंदर लोदी के काल में पांचवी मंजिल के क्षतिग्रस्त होने पर उसकी मरम्मत कराई गई। इस प्रकार वर्तमान में कुतुबमीनार पांच मंजिली है इसके प्रथम तीन मंजिले पत्थर की हैं जिनमें बाहर की ओर बलुआ लाल पत्थर का प्रयोग किया गया है। ऊपर की दो मंजिलों में अंदर बलुआ पत्थर तथा बाहरी ओर सफेद पत्थर का प्रयोग किया गया है। कुतुबमीनार पर एक लेख है जिसमें फजल - एबनअबुल -माली के नाम मिलते हैं।

अढ़ाई दिन का झोपड़ा -अढ़ाई दिन का झोपड़ा राजस्थान के अजमेर नगर में स्थित यह एक मस्जिद है। माना जाता है इसका निर्माण सिर्फ अढाई दिन में किया गया और इस कारण इसका नाम अढाई दिन का झोपड़ा पढ़ गया। इसका निर्माण पहले से विद्यमान संस्कृत विद्यालय को परिवर्तित करके मोहम्मद गोरी के आदेश पर उस के गवर्नर कुतुब-उद-दीन ऐबक ने वर्ष 1192 में करवाया था। मोहम्मद गौरी ने तराईन के युद्ध में पृथ्वीराज चौहान को हरा दिया उसके बाद पृथ्वीराज की राजधानी तारागढ़ अजमेर पर हमला किया। यहां स्थित संस्कृत विद्यालय को मस्जिद में परिवर्तित कर दिया अर्थात इसका निर्माण संस्कृत महाविद्यालय के स्थान पर हुआ। इसका प्रमाण अढाई दिन के झोपड़े के मुख्य द्वार के बायीं ओर लगा संगमरमर का एक शिलालेख है जिस पर संस्कृत में इस विद्यालय का उल्लेख है।यहाँ भारतीय शैली में अलंकृत स्तंभों का प्रयोग किया गया है, जिनके ऊपर छत का निर्माण किया गया है। मस्जिद के प्रत्येक कोने में चक्राकार एवं बासुरी के आकार की मीनारे निर्मित है। 90 के दशक में इस मस्जिद के आंगन में कई देवी - देवताओं की प्राचीन मूर्तियां यहां-वहां बिखरी हुई पड़ी थी जिसे बाद में एक सुरक्षित स्थान पर रखवा दिया गया। ये भारत की सबसे प्राचीन इस्लामी मस्जिदों में शुमार है।

सुल्तान गढ़ी -सुल्तान गढ़ी का शाब्दिक अर्थ है गुफा का सुल्तान। यह इल्तुतमिश के जेष्ठ पुत्र नसीरुद्दीन का मकबरा है। इसका निर्माण इल्तुतमिश ने 1231 ईस्वी में दिल्ली स्थित कुतुब मीनार से 3 मील दूर मलकापुर में एक गढ़ की भांति ऊंचे चबूतरे पर करवाया था। इसका बाहरी भाग भूरे ग्रेनाइट पत्थर तथा संगमरमर से बना है।आंतरिक भाग अष्ट मुखी आकार का है। इसकी छत को सुंदर खंभों से सहारा दिया गया है।इस मकबरे के निर्माण के साथ ही इल्तुतमिश ने भारत में मकबरों के निर्माण का श्रीगणेश किया इल्तुतमिश को मकबरा शैली का जन्मदाता कहा जाता है।

इल्तुतमिश का मकबरा- इल्तुतमिश का मकबरा दिल्ली में स्थित एक कक्षीय मकबरा है। इसका निर्माण लाल पत्थरों से हुआ है इसके भीतरी भाग को नक्काशी द्वारा सुसज्जित करने का प्रयास किया गया है। इसकी दीवारों पर कुरान की आयतें अंकित है यह तत्कालीन समय का सबसे महत्वपूर्ण अलंकृत मकबरा है।आज भी इस मकबरे की छत नहीं है। दिल्ली पर राज करने वाले इस सुल्तान का मकबरा बिना छत का है। बाहर से तो यह मकबरा बिल्कुल सादा है, लेकिन अंदर और गेट पर शानदार तरीके से नक्काशी की गई है। इन नक्काशियों में चक्र, घंटी, जंजीर, कमल और हीरा शामिल हैं। इन्हें देखकर फर्ग्युसन ने कहा था कि यह इस्लामी उद्देश्यों के लिए हिंदू कला के इस्तेमाल किए जाने का शानदार उदाहरण है।

बदायूं की जामा मस्जिद -बदायूं की जामा मस्जिद शम्सी हिंदुस्तान की शानदार मस्जिदों में गिनी जाती है। बादशाह इल्तुतमिश ने इसकी नींव रखी थी। पंद्रह साल में बनकर तैयार हुई इस मस्जिद का निर्माण उनके बेटे रुकुनुद्दीन ने पूरा कराया था।

बदायूं की मस्जिद शम्सी खुद में काबिले तारीफ है। इसके चारों ओर बने बड़े-बड़े बरामदे तथा बीच में वुजू के लिए पानी का हौज भी आलीशान है। मस्जिद के ऊपर बनाई गई बड़ी गुम्बद भी अपने में खासियत रखती है। यह गुंबद शहर में दूर-दूर से दिखाई देती है।

गौरतलब है कि इल्तुतमिश दिल्ली का बादशाह बनने से पहले बदायूं का सूबेदार था। उसने जामा मस्जिद की बुनियाद सन् 1210 में रखी थी। उसके दिल्ली का बादशाह बनने के बाद उसका बेटा रुकुनुद्दीन बदायूं का सूबेदार बना। रुकुनुद्दीन ने 1225 में मस्जिद को पूर्ण रूप से तैयार कराया। मोहम्मद तुगलक ने इसकी मरम्मत कराई।

बलबन का मकबरा -यह मकबरा दिल्ली में स्थित है। इसे बलवान ने बनवाया था। शुद्ध इस्लामी पद्धति द्वारा निर्मित यह भारत का प्रथम मकबरा है वास्तव में सही रूप में मेहराबों का प्रयोग बलबन के मकबरे में ही हुआ है। मकबरे के द्वार की मेहराब भारत की तुर्की मेहराबों में सर्वोत्तम है।

निष्कर्ष- ममलूक शासकों ने भारत पर 1206 से 1290 ईसवी तक शासन किया। इस दौरान 11 शासकों ने शासन किया। जिनके द्वारा निर्मित प्रमुख भवनों एवं इमारतों का वर्णन ममलूक स्थापत्य कला के अंतर्गत किया गया। जिसमें से सबसे प्रसिद्ध इमारत कुतुबमीनार है जिसे यूनेस्को द्वारा वर्ष 1993 में विश्व विरासत स्थल की सूची में जगह दी गई है। कुतुबमीनार को देखने के लिए भारत ही नहीं अपितु विदेशों से भी लाखों पर्यटक भारत आते हैं और इस ऐतिहासिक इमारत को देखकर दर्शक स्वयं उस समय की स्थापत्य कला की बारीकियों का विवरण प्राप्त करते हैं, ममलूक सुल्तानों का कार्यकाल यद्यपि मात्र 84 वर्ष ही रहा है लेकिन उनके शासनकाल में बनाई गई प्रमुख इमारतों में कुतुबमीनार, अढ़ाई दिन का झोपड़ा, कुव्वत-उल-इस्लाम-मस्जिद, सुल्तान गढ़ी, इल्तुतमिश का मकबरा, बदायूं की जामा मस्जिद, बलबन का मकबरा आदि इमारतों में से बलबन के मकबरा को छोड़कर शेष इमारतें वर्तमान समय में भी समय की मार को झेलते हुए अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखे हुए हैं और उस युग की स्थापत्य कला का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यकालीन भारत का इतिहास -एस.के. पांडे
2. मध्यकालीन भारत तथा धार्मिक जीवन- वी. डी.महाजन
3. अद्भुत भारत- ए. एल.बासम
4. एन.सी.ई. आर.टी. की किताबें
5. मध्यकालीन भारत का इतिहास- हरिश्चंद्र वर्मा
6. मध्यकालीन भारत का इतिहास- एल.पी.शर्मा
7. मध्यकालीन भारत -रोमिला थापर
8. मध्यकालीन भारत की सामाजिक अवस्था-अब्दुल्लाह यूसुफ अली

शिक्षकों के आकांक्षा स्तर प्रभावशीलता, सुविधास्तर, स्वधारणा एवं कार्यात्मक मूल्यों का समीक्षात्मक अध्ययन

पूजा वर्मा * डॉ. आदित्य चतुर्वेदी **

शोध अध्ययन की पृष्ठभूमि – सभी मानवीय कार्यकलापों की तरह शिक्षा में भी समाज की उदीयमान आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के अनुरूप परिवर्तन होते रहते हैं। मानव जीवन में जब नए लक्ष्य स्थापित होते हैं तो समाज की आकांक्षाएँ भी बदल जाती हैं। शिक्षा की अवधारणा में चाहे जो भी परिवर्तन हो, मानव-मुक्ति, स्वतन्त्रता और न्यायपूर्ण समाज की रचना इसका अन्तिम लक्ष्य रहा है तथा भविष्य में भी रहेगा। मानव मुक्ति और न्यासपूर्ण समाज की परिभाषाएं विभिन्न विचारधाराओं के सापेक्ष बदलती रही हैं जिसके कारण शिक्षा प्रक्रिया और प्रभाव क्षेत्र के स्वरूप में भी स्वाभाविक रूपान्तरण होता रहा है।विश्व के बदलते परिप्रेक्ष्य और संक्रमणकालीन मूल्य विहीनता को देखते हुए शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापकों के मूल्य, शिक्षण प्रभावशीलता, आकांक्षा स्तर आदि के परस्पर संबंधे कीचर्चा ज्वलंत बनी हुई है।

यह सर्वविदित है कि मानव के सर्वांगीण विकास में शिक्षा की अहम भूमिका होती है। अत: हमारी चिंतन प्रक्रिया के शैक्षिक निहितार्थों में शाश्वत मूल्य निश्चित रूप से विद्यमान होने चाहिए। शिक्षा के हर क्षेत्र में हमारी संस्कृति, संस्कार, सोच और चिन्तन प्रतिबिंबित होते हैं।

आधुनिक शिक्षा आज एक साथा दोहरे संकट से ग्रस्त है। जहां एक ओर उसकी सामाजिक प्रासंगिकता पर बड़े पैमाने पर सवाल उठाये जा रहे हैं, वहीं दूसरी तरफ सभी प्रबुद्ध नागरिक जीवनमूल्यों के ह्रास के बारे में शिक्षक की भूमिका को सन्देह की दुष्टि से देखते हैं।

राष्ट्र की अपनी संस्कृति और सभ्यता होती है। राष्ट्र की सांस्कृतिक सम्पदा शिक्षण संस्थाओं में ही सुरक्षित रहती है। ये शिक्षण संस्थाएं राष्ट्र की प्रहरी बनकर सत्त उसकी रक्षा में लगी रहती हैं। संस्थाएं अपनी शिक्षा से समाज को निरन्तर प्रभावित करती रहती हैं। वस्तुत: उस राष्ट्र के सांस्कृतिक वैशियट्य को वहाँ के शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से प्रतिनिधित्व मिलता है।

कोई भी राष्ट्र अपने शिक्षक वर्ग पर सम्पूर्ण रूप से निर्भर करता है क्योंकि शिक्षक समाज के नागरिकों की गुणवत्ता को बढ़ाते हैं और नागरिक राष्ट्र का निर्माण करते हैं, इसलिए शिक्षक को राष्ट्र का निर्माता समझा जाता है। शिक्षण व्यवसाय को एक आदर्श व्यवसाय की संज्ञा दी गई है। शिक्षक वह धुरी है जिसके चारों ओर राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली घूमती है। प्राचीन भारत में शिक्षक को अग्रणी स्थान प्राप्त था और शिक्षक अपने कार्य को जीवन का प्रमुख ध्येय समझते थे, परन्तु आज शिक्षण कार्य एक व्यवसाय मात्र रह गया है और जीविकोपार्उन इसका मूल उद्देश्य है।

यह आवश्यक नहीं है कि जितने भी व्यक्ति शिक्षण व्यवसाय से जुडे हैं, वह सभी इस धारणा से ओत-प्रोत हों कि शिक्षण क्रिया समाज की सबसे बड़ी सेवा है, बल्कि कुछ ऐसे भी व्यक्ति होते हैं जो कि अपने अभीष्ट लक्ष्य को न प्राप्त कर सकने की स्थिति में जीवन-निर्वाह हेतु इस व्यवसाय को अंगीकार कर लेते हैं। ऐसे ही शिक्षक प्राय: अपने कार्य में सफल एवं प्रभावपूर्ण नहीं होत हैं। वर्तमान समय में समस्त शिक्षा वैज्ञानिक शिक्षण में सुधार की आवश्यकता पर बल देते हैं, इसलिए इस सन्दर्भ में ऐसे शिक्षकों की आवश्यकता है जिनकी अध्यापन क्षेत्र में ही आगे बढ़ने की प्रवृत्ति हो।

उपर्युक्त सन्दर्भ में योग्य शिक्षकों के व्यक्तित्व के गुणों तथा विशेषताओं से परिचित होना आवश्यक है।

इस बात से प्रभावित होकर विगत दशकों में यह जानने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार के व्यक्तित्व वाले शिक्षक अच्छा और प्रभावशाली शिक्षण करते हैं। इन अध्ययनों से ऐसे अध्यापकों की पहचान हो जाय तो निश्चित रूप से छात्रों को अधिगम के लिए उत्प्रेरित किया जा सकता है। इन अध्ययनों से ऐसे अध्यापकों के व्यक्तित्व-तत्वों व विशेषताओं की जानकारी भी की जा सकती है जो कक्षा में अच्छा तथा प्रभावी शिक्षण कार्य सम्पादित नहीं कर पाते। फलस्वरूप छात्र अधिगम बहुत कम हो पाता है। यह भी देखने मेंआता है कि शिक्षकों में अपने शिक्षण व्यवसाय के प्रति सकारात्मक प्रवृत्ति नहीं पायी जाती है परिणामत:अनेक शैक्षिक समस्यायें यथा-शैक्षिक मूल्यों का ह्रास, शिक्षण स्तर का गिरना, छात्र अनुशासन की समस्या एवं विद्यालयीय अव्यवस्था देखने को मिलती हैं। वर्तमान समय में शिक्षा जगत की समस्यायें इतनी विशाल, बहुआयामी, जटिल तथा दिग्भ्रमित हैं कि इनके लिए व्यापक स्तर पर वैज्ञानिक अध्ययन की आवश्यकता है।

प्राय: यह देखा जाता है कि शिक्षक के व्यवहार में कुछ ऐसी बाते या क्रिया-कलाप आ जाते हैं, जो छात्र हितकरी नहीं होते हैं। अत: शिक्षक व्यवहार का मूल्यांकन एवं अवलोकन करके उनके व्यवहार में उत्तम एवं उपयोगी परिवर्तन लाया जा सकता है। यदि शिक्षक की शिक्षण व्यवसाय के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति है तो वह इसमें रूचि लेगा और शिक्षार्थियों को समुचित रूप ये शिक्षित करने का प्रयास करेगा।'शिक्षक का व्यक्तित्व' कक्षा की परिस्थितियों में एक महत्वपूर्ण चर है।

कोठारी आयोग ने भी कहा है कि -'भारत का भविष्य उसकी कक्षाओं में स्वरूप ग्रहण करता है।' कहने का तात्पर्य यह है कि- शिक्षण के दौरान देश के भावी नागरिकों का सृजन होता है तथा उन पर अध्यापकों की नैतिकता, चरित्र, मूल्यों एवं अन्य कारकों का प्रभाव पड़ता है। ऐसी स्थिति में प्रस्तुत अध्ययन इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि उन कारकों की खोज गम्भीरतापूर्वक की जाये जो अध्यापन व्यवसाय की गरिमा को बनाये रखने में सहयोग

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, आनन्द इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट ,भोपाल (म.प्र.) भारत

प्रदान करते हैं तथा जिनके अनुपालन से शिक्षक अपने शिक्षण कार्य में सफलता प्राप्त कर समाज में अपना गौरवमय स्थान सुनिश्चित कर सके एवं राष्ट्र निर्माण में अपनी महति भूमिका निभा सके।

प्रथम प्रकार के वे शिक्षक हैं जिन्होंने विश्वविद्यालय से मान्यता प्राप्त कॉलेजो से प्रशिक्षण संस्थाओं से अध्यापक शिक्षा का प्रशिक्षिण प्राप्त किया है। ऐसे शिक्षकों को माध्यमिक स्तर पर शिक्षण करने हेतु प्रमाण पत्र प्रदान किया जाता है। इन्हें बी.एड प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षक कहा जाता है।

द्वितीय प्रकार के शिक्षक वें हैं जिन्होंने प्राथमिक प्रशिक्षण संस्थाओं में अध्यापन हेतु प्रशिक्षण प्राप्त किया है। ऐसे शिक्षकों को बेसिक शिक्षा प्रमाण पत्र प्रदान किया जाता है। इन्हें बी.टी0सी0 शिक्षक कहा जाता है।

बी0एड0 शिक्षण प्रशिक्षण संस्थाओं में अध्ययनत् भावी शिक्षक ऐसे कौशलों को विकसित करने में समर्थ हो जाते हैं जो कि किशोरवय शिक्षार्थियों में माध्यमिक स्तर पर वांछनीय अनुभवों को विकसित करने में सफलता प्राप्त करने के योग्य बन जाते हैं।

यह अधिकांश शोधार्थी और शिक्षक स्वीकार करते हैं कि दोनों स्तरों (माध्यमिक तथा प्राथमिक) पर शिक्षार्थियों की व्यक्तित्व विशेषताओं की विभिन्नता के कारण शिक्षको के शिक्षण कौशल व सम्प्रेषण कौशलता अलग-अलग प्रकार की होती है।

प्रश्न तो यहाँ यह है कि क्या प्राथमिक स्तर पर शिक्षण करने वाले बी.टी.सी. शिक्षक एवं माध्यमिक स्तर पर शिक्षण करने वाले बी.एड. शिक्षक दोनों की भिन्न-भिन्न शिक्षण प्रशिक्षण प्रारूपों के कारण शिक्षण प्रभावशीलता समान है ? क्या इनकी व्यक्तित्व विशेषताएँ जो शिक्षण को प्रभावित करती हैं,यथा सुविधास्तर, स्वधारणा, कार्यात्यक मूल्य, आकांक्षा स्तर समान हैं ? क्या इन दोनो स्तरों के शिक्षकों की परिस्थितियों भी समान है या नही ? यह एक ज्वलन्त प्रश्न है जिनका उत्तर ज्ञात करना शोधार्थिनी के लिए आवश्यक महसूस होता हैं। वर्तमान शोध का उद्गम शोधार्थिनी के मन में उपजे इन प्रश्नों का उत्तर ज्ञात करने के लिए उद्गमित हुआ है और इसलिये बी.एड. एवं बी.टी.सी. प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की विशेषताओं का उनके व्यवसाय पर क्या प्रभावपड़ता है इसका अध्ययन करने हेतु इस समस्या का चयन किया गया है।

समस्या कथन - निश्चित शब्दों में समस्या कथन को निम्न प्रकार प्रस्तुत किया गया है।प्रस्तुत शोध माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के व्यक्तित्व एवं व्यवसायिक संतुष्टि का उनके शिक्षण पर प्रभाव का अध्ययन (होशंगाबाद जिले के संबंध में) शोध क्षेत्र को चुना गया है।

वर्तमान शोध में प्रयुक्त तकनीकी शब्दों की परिभाषा निम्नवत है:-

1. बी.टी.सी :- प्रत्येक जनपद में इस प्रकार के विद्यालय राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् उत्तराखण्ड द्वारा नियंत्रित होते हैं। बी.टी.सी प्रशिक्षण जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (DIET) द्वारा संचालित द्वि-वर्षीय पाठ्यक्रम हैं। बी.टी.सी प्रशिक्षण प्राप्तकर्त्ता बी.टी.सी अर्हतायुक्त शिक्षक कहलाता है।

2. बी0एड0 :- माध्यमिक स्तर के लिए अध्यापक प्रशिक्षण संस्थान खोले गये। प्रत्येकविश्वविद्यालय द्वारा मान्यता प्राप्त महाविद्यालयों में यह पाठ्यक्रम आयोजित किया गया है। बी0एड0 प्रशिक्षण राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद् (NCTE) द्वारा नियंत्रित होते हैं। वर्तमान समय में सरकारी तथा गैरसरकारी बी0एड0 महाविद्यालय स्थापित किए गए हैं। पहले यह प्रशिक्षण एक वर्षीय था, परन्तु वर्तमान समय में सरकार ने इसे द्वि-वर्षीय(चार सेमेस्टर) कर दिया है ताकि माध्यमिक स्तर पर कुशल एवं योग्य शिक्षको को प्रशिक्षित किया जा सके।

3. आकांक्षा स्तर - चौहान (1999) ने आकांक्षा स्तर को परिभाषित किया कि 'आकांक्षा स्तर, किसी कार्य के उस स्तर से सम्बन्धित है जिसके लिए कोई व्यक्ति भविष्य के लिए आकांक्षा करता है। किसी व्यक्ति या समूह की क्रियात्मकता उसके आकांक्षा स्तर पर निर्भर करती है।'

कोई शिक्षक अपने वर्तमान शिक्षण स्तर को पाने के पश्चात् भावी प्रयास में जिस स्तर को प्राप्त करने की आशा रखता है, उा शिक्षक का आकांक्षा स्तर कहलाता है।

4. सुविधा स्तर - अपने शिक्षण कार्य व अध्यापन व्यवसाय सम्बन्धी सुविधाओं व असुविधाओं की मात्रा से शिक्षक अपने शिक्षण वातावरण में शिक्षण हेतु सुविधा महसूस करता है और यह सुविधा स्तर उसके कार्य प्रभाव को प्रभावित करता है। शिक्षक के सुविधा स्तर से तात्पर्य उस स्तर से है जिस स्तर पर शिक्षक अपने कार्य को सुचारू रूप से प्रतिपादित करने में सुविधा महसूस करता है।

5. शिक्षक प्रभावशीलता - शिक्षक प्रभावशीलता का सम्बन्ध उस शिक्षण प्रभाव से है, जो एक शिक्षक द्वारा उस शिष्य पर डाला जाता है, जिसे वह पढ़ाता है। शिक्षक प्रभावशीलता इसका मापन नहीं है, कि क्या करता है?, बल्कि इसका मापन है कि शिक्षक द्वारा पढ़ाये गये शिष्य के व्यवहार में क्या परिवर्तन हुए हैं। शिक्षक प्रभावशीलता से वे निष्कर्ष सामले आते हैं, जिससे शिक्षा के उद्देश्य परिलक्षित होते हैं?

6. स्वधारणा - स्व-धारण अर्थात किसी व्यक्ति की अपनी प्रकृति के बारे में अनुभव।इसका तात्पर्य यह है कि व्यक्ति दूसरों के विचारों, अनुभवों व पृष्ठपोषण से उनके बारे में क्या दृष्टिकोण रखता है। स्व-धारणा मूल्यों, अभिवृत्तियों व विचारों से बनने वाली अनुभव संरचना है।

7. कार्यात्मक मूल्य - बुड्स के अनुसार 'मूल्य मानव व्यवहार के घटक तथा निर्धारक तत्व है। ये आदर्श और लक्ष्य दोनों का कार्य करते हैं।' कार्यात्मक मूल्य का अर्थ उन मूल्यों से है जो किसी व्यक्ति द्वारा किऐ गये कार्य के आदर्श, लक्ष्य, गुणवत्ता या उस कार्य की सफलता से सम्बन्धित होते हैं।

शोध समस्या का औचित्य - यह सत्य है कि आज शिक्षक सामान्यतया अपने व्यवसाय से असन्तुष्ट है। यद्यपि आज से कुछ वर्ष पहले जबकि शिक्षकों की दशा वास्तव में खराब थी, तब भी उनका व्यवहार इस तरह का नहीं था। वे छात्रों के भविष्य को प्राथमिकता देते थे तथा अध्यापक की गरिमा पूर्ण छवि बनाए रखते थे। वे समाज के सबसे आदरणीय पात्र थे। आज जबकि वेतन आकर्षक हो गया है, वे अन्य कार्यो में ज्यादा लिप्त पाए जाते हैं। जैसे-जैसे सुविधाएँ बढ़ती जा रही है, वैसे-वैसे तृष्णा का आकार भी बढ़ता जा रहा है। अन्य व्यवसायों की तरह आज का अध्यापक भी पैसे को अधिक महत्व देता है। आज वह बेचैन है तथा पुराने समय के गुरूओं से भिन्न है। वह आज नारेबाजी, रैली निकालने तथा लड़ाकू रूख अख्तियार करने में तनिक भी नहीं हिचकता। उसकी शान्तिप्रियता एक नकाब है, जिसे वह किसी भी क्षण हटा सकता है। इस वर्ग के कुछ लोग परीक्षा परिणामों में हेरा-फेरी करवाने, दलाली करने, स्थानान्तरण करवाने तथा लाभ के लिए राजनैतिक दलों से साँठ-गाँठ करने से नहीं चूकते हैं। ऐसे कामों को वेधनोपार्जन का अतिरिक्त साधन मानते हैं और यह भूल जाते हैं कि अध्यापक का सिर्फ और सिर्फ एक ही काम है- **'समाज को ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित करना।'**

अगर आज की शिक्षा व्यवस्था पर ऊंगलियाँ उठ रही हैं तो अध्यापक

का भी इसमें दोष है जिन्होंने कार्य सम्पादन में शिथिलता अथवा अशैक्षिक कठिनाईयाँ पैदा करके इस व्यवस्था को कमजोर किया। आज का अध्यापक येन-केन प्रकारेण अपनी सुविधानुसार विद्यालयों के चयन हेतु सदैव परेशान रहता है। शायद इसी कारण वह पठन-पाठन कार्य में या कक्षा में जाने में रूचि नहीं लेता। इस परिस्थिति में यह कहना अनुचित नहीं होगा कि आज का अध्यापक बदल गया है, पुराने मापदण्डों पर खरा नहीं बैठ पा रहा और वह बिना काम किये सफल डाक्टर के समान महत्वाकांक्षी है। आज का अध्यापक यह भूल रहा है कि आदर या पद कार्य से प्राप्त करना होता है, थोक के भाव नहीं मिलता। वह श्रेष्ठता प्राप्त करने का प्रयास ही नहीं कर रहा है। वह भूल गया है कि उसका भविष्य उसके ज्ञान एवं उसकी कार्यनिष्ठा में निहित है। कुछ विद्वानों का मत है कि समाज की शिक्षकों के नीति उपेक्षापूर्ण नीति भी शिक्षकों की दशा को दयनीय बनाने में महत्वपूर्ण कारक है। वेतन एवं अन्य सुविधाओं के बाद भी शिक्षक का जीवन समाज के अन्य लोगों की तुलना में खराब ही पाया जाता है। अच्छे स्कूलों, कॉलेजों या विश्वविद्यालयों में प्राथमिकता के आधार पर उनके बच्चों के प्रवेश का कोई इन्तजाम नहीं होता है। बच्चों को उच्च तकनीकी शिक्षा दिलानें में भी अपने को सामर्थ्यहीन महसूस करते हैं।

यद्यपि शिक्षक समाज में कुछ लोग अपने पथ से दिग्भ्रमित हुए है तथापि आज भी बहुत से ऐसे शिक्षक हैं जो अपने एवं अपने विद्यार्थियों के मूल्यों को पहचानते हैं तथा अपने कर्त्तव्यों एवं आदर्शो के प्रति समर्पित हों। अत: वर्तमान की आवश्यकता यह है कि युवा शिक्षक समाज जागृत हो, आकर्षक वेतनमान से अपने को सन्तुष्ट करें, अपने मूल्यों एवं आदर्शो के प्रति समार्पित हो और भ्रष्टाचार मुक्त, अवसाद मुक्त, संस्कार युक्त, नैतिकता युक्त, कर्त्तव्ययुक्त, एवं कर्म युक्त छात्रों का निर्माण करें। निश्चित रूप से ऐसे अध्यापक ही अपने शिक्षार्थियों के प्रति अपने कर्त्तव्य निवर्हन के योग्य कहे जाएगें।

अध्ययन का महत्व - अनुसंधान मानव ज्ञान भण्डार को विस्तृत करता है- अनुसंधान से मनुष्य का ज्ञान दिन प्रतिदिन बढ़ता रहता है क्योंकि अनुसंधान के आधार पर नवीन वैज्ञानिक तथ्यों, सामान्य नियमों तथा सिद्धान्तों की रचना होती है। अनुसंधान व्यावहारिक समस्याओं के समाधान का एक प्रबल यंत्र है- अनुसंधान व्यावहारिक समस्याओं के समाधान में सहायता करता है। आधुनिक जीवन के सामाजिक, औद्योगिक,शैक्षिक, सैनिक, मनोवैज्ञानिक तथा चिकित्सा आदि क्षेत्रों में अनुसंधान की अत्यधिक उपयोगिता है, इसलिए सामाजिक अनुसंधान, औद्योगिक अनुसंधान तथा शैक्षिक अनुसंधान का विस्तार निरन्तर मानव जीवन में बढ़ रहा है।

सम्बन्धित साहित्यावलोकन - सम्बन्धित साहित्य के सर्वेक्षण से शिक्षकों के आकांक्षा स्तर, प्रभावशीलता कार्यात्मक मूल्य,स्वधारणा, व सुविधा स्तर से सम्बन्धित निम्न अध्ययन प्राप्त हुए हैं-

1. वंगू एम.एल. (1984) ने, हाई स्कूल शिक्षकों के प्रभावशीलता तथा व्यक्तित्व व विद्वतापूर्णक्षमता का अध्ययन किया, जिसमें निष्कर्ष मिला कि व्यक्तित्व, समायोजन, प्रजातांत्रिक नेतृत्व, उच्चकोटि की बुद्धि व संवेगात्मक नियन्त्रण ही वे गुण हैं जिससे शिक्षक प्रभावशीलता बढ़ती है।

2. हुसैन एम.क्यू. (1985) ने, हाई स्कूल शिक्षकों की कश्मीर में कर्तव्य निष्ठा का उनकी शैक्षिक प्रभावशीलता, शैक्षिक प्रभुत्व व नैतिकता से सम्बन्ध का अध्ययन किया व निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए।(निजी व सरकारी स्कूल शिक्षकों की नैतिकता, कर्तव्य निष्ठा में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

3. सिंह आर0एस0 (1987) नें, पूर्वी उत्तरप्रदेश में हाईस्कूल स्तर से सम्बन्धित शिक्षकों की प्रभावशीता का अध्ययन किया जिसमें निष्कर्ष प्राप्त हुए कि - (1) पुरूष और महिला शिक्षकों की प्रभावशीलता प्राप्तांकों में सार्थक अन्तर नहीं था।

4. भासीन चंचल (1988) ने, भी हायर सेकेण्डरी स्कूल शिक्षकों की शिक्षण अभिरूचि व शिक्षण प्रभावशीलता का अध्ययन किया और निम्न निष्कर्ष दिए- (1) शिक्षण अभिरूचि व शिक्षण प्रभावशीलता के मध्य धनात्मक सह-सम्बन्ध पाया गया लेकिन इसका शिक्षक- समुदाय सहभागिता के साथ कोई सम्अन्ध नहीं था।

शोध समस्या का सीमांकन - वर्तमान शोध समस्या निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर सीमांकित है।

1. शोध समस्या का परिक्षेत्र मात्र होशंगाबाद जिले तक ही सीमित है। अन्य राज्य इसकेपरिक्षेत्र में सम्मिलित नही किए गए हैं।
2. छ: जनपदों में शोध मात्र माध्यमिक शिक्षकों के न्यादर्श तक ही सीमितहै।

शोध कार्य हेतु कुल 400 शिक्षकों का चयन किया गया वर्तमान शोध मात्र छ: चरों यथा - शिक्षकों के आकांक्षा स्तर, शिक्षण प्रभावशीलता,स्वधारणा, विद्यालयों में उपलब्ध सुविधा स्तर तथा शिक्षकों से कार्यात्मक मूल्यों तक ही सीमित है। इनके अलावा शिक्षकों के अन्य व्यक्तित्व अथवा अन्यशिक्षण सम्बन्धी घटक इस शोध समस्या में सम्मिलित नही किए गये हैं।

शोध के उद्देश्य - उपर्युक्त शोध समस्या के आलोक में शोधकर्त्री ने अपने शोध कार्य के अन्तर्गत निम्नलिखित उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया है-

1. भावनात्मक बुद्धिमत्ता के स्तर का पता लगाना।
2. नौकरी की संतुष्टि के स्तर का पता लगाने के लिए।
3. भूमिका प्रतिबद्धता के स्तर का पता लगाना।
4. शिक्षण योग्यता का स्तर ज्ञात करना।
5. भावनात्मक बुद्धिमत्ता और नौकरी की संतुष्टि के बीच संबंधों का अध्ययन करना।
6. भावनात्मक बुद्धिमत्ता के बीच संबंधों का अध्ययन करना और भूमिका प्रतिबद्धता।
7. भावनात्मक बुद्धिमत्ता और शिक्षण योग्यता के बीच संबंधों का अध्ययन करना
8. नौकरी की संतुष्टि और भूमिका प्रतिबद्धता के बीच संबंधों का अध्ययन करना।
9. नौकरी की संतुष्टि और शिक्षण योग्यता के बीच संबंधों का अध्ययन करने के लिए पेज
10. भूमिका प्रतिबद्धता के बीच संबंधों का अध्ययन करने के लिए और शिक्षण योग्यता।

शोध की परिकल्पनायें- शोध अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के आलोक में निम्नलिखित परिकल्पनाओं निर्माण किया गया।

1. शासकीय एवं अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों की महिला शिक्षकों के व्यक्तित्व में सार्थक अंतर नहीं है।
2. शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के पुरुष शिक्षकों के व्यक्तित्व में सार्थक अंतर नहीं है।
3. शासकीय माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरुष शिक्षकों के व्यक्तित्व में सार्थक अंतर नहीं है।

4. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरुष शिक्षकों के व्यक्तित्व में सार्थक अंतर नहीं है
5. शासकीय महाविद्यालय के कुल शिक्षक एवं अशासकीय माध्यमिक विद्यालय की कुल शिक्षकों के व्यक्तित्व में सार्थक अंतर नहीं है
6. शासकीय एवं अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों की महिला शिक्षकों की कार्य व्यवसायिक संतुष्टि में सार्थक अंतर नहीं है
7. शासकीय एवं अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में पुरुष शिक्षकों की कार्य व्यवसायिक संतुष्टि में सार्थक अंतर नहीं है
8. शासकीय माध्यमिक विद्यालय कि महिला शिक्षकों एवं पुरुष शिक्षकों की कार्य संतुष्टि में सार्थक अंतर नहीं है
9. अशासकीय माध्यमिक विद्यालय की महिला एवं पुरुष शिक्षकों की कार्य संतुष्टि में सार्थक अंतर नहीं है
10. शासकीय एवं अशासकीय माध्यमिक विद्यालय के कुल शिक्षकों की कार्य संतुष्टि में सार्थक अंतर नहीं है।

शोध विधि एवं प्रक्रिया– प्रस्तुत शोध अध्ययन में माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के व्यक्तित्व एवं व्यवसायिक संतुष्टि का उनके शिक्षण पर प्रभाव का अध्ययन (होशंगाबाद जिले के संबंध में) शोधा क्षेत्र को चुना गया है।शोध उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु शोध विधि का चयन करने के उपरान्त द्वितीय परिप्रेक्ष्य में शोध प्रविधियों का चयन करना था। शोधार्थिनी ने इस परिप्रेक्ष्य में निम्नलिखित प्रविधियों का प्रयोग किया है–

1. निरीक्षण
2. साक्षात्कार
3. परीक्षण
4. सांख्यिकीय तकनीकियाँ

1. निरीक्षण– निरीक्षण तकनीकी का प्रयोग शोधार्थिनी ने प्राथमिक संस्थाओं में प्रयुक्त दृश्य-श्रव्य सामग्रियों, शिक्षण कक्ष की विशेषताओं, शिक्षकों के पारस्परिक सम्बन्धों, शिक्षक तथा छात्रों के सम्बन्धों की धनात्मकता एवं उष्णता, शिक्षण विधियों के प्रयोग, छात्रों के निर्देशन हेतु प्रयुक्त तकनीकियां, खेल उपकरण एवं खेल का मैदान, प्रधानाध्यापक व शिक्षकों के पारस्परिक सम्बन्धों का अनौपचारिक रूप से न्यादर्श के लगभग एक प्रतिशत प्राथमिक संस्थाओं के न्यादर्श में इस तकनीकी का प्रयोग किया है। यह कहना अनावश्यक है कि निरीक्षण की समस्त प्रक्रिया अनौपचारिक थी। निरीक्षण के समय न तो छात्रों को, न ही शिक्षकों, न ही प्रधानाध्यापक को यह ज्ञात हो पाया कि शोधार्थिनी यह क्रिया कर रही है और किस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कर रही है।

2. साक्षात्कार– साक्षात्कार विधि का प्रयोग शोधार्थिनी ने शिक्षकों से प्राथमिक शिक्षा संस्था सम्बन्धी प्रश्नों के द्वारा किया। आमने-सामने प्रश्नोत्तर रूप में उसने संस्था के प्रधानाध्यापक, अन्य शिक्षकगण, छात्रों के दृष्टिकोण को पुनः जानने का प्रयास किया यह कहना यहाँ पर अनावश्यक है कि साक्षात्कार प्रविधि का प्रयोग उन्हीं प्राथमिक तथा माध्यमिक संस्थाओं में किया गया जहाँ शोधार्थिनी द्वारा निरीक्षण प्रविधि का प्रयोग किया गया था।

3. परीक्षण– इस प्रविधि का प्रयोग न्यादर्श में सम्मिलित शिक्षकों यथा- बी.एड्. तथा बी.टी.सी. अर्हता युक्त शिक्षकों की पाँचों विशेषताओं यथा- स्व-धारणा, आकांक्षा स्तर, सुविधा स्तर, प्रभावशीलता व कार्यात्मक मूल्यों के स्तर को ज्ञात करने में किया जाएगा।

शोध उपकरण – शोध अध्ययन में निम्नांकित शोध उपकरणों का प्रयोग किया गया है।

1. आकांक्षा स्तर हेतु डॉ. ऊषा जौहर निर्मित आकांक्षा मापनी।
2. शिक्षक प्रभावशीलता – डॉ0 प्रमोद कुमार एवं डॉ0 डी.एन मुथा।
3. स्वधारणा डॉ0 आशा शर्मा एवं डॉ0 श्रीकान्त मौर्य।
4. कार्यात्मक मूल्यों के मापन हेतु डॉ0 सीमा संधी।
5. शिक्षा संस्था सुविधाएँ हेतु – डॉ0 के0जी0शर्मा।

जनसंख्या एवं न्यादर्श – कुमाँऊ मण्डल के प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत लगभग (54487) शिक्षकों पर उपर्युक्त पॉच शोध उपकरणों का प्रशासन कठिन कार्य था और न्यादर्श काफी बड़ा व जटिल होने की सम्भावना थी, जिसमें शोध कार्य करने में कठिनाईयों का सामना करना पड़ सकता है। इसलिए शोधकर्त्री ने प्रत्येक जिले से एक विकासखण्ड का चयन अनियमित प्रतिचयन की लाटरी विधि द्वारा किया। इस विधि केप्रयोग से शोधकर्त्री ने जनपद वार एक-एक विकास खण्ड का चयन किया है। उन विकासखण्डों में स्थित प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयों का चयन भी लाटरी विधि द्वारा किया गया, क्योंकि एक विकासखण्ड में प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयों की संख्या एवं शिक्षकों की संख्या अधिक थी। इस प्रकार कुल 250 बी.टी0सी0 एवं 250 बी0एड0 शिक्षकों का चयन किया गया है।

आँकड़ों का संकलन एवं विश्लेषण – शोधकर्त्री को पॉचों शोध उपकरणों के प्रशासन में लगभग 2-3 माह का समय लगा, क्योंकि क्षेत्र काफी विस्तृत था। प्राथमिक विद्यालयों का दुर्गम स्थान में होना यातायात की सुविधा भी सरल नही थी, इस कारण शोधकर्त्री ने शोध उपकरणों के प्रशासन में समय चक्र एवं तिथिवार का निर्माण किया।

शोधकर्त्री प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण सांख्यिकीय विधियाँ माध्य, मानक विचलन, टी-मूल्य, सहसम्बन्ध गुणांक आदि के आधार पर करने के पश्चात शोध परिणामों की व्याख्या एवं निष्कर्षो को प्रस्तुत किया है। इससे सम्बन्धित सारणियों को यथास्थान अध्यायक्रम में दिया गया है।

शोध निष्कर्ष :

1. शिक्षको की स्वधारणा का उनकी शिक्षण प्रभावशीलता, सुविधास्तर,आकांक्षास्तर तथा कार्यात्मक मूल्यों से महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध है।
2. शिक्षकों की स्वधारणा का सुविधा स्तर एवं शिक्षण प्रभावशीलता से नगण्यऋणात्मक सह – सम्बन्ध है।
3. शिक्षकों की प्रभावशीलता का स्वधारणा, सुविधा स्तर, आकांक्षा सतर एवंकार्यात्मक मूल्यो से नगण्य ऋणात्मक सह-सम्बन्ध है।
4. शिक्षकों की सुविधा स्तर का स्वधारणा, शिक्षण प्रभावशीलता, आकांक्षा स्तरऔर कार्यालय मूल्यों में नगण्य ऋणात्मक सह-सम्बनध है।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि उपर्युक्त सभी चरों (स्वधारणा, शिक्षण प्रभावशीलता, सुविधा सतर, आकांक्षा स्तर कार्यात्मक मूल्यों) मेंनगण्य सह-सम्बन्ध पाया गया है।

शैक्षिक निहितार्थ – किसी भी उद्देश्यपूर्ण कार्य के निहितार्थ आवश्यक होते है क्योंकि कार्य की सार्थकता उसके निहितार्थ से आँकी जाती है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर के बी0एड0 एवं बी0टी0सी0 शिक्षकों की स्वधरणा, आकांक्षास्तर, सुविधास्तर, प्रभावशीलता एवं कार्यात्मक मूल्यों के सन्दर्भ में अध्ययन किया गया है। अत: शोध अध्ययन विद्यार्थियों, शिक्षकों, प्रधानाचार्य, संस्था प्रबंधकों हेतु निहितार्थ रख सकते हैं।

शोधार्थी द्वारा किए गए शोध कार्य से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर प्रस्तुत शोध अध्ययन के शैक्षिक निहितार्थ को अग्रांकित रूप से प्रस्तुत किया गया है।

1. विद्यार्थी हेतु – एक विद्यालय का केन्द्र विद्यार्थी होता है। विद्यार्थी के जीवन में शिक्षक का महत्वपूर्ण स्थान रहता है। जब शिक्षक प्रभावशाली ढंग से शिक्षण करते हैं तो विद्यार्थी की स्वधारणा और आकांक्षास्तर उच्च होती है जिससे कार्यात्मक मूल्यों में वृद्धि होती है। सुविधा प्रदत्त शिक्षण शैली विषय में रूचि उत्पन्न करती है।

2. शिक्षक हेतु – किसी राष्ट्र के विकास में शिक्षक की अहम भूमिका होती है शिक्षा की गुणवत्ता में शिक्षक के शिक्षण की भूमिका होती है। एक शिक्षक विद्यार्थियों का सवार्गीण विकास करने में सहायक होता है परन्तु यह भी शिक्षक की शिक्षण प्रक्रिया पर निर्भर करता है। शोध अध्ययन मे पाया गया कि प्राइमरी एवं माध्यमिक स्तर के शिक्षक शिक्षण में विभिन्न चरों का प्रयोग करते हैं। शिक्षण कौशलों के प्रयागे द्वारा वे स्वयं में परिवर्तन लाकर विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धि को बेहतर बना सकते हैं और अपने शिक्षण को प्रभावी बना सकते है।

3.स्कूल प्रबन्धकों हेतु –स्कूल प्रबन्ध के सहयोग के बिना शिक्षक व प्रधानाचार्य स्कूल को प्रगति पद पर अग्रसर नही कर सकते। कई दृष्टिकोण से स्कूल प्रबन्धन का सहयोग विद्यालय व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने में अनिवार्य समझी जाती है। स्कूल प्रबन्धन हठधर्मिता, पक्षापातपूर्ण रवैया, अनेक ऐसे कारण है जो शिक्षक व प्रधानाध्यापक को अपनी पूर्ण निष्ठा व मेहनात से कार्य करने में बाधक सिद्ध होते है। अत: यह शोध अध्ययन उन्हेंयह कर्त्तव्यबोध कराता है कि उन्हें भी विद्यालय को प्रगति शिखर पर आरूढ़ करने हेतुतन-मन,धन से सहयोग करना होगा।

भावी शोध हेतु सुझाव – प्रस्तुत अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो के फलस्वरूप नवीन पक्ष तथा कुछ प्रश्न भी उभरे है, जिनके उत्तर प्राप्त करना भावी शोध का विषय हो सकते हैं ये सम्भावनाएँ निम्न हो सकती हैं-

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन में होशंगाबाद जिलेके शिक्षकों की स्वधारणा, आकांक्षा स्तर, प्रभावशीलता, सुविधास्तर, कार्यात्मक मूल्यों का अध्ययन किया गया है। इसके अतिरिक्त गढ़वाल मण्डल में भी यह शोध किया जा सकता है।
2. उच्च शिक्षा में कार्यरत् शिक्षको की स्वधारणा, आकांक्षा स्तर, सुविधास्तर, प्रभावशीलताएवं कार्यात्मक मूल्यों का भी अध्ययन किया जा सकता हैं।
3. प्रस्तुत शोध अध्ययन प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षकों की विभिन्न व्यक्तित्व विशेषकों (स्वधारणा, आकांक्षास्तर, सुविधा स्तर, प्रभावशीलता, कार्यात्मक मूल्य) के सन्दर्भ में किया गया है। भावी शोध कार्य इनके अतिरिक्त शैक्षिक योग्यता, शिक्षण अनुभव, शिक्षण दक्षता, सृजनात्मकता, व्यक्तिगत कारक आदि के सन्दर्भ में भी किये जा सकता हैं।
4. प्रस्तुत शोध में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। अत: किसी अन्य प्रविधि का उपयोग करते हुए इस अध्ययन के निष्कर्षो की जॉच की जा सकती हैं।
5. माध्यमिक स्तर या विभिन्न विषयों के शिक्षको की स्वधारणा, आकांक्षा स्तर सुविधास्तर, प्रभावशीलता एवं कार्यात्मक मूल्यों का भी तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अग्रवाल, जे0सी0 (2009)ए 'शैक्षिक तकनीकी तथा प्रबन्ध के मूल तत्व', अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा, कुल पृष्ठ संख्या 424.
2. आनन्द, एस0पी0 (1998), 'प्राथमिक स्तर पर शिक्षक प्रभावशीलता पर प्रेरणा का अध्ययन', Indian Education Review – Vol 33(1) 117-131 in IEA, NCERT, New Delhi, vol. 1, Number 2, July 2001.
3. अत्रेय, जयशंकर (1989), 'शिक्षकों की प्रभावशीलता का डिग्री कॉलेज स्तर पर अध्ययन',पी0एच0-डी0 (एजूकेशन), आगरा विश्वविद्यालय, एम0बी0बुच फिफ्थ सर्वे, वोल्यूम सेकेण्ड (1988-1992)
4. अब्दुल समद (1986),'चंडीगढ़ के राजकीय हाई स्कूलों के संगठनात्मक वातावरण के शिक्षकों की व्यावसायिक संतुष्टि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन', (आयु स्तर के आधार पर विशिष्ट बी0टी0सी0 शिक्षकों की व्यावसायिक संतुष्टि का अध्ययन, शोध प्रबन्ध, एम0फिल0, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद)।
5. डॉ0जी0 संगीता (2011), 'कॉलेज शिक्षकों की उनकी व्यावसायिक संतुष्टि के संबंध में शिक्षण प्रभावशीलता', जनरल ऑफ टीचर एजूकेशन एण्ड रिसर्च, वोल्यूम 6, नं0 1 जून 20011।
6. भटनागर, डॉ0 ए0बी0 एवं भटनागर, डॉ0 अनुराग (2011), 'शैक्षिक अनुसंधान की कार्य प्रणाली', आर लाल बुक डिपो, मेरठ, कुल पृष्ठ संख्या 298।
7. भटनागर, डॉ0 ए0बी0 (2007), 'भारत में शैक्षिक प्रणाली का विकास', आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ, कुल पृष्ठ संख्या 488।
8. बाजपेयी, अमिता और कन्नौजिया, आरती (2007), 'माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की व्यावसायिक आकांक्षा का एक अध्ययन' भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका वर्ष 26, अंक- 1, जनवरी-जून 2007, लखनऊ।
9. भसीन, चंचल (1988),'हायर सेकेण्डरी स्कूल शिक्षकों की शिक्षण अभिरूचि व इसका शिक्षण प्रभावशीलता से सम्बन्ध', पी-एच0डी0 (एजूकेशन), रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय,एम0बी0बुच फिफ्थ सर्वे, वोल्यूम सेकेण्ड (1988-1992)।
10. भटनागर, जे0एन0 (1979), 'एन इन्वेस्टिगेशन इन टू द वैल्यू एस्पीरेशन एण्ड पर्सनालिटी ट्रेंड्स ऑफ राजस्थान', एम0बी0बुच, थर्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, पृष्ठ संख्या 333।
11. छाया (1994),'प्रभावी व अप्रभावी शिक्षकों के व्यक्तित्व समायोजन शिक्षण अभिवृत्ति एवं संवेगात्मक अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन', ('मेरठ शहर के अनुदानित एवं गैर-अनुदानित प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापक-अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता का तुलनात्मे अध्ययन', लघु शोध प्रबन्ध, आई0आई0एम0टी0 कॉलेज ऑफ एजूकेशन, मेरठ)।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

A Study of Working Capital Management in Small Scale Industries in J & K

Dr. L. N. Sharma* Mohd Rafi Malla Imtiyaz Rashid Lone*****

Abstract - The Role of Small Scale Industries (SSIs) has always been supported in a country like India with variousopinions such as employment, equality, latent resource, trickling effect, insurance against social tension, distributive effect, creation of social eco-system and decentralization etc. The other arguments in favour of this are making provision for self-employment and capital formation. Study of SSIs has received many responses from various economists. The performance of the small-scale sector has a direct impact on the growth of the overall economy in terms of number of units, production, employment and exports. It may help to understand its role in the economic development of the country.

Industrialization brings about social and economic changes that areessentially important for sustainable survival and development of humansociety in background of continuously increasing population size, shrinkingagricultural lands, inadequacy of various natural resources andunemployment. Industrialization also leads to protection and development ofagrarian society being the backbone of our country. To study the workingCapital Management Small Scale Industries.

Key words - Importance of Working Capital, Growth of Current Assets Structure of working Capital, Effectiveness of Working Capital, SSIs, Production, Employment, Exports, GDP.

Introduction - Small Scale Industries have played a very important role in the development of country. Thegovernment in its budget normally emphasizes on the contribution of the small and medium scale enterprises. The role of small-scale industries has always been supported in a country like India with various opinions such as employment, equality, latent resource, trickling effect, insurance against social tension, distributive effect, creation of social eco system and decentralization etc. The other arguments in favour of small-scale industries are making provision for self-employment and capital formation and they are skill light, import light and quick yielding. Analysis of the data on SSIs has received different responses from different economists in different studies, right from one of the earliest studies in1961. The performance of the small-scale sector has a direct impact on the growth of the overall economy. The performance of the small scale sector in terms of parameters like number of units, production, employment and exports will help to understand its role in the economic development of the country.

The term SSI has been defined and redefined from time to time andvariably from country to country, depending upon their historical conditions and economic growth. A small industry in a developed country may not be that small as compared to its counter-part in adeveloping country. Different factors such as size of the enterprise,number of persons employed, amount of investments, energyinput, physical measure of production, nature of activitiesengaged in etc., make the basis for defining small scale industry.In most of the industrially advance countries, number of personsemployed' is taken as the basis of distribution between large andsmall industries.

The Ministry of Industry in 1966 redefined in SSI as 'Small-ScaleIndustries include all industrial units with a capital investment ofnot more than Rs. 7.5 lakhs irrespective of the number of personsemployed. Capital investment for this purpose will meaninvestment in plant and machinery only. Undertaking havinginvestment in fixed assets in plant and machinery not exceeds Rs.10 lakhsare small-scale industries and Undertaking havinginvestment in fixed assets in plant and machinery not exceeding Rs.15 lakhs are ancillary Industries.

Concept of Small Scale Industries (SSIs): Small Scale Industries (SSI) are those industries in which manufacturing, providing services, productions are done on a small scale or micro scale. For example, these are the ideas of Small scale industries: Napkins, tissues, chocolates, toothpick, water bottles, small toys, papers, pens. Small scale industries play an important role in social and economic development of India. These industries do a one-time

*HOD (Commerce) Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
*** Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

investment in machinery, plants, and industries which could be on an ownership basis, hire purchase or lease basis. But it does not exceed Rs. 1 Crore.

Essentially small scale industries comprise of small enterprises who manufacture goods or services with the help of relatively smaller machines and a few workers and employees. Basically, the enterprise must fall under the guidelines set by the Government of India. At the time being such limits are as follows,

1. For Manufacturing Units for Goods: Investment in plant and machinery must be between 25 lakhs and five crores.
2. For Service Providers: Investment in machinery must be between 10 lakhs and two crores.

In developing countries like India, these small scale industries are the lifeline of the economy. These are generally labour-intensive industries, so they create much employment. They also help with per capita income and resource utilization in the economy. They are a very important sector of the economy from a financial and social point of view.

Working Capital Management: Working Capital Manage -ment is the life blood for every small scale industry, therefore management of working capital considered as one of the most important area in the field of financial management. Working capital management is the most important area in the field of financial management. Every small scale industry as well as large scale industry requires some amount of fixed capital to get fixed assets like plant and machinery, land and building, furniture, vehicles, loose tools etc. along with the fixed capital. Every small scale industry and large scale industry requires additional capital for financing day to day activities which is known as 'working capital'. Working capital is very important for smooth conduct of business activities. Working capital is very crucial for dictating success or failure of an industry.

Researcher is interested in examining working capital management of small scale industry and to determine management performance in certain small scale industry, the efficiency of working capital management is determined by the efficient administration of its various components like cash management, accounts receivable management, and inventory management.

Concept of Working Capital: "Working Capital" is the term used basically to indicate the financial condition of a firm or an organization in the short term. In other words, it can be called a scale to measure the overall efficiency of the business entity.

"Working Capital", also known as net working capital (NWC), is the difference between a company's current assets- such as cash, accounts receivable/customers' unpaid bills, and inventories of raw materials and finished goods - and its current liabilities, such as accounts payable and debts. NWC is a measure of a company's liquidity, operational efficiency, and short-term financial health. If a company has substantial positive NWC, then it should have the potential to invest and grow. If a company's current assets do not exceed its current liabilities, then it may have trouble growing or paying back creditors. It might even go bankrupt.

The Working Capital formula tells us the short-term liquid assets available after short-term liabilities have been paid off.

Working Capital = Current Assets – Current Liabilities

Literature Review:

Adina Elena Danuletiu (2010),the purpose of this study to analyse the efficiency of working capital management of companies or firms or industries from Alba country, The researcher also study the relation between the efficiency of the working capital management and profitability. The conclusion of the study says that there is a negative relationship between working capital management and profitability.

Srinivas K T, (2013), has studied the performance of micro, small and medium enterprises and their contribution in India's economic growth and concluded that MSMEs play a vital role in the inclusive growth of Indian economy. .

Lalin and Sabir (2010), concludes that regulations are the principal operator why SMEs prepare financial statements. An early study of financial statement users of SMEs exhibit that owners, managers, tax authorities and lenders are the main users.

Walhlstedt. (1996), believes that conventional accounting reports play a significant role in SMEs but argues that the reports must be adjusted in order for them to be understood, proposing the use of the cash basis rather than the accruals basis.

Research Methodology: The Research is Descriptive in Nature. The study is based on primary data and secondary data. The study covers mainly working capital and performance of the Small Scale Industries in Jammu and Kashmir. The datahave collected from various government reports, Journals, books,District Industrial Reports etc.

Limitations of the Study: No Research Work is perfect in all respects. Base on my knowledge and different research and publication in my research work also there are many limitation and barrier towards working capital managements of small scale industry which as follows:

1. Due to lack of time and monetary matter, researcher has taken only Limited area for the study.
2. The study is based on the opinion of respondent (questionnaire) and these can be bias.
3. The questionnaire might have excluded some important factor therefore the analysis and interpretation might be exhaustive.
4. For Small Scale Industry registration is not compulsory therefore it is very difficult to find out exactly number of industry in J & K Union Territory State of India.

Objectives of the Study:

1. To study the working capital management and finance in respect of small scale industries.
2. To examine the performance of Small Scale Indus-

tries in Jammu and Kashmir.

3. To study the sources of working capital used by the selected units.
4. To study the ways to increase the efficiency of the working capital of the selected units.

Hypothesis of the Study:

Ho_1: There would be no significant difference in the quick ratio of selected Small Scale Industries of Kashmir Division during the period of the study.

Ho_2: There would be no significant difference in the Net Cash Flows of selected Small Scale Industries of Kashmir Division.

Data Analysis: Analysis of Working capital management short term financial position was carried outfor financial analysis of different categories of SSI units working in the Jammu and Kashmir chosen for the present study. A total of 120 SSI units as samples under 04 categories were investigated for their financial performance.

Primary Data:

1. Primary data collected form the questionnaire.
2. Primary data also collected from face to face interview with entrepreneurs, officials and non-officials and others experts in the field.

Secondary Data:

1. Financial reports of the industry.
2. Books, Magazines, Newspapers, libraries, Internet etc.

Assessment of Working Capital:

The owner of the unit always tries to find out whether his unit is effectively utilizing the working capital or not. The methods for such assessment can be:

1. **Ratio Analysis,**
2. **Fund Flow Analysis.**

The methods used by the selected small scale industries of Kashmir Division have been shown in the below table:

Table No. 1: Method of Assessment of Working Capital:

S.	Methods Adopted	M	L	F	E	C	Total
1	Ratio Analysis	11	04	08	02	03	**28**
2	Fund Flow Statement	17	06	00	02	02	**27**
3	No Method Adopted	19	21	19	04	02	**65**
	Total	**47**	**31**	**27**	**08**	**07**	**120**

Source: Survey Field:

Interpretation: From the above table it is conclude that about 50% of the total units do not have any particular method of working assessment. Either they do not know about the technique or they are not following the methods formally. Only food industries do not use the method of fund flow statement. Other industries have used the both the method for assessment of working capital.

Control Used For Working Capital Management: The control methods used in working capital management in the selected small scale industries Kashmir Division are given below:-

Table No. 2: Control Methods for Working Capital:

S.	Methods Adopted	M	L	F	E	C	Total
1	Cash and bank balance report	25	09	09	03	03	**49**
2	Sale/production budget report	13	11	09	03	04	**40**
3	Total w/c report	05	10	05	02	00	**22**
4	Two or more methods of the above	04	01	04	00	00	**09**
	Total	**47**	**31**	**27**	**08**	**07**	**120**

Source: Survey Field:

Interpretation: The above table shows that more than 90% of the units exercise some system of control in their working capital management. They make efforts to know on a continuous basis the relationship between their activities and find funds. Most of the units keep a close watch on their cash and bank balance reports.

Shortage of Working Capital: The following table shows the broad areas of shortage of working capital and their frequency of occurrences

Table No. 3: Area of Shortage of Working Capital:

S.	Areas	Always		Seasonal		Never	
1	Cash	50	41.67	60	50	10	08.33
2	Inventories	30	25.00	60	50	30	25.00
3	Other Areas	40	33.33	00	00	80	66.67
	Total	**120**	**100**	**120**	**100**	**120**	**100**

Source: Survey Field:

Interpretation: The above table shows that against the general belief, we found that 25% of the units were not at all worried about the working capital shortage either in cash or in inventory. No definite reaction could be secured on discussion but it is strongly indicated that units owned by people who were essentially merchants and/or money lenders felt very secure, in their working capital position.

Adequacy of Working Capital: The size of working finance as divided by month's cost of production/operation or months, average sales/turnover shows its adequacy/ inadequacy when the ratios so obtained are compared with the guide posts fixed in these regards.

"Working Finance in Terms of Months, Cost of production"

$$\frac{\textbf{WC}}{\textbf{Value of production}} \textbf{ X 12}$$

Table No. 4: Working finance in terms of months cost of production in 120 Units:

S.	Years	M	L	F	E	C	Trend
1	**2012 – 2013**	0.20	0.60	0.50	1.10	0.20	**0.52**
2	**2013 – 2014**	0.20	0.90	0.30	1.30	0.30	**0.60**
3	**2014 – 2015**	0.40	0.70	0.20	1.50	0.40	**0.64**
4	**2015 – 2016**	0.50	0.40	0.40	1.40	0.20	**0.58**
5	**2016 – 2017**	0.40	0.60	0.40	1.20	0.30	**0.58**
	Total		**0.34**	**0.64**	**0.36**	**1.30**	**0.28**

Source: Survey Field:

Chart No. 1: (see in last page)

Interpretation: The above table shows that the units on an average kept the finance to meet the requirement of 0.52 to 0.64 months cost of production. In the year 2015 - 16 to 2016 -17 the period was stationary to the tune of 0.58 & 0.58 months. Coming to the individual industry group the

engineering and leather units kept the working finance for more than the general average.

Working Finance In Terms Of Month's Average sales Turnover:

Table No. 5: Working Finance in terms of months' average sales turnover in 120 units:

S.	Years	M	L	F	E	C	Trend
1	**2012 – 2013**	0.30	0.40	0.40	1.20	0.20	**0.50**
2	**2013 – 2014**	0.40	0.30	0.20	1.00	0.40	**0.46**
3	**2014 – 2015**	0.30	0.30	0.30	1.40	0.20	**0.50**
4	**2015 – 2016**	0.40	0.60	0.10	1.20	0.30	**0.50**
5	**2016 – 2017**	0.20	0.40	0.50	1.30	0.30	**0.54**
	Total	**0.32**	**0.40**	**0.30**	**1.22**	**0.28**	

Source: Survey Field:

Chart No. 2: (see in last page)

Interpretation: From the above table it can be seen that the units had the working finance below one month's sales turnover. The rate 0.50 in 2012 - 13 and after that it increased to 0.54 in 2016 -17.Individually, the working finance in terms of sales turnover of small scale industries was higher in engineering units. The lowest working finance was in food and chemical industries.

Position of quick ratio in selected SSIs of Kashmir Division is given below:

$$\text{Quick Ratio} = \frac{\text{Quick Assets}}{\text{Current Liabilities}}$$

Table No. 6: Quick Ratios for 120 Units:

S.	Years	M	L	F	E	C	Trend
1	2012 – 13	0.62	0.60	3.20	2.05	0.85	**1.64**
2	2013 – 14	0.54	0.57	0.70	2.36	0.82	**1.37**
3	2014 – 15	0.62	0.72	0.90	3.11	0.73	**1.36**
4	2015 – 16	0.40	0.50	0.64	2.18	0.52	**0.84**
5	2016 – 17	0.64	0.51	0.95	1.10	0.84	**0.80**
	Total	**0.56**	**0.58**	**1.28**	**2.16**	**0.75**	

Source: Survey Field:

Chart No. 3: (see in last page)

Interpretation: The above table reveals that the average ratio for the 5 years 2012 - 13 to 2016 - 17 range from 0.80 to 1.64 as shown in the above table. Here the industry which has above 1:1 Quick ratio is engineering. This shows that in the case of majority of industrial units the quick assets (cash, receivables and short term investments) are not adequate to liquidate current liabilities at particular point of time. The current ratio was higher but the quick ratio is far below the normal 1:1ratio, which shows that a large part of C.A. is blocked in inventories except in the engineering and food industries. This shows that a slight fall in the prices of inventories will further weaken their liquidity position.

Testing Hypothesis:

1. Hypothesis:

Ho_1: There would be no significant difference in the quick ratio of selected Small Scale Industries of Kashmir Division during the period of the study.

Table No. 7: ANOVA Analysis Quick Ratio:

Sources of Variations	SS.	Df	MS	F	F Crit.
Between Samples	**9.17**	**04**	**2.29**	**6.36**	**2.87**
Within Samples	**7.19**	**20**	**0.36**		
Total	**16.36**	**24**			

Source: Survey Field:

Interpretation: The above table indicates the calculated value of "F". The calculated value of "F" is 6.36 which is more than the table value of "F". The table value of "F" at '5%' level of significance is '2.87'. It indicated that the null hypothesis is rejected. So, it indicates that there is a significant difference in the quick ratio of selected Small Scale Industries of Kashmir Division.

Conclusion: The small scale industries play a vital role in the growth of the country. It contributes almost 40% of the gross industrial value added in the Indian economy. Small scale industries are discussed all over the states and they satisfy local demand. The government has also introduced various schemes and incentives for the promotion of SSIs and provide institutional infrastructure for SSIs. SSI has been very helpful in generation of revenue mainly through export of goods and addressing the challenges such as Finance, Raw material, Marketing, underutilization of capacity. Skilled manpower, Project planning, Infrastructure, employment and same time it has raised the socio-economic condition of people.

The total selected small scale industries of Kashmir Division were found to have correct concept of working capital components. The position regarding conceptual clarity about working capital in the selected industries appear to be highly satisfactory. Step may be taken to encourage the use of standard accounting classification regarding components of working capital through educational process in the form of extension work.

The selected small scale industries subscribe to the gross working capital concept and consider current liabilities as a source of workingfinance.80% of the selected small scale industries were found to have total centralized of working capital management authority with proprietor sand partners. 15% of the selected industries delegated this authority to a very limited extent to their industries managers. The main reason stated for centralization of this function is not financial but the need to maintain secrecy.75% of the selected industries were found to determine working capital requirements on the basis of production and sales. All the selected industries belonging to chemical industries were found to adopt this practice. But selected industries to plastic industries were not found to have adopted this basis. Only 12.5% of the selected industries were not determining their working capital requirements. So there is a good degree of awareness among the selected small scale industries of Kashmir Division.

Size of working capital were determined in different ways, 50% units of each industry group estimate the size of working capital the basis of production or sales. 13 units out of 120 units estimate their size of working capital on the basis of fixed capital. The method adopted by these

units shows their belief that there is a positive correlation between fixed capital and working capital. 25% of the units do not adopt any formal method for estimating the size of working capital. The turnover of current assets found to have Industry-wise analysis shows that the rate of turnover of current assets has increased in mining and leather units during period. The engineering, food and chemical units showed a declining trend. The rate shown by the engineering was the lowest. High turnover rate of current assets over the period under study. The trend has decreased from 3.62 to 2.76 in 2015-16. Efficiency of utilization of current assets may be increased weather by increasing sales, or reducing quantum of working capital, or by adopting both the ways as the situation permits in a particular case.

As far as the profitability of the current asset is concerned in selected small scale industries were found to have improved their performance during the period of study. The rate of net profit on current assets increased, over the period study except 2013 – 14. The rate of increase was significant as compared to 2012 – 13. The rate of net profit on current assets in 2014 - 15 was low because of higher amount of current assets and higher payments to labourers.

These facts were gathered at the time of personal interview with the entrepreneurs. And the overall trend of the industry was increased from 4.36 to 6.11in the year 2016 - 17. And the overall performance in mining and leather units was better because the average of the mining units is 12.15 which is higher than other units.

References:-

1. Annual Report (2003-2004), Ministry of Small Scale Industries, Govt. of India, New Delhi.
2. Arora A.K. (2002). Financing of small Scale Industries, Deep & Deep Publishers, and New Delhi.
3. Bajaj, K.K, (1992). Factoring Service Make a Doubt in India, Financial Express, August 20, 1992.
4. Dhar, P.N. and Lydal, H.F.(1961), “Role of small enterprises in economic development”, New Delhi
5. Gujarati, D. N. (1995), “Basic Econometrics” Fourth Edition, McGraw Hill, Boston.
6. Goldar, Biswanath (1988), “Relative efficiency of modern small scale industries in India”, Small Scale Enterprises in Industrial Development- an Indian Experience, Sage Publication.
7. Sandesara, J.C.(1969), “Size and Capital Intensity in Indian Industry”, Bombay.
8. Bharathi Dr. G. Vijaya, Subbalakshumma Dr. P. and Reddy P. Harinatha (2011), Promotion of Small Scale Industries: - A Panoramic View International Journal of Enterprise Computing and Business Systems, http://www.ijecbs.com/July2011/15.pdf, accessed on 13.11.2011.
9. Charantimath Poornima (2006), Entrepreneur Development Small Business Enterprise. Darling Kindersley (India) Pvt. Ltd, New Delhi.
10. Industrial estate handicraft and skills Kashmir Srinagar.
11. Directorate of industries and commerce, Jammu & Kashmir government.
12. J & k industry limited handicraft (S&E) corporation.

Chart No. 1:

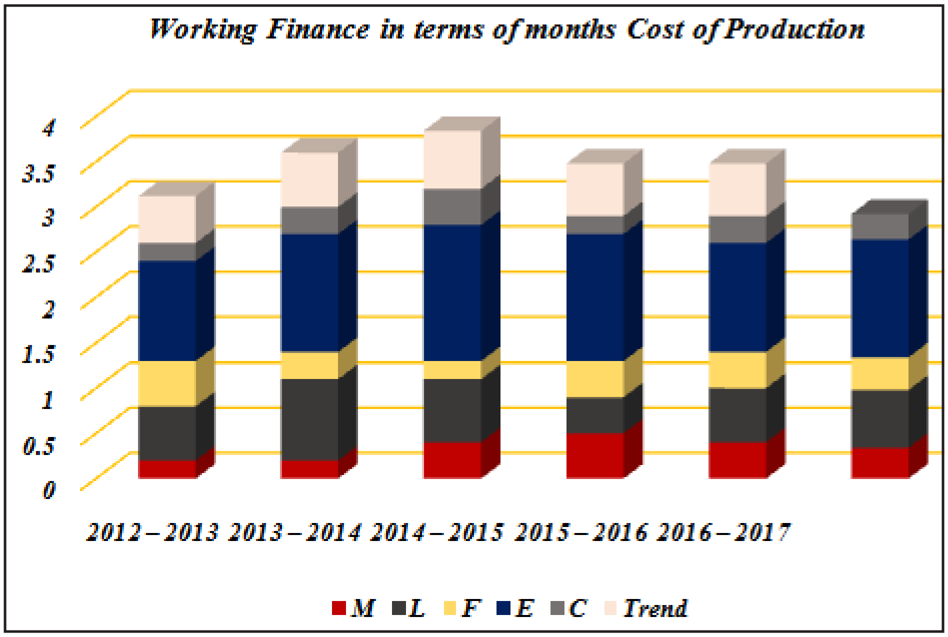

Chart No. 2:

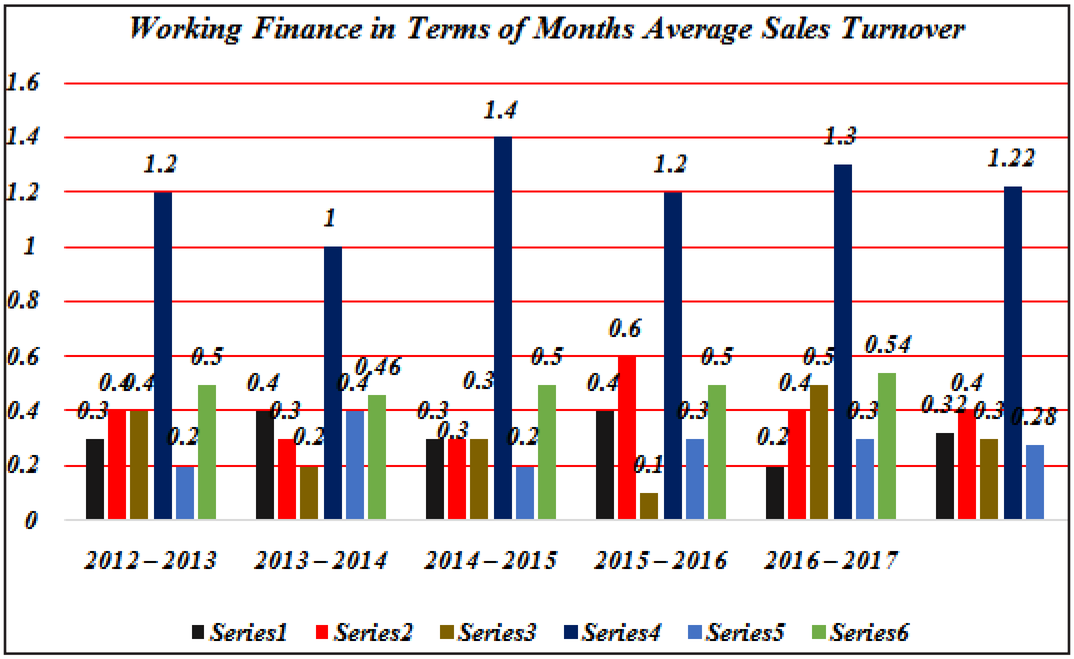

Chart No. 3:

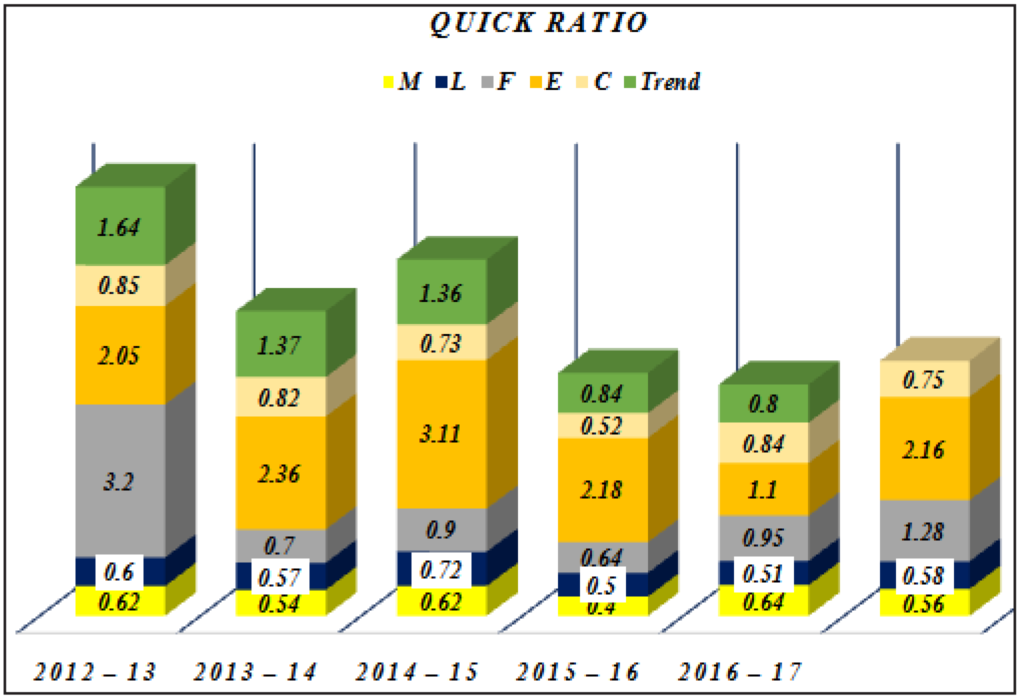

****

मध्यप्रदेश के औद्योगिक विकास का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. सी. एम. मेहता*   मुकेश बाथम **

प्रस्तावना – भारत में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम क्षेत्र का ग्रामीण एवं शहरी रोजगार केअवसर उपलब्ध कराने तथा देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान है। इस क्षेत्र में लगभग 1.3 करोड़ इकाईयों के माध्यम से लगभग 3.2 करोड़ देशवासियों को रोजगार उपलब्ध है। विनिर्माण क्षेत्र में इस क्षेत्र का योगदान लगभग 45 प्रतिशत है जबकी कुल राष्ट्रीय उत्पाद में इसका अंश लगभग 9 प्रतिशत है तथा देश के कुल निर्यात में इस क्षेत्र का योगदान लगभग 40 प्रतिशत है।[1] इसलिये बेराजगारी व गरीबी की चुनौती का सामना करने के लिये रोजगार के अवसरों में वृद्धि के लिये सरकार द्वारा बैंको के माध्यम से जरूरतमन्द बेरोजगार युवाओं को स्वरोजगार हेतु ऋण उपलब्ध कराकर स्वावलम्बी बनाने का प्रयास किया जा रहा है।[2]

औद्योगिक विकास की भूमिका राष्ट्रीय विकास में महत्वपूर्ण निर्णायक तत्व है। इसके माध्यम से मुख्यत: संरचनात्मक विविधता, आधुनिकता तथा स्वनिर्भरता के उद्देश्यों की पूर्ति संभव होती है। वर्तमान औद्योगिक युग में विश्व का प्रत्येक विकसित एवं विकासशील राष्ट्र अपना अधिकाधिक औद्योगिकरण करने हेतु प्रयत्नशील है। औद्योगिक विकास आर्थिक विकास का एक मुख्य अंग है, जिसका उद्देश्य उत्पादन के संसाधनो की कुशलता में वृद्धि द्वारा जीवन स्तर को ऊँचा उठाना है। औद्योगिक विकास के बिना ना तो किसी राष्ट्र के वासियों का जीचन स्तर ऊँचा उठ सकता है और न ही ऐसा राष्ट्रीय, अंतराष्ट्रीय स्तर पर अपनी भूमिका का संतुलित निर्वाह करता है। इस प्रकार औद्योगिक विकास एक युग धर्म बन चुका है।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनी, प्रायवेट, को-ऑपरेटिव्ह सोसाइटी, लिमिटेड कम्पनी, पार्टनरशिप संयुक्त हिन्दु परिवार और पूर्ण स्वामित्व प्राप्त संस्थाओ को वित्त निगम से आर्थिक सहायता प्राप्त करने की पात्रता है। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य **मध्यप्रदेश के औद्योगिक विकास का विश्लेषणात्मक अध्ययन** का विस्तृत अध्ययन है। वर्तमान परिस्थितियों में उद्योगो की स्थिति है, इन उद्योगों के वकास में वित्त निगम की क्या भूमिका को प्रस्तुत किया गया है। भारत में आधुनिक प्रमुख औद्योगिक इकाईयों का संक्षिप्त परिचय निम्नानुसार विवेचित है-

आधुनिक उद्योगों का संक्षिप्त इतिहास भारत में आधुनिक औद्योगिक विकास का प्रारंभ मुंबई में प्रथम सूती कपड़े की मिल की स्थापना (1854) से हुआ। इस कारखाने की स्थापना में भारतीय पूँजी तथा भारतीय प्रबंधन ही मुख्य था। जूट उद्योग का प्रारंभ 1855 में कोलकाता के समीप हुगली घाटी में जूट मिल की स्थापना से हुआ जिसमें पूँजी एवं प्रबंध नियन्त्रण दोनो विदेशी थे। कोयला खनन उद्योग सर्वप्रथम रानीगंज (पश्चिम बंगाल) में 1772 में शुरू हुआ। प्रथम रेलगाड़ी का प्रारंभ 1854 में हुआ। टाटा लौह-इस्पात कारखाना जमशेदपुर (झारखण्ड राज्य) में सन 1907 में स्थापित किया गया। इनके बाद कई मझले तथा छोटी औद्योगिक इकाइयों जैसे सीमेन्ट, कांच, साबुन, रसायन, जूट, चीनी तथा कागज इत्यादि की स्थापना की गई। स्वतंत्रता पूर्व औद्योगिक उत्पादन न तो पर्याप्त थे और न ही उनमें विभिन्नता थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत की अर्थव्यवस्था अविकसित थी, जिसमें कृषि का योगदान भारत के सकल घरेलू उत्पाद का 60% से अधिक था तथा देश की अधिकांश निर्यात से आय कृषि से ही थी। स्वतंत्रता के 60 वर्षो के बाद भारत ने अब अग्रणी आर्थिक शक्ति बनने के संकेत दिए हैं। भारत में औद्योगिक विकास को दो चरणों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम चरण (1947-80) के दौरान सरकार ने क्रमिक रूप से अपना नियन्त्रण विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों पर बढ़ाया। द्वितीय चरण (1980-97) में विभिन्न उपायों द्वारा (1980-1992 के बीच) अर्थव्यवस्था में उदारीकरण लाया गया। इन उपायों द्वारा उदारीकरण तात्कालिक एवं अस्थाई रूप से किया गया था। अत: 1992 के पश्चात उदारीकरण की प्रक्रिया पर जोर दिया गया तथा उपागमों की प्रकृति में मौलिक भिन्नता भी लाई गई।

स्वतंत्रता के पश्चात भारत में व्यवस्थित रूप से विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत औद्योगिक योजनाओं को समाहित करते हुए कार्यान्वित किया गया और परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में भारी और मध्यम प्रकार की औद्योगिक इकाइयों की स्थापना की गई। देश का पहला उद्योग 1772 में शुरू हुआ। प्रथम रेलगाड़ी का प्रारंभ 1854 में हुआ। टाटा लौह-इस्पात कारखाना जमशेदपुर (झारखण्ड राज्य में सन 1907 में स्थापित किया गया। इनके बाद कई मझले तथा छोटी औद्योगिक इकाइयों जैसे सीमेन्ट, कांच, साबुन, रसायन, जूट, चीनी तथा कागज इत्यादि की स्थापना की गई। स्वतंत्रता पूर्व औद्योगिक उत्पादन न तो पर्याप्त थे और न ही उनमें विभिन्नता थी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत की अर्थव्यवस्था अविकसित थी, जिसमें कृषि का योगदान भारत के सकल घरेलू उत्पाद का 60% से अधिक था तथा देश की अधिकांश निर्यात से आय कृषि से ही थी। स्वतंत्रता के 60 वर्षो के बाद भारत ने अब अग्रणी आर्थिक शक्ति बनने के संकेत दिए हैं। भारत में औद्योगिक विकास को दो चरणों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम चरण (1947-80) के दौरान सरकार ने क्रमिक रूप से अपना नियन्त्रण विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों पर बढ़ाया। द्वितीय चरण (1980-97) में विभिन्न उपायों द्वारा (1980-1992 के बीच) अर्थव्यवस्था में उदारीकरण लाया गया। इन उपायों द्वारा उदारीकरण तात्कालिक एवं अस्थाई रूप से किया गया था। अत: 1992 के पश्चात उदारीकरण की प्रक्रिया पर जोर

* प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, नागदा (उज्जैन) (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

दिया गया तथा उपागमों की प्रकृति में मौलिक भिन्नता भी लाई गई।

स्वतंत्रता के पश्चात भारत में व्यवस्थित रूप से विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत औद्योगिक योजनाओं को समाहित करते हुए कार्यान्वित किया गया और परिणाम स्वरूप बड़ी संख्या में भारी और मध्यम प्रकार की औद्योगिक इकाइयों की स्थापना की गई। देश की औद्योगिक विकास नीति में अधिक ध्यान देश में व्याप्त क्षेत्रीय असमानता एवं असंतुलन को हटाने में केन्द्रित किया गया था और विविधता को भी स्थान दिया गया। औद्योगिक विकास में आत्मनिर्भरता को प्राप्त करने के लिये भारतीय लोगों की क्षमता को प्रोत्साहित कर विकसित किया गया। इन्हीं सब प्रयासों के कारण भारत आज विनिर्माण के क्षेत्र में विकास कर पाया है। आज हम बहुत सी औद्योगिक वस्तुओं का निर्यात विभिन्न देशों को करते हैं।

उद्देश्य एंव प्रविधि – प्रस्तुत शोध में **मध्यप्रदेश के औद्योगिक विकास में मध्यप्रदेश वित्त निगम की भूमिका का अध्ययन** मध्यप्रदेश के संदर्भ में किया गया है। शोध का क्षेत्र मध्यप्रदेश के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र रहें जिनमें मध्यप्रदेश वित्त निगम द्वारा प्रदान किया ऋण, वित्त प्राप्त करने की कार्य विधि, समस्या, समाधान का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया और यह पाया गया कि मध्यप्रदेश के औद्योगिक विकास में मध्यप्रदेश वित्त निगम की अहम भूमिका रही है। सरलता से कम समय में ऋण प्राप्ति का यह प्रमुख माध्यम है। सम्पूर्ण मध्यप्रदेश में फैले इसके कार्यालयों से औद्योगिक संस्थान सीधे जुड़कर ना केवल इससे आर्थिक लाभ प्राप्त करते हैं बल्कि शासन की अनेक लाभप्रद योजनाओं की त्वरित जानकारी भी प्राप्त करते हैं।

परिकल्पना – प्राक्कल्पनाओं के माध्यम से मध्यप्रदेश के औद्योगिक विकास में मध्यप्रदेश वित्त निगम से औद्योगिक इकाईयो को मिलने वाले लाभ, उद्यमियों एवं कार्य करने वाले श्रमिकों के जीवन स्तर में बदलाव को रेखांकित किया गया है। आर्थिक विकास के लिए विकसित बाजार, बैंकिंग सेवायें, विनियोग, वित्त निगम एवं अन्य वित्त प्रदान करने वाली संस्थाओं की आवश्यकता होती है। मध्यप्रदेश वित्त निगम के वित्तीय स्त्रोत में राज्य के औद्योगिक विकास का दायित्व निर्धारित किया जाता है। मध्यप्रदेश वित्त निगम की विभिन्न ऋण योजनाओं की प्रति पूर्ति हेतु वित्तीय स्त्रोतों का परिचय निम्नानुसार है–

1. अंशपूॅजी
2. विशेष पूॅजी
3. अंश पूॅजी के स्थान पर ऋण
4. लाभों का पुनर्विनियोजन
5. बॉन्ड जारी करके
6. पूर्नवित्त वसूली से प्राप्त राशि

मध्यप्रदेश वित्त निगम की अंशपूॅजी संरचना निम्न है :

अ) सामान्य पूॅजी

1. भारतीय औद्योगिक विकास बैंक
2. राज्य शासन
3. अनुसूचित बैंक
4. जीवनबीमा विनियोग न्याय एवं सहकारी बैंक
5. अन्य

ब) विशेष पूॅजी

1. भारतीय औद्योगिक विकास बैंक
2. राज्य शासन

स) अंशपूॅजी के स्थान पर ऋण

1. भारतीय औद्योगिक विकास बैंक
2. राज्य शासन
3. उपकरण पुर्नवित्त योजना
4. कार्यशील पूॅजी सावधि ऋण योजना
5. इलेक्ट्रों मेडिकल उपकरण
6. अस्पताल एवं नर्सिंग होम योजना
7. योग्य पेशेवर लोगों के लिए योजना
8. पुन:पूर्ति सावधि ऋण योजना
9. डीजल जनरेट सेट्स शीघ्र वित्त योजना
10. विपणन कार्यो के लिए योजना
11. समता भागिता योजना
12. आधुनिकीकरण योजना
13. सेवा सुविधा योजना

शोध कार्य के अपेक्षित परिणाम :

1. मध्यप्रदेश वित्त निगम के माध्यम से मध्यप्रदेश के औद्योगिक विकास को जीवित रखने के सुझाव दिये गये।
2. मध्यप्रदेश वित्त निगम में वित्त पोषण के विभिन्न स्त्रोतों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जायेगा एवं उसकी उपादेयता चिन्हीत की जायेगी।
3. वित्त निगम द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं से विभिन्न उद्योगों को अवगत कराया जायेगा।
4. उद्यमी, व्यापारी, उत्पादक तथा शोधार्थी द्वारा इस उद्योग की वित्त पोषण की समस्या को सुलझाने के उपायों का प्रयोग में लाया जा सकता है।

समस्या – सर्वेक्षण के दौरान पाया गया की बैंक अधिकारियों तथा कर्मचारियों की भी इन योजनाओं को मूर्त रूप देने में कई तरह की कठिनाईयाँ का सामना करना पड़ता है, यह कठिनाइयाँ इस प्रकार है।

(अ) ऋण लौटाना या वापसी– वित्त निगम के कर्मचारियों की सबसे बड़ी समस्या है कि विभिन्न योजनओं के अन्तर्गत ऋण की वापसी होना परन्तु कई बार उद्यमी या हितग्राही ऐसा मानता है की ऋण तो शासकीय है व सरकार कभी न कभी तो माफ करेगी अत: वह लम्बे समय तक उसे नहीं भरता।

(ब) शिक्षा– उद्यमी का कम पढा –लिखा होने के कारण वित्त निगम की कार्यविधियों को नहीं समझ पाते है, जिससे उद्यमी वित्त निगम को गलत जानकारी प्रदान करते है इस कारण उद्यमी का वित्त निगम के प्रति अविश्वास उत्पन्न होता है।

(स) ऋण प्राप्त करने के बाद व्यवहार में परिवर्तन– ऋण प्राप्त करने के बाद उद्यमियों का व्यवहार बदल जाता है वह कठोर हो जाते है, कभी–कभी तो क्षेत्रिय अधिकारी पर हमले तक कर दिये जाते है।

(द) ऋण वसूलूली खर्च– वित्त निगम की एक समस्या यह है कि ऋण प्राप्त करता से ऋण की राशि से अधिक खर्च वसूली में हो जाता है। परिणामस्वरूप निगम वसूली की कार्यवाही नहीं कर पाते है।

(इ) ऋण स्वीकृत करने का दबाव– उद्यमी राजनेताओं की शरण में जाते है जो निगम के अधिकारियों पर अपने लोगों का ऋण स्वीकृत करने का दबाव बनाते है।

3. वित्त निगम की ऋण राशि में सुधार हेतु सुझाव :

(अ) ऋण राशि में वृद्धि– ऋण राशि में वृद्धि की जानी चाहिए, विशेष रूप से औद्योगिक इकाई की परियोजनाओं में विशेष वृद्धि की जानी चाहिए ताकि उद्योगों की गतिविधियाँ अच्छी तरह से उत्पन्न हो।

(ब) अनुदान की राशि– योजनाओं के अनुदान की राशि में वृद्धि करना चाहिए। अनुदान की पात्रता प्राप्त कर जो हितग्राही को अविलम्ब अनुदान राशि का भुगतान किया जाना चाहिए।

(स) प्रशिक्षण सम्बन्धी सुझाव– हितग्राही को ऋण स्वीकृत होने के बाद तथा भुगतान के पूर्व व्यवसाय का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। लेकिन कोई उद्यमी पूर्व अनुभवी हो तो उसे प्रशिक्षण से मुक्त रखा जाना चाहिए।

(द) कागजी कार्यर्ववाही व औपैपचारिकता सम्बन्धी– ऋण राशि प्राप्ति हेतु की जाने वाली कागजी कार्यवाही एक कम पढ़े लिखे उद्यमी के लिए कठिनाई का कारण है अत: उनमें से कुछ कार्यवाही को उसके गुण दोष के आधार पर कम करना चाहिए।

(इ) ऋण प्रक्रिया को सरल बनाना चाहिए– ऋण प्रक्रिया को और अधिक सरल बनाने की आवश्यकता है जिससे उद्यमी को आसानी से ऋण प्राप्त हो।

निष्कर्ष– वित्त निगम की सहायता म.प्र. में औद्योगिकीकरण काफी हद तक बढ़ गया नई–नई उद्योगों की स्थापना होने लगी, लोगों का झोन काफी हद तक उद्योगों की स्थापना की तरफ बढ़ने लगा है। म.प्र. सरकार द्धारा कई तरह की योजनाएँ उपलब्ध कराई जा रही है जिससे उद्योगों की संख्या में वृद्धि हो रही है। वित्त निगम के द्धारा बहुत से उद्यमी नयी तकनीकी के साथ औद्योगिक इकाईयों की स्थापना कर रहे है यहाँ तक की म.प्र. में बड़ी–बड़ी एवं प्रतिष्ठित घरानों की औद्योगिक इकाईयाँ स्थापित हो रही है। निगम का उद्देश्य यह है कि नये उद्योगों को एवं जो वर्तमान में चल रहे है व योग्य औद्योगिक संस्थाओं को मध्यम और दीर्घ अवधि के लिए औद्योगिक ऋण के रूप में आर्थिक सहायता उपलब्ध कराना और इस प्रकार म.प्र. राज्य में औद्योगिक उत्पादन को बढ़ाना है। अत: इस कारण म.प्र. राज्य में औद्योगिक विकास सराहनीय है और कम समय, श्रम, लागत पर अधिक उत्पादन हो रहा है, जिस कारण बाजार में अनेक वस्तुओं का विक्रय हुआ व साथ ही निर्यात भी बढ़ा जिस कारण म.प्र. अर्थव्यवस्था में सुधार आया व वहाँ के लोगों के जीवन स्तर में भी सकारात्मक परिवर्तन हुए। निगम लघु उद्योग क्षेत्र के उद्योगों की विशेषत: पिछड़े क्षेत्रों में ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने में अधिक प्रयत्नशील रहा है, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्र का विकास करना अत्यन्त आवश्यक होता है इसके बिना राज्य भी प्रगति नहीं कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. देवपुरा प्रतापमल, 'ग्रामीण क्षेत्र में सेवा रोजगार' कुरूक्षेत्र (2009) जनवरी 2011, पेज–21
2. वार्षिक रिपोर्ट 2009–2010, सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम मंत्रालय, नई दिल्ली।
3. डॉ. रामसिंह, औद्योगिक प्रबंध तकनीक, कला प्रकाशन, वाराणसी, वर्ष 2012

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

How Satisfied are employees in Public sector banks: A case study of Canara Bank located in Kashmir

Youns Ahmad Shah* Mohd Sultan Bhat Prof. (Dr.) L.N. Sharma*****

Abstract - The current study was carried out to find the job satisfaction of employees of Canara Bank. For the current study Job satisfaction survey (JSS) developed by Paul Spector was used as this scale was particularly developed for service sector organisations. JSS is a 9 facet scale in which different facets of job satisfaction are measured. The 9 facets in JSS are pay, promotion, supervision, fringe benefits, co-workers, nature of work, contingent rewards, operating procedures and communication. The JSS scale consists of 36 questions posed on 9 facets of job satisfaction. Each facet has 4 questions. The Likert scale ranges from strongly disagree with score of 1 to strongly agree with score of 6. All the scores are summed up to find the level of satisfaction of employees. In the current study, sample size was 47 and only 20 employees were satisfied with their job. The employees were found least satisfied with contingent rewards and fringe benefits. The bank has been provided with various suggestions by the researcher so as to improve the level of job satisfaction among bank employees.

Introduction - Human resource is the most important resource for any organisation and banking is no exception where the success and failure largely depends on the human resource. For making the banks successful, it is important that employees working in banks must be satisfied with their job. Today's world is the world of machines but the importance of human resource cannot be nullified. The 2008 stock market crash is testimony to the fact that India was able to survive only because of its dependence on human resource quite opposite from those economies that were dependent on machines.

Review of Literature

Saleem, Majeed, Aziz and Usman (2013) in their research on, **"Determinants of job satisfaction among employees of banking industry at Bahawalpur"** tries to identify different factors responsible for job satisfaction and their impact on overall job satisfaction. For this purpose they identified certain factors like organisational policy and strategy, nature of work, communication, personality and recruitment and selection procedures. A well framed questionnaire was handed over to bank employees with a 4 point Likert scale. Different statistical techniques like, correlation and regression analysis were applied on the questionnaire and it was found that among these variables, recruitment and selection procedures, organisational policy and strategy and nature of work have a significant and strong impact on employee job satisfaction. The rest of the factors also have an impact on job satisfaction but their impact is least and these factors are job stress, communication and personality.

Chahal et al. (2013) in their research work on the topic, **"job satisfaction among bank employees: an analysis of the contributing variables towards job satisfaction"** carried out a research work in Canara bank using a sample size of 120 employees. A well structured questionnaire was framed and distributed among the employees in which different aspects of job were evaluated to find out the level of job satisfaction. The aspects include nature of job, salary and incentives, work environment, performance appraisal technique, working hours, training, relationship with employees, transfer, grievance handling and safety provisions were taken into consideration. Percentage method was applied on the questionnaire and the results reveal that with respect to nature of job more than 50% of employees were either satisfied or highly satisfied, in case of salary 47.5% of employees were satisfied or highly satisfied and 35 % were dissatisfied or highly dissatisfied, in case of work environment 75% of employees were satisfied and only 5% were dissatisfied and the rest were indifferent, in case of performance appraisal 67.5% were satisfied or highly satisfied and only 7.5% of employees were dissatisfied, in case of working hours majority of the employees were dissatisfied and the percentage goes to 62.5%, in case of training 27.5% of employees were satisfied with the training given in the bank while as 40% of employees were dissatisfied with the training being imparted in the bank and the rest of employees answered no comments. In case of relationship majority of the employees

*PhD Research Scholar (Commerce) Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
** PhD Research Scholar (Commerce) Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
*** Professor and Head (Commerce) Govt. P. G. College, Neemuch (M.P.) INDIA

were satisfied with this aspect of job satisfaction and the table shows a significant number of 57.5%. In case of transfer 60% of employees were dissatisfied with the transfer policy of the bank. With respect to grievance handling an overwhelming 85% of the employees were satisfied with that aspect of job satisfaction in the bank. So we can say from the results that majority of the bank employees are satisfied with their job in Canara bank.

Devi and Suneja (2013) in their research work on **"Job satisfaction among bank employees: a comparative study of public sector and private sector banks"** tried to find out the satisfaction level of public and private sector bank employees. Sample size for the current study was 110 employees, of which public sector employees were 56 and private sector 54 employees. A semi- structured questionnaire was framed with a 5 point Likert scale ranging from strongly disagree to strongly agree. Different statistical techniques were employed like mean, standard deviation, t-test etc. The results reveal that a significant difference exists in the level of job satisfaction among private and public sector banks. The employees of PVSBs were more satisfied with pay increments and revision than that of PSB employees. Similarly in case of training the employees of PVSBs were more satisfied than public sector bank employees. The results suggest that public sector banks should improve their policy in case of training and also should think about pay increment and revision of their employees.

Kozarevic, Peric and Delic (2014) in their article on, **"job satisfaction of banking sector employees in the federation of Bosnia and Herzegovina"** came to the conclusion that employees feel dissatisfied when they are not involved in decision making process. The employees want their organisation to be more democratic and they should have their say in the organisation. The employees were satisfied with timely pay as well as pension commitments but were dissatisfied with the level of salary, overtime efforts and pay scale for various jobs. The employees stated that their jobs negatively affect their personal life (65%) and health (55.7%). The study was carried out using a sample size of 529 bank employees. A well structured questionnaire was framed covering seven aspects of job satisfaction and they are demographic, management, monetary compensation, non-monetary compensation, working environment, social atmosphere and general satisfaction with life. A total of 82 questions were divided into 7 sections. The mean score was computed on the questionnaire and the results were interpreted.

Objectives of the study - The objectives of the study are as follows:-

1. To find out the degree of job satisfaction of the employees of Canara Bank.
2. To find out the relative importance of each variable of JSS in determining the level of job satisfaction of each employee.
3. To suggest measures as to how Job Satisfaction among employees can be improved.

Research Methodology - JSS or Job Satisfaction Survey developed by Paul Spector is suitable for the current study. JSS or Job Satisfaction Survey uses a six point Likert scale ranging from strongly disagree to strongly agree having 36 questions on nine facets of job satisfaction. Each facet has 4 questions. Some questions are to be reverse scored as they are negatively posed. The nine facets included in JSS are pay, promotion, supervision, fringe benefits, contingent rewards, operating procedures, coworkers, nature of work and communication. JSS was originally developed for service sector organisations and that is why JSS is used in the current research work. The research work was carried out in Jammu and Kashmir. The sample size for the current study was 50 and out of which only 46 questionnaires were in usable form. Thus our sample size was reduced to 46. The table below shows the distribution of respondents of Canara Bank.

Table 1 : Sample size and distribution of Canara Bank respondents

Personal Attributes	Segm -ent 1	Segm -ent 2	Segm -ent 3	Segm -ent4	Total
Age in Years	18-30	>30-45	>45		47
	18	15	14		
Gender	Male	Female			47
	36	11			
Marital Status	Married	Un married			47
	31	16			
NOD	<=3	4-6	>6		47
	31	16	0		
Education	<=12th	Graduate	PG	Re search Degree	47
	16	19	11	01	
Present Position	Officer	Clerk	Sub Staff		47
	13	21	13		
Tenure/ Expe	<=3	>3-10	>10-15	>15	47
rience in Years	05	20	10	12	
Monthly In come in Rs	<=15000	>15000 -30000	>30000 -50000	>50000	47
	00	04	31	12	

Source: Data Analysis of Questionnaire

Table 1 shows that as far as age is concerned most of the employees were in the age group of 18-30 years as they accounted for about 38% of the respondents followed by >30-45 years and they accounted for 32%. In case of gender almost 79% were males. Married respondents were 31 and unmarried respondents were16. In case of NOD (number of dependants) most employees were lying in the category of <=3 which means most of the employees has dependants either 3 or less than that and they accounted for 31 respondents and the rest were in the category of 4-6 dependants. As far as education is concerned, most of the respondents were graduates with 19 respondents, followed

by <12th in which there were 16 respondents and there was a single respondent with research degree. As far as position of the respondent is concerned, officers were 13, clerks 21 and 13 were from sub staff category. In case of experience the numbers are as, 5 respondents were freshers having <3 years of experience, 20 respondents were having experience of >3-10 years, 10 respondents were having experience of >10-15 years and the rest were having experience of >15 years. In the last category of income, 4 respondents were earning >15000-30000 Rs, respondents earning a monthly income of 30000-50000 Rs. were the most and their number was 31 while as there were 12 respondents who were highest paid and their monthly income was >50000 Rs.

Data analysis and Interpretation

Table 2 Level of job satisfaction of the respondents

S.	Level of Job Satisfaction	No. of Respondents	Percentage
1.	Dissatisfied	1	2.1
2.	Ambivalent	26	55.3
3.	Satisfied	20	42.6
4.	Total	47	100%

Source: Data Analysis of Questionnaire

From the table above it is evident that most of the employees of Canara Bank are in the state of ambivalence with their job as the percentage of ambivalent employees is 55.3%. Almost 43% of the employees are satisfied as far as job satisfaction is concerned and there was a single respondent who was dissatisfied with his/her job.

Satisfaction level with each facet of job satisfaction - In order to test the level of job satisfaction of employees with each facet, data was analysed and the tables below give a detailed picture of the satisfaction level of employees, keeping in view all the nine facets of job satisfaction.

(a) Pay and the level of job satisfaction of the respondents

Table 3

S.	Level of Job Satisfaction	No. of Respondents	Percentage
1.	Dissatisfied	14	29.8%
2.	Ambivalent	01	2.1%
3.	Satisfied	32	68.1%
4.	Total	47	100%

Source: Data Analysis

In case of promotion 41 respondents were satisfied with their chances of promotion while as 6 respondents were dissatisfied.

(c) Supervision and the level of job satisfaction

Table 5

S.	Level of Job Satisfaction	No. of Respondents	Percentage
1.	Dissatisfied	08	17%
2.	Ambivalent	01	2.1%
3.	Satisfied	38	80.9%
4.	Total	47	100%

Source: Data Analysis

In case of supervision, 38 respondents were satisfied, 8 respondents were dissatisfied and the remaining 1 respondent was ambivalent.

(d) Fringe benefits and the level of job satisfaction

Table 6

S.	Level of Job Satisfaction	No. of Respondents	Percentage
1.	Dissatisfied	27	57.4%
2.	Ambivalent	02	4.3%
3.	Satisfied	18	38.3%
4.	Total	47	100%

Source: Data Analysis

In case of Fringe benefits, the number of dissatisfied employees were more than satisfied employees and the number of satisfied employees was 18, while as the number of dissatisfied employees was 27. Only 2 employees were ambivalent.

(e) Contingent Rewards and the level of job satisfaction

Table 7

S.	Level of Job Satisfaction	No. of Respondents	Percentage
1.	Dissatisfied	25	53.2%
2.	Ambivalent	11	23.4%
3.	Satisfied	11	23.4%
4.	Total	47	100%

Source: Data Analysis

In case of contingent rewards, out of 47 respondents, the number of dissatisfied respondents was more than satisfied respondents. 25 were dissatisfied and 11 were satisfied and 11 employee was ambivalent.

(f) Operating procedures and the level of job satisfaction

Table 8

S.	Level of Job Satisfaction	No. of Respondents	Percentage
1.	Dissatisfied	20	42.6%
2.	Ambivalent	08	17%
3.	Satisfied	19	40.4%
4.	Total	47	100%

Source: Data Analysis

In case of operating procedures, 19 respondents were satisfied with the operating procedures followed by the bank and 20 were dissatisfied. The number of ambivalent employees was 8.

(g) Relation among co-workers and the level of job satisfaction

Table 9

S.	Level of Job Satisfaction	No. of Respondents	Percentage
1.	Dissatisfied	00	0%
2.	Ambivalent	04	8.5%
3.	Satisfied	43	91.5%
4.	Total	47	100%

Source: Data Analysis

While choosing relation among co-workers as a facet of job satisfaction, it was found that out of total 47 respondents,

43 respondents were satisfied with their co-workers and 4 respondents were ambivalent. There was not a single respondent who was dissatisfied with his/her co-worker.

(h) Nature of work and the level of job satisfaction

Table 10

S.	Level of Job Satisfaction	No. of Respondents	Percentage
1.	Dissatisfied	14	29.8%
2.	Ambivalent	06	12.8%
3.	Satisfied	27	57.4%
4.	Total	47	100%

Source: Data Analysis

In case of nature of work, 27 and employees were satisfied with it 14 employees were dissatisfied with the nature of work and the number of ambivalent employees was 6.

(I) Communication and the level of job satisfaction

Table 11

S.	Level of Job Satisfaction	No. of Respondents	Percentage
1.	Dissatisfied	14	29.8%
2.	Ambivalent	03	6.4%
3.	Satisfied	30	63.8%
4.	Total	47	100%

Source: Data Analysis

In case of communication, 30 employees were satisfied and 14 employees were dissatisfied with the communication in the bank. The number of ambivalent employees was 3.

Findings, Conclusion and Suggestions - From Table 2, it was found that the employees of Canara Bank were somewhat satisfied with their job, they were not fully satisfied as the results indicate that 55.3% of the employees of Canara Bank were in the state of ambivalence. The percentage of satisfied employees was 42.6%. However, the percentage of dissatisfied employees was very low and it was only 2.1%.

Based on the satisfaction of each facet of job satisfaction, it was found that most employees were satisfied with their co-workers and the percentage of satisfied employees in this category was 91.5% in the remaining facets, promotion was second ranked with 87.2% satisfied employees, followed by supervision with 80.9%, followed by pay with 68.1%, followed by communication with 63.8%, followed by number of workers with 54.4%, followed by operating procedures with 40.4%, followed by fringe benefits with 38.3% and at last contingent rewards with 21.3% of satisfied employees.

Suggestions - The suggestions for the bank are:-

1. Overall the employees of Canara Bank were not satisfied with their bank as one expects from such type of public sector bank as only 42.6% of employees were satisfied with the bank.
2. The employees were least satisfied with contingent rewards, fringe benefits, operating procedures and nature of work. The bank must take measures to address these issues as they are part and parcel of job satisfaction.
3. Contingent reward is a motivation based reward system that helps the organisation to achieve its goals as well as keep the employees satisfied. Thus bank must provide contingent rewards to the employees for their benefit as well as for the benefit of the employees.
4. The bank must provide fringe benefits to the employees as fringe benefits help to keep employees satisfied. Fringe benefits include employee security, safety and health, old age benefit, medical benefit, welfare and recreational facilities, payment for time not worked etc.
5. The bank must not over burden the employees with the work as they feel dissatisfied and must eliminate the bottlenecks in doing a job smoothly.

References:-

1. Katuwal, SB., Randhawa, G. 2007. A study of job satisfaction of public and private sector Nepalese textile workers. *Indian Journal of Industrial Relations*, 44(2): 239-253.
2. Shrivastava, A., Purang, P. 2009. Employee perceptions of job satisfaction: comparative study on Indian banks. *Asian Academy of Management Journal*, 14(2):65-78
3. Ozturan, M., Kutlu, B. 2010. Employee satisfaction of corporate e-training programs. *Procedia-Social and Behavioral Sciences*, 2(2):5561-5565.
4. Tatsuse, T., Sekine, M. 2011. Explaining global job satisfaction by facets of job satisfaction: the Japanese civil servants study. *Environmental health and preventive medicine*, 16(2):133-137.
5. Sowmya, KR., Panchanatham, N. 2011. Factors influencing job satisfaction of banking sector employees in Chennai, India. *Journal of law and conflict Resolution*, 3(5):76-79.
6. Mansor, N., Noor, JMM., Hassan, NFN. 2012. Job satisfaction among the bankers: An investigation on Islamic financial institution in eastern region of Malaysia. *Asian Social Science*, 8(10):186-197.
7. Jain, S., Sharma, S., Jain, R. 2012. Job satisfaction in banking: a study of private and public sector banks (comparative study). *International journal of science & technology*, 2(1), 40-48.
8. Saleem, S., Majeed, S., Aziz, T., Usman, M. 2013. Determinants of job satisfaction among employees of banking industry at Bahawalpur. *Journal of emerging issues in economics, finance and banking*, 1(2):150-162.
9. Chahal, A., Chahal, S., Chowdhary, B., Chahal, J. 2013. Job satisfaction among bank employees: An analysis of the contributing variables towards job satisfaction. *International journal of scientific & Technology research*, 2(8):11-20.
10. Devi, S., Suneja, A. 2013. Job satisfaction among bank employees: A comparative study of public sector and private sector banks. *International Journal of Research in Management, Science and Technology*, 1(2):93-101

11. Kozarevic, E., Peric, A., Delic, A. 2014. Job satisfaction of banking sector employees in the Federation of Bosnia and Herzegovina. *Economia. Seria Management*, 17(1):30-49.
12. Karim, MM., Islam, MJ., Mahmud, MAL. 2014. Job Satisfaction of Employees in Banking Sector: A Case Study on Janata Bank Limited. *European Journal of Business and Management*, 6(17):70-77.
13. Saner, T., Eyupoglu, SZ. 2015. The job satisfaction of bank employees in North Cyprus. *Procedia economics and finance*, 23:1457-1460.
14. Yoganandan, G., Sathya, C. 2015. Job Satisfaction in State Bank of India in Namakkal district. *IRACST-International Journal of Research in Management & Technology*, 5(1): 167-173.
15. Bhola, A. 2015. Job satisfaction among bank employees-A study on District Kathua (Jammu & Kashmir). *International Journal of Management and Commerce Innovations*, 3(1):186-191.
16. Raziq A., Maulabakhsh, R. 2015. Impact of working environment on job satisfaction. *Procedia Economics and Finance*, 23:717-725
17. Tepret, NY., Tuna, K. 2015. Effect of management factor on employee job satisfaction: An application in telecommunication sector. *Procedia-Social and Behavioral Sciences*, 195: 673-679

****

वाङ्चूः सृजन सर्वस्व की कथा

डॉ. संजय सक्सेना*

प्रस्तावना – वाङ्चू भीष्म साहनी की एक चर्चित कहानी है। इसके केन्द्र में वाङ्चू है जो एक चीनी बौद्ध शोधकर्ता है। यूँ तो वह शोधकर्ता कह दिया गया है। किन्तु उसके स्वभाव पर दृष्टि डालें तो वह ''भावुक, काव्यमयी प्रकृति का जीव जो प्राचीनता के मनमोहक वातावरण में विचरते रहना चाहता था। वह यहाँ तथ्यों की खोज करने नहीं आया था। वह तो बोधिसत्वों की मूर्तियों को देखकर गदगद होने आया था। महीने भर से संग्रहालय के चक्कर काट रहा था लेकिन उसने कभी नहीं बताया कि बौद्ध धर्म की किस शिक्षा से उसे सबसे अधिक प्रेरणा मिलती है। न तो वह किसी तथ्य को पाकर उत्साह से खिल उठता न उसे कोई संशय परेशान करता। वह भक्त अधिक और जिज्ञासु कम था।''[1] स्पष्ट है कि वाङ्चू की तत्कालीन सामाजिक व राजनैतिक समझ बहुत कम है। वह न तो चीनी है न भारतीय वह सिर्फ मानव है जो मनुष्य के सार्वभौमिक अस्तित्व में भरोसा रखता है। ''यह कहानी साहनी जी की व्यापक और गहन दृष्टि की परिचायक है। देशकाल निस्संग मानवता के प्रति इतनी गहरी सहानुभूति को सफलता से अंकित करने वाली कोई दूसरी कहानी हिन्दी में शायद ही लिखी गयी हो।''[2]

वाङ्चू के स्वभाव, चरित्र और बौद्धिक सीमाओं से लेखक हमें कहानी में कई स्थानों पर परिचित करवाता है। वह मामूली हिन्दी व अंग्रेजी जानता है। उसमें अचम्भित और अखरने वाली तटस्थता है। जीवन के किसी गलत निर्णय को सब कुछ जान कछुए की गति से चल रहा है। देश–विदेश में हो रही सामाजिक, राजनैतिक घटनाओं से कोई सरोकार–प्रतिक्रिया नहीं है। वह बौद्ध ग्रंथ बॉचता है। और उन्हें बॉचने के लिये चीन से आया है। वह शर्मीला है और उसके उच्चारण हास्यास्पद है। वह प्रोफेसर शॉन के साथ भारत चला आया था। प्रोफेसर तो चले गये लेकिन वह भारत में ही रह गया। अतः वाङ्चू की नागरिकता भी एक प्रश्न थी। उसके मन मस्तिष्क में बुद्ध के चरण ही थे। वह कम बोलता अपने में ही रहता और बौद्धिक चर्चाओं से दूर ही रहता था। मगर ये सच्चाई है कि उसने किसी का कुछ भी न बिगाड़ा न सोचा। वह तो निस्संग संत ही है। लेखक का यह दृढ़ विश्वास है कि वह वर्तमान से कटकर अतीत के किसी कालखंड में ही विचर रहा है। उसे यहाँ भारत का अतीत खींच कर लाया है।

वाङ्चू के बारे में इतनी सारी जानकारी हो जाने पर स्पष्ट हो जाना चाहिए कि वाङ्चू परदेशी होने के कारण, चीन का होने के कारण ज्यादा ध्यान आकर्षित करता है। अन्यथा: इस प्रकार के स्वभाव, चरित्र और बौद्धिक सीमाओं से भरे जाने कितने लोग हैं – निरीह, संत और सिर्फ अपने तक सीमित। इष्ट के थोडे से ही अवलम्बन के सहारे सारा जीवन एकांत और निर्द्वन्द्व काटने वाले।

वस्तुतः ज्ञान जब सीमित होता है तो संवेदना भी अपने आप सीमित हो जाती है। आखिर ज्ञान प्रसार के भीतर ही तो भाव प्रसार होता है। बहुआयामी ज्ञान ना होने से ज्ञानात्मक संवेदना की परिधि को समझा जा सकता है। भीष्म जी ने वाङ्चू के चरित्र में यही देखा और समझाया भी कि ''वह उन लोगों में से था जो बरसों तक औपचारिक परिचय की परिधि पर ही डोलते रहते है न परिधि लॉघकर अन्दर जाते है और न पीछे हटकर ऑखों से ओझल होते है।''[3] यही एक सूत्र उसके व्यक्तित्व को समझने में पर्याप्त सहायक है। वाङ्चू अपने देश, आस्था, धर्म, प्रेम सभी की परिधि पर ही डोलता रहता है, परिधि को अतिक्रमित करने लायक ज्ञान, साहस, आवेग उसमें नहीं है। वह बुद्ध के चरणों में ही संतुष्ट है। उनके ज्ञान और बुद्धि से उसे ज्यादा मतलब नहीं है। धर्म यदि अफीम है तो बहुतों को तो थोड़ा ही नशा पर्याप्त है, जिसमें वह सरहदें तो पार करता है पर डूब नहीं पाता। धर्म की परिधि पर ही खड़ा है। गदगद्, संतुष्ट।

वाङ्चू ने लेखक की मौसेरी बहन नीलम से प्रेम भी किया है। उसने नीलम को झूमरों का जोड़ा, प्रेमोपहार के रूप में दिया और प्रेमोपहार राइटिंग पैड लिया भी। नीलम को चिट्ठी लिखी और उसकी चिट्ठी पाई भी। कुछ दूर इस प्रेम में बहा भी। नीलम का विवाह हो जाने पर भी उसने उससे व्यवहार बनाये रखा। कुल मिलाकर यहाँ भी वह प्रेम की परिधि पर ही रहा। नीलम के व्यंग्य को शीघ्र समझकर थोड़े से प्रेम और सहानुभूति से वह संतुष्ट दिखता है। थोड़ा सा अपनापन, संग, ठिठोली और स्वंय की भावुकता को वह समझ पाता है। पर इतने से साथ को भी वह आगे तक निभाता है। वाङ्चू का सहज मानवीय प्रेम रसोइयें से भी है जो सारनाथ कैन्टीन में है। यह रसोइया प्यार से मिलता था और वाङ्चू को हाथ जोड़कर 'कहो भगवन' सम्बोधित करता था। संसार में शायद वह एक मात्र प्राणी था जो वाङ्चू की मृत्यु पर रोया था। इसी रसोइये ने लेखक को भी बताया कि वह अक्सर लेखक को याद करता था। लेखक, नीलम, रसोइया ये तीन चार लोगों से उसने प्रेम के आदान प्रदान व्यवहार–परिधि सभी को समझा और निभाया था।

वाङ्चू ज्ञान की जिस परिधि पर खड़ा है। वहाँ उससे किये गये इन प्रश्नों के कितने मायने है – कि वह बौद्ध धर्म की अवधारणाओं को कैसे आंकता है? उसकी राजनैतिक समझ कितनी है? द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद और बौद्ध धर्म को वह कैसे समझता है? आदि। किन्तु परिवेश से कटकर जीने का वह यहीं नुकसान भी उठाता है। कम समझ से लिये गये अविवेकपूर्ण निर्णय, व्यर्थ की आवाजाही, देशकाल स्थिति का अल्पज्ञान और उससे उपजे संकट, विषम स्थिति, प्रताड़ना को सहना उसकी मजबूरी हो जाती है। वह संत है उसे सीकरी से कुछ लेना देना नही है। उसे नेहरू जी से नही मिलना है, उसे विचारधाराओं का सामयिक अध्ययन नही करना है। उसे जुलूस में शामिल नही होना है। पर यहीं परिवेश से उपजी विडंबनाएँ भी है कि

* एसोसिएट प्रोफेसर (हिंदी) बुन्देलखण्ड महाविद्यालय, झाँसी (उ.प्र.) भारत

इतने ही सरल व्यक्ति पर संदेह भी किया जा सकता है। हमारे देश से निकल जाओं, भी कहा जा सकता है। सिर्फ सूरत से भी शत्रु समझा जा सकता है। तटस्थ भाव से चरित्रांकन और स्थिति का सूक्ष्म निरीक्षण–परीक्षण व अन्तर्सम्बन्धों को दर्शाने – रूपायित करने में भीष्म जी बेजोड़ है। वाङ्चू पर जो बीती समझ में आती चली गयी है। कथावाचक स्वयं वाङ्चू से परेशान हो उठता है। वास्तव में ''दूसरे किसी भी मुल्क के लोगों के बारे मे हम कैसा सोचते है। ईमानदारी से इस सवाल का जवाब ढूंढें तो हम देखेंगें कि हम वाकई पिछड़े हुये लोग है जो ताकतवर है उनके साथ हमारा व्यवहार एक ढंग का है, जो बराबर या हमसे कमजोर हैं उनके प्रति हमारा व्यवहार सीनाजोरी का है।'' [4] वाङ्चू से हर कोई सीनाजोरी ही कर रहा है। कथा का नाटकीय विन्यास यथार्थ की विसंगतियों और अंतर्विरोधों को प्रकट करता हुआ मनुष्य की गरिमा, आजादी और नैतिकता को कटघरे में खड़ा कर देता है।

यह वाङ्चू के स्वभाव की विशिष्टता है कि वह सब कुछ बर्दाश्त कर लेता है। तब आखिर कहाॅ जाकर वह टूटता है, बिखरता है, उसकी जिजीविषा जवाब दे जाती है। उसकी मृत्यु हो जाती है। भीष्म जी की दृष्टि अचूक है वह उसकी मृत्यु के वास्तविक कारण तक पहुॅच सके। वाङ्चू अपने प्रति प्रदर्शित संदेह और घृणा को तो सह गया किन्तु उसकी मृत्य तब हुई जब उसका सृजन उससे छिन गया। अभिव्यक्ति की मौलिकता ही तो सृजन है फिर चाहे वह किसी भी व्यक्ति का हो, किसी भी स्तर का हो। वाङ्चू का वह पुलिंदा जिसमें उसकी शोध है, टिप्पणियां है, लेखन है – उसका सर्वस्व है। वाङ्चू के पुलिंदे में ''कहीं पालि में तो कहीं संस्कृत में उद्धरण लिखे थे लेकिन बहुत सा हिस्सा चीनी भाषा में था।'' [5] उसके पुलिंदे को दिल्ली भेजा जाता है क्योंकि बनारस में कोई भी चीनी भाषा नही जानता था। और उसका ट्रंक जब उसे वापिस मिलता है तब ''उसके कागज उसमें नही थें जिन पर वह बरसों से अपनी टिप्पणियां और लेखादि लिखता रहता था। और जो एक तरह से उसके सर्वस्व थे। वह पुलिस से कहता है – ''वे मेरे कागज आप मुझे दे दीजिये उन पर मैंने बहुत कुछ लिखा है, वह बहुत जरूरी है।'' [6] अपने कागजों के बिना वो अधमरा सा हो जाता है और बीमारी की हालत में भी बनारस सिर्फ इस सूचना को पाकर पहुॅचता है कि उसके कागज उसे वापिस किये जा रहे है। किन्तु जब वह देखता है कि उसके एक तिहाई कागज ही बचे है। शेष पुलिस ने उसे लौटाये ही नहीं हैं, उसी दिन से वाङ्चू निराश होकर मर जाता है। वाङ्चू का आग्रह था कि उसकी ट्रंक लेखक को सौंप दी जाये जिसमें कागजों का पुलिंदा है। कहानी का अंत भी लेखक की दुविधा से होता है जिसमें वह सोचता है कि ''इस पुलिन्दे का क्या करूॅ? कभी सोचता हूॅ, इसे छपवा डालूं। पर अधूरी पाण्डुलिपि को कौन छापेगा पत्नी रोज बिगड़ती है कि मैं घर में कचरा भरता जा रहा हूॅ! कभी किसी तख्ते पर रख देता हूॅ, कभी पलॅग के नीचे छिपा देता हूॅ पर मैं जानता हूॅ कि किसी दिन ये भी गली में फेंक दिये जायेंगे।'' [7] यह विडम्बना है कि वाङ्चू को किसी ने नही अपनाया किन्तु वाङ्चू ने जिसे अपनाया अर्थात उसका सृजन, उसे पढ़ा जाना चाहिए था। वाङ्चू का पुलिंदा ही दरअसल अब वाङ्चू था। कथाकार भी उसकी पाण्डुलिपि के साथ न्याय नही कर पाया। वह किसी चीनी भाषा के विशेषज्ञ से उसे पढ़वाता नहीं है। चीनी भाषा में लिखा वाङ्चू का सृजन ही उसका सर्वस्व है। वाङ्चू की स्वतंत्रता, नैतिकता, प्रेम और संवेदनशीलता के साथ साथ उसके सृजन के साथ भी न्याय नही हो पाया, जो उसका सर्वस्व था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भीष्म साहनी – प्रतिनिधि कहानियाँ 'वाङ्चू' – पृ0 110
2. भीष्म साहनी – व्यक्ति और रचना सम्पादक राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर– पृ0 204
3. भीष्म साहनी – प्रतिनिधि कहानियाँ 'वाङ्चू' – पृ0 116
4. लाल्टू बनास जन (शताब्दी स्मरण भीष्म साहनी) पृ0 177
5. भीष्म साहनी – प्रतिनिधि कहानियाँ 'वाङ्चू' – पृ0 126
6. भीष्म साहनी – प्रतिनिधि कहानियाँ 'वाङ्चू' – पृ0 126
7. भीष्म साहनी – प्रतिनिधि कहानियाँ 'वाङ्चू' – पृ0 129

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

जीवन और संगीत

डॉ. इच्छा नायर *

प्रस्तावना – 'संगीत कं न मोहयेत' संगीत किसे मोहित नहीं करता है। अंतर की सत्य भवना तथा अनुराग सहित यथार्थ स्वरूप में गायन, वादन या नृत्य द्वारा प्रस्तुत किया हुआ संगीत सबको समान रूप से मोहित करता है। भागवत में कहा गया है कि श्री कृष्ण के मुरलीवादन से यमुना का चंचल जल भी शांत और स्थिर हो जाता था। वनस्पति विज्ञान के आचार्य सर जगदीश चंद्र बसु ने अपनी प्रयोगशाला में ऐसे यंत्र बनाए जिनसे भलीभांति परीक्षा की जा सकती है कि संगीत सुनकर वृक्ष भी प्रफुल्लित हो उठते हैं।

सृष्टि की समस्त वस्तुओं को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं। जड़ और चेतन। चेतन के अंतर्गत मनुष्य व पशु-पक्षी आते हैं। मनुष्य को सृष्टि का सबसे श्रेष्ठ प्राणी कहा गया है। केवल मानव शरीर ही उसकी श्रेष्ठता के लिए पर्याप्त नहीं है वरन् उसकी श्रेष्ठता के लिए कुछ गुण भी आवश्यक है। इन्हीं गुणों की ओर इंगित करते हुए श्रीभर्तृहरि ने 'साहित्य संगीत कला विहीनः , ... साक्षात् पशुः पुच्छ विषाण हीनः'॥
कहकर मनुष्य का अपरिहार्य गुण संगीत, साहित्य और कला से युक्त होना कह दिया।

संगीत की उत्पत्ति एवं उद्गम के संबंद में यदि ऐतिहासिक रूप से जांचा जाए तो यह हमारे हृदयगत भावनाओं को व्यक्त करने वाला एक स्वाभाविक साधान है , अतः इसकी उत्पत्ति मानव जन्म के साथ हो जाती है। कंठ ईश्वर प्रदत्त 'प्राकृतिक उपकरण' है , जो हमारी भाषा और संगीत दोनों का आधारभूत स्तम्भ है, क्योंकि ध्वनि का निकास इसी से होता है। चाहे पशु हो, पक्षी हो और चाहे मानव, सर्वप्रथम ध्वनि इसी उपकरण से निकलती है। जब आदमी बोलना भी नहीं जानता था तब भी वह अपने सुख-दुख के भावों को प्रकट करने के लिए मुँह से हाहा, हूहू जैसे अक्षरों को निकलता था।[1]

संसार की समस्त ललित – कलाओं में संगीत को सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। क्योंकि यही एक ऐसा साधान है जिसके द्वारा मनुष्य लौकिक और पारलौकिक सुख तथा शांति की अनुभूति कर सकता है। मनीषियों ने मनुष्य के कल्याणकारी पदार्थों को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में वर्गीकृत किया गया है। इन चारों की ही प्राप्ति संगीत द्वारा होती है साथ ही साथ उसे परमानन्द स्वरूप परमात्मा की प्राप्ति भी संगीत द्वारा ही होती है।

सृष्टि का जड़ और चेतन संगीतमय है। पशु-पक्षी जब आनंद विभोर हो जाते हैं तब उनका स्वर संगीतमय हो जाता है। संगीत पारिजात में कहा गया है कि चिड़िया, भौरे, पतंगे, हरिण आदि सभी जीव गाते हैं, अतः संगीत सर्वदिशाओं में व्याप्त है।

खगाः भृंगाः पतंगाश्च कुरंगाद्योपिजन्तवः।
सर्वएव प्रगीयन्ते गीतव्याप्तिर्दिगन्तरे॥ संव पारिजात पृव [2]

पशु पक्षियों में ही नहीं वरन् मानव समाज पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होगा कि वनों में रहने वाले वनवासियों से लेकर नगरों में पलने वाले सुसंस्कृत और सभ्य कहलाने वाले मानवों तक के जीवन को संगीत प्रभावित करता है। गावों में एक देशज तुकबंदी प्रायः सुनने को मिलती है 'नाचौ, गावै, तौरे, तान। ओकर दुनियाँ राखै मान'।

'यद्यपि संगीत मानव के लिए स्वाभाविक है तथापि कला के रूप में यह दिव्य प्रेरणा से आया होगा। संगीत वह सुंदर, सुरभि, सरस, पद्म है जो बिना स्वर्ग के प्राणदायक शीतल ओष कण के खिलता ही नहीं। हमारे ऋषियों और आचार्यों का यह विश्वास है कि शंकर के डमरू से वर्ण और स्वर दोनों उत्पन्न हुए। शंकर की शक्ति पार्वती, शिव, दुर्गा भी संगीत की प्रेरक मानी गई हैं।'[2]

मानव जीवन के तो प्रत्येक क्षण में संगीत भरा है। शिशु के रुदन में स्वरों का उतार-चढ़ाव है। उसके हाव-भाव में नृत्य की असंख्य मुद्राएँ भरीं पड़ी हैं। लोरियों के स्वरों में शिशु को सुलाने की शक्ति है। इसी प्रकार बालपन में खेलकूद के गीत का उनके जीवन में बहुत महत्व होता है। युवावस्था में सूक्ष्म भागों की अभिव्यक्ति के लिए संगीत के बराबर किसी वस्तु में भी शक्ति नहीं है। थके हुए किसानों व मजदूरों को संगीत से ही सांत्वना और नवोत्साह प्राप्त होता है। भारी बोझ उठाने या ढोने में लय और स्वर के प्रभावशाली प्रयोग अत्यधिक सहायता पहुँचाते हैं।

संगीत मानव जीवन के रग-रग में इतना व्याप्त है कि जब प्राणी हर्षातिरेक से प्रफुल्लित हो जाते हैं तब उनकी वाणी में संगीत मुखरित हो जाता है। वियोग के क्षणों में भी मानव संगीत का सहारा लेता है।

मनुष्य के संघर्षमय जीवन में मानसिक स्थिरता का या जाना स्वाभाविक है। उस समय केवल संगीत ही एक ऐसी औषधि है जो मन के उद्वेग को शांत कर पुनः शक्ति संचार कर सकती है।

जन्म से लेकर मृत्युपर्यंत हिंदुओं का समस्त सामाजिक जीवन संगीतमय है। हिंदुओं के जीवन को भारतीय मनीषियों ने सोलह संस्कारों में विभाजित किया है। जन्म से लेकर मृत्यु तक यह सोलह संस्कार मनुष्य के जीवन से समृद्ध रहते हैं। नवजात शिशु के रोने के साथ ही ढोल-मजीरे की ताल पर उठते हुए संगीत के सामूहिक स्वर सुनाई देने लगते हैं। माँ की लोरियों की गुनगुन सम्पूर्ण घर में व्याप्त हो जाती है। जीवन के विकास के साथ-साथ संगीत की झंकार भी आगे बढ़ती जाती है। नामकरण, अन्नप्राशन, मुंडन, यज्ञोपवीत, पाणिग्रहण, आदि संस्कारों तथा उपसंस्कारों के मध्य संगीत के स्वर गूँजते रहते हैं। सभी संकारों का प्रारंभ और अंत संगीत से ही होता है।

संगीत आराधना है। मानव का सर्वप्रधान कर्तव्य ईश्वर की वंदना और आज्ञा पालन है। वंदना के लिए भावुकता के अश्रु और तन्मयता की

* एसोसिएट प्रोफ़ेसर, संगीत-तबला, महिला सेवा सदन डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

अवस्था नित्तान्त आवश्यक है; इस प्रकार की स्थिति संगीत के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु से नहीं प्राप्त हो सकती, जो हृदय में आग और प्राणों में तड़प पैदा कर सके।[3]

मांगलिक पर्वों तथा उत्सवों में मनोरंजन के लिए तो संगीत प्रमुख है ही प्रत्येक परिश्रम के काम के साथ भी गीत लगा हुआ है। पथिक संगीत के स्वरों में लीन होकर अपनी थकान भूल जाता है। दुल्हन को पालकी पर ले जाते हुए कहर गीत गा-गा कर राह काटते हैं। चरवाहा अपनी गौओं को चराते हुए सुनसान जंगलों में अपने गीत संगीत से जीवन भरा रहता है। दिनभर के कठोर परिश्रम के बाद सायंकाल वंशी की एक छोटी सी धुन शरीर का सारा श्रम हर लेती है।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है, इसका अपने समाज के प्रति भी दायित्व होता है जिसका वह अनेक प्रकार से निर्वाह करता है। समाज में आनंद का वातावरण बनाने के लिए उसने अनेक त्योहार और उत्सवों का सृजन किया है। ये सभी त्योहार बिना संगीत के अधूरे हैं। गावों में फसल तैयार होती है तो उनका हर्षोल्लास होली के रूप में प्रकट होता है। ये जिस खुशी और आत्मीयता से गले मिलते, रंग छिड़कते और अबीर गुलाल लगाते हैं वह देखते ही बनता है। उनके उल्लास की चरम सीमा उस समय दिखाई देती है,जब वे ढोल और मंजीरा लेकर झुंड के झुंड लय और ताल के साथ स्वर मिलाकर मस्त हो जाते हैं। चौती और फाग गाते हैं। लगता है मानों पूरे वर्ष की थकावट इस प्रकार से संगीत के माध्यम से निकाल रहे हों। वर्ष के बूंदों के साथ ही प्यासी धरती तो उल्लासित होती ही है साथ ही मानव कंठ से कजरी और मल्हार के मदमस्त बोल भी फूट पड़ते हैं।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है इसलिए संगीत भी मनुष्य के जुड़ा होने के कारण समाज में अपना विशेष स्थान रखता है। भारत में विभिन्न धर्मो के अनुयायी हैं। सभी धर्मों ने संगीत जगत को अपनाया है क्योंकि संगीत सत्य, शिव सुंदर है। 'संगीत भी एक धर्म है। संगीत जगत सापेक्ष होते हुए भी निरपेक्ष है।' यह समस्त जगत को एक सूत्र में पिरोय हुए है।[4]

मनुष्य परिस्थितियों का दास है। कभी-कभी वह विरोधी परिस्थितियों में पड़कर मानसिक संतुलन खो बैठता है और जीवन से निराश हो जाता है। ऐसे में हृदय को हिल देने वाला संगीत मृतप्राय हृदय में संजीवनी, नैराश्य में आशा, चिंता की ज्वाला में शांति तथा दुखमय क्षणों में आनंद प्रदान कर सकता है। संगीत कि ध्वनि के शीतल स्पर्श से व्यथित हृदय की वेदना क्षण भर में लुप्त हो जाती है। मोक्ष प्रदान करने वाली संगीत कला मनुष्य के भौतिक दुखों का भी अंत करने में सक्षम है। यही कारण है कि आज के युग में डॉक्टर तथा मनोवैज्ञानिक भी संगीत में छिपे स्वास्थ्यदायक तत्वों की खोज करने में प्रयत्नशील है। मनहट्टन अस्पताल में हुए एक शोध के द्वारा संगीत-चिकित्सा का आश्चर्य जनक परिणाम प्राप्त हुआ है। संगीत के प्रयोग से 38 प्रतिशत रोगी पूर्णरूपेण 33 प्रतिशत रोगी आंशिक सुधार गए और 28 प्रतिशत रोगी प्रभावहीन रहे। पं ओंकारनाथ ठाकुर जी का विचार था कि मारफिया के बजाए संगीत से पीड़ा कहीं शीघ्र कम हो सकती है। अपने गाने से सूला देना मूसेलिनी ठाकुर जी के जीवन की एक सत्य तथा प्रसिद्ध घटना बन गई। मानसिक चिकित्सकों के लिए संगीत सर्वश्रेष्ठ औषधि है।

मनुष्य जिस प्रकार जीवन से निराश हो उठता है उसी प्रकार अत्यधिक आमोद-प्रमोद तथा सुख-सुविधाओं को पाकर मनुष्यता को भूल जाता है। वह इतना स्वचन्द हो जाता है कि दूसरों के जीवन को संकट में डाल देता है। दूसरे की सुविधा-असुविधा का उसे ध्यान नहीं रहता। उस समय उसका कोई गुरु नहीं होता न ही वह किसी की शिक्षाओं पर धयान देता है। उस समय यदि कोई उपचार सिद्ध और सफल हो सकता है तो वह है केवल संगीत। संगीत में उन्माद में डूबे जन् समुदाय को मुक्त कर देने की अपूर्व क्षमता है। गाँधीजी के जीवन की एक सत्य घटना से इसे भली भांति समझा जा सकता है-

'1921 ईव में अहमदाबाद में काँग्रेस होने वाली थी। गाँधीजी को उसमें भाग लेना था। मार्ग में लाखों की संख्या में लोगों ने उन्हें घेर लिया। वे लगातार गांधीजी की जय बोल रहे थे और गांधीजी के दर्शन के उत्सुक थे। भीड़ का उन्माद इतना बढ़ गया था कि गांधीजी की कर न आगे बढ़ सकती थी न पीछे लौट सकती थी। गांधीजी ने उनसे प्रार्थना की, डाँटा फटकारा पर कोई असर न हुआ। गांधीजी ने निराश होकर समीप में स्थित एक युवक से कुछ कहा। वह युवक अपने साथ एक विद्धान संगीतज्ञ को लेकर पंडाल में गया। उन विद्धान संगीतज्ञ उस असंख्य भीड़ को अपनी मधुर वाणी से शांत और स्तब्ध कर दिया। भीड़ सब कुछ भूलकर संगीत में मगन हो गई। इस बीच गांधीजी चुपचाप निकल गए। जो काम गांधीजी स्वयं नहीं कर पाए उसे एक संगीतकार ने कर दिखाया। वह महान संगेटकार और कोई नहीं वरन् पं विष्णु दिगंबरपलुसकर जी थे।

संगीत केवल विनोद की वस्तु नहीं है बल्कि ऐसा चिरस्थाई आनंद है जिसमें हमें आत्म सुख मिलता है। इसीलिए संगीत भक्ति का अभिन्न अंग रहा है। संगीत का प्राण-बीज नाद है। यह अखिल ब्रह्मांड में उसी प्रकार व्याप्त है जिस प्रकार अग्नि में उष्णता निहित है। वाक्य प्रदीप के प्रणेता ने सृष्टि को नाद का विवर्त मान है, यही नहीं वैशेषिक दर्शन में मन गया है कि पंचतत्वों का अग्नि तत्व जो व्यक्त शक्ति का प्रादुर्भूत रूप है वही आदिनाथ का मूल है और वही सृष्टि का भी मूल है।

संगीत की इसी व्यापकता को लक्ष्य कर पं ओंकारनाथ ठाकुर ने कहा है 'संगीत पृथ्वी का विषय नहीं है। शब्द आकाश का गुण है। जितना आकाश विशाल है नाद (संगीत) भी उतना ही व्यापक है।' शेख शादी ने कहा है कि - 'संगीत के पीछे पीछे खुद चलता है।'

'मानव जीवन का सर्वप्रधान लक्ष्य आत्मिक आनंद है, यह लक्ष्य संगीत के अतिरिक्त अन्य किसी माध्यम से प्राप्त नहीं हो सकता क्योंकि आत्मा स्वयं इतनी आनंदपूर्ण है , जिसका ज्ञान ईश्वर के अतिरिक्त अन्य किसी को नहीं है ; किन्तु वह भी इस ललित कला (संगीत) से शक्ति प्राप्त करती है और इसलिए यह कहावत प्रसिद्ध है कि 'जिस्म की ग़िज़ा गान और रूह की ग़िज़ा गाना)'। आत्मा जितनी शुद्ध और निर्मल होगी, उतना ही संगीत से उसका लगाव होगा और व उस कला से आनंद प्राप्त करेगी। आत्मानंद की अभिवृद्धि तथा उसे उत्तुङ्गशृंग पर पहुँचाने के निमित्त ही मानव को संगीत की आवश्यकता है, जैसा कि आत्म-तत्व-वेत्ताओं के कथन से स्पष्ट है कि उन्होंने इस कला को आत्म-मार्ग का सर्वश्रेष्ठ निर्देशक तथा सहचर अनुभव किया और इसके प्रकाश द्धारा उन्होनें सुगमता पूर्वक वे लक्ष्य प्राप्त कर लिए, जहाँ कल्पना-पक्षी की पहुँच भी नहीं हो सकती'।[5]

'आज के तनावपूर्ण वातावरण में संगीत के द्धारा मनुष्य को शांति प्राप्त हो सकती है। संगीत राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाता है। संगीत के द्धारा सम्पूर्ण राष्ट्र ही नहीं वरन् विश्व भी एक सूत्र में पिरोया जा सकता है। जाति, धर्म,संप्रदाय, के आधार पर देश को सत्तालोलुप राजनायिकों ने दो टुकड़ों में बाँट दिया किन्तु न वो बाँट सके हैन और न वो बाँट सकेंगे वह है संगीत।'[6]

वास्तव में मानव जीवन और संगीत का संबंध सनातन है जो मन और वाणी से परे और अनुभव तथा आनंद का विषय है। जीव ब्रह्मा का अंश है

जो परमानन्द स्वरूप है और ब्रह्मा ही नाद है जो कि संगीत का मूल है। उस नाद अर्थात ब्रह्मा का ही अंश होने के कारण मानव जीवन संगीत से अलग और अछूता कैसे रह सकता है ? वह संगीत तो मनुष्य की आत्मा में इस प्रकार घुला मिला है की उसके बिना मनुष्य जीवन की कल्पना असंभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. संगीत मणि- डॉ. महारानी शर्मा, श्री भुवनेश्वरी प्रकाशन - पृ.सं. 01 संस्करण 2008
2. भारतीय संगीत का इतिहास-ठाकुर जयदेव सिंह - पृ.सं. 05 - प्रथम संस्करण 1994
3. निबंध संगीत संकलक लक्ष्मीनारायण गर्ग पृ.सं. 618 संस्करण मई 1978
4. हिन्दी भक्ति काव्य एवं गायन संगीत - इभा सिरोठिया- पृ.सं. 60 संस्करण 2015
5. निबंध संगीत संकलक लक्ष्मीनारायण गर्ग पृ.सं. 619 संस्करण मई 1978
6. हिन्दी भक्ति काव्य एवं गायन संगीत - इभा सिरोठिया- पृ.सं. 60 संस्करण 2015

****

Overweight and Obesity Among Adolescent Girls of Allahabad City Under Changing Lifestyle

Parvati Singh*

Abstract - The changing global conditions are affecting the life style of human beings all over the world. Though the effects are prevalent at every age group of people but it is mainly affecting much to school and college going children. Therefore, a cross-sectional study was carried out to determine the prevalence of overweight and obesity among 500 adolescent girls of 12-15 years of age in Allahabad city. The anthropometric measurements of height and weight were made on selected girls. The body mass index (BMI) was computed following the standard equation. To calculate overweight and obesity among these girls internationally accepted BMI cut-off points were taken into consideration. Results exhibited that the overall rates of overweight and obesity were 8.34 % and 1.92 %, respectively. There was a steady increase in number of overweight and obesity among girls from 12 to 15 years of age.
Key words- Adolescent girls, BMI, Obesity, Overweight, Changing lifestyle.

Introduction - There are nearly one billion of adolescents in the world accounting 20-25% of total population in the developing countries. This particular group of population is likely to increase in next twenty years due to population momentum effect. At present the potential public health issue that is emerging, is the increasing incidence of childhood obesity in developing countries, thus, resulting socio-economic and public health burden that will be faced by these countries in near future. In its report, World Health Organization (WHO) defines obesity as a 'global epidemic (WHO, 2000). It is now estimated that there are more than 100 million obese individuals worldwide. Gopinath et al. (1994) estimated the obesity prevalence in an adult urban population of Delhi about 27.8%. A study in UK showed that more than 55% of adults were overweight (body mass index (BMI)) > 25 kg/ m^2), while 20 % are obese (BMI >30 kg/ m^2) (Trayhum, 2003).A study in the Surat, Gujarat reported that more than 27.4% of 14-16 years adolescent were overweight , while 14.3%% were obese (Alok et al., 2012). A study conducted by the Nutrition Foundation of India among the urban upper middle class segment in Delhi showed obesity in 32.2% of males and 50.0% of females (Krishnaswamy, 1999). In another study, Misra et. al. (2001) noticed that obesity was more prevalent in females (15.6%) than in males (13.3%). In recent years, the two most important factors that contribute to a sudden rise in incidence of obesity are changes in life style particularly dietary practices and urbanization. Presently, the diet includes more fats and oils, more sugar and fewer fibres (Ramachandran et al., 2002). Convenience foods and fast foods are getting increased acceptance. Besides dietary changes, changes in occupational activity, sedentary life styles and a lack of adequate physical activity have also been observed, which in turn have contributed to the increased incidence of obesity. Occupations that involve heavy manual labour are increasingly being replaced by sedentary habits as a result of mechanization. Obesity is associated with several risk factors for heart disease and other chronic diseases in adult life, including hyper lipidaemia, hyper insulinaemia, hypertension and early atherosclerosis (Berenson et. al., 1998). It is an important factor contributing to the morbidity and mortality due to chronic non-communicable diseases. The pace of development transition in Third World countries has been particularly marked in recent times, and has led to the double burden of under nutrition and obesity in developing countries. It is, therefore, imperative that the rising incidence of obesity is to be controlled before it emerges as the single most important public health problem in India. The global childhood obesity is increasing very rapidly (WHO, 2000). The number of seriously overweight children is widely prevalent. It is estimated that almost children (teenage) overweight adolescent has 70% chance of becoming an obese adult, and obesity can lead to a higher life threatening health problems. In other words, it increases the odds of the adult. Childhood obesity is associated with increased risk of disease. Prevalence varies from place to place because of differences in the lifestyle, mainly in the dietary activity in and out of house. In addition, urbanization and industrialization are the main culprits for the increase in the prevalence of obesity. The obesity among adolescents particularly girls and its causes must be investigated to address the problem seriously before it may become worse. Considering the above facts, the present study has been

*Associate Professor (Home Science) Mahila Sewa Sadan Degree College, Allahabad (U.P.) INDIA

conducted to estimate the prevalence of overweight and obesity among adolescent girls between 12 and 15 years in Allahabad city.

Methodology: A school-based, cross-sectional study was carried out over a period of four months, from October 2015 to January, 2016 in the college situated in urban area of Allahabad city. A total of 500 adolescent girls in the age group of 12 to 15 years were selected. Height was measured using an anthropometric rod. Weight was recorded by an electronic weighing machine with a sensitivity of 200 grams. Body Mass Index (BMI) was calculated using the formula "weight in kilogram / (height in meter)^2". Body Mass Index was then categorized into underweight (< 18.5), normal (18.5-24.9), overweight (25-29.9) and obese (> = 30). The data was then analyzed for the results. Physical activity which included the mode of transport used to go to school and participation in sports and games, aerobic physical exercises, and frequency and duration of participation in household activities were also recorded. Time spent in watching television, playing computer and video games were also noted. Diet preferences for pizza, burger, chocolate, biscuits, chips, and soft drinks were also taken into consideration to understand the relationship with overweight.

Results and discussion: The results presented in table 1 display that the average height and weight increased with increasing the age of children from 12 -15 years. The distribution of height, weight and BMI of sample across the age is given in Table 1. The mean Body Mass Index (BMI) of the sample was 17.83 kg/m^2. The overall prevalence of overweight among adolescents was 8.34% and obesity was 1.92%. The results clearly demonstrate that overweight and obesity showed rising trends with increase in age of girls (Table 2). According to the Body Mass Index cut off values, 18.7 % (94) were underweight (below 18.5) that indicate that a large number of girls were suffering from under nutrition that probably occurred due to negligence and improper knowledge of balanced diets (data not shown).

Table 1: Distribution of sample by weight, height and BMI of adolescent college girls:

Age (Years)	No.of Girls	Height (cm)	Weight (Kg)	BMI (Kg/m^2)
12	125	142.12±6.38	34.12±5.34	16.87±2.34
13	143	147.14±5.34	37.94±6.84	17.32±2.50
14	135	148.84±6.24	42.82±7.54	19.22±2.60
15	97	150.14±5.26	44.54± 6.34	20.o1 ± 3.54
Overall		146.04±8.34	38.02±6.34	17.83 ±2.90

It may also be correlated that the decline in weight gain could occur because the adolescents become more conscious about their looks with increasing age and restrict their dietary intake. Other study support our findings related to overweight and obesity among adolescents (Vijaylakshmi et al., 2002). About 70.84 % (354) girls were categorized as normal (18.5-24.9) (Data not shown) exhibiting improvements in the orientation of society towards female child. An appreciably high percentage of sample was identified as overweight (8.34%; 42) and obese (1.92%; 10).

Table 2: Distribution of sample by prevalence of overweight and obesity of adolescent college girls:

Age (Years)	No. of Girls	Prevalence(%)	
		Overweight	Obesity
12	125	7.44	1.62
13	143	7.32	1.68
14	135	12.04	3.64
15	97	13.23	4.54
Overall		8.34	1.92

The prevalence of overweight was higher among the adolescents of the high socioeconomic status group, who had physical activity of less than one hour in a day, watched television 4 hours per day or even more, and ate chocolates daily. Their diets also included pizza and burger. The study clearly demonstrates that changing life pattern is causing risk of overweight among adolescent girls that may affect adversely the future of young girls. This study seeks the attention of planning makers to develop policy for value education based on lifestyle particularly dietary intake and physical exercise to avoid this problem and save the future generations from this disease.

Conclusions: The study showed that incidence of overweight / obesity in adolescent girls in city like Allahabad may represent a model study of country which explains about critical health issue. The study also points out that greater risk of overweight among college girls may be identified and an intervention of college authority as well as parents/ society may promote to increase the physical exercise and restrict the consumption of energy rich foods to control the overweight ,thereby future generations may be made healthy.

References:-

1. Alok P., Malay.P., Kumar DD.(2012). Prevalence of overweight and obesity on adolescents of urban and rural area of Surat, Gujarat. Nat. J. Med. Res.,2:325-329
2. Berenson G S., Sathanur R., Srinivasan, Bao W., William P., Newman (1998). Association between multiple cardiovascular risk factor and atherosclerosis in children and young adults. The New Eng. J. Med..338:1650-1656
3. Gopinath N., Chadha Sl., Jain P., Shekhawat, Tandon R. (1994).An epidemiological study of obesity in adults in the urban population of Delhi. J.Assoc. Physic. India, 42:212-215
4. Krishnaswamy, K. (1999). Obesity in the urban middlie class in Delhi. (Ed.) Scientifc Report No. 15, New Delhi : Nutrition Foundation of India.
5. Misra A., Pandey RM., Devi JR., Sharma R., Vikram NK., Khanna N. (2001). High prevalence of dubieties, obesity and dyslipidaemia in urban slum population in northern India. Int. J.Obesity Relat. Metab. Disorder, 25:1722-1729

6. Ramachandran A., Snehalatha C., Vinitha R., Thayyil M., Kumar CK., Sheeba L. (2002).Prevalence of overweight in urban Indian adolscent school children. Diab. Res.Clin. Pract., 57:185-190
7. Trayhum P. (2003).The biology of obesity- recent development in the regulation of energy balance. In: Seshadri M., Siddhu A., .eds. Nutrition Goals for Asia- Vision 2020. Proceedings of the 9th Asian Congress of Nutrtion, New Delhi:Nutrtion Foundation of India, 443-447.
8. Vijayalkshmi K. Reddy A G., Prasannna KT., Krishanaswamy K. (2002).Obesity in adolescent of different socio-economic groups: Prevalence in Andhra Pradesh., India. Asia Pac. J. Clin. Natur., 11:S40-3.
9. WHO (2000). Obesity: Preventing and managing the global epidemic.Report of A WHO consultation. World Health Organisation Technical Report Ser.,No.894: 1-253.

****

Relevance of Unorganized Sector Employment in India: The Current Needs

Dr. Arvind Prakash*

Abstract - Unorganized sector has a crucial role in our economy in terms of employment and its contribution to the National Domestic Product, savings and capital formation. The contribution of the unorganized sector to the bet domestic product and its share in the total NDP at current prices has been over 60 per cent. At present Indian Economy is passing through a process of economic reforms and liberalization. During the process, merger, integration of various firms within the industry and up gradation of technology and other innovative measures take place to enhance competitiveness of the out put both in terms of cost and qualitative to compete in the international market. The low inefficient units either wither away or mere with other ones performing better. In this situation, there is a special need to take care of the interests of the works by providing them training, upgrading their skills, and other measures to enable them to find new avenue of employment, improve their productivity in the existing employment, necessary to enhance the competitiveness of their product boot in terms of quality and cost which could also help in improving their income and thereby raising their socio economic status. It has been experienced that formal sector could not provide adequate

Opportunities to accommodate the workforce in the country and informal sector has been providing employment for their subsistence and survival. Keeping in view the existing economic scenario, the unorganized sector will expand further in the years to come. Thus, it needs to be strengthened and activated so that it could act as a vehicle of employment provided and social development.

There is a need for promoting informal sector which employs a major proportion of casual workers and self-employed. The basic idea is not to perpetuate insecure jobs but to make it easier for the job seekers to find jobs in productive works at least during the transition period. The first thing would be to create environment where informal activity does not seem to illegal or undesirable but it looked to be rather productive. Hurdles in the form availability of inputs and credit and marketing should be specially attended. Attitude of the local government towards vendors, small production units needs to be changes so as to assist them and not resist.

Keywords- Informal sector, unorganised sector, vendors, handloom sectors, casual workers.

Introduction - Unorganized sector in India is broadly characterized as consisting of units engaged in the production of goods and services with the primary objectives of generating employment and income. These units typically operate at low level of organization, with little or on division between labour and capital as factors of production and on a very small scale. Labour relations, where they exist are based mostly on casual employment, kinship or personal or social relations rather contractual arrangements with formal guarantees as in formal sector. The owners of these production units have to raise the finance at their own risk and are personally liable for any debts or obligations incurred in the production process. For statistical purpose, the informal sector is regarded as a group of production units, which form part of the household sector as household enterprises or equivalently, unincorporated enterprises owned by households.

In India, the term informal sector has not been used in the official statistics or in the National Accounts Statistics (NAS). The terms used in the Indian NAS are ' organized' and ' unorganized' sector. The organized sector comprises enterprises for which the statistics are available from the budget documents or reports etc. On the other hand the unorganized sector refers to those enterprises whose activities or collection of data is not regulated under any legal provision or who do not maintain anyregular accounts. In the unorganised sector, in addition to the unincorporated proprieties or partnership enterprises or partnership enterprises, enterprises run by co-operative societies, trust, private and limited companies are also covered.

The term ' unorganized labour' has been defined as those workers who have not been able to organize themselves in pursuit of their common interests due to certain constraints, such as casual nature of employment, ignorance and illiteracy, small and scattered size of establishments etc. As per the survey carried out by the

*Associate Professor (Economics) Feroze Gandhi College, Raebareli (U.P.) INDIA

National Sample Survey Organization (NSSO) in the year 2014-15, the total employment in both organized and unorganized sector in the country was of the order of 45.9 crore. Out of this, about 2.6 crore were in the organized sector and the balance 43.3 crore in the unorganized sector. Out of 43.3 crore workers in the unorganized sector, 26.9 crore workers were employed in agriculture sector, crore in construction, and remaining in the manufacture activities, trend and transport, communication & services. A large number of unorganized workers are home based and are engaged in occupations such as beedi rolling. Agarbatti making, paped making, tailoring and embroidery work.

Broadly, the unorganized sector provides income earning opportunities for a larger number of workers. In India, there is a large magnitude of work force which gets their livelihood from the unorganized sector. The enactment of legislations and other measures to bring them under the regulatory and social protection instruments will adversely affect the existing mechanism prevailing in the unorganized sector as it would lead to market imperfections creating hurdles in the smooth functioning of the market led economy. Besides, it requires huge infrastructural land institutional arrangement involving financial implications beyond the capacity of the government in the changing scenario all over the world. The government attaches high priority to the welfare of the workforce in the country.

Labour both men and women of working age constitute the main strength of economic development of a nation. Being about half of the population, women power forms an important segment of the labour force. All rural women can be classified into categories on the basis of the nature of their jobs. Nearly 94 percent of women workers are working in the unorganized sector. Nearly 81.4 percent work in agriculture and the rest in the non agricultural occupations and services. Rural women in India even after 70 years of independence are characterized by low status, low of education, low level of health conditions and employment. One important reason for this has of course been that a large number of women in the unorganized sector are self employed. The self employed of course, remain an important part of the informal economy.

Informal sector plays a vital role in terms of providing employment opportunity to large segment of the working force in the country and contributes to the national product significantly. The contribution of the unorganized sector to the net domestic product and its share in the total NDP at current prices has been over 60% In the matter of savings the share of household sector in the total gross domestic saving is about three fourth.

Thus unorganized sector has a crucial role in our economy in terms of employment and its contribution to the National Domestic Product, saving and capital formation. At present Indian economy is passing though a process of various firms within the industry and up gradation of technology and other innovative measures take place to enhance competitiveness of output both interms of cost and quality to compete in the international market. The low inefficient units either wither away or merge with other ones performing better. In this situation, there is a special need to take care of the interests of the workers by providing them training upgrading their skills, and other measures to enable them to find new avenue of employment, improve their productivity in the existing employment, necessary to enhance the competitiveness of their product both in terms of quality and cost which would also help in improving their income and thereby raising their socio-economic status. It has been experienced that formal sector could not provide adequate opportunities to accommodate the work force in the country and informal sector has been providing employment for their subsistence and survival, keeping in view the existing economic scenario, the unorganized sector will expand further in the years to come. Thus it needs to be strengthened and activated so that it could act as a vehicle of employment provider and social development.

The unorganized sector workers suffer from cycles of excessive seasonality of employment, lack of a formal employer-employee relationship and absence of social security protection. Several legislations such as the Workmen's Compensation Act 1923, the Minimum Wages Act 1948, the Maternity Benefit Act 1961, the Contract Labour (Regulation of Employment &Conditions of Service) Act 1996, and the Building and other Construction Workers Welfare (cess) Act, 1996 etc. are directly or indirectly applicable to the workers in the unorganized sector also. The Ministry of labour is also operating welfare funds for some specific categories of workers in the unorganized sector like beedi workers, cineworkers and certain non coalmine workers. The funds are used to provide various kinds of welfare activities to the workers in the field of health care, housing, educational assistance for children, water supply, etc. The Government has launched Group Insurance Schemes in the past, such as the JanshreeBeema Yojana for people living below or marginally above the poverty line and Aam Aadmi Bima Yojana for landless rural households which also include workers in the uno0rganized sector. There are some employment oriented schemes like Swarn Jayanti Gram Swarojgar Yojana, Pradhanmantri Gram Sadak Yojana Smpoorna Gramin Rojgar Yojana, National Rural Emploment Guarantee Scheme etc. Which are benefiting unorganized sector works.

The Government has also enacted a Central legislation for the building and other construction workers towards creation of welfare funds at the level of states. There are around 20 million construction workers in the country. A small cess is collected on the basis of the cost of a construction project which makes the project which makes the corpus of the welfare fund for the construction works. All facilities as enumerated above are provided to this section of the unorganized sector workers. Earlier three states in the country namely, Kerala, Tamilnadu and Delhi have started implementing schemes under this Act.

However. Other States alsoadopted it consequently. Moreover, the welfare fund model have successfully been implemented by various States for various categories of works. The State of Tamilnadu is running 11 Welfare Boards for workers like construction workers, truck drivers, footwear workers, handloom weaving workers. Similarly, State of Kerala is also running several welfare funds for agricultural workers, cashew workers, coir workers, fisherman, toddy-tappers etc. The model is so popular that some of the other States like Andhra Pradesh, Karnataka and Madhya Pradesh are in the process of bringing out their own legislation for creation of welfare funds in the unorganized sector workers for providing them social security.

However, for the vast majority of these workers there is no fixed place to work, no fixed working hours, no regular wages, no job or economic security and not even any from of identity. In "Letters from Russia" Togore wrote about these toiling peoples "They are like a lamp stand bearing the lamp of civilization on their heads; people above receive the lights while they are smeared with the trickling oil". In India employment per se is not the main problem. Many work in the unorganized sector which is characterized with low earning, poor working condition and lack of social security protection. The incidence of poverty has been found to be highest for these workers. The statutory minimum wages have been largely ineffective in influencing wage level in the unorganized sector. Irregular revisions, lack of proper indexation and work enforcement have rendered statutory minimum wages virtually irrelevant in practice (ILO 1996). The current issue is how to make workers more productive apart from creating more jobs. The approaches which treat employment as mere by-product of growth or seek a solution of the unemployment programmes are inadequate….Market forces can not be relied upon ………….. public interventions are necessary to ensure adequate opportunities and to enable the labour force to get access to these opportunities.

In case of agriculture, the potential for indirect employment in the form of jobs in the agro-industries seems to be higher than that for direct employment. Higher investment in agriculture and rural infrastructure is a necessary condition for enhancing agricultural growth. The government's role seems to be much more important not only for raising public investment but also for inducing private investment.

The need of the hour is to take care of the majority of the labour force engaged in unorganized sector. Liberalization has driven more people from organized sector to unorganized sector. There is a need to reverse this process so that more and more units of the unorganized sector should be allowed to graduate and be promoted to the category of organized sector. The Government should recognize Right to Work as a Fundamental Right. The Government has to play a role of facilitator and promoter so that the workers employed in the informal sector are able to get requisite level of protection and security to have decent work environment enabling them to express their skills fully and according to their capabilities.

There is a need today to take care of the interests of the workers by providing them training, upgrading their skills, and other measures to enable them to find new avenue of employment, improve their productivity in the existing employment, necessary to enhance the competitiveness of their product both in terms of quality and cost which could also help in improving their income and thereby raising their socio economic status. It has been experienced that could not provide adequate.

Opportunities to accommodate the workforce in the country and informal sector has been providing employment for their subsistence and survival. Keeping in view the existing economic scenario, the unorganized sector will expand further in the years to come. Thus, it needs to be strengthened and activated so that it could act as a vehicle employment provider and social development.

References:-

1. Parthasorthy G., "Economic Reforms and Rural Development India" Academic Foundation. New Delhi, 2003
2. Prasad Anuradha and Prasad K.V. Eswara, "Home based Workers in India – Living and Working Condition" National Labor institutes, NOIDA, 1990.
3. Suri, K.B., "Small scale enterprises in industrial Development : The Indian Experience" Seg publications, New Delhi, 1993
4. Government of India, Ministry of Science, "Economic Survey" 1994-95 and 2001, New Delhi, 1993
5. Central Statistical Organization Department of Statistics, Government of India, New Delhi, "National account Statistics". 1993
6. Mishra S., "India's Textile Sector A Policy Analysis" Centre for Policy Research, Seg Publication, New Delhi, 2013
7. Kuppuswamy B, "Social Change in India "Vikas Publication House, New Delhi, 2013
8. Samal Kishore C., "urban informal sector" Manak Publication, New Delhi 1999
9. NSSO, Sarvekshana, Vol. XVI. No. 2, 1992, Journal of National sample Survey Organization, Ministry of Planning, new delhi.
10. Jhavala Renana, "Unorganized Workers Bill – In Aid of the informal Worker" Economic & Political Weekly, May 28 June 4-10,2015.
11. Hirway Indira, "unorganized Sector Workers Social Security Bill" 2005. Economic & Political Weekly, February 4-10,2006 Vol. XLI, No.5
12. Singh Gopal, "Economic Empowerment of Rural Women in India" RBSA Publishers, New Delhi.

****

खंडवा जिले के प्रमुख पर्यटन स्थल

डॉ. अजय वाघे *

शोध सारांश – निमाड़ क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले पूर्व निमाड अथवा खंडवा में पर्यटन स्थलों की बात करें तो,पर्यटन के क्षेत्र में अग्रणी है। खंडवा जिले के अंतर्गत ओम्कारेश्वर है ,जो एक धार्मिक नगरी है। यहां पर भारत का प्रमुख ज्योतिर्लिंग है ओम्कारेश्वर नर्मदा नदी के किनारे स्थित है, जिससे सभी प्रकार के पर्यटक भ्रमण करने आते हैं । दादाजी धूनीवाले का मंदिर जिसके कारण खंडवा को दादाजी की नगरी भी कहा जाता है। मध्य प्रदेश का स्विट्जरलैंड हनुवंतिया भी खंडवा जिले के अंतर्गत आता है । संत महात्माओं की बात करें तो संत सिंगाजी महाराज का मंदिर भी खंडवा जिले में है । इसके अतिरिक्त किशोर कुमार स्मारक , बोरिया माल टापू , नागचुन पार्क एवं तालाब में खंडवा की शान बढ़ाता हैं। इसके अलावा भी खंडवा जिले में अन्य पर्यटन स्थल उपस्थित है जिससे पर्यटक वर्ष भर आते रहते हैं । पर्यटन स्थलों का अपना अलग आर्थिक एवं धार्मिक महत्व है जिसका सामान्य परिचय इस शोधपत्र में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है ।
शब्द कुंजी- पर्यटन, पर्यटक, निमाड़, पूर्व निमाड़, खंडवा।

प्रस्तावना – 1 नवंबर 1956 को मध्यप्रदेश की स्थापना के साथ ही खंडवा जिले की स्थापना की गई। पूर्व में खंडवा जिले का नाम पूर्व निमाड़ था। स्थापना के समय पर खंडवा जिले में बुरहानपुर भी शामिल था, परंतु कुछ समय पश्चात वर्ष 2003 में बुरहानपुर को खंडवा जिले से पृथक कर बुरहानपुर जिला बनाया गया। खंडवा जिले का अपना इतिहास रहा है यहां पर 12 वीं सदी के मंदिर अभी विद्यमान है। ऐतिहासिक महत्व के साथ-साथ खंडवा का संबंध राजनीति एवं मनोरंजन के क्षेत्र से भी रहा है। किशोर कुमार जो फिल्मी जगत के सितारे हुए हैं का जन्म खंडवा जिले में हुआ था। आर्थिक दृष्टि से अगर देखा जाए तो खंडवा जिले में सूत मिलों की संख्या अधिक थी साथ ही अन्य उद्योग में स्थापित हुए। खंडवा जिला रेलवे एवं सड़क मार्ग के द्धारा पूरे भारतवर्ष से जुड़ा हुआ है। कृषि के विषय पर देखें तो यहां के मुख्य फसलें सोयाबीन, कपास, गेहूं तथा अन्य फसलें हैं। इसी तरह पर्यटन की बात करें तो खंडवा जिले में बहुत महत्वपूर्ण पर्यटन स्थल है जैसे -ओम्कारेश्वर जो अपने आप में एक महत्वपूर्ण स्थान है। पूरे भारत से पर्यटक ओमकारेश्वर में घूमने आते हैं। इसके अतिरिक्त खंडवा जिले में पर्यटन के और भी स्थल है जैसे हनुवंतिया टापू, दादाजी धूनीवाले का मंदिर, नवचंडी मंदिर, इंदिरा सागर बांध, नागचुन पार्क एवं तालाब, सिंगाजी महाराज का मंदिर एवं समाधि आदि। खंडवा जिले के पर्यटक स्थलों का धार्मिक महत्व के साथ-साथ आर्थिक महत्व भी है। पर्यटन का क्षेत्र किसी भी देश अथवा राज्य के लिए आर्थिक दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। पर्यटन से किसी भी क्षेत्र का आर्थिक विकास होता है , साथ ही विभिन्न व्यक्तियों द्धारा पर्यटन क्षेत्रों की सभ्यताओं का भी विकास होता है ।

उद्देश्य:

1. खंडवा जिले के प्रमुख पर्यटन स्थलों का अध्ययन प्रस्तुत करना ।
2. खंडवा जिले के प्रमुख पर्यटन स्थलों के महत्व का अध्ययन प्रस्तुत करना ।

खंडवा जिले के प्रमुख पर्यटन स्थल-पूर्व निमाड अथवा खंडवा मध्य प्रदेश का एक महत्वपूर्ण जिला है। जिले का संबंध कई संत महात्माओं से रहा है। खंडवा जिले को दादाजी की नगरी के नाम से भी जाना जाता है। भाषा के रूप में प्रमुख रूप से हिंदी का प्रयोग किया जाता है। महाराष्ट्र राज्य से लगा होने के कारण कुछ स्थानों पर मराठी भी बोली जाती है। निमाड़ क्षेत्र में होने के कारण यहां के क्षेत्रीय बोली निमाड़ी है। पर्यटन केंद्रों के संबंध में देखा जाए तो पर्यटन के बहुत से केंद्र है,जिनमें से प्रमुख पर्यटन स्थलों का अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है ।

ओमकारेश्वर- भारत में 12 ज्योतिर्लिंगों में से 1 ज्योतिर्लिंग खंडवा जिले के ओमकारेश्वर में है। भगवान शिव के 2 मंदिर एक ओमकारेश्वर एवं दुसरा ममलेश्वर है। ओमकार पर्वत पर स्थित होने के कारण इस स्थान का नाम ओमकारेश्वर पड़ा। ऐसा माना जाता है कि ओमकारेश्वर में सभी हिंदू देवी देवताओं के मंदिर हैं। प्राकृतिक रूप से देखा जाए तो ओमकारेश्वर में नर्मदा नदी का प्रवाह है, साथ में वन संपदा भी अधिक मात्रा में है। ओमकारेश्वर में वर्ष भर पर्यटक आते रहते हैं, यहां पर ऐसा स्थान है, जहां पर सभी धर्मो के पर्यटक आते हैं। ओमकारेश्वर खंडवा रेल्वे स्टेशन से लगभग 70 किलोमीटर दूर है। ओमकारेश्वर जाने के लिए रेल, सड़क एवं हवाई यातायात के साधन उपलब्ध है। हवाई जहाज से पहुंचने के लिए इंदौर में हवाई अड्डे पर उतर कर सड़क मार्ग से जाया जा सकता है। रेलवे के माध्यम से जाने के लिए खंडवा अथवा इंदौर रेलवे स्टेशन पर उतरकर बाद में सड़क मार्ग से पहुंचा जा सकता है।

दादाजी मंदिर-निमाड़ की भूमि संत एवं महापुरुषों की भूमि रही है। इनमें से एक महान संत हुए हैं, जिनका नाम दादाजी धूनीवाले हैं। दादाजी धूनीवाले का संबंध खंडवा जिले से होने के कारण खण्डवा को दादाजी धूनीवाले की नगरी भी कहा जाता है। दादा जी अनेक जगहों से भ्रमण करते हुए खंडवा आये और खंडवा में ही बस गए और अंतत: यहीं पर सन 1930 में समाधि ले ली। समाधि लेने के बाद समाधि स्थल पर ही एक वृहद मंदिर का निर्माण किया गया। दादाजी के देश और दुनिया में सैकड़ों भक्त हैं। जुलाई-अगस्त में गुरु पूर्णिमा के अवसर पर एक बहुत बड़ा मेले का आयोजन किया जाता है, जिसमें लाखों की संख्या में भक्त पूरे भारतवर्ष से आते हैं। मेले के उपलक्ष में पूरे शहर को सजाया जाता है तथा भक्तों का गरिमापूर्ण रूप से स्वागत

* प्रभारी प्राचार्य, विद्योदय महाविद्यालय, मनावर, धार (म.प्र.) भारत

किया जाता है। मेले की अवधि के अलावा भी वर्षभर भक्तों एवं पर्यटकों का आना जाना लगा रहता है। दादा जी मंदिर विशाल क्षेत्र में बना है, जिससे मंदिर बहुत मनमोहक दिखाई पड़ता है। इन्हीं विशेषताओं के कारण दादाजी मंदिर एक प्रमुख पर्यटन स्थल भी बन गया है।

हनुवंतिया टापू- मध्य प्रदेश के यशस्वी मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान द्वारा मध्यप्रदेश में खंडवा जिले के विकास एवं पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए खंडवा जिले की मूंदी तहसील के अंतर्गत हनुवंतिया टापू को प्रारंभ किया। हनुवंतिया टापू को हनुमंतिया टापू भी कहा जाता है। खंडवा जिले में स्थित इंदिरा सागर बांध के निर्माण से झील का निर्माण हुआ इसी झील को विकसित कर हनुवंतिया टापू बनाया गया। हनुवंतिया टापू को मध्य प्रदेश का स्विट्जरलैंड भी कहा जाता है। कुछ अन्य इसे मध्यप्रदेश के गोवा के नाम से भी जानते हैं। हनुवंतिया टापू इस प्रकार से निर्मित किया गया है, कि इसके किनारे से देखने पर दूर-दूर तक पानी दिखाई देता है। जिससे यह समुद्र के समान दिखाई पड़ता है। इस स्थान पर प्रतिवर्ष जल महोत्सव का आयोजन किया जाता है, जिसमें विभिन्न कार्यक्रमों का आनंद लिया जाता है। यहां पर नौका विहार की सुविधा उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त यहां पर आवास एवं भोजन की सुविधा का लाभ भी लिया जा सकता है। वर्ष भर यहां पर पर्यटक आते रहते हैं। हनुवंतिया टापू तक पहुंचने के लिए रेल्वे, सड़क एवं हवाई यातायात के माध्यम से पहुंचा जा सकता है।

संत सिंगाजी के मंदिर एवं समाधि- जैसा की सर्वविदित है, कि निमाड़ मैं संत महात्माओं के मंदिर समाधि स्थल स्थित है, उन्ही में से एक संत सिंगाजी का मंदिर। इस समाधि स्थल खंडवा जिले का प्रमुख पर्यटन स्थल संत सिंगाजी निर्माण क्षेत्र के प्रमुख संत के रूप में विख्यात है।निमाड के बड़वानी जिले की जन्मस्थली होने के बाद उन्होंने समाधि,खंडवा जिले में ली। संत सिंगाजी को निमाड़ के लोग भगवान के समान पूजते हैं।खंडवा जिले के ग्राम सिंगाजी मे संत सिंगाजी महाराज का 2010 में एक भव्य मंदिर का लोकार्पण किया गया। यहां प्रतिवर्ष अगस्त- सितंबर के समय दस दिवसीय मेले का आयोजन किया जाता है। मंदिर एम समाधि स्थल पर दूर-दूर से भक्त एवं पर्यटक आते हैं।पर्यटन की दृष्टि से देखें तो यहां पर विभिन्न स्थानों से पर्यटक आते रहते हैं। मंदिर एंव समाधि स्थल पहुंचने के लिए किसी भी यातायात साधन का उपयोग किया जा सकता है।

किशोर कुमार स्मारक- खंडवा जिले का संबंध सिर्फ संत महात्माओं से ही नहीं है, इसके अतिरिक्त खंडवा का संबंध अभिनेता गायक कलाकारों आदि से भी है। इसी में से एक है किशोर कुमार। किशोर कुमार की जन्म स्थली खंडवा रही है। किशोर कुमार अकेले ऐसे व्यक्ति थे जो, अभिनेता के साथ-साथ गायक, संगीत, निर्देशक, फिल्म प्रोड्यूसर तथा फिल्म निर्देशक भी हुए। इन सभी प्रतिभाओं के साथ किशोर कुमार विश्व प्रसिद्ध हुए।किशोर कुमार की याद मे खंडवा जिले में किशोर कुमार स्मारक की स्थापना की गई है।कशोर कुमार स्मारक इस प्रकार से बनाया गया है कि दूर से ही किसी भी व्यक्ति को मनमोहन ले। इन्हीं विशेषताओं के कारण विभिन्न स्थानों से पर्यटक किशोर कुमार स्मारक को देखने आते हैं। खंडवा जिले में शहरी क्षेत्र में ही होने के कारण यहां पर आसानी से पहुंचा जा सकता है।

बोरियामाल टापू- बोरियामाल टापू इंदिरा सागर जलाशय में स्थित एक टापू हनुवंतिया से लगभग 10 किलोमीटर की दूरी पर जलाशय के मध्य में है। बोरियामाल टापू तक जाने के लिए हनुवंतिया टापू से नौका के माध्यम से जाया जा सकता है। इस टापू पर एक घना जंगल है, तथा विभिन्न प्रकार के जंगली जानवर भी मौजूद है। प्राकृतिक रूप से हरा-भरा होने से पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र है। इस जगह का नाम बोरियां माल इसलिए पड़ा क्योंकि डूब से पूर्व यहां पर बेर के पेड़ का जंगल था, तथा यहां के गांव का नाम बोरियामाल था।बोरियामाल एक ऐसा गांव है जहां पर अधिक शोर शराबा नहीं है तथा पर्यटकों की संख्या भी अधिक नहीं होती है। यह स्थल उन पर्यटकों के लिए अच्छा है जिन्हें एकांत पसंद है। यहां पर वन विभाग के सुरक्षा गार्ड निरंतर सुरक्षा में लगे रहते हैं।

नागचून पार्क एव तालाब- खंडवा शहर से लगभग 2 से 3 किलोमीटर दूरी पर नागचून गांव से थोड़ा बाहर की ओर एक तालाब का निर्माण किया गया। तालाब बनाने का मुख्य उद्देश्य शहर को जल की आपूर्ति करना थी। तालाब से संपूर्ण शहर एवं अन्य क्षेत्रों में जल पहुंचाया जाता था, वर्तमान में नर्मदा जल की व्यवस्था होने पर यहां से जल की पूर्ति कम हो गई। नागचून तालाब को विकसित करने की प्रक्रिया में तालाब के साथ ही पार्क भी बनाया गया है।इस पार्क में एक टॉय ट्रेन भी संचालित है। कुछ समय पूर्व यहां पक्षियों का आवागमन बहुत अधिक था,किंतु वर्तमान में थोड़ा कम हो गया है। यहां पर पर्यटक वर्ष भर आते हैं। यहां के तालाब में पार्क का आनंद लेते हैं, किसी विशेष दिवस पर यहां पर पर्यटकों की भीड़ लगी रहती है।

निष्कर्ष- पर्यटन की दृष्टि से देखा जाए तो खंडवा जिले में और भी बहुत से पर्यटन स्थल मौजूद है। यहां पर प्रमुख पर्यटन स्थलों का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इसके अतिरिक्त खंडवा से बुरहानपुर जिले के अलग जिला बनने पर भी बहुत से पर्यटन स्थल बुरहानपुर जिले में चले गए जैसे असीरगढ़ का किला आदि। किसी भी देश या क्षेत्र में पर्यटन का अपना अलग महत्व है। पर्यटन से किसी भी क्षेत्र के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पर्यटकों का क्षेत्र में आवागमन होने पर पर्यटक उस क्षेत्र विशेष की सभ्यता संस्कृति को सीखते हैं। जिससे क्षेत्र की सभ्यता संस्कृति का विकास होता है। पर्यटन के संबंध में खंडवा जिले की बात करें तो जिले के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. तिवारी हंसा, नवीन शोध संसार पृष्ठ संख्या 412
2. दुबे तरुण, नवीन शोध संसार पृष्ठ संख्या 22
3. झा अशोक कुमार, नवीन शोध संसार पृष्ठ संख्या 179
4. चौबे मधुसुधन, नवीन शोध संसार पृष्ठ संख्या 318
5. Khandwa.nic.in
6. m.patrika.com
7. en.m.wikipedia.org
8. मध्य प्रदेश सामान्य ज्ञान, पुणेकर पब्लिकेशन इंदौर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Drainage System of Ramganga River System (In Respect of Moradabad District)

Ankit Kumar*

Abstract - River has been central to the growth and development of Human Civilization. In India, River has had social, cultural, economic and spiritual significance in the life of its people since time immemorial. Ramganga is one of major tributary of River Ganga. Moradabad is situated on the banks of the Ramganga River. Mostly in the rainy season, some of the most serious contributing factors are industrial wastes, a mixture of chemicals, heavy metals are discharged all over the water and it is difficult to clean them. This leads to deforestation resulting in silting, flooding and reduced navigation possibilities. It is a fact that good water quality produces healthy humans from one of the qualities of poor water quality. River Ramganga is the lifeline of Moradabad and it is used for domestic and agricultural purposes. In this paper, we are studying the drainage system of Ramganga River in respect of Moradabad District.

Introduction - The geographical extent of the Ramganga sub-basin lies between 78° 14' to 80° 8' east longitudes and 27° 7' to 30° 6' north latitudes of the country . The Ramganga is the first major tributary joining the Ganga. It rises at an altitude of about 3,110 m in the lower Himalayas near the Lohba village in the Garhwal district of Uttarakhand. The length of the Ramganga River from the source to the confluence with the Ganga is 596 km. During its course, the river flows through a mountainous terrain and has a number of falls and rapids. The river enters the plains at Kalagarh near the border of the Garhwal district, where the famous Ramganga dam has been constructed. Beyond Kalagarh, the river flows in a southeasterly direction and finally joins the Ganga on its left bank near Kanauj in the Fategarh district. The river flows entirely in the states of Uttarakhand and Uttar Pradesh. The catchment area of the sub-basin is about 32,493 Sq.km

Drainage System Of Ramganga: The important tributaries that join the Ramganga River are the Ban, the Khoh, the Gangan, the Gagas, the Aril, the Kosi, the Haldgadi Rao and the Deoha.

Tributory Of Ramganga

Gangan – Rising in the north of the district of Bijnor, this river enters the districts of Moradabad near the village of Kaimukhia (in district Amroha) and forms the boundary of the districts in the north for a short distance. It than flow in a winding courses in a south easterly direction for about 5km. and then goes on towards the south west for about 2km. Proceeding in the same direction it forms the natural boundary between district Amroha and Moradabad for about 2km. and again further on between tahsil Moradabad and Bilari. Near the village of Pandit Nagla (in tahsil Moradabad) it is fed by another Karula a small rising in a chain of jhils to the north west of the city. It leaves the districts near the village of Turtipur (in tahsil Bilari). Although it carries an ample supply of water it is generally fordable even in the rains. It has well defined banks which are generally high and firm on the east low and sandy toward the west. In its upper course, the character of the bed is clayish sand which gradually becomes clayish in the south. It is little used for irrigation purposes in the district. A dam is made annually at the village of Umri and, in a few villages lower down its course; water is sometimes lifted from it to irrigate the adjacent lands.

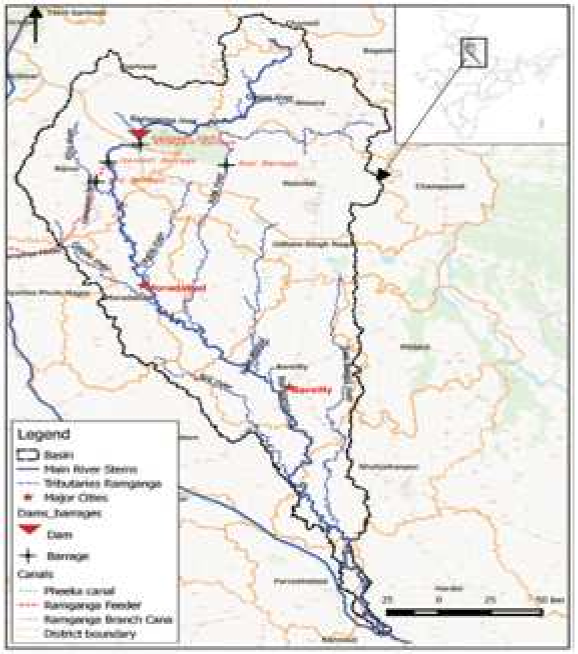

*Geography Faculty of The Bodhi IAS PCS Classes & Former Guest Faculty of VAJIRAM& Ravi IAS, Rajendra Nagar, New Delhi, INDIA

Dhela- This stream, which rises in the hills of the Naina Tal district, enters the district near the village of Kalyanpur (in tahsil Thakurdwara) after forming for about 2 km, the boundary between two districts. At this place it is fed by the Matwali (East) or Dhandi which separates the Thakurdwara tahsil from that of Kashipur (Naini Tal district) for some distance. It forms the boundary between tahsils Thakurdwara and Moradabad for some distance and is fed by the Damdama near the village of Bhagatpur Ratan before it joins the Ramganga at a place about 3 km. north of the city. Though its bed is fallow it has a considerable volume of water and since the construction of the Tumaria dam (in district Naini Tal) it has not changed its course. It sometimes floods its narrow khaddar during the rains. It is fordable and is not a serious barrier to communication as it dries up completely during May and June.

Kosi- This large stream (which is also known as the Kausitya or Kosila) rises in district Almora and passing through the districts of Nainital and Rampur touches the districts boundary on the east near the village of Khabaria Bhur (in tahsil Moradabad) where it is fed by the Bahalla or Bah. It then leaves the district and after traversing the western part of the district of Rampur reappears near the village of Barwara Khas in the south-eastern part of the Moradabad tahsil. Running through the Rampur district in a southerly course of about 2 km. it once again enters the Moradabad district near the village of Dhatura Megha Nagla and joins the Ramganga south of the village of Bhaya Nagla (in tahsil Moradabad). Its average depth during the rains is about 2 km. and its breadth about 305 m. but during the dry season it shrinks considerably to a depth of about 0.6 m. and to about 18m in breadth. The bed of this erratic stream is sandy and its banks low and sandy in the north though firm and high towards the south.

Bahalla - This stream (which is also known as the Bah) rises in the Tarai and touching the district boundary near the village of Ud-mawala (in tahsil Moradabad), skirts the Moradabad tahsil boundary on the east. During its course, before joining the Kosi near the village of Khabaria Bhur (in tahsil Moradabad), it is fed by the Nachna (which rises a few kilometers to the south of Kashipur in the Naini Tal district) and its tributary, the Ghogra, near the village of Kher Khata. It has a clayish bed and does not affect the lands on its banks which are firm and well defined. In the dry season it is about a meter in depth and 4 m. in breadth but during the rains, when in spate, the depth increase to about 2m. and the breadth to about 30m.Throughout its course it is utilized for irrigation, dams being built at Mandla and several other places.

Rajhera- This stream has its origin in the depressions of the rice lands near the village of Bhagatpur Tanda (in tahsil Moradabad) and joins the Ramganga near the village of Samdha Ramsahal (in tahsil Moradabad). It is fed by several minor watercourses, the chief being the Kachia. Its bed is characterized by clayish sand and its banks by poor and broken soil. It is spanned by a masonry arch bridge near the railway station of Dalpatpur, on the road leading to Bareilly and at a short distance downstream by a railway bridge. Throughout its course it is largely utilized for irrigation.

Lapakna- Rising in the Tarai region, this stream enters the district near the village of Raghoowala (in tahsil Thakurdwara) after forming the northern boundary of the district for about a kilometer. On the right bank it is fed by the Lapakna nala near the village of Isampur and on the left bank by the Kurka near the village of Rehta Muafi Mustehkam, the united stream, shortly afterwards discharging its water into the Ramganga. It is utilized for irrigation purposes in exceptionally dry years.

Khalia- Rising in the Tarai, this stream enters the district near the village of Tanda Alam in the northwest of tahsil Tahkurdwara and receives the Kawakhar when it becomes known as the Repi or Rapi. It is joined by the Jabdi a Tarai stream, before it meets the Ramganga.

Kurka- This stream stars as a nullah close to Thakurdwara town and flows in a southerly direction as far as the village of Sultanpur Dost. Taking almost a westerly course from here it is fed, on the right bank, by a small tributary, the Lapakna, near the village of Rehta Muali Mustehkam before it joins the Ramganga near the deserted village Kharagpur. It has a deep bed flanked on each side by patches of scrub jungle and becomes; an impossible barrier for carts during the rainy season. Throughout its course it is utilized extensively for irrigating the sugarcane fields.

Hydropower Generation: The Kalagarh Dam is a multipurpose project, and one of its added benefits is hydropower generation. The designed capacity of this project is 198 mega watts (MW) through three turbines each of 66 MW capacities. The discharge required is 226 comic. The hydropower generation from the Aligarh Dam is dependent on irrigation demand, i.e., when irrigation demand exceeds 30 comic, water is released from the dam through power houses. Hence the power generation is often lesser than the designed capacity.

Socio-cultural Values: There are some places adjoining the river Ramganga, which have sites of historical and cultural significance. In the plains of Uttar Pradesh, there are two other important sites on the banks of the Ramganga, which have significant socio-cultural values, viz., Katghar in Moradabad. During these auspicious days, these sites host several thousand visitors. The associated study to this aspect reveals a rich diversity of livelihoods, rituals, and other ways in which different groups of people relate to the river.

Terrestrial and Aquatic Biodiversity: About 45km stretch of the Ramganga River flows through the Corbett Tiger Reserve. Within Corbett, and even the immediate upstream and downstream, the Ramganga is not only crucial for aquatic species, but it also quenches the thirst of large terrestrial species (tiger, elephant etc.).

Conclusion: Conjunctive use of water becomes critical, along with better irrigation practices (including soil health-

based water and fertilizer application, so that water can be used for irrigation in a judicious manner). This way, the water usage for irrigation can be rationalised and hence saved water can be used for other purposes, including reviving flows in the river.

It is envisaged that efforts like these ones will go a long way to realize E-Flows in critical river systems, including the Ganga and Ramganga. This has been a clear-cut 'ask' of various campaigns run by the Government of India, including the 'Namami Gange' programme. In many ways, the alignment with government programmes and schemes, as argued in this report, makes this initiative all the more relevant, hence it not only deserves due attention but also serious thoughts for implementation on ground!

References:-

1. Static Data - Ministry Of Water Resources, River Development and Ganga Rejuvenation
2. Survey Of Indian River,Department Of Science and Technology
3. Sanyal Sanjeev,2012, The land Of Seven Rivers
4. Bharti Radhakant ,2008,Rivers Of India
5. Butler David ,1998, Urban Drainage

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Assessment of Physico-Chemical Properties of Soil from Panje- Funde Wetland, Uran, Navi Mumbai, West Coast of India

Aamod N. Thakkar*

Abstract - Wetland soils, also known as hydric soils, are soils which are saturated, flooded, or ponded long enough during the growing season to develop anaerobic conditions in the upper part that favor the growth and regeneration of hydrophytic vegetation. Wetland soils are often wet for most of the year. Various Physico-chemical properties of soil such as pH, Alkalinity, Calcium, Calcium Carbonates, Carbonates, Phosphates, Nitrates, Chloride, Magnesium and Organic matter were assessed to evaluate quality of soil.

Introduction - Wetlands are an important natural resource in the biosphere. Traditional terms used to describe wetlands are marshes, bogs, and swamps. Tidal wetlands are among the most biologically productive and societally valuable ecosystems in the world (Barbier et al., 2011; Howard et al., 2017;), The values and functions of wetlands include: groundwater recharge, water supply, floodwater storage, sediment trapping, pollution control, and wildlife habitat (Mitsch and Gosselink, 1986) Increased emphasis on the importance of wetlands at local, state, and national levels demands thorough study of all components of wetlands, including soil. s. Fluctuating hydrology, hydromorphic soils and hydrophilic plant communities are taken as the three key elements in wetland ecosystems that give rise to interplay between aerobic and anaerobic processes (Jessica et al. 2006; Mitsch and Gosselink 2007). Environmental modifications, such as nutrient availability, pH variation and sediment accumulation, in turn influence the distribution and biodiversity of plant communities (Christensen and Crumpton 2010). Soil is the physical foundation for wetland ecosystem, comprising principal medium for substances conversion in wetland, as well as the major reservoir of chemical substances for most wetland plants, which intensively reflects the complex interactions in wetland system evolution (Hamdan et al. 2010). Wetland plant strongly influences the soil nutrient contents, especially in surface layer (Dong et al. 2012a). Wetland continue to be lost at a global rate of approximately 1.5% annually (Hopkinson, Cai, & Hu, 2012 ;).

Panje site is having all in one habitats like wetland, mud flats, coast, mangroves vegetation Paddy fields and human dwellings. Ever since its inception on May 26, 1989, Jawaharlal Nehru Port (JNP) is the biggest container handling port in India, handling around 44% of the country's containerized cargo, crossing the historic landmark of 4 million TEUs in container consecutively for the last five years. Shipping, shipbuilding, and port support are major economic factors in Uran. Along with JNPT, container terminals include APM Terminals (formerly GTI) and NSICT- DP World. The Prime Minister Shri Narendra Modilayed the foundation of a Port- Based Multi-product Special Economic Zone (SEZ) at the prestigious Jawaharlal Nehru Port Trust (JNPT) at Sheva, Navi Mumbai on Saturday, August 16, 2014. All these development and port related activities have placed tremendous pressure on the nearby ecosystems. Uran is under heavy process of Urbanization, Industrialization, land filling, reclamation cutting of mangroves, shipping and port related activities resulting in fragmentation of natural habitats. Hence present study has been undertaken to evaluate soil quality of wetland.

Materials and Methods:

Study Area: The Panje-Phunde wetland is located in the coastal town of Uran, Navi Mumbai in Raigad district of Maharashtra west coast of India. Panje –Funde wetland (Lat.18˚53'52.38''Nand Long.72˚57'07.07' is positioned in between Uran city and Jawaharlal Nehru Port. It is a major bird watching site in Mumbai Metropolitan Region (MMR). It is the last surviving wetland at Uran. The core wetland area at Panje covers 213 hectares and consists of foraging and roosting areas of several bird species. The buffer area of 157 hectares is mangroves. Panje consists of a mix of habitats including freshwater and saline marshes, reeds, mangroves, grasslands , scrub and salt pans. In 2015, The State Wildlife Board approved the creation of a bird sanctuary at Panje-Funde near Uran.

Methodology: The studied samples were collected from five different sites at depthsof 0 to 15 cm (topsoil). The studied samples were collected in polyethylenebags in total amount of about 1 kg. The samples were air –dried and

* Veer Wajekar A. S. C. College, MahalanVibhag, Phunde, Tal. Uran, Dist. Raigad (Maharashtra) INDIA

cleaned from roots of plants and other wastes.The chemicals and reagents used for the analysis were of A. R. Grade. A portion of 5 g of fresh sediments was suspended in50 ml of distilled water and kept on stirrer overnight. The next day the suspension wascentrifuged and the clear supernatant was subjected to the measurement of pH, salinity,chlorinity, PO4-P and NOx-N by the methods described by Venkatachalam and Kale (2002),Sulphates were estimated by the method described by Bower and Huss (1948).CaCO3 Content (By Allison and Moodie, 1965), Organic Matter (ByWalkley and Black's method, 1935.

Result and Discussion: As evident in table 1, Thesoil of the section of Phunde-Panje Wetland averaged pH of 7.26 with maximum pH of 7.5and minimum of 7.1. The organic content of the soil averaged at 0.0046 g%. The maximum organic content was 0.0061 g % in the soil and minimum organic content of 0.0033 g% was in the soil. The phosphate phosphorus content in the soil collected averaged at 0.0135 g% with the maximum phosphate phosphorus content as 0.0194 g%, lowest phosphate phosphorus content 0.0088 g%.

The nitrite and nitrate nitrogen content of the soil averaged at 0.0716 g % with the nitrogen content maximum 0.092 g % in sediments collected and nitrogen content minimum 0.046 g% was observed. The salinity of the sediments averaged 29.33 g%; 39.59 g%was maximum salinity of soil and lowest salinity of 21.53 g% of the soil recorded was from study area. The calcium content of the sediments averaged at 2.51 g % with the nitrogen content maximum 3.41g % in soil collected and nitrogen content minimum 1.76 g % was observed.

The calcium carbonate content of the sediments averaged 40.27 g%; 40.88 g %was maximum calcium carbonate of soil and lowest calcium carbonate of 39.64g % was recorded. The carbonate content of the soil averaged at 25.15 g% with the carbonate content maximum 32.88g % in soil collected and carbonate content minimum 16.45g % was observed. The magnesium content of the soil averaged 1.26 g%; 1.66g %was maximum calcium carbonate of soil and lowest calcium carbonate of 0.92g % was recorded. The chlorinity content of the soil averaged at 30.41 g % with the chlorinity content maximum 36.32g % in soil collected and chlorinity content minimum 23.12g % was observed.

The sulphate content of the sediments averaged 0.0023 g %; 0.0028g %was maximum sulphate of soil and lowest sulphate of 0.0018g % was recorded Sediments serves as primary source ofexposure to contaminant for sediment-dwelling organisms and animals such as crabs and other organisms that feed on the bottom, (Lokhande*et al.*,2011) Sediments act as a reservoir forcontaminants that can be transferred to the water column through physical disturbance,diffusion, and biological activities (athalye, 2013). This exposure can produceadverse impacts on benthic communities and can also lead to indirect effects on wildlife andhuman health due to the accumulation of contaminants from the food chain concentration (Meshram*et al.*, 2014).

Table 1 (see in next page)

Conclusion: In general, it was observed that the wetland area sample sites showed variation in various physico-chemical parameters studied. These parameters play a very important role In proving nutritions to the biotic community. In spite of the present status of the wetland, it is possible to revive the wetland ecosystem if remedial measures such as reduction of sewage and solid wastes at source, flow of tidal water, plantation of mangroves, regulation of silt brought by runoff, etc. are implemented. The local folks can be encouraged to conserve mangroves and remove floating objects.Furtherstudies may help in providing remedial measures for sustenance of these wetland site.

References:-

1. Athaley, R. P. (2013), "Biodiversity of thane creek" in Proc. Nat. Conf. on Biodiversity: Status and Challengesin Conservation, 'FAVEO 2013', pp 9-14
2. Barbier, E. B., Hacker, S. D., Kennedy, C., Koch, E. W., Stier, A. C., & Silliman, B. R. (2011). The value of estuarine and coastal ecosystem services. Ecological Monographs, 81, 169–193.
3. Christensen JR, Crumpton WG (2010) Wetland invertebrate community responses to varying emergent litter in a prairie pothole emergent marsh. Wetlands 30:1031–1043.
4. Dong ZC, Liang ZM, Li DY, Guo HF (2012a) Influences of Three Gorges Project on water resources and ecological effects in Poyang Lake. J HohaiUniv (Nat Sci) 40(1):13–18 (in Chinese press)
5. Hamdan MA, Asada T, Hassan FM, Warner BG, Douabul A, Al-Hilli MR, Alwan AA (2010) Vegetation Response to Re-flooding in the Mesopotamian Wetlands, Southern Iraq. Wetlands 30:177–188.
6. Hopkinson, C. S., Cai, W., & Hu, X. (2012). Carbon sequestration in wetland dominated coastal systems—a global sink of rapidly diminishing magnitude. Current Opinion in Environmental Sustainability, 4, 186–194
7. Howard, J., Sutton-Grier, A., Herr, D., Kleypas, J., Landis, E., Mcloed, E., ... Simpson, S. (2017). Clarifying the role of coastal and marine systems in climate mitigation. Frontiers in Ecology and the Environment, 15, 42–50.
8. Jessica LM, Robert MG, Teri CB (2006) Linking soil process and microbial ecology in freshwater wetland ecosystems. Plant Soil 289:17–34.
9. L. E. Allison and C. D. Moodie, "Carbonate," In: Black, C. A., Ed., Methods of soil analysis. Part 2: Chemical and microbiological properties, Agronomy, Madison, Wisconsin, USA, 1965, pp.1379-1398.
10. Lokhande, R.S, Pimple, D.S ,Singare, P.U (2011) "Quantification Of Study Of Toxic Heavy Metal PollutionIn The Sediments Of Kasardi River Taloja, Mumbai, India" . New York Times Journal; 4(A):66-71.ISSN: 1554-0200.

11. Meshram, L. N., Mishra, P. S., Pawar, S..andUdavant, S. M. (2014), "Bioaccumulation of heavy metals (Zn,Pb, Cd and Ni) in tissues of *Paeneusmonodon*." Int. J. of Adv. Res. 2(3): 548-555.
12. Mitsch WJ, Gosselink JG (2007) Wetlands, 4th edn. Wiley, New York. Rapid Conductometric Method For Estimating Gypsum In Soils C. A. Bower, R. Huss, Published 1 September 1948.
13. Venkatachalam S. and Kale, P. G. (2002), "Benthic Macrofauna of Thane Creek: Seasonal Variations".Proceedings of National Seminar on Creeks, Estuaries and Mangroves, Pollution and Conservation, pp 78- 84.
14. Walkley, A.J. and Black, I.A. (1934) Estimation of soil organic carbon by the chromic acid titration method. Soil Sci. 37, 29-38.

Table 1

Para-meter Site	Color	P^H	Organic contentg %	Po_{4-P} g%	NOx-N g%	Salinity	Ca g%	$CaCo_3$ g %	CO_3 g%	Mg g%	Chlor -inity g%	Sulp -hate g %
A	**Black**	7.3	0.0048	0.0134	0.092	28.54	2.33	40.88	16.45	1.18	23.12	0.0025
B	**Black**	7.2	0.0061	0.0146	0.062	31.26	3.41	39.64	22.68	0.92	27.62	0.0018
C	**Black**	7.5	0.0047	0.0194	0.046	25.72	1.76	40.56	27.34	1.46	33.56	0.0022
D	**Black**	7.2	0.0033	0.0088	0.083	39.59	2.63	40.24	32.88	1.66	31.44	0.0028
E	**Black**	7.1	0.0045	0.0116	0.075	21.53	2.45	40.04	26.42	1.08	36.32	0.0024

****

A Study of People's Perception Regarding Investment in Gold

Dr. Girish Shah*

Introduction - Investment is employment of funds with an object of earning income or capital appreciation. Many individuals find the process of investment very interesting and challenging as they can participate actually in the decision making process and see the results for themselves. Since these decisions are being made by individuals, they are bound to make some or other type of error and as a result will not always make profit. A proper understanding of money, savings, various available investment avenues, risk and returns attached to it etc is important in order to gain and build wealth. From good old days, fixed deposits, recurring deposits, PPF has been the popular modes of investments. With development and globalization people were exposed to new avenues of investment and Gold has been one such avenue.

Gold has long been considered the most desirable of precious metals, and its value has been used as the standard for many currencies in history. Gold has been used as a symbol for purity, value, royalty. One of the salient features about the gold is that "A single gram of weight is not at all wasted since its exploration". It may be the first metal used by humans and was valued for ornamentation and rituals.

Applications of Gold: In various countries, gold is used as a standard for monetary exchange, in coinage and in jewelry. Pure gold is too soft for ordinary use and is typically hardened by alloying with copper or other base metals. The gold content of gold alloys is measured in carats (k), pure gold being designated as 24k.

1. As a medium of monetary exchange: Gold coins intended for circulation from 1526 into the1930s were typically a standard 22k alloy called crown gold, for hardness. Modern collector/investment bullion coins are typically 24k, although the American Gold Eagle and British gold sovereign continue to be made at 22k, on historical tradition. The world wide used coins are American Gold Eagle, British Gold Sovereign, Canadian Gold Maple Leaf, Gold Kangaroos, Australian Gold Nugget.

2. Jewellery: Because of the softness of pure (24k) gold, it is usually alloyed with base metals for use in jewelry, altering its hardness and ductility, melting point, color and other properties. Alloys with lower cartage, typically22k, 18k, 14k or 10k, contain higher percentages of copper, or other base metals or silver or palladium in the alloy.

3. Other uses: • Gold leaf, flakes or dust is used in some gourmet foodstuffs, sweets and drinks as decorative ingredient.

1. Gold is used in dentistry as crowns and permanent bridges.
2. Gold threads are used in embroidery.
3. Gold has been used for electrical wiring in some high energy applications, atomic experiment and other electrical equipments.
4. Olympics, Nobel Prize and other competitions and Honors award medal to the winner.

Rationale of the Study: Gold has been measured as very precious metal from long back till the time. In Indian culture the Gold is worshipped by all classes. Gold is purchased in various physical forms like Bars, Biscuits, Coins, Jewellery, etc. in this way people invest in Gold.

Through this study it has been tried to find out why people buy/invest in Gold, what are their perception regarding the investment in the Gold, what are their investment patterns, how often they invest in Gold and various other factors influencing the investment in gold.

Review of literature: India is a land of different cultures and sub-cultures, customs, religions, food and ethnic dress preferences. With culture and tradition, a deep affection for gold and a thrust for accumulating it have the traces back in the history of the nation from many centuries.

Suresh (2012) has identified that primary reason for such a high level of demand and investment urge amongst the Indian customers are due to rise in their savings and real income levels, and not by price of the commodity. The Indian consumers have started investing more and more of their savings into Gold which has a high level of risk diversifying quality.

The findings of **Mansor (2012)** proved useful for designing financial investment portfolios. The paper evaluated the role of gold from a domestic perspective, which should be more relevant to domestic investors in guarding against recurring heightened stock market risk.

Neenu & Nishad (2012), their study found that gold has a strong hedge in case of India, USA, UK, China and France. Their study provides insights regarding the nature of gold and stock during the normal condition and also in case of

*Assistant Professor, Mahakal Institute of Management, Ujjain (M.P.) INDIA

extreme loss.

Hundal et al (2013) observed in his study the factors influencing purchase behavior of retail investors towards gold with the help of Factor Analysis and revealed that variables like profitability, tax aversion, future prospect; time value of money etc. motivates a retail investor to purchase gold as an investment. The purpose for buying gold has clearly come out through the survey.

Parikh & Vaish (2013) found in his research study that the spur in the investment and demand into commodity such as Gold has been recently on rise due the rapid growth and development been observed in the Asian developing economics, especially in India. In future it would be interesting to further investigate the impacts of gold on inflation rate in the Indian Economy.

Sujata and Kumaresan (2013) concluded that gold is preferred by all classes of people and is inevitable for certain rituals, functions and celebrations as per our cultural demands. Although price of gold fluctuate frequently its purchase and the people flocking behind it has not decreased. Lifestyle is a major aspect that influences the purchase decisions of gold. They made an attempt to study the influence of lifestyle on the purchasing decision of gold in Chennai city.

Research Methodology:

1. The Study: A Study of People's Perception regarding Investment in Gold

2. Objectives of Study: The main objective of the research is to study people's perception regarding investment in Gold/ Gold Ornaments. Other objectives are:

1. To analyze the gender wise perception regarding investment in gold.
2. To analyze the behavior of investors with respect to Gold.
3. To know the preference of investors towards investing in pure gold and gold ornaments.
4. To know the focus area of customers while buying gold.
5. To understand the purpose of buying gold.
6. To know the preference for point of purchase for gold.

3. Type of study: The research study is Exploratory in nature.

4.The sample:

Sampling Unit- Sampling unit is the customers who invest in gold or gold ornaments.

Sample size- The Sample size was 100 Respondents.

Sampling Technique- Sampling technique is purposive sampling and the data have been collected according to the different demographics variables i.e. Age, Gender, income, occupation etc.

5. Tools for Data collection: Primary data was collected with the help of self prepared structured questionnaire. Likert scale was used in the questionnaire.

6. Hypotheses:

$H_0$1: There is no difference between male and female towards buying of gold as an investment instrument.

$H_0$2: There is no difference between male and female towards buying of gold as an ornament.

$H_0$3: There is no difference between male and female towards point of purchase of gold.

$H_0$4: There is no difference between male and female towards buying of gold for security purpose.

Data Analysis and Interpretation: The collected data were coded and tabulated. By applying factor analysis, four major factors have been identified. Null hypotheses were formulated and tested through t-test. The results of analysis obtained through SPSS are as summarised as under:

Group Statistics

	Gender	N	Mean	Std. Deviation
Investment buying	Male	56	3.456633	0.759074
	Female	44	3.422078	0.732949
Ornament buying	Male	56	3.517857	0.639203
	Female	44	3.477273	0.467189
Point of purchase of buying	Male	56	3.475	0.612075
	Female	44	3.318182	0.729853
Security buying	Male	56	2.517857	0.914352
	Female	44	2.477273	0.875736

Independent Samples Test

(See in last page)

Discussion:

1. The t-statistics shows that the value (perception between male and female towards buying of gold as an investment instrument) is significant at 0.8190 (p value) which is greater than 0.05 level of significance. Therefore null hypothesis cannot be is rejected and it has been concluded that there is no significant difference between male and female towards buying of gold as an investment instrument.
2. The t-statistics shows that the value (perception between male and female towards buying of gold as an ornament) is significant at 0.7245 (p value) which is greater than 0.05 level of significance. Therefore null hypothesis cannot be is rejected and it has been concluded that there is no significant difference between male and female towards buying of gold as an ornament.
3. The t-statistics shows that the value (perception between male and female towards point of purchase of gold) is significant at 0.2455 (p value) which is greater than 0.05 level of significance. Therefore null hypothesis cannot be is rejected and it has been concluded that there is no significant difference between male and female towards point of purchase of gold.
4. The t-statistics shows that the value (perception between male and female towards buying of gold for security purpose) is significant at 0.8228 (p value) which is greater than 0.05 level of significance. Therefore null hypothesis cannot be is rejected and it has been concluded that there is no significant difference between male and female towards buying of gold for security purpose.

Implication and Conclusion of the Study: The present

study was based on individuals buying behavior of gold. This study tried to explore gender wise psychology towards buying of gold which was the most influencing factor.

As per the objectives of this study, four factors have been identified (through Factor analysis) viz. investment buying, ornament buying, security buying and point of purchase which consisted of many sub factors.

Analysis of data revealed that there is no difference in the perception of male and female as for as buying of gold for the purpose of investment, for the purpose of jewelry or ornament, for the purpose of safety and security of future is concerned and also from where to buy, when to buy, what factors are to be kept in mind while buying of gold are concerned.

Gold has become an inseparable part of the Indian society. Demand for Gold as an investment commodity has been always seen by the investors as a most preferred investment instrument.

It is observed that the perception of investors varies many times on the basis of their age, gender, income, etc. However the attraction towards gold as a status symbol has still remained.

Limitations:

1. The research was conducted within the limited time frame so a few shortcoming may be expected.
2. The information obtained from the customers based on questionnaires was assumed to be factual.
3. The research has been conducted in Ujjain city so the results of the study may differ if the study conducted in other regions.
4. People's perception may differ according to their demographic factors.

Scope: The further study may be conducted in various regions. This study is conducted taking Gender as the only demographic variable; therefore more studies are possible considering other demographic variables like- age, Income, Occupation, Experience, etc.

References:-

1. A Suresh (2012), An Analytical Perspective of Global Melt down Vis-à-vis Perceptible Escalation in Gold Prices with Special Reference to India, Journal of Finance, Accounting and Management, pp. 79-95.
2. Hundal et al, Herd Behaviour and Gold Investment: A Perceptual Study of Retail Investors, Journal of Business and Management (IOSR-JBM), Vol.15 (4), PP 63-69, 2013, e-ISSN: 2278-487X, p-ISSN: 2319-7668 Downloaded from https://citeseerx.ist.psu.edu/viewdoc/download?doi=10.1.1.1079.189&rep =rep1&type=pdf, www.iosrjournals.org
3. Mansor, "Financial market risk and gold investment in an emerging market: the case of Malaysia," International Journal of Islamic and Middle Eastern Finance and Management, Emerald Group Publishing, vol. 5(1), 2012, pages 25-34
4. Neenu & Nishad, Gold as as a hedge and safe haven against stock market volatility: An International Perspective, International journal of Islamic and Middle Eastern Finance and Management,5,1,25-34, 2012
5. Parikh & Vaish, Gold and Investor's Perspective in Different Market Conditions, Global Journal of Management and Business Studies. Vol 3 (8), pp. 825-834, 2013, ISSN 2248-9878
6. Sujata and Kumaresan **,** Influence of Lifestyle Perception on Gold Purchase Decisions, Global Research Analysis, Vol 2 (7), 2013, ISSN No 2277 – 8160 Downloaded from https://www.worldwidejournals.com/global-journal-for-research-analysis-GJRA/recent_issues_pdf/2013/July/influence-of-lifestyle-perception-on-gold-purchase-decisions_July_2013_ 1598966863_11.pdf

Independent Samples Test

		Levene's Test for Equality of Variances		t-test for Equality of Means						
		F	Sig.	t	df	Sig. (2-tailed)	Mean Difference	Std. Error Difference	95% Confidence Interval of the Difference Lower	Upper
Investment buying	Equal variances assumed	0.6556	0.4200	0.2293	98	0.8190	0.0345	0.150	-0.2643	0.3334
	Equal variances not assumed			0.2303	93.8843	0.8183	0.0345	0.1499	-0.2632	0.3323
Ornament buying	Equal variances assumed	5.8162	0.0177	0.3533	98	0.7245	0.0405	0.1148	-0.1873	0.2685
	Equal variances not assumed			0.3665	97.5407	0.7142	0.0405	0.1107	-0.179	0.2602
Point of purchase of buying	Equal variances assumed	2.1022	0.1502	1.1682	98	0.2455	0.1568	0.1342	-0.1095	0.4232
	Equal variances not assumed			1.1438	83.6767	0.2559	0.1568	0.1371	-0.1158	0.4294
Security buying	Equal variances assumed	0.0543	0.8160	0.2244	98	0.8228	0.0405	0.1808	-0.3182	0.3994
	Equal variances not assumed			0.2256	94.1857	0.8219	0.0405	0.1798	-0.3165	0.3977

****

Exploring Components of Service Quality Dimensions of Commercial Banks Operating in Ujjain Region

Jitendra Parmar* Dr. Kamran Sultan**

Abstract - The Indian banking system has been adequately developed and different categories of banks such as public, private, foreign, cooperative, rural, etc. The service offered by the banking industry is fundamental and unique in social and economic points of view of a nation. The technological advancements such as introduction of internet and mobile banking has transformed the banking services and rooted an unprecedented growth of the industry. Now the banks are also utilizing these tools to facilitate the customers and reform a platform for communication. The traditional banking practices have become history now and the banks are coming up with innovative ideas to expand their business across the globe. Thus, the importance of quality of services and customer convenience has attracted the focus of practitioners and researchers in the bnking sector. The banks are focusing on exploring the concepts and finding ways to improvise the effectiveness of these concepts of service quality to develop a competitive advantage. The results of the study revealed various key elements of the service quality through the factor analysis supported the existing literature and the fundamental framework emerged through the exploratory factor analysis.
Keywords- Banking, Customer Satisfaction, Service Quality, Marketing Strategy.

Introduction - The banking industry is one of the key service industries which offers vital financial services and affects the lives of majority of the population. The service offered by the industry is fundamental and unique in social and economic points of view of a nation. In the earlier era, the attitude of banking industry was confined to the delivery of financial service that it was not considered important to market for its services and need of products were enough to carry forward the tasks. Before the era of 1950s, the banks had no understanding or regard for marketing. It came into existence due to the shift in market paradigm which is attributed to technological advancements and immensely increasing competition. The banks are mainly engaged in the banking activities which are typically defined as the borrowing and deposit of money through channels and institutions. The monetary flow of public saving is channelized to the organizations through loans and investment by the banks. This depiction of banking activities is practiced by the overall banking industry whereas the individual players which are typically the public and private sector banks face tough competitions among them to strive for customers. The role of banking players has significantly enlarged in the last decades and the customer's expectation for the deliverables has also witnessed a paradigm shift. The increase in the customer base is consistently increasing and so the expectations of the customers for quality of services in addition to the monetary benefits, which has encouraged the banks to integrate the traditional practices with modern tools of market expansion. Consequently, the banking industry is focusing on the marketing strategy to sustain the growth of the segment to retain the existing customers and attract new potential customers. Thus, it is imperative to study and explore the service quality dimensions adopted by the banks to optimize the opportunities to increase sales and achieve a competitive sustainable advantage.

Service Quality Analysis - The quality of the products or services offered by any organization has a significant reflection of the marketing strategy adopted by any organization. For the purpose of assessment of quality of the services, Zeithaml, Parasuraman, and Berry (1988) have explored and defined five dimensions to assess the quality of services used by customers and termed the survey instrument SERVQUAL. These dimensions are commonly accepted by the researchers and academicians to assess and analyses the perception of the service quality. These dimensions are defined as "Tangibles, Reliability, Responsiveness, Assurance, and Empathy". All these elements of the service quality are interrelated and interdependent and combinedly creates an influence on the consumers. Therefore, it becomes important to understand that assessment of service quality is an essential component for any organization and in context of banking sector where the services are their key product it becomes

*Research Scholar, Pandit Jawaharlal Nehru Institute of Business Management, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
** Reader, Pandit Jawaharlal Nehru Institute of Business Management, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

even imperative to explore and understand the aspects of service quality to comprehend the present status of the marketing strategy and align it for the further improvements.

Literature Review - The concept of quality of services in bank marketing has developed when the banks focused on expanding their business to sustain growth. Marketing strategy in banking is a combination of attributes and activities which helps the banks to focus on the product and the consumer more effectively than their competitors. In simple terms, it means the coordinated application of marketing techniques pertaining to the organizational objectives pertaining to the specific needs of the customers through the components of marketing mix. To explore and understand such aspects of service quality in marketing strategies in reference to banking industry, various studies have been conducted in the past and some of them are presented in the following paragraphs. Walker (1995) studied the satisfaction of the consumers for availed services. The study was conducted to explore a framework which can provide an improved understanding of the service satisfaction process. The study focused on recognizing and separating the peripheral and central dimensions of services, by clearly considering the process of evaluation, the notion of active and passive expectations and together with a realistic decision-making process for the evaluation of services. Spreng, Harrell, and Meckoy (1995) focused on service recovery and impact on satisfaction and intentions. The study was conducted through observations captured from various service sectors. The results of the study explored the aspects of satisfaction and service management among the consumer and service provider. Clow and Beisel (1995) studied on managing consumer expectations for low margins and high service levels by initiating and maintaining any interaction between a service provider as per the expectations of the consumer. In this study, he explained three actions which a service provider wants from the consumer of the service which included immediate payment and repeated consumption of the service. Similarly, in the banking industry, the banks provide the financial services and pertain to retain the existing customers. Rust, Catherine, and Zeithaman (2004) in their study investigated the returns on marketing through analyzing customer equity. The study focused on various criteria to assess the returns through calculating return on advertising, loyalty program, etc. Gupta and Mittal (2008) found that a properly designed advertising strategy is significant for promoting the services of the banks. It was reported that banks utilize similar tools of marketing promotion which is mainly focused on media promotion. The results of the study revealed that the banks differ on the parameter of the advertising techniques which are mainly "personal sales" and "direct marketing" which was majorly practiced by the private sector banks. Dixit (2004) conclude that in order to be successful in marketing and increasing efficiency, customer needs must be identified by designing new products for their customers. Staff must have enough knowledge to meet the needs of the client. The organizations should pursue long-term strategies to transform the whole organization into a customer-centric organization. In another study by Mehta (2010) reported that the Indian banks are not efficient in marketing communication. The study suggested that banks should focus on adopting appropriate marketing promotion strategies to offer better services. The study also reported that banking services can significantly improve with the introduction of personal sales as a marketing promotion strategy in banks.

Significance of the Study- To comprehend the aspects of improvisation of banking services, it is imperative to consider the banking as a service industry and in the scenario of rapidly changing market environment, it becomes vital to study and analyze how the banks market their products and services. This analysis will aid the banking professionals and policymakers to identify the underlying dimensions of their adopted marketing strategies and set forth a base to optimize the effectiveness of marketing and quality of quality of services.

Methodology- The present study is aimed at exploring and analyzing various factors or dimensions of quality of services offered by commercial banks operating in Ujjain region. Based on the statement of the problem and research gaps explored through an extensive review of the literature, the research objective is defined as "To explore and analyze the components of quality of services offered by commercial banks operating in Ujjain region". Individuals having any bank account were considered as a sample unit and the data collection was done using the nonprobability convenience sampling technique. A total of 300 filled questionnaires were used for analysis of the study. The responses were gathered through 5 points Likert scale ranging from strongly agree to strongly disagree.

Data Analysis- The data was studied in various steps, the preliminary analysis was conducted through frequency observations which provided an overall understanding of the respondent's profile and their demographic composition. After the demographic analysis the data was analyzed through exploratory factor analysis to explore the components of the service quality. The KMO measure of sampling adequacy was found as 0.648 which exhibits an adequate sample for factor analysis. The Bartlett's test of sphericity also evidenced employment of factor analysis. Further, the results of factor analysis-derived 5 factors of SERVQUAL model as per the existing literature. The cumulative variance explained by all the factors was found to be 65.89% which shows that a reasonable amount of variance in responses is explained by the retained components of factor analysis.

Table 1: Results of KMO and Bartlett's Test (for Service Quality)

Kaiser-Meyer-Olkin Measure of Sampling Adequacy.		648
Bartlett's Test of Sphericity	Approx. Chi-Square	2927.111
	Df	105
	Sig	000

Table 2: (see in last page)

Table 3: Total Variance Explained

Total Variance Explained

Rotation Sums of Squared Loadings

Factor	% of Variance	Cumulative %
1	15.25	15.25
2	14.674	29.924
3	14.651	44.575
4	11.285	55.861
5	10.03	65.89

Extraction Method: Principal Component Analysis.

Conclusion- Adequate quality of service is an essential component of success of any organization and the banking industry is no exception to that. Commercial banking in India is majorly dominated by the public and private sector banks. In the past decade, the industry has witnessed sharp growth in the product portfolio and coverage. The results of the study revealed various key elements of the marketing strategy and explored their perception towards these components and underlying variables. The variables explored through the factor analysis supported the existing literature and the fundamental framework of the SERVQUAL model emerged through the exploratory factor analysis. The factor analysis resulted into five dimensions of the service quality which are generally accepted in the field of marketing across the globe. These “five service quality dimensions are tangibility, reliability, responsiveness, assurance and empathy”. The most important factor arose through the factor analysis was ‘Assurance’ which was comprised of three variables and the explained the maximum variance. In the context of assessment of service quality, the term assurance is defined as a positive intent from the employees of the organization which provides a sense of confidence in the customers. The result of the underlying variable also explains that the experience of the bank employees has a significant role in assurance exhibited by highest factor loading of 0.892 in factor composition. Similarly, the second factor was also comprised of three variables which were related to variables related to responsiveness which represents the willingness of the staff to provide prompt service, politeness and availability in the working hours. The factor 3 was termed as tangible as the tangible attributes are also significant in the context of banking services since the customers have to spend time within the bank premise as per their banking requirements. The fourth factor comprised of two variables representing the empathy aspect of the service quality mainly pertaining to individual attention to the customers. The fifth and the last factor had three underlying variables which were signifying towards the reliability aspect of the service quality dimensions. The questions were aimed to assess error free services, customer grievance management system and availability of the essential forms in the bank. Briefly the results demonstrated the fundamental structure of the SERVQUAL Model, and the model fit can be adequately justified as the factors explained the 65.89% variance in the variables.

References :-

1. Chow, W. S. (2004). An exploratory study of the success factors for extranet adoption in esupply chain. Journal of Global Information Management (JGIM), 12(1), 60-67.
2. Clow, K. E., & Beisel, J. L. (1995). Managing consumer expectations of low-margin, highvolume services. Journal of Services Marketing, 9(1), 33-46.
3. Dixit, V. C. (2004). Marketing Bank Products. IBA Bulletin, 15.
4. Gupta, S. L., & Mittal, A. (2008). Comparative study of promotional strategies adopted by public and private sector Banks in India. Asia Pacific Business Review, 4(3), 87-93.
5. Mehta, S. (2010). Personal Selling–A Strategy for promoting Bank Marketing. State Bank of India Monthly Review, 3.
6. Parasuraman, A., Zeithaml, V. A., & Berry, L. L. (1988). ServQual: A multiple-item scale for measuring consumer perc. Journal of Retailing, 64(1), 12.
7. Rust, R. T., Lemon, K. N., & Zeithaml, V. A. (2004). Return on marketing: Using customer equity to focus marketing strategy. Journal of marketing, 68(1), 109-127.
8. Spreng, R. A., Harrell, G. D., & Mackoy, R. D. (1995). Service recovery: impact on satisfaction and intentions. Journal of services Marketing, 9(1), 15-23.
9. Walker, J. L. (1995). Service encounter satisfaction: conceptualized. Journal of services marketing, 9(1), 5-14.

Table 2: Factor Analysis Results (for Service Quality)

	Component				
	1	2	3	4	5
Bank employees are experienced and competent toprovide satisfactory services	892				
Bank delivers the services within the promised time duration	874				
Bank is providing consistently efficient banking services .	690				
Staff of the bank is always polite and helpful .		907			
Concerned employees are available in the bank during working hours .		818			
Bank staff understands the need of customers .		766			
Bank premise is clean and well organized .			796		
Bank offers a comfortable waiting area for their customers. .			762		
Water drinking facility is available for the customers .			724		
Vehicle parking facility is available for customers .			544		
Bank individually inform about launching of new products or services .				875	
Bank provides individual attention to their customers .				851	
Bank offers error free banking services to their customers .					659
Bank have an effective customer grievances management system .					622
Essential forms to avail banking services are available at convenience .					604

Extraction Method: Principal Component Analysis. Rotation Method: Varimax with Kaiser Normalization. a. Rotation converged in 6 iterations

****

मध्यकाल में सघन वनों एवं वनोपज की प्रचुरता का अध्ययन

डॉ. भावना तिवारी *

प्रस्तावना – प्राकृतिक परिवेश की इतनी महत्ता के बावजूद इस संबंध में संगठित और सूक्ष्म जानकारी उपलब्ध नहीं है। भारत में इस्लाम के आगमन के पूर्व विधिवत इतिहास लेखन की परंपरा नहीं थी। भारत में मुस्लिम राज्य की स्थापना के पश्चात जो इतिहास लेखन हुआ उसमें राजनीतिक घटनाक्रमों को ही तरजीह की गई। उनके लेखन में ऐसे विवरण यदा-कदा ही संयोगवश आए हैं।

उद्देश्य:

1. मुगलकाल के पर्यावरण और आज के पर्यावरण का तुलनात्मक अध्ययन।
2. सघन वनों एवं वनोपज की कमी के प्रभाव से पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी के संतुलन पर प्रभाव।

समय एवं क्षेत्र– इस शोध पत्र का क्षेत्र मुगलकाल में उत्तर भारत की पर्यावरणीय चेतना को जानना है।

शोध प्रविधि– इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों का प्रयोग किया गया है।

मुगलकाल में वन वनोपज, वनस्पतियों आदि के संबंध में जानकारी देने वाले कई साधन उपलब्ध हैं। अबुलफज़ल का आधिकारिक ऐतिहासिक ग्रंथ 'आइन-ए-अकबरी' तो इस तरह की जानकारी का भंडार है पर विदेशी यात्रियों के विवरण भी भारत के लगभग सभी क्षेत्रों के प्राकृतिक परिवेश के संबंध में जानकारी प्रदान करते हैं। इन सूचनाओं के आधार पर तत्कालीन प्राकृतिक परिवेश की जानकारी हमें अनायास मिलती है।

प्रशासनिक सूचनाओं के माध्यम से भी हमें मिट्टी के प्रकार, उपजों, वनस्पतियों और वन क्षेत्रों आदि की जानकारी ज्ञात हो जाती है। उदाहरण के लिए अबुलफज़ल जहाँ प्रत्येक सूत्रों, परगनों आदि की जानकारी प्रदान करता है। वहाँ वह उन क्षेत्रों की कृषि भूमि का रिकॉर्ड देता है।इन रिकार्डो के आधार पर हम कृषि योग्य भूमि के अतिरिक्त उस क्षेत्र का वनक्षेत्र ज्ञात कर लेते हैं।

प्रो. शीरीन मूसवी के सिम्पोजिया पेपर में सन् 1909 में ब्रिटिश राज के अधीन भारत के कृषि एवं वनक्षेत्र की अबुलफज़ल के द्वारा दिए गए राजस्व भूमि संबंधी आंकड़ों से तुलना कर यह ज्ञात किया गया है कि तीन शताब्दियों में वन क्षेत्र में कमी आई और कृषि भूमि में करीब दो गुना वृद्धि हुई।[1] अबुलफज़ल द्वारा उत्तर भारत में (बिहार, बंगाल, सिंध और कश्मीर के कुछ हिस्सों को छोड़) कृषि क्षेत्रों के संबंध में जो जानकारी दी गई है मात्र उसी की तुलनात्मक अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है। [2]

उक्त तुलनात्मक अध्ययन से ज्ञात होता है कि सुदूर पूर्व में असम और दूसरे उत्तर-पूर्वी राज्यों में एक संकरी पट्टी को छोड़ घने जंगल थे। यह संकरी पट्टी ब्रम्हपुत्र नदी के दोनों और थी जहाँ कृषि होती थी। इसके अलावा ब्रम्हपुत्र और दीहींग नदी के आसपास की छोटी पट्टी में भी कृषि होती थी और बसाहट थी। [3]

ब्रम्हपुत्र के आसपास बाई तरफ कजली वन था जो इतना घना था कि उसमें बड़ी संख्या में जंगली हाथियों का वास था। इस वन के अलावा असम के और चार-पाँच वन क्षेत्र भी इतने ही घने थे जिनमें बड़ी संख्या में हाथी पाए जाते थे। चूंकि ब्रम्हपुत्र दक्षिण की ओर मुड़ कर बंगाल की खाड़ी के लिए जाती है इस कारण असम का कृषि योग्य क्षेत्र चारों ओर से ब्रम्हपुत्र से घिर जाता था। [4]

प्रो. शीरीन मूसवी के सिम्पोजिया पेपर के अनुसार रेनले के बंगाल एटलस से जो जानकारी प्राप्त होती है उससे ज्ञात होता है कि सन् 1781 ई. तक बंगाल में भी घने जंगल थे। यहाँ उत्तर में तराई के जंगलों से लेकर कूच बिहार और गोरघाट की सरकार तक घने जंगल थे। [5] सिलहट का वन क्षेत्र अराकान तक फैला हुआ था। सुंदरवन का डेल्टा भी घने वन से आच्छदित था।

उड़ीसा मध्य भारत के जंगल के किनारों पर था। इन जंगलों के पूर्व की तरफ का हिस्सा झारखंड था। [6] उड़ीसा के कृषि क्षेत्र भी घने जंगलों के टुकड़ों से घिरे थे। उड़ीसा के समुद्र तट के साथ-साथ भी जंगल थे जैसे कनिका के दक्षिण में और बालासोर और समुद्र तट के मध्य नदी के साथ-साथ जंगल था। [7]

अब्दुल हमीद लाहौरी लिखता है कि,एक बार शाहजहाँ की सेनाओं को उड़ीसा अभियान में गंजाम के दक्षिण में जंगल में लगातार तीस कुरोह तक (75 मील) यात्रा करनी पड़ी थी। [8]

हिमालय की तराई से लेकर भारत-नेपाल सीमा से सटे क्षेत्र में घने वनों की पट्टी थी। यह तराई का जंगल बिहार के पूर्णिया जिले से अवध में बहराइच तक था। अबुलफ़ज़ल भी चंपारन सरकार में घने जंगलों के बारे में बताता है जहाँ बाँस और लंबे .... के वृक्ष पाए जाते थे। [9] इन जंगलों में बाँस ऊसर भूमि को ढंक लेते थे और मुख्य भूमि में लंबी घास 'कांस' आच्छादित रहती थी। इस कारण यह भूमि किसानों की पहुँच से परे थी। मुगलकाल में पूर्वी उत्तरप्रदेश का क्षेत्र तराई के जंगलों से आच्छादित था। गोरखपुर क्षेत्र में कृषि योग्य क्षेत्र 1909-10 के मुकाबले 1595 ई. में महज एक बंटा बीसवाँ भाग था। यद्यपि औरंगजेब के काल में सत्रहवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में कृषि भूमि में बढ़ोत्तरी हुई फिर भी वन क्षेत्र में कोई कमी नहीं आई। इस क्षेत्र में उन्नीसवीं शताब्दी तक भी इतने घने वन थे कि बड़ी संख्या में इनमें हाथी पाए जाते थे।

रोहिलखंड में भी सन् 1595 तक एक चौथाई हिस्से में ही कृषि हो रही

* इतिहास विभाग, शासकीय महाकोशल कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

थी बाकी क्षेत्र वनों से ही आच्छादित था। हालांकि रेनल के एटलस के मुताबिक 1780 तक किसानों ने इस क्षेत्र को साफ कर कृषि करना आरंभ कर दिया इस कारण गोरखपुर से अयोध्या तक के क्षेत्र में जंगल शेष नहीं बचे थे। [10]

बिहार का सूबा भी झारखंड के वनों से पटा हुआ था और इतना घना था कि इनमें बड़ी संख्या में जंगली हाथी थे।

अब्दुल हमीद लाहौरी लिखता है 'मध्य भारत का जंगल इस काल में हिन्दुस्तान का सबसे बड़ा वन क्षेत्र था जो गोदावरी और महानदी के मध्य बस्तर से, झारखंड (सोन और महानदी के मध्य) से लेकर गुजरात में दाहोद और राजपीपल तक और उत्तर-पश्चिम में चंबल तक फैला हुआ था।' [11]

प्रो. इरफान हबीब इसे 'ग्रेट सेन्ट्रल इंडियन फॉरेस्ट' की संज्ञा देते हैं। इस घने जंगलों वाले क्षेत्र में मालवा का पठार ही अलग-थलग एक बड़ा क्षेत्र था जहाँ बड़े पैमाने पर और अच्छी खेती होती थी। [12]

जहाँगीर अपनी आत्मकथा में इस बारे में लिखता है कि 'सन् 1618 में उसने यहाँ के जंगलों से हाथी पकड़े थे।' [13] विदेशी यात्री पीटर मुण्डे भी यहाँ के घने जंगलों के बारे में लिखता है। [14]

भारत के भिन्न-भिन्न वनक्षेत्रों से जो वनोपज मिलती थी वह इस प्रकार थी:-

पंजाब में चांबा की पर्वत श्रृंखला से इमारती लकड़ी जो चिनाब नदी से दूसरे क्षेत्रों में भेजी जाती थी। इसी तरह कहलागढ़ या इनके जंगलों से भी इमारती लकड़ी प्राप्त होती थी। [15] इसी तरह पंजाब में ही धमेरी क्षेत्र से गोंद, गंधा बिरोजा (Turpentine), जटामासी (Spikenard), जुलाब या जैलैप (Jalap) आदि भी प्राप्त होते थे। [16]

राजस्थान में धनवारा, मंडलगढ़, बूंदी और जहाजपुर आदि के आसपास घने जंगल थे। [17]

मुगलकाल में भारत में उपलब्ध भिन्न किस्मों की लकड़ी- अबुल-फ़ज़ल, आइन-ए-अकबरी में लिखता है कि 'शहंशाह अकबर ने अपने व्यावहारिक ज्ञान और और कई कारणों से भिन्न प्रकार की लकडियों का वज़न करवाया था। सूखी लकड़ी के एक क्यूबिक गज़ का वजन करवा कर भिन्न-भिन्न लकड़ियों के वजन और उनके अंतर को ज्ञात किया था। इस अनुसार खंजक सबसे भारी लकड़ी और साफीदार सबसे हल्की लकड़ी साबित हुई।'[18]

अपने ग्रंथ में अबुलफ़ज़ल ने 72 प्रकार की लकड़ियों का नापतौल और दाम की सूची दी है। हमारे अध्ययन की आवश्यकतानुरूप यहाँ सिर्फ लकड़ियों के नामों का उल्लेख किया गया है।

सूची इस प्रकार है:-

खंजक, इमली, जैतून, बलूत, खेर , खिरनी, परसिद्ध, आबनूस, सैन, बाकम, खरहार, माहवा, चांदनी, फुलाही, रक्त चंदन, चामरी, चामरी-मामरी, उन्नाब, शीषू पतंग, संदन, शमशाद, धाऊ, आँवला, कारिल, संदल, साल, बनास (शहँशाह इस पेड़ को शाहआलू पुकारते हैकिन्तु फारस और काबुल में इस पेड़ को आलू बालू (चेरी) कहते है।) कैलास, नीम, दारहर्द, मैन, बबूल, सागौन, बिज्यासर, पीलू, शहतूत, धामन, बनबरास, शीरीष, सीसाउ, फिंदक, छाकर, दूधी, हल्दी, कैम, जामुन, फरास, बार, खांडू, चनार, चारमगज (अखरोट का वृक्ष) चंपा बेर, आम,पपरी, ढीयार, बेद, कुनभीर या गुनभीर, चीड़, पीपल,कटहल, गुर्दनी, रूहेरा, पलाश, सुर्खबेद, आक, सेनबेल, बकायनी, लाहसोरा, पदमाख, अंद, सफीदार।[19]

गुजरात में जंगलों से इमारती लकड़ी सागौन, गजदेवी, और बुलसार से, गोंद और लाख सनखेड़ा से, अगर (घीकुंवार) चांपानेर से, राजपीपल से शहद आदि बड़ी मात्रा में प्राप्त होता था।[20]

उत्तरप्रदेश के जंगलों से मुख्यत: बांस और इमारती लकड़ी प्राप्त होती थी। [21]

बिहार के रोहतास पर्वत के जंगलों, गोरघाट के जंगलों से बाँस प्राप्त होता था। चंपारन के जंगलों से लाख और गोंद तथा नेपाल की तराई के क्षेत्रों से कस्तूरी (ऽंदह च्मचचमत) प्राप्त होती थी। [22]

बंगाल के जंगलों से जहाजों और नावों से लिए लकड़ी सिलहट के जंगलों से अगर (घीकुंवर), गोंद, लाख और मोम तो बंगाल के अधिकांश जंगलों से प्राप्त होता था। [23]उड़ीसा के घने जंगलों से भी लकड़ी, गोंद और लाख प्राप्त होती थी।

असम के जंगल अगर की लकड़ी के लिए मशहूर थे। वैसे ही यहाँ से गोंद-लाख और कस्तूरी भी प्राप्त होती थी। [24]

दक्खन के पश्चिमी हिस्से से सागौन की लकड़ी बड़ी मात्रा में प्राप्त होती थी थाणा, कल्याण, भिवण्डी आदि स्थानों के जंगल इसके लिए प्रसिद्ध थे। इसी तरह गोंद-लाख, चंदन की लकड़ी आदि भी बड़ी संख्या में प्राप्त होती थी। बुरहानपुर से चंदन की लकड़ी प्राप्त होती थी किन्तु यह जंगलों से नहीं प्राप्त होती थी बल्कि यहाँ पर चंदन के पेड़ों के बगीचे थे।

पूर्वी दक्खन के जंगलों से भी लकड़ी मिलती थी जो सबसे ज्यादा जहाज और नावों के निर्माण में प्रयुक्त होती थी। यह लकड़ी सागौन ही होनी चाहिए। [25] गोंद, मोम, लाख के अलावा बीज़ौर नामक कीमती पत्थर भी प्राप्त होता था यह पत्थर चाँदा के निकट बीज़ौर नामक स्थान के जंगलों में मिलने वाली बकरियों से मिलता था। इरफ़ान हब़ीब के एटलस में उसके उल्लेख के साथ लिखा है कि सोलहवीं सदी में इमादुद्दीन महमूद द्धारा लिखी गई रिसाला-ए-पझहर में बताया गया है कि ऐसी बकरियाँ गोलकुण्डा एवं वारंगल के क्षेत्र में पाई जाती थीं और ये जंगलों और पर्वतों में रहती थी। स्वयं हब़ीब का मानना है कि मनुची चाँदा के निकट जिस बिज़ौर की बात लिखता है वह संभवत: आज का बस्तर क्षेत्र है।

मुख्य दक्षिण के वन अपनी कीमती चंदन की लकड़ी के लिए मशहूर थे। इसके अलावा सागौन और बांस भी बड़ी मात्रा में उत्पन्न होता था।

इरफ़ान हब़ीब लिखते हैं, कि मुगलकाल के बाद से वनक्षेत्र में कमी होने लगी क्योंकि कृषि योग्य भूमि में बढ़ौत्री होने लगी जिससे वनों की कटाई होकर वन क्षेत्रों में कमी आई। साथ ही 1600-1800 ई. के मध्य बढ़ती आबादी ने भी वन क्षेत्रों में कमी की थी।

घने वन क्षेत्रों की उपस्थिति के कारण ऐसे क्षेत्रों में भी हाथियों, गैंडों, शेर, बाघ आदि की उपस्थिति ज्ञात होती है जहाँ बीसवीं शताब्दी में हम इनका नामों निशान भी नहीं देखते।

मुगलकाल में विस्तृत वन क्षेत्रों के महत्वपूर्ण परिणाम देखने को मिलते हैं। इनसे ईधन, भवन एवं जहाज रानी उद्योग के लिए बड़ी मात्रा में लकड़ी मिलती थी, विस्तृत चरागाह उपलब्ध थे, पर्यावरण-पारिस्थितिकी और आर्थिक दृष्टि से उपयोगी वन्य जीव पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध थे। बाघों-शेरों की उपस्थिति से पारिस्थितिकी का संतुलन बना हुआ था। हाथी जैसे आर्थिक दृष्टि से उपयोगी अनेक जानवर बड़ी मात्रा में प्राप्त होते थे तो चीते जैसे जानवर शिकार में उपयोग के लिए, घोड़े युद्ध के लिए, यातायात की दृष्टि से बैल, ऊँट जैसे प्राणी आदि की बड़ी मात्रा में उपस्थिति विस्तृत जंगलों के कारण ही संभव थी।

जंगलों में रहने वाले आदिवासियों के संबंध में विदेशी यात्री जॉन फ्रेयर ने लिखा है- 'हर जगह जंगल फैले हुए हैं, इन जंगलों में रहने वाले

कुछ लोगों को मैंने देखा है।' [26]

निष्कर्ष– मध्य भारत के इन जंगलों का क्षेत्र अठाहरवीं शताब्दी के अंतिम दौर में कम होने लगा था। मीरात–ए–अहमदी का लेखक अली मुहम्मद खाँ बताता है कि कृषि क्षेत्र बढ़ते–बढ़ते इतना हो गया कि जंगल के जिस रास्ते से हाथी राजपीपल के क्षेत्र तक चले जाते थे वह रास्ता लगभग बंद ही हो गया था।[27]

गुजरात का वह हिस्सा जो नर्मदा के आसपास था वहाँ बड़े घने जंगल थे।

वनों का महत्व सिर्फ पारिस्थितिकी के लिए नहीं था बल्कि वनों का आर्थिक महत्व भी था। वनों से ईधन के लिए लकड़ी से लेकर गोंद, लाख, शहद, मोम, जड़ी बूटियाँ, भवन निर्माण के लिए लकड़ी आदि भी प्राप्त होती थी।

वनोपज एवं पारिस्थितिकी के कारण मुगलकाल में वनों का पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी एवं अर्थव्यवस्था तीनों के लिए महत्वपूर्ण योगदान था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मूसवी शीरीन : मैन एंड नेचर इन मुगल एरा, इंडियन हिस्ट्री काँग्रेस 54जी सेशन (मैसूर) सिम्पोज़िया पेपर –5।
2. वही : ————''————
3. काज़ीन मोहम्मद : आलमगीरनामा, सम्पा. हुसैन खादिम और अब्दुल हई पृ. 723–733
4. वही : ————''———— पृ0 730
5. मूसवी शीरीन : मैन एंड नेचर इन मुगल एरा, इंडियन हिस्ट्री काँग्रेस 54जी सेशन (मैसूर) सिम्पोज़िया पेपर –5।
6. फज़ल अबुल : अकबरनाम भाग–2 अनु. बेबरीज़ पृ0 120
7. वही :————''———— पृ0 221
8. लाहौरी अब्दुल हमीद: पादशाहनामा भाग–1
9. फज़ल अबुल:आइन–ए–अकबरी भाग–1 अनु. ब्लॉकमन पृ0 174
10. रेनल्स जेम्स :बंगाल एटलस
11. लाहौरी अब्दुल हमीद: पादशाहनामा भाग–1
12. फज़ल अबुल: आइन–ए–अकबरी भाग–1 अनु. ब्लॉकमन पृ0 456
13. जहाँगीर : तुजुक–ए–जहाँगीरी अनु. रोज़र्स भाग–2 पृ0 179
14. मुण्डें पीटर : द ट्रेवल्स ऑफ पीटर मुण्डें इन यूरो एंड एशिया भाग–2 पृ0 151
15. भण्डारी सुजान राय:खुलासातुल–ए–तवारीख़ सम्पा ...पृ0 77
16. राल्फ फिन्च : अर्ली ट्रेवल्ट इन इंडिया पृ0 179
17. लाहौरी अब्दुल हमीद : पादशाहनामा
18 फज़ल अबुल : आइन–ए–अकबरी भाग–1 अनु. ब्लॉकमन पृ0 237
19 फज़ल अबुल :आइन–ए–अकबरी भाग–1 अनु. ब्लॉकमन पृ0 238–239
20. भण्डारी सुजान राय : खुलासातुल–ए–तवारीख़ सम्प.
21. वही : ————''————
22. अबुल फ़ज़ल:आइन–ए–अकबरी भाग–1 अनु. ब्लॉकमन पृ0 417
23. वही : ————''———— पृ0 6
24. ट्रेवेनियनर जिन बेपटिस्ट : ट्रेवल्स इन इंडिया भाग–2 अनु. बाल.वी. पृ0 281–282
25. हबीब इरफान : एन एटलस आफ मुगल एम्पायर पृ0 62
26. फ्रेयर जॉन : ट्रेवल्स इन इंडिया पृ0 437
27. अली मोहम्मद खाँ :मीरात–ए–अहमदी भाग–1 सम्पा. अली नवाब पृ0 214

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

छत्तीसगढ़ राज्य के स्थानीय निकायों की वित्तीय स्थिति का विश्लेषण (दुर्ग नगर निगम के विशेष सन्दर्भ में)

कु. अभिलाषा रजक* डॉ. डी. पी. जायसवाल**

प्रस्तावना – वर्तमान समय में नगरीय प्रशासन का कार्य कठीन हो गया है। नगरीकरण प्रक्रिया में वृद्धि,इसका विकास क्षेत्र व्यापक हो गया है। इसमें नगरीकरण, नगरीय विकास, नगरीय वृद्धि, नगरीय पुर्नविकास, नगरीय आधारित संरचना नगरीय मूलभूत सुविधा की व्यवस्था, नगरीय नियोजन एवं प्रबंध से संबंधित प्रत्येक विचारणीय विषयों का समावेश है, चूंकि स्थानीय संस्थाएं अपने क्षेत्र के नागरिकों को यथासंभव सुविधाएं प्रदान करती है। ये केन्द्र और राज्य सरकार द्धारा संचालित महत्वपूर्ण योजनाओं का सफल संचालन करती है।

अत: नगरीय निकायों को अपने सभी मूलभूत कार्यो को करने के लिये पर्याप्त वित्त की आवश्यकता पड़ती है।

स्थानीय निकायों की वित्तीय व्यवस्था के मुख्य स्त्रोतों को निम्न प्रकार से बांटा जा सकता है: –

1. **करो से आय–** इस मद में सम्पत्ति कर, भूमि भवन कर, सीमाकर, पथकर सम्पत्ति हस्तांतरण पर कर, जलकर, स्वच्छता कर, प्रकाश कर आदि को शामिल किया जाता है।

2. **गैर करगत कार्य**–इसमें शिक्षा उपकर, दण्ड, किराया, लायसेंस शुल्क आदि शामिल है।

3. **राज्य सरकार से प्राप्त अनुदान –** इसमें राज्य सरकार से प्राप्त अनुदान जैसे सीमा क्षतिपूर्ति शुल्क, वित्त आयोग से प्राप्त राशि, विभिन्न योजनाओं हेतु प्राप्त राशि आदि को सम्मिलित करते है।

इस प्रकार स्थानीय निकाय द्धारा लगाए गये करो को दो भागों में प्रत्यक्षकर व अप्रत्यक्ष कर में भी बांटा जा सकता है। प्रत्यक्ष करों के अंतर्गत सम्पत्ति कर, वृत्तियों या पेशो पर कर, मार्ग शुल्क गाड़ियों पर कर, बाजार कर, जलकर जानवरों के क्रयविक्रय पर कर आदि सम्मिलित है। प्रत्यक्ष करों के अंतर्गत चुंगी कर, सीमान्त कर, टर्मिल कर आदि को रखा जा सकता है। निगम को अपनी राजस्व का 68 प्रतिशत भाग करगत स्त्रोतों से ही प्राप्तहै। शेष भाग गैर करगत स्त्रोतों से प्राप्त होता है।

स्थानीय शासन के प्रमुख श्रोत निम्न है :

1. विभिन्न करों के माधयम से धान प्राप्त करना –

a. संपत्ति कर। b. जल कर।
c. शिक्षा उपकर। d. अन्य उपकर।

2. राज्य सरकार द्धारा प्राप्त अनुदान एवं अंशदान।
3. विशेष अधिनियमों के अधीन राज्य शासन से प्राप्त धानराशि।
4. विभिन्न संस्थाओ से प्राप्त ऋण एवं अग्रिम।

नगर निगम में नागरिकों के सामाजिक विकास हेतु व्यय की मदें निम्नलिखित है:–

1. जन स्वास्थ्य की सुविधाओं पर व्यय।
2. सार्वजनिक शिक्षा पर व्यय।
3. लोककर्म विभाग पर व्यय।
4. सार्वजानिक उद्यान हेतु व्यय।
5. जल प्रदाय हेतु व्यय।
6. सार्वजानिक विद्युत् व्यवस्था पर व्यय।
7. विविधा व्यय।

वर्ष 2000 –2001 तक वर्षो में राजस्व की वसूली निम्न प्रकार से हुयी है –

S.No.	Year	राजस्व की मांग (%)	वसूली (%)
1	2000-2001	52	42
2	2001-2002	60	51
3	2002-2003	67	59
4	2003-2004	75	68
5	2004-2005	80	52
6	2005-2006	80	54
7	2006-2007	90	78
8	2007-2008	90	81
9	2008-2009	100	96
10	2009-2010	100	96.85

Fig 1.1 Source : PRATIVEDAN2005-2010 www.durg.cg.gov.in

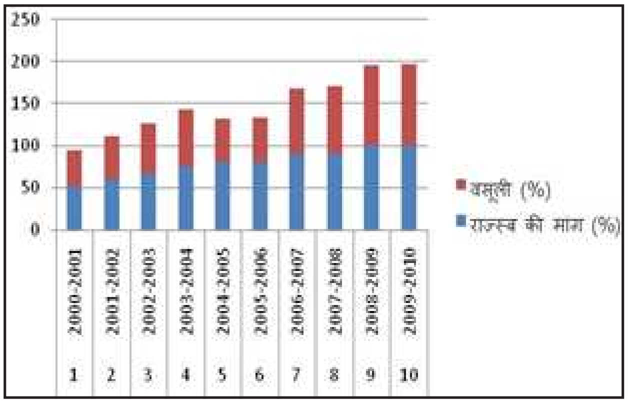

Fig 1.2

* शोधार्थी, कल्याण स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेक्टर -7, भिलाई नगर (छ.ग.) भारत
** शोध नर्देशक एवं विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) कल्याण स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेक्टर -7, भिलाई नगर (छ.ग.)भारत

निष्कर्ष: – नगर पालिक निगम, दुर्ग के राजस्व वसूली के अध्ययन से स्पष्ट है कि वर्ष 2000–2001, 2002–2003 में चालू वर्ष के राजस्व वसूली 82.20 प्रतिशत तथा 81.00 प्रतिशत रहा है, जबकि 2004–2005 में राजस्व वसूली सबसे कम अर्थात 40.19 प्रतिशत ही रहा है। निगम प्रशासन को चाहिए की राजस्व वसूली हेतु लोगों को जागरूक करें तथा प्रशासन द्वारा वसूली हेतु समय समय पर ध्यान दिया जाये।वैसे तो राजस्व वसूली की स्थिति संतोषप्रद है, फिर भी निकाय को अपनी राजस्व बढ़ाने के लिये शत् प्रतिशत् वसूली की परिकल्पना को साकार करने की आवश्यकता है तभी निगम को पर्याप्त आय हो सकेगी। इसी प्रकार सम्पत्ति कर विश्लेषण से भी स्पष्ट है कि निगम प्रशासन सम्पत्ति कर की मांग के अनुरूप शत् प्रतिशत् कर वसूली नहीं कर पाता है और लोगों में चालू वर्ष का कर चुकाने में भी कमी देखने को मिली है। जहां वर्ष 2006–07में ही चल वर्ष की मांग का अधिक अर्थात 80.35 प्रतिशत संपत्ति कर वसूल किया गया, वही बकाया कर वसूलने में कठोर रवैयो को अपनाने के फलस्वरूप 2008–2009 में 96.51 प्रतिशत की कर वसूली संभव हो सकी है।इस प्रकार अध्यापित निकाय में राजस्व वसूली की स्थिति संतोषप्रद कही जा सकती है और सम्पत्ति कर की वसूली शत् प्रतिशत नहीं हो पा रही है।

आय से अधिक व्यय निगम को ऋणी बना देते है जिसमे लाख कोशिशो के बाद भी कोई सुधार संभव नही है वही इसे अन्य दृष्टिकोण से देखा जाये तो आय से अधिक व्यय घाटे का बजट प्रगति का घोतक है। टेबल क्रमांक मे वर्ष 2001 से 2010 तक विभिन्न स्त्रोतों से नगर निगम , दुर्ग को प्राप्त आय का विश्लेषण किया गया हैद्य जिससे यह स्पष्ट होता है कि दुर्ग नगर निगम के आय के प्रमुख स्त्रोत नगर निगम दर एवं कर तथा शासन से प्राप्त अनुदान एवं अंशदान है द्ययह कुल प्राप्तियो से अधिक है अत: इनके आय दर मे वृद्धि करनी चाहिये।

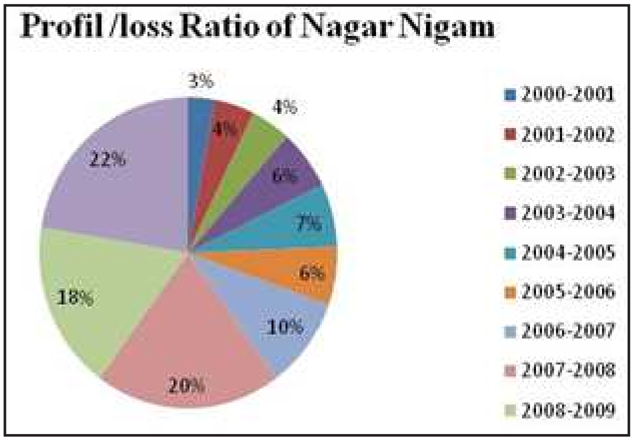

Source : PRATIVEDAN2005-2010 www.durg.cg.gov.inFig 2

समस्याएं:– शोध के दौरान कुछ समस्याएं भी देखने को मिली जो कि निगम के सतत् विकास में सर्वदा बाधक ही प्रतीत होती रही है।

1. जनता कर चुकाने के प्रति गंभीर नहीं है। जिससे शत् प्रतिशत कर वसूल कर पाना कठिन सा हो गया जनता की ये प्रवृत्ति किसी भी निगम के विकास में बाधक ही है।
2. सम्पत्ति के मूल्यांकन की समस्या अभी भी बनी हुई है। स्वमूल्यांकन की पद्धति से हट कर निगम प्रशासन को कोई विकल्प सोचना चाहिए ताकि लोगों द्वारा सम्पत्ति को कम मूल्य पर नहीं आंका जा सके।
3. निगम द्वारा बनाये गये दुकानों का आबंटन भी शत् प्रतिशत् नहीं हो पाता ये एक गंभीर समस्या है कि सम्पत्ति को जो बनकर तैयार हो गई है परन्तु उसका आबंटन नहीं होने से उससे किसी प्रकार की आय नहीं मिल पाती है ।
4. कर वसूली का कार्य स्पैरो कम्पनी को सौंपे जाने से निगम अधिकारी अपने को वसूली कार्य से मुक्त समझते है। उनकी ये प्रवृत्ति निगम के विकास में बाधक है।
5. द्वितीय समंको को सकलन में भी अधिकारियों के मन मे भय व आशंका का भाव देखने को मिला वे राजस्व से संबंधित सूचना देने में तैयार नहीं थे।

सुझाव–नगर पालिक निगम, दुर्ग के संदर्भ में कुछ सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं जिनके द्वारा निगम प्रशासन राजस्व वसूली समस्या का निकारण कर अपनी राजस्व वसूली में वृद्धि कर सकता है:–

1. निगम प्रशासन को कर वसूली हेतु मजबूत तंत्र की स्थापना करने के साथ–साथ जनता को भी कर चुकाने हेतु प्रेरित करने का प्रयास करना चाहिये।
2. जनता को कर चुकाने हेतु जागरूक करने के लिये निगम प्रशासन विज्ञापन द्वारा लोगों को जागरूक कर सकता है।
3. निगम प्रशासन को चाहिए कि, वे बकाया कर वसूली हेतु नोटिस अनिवार्य रूप से समय–समय पर देते रहे जरूरत पड़ने पर कुर्की वारंट भी भेजा जाना चाहिये।
4. निगम प्रशासन को अपनी आय बढ़ाने हेतु पुराने व बेकार पड़ी दुकानों गुमटियों को सुधार कर उन्हें पुन: किराये पर उठाना चाहिये।
5. निगम प्रशासन द्वारा दुकानों के आबंटन का कार्य शीघ्र किया जाना चाहिये बोरसी हाट बाजार का निर्माण 2003 से हो चुका है परन्तु अभी तक इन दुकानों का आबंटन नहीं किया गया। इस प्रकार से निगम प्रशासन को सचेत होने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. राजस्व वसूली का विवरण, नगर पालिक निगम, दुर्ग (2005–2007 से 2008–2010 तक)
2. श्री राम महेश्वरी, भारत में स्थानीय शासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा
3. डॉ. जे.सी. वैश्णव, राजस्व, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा 1977
4. एस.पी.सिंह, लोकवित्त, एस0चन्द्र एण्ड कम्पनी
5. डॉ. रामशरण कौशिक, राजस्व, मिनाक्षी प्रकाशन मेरठ, नई दिल्ली
6. दैनिक भास्कर
7. हरिभूमि

****

गीता में भक्ति का स्वरूप

डॉ. जयराम त्रिपाठी *

प्रस्तावना – सामान्यत: अध्यात्मवादियों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है– निर्विशेषवादी तथा सगुणवादी। सगुणवादी भक्त अपनी सारी शक्ति से परमेश्वर की सेवा करता है। निर्विशेषवादी भी कृष्ण की सेवा करता है, किन्तु प्रत्यक्ष रूप से न करके वह अप्रत्यक्ष निर्विशेष ब्रह्म का ध्यान करता है। जो लोग भक्ति के द्वारा परमेश्वर की प्रत्यक्ष सेवा करते हैं, वे सगुणवादी कहलाते हैं। जो लोग निर्विशेष ब्रह्म का ध्यान करते हैं, वे निर्विशेषवादी कहलाते हैं। यहाँ पर अर्जुन पूछता है कि इन दोनों में से कौन श्रेष्ठ है। यद्यपि परम सत्य के साक्षात्कार के अनेक साधन हैं, किन्तु इस अध्याय में कृष्ण भक्तियोग को सबों में श्रेष्ठ बताते हैं। यह सर्वाधिक प्रत्यक्ष है और ईश्वर का सान्निध्य प्राप्त करने के लिए सबसे सुगम साधन है।

भगवद्गीता के द्वितीय अध्याय में भगवान ने बताया है कि जीव भौतिक शरीर नहीं है, वह आध्यात्मिक स्फुलिंग है और परम सत्य परम पूर्ण है। सातवें अध्याय में उन्होंने जीव को परम पूर्ण का अंश बताते हुए पूर्ण पर ही ध्यान लगाने की सलाह दी है। पुन: आठवें अध्याय में कहा है कि जो मनुष्य भौतिक शरीर का त्याग करते समय कृष्ण का ध्यान करता है, वह कृष्ण के धाम को तुरन्त चला जाता है। यही नहीं, छठे अध्याय के अन्त में भगवान् स्पष्ट कहते हैं, कि योगियों में से, जो भी अपने अन्त:करण में निरन्तर कृष्ण का चिन्तन करता है, वही परम सिद्ध माना जाता है। इस प्रकार प्राय: प्रत्येक अध्याय का यही निष्कर्ष है कि मनुष्य को कृष्ण के सगुण रूप के प्रति अनुरक्त होना चाहिए, क्योंकि वही चरम आत्म–साक्षात्कार है। इतने पर भी ऐसे लोग हैं, जो कृष्ण के साकार रूप के प्रति अनुरक्त नहीं होते। वे दृढ़तापूर्वक विलग रहते है, यहाँ तक कि भगवद्गीता की टीका करते हुए भी वे अन्य लोगों को कृष्ण से हटाना चाहते हैं और उनकी सारी भक्ति निर्विशेष ब्रह्मज्योति की ओर मोड़ते हैं। वे परम सत्य के उस निराकार रूप का ही ध्यान करना श्रेष्ठ मानते हैं, जो इन्द्रियों की पहुँच के परे है तथा अप्रकट है।

इस तरह सचमुच में अध्यात्मवादियों की दो श्रेणियाँ हैं। अब अर्जुन यह निश्चित कर लेना चाहता है कि कौन–सी विधि सुगम है और इन दोनों श्रेणियों में से कौन सर्वाधिक पूर्ण है। दूसरे शब्दों में, वह अपनी स्थिति स्पष्ट कर लेना चाहता है, क्योंकि वह कृष्ण के सगुण रूप से के प्रति अनुरक्त है। वह निराकार ब्रह्म के प्रति आसक्त नहीं है। वह जान लेना चाहता है कि उसकी स्थिति सुरक्षित तो है! निराकार स्वरूप, चाहे इस लोक में हो चाहे भगवान् के परम लोक में हो, ध्यान के लिए समस्या बना रहता है। वास्तव में कोई भी परम सत्य के निराकार रूप का ठीक से चिन्तन नहीं कर सकता। अत: अर्जुन कहता चाहता है कि इस तरह से समय गँवाने से क्या लाभ? अर्जुन को ग्वारहवें अध्याय में अनुभव हो चुका है कि कृष्ण के साकार रूप के प्रति आसक्त होना श्रेष्ठ है, क्योंकि इस तरह वह एक ही समय अन्य सारे रूपों को समझ सकता है और कृष्ण के प्रति उसके प्रेम में किसी प्रकार का व्यवधान नहीं पड़ता। अत: अर्जुन द्वारा कृष्ण से इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न के पूछे जाने से परम सत्य के निराकार तथा साकार स्वरूपों का अन्तर स्पष्ट हो जाएगा।

अर्जुन के प्रश्न का उत्तर देते हुए कृष्ण स्पष्ट कहते हैं कि जो व्यक्ति उनके साकार रूप में अपने मन को एकाग्र करता है और जो अत्यन्त श्रद्धा तथा निष्ठापूर्वक उनको पूजता है, उसे योग में परम सिद्ध मानना चाहिए। जो इस प्रकार कृष्णभावनाभावित होता है, उसके लिए कोई भी भौतिक कार्यकलाप नहीं रह जाते, क्योंकि हर कार्य कृष्ण के लिए किया जाता है। शुद्ध भक्त निरन्तर कार्यरत रहता है–कभी कीर्तन करता है, तो कभी श्रवण करता है, या कृष्ण विषयक कोई पुस्तक पढ़ता है, या कभी–कभी प्रसाद तैयार करता है या बाजार से कृष्ण के लिए कुछ मोल लाता है, या कभी मन्दिर झाड़ता–बुहारता है, तो कभी बर्तन धोता है। वह जो कुछ भी करता है, कृष्ण सम्बन्धी कार्यों के अतिरिक्त अन्य किसी कार्य में एक क्षण भी नहीं गँवाता। ऐसा कार्य पूर्ण समाधि कहलाता है। जो लोग भग्वान कृष्ण की प्रत्यक्ष पूजा न करके, अप्रत्यक्ष विधि से उसी उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं, वे भी अन्तत: श्रीकृष्ण को प्राप्त होते हैं। 'अनेक जन्मों के बाद बुद्धिमान व्यक्ति वासुदेव को ही सब कुछ जानते हुए मेरी शरण में आता है।' जब मनुष्य को अनेक जन्मों के बाद पूर्ण ज्ञान होता है, तो वह कृष्ण की शरण ग्रहण करता है। यदि कोई इस श्लोक में बताई गई विधि से भगवान् के पास पहुँचता है, तो उसे इन्द्रियनिग्रह करना होता है, प्रत्येक प्राणी की सेवा करनी होती है और समस्त जीवों के कल्याण–कार्य में रत होना होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि मनुष्य को भगवान् कृष्ण के पास पहुँचना ही होता है अन्यथा पूर्ण साक्षात्कार नहीं हो पाता। प्राय: भगवान की शरण में जाने के पूर्व पर्याप्त तपस्या करनी होती है।

आत्मा के भीतर परमात्मा का दर्शन करने के लिए मनुष्य को देखना, सुनना, स्वाद लेना, कार्य करना आदि ऐन्द्रिय कार्यों को बन्द करना होता है। तभी वह यह जान पाता है कि परमात्मा सर्वत्र विद्यमान है। ऐसी अनुभूति होने पर वह किसी जीव से ईर्ष्या नहीं करता–उसे मनुष्य तथा पशु में कोई अन्तर नहीं दिखता, क्योंकि वह केवल आत्मा का दर्शन करता है, ब्रह्म आवरण का नहीं। लेकिन सामान्य व्यक्ति के लिए निराकार अनुभूति की यह विधि अत्यन्त कठिन सिद्ध होती है। अध्यात्मवादियों का समूह, जो परमेश्वर के अचिन्त्य, अव्यक्त, निराकार स्वरूप के पथ का अनुसरण करता है, ज्ञान–योगी कहलाता है और जो व्यक्ति भगवान् की भक्ति में रत रहकर पूर्ण कृष्णभावनामृत में रहते हैं, वे भक्ति–योगी कहलाते हैं। यहाँ पर ज्ञान–योग तथा भक्ति–योग में निश्चित अन्तर बताया गया है। ज्ञान–योग का पथ यद्यपि मनुष्य को उसी लक्ष्य तक पहुँचाता है, किन्तु है अत्यन कष्टकारक,

* सहा0 प्रोफेसर, हेमवती नंदन बहु0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नैनी, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

जब कि भक्ति-योग भगवान् की प्रत्यक्ष सेवा होने के कारण सुगम है और देहधारी के लिए स्वाभाविक भी है। जीव अनादि काल से देहधारी है। सैद्धान्तिक रूप से उसके लिए यह समझ पाना अत्यन्त कठिन है कि वह शरीर नहीं है। अतएव भक्ति-योगी कृष्ण के विग्रह को पूज्य मानता है, क्योंकि उसके मन में कोई न कोई शारीरिक बोध रहता है, जिसे इस रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। निस्सन्देह मन्दिर में परमेश्वर के स्वरूप की पूजा मूर्तिपूजा नहीं है। वैदिक साहित्य में साक्ष्य मिलता है कि पूजा सगुण तथा निर्गुण हो सकती है। मन्दिर में विग्रह पूजा सगुण पूजा है, क्योंकि भगवान् को भौतिक गुणों के द्धारा प्रदर्शित किया जाता है। लेकिन भगवान् के स्वरूप को चाहे पत्थर, लकड़ी या तैलचित्र जैसे भौतिक गुणों द्धारा क्यों न अभिव्यक्त किया जाय, वह वास्तव में भौतिक नहीं होता। परमेश्वर की यही परम प्रकृति है।

यहाँ पर एक मोटा उदाहरण दिया जा सकता है। सड़कों के किनारे पत्र-पेटिकाएँ होती हैं, जिनमें यदि हम अपने पत्र डाल दें, तो वे बिना किसी कठिनाई के अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाते हैं। लेकिन यदि कोई ऐसी पुरानी पेटिका, या उसकी अनुकृति कहीं दिखे, जो डाकघर द्धारा स्वीकृत न हो, तो उससे वही कार्य नहीं हो सकेगा। इसी प्रकार ईश्वर ने विग्रहरूप में, जिसे अर्चा-विग्रह कहते हैं, अपना प्रामाणिक (वैध) स्वरूप बना रखा है। यह अर्चा-विग्रह परमेश्वर का अवतार होता है। ईश्वर इसी स्वरूप के माध्यम से सेवा स्वीकार करते हैं। भगवान् सर्वशक्तिमान हैं, अतएव वे अर्चा-विग्रह रूपी अपने अवतार से भक्त की सेवाएँ स्वीकार कर सकते हैं, जिससे बद्ध जीवन वाले मनुष्य को सुविधा हो। इस प्रकार भक्त को भगवान् के पास सीधे और तुरन्त ही पहुँचने में कोई कठिनाई नहीं होती, लेकिन जो लोग आध्यात्मिक साक्षात्कार के लिए निराकार विधि का अनुसरण करते हैं, उनके लिए यह मार्ग कठिन है। उन्हें उपनिषदों जैसे वैदिक साहित्य के माध्यम से अव्यक्त स्वरूप को समझना होता है, उन्हें भाषा सीखनी होती है, इन्द्रियातीत अनुभूतियों को समझना होता है, और इन समस्त विधियों का ध्यान रखना होता है। यह सब एक सामान्य व्यक्ति के लिए सुगम नहीं होता। कृष्णभावनामृत में भक्तिरत मनुष्य मात्र गुरु के पथप्रदर्शन द्धारा, मात्र अर्चाविग्रह के नियमित नमस्कार द्धारा, मात्र भगवान् की महिमा के श्रवण द्धारा तथा मात्र भगवान् पर चढ़ाये गये उच्छिष्ट भोजन को खाने से भगवान् को सरलता से समझ लेता है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि निर्विशेषवादी व्यर्थ ही कष्टकारक पथ को ग्रहण करते हैं, जिसमें अन्ततः परम सत्य का साक्षात्कार संदिग्ध बना रहता है। किन्तु सगुणवादी बिना किसी संकट, कष्ट या कठिनाई के भगवान् के पास सीधे पहुँच जाते हैं। ऐसा ही संदर्भ श्रीमद्भागवत में पाया जाता है। वहाँ यह कहा गया है कि यदि अन्ततः भगवान् की शरण में जाना ही है (इस शरण जाने की क्रिया को भक्ति कहते हैं) तो यदि कोई, ब्रह्म क्या है और क्या नहीं है, इसी को समझने का कष्ट आजीवन उठाता रहता है, तो इसका परिणाम अत्यन्त कष्टकारक होता है। अतएव यहाँ पर यह उपदेश दिया गया है कि आत्म-साक्षात्कार के इस कष्टप्रद मार्ग को ग्रहण नहीं करना चाहिए, क्योंकि अन्तिम फल अनिश्चित रहता है।

जीव शाश्वत रूप से व्यष्टि आत्मा है और यदि वह आध्यात्मिक पूर्ण में तदाकार होना चाहता है तो वह अपनी मूल प्रकृति के शाश्वत (सत्) तथा ज्ञेय (चित्) पक्ष का साक्षात्कार तो कर सकता है, लेकिन आनन्दमय अंश की प्राप्ति नहीं हो पाती। ऐसा अध्यात्मवादी जो ज्ञानयोग में अत्यन्त विद्धान होता है, किसी भक्त के अनुग्रह से भक्तियोग को प्राप्त होता है। उस समय निराकारवाद का दीर्घ अभ्यास कष्ट का कारण बन जाता है, क्योंकि वह उस विचार को त्याग नहीं पाता। अतएव देहधारी जीव, अभ्यास के समय या साक्षात्कार के समय, अव्यक्त की प्राप्ति में सदैव कठिनाई में पड़ जाता है। प्रत्येक जीव अंशतः स्वतन्त्र है और उसे यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि यह अव्यक्त अनुभूति उसके आध्यात्मिक आनन्दमय आत्म (स्व) की प्रकृति के विरुद्ध है। मनुष्य को चाहिए कि इस विधि को न अपनाये। प्रत्येक जीव के लिए कृष्णचेतना की विधि श्रेष्ठ मार्ग है, जिसमें भक्ति में पूरी तरह व्यस्त रहना होता है। यदि कोई भक्ति की उपेक्षा करना चाहता है, तो नास्तिक होने का संकट रहता है। अतएव अव्यक्त विषयक एकाग्रता की विधि को, जो इन्द्रियों को पहुँच के परे है, जैसा कि इस श्लोक में पहले कहा जा चुका है, इस युग में प्रोत्साहन नहीं मिलना चाहिए। भगवान् कृष्ण ने इसका उपदेश नहीं दिया। यहाँ यह स्पष्ट कहा गया है कि भक्तजन अत्यन्त भाग्यशाली हैं कि भगवान उनका इस भवसागर से तुरन्त ही उद्धार कर देते हैं। शुद्ध भक्ति करने पर मनुष्य को इसकी अनुभूति होने लगती है कि ईश्वर महान हैं और जीवात्मा उनके अधीन है। उसका कर्तव्य है कि वह भगवान् की सेवा करे और यदि वह ऐसा नहीं करता, तो उसे माया की सेवा करनी होगी।

जैसा पहले कहा जा चुका है कि केवल भक्ति से परमेश्वर को जाना जा सकता है। अतएव मनुष्य को चाहिए कि वह पूर्ण रूप से भक्त बने। भगवान् को प्राप्त करने के लिए वह अपने मन को कृष्ण में पूर्णतया एकाग्र करे। वह कृष्ण के लिए ही कर्म करे। चाहे वह जो भी कर्म करे, लेकिन वह कर्म केवल कृष्ण के लिए होना चाहिए। भक्ति का यही आदर्श है। भक्त भगवान् को प्रसन्न करने के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं चाहता। उसके जीवन का उद्देश्य कृष्ण को प्रसन्न करना होता है और कृष्ण की तुष्टि के लिए वह सब कुछ उत्सर्ग कर सकता है, जिस प्रकार अर्जुन ने कुरुक्षेत्र के युद्ध में किया था। यह विधि अत्यन्त सरल है। मनुष्य अपने कार्य में लगा रह कर हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन कर सकता है। ऐसे दिव्य कीर्तन से भक्त भगवान् के प्रति आकृष्ट हो जाता है।

यहाँ पर भगवान् वचन देते हैं कि वे ऐसे शुद्ध भक्त का तुरन्त ही भवसागर से उद्धार कर देंगे। जो योगाभ्यास में बढ़े-चढ़े हैं, वे योग द्धारा अपनी आत्मा को इच्छानुसार किसी भी लोक में ले जा सकते हैं और अन्य लोग इस अवसर को विभिन्न प्रकार से उपयोग में लाते हैं, लेकिन जहाँ तक भक्त का सम्बन्ध है, उसके लिए यहाँ यह स्पष्ट कहा गया है कि स्वयं भगवान् ही उसे ले जाते हैं। भक्त को वैकुण्ठ में जाने के पूर्व अनुभवी बनने के लिए प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। वराह पुराण में एक श्लोक आया है-

नयामि परमं स्थानमर्चिरादिगतिं विना।
गरुडस्कन्धमारोप्य यथेच्छमनिवारितः॥

तात्पर्य यह है कि वैकुण्ठलोक में आत्मा को ले जाने के लिए भक्त को अष्टांगयोग साधने की आवश्यकता नहीं है। इसका भार भगवान् स्वयं अपने ऊपर लेते हैं। वे यहाँ पर स्पष्ट कह रहे हैं कि वे स्वयं ही उद्धारक बनते हैं। बालक अपने माता पिता द्धारा अपने आप रक्षित होता रहता है, जिससे उसकी स्थिति सुरक्षित रहती है। इसी प्रकार भक्त को योगाभ्यास द्धारा अन्य लोकों में जाने के लिए प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं होती, अपितु भगवान् अपने अनुग्रहवश स्वयं ही अपने पक्षीवाहन गरुड़ पर सवार होकर तुरन्त आते हैं और भक्त को भवसागर से उबार लेते हैं। कोई कितना ही कुशल तैराक क्यों न हो और कितना ही प्रयत्न क्यों न करे, किन्तु समुद्र में गिर जाने पर वह अपने को नहीं बचा सकता। किन्तु यदि कोई आकर उसे जल से बाहर निकाल ले, तो वह आसानी से बच जाता है। इसी प्रकार भगवान्

भक्त को इस भवसागर से निकाल लेते हैं। मनुष्य को केवल कृष्णभावनामृत की सुगम विधि का अभ्यास करना होता है, और अपने आपको अनन्य भक्ति में प्रवृत्ता करना होता है। किसी भी बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिए कि वह अन्य समस्त मार्गों की अपेक्षा भक्तियोग को चुने।

नारायणीय में इसकी पुष्टि इस प्रकार हुई है–

या वै साधनसम्पत्तिः पुरुषार्थचतुष्टये।
तया विना तदाप्नोति नरो नारायणाश्रयः।।

इस श्लोक का भावार्थ यह है कि मनुष्य को चाहिए कि वह न तो सकाम कर्म की विभिन्न विधियों में उलझे, न ही कोरे चिन्तन से ज्ञान का अनुशीलन करे। जो परम भगवान् की भक्ति में लीन है, वह उन समस्त लक्ष्यों को प्राप्त करता है, जो अन्य योग विधियों, चिन्तन, अनुष्ठानों, यज्ञों, दानपुण्यों आदि से प्राप्त होने वाले हैं। भक्ति का यही विशेष वरदान है।

केवल कृष्ण के पवित्र नाम– *हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे, हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे*– का कीर्तन करने से ही भक्त सरलता तथा सुखपूर्वक परम धाम को पहुँच सकता है। लेकिन इस धाम को अन्य किसी धार्मिक विधि द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता।

भगवद्गीता का निष्कर्ष अठारहवें अध्याय में इस प्रकार व्यक्त हुआ है–

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।

आत्म–साक्षात्कार की अन्य समस्त विधियों को त्याग कर केवल कृष्णभावनामृत में भक्ति सम्पन्न करनी चाहिए। इससे जीवन की चरम सिद्धि प्राप्त की जा सकती है। मनुष्य को अपने गत जीवन के पाप कर्मों पर विचार करने की आवश्यकता नहीं रह जाती, क्योंकि उसका उत्तरदायित्व भगवान् अपने ऊपर ले लेते हैं। अतएव मनुष्य को व्यर्थ ही आध्यात्मिक अनुभूति में अपने उद्धार का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि वह परम शक्तिमान ईश्वर कृष्ण की शरण ग्रहण करे। यही जीवन की सर्वोच्च सिद्धि है।

जो भगवान् कृष्ण की भक्ति में रत रहता है, उसका परमेश्वर के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। अतएव इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं कि प्रारम्भ से ही उसकी स्थिति दिव्य होती है। भक्त कभी भौतिक धरातल पर नहीं रहता–वह सदैव कृष्ण म वास करता है। भगवान् का पवित्र नाम तथा भगवान् अभिन्न हैं। अतः जब भक्त हर कृष्ण कीर्तन करता है, तो कृष्ण तथा उनकी अन्तरंगाशक्ति भक्त की जिह्वा पर नाचते रहते हैं। जब वह कृष्ण को भोग चढ़ाता है, तो कृष्ण प्रत्यक्ष रूप से उसे ग्रहण करते हैं और इस तरह भक्त इस उच्छिष्ट (जूठन) को खाकर कृष्णमय हो जाता है। जो इस प्रकार सेवा में नहीं लगता, वह नहीं समझ पाता कि यह सब कैसे होता है, यद्यपि भगवद्गीता तथा अन्य वैदिक ग्रंथों में इसी विधि की संस्तुति की गई है।

इस श्लोक में भक्तियोग की दो पृथक्–पृथक् विधियाँ बताई गई हैं। पहली विधि उस व्यक्ति पर लागू होती है, जिसने दिव्य प्रेम द्वारा भगवान् कृष्ण के प्रति वास्तविक आसक्ति उत्पन्न कर ली है। दूसरी विधि उसके लिए है, जिसने इस प्रकार से भगवान् कृष्ण के प्रति आसक्ति नहीं उत्पन्न की। इस द्वितीय श्रेणी के लिए नाना प्रकार के विधि–विधान हैं, जिनका पालन करके मनुष्य अन्ततः कृष्ण–आसक्ति अवस्था को प्राप्त हो सकता है।भक्तियोग इन्द्रियों का परिष्कार (संस्कार) है। संसार में इस समय सारी इन्द्रियाँ सदा अशुद्ध हैं, क्योंकि वे इन्द्रियतृप्ति में लगी हुई हैं। लेकिन भक्तियोग के अभ्यास से ये इन्द्रियाँ शुद्ध की जा सकती हैं और शुद्ध हो जाने पर वे परमेश्वर के सीधे सम्पर्क में आती हैं। इस संसार में रहते हुए मैं किसी अन्य स्वामी की सेवा में रत हो सकता हूँ, लेकिन मैं सचमुच उसकी प्रेमपूर्ण सेवा नहीं करता। मैं केवल धन पाने के लिए सेवा करता हूँ। और वह स्वामी भी मुझसे प्रेम नहीं करता है, वह मुझसे सेवा कराता है और मुझे धन देता है। अतएव प्रेम का प्रश्न ही नहीं उठता। लेकिन आध्यात्मिक जीवन के लिए मनुष्य को प्रेम की शुद्ध अवस्था तक ऊपर उठना होता है। यह प्रेम अवस्था इन्हीं इन्द्रियों के द्वारा भक्ति के अभ्यास से प्राप्त की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जयदयाल गोयन्दका : श्रीमद्भगवद्गीता, गीता प्रकाशन, 2014, गोरखपुर
2. लोकमान्य बालगंगाधर तिलक : *श्रीमद्भगवद्गीता*, लिट्रेसी हाउस, 2020, नई दिल्ली
3. डॉ0 राजेश्वरशास्त्री मुसलगाँवकर, डॉ0 शुभम शर्मा : *श्रीमद्भगवद्गीता*, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
4. अथर्ववेद
5. अमृतबिन्दु उपनिषद्
6. ईशोपनिषद्
7. उपदेशामृत

****

कला के संदर्भ में विभिन्न दार्शनिकों की अभिव्यक्ति

मीना बरतिया *

प्रस्तावना – कला एक संस्कृत भाषा का शब्द है जिसकी उत्पत्ति कट धातु से हुई है । जिसका अर्थ प्रसन्न करना है कुछ विद्धान इसकी उत्पत्ति कल धातु से मानते हैं जिसका अर्थ है प्रेरित करना सबसे पहले कला शब्द का प्रयोग ऋग्वेद में हुआ। जो मनुष्य के जीवन में आनंद प्रदान करती है जैसे खाना बनाना कोई भी खेल खेलना अर्थात जिससे आनंद प्राप्त होता है वह कला है वह कला है।

शिल्प और कला दोनों ही शब्दों का प्रयोग भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में किया है कला दो प्रकार की होती है अलग-अलग विद्धानों ने इसे अपने तरीके से समझाया है जैसे भरतमुनि पाणिनि हीगल अरस्तु इन्होंने कला को कला के प्रकार को अपने-अपने तरीकों से समझाया है। भरतमुनि 400 शताब्दी ईसा पूर्व हुए थे इन नहीं चौथी शताब्दी से पूर्व में नाट्यशास्त्र लिखा था। शास्त्र में भरतमुनि ने उसके 8 भागों का वर्णन किया था।

कला ही जीवन है। कला का ज्ञान, मानव के सर्वागीण विकास के लिए आवश्यक है, यह मनुष्य की मानसिक शक्तियों का विकास करके उसे पशुत्व से उपर उठाता है। भर्तृहरि का लिखा हुआ यह प्रसिद्ध श्लोक मानव जीवन में कला के महत्व पर प्रकाश डालता है—

साहित्य संगीत कला विहीन:
साक्षात् पशुरू पुच्छ विषाण हीन: ।।

भरतमुनि ने कला को दो भागों में वर्गीकृत किया था 1 मुख्य कला 2 गौण कलापाणिनि ने अष्टाध्याई ग्रंथ लिखा था पाणिनि ने कला को दो भागों में वर्गीकृत किया कारो कला जिसका अर्थ 1 उपयोगी कला जो जीवन से संबंधित कलाएं होती है वह उपयोगी कला कहलाती है कुमार का बर्तन बनाना सुनार का स्वर्ण के आभूषण बनाना यह उपयोगी कला है 2 ललित कला के 5 भाग होते हैं

1. **स्थापत्य कला**
2. **मूर्ति कला**
3. **संगीत कला**
4. **चित्रकला और**
5. **काव्य कला**

यह पांच प्रकार की ललित कला होती है स्थापत्य कला के अंतर्गत भवन निर्माण संबंधी कलाऐं आती है।

मूर्तिकला में मूर्तियां आती है मूर्तियां दो प्रकार की होती है हाय रिलीफ और लो रिलीफ हाय रिलीफ को गहराई से तराशा जाता है सिक्कों पर अधिक उपहार नहीं आता जिनको हल्का सा तराशा जाता है लो रिलीफ कहलाती है सांचे से बनी हुई मूर्तियां लो रिलीफ कहलाती है। चित्रकला रूप रंग चित्र एवं आकार पर आधारित होती है।

संगीत कला ध्वनि प्रधान होती है ध्वनि बिना दोनों के संगीत में आनंद की अनुभूति नहीं होती संगीत कला ध्वनि प्रधान होती है के स्वर तथा नाद इसके प्रधान गुण होते हैं पांचवी कला है काव्य कला अर्थ प्रदान होती कवि के द्धारा कविता का पाठ कविता का अर्थ में आनंद की अनुभूति होती है कविता पाठ में कविता के द्धारा प्रस्तुत की गई विषय वस्तु उसका प्रधान गुण होती है अर्थ प्रदान होती है अर्थ प्रदान होता है काव्य अर्थ वाले शब्द अर्थ उसके प्रधान गुण है इस प्रकार ललित कला के 5 पांच प्रकार स्थापित कला मूर्तिकला चित्रकला संगीत एवं काव्य कला है।

हीगल ने कला को दो भागों में वर्गीकृत किया है दृश्य कला और श्रव्य कला हीगल जर्मन दार्शनिक से उन्होंने कला को दो भागों में वर्गीकृत किया चित्र कला मूर्ति कला और भवन को उन्होंने दृश्य कला के अंतर्गत रखा जिससे आंखों को देखकर आनंद की अनुभूति हो वह दृश्य कला है एवं श्रव्य कला के अंतर्गत उन्होंने काव्य कला कविता पाठ को रखा सुनने के पश्चात आनंद की अनुभूति हो वह श्रव्य कला है ।दृश्य कला को निम्न श्रेणी की कला माना है जबकि श्रवण को उच्च श्रेणी की कला माना है।

अरस्तू ने कला को दो भागों में वर्गीकृत किया है अरस्तू यूनानी दार्शनिक थे उन्होंने ललित कला और उदार कला में वर्गीकृत किया।

क्षेमेंद्र एक कश्मीरी पंडित थे उन्होंने कला से संबंधित एक ग्रंथ लिखा विलास विज्ञान जिसमें उन्होंने 64 जन-उपयोगी एवं 32 पुरुषार्थ धर्म का अर्थ और मोक्ष संबंधी और 64 वेश्यो से संबंधित 64 सुनारो 10 चिकित्सकों से संबंधित 16 कायस्थों से संबंधित और 100 सार कलाओं का वर्गीकरण किया है।

इनके गुरू अभिनव गुप्त थे अभिनव गुप्त भी कश्मीरी पंडित थे इन्होंने अभिनव भारती ग्रंथ लिखा था इन्होंने भरतमुनि ने जो अपने नाट्यशास्त्र में उनके भावों को इन्होंने 9 रस बताये नवा रस शांत रस बताया था। भरतमुनि नाट्यशास्त्र में 8 रसों का वर्गीकरण किया था कला की अवधारणा अलग-अलग रूप में वर्गीकृत किया। प्लेटो एक यूनानी दार्शनिक थे उनके गुरु सुकरात थे उनके शिष्य अरस्तु थे। प्लेटो ने कहा था कला सत्य की अनुकृति है प्लेटो ने यहां माना कि समस्त कलाओं की मौलिक विशेषता अनुकरण है उनकी दृष्टि में कवि कलाकार सभी अनुकरण करता है। अनुकरण का मतलब वस्तु को यथार्थ रूप में प्रस्तुत नहीं करना। बल्कि उसे आदर्श रूप में प्रस्तुत करें किया जाता है। उनका कहने का तात्पर्य यह था जैसे उनके गुरु सुकरात ने कहा था कला सत्य से दोहरी दूरी पर रहती है कला अनुकरण है। यह सुकरात ने कहा था प्लेटो अपने गुरु सुकरात की पद्धति का ही अनुसरण करते थे ।कला सत्य की अनुकृति यह प्लेटो ने कहा अरस्तु ने कहा अनुकरण ही कला है अनुकरण में पूर्ण रचना का अनुकरण हो भूल न कर नहीं है बल्कि

* मकान नंबर 434, केशवपुरा सेक्टर-4, रंगबाड़ी रोड, कोटा (राज.) भारत

पुन: प्रस्तुतीकरण है अनुकरण उसमें अपनी तरफ से कुछ और जोड़ता है।

क्रोचे ने कहा कि कला दृश्य बाह्व प्रभावों की अभिव्यक्ति है कला आंतरिक भावों को प्रकट नहीं करती अपितु बाहरी भावों को प्रकट करती है यह क्रोचे ने कहा था कला बाहरी प्रभावों की अभिव्यक्ति है।

रवींद्रनाथ टैगोर ने कहा था सत्यम शिवम सुंदरम वही कला है जो सत्य है और सुंदर है वही कला है।

हीगल ने कहा कला भौतिक संता को अभिव्यक्त करने का माध्यम है।

टालस्टाय ने कहा कि कला क्रिया रेखा रंग पद ध्वनि शब्द के द्धारा इसी अभिव्यक्ति पैढा करती है। देखने और सुनने वालों के मन में भाव को जागृत करने की कला है। जैसा करना चाहती है कला प्रकृति की अनुकृति है यह अरस्तु ने कहा था रस्किन ने कहा ला कला एक अभिव्यक्ति है कल आप हर चीज को प्रकट करती है मनुष्य अपने भाव को कला के द्धारा प्रकट करता है कला एक अभिव्यक्ति है।

महान चित्रकार पिकासो का कथन विश्व में कोई वस्तु शाश्वत नहीं, परतु कला अमर रहेगी, जब तक संसार में मनुष्य का अस्तित्व है, तब तक कला अस्तित्व रहेगा, आज भी उतना ही प्रासागिक है, जितना वर्षो पहले था। यह कला का ही परिणाम है कि ताज आज भी अपने अद्धितीय सौंदर्य को बिखेर रहा है और मोनालिसा की रहस्यपूर्ण मुस्कान आज भी शाश्वत है। सच तो यह है कि कला मानव की चिरसंगिनी है। कला कभी शून्य में खड़ी नहीं होती, अपितु वह समाज के समूचे रूप में जिंदगी में घुल मिल कर चलती है।

कला (आर्ट) शब्द इतना व्यापक है कि विभिन्न विद्धानों की परिभाषाएँ केवल एक विशेष पक्ष को छूकर रह जाती हैं। कला का अर्थ अभी तक निश्चित नहीं हो पाया है, यद्यपि इसकी हजारों परिभाषाएँ की गयी हैं। भारतीय परम्परा के अनुसार कला उन सारी क्रियाओं को कहते हैं जिनमें कौशल अपेक्षित हो। यूरोपीय शास्त्रियों ने भी कला में कौशल को महत्तवपूर्ण माना है।

कला एक प्रकार का कृत्रिम निर्माण है जिसमे शारीरिक और मानसिक कौशलों का प्रयोग होता है।

जीवन, ऊर्जा का महासागर है। जब अंतश्चेतना जागृत होती है तो ऊर्जा जीवन को कला के रूप में उभारती है। कला जीवन को सत्यम् शिवम् सुन्दरम् से समन्वित करती है। इसके द्धारा ही बुद्धि आत्मा का सत्य स्वरुप झलकता है। कला उस क्षितिज की भाँति है जिसका कोई छोर नहीं, इतनी विशाल इतनी विस्तृत अनेक विधाओं को अपने में समेटे, तभी तो कवि मन कह उठा–साहित्य संगीत कला विहीन: साक्षात् पशु: पुच्छ विषाणहीन:।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर के मुख से निकला 'कला में मनुष्य अपने भावों की अभिव्यक्ति करता है' तो प्लेटो ने कहा – 'कला सत्य की अनुकृति के अनुकृति है।'

टालस्टाय के शब्दों में अपने भावों की क्रिया रेखा, रंग, ध्वनि या शब्द द्धारा इस प्रकार अभिव्यक्ति करना कि उसे देखने या सुनने में भी वही भाव उत्पन्न हो जाए कला है। हृदय की गइराईयों से निकली अनुभूति जब कला का रूप लेती है, कलाकार का अन्तर्मन मानो मूर्त ले उठता है चाहे लेखनी उसका माध्यम हो या रंगों से भीगी तूलिका या सुरों की पुकार या वाद्यों की झंकार। कला ही आत्मिक शान्ति का माध्यम है। यह कठिन तपस्या है, साधना है। इसी के माध्यम से कलाकार सुनहरी और इन्द्रधनुषी आत्मा से स्वप्निल विचारों को साकार रूप देता है।

कला में ऐसी शक्ति होनी चाहिए कि वह लोगों को संकीर्ण सीमाओं से ऊपर उठाकर उसे ऐसे ऊँचे स्थान पर पहुँचा दे जहाँ मनुष्य केवल मनुष्य रह जाता है। कला व्यक्ति के मन में बनी स्वार्थ, परिवार, क्षेत्र, धर्म, भाषा और जाति आदि की सीमाएँ मिटाकर विस्तृत और व्यापकता प्रदान करती है। व्यक्ति के मन को उदात्त बनाती है। वह व्यक्ति को 'स्व' से निकालकर 'वसुधैव कुटुम्बकम' से जोड़ती है।

कला ही है जिसमें मानव मन में संवेदनाएँ उभारने, प्रवृत्तियों को ढालने तथा चिंतन को मोड़ने, अभिरुचि को दिशा देने की अद्भुत क्षमता है। मनोरंजन, सौन्दर्य, प्रवाह, उल्लास न जाने कितने तत्त्वों से यह भरपूर है, जिसमें मानवीयता को सम्मोहित करने की शक्ति है। यह अपना जादू तत्काल दिखाती है और व्यक्ति को बदलने में, लोहा पिघलाकर पानी बना देने वाली भट्टी की तरह मनोवृत्तियों में भारी रुपान्तरण प्रस्तुत कर सकती है।

जब यह कला संगीत के रूप में उभरती है तो कलाकार गायन और वादन से स्वयं को ही नहीं श्रोताओं को भी अभिभूत कर देता है। मनुष्य आत्मविस्मृत हो उठता है। दीपक राग से दीपक जल उठता है और मल्हार राग से मेघ बरसना यह कला की साधना का ही चरमोत्कर्ष है। संगीत की साधनाय सुरों की साधना है। मिलन है आत्मा से परमात्मा काय अभिव्यक्ति है अनुभूति की।

वर्गीकरण –कलाओं के वर्गीकरण में मतैक्य होना सम्भव नहीं है। वर्तमान समय में कला को मानविकी के अन्तर्गत रखा जाता है जिसमें इतिहास, साहित्य, दर्शन और भाषाविज्ञान आदि भी आते हैं।

पाश्चात्य जगत में कला के दो भेद किये गये हैं– उपयोगी कलाएँ (Practice Arts) तथा ललित कलाएँ (Fine Arts)। परम्परागत रूप से निम्नलिखित सात को (कला) कहा जाता है–

1. स्थापत्य कला (Architecture)
2. मूर्त्तिकला (Sculpture)
3. चित्रकला (Painting)
4. संगीत (Music)
5. काव्य (Poetry)

आधुनिक काल में इनमें फोटोग्राफी, चलचित्रण, विज्ञापन, और कॉमिक्स जुड़ गये हैं।उपरोक्त कलाओं को निम्नलिखित प्रकार से भी श्रेणीकृत कर सकते हैं–

1. **साहित्य** – काव्य, उपन्यास, लघुकथा, महाकाव्य आदि।
2. **निष्पादन कलाएँ**– (Performing arts) संगीत, नृत्य, रंगमंच।
3. **पाक कला** (Culinary arts)– बेकिंग, चॉकलेटरिंग, मदिरा बना।
4. **मिडिया कला** – फोटोग्राफी, सिनेमेटोग्राफी, विज्ञापन।
5. **दृष्य कलाएँ** – ड्राइंग, चित्रकला, मूर्त्तिकला।

कुछ कलाओं में दृश्य और निष्पादन दोनों के तत्त्व मिश्रित होते हैं, जैसे फिल्म।

कला के संदर्भ में विभिन्न कला के संदर्भ में विभिन्न दार्शनिकों के विचार के आधार पर हम कह सकते हैं कि भारतीय परम्परा के अनुसार कला उन सारी क्रियाओं को कहते हैं जिनमें कौशल अपेक्षित हो। यूरोपीय शास्त्रियों ने भी कला में कौशल को महत्त्वपूर्ण माना है। कला अभिव्यक्ति है जिसके द्धारा मनुष्य अपनी भावनाओं का प्रदर्शन करता है उसे व्यक्त करता है वह कला कहलाती है दूसरे शब्दों में कला का अर्थ ऐसे समस्त भावों के प्रदर्शन से है जो वास्तविक रूप से भावनाओं का प्रदर्शन करते हैं इनका प्रकाशन किसी भी रूप में किया जा सकता है अत: इनके अंतर्गत कविता संगीत नाटक नृत्य आदि भी सम्मिलित होते हैं यह कला का भाव रूप से प्रकाशन होता है या प्रदर्शन होता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची:-

1. रूपप्रद कला के मूलाधार डॉ. आर.के. अग्रवाल, इंटरनेशनल पब्लिकेशन
2. भारतीय संस्कृति: राजकमल पब्लिकेशन
3. वैदिक सहित्य व संस्कृति आचार्य बलदेव
4. http://www.abhivyaktiHindi.org
5. http: //www.kalaLekhan. com
6. http://www.M.P.Boardonline.com
7. http://www.bishwajeetverma.wordpress.com
8. http://www.NottetNavneethindi.com
9. http:// www.deshbandhu.co.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.110 (2017) April 2018 E-Journal, Vol. III

Comparative Study of Values in Indian Ideology, Science and Human Psychology

Dr. Mani Bansal* Dr. Manuj Kumar Agarwal**

Abstract - Since the starting of the human being the values are the manifest in the conduct of the individual. Learning without values is incomplete growth. So the development of values in the behavior is the focus of human life.

Although monetary expectations for day-to-day and comforts have improved over time, the world's advancement has encountered numerous significant issues from different angles in conditional, social and human measurements. But there are numerous question still stand in front of us. Are we living a happy life in all aspects, even with the advancement of technology, living standards? Are these technological advancement, according to the rules of nature? There are several questions with respect to human qualities and true human values, and impact of technological advancement on nature, just as worries for biological equalization, atmosphere changes and practice advancement. This has prompted conversations among us for enhancement of improved standards for comprehensive advancement.

In this paper we will study about, "How the human values and thought process of human influence the life and environment?" How these values are portrayed in various religions? Are these values having same definition in all respect?
Keywords -Trust, Respect, Indian Ideology and Science.

Introduction - As all of we aware that the entire world can be arranged in four order human order, creature order, plant order, and material order. We can easily see that all the 4 orders are interconnected to one another so as to fulfill their requirements. But if go in deep then we will find that in all the 4 orders, leaving the human order rest 3 orders are expecting their occupations unequivocally. However, if we see to human order than we will see that there is vulnerability in human conduct.

Uneducated youth is not the problem of today in nation.The major issue is,"Which type of education are we imparting to the youth?" Seeing the exhibitions of mercilessness presented by adolescents encompassing us, we consider whether the parents and teachers have ignored their commitments towards present youth. These infringements are extending bit by bit by our current youth. These infringements are extending bit by bit by our current youth. This attests the parents and teacher's today are ignoring the imperative commitments of embedding social qualities in our youngsters[1, 2].

Before talking about additionally, let us discuss some issues. Much time it occurred in our life that we expect a great deal of, from anybody and not get the ideal outcome. Have you not seen that when you accomplish something for anybody and anticipate the equivalent of that individual? Be that as it may, again face the inability to get the ideal outcome. At the point when we are not getting the ideal outcome than we state that supporting anybody is in vain. Have you, at any point, though what the purpose of it is? A large number of individuals are an excess of strict while others are most certainly not. There are such a large number of contradictions in the behavior of the people [3].

Have we, at any point attempted to discover the main driver behind this?

This is simply just the impression of our attitude and conduct. Values are in the base of these frames of attitude and conduct. These Values are the consequence of hereditary legacy and presentation to the social condition. Or on the other hand in the basic words, we can say that Attitude = Values = Hereditary legacy + Social presentation of nature

What is Value?

Values connote that nature of an individual or things which make that individual or thing significant, decent and helpful. Be that as it may, from a philosophical or instructive perspective, values connote neither a thing nor an individual, however an idea or a point of view. All things considered, anything which is helpful to an individual gets important to him. The main purpose of the value to develop the right attitude towards self, society and religions.

Starting here of view, values allude to objects that we value or wants and think of them as attractive and deserving of obtaining. These might be material articles like nourishment, attire, cover and so forth and unique

*Associate Professor, D.A.K. (P.G.) College, Moradabad (U.P.) INDIA
** Assistant Professor, M.I.T., Moradabad (U.P.) INDIA

characteristics and thoughts like truth, respect, excellence, goodness, harmony, joy, and so forth. These qualities have inherent worth for individuals.

Training has the best worth. It is worried about values that fulfill the plans, needs, and desires. Instructive values are identified with those exercises which are acceptable, helpful and significant from the perspective of training [4, 5, 6].

Classification of Values - Value is one by which men live, for which, they are eager to forfeit solaces, offices, and even lives to protect their qualities. The term "Value" alludes to the advancement of "heart". Every individual has an individual progressive system of significant worth needs: a few values are extremely significant, others respectably significant, and still others are of some significance [7]. Every individual is differing with other due to the values, which are incorporated in them. At whatever point a human associate with another then he has certain values on which his disposition and conduct depend. There are a few different ways as per which the qualities can be characterized.

1. Aesthetic aspects
2. Social aspects
3. Moral aspects
4. Spiritual aspects

Being a social being humans can't be isolated as a free element. The general public, where he plans and thrives, has certain beliefs, values, conduct, code and confidence that impact the development and method of thinking about a person. To appreciate social values, he wants to advance an appreciation relationship with his family, companions, and network.

The values identifying with the conduct of an individual are called moral values. So moral values relates to the conduct of man towards a man in the home, in the public arena, in financial fields and in the life of the outside world. By and large, man isn't brought into the world with morals. He has certain driving forces.

Spiritual values impact the person in his connection with himself. Man doesn't live by bread alone. He needs inward harmony and bliss. Not material things but rather profound qualities can give him genuine comfort and delight throughout everyday life.

Students are losing their higher standards of life and they are living in another worldly vacuum. In the event that the point of training is self-acknowledgment, at that point, the first towards its achievement will be to comprehend the idea of the youngster and after the right examination, attempt to know well his fundamental propensities, limits and capacities.

There number of values. When we are talking about self then the values are differ. When we are studying about human to human relationship then there are some different values. In this paper we have tried to understand the values on the basis of human psychology, science and Indian ideology.

Trust

Trust in Human Psychology - All we are especially mindful of the hereditary legacy. What is the social presence of the surrounding? It might become a friend circle, our general public where live, our education system, our family members, and so forth. Despite the fact that these values are inalienable in each human yet we are not ready to pass judgment on them or we can say that we misinterpret them. For instance

In the event that some misstep is performed by us, at that point we don't make a big deal about that since we think just this is just done by some coincidence, not performed purposefully. Simultaneously on the off chance that a similar error is submitted by others, at that point what we state? That individual submitted it by purposefully. At that point, we began to make an uncertainty on the other intension. For what reason is it so? This is only just because of the absence of the estimation of **Trust**.

We don't have the trust on anyone. All of us want to live in relationship but not able to trust anyone then how can us able to live in relationship. In order to build up the relationship the **Trust** is in the **base** of all values which are discussed above.

We always judge others according to their intension and we always have doubt on the intension of others. We judge ourselves according to our competence.

While the real meaning of trust is that we should have the clarity that the others are in respect of my happiness and prosperity. Trust is a passionate cerebrum state, not only a desire for conduct. Trust is a focal piece of every human relationship, including sentimental organizations, family life, business tasks, governmental issues, and clinical practices [8].

Trust isn't conduct, nor is it an erratic choice. It is an basic mental state, which is educated by both our feelings and subjective (mental) forms.Trust intervenes conduct decisions where risk is included. Risk-taking can be viewed as a result of trust. At the point when a result is uncertain, however, includes gambling something of human esteem (for example health, cash, time, reputation), the trust gives a intends to judge whether to face the challenge [9].

Think about the state, when anybody needs to acquire some cash from you. What occurs in that circumstance? It is possible that you will give cash or you won't give cash. There is the probability of 0 or 1. This probability is due the uncertainty of situation.

i. What sum he is inquiring. On the off chance that soliciting a low sum from cash, at that point the, probability is more noteworthy to give cash say 1 similarly on the off chance that he is soliciting a high sum from cash, at that point the probability is low say 0.
ii. If an individual is asking an enormous sum then we believe that whether the individual is fit to restore the cash or not. We try to see his background.On the off chance that he is serviceman, at that point, probability is high to return money say 1,since serviceman at-

tempts to clear his obligation when he got the pay. Then again, on the off chance that the individual is a businessperson, at that point, the odds are low, say 0.

iii. We likewise look for the assessment of others to find out about the circumstance and may direct us what they accept to be valid. They control us about the previous history of that individual. On the off chance that the individual has restored the acquired sum on schedule, at that point the probability is high, say 0 in the event that he has been bamboozled anybody, at that point the probability is low, say 0.

iv. If the individual is offering a higher rate of interest on the acquired cash at that point risks additionally increment that you are in the circumstance to give the cash. On the off chance that the individual isn't offering a higher rate of interest or not offering any rate of interest then chances are very low, say 0.

v. Also, see the circumstance for what reason he is requesting the cash. In the event that he is in a difficult situation and required the cash to get free off of that inconvenience at that point chance are high, say 1 yet he is asking for no reason at that point chances are extremely low, say 0.

After making all the calculations from all above numbers if the probability of 1 is high then we are in the situation to give the amount needed by the person but if the probability of 0 is high then we are not giving any money to that person.

But human psychology said that we should trust on his intension which says that nobody in the world want to distrust to anyone. We should trust on the intension of the person that he will return the money. Because intension means "Natural Acceptance" which is universal truth.Because nobody want to distrust to anyone.

Figure 1: Role-based trust in the processing of risk

Trust in Indian Ideology - The mind or "Buddhi" is the main thrust behind all the activities of people. Everyone is provoked to act dependent on the choice of the intellect after it gauges the advantages and disadvantages of an issue. In any case, there is no assurance that one's intellect consistently is correct and it is just with time and knowing the past that one can measure the value of the choices. That is the reason in the Gita Krishna clarifies that the savvy consistently trust the way appeared by the"Sastras" since they express God's perspectives on all issues.

Ruler Krishna lectured Bhagavad Gita' to Arjuna for persuading him to play out his assignment and obligation when he was confronting a moral issue.

Bhagavad Gita' resembles the stream Ganga, in which information, obligation, and deed are accentuated upon. As stream Ganga has been streaming for some periods on this Earth, it extinguishes the thirst of each parched man without getting some information about the station, shading, and doctrine or to which nation he has a place with, so additionally Bhagavad Gita, similar to the waterway Ganga, is streaming for the government assistance of humankind regardless of the rank, ideology, religion, and nation. According to Bhagwat Gita: - Krishna said to Arjun I have purpose for you pain, a reason for your struggle and reward for your faithfulness. Trust me and don't give up.If you think that he is not answering your prayers, just remember, he feels your pain [10, 11].

So according to this God is present in every human. If we trust on God then we will have to trust on human being. Because when god does not want to harm you then, "how can you say that any individual can harm you?" Individual may lack in the competency but the "Natural Acceptance" is same of every individual. So nobody can distrust you.

Trust in science - Trust is described on the bases three pillars in science.

Three pillars of truth - In essence, science is the organized method developed to understand nature. It is observed that researches and society may have strong moral and ethical bases, the scientific understanding of nature has none.

Science and academics rest on three pillars three R's [12], which are an interdependent set of **Realties (Facts), Rationality (Logic) and Reason**. **Realities** identify with the perception and the proof that we gather. **Rationality** joins together perceptions and decides the guidelines to comprehend the proof. **Reasons** build theories and these are tried for consistency against rationale and certainty. While logic is an aspect of reason, Reason encompasses imagination, creativity, mathematical thinking and other abilities of the human mind, which also helps understand facts.

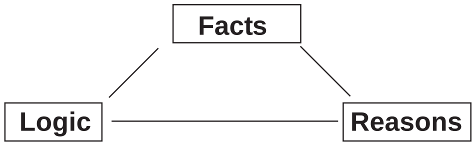

Figure 2:- Three Pillars to understand 3 Trust

Both rationality and reasons allow us to acquire more proof. All the time, significant advances result out of apparently minor irregularities since this triangular structure holds. This triangular structure lies at the core of the logical technique. At the point when the utilization of the technique can't help contradicting the consistency required by the triangular structure, it flags the requirement for new thoughts and proof.

So in the event that we attempt to utilize these three

pillars for any individual, at that point, we see that the trust is that each individual needs to confide in others and would prefer not to distrust anyone. On the off chance that we go on second pillar1 reasons, at that point there might be sure reasons that any individual distrusts anyone. It might be antagonistic conditions, any contingent circumstance e.t.c. Furthermore, when we see towards the third pillar then we will attempt to discover the rationale that when each individual needs to confide in others and would prefer not to distrust at that point, "what is the condition because of which he questioned others?" The appropriate response we will find that the "Natural Acceptance" of each individual is the equivalent. God is available in each person. So we should trust on everybody.

Respect

Respect in Human Psychology - Regard is an all-encompassing thought and speaks to the acknowledgment of every person's natural worth. Regard includes respecting the rights, protection, pride, qualifications, and a decent variety of those adding to investigate. In associations, workers experience circumstances in which they feel that they are not tuned in and that their thoughts and proposals even are overlooked. Accordingly, a large number of them may leave the association in a frustrated way since they didn't feel regarded. In our cozy connections, accomplices may demonstrate less responsibility to the next and the relationship all in all when they notice that their accomplice barely dedicates any regard for their necessities and issues. In these circumstances, it is frequently located " . the individual in question doesn't regard me [13].

Whenever we try to judge anyone, we either do under evaluation or do over evaluation. We judge anyone according their physical facility their wealth. In many cases we have seen that if anyone have more physical facility then we give more respect likewise if someone is lacking in that then we don't give too much attention towards them.

Right now the theory is Physical facility = Respect.

But the true definition of the respect is

Respect = Right Evaluation (Evaluating the person as he is)

Instead of showing pride, conceit or arrogance towards anyone, we should treat everyone with request. We must not try to put others down and try to project ourselves to be superior to others. Whenever we get acclaim or recognition, we must always credit it to others who have helped us and also thank Bhagavân for his grace in enabling it. We should also respect others irrespective of who they are.

Respect means elevating the person in front of us. We do not become smaller when we give respect to another person.

Respect in Indian Ideology - We ought not to be presumptuous or impolite in light of the fact that in all actuality, each living animal has an indistinguishable soul in them. So we are not better than anybody in our substance. The insightful see the equivalent (Brahman) with an equivalent eye, in a scholarly and humble brâhmaña. Bhagavân resides within everyone. When we love others, honor them and respect them, we are actually doing the same to Bhagavân. Conversely, if we hate and disrespect others, then we are abusing Bhagavân no matter how many ceremonies and prayers we may do [10, 11].

Respect in science - We as a whole have undetectable concentric circles around us. At whatever point we are disregarding to anybody then antagonistic influence we need to feel on our body. In view of the way that negative deduction to change congruity of our body.

Just half accept that human movement has caused environmental change, and a comparative number accept hereditarily altered nourishments are "by and large perilous". These are for the most part points that science has a lot to state about, and where researchers and the general population give off an impression of being in distinct contradiction.

Research including people remains especially testing to established researchers. Examining individuals, their tissues and their information raises moral complexities not seen with fundamental research, including duty regarding the security and protection of study members. Both worldwide and local research expects affectability to the social foundation and inclinations of members. In contrast to sub-atomic, cell or creature contemplates; human subjects require respect in support, regard for their self-rule and security from hurt.

Regardless of whether you constantly side with established researchers, I figure we can, at any rate, concur that the connection between Science and the Public isn't sound.

The profound estimation of regard is perhaps one of the most basic activities to be advanced at school day by day life since it is the base of human connections and permits a decent concurrence between gatherings [14].

Everybody wants regard to paying little heed to age or status in the public arena. As a youngster, an understudy ought to figure out how to regard others which incorporate his friends, older folks, various religions, races, genders, thoughts, and ways of life. It is a fundamental virtue as it will make him increasingly worried about others and advantage him in life later on.

We can also say that the respect is a two-way road" – when we offer our best regard to our work environment we get back its best. We can see the example of COVID-19, Severing AQI, Water table is going down and many more. All these problems, which we are facing today is the reverse of the nature to us.

Conclusion- In light of the above assessment, we can close with the word that the base of association with this regular life is only the values. Regardless, we are at home, we are at an open spot, in the open eye, or at some other recognize the attitude of the individual is huge and all the characteristics are delineated in Ideology and science with a comparable substance.

With esteem training, a person's proclivity towards

morally right conduct expects appropriate shape. Morally right conduct causes people to find some kind of harmony between personal responsibility, social intrigue, and worldwide intrigue.

The point of significant worth instruction is simply to give the qualities in each individual in order to limit the contentions at home, in the public arena, and with nature. Values are those characteristics in individuals that provide the motivation and guidance for the span of their lives. These values are not the property of any religion or any thinking or any nation. These values are general in nature and convey directly which is helpful both to the individual and to the general public. These are the pith of strong associations and are basic for improvement in any country. These values sway our contemplations and exercises and convince us to progress in the right way. These values add to the inside and out of the progress of society and the country.

Each general public needs its youths to make sure about a charming course of action of esteems. The target of instruction in every country is the progression of alluring values. Unmistakably, it is fundamental to know in the matter of what esteems are held by its school students.

References:-

1. Bequist, W.H. (1992). The Four Cultures of Academy: Insights and Strategies for Improving Leadership in Collegiate Organisation, San Francisco: Jossey Bass.
2. Diane Tillman. (2001), Living Values Activities for Young Children. New York: HCI Books.
3. Williams, R. M. (1970). *American society: A sociological interpretation* (p. 58). New York, NY: Knopf.
4. Kluckhohn, C. (1951). Values and value-orientations in the theory of action: An exploration in definition and classification. In T. Parsons & E. Shils (Eds.), *Toward a general theory ofaction*(pp. 388–433). Cambridge, MA: Harvard University Press.
5. Rokeach, M. (1973). *The nature of human values*. New York, NY: Free Press.
6. Schwartz, S. H. (1992). Universals in the content and structure of values: Theoretical advances and empirical tests in 20 countries. In M. Zanna (Ed.), *Advances in experimental social psychology* (Vol. 25, pp. 1–65). London, UK: Academic Press.
7. Schwartz, S. H., &Bardi, A. (2001). Value hierarchies across cultures: Taking a similarities perspective. *Journal of Cross-Cultural Psychology, 32*(3), 268–290.
8. Rotter, J. B. (1967). A new scale for the measurement of interpersonal trust. *Journal of Personality, 35,* 651-665.
9. Gifford, R. (2011). The dragons of inaction: Psychological barriers that limit climate change mitigation and adaption. *American Psychologist, 66*, 290-302.
10. Muniapan, B. (2007). ¯Managerial Efectiveness from the Perspectives of the Bhagavad-Gita , Punjab Journal of Business Studies, Volume 2 (2), October – March 2006 – 2007, 30 – 38.
11. Swami Ranganthananda. (2000). "The Universal Message of Gita", AdvaitaAshrama, Kolkatta, Vol. 1, 430 – 437.
12. Hardwig, J. (1991). The role of trust in knowledge. The Journal of Philosophy, 88(12), 693–708
13. *Boeckmann*, *R. J.*, & *Tyler*, *T. R.* (*2002*). *Trust*, *respect* and the *psychology* of *political engagement*. *Journal* of *Applied Social Psychology*, *32*(10), *2067–2088*.
14. Martínez-Scott, S., Monjas-Aguado, R., &Torrego-Egido, L. (2017). Hunger and prejudice. A study of development education in teachers training. Proccedia Social and Behavioral Sciences, 237, 950-955

****

Quantification of Primary Metabolites from Selected Medicinal Plants

Mukesh Agarwal* R.D. Agarwal**

Abstract - Current research involves physiochemical evaluation and quantification of primary metabolites like carbohydrates, protein, phenol, lipids, chlorophyll and carotenoids. The presence of biologically active metabolite constituents might be responsible for the various biological activities. *Pedalium murex* and *Mucuna pruriens* have been recommended for various medicinal properties which are used for curing of various human diseases and also play an important role in healing. They have have anticancer, antimicrobial, antidiabetic, antidiuretic and anti-inflammation activities. Phytochemicals are non-nutritive chemicals that have protective or disease preventive properties. They are nonessential nutrients, meaning that they are not required by the human body for sustaining life
Keywords- Biochemical; Primary Metabolites; *Pedalium murex; Mucuna pruriens.*

Introduction - The consumption of medicinal plants as resource for drug delivery has mentioned since many centuries as equivalent to human civilization. Most of medicinal plants are used as herbs in various spices, flavors used by human civilizations as processed food which possess many bioactive compounds (Lai and Roy, 2004). These compounds acts as drugs to combat against many infectious diseases. It has been reported that in tropical climates where there is adequate amount of pathogens , their uses becomes crucial. Most of common weeds present in field crops that possess living population density , like nettle, dandelion and chickweed, are resource of many bioactive compounds (Wynn and Fougère, 2007).

In pass 200 years rapid increase in business of medicinal plant has been observed as lot of industries has kept on eyes on this emerging resource. Large amount of vital drugs has been innovated and lot of research is carried out in their synthesis and their post production management. Due to prominent outcomes carried out so global attention has been diverted on this important aspect.

Chlorophyll recommended as green pigment is core photosynthetic reactions among all medicinal plants. It is a crucial component for colouration of leaves. Each chlorophyll molecule possess a porphyrin ring with Mg^{+2} which imparts green colour for leaf. There are several types of chlorophyll present in plant kingdom viz. Chl. a, b, c, d,e, bacteriochlorophyll a, b, and bacterioviridin Ascorbic acid is a polar free radical scavenger vitamin used in wound healing and it controls cancer cells etc. It is found in an adequate quantity in sweet pepper, potato, parsley all fresh vegetables and fruits etc. It also triggers amylase, protease and RNA efficacy in diversified crops. These are present in active metabolizing cells engaged in biosynthetic pathways (Prakash *et al*., 2001). Another photosynthetic apparatus includes carotenoids which act as accessory pigments present in plant kingdom. They are present in all photosynthetic organisms. They are group of secondary metabolites categorized in 2 groups like viz. â-carotene, and xanthophylls. These are lipophilic compounds, which bears colour from yellow , intermediate orange and finally to red. These pigments have minimal role on the plant colour, as they are overtake by chlorophyll (Stahl and Sies, 2005). They belongs to supplementary pigments in photosynthesis. They have their role in transformation of energy to chlorophyll around 20%–89%. They prevents chlorophyll against photodamage.

Materials and Methods

Physiochemical Evaluation: Experimental plant material of selected medicinal plants was dried, powdered and soxhlet isolated consecutively with petroleum ether (60-80^{0}C), C6H6, CHCl3, C2H5OH and H2O for 24-36 h. the respective sequential extracts was filtered, dried to remove moisture and screened for the quantitative yield. Later, using well defined assays and procedures each of the test samples was processed thereafter for analysis of carbohydrates, proteins, flavonoids and alkaloids. Prior to this , every sample was dissolved in the in its solvent for proper dissolution and divided into aliquots to perform the following qualitative tests.

Carbohydrates

Fehling's test: To 2 mL of aliquot, similar ratioo of freshly made Fehling's solution (prepare by amalgating solution A: 7.0g $CuSO_4 . 7H_2O$ in 100mL distilled water and B: 24g KOH and 34.6 g C4H4KNaO6 in 100 ml distilled water) was

*Department of Botany, University of Rajasthan, Jaipur (Raj.) INDIA
**Department of Botany, University of Rajasthan, Jaipur (Raj.) INDIA

solubilized and whole blend was boiled on water bath. Emergence of rusty brown color or red precipitated confirmed the occurrence of carbohydrates.

Benedict Test: In 2 mL of volume a small droplets of Benedict's solution (made by mixing 17.3g of Na3C6H5O7 10g of Na_2 CO_3 in 75 mL of distilled water, which was filtered , further , 17.3 g of $CuSO_4$. $7H_2O$ mixed in 20 mL of distilled water) had been amalgated thereafter heated whole reaction mixture on a water bath. A chronological variation in the colour (blue-green-orange) confirmed the occurrence of carbohydrates.

Proteins

$FeCl_3$ Test: In 2 ml of aliquot, 5% aqueous $FeCl_3$solution was slowly added and the occurrence of proteins was confirmed by the development of blue colour changing to olive green as a result of addition of more$FeCl_3$solution.

Phenanzone Test: In 2mL of test sample 0.2 g sodium acid phosphate was added followed by heating, which was subsequently brought to room temperature and filtered. To this, 2% phenanzone solution was added resulting in the formation of a bulky and colored precipitation thus evidenced the presence of proteins.

Flavonoids

Shinoda' S Test- In 2 ml of tested sample a piece of Mg^{++}ribbon and concentrated HCl mixed steadily drop wise . The appearance of pink/ scarlet crimson or sporadically green/blue colour confirmed the occurrence of flavonoids.

Alkaloids: Sample to be analyzed was treated with 2% HCl heated (60^0) for 2 h which thereafter chilled and filtered. Appearance of white precipitate after mixing of 2-3 drops of below mentioned reagents to 2 mL of the above solution confirmed the occurrence of alkaloid.

1. ***Modi Mayer's reagent-*** Prepared by mixing 1.35g $HgCl_2$and 3.95 g KI in 100mL of distilled water.
2. ***Wagner's reagent-*** Prepare by mixing 1.27g I_2 and 2.00 g KI in 100 mL distilled water.
3. ***Bourchardt's reagent-*** Prepare by mixing 2.0g $I_2$and 4g KI in 100 mL distilled water.

Tannins

Lead acetate test: The filtered residue (50 mg) was mixed in 5 mL of distilled water. Later on 3ml of 10% Pb(C2H3O2)2 were mixed. A thick viscous impetuous confirmed occurrence of tannins.

Estimation Of Primar Y Metabolites: Different plant parts of *Pedalium murex* and *Mucuna pruriens* were shade dried and free from moisture and grinded for analysis of various primary metabolites.

Carbohydrates

Total Soluble Sugars

Extraction: The dehydrated grinded plant material (50 mg each) was macerated with pestle and mortar having 20 mL of 80% ethanol disjointedly , kept whole night. Every tested material was rotated at 1200 rpm for 20 min; liquid layer were unruffled independently and resoluted at heating mantle following assay of Loomis and Shull (1937). Distilled water was mixed for raising the level till 50 mL and thereafter estimated for quantitative estimation.

Starch Estimation: Remaining pellet obtained from above process was diluted in 5 mL of 52% perchloric acid (McCready et al., 2002) Afterwards , 6.5 mL of water was mixed in every trial and the reaction solution was stunned forcefully for 7 min.

Quantitative Analysis: 1mL of tested sample being analyses for quantification using protocol of C6H5OH-H2SO4 (Dubois et al., 1951). Regression curve of pure sugar (taking glucose as standard) was plotted. Hoard mixture of glucose (100ìg/ mL) was mixed in distill water. Different dilutions viz, 0.1 to 0.8 mL was taken in 8 different test tubes and mixture increased upto 1 mL with distilled water followed by chill treatment with ice. 1 mL of 5% C6H5OH was mixed in every test tube and stunned soothingly. 5 mL of conc. H2SO4 was quickly mixed as a result there was steam collided with liquid and tubes were steadily stunned while mixing acid . At last the complete reaction solution was kept steady on incubator at 28-34^0C for 30 minutes. The appearance of yellowish orange colour was visualized. Absorbance was calculated at 490 nm having for distill water as blank. A plot in the form curve was drawn between the recognized quantity of glucose and their particular absorbance , based on Lambert Beer's theory. Complete trials carried out in similar manner as mentioned earlier and quantity of complete carbohydrates were mentioned by plotting absorbance of tested samples with customary curve.

Proteins Estimation: Tested sample which is to be analyzed (50mg) were discretely macerated in 10 mL of chilled 10% TCA for half an hour and stabilized at 6^0C for 1 day. Later on whole solution were centrifuged discretely and liquid layer separated and thrown away. Solid residues in form of pellets was remixed in 10 mL of 5% TCA and boiled at 80^0on a incubator for half an hour. The test samples were chilled , centrifuged and liquid layer were discarded. The pellet again treated with distilled water, mixed in 10 ml of 1N NaOH, hold whole night at 37^0 (Osborne, 1962).

Quantitative Estimation: Every test sample mentioned earlier (1 mL) was carried and quantity of protein was calculated through protocol of Lowry et al., (1951). A standard graph was drawn. Stock dilutions of BSA (Sigma Chem. Co., St. Louis, USA) was mixed in 1N NaOH (1mgL^{-1}). 8 dilutions (at concentration from 0.1 to 0.8 mgL^{-1}) were discretely calculated in test tube and solution of every test sample was raised to1 mL by mixing distilled water. In every test tube , 5 mL of recently made alkaline mixture (made by adding 50 mL of 2% Na_2CO_3 in 0.1 N NaOH and 1 mL of 0.5 % $CuSO_4$.$5H_2O$ in 1% KNaC4H4O6·4H2O) mixed, made stable for 15 min. In every tube 0.5mL of Folin-Ciocalteau reagent (readily solution purchased from market was dissolved with same quantity of distilled water prior before reaction) was mixed hastily along instantaneous mixing and absorbance of each sample was calculated after half an hour at 750 nm in contrast to blank. 5 replicates of every dilutions was kept and mean data had been drawn in

contrast to their particular dilutions to sketch standard graph.

Each sample was carried forward in an identical steps and the quantification of proteins was determined through considering absorbance of every sample with standard graph. 5 replicates of every dilutions carried in same manner and their average data was determined.

Lipids Quantification: The sample to be analyzed were made free from moisture , grinded and 100mg had been homogenized with 10 mL distilled water, poured in beaker bearing 30 mL of $CHCl_3$ and CH_3OH (2/1:v/v; Jayaraman, 1981). Solution was painstakingly assorted, kept whole night on 37^0C in absence of light to finish the reaction . Afterwards , 20 mL of $CHCl_3$ diluted with 2 mL of water were mixed and centrifuged. 2 phases were alienated, the lower layer of $CHCl_3$, which possessing all fats has been vigilantly harvested in already weighed glass vials and the colored water soluble pooled solvent containing CH_3OH having all polar compounds and thick interface layer were rejected . The $CHCl_3$ fractions dehydrated *in vacuo* and their weight was calculated. 3 replicates were repeated and their average values were determined.

Phenols Extraction: The test sample were made free from protein (200mg each) and homogenized with 10 mL of 80% ethanol for 120 min , and kept whole night on 37^0C. The solution were centrifuged and liquid layer thus obtained were harvested discretely and raised 40 mL while mixing 80% ethanol .

Quantification: Complete phenol estimation in every test sample has been carried using the established assay of Bray and Thorpe (1954). Here also we prepared standard plot of pure phenol (Tannic acid). Different dilutions of tannic acid was made by amalgating 40 mg of phenol in 1 mL of 80% ethanol. 8 dilutions at different concentration from 0.1 to 0.8 mL added in the test tube and final volume was made to 1mL by mixing of 80% ethanol. In each tube , 1mL of Folin-Ciocalteau reagent and 2 mL of 20% Na2CO3 mixture was macerated and reaction solution was dazed meticulously. The tested tissues were kept in hot water for 60 sec thereafter chilled in operating tap. Further solution were concentrated around 25 mL by mixing distilled water and absorbance noted at 750 nm in contrast to blank. The absorbance of each sample was drawn in contrast to the different dilutions of standards to draw plot curve. Amount in test samples were determined by measuring the particular absorbance against usual graph of phenols.

Chlorophyll: Chlorophyll was quantified using protocol of Arnon's (1949) in 80% acetone and the absorbance noted at 663 nm and 645 nm by spectrophotometer. The amount of chlorophyll was quantified using following formula.

$$\text{Chlorophyll a} = \frac{(12.3 \times \text{OD at } 663 - 0.86 \times \text{OD at } 645) \times V}{1000 \times W}$$

$$\text{Chlorophyll b} = \frac{(19.3 \times \text{OD at } 645 - 3.6 \times \text{OD at } 663) \times V}{1000 \times W}$$

V= Final volume of chlorophyll extract in 80% acetone
W = amount of extract of tissue

Materials required

1. 80% acetone (pre-chilled)
2. Plant material (1 gm)

Procedure: Initially 1gm plant material was taken and grinded in 80% acetone. Further the samples were centrifuged 3 times at 5000rpm for 5 min. Supernatant was extracted and final solution was made to 4.0 ml. Optical density was taken at 645 and 663 nm and 80% acetone was kept as blank. Calculations were done as mean of 3 replicates and the quantification of chlorophyll was expressed as µg/mg fresh weight.

Carotenoids : They were calculated using protocol of Duxbury and Yentsch, (1956). 1g fresh leaf samples were macerated with 80% acetone and centrifuged at 5000 rpm for 7 min. Supernatant was extracted and volume raised to 100 ml optical density was noted down at 480 and 510.

Carotenoid mg/g tissue = 706 (A_{480}) - 1.49(A_{510}) x V

$$\frac{}{1000} \quad X \quad W$$

Where,
A = optical density
V = Final volume of chlorophyll made in 80% acetone
W = amount of extract of tissue

Ascorbic Acid : The protocol of Kotte (1922) was followed for calculation of Vitamin C Lorit reagent has been recommended , which oxidises ascorbic acid when reacted with Trichloro acetic acid (TCA).

Reagents Preparation :

1. 2% 2,4-dinitrophenyl, hydrazine : 2.0 gm of chemical polarized in 100 ml of 9N H_2SO_4.
2. Lorit reagent : 2% of activated charcoal polarized in 100 ml of 6% TCA. The reagent was filtered through what man paper bearing no 42.
3. 10% Thiourea :- 10 gm mixed in 100 ml of 9.0% alcohol.
4. Regression curve of ascorbic acid :- the stock solution was kept at 1mg/ml. A dilutions were made from 10 µg- 100 µg by serial dilutions from 0.1-1.0 ml of the standard solution.

Procedure: Initially plant samples (500mg) were homogenaized in Lorit reagent (10ml) and Centrifuged at 1200 rpm for 20-25 min. Supernatants were extracted out.

Estimation: ml of 2,4-dinitrophenyl hydrazine was added to 4.0 ml of three above mentioned reagents . During this dropwise thiourea was mixed and the reaction mixture heated for 20 min at 99°C. Further these tubes were dipped in ice bath for cooling. Further 5 ml of 85% H2SO4 was added and kept for incubation period of half an hour. Different dilutions (ranging from 10 µg- 100 µg) considered as standard curve. Three replicates has been experimented and amount of vitamin C was expressed as µg/mg fresh weight of the tissue.

Results: Physico-chemical screening of various metabolites (carbohydrates, proteins flavonoids and alkaloids) along with their chemical behavior and extractive values in different plant parts from selected medicinal plants

were analyses. On sequential extraction, all the plant parts and exhibited a similar response for all the major groups of metabolites tested. It showed that the biosynthetic potentialities for all types of metabolites in general are retained. Among the different solvents used for sequentially extraction, the total extractability was maximum in alcohol, while in C_6H_6 and $CHCl_3$ it was minimum both *in vivo* and *in vitro*

In the present investigation, total extractive values of stem, leaf and fruit of *Pedalium murex* were found 10.77%, 11.32 % and 11.81% respectively. Out of different solvents used for sequential extraction, in stem of *P. murex,* maximum extractability was observed in methanol extract (4.03%) and minimum in aqueous extract (0.83%). The same situation was also observed in leaf and fruit of *P.murex.* In leaf, maximum extractability was detected in methanol (4.04%) and minimum was detected in aqueous solvent (0.93%). Maximum and minimum extractability in fruit of *P. murex* was observed in methanol and aqueous extract respectively (4.23%, 1.01%). Total ash value in stem, leaf and fruit were detected to be 4.22%, 4.04% and 4.09%**.**

Physicochemical analysis was also done for another plant i.e *Mucuna pruriens*. Total extractive value were found in increasing order in stem, leaf and fruit of *M. pruriens* such as 9.26%, 9.60 and 10.84%. Out of different solvents used for sequential extraction, maximum extractability was observed in methanol extract of all plant parts. Stem, leaf and fruit, maximum extractability was observed in methanol extract (3.24%, 3.30% and 3.93%) and minimum were observed in aqueous extract (0.52%, 0.61% and 1.01%) respectively. Total ash value were observed in increasing order of leaf, stem and fruit M. pruriens (3.16%, 3.98 and 4.02%) Fluorescence analysis was also done of both selected plant species in various solvents and different colors were observed in day light and UV light (**Tables 1-7**).

Primary Metabolites: Primary metabolites quantified from different plant parts are has been represented.

The content of soluble sugar were observed in stem, leaf and fruit of *Pedalium murex* and maximum content was found in leaf (22.16 mg/gdw) and lowest in stem (19.18 mg/gdw). Same experiment was also done with *Mucuna pruriens* and maximum content was observed in fruit (21.42 mg/gdw) and least quantity was found in stem (17.42 mg/gdw).

Starch: The level of starch content in *P. murex*, maximum was observed in leaf (mg/gdw) and lowest in fruit (5.82 mg/gdw). In *M. pruriens*, maximum starch content was found in leaf (10.42 mg/gdw) and minimum was found in fruit (8.12 mg/gdw)

Proteins: In *P. murex*, protein content maximum in stem (21.84 mg/gdw) and lower in leaf (17.62 mg/gdw) whereas in *M. pruriens* maximum protein content was observed in stem (38.43 mg/gdw) and least in fruit (28.16 mg/gdw) .

Lipids: The level of lipid content in *P. murex* was found to be maximum in stem (27.24 mg/gdw) and minimum in leaf (24.82 mg/gdw). In *M. pruriens*, quantity of lipid was more in leaves (38.11 mg/gdw) as compared to stem (29.16 mg/gdw).

Phenols: Maximum and minimum phenol content was detected in fruit and leaf of P. murex (6.63 mg/gdw, 4.21 mg/gdw) respectively. In *M. pruriens*, high level of phenol content was found in stem (6.29 mg/gdw) and low level of phenol content was found in leaf (5.36 mg/gdw) (**Table 5-6).**

Chlorophyll and Carotenoids: Chlorophyll and Carotenoids estimation was done in fresh leaves of selected plant species and it was found that the chlorophyll a is higher in *P. murex* (0.56 mg/gfw) as compared to *M. pruriens* (0.42 mg/gfw). Similarly, chlorophyll b was found maximum in of *P. murex* (0.43 mg/gfw). Also, total chlorophyll content was found to be higher in the same (1.09 mg/gfw)

Similarly, the levels of carotenoids content found maximum in *P. murex* (0.18 mg/gfw) followed by *M. pruriens* (0.17 mg/gfw).

Ascorbic acid: Ascorbic acid estimation was also done with fresh leaves of the selected plant species and highest level was recorded in *P. murex* (0.46 mg/gfw) followed by *M. pruriens* (0.38 mg/gfw) (**Table 7**).

Discussion: Initial phytochemical analysis of medicinal plant is crucial as they provide detail chemical base for identification of natural products which are responsible for their therapeutic ventures including their yields. Most bioactive compounds are present in polar solvents like alcohol and water. Plant secondary metabolites with prominent efficacies in pharmaceuticals are integral part synthesized initially from primary metabolites which act as precursors to produce them. Various primary metabolites (lipid, protein, starch, sugars, phenol etc.)are produced in plants are required for the normal growth, survival and development of itself. Some previous scanty reports proved the efficacy of various biotic and abiotic factors engaged in their synthesis which can also be quantified precisely**.** Some sugar moieties have been purified from some medicinal plants of china particularly phenols which are bioactive and bears various pharmacological effects like immuno-modulating, anticancer and antimicrobial potential (Tan and Vanitha, 2004).

In the present investigation the content of soluble sugar were observed in stem, leaf and fruit of *Pedalium murex* and maximum content was found in leaf (22.16 mg/gdw) and least found in stem (19.18 mg/gdw). Same experiment was also done with *Mucuna pruriens* and maximum content was observed in fruit (21.42 mg/gdw) and minimum amount was observed in stem (17.42 mg/gdw). The level of starch content in *P. murex*, maximum was observed in leaf (mg/gdw) and minimum was observed in fruit (5.82 mg/gdw). In *M. pruriens*, maximum starch content was found in leaf (10.42 mg/gdw) and minimum was found in fruit (8.12 mg/gdw) . In *P. murex*, protein content was found to be higher in stem (21.84 mg/gdw) and lower in leaf (17.62 mg/gdw) whereas in *M. pruriens* maximum protein content was observed in stem (38.43 mg/gdw) and minimum was

observed in fruit (28.16 mg/gdw) . The level of lipid content in *P. murex* was found to be maximum in stem (27.24 mg/gdw) and minimum in leaf (24.82 mg/gdw). In *M. pruriens*, higher lipid content was observed in leaf (38.11 mg/gdw) and lower lipid content was observed in stem (29.16 mg/gdw). Maximum and minimum phenol content was detected in fruit and leaf of P. murex (6.63 mg/gdw, 4.21 mg/gdw) respectively. In *M. pruriens*, high level of phenol content was found in stem (6.29 mg/gdw) and low level of phenol content was found in leaf (5.36 mg/gdw). Chlorophyll and Carotenoids estimation was done in fresh leaves of selected plant species and it was found that the chlorophyll a is higher in *P. murex* (0.56 mg/gfw) as compared to *M. pruriens* (0.42 mg/gfw). Similarly, chlorophyll b was found maximum in of *P. murex* (0.43 mg/gfw). Also, total chlorophyll content was found to be higher in the same (1.09 mg/gfw)
Similarly, the levels of carotenoids content found maximum in *P. murex* (0.18 mg/gfw) followed by *M. pruriens* (0.17 mg/gfw). Ascorbic acid estimation was also done with fresh leaves of the selected plant species and highest level was recorded in *P. murex* (0.46 mg/gfw) followed by *M. pruriens* (0.38 mg/gfw)

These results revealed fact that primary metabolites are of commercial importance and have broad spectrum scope in plants pharmaceutical industry. Their mode of action and analysis is of prime urge to understand the biochemical composition of plants and they act as initiators substrates for the production of phytochemicals. Bioactive compounds wide array of organic molecules as carbohydrates are initial group of metabolite which is formed during organic molecules in the plants due to biochemical reaction of photosynthesis, also provides energy in form of ATP. Besides this , phytochemicals are engaged as crucial scaffold or they also cause variation in the physico-chemical features in other compounds by reacting with them.

References:-

1. Lai, P., & Roy, J. (2004). Antimicrobial and Chemopreventive Properties of Herbs and Spices. Current Medicinal Chemistry, 11(11), 1451–1460
2. Wynn, S. G., & Fougère, B. J. (2007). Veterinary Herbal Medicine: A Systems-Based Approach. In Veterinary Herbal Medicine (pp. 291–409).
3. Prakash, E., Khan, S. V., Meru, E., & Rao, K. R. (2001). Somatic embryogenesis in *Pimpinella tirupatiensis* Bal. and Subr., an endangered medicinal plant of Tirumala hills. Current Science, 1239–1242.
4. Stahl, W., & Sies, H. (2005). Bioactivity and protective effects of natural carotenoids. Biochimica et Biophysica Acta ({BBA}) - Molecular Basis of Disease, 1740(2), 101–107.
5. Loomis, W. E., & Shull, C. A. (1937). Methods in plant physiology. *Methods in plant physiology.*
6. McCready, R. M., Guggolz, J., Silviera, V., & Owens, H. S. (2022). Determination of Starch and Amylose in Vegetables. Analytical Chemistry, 22(9), 1156–1158.
7. Dubois, M., Gilles, K., Hamilton, J. K., Rebers, P. A., & Smith, F. (1951). A Colorimetric Method for the Determination of Sugars. Nature, 168(4265), 167
8. Osborne, D. J. (1962). Effect of Kinetin on Protein & Nucleic Acid Metabolism in *Xanthium* Leaves during Senescence. Plant Physiology, 37(5), 595–602.
9. Lowry, O., Rosebrough, N., Farr, A. L., & Randall, R. (1951). PROTEIN MEASUREMENT WITH THE FOLIN PHENOL REAGENT. Journal of Biological Chemistry, 193(1), 265–275.
10. Jayaraman, J., & Jayaraman, J. (1981). Laboratory manual in biochemistry. Wiley Eastern Delhi, India
11. Bray, H. G., & Thorpe, W. V. (1954). Analysis of Phenolic Compounds of Interest in Metabolism. In Methods of Biochemical Analysis (pp. 27–52).
12. Arnon, D. I. (1949). Copper enzymes in isolated chloroplasts. Polyphenoloxidase in *Beta vulgaris*. Plant Physiology, 24(1), 1–15.
13. Duxbury, A. C., & Yentach, C. S. (1956). Plankton pigment monograph. J. Marine Res., 15, 190–191
14. Kotte, W. (1922). Kulturversuche mit isolierten Wurzelspitzen. Beitr. Allg. Bot, 2, 413–434.
15. Tan, B., & Vanitha, J. (2004). Immunomodulatory and Antimicrobial Effects of Some Traditional Chinese Medicinal Herbs: A Review. Current Medicinal Chemistry, 11(11), 1423–1430. Timberlake, C. F., & Henry, B. S. (1986). Plant pigments as natural food colours. Endeavour, 10(1), 31–36.

Table 1. Physicochemical Analysis of *Pedalium murex*

	EXTRACTIVES					
	Petroleum ether	**Benzene**	**Chloroform**	**Acetone**	**Alcohol**	**Aqueous**
Total % by weight	0.63	0.38	0.86	0.43	4.873	4.132
Physical appearance and consistency	Light Greenish Yellow sticky	Bright red oily	Greenish Yellow oily	Greenish	Greenish brown viscous	Brown Yellow viscous
Carbohydrates	-	+	++	+	++	+++
Lipid	+	-	-	-	+	++
Proteins	-	-	-	-	+	+++
Phenols	-	+	-	-	+	++
Tannins	-	-	-	-	+	-
Flavonoids	-	+	+	-	+++	+
Alkaloids	-	+	++	-	++	-
Triterpenoids	-	+	+	-	++	-

Total % of extractives = 10.29 ; Total % of ash values = 4.22 ; Relative intensity of the test = +/++/+++

Table 2. Physicochemical Analysis of *Mucuna pruriens*

	EXTRACTIVES					
	Petroleum ether	**Benzene**	**Chloroform**	**Acetone**	**Alcohol**	**Aqueous**
Total % by weight	0.83	0.48	1.286	0.44	6.673	3.322
Physical appearance and consistency	Light Greenish sticky	Brownish Yellow oily	Greenish Yellow oily	Reddish br own viscous	Greenish bro -wn viscous	Brown Yellow viscous
Carbohydrates	-	+	++	++	+++	+++
Lipid	+	-	+	-	+	++
Proteins	-	-	-	-	++	+++
Phenols	-	+	-	-	+	++
Tannins	-	-	-	-	+	-
Flavonoids	-	-	++	-	+++	+
Alkaloids	-	+	++	+	+++	-
Triterpenoids	-	+	+	-	++	-

Total % of extractives = 12.19 ; Total % of ash values = 4.012 ; Relative intensity of the test = +/++/+++

Table 3. Behaviour of Plant powder on treatment with different chemical reagents.

Treatment	**Colour after treatment in daylight**	
Powder treated with	***Pedalium murex***	***Mucuna pruriens***
Conc. H_2SO_4	DR-BN	RD-BN
Acetic Acid	BN-YN	GN-YW
1N HNO_3	YW	OR-YW
5% I_2 solution	YW-GN	GN
5% $FeCl_3$ solution	GN-YW	DT-BN
Few drops of dil. NH_3 + $K_4Fe(CN)_6$ Soln.	OR-RD	BR-RD
10% NaOH followed by a drop of $CuSO_4$	GN	RD-OR
	GN-YW	GY-OR
40% NaOH + few drops of 10% lead acetic soln.	YW	YW-OR
Acetic acid Conc. H_2SO_4	BN	YW
Conc. HNO_3 + excess of NH_3	RD	RD-OR
Acetic acid + trace of $FeCl_3$ and transferred to the surface of Conc. H_2SO_4	YW-OR	OR

Table 4. Fluorescence analysis of sequential extracts of the selected plant species.

Plant	*PM*			*MP*		
Type of extracts	Color in			Color in		
	Day Light	UV		Day Light	UV	
		284 nm	365 nm		284 nm	365 nm
Pet ether	BN-YW	MA-RD	GN-WY	GN-YW	MA-RD	DR-GN
Benzene	BL-RD	MA-RD	OL-GN RD	DT-BN	MA-RD	OL-GN
Chloroform	RD-OR	OR	OR	GN-YW	PL-GN	LF-GN
Acetone	RD-OR	RD	RD	OR	PL-RD	YW-BN
Alcohol	MA-BN	YW-SN	OL-GN	BN-YW	GN-YW	PL-YW
Aqueous	RD-BN	YW-BN	PL-GN	BN-RD	YW-BN	YW-GN

Table 5. Primary Metabolites (mg/gdw) in different plant parts of *Pedalium murex*.

Plant Part	Experiments				
	Soluble sugar	Starch	Protein	Lipid	Phenol
Leaf	22.16 ± 1.24	8.62 ± 0.06	17.62 ± 0.8	24.82 ± 1.5	4.21 ± 0.04
Stem	19.18 ± 1.1	7.68 ± 0.05	21.84 ± 0.7	27.24 ± 1.6	5.63 ± 0.03
Root	18.43 ± 0.8	6.43 ± 0.06	22.67 ± 1.2	32.42 ± 1.5	5.89 ± 0.02
Pod	21.86 ± 0.6	5.82 ± 0.02	21.44 ± 0.7	26.41 ± 1.6	6.63 ± 0.04

Table 6. Primary Metabolites (mg/gdw) in different plant parts of *Mucuna pruriens*

Plant Part	Experiments				
	Soluble sugar	Starch	Protein	Lipid	Phenol
Leaf	18.14 ±1.4	10.42± 0.06	32.66 ± 1.6	38.11 ±1.5	5.36 ± 0.05
Stem	17.42 ±1.1	9.84 ± 0.09	38.43 ± 1.7	29.16 ±1.2	6.29 ± 0.07
Root	26.86 ±1.1	7.44 ± 0.06	36.32 ±1.9	28.2 ±1.3	5.55 ± 0.06
Pod	21.42 ± 0.6	8.12 ± 0.02	28.16 ±1.6	36.33 ±0.6	5.86 ± 0.03

Table 7. Chlorophyll, Carotenoid, and Ascorbic acid (mg/gdw) contents in fresh leaves of *Pedalium murex* and *Mucuna pruriens*.

Plant	Amount				
	Chl a	Chl b	Total Chl	Carotenoids	Ascorbic acid
Pedalium murex	0.56 ± 0.02	0.43 ± 0.01	1.09 ± 0.07	0.18 ± 0.008	0.46 ± 0.02
Mucuna pruriens	0.42 ± 0.01	0.26 ± 0.01	0.89 ± 0.03	0.17 ± 0.006	0.38 ± 0.01

Abbreviations:
Chl a: Chlorophyll a; Chl b: Chlorophyll b;
***=mg/gdw: miligram per gram dry weight**
****=mg/fdw: mili gram per fresh dry weight**

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिपादित यज्ञविज्ञान निरूपण

डॉ. उषा नागर *

शोध सारांश – जिस समय गीता का प्रणयन हुआ, उस समय स्थिति यह थी कि एक सम्प्रदाय कर्मो के पूर्ण परित्याग का उपदेश कर रहा था और दूसरा कर्मानुष्ठानरूप यज्ञों के सम्पादन का पक्षधर था। प्रथम का प्रतिनिधित्व सांख्यवादी कर रहे थे और द्वितीय पक्ष का प्रतिनिधित्व वेदवादी। सांख्यवादी पुरुष को कूटस्थ, निष्क्रिय, निर्गुण, निरवयव आदि मानते हैं, जिसका सम्बन्ध किसी भी कर्म के साथ नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर जो आत्मा है, वह भी उसी पुरुष का प्रतिनिधि है, उसी का रूप है, इसलिये स्वभावत: वह भी कूटस्थ, निष्क्रिय, निर्गुण आदि होने के कारण सभी प्रकार के कर्मो से रहित है। उसके मूलस्वरूप को बनाये रखने के लिये सभी प्रकार के कर्मो से उसे अलग रखना चाहिए। प्रकृतिजन्य कर्म ही पुरुष को बाँधता है और नाना प्रकार के सुख–दु:खों का भोग करता है। सांख्यमतानुसार यज्ञादि कर्म भी मुक्ति में बाधक हैं। इन कर्मो के त्रिविध दु:खों से ऐकान्तिक तथा आत्यान्तिक निवृत्ति नहीं हो सकती, क्योंकि वे यज्ञादि कर्म अविशुद्ध, क्षययुक्त तथा अतिशय युक्त हैं।' **दृष्टवदानुश्रविक: सह्यविशुद्ध क्षयातिशययुक्त:।**

शब्द कुंजी – श्रीमद्भगवद्गीता, यज्ञविज्ञान, वेदों, दृष्टवदानुश्रविक:, सह्यविशुद्ध, क्षयातिशययुक्त:, मुण्डकोपनिषद, अग्निहोत्र, दर्शपूर्ण, मासादि वैध यज्ञरूप, निर्योगक्षेम।

उद्देश्य – श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिपादित यज्ञविज्ञान का स्वरूप के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त करना है।

वेदवादी कर्मो के सम्पादन को आवश्यक मानता है, किन्तु उसका कर्म से अभिप्राय केवल यज्ञों तथा तदन्तर्गत कर्मकाण्ड से ही है। वेद विहित कर्म है 'श्रेयस्' का साधन है, यज्ञवेदिविहित कर्म है, इसलिए यज्ञ ही श्रेयस् का साधन । यही वेदवादियों की मान्यता है उनकी दृष्टि में वेदोक्त 'यज्ञेन यज्ञमयज देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्' इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन करता इसीलिए यज्ञ–व्यतिरिक्त कर्मो का परित्याग तथा वेदविहित यज्ञों का सम्पादन वेदवादियों का मूल सिद्धान्त है। वेदवादियों का प्रतिनिधित्व मीमांसक करते हैं। यह बात उल्लेखनीय है कि वेदवादी सभी वेदों को यज्ञपरक ही मानते हैं। यहाँ तक कि आरण्यक और उपनिषद् भी यज्ञपरक हैं।

सांख्यावादियों की तरह यज्ञकर्म का निषेध करने वाले वेदान्तवादियों का भी एक अलग सम्प्रदाय था। वेदान्तियों के विपरीत ये यज्ञादि कर्मो को प्रारम्भिक कर्म मानते हैं, जिन्हें व्यक्ति आत्मा की अज्ञानावस्था में सम्पादित करता है। जब व्यक्ति को आत्मा के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान हो जाता है, तब इन कर्मो का वह परित्याग कर देता है। वेदान्तियों की दृष्टि में यज्ञादि कर्म मुमुक्षु के लिये बाधक हैं, क्योंकि इनसे मुक्ति नहीं मिल सकती। वेदान्तवादी वेदवादियों की देवता –विषयक धारणा को स्वीकार नहीं करते। वे ब्रह्म को ही सत्य मानते हैं, जिसकी प्राप्ति यज्ञादि कर्मो के सम्पादन से नहीं होती, बल्कि ज्ञान से होती है, मुण्डकोपनिषद् के अनुसार वेदान्तवादियों द्वारा वेदवादियों के मत का खण्डन किया गया है। मुण्डकोपनिषद् के अनुसार दो प्रकार की विद्याएं हैं– एक परा और दूसरी अपरा । अपरा विद्या के अन्तर्गत दस प्रकार के ग्रन्थों का उल्लेख है, जिसमें चार वेद और छ: वेदांग ग्रन्थ हैं । यहाँ ब्राह्मण ग्रन्थों का उल्लेख नहीं है, किन्तु योग प्रतिपादिक होने के कारण तत्तद् वेद से उनके ब्राह्मणों को भी समाविष्ट मानना चाहिए। शिक्षा–कल्पादि वेदांग ग्रन्थ भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से यज्ञ से ही सम्बद्ध हैं। **मुण्डकोपनिषद् परा विद्या के अन्तर्गत केवल उपनिषदों को ही स्वीकार करती है, क्योंकि उनमें ब्रह्म तत्त्व विवेचन किया गया है।**

मुण्डकोनिषद् के अनुसार वेदवादी यज्ञादि कर्मो को सत्य–कामना वाला मानकर आचरण करते हैं। **वे इसी को सुकृत का मार्ग समझते हैं।** जिसका अग्निहोत्र दर्श, पौर्णमास, चातुर्मास्य, आग्रयण तथा अन्तेष्टि के बिना होता है। अथवा जो अग्निहोत्र नहीं करता, अथवा वैश्वदेव कर्म के बिना करता है अथवा विधिपूर्वक नहीं करता, अथवा अश्रद्धा से करता है, **उसके सातों लोकों को अग्निहोत्र नष्ट कर देता है।** अग्नि की सात जिह्वाएँ होती हैं– **काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, सुधूम्रवर्णा, विस्फुलिगिनी तथा विश्वरूचि।** इन्हीं सात जिह्वाओं से अग्नि आहुति ग्रहण करता है।

मुण्डकोपनिषद् की तरह श्रीमद्भगवद्गीता में भी वेदवादियों के लिए जो जन्मकर्म के फलों को देने वाली तथा भोग तथा ऐश्वर्य को प्राप्त करने के लिए अनेक प्रकार की क्रियाओं की प्रशंसात्मिक पुष्णिता वाणी बोलते हैं वेदवादरता: **'नान्यदस्तीतिवादित:, कामात्मन:, स्वर्गपरा:, तथा आवपश्चित:, इन उपाधियों का प्रयोग किया गया है।** इनमें नान्यदस्तीतिवादिन:, कामात्मन:, स्वर्गपरा: तथा अविपश्चित:, उपाधियाँ उन्हीं लोगों के लिये हैं, जो 'वेदवादरता:' है। इसी आधार पर वेदों को **निशा** कहा गया है और इतना ही नहीं बल्कि उसके परित्याग कर देने का आदेश दिया गया है। चूंकि अर्जुन को निस्त्रैगुण्य, निर्द्वन्द्व बना निर्योगक्षेम तथा आत्मवान् होने का आदेश दिया गया है। इसका मतलब हुआ कि वेद में जो विषय प्रतिपादित हैं, वे केवल त्रिगुणात्मक ही नहीं है, द्वन्द्वयुक्त, अनित्यसत्तवस्थरूप, योगक्षेमयुक्त तथा अनात्मवान हैं। पं मोतीलाल जी शास्त्री इस प्रकरण पर विचार व्यक्त करते हुए लिखते हैं–' आज हम ऐसे विषय की मीमांसा करने वाले हैं, जो कि विषय हमारे जीवन का एक मुख्य एवं सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य है। जिस वेदराशि के लिये आर्य महर्षियों के 'वेद द्विजातीनां नि:श्रेयस्कर पर:', 'वेदाद्धर्मो हि निर्बभौय वेद एवाभ्यसेन्नित्यम्' आदि उद्गार हैं, उसी के लिये धर्मरक्षक, पूर्णावतार श्रीकृष्ण आज अर्जुन को

* व्यख्याता (संस्कृत) बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर (राज.) भारत

यह कह रहे हैं कि अर्जुन! वेद तो त्रिगुणात्मक हैं, तुझे त्रिगुणभाव छोड़ देने चाहिये। भगवान् की इस उक्ति से वेदभक्तों के हृदय पर सहसा आघात होता है। सचमुच सामान्य व्यक्तियों के लिये गीताशास्त्र का यह प्रकरण एक जटिल समस्या है। क्या भगवान् वेदों का आदर नहीं करते? क्या श्रीकृष्ण वेदशास्त्र सिद्ध यज्ञ, दान, तपोलक्षण, विद्यासापेक्ष सत्कर्म के पक्षपाती नहीं है। पं शास्त्री लिखते हैं कि 'कदापि नहीं कहा जा सकता। गीता के ही अनेक स्थलों पर ऐसे अनेक उद्धरण मिलते हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि वे वेदशास्त्र के अन्यतम भक्त हैं। वेदशास्त्रसिद्ध यज्ञादि कर्मों के वे महापक्षपाती हैं, यह कर्मकाण्ड के पूर्ण अनुयायी हैं, यह वेदमूलक धर्मशास्त्र के वे परमभक्त हैं। इसीलिये तो अर्जुन को, जो वेदसिद्ध चातुर्वर्ण्य की उपेक्षा कर रहा था, भगवान ने वर्णधर्म का स्वरूप समझाते हुए ही कर्म मार्ग में प्रवृत्ता किया है, बिना वेदशास्त्र को अपनाये चातुर्वर्ण्य, यज्ञ, तप, स्वधर्म आदि का कुछ भी महत्तव नहीं रह जाता है।

श्रीकृष्ण ने अनेक स्थलों पर श्रीमद्भगवदगीता में यज्ञ की महिमा का स्पष्ट रूप से प्रतिपादन किया है। यह सम्पूर्ण संसार कर्मबन्धन है, किन्तु ऐसे भी कर्म हैं, जो बन्धन रूप नहीं है। ऐसे ही कर्मों में यज्ञ भी माना गया यज्ञरूप कर्म को छोड़कर शेष जितने भी कर्म हैं, वे सब बन्धन में डालने वाले हैं। यहाँ यज्ञार्थ कर्म क्या है ? यह विचारणीय है। कई भाष्यकार यहाँ यज्ञ कर्म भाव से अभिप्राय अग्निहोत्र-दर्शपूर्णमासादि वैध यज्ञों से न लेकर जो भी का भाव से किया जाता है, वह यज्ञ है, ऐसा मानते हैं। वस्तुत: त्यागभाव का है फल की भावना का परित्याग कर कर्म को कर्तव्य मानकर करना। ऐसा कर्म बन्धन में डालने वाला नहीं होता, शेष सभी कर्म जो किसी कामनावश फल प्राप्ति के उद्देश्य से किए जाते हैं, बन्धन के कारण होते हैं। चूंकि अग्निहोत्र दशपूर्णमासादि भी यज्ञ है, इसलिए इनका विधिवत् सम्पादन भी कर्मवान के क्षेत्र से बाहर हो सकता है, यदि वह किसी फलप्राप्ति की कामना से नहीं किया जाता। अत: अग्निहोत्र, दर्शपूर्ण, मासादि वैध यज्ञरूप कर्म भी काम्य तथा निष्काम भाव से किये जा सकते हैं। यदि किसी लौकिक कामना की पूर्ति के लिए अथवा स्वर्ग प्राप्ति के लिए यज्ञ किया जाता है, तो वह निश्चित ही त्रिगुणात्मक होगा, अतएव उसका परिणाम भी अवश्य ही सुख दु:खात्मक होगा, किन्तु जब वही यज्ञ कर्म किसी कामना से प्रेरित न होकर कर्तव्य कर्म मानकर किया जाता है, वह तब त्रिगुणात्मक नहीं रह जाता। गीता में जिस यज्ञ की प्रशंसा की गई है, तथा जिसे कर्मबन्धन से अलग माना गया है, वह इसी यज्ञ को लक्ष्य करके कहा गया है। प्राकृतिक यज्ञविज्ञान का ज्ञान कहीं लुप्त न हो जाये, क्योंकि इसके लुप्त हो जाने पर मानव-जीवन में अनेक विसंगतियाँ आ सकती हैं, जो उसके अस्तित्व के लिए खतरा सिद्ध हो सकती हैं। इसलिए इनकी अनुकृति वैध यज्ञों को कर्तव्य मानकर सदा सम्पादित करते रहना मानव के कल्याणार्थ ही है। जिस दिन वह इन्हें भूला देगा, उस दिन मानव मानव न रहकर दानव बन जायेगा। इसलिए प्राकृतिक यज्ञ की अनुकृति रूप वैध यज्ञों को भी निष्काम भाव से सदा सम्पादित करते रहने का गीता का आग्रह है। भगवान् श्रीकृष्ण प्रजा की उत्पत्ति के साथ ही यज्ञ की भी उत्पत्ति प्रजापति से मानते हैं। प्रजापति समस्त सृष्टि का उत्पादक है। प्रजा की सृष्टि के साथ ही उसने यज्ञों को भी उत्पन्न किया। यज्ञों को उत्पन्न करने का प्रयोजन था मानव की समृद्धि। यज्ञ ही प्रजा की समृद्धि का हेतु है। इसीलिए प्रजापति ने कहा है कि यह यज्ञ ही तुम लोगों की समृद्धि का हेतु है और यही कामनाओं की पूर्ति करने वाला है। इस सन्दर्भ में प्रजापति ने कहा है कि देवों और मनुष्यों का परस्परोपकारक सम्बन्ध यज्ञ के द्वारा ही सम्भव है। देवता वे शक्तियाँ हैं, जो सदा मानव को सुख देने वाली हैं। इसलिए उनके प्रति सदा कृतज्ञता का भाव रखना मानव का कर्तव्य है। यही 'यज्ञ' है। अत: कोई भी वैध यज्ञ हो, उसमें देवाराधना, देव-प्रार्थना, देवस्तुति, क्षमायाचना और हविर्द्रव्य-समर्पण रूप कर्म अवश्य होता है। मनुष्य यज्ञ से देवताओं को तृप्त करें, देवता मनुष्य के जीवन उपयोगी वस्तुएं प्रदान कर तृप्त करें, इस प्रकार परस्पर एक-दूसरे को तृप्त करते हुए श्रेयस् को प्राप्त करें, यही यज्ञ के सम्पादन का मूल प्रयोजन है' यह उल्लेखनीय हैं कि गीता यहाँ देवताओं तथा मनुष्यों के परस्पर भावना रूप यज्ञ कर्म को श्रेयस्-प्राप्ति का साधन मानती है। यज्ञ को छोड़कर परस्पर भावना रूप कोई दूसरा कर्म नहीं। कठोपनिषद 'योगक्षेम' के उद्देश्य से किये जाने वाले यन 'प्रेयस' मानती है, श्रेयस् नहीं और स्वयं गीता भी 'योगक्षेम' को त्रिगुणात्मक मानकर **'निर्योगक्षेम'** होने का आग्रह करती है। फिर यहाँ देव-मन, भावना रूप यज्ञ को श्रेयस् माना गया है, ऐसा विरोध क्यों? वस्तुत: जहाँ के उद्देश्य से यज्ञ की बात कही गई है और अर्जुन को **'निर्योगक्षेम'** होने का आदेश दिया गया है, वहाँ यज्ञ देव-मनुष्य का भावना रूप नहीं है। एकांगी है। उसके सम्पादन का उद्देश्य केवल कामनाओं की पूर्ति है। व्यक्ति अपनी कामनाओं की पूर्ति के लिये स्वार्थवश देवताओं की आराधना करना है और दूसरा देवताओं को श्रेष्ठ समझकर और अपना कर्तव्य मानकर श्रद्धापूर्वक देवताओं की आराधना करता है और वे योगक्षेम के लिए आवश्यक वस्तुएं प्रदान करते हैं। इस प्रकार स्वार्थवश देवताओं का आराधनरूप यज्ञ तथा देवताओं के प्रति आदरभाव से अपना कर्तव्य समझकर नित्य यज्ञादि द्वारा उनका आराधनरूप यज्ञ दोनों भिन्न सिद्ध होते हैं। प्रथम में योगक्षेम की कामना है, दूसरे में देवताओं की प्रसन्नता से योगक्षेम की प्राप्ति है। प्रथम प्रेयस् तथा दूसरा श्रेयस है। स्पष्ट है कि गीता में जिस यज्ञ को श्रेयस् कहा गया है, वह स्वयं योगक्षेम प्रदान करने वाला देव-मनुष्य परस्पर भावना रूप यज्ञ हैं, जो काम्य कर्म के अन्तर्गत नहीं आता। इसी यज्ञ के सम्पादन के लिये मनुष्यों के प्रति प्रजापति का आदेश है, इसी के प्रति श्रीकृष्ण का अर्जुन को उपदेश है, इसी यज्ञ के अवशिष्ट को खाने से सम्पूर्ण पापों से मुक्त होने का उल्लेख है। जो कुछ प्राप्त है, वह देवताओं से प्राप्त है, इसलिए उस प्राप्त में से देवताओं को प्रथम समर्पण कर अवशिष्ट का भोग यज्ञावशिष्ट - अशन है। यही श्रीकृष्ण द्वारा प्रतिपादित यज्ञ का स्वरूप है।

नित्य प्राकृतिक यज्ञ की अनुकृति पर सम्पादित होने वाला देव-मनुष्य परस्पर भावनारूप वैध यज्ञ भी किस प्रकार नित्य ब्रह्म की प्रतिष्ठा है, इसका। स्पष्ट उल्लेख गीता में किया है। इस जगत में अन्न ही प्राणियों का आधार सभी अन्न से उत्पन्न होते हैं, अन्न खाने से ही शरीर में रक्त बनता है, उसी से वीर्य बनता है और उसी से सन्तानोत्पत्ति होती है। अन्न स्वयं पर्जन्य से। होता है। यदि वृष्टि न हो, तो अन्नादि औषधियां उत्पन्न ही नहीं होंगी। उत्पन्न करने वाला पर्जन्य स्वयं उत्पन्न न होकर यज्ञ से उत्पन्न होता पुन: कर्म से उत्पन्न होता है, ब्रह्म अक्षर से उत्पन्न होता है, इस प्रकार ब्रह्म नित्य यज्ञ में प्रतिष्ठित हैं। यही चक्र सृष्टि को गतिमान किए। इसलिए विश्व-व्यवस्था को संचालित करने में प्रवृत्ता इस चक्र का जो अनुसरण नहीं करता, वह पापात्मा, स्वेच्छाचारी व्यर्थ में जीता है।

गीता का उद्देश्य वेदवादियों तथा वेदान्तवादियों की परस्पर विरोधी अतिदृष्टियों का समन्वय करना है और सिद्धान्तरूप में यह प्रतिपादित करना है। कि असक्त होकर नित्य यज्ञादि कर्मों का आचरण करता हुआ पुरुष परमपद को प्राप्त कर सकता है। असक्त होकर कार्य करके सिद्धि प्राप्त करने वालों में जनक का नाम उद्धृत किया गया है। आत्मज्ञानी को भी असक्त होकर कार्य करने की क्या आवश्यकता है? इस संदर्भ में गीता लोकसंग्रह की भावना

को महत्तव देती है। समाज में राजा या प्रतिष्ठित व्यक्ति जैसा आचरण करते हैं, अन्य जन भी वैसा ही आचरण करते हैं– **'यथा हि कुरुते राजा प्रजास्तमनुसरते।' अत: आत्मज्ञानी ही यज्ञादि कर्मों का आचरण नहीं करेंगे,** तो जनसामान्य भी उन्हीं का अनुसरण करेंगे। इस प्रकार के चिन्तन से सम्पूर्ण यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों का लोप हो सकता है: वेदशास्त्रों का अध्'न अवरुद्ध हो सकता है तथा इससे समाज में अराजकता फैल सकती है। इसीलिए श्रीकृष्ण कहते हैं कि आत्मज्ञानी को भले ही व्यक्तिगत रूप से यज्ञादि कर्मों के करने या न करने से कोई लाभ–हानि न हो, किन्तु उसे न करने से समाज को नुकसान, लोगों का भ्रष्ट होना अवश्यम्भावी है। अत: लोक संग्रह के लिए इन कर्मों का सम्पादन करना आवश्यक है। भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि मैं स्वयं ब्रह्म हूँ, ये तीनों लोकों में मेरे लिए कुछ भी प्राप्तव्य या अप्राप्तव्य कर्म नहीं है, किन्तु मैं स्वयं भी लोक संग्रह के लिए कर्म में प्रवृत्ता हूँ यदि मैं सावधान होकर कभी कर्म का आचरण न करूँ, तो मनुष्य भी मेरे मार्ग का अनुसरण करके कर्मों का परित्याग कर देंगे और तब इस कर्म–विनाश का कर्ता मैं ही कहलाऊँगा। इसलिए जिस प्रकार कर्म में आसक्त होकर अविद्वान् कार्य करते हैं, उसी प्रकार विद्वान् को भी लोकसंग्रह की भावना से यज्ञादि कर्म करते रहना चाहिए।

गीता के चतुर्थ अध्याय में यज्ञ का अध्यात्मिक और मनोवैज्ञानिक स्वरूप प्रस्तुत किया गया है। 'जो व्यक्ति असक्त होकर कर्मों का सम्पादन करता है, उस ज्ञानावस्थित चित्ता वाले व्यक्ति के सम्पूर्ण कर्म ब्रह्म में लीन हो जाते हैं। इन कर्मों का फल उसे प्राप्त नहीं होता, क्योंकि उसके लिये सम्पूर्ण यज्ञकर्म ब्रह्ममय है। ब्रह्म ही अपर्ण है, ब्रह्म ही हवि है, ब्रह्म ही अग्नि है, बह्म ही स्वरुप है, ब्रह्म ही उसका गन्तव्य है।' यज्ञ का एक दूसरा रूप है, जिसका सम्पादन योगी लोग करते हैं। यह यज्ञ देवोपासना रूप में है। इस यज्ञ का सम्पादन योगीजन शास्त्रविधि के अनुसार करते हैं और असक्त होकर बिना किसी फल की कामना से करते हैं। यज्ञ का एक दूसरा रूप है, जिसमें योगी ब्रह्मरूप अग्नि में अपने सम्पूर्ण कर्मों को समर्पित करता है, यज्ञ का एक अन्य रूप है, **जिसमें योगी संयमरूपी अग्नि में श्रौतादि इन्द्रियों का होम करते हैं।** योगियों का एक यज्ञ यह भी है, जो इन्द्रिय रूपी अग्नि में इन्द्रियों के शब्दादि विषयों का होम कर योगियों द्वारा सम्पादित किये जाने वाले यज्ञों का उल्लेख श्रीकृष्ण चार प्रकार के यज्ञों 'द्रव्ययज्ञ, तपोयज्ञ, योगयज्ञ, स्वाध्याय ज्ञानयज्ञ' आदि को बतलाते हैं। इसके अतिरिक्त प्राणायाम को बतलाया गया है। प्राण की आहुति अपान में तथा अपान की आहुति प्राण में। प्राण–अपान दोनों की गति को रोककर, जो प्राणायाम किया जाता है एक यज्ञ है। प्राणों में प्राणों की आहुति भी यज्ञ का एक रूप बताया गया गीता के चतुर्थ अध्याय में जिन यज्ञों का उल्लेख किया गया है, वे वैदिक श्रौतयागों से भिन्न हैं। इन यज्ञों को आध्यात्मिक या मानसिक यज्ञ कहा जाता है। गीता की रचना के समय इन यज्ञों का प्रचलन था।

यज्ञ शब्द का अर्थ केवल अग्निहोत्र, दर्शनपूर्णमास आदि ही नहीं, जिस अर्थ में मीमांसक स्वीकार करते हैं। यहाँ दान, तप, स्वाध्याय, ज्ञान, प्राणायाम, आत्मसंयम, इन्द्रिय–निग्रह आदि सभी यज्ञ के नाम से व्यवहृत हुए हैं। इसलिए यज्ञ के लिए प्रयुक्त प्रतीकों के आधार पर ऐसा मानने में कोई विप्रतिपत्ति नहीं कि गीता में यज्ञों का आध्यात्मिक, आधिदैविक तथा आधिभौतिक अर्थ मिलते हैं। अरविन्द का कथन है कि 'वैदिक रहस्यवादियों का रहस्यात्मक प्रतीकवाद जो बिल्कुल सही, काव्यमय, आश्चर्यजनक तथा मनोवैज्ञानिक है, जो गीता के समय विस्मृत हो चुका था। इसलिए गीता में उनके स्थान पर नये, विस्तृत तथा वेदान्त तथा योगदर्शन की दार्शनिक प्रकृति के अनुसार प्रतीकों का प्रयोग किया गया। यज्ञों की अग्नि भौतिक अग्नि की लपटें नहीं, किन्तु ब्रह्माग्नि हैय यह ब्रह्मान्मुस शक्ति है, जिसे वेदों में पुरोहित कहा गया है। यह अग्नि आत्मसयम ज्ञानक्रियारूप है, प्राण द्यअपानरूप है। इस ज्ञानाग्नियज्ञ में जो अवशिष्ट है, वह अमृत है। इस यज्ञशिष्ट–अमृत को ग्रहण करने वाले सनातन ब्रह्म को प्राप्त करते हैं। जो इस यज्ञ को नहीं करता, उसके लिए यह लोक भी नहीं, अन्य लोक कैसे प्राप्त कर सकता है? यह बात उल्लेखनीय है कि तृतीय अध्याय में जहां 'देव–मनुष्य परस्पर भावना रूप यज्ञ' का उल्लेख है, वहा **यज्ञाषिष्टासिन: सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषै:** कहा गया है। इस पृथक् फल–कथन से ऐसा प्रतीत होता है कि तृतीय अध्याय में जिस यज्ञ का विवेचन किया गया है, वह वैदिक यज्ञ है, जिसके अन्तर्गत प्राकृतिक और वैध दोनों का समावेष है तथा चतुर्थ अध्याय के यज्ञ का सम्बन्ध वेदान्तियों तथा योगवादियों के यज्ञ से है। यज्ञ विषयक ये धारणाएं वेदोत्तारकाल की हैं। तथा वे गीताकालीन वेदान्तवादियों तथा योगवादियों के यज्ञविषयक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. दृष्टवदानुश्रविक: स हाविशुद्ध: क्षयातिशययुक्त। सांख्यकारिका:–2
2. तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेद: सामवेदोऽर्थवेद: शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरूक्तं छन्दो ज्योतिषामिति। अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते। मुण्डकोपनिषद्
3. तदेतत् सत्यं मन्त्रषु कर्माणि कवयो यान्यपश्यंस्तानि त्रेतायां बहुधा सन्ततानि। तान्यचरथ नियतं सत्यकामा एष एव पन्था सुकृतस्य लोके ।। मुण्डकोपनिषद्
4. यस्याग्निहोत्रमदर्शमपौर्णमासमचातुर्मास्यमनाग्रण्यणमतिथिवर्जित च अहुतमेवैश्वदेवमविधिना हुतमश्रद्धया हुतमासप्तमांस्तस्य लोकान् हिनस्ति।
5. काली कराली च मनोजवा च सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा। विसफुलिडि,गनी विश्वरूचि यथाकालं चाहुतयो याददायन्।।
6. यामिमा पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चित:। वेदवादरता: पार्थ नान्यदस्तीतिवादिन: ।। कामात्मन: स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम्। क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगति प्रति।
7. त्रैगुण्यविषयां वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन। निर्द्वन्द्वो नित्यसत्वस्थों निर्योगक्षेम आत्मवान्।। गीता–
8. पं. मोतीलाल शास्त्री, राजर्षिविद्या, द्वितीयोपनिषत् राजस्थान पत्रिका, जयपुर
9. यथार्थत्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धन:। तदर्थ कर्म कौन्तेय मुक्तसड्.ग: समाचर।। श्रीमद्भगवद्गीता–
10. सहयज्ञा: प्रजा सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापति:। अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्।। श्रीमद्भगवद्गीता–
11. देवान् भायतानेन ते देवा भावयन्तु व:। परस्परं भावयन्त: श्रेय: परमवाप्स्यथ।
12. त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन। निर्द्वन्द्वो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्।
13. (क) मोघमन्नं विन्दते अप्रचेता: सत्यं ब्रवीमि वध इत्स तस्य। नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी ।।ऋग्वेद– (ख) यज्ञशिष्टाशिन: सन्तों मुञ्चन्ते सर्वकिल्विषै:। भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्।। श्रीमद्भगवद्गीता–
15. अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भव:।

यज्ञाद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ।।
ब्रह्मकर्मोद्भव विद्धिं ब्रह्माक्षरसमुद्भवः ।
तत्स्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यतें प्रतिष्ठितम् द्यद्य श्रीमद्भगवद्गीता–

16. एव प्रवर्तित चक्रं नानुवर्तयतीह यः ।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति ।। श्रीमद्भगवद्गीता–

17. तस्मादसक्तः सततं कार्य कर्म समाचर, असक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पुरूषः। कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः, लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन्कर्तुमर्हसि ।। श्रीमद्भगवद्गीता–

18. वाल्मीकि– रामायाण

19. यद्यदाचरित श्रेष्ठस्तत्तादेवेतरो जनः ।
याचरन् कर्म परमाप्नोति कादयः, लोकसंग्रहमेवापि

20. ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हेतम् ।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ।। श्रीमद्भगवद्गीता–

21. दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते।
ब्रह्माग्नावापरे यज्ञं यज्ञेनोपजुह्वति।। श्रीमद्भगवद्गीता–

22. श्रीमद्भगवद्गीता

****

आधुनिकता और सामाजिक विचलन

डॉ. जयराम बैरवा*

शोध सारांश – परिवर्तन मानव जीवन का सत्य है। हम इसे अपने प्रतिदिन के जीवन में भले ही महसूस न करें, पर यह हमारे जीवन को विभिन्न तरीकों से प्रभावित करता रहता है। हम कह सकते हैं कि समाज एक परिवर्तनशील व्यवस्था है। मानव इतिहास में आज तक ऐसे समाज का परिचय नहीं मिलता जो एक निश्चित सामाजिक ढाँचे को स्थिर रख सका है। भौतिक पदार्थों अन्य प्राकृतिक रचनाओं में भी निरन्तर परिवर्तन होता रहता है, इसलिए समाज और उसकी संस्कृति में हमेशा परिवर्तन की चर्चा का एक महत्त्वपूर्ण विषय बनाऐं रखा है। परिवर्तन प्रकृति का अटल एवं शाश्वत नियम है। यद्यपि मानव समाज भी इसी प्रकृति का अंग है। इसलिए मानव समाज परिवर्तन के बहाव से बच नहीं सकता। परिवर्तन विश्व का शाश्वत व सार्वभौमिक नियम है, जो चिरकाल से चलायमान है। पुरातन परम्पराओं में नवीन विचारों व प्रक्रियायों का समागम, आधुनिकता को दर्शा रहा है, इससे पुरानी मनोवृतियां खण्डित हो रही हैं तथा नवीन सिद्धांतों व मूल्यों का निर्माण हो रहा है। आधुनिकता को अपनाने व स्वयं को आधुनिक कहलाए जाने के कारण व्यक्ति स्वंय के मार्ग से भटक कर विचलन की और अग्रसर हो रहा है। प्रस्तुत लेख आधुनिकता की स्वीकार्यता के बाद होने वाले विचलनों की समीक्षा है।
शब्द कुंजी – आधुनिकता, भौतिकवादिता, परिवर्तन, विचलन, सार्वभौमिक।

उद्देश्य :

1. आधुनिकता क्या है? और इसके कौन-कौन से क्रम है, के बारे में चर्चा करना।
2. आधुनिकता ने किस प्रकार से विचलित व्यवहार को जन्म दिया।

प्रस्तावना– आधुनिक युग में मानव विकास व समाज में परिवर्तन की प्रक्रिया तीव्र गति से चल रही है। परिवर्तन की इस प्रक्रिया में प्राचीन व नवीन के बीच सघंर्ष भी स्वाभाविक रुप से होता है। परिणामस्वरुप पुरानी परंपरा, मूल्यों, आंकाक्षाओं व आदर्श नियमों में परिवर्तन होकर नए स्वरुप का निर्माण होता है।

आधुनिकता अतीत से स्व-प्रेरित पृथकता व नवीन भावों के अन्वेषण की प्रक्रिया है। प्राचीन समाज अंधविश्वासी, रुढीवादी परंपराबद्ध व्यक्तियों व दूसरी और प्रगतिवादी विचारधारा वाले व्यक्तियों से बना था। विभिन्न युगों में रुढ़िवादी व आधुनिक दोनों प्रवृतियों के विकास का कारण यह है कि मनुष्य अलग-अलग सामाजिक दायरों में सोचता व कार्य करता है।

आधुनिकता से तात्पर्य आधुनिकीकरण से भी है जिसके द्वारा मानव जाति में भौतिक, सामाजिक व सांस्कृतिक वातावरण को नियंत्रित करने की क्षमता में निरंतर वृद्धि होती रहती हैं। 'आधुनिक' शब्द बारंबार एक युग की मानसिकता का परिचय देता है, जो स्वयं को प्राचीन अतीत की तुलना में खड़ा पाता हैं।। यह पुराने से नए की ओर संक्रमण का द्योतक है (हेबरमास, 1985)।

आधुनिकता, प्रगतिशीलता की ओर निर्देशित करती है जो कि मानव जाति का अज्ञानता व तर्कहीनता से मुक्त कराने का वादा करती है (रोजनाऊ,1992)। आधुनिकता, प्रबोध युग के फलस्वरुप सामाजिक स्थिति, प्रक्रियाओं और उपदेशों को संदर्भित करती है।

आधुनिकता का क्रम – परम्पराओं ने धीरे-धीरे विकास किया। आज जिसे हम रुढ़ि कहते हैं, वह प्राचीन काल में आधुनिकता का सूचक रही होगी। विकसित देश की किसी पिछड़ी जाति के व्यक्ति को यदि अफ्रीका की पिछड़े क्षेत्रों के कबीलों में भेज दिया जाए, तो वह, वहां सबसे आधुनिक व्यक्ति माना जाएगा। इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि आधुनिकता विधियों पर नहीं बल्कि दृष्टिकोणों पर आधरित होती है। सर्वप्रथम, नगरीकरण से आधुनिक युग का प्रारंभ हुआ उसके बाद औधौगिक क्रांति से इसमें व्यापक प्रगति हुई। इससे न केवल विद्यमान रुढ़िवादिता की समाप्ति हुई बल्कि सामाजिक स्तर पर भी रहन-सहन, खान-पान के ढंग में भारी परिवर्तन आया। विद्रोह व मुक्ति का यह रुप पहले से कहीं और अधिक उग्र होता गया।

समाज में व्यक्ति से यह आशा की जाती है कि वह समूह की परिस्थितियों, अपनी प्रस्थिति व कानून के अनुसार व्यवहार करें। समाज द्वारा स्वीकृत मापदण्ड ही मूल्य कहलाते हैं। सामाजिक मूल्य, सामाजिक मान हैं जो सामाजिक जीवन में अंतर्सबंधों को परिभाषित करने में सहायक होते हैं। मूल्यों की विचारधारा से सभी वस्तुओं का आकलन किया जा सकता है। चाहे भावनाएं हों या विचार, गुण, वस्तु, क्रिया, व्यक्ति, समूह, लक्ष्य या साधन । मुखर्जी (1950) के अनुसार 'मूल्य समाज द्वारा प्राप्त इच्छाएं व लक्ष्य हैं जिनका आंतरीकरण सीखने या समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से होता है, जो व्यक्तिनिष्ठ अधिगम मान तथा अभिलाषाएं बन जाती हैं।' समाज मूल्यों का एक संगठन व संकलन है। सामाजिक मूल्य सामाजिक क्रिया में सामूहिक अनुभव होते हैं, जिनका निर्माण वैयक्तिक व सामाजिक दोनों प्रकार के प्रत्युत्तारों व मनोवृत्तियों द्वारा होता है। ये मूल्य समाज का निर्माण व सामाजिक संबंधों को संगठित करते हैं।

एक सरल समाज में व्यक्ति अपनी भूमिका निर्वाह एक नैतिक कर्तव्य के रुप में करता है, लेकिन जैसे-जैसे समाज जटिल होता जाता है, व्यक्ति के निजी स्वार्थ उसे ऐसे कार्य करने की प्रेरणा देने लगते हैं, जो या तो समाज द्वारा मान्य नहीं होते अथवा जिनके लिए अपनाए गए साधनों की समाज अनुमति नहीं देता। इसका तात्पर्य यह है कि किसी व्यक्ति या समूह द्वारा समाज के नियमों, कानूनों व सामाजिक प्रतिमानों का जानबूझकर उल्लंघन करके अपने हितों को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है। इसे विचलन या वह दशा कहते हैं जो अनुरुपता के विपरीत होती है। 'व्यक्तिगत विचलन' से तात्पर्य किसी व्यक्ति विशेष द्वारा अपनी उप-संस्कृति के

* व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय महाविद्यालय, राजगढ (अलवर) (राज.) भारत

प्रतिमानों से विचलित होना है। मादक द्रव्यों का सेवन व यौनिक प्रतिमानों का उल्लंघन करना इसके उदाहरण हैं। प्राथमिक विचलन वह है जो इच्छित या नियोजित नहीं होता बल्कि कुछ विशेष परिस्थितियों या व्यक्तिगत लापरवाही का परिणाम होता है। जैसे देरी के कारण रेल का टिकट लेने की असमर्थता होने पर बिना टिकट यात्रा करना (लेमार्ट, 1951)।

विचलित व्यवहार के प्रतिमान – मर्टन (1938) ने विचलित व्यवहारों को प्रतिमानता के सिद्धांत के आधार पर स्पष्ट किया। उनके अनुसार सांस्कृतिक रूप से निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए जब समाज की संरचना व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है तो समाज में व्यवहार संबंधी नए मूल्य विकसित होने लगते हैं, इससे उत्पन्न होने वाले तनाव ही विचलित व्यवहारों को प्रोत्साहन देते हैं। क्विने (1967) के अनुसार 'जो समूह अधिक शक्तिशाली होता है वह अपने से कमजोर व अधीन रहने वाले व्यक्तियों या समूह के व्यवहारों को विचलित दिशा की ओर ले जाने लगता है।'

वास्तविकता यह है कि नगरों में सामाजिक विचलन को केवल कुछ सिद्धांतों के संदर्भ में ही नहीं समझा जा सकता। दूसरी सामाजिक घटनाओं की तरह विचलित व्यवहार भी कुछ प्रमुख सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक दशाओं का परिणाम होता है। उदाहरण के लिए यदि आंरभिक जीवन से ही व्यक्ति का समुचित समाजीकरण नहीं होता है अथवा उसकी शिक्षा दोषपूर्ण होती है तो वह समाज के नियमों का उल्लंघन करके अपने उद्धेश्यों को पूरा करने का प्रयत्न करने लगता है।

आधुनिकता से विचलन के इस रूप का संबंध वर्तमान युग में विकसित होने वाले चरित्र के उस संकट से है जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के भौतिक लाभ प्राप्त करने के लिए अधिकांश राजनितिज्ञ, उद्योगपति, व्यवसायी व अधिकारी अपने पद का दुरुपयोग करके एक–दूसरे से आगे निकल जाने की होड़ में लगे हुए हैं।

विचलन प्रत्येक रुप से नैतिकता के उल्लंघन से ही संबंधित होता है, लेकिन नगरीय क्षेत्रों में नैतिक मूल्यों मे होने वाले विचलन की समस्या उस अधकचरी आधुनिकता से जुड़ी हुई है जो हमारे जीवन को विषाक्त कर रही है। सोरोकिन (1959) ने इस दशा को आधुनिक संस्कृति की 'भोगवादी भक्तिहीनता' कहा है, जिसमे व्यक्ति नैतिक मूल्यों को भूलकर संसारिक सुखों के पीछे पागल है। इसे हम पूरी दुनिया में उभर रहा एक व्यापक संस्कृति संकट कह सकते हैं।

नगरों में आज यह मनोवृत्ति बहुत तेजी से विकसित हो रही है कि धन अर्जित करना आवश्यक है, चाहे इसे किसी भी तरह से प्राप्त किया जाए। धन के द्वारा ही सभी तरह के सांसारिक सुख प्राप्त किए जा सकते हैं अथवा यह कि धन का संचय ही व्यक्ति की प्रतिष्ठा का आधार है। ऐसी मनोवृति उन मूल्यों को प्रभावपूर्ण बनाने लगती है जो पूरी तरह अतार्किक व अव्यक्तिवादी होते हैं। नगरों में जब एक बार श्वेतवसन अपराधों की प्रक्रिया आरंभ हो जाती है तब ऊपर से नीचे तक प्रत्येक व्यक्ति को अवसर मिलते ही अधिक से अधिक साधन संचित करने में लग जाता है। धन का संचय ही एक ऐसी प्रवृति हैं जिसकी कोई सीमा नहीं होती। यही कारण है कि वर्तमान दशाओं में श्वेतवसन अपराध सार्वजनिक सम्पत्ति की लूट का सबसे मुख्य कारण बन गए हैं। आए दिन सामाचारपत्रों में इस तरह के समाचार छपते रहते हैं कि व्यवसायी के पास कई हजार करोड़ की अवैध सम्पत्ति पाई गई, बैंकों को लूट ले गये, ए.टी.एम. उखाड़ ले गये आदि।

भौतिकतावादी संस्कृति – नगरों की वर्तमान भौतिकवादी संस्कृति में अधिकांश व्यक्ति भौतिक सुख–सुविधाओं से संबधित विभिन्न वस्तुओं जैसे एयर कंडिशनर, फ्रिज, टेलीविजन के नए मॉडल, मोबाइल, माइक्रोवेव व सौंदर्य प्रसाधनों का उपयोग करना सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए आवश्यक समझने लगा है। यद्यपि इनके लिए उनके पास पर्याप्त आर्थिक साधन नहीं होते। इस दशा में व्यक्ति बैंको या दूसरे वित्तीय संगठनों से ऋण लेकर इन आवश्यकताओं को पूरा करने लगता है। एक बार परिवार जब ऐसे ऋण के आर्थिक बोझ से दब जाता है तो किसी विशेष विचलित व्यवहार व भ्रष्ट तरीकों से उन पर अतिरिक्त आर्थिक साधनों को प्राप्त करने का दबाव बढ़ने लगता है।

कुछ समय पूर्व तक अधिकांश अपराध चोरी, डकैती व लूटपाट तक ही सीमित थे। जैसे–जैसे भौतिकवादी संस्कृति में वृद्धि होने लगी है, वैसे–वैसे अपराध के रुप में विचलित व्यवहारों में वृद्धि व नया रुप लेना प्रारंभ कर दिया है। नगरों में जमीनों पर अवैध कब्जे, जाली नोटों की छपाई, तस्करी, नकली व मिलावटी वस्तुओं के उत्पादन, आयकर में चोरी व महिलाओं के विरुद्ध होने वाले अपराध तेजी से बढ़ते जा रहे हैं। नई प्रोद्योगिकी व कम्प्यूटर का प्रचलन बढ़ने से साइबर अपराध, अपराधों के एक नए रूप में विकसित हुआ है। नगरीय मूल्यों में इतना अधिक विखराव पैदा हुआ है कि चिकित्सकों द्वारा मानव अंगों की तस्करी भी गम्भीर समस्या बनती जा रही है। युवकों के द्वारा मोबाइल के माध्यम से फेक आई डी बनाकर हनी ट्रेप के मामले में फंसा कर धन अर्जन कर रहें हैं। जब समाज का स्वरूप ही परिवर्तित होता जा रहा है तो एक व्यक्ति का सही समाजीकरण कैसे सम्भव है, उपयुक्त समाजीकरण न होने की दशा में अपराध और बाल अपराधों में वृद्धि होती है। भारत में भी यही स्थिति उत्पन्न हो रही है।

भारत में 7 से 16 वर्ष तक की आय तक के युवकों व 7 से 18 तक की आयु की युवतियों द्वारा किए जान वाले कानून विरोधी कार्यो को बाल अपराध माना जाता है। नगरों में माता–पिता दोनों के द्वारा करा करने व बच्चों के समाजीकरण पर अधिक ध्यान न देने के कारण बच्चों पर परिवार का अधिक नियंत्रण नहीं रह पाता। बुरी संगति से, सम्पन्न परिवारों में भी बच्चों के जीवन में अनुशासनहीनता की बढ़ रहा है। कुछ समय पहले तक बाल अपराध का संबंध सामान्य अपराधों जैसे जेब काटना, चोरी तस्करी करना व जुआ खेलना तक ही सीमित था। आज नगरीय पर्यावरण में नैतिक मूल्य कमजोर हो जाने के कारण बहुत से किशोर यौन अपराधों में लिप्त होते जा रहे हैं। सार्वजनिक स्थानों अश्लीलता का सबसे अधिक प्रदर्शन किशोरों द्वारा किया जाता है। इस तरह के अपराधों में मध्यम वर्ग के किशोरों की बढ़ती हुई संख्या चिंता का विषय है। मुख्य बात यह है कि बाल अपराध केवल लड़को तक ही सीमित नहीं हैं। सामाजिक व नैतिक मर्यादाएं कमजोर होने के कारण अब अवयस्क युवतीयों किए जाने वाले अपराधों में भी तेजी से वृद्धि होने लगी है। वर्तमान सामाजिक पर्यावरण में युवतियों के यौनिक विचलन को एक सामान्य व्यवहार के रुप में देखा जाने लगा है।

पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव – भारत की संस्कृति को एक लम्बे समय तक आध्यात्मिक संस्कृति के रूप में देखा जाता रहा है। संस्कृति के भौतिक सुखों व मूल्यों तथा वैयक्तिक स्वन्त्रता के बिगड़े हुए रुप से प्रोत्साहित होकर भारत की युवा पीढ़ी में एक ऐसा विचलन पैदा हुआ है, जिसकी कुछ समय पहले तक कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। संचार के वर्तमान युग में जब विभिन्न टेलीविजन चौनलों को जनसाधारण लिए किसी भी तरह के कार्यक्रम और धारावाहिक के प्रसारण की स्वंतत्रता मिल गई, तब से काल्पनिक जीवनशैली की चाहत समाज के मध्यम वर्ग का आदर्श बनने लगी। विभिन्न धारावाहिकों से युवा वर्ग यह प्रेरणा लेने लगा कि वैयक्तिक स्वन्त्रता का तात्पर्य अधिक से अधिक भौतिक सुख प्राप्त करना है। विज्ञापनों की दुनिया ने इस धारणा को बल देना प्रारम्भ कर दिया कि फैशनेबल वेशभूषा, सौन्दर्य प्रसाधनों के उपयोग और स्वयं को प्रदर्शित करके ही वे दूसरों को अपनी

और आकर्षित कर सकते हैं।

युवा पीढ़ी स्वभाव से ही स्वतन्त्र व सरल होती है, लेकिन जब उसे अपनी इच्छाओं के अनरूप भौतिक, कामकाजी तथा कानूनी वातावरण भी मिल जाता है तब व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के प्रति उसकी दृष्टि में तेजी से परिवर्तन होने लगता है। वैयक्तिक स्वतन्त्रता के नाम पर आज हमारे समाज में विवाह के पश्चात् स्थापित यौन संबधो को नैतिक मूल्यों के विचलन के रूप में नहीं देखा जाता। आज एक ओर हमारी जीवनशैली को बदलने वाले तरह-तरह के उत्पाद बाजार में बहुतायत से उपलब्ध हैं तो दूसरी ओर 'डेटिंग' तथा 'विषम लिंग' के व्यक्तियों के घनिष्ठ संबंधों को किसी खतरे के रुप में न देखकर आधुनिकता के एक लक्षण के रुप में देखा जाने लगा है। इसका सबसे विघटनकारी रुप किसी पुरुष का किसी महिला के साथ बिना विवाह किए लम्बे समय तक पति-पत्नी की तरह जीवन व्यतीत करना है, जिसे 'लिव-इन-रिलेशनशिप' कहा जाता है।

व्यक्तिगत स्वतन्त्रता आज धर्म और परिवार की मान्यताओं को दरकिनार करते हुए किसी भी ऐसे संबंध को आपत्तिजनक नहीं समझती जिससे व्यक्ति को अस्थायी सुख मिल सकता है। विषम स्थिति तब पैदा होती है, जब विवाह से पहले प्रेम के दौरान किया जाने वाला पूर्ण समपूर्ण विवाह के बाद पैदा होने वाली नई-नई मांगों के आगे कमजोर पड़ने लगता है। इसी दशा में त्याग और शालीनता की जगह पति-पत्नी के जीवन में आरोप-प्रत्यारोप का सिलसिला आरंभ हो जाता है जिसकी अंतिम परिणाम विवाह-विच्छेद के रुप में हमारे सामने आता है। मारवेल (2003) ने नैतिक मूल्यों में होने वाले पतन को आज विवाह-विच्छेद का सबसे बड़ा कारण माना है। हमारे देश के महानगरों जैसे-दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई, हैदराबाद, तथा बेंगलूरु में तलाक का प्रतिशत 30 से 40 तक पहुंच जाना इस दशा का सबसे बड़ा प्रमाण है। पश्चिमी आधुनिकता से प्रभावित युवकों और युवतियों का क्लब तथा जिम में जाना आम बात है। नैतिक मूल्यों में विचलन का एक अन्य रुप समलिंगी स्त्रियों और पुरुषों के द्धारा विवाह की मांग करना हैं। यदि पश्चिमी के अनेक देशों की तरह भारत में भी ऐसी मांग को स्वीकार कर लिया जाता है, तो इससे होने वाली नैतिक असुरक्षा की कल्पना भी कठिन है। आज मीडिया द्धारा सेलीबिट्रीज से जुड़ी अपवाहें नगरों की जीवनशैली का अभिन्न हिस्सा बनने लगी हैं जिसके अनुकरण से मध्यम वर्ग की युवा पीढ़ी के नैतिक मूल्य बिखर रहे हैं।

मूल्यों में विचलन – सबसे बडी विडम्बना यह है कि पश्चिम के बहुत से बुद्धिजीवी नैतिक मूल्यों में होने वाले विचलन स संबधित आधुनिकता का जहां व्यापक विरोध करने लगे हैं, वहीं हम आज भी उस आधुनिकता को ग्रहण करने में लगे हुए हैं, जो हमारे वैयक्तिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक जीवन के लिए सबसे अधिक घातक है। गिडेन्स (1990) ने पश्चिम की आधुनिकता की तुलना एक जुगरनॉट से की हैं। उनके अनुसार जुगरनॉट तेजी से दौड़ता हुआ शक्तिशाली इंजन वाला एक ऐसा वाहन है जो कभी भी अनियन्त्रित होकर अपने मार्ग से भटक सकता है। स्वाभाविक है कि इस पर सवार लोगों का जीवन किसी भी रूप में सुरक्षित नहीं रहता। यदि एक बार यह अपने रास्ते से भटक जाए तो इसके खतरनाक परिणाम हो सकते हैं। स्पष्ट है कि जो आधुनिकता नैतिक मूल्यों के विचलन को प्रोत्साहन देती हो, वह एक ऐसी जोखिम भरी संस्कृति से जुड़ी है, जिसे अपनाकर हम स्वयं ही अपने जीवन के सामने एक बड़ा संकट खड़ा कर लेते हैं।

मर्टन (1938) के विचलित व्यवहार के सिद्धांत के अनुसार, सांस्कृतिक रूप से निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए समाज की संरचना व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है तो समाज में व्यवहार सम्बंधी नए मूल्य विकसित होने लगते हैं। इससे उत्पन्न होने वाले तनाव ही विचलित व्यवहारों को प्रोत्साहन देते हैं। यदि स्वीकृत व्यवहारों का उल्लंघन करने पर लोगों को समुचित दंड ना मिले तो सामाजिक स्वीकृतिया दुर्बल हो जाने से विचलित व्यवहारों में वृद्धि होने लगती है। कानूनों को प्रभावपूर्ण ढंग से क्रियान्वित न करने की दशा भी विचलित व्यवहारों को बढ़ाती है। अनेक समाजों में जब परिवर्तन की गति बहुत तेज होती है तो सामाजिक मानदंडों में कमी की दशा उत्पन्न होने से भी विचलित व्यवहारों में वृद्धि होने लगती हैं। पारसन्स (1964) के अनुसार 'अपराधी समूह स्वयं में इतनी संगठित व शक्तिशाली होते हैं कि एक बार उनसे जुड़ जाने के बाद व्यक्ति अपने-आपको विचलित व्यवहार से अलग नहीं रख पाता।'

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि आधुनिकता का सीधा प्रभाव मनुष्य के जीवन पर पड़ा है। इससे उसका जीवन एकाकी हो गया है। पहले नगर, परिवार, समाज और भिन्न संस्थाएं सभी एकता के सूत्र में बंधे हुए थे। विश्व के सभी दैनिक विधान, व्यक्ति के सामाजिक अधिकार व कर्तव्य, नैतिकता के नियम और कला के उद्देश्य व विज्ञान की उपयोगिता, सभी नियम मुक्त हो गए हैं।

वर्तमान समय में युवा पीढ़ी निर्धारित मापदण्डों और मान्यताओं को ईमानदारी से स्वीकार नहीं कर इन्हें अपनी सुविधा के अनुकूल अपना रही है। परिणामस्वरुप यह पीढ़ी एक निर्धारित मार्ग से भटककर एक पृथक राह पर चलने लगी है। इससे सामाजिक मूल्यों का पतन हो रहा है। आवश्यकता है कि युवा पीढ़ी समाज के द्धारा निर्धारित सामाजिक मूल्यों का सम्मान करे, उन्हें आत्मसात करे, जिससे सांस्कृतिक मूल्यों को लुप्त होने से बचाया जा सके। सम्पूर्ण मानव समाज व मानव कल्याण हेतु व्यक्ति के सामाजिक और नैतिक मूल्यों का संरक्षण आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Freud, Singmund (1923)- The Ego & the Id : International Psychoanalytical verlog (Vienna)- w-w-northon & company.
2. Giddens, Anthony(1990)- The Consequences of Modernity- John Willey & Sons-
3. Habermas, Jurgen (1985)- The Philosophical Discourse of Modernity, Germany: MIT press.
4. Lamart, Adwin Mart-(1951), Social Pathology a Systematic Approach to the Theory of Sociopathic Behavior, New York Mcgraw hill.
5. Marevall, Jose Maria (2003)- Democracy & the Rule of Law, Cambridge: Universe Press.
6. Morton, R.K. (1938) - Social Structure of Anomie, American Socialogical Associations.
7. Mukherji, R.K. (1950) The Social Structure of Value, Macmillon.
8. Parsons, T. (1964). The Structure of Social System, New York : free.
9. Richard, Kuinney (1967). Criminal Behavior System: A Typology Criminal Justice Studies. Holt : Rinehart &Winston.
10. Rosenaou, Pauline Marie (1992). Postmodernism & The Social Sciences: Insights, Inroads arts Intrusions, N.J. : Princeton University.
11. Sorokin Pitrim (1959). Social and Culture Dynamics, New York: Free.

भारतीय समाज में अंधविश्वास और चमत्कारों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. हरिचरण मीना *

शोध सारांश – भारतीय समाज मे अंधविश्वास एवं चमत्कार मे विश्वास आदिकाल से रहा है। बिना तर्क के विश्वास करना अंधविश्वास कहलाता है। अंधविश्वास व्यक्ति के सोचने समझने की शक्ति को क्षीण कर देता है। वर्तमान में जादू, तंत्र-मंत्र, भूत-प्रेत, डायन आदि के प्रति अंधविश्वास बढ़ता जा रहा है। बुजुर्ग एवं अनपढ़ लोगों का इन सब पर विश्वास होता है परन्तु वर्तमान में पढ़े लिखे व्यक्ति भी इस अंधश्रद्धा के बहाव में बह रहे हैं। बाबा, ओझा, तांत्रिक आदि के चक्करों में फंस कर व्यक्ति चमत्कारों की उम्मीद लगा बैठता है तथा अपना बहुत सा समय एवं पैसा बर्बाद कर देता है। अंधविश्वास एवं चमत्कारों से प्रभावित क्षेत्र केवल भारत ही नहीं है बल्कि विश्व के अन्य देशों में भी यह प्रचलित है। यह अंधविश्वास न केवल मानव के मानसिक विकास को अवरुद्ध कर रहा है बल्कि उसे कायर एवं डरपोक भी बनाता जा रहा है। जहां अंधविश्वास एवं जादू, टोनों से चमत्कार में विश्वास होता है वहां व्यक्ति का विकास चाहे वो सामाजिक हो, आर्थिक हो या वैयक्तिक, सभी अवरुद्ध हो जाते हैं। जो व्यक्ति और समाज दोनों के लिए घातक है। जादू, तंत्र-मंत्र से चमत्कारों का विश्वास दिला कर भोली-भाली जनता को ठगा जाता है। वर्तमान में अब यह व्यवसाय का रूप धारण कर चुका है। प्रस्तुत शोधपत्र के माध्यम से अंधविश्वास, जादू-टोने एवं तंत्र-मंत्र में लोगों के विश्वास, क्रिया विधियां, कारण तथा उन पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करने का प्रयास किया जायेगा।

शब्द कुन्जी– अंधविश्वास, जादू-टोना, चमत्कार, बाबा, मौलवी, ओझा, मनौतियां, झाड़-फूंक, टोटका, तांत्रिक, डायन, तंत्र-मंत्र।

प्रस्तावना – भारतीय समाज मे अंधविश्वास एवं चमत्कार मे विश्वास आदिकाल से रहा है। मानव जीवन में पीढ़ी दर पीढ़ी कुछ परम्पराएँ, रीति-रिवाज, प्रथाएं आस्थाएँ, अंधविश्वास आदि हस्तांतरित होते रहते हैं। जादू-टोना, तंत्र-मंत्र, भूत-प्रेत, डायन आदि के प्रति विश्वास भी पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है। अंधविश्वास एक मान्यता है जो व्यक्ति के सोचने-समझने की शक्ति को क्षीण कर देती है जिसके प्रभाव स्वरूप मानव ढोंगी बाबाओं के चंगुल में फंस जाता है तथा चमत्कार की आस में बाहर नहीं निकल पाता। वर्तमान में शिक्षित और अशिक्षित दोनों ही वर्गो में अंधविश्वास देखा जा सकता है। दुनिया में जितना विश्वास है उतना ही अंधविश्वास भी है और मनुष्य जन्म के साथ ही इसके सम्पर्क में आ जाता है। बालक के जन्म लेते ही उसकी नजर उतारना, उसे रक्षा सूत्र पहनाना, काला टीका लगाना आदि प्रक्रियाएं की जाती है। इन्हें देखते-देखते बालक स्वयं भी इस विचारधारा से जुड़ जाता है।

टूटते संयुक्त परिवार और बढ़ते शहरीकरण के प्रभाव स्वरूप व्यक्ति का सामाजिक दायरा सीमित होता जा रहा है तथा सामाजिक सम्पर्क प्रत्यक्ष रूप के स्थान अप्रत्यक्ष रूप में अधिक प्रचलित हो गया है जिसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति में मानसिक तनाव बढ़ता जा रहा है और वह तनाव के कारणों को जान कर समाप्त करने के स्थान पर इसके बचाव के उपाय जादू, तंत्र-मंत्र एवं टोन टोटकों से करवाने का प्रयास करता है। क्योंकि वह द्रुतगति से उपचार चाहता है जो इनके अनुसार केवल बाबा, ओझा के द्वारा ही सम्भव है। प्राचीन समाज में शिक्षा, ज्ञान, संचार, परिवहन के साधन आदि के अभाव था तब आसानी से उपलब्ध बाबा, ओझा, पुजारी, मौलवी आदि ही उपचारक माने जाते थे इन्हें ही ज्ञानी एवं शक्तिशाली माना जाता था। मानव के पास विज्ञान का ज्ञान, उचित-अनुचित को जांचने के साधन एवं तर्कसंगत ज्ञान, का भी अभाव था। वर्तमान में मानव शिक्षा, तकनीक, विज्ञान, संचार के साधन, परिवहन के साधनों से परिपूर्ण है परन्तु फिर भी अंधविश्वास समाज में अपना स्थान बनाये हुए है।

व्यक्ति जितना आस्तिक होगा, अंधविश्वास में उसमें उतना ही अधिक होगा। देव आस्था होने के कारण चमत्कारों की उम्मीद एवं मंत्र, कर्मकाण्ड आदि के कारण अंधविश्वास बढ़ता जाता है। भाषा, ज्ञान, वेशभूषा रहन-सहन खान-पान आदि में भिन्नता होने के बावजूद अंधविश्वास एवं जादू-टोना, तंत्र-मंत्र में विश्वास एवं आस्था एक समान स्तर है। भारतीय समाज में अंधविश्वास एवं चमत्कारों के प्रति व्यक्ति की बहुत आस्था है। भारतीय समाज में प्रत्येक कार्य के लिए मुहूर्त निकलवाना आवश्यक माना जाता है। जो कि अंधविश्वास का ही एक रूप है। अंधविश्वास- आंखें बंद करके किसी पर विश्वास करना । अंधविश्वास के आगे तर्क समाप्त हो जाता है। केवल मात्र भरोसा एवं विश्वास होता है जो चमत्कार से जुड़ा होता है।

प्रचलित अंधविश्वास:

1. यदि बिल्ली आगे से रास्ता काट जाये तो आगे नहीं बढ़ना चाहिए।
2. घर में नमक किसी खुले डिब्बे में नहीं रखना चाहिए।
3. दिन ढलने के बाद घर में झाडू नहीं लगानी चाहिए। किसी शुभ कार्य हेतु जाते समय पीछे मुड़कर नहीं देखना चाहिए।
4. टिटहरी यदि रात में बोले तो यह अशुभ है।
5. यदि किसी कार्य को प्रारम्भ करते समय कोई छींक दे तो वह कार्य पूर्ण नहीं होता।
6. घर से बाहर जाते समय गुड़ या दही खाकर जाना चाहिए।
7. पैर के तलवे में खुजली हो तो व्यक्ति को घर से बाहर जाना पड़ सकता है अर्थात् यात्रा करनी पड़ती है।

* सह आचार्य (समाजशास्त्र) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

8. यदि किसी महिला की दायीं आंख और पुरुष की बांयी आंख फड़कती है तो कुछ बुरा होना संभावित है।
9. यदि कहीं कुत्ता अथवा बिल्ली रोने लग जाए तो वहां किसी व्यक्ति का बुरा होता है या किसी की मृत्यु होती है।
10. मेंहदी लगाकर बाहर नहीं घूमना चाहिए।
11. चौराहे के बीच से नहीं जाना चाहिए।

पुनर्जन्म : भारतीय समाज में पुनर्जन्म के प्रति भी गहरी आस्था है। यह माना जाता है कि पूर्व जन्म के कर्मों का फल वर्तमान जीवन में और वर्तमान जीवन के कर्मों का फल अगले जन्म में मिलता है। अत: व्यक्ति को कर्मों का फल भुगतने हेतु बार-बार जन्म मिलता है तथा यह भी विश्वास किया जाता है कि किसी योनि मे जन्म लेने वाले को उस योनि में सात जन्म लेने होते है। यह भी अंधविश्वास का ही एक रूप है।

मनौतियां : प्रत्येक व्यक्ति की कुछ इच्छाएं एवं महत्वकांक्षायें होती है, जिन्हें कुछ व्यक्ति तो मेहनत से प्राप्त करने का प्रयास करते हैं तथा कुछ व्यक्ति चमत्कार से प्राप्त करना चाहते है। अत: उनके द्वारा धार्मिक स्थलों, पेड़, किसी स्थान, बाबा, चाँद-तारों आदि से मनौतियां मांगी जाती है तथा चमत्कार की आशा की जाती है। मानव द्वारा -

मनौतियां	मनौतियां मांगने का स्त्रोत
संतान की प्राप्ति	दरगाह, मंदिर, बाबा
सही प्रकार से प्रसव	तांत्रिक, देवस्थल
नौकरी की प्राप्ति	बाबा, तांत्रिक, ज्योतिषी, देवस्थल
पशु की सलामती	बाबा, तांत्रिक, देवस्थल
विवाह सम्पन्न हेतु	पेड़, बाबा, ओझा, दरगाह, मजार, देवस्थल
परीक्षा में उत्तीर्ण हेतु	मन्दिर, बाबा
बीमारी से निजात	बाबा, तांत्रिक, दरगाह, मस्जिद, देवस्थल
धन की प्राप्ति हेतु	बाबा और ज्योतिष
पुत्र की प्राप्ति	पेड़, बाबा, दरगाह, मन्दिर

आदि विभिन्न उद्देश्यों के लिए विभिन्न स्त्रोतों के माध्यम से मनौतियां मांगी जाती है। कभी कभी मनौतियां पूर्ण हो जाती है। यदि पूर्ण नहीं होती तो बाबा, ओझा, पुजारी, साधु-संन्यासी जिन्हें ईश्वर के करीब माना जाता है से प्रार्थना की जाती है कि वे मनौती हेतु जप-तप करें जिसमें कि मनौती पूर्ण हो जाये। यदि मनौती पूर्ण हो जाती है तो उसे चमत्कार बताकर उस बाबा, ओझा आदि का खूब प्रचार प्रसार किया जाता है तथा वे भी भोली-भाली जनता के विश्वास से छलावा करते हुए धन कमाते हैं।

झाड़-फूंक : जब व्यक्ति को नजर लग जाए, मन अशान्त हो तथा किसी भी प्रकार की कोई शारीरिक या मानसिक परेशानी हो तब बाबा, ओझा या तांत्रिक मोर की पंख, चाकू या नीम की टहनी को पीड़ित व्यक्ति के शरीर को छुते हुए या पीड़ित के शरीर पर फेरते हुए मंत्रों का जाप करता है तथा अन्त में पीड़ित के शरीर पर फूँक मारता है। यह प्रक्रिया झाड़-फूंक कहलाती है। नजर उतारना या अदृश्य शक्ति का प्रभाव आदि से बचाव हेतु इस प्रक्रिया को किया जाता है क्योंकि चिकित्सा विज्ञान ऐसी किसी भी समस्या को असत्य मानते हुए उपचार हेतु नकार देता है। इस प्रकार अंधविश्वास के कारण बहुत से व्यक्ति उपचार के नाम पर बड़ी संख्या में लोगों को ठग रहे हैं। झाड़-फूंक करने हेतु सामग्री : झाडू, मोरपंख, चाकू, नीम की टहनी, धागा आदि।

टोटका : किसी अप्रिय तथा हानिकारक कार्य को अपने पक्ष में करने के लिए शास्त्रों (तांत्रिक विद्या) द्वारा निर्धारित क्रिया को करना टोटका कहलाता है। यह दो प्रकार का होता है। प्रथम वह जो नियमित रूप में किया जाता है। यह तब तक बार-बार किया जाता है जब तक कि व्यक्ति का उद्देश्य पूर्ण न हो जाए। दूसरा वह जो निर्धारित संख्या में किया जाता है। इसमें उद्देश्य पूर्ण होने का इन्तजार नहीं किया जाता। यह निश्चित संख्या एवं प्रक्रिया द्वारा किया जाता है। यदि उद्देश्य पूर्ण नहीं होता है तो फिर से शुरूआत की जाती है या अन्य टोटके का प्रयोग किया जाता है।

टोटकों को सम्पन्न करने हेतु प्रयुक्त सामग्री :

रोली	मोली	चावल
राख	काजल	मांस
टूटा घड़ा	लाल कपड़ा	नारियल
फूल	बाल	मिट्टी
मेहन्दी	हल्दी	धागा आदि।

बाबा या गुरु : वर्तमान में बाबा तथा गुरु सामान्य जनता में बहुत प्रचलित हो रहे हैं। सामान्य जनता इन्हें अपना आदर्श मान इनके इशारों पर चलना पसंद करती हैं। धीरे-धीरे लोग इन्हें भगवान का दर्जा देना प्रारम्भ कर देते हैं तथा इन्हीं के कहे अनुरूप अपना जीवन व्यतीत करना प्रारम्भ कर देते हैं। ये विश्वास इतना अंधा होता है कि मानव सही और गलत का भेद ही नहीं जानना चाहता है। उनके लिए गुरु ही श्रेष्ठ एवं प्रथम व्यक्ति या मार्गदर्शन बन जाता है। वे उन्हें गुरु मानने के उपरान्त स्वयं को सुरक्षित एवं भाग्यशाली मानने लगते हैं।

तंत्र-मंत्र, डोरे, ताबीज एवं यंत्र आदि हेतु प्रचलित व्यक्ति

बाबा	मौलवी	स्वामी
तांत्रिक	ओझा	ज्योतिषी
पुजारी	अघोरी	गुरूजी

डायन : यह एक कुप्रथा है जो ग्रामीण समाजों में अधिक देखने को मिलती है। इस कुप्रथा में किसी भी महिला को डायन घोषित कर दिया जाता है तथा यह कहा जाता है कि इसमें भूत-प्रेत का साया है। यह जादू-टोना करती है। यदि किसी के पीछे पड़ जाये तो पीछा छुड़वाना अत्यन्त ही कठिन कार्य है। डायन किसी की भी धन सम्पत्ति को नष्ट कर सकती है एवं हत्या कर सकती है। इस प्रकार के अंधविश्वास भी महिलाओं के प्रति पाये जाते हैं। यह स्थिति महिलाओं के शोषण को प्रदर्शित करती है तथा भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति को चित्रित करती है।

जो महिला एक बेटी, बहू, पत्नी तथा माँ जैसे देवी रूप में होती है वह डायन कैसे हो सकती है? किसी प्रकार की मानसिक या शारीरिक परेशानी के कारण महिला का व्यवहार असामान्य हो सकता है। उन कारणों को जानने एवं उनका उपचार करवाने के बजाए लोग महिला के असामान्य व्यवहार के आधार पर उसे डायन घोषित कर देते हैं जो कि अनुचित है। यह भी अंधविश्वास का एक प्रकार हैं।

भूत : भूत वह है जो बीत गया। लोक जीवन में मृत व्यक्ति की आत्मा को भूत माना जाता है।

यदि कोई व्यक्ति असामान्य व्यवहार करता है तो यह माना जाता है कि उसमें किसी भूत या प्रेतात्मा का वास हो गया है तथा उपचार हेतु बाबा, ओझा आदि के पास ले जाकर उपचार करवाने का प्रयास किया जाता है। पीड़ित व्यक्ति को उपचार के नाम पर यातनाएं दी जाती है। उसे पीटा जाता है। वास्तविक कारण को जाने बिना ही किसी को भूत पीड़ित घोषित करना अंधविश्वास का ही एक रूप है। वह व्यक्ति किसी मानसिक तनाव या बीमारी से भी ग्रस्त हो सकता है। उचित कारण की जानकारी के अभाव में न केवल

पीड़ित व्यक्ति बल्कि उसके परिवार को भी कष्ट पहुंचाता है तथा पाखंडी बाबाओं को झूठे कर्मकाण्ड, पाखण्ड करने तथा धन कमाने के अवसर प्राप्त हो जाते हैं जो कि अंधविश्वास को बढ़ावा देते हैं।

इस प्रकार के अंधविश्वास और चमत्कारों की उम्मीद के कारण ही तंत्र-मंत्र को बल मिला है तथा बाबा, मौलवी एवं ओझा आदि इसे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है। तंत्र-मंत्र की प्रक्रिया के कई रूप है जैसे :

रोग निवारण इस प्रक्रिया में तंत्र-मंत्रों के द्वारा रोगों का निवारण किया जाता है। उन रोगों को ठीक करने का दावा किया जाता है, जो चिकित्सक एवं दवा के माध्यम से ठीक नहीं हो पाते हैं।

वशीकरण इस प्रक्रिया में मंत्रों के द्वारा किसी भी व्यक्ति को वश में किया जा सकता है। तांत्रिक यह दावा करता है कि व्यक्ति को वश में करने के उपरान्त वशीभूत व्यक्ति किसी व्यक्ति विशेष तक ही सीमित हो जाता है। उसी से जुड़ा रहना चाहता है तथा उसी के अनुरूप कार्य करता है।

उच्चाटन इस प्रक्रिया में मंत्रों के द्वारा व्यक्ति को मानसिक रूप से अस्थिर कर दिया जाता है जिससे व्यक्ति का स्थान विशेष या किसी व्यक्ति से लगाव समाप्त हो जाता है।

मारण इस प्रक्रिया में तंत्र-मंत्र के द्वारा किसी भी व्यक्ति को मारा जा सकता है।

ये तांत्रिकों एवं बाबाओं के द्वारा की जाने वाली तांत्रिक क्रियाएं जिसके द्वारा वे शक्तिशाली एवं प्रभावशाली माने जाते हैं। ये बाबा तथा तांत्रिक लोगों में अंधविश्वास पैदा कर उन्हें अपने प्रभाव में लेते हैं तथा उनमें चमत्कारों की उम्मीद जगा कर धन ऐंठते हैं।

प्रचलित उपचार:

1. झाड़-फूंक करवाना।
2. ताबीज पहनना।
3. मनौतियां ।
4. टोन टोटके करना।
5. तपस्या करना।
6. पूजा पाठ करना ।
7. ताबीज को पानी में डाल कर पीना।
8. भभूत को शरीर के लगाना या खाना ।
9. तंत्र-मंत्र से बचाव हेतु यंत्र रखना ।
10. ईश्वर की फोटो लोकेट में डालना।
11. सुरक्षा मन्त्र का जाप करना।
12. रक्षा सूत्र धारण करना ।

अंधविश्वास के कारण इन उपायों के द्वारा व्यक्ति अपनी परेशानियों का बाबा, तांत्रिक एवं ओझा आदि से उपचार करवाते हैं।

कोई भी व्यक्ति किसी अन्य पर इतनी आसानी से विश्वास नहीं है जितनी तत्परता से वह समाज में प्रचलित अंधविश्वासों को मान जाता है। सामान्यत जन समुदायों में टोने टोटकों, जादू, तंत्र-मंत्र, के प्रति भय होता है। यह भय ही उन्हें इसमें विश्वास हेतु प्रेरित करता है। डायन, भूत, प्रेत, जादू, तंत्र-मंत्र, टोना-टोटका, पुनर्जन्म आदि सभी से मानव भयभीत रहता है। इन सभी का संबंध अलौकिक शक्ति से है जिससे बचाव के उपाय बाबा एवं तात्रिक के पास ही माने जाते हैं। सामान्य मानव भयवश इनके सामने झुकता है तथा दबाव में रहता है। बहुत बार व्यक्ति को आर्थिक हानि का सामना करना पड़ता है। माना जाता है कि जो व्यक्ति एक बार इनके चंगुल में फंस जाता है उसका इनसे पीछा छुड़ाना कठिन हो जाता है। वर्तमान में व्यक्ति धन कमाने हेतु अपने शहर एवं रिश्तेदारों से दूर रहता है। किसी भी प्रकार की परेशानी आने पर वह अकेला ही समाधान करने का प्रयास करता है और तनाव ग्रस्त हो जाता है। मानव तीव्र गति से विकास करना चाहता है तथा अधिक से अधिक धन कमाने की होड़ में वह अपने परिवार एवं रिश्तेदारों से दूरी बनाता जा रहा है। एकांकी जीवन जीने के कारण उसका मानसिक दबाव बढ़ रहा है। इन कारणों से मानव समस्याग्रस्त रहता है तथा अपनी समस्याओं को किसी से कहने के स्थान पर वह पाखण्डी बाबाओं से उपचार करवाने का प्रयत्न करता है जिसके प्रभाव स्वरूप बाबाओं का समाज में अस्तित्व बना रहता है। वर्तमान जीवन शैली को देखते हुए ये पाखण्डी लोग भोली-भाली जनता को ठगने का प्रयास करते हैं। आकर्षक, उद्देश्य पूर्ति, उपचार, आदि के लुभावने विज्ञापनों के द्वारा प्रचार करते हैं तथा हर बीमारी का ईलाज सम्भव है का दावा पेश किया जाता है।

जन साधारण इन लुभावने विज्ञापनों के चंगुल में फंस जाते है तथा अंधविश्वास में अपनी आस्था बनाए रखते है। मानव के अनुसार बाबा, ओझा आदि किसी भी प्रकार का चमत्कार कर सकते हैं। इन सबके बहकावे में आकर व्यक्ति अपने परिवार एवं रिश्तेदारों पर शक करने लगता है और धीरे-धीरे इनसे दूरी बना लेता है। वे सभी विश्वास जो कि अंधविश्वास है, का मुख्य कारण टूटते संयुक्त परिवार, नगरीकरण एवं औद्यागिकीकरण है। सामाजिक सम्पर्क समाप्त होते जा रहे हैं। तकनीक पर अत्यधिक निर्भरता हो रही है। जिसके परिणाम स्वरूप मानव जीवन एवं परिवार प्रभावित हो रहे हैं। अंधविश्वास एवं चमत्कार में आस्था को समाप्त करने हेतु शिक्षा एवं नैतिक शिक्षा को बढ़ावा दी जानी चाहिए। मानव को अपने परिवार के सम्पर्क में रहना चाहिए। जिससे की मानसिक तनाव कम हो और उपचार हेतु बाबा, ओझा के पास जाने से बचा जा सके। विज्ञान के ज्ञान का प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिए। वैज्ञानिक सोच विकसित की जानी चाहिए। नवीन ज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। सरकार को इन भ्रमित विज्ञापन देने वालों पर नकेल कसनी चाहिए जिससे की लोगों के साथ होने वाले धोखों को रोका जा सके।

निष्कर्ष-निष्कर्ष रूप मे कहा जा सकता है कि भारतीय समाज मे अंधविश्वास एवं चमत्कार मे विश्वास आदिकाल मे रहा है। वर्तमान मे समाज ने शिक्षा एवं विज्ञान के क्षेत्र मे चाहे कितनी ही उन्नति कर ली हो लेकिन फिर मे समाज मे अंधविश्वास एवं चमत्कारो में आज भी व्यक्ति ऑख मूंदकर विश्वास करता हैं। जबकि वास्तव मे समाज मे अंधविश्वास एवं चमत्कार में आस्था को समाप्त करने हेतु शिक्षा एवं नैतिक शिक्षा को बढ़ावा दी जानी चाहिए। मानव को अपने परिवार के सम्पर्क में रहना चाहिए। जिससे की मानसिक तनाव कम हो और उपचार हेतु बाबा, ओझा के पास जाने से बचा जा सके। विज्ञान के ज्ञान का प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिए। वैज्ञानिक सोच विकसित की जानी चाहिए। नवीन ज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। सरकार को इन भ्रमित विज्ञापन देने वालों पर नकेल कसनी चाहिए जिससे की लोगों के साथ होने वाले धोखों को रोका जा सके। जिससे एक वैज्ञानिक एवं मानवतावादी समाज का निर्माण हो सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. वरठे, डॉ. चन्द्र कुमार, अंधविश्वास और चमत्कार, रचना प्रकाशन, जयपुर, 2010, पृ. 27-32
2. बहल, तांत्रिक, तंत्र-मंत्र-यंत्र रहस्य, राजा पैकेट बुक्स, दिल्ली, 2005
3. धाकरे, उपेन्द्र, देखने में छोटे लगें... जीवन में आने वाली समस्याओं

के सरल उपाय, निरोगी दुनिया प्रकाशन, जयपुर - 16, 2012, पृ. 10-12.

4. शुक्ल, आचार्य पं. शत्रुघ्न लाल, भारतीय तंत्र विद्या, हिन्दी सेवा सदन, मथुरा, 2007
5. कविराज, गोपीनाथ, तांत्रिक साधना और सिद्धान्त, अनुवाद पं. हंसकुमार, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, 2009
6. द्धिवेदी, आचार्य हजारी प्रसाद, कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1976
7. पूनियानी, राम, धर्म का बाजार, उद्भावना प्रकाशन, राजनगर, गाजियाबाद
8. तंत्र-मंत्र-यंत्र विज्ञान, डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी, जोधपुर, राजस्थान, अप्रेल 2010, सितम्बर, 2010
9. चतुर्वेदी आचार्य, रहस्यवाद, बिहार- राष्ट्रभाषा, पटना-5, 1973
10. सागर, प्रमोद, मुस्लिम तंत्र, श्री सरस्वती प्रकाशन, अजमेर, 2003

****

अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो के ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की शिक्षण प्रभावशीलता का तुलनात्मक ग्रामीण अध्ययन

डॉ. सतीश पाल सिंह *

प्रस्तावना – शिक्षक प्रभावशीलता एक स्कूल प्रणाली शिक्षा नीति पहल है जो छात्र सीखने में सुधार के संदर्भ में एक शिक्षक के प्रदर्शन की गुणवत्ता को मापती है। यह कई तरह के तरीकों का वर्णन करता है, जैसे कि अवलोकन, छात्र मूल्यांकन, छात्र कार्य के नमूने और शिक्षक कार्य के उदाहरण, जिनका उपयोग शिक्षा नेता शिक्षक की प्रभावशीलता को निर्धारित करने के लिए करते हैं।

शिक्षक प्रभावशीलता कार्यक्रमों के लिए अभियान दौड़ से लेकर शीर्ष तक है जहां राज्यों को शिक्षक की प्रभावशीलता के आधार पर शैक्षिक नीतियों को पूरा करने के लिए अंक दिए गए थे। यह नीति राज्यव्यापी शिक्षक प्रभावशीलता कार्यक्रमों के उद्भव का आधार थी।

शिक्षक प्रभावशीलता कार्यक्रम अलग–अलग राज्यों में अलग–अलग होते हैं। आमतौर पर, एक शिक्षक प्रभावशीलता कार्यक्रम अवलोकन और आकलन के एक चक्र का वर्णन करता है जो एक शैक्षणिक वर्ष के दौरान शिक्षकों के विभिन्न समूहों पर लागू होता है। नए शिक्षकों का मूल्यांकन अधिक बार किया जाता है, और अनुभवी शिक्षकों का मूल्यांकन कई वर्षों के चक्रों में किया जाता है। मूल्यांकन किए गए शिक्षकों के पास अघोषित कक्षा टिप्पणियों के अलावा मूल्यांकनकर्ता के साथ कई अनुसूचित कक्षा अवलोकन और सम्मेलन होते हैं। मूल्यांकन के उद्देश्य का एक विवादास्पद पहलू शिक्षकों को यह निर्धारित करने में मदद करना है कि उनकी प्रथाओं में क्या प्रभावी है और शिक्षकों को अधिक प्रभावी बनने में मदद करने के लिए उन्हें प्रतिबिंबित करने और अपने अभ्यास को बदलने का माध्यम प्रदान करता है।

शिक्षण प्रभावशीलता परिभाषा– स्कूल प्रणाली में उपयोग की जाने वाली एक विधि है जो कक्षा के अवलोकन, छात्र कार्य नमूने, मूल्यांकन स्कोर और शिक्षक कलाकृतियों सहित आकलन के कई उपायों का उपयोग करती है, ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि किसी विशेष शिक्षक का छात्र के सीखने के परिणामों पर प्रभाव पड़ता है। जबकि स्कूलों ने कई वर्षों से शिक्षक मूल्यांकन प्रथाओं और नीतियों का उपयोग किया है, शिक्षक प्रभावशीलता नीतियों का उद्भव इन मौजूदा प्रथाओं को रूब्रिक और परीक्षण स्कोर के साथ जोड़ता है ताकि शिक्षकों के काम पर अधिक मजबूत दृष्टिकोण प्रदान किया जा सके। शिक्षक प्रभावशीलता पहल अक्सर प्रभावी शिक्षण प्रथाओं के विवरण का उपयोग करती है, जैसे कि चार्लोट डेनियलसन की 'शिक्षण के लिए ढांचा', मूल्यांकन के लिए अलग–अलग डोमेन शिक्षण को व्यवस्थित करने के लिए। डेनियलसन के डोमेन में शामिल हैंरू योजना और तैयारी, कक्षा पर्यावरण, व्यावसायिक उत्तरदायित्व और निर्देश।

शिक्षक मूल्यांकन समय के साथ बदल गए हैं और संयुक्त राज्य भर में अलग–अलग मानक हैं। मूल्यांकन प्रणाली में अक्सर एक प्रशासक शामिल होता है जो प्रति वर्ष दो बार एक शिक्षक का निरीक्षण करता है। कुछ स्थानों पर, शिक्षक अवलोकन केवल तीन साल या उससे अधिक अवधि के चक्र पर किए गए थे। अतीत में, द न्यू टीचर प्रोजेक्ट द्वारा वर्णित एक विजेट प्रभाव स्थापित किया गया है जिसने एक ऐसी संस्कृति विकसित की है जहां सभी शिक्षक महसूस करते हैं कि वे मूल्यांकन पर उच्चतम अंक के पात्र हैं। स्कूल अपनी नौकरी को पदों को भरने के रूप में देखते थे और सोचते थे कि जिस भी शिक्षक को लाइसेंस दिया गया था, वह उच्च गुणवत्ता वाला था, और इस तरह उन्हें उस विचार प्रक्रिया के अनुसार स्कोर किया। इसलिए, सभी शिक्षकों को ऐसे अंक मिल रहे थे जो अच्छे या महान थे और किन्हीं दो शिक्षकों के बीच कोई भिन्नता निर्धारित नहीं की जा सकती थी।

आज, संघीय और राज्य की नीतियों ने स्कूल प्रणालियों को अधिक व्यापक मूल्यांकन प्रणालियों को डिजाइन करने के लिए प्रोत्साहित किया है जो छात्र प्रदर्शन लाभ, कक्षा अवलोकन, शिक्षक प्रतिबिंब, सामग्री विशिष्ट ज्ञान और छात्र प्रतिबिंब जैसी वस्तुओं को देखकर शिक्षक के प्रदर्शन के कई उपायों पर भरोसा करते हैं। कुछ नीति निर्माता और शोधकर्ता अच्छे और बुरे शिक्षकों की पहचान करने और उन्हें छांटने के लिए सिस्टम के डिजाइन को प्रोत्साहित करते हैंय दूसरों को उनके कौशल को बढ़ाने के लिए शिक्षकों को सार्थक प्रतिक्रिया और व्यावसायिक विकास प्रदान करने के लिए डिजाइन किया गया है कुल मिलाकर, शिक्षक प्रभावशीलता का उद्देश्य शिक्षकों के लिए उनके कौशल को बढ़ाने की क्षमता का निर्माण करना है। प्रभावी शिक्षक किसी विषय की उच्च स्तर की वैचारिक समझ रखने की छात्र की क्षमता पर प्रभाव डालते हैं और कम प्रभावी शिक्षकों द्वारा पढ़ाए गए साथियों की तुलना में अधिक सारगर्भित सोचने की क्षमता प्रदर्शित करते हैं। कक्षा में छात्रों के विविध निकाय के लिए सकारात्मक सीखने के परिणामों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षण को एक महत्वपूर्ण प्रभाव के रूप में भी पहचाना गया है। एवं इसका उपयोग कैसे किया जा रहा है।

शिक्षक प्रभावशीलता नीतियों द्वारा मापे गए प्रदर्शन के लिए शिक्षकों को पुरस्कृत करने के बारे में अमेरिका में महत्वपूर्ण बहस चल रही है। कुछ स्कूल शिक्षकों को उनके छात्र के टेस्ट स्कोर के आधार पर अधिक भुगतान करके पुरस्कृत करते हैं, जो संयुक्त राज्य अमेरिका में रेस टू द टॉप फंडिंग से जुड़ा हुआ है। हालांकि, अन्य पुरस्कार प्रणालियां इस विचार के आधार पर बनाई जा रही हैं कि शिक्षक की सीखने की क्षमता में सुधार और उनके अभ्यास में सुधार का सीधा प्रभाव छात्र की उपलब्धि पर पड़ेगा। इन स्कूलों में शिक्षकों जो का उपयोग कर एक राष्ट्रीय प्रमाणन बोर्ड है के लिए भुगतान में वृद्धि व्यावसायिक शिक्षण मानकों के लिए राष्ट्रीय बोर्ड , उन्नत डिग्री,

* एसोसिएट प्रोफेसर, अध्यापक प्रशिक्षण विभाग, दिगम्बर जैन कॉलेज, बड़ौत (बागपत) (उ.प्र.) भारत

व्यावसायिक विकास में आकर्षक, नए सहयोगियों संरक्षक और कर्मचारियों स्कूलों के लिए कड़ी मेहनत में इन योग्य शिक्षकों के लिए अधिक राशि का भुगतान शिक्षक प्रभावशीलता और योग्यता वेतन का संबंध विभिन्न देशों में भिन्न होता है। फिनलैंड और कनाडा में, वे योग्यता-वेतन दृष्टिकोण का उपयोग नहीं करते हैं, बल्कि मूल्यांकनकर्ता और शिक्षक के बीच छात्र की प्रगति और सफलता के बारे में बातचीत को प्रोत्साहित करते हैं। इसके विपरीत, चीनी और सिंगापुर के शिक्षकों को उच्च प्रदर्शन के लिए वित्तीय बोनस और पदोन्नति मिलती है। उच्च प्रदर्शन करने वाले देशों में पेशेवर और स्कूल स्तर की जवाबदेही की एक मजबूत प्रणाली है, लेकिन स्कूल सुधार लक्ष्यों, पेशेवर योगदान और छात्र कल्याण के संकेतक जैसी चीजों पर सफलता देखें।

सन्दर्भ साहित्य की समीक्षा- अवस्थी (2013) ने माध्यमिक विद्यालय में कार्यरत शिक्षकों और शिक्षिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता एवं कार्य सन्तुष्टि का उनके शैक्षिक अनुभव के सन्दर्भ में अध्ययन किया और निष्कर्ष में माध्यमिक स्तर केसरकारी विद्यालयों में कार्यरत उच्च अनुभवी एवं अल्प अनुभवी शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर पाया है। माध्यमिक स्तर के सरकारी विद्यालयों मे कार्यरत उच्च अनुभवी एवं अल्प अनुभवी शिक्षिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर होता है। माध्यमिक स्तर के गैर-सरकारी विद्यालय में कार्यरत उच्च अनुभवी एवं अल्प अनुभवी शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर होता है। माध्यमिक स्तर के गैर-सरकारी विद्यालय में कार्यरत उच्च अनुभवी एवं अल्प अनुभवी शिक्षिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर होता है। माध्यमिक स्तर केसरकारी विद्यालय में कार्यरत उच्च अनुभवी एवं अल्प अनुभवी शिक्षकों की व्यावसायिक सन्तुष्टि में सार्थक अन्तर नहीं पाया है।

गोयल (2014) ने प्राथमिक विद्यालय में अध्यापनरत् नियमित शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों की कार्यसन्तुष्टि का उनकी शिक्षक प्रभावशीलता पर प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि प्राथमिक विद्यालय में अध्यापनरत् शिक्षकों की कार्यसन्तुष्टि में सार्थक अन्तर नहीं है। नियमित शिक्षकों एवं शिक्षामित्र शिक्षको की शिक्षक प्रभाव शीलता में अधिक अन्तर नहीं है पर नियमित शिक्षकों का शैक्षिक स्तर उच्च होने के कारण शिक्षामित्र शिक्षकों से नियमित शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता थोड़ी अधिक है। प्राथमिक विद्यालय मे अध्यापनरत् नियमित शिक्षिकाओं एवं शिक्षामित्र शिक्षिकाओं की कार्यसन्तुष्टि में सार्थक अन्तर नहीं है। प्राथमिक विद्यालय में अध्यापनरत् नियमित शिक्षक-शिक्षिकाओं की शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर नहीं है अर्थात् शिक्षक प्रभावशीलता अधिकतर समान है। उच्च कार्यसन्तुष्टि एवं निम्न कार्यसन्तुष्टि वाले नियमित शिक्षकों की कार्यसन्तुष्टि का उनकी शिक्षक प्रभावशीलता पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि उच्च कार्य सन्तुष्टि वाले नियमित शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता एवं निम्न कार्यसन्तुष्टि वाले शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता लगभग समान है।

कुमार (2015) ने शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक एवं शिक्षिकाओं में आत्मविश्वास एवं शिक्षक प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन किया और पाया कि शहरी क्षेत्र के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों का आत्मविश्वास स्तर ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षकों के आत्मविश्वास स्तर से अधिक है व शहरी क्षेत्र की शिक्षिकाओं का आत्मविश्वास स्तर ग्रामीण स्तर की शिक्षिकाओं से अधिक पाया गया। शहरी क्षेत्र के शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता भी अपेक्षाकृत अधिक पायी गयी। शहरी क्षेत्र की शिक्षिकाओं की शिक्षक प्रभावशीलता भी अपेक्षाकृत कम पायी गयी।

यादव (2015) ने माध्यमिक स्तर पर शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं मे शिक्षक प्रभावशीलता एवं आकांक्षा स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया व पाया कि शिक्षकों व शिक्षिकाओं की शिक्षक प्रभावशीलता में विभिन्नता नहीं पायी जाती है और शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की शिक्षक प्रभावशीलता स्वतन्त्र वितरित नहीं पायी गयी है।

तिवारी (2017) ने वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं तनाव एवं शिक्षक प्रभावशीलता सम्बन्ध का अध्ययन किया व पाया कि वित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों के तनाव एवं शिक्षक प्रभावशीलता में अत्यन्त निम्न ऋणात्मक सह-सम्बन्ध है तथा स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों की शिक्षिकाओं के तनाव तथा शिक्षक प्रभावशीलता में निम्न धनात्मक सह-सम्बन्ध है, अर्थात् वित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों का व्यक्तिगत तनाव बढ ने के साथ उनकी शिक्षक प्रभावशीलता घट रही है तथा स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों का व्यक्तिगत तनाव बढ़ने पर उनकी शिक्षक प्रभावशीलता भी बढ़ रही है एवं स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालय की शिक्षिकाओं के तनाव एवं शिक्षक प्रभावशीलता में सामान्य ऋणात्मक सह-सम्बन्ध है, अर्थात् शिक्षिकाओं का व्यक्तिगत तनाव बढ़ने के साथ उनकी शिक्षक प्रभावशीलता घट रही है।

अध्ययन का औचित्य - संदर्भ साहित्य की समीक्षा के निष्कर्ष रूप में प्राप्त परिणाम प्राप्त होता है कि अवस्थी (2013) में माध्यमिक स्तर की पर शिक्षण प्रभावशीलता पर अध्ययन किया। गोयल (2014) ने नियमित शिक्षक एवं शिक्षा मित्रों पर अध्ययन किया। कुमार (2015) में उच्चतर माध्यमिक स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण अध्ययन पर कार्य किया एवं यादव (2015) में माध्यमिक स्तर पर शिक्षक शिक्षकों की प्रभावशीलता का अध्ययन किया। तिवारी (2017) ने वित्ता पोषित एवं स्ववित्तापोषित अध्यापको की शिक्षण प्रभावशीलता पर अध्ययन किया संदर्भ साहित्य की समीक्षा के पश्चात यह पाया गया कि बागपत जनपद के अनुदानित माध्यमिक स्तर पर कार्यरत अध्यापको की शिक्षण प्रभावशीलता पर अध्ययन नहीं हुआ है इसलिए ग्रामीण एवं शहरी अध्यापक अध्यापिकओ की शिक्षण प्रभावशीलता पर अध्ययन की आवश्यकता प्रतिपादित होती है

समस्या कथन- अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो के ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की शिक्षण प्रभावशीलता का तुलनात्मक ग्रामीण अध्ययन

अध्ययन के उद्देश्य:

1. अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन।
2. अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन।
3. अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन।
4. अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन।
5. अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता का तुलनात्मक

अध्ययन।

अध्ययन की परिकल्पनाए:

1 अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

2 अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है ।

3 अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

4 अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

5 अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

जनसंख्या– प्रस्तुत अध्ययन में जनसंख्या के रूप में पश्चिमी उत्तर प्रदेश के बागपत जनपद के अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो के शहरी एवं ग्रामीण अध्यापकों को सम्मिलित किया किया है।

न्यादर्श– वर्तमान अध्ययन हेतु न्यादर्श के रूप में 'यादृच्छिक न्यादर्शन' विधि के आधार पर बागपत जनपद के माध्यमिक स्तर के 100 अध्यापकों का चयन किया है। जिसमे ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों की संख्या 50–50 है।

प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत अध्ययन में उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक तथ्यों, आंकडों एवं सूचनाओं के संकलन हेतु डॉ0 उम्मे कुलसुम द्धारा निर्मित एवं मानकीकृत परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

प्रयुक्त सांख्यिकीय प्रविधियां – समकं संकलन से प्राप्त सूचनाओं को अर्थयुक्त बनाने एवं परिणामों की व्याख्या हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं 'टी'– परीक्षण आदि सांख्यिकीय प्रविधियों का उपयोग किया गया है।

परिणाम एवं विवेचना– समस्या से सम्बन्धित आकडों तथ्यों एवं सूचनाओं आदि के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर परिणामों को प्राप्त किया गया है। प्रस्तुत शोध समस्या के उद्देश्यों पर आधारित परिकल्पनाओं के सम्बन्ध में निम्नलिखित परिणाम प्राप्त हुए है।

शोध का सीमांकन – प्रस्तुत शोध केवल बागपत जनपद के अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो के शहरी एवं ग्रामीण अध्यापकों को पर ही सीमित था।

अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत अध्यापको/अध्यापिकाओ की शिक्षण प्रभावशीलता की तुलना अध्ययन करना।

तालिका– 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों के 50 कार्यरत अध्यापकों एवं 50 कार्यरत अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता संबंधी फलांकों का मध्यमान क्रमश: 284.6 तथा 286.5 एवं प्रमाणिक विचलन क्रमश: 16.12 तथा 17.25 प्राप्त हुआ। .अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्य सार्थक अन्तर की जाँच के लिए t परीक्षण का प्रयोग किया गया गणना के पश्चात परिगणित t परीक्षण का मान 1.529 पाया गया। जो कि मुक्तांश 98 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.96 से कम है। अर्थात .अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे समानता पायी गयी ।

निष्कर्ष के रूप में अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को स्वीकृत किया जाता है।'

तालिका– 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 2 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों के 25 कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं 25 कार्यरत ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता संबंधी फलांकों का मध्यमान क्रमश: 285.4 तथा 291.5 एवं प्रमाणिक विचलन क्रमश: 15.23 तथा 13.25 प्राप्त हुआ। .अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्य सार्थक अन्तर की जाँच के लिए t परीक्षण का प्रयोग किया गया गणना के पश्चात परिगणित t परीक्षण का मान 1.510 पाया गया। जो कि मुक्तांश 48 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.96 से कम है। अर्थात .अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे समानता पायी गयी ।

निष्कर्ष के रूप में अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को स्वीकृत किया जाता है।'

तालिका– 3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 3 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों के 25 कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं 25 कार्यरत शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता संबंधी फलांकों का मध्यमान क्रमश: 294.85 तथा 290.21 एवं प्रमाणिक विचलन क्रमश: 14.23 तथा 13.57 प्राप्त हुआ। .अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्य सार्थक अन्तर की जाँच के लिए t परीक्षण का प्रयोग किया गया गणना के पश्चात परिगणित t परीक्षण का मान 1.179 पाया गया। जो कि मुक्तांश 48 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.96 से कम है। अर्थात अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे समानता पायी गयी ।

निष्कर्ष के रूप में अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को स्वीकृत किया जाता है।'

तालिका– 4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 4 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों के 25 कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं 25 कार्यरत शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता संबंधी फलांकों का मध्यमान

क्रमश: 285.4 तथा 290.21 एवं प्रमाणिक विचलन क्रमश: 15.23 तथा 13.53 प्राप्त हुआ। अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्य सार्थक अन्तर की जाँच के लिए t परीक्षण का प्रयोग किया गया गणना के पश्चात परिगणित t परीक्षण का मान 1.180 पाया गया। जो कि मुक्तांश 48 पर 0.01 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.96 से कम है। अर्थात अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे समानता पायी गयी।

निष्कर्ष के रूप में अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अंतर नही पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को स्वीकृत किया जाता है।'

तालिका- 5 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 5 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों के 25 कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं 25 कार्यरत ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता संबंधी फलांकों का मध्यमान क्रमश: 294.85 तथा 291.5 एवं प्रमाणिक विचलन क्रमश: 14.23 तथा 15.92 प्राप्त हुआ। अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्य सार्थक अन्तर की जाँच के लिए t परीक्षण का प्रयोग किया गया गणना के पश्चात परिगणित t परीक्षण का मान 0.785 पाया गया। जो कि मुक्तांश 48 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.96 से कम है। अर्थात दअनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे समानता पायी गयी।

निष्कर्ष के रूप में अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अंतर पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अनुदानितमाध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को स्वीकृत किया जाता है।'

निष्कर्ष- अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत अध्यापको/ अध्यापिकाओ की शिक्षण प्रभावशीलता के अध्ययन से सम्बन्धित निष्कर्ष अनुदानित माध्यमिक विद्यालयो मे कार्यरत अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के अध्ययन द्वारा स्पष्ट होता है कि अनुदानितमाध्यमिक विद्यालयो मे कार्यरत अध्यापक अपेक्षा अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता कुछ अधिक है। कार्यरत अध्यापक की शिक्षण प्रभावशीलता का मध्यमान 284.6 है एवं कार्यरत अध्यापक की शिक्षण प्रभावशीलता का मध्यमान 289.7 हैं। इस आधार पर कह निष्कर्ष रूप मे कह सकते हैं कि माध्यमिक विद्यालयो मे कार्यरत अध्यापकों अध्यापिकाओ की शिक्षण प्रभावशीलता लगभग समान है।

1. अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

निष्कर्ष के रूप में अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को स्वीकृत किया जाता है।'

2. अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

निष्कर्ष के रूप में अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को स्वीकृत किया जाता है।'

3. अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

निष्कर्ष के रूप में अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को स्वीकृत किया जाता है।'

4. अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

निष्कर्ष के रूप में अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अंतर पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को अस्वीकृत किया जाता है।'

5. अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

निष्कर्ष के रूप में अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अंतर पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को स्वीकृत किया जाता है।'

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. अवस्थी, डी. (2013) केन्द्रीय, नवोदय तथा उ0 प्र0 बोर्ड संचालित विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं की प्रभावशीलता तथा प्रतिबद्धता का तुलनात्मक अध्ययन (अप्रकाशित). (एम. एड. की उपाधि हेतु लघु शोध-प्रबन्ध). शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।
2. अवस्थी, यू. (2013) माध्यमिक विद्यालय में कार्यरत शिक्षकों और शिक्षिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता एवं कार्य सन्तुष्टि का उनके

शैक्षिक अनुभव के सन्दर्भ में अध्ययन (अप्रकाशित). (एम. फिल . की उपाधि हेतु लघु शोध–प्रबन्ध). शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।

3. गोयल, एस. (2014) प्राथमिक विद्यालय में अध्यापनरत नियमित शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों की कार्यसन्तुष्टि का उनकी शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रभाव का अध्ययन (अप्रकाशित). (एम. फिल . की उपाधि हेतु लघु शोध–प्रबन्ध).शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।
4. यादव, वी. (2015) माध्यमिक स्तर पर शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं में शिक्षक प्रभावशीलता एवं आकांक्षा स्तर का तुलनात्मक अध्ययन. (अप्रकाशित). (एम. एड. की उपाधि हेतु लघु शोध–प्रबन्ध). शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।
5. कुमार, एस. (2015) शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक एवं शिक्षिकाओं मे आत्मविश्वास एवं शिक्षक प्रभावशीलता (अप्रकाशित). (एम. एड. की उपाधि हेतु लघु शोध–प्रबन्ध).शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।
6. तिवारी, एस. (2017) वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक शिक्षिकाओं के तनाव एवं शिक्षक प्रभावशीलता के सम्बन्ध का अध्ययन (अप्रकाशित). (एम. एड. की उपाधि हेतु लघु शोध–प्रबन्ध). शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।

1 अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्यमान मानक विचलन एवं टी का मान दर्शाने वाली तालिका– 1

समूह	अध्यापकों की संख्या	प्राप्ताको का मध्यमान	मानक विचलन	टी का मान	स्वतंत्रता अंश
	N	M	SD	T value	df
कार्यरत अध्यापकों	50	284.6	16.12	1.529	सार्थक
कार्यरत अध्यापिकाओं	50	289.7	17.25		

2 अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता मध्यमान मानक विचलन एवं टी का मान दर्शाने वाली तालिका– 2

समूह	अध्यापकों की संख्या	प्राप्ताको का मध्यमान	मानक विचलन	टी का मान	स्वतंत्रता अंश
	N	M	SD	T value	df
कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों	25	285.4	15.23	1.510	सार्थक
कार्यरत ग्रामीण अध्यापिकाओं	25	291.5	13.25		

3 अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता मध्यमान मानक विचलन एवं टी का मान दर्शाने वाली तालिका– 3

समूह	अध्यापकों की संख्या	प्राप्ताको का मध्यमान	मानक विचलन	टी का मान	स्वतंत्रता अंश
	N	M	SD	T value	df
कार्यरत शहरी अध्यापकों	25	294.85	14.23	1.179	सार्थक
कार्यरत शहरी अध्यापिकाओं	25	290.21	13.57		

4 अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता मध्यमान मानक विचलन एवं टी का मान दर्शाने वाली तालिका– 4

समूह	अध्यापकों की संख्या	प्राप्ताको का मध्यमान	मानक विचलन	टी का मान	स्वतंत्रता अंश
	N	M	SD	T value	df
कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों	25	285.4	15.23	1.180	सार्थक
कार्यरत शहरी अध्यापिकाओं	25	290.21	13.53		

5 अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता मध्यमान मानक विचलन एवं टी का मान दर्शाने वाली तालिका– 5

समूह	अध्यापकों की संख्या	प्राप्ताको का मध्यमान	मानक विचलन	टी का मान	स्वतंत्रता अंश
	N	M	SD	T value	df
कार्यरत शहरी अध्यापकों	25	294.85	14.23	0.784	सार्थक

****